लाल बहादुर शास्त्री प्रशासन अकादमी
Lal Bahadur Shastri Academy of Administration
मसूरी
MUSSOORIE

पुस्तकालय
LIBRARY

अवाप्ति संख्या
Accession No. ~~15~~ 118238

वर्ग संख्या
Class No. R 039.914

पुस्तक संख्या
Book No. Enc V.2

हिन्दी
विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,

सिद्धान्त-वारिधि, शब्दरत्नाकर, एम, आर, ए, एस,

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्कलित ।

द्वितीय भाग

[अभिप्रहत—आसृति]

THE
ENCYCLOPÆDIA INDICA.

VOL. II.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, Prāchyavidyāmahārnavā,

Siddhānta-vāridhi, Sabda-ratnākara, M. R. A. S.,

Compiler of the Bengali Encyclopædia ; the late Editor of Bangiya Sāhitya Parishad and Kāyastha Patrikā ; author of Castes & Sects of Bengal, Mayurabhanja Archæological Survey Reports and Modern Buddhism ; Hony. Archæological Secretary, Indian Research Society ; Member of the Philological Committee, Asiatic Society of Bengal ; &c. &c. &c.

Printed by R. C. Mitra, at the Visvakosha Press

Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu

9, Visvakosha Lane, Baghbazar, Calcutta.

1917

हिन्दी

विश्वकोष

(द्वितीय भाग)

अभिप्रहत (सं० त्रि०) अभि-प्र-हन्-क्त। आहत, ज़ख़्मी, घायल, मार खाये हुआ, मारा गया।

अभिप्राणन (सं० क्ली०) अभि-प्र-अन-ल्युट्। निश्वास, उच्छ्वास, निर्गम, उद्गमन, तबखीर, भाप।

अभिप्रातर् (सं० अव्य०) अतिशयं प्रातः। अतिशय प्रत्यूष, अतिप्रभात, बहुत सबेरे, ज़्यादा तड़के।

अभिप्राप्त (सं० त्रि०) आगत, हस्तगत, उपस्थित, आया हुआ, दस्तयाब, जो आ पहुंचा हो।

अभिप्राप्ति (सं० स्त्री०) आभिमुख्येन प्राप्तिः, प्रादि-समास। अभिमुख-प्राप्ति, सम्मुख प्राप्ति, पहुंच, आमद।

अभिप्राय (सं० पु०) अभिप्रैति अभिगच्छति कार्य-सिद्धिमनेन, अभि-प्र-इण करणे अच्। १ आशय, भाव, मतलब, ग़रज़। २ छन्द। ३ आशय, मक़सद, इरादा। ४ विष्णु। (त्रि०) ५ अभिगामी, पास पहुंचनेवाला।

अभिप्री (सं० त्रि०) अभिप्रीणाति, अभि-प्री-क्विप्। सकल प्रकार तर्पण करनेवाला, जो हर सूरतसे खुश रहता हो।

अभिप्रीति (सं० स्त्री०) १ उत्साह, आनन्द, प्रसन्नता, हौसला, खुशी, रज़ामन्दी। २ अभिलाष, इच्छा, ख़ाहिश, मर्ज़ी।

अभिप्रेत्य (सं० अव्य०) दृष्टि डालकर, निगाह उठाकर।

अभिप्रेत (सं० त्रि०) अभिप्रेयते स्म, अभि-प्र-इण-क्त। १ अभीष्ट, इरादा किया हुआ। २ अभिलषित, चाहा गया। ३ स्वीकृत, सम्मानित, मञ्ज़ूरशुदा, पसन्द किया हुआ। ४ इच्छुक, ख़ाहिशमन्द, चाहनेवाला।

अभिप्रेत्य (सं० त्रि०) अभिप्रेयते, अभि-प्र-इण-क्यप् तुगागमः। १ अभिप्रेतव्य, अभिप्रायणीय, अभिलषणीय, ख़ाहिश रखने क़ाबिल, जो चाहने लायक़ हो।

अभिप्रेप्सु (सं० त्रि०) अभिप्राप्तिमिच्छुः, अभि-प्र-आप्-सन्-उ। पानेके निमित्त इच्छुक, जो मिलनेका ख़ाहिशमन्द हो।

अभिप्रेयमाण (सं० त्रि०) खदेरा जाते हुआ, जो हटाया जा रहा हो।

अभिप्रोक्षण (सं० क्ली०) अभि सर्वतः प्रोक्षणं संस्कार-विशेषः। सकल दिक् जलादि द्वारा सेकरूप वैध-संस्कार, छिड़काव।

अभिप्लव (सं० पु०) अभिप्लवन्ते स्वर्लोकमभिगच्छन्ति, अभि-प्लु-गतौ अच्। १ प्राजापत्य नामक आदित्य सकल। २ वर्षसाध्य गवामयन यज्ञवाले प्रतिमासीय चौबीस दिनके मध्यस्थित चार-संख्यक छः दिन; अर्थात् चौबीसको चारसे भाग देनेपर प्रत्येक भागमें जो छः दिन आते, उनके एक-एक अंशका छः दिन-

वाला समय। ३ छः दिन साध्य स्तोमादि पाठसाधक गवामयनाङ्ग याग विशेष। भावे अप्। ४ उपप्लव, उपद्रव, सकल दिक् लम्फन, सकल दिक् गमन, झगड़ा, बखेड़ा, चारो ओरकी दौड़-धूप।

अभिप्लुत (सं० त्रि०) सम्यक् प्लुतम्, अभि-प्लु-क्त। १ सकल दिक् व्याप्त, चारो ओर भरा हुआ। २ सकल प्रकार सिक्त, सब तरह लबरेज़। ३ अभिभूत, अधीन, मातहतीमें पड़ा हुआ।

अभिबल (सं० क्ली०) गुप्तवेशमें स्थानविशेष पर मिलनेकी स्वीकृति, छिप कर किसी अखाड़ेमें आनेका इक़रार।

अभिबुद्धि (सं० स्त्री०) बुद्धीन्द्रिय, इल्म, अक्ल, समझका औज़ार।

अभिभङ्ग (सं० त्रि०) अभितो भङ्गो यस्मात्, ५-बहुव्री०। १ भङ्ग करनेवाला, जो तोड़ डालता हो। २ भङ्गशील, टूटा हुआ। (पु०) ३ भङ्गकरनेवाला व्यक्ति, जो शख्स तोड़नेवाला हो।

अभिभञ्जत् (सं० त्रि०) तोड़ डालनेवाला, जो तोड़ रहा हो।

अभिभर्त्तृ (सं० अव्य०) प्रेमीके प्रति, स्वामीके सम्मुख, आशककी तर्फ़, खाविन्दके सामने।

अभिभव (सं० पु०) अभि-भू-अप्। १ पराजय, हार। २ तिरस्कार, अनादर, बेइज़्ज़ती। ३ रोगादि द्वारा जड़ीभाव, बीमारी वगैरहसे सख्त पड़ जाना। ४ योग, जोड़। (त्रि०) ५ शक्तिसम्पन्न, ग़ालिब, हावी।

अभिभवन (सं० क्ली०) अभि-भू-ल्युट्। अभिभव, पराजय, रोगादि द्वारा ज्ञानरोध, शिकस्त, हार, बीमारी वगैरहसे होशका न रहना।

अभिभवनीय (सं० त्रि०) अभिभूत होनेवाला, जिसे शिकस्त दें।

अभिभा (सं० स्त्री०) अभि-भा-अङ्। १ प्रेत, साया। २ पराजय, अभिभव, शिकस्त, हार। ३ सकल दिक् दीप्ति, चारो ओर रोशनी, उत्कर्ष, सबकत, बड़ाई।

अभिभायतन (सं० क्ली०) १ उत्कर्षका स्थान, सबकतकी जगह। २ बौद्ध उत्कर्षके आठ स्रोतका नाम।

अभिभार (सं० पु०) अभि-भृ-घञ्, अभि अति-शयितो भारो यस्य, प्रादि-बहुव्री०। अतिभारयुक्त, निहायत वज़नी।

अभिभावक (सं० त्रि०) अभिभवति, अभि-भू-ण्वुल्। अभिभवकारी, पराजयकारी, तिरस्कारकारी, जड़ी-भावकारी, सबकत ले जानेवाला, जो हरा देता हो, बेइज़्ज़त करनेवाला। २ आत्मीय स्वजन, तत्त्वा-वधायक, मुरब्बी।

अभिभावन (सं० क्ली०) विजय, जीत।

अभिभाविन् (सं० त्रि०) अभिभवति, अभि भू-णिनि। तिरस्कारकारी, पराजयकारी, बेइज़्ज़त करनेवाला, जो हरा देता हो। 'सर्वतेजोभिभाविना।' (रघु १।१४)

अभिभावी (सं० पु०) अभिभाविन् देखो।

अभिभावुक (सं० त्रि०) अभि-भू-उकञ्। तिरस्कार-कारी, पराजयकारी, जड़भावकारी, बेइज़्ज़त करने-वाला, जो हरा देता हो, होश उड़ानेवाला।

अभिभाषण (सं० क्ली०) अभितो भाषणम्, प्रादि स०। आभिमुख्य कथन, सम्मुखका बोलना, सामनेकी गुफ़्तगू, जो बात रूबरू हो।

अभिभाषमाण (सं० त्रि०) बोल देनेवाला, जो बात कह उठता हो।

अभिभाषित (सं० त्रि०) कथित, निवेदित, कहा गया, जिससे कह चुकें।

अभिभाषिन् (सं० त्रि०) आभिमुख्येन भाषते, अभि-भाष-णिनि। आभिमुख्य कथक, जो सम्मुख बोलता हो, सामने कहनेवाला, जो बात कर रहा हो।

अभिभाष्य (सं० त्रि०) कथनीय, कहा जानेवाला, जिससे बात की जाये।

अभिभाष्यमाण (सं० त्रि०) कहा जाते हुआ, जिससे बात करते हों।

अभिभू (सं० त्रि०) अभिभवति, अभि-भू-क्विप्। अभिभावक, पराजयकारी, तिरस्कारक, सबकत ले जानेवाला, जो हरा देता हो, इज़्ज़त बिगाड़नेवाला।

अभिभूत (सं० त्रि०) अभि-भू-क्त। १ किंकर्तव्य-

विमूढ़, जो घबरा गया हो। २ पराभूत, मग़लूब, हारा हुआ। ३ व्याकुल, तकलीफ़ज़दह।

अभिभूति (सं० स्त्री०) अभि-भू-क्तिन्। १ पराभव, पराजय, शिकस्त, हार। २ अवज्ञा, बेइज़्ज़ती। (त्रि०) ३ अभिभावक, पराजयकारी, ग़ालिब आनेवाला, जो जीत लेता हो।

अभिभूत्योजस् (वै० क्ली०) १ उत्कृष्ट शक्ति, ऊंची ताक़त। (त्रि०) २ उत्कृष्ट शक्तिसम्पन्न, ऊंची ताक़त रखनेवाला।

अभिभूय (सं० क्ली०) अभि-भू भावे क्यप्। सकल दिक् प्रसार, सकल प्रकार स्थिति, उत्कर्ष, चारो ओर फैलाव, सब तरह गुज़ारा, सबक़त।

अभिभूवन् (सं० त्रि०) अभि-भवति, अभि-भू-कर्तरि बाहुलकात्, ङ्वनिप्। अभिभावक, तिरस्कारक, पराजयकारी, हरानेवाला, जो ग़ालिब आता हो, झिड़की देनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। अभिभूवरी।

अभिमण्डन (सं० क्ली०) १ शृङ्गार, सजावट, बनाव-चुनाव। २ प्रतिपादन, समर्थन, अपनी बातका रखना।

अभिमण्डित (सं० त्रि०) विभूषित, अलङ्कृत, सजा हुआ, जो संवारा गया हो।

अभिमत (सं० त्रि०) अभिमन्यते स्म, अभि मन-क्त। १ अभिमानका विषयीभूत, जिसके लिये घमण्ड करें। २ सम्मत, मञ्ज़ूर, माना हुआ। ३ आदृत, इज़्ज़त किया गया। ४ अभीष्ट, ख़ाहिश किया हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ५ अभिमान, घमण्ड। ६ मिथ्या-ज्ञान, झूठो समझ। ७ अभिलाष, इच्छा, ख़ाहिश, मर्ज़ी।

अभिमतता (सं० स्त्री०) १ अनुरूपता, काम्यता, प्रवाहत, ख़ाहिशमन्दी। २ प्रेम, उत्कण्ठा, इश्क़, चाह।

अभिमति (सं० स्त्री०) अभि-मन्-क्तिन्। १ अभिमान, गुरूर। २ मिथ्याज्ञान, झूठो समझ। ३ आदर, सम्मान, तवक़्क़ा, इज़्ज़त। ४ अभिलाष, ख़ाहिश।

अभिमनस् (सं० त्रि०) अभिमुखं सम्पादनोन्मुखं मनो यस्य, बहुव्री०। १ कार्य करनेमें उन्मुख वा उद्यत, काममें मन लगानेवाला। २ हृष्ट, तुष्ट, आसूदा, सेर, छका हुआ। ३ उत्कण्ठित, ख़ाहिशमन्द।

अभिमन्तव्य (सं० त्रि०) अभिमन्यते, अभि-मन् कर्मणि तव्य। ज्ञातव्य, ख़याल करने क़ाबिल। २ स्पृहनीय, चाहने लायक़। ३ अधिक मान किया जानेवाला, जिसकी ज़्यादा इज़्ज़त की जाये।

अभिमन्तु (सं० स्त्री०) चोटका चलाना, नाशका करना।

अभिमन्तृ (सं० त्रि०) इच्छुक, उत्कण्ठित, स्पृहा-युक्त, लालची, ख़ाहिशमन्द।

अभिमन्तोस् (वै० अव्य०) हानि पहुंचानेको, नुक़-सान करनेके लिये।

अभिमन्त्र (सं० क्ली०) अभि-मन्त्र चुरा० अच्। मीमांसकोक्त मन्त्रपाठपूर्वक दर्शनादि संस्कारविशेष।

अभिमन्त्रण (सं० क्ली०) अभि-मन्त्र चुरा० ल्युट्। १ मीमांसकोक्त मन्त्रपाठपूर्वक दर्शनादि संस्कारविशेष। २ सम्बोधन, आमन्त्रण, बुलाहट, पुकार। ३ अभि-प्रणयन, सलाहका लेना। ४ जादू, टोना।

अभिमन्त्रित (सं० त्रि०) जादू किया हुआ, जिसपर टोना पड़ चुके।

अभिमन्त्र्य (सं० त्रि०) अभि-मन्त्र चुरा० यत्। १ अभिमन्त्रणीय, गोपनमें परामर्शणीय, समझाने-क़ाबिल, जो चुपकेसे सिखाने लायक़ हो। (अव्य०) २ अभिमन्त्र-ल्यप्। २ मन्त्रणा करके, मन्त्र पढ़के।

अभिमन्थ, अधिमन्थ (सं० पु०) अभि अधि वा मथ्नाति नेत्रम्। १ नेत्ररोगविशेष, आंखकी कोई बीमारी। भावे घञ्। २ अतिशय मन्थन, हदसे ज़्यादा मथाई। (अव्य०) मन्थस्याभिमुख्यम्, अव्ययी०। ३ मन्थनदण्डके सम्मुख, मन्थनदण्डके समीप, मथानीके सामने या पास।

अभिमन्यु (सं० पु०) अभिगत: प्राप्त: युद्धसमये मन्यु: क्रोधो यस्य, प्रादि २-बहुव्री०; अथवा अभिलक्षो-कृत्य अतियोद्धारमिति शेष: मन्यु: क्रोधो यस्य, ६-बहुव्री०; अथवा अभि अतिशयो मन्यु: शोको यस्मात्, ५-बहुव्री०। १ अर्जुनके पुत्र। कृष्णकी भगिनी सुभद्राके गर्भसे इनका जन्म हुआ था। विराटकन्या उत्तरासे

इन्होंने विवाह किया। इनके पुत्रका नाम परीक्षित् रहा। कुरुक्षेत्रयुद्धमें अभिमन्युने असाधारण वीरत्व देखाया था। अर्जुन नारायणी सेनाके साथ दूर लड़ते रहे, इधर अभिमन्यु व्यूहमें घुस पड़े। महाभारतमें लिखा है, कि उसी दिनके युद्धमें इनके हाथ दुर्योधनके भ्राता वृन्दारक, मगधराजपुत्र श्वेतकेतु, अश्वकेतु एवं कुञ्जरकेतु, कोशलके राजा बृहद्बल, दुःशासनके पुत्र उलूक प्रभृति अनेक वीर मारे गये थे। शेषमें कर्ण प्रभृति छः रथियोंने मिल अभिमन्युको वध किया। शापमुक्त हो अभिमन्यु चन्द्रलोक पहुंचे थे।

२ विष्णुपुराणमें लिखा है, कि चाक्षुष मनुके पुत्रका नाम अभिमन्यु रहा। इन्होंने नवलाके गर्भसे जन्म लिया था। ३ राधिकाके स्वामी आयानको भी पहले लोग अभिमन्यु कहते रहे।

४ कश्मीरमें दो अभिमन्यु नृपति थे। प्रथम अभिमन्यु नृपतिके समय वहां बौद्धधर्म अतिशय प्रबल रहा। किन्तु महाराज अभिमन्यु शिवलिङ्गको प्रतिष्ठित कर पूजते थे। प्रसिद्ध वैयाकरण चन्द्राचार्य इन्हींकी सभामें विद्यमान रहे। चन्द्रव्याकरण उन्होंने ही उद्धार किया था। नागार्जुन प्रभृति बौद्ध राजसभामें पहुंच सवदा ही पण्डितोंके साथ तर्क-वितर्क और नील-पुराणकी कुत्सा करते रहे। उससे नागजातिने क्रुद्ध हो अनेक बौद्धोंको मार डाला। कहते हैं, कि अन्तमें कश्यपवंशके चन्द्रदेव नामक किसी ब्राह्मणने महादेवको आराधना लगा यह सकल उपद्रव मिटाया था। इन्होंने कश्मीरमें अभिमन्युपुर नामक नगरको स्थापन किया।

५ द्वितीय अभिमन्यु ८८० शकाब्दमें प्रादुर्भूत हुए थे। यह क्षेमगुप्तके पुत्र रहे। इन्होंने बाल्यकालमें ही राज्यका भार उठा लिया था। ४८ लौकिकाब्दमें यक्ष्मारोगसे इन्होंने प्राणत्याग किया। कश्मीर देखो।

अभिमर (सं० पु०) आभिमुख्येन म्रियन्ते सैन्या यत्र, अभि-मृ अधिकरणे अप्। १ युद्ध, जङ्ग, लड़ाई। २ युद्धस्थान, रणक्षेत्र, मैदान-जङ्ग, खेत, जिस जगह लड़ाई रहे। करणे अप्। ३ भय, खौफ, डर। ४ अपने सैन्यपक्षसे विश्वासघातकी आशङ्का, अपने सिपाहीसे धोका खानेको शक। अभिम्रियते यस्मात्, अपादाने अप्। ५ मरणव्यापार, वध, क़त्ल, जानका लेना। अभिमुखीभूय म्रियते, कर्तरि अच्। ६ स्वसैन्य, सिपाही, धनलोभसे प्राणको आशा छोड़ व्याघ्र वा हस्तीके सम्मुख युद्ध करनेको उद्यत व्यक्ति, जो शख़्स दौलतके लालच जानकी उम्मीद न रख शेर या हाथीसे लड़नेको तैयार हो। ७ बन्धन, क़ैद।

अभिमर्द (सं० पु०) अभि-मृद भावे घञ्। १ अवमर्द, रगड़। २ निष्पीड़न, ज़ुल्म, दुश्मनके ज़रिया मुल्कको बरबादी। अधिकरणे घञ्। ३ युद्ध, जङ्ग, लड़ाई। ४ मद्य, शराब। (त्रि०) ५ मर्दनकर्ता, मलने या रगड़नेवाला।

अभिमर्दन (सं० क्लो०) अभि-मृद भावे ल्युट्। पीड़न, चर्वण, ज़ुल्म, किसीको सताना।

अभिमर्दिन् (सं० त्रि०) पीड़ा पहुंचानेवाला, जो तकलीफ़ देता हो।

अभिमर्श, अभिमर्ष (सं० पु०) अभि-मृश वा मृष भावे घञ्। स्पर्श, घर्षण, छूत, मिलाव।

अभिमर्शक, अभिमर्षक (सं० त्रि०) अभि-मृश वा मृष-ण्वुल्। १ स्पर्श करनेवाला, जो छू लेता हो। २ पराभवकारी, नीचा देखानेवाला।

अभिमर्शन, अभिमर्षण (सं० क्लो०) अभि-मृश वा मृष-ल्युट्। १ स्पर्श, छूत। २ घर्षण, पराभव। ३ यक्ष-पिशाचादि भूतकृत पीड़ा, जो बीमारी साये वग़ैरहसे पैदा हो।

अभिमाति (सं० त्रि०) अभिमयते, अभि-मेङ कर्तरि क्तिन् न इत्वम्। १ घातक, मारनेकी कोशिश करते हुआ, चोट देनेवाला, जो दुश्मनी रखता हो। (पु०) २ शत्रु, दुश्मन। ३ पाप, इज़ाब।

अभिमातिजित् (सं० त्रि०) शत्रुको जीतनेवाला, जो दुश्मनको हरा देता हो।

अभिमातिन् (सं० पु०) अभि-मेङ भावे क्त। १ शत्रु, दुश्मन। २ आघात, चोट।

अभिमातिषाह् (सं० त्रि०) अभिमातिं शत्रुं सहते, अभिमाति सह-ण्वि षत्वम्। शत्रुजित्, दुश्मनको जीतनेवाला।

अभिमातिषाह, अभिमातिषाह देखो।

अभिमातिहन् (सं० पु०) शत्रुसंहारकर्ता, जो शख्स दुश्मनको कत्ल करता हो।

अभिमाद (सं० पु०) मद, खीवता, नशा, खुमार।

अभिमाद्यत् (सं० त्रि०) उन्मत्त होनेवाला, जो नशा पी रहा हो।

अभिमाद्यत्क (सं० त्रि०) कुछ-कुछ उन्मत्त, जो बहुत नशेमें न हो।

अभिमान (सं० पु०) अभि-मन्-घञ्। १ ऐश्वर्य प्रभृतिके निमित्त गर्व, दर्प, अहङ्कार, फख्र, घमण्ड। २ प्रणय, स्नेह प्रभृति स्थलमें मनका दुःख हेतुक आदर-सहित क्रोध, मुहब्बत, प्यार वगैरहको जगह दिलको दुखानेवाली इज्जतसे मिली-गुस्सा। ३ प्रणय, प्रेमप्रार्थना, शादी, मुहब्बतका इजहार। ४ अवलेप, दावेदारी। ५ मिथ्याज्ञान, झूठी समझ। ६ शृङ्गार-रसकी अवस्थाविशेष, मान, नखरा। ७ हिंसा, हनन, कत्ल, मारकाट।

अभिमानता (सं० स्त्री०) दर्प, धृष्टता, गुरूर, गुस्ताखी।

अभिमानवत् (सं० त्रि०) १ मानी, नखरेबाज़। २ दर्पित, मगरूर, गुस्ताख।

अभिमानशून्य (सं० त्रि०) दर्परहित, गर्वविहीन, बेफख्र, गुरूरसे खाली, जिसे घमण्ड न रहे।

अभिमानित (सं० त्रि०) अभिमानो गर्वः सञ्जातोऽस्य, अभि-मान-इतच्। १ जातगर्व, जाताभिमान, जिसे घमण्ड आ जाये। (क्ली०) अभि-मान णिच् भावे क्त। २ मैथुन, हमबिस्तरी। ३ गर्व, गुरूर।

अभिमानिता (सं० त्रि०) दृप्त रहनेकी दशा, जिस हालतमें घमण्ड घेरे रहे।

अभिमानित्व (सं० क्ली०) अभिमानिता देखो।

अभिमानिन् (सं० त्रि०) अभि-मन्-णिनि। १ गर्वयुक्त, दृप्त, अभिमानविशिष्ट, मगरूर, गुस्ताख, घमण्डी। २ प्रणयकोपयुक्त, नखरेबाज़। ३ मिथ्याज्ञानयुक्त, झूठी समझवाला। (पु०) ४ भौत्य मनुके दश पुत्रोंमें पञ्चम पुत्र।

अभिमानी, अभिमानिन् देखो।

अभिमानुक (सं० त्रि०) अभि-मन् बाहुलकात् उकञ्। १ अभिमानविशिष्ट, मगरूर। २ वध करनेमें शक्त, जो चोट पहुंचा सकता हो।

अभिमाय (सं० त्रि०) मायां अविद्यां अभिगतम्, अतिक्रा०-तत् गौणे ह्रस्वः। इतिकर्तव्यताशून्य, अभिभूत, घबराया हुआ, जो भौचक रह गया हो, अहमक, नादान।

अभिमिह्य (सं० त्रि०) अभिमिह्यते सिच्यते। जिसके सम्मुख मलमूत्रादि त्याग किया जाये, पेशाब किया जानेवाला, जिसपर पेशाब करें।

अभिमीलित (सं० त्रि०) अवरुद्ध, बन्द, जो आंखकी तरह झपका हो।

अभिमुख (सं० त्रि०) अभिगतं मुखम्, अतिक्रा०-तत्। १ अभिमुखप्राप्त, सामने चेहरा किये हुआ। २ सम्मुख, समक्ष, घूमा हुआ, जो सामने आ गया हो। ३ कर्म करनेमें उद्यत, काममें लगा हुआ। ४ उपस्थित होनेवाला, जो नज़दीक जा या पहुंच रहा हो। ५ इच्छा रखनेवाला, जो इरादा बांधे हो। (अव्य०) मुखमभिलक्षीकृत्य, अव्ययी०। ६ अभिमुख, सम्मुख, सामने, रूबरू। ७ सम्मुख आकर, सामने पहुंचके।

अभिमुखता (सं० स्त्री०) उपस्थिति, सामीप्य, हाजिरी, नज़दीक रहनेकी हालत।

अभिमुखी (सं० स्त्री०) बौद्धमतसे—दश पृथिवीमें एक पृथिवी।

अभिमुखीकरण (सं० क्ली०) अभिमुखः क्रियते अनेन, अभिमुख-च्वि-कृ करणे ल्युट्। सम्बोधन, बुलाहट, पुकार। सम्बोधन उच्चारण करनेसे श्रोता सुनकर अभिमुख होता, इसीसे अभिमुखीकरण शब्द सम्बोधन बताता है।

अभिमुखीभाव (सं० पु०) अनभिमुखस्य अभिमुखरूपो भावः भवनम्, अभिमुख-च्वि-भू भावे घञ्। १ आभिमुख्य, सामना। २ कार्यको अनुकूलता, कामको मुवाफिकत। ३ अभिमुखका होना, सामनेका पड़ना।

अभिमुखीभूत (सं० त्रि०) सम्मुखागत, उपस्थित, सामने पड़ा हुआ, जिसका मुंह सामने रहे।

अभिमूर्च्छित (सं० त्रि०) विक्षिप्त, मोहित, व्यग्र, विधुर, आकुल, मूढ़, विह्वल, संक्षुब्ध, भ्रान्त, उन्मत्त, बेहोश, फ़रेफ़्ता, थकामांदा, मतवाला।

अभिमृष्ट (सं० त्रि०) अभि-मृष्-क्त। १ स्पृष्ट, जो स्पर्श किया गया हो, छूया हुआ। २ पराभूत, पराजित, धर्षित, शिकस्त खाये हुआ, जो हार चुका हो। ३ मिलित, संसृष्ट, मिला हुआ, जो निकाला गया हो। (त्रि०) ४ मार्जनायुक्त, शुद्ध, दला-मला, पाकीज़ा।

अभिमेथक (सं० पु०) अभि-मिथ्-ण्वुल्। सर्वप्राप्तिसाधन वाक्यविशेष, जिस वाक्यके कहनेसे सकल ही मिल जाये, सारा मतलब पूरा करनेवाली बात।

अभिमेथिका (सं० स्त्री०) १ वाण-सदृश वाक्य, तीर जैसी बात। २ अश्लील वचन, फोहश गुफ़्तगू। ३ शाप, बद्दुवा।

अभिमेघ्य, अभिमिध्य देखो।

अभिम्लात, अभिम्लान देखो।

अभिम्लान (सं० त्रि०) अभितो म्लानम्, अभि-म्लै-क्त। १ अतिमलिन, अप्रसन्न, निहायत अफ़सुर्दा, नाखुश, कुम्हिलाया हुआ। २ विशीर्ण, सड़ा-गला।

अभियज्ञगाथा (सं० स्त्री०) यज्ञ-सम्बन्धीय भजन।

अभिया (सं० पु०-स्त्री०) आक्रमण, हमला, धावा, चढ़ाई।

अभियाचन (सं० क्ली०) अभि-याच-ल्युट्। अभिमुख प्रार्थना, जो प्रार्थना सम्मुख होकर की जाती हो, आर्ज़ू-मिन्नत, सामनेकी मांग यांच।

अभियाचित (सं० त्रि०) सम्मुख प्रार्थना किया गया, सामने मांगा हुआ।

अभियात् (सं० त्रि०) अग्रगामी, आक्रमणकारी, हमलावर, जो धावा मार रहा हो।

अभियात (सं० त्रि०) आक्रमण किया गया, जिसपर हमला पड़ चुके।

अभियाति (सं० पु०) आभिमुख्येन यातिः युद्धार्थं गतिः, अभि या बाहुलकात् क्ति। रिपु, शत्रु, दुश्मन। (स्त्री०) भावे क्तिन्। २ युद्धार्थ गमन, लड़ाईकी चढ़ाई।

अभियातिन् (सं० पु०) अभियातमनेन; अभि-या भावे क्त, तत इष्टादि० इन्। शत्रु, दुश्मन।

अभियातृ (सं० पु०) अभिमुखं युद्धार्थं याति, अभि-या-तृच्। १ शत्रु, दुश्मन। (त्रि०) २ अभिमुख-गमनकारी, सामने धावा लगानेवाला।

अभियान (सं० क्ली०) अभि-या-ल्युट्। युद्धयात्रा, अभिगमन, मुहीम, हमला, चढ़ाई।

अभियायिन् (सं० त्रि०) आभिमुख्येन याति, अभि-या-णिनि। अभिमुख-गमनकारी, सामने जानेवाला, जो हमला मारता हो, पास पहुंचते हुआ।

अभियुक्त (सं० त्रि०) अभि-युज्यते स्म, अभि युज्-क्त। १ अन्य कर्त्तृक रुद्ध, तत्पर, आसक्त, लगाया हुआ, मुस्तैद, खयालमें डूबा हुआ। २ प्रतिष्ठित, मुक़र्रर किया हुआ। ३ कथित, उक्त, कहा हुआ, जिसके बारेमें बात हो चुके। ४ आक्रमण किया हुआ, जिसपर दुश्मनका हमला पड़ चुके। ५ निन्दित, बदनाम। ६ क़ानूनमें—प्रतिवादी, मुद्दालह, जिसपर नालिश हो चुके।

अभियुग्वन्, अभियुज्वन् (वै० त्रि०) अभि-युज्-ङ्वनिप्, वेदे पृ० कुत्वम्। १ अभियोक्ता, अभियोगकारी, अभियोग लगानेवाला, हमलावर, मुद्दई। (पु०) २ आघात, आक्रमण, चोट, हमला। ३ शत्रु, दुश्मन। (स्त्री०) ङीप्। अभियुज्वरी।

अभियुज् (सं० त्रि०) अभिमुखं युनक्ति, अभि-युज्-क्विप्। अभियोक्ता, अभियोगकारी, मुद्दई, नालिश करनेवाला। (स्त्री०) २ आक्रमण, हमला। ३ शत्रु, दुश्मन।

अभियुज्यमान (सं० त्रि०) अभियोग लगाया जाते हुआ, जिसपर नालिश की जा रही हो।

अभियोक्तव्य (सं० त्रि०) अभियोक्तुं शक्यम्, अभि-युज्-तव्य। १ अभियोग लगाने योग्य, जिसपर इलज़ाम लगाया जा सके। २ अभिमुख योजनीय, सामने धावा मारने क़ाबिल। ३ निषेध्य, रोकने क़ाबिल।

अभियोक्ता, अभियोक्तृ देखो।

अभियोक्तृ (सं० पु०) अभिमुखं युनक्ति, अभि-युज्-तृच्। १ अभियोगकर्ता, वादी, नालिश करनेवाला,

मुद्दई। २ युद्धार्थ आक्रमणकर्ता, लड़ाईकी चढ़ाई करनेवाला।

अभियोग (सं० पु०) अभितो राजसमीपे योगः योजनम्, अभि-युज्-घञ्। १ अन्य कर्तृक अपकार निवारण वा क्षतिपूरण करनेको राजाके निकट प्रार्थना, दूसरेका किया हुआ नुकसान् मिटानेको हाकिमसे अर्ज। २ युद्धार्थ आक्रमण, लड़ाईकी चढ़ाई। ३ शपथ, क़सम। ४ उद्योग, तदबीर। ५ आग्रह, ज़िद। ६ अभिनिवेश, खटका। ६ दोषारोप, ऐबजोयी। ७ नियुक्ति, लगाव।

अभियोगपत्र (सं० स्त्री०) अर्ज़ीदावा, जिस काग़ज़ पर लिखकर नालिश की जाये।

अभियोगिन् (सं० त्रि०) अभितो राजादि समीपे युनक्ति स्वदुःखमावेदयति अभि-युज् बाहुलकात् घिणुन्। १ अभियोगकर्ता, वादी, नालिश करनेवाला, मुद्दयी। २ आक्रमणकर्ता, हमलावर। ३ आग्रहयुक्त, ज़िद्दी। ४ अभिनिविष्ट, मनोयोगी, दिल लगानेवाला। ५ योजनकर्ता, जो मिला देता हो।

अभियोगी, अभियोगिन् देखो।

अभियोग्य (सं० त्रि०) आक्रमण किये जाने योग्य, जो धावा लगाये जाने क़ाबिल हो।

अभियोजन (सं० क्ली०) अभि पुनःपुनर्योजनम्। योजित पदार्थकी दृढ़ताके लिये पुनर्बार योजन, जुड़ी हुई चीज़की मज़बूतीके लिये दोबारा जोड़ाई।

अभियोज्य, अभियोक्तव्य देखो।

अभिरक्षण (सं० स्त्री०) अभितो रक्षणम्। सकल दिक् रक्षा, पञ्चादि द्वारा सकल दिक् सरसों आदि फेंक राक्षसादिसे वैध कर्मकी रक्षा, दुनियावी हिफ़ाज़त। पूर्वकाल यज्ञादि कार्य उपस्थित होनेपर राक्षसादि आकर घृत प्रभृति यज्ञीय द्रव्य खा जाते और यज्ञ बिगाड़ देते थे। उसके लिये ऋषि मन्त्रपाठपूर्वक सफ़ेद सरसों आदि फेंक उन्हें निवारण करते रहे। आजकल भी चुड़ैल और भूत झाड़ते समय लोग सफ़ेद सरसों फेंकते हैं।

अभिरक्षा (सं० स्त्री०) अभि-रक्ष्-अ टाप्। मन्त्रादि द्वारा यज्ञ प्रभृतिकी रक्षा।

अभिरक्षित (सं० त्रि०) अभितो रक्षितम्, प्रादि-स०। सकल दिक् रक्षित, चारो ओर महफ़ूज़।

अभिरक्षितृ (सं० त्रि०) अभितो रक्षितम्, अभि-रक्ष्-तृच्। सकल दिक् रक्षाकर्ता, सर्वप्रकार रक्षाकर्ता, चारो ओर हिफ़ाज़त रखनेवाला, जो सब तरह हिफ़ाज़त रखता हो।

अभिरक्ष्य (सं० त्रि०) रक्षा वा शासन किया जानेवाला, जो हिफ़ाज़त रखे या हुकूमत किये जाने क़ाबिल हो।

अभिरञ्जित (सं० त्रि०) रागरङ्गयुक्त, अरुणित, रक्त, लोहित, अनुराजित, रंगा हुआ, सुर्ख़, जिसपर मुहब्बतका जोश चढ़ चुके।

अभिरत (सं० त्रि०) आभिमुख्येन अतिशयं रतम्, अभि-रम्-क्त। १ आरक्त, फ़रेफ़ता। २ प्रीतियुक्त, आसूदा, खुश। ३ नियुक्त, मसरूफ़, लगा हुआ। ४ ध्यान देनेवाला, जो ख़याल लड़ाता हो।

अभिरति (सं० स्त्री०) अभितो रतिः, प्रादि-स०, अभि-रम्-क्तिन्। १ अतिशय आसक्ति, हदसे ज़्यादा फंसाव। २ प्रसन्नता, खुशी।

अभिरत्य (सं० अव्य०) अभिरम्य देखो।

अभिरना (हिं० क्रि०) १ सामना करना, गुस्सामें लपटना, लड़ना-भिड़ना।

अभिरमण (सं० क्ली०) अनुराग, इश्क़, खुशी।

अभिरमणीय (सं० त्रि०) अभिरम्य देखो।

अभिरम्य (सं० त्रि०) अभिरम्यते, अभि-रम् कर्मणि यत्। १ रमणीय, मनोरम, मज़ेदार, दिलको खुश करनेवाला। (अव्य०) २ रमण वा क्रीड़ा करके, मज़ा उड़ा या खेलकर।

अभिराज् (सं० त्रि०) सर्वत्र राज्य करते हुआ, जो सब जगह हुकूमत चला रहा हो।

अभिराद्ध (सं० त्रि०) अभितो राद्धम्, अभि-राध्-क्त। १ सर्वथा सिद्ध, सकल प्रकार निष्पन्न, हर सूरतसे साबित, सबतरह तैयार। २ सेवित, ताबेदारी किया गया।

अभिराम (सं० त्रि०) अभिरम्यते अनेन अस्मिन् वा, अभि-रम् करणे अधिकरणे वा घञ्। सुन्दर, प्रिय,

मनोज्ञ, खुश करनेवाला, गवारा, खूबसूरत। (अव्य०) २ रामके प्रति, रामको।

अभिरामता (सं० स्त्री०) अभिरामत्व, सौन्दर्य, प्रियता, मनोज्ञता, सुथरापन, खूबसूरती, चमक-दमक।

अभिरामी (सं० त्रि०) अभिरमणकर्ता, मज़ा उड़ानेवाला।

अभिराष्ट्र (सं० त्रि०) राज्य पानेवाला, जिसे बादशाही मिल जाये।

अभिरुचि, अभिरुची (सं० स्त्री०) अभि-रुच्-इन्। १ अतिशय रुचि, अतिशय दीप्ति, हदसे ज्यादा रौनक, हदसे ज्यादा हौसिला। २ इच्छा, हर्ष, स्वाद, ख़ाहिश, खुशी, मज़ा।

अभिरुचित (सं० त्रि०) हर्षित, प्रसन्न, खुश, बश्शास।

अभिरुचिर (सं० त्रि०) अतिशय मनोरम, सुन्दर, निहायत खुशगवार, खूबसूरत।

अभिरुत (सं० त्रि०) १ मुखरित, जिससे आवाज़ निकल चुके। २ कूजित, सुस्वर, मधुर, कूका हुआ, सुरीला, मीठा।

अभिरुता (सं० स्त्री०) १ सङ्गीतकी कोई मूर्च्छना। २ कूक, सुरीलापन।

अभिरूप (सं० त्रि०) अभिरूपयति सर्वं रूपविशिष्टं करोति, अभि चुरा० रूप-णिच्-अच्। १ मनोहर, प्रिय, दिलकश, प्यारा। २ पण्डित, दाना। "अभिरूपभूयिष्ठा परिषत्।" (शकु०) ३ सदृश, मिलते हुआ। ४ उचित, वाजिब। ५ यथेष्ट, काफ़ी। (पु०) ६ कन्दर्प, कामदेव। ७ चन्द्र, चांद। ८ विष्णु। ९ शिव।

प्राज्ञरूपस्वरूपाभिरूपा बुधमनीषयोः। (अमर)

अभिरूपक (सं० त्रि०) अभिरूप देखो।

अभिरूपपति (सं० पु०) सुन्दर स्वामी, अच्छासा ख़ाविन्द।

अभिरोग (सं० पु०) जिह्वामें कृमि पड़नेकी पीड़ा, जिस बीमारीसे जीभमें कीड़ा पड़ जाये। यह रोग पशुको अधिक लगता है।

अभिरोध (सं० पु०) अभि-रुध-घञ्। पीड़न, बीमारी, तकलीफ़।

अभिरोरुद (वै० त्रि०) रुलानेवाला, जिसे देख कर आंसू टपकते रहें।

अभिलकपित्थ (सं० पु०) आम्रातक वृक्ष, अमड़ेका पेड़।

अभिलक्षित (सं० त्रि०) चिह्नित, निशानदार।

अभिलक्ष्य (सं० त्रि०) अभिलक्ष्यते शरादि वेधार्थं अतिशयेन दृश्यते; अभि चुरा० लक्ष्-णिच्-यत्, णिच् लोपः। १ शरव्य, तीरसे मारा जानेवाला। २ चिह्न-योग्य, निशाना जमाने काबिल। (अव्य०) लक्ष्यस्य शरव्यस्य आभिमुख्यम्‌ अव्ययी०। ३ शरव्यके समीप, लक्ष्यके सम्मुख, निशानेके पास, शिकारके सामने। ४ लक्ष्य लगाकर, शिस्त जमाके।

अभिलङ्घन (सं० क्ली०) अभि लघि भावे ल्युट्। उल्लङ्घन, कूद फांद।

अभिलषण (सं० क्ली०) उत्कण्ठा, स्पृहा, लालच, ख़ाहिश।

अभिलषणीय (सं० त्रि०) अभि-लष् कर्मणि अनीयर्। वाञ्छनीय, चाहने काबिल।

अभिलषिकरोग (सं० पु०) वातव्याधिविशेष, वातकी कोई बीमारी।

अभिलषित (सं० त्रि०) अभिलष्यते स्म, अभि-लष् कर्मणि क्त। १ इष्ट, वाञ्छित, मकबूल, चाहा हुआ। (क्ली०) भावे क्त। २ अभिलाष, इच्छा, ख़ाहिश, मर्ज़ी।

अभिलषितव्य (सं० त्रि०) अभि-लष-तव्य। अभिलषणीय, काम्य, चाहने काबिल।

अभिलाख (हिं०) अभिलाष देखो।

अभिलाखना (हिं० क्रि०) उत्कण्ठित होना, ख़ाहिश करना।

अभिलाखा (हिं० स्त्री०) अभिलाष देखो।

अभिलाखी (हिं०) अभिलाषिन् देखो।

अभिलाप (सं० पु०) अभिलप्यते मानसं कर्म अनेन। अभि-लप् करणे घञ्। १ सङ्कल्पवाक्य। भावे घञ्। २ कथन, बातचीत।

अभिलाव (सं० पु०) अभिलूयते, अभि-लू भावे घञ्। छेदन, चीरफाड़।

अभिलाष (सं० पु०) अभि-लष-घञ्। १ इच्छा, ख़ाहिश। २ लोभ, लालच। ३ अनुराग, मुहब्बत।

अभिलाषक (सं० त्रि०) अभि-लष-ण्वुल्। अभिलाष-कारी, ख़ाहिशमन्द। (स्त्री०) अभिलाषिका।

अभिलाषा (सं० स्त्री०) अभिलाष देखो।

अभिलाषिन् (सं० त्रि०) अभिलषति, अभि-लष-णिनि। अभिलाषशील, अभिलाषकारी, ख्वाहिशमन्द, लालची। (स्त्री०) ङीप्। अभिलाषिणी।

अभिलाषुक (सं० त्रि०) अभिलषितुं शीलमस्य अभिलषति वा, अभि-लष बाहुलकात् उकञ्। अभिलाषयुक्त, ख्वाहिशमन्द।

अभिलास, अभिलाष देखो।

अभिलासा, अभिलाष देखो।

अभिलिखित (सं० त्रि०) पत्रारूढ़, न्यस्ताक्षर, लेख्यारोपित, हर्फ़में खोदा हुआ, जो तहरीरमें ढला हो।

अभिलीन (सं० त्रि०) १ संलग्न, चिपक जानेवाला। २ हृदयसे लगाया हुआ, जिसे छातीसे लिपटा चुकें। ३ हृदयसे लगाते हुआ, जो छातीसे लिपटा रहा हो।

अभिलुप्त (सं० त्रि०) उद्विग्न, ताड़ित, घबराया हुआ, जिसके चोट लग चुके।

अभिलुलित (सं० त्रि० १ क्रीड़ाशील, चञ्चल, खेलाड़ी, चुलबुला। २ उत्तेजित, उद्विग्न, आहत, जोश खाये हुआ, जो घबरा गया हो।

अभिलूता (सं० स्त्री०) कीटविशेष, किसी किस्मकी मकड़ी।

अभिलेखन (सं० क्ली०) न्यस्ताक्षरता, पाषाण या शिलालेख, हर्फ़की खोदाई, जो तहरीर पत्थर वग़ैरह पर का जाती हो।

अभिवचन (सं० क्ली०) सत्यवचन, प्रतिज्ञा, क़ौल, इक़रार।

अभिवञ्चित (सं० त्रि०) प्रतारित, अभिसन्धानित, धोका खाये हुआ, जो ठगा गया हो।

अभिवत् (सं० त्रि०) अभि शब्दसंयुक्त, जिसमें अभि लफ़्ज़ शामिल रहे।

अभिवदन (सं० क्ली०) अभि अनुकूलं वदनं कथनम्, प्रादि-तत्। १ अनुकूल वाक्य, मुवाफ़िक़ बातचीत। (त्रि०) अभि अनुकूलं वदनं वाक्यं मुखं वा यस्य, प्रादि-बहुव्री०। २ अनुकूलवादी, प्रसन्नमुख, मुवाफ़िक़ बात करनेवाला, खुशदिल। (अव्य०) वदनस्य मुखस्याभिमुखम्,अव्ययी०। ३ मुखके सामने, चेहरेके पास।

अभिवन्दन (सं० क्ली०) अभितः सर्वतः आभिमुख्येन वा वन्दनम्, प्रादितत्। सकल दिक्प्रणति, सम्मुखप्रणाम, साहब-सलामत।

अभिवयस् (सं० त्रि०) अभिमतं वयः, प्रादि-तत्। १ अभिमत वयस, ठीक उमरवाला। विवाहादिके समय वयस अधिक वा न्यून न होनेसे वर अभिमतवयस कहा जा सकता है। अभिमतं सम्मतं वयो यस्य, प्रादि-बहुव्री०। २ प्रकृष्ट वयस्क, नौ जवान्।

अभिवर्तिन् (सं० त्रि०) अभितः अभिमुखेन वा वर्तते, अभि-व्रत-णिनि। सम्मुखवर्ती, सम्मुखस्थायी, सामने जानेवाला, जो पास पहुंच रहा हो, हमलावर।

अभिवर्षण (सं० क्ली०) अभितो वर्षणम्, प्रादि-तत्। १ सकल दिक् वर्षण, भीषण वृष्टि, गहरी बारिश। २ सिंचायी, पानीका दिया जाना।

अभिवर्षिन् (सं० त्रि०) अभितो वर्षति, अभि-वृष-णिनि। सकल दिक् वर्षणकारी, सब तर्फ़ बरसनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। अभिवर्षिणी।

अभिवह (सं० त्रि०) निकट या सम्मुख ले जानेवाला, जो हांकते जा रहा हो।

अभिवहन (सं० क्ली०) निकट वा सम्मुखका पहुंचाना, नज़दीक या सामनेका ले जाना।

अभिवाञ्छित (सं० त्रि०) इच्छा किया हुआ, जो चाहा गया हो।

अभिवात् (सं० त्रि०) आभिमुख्येन वाति गच्छति, अभि वा-शतृ। भृत्य, दास, नौकर, गुलाम।

अभिवात (सं० अव्य०) वायुकी ओर, हवाकी तर्फ़, जिस रुख़को हवा चले।

अभिवाद (सं० पु०) अभितो वादः आशीर्वादरूपं वाक्यम् येन, प्रादि-बहुव्री०। अभि वद करणे घञ्। १ सम्मुख प्रणाम, साहब सलामत। अभिधर्षको वादः वाक्यम्, प्रादि-तत्। २ परुष वाक्य, कठिन वचन, कड़ी बात, गालीगलौज। 'पारुष्यमभिवादः स्यात्।' (अमर)

अभिवादक (सं० त्रि०) अभितो वदति, अभि-चुरा० वद-ण्वुल्। १ सम्मुख प्रणतिकारी, वन्दारु, वन्दगी करनेवाला। 'वन्दारुरभिवादकः।' (अमर)

अभिवादन (सं० क्ली०) अभि पूजार्थं वादनं त्वामह-

माभवादय इत्यादिरूप कथनम्, प्रादि-तत्; अभि-चुरा० वद-णिच्-ल्युट्। १ पूजार्थ वाक्य, गौरवार्थ वाक्य, जो बात किसीको इज्ज़त बढ़ानेके लिये कही गयी हो। यद्वा अभिः सौम्ये सौम्य' आशीर्वादरूपं वाच्यते प्रत्यभिवादयित्रा कथ्यते येन। २ नामग्रहण-पूर्वक प्रणाम, नाम लेकर बन्दगीका बजाना। जिसके हाथमें समिध्, जल, जलका कलस, फूल, अन्न, कुश, अग्नि, दतून और भक्ष्यवस्तु रहे, उसे अभिवादन न देना चाहिये। किंवा जो जप वा यज्ञ करता या जलमें खड़ा हो, उसे भी अभिवादन करनेका निषेध है। वयःकनिष्ठ श्वशुर, पितृव्य, मातुल एवं पुरोहित को खड़े ही खड़े अभिवादन दिया जाता अर्थात् पैर न छूना चाहिये।

अभिवादयिता (सं० पु०) अभिवादयितृ देखो।

अभिवादयितृ (सं० त्रि०) सगौरव प्रणतिकारी, अदबके साथ सलाम करनेवाला।

अभिवादयित्री (सं० स्त्री०) अभिवादयितृ देखो।

अभिवादित (सं० त्रि०) सगौरव प्रणाम किया हुआ, जिसको अदबके साथ बन्दगी हो चुके।

अभिवाद्य (सं० त्रि०) अभिवादयितुमर्हम्, अभि-चुरा० वद-णिच्-यत्। १ अभिवादनके योग्य, जिसे प्रणाम करना कर्तव्य ठहरे, अदबसे बन्दगी बजाने क़ाबिल। पिता, गुरु, सवर्ण वयोज्येष्ठ, राजा, पुरोहित, श्रोत्रिय, अधर्मनिवारक, अध्यापक, पितृव्य, मातामह, मातुल, श्वसुर, ज्येष्ठभ्राता, सम्बन्धिव्यक्ति, इनकी स्त्री सकल वयोज्येष्ठा, मौसी, पितृष्वसा, ज्येष्ठा भगिनी आदि अभिवाद्य हैं। युवती गुरुपत्नीके पैर न छूना चाहिये। किसी-किसीके मतमें गुरुके पैर छूकर प्रणाम करना निषिद्ध है। (अव्य०) ल्यप्। प्रणाम करके, आदाब बजाकर।

अभिवान्य (सं० त्रि०) अभि-वन सम्भक्तौ कर्मणि ण्यत्। संभजनीय, सम्यक् भजनाके योग्य।

अभिवान्यवत्सा, अभिवान्या देखो।

अभिवान्या (सं० त्रि०) दूसरेके बच्चेको दूध पिलानेवाली गाय, जो गाय दूसरी गायके बच्चेको अपना समझकर दूध पिलाती हो।

अभिवास (सं० पु०) आच्छादन, आवरण, पाशय, ओढ़ना, चादर, गिलाफ़।

अभिवासन (सं० क्ली०) अभिवास देखो।

अभिवासस् (सं० अव्य०) वासस् उपरि, अव्ययी०। परिहित वस्त्रके उपरिभाग, कपड़े पर।

अभिवाह्य (सं० त्रि०) अभ्युह्यते, अभि-वह कर्मणि ण्यत्। १ सकल दिक् वा सकल प्रकार वहनीय, नज़दीक पहुंचाया जानेवाला। (क्ली०) भावे ण्यत्। २ नयन, प्रापण, इन्तिक़ाल, तकवील, ले जाना। ३ समर्पण, नज़र।

अभिविख्यात (सं० त्रि०) लोकप्रसिद्ध, ख़ूब मशहूर, जिसे सब लोग जानें।

अभिविज्ञप्त (सं० त्रि०) विघोषित, सूचित, मुश्तहर, जो लोगोंको बता दिया गया हो।

अभिविधि (सं० पु०) अभि समन्तात् विधि व्यापनम्, अभि-वि धा-कि। व्याप्ति, इन्दिराज, समायी।

अभिविनीत (सं० त्रि०) १ भली भांति बरताव करनेवाला, जो अच्छीतरह पेश आता हो। २ सुशील, मुअद्दब। ३ साधु, पाकीज़ा।

अभिविमान (सं० पु०) अभितः विशेषेण मानं द्वादशाङ्गुलरूपपरिमाणं यस्य, प्रादि बहुव्री०। १ परमात्मा, परमेश्वर। (त्रि०) २ अपरिमित परिमाण-वाला, जिसकी जसामत बेहद रहे।

अभिविशङ्किन् (सं० त्रि०) भयभीत, डरनेवाला।

अभिविश्रुत (सं० त्रि०) सुप्रसिद्ध, ख़ूब मशहूर।

अभिवीक्षित (सं० त्रि०) संदृष्ट, देखा हुआ, जो मालूम पड़ गया हो।

अभिवीक्ष्य (सं० अव्य०) देख या समझकर।

अभिवीर (सं० पु०) पुरुषों वा वीरोंसे आवेष्टित व्यक्ति, जिस शख़्सको आदमी या बहादुर घेरे रहें।

अभिवृत (सं० त्रि०) व्यावृत, उद्धृत, चुना हुआ, जो छांट कर निकाला गया हो।

अभिवृत्त (सं० त्रि०) १ गया हुआ, जो रवाना हो चुका हो। २ घूम जानेवाला, जो रुख़ बदल रहा हो।

अभिवृत्ति (सं० स्त्री०) अभि-वृत्-क्तिन्। सर्वथा गमन, दौड़ धूप।

अभिवृद्ध (सं० त्रि०) विस्तारित, समृद्ध, बढ़ा हुआ, जो फैल गया हो।

अभिवृद्धि (सं० स्त्री०) समृद्धि, संयोग, सफलता, बढ़ती, मेल, कामयाबी।

अभिवृष्ट (सं० त्रि०) १ सिञ्चित, सींचा हुआ, जिसमें पानी दे चुकें। २ बरसा हुआ, जा बरस चुका हो।

अभिवेग (सं० पु०) विचार, अभीष्ट, ख़याल, इरादा।

अभिव्यक्त (सं० त्रि०) अभि-वि-अञ्ज कर्मणि क्त। १ फलोन्मुखीकृत, ज़ाहिर, साफ़। "तत दैवमभिव्यक्तं पौरुषं पौर्वदैहिकम्।" (याज्ञवल्क्य) २ अभिव्यक्तियुक्त, प्रकाशित, ज़ाहिर किया हुआ, जो बताया गया हो। ३ सांख्यादि मतसिद्ध आविर्भावयुक्त। (अव्य०) ४ प्रकाश्यभावसे, साफ़-साफ़।

अभिव्यक्ति (सं० स्त्री०) अभि-वि-अञ्ज-क्तिन्। १ प्रकाश, ज़ुहूर। २ घोषणा, ढिंढोरा। ३ सांख्यादि मतसिद्ध सूक्ष्मरूपस्थित कारणका कार्यरूप आविर्भाव। ४ एकरूप स्थित पदार्थका अन्यरूप प्रकाश।

अभिव्यङ्ग्य (सं० त्रि०) प्रकाशित किया जानेवाला, जो साफ़-साफ़ बताने क़ाबिल हो।

अभिव्यज्यमान (सं० त्रि०) प्रकाशित किया जाते हुआ, जो साफ़-साफ़ बताया जा रहा हो।

अभिव्यञ्जक (सं० त्रि०) अभिव्यञ्जयति प्रकाशयति, अभि-वि-अञ्ज-णिच्-ण्वुल्। १ प्रकाशक, ज़ाहिर करनेवाला। २ निर्देशक, जो बताता हो। ३ अलङ्कारमतसे व्यञ्जनावृत्ति द्वारा प्रकाशक।

अभिव्यञ्जन (सं० क्लो०) प्रकाशन, ज़ाहिर करनेकी हालत।

अभिव्यादान (सं० क्लो०) १ नियन्त्रित शब्द, दबी हुयी आवाज़। २ अभिन्न शब्दकी पुनरावृत्ति, उसी आवाज़का दोहराव।

अभिव्याधिन् (सं० त्रि०) आघातकारी, अतिकष्टदायक, मार डालनेवाला, जो गहरी चोट लगाता हो।

अभिव्यापक (सं० त्रि०) अभितो व्याप्नोति, अभि-वि-आप-ण्वुल्। सकल दिक् व्यापक, जो सकल अवयवमें व्याप्त हो, सब ओर भरा हुआ, जो सब अज़ामें समा रहा हो। ३ व्याकरणमतसे—सकल अवयव व्याप्त आधार अभिव्यापक होता है। "औपश्लेषिको वैषयिकोऽभिव्यापकश्चेत्याधारस्त्रिधा।" (सिद्धान्तकौमुदी)

अभिव्याप्त (सं० त्रि०) सम्मिलित, शामिल, मिला हुआ।

अभिव्याप्ति (सं० स्त्री०) अभि-वि-आप् भावे क्तिन्। सकल दिक् व्यापन, सर्वत्र अवस्थान, सकल अवयव व्याप्ति, सब तर्फ़ समायी, सब जगह रहायिश, सब अज़ाको पैठ।

अभिव्याप्य (सं० त्रि०) अभिव्याप्यते, अभि-वि-आप् कर्मणि ण्यत्। १ सकल अवयव व्यापनीय, सब अज़ामें समा जानेवाला। (अव्य०) ल्यप्। २ सकल अवयवमें व्याप्त होकर, सब अज़ामें समाके।

अभिव्याहरण (सं० क्लो०) अभिव्याहार देखो।

अभिव्याहार (सं० पु०) अभि सीमत: व्याहार उक्ति:, अभि-वि-आ-हृ-घञ्। १ प्रशस्त उक्ति, भली बात। २ उच्चारण, तलफ़्फ़ुज़।

अभिव्याहारिन् (सं० त्रि०) उच्चारण करनेवाला, जो कह रहा हो।

अभिव्याहृत (सं० त्रि०) उच्चारित, कहा हुआ, जो मुंहसे निकल गया हो।

अभिव्रज (वै० पु०) आक्रमण, हमला, चढ़ाई।

अभिशंसक (सं० त्रि०) १ अभियोग लगानेवाला, जो इलज़ाम लगाता हो। २ अपमान करनेवाला, जो इज़्ज़त उतारता हो। ३ अपशब्द कहनेवाला, जो गाली देता हो।

अभिशंसन (सं० क्लो०) अभित: शंसनं क्रोधवचनं आरोप्यापवादो वा, अभि-शन्स-ल्युट्। १ अपवाद, इलज़ाम। २ परुष वाक्यप्रयोग, कड़ी बातका कहना। ३ आक्रोश, बद्दुवा।

अभिशंसिन्, अभिशंसक देखो।

अभिशङ्क (सं० त्रि०) अभित: शङ्का यस्य,प्रादि-बहुव्री०। सर्वथा शङ्कायुक्त, जिसे सब तरह शक बना रहे।

अभिशङ्का (सं० स्त्री०) अभित: शङ्का; प्रादि-तत्, अभि-शङ्क-भावे अ-टाप्। १ सर्वथा शङ्का, सकल प्रकार आशङ्का, संशय, भ्रम, शक।

अभिशङ्कित (सं० त्रि०) शङ्कायुक्त, भयभीत, शक करनेवाला, खौफ़ज़दह, जिसे डर लग चुके।

अभिशपन (सं० क्ली०) अभिशाप देखो।

अभिशप्त (सं० त्रि०) अभिशप्यते स्म, अभि-शप कर्मणि क्त। १ अभिशापग्रस्त, शापित, जिसे बद्दुवा दी जा चुके। २ अभियोग लगाया हुआ, जिसपर इलज़ाम लग चुके। ३ निन्दित, बदनाम।

अभिशब्दित (सं० त्रि०) आभिमुख्येन शब्दितम्। सम्मुख आहूत, सम्मुख कथित, सामने सुनाया हुआ, जो मुंहपर कहा गया हो।

अभिशस् (सं० त्रि०) अभि-शन्स-क्विप्। १ सर्वथा आक्रोशकारी, सबतरह बद्दुवा देनेवाला। २ सर्वथा अपवादकारी, सब तरह इलज़ाम लगानेवाला। (वै० स्त्री०) ३ अभियोग, इलज़ाम।

अभिशस्त (सं० त्रि०) अभिशस्यते स्म, अभि-शन्स-क्त। १ मिथ्यापवादित, झूठ मूठ बदनाम। अभि-वधे क्त। २ हिंसित, आक्रान्त, मारा हुआ, जो चोट खा चुका हो। (क्ली०) शन्स शस् वा भावे क्त। ३ आक्रोश, अभिशाप, अपवाद, हिंसन, बद्दुवा, बद-नामी, मारपीट।

अभिशस्तक (सं० त्रि०) १ मिथ्यापवादित, झूठ-मूठ बदनाम। २ शापित, जिसको बद्दुवा दी गयी हो। ३ अभिशापसे उत्पन्न, जो बद्दुवासे पैदा हुआ हो। (स्त्री०) अभिशस्तिका।

अभिशस्ता, अभिशस्तृ देखो।

अभिशस्ति (सं० स्त्री०) अभि-शन्स-क्तिन्। १ अभि-शाप, बद्दुवा। २ अपवाद, बदनामी। ३ हिंसा, क़त्ल। आभिमुख्येन शस्तिर्याचनम्। ४ प्रार्थना, अर्ज़।

'अभिशस्तिः पुनर्लोकापवादे प्रार्थनेऽपि च।' (हेम)

अभिशस्तिचातन (वै० पु०) अभिशाप निवारण, बद-दुवाका दूर रखना।

अभिशस्तिपा (वै० पु०) अपवाद वा अभिशापसे बचानेवाला व्यक्ति, जो शख़्स बदनामी या बद्दुवासे बचाता हो।

अभिशस्तृ (सं० पु०) शत्रु, हानिकर्ता, दुश्मन, नुक़सान् पहुंचनेवाला।

अभिशस्त्र (सं० त्रि०) अभिशस्तिं अभिशापं अर्हति यत्। अभिशापार्ह, हिंसाके योग्य, बद्दुवा देने क़ाबिल, जो मारा जाने लायक़ हो।

अभिशान्त्व (सं० क्ली०) अनुग्रह, कृपा, मेहरबानी, नेवाज़िश।

अभिशाप (सं० पु०) अभि-शप-घञ् वा दीर्घः। १ अभिसम्पात, आक्रोशवाक्य, बद्दुवा, कोसनेको बात। २ मिथ्यापवाद, झूठो बदनामी।

अभिशापज्वर (सं० पु०) अभिशापके कारण आया हुआ ज्वर, जो बुख़ार बद्दुवाके सबब चढ़ आता हो।

अभिशापित (सं० त्रि०) अभिशाप दिया हुआ, जिसको बद्दुवा दी गयी हो।

अभिशिरोग्र (सं० त्रि०) शिरसोऽभिमुखं अग्रमस्य, बहुव्री०। ऊर्ध्वदिक् मूल एवं निम्नदिक् शाखावाला, जिसको जड़ ऊपर और डाल नोचे जाये।

अभिशीत (सं० त्रि०) बहुत ठण्डा, निहायत सर्द।

अभिशीन (सं० त्रि०) घनीभूत, जो गाढ़ा हो गया हो।

अभिशोक (सं० पु०) अभिलक्षीकृत्य कमपि शोकः, प्रादि-तत्। १ किसीको लक्ष्यकर शोक करनेवाला व्यक्ति, जो शख़्स किसीको देख अफ़सोस करता हो। (क्ली०) शुच-लुट्। २ अभिशोचन, पछतावा।

अभिशोच (सं० त्रि०) चमत्कृत, प्रदीप्त, चमकीला, जो गर्मीसे चमक रहा हो।

अभिशोचयिष्णु, अभिशोच देखो।

अभिशौरि (सं० अव्य०) शौरिको ओर, कृष्णको तर्फ़।

अभिश्यान, अभिशीन देखो।

अभिश्रव (वै० पु०) अभि-श्रु-अप् वेदे घञ्। सर्वथा श्रवण, सकल दिक् श्रवण, सबतरह सुनायी, चारो ओरका सुनना।

अभिश्रवण (वै० क्ली०) वेदके मन्त्रविशेषका पुनः पुनः उच्चारण, श्राद्ध करनेको बैठना।

अभिश्राव, अभिश्रव देखो।

अभिश्री (वै० पु०-स्त्री०) १ संयोजक, जोड़नेवाला, जो मिला रहा हो। २ नियमसे रखनेवाला, जो

तरतीब लगाता हो। ३ शरणापन्न, पनाह पा जाने क़ाबिल। ४ सम्मानित, इज़्ज़तदार। ५ प्रदीप्त, चमकते हुआ। ६ शक्तिशाली, ताक़तवर।

अभिश्लेषण (सं० क्ली०) बन्धन, वेष्टन, रज्जु, पट्टी बांधनेकी चिट।

अभिश्वस् (सं० त्रि०) ऊपर सांस लेनेवाला, जो किसीकी तर्फ़ सांस चलाता हो।

अभिश्वास (वै० पु०) उद्‌गार, उद्‌गम, उद्‌गमन, सांसका छोड़ देना।

अभिश्वैत्य (सं० त्रि०) अभि अपगतं श्वैत्यं स्वभावस्य शुचित्वं यस्य, प्रादि बहुव्री०। शुद्धचरित्र, जिसका स्वभाव पवित्र रहे, नेकचलन, पाकीज़ा मिज़ाजवाला।

अभिषक्त (सं० त्रि०) दलित, पराजित, अभिशप्त, निन्दित, पायमाल, शिकस्त, जिसको बददुवा दी गयी हो, बदनाम।

अभिषङ्ग (सं० पु०) अभितः सङ्गो मिलनम् आसक्तिर्वा येन; प्रादि-बहुव्री०, अभि-सञ्ज-घञ्। १ शपथ, क़सम। २ आक्रोश, बददुवा। ३ पराभव, हार। 'अभिषङ्गस्तु शपथे स्यादाक्रोशे पराभवे।' (विश्व) ४ आसक्ति, फंसाव। ५ व्यसन, दुःख, आदत, तकलीफ़। "नवविभ्रमाभिषङ्गात्।" (माघ ७।६) 'नवाभिषङ्गां नूतनदुःखाम्।' (मल्लिनाथ) ६ पूर्ण संयोग, पूरा मेल। ७ सङ्गति, सोहबत। ८ आलिङ्गन, छातीसे छातीका प्रेमसे मिलाना। ९ प्रेतबाधा, शैतान्‌का साया।

अभिषङ्गज्वर (सं० पु०) भूतादिके आवेशसे आया हुआ ज्वर, जो बुख़ार शैतान्‌के साये सबब चढ़ता हो। यह छः प्रकारका होगा। वैद्यकमें लिखा है,—

"अभिघाताभिचाराभ्यामभिषङ्गाभिशापतः।
आगन्तुर्जायते दोषैर्यथास्वन्तं विभावयेत्॥" (माधवनिदान)

पुनश्च,—

"कामशोकभयक्रोधैरभिषक्तस्य यो ज्वरः।
सोऽभिषङ्गज्वरो ज्ञेयः यश्च भूताभिषङ्गजः॥" (चरक नि०)

अभिषङ्गा (वै० स्त्री०) वेदका वाक्य विशेष।

अभिषव (सं० पु०) अभि-सु-अप्। १ यज्ञीय स्नान, मज़हबी गुसल। २ निष्पीड़न, सोमलताका निचोड़। ३ मद्यसन्धान, आबकारी। ४ सुरामण्ड, कारीत्तर, ख़मीर। ५ सोमलताका रसपान। वैदिक समयमें ऋषि शकटपर सोमको लाद लाते थे। उसके बाद वही लता प्रस्तरपर रख अन्य प्रस्तर द्वारा दबा देते रहे। अच्छीतरह दब जानेसे भेड़के चमड़ेको मसकमें उसे भरते और कूट-कूट कर रस निकालते थे। मसकका रोयेंदार चमड़ा भीतरकी ओर रहता था। पीछे वही रस पुनर्वार चर्मके आधारसे छान लेनेपर परिष्कार होते रहा। ऋषि कुम्भके भीतर रख सोमरसमें यव, चीनी प्रभृति नानाप्रकार द्रव्य मिला देते थे। उसीमें अन्तरुत्सिक्त होकर मद्य प्रस्तुत होते रहा।

सूयते स्नायते अस्मिन्, अधिकरणे अप्। ६ यज्ञ। ७ जैनशास्त्रके मतसे सौवीरादि द्रव वा वृष्य द्रव्य।

"द्रवो वृष्यं वा ऽभिषवः।"
'द्रवः सौवीरादिकः वृष्यं वा द्रव्यमभिषवः इत्यभिधीयते॥'
(अकलङ्करचित तत्त्वार्थराजवार्त्तिक ७।३५।५)

अभिषवण (सं० क्ली०) अभि-सु-ल्युट्। अभिषव देखो।

अभिषवणी (सं० स्त्री०) सोम-निष्पीड़नका यन्त्र, जिस चीज़से सोम दबाया जाये।

अभिषवणीय (सं० त्रि०) सोमरसकी भांति निचोड़ जाने योग्य, जो खूब दबाने क़ाबिल हो।

अभिषह्य (सं० त्रि०) अभितः सोढुं शक्यम्, अभि-सह्-यत्। १ सहन करने योग्य, जो बरदाश्त करने क़ाबिल हो। (अव्य०) २ बलपूर्वक, ज़ोरसे।

अभिषाच् (सं० त्रि०) अभि-सच् स्वार्थे णिच्-क्विप्। सम्मुख बन्धन करनेमें समर्थ, अभिभावक, सामने बांध सकनेवाला, जो जड़वत् कर सकता हो।

अभिषावक (सं० पु०) सोमरस निचोड़नेवाला व्यक्ति।

अभिषावकीय (सं० त्रि०) अभिषावक-सम्बन्धीय, जो सोम निचोड़नेवाले शख़्ससे ताल्लुक़ रखता हो।

अभिषाह्, अभीषाह् (सं० त्रि०) अभि-सह-णिव स्वार्थे णिच् क्विप् वा। १ शत्रुजयकारी, दुश्मन्‌को जीतनेवाला। २ सहनकारी, जो बरदाश्त कर लेता हो।

अभिषिक्त (सं० त्रि०) अभिषिच्यते स्म, अभि-सिच्-क्त। १ विधिपूर्वक स्नापित, जो मज़हबी तौरपर नहलाया गया हो। प्रतिमाकी प्रतिष्ठा और राजाके

राज्यभार पाने इत्यादि शुभकार्यमें तीर्थजलादि द्वारा विधिपूर्वक लोग नहाते हैं।

अभिषिषिचत् (सं० त्रि०) अभिषेक करनेका इच्छुक, जिसे तेल चढ़ानेकी ख्वाहिश लगी रहे।

अभिषुक (सं० पु०) काबुल वगैरहका मग़ज़्र मेवा, पिस्ता।

अभिषुत (सं० त्रि०) अभिषयते स्म, अभि-सु-क्त। १ निष्पीड़ित, सोमरसकी भांति निचोड़ा हुआ। (क्ली०) २ कांजी।

अभिषुविक्रान्त (सं० पु०) माधवीसुरा, महुवेकी शराब।

अभिषेक (सं० पु०) अभिषेचनं अभि-सिच-भावे घञ्। विधान अनुसार शान्तिके लिये सेचन, अधिकार पानेके लिये स्नान, मन्त्रसे शिरपर जल छिड़ककर मार्जन, कर्तव्य कर्मके अन्तमें शान्तिस्नान, पुरश्चरणके अन्तर्गत मन्त्रद्वारा शिरपर जल छिड़कनेका तीसरा काम। इष्टमन्त्रग्रहण करते समय दश प्रकारके संस्कारमें पांचवां संस्कार विशेष। यथा गौतमीये

"जननं जीवनं पश्चात्ताड़नं बोधनं तथा।
अथाभिषेको विमलीकरणाप्यायने पुनः।
तर्पणं दीपनं गुप्तिर्दशैता मन्त्रसंक्रियाः॥"

जनन, जीवन, ताड़न, बोधन, अभिषेक, विमलीकरण, अप्यायन, तर्पण, दीपन, गोपन, मन्त्रका यही दश प्रकार संस्कार है।

मन्त्राभिषेककी प्रणाली इस तरह लिखी हुई है,—स्वर्ण अथवा ताम्रादिके पात्रपर पहले स्वरव्यञ्जन-भेदसे कुङ्कुमद्वारा मन्त्रको लिखना चाहिये। फिर उसके ऊपर तालपत्रादि रखकर पंक्ति पंक्ति मन्त्र लिखे। अन्तमें,—'अमुकवर्णमभिषिञ्चामि नमः'—यह मन्त्र सौ, बीस या आठ बार उच्चारण कर कुङ्कुमसे लिखे हुए मन्त्र द्वारा प्रत्येक वर्णको पीपलके पल्लवसे अभिषेक करना पड़ेगा।

शक्तिमन्त्र द्वारा दीक्षा देते समय मधुसे अभिषेक करना होता है। विष्णुमन्त्रमें कर्पूरयुक्त जल प्रशस्त है। शिवमन्त्रमें घी अथवा दूध देना चाहिये।

शिवलिङ्गादि प्रतिष्ठा एवं दोलयात्रादि उत्सवमें भी अभिषेककी पद्धति है। किन्तु सब क्रियाका अभिषेक द्रव्य समान नहीं होता।

दोलयात्रा अभिषेकके द्रव्य यह हैं,—शीतल जल, गायका गोबर, गोमूत्र, दूध, दही, घी, कुशका जल, शङ्खका जल, चन्दनका जल, कुङ्कुमका जल, फूलका जल, फलका जल, चन्दन और अंवरा—इन सबको एक साथ पीस कर उसका प्रलेपन और सुगन्धि जल। इन सब वस्तुओंसे आठ बार स्नान कराना चाहिये। दूसरी बार स्नानके समय अभिषेक-द्रव्योंके साथ दूध मिलाते हैं। पांचवीं बारके समय घी और आठवीं बारके समय उसमें मधु मिला देना आवश्यक है। अन्तमें अन्यान्य द्रव्योंके साथ गङ्गोदक, तीर्थ-जल, गङ्गाजल, वल्मीक जल, सर्वौषधि-जल, सहस्र-धारा-जल, घड़ेका जल—इन सब द्रव्योंसे अभिषेक करते हैं।

दुर्गापूजाके अभिषेकमें यह सब द्रव्य व्यवहृत होते हैं,—पिसे हुए अंवरेमें हलदी मिलाकर उसका प्रलेपन, शुद्धजल, शङ्खका जल, गङ्गाजल, गन्धोदक, पञ्चगव्य, कुशका जल, पञ्चामृत, शिशिरका जल, मधु, फूलका जल, इक्षुरस, सागरका जल, सर्वौषधि-महौषधि-जल, पञ्चकषायका जल, अष्ट मृत्तिका, फलका जल, उष्ण जल, सहस्रधारा-जल, वृष्टि-मन्दाकिनी-सरस्वती-सागर-पद्मरेणुमिश्रित-निर्झर-सर्वतीर्थ-शुद्धजल, इन आठ प्रकारके जलोंसे पूर्ण आठ घड़े रखे। फिर इन आठ प्रकार घड़ेके जलोंसे स्नान कराते समय आठ प्रकारके बाजे बजाने और राग आलापनेका विधि है। वृहन्नन्दिकेश्वर, देवीपुराण और कालिकापुराणमें भिन्न भिन्न बाजों और रागरागिणियोंके नाम पाये जाते हैं।

वृहन्नन्दिकेश्वरके मतसे इन सब राग रागिणियोंमें यह गीत होना चाहिये,—१ मालश्री, २ देवकीरी, ३ बराड़ी, ४ देशाख्य, ५ धनाश्री, ६ भैरवी, ७ गुर्जरी, ८ वसन्त। देवीपुराणके मतसे,—१ बराड़ी, २ मालव-गौड़, ३ मालव, ४ देशाख्य, ५ मालश्री, ६ भैरवी, ७ वसन्त, ८ कोड़ा। कालिकापुराणके मतसे,—

१ मालव, २ ललिता, ३ विभाषा, ४ भैरवी, ५ कोड़ा, ६ वराड़ी, ७ वसन्त, ८ धनाश्री ।

बाजेके विषयमें यह लिखा है। वृहन्नन्दिकेश्वरके मतसे,—१ मङ्गलोत्सव, २ भुवनविजय, ३ विजय, ४ राजाभिषेक, ५ मधुरी, ६ करताल, ७ वंशी, ८ पञ्चशब्द। देवीपुराणके मतसे—१ इन्द्रविजय, २ मङ्गलविजय, ३ देवोत्सव, ४ घनताल, ५ मधुकर, ६ ढक्का, ७ शंख, ८ मृदङ्ग । कालिकापुराणके मतसे,—१ विजय, २ विजयदुन्दुभि, ३ दुन्दुभि, ४ वंशी, ५ इन्द्राभिषक, ६ शङ्ख, ७ पञ्चशब्द ।

राज्याभिषेकके लिये यह सब द्रव्य कहे गये हैं,—मृगचर्मास्तीर्ण अलङ्कृत स्वर्ण, भद्रासन, गङ्गा और यमुनाके सङ्गमस्थलका जल, सब पुनीत नदियोंका जल, पूर्वमुखको नदीका जल, पश्चिममुखकी नदीका जल, तिर्यङ्मुख नदीका जल, सब द्रव्योंका जल, क्षीरिवृक्ष प्रवाल पद्म नोलपद्म प्रभृति मिश्रित काञ्चन, कुम्भपूर्ण जल, रूचक, रोचना, घृत, मधु, दुग्ध, दधि, पुण्यतीर्थमृत्तिका, पुण्यतीर्थजल, मङ्गलद्रव्य, मणिदण्डयुक्त श्वेतचामर-व्यजन, माल्यभूषित श्वेतच्छत्र, श्वेतवृष, श्वेतअश्व, वृहत् हस्ती, उत्तम अलङ्कारभूषित अष्ट कन्या, सब तरहके बाजे, सुसज्जित वन्दी ।

अभिषेकके एक दिन पहले गणेश और मातृकादिकी पूजा करके नान्दीकार्य सम्पन्न करना होता है। राजा और राणी उपवास करेंगी। दूसरे दिन पुरोहित, अमात्य और सामन्तोंको लेकर स्नानादिके बाद जब राजा और राणी मणि, काञ्चन, पृथिवी, पुष्प प्रभृति स्पर्श कर लें, तब उन्हें व्याघ्रचर्म आच्छादित आसनपर बैठाना चाहिये। उसके बाद अग्नि स्थापनकर पलाशादि समिध्‌द्वारा घृतकी आहुति देना होगा। अन्तमें ऋत्विग्गण अमात्य प्रभृति सबको लेकर अष्टकन्यापरिवृत राणीसहित राजाको अभिषेक करेंगे। अभिषेक हो जानेपर सब कोई राजा और राणीके कपालमें कुङ्कुम, अगुरु, कस्तूरी प्रभृतिका तिलक देंगे। राज्याभिषेक देखो ।

अभिषेकशाला (सं० स्त्री०) राज्यतिलकका भवन, जिस महलमें बादशाहकी ताजपोशी की जाय।

अभिषेकार्द्रशिरस् (सं० त्रि०) अभिषेकसे शिर भिगोये हुआ, अभिषिक्त, जिसका सर मजहबी गुसलसे तर रहे।

अभिषेकाह (सं० पु०) अभिषेकका दिन, जिस रोज मजहबी गुसल बने ।

अभिषेक्तृ (सं० त्रि०) अभिसिञ्चति, अभि-षिच्-तृच्। अभिषेककर्ता, मजहबी गुसल करनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। अभिषेक्त्री ।

अभिषेक्य (सं० त्रि०) अभिषेकमर्हम्, अभि-सिच्-य्यत् कुत्वम्। अभिषेकके योग्य ।

अभिषेचन (सं० क्ली०) अभि-सिच भावे ल्युट्। १ अभिषेक, धार्मिक स्नान, मजहबी गुसल। अभिषेक देखो। करणे ल्युट्। २ अभिषेक-द्रव्य जल घृतादि ।

अभिषेचनीय (सं० त्रि०) अभि-सिच कर्मणि अनीयर्। अभिषेकके योग्य, जिसको अभिषेक देना उचित हो।

अभिषेचनीयस् (सं० पु०) यज्ञविशेष, यह राजाका अभिषेक होते समय किया जाता है।

अभिषेचित (सं० त्रि०) अभिषिक्त, अभिषेक कराया हुआ, जिसका अभिषेक हो चुके ।

अभिषेच्य, अभिषेक्य देखो।

अभिषेण (सं० पु०) अभिषेणन देखो ।

अभिषेणन (सं० क्ली०) इनः राजा पतिर्वा तेन सह वर्तते सेना तया अभिमुखं याति शत्रोः, अभि-सेना-णिच्-ल्युट् षत्वं णत्वञ्च। १ युद्धनिमित्त जयेच्छु व्यक्तिका सेनाको साथ लेकर शत्रुके सम्मुख गमन, लड़ाईको फ़ौज लेकर दुश्मनके सामनेको पहुंच। २ अभिमुख बाणसन्धान, सामनेको तीरन्दाजी ।

अभिषेणयिषु (सं० त्रि०) सेना लेकर पहुंचनेका उत्सुक, जो फ़ौज लेकर दुश्मनके सामने पहुंचनेका ख़ाहिशमन्द हो।

अभिष्टन (सं० पु०) अभितः स्तनः, अभि-स्तन-अच्। सिंहनाद, उद्घोषण, गरज, दहाड़, शोर-गुल।

अभिष्टव (सं० पु०) प्रशंसा, तारीफ़।

अभिष्टि, अभीष्टि (वै० त्रि०) इज्यते इष्यते वा अनया अभि-यज् वा इष्-क्तिन् वेदे पृषो० एका०। १ अभियष्टव्य, जिसका याग कर्तव्य ठहरे। (पु०) २ सहा-

यक, रक्षक, मददगार, मुहाफ़िज़। ३ रक्षा रखने कारण पूज्य व्यक्ति, जिस शख़्सकी तारीफ़ हिफ़ाज़त करनेसे रहे। ४ आक्रमणकारी, हमला करनेवाला। ५ शत्रु-पराजयकारी, दुश्मनको शिकस्त देनेवाला। ६ अभिलाष, ख़्वाहिश। (स्त्री०) ७ साहाय्य, रक्षा, मदद, हिफ़ाज़त। ८ यज्ञ। ९ यज्ञीय गीत। १० साहाय्यार्थ उपस्थिति, मददके लिये पहुंचना।

अभिष्टिकृत् (सं० त्रि०) सहायक, मददगार।

अभिष्टिद्युम्न (सं० त्रि०) आनन्ददायक, आराम देनेवाला।

अभिष्टिपा (वै० पु०) शत्रुसे रक्षा करनेवाला, निवारणकारी, जो दुश्मनसे हिफ़ाज़त करता हो, दुश्मनको दूर रखनेवाला।

अभिष्टिमत् (सं० त्रि०) अभिलषणीय, उत्कण्ठा योग्य, मरग़ूब, क़ाबिल-तमन्ना, पसन्दीदा, अच्छा।

अभिष्टिशवस् (सं० त्रि०) सहायक व्यक्ति, मददगार शख़्स, जो आदमी दुश्मनको जीतने क़ाबिल हो।

अभिष्टुत (सं० त्रि०) अभितः स्तुतम्, अभि-स्तु-क्त। प्रशस्त, प्रशंसित, वर्णित, स्तुत, तारीफ़ किया हुआ।

अभिष्टवत् (सं० त्रि०) प्रशंसापरायण, जो तारीफ़ कर रहा हो।

अभिष्यत् (सं० त्रि०) विनाशक, हिंसक, बरबाद करनेवाला, जो क़त्ल कर रहा हो।

अभिष्यन्द, अभिस्यन्द (सं० पु०) अभि-स्यन्द भावे घञ्, अप्राणि-कर्तरि वा षत्वम्। १ अतिवृद्धि, अधिक वृद्धि वा फूलना, बहाव, जल आदिका निकास, जलका गिरना। आधारे घञ्। २ नेत्ररोगविशेष। 'अभिष्यन्दस्त्वास्रावनेत्ररोगातिवृद्धिषु।' (हेम) नेत्रके भीतर धूल, कीड़ा, पसीना, आदि बाहरकी कोई वस्तु उड़कर पड़ने; उग्र बाष्पादिका तेज, प्रखर रौद्र, धूम, पूर्व वा उत्तर दिशाका वायु अथवा अति शीतल वायु प्रभृति लगने, सर्वदा सूक्ष्म वस्तुकी ओर देखते रहने, वर्षा और शीतकालकी रात्रिका वायु छूने; अतिशय मद्यपान, अतिमैथुन, अत्यन्त मानसिक उद्वेग, अधिक वमन, कोष्ठबद्धता, शिरोरोग, अतिशय क्रोध प्रभृति कारण विद्यमान रहनेसे अभिष्यन्द रोग हो सकता है। Opthalmia, Supurative inflamation of the eye प्रभृति रोग यहां एक ही साथ गृहीत हुए हैं।

वैद्यक पुस्तकोंमें अभिष्यन्दरोग चार श्रेणियोंमें विभक्त किया गया है,—वातजनित, पित्तजनित, कफजनित और रक्तजनित। फलतः यह रोग कहीं सहज और कहीं अतिशय कठिन हो जाता है। नेत्र थोड़े या बहुत लाल हो जाते और जैसे उनमें धूल पड़ गई हो, वैसे करकराया करते हैं। इसे 'आंख उठना' (Conjunctivitis, simple opthalmia) कहते हैं। वैद्यशास्त्रका यह वातजनित अभिष्यन्द है।

कफजनित अभिष्यन्द (Opthalmiacum catarrho, catarrhal opthalmia) पहलेसे कुछ विभिन्न है। इस रोगमें आंखके भीतर मानो तेज़ सूईकी तरह सदैव कुछ चुभा करता है। पलकके भीतर बालू प्रभृति पड़ जानेसे जिस तरह आंख करकराती, उसी तरहकी पीड़ा उठती है। सदैव अत्यन्त जल और कीचड़ बहा करता है; रातको नेत्रके मलसे दोनों पलकें सटतीं, कोवे अत्यन्त लाल हो उठते और आंखें फूल जाती हैं। उस ललाईमें पतली-पतली रेखायें दिखाई देती हैं। इस श्रेणीका रोग कुछ संक्रामक होता है।

पित्त और रक्तजनित अभिष्यन्द—पूयजनक प्रदाह है (Opthalmia purulenta, purulent opthalmia)। यह रोग अतिशय कठिन और कष्टकर होता है। पहले आंख कुछ कुछ खुजलाती, उसके बाद बहुत करकराती और भीतर पीड़ा मालूम पड़ती है। ऐसा जाननेमें आता, मानो हठात् आंखके भीतर कहीं कीड़ा पड़ गया और दुःसह यन्त्रणा होती है। दोनों पलक अत्यन्त फूल जाते हैं। पहले केवल जल, फिर मलमिश्रित जल गिरने लगता है। कोवे लाल हो जाते हैं। शिरमें पीड़ा होती, शरीर गर्म पड़ता और नाड़ी तेज़ हो जाती है। बीच बीचमें वमन और वमनोद्वेग हुआ करता है।

नेत्ररोगमें मादक द्रव्य-सेवन, अधिक मानसिक चिन्ता, रात्रिजागरण, धूप, धूम, शीतल वायु, पूर्व और उत्तर दिशाके वायुका लगना, अधिक मैथुन, मत्स्य,

शाक, अम्ल, कटु, गुरुपाकद्रव्य प्रभृतिका व्यवहार करना निषेध किया गया है।

शाठी चावल, यव, गेहूं, चना, मूंग, मांस, अण्डा, दूध, घृतपक्व द्रव्य, तिक्त रस प्रभृति पथ्य नेत्ररोगके लिये प्रशस्त है। जिससे कोष्ठशुद्धि हो, रोगीको सर्वथा वही यत्न करना चाहिये। केश, नेत्र, शरीर, पहननेके कपड़े और शय्यादिको सब तरहसे साफ सुथरा रखना उचित है।

चिकित्सा—सामान्य पीड़ा हो, तो प्रथमावस्थामें नेत्रके ऊपर उष्ण जलका स्वेद अथवा जलमें पोशतेकी ढेढ़ी सिद्धकर उसका स्वेद देनेसे विशेष उपकार होता है। स्तनदुग्धके साथ लजालूका रस मिलाकर आंखके भीतर डालनेसे भलाई होती है। वैद्यलोग रसवत और स्तनदुग्ध मिलाकर आंखमें डालते हैं। संन्यासी लोग तांबेके बरतनमें दूध और दारुहल्दी; अथवा हर, कामिनीकाष्ठ और विशुद्ध गायका घी घसकर आंखके भीतर प्रयोग करनेको बताते हैं। एलोपैथीके मतसे आधा छटांक गुलाबजल, ढाई रत्ती फिटकिरी और ढाई रत्ती सलफेट अव जिङ्क मिलाकर आंखके भीतर डालना चाहिये। होमियोपैथीके चिकित्सक एकोनाइट १२ डा०, किंवा बेलेडोना १२ डा० २।१ बूंद जलके साथ मिलाकर सेवन करनेको देते हैं। फलतः कोई औषध क्यों न हो, विना कुछ देर लगे रोग अच्छा नहीं होता।

पूयजनक प्रदाहको प्रथमावस्थामें ही नेत्रके भीतर और ऊपर काष्टिक प्रयोग करना चाहिये। नेत्रके भीतर प्रयोग करनेको आधा छटांक गुलाबजल और आधा ग्रेन काष्टिक एक साथ मिलाकर प्रतिदिन चार पांच बार आंखके भीतर डालना होगा। गुलाबजल आधा छटांक और काष्टिक पन्द्रह ग्रेन एक साथ मिलाकर पलकके ऊपर अच्छी तरह लगा देते हैं और रुई तथा कपड़ेसे आंखको बांधते हैं। सेवनके लिये कुइनाइन, लौह एवं पार्थिवाम्ल प्रशस्त है। उपदंश और प्रमेहके रोगी तथा शिशुको भी यह रोग सताता है। नेत्रमें चाहे जो रोग हो, शीघ्र ही सुचिकित्सकका परामर्श लेना उचित है।

अभिष्यन्दनगर (सं० क्ली०) अभिष्यन्देन प्रधाननगरातिवृद्ध्या क्षतं नगरम्। शाखानगर, छोटा शहर, प्रधान नगरमें अधिक मनुष्य हो जानेसे उद्वृत्त लोगोंसे बसाया हुआ नूतन नगर।

अभिष्यन्दरमण (सं० क्ली०) ६-तत्। रतिस्थान।

अभिष्यन्दवमन (सं० क्ली०) ६-तत्। नगरके अतिरिक्त लोगोंका निःसारण, शहरके फालतू आदमियोंका निकास।

अभिष्यन्दिन्, अभिस्यन्दिन् (सं० त्रि०) अभिष्यन्दते, अभिष्यन्द-णिनि; अप्राणि कर्तरि वा षत्वम्। १ क्षरणशील, स्रवयुक्त, चूनेवाला, जो टपक रहा हो। २ सारक, रेचक, मुलय्यन, रफाक, जो बदहज़मी मिटाता हो। ३ निस्यन्दक, क्षरणकारी, स्रवणविधायक, चुवानेवाला, जो टपका रहा हो।

अभिष्यन्दिरमण (सं० क्ली०) १ परिसर, उपकण्ठ, नवाह-शहर, शहरके आस-पासवाला गांव। २ उपनगर, जो छोटा शहर बड़े शहरके लगोंसे बसा हो।

अभिष्वङ्ग (सं० पु०) अभिष्वज्यते, अभि-ष्वञ्ज-घञ्। उत्कट राग, अतिशय अनुराग, शदीद रिफ़ाक़त, निहायत मुहब्बत, गहरा मेल, जिस प्यारका ठिकाना न लगे।

अभिसंयोग (सं० पु०) उत्कट ऐक्य, निकटस्थ संपर्क, शदीद इत्तिफ़ाक़, गहरा इत्तिसाल, जिस मेल-मिलापकी कोई हद न रहे।

अभिसंरब्ध (सं० त्रि०) अभिसंरभ्यते स्म, अभि-सम्-रभ-क्त। क्रुद्ध, गुस्सेसे भरा हुआ।

अभिसंवृत (सं० त्रि०) आच्छादित, परिच्छदविशिष्ट, ढका हुआ, जो कपड़ा पहन चुका हो।

अभिसंवृत्ति (सं० स्त्री०) अभि-सम्-वृत्-क्तिन्। १ व्यवहार, बरताव। २ अभिनिष्पत्ति, कमालियत।

अभिसंश्यान, अभिसंशीन (सं० त्रि०) घनीभूत, जो गाढ़ा पड़ गया हो।

अभिसंश्रय (सं० पु०) अभितः संश्रयः, प्रादि-स०, अभि-सम्-श्रिञ्-अच्। सर्वथा आश्रय, पूरी पनाह।

अभिसंसार (सं० पु०) अभितः सम् सम्यक् सरति

गच्छति, अभि-सम्-सृ-घञ्। १ जगत्, जहान्। २ दलरूप आगमन, झुण्ड बांधकर पहुंचना। (अव्य०) संसारस्याभिमुख्यम्, अव्ययी०। ३ संसारके अभिमुख, दुनियाके सामने। ४ अभिगमन करके, रवाना होकर।

अभिसंस्कार (सं० त्रि०) भावना, भावन, कल्पना, कथन, सङ्कल्प, वासना, मन:कल्पना, कुव्वत मुतखैयल, वन्दिश-ख्याल, सोच-विचार।

अभिसंस्तव (सं० पु०) उत्कट प्रशंसा, गहरी तारीफ।

अभिसंस्तुत (सं० त्रि०) अतिशय प्रशंसित, निहायत तारीफ किया हुआ।

अभिसंहत (सं० त्रि०) नियोजित, संगठित, जोड़ा हुआ, जो मिल गया हो।

अभिसंहित (सं० त्रि०) अभि-सम् धा कर्मणि कर्तरि वा क्त। १ किसी फलके उद्देश्यसे कृत, जो किसी नतीजेके लिये किया गया हो। २ अभिसन्धिका विषयीभूत, लगा हुआ। ३ अभिसन्धिकर्ता, राज़ी, जो मञ्ज़ूर कर चुका हो।

अभिसंक्रुद्ध (सं० त्रि०) जातामर्ष, रुष्ट, सामर्ष, सरोष, कुपित, समन्यु, नाराज़, गुस्सावर, जिसको गुस्सा आ गया हो।

अभिसंक्रुध्यत् (सं० त्रि०) कुपित होनेवाला, जो नाराज़ हो रहा हो।

अभिसङ्क्षिप्त (सं० त्रि०) १ फेंका हुआ, जो डाल दिया गया हो। २ फेंकने, गोली मारने या निशाना लगानेवाला। ३ जिसपर निशाना लग चुके।

अभिसङ्क्षेप (सं० पु०) ग्रहण, बोध, धी, मति, बुद्धि, अवधारण, मेधा, समझ, अक्ल, हाफ़िज़ा।

अभिसङ्ख्य (सं० त्रि०) अनुमेय, आनुमानिक, निरूपणीय, निर्णययोग्य, अन्दाज़ी, बताने क़ाबिल।

अभिसङ्गुप्त (सं० त्रि०) रक्षित, त्रात, हिफ़ाज़त किया हुआ।

अभिसञ्चारिन् (सं० त्रि०) अस्थिर, अदृढ़, चल, तरल, लोलमति, चलचित्त, मुतलव्विन, बेवफ़ा, मुतग़ैयर, मुतबद्दिल, जो ठहरता न हो।

अभिसञ्जात (सं० त्रि०) उत्पन्न, उत्पादित, निर्मित, घटित, सृष्ट, जनित, जात, उद्भूत, पैदा होनेवाला, जो पैदा हुआ हो।

अभिसन्तत (सं० त्रि०) विस्तृत, दीर्घीकृत, प्रसारित, फैल जानेवाला, जो खूब बढ़ गया हो।

अभिसत्वन् (वै० त्रि०) वीर पुरुषोंसे आवेष्टित, जो बहादुर लोगोंसे घिरा हो।

अभिसन्तप्त (सं० त्रि०) अतिशय आतङ्कित, व्यथित, पीड़ित, दु:खित, प्रमथित, अज़ाब या अज़ीयत दिया हुआ, जिसको तकलीफ़ पहुंची हो।

अभिसन्ताप (सं० पु०) अभि-सम्-तप् भावे घञ् अभिसन्तप्यतेऽस्मिन् अधिकरणे वा घञ्। १ युद्ध, जङ्ग, लड़ाई। अभिसन्ताप्यतेऽनेन, अभि सम्-तप्-णिच् करणे अच्। २ अभिशाप, बददुवा।

अभिसन्त्रस्त (सं० त्रि०) अतिशय भयभीत, जो बहुत डर गया हो।

अभिसन्दष्ट (सं० त्रि०) सङ्कोचित, सम्पीड़ित, दबाया हुआ, जो बांधा गया हो।

अभिसन्देह (सं० पु०) १ विनिमय, परीवर्त, परिवृत्ति, परिदान, व्यतिहार, मुबादला, अलटा-पलटा, अदला-बदला। २ जननेन्द्रिय, पैदा करनेका आला। इस अर्थमें अभिसन्दोह भी लिखते हैं।

अभिसन्ध, अभिसन्धक देखो।

अभिसन्धक (सं० त्रि०) अभिधर्षणं सन्धत्ते, अभि-सम्-धा-क स्वार्थे कन्। दूसरेका गुण न सह सकनेपर आक्षेपकारी, परगुणासहिष्णु, दूसरेका वस्फ़ न देख सकनेपर ताना मारनेवाला, जो इलज़ाम लगाता हो।

अभिसन्धा (सं० स्त्री०) अभि-सम् धा भावे अङ्। १ वञ्चना, फरेब, धोका। २ फलोद्देश, ख्वाब राज़ीनामा। ३ अभिसन्धि, लगाव, फ़ायदा। ४ वचन, कथन, बातचीत, इज़हार।

अभिसन्धान (सं० क्ली०) अभि-सम्-धा-ल्युट्। १ परवञ्चन, धोकेबाज़ी, हीलासाज़ी। २ फलोद्देश, आख़िरी मतलब। ३ अभिसन्धि, लगाव, मुहब्बत।

"सा हि सत्याभिसन्धाना।" (रामायण ५।५१।२१)

अभिसन्धाय (सं० पु०) अभि-सम्-धा बाहुलकात् ण घञ् वा। १ अभिसन्धि, लगाव। २ फलोद्देश,

आखिरी मतलब। (अव्य०) ल्यप्। फलादिका उद्देश्य करके, नतीजे वगैरहके मतलबसे।

अभिसन्धि (सं० पु०) अभि-सम्-धा भावे कि। फलादिका उद्देश्य, अभिसन्धान, मतलब, ग़रज़, इरादा।

अभिसन्धिकृत् (वै० त्रि०) प्रयोजनानुसार किया हुआ, जो मतलबसे किया गया हो।

अभिसन्धित (सं० त्रि०) अभिसन्धा जाता अस्य, तारकादि इतच्। उद्देश-विशिष्ट, अभिसन्धिविषयक, मतलबसे भरा हुआ, जिससे मतलब निकले।

अभिसन्धिता (सं० स्त्री०) नायिकाविशेष, कलहान्तरिता। यह अपने आप प्रियसे लड़ पछताया करती है।

अभिसन्नद्ध (सं० त्रि०) १ अलङ्कृत, भूषित, सुसज्जित, आरास्ता, सजा हुआ।

अभिसमवाय (सं० पु०) सम्बन्ध, सङ्गति, मेल-जोल, साथ।

अभिसम्पत्ति (सं० स्त्री०) अभितः सम्पत्तिः, प्रादि-स०, अभि-सम्-पद-क्तिन्। १ सकल दिक् सम्पत्ति, पूरे तौरपर असरका पड़ना। २ संक्रान्ति, परिवर्त, विकार, स्थित्यन्तर, अवस्थान्तर, तबदील, तग़ैयुर, तबद्दुल।

अभिसम्पद् (सं० स्त्री०) अभि अतिशय सम्पत्, प्रादि-स०। १ अधिक सम्पत्ति, अधिक धन, ज़्यादा दौलत, बहुत रुपया-पैसा। २ पूर्ण होनेकी स्थिति, जिस हालतमें पूरा पड़े।

अभिसम्पद (सं० अव्य०) सम्पदमभिलक्षीकृत्य, टजन्त अव्ययी०। सम्पदको अभिलक्ष्य करके, दौलतकी ओर इशारा निकालकर।

अभिसम्पन्न (सं० त्रि०) परिपूर्ण, पूर्णरूपसे सफल, जिसपर पूरे तौरसे असर पड़े।

अभिसम्पराय (सं० पु०) भावि उत्तर-काल, भविष्यत्, आगामि-काल, उक़बा, आक़िबत, आलम-ग़ैब, इस्तिक़बाल, होनी, होनहार।

अभिसम्पात (सं० पु०) अभि साम्मुख्येन सम्पतन्ति सङ्गच्छन्तेऽस्मिन्, आधारे घञ्। १ युद्ध, लड़ाई। भावे घञ्। २ पतन, ज़वाल। सम्पतन्ति विनश्यन्ति अनेन करणे घञ्। ३ अभिशाप, बद्दुआ।

अभिसम्बद्ध (सं० त्रि०) १ सम्मिलित, मिला हुआ। २ प्रमाणयुक्त, जो हवाला देता हो।

अभिसम्बन्ध (सं० पु०) अभितः सम्बध्यते, अभि-सम्-बन्ध-घञ्, प्रादि-स०। १ अधिक सम्बन्ध, ज़्यादा रिश्ता। २ स्पर्श, संस्पर्श, सम्पर्क, संसर्ग, संयोग, आसङ्ग, व्यतिकर, परामर्श, इत्तिसाल, लमस, छुवाव, लगाव। ३ दाम्पत्य सम्पर्क, औरत-मर्दका रिश्ता।

अभिसम्बाध (सं० त्रि०) अतिशय संयत, निरुद्ध वा निबद्ध, निहायत मुक़ैयद, जो खूब अटका हो।

अभिसम्मुख (सं० त्रि०) १ प्रत्यक्ष, समक्ष, सम्मुख, मुंह सामने किये हुआ, जिसका चेहरा सामने रहे। २ आदरपूर्वक देखते हुआ, जो इज़्ज़तके साथ निगाह डाल रहा हो।

अभिसर (सं० पु०) अभितः सरति, अभि-सृ-घ। सहाय, अनुचर, मददगार, नौकर।

अभिसरण (सं० क्ली०) अभितः सरणम्, प्रादि-स०। १ अभिगमन, सम्मुख गमन, पहुंच, मुलाक़ात, मिलनेको रवानगी। २ नायकके अनुरागहेतु नायिकाका अन्य सङ्केतस्थानको गमन, आशिक़को खुश करनेके लिये माशूक़का दूसरी जगह पहुंचना, अनुसरण, अभिसार।

अभिसरत् (सं० त्रि०) आभिमुख्यार्थ गमनकर्ता, आक्रमणकारी, मिलनेको जानेवाला, हमलावर, जो धावा मार रहा हो।

अभिसरना (हिं० क्रि०) १ गमन करना, चला जाना। २ अभीष्ट स्थानको रवाना होना, वादेकी जगह पहुंचना। ३ नायक वा नायिकाका प्रियतमसे मिलनेको सङ्केतस्थानके प्रति गमन, आशिक़ या माशूक़का अपने प्यारेसे मुलाक़ात करने किसी मुक़र्रर जगहको जाना।

अभिसर्ग (सं० पु०) सृष्टि, खिलक़त।

अभिसर्जन (सं० क्ली०) अभि-सृज भावे ल्युट्। १ दान, उत्सर्ग, बख़्शिश, देना। २ वध, क़त्ल।

अभिसर्त्तृ (सं० त्रि०) आक्रमणकारी, हमलावर, जो धावा मार रहा हो।

अभिसार (सं० पु०) अभिसरन्ति गच्छन्ति अस्मिन्, अभि-सृ-घञ्। १ युद्ध, लड़ाई। २ सम्मिलन, जमघट। ३ आक्रमण, हमला। ४ संस्कार विशेष। ५ बल, जोर। ६ सहाय, सहारा। ७ नायकका अनुरागसे नायिकाके लिये सङ्केतस्थानको गमन, आशक़का मुहब्बतसे माशूक़के लिये मिलनेकी जगहको जाना। कर्तरि घञ्। ८ अनुचर, साथी। ९ शकुली मत्स्य।

अभिसार—पौराणिक जनपद और उसमें रहनेवाली क्षत्रिय-जातिविशेष। (महाभारत,भीष्म० ९।५२,मार्कण्डेयपु०५८।४९, बृहत्संहिता १४।२९) भारतीय उत्तरपश्चिमप्रान्तमें मरी और मर्गला गिरिसङ्कटके मध्य अवस्थित यह एक पार्वत्य राज्य है। यूनानी ऐतिहासिकोंने इस जगहके नृपतिको भी Abisares नामसे ही परिचित किया है। महावीर सिकन्दरने अपने विजित सिन्धुनदके पूर्वांशमें अवस्थित भारतखण्डका शासनकर्तृत्व जिन कई नृपतियोंपर छोड़ा था, उनमें अभिसार भी एक राजा रहे।

अभिसारना (हिं० क्रि०) चल देना, राह पकड़ना, प्रियसे किसी सङ्केतस्थानमें मिलनेको रवाना होना।

अभिसारिका (सं० स्त्री०) अभिसरति अभिसारयति वा सङ्केतस्थानम्, अभि-सृ-ण्वुल्, णिच्-ण्वुल् वा। स्वीयादि सोलह प्रकार नायिकामें अष्टावस्था विशिष्ट अष्टनायिकान्तर्गत नायिका विशेष, नायकके साथ परामर्श करके जो नायिका सङ्केतस्थलमें गमन करे, जो नायिका नायकको सङ्केतस्थानमें भेज दे।

> "अभिसारयते कान्तं या मन्मथवशम्वदा।
> स्वयं वाभिसरत्येषा धीरैरुक्ताभिसारिका॥" (साहित्यदर्पण)

जो स्त्री कामपीड़ित होकर कान्तको सङ्केतस्थलमें भेज दे अथवा स्वयं वहां गमन करे, पण्डितलोग उसे अभिसारिका नायिका कहते हैं।

अभिसारिका नायिकाकी चेष्टा चार प्रकार होती है। यथा—समयानुरूप वस्त्राभरण, शङ्का, बुद्धिकी निपुणता और कपट साहसादि। रसमञ्जरीमें तीन प्रकारकी अभिसारिकाका उल्लेख है। यथा—दिवाभिसारिका, ज्योत्स्नाभिसारिका एवं अन्धकाराभिसारिका।

हिन्दीके कवियोंने भी तीन प्रकारकी अभिसारिका कही है। यथा—दिवाभिसारिका, शुक्लाभिसारिका और कृष्णाभिसारिका। इनके उदाहरण नीचे दिये जाते हैं,—

दिवाभिसारिका—

> पगनिमें ओस करि हौस घौंस हो कों चली
> प्रिय महबूब मिलबे की बनी घाति है।
> घेरदार जामा पायजामापें प्रवीन बेनी
> अति ही सकामा वामा सुख अरुझाति है॥
> बांधे बखतरी परी कांधे समसेर फरी
> लखी ना परी है काहु सखि न सकाति है।
> केस कस पगरीमें ववरी बनाय बाल
> मुगलबचा लौं एकपंचो सजे जाति है॥

शुक्लाभिसारिका—

> सजि ब्रजचन्दपै चली यों मुखचन्द जाको
> चंद चांदनीको दुति मन्द सौ करत जात।
> कहै पदमाकर त्यों सहज सुगन्धहीके
> पुंज बन कुंजनमें कंजसे भरत जात॥
> भरत जहांई जहां पग है सुप्यारी तहां
> मंजुल मजीठहीके माठसे ढुरत जात।
> हारनते हीरे सेत सारीके किनारनतें
> बारन तें मुकता हजारन झरत जात॥

कृष्णाभिसारिका—

> उमड़ि घुमड़ि दिगमंडलनि मंडि रहे
> झूमि झूमि बादर कुहूकी निसि कारी में।
> अंगन में कीनो मृगमद अङ्गराग तैसे
> आनन उढ़ाय लीन्हो स्यामरंग सारी में।
> मतिराम सुकवि मेचक रुचि राजि रही
> आभरण साजि मरकत मनिवारी में।
> मोहन छबीलेको मिलन चली ऐसी छबि
> छांह लौं छबीली छबि छाजत अंध्यारी में॥

अभिसारिन् (सं० त्रि०) अभि साम्मुख्येन सरति गच्छति, अभि सृ-णिनि। १ सम्मुख-गमन करनेवाला, आक्रमणकारी, जो मिलने जा रहा हो, सामने जानेवाला, हमलावर, जो मुलाक़ात करता हो। २ अनुचर, नौकर।

अभिसारिणी (सं० स्त्री०) १ अनुसारिणी, अनुचरी, नौकरनी, जो मुवाफ़िक़ काम करती हो। २ अपने

प्रियसे मिलने जानेवाली स्त्री। ३ वैदिक छन्दोविशेष। इस छन्दके दो पाद वैराज और दो पाद जगती रहेंगे।

अभिसारी, अभिसारिन् देखो।

अभिसार्यमाण (सं० त्रि०) जिसके पास पहुंचें, जिससे मुलाक़ात हो जाये।

अभिसृत्य (सं० अव्य०) निकट उपस्थित होके, पास पहुंचकर।

अभिसृष्ट (सं० त्रि०) अभिसृज्यते स्म, अभि-सृज-क्त। दत्त, उत्सृष्ट, दिया हुआ, जो छोड़ा जा चुका हो।

अभिसेख (हिं० पु०) अभिषेक, धार्मिक स्नान।

अभिसेवन (सं० क्ली०) सम्यक् अभ्यास, उत्कृष्ट सेवा, खासी महारत, बड़ी खिदमत।

अभिस्कन्द (वै० पु०) १ आक्रमण, धावा। २ आक्रमण करनेवाला व्यक्ति, जो शख्स हमला करता हो। (अव्य०) ३ आक्रमण द्वारा, धावेसे।

अभिस्थिर (सं० अव्य०) अतिशय दृढ़तापूर्वक, निहायत मज़बूतीसे।

अभिस्नेह (सं० पु०) अनुराग, प्रेम, उत्कण्ठा, मुहब्बत, प्यार, ख्वाहिश।

अभिस्फुरित (सं० त्रि०) पूर्णरूप प्रसारित, अच्छी तरह खिली हुयी।

अभिस्यन्द, अभिष्यन्द देखो।

अभिस्वयमातृणम् (वै० अव्य०) यज्ञीय ईंटपर।

अभिस्वर् (वै० स्त्री०) अभितः स्वः स्वरणं शब्दो वा यस्य, अभि-स्व, भावे विच्। १ अतिशय स्वरयुक्त स्तोत्र विशेष, अधिक शब्दयुक्त स्तव। २ आह्वान, नामग्रहण, प्रार्थना, बुलावा, पुकार, अर्ज़। ३ सम्मुख आह्वान, सामनेका बुलाना।

अभिस्वर (सं० पु०) अभि-स्वृ-अप्। सम्मुख भेजना, सामने पहुंचाना।

अभिस्वर्तृ (सं० पु०) आमन्त्रणकारी, प्रशंसापरायण, आह्वान करनेवाला, जो पुकारता हो, तारीफ़ करनेवाला।

अभिहत (सं० त्रि०) अभि-हन्-क्त। १ अभिघात-संयोगयुक्त, जिसमें मारका खटका लग चुके। २ ताड़ित, मारा या पीटा हुआ। ३ सन्तप्त, जला हुआ। ४ अभिभूत, तोड़ा हुआ। ५ अवरुद्ध, रुका हुआ। ६ गुणित, जो ज़र्ब किया गया हो।

अभिहति (सं० स्त्री०) १ ताड़न, मारपीट। २ गुणन, ज़र्ब।

अभिहन्यमान (सं० त्रि०) वध्यमान, निहत, मारा जानेवाला, जो मार डाला गया हो।

अभिहर (सं० त्रि०) उठा ले जानेवाला, जो गुम कर देता हो।

अभिहरण (सं० क्ली०) अभि-हृ-ल्युट्। १ सम्मुख आहरण, सामनेसे उठा ले जाना। २ विवाहादिका यौतुक दान, जो दहेज़ शादीमें लड़कीको दिया जाता हो।

अभिहरणीय (सं० त्रि०) निकट लाने योग्य, जो नज़दीक लाने क़ाबिल हो।

अभिहर्तव्य, अभिहरणीय देखो।

अभिहर्तृ (सं० पु०) अभिहरणकर्ता, उठा ले जानेवाला, आक्रमणकारी। २ धर्षक।

अभिहव (सं० पु०) अभिह्वयते, अभि-ह्वे-अप्। १ सम्मुख आह्वान, सामने बुलाना। २ यज्ञ।

अभिहस्य (सं० त्रि०) अभिहस्यते, अभि-हस्-यत्। उपहसनीय, उपहासकी योग्य, क़ाबिल-तज़हीक, हंसने लायक़।

अभिहार (सं० पु०) अभि-हृ-घञ्। १ अपकार पहुंचानेकी इच्छासे सम्मुख आक्रमण, नुक़सान करनेके इरादेसे सामने जा हमला मारना। २ सम्मुख हरण, सामनेसे उठा ले जाना। ३ आलिङ्गन, हमागोशी। ४ मेलन, मुलाक़ात। ५ चौर्य, चोरी। ६ अभियोग, इलज़ाम। ७ बन्धन, क़ैद। ८ कवच-धारण, बख्तरकी पोशिश।

अभिहारोऽभियोगेच। चौर्य सन्नहनेऽपि च। (अमरविश्वी)

अभिहार्य, अभिहरणीय देखो।

अभिहास (सं० पु०) हास्य, विनोदोक्ति, प्रहसन, विनोदभाषण, परिहासोक्ति, नर्मालाप, हंसी, दिल्लगी, मज़ाक़, बोली-ठोली, छेड़छाड़।

अभिहित (सं० त्रि०) अभि-धा-क्त। १ भाषित, उदित, जल्पित, आख्यात, लपित, कहा हुआ।

'उक्तं भाषितमुदितं जल्पितमाख्यातमभिहितं लपितम्।' (अमर)

२ इच्छा किये हुआ, जो इरादा बांध चुका हो। (क्लो०) ३ नाम, वर्णन, शब्द, इस्म, बयान, लफ़ज़।

अभिहितत्व (सं० क्लो०) कथित होनेकी स्थिति, कहे जानेकी हालत। २ घोषणा, पुकार। ३ प्रमाण, आप्तवचन, निदर्शन, हवाला, सुबूत, पक्की बात।

अभिहिता (सं० स्त्री०) जलपिप्पली, पानीपिपरी।

अभिहितान्वय (सं० पु०) अभिहितानां अभिधया लक्षणया वा पदोपस्थापितानां अर्थानां अन्वयः सम्बन्धः, मध्यपदलोपी ६-तत्। सकल पदार्थ बोध होने पर वाक्यार्थका अन्वय। प्राचीन नैयायिकोंके मतसे किसी वाक्यके प्रथम प्रत्येक पदका अर्थ समझ सकनेपर वाक्यार्थका अन्वय लगता. किन्तु यह भी तात्पर्याख्य वृत्तिसापेक्ष है। आजकलके नैयायिक इसे संसर्गमर्यादा कहेंगे। मीमांसकोंके मतसे प्रथम क्रिया और कारकका अन्वय लगता, पीछे अर्थ समझ पड़ता है।

अभिहितान्वयवादिन् (सं० पु०) अभिहितानां अभिधया लक्षणया वा पदोपस्थापितानां अर्थानां अन्वयं परस्परसम्बन्धं वदति; अभिहितान्वय-वद-णिनि, उप०स०। प्राचीन नैयायिक, प्रथम प्रत्येक पदका अर्थबोध मान पीछे वाक्यार्थका अन्वयबोध स्वीकार करनेवाला।

अभिहिति (सं० स्त्री०) कथन, वर्णन, उपाधि, बात, बयान, खिताब।

अभिहूति (सं० स्त्री०) अभि-ह्वे-क्तिन्, सम्प्रसारणं दीर्घश्च। १ सम्मुख आह्वान, पुकार। अभि-हृ-क्तिन् पृषो० साधुः। २ कुटिल स्वभाव, टेढ़ा मिज़ाज।

अभिहृत् (वै० त्रि०) अभि-हृ कर्मणि क्विप्, वेदे पृषो० न गुणः। १ सम्मुख हरण किया जानेवाला, जिसे समानेसे उठा ले जायें। २ वक्र, टेढ़ा, बेइन्साफ़ीसे काम करनेवाला। (स्त्री०) ३ पतन, पराजय, हानि, ज़वाल, शिकिस्त, नुकसान्।

अभिहृति (वै० स्त्री०) १ निपात, गिराव। २ पराजय, हानि, अपराध, शिकिस्त, नुक़सान्, जुर्म।

अभिह्रुत् (सं० त्रि०) अभि-ह्वृ-क्विप्। कुटिल गमनकारी, टेढ़ा चलनेवाला।

अभिह्वर (सं० क्लो०) १ निपतन, ज़वाल। २ वक्रता, पाप, टेढ़ाई, गुनाह।

अभिह्वार, अभिह्वर देखो।

अभिह्रुत् (सं० त्रि०) ह्वृ कौटिल्ये कर्तरि क्विप्। सम्मुख कुटिल कर्मकारी, सामने बुरा काम करनेवाला।

अभी (सं० त्रि०) नास्ति भीर्भयं यस्य, बहुव्री०। १ निर्भय, भयशून्य, बेख़ौफ़, निडर। (हिं० क्रि०-वि०) २ इसी समय, इसी वक्त। ३ शीघ्र, फ़ौरन्।

अभीक (सं० त्रि०) अभि-कन् दीर्घश्च। १ कामयमान, कामुक, ख़्वाहिशमन्द, चाहनेवाला। २ उत्सुक, नफ़सपरस्त। ३ चिन्तायुक्त, फ़िक्रमन्द। ४ क्रूर, बदमिज़ाज। नास्ति भी र्यस्य, अभी-कप्। ५ निर्भीक, भयशून्य, भयहीन, बेख़ौफ़, जिसे डर न लगे। (पु०) अभि-इण्-कक्। ६ कवि, शायर। ७ स्वामी, ख़ाविन्द। (क्लो०) ८ सम्मेलन, सामीप्य, मेलजोल, क़ुर्ब, नज़दीकी। ९ संघट्ट, समाघात, प्रतिघात, संमर्द, संघर्षण, ठोकर, लड़ाई, दुश्मनी। (अव्य०) १० सन्निधिमें, उसी स्थान वा समयपर, उपयुक्त समय, क़ुर्बमें, उसी जगह या वक़्तपर, ठीक मौक़ेसे। ११ एक ही क्षणमें, शीघ्र, एक लमहेमें, फ़ौरन्।

अभीक्ष्ण (सं० त्रि०) अभि-क्ष्णु तेजने बाहुलकात् ड दीर्घश्च, अभिगतं क्षणं वा पृषो० साधुः। १ सन्तत, निरन्तर, मुदामी, लगातार। २ भृश, अक्सर-औक़ात, जो बार-बार आता हो। (अव्य०) ३ पुनःपुनः, बारबार। ४ सदा, हमेशा। ५ अतिशय, बहुत, निहायत। ६ शीघ्र, फ़ौरन्।

अभीक्ष्णम् (सं० अव्य०) अभि-क्ष्णु बाहुलकात् डमु पृषो० दीर्घः। १ पुनःपुनः, मुहुः, बारबार, लगातार। २ शश्वत्, असकृत्, फ़ौरन्, उसी वक़्त। ३ नित्य,रोज़।

अभीक्ष्णशस्, अभीक्ष्णम् देखो।

अभीघात, अभिघात देखो।

अभीच्छत् (सं॰ त्रि॰) उत्कण्ठित, ख़्वाहिशमन्द। (स्त्री॰) अभीच्छती।

अभीज्य (सं॰ त्रि॰) १ बलि दिया जानेवाला, जिसे बलि चढ़ायें। (पु॰) २ देवता।

अभीत (सं॰ त्रि॰) अभि-इण्-क्त। १ अभिगत, प्राप्त, आया हुआ, जो हाथ लग गया हो। न भीतम्, नञ्-तत्। २ निर्भय, उत्साहान्वित, बेख़ौफ़, हौसलेमन्द।

अभीतवत् (सं॰ अव्य॰) निर्भय व्यक्तिकी भांति, भयका छोड़कर, बेख़ौफ़ शख़्सकी तरह, निडर बनके।

अभीति (सं॰ त्रि॰) नास्ति भीतिर्यस्य, नञ्-बहुव्री॰। १ निर्भय, भयशून्य, बेख़ौफ़। (स्त्री॰) अभावे नञ्-तत्। २ भयका अभाव, ख़ौफ़की अदममौजूदगी। ३ अभयदायक मुद्राविशेष। अभि-इण्-क्तिन्। ४ अभिगमन, बढ़ावढ़ी। अभि-इण् कर्मणि-क्तिन्। ५ समीप, कुर्ब, पास।

अभीत्वन् (सं॰ पु॰-स्त्री॰) १ अग्रगमन, आक्रमण, धावा, हमला।

अभीत्वर, अभीत्वन् देखो।

अभीद्ध (सं॰ त्रि॰) प्रज्वलित, द्युतिमान्, भभकते हुआ, चमकीला।

अभीपत् (सं॰ त्रि॰) अभि-पत्-क्विप् पृषो॰ दीर्घः। अभिगमनकर्ता, धावा मारनेवाला। (वै॰ पु॰) २ जिस तड़ाग या स्थानमें जल एकत्र हो जाये। ३ अपा, मेहरबानी।

अभीप्सित (सं॰ त्रि॰) अभि-आप्-सन्-क्त। अभीष्ट, अभिलषित, वाञ्छित, ख़्वाहिश किया हुआ, जो चाहा गया हो।

अभीप्सिन् (सं॰ त्रि॰) उत्कण्ठित, अभिलाषयुक्त, चाहनेवाला, ख़्वाहिशमन्द।

अभीप्सु (सं॰ त्रि॰) अभि-आप्-सन्-उ। अभिलाषुक, ख़्वाहिशमन्द, जिसको चाह लगी हो।

अभीम (सं॰ त्रि॰) बिभेत्यस्मात्, भी-मक् ततो नञ्-तत्। १ अर्जुनका अग्रज न होनेवाला, जो अर्जुनसे पहले पैदा न हुआ हो। २ जो भयानक या भयङ्कर न हो, जिससे डर न लगे।

अभीमान (सं॰ पु॰) अभि-मन-घञ् वा दीर्घः। अभिमान देखो।

अभीमोद (सं॰ पु॰) आनन्द, प्रसन्नता, ख़ुशी।

अभीर (सं॰ पु॰) आभिमुख्येन ईरयति प्रेरयति गाः, अभि-ईर्-अच्। १ गोप, ग्वाला, अहीर। पहले कृष्णा और गोदावरीके तीर विस्तर अभीर रहते थे। सिन्धु नदके कूलमें भी इनका वास था। पौराणिक मतमें इन्हें असभ्य वन्य जाति समझते हैं। सिन्धुनदके तटवर्ती अभीर कृष्णकी सोलह सौ रमणी चुरा ले गये थे। आजकल इस जातिको हम अहीर कहते हैं। कृष्णानदीके निकट गोवर्धन नामक पर्वत विद्यमान है। देवराज इन्द्रने यह पर्वत बनाया था। वनवासके समय रामचन्द्रने निकट पहुंच गोवर्धन पर्वतको पवित्र किया, उससे वह स्वर्गतुल्य स्थान हो गया। भरद्वाजने वहां एक नगर बसाया था। वह नगर उद्यान और सरोवरसे सुशोभित रहा। ब्रह्माण्ड-पुराणके मतसे उस देशको अभीर देश भी कहते हैं। सुननेमें आता, कि अत्रि और भरद्वाजवंशको कोई-कोई जाति आज भी उस स्थानमें बसती है। मालूम होता, कि इस जातिके लोगोंने अनार्य स्त्रीके गर्भसे जन्म लिया था। अभीरको स्वदेशमें वह्लिक, और वत्स, नामसे भी पुकारते हैं। वाटधान, कालतोयक, अपरीत, शूद्र, पह्लव, चर्मचन्द्रक, काम्बोज, दरद, बर्बर प्रभृति दूसरे नाम पुराणमें मिलेंगे। आभीर देखो। २ चार पादयुक्त छन्दोविशेष। इसके प्रतिपादमें ग्यारह मात्रा लगती हैं।

अभीरणी (सं॰ स्त्री॰) दुन्दुभ सर्प, पनिहा सांप। यह ज़हरीली नहीं होती।

अभीराजी (सं॰ स्त्री॰) विषाक्त कीटविशेष, कोई ज़हरीला कीड़ा।

अभीराम—सौगन्धिका-विवरण-व्याख्याकार।

अभिराम देखो।

अभीराम (अभिराम), एक गोस्वामी। यह अभिराम-गोपाल नामसे भी परिचित रहे। श्रीचैतन्यावतारमें श्रीदामके अवतार और द्वादशगोपालके अन्यतम होनेसे गौड़ीय वैष्णवसमाज इन्हें पूजता है। बङ्गाल-वासी इनको शिशीके खानाकुल-कृष्णनगरमें इन

अभिराम गोस्वामीकी गद्दी मौजूद है। अभिराम-लीलामृतमें इनकी चरिताख्यायिका विवृत हुई है।

अभीरामभट्ट—अभिज्ञानशकुन्तलके टीकाकार।

अभीरामविद्यालङ्कार—गयोचन्द्ररचित संक्षिप्तसारनामक व्याकरणकी कौमुदी नाम्नी टीकाके रचयिता।

अभीरी (सं॰ स्त्री॰) अभीर भाषा, अहीरोंकी बोली, जिस ज़बानको अहीर बोलें।

अभीरु (सं॰ त्रि॰) बिभेति, भी-क्रु। १ अभय-शील, जो डरावना न हो। २ निर्भय, बेख़ौफ़। (पु॰) ३ भैरव। ४ शिव। (स्त्री॰) ५ शतमूली, सतावर। 'शतमूली बहुसुता भीरुरिन्दीवरीवरी।' (अमर)

अभीरुक, अभीरु देखो।

अभीरुण (सं॰ त्रि॰) अभि-रु-उनन् दीर्घः। १ निर्भय, जो डरावना न हो, बेख़ौफ़, बेगुनाह। २ सम्मुख।

अभीरुपत्रिका, अभीरुपत्री देखो।

अभीरुपत्री (सं॰ त्रि॰) न भीरूणि भीरुवत् न सङ्कुचितानि पत्राण्यस्याः, नञ्-बहुव्री॰, जातित्वात् ङीप्। शतमूली, सतावर।

अभील (सं॰ क्ली॰) अभितः ईरयति प्रेरयति, अभि-ईर्-अच् रस्य लत्वम्; यद्वा अभि इतस्ततः एलयति गमयति, अभि-चुरा॰ इल-क। १ कष्ट, तकलीफ़। २ भय, ख़ौफ़। (त्रि॰) अभि इतस्ततः ईलं कष्टं गमनं वा यस्य। ३ क्लेशयुक्त, तकलीफ़में पड़ा हुआ। ४ भययुक्त, ख़ौफ़ज़दह।

अभीलाप (सं॰ पु॰) अभि-लप् भावे घञ् वा दीर्घः। अभिमुख कथन-रूप शब्द, सामने कहने जैसी लफ़्ज़।

अभीलापलप् (वै॰ पु॰ बहु॰) अतिशय कथन, हदसे ज़्यादा गुफ़्तगू।

अभीलु, अभीरु देखो।

अभीलुक, अभीरु देखो।

अभीवर्ग (सं॰ पु॰) अभि-व्रज अधिकरणे घञ्। अभिमुखसमूह, अभिमुख बहुव्यक्ति, चक्कर, दौर।

अभीवर्त (सं॰ पु॰) अभि-वर्तन्ते तिष्ठन्ति ब्रह्म साम्यतया अनेन, अभि-वृत करणे घञ् उपसर्गे दीर्घः। १ ब्रह्मसाम, ब्रह्मस्तोत्रविशेष। इसे शत्रु पर आक्रमण करते समय पढ़ते हैं। अभिवर्तयति सर्वाणि भूतानि द्वादश मासान् षड़्ऋतून् वा परिवर्तयति, अभि-वृत-कर्तरि घञ् उपसर्गे दीर्घः। २ संवत्सर। ३ सूक्त-विशेष। ४ अभितृप्तिसाधन घृतादि। ५ सर्वव्यापकत्व, हर जगहकी मौजूदगी। ६ यात्रा, रवानगी। ७ आक्रमण, हमला। ८ विजय, फ़तेहमन्दी।

अभीवृत् (वै॰ त्रि॰) सर्वव्यापी, सब जगह रहनेवाला।

अभीवृत (सं॰ त्रि॰) आच्छादित, आवेष्टित, ढंका हुआ, जो घिरा हो।

अभीशाप, अभिशाप देखो।

अभीशु (सं॰ पु॰) अभि-अशू व्याप्तौ बाहुलकात् उ, धात्ववयवस्य आकारस्येकारश्च; अथवा अभि-ईश ऐश्वर्ये उ, यद्वा अभि-अश-उ। १ रश्मि, शुवा। २ बाहु, बाज़ू। ३ अङ्गुलि, उंगली। ४ प्रग्रह, लगाम।

अभीशुमत् (सं॰ पु॰) अभी-शवः किरणाः सन्त्यस्य, बाहुलकार्थे मतुप्। १ सूर्य, आफ़ताब। (त्रि॰) २ द्युतिमान्, प्रदीप्त, चमकीला, रौशन।

अभीषङ्ग (सं॰ पु॰) अभि-सञ्ज-घञ् उपसर्गे दीर्घः। १ पराभव, शिकस्त। २ शपथ, क़सम। ३ व्यसन, आदत। ४ आसक्ति, फंसाव। ५ भूतादिका आवेश, शैतान्का साया। ६ आक्रोश, बददुवा।

'आक्रोशनमभीषङ्गः।' (अमर)

अभीषया (सं॰ अव्य॰) निर्भय हो कर, बेख़ौफ़ीसे।

अभीषाह् (सं॰ त्रि॰) १ पराभवकारी, जो दबा देता हो। (स्त्री॰) २ प्रभूत शक्ति, बड़ी ताक़त।

अभीषु (सं॰ पु॰) अभि इष्यते व्यज्यते, अभि-इष कर्मणि कु। १ किरण, शुवा। २ अश्वरज्जु, बागडोर। ३ प्रग्रह, लगाम। ४ काम, ख़ाहिश। ५ अनुराग, मुहब्बत।

अभीषुमत् (सं॰ त्रि॰) अनुरक्त, आसक्त, फ़रेफ़्ता।

अभीष्ट (सं॰ त्रि॰) अभि इष्यते स्म, अभि-इष-क्त। १ वाञ्छित, दयित, वल्लभ, हृद्य, प्रिय, अभीप्सित, ख़ाहिश किया हुआ, प्यारा, दिलदार। 'अभीष्टेऽभीप्सितं हृद्यं दयितं वल्लभं प्रियम्।' (अमर) अभि-यज-क्त। २ पूजित, परस्तिश किया हुआ। (पु॰) ३ तिलकवृक्ष, तिलका पेड़।

अभीष्टगन्धक (सं० त्रि०) माधवीलता, मधुवेका पेड़।

अभीष्टता (सं० स्त्री०) हृद्यता, प्रियता, साहिबमहब्बती, दिलदारी।

अभीष्टदेवता (सं० स्त्री०) ईप्सित देवी।

अभीष्टलाभ (सं० पु०) प्रिय पदार्थकी प्राप्ति, प्यारी चीज़का मिलना।

अभीष्टसिद्धि (सं० स्त्री०) अभीष्टलाभ देखो।

अभीष्टा (सं० स्त्री०) १ रेणुक गन्धद्रव्य, खुशबूदार खाक। २ ताम्बूल, पान। ३ गृहस्वामिनी, बीबी।

अभुआना (हिं० क्रि०) १ अतिशय चेष्टा करना, बहुत कोशिश लगाना। २ धैर्यच्युत होना, बेसब्र पड़ना।

अभुक्त (सं० त्रि०) भज-क्त, ततो नञ्-तत्। १ अभक्षित, भोजन न किया हुआ, जो खाया न गया हो। २ फलभोगविहीन, मज़ा न लिया हुआ, जो काममें न आया हो। ३ न खाये हुआ, जिसको मज़ा न मिला हो।

"अभुक्तस्य दिवानिद्रा पाषाणमपि जीर्यति।" (वैद्यकनिघण्टु)

अभुक्तमूल (सं० क्ली०) अभुक्तं मूलं पितृधनं यस्मिन् येन वा। ज्येष्ठाके शेष एवं मूलाके आदि दो दण्ड। इस कालमें जन्म लेनेसे सन्तान पितृधन भोग नहीं कर सकता।

"ज्येष्ठान्ते घटिके द्वे च मूलाद्यघटिकाद्वयम्
अभुक्तमूलमित्याहुः जातं तत्र विवर्जयेत्॥" (वशिष्ठ)

अभुक्तवत् (सं० त्रि०) भोजन न करनेवाला, जो खा न चुका हो।

अभुग्न (सं० त्रि०) १ अवक्र, सीधा, जो टेढ़ा न हो। २ स्वस्थ, नीरोग, तन्दुरुस्त, जो बीमारीसे अलग हो।

अभुज् (सं० त्रि०) न भुङ्क्ते, भुज-क्विप्, नञ्-तत्। अभक्षक, न खानेवाला, जो खाता न हो।

अभुज (सं० त्रि०) बाहुविहीन, बेबाजू, लूला, जिसका हाथ टूट जाये।

अभुजिष्य (सं० पु०-स्त्री०) जो व्यक्ति दास वा भृत्य न हो, नौकर या गुलाम न होनेवाला शख्स।

अभू (सं० पु०) १ विष्णु, नारायण। अजन्मा होनेसे विष्णुको अभू कहते हैं। (हिं० क्रि०-वि०) अभी देखो।

अभूखन (हिं० पु०) आभूषण देखो।

अभूत (सं० त्रि०) न भूतम्, नञ्-तत्। १ अनतीत, जो बीता न हो। २ क्षित्यपादि पञ्चभूत भिन्न, जो दुनियाकी चीज़से अलग हो। ३ पिशाचादि न होनेवाला, जो शयतान न हो। ४ जन्तु-भिन्न, जो जानदार न हो। ५ मिथ्याभूत, झूठा साबित होनेवाला। ६ अविद्यमान, गैरहाज़िर।

अभूततद्भाव (सं० पु०) अभूतस्य यथा भावाप्राप्तस्य तेन रूपेण भावः उत्पत्तिः, ६-तत्। पूर्व न रहनेवाले भावकी प्राप्ति, जो हासिल पहले न रहनेवाली बात हो। जैसे दूध पहले पतला रहता, गर्म करनेसे गाढ़ा पड़ जाता है। ऐसी जगह दूधका गाढ़ा पड़ना अभूततद्भाव होगा।

अभूतपूर्व (सं० त्रि०) न पूर्वं भूतम्, नञ्-तत्। पूर्व न होनेवाला, जो पहले न हुआ हो।

अभूतप्रादुर्भाव (सं० पु०) पूर्व न होनेवाले विषयका विकाश, जो ज़हूर पहले न रहनेवाली बातका हो।

अभूतरजस् (सं० पु०) पञ्चम मन्वन्तरके देवताविशेष।

अभूतशत्रु (सं० त्रि०) रिपुरहित, जिसके दुश्मन न रहे।

अभूताभिनिवेश (सं० पु०) अभूते असत्ये वस्तुनि अभिनिवेशः सत्यताकल्पनम्, ७-तत्। मिथ्यावस्तुकी सत्यकल्पना, मिथ्या वस्तुमें सत्य वस्तुका आरोप, झूठ चीज़को सच मान लेना, झूठेको सच्चा समझना।

अभूति (सं० स्त्री०) भू-क्तिन्, अभावे नञ्-तत्। १ उत्पत्तिका अभाव, पैदायशकी अदममौजूदगी। २ सम्पत्तिका अभाव, गरीबी, मुफ़लिसी। ३ शक्तिका अभाव, नाताक़ती, कमज़ोरी। (त्रि०) नास्ति भूतिर्यस्य, नञ्-बहुव्री०। ४ जन्मशून्य, नापैद, जो पैदा न हो। ५ सम्पत्तिविहीन, निर्धन, गरीब, मुफ़लिस।

अभूतोपमा (सं० स्त्री०) दश उपमाका कोई भेद। इसमें उपमानका गुण नहीं बताते।

अभूमन् (सं० पु०) बहु-इमनिच्; इकारलोपः भूरादेशश्च, नञ्-तत्। अनधिक, अल्प, थोड़ा, कम।

अभूमि (सं० पु०) भू-मि, ततो नञ्-तत्। १ अनाश्रय, अपात्र, अविषय, ग़ैरवाजिब बात, नाक़ाबिल जगह। २ भूमिसे अतिरिक्त द्रव्य, जो चीज़ ज़मीन् न हो। (त्रि०) नास्ति भूमिर्यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ भूमिशून्य, स्थानशून्य, बेजगह, बेज़मीन्।

अभूमिज (सं० त्रि०) भूमौ भूम्या वा जायते; भूमि-जन-ड, नञ्-तत्। १ अभूमिजात, जो ज़मीन्से पैदा न हुआ हो। २ आकाशादि जात, आसमान्से निकला हुआ। ३ अप्रशस्त भूमिसे उत्पन्न, नाक़ाबिल ज़मीन्से पैदा हुआ।

अभूयिष्ट (सं० त्रि०) बहु-इष्टन्, नञ्-तत्। अनधिक, न्यून, कम, जो ज़्यादा न हो।

अभूरि (सं० त्रि०) कतिपय, कुछ, थोड़ा।

अभूष (सं० त्रि०) वेशभूषारहित, सजा न हुआ।

अभृत (सं० त्रि०) भाटक न पानेवाला, जिसको किराया दिया न गया हो।

अभूय (सं० त्रि०) अनधिक, न्यून, किञ्चित्, थोड़ा, कम, जो ज़्यादा न हो।

अभेड़ा, अभेरा देखो।

अभेद (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ भेदका अभाव, फ़र्क़का न पड़ना। २ ऐक्य, बराबरी। ३ सङ्गठन, मिलावट। (त्रि०) बहुव्री०। ४ अभिन्न, निर्विशेष, बांटा न हुआ, मिलता-जुलता, बराबर।

अभेदक (सं० त्रि०) अभिन्न, निर्विशेष, न बांटने-वाला, जो फ़र्क़ न डालता हो।

अभेदनीय, अभेद्य देखो।

अभेदवादी (सं० पु०) भेद न माननेवाला व्यक्ति, जो शख़्स जीवात्मा और परमात्मामें कोई फ़र्क़ न देखता हो।

अभेद्य (सं० त्रि०) न भेत्तुं शक्यम्; भेद शक्यार्थ यत्, नञ्-तत्। १ भेद किये जानेको अशक्य, जो छेदा न जाता हो। २ विभक्त न होनेवाला, जिसे तक़सीम न कर सकें। (क्ली०) ३ हीरक, हीरा। किसी धातुसे न छिदने कारण हीरेको अभेद्य कहते हैं।

अभेद्यता (सं० स्त्री०) अविभाज्यता, अविच्छेद्यता, अविभेद्यता, अदमइनक़िसाम, ग़ैर क़ाबिलियत-इनक़िसाम, टुकड़े न उड़ सकनेकी हालत।

अभेय (हिं०) अभेद देखो।

अभेरा (हिं० पु०) युद्ध, विग्रह, लड़ाई, झगड़ा, सामना, मुक़ाबिला।

अभेव (हिं०) अभेद देखो।

अभेषज (सं० क्ली०) विपरीत औषध, उलटी दवा।

"अभेषजमिति ज्ञेयं विपरीतं यदौषधम्।" (चरक चिकित्साख्यान)

अभै (हिं०) अभय और अभी देखो।

अभैर (हिं० पु०) कलवांसा, दढ़ेरो, जिस लकड़ीमें रस्सी कस करघेकी कङ्घी लटकायी जाये।

अभोक्तव्य (सं० त्रि०) आनन्द लेने वा काममें लानेके अयोग्य, जो मज़ा उड़ाने या इस्तेमाल करने लायक़ न हो।

अभोक्ता (सं० पु०) अभोक्तृ देखो।

अभोक्तृ (सं० त्रि०) आनन्द न लेनेवाला, जो काममें न लाता हो, पृथक् रहनेवाला, मज़ा न लूटनेवाला, जो इस्तेमाल न करता हो, परहेज़गार।

अभोग (सं० पु०) आनन्दका अभाव, काममें न लानेकी स्थिति, बेलुत्फ़ी, इस्तेमालमें न आनेकी हालत।

अभोगिन्, अभोक्तृ देखो।

अभोगी, अभोक्तृ देखो।

अभोग्य, अभोक्तव्य देखो।

अभोज (वै० पु०) आनन्दनिग्रह, खुशीका न मनाना। देवताको बलि न देना अभोज कहाता है। (हिं०) अभोक्तव्य देखो।

अभोजन (सं० क्ली०) भोजनका अभाव, उपवास, निवृत्ति, न खानेकी बात, फ़ाक़ा, परहेज़।

"अजीर्णे भोजनं येषां तेषां ...। रात्राववभोजनं येषां तेषां नश्यन्ति धातवः।" (संग्रह)

अभोजित (सं० त्रि०) खिलाया न हुआ, जो

भोजनसे तृप्त न किया गया हो, खाना न खिलाया हुआ, जो खानेसे आसूदा न किया गया हो।

अभोजिन् (सं० त्रि०) भोजन न पाते हुआ, जो उपवास कर रहा हो, न खानेवाला, फ़ाक़ेमस्त।

अभोज्य (सं० त्रि०) न भोक्तुं शक्यं शास्त्रनिषिद्धत्वात्, भुज-ण्यत् निपातनात् न कुत्वम्। भोजनके अयोग्य, जो भोजनके लिये निषिद्ध हो, अमेध्य, अभक्ष्य, खानेके नाक़ाबिल, जिसको खाना मना हो, नापाक।

अभोज्यान्न (सं० त्रि०) जिसका अन्न भोजन करना निषिद्ध रहे, जिसका अनाज खाया न जाये।

अभौतिक (सं० त्रि०) पञ्चभूतसे सम्बन्ध न रखने-वाला, जिसका तअल्लुक़ दुनियावी चीज़से न रहे।

अभौम (सं० त्रि०) न भूमौ भवम्, नञ्-तत्। १ भूमिसे न उत्पन्न होनेवाला, जो ज़मीनसे पैदा न हुआ हो। २ आकाशादि जात, असमान् वग़ैरहसे पैदा हुआ। ३ जैनशास्त्रमतमें शूद्र, हीनजाति।

अभ्यक्त (सं० त्रि०) अभि-अञ्ज-क्त। आपादमस्तक तैलाक्त, सरसे पैरतक तेल लगाये हुआ।

अभ्यक्ष्ण (सं० क्लो०) अभि-अक्षू-क्स; अभितः अक्ष्णाम्, प्रादिस०। १ सर्वथा अखण्ड, जो चीज़ हर-तरह साबित हो। २ तिलकल्क, तिलकी खली।

अभ्यग्नि (सं० पु०) १ ऐतशके कोई पुत्र। (अव्य०) २ अग्निकी ओर, आतिशकी तर्फ़।

अभ्यग्र (सं० त्रि०) अभिमुखं अग्रं यस्य। १ निकट, अन्तिक, नज़दीक, पास। २ नूतन, नव, नया, ताज़ा।

अभ्यङ्क (सं० त्रि०) अचिर चिह्नित, हालमें निशान् लगाया हुआ।

अभ्यङ्ग (सं० पु०) अभ्यज्यते अङ्गं दीप्यते येन, अभि-अञ्ज-करणे घञ् कुत्वञ्च। १ आपादमस्तक तैलादि मर्दन, सरसे पैरतक तेलकी मालिश।

> "मूर्ध्नि दत्तं यदा तैलं भवेत् सर्वाङ्गसङ्गतम्।
> स्रोतोभिस्तर्पयेद्वाङ्ग अभ्यङ्गः स उदाहृतः।"
>
> (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

इसका गुण यह है,—

> "जलसिक्तस्य वर्धन्ते यथामूलेऽङ्कुरास्तरोः।
> तथा धातुविवृद्धिर्हि स्नेहसिक्तस्य जायते॥
> शिरामुखैरोमकूपैर्धमनीभिश्च तर्पयन्।" (सुश्रुत)

मदनपालके मतमें—

> "अभ्यङ्गो वातरोगघ्नः धातुसाम्यं बलं सुखम्।
> निद्रावर्णमृदुत्वानि कुरुते हृष्टिपुष्टिकृत्।
> शिरोऽभ्यङ्गः शिरस्तृप्तिकेशदार्ढ्याक्षिपुष्टिकृत्।
> केशप्रसाधनः केश्यः रजोजन्तुमलापहा।" (मदनपालनिघण्टु)

करणे ल्युट्। २ तैलादि, तेल वग़ैरह।

अभ्यञ्जन (सं० क्लो०) अभि-अञ्ज-भावे ल्युट्। १ तैल-मर्दन, तेलकी मालिश। २ तैल, तेल। ३ नेत्रमें कज्जल या सुरमेका लगाना। ४ आभूषण, ज़ेवर। ५ वेश, आकल्प, ज़ेबायश, आरास्तगी, बनावट, सजावट।

अभ्यञ्जनीय (सं० त्रि०) अभि-अञ्ज कर्मणि अनीयर्। मर्दनके योग्य, लगाने क़ाबिल।

अभ्यतीत (सं० त्रि०) मृत, निर्गत, मुर्दा, गया-गुज़रा।

अभ्यधिक (सं० त्रि०) अभि अतिशयं अधिकम्, प्रादि-स०। १ अधिकपरिमाण, ज़्यादा मिक़दारवाला। २ उत्कृष्टतम, सबसे बड़ा। ३ अति उत्कृष्ट, निहायत उम्दा। (अव्य०) ४ अतिशय, निहायत, ज़्यादातर।

अभ्यध्व (सं० अव्य०) अध्वन आभिमुख्यम्, टजन्त-अव्ययी०। १ पथके अभिमुख, राहको ओर, सड़कपर।

अभ्यनुज्ञा (सं० स्त्री०) अभि-अनु-ज्ञा-लुयट्। १ अनु-मति, रज़ा। २ पृथक्करण, बरतरफ़ी। ३ आज्ञा, हुक्म।

अभ्यनुज्ञात (सं० त्रि०) अभि-अनु-ज्ञा-क्त। नियोजित, रज़ा पाये हुआ, जिसे हुक्म मिल चुके।

अभ्यनुज्ञान (सं० क्लो०) अभि-अनु-ज्ञा-लुयट्। अनुज्ञा, रज़ा।

अभ्यनुक्त (सं० त्रि०) अभि-अनु-व्र-वच वा क्त। प्रकाश्यरूपसे न कहा हुआ, जो साफ़ तौरपर बताया न गया हो।

अभ्यन्त (सं० त्रि०) आतुर, तकलीफ़ज़दह, घबराया हुआ।

अभ्यन्तर (सं० क्लो०) अभिगतं प्राप्तं अन्तरं अवकाशं मध्यदेशं वा, प्रादि-स०। १ अन्तराल, मध्यस्थान, अन्दरूनी हिस्सा, बीचकी जगह। 'अभ्यन्तरम्त्वन्तरालम्।'(अमर)

२ उभयका मध्य, दोनोंका बीच। ३ अन्तःकरण, कलेजा। (त्रि०) ४ अन्तस्थ, भीतरी, हार्दिक, दिली। (अव्य०) ५ अन्तर्भागमें, भीतर-भीतर।

अभ्यन्तरक (सं० पु०) हार्दिक मित्र, दिली दोस्त।

अभ्यन्तरकरण, अन्तःकरण देखो।

अभ्यन्तरकला (सं० स्त्री०) गुप्त वा विलास-सम्बन्धीय विद्या, जो हुनर पोशीदा या ऐश-इशरतसे तअल्लुक रखनेवाला हो।

अभ्यन्तरायाम (सं० पु०) धनुस्तम्भ रोगविशेष, पृष्ठास्थिका सङ्कोच द्वारा वक्रीभाव, रीढ़का सिकुड़कर टेढ़ा पड़ना। इस रोगमें कुपित बलवान् वायु अङ्गुलि, वक्ष, हृदय, और गलदेशादिक पर दौड़ स्नायु समूहको खैंचता और मनुष्यको झुका देता है। यह अक्षिस्तब्धता और हनुस्तम्भादिको उत्पन्न करेगा इसका लक्षण इसतरह लिखा है,—

> "अङ्गुलीगुल्फजठरहृद्वक्षोगलसंश्रितः।
> स्नायुप्रतानमनिलो यदा क्षिपति वेगवान्।
> विष्टब्धाक्षस्तब्धहनुर्भग्नपार्श्वः कफं वमन्।
> अभ्यन्तरं धनुरिव यदा नमति मानवः।
> तदास्याभ्यन्तरायामं कुरुते मारुतो बली।" (माधव निदान)

अभ्यन्तराराम (सं० त्रि०) अभ्यन्तरे परमात्मनि आरमति, रम कर्तरि घञ्। आत्माराम, आत्मज्ञ, योगी, जो भगवान्‌का भजन करता हो।

अभ्यन्तरीकरण (सं० क्ली०) १ अभिषेक, प्रतिष्ठा, अच्छे कामका अदाय-रसूम। २ हार्दिक मित्र बनाना, दिली दोस्त पैदा करना।

अभ्यन्तरीकृत (सं० त्रि०) मध्यस्थापित, अन्तस्थ, बनाया हुआ। २ अभिषिक्त, जिसकी रस्म अदा हो जाये। ३ हार्दिक रूपसे किया हुआ, जो दिलसे किया गया हो।

अभ्यमन (सं० क्ली०) अभितः अमनम्, अम गत्यादौ भावे ल्युट्। १ अभिगमन, हमला, धावा। २ रोग, बीमारी।

अभ्यमनवत् (सं० अव्य०) १ आक्रमणसे, धावेमें, हमला करके। २ रोगसे, बीमारीमें।

अभ्यमित (सं० त्रि०) अभ्यम्यते, अभि-अम कर्मणि क्त। रुग्ण, पीड़ित, आतुर, बीमार।

अभ्यमित्र (सं० अव्य०) अम इव अमित्रः शत्रुः तस्याभिमुख्यम्, आभिमुख्ये अव्ययी०। अभ्यमित्राच्छ च। पा ५।२।१७। शत्रुके आभिमुख्य, रिपुके सम्मुख, दुश्मनके सामने।

अभ्यमित्रीण (सं० पु०) वीरतापूर्वक शत्रुसे सम्मुखीन होनेवाला योद्धा, जो सिपाही दिलेरीसे दुश्मनका सामना पकड़ता हो।

अभ्यमित्रीय, अभ्यमित्रीण देखो।

अभ्यमित्र्य, अभ्यमित्रीण देखो।

अभ्यमिन् (सं० त्रि०) अभि-अम कर्तरि णिनि। १ रोगयुक्त, बीमार। २ सम्मुखवर्ती हो पीड़नकर्ता, जो सामने तकलीफ़ पहुंचाता हो।

अभ्यय (सं० पु०) अभितः सर्वथा अयः गमनम्, प्रादि-स०। १ निकट गमन, समीपकी उपस्थिति, पासका पहुंचना। २ प्रवेश, दाखिला। ३ अस्तमय, गुरूब, सूर्यका बैठना।

अभ्यरि (सं० अव्य०) शत्रुके प्रति, अरिके विरुद्ध, दुश्मनके खिलाफ़।

अभ्यर्कविम्ब (सं० अव्य०) सूर्यके मण्डलकी ओर, आफ़ताबके घेरेकी तर्फ़।

अभ्यर्चत् (सं० त्रि०) पूजा करते हुआ, जो परस्तिश कर रहा हो।

अभ्यर्चन (सं० क्ली०) अभि-अर्च-ल्युट्। सकल प्रकार पूजा, जो पूजा अनुकूल बनानेको की जाती हो, हरतरहकी परस्तिश, जो परस्तिश मुवाफ़िक करनेको हो।

अभ्यर्चनीय, अभ्यर्च्य देखो।

अभ्यर्चा (सं० स्त्री०) अभ्यर्चन देखो।

अभ्यर्चित (सं० त्रि०) सुप्रशंसित, सकल प्रकार पूजित, खूब तारीफ़ किया हुआ, जिसकी परस्तिश सब तरह हो जाये।

अभ्यर्च्य (सं० त्रि०) अभ्यर्च्यते, अभि-अर्च कर्मणि ण्यत्। १ सर्वथा पूजनीय, सब तरह परस्तिश करने क़ाबिल। (अव्य०) ल्यप्। पूजा करके, परस्तिश पहुंचाके।

अभ्यर्ण (सं० त्रि०) अभि-अर्दि कर्मणि क्त, अदूरार्थे

इड्भाव:। १ समीप, अन्तिक, निकट, नज़दीक, क़रीब, पास।

'अभ्यर्णं नातिदूरं आसन्नं वा।' (सिद्धान्तकौमुदी)

(क्ली०) २ सामीप्य, अन्तिकता, नैकट्य, क़ुर्ब, नज़दीकी।

अभ्यर्थन (सं० क्ली०) अभ्यर्थना देखो।

अभ्यर्थना (सं० स्त्री०) अभि-अदन्त चुरा०-अर्थ भावे युच्। सर्वथा प्रार्थना, खुली अर्ज़ी, दरख़ास्त। हिन्दी भाषामें समादर देनेको अभ्यर्थना कहते हैं। जैसे—उन्होंने समागत व्यक्तिको यथेष्ट अभ्यर्थना की थी।

अभ्यर्थनीय (सं० त्रि०) अभि-अदन्त-चुरा० अर्थ गौणे कर्मणि अनीयर्। १ सर्वथा प्रार्थनीय, सब तरह अर्ज़ करने क़ाबिल। २ अगवानी करने योग्य, जिसकी ताज़ीम बजायी जाये।

अभ्यर्थित (सं० त्रि०) अभि-अदन्त-चुरा०-अर्थ गौणे कर्मणि क्त। १ प्रार्थित, याचित, अर्ज किया हुआ, जिससे मांग चुकें। २ अगवानी किया हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ३ सर्वथा प्रार्थना, दरख़ास्त।

अभ्यर्थिन् (सं० त्रि०) सर्वथा प्रार्थना करनेवाला, जो हरतरह अर्ज़ कर रहा हो। २ अगवानी या ताज़ीम देनेवाला।

अभ्यर्थ्य (सं० त्रि०) अभि-अदन्त-चुरा०-अर्थ कर्मणि ण्यत्। १ प्रार्थनीय, अर्ज़ करने लायक़। २ आगवानी करने योग्य, जो ताज़ीम पाने क़ाबिल हो। (अव्य०) ल्यप्। ३ आगवानी करके, ताज़ीम बजाकर। ४ सर्वथा प्रार्थना करके, सबतरह अर्ज़ सुनाकर।

अभ्यर्दित (सं० त्रि०) अभि-अर्द-क्त। अतिशय पीड़ित, निहायत तकलीफ़ उठाये हुआ।

अभ्यर्ध (सं० त्रि०) अभि-ऋधु वृद्धौ णिच्-अच्। इस पार्श्वपर रहनेवाला, जो इस तर्फ़ रहता हो। १ समीप, निकट, पास, क़रीब। ३ उन्नतिशील, बढ़नेवाला। (क्ली०) ४ सामीप्य, नैकट्य, क़ुर्ब, नज़दीकी। ५ इस पार्श्वको स्थिति, इस तर्फ़की रहायश।

अभ्यर्धयज्वन् (वै० त्रि०) अभ्यर्ध-यज-ङनिप्। १ दान करनेवाला, जो बख़्श रहा हो। २ पुजारीकी सम्पत्ति बढ़ानेवाला, जो परस्तिश करनेवालेकी जायदाद बढ़ा रहा हो। ३ रसको आहरण कर बरसनेवाला, जो अर्क़ खींच कर बरसाता हो।

अभ्यर्ष (सं० पु०) अभि-ऋष गतौ घ। अध्येषण, अरदास, मांग।

अभ्यर्हण (सं० क्ली०) अभि-अर्ह भावे ल्युट्। १ सर्वथा पूजा, हरतरहकी परस्तिश।

अभ्यर्हणा (सं० स्त्री० अभ्यर्हण देखो।

अभ्यर्हणीय (सं० त्रि०) अभि-अर्ह पूजायां अनीयर्। पूजनीय, परस्तिशके क़ाबिल।

अभ्यर्हणीयता (सं० स्त्री०) सुप्रसिद्धि, श्लाघ्यता, इज़्ज़तदारी, रास्ती, माक़ूलियत।

अभ्यर्हित (सं० त्रि०) अभि-अर्ह पूजायां क्त। १ पूजित, इज़्ज़त पाये हुआ। २ उचित, वाजिब।

अभ्यलङ्कृत (सं० त्रि०) सर्वप्रकार मण्डित, सम्यक् रूप भूषित, सजा हुआ, जो संवारा गया हो।

अभ्यवकर्षण (सं० क्ली०) अभि-अव-कृष भावे ल्युट्। १ निर्ह्वार, निकाल, निचोड़, खींच। २ शल्याद्युत्पाटन, कांटे वग़ैरहका निकालना।

'निर्ह्वारोऽभ्यवकर्षणम्।' (अमर)

अभ्यवकाश (सं० पु०) असंवृत स्थान, खुली जगह।

अभ्यवदान्य (वै० त्रि०) १ अनुदार, कृपण, कञ्जूस, बख़ील, जो दान न करता हो।

अभ्यवस्कन्द (सं० पु०) अभि-अव-स्कन्द-घञ्। १ शत्रुका आक्रमण, दुश्मनका हमला। २ दुर्बल बनानेको शत्रु-पर प्रहारका करना, कमज़ोर करनेके लिये दुश्मन्‌को मारना। ३ प्रहार, मार। ४ प्रपात, धावा। ५ आक्रमण, हमला। ६ अवरोध, रोक।

अभ्यवस्कन्दन (सं० क्ली०) अभ्यवस्कन्द देखो।

अभ्यवहरण (सं० क्ली०) अभि-अव-हृ-ल्युट्। भोजनका करना, खाना, निगलना। २ आहार, ख़ुराक।

अभ्यवहार (सं० पु०) अभि-अव-हृ-घञ्। अभ्यवहरण देखो।

अभ्यवहार्य (सं० त्रि०) अभ्यवह्रियते, अभि-अव-हृ-ण्यत्। १ भोजनयोग्य, भोजनीय, खाने क़ाबिल। (क्ली०) २ आहार, खाना।

अभ्यवहित (सं० त्रि०) प्रशमित, निर्वापित, ठण्डा किया हुआ, जो बुझा दिया गया हो।

अभ्यवहृत (सं० त्रि०) अभ्यवह्रियते स्म, अभि-अव-हृ-क्त। भक्षित, भुक्त, खादित, खाया हुआ, जो खा डाला गया हो।

अभ्यवायन (सं० क्लो०) अभि-अव इण-अप् वा ल्युट्। १ आभिमुख्य अपयान, नीचेकी ओरका गिराव। २ अपगमन, बुरी चाल। ३ पलायन, फ़रारी, भगोड़ापन।

अभ्यवेत (सं० त्रि०) मग्न, निविष्ट, अभिनिविष्ट, व्यापृत, लीन, आसक्त, डूबा हुआ।

अभ्यशन (सं० क्लो०) प्राप्ति, उपस्थिति, हासिल, पहुंच।

अभ्यसन (सं० क्लो०) अभ्य-अस-ल्युट्। १ अभ्यास, महावरा, कसरत। २ पुनः पुनः एकरूप क्रियाका करना, बार-बार वैसे ही कामका चलाना। ३ बार-म्बार आवृत्ति, मुतालअ, पढ़ाई।

अभ्यसनीय (सं० त्रि०) १ अभ्यास करने योग्य, महावरा डालने क़ाबिल। २ बार-बार पढ़ने योग्य, जो मुतालअ करने क़ाबिल हो।

अभ्यसित, अभ्यस्त देखो।

अभ्यसितव्य, अभ्यसनीय देखो।

अभ्यसूय, अभ्यसूयक देखो।

अभ्यसूयक (सं० त्रि०) अभ्यस्यति अभ्यसूयति अभ्यसूयते वा, अभि-अस उपतापे अस् असूञ् वा कण्ड्वादि० यक्-ण्वुल्। १ अत्यन्त असूयाकर्ता, निहायत बुग़ज़ रखनेवाला, जो बहुत ज़्यादा डाह करता हो। २ साधुव्यक्तिके गुणमें दोष आरोपक, जो भले आदमीके हुनरमें ऐब लगाता हो। (स्त्री०) अभ्यसूयिका।

अभ्यसूया (सं० स्त्री०) अभि-असू उपतापे अस् असूञ वा कण्ड्वादि० यक् प्रत्ययान्तात् अ टाप्। परगुणमें दोषारोप, स्पर्धा, दूसरेके हुनरकी ऐबजोई, बुग़ज़, डाह।

अभ्यस्त (सं० त्रि०) अभ्यस्यते स्म, अभि-अस-क्त। १ बारम्बार एकरूप कार्यकी आवृत्तिसे युक्त, बार-बार एक ही जैसा काम करनेवाला। २ शिक्षित, तालीमयाफ़्ता, पढ़ा-लिखा। ३ व्याकरणमें द्विगुणित, दुचन्द किया हुआ। (क्लो०) ४ मूलका द्विगुणित आधार, जड़की दुचन्द बुनियाद।

अभ्यस्य, अभ्यसनीय देखो।

अभ्यस्यत् (सं० त्रि०) अभ्यास करने या पढ़नेवाला, जो महावरा डाल या पढ़ रहा हो।

अभ्यस्तमय (सं० पु०) सूर्यास्तकाल, ग़ुरूब-आफ़ताब। किसीके अनुसार सूर्यका अस्त होना अभ्यस्तमय कहलाता है।

अभ्यस्तमित (सं० त्रि०) सूर्यास्तके समय सोनेवाला, जो आफ़ताबके ग़ुरूब होते वक़्त सोता हो।

अभ्याकर्ष (सं० पु०) तालका ठोंकना, ललकार।

अभ्याकाङ्क्षित (सं० त्रि०) अभ्याकाङ्क्ष्यते स्म, अभि-आ-काङ्क्ष कर्मणि क्त। १ ईप्सित, वाञ्छित, ख़्वाहिश किया हुआ, जो चाहा गया हो। (क्लो०) भावे क्त। २ मिथ्या अभियोग, बनावटी नालिश, झूठा दावा।

अभ्याक्राम (सं० अव्य०) निकट पदार्पण करके, पाससे निकलकर।

अभ्याख्यात (सं० त्रि०) मिथ्यारूप अभियुक्त, जिसपर झूठा जुर्म लग चुके।

अभ्याख्यान (सं० क्लो०) अभि-आ ख्या-ल्युट्। मिथ्या अभियोग, झूठा जुर्म। 'मिथ्याभियोगोऽभ्याख्यानम्।' (अमर)

अभ्यागत (सं० पु०) अभि-आ-गम कर्तरि क्त। १ अतिथि, अन्यवसे आगत व्यक्ति, मेहमान्, दूसरी जगहसे आया हुआ आदमी। (त्रि०) २ सम्मुखागत, सामने आया हुआ, जो आ पहुंचा हो।

अभ्यागम (सं० पु०) अभिमुखतया गच्छति यत्र, अभि-आ-गम आधारे अप्। १ युद्ध, लड़ाई। २ रणस्थल, मैदान-जङ्ग, लड़ाईका खेत। कर्मणि अप्। ३ अन्तिक, समीप, क़ुर्ब, पड़ोस। करणे अप्। ४ विरोध, दुश्मनी। भावे अप्। ५ अभ्युत्थान, बढ़ाव, उठान। ६ अभिघात, मार। ७ सम्मुखागमन, पहुंच, मुलाक़ात।

'अभ्यागमोऽन्तिके घाते विरोधाभ्युद्गमादिषु।' (विश्व)

अभ्यागमन (सं० क्लो०) अभि-आ-गम-ल्युट्। अभ्यागम देखो।

अभ्यागारिक (सं० पु०) अभ्यागारे गृहगतपुत्रादि-पोषण-कर्मणि नियुक्तः ठन्। १ गृहगत पुत्रादि पोषण-कार्य्यमें नियुक्त, जो घरके बाल-बच्चे पालनेमें लगा हो। २ पुत्रादिके पालन निमित्त यत्नवान्, जो बाल-बच्चोंके खिलाने-पिलानेकी तदबीर लड़ा रहा हो।

अभ्याघात (सं० पु०) अभि-आ-हन-घञ्। १ आघात, ताड़न, जर्ब, मार। करणे घञ्। २ आघातका उपदेश, मारनेकी सलाह।

अभ्याघातिन् (सं० त्रि०) अभ्याहन्ति, अभि-आ-हन् ताच्छील्ये णिनुण्। हिंसाशील, आघातकारी, हमला मारनेवाला, जो धावा कर रहा हो।

अभ्याचार (सं० पु०) अभि-आ-चर-घञ्। १ सर्व्वतो-भाव आचरण, सब तर्फ़की चाल। २ आक्रमण, बाधा, हमला, दस्तन्दाज़ी।

अभ्याज्ञाय (सं० पु०) अभि-आ-ज्ञा-घञ् युक् च। १ अभिज्ञान, पूर्व्वज्ञात विषयका बिलकुल अनुरूप ज्ञान, समझदारी, पहले जानी हुयी बातकी ठीक-ठीक वैसी ही समझ। (वै० पु०) २ आज्ञा, आदेश, हुक्म, फ़र्मान्।

अभ्यातान (सं० पु०) अभि-आ-तन-घञ्। अत्यन्त विस्तार, बहुत ज्यादा फैलाव।

अभ्यात्त (सं० पु०) अभ्याततति सातत्यं व्याप्नोति, अभि-अत सातत्ये कर्त्तरि क्त। १ सर्व्वव्यापक परमेश्वर। (त्रि०) अभ्यादीयतेस्म, अभि-आ-दा-क्त। २ गृहीत, पाया हुआ।

अभ्यात्म (सं० त्रि०) १ अपनी ओर निर्देश किया हुआ, जो अपनी तर्फ़ झुकाया गया हो। (अव्य०) २ अपनी ओरको, अपनी तर्फ़।

अभ्यात्मतर (सं० अव्य०) अधिक अपनी ओरको, ज्यादातर अपनी तर्फ़।

अभ्यादान (सं० क्ली०) आभिमुख्येन आदानम्, प्रादि-स०; अभि-आ-दा-ल्युट्। सोमभ्यादाने। पा ८।१।८७। १ ग्रहण, पकड़। २ आरम्भ, शुरू।

अभ्याधान (सं० क्ली०) अभीत आधानम्, प्रादि-स०; अभि-आ-धा-ल्युट्। १ सर्व्वथा मन्त्रादि द्वारा अग्न्यादिका आधान, यथाविधान अग्न्यादि स्थापन। २ संस्थापन, प्रतिष्ठा, जमावट।

अभ्यान्त (सं० पु०) अभि-अम-क्त। रोगयुक्त, निष्पीड़ित, बीमार, तकलीफ़ उठानेवाला।

अभ्यापत्ति (सं० स्त्री०) अभि-आ-पद्-क्तिन्। अभिमुख आगमन, सम्मुखका आना, आक्रमण, धावा, हमला, चढ़ाई।

अभ्यापात (सं० पु०) विपद्, विघ्न, बाधा, आफ़त, बदबख्‌ती।

अभ्यामर्द (सं० पु०) मृद्यते निष्पीड्यते अस्मिन्; अभि-आ आधारे घञ्। १ युद्ध, रण, जङ्ग, लड़ाई। भावे घञ्। २ निष्पीड़न, तकलीफ़दिही, दुःखका देना।

अभ्यायंसेन्य (सं० त्रि०) अभि-आ-यम बाहु० सेन्य। १ अभितो नियन्तव्य, रोका जानेवाला। २ अधीन बनाने योग्य, जो मातहत बनाने लायक़ हो।

अभ्यारम्भ (सं० पु०) अभि-आ-रम-घञ्-नुम्। प्रथम आरम्भ, पहला आग़ाज़, शुरू।

अभ्यारूढ़ (सं० त्रि०) अभि-आ-रुह-क्त। १ अति आरूढ़, ख़ूब चढ़ा हुआ। २ वृद्ध, बुड्ढा। ३ आगे निकला हुआ, जो सबक़त ले गया हो।

अभ्यारोह (सं० पु०) अभि-आ-रुह-घञ्। १ अभि-मुख आरोहण, ऊपरका चढ़ाव। २ एक स्थानसे दूसरे स्थानको परिवर्त्त, एक जगहसे दूसरी जगहको तबादिला। ३ उन्नति, तरक़्क़ी। आभिमुख्येनारुह्यते, देवभावोऽनेन, करणे घञ्। ४ मन्त्रजपविशेष।

अभ्यारोहण (सं० क्ली०) अभ्यारोह देखो।

अभ्यारोहणीय (सं० त्रि०) अभ्यारोढुं शक्यम्, अभि-आ-रुह-अनीयर्। १ आभिमुख्य आरोहणीय, चढ़ जाने लायक़। (पु०) २ यज्ञ विशेष।

अभ्यारोह्य (सं० त्रि०) आरोहणके योग्य, चढ़ जाने क़ाबिल।

अभ्यावर्त्त (सं० त्रि०) अभ्यावर्त्तते, अभि-आ-वृत् कर्त्तरि अच्। १ पुनः पुनः आवर्त्तमान, बार-बार वापस आने-वाला। २ अभि-आ-वृत-णिच् कर्मणि अच्। ३ बार-म्बार आवर्त्तनीय, बार-बार वापस आने क़ाबिल।

(पु०) भावे घञ्। ४ अतिशय आवृत्ति, हदसे ज़्यादा दोहराव। (अव्य०) ५ पुन: पुन: आवृत्ति करके, बार-बार दोहराकर।

अभ्यावर्तिन् (सं० त्रि०) अभ्यावर्तते, अभि-आ-वृत-णिनि। १ सर्वदा स्थितिशील, बार-बार आनेवाला। (पु०) २ वेदोक्त चयमान राजपुत्र।

अभ्यावृत्त (सं० पु०) अभि-आ-वृत् उपसृष्टत्वात् क्त। १ आभिमुख्य आनीत होमशेष द्रव्य, होमकी जो बची हुयी चीज, सामने लायी गयी हो। (त्रि०) २ बारम्बार अभ्यस्त, बारम्बार आवृत्तियुक्त, बार-बार मह्वावरा डाला हुआ, जो बार-बार दोहराया गया हो।

अभ्यावृत्ति (सं० स्त्री०) अभि-आ-वृत-क्तिन्। बारम्बार अभ्यास, पुन: पुन: आवृत्ति, दोहराव, बार-बारका मह्वावरा।

अभ्याश (सं० पु०) अभिमुखं आश्यते व्याप्यतेऽनेन, अभि-आ-अशू व्याप्तौ करणे घञ्। १ निकट, क़ुर्ब, पड़ोस। २ अभिव्यापन, अभिव्याप्ति, पहुंच। ३ फल, नतीजा। (अव्य०) ४ समीप, नज़दीक।

अभ्याशादागत (सं० त्रि०) निकट स्थानसे आगत, जो नज़दीकसे आया हो।

अभ्याशे (सं० अव्य०) समीप, नज़दीक।

अभ्यास (सं० पु०) आभिमुख्येन आस्यते चिप्यते पदादि यत्र, अभि-आ-असु चेपे आधारे घञ्। १ निकट, समीप, क़ुर्ब, पड़ोस, नज़दीक पास। २ पुन: पुन: अनुशीलन, बार-बारका काम। ३ पुनरावृत्ति, दोहराव। ४ साधन, सामरिक अनुशीलन, सदाका व्यायाम, प्रयोग, स्वभाव, प्रथा, मह्वावरा, अङ्गो कसरत, मुदामो मेहनत, इस्तैमाल, आदत, रिवाज। ५ वेदादिकी आवृत्ति, कण्ठाग्र पठन, ज़बानी याददाश्त। ६ शिक्षा, तालीम। ७ धनुर्विद्याका अनुशीलन, तीर चलानेका मह्वावरा। कर्मणि घञ्। ८ व्याकरणोक्त द्विरुक्त धातु भागद्वय, दोबारका दोहराव, तशदीद। ९ काव्यमें—अन्तिम चरणका दोहराव, ग़ज़लके आख़िरी मिसरे-मिसरेका बार-बार कहा जाना। १० गणित शास्त्रमें—गुणन।

अभ्यासकला (सं० स्त्री०) आसन और प्राणायामकी एकता। योगमें जो चार कला होतीं, उनमें इसका भी नाम पाते हैं। यह विविध साधनके संयोगसे निकलेगी।

अभ्यासता (सं० स्त्री०) अनवरत अनुशीलन, प्रयोग, व्यसन, लगातार मह्वावरा, इस्तैमाल, आदत।

अभ्यासनिमित्त (सं० क्ली०) व्याकरणके द्वित्वका कारण, नह्वकी तशदीदका सबब।

अभ्यासपरिवर्तिन् (सं० त्रि०) समीप वा निकट भ्रमणकारी, पास या क़रीब घूमनेवाला।

अभ्यासयोग (सं० पु०) अभ्यासेन सर्वदालोचनया योग:, ३-तत्। सर्वदा एक विषयकी चिन्ता द्वारा जात समाधि, जीवात्मा और परमात्माका संयोग, अभ्यास द्वारा किसी कार्यका मन:संयोग, बार-बार यादका आना।

अभ्यासव्यवाय (सं० पु०) द्वित्वाचरसे उत्पन्न अवकाश, जो वक़फ़ा तशदीदसे निकलता हो।

अभ्यासादन (सं० क्ली०) अभि-आ-सद्-णिच् ल्युट्। शस्त्रादि द्वारा शत्रुको निर्बल बनानेका काम, शत्रुपचपर आक्रमण, शत्रुके सम्मुखगमन, निकट स्थापन, हथियार वग़ैरहसे दुश्मनको कमज़ोर करना, अदूपर हमला मारना, दुश्मनका सामना पकड़ना, नज़दीक जा पहुंचना।

अभ्यासी (सं० पु०) अभ्यास उठानेवाला, जो मह्वावरा डालता हो।

अभ्याहत (सं० त्रि०) आहत, स्तम्भित, ज़ख़्मी, चोट खाये हुआ।

अभ्याहनन (सं० क्ली०) आघात, वध, स्तम्भन, मार-पीट, क़त्ल, फटकार।

अभ्याहार (सं० पु०) आभिमुख्येन आहार: आहरणम्, प्रादि-स०। १ अपकारकी इच्छासे सम्मुखका आक्रमण, साचात् चौर्य, डाका, दिन-दहाड़ेकी लूटमार। २ अभियोग, नालिश। ३ कवचादि धारण, बख़्तर वग़ैरहका पहनना। ४ आलिङ्गन, हमागाशी। ५ मेलन, मेल-जोल। ६ आभिमुख्य आनयन, सामनेका लाना। ७ भक्षण, खाना। यह चर्व्य, चोष्य, लेह्य और पेय भेदसे चार प्रकारका होता है।

अभ्याहार्य (सं॰ त्रि॰) भोजन कर लेने योग्य, जो खा डालनेके लायक् हो।

अभ्याहित (सं॰ त्रि॰) अभि-आ-धा-क्त। मन्त्रादि द्वारा यथाविधान संस्कार किया हुआ, जो रख दिया गया हो।

अभ्युक्त (सं॰ त्रि॰) आभिमुख्येन उक्तम्, प्रादि-स॰। समक्ष उक्त, साक्षात् उक्त, प्रकाशित, सामने जाहिर किया हुआ, जो रूबरू कह दिया गया हो।

अभ्युक्षण (सं॰ क्ली॰) आभिमुख्येन उक्षणम्, प्रादि-स॰; अभि-उक्ष सेचने ल्युट्। सेचन, अधोमुख हस्त द्वारा सेचनरूप संस्कार विशेष, सिंचाई, छिड़काव, आब्पाशी। "मूलेनाभ्युक्षणं कुर्यात्।" (तन्त्र) मूलमन्त्र पढ़ निम्नमुख हस्त द्वारा स्थण्डिलमें जल छिड़क देना चाहिये। इस बातके प्रमाणमें लिखा है,—

"उत्तानेनैव हस्तेन प्रोक्षणं परिकीर्तितम्।
न्यञ्चिताभ्युक्षणं प्रोक्तं तिरश्चावोक्षणं स्मृतम्॥" (स्मृति)

वैध कार्यमें हाथ सीधा रख जो जलसेक किया जाता, वह प्रोक्षण कहलाता है। फिर उलटे हाथसे किये जानेवाले जलसेकको अभ्युक्षण कहेंगे। इसी-तरह हाथ घुमा जो जलसेक होता, उसका नाम अवोक्षण पड़ा है। मीमांसक द्रव्यनिष्ठ अभ्युक्षणादि संस्कारको अदृष्ट विशेष रूप बतायेगा।

अभ्युक्षित (सं॰ त्रि॰) अभि-उक्ष-क्त। अभ्युक्षण किया हुआ, जो छिड़का गया हो।

अभ्युक्ष्य (सं॰ त्रि॰) अभ्युक्षितुं योग्यम्, अभि-उक्ष अर्हार्थे ण्यत्। अभ्युक्षणके योग्य, छिड़कने क़ाबिल। (अव्य॰) उलटे हाथसे जलका छींटा देकर, ऊपर छिड़कके।

अभ्युचित (सं॰ त्रि॰) साधारण, रीतिमत, मामूली, जो रिवाजमें आ गया हो।

अभ्युच्चगामिन् (सं॰ त्रि॰) १ अतिशय उच्च गमन करते हुआ, जो निहायत ऊंचे चढ़ा जाता हो। (पु॰) २ बुद्ध विशेष।

अभ्युच्चय (सं॰ पु॰) अभि-उद्-चि-अच्। वृद्धि, बढ़ती। "सरित्सु खभ्युच्चयमादधानम्।" (भट्टि ७।९)

अभ्युच्छ्रित (सं॰ त्रि॰) अधिरोपित, उन्नीत, उपरि-नियुक्त, ऊपर चढ़ाया हुआ, जो बढ़ा दिया गया हो।

अभ्युच्छ्रितकर (सं॰ त्रि॰) उन्नीतहस्त, जो हाथ उठाये हो।

अभ्युत्क्रुष्ट (सं॰ त्रि॰) उच्चैर्घोष द्वारा प्रशंसित, जिसकी तारीफ़ बुलन्द आवाज़ोंसे हो चुके।

अभ्युत्क्रोशन (सं॰ क्ली॰) उच्चैर्घोष, बुलन्द-आवाज़, ज़ोर की चिल्लाहट।

अभ्युत्क्रोशनमन्त्र (सं॰ पु॰) प्रशंसाका गीत, जो गाना किसीकी तारीफ़के बारेमें हो।

अभ्युत्थान (सं॰ क्ली॰) अभितः उत्थानम्, प्रादि-स॰; अभि-उद्-स्था-ल्युट्। १ किसीका आदर करनेके लिये आसन छोड़ खड़ा हो जाना, ताज़ीम। २ प्रत्युद्-गमन, अग्रसर हो किसीका आदरपूर्वक आनयन, अगवानी। ३ उद्यम, उद्भव, उच्चपदप्राप्ति, अधिकार-प्राप्ति, तरक़्क़ी, उठान, ऊंची जगहका पाना।

अभ्युत्थायिन् (सं॰ त्रि॰) अभ्युत्तिष्ठति, अभि-उद्-स्था-णिनि-युक्। उत्तिशील, दण्डायमान, उठनेवाला, जो खड़ा हो। (स्त्री॰) ङीप्। अभ्युत्थायिनी।

अभ्युत्थायी, अभ्युत्थायिन् देखो।

अभ्युत्थित (सं॰ त्रि॰) अभि-उद्-स्था-क्त। अभि-वादनके निमित्त खड़ा हुआ, पूज्य व्यक्तिको सम्मान-रक्षाके लिये आसनसे उत्थित, आभिमुख्य उद्गत, उठा हुआ, जो उठकर खड़ा हो गया हो।

अभ्युत्थिताश्व—दशरथसे उत्पन्न हुये कोई नृपति-विशेष।

अभ्युत्थेय (सं॰ त्रि॰) अभ्युत्थातुं अर्हम्, अभि-उद्-स्था उपसृष्टत्वात् यत्। अभिवाद्य, जिसके अभिवादन-को आसनादिसे उठना पड़े, ताज़ीमके लायक़, जो अगवानी किये जाने क़ाबिल हो।

अभ्युत्पतन (सं॰ क्ली॰) आभिमुख्येनोत्पतनम्, प्रादि-स॰; अभि-उद्-पत-ल्युट्। सम्मुख भाव ऊर्ध्व-गमन, उल्लम्फन, उद्गमन, झपटा-झपटी, कूद-फांद, किसीके ऊपर जाकर पड़ना।

अभ्युदय (सं॰ पु॰) अभितः उदयः, प्रादि-स॰; अभि-उद्-इण-अच्। १ अभीष्ट कार्यका प्रादुर्भाव,

ख़ाहिश की हुयी बातका हो जाना। २ वृद्धि, उन्नति, बढ़ती, तरक्क़ी। 'अभ्युदये क्षमा।' (हितोपदेश) अभितः उदयः मङ्गलम्, प्रादि-स०। ३ विवाह और पुत्र-जन्मादि रूप इष्टलाभ, मुरादोंका हो जाना। ४ ग्रहका उत्थान, सितारेका निकलना। ५ आरम्भ, आग़ाज़। ६ आनन्द, ख़ुशी। ७ शुभफल, अच्छा नतीजा। ८ उत्सव, जलसा। ९ समापत्ति, दैवयोग, दैवगति, दैवघटन, हादिसा, वाक़िया, माजरा।

अभ्युदयार्थक (सं० त्रि०) अभ्युदयः इष्टलाभः अर्थो निमित्तं यस्य, बहुव्री० कप्। अभ्युदयके निमित्त किया जानेवाला, जो अभ्युदयके लिये हो। आभ्युदयिक श्राद्ध, विवाहादि सकल मङ्गल कार्यसे पहले हो करना चाहिये। किन्तु पुत्रजन्म प्रायश्चित्त प्रभृति कर्मके बाद भी आभ्युदयिक श्राद्धका विधान पाया जाता है।

अभ्युदयिन् (सं० त्रि०) उठते हुआ, जो निकल रहा हो।

अभ्युदयेष्टि (सं० स्त्री०) अघमर्षण यागविशेष।

अभ्युदानयन (सं० क्ली०) अभि-उद्-आ-नी-ल्युट्। अग्निके अभिमुख आनयन, आगके सामने पहुंचाना।

अभ्युदाहरण (सं० क्ली०) अभि-उद्-आ-हृ-ल्युट्। १ अभिमुख कथन, सामनेकी बातचीत। २ अभिमुख उत्क्षेपण, सामनेकी उछाल। ३ किसी पदार्थका विपरीत भावसे निदर्शन, जो मिसाल किसी चीज़ पर उलटे तौरसे पड़ती हो।

अभ्युदित (सं० त्रि०) अभितः सम्यक् उदितं उत् क्रान्तं वा प्रातर्विहितं वेधकर्मनिद्रादिवशात् येन यस्य वा, प्रादि बहुव्री०; अभि-उद्-इण-क्त। १ निद्रावशतः प्रातःकालका वेधकर्म न करनेवाला, जो नींदके सबब सवेरेका मुनासिब काम न करता हो।

'सुप्ते यस्मिन्नस्तमेति सुप्ते यस्मिन्नुदेति च।
अंशुमानभिनिर्म्मुक्ताभ्युदितौ तौ यथाक्रमम्॥' (अमर)

२ सर्वांश उदित, पूरे तौरसे निकला हुआ। ३ कथित, कहा हुआ। ४ प्रादुर्भूत, जो हुआ हो। ५ वर्द्धित, बढ़ा हुआ। ६ उत्सवकी भांति प्रसिद्ध किया हुआ, जो जलसेकी तरह मशहूर किया गया हो। (क्ली०) ७ सूर्योदय, आफ़ताबका निकलना। ८ उद्गम, उठान।

अभ्युदीरित (सं० त्रि०) अभि-उद्-ईर्-क्त। १ सम्मुख कथित, सामने कहा हुआ। २ ऊपर फेंका हुआ, जो चला दिया गया हो। (क्ली०) भावे क्त। ३ कथन, कलाम।

अभ्युद्ग (सं० त्रि०) उठते हुआ, जो निकल रहा हो।

अभ्युद्गत (सं० त्रि०) १ विस्तृत, फैला हुआ। २ अभ्यर्थनार्थ प्रस्थानित, जो ताज़ीमके लिये बाहर गया हो। ३ उत्थित, उठा हुआ।

अभ्युद्गतराज (सं० पु०) बौद्ध कल्प विशेष।

अभ्युद्गम (सं० पु०) अभि-उद्-गम-अप्। १ अभ्युत्थान, उन्नति, उद्भव, उठान, बढ़ती, होती। २ अभ्यर्थनार्थ उठना, ताज़ीम बजानेको खड़ा हो जाना।

अभ्युद्गमन (सं० क्ली०) अभितः उद्गमनम्, प्रादि-स०; अभि-उद्-गम-ल्युट्। अभ्युद्गम देखो।

अभ्युद्दृष्ट (सं० क्ली०) दृग्गोचर होना, दिखाई देना, उदय, उठान।

अभ्युद्दृष्टा (सं० स्त्री०) संस्कार विशेष, कोई रस्म।

अभ्युद्धृत (सं० त्रि०) अभि-उद्-हृ-क्त। १ याच्ञा विना आनीत, बेमांगे लाया हुआ। २ अभ्यर्थना करके प्रदत्त, जो ताज़ीमके साथ दिया गया हो। अभि-उद्-धृत। ३ अभिमुख होकर उत्तोलन द्वारा धृत, जो सामने उछालकर पकड़ा गया हो।

अभ्युद्यत (सं० त्रि०) अभितः सम्यक् उद्यतम्, प्रादि-स०; अभि-उद्-यम-क्त। १ अयाचित अथच किसी व्यक्तिकर्तृक आनीत, बेमांगे लाया या दिया हुआ। २ उद्यत, उपक्रम-विशिष्ट, कार्य करनेमें प्रवृत्त, बिलकुल तैयार, उठा हुआ, जो काम कर रहा हो।

अभ्युद्यन्त् (वै० त्रि०) भिगोते हुआ, जो तर कर रहा हो। २ बढ़ जानेवाला, जो बढ़ते जा रहा हो। (स्त्री०) अभ्युद्यन्ती।

अभ्युन्नत (सं० त्रि०) अभितः सम्यक् उन्नतम्, अभि-

उद्-नम कर्तरि क्त। १ सम्यक् उन्नत, चढ़ा-बढ़ा, जो ऊंचा हो चुका हो। २ समधिक उच्च, ऊपरको उठा हुआ, जो निहायत ऊंचा या भरा हो।

अभ्युन्नति (सं० स्त्री०) सम्यक् समृद्धि वा उन्नति, बड़ी तरक्की या खुश-खुरमी।

अभ्युपगत (सं० त्रि०) अभि-उप-गम क्त म लोपः। १ स्वीकृत, अङ्गीकृत, मञ्जूरशुदा, जो मान लिया गया हो। २ निकट गत, पास पहुंचा हुआ। ३ प्रमाणित, सम्भव, हवाला दिया हुवा, जो मुमकिन हो। ४ विवक्षित, प्रतीत, उपलक्षित, सूचित, मफ़हूम, मुतसव्वर, मानी रखते हुआ। ५ सम, समान, तुल्य, अनुगुण, अनुरूप, सधर्मन्, मुताबिक़, मिस्ल, वैसा ही, मानिन्द, हमशक्ल, मुतशाबेह, मिलता-जुलता। (स्त्री०) अभ्युपगता।

अभ्युपगन्तव्य (सं० स्त्री०) निकट जाने योग्य, जो पास पहुंचने लायक़ हो।

अभ्युपगन्ता (सं० पु०) अभ्युपगन्तृ देखो।

अभ्युपगन्तृ (सं० त्रि०) सम्मुख उपस्थित होने या स्वीकार करनेवाला, जो पास पहुंचता या मञ्जूर कर लेता हो।

अभ्युपगन्त्री (सं० स्त्री०) अभ्युपगन्तृ देखो।

अभ्युपगम (सं० पु०) अभि-उप-गम-अप्। १ समीप-गमन, पासका पहुंचना। २ प्रतिज्ञा, स्वीकार, अङ्गी-कार, इक़रार, राज़ीनामा, ठेका, क़ौल-क़रार। ३ नियम, क़ायदा। ४ विश्वास, एतबार। ५ सम्बिद्। यह न्यायशास्त्रके चार सिद्धान्तमें सम्मिलित है। जब वेदेखे-सुने कोई मानी हुई बात काटी जाती, तब उसकी विशेष परीक्षा अभ्युपगम-सिद्धान्त कहलाती है। 'अभ्युपगमः समीपागमने स्वीकृतावपि।' (हेम)

अभ्युपगमसिद्धान्त (सं० पु०) अङ्गीकृत तत्त्व, माना हुआ उसूम-मुतारफ़ा।

अभ्युपगमित (सं० त्रि०) १ अङ्गीकार कराया हुआ, सम्मतिसे प्राप्त, मरज़ीसे मिला हुआ, जो मना लिया गया हो। (पु०) २ नियत अवधिका दास, जो मुक़ाम मुक़र्रर वक़्तके लिये हो।

अभ्युपपत्ति (सं० स्त्री०) अभि अतिशया उपपत्तिः प्रादि-स०; अभि-उप-पद्-क्तिन्। १ अनिष्ट निवारण और इष्ट सम्पादन रूप अनुग्रह, मेहरबानी, प्यार। 'अभ्युपपत्तिरनुग्रहः' (अमर) २ सान्त्वना, हिफ़ाज़त, बचाव। ३ सम्मति, रज़ा। ४ किसी स्त्रीका गर्भाधान, औरतका हमल।

अभ्युपपत्तुम् (सं० अव्य०) अभितः उपपत्तुम्, प्रादि-स०; अभि-उप-पद्-तुमुन्। सान्त्वनाके निमित्त, अनु-ग्रहार्थ, हिफ़ाजतके लिये, मेहरबानीके वास्ते।

अभ्युपपन्न (सं० त्रि०) अभि-उप-पद्-क्त तस्य न। अनुगृहीत, बचाया हुआ।

अभ्युपयुक्त (सं० त्रि०) नियुक्त, व्यवहृत, काममें लगा हुआ, जो इस्तैमाल किया गया हो।

अभ्युपशान्त (सं० त्रि०) निर्वापित, प्रशमित, ठण्ढा किया हुआ, जो कम कर दिया गया हो।

अभ्युपस्थित (सं० त्रि०) सहित, अनुषक्त, समेत, परिवृत, साथ, हाज़िरी दिया हुआ, जिसको मदद मिली हो।

अभ्युपाकृत (सं० त्रि०) भाग ग्रहण करनेको आहूत, जो हिस्सा लेनेका बुलाया गया हो।

अभ्युपाय (सं० पु०) अभितः उपायः, प्रादि-स०; अभि-उप-इण्-अच्। १ स्वीकार, रज़ा, इक़रार। २ अधिक उपाय, कल्प, साधन, ज़रिया, वसीला, तवस्सुल, चारा, इलाज, मकहक।

अभ्युपायन (सं० क्ली०) उत्कोच, पारितोषिक, रिशवत, इनाम।

अभ्युपावृत्त (सं० त्रि०) समीपागत, आया हुआ, जो पहुंच गया हो।

अभ्युपेत (सं० त्रि०) अभि समीपं उपेतम्, प्रादि-स०; अभि-उप-इण्-क्त। १ अभिमुखसे समीपगत, पहुंचा हुआ। २ अङ्गीकृत, स्वीकृत, मञ्जूर किया हुआ, जो मान लिया गया हो।

अभ्युपेतव्य, अभ्युपेय देखो।

अभ्युपेतार्थकृत्य (सं० त्रि०) अभिलषित अर्थकी सम्पा-दनार्थ विहित, जो ख़ाहिश किये हुये तमाशेकी तस-नीफ़के लिये मरकून् हो।

अभ्युपेत्य (सं० त्रि०) अभि-उप-इण्-ल्यप् तुमागमः।

१ आभगमनाय, पास जाने क़ाबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ स्वीकार करके, समीप पहुंचकर।

अभ्युपेत्या (सं० स्त्री०) अभि-उप-इण् भावे ल्यप्। सेवा, ख़िदमत, टहल।

अभ्युपेत्याशुश्रूषा (सं० स्त्री०) अभ्युपेत्य स्वीकृत्य अशुश्रूषा सेवनाभावः। दासत्व करनेमें स्वीकृत होनेसे उसका अकरण रूप विवाद विशेष, भृत्यके कर्तव्य कर्ममें त्रुटि डालनेपर उसी कार्यकी अवहेलाके निमित्त प्रभु और भृत्यका परस्पर विवाद, मालिक और नौकरकी शर्तका बिगाड़।

अभ्युपेय (सं० त्रि०) अङ्गीकार किया जानेवाला, जो मञ्ज़ूर करने क़ाबिल हो।

अभ्युष (सं० पु०) अभित उष्यते ओष्यते वा अग्निना दह्यते, अभि-उष ओष वा बाहुलकात् कर्मणि क्त। १ पोलिका, रोटी। उष भावे कर्मणि वा घञ्। २ अल्प दग्ध अन्न, कुछ जला हुआ अनाज। भावे घञ्। कलायादिका अल्प दहन, दानेकी थोड़ी भुंजाई। अभि-उष भावे घञ्। ३ भुना हुआ अनाज, बहुरी, भूंगड़ा। चना मटर वगैरह भूननेपर चट-चटानेसे अभ्युष कहलाता है।

राजनिघण्टुमें अभ्युषका इस तरह गुण लिखा गया है,—यह मधुर, गुरु, रोचक एवं बलकारी होता और श्लेष्मा, रक्त तथा पित्तको बढ़ाता है; फिर अङ्गारपर भूननेसे आग्नेय, वायुवृद्धिकर, लघु और बलकारक हो जायेगा।

अभ्युषित (सं० त्रि०) अभि-वस-क्त। सम्मुख रहने-वाला, जो एकत्र वास करता हो, नज़दीक क़याम करनेवाला, जो साथ ही ठहरा हो।

अभ्युषीय (सं० त्रि०) अभ्युष-सम्बन्धीय, बहुरी या भूंगड़ेसे तअल्लुक़ रखनेवाला।

अभ्युष्य, अभ्युषीय देखो।

अभ्यूह्य (सं० अव्य०) १ प्रतिफल निकालकर, नतीजा पैदा करके। २ अटकल लगाकर, तक़दीर-कलाम मिलाके।

अभ्यूढ़ (सं० त्रि०) १ निकट आनीत, नज़दीक लाया हुआ। २ प्रतिफलित, नतीजा निकाला हुआ।

अभ्यूष, अभ्युष देखो।

अभ्यूषीय, अभ्युषीय देखो।

अभ्यूष्य, अभ्युषीय देखो।

अभ्यूह (सं० पु०) अभि-ऊह-घञ्। १ वितर्क, बहस। २ अटकल साधन, तक़दीर-कलामका बहम पहुंचाना। ३ बुद्धि, समझ।

अभ्यूहनीय (सं० त्रि०) अभितः ऊहनीयं ऊह्यं वा अभि-ऊह-अनीयर् यत् वा। तर्कनीय, बहस करने क़ाबिल।

अभ्यूहितव्य, अभ्यूहनीय देखो।

अभ्यूह्य, अभ्यूहनीय देखो।

अभ्येत्य (सं० अव्य०) समीप उपस्थित होके, पास पहुंचकर।

अभ्येषण (सं० क्ली०) १ इच्छा, ख़्वाहिश, चाह। २ आक्रमण, हमला, धावा।

अभ्रेषणीय (सं० त्रि०) अभिलाष किया जानेवाला, जिसकी चाह लगी रहे।

अभ्रोष, अभ्युष देखो।

अभ्रोषीय, अभ्युषीय देखो।

अभ्रोष्य, अभ्युषीय देखो।

अभ्र (सं० क्ली०) अभ्र-अच्। अभ्रक, अबरक। अन्यान्य विवरण अबरक शब्दमें देखो।

भारतवर्ष, साइबेरिया, पेरु, मेक्सिको, नारवे, सुइडेन प्रभृति नाना स्थानके पार्वतीय प्रदेशमें यह उप-धातु उत्पन्न होता और सचराचर देखनेमें कांच-जैसा परिष्कार और श्वेतवर्ण रहता है। किसी किसी जातिके अभ्रमें सिलिका ४६-६३ भाग, मेग्नेशिया ३०-३५ भाग एवं जल २-६ भाग मिलता है। तद्भिन्न अन्यान्य जातीय अभ्रमें लौह, मेङ्गनिज़, क्रोम, फ़्लोरिन् प्रभृति पदार्थ भी विद्यमान रहते हैं। इन सब पदार्थोंके गुणसे श्वेत, धूसर, सब्ज़, लाल, धुंधला, कृष्ण वर्ण एवं क्वचित् पीतवर्ण अभ्र देखनेमें आता है। कोई कोई अभ्र चट्-चटा, कोई विलक्षण स्थितिस्थापक एवं कितना ही अभ्र तोड़नेपर परत-परत अलग होजानेवाला रहता है। अभ्र बहुत पतला होता है। सचराचर १००००० इससे अधिक मोटा नहीं पड़ता।

अनेक खानिमें दो हाथ व्याससे भी बड़ा-बड़ा अभ्र पाया जाता है। अणुवीक्षणयन्त्रकी परीक्षासे द्रव्य निर्दिष्ट करनेके लिये अभ्र यथेष्ट व्यवहृत होता है। साइबेरिया, पेरु, मेक्सिको प्रभृति स्थानमें खिड़कीपर कांचकी जगह अभ्र ही लगाया जाता है। अभ्रधातुके गुणमें शीतोष्णता बदलनेसे कुछ भी व्यतिक्रम नहीं पड़ता, परन्तु कांचके गुणमें बहुत व्यतिक्रम होता है। इसीसे लालटेनमें भी अच्छा अभ्र लगाया जा सकता है। दीवार खूब साफ, और सुन्दर दिखाई देनेसे अनेक देशके राजमिस्त्री अभ्रचूर्ण देकर मन्दिरको रंगते हैं। भारतवर्षके अजमेर आदि नाना स्थानीय अट्टालिकाकी भीतरी छतमें लाल, सब्ज, प्रभृति अनेक प्रकारके ताम्रपर अभ्र चढ़ा है। इससे राजप्रासादका सौन्दर्य बहुत बढ़ता है। तोप वगैरहकी गहरी आवाज़के धक्केसे कांच तड़क जाता, परन्तु अभ्र नहीं टूटता; इसलिये यह रणपोतमें भी लगता है। इस देशके माली रास, दोल, विवाह आदि अनेक प्रकार उत्सवमें अभ्रके झाड़, ग्लास, फानूस और दूसरे भी कितने ही खिलौने बनाते हैं। अबीरके साथ कोई कोई अभ्र मिलाते हैं। वैद्य लोग अनेक रोगमें औषधके साथ अभ्र प्रयोग करते हैं।

वैद्यमतसे अभ्र चार प्रकार है। यथा,—पिनाक, दर्दुर, नाग और वज्र। कहते हैं, कि पूर्वकालमें वृत्रासुरको वध करनेके लिये इन्द्रने वज्र उत्पन्न किया था। उस वज्रसे स्फुलिङ्ग झर कर पर्वतोंपर जा गिरा। उसीसे अभ्रकी उत्पत्ति हुयी है। इसीसे आज भी लोग कहा करते, कि मेघ गरजनेसे अभ्र उत्पन्न होता है। फिर सुनते हैं कि मेघ हस्तिरूपसे सालको पत्ती खाता है। सालकी पत्ती खाते समय उसके मुंहसे लार टपकती, उसी स्वच्छ लारसे अभ्र उत्पन्न होता है। 'रसेश्वर'में लिखा, कि गौरीके रजसे अभ्रक धातुकी उत्पत्ति हुई है।

शास्त्रकार कहते हैं,—श्वेतवर्ण अभ्र जातिमें ब्राह्मण, रक्तवर्ण—क्षत्रिय, पीत—वैश्य और कृष्णवर्ण शूद्र रहता है। इनमें रौप्य मुक्तादिपर श्वेतवर्ण अभ्र विहित है। रसायनमें रक्तवर्ण, सुवर्णादिमें पीतवर्ण एवं रोमादिमें कृष्णवर्ण अभ्र प्रशस्त होता है।

आगमें डालनेसे पिनाक अभ्रका सब परत खुल जाता है। इसके खानेसे कुष्ठरोग उत्पन्न होता है। दर्दुर अभ्रको आगमें डालनेसे गोल गोल कुण्डली पड़ती और एक प्रकारका शब्द निकलता है। इस अभ्रके खानेसे मृत्यु हो सकती है। नागाभ्रको आगमें छोड़नेसे सांपकी फुसकार-जैसा शब्द होता है। इसके खानेसे भगन्दर रोग लगता है। वज्राभ्र देखनेमें काला होता है। आगमें डालनेसे यह जैसेका तैसा ही रहता, कोई भावान्तर नहीं पड़ता; इसीसे यह सब अभ्रमें श्रेष्ठ है। उत्तर पर्वतमें जो काला अभ्र होता, वही विशेष गुणकर होता है। दक्षिण पर्वतका अभ्र उतना गुणकर नहीं ठहरता। कृष्णाभ्रसे सब व्याधि और जरा मिट जाती, और इसका सेवन करनेसे अकालमृत्यु कम होती है। किन्तु अन्यान्य धातुकी तरह विना शोधित किये अभ्र भी सेवन न करना चाहिये। जिस पार्वतीय प्रदेश या पथरीले स्थानमें अभ्रकी खानि होती, वहांका जल पीना उचित नहीं; पीनेसे अनेक प्रकारका उत्कट रोग लग जाता है।

अभ्र शोधनेकी प्रणाली—पहले कृष्णवर्ण अभ्रको आगमें जलाकर गायका कच्चा दूध छोड़ देते हैं। इस प्रक्रियाको कोई कोई एकवार और कोई कोई पांच सात बार करते हैं। फिर अभ्रको अच्छी तरह धोकर उसके सब तह खोल डालते हैं। सब तह अलग अलग हो जानेसे उसे कागज़ी नीबू और चोलाई शाकके रसमें आठ दिन तक भिगो रखते हैं।

उसके बाद एक गुण उक्त शोधित अभ्र और उसका चतुर्थांश शाठी चावल एक साथ कम्बलसे लपेटकर तीन दिन जलमें भिगो रखना चाहिये। फिर उसको हाथसे मलनेपर विशुद्ध अभ्रकणा कम्बलके छेदसे बाहर गिर पड़ेगी। उसे ही संग्रह कर लेते और धान्याभ्र कहते हैं।

धान्याभ्रको मन्दारवाले पाटेके साथ पत्थरीके खलमें अच्छी तरह मर्द्दन करके टिकिया बना लेते हैं। फिर

टिकियेको मन्दारके पत्तेमें लपेटकर गजपुटसे पकाना चाहिये। इस तरह सातबार मन्दारके आटेसे मर्दन और सात बार पकाकर अन्तमें वटको बौके रसमें फिर मर्दन करना पड़ेगा। पीछे तीन बार पहले ही की तरह गजपुटसे पकाते हैं। इसतरह पक जानेपर यह जारित अभ्र कहा जाता है।

जारित अभ्र और उसीके बराबर गायके घी दोनोको एक साथ मिला कर लौह-पात्रमें पकाना चाहिये। जब घी जल जाय, तब पात्रको उतार ले। इसे अमृतीकरण कहते हैं। इस प्रकारसे प्रस्तुत किया हुआ अभ्र कषाय, मधुर, शीतवीर्य्य, आयुष्कर एवं धातुपोषक होता और त्रिदोष, व्रण, मेह, कुष्ठ, प्लीहा, उदरी, ग्रन्थिरोग तथा क्रमिको नष्ट करता है। मात्रा २-६ रत्ती रहेगी। इसे मधुके साथ सेवन करना पड़ता है। वैद्यलोग जारित अभ्रसे नाना प्रकारके औषध प्रस्तुत करते हैं।

मिष्टर जी वाट अपनी "Dictionary of the Economic Products of India"में लिखते हैं :—

अभ्र चार प्रकारका होता है। यथा—Muscovite (लाल), Boitite (काला), Lepidolite (सीसेके रङ्गका) और Lepidomelane।

हिन्दुस्थानके अनेक स्थानोंमें अभ्रककी खानि हैं, ... व्यवहारयोग्य अभ्रक थोड़े ही स्थलोंमें पाया जाता ...। यह प्राय: बेढङ्गे पत्थरोंके दर्रेमें मिलता है। मन्द्राजवाले विजगापट्टम ज़िलेके अन्तर्गत कोलरमें जितने बड़े बड़े पत्र कामके योग्य चाहिये, उतने ही बड़े बड़े मिल जाते हैं; परन्तु वह अच्छे नहीं होते। क्योंकि रुपयेके प्राय: बारह सेर मिलते हैं। प्रधानत: इसकी आमदनी विहारके हज़ारीबाग़ ज़िलेसे होती है। वहां धब्बो, कुदरमा, धूब और जामताराकी खानोंसे अभ्रक निकाला जाता है। पास ही गया और मुंगेर ज़िलेके रजाऊमें भी नौ इच लम्बे और उतने ही चौड़े अभ्रके पत्र मिलते हैं। हज़ारीबाग़ ज़िलेके उत्तरी अंशमें एक फुट या उससे अधिक व्यासवाले मस्कोवाइट (Muscovite)के पत्र निकलते हैं। मेलेट कहता है, मैंने २०×१७ और २२×१५ इचके पत्र भी देखे; फिर खानि खोदनेवालोंको कभी कभी इससे भी बहुत बड़े पत्र मिले हैं। इस ज़िलेका अभ्रक धूम्रा-जैसे भूरे या लाल-भूरे रङ्गका होता है। यह सामान्य मोटाईके पत्रोंसे मिलता और बहुत स्वच्छ रहता है। व्यापारका यही लाल अभ्रक है। जब-तब यह पीले या जैतून-जैसे सब्ज़ रङ्गका भी पाया जाता है। मैलेटके कथनानुसार इसी ज़िलेमें कभी कभी Boitite और सीसे-जैसे भूरे या गहरे नीले रङ्गका Lepidolite अभ्रक मिलता है। महिसूरमें मसकोवाइट (Muscovite) अभ्रके एक एक फुट लम्बे पत्र निकलते हैं। वह चित्रकारोंके काममें आते हैं। पश्चिमघाट पर्वतश्रेणी और उसकी पूर्व ओरवाली ज़मीनमें लालटेन बनाने और खिड़कियोंमें लगाने लायक़ बड़े बड़े पत्र मिलते हैं। मिष्टर ब्राउथका कथन है, कि बाइनादकी रङ्ग बदनेवाली चट्टानोंके दर्रेमें भी बड़े बड़े पत्र पाये जाते हैं। इरवाइनका कहना है, कि राजपूतानेमें बड़े बड़े पत्र खानिसे निकाले जा सकते हैं। मैलेटका मत है, कि टोंकके उत्तर-पूर्व चतुर्भुज पहाड़ी और जयपुरमें भी अच्छे क़दके पत्र मिलते हैं, परन्तु वह हज़ारीबाग़के अभ्रक-जैसे अच्छे नहीं होते। सतलज नदीवाले बाङ्गतू पुलके पास पत्थरके दर्रोंसे भी बड़े बड़े टुकड़े निकलते हैं। मि॰ बेडेन पौयेल लिखते हैं, कि गुड़गांवमें बहुत अच्छे और बड़े बड़े पत्र मिले थे, जो सन् १८६४ ई॰ को लाहोरकी प्रदर्शिनीमें देखाये गये।

अभ्रकका चूर्ण कपड़ा छापनेके काममें व्यवहार किया जाता है, फिर धोबीलोग चमक देनेके लिये उसे कपड़ेमें भी लगा देते हैं।

संस्कृतज्ञ लेखकोंके मतानुसार अभ्रक चार प्रकारका होता है। यथा—सफेद, लाल, पीला और काला। सफेद लालटेन बनानेके काम और काला औषधमें व्यवहार किया जाता है। व्यवहारमें लानेसे पहले इसे शोध लेते हैं। पहले गर्म करके यह दूधमें भिगोया जाता है। उसके बाद तह अलग अलग कर लेते, फिर चौलाई भाजीके रस और

क्काथकमें आठ दिन तक उन्हें भिगो रखते हैं। पीछे उन्हें मोटे कपड़ेके टुकड़ेमें रख और थोड़े से धान मिला कर मलते हैं। मलनेसे कपड़ेके छेदोंसे अभ्रकका चूर्ण नीचे गिर पड़ता है। उसे उठा कर इकट्ठा कर लेते हैं। यह धान्याभ्रक कहा जाता है। इस धान्याभ्रकको गोमूत्रमें मिला एक मट्टीके बरतनमें रख उसका मुंह बन्द कर देते हैं। फिर उसे सौ बार आगमें फूंकते हैं। कोई कोई सहस्र बार भी फूंकते हैं। इसे सहस्रपुटित अभ्र कहते हैं। यह आठ रुपये तोला बिकता है। इस अभ्रका रंग ईंटके चूर-जैसा लाल होता, खानेमें नमकीन और सोंधा मालूम देता है। यह उत्तेजक और पुष्टिकारक होता है। यह लोहेके साथ रक्ताल्पता, कंवल, संग्रहणी, अतीसार, आंव, पुराने ज्वर, प्लीहा, मूत्ररोग और नामर्दी आदि रोगोंमें काम आता है। लोहेके साथ देनेसे इसका गुण बढ़ जाता है। मात्रा ६से १२ ग्रेन तक रहेगी।

चीना लोग इसे जीवनवर्द्धक समझते हैं।

अभ्रकको लालटेन, दरवाजे, और खिड़कियां बनाई जाती हैं। यह चित्रोंमें चमक देनेके काम आता और दर्पणोंके पीछे लगाया जाता है। हिन्दुस्थानमें यह मन्दिर, राजभवन, झण्डे और कपड़े आदिके सजानेमें लगेगा। अभ्रकका चूर्ण मट्टीके बरतनों और साधारण कपड़ोंमें भी दिया जाता है। चित्रकार इसे चित्रकारीके काममें लाते हैं।

अभ्रंलिह (सं० पु०) अभ्रं गगनं लेढ़ि स्पृशति, अभ्र-लिह-खश्-मुम्। १ वायु, हवा। (त्रि०) २ अतिशय उच्च, गगनस्पर्शी, निहायत ऊंचा, आसमानको चूमनेवाला।

अभ्रक, अभ्र देखो।

अभ्रकभस्मन् (सं० क्ली०) अबरककी खाक।

अभ्रकसत्व (सं० पु०) ईस्पात, लोहा।

अभ्रकुष, अभ्रङ्कष देखो।

अभ्रज, अभ्रज देखो।

अभ्रनाग (सं० पु०) अभ्रस्य मेघस्य नागः हस्ती, ६-तत्। ऐरावत, इन्द्रका हाथी।

अभ्रनामक (सं० पु०) मुस्ता, मोथा।

अभ्रपटल (सं०-पु०-क्ली०) अभ्रक, अबरक।

अभ्रपथ (सं० पु०) अभ्रे गगने पन्था, ७-तत्। गगनमार्ग, विमान, शून्यपथ, आसमान्‌को राह।

अभ्रपिशाच, अभ्रपिशाच देखो।

अभ्रपिशाचक, अभ्रपिशाच देखो।

अभ्रपुष्प, अभ्रपुष्प देखो।

अभ्रप्रुष् (वै० स्त्री०) बादलको छींट, बूंदाबांदी।

अभ्रम (सं० पु०) भ्रमो भ्रमणं मिथ्याज्ञानञ्च, अभावे नञ्-तत्। १ भ्रमका अभाव, भ्रमण न लगना, शककी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति भ्रमो यस्य यत्र वा, बहुव्री०। २ अभ्रान्त, भ्रमशून्य, न भूलनेवाला, जिसमें कोई शक न रहे।

अभ्रमती (सं० स्त्री०) आनर्त्त या काठियावारप्रान्तकी एक प्राचीन नदी। (स्कन्दे नागरखण्ड ११८।४४)

अभ्रमांसी (सं० स्त्री०) अभ्रमिव जटाया मांसी यस्य, बहुव्री०। आकाशमांसीलता, जटामांसी।

अभ्रमातङ्ग, अभ्रमातङ्ग देखो।

अभ्रमाला (सं० स्त्री०) अभ्राणां मेघानां माला श्रेणी, ६-तत्। मेघसमूह, मेघश्रेणी, घटा, बादलका जमघट।

अभ्ररोहस् अभ्ररोहस् देखो।

अभ्रलिप्त (सं० त्रि०) मेघसे आच्छादित, बादलसे भरा हुआ।

अभ्रलिप्ती (सं० स्त्री०) अभ्रेण लिप्तम्, स्त्रीत्वात् ङीप्; ३-तत्। अल्प मेघयुक्त आकाश, जिस आसमानमें थोड़ा बादल रहे।

अभ्रवटिका (सं० स्त्री०) अबरककी गोली। यह रसविशेष ज्वरातिसार रोगमें देना और मटर-बराबर गोली रखना चाहिये। इसके बनानेका विधि यह है,—

"अथ सूतस्य शुद्धस्य गन्धकस्याभ्रकस्य च।
प्रत्येकं कर्षमेकन्तु ग्राह्यं रसगुणैषिणा।
ततः कज्जलिकां कृत्वा व्योषचूर्णं प्रदापयेत्।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याश्चित्रकस्य च।
श्रीमत्सुन्दरकस्यापि जयन्त्याः स्वरसं तथा।
मण्डूकपर्ण्याः स्वरसं ततः कनकमस्य च।

श्वेतापराजितायाश्च स्वरसं पर्णसम्भवम्।
दापयेत्तत्र तुल्यञ्च विधिज्ञः कुशलो भिषक्।
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णं मरिचसम्भवम्।
देयं रसार्धभागेन चूर्णं टङ्कणसम्भवम्॥" (रसरत्नाकर)

ग्रहणीपर चलनेवाली अभ्रवटिका इसतरह बनेगी,—

"पक्के ष्टकाहरिद्राभ्यामगारधूमकेन च।
शोधितं पारदञ्चैव कर्षार्धं तुलया धृतम्॥
भृङ्गराजरसैः शुद्धं गन्धकं रससम्मितम्।
ताभ्यां कज्जलिकां कृत्वा भावयेत्तत्तु भेषजैः॥
सिन्दुवारदलरसे मण्डूकपर्णिकारसे।
केशराजरसे चैव श्रीमसुन्दरजे रसे॥
रसेऽपराजितायाश्च सोमराजीरसे तथा।
रक्तचित्रकपत्रोत्थे रसे च परिभावितम्।
रसमानसमानेन छायायां शोषयेद्भिषक्॥" (राजनिघण्टु)

अभ्रवर्ष (सं॰ पु॰) अभ्रैर्मेघैर्वृष्यते, वृष कर्मणि घञ्। १ मेघ कर्तृक सिच्यमान स्थान, जो जगह बादलसे सींची जाती हो। भावे घञ्। २ मेघवर्षण, बादलका बरसना।

अभ्रवाटक (सं॰ पु॰) अम्रातक वृक्ष, अमड़ा।

अभ्रवाटिक (सं॰ पु॰) अभ्रेण शून्येन वाटो वेष्टनं यस्य, बहुव्री॰। आम्रातक वृक्ष, अमड़ा। अमड़ेकी पत्ती झड़ जानेसे वृक्ष केवल शून्य द्वारा वेष्टित रहता, इसीसे इसका नाम अभ्रवाटिक पड़ा है।

अभ्रवाटिका (सं॰ स्त्री॰) अभ्रवाटिक देखो।

अभ्रशिरस् (सं॰ क्ली॰) आकाशका बना हुआ शिर, जो सर आसमान्से बना हो।

अभ्रसार (सं॰ पु॰) भीमसेनी कर्पूर, काफूर।

अभ्राज (सं॰ त्रि॰) न भ्राजते, भ्राज-अच्; नञ्-तत्। अनुज्ज्वल, मैला, जो अच्छा न मालूम हो।

अभ्राता (सं॰ पु॰) अभ्रातृ देखो।

अभ्रातृ (सं॰ त्रि॰) नास्ति भ्राता यस्य, बहुव्री॰। भ्रातृशून्य, जिसके भाई न रहे।

अभ्रातृक, अभ्रातृ देखो।

अभ्रातृमत्, अभ्रातृ देखो।

अभ्रातृमती (सं॰ स्त्री॰) अभ्रातृ देखो।

अभ्रातृमान् (सं॰ पु॰) अभ्रातृ देखो।

अभ्रातृव्य (सं॰ त्रि॰) नास्ति भ्रातृव्यः भ्रातुष्पुत्रः शत्रुर्वा यस्य, नञ्-बहुव्री॰। १ भ्रातुष्पुत्रहीन, जिसके भतीजा न रहे। २ शत्रुरहित, जिसके दुश्मन न रहे।

अभ्रान्ती (सं॰ स्त्री॰) अभ्रान्ति देखो।

अभ्रान्त (सं॰ त्रि॰) भ्रम-क्त, ततो नञ्-तत्। भ्रान्तिशून्य, प्रमादरहित, न घबराया हुआ, जो ग़लतीमें न हो, साफ़, ठहरा हुआ।

अभ्रान्तबुद्धि (सं॰ त्रि॰) विशुद्ध प्रज्ञा-सम्पन्न, जिसकी अक़्ल, बिगड़ी न रहे।

अभ्रान्ति (सं॰ स्त्री॰) भ्रम-क्तिन्, नञ्-तत्। १ भ्रान्तिका अभाव, प्रमादका न पड़ना, भ्रमणकी शून्यता, घबराहट या ग़लतीका न होना। (त्रि॰) नञ्-बहुव्री॰। २ भ्रान्तिशून्य, जो घबराहट या ग़लतीमें न पड़ता हो।

अभ्रावकाश (सं॰ पु॰) अभ्र आकाशमेव अवकाशः अवसरः। मेघका शरण, बादलकी पनाह।

अभ्रावकाशिक (सं॰ त्रि॰) अभ्रावकाशः अस्त्यस्य, इनि स्वार्थे कन् वा। केवल आकाशावरणयुक्त, जो आकाश भिन्न अन्य आवरणसे विशिष्ट न हो, बारिशके तईं खुला हुआ।

अभ्रावकाशिन्, अभ्रावकाशिक देखो।

अभ्राह्व (सं॰ क्ली॰) कुङ्कुम, केसर।

अभ्रि, अनुभ्रि देखो।

अभ्रिखात (सं॰ त्रि) लकड़ीके फावड़ेसे खोदा हुआ।

अभ्रित (सं॰ त्रि॰) मेघाच्छन्न, बादलसे भरा हुआ।

अभ्रिय (सं॰ त्रि॰) १ मेघ-सम्बन्धीय, बादलसे पैदा हुआ। (पु॰) २ विद्युत, बिजली। (क्ली॰) ३ सौदामिनीयुक्त मेघसमूह, जिस घटामें बिजली भरी रहे।

अभ्रूष (सं॰ पु॰) तालुरोगविशेष, तालूकी कोई बीमारी। इसमें स्तब्धलोहित एवं शोणितोत्थ शोथ, ज्वरकी-तीव्र वेदनासे युक्त रहता है।

अभ्रेष (सं॰ पु॰) भ्रेष चलने घञ्, ततो नञ्-तत्। १ युक्तता, योग्यता, क्षमता, पात्रता, उपयोगिता,

उपपत्ति, नाक़ाबिलियत, लियाक़त, मक़दूर। (त्रि०) २ चलनशून्य, जिसका रिवाज न रहे।

अभ्य (सं० पु०) नग्न साधु, जो फ़क़ीर नङ्गे रहता हो।

अम्भ (सं० त्रि०) आ समन्तात् भवति विद्यते, आ-भू बाहुलकात् क; उपसर्गह्रस्वत्वम्। १ महत्, बड़ा, भारी, ताक़तवर। २ भीषण, भयदायक, हलाकू, ख़ौफ़नाक। (क्ली०) ३ जल, पानी। ४ मेघ, बादल। ५ निर्भर, चश्मा। ६ राक्षस, आदमख़ोर। ७ अपूर्व शक्ति, अनोखी ताक़त। ८ घोर विपत्ति, बड़ी आफ़त। ९ प्रखरता, तेज़ी। (पु०) १० शक्तिशाली शत्रु, कट्टर दुश्मन।

अम, आम (सं० पु०) अम गतौ अच् घञ् वा। १ सेवक, नौकर। २ साथी, हमसोहबत। ३ बल, ताक़त। ४ रोग, बीमारी। ५ प्राण, नफ़स। ६ अपक्व फलादि, कच्चा फल वगैरह।

'अमो रोगे नविशेषे चामीऽपक्के तु वाच्यवत्।' (विश्व)

अमगांव—मध्यप्रदेशके चांदा ज़िलेका एक परगना। इसमें बहुत पहाड़ पड़ा है। सिवा वाणगङ्गाके निकट दूसरी जगह जङ्गलकी कोई कमी नहीं देखते। इसमें वाणगङ्गाकी कितनी ही सहायक नदी बहती हैं। यहां चावल, टसर और जङ्गली चीज़ ख़ासकर पैदा होगी। पूर्व-सागर-तटसे कितना ही नमक मंगाया जाता है। उत्तरमें तेलगू और दक्षिणमें लोग मराठी भाषा बोलेंगे। तैलङ्गी ही इसके प्रधान व्यापारी हैं।

अमम्न (सं० पु०) न मर्म्म यत्र, नञ्-बहुव्री०। सागर विशेष, किसी बहरका नाम। कुशद्वीपके अन्तर्गत ज्वालामुख पर्वतपर भाल्लायन राजा रहते थे। वह अपनी भगिनी अन्तमंदाके साथ तपोवनमें पहुंच तपस्या करने लगे। मायादेवीने नाना प्रकार प्रलोभन देखा उनकी तपस्यामें विघ्न डालनेकी विस्तर चेष्टा की थी। किन्तु किसीतरह वह कृतकार्य न हुयीं। अन्तमंदाने उससे गर्वित हो कहा था,— 'त्रिभुवनके लोग अब आकर हमारी पूजा चढ़ायें। हम वशिष्ठपत्नी अरुन्धतीके सदृश विराजमान हैं। देवाङ्गना होनेसे हम नक्षत्रलोकमें जाकर रहेंगी।' इस गर्वित वाक्यसे मायादेवी अतिशय क्रुद्ध हो गयी थीं। उन्होंने भौवेंको बुला तपोवनमें आग लगवा दी। किन्तु तपोवनमें विष्णु अन्तमंदाके सहाय रहे। चक्रपाणि मायासे पर्वत बन गये थे। उसी पर्वतकी गुहामें राजा और उनकी भगिनी दोनो जा छिपे। इसीसे उस स्थानको स्थामाच्छादित वा परिरक्षित कहते हैं। मायादेवी पुनर्वार प्रबल भाड़ बांध उन्हें विरक्त बनाने लगी थीं। विष्णु भी पुनर्वार बृहत् वृक्ष बन तने और डालसे उन्हें बचा लिया था। उस स्थानको रक्षितस्थान कहते हैं। इतने पर भी मायादेवीकी मनस्कामना पूर्ण न हुयी। परिशेष पर उन्होंने अन्तमंदाको पकड़ किसी सागरके जलमें डाल दिया था। किन्तु विष्णुकी मायासे अन्तमंदा न डूबीं, पानी पर तैरने लगीं। उस दिनसे इसके जलमें कोई वस्तु डालने पर नहीं डूबती। यही इसके अमम्न नाम पड़नेका कारण है।

आधुनिक प्रत्नतत्त्वानुसन्धायी अनुमान बांधते, कि राजा और उनकी भगिनी मिस्रके उत्तर-प्रदेशमें तपस्या करने गये थे, आस्फाल्टाइटिस सागरका ही नाम अमम्न रहा। नहीं कह सकते, यह मीमांसा कहांतक सङ्गत है।

अमङ्गल (सं० पु०) मङ्ग-अलच्; नास्ति मङ्गलं प्रयोजनं यस्मात्, ५-बहुव्री०। १ एरण्डवृक्ष, रेंड़का पेड़। एरण्डवृक्षसार न रखनेसे किसी काम नहीं आता। (त्रि०) ६ वा ७-बहुव्री०। २ मङ्गलशून्य, अकुशल, बदशिगून, बदबख़्त, बुरा। (क्ली०) नञ्-तत्। ३ अशुभ, बदशिगूनी, कमबख़्ती। ४ अशुभसूचक लक्षणादि, जो शिगून वगैरह बुरा हो। हमारे शास्त्रकारने विस्तर अशुभ लक्षणका उल्लेख उठाया है। ब्रह्मवैवर्तपुराणमें इसका विस्तारित विवरण मिलेगा। दिवसमें शृगालका हुआना, कुत्तेका रोना, रात्रिको उल्लूका बोलना, द्रोणकाक या जङ्गली कौवेका कांव-कांव करना, गृहमें गृध्रका गिरना और यात्राकालमें भग्न वा शून्य कुम्भ, तैल, लवण, अस्थि, कार्पास, कच्छप, कुत्ते, छिन्नकेश, मत्त, मल, देवलब्राह्मण, ग्रामयाजक, शशक, शाह, विष,

तेली, व्याध, नपुंसक, संपेरे प्रभृतिका देख पड़ना विस्तर अमाङ्गलिक लक्षण माना गया है।

अमङ्गल्य (सं० त्रि०) मङ्गलाय हितं यत्, नञ्-तत्। अमङ्गलजनक, अशुभ, बदशिगून्, बुरा, खराब।

अमचूर (हिं० पु०) सूखे आमकी बुकनी, जो अमहर पीस ली गयी हो।

अमजद अलीशाह—मुहम्मद-अली शाहके लड़के। सन् १८४२ ई०की १७ वीं मईको यह अपने बापकी जगह लखनऊके राजसिंहासनपर बैठे और अवधके नवाब बने थे। उसी उत्सवके उपलक्षमें इन्हें सुरिया शाहकी उपाधि मिली। सन् १८४७ ई०की १६ वीं मार्चको इनकी मृत्यु हुयी थी। फिर इनके लड़के वाजिद-अली शाहको राज्यका भार दिया गया। सन् १८५६ ई० को ७ वीं फरवरीको अंगरेज-सरकारने वाजिद-अली शाहसे लखनऊकी नवाबी छीन अपने राज्यमें मिला ली थी।

अमजेर—गुजरातका एक राज्य। सन् १८५७ ई० को मऊमें सिपाहियोंके बलवा करनेपर यहांके राजाने भोपावारके पोलिटिकल एजण्ट कप्तान हचिनसनपर आक्रमण किया था।

अमण्ड (सं० त्रि०) मन-ड; नास्ति मण्डो यस्य, बहुव्री०। १ मण्डरहित, माड़से खाली, जिसमें माड़ न रहे। २ भूषणहीन, बेसाज। (पु०) ३ एरण्ड-वृक्ष, रेंड़का पेड़।

अमण्डित (सं० त्रि०) भूषित न किया हुआ, जो संवारा न गया हो।

अमड़ा (हिं० पु०) आम्रातक, अमारी। (Spondias mangifera) यह वृक्ष छोटा और पतझरा होता है। इसे भारतवर्षके इस सिरेसे उस सिरेतक वन्य अवस्थामें पायें या लगायेंगे। सिन्धुनदसे पूर्व एवं दक्षिण, मलाका और सिंहल तक इसका अधिक प्रसार देखते हैं। हिमालय पर यह ५००० फ़ीटसे ऊंचे न उगेगा। प्रकृतिने इसे अनयनहृत्त एशियामें विभाजित किया है।

इसके बकलेसे मृदु-निःसार निर्यास टपकता, जो कुछ-कुछ अरबी-निर्यास जैसा होता; किन्तु रङ्गमें ज्यादा काला निकलता है। वह वृक्षसे लटकते हुये कुछ-कुछ पीले या लाल-जैसे भूरे रङ्गवाले भागमें रहे और उसका चिकना-चमकीला तल चमका करेगा। अधिक जलके साथ यह लसदार गोंद बनाता, जो सीसेके नमकसे जम जाता; फिर बुनियादी नमक और लाइमकी हरी भापसे चिपचिपाने लगता है। किन्तु इसमें सोहागेका कोई काम नहीं देखते।

इसके फलवाले गूदेको संस्कृत लेखकोंने खट्टा, कसैला और पित्त-सम्बन्धीय अजीर्ण रोगमें लाभदायक बताया है। इसीसे कभी-कभी अमड़ेको पित्तवृक्ष कह देते हैं। हमलोग खटाईके लिये इसे तरकारीमें डालें और इसका अचार बनायेंगे। पत्ता और बकला कसैला-खुशबूदार रहता और पेचिशकी दवाके काम आता है। इसका गोंद शामक होगा। पत्तीका अर्क कहीं-कहीं कानमें दर्द होनेसे छोड़ा जाता है। ब्रह्मदेशकी शान जाति इस फलको ज़हरीले वाणसे हुये घावके लिये ज़हरमोहरा समझती और आवश्यकता आनेसे हरा या सूखा ही खा लेती है।

इसका फल अक्तोबरमें पके और सबसे बड़ा होने-पर हंसके अण्डे-जैसा निकलेगा। रङ्गमें वह खूब जैतूनी-हरा रहता और पीला-काला धब्बा पड़ जाता है। उसमें कोई गन्ध नहीं होता। बकलेके पासका भाग बहुत खट्टा लगता, किन्तु उसे निकाल डालनेसे गुठलीके पास फल मीठा और खाने लायक आता है। पकने पर उसे कभी-कभी सूखा भी खाते, किन्तु प्रायः तरकारीमें खटाई देनेको हरा ही छोड़ देते हैं। तेल, नमक और लाल मिर्च मिलाके फलकी चटनी भी बनायेंगे। गो और हिरण फलको बड़े चावसे खाते हैं।

इसकी लकड़ी मुलायम और कुछ-कुछ भूरी होती है। प्रति घन फ़ुटमें लकड़ीका वज़न कोई छत्तीस सेर रहेगा। लकड़ी सिर्फ़ जलानेके ही काम आती है।

अमत (सं० पु०) अम-अतच्। १ रोग, बीमारी। २ मृत्यु, मौत। ३ काल, समय। (त्रि०) मन-क्त,

नञ्-तत्। ४ असम्मत, अज्ञात, मालूम न होनेवाला, जो दमाग़से समझ न पड़ता हो।

अमतपरार्थ (सं० त्रि०) प्रधान विषयसे असम्बद्ध, ख़ास मज़मूनसे लगाव न रखनेवाला।

अमति (सं० पु०) अम-अति। १ काल, वक़्त। २ चन्द्र, चांद। ३ दण्ड, सज़ा। (स्त्री०) ४ दीप्ति, चमक। ५ रूप, सूरत। ६ ज्ञानाभाव, बेवक़ूफ़ी। ७ अप्रशस्तबुद्धि, ओछी समझ। (त्रि०) ८ दुष्ट, बदमाश। ९ ज्ञानहीन, बेसमझ। १० दरिद्र, ग़रीब।

अमतिपूर्व (सं० त्रि०) अचेतन, अज्ञात, बेहोश, बेइरादा, जिसे पहलेका ख़याल न रहे।

अमतीवन् (सं० त्रि०) अमतिरप्रशस्ता बुद्धिस्तय वनुते, वन-क्विप् दीर्घः। १ अप्रशस्त बुद्धियुक्त, ओछी समझवाला। २ दरिद्र, निर्धन, ग़रीब, जिसके पास दौलत न रहे।

अमत्त (सं० त्रि०) न मत्तम्, नञ्-तत्। अक्षीव, निर्मद, बाहोश, जो मतवाला न हो।

अमत्र (सं० क्ली०) १ भाजनपात्र, भाजन, बरतन। २ बल, ताक़त। (त्रि०) ३ अहिंसित, ताक़तवर। ४ अपरिमित, हदसे ज़्यादा।

अमत्रिन् (सं० त्रि०) १ शक्तिशाली, बलवान, ताक़तवर, ज़ोरदार। २ भाजन लिये हुआ, जिसके पास बरतन मौजूद रहे।

अमत्सर (सं० पु०) मद-सरन्, ततो नञ्-तत्। १ अन्यके मङ्गलमें हिंसाका अभाव, दूसरेकी भलाईमें हसदका न करना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ मात्सर्यरहित, अन्यके प्रति द्वेषशून्य, हसद न रखनेवाला, फ़याज़, जो किसीसे डाह न करता हो।

अमद (सं० त्रि०) विषण्ण, निरानन्द, बेचैन, ग़मज़दह, रञ्जीदह, जो उदास रहता हो।

अमदन (अ०-क्रि०-वि०) इच्छापूर्वक, सरासर, जान-बूझकर।

अमधव्य (सं० त्रि०) सोममाधुर्यके अयोग्य, जो सोमको मिठाईके क़ाबिल न हो।

अमधुपर्क्य (सं० त्रि०) मधुपर्कके अयोग्य, जो शहद, दूध और घी मिलाकर दिया जानेके क़ाबिल न हो।

अमधुर (सं० त्रि०) १ कटु, कड़वा, जो मीठा न हो। (पु०) २ वंशीके छः दोषमें एक दोष।

अमध्यम (सं० त्रि०) अमध्यस्थ, बीचमें न पड़नेवाला।

अमध्यस्थ (सं० त्रि०) असामान्य, असमबुद्धि, जो बेख़बर न हो।

अमध्यस्थधर्मिणी (सं० स्त्री०) चेतनजडोभय धर्मवर्तिनी न होनेवाली, जा जानदार और बेजान दोनो सिफ़तके बीच न रहती हो।

अमन (अ० पु०) आनन्द, शान्ति, चैन, बचाव।

अमननीय, अमन्तव्य देखो।

अमनस् (सं० त्रि०) नास्ति प्रशस्तत्वात् कार्यक्षमं मनो यस्य। १ कार्यक्षम मनोहीन, काम करने लायक़ तबीयत न रखनेवाला। २ मनोवृत्तिशून्य, जिसका मन मर जाये। (क्ली०) ३ जो इन्द्रिय इच्छाका न हो, ज्ञानका अभाव, जो औज़ार अक़्लका न हो।

अमनस्क (सं० त्रि०) १ इच्छाके इन्द्रियसे रहित, जिसे ज्ञान न रहे, ख़्वाहिशका आला न रखनेवाला, जिसे मालूम न पड़े। २ अचेतन, बेहोश।

अमनस्विन् (सं० त्रि०) अज्ञान, अमनुष्यधर्मा, बेसमझ, आदमख़ोर-जैसा।

अमनाक् (सं० अव्य०) अधिक, अन्यून रूपसे, ज़्यादा, बहुत, ख़ूब।

अमनि (सं० स्त्री०) १ गति, चाल। 'अमनिर्गतिः।' (उज्ज्वलदत्त) २ पथ, राह।

अमनिया (हिं० वि०) विशुद्ध, स्वच्छ, पवित्र, पाक, साफ़, जो छूवा न गया हो।

अमनुष्य (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ मनुष्य भिन्न पशु, देवता, वृक्षादि, आदमीको छोड़ जानवर, फ़रिश्ता, दरख़्त वग़ैरह। (त्रि०) अप्राशस्त्ये नञ्-तत्। २ मनुष्योचित गुणशून्य, आदमीके क़ाबिल सिफ़त न रखनेवाला, जो इन्सान न हो।

अमनुष्यता (सं० स्त्री०) क्लीवत्व, पौरुषहीनता, पुरुषानर्हता, नामरदानगी, ज़नानापन।

अमनुष्यनिषेवित (सं० त्रि०) मनुष्यशून्य, जहां मनुष्य न रहे, आदमीसे ख़ाली, जिस जगह आदमी न बसे।

अमनैक (हिं० पु०) कृषकविशेष, कोई खास काश्तकार। यह अवधमें रहता और मालगुज़ारी देनेमें अपना खास हक़ रखता है। २ सरदार, अधिकारप्राप्त व्यक्ति। (वि०) ३ साहसी, ज़बरदस्त।

अमनोगत (सं० त्रि०) न मनोगतम्, नञ्-तत्। अनभिप्रेत, ख़याल न किया हुआ, नामालूम।

अमनोज्ञ (सं० त्रि०) चित्तको अप्रिय, अनिष्ट, अनीप्सित, दिलको खुश न आनेवाला, नागवार, नापसन्द।

अमनोनीत (सं० त्रि०) न मनोनीतम्, नञ्-तत्। १ जो मनःपूत न हो, खराब-खस्ता, मरदूद, गया-गुज़रा। २ अनीप्सित, अनभिप्रेत, नापसन्द।

अमनोयोग (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ मनोयोगका अभाव, अवधारणका न रहना, अमतवज्जोही। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ अन्यमनस्क, मनोयोगशून्य, दिल न लगानेवाला, जिसका ख़याल दूसरी जगह लगा रहे।

अमनोयोगिन् (सं० त्रि०) अनवधान, निरपेक्ष, अनासक्त, उपेक्षक, मन्दादर, प्रमत्त, प्रमादिन्, अनवहित, अनिविष्टचित्त, शून्यहृदय, बेपरवा।

अमनोरम्य, अमनोहर देखो।

अमनोहर (सं० त्रि०) अनभिप्रेत, अनीप्सित, नामवार, नापसन्द, जो दिलको न खींचता हो।

अमन्तव्य (सं० त्रि०) ध्यान न दिया जानेवाला, जिसपर ख़याल न दौड़े।

अमन्तु (सं० त्रि०) मन-तुन्, ततो नञ्-तत्। १ अज्ञान, नासमझ। २ निरपराध, बेगुनाह।

अमन्त्र (सं० त्रि) नास्ति मन्त्रो वेदपाठो यस्मिन् कर्मणि, बहुव्री०। १ वेदपाठशून्य, जिसमें वेदमन्त्र न पढ़ा जाये। २ वेदमन्त्र न जाननेवाला, जिसे वेद पढ़नेका अधिकार न रहे। (पु०) ३ अवैदिक मन्त्र, मन्त्रशून्य कर्मादि।

अमन्त्रक, अमन्त्र देखो।

अमन्त्रविद् (सं० त्रि०) वेदविधि न जाननेवाला, जिसे वेदका सूत्र मालूम न रहे।

अमन्त्रिका (सं० स्त्री०) अमन्त्र देखो।

अमन्द (सं० त्रि०) १ पटु, होशियार। २ उत्कृष्ट, बढ़िया। ३ तीव्र, चालाक, जो सुस्त न हो। ४ अधिक, प्रधान, ज़रूरी, ज़्यादा। (पु०) ५ वृक्षविशेष, किसी दरख़्तका नाम।

अमन्यमान (सं० त्रि०) १ न माननेवाला, जो इज़्ज़त न करता हो। २ आशा न रखते हुआ, जिसे आगाही न रहे।

अमन्युत (सं० त्रि०) गुप्त क्रोध न रखनेवाला, जो किसी शख़्ससे डाह न करता हो।

अमम (सं० पु०) १ भावी उत्सर्पिणीके द्वादश जिनविशेष। (त्रि०) नास्ति मम इत्यभिमानः गृहादिषु यस्य, बहुव्री०। २ ममताशून्य, गृहादिके प्रति माया न रखनेवाला, ख़ुदसनायीसे ख़ाली, जिसे बिलकुल दुनयावी मुहब्बत न रहे।

अममता (सं० स्त्री०) निरीहता, निःसङ्गता, बेतमयी, बेग़रज़ी, बेपरवायी।

अममत्व (सं० क्ली०) अममता देखो।

अमम्रि (वै० त्रि०) अक्षर, अमर, जो कभी मिटता न हो।

अमर (सं० पु०) मृ-अच्, ततो नञ्-तत्। १ देवता, फ़रिश्ता। २ कुलिशवृक्ष, सेहुड़। ३ अस्थिसंहार वृक्ष, हरजोड़। ४ पारद, पारा। ५ सनोवर। ६ मरुद्गण विशेष, उन्चासमें एक पवन। ७ विवाह-जोटक नक्षत्रविशेष। इसमें अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्या, हस्ता, स्वाती, अनुराधा, श्रवणा और रेवती नक्षत्र रहता है। ८ सुवर्ण, सोना। ९ रुद्राक्ष। १० हस्ती, हाथी। ११ अमरकोष अभिधानके रचयिता। लोग इन्हें अमरसिंह कहते हैं। यह बौद्धधर्मावलम्बी रहे और विक्रमादित्यकी सभाको सुशोभित करते थे। १२ गिरिविशेष, किसी पहाड़का नाम। १३ सोमगिरिके अन्तर्गत सरोवरविशेष, सोम पहाड़का कोई तालाब। इसे देवसरोवर भी कहते हैं। १४ उकार अक्षरका गूढ़ अर्थ। १५ तैंतीस संख्या। १६ अमरकोष। १७ बम्बईके कच्छ ज़िलेका स्थान विशेष। यह भुजसे कोई चौबीस क्रोस पश्चिम अवस्थित है। प्रति वर्ष यहां रज़बीके अमीर कारकासिमकी

अतिरखाकी मेला लगता है। सन् ई०के १४वें शताब्द वह पश्चिमभारतमें भ्रमण करते समय कच्छमें राज्य करनेवाले सम्मा राजपूतों द्वारा मार डाले गये थे। चैत्र कृष्णपक्षमें जो पहला सोमवार पड़ता, उससे मेला शुरू होता और पांच दिनतक रहता है। मन्दरेके पीर शाह मुराद मेलेका प्रबन्ध करते हैं। प्रति वर्ष हज़ारो मुसलमान और नीच जातिके हिन्दू यात्री इस जगह आते और रुपया-पैसा, नारियल, कपड़ा, बकरा, भेड़, मिठाई तथा छोहारा कब्रपर चढ़ाते हैं। यहां चावल, छोहारे, रङ्गीन कपड़े, बैल, ऊंट और मिठाईका रोज़गार चलता है।

अमरकणा (सं० स्त्री०) १ गजपिप्पली, बड़ी पीपल।

अमरकण्टक—पर्वतविशेष, एक पहाड़। यह पर्वत बुंदेलखण्डके रीवा राज्यमें समुद्रतलसे ३४८१ फ़ीट ऊंचे अवस्थित है। इससे शोण और नर्मदा नदी निकली है। यह विन्ध्याचलके सातपुरा पर्वतका एक भाग है और इसकी चोटीपर सुविस्तृत अधित्यका पड़ी है। यहां नर्मदा नदीकी चारो ओर सुन्दर मन्दिर बने और कितने ही निर्झर पानीका फौवारा छोड़ा करते हैं। अमरकण्टक हिन्दुवोंका एक तीर्थ है और प्रति वर्ष महादेवका मेला लगता है।

अमरकण्टिका (सं० स्त्री०) शतावरी, सतावर।

अमरकन्द (सं० पु०) कन्दविशेष।

अमरकण्ठ—महिम्नस्तोत्रके टीकाकार।

अमरका, आमरका—बम्बईके सूरत जिलेकी कोई पुरानी छावनी। त्रैकूटक महाराज दृढ़सेनने यहां विजय पाकर जो दानपत्र लिखा, उसमें अज्ञात संवत् २०७ पड़ा है।

अमरकान्त—संस्कृत एकाक्षर-नाममालाके रचयिता।

अमरकालिक (सं० पु०) वृश्चिकाली, बढ़न्ता।

अमरकाष्ठ (सं० क्लो०) देवकाष्ठ, देवदारु।

अमरकुसुम (सं० क्लो०) लवङ्ग, लौंग।

अमरकोट—सिन्धुनदके परपारका स्थान विशेष। पहले यह किसी राजपूतराज्यकी राजधानी रहा। इसी स्थानमें प्रसिद्ध बादशाह अकबरका जन्म हुआ था। अकबर देखो।

अमरकोष (सं० पु०) अमरसिंहप्रणीत अभिधान-विशेष। अमरसिंह देखो।

अमरख (हिं०) अमर्ष देखो।

अमरखी (हिं० वि०) क्रोधी, गुस्सावर, बुरा माननेवाला।

अमरगङ्ग—बम्बईके धारवाड़ ज़िलेवाले देवगिरि स्थानके कोई यादव-नृपति। यह सेवनके पौत्र, मल्लुगीके पुत्र और कर्णके भ्राता रहे। कर्ण-पुत्र भिल्लम महाराज सन् ११९१ ई०में देवगिरिके सिंहासन पर प्रतिष्ठित थे।

अमरगढ़ (अमरार गढ़)—वर्द्धमानके गोपभूम प्रान्तका एक प्राचीन नगर। पहले यह सद्गोपवंशके नृपति महेन्द्रनाथ महाराजकी राजधानी रहा। इसकी चारो ओर सुदीर्घ दुर्गश्रेणी बनी थी। आज भी उसका भग्नावशेष देखनेमें आता है।

अमरगण (सं० पु०) देवतासमाज, फरिश्तोंका मजमा।

अमरगोल—बम्बईवाले धारवाड़ ज़िलेके हुबली परगनेका कोई गांव। यहां जो पत्र-लेख मिला था, उसमें महामण्डलेश्वर जयकर्ण द्वितीयका उल्लेख रहा। उन्होंने सन् १११९ ई० से ११२५ ई० तक राज्य किया था। इस ग्रामके मध्य शङ्करलिङ्गका मन्दिर बना, जो कुछ-कुछ गिरने लगा है। मन्दिरकी दीवारों और खम्भोंपर देवदेवीकी मूर्ति खचित है।

अमरचन्द्र—१ परिमलनामक संस्कृतव्याकरणरचयिता। २ वायड़गच्छीय जिनदत्तसूरिके शिष्य। इन्होंने कला-कलाप, काव्यकल्पलता, छन्दोरत्नावली, बालभारत प्रभृति संस्कृत ग्रन्थ बनाये थे। ३ विवेकविलास-रचयिता। यह सन् ई०के १३वें शताब्दमें विद्यमान थे।

अमरज (सं० पु०) अमरः दुर्मर इव जायते, अमर-जन-ड। १ दुष्खदिरवृक्ष, लजालू। २ देवदारु। ३ नदीवट।

अमरजी—राजपूतानेके एक कवि। 'राजस्थान'में टाडने इनका उल्लेख किया है।

अमरण (सं० क्लो०) अमरता, अमरत्व, अनश्वरता, आमरत्व, नित्यता, हयात-अबदी, हयात-जाविदानी, बका, कभी न मरनेकी हालत।

अमरणीय (सं० त्रि०) अमर, अनश्वर, नित्य, लाज़वाल, जो कभी मरता न हो।

अमरणीयता (सं० स्त्री०) अमरण देखो।

अमरतटिनी (सं० स्त्री०) देवतावोंकी नदी, गङ्गा।

अमरतरु (सं० पु०) १ देवदारु। २ अकोदि, अकोड़ा वगैरह।

अमरता (सं० स्त्री०) १ अनश्वरता, कभी न मरनेकी हालत। २ देवत्व, देवताका भाव।

अमरत्व (सं० क्ली०) अमरता देखो।

अमरदत्त—१ बम्बईवाले खम्भात प्रान्तके नृपतिविशेष। यह राजपूताने—जयपुरके रणस्तम्भगढ़वाले धंधल पंवारकी २६ वीं पीढ़ीमें उत्पन्न हुये थे। सन् ई०के १३वें शताब्द अलाउद्दीन् खिलजीने जब रणस्तम्भगढ़को लूटपाट अपने हाथ किया, तब धंधलको वहांसे भाग खम्भातमें जा बसना पड़ा। सन् ई०के १६वें शताब्दमें अमरदत्तने शाहजहांको कोई हीरा नज़र दिया था। उससे उन्होंने अत्यन्त प्रसन्न हो इन्हें रायकी उपाधि प्रदान की और अपने साथ ही दिल्ली ले जाकर दरबारका मुसाहब बना लिया। यह एक लड़का छोड़कर मरे थे, जिसने मुरशिदाबादके सेठ मानिकचन्दकी लड़कीसे अपना विवाह किया। २ एक प्राचीन संस्कृत-शब्दकोषकार।

अमरदारु (सं० पु०-क्ली०) अमराणां प्रियं दारु, शाक०-तत्। देवदारु।

अमरदास—नानकपन्थियोंके दश गुरुमें एक। सिखोंके 'ग्रन्थ'में इनके बनाये भजन मिलते हैं।

अमरदेव—१ मालव देशवाले किसी विक्रमादित्य नृपतिकी राजसभाके रत्न-विशेष। कहते हैं, जब महादेवने स्वप्न देखाया, तब बोध-गयामें अशोकका कोई विहार खोदवा इन्होंने एक शिवमन्दिर बनवाया था। बोधगयासे आविष्कृत १००५ संवत्की शिलालिपिसे उपरोक्त विषय प्रमाणित होता है।

अमरद्रु (सं० पु०) विट्खदिरवृक्ष, लजालू।

अमरद्विज (सं० पु०) अमराणां देवानां पूजकः द्विजः, शाक०-तत्। देवल ब्राह्मण, पुजारी ब्राह्मण, जो ब्राह्मण देवताका पूजन करता हो।

अमरनाथ (सं० पु०) १ इन्द्र, देवतावोंके मालिक। २ काश्मीरका एक प्रसिद्ध तीर्थ। यहां महादेवका जो स्वयम्भू तुषारलिङ्ग है, उसीका नाम अमरनाथ वा अमरेश्वर पड़ा है। प्रति वर्ष श्रावण मासकी राखी पूर्णिमाको भारतवर्षके नाना-देशवाले यात्री यहां आते हैं।

अमरनाथ काश्मीरकी पूर्व दिशामें अवस्थित है। इसके उत्तर तिब्बत देश है। यहांकी पर्वतमाला बहुत ऊंची-नीची है। उंचाई प्रायः १५०००-१६००० फ़ीट् होगी। क्या शीत, क्या ग्रीष्म—बारहो महीने चारो ओर तुषार ही तुषार दिखाई देता है। पथ दुर्गम, प्राणिशून्य और तृणशून्य है। सहस्र सहस्र प्रस्तरखण्ड और हिमशिला पतनोन्मुख हो रही हैं। चलते समय यात्रीके उच्चस्वरमें बोलने अथवा ज़ोरमें पैर फटकने पर उसकी धमकसे सारी शिला उसके शिरपर गिर पड़ेगी। इधर भाद्रमास रातदिन वृष्टि हुआ करती, कभी कभी बर्फ भी पड़ जाती है। इतनी विघ्नबाधा रहते भी प्रायः दो हज़ार यात्री प्रति वर्ष इस स्वयम्भूलिङ्गका दर्शन करने अमरनाथ पहुंचते हैं।

पथ ऐसा दुर्गम रहनेके कारण काश्मीराधिपति यात्रियोंको विशेष सहायता देते हैं। इस महातीर्थका दर्शन करनेको भारतवर्षके सुदूर स्थानोंसे यात्री आते हैं। उनमें धनी दरिद्र, योगी संन्यासी, सभी सम्प्रदायके मनुष्य पाये जाते हैं। दरिद्रोंको काश्मीरराज स्वयं राहखर्च देते हैं।

राखी-पूर्णिमासे चौदह पन्द्रह दिन पहले श्रीनगरके निकट रामबागमें सरकारी झण्डा उड़ा दिया जाता है। इसीको देखकर यात्री क्रमशः एकत्र होते हैं। फिर पूर्णिमासे आठ दिन पहले ही सब यात्री श्रीनगरसे यात्रा करते हैं। अनन्तनागमें झण्डा पहुंचने पर यात्री एकत्र हो जाते हैं, आगे पीछे कोई भी नहीं रहता। वहांसे अमरनाथ २८ क्रोस रह जाता है। बीचमें पांच पड़ाव पड़ते हैं, फिर तीर्थस्थान मिलता है। पथमें कुछ भी नहीं पाते। अमरनाथमें भी न तो हाट-बाज़ार और

न मनुष्योंकी बस्ती ही है। इसीसे यात्री अनन्त-नागमें ही आवश्यकीय वस्तु खरीद लेते हैं।

राज-पताका आगे आगे और उसके पीछे पीछे हाथमें प्राण लिये यात्री चलते हैं। अमरनाथके पथमें सब मिलाकर इक्कीस तीर्थोंमें स्नान किया जाता है। पहले वितस्ता नदीके उस पार कश्यपमुनिका शौर्य वा श्रीस्थान मिलता है। वहां कोई देवमूर्ति नहीं। कहते हैं, वहां जो कोई स्नान करता, वह शौर्य एवं श्रीसम्पन्न होता है।

दूसरा तीर्थ पाण्डृतन है, यह 'पुराणाधिष्ठान' शब्दका अपभ्रंश जान पड़ता है। भगवती भागती थीं और महादेव उनका पीछा कर रहे थे। उसी स्थानमें महादेवने भगवतीका पदचिह्न देख पाया। बहुत समय पहले वहां काश्मीरकी राजधानी रही। महाराज अशोक किसी दिन उस नगरमें राजत्व करते थे। उनके प्रतिष्ठित एक मन्दिरमें बुद्धदेवका दांत रखा था। उसके बाद काश्मीरके राजा अभिमन्युने आग लगवाकर समस्त नगरको जला डाला। उसमें देवालयादि भी भस्म हो गये थे। कोई कोई कहते हैं, कि सन् ८१३ ई०को पार्थ राजाने वह नगर बसाया था। अभिमन्युने जो नगर ध्वंस किया, वह पाण्डृतनके निकट हो रहा। अन्तको जब शहाबुद्दीन् सिकन्दरने काश्मीरमें उत्पात मचाया, उस समय भी पाण्डृतन विनष्ट न हुआ था। वहां अस्सी हाथ चतुष्कोण एक शिवकुण्ड है। अमरनाथ जाते समय यात्री उसी कुण्डमें स्नान करते हैं। पाण्डृतनमें अब भी कितने ही देवालयों और अट्टालिकाओंके भग्नावशेष वर्त्तमान हैं।

तीसरे तीर्थस्थानका नाम पदिनापुर वा पाम्पुर है। वह 'पद्मपुर' शब्दका अपभ्रंश है। पद्म नामक किसी राजाने उसे निर्माण कराया था। अब जगह-जगह केवल बड़े बड़े स्तम्भ और अट्टालिकाके भग्नावशेष देखनेमें आते हैं।

उसके बाद यात्री जहां स्नान करता, उसका नाम यक्षुर है। वहां महादेवका एक लिङ्ग विद्यमान है।

यक्षुरसे आगे बढ़नेपर अवन्तीपुर मिलता है। महाराज अवन्तीवर्म्माने उस नगरको प्रतिष्ठित किया था। कहते हैं, महादेवके वरसे वह जलके ऊपर चल सकते रहे। उस समय एकबार महाजलप्लावनमें काश्मीर डूब गया था। परन्तु अपने साधनबलसे अवन्तीवर्म्माको कोई कष्ट न भोगना पड़ा। अवन्तीपुरमें अभी अनेक देवालयादिके भग्नावशेष पड़े हैं। उसके बाद वाग्हमु उत्स आयेगा। ८ हस्ती-कि-नर-कुन्-नगम, ९ चक्रधर, १० देवकीस्थान, ११ विजयेश्वर, १२ हरिश्चन्द्रराज, १३ तेजोवर, १४ सुरि-गुफर (सौर-गह्वर), १५ सुकर गां, १६ वहुब, १७ सलर, १८ गणेश बुल, १९ नीलगङ्गा, २० स्थानेश्वर, सबके अन्तमें पञ्चतरङ्गिणी है। इस झरनेकी पांच शाखायें हैं, इसीसे पञ्चतरङ्गिणी कहते हैं। यात्री उस स्थानमें स्नान करेंगे। स्नानके उपरान्त वस्त्र त्याग कर भूर्जपत्रका वस्त्र पहनते हैं। कोई कोई नङ्गे ही मनके उल्लाससे हर हर जय-जय कहते हुए आगे बढ़ते हैं। पञ्चतरङ्गिणी अमरेश्वरसे एक कोसपर है। यात्री अपनी अपनी खाद्यसामग्री प्रभृति वहीं रख देते हैं।

अब अमरेश्वरकी गुहा मिलेगी। इसका प्रवेशपथ प्रायः ३२ हाथ प्रशस्त है। गुहामें प्रवेश करनेपर पहले कोई ५० हाथ सरल पथ आता है। उसके बाद दक्षिण ओर थोड़ा घूमकर प्रायः १६ हाथ आगे बढ़ना पड़ता है। गुहाके भीतर अत्यन्त शीत लगता है। ऊपरसे सदैव टप टप जल चूआ करता है। महादेवका स्वयम्भू तुषारलिङ्ग यहीं निर्मल स्फटिककी भांति चमकते रहता है। कहते हैं, शायद चन्द्रमाकी तरह इस शिवलिङ्गको भी ह्रासवृद्धि हुआ करती है। पूर्णिमाके दिन महादेवकी पूर्णमूर्तिका दर्शन होता है। फिर प्रतिपत्से एक एक कला घटने लगती है। अमावस्याके दिन तुषारलिङ्गका कोई चिह्न बाकी नहीं रहता, सब अवयव अदृश्य हो जाता है। फिर शुक्लपक्षकी प्रतिपत्से यह लिङ्ग प्रतिदिन एक एक कला बढ़ने लगता है। स्थान जनशून्य और अत्यन्त भयानक है। बारह महीने यहां मनुष्य नहीं रह सकता। योगी-संन्यासियोंमें कोई कोई तीन [illegible] हैं। [illegible] लोग कहते

हैं, कि चन्द्रमाकी ह्रासवृद्धिके साथ अमरनाथकी भी ह्रासवृद्धि हुआ करती है। महाराज गुलाब सिंहने यहां एक रात वास किया था। कहते हैं, किसी समय उन्हें सर्परूपमें दर्शन दे कर महादेव अन्तर्हित हुये। दूसरा भी प्रवाद है, कि यह स्वयम्भू लिङ्ग कदाचित् कपोतरूप धारण करता है। फलतः यह बात मिथ्या है। अमरनाथ जाते समय पण्डे कबूतरोंको कपड़ेमें छिपा लेते, और अन्तमें अमरनाथको गुफाके पास पहुंचकर उन को छोड़ देते हैं। यात्री कपोतरूपी महादेवको देखकर भक्ति करते हैं। अमरनाथमें दूसरी भी कई देवदेवी और बैलकी पाषाणमय मूर्ति है।

उज्जैनमें भी अमरनाथ वा अमरेश्वर नामक एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित था।

३ बम्बई प्रान्तके थाना ज़िलेका एक गांव। यहांसे आध क्रोस दूर एक सुन्दर उपत्यकामें महादेवका प्राचीन मन्दिर बना है। मन्दिरमें हिन्दुवोंकी असली कारीगरी देख पड़ेगी। सम्भवतः मन्दिर सन् ई०के ११ वें शताब्दमें तैयार हुआ था। इस मन्दिरमें जो शिला-लेख मिला, उसमें ९८२ शक अङ्कित है। कल्याणवाले चालुक्योंके अधीनस्थ महामण्डलेश्वर चित्रराजदेव-पुत्र मामवनीराज कदाचित् मन्दिरके बनवानेवाले रहे। इसमें शिव-पार्वती, विमान और कालीकी मूर्ति बहुत अच्छी गढ़ी गयी है।

४ हिन्दुस्थानके भिक्षुकोंका सम्प्रदाय विशेष।

अमरपख (हिं० पु०) अमरपक्ष, पितृपक्ष।

अमरपति (सं० पु०) देवतावोंके प्रभु, इन्द्र।

अमरपद (सं० पु०) १ देवतावोंका स्थान, स्वर्ग। २ मोक्ष, निर्वाण।

अमरपाल—पालवंशीय नृपतिविशेष। भविष्य ब्रह्म-खण्डके मतसे यह देवपालके पुत्र रहे।

(भविष्यब्रह्म० २०।४०)

अमरपुर (सं० क्लो०) १ देवतावोंका नगर, स्वर्ग, अमरावती।

२ ब्रह्मदेशकी प्राचीन राजधानी। यह ऐरावती नदीके पूर्व तटपर अवस्थित है। अनेक मनुष्योंका अनुमान है, कि अमरपुर सन् १७८३ ई०में प्रतिष्ठित हुआ था। इसमें एक मन्दिर हो विशेष प्रसिद्ध है। उसकी चारो ओर मुलम्मेदार लकड़ीके २५० खम्भे सुशोभित हैं। मन्दिरके भीतर बुद्धकी बड़ी भारी धातुमयी मूर्ति है। पहले अमरपुरकी चारो ओर २० फीट ऊंची और ७००० फीट लम्बी शहरपनाह बनी थी। सन् १८१० ई०में आग लगनेसे नगर विनष्ट हो गया। फिर १८३९ ई०में भूकम्पसे भी इसे बहुत हानि पहुंची थी। ब्रह्मदेशवाले प्राचीन राजाओंके राजप्रासादका भग्नावशेष अभीतक नगरके मध्य स्तूपाकार पड़ा हुआ है।

कोई कोई कहते हैं, कि अमरपुर नगर आधुनिक नहीं ठहरता। यह राजधानी अतिप्राचीन है। सन् १६८३ ई०में केवल इसका नाम बदल दिया गया था। तलेमिने आवा नदकी दो शाखाओं और उसके निकटवर्ती दो नगरोंका विषय लिखा है। उन दो नगरोंके नाम उरथेना और नर्दन हैं। उरथेन शब्द राधन शब्दका अपभ्रंश है। यही अमर-पुरका प्राचीन नाम है। इसे पहले आवा और रत्नामरकोट कहते थे। प्रकृत आवा नगर एवं अमरपुरमें प्रभेद है। ब्रह्मदेशमें यह रीति प्रचलित रही,—जब कोई नया राजा होता, तब वह पूर्व राज-धानीको त्याग किसी दूसरे नगरमें अपनी राजधानी स्थापित करता था। इसी प्रथाके अनुसार राजधानी आवासे अमरपुर स्थानान्तरित की गई।

अमरपुष्प (सं० पु०-क्लो०) १ कल्पवृक्ष। २ पूगफल, सुपारीका पौधा। ३ कासतृण। ४ आम्र, आम। ५ केतकी। ६ तालमखाना। ७ गोखरू।

अमरपुष्पक, अमरपुष्प देखो।

अमरपुष्पिका (सं० स्त्री०) १ सोया। २ कांस।

अमरपुष्पी, अमरपुष्पिका देखो।

अमरप्रख्य (सं० त्रि०) देवता-जैसा, जो देवताकी तरह हो।

अमरप्रभ, अमरप्रख्य देखो।

अमरप्रभा-सूरि—एक प्रसिद्ध जैनाचार्य।

अमरप्रभु (सं० पु०) १ इन्द्र। २ विष्णु।

अमरप्रसादसूरि—एक प्रसिद्ध जैनाचार्य।

अमरबेल (हिं० पु०) अमरवल्ली, कोई पीलीलता, पबेर। इसमें जड़ और पत्ती नहीं पाते। यह जिस वृक्षपर फैलता, उसके रससे अपना पेट भरता और उसे निर्बल बना देता है। इसमें श्वेत पुष्प निकलेंगे। वैद्यकमतसे—यह मीठा होता, पित्तको दबाता और वीर्य बढ़ाता है।

अमरभर्ता, अमरभर्तृ देखो।

अमरभर्तृ (सं० पु०) इन्द्र, देवतावोंके स्वामी।

अमरमल्ल—नैपालके एक प्रसिद्ध राजा। यह सूर्यमलके पुत्र और शिवसिंहके पितामह रहे।

अमरमल्लुगी—दक्षिणके मल्लुगी नृपतिके एक पुत्र। यह गोविन्द्रराजके मरनेपर सिंहासनारूढ़ हुये थे। जब यह भी मर गये, तब राजसिंहासन इनके पुत्र कालीय-बल्लालको मिला।

अमररत्न, अमलरत्न (सं० क्ली०) स्फटिक, बिल्लौर।

अमरराज (सं० पु०) देवतावोंके राजा, इन्द्र।

अमरराजशत्रु (सं० पु०) देवतावोंके नृपतिका शत्रु, वृत्रासुर, रावण।

अमरलोक (सं० पु०) देवतावोंका स्थान, स्वर्ग, बिहिश्त।

अमरलोकता (सं० स्त्री०) स्वर्गका प्रहर्ष, बिहिश्तका मज़ा।

अमरवत् (सं० अव्य०) देवताकी भांति, फ़रिश्तेकी तरह।

अमरवर (सं० पु०) इन्द्र, जो व्यक्ति देवतावोंमें श्रेष्ठ हो।

अमरवल्लरी, अमरवल्ली देखो।

अमरवल्ली (सं० स्त्री०) १ आकाशवल्ली, अमरबेल। २ सालसा। इसका गुण यों लिखा है,—

> "हृद्यवल्ली बलकरी परं हृद्या रसायिनी।
> मूत्रकृत्स्वेदजननी पुष्टिदा कार्श्यवारिणी॥
> श्लीपदं शिकरोगांश्च रक्तदोषं हरेदियम्॥" (वैद्यक)

अमरवार—मध्यप्रदेशके छिन्दवाड़े ज़िलेका एक गांव। यह नरसिंहपुरको गयी सड़कपर बसा और इसमें गवर्नमेण्ट-स्कूल एवं पुलिसका थाना बना है।

अमरविजय—राजपूतानेवाले कोड़ागढ़के एक विख्यात राठौर राजा। टाडके राजस्थानमें लिखा है, कि इन्होंने सोलह हज़ार परमारोंको वधकर उक्त राज्य अधिकार किया था। इनके वंशधर कोड़ा कामध्वजकी उपाधि व्यवहारमें लाते रहे।

अमरस (हिं० पु०) आमका रस, अमावट। आमका रस निचोड़ कर थाली या कपड़ेपर फैला धूपमें सुखा लेते हैं। वही पीछे अमरस या अमावट कहलाता है।

अमरसरित् (सं० स्त्री०) देवनदी, गङ्गा।

अमरसर्षप (सं० पु०) देवसर्षप, राई।

अमरसिंह—१ सुप्रसिद्ध संस्कृत शब्दकोषकार। प्रवाद-मतसे यह विक्रमादित्यवाले नवरत्नके एक जन और बौद्धधर्मावलम्बी व्यक्ति रहे। वोपदेवने अपने कवि-कल्पद्रुममें इन्हें अन्यतम शाब्दिक या वैयाकरणके मध्य बताया है। सदुक्तिकर्णामृतमें अमरसिंहकी कितनी ही कविता उद्धृत हुयी। इनके नामानुसार ही कीर्तिस्तम्भस्वरूप 'अमरकोष' प्रसिद्ध पड़ा है। संस्कृत भाषामें जितना प्राचीन शब्दकोष विद्यमान है, उसमें अमरकोष सबसे श्रेष्ठ समझा जाता है। इसीलिये इस कोषकी जितनी टीका बनी, उतनी किसी दूसरे संस्कृत कोषकी नहीं देख पड़ती। अमर-कोषकी टीकावोंमें अच्युतउपाध्यायका व्याख्याप्रदीप, अप्पयदीक्षितकी अमरवृत्ति, आशाधरका क्रिया-कलाप, काशीनाथकी काशिका, क्षीरस्वामीका अमर-कोषोद्घाटन, गोस्वामि-रचित बालबोधिनी, नयनानन्द एवं रामचन्द्रशर्माकी अमरकौमुदी, नारायणशर्माकी अमरकोषपञ्जिका, नारायणविद्याविनोदकी शब्दार्थ-संदीपिका, नीलकण्ठकी सुबोधिनी, परमानन्दकी अमरकोषमाला, बृहस्पतिकी अमरकोषपञ्जिका, भरतमल्लिककी मुग्धबोधिनी, भानुजीदीक्षितकी व्याख्यासुधा, मथुभट्टकी गुरुबालप्रबोधिनी, मथुरेश-विद्यालङ्कारकी सारसुन्दरी, मल्लिनाथका अमरपद-पारिजात, महादेवतीर्थकी बुधमनोहरा, महेश्वरका अमरकोषविवेक, मुकुन्दशर्माकी अमरबोधिनी, रघुनाथ चक्रवर्तीकी त्रिकाण्डचिन्तामणि, राघवेन्द्रकी अमर-कोषव्याख्या, रामनाथका त्रिकाण्डविवेक, रामप्रसादकी

वर्षस्यकौमुदी, रामशर्मांको अमरकोषव्याख्या, रामस्वामीको अमरविवृति, रामाश्रमकी अमरकोषटीका, रामेश्वरशर्माकी प्रदीपमञ्जरी, रायमुकुटकी पदचन्द्रिका, लक्ष्मणशास्त्रीकी अमरकोषव्याख्या, लिङ्गभट्टकी अमरबोधिनी, लोकनाथकी पदमञ्जरी, श्रीकराचार्यकी व्याख्यामृत, श्रीधरकी अमरटीका और सर्वानन्दकी टीकासर्वस्व उल्लेखयोग्य है।

रायमुकुट और भानुजीदीक्षितने अपनी-अपनी टीकामें वृहदमरकोषकी बात भी कही है।

२ राजपूत-वीरकेशरी राणा प्रतापसिंहके ज्येष्ठ पुत्र। राणा प्रतापके जो सतरह लड़के रहे, उनमें अमरसिंह सबसे बड़े थे। पिताकी मृत्यु होनेसे उन्होंने मेवाड़का राजसिंहासन पाया। आठ वर्षकी अवस्थासे राणा प्रतापके मृत्युकालतक वह सुख-दुःख, सम्पद्-विपद्में सभी समय अपने पिताके पास ही रहे। राणा प्रतापने मरनेसे पहले अमरसिंहको अपने कठोर व्रतमें दीक्षित कर दिया था। प्रतापने जैसे स्वाधीनताके लिये आजन्म युद्ध चलाया, वैसे ही अपने राणा अमरसिंहसे भी चिरवैरी मुगलोंके विपक्षमें युद्ध करने और स्वदेशकी स्वाधीनता अक्षुण्ण रखनेकी शपथ ले लिया। अमरके सिंहासनारूढ़ होनेके बाद आठ वर्षतक मुगल-सम्राट् अकबर जीवित रहे और उन्होंने कई वर्ष मेवाड़के विरुद्ध अस्त्रधारण न किया। इससे राणा अमर एक तरह युद्धविद्या भूल बहुत विलासी बन गये थे। उन्होंने पिताके आदेश और उपदेशपर ध्यान न दे और क्लेशकर कुटीरवास छोड़ उदयसागरके पास कोई सुरम्य प्रासाद बनवाया, फिर वहां विलास-व्यसनमें समय बिताने लगे। उसी समय बादशाह जहांगीरने उनके विरुद्ध युद्धघोषणा की। राणाको बड़ा सङ्कट पड़ गया। उन्होंने मन ही मन स्थिर किया,—यह सुखभोग और विलास व्यसन छोड़ हम अशान्तिकर युद्धमें प्रवृत्त न होंगे, बादशाहके साथ सन्धि कर लेंगे। किन्तु अन्तमें अमर सन्धि करनेमें समर्थ न हुये। मेवाड़के जिन सेकड़ों राजपूतों और सरदारोंने राणा प्रतापके साथ खड़े हो कई बार मुसलमानोंसे युद्ध किया, वह अपना-अपना कर्तव्य न भूले थे। सालुम्बरके सरदार गोविन्दसिंह-प्रमुख वीरगणकी उत्तेजना और अनुरोधसे अमरसिंह युद्ध करनेपर बाध्य बने। देवीर नामक स्थानमें भीषण युद्ध हुआ था। बादशाहके भाई हारकर भाग गये। किन्तु बादशाह उसपर भी सङ्कल्पच्युत न हुये, थोड़े दिन बाद ही अब्दुल्ला नामक सेनापतिकी अधिनायकतामें मेवाड़के विरुद्ध बहुत मुसलमान-फौज भेजी थी। संवत् १६६६में रणपुर नामक पार्वत्य प्रदेशपर फिर राजपूतोंके साथ मुगलोंका युद्ध हुआ। अब्दुल्ला अपनी फौजके साथ हार गये थे।

बार-बार हार होनेसे जहांगीरका क्रोध और विद्वेषवह्नि प्रचण्ड वेगसे प्रज्वलित हुआ; राजपूतोंमें घराऊ झगड़ा डालनेके लिये उन्होंने एक उपाय निकाला। राणा प्रतापके किसी भाई सगरसिंहने प्रतापका पक्ष छोड़ मुसलमानोंका पक्ष ले लिया था। बादशाहने उन्हीं वृद्ध सगरको राणा बना अरण्यपूर्ण और भग्न चित्तौरगढ़में अभिषिक्त किया। किन्तु चित्तौरके श्मशानमय दुर्गमें राणा बननेसे वृद्ध सगरके मनमें दारुण अनुताप उपस्थित हो गया था। उन्होंने अनुतापसे जर्जरित हो, अमरसिंहको चित्तौरगढ़ प्रत्यर्पणकर, बादशाहके निकट पहुंच और अपनी छातीमें छुरी घुसेड़ पापका प्रायश्चित्त किया। बादशाहका उद्देश्य उलट पड़ा था। अन्तको सन् १६०८ ई०में जहांगीरने अपने लड़के परवीजको सेनापति बना उनके अधीन बहुत बड़ी फौज मेवाड़ भेजी। खेमनेरकी विशाल रणभूमिमें राजपूत और मुसलमान फिर भिड़ गये। इस बारके युद्धमें भी प्रायः सारे मुगल मृत्युमुखमें पड़े थे। शाहजादे परवीज हारकर भाग खड़े हुये। मुसलमान-ऐतिहासिक इस युद्धका वर्णन अच्छी तरह कर गये हैं। अमरसिंहको राजा होने बाद मुगलोंसे सत्रह बार लड़ना पड़ा। सकल ही युद्धमें उन्होंने जयलाभ किया था।

किन्तु विधिलिपि बड़ी अलङ्घनीया होती है। अन्तमें जहांगीरने अपने ज्येष्ठ पुत्र खुर्रम(शाहजहां) के...

(भावी शाहजहान्) मुग़ल-सेनापति बना और बड़ा भारी फौज साथकर राणासे लड़ने भेजा। इधर क्रमागत युद्ध करनेसे कितने ही राजपूतवीर धराशायी हो गये थे। अतिकष्टसे थोड़ी फौज इकट्ठा कर राणाके ज्येष्ठपुत्र कर्ण खुरमकी विशाल वाहिनीसे लड़नेको खड़े हुये। किन्तु इस बार मुग़लोंका आक्रमण कोई व्यर्थ कर न सका था। मुगलोंकी जयपताका मेवाड़में उड़ने लगी, मेवाड़ने चिरतरको स्वाधीनता खोयी और राणा सन्धि करनेपर बाध्य हुये। शाहजादे खुरमने अमरकी समधिक सम्बर्धना कर उन्हें फिर राज्यग्रहण करनेका आदेश दिया था। किन्तु उन्होंने अपने पुत्र कर्णके शिर राज्यभार डाल और वाणप्रस्थ अवलम्बन कर शेष जीवनको अतिवाहित किया।

३ जोधपुरवाले राजा गजसिंहके ज्येष्ठपुत्र और नागोरके सामन्तराज। बाल्यकालसे यह अत्यन्त दुर्धर्ष, साहसी और महावीर रहे। दाक्षिणात्यके सकल युद्धमें यह पिताके साथ गये और समरप्राङ्गणमें इन्होंने सर्वाग्र ही अवस्थान किया। यह उग्र स्वभाव होने कारण प्रजाको सदा सताते और वह इनके विरुद्ध अभियोग लेकर राजा गजसिंहसे परित्राण पानेकी प्रार्थना करते रहो। अवशेषमें राजा गजसिंहने राजधर्मानुसार प्रजारक्षनके लिये ज्येष्ठपुत्र अमरसिंहको उत्तराधिकारसे वञ्चित रखा। सन् १६३४ ई०के वैशाख मास अमरसिंहको 'देशभाड़ा' अर्थात् चिरनिर्वासनका दण्ड दिया गया था। निर्वासित अमरसिंहने अपने अनुचरोंके साथ दिल्ली पहुंच बादशाहका आश्रय लिया। इन्हें बादशाहने 'राव'की उपाधि दे तीन हजार सवारका मनसब और नागोरका स्वाधीन शासक बना दिया था। अवाध्यता और उग्र-स्वभावने ही इनके जीवनका शोचनीय परिणाम देखाया। कुछ दिन यह दिल्लीसे शिकारके बहाने नागोरमें आकर रहे थे। कई दिन दिल्लीमें इन्हें न देख शाहजहां नाराज़ हुये और अर्थदण्डका भय देखाया। इसलिए अमरसिंहने [illegible]

कटार देखा कहा था,—'यही हमारी सम्पत्ति है।' बादशाहने उससे विरक्त बन जुर्माना वसूल करने सलावत् खान्को इनके मकान् भेजा। बादशाहकी आज्ञासे सलावत् खान्ने फौरन् अमरसिंहके घर पहुंच जुर्माना देनेकी बात कही। अमरसिंह जुर्माना देनेपर राज़ी न हुये और उसी समय सलावत खान्को घरसे निकाल दिया। शाहजहान्ने इनका यह हाल सुन अपना अपमान समझा और उसको सज़ा देनेको सभामें बुला भेजा। अमरसिंह खबर पाते हो आमखास दरबारमें जा पहुंचे थे। इन्होंने जाकर देखा,—बादशाह आग-बबूला हो और सलावत् खान् उनको समझा रहे हैं। यह सत्रह हज़ार सवारके मनसबदार उमराको लांघते हुये बादशाहके सिंहासनकी ओर झपट पड़े। इन्होंने अपनी कमरमें कटार छिपा रखी थी, सलावत खान्के पास पहुंचते ही उसकी छातीमें घुसेड़ दी। देखते-देखते सलावत खान् सम्राट्के सामने धराशायी हुये थे। फिर इन्होंने सिंहासनपर बैठे शाहजहान्को तलवार फेंक कर मारा, किन्तु सौभाग्यक्रमपर वह खम्भेसे टकरा टुकड़े-टुकड़े हुयी और बादशाह बाल-बाल बच गये। अमरसिंहके डरसे शाहजहान् जनानेमें जाकर छिपे थे। इन्होंने क्रोधसे तलवार निकाल ली और पांच मुग़ल सरदारोंको आमखासमें ही मार गिराया। किसी मुसलमान्-सरदारने अमरसिंहको पकड़नेकी हिम्मत न देखायी थी। अन्तमें अर्जुन गौड़ नामक एक आत्मीयने सान्त्वना देनेके बहाने इनपर दारुण अस्त्राघात किया और यह मारते-काटते सभास्थलमें ही अनन्त निद्रासे अभिभूत हुये। अमरसिंहके मरनेकी बात सुनते ही राठौरोंने लालकिलेमें पहुंच फिर हत्याभिनय मचा दिया था।

अमरसिंहका विवाह बूंदी-नरेशकी कन्यासे हुआ था। वह आमखासमें पहुंच इनका शव उठा लायीं और उन्हीके साथ जलकर स्वर्गधामको गयीं। किसी प्राचीन कविने अमरसिंहकी प्रशंसामें कहा है,—

"अमरसिंह तू अमर है आगल सबल जहान।
[illegible]"

अमरसिंह ठापा—एक गोर्खा सेनापति। सन् १८१५ ई०में इनकी अधीनस्थ गोर्खा सेनाने पञ्जाबके मलावन किलेमें घुस कर शरण लिया, जिसे जनरल आक्टर-लोनीने पश्चिम-पर्वतोंके समग्र स्थानोंसे खदेर दिया था। अन्तमें इन्होंने अपने पुत्रके साथ अंगरेजोंके हाथ आत्मसमर्पण किया। पीछे जो सन्धि हुयी, उसके अनुसार इन्हें नेपाल चले जानेकी आज्ञा दी गयी थी। सन् १८१६ ई०में इनका परलोक हुआ।

अमरसी (हिं० वि०) आमके रस-जैसा, जो अमावटकी तरह पीला हो, सुनहला। एक छटांक हलदीमें आठ माशे चूना डालनेसे अमरसी रङ्ग बन जाता है।

अमरसुन्दरी (सं० स्त्री०) ज्वराधिकारका औषधविशेष। इसके बनानेका विधान यह है,—

> "त्रिकटु त्रिफला चैव ग्रन्थिकं रेणुकानलम्।
> चातुर्जातं मृतं लौहं पारदो विषगन्धकम्॥
> समभागमिदं चूर्णं तस्माच्च द्विगुणो गुड़ः।
> कोलप्रमाणं गुड़िकां प्रातरुत्थाय सेवयेत्॥" (प्रयोगामृत)

अमरस्त्री (सं० स्त्री०) स्वर्गकी अप्सरा, बिहिश्तकी परी।

अमरा (सं० स्त्री०) अमर-टाप्। १ दूर्वा, दूब। २ गुडूची, गुर्च। ३ इन्द्रवारुणीलता, इन्द्रायण। ४ नीलदूर्वा, काली दूब। ५ गृहकन्या, घीक्वार। ६ नीलीवृक्ष, बड़े नीलका पेड़। ७ मेषशृङ्गी, बरियारी। ८ वृश्चिकाली, बढ़न्ता। ९ नदीवट। १० जरायु। ११ गर्भनाड़ी। १२ अमरावती, इन्द्रके रहनेकी पुरी। १३ नाभिनाली। (पु०) १४ अमड़ा।

अमराई (हिं० स्त्री०) आमका बाग, जिस बारीमें आमका ही पेड़ रहे।

अमराङ्गना (सं० स्त्री०) इन्द्रपुरीकी अप्सरा, बिहिश्तकी परी।

अमराचार्य (सं० पु०) देवतावोंके गुरु, बृहस्पति।

अमराद्रि (सं० पु०) देवतावोंका पर्वत, सुमेरु।

अमराधिप (सं० पु०) देवतावोंके प्रभु, इन्द्र।

अमरापगा (सं० स्त्री०) देवतावोंकी नदी, गङ्गा।

अमरालय (सं० पु०) देवतावोंका भवन, स्वर्ग।

अमराव (हिं० पु०) अमराई देखो।

अमरावती (सं० स्त्री०) अमरा देवा विद्यन्ते यस्याम्, अस्त्यर्थे मतुप् मस्य वकारः मतौ दीर्घः। १ इन्द्रालय। इस नगरको विश्वकर्माने निर्म्माण किया था। यह सुमेरु पर्वतपर अधिष्ठित है। यहां जरा मृत्यु, शोक-ताप कुछ भी नहीं होता। इसके सुरभि धेनु, ऐरावत हस्ती, उच्चैःश्रवा अश्व, अप्सरा और नन्दन-काननवाले मन्दार, पारिजात, सन्तान, कल्पवृक्ष एवं हरिचन्दन—यह पांच वृक्ष ही विशेष प्रसिद्ध हैं। अलकानन्दा इन्द्रपुरीके भीतर होकर बहती है। देवराज इन्द्र यहांके अधीश्वर हैं। बोखारे वगैरहके पास 'इन्द्रालय' नामक एक स्थान है। किसी किसीका अनुमान है, कि वही प्राचीन इन्द्रालय वा अमरावती होता और अलकानन्दाका ही आधुनिक नाम अक्सस् है। वेद और पुराणमें देखा जाता है, कि पहले असुरोंने इन्द्रसे कई बार विरोध किया था। मालूम होता है, इन्द्रसे राजधानी आदि छीन लेनेके लिये ही वह सब बार बार युद्ध करते रहे।

२ मन्द्राजवाले गुण्टूर ज़िलेका एक सुप्राचीन नगर, जो अक्षा° १६° ३५´ उ० और द्राघि० ८०° २४´ पू० कृष्णा नदीके दक्षिण-तटपर अवस्थित है। अमरावतीके स्तूप और मरमर पत्थरवाले रेलिङ्गकी मूर्ति प्राचीन-भारतीय शिल्पका अच्छा आदर्श है। इसे देखकर २००० वर्ष पहलेके धरणिकोट नगरका स्मरण आये गा। कोई सुचारुरूप खचित स्तम्भ नगरके दक्षिण खड़ा था, जिसका आदर सन् ई०के १२वें शताब्द तक होते रहा। किन्तु सन् ई०का १८वां शताब्द लगते समय किसी स्थानीय ज़मींदारने अपना गृह बनवानेको सस्ता मसाला पानेके लालच उसे तोड़वा डाला। कितने ही पुरातत्त्वानु-सन्धायियोंने इसकी मूर्तियोंका नक़्शा उतारा, जिनका अब चिह्नतक मिट गया है। फिर भी अनेक स्तूपकी सुन्दर मूर्तियां ब्रिटिशमिउज़ियम् और मन्द्राजके अजायब घरमें रखी हैं।

शिलालेखके अनुसार अमरावतीके प्रथम स्तूप सन् ई०से २०० वर्ष पहले बनाये गये थे। किन्तु अधिकांश

स्तूप पीछे अर्थात् कुषानोंके समय तैयार हुये। कुषानोंका राज्य अमरावतीमें न रहा, यहां अन्ध्रवंश अपना आधिपत्य जमाये था। अन्ध्रवंशके जो दो शिलालेख मिले, उनसे समझते हैं—स्तूप और उसका सुखचित रेलिङ्ग सन् १५० और २०० ई० के बीच बना था। सर्वोत्तम रेलिङ्ग या कटहरेका व्यास ६४ गज, परिधि २०० गज और उन्नता कोई ५ गज रही। उसके अङ्गप्रत्यङ्गमें सुखचित फलक लगे, जिनमें फूलोंके गुच्छे लिये मनुष्य बने और दूसरे नाना प्रकार आकार खिंचे थे। स्तम्भतलमें हास्यप्रद बालक और पशुका चित्र रहा। भीतरकी ओर सजावट ज्यादा थी, बौद्ध पुराणका प्रत्येक विषय खचित था। इसीतरह १६८०० वर्गफीट तलके संस्थानका प्रत्येक भाग खचित नाना-साधनसे भरा रहा।

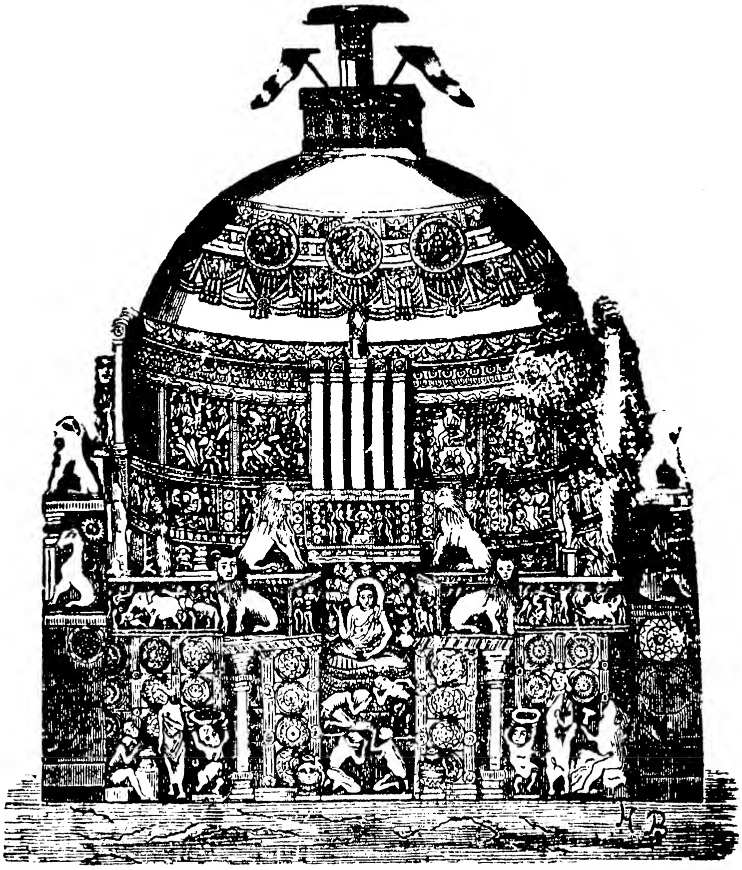

अमरावतीस्तूपकी एक चूड़ाका चित्र

यहां अमरावतीस्तूपकी एक चूड़ाका चित्र दिया गया है। चित्रके मध्यस्थलमें एक मूर्ति है। उसके मस्तक पर नागफणा सुशोभित है। सामने चार भक्त प्रणाम कर रहे हैं। नीचे दोनों ओर कई मनुष्य शिरपर कुछ रख लिये जाते हैं। ऊपर दोनों ओर सिंह तथा और भी कई मूर्ति हैं। चूड़ाके शिखरपर चक्र विद्यमान है।

अमरावतीके दूसरे भी कई स्थानमें नाग, चक्र और वृक्षकी प्रतिमूर्ति देखनेमें आती है। किसी स्थानपर पत्थरके मध्यस्थलमें एक नाग, उसकी दाहिनी ओर एक वृक्ष एवं ऊपर और बाईं ओर चक्र बना है।

साञ्चीके रेल या कटहरे भी बुरे नहीं लगते। किन्तु अमरावतीके कटहरे सबसे बड़े और सुचित्रित हैं। देवालयकी नीवपर बालक और नाना प्रकारके पशुकी मूर्ति खुदी है। स्तम्भके नीचे-ऊपर अर्धचन्द्र और मध्यमें पूर्णचन्द्रकी आकृति है। समग्र स्थान नाना प्रकार चित्र विचित्र बना है। द्वारके निकटवर्ती स्तम्भका चित्र अन्य प्रकार है। एक

स्थानमें कोई राजा सिंहासन पर बैठे हैं। कटिमें कपड़ा लिपटा, शिरपर पगड़ी बंधी और पगड़ीके ऊपर मणिमय चन्द्रमा लगा है। दोनों हाथोंमें सोनेके कड़े हैं। शरीरमें सिवा कटिके और कहीं भी वस्त्र नहीं देखते। दाहनी ओर और पीछे सभासद्गण हैं। उनका वस्त्राभरण भी राजाके सदृश ही है। एक मन्त्री हाथ जोड़कर राजासे कुछ कह रहे हैं। राजा मन लगाकर उनकी बात सुनते हैं। सामने अस्त्रधारी प्रहरी हैं। उनके सम्मुख युद्धसज्जा लगी है। पैदल सिपाही अस्त्र उठाये हैं। कोई सैनिक घोड़े और कोई हाथीपर सवार है। अजण्टा गुफामें जो मूर्ति खुदीं, उनमें कितनोंहीके शरीर कुरते, चपकन आदि वस्त्रसे ढंके और वह यूनान और ईरानके आदमी-जैसे जान पड़ते हैं। परन्तु अमरावतीमें किसीके शरीरपर वस्त्र नहीं मिलता और न कोई विदेशी ही मालूम देता है।

इसमें सन्देह नहीं, कि वैभव-समय अमरावतीके स्तूप आकार-प्रकारमें अपूर्व थे। पुराकीर्ति-वेत्तावोंने इसके सम्बन्धमें लिखा है,—

"Study of Plate XXXIII, reproducing the best preserved of such slabs, will dispense with the necessity for detailed description, and at the same time give a good notion of what the appearance of Amarávatí *stúpa* must have been in the days of its glory. When fresh and perfect the structure must have produced an effect *unrivalled in the world*". *

भारतीय शिल्पकारोंने रेलिङ्गका अङ्गुल भर स्थान भी खाली नहीं छोड़ा। दिनको सूर्यकी प्रभा और रातको गुम्बदवाले सैकड़ों प्रदीपके प्रकाशसे जब मरमर चमकता, तब उसे देख कर लोगोंकी आंखमें चकाचौंध लग जाती थी। चन्द्रकान्तमणिका आकार सिंहलके आदर्श-जैसा रहा। सिंह और कुछ दूसरे खचित आकार अशोकवाले समयके असुरीय और ईरानीय

* Vincent A. Smith's History of Fine Art in India and Ceylon, (1911), p. 150.

नमूनेसे मिलते थे। वास्तवमें इस शिल्पको देखकर शिल्पकार और चित्रकारको मुक्तकण्ठसे प्रशंसा करना पड़ेगी। पूजाके स्तम्भका ११ फ़ोट व्यासवाला दुन्दुभि कुछ दिन हुये अमरावतीसे खोदकर निकाला गया था। उसके आधार पर जो स्त्री-पुरुष खड़ा, उसकी मूर्ति अतीव सुन्दर आयी और कमलके फूलकी आकृति भी खूब ही बनी है।

अमरावतीमें कुछ मूर्ति पृथक् भी मिली थी। मूर्तिका वस्त्र गुप्तकालसे नहीं, गन्धार और अजण्टेकी १० वीं गुहाके कारुकार्यसे मिलता है।

अमरावतीकी मूर्तिको देखते ही पशुजीवन, अलङ्कार-धारण और मनुष्यकी गतिका चित्र सामने आ जायेगा। शिल्पकारोंने बड़ी ही स्वतन्त्रता और पटुतासे काम किया है।

कितने ही अनुमान करते हैं, कि सन् ३१८ ई०में दन्तपुरीसे लङ्का जाते समय बुद्धका दांत अमरावतीके भीतर होकर निकला था। उसी समय यहांका बाहरवाला रेलिङ्ग बना। भीतरवाला रेलिङ्ग सम्भवत: सन् ई०के पहले दूसरे शताब्द सम्पूर्ण हुआ होगा। उसके कई पत्थरमें पहले न मालूम और क्या क्या खोदा था। इसीसे जान पड़ता, किसी पुरातन अट्टालिकाको तोड़कर यह नवीन देवालय निर्मित हुआ है।

सन् ६३८ ई०में चीन-परिव्राजक यूयङ्-चुयाङ्ग यहां आये। उससे प्राय: सौ वर्ष पूर्व यह स्थान जनशून्य हो गया था। फिर भी उन्होंने अमरावतीकी बड़ी प्रशंसा की है।

अमरावतीकी प्राचीनकीर्तिके सम्बन्धपर निम्नलिखित ग्रन्थमें विस्तृत विवरण दिया गया है,—

Fergusson's *Tree and Serpent Worship*, 2nd ed. (1873); Fergusson's *History of Indian and Eastern Architecture* (2nd ed. by Burgess, 1910), Vol. I, p. 119ff; *Annual Report of the Archaeological Survey of India*, 1905-6; Vincent A. Smith's *History of Fine Art in India & Ceylon* (1911), pp. 148-156.

३ बरार प्रान्तका एक ज़िला। यह अक्षा० २०° २५´ एवं २१° ३६´ ४५´´ उ० और द्राघि० ७७° १५´ ३०´´ तथा ७८° १८´ ३०´´ पू०के मध्य अवस्थित है। अमरावतीसे उत्तर बेतूल ज़िला, पूर्व वर्धा नदी, दक्षिण वासिम एवं ऊन जिला और पश्चिम अकोला तथा एलिचपुर ज़िला पड़ेगा। इसका क्षेत्रफल २७७८ वर्गमील होता है।

अमरावती जिला समुद्रतलसे ८०० फ़ीट ऊंचे समान भूमिपर बसा है। इसकी भूमि उत्तरसे दक्षिणको ढली है। अमरावती और चांदपुरके बीच जा पहाड़ पड़ता, उसमें वृक्षादि बहुत कम उपजता है। इस ज़िलेकी चिकनी और काली मट्टी निहायत ज़रखेज़ निकलेगी। पूर्णा नदी अमरावतीके पश्चिम बहती है। जङ्गलमें शिकारकी कोई कमी नहीं देखते।

इतिहास—पुराणमतसे कितने ही वरहारी रुक्मिणी-का गान्धर्व विवाह देखने अमरावती आये थे। वह अन्तमें यहीं बसे और देशको बरार कहने लगे। यहां कई शताब्द राजपूतोंका राज्य रहा था। सन् १२८४ ई०में दिल्लीवाले बादशाह फीरोज़शाह गिलजायीके दामाद अलाउद्दीन्ने बरार सहित अमरावतीपर अपना अधिकार जमाया। औरङ्गज़ेबके मरने बाद दक्षिणके अधिनायक चीनक़लीच खान्ने निज़ाम-उल-मुल्ककी उपाधि ग्रहणकर सन् १७२४ ई०में महा-राष्ट्रोंसे बरार छीन लिया था। सन् १८५३ और १८६१ ई०के सन्धिपत्रानुसार अंगरेजोंने हैदराबादके निज़ामको समग्र बरार सौंप अमरावती और कुछ दूसरे ज़िले अपने अधीन किये।

कृषि—रूयी ही यहां अधिक उपजती है। वह दो किस्मकी होती,—बनी और गारी। बनीको जूनके अन्त बोते और नवम्बरमें चुनते हैं। किन्तु गारी बनीसे दो सप्ताह पीछे पूर्णा उपत्यका की गहरी काली मट्टीमें बोयी जायेगी। वह १५ वीं दिसम्बरसे पहले प्रायः तैयार नहीं होती। सब्ज़ीमें आलू ख़राब, किन्तु रतालू अच्छी निकलती है।

शिल्पनिर्माण—सिवा मोटे कपड़े और खराब कामको लकड़ीकी चीज़के और कुछ यहां नहीं बनता। पुराने समय शोलापुरमें रेशमका व्यवसाय होता था।

व्यापार—प्राचीन समय अमरावतीसे बैल गाड़ीपर रूयी ढाई-सौ कोस दूर मिर्ज़ापुर बिकने भेजी जाती थी। आजकल रेलवे द्वारा वह बम्बई पहुंचती और अमरावती नगरमें कपास साफ करनेकी कितनी ही कल चलती है। इस नगरमें नागपुरसे मसाला, नमक, विलायती कपड़ा, बढ़िया सूत, दिल्लीसे चीनी, गुड़, पगड़ी और बनारससे सोनेकी गोटा-किनारी मंगायी जाती है। ज़िलेका भीतरी कारबार, कुन्दन-पुर, भीलटेक, अमरावती नगर, मोरसी, चांदपुर, मुर्तजापुर और बदनेरेमें साप्ताहिक बाज़ार लगनेसे चलता है।

४ अमरावती ज़िलेका एक तअल्लुक़। इसका क्षेत्रफल ६७२ वर्गमील लगता है।

५ अमरावती ज़िलेका म्युनिसिपल नगर और हेड क्वार्टर। यह नगर अक्षा० २०° ५५´ ४५´´ उ० और द्राघि° ७७° ४७´ ३०´ पूर्वपर अवस्थित है। बदनेरेसे निकल तीन कोसकी शाखा-रेल इसे ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला-रेलवेके साथ मिला देती है। इसको चारो ओर पत्थरकी चहारदीवार बनी जो २०से २६ फ़ीट ऊंची और सवा दो मील घेरेमें पड़ती है। उसमें पांच फाटक और चार खिड़की लगी हैं। सन् १८०७ ई०में निज़ाम सर-कारने पेन्धारियोंसे धनी सौदागरोंको बचानेके लिये वह दीवार बनवायी रही। एक खिड़की खूंखारी इसलिये कहलायी, कि उसके पास सन् १८१८ ई०में सात-सौ आदमी कट मरे थे। शहरका पानी ठीक नहीं, बहुतसे कुयें खारी पड़े हैं। यहां भवानी वा अम्बा-मन्दिर बहुत अच्छा बना है। लोग कहते, कि उस मन्दिरको बने हज़ार वर्ष बीते हैं। यह अपने रूईवाले व्यापारके लिये प्रसिद्ध है। सन् १८४२ ई०में किसी व्यापारीने एक लाख गाड़ी रूयी अमरावतीसे कलकत्ते पैदल भेजी थी।

अमराह्व (सं० क्ली०) देवदारु।

अमरिष्णु (वै० त्रि०) अमर, न मरनेवाला।

अमरी, अमरा देखो।

अमरु (सं० पु०) १ अमरुशतक-रचयिता। यह कोई राजा रहे। शङ्कराचार्य देखो।

अमरुत (सं० त्रि०) वायुरहित, निष्कम्प, बेहवा, खमोश।

अमरुफल (सं० क्लो०) उत्तरदेशप्रसिद्ध फल, जो फल शिमाली मुल्कमें मशहूर हो। इसका गुण इसतरह लिखा है,—

"अमरोच फलं शीतं मलद्रवकरं मतम्।
सारं दाहं रक्तपित्तं वामलां मूत्रकृच्छ्रकम्॥
मूत्राश्मरीच हन्तीति ऋषिभिः परिकीर्तितम्॥" (वैद्यक-निघण्टु)

अमरुत (हिं० पु०) अमरूद, सफरी। इसे मध्य-भारत एवं मध्यप्रदेशमें जाम या बिही, बङ्गालमें प्यारा, दक्षिणमें पेरूफल या पेरुक, नेपाल-तराईमें रुवी और तिर्हुतमें लताम कहते हैं। (Psidium Guyava) इसका तना कमज़ोर, टहनी पतली और पत्ती पांच-छः अङ्गुल लम्बी होगी। फल कच्चा रहनेसे कसैला और पकनेपर मीठा लगता है। उसमें छोटे-छोटे कड़े वीज रहेंगे। फलका गुण रेचक है। अमरुतकी पत्ती, बकला चमड़ा रंगने और सिझानेमें लगेगा। पत्तीके काढ़ेसे कुल्ला करनेपर दांतका दर्द और वह अफीमके साथ मदकमें भी पड़ती है। इलाहाबादका अमरुत भारतमें प्रसिद्ध है।

अमरूद, अमरुत देखो।

अमरेज्य (सं० पु०) देवगुरु बृहस्पति।

अमरेन्द्रतरु (सं० पु०) १ देवदारुवृक्ष। २ निर्गुण्डी धूप।

अमरेश (सं० पु०) १ शिव। २ इन्द्र।

अमरेश्वर, अमरेश देखो।

अमरैया, अमराई देखो।

अमरोत्तम (सं० त्रि०) देवतावोंमें सबसे अच्छा, जो फरिश्तोंमें सबसे बढ़कर हो।

अमरोपम (सं० त्रि०) देवताके सदृश, फरिश्ते-जैसा।

अमर्त (वै० त्रि०) अमर, जो कभी मरता न हो।

अमर्त्य (सं० त्रि०) मर्त स्वार्थे यत्, नञ्-तत्। मरण-शून्य, जो मर न सकता हो।

अमर्त्यभुवन (सं० क्लो०) देवतावोंका लोक, स्वर्ग, बिहिश्त।

अमर्दित (सं० त्रि०) अनिष्पुतुषित, अनभिभूत, जो दला-मला न गया हो, मातहत न बनाया हुआ, जो पैरसे कुचला न गया हो।

अमर्धत् (वै० त्रि०) अहिंसक, जो चोट न चलाता हो।

अमर्मजात (सं० त्रि०) दृढ़ अङ्गसे अजात, जो मज़-बूत अज़ोसे न पैदा हुआ हो।

अमर्मन् (वै० त्रि०) शरीरमें अप्रधान, ग्रन्थिरहित, जो जिस्ममें ख़ास न हो, बेगांठ।

अमर्मवेधिन् (सं० त्रि०) प्रधान अङ्गका अहिंसक, मृदु, ख़ास अज़ोमें चोट न देनेवाला, मुलय्यन।

अमर्याद (सं० त्रि०) नास्ति मर्यादा सीमा सम्मानो यस्य यत्र वा, बहुव्री० गौणे ह्रस्वः। सीमारहित, सम्मानविहीन, बेहद, बेइज़्ज़त।

अमर्यादा (सं० स्त्री०) १ सीमाराहित्य, वाजिब हदका लांघ जाना। २ सम्मानशून्यता, बेइज़्ज़ती। ३ उचित अर्चनाका उल्लङ्घन, वाजिब परस्तिशका न करना। ४ प्रागल्भ्य, निर्लज्जता, अतिप्रसङ्ग, अविनय, बेशर्मी, गुस्ताखी।

अमर्ष (सं० पु०) मृष क्षान्तौ घञ्-तत्। १ क्रोध, अक्षमा, गुस्सा। 'कोपक्रोधामर्षरोषप्रतिघा।' (अमर) २ अधैर्य, बेसबरी। ३ सहनशीलताका अभाव, बरदाश्तका न होना। ४ साहस, हिम्मत। ५ अलङ्कारमतसे व्यभि-चारी भाव विशेष। (त्रि०) ६ असहिष्णु, बरदाश्त न करनेवाला।

अमर्षज (सं० त्रि०) अधैर्य वा घृणासे उत्पन्न, जो बेसबरी या नफ़रतसे पैदा हुआ हो।

अमर्षण (सं० त्रि०) मृष-ल्युट्, ततो नञ्-तत्। १ क्रोधी, गुस्सावर। २ असहन, बरदाश्त न करने-वाला। (क्लो०) भावे ल्युट्। ३ क्रोध, गुस्सा। ४ अक्षमा, नाराज़ी।

अमर्षवत्, अमर्षित देखो।

अमर्षहास (सं० पु०) क्रोधका हास्य, गुस्सेकी हंसी।

अमर्षित (सं० त्रि०) मृष-क्त, ततो नञ्-तत्। क्रुद्ध, क्षमारहित, गुस्सावर, माफ़ न करनेवाला।

अमर्षिन् (सं० त्रि०) मृष-णिनि, ततो नञ्-तत्। क्रोधी, गुस्सावर।

अमर्षी, अमर्षिन् देखो।

अमल (सं० क्ली०) मृज्यते शोध्यते, मृजूष शुद्धौ कल, ततो नञ्-तत्। अथवा अम-कलच्। १ अभ्र, अबरक। २ समुद्रफेन। ३ कर्पूर, कपूर। ४ रौप्य माक्षिक, रुपामाखी। ५ कतकवृक्ष, निर्मली। ६ गन्ध द्रव्यविशेष। ७ पवित्रता, पाकीज़गी। ८ परमात्मा। (त्रि०) नास्ति मलमस्य, नञ्-बहुव्री०। ९ निर्मल, साफ़। १० दोषरहित, बेऐब। (अ० पु०) ११ व्यवहार, बरताव। १२ शासन, हुकूमत। १३ उन्माद, नशा। १४ व्यसन, आदत। १५ प्रभाव, असर। १६ समय, वक्त।

अमलगर्भ (सं० पु०) बोधिसत्त्वविशेष, किसी बोधिसत्त्वका नाम।

अमलता (सं० स्त्री०) १ निर्मलता, सफ़ाई। २ दोषराहित्य, बेऐबी।

अमलतास (हिं० पु०) आरग्वध, गिरिमाला, राजवृक्ष, कितवाली, करकच, भावा, कथ-उल-हिन्द, ख़ियार-चंबर। (Cassia Fistula)

यह वृक्ष हिमालयके निम्न भागमें उपजता, मध्यम परिमाण-विशिष्ट एवं पतनशील होता, और भारत तथा ब्रह्मदेशके भीतर-बाहर ३००० फ़ीटकी उच्चतापर बढ़ता है। खासिया पहाड़से पेशावर तक हिमालयके अञ्चलमें निम्न पार्वत्य प्रदेशपर इसे अधिक देखें और छोटा-नागपुर तथा मध्यभारतसे बम्बईतक फैला पायेंगे। यह प्रधानतः छोटा और फैलनेवाला वृक्ष रहता, ऊंचाईमें २० फ़ीटसे अधिक नहीं पड़ता, मार्चमें पत्ती झड़ जाती और चमकीला पीला फूल, ताज़ी हरी पत्तीके लम्बे हिलनेवाले गुच्छे साथ ही अप्रेलमें निकलता है। किन्तु कभी-कभी दुबारा शरत्‌में फूल खिल जायेगा। इसकी लम्बी, भूरी, हिलनेवाली फली या छिया लम्बाईमें एक या डेढ़ फ़ीट पड़ती और जाड़ेमें पकती है।

डालसे जो लाल अर्क टपकता, वह कड़ा पड़नेसे गोंद-जैसा बन जाता है। उसे साधारणतः कमरकस कहेंगे। उसका अमुक्तहस्त प्रयोग मामूली लोग नहीं जानते, किन्तु उसे सङ्कोचनशील बताया करते हैं।

अमलतासका बकला चमड़ा रंगनेके काम आता है। बङ्गालके लोहारडागे ज़िलेमें बकलेसे हलका-लाल रङ्ग बनाते और टिकाऊ रखनेके लिये उसमें फिटकरी डाल देते हैं। दो छटांक बकलेको दो तोले फिटकरीके साथ उबालेंगे। रङ्ग अनारकी छाल डालनेसे गहरा पड़ जाता है। युक्तप्रदेशसे अमलतासका बकला कुछ बाहर भेजा जाता है।

फलका सार या गूदा और जड़का बकला दवामें पड़ता है। घराऊ दवामें गूदेको सबसे साधारण और लाभदायक विरेचन समझेंगे। वह मृदु रेचनकी भांति भी व्यवहृत होता है। फलीको उबालकर गूदा निकालने और बादामवाले तेलके साथ शरीर पर मलनेसे वह शिशु और गर्भवती स्त्रीके लिये निराबाध विरेचन ठहरेगा। स्वल्प मात्रामें रेचक और अधिक मात्रामें उसे विरेचक देखते हैं। वह मृदु-रेचक और वक्षःस्थलका प्रतिबन्ध मिटानेको लाभदायक होगा। वह प्रायः इमलीके साथ मिलाया और उस दशामें शुष्क पित्तके लिये उत्तम विरेचन समझा जाता है। बाहरसे उसको गठिये और चिनकबाईपर लगायेंगे। कहवेके जौहरमें भी वह पड़ता है। फूलका गुलकन्द बनाया और वह बुखार छोड़ानेवाला समझा जायेगा। छाल और पत्ती दोनोको कूट-पीस और तेल डालकर फोड़ेपर लगाते हैं। चर्मरोग—प्रधानतः दद्रुपर भी उसे बाहरसे रखेंगे। सन्ताल इसकी पत्तीका काढ़ा रेचककी भांति व्यवहार करता है। मूल प्रबल विरेचक होगा। सिंहलवासी वृक्षके प्रत्येक भागको विरेचन बताता है। पञ्जाबमें इसका मूल धातु पुष्ट करने और बुखार छोड़ाने को खिलायेंगे। इसके बीजसे वमन भी कराते हैं।

सन् ई०के १३वें शताब्द सेविलेवाले अबुल अब्बासने इसका गुण लोगोंको समझा-बुझा दिया था, उसी समय फलके औषधमें व्यवहृत होनेकी बात उठी।

भुनी हुयी पत्ती भोजनके साथ मृदु-रेचककी भांति खायी जाती है। सम्हाल फूलको अधिकतर खाद्य-द्रव्यकी भांति व्यवहार करेगा। फलीका गूदा बङ्गालमें तम्बाकूको ज़ायक़ेदार बनानेके काम आता है। सारकाष्ठ विस्तीर्ण और अभ्यन्तर-काष्ठ धूसर वा हरिद्राभ रक्तवर्णसे इष्टक-रक्तवर्ण बदलते रहता है। काष्ठ अधिक स्थायी हो, किन्तु साधारणत: यथेष्ट विस्तीर्ण परिमाणका न पड़ेगा। इससे उत्तम स्तम्भ बनता और शकट, कृषियन्त्र एवं शालिमुसलके लिये भी प्रशस्त ठहरता है।

अमलतासिया (हिं० वि०) अमलतासके फूल-जैसा, हलके-पीले रङ्गवाला, गन्धकी, जिसका रङ्ग अमलतासके फूल-जैसा चमके।

अमलदारी (फ़ा० स्त्री०) १ हुकूमत, दख़ल, शासन, अधिकार। २ कनकूत, मालगुज़ारी। बुन्देलखण्डमें कोई कृषि ऐसी होती, जिसमें कृषकको उपजके तुल्य कर देना पड़ता है।

अमलदीप्ति (सं० पु०) कपूर, काफ़ूर।

अमलपट्टा (हिं० पु०) कर्मचारीको कार्यमें नियुक्त करनेके लिये दिया जानेवाला अधिकारपत्र, जो दस्तावेज़ कारिन्देको काममें लगानेके लिये दी जाती हो।

अमलपतत्रिणी (सं० स्त्री०) अमलपतत्रिन् देखो।

अमलपतत्रिन् (सं० पु०) पश्चात् पतनात् पतत्र: पक्ष: सोऽस्यास्तीति; अमलश्चासौ पतत्री चेति, कर्मधा०। वन्यकुक्कुट, जङ्गली हंस। वन्यकुक्कुटका पर देखनेमें अतिसुन्दर लगता, उसीसे यह नाम पड़ा है।

अमलपतत्री, अमलपतत्रिन् देखो।

अमलपत्री (सं० पु०) हंस।

अमलबेत (हिं० पु०) अम्लवेतस, चूक, अम्बरी, चूकपालक, सलूनी, हमाज़, तुर्शह। (Rumex Vesicarius) यह क्षुप प्रतिवर्ष फलता, पीछे मर जाता और छ:से बारह इञ्चतक ऊंचा होता है। इसे प्रधानत: पश्चिम-पञ्जाब, लवणपर्वत और सिन्धुके उस पारवाले पहाड़ पर उपजते देखेंगे। भारतके दूसरे प्रदेशमें भी यह मिलता, किन्तु वहां बो दिया जाता है। लताके रसको भारतवासी शीतल, रेचक और कुछ-कुछ मूत्रवर्द्धक समझते हैं। यह दन्तपीड़ा-निवारणके काम आये और अपने रेचक गुणसे वमनको रोकेगा। पूर्ण मात्रामें अमलबेतस कोष्ठप्रदाह रोकने और बुभुक्षा बढ़ानेको खिलाया जाता है। विषाक्त कृमि और वृश्चिकका दंश दूर करनेके लिये कुचली हुयी पत्तीकी लेयी चमड़ेपर लगायेंगे। बीजमें भी वैसा ही गुण रहता, फिर संग्रहणीमें भूनकर दिया जाता है। मूलसे भी औषध बनेगा। लता भारतके भीतर-बाहर सबज़ी की तरह लगायी और कच्ची-पक्की दोनो तरह खायी जाती है। प्राय: यह कूपके समीप ढेरका ढेर उग और साल भर बराबर मिल सकता है। इसकी सूखी टहनी हाटमें बिकेगी। वह खट्टी रहती और पाचक चूर्णमें पड़ती है। अम्लवेतस देखो।

अमलमणि (सं० पु०) १ स्फटिक, बिल्लौर। २ कपूर-मणि, कपूरगन्धमणिविशेष, जिस जवाहरमें काफ़ूर-जैसी ख़ुशबू आये।

अमलरत्न (सं० क्ली०) स्फटिक, बिल्लौर।

अमला (सं० स्त्री०) नास्ति मलं दोष: कोऽपि यस्या:, बहुव्री०। १ लक्ष्मी। २ भूम्यामलकी, पाताल-आंवला। ३ सातलावृक्ष, कोई झाड़ी। ४ नाभिनाली, तोंदीकी डोरी। ५ आमलकी, आंवला। (अ० पु०) ६ राजकर्मचारी, सरकारी नौकर। प्रधानत: न्यायालयके कर्मचारियोंको अमला कहते हैं।

अमलाझटा (सं० स्त्री०) भूधात्री, पाताल-आंवला।

अमलात्मन् (सं० पु०) अमलो दोषरहित: आत्मा यस्य, बहुव्री०। १ विशुद्धान्त:करण योगी, जिस फकीरका दिल साफ़ रहे। (त्रि) २ विशुद्धान्त:करण, साफ़ दिलवाला।

अमलानक (सं० क्ली०) अम्लानपुष्प, सदा-बहार, गुल-शादाब।

अमलिन (सं॰ त्रि॰) निष्कलङ्क, निर्मल, शुद्ध, बेदाग़, बेमैल, साफ़।

अमली (हिं॰ स्त्री॰) १ अम्लिका, इमली। २ कर-मर्द, गीदरवटी। यह झाड़दार पेड़ हिमालयके दक्षिण गढ़वालसे आसामतक उत्पन्न होता है। (अ॰ वि॰) ३ अमलसे तअल्लुक़ रखनेवाला, जो व्यवहारमें आता हो। ४ अमल करनेवाला, कर्मशील। ५ नशेबाज़, जो मादक द्रव्य खाता हो।

अमलूक (हिं॰ पु॰) वृक्षविशेष, कोई पेड़। यह अफ़ग़ानस्थान, बलूचिस्थान, कश्मीर और पञ्जाबसे उत्तर हिमालयकी पहाड़ीपर उपजेगा। इससे जो कितना ही रस टपकता, वह जमकर गोंद-जैसा बन जाता है। फलको कच्चा-पक्का दोनो तरह खायेंगे। सूखा फल काबुली लाया करते हैं। इसे मलूक भी कहेंगे।

अमलोनी (हिं॰ स्त्री॰) लोनिया, नोनी। यह एक तरहकी घास है। पत्ती छोटी, मोटी और खट्टी रहेगी। इसकी जो तरकारी बनती, उससे भूख बढ़ती है। रसको निचोड़ कर पीनेसे धतूरेका ज़हर उतर जायेगा। बड़ी पत्तीकी अमलोनी कुलफा कहलाती है।

अमल्लक (हिं॰ वि॰) मुतलक़, समूचा।

अमवत् (सं॰ वि॰) अमा सहार्थो व्ययम् मतुप् ह्रस्वः। १ असहाय, बेमदद। अथवा अम रोगस्ततो मतुप्। २ रोगवान्, बीमार। अथवा आम-शब्दस्य वा अमभावः। ३ यत्नवान्, तद्बीर लड़ानेवाला। ४ भीषण, खूंख्वार। ५ शक्तिशाली, ताक़तवर। (अव्य॰) ६ भीषणरूपसे, ज़ोरमें।

अमवती (सं॰ स्त्री॰) अमवत् देखो।

अमवा—युक्तप्रदेशके गोरखपुर ज़िलेका एक ग्राम। यह गोरखपुर शहरसे ३४ कोस दूर पड़ेगा। इसमें प्रधानतः नीच जातिके हिन्दू किसान रहते हैं। बड़ी गण्डक नदीके किनारे यह बसा है। नदी अपनी जगह छोड़ कुछ मील दूर पूर्वकी ओर बहने लगी है। किन्तु ग्राम और नदीके बीचकी जगह कभी-कभी बाढ़ आनेसे उपजाऊ बन जाती है।

अमवान् (सं॰-पु॰-क्ली॰) अमवत् देखो।

अमविष्णु (सं॰ त्रि॰) विभिन्नदिक् गमनशील, भिन्नोद्य, मुख्तलिफ़ तर्फ़को जानेवाला, ऊंचा-नीचा।

अमस (सं॰ पु॰) अम-असच्। १ काल, वक्त। २ रोग, बीमारी। ३ निर्बोध, बेवकूफ़ी। ४ अज्ञानी व्यक्ति, जिस शख्सको अक़्ल न रहे।

अमसूल (हिं॰ पु॰) वृक्ष विशेष, कोई दरख़्त। यह पतला होता और डाल नीचेको झुक जाती है। इसे दक्षिणको ओर कोंकण, कनाड़े और कुर्गके ज़िलेमें उत्पन्न होते देखेंगे। नीलगिरिपर इसकी अतिवृद्धि रहती है। फलको 'क्रिन्दाव' कहें और खायेंगे। इसके बीजका तेल बहुत प्रसिद्ध है। बाज़ारमें वह जमी हुयी सफ़ेद लम्बी पत्ती या टिकिये-जैसा बिके और थोड़ी ही गर्मी पहुंचनेसे पिघल जायेगा। उसका गुण वर्धक और सङ्कोचक होता है। सूजन वग़ैरहपर वह मला जाता है। उससे मरहम भी बनता है।

अमसृण (सं॰ त्रि॰) कठोर, कठिन, सख़्त, कड़ा, जो मुलायम न हो।

अमस्तक (सं॰ त्रि॰) मस्तकहीन, अशिरस्, बेसर, जिसके सर न रहे।

अमस्तु (सं॰ क्ली॰) दधि, दही।

अमहत (सं॰ त्रि॰) रोगादिसे पीड़ित, जिसको बीमारी वग़ैरहसे चोट पहुंची हो।

अमहन् (सं॰ त्रि॰) रोगादि निवारक, जो बीमारी वग़ैरहको मिटता हो।

अमहर (हिं॰ पु॰) कच्चे और छिले हुये आमकी सूखी फांक। इसे दाल और तरकारीमें डालते हैं।

अमहल (हिं॰ वि॰) १ भवन-विहीन, बेमकान्, जिसके पास घर न रहे। २ व्यापक, समाया हुआ।

अमा (सं॰ अव्य॰) मा-का मा, न मा। १ सह, साथ। २ निकट, नज़दीक। ३ भवनमें, मकानपर। (स्त्री॰) ४ अमावस्या, अमावस। ५ चन्द्रकी सोलह कला। ६ महाकला। (पु॰) ७ आत्मा, रूह। ८ गृह, मकान, घर। ९ इहलोक। १० पशुके नेत्रकी तोरी। इसे अशुभ समझते हैं। (त्रि॰) ११ परि-

मापशून्य, बेमिक़दार। १२ अपक्व, कच्चा, जो पका न हो। १२ दुर्भाग्य, कमबख़्त।

अमांस (सं० त्रि०) नास्ति मांसं यस्य, बहुव्री०। १ दुर्बल, लाग़र, जिसके जिस्मपर गोश्त न रहे। (क्ली०) २ मांस भिन्न अन्य वस्तु, जो चीज़ गोश्त न हो।

अमांसौदनिक (सं० त्रि०) मांसविशिष्ट शालि-भोजनसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो गोश्त मिले भातसे तअल्लुक़ न रखता हो।

अमाक्त (वै० त्रि०) मिलित, सहागत, मिला हुआ, जो साथ-साथ आया हो।

अमाचीत (हिं० पु०) शालिविशेष, किसी क़िस्मका चावल। यह अग्रहायणमें प्रस्तुत हो जाता है।

अमाजुर्, अमाजूर् (वै० स्त्री०) १ यावज्जीवन गृहनिवास, मकानमें ही बुड्ढ हो जानेकी हालत। २ माता-पिताके साथ गृहमें रहते हुये पतिका वियोग, अपने मा-बापके साथ एक ही मकानमें रहते हुये ख़ाविन्दकी जुदायी।

अमात् (सं० त्रि०) १ अमित, अपरिमित, अप्रतीमान, बेअन्दाज़, बेतौल, जिसकी पैमायश न हो सके। (अव्य०) २ निकटमें, पड़ोससे।

अमातना (हिं० क्रि०) निमन्त्रण देना, बुला भेजना, तलब करना।

अमातापुत्र (सं० पु०) माता और पुत्र दोनोका अनस्तित्व, मा और लड़के दोनोका न रहना।

अमातृक (सं० त्रि०) हीनमातृक, मृतमातृक, बेमादर, जिसके मा न रहे।

अमातृभोगीण (सं० त्रि०) माताके व्यवहारमें न आने योग्य, जो माके काम आने क़ाबिल न हो।

अमात्य (सं० पु०) अमा सह विद्यते अस्य त्यप्। १ अभिन्न गृहका परिजन, हमख़ाना, हममसकन, जो आदमी एक ही मकान्‌में रहता हो। २ मन्त्री, सचिव, वज़ीर, दीवान्। जो धर्मज्ञ, प्राज्ञ, जितेन्द्रिय, सत्‌कुलीन, और कार्यकुशल रहता, शास्त्रकार उसीको राजाके अमात्य योग्य कहता है।

"अमात्यमुख्यं धर्मज्ञं प्राज्ञं दान्तं कुलोद्गतम्।
स्थापयेदासने तस्मिन् खिन्नः कार्यचणे नृणाम्॥" (मनु ७।१४१)

अमात्र (सं० पु०) मा-उण्-त्रन्-टाप्; नास्ति मात्रा मानं परिच्छेदो वा यस्य, नञ्-बहुव्री० गौणे ह्रस्वः। १ तुरीय ब्रह्म, परमात्मा, जिस चीज़की कोई माप न पड़े। (त्रि०) २ असीम, बेहद, जिसका छोर न मिले। ३ असम्पूर्ण, जो समूचा न हो। ४ अप्रारम्भक, जो असली न हो। ५ अकार-मात्रा-विशिष्ट, जो अलिफ़की मिक़दार रखता हो।

अमात्रवत्त्व (सं० क्ली०) १ न्यूनता, दोष, कमी, ऐब। २ प्राण, आत्मा, आध्यात्मिक सार, जान्, रूह, रूहानी माहियत, जान्‌की जड़।

अमान (सं० त्रि०) १ मानरहित, बेमाप, जिसका कोई ठिकाना न लगे। २ निरभिमान, बेफ़ख़र, जिसे घमण्ड न घेरे। ३ अप्रतिष्ठित, बेइज़्ज़त। (अ० पु०) ४ रक्षण, हिफ़ाज़त। ५ शरण, पनाह।

अमानत (अ० स्त्री०) न्यास, निक्षेप, आधि, उपनिधि, तहवील, वदीयत, ज़र अमानत, धरोहर, किसी चीज़का किसीके पास कुछ वक़्त के लिये रखना, सुपुर्द किया हुआ माल।

अमानतदार (अ० पु०) अमानत रखनेवाला शख़्स, जिस व्यक्तिके पास उपनिधि रहे।

अमानन (सं० क्ली०) अमानना देखो।

अमानना (सं० स्त्री०) मान चुरा० पूजायां युच् टाप्, अभावे नञ्-तत्। १ आदरका अभाव, सम्मानकी शून्यता, बेइज़्ज़ती, इज़्ज़तका न रहना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ मानशून्य, गौरवहीन, बेइज़्ज़त।

अमानव (सं० त्रि०) १ अपौरुषेय, अमानुष, ग़ैर इन्सानी, जो आदमी न हो। २ अतिमर्त्य, मानुषातिग, ख़ारिज अज़ ताक़त-बशरी, आसमानी, जो आदमीकी पहुंचका न हो।

अमाननीय, अमान्य देखो।

अमानस्य (सं० क्ली०) मानसे मनसि साधु मानसयत्, ततो नञ्-तत्। १ दुःख, तकलीफ़। २ पीड़ा, दर्द।

'पीड़ाबाधाव्यथादुःखममानस्यं प्रसूतिजम्।' (अमर)

अमाना (हिं० क्रि०) १ पूरे तौरपर भर जाना, समाना, किसी चीज़के भीतर किसी चीज़का आ जाना। २ प्रफुल्लित होना, बढ़ चलना, अभिमान

देखाना। (पु०) २ अन्नभवनका द्वार, बखारका दरवाज़ा, आना।

अमानितव्य, अमान्य देखो।

अमानिता (सं० स्त्री०) लज्जाशीलता, नम्रता, आजिज़ी, खाकसारी, ग़रीबी, ताबेदारी।

अमानित्व (सं० क्ली०) अमानिता देखो।

अमानिन् (सं० त्रि०) १ लज्जाशील, नम्र, आजिज़, खाकसार, ताबेदार, ग़रीब। (पु०-क्ली०) अमानी। (स्त्री०) अमानिनी।

अमानी (हिं० स्त्री०) १ भूमिविशेष, कोई खास ज़मीन, जिस ज़मीन्का सरकार ही ज़मीन्दार रता है और उसकी ओरसे कलेक्टर इन्तिजाम करता है। २ भूमिका कार्य विशेष, ज़मीनका कोई खास काम। इसका प्रबन्ध अपने ही हाथमें रखते हैं, ठेके पर कभी नहीं छोड़ते। ३ भूमिकरकी प्राप्ति, मालगुज़ारी का वसूल। इसमें ख़राब हुई फ़सलको देख कुछ छोड़ देते हैं। ४ इच्छानुसारिणी क्रिया, जो कारवाई अपनी तबीयतके मुवाफ़िक़ की जाती हो।

अमानुष, अमानव देखो।

अमानुषी (हिं०) अमानव देखो।

अमानुष्य, अमानव देखो।

अमाप (सं० त्रि०) अमान, असीम, वेहद, जिसकी कोई नाप न रहे।

अमामसी (सं० स्त्री०) अमा सह सूर्येण मा: मासो वा चन्द्रो यस्याम्, बहुव्री० गौरादि० ङीप्। सूर्य और चन्द्रके एक साथ रहनेकी तिथि, अमावस्या।

अमामासी (सं० स्त्री०) मास इति मा: एव इति, मस् स्वार्थे अण्। अमामसी देखो।
'अमावस्याप्यमामासी' (शब्दार्णव)

अमाय (सं० त्रि०) नास्ति माया यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ मायाशून्य, कपटतारहित, सात्विक, सच्चा। २ अविद्याहीन, जानकार। 'स्यानमायस्त्वमायी क्षपा। दम्भी बुद्धिय।' (हेम) मायो पीताम्बरं अम्बरं वा तन्नास्ति यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ पीताम्बरशून्य, वस्त्रशून्य, पीताम्बर न पहने हुआ, जिसके पास कपड़ा न रहे। 'माय: पीताम्बरेऽम्बरे।' (विश्व) मायो मानं स नास्ति यस्य। ४ परिमाणशून्य, इयत्तारहित, बेमिक़दार, बेहद, जिसकी कोई नाप न रहे। (क्ली०) ५ ब्रह्म, परमेश्वर।

अमायत् (सं० त्रि०) मा: मानं तां यन् प्राप्नुवन्; मा-इण्-शतृ, ततो नञ्-तत्। अपरिमित, बेहद, जिसकी कोई नापजोख न रहे।

अमाया (सं० स्त्री०) १ भ्रमका अभाव, मुग़ालतेकी अदम-मौजूदगी। २ सत्यका ज्ञान, रास्तीका इल्म। ३ शौच, आर्जव, रास्तबाज़ी सदाक़त, सचायी। (हिं० वि०) अमाय देखो।

अमार (सं० पु०) १ जीवन, ज़िन्दगी, न मरनेकी हालत। (हिं० पु०) २ अम्बार, अनाज रखनेकी जगह। यह अरहरके सरकण्डोंकी टट्टीसे घेर छाया और नीचे ऊपर भुस डाल बीचमें अनाजसे भरा जाता है। ३ अमड़ा।

अमारग (हिं०) अमार्ग देखो।

अमारी (अ० स्त्री०) हाथीका हौदा। इसपर छायाके लिये मण्डप बंधा रहता है।

अमार्ग (सं० पु०) मार्गका अभाव, राहकी अदम-मौजूदगी। (त्रि०) २ मार्गरहित, बेराह, जहां चलनेकी जगह न मिले।

अमार्गित (सं० त्रि०) अनिरीक्षित, जो आखेट न किया गया हो, तलाश न किया हुआ, जिसके पीछे शिकार करनेको न पड़ चुकें।

अमार्जित (सं० त्रि०) मृज-क्त-इट् वृद्धि:, ततो नञ्-तत्। अशुद्ध, अपरिष्कृत, नापाक, मैला, जो साफ़ न किया गया हो।

अमाल (अ० पु०) शासक, अधिकारी, हाकिम।

अमालनामा (अ० पु०) १ कर्मचारीके उत्तम-अधम कार्य लिखनेका पुस्तक, जिस किताब या रजिष्टरमें नौकरोंके भले-बुरे काम लिखे जायें।

अमावट (हिं० स्त्री०) अमरस, आमका सूखा रस। आम अच्छीतरह पक जानेपर रसको निचोड़ते और कपड़ेपर फैलाकर सुखा लेते हैं। यह खानेमें मज़ेदार लगता और चटनी वग़ैरहके काम आता है।

अमावना, अमाना देखो।

अमावस (हिं०) अमावस्या देखो।

अमावसी (सं० स्त्री०) अमा सह वसतोऽस्यां चन्द्रार्कौ ; अमा-वस-अप्-घञ् वा पृषो० साधु०, ततो गौरा० ङीप्। अमावस्या।

अमावसु (सं० पु०) १ उर्वशी-गर्भसे उत्पन्न हुये पुरूरवाके पुत्र। यह सात भाई रहे। यथा—आयु, अमावसु, विश्वायु, दृढ़ायु, वनायु एवं शतायु। (हरिवंश) २ चन्द्रवंशीय कुशके चतुर्थ पुत्र। यह वसु एवं कुशिक नामसे भी प्रसिद्ध रहे। (विष्णुपुराण)

अमावस्या, अमावास्या (सं० स्त्री०) अमा सह वसतोऽस्यां चन्द्रार्कौ, अमा-वस अधिकरणे ण्यत् निपातनात् ह्रस्वोपि। कृष्णपक्षको पन्द्रहवीं तिथि। शास्त्रकारगण कहते हैं, कि अमावस्याके दिन एकही राशिमें सूर्य ऊपर और चन्द्रमा नीचे रहता है। वह लोग यह भी कहते हैं, कि अमावस्या तिथिको चन्द्र सूर्यकी किरणसे आच्छन्न रहता है, इसीसे उसे कोई देख नहीं सकता।

'अमावस्यात्वमावास्या दर्शः सूर्येन्दुसङ्गमः।' (अमर)

"सूर्याचन्द्रमसोर्यः परः सन्निकर्षः सामावास्येति।" (गोभिल०)

'परः सन्निकर्षः उपर्यधोभावापन्न-समसूत्रपातन्यायेनैकराश्यवच्छेदेन महावस्थानरूपः।' (स्मार्त)

विष्णुपुराणके दूसरे अंशके बारहवें अध्यायमें लिखा है, कि कृष्णपक्षमें देवगण और पितृगण चन्द्रका सुधा पान करते हैं। अन्तमें जब एक कला बाकी रह जाती है, तब सूर्य सुषुम्ना नाम्नी रश्मिद्वारा उन्हें फिर परिपुष्ट कर देते हैं।

जब दो कला बाकी रह जाती हैं, उस समय चन्द्रमा अमा नाम्नी सूर्यरश्मिमें प्रवेश करता है, इसीसे उस दिनको अमावस्या कहते हैं।

"अमाख्या रश्मौ वसति अमावस्या ततः स्मृता।" (विष्णुपुराण)

अमावस्याके दिन अहोरात्र चन्द्र पहले जलमें, उसके बाद लतामें, फिर अस्तको सूर्यमण्डलमें प्रवेश करता है ; इसीसे लता वा लता-पत्र आदि तोड़नेसे ब्रह्महत्याका पाप लगता है।

अमावस्या तिथिमें चन्द्र और सूर्य किस तरह अवस्थान करते हैं, उसे ऊपरके गोभिल-सूत्रमें स्मार्तने स्पष्ट भावसे प्रकाश नहीं किया। चन्द्र, सूर्य और पृथिवी इन तीनोंका समसूत्रपात पड़नेसे उस समय चन्द्र यदि पृथिवी और सूर्यका मध्यवर्ती रहे, तो उसी दिन अमावस्या होती है। इस चित्रमें सू-से सूर्यमण्डल,

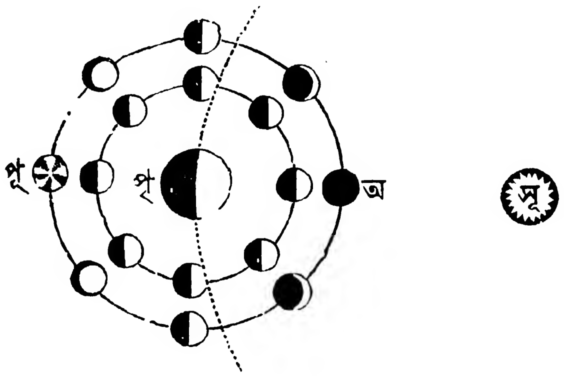

अ-से अमावस्याका चन्द्र, पूः-से पूर्णिमाका चन्द्र और पृः-से पृथिवी समझना चाहिये। विन्दु-विन्दु रेखाद्वारा वृत्तका जो कुछ अंश दिखाया गया है, उस पथद्वारा पृथिवी सूर्यके चारों ओर घूमती है। इधर चन्द्रमण्डल फिर उसीके साथ साथ पृथिवीके चारो ओर घूमता है। इसीसे सूर्य, पृथिवी एवं चन्द्र—तीनो प्रति मास दो बार समसूत्रमें अवस्थान करते हैं। उसमें जिस दिन सूर्य और पृथिवीके मध्यस्थलमें चन्द्र आ पड़ता है, उस दिन अमावस्या होती है, एवं जिस दिन सूर्य और चन्द्रके मध्यस्थलमें पृथिवी आ पड़ती है, उस दिन पूर्णिमा होती है। ऐसा होनेका कारण यही है, कि चन्द्र स्वयं ज्योतिर्मय ग्रह नहीं है। उसमें सूर्यकिरण प्रतिविम्बित होनेसे ही प्रकाश पंहुचता है। इसीलिये चन्द्रमाकी जो दिक् सूर्यकी ओर घूमती है, केवल उसी ओर धूप जाती है, दूसरी ओर अन्धकारमें छिपी रहती है। अतएव चन्द्रमण्डलका जो अंश पृथिवी और सूर्य इन दोनोंकी ओर घूमता रहता है, केवल उसी अंशको हमलोग देखते हैं। इस चित्रमें अ-अमावस्याका चन्द्र है। वह सूर्य एवं पृथिवीका मध्यवर्ती हो गया है, इसीसे उसका जो अंश पृथिवीकी ओर फिरा हुआ है उसमें सूर्यका किरण नहीं लगती, और हम लोग

चन्द्रको देख नहीं सकते। इसके अतिरिक्त अमावस्याको चन्द्रमण्डल पृथिवी-निकटसे और कहीं अन्तर्हित तो नहीं हो जाता। सूर्यग्रहण लगते समय चन्द्रमण्डल ठीक पृथिवी और सूर्यके मध्यस्थलमें रहता है। इसलिये चन्द्रकी छाया पड़नेसे हमलोग सूर्यके कुछ अंशको थोड़ी देरतक नहीं देख सकते। फिर जब चन्द्रमा हट जाता, हैं तब सूर्यमण्डल दिखाई पड़ने लगता है। इस तरह चन्द्रका छायापतन ही सूर्यग्रहणका कारण है। अमावस्याके दिन सूर्य, चन्द्र और पृथिवी समसूत्रमें रहते हैं, और चन्द्रमण्डल दोनोंके बीचमें आ जाता है, इसीसे सूर्यग्रहण होता है, तद्भिन्न दूसरी तिथिमें सूर्यग्रहण नहीं पड़ सकता।

इस जगह प्रश्न हो सकता है, कि प्रति अमावस्याको ही सूर्य, चन्द्र और पृथिवी समसूत्रमें रहती है और चन्द्रमण्डल भी दोनोंके मध्यस्थलमें आ पड़ता है, फिर प्रत्येक अमावस्याके दिन सूर्यग्रहण क्यों नीं होता? उसका कारण यह है, कि इस चित्रपर पृथिवी और चन्द्रका भ्रमणपथ जिस प्रकार समतल चेत्रमें दिखाया गया है,वस्तुतः आकाशमें वैसा समतल नहीं आता। यदि वह समतल होता, तो प्रतिमास ही एक बार सूर्यग्रहण पड़ता। चन्द्रका भ्रमणपथ पृथिवीके भ्रमणपथकी ओर कुछ झुका हुआ है। बारीक हिसाब लगानेसे इस वक्रताके कोणका परिमाण ५° ८′+, होता है; और चन्द्रमण्डल घूमते घूमते कभी पृथिवीवाले भ्रमणपथके ऊपर और कभी नीचे आ जाता है, इसीसे जिस समय चन्द्र पृथिवीवाले भ्रमणपथके ऊपर आ तिरछे पार होता है, उस दिन अमावस्या होनेसे सूर्यग्रहण लगता है।

चन्द्रके आकर्षणसे समुद्रका जल स्फीत हो जाता है, इसीसे गङ्गा आदि नदियोंमें उस समय जुआर उठता है। अमावस्या एवं पूर्णिमाके समय समुद्र का जल अत्यन्त स्फीत होता, इसीसे उस समय बाढ़ आती है। किसी स्थानकी द्राघिमाके ऊपर जब चन्द्र उपस्थित होता है, तब उसके तीन घण्टे बाद जुआर आता है। चन्द्रकी ओर वाली द्राघिमा एवं उसकी विपरीत दिशामें भी जुआर होता है। चन्द्रको एक बार घूमकर फिर अपनी द्राघिमाको पहुंचनेमें २४ घण्टे ५० मिनट लगते हैं, सुतरां १२ घण्टे २५ मिनट बाद अहोरात्रमें दो बार जुआर आता है।

अमावस्यादन्यतरस्याम्। पा० ३।१।१२१। अमा इस उपपदके परस्थित वस धातुसे उत्तर अधिकरण वाच्यमें ण्यत् प्रत्यय होता है। वृद्धि होनेपर निपातनमें विकल्पसे ह्रस्व भी होता है। "वृद्धौ सत्यां पाक्षिको ह्रस्वश्च निपात्यते। अमा सह वसतोऽस्याश्चन्द्रार्कौ अमावास्या अमावस्या।" (सि० कौ०)।

"अमावस्या गुरुं हन्ति शिष्यं हन्ति चतुर्दशी।" (मनु ४।११४)

अमावस्याके दिन पढ़नेसे गुरु और चतुर्दशीके दिन पढ़नेसे छात्र मर जाता है।

शास्त्रकारोंने विशेष कर्तव्य कर्मके लिये अमावस्याको कई प्रकारसे विभक्त किया है। चतुर्दशीयुक्त अमावस्याका नाम सिनीवाली और क्षययुक्त अमावस्याका नाम कुहु है। अमावस्याके दिन तेल लगाना, बाल बनवाना, मांस-मछली खाना और स्त्रीसम्भोग करना मना है। इस दिन धान्य और तृणादि काटना न चाहिये। पुष्या नक्षत्र वा जन्म नक्षत्रमें; व्यतीपात वा वैधृति योगमें अमावस्या होनेसे उस दिन नदीस्नान करनेसे सात कुल पवित्र हो जाते हैं। मङ्गलवारको अमावस्याको नदी स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। सोमवारको सिनीवाली वा कुहु अमावस्या हो, तो मौन रह स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है। मुख्य चान्द्र पौषको अमावस्याको यदि रविवार एवं व्यतिपात योग और श्रवणा नक्षत्र हो, तो उसका नाम अर्धोदययोग है। यह योग कभी कभी आता है। अर्धोदय देखो।

अमावस्या ही श्राद्धका प्रशस्त काल है, इसलिये प्रतिमासका कृष्णपक्षनिमित्तक पार्वणश्राद्ध अमावस्याके दिन ही करना होता है। अमावस्याके श्राद्धका प्रशस्तकाल अपराह्ण है। दिनको पांच भाग करनेसे उसके चतुर्थ भागका नाम अपराह्ण है। उसी समय पार्वणश्राद्ध करना उचित है। दोनों

दिनों मुख्य अपराह्ण न मिलनेसे दूसरे दिन अष्टम एवं नवम मुहूर्तरूप गौण अपराह्णमें भी श्राद्धका विधान मिलता है। सौर आश्विन मासकी अमावस्याको महालया कहते हैं। महालयामें श्राद्ध करनेसे उन्नीस पिण्ड देना पड़ता है। उसका नाम षोड़श पिण्डदान है। कार्तिक मासकी अमावस्याका नाम दीपान्विता है। दीपान्विताको श्राद्धके बाद उल्कादान करना पड़ता हैं। प्रति मासमें अमावस्याका एक-एक व्रत भी प्रचलित है।

अमावासी, अमावस्या देखो।

अमावास्यक (सं० त्रि०) अमावस्याकी रात्रिको उत्पन्न हुआ, जो अमावसकी रातको पैदा हुआ हो।

अमावास्या, अमावस्या देखो।

अमाष (सं० त्रि०) मुद्‌गविहीन, शिम्बिकशून्य, लोबियाकी फली न रखनेवाला, जिसमें लोबियाकी छिया न रहे।

अमाह (हिं० पु०) नेत्ररोगविशेष, नाख़ूना। इससे आंखमें लाल मांस उभर आता है।

अमाही (हिं० वि०) नेत्ररोग सम्बन्धीय, जो नाख़ूनेसे तअल्लुक़ रखता हो।

अमिट (हिं० वि०) १ न मिटनेवाला, जो टिका रहता हो। २ अवश्यम्भावी, जिसके होनेमें फ़र्क़ न पड़े।

अमित (सं० त्रि०) न मितम्, नञ्-तत्। १ अपरिमित, इयत्तारहित, बेहद, जिसको कोई नाप-जोख न रहे। २ अज्ञात, नादान। ३ अनवधारित, भूला हुआ। ४ अपरिष्कृत, जो साफ़ न किया गया हो। ५ अलङ्कार-विशेष। केशवके मतानुसार साधन जब साधककी सिद्धिका फल उठाता, तब अमितालङ्कार लगता है।

अमितक्रतु (वै० पु०) १ असीम प्रज्ञा-सम्पन्न व्यक्ति, जिस शख़्सकी अक़्लका ठिकाना न लगे। २ असीम शक्तिशाली, बेहद ताक़त रखनेवाला।

अमितगतिसूरि (सं० पु०) एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार। विक्रमसंवत् १०२५के कुछ पहले श्रीअमितगतिसूरिका जन्म हुआ था।

आचार्यवर्य अमितगति बड़े भारी विद्वान् और कवि थे। इनकी असाधारण विद्वत्ताका परिचय पानेको इनके ग्रन्थोंका भलीभांति मनन करना चाहिये। रचना सरल और सुखसाध्य होने पर भी बड़ी गंभीर और मधुर है। संस्कृत भाषापर इनका अच्छा अधिकार था। इन्होंने अपने धर्मपरीक्षा नामक ग्रन्थको केवल दो महीनेमें रचके तयार किया जिसे वांचकर लोग मुग्ध हो जाते हैं। यथा :—

"अमितगतिरिवेदं स्वस्य मासद्वयेन
प्रथितविशदकीर्तिः काव्यमुद्भूतदोषम्।"

धर्मपरीक्षाके अतिरिक्त अमितगतिके बनाये हुए निम्नलिखित ग्रन्थोंका भी उल्लेख मिलता है—१ सुभाषितरत्नसन्दोह, २ श्रावकाचार, ३ भावनाद्वात्रिंशति, ४ पञ्चसंग्रह, ५ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, ६ चन्द्रद्वीप प्रज्ञप्ति, ७ सार्द्धद्वयद्वीपप्रज्ञप्ति, ८ व्याख्याप्रज्ञप्ति, ९ योगसारप्राभृत।

पञ्चसंग्रहमें अमितगतिकी प्रशस्ति इस प्रकार लिखी है—

"श्रीमाथुराणामनघद्युतीनां संघोऽभवद्वृत्तिविभूषितानाम्।
हारो मणीनामिव तापहारी सूत्रानुसारी शशिरश्मिशुभ्रः॥ १॥
माधवसेन गणी गणनीयः शुद्धतमोऽजनि तत्र जनीयः।
भूयसि सत्यवतीव शशाङ्कः श्रीमति सिन्धुपतावकलङ्का॥ २॥
शिष्यस्तस्य महात्मनोऽमितगतिर्मोक्षार्थिनामग्रणी-
रेतच्छास्त्रमशेषकर्मसमितिप्रख्यापनायाकृत।
वीरस्येव जिनेश्वरस्य गणभृद्भव्यात्मनां व्यापको-
दुर्वारस्मरदन्तिदारुणहरिः श्रीगौतमः सत्तमः॥ ३॥
यदत्र सिद्धान्तविरोधि बद्धं ग्राह्यं निराकृत्य तदेतदार्यैः।
गृह्णन्ति लोका ह्युपकारि यत्नात्तुषं निराकृत्य फलं विनम्रम्॥ ४॥
यावन्मेरुधरा केवलमर्क नीरं (यावच्चिरं) तिष्ठति मुक्तिशक्ती।
तावद्धरायामिदमत्र शास्त्रं स्तुयाच्छुभं कर्मनिराशकारि॥ ५॥"

(पञ्चसंग्रह)

इसका सारांश यह है—जिस समय महाराज सिन्धुपति (भोजके पिता) पृथ्वीका पालन करते थे, उस समय कीर्तिशाली माथुरसंघमें एक माधवसेन नामके आचार्य हुए, जिनके गौतमगणधरके समान विद्वान् शिष्य अमितगतिने यह पञ्चसंग्रह ग्रन्थ सम्पूर्ण कर्मसमितियोंकी प्रख्यापनाके लिये बनाया।

अमितगतिने संवत् १०५०में सुभाषितरत्नसन्दोह बनाते समय मुञ्जका राज्यकाल बताया और

अपने गुरुके समयमें सिंधुल महाराजका राज्य बतलाया है। इससे यह निश्चय होता है कि, मुञ्जके पहले भी सिंधुल राज्य कर चुके थे। फिर उनके पीछे भी उनका राजा होना सिद्ध होता है।

धर्मपरीक्षाकी प्रशस्तिके कुछ श्लोक उद्धृत करते हैं—

"सिद्धान्तपाथोनिधिपारगामी
श्रीवीरसेनोऽजनि सूरिवर्य्यः।
श्रीमाथुराणां यमिनां वरिष्ठः
कषायविध्वंसविधौ पटिष्ठः॥ १॥
ध्वस्ताशेषध्वान्तवृत्तिर्मनस्वी
तस्मात्सूरिर्देवसेनोऽजनिष्ट।
लोकोद्योती पूर्वशैलादिवार्कः
शिष्टाभीष्टः स्थेयसोऽपास्तदोषः॥ २॥
भासिताखिलपदार्थसमूहो
निर्मलोऽमितगतिर्गणनाथः।
वासरो—दिनमणेरिव—तस्मा
ज्जायतेस्म कमलाकरबोधी॥ ३॥
नेमिषेणगणनायकस्ततः
पावनं वृषमधिष्ठितो विभुः।
पार्वतीपतिरिवास्तमन्मथो
योगगोपनपरो गणार्च्चितः॥ ४॥
कोपनिवारी शमदमधारी माधवसेनः प्रणतरसेनः।
सोऽभवदस्माद्गलितमदोष्मा यो यतिसारः प्रशमितसारः॥
धर्मपरीक्षामकृतवरेण्यां धर्मपरीक्षामखिलशरण्याम्।
शिष्टवरिष्ठोऽमितगतिनामा तस्य पटिष्ठोऽनघगतिधामा॥"

इसका सारांश यह है कि माथुरसंघके मुनियोंमें श्रीवीरसेन नामके एक श्रेष्ठ आचार्य हुए और उनके शिष्योंमें क्रमसे देवसेन, अमितगति (प्रथम) नेमिषेण, और माधवसेन नामके मुनि हुए। अमितगति इन्हीं माधवसेनके शिष्य थे।

अमिततेजस् (सं० त्रि०) असीम तेज सम्पन्न, बेहद रौशनी रखनेवाला, जिसकी महिमा या शान्का छोर न मिले।

अमितद्युति (सं० त्रि०) असीम प्रभान्वित, बेहद चमक-दमक रखनेवाला।

अमितध्वज (हिं० पु०) चन्द्रवंशीय धर्मध्वजके पुत्र।

अमितविक्रम (सं० पु०) अमिता अपरिच्छिन्ना विक्रमाश्रयः पादनिःक्षेपरूपा यस्य अमितः विक्रमः शौर्यमस्येति वा, बहुव्री०। १ विष्णु। (त्रि०) २ बहु विक्रमशाली, अधिक शौर्य-सम्पन्न, जो निहायत बहादुर हो।

अमितवीर्य (सं० पु०) असीम शक्तिसम्पन्न, बेहद कुवत रखनेवाला।

अमिताक्षर (सं० त्रि०) अनियत अक्षर-विशिष्ट, जिसमें गैर मुकर्रर हर्फ़ रहे।

अमिताभ (सं० पु०) १ सावर्णि मन्वन्तरकी द्वितीय और धैवत मन्वन्तरकी प्रथम श्रेणीके देवता। २ कोई ध्यानी बुद्ध। (त्रि०) ३ असीम प्रभासम्पन्न, जिसकी चमक दमक बेहद रहे।

अमितायुस् (सं० पु०) कोई ध्यानी बुद्ध।

अमिताशन (सं० पु०) अमितं अश्नाति प्रलय समये अमित-अश-ल्युट्। १ सर्वभक्षक परमेश्वर। २ विष्णु। (त्रि०) अमितं अशनं यस्य, बहुव्री०। ३ अपरिमित-भोजी, अतिभोजी, बेहद खानेवाला, जिसके खानेका ठिकाना न लगे।

अमितौजस् (सं० त्रि०) अदन्त पुरा०, ओज-असुन् ततो नञ्-बहुव्री०। अपरिमित बलशाली, बेहद कुव्वत रखनेवाला।

अमित्र (सं० क्ली०) अम-उण्-इत्र। असुहृत्, शत्रु, दुश्मन, अदू।

अमित्रखाद (सं० पु०) शत्रुको चबा जानेवाले इन्द्र।

अमित्रगणसूदन (सं० त्रि०) शत्रुका दल नष्ट करनेवाला, जो दुश्मन्का गिरोह बरबाद कर डालता हो।

अमित्रघात (वै० त्रि०) १ शत्रुको नष्ट करनेवाला, जो दुश्मन्को क़त्ल कर रहा हो। (पु०) २ मौर्यवंशीय एक राजाका नाम (Amitrachates)।

अमित्रघातिन् (सं० त्रि०) अमित्रघात देखो।

अमित्रघ्न (सं० त्रि०) अमित्रघात देखो।

अमित्रजित् (सं० पु०) अमित्रं शत्रुं जयति, जि-क्विप्। १ शत्रुपराजयकारी, दुश्मन्को जीतनेवाला। २ इक्ष्वाकुवंशवाले सुवर्णराजके पुत्र। मत्स्यपुराणमें इनका नाम अमन्त्रजित् लिखा, किन्तु विष्णुपुराणमें 'अमित्रजित्' ही मिला है।

अमित्रता (सं० स्त्री०) शत्रुता, दुश्मनी, दोस्त न होनेकी हालत।

अमित्रदमन (वै० वि०) शत्रुको हानि पहुंचानेवाला, जो दुश्मनको चोट दे रहा हो।

अमित्रसह (सं० वि०) अमित्रं शत्रुं सहते, अमित्र-सह-अच्। रिपुजयशील, बलवान्, दुश्मनको जीतनेवाला, ज़ोरदार।

अमित्रसाह (सं० वि०) अमित्रं सहते, अमित्रसह-अण्। अमित्रसह देखो।

अमित्रसेना (सं० स्त्री०) शत्रुसेना, दुश्मन्की फौज। (अथर्व सं० ३।१।३)

अमित्रहन् (वै० पु०) शत्रुको नष्ट करनेवाला, जो दुश्मनको क़त्ल कर रहा हो।

अमित्रायुध (वै० वि०) शत्रुको अभिभूत करते हुआ, जो दुश्मन्को दबा रहा हो।

अमित्रिन् (सं० वि०) विपक्षी, विद्वेषी, दुश्मनी रखनेवाला। (स्त्री०) अमित्रिणी।

अमित्रिय (सं० वि०) प्रतिकूल, खिलाफ़।

अमित्र्य, अमित्रिय देखो।

अमिथित (वै० वि०) १ अप्रकाशित, जो ज़ाहिर न हो। २ अप्रकोपित, जो नाराज़ न हो।

अमिथ्या (सं० अव्य०) सत्य-सत्य, सच-सच, सच्चेपनसे।

अमिन् (सं० वि०) अम अस्यास्ति, अम-इनि। १ गमनशील, चलनेवाला। २ रोगी, पीड़ित, बीमार, जिसके दर्द रहे।

अमिन (सं० वि०) मि हिंसा वधकर्म्म वा, बाहुल्यकात् औणादिक नक्-मिनम् ततो नञ्-तत्। १ अहिंसित, जो विनष्ट न हो, न मारा हुआ, जो बरबाद न हो। २ भीषण, खूंख़ार। ३ अपरिमाण, बेमिक़दार, जिसकी कोई नाप-जोख न रहे।

अमिनत् (वै० वि०) १ आघात न करनेवाला, जो चोट न पहुंचा रहा हो। २ अविदारित, जो चोट न खाये हो।

अमिय (हिं० पु०) अमृत, आब-हयात।

अमिय-मूरि (हिं० स्त्री०) अमृतमूल, सञ्जीवनी बूटी, जिस जड़को खाकर मुर्दा जी उठे।

अमिरती, इमरती देखो।

अमिल (हिं० वि०) १ न मिलनेवाला, जो दस्तयाब न हो। २ पृथक्, बेमेल।

अमिलतास, अमलतास देखो।

अमिलपट्टी (हिं० स्त्री०) चौड़ी तुरपन, किसी क़िस्मकी सिलाई।

अमिलातक (सं० क्ली०) बेलेका फूल।

अमिलातका (सं० स्त्री०) महाराजतरुणीपुष्पवृक्ष, चमेली।

अमिलित (सं० वि०) पृथक्, न मिला हुआ।

अमिलिया पाट (हिं० पु०) एक प्रकारका पटसन।

अमिली, इमली देखो।

अमिश्र (सं० वि०) १ संयोगशून्य, न मिला हुआ। २ दूसरेकी अभिसन्धिसे रहित, जिसमें दूसरेकी शिरकत न रहे।

अमिश्रण (सं० क्ली०) मिश्रणका अभाव, मिलावटकी अदम मौजूदगी।

अमिश्रराशि (सं० पु०) एकाईसे हो पृथक् पृथक् किया जानेवाला राशि, जिस जिन्समें कुछ मिला न रहे। गणितशास्त्रमें एकसे नौ तक संख्या अमिश्र राशि कहलाती है।

अमिश्रणीय (सं० वि०) मिश्रणके अयोग्य, मिलानेके नाक़ाबिल, जो मिल न सकता हो।

अमिश्रित (सं० वि०) मिश्रणशून्य, बेमिलावट, जिसमें कोई दूसरी चीज़ मिली न रहे।

अमिष सं० क्ली०) अम भागे कर्मणि टिषच्। १ लौकिक सुख, दुनियाकी आराम। २ भोग्य वस्तु, मज़ा लेने लायक़ चीज़। ३ अकपट, सत्य, ईमान्दारी, सादालौही। ४ असत्य, बेईमानी। (वि०) नास्ति मिषश्छलं यस्य यत्र वा, नञ्-बहुव्री० ५ छलशून्य, धोका न देनेवाला।

अमी (हिं० पु०) अमृत, आब-हयात।

"अमी पियावत मान बिन
रहिमन हमें न सुहाय।" (रहीम)

अमीकर (हिं० पु०) अमृत बरसानेवाला, चन्द्रमा।

अमीत (सं० वि०) मी वधे कर्मणि क्त, ततो नञ्-

तत्। १ अहिंसित, जो मारा न गया हो। (हिं॰ पु॰) २ शत्रु, दुश्मन्, जो मित्र न हो।

अमीतवर्ण (सं॰ त्रि॰) १ अपरिमित वर्णविशिष्ट, जिसमें बेहद रङ्ग रहें। २ अम्लानवर्णयुक्त, जिसका रङ्ग फीका न पड़े।

अमीन (अ॰ पु॰) न्यायालयके बाहरी कामका अधिकारी, जिस कचहरीवाले हाकिमके हाथ बाहरी इन्तज़ाम रहे। घटनास्थल विशेषका अनुसन्धान लेना, भूमि नापना, विच्छेद कराना, कुरकीकी चीज़ नीलामपर चढ़ाना आदि अमीनका काम है।

अमीमांसा (सं॰ स्त्री॰) अध्याहार वा अनुसन्धानका अभाव, बहस या तलाशकी अदम-मौजूदगी।

अमीमांस्य (सं॰ त्रि॰) अध्याहार वा अनुसन्धान लगानेके अयोग्य, जो तलाश या बहस करने काबिल न हो।

अमीर (अ॰ पु॰) १ अधिकारी, हाकिम। २ धनवान्, दौलतमन्द, जिसके पास खूब रुपया पैसा रहे। ३ अकृपण, सखी। ४ अफ़ग़ानस्थानके बादशाहकी उपाधि। अफ़ग़ानस्थानके समग्र नृपति अमीर ही कहलाते हैं।

अमीराना (अ॰ वि॰) अमीर-जैसा, जिससे दौलतमन्दी झलके।

अमीरी (अ॰ स्त्री॰) १ धनाढ्यता, ऐश्वर्य, दौलतमन्दी। २ उदारता, सखावत। (वि॰) ३ अमीर-जैसा, अमीराना, जो धनाढ्यके योग्य हो।

अमीव (सं॰ क्ली॰) अम रोगे ईव। 'अमेरीवः' ईव प्रत्ययः। (निरुक्त) १ रोग, बीमारी। २ हिंसित, कत्ल। ३ पाप, इज़ाब। ४ दुःख, तकलीफ़। ५ प्रेत, शैतान्।

अमीवचातन (सं॰ त्रि॰) अमीवं रोगं चातयति, चत पाचने णिच्-ल्युट। १ रोगनाशक, बीमारी मिटानेवाला। २ शत्रुघातक, दुश्मनको मारनेवाला। (स्त्री॰) गौरादि॰ ङीप्। अमीवचातनी।

अमीवहन्, अमीवचातन देखो।

अमीवा (सं॰ स्त्री॰) अमीव देखो।

अमुक (सं॰ त्रि॰) अदस्-टेरक्च उः मश्च। अदस् शब्दके अर्थवाला, फ़लान्, कोई। जब किसी आदमी या चीज़का नाम नहीं लिया जाता, तब उसकी जगह अमुक शब्द आता है।

अमुक्त (सं॰ त्रि॰) १ सम्बद्ध, बंधा हुआ, जो खुला न हो। २ जन्ममरणसे आबद्ध, जिसे पैदा होने और मरनेसे छुटकारा न मिला हो। (क्ली॰) ३ अस्त्र, हथियार। जिसे हाथमें पकड़ रखते और मारते समय भी नहीं छोड़ते, उस हथियारको अमुक्त कहते हैं। जैसे—छुरी, कटारी, तलवार।

अमुक्ति (सं॰ स्त्री॰) १ मोक्षका अभाव, छुटकारेका न मिलना। २ स्वतन्त्रताका अभाव, आज़ादीकी अदम-मौजूदगी।

अमुख (सं॰ त्रि॰) मुखरहित, बेदहन, जिसके मुंह न रहे।

अमुख्य (सं॰ त्रि॰) अप्रधान, अधीन, मातहत, जो बड़ा न हो।

अमुग्ध (सं॰ त्रि॰) अनाकुल, अव्यग्र, घबराया न हुआ, जो फरेफ़्ता न हो।

अमुच् (वै॰ स्त्री॰) अमुक्ति देखो।

अमुची (वै॰ स्त्री॰) चुड़ैल, डाइन।

अमुतस् (सं॰ अव्य॰) अमुष्मात्, अदस्-तसिल् उः मश्च। १ वहांसे, दूसरी दुनियासे, बिहिश्तसे। ३ इसपर, इससे। ४ यहांसे, आगे।

अमुत्र (सं॰ अव्य॰) अमुष्मिन्, अदस्-त्रल् उः मश्च। १ वहां, उस स्थानपर। २ परकालमें, आक़िबतपर। ३ यहां, इस जगह।

अमुत्रत्य (सं॰ त्रि॰) परकालीन, आयन्दा हालतसे तअल्लुक़ रखनेवाला, जो दूसरी दुनियाका हो।

अमुत्रभूय (सं॰ क्ली॰) अमुत्रस्य भावः, अमुत्र-भू भावे क्यप्। १ परकालका धर्म, उक़बेका फ़ज़। २ मृत्यु, मौत।

अमुथा (सं॰ अव्य॰) अमुना प्रकारेण, अदस्-थाल्। १ इस प्रकार, इसतरह। २ उस प्रकार, उस तरीक़ेसे, वैसे।

अमुद्रच् (सं॰ त्रि॰) अमुमञ्चति, अदस्-अञ्चु गतौ क्विप् न लोपः, अद्रादेशः उः मश्च। अदस् शब्दका अर्थप्राप्त, वैसा, ऐसा। (स्त्री॰) अमुद्रीची।

अमुद्र्यञ्च (सं० त्रि०) अमुमञ्चति, अदस्-अञ्चु पूजायां क्विप्, न लोपाभावः अद्र्यादेशश्च। उसका पूजक, जो उसकी परस्तिश करता हो।

अमुमुयच् (सं० त्रि०) अमुमञ्चति, अदस्-अञ्चु गतौ क्विप् न लोपः अद्र्यादेशः अद्रेरपि उत्वमत्वे। अदस् शब्दका अर्थप्राप्त, वैसा, ऐसा। (स्त्री०) अमुमुयीची।

अमुमुयञ्च (सं० त्रि०) अमुमञ्चति, अदस्-अञ्च पूजायां क्विप्, न लोपाभावः अद्र्यादेशः अद्रेरपि उत्वं मत्वञ्च। उसका पूजक, जो उसकी परस्तिश करता हो। (स्त्री०) ङीप्। अमुमुयञ्ची।

अमुया (सं० अव्य०) उस मार्गसे, उस तरीक़ेपर।

अमुर्हि (सं० अव्य०) उस समय, उस वक़्त, तब।

अमुवत्, अदोवत् (सं० अव्य०) अमुष्येव, अदस्-वति। उसकी भाँति, फ़लां शख़्स या चीज़की तरह।

अमुष्मिन् (सं० अव्य०) परलोकमें, आक़िबतपर।

अमुष्य (सं० त्रि०) प्रसिद्ध, मशहूर, जिसका नाम फैल पड़े।

अमुष्यकुल (सं० क्ली०) पृषो० अलुक्, ६-तत्। १ प्रसिद्धकुल, मशहूर ख़ान्दान्। (त्रि०) २ प्रसिद्ध कुलमें उत्पन्न, जो मशहूर ख़ान्दान्में पैदा हो।

अमुष्यपुत्र (सं० पु०) पृषो० अलुक्, ६-तत्। प्रसिद्ध-वंश, कुलीन, ख़ान्दानी शख़्स।

अमुष्यायण, आमुष्यायण (सं० पु०) विख्यात वंशोत्पन्न अपत्य, मशहूर शख़्सका बेटा।

अमूक (सं० त्रि०) १ जो मूक न हो, गूंगा न होनेवाला। २ वक्ता, जो बोल रहा हो। ३ वाचाल, बहुत बात करनेवाला। ४ प्रवीण, होशियार।

अमूढ़ (सं० त्रि०) १ अलुप्तसंज्ञ, बुद्धिमान, होशियार, जिसकी अक़्ल गुम न पड़े। २ अकातर, जो घबराया न हो।

अमूदृच (सं० त्रि०) अमूमिव पश्यति असाविव दृश्यते वा, अदस्-दृच अथवा दृश्-क्स सर्वनाम्नः आ अमूआदेशस्ततो आकारस्य उत्वं दस्य मकारः। इसकी भाँति, ऐसा, इस तरहका, ऐसी शक़्ल या क़िस्मवाला। (स्त्री०) अमूदृशी।

अमूदृश्, अमूदृच देखो।

अमूदृश, अमूदृच देखो।

अमूर (सं० त्रि०) मूर्छ-क्विप् मूः मूर्छा तस्या अभावः अमूः, अमूरस्तस्य कुञ्जादि र। १ अमूढ़, जो बेवक़ूफ़ न हो। २ मोहशून्य, जो फ़रेफ़ता न हो।

अमूर्त (सं० त्रि०) मूर्छ-क्त छ लोपः, ततो नञ्-तत्। १ अवयवशून्य, आकार-रहित, अपरिच्छिन्न, परिमाणशून्य, बेअज़ो, बेशक्ल, बेमिक़्दार, जिसकी कोई सूरत न रहे। (पु०) २ शिव।

अमूर्तगुण (सं० पु०) अमूर्तस्य गुणाः, ६-तत्। अमूर्त आकाशादिका गुण विशेष, जो ख़ास वस्फ़ बेशक्ल आसमान् वग़ैरहमें हो।

अमूर्तरजस्, अमूर्तरजस, कुशके कोई पुत्र। यह वैदर्भीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे।

अमूर्ति (सं० त्रि०) मूर्छ-क्तिन्, ततो नञ्-बहुव्री०। १ मूर्तिशून्य, आकृतिहीन, बेशक्ल, जिसकी कोई सूरत न रहे। (पु०) २ विष्णु। ३ गगनादि, आसमान् वग़ैरह। (स्त्री०) ४ आकार वा अवयवका अभाव, शक्ल या अज़ोकी अदम-मौजूदगी।

अमूर्तिमत् (सं० त्रि०) मूर्ति-मतुप्, ततो नञ्-तत्। मूर्तिरहित, बेशक्ल।

अमूर्तिमती (सं स्त्री०) अमूर्तिमत् देखो।

अमूर्तिमान् (सं० पु०) अमूर्तिमत् देखो।

अमूल (सं० त्रि०) नास्ति मूलं यस्य, नञ्-बहुव्री०। आदिकारणशून्य, मूलरहित, असली सबब न रखनेवाला, जिसकी जड़ न रहे।

अमूलक (सं० त्रि०) नास्ति मूलं यस्य, कप् बहुव्री०। अमूल देखो।

अमूला (सं० स्त्री०) अग्निशिखावृक्ष, करियारी।

अमूल्य (सं० त्रि०) मूल्यरहित, क्रयके अयोग्य, बेबहा, ख़रीदके नाक़ाबिल, जिसकी कोई क़ीमत न रहे।

अमृक्त (सं० त्रि०) मृज्यते स्म, मृज शुद्धौ क्त, ततो नञ्-तत्। १ अशोधित, अप्रक्षालित, पाक न किया हुआ, जो धोया न गया हो। २ अपीड़ित, तकलीफ़ न दिया हुआ, महफ़ूज़, जिसे नुक़सान न पहुंचा हो।

अमृणाल (सं॰ क्लो॰) श्वेत उशीर, सफेद खस।

अमृत (सं॰ त्रि॰) मृङ् मरणे निष्ठा-क्त अथवा औणादिक तन्, ततो नञ्-तत्। १ जीवित, ज़िन्दा, जो मरा न हो। २ मरणशून्य, जो मर न सकता हो। ३ सुन्दर, प्रिय, अभिलषित, ख़ूबसूरत, प्यारा, पसन्दीदा। (पु॰) ४ देवता, फ़रिश्ता। ५ इन्द्र। ६ सूर्य। ७ प्रजापति। ८ आत्मा, रूह। ९ विष्णु। १० शिव। ११ धन्वन्तरि। १२ पारद, पारा। १३ वनमुद्ग, उड़द। १४ वाराही नाम महाकन्द-शाक, ज़मींकन्द, सूरन। (क्लो॰) भावे क्त। १५ जल, पानी। १६ समुद्र नवनीतक यज्ञशेष द्रव्य। १७ स्वर्ण, सोना। १८ घृत, घी। १९ दुग्ध, दूध। २० अन्न, अनाज। २१ स्वादु द्रव्य, ज़ायकेदार चीज़। २२ रोगनाशक औषध, बीमारी मिटानेवाली दवा। २३ विष, ज़हर। २४ वत्सनाभ, बच्छनाग। २५ धन, दौलत। २६ मुक्ति, निजात। २७ अमरत्व, बक़ा। २८ देवगण। २९ वैकुण्ठ, बिहिश्त। ३० सोमरस। ३१ ज़हरमोहरा। ३२ अयाचित दान, बेमांगी बख़्शिश। ३३ भोजन, खुराक। ३४ मिठाई। ३५ भात। ३६ चमत्कार, चमक-दमक। ३७ वार और तिथि-घटित योग विशेष। ३८ वार और नक्षत्र-घटित योग विशेष। ३९ माहेन्द्र प्रभृति योगके अन्तर्गत योग विशेष। अमृतयोग देखो। ४० ब्रह्म। ४१ पीयूष, आब-हयात। कहते हैं, कि पृथुराजके भयसे पृथिवीने गोरूप धारण किया था। उस समय देवतावोंने इन्द्रको वत्स बनाकर सुवर्ण-पात्रमें उसी गोरूपा पृथिवीको दूहा। उसमें पृथिवीके स्तनसे अमृत निकला था। पीछे दुर्वासाके शापसे वही अमृत समुद्रमें जा गिरा। शेषको देवासुरके क्षीरोदसागर मथनेपर अमृत पुनर्वार उत्थित हुआ था। लोगोंमें ऐसा प्रवाद पड़ गया है, कि अमृत पीनेसे जरा, मृत्यु प्रभृति कुछ भी नहीं होता।

'अमृतं यज्ञशेषे स्यात् पीयूषे सलिले घृते।' (मेदिनी)

अमृतक (सं॰ क्लो॰) पीयूष, आबहयात।

अमृतकन्दा (सं॰ स्त्री॰) कन्दगुडूची, कन्दगुर्च।

अमृतकर (सं॰ पु॰) चन्द्र, चांद, जिस चीज़की किरणमें अमृत रहे।

अमृतकल्परस (सं॰ पु॰) अजीर्णाधिकारका रस, जो रस बदहज़मीपर दिया जाता हो।

"शुद्धौ पारदगन्धौ च समानौ कज्जलीकृतौ।
तयोरर्द्धं विषं शुद्धं तत्समं टङ्गणं भवेत्।
भृङ्गराजद्रवैर्भाव्यं त्रिदिनं यत्नतः पुनः॥" (रसेन्द्रसारसंग्रह)

अमृतकुण्ड (सं॰ क्लो॰) अमृतपात्र, जिस बरतनमें आबहयात रहे।

अमृतकुण्डली (सं॰ स्त्री॰) १ छन्दोविशेष। चान्द्रा-यणके अन्तमें हरिगीतिकावाले दो पद मिलनेसे यह छन्द बन जाता है। २ वाद्यविशेष, कोई बाजा।

अमृतकेशव (सं॰ पु॰) अमृतप्रभाका बनवाया हुआ कोई मन्दिर। (राजतरङ्गिणी)

अमृतक्षार (सं॰ क्लो॰) नौसादर।

अमृतगति (सं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष। इसके प्रत्येक चरणमें एक नगण, एक जगण; पुनः एक नगण और अन्तमें गुरु अक्षर रहेगा।

अमृतगर्भ (हिं॰ पु॰) अमृतं ब्रह्म गर्भे अभ्यन्तरे यस्य, बहुव्री॰। १ जीव, जान। २ ब्रह्मा। ३ निद्रा, नींद। (त्रि॰) ४ अमृतपूरित, आब-हयातसे भरा हुआ।

अमृतगुडिका (सं॰ स्त्री॰) अजीर्ण रोगकी वटी, जो गोली बदहज़मीपर दी जाती हो।

"कुर्यान्नन्धविषव्योषत्रिफलापारदैः समैः।
भृङ्गाम्बुमर्दितैर्मुद्गमावामृतवटीं शुभाम्॥" (रसेन्द्रचिन्तामणि)

अमृतचिति (सं॰ स्त्री॰) अमरत्व प्रदान करनेवाली यज्ञीय ईंटका सञ्चय।

अमृतज (सं॰ त्रि॰) पीयूषसे उत्पन्न, जो आब-हयातसे पैदा हो।

अमृतजटा (सं॰ स्त्री॰) अमृतमिव रोगनाशिनी जटा यस्याः, बहुव्री॰। जटामांसी, जटामासी।

अमृतजा (सं॰ स्त्री॰) हरीतकी, हर।

अमृततरङ्गिणी (वै॰ स्त्री॰) चन्द्रज्योत्स्ना, चांदनी, जिस चीज़की लहर आब-हयात-जैसी रहे।

अमृतता (सं॰ स्त्री॰) अमरत्व देखो

अमृतत्व (सं० क्लो०) अमृतस्य भावः त्व। मुक्ति, निजात।

अमृतदान (हिं० पु०) खाद्यवस्तु रखनेका पात्रविशेष, जिस बरतनमें खानेकी चीज़ रखें। यह ढकनेदार रहता है।

अमृतदीधिति (सं० पु०) अमृतमिव तृप्तिकरी दीधितिः किरणोऽस्य, बहुव्री०। चन्द्र, चांद, जिस चीजका किरण अमृतकी तरह तबीयतको आसूदा करे।

अमृतद्युति (सं० पु०) अमृतमिव तृप्तिकरी द्युति-र्दीप्तिर्यस्य, बहुव्री०। चन्द्र, चांद।

अमृतद्रव (सं० त्रि०) अमृत बरसानेवाला, जिससे अमृत टपके।

अमृतधार (सं० त्रि०) अमृत बहानेवाला, जिससे अमृत बहे।

अमृतधारा (सं० स्त्री०) अमृतस्य धारा ६-तत्। १ अमृतविस्तार, आब-हयातका फैलाव। २ छन्दो-विशेष। इसके प्रथम पादमें आठ और द्वितीय पादमें दश अक्षर रहते हैं।

अमृतधुनि (हिं०) अमृतध्वनि देखो।

अमृतध्वनि (वै० स्त्री०) छन्दोविशेष। इसमें २४ मात्रा और प्रथम एक दोहा लगायेंगे। इसतरह यह छः चरण रखता है। फिर प्रत्येक चरणमें तीन-तीन यमक पड़े, जिसपर द्वित्व वर्णका प्रयोग या भटका बैठेगा। प्रायः इसे वीररसपर ही अधिक लिखते हैं।

अमृतनाद (सं० पु०) अमृतमिव आप्यायकः नादः स्वरो यस्य, बहुव्री०। कृष्णयजुर्वेदान्तर्गत उपनिषद् विशेष।

अमृतनादोपनिषत्, अमृतनाद देखो।

अमृतनालिका (सं० स्त्री०) अमृतस्य स्वादुरसस्य नालीव, ६-तत्। १ कर्पूरनालिका विशेष। २ पक्वान्न-विशेष।

अमृतप (सं० पु०) अमृतं समुद्रमन्थनोद्भूतं पाति रक्षति असुरेभ्यः, पा रक्षणे क। १ विष्णु। समुद्रमन्थन-से अमृत निकलनेपर दैत्योंने लेना चाहा था। किन्तु विष्णुने मोहिनीमूर्ति बना उसी अमृतको देवतावोंके लिये बचाया। इसीलिये विष्णुका नाम अमृतप अर्थात् अमृतके रक्षाकर्ता पड़ा है।

अमृतं पिबति, अमृत-पा पाने क। २ देवता, जो अमृत पीता हो। (त्रि०) अमृततुल्य मधु प्रभृति पानकर्ता, जो आब-हयात जैसा शहद वगैरह पीता हो।

अमृतपक्ष (सं० पु०) अमृतस्य सुवर्णस्य पक्षः, अवि-नाशकत्वात् आत्मीय इव। १ अग्नि, आग। अग्नि सकल वस्तुको दग्ध और विनष्ट कर डालता, किन्तु स्वर्ण को कोई हानि नहीं पहुंचा सकता; वरं उसका गुणागुण देखा देता है। इसीलिये अग्निको अमृतपक्ष कहेंगे। २ स्वर्णवत् वर्णके पक्षसे युक्त पक्षी, जिस चिड़ियेके पर सोने-जैसे चमकें।

अमृतप्राशघृत (सं० क्लो०) काश प्रभृति नाना प्रकार रोगोंका महोपकारी घृत विशेष। चार सेर गायके घीको थोड़ी सी हल्दीके साथ मिला और मूर्च्छा करके पन्द्रह दिन रख दे। फिर क्वाथके लिये सुपक्व आम-लकीका रस, भूमिकुष्माण्डका रस, ऊखका रस, वधिया बकरेके मांसका क्वाथ और बकरीका दूध चार चार सेर ले। सात सात दिन बाद एक एक वस्तुको घीके साथ पाक करे।

कल्कार्थ—जीवक, ऋषभक, वेणाका मूल, जीवन्ती, सोंठ, शठी, शालपर्णी, चक्रकुल्या, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, मेद, महामेद, कङ्कोल, क्षीरकाकोली, कण्टकारी, वृहती, श्वेतपुनर्णवा, रक्तपुनर्णवा, ज्येष्ठीमधु, कौंचका बीज, शतमूल, ऋद्धि, परूषफल, ब्राह्मणयष्टिका मूल, मुनक्का, सिंवाड़ा, भूम्यामलकी, भूमिकुष्माण्ड, पीपल, बहेड़ा, कुलके बीजका गूदा, अखरोट, बादाम, पिण्डखजूर, फालसा—प्रत्येक दो दो तोला रहे।

पाक सिद्ध हो जाने पर कल्कद्रव्य छानकर शीतल घृतमें मधु दो सेर, चीनी सवा छः सेर; मरीचचूर्ण, दारचीनीचूर्ण, बड़ी इलायचीका चूर्ण, तेजपत्र चूर्ण, और नागकेशरका फूल प्रत्येक आधा आधा पल लेकर एक साथ मिला दे।

"जीवकर्षभकौ वीरा जीवन्ती नागरं शटीम्।
चतस्रः पर्णिनीमेदे काकोल्यौ द्वे निदिग्धिकाम्॥

पुनर्नवे द्वे मधुकमात्मगुप्तां शतावरीम् ।
ऋद्धिं परूषकं भार्गीं मृद्वीकां बृहतीं तथा ॥
शृङ्गाटकमामलकीं पयस्यां पिप्पलीं बलाम् ।
बदराक्षोड़खर्जूरवातादाभिषुकाणि च ।
फलानि चैवमादीनि कल्कान् कुर्वीत कार्षिकान् ।
धात्रीफलविदारीक्षुच्छागमांसरसान् पयः ॥
दत्वा प्रस्थान्मितान् भागान् घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
प्रस्रुतिं मधुनः शीते शर्करार्द्धतुलां तथा ॥
पलार्द्ध कथ मरिचत्वगेलापत्रकेशरम् ।
विनीय चूर्णयेत्तस्मान्मात्रां यथाबलम् ॥
अमृतप्राश इत्येष नराणाममृतोपमः ।
सुराघृतमयं पथ्यं क्षीरमांसरसाशिनः ॥
नष्टशुक्रक्षतक्षीणदुर्बलव्याधिपीड़ितान् ।
स्त्रीप्रसक्तानकृशलान् स्वरहीनांश्च बृंहयेत् ॥
कासहिक्काज्वरश्वासदाहतृष्णास्रपित्तनुत् ।
पुत्रदो वृद्धि......दाहशूलच्छर्यापहः ॥" (प्रयोगामृत)

प्रकारान्तर—गायका घी ४ सेर लाये। क्वाथार्थ बधिया बकरेका मांस १२॥ सेर, ६४ सेर जलमें सिद्ध करे। जब १६ सेर रह जाय, तब उतार ले; अश्वगन्धा क्वाथार्थ ऐसा है,—बकरीका दूध १६ सेर मंगाये। सात सात दिन बाद एक एक द्रव्य घृतके साथ पाक करे। कल्कार्थ श्वेत खरैटाका मूल, गेहूं, अश्वगन्धा, गुलञ्च, गोक्षुर, कशेरु, त्रिकटु, धनिया, तालाङ्कुर, त्रिफला, मृगनाभि, कोंचका बोज, मेद, महामेद, केजकी सूखो जड़, जीवक, ऋषभक, शठी, दारुहरिद्रा, प्रियङ्गु, मञ्जिष्ठा, तगरपादुका, तालीशपत्र, इलायची, तेजपत्र, दारुचीनी, नागकेशर, जातीपुष्प, रेणुक, सरलकाष्ट, जैत्री, छोटी इलायची, उत्पल, अनन्तमूल, तेलाकुचाका मूल, जीवन्ती, ऋद्धि, वृद्धि, उडुम्बर—प्रत्येक दो दो तोला डाले। पाक सिद्ध हो जाने पर कल्क द्रव्यका छानकर शीतल घृतमें एक सेर चीनी मिला दे। मात्रा दो तोला होगी।

यह सब घी थोड़े गर्म दूधके साथ सेवन करना पड़ता है। इससे सब तरहके कासरोग, ध्वजभङ्ग, दैहिक दुर्बलता आदि नष्ट हो जाते, शरीर पुष्ट और बुद्धिकी तेजोवृद्धि होती है। फिर कलेवर कन्दर्पकी तरह हो जाता है।

"छागमांसं बलाञ्चैव वाजिगन्धां तथैव च ।
जलद्रोणे विपक्तव्यं कुर्यात् पादावशेषितम् ॥
घृतप्रस्थं पचेत्तेन अजाक्षीरं चतुर्गुणम् ।
मूर्च्छनार्थं प्रदातव्यं कुङ्कुमञ्च द्विकार्षिकम् ॥
बलामूलञ्च गोधूमं चाश्वगन्धा तथामृता ।
गोक्षुरञ्च कशेरुञ्च त्रिकटु च सधान्यकः ॥
तालाङ्कुरस्त्रिफलञ्च कस्तूरीबीजवानरी ।
मेदे द्वे च तथा कुष्ठं जीवकर्षभकौ शटी ॥
दार्वी प्रियङ्गुर्मञ्जिष्ठा नतं तालीशपत्रकम् ।
एलापत्रत्वचं नागं जातीकुसुमरेणुकम् ॥
सरलं जातिकोषञ्च सूक्ष्मैलोत्पलसारिवे ।
मूलं बिल्वस्य जीवन्ती ऋद्धिर्वृद्धी उडुम्बरम् ॥
प्रत्येकं कर्षमात्रन्तु पेषयित्वा विनिक्षिपेत् ।
वस्त्रपूते सुशीते च सितां दद्याच्छरावकम् ॥" (भैषज्यरत्नावली)

यह अमृतप्राश ध्वजभङ्गाधिकारपर दिया जाता है।

अमृतप्राशावलेह (सं० पु०) राजयक्ष्माका अवलेह, जो ढीला पाक क्षयरोगपर दिया जाता हो।

"क्षीरे धात्री च मञ्जिष्ठा चोरिणाञ्च तथा रसैः ।
पचेत् समैर्घृतप्रस्थं मधुरैः कर्षसम्मितैः ॥
द्राक्षादिचन्दनोशीरैः शर्करोत्पलपद्मकैः ।
मधूककुसुमानन्ता काश्मरीदृषसंज्ञकैः ॥
प्रस्थार्द्धं मधुनः शीते शर्करार्द्धतुलां तथा ।
पलार्द्धिकांश संचूर्ण्य त्वगेलापत्रकेशरान् ॥
विनीय तत संलिह्यान्मात्रां नित्यं सुयन्त्रितः ।
अमृतप्राशमित्येतदश्विभ्यां परिकीर्तितम् ॥" (भावप्रकाश मध्यभाग)

काकोल, क्षीरकाकोल, धात्री, मञ्जिष्ठा यह सब द्रव्य एक एक पैसे भर और वट, अश्वत्थ, उदुम्बर, पाकर इन वृक्षोंकी त्वच् (छाल) एक एक पैसे भर इन सब वस्तुवोंका क्वाथ बनाकर फिर मुनक्का, किशमिश, चन्दन, खस, नीलकमल, पद्मकाठ, मुलहटी, लौंग, अनन्तमूल, काश्मरी गन्धतृण इन द्रव्योंका कल्क तैयार करके चार सेर घृतमें पाक करना होता है। पाक सिद्ध हो जाने पर दो सेर मधु (शहद) दो सेर चीनी, तथा दालचीनी एलायची छोटी, तेजपत्र, केशर इन वस्तुवोंका प्रत्येक आधा आधा पल चूर्ण मिलाना चाहिये। इसका नाम अमृतप्राशावलेह

है। इसको प्रतिदिन सेवन करनेसे राजयक्ष्मारोग निर्मूल हो जाता है।

अमृतफल (सं॰ क्ली॰) अमृतमिव स्वादु फलम्, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। १ रुचिफल, नासपाती।

"गुरु वातघ्नं स्वाद्वम्लं रुचिकृत् शुक्रकृच्च।" (मदनपाल)

"अमृतस्य फलं धातुवर्धकं मधुरं गुरु।

रुच्यचाम्लं वातहरं त्रिदोषस्य च शामकम्॥" (देवकनिघण्टु)

(पु॰) अमृतमिव फलं यस्य, बहुव्री॰। २ परवल। ३ पारद, पारा। ४ वृद्धिनामक औषध। ५ धात्रीवृक्ष, आंवलेका पेड़।

अमृतफला (सं॰ स्त्री॰) १ द्राक्षा, दाख। २ किशमिश। ३ आमलकी, आंवला। ४ लघुखर्जूरी, खिर्नी।

अमृतबन्धु (सं पु॰) अमृतस्य बन्धुः सोदरः एकसमुद्रोत्पन्नत्वात्। १ चन्द्र, चांद। २ अश्व, घोड़ा। चन्द्र और अश्व दोनो समुद्रसे अमृतके साथ पैदा होनेसे अमृतबन्धु कहाते हैं। ३ देवता, फरिश्ता।

अमृतबाज़ार (पूर्वनाम मागुरा)—बङ्गालके यशोर जिलेका एक गांव। इस ग्रामके ज़मीन्दार स्वर्गीय शिशिरकुमार घोष और उनके भाइयोंने इसे अपनी माता अमृतमयीके नाम पर बसाया था। अमृतबाज़ार अक्षा॰ २३° ८′ उ॰ और द्राघि॰ ८८° ६′ पू॰ पर अवस्थित है। पहले यहां १८६८ ई॰में बङ्गालियोंका सुप्रसिद्ध अंगरेजी साप्ताहिक समाचारपत्र अमृतबाज़ारपत्रिका छपते रहा। अब वह कलकत्तेसे दैनिक रूपमें निकलता है।

अमृतबान (हिं॰ पु॰) रोग़नी बरतन, जो मट्टीकी हांडी लाहके रोग़नसे बनती हो। इसमें गुलकन्द, मुरब्बा, अचार, घी, मक्खन वगैरह रखा जाता है।

अमृतभल्लातकघृत, (सं॰ क्ली॰) भिलावें प्रभृति द्रव्यद्वारा प्रस्तुत कुष्ठादि रोगका उपयोगी घृतविशेष। आठ सेर सुपक्व भिलावेंको ईंटको सुर्खीमें डालकर एक दूसरी ईंटसे अच्छी तरह घिसे। घिसनेके समय खूब सावधान रहे। हाथमें लुआब लग जानेसे सर्वाङ्गमें कण्डु निकल आ सकते हैं, फिर सारा शरीर भी फूल जाता है।

घिसना अच्छी तरह हो जानेपर टोकरी अथवा बरतनमें रखकर जलसे बारबार धोये। फिर धूपमें सुखाकर सब भिलावेंको सरौतेसे दो दो टुकड़े कर डाले। उसके बाद ६४ सेर जलमें सिद्ध करे; जब १६ सेर रह जाय, तब उतार ले। ठण्ढा हो जानेपर उस क्वाथको छानकर ८ सेर गायके दूधके साथ सिद्ध करे। दो सेर रह जानेपर उतारकर क्षीरका अंश छानकर बाकी क्वाथको ८ सेर गायके घीके साथ पाक करे। पाक शेष हो जानेपर उतार कर रख दे। जब ठण्ढा हो जाय, तब ४ सेर साफ़ चीनी मिलाकर अच्छी तरह हिला दे। इसकी मात्रा १ तोलासे १॥ तोलातक वा उससे भी अधिक होगी। थोड़ेसे दूधमें मिलाकर सेवन करे। इससे ख़राब ख़ून साफ़ होता और शरीर बलिष्ठ पड़ जाता है।

अमृतभल्लातकावलेह (सं॰ पु॰) कुष्ठाधिकारका अवलेह, जो ढीला पाक कोढ़पर खिलाया जाता हो। अमृतभल्लातकघृत देखो। इसको इसतरह बनाते हैं,—

"भल्लातकप्रस्थयुगं छित्वा द्रोणजले क्षिपेत्।

प्रस्थद्वयं गुडूच्याश्च चूर्णं तवाम्भसि क्षिपेत्॥

शरावमात्रकं सर्पिः दुग्धं स्यादाढ़कं तथा।

सितां प्रस्थमितां दद्यात्प्रस्थार्धं माक्षिकं क्षिपेत्॥

सर्वाण्येकत्र भाण्डे तु पचेन्मृद्वग्निना शनैः।

सर्वद्रवे घनीभूते पावकादवतारयेत्॥

तत्र चैषाणि चूर्णानि क्रमो विश्वविषामृताः।

वाकुची चाथ दद्रुघ्नः पिचुमर्दो हरीतकी॥

अक्षो धात्री च मञ्जिष्ठा मरिचं नागरं कणा।

यमानी सैन्धवं मुस्तं त्वगेला नागकेशरम्॥

पर्पटं पद्मकं वा॑ऽमुशीरं चन्दनं तथा।

गोक्षुरस्य च बीजानि कर्पूरं रक्तचन्दनम्॥

पृथक् पलार्धमानानां चूर्णमेषामिह क्षिपेत्।

पलमात्रमिदं प्रातः समश्नीयाज्जलेन हि॥" (भावप्रकाश-मध्यभाग)

दो पसेरी यानी १० सेर भिलावेंकी त्वचा निकालकर १) मन यानी ४० सेर पानीमें डाले और उसी जलमें दो पसेरी (१०) गुड़चीको कूटकर छोड़ दे। फिर १-सेर घृत, आधा मन (२० सेर) दूध १-पसेरी (५॥सेर) चीनी और आधा पसेरी (२॥ सेर) शहद

मिला इन सब द्रव्योंको एक पात्रमें रख शनैः शनैः धीमी आंचसे पकाना चाहिये। जब सब द्रव्य मिल कर एक हो जाय, तब त्रिफा, गुडूची, वाकुची, दद्रुघ्न, निम्बकी त्वचा, हर, बहेरा, आंवला, मञ्जिष्ट, काली मिर्च, नागरमोथा, कणा, यमाइन, सैन्धव, मुस्ता, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, पर्पट, तेजपत्र, बाल अथवा जटामांसी—खस्, चन्दन, इन सब वस्तुवोंका पृथक् पृथक् आधा आधा पल चूर्ण मिलाना होता है। इसको अमृतभल्लातक कहते हैं। प्रतिदिन जलके साथ एकपल मात्रा खानेसे सब प्रकारका कोढ निर्मूल होता है।

अमृतभल्लातकी (सं० स्त्री०) रसायनका योग-विशेष। पका हुआ जितना भिलावां हो, उतना ही ईंटका चूर्ण मिलाकर अच्छीतरह रगड़ कर जलसे धोकर हवामें सुखाना चाहिये। फिर सूखे हुये भिलावेंको छीलकर पृथक् कर चागुण जलमें पाक करे। जब चौथाई शेष रहे, तब उतार कर फिर बराबर दूधमें पाक करे। जब चौथाई शेष हो, तब पुनः उतार कर शीतल हो जानेपर तुल्य घृतमें पाक करे। जब पाक सिद्ध हो जाय, तब सब द्रव्यसे आधी चीनी मिलाके खूब मथ (घोंट)के एक पात्रमें रखके ७ दिनतक रहने दे। फिर इसे कार्यमें लाना चाहिये। दुसरी इसतरह बनायेंगे—

पकेहुये भिलावेंको द्विधा विदीर्ण कर चौगुण जलमें पाक करके चतुर्थांश शेष रहने पर उतार कर पुनः चतुर्गुण दूधमें पाक करके पुनः तुल्य घृतमें पाक करना चाहिये, जब गाढ़ा हो जाय, तब १६ पल मिश्री या चीनी मिलाकर किसी पात्रमें ७ दिनतक रख छोड़ना चाहिये। पश्चात् इसे सेवन करना होता है।

अमृतभुज् (सं० पु०) अमृतं भुङ्क्ते; अमृत-भुज्-क्विप्, ६-तत्। १ देवता, फ़रिश्ता। (त्रि०) अमृतमयाचितं यज्ञशिष्टान्नं वा भुङ्क्ते। अयाचित अथच अन्य-कर्तृक अन्नाहेतु आनीत वस्तुका भक्षक, यज्ञके शेषान्नका भोक्ता, बेमांगे और इत्मतसे लायी हुयी चीज़को खानेवाला, जो यज्ञका बचा हुआ अन्न खाता हो।

अमृतभू (सं० त्रि०) जन्ममरणशून्य, जो न तो पैदा होता और न मरता हो।

अमृतमञ्जरी (सं० स्त्री०) १ गोरक्षदुग्धीक्षुप, गोरखमुण्डी। २ सामान्यज्वरका रस विशेष, मामुली बुखारपर दिया जानेवाला कोई रस। इसे खांसीपर भी दें और मात्रा दो या तीन गुञ्जा रखेंगे।

> "हिङ्गुलं मरिचं टङ्कं पिप्पलीं विषमेव च।
> जातीकोषं समं सर्वं जम्बीराद्भिर्विमर्दयेत्॥" (रसेन्द्रसारसंग्रह)

हिङ्गु, मरिच, पिप्पल, विष, जयित्री यह सब वस्तु सम भाग कूटकर नीबुके रसमें घोंटना होता है।

अमृतमण्डूर (सं० पु०) परिणामशूलका रस विशेष, पेटके दर्दकी कोई दवा। इसे इसतरह बनायेंगे,—

> "मण्डूरस्य पलान्यष्टौ शतावर्या रसं तथा।
> क्षीराज्यं दधि प्रत्येकं पिष्ट्वा चतुःपलं पचेत्॥" (रसरत्नाकर)

शुद्धलोहा ८ पल शतावरी का रस, दूध, घृत, दधि, यह सब प्रत्येक चार चार पल एक साथ पचाना होता है।

अमृतमति (सं० स्त्री०) अमृतगति नामक छन्दो-विशेष।

अमृतमन्थ (सं० पु०) दुग्धादिपरिशोधित मन्थ, दूध वगैरहका मथा जाना।

अमृतमन्थन (सं० क्ली०) अमृतमन्थ देखो।

अमृतमय (सं० त्रि०) १ अमर, न मरनेवाला २ अमृतसे परिपूर्ण, जिसमें आब-हयात भरा रहे।

अमृतमहल (हिं० स्त्री०) महिसूर प्रान्तकी कोई भैंस।

अमृतमालिनी (सं० स्त्री०) दुर्गा देवी।

अमृतयोग (सं० पु०) अमृतनामा योगः, मध्य-पदलोपी बहुव्री०। वार और नक्षत्र या वार और तिथि घटित योग विशेष। रवि एवं सोमवारको पूर्णा, मङ्गलवारको भद्रा, बुध एवं शनिवारको नन्दा, बृहस्पतिवारको जया और शुक्रवारको रिक्ता तिथि होनेसे सिध्यामृतयोग कहायेगा। फिर रविवारको हस्ता, सोमवारको श्रवणा, मङ्गलवारको रेवती, बुध

वारको अनुराधा, वृहस्पतिवारका पुष्या, शुक्रवारको रेवती और शनिवारको रोहिणी पड़नेसे नक्षत्रामृत-योग होता है। इस योगमें भद्रा, व्यतीपात प्रभृतिका अशुभ प्रभाव न पड़ेगा।

"दिनकरकरयुक्तः सोमसौम्ये न वापि
तुरगसहितभौमः सोमपुत्रोऽनुराधा।
सुरगुरुरपि पुष्ये रेवती शुक्रवारे
दिनकरसुतयुक्ता रोहिणी सौख्यहेतुः॥" (ऋषिसंहिता)

अमृतरश्मि (सं० पु०) चन्द्र, चांद।

अमृतरस (सं० पु०) अमृतस्य रस इव रसो यस्य, मध्यपदलोपी बहुव्रो०। १ अमृत-जैसा सुस्वादु वस्तु, जो चीज़ आबहयातकी तरह ज़ायकेदार हो। अमृतस्य रसः सारः, ६-तत्। २ सुधारस, अर्क, आबहयात। अमृतं निर्वाणं रस इव यस्य बहुव्रो०। ३ परमात्मा।

अमृतरसा (सं० स्त्री०) अमृतस्य रस इव रसो यस्याः, मध्यपदलोपी बहुव्रो०। कपिला द्राक्षा, काला अङ्गूर।

अमृतलता (सं० स्त्री०) अमृता नामी लता चेति; कर्मधा; पूर्वपदस्य पुंवद्भावः। गुड़ूची, गुर्च।

अमृतलतादिघृत (सं० क्ली०) पाण्डुरोगके अधिकारका घृतविशेष, जो घी यरक़ान् या कंवल बाईपर दिया जाता हो।

"अमृतलतारसकल्कं प्रसाधितं तुरगविहिषः सर्पिः।
क्षीरं चतुर्गुणमेतद्धितरेव हलीमकार्तेभ्यः॥" (भावप्रकाश मध्यभाग)

गुड़ूचीका रसकल्क, भैंस का घृत और चौगुणा दूध एकत्र मिलाकर हलीमक रोगसे पीड़ित मनुष्यको देना चाहिये। यह औषध शीघ्र गुण दिखानेवाला है।

अमृतलतिका, अमृतलता देखो।

अमृतलोक (सं० पु०) स्वर्ग, बिहिश्त।

अमृतवटक (सं० पु०) अमृतका लड्डू, जो लड्डू खानेसे अमृतकी तरह गुण करता हो। इसे सन्निपातातिसार पर देते हैं।

अमृतवटी (सं० स्त्री०) अग्निमान्द्यका रसविशेष, जो रस भूख न लगनेपर खिलाया जाता हो।

"अमृतवराटकमरिचैः द्विपञ्चनवभागिकैः क्रमशः।" (भैषज्यरत्नावली)

२ तोले विष, ५ तोले कड़ि और ८ तोले मरिचको कूट-पोस मठर-जैसी गोली बनाना चाहिये।

अमृतवपु, अमृतवपुस् देखो।

अमृतवपुस् (सं० पु०) अमृतमयं अमृतेन वर्धितं वा वपुः शरीरं यस्य, मध्यपदलोपी बहुव्रो०। चन्द्र, चांद। सूर्य अपने किरण द्वारा चन्द्रमें सुधारूप अमृत पहुंचाता, इसीसे कृष्णपक्षके बाद चन्द्र बढ़ा करता है। कहा जाता कि चन्द्रका शरीर अमृतमय है। वह अपने देहकी अमृतमय शीतल जलीय कणा द्वारा उद्भिदगणको बढ़ाया करता है। अविनश्वर परमात्मा और विष्णुको भी अमृतवपुः कहेंगे।

अमृतवर्तिका (सं० स्त्री०) अमृतकी वर्तिका। यह औषध मृत्युञ्जयतन्त्रमें लिखा है—त्रिकटु, त्रिफला, ब्राह्मी, गुड़ूची, चित्रक, नागकेशर, शुण्ठी, भृङ्गराज, निर्गुण्डी, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, शक्रासन, त्वक् एला, गाम्भारीत्वक्, विड़ङ्ग और वचका दो-दो पल चूर्ण पचास पल कामरूपदेशीय गुड़में मिला ३६० बत्ती बनाते हैं। एक बत्ती भोजनसे पहले या सन्ध्याको शीतल जलके साथ खाना चाहिये। इसके सेवनसे शरीरका समग्र रोग दूर हो जाता है।

अमृतवर्ष (सं० पु०) सुधावृष्टि, आब-हयातकी बारिश।

अमृतवल्लरी (सं० स्त्री०) १ गुड़ूची, गुर्च। २ बड़ी पोय।

अमृतवल्लिका अमृतवल्ली देखो।

अमृतवल्ली (सं० स्त्री०) अमृतावल्ली लता, कर्मधा०। चित्रकूटप्रसिद्ध गुड़ूची, चित्रकूटकी मशहूर गुर्च। इसके गुण लिखा है,—

"अमृतस्य च वल्ली सा हितकारी विषापहा।
किञ्चित्तिक्ता जराव्याधिहरी कुष्ठामनाशिनी।
कामलव्रणशोथघ्नी ऋषिभिः परिकीर्तिता॥" (वैद्यकनिघण्टु)

अमृतवल्लीको ऋषियोंको हितकारी, विषापहा, किञ्चित्तिक्ता, जराव्याधिहरी, कुष्ठामनाशिनी, और कामलव्रण-शोथघ्नी बताया है।

अमृतवाका (सं० स्त्री०) पक्षीविशेष, किसी क़िस्मकी चिड़िया।

अमृतविन्दूपनिषद्—अथर्ववेदका उपनिषत्‌विशेष।

अमृतसंयाव (सं० क्ली०) अमृतमिव संयावम्, मध्यपदलोपी कर्मधा०। घृतपक्व यवचूर्ण प्रस्तुत पक्वान्न-विशेष, यवके आटेका घीमें पकाकर बनाया हुआ भोजन। इसके प्रस्तुत करनेकी प्रणाली यह है,—पहले यवका चूर्ण घृतमें पकाकर नये पात्रमें रख लेना चाहिये। फिर उसमें कालीमिर्च, चीनी और कपूर मिलायेंगे। यह विलक्षण सुस्वादु और पित्तघ्न होता है।

अमृतसङ्गम (सं० पु०) खर्परिका, खपरिया।

अमृतसञ्जीवनी (सं० स्त्री०) गोरखदुग्धी नामक्षुप, गोरखमुण्डी।

अमृतसम्भवा (सं० स्त्री०) अमृता इव सम्भवति, सम्-भू-अच्। गुडूची, गुर्च।

अमृतसर—१ पञ्जाबका एक डिविज़न या कमिश्नरी। यह कमिश्नरी अक्षा० ३१° १०´ एवं ३३° ५०´ ३०´ उ० और द्राघि० ७४° १४´ ४५´´ तथा ७५° ४४´ ३०´´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ५३५४ वर्गमील निकलेगा।

२ पञ्जाब प्रान्तका एक ज़िला। यह ज़िला अक्षा० ३१° १०´ एवं ३२° १३´ उ० और द्राघि० ७४° २४´ तथा ७५° २७´ पू०के बीच पड़ता है। इसका क्षेत्रफल १५७४ वर्गमील लगेगा। ज़िलेसे उत्तर-पश्चिम रावी नदी बहती, जो इसे स्यालकोट ज़िलेसे अलग करती है। अमृतसरके उत्तर-पूर्व गुरुदासपुर ज़िला आता है। दक्षिण-पूर्व व्यास नदी इसे कपूरथला राज्यसे पृथक् करती है। इसके दक्षिण-पश्चिम लाहोर ज़िला लगता है।

३ पञ्जाबवाले अमृतसर ज़िलेकी एक तहसील। यह तहसील अक्षा० ३१° २८´ १५´ एवं ३१° ५१´ उ०, और द्राघि० ७४° ४४´ ३०´´ तथा ७५° २६´ १५´´ पू०के मध्य लगती है। इसका क्षेत्रफल ५५० वर्गमील पड़ेगा।

४ पञ्जाबमें सिखोंका प्रधान पवित्र स्थान। यह नगर लाहोरसे १६ क्रोस दूर, अक्षा० ३१° ३७´ १५ उ० और द्राघि० ७४°५५´ पू० पर अवस्थित,तथा वाणिज्य-के लिये विशेष प्रसिद्ध है। हमलोग काशी, वृन्दावन आदि तीर्थस्थानोंको जिस तरह भक्ति करते हैं, मुसलमान जिस तरह मक्काको पवित्र समझते हैं, बौद्धोंके लिये बोधगया जिस भांति पुण्यक्षेत्र है और यहूदी तथा ईसायियोंके लिये जरुसेलम जैसी पवित्र भूमि है, सिखोंको दृष्टिमें अमृतसर भी ठीक वैसा ही है। यहां 'अमृतसर' नामक एक बड़ा भारी सरोवर है, इसीसे सिख लोग इस नगरको भी 'अमृतसर' कहते हैं।

चार सौ वर्ष पहले यहां एक छोटेसे गांवके सिवा और कुछ भी न था। उस वक्त लोग इसे 'बाज़ार' कहते थे। पीछे अकबर बादशाहके राजत्वकाल सन् १५७४ ई०में सिखोंके चतुर्थ गुरु रामदाससिंहने वर्तमान सरोवरको खुदवाकर उसको चारो ओर छोटे छोटे मन्दिर बनवा दिये। उस समय इस नगरका नाम रामदासपुर हुआ। अन्तमें गुरु रामदासके सन्तान अर्जन सिंहने यहां सिखोंकी राजधानी प्रतिष्ठित करके इसका नाम 'अमृतसर' रख दिया। वही नाम अबतक चला आता है। यहां सिख, हिन्दू और मुसलमान सभी लोग वास करते हैं। सब समेत लोकसंख्या प्रायः डेढ़ लाख होगी।

अमृतसरकी चारो ओर शहरपनाह बनी हुई है। उसमें तेरह फाटक हैं। पहले इसकी चारो ओर खाई रही। इसके अतिरिक्त आक्रमणसे नगरकी रक्षा करनेके निमित्त सिखोंने यहां क़िला भी बनवाया था। परन्तु अब वह क़िला नहीं रहा और उत्तर ओर क़िलेकी खाई भी भर दी गई है। सन् १८०८ ई०में महाराज रणजित् सिंहने गोविन्दगढ़ नामक परिखावेष्टित एक दुर्ग बनवाया था; केवल वही अब तक खड़ा है।

सन् १७६२ ई०में अहमदशाहके पुत्र तैमूरने अमृतसरके प्रधान-प्रधान मन्दिरोंको तोड़ डाला था। सिखोंने उन्हीं मन्दिरोंको फिर बनवाया। उसके बाद अहमदशाहने स्वयं आकर नये मन्दिरोंको फिर तोड़वा दिया। परन्तु केवल मन्दिरोंको ही तोड़ कर उनके मनका क्षोभ न मिटा था। उन सब देवा-

क्योंकि ऊपर गोहत्या करके उन्होंने स्थानको अपवित्र भी कर दिया। उसी समय अमृतसरमें जगह-जगह मसजिदें भी बनवायी गई थीं। अहमदशाहके चले जाने पर उन मसजिदोंको तोड़कर सिखलोग वहां सूअर काटने लगे अन्तमें वर्तमान मन्दिर बना।

अमृतसर बड़ा भारी सरोवर है। क्या ग्रीष्म और क्या वर्षा बारहो महीने उसमें जल भरा रहता है। सरोवरके ठीक वक्षस्थलपर सिखोंका देवालय है। यहां रात दिन सिखोंके ग्रन्थसाहबका पाठ हुआ करता है। सरोवरकी चारो ओर राजा, राजमन्त्री, प्रधान प्रधान सरदार एवं अन्यान्य धनाढ्योंकी अट्टालिकायें सुशोभित हैं।

अमृतसरके इस मन्दिरका नाम 'दरबार साहब' है। यह सफ़ेद पत्थरका बना हुआ है। देखनेमें बहुत बड़ा नहीं है। मन्दिरका गुम्बद तांबेके पत्तरका है, उसपर सोनेका पानी चढा है। इसीसे लोग इसे सुवर्णमन्दिर कहते हैं। सोनेके पानी चढ़ाने में महाराज रणजित्‌ने बहुत धन व्यय किया था। इसके अतिरिक्त सिखोंने जहांगीर प्रभृति बादशाहोंकी कब्रोंसे बहुमूल्य प्रस्तरादि लाकर भीतर लगा दिये हैं। सरोवरके किनारे किनारे सफ़ेद पत्थर लगा हुआ है। घाटसे मन्दिरमें जानेके लिये सफ़ेद पत्थरका सुन्दर पथ बना है। मन्दिरको चारो ओर बरामदा है। प्रायः पांच सौ अकाली पुरोहित इस देवालयकी परिचर्यामें नियुक्त हैं।

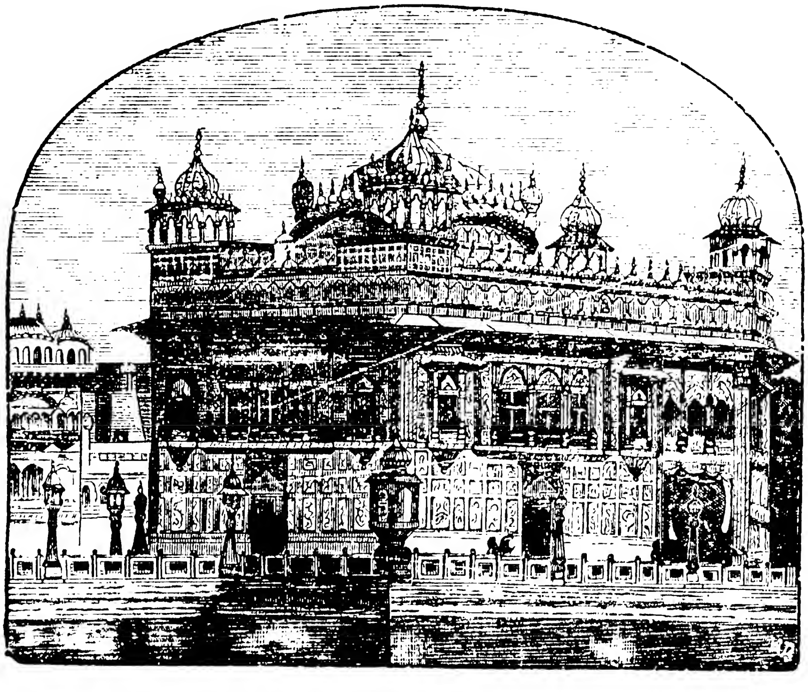

दरबार-साहब

सिंहद्वारसे प्रवेश करनेपर सामने अकालियोंका 'भुङ्ग' प्रासाद दिखाई देता है। यहां सिख गुरुओंके अस्त्र शस्त्र रखे हुए हैं। यहां अनेक गाने बजानेवाले बैठे रहते हैं। प्रतिदिन धार्मिक गीत गानेके लिये ही वे लोग नियुक्त हैं। मन्दिरके भीतर प्रसिद्ध ग्रन्थ साहब विराजमान हैं। पुरोहित लोग पुष्पादि द्वारा प्रतिदिन ग्रन्थ साहबकी पूजा करते हैं। सब मिलाकर सिखोंके दश गुरु हैं—नानक, अङ्गद, अमरदास, रामदास, अर्जुन, हरगोविन्द, हरराय, हरकृष्ण, तेजबहादुर और गुरु गोविन्द सिंह। ग्रन्थसाहब वा आदिग्रन्थ नानकका रचा हुआ है। देवालयमें जाकर भक्तिपूर्वक ग्रन्थसाहबको प्रणाम करनेसे पुरोहित लोग दर्शकोंको एक एक आशीर्वादात्मक फूल देते हैं।

मन्दिरको चारो ओर कहीं यात्री लोग स्नान करते हैं; कहीं साधु संन्यासी बैठे दिखाई देते हैं; कहीं भक्तिभावसे बैठकर सिख लोग धर्मपुस्तकको नकल

करते हैं ; कहीं दुकानदार कपड़े, कंघी और लोहेके अलङ्कार आदि नाना प्रकार वस्तु बेचते हैं। सरोवरकी पूर्व ओर दो बड़े बड़े स्तम्भ हैं। उनके ऊपर जानेसे चारो ओरका दृश्य अति मनोहर दिखाई देता है। "बाबा अतल" नामकी एक सभा है, उसकी गठनप्रणाली बहुत ही विचित्र है। बाबा अतलकी बगलमें कौलसर है। गुरुगोविन्द सिंहकी स्त्रीका नाम कौल था ; वे वन्ध्या थीं। उन्होंके नामसे कौलसर प्रतिष्ठित है। मन्दिरमें जानेके पहले यात्री इसी सरोवरमें स्नान करते हैं। सरोवर किनारेके सुरम्य वृक्षोंकी शाखायें जलपर झुकी हुई हैं। उनपर सैकड़ों पंखदार गिलहरी झूला करती हैं। एक वृक्षके नीचे सुनहला ताम्रफलक है। गुरुगोविन्द सिंह किस तरह अपनी पत्नी कौलको लाहोरसे ले आये थे, इस ताम्रफलकपर उसी समयका दृश्य खुदा हुआ है। अमृतसरका 'सन्तोषसर' भी अति मनोहर स्थान है।

अमृतसरसे सात कोस दक्षिण 'तरण-तारण' नामक और एक प्रसिद्ध स्थान है। वहां भी एक पुष्पसरोवर है। वह प्रायः ४८४ हाथ लम्बा, ४८० हाथ चौड़ा और चारो ओर पत्थरसे बंधा हुआ है। महाराज रणजित् सिंहके पौत्र नवनिहाल सिंहने सरोवरके ईशानकोणपर एक स्तम्भ बनवा दिया था। वह अब तक विद्यमान है। उसके किनारे कोढ़ी लोग रहते और नित्य पुष्पसरोवरमें स्नान करते हैं। गुरु अर्जुनसिंहके शायद कुष्ठरोग था। वही इस सरोवरकी प्रतिष्ठा कर गये हैं। कहते हैं, कि व्याधिग्रस्त लोग तैरकर इस सरोवरके पार जानेसे नीरोग हो जाते हैं। प्रति मास कृष्णपक्षकी त्रयोदशीको वहां अमावस्या नामका मेला लगता है। मेलेके दिन यात्री लोग आकर तरणतारणके जलमें स्नान और सरोवरको प्रदक्षिण करते हैं। मेलेमें द्रव्यादिका क्रयविक्रय होता है।

अमृतसरके निकटकी भूमि बहुत उपजाऊ है। किसान बड़े दोआबकी झील, व्यास और रावी नदीसे जल लाकर भूमिको सींचते हैं। गेहूं, यव आदि नाना प्रकारके शस्य, कपास, ऊख, शन, केशर, तम्बाकू, अफीम एवं और और कितनी ही चीज़ें यहां पैदा होती हैं। यहां तिब्बत प्रभृति स्थानोंकी बकरियोंके रोयेंका बहुत बढ़िया शाल बनता है। अमृतसरमें कमसे कम ५००० करघे चलते हैं। काश्मीरके आदमी यहांके महाजनोंके पास आकर उन सब करघोंमें शाल तय्यार करते हैं। इसके सिवा अमृतसरमें उत्तम रेशम भी उत्पन्न होता है। नाना स्थानोंके व्यवसायी यहां आकर अनेक प्रकारकी चीज़ें बेचते और खरीदते हैं। कहते हैं, प्रतिवर्ष प्रायः चार करोड़ रुपये चीज़की आमदनी और रफ़तनी होती है।

अमृतसहोदर (सं० पु०) घोटक, घोड़ा।

अमृतसार (सं० पु०) अमृतस्य दुग्धस्य सारः, ६-तत्। १ घृत, घी। २ नवनीत, मक्खन। ३ लौहपाकविशेष।

अमृतसारज (सं० पु०) अमृतमिव सारः तस्मात् जायते ; जन-ड, ६-तत्। गुड़।

अमृतसारजा (सं० स्त्री०) शर्करा, शक्कर, चीनी, खांड।

अमृतसू (सं० पु०) अमृतं किरणरूपं सूते विकिरति, सु-क्विप्। १ चन्द्र, चांद। अमृतानां देवानां सूः प्रसूतिः, ६-तत्। २ देवमाता, अदिति।

अमृतसोदर (सं० पु०) अमृतस्य पीयूषस्य सोदरः एकस्थानोत्पन्नत्वात्, ६-तत्। १ उच्चैःश्रवा अश्व। समुद्रमन्थनके समय अमृतके साथ यह घोड़ा निकला था, उसीसे इसका नाम अमृतसोदर पड़ा। २ घोटकमात्र, घोड़ा।

अमृतस्रवा (सं० स्त्री०) अमृतमिव स्रवति, स्रु पचाद्यच्-टाप्। १ रुदन्तीलता। २ त्रायमाणा। (पु०) भावे अप्, ६-तत्। ३ अमृतक्षरण, आब-हयातका टपकना।

अमृतस्रुत् (सं० त्रि०) अमृत टपकाते हुआ, जिससे आबहयात चूये।

अमृतहरीतकी (सं० स्त्री०) पीयूषकी हरीतकी, आबहयातकी हर। यह अजीर्णपर चलती और इसतरह बनती है,—

"धान्यकं जीरकञ्चैव मुस्तकं पटुपञ्चकम्
यमान्यामठपत्रञ्च लवङ्गं त्रिकटुं तथा ॥"
प्रत्येकं समभागन्तु शस्त्रचूर्णानि कारयेत्
सर्वं चूर्णसमं दद्यादभयाचूर्णसंस्कृतम् ॥" (सारकौमुदी)

धान्यक (धनिया), जीरा, मुस्ता, पञ्चलवण, यमानी (यमाईन), आमठपत्र, लवङ्ग, त्रिकटु, (सोंठ, पीपल, मरिच) इन सबके प्रत्येक समभागका चूर्ण करके सब चूर्णके बराबर हरीतकीका चूर्ण मिलाना चाहिये।

"तक्रे समुत्स्विन्नशिवाशतानि तद्बीजमुद्धृत्य च कौशलेन।
षडूषणं पञ्चपटूनि हिङ्गुक्षारावजाजीमजमोदकञ्च।
चुक्रेण सम्भाव्य त्वचा समानं क्षिपेत् शिवाबीजनिवासमध्ये ॥"
(प्रयोगामृत)

दूसरा—१०० हरीतकीका तक्रमें डाल दे। जब वह फूल जाय, तो बीजको निकाल कर षडूषण, पीपल, पीपलमूल, चाव्य, चित्रकमूल, सोंठ, मरिच, यह सब समभाग; पञ्चलवण, हिंङ्गु, यवक्षार, जीरा, कालाजीरा, वनयमानी समभाग—इन सब वस्तुओंका चूर्ण तय्यार करके एकमें मिलाकर हरीतकीके बीज-स्थानमें भर देना चाहिये। इसे अमृत-हरीतकी कहते हैं। यह अजीर्णमें बहुत लाभदायक होती है।

अमृता (सं० स्त्री०) न मृतं मरणमनया, टाप्। १ गुलञ्च, गुर्च। २ आमलकी, आंवला। ३ स्थूलमांस हरीतकी, बड़ी हर। ४ तुलसी। ५ काष्ठधात्री, अतीस। ६ मदिरा, शराब। ७ इन्द्रवारुणी, इन्द्रायण। ८ पारावतपदी, ज्योतिष्मती। ९ गोरक्षदुग्धा, दूधी। १० कृष्णातिविषा, काली सींगिया। ११ रक्तत्रिवृता, लाल निसोत। १२ दूर्वा, दूब। १३ पिप्पली, पीपल। १४ लिङ्गिनी, मालकंगनी। १५ नीलदूर्वा, काली दूब। १६ श्वेतदूर्वा, सफेद दूब। १७ नागवल्ली, पान। १८ रास्ना, रसोत। १९ गरुड़वल्ली। २० सूर्यप्रभा, खरबूजा। २१ कन्दगुडूची। २२ स्फटिकारिका, फिटकरी। २३ परीक्षित्‌की माता।

अमृतांशु (सं० पु०) अमृतमिव हृषिकराः अंशवो यस्य, बहुव्री०। चन्द्र, जिसकी किरण अमृत-जैसा हृषिकर रहे।

अमृताक्षर (सं० त्रि०) अजर-अमर, जो कभी मरता और गिरता न हो।

अमृताख्यगुग्गुलु (सं० पु०) वातरक्त रोगपर दिया जानेवाला अमृत नामक गुग्गुल। चक्रपाणिदत्तकृत-संग्रहमें इसके बनानेका विधान इसतरह लिखा है,—

गुडूची २ शरावक,गुग्गुल १ शरावक और त्रिफला प्रत्येक २ शरावकको ६४ शरावक जलमें डालकर पाक करे। जब चतुर्थांश शेष रह जाय, तब आग-परसे उतार कर उसे फिर पाक करना चाहिये। गाढ़ा हो जानेपर थोड़ा उष्ण रहते दन्त्यादिका चूर्ण प्रत्येक ४ तोलक और त्रिवृत् चूर्ण २ तोलक डाल अच्छी-तरह घोटकर मिला दे। मात्रा बलाबल देख कर देना होगी।

अमृताख्यलौह (सं० पु०-क्ली०) रक्तपित्ताधिकारका लौह, जो लौह रक्तपित्तपर दिया जाता हो। इसके बनानेकी रीति यह है,—गुडूची, त्रिवृता, दन्ती, मुण्डितिका (मुण्डी), खदिर, वृष, चित्रक, भृङ्ग-राज, तालमखाना, कमलकन्द, पुनर्णवा, बरियार, महिञ्जन, जखका मूल, वृद्धदारक, गोरक्षककंटी, शतावरी, कन्द, चाव्य, पिपलामूल, कुष्ठ, और ब्राह्मणयष्ठिका यह सब द्रव्य प्रत्येक एक पल, १६ सेर जलमें डालकर पाक करे। जब अष्टांश (२ सेर क्वाथ) रह जाय, तब आग परसे उतार ले। फिर १ सेर त्रिफलाको २ सेर जलमें पचाये। जब १ सेर क्वाथ बाकी रहे, तब आगसे उतार शुद्ध लौह १६ पल, शुद्ध अभ्रक ४ पल, शुद्ध गन्धक ४ पल, गुड़ ८ पल, गुग्गुल २ पल, घृत १ सेर इन सबको मिला पाक करना चाहिये। जब पाक सिद्ध हो जाय, तब आगसे नीचे उतारे। शीतल होनेसे शहद ८ पल, शुद्धस्वर्ण-माक्षिकचूर्ण २ पल, शिलाजतु ४ तोलक इन सब द्रव्योंको मिलाना चाहिये।

अमृतागुग्गुलु (सं० पु०) राजयक्ष्मापर दिया जानेवाला गुग्गुलु। इसके बनानेका विधान नीचे लिखते हैं, १ सेर गुडूची और त्रिफला प्रत्येक आध सेरको १६ सेर जलमें क्वाथ करे। जब क्वाथ गाढ़ा हो जाय, तब आगसे नीचे उतार थोड़ा उष्ण रहते दन्ती, गुडूची,

व्योष (सोंठ मिर्च पीपल), विड़ङ्ग, त्रिफला—इन सब वस्तुओंका चूर्ण प्रत्येक आध पल मिला देना होगा। (रसरत्नाकर)

द्वितीय प्रकार—गुडूची २सेर, गुग्गुलु १ सेर,आमलकी १ सेर,विभीतक १ सेर, पुनर्णवा १ सेर,हरीतकी १ सेर,इन सबको एकत्र कूट ३२ सेर जलमें पाक करे। चतुर्थांश यानी ८ सेर क्वाथ तैयार करना चाहिये। जब क्वाथ सिद्ध हो जाय, तब छान कर पुन: पाक करे। जब वह गाढ़ा हो जाय, तब आगसे नीचे उतार कर थोड़ा गर्म रहते, दन्ती, गुडूची, व्योष, विड़ङ्ग, त्रिफला प्रभृतिका प्रत्येक ४ तोलक चूर्ण और २ तोलक त्रिवृत् चूर्ण मिलाना होता है। मात्रा बलाग्नि देखकर दी जाती है। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

अमृताङ्कुरलौह (सं० पु०-क्ली०) उपदंशका लौह विशेष, जो लौह आतशकको खास दवा हो। यह रस कुष्ठपर भी चलता, और इस तरह बनता है,—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, शुद्धलौह, शुद्धअभ्रक, शुद्धताम्र, शुद्ध गुग्गुलु, शुद्ध भल्लातक (भिलावां) यह सब प्रत्येक एकपल, आमलकी चूर्ण ६।।पैसे भर, हर और विभीतक (बहेरा) का चूर्ण प्रत्येक दो पैसेभर घृत १६ पल—यह सब द्रव्य १ सेर त्रिफलाके क्वाथसे लौहपात्रमें पाक करे। जब पाक सुसिद्ध हो जाय, तब किसी पात्रमें रख लेना चाहिये। फिर मधु और घृत मिलाकर प्रतिदिन एक रत्तीसे क्रमश: बढ़ाते हुये दूध या नारियलके जल साथ खाना होता है। (प्रयोगामृत)

अमृतादि (सं० पु०) कषायद्रव्यसमूह, कोई काढ़ा। यह विसर्प विस्फोटकपर दिया जाता है,—

गुडूची, वृष, पटोल, मुस्ता, सप्तपर्ण, खदिर, असितवेत्र (श्यामालता), निम्ब, हल्दी, दारुहल्दी, इन सबका कल्क पीना होता है। (रसरत्नाकर)

द्वितीय प्रकार—अमृतादि मूत्रकृच्छ्र-हितकारक है। गुडूची, नागरमोथा, धात्री, वाजिगन्धा, त्रिकण्टक, इन सब द्रव्योंको उबालकर पीनेसे समूल मूत्रकृच्छ्र निर्मूल होता है। (भैषज्यरत्नावली)

अमृतादिवटी (सं० स्त्री०) अमृतादि नामकी गोली। यह कफ, त्रिदोष और अग्निमान्द्यपर खिलायी जाती है,—विष २ भाग, कपर्दभस्म ५ भाग और मरिच ८ भाग एक साथ पीसकर पानीसे मटर-जैसी गोली बांध लेना चाहिये। (भावप्रकाश मध्यभाग)

अमृताद्यगुग्गुलु (सं० पु०) मेदरोगपर दिया जानेवाला गुग्गुल। इसके तैयार करनेकी रीति यह है, गुडूची, छोटीएलायची, विड़ङ्ग, वत्सक, कुटजत्वक्, विभीतक, हर, आंवला, गुग्गुलु यह सब क्रमसे बढ़ाकर—यथा गुडूची १ पल हो, तो छोटी एलायची २ पल, विड़ङ्ग ३ पल—इसतरह परिमाण वृद्धिसे सब द्रव्योंको चूर्ण करके मधुमें मिलाना चाहिये। (भैषज्यरत्नावली)

अमृताद्यघृत (सं० क्ली०) वातरक्तका घृत, जो घी वातरक्त रोगपर लगता हो। इसके बनानेका विधान यों लिखा गया है,—घृत ४ शरावक एवं आरग्वध, श्वेतपुनर्णवा, कोकिलाक्षमूल, एरण्डमूल और घनमुस्ताका कल्कद्रव्य १ शरावक किसी हांडीमें रखे। फिर उसमें आमलकीरस ४ शरावक और जल १२ शरावक डालकर खूब पकाना और घी निकाल लेना चाहिये। (चक्रपाणिदत्तकृतसंग्रह)

अमृताद्यचूर्ण (सं० क्ली०) आमवातका चूर्ण, जो चूर्ण आमवात रोगपर खिलाया जाता हो। इसके तैयार करनेकी रीति यह है,—गुडूची, नागर, मुष्किंतिका और वरुणको बराबर-बराबर रखते और पीसकर चूर्ण बना लेते हैं। (भावप्रकाश मध्यभाग)

अमृताद्यतैल (सं० क्ली०) गलगण्डादिका तैलविशेष, जो तैल गलगण्डादि रोगपर लगता हो। इसके बनानेका विधान नीचे लिखते हैं,

मूर्च्छित तिलका तैल ४ शरावक, गुडूची, नीमकी छाल, कुटजत्वक्, वत्सक, पीपल, देवदारु, काकमारी, बला इन सबका कल्क १ शरावक तय्यार करना चाहिये। पहले १०० पल गुडूच्यादिको ६४ शरावक जलसे क्वाथ बनाये। जब १६ शरावक शेष रहे, तब आगसे नीचे उतार उक्त कल्क और तैलको मिला कर तैल पाककी विधिसे पकाना होता है। (भैषज्यरत्नावली)

अमृताम्बस् (सं० त्रि०) अमृतं अम्बः अन्नमिव तृप्तिकरं येषाम्। सकल देवता।

अमृताफल (सं० क्लो०) अमृतायाः फलम्, ६-तत्। १ परवल। २ रुचिफल, नाश्पाती।

अमृतायमान (सं० त्रि०) अमृतमिव आचरति, अमृत-क्यङ्-शानच्। अमृततुल्य, पीयूष-जैसा, जो आवहयातके बराबर हो।

अमृतारिष्ट (सं० क्लो०) विषमज्वरादिका अरिष्ट, जो अरिष्ट विषमज्वरादिपर दिया जाता हो। गुडूची पलशत और दशमूल पलशतको द्रोणचतुष्टय जलमें डाल पकाना और चौथाई बाकी रह जानेसे उतार लेना चाहिये। पीछे इस क्वाथमें गुड़ तुलात्रय मिला, कृष्णजीरा १६ पल, पर्पट २ पल तथा सप्तपर्ण, त्रिकटु, मुस्तक, नागकेशर, कटुकी, अतिविषा और इन्द्रयव प्रत्येकका १ पल चूर्ण छोड़ते हैं। उसके बाद आहत-पात्रमें इसे भर तीन मास रखेंगे। (भैषज्यरत्नावली)

अमृतार्णव (सं० पु०) अतिसार और ज्वरातिसार पर दिया जानेवाला रस। इसकी मात्रा १ माषा रहेगी। अनुपानमें धान्य, जीरक वा शालिवीज पड़ता है। इसके बनानेका विधान यह होगा,—हिङ्गु-लोत्थरस, लौह, गन्धक, टङ्कण, शठी, धान्यक, ह्रीवेर, मुस्तक, अम्बष्ठा, जीरक और अतिविषाको बकरीके दूधमें डालकर घोंटनेसे अमृतार्णव तैयार हो जाता है। (भैषज्यरत्नावली)

अमृतार्णवरस (सं० पु०) कासहर रसविशेष, जो रस खांसीको मिटाता हो। गुडूची और पद्मकाष्ठसे ही यह तैयार हो जायेगा। (रसरत्नाकर) वाजीकरण-पर चलनेवाले अमृतार्णवरसमें सूतभस्म यानी रस-सिन्दूर मिलाया जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) कासपर दिया जानेवाला अमृतार्णवरस इसतरह बने और मात्रामें २ गुञ्जा पड़ेगा। रास्ना, विड़ङ्ग, त्रिफला, रसगन्ध, कटुत्रिक, अमृता, पद्मक, क्षौद्र और विष-तुल्यको पीस चूर्ण कर लेते हैं। रसेन्द्रसारधृतके रसायनाधिकार पर भी अमृतार्णव रस चलता और मात्रामें निष्ककी बराबर रहता है।

अमृतार्णवलौह (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका लौह, जो लौह कुष्ठपर खिलाया जाता हो। इसे एक माषा मधुके साथ चाट लेना चाहिये।

अमृतावटिका (सं० स्त्री०) सद्योव्रणघ्नी वटिका, जो गोली फौरन् फोड़ा-फुन्सी मिटा देती हो। यह व्रण शोथपर भी चलती है। इसे यों बनायेंगे,—

गुड़ूची, पटोलमूल, त्रिफला, त्रिकटु, (सोंठ मिर्च पीपल), कृमिघ्न, इन सबका चूर्ण बराबर बराबर और सब चर्णके बराबर गुग्गुल मिला गुटिका बना प्रति-दिन सेवन करना होता है। (रसरत्नाकर)

दूसरी, अमृतावटिका बृहदभिधाना होती, व्रणको फायदा पहुंचाती और मात्रामें ८ माषा रहती है। बनानेका विधान यह होगा,—

गुड़ूची १०० पल, दशमूल १०० पल, पाठा, मूर्वा, बला (बरियार), श्वेत बरियारकामूल, एरण्डमूल यह सब प्रत्येक १० पल, हरीतकी १०० पल, बहेड़ा २०० पल, आमलकी ४०० पल, इन सब द्रव्योंको दो द्रोण (१२७ शरावक) जलमें एकरात्र फुलाना और १ प्रस्थ गुग्गुलुकी पोटली बांधकर उसमें डाल देना चाहिये। पश्चात् दूसरे दिन गुग्गुलुके साथ उक्त द्रव्योंको पाक करे। जब चतुर्थांश क्वाथ शेष रह जाय, तब उतार उसके गुगुलको खूब पचाना चाहिये। पुनः इन सब द्रव्योको लोहेके पात्रमें पाक करे। जब गाढ़ा हो जाय, तब आगसे उतार कर शीतल होनेपर त्रिफला, त्रिवृता, दन्ती, व्योष (सोंठ मिर्च पीपल), गुड़ूची, अश्वगन्धा, विड़ङ्ग, चित्रक, तेजपत्र, छोटी एलायची, नागकेशर, इन सबका चूर्ण प्रत्येक एक एक पल मिलाना होता है। (प्रयोगामृत)

फिर तीसरी अमृतावटिका कुष्ठरोग और वात-रक्तको नाश करती है। यह इसतरह बनेगी,—

गुड़ूची १०० पल, दशमूल, १०० पल, पाठा, मूर्व्वा, बरियार, पटोलकी पत्ती, दार्वी, एरण्डमूल, यह सब प्रत्येक १० पल, विभीतक १०० पल, हरीतकी २०० पल, आमलकी १०० पल—सबको ३ द्रोण (१८२ शरावक) जलमें क्वाथ बनाये, अष्टांश शेष रहने पर उतार कर छान ले। पश्चात् गुग्गुलु १ प्रस्थ, घृत आधा प्रस्थ मिला पुनः पाक करे। जब पाक सिद्ध हो जाय, तब गुड़ूचीका

सत्व २ पल, सोंठ और पीपलका चूर्ण प्रत्येक २ पल देना होता है। (भैषज्यरत्नावली)

अमृताश (सं॰ पु॰) अमृते जले आ-सम्यक् रूपेण शेते प्रलयकाले, अमृत-आ-शी-ड। १ प्रलयकालमें जलपर सोनेवाले विष्णु भगवान्। अमृतं अश्नाति, अमृत-अश-अण्। २ अमृत पीनेवाला देवता, जो फरिश्ता आवहयात पीता हो।

अमृताशन (सं॰ पु॰) अमृतं अश्नाति अमृतं अशनं यस्य इति वा, अमृत-अश-ल्यु। देवता, फरिश्ता।

अमृताशिन् (सं॰ पु॰) अमृताशन देखो।

अमृताश्म (सं॰ पु॰) अमृतो जीवितः अश्मा, टजन्त कर्मधा॰। प्रस्तरविशेष, जीवित प्रस्तर, जानदार सङ्ग, जीता-जागता पत्थर। ऐसा भी पत्थर होता जो प्राणीकी भांति जलमें तैरते फिरता है।

अमृताष्टक ((सं॰ पु॰) अमृतां गुडूची प्रभृतीनामष्टकं यत्र, बहुव्री॰। पाचन विशेष, बदहज़मीकी कोई दवा। यह कषाय गुड़ची आदि आठ द्रव्यसे बनता है,—गुलञ्च, इन्द्रयव, नीमका बकला, परवलकी पत्ती, कटुकी, सोंठ, रक्तचन्दन और नागरमोथा यह सब दो तोले ले सोलह गुण जलमें धीमी आंचसे पकाना चाहिये। कोई चौथाई जल रह जानेसे हांडीको नीचे उतार उसमें आध तोले पीपलका चूर्ण छोड़ देते हैं। इस कषायकी पीनेसे पित्तश्लेष्मज्वर, हृल्लास, अरुचि, वमि, पिपासा और दाह मिट जायेगा। (सारकौमुदी)

अमृतासङ्ग (सं॰ क्लो॰) अमृतस्य विषस्येव आसङ्गो यत्र, बहुव्री॰। खर्परिकातुल्य, खपरियेका सुर्मा।

अमृतासङ्गम (सं॰ पु॰) अमृतासङ्ग देखो।

अमृतासु (सं॰ त्रि॰) अमृता वियोगरहिता असवः प्राणा यस्य, बहुव्री॰। दीर्घजीवी, बहुत दिन जीनेवाला, जो जल्द न मरता हो।

अमृताहरण (सं॰ पु॰) अमृतं पीयूषं आहरति अमृतस्य आहरणं येन वा, अमृत आ-हृ-ल्युट्। अमृतको हरण-करनेवाले गरुड़। गरुड़के अमृताहरणका विवरण अधिजिह्व शब्दमें देखो।

अमृताह्व (सं॰ क्लो॰) अमृतं आह्वयते तुल्यस्वादफलत्वेन स्पर्द्धते, अमृत-आ-ह्वे-क। १ अमृतफल, नासपाती। यह गुरु, वातघ्न, स्वादु और त्रिदोषनाशक होता है। मुङ्गेरप्रान्तमें इसे प्रचुर पायेंगे। २ खरबूजा।

अमृताह्वयतैल (सं॰ क्लो॰) वातरक्तका तैल, जो तैल वातरक्त रोगपर लगता हो। इसके बनानेका विधान नीचे लिखते हैं,—

गुडूची, मधुक, ह्रस्वपञ्चमूल, बृहती, कण्टकारी, पृश्निपर्णी, गोक्षुर, पुनर्णवा, रास्ना, एरण्डमूल, जीवनीय, यह सब प्रत्येक १०० पल, बला ५०० पल, कोल, बिल्व, यव, माष, कुलथी, यह सब १ आढक, गुड़ काश्मर्या (गम्भार) १ द्रोण, इन सबका १०० द्रोण जलमें क्वाथ बनाकर जब ४ द्रोण शेष रहे, तब नीचे उतार कर छान ले, पीछे १ द्रोण तैल और पञ्चगुण दूध मिलाकर पचाना चाहिये, पुनः चन्दन, खस, केसर, पत्र, एलायची, गुरु, कुष्ठ, तगर, मधुयष्टिका, यह सब प्रत्येक २ पल और मञ्जिष्ठ आधा पल चूर्ण करके मिलाया जाता है। (भावप्रकाश मध्यभाग)

अमृतेश (सं॰ पु॰) अमृतके ईश, शिव।

अमृतेशय (सं॰ पु॰) अमृते जले शेते; अमृत-शी-अच्, अलुक्-स॰। विष्णु। प्रलयकालमें जलपर सोनेसे विष्णुका नाम अमृतेशय पड़ा है।

अमृतेश्वर, अमृतेश देखो।

अमृतेश्वररस (सं॰ पु॰) यक्ष्मारोगका रसविशेष। इसके तैयार करनेकी रीति यह है—पाराभस्म, गुड़चका सत्व, लौह, मधु (शहद), घृत, इन सब द्रव्योंको एकत्र मिलाकर यह औषध बनाया जाता है। मात्रा इसकी ६ रत्ती होती है। (प्रयोगामृत)

अमृतेष्टका (सं॰ स्त्री॰) यज्ञीय इष्टकाविशेष, यज्ञकी खास ईंट। यह मनुष्य, पशु, पक्षी प्रभृतिके शिरजैसी स्वर्णसे बनायी जाती है।

अमृतोत्था (सं॰ स्त्री॰) साधुमूला, सालमभिसरी।

अमृतोत्पत्ति (सं॰ स्त्री॰) पीयूषका प्रादुर्भाव, आबहयातकी पैदायश।

अमृतोत्पन्न (सं॰ क्लो॰) अमृतं विषमिव उत्पन्नम्, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। खर्परीतुल्य, खपरिया।

अमृतोत्पन्ना (सं० स्त्री०) अमृतमिव स्वादु मधु उत्पन्नं यस्याः, ५-बहुव्री०। मक्षिका, ममाखी। मक्षिका पुष्पसे मकरन्दको ले छत्तेमें मधुसञ्चय करती, इसीसे उसका नाम अमृतोत्पन्ना पड़ा है।

अमृतोदन—सिंहहनुके पुत्रविशेष।

अमृतोद्भव (सं० क्ली०) अमृतं विषमिव उद्भवति, अमृत-उद्-भू-अच्। १ खर्परीतुत्थ, खपरिया। २ आमलकी, आंवला। (पु०) अमृतं मृत्युञ्जयं शिवमिति यावत् उद्भवते प्राप्नोति भक्तदेयत्वेन। ३ बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़। ४ धन्वन्तरि।

अमृतोद्भवा (सं० स्त्री०) १ आमलकी, आंवला। २ नागरवल्ली, पान।

अमृतोपम (सं० क्ली०) खर्परीतुत्थ, खपरिया।

अमृतोपहिता (सं० स्त्री०) चोपचीनी।

अमृत्यु (सं० पु०) १ मृत्युका अभाव, अमरत्व, मौतकी अदममौजूदगी, बक़ा। (त्रि०) २ अमर, कभी न मरनेवाला। ३ अमरत्व प्रदान करनेवाला। जो बक़ा बख्श देता हो।

अमृध्र (सं० त्रि०) मृधु उन्दने बाहुलकात् रक्, ततो नञ्-तत्। १ अहिंसित, न मारा हुआ, जिसे कोई चोट न दे सके।

अमृषा (सं० अव्य०) १ सत्य, सच-मुच, बेशक, असलमें। २ शुद्ध रीतिपर, ठीक तौरसे।

अमृषाभाषिन् (सं० त्रि०) सत्यवक्ता, सच बोलनेवाला, जो झूठ न कहता हो।

अमृष्टमृज (सं० त्रि०) विशुद्ध, निहायत पकीज़ा, जिसकी सफ़ाईमें दाग़ न लगे।

अमृष्य (सं० त्रि०) सहन करनेके अयोग्य, जो बरदाश्त न हो।

अमृष्यमाण (सं० त्रि०) सहन न करनेवाला, जो बरदाश्त न करता हो।

अमेक्षण (सं० त्रि०) मेक्षणशून्य, बेचम्मच, जिसमें चलानेको चम्मच न रहे।

अमेघ (सं० त्रि०) मेघरहित, बेबादल, साफ़, खुला।

अमेजना (हिं० क्रि०) १ आमिजिश रहना, मिलावट होना, मिल जाना। २ आमिजिश करना, मिला देना।

अमेठना, उमेठना देखो।

अमेदस्क (सं० त्रि०) मेदरहित, बेचर्बी, लागर, दुबला।

अमेधस् (सं० त्रि०) नास्ति मेधा धारणवती धीर्यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ अल्प धारणाशक्तिसम्पन्न, कुछ भी स्मरण न रखनेवाला, बेहाफ़िज़ा, जिसे कुछ भी याद न रहे। २ मूर्ख, बेवकूफ़। ३ क्षिप्त, पागल।

अमेध्य (सं० त्रि०) न मेध्यं पवित्रम्, विरोधे नञ्-तत्। १ अपवित्र, अशुद्ध, नापाक। "यदमेध्यमशुद्धञ्च।" (स्मृति) (क्ली०) २ विष्ठा, मैला। "अभक्ष्याणि द्विजातीनाममेध्यप्रभवाणि च।" (मनु ५।५) ३ अपशकुन, बुरा शिगून्।

अमेध्यकुणपाशिन् (सं० त्रि०) १ कुणपभक्षक, मुर्दाखोर। २ अखाद्यमांसभोजी, सड़ागला गोश्त खानेवाला।

अमेध्यता (सं० स्त्री०) अपवित्रता, अशुद्धता, नापाकीज़गी, मैलापन।

अमेध्यत्व (सं० क्ली०) अमेध्यता देखो।

अमेध्ययुक्त (सं० त्रि०) मलिन, कलुष, मैला, नापाक।

अमेध्यलेप (सं० पु०) पुरीषका लेपन, गोबरकी लेपायी।

अमेध्याक्त (सं० त्रि०) पुरीषसे कलुषित, मैलेसे भरा हुआ, जिसमें गोबरकी खाद पड़ जाये।

अमेन (वै० पु०) मृतपत्नीक, गतभार्य, बेज़न, रंडुवा, जिस शख्सकी बीबी मर जाये।

अमेनि (वै० त्रि०) मि-नि, ततो नञ्-तत्। परिच्छेदशून्य, इयत्तारहित, बेबाज़, बेमिक़दार। २ आघात न करनेवाला, जो चोट न पहुंचा रहा हो।

अमेय (सं० त्रि०) न मेयम्, नञ्-तत्। १ इयत्ता लेनेके अयोग्य, जिसकी मिक़दार मालूम न हो सके। २ जाननेके अयोग्य, समझमें आ न सकनेवाला।

अमेयात्मन् (सं० त्रि०) महानुभाव, उदारचेता, महाशय।

अमेरिका—एक महाद्वीप। यह उत्तर, मध्य और दक्षिण—तीन भागमें विभक्त है, किन्तु सचराचर उत्तर और दक्षिण—दो ही भाग प्रधान हैं।

उत्तर-अमेरिकासे उत्तर उत्तर-महासागर, पूर्व आटलाण्टिक महासागर और पश्चिम एवं दक्षिण प्रशान्त-महासागर विद्यमान है। उत्तरसे दक्षिण दिक् पर्यन्त इसका दैर्घ्य ४६०० मील और पूर्वसे पश्चिम पर्यन्त प्रस्थ ३१२० मील पड़ेगा। इसमें भूमिका परिमाण प्रायः ८३१८७११ वर्ग-मील आता है।

उत्तर-अमेरिकाके विभाग नीचे लिखेंगे,—

विभागका नाम	परिमाण (वर्गमील)
१ ग्रीनलैण्ड	३८००००
२ फ्रान्सीसी अधिकार	११३
३ रूस अधिकृत अमेरिका	३८४०००
४ निउ ब्रुटेन	१४८००००
५ पश्चिम कानाडा	१४७८३२
६ पूर्व-कानाडा	२०१९८८
७ निउ ब्रन्सविक	२७७००
८ नोवा स्कोशिया	१८७४६
९ प्रिन्स एडवर्ड द्वीप	२१३४
१० निउ फाउण्डलैण्ड	५७१००
११ ब्रुटिश कलम्बिया	२१३५००
१२ युनाइटेड स्टेट या युक्तराज (अमेरिका)	३३०६८३४
२३ मेक्सिकोका मिश्रराज्य	१०३८८६५

प्रधान द्वीप—उत्तर-महासागरमें ग्रीनलैण्ड, साउदमटन, कम्बरलैण्ड, ककवरन, विक्टोरिया, बैङ्कसलैण्ड ; ब्रुटिश अमेरिकासे पश्चिम सिटका, प्रिन्स औफ वेल्स, क्वीन शार्लेट, वङ्कुवर ; बर्मूदास, केपब्रुटेन, प्रिन्स एडवर्ड, निउ फाउण्डलैण्ड, एवं वेष्ट इण्डिज़ द्वीपपुञ्ज।

उपसागर—कालिफोर्निया, मेक्सिको, कम्पीची, हण्डूरास, हडसन, बेफिन, सेण्ट लरेन्स, चीसापीक, कारीव सागर।

प्रणाली—बेरिङ्ग, हडसन, डेविस।

अन्तरीप—प्रिन्स औफ वेल्स, सेण्ट लूकस्, सेवल, रे चार्लस, फुडलेच, फेअरोवेल, रेस।

उपद्वीप—कालिफोर्निया, आलस्का, लाब्राडर, फ्लोरिडा, नोवास्कोशिया, युकेटन।

पर्वत—राकी गिरिश्रेणी (उच्चशृङ्ग ब्राउन गिरि), आलिघानी गिरिश्रेणीवाली मेक्सिकोकी गिरिश्रेणी (उच्च शृङ्ग पोपोकाटिपेटल, १७७८३ फीट), कालिफोर्नियाको गिरिश्रेणी, सेण्ट इलियस, सेण्ट वेदर।

नद-नदी—ग्रेटफिस,मेकञ्जी,वोरगन, निउ कोलोरडो, मिसिसिपि, जेमस्, सेण्ट लारेन्स।

ह्रद—ग्रेटबियर, ग्रेटस्लेभ, अथावीस्का, युनिपेग, सुपिरियर, हिउरन, निकारागोया, चपला।

उत्तर-अमेरिका अतिशय शीतप्रधान स्थान है। इसमें कितनी ही जगह अधिक शीत पड़नेसे न तो कोई ठहर और न गेहूं वगैरह शस्य ही उपज सकेगा। इस सकल स्थानमें शिकारी वन्य जन्तुका चर्म लेने आता है। सुविधा-मत स्थान वास्तवमें रिउ-ब्रडेल नटर्नसे कालिफोर्नियावाले उपद्वीपके निम्नस्थान पर्यन्त ही मिलेगा।

शीतप्रधान स्थान रहते भी अंगरेज़के हाथ जा उत्तर-अमेरिकाकी पूर्व दुरवस्था बदली, अब अनेक स्थान समृद्धिशाली सभ्यताकी वासभूमि बन गया है।

देश और उसकी	राजधानी एवं नगर।
देनिश अमेरिका	१ लिक्टेन बेलस, जूलियेन, सब्हाव।
फ्रान्सीसी अधिकार	२ सेण्ट पायर।
रूसी अधिकार	३ उत्तर-आर्केञ्जल।
ब्रुटिश अमेरिका	४ योर्क फैक्टरी, ५ टोरेण्टो-हामिल्टन, ६ क्विबेक, ओटोवा, ७ फ्रेडरिक्टन, सेण्ट जान, ८ हालिफ़क्स, ९ सार्लेटन, १० सेण्टजोन्स, ११ निउ वेस्टमिनिस्टर।
युनाइटेडस्टेट	१२ वाशिङ्गटन, बोस्टन,निउ यार्क, फिलाडेलफिया, बल्टिमोर, रिचमण्ड, चारलष्टन, निउ आर्लीन्स, सेण्टलूयी, सिन्सिनाटी, पिटस्बर्ग, चिकागो।
मेक्सिको	वेराक्रूज़, प्यूलवा, मेरिडा।

ओटावा नगरमें चुम्बक पत्थरकी खानि निकली है। टोरोण्टो विश्वविद्यालय और क्विबेक वाणिज्यका स्थान होनेसे प्रसिद्ध है। वाशिङ्गटनमें राज्यके प्रधान कर्ता रहते हैं। वहां जातीय समिति लगती है। निउ-यार्कमें वाणिज्य-व्यवसाय अधिक चलता और नाना

शास्त्र एवं नाना भाषा सीखनेको विश्वविद्यालय बना है। चिकागोसे ग्रन्थ भेजा और मंगाया जाता है।

मध्य-अमेरिकामें निम्नलिखित देश विद्यमान हैं,—

देशका नाम	परिमाण वर्गमील	राजधानी
सानसालवेडर	८५००	कजुतेपेक।
निकारागोया	४४०००	ग्रानाडा।
हण्डुरास	५३०००	कोमागागोया।
गोयाटेमाला	५८०००	निउगोयाटेमाला।
कष्टारिका	२५०००	सञ्जोशे।
मसकिटो		ब्लुफील्डस।
ब्रटिश हण्डुरास		बिलिज।

मध्य-अमेरिका उत्तर अमेरिकामें ही गिना जाता है। किन्तु कोई-कोई इसे स्वतन्त्र भी बना लेगा।

दक्षिण-अमेरिकाकी उत्तर-सीमापर कारीव सागर एवं आटलाण्टिक महासागर, दक्षिण तथा पूर्व दक्षिण-महासागर और पश्चिम प्रशान्त महासागर विद्यमान है। उत्तरसे दक्षिण पर्यन्त दैर्घ्य ४५०० मील, पूर्वसे पश्चिम पर्यन्त प्रस्थ ३००० मील और भूमि-परिमाण प्रायः ७८८०००० वर्ग-मील है। इसके देशादिका विवरण नीचे देखिये,—

देश	शासनप्रणाली	परिमाण	राजधानी
१ वैनजुयेला	साधारणतन्त्र	४१६६००	काराकास।
२ बोलभिया	,,	३७४४८०	चुकुयीशाका।
३ इक्वेडर	,,	३२५०००	क्विटो।
४ पेरू	,,	५८००००	लिमा।
५ चिलि	,,	१७००००	सेण्टियागो।
६ कलम्बिया ब्रटिश		१२००००	बोगोटा।
७ पाटागोनिया		३८००००	पण्टायेरिनस।
८ बुयेन आयार	साधारणतन्त्र	६००००	बुयेन आयार।
९ उरुगोया	,,	१२०००	मण्टभिडो।
१० पारागोया	,,	७४०००	आसनशन।
११ लाप्लाटा		८२७०००	पेराना।
१२ ब्रेज़िल		२३००००	रिउडेजोनवरो।
१३ गायना (ब्रटिश)		७६०००	जार्जटाउन।
१४ ,, (हालेण्ड-अधिकार)		३४५००	पारामारिबो।
१५ ,, (फ्रान्सीसी)		२१५००	केयेन।
१६ फकलेण्ड द्वीपपुञ्ज		१६०००	पोर्टलुयी।

प्रधान सागर और उपसागर—डेरियान, पनामा, मारकायिवो, गोयाकिल।

प्रणाली—मेगिलेन।

द्वीप—ट्रिनिडाड, गालापेगन, चिम्रा, जुयान, फार्नाण्डेज, चिलो, वेलिङ्गटन, ष्टेटन, अबोरा, जर्जिया, मरुद्वीप, टेण्डेलफिउगो, फकलेण्ड, मराजो।

पर्वत—एण्डिस् (उच्चश्रृङ्ग एकोनकागुया), पेरिम।

आग्नेयगिरि—कोटापेक्सी।

ह्रद—मारोकायिवो, टिटिकाका, सिलवेरो, गुयानकेक।

नदी—ओरिनोको, एसेक्विवो, मागडेलाना, कलरेडो, लाप्लाटा, पारागुया, फ्रान्सिस्को, टोकाण्टिन, आमेज़ान।

योजक—पनामा। इसी योजक द्वारा अमेरिका उत्तर और दक्षिण भागमें विभक्त हुआ। अब यह खोदकर लहर बनाया गया है।

वेष्ट-इण्डिज़ अमेरिकाका एक विभाग है। इसमें कितने ही देश और नगर विद्यमान हैं,—

देशका नाम	वर्गमील परिमाण	राजधानी।
हेटी	११०००	हेटी।
डोमिनिका	१८०००	सानडोमिनिगो।
केउबा	४२३८३	हावाना।
पोर्टोरिका	३८६५	सानजयेन।
जामैका	५४६८	स्पनिश टाउन।
ट्रिनीडाड	२०००	म्पुरटा।
विण्डवर्ड द्वीपपुञ्ज		ब्रिजटाउन।
बर्बडो	१६६	,,
सेण्ट विनसेण्ट	१३१	किङ्गस्टन।
टोरेगो	१८७	स्कारवेरो।
सेण्ट लुसिया	२२५	केष्ट्रिस।
एण्टीगुया	१६८	सेण्टजान्स।
मण्टसेरेट	४९	,,
सेण्ट क्रिष्टोफर / एङ्गुयेला	१०३	बेसेटीर।
नेविस	३०	चार्लस टाउन।

देशका नाम		वर्गमील परिमाण	राजधानी
वेर्जिन द्वीपपुञ्ज		१३७	
डोमिनिका		२८१	रोसू।
बाहामा द्वीपपुञ्ज		५४२२	नसू।
गोयेडेलूप	फ्रान्सीसी	५०४	वेसेटर।
मार्टिनिक		३३२	पोर्टरायेल।
सेण्टमार्टिन उत्तर		२१	
सेण्टमार्टिन दक्षिण	ओलन्दाजी	२१	
कूयरेसोया		५८०	विलमष्टेड।
साण्टाक्रूज	डेनमार्की	८१	क्रिष्टनष्टेड।
सेण्टटोमस		३७	
सेण्टवार्थेलमुय		७२	
सेण्टजान		२५	लासेरेनेज।
तुर्क द्वीपपुञ्ज		४००	
बर्मूडा द्वीपपुञ्ज		४७	हेमिलटन।

वेष्ट-इण्डिज द्वीपकी भूमिका परिमाण—प्राय: ८१८१० वर्गमील पड़ता है।

जाति—अमेरिकाका आदिम निवासी ताम्रवर्ण होता है। यह जाति अमेरिकामें प्राय: सर्वत्र ही देख पड़ेगी। आदिम निवासी कुछ-कुछ बौना रहता है। उसका होंठ और गाल बड़ा-मोटा, बाल काला-लम्बा लगेगा। कोई-कोई अनुमान करता है, कि वह मुगल जातिसे उत्पन्न हुआ था। उसका आदि निवास दक्षिण एशिया रहा, बेरिङ्ग-प्रणाली पारकर अमेरिका जा पहुंचा। अमेरिका जब स्पेनवासीकी दृष्टि आया, तब वह सिर्फ़ शिकार ढूंढते फिरता था। कोलम्बस बहु कष्ट बाद भारतवर्ष समझ अमेरिकामें घुसा और आदिमनिवासीको जा देखा। वह उलङ्ग फिरता, केशराशि पृष्ठदेश पर्यन्त लटकता, दाढ़ीका नाम न मिलता और देह सुचिक्कण रहता है। मुखश्री समान पड़े, देखनेमें मन्द न मालूम देगी। हावभाव नम्र अथच भययुक्त होता है। शरीर लम्बा न लगे, और रूप सुन्दर देख पड़ेगा। उसका बदन कोमल होता है। वह अपने देहका कोई-कोई अंश चित्र-विचित्र बनाये, फिर उसपर जब सूर्यका किरण पड़े, तब सुन्दरताका ठिकाना न लगेगा। वास्तवमें वह प्रकृतिका सुकुमार शिशु ठहरता और नहीं जानता, भला-बुरा किसे कहा जाता है। उसे सदा ही प्रफुल्ल और अपने ही आप सन्तुष्ट पायेंगे। उसके पास लौहास्त्र कुछ भी न रहा और न वह जानता ही था लौहास्त्र कैसे बनता है। वह बेतके सिरेपर मछलीका कांटा लगा तीर और लकड़ीको जलाकर मुखको और धार निकाल तलवार बनाता था। युरोपीय उसे रेड इण्डियन कहते हैं। वह सूर्योपासक होता है। पहले जब कोलम्बस अमेरिकाके कूलपर उतरा, तब आदिम निवासीने कोलम्बस और उसके साथीको सूर्यलोक प्रेरित देवदूत समझ भय और भक्ति देखायी थी। उस समय अमेरिकाके स्थान-स्थानमें वह राज्य भी चलाते रहा। यद्यपि आदिम निवासी उलङ्गप्राय घूमता, तथापि उसके अङ्गपर सोना भी चमका करता था। अब सभ्यजातिके सहवाससे वह भी क्रमसे सभ्य बनते जाता है।

उत्तर-अमेरिकाको प्राचीन जाति इण्डियन, आज-तेक, और एस्क्विमो, इन तीन भागमें बंटी है। कोई प्राचीन इतिहास न मिलते भी आजतेक बहुत पुरानी जाति ठहरती है। किन्तु प्रवाद सुनेंगे,—तेरह सौ वर्ष पहले तोलतेक नामक कोई सुसभ्य जाति उत्तराञ्चलसे आ अनाहुयाकमें बसी थी। (अनाहुयाकको अब मेक्सिको कहते हैं) उसकी निर्मित विचित्र अट्टालिकाका ध्वंसावशेष आज भी स्थान-स्थानमें पड़ा है। महामारी, दुर्भिक्ष प्रभृति नाना कारणसे उस जातिके लोग मेक्सिको छोड़कर चले गये थे। सन् ई०के १२वें शताब्दमें चिचेमेक नामक किसी जातिने अनाहुयाक या मेक्सिको पहुंच अपना राज्य जमाया। उसके १३ वर्ष बाद ही आकलहुयान जातिने आ चिचेमेकको यहांसे भगा दिया था।

फिर उत्तर-पश्चिमाञ्चलसे आजतेक जातिने पदार्पणकर अपना राज्य फैलाया। उस जातिवाले लोग अमेरिकाके सकल अधिवासीसे श्रेष्ठ रहे। शौर्य, वीर्य और सभ्यतावाले गुणसे वह सन् ई०के १४वें शताब्दमें प्रसिद्ध हो गये थे। उस समय धनुर्विद्या, ज्योतिर्विद्या, शिल्प, राजनीति और युद्ध-विग्रहादिमें वही अमेरिका-

के मध्य प्रधान रहे। वह व्यवहारके लिये वस्त्र, अलङ्कार, धातुमय अस्त्रादि और बड़ी-बड़ी अट्टालिका बनाते थे। उनका उपास्य देवता तेलकातल-पोका है। आजतेक कहे, कि वह देवता पृथिवीके आत्माका स्वरूप एवं सृष्टिकर्ता ठहरे और मनोहर दिव्यपुरुष समझ उसका ध्यान लगाना पड़ेगा। आजतेक जातिमें नरवलिकी प्रथा प्रचलित रही। उपरोक्त देवताके उपलक्षमें विपक्षपक्षीय किसी सुलक्षण पुरुषको पकड़ वलि चढ़ायी जाती थी। वलिदानके समय महा-समारोह होते रहा। चार स्थिरयौवना मनोहरा सुन्दरी युवती तेजकातल-पोकेका सेवा किया करती थी। सुविज्ञ लोग नैवेद्य, एवं गन्धद्रव्यादि लाते रहे। पांच आदमी वध्य व्यक्तिका हाथ-पैर पकड़ते, षष्ठ व्यक्ति लाल कपड़े पहन और पत्थरकी छुरी उठा हत्यारेका काम करता था। छुरीसे हृत्पद्म छिदनेपर प्राणवायु निकलता या न निकलता, किन्तु वह हृत्-पद्म सूर्यदेवकी देखा देवताके सम्मुख रख दिया जाते रहा। उसके बाद जो आदमी युद्धसे निहत व्यक्तिको पकड़ लाता, वह महामांससे व्यञ्जनादि बनवा स्त्रीपुत्रपरिजनके साथ महासमारोहसे खाता था। कहते हैं, कि सन् १५४२ ई०में 'ह्योटजिलो पोटेक्ली' देवतावाले मन्दिरकी प्रतिष्ठाके समय ७२३४४ व्यक्ति पूर्वोक्तरूपसे एकबारगी ही वलि चढ़ाये गये थे। तेजकातलपोकेके अधीन दूसरी भी कितनी ही देव-देवी रहती, जिसकी पूजा आजतेक जाति करती है। सन् १६५३ ई०को लन्दन शहरमें आजतेक-वंशीय कोई १७ वर्षका बालक और ११ वर्षकी एक बालिका जा पहुंची थी। बालक और बालिका देखनेमें दोनो खर्व रहे। उनके ले जानेवाले व्यक्तिने बताया था,—'यक्सिमागा नामक प्राचीन नगरके लोग इस बालक और बालिकाको, देवताकी तरह पूजते रहे।' कोई-कोई कहता, कि आजतेक अस्वाभाविक जाति है।

एस्क्विमा या एस्क्विमो जाति उत्तर-अमेरिकामें प्रायः सर्वत्र ही मिलेगी। अनेक कहते, इस जातिके लोग मुगल जातिसे उत्पन्न हुये हैं। फिर दूसरे बतायें, कि अमेरिकाके रेडइण्डियनसे एस्क्विमोका सादृश्य रहते वह भी उसी जातिके लोग होंगे। लेथम साहबके मतानुसार यही एकमात्र जाति उभय महा-द्वीपमें देख पड़ती है। एस्क्विमो शब्दका अर्थ आमिषाशी निकलेगा। मालूम देता, कि लोगोंने कच्चा मांस खानेसे ही वह नाम पाया है। अपनेको यह इन्वित अर्थात् लोक कहेंगे। सन् ई०के दशम शताब्दवाले स्कन्दनाभ उन्हें क्रोलिङ्गर अर्थात् धूर्त कहकर पुकारते थे। इस जातिवाले युवकके छोटी-छोटी दाढ़ी होती है, मूछ नहीं देख पड़ती। पुराने लोग घनी दाढ़ी और कटी मूछ रखते थे। किन्तु इण्डियनकी दशा ऐसी नहीं रहती। वह दाढ़ी-मूछ कुछ भी न रखे, निकलते ही जड़से उखाड़ डालेगा। इसीसे वह ज़नाना-जैसा जान पड़ता है। एस्क्विमो जातिका आदमी पांच साढ़े पांच फीट पर्यन्त बढ़ेगा। पुरुष शिकार मारते घूमता और स्त्री घरका काम चलाती है। मांस खानेके सम्बन्धमें वह प्रायः कुछ सोच-विचार न करेगा। अनेकस्थलमें उसे बे-पकाये ही पेटमें डाल लेता है। जिस जन्तुको खाये, पहले उसका निर्गत रक्त वह चूस लेगा। रक्त प्रायः टटका ही पिया जाता है। वह अतिशय अपरि-ष्कार और उग्र रहेगा। मृग, पशु, पक्षी और मत्स्यके चर्मसे आच्छादन बनता, जो स्त्रीपुरुषके देहका कपड़ा होता है। उसमें अनेक कुसंस्कार मिलेगा। उपास्य देवता दो रहते हैं। सन् १७२१ ई०में हानेगेड नामक किसी व्यक्तिने ग्रीनलेण्ड जा इस जातिके कितने ही लोगोंको ईसायी बना डाला था। एस्क्विमो निहत पशुका सद्य रक्त तेल और चर्बीसे मिला एक प्रकार अङ्गार बनाता, जो स्वास्थ्यके लिये विशेष उपकारी ठहरता है।

अब उत्तर-अमेरिकामें नाना सभ्य जाति आ बसी है। यूनायिटेड ष्टेटसके सभ्य अंगरेजगणने पृथिवी पर नाना विषयमें उच्च आसन पाया। पहले वह इङ्गलेण्ड राज्यके अधिकारमें रहे, मध्यमें इङ्गलेण्डवासी अंगरेजसे लड़ स्वाधीन बन गये हैं। उनके देशमें राजा न हो, राज्यके मध्य किसी विज्ञ व्यक्तिको सकल

द्वारा निर्वाचनकर राज्यका प्रधान पद दिया जायेगा। उस प्रधान व्यक्तिको अधिवासीके मतानुसार काम करना पड़ता है।*

दक्षिण-अमेरिकाका अति प्राचीन कालसे भारतवर्षके साथ संस्रव रहा। यहां आदिम अधिवासीके मध्य राम-सीताका उत्सव प्रचलित है। (Asiatic Researcheus, Vol. XI.) इस स्थानको कितने ही लोग पुराणोक्त पाताल लोक समझते हैं। दक्षिण अमेरिकाका पेरु देश बहुकाल पूर्व भी समृद्धिशाली रहा। पाश्चात्य पण्डित उसी समयको इङ्क-पूर्वकाल कहा करते हैं। इङ्कपूर्व जाति सभ्यता, भाषा, और धर्माचरणमें, दक्षिण-अमेरिकाकी दूसरी जातिसे श्रेष्ठ थी। उसकी शिल्प, और भास्करविद्याका परिचय, प्राचीन मन्दिरादिके ध्वंसावशेषसे पायेंगे। सकल भग्न मन्दिर पेरुदेशके स्थान-स्थानमें आज भी पड़ा है। टिटिकाका ह्रदके तीर ढिया-हुनाकुका ध्वंसावशेष देखेंगे। उसका हरेक दरवाज़ा पत्थरसे बना, दश फीट ऊंचा और तेरह फीट चौड़ा है। किसी प्रस्तर-स्तम्भकी उंचाई, कोई बाईस फीट निकलेगी। मन्दिरको चारो ओर खोदी हुयी देवमूर्ति तीस फीट लम्बी लगती है। ढियाहुनाकुका इतिहास नहीं मिलता। यह बात आज भी ठीक न हुयी, किस समय ढियाहुनाकु नाम रखा गया था। कोई-कोई अनुमान बांधते हैं, कि इङ्कने वह नाम रखा होगा। यह स्थान सागरसे १२८३० फ़ीट ऊंचा पड़ता है। यहां वायु प्रबल न लगेगा। मालूम होता है, कि इङ्क-पूर्वने इस जगह राजधानी बनायी थी। लिमा शहरसे साढ़े बारह क्रोस दूर पचाकमाक नामक कोई प्राचीन स्थान है। वहां बड़े-बड़े मन्दिरका ध्वंसावशेष देखनेसे समझ पड़ेगा, कि इङ्क-पूर्व जाति आस्तिक रही। 'पचा'का पृथिवी और 'कमाक'का अर्थ बनानेवाला है। मतलब यह, कि पृथिवी-निर्माणकारी परमेश्वर उसके उपास्य देवता थे, जिनके नामपर उपरोक्त स्थान प्रतिष्ठित हुआ। पचाकमाकके मन्दिरमें कोई मूर्ति न रहते अनेक लोगोंका अनुमान है, कि वह निराकार और अव्यक्त परमेश्वरको मानती थी।

इङ्ककी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कुछ निश्चय नहीं ठहरता। इण्डियनका कहना है, कि मङ्को नामक प्रथम इङ्क टीटीकाका ह्रदके तीर आये, उनके साथ उनकी स्त्री और मामा ओक्लो भी रहे। मङ्कोके परिचयसे वह इङ्क अर्थात् सूर्यके आदेशपर असभ्यजातिको परित्राण देने पहुंचे थे। उनके हाथमें कोई पतली सोनेकी छड़ी रही। उस छड़ीके छूते ही ज़मीन् फट और वह अन्तर्हित हो जाते थे। मङ्कोने उस समय असभ्योंको खेती करना सिखाया एवं विशुद्ध धर्म और समाजनीतिका प्रचार किया। मामा ओक्लोने लड़कियोंको सिलाई और बुनाईका काम बताया था। उसी समय कुजका नगर भी बसा रहा। मङ्को पहले * इङ्क हुये; वह केवल शासनकर्ता ही नहीं, सबके पितास्वरूप प्रधान पुरोहित भी रहे। सब लोग उनके सुनियमसे बद्ध रहे और असभ्य सभ्य बन गये थे। अन्तको मङ्को सूर्यके निकट जा पहुंचे। यह घटना सन् १०६२ ई०की है। मङ्कोने चालीस वत्सर राजत्व किया था।

उसी समयसे पेरुवासी क्रम-क्रम उन्नतिलाभ करने लगे, उन्नतिके साथ ही निकटस्थ लोगोंके राज्यपर भी उन्होंने हाथ मारा।

तुपक इङ्क युपनकी (११श इङ्क)ने अपना राज्य बहुत दूरतक फैलाया और सन् १४५४ ई०में चिलि राज्यको अतिक्रम कर मौल नदी पर्यन्त पेरु राज्यकी सीमा पहुंचायी थी। उनके पुत्र हुयना कपकने आमिज़ान नदी पार हो क्विटो राज्यपर अपना अधिकार जमाया। उन्हें सन् १४७३ ई०में राज्यपद मिला था।

* युनायिटेड ष्टेट्सके जाति प्रभृति विवरणको Historical and Statistical Information respecting the History, Condition and Prospects of the Indian Tribes of the United States, by H. R. Schoolcraff L. L. D. Philadelphia 1, 2, 3rd pt. देखो।

* इङ्क पेरुवीय शब्द है, इसका प्रकृत अर्थ सूर्य लगेगा। प्राचीन समय

अमेरिकाका आविष्कार—सन् ई०के १०वें शताब्द स्कान्द-नाभगणने मेसाचुसेट्स पर्यन्त आविष्कार किया था। कोई कोई कहता है,—सन् ११७० ई०में वेलस युवराज माडक पश्चिम दिक् घूमने निकले और सात दिन बाद उनका जहाज वर्जिनियाके उपकूलमें जा पहुंचा।

सन् ४८२ ई०को ३री अगस्त शुक्रवारको कोलम्बसने भारतवर्ष आनेके लिये यात्रा की। वह नाना स्थान अतिक्रम कर और नाना विपद् उठा अन्तको अमेरिकाके उपकूलमें आ पहुंचे थे। सन् १४८२ ई०को ११वीं अक्तोबरको उन्होंने पहले-पहल अमेरिकामें पैर रखा। उनका प्रथम आविष्कार बाहामा द्वीपपुञ्ज रहा, वह स्वर्णलोभसे अमेरिकाके अनेक स्थान घूमें और उनको आविष्कार भी किया। वह स्पेन देशसे चार बार अमेरिका आये थे। चार बारमें उन्होंने हिस्पानियोयाला, किउबा, जामेका, हण्डुरासके दक्षिणसे वेनेजुयाके उपकूल पर्यन्त मध्य-अमेरिका और ओरिनोकोसे मारगरिटो तक दक्षिण-अमेरिकाको आविष्कार किया। दक्षिण-अमेरिका आते समय उनके साथ अमेरिगो-वेसपुचि विद्यमान रहे। वेसपुचिके पोतचालन (नावचलाना) विषयसे सन्तुष्ट हो कोलम्बसने उनके नामानुसार इस नूतन महाद्वीपको अमेरिका कहकर पुकारा था।

कोलम्बसके अमेरिका-आविष्कारसे पन्द्रह वत्सर बाद पोन्स डी ल्यून नामक किसी व्यक्तिने फ्लोरिडाको आ खोजा। सन् ई०के १५वें शताब्दमें इङ्गलेण्ड-राज सप्तम हेनरीने वेनिस-निवासी गियोवनो कैवट और उसके पुत्रको अटलाण्टिक-आविष्कारके लिये नियुक्त किया था। सन् १४८७ ई०में उन्होंने निउफाउण्डलेण्डको ढूंढ निकाला। फिर सन् १५१८ ई०में मागेलन पृथिवी घूमते-घूमते अमेरिकाकी किसी प्रणालीमें आ पहुंचे थे। उनके प्रथम वहां पहुंचनेसे ही उसका नाम मागेलन-प्रणाली पड़ा है। सन् १६१० ई०में स्कुटेन नामक किसी हालेण्डवासीने केप हर्नको आविष्कार किया। उसके छः वर्ष बाद लेमेयार ष्टेटेन और टेराडेल फिउगोके मध्यसे आते समय किसी हृदपर पहुंच गये थे, उन्हीके नामानुसार वह हृद भी लेमेयार कहा गया। फिर थोड़े दिन पीछे मागेलेनके कुछ साथी युरोप वापस गये थे। उनमें वेराजनो भी रहे। फ्रान्स-राज प्रथम फ्रान्सिसने उन्हे यूनाइटेड ष्टेटके सीमान्तपर अटलाण्टिक उपकूलका पथ आविष्कार करने भेजा। दश वत्सर बाद उक्त राजाके आदेशसे फिर जेक्स कर्टेर जलभ्रमणको निकल पड़े थे। उन्होंने सेण्ट-लरेन्स नामक उपसागर और हृदको आविष्कार किया। सन् १५७८ ई०में ड्रेक साहबने कालिफोर्नियाका उत्तर भाग ढूंढा था। सन् १६८२ ई०में फ्रान्सीसी सर्वप्रथम मिसिसिपिमें आ उतरे। सन् १७१८ और १७३८ ई०के मध्य अलक्सन्दर मेकेंजी वर्तमान ब्रटिश कलम्बियाके मध्यसे मेकेंजी नदीपर पहुंचे और वहांसे प्रशान्त महासागरके उपकूल पर्यन्त समग्र स्थानको आविष्कार किया था। सिवा उसके डेविस, वेफिन, लाङ्केष्टार, हडसन् प्रभृति, अंगरेजोंने भी अनेक स्थान ढूंढ निकाले। अभी सकल स्थान आविष्कार नहीं हुये अनुसन्धान लगा रहे हैं।

उपनिवेश—युरोपीयोंके मध्य स्पेनवासियोंने सर्वप्रथम अमेरिकामें उपनिवेश किया। उपनिवेश स्थापन करनेमें उन्हें आदिम अधिवासियोंसे अनेक बार लड़ना पड़ा था। उसमें मेक्सिको और पेरूका ही युद्ध प्रधान रहा। सन् १५८४ ई०को मेक्सिको स्पेनके अधिकारमें चला गया था। सन् १७६८ ई०में स्पेनके अधीन फ्रान्सिस्कानोंने अपर कालिफोर्नियाको अधिकार किया। सन् १८१८ ई०को ४२° अक्षान्तर पर्यन्त उत्तर-अमेरिकामें स्पेनका शासन फैल चुका था। पोर्तुगालवासी उपनिवेश स्थापनमें उतने यत्नवान् न रहे, उनका लक्ष्य एशिया-खण्डपर ही लग गया। सन् १५०० ई०में ब्रेजिल आविष्कार हुआ था। उसके तीस वर्ष बाद पोर्तुगीजोंने वहां उपनिवेश जमाया। सन् १६५० ई०में पोर्तुगालके साथ ब्रेजिल भी स्पेनके अधिकारमें पड़ गया था। कुछ दिन पीछे फ्रान्सराजके आक्रोशमें ब्रागेन्जावासी सामन्त आये और ब्रेजिल पहुंचकर आश्रय लिया। पचास वर्ष

बाद ब्रेजिल दक्षिण-अमेरिकाके मध्य प्रबल और स्वाधीन राज्य बन गया था।

फ्रान्सीसियोंने सेण्टलरेन्स और मिसिसिपिका उपकूल अधिकार किया; उन्हें उपनिवेशके संस्थापनकी अधिक इच्छा न रही, अंगरेजोंसे लड़ना ही उनका उद्देश्य था। फ्रान्सीसी अधिकारके मध्य शासनकर्ता ही सर्वेसर्वा होता और राजनीतिका चक्र नाना भावसे चलता है। किसीको उसपर हस्तक्षेप करनेका अधिकार न रहेगा। सन् १७६२ ई०में फ्रान्सने इङ्गलेण्डको कानाडा दे दिया था।

अंगरेज उपनिवेश—स्थापन करनेमें सकल जातिकी अपेक्षा तत्पर होते हैं। किन्तु वही सबसे पीछे अमेरिका पहुंचे थे। सन् १६०७ ई०को निउफाउण्डलेण्ड और वरजिनियामें सर्वप्रथम अंगरेजी उपनिवेश स्थापित हुआ।

सन् १६२० ई०में पूरिटानोंने मेसाचुसेटसको अधिकार किया था। सन् १६३४से १६३६ ई०के मध्य निउ हामसायर और कनेकटिकटमें अंगरेज आकर टिकते रहे। सन् १६६४ ई०में उन्होंने निउयार्क, निउजर्सी और डेलावर-बेको हालेण्डवालोंसे ले लिया। सन् १६७० ई०को साउथ-केरोलिनामें अंगरेजी राज्य स्थापित हुआ था। सन् १७३३ ई०को जर्जिया भी अंगरेजोंके अधिकारमें आया।

अमेरिकाके अंगरेज स्वाधीनता-प्रयासी होते हैं। वह किसीके अधिकारमें रहना नहीं चाहते। आजकल युनाइटेड-स्टेटस्के अंगरेज सर्वप्रकार स्वाधीन हैं। वहां दूसरेका शासन नहीं चलता।

उद्भिद और जन्तु—अमेरिकाका उद्भिद और मत्स्यादि पुरातन महाद्वीपसे भिन्न निकलेगा। वहां नाना जातीय वृक्ष उपजता, जिसमें देवदारु, ओक, विलो प्रभृति ही अधिक रहता है। चूड़ाग्र जातीय वृक्ष हिमालय पर्वतपर भी देख पड़ेगा। चावल, यव, राई, गेहूं प्रभृति शस्य उत्पन्न होता है। यहां ज्वार ज्यादा मिलेगी। स्थान-स्थानमें सन और तीसी बोयी जाती है। ३८° अक्षान्तरके मध्य तम्बाकू बहुत लगायेंगे। ३७° अक्षान्तरमें रुयी उपजती है। नील भी बोया जाये, किन्तु बङ्गदेशकी तरह अधिक न होगा। यहां केले बहुत बढ़ते और लोगोंको खानेमें भी अच्छे लगते हैं। आलू ढेरका ढेर निकलेगा। मानिवोक नामक कोई लता होती है। उसकी रेशेदार जड़ सुखाकर बुकनी बना लेनेसे आटे जैसी आयेगी। अमेरिकन या मार्किन उसी आटेकी रोटी पकाकर खाता है। चिलि देशमें आरारोट उपजेगा। स्थान-स्थानमें नारियल, गन्ना, बादाम और गुलतुरह मिलता है। आजकल युरोपीय सभ्य जातिके उत्साहसे अमेरिकामें नाना जातीय फल-फूलका पेड़ लगाया जाता है।

जन्तु नाना प्रकारका होता है। उसमें हरिण, महिष (बाइसन), मेष, शशक, विड़ाल, छछूंदर चूहा, चमगीदड़, शजारु, भालू और लोमड़ी प्रायः देखनेमें आयेगी। अमेरिकाका मांसाशी जन्तु बहुत भयानक लगता है। लगड़भग्गा और जागुयार नामक व्याघ्र ही अधिक पायेंगे। हाथी, गैंडा, और घोड़ा पुरातन महाद्वीपकी तरह रहता है। चिलि और पेरु देशमें लामा एवं अलपका मिलेगा। उत्तर अमेरिकामें अपोजम होता है। उष्ण-प्रधान देशमें वानर बसेगा, किन्तु वह कितना ही एशियाके बन्दर-जैसा होता है।

यहां बड़े-बड़े बाजूवाला गृध्र, चील, उल्लू, जङ्गली कौवा, कौवा, पपीहा, मक्खीखोरा, चिड़ा, नाना जातीय कबूतर प्रभृति खेचर पक्षी उड़ेगा। हंस, राजहंस, सारस प्रभृति जलचर पक्षी भी तैरते फिरता है। अमेरिकाके टुकन पक्षीकी कौन प्रशंसा न करेगा!

अमेरिकाके सर्पमें विष अधिक होता है। वह नाना जातीय रहेगा। कच्छप भी अनेक प्रकारका होता है। नदीमें छोटी-बड़ी नाना प्रकारकी मछली तैरती है। निउफाउण्डलेण्डके किनारे बड़ी-बड़ी मछली पकड़ेंगे।

मधुमक्षिका बड़ा-बड़ा छत्ता लगाती, जिससे प्रचुर मधु निकलता है। यहां नाना जातीय पिपीलिका होगी। किन्तु उसमें दीमक ही अधिक देख पड़ती है।

अमेलो (हिं० स्त्री०) अमिलन, मिश्रणका अभाव, आमेज़िशका न होना, सफ़ाई।

अमेव (हिं०) अमेय देखो।

अमेष्ट (वै० त्रि०) गृहमें बलिदान किया हुआ, जो घरमें कुरबान् किया गया हो।

अमोक्य (वै० त्रि०) बांधनेके अयोग्य, जो बांधा न जा सकता हो।

अमोक्ष (सं० त्रि०) १ अमुक्त, आबद्ध, निजात न पाये हुआ, जो खुला न हो। (पु०) २ स्वतन्त्रताका अभाव, बन्धन, आज़ादीको अदम-मौजूदगी, क़ैद। ३ मुक्तिका अभाव, निजातको अदम-मौजूदगी झूठी ज़िन्दगीसे छुटकारेका न मिलना।

अमोघ (सं० त्रि०) न मोघं निष्फलम्, नञ्-तत्। १ सफल, उत्पादक, मेवादार, ज़रखेज़, सेरहासिल, जो पैदा करनेवाला हो। २ अव्यर्थ, न निकम्मेवाला, जो निशानेपर लग जाता हो। (पु०) ३ नदविशेष, कोई ख़ास दरया। ४ विष्णु। ५ शिव। ६ व्यर्थ न जानेका भाव, जिस हालतमें फ़र्क़ न पड़े।

अमोघदण्ड (सं० पु०) दण्ड देनेमें न भूलनेवाले शिव।

अमोघदर्शिन् (सं० पु०) बोधिसत्व-विशेष।

अमोघदृष्टि (सं० त्रि०) अव्यर्थमत, जिसके सुझायिनेमें फ़र्क़ न पड़े।

अमोघदेव—कोई प्राचीन संस्कृत कवि। इनका नाम शुक्तिमुक्तावलीमें आया है।

अमोघबल (सं० त्रि०) अव्यर्थशक्तिशाली, जिसका ज़ोर कभी कम् न पड़े।

अमोघराज (सं० पु०) भिक्षु-विशेष।

अमोघवर्ष—राष्ट्रकूटवंशीय प्रसिद्ध नृपति। राष्ट्रकूट शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

अमोघवाक् (सं० स्त्री०) अव्यर्थ शब्द, खाली न जानेवाला लफ़्ज़, जो बात कभी बिगड़ती न हो।

अमोघवाञ्छित (सं० त्रि०) अनवरत आशान्वित, कभी दिलगीर न होनेवाला।

अमोघविक्रम (सं० त्रि०) १ अव्यर्थवीर्य, जिसकी बहादुरीमें कभी फ़र्क़ न आये। (पु०) २ शिव।

अमोघसिद्ध (सं० पु०) पञ्चम ध्यानी बुद्ध।

अमोघा (सं० स्त्री०) १ पाटल। २ हरीतकी, हर। ३ विड़ङ्ग।

अमोचन (सं० क्ली०) १ मुक्तिका अभाव, निजातको अदम-मौजूदगी। २ बन्धन, क़ैद, छूटने न पाना।

अमोचनीय (सं० त्रि०) स्वतन्त्र करनेके अयोग्य, छुटकारा न पाने क़ाबिल।

अमोचित (सं० त्रि०) आबद्ध, बंधा हुआ, जिसको छुटकारा न मिला हो।

अमोत (सं० क्ली०) अमा सह उतम्, अमा-व्वे-क्त। १ अच्छिन्न सदश वस्त्रयुग्म, जिस कपड़ेके जोड़ेका किनारा फटा न रहे। (त्रि०) २ गृहसे उत, जो मकानमें बुना गया हो।

अमोतक (सं० पु०) १ गृहपालित शिशु, मकानमें परवरिश पाया हुआ बच्चा। २ पटकारक, जुलाहा, जो कपड़ा बुनता हो।

अमोतपुत्रका (वै० स्त्री०) गृहपालिता बालिका, जो लड़की मकानमें पली हो।

अमोद (हिं०) आमोद देखो।

अमोद—बम्बईके भड़ोंच ज़िलेका एक प्रधान नगर। यह धाधर नदीसे आध कोस दक्षिण, भड़ोंचसे साढ़े दश कोस उत्तर, बड़ोदेसे पन्द्रह कोस दक्षिण पूर्व और अक्षा० २१° ५९′ ३०″ उ० एवं द्राघि० ७२° ५६′ १५″ पू० पर अवस्थित है। यहां लोहेका चाकू, छुरा अच्छा बनता और कुछ-कुछ रूयीका रोज़गार चलता है।

अमोनिया (अं० पु०) १ नौसादर। २ मूर्च्छा छोड़ानेका औषध, जिस दवासे होश आ जाये। (Ammonium chloride) इसे बंगलामें निशादल, गुजरातीमें नवसार, मारवाड़ीमें नवसागर, कनरीमें नवासगर, तामिलमें नवचरम, तेलगुमें नवासागरम्, मलयमें नवसारम्, अरबीमें मिलहुबार, फ़ारसीमें नौसादर, भूटानीमें जियतसा, सिंघालीमें नवाचारम् और ब्रह्मीमें ज़रस कहते हैं।

नौसादर पञ्जाबमें बहुत बनता, फिर जमे हुये अर्क़की शक्लसे धातु गलाने और रंगनेके काम आता है। कहते हैं, कि पञ्जाबवाले करनाल ज़िलेके गुमतलाह गांवमें कुम्हार बहुत पुराने समयसे ढेरका

ढेर नौसादर तैयार करते रहे हैं। इसे मिस्र और भारतमें निम्नलिखित रीतिसे बनायेंगे,—

तालाबकी गन्दी मट्टीसे पन्द्रह या बीस हज़ार ईंट तैयार करते और उसे पजावेकी बाहरी ओर रख आग लगा देते हैं। जब ईंट आधी जले, तब उससे पेड़के बकले-जैसी कोई भूरी चीज़ निकलेगी। यह चीज़ दो किस्मकी होती है—ख़राब और अच्छी। ख़राब चीज़ नौसादरकी खाम मट्टी कहाये, पजावे पीछे बीस-तीस मन निकले और आठ आने मन बिकेगी। अच्छी चीज़को पपरी कहते, पजावे पीछे एक या दो मनसे ज़्यादा नहीं पाते और दो-सवा दो रुपये मन बेचते हैं।

खाम मट्टीको चलनीसे साफ़कर पानीमें घोलें और क़लम बना लेंगे। इसका सारा मैल निकालनेको उपरोक्त क्रिया चार बार की जाती है। फिर जो ख़ालिस चीज़ रहे, वह नौ घण्टेतक आगपर रख उबाली जायेगी। पनीला हिस्सा उड़नेपर कच्ची शकर-जैसा नमक तैयार होता है। उसके बाद पपरीको उठा कूटें और पहले नुसख़ेमें मिला देंगे। अन्तमें सबको काले शीशेकी बोतलमें भर मुंह बन्द करते हैं। फिर बोतलपर चिकनी मट्टीके सात तह चढ़ायें और उसे नौसादरके मैलमें रख छोड़ेंगे। पीछे बोतलका मुंह दूसरे शीशेके ढक्कनसे ढांका और उसमें हवा न पहुंचनेको चिकनी मट्टीका चौदह तह चढ़ाया जाता है। ऐसा होनेपर इसे किसी बरतनमें भर तीन रात और तीन दिनसे जलती रहनेवाली भट्टीपर चढ़ा देते हैं। बारह घण्टे पीछे ढक्कनको निकाल डालेंगे। इससे उड़े हुये नौसादरकी जगह ताज़ा नौसादर आ जमता है। तीन दिन, तीन रातके बाद भट्टीसे बरतन उतारें, ठण्डा पड़नेसे मुंहको तोड़ें और बाक़ी बरतनको फूंक देंगे। ख़ाली नलीमें बरतनसे नमकका जौहर उड़नेपर कोई चीज़ निकलती, वह फाली कहलाती है। फाली दो तरहकी होगी, बढ़िया और घटिया। बढ़िया फाली सिर्फ़ दो दिन और दो रात ही आगपर नौसादर चढ़ा रहनेसे बन जाती है। इस हालतपर नली कुछ-कुछ जौहरसे भरे और निकासी पांच-छः सेर रहेगी। यह जौहर सोलह रुपये मन बिकता है। घटिया फाली तीन दिन और तीन रात नौसादर आगपर चढ़ा रहनेसे निकलेगी। इस हालतमें बरतनकी नली पूरे तौरपर फालीसे भर जाती, दश-बारह सेर निकासी पड़ती और तेरह रुपये मन बिक्री होती है।

जो चीज़—नलीमें नहीं—बरतनके मुंहमें उड़के लगे, वह फूल कहायेगी। यह सुर्मा बनानेके काम आता और चालीस रुपये मन बिकता है।

करनालमें हर साल २३०० मन नौसादर बने, जो ३४५००) रुपयेका पड़ेगा। व्यवसायी इसे कारख़ानेमें ही आठ रुपये मन औसतके हिसाबसे ख़रीद लेते और दूसरे शहर भेज पन्द्रह रुपये मन बेचते हैं। पञ्जाबके दूसरे ज़िलेमें भी पजावेसे नौसादर निकले, किन्तु बहुतायतसे हाथ न लगेगा।

औषधकी भांति नौसादर यकृत् और प्लीहाके शोथपर दिया जाता है। भारतीय वैद्य किसी रोगमें इसे खानेको न कहेंगे। रक्तात्म यकृत्, फेफड़ेकी सूजन और गिलटी निकल आनेपर नौसादर ऊपरसे लगता है। पन्द्रह या बीस रत्ती मात्रामें खिलानेसे यह आधाशीशीकी पीड़ा मिटा देगा। हलकी शिरःपीड़ा पर तीस रत्ती मात्रामें यह लाभदायक होता है। श्लेष्मा और कासको भी नौसादर फ़ायदा पहुंचायेगा।

अमोरी (हिं० स्त्री०) १ आम्रका अपक्व फल, आमकी कच्ची केरी, अंबिया। २ अमड़ा।

अमोल (हिं०) अमूल्य देखो।

अमोलक (हिं) अमूल्य देखो।

अमोला (हिं० पु०) आम्रका सद्यजात वृक्ष, जो आमका पौधा हालमें ही ज़मीनसे निकल रहा हो। हिन्दुस्थानी लड़का इसे पपोहरा कहता और उखाड़कर इसकी गुठलीका बकला छील डालता है। फिर वह छिली हुयी गुठलीके सिरको पत्थर या किसी लकड़ीपर रगड़ेगा। जब सिरेकी एक तह घिस जाती और दूसरी देखायी देने लगती, तब लड़का गुठलीको मुंहमें डाल सीटीकी तरह फूंकने और

बजाने लगता है। किन्तु गुठलीका मुंह बिगड़ जानेसे आवाज़ न निकलेगी। इसीलिये लड़का गुठली रगड़ते समय विघ्न-बाधा दूर रखनेको नीचे लिखा लटका पढ़ते जाता है,—

"मोर पधीहरा आंबिका—तांबिका।
करिया बंबूरेका कैसे बाजे पीं' धर्पी॥"

अमोसी—युक्तप्रदेशके लखनऊ ज़िलेका एक नगर। यह लखनऊसे कोई चार कोस दूर पड़ेगा। यहां चौहान राजपूतोंका अड्डा बना है। सन् ई०के १५वें शताब्द मध्य उन्होंने भारोंसे इसको छीन लिया था। अमोसीको चारो ओर ऊसर मिलेगा।

अमोही (हिं० वि०) अमोह, विरक्त, जो किसीसे मुहब्बत न रखता हो। २ कठोरहृदय, सख़्तदिल, जिसे रहम न आये।

अमौआ (हिं० पु०) १ आम्रके रसतुल्य वर्ण, जो रङ्ग आमके अर्क़-जैसा हो। यह तरह-तरहका रहता है। २ आम्ररसतुल्य वर्णविशिष्ट वस्त्र, जिस कपड़ेका रङ्ग आमके रस-जैसा रहे। (वि०) ३ आम्र रसतुल्यवर्णविशिष्ट, जो आमके रस-जैसा रङ्ग रखता हो।

अमौतधौत (सं० त्रि०) रजक द्वारा अप्रक्षालित, जिसको धोबीने न धोया हो।

अमौन (सं० क्ली०) १ निःशब्दताका अभाव, ख़मोशीको अदम-मौजूदगी, बोलचाल। २ आत्मज्ञान, रूहका इल्म।

अमौलिक (सं० त्रि०) १ मूलशून्य, बेबुनियाद, जिसकी कोई जड़ न रहे। २ मिथ्या, झूठ। ३ अयथार्थ, ग़ैरवाजिब।

अमौवा, अमौआ देखो।

अम्दपुर—बरारके बुलडाना ज़िलेका कोई गांव। यह बुलडानेसे दक्षिण-पूर्व दश कोस लगता है। गांवसे दक्षिण कोई पाव कोस एक छोटा पहाड़ है, जिसके दक्षिण और दक्षिण-पूर्व किनारे गहरी-ख़ूबसूरत झाड़ी पड़ी है। पहाड़की चोटीपर एक नया भवानीका मन्दिर देखेंगे। मन्दिरमें ऊपरसे इसतरह प्रकाश पहुंचाते हैं, कि वह पूर्ण रीतिसे मूर्तिपर ही पड़ता और मण्डपमें अन्धकार बना रहता है। मन्दिरके निकट किसी बहुत बड़ी मूर्तिका ध्वंसावशेष मिलेगा। नाखूनसे एड़ीतक जो हिस्सा टूटा, वह साढ़ेछः फ़ीट नया है। यह मूर्ति पूर्ण परिमाणमें पचास-साठ फ़ीट रही होगी। इसका अङ्ग-प्रत्यङ्ग अलग अलग गढ़ा गया है।

अम्नस् (वै० अव्य०) १ अज्ञात दशामें, शीघ्र, बेसमझे-बूझे, झटपट। २ वर्तमान समय, अभी। ३ लघुरूपसे, कुछ-कुछ।

अम्नेर—बरारके अमरावती ज़िलेका एक शहर। यह मोरसी तहसीलसे लगता, जाम तथा वर्धा नदीके सङ्गम पर बसता और निवासियोंमें विशेषतः मुसलमान रखता है। यहां जागीरदार और निज़ामसे किसी समय घोर युद्ध हुआ था। सात हज़ार सिपाहियोंकी क़ब्रें आज भी देखनेमें आयेंगी। नदी किनारे एक पुराना महादेवका मन्दिर बना और उसके नीचे अद्भुत कुण्ड भरा है। २ बरारवाले एलिचपुर ज़िलेके मेलघाटका क़िला। यह अक्षा० २१° ३१′ ४५″ उ०, द्राघि० ७६° ४८′ ३०″ पू० पर अवस्थित है। गार्गा और तापती नदीने मिलकर जो त्रिकोण बनाया, उसको शिखापर इसे लोगोंने खड़ा किया था। सिवा उत्तर-पश्चिम ओरके किसी राह शत्रु इसपर आक्रमण कर नहीं सकता। फिर तापतीके बायें किनारेकी भूमि ढाल और ऊंची भी पड़ेगी। क़िला एक एकड़ भूमिपर विस्तृत, आकृतिमें चतुष्कोण, ईंटसे उठा और अपने इधर उधर चार बुर्ज रखता है। इसके पश्चिम कोणको मीनारदार मसजिद देखनेमें सुन्दर और उत्कृष्ट मालूम होगी। सन् १८५८ ई०में इसका सामान उतारा और तोप हटायी गयी थी।

अम्ब (सं० पु०) अम्ब-घञ् अच् वा। १ सम्बोधन, पुकार। २ गमन, रवानगी। ३ पिता, बाप। ४ शब्द, वेद, शब्द सुनानेवाला, आवाज़, जो आवाज़ लगाता हो। (क्ली०) ५ नेत्र, आंख। ६ जल, पानी। (अव्य०) ७ सुष्ठु, साधु, सम्यक्, ख़ूब, क्या ख़ूब, भला।

अम्बक (सं० क्ली०) अम्बति दूरस्थमपि वस्तु प्राप्नोति, अम्ब-ण्वुल्। १ नेत्र, चश्म। 'वियम्बकं संयमिनं ददर्श।' (कुमार ३।४४) अम्बति शीघ्रात् धावति, घञ् स्वार्थे

क। २ पिता, बाप। ३ ताम्र, तांबा। (पु०) ४ वकुलवृक्ष, मौलसिरी।

अम्बया (वै० स्त्री०) १ माता, मा। २ उत्तमा स्त्री, अच्छी औरत, ३ जल ले जानेवाली, जो पानी ले जाती हो।

अम्बर (सं० क्ली०) अम्बन्ते शब्दायन्तेऽस्मिन् मेघाः, अविङ्-अरच् प्रत्ययान्तो निपात्यते। १ आकाश, आस्मान्। २ अन्तिक, पड़ोस। ३ वस्त्र, कपड़ा। ४ अभ्र धातु, अबरक। ५ कार्पास, कपास। ६ ओष्ठ, होंठ। ७ पाप, इज़ाब। ८ गन्धद्रव्यविशेष, इसी नामकी कोई खुशबूदार चीज़। ८ कुङ्कुम, केशर। १० परिधि, दौर-मुहीत-दायरा, घेरा। ११ नगर विशेष, एक शहर। अम्बर या आमेर जयपुरकी प्राचीन राजधानी रहा। यह वर्तमान जयपुर नगरसे प्रायः तीन कोस उत्तर अरवली पर्वतके मध्यमें अक्षा० २६° ५८´ ४५´´ उ०और द्राघि० ७५° ५२´ ५०´´ पू० पर अवस्थित है। महाराज मानसिंहने इस नगरको सुरम्य प्रस्तरकी अट्टालिकाओंसे सुशोभित किया था।

अम्बर शहरका चलता हुआ नाम आमेर है। कोई कोई इसे धुन्धुवर और अम्बकेश्वर भी कहते हैं। इस नगरको पहले किसने स्थापित किया था, इसका ठीक पता नहीं लगता। आमेर और उसके निकट-वर्ती स्थानमें मीना नामकी एक असभ्य जाती रहती है। मेवाड़के भीलोंके साथ मीना जातिका बहुत सादृश्य देखा जाता है। पहले यहांके अनेक स्थानोंमें मीनाओंका एक एक छोटा राज्य था। सम्भवतः अम्बर भी मीनावोंकी राजधानी रहा होगा। उसके बाद यह किस तरह मानसिंहके पूर्वपुरुषोंके हाथ आ गया, यह वृत्तान्त खूब स्पष्ट नहीं है।

जयपुरके राजे सूर्यवंशी क्षत्री हैं। ये लोग श्रीरामचन्द्रके द्वितीयपुत्र कुशके सन्तान हैं। कुशसे गणना करनेसे इस समय १३८ वीं पीढ़ी चलती है। पहले कुशवंशके एक राजाने अयोध्यासे आकर शोन नदके निकट एक पर्वतके ऊपर रोहतासगढ़ नामक दुर्ग बनाया। यहां कुशवंशके राजाओंने कुछ समय तक राज्य किया था। फिर यहांसे जाकर उन लोगोंने लाहोरके निकट सिन्धु एवं पङ्कज नदके समीप कछुया-गढ़में कुछ कालतक राजत्व चलाया। उसके बाद २७५ ई०में यहांसे २५ कोस पश्चिम गवालियरका राज्य संस्थापन हुआ। अन्तमें २८५ ई०में नल नामक जनैक राजाने बुन्देलखण्ड जाकर नरवर राज्य संस्थापन किया।

कुशराजासे बत्तीस पीढ़ी बीत गई। उसके बाद सौधासिंह नरवरके राजा हुए। उनके पुत्रका नाम दूल्हा राव था। सौधासिंहकी मृत्युके बाद उनके छोटे भाईने अपने भतीजेको राज्य नहीं दिया। उन्हें नर-वरसे निकाल दिया। दूल्हा राव उस समय एकदम लड़के थे। सन् ८६७ ई०में वे अपनी माताके साथ जयपुरसे ढाई कोस दक्षिण मीनाओंके खो-नगरमें जा पहुंचे।

समय अधिक हो गया, भूख और पथश्रमसे शिशुका शरीर क्लान्त था। हतभाग्या जननी पुत्रको एक निर्जन स्थानमें रख आप आहार खोजने गईं। लौट कर देखा, कि बच्चा धूलमें पड़ा सो रहा और उसके शिरपर फण पसारे एक बड़ा भारी सांप बैठा था। देखते ही उनका कलेजा कांप उठा। एक दिन जो राजरानी थीं, आज वे पथकी भिखारिनी बनीं। अन्धेकी लाठीकी तरह एकही शिशु सन्तान सम्बल था, भाग्यदोषसे शायद वह भी जाना चाहते रहा। दुर्भाग्या जननी रोती रोती पुत्रकी ओर दौड़ी। शब्द पाकर सांप चला गया। दूरसे एक ब्राह्मणने यह व्यापार देखकर रानीसे कहा,—'डरो मत। देखना, शीघ्र ही तुम्हारा यह पुत्र राज्येश्वर होगा।' दुःखिता जननी अपनी सन्तानको लेकर नगरमें गईं और एक मीना-सरदारकी परिचारिका हुईं। कहते हैं, कि अन्तमें दूल्हा राव, शायद मीना-सरदारका प्राण नष्टकर आप राजा बन बैठे थे। किसी किसीके मतानुसार— जयपुरसे १७ कोस दक्षिणपूर्वकी ओर दोसा नगरके सरदारकी कन्याके साथ उन्होंने अपना विवाह किया था। दोसाराज निःसन्तान थे, इसीसे उनकी मृत्युके अनन्तर दूल्हा राव राज्यके उत्तराधिकारी हुए। इस तरह इस विषयमें अनेक मतान्तर हैं।

प्रवाद है, कि दूलहा रावने मीना प्रभृति जातियोंके साथ भयङ्कर युद्ध किया था। उसी युद्धमें वे ससैन्य खेत आये। उसके बाद रातमें अम्बा अर्थात् माता भगवतीने दयाकर दूलहा रावको जिला दिया। इस अद्भुत व्यापारको देखकर मीनाओंने उन्हें राज्यपदपर अभिषिक्त किया। देवीके वरपुत्र दूलहा राव अम्बरमें अम्बा देवीकी मूर्ति प्रतिष्ठित कर उनकी पूजा करने लगे। कोई कोई कहते हैं, कि दूलहा रावके पुत्र काङ्कल रावने अम्बर जय किया था। फिर किसीके मतानुसार मैदल राव नामक उन्हींके किसी पुत्रने अम्बरको जीता। मैदल रावको अट्ठारह पीढ़ी बाद विहारी वा बहारमल्लका जन्म हुआ। बहारमल्ल बाबरके प्रियपात्र थे। हुमायूंने भी उन्हें मनसब अर्थात् पांच हजार सैन्यका सेनापति बना दिया। मानसिंह इन्हीं विहारीमल्लके सन्तान रहे। इन्होंने ही अम्बर नगरको सुरम्य अट्टालिका प्रभृतिसे सुसज्जित किया था।

कोई कोई कहते हैं, 'अम्बा' देवीके नामसे ही लोग इस शहरको अम्बर कहते हैं। फिर आमेर अम्बरका अपभ्रंश है। अम्बरमें अम्बकेश्वर नामक एक शिवलिङ्ग है। इसलिये अनेक यह बात भी कहते हैं, कि अम्बकेश्वरसे ही इस नगरका नाम अम्बर हुआ है। धुन्धुर वा धुन्धुवर नामका कारण लोग यह बताते हैं, कि पहले गलता पहाड़में धुन्धु नामक एक दैत्य रहता था। उसीके नामके अनुसार सब कोई इस प्रदेशको धुन्धुर वा धुन्धुवर कहते हैं। जयपुर शब्दमें अम्बर राजवंशका विवरण देखो।

अब अम्बर शहरका वर्णन किया जाता है। निर्जन निभृत स्थानमें दोनों ओर पर्वतकी गोदमें यह सुरम्य स्थान मानो अमरावतीके समस्त सौन्दर्यसे सुशोभित किया गया है। जयपुरके ईशान कोणवाले फाटकसे निकलकर उत्तर मुंह जाना पड़ता है। बराबर सुन्दर पक्की सड़क बनी हुई है। इसी राहसे पहले लोग दिल्ली जाते आते थे। फाटकके बाहर कुछ बाईं ओर जयपुरके प्रथम प्रधान मन्त्री अमोर ठाकुरका प्रासाद है। पथकी दोनों ओर पर्वतमाला विस्तीर्ण शरीर फैलाकर पड़ी हुई है। ग्रीष्मकालमें यहांके पहाड़ी लता-गुल्म सूख जाते, परन्तु वर्षाका जल पाकर फिर मञ्जरित होते हैं। उस समय नगरकी शोभाके साथ तरु-लता हंसती रहती हैं।

दोनों ओर पर्वतके नीचे स्थान स्थानपर गहरे तालाब हैं। उनमें कच्छप, कुम्भीर, मत्स्य प्रभृति जलजन्तु कभी ऊपर आते, कभी नीचे जाते, और कभी तैर-तैर सैर करते हैं। दक्षिण ओर मान सागर है। ग्रीष्मकालमें यह स्थान सुशीतल और मनोहर हो जाता है, परन्तु आजकल इसमें बारहो महीने जल नहीं रहता। उससे कुछ दूर बाईं ओर चन्द्रबाग है। पथकी दोनों ओर देशी और नाना प्रकारके विलायती वृक्ष शाखा फैलाये छाया किये रहते हैं। दक्षिण ओर रानियोंकी छत्रियां और बाईं ओर और और लोगोंकी समाधियां है। रानियोंकी छत्रियां कुछ बनीं और कुछ नहीं बनीं; छत अधूरी और ऊपर चूड़ा नहीं है। राजाओंने रानियोंकी छत्रियोंको सम्पूर्ण नहीं किया। सड़कके किनारे एक एक छोटा देवालय और पथिकोंके विश्रामका स्थान बना हुआ है। अम्बरके बाहर घाटके नीचे प्रसिद्ध 'काले महादेव'का मन्दिर है। प्रवाद है, कि महाराज मानसिंह इस शिवलिङ्गको यशोहरसे ले आये थे।

क्रमसे दो कोस राह खतम हो जानेपर एक कोस और बाकी रह जाती है। परन्तु इस कोसमें चार कोससे भी अधिक श्रम होता है। सीधा ढालू पथ क्रम क्रमसे ऊपर उठता गया है। डोली आदि ले जानेसे कहार पसीने पसीने हो जाते हैं। चार कहार डोलीको कन्धेपर लिये रहते हैं; दो सामनेका डण्डा पकड़कर खींचते और दो दोनों ओर थांभे रहते हैं, तब ऊपर जाया जाता है। उतरनेके समय भी ऐसा ही कष्ट होता है। ऊंट, हाथी, घोड़ा, बैल आदि बलवान पशु भी धीरे धीरे जाते और आते हैं।

ऐसे दुरारोह पथसे कुछ कम आध कोस ऊपर आकर फिर नीचे उतरना पड़ता है। उसके बाद अम्बर शहर है। पहले बाईं ओर 'दिलाराम' बाग मिलता है। इसमें नाना प्रकारके फल फूलके पेड़

है। बीचमें जलके कई फव्वारे हैं, पश्चिम ओर अट्टालिका है। बाग़में झुण्डके झुण्ड मोर चरते फिरते हैं। कोई वृक्षपर बैठा और लम्बी पूछ लटकाये देख रहा है, कोई ज़मीनपर छायेमें सो रहा है, कोई पूछ फैलाये और उठाये आनन्दसे नाच रहा है; उनके पास जानेमें तनिक भी न डरेंगे। जयपुर-नरेशकी आज्ञासे इस प्रदेशमें मयूरको कोई नहीं मार सकता। दिलाराम बाग़की बाईं ओर एक बड़ा भारी सरोवर है।

इस उद्यानसे निकलकर एक सड़क उत्तरकी ओर भग्न नगरमें चली गई है और एक सड़क कुछ दूर पश्चिममें राजप्रासादकी ओर आई है। शहरमें और कुछ भी नहीं है। कितने दिनोंकी धूमधामके बाद शहर अब सो रहा है। हाट बाज़ार टूट फूट गया है। पहले यहां बहुत अच्छी बन्दूक़ और नाना प्रकारके अस्त्र शस्त्र प्रस्तुत होते थे। वह सब अस्त्र अब भी जयपुरके राजभवनमें रखे हुए हैं। उनके सामने विलायती अस्त्र तुच्छ मालूम होते हैं। महाराज मानसिंहके हाथकी लाठी यहीं बनाई गई थी। विधाताके हाथका नैपुण्य सन्ध्याके आकाश तथा मयूर-पुच्छमें और मनुष्यके हाथका नैपुण्य मानसिंहकी सामान्य एक लाठीमें दिखाई देता है। संसारमें ऐसा सुन्दर और कुछ भी नहीं है। लाठीके ऊपर मुलम्मा किया हुआ है। उसमें कितने ही रङ्ग और विचित्र चित्र हैं। प्रायः तीन सौ वर्ष हो चला, परन्तु आज भी वह नई और ऊपरसे नीचे तक सुन्दरतासे भरी हुई है। अब भी कैसे चमकती है। उस समय इस नगरमें और भी अनेक शिल्पकार्योंकी उन्नति हुई थी।

अब अम्बरके शिल्पी जयपुर चले गये हैं। अब यहां धनी आदमी नहीं है। केवल सामान्य अवस्थाकी प्रजा कष्टसे दिन बिताती है। दुकानोंमें खानेकी अच्छी चीज़ें नहीं मिलती, केवल भुना हुआ चना, गेहूं, यव और सत्तू, आदि सामान्य चीज़ें हो पाते हैं। किसी किसी दुकानमें मावेकी मिठाई भी मिलती है।

अम्बरका राजप्रासाद ऊंचे पहाड़के नीचे एक उन्नत स्थानपर बना हुआ है। इसकी पूर्व ओर एक बृहत् सरोवर है। इसी सरोवरके समीप दिलाराम बाग़ और उसके बाद राजपथ है। राजपथकी पूर्व ओर और एक पर्वतमाला है। राजभवनसे दक्षिण ऊंचे पहाड़के ऊपर प्रसिद्ध जयगढ़ है। मानसिंहके भ्राता जगत्‌सिंहके पौत्र महाराज मिर्ज़ा जयसिंहने इस दुर्गको सम्पूर्ण किया था। जयगढ़में मानसिंहकी बहुमूल्य सम्पत्ति भाण्डारमें बन्द है। दरवाज़ेपर मुहर लगी हुई है। उस भाण्डारको खोलनेकी आज्ञा किसीको नहीं है। स्वयं जयपुरके महाराज भी उसे आंखसे नहीं देखने पाते। मीना लोग अम्बर राजवंशकी परम विश्वासी प्रजा हैं। पहले वह लोग चारो ओर राजपूतानेमें चोरी-डकैती करते फिरते थे, परन्तु यहांके राजाकी कभी कोई हानि न करते थे। अम्बरका समस्त राजभाण्डार अब भी मीना जातिके हाथमें है। वह लोग आठो पहर वहां पहरा दिया करते हैं। बङ्गाल जय करनेके बाद महाराज मानसिंहने जयगढ़में एक बहुत ऊंचा विजयस्तम्भ स्थापित किया था। वह कीर्त्तिस्तम्भ आज भी विनष्ट नहीं हुआ।

राजप्रासादसे पश्चिम कुछ दूर ऊंचे पहाड़के ऊपर प्राचीन कुन्तलगढ़ है। यह गढ़ हज़ार वर्षसे भी पहलेका है। अब टूट फूट गया है, चारो ओर जङ्गल लग गया है। इसमें बाघ और बनैले सूअर छिपे रहते हैं। कुन्तलगढ़से और भी ऊपर भूतेश्वर महादेवका मन्दिर है। यह भी अतिशय प्राचीन है। उत्तर ओरकी दीवारके पास एक बड़ी भारी मसजिद है। अजमेरसे गमनागमनके समय किसी मुसलमान बादशाहने इस मसजिदको बनवाया था।

नीचेके पथसे राजप्रासाद बहुत ऊंचेपर है। परन्तु ऊपर जानेके लिये अच्छी राह बनी हुई है। हाथी, घोड़ा, अथवा पालकी प्रभृतिपर चढ़कर सुखसे ऊपर जा सकते हैं। पहले ही पूर्वमुख प्रशस्त दीर्घ सिंहद्वार है। उसके ऊपर अंगरेज़ी घड़ी लगी हुई है। सिपाही लोग रात दिन वहां पहरा दिया करते हैं। उस द्वारसे पश्चिम मुख प्रवेश करने पर राज-

भवनके पहले महलका बड़ा भारी आंगन मिलता है। पहले यहां हाथीको लड़ाई और अनेक प्रकारको धूमधाम हुआ करती थी। उसके बाद दक्षिण पश्चिमको ओर जानेसे कुछ ऊपर चढ़ना होता है। चढ़ते ही सामने यशोहरेश्वरी कालीके मन्दिर-का प्रवेशद्वार दिखाई देता है। बाईं ओर महाराजका दीवानखाना है।

२४ परगनाके अन्तर्गत टाकीसे प्रायः दश कोस दक्षिण प्राचीन यशोहर नगर है। वहां प्रतापादित्य राजाकी राजधानी थी। अब यशोहरका नाम निशान भी नहीं है। नगर ध्वंश हो गया है, कई स्थानोंमें जङ्गल भर गया है। इसके निकटवर्ती स्थानमें राजा चन्द्रनाथ रायके वंशके अनेक यशस्वी कायस्थ अब भी वास करते हैं। प्रतापादित्य दिल्लीके बादशाहको न मानते थे। इसलिये उन्हें दमन करनेके लिये बादशाहके प्रधान सेनापति ससैन्य बङ्गाल पहुंचे। वहांसे भवानन्द मजुमदारको लेकर यशोहर गये। घोर युद्ध हुआ; अन्तमें प्रतापादित्य परास्त हुए।

स्वदेश जानेके समय मानसिंह यशोहरकी शिला देवीको अपने साथ ले गये और अम्बरमें उन्हें प्रतिष्ठित किया। वह शिलादेवी अब भी विद्यमान हैं। देवीकी सेवाके लिये महाराज कितने ही पुजारी भी ले गये थे। वह सब वैदिक श्रेणीके ब्राह्मण हैं। इस समय भी उनके वंशधर यशोहरेश्वरीकी पूजा करते हैं। इन ब्राह्मणोंके अनेक आत्मीय व्यक्ति अच्छे ख्यातविद्य हो गये थे। उनका नाम विद्याधर था। वर्तमान जयपुर नगर निर्माण करनेके समय उन्होंने ही नक्शा तय्यार कर दिया था। उसी नक्शेके अनुसार यह अपूर्व शहर बना है। मानसिंहके शिलादेवीके ले आनेपर कचूरायने और एक प्रतिमा बनवाकर यशोहरमें प्रतिष्टित की। धूमघाटके देवालयमें आज भी वही शिलादेवी वर्तमान हैं।

यहां यशोहरेश्वरीका एक चित्र दिया गया है। देवी अष्टभुजी—महिषमर्दिनी मूर्ति हैं। कटिदेशसे पदतल तक घाघरेसे छिपा हुआ है। इसीसे सिंह प्रभृतिकी मूर्ति दिखाई नहीं देती। देवी बाईं ओरके हाथोंसे ढाल, धनु और महिषासुरकी जिह्वा पकड़े हुये हैं। फिर एक हाथमें ब्राह्मण लोग फूलोंका छोटासा गुच्छा रख रहे हैं। मालूम होता है, पहले इसमें चक्र था। दाहिने हाथोंमें खड्ग, तीर और त्रिशूल है; फिर एक हाथमें न मालूम कौन अस्त्र है, जो ठीक पहचाना नहीं जाता। मालूम होता है, देवी इस हाथसे वर और अभय देती हैं। किन्तु लोगोंने किस तरह गोलमाल करके बायें हाथका अस्त्र दाहिने हाथमें दे रखा है। प्रतापादित्य, मानसिंह और शिलादेवी देखो।

देवीके मस्तकके ऊपर पीछेकी ओर गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, शिव और कार्तिकेयकी मूर्ति है। यह प्रतिमा पाषाणमयी और उज्ज्वल कृष्णवर्ण है। न मालूम क्यों बाईं ओर मुख कुछ वक्र किये हुए हैं। इस बारेमें बहुत सी गल्प हैं। कोई कोई कहते हैं, कि मानसिंहके साथ युद्धके समय प्रतापादित्यने सङ्कटमें पड़कर देवीकी स्तुति की थी, परन्तु यशोहरेश्वरीने उसे नहीं सुना; रूठकर मुख फेर लिया। उसीसे देवीका मुख बाईं ओर कुछ वक्र हो गया है।

यह तो हुआ एक मत। और एक प्रवाद है, पहले मानसिंहके समयमें शिलादेवीके निकट प्रतिदिन नरबलि होता था। कुछ दिनोंके बाद यह कुप्रथा बन्द हो गई, इसीसे रुष्ट देवीने मुंह फेर लिया था। अन्तमें जब महाराजको स्वप्नमें यह सब बातें मालूम हुईं, तब प्रत्यह वह एक बकरेका बलि देने लगे। अब तक वह नियम चला आता है। केवल आश्विन मासकी महाष्टमी और वासन्ती पूजाके समय अधिक धूम होती है। प्रधान प्रधान सरदार और अनेक कर्मचारियोंको साथ लेकर जयपुरके महाराज स्वयं पूजा देखने आते हैं।

बलिदान मन्दिरके ठीक सामने नहीं होता। देवीका मुंह बाईं ओर कुछ वक्र है, इसलिये बलिदान भी मन्दिरकी बाईं ओर होता है। मीना लोग ही प्रतिदिन बलिदान देते हैं। किन्तु महाष्टमी और वासन्तीपूजामें असंख्य भैंसों और बकरोंका बलिदान

दिया जाता है। उस समय ख़ुद सरदार लोग ही तलवारसे बलि देते हैं।

शिलादेवीके मन्दिरसे निकलकर बाईं ओर जानेसे और एक सिंहद्वार मिलता है। इसके कपाटमें पीतलके पत्र जड़े हैं। यहां भी पहरा पड़ता है। बिना महाराजका आज्ञापत्र दिखाये पहरेवाले भीतर जाने नहीं देते।

इस पथसे प्रवेश करनेपर सामने पोख़्ता आंगन दिखाई देता है। उसकी चारो ओर प्रसिद्ध दीवानख़ाना है। इसमें लाल पत्थरके चालीस खम्भे हैं। खम्भोंमें सफ़ेद पलस्तर किया हुआ है। ऊपरकी छत मेहराबदार है, महाराज मानसिंह यहीं दरबार करते थे। पहले खम्भोंमें पलस्तर नहीं था। कहा जाता है, कि यह दीवानख़ाना अकबरके दीवान-आमकी नक़ल बनाया गया था। यह समाचार पाते ही—सम्राट्ने आमेरमें कुछ सेना भेज दी। इधर दो पहरके पहले मानसिंहको भी ख़बर लग गई। बस चटपट उन्होंने सब खम्भोंमें सफ़ेद पलस्तर लगवा दिया। इसलिये आनेपर सम्राट्के लोग और कोई आपत्ति न कर सके। दीवानख़ानेकी बग़लमें पूर्व ओर कई छोटी छोटी कोठरियां हैं।

उसके बाद दक्षिण ओर और एक पीतलका दरवाज़ा है। इस दरवाज़ेसे मकानके अन्दर जाना होता है। बीचमें बड़ा भारी आंगन है। उसमें मनोहर उपवन है। उस उपवनमें कहीं फल लगे हैं, कहीं फूल खिले हैं। हवाके झोंकेसे पेड़ोंकी डालियां डोल रही हैं। इसकी पूर्व ओर और एक बड़ा भारी दालान है। इस दालानके पत्थरोंमें ताजमहलके निपुण कारीगरोंका शिल्पकौशल है। इसकी कारीगरीपर नज़र अटक जाती है, वहांसे टलना नहीं चाहती। खम्भे सफ़ेद पत्थरके बने हैं। उनपर फूल कटे हुए हैं। फूलोंपर तितलियां उड़ उड़कर बैठ रही हैं। छत मेहराबदार है। मेहराबके नीचे खिड़कियोंके सिरेपर भी अनेक प्रकारके चित्र विचित्र रङ्ग हैं। उनके ऊपर कांच जड़ा हुआ है। एक मनुष्यके नीचे खड़े होनेसे ऊपर कितने ही मनुष्य दिखाई देते हैं। हाथ डोलानेसे ऊपर कितने ही हाथ डोलने लगते हैं।

इस दालानकी उत्तर ओर एक छोटे द्वारसे जानेपर मानसिंहके स्नान करनेका हम्माम मिलता है; उसके बाद पश्चिम ओर सुरङ्गकी राह जानेसे देवार्चनका कमरा है। हम्माममें सफ़ेद पत्थरका हौज़ बना है, उसके किनारे किनारे मोरियां लगी हैं। स्नानके बाद सहसा शीतल वायु न लगे, इसलिये हम्मामसे निकल अति अप्रशस्त सुरङ्गके पथसे पूजाके घरमें जाना होता है।

पश्चिम ओर नीचेकी मंज़िलमें ग्रीष्मकालमें रानियां आकर बैठती थीं। यहां फ़व्वारा और जलकी प्रणाली है। उत्तर ओर नीचेसे ऊपर जानेके लिये सीढ़ी नहीं है। नीचेसे ऊपर तक प्रशस्त ढालू पथ है। उसपर जानेमें कोई कष्ट नहीं होता। ऊपरी कमरेमें अनेक प्रकारके चित्र बने हैं, एक जगह मथुरा, वृन्दावन प्रभृति नगर अङ्कित हैं। गङ्गा-यमुनाके जलमें मछलियां क्रीड़ा करती फिरती हैं। मन्दिरमें देवमूर्ति प्रतिष्ठित है। विचारालयमें विचारपति बैठे हुए विचार कर रहे हैं। चित्रोंमें इसी तरहके कितने ही विवरण देखनेमें आते हैं। शिलादेवीकी पूजाके समय रानियां ऊपरसे उत्सव देखती थीं, इसलिये दीवारमें झरोखे कटे हुए हैं। उसके बाद पूर्व ओर नीचेवाले दालानके ऊपर और एक छोटा दालान है। यह सफ़ेद पत्थरका बना और अति सुन्दर है। यहांके कमरोंमें किसीका नाम 'जयमन्दिर', किसीका 'सोहागमन्दिर', किसीका 'यशोमन्दिर' और किसीका 'सुखमन्दिर' है। ऊपरके दालानमें रानियां दरबार करती थीं।

ऊपरकी छतपर जाकर खड़े होनेसे सभी मनोहर दिखाई देता है। जिधर आंख उठाकर देखिये, उधर ही अपूर्व दृश्य झलकता है। मकानके नीचे पूर्व ओर सरोवर है। उसके मध्यस्थलमें द्वीप है। उसके ऊपर मनोहर उद्यान है। उत्तरकी ओर भग्न नगर है। बीच बीचमें देवालय हैं। दक्षिण दिशामें बहुत दूरपर सुरम्य जयपुर शहर है, पूर्व पश्चिममें पहाड़ है।

मन होता है, कि दिन-रात वहां दृष्टिभर चारो ओरकी अपूर्व शोभा ही देखा करें।

फिर आंगनमें उतर कर दक्षिण ओर जाओ, तो रानियोंका अन्तःपुर है। किन्तु रानियोंका घर होनेसे यहां सुन्दर अङ्गको यत्नसे रखनेके लिये मणि-की अट्टालिका नहीं है। ऊपर नीचे पंक्तिकी पंक्ति छोटी छोटी सामान्य कोठरियां हैं। उन्हींमें रानियां रहती थीं। आंगनमें एक नाट्यमन्दिर जलक्रीड़ाके लिये एक हौज़, और कई फ़व्वारे हैं। उत्तरके किनारेके नीचे एक कोठरीमें गौरीदेवीका मन्दिर था। वहीं रानियां गौरीकी पूजा करती थीं। रानियोंकी गौरी-पूजाका नियम अब भी प्रचलित है।

आमेरके राजभवनका सौन्दर्य आज भी नष्ट नहीं हुआ। देखनेसे मालूम होता है, मानो अट्टालिका आज ही बनाई गई है। मकानके भीतरी दरवाज़ोंमें हाथी-दांत जड़े हुए थे। अब सब टूट फूट गये हैं। कहीं किसी कपाटमें कुछ कुछ निदर्शन देखा जाता है। सौभाग्यलक्ष्मीकी पूर्णदृष्टिके समय मानसिंहने इस सुरम्य अट्टालिकाको बनवाया था। इसके पहले वे जिस मकानमें रहते थे, वह अति सामान्य है। सदर मकानके पश्चिमद्वारसे उतरकर उस पुराने मकानमें जाना होता है।

सदर मकानके पश्चिम दरवाज़ेसे बहुत नीचे उतरना पड़ता है। नीचे अप्रशस्त पथ है। पहले पश्चिम तरफ़के पहाड़पर नगरनिवासियोंके छोटे छोटे घर थे। अब सब मकान गिर पड़े हैं। कहीं गिरी हुई दो एक दीवार खड़ी है, कहीं दीवारके सब पत्थर गिरकर सड़कपर ढेर हो गये हैं। उस समय सब घर कच्चे बनते थे। सिर्फ़ मट्टीके गारेसे पत्थर जोड़ जोड़-कर दीवार उठा दी जाती थी। राजप्रासादके पीछेकी ओर भी कच्ची बनावट देख पड़ती है। परन्तु यह कच्ची जोड़ाई भी बहुत दिनतक रहती है। तीन सौ वर्षके मकान आज भी वैसे ही खड़े हैं।

नीचेकी राह उत्तर मुंह जानेसे दक्षिण भागमें विग्रहका एक ऊंचा मन्दिर मिलता है। उसके बाद कुछ और उत्तर रत्नाकरका वासस्थान है। रत्नाकर अम्बरराजके कुलगुरु थे। इस मकानमें अब कोई नहीं रहता। कई जगह यह गिर भी पड़ा है। वाम भागके ऊंचे पहाड़की दक्षिण दिशामें रत्नाकरकी छत्री, खड़ाऊं और रत्नाकरसागर है। देखनेमें रत्नाकरसागर अति सुरम्य सरोवर है। स्थान भी अति मनोहर है। गुरुकी मृत्यु होनेपर उनकी अन्त्येष्टिक्रिया हो जानेके बाद इसी सरोवरके किनारे उनका भस्म समाहित किया गया था। यह छत्री वही समाधिस्थान है।

और कुछ उत्तर जाकर बाईं ओर चढ़ना पड़ता है। यहांकी राह बहुत ऊंची-नीची है। बाईं ओर कुछ दूर जानेसे सामने नृसिंहदेवका मन्दिर दिखाई देता है। इस मन्दिरके आंगनसे पश्चिमकी ओर 'हिन्दोला' मञ्च है। महाराज जयसिंहकी महिषी सौदामिनी रानीने इस हिण्डोला मञ्चको श्रीकृष्णके प्रीत्यर्थ उत्सर्ग कर दिया था। मञ्चके एक सफ़ेद पत्थरपर उत्सर्गका संवत् दिन आदि खुदा हुआ है।

आंगनसे पूर्व शूरसिंहका गृह है। शूरसिंहके साथ अम्बरराजका कैसा सम्बन्ध था, बहुत कुछ अनुसन्धान करनेपर भी कुछ निश्चित न हो सका। वे मीनाओंके सरदार थे अथवा मानसिंहके किसी पूर्वपुरुषके दो तीन नाम रहे इसीसे इस नामका गोलमाल होता है। इन सब बातोंकी ठीक मीमांसा करना अत्यन्त कठिन है। किन्तु शूरसिंह मानसिंहके कोई विशेष आत्मीय थे, और उन्होंके अभ्युदयसे अम्बरराजकी श्रीवृद्धि हुई थी, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। कारण, इन शूरसिंहके मकानमें ही अबतक जयपुर राजवंशका राजतिलक होता है और उस समय राजाओंके शिरपर शूरसिंहका छत्र रखा जाता है।

शूरसिंहका गृह अति सामान्य है। आंगन छोटा और ऊपर नीचेके कमरे भी बहुत छोटे हैं। ऊपर जानेमें विपदकी शङ्का होती है,—सीढ़ी एकदम छोटी और सीधी है। महाराज जिस कमरेमें बैठकर सभा करते थे, उसके पश्चिम दक्षिण कोणमें एक वेदी है। वही वेदी शूरसिंहका राजसिंहासन है। इस कमरेकी

उत्तर ओरकी दिवारमें ब्राह्मण पुजारियोंने अनेक छोटी छोटी देवमूर्तियां रख दी हैं। उन मूर्तियोंकी नित्य पूजा होती है।

राजभवनकी दक्षिण ओर रानी बालाबाईका मन्दिर है। बालाबाई शूरसिंहकी महिषी थीं। प्रवाद है, कि शूरसिंह और बालाबाई दोनों आदमी गुटिकासिद्ध थे। सन्ध्या समय विमानपर चढ़कर दोनों आदमी शून्यपथसे पुरीमें श्रीजगन्नाथका दर्शन करने जाते थे। परन्तु महाराजने इस बातको रानीसे कभी न कहा और रानीने भी इसे उनसे छिपा रखा था। इसलिये एक दूसरेकी बात कोई न जानता था। एक दिन रानीने जगन्नाथजीके मन्दिरके द्वार-पर राजाको देखा। देखते ही लज्जा और भयसे सकुचा गईं। परन्तु रानीका मुंह घूंघटमें छिपा था, इससे अपनी महिषीको न पहचान राजाने शिष्टाचार करके कहा,—"डरो मत, बेटी! लजाती क्यों हो? तुम कन्याके समान हो, स्वच्छन्द प्रतिमाका दर्शन करो।" जगन्नाथ देवका दर्शन करके रानी घर आईं, परन्तु राजाने उन्हें कन्या कह सम्बोधन किया था, इसलिये उस दिनसे उन्हें फिर कभी अपने शयन-गृहमें न घुसने दिया। बाला शब्दका अर्थ कन्या और बाईका स्त्री है, इसीसे इस मन्दिरका नाम बालाबाई हुआ है।

शूरसिंहके मकानसे पूर्व महाराज मानसिंहका पूर्व वासस्थान है। यह राजभवन सामान्य धनियोंके मकान जैसा है। इसमें कोई कारीगरी नहीं, कुछ श्रीसौन्दर्य नहीं। अब कई जगह यह गिर पड़ा है। बादशाहके निकट दिन दिन मानसिंहकी प्रतिपत्ति बढ़ने लगी, सौभाग्य लक्ष्मी दिन दिन प्रसन्न होने लगीं; उसी समय अम्बरका प्रसिद्ध राजभवन बनवाया गया।

राजभवनसे बाहर निकल फिर पूर्वके पथसे कुछ उत्तर पश्चिम मुंह जानेसे बाईं ओर श्वेत प्रस्तरके 'अम्बकेश्वर' महादेव मिलते हैं। किसी किसीके मतानुसार इन महादेवके नामसे ही शहरका नाम अम्बर हुआ है। उसके बाद हुक्ष्वटकी शाखाके नीचे और कुछ उत्तर जानेपर एक बड़ा भारी हौज़ दिखाई देता है। इसके कुछ दूर पश्चिम ओर भैरव-नाथका मनोहर पीठस्थान है। ग्रीष्मकालमें यह स्थान अतिशय मनोहर हो जाता है। चारो ओर वटपत्र छाया किये हुए हैं, नीचे तनिक भी धूप नहीं आती। ज़मीनके भीतर एक पत्थरकी भैरवनाथकी मूर्ति खोदकर बनाई गई है, इसीसे लोग इन्हें अनादि लिङ्ग कहते हैं। भैरवनाथके सब अङ्गोंमें सिन्दूर पोता हुआ है। यहांसे फिर पूर्व पथ नगरके भीतर जानेपर जयपुरका राजपथ मिलता है।

अम्बरखाना—भवन-विशेष, कोई मकान। सन् १६१६ ई०को शाहजीने पूनावाले किलेसे दक्षिण यह भवन अपनी धर्मपत्नी जीजी बाई और वीरपुत्र शिवजीके लिये बनवाया था। इसे लालमहल भी कहते हैं। यह बहुत ही मजबूत बना रहा। आज भी कुछ तहखाने देखनेमें आयेंगे। शिवाजीने अपनी माताके साथ कितने ही वर्ष इसमें निवास किया। शाहजीके तत्त्वावधायक दादाजी कोंडदेव शिवजीकी शिक्षाको देखते और मकान्की भी खबर लेते थे। पेशवाओंने आकर इसमें हाथियोंके हौदे रखना शुरू किया। इसीसे लोग इसे अम्बर या अम्बरीखाना कहते हैं।

अम्बरग (सं० त्रि०) आकाशगामी, आस्मान्पर चलनेवाला।

अम्बरद (सं० पु०) कार्पास वृक्ष, कपासका पेड़।

अम्बरनाथ—बम्बईके थाना ज़िलेका एक गांव। इसमें सन् १०६० ई०को अमरनाथका बहुत अच्छा मन्दिर बना था। यद्यपि मन्दिर छोटा, तथापि नक्काशी देखकर दिल खुश हो जाता है। शिवरात्रको यहां बड़ा उत्सव रहेगा। मन्दिरमें शिलाहारवंशके शिलालेखपर ८८२ शक खुदा है। गुम्बदपर कितनी ही अच्छी तस्वीरें देख पड़ेंगी। दीवारों खम्भों और छतोंकी कारीगरी देख सभी प्राचीन भारतीय शिल्पियोंकी प्रशंसा करते हैं। गांवका मुखिया ही महादेवकी पूजे और दान-दक्षिणा लेगा। लोग कहते हैं, कि इस मन्दिरको देवताओंने एक रातमें बनाया था।

अम्बरयुग (सं० क्ली०) लहंगा-लुगरा, धोती-पिछौरी, घंघरिया-ओढ़निया।

अम्बरशैल (सं० पु०) गगनस्पर्शी पर्वत, जो पहाड़ अपनी ऊंचाईसे आस्मानको चूमता हो।

अम्बरस्थली (सं० स्त्री०) भूमि, ज़मीन।

अम्बरा (सं० स्त्री०) कार्पासवृक्ष, कपासका पेड़।

अम्बरातक (सं० पु०) आम्रातक वृक्ष, अमड़ा।

अम्बरान्त (सं० पु०) १ वस्त्रका अवशेष, कपड़ेका सिरा। २ क्षितिज, उफ़क़, जो ज़मीन्का किनारा आस्मान्से लगा मालूम हो।

अम्बरिया—विहारके ब्राह्मणोंका समाज विशेष।

अम्बरिष, अम्बरीष देखो।

अम्बरीप, अम्बरातक देखो।

अम्बरीष (सं० पु०-क्ली०) अम्बाते भर्जनकाले शब्दायतेऽच, अवि-ईषन् रकारागमो निपात्यते। अम्बरीषः। उण् ४।२८। १ भर्जनपात्र, कड़ाही, जिस बरतनमें कोई चीज़ तलें। २ आम्रातक वृक्ष, अमड़ा। ३ सूर्य। ४ विष्णु। ५ शिव। ६ युद्ध, लड़ाई। ७ नरकविशेष। ८ किशोर, बछेड़ा। ९ अनुताप, पछतावा। १० पुलह नामक ब्रह्मर्षिके पुत्र। ११ मान्धाताके एक पुत्र। यह विन्दुमतीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। १२ सूर्यवंशीय नृपति-विशेष। यह सुश्रुतके पुत्र रहे। किसी समय इन्होंने यज्ञका अनुष्ठान किया, किन्तु कार्य सम्पन्न होनेसे पहले ही इन्द्र जाकर यज्ञीय पशु चोरा लाये थे। इसीसे अम्बरीषने ऋचिक मुनिके सन्तान शुनःशेफको वधार्थ खरीदा।

भागवतमें लिखा है,—अम्बरीष नाभाके पुत्र रहे। इनके परम विष्णुभक्त होनेमें कोई त्रुटि न थी। इसीसे विष्णुने इन्द्र बचानेके लिये अपना चक्र सौंप दिया। विपद् पड़नेसे चक्र आकर अम्बरीषकी रक्षा करता था।

एक बार कार्तिक मासकी द्वादशीको व्रत-पारणके दिन दुर्वासा मुनि इनके मकान्पर आ पहुंचे थे। महाराजने यथोचित समादरके बाद अपने गृहमें भोजन करनेको मुनिसे अनुरोध किया। दुर्वासा सम्मत होकर स्नान करने चले गये थे। कितना ही विलम्ब होते भी वह वापस न आये। इसीसे अम्बरीषने पुरोहितकी अनुमति ले भोजन कर लिया, अधिकक्षण फिर दुर्वासाकी राह न देखी थी। अन्तको दुर्वासाने पहुंच यह बात सुनी, क्रोधसे उनका सर्वाङ्ग जलने लगा। उन्होंने महाराजको वध करनेके लिये जटासे कोई उग्रदेवता निकाला था। उसी समय विष्णुके सुदर्शन चक्रने धावा मार उस उग्रदेवताको नष्ट किया और दुर्वासाके पीछे-पीछे दौड़ने लगा। किसी जगह निस्तार न पा अन्तमें दुर्वासा अम्बरीषके ही शरणापन्न हुये थे।

अम्बरौकस् (सं० पु०) अम्बर आकाश ओकः स्थानं यस्य, बहुव्री०। १ वैकुण्ठमें रहनेवाला, जो बिहिश्तमें रहता हो। २ देवता, फ़रिश्ता।

अम्बष्ठ (सं० पु०) अम्बायां मातृगृहे तिष्ठति, अम्बा-स्था-क षत्वं आकारलोपश्च। १ वैश्यकन्याके गर्भ और ब्राह्मणके औरससे जात सङ्कीर्ण जाति विशेष। २ वैद्यजाति, हकीम। ३ देशविशेष, एक मुल्क। ४ युक्तप्रदेशकी प्रसिद्ध एक कायस्थ जाति।

।*। हमारे धर्मशास्त्रमें अम्बष्ठ जातिपर निम्नलिखित मीमांसा दी गयी है,—

"अनुलोमा अनन्तरैकान्तरद्व्यन्तरासु जाताः सवर्णाम्बष्ठोग्र-निषाददौष्यन्तपारशवाः।" (गौतमधर्मसूत्र ४।१६)

अर्थात् अनन्तरज, एकान्तरज, और द्व्यन्तरज, क्रमसे जात अनुलोमगण ही सवर्ण, उग्र, अम्बष्ठ, निषाद, दौष्यन्त और पारशव जाति है।

बौधायन-धर्मसूत्रसे भी उक्तमत समर्थित है। ब्राह्मणात् क्षत्रियायां ब्राह्मणो वैश्यायामम्बष्ठः शूद्रायां निषादः। (१।१)

अर्थात् ब्राह्मणके औरस एवं विवाहिता क्षत्रियकन्याके गर्भसे ब्राह्मण, ब्राह्मण और वैश्यकन्यासे अम्बष्ठ एवं शूद्रासे निषाद उत्पन्न होता है।

भगवान् मनुने भी धर्म-सूत्रके अनुसार ही लिखा है। यथा—

"ब्राह्मणात् वैश्यकन्यायामम्बष्ठो नाम जायते।" (१०।८)

अर्थात् ब्राह्मणसे वैश्यकन्याके गर्भमें अम्बष्ठ जाति हुयी है।

महर्षि याज्ञवल्क्यने लिखा है—

"विप्रात् मूर्द्धावसिक्तो हि क्षत्रियायां विशः स्त्रियाम्।
अम्बष्ठः शूद्रां निषादो जातः पारशवोऽपि वा॥" (१।९१)

अर्थात् ब्राह्मणसे क्षत्रियाके गर्भमें मूर्द्धावसिक्त, ब्राह्मणसे वैश्याके गर्भमें अम्बष्ठ* एवं ब्राह्मणसे शूद्राके गर्भमें निषाद वा पारशव उत्पन्न हुआ है।

औशनस धर्मशास्त्रमें कहा है—

"वैश्यायां विधिना विप्रात् जातो ह्यम्बष्ठ उच्यते।
कृष्याजीवी भवेत् तस्य तथैवाग्नेयवृत्तिकः॥
ध्वजिनी जीविका वापि ह्यम्बष्ठाः शस्त्रजीविनः।"

ब्राह्मणसे विधिपूर्वक वैश्यामें जो उत्पन्न होता, उसको अम्बष्ठ कहा जाता है। वह कृषिजीवी रहता और आग्नेयवृत्तिक एवं ध्वजधारी होता है। अम्बष्ठ शस्त्रजीवी ठहरेगा। महर्षि नारदका मत है—

"उग्रः पारशवश्चैव निषादश्चानुलोमतः।
अम्बष्ठो मागधश्चैव क्षत्ता च क्षत्रियात्मजः॥"

उग्र, पारशव, और निषादकी अनुलोमक्रमसे उत्पत्ति है। अम्बष्ठ, मागध और क्षत्ता कितनी ही जाति क्षत्रिय कन्यासे उत्पन्न हैं। नारदने हो आगे फिर लिखा है,—

"अम्बष्ठोग्रौ तथा पुत्रावेवं क्षत्रियवैश्ययोः।
एकान्तरस्तु चाम्बष्ठः वैश्यायां ब्राह्मणात् सुतः॥
शूद्रायां क्षत्रियात् तद्वत् निषादो नाम जायते।
शूद्रा पारशवं सूते ब्राह्मणादुत्तरं सुतम्॥" (१२।१०७।१०८)

क्षत्रिय और वैश्यसे अम्बष्ठ और उग्रजाति हुयी है। ब्राह्मण और वैश्यासे एकान्तर अम्बष्ठ, क्षत्रिय और शूद्रासे निषाद नामक जाति एवं ब्राह्मण और शूद्रासे पारशव की उत्पत्ति है।

मनु-टीकाकार रामचन्द्रने एक स्थान पर लिखा है—"नृपकन्यायां वैश्ये उत्पन्ने शूद्रे उत्पन्ने सति उभौ अम्बष्ठौ भवतः।" (मनुटीका १०।७) वैश्यके औरस और क्षत्रियकन्याके गर्भसे एवं शूद्रके औरस और क्षत्रियकन्याके गर्भसे दोनो ही तरह अम्बष्ठ उत्पन्न होता है।

स्मार्त रामचन्द्रने फिर 'अम्बष्ठानां चिकित्सितम्' इस श्लोक की टीकामें कहा है—'अम्बष्ठानां शूद्रादम्बष्ठा जाताः चिकित्सनं शास्त्रं वैद्यकम्।' (मनुटीका १०।४७) अर्थात् अम्बष्ठादिकी चिकित्सा यानी वैद्यकशास्त्र ही उपजीविका होती है। अम्बष्ठ शूद्रसे उत्पन्न हैं।

मनुसंहिता और महाभारतके प्रधान-प्रधान टीकाकारने अधिकांश अम्बष्ठको अपसद वा अपध्वंसज भावसे ही ग्रहण किया है,—

"ये द्विजानामपसदा ये चापध्वंसजाः स्मृताः।
ते निन्दितैर्वर्त्तयेयुर्द्विजानामेव कर्मभिः॥
सूतानामश्वसारथ्यमम्बष्ठानां चिकित्सितम्।" (मनु १०।४६)

द्विजातिमें जो अपसद और अपध्वंसज रहे, वह द्विजगणके निन्दित कर्म द्वारा जीविका चलायेगा। (उसमें) सूतजातिकी वृत्ति अश्वसारथ्य और अम्बष्ठकी चिकित्सा होती है।

"चैत्यद्रुमश्मशानेषु शैलेषूपवनेषु च।
वसेयुरेते विज्ञाना वर्त्तयन्तः स्वकर्मभिः॥" (मनु १०।५०)

सूतादि सकल अपसद और अपध्वंसज जाति अपनी-अपनी जातीय वृत्ति उठा चैत्यवृक्षके नीचे, श्मशान, पर्वत या उपवनमें रहती है। मनुटीकाकारगणकी तरह नीलकण्ठने भी अनुशासनपर्वके ४८ वें अध्यायकी टीकामें लिखा है,—'पञ्चदश बाह्या उक्ताः' अर्थात् उक्त पन्द्रह जाति ही समाजबाह्य कही गयी है।* वेदव्यासने महाभारत अनुशासनपर्वके ४८वें अध्यायमें अम्बष्ठको अपध्वंसज बताया है। मिताक्षराकार विज्ञानेश्वरने 'अपध्वंसज' शब्दका 'व्यभिचार-जात' अर्थ लगाया। (याज्ञवल्क्यटीका १।९०)

मनुटीकामें सर्वज्ञनारायणने भी लिखा है,—

"विप्राद्वैश्यायां यथाम्बष्ठो यथा वा क्षत्रियाच्छूद्रायामुग्रः पुत्र आनुलोम्येन जातोऽप्यनन्तरस्त्रीजातपुत्रापेक्षया निन्दितस्तथा वैश्याद्विप्रायां जातो वैदेहः शूद्रात् क्षत्रियायां जातश्च क्षत्ता। अनन्तर प्रतिलोमजातापेक्षयैकान्तरितजातत्वान्निन्दित इत्यर्थः। यथा स्मृतौ निन्दिताविति शेषः।"

(मनुटीका १०।१२)

ब्राह्मणसे वैश्याका गर्भज अम्बष्ठ एवं क्षत्रियसे शूद्राका गर्भज उग्रपुत्र अनन्तर-स्त्रीजात पुत्रकी अपेक्षा निन्दित ठहरता है। इसीतरह वैश्यसे ब्राह्मणीका जात वैदेह और शूद्रसे क्षत्रियाका जात क्षत्ता भी

---

* मिताक्षराकार विज्ञानेश्वरने यहां 'विशः स्त्रियाम्' का अर्थ विवाहित-वैश्यकन्या लिखा है।

* सूत तथा अम्बष्ठ सह वैदेहक, मागध, निषाद, आयोगव, मेद, चुञ्चु, अन्ध्र, मद्गु, क्षत्ता, उग्र, पुक्कस, धिग्वण और वेण—सब मिलाकर इन पन्द्रह जातिको मनुने अपसद और अपध्वंसज कहा है।

निन्दित होता है। अनन्तर-प्रतिलोमको अथवा एकान्तर-प्रतिलोमको भी बुरा समझते हैं। कारण स्मृतिमें लिखा कि अम्बष्ठ और उग्र दोनो ही अनुलोम जाति निन्दित होती है।

प्रसिद्ध टीकाकार सर्वज्ञनारायणने मनुके १०।५० श्लोकको टीकामें बताया है,—'एते सूतादय विज्ञाताचिह्निता' अर्थात् सूत और अम्बष्ठसे वेण पर्यन्त चिह्नित जाति सकल मानना होगा। मतलब, उनके मतमें यह सकल ही जाति समाजवाह्य ठहरती है। उक्त श्लोकको टीकामें रामचन्द्रने भी कहा है,—'स्वकर्मभिर्वर्तयन्तो विज्ञाता एते पौण्ड्रकादय: वसेयु:' अर्थात् पौण्ड्रक, द्राविड़, काम्बोज, यवन, शक, पारद, पह्लव, चीन, किरात, दरद, खस, द्विज और शूद्रके मध्य जो वाह्य जाति वा दस्यु कहाये तथा अपसद और अपध्वंसज निर्दिष्ट हो, वह निन्दित कर्म द्वारा ही जीविका चलाता है।

मनूक्त पौण्ड्रकादि क्षत्रियजातिने क्रम-क्रम जैसे क्रियालोप और ब्राह्मणादर्शन हेतु वृषलत्व पाया, वैसे ही निन्दित कर्म द्वारा अम्बष्ठादि और क्रियालोप हेतु पौण्ड्रकादिक भी वृषलत्वप्राप्त और वाह्य-जाति कहाया था। वास्तविक अद्यापि दाक्षिणात्यके तिरुवाङ्कोड़ राज्यमें ऐसे समाजवाह्य अम्बष्ठ वैद्यका वास रहा है। इस जातिके सम्बन्धमें तिरुवाङ्कोड़ महाराजके दीवानपेश्कार सुब्रह्मण्य-अय्यरने लिखा था,

"In their dresses, ornaments and festivals they do not differ from the Malayal Sudras, of whom according to the Keralotpatti, they form one of the lowest subdivisions. The niece is the rightful wife of the son and the daughter that of the nephew.······Among the Ampattans (Ambastham) fraternal polyandry seems to be common."*

अर्थात् वेशभूषा और उत्सवादिमें मलयाल शूद्रगणसे वहांके रहनेवाले अम्बष्ठगणका कोई पार्थक्य नहीं पाते। केरलोत्पत्तिके मतसे यह जाति नीचतम शूद्रके मध्य गण्य होती है। भागिनेयी ही उपयुक्त पुत्रवधू और कन्या ही उपयुक्त भागिनेयवधू ठहरती है। इस अम्बष्ठ जातिके मध्य बहुतसे भ्राता मिलित हो साधारणत: एक पत्नी रखेंगे।

सम्भवत: ऐसी निकृष्ट अम्बष्ठ जाति देखकर ही रघुनन्दन, वाचस्पतिमिश्र प्रभृति स्मार्तगणने 'एवमम्बष्ठादीनामपि कलौ शूद्रत्वम्' लिख डाला है। सिवा इसके महाराष्ट्र और कर्णाट अञ्चलको बेदु और बेद्द जातिको भी आलोचना करनेसे द्राविड़की अम्पट्ट जातिको तरह हीन समझना पड़ेगा। बैदु देखो।

उशनाने जिस अम्बष्ठकी बात लिखी, वह अम्बष्ठ जाति हस्तिपकरूप बतायी गयी है,—

"अम्बष्ठाम्बष्ठमार्गं नौ देह्यपक्रममाचिरम्।
नो चेत् सकुञ्जरं त्वाद्य नयामि यमसादनम्।"(भागवत १०।४३।४)
'अम्बष्ठो हस्तिप:।' (श्रीधरस्वामी)

हिन्दुवोंके राजत्वकालमें हस्तिपक खेती बारी करता, हाथोपर पताका बांधके चलता, रणक्षेत्रमें अस्त्र उठाता और नाना उत्सवके समय हाथोपर आगे-आगे जा अग्निक्रीड़ा देखाता था। भागवत-वाला निषादी अम्बष्ठही उशनाका शस्त्रजीवी अम्बष्ठ होगा।

अम्बष्ठ क्षत्रिय—मकदूनियाके वीर सिकन्दर जब पञ्जाब पहुंचे, तब पञ्जाबके दक्षिणमें अम्बष्ठ नामक वीर जाति राजत्व चलाती, जो यूनानी नृपतिसे बहुत लड़ी थी।† पुराणकार और पाणिनिने भी इस क्षत्रिय जातिकी बात कही है। सुतरां इस जातिको अतिशय अप्राचीन कैसे समझेंगे! इसको अध्युषित वासभूमि पुराणमें 'अम्बष्ठ' बतायी गयी है।

अम्बष्ठ ब्राह्मण—शाक्य बुद्धके आविर्भाव कालमें अम्बष्ठ नामक कोई ब्राह्मण कपिलवास्तु अञ्चलमें रहते थे। दो सहस्र वर्ष पूर्वरचित दीघनिकायके अन्तर्गत 'अम्बट्ठसुत्त' नामक पालिग्रन्थ उन्हो अम्बष्ठ ब्राह्मणका बनाया ठहरता और उसमें तत्कालीन ब्राह्मणगणको सामाजिक अवस्थाका खासा परिचय मिलता है। नीचे हम उसका कुछ अनुवाद उद्धृत करेंगे,—

* Census Report of Travancore by N. Subrahmanya Aiyar, M. A., M. B. C. M., Part 1, p. 27.

† Arrian और Quintin Curtius द्रष्टव्य है।

'एकदा भगवान् बुद्धदेव कोशल राज्यके इच्छानकल नामक वनमें विहार करते थे। उसी समय वहां पुष्करसारी नामक कोई ब्राह्मण भी वसते रहे। उनका अम्बष्ठ नामक कोई पण्डित और त्रिवेदज्ञ शिष्य था। बुद्धदेवके आगमन बाद उन्होंने सुना, कि द्वात्रिंश-लक्षणाक्रान्त कोई महापुरुष वहां जा पहुंचा रहा। उन महापुरुषको देखनेके लिये अम्बष्ठ प्रभृति पण्डित उपस्थित हुये। नानाविध वादानुवाद अम्बष्ठ नानारूप परुषवाक्यसे बुद्धदेवको संबोधन करने लगे थे। उससे भगवान्ने अम्बष्ठको पापपरायण बताया। उन्होंने अत्यन्त असन्तुष्ट हो कहा था,—हे श्रमण गोतम! तुम पापी और तुम्हारा वंश क्रूरस्वभाव एवं निष्ठुर निकलेगा। शाक्यगण नीच और ब्राह्मणके प्रति भक्तिशून्य रहता, ब्राह्मणके प्रति यथोचित सम्मान नहीं दिखाता; ब्राह्मणसे शाक्यगणका ईदृश व्यवहार अनुचित लगता है।

'बुद्धदेवने कहा, हे अम्बष्ठ! शाक्यगणने तुम्हारा क्या अपराध किया है? (इसपर उन्होंने उत्तर दिया) किसी दिन मैं अपने आचार्य पुष्करसारीके कामसे शाक्यगणके विश्रामागार गया था; उस समय शाक्यकुमारगण उच्च आसनपर बैठ परस्पर कौतुक करते रहा, मुझे देख किसीने बैठनेको न कहा। बुद्धदेवने उत्तर दिया, शकुन जैसे अपने आसन पर बैठ यथेच्छा आचरण करता, वैसे ही शाक्यगण भी अपने कपिलवास्तु नगरमें यथेच्छा व्यवहार बना सकता है। ऐसे सामान्य कारणसे आपको कष्ट पहुंचना उचित नहीं ठहरता।

'अम्बष्ठने कहा,—हे गोतम! वर्ण चार होता है—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। उसमें क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ब्राह्मणका परिचारक रहता है। इसीसे शाक्यगण ब्राह्मणसे हीन होता और उसका वैसा व्यवहार अनुचित ठहरता है। यह बात सुन भगवान् मन ही मन ऐसी चिन्ता करने लगे,—तरुण अम्बष्ठ अति मूर्ख है, इसीकारण वह शाक्यगणको नीच बताता और निन्दा करता है। उन्होंने प्रकट भावमें पूछा,—हे अम्बष्ठ! आपका कौन गोत्र है? अम्बष्ठने कहा,—मैं कृष्ण गोत्रसे उत्पन्न हुआ हूं। बुद्धदेव फिर बोल उठे,—आपके मातृ और पितृकुलको वंशपरम्परावाले नाम और गोत्रको देखते प्रतीयमान होता, कि शाक्यगण आपका प्रभुस्थानीय और आप उसके दासीपुत्र हैं। शाक्यगणके पूर्वपुरुष इक्ष्वाकु रहे। उन्होंने अपनी प्रियतमा महिषीके पुत्रको अधिकार देनेकी इच्छासे ज्येष्ठ कुमारगणको राज्यसे निकाल दिया था। वह राज्यसे वहिष्कृत हो हिमवन्त प्रदेशके शाकवनमें जा रहने लगा और जातीय पवित्रताकी रक्षाके निमित्त यथोचित विवाहादि सम्बन्धसे आवद्ध हुआ। कुछ काल बाद राजाने अमात्यगणसे पूछा था,—अब कुमारगण कहां रहता है? उसपर अमात्यगणने कुमारोंकी अवस्था यथायथ बता दी। राजा आप ही आप कहने लगे, कि कुमारगणका आचरण शक्य अर्थात् धर्मसङ्गत रहा। उसीसे शाक्य नाम निकला और वही शाक्यगणके पूर्वपुरुष रहे। इक्ष्वाकुराजके 'दिसा' नाम्नी कोई दासी थी, उसीने कृष्णको प्रसव किया था। उस नवजात शिशुने जन्म मात्रसे माताको पांच प्रकार गर्भमल परिष्कार करने और उससे अनेक उपकार पहुंचनेको कहा। हे अम्बष्ठ! इस समय मनुष्य जैसे पिशाचको पिशाच बताता, वैसे हो 'कृष्ण' को सब लोग पिशाच समझते थे। इसीसे कार्ष्णायण गोत्रको उत्पत्ति हुयी है। वही शिशु कृष्णगोत्रका आदिपुरुष रहा।

'इसीतरह हे अम्बष्ठ! आपके पितृ-मातृकुलवाले पूर्वपुरुषगणका नाम और गोत्र सुननेसे मालूम पड़ता, कि आप लोग शाक्यगणके दासीपुत्र लगते हैं। अम्बष्ठसे ऐसी बात होनेपर समागत जनवृन्दने कहा,—हे भगवन् गोतम! आप अम्बष्ठको बालक, मूर्ख और दासीपुत्र बता गौरव न घटायें। अम्बष्ठ सद्वंशजात और कुलपुत्र हैं। भगवान् बोले,—आप यदि अम्बष्ठको नीचकुलजात, दासीपुत्र और मेरे साथ वाद प्रतिवादके अयोग्य समझें, तो उनके बदले आप ही मेरे साथ उत्तर प्रत्युत्तर करें। फिर यदि आप अम्बष्ठको उच्चकुलजात ठहरायें, तो मेरे साथ उन्हें उत्तर प्रत्युत्तर करनेको कहें। भगवान्ने अम्बष्ठसे

कहा,—इसबार आप मेरे प्रश्नका यथायथ उत्तर दीजियेगा। कार्ष्णायण गोत्रकी उत्पत्ति और उसके पूर्वपुरुषका कौन हाल आपने आचार्य, महल्लोक या वृद्ध ब्राह्मणसे सुना है ?

उसपर अम्बष्ठने तुष्णीभाव अवलम्बन कर कियत्-क्षण बाद कहा,—हे गोतम। आपने जैसा बताया, मैंने भी वैसा ही सुना है। इसपर समवेत जनवृन्द नाना प्रकार निन्दा करने और कहने लगा,—यह कुलपुत्र नहीं ठहरता, नीच वंशोत्पन्न और दासीपुत्र लगता है। उपस्थित जनवृन्दका वैसा मनोभाव देख बुद्धदेवने अम्बष्ठके आदिपुरुष 'कृष्ण' ऋषिका एक उपाख्यान सुनाया और उसी प्रसङ्गमें राजा इक्ष्वाकुके उन्हें कन्या देनेकी बात भी कह डाली।

बुद्धके समय अम्बष्ठ और ब्राह्मणसमाज। भगवान्‌ने पूछा,—हे अम्बष्ठ! यदि क्षत्रियकुमार ब्राह्मण-कन्यासे सहवास करे और उसके सहवाससे पुत्र उत्पन्न हो, तो उस पुत्रको ब्राह्मणगणके मध्य जल वा आसन मिलेगा या नहीं? अम्बष्ठने उत्तर दिया,—उसे मिलेगा। भगवान्‌ने फिर पूछा,—यज्ञ, श्राद्धादि और अन्यान्य क्रियाकलापमें वह पुत्र निमन्त्रित होता है या नहीं? अम्बष्ठने कहा,—वैसा ही हुआ करता है। भगवान् बोले,—ब्राह्मणगण उसे वेदमन्त्र देता है या नहीं? अम्बष्ठने बताया,—वेदमन्त्र उसे दिया जाता है। भगवानने प्रश्न किया,—ब्राह्मणकन्याके साथ उसका विवाहादि होता है या नहीं? अम्बष्ठने बताया,—होता है। भगवान्‌ने पूछा,—वह राज्यपर अभिषिक्त किया जाता या नहीं? अम्बष्ठने जवाब दिया,—यह कैसे होगा, क्योंकि उसका मातृकुल क्षत्रिय नहीं ठहरता।

बुद्धदेवने फिर पूछा,—इसीतरह किसी क्षत्रिय-कन्या साथ ब्राह्मण कुमारके सहवास फलसे पुत्र होनेपर वह भी पूर्वोक्तरूपसे सकल विषयका अधिकारी बन राजसिंहासनके योग्य समझा जाता है या नहीं? अम्बष्ठने उत्तर दिया,—यह कैसे होगा, कारण उसका पिता क्षत्रिय नहीं ठहरता। बुद्धदेवने बताया,—सुतरां क्षत्रिय ही श्रेष्ठ समझ पड़ता, ब्राह्मण उसकी अपेक्षा हीन है।

बुद्धदेवने फिर पूछा,—यदि कोई ब्राह्मण किसी अपराधसे मस्तक मुंड़वा देशसे निकाला जाये, तो वह ब्राह्मणगणके मध्य जल और आसन पानेका अधिकारी होता या नहीं। अम्बष्ठने उत्तर दिया,—नहीं होता। बुद्धदेवने कहा,—यज्ञ, श्राद्ध और अन्यान्य क्रियाकलापमें उसे भोजन देते हैं या नहीं। अम्बष्ठने कहा, नहीं देते। बुद्धदेवने पूछा, ब्राह्मण-कन्याके साथ उसका विवाहादि होता है या नहीं। अम्बष्ठने बताया, वह भी नहीं होता।

बुद्धदेव फिर बोले, क्षत्रियगण यदि कारणवश किसी क्षत्रियको मस्तक मुंड़वा निकाल बाहर करे, तो वह ब्राह्मणगणके मध्य जल वा आसन पाता है या नहीं। अम्बष्ठने उत्तर दिया, पाता है। बुद्धदेवने , यज्ञ और श्राद्धादिमें उसे भोजन देते हैं या नहीं। अम्बष्ठने कहा, देते हैं। बुद्धदेवने दूसरा प्रश्न उठाया, ब्राह्मणगण उसे मन्त्र देगा या नहीं और ब्राह्मण-कन्याके मध्य उसका विवाहादि होगा या नहीं। अम्बष्ठने कहा,ऐसा ही होते रहता है। भगवान् बोल उठे, कोई क्षत्रिय जब इसतरह मुण्डितमस्तक देशसे निकाला जाता, तब वह अत्यन्त हीन अवस्थाको प्राप्त होता; किन्तु वैसी हीन अवस्थामें भी क्षत्रिय ब्राह्मणकी अपेक्षा श्रेष्ठ ठहरता है।

उक्त विवरणसे भी अच्छीतरह समझ पड़ता है, कि बुद्धदेवके अभ्युदयकालमें क्षत्रियप्राधान्य हो रहा। अम्बष्ठ ब्राह्मण होते भी उनके वंशमें क्षत्रियादिके संश्रवका अभाव न था और ब्राह्मण क्षत्रियसे हीन गिना जाता था। अम्बट्ठ सुत्तके उक्त 'अम्बट्ठ' शब्दको कोई कोई रूपक और जातिवाचक बतायेंगे। उनके मतसे अम्बष्ठ और क्षत्रिय जातिके मध्य सामाजिकता पर कुछ गड़बड़ रहा, बुद्धदेवने उसीकी मीमांसा लगा दी थी। किन्तु दीघनिकायकी टीका एवं भोट देशके दुल्व ग्रन्थमें अम्बट्ठ सुत्तका तिब्बतीय अनुवाद विद्यमान है। उसमें अम्बष्ठ शब्दको स्पष्टरूपसे व्यक्ति विशेषका नाम ही बताया है।

अम्बष्ठ कायस्थ—युक्तप्रदेशीय कायस्थगणके कुलग्रन्थधृत पद्मपुराणीय वचनसे समझ पड़ता, कि चित्रगुप्तके

पुत्र हिमवानसे अम्बष्ठ नामक कायस्थ-शाखाका उत्पत्ति हुयी है। इस जातिके मध्य भी बहुतसे लोग चिकित्साशास्त्रमें पाण्डित्य देखा गये हैं। अद्यापि उनका आचार-व्यवहार ब्राह्मण-क्षत्रियके तुल्य ही निकलेगा। युक्तप्रदेशके कायस्थ-समाजमें प्रवाद है कि अम्बष्ठ कायस्थके पूर्वपुरुषोंने गिरनारपर रहने और अम्बा देवीकी पूजा करनेसे अम्बष्ठ नाम पाया।* गरुड़पुराणके ५५वें अध्यायमें अम्बष्ठ प्रान्तका वर्णन कर्णाट, लाट, कम्बोज और आनर्तके साथ आया है।† सिकन्दरकी चढ़ाईका हाल लिखते अरियनने(Arrian) पञ्जाबके दक्षिण सुराष्ट्र वा गुजरात हो अम्बष्ठ बताया। इन कायस्थोंने अम्बष्ठ नाम इसी स्थानके कारण पाया है। आजकल युक्तप्रदेशमें अम्बष्ठ कायस्थ न मिलेगा। कितनों हीके मतानुसार बङ्गालमें इन कायस्थोंको अम्बष्ठ या वैद्य कहते हैं।* किन्तु बङ्गालका अम्बष्ठ अपनेको सेनराजवंशका स्वजातीय बतायेगा। परन्तु सेनवंश-शिरोमणि विजयसेनके शिलालेखमें उन्होंने अपनेको "ब्रह्म-क्षत्रिय" और उनके पौत्र लक्ष्मणसेनवाले ताम्रफलकमें "कर्णाट-क्षत्रिय" लिखा है। कर्णाटकमें आज भी ब्रह्मक्षत्रिय मिलते, जो कायस्थ की तरह लेखकका व्यवसाय चलाते हैं। सेनोंके पूर्वपुरुष कर्णाटकमें रहते थे। सम्भव है, कि उनके साथ अम्बष्ठ भी बङ्गाल गये और सम्बन्ध-सूत्रमें बंधे होंगे। बंगला अम्बष्ठजातिके कुलग्रन्थमें लिखा है, कि अम्बष्ठोंके स्वजाति नन्द्रादि महाराष्ट्र देशमें रहते थे—

"नन्द्रादयः महाराष्ट्रे निवसन्ति ये केचन।" (भरतमल्लिक)

अम्बष्ठका, अम्बष्ठकी देखो।

अम्बष्ठकी (सं॰ स्त्री॰) अम्बष्ठं कायति रोगविनाशाय ग्रहणार्थं माह्वयति, अम्बष्ठ-कै-क। १ लताविशेष, पाठा, हरजेवरी। Stephania hernondifolia. इसके पर्याय हैं—पाठा, अम्बष्ठा, कुचेली, पायचेलिका, एकचाला, रसा, तिक्ता, प्राचीना, एकाष्ठिका, वृका, वृककर्णी, स्थापनी, श्रेयसी, रसा, वनतिक्तिका, अविद्धकर्णी, अविद्धकर्णा, अम्बष्ठका, यूथिका, विद्धकर्णिका, दीपनी, तिक्तपुष्पा, वृहत्तिक्ता, शिशिरा, वृकी, मालती, देवा, वृत्तपर्णा। यह लता देखनेमें बिलकुल गुर्च-जैसी होती है। गुर्चकी बनिस्बत इसकी पत्ती छोटी और डाल सीधी रहेगी। किन्तु गठनमें कोई प्रभेद नहीं पड़ता। बङ्गालके जङ्गलों और बागोंमें यह बहुत उत्पन्न होती है।

२ भार्गी, भारङ्गी। ३ लक्ष्मणामूल, बीमारीके निशानकी जड़। ४ अम्बलोणी, लोनिया। ५ यूथिका, जूही। ६ मयूरशिखा, कोकन। ७ आम्रातक, अमड़ा। ८ माचिका, साकुरुण्ड, पुदीना।

अम्बष्ठा (सं॰ स्त्री॰) अम्बा-स्था-क। अम्बष्ठकी देखो।

अम्बष्ठादि (सं॰ पु॰) पाठादिगण विशेष। इसमें निम्नलिखित द्रव्य रहेंगे,—अम्बष्ठा, धातकी, कुसुम, समङ्गा, कट्वङ्ग, मधुक, विल्व, पेशी, रोध्र, सावरोध्र, पलाश, नन्दीवृक्ष और पद्मकेशर। यह पक्वातीसारनाशक, सन्धानीय, पित्तमें हितकर और व्रणमें रोपण होता है।

"गणौ प्रियङ्ग्वम्बष्ठादी पक्वातीसारनाशनौ।
सन्धानीयौ हितौ पित्ते व्रणानाञ्चापि रोपणौ॥" (सुश्रुत)

अम्बष्ठिका, अम्बष्ठकी देखो।

अम्बष्ठी (सं॰ स्त्री॰) कटुकाभेद, किसी किस्मकी कुटकी।

"रक्तकाण्डेऽरुहाम्बष्ठी कटुका चापरा स्मृता।" (द्रव्याभिधान)

अम्बहट—युक्तप्रदेशके सहारनपुर ज़िलेका एक शहर। यह सहारनपुरसे दक्षिण-पश्चिम आठ कोस अक्षा॰ २९° ५०′ १५″ उ॰ और द्राघि॰ ७७° २२′ ३५″ पू॰ पर अवस्थित है। इसका रक्बा कोई ५५ एकर पड़ेगा। यहां सैयदोंका पीरज़ादा खान-दान रहता है। शहरके बीच शाह अबुल मसलीकी क़ब्र बनी, सन् ई॰के १७वें शताब्द जिनका नाम खूब बढ़ गया था। पीरज़ादे आज भी माफ़ी पाते और अपना एक प्रतिनिधि किलेमें रखते हैं। वास्तविक यह मुगल फ़ौजकी छावनी रहा।

---

* W. Crooke's Tribes and Castes of N. W. P and Oudh, Vol. III. p. 190.

† "कर्णाटा कम्बोजघण्टा दक्षिणापथवासिनः॥
"अम्बष्ठा द्रविडा लाटाः काम्बोजाः स्त्रीमुखाः शकाः।
आनर्तवासिनश्चैव ज्ञेया दक्षिणपश्चिमे॥" (गरुड़पुराण ५५।१५)

अम्बहता—उड़ीसाके बालेश्वर ज़िलेका एक जनपद। यहां एक क़िला बना हुआ है।

अम्बा (सं० स्त्री०) अम्बति स्नेहात् गच्छति, अम्ब-अच् स्त्रीत्वादाकारः। १ माता, मा। २ अम्बष्ठा, पुदीना। ३ पाठा, हरजेवरी। ४ दुर्गा। ५ अप्सरस् विशेष, किसी परीका नाम। ६ काशिराजकी जेष्ठा कन्या। भीष्म,अपने सौतेले भाई चित्रवीर्यके लिये अम्बा और इनकी दो बहनको स्वयंवर-सभासे चोरा लाये थे; किन्तु पहले मनही मन उनके शाल्वराजपर आसक्त हो जानेसे उन्हें वापस भेजा। शाल्वके अपहृता कन्यासे विवाह करनेमें असम्मत होनेपर अम्बाने कठोर तपस्याकर देहको छोड़ दिया। भीष्म ही अम्बाके इतने कष्टका कारण बने थे। इसीसे महादेवके वरसे परजन्ममें अम्बाने शिखण्डीका अवतार लिया। शिखण्डीके पीछे ही महाभारतमें भीष्म मारे गये थे। ७ पाण्डुमाताकी भगिनी। ८ ज्योतिषमें चतुर्थ भाव-वाचक शब्द विशेष।

भारतवर्षके दक्षिण अञ्चल प्रायः प्रत्येक ग्राममें अम्बा देवीकी पूजा होती है। देवीकी कोई विशेष मूर्ति न रहेगी। पुरोहित पत्थरके टुकड़े पर तेल और सिन्दूर चढ़ा पुष्पादिसे अम्बाको,पूजते और छाग-मेषादिको बलि देते हैं। गांवमें हैज़ा, चेचक, महा-मारी प्रभृति उपद्रव उठनेसे अम्बाकी पूजा धूमधामसे की जायेगी।

अम्बागङ्गा (सं० स्त्री०) सिंहलकी कोई नदी।

अम्बागढ़ चौकी—मध्यप्रदेशके चांदा ज़िलेकी जमी-न्दारी। यह अक्षा० २०° ३५´ तथा २०° ५१´ २०´´ उ० और द्राघि० ८०° ३१´ १५´´ एवं ८०° ५२´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २०८ वर्ग-मील लगेगा। इसमें जङ्गल और पहाड़ बहुत पड़ता, किन्तु रायपुरकी ओर खेती भी अच्छीतरह होती है। कच्चा लोहा यहां खूब निकलता है।

अम्बाजम्बन् (सं० क्ली०) तीर्थविशेष।

अम्बाजी-दुर्ग—महिसूर राज्यके कोलार जिलेका एक पहाड़। यह समुद्रतलसे ४३९८ फोट उच्च और अक्षा० १३° २३´ ४०´´ उ० एवं द्राघि० ७८° ३´ २५ पू० पर अवस्थित है। टीपू सुलतानने पहले यहां क़िलेबन्दी की थी। इसका जलवायु महिसूरमें अतिशय स्वास्थ्यकर है।

अम्बाड़ा, अम्बाला (सं० स्त्री०) माता, मा।

अम्बाद—दक्षिण-हैदराबादका कोई तअल्लुक़। यह हैदराबादके उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। रक़बा ८६० वर्गमील पड़ेगा। इसमें अम्बाद, जामखेर, रोहिलगढ़, बोहामफळव, गुनसोंगी और एकतूनी प्रधान नगर हैं। महाराष्ट्र-पराभवके पश्चात् यह अंगरेजोंके हाथ लगा था, किन्तु थोड़े ही दिन बाद निज़ामको सौंपा गया।

अम्बापाटक—गुजरात प्रान्तका एक ग्राम। दुर्गाभट्टके पुत्र और राष्ट्रकूट-नृपति कर्कके समर-सचिव नारा-यणने नागरिकावाले जैनमन्दिरमें इस ग्रामका कुछ क्षेत्र उत्सर्ग किया था।

अम्बापु, आम्बष्ठ देखो।

अम्बापेट—मन्द्राज प्रान्तके गोदावरी जिलेका एक राज्य। इसका राजस्व कोई २४२१०) रु० देना पड़ता है।

अम्बाप्रसाद—सुप्रसिद्ध हिन्दी कवि पद्माकरके एक पुत्र।

अम्बाभोना—बेहार और उड़िष्याप्रान्तके सम्बलपुर ज़िलेका एक गांव। यह बड़गढ़से उत्तर दश कोस पड़ता है। सम्बलपुरी राजावोंके समय यहां क़िले-बन्दी रही। किसी प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष आज देखनेमें आयेगा। केदारनाथ महादेवका प्राचीन प्रस्तरमन्दिर कोई सौ वर्ष हुये सम्बलपुर-नरेश राजा जैतसिंहके दीवान् रखनी रायने बनवाया था।

अम्बाला (सं० स्त्री०) अम्बति शब्दं लाति धत्ते अम्बाला-क। १ माता। २ पञ्जाब प्रान्तका एक ज़िला। चौदहवीं शताब्दीमें अम्बा नामक जनैक राजपूतने इस नगरको बसाया था। इसीसे लोग इसी अम्बाला कहते हैं। यह ज़िला अक्षा० २९° ४९´ एवं ३१° १२´ उ० और द्राघि० ७६° २२´ तथा ७७° ३९´ पू०के मध्य अवस्थित है। रक़बा कोई २५७० वर्गमील लगेगा। इससे उत्तर-पूर्व हिमालय, उत्तर सतलज, पश्चिम पटियाला राज्य एवं लुधियाना ज़िला और दक्षिण कर्नाल जिला तथा यमुना नदी पड़ती है।

इस ज़िलेकी भूमि सतलज और सिन्धुके बीच समान बैठेगी। किन्तु पूर्वकी ओर घना जङ्गल और पहाड़ मिलता है। उसी पहाड़से घावरा नदी निकली थी। मोरनीके जङ्गलमें दो अच्छे झील हैं। लोगोंने उन्हें पूज्य एवं पवित्र माना है। बड़े झीलपर श्रीकृष्णचन्द्रका मन्दिर मिलता, जिसमें प्रतिवर्ष धूम-धामसे मेला लगता है। दक्षिण-पश्चिम ओर इसकी भूमि ढल गयी है। ज़िलेमें चारो ओर छोटे-छोटे असंख्य नदी नाले देख पड़ते हैं। घावरा नदीके पानीसे खेत सींचे जाते हैं। वर्षामें नदी उमंड़नेसे डाक हाथीपर आती-जाती है। दक्षिणमें आम बहुत होता है। कलेसरके १३८१७ एकर जङ्गलमें सालका वृक्ष भरा रहता है। छोटे छोटे पहाड़ी नालोंकी बालूमें थोड़ा बहुत सोना भी हाथ लग जाता है। किन्तु चूनेका कंकड़ ढेरका ढेर मिलेगा। जङ्गलमें शिकार की कोई कमी नहीं देखते, हिंसक जन्तु भी घूमते फिरते हैं।

इतिहास—अम्बाला भारतीयोंका आदि स्थान है। सरस्वती और घावराके बीचकी भूमि पवित्र मानी जायगी। सरस्वती नहाने दूर-दूरसे लोग आते हैं। किनारे-किनारे सुन्दर मन्दिर अपनी शोभा देखायेंगे। थानेश्वर और पेहेवा नगर हृदयको अपनी ओर खींच लेता है। थानेश्वरके सरस्वती कुण्डमें प्रति वर्ष कोई तीन लाख मनुष्य नहाते हैं। चीना परिव्राजक यूअन चुअङ्ग सन् ई०के७वें शताब्द यहां आये थे। उन्होंने इस प्रदेशको सभ्य एवं सुसम्पन्न पाया। उस समय राजधानी स्रुघ्नमें प्रतिष्ठित थी। कितनीही आविष्कृत मुद्रासे प्रमाणित होता है, कि मुसल्मानों के भारतविजय तक स्रुघ्नमें राजधानीका ठाट-बाट रहा।

अम्बालाके आसपासकी भूमि ग़ज़नवी और गोरी मुसल्मानोंके हाथ चली गयी थी। सन् ई० के १४ वें शताब्द फ़ीरोज़शाह बादशाहने हिसारमें पानी पहुंचानेको एक नहर बनवायी। सन् ई० के १८ वें शताब्दान्त सतलजसे दक्षिण सिख-राज्य प्रतिष्ठित हो गये थे। जब महाराष्ट्रों और अफ़गानोंने मुसल्मान साम्राज्यको विच्छिन्न किया, तब कितने ही सिख-सरदार सतलज और यमुनाके बीच राजा बन बैठे। सन् १८०३ ई० मे महाराष्ट्र अंगरेज़ोंसे हारे थे। उस समय यह सारी भूमि पटियाला, झीन्द, नाभा आदि राज्यो में बांटी गयी। किन्तु सन् १८०८ ई० में रणजित् सिंहने पञ्जाबसे कितनी ही सिख फ़ौज ले सतलजको पार किया और उस ओरके नृपतियोंसे राजस्व मांगा था। उस पर सिख-नृपतियोंने बिगड़ कर अंगरेज़ोंसे साहाय्य-प्रार्थना की। अंगरेज़ोंने बीचमें पड़ झगड़ा मिटा दिया था। सन् १८०९ ई० में अंगरेज़ोंसे जो सन्धि हुयी, उसके अनुसार रणजित् सिंहने छोटे राज्यों पर आक्रमण न करने का वचन सुनाया। सन् १८११ ई० की घोषणाने आभ्यन्तरिक युद्ध भी रोक रखा था। किन्तु राजा पूर्ण रूपसे स्वतन्त्र रहे। उन्हें किसी प्रकारका कर देना पड़ता न था। सन् १८४५ ई०में प्रथम सिख-युद्ध हुआ। उस समय सिख-राजावोंका अधिकार घटाया और अम्बालेमें पोलिटिकल एजण्टकी जगह कमिश्नर बैठाया गया था। सन् १८४९ ई०में जब दूसरा सिख-युद्ध हुआ और पञ्जाब अंगरेज़ी राज्यमें मिला, तब राजाओंका बचा-बचाया स्वत्व (स्वतन्त्रता) भी जाते रहा। सन् १८५७ ई०को बलवेके समय अम्बालेमें कितनी ही आग लगी और गड़बड़ पड़ी थी, किन्तु उससे कोई गहरी क्षति न हुयी और न इसके प्रबन्धमें ही विशेष असुविधा आयी।

वाणिज्य व्यवसाय—की धूम कृषिप्राधान्यके कारण अम्बाले ज़िलेमें बहुत कम देख पड़ेगी। रूपरमें लोहेकी छोटी-छोटी चीज़, अम्बालेमें कालीन और प्रत्येक ग्राममें मोटा कपड़ा बनता है। वाणिज्यका मुख्य स्थान अम्बाला, रूपर, जगाधरी, खिज़राबाद, बूरिया और खरार है। इस ज़िलेमें सिन्धु-पञ्जाब और दिल्लीसे रेल आती है। जगाधरीसे कुछ मील दक्षिण यमुना और अम्बालेसे छः मील घावरा पर लोहेका अगरेज़ी पुल बंधा पायेंगे। कर्नालसे पक्की सड़क इस ज़िलेमें होकर पटियाला राज्यको चली गयी है। दूसरी पक्की सड़क अम्बालेसे कालका जायेगी। रेल और सड़कके किनारे तार लगा है।

३ इस ज़िलेकी एक तहसील। इसका क्षेत्रफल ३६६ वर्गमील पड़ेगा।

४ इसी ज़िलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० ३०° २१´ २५´´ उ० और द्राघि० ७६° ५२´ १४´´ पू० पर अवस्थित है। इसकी भूमि घाघरा नदीके तीन मील पूर्व समुद्रतलसे १०४० फीट उच्च बैठेगी। यहां अंगरेज़ी फौजकी छावनी और ज़िलेकी कचहरी बनी है। किसी अम्बा राजपूतने इसे सन ई०के १४वें शताब्द बसाया था, जिसके अनुसार इसका नाम भी चल पड़ा। सन १८०८ ई०में जब सतलजके उस पारवाला राज्य अंगरेज़ोंके अधिकारमें आया, तब अम्बाला राज्यपर सरदार गुरुबख्श सिंहजाकी विधवा पत्नी दया कुंवर आधिपत्य चला रही थीं। सन १८२३ ई०में दया कुंवरके मरनेपर सतलजके उस पारवाले राज्यका प्रबन्ध बांधनेको अम्बालेमें पोलिटिकल एजण्ट बैठाया गया। सन १८४३ ई०में नगरसे दक्षिण छावनी पड़ी थी। सन १८४८ ई०को पञ्जाबके अंगरेज़ी राज्यसे मिलनेपर अम्बालेमें ज़िलेका हेड क्वार्टर आया। अम्बाला नगर नये और पुराने दो भागमें विभक्त है। पुरानेकी राह ख़राब और नयेकी जगह अच्छी निकलेगी। सन १८६९ ई०को अफ़ग़ानस्थानके भूतपूर्व अमीर शेर अली जब भारत आये, तब अम्बालेमें आलीशान दरबार लगा था। नगरमें अन्नका बड़ा बाज़ार जमता है। अदरक और हलदी भी ढेरकी ढेर बिकती है। यहांसे सूती कपड़ा, अनाज और क़ालीन चालान किया तथा विलायती कपड़ा, लोहा, नमक, ऊन एवं रेशम मंगाया जाता है।

अम्बाला शहरकी चारो ओर शहर पनाह है। अब यह जङ्गी छावनीके नामसे विशेष प्रसिद्ध है। अम्बाला प्रदेशके अन्तर्गत कोटाहा नामक एक स्थान है। वहांके मरणी नामक जङ्गलके दो ह्रद विख्यात हैं। उन तालावोंका जल कभी नहीं सूखता। उनके किनारे किनारे अनेक देवालय हैं। इस प्रदेशके अनेक स्थानोंमें पहाड़के झरनोंमें बांसके नल लगे रहते हैं। नलके अन्दरसे पानी गिरता है। जाड़े और गर्मीके दिनोंमें स्त्रियां अपने अपने बच्चोंको घासके तकियेके सहारे उन्हीं नलोंके नीचे सुला देती हैं। ब्रह्मतालुपर झरझर पानी गिरता रहता है। कहा जाता है, कि रोग हो चाहे न हो, बच्चोंको ऐसी चिकित्सा न करने से कितने ही बचपनमें ही प्राणत्याग देते हैं। किन्तु इस प्रक्रिया द्वारा सर्दी, खांसी, ज्वर, शीतला प्रभृति कोई रोग नहीं होता।

अम्बाला शहर से प्रायः १७ कोस पर ईशान कोणमें श्रीमूर वा नाहन राज्य है। यहां राजा वाणका बन है। इस प्रदेशमें तांबा, सीसा, लोहा, और नमक पैदा होता है। अम्बालासे शिमला पहाड़ ४० कोस है।

अम्बालापुले—मन्द्राज प्रान्तके तिरुवांकोर राज्यका एक तअल्लुक। इसका क्षेत्रफल १२१ वर्गमील लगता है।

अम्बालिका (सं० स्त्री०) अम्बालेव, अम्बाला स्वार्थे कन् ङ्गस्व: इत्वम्। १ माता, मा। २ काशिराजकी कनिष्ठा कन्या। स्वयम्बर-सभासे भीष्मने इन्हें चोरा अपन सौतिले भाई चित्रवीर्यको व्याह दिया था। चित्रवीर्यके मरनेपर इन्होंके गर्भ और व्यासके औरससे पाण्डुराजने जन्म लिया। ३ अम्बष्ठा, पुदीना। ४ पाठा, हरजेवरी।

अम्बाली—बड़ोदा राज्यके सिनोर सबडिविज़नका एक गांव। यहां दत्तात्रेयकी माता अनुसूयाका पवित्र मन्दिर बना है। कहते हैं, कि इस मन्दिरके नीचेकी मट्टी या देवीके स्नानका जल लगानेसे कुष्ठरोग मिट जायेगा। कितने ही कोढ़ी इस ग्राममें टिके रहते हैं। श्रीमान् गायकवाड़ने कोढ़ियोंके लिये अस्पताल और भिक्षुकोंके लिये अन्नक्षेत्र चला रखा है।

अम्बासमुद्रम्—मन्द्राज प्रान्तवाले तिनेवली ज़िलेके अपने तअल्लुक़का हेड क्वार्टर और नगर। यह अक्षा० ८° ४२´ ४६´´ उ० एवं द्राघि० ७७° २९´ १५´´ पू० पर अवस्थित है। इसमें सबडिविज़नल आफ़िसर वास करते हैं।

अम्बि (वै० स्त्री०) १ जल, पानी। २ स्त्री, माता, धात्री, औरत, मा, धाया।

अम्बिका (सं० स्त्री०) अम्बेव, अम्बा स्वार्थे कन्

कृत्य: हलम्। १ माता, मा। २ दुर्गा। ३ श्वेतांवर जैनको शासन-अधिष्ठात्री देवी। इसका एक मन्दिर गिरनार पर्वतपर है, इसको जैन, अजैन सब पूजते हैं। अजैन लोग इसको अम्बाका मन्दिर कहते हैं। ४ कटुकी, कुटुकी। ५ अम्बष्ठा, पुदीना। ६ मायाफलवृक्ष, मैनफल। ७ काशि-राजकी मध्यमा कन्या। स्वयम्वर-सभासे बलपूर्वक हरणकर भीष्मने इन्हें विचित्रवीर्यसे व्याह दिया था। विचित्रवीर्यके मरनेपर इनके गर्भ और व्यासके औरससे अन्धराज धृतराष्ट्रने जन्म लिया।

अम्बिका—१ बंबई प्रान्तके सूरत जिलेकी एक नदी। यह बांसदा पहाड़से निकल बड़ोदा राज्यमें बहती है। फिर पश्चिम ओर दो धारामें बंट इसे सूरत जिलेमें पहुंचते पायेंगे। वहांसे यह चिखली और जलालपुरके बीच घूम-घूम चलती और पूर्णासे दक्षिण साढे सात कोस पर समुद्रमें गिरती है। मुंहानेसे कोई छः कोस गणदेवी नगर तक इसकी लहर जायेगी। समुद्रसे कोई तीन कोस इस नदी पर ८७५ फीट लंबा और २८ फीट ऊंचा रेलवेका पुल बना है। अम्बिकामें कावेरी और खरेरा दो नदी जा मिली है। सङ्गमके नीचे यह फैलकर चौड़ी खाड़ी बनती है। विलमोरे तक बड़ा जहाज जा सकेगा। २ बङ्गालके वर्द्धमान जिलेका एक गांव। कालना देखो।

अम्बिकादत्तव्यास—इनका निवासस्थान श्रीकाशीधाम रहा। सन् १८८८ ई०में यह जीवित थे। इन्होंने हिन्दी लेखकी बड़ी उन्नति की। कितने ही हिन्दी नाटक इनकी लेखनीसे अङ्कित हुये हैं। स्वर्गीया महारानी विक्टोरियाकी जुबिलीपर इन्होंने 'भारत-सौभाग्य' नामक नाटकग्रन्थ लिखा था। बङ्गला उपन्यास 'मधुमत'का इन्होंने बहुत अच्छा हिन्दी अनुवाद उतारा है।

अम्बिकापति (सं० पु०) अम्बिकाके स्वामी, शिव।

अम्बिकापुत्र (सं० पु०) धृतराष्ट्र।

अम्बिकाप्रसाद—विहारप्रान्तके शाहाबाद ज़िलेके कोई कवि। इन्होंने भोजपुरी भाषामें कितने ही गीत बनाये हैं। गीत, बहुत उम्दा न ठहरते भी रचयिताकी मातृभाषाके खासे आदर्श है।

अम्बिकाप्रसाद मिश्र—गयादत्तके पुत्र तथा बहोरन मिश्रके पौत्र थे। इन्होंने ही बेतियाके महाराज श्रीराजेन्द्रकिशोरसिंहकी आज्ञानुसार, १८५४ ई०में 'वैधहिंसावतिमिरमार्तण्डोदय' नामक संस्कृत ग्रन्थ रचना किये थे।

अम्बिकेय, आम्बिकेय (सं० पु०) अम्बिकाया अपत्यम्, अम्बिका-ढ ढक्। १ गणेश। २ कार्तिकेय। ३ धृतराष्ट्र।

अम्बिकेयक, अम्बिकेय देखो।

अम्बिवाली—बंबई प्रान्तके थाना जिलेका एक गांव। इस ग्रामसे कोई आध मील दूर जमब्रुगके पास इसी नामक एक गुहाभी वर्तमान है। इसे लोगोंने एक पहाड़ी खोदकर बनाया था। गुहासे नदी किनारे तक एक ढालू चट्टान चली गयी है। इसमें एक बड़ासा चौखुण्टा दालान देखेंगे। वह ४२ फीट दैर्घ, ३८ फीट चौड़ा और १० फीट ऊंचा है। उसकी तीन ओर चार-चार कोठरी पायेंगे। तीनों ओरके आसपास एक नीचा तख़ता लगा है। सामने और दाहने दो दरवाजे देखेंगे। दरवाजोंसे राह बरामदेको जाती, जो ११ फीट पड़ता है। बड़ी दीवारकी बाहरी ओर नासिकवाली तृतीय गुहा—जैसी सजावट रही, वन्दनवार लटकता और फूल झूमता था। किन्तु अब टूट फुट जानेसे कुछ देख न पड़ेगा।

खम्भा भी नासिकके ही नमूनेका है। चोटी पर चपटा खपरा अधुरी हालतमें देखेंगे। बीचके जोड़े खम्भेमें अठखुण्टा और बाकी दोमें सोलह पहलुका शहतीर लगा है। राहमें पुरानेकी जगह नक्काशीदार दरवाजा लग जानेसे यह गुहा ब्राह्मणोंका मन्दिर हो गया। बरामदेके दूसरे खम्भे पर दरवाजेकी बायीं ओर ऊपरसे नीचेको पाली भाषामें कोई लेख लिखा है। खम्भेके बीचवाले जोड़े पर भी अक्षरका चिह्न देखेंगे। किन्तु वह पढ़नेमें बिलकुल नहीं आता।

अम्बिवोख—बङ्गालदेशान्तर्गत दार्जिलिङ्ग नगरके प्रेम-मन्दिरका निकस्थान।

अम्बोर—बंबईप्रान्तको कर्णाटक जिलेके कोल्हापुर राज्यको एक छोटी नदी। यह चारणके पास वार्ना नदसे जा मिलती है।

अम्बु (सं० क्लो०) अमति गच्छति देशान्तरं अम्यते गम्यते वा प्राणिभिः, अम-उ बुगागमश्च। १ जल, पानी। २ वाला, कुसा घास। ३ लग्नसे चतुर्थ स्थान। ४ चार संख्या। ५ छन्दोविशेष। ६ बालक, बच्चा। ७ पुनर्णवा तैल।

अम्बुक (सं० पु०) १ श्वेतार्कमन्दार, सफेद अकोड़ा। २ रक्तैरण्ड, लाल रेंड़।

अम्बुकण (सं० पु०) अम्बुनः कणः, ६-तत्। जलकणा, पानीका बूंद। अम्बुकणा-जैसी रूप भी होता है।

अम्बुकण्टक (सं० पु०) अम्बुनि जले कण्टकः शत्रुः ७-६ वा तत्। कुम्भीर, नक्र, शेर-आबी, मगर, घड़ियाल, जो पानीका कांटा हो।

अम्बुकन्द (सं० पु०) शृङ्गाटक, सिंघाड़ा।

अम्बुकिराट, अम्बुकिरात देखो।

अम्बुकिरात (सं० पु०) अम्बुनि जले किरात इव हिंस्रः। कुम्भीर, नाकू, घड़ियाल, जो पानीमें शिकारीकी तरह निशाना लगाता हो।

अम्बुकोश (सं० पु०) अम्बु नि अम्बुनो वा कोशो वानर इव। १ शिशुमार, सङ्ग-माछी, गङ्गाका सूस। २ गोधा, गोह।

अम्बुकुक्कुटिक, अम्बुकुक्कुटी देखो।

अम्बुकुक्कुटी (सं० स्त्री०) जलकुक्कुटी, पनडुब्बी।

अम्बुकूर्म (सं० पु०) अम्बुनि कूर्म इव। शिशुमार, गङ्गामें रहनेवाला सूस।

अम्बुकृत (सं० त्रि०) अस्पष्ट रूपसे उच्चारण किया हुआ जो साफ साफ न बोला गया हो। व्यर्थ-जल्पित, जो बेहूदा बका गया हो।

अम्बुकृष्णा (सं० स्त्री०) जलपिप्पली, पानीकी पीपल।

अम्बुकेशर (सं० पु०) अम्बुनि जातः केशरो यस्य, बहुव्री०। छोलङ्ग नीबू।

अम्बुक्रिया (सं० स्त्री०) अन्तेष्टिसंस्कार, जो काम किसीके लिये मरनेपर किया जाता है।

अम्बुग (सं० त्रि०) जलमें गमन करनेवाला, जो पानीमें रहता हो।

अम्बुघन (सं० पु०) वर्षशिला, ओला, आस्मानसे गिरनेवाला पत्थर।

अम्बुचर (सं० त्रि०) अम्बुनि जले चरति, अम्बु चर-ट। जलचर, पानीमें फिरनेवाला, दरयायी। (पु०) २ कच्छप, जलपिपरी। ३ कनगुर।

अम्बुचामर (सं० क्लो०) अम्बुनः चामरमिव। शैवाल, सेवार जो चीज पानीपर पङ्केकी तरह फैल जाती हो।

अम्बुचारिणी (सं० स्त्री०) स्थलपद्मिनी, स्थलकमल, गुल-अजायब।

अम्बुचारिन् (सं० त्रि०) अम्बुनि चरति, अम्बु-चर-णिनि, ७-तत्। जलचर, पानीमें घूमनेवाला।

अम्बुज (सं० क्लो०) अम्बु नि जले जायते; जन-ड, ७-तत्। १ पद्म, कमल। २ सारसपक्षी। ३ चन्द्र, चांद। ४ कर्पूर, काफूर। ५ हिज्जलवृक्ष, समुद्रफल, पनियारी। (पु०-क्लो०) ६ शङ्ख। ७ वज्र। (त्रि०) ८ जलजात, पानीमें पैदा हुआ, दरयायी।

अम्बुज—एक कवि, कोई शायर। इनका जन्म सन १८१८ ई०में हुआ था। इन्होंने नीति और नखसिख पर अच्छी कविता बनायी है।

अम्बुजन्मन् (सं० क्लो०) अम्बुनो जन्म अस्य, बहुव्री०। १ पद्म। २ सारसपक्षी। (पु०-क्लो०) ३ शङ्ख।

अम्बुजभू (सं० पु०) ब्रह्मा, जो कमलसे उत्पन्न हो।

अम्बुजस्थ (सं० त्रि०) कमलपर बैठनेवाला, जो कमलपर बैठता हो।

अम्बुजामलकी (सं० स्त्री०) पानीयामलकी, भूइं आंवला।

अम्बुजासन (सं० पु०) अम्बुजं पद्मं आसनं यस्य बहुव्री०। १ ब्रह्मा। २ सूर्य। कर्मधा०। ३ योगका आसन विशेष, पद्मासन।

अम्बुट (सं० पु०) अश्मन्तकवृक्ष, पहाड़ी शिरीष।

अम्बुतस्कर (सं० पु०) सूर्य, आफ़ताब, जो पानीको चोराता हो।

अम्बुताल (सं० पु०) अम्बुनि तालयति तिष्ठति चुरा० तल् प्रतिष्ठायां अच्। शैवाल, सेवार।

अम्बुतिया—बङ्गाल प्रान्तके दार्जिलिङ्ग जिलेका एक गांव। सन् १८६० और १८६४ ई०के बीच दार्जिलिङ्ग-टी-कम्पनीने यहां चायका बाग लगाया था। इसका मदान ऐसा उमदा देख पड़ता, मानो प्रकृतिने उसे घुड़दौड़के लिये बना रखा है।

अम्बुद (सं० पु०) अम्बु ददाति, अम्बु-दा-क। १ मेघ, बादल। २ मुस्ता, मोथा। (त्रि०) ३ जल-दाता, पानी पहुंचानेवाला।

अम्बुधर (सं० पु०) अम्बुनि धरति, अम्बु-धृ-अच्। १ मेघ, बादल। २ नागर-मुस्ता, नागर-मोथा। ३ भद्रमुस्ता।

अम्बुधि (सं० पु०) अम्बु नि धीयन्ते ऽत्र, अम्बु-धा अधिकरणे कि। १ समुद्र, सागर। २ जलपात्र, पानी रखनेका बरतन। ३ चारसंख्या।

अम्बुधिप्रसवा (सं० स्त्री०) अम्बुधिमिव प्रभूतं प्रसूते, अम्बुधि-प्र-सू-अच् टाप्। घृतकुमारी, घीकुमार।

अम्बुधिफेन (सं० पु०) समुद्रफेन।

अम्बुधिस्रवा (सं० स्त्री०) गृहकन्या, घृतकुमारी, घीकुवार।

अम्बुनाम (सं० क्ली०) १ ह्रीवेर, ह्रसा घास।

अम्बुनिधि (सं० पु०) अंबुनः निधिः, ६ तत्। समुद्र, जलका भाण्डार, सागर, पानीका खज़ाना।

अम्बुप (सं० पु०) अंबुनि पाति रक्षति पिबति वा, अम्बु-पा-क। १ जलाधिप वरुण। २ समुद्र। २ चकुन्दा, पानेवार। (त्रि०) ४ जल पीनेवाला, जो पानी पीता हो।

अम्बुपत्रा (सं० स्त्री०) अंबुनि शीकराः पत्रे यस्याः, बहुव्री०। उच्चटाहृच, मुलहटी, मौरेठी।

अम्बुपत्रिका, अम्बुपत्रा देखो।

अम्बुपत्री, अम्बुपत्रा देखो।

अम्बुपद्धति (सं० स्त्री०) धारा, पानीका बहाव, चश्मा।

अम्बुपात (सं० पु०) अम्बुपद्धति देखो।

अम्बुप्रसाद (सं० पु०) अम्बुनि प्रसादयति; अम्बु-प्र-सद-णिच्-अण, उप-स०। कतकवृक्ष, निर्मलीका पेड़। इसका फल घिस कर डालनेसे मैला जल साफ़ हो जाता है।

अम्बुप्रसादन (सं० क्ली०) अम्बुप्रसाद देखो।

अम्बुप्रसादनफल (सं० क्ली०) कतकफल, निर्मलीका फल।

अम्बुभृत् (सं० पु०) अंबुनि बिभर्ति, अंबु-भृ-क्विप् तुगागमः। १ मेघ, बादल। 'वारिदोऽम्बुभृत्' (अमर) २ मुस्तक, मोथा। ३ समुद्र, सागर। ४ अभ्रक। (त्रि०) ५ जल ले जानेवाला, जिसमें पानी भरकर ले जायें।

अम्बुमत् (सं० त्रि०) अंबुनि सन्त्यास्मिन्, अंबु बाहुल्ये मतुप्। बहुजलयुक्त, जिसमें पानी बहुत रहे।

अम्बुमती (सं० स्त्री०) अम्बुमत् देखो।

अम्बुमयूरक (सं० पु०) जलापामार्ग, पानीका लटजीरा।

अम्बुमात्रज (सं० पु०) अंबुमात्रे अल्पजले जायते; अंबुमात्र-जन-ड, ७-तत्। १ शंबुक, दुफड़की कौड़ी। (त्रि०) २ केवल जलमें उत्पन्न होनेवाला, जो सिर्फ़ पानीमें ही पैदा हो।

अम्बुमुच् (सं० पु०) अंबुनि मुञ्चति; मुच्-क्विप्, ६-तत्। १ मेघ, बादल। २ मुस्तक, मोथा।

अम्बुयष्टिका (सं० स्त्री०) भार्गी, भारङ्गी।

अम्बुर (सं० पु०) अंबु बाहुलकात् उरण्। द्वारका अधःकाष्ठ, दहलीज़, देहली, चौखटके नीचेकी लकड़ी।

अम्बुराज (सं० पु०) १ समुद्र, सागर। २ वरुण, जलके स्वामी।

अम्बुराशि (सं० पु०) अंबुनां राशयो यत्र, बहुव्री०। समुद्र, पानीका ज़खीरा।

"नेतन्नभोमण्डलमम्बुराशिः।" (साहित्यदर्पण)

अम्बुरुह् (सं० क्ली०) अंबुनि जले रोहति, अंबु-रुह-क्विप्। पद्म।

अम्बुरुह (सं० पु०-क्ली०) अंबु-रुह-क। पद्म।

अम्बुरुहा (सं० स्त्री०) अंबुरुहमिव पुष्पमस्त्यस्याः, अंबुरुह अर्श आदि० अच्-टाप्। १ पद्मिनी। २ स्थल-पद्मिनी।

अम्बुरुहिणी (सं० स्त्री०) अंबुरुहमस्त्यस्याः; अंबुरुह मत्वर्थे इनि, ऋन्नेभ्यो ङीप्। पद्मलता, कमलकी बेल। अंबुरुहाणां समूहः। २ पद्मसमूह, कमलका

टेर। अंबुरुहाणां सन्निकृष्टदेशः। ३ पद्मयुक्त देश, जिस मुल्कमें कमल रहे।

अम्बुरोहिणी (सं॰ स्त्री॰) पद्मिनी।

अम्बुरोहिन् (सं॰ क्ली॰) अंबुनि जले रोहति, अंबु-रुह-णिनि। १ पद्म। २ सारस पक्षी।

अम्बुवल्लिक (सं॰ पु॰) कृमिशङ्ख, कोई पौधा।

अम्बुवल्लिका (सं॰ स्त्री॰) कारवेल्ली, करेला।

अम्बुवल्ली (सं॰ स्त्री॰) १ क्षुद्राकारवल्ली, करेली। २ जलपिप्पली, पानीपिपरी।

अम्बुवाची (सं॰ स्त्री॰) अंबु वाचयति तद्दर्षणं सूचयति अम्बु-चुरां वच-णिच्-अण् णिच् लोपः। उप-सं ङीप्। जिस समय सूर्य आर्द्रा नक्षत्रके प्रथम चरणमें रहता है, उस स्थितिकालका नाम अंबुवाची है। सूर्यके मृगशिरा नक्षत्र भोगके बाद तीन दिन बीस दण्ड मात्र यह स्थितिकाल है। इसी समय पृथिवी शायद भीतर ही भीतर रजस्वला होती हैं। यथा राजमार्त्तण्डमें—'मृगशिरसि निवृत्ते रौद्रपादे अम्बुवाची ऋतुमति खलु पृथ्वी'। (ऋतुमतीति रजस्वलमार्षम्। काशी) सूर्य मासमें दो नक्षत्र और एक चरण भोग करते हैं। इसीसे वैशाख मासमें अश्विनी और भरणी ये दो नक्षत्र और कृत्तिकाका एक चरण सूर्यका भोग होता है। ज्येष्ठ मासमें कृत्तिकाके शेष तीन पाद, सम्पूर्ण रोहिणी और मृगशिराके दो पादोंको सूर्य भोग करते हैं। फिर आषाढ़ मासके पहले छः दिन चालीस दण्डोंमें मृगशिराके शेष दो पाद सूर्यके भोग होते हैं। उसके बाद जिन तीन दिन बीस दण्ड तक सूर्य आर्द्राके प्रथम चरणमें रहते हैं, उसीका नाम अंबुवाची है। उसी समयसे वर्षा की सूचना होती है। इसीसे लोग इसे अंबुवाची कहते हैं। रुद्रयामलमें लिखा है,—

"प्रावृट्काले समायाते रौद्रं गच्छति रवौ।
नाड़ीवेधसमायोगे जलयोगं वदाम्यहम्॥"

सूर्यके आर्द्रा नक्षत्रमें गमन करनेसे वर्षा उपस्थित होगी। उसी समय नाड़ीवेध होनेसे मैं जलयोग अर्थात् वर्षाकालका योग कहूंगा।

ज्योतिषमें लिखा है, जिस दिनके जिस समय सूर्य मिथुन (आषाढ़) में गमन करते हैं, फिर उसी वारके उसी समयमें प्रायः ही अंबुवाची होता है। अंबुवाचीमें वेद वेदाङ्गका अध्ययन निषिद्ध है। उसमें भूमि जोतना न चाहिये। शौचके निमित्त कितने ही खुदी हुई मट्टी व्यवहार करते हैं। यति, विधवा और व्रतस्थ ब्राह्मण इनमें कोई भी स्वपाक व परपाक भक्षण नहीं करते। भक्षण करनेसे चण्डालान्न भोजन का पाप होता है। अंबुवाचीके मध्यमें विधवाको अग्नि स्पर्श न करना चाहिये, इसीसे वे लोग प्रदीप प्रभृति स्पर्श नहीं करतीं। अंबुवाची पड़नेके पहले धानका लावा भून रखती हैं और अंबुवाचीके तीनों दिनोंमें उसीको खाती हैं। कितनीही फल मूल खाकर रहती हैं। (नाहिभीर्दुग्धपानतः। स्मृति) अंबुवाचीमें दूध पीनेसे सर्पभय नहीं रहता।

अम्बुवाचीत्याग (सं॰ पु॰) आषाढ़ कृष्णका तेरहवां दिवस।

अम्बुवाचीप्रद (सं॰क्ली॰) आषाढ़ कृष्णका दशवां दिवस।

अम्बुवारिणी (सं॰ स्त्री॰) स्थलकमलिनी, गुलाब।

अम्बुवासिन् (सं॰ त्रि॰) अंबुनि जलप्रधाने देशे वसति; अम्बुवस णिनि, मध्यपदलोपी ७-तत्। जलवासी, पानीमें रहनेवाला।

अम्बुवासिनी, अम्बुवासिन् देखो।

अम्बुवासी (सं॰ पु॰-स्त्री॰) अंबुनि जलप्रधाने देशे वासो यस्याः, ङीप्। रक्तपाटल, पुन्नागका पेड़।

अम्बुवाह, अम्बुवाह देखो।

अम्बुवाह (सं॰ पु॰) अंबुनि वहति; अंबु-वह-अण्, उप-स॰। १ मेघ, बादल। २ मुस्तक, मोथा। ३ कहार, पानी भरनेवाला। ४ अभ्र, अबरक। ५ सप्त संख्या, सात नम्बर।

अम्बुवाहिन् (सं॰ त्रि॰) अंबुनि वहति दधाति; अंबु-वह-णिनि, ६-तत्। १ जलको रखनेवाला, जिसमें पानी रहे। २ जल ले जानेवाला, जो पानी ले जाये। (पु॰) ३ जलपात्र, पानी भरनेका बरतन। ४ मेघ, बादल। ५ मुस्तक, मोथा।

अम्बुवाहिनी (सं॰ स्त्री॰) पुनःपुनः अंबुनि वहति स्थानान्तरं नयति; अंबु-वह-णिनि, ६-तत्। द्रोणी,

अश्यचेत्रमें जल पहुंचानेका पात्रविशेष, कुंडी, जिस बरतनसे खेत सिंचे।

अम्बुविहार (सं० पु०) अम्बुनि जले विहारः; अम्बु-वि-हृ-घञ्, ७-तत्। १ जलक्रीड़ा, सन्तरणादि, पानी-का खेल, तैरना वगैरह।

अम्बुविस्रवा (सं० स्त्री०) अम्बुनः विस्रवा, अम्बु-वि-स्रु-अच्। घृतकुमारी, घीक्वार। इसके पत्तेसे जल निकलता है।

अम्बुवेतस (सं० पु०) अम्बुजातो वेतः, शाक० तत्। जलवेतस, पानीका बेंत।

द्वौ परिव्याध-विदुलौ नादेयी चाम्बुवेतसे। (अमर)

अम्बुशिरीषिका (सं० स्त्री०) अम्बुजातः अल्पः शिरीषः, अल्पार्थे कन्, स्त्रीत्वात् इत्वम्। जल-शिरीषिका, पानीका कलसीस। इससे त्रिदोष, विष, कुष्ठ एवं अर्श नष्ट होता है।

अम्बुशिरीषी, अम्बुशिरीषिका देखो।

अम्बुशुक्ति (सं० स्त्री०) १ जलशुक्ति, घोंगा। २ अड़ाहा, घास-फूस।

अम्बुसंरोध (सं० पु०) अम्बुनि संरुध्यन्तेऽस्मिन्, अम्बु-सम्-रुध आधारे घञ्। समुद्र, सागर।

अम्बुसरण (सं० क्ली०) अम्बु-सृ-ल्युट्। जलप्रवाह, पानीका बहाव।

अम्बुसर्पिणी (सं० स्त्री०) अम्बुनि जले सर्पति गच्छति, अम्बु-सृप-णिनि, ७-तत्। जलौका, जोंक।

अम्बुसादन (सं० क्ली०) निर्मली बीज, निर्मलीका तुखम।

अम्बुसारा (सं० स्त्री०) कदलीवृक्ष, केलेका दरख्त।

अम्बुसाह्व (सं० पु०) कुन्द पुष्पक्षुप, कुन्दके फूलका झाड़।

अम्बुसेचनी (सं० स्त्री०) अम्बुनि सिच्यन्ते नौकानः अनया; अम्बु-सिच करणे ल्युट्, ६-तत्। नौकासे जल निकालकर फेंकनेका काष्ठमय पात्र, नावसे पानी उलीचनेको लकड़ीका बरतन।

अम्बूकृत (सं० क्ली०) अनम्बु अम्बूकृतम्, अम्बु-च्वि-कृ-क्त। १ निष्ठीवन-युक्त वाक्य, थुत्कारी हुयी बात। (त्रि०) २ बका हुआ, जो जल्द कहा गया हो। ३ थूका हुआ, जिसपर लुआब गिरा हो।

अम्बूर—मन्द्राज प्रान्तवाले उत्तर-अरकाट जिलेके वेल्लूर तअल्लुकका एक नगर। यह अक्षा० १२° ५०′ २५″ उ० और द्राघि० ७८° ४४′ ३०″ पू० तथा वेल्लूरसे ३०, बङ्गलोरसे ७८ और मन्द्राजसे ११२ मील दूर, कदपनाथम् घाटीके नीचे पालार नदीके दक्षिण अवस्थित है। यहांसे वेल्लूर और सलेमको बढ़िया सड़क गयी है। रेलवे ष्टेशन नगरसे कोई पाव कोस दूर पड़ेगा। अम्बूरदुर्ग पर्वतकी चोटी पर नगर विराजमान है। यहां तेल, घी और नीलका व्यापार बड़े जोरसे चलते देखेंगे। सन् १८६० ई०में रेलवेके चल जानेसे नदीकी राह माल नहीं भेजते। अम्बूर-दुर्ग पर्वतपर किला खड़ा है। सन् १७५० ई०में इस किले-के पास जो भयानक युद्ध हुआ, उसमें मुजफ्फरजङ्गने अरकाटके नवाब अनवर-उद्दीनको हरा दिया था। सन् १७६८ ई०में मन्द्राजकी १०वीं पैदल फौजने इस किलेको बड़ी बहादुरीके साथ बचाया। बीस वर्ष बाद हैदरअलीने हमला मार इसे ले लिया था, किन्तु बङ्गलोरकी सन्धिके अनुसार वापस दिया। सन् १७९२ और १७९९ ई०में जब महिसूरपर चढ़ाई हुयी, तब इस किलेमें खबर लेने-देनेकी फौज रखी गयी थी।

अम्बूरपेट—मन्द्राज प्रान्तके सलेम जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १२° ४७′ १५″ उ० एवं द्राघि० ७८° ४५′ १५″ पू० पर अवस्थित है। वनियमबाड़ीके सहरतली है।

अम्बूली—बंबई प्रान्तके पूना जिलेकी एक छोटी घाटी। इस राह लोग अम्बूलीसे पालु आते जाते हैं। किन्तु यह व्यापारका मार्ग नहीं ठहरती। जुन्नरसे कल्याण जाना सीधा पड़नेसे इसमें बहुत मुसाफिर देखेंगे। यह मीना उपत्यकाकी चोटीपर पड़ती है।

—मन्द्राज प्रान्तवाले तिरुवाङ्कोड़ राज्यके इसनाम तअल्लुकका एक नगर। यह अक्षा० ९° २३′ उ० और द्राघि० ७६° २४′ ३०″ पू० पर अवस्थित है। इसे एक नहर अल्लेपीसे मिलाती और अप्रेल मासका मेला स्थानीय व्यापारको बढ़ाता है। सन् १७५४ ई०तक यहां चेम्बगचारी नृपतियोंकी राज-धानी रही थी।

अम्बेगांव—बंबईके नासिक जिलेका ग्राम विशेष। यह डिंडोरीसे पश्चिम साढ़े छः कोस पड़ेगा। इस गांवमें हेमाड़पन्थियोंके महादेवका एक बहुत बढ़िया नक्क़ाशीदार मन्दिर बना था। मन्दिर चालीस फीट लम्बा और छत्तीस फीट चौड़ा रहा। अब छत और दीवार गिर गयी है।

अम्बोल—पञ्जाबके पेशावर जिलेसे उत्तरपूर्व ठीक अंगरेज़ी राज्यकी उस ओर अवस्थित एक पहाड़ी घाटी। इसी घाटीकी राह कई बार अंगरेज़ी फौज़ने उद्दण्ड पार्वतीय जातियों पर आक्रमण किया था। सन् १८६३ ई०की मुहीम पड़ी रही। स्वात प्रदेशके सितान स्थानमें जो वहाबी मुसलमान रहते, वह पञ्जाबके अंगरेज़ी राज्यमें मिलते समयसे उपद्रव उठाते आये थे। सन् १८५० से १८६३ ई० तक इन्हीं मुसलमानोंके कारण सीमान्तकी प्रजाने अंगरेजोंसे शत्रुता रखी। किन्तु यह कभी अंगरेजोंका सामना पकड़ते न थे। सन् १८५७ ई०में इन्होंने अंगरेज़ी राज्यमें घुस किसी अफ़सरके डेरे पर धावा मारा। इसीलिये सन् १८५८ ई०में अम्बोल घाटीकी राह पांच हज़ार अंगरेज़ी फ़ौज इनके विरुद्ध भेजी गयी थी। थोड़ीसी असुविधाके बाद अंगरेजी फ़ौज़ने इनके सहायकोंका गांव फूंक, दो क़िला उड़ा और सितानको मिटा दिया। अन्तमें मन्धि होने पर सितान किसी सरदारको सौंपा गया था। किन्तु दो वर्ष बाद ही फिर उपद्रव उठने और अंगरेज़ी राज्य पर आक्रमण पड़ने लगा। सन् १८६३ ई०के सितम्बर मासमें अंगरेज़ी निगहबान फौज पर बड़े ज़ोरसे धावा हुआ था। उसी सालकी १८वीं अक्तोबरको सात हज़ार अंगरेज़ी फौज़ पञ्जाबसे चल अम्बोल घाटी पर जा पहुंची। २०वीं अक्तोबरको वहाबी मुसलमान इतने ज़ोरसे लड़े, कि अंगरेज़ी फौज़को रुकना और कुमक मंगाना पड़ा था। १५वीं दिसम्बरकी रातको अंगरेज़ी फौजने दुश्मनकी जगह छापा मारा और १६वीं को अप्रेल गांव जला डाला। अन्तको बुनेर लोग अंगरेजोंसे मिले और वहाबियोंको नाश करने पर उद्यत हुये थे। कोई एक ही सप्ताह बीच अंगरेज़ी फौज़ने बुनेरोंके साथ मलवाइयोंका स्थान भस्म किया। २३वीं दिसम्बरको अंगरेजी फौज, शत्रुको परास्त कर अम्बोल घाटी वापस पहुंची थी। इस युद्धमें अंगरेजों के ८४७ और शत्रुके ३००० वीर हताहत हुये।

अम्बोलगढ़—बम्बईके रत्नागिरि जिलेका एक क़िला। यह राजापुर नदीके मुंहाने खाड़ीपर खड़ा और समुद्रतलसे बहुत कम ऊंचे उठा था, उत्तर और पश्चिम ओर गड्ढा बना रहा। इसका क्षेत्रफल पाव एकर निकलता था। सन् १८१८ ई०में क़िलेने कर्नेल इमलकके हाथ आत्मसमर्पण किया। फिर सन् १८६२ ई०में यह बिलकुल टूट-फूट गया, मकान, दीवार या बुर्जका कहीं नाम भी न रहा।

अम्बोली—बंबईवाले थाने जिलेकी सलसीट तहसीलका एक गांव। इस ग्राममें शिला-मन्दिर प्रतिष्ठित है।

अम्बर (वै० पु०) गायक, गवैया, गानेवाला।

अम्ल (सं० पु०) १ अम्लरस, कार्कश्य, तुर्शी, खटाई।

अम्भः (सं० क्ली०) आप्नोति विश्वं व्याप्नोति; आप-असुन्, ह्रस्वः नुम् भश्च। १ जल, पानी। २ वकार अक्षर। ३ बाला नामक औषध। ४ लग्नसे चतुर्थ राशि। ५ वैदिक छन्दोविशेष। ६ आकाश, आसमान्।

अम्भःपा (सं० पु०) चातक पक्षी, पपीहा।

अम्भःसार (सं० क्ली०) अम्भसां सारं श्रेष्ठम्, ६-तत्। मुक्ता, मोती।

अम्भःसू (सं० पु०) अम्भांसि जलानि सूते, अम्भस्-सू-क्विप्। १ धूम, धूवां। २ साभ्रता, बदली। धूवांसे बादल बनता और बादलसे पानी बरसता, इसीसे धूवां अम्भःसू अर्थात् पानी बरसानेवाला कहाता है। फलतः धूम दग्ध पदार्थके जलीयांश भिन्न दूसरा कुछ नहीं ठहरता।

'धूमःस्याद्वायुवाहोऽग्नि-वाहो दहनकेतनम्।
अम्भःसूः कारमालश्च सूरी जीमूतवाह्यपि॥' (हेम)

अम्भःस्थ (सं० त्रि०) १ जलयुक्त, पानीसे भरा हुआ। २ जलमें स्थिति रखनेवाला, जो पानीमें ठहरा हो।

अम्भस्, अम्भः देखो।

अम्भसांनिधि (सं० पु०) अम्भसां जलानां निधिः, अलुक् ६-तत्। समुद्र, बहर।

अम्भसाकृत (सं० त्रि०) जलसे किया हुआ, जो पानीसे बना हो।

अम्भस्सार, अम्भःसार देखो।

अम्भिनी (वै० स्त्री०) ग्रिष्यिका विशेष। इन्होंने शुक्ल यजुर्वेदको वाच्‌में परिणत किया था।

अम्भृण (सं० पु०) अम क्विप्-भृ बाहुलकात् न। १ महत्, बड़ा आदमी। २ भयङ्कर शब्दकारक, नाक आवाज़ देनेवाला। ३ सोमरस बनानेका पात्र। ऋषिविशेष। यह्ववाच्‌के पिता रहे। (त्रि०) ४ शक्तिशाली, ताक़तवर।

अम्भोज (सं० क्ली०) अम्भसि जले जायते; अम्भस्-जन-ड, ७-तत्। १ पद्म। २ सारसपक्षी। ३ वारिवेतस, पानीका बेंत। ४ चन्द्र, चांद। (पु० क्ली०) ५ शङ्ख। (त्रि०) ६ जलजात, पानीसे पैदा हुआ।

अम्भोजखण्ड (सं० पु०) अम्भोजानां षण्डः खण्डो वा। पद्मसमूह।

"कुमुदवनमपश्रियश्रीमदम्भोजखण्डम्।" (माघ ११।६४)

अम्भोजजनि, अम्भोजजन्मन् देखो।

अम्भोजजन्मन् (सं० पु०) अम्भोजे पद्मे जन्म यस्य बहुव्री०। चतुर्मुख, हरिनाभिपद्मजात ब्रह्मा।

अम्भोजनाल (सं० पु०) पद्मनाल, कमलकी डण्डी।

अम्भोजयोनि, अम्भोजजन्मन् देखो।

अम्भोजशण्ड, अम्भोजखण्ड देखो।

अम्भोजषण्ड, अम्भोजखण्ड देखो।

अम्भोजा (सं० स्त्री०) वल्ली यष्ठीमधु, बेलके डण्ठलका शहद।

अम्भोजिनी (सं० स्त्री०) अम्भोजानां समूहः। १ पद्मसमूह। २ पद्मलता, कमलकी बेल। ३ पद्मयुक्त देश, जिस मुल्कमें कमल ख़ूब मिले।

अम्भोद (सं० पु०) अम्भो जलं ददाति, अम्भस्-दा-क। १ मेघ, बादल। २ मुस्तक, मोथा। (त्रि०) ३ जलदानकर्ता, पानी देनेवाला।

अम्भोधर (सं० त्रि०) अम्भो जलं धरति, अम्भस्-धृ-अच्। १ मेघ, बादल। २ मुस्तक, मोथा। ३ समुद्र, बहर।

अम्भोधि (सं० पु०) अम्भांसि धीयन्तेऽस्मिन्, अम्भस् धा आधारे कि। समुद्र, बहर।

अम्भोधिपल्लव (सं० पु०) प्रवाल, मूंगा।

अम्भोधिवल्लभ (सं० पु०) ६-तत्। प्रवाल, मूंगा।

अम्भोनिधि (सं० पु०) अम्भसः निधिः, ६-तत्। समुद्र, बहर।

अम्भोराशि, अम्भोनिधि देखो।

अम्भोरुह्, अम्भोरुह देखो।

अम्भोरुह (सं० क्ली०) अम्भसि रोहति; अम्भोरुह-क, ७-तत्। १ पद्म। २ सारसपक्षी। (पु०) ३ वेतस, बेंत। (त्रि०) ४ जलजात, पानीसे पैदा हुआ।

अम्भोरुहकेशर (सं० क्ली०) पद्मकेशर, कमलका रेशा।

अम्मकुदग—गुजरातकी कावेरी नदीके पासका स्थानीय पुरोहित-समाज। पहले लोगोंने इस समाजको ब्राह्मण समझ रखा था,किन्तु पीछे वह बात जाती रही।

अम्मणदेव—बम्बईवाले कनाड़ी जि़लेके मालखेडा राष्ट्रकूट नृपति अर्जुनके लड़के। चेदीके महाराज कोक्कल्ल इनके बाबा रहे। इनकी कन्या महाराजाधिराज द्वितीय कृष्णसे व्याही गयी थी। नौसरी ताम्रफलकके अनुसार,—सन् ८१५ ई०की २४ वीं फरवरीको द्वितीय कृष्ण सिंहासनारूढ़ हुये।

अम्मपेट—मन्द्राज प्रान्तके सलेम जिलेका एक नगर। यह सलेम नगरके समीप अक्षा० १२° ९´ १५´´ उ० एवं द्राघि० ७८° ४१´ पू० पर अवस्थित है।

अम्मय (सं० त्रि०) अप्-मयट्, प स्थाने मः। जलमय, आबदार, पानीसे भरा हुआ।

अम्मरस (हिं० पु०) अमृतसरका कपोत, जो कबूतर अमृतसरमें पैदा हुआ हो। इसका समग्र शरीर श्वेत और कण्ठ काला होता है।

अम्मा, अम्मां (हिं० स्त्री०) माता, मां, महतारी।

अम्मामा (अ० पु०) साफ़ा, मुरैठा। इस निराले साफ़ेको मुसलमान बांधते हैं।

अम्मायानायकनुर—मन्द्राज प्रान्तवाले मदुरा जिलेके डिण्डिगल तअल्लुकका एक राज्य। सन् १७४१ ई०में

यहां जो लड़ाई हुयी थी,उसमें डिग्गिगल चांदा साहबके हाथ लगा। सन् १७५७ ई०में हैदरअलीके हमला मारते समय भी इस राज्यने बड़ा काम किया था। अंगरेजोंने अपने अधिकारके समय इस राज्यको कोई इक्कीस हजार रुपये वार्षिक कर लगा छोड़ दिया। अम्मायानायकनुर नगरमें दक्षिण-भारत-रेलवेका ष्टेशन बना है

अम्मारी, अम्बारी देखो।

अम्माल्—वेदान्त-विलास नाटक-रचयिता।

अम्मुगी—बम्बई प्रान्तवाले कल्याण राज्यके कोई कालचुर्य नृपति। यह सिन्धुराजके पुत्र थे। महिसुरके हरिहर स्थानमें जो शिलालेख मिला उसमें लिखा है,—इस राजको कृष्णने प्रतिष्ठित किया था। वह शिवके अवतार थे। उनका जन्म किसी ब्राह्मणीसे हुआ था। वह नापितका काम करते रहे। कालञ्जरमें उन्होंने एक राजाको मारा, जो नरमांस खाता था। इस तरह कृष्णको मध्य-भारतके डाहल-प्रान्तका राज्य मिला। उनके वंशके कितने हो राजावोंने शासन किया था। अन्तमें कन्नम नामक कोई नृपति हुये, उनके दो पुत्र रहे,—विज्जल और सिन्धुराज। ज्येष्ठ-भ्राता बिज्जल सिंहासनारूढ़ हुये थे। सिन्धुराजके चार पुत्रका नाम है,—अम्मुगी, शङ्खवर्मन्, कन्नर और जोगम। इनमें सबसे पहले, अम्मुगीको ही राज्यका अधिकार दिया गया था। अम्मुगीके बाद जोगम गद्दीपर बैठे। जोगमके पुत्रका नाम परमाढ़ि रहा। परमाढ़िके पुत्र बिज्जल जब सिंहासनारूढ़ हुये, तब यह शिलालेख बनाया गया। सन ११७३ ई०को बिज्जलके ज्येष्ठपुत्र सोवीदेवका जा शिलालेख पड़ा, वह उपरोक्त शिलालेखसे नहीं मिलता।

अम्यक् (वै० अव्य०) ओर, तर्फ़।

अम्र (सं० पु०) अम्यते सौरभेन दूरात् ज्ञायते अम्-रक्। आम्र वृक्ष। आमका फल, पत्ता बोध होनेसे क्लीवलिङ्ग होता है।

अम्र वा आम्रका (Mangifera indica) चलता नाम आंब या आम है। छोटा नागपुर और भारतवर्षके दक्षिणमें यह पहले आप ही आप जन्मता था। अब भारतवर्षके सब स्थानोंमें इसके पेड़ लगाये गये और फल भी खूब होते हैं।

आम्र शब्दके ये कई पर्याय देखे जाते हैं—अम्र, आम्र, चूत, रसाल, सहकार, कामशर, कामवल्लभ, कीरेष्ट, माधवद्रुम, भृङ्गाभीष्ट, सोधुरस, मधूला, कोकिलोत्सव, वसन्तदूत, अम्लफल, मोदाख्य, मन्मथालय, मध्वावास, सुमदन, पिकराग, नृपप्रिय, प्रियाम्बु, कोकिलावास, माकन्द, षट्पदातिथि, मधुव्रत, वसन्तद्रु, पिकप्रिय, स्त्रीप्रिय, गन्धबन्धु, अलिप्रिय, मदिरासख।

वैद्यशास्त्रके मतानुसार कच्चा आम कषाय, रुचिकर, कुछ अम्ल और सुगन्धित होता; इसके खानेसे वायु, पित्त और रक्त बढ़ता है। परन्तु और इससे कफ कई प्रकारका रोग भी नष्ट होता है। अपक्क बड़ा अम्ल पित्तकर होता है।

पके आममें कई गुण होते हैं। लोग कहा करते हैं,—'पाके आमकी रसी खाई न खाई देहे धसी' सुमिष्ट पका हुआ आम सुस्वाद और पुष्टिकर होता है। इससे त्रिदोष नष्ट होता है। इसके खानेसे वर्ण, रुचि, शरीरकी कान्ति, बल एवं मांस बढ़ता है। चीनीके साथ पका आम खानेसे क्षयरोग, प्लीहा, वात, श्लेष्मा प्रभृति अनेक प्रकारके रोगोंमें उपकार दिखाई देता है। घृतके साथ मिलाकर खानेसे वात और पित्त नष्ट होता एवं अग्नि, वर्ण और बल बढ़ता है। दूधके साथ आम शीतल, सुस्वादु, स्निग्ध, किञ्चित् गुरुपाक और अल्प विरेचक होता है। वात पित्तादि रोगमें यह हितकर रहता है। इससे शुक्र, रक्त और बल बढ़ता है।

पके आमका प्रधान गुण यह है, कि इससे विलक्षण कोष्ठशुद्धि होती है। इसलिये अनेक रोगोंमें यह हितकर है। गृहस्थ लोग छिलका सहित कच्चे आमको सुखाकर रखते हैं। बच्चोंके उदरामय होने पर उसका क्वाथ खिलानेसे दो ही तीन दिनमें फायदा मालूम होता है। आमका हरा पत्ता, मूल और गुठली सङ्कोचक है। इसीसे जलमें सिद्धकर खिलानेसे उदरामय रोग नष्ट हो जाता है। पश्चिमके गरीब आदमी पके आमकी गुठली आगमें भूनकर खाते हैं।

अंठलीके चूर्णको अच्छी तरह धोकर कितनेही उसकी रोटी बनाते हैं। युरोपीय चिकित्सक आमकी अंठली, सोंठ और कच्चे बेलको एक साथ सिद्ध करके रक्तामाशय एवं उदरामय रोगमें देनेसे विलक्षण उपकार देखते हैं। नाकसे खून गिरनेमें अंठलीका रस सुड़कनेसे खून बन्द हो जाता है। इण्डियन फार्मेकोपियामें लिखा है, कि आमकी अंठलीमें खूब गैलिक-एसिड है। इससे कृमि नष्ट और बाधक तथा अर्श रोगमें इसका क्वाथ खानेसे रोगी सुस्थ हो जाता है। वैद्यराजवल्लभके मतमें इससे तृष्णा, छर्दि, मेह एवं अतिसार नष्ट होता है। आमका मज्जा रुचिकर और अग्निदीपक है।

युरोपीय चिकित्सक कहते हैं, कि कच्चा आम और कच्चे आमकी अंठली नेत्रप्रदाह, खुजली और श्वासकासमें विशेष उपकार करती है। हरे पत्तेको सुखाकर तम्बाकूकी तरह उसका धुआं हुक्केमें पीनेसे श्वासकृच्छ्र और कण्ठरोगका प्रतिकार होता है। डाक्तर ऐन्सिली कहते हैं, कि आमके पेड़का चूर्ण नीबूके रस या तेलके साथ मिलाकर लगानेसे चर्मरोग अच्छा हो जाता है। आमका तख़्ता ज़्यादा कठिन और स्थायी न होते भी साधारण आदमी उसके किवाड़ आदि बनाते हैं। कपड़ा रंगनेसे पहले अनेक आदमी आमके पत्ते और छिलकेको व्यवहार करते हैं।

हम लोगोंके देशमें कितने हो आदमी कच्चे आमको सुखाकर रखते हैं। उसे अमरा, अमचूर या अमसो, कहते हैं। पक्के आमके रसको पतला करके सुखा लेते और उसे अमावट कहते हैं। सर्वदा धूप दिखाकर यत्नसे रखनेपर अमचूर और अमावट बारह महीने रहता है, उसमें कोड़े नहीं लगते। परन्तु अमचूरमें हल्दी और नमक न मिलानेसे बरसातके दिनों उसमें कोड़ा लग और वह खराब हो जाता है। स्वभावतः जिसका धातु कोष्ठबद्ध हो, यदि वह नित्य अमचूर या अमावट खावे, तो पेटका उद्वेग कम पड़ता है।

वैद्यशास्त्रोक्त आम्रखण्ड अति उपादेय सामग्री है। इससे नेत्ररोग, वायुरोग, रक्तपित्तजनितरोग, अम्लबुद्धि, मेहप्रभृति अनेक प्रकारके रोग दूर हो जाते और देहकी कान्ति तथा बलबुद्धि होती है। इसके प्रस्तुत करनेकी रीति यह है,—खूब मीठे आमका रस कपड़ेसे छान ले। छना रस १२ सेर, साफ़ चीनी ८ सेर, गायका घी ४ सेर, सोंठका चूर्ण १ सेर, मिर्चका चूर्ण आध सेर, पीपलका चूर्ण पाव भर, दूध आठ सेर, सब द्रव्योंको मूर्च्छित घीमें पकाये। पक जाने पर पिपरामूल, मुनक्का, चाव्य, धनियां, जीरा, कालाजीरा, सोंठ, बड़ी इलायची, दारुचीनी, तालिशपत्र, इन सबको खूब बारीक पीस और कपड़ेसे छान कर हरेक चीज आध आध सेर लेना चाहिये। तरबूजके बीज, लवङ्ग और नाग केशरको चूर्णकर प्रत्येक द्रव्य चौबीस चौबीस तोले और असली मधु चार सेर डाले। इन सब चीजोंको अच्छी तरह एक साथ मिलाकर इस खण्डको घीके बरतनमें रख दे। बीच बीचमें धूप देखाना अति आवश्यक है। मात्रा दो तोले थोड़े गर्म दूधके साथ सेवन करना।

आमका मुरब्बा भी खानेमें जायक़ेदार होता है। यह कोठेको खूब साफ़ रखता है। जिस आममें एकदम रेशा न हो और पकने पर कड़ा रहे, उसके बड़े बड़े टुकड़े करके घीमें भून ले। फिर उन्हें मिश्रीके रस-जैसी गाढ़ी चीनीमें छोड़ भांड़में रख दे। आमका मुरब्बा बहुत दिन नहीं रहता।

वङ्गदेशके अनेक स्थानोंमें जो आमका अचार बनता है, उसे कासुन्दी कहते हैं। इसके बनानेकी रीति यह है,—पहले सरसों और हल्दीको अच्छी तरह धोकर सुखा लेना। सूख जाने पर दोनोंको खूब महीन पीस लेना। उसके बाद दश सेर आमको, छील और अंठली निकाल कर टुकड़े टुकड़े करे। पकी हुई ३ सेर इमलीका भी चिंयां निकाल डाले। फिर दो सेर सरसोंके चूर्ण और आध सेर हल्दीको आम और इमलीके साथ ढेंकीमें कूटना चाहिये। एक सप्ताह बाद फिर उसके साथ पूर्ववत १० सेर आम और ३ सेर इमली कूटे। एक सप्ताहके बाद फिर उसके साथ पहले हीकी तरह १० सेर आम, ३ सेर इमली और २॥ सेर नमक कूट

अच्छी तरह सानकर मिला देना। इस अचारको हांडीमें रखकर उसका मुंह बन्द कर दे। बीच बीचमें धूप दिखा देनेसे यह सड़ता नहीं, यह मुख रोचक और आग्नेय है। इससे अम्लका व्यञ्जन बनानेपर वह खानेमें खूब सुस्वादु होता है। वंगालके स्थान विशेषमें अन्यान्य भी अनेक प्रकारकी कासुन्दी बनती है।

पश्चिम देशका अचार खानेमें बहुत रुचिकर होता है। वह इसतरह बनाया जाता है। जालीदार एक एक आमके चार चार टुकड़े कर उनके भीतरकी आधी अठली निकाल आधी रहने दे। फिर पत्थरके बरतनमें उनमें अच्छी तरह सेंधा नमक मिलाकर धूपमें रख देना। पानी निकलने पर उसे फेंक देना। इस प्रक्रियाको तीन दिन करना पड़ता है, अन्तमें छोटी मेथी, काला जीरा, सौंफ और मिर्चा कुछ अधकुटा और कुछ समूचा रखे। इस मसालेको अनुमान आधा तोला हरेक आममें भर उसे असली सरसोंके तेलमें डाल दे, और उसके ऊपर थोड़ासा यह मसाला और सेंधा नमक छोड़े। उसके बाद हांड़ीका मुह बन्द करे। बीच बीच धूपमें रख देना अति आवश्यक है। कुछ दिनमें आम गल जाने पर अचार तय्यार हो जायगा।

भारतवर्ष ही आमका जन्मस्थान है। यह ग्रीष्म प्रधान देशका वृक्ष है। शीतप्रधान देशमें अम्रवृक्ष नहीं जन्मता। कुछ लोनी मट्टीमें आमका पेड़ बड़ी तेज़ीसे बढ़ता, खुश्क और कंकरीली मट्टीमें भी यह पैदा होता है। अंठली, गुलक़लम और जोड़-क़लमसेही आमके पेड़ रोपे जाते हैं। पहले गुठलीही रोपी जाती थी। उसके बाद युरोपियोंसे हम लोगोंने क़लम लगाना सीखा है। आंठीका पेड़ बहुत बड़ा और सतेज होता है, क़लमका उतना बड़ा और तेजस्कर नहीं होता। गिरी हुई दीवारकी मट्टी और सूखा कीचड़ आमके पेड़की जड़में देनेसे वह बड़ी तेज़ीके साथ बढ़ता है।

निम्न वङ्गदेशमें पौषमासके अन्तमें आमका मुकुल निकलने लगता है। माघमास सब पेड़ोंमें मुकुल निकल आते हैं। मुकुल खिलनेपर वृष्टिका जल पड़ने और बीजकोष बंधनेसे फिर फल नहीं लगता। माघ महीनेके अन्त और फाल्गुन मासमें छोटी छोटी अमीरियां लग जाती हैं। ज्येष्ठ महीनेके अन्तमें प्रायः सब आम पक जातेहैं। परन्तु भागलपुर, मालदहसे पश्चिम सभी स्थानमें माघ, फाल्गुन मासमें मञ्जर लगते हैं, और आषाढ़ महीनेमें आम पकना शुरू होता है। मालवप्रान्तके किसी ग्राममें कवि कालिदासका जन्म हुआ था और वे उज्जयिनीमें रहते थे। मेघदूतमें आषाढ़ मासमें आमके पकनेकी बात लिखी है। अतएव इन दोमें, चाहे जिस स्थानपर उन्होंने मेघदूतकी रचना की हो, आषाढ़ मासमें वहां आम पक जाते थे। 'छन्नोपान्तः परिणतफलद्योतिभिः काननाम्रैः।' (पू० मे० १८) इसपर मल्लिनाथने लिखा है,—'आषाढ़े वनचूताः फलन्ति पच्यन्ते च मेघवातेन इत्याशयः।' इसमें ऐसा सन्देह हो सकता है, कि और और आम इसके पहले पक जाते हैं। किन्तु वास्तवमें देखा जाता है, कुछ पेड़ोंके सिवा युक्तप्रदेशादि प्रदेशोंमें आषाढ़ मासमें ही आम पकते हैं। फलतः वंगाल देशसे बहुत पीछे वहां आम पकते हैं। बम्बई, मालदह और लङ्गड़ेका लोग अधिक आदर करते हैं। कलकत्तेसे दक्षिण और आसामप्रभृति अनेक स्थानोंमें पकनेके समय आममें कीड़े पड़ जाते हैं। कुछ आमोंकी अंठलियोंमें एक प्रकारके पतङ्ग होते हैं। पक्का आम काटने पर वे फरसे उड़ जाते हैं। इस तरहके कीड़े जन्मनेसे आधा आम खराब नहीं होता। किन्तु अन्य प्रकारके कीट अत्यन्त छोटे होते हैं। पके हुये आममें वे किलबिल किलबिल घूमते फिरते हैं। जिस आममें ऐसे कीड़े रहते हैं, वह आम खाया नहीं जाता। ये सब कीड़े छोटे-छोटे छेदोंसे आमके भीतर घुस जाते और उसके बाद बड़े होते हैं।

अम्रगन्धहरिद्रा (सं० स्त्री०) आम्रहरिद्रा, आंबा-हरदी।

अम्रवेतस (सं० पु०) अम्लवेतस, अमलवेत, चूक।

अम्रसार, अम्रवेतस देखो।

अम्रात (सं॰ पु॰) अम्रवत् सर्वत्र अत्यते प्राप्यते; अम्र अत-घञ्, शाक॰ तत्। अमड़ा, अमड़ेका पेड़।

अम्रातक, अम्रात देखो।

अम्ल (सं॰ क्ली॰) अम-बाहुल॰ क्त। तक्र, माठा। (पु॰) रसविशेष, खट्टारस। (त्रि॰) अम्लरसयुक्त, खट्टा।

अम्ल दो प्रकारका है—पार्थिवाम्ल और औद्भिज्जाम्ल। लवण, गन्धक, यवक्षार प्रभृति खनिज द्रव्यसे जो अम्ल प्रस्तुत होता है। उसे पार्थिवाम्ल कहते हैं। इसका दूसरा नाम द्रावक है। उद्भिजसे जो अम्ल संगृहीत होता, उसका नाम औद्भिज्जाम्ल है। उद्भिद्‌के नीलवर्ण साथ अम्लरस मिलनेसे रक्तवर्ण हो जाता है। इसीसे कपड़े या काग़ज़पर जवाफूल घिसकर उसमें नीबूका रस देनेसे लाल रङ्ग निकलता है। कितने ही ठग पहलेसे ही छुरीमें जवाफूल घिस रखते हैं। फिर जब कोई प्लीहाका रोगी आता है, तब उस छुरीको नीबूमें घुसेड़कर दाबते हैं; उससे लाल रंगका रस टपकता है। वे लोग गंवारोंको समझा देते हैं, कि प्लीहा कटा, इसीसे खून टपकता है। अम्लमें कौड़ी हड्डी, रूपा या सोना डाल देनेसे जल जाता है। अङ्गार वाष्पयुक्त क्षारद्रव्यके साथ अम्ल मिला देनेसे, वह बाहर निकल आता है। अधिक वा तेजस्कर अम्लरस दांतमें लग जानेसे दांत गोठिल हो जाते हैं। उस समय कोई वस्तु चबानेसे कष्ट होता है। यदि दांत गोठिल हो जाय, तो कोई कड़ी मीठी चीज़ चबाना चाहिये। अनेक आदमी कहते हैं, कि जो लोग अङ्गार प्रभृति क्षार द्रव्यसे दांत मांजते, थोड़े ही अम्लरससे उनके दांत गोठिल हो जाते हैं।

विना जल मिलाये द्रावक, सेवन न करना चाहिये। सेवन करनेसे अन्ननाली जल जाती और उससे प्राणनाश हो सकता है। थोड़ासा अम्लरस सेवन करनेसे पाचक और बलकर होता है। हम लोग आहारके बाद अम्लका व्यञ्जन खाते हैं, वह परिपाकके लिये उपकारी है। परन्तु दुर्बल व्यक्तिको प्रतिदिन वा बहुत उद्भिज्जाम्ल न खाना चाहिये। खानेसे रक्तके कण नष्ट होते और शरीर और भी दुर्बल हो जाता है। एकदम कुछ भी अम्लरस न खानेसे स्फूर्ति और अजीर्ण रोग होता है। सुपथ्यमें नीबू या आम ही प्रशस्त है। किसी किसी दिन चालता और पुरानी इमली भी खा सकते हैं। नये ज्वरमें अम्ल खानेसे प्यास, रक्तकी उष्णता और ज्वरका तेज़ कम हो जाता है। पुराने ज्वर प्रभृति रोगमें, पार्थिवाम्ल हितकर है।

वैद्यशास्त्रके मतसे अम्ल—हृद्य, शीतल, वायुनाशक एवं स्निग्ध है। कड़ु वस्तुओंसे यह अधिक तेजस्कर है। इससे जिह्वा एवं दन्तका उद्वेग उत्पन्न होता है। पण्डितोंने शाक एवं अम्लमें एक प्रकारका दोष बताया है। अर्थात् इससे शरीर, रक्त, नेत्र सब दूषित होता, प्रज्ञा और स्मरणशक्ति नष्ट हो जाती है। अम्ल सब रोगोंका घर है, इसलिये इसे परित्याग कर देना चाहिये।

अम्लक (सं॰ पु॰) अल्पोऽम्लः, अल्पार्थे कन्। १ मन्दार वृक्ष, अकोड़ेका पेड़। २ लकुचवृक्ष, बड़हर।

अम्लकरञ्ज (सं॰ पु॰) करञ्जविशेष, खट्टा किरमाल। इसके फलका गुण पिपासानाशक, गुरु, रुचिकर और पित्तकर है। (राजवल्लभ)

अम्लका (सं॰ स्त्री॰) १ पालङ्कशाक, खट्टा पालक। २ पलाशी लता, खट्टी खिरनी।

अम्लकाञ्जिक (सं॰ क्ली॰) काञ्जिक, खट्टी कांजी।

अम्लकाण्ड (सं॰ क्ली॰) अम्लं अम्लरस-विशिष्टं काण्डं नालं यस्य, बहुव्री॰। १ लवणतृण, लोनिया। (पु॰) शुक्लरसोन, सफ़ेद गन्दन।

अम्लकूचि (सं॰ पु॰) वृक्षविशेष, कोई दरख़्त।

अम्लकेशर (सं॰ पु॰) अम्लः केशरो यस्य, बहुव्री॰। १ मातुलुङ्ग, बिजौरा नीबू। २ दाड़िमवृक्ष, अनारका पेड़।

अम्लकेसरी (सं॰ पु॰) अम्लरसनिम्बुक वृक्ष, खट्टे नीबूका दरख़्त।

अम्लकोश (सं॰ पु॰) तिन्तिड़ी वृक्ष, इमलीका दरख़्त।

अम्लकोशाक, अम्लकोश देखो।

अम्लगोरस (सं॰ क्ली॰) अम्लतक्र, खट्टा मठा।

अम्लचाङ्गेरी (सं॰ स्त्री॰) चाङ्गेरीभेद, खट्टी अम्बोती या सेंह।

अम्लचुक्रिका (सं॰ स्त्री॰) कर्मधा॰। चिञ्चाम्ल, खट्टा पालक।

अम्लचूड़ (सं॰ पु॰) अम्लचुक्रिका देखो।

अम्लजम्बीर (सं॰ पु॰) अम्लरसनिम्बुकवृक्ष, खट्टे नीबूका दरख्त।

अम्लटक (सं॰ पु॰) अश्मन्तक वृक्ष, इसके रेशेसे ब्राह्मणकी मेखला बन सकती है।

अम्लता (सं॰ स्त्री॰) कार्कश्य, खटाई, तुर्शी।

अम्लत्वक् (सं॰ पु॰) प्रियालवृक्ष, चिरौंजीका पेड़।

अम्लदोलक (सं॰ पु॰) चुक्र, खट्टा पालक।

अम्लद्रव (सं॰ पु॰) बीजपूरादिरस, बिजौरे नीबू वगैरहका अर्क।

अम्लद्रव्य (सं॰ क्ली॰) बीजपूरादि, बिजौरा नीबू वगैरह।

अम्लनायक (सं॰ पु॰) अम्लं रसं नयति, अम्ल-नी-ण्वुल्। अम्लवेतस, चूक।

अम्लनिम्बुक (सं॰ पु॰) महाम्ल निम्बुक, खट्टा नीबू।

अम्लनिशा (सं॰ स्त्री॰) अम्ला निशा, कर्मधा॰। शठीवृक्ष, आंबाहरदी।

अम्लपञ्चक, अम्लपञ्चफल देखो।

अम्लपञ्चफल (सं॰ क्ली॰) पांच खट्टे फल। कोल, दाड़िम, वृक्षाम्ल, चुक्रिका एवं अम्लवेतस अथवा जम्बीर, नारङ्गा, अम्लवेतस, तिन्तिड़ी एवं बीजपुरसे मिलकर अम्लपञ्चक बनता है।

अम्लपत्र (सं॰ पु॰) अम्लं पत्रं यस्य, बहुव्री॰। १ अश्मन्तक वृक्ष। २ दण्डालुक, खाम। ३ क्षुद्रपत्रतुलसीवृक्ष, जिस तुलसीके पेड़का पत्ती छोटी रहे। (क्ली॰) ४ चुक्रशाक, खट्टा पालक।

अम्लपत्रक (सं॰ पु॰) १ भेण्डा, भेंडा। २ अश्मन्तक वृक्ष। ३ अम्ललोणिका, लोनिया।

अम्लपत्रा (सं॰ स्त्री॰) शुक्रला, भिण्डी।

अम्लपत्रिका (सं॰ स्त्री॰) चाङ्गेरी, सेंह।

अम्लपत्री (सं॰ स्त्री॰) अम्लं पत्रं यस्याः। १ पलाशीलता, गूलर। २ चाङ्गेरी, सेंह। ३ क्षुद्राम्लिका, छोटी लोनिया।

अम्लपनस (सं॰ पु॰) अम्लः तद्रसः पनसः, कर्मधा॰। लिकुचवृक्ष, मन्दार।

अम्लपर्णिका (सं॰ स्त्री॰) १ वृक्षविशेष, कोई दरख्त २ सुरपर्णी, गूलर इसका गुण—वात, कफ और शूलरोगनाशक है। (वैद्यकनिघण्टु)

अम्लपर्णी, अम्लपर्णिका देखो।

अम्लपादप (सं॰ पु॰) वृक्षाम्ल, इमली।

अम्लपित्त (सं॰ क्ली॰) अम्लात् अजीर्णात् जातं पित्तम्। रोगविशेष, कोई बीमारी। इस रोगसे आहारके बाद उदरमें अम्ल मालूम पड़ेगा। कारण, खाया हुआ पदार्थ पित्तके दोषसे खट्टा हो जाता है। रूक्ष, अम्ल, कटु और उष्ण वस्तुका भोजन ही इसका उपादान निकलेगा। लक्षणमें लिखा है,—

विरुद्धदुष्टाम्लविदाहिपित्तप्रकोपि पानान्नभुजोविदग्धम्।
पित्तं स्वहेतूपचितं पुरा यत्तदम्लपित्तं प्रवदन्ति सन्तः॥
अविपाकः क्लमोत्क्लेशः तिक्ताम्लोद्गारगौरवौ।
हृत्कण्ठदाहारुचिभिरम्लपित्तं वदेद्भिषक्।
तच्चद्विधा————अधोगमूर्ध्वगञ्च।” (माधवनिदान)

सारांश यह, कि अविपाक, अरुचि, हृदय एवं कण्ठके दाह, तिक्त अम्लके उद्गार आदिसे अम्लपित्तको पहचानेंगे। शूल देखो।

अम्लपित्तान्तकमोदक (सं॰ पु॰) अम्लपित्तका योगविशेष, जो लड्डू अम्लपित्तको मिटाता हो। इस मोदकके बनानेका विधान यह है,—८ पल शुण्ठी, ८ पल, पिप्पली और ८ पल गुवाकचूर्णको ४ शरावक घृतमें डाल एकत्र भूनेंगे। फिर उसमें दो-दो तोले लवङ्गचूर्ण, वचाचूर्ण, कुष्ठचूर्ण, नागकेशरचूर्ण, यमानीचूर्ण, रक्तचन्दनचूर्ण, रास्नाचूर्ण, कृष्णजीरकचूर्ण, यष्टिमधुचूर्ण, तेजपत्रत्वगेलाचूर्ण, सैन्धव, हवुषाकलचूर्ण, शटीमदनफलचूर्ण, जटामांसीचूर्ण, अभ्र, रङ्ग, रौप्य, तालीशचूर्ण, पद्मकाष्ठचूर्ण, मूर्वाचूर्ण, वराहक्रान्ताचूर्ण, वंशलोचन, पिप्पलीमूलचूर्ण, शतावरीचूर्ण, शतपुष्पाचूर्ण, पीतभिण्टीमूलचूर्ण, जातीकोषचूर्ण, जातीफलचूर्ण, काकोलीमुस्तकपिप्पलीकर्पूरविडङ्ग-वनयमानीका चूर्ण, लौह और एक तोले स्वर्ण मिलाकर लड्डू बांधते हैं। (भैषज्यरत्नावली)

अम्लपित्तान्तकरस (सं० पु०) अम्लपित्तघ्नरस, जो रस अम्लपित्तको दूर करता हो। यथा,—

"मृतसूतार्कलौहानां तुल्यां पथ्यां विमर्दयेत्।
माषमात्रं लिहेत् क्षौद्रैरम्लपित्तप्रशान्तये॥" (भैषज्यरत्नावली)

फुंके हुये सूत, अर्क और लौहके बराबर हरको रखकर रगड़ लेना चाहिये। इस रसको माषमात्र खानेसे अम्लपित्त दबता है।

अम्लपुर (सं० क्ली०) वृक्षाम्ल, इमली।

अम्लपुष्पिका (सं० स्त्री०) आरण्यशणवृक्ष, जङ्गली सनका पेड़।

अम्लपूर (सं० क्ली०) अम्लेन पूर्यते; अम्ल-पूर कर्मणि घञ्, ३-तत्। तिन्तिड़ी, इमली।

अम्लफल (सं० पु०) अम्लं फलं यस्य, बहुव्री०। १ तिन्तिड़ी वृक्ष, इमलीका पेड़। (क्ली०) २ वृक्षाम्ल, इमली।

अम्लफला (सं० स्त्री०) कत्थारिका, कैथा।

अम्लबन्ध्या (सं० स्त्री०) अम्लं रसं बध्नाति; अम्लबन्ध उण्-यक्, स्त्रीत्वात् टाप्। अम्लरसस्कन्ध।

अम्लभेदन (सं० पु०) अम्लार्थं अम्लरसप्राप्तयर्थं भिद्यतेऽसौ, अम्ल-भिद कर्मणि ल्युट्। १ अम्लवेतस, चूक। २ चुक्र, खट्टा पालक।

अम्लमारीष (सं पु०) अम्लशाकविशेष, खट्टी चौराई।

"अम्लमारीषको दीपकोपनो मधुरः पटुः।" (वैद्यकनिघण्टु)

अम्लमूलक (सं० क्ली०) व्युषितकाञ्जिकपक्वमूलक, पुरानी कांजीकी पक्की जड़।

"काञ्जिकं व्युषितं पक्वं मूलकं लम्लमूलकम्।" (परिभाषाप्रदीप)

अम्लमेह (सं० पु०) पित्तजन्यमेहरोगभेद, जो पेशाब की बीमारी सफ़रा बिगड़नेसे पैदा हो।

अम्लरस (सं० पु०) अम्लश्चासौ रसश्चेति, कर्मधा०। १ अम्लरस, तुर्शी, खटाई। (त्रि०) २ अम्लरसविशिष्ट, तुर्श, खट्टा।

अम्लरुहा (सं० स्त्री०) अम्लाय रोहति, अम्ल-रुह-क-टाप्। मालवदेशप्रसिद्धनागवल्लीभेद, मालवेका पान। इसका गुण यों लिखा है,-

"रुचिकरी दाहघ्नी गुल्महरी आध्मानहरी च।" (राजनिघण्टु)

अर्थात् अम्लरुहा उष्णा, मधुरा एवं रुचिकरा होती है। यह दाह, पित्त और गुल्मको मिटायेगी। इसके सेवनसे अग्नि और बल बढ़ता है।

अम्ललोणिका (सं० स्त्री०) अम्लं रसं लाति गृह्णाति, अम्ल-ला-क; पुरा० ण्वुल्, स्त्रीत्वात् टाप्। पृषो० वा णत्वम्। अमरूल, सेह।

चाङ्गेरी चुक्रिका दन्तशटाम्बष्ठाम्ललोणिका। (अमर)

वस्त्रादिमें लौह या अन्य कषायका चिह्न पड़नेपर इससे छुट जायगा। इसके गुणमें बताया है,—यह क्षुधावर्धक, रुचिकर, कफ वायु और ग्रहणीरोगनाशक, पित्तकर अर्श, कुष्ठ एवं अतिसार प्रभृति रोग निवारक है। (भावप्रकाश)

अम्ललोणी, अम्ललोणिका देखो।

अम्ललोनिका, अम्ललोणिका देखो।

अम्लवती (सं० स्त्री०) अम्लं रसं अस्त्यस्याम्; अम्ल रसादि० मतुप्, मस्य वत्वम्। आमरूललता, सेह।

अम्लवर्ग (सं०पु०) अम्लानां तद्रसवतां वर्गः समूहः, ६-तत्। अम्लरस प्रधान द्रव्यसमूह, खट्टी चीज़का जखीरा। इसमें निम्न लिखित द्रव्य सम्मिलित हैं,—

"अम्लवेतसजम्बीरलुङ्गाम्लचणकाम्लकाः।
नागरङ्गं तिन्तिड़ी च चिञ्चाफलं च निम्बुकम्॥
चाङ्गेरी दाड़िमश्चैव करमर्दं तथैव च।
एष चाम्लगणः प्रोक्तो वेतसाम्लसमायुतः॥" (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कोई कोई दाड़िम, आमलकी, मातुलङ्ग, आम्रातक, कपित्थ, करमर्द, वदर, तिन्तिड़ी, कोशाम्र, भव्य, परावत, वेत्रफल, लकुच, अम्लवेतस, दन्तशठ, दधि, तक्र, सुरा, शुक्त, सौवीरक, तुषोदक एवं धान्याम्लको भी अम्लवर्ग समझता है। वस्तुतः जितना अम्ल द्रव्य हो, वह सब इसमें आ जायेगा।

अम्लवल्लिका, अम्लवल्ली देखो।

अम्लवल्ली (सं० स्त्री०) अम्ल तद्रसवती वल्ली यस्याः, पूर्वपदस्य पुंवद्भावः। त्रिपर्णीकन्द, जवासा। इसके ग्रन्थिविशिष्ट मूलसे अम्लरस लता निकलती है।

अम्लवाटक (सं० पु०) आम्रातक वृक्ष, अमड़ेका पेड़।

अम्लवाटा, अम्लवाटिका देखो।

अम्लवाटिका (सं० स्त्री०) वाटी एव वाटिका; स्वार्थे कन्-टाप्, ह्रस्व इत्वम्। अम्लस्य वाटिका स्थानमिव, ६-तत्। नागवल्लीभेद, किसी क़िस्मका खट्टा पान।

अम्लवाटी, अम्लवाटिका देखो।

अम्लवाड़क, अम्लवातक देखो।

अम्लवातक (सं० पु०) आम्रातक वृक्ष, अमड़ेका पेड़।

अम्लवास्तुक (सं० पु०) चाङ्गेरी, अमरूल।

अम्लवास्तुक, अम्लवास्तूक देखो।

अम्लवास्तूक (सं० पु०) अम्लरसान्वितो वास्तूकः, कर्मधा०। चुक्रनाम पत्रशाक, खट्टा पालक।

अम्लविदुल (सं० पु०) अम्लवेतस, अमलबेत, चूका।

अम्लवीज (सं० क्ली०) अम्लस्य वीजं कारणम्, ६-तत्। वृक्षाम्ल, इमली।

अम्लवृक्ष (सं० क्ली०) अम्लरसो वृक्षे यस्य, बहुव्री०। वृक्षाम्ल, इमली।

अम्लवेत, अमलवेतस और अमलबेत देखो।

अम्लवेतस (सं० पु०) अम्लं रसं वयति सर्वपत्रेषु वहति; वेञ्-उण्-असच् तुट्च, बाहुलकात् न आत्वम्। चुक्र, अमलबेत, तुर्शह, खट्टा शाक। अमलबेत देखो। अम्लवेतसका गुण कषाय, उष्ण और वात, कफ, अर्श, गुल्म, अरोचक प्रभृति रोगनाशक कहा गया है। "भेदनोऽर्शोप्रशस्तः।" (राजनिघण्टु)

यह लघु, दीपन, भेदन और हृद्रोग, शूल, गुल्म प्रभृति रोगनाशक, पित्तकर, रोमहर्षण, वद्धविट्, मूत्र, प्लीहा, उदावर्त, हिक्का, अरुचि, श्वास, कास, अजीर्ण, वमन, वात, कफ प्रभृति रोगनाशक होता है। (भावप्रकाश)

इसके पक्के फलमें निम्नलिखित गुण रहेगा,—

"दोषघ्नं गुरु दारकञ्च।" (राजवल्लभ)

अम्लशाक (सं० पु०) अम्लोऽम्लः शाको यस्य, बहुव्री०। १ चुक्र, चूका। यह अत्यम्ल होता और वात, दाह एवं श्लेष्माको दूर करता है। शकर या चीनी मिलाकर खानेपर इससे दाह, पित्त और कफ मिट जायेगा। (राजनिघण्टु)

अम्लशाकाख्य (सं० क्ली०) चुक्रनामकपत्रशाक, चूका।

अम्लष्टा (सं० स्त्री०) चाङ्गेरी, सेह।

अम्लसरा (सं० स्त्री०) नागवल्लीभेद, किसी क़िस्मका पान।

अम्लसार (सं० पु०) अम्लरस एव सारः प्रधानं यस्य। १ चुक्र, चूका। २ निम्बुक, नीबू। ३ हिन्ताल वृक्ष। (क्ली०) ४ काञ्जिक, कांजी। ५ चुक्रनामक काञ्जिकभेद, किसी क़िस्मकी कांजी। ६ भातका मांड़।

अम्लसारक (सं० क्ली०) १ काञ्जिक, कांजी। २ चुक्रनामक काञ्जिकभेद, किसी क़िस्मकी कांजी।

अम्लस्तम्भनिका (सं० स्त्री०) तिन्तिड़ी, इमली।

अम्लहरिद्रा (सं० स्त्री०) अम्ला अम्लरसाधिका हरिद्रा, कर्मधा०। शठीवृक्ष, आंबाहलदी।

अम्ला (सं० स्त्री०) अम-उण-क्त; अम्लरसोऽस्त्यस्याम्, अर्श आदि०-अच् ततः टाप्। १ चाङ्गेरी, आमरूल। २ वनमातुलुङ्ग, बिजोरा। ३ ओवल्लीवृक्ष। ४ तिन्तिड़ी, इमली।

अम्लाक्त (सं० त्रि०) अम्लीकृत, खट्टा किया हुआ, जो तुर्श हो गया हो।

अम्लाङ्कुश (सं० पु०) अम्लं अङ्कुशः अङ्कुशाकाराग्रं यस्य बहुव्री०। चुक्र, अम्लवेतस, चूका।

अम्लाटन (सं० पु०) १ महासहावृक्ष, कोई झाड़ी, कटसरैया। यह कषाय, मधुर, तिक्त, उष्णवीर्य और स्निग्ध होता है। (भावप्रकाश) २ गर्भवेदनाहर योग, हमलका दर्द मिटानेवाली दवा। (चिकित्साक्रमकल्पवल्ली)

अम्लाढ्य (सं० पु०) अरुणनिम्बुक, नारङ्गीका दरख़्त।

अम्लात, अम्लातक देखो।

अम्लातक (सं० पु०) अम्लं रसं अतति गच्छति प्राप्नोति; अम्ल-अत-ण्वुल्, ६-तत्। अम्लवेतस, चुक्र, अमलबेत, चूका।

अम्लातकी (सं० स्त्री०) पलाशीलता, सेह।

अम्लादन (सं० पु०) आद्यते, अद कर्मणि ल्युट्; अम्लं अदनं भक्ष्यम्, कर्मधा०। कुरण्टकवृक्ष, पीली लोनिया।

अम्लादान, अम्लादन देखो।

अम्लादि (सं० पु०) १ तिन्तिड़ी, इमली। २ चुक्रनामक पत्रशाक, चूकेकी भाजी।

अम्लाध्युषित (सं० पु०-क्ली०) १ सर्वगताक्षिरोग,

आंखकी कोई बीमारी। इससे आंख पकती, लाल पड़ती, जला करती और पानी देती है। (माधवनिदान) २ अवगणनिम्बूक, नारङ्गी।

अम्लान (सं० पु०) म्ले-क्त ऐदात्वं तस्य नत्वञ्च, ततो नञ्-तत्। १ बन्धुजीवकवृक्ष, दोपहरिया। २ महासहा, कोई झाड़ी। 'अम्लानस्तु महासहा।' (अमर) ३ झिण्टिका भेद, किसी किस्मकी झाड़ी। 'अम्लानस्त्वमले झिण्टिभेदे।' (हेम) 'अम्लानो झिण्टिकाभेदे।' (विश्व) ४ महाराजतरङ्गिणीवृक्ष। (क्ली०) ५ पद्म। (त्रि०) ६ प्रफुल्ल, फूला हुआ, जो मुरझाया न हो। ७ प्रकाशमान, मेघरहित, खुला हुआ, बादलसे खाली।

अम्लाना (सं० स्त्री०) महासेवतीपुष्पवृक्ष, बड़ी सेवतीके फूलका दरख्त।

अम्लानि (सं० स्त्री०) १ बल, स्फूर्ति, गुरुता, कुवत, ताज़गी, रौनक। (त्रि०) २ बलवान्, प्रफुल्ल, ताकतवर, शिगुफ्ता, खिला हुआ, जो मुरझाता न हो।

अम्लानिन् (सं० त्रि०) स्वच्छ, प्रकाशमान, साफ, चमकीला।

अम्लानिनी (सं० स्त्री०) अम्लानानां समूहः, इनि। १ पद्मसमूह। २ पद्मिनी।

अम्लाम्रा (सं० स्त्री०) चाङ्गेरी, आमरुलकी भाजी।

अम्लायनी (सं० स्त्री०) मल्लिकाभेद।

अम्लिका (सं० स्त्री०) अम्ल इव स्वार्थे कन् टाप् अतो इत्वः इत्वञ्च। १ तिन्तिड़ीवृक्ष, इमलीका दरख्त। 'तिन्तिड़ी चिञ्चाम्लिका।'(अमर) २ आम्र, आमका फल। ३ पलाशी लता, ढाक, टेसूका पेड़। ४ माचिका, पुदीना। ५ श्वेताम्लिका, कोई झाड़ी। ६ चाङ्गेरी, चौलाईकी भाजी। ७ अम्लोद्गार, खट्टी डकार।

'अम्लिका तिन्तिड़िकाम्लोद्गारचाङ्गेरिकासु च।' (विश्व)

अम्लिकापान (सं० क्ली०) तिन्तिड़ीपानक, इमलीका पना। पकी इमलीको पानीमें अच्छीतरह मलके रस निचोड़ लेंगे। पीछे शकर, कालीमिर्चकी बुकनी, लौंग और कपूर मिलाकर उसे पीनेपर वातरोग छूट जाता है। (भावप्रकाश पूर्वभाग)

अम्लिकावटक (सं० पु०) वटकविशेष, इमलीका बड़ा। इमलीको अच्छीतरह पहले पानीमें भिगो देना चाहिये। जब वह फूल जाये, तब खूब जलमें मलकर उसका रस निचोड़ लीजिये। फिर उसमें ठीक तौरपर नमक, मिर्च और मसाला मिलाकर बड़ेको डुबो देंगे। यही बड़ा अम्लिकावटक कहलाता, खानेमें अच्छा लगता और भूखको बढ़ाता है। (भावप्रकाश)

अम्लिमन् (सं० पु०) अम्लता, तुर्शी, खटाई।

अम्ली (सं० स्त्री०) अम्लो रसोऽस्त्यस्याम्, अम्ल-अर्श आदि०-अच्-ङीप्। १ चाङ्गेरी, आमरुल, चौलाईकी भाजी। 'अम्ली चाङ्गेर्याम्।' (हेम) २ जलवेतस, पानीका बेंत। ३ चुक्रिका, लोनिया। ४ तिन्तिड़ी, इमली।

अम्लीका, अम्लिका देखो।

अम्लीकाफल (सं० क्ली०) तिन्तिड़ीफल, इमली। यह शुष्क, उद्दीपन, भेदन, तृष्णाघ्न, लघु और कफवातरोगका पथ्य होता है। (वाग्भट सूत्रस्थान) कच्ची इमली खानेसे अस्र, पित्त तथा आम बढ़ता और दाह होने लगता है। किन्तु पकी इमली वात, आम और शूलको मिटाती तथा हृदयको शीतल कर देती है। (अत्रिसंहिता)

अम्लीय (सं० पु०) अम्लवेतस, अमलबेत, चूका।

अम्लोटक (सं० पु०) अम्लं उटं पत्रं यस्य। अश्मन्तकवृक्ष, सेहू।

अम्लोटज (सं० पु०) चाङ्गेरी, चौलाईकी भाजी।

अम्लोत्तम (सं० पु०) दाड़िम, अनार।

अम्लोद्गार (सं० पु०) अम्ल-उद्-गृ-घञ्: अम्लस्य उद्गारः, ६-तत्। अम्लरससंयुक्त उद्गार, खट्टा डकार।

अम्लौरी (हिं० स्त्री०) अंधौरी, छोटी-छोटी फुन्सी। यह ग्रीष्म ऋतुमें पसीनेसे लोगोंके शरीरपर उभर आयेगी।

अय (सं० पु०) ईयते प्राप्यते शुभमनेन, इण् करणे अच्। १ पूर्वजन्मकृत शुभकर्म, शुभदायक दैव, पहले जन्मका किया हुआ अच्छा काम, नेकबख्ती, खुशकिस्मती। 'अयः शुभावहो विधिः।' (अमर) २ विधान, कायदा। एति जयमनेन, इण् करणे अच्। ३ पासा। यन्ति शावाः द्यूतसाधनोपकरणानि अस्मिन्, आधारे अच्। ४ शतरञ्जकी दाहनी-ओरवाला घर।

५ प्रजापतिविशेष। ६ गमन, रवानगी। (त्रि॰) ७ गमनकर्ता, जानेवाला। (हिं॰ पु॰) ८ लोहा। ९ अग्नि, आग। (सम्बो॰) १० हे, अरे।

अयं (सं॰ सर्व॰) यह, इसने।

अय:पान (सं॰ क्ली॰) अयो द्रवीभूतं तप्तलौहं पीयते अत्र, अधिकरणे ल्युट्। नरकविशेष, किसी दोज़ख़का नाम। इस नरकमें जानेसे यमदूत पापीको तरल और अग्निवर्ण लौह पिला देते हैं।

अय:प्रतिमा (सं॰ स्त्री॰) अयस: प्रतिमा, ६-तत्। लौहप्रतिमा, सूर्मी, स्थूणा, बुत-आहनी, लोहेकी मूर्ति। 'सूर्मी स्थूणाऽय:प्रतिमा।' (अमर)

अय:शूल (सं॰ क्ली॰) रम्भ्रादि करणे अयस: शूलमिव, ६ तत्। अय:शूलदण्डाजिनाभ्यां ठक्ठञौ। पा ५।२।७६। १ लौहनिर्मित तीक्ष्ण अस्त्रविशेष, लोहेका कोई तेज़ हथियार। २ अपराधीके प्राणदण्ड निमित्त लौह-कीलक, फांसी चढ़नेकी सूली। ३ तीक्ष्ण उपाय, कड़ी तदबीर। अयस: शूलमिव सन्तापकम्। ४ शूलरोग, दर्द-शिकम्, पेटकी पीड़ा।

अयक्ष्म (वै॰ त्रि॰) नास्ति यक्ष्मा यस्य, वेदे अच्-समा॰। १ रोगशून्य, नीरोग, तनदुरुस्त, भला-चङ्गा। नास्ति यक्ष्मा रोगविशेषो यस्य। २ अयक्ष्मा, क्षयरोग-शून्य, गैरमदक़ूक़, जिसे क्षईकी बीमारी न रहे। ३ स्वास्थ्यकर, सेहतबख़्श। (क्ली॰) ४ स्वास्थ्य, तनदुरुस्ती।

अयक्ष्मकरण (सं॰ त्रि॰) स्वास्थ्यकर, सेहतबख़्श।

अयक्ष्मताति (वै॰ स्त्री॰) १ क्षयरोगकी शून्यता, क्षईकी बीमारीका न होना। २ स्वास्थ्य, तनदुरुस्ती।

अयक्ष्मत्व (वै॰ क्ली॰) अयक्ष्मताति देखो।

अयक्ष्ममाण (सं॰ पु॰) बलिदानकी अनिच्छा, क़ुर्बानी करनेकी ख़्वाहिशका न होना।

अयजनीय (सं॰ त्रि॰) १ यज्ञमें आदर पानेके अयोग्य। २ निन्दित, बदनाम।

अयजुष्क (वै॰ त्रि॰) यज्ञीय पदसे रहित।

(सं॰ त्रि॰) नास्ति यज्ञो यस्य, नञ्-बहुव्री॰। १ अकृतयज्ञ, यज्ञ न करनेवाला। (पु॰) २ यज्ञका अभाव। ३ अनुत्तम यज्ञ।

अयज्ञक (सं॰ त्रि॰) यज्ञके अयोग्य, जो यज्ञके क़ाबिल न हो।

अयज्ञदत्त (सं॰ पु॰) न यज्ञदत्त, दुष्ट यज्ञदत्त, जो यज्ञदत्त इकीर हो।

अयज्ञसाच् (वै॰ त्रि॰) यज्ञ न करनेवाला, जो तुच्छ यज्ञ करता हो।

अयज्ञिय (सं॰ त्रि॰) यज्ञं अर्हति; यज्ञ-घ, ततो नञ्-तत्। यज्ञमें देनेको अयोग्य, जो यज्ञमें देने क़ाबिल न हो।

अयज्यु (सं॰ त्रि॰) यजति; यज-युच्, ततो नञ्-तत्। यज्ञ न करनेवाला, जो अध्वर्यु न हो, ख़राब।

अयज्वन् (सं॰ पु॰) विधिना इष्टवान्; यज-क्वनिप्, ततो नञ्-तत्। अकृतयज्ञ, यज्ञ न करनेवाला।

अयणाचार्यसूनु—विष्णुमाहात्म्यपद्धति-रचयिता।

अयत् (सं॰ त्रि॰) निश्चेष्ट, चेष्टा न करनेवाला, जो कोशिश कर न रहा हो।

अयत (सं॰ त्रि॰) यम-क्त, ततो नञ्-तत्। १ अकृतयम, नियमहीन, जो इन्द्रियके दमनमें अशक्त हो, परहेज़ न रखनेवाला, बेक़ायदा, जो इन्द्रियको रोक न सकता हो। यतते; यत-अच्, नञ्-तत्। २ यत्नशून्य, बेतदबीर, कोशिश न करनेवाला।

अयतेन्द्रिय (सं॰ त्रि॰) इन्द्रियको यममें न रखनेवाला, जिसकी इन्द्रिय चलायमान रहे।

अयत्न (सं॰ पु॰) न यत्न:, अभावे नञ्-तत्। १ यत्नका अभाव, आयासाभाव, बेतदबीरी। (त्रि॰) नास्ति यत्नो यस्य, बहुव्री॰। २ यत्नशून्य, बेतदबीर, कोशिश न करनेवाला।

अयत्नकारिन् (सं॰ त्रि॰) आयासशून्य, चिन्तारहित, शिथिल, तदबीर न लड़ानेवाला, बेपरवा, सुस्त, काहिल।

अयत्नकृत (सं॰ त्रि॰) सरल अथवा प्रस्तुत रूपसे उत्पन्न किया हुआ, स्वत:प्रवर्तित, जो आसानीसे या फ़ौरन् निकल आया हो।

अयत्नज, अयत्नकृत देखो।

अयत्नतस् (सं॰ अव्य॰) विना चेष्टा, बेतदबीर लड़ाये, ख़ुद-ब-ख़ुद, आप ही आप।

अयत्नवत् (सं० त्रि०) अकर्मण्य, निश्चेष्ट, शिथिल, नाकाम, बेपरवा, सुस्त, जो तदबीर न लड़ाता हो।

अयथा (सं० अव्य०) न यथा तुल्ययोग्यत्वे, नञ्-तत्। १ विशृङ्खल वा अनुपयुक्त रूपसे, नामुवाफिक या नाकाबिल तौरपर। (त्रि०) नास्ति यथा तुल्य योग्यता यस्य यत्र वा, बहुव्री०। २ अयोग्य, नालायक। अयत्न, बेतदबीर, दौड़-धूप न लगानेवाला। ४ मिथ्या, झूठ। (पु०) ५ अयोग्य कर्म, नाकाबिल काम।

अयथातथ (सं० त्रि०) यथा योग्यं तथा न भवति, नञ्-तत्। १ अयथा, नामुनासिब। २ निष्प्रयोजन, निरर्थक, बेकाम, बेफायदा, फजूल। (अव्य०) ३ निरर्थक रूपसे, नाकाबिल तौर पर। (क्ली०) ४ अयथातथ्य, अयथार्थका भाव, नामुनासिबत।

अयथातथ्य (सं० क्ली०) अनुरूपताका अभाव, अयुक्तता, अनौचित्य, अयोग्यता, असदृशता, नामुवाफिकत, नामुनासिबत।

अयथाद्योतन (सं० क्ली०) अनपेक्षित विषयकी सूचना, गैरमुतरक्किब बातकी खबर।

अयथापूर्व (सं० त्रि०) अभूतपूर्व, अदृष्टप्रतिम, गैर-मामूल, जिसकी नजीर न मिले।

अयथाबल (सं० अव्य०) अपने बलके विपरीत, अपनी ताकतके खिलाफ।

अयथामात्र (सं० त्रि०) मापसे उलटा, नापसे खिलाफ।

अयथामुखीन (सं० त्रि०) मुंह फेरे हुआ, जो चेहरा घुमाये हो।

अयथार्थ (सं० त्रि०) नास्ति यथा अर्थो यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ मिथ्याभूत, मानी या मतलबके मुवाफिक न रहनेवाला, बेमानी। २ अयोग्य, नामुनासिब, नाकाबिल।

अयथार्थज्ञान (सं० क्ली०) मिथ्या आभास, झूठी समझ।

अयथार्थबुद्धि (सं० स्त्री०) अर्थव्यभिचारी अप्रमाण जन्य ज्ञान। (तर्कभाषा)

अयथार्थानुभव (सं० पु०) अप्रमावत् अर्थानुसन्धेय। (सिद्धान्तचन्द्रोदय)

अयथावत् (सं० अव्य०) यथा योग्यं रूपमर्हति; अर्हार्थे वति, ततो नञ्-तत्। अननुरूप, गलतीसे, नादुरुस्तीमें।

अयथाशास्त्रकारिन् (सं० त्रि०) शास्त्रके अनुसार काम न करनेवाला, अधार्मिक, बुरा, खराब।

अयथेष्ट (सं० अव्य०) इष्टमनतिक्रम्य, यथेष्टम्, ततो नञ्-तत्। १ इच्छाके विरुद्ध, मर्जीके खिलाफ। (त्रि०) अर्श आदि० अच्। २ अल्प, थोड़ा, कम।

अयथोचित (सं० त्रि०) अनुपयुक्त, नाकाबिल, जो मुनासिब न हो।

अयन (सं० क्ली०) अय-इण् वा भावे ल्युट्। १ गमन। २ सूर्य एवं चन्द्रमाका दक्षिणसे उत्तर और उत्तरसे दक्षिण गमन। ३ पथ। ४ गृह, आश्रय। ५ स्थान। ६ अयननाम्नी संक्रान्ति। "अयने विषुवे चैव संक्रान्त्याम।" (स्मृति) ७ उक्त अयनसाधन शास्त्र। ८ सैन्यनिवेश रूप व्यूह-प्रवेशका पथ। ९ राशिचक्रका क्रान्तिवृत्तारम्भ स्थान विशेष। १० अंश। ११ अयनाभिमानी देवताका याग विशेष। १२ सूर्यके उत्तर और दक्षिण दिशामें जानेका काल।

तीन ऋतुका एक अयन और दो अयन का एक वर्ष होता है।

'द्वौ द्वौ माघादिमासौ स्यादृतुस्तैरयनं त्रिभिः।
अयने द्वे गतिरुदग्दक्षिणार्कस्य वत्सरः॥' (अमर)

पहले सब देशके मनुष्योंका ऐसाही विश्वास था, कि पृथिवी समतल भूमि है। सूर्य, चन्द्रप्रभृति ग्रहगण इस पृथिवीको वेष्टन कर घूमते फिरते हैं। आखिर हमारे देशके आर्यभटने लोगोंका यह भ्रम दूर कर दिया, तो भी वह सूर्यकी ठीक गति स्थिर कर न सके। आजकल युरोपमें ही ज्योतिष शास्त्रकी विशेष उन्नति हुई है। सूर्य एक स्थानमें है,परन्तु स्थिर नहीं है। यह अपने ही स्थानोंमें पचीस दिनमें एक बार घूम आता है। पृथिवी चन्द्र एवं और भी अनेक ग्रह सूर्यकी चारो ओर घूमते हैं। इन सब विषयोंको युरोपीय पण्डितोंने सुचारुरूपसे निश्चित किया है।

पृथिवी वर्ष भरमें एक बार सूर्यकी चारो ओर घूम आती है। फिर अहोरात्रमें आप भी एक बार घूमती

है। किन्तु सहज विवेचनामें पृथिवीकी गति ठीक सूर्यकीसी गति जान पड़ती है। इसके अतिरिक्त पृथिवी पश्चिम दिशासे पूर्व दिशामें घूमकर आती है। सहज दृष्टिमें यह भी ठीक विपरीत दिखाई देता है।

राशिचक्र ३६० अंशोंमें विभक्त है। राशिचक्रमें,—मेष, वृष, मिथुन, कर्कट, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन यही बारह राशि हैं। अतएव एक एक राशिका परिमाण ३० अंश है। राशिचक्रमें २७ नक्षत्र हैं। इसलिये दो पूर्ण नक्षत्र और एक का एक चरण लेकर एक राशि होता है। अर्थात् प्रत्येक नक्षत्रका परिमाण १३ अंश २० कला हैं। पृथिवीकी मध्यरेखा एवं भचक्रकी मध्यरेखा जहां समसूत्रपातमें मिली उसका नाम क्रान्तिपात है। इस क्रान्तिपातके ऊपरसे उत्तर दक्षिणकी ओर लम्बी जिस एक रेखाकी कल्पना की जाती है, उसे विषुवरेखा कहते हैं। इस देशके ज्योतिषानुसार इस तरहकी गणना की जाती है, कि सूर्य इस रेखासे २७ अंश उत्तर और २७ अंश दक्षिणमें गमनागमन करता है। उसी गतिका नाम अयनगति और उसके एक एक अंशका नाम अयनांश है। किसी किसीके मतसे ६६ वर्ष ८ मासमें एक एक अयनांशकी गति समाप्त होती है। इसलिये ५४ अंश जानेमें ३६०० वर्ष लगते हैं। किन्तु एक एक अयनांश बीतते ७२ वर्ष लगते यही अनेक मनुष्य स्वीकार करते हैं। अयनांश गति द्वारा दिवारात्रका व्यतिक्रम होता है। संप्रति अयनांश २०।४६।१० है, इसलिये इस समय १० आश्विन और १० चैत्रको दिवारात्रि समान होती है। जिस बार अयनांश शून्यमें आ पड़ेगा, उस वर्ष ३० आश्विन और ३० चैत्रको दिवारात्रि समान होगी। कारण, उस दिन सूर्य क्रान्तिपातमें आ उपस्थित होता है। उसके बाद अयनांश जितना बढ़ता है, उतना ही पीछे आकर दिवारात्रि समान होती है। अयन, अयनांश अयनसंक्रान्ति इत्यादिका विशेष विवरण एवं चित्र प्रभृति,—चन्द्र, पृथिवी और सूर्य शब्दमें देखो। आयन-अयनसाध्य, अयनसम्बन्धीय, आयनिक, अयनजात। (स्त्री०) आयनिकी।

अयनकाल (सं० पु०) अयनाधारः कालः, मध्यपदलोपी ६-तत्। अयनांशस्थित काल, ऐतिदाल-लैलोनिहारवाले नुक़्तोंके बीचका वक़्त।

अयनचलन (सं० क्ली०) अयनस्य चलनं वलनं वा, ६-तत्। अयनांशका पूर्व वा पश्चिमके स्थानान्तरको चलन, नुक़्तायेतिदाल-लैलोनिहारकी मशारिक़ या मग़रिब किसी दूसरी जगहको रवानगी।

अयनज (सं० पु०) अयनात् राशीनां स्वस्वस्थानचलनात् जायते,, जन-ड। अयनांशजात मासादि, नुक़्तायेतिदाल-लैलोनिहारसे निकला महीना वग़ैरह।

अयनदेवता (सं० स्त्री०) मार्गके निकट रखी हुयी देवी वा मूर्ति।

अयनभाग (सं० पु०) अयनस्य बोधको भागः शाक०-तत्। अयनांश, मुक़र्रर मिन्तक़त-उलबुरूज या हमलवाले पहले नुक़्तेके शुरू और बहारी मोतदिल-उलनहारके मुत-अल्लिक़ नुक़्तेके बीचका कमान।

अयनमण्डल (सं० क्ली०) ६-तत्। राशिचक्र और राशिचक्रस्थ सूर्यके गमनका पथ, मिन्तक़त उल-बुरूज। (Ecliptic)

अयनमास (सं० पु०) अयन-निरूपितो मासः, शाक०-तत्। अयनांशानुसार दिनमानादिके ज्ञानार्थ कल्पित मास, जो महीना नुक़्ते-ऐतिदाल-लैलोनिहारके मुवाफ़िक़ दिनका मिक़दार वग़ैरह जाननेको फ़र्ज़ कर लिया जाता हो।

अयनवलन, अयनचलन देखो।

अयनवृत्त, अयनमण्डल देखो।

अयनसंक्रम (सं० पु०) अयनांशानुसारेण संक्रमः, शाक०-तत्। मेषादि राशिके अयनांशमें ग्रहगणका सञ्चार।

अयनसंक्रान्ति (सं० स्त्री०) अयनघटिता संक्रान्तिः, शाक०-तत्। १ सूर्यकी दक्षिणायनघटित संक्रान्ति, कर्कट-संक्रान्ति। २ सूर्यकी उत्तरायणघटित संक्रान्ति, मकरसंक्रान्ति। ३ चल-संक्रान्ति।

अयनसंपात (सं० पु०) अयनांशका पतन, नुक़्तायेतिदाल-लैलोनिहारका गिराव।

अयनांश (सं० पु०) सूर्यगति विशेषका भाग, जो हिस्सा आफ़्तावको किसी चालका हो।

अयनांशज (सं० पु०) अयनांशात् जायते, अयनांश-जन-ड। प्रथम क्रान्तिवृत्तान्तर स्थानको अतिक्रमकर उत्पन्न होनेवाला मास, जो महीना नुक़्ता-ऐतिदाल-लैलोनिहारको लांघकर निकला हो।

अयनान्त (सं० पु०) अयनकी सीमा, नुक़्ता-ऐतिदाल-लैलोनिहारका ख़ातिमा।

अयन्त्र (वै० क्ली०) १ अबाध्यता, मनमानी। २ अस्त्र-विशेष, कोई हथियार। यह अस्त्र अतिशय भीषण होता और शत्रुको रोक रखता है।

अयन्त्रित (सं० त्रि०) अबाध्य, स्वतन्त्र, खुद इख़्तियार, मनमौजी, जो रोक-टोक न मानता हो।

अय:पान (सं० क्ली०) नरक विशेष, कोई दोज़ख़। इसमें यमदूत पापीको तप्त-तरल लौह पिलाते हैं।

अय:प्रतिमा (सं० क्ली०) लौहमूर्ति, लोहेका बुत।

अयम—सुप्रसिद्ध क्षत्रप नृपति नहपानके मन्त्री। बम्बई-के जुन्नरगढमें जो शिलालेख मिला, उसपर लिखा है,—इन्होंने एक तालाब खुदवाया और एक भवन बनवाया था। इनका जन्म वत्सगोत्रमें हुआ रहा।

अयमित (सं० त्रि०) प्रतिबन्धरहित, अनिवारित, रोका न हुआ, जो काटा न हो।

अयव (सं० पु०) अल्पो यवः सदृशो वा, नञ्-तत्। १ विष्ठाजात क्रमिविशेष, गोबरीला कीड़ा। (क्ली०) यु-मिश्रणे-कर्तरि-अच्, ततो नञ्-तत्। २ चन्द्र और सूर्यका वियोजक कृष्णपक्ष, अंधेरा पाख। (त्रि०) नास्ति यवो यज्ञसाधनत्वात् यत्र। ३ यवहीन, जिसमें यव न लगे। पितृकृत्यादि तिलसाध्य होता, उसमें यवका प्रयोजन नहीं पड़ता।

अयवक (सं० त्रि०) यवरहित, दुष्टयवसंयुक्त, जिसमें यव न रहे, बुरे यववाला।

अयवन् (सं० क्ली०) कृष्णपक्ष, अंधेरा पाख।

अयवस् (सं० पु०) न युतः मिलितः चन्द्रसूर्यौ यत्र, यु-आधारे-असुन्। अर्धमास, पक्ष। हमारे शास्त्र-कारोंके मतसे अर्धमास अर्थात् पूर्णिमाको चन्द्र एवं सूर्य अति दूरवर्ती सप्तम राशिमें रहता किसी तरह मिलन नहीं होता; इससे अर्धमास अयवा कह-लाता है।

अयविका (सं० क्ली०) अयवक देखो।

अयव्य (सं० त्रि०) यवके अयोग्य, जो यवके क़ाबिल न हो।

अय:शय (वै० त्रि०) लोहमें लेटनेवाला, लोहेका बना हुआ।

अय:शिप्र (वै० त्रि०) लौह हनु वा नासा विशिष्ट, जिसका जबड़ा या नाक आहनी रहे।

अय:शीर्षन् (वै० त्रि०) लौह-शिरस्-विशिष्ट, जिसका सर आहनी रहे।

अय:शूल (सं० क्ली०) १ लोहप्रास, लोहेका भाला। २ सव्याज उपाय, धोकेकी तदबीर।

अय:स्थुण (सं० त्रि०) १ लौहस्तम्भ-विशिष्ट, जिसमें आहनी खम्भे लगें। (पु०) २ ऋषिविशेष।

अयश (हिं०) अयशस् देखो।

अयशस् सं० क्ली०) अश्नुते व्याप्नुते; अश्-असुन् युट् च, विरोधे नञ्-तत्। १ यशका विरोधी अपवाद, अकीर्ति, बदनामी। (त्रि०) नास्ति यशो यस्य, नञ्-बहुव्री०। कीर्तिशून्य, बदनाम, नागवार।

अयशस्कर (सं० त्रि०) यशस्-कृ-ताच्छील्यादौ-ट, ततो नञ्-तत्। अकीर्तिकर, अपवादजनक, बदनाम करनेवाला, जिससे हिक़ारत रहे।

अयशस्य (सं० त्रि०) अयशो हितम्: हितार्थे यत्, विरोधे नञ्-तत्। कीर्तिशून्य बदनाम।

अयशस्वी (सं० त्रि०) कीर्तिशून्य बदनाम।

अयशी, अयशस्वी देखो।

अयश्चूर्ण (सं० क्ली०) लौहकिट्ट, लौहज, लोहेका बुरादा या रेत।

अयस् (सं० क्ली०) एति आगच्छति अयस्कान्त-मणि-कर्षणात्। १ लौहमात्र, लोहा। २ कान्तलौहचुम्बक, खेड़ीका लोहा। एति गच्छति अङ्गुलीयकादिरूपेण शरीरं ऋकयक्रय-सन्निभागादिना वा पुरुषात् पुरुषा-न्तरं गच्छत्यनेन धर्मदानादिना वा। ४ हिरण्य, सोना। भावे असुन्। ५ गमन, रवानगी। अयसा निर्मितम्, अण्। ५ आयस, लोहेका छड़ा वगैरह। (पु०) ७ अग्नि, आग।

अयस, अयस् देखो।

अयस्कांस (सं० पु०-क्ली०) अयो विकारः कंसः अयसो वा कंसः पात्रं सत्वम्। लौहनिर्मित पानपात्र, लोहेका कटोरा या आबखोरा।

अयस्कर्णी (सं० स्त्री०) अय इव कर्णावस्याः, सत्वं ङीष्। लौहतुल्य कठिन कर्णयुक्त स्त्री, जिस औरतके कान लोहे-जैसे कड़े रहें।

अयस्काण्ड (सं० पु०-स्त्री०) लौहवाण, लोहेका तीर।

अयस्कान्त (सं० पु०) अयस्सु मध्ये कान्तः रमणीयः, ७-तत्; कस्कादित्वात् सत्वम्। १ कान्तिलौह नामक लौहविशेष, खेड़ीका लोहा। अयसां कान्तः प्रियः, नैकव्यमात्रेण। २ कान्तपाषाण, चुम्बकपत्थर। यह लेखन, शीत और मेदोविषघ्न होता है चुम्बक देखो। ३ शल्य उद्धार चिकित्सा, जिस इलाजमें चुभे हुये हथियारके निकालनेका काम रहे।

अयस्कान्तशिला (सं० स्त्री०) लौहचुम्बक, चुम्बक पत्थर।

अयस्काम (सं० त्रि०) अयो लौहं कामयते; अयस्-कम् अण्-उपस० सत्वम्। लौहाभिलाषी, जिसे लोहा पानेकी ख्वाहिश रहे।

अयस्कार (सं० पु०) अयो विकारः करोति; अयस्-कृ अण्, उप-स० सत्वम्। १ लौहकार, लोहार। २ जङ्घाका ऊर्ध्वभाग, टांगका ऊपरी हिस्सा।

अयस्कीट (सं० पु०) लौहकिट्ट, लोहेका जङ्ग।

अयस्कुम्भ (सं० पु०) अयो विकारः कुम्भः सत्वम्, शाक०-तत्। लौहनिर्मित घट, लोहेका घड़ा।

अयस्कुशा (सं० स्त्री०) अयः सहिता कुशा, शाक०-तत्। लौह-सहित वल्गा, जिस रस्सीमें कुछ-कुछ लोहा लगा रहे।

अयस्कृति (सं० स्त्री०) अयसा कृतिः चिकित्सा भेदः, ३-तत्। महाकुष्ठका चिकित्साविशेष।

अयस्ताप (सं० त्रि०) लौहको उष्ण रक्तवर्ण बनानेवाला, जो लोहेको तपा लाल कर डालता हो।

अयस्थूणा (सं० स्त्री०) अयो निर्मिता स्थूणा, शाक०-तत् वा विसर्गलोपः। १ लौहमय गृहस्तम्भ, लोहेका खम्भा। 'स्थूणा गृहस्तम्भः' (उज्ज्वलदत्त) २ लौहप्रतिमा, लोहेका बुत। (पु०) अयो निर्मिता स्थूणा यस्य; ६-बहुव्री०, गौणे ह्रस्वः। ३ लौहस्थूणायुक्त गृहस्थ, जिस आदमीके घरमें आहनी खम्भा लगा रहे। ३ ऋषिविशेष। (त्रि०) ७-बहुव्री०। ४ अयोमय अक्षयुत, लोहेकी धुरीवाली। अयस्थूण शब्द शिवादि-गणके मध्य आया है।

अयस्पात्र (सं० क्ली०) अयोमयं पात्रम्, मध्यपदलोपी कर्मधा०। लौहमय पात्र, लोहेका बरतन।

अयस्मय (सं० त्रि०) अयो विकारः, अयस्-मयट्। अयस्मयादीनि छन्दसि। पा १।४।२०। १ लौहमय आहनी, लोहेका। (पु०) २ मनु स्वारोचिषके पुत्रविशेष।

अयस्मयी (सं० स्त्री०) असुरस्के तीन निवास-स्थानमें एक।

अया (वै० अव्य०) इस रीतिसे, ऐसे, इसतरह, यों।

अयाँ (अ० वि०) १ प्रकाशित, खुला हुआ। २ साफ़, जो भ्रमात्मक न हो।

अयाचक (सं० त्रि०) याच्ञा न करनेवाला, जो मांगता न हो। (स्त्री०) अयाचिका।

अयाचित (सं० क्ली०) याच-क्त याचितम्, नञ्-तत्। १ अमृताख्य वृत्ति, न मांगनेकी हालत। (पु०) २ उपवर्ष ऋषिका नाम विशेष। (त्रि०) ३ अप्रार्थित, न मांगा हुआ, जिससे कोई चीज मांगी न जाये। (अव्य०) ४ विना याच्ञा, बेमांगे।

अयाचितवृत्ति (सं० स्त्री०) याच्ञा हीन भैक्ष्यपर निर्वाह, बेमांगी खैरातपर गुजरका करना।

अयाचितव्रत (सं० क्ली०) अयाचितवृत्ति देखो।

अयाचिन् (सं० त्रि०) याच्ञा न करते हुआ, जो मांगता न हो।

अयाची, अयाचिन् देखो।

अयाच्य (सं० त्रि०) याच्ञाके अयोग्य, जो मांगने काबिल न हो।

अयाज्य (सं० त्रि०) न याजयितुमर्हः; यज-णिच्-यत्, नञ्-तत्। १ बलिदानके अयोग्य, जिसके लिये कुरबानी करना मुनासिब न ठहरे। २ पतित, गिरा हुआ। ३ यज्ञ करनेके अयोग्य। ४ धार्मिक अनुष्ठानमें प्रवेश पानेके अयोग्य।

अयाज्यत्व (सं० क्लो०) पतित होनेका भाव, गिर जानेकी हालत।

अयाज्ययाजक (सं० पु०) पतित व्यक्तिको यज्ञ करानेवाला पुरुष।

अयाज्ययाजन (सं० क्लो०) अयाज्यानां याजनम्, ६-तत्। अयाज्य पतितादिका याजन, पतितादिका यागपूजादि करना, पतितादिगणको याग किंवा पूजादि कराना।

अयाज्यसंयाज्य (सं० क्लो०) अयाज्यस्य पतितादेः सम् सम्यक् याज्यम्, ६-तत्; अयाज्य-सम्-यज-णिच्-यत्। अयाज्ययाजन देखो।

अयातपूर्व (सं० त्रि०) अनुग, अनुयायी, अगला, दूसरा, आयन्दा।

अयातयाम (सं० त्रि०) यातो गतः यामः प्रहर-कालो यस्य, नञ्-तत्। १ बलिष्ठ, जो कमज़ोर न हो। २ प्रयोग करनेसे न बिगड़ा हुआ, जो इस्तेमाल कर-नेसे ख़राब न हुआ हो। ३ नूतन, टटका। ४ एक प्रहर न बिताये हुआ, जिसको एक पहर न लगा हो। ५ विगतदोष, बेऐब। ६ जिसका काल बीत न जाये, मौक़ेका। ७ परिभुक्त न होनेवाला, जो खाया न गया हो। (क्लो०) ८ याज्ञवल्क्य द्वारा आविष्कृत यजुर्वेदका अंश विशेष।

अयातयामता (वै० स्त्री०) अनभिभूत बल, नवो मता, ताज़गी, जो ताक़त बिगड़ो न हो।

अयातयामन् (वै० त्रि०) बलिष्ठ, नूतन, ताज़ा, जो कमज़ोर न हो।

अयातु (वै० त्रि०) या-तु, नञ्-तत्। १ राक्षसभिन्न, अहिंसक, न मारनेवाला, जो शैतान् न हो। (पु०) २ देवता, राक्षस न होनेवाला व्यक्ति।

अयाथातथ्य, आयथातथ्य (सं० क्लो०) न यथातथा-भावः, ष्यञ्, नञ्-तत्। १ मिथ्यात्व, नारास्ती, झूठा-पन। २ अयथार्थत्व, ग़ैर-मुनासिबत, जो बात ठीक न हो।

अयाथार्थिक (सं० त्रि०) १ अनुचित, अयोग्य, ग़ैर मुनासिब, जो ठीक न हो। २ कृत्रिम, कल्पित, बनावटी, मसनूयी, जो असली न हो।

अयाथार्थ्य (सं० क्लो०) अनौचित्य, अयोग्यता, ग़ैर-मुनासिबत, नाक़ाबिलियत।

अयान (सं० क्लो०) नास्ति यानं चलनं यस्य, नञ्-बहुव्रो०। १ स्वरूप, प्रकृति, स्वभाव, सूरत, क़ुदरत, तबीयत। २ यत्न। नञ्-तत्। ३ गमनाभाव, ठहराव, मुक़ाम। (त्रि०) नास्ति यानं वाहनं गतिर्वा यस्य, नञ्-बहुव्रो०। ४ वाहनहीन, बेसवारी। ५ गतिहीन, न चलनेवाला, जो जाता न हो।

अयानत (अ० स्त्री०) साहाय्य, सहारा।

अयानप (हिं० पु०) १ ज्ञानका अभाव, बेअक़्ली, समझ न आनेकी हालत। २ सादालौही, भोलापन, टेढ़े न पड़नेकी हालत।

अयानपन अयानप देखो।

अयानय (सं० पु०) अयः प्रदक्षिणम्, अनयः प्रसव्यम्; प्रदक्षिण प्रसव्यगामिनां शाराणां यस्मिन् परशारैः पदानामसमावेशः। अनुपद सर्वान्नायानयं बध्वा भक्षयति नेयेषु। पा ५।२।९। १ पाशक्रीड़ाका शीर्षस्थान, जिस स्थानमें गोटके जानेसे विपक्षको गोट कोई अनिष्ट कर न सके। (क्लो०) २ पाशक्रीड़ा विशेष।

अयानयीन (सं० पु०) शीर्षस्थानप्राप्त पांसा, जो गोट ऊंची जगह पहुंच गयी हो।

अयानी (हिं० स्त्री०) अज्ञानी, जिस औरतको समझ न रहे।

अयाल (फ़ा० पु०) १ केशर, घोड़े और शेरके गलेका बाल। (अ०) २ सन्तान-सन्तति, बाल-बच्चा।

अयावक (सं० त्रि०) यावकविहीन, महावरसे ख़ाली, प्रकृत रक्तवर्ण, जो क़ुदरतन् लाल हो।

अयावन (सं० क्लो०) योग करानेका अभाव, जिस हालतमें मिला न सकें।

अयाश (वै० त्रि०) अयं अश्नाति, अय-अश-उण्। राक्षस, सम्पर्कके अयोग्य, जो साथ रहने क़ाबिल न हो।

अयास् (वै० अव्य०) एति गच्छति सर्वत्र, इण्-आसि। अग्निमें, आगपर। 'अयाः वह्निः। स्वरादि पाठादव्ययम्।' (उज्ज्वलदत्तः)

अयास्य (वै० त्रि०) यस्-णिच्-यत्, नञ्-तत्।

१ क्षेपण करानेको अशक्य, जो फेंकवा न सकता हो। २ यापन करनेको अशक्य, जो बिताया न जा सकता हो। ३ क्षेपण न किया जानेवाला, जिसे फेंक न सकें। ४ युद्ध द्वारा वश किये जानेको अशक्य, जिसे लड़कर मातहत न बना सकें। (पु०) आस्यात् मुखादयते वहिर्गच्छति; इण्-अय वा अच्, ततः पृषो० पदव्यत्ययः। ५ मुखसे वहिर्गामी वायु, जो हवा मुंहसे बाहर निकलती हो। ६ अङ्गिरा वंशके मुनिविशेष। यह सकल लोकके बन्धु-स्वरूप रहे।

अयासोमीय (वै० क्लो०) सामवेदका मन्त्र विशेष।

अयाहव (सं० क्ली०) कान्सा धातु, कांसा।

अयि (सं० अव्य०) १ क्या, क्यों। २ अच्छा, खूब। ३ ए, ओ। ४ प्यारी, प्यारे। ५ आयिये, पधारिये। यह अव्यय प्रश्न, अनुनय, सम्बोधन, अनुराग एवं सस्नेह आमन्त्रणमें आता है।

'अयि प्रिये प्रीतिभृतां मुरारी।' (लोलिम्बराज)

अयुक्छद (सं० पु०) न युज्यन्ते समतया असमाः छदाः पत्राण्यस्य। सप्तपर्ण वृक्ष, सतनो। सतनो पेड़की हरेक डालमें अलग अलग सात पत्ते रहते, इसीसे उसे अयुक्छद कहते हैं।

अयुक्त (सं० त्रि०) युज-क्त, नञ्-तत्। १ अन्य विषयमें मनोयोग हेतु कर्तव्य विषयसे अनवहित, जो दूसरी बातमें दिल लग जानेपर फर्जसे अलाहिदा हो। २ असंयुक्त, जुदा, जो मिला न हो। ३ अनियोजित, जो लगा न हो। ४ कसा न हुआ, जिस पर काठी वग़ैरह न चढ़े। ५ अयोग्य, नालायक़। ६ वहिर्मुख, भगा हुआ। ७ युक्तिशून्य, गंवार। ८ आपद्गत, मुसीबतमें पड़ा हुआ।

अयुक्तकृत् (सं० त्रि०) कुकर्म करनेवाला, जो बुरा काम करता हो।

अयुक्तचार (सं० पु०) गुप्तपुरुषको नियुक्त न करनेवाला, जो जासूस न रखता हो, राजा, बादशाह।

अयुक्तता (सं० स्त्री०) अप्रयोग, अनियुक्ति, कामसे दूरका रहना।

अयुक्तत्व (सं० क्ली०) अयुक्तता देखो।

अयुक्तपदार्थ (सं० पु०) सन्वय किया जानेवाला शब्दार्थ, लफ़्ज़का जो मानी मुहैया किया जाता हो।

अयुक्तरूप (सं० त्रि०) अनुचित, अयोग्य, नाक़ाबिल, ग़ैरमुनासिब, नालायक़।

अयुक्ति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ युक्तिका अभाव, जुदायी, मेलका न मिलना। २ अन्याय, ग़ैरमुन्सिफ़ी। ३ अयोग्यता, नाक़ाबिलियत। ४ वंशो बजानेकी चाल।

अयुक्पलाश (सं० पु०) वृक्षविशेष, किसी दरख़्तका नाम।

अयुक्पादयमक (सं० क्ली०) अर्थालङ्कार अलङ्कार, तजनीस। छन्दके प्रथम और तृतीय पादमें एक ही शब्द विभिन्न अर्थका द्योतक रहनेसे यह अलङ्कार होता है।

अयुक्शक्ति (सं० पु०) शिव, महादेव।

अयुग (सं० त्रि०) युग्म-भिन्न, विषम, ताक़, अकेला।

अयुगख, अयुग्मनेत्र देखो।

अयुगपद् (सं० अव्य०) न युगपत्, नञ्-तत्। क्रम-क्रम, एक-एक, धीरे-धीरे।

अयुगपद्ग्रहण (सं० क्ली०) क्रमागत आसेध, जो समझ धीरे-धीरे आती हो।

अयुगपद्भाव (सं० पु०) अनुपूर्वता, क्रमानुसारिता, सिलसिलेवन्दी।

अयुगिषु (सं० पु०) पञ्चबाण, कामदेव।

अयुगू (सं० स्त्री०) अयुजमद्वितीयम् एकसन्तानमिति यावत् अवति गर्भे धारयति, अव-क्षिप्-ऊठ्। काकवन्ध्या, सिवा एकके दूसरा सन्तान न उत्पन्न करनेवाली स्त्री, जो औरत एक ही बच्चा पैदा करती हो।

अयुग्धातु (सं० त्रि०) वीजकी विषम संख्यासे विशिष्ट, जिसमें जुज़-आज़मका शुमार ताक़ रहे।

अयुग्म (सं० क्ली०) युज्यते समतया; युज्-मक् कुत्व, नञ्-तत्। १ युग्म न होनेवाला द्रव्य, विषम, ताक़, जो चीज़ बेजोड़ हो। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ एकादि संख्या-विशिष्ट, एक वग़ैरह अदद रखनेवाला, जो पूरा न हो।

अयुग्मक (सं० पु०) सप्तपर्णवृक्ष, सतनो।

अयुग्मच्छद (सं॰ पु॰) सप्तपर्ण वृक्ष, सतनो।

अयुग्मनेत्र (सं॰ पु॰) अयुग्मानि युग्मभिन्नानि नेत्रा ण्यस्य, बहुव्री॰। १ शिव। शिवके ललाटपर अतिरिक्त एक नेत्र विद्यमान है, इसीसे उनका नाम अयुग्मनेत्र पड़ा। (क्ली॰) युग्मञ्च तत् नेत्रञ्चेति, कर्मधा॰। २ युग्मभिन्न नेत्र, कपालनेत्र।

अयुग्मपत्र, अयुग्मच्छद देखो।

अयुग्मपर्ण, अयुग्मच्छद देखो।

अयुग्मबाण (सं॰ पु॰) कामदेव।

अयुग्मवाह (सं॰ पु॰) अयुग्माः विषमा सप्त वाहा यस्य, बहुव्री॰। सप्ताश्व, सूर्य।

अयुग्मशर (सं॰ पु॰) अयुग्मा विषमाः पञ्चशरा यस्य, बहुव्री॰। पञ्चशर विशिष्ट, कामदेव।

अयुग्बाण, अयुग्मशर देखो

अयुङ्ग (वै॰ त्रि॰) विषम, ताक़, बेजोड़।

अयुज् (सं॰ त्रि॰) न युज्यते समतया; युज-क्विन्, नञ्-तत्। अयुग्म, विषम, ताक, बेजोड़, जो पूरा न हो।

अयुज, अयुङ्ग देखो।

अयुत (सं॰ त्रि॰) यु-क्त, नञ्-तत्। १ असंयुक्त, असम्बद्ध, मिला न हुआ, जो मिलसिलेमें न हो। (वै॰ त्रि॰) २ अविमर्दित, विच्छेदशून्य, दख़ल न दिया हुआ, जो परेशान् किया न गया हो। (पु॰) ३ राधिकके पुत्रविशेष। (क्ली॰) ४ दश सहस्र संख्या, दश हज़ारका शुमार।

अयुतजित्—भजमानके पुत्रविशेष।

अयुतनायिन् (सं॰ पु॰) अयुतं पुरुष-मेधानाम् अयुतं नयति स्म, नी-भूते-णिनि। पुरुवंशके नृपतिविशेष। इन्होंने प्रासेनजित्की कन्या सुयज्ञाके गर्भ एवं महाभौमके औरससे जन्मग्रहण किया था। अयुत संख्यक नरमेध करनेसे इनका नाम अयुतनायी पड़ा। पृथुश्रवाकी कन्या कामाके साथ इनका विवाह हुआ था। कामाके गर्भसे अक्रोधन नामक एक पुत्रने जन्म लिया। (महाभारत सम्भवपर्व ९४ अध्याय)

अयुतशस् (सं॰ अव्य॰) अयुतं अयुतं ददाति, वीप्सार्थ कारकात् शस्। अयुत-अयुत, दश-दश हज़ार।

अयुतसिद्ध (सं॰ त्रि॰) युतं अपृथग्भूतं सत् सिद्धं युतसिद्धम्। न युतसिद्धम्—नञ्-तत्। उपादान अर्थात् समवायी कारण परित्यागकर जिसका उपादान वा ज्ञान न किया जाय। जैसे कपाल परित्याग कर देनेसे घटकी उत्पत्ति नहीं हो सकती एवं घट कैसी वस्तु है, यह भी हमलोग समझ नहीं सकते। इसीसे घट और कपालको 'अयुतसिद्ध' अथवा अपृथक्सिद्ध कहते हैं। (जिन दो भागोंको पहले बना और जोड़कर कुम्हार घट प्रस्तुत कर लेते, उन्हीं दोनों खण्डोंको कपाल कहते हैं)।

इसका स्थूल तात्पर्य यह है, जहां कुछ अङ्ग प्रत्यङ्ग एकत्र कर लेनेसे एक विशेष वस्तुकी उत्पत्ति और उसका गुण तथा क्रियादि प्रकाश हो; परन्तु उसी अङ्ग प्रत्यङ्गको परित्याग करनेसे फिर उस वस्तुकी उत्पत्ति नहीं होती और न उसके गुण वा क्रियादिका ही प्रकाश होता है। यथा,—वृक्ष कैसा होता है, यह समझनेके लिये पत्र, शाखा, पल्लव, मूल, धड़, काठ इन सबको एकत्र ग्रहण करना पड़ता है। इन सबको एकत्र ग्रहण करनेसे समझमें आता, वृक्ष कैसा पदार्थ है। किन्तु पत्र पल्लवादिको परित्याग करनेसे हम लोग नहीं समझ सकते, वृक्ष कैसा होता है।

ऊपर 'उपादान कारण' कहा गया है। इस बातके कहनेका तात्पर्य यह है, कि कुम्भकारका दण्ड घटका निमित्त कारण है। क्यों कि, जब कुम्भकार दण्डसे चाकको घुमाता, तब घट निर्माण किया जाता है। किन्तु घट निर्माण कर लिये जाने पर फिर दण्डके साथ घटका कोई सम्पर्क नहीं, दण्ड एक जगह और घट दूसरी जगह पड़ा रहता है। घटके कपाल साथ घटका वैसा सम्बन्ध नहीं है। उसके पृथक् हो जानेपर फिर घटका अवयव नहीं रहता एवं घट न रहनेसे, शुक्लवर्ण या कृष्णवर्ण इत्यादि गुण भी नहीं रहता। घटका हिलना डोलना —किसी प्रकारकी क्रिया भी असम्भव हो जाती है। इस लिये गुण भी घटका अयुतसिद्ध है। किन्तु वैदान्तिक इस बातको स्वीकार नहीं करते।

अयुतसिद्धि (सं॰ स्त्री॰) यु अमिश्रणे-क्त युतम्;

युतयोः अपृथगरूपेण स्थितयोः सिद्धिः, अभावे नञ्-तत्। पृथक् रूपसे असिद्धि। जैसे, अवयव और अवयवीकी पृथक् पृथक् रूपसे सिद्धि नहीं होती। अर्थात् हस्त पदादि अवयव एवं मनुष्य अवयवी है, यहां अवयव एवं अवयवीको पृथगरूपसे सिद्धि होनी असम्भव है। फिर द्रव्य और गुण एवं द्रव्य और क्रियाकी पृथग्-रूपसे सिद्धि नहीं हो सकती। अर्थात् द्रव्य न रहनेसे उसका गुण किम्वा क्रिया भी नहीं रह सकती।

अयुतहोम (सं० पु०) यज्ञविशेष।

अयुताध्यापक (सं० पु०) उत्तम शिक्षक, अच्छा उस्ताद।

अयुतायुस् (सं० पु०) १ जयसेन आराविनके पुत्रविशेष। २ श्रुतवत्के पुत्रविशेष।

अयुताश्व (सं० पु०) सिन्धुद्वीपके पुत्रविशेष।

अयुद्ध (सं० क्ली०) १ शान्ति, अविरोध, सुलह, मेल, लड़ाईका न रहना। (त्रि०) २ अपराजित, जो जीता न गया हो। ३ युद्ध न करते हुआ, जो लड़ न रहा हो।

अयुद्धसेन (वै० पु०) अपराजित सैन्यसे सम्पन्न वीर, जिस बहादुरकी फौजको जीत न सकें।

अयुद्ध्वी (वै० अव्य०) विना युद्ध, बे लड़े-भिड़े, सीधे तौरपर।

अयुध (सं० पु०) १ युद्ध न करनेवाला व्यक्ति, जो शख्स लड़ता न हो। (हिं०) २ आयुध, हथियार।

अयुध्य (सं० त्रि०) अपराजेय, जिसे जीत न सकें।

अयुध्विन् (वै० पु०) विजय न पानेवाला वीर, जो लड़नेवाला ज़ोरदार न हो।

अयुनेत्र (सं० पु०) शिव।

अयुव (वै० त्रि०) न यौति, यु बाहु० क। असंसृष्ट, संसर्गशून्य, परेशान् न किया हुआ, जो हिला न हो।

अयूप, अयूप्य देखो।

अयूप्य (सं० त्रि०) यूपे साधु यत्, नञ्-तत्। यूप प्रस्तुत करनेके अयोग्य, जो यज्ञीय पशुरम्भनके क़ाबिल न हो। नीम, नीबू वग़ैरहकी लकड़ीसे यूप नहीं बनाते, इसीसे उसे अयूप्य कहते हैं। फिर पलाश, खदिर, विल्व प्रभृतिके काष्ठसे यूप बनता, इसीसे वह यूप्यकाष्ठ ठहरता है।

अये (सं० अव्य०) इण्-एच्। १ सावधान, होशियार, खबरदार। २ दुःख, हाय, अफ़सोस। ३ अरे, क्या, कहां, क्यों, भला। ४ प्रिये, प्यारे, हां। ५ सुनिये, देखिये, इधर, हुज़ूर, सरकार। कोप, विषाद, संभ्रम, स्मरण, सम्बोधन प्रभृति स्थलमें यह अव्यय आता है। (हिं० पु०) ६ जन्तुविशेष, कोई जानवर। यह जन्तु अये-अये बोलनेसे ही 'अये' कहलाता है।

अयोग (सं० पु०) युज-घञ्, अभावे नञ्-तत्। १ योगका अभाव अर्थात् विश्लेष, जुदायी, मुफ़ारक़त, फ़र्क़। २ ध्यानका अभाव, ख़यालकी अदममौजूदगी। ३ औषधका अभाव, दवाका न मिलना। ४ रोगनिदानके विरुद्ध चिकित्सा, जो हकीमी मर्ज़के आसारसे ख़िलाफ़ रहे। ५ ज्योतिषोक्त तिथिवारादि जात दुष्ट योग। ६ दो नक्षत्रका योग। ७ कोई मछली। ८ कठिनोद्यम, जान्फ़िशानी, कड़ी दौड़-धूप। ९ वमन द्वारा उपशमनीय रोग, जो बीमारी क़ै करानेसे छूट सकती हो। १० कूट, मुअम्मा, जिस बातका मतलब आसानीसे समझ न पड़े। ११ स्वर्णकारकी हथौड़ी। १२ विक्षेप, वक़फ़ा, फ़र्क़। १३ अयोग्यता, नाक़ाबिलियत। १४ अनुपस्थित स्वामी, ग़ैरहाज़िर ख़ाविन्द, रंडुवा। १५ अकाल, बुरा वक़्त। १६ सङ्कट, मुसीबत, तकलीफ़। १७ अप्राप्ति, ग़ैरहासिली; (त्रि०) १८ असंयुक्त, जो मिला न हो। १९ स्पष्टरीतिसे असम्बद्ध, जो साफ़ साफ़ जोड़ा न हो। २० प्राणपणसे चेष्टा करते हुआ, जो दिलोजान्से कोशिश कर रहा हो। २१ अप्रशस्त, ख़राब, जो भला न हो। (हिं०) २२ अयोग्य, नाक़ाबिल।

अयोगगुड़ (सं० पु०) लोहगुड़िका, लोहेकी गोली।

अयोगव (सं० पु०) अय इव कठिना गौर्वाणी यस्य, निपातने अच्। वैश्य कन्याके गर्भ और शूद्रके औरससे जो शङ्कर जाति उत्पन्न होती है, उसे अयोगव कहते हैं। शास्त्रकार कहते हैं, कि प्रतिलोम जातिमें एक वर्णका व्यवधान रहनेसे उस जातिको स्पर्श कर सकते हैं। वैश्य एवं शूद्रमें केवल एक वर्णका व्यवधान है, इसलिये अयोगव जातिको स्पर्श कर सकते हैं। इस समय प्रकृत अयोगव जाति निर्धारित करना बहुत

कठिन है। पश्चिम देशमें यह नाना वर्णोंके साथ मिल गये हैं। यह सब कृषिकार्य और पशुपालन करते हैं।

अयोगवाह (सं० पु०) नास्ति योग उल्लेखरूपः सम्बन्धोऽक्षरसमाम्नायसूत्रेषु येषां ते अयोगाः, अयोगा-उल्लेखरूप-सम्बन्धरहिता अपि वाहयन्ति णत्वषत्वकार्यं निर्वाहयन्ति इति वह-णिच्-अच् वाहाः; अयोगाश्च ते वाहाश्चेति कर्मधा०। १ अनुस्वार और विसर्ग एवं जिह्वामूलीय और उपध्मानीय। पाणिनिने स्वर एवं व्यञ्जन वर्णको अ इ उण्, ऋ लृ क् इत्यादि जो समाहार संज्ञा की है, उसमें अनुस्वार विसर्ग, जिह्वामूलीय और उपध्मानीय इन कईका योग अर्थात् उल्लेख नहीं है। इसीसे इन सबको अयोग कहते हैं; किन्तु योग अर्थात् उल्लेख न रहते भी यह सब णत्वादि कार्य निर्वाह करते हैं, इसलिये वाह नाम हुआ है। जिसमें अयोग और वाह यह दोनों धर्म रहते, उस वर्णको अयोगवाह कहते हैं।

अथवा, योगः आश्रयस्थानं तद्व्यतिरेकेन न उह्यते उच्चार्यते अयोग-वह-घञ्, शाक०-तत्। २ जो वर्ण आश्रयस्थानके योग भिन्न उच्चारित न हो।

'अयोगवाहा विज्ञेया आश्रयस्थानभागिनः।' (शिक्षाग्रन्थ)

विसर्गके जिह्वामूलीय और उपध्मानीय यह दो रूप और भी हैं। ककार खकारके पूर्व अर्द्ध विसर्ग सदृश जो चिह्न होता, उसे जिह्वामूलीय कहते हैं। जैसे,+क+ख। फिर पकार फकारके पूर्व जो अर्द्ध विसर्गके तुल्य चिह्न पड़ता, उसे उपध्मानीय कहते हैं। जैसे ⌣प⌣फ। अच्के बाद एक विन्दु रहनेसे उसे अनुस्वार और दो विन्दु रहनेसे विसर्ग कहते हैं। अच् भिन्न हलन्त वर्णके बाद यह प्रयुक्त नहीं होते। जैसे अं वं, अः वः। '+क+ख इति कखाभ्यां प्रागर्द्धविसर्गसदृशो जिह्वामूलीयः। ⌣प⌣फ इति पफाभ्यां प्रागर्द्धविसर्गसदृश उपध्मानीयः; अं अः इत्यचः परावनुस्वारविसर्गौ।

"नुवी पूर्वेण सम्बद्धौ, मूर्ध्नौ तु परगामिनौ।
चत्वारो योगवाहाख्याः, णत्वकर्मण्यचो मताः॥"

नु अर्थात् अनुस्वार, वि अर्थात् विसर्ग, इनका पूर्व वर्णके साथ सम्बन्ध रहता है, अर्थात् यह पूर्व वर्णके साथ उच्चारित होते हैं। मू अर्थात् जिह्वामूलीय और नी अर्थात् उपध्मानीयका पर वर्णके साथ उच्चारण होता है। इन चार वर्णोंका नाम अयोगवाह है। णत्वकार्यमें यह सब अच्की तरह व्यवहृत होते हैं—अर्थात् मूर्द्धन्य षकार, रेफ, ऋवर्ण एवं नकारके मध्य अच् व्यवधान रहनेसे जिस तरह णत्वमें कोई व्याघात नहीं लगता, उसी तरह अनुस्वारादि व्यवधान रहते भी णत्वकार्यमें कोई व्याघात नहीं पड़ता।

अयोगम् (सं० क्ली०) युज्-असुन्-क्लत्वम्, नञ्-तत्। १ असमाधि, दुनियादारी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ योगहीन, समाधिरहित, जो योग न जानता हो।

अयोगी (सं० पु०) योग न जाननेवाला, जिसे साधन-भजन मालूम न रहे।

अयोगुड़ (सं० पु०) अयसा निर्मितो गुड़ः गुटिका, शाक०-तत्। लौहमय गुटिका, फौलादकी गोली।

"वरमाशीविषविषं कथितं ताम्रमेव वा।
पीतमत्यग्निसन्तप्ता भक्षिता वाप्ययोगुड़ाः॥" (चरकसंहिता)

अयोगुल, अयोगुड़ देखो।

अयोगू (सं० पु०) अयो लौहविकारं गच्छति, अयस्-गम-डङ् मलोपः। कर्मकार, अयस्कार, लोहार, जो लोहेका काम करता हो।

अयोग्य (सं० त्रि०) युज-ण्यत्, नञ्-तत्। १ अक्षम, निष्प्रयोजन, नाक़ाबिल, नादुरुस्त, बेकार, जो किसी लायक़ न हो। २ अनुचित, ग़ैरवाजिब। ३ अमूर्त, निरवयव, बेशक्ल, जिसके अज़ो न रहे। ४ अनिरूप्य, जो क़ाबिल तहक़ीक़ न हो, पहचानमें न आनेवाला।

अयोग्यता (सं० स्त्री०) अक्षमता, नाक़ाबिलियत, नादुरुस्ती, लायक़ न होनेकी हालत।

अयोग्र (सं० पु०) अयोऽग्रे मुखे यस्य। मुषल, मूसर। मुषलके मुखमें लौह लगता, इसीसे वह अयोग्र कहलाता है। 'अयोग्रं मुषलोऽस्त्री स्यात्।' (अमर)

अयोग्रक, अयोग्र देखो।

अयोघन (सं० पु०) अयो हन्यतेऽनेन, अयस्-हन् करणे अप् घनादेशश्च। लौहमुद्गर, हथौड़ा।

अयोच्छिष्ट (सं० क्ली०) लौहकिट्ट, लोहेका जङ्ग।

अयोजन (सं॰ क्लो॰) वियोग, विश्लेष, जुदायी, अलाहदगी, मेलका न मिलना।

अयोजाल (सं॰ क्लो॰) अयोविकारः जालम्, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। १ लौहनिर्मित जाल, लोहेका फन्दा। (त्रि॰) अय इव दुर्भेद्यं जालं माया यस्य, बहुव्री॰। २ दुर्भेद्य-कपट, जिसकी चालाकी समझ न पड़े। ३ लौहजाल-विशिष्ट, जिसमें लोहेका फन्दा पड़ा रहे।

अयोदंष्ट्र (सं॰ त्रि॰) अयोमयी दंष्ट्राग्रधारा यस्य, बहुव्री॰ गौणे ह्रस्वः। लौहमय दंष्ट्राविशिष्ट, लोहेकी दाढ़वाला, जिसका अग्रभाग लौहमय रहे।

अयोदत्, अयोदंष्ट्र देखो।

अयोदती (वै॰ स्त्री॰) अयोदंष्ट्र देखो।

अयोदाह (सं॰ पु॰) लौहके जलनेका गुण, जो वस्तु, लोहेके जलनेमें हो।

अयोध्य (सं॰ त्रि॰) योद्धुं अशक्यम्; युध-ण्यत्, नञ्-तत्। युद्ध किये जानेको अशक्य, जिससे कोई लड़ न सके।

अयोध्या (सं॰ स्त्री॰) सूर्यवंशी राजाओंकी राजधानी। यह अक्षा॰ २६° ४८′ २०″ उ॰ और द्राघि॰ ८२° १४′ ४०″ पू॰ पर अवस्थित है। यहांके राजाओंको युद्धमें कोई परास्त न कर सकता था, इसीसे उनकी राजधानीको लोग अयोध्या कहते हैं।

अयोध्या वा अवध प्रदेश पहले कोशल नामसे प्रसिद्ध था। इसके उत्तर-पूर्वमें नेपाल राज्य, उत्तर-पश्चिममें रुहेलखण्ड, दक्षिणप—श्चिममें गङ्गा, पूर्वमें बस्ती और दक्षिण-पूर्वमें वाराणसी विभाग है। अयोध्यापुरी कोशलकी प्राचीन राजधानी है। मुसलमानोंके समयमें लखनऊ नगर राजधानी था।

अयोध्या प्रदेशके चार प्रधान विभाग हैं। यथा,—लखनऊ, सीतापुर, फैजाबाद और रायबरेली। लखनऊ विभागके अन्तर्गत लखनऊ, उनाव और बाराबंकी; सीतापुरके अन्तर्गत सीतापुर, हरदोई और खेरी; रायबरेलीके अन्तर्गत रायबरेली, सुलतानपुर और प्रतापगढ़—यह तीन-तीन उपविभाग हैं।

अति प्राचीनकाल ही भारतवर्षमें अयोध्या सुप्रसिद्ध स्थान हो गयी थी। सूर्यवंशी नृपति यहां राज्य करते थे। रामायणमें लिखा है, कि स्वयं मनुने अयोध्यापुरी निर्माण की थी। इसकी लम्बाई बारह योजन और चौड़ाई दो योजन रही। महाकवि वाल्मीकिने इस नगरीका जैसा वर्णन किया, उसके पढ़नेसे मालूम होता है, कि उस समय अयोध्या राजधानी विशेष समृद्धशालिनी थी। ब्राह्मण एवं ऋषि शिष्योंको विद्या पढ़ाते; शिल्पी नाना प्रकारके शिल्पकार्य्य चलाते; और नाना देशोंसे आकर वणिक्‌गण पण्यद्रव्य क्रय-विक्रय करते थे। कलकत्ता आदि नगरोंकी तरह उस समय अयोध्यापुरीमें भी सड़कोंपर पानी छिड़का जाता था। मनुसे लगा ११२ पीढ़ियोंने यहां राज्य किया था। उसके बाद राजा सुमित्रने अयोध्यापुरीको त्याग दिया। उनके परित्याग करनेके बाद सब अट्टालिकायें गिर पड़ीं और धीरे धीरे चारो ओर जङ्गल हो गया।

सूर्यवंशियोंके अयोध्या परित्याग कर देने पर बहुत दिनोंतक यहां बौद्ध धर्मका विशेष प्रादुर्भाव हुआ था। उसके बाद विक्रमाजित् नामक एक राजा यहांके जङ्गलको कटवाकर रामायणको लुप्तकीर्त्तिका उद्धार करने लगे। हमारे शास्त्रोंमें अयोध्याको मोक्षदायिकापुरी लिखा है। "अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका। पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः॥" अयोध्याका ऐसा माहात्म्य देखकर ही शायद विक्रमाजित्‌ने इस पुरी पर विशेष दृष्टि रखी थी। पहले उन्होंने सरयू नदीका स्थान सुधारा, उसके बाद नागेश्वर महादेवके मन्दिरका उद्धार किया। बौद्ध विप्लवके समय यह मन्दिर विनष्ट न हुआ था।

कहते हैं, कि राजा विक्रमाजित्‌ने अयोध्यामें ३६० देवालय बनवाये थे। परन्तु इस समय ४२ से अधिक मन्दिर विद्यमान नहीं हैं। अयोध्याके वृद्ध मनुष्य ऐसा कहते हैं, कि मुसलमान सम्राटोंके राजत्वकालमें यहां तीनसे अधिक मन्दिर प्रसिद्ध न थे; इसीसे मालूम होता है, कि अन्यान्य मन्दिर अधिक प्राचीन नहीं हैं।

अयोध्यामें रामकोट विशेष प्रसिद्ध स्थान है। कहते हैं, श्रीरामचन्द्रने इसी स्थानमें दुर्ग निर्म्माण किया था। इस दुर्गकी चारो ओर दश बुर्ज थे। हनुमान्,

सुग्रीव, जाम्बुवान् प्रभृति सेनापति उन्हीं बुर्जों पर रह नगरकी रक्षा करते थे। दुर्गके भीतर आठ राज-प्रासाद थे।

अयोध्या जानेसे रामलीलाके अनेक विवरण देखने में आते हैं। पण्डे यात्रियोंके साथ साथ जाकर उन विवरणोंको समझा देते हैं। भूभार हरण करनेके लिये श्रीराम पृथिवी पर अवतीर्ण हुये थे। उनका जन्म स्थान अब भी वर्त्तमान है। यहां कोई मूर्त्ति नहीं है। केवल श्रीरामचन्द्रके ध्वजवज्राङ्कुश-अङ्कित पादपद्मका चिह्न पड़ा हुआ है।

जन्मस्थानके निकट ही मुसलमान सम्राट्की एक मसजिद है। सन् १५२८ ई०में आखेटके लिये आकर बाबर यहां कुछ दिन रहे थे, उसी समय यह मसजिद बनी। मसजिदके दो पत्थरोंमें सन् ८३५ हिजरी (१५२८ ई०) खुदा हुआ है। अनेक मन्दिरोंसे पत्थर निकाल निकाल कर यह मसजिद बनाई गई थी। जन्मस्थानका मन्दिर कसौटीके पत्थरका बना था। बाबरकी मसजिदमें अभीतक उसके कई स्तम्भ विद्यमान हैं। मसजिद बननेपर कुछ दिनों तक हिन्दुवों और मुसलमानोंमें खूब विरोध चला था। उसके बाद अयोध्या अंगरेजोंके अधिकारमें आयी, तभीसे जन्मस्थान और मसजिदके बीचमें लोहेका बेड़ा लगा दिया गया है। सुतरां हिन्दुवों और मुसलमानोंमें फिर विरोध होनेकी सम्भावना न रही।

स्वर्गद्वार और राम-सीताके स्थानमें भी दो मसजिद हैं। स्वर्गद्वारकी मसजिद औरङ्गज़ेबकी बनवाई हुई है; परन्तु यह नहीं कहा जा सकता, राम सीताके स्थानकी मसजिद कब बनी थी। इस समय स्वर्गद्वारकी भग्नावस्था है। दो सौ वर्ष हुए कालूके राजाने रामसीताके मन्दिरका संस्कार करा दिया था; उसके बाद अहल्याबाईकी दृष्टि इसपर पड़ी। अहल्याबाई इन्दोरके होल्कर यशवन्त रावकी पत्नी थीं। सन् १७८४ ई०में रामसीताके निकटका घाट उन्होंने ही बनवाया था। इस समय भी इस देवालयका व्यय निर्वाह करनेके लिये इन्दोर से प्रति वर्ष २३१) रुपयेकी वृत्ति मिलती है।

रामचरितकी अन्यान्य मूर्तियां अनेक स्थानोंमें गठित हैं। कहीं तपोवनसे विश्वामित्र ऋषि आकर खड़े; कहीं रन्धनशालामें सीताजी रोटी बनाती, जिसके बेलन आदि अब भी पड़े हुए हैं। कहीं दशरथसे रूठकर कैकेयी सोती और रामको वन भेजकर प्राणप्रिय पुत्र भरतको राजगद्दी दिलानेके लिये दो वर मांगनेको आंखोंमें आंसू भरती हैं। प्रतिमूर्तियोंकी बनावट खराब है; उनमें शिल्पनैपुण्य नहीं, फिर भी इन कठिन स्थानोंमें जानेसे अयोध्याके उस पूर्व शोककी स्मृति आज भी जाग उठती है। अश्वमेधयज्ञका अनुष्ठान तो हुआ, परन्तु सीताजी उस समय बनवासमें थीं। विना सस्त्रीक हुए यज्ञका संकल्प नहीं होता, इसीसे कनकसीता बनवाकर रामचन्द्रजीने यज्ञ किया था। पण्डे अब भी त्रेतायुगकी उस कनकसीताको देखा देते हैं। पहले कही हुई मसजिद इसी स्थानमें है।

राम स्वयं राजा हुए। किन्तु उनके प्रधान अनुचर हनुमान्ने प्राण अर्पणकर सीताका उद्धार किया था, इसलिये भक्तवत्सल रामने महावीर हनुमान्को भी राजा बना दिया। एक स्थानमें वह अपूर्व दृश्य आज भी विद्यमान है। हनुमान् राजवेशमें बैठे हैं, शिरपर मुकुट सुशोभित है, पार्श्वमें चमर चल रहा है।

अयोध्यामें प्रवेश करनेपर निकट ही मणिपर्वत मिलता है। शक्तिशेल लगनेसे जब लक्ष्मणजी मूर्छित हुये, तब हनुमान्जी विशल्यकरणी लाने गये थे। परन्तु वानरकी जाति, क्या जाने विशल्यकरणी कैसी होती है, इसलिये समस्त गन्धमादन पर्वतको ही उठाये वह शून्यमार्गसे चले जाते थे। जब वे अयोध्याके ऊपर पहुंचे, तब भरतने अनजानमें उनके बाण मार दिया। तीक्ष्ण शरके लगते ही व्यथित होकर हनुमानजी भूमिपर गिर पड़े। उससे शायद गन्धमादनका कुछ अंश टूट गया था। यह मणिपर्वत वही भग्नांश है।

मणिपर्वत ४४ हाथ ऊंचा तथा टूटी फूटी ईंटों और कंकड़ोंसे परिपूर्ण है। इसीसे मालूम होता

कि अट्टालिकाओंके ईंटपत्थरों और कंकड़ोंको फेंक फेंककर यह पर्वत बना दिया गया है। इस स्तूपके नीचे किसी समय एक फलक मिला था। उसमें यह खुदा रहा,—मगध-राजवंशके नन्दवर्द्धन नामक जनैक राजाने मणिपर्वत निर्माण कराया था।

सुग्रीवपर्वत एवं कुवेरपर्वत नामके और भी दो स्तूप हैं। सुग्रीवपर्वत प्रायः ६ हाथ और कुवेर पर्वत प्रायः १४ हाथ ऊंचा है। कोई कोई अनुमान करते, कि ये सब बौद्धोंके स्तूप हैं।

सरयूके किनारे अनेक घाट हैं, परन्तु सब बंधे हुए नहीं हैं। रामघाट, भरतघाट, लक्ष्मणघाट, शत्रुघ्न-घाट—इसतरह एक एक घाटका एक एक नाम है। इन सब घाटोंमें पूर्वकीर्त्ति कुछ भी नहीं है। रामघाट पर अब धोबी लोग कपड़े धोते हैं। गुप्तघाटमें एक सुरङ्ग है। पण्डे कहते हैं, कि इसी सुरङ्गसे रामचन्द्रजीने सरयूजलमें प्रवेश किया था। स्वर्गघाट पक्का बंधा हुआ है। ऊपर मनोहर वृक्षश्रेणी है। यात्रीलोग यहां स्नान, दान और भोज्यादि उत्सर्ग करते हैं। घर्घरासे कुछ उत्तर कर्णालगङ्गाके पास अगस्त्य मुनिका समाधिस्थान है।

अयोध्यामें वैष्णवोंकी सात सम्प्रदायोंके सात मठ हैं। प्रत्येक मठमें एक एक महन्त और उनके चेले रहते हैं।

हनुमान्‌गढ़ीमें निर्वाणी सम्प्रदायका मठ है। इस सम्प्रदायके वैष्णव चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं; यथा—कृष्णदासी, तुलसीदासी, मणिरामी और जानकीशरण-दासी। निर्वाणी अखाड़ेमें प्रायः छः सौ चेले हैं; उनमें प्रायः तीन सौ सर्वदा उपस्थित रहते हैं।

रामघाट एवं गुप्तघाटपर निर्मोही सम्प्रदायके वैष्णवोंका अखाड़ा है। कहते हैं, प्रायः दो सौ वर्ष हुए गोविन्ददास नामक एक वैरागीने जयपुरसे कुछ निष्कर भूमि पाकर अयोध्याके रामघाटपर एक मन्दिरकी प्रतिष्ठा की थी। उसके बाद गुप्तघाटपर और एक अखाड़ा स्थापित हुआ। बस्ती, मनकापुर और खुर्दाबादमें इस सम्प्रदायके वैष्णवोंकी निष्कर भूमि है।

दिगम्बरी और एक सम्प्रदायके वैष्णव हैं। प्रायः दो सौ वर्ष हुए श्रीबलरामदासने अयोध्या आकर यह मठ स्थापन किया था। इस अखाड़ेमें १४।१५ चेलेसे अधिक नहीं रहते। इन लोगोंके भी निष्कर भूमि है।

शुजाउद्दौलाके शासनकालमें चित्रकूटसे दयाराम नामक एक व्यक्तिने आकर खाकी सम्प्रदायके वैष्णवोंका अखाड़ा जमाया था। प्रवाद है, कि वन जाते समय लक्ष्मण सर्वाङ्गमें भस्म लगाकर रामचन्द्रके साथ हुये, इसीसे खाकी वैष्णव सर्वाङ्गमें भस्म पोते रहते हैं। इस अखाड़ेमें प्रायः १८० चेले हैं। उनमें से प्रायः ५० चेले सर्वदा उपस्थित रहते हैं।

महानिर्वाणी सम्प्रदायका अखाड़ा भी शुजा-उद्दौलाके शासनकालमें स्थापित हुआ था। पुरुषोत्तम-दास महन्तने कोटाबूंदीसे आकर इस अखाड़ेको लगाया। इस अखाड़ेमें प्रायः २५ चेले हैं। सभी प्रायः तीर्थाटन किया करते हैं

मन्सूर अलीखांके शासनकालमें रतिराम नामक एक महन्तने जयपुरसे आकर सन्तोषी सम्प्रदायका मठ स्थापन किया था। किन्तु दो महन्तोंके बाद वैरागी लोग इस स्थानको त्याग कर चलते बने, अखाड़ा भी टूट-फूट गया। उसके बाद निधिसिंह नामक एक धनवान् पुरुषने पुराने मठका स्थापन निर्दिष्ट कर वहां एक मन्दिर बनवा दिया था। अन्तमें कुशलदास नामक सन्तोषी सम्प्रदायके कोई वैष्णव आकर एक अशोक वृक्षके तले रहने लगे। वहीं उनकी मृत्यु हुई थी। महन्तकी मृत्युके बाद रामकृष्णने वहां वर्त्तमान मन्दिर बनवा दिया।

शुजाउद्दौलाके ही शासनकालमें श्रीवीरमलदासने कोटेसे आकर निरालम्बी सम्प्रदायका मठ स्थापन किया था। किन्तु कुछ दिनोंके बाद यह अखाड़ा छोड़ दिया गया, उसके बाद नृसिंहदास नामक और एक वैरागीने आकर वर्त्तमान मन्दिर बनवाया।

अयोध्यापुरी स्थापित होनेके बाद यहां अनेक राजविप्लव और धर्मविप्लव हो गये हैं। ऊपर विक्रमा-जित् राजाकी बात कही जा चुकी है। सुननेमें आता है, कि उन्होंने शायद अस्सी वर्ष अयोध्यामें राज्य किया

था। फिर समुद्रपाल नामक एक योगीने अभिचार मंत्र द्वारा उनके प्राणको उड़ा दिया। प्राणवायुके देह छोड़ जाने पर सिद्ध योगीने उस मृत शरीरमें प्रवेश किया था। इस योगीकी सात पीढ़ीने शायद अयोध्या में राजत्व चलाया। परन्तु उन लोगोंका राजत्वकाल जिस तरह निर्दिष्ट हुआ है, उसपर एक दम विश्वास नहीं किया जा सकता। प्रवाद है, ६४३ वर्ष तक अयोध्यामें समुद्रपालोंका आधिपत्य रहा। अतएव हिसाब करनेसे प्रत्येक राजाका राजत्वकाल ८१ वर्षसे भी अधिक हो जाता है।

कोशलमें श्रावस्ती नामक और एक प्राचीन प्रसिद्ध स्थान है। इक्ष्वाकुसे आठवीं पीढ़ीके बाद युवनाश्वके पुत्र श्रावस्त राजाने इस नगरको बसाया था। अनेक दिनों तक यहां बौद्ध धर्मका अनुशीलन चला।

कपिलवस्तुमें शाक्यमुनिने जन्म ग्रहण किया था। उसके बाद अयोध्यामें आकर वे धर्मप्रचार करने लगे। सन् ई०से ५५० वर्ष पहले कुशीनगरमें उन्होंने निर्वाण मुक्तिको लाभ किया था।

सन् ४००ई०में चीनपरिव्राजक फाहियान श्रावस्ती आये। उस समय शहरपनाह टूट गई थी, उसके भीतर मन्दिर और अट्टालिकाका भग्नावशेष पड़ा हुआ था। कई दरिद्र संन्यासियोंके अतिरिक्त नगरमें और कोई भी न रहा। उसके बाद सातवीं शताब्दीमें युअङ्-चुयाङ् अयोध्या आये थे। आकर उन्होंने उस समय भी बीस बौद्ध मन्दिर देखे। उन मन्दिरमें प्रायः तीन हजार बौद्ध महन्त रहते थे। उस समय ब्राह्मणोंके भी प्रायः बीस मन्दिर विद्यमान रहे। युअङ्-चुयाङ्ने अयोध्याको अ-यु-त लिखा है।

अयोध्यामें छः जैन मन्दिर हैं। आदिनाथ जैनियों के प्रथम तीर्थङ्कर हैं। यही अयोध्या नगरी उनका जन्मस्थान है। उन्होंने आबू पर्वत पर प्राणत्याग किया था। अयोध्यावाले स्वर्गद्वारके समीप मुराई टोलेमें एक स्तूपपर उनका मन्दिर बना है। मन्दिरके निकट मुसलमानोंकी कितनी ही कब्र और एक मसजिद भी है। द्वितीय तीर्थङ्कर अजितनाथ हैं। इन्होंने भी अयोध्यामें जन्म ले समेतशिखरपर प्राणत्याग किया था। इटोरा सरोवरके पश्चिम किनारे इनका मन्दिर स्थापित है। अभिनन्दननाथ जैनियोंके चतुर्थ तीर्थङ्कर हैं। इन्होंने भी अयोध्यामें जन्म ले समेतशिखरमें प्राणत्याग किया। अयोध्याकी सरायके समीप इनका मन्दिर बना है। षष्ठ तीर्थङ्करका नाम सुमन्तनाथ और चतुर्दशका अनन्तनाथ है। इन सबने अयोध्यामें जन्म लिया और समेतशेखर या पारसनाथ पहाड़पर प्राणत्याग किया था। रामकोटके भीतर सुमन्तनाथका मन्दिर है। अनन्तनाथका मन्दिर गोलाघाटके नाले किनारे है। ये पांच दिगम्बर जैनियोंके मन्दिर हैं। इनके अतिरिक्त श्वेताम्बर जैनियोंका भी एक मन्दिर है। जैनियोंके मन्दिर अधिक प्राचीन नहीं हैं।

दर्शनसिंहके मन्दिरमें लाल पत्थरके एक महादेव हैं। नर्मदा नदीके पत्थरको गढ़कर यह देवमूर्ति तैयार हुई है। मन्दिर चुनारके पत्थरका बना है। यहां एक बड़ा भारी घण्टा है। उस घण्टेको बजानेसे चारो ओर गम्भीर नाद गूंज उठता है। ऐसा बड़ा भारी घण्टा बनानेके लिये दर्शनसिंहने नेपाली कारीगरोंके पास अपना आदमी भेजा था। घण्टा बनकर तय्यार तो हुआ, परन्तु नेपालसे अयोध्या लाते समय राहमें टूट गया। सुतरां नेपालका नमूना देखकर अयोध्यामें ही वर्तमान घण्टा ढला था।

मणिपर्वतके समीप दो क़ब्र हैं। मुसलमान कहते, कि इन क़ब्रोंमें शेख और पैग़म्बर गड़े हैं। पहले यहां गणेशकुण्ड नामक एक कूप था, अब सोमगिरि नामक दो छोटे-छोटे स्तूप हैं। सोमगिरि क्या हैं, इसका विशेष वृत्तान्त जाननेको कोई उपाय नहीं। यहांसे आध कोस दूर और एक क़ब्र देखनेमें आती है। वहां एक दरवेश या संन्यासी रहते थे। वे कहते रहे, कि वही बाइबल-उल्लिखित नोहाका समाधिस्थान है। रूमी महावीर सिकन्दर (अलेक्-सन्दर)ने इस क़ब्रको बनवा दिया था।

बहू बेगमकी क़ब्र भी एक उत्तम स्थान है। बहू बेगम और अवधके नवाबने गवर्नमेण्टके साथ ऐसा प्रबन्ध किया था, कि उनकी सम्पत्तिमेंसे तीन लाख रुपये क़ब्र बनानेके लिये अलग रख दिये जाते;

उसके सिवा क़ब्रस्तानमें जो दाई नौकर रहती और अतिथि फ़क़ीर आता, उसके ख़र्चको उनकी ज़मीन्दारीसे वार्षिक दश हज़ार रुपये निर्दिष्ट होते। सन् १८१६ ई॰में बेगमकी मृत्यु हुई थी। पीछे क़ब्रका काम चला। किन्तु बीच बीचमें अनेक बाधाविघ्न उपस्थित हुए थे। अन्तमें सन् १८५७ई॰के सिपाही-विद्रोह बाद क़ब्र तय्यार हुई। इस समय यहांके व्यय निर्वाहको गवर्नमेण्ट वार्षिक ४८३३) रुपये देती और क़ब्रके संस्कारको १०००) रुपये अमानत रखती है।

इस समय अयोध्यामें सब मिलाकर ८६ मन्दिर हैं। उनमें ६३ विष्णुमन्दिर और ३३ शिवमन्दिर हैं। इसके अतिरिक्त मुसलमानोंकी ३६ मसजिदें हैं। प्रतिवर्ष रामनवमीके उपलक्ष्यमें यहां मेला लगता है। मेलेमें कमसे कम ५००००० आदमी आते हैं।

प्राचीन कालके अनेक राष्ट्रविप्लवों बाद सन् १८५६ ई॰को अयोध्या अंगरेजोंके अधिकारमें आयी। सबसे पहले सूर्यवंशीय राजा यहां राज्य करते थे। उसके बाद श्रावस्तीके राजाओंने बहुत दिनतक यहां राजत्व चलाया। बौद्धधर्मके प्रादुर्भाव समय राजा अशोकका यहां विशेष आधिपत्य था। काश्मीरके राजा मेघवाहनके समय अयोध्या उनके अधीन थी, ऐसे अनेक जनप्रवाद हैं। विक्रमाजित्ने मेघवाहनको युद्धमें परास्तकर रामचरितकी लुप्तकीर्तिका उद्धार किया था। विक्रमाजित्के बाद गुप्त और पालवंशियोंने ६४३ वर्ष यहां राजत्व चलाया। किन्तु अयोध्या नगरी फिर जङ्गलसे परिपूर्ण हो गई थी।

सन् ई॰की आठवीं शताब्दीमें थारु नामकी एक असभ्य जाति हिमालय पर्वतसे आ अयोध्याका जङ्गल साफ करने लगी। परन्तु मालूम होता है, कि किसानीके सिवा उसका और कोई उद्देश्य न था। इसीसे उसने राज्य फैलानेका कभी यत्न न किया। पीछे उत्तर-पश्चिमसे सोमवंशके राजावोंने पहुंच थारु लोगोंको मार भगाया। सोमवंशी राजे जैनमतावलम्बी थे। ग्यारहवीं शताब्दीके अन्तमें कनौजके राजा चन्द्रदेवने चन्द्रवंशीय राजाओंको दूरकर अयोध्या और उत्तर कोशलपर अपना अधिकार जमा दिया।

उसके बाद अयोध्यापुरी भड़ नामकी एक असभ्य जातिके हाथमें पड़ गई। भड़ लोग भी जैन मतावलम्बी थे।

सन् ११८४ ई॰में शहाबुद्दीन् गोरीने कनौज जीत अयोध्याको लूटा था। उसी समयसे बहुत दिनकी प्राचीन आर्य राजधानी मुसलमानोंके अधिकारमें चली गई। अवधके मुसलमान बादशाहोंका विवरण लखनऊ शब्दमें देखो।

अयोध्या प्रदेशमें गङ्गा, गोमती, घर्घरा एवं राप्ती यही चार नदियां प्रसिद्ध हैं। यहां अनेक छोटे-छोटे सरोवर हैं। यहांकी भूमि बहुत उपजाऊ है। परन्तु आजकल बहुत भूमि ऊसर हो गई है। यव, गेहूं, चना, मकई, तिल, सरसों, बाजरा, अनेक प्रकारकी दाल, ऊख, तम्बाकू, नील, कपास, शोरा और आम प्रभृति नानाप्रकारका फल यहां यथेष्ट परिमाणमें उत्पन्न होता है। पहले यहां अपर्याप्त लवण बनता था। अब गवर्नमेण्टने उसे बन्द कर दिया है। पहले यहां वनहस्ती, भैंस, बाघ, शूकर प्रभृति वन्य पशु भी बहुत उपद्रव करते थे। अब वे प्रायः दिखाई नहीं देते। परन्तु नीलगाय, हरिण और मोर झुण्डके झुण्ड ऊसर भूमिमें चरते फिरते और बीच बीच किसानोंके खेतमें जाकर उपद्रव मचाते हैं। वृन्दावनकी तरह अयोध्यापुरीमें भी असंख्य वानर भरे हुए हैं। यात्री लोग उन्हें चना और लड्डू खिलाते हैं।

अयोध्याके अन्तर्गत खैरागढ़के सालकी लकड़ी अत्यन्त विख्यात है। यह सालवन गवर्नमेण्टके अधिकारमें है। गवर्नमेण्टके आदमी सालके पेड़ोंको काट काट घर्घरा नदीमें बेड़ा बांधते और उसे बहाकर बहरामघाट ले जाते हैं। यह सब लकड़ियां कलसे चिरती हैं। अयोध्यामें महुवे और शीशमके पेड़ भी बहुत होते हैं।

अयोध्याकाण्ड (सं॰ क्ली॰) अयोध्यायास्तन्नगरीवृत्तान्तविवृतेः काण्डं वर्गः, ६-तत्; तादृश्याः काण्डं वर्गो यस्मिन् पुस्तके, बहुव्री॰ वा। सप्तकाण्ड रामायणका द्वितीय काण्ड। इस काण्डमें रामके राज्याभिषेक प्रस्तावसे अत्रिमुनिके आश्रममें जानेतक सकल विषय वर्णित है।

अयोध्याधिपति (सं॰ पु॰) अयोध्याके नृपति, अयोध्याके बादशाह।

अयोध्याप्रसाद—१ रसतरङ्गिणीटीका एवं वृत्त-रत्नाकरकी नौका नाम्नी टीका रचयिता। २ भुवनदीपकके टीका-रचयिता।

अयोध्याप्रसाद बाजपेयी—युक्तप्रदेशवाले रायबरेली ज़िलेके सातनपुरवा ग्रामवासी कोई प्राचीन कवि। यह सन् १८८३ ई॰में जीवित रहे। इन्हें संस्कृत और हिन्दी भाषाका अच्छा ज्ञान था। इन्होंने सुस्वादु और चमत्कृत कविता बनायी है। छन्दानन्द, साहित्य-सुधासागर और रामकवित्तावली इनके रचित ग्रन्थमें उल्लेखयोग्य है। शिवसिंहके कथनानुसार यह महन्त रघुनाथदास या चन्दापुरमें राजा जगमोहन सिंहके साथ रहते थे। इन्होंने अपना उपनाम अवध लिखा है।

अयोध्याराम (आजूगोसाँई) गोस्वामी विशेष। अयोध्याराम गोस्वामीका निवासस्थान बङ्गालका हालीशहर और पिताका नाम रामराम गोस्वामी रहा, जो संस्कृत शास्त्रके विलक्षण पण्डित थे। आजू गोसाँई ऐसे प्रसिद्ध पुरुष नहीं, परन्तु चरित्र कुछ कौतूकावह रहा। यह पागल जैसे थे। परन्तु उस पागलपनके भीतर कुछ कवित्वशक्ति छिपी हुई थी। कविरञ्जन रामप्रसाद सेन भी हाली शहरके निवासी रहे। अतएव दोनों एक ही जगहके आदमी हुये। जब राजा कृष्णचन्द्र हालीशहर जाते, तब दोनो आदमियोंको बुलाकर कौतुक देखते और रामप्रसाद जब कोई गीत बनाते, तब आजू गोसाँई दिल्लगी उड़ाकर उस गीतका उत्तर देते थे। अयोध्याराम नामक और एक व्यक्तिने सत्यनारायणकी कथा बनायी थी, परन्तु वे उतने प्रसिद्ध नहीं।

अयोध्यावासिन् (सं॰ त्रि॰) अयोध्याका रहनेवाला, जो अयोध्यामें रहता हो।

अयोध्यावासी—युक्तप्रदेशका वैश्य-समाजविशेष। यह समाज आगरा और इलाहाबादके जिलों तथा अवधमें मिलता है।

अयोनि (सं॰ स्त्री॰) अयते क्लिद्यते शुक्रशोणितादि-कारणसामग्री अनया, नञ्-तत्। १ योनिभिन्न अन्य-स्थान। २ जो मन्त्र सामवेदका न हो। (त्रि॰) नास्ति योनिरुत्पत्तिस्थानं यस्य, नञ्—बहुव्री॰। ३ अजन्म, योनिसे उत्पन्न न होनेवाला। ४ नित्य, उत्पत्ति और नाशसे रहित। (पु॰) ५ ब्रह्मा। ६ शिव। ७ मुषल, कुटना।

अयोनिक (सं॰ त्रि॰) न आम्नाता योनिर्यस्य, नञ्-बहुव्री॰ कप्। १ योनि शब्दयुक्त श्लोक न रखनेवाला। २ जिसकी उत्पत्तिका कारण कहा न गया हो।

अयोनिज (सं॰ त्रि॰) न योनेर्जायते, ५-तत्। योनिसे अजात, जो योनिसे उत्पन्न न हुआ हो। (क्ली॰) २ तीर्थविशेष।

अयोनिजत्व (सं॰ क्ली॰) योनिसे उत्पन्न न होनेकी स्थिति।

अयोनिजेश (सं॰ पु॰) शिव।

अयोनिजेश्वर, अयोनिजेश्वरतीर्थके महादेव।

अयोनिजेश्वरतीर्थ (सं॰ क्ली॰) तीर्थविशेष।

अयोनिसम्भव, अयोनिज देखो।

अयोपाष्टि (वै॰ त्रि॰) लौहनखविशिष्ट, लोहेके नाखून रखनेवाला।

अयोमय (सं॰ त्रि॰) अयसो विकारः, विकारे मयट्। लौहविकार-जात, लोहेसे बना हुआ।

अयोमल (सं॰ क्ली॰) अयसो मलमिव, ६-तत्। लौहकिट्ट, लोहेका जङ्ग। 'अयोमलन्तु सन्तप्तम्।' (चिकित्सा)(चिकियोग) लोहेको जलानेसे शीशेको ईंट—जैसी जो चीज़ निकलती, वह अयोमल कहलाती है। इसका गुण लोहे-जैसा ही है। सौ वर्षका अयोमल उत्तम, अस्सीका मध्यम और साठका अधम होता है।

अयोमुख (सं॰ क्ली॰) अयो विकाररूपं मुखं यस्य। १ लाङ्गलादि, हल वग़ैरह। (पु॰) २ वाण, तीर। ३ दानव विशेष। ४ पर्वतविशेष। (त्रि॰) ५ लौह-मुखविशिष्ट, लोहेके मुंहवाला, लोहेकी नोक रखनेवाला, जिसकी नोक लोहेसे निकले।

अयोरज, अयोरजस् देखो।

अयोरजस् (सं॰ स्त्री॰) लौहकिट्ट, लोहेका जङ्ग।

अयोरस (सं॰ पु॰) अयोमल देखो।

अयोवस्ति (सं० पु०-स्त्री०) वस्तिकर्म विशेष।

"एरण्डमूलं निःक्वाथ्य मधुतैलं ससैन्धवम्।
एष युक्त अयोवस्तिः सवचापिप्पलीफलः॥" (भावप्रकाश)

मधु, तैल, सैन्धव, वच एवं पिप्पलीके साथ एरण्ड-मूलका काढ़ा बनानेसे अयोवस्ति तैयार होता है।

अयोविकार (सं० पु०) लौहव्यापार, अयोनिर्माण, लोहेका काम, जो चीज़ लोहेसे बनी हो।

अयोहत (वै० त्रि०) लोहेकी नक़्क़ाशीवाला, जिस-पर लोहेके बेलबूटे बने हों।

अयोहनु (वै० त्रि०) लौहहनुविशिष्ट, लोहेके जबड़े रखनेवाला।

अयोहृदय (सं० त्रि०) अयोवत् कठिनं हृदयं मनो यस्य, बहुव्री०। कठिनचित्त, निर्दयचित्त, दयाशून्य, लोहे-जैसे दिलवाला, सख़्त, अफ़सोस न करने-वाला।

अयौक्तिक (सं० त्रि०) अननुरूप, असमान, अयोग्य, जो ठीक न हो।

अयौगपद्य (सं० क्लो०) असमकालीन अस्तित्व, जो मौजूदगी एक वक़्तपर न रहे।

अयौगिक (सं० त्रि०) नियमित व्युत्पत्ति-विहीन, जिसकी जड़ ठीक न रहे।

अयौधिक (सं० पु०) १ युद्ध न करनेवाला व्यक्ति, बुरे तौरसे लड़नेवाला, जो शख़्स लड़ाई न करता हो। २ दूसरोंसे समता न किया जानेवाला योद्धा,जिस सिपाहीसे लड़नेमें दूसरा बराबरी न कर सके।

अय्मान् (सं० त्रि०) अयते गच्छति, अय—कर्तरि मनिन्। १ गमनकर्ता, चलनेवाला। अय्यते गम्यते-ऽनेन, करणे मनिन्। २ गमनमें सहायता देनेवाला, जो चलनेमें मदद देता हो।

अय्याजी भट्ट—ज्ञानानन्दके शिष्य और रामगीता एवं शिवगीताके सुबोधिनी टीका-रचयिता।

अर (सं० पु०) अर्यते गम्यतेऽनेन इयर्ते ऋच्छतेर्वा, अप्। १ जैनियोंको वर्तमान अवसर्पिणीके अष्टादश तीर्थङ्कर। अरनाथ देखो। २ जैनियोंके कालचक्रका द्वाद-शांश। यह अवसर्पिणी कालका षष्ठभाग होता है। ३ ब्रह्मलोकका कोई समुद्र। (क्लो०) ४ चक्रकी नेमि और नाभिके मध्यका काष्ठ, आरी। ५ कोण, कोना। ६ शैवाल, सेवार। (हिं०) ७ हठ, जिद्द। (त्रि०) ८ शीघ्रग, तेज़। ९ न्यून, कम।

'अरं शीघ्रे च चक्राङ्गे शीघ्रगे पुनरन्यवत्।' (मेदिनी)

अरंग (हिं० पु०) सुगन्ध, खुशबू, महक।

अरंड (हिं० पु०) एरण्ड, रेंड, अंडा। इसे बंगलामें भेरेंडा, आसामीमें एरी, नैपालीमें अरेटा, विहारीमें अण्डी, उड़ियामें गब, नागपुरीमें श्रंडी, कानपुरीमें रेड़ी, पञ्जाबीमें हरनौली, अफ़गानीमें बुज़-अंजीर, सिन्धुवीमें हेरां, दक्षिणीमें रंड, बम्बैयामें एरण्डी, मारवाड़ीमें पुरंडीच, गुजरातीमें दिवेली, अरबीमें खिरवा और फ़ारसीमें बेदअंजीर कहते हैं। (Ricinus communis)

आधुनिक औषधिशास्त्रज्ञ इस वृक्षको अफ़रीकाका अधिवासी बताते हैं। वहीं से यह भारतमें आया और वहीं जङ्गली तौरपर मिला भी है। इसे भारतमें सब जगह बोते और गांवके पास प्रायः लगा देते हैं। संस्कृतके प्राचीन पुस्तकमें इसका वर्णन मिलनेसे कोई-कोई इसे भारतका अधिवासी भी बताता है। हिमालयके निर्जन वनमें यह जङ्गली तौरपर जगता है। इसके बीजसे जो तेल निकलता, वह खूब धूम-धामसे बिकता है। बीज दो प्रकारका होता है, बड़ा और छोटा। बड़ेका चिराग़ वग़ैरह जलाने और छोटेका तेल दवाके काम आता है। कलपुर्ज़ेमें भी अण्डीका तेल ही लगता है। इस तेलकी रोशनी सबसे अच्छी होती है। यह बहुत धीरे-धीरे जलता है, आग लगनेका कोई डर नहीं रहता। भारतकी सारी रेलवे अण्डीका ही तेल जलाती है। इससे धुवां कम निकलता है। दूसरे तेलमें यह गुण नहीं देखते। साबुन, बत्ती, फुलेल और अतर बनानेमें इसे सबसे अच्छा और सस्ता पायेंगे। लन्दन और पेरिसका गन्धी इसीसे शिरमें लगानेको बढ़िया तेल बनाता है। यह हलका जुलाब देनेमें बहुत काम आयेगा। बीजके बकला छोड़ाने और साफ़ करनेमें ज़्यादा खर्च लगता है। इस तेलका बना वार्निश गाड़ी, तस्वीरके चौखटे, चमड़े, नक़्शे और कपड़े पर खूब

चढ़ता है। गाड़ी ओंगनेमें अण्डीका ही तेल पड़ता है।

इसकी खली हिन्दुस्थानमें गाय-भैंसको भिगोकर भूसेके साथ दी जाती है, जिससे दूध ज़्यादा और गाढ़ा उतरता है। सिवाय खादके खलीसे एक गैस भी बनती है, जिसकी रोशनी बहुत बढ़िया होती है। इलाहाबादके रेलवे ष्टेशनपर इस गैससे चिराग़ जलाया जाता है।

खलीको खाद गन्ने, गेहूं और आलूके खेतमें डालनेसे उपज बढ़ जाती है।

सिवा जुलाबके अण्डीका तेल फोड़े-फुन्सीपर लगानेसे भी बहुत फ़ायदा पहुंचाता है। तम्बाकू और लाल मिर्च मिलाकर इसकी जड़के बकलेसे गोली बनती और पेचिश होनेपर घोड़ेको खिलाते हैं। भारतवासी इसकी पत्ती कूटकर बालप्रसविनी स्त्रीके दुग्धका स्राव रोकनेको स्तनपर लगाते हैं। सुश्रुतमें इसकी जड़ और तेलसे कितने ही औषध बनानेकी बात लिखी है। यह अजीर्ण, उदराध्मान, ज्वर और शोथपर भी चलता है। वातरोगके लिये यह अतिशय लाभदायक है। कमरका दर्द, फेफड़ेकी सूजन और फूला रह जानेकी बीमारी इससे दूर हो जाती है।

मुसलमान-हकीमोंका मत है,—यह दो तरहका होता,—लाल और सफ़ेद। किन्तु लाल बड़े ही कामकी चीज़ होती है। यह शोथहृत् एवं विरेचक होता है और पक्षाघात, श्वास, शैत्य, शूल, अम्बाध्मान, वातव्याधि तथा जलोदर पर दिया जाता है। शहदके साथ इसके दश बीजकी मींगी मलकर खानेसे खासा जुलाब उतरता है। सौरदाहके समय इसके बीजका पुलटिस वातग्रस्त छातीकी सूजन मिटानेको चढाते हैं। पत्तीमें यह गुण न्यून परिमाणसे मिलता है। अफीम वगैरह नशा ज़्यादा चढ़नेसे इसका ताजा अर्क़ क़ै करानेको पिलाते हैं। यवके आटेके साथ इसकी पत्तीका पुलटिस आंख आनेपर बांधते हैं।

किन्तु बीजकी मींगी खानेसे प्राण जानेका डर रहता है। दो-एक आदमी इसी तरह मर भी गये हैं।

इसकी पत्ती चरनेसे गाय-भैंसका दूध बढ़ जाता है। बीजका बकला ऊखके रसको गर्म करनेमें जलाते हैं। लकड़ी काटकर सुखा लेनेसे छानीछप्परमें लगाते हैं। इसकी लकड़ीमें कीड़ा नहीं पड़ता। मधुमक्षिका इसे बहुत चाहती और प्रायः इसपर अपना छत्ता बनाती है।

युक्तप्रदेशके आज़मगढ़ ज़िलेमें यह दो तरहका होता है—रेड़ी और भटरेड़ी। रेड़ी भटरेड़ीसे कुछ लम्बी रहती और एक सालमें ही कट जाती है। किन्तु भटरेड़ीको दो-तीन साल तक खड़ी रखते हैं। इससे तेल भी बहुत अच्छा निकलता है। अण्डेको इस प्रदेशमें प्रायः खेतकी चारो ओर बो देते हैं। इसकी खेती अलग नहीं की जाती। सिर्फ़ इलाहाबादमें यमुना किनारे बारह-तेरह हजार एकर भूमिपर यह बोया जाता है। मकानके पास सेमकी बेल चढ़ानेको प्रायः इसे लगाते हैं।

यह ग्रीष्मके अन्त या वर्षाके आरम्भमें बोया जाता है। खेतमें अट्ठारह इञ्चके फ़ासलेपर इसका बीज बोते हैं। पौधेके चारो ओर पानी इकट्ठा न होनेको जड़पर मट्टी चढ़ा देते हैं। मार्च और अप्रेल मासमें बीज पकने पर, तोड़कर धूपमें सुखाकर उसका छिलका निकाल डालते हैं।

बीजको उबाल कर भुरजी तेल निकलता है। तेली यह काम कभी नहीं करता। पहले बीजको कुछ भून, फिर ओखलीमें कूटकर पीछे पानीमें डाल उबालते हैं। ऐसा करनेसे तेल ऊपर उठ आता है। साधारणतः बीजसे आधा तेल निकलता है।

अरंभ, (हिं०) आरम्भ देखो।

अरंभना (हिं० क्रि०) १ शब्द निकालना, आवाज़ देना। २ शुरू करना, आरम्भ करना।

अरइल (हिं० वि०) १ ठिठक जानेवाला, जो रुकता हो। (पु०) २ वृक्षविशेष, कोई दरख़्त।

अरई (हिं० स्त्री०) गाड़ी हांकनेकी छोटी छड़ी। इसके सिरेपर लोहेकी कील लगी रहती है। नटखटी देखाने या आगे न बढ़नेपर अरई लगा बैलको चलाते हैं।

अरक (सं० पु०-क्लो०) १ शैवाल, सेवार। २ जैन समय-विभाग, जैनियोंका पृथक् किया हुआ समय। ३ चक्रका सक्थि, पहियेका अरा। (अ० पु०) ४ आसव,भभकेसे उतारा हुआ रस। ५ रस, निचोड़। ६ स्वेद, पसीना।

अरकगीर (फा० पु०) नमदेका कोई टुकड़ा। इसे घोड़ेकी पीठपर लगा ज़ीन खींचते हैं।

अरकाट (अरुकदु)—१ मन्द्राज प्रान्तके उत्तर अरकाट ज़िलेका एक तअल्लुक। इसका क्षेत्रफल ४३२ वर्गमील है। इसकी लम्बाई पूर्वसे पश्चिम ३२ और चौड़ाई १२ मील है। ज़मीन उपजाऊ नहीं है और सिवा चूनेवाले कङ्कड़के दूसरा धातु भी नहीं मिलता। मकान बनानेको पत्थर मुश्किलसे पाया जाता है। मामन्दूर और कलवायी तालावों से ढेरकी ढेर मछली पकड़ते हैं। प्रधान व्यवसाय खेती, बुनाई और चमड़ेकी रंगाईका रहता है।

२ मन्द्राज प्रान्तके उत्तर अरकाट ज़िलेका प्रधान नगर। यह शब्द तामिल भाषाका है। अरुका छः और कदूका अर्थ किला है। इसतरह अरकाट माने छः किलेका शहर होता है।

यह नगर पालार नद किनारे मन्द्राजसे साढ़े बत्तीस कोस दूर अक्षा० १२° ५५′ २३″ उ० और द्राघि० ७९° २४′ १४″ पू० पर बसा है। इसमें अरकाट ज़िलेका हेडक्वार्टर है। पहले यहां कर्णाटक प्रान्तके नवावकी राजधानी प्रतिष्ठित थी। सिवा पश्चिमतटको कुछ चावल भेजे जानेके इस नगरमें दूसरा व्यवसाय नहीं चलता और न सिवा चूड़ियां बननेके दूसरा काम ही होता है। यद्यपि कुछ वर्ष यहां सुनहली गोटा-किनारी और छींट बनती-बिकती थी, परन्तु अब इससे डेढ़ कोस दूर वालाजापेट नगरने अपनी समृद्धि फैला इसका शिल्प-व्यवसाय बिगाड़ दिया है।

ऐतिहासिक दृष्टिसे अरकाट बड़े महत्त्वको सामग्री है। किन्तु पूर्व समयका अधिक चिह्न देख नहीं पड़ता। सन् १७१२ ई०में महिसुरके विरुद्ध-युद्ध चलानेको दिल्लीवाली फौज़के अधिनायक सआदतउल्ला-खान् बीस वर्ष और उनके उत्तराधिकारी दोस्त अलीके सिंहासनारूढ़ होनेपर यह सरकारी राजधानी रहा। युद्धमें दोस्तअलीके मारे जानेपर यहां झगड़ेकी जड़ जमी। सन् १७४२ ई०में दोस्तअलीके उत्तराधिकारी सब्दरअली और सन् १७४४ ई०में सब्दरअलीके उत्तराधिकारी सैयदमुहम्मदकी इसी नगरमें हत्या हुयी थी। कितनी ही बार दूसरे-दूसरेके अधिकारमें जा अन्तको सन् १७५१ ई०में इस नगरका किला अंगरेजी फौजके हाथ लगा। सन् १७५१ ई०की २५वीं अगस्तको लार्ड क्लाइव मन्द्राजसे २०० युरोपीय और ३०० भारतीय सिपाही ८ मैदानी तोपोंको साथ ले आगे बढ़े और पांच दिन बाद इस नगरसे पांच कोस दूर अपना डेरा आ डाला। अंगरेजी फौजका साहस देख अरकाट किलेकी फौज आंख मूंदकर भाग खड़ी हुयी। दूसरे दिन क्लाइवने बेलड़ेभिड़े किलेको ले लिया। किला छूटनेकी खबर पा कर्णाटकके नवाब चांदा साहबने अपने पुत्र राजा साहबके अधीन ४००० देशी और १५० फ्रान्सीसी सिपाही किला जीतनेको भेजे थे। २३ वीं सितम्बरको राजा साहबने कितनी ही पैदल फौज और सवारके साथ किलेको आ घेरा। किलेमें सिर्फ ६० दिनका सामान बचा, किन्तु पानी बहुत भरा पड़ा था। ५० दिन तक किलेमें तोपका गोला लगनेसे जो छेद होता, वह रातको भर दिया जाता रहा। किलेमें कोई बड़ी भारी तोप थी, जो ३१ सेरका गोला फेंकती थी। क्लाइवने वही तोप किसीतरह किलेके बड़े बुर्जपर चढ़ा नवाबके महलमें रोज़ एक गोला फेंकना शुरू किया। चौथे दिन तोप फटी और उससे नवाबकी हिम्मत बढ़ गयी। उन्होंने किलेकी दीवारसे थोड़ी दूर एक पोश्ता बना उसपर तोपखाना रखा। किन्तु क्लाइवने तय्यार होनेपर उसपर ऐसे गोले मारे, कि घण्टे भरमें ही वह टूट-फूट कर ढेर हो गया और उसके ५० आदमी काम आये। फिर मुरारि राव महाराष्ट्र अपने सवारोंके साथ क्लाइवको साहाय्य देनेपर राजी हुये। राजा साहबने ऐसा देख क्लाइवसे

साफ़ अस्वीकार किया। रुपये लेनेकी बात भी खुलेतौरपर टाल दी गयी। आत्मसमर्पणकी आशा न पा राजा साहबने १४वीं नवम्बरको हमला मारा। एक घण्टे लड़ाई चली। राजा साहबके चार सौ और किलेके पांच-छः आदमी मरे। किन्तु अन्तमें राजा साहबकी फ़ौज हारकर पीछे हटी। किलेमें रात बड़ी चिन्तासे कटी थी। किन्तु सवेरे घेरनेवाले कहीं देख न पड़े।

सन् १७५८ ई०में अरकटका किला फ्रान्सीसियोंके हाथ चला गया। दूसरे वर्ष दो बार उसके लेनेकी अंगरेजोंने कोशिश की, लेकिन कोई काम न निकला। सन् १७६० ई०में अंगरेजोंने किलेको घेर सात रोज़की गोलेबारीसे उसे पा लिया था। फिर बीस वर्षतक अरकटका किला अंगरेजोंके दोस्त नवाब मुहम्मद अलीके हाथ रहा। किन्तु सन् १७८० ई०में महिसुरके इस ज़िलेतक बढ़ आनेपर अरकट हैदर-अलीको सौंपा गया, जिन्होंने सन १७८३ ई०तक अपने हाथ रक्खा। टीपू सुलताननें किलेबन्दीको तोड़ शहर छोड़ा था। सन १८०१ ई०में नवाबने कर्णाटकके साथ अरकट भी अंगरेजोंको दे दिया। नगरके समीप नवाबके वंशजोंकी आज भी सम्पत्ति विद्यमान है। नवाबका महल तो ढेर हो गया और न किलेका ही कोई निशान् रहा। महल और किलेके बीच नवाब शआदत उल्लाकी क़ब्र बनी है, जिसके लिये सरकारकी तर्फ़से माहवार खर्च मिलता है। क़ब्रके पास ही बड़ी जामा मसजिद है।

अरकट-उत्तर—मन्द्राज प्रान्तका एक ज़िला। यह अक्षा० १२° २०´ एवं १३° ५४´ उ० और द्राघि० ७८° १५´ तथा ८०° ४´ पू०के बीच अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ७२५६ वर्गमील है। इससे पश्चिम महिसुर राज्य, उत्तर कडापा एवं नेल्लोर, दक्षिण सलेम तथा दक्षिण अरकट और पूर्व चिङ्गलपट है।

इस ज़िलेका उत्तर एवं पश्चिम भाग पार्वत्य तथा सुन्दर और दक्षिण एवं पूर्व अंश समान तथा अप्रधान है। पूर्वघाटकी पर्वतश्रेणी अपनी दक्षिण और शाखा फैलाती हुयी इससे दक्षिण-पश्चिमसे उत्तर-पूर्व है और नागरी उत्तर-पूर्व कोणको पार करती है। पूर्वघाट पर्वत बालाघाट और पाचनघाटके बीचमें है। इस जगह पहाड़की मामूली उंचाई समुद्र-तलसे २५०० फ़ीट ऊपर है। दक्षिण-पश्चिम जो जवादी पहाड़ पड़ता है, उसकी चोटी कहीं-कहीं समुद्रतलसे ३००० फ़ीट ऊंची है। वनी-वम्बदी या पालारकी विस्तृत उपत्यका इस पहाड़को पूर्वघाट पर्वतसे अलग करती है। अम्बूरके पास जवादी और पूर्व-घाट दोनो पर्वत बिलकुल मिले हुये हैं। उस पर्वतमें लोहा और तांबा ढेरका ढेर पाया जाता है। महिसुर राज्यमें ज़िलेकी सीमाके पास सोना मिलनेसे उसके इस ज़िलेमें भी रहनेकी सम्भावना है। कोयलेका कहीं पता नहीं चलता, किन्तु चूना और मकान बनानेका बढ़िया पत्थर बहुत मिलता है। पालार सबसे बड़ी नदी है। वह ज़िलेके दक्षिण-पश्चिम आ उत्तर और बहती हुई जवादी पर्वतसे पूर्व जा समुद्रमें मिली है। राहमें उससे दो बड़ी नदी चेयेर और पाइनी मिल जाती हैं। अम्बूर और गुदियातम पालारकी छोटी सहायक नदी है। ज़िलेके पूर्व केन्द्रमें नारयणवन और कोर्त्तलयार प्रवाहित हैं। प्रायः बारहो महीने नदी सूखी रहती है। पानी उसकी गहरी बालूमें डूब जाता है। फिर भी नहरें काट नीचेके पानीसे खेत सींचते हैं। इससे पानीकी कमी कभी नहीं होती। १८०० वर्गमीलपर जङ्गल फैला है, जिसमें तिहाई प्रजाका है। लाल सन्दरकी लकड़ी बहुत उम्दा होती है। दीमक न लगनेके कारण लोग इससे गाड़ीका ढांचा और दरवाजेका खम्भा बनाते हैं। लाल रङ्ग निकालनेको यह युरोप भी भेजी जाती है। जङ्गलमें हाथी, भैंसा, चीता, भेंड़िया भालू, तरह-तरहका हिरण, स्याही और सूअर घूमते फिरते हैं।

इतिहास—उत्तर अरकट प्राचीन द्राविड़ देशका अंशल है। इसके आदिम निवासी करम्ब थे, जो किसी राजाको न रखते थे। सबसे पहले पल्लव-वंशके कमण्डु करम्बप्रभु राजा बनाये गये। पल्लव-नृपतियोंका किला पूरलूरमें रहा और काञ्चीवरम

सबसे बड़ा नगर था। सन् ई०के ७वें शताब्दमें पल्लव-राजवंशका पराभव होनेसे कोङ्ग और चोल नृपति प्रधान बने। सन ई०के ८वें या ९वें शताब्द चोलोंने करम्बोंको यहांसे निकाल बाहर किया।

काञ्चीपुर चोल-नृपतियोंकी राजधानी हुआ और गोदावरीतक फैला। किन्तु तैलङ्ग और विजय-नगरके राजावोंसे युद्ध होनेपर चोलोंका जोर घट गया। सन ई०के १७वें शताब्दके मध्य महाराष्ट्रोंका अभ्युदय होनेसे विजयनगरवालोंका भी प्रभाव कम हो गया। शिवाजीने दक्षिण-भारतमें अपना अधिकार फैला रखा था। वेङ्काजी शिवाजीके सौतेले भाई और वर्तमान तञ्जौर राजवंशके प्रतिष्ठाता थे। बीजापुर-राज्यकी ओरसे कर्णाटकमें उन्हें जागीर मिली थी। सन १६६४ ई०में अपने बाप शाहाजीके मरनेपर वेङ्काजी वह जागीर पा गये। सन १६७६ ई०में शिवाजी जागीर लेनेके लालचसे उत्तर-अरकाट-की कल्लूर घाटीसे कर्णाटक जा पहुंचे थे। वेल्लूर, अरनी और दूसरी जगहका किला तोड़ वह अपने भाईकी सारी जागीर दबा बैठे। कर्णाटक जाते समय शिवाजी अपने राज्यका उत्तरप्रान्त गोलकुण्डाके नवाबको सौंप आये थे। वहां उपद्रव उठनेकी खबर पा उन्हें झटपट वापस जाना पड़ा। शिवाजी जीती हुयी जागीर दूसरे सौतेले भाई सन्ताजीको दे चले थे, जिन्हें वेङ्काजीने धीरे-धीरे दबा लिया। अन्तमें वेङ्काजीसे आधी आमदनी लेनेपर शिवाजीने जागीर छोड़ दी। इसी बीचमें बादशाह औरङ्गजेबने दक्षिणकी अराजकता मिटानेपर कमर बांधी। सन् १६९८ ई०में औरङ्गजेबके सिपहसालार जुलफ़कार खान्ने जञ्जी ले दाउदखान्को अरकाटका हाकिम बना दिया। सन् १७१२ ई०तक मुसलमान हाकिम जञ्जीमें रहा और पञ्चमांश देनेवाले मुसलमान कृषकको खाने-कमानेके लिये भूमि देता गया। सन् १७१२ ई०में ही सआदतउल्ला खान्ने कर्णाटकका नवाब बन अरकाटको अपनी राजधानी बना लिया।

सन् १७९२ ई०में महिसूरका द्वितीय युद्ध समाप्त होते ही वर्तमान ज़िलेवाले घाटका ऊपरी भाग अंगरेज सरकारको दिया गया। सन् १८०१ ई०में नवाबके कर्णाटक अंगरेजोंको सौंपनेपर 'अरकाटका उत्तर-भाग' नामक एक ज़िला खुला। सन् १८०३ ई०में नारागल्ली, कल्लूर, करकमबादी, कृष्णपुर, तम्बा, वङ्गारी, पुलिचेरला, पोलूर, मोगराल, पकाल और गेद्रगूंट राज्यके बलवा मचानेपर अंगरेजी फौज उन्हें दबानेको भेजी गयी। इस ज़िलेके अरकाट, वेल्लूर और चन्द्रगिरि आदि नगरमें ऐतिहासिक समिति वर्तमान है। सन् १६४० ई०में बीजपुर-नरेशसे अंगरेजोंने उनके राज्यवाले 'मन्द्राजपटम्' नगरमें एक कारखाना खोलनेको आज्ञा मांगी थी।

इस ज़िलेमें तामिल और तेलगु भाषा चलती है। दक्षिण तअल्लुक़में जैन अधिक देख पड़ते हैं। वह जमीन्दारी करते और आनन्दसे रहते हैं। बनजारा वगैरह घूमते रहते है। जङ्गल और पहाड़में इरूला, येदिकाली, यानादी और मलयाली नामक आदिम-निवासी रहते है। वे शहद, मोम, छाल, जड़, सुपारी वगैरह जङ्गली चीज़को मैदानी आदमीयोंके हाथ बदलसे, जो उनसे अधिक सभ्य मालूम होते हैं। किसान सिवा धार्मिक उत्सवके दूसरी जगह अपना गांव छोड़कर बहुत कम जाते है। भैंस सस्ती मिलती है। इस ज़िलेमें नहर निकालनेका सुभीता नहीं पड़ता।

यहांसे चावल और सीरा बाहर बिकने जाता है। नमक, लोहा, कपड़ा और रूई अपने खर्चको मंगाया करते हैं। आमदनीको बनिस्बत रफ़तनी ज़्यादा होती है। कपड़ेको बुनाईका ही काम अधिक होता है। किन्तु वालाजापेटका क़ालीन, वन्दवेको चटाई, तीरुपतिकी पीतलवाली चीज़ और लकड़ीकी नक्काशी, पुङ्गनूरका लोहेवाला सामान, गुड़ियातमका मट्टीवाला बरतन और कलस्त्रीवाली शीशेकी पोत देखने लायक़ होती है। ज़िलेमें रेलवे और सड़क-की कोई कमी नहीं है। सन् १८२६ ई०में पहले पहल सरकारी मदरसा खुला था।

यहां मलेरिया ज्वरका प्रकोप अधिक फैला रहता

है। वर्षा समाप्त होते ही उसका चमत्कार बढ़ जाता है। कुष्ठरोग साधारणत: फेल और फरवरीसे मई तक चेचक चिपट जाता है। मवेशी वेर और मुंहकी बीमारीसे मरती है।

दक्षिण-अरकट—मन्द्राजप्रान्तका एक जिला है। यह अक्षा० ११° १०´ एवं १२° २५´ ३०´´ उ० और द्राघि० ७८° ४१´ ३०´´ तथा ८०° ३´ १५´´ पू०के मध्य अवस्थित है। इस जिलेका रकबा ४८७३ वर्गमील है। दक्षिण अरकटसे उत्तर चिङ्गलपट एवं उत्तर-अरकट, पूर्व बङ्गालकी खाड़ी, दक्षिण त्रिचनापली तथा तञ्जोर और पश्चिम सलेम जिला है। यह जिला आठ तअल्लुक़में बंटा है। फ्रान्सीसी बसती पुंदिचेरी इसीके भीतर है। पश्चिममें सिवा कलरायन पर्वतके दूसरी जगह पत्थर नहीं देखायी देता। समुद्र किनारे और पुंदिचेरी तथा कूड़लूरके पास भी कुछ पहाड़ आ गया है। इसमें तिरुनमलय पर्वतपर कोई सवारी जा न सकती। उसकी बग़ल ढालू और जङ्गलसे हरीभरी रहती है। पोर्टे-नोवोसे डेढ़ कोस दक्षिण कोलरुन नदी इस ज़िलेकी दक्षिण-पूर्व सीमापर अट्ठारह कोसके चक्कर लगा, बङ्गालकी खाड़ीमें गिरती है। वेल्लार भी इकतालीस कोस ज़िलेके भीतर बह और मणिमुक्ता-नदीको ले पोर्टो-नोवोके पास समुद्रसे मिलती है। दोनो नदीमें कोई तीन कोस तक समुद्रकी लहर चढ़ती है। गड्डिलम् या गरुड़नदी येगल झीलसे निकल और ५८ मीलका चक्कर मार कूड़लूरसे आध कोस उत्तर बङ्गालकी खाड़ीमें गिरती है। पोन्नेयार महिसुरकी समस्थलीसे चलती और ७५ मीलका धावा लगा कूड़लूरसे डेढ़ कोस उत्तर खाड़ीमें मिलती है। सेन्जी नारायणमङ्गलम् झीलसे निकलती और तोण्डेयार तथा पाम्बैयारको साथ ले अरियानकूपम् तथा चिन्नविरामपटनम्के पास दो मुहाने समुद्रसे मिलती है। सिवा सरकारीके कितना ही अरक्षित जङ्गल भी देखेंजाते,जिसमें तञ्जोर ज़िलेसे मवेशी चरने आती है। हाथी, चीता और भालु तो कम, किन्तु लकड़बग्घा, हिरण, जङ्गली कुत्ता, सूअर और भेड़ बहुत देख पड़ता है।

सन् १६७४ ई०में जिञ्जि(सेञ्जि)-नृपतिके बसनेको बुलानेपर अंगरेजोंका सम्बन्ध इस जिलेसे लगा था। बातचीत तो चलती रही, किन्तु सन् १६८२ ई० तक कोई काम न बना, तब अंगरेजोंने कूड़लूरमें कारबार करनेको एक कोठी खोली। इसमें सफलता न होनेपर कुछ ही महीने बाद पुंदिचेरीसे पांच कोस उत्तर कुञीमेडूमें अंगरेजी बसती हुई थी। सेञ्जि-शासक हरजो राजाके भूमि देनेपर सन् १६८३ ई० में कूड़लूरकी कोठी फिर खुली, और पोर्टो-नोवोमें कोई छोटी बसती बनायी गयी। चार वर्ष पीछे अंगरेजोंने महाराष्ट्रोंसे सेण्ट-डेविड दुर्गकी जगह ख़रीदी और कुनिमेडूकी बसती छोड़ दी। कर्णाटकके युद्धमें कूड़लूरने बड़ा काम बनाया था। सन् १७५८ ई०में फ्रान्सीसियोंने सेण्ट डेविड दुर्ग और कूड़लूरको अधिकार कर किला तोड़-फोड़ डाला। किन्तु दो वर्ष बाद बन्दिवासका युद्ध समाप्त होते सर एयार-कूटने फिर कूड़लूरको अधिकार किया, उनके पहुंचनेकी ख़बर पा फ्रान्सीसी दल सेण्ट-डेविड दुर्गसे भाग खड़ा हुआ था। सन् १७८२ ई०में फ्रान्सीसी सेनापति और टीपू सुलतानने नगरको फिर जीत तीन वर्ष अपने हाथ रखा। अन्तमें कूड़लूर अंगरेजों और पुंदिचेरी नगर फ्रान्सीसियोंको सन्धिके अनुसार मिला था। सन् १८०१ ई० में अरकटप्रान्त अंगरेजोंके हाथ आनेसे 'अरकटका दक्षिण विभाग' (The Southern Division of Arcot) नामक एक जिला बना।

दक्षिण अरकटके अधिवासी तामिल भाषा बोलते हैं। चेटी या सेठी लोग धनवान् होते हैं। ब्राह्मण जमीन्दारी और सरकारी नौकरी करते हैं। कोरवारको चोर बताते। पहाड़ी ज़मीनमें मलयाली, इरुलार और विल्लियार मिलता। तिरुवाम-नल्लूरके मुसलमानोंमें बहुहाबी उपनिवेश प्रतिष्ठित है। इस ज़िलेके प्रधान नगरोंका नाम—चिदम्बरम्, कूड़लूर, पण्रुट्टि, पोर्टो नोवो, तिरुक्कोवनम्, तिरुवन्नमलय, वलवनूर, विल्लुपुरम् और वृद्धाचलम् है। इस जिलेमें सौ आदमीमें पचाससे ज़्यादा काम करनेवाले

न निकलेगी। यहां पचास तरहका चावल होता है। प्राय: तूफान समुद्र तटपर जोरशोरसे चलता रहता है।

यहां नील, चीनी, गुड़, नमक, चटाई, मट्टीका बरतन, तेल तथा रुई एवं रेशमका धागा और कपड़ा बनता है। नमक सरकारी देख भालसे तैयार होता है। महिसुरसे रेशम रंगा कुम्भकोनममें रंगा और चिदम्बरमें बुना जाता है। सन् ई०के १८वें शताब्द ईष्ट इण्डिया कम्पनीने कई जगह कपड़ेका काम खोला था, जो अब बिगड़ गया। जिलेके भीतर अनाज,मट्टीके बरतन, शराब, तेल, नील, चीनी, गुड़, नमक, चटाई और कपड़ेका काम चलता है। तिरुनमलय, चिदम्बरम्, वृद्धाचलम्, कूड़लूर, कैर्म, श्रीमुष्ण, कुवागम्, मयलम् और मलयानूरमें हरसाल मेला लगता है। इरुलार शहद, मोम, माज़ूफल और रंगनेकी छाल बेच अपना काम निकालता है। कल्लकूरिची, तिरुनमलय और तिरुकोइलूर तअल्लुकमें बहुत कच्चा लोहा मिलता है। 'खान साहब' नहर कोलरुन तथा वड़वार नदीको वेल्लारसे जोड़ता है। किन्तु नहर तङ्ग रहनेसे बड़ा जहाज़ चल नहीं सकता। जिलेमें आठ तअल्लुक हैं,—चिदम्बरम्, कूड़लूर, कल्लकूरुची, तिण्डिवनम्, तिरुकोइलूर, तिरुवन्नमलय, विल्लुपुरम् और वृद्धाचलम्। पहले यहां डाका बहुत पड़ता था, किन्तु अब सरकारी इन्तज़ाम होनेसे रुक गया।

अरकटी (हिं० पु०) पतवार घुमानेवाला मांझी।

अरकना (हिं० क्रि०) १ टक्करखाना। २ तड़का खाना, फट जाना।

अरकनाना (अ० पु०) पुदीने और सिरकेका अरक।

अरकना-बरकना (हिं० क्रि०) टालम टोल लगाना, मुंह फेर चल देना, खेंचतान मचाना, ध्यान न जमाना।

अरक़बादियान (अ० पु०) सौंफ़का अर्क़।

अरकला (हिं० पु०) अर्गल, रोक, ठहराव।

अरकान (अ० पु०) राजाके प्रधान कर्मचारी, रियासतके ख़ास कामदार। यह रुक्न शब्दका बहुवचन होता है।

अरकासार (हिं० पु०) तड़ाग, तालाब।

अरकोल (हिं० पु०) कौलीरा, लाखर। यह वृक्ष हिमालय पर्वतपर होता और झेलमसे आसामतक २०००से ८००० फीट ऊंचे मिलता है। इसके गोंदको ककरासिंगी कहते हैं।

अरक्त (सं० पु०) लाचा, लाख।

अरचणी (सं० स्त्री०) न रचति न रचितुं शक्या वा; रच-लुट् अनीयट् वा, नञ्-तत्। अविवाहिता एवं दशम वत्सरसे अधिक वयस्का बालिका, जो क्वारी लड़की दश सालसे उम्रमें ज़्यादा हो।

अरचम् (सं० त्रि०) नास्ति रचो रचस्तुल्यं बाधकं यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ बाधकरहित, जिसपर शैतान्‌का साया न रहे। २ अहिंसित, सत्यव्रत, नुक़सान् न पहुंचानेवाला, ईमान्दार।

अरचित (सं० त्रि०) १ अपरिपोषित, अशरण, अनाश्रय, बेहिफ़ाज़त, बेपनाह, जिसकी देखभाल रखी न जाये।

अरग (हिं० पु०) अरगजा। यह द्रव्य पीत एवं सुगन्धित होता है। देवतापर चढ़ा लोग इसे माथेमें लगाते हैं।

अरगजा (हिं० पु०) सुगन्धित द्रव्य विशेष, कोई खुशबूदार चीज़। इसे केशर, चन्दन एवं कपूरादि मिलाकर बनाते और शरीरमें लगाते हैं।

अरगजी (हिं० वि०) १ अरगजेके रङ्ग-जैसा, जिसका रङ्ग अरगजेकी तरह रहे। २ अरगजेके सुगन्ध-जैसा, जिसकी खुशबू अरगजेकी तरह रहे। (पु०) ३ अरगजे-जैसा रङ्ग, जो रङ्ग अरगजेकी तरह हो।

अरगट (हिं० वि०) पृथक्, भिन्न, जुदा, अलग।

अरगण्ट (वै० प्रा०) उपत्यका, घाटी, दरह, दो पहाड़के बीचकी राह।

अरगन (अं० पु०) वाद्यविशेष, कोई बाजा। (Organ) इस बाजेको धौंकनीसे बजाते। स्वर आनेको इसमें नली लगती है।

अरगनी (हिं० स्त्री०) वस्त्रादि लटकानेकी लकड़ी या रस्सी। इसे कपड़े वग़ैरह टांगनेको घरमें बांधते हैं।

अरगल, अर्गल देखो।

अरगवानी (फा० पु०) १ रक्त, लाल। (वि०) २ गहिरे लाल रङ्गका।

अरगाना (हिं० क्रि०) १ पृथक् पड़ना, जुदा होना, अलग रहना। २ चुपचाप बैठना, बात न कहना, मौन-धारण करना। ३ निर्वाचन निकालना, चुनना, छांटना।

अरग्वध (सं० पु०) पृषो० आकार ह्रस्वः। १ आरग्वधवृक्ष, अमलतास, गिरमालह, राजवृक्ष।

यह अतिमधुर, शीतल और शूलघ्न होता है। इसके सेवनसे ज्वर, कण्डु, कुष्ठ, मेह, कफ और विष्टम्भ दूर हो जाता। (राजनिघण्टु)

यह स्रंसन, गुरु और हृद्रोग एवं उदावर्त नाश करता है। इसका फल स्रंसनगुणयुक्त, रुच्य, कोष्ठ-शुद्धिकर और कुष्ठ, कफ, एवं ज्वरघ्न होता है।

इसका पत्ता रेचक और कफ एवं मेदको मिटानेवाला होता। पुष्प स्वादु, शीतल, तिक्त, ग्राहक और तुवर होता। पाकमें मज्जा मधुर, स्निग्ध, अग्निविवर्धन, रेचक और पित्तवातको नाश करती है।

(क्ली०) २ स्वर्णालुफल, किसी किस्मका आलू।

अरघ, अर्घ देखो।

अरघट्ट (सं० पु०) अरचक्रकाष्ठवत् घटादि घट्यते चल्यते यत्र येन वा। १ महाकूप, बड़ी गचका कुवाँ। अरं शीघ्रं घट्यते, अर-घट्ट कर्मणि घञ् वा। कूपसे जल निकालनेका काष्ठविशेष, रहट।

अरघट्टक, अरघट्ट देखो।

अरघा (हिं० पु०) अर्घदेनेका ताम्रपात्र विशेष, जिस तांबेके बरतनसे अर्घ दें। २ जलहरी, शिव-लिङ्ग स्थापित करनेका पात्र। ३ चंवना, कुयेंको गचका पानी निकालनेवाली राह।

अरघान, आघ्राण देखो।

अरङ्कृत् (वै० त्रि०) १ सन्तोषप्रदरूपसे कार्य चलानेवाला, जिसके कामसे जो खुश रहे। २ प्रस्तुत हो जानेवाला, जो पूजारीकी तरह काम करता हो।

अरङ्कृत (वै० त्रि०) १ सबद्ध, सज्जीभूत, तैयार। २ सन्तुष्ट, तृप्त, आसूदा, छका हुआ।

अरङ्कृति (वै० स्त्री०) सेवा, आराधन, ख़िदमत, परस्तिश।

अरङ्ग (सं० पु०) १ मत्स्यविशेष, कोई मछली। २ शजना, सेगवा।

अरङ्गम (वै० त्रि०) १ समीप आनेवाला, जो देखाई दे रहा हो। (पु०) २ गति, चाल। ३ परि-मित गमन, थोरा चलना।

अरङ्गर (सं० पु०) कृत्रिम विष, बनाया हुआ ज़हर।

अरङ्गा (सं० स्त्री०) अरङ्ग देखो।

अरङ्गिन् (सं० त्रि०) विरक्त, शान्तराग, धीमा।

अरङ्गिसत्त्व (सं० पु०) बौद्धोंके देवविशेष।

अरङ्गी (सं० स्त्री०) अरङ्ग देखो।

अरङ्गुदी (सं० त्रि०) माधवीलता, महुवेका पेड़।

अरङ्गुष (वै० त्रि०) सोत्साह प्रशंसा करनेवाला, प्रकाण्ड शब्द सुनानेवाला, जो हौसलेके साथ तारीफ करता हो, बुलन्द आवाज़ देते हुआ।

अरचन, अर्चन देखो।

अरचना (हिं० क्रि०) पूजना, परस्तिश करना।

अरचल (हिं० स्त्री०) अड़चन, झमेल, रोक, झगड़।

अरचि, अर्चि देखो।

अरज़, अरजस् और अर्ज देखो।

अरजल (अ० पु०) १ अश्वविशेष, कोई घोड़ा। इसका दोनो पिछला और एक दाहना पैर सफ़ेद या किसी एक रङ्गका होता है। इसको ऐबी समझते। २ पतित जातिका पुरुष, जो शख्स कमीनी कौमका हो। ३ वर्णसङ्कर। (वि०) ४ नीच, कमीना।

अरजस् (सं० वि०) रञ्ज-असुन् न लोपः, नास्ति रजोगुणो यस्य। १ रजोगुणके कार्य कामक्रोधादिसे शून्य। २ रेणुरहित, जिसमें धूली न रहे। ३ स्वच्छ, शुद्ध, पाक, साफ़। ४ मासिक धर्मविहीन स्त्री, जिसे महीना न होवे।

अरजस्क, अरजस् देखो।

अरजा (सं० स्त्री०) १ घृतकुमारी, घीक्वार। २ भार्गव ऋषिकी कन्या।

अरजास् (सं० स्त्री०) नवयौवना बालिका, नौजवान् लड़की।

अरजो, अर्जो देखो।

अरजुन, अर्जुन देखो।

अरज्जु (सं० क्लो०) नास्ति रज्जुः बन्धनसाधनं यत्र। १ बन्धनागार, बांधनेकी जगह। इस जगहसे रस्सी न रहते भी जानवर भाग नहीं सकते। (वि०) २ रज्जु-रहित, जिसमें रस्सी न लगी।

अरझना (हिं० क्रि०) लिपट जाना, फंसना।

अरट (सं० पु०) न रटति गुप्तमन्त्राणां प्रकाशयति, रट-वन्, नञ्-तत्। पृथुश्रवा नृपतिके मन्त्रि-विशेष।

अरटु (सं० पु०) अरं शीघ्रं अटति, अट-अल् वा उण् पृषो० साधु। श्योना वृच।

अरटू (सं० वि०) १ अरटुकाष्ठसे निर्मित, जो श्योनेका लकड़ीका बना हो। (पु०) २ पुरुष विशेष, किसी आदमीका नाम।

अरडींग (हिं० वि०) शक्तिशाली, ताक़तवर।

अरण (सं० वि०) रणति गर्जतेऽस्मिन्, रणशब्दे आधारे घ, नास्ति रणो युद्धं यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ युद्धशून्य, जिसमें लड़ाई न रहे। नास्ति रणः शब्दो येन। २ रिपु देखकर जिसका वाक्य भयसे न फटे, दुश्मनको देखकर ख़ौफ़से न बोलनेवाला। ३ क्रीड़ाहीन, जो खेलता न हो। ४ दुःखित, रञ्जीदह। ५ विगत, गया-गुज़रा। ६ अपरिचित, अजनबी। ७ दूरस्थित, फ़ासलेपर रहनेवाला। (क्लो०) ८ गमन, उपस्थिति, चाल, दाख़िला। ९ निवेश, निधान, इन्दिराज, इदख़ाल। १० शरण, पनाह। (पु०) ११ चित्रकवृच, चौतका पेड़।

अरणि (सं० पु०-स्त्री०) रिच्छति गच्छति, ऋ-अनि। १ अग्न्युत्पादक मन्थनकाष्ठ, जिस लकड़ीको घिसनेसे आग निकले। २ लकड़ीके जिन दो टुकड़ोंको घिसकर आग बनायें। (पु०) ३ सूर्य। ४ अग्नि। ५ क्षुद्राग्निमन्थवृच, गनियार, अंगेथु। ६ श्योनाकवृच। ७ चित्रकवृच। (स्त्री०) ८ मार्ग, राह। ९ क्षपणता, बख़ीली।

'अरणिवक्निमन्येपि कृती निर्मथ्य दारणि।' (विश्व)

अरणि यज्ञसे यज्ञमें आग बनाते हैं। यह दो भागमें विभक्त होता—अधरारणि और उत्तरारणि। इसे शमीगर्भ अश्वत्थसे तैयार करते हैं। उत्तरारणिको अधरारणिके छेदमें डाल, रस्सीसे मथानीको तरह घुमानेसे छेदके नीचे रखा हुआ कुश जल उठता है। अरणि मन्थनके समय वेद पढ़ा जाता है। यज्ञमें प्रायः अरणिमन्थनसे निकली हुई ही आग काम देती है।

अरणिक (सं० पु०) अरणये अग्निमन्थनाय साधुः ठन्। अग्निमन्थन वृच।

अरणिका (सं० स्त्री०) अरणिक देखो।

अरणिमत् (सं० वि०) १ दोनो अरणिसे सम्बन्ध रखनेवाला। २ अरणिसे उत्पन्न किया जानेवाला।

अरणी, अरणि देखो।

अरणीकेतु (सं० पु०) अरणी केतुरस्य। महाग्नि-मन्थ वृच, बड़ा गनियार।

अरणीसुत (सं० पु०) अरणीद्वय-घर्षणेन सुतः जातः। ३ शाक० तत्। शुकदेव। महाभारतमें लिखा है, कि वेदव्यास देवताके निकट वर पा अरणी-द्वय घर्षण द्वारा अग्न्युत्पादनको चेष्टामें रहे, उसी समय रूपवती घृताची अप्सरा देख पड़ी। उसको देखनेसे ही ऋषिके मनमें विकार आ गया। घृताचीने उसे समझ शुकी पक्षिणीका रूप बनाया था। व्यास-देवने इन्द्रिय दमनके निमित्त अनेक यत्न लगाया, किन्तु किसीतरह कृतकार्य हो न सके। हस्तस्थित अरणीपर शुक्र गिरते भी उन्होंने अरणीमन्थन न छोड़ा। उसीसे शुकदेवका जन्म हुआ और अरणी-सुत नाम पड़ा।

अरण्य (सं० क्लो०) अर्यते गम्यते पश्चाद्यत् वर्षात् परं तदनन्तरं वा यत्र। १ वन, जङ्गल।

'अटव्यरण्यं विपिनम्।' (अमर)

शास्त्रकारोंके पचास वत्सर वयःक्रम बाद वन जानेकी व्यवस्था देनेसे उसका नाम अरण्य पड़ा है। यह उद्यान, महावन, उपवन और प्रमोदवनके भेदसे चार प्रकारका होता है। उद्यानमें रागी क्रीड़ा करते और महावनमें सिंहादि पशु रहते हैं। उप-वन गांवके पासमें और प्रमोदवन राजाके घरमें

रहता है। (पु०) २ रैवत मनुके पुत्र। ३ कट्फल, कायफल। ४ साध्यविशेष। ५ रामायणका एक काण्ड। रामायण देखो।

अरण्यक (सं० पु०) १ महानिम्ब, बकैन। २ वन, जङ्गल।

अरण्यकणा (अ० स्त्री०) १ कटुजीरक, जङ्गली जीरा। २ वनपिप्पली, जङ्गली पीपल।

अरण्यकदली (सं० स्त्री०) अरण्यस्येव कदली, ६ तत्। गिरिकदली, पहाड़ी केला। शास्त्रमें लिखा है—यह शीतल, मधुर, बल्य, वीर्यवर्धन, रुच्य, दुर्जर एवं गुरु होती और दाह, शोष तथा पित्तको मिटाती है। इसका फल तुवर, मधुर और गुरु रहता। (वैद्यकनिघण्टु)

अरण्यकर्कटी (सं० स्त्री०) वनजात-कर्कटी, जङ्गली ककड़ी। यह उष्ण, तिक्तरस, भेदक तथा पाकमें कटु रहती और कफ, क्रमि, पित्त, कण्डू एवं ज्वरको मिटाती है।

अरण्यकाक (सं० पु०) वनकाक, जङ्गली कौवा।

अरण्यकाण्ड (सं० क्ली०) अरण्यस्य काण्डो यत्र बहुव्री०। रामायणान्तर्गत रामके वन व्यापारका वर्णित ग्रन्थ।

अरण्यकार्पासी (सं० स्त्री०) अरण्ये अरण्यस्य वा कार्पासी, ७ वा ६-तत्। वनकार्पास, जङ्गली कपास। यह रुच होती और व्रण तथा शस्त्रक्षतको मिटाती है।

अरण्यकुक्कुट (सं० पु०) वनकुक्कुट, जङ्गली मुर्गा। इसका मांस हृद्य, लघु, और श्लेष्महर होता है। (राजनिघण्टु)। मतान्तर अरण्यकुक्कुटका मांस बृंहण, स्निग्ध, वीर्योष्ण, वातघ्न और गुरु रहता है। (भावप्रकाश)

अरण्यकुलत्था, अरण्यकुलत्थिका देखो।

अरण्यकुलत्थिका (सं० स्त्री०) अरण्यस्य कुलत्थिका, ६-तत्। १ वनकुलत्थिका, जङ्गली कुलथी। कुलत्थाञ्जन, काला सुर्मा।

अरण्यकुसुम्भ (सं० पु०) ६-तत्। वनकुसुम्भ, जङ्गली कुसुम। यह पाकमें कटु, श्लेष्मघ्न और दीपन होता है। (राजनिघण्टु)

अरण्यकुलत्थी, अरण्यकुलत्थिका देखो।

अरण्यकोलि (सं० स्त्री०) वनबदर, जङ्गली बेर।

अरण्यगज (सं० पु०) अरण्यस्थो गजः, कर्मधा०। वनहस्ती, जङ्गली हाथी।

अरण्यगत (सं० त्रि०) वनमें पहुंचा हुआ, जो जङ्गलको चला गया हो।

अरण्यगवय (सं० पु०) वनगवय, जङ्गली गाय, सुरागाय।

अरण्यगान (सं० क्ली०) अरण्ये गीयते, अरण्य-गै कर्मणि ल्युट्। सामवेदके अन्तर्गत अरण्यमें गाने योग्य गान विशेष। सामवेद देखो।

अरण्यघोलिका, अरण्यघोलि देखो।

अरण्यघोली (सं स्त्री०) १ वनघोली, कोई सब्ज़ी। २ मन्थनदण्ड, मथानी।

अरण्यचटक (सं० पु०) वनचटक, जङ्गली कबूतर। इसका मांस लघु, हितावह और चटकके समान गुण रखनेवाला होता है।

अरण्यभव (सं० त्रि०) अरण्ये भवति; अरण्य-भू-अच्, ७-तत्। वनजात, वनोत्पन्न, जङ्गलमें पैदा होनेवाला।

अरण्यमक्षिका (सं० स्त्री०) ६-तत्। दंश, डांस, मच्छर।

अरण्यमार्जार (सं० पु०) ६ वा ७-तत्। वनबिड़ाल, जङ्गली बिलाव।

अरण्यमुद्ग (सं० पु०) ६-तत्। १ वनमुद्ग, जङ्गली मूंग, मोट। यह कषाय, मधुर, रक्तपित्तघ्न, ज्वर-दाहघ्न, पथ्य, रुचिकृद् और त्रिदोषहर होता है। (राजनिघण्टु) इसे रक्तपित्तकफवातहर, उष्ण, कषाय, मधुर, प्रदिष्ट, ग्राही, सुशीतल और सर्वरोगनाशक कहते हैं। (चरकसंहिता) इसकी दाल अल्पबल, पाचन, दीपन, लघु, चक्षुष्य, बृंहण, वृष्य और पित्त, श्लेष्म, तथा असका रोग मिटानेवाली होती है। (द्रव्यगुण) २ मुद्गपर्णी, उड़द।

अरण्यमुद्गा (सं० स्त्री०) मुद्गपर्णी, उड़द।

अरण्यमेथी (सं० स्त्री०) वनमेथिका, जङ्गली मेथी।

अरण्ययान (सं० पु०) अरण्ये यायते येन, अरण्य-

या करणे लुट्। १ वन जानेका वाहन विशेष, जिस सवारीमें बैठ जङ्गल पहुंचें। (क्लो०) भावे लुट्। २ वनगमन, जङ्गलकी रवानगी।

अरण्यरक्षक (सं० पु०) अरण्यं रक्षति; अरण्य-रक्ष-ण्वुल्, ६-तत्। वनरक्षक, जङ्गलका मुहाफ़िज़।

अरण्यरजनी (सं० स्त्री०) वनहरिद्रा, जङ्गली हलदी।

अरण्यराज् (सं० पु०) वननृपति, जङ्गलका बादशाह। यह शब्द सिंहके लिये विशेषणरूपसे आता है।

अरण्यराज्य (सं० क्लो०) वनसाम्राज्य, जङ्गलकी बादशाहत।

अरण्यराशि (सं० पु०) अरण्यजात: राशि:, मध्य-पदलोपी कर्मधा०। १ वन्यपशुजातीय राशि, जङ्गली जानवरका झुण्ड। ज्योतिषशास्त्रोक्त सिंहादि राशि।

अरण्यरुदित (सं० क्लो०) अरण्ये रुदितं रोदनम्, सप्तमी वा अलुक्। अरण्यरोदन, वृथा आक्षेप, बेफ़ायदा रुलायी।

अरण्यरोदन, अरण्यरुदित देखो।

अरण्यवत् (सं० अव्य०) वनकी भांति, जङ्गलकी तरह।

अरण्यवायस (सं० पु०) अरण्यस्य वायस:। वनकाक, जङ्गली कौवा।

अरण्यवास (सं० पु०) अरण्ये वास: वसति:। वनवास, जङ्गलमें रहना।

अरण्यवासिन् (सं० त्रि०) अरण्ये वसति, अरण्य-वस-णिनि। १ वनवासी, जङ्गलका रहनेवाला। (पु०) मुनि प्रभृति।

अरण्यवासिनी (सं० स्त्री०) अत्यम्लपर्णी लता, अमरवेल।

अरण्यवास्तुक, अरण्यवास्तूक देखो।

अरण्यवास्तूक (सं० पु०) ६-तत्। कुणञ्जर, जङ्गली बथुवा। यह मधुर, रुच्य, दीपन और पाचन होता है। इसका शाक त्रिदोषघ्न, मधुर, रुच्य, दीपन, ईषत् कषाय, संग्राही और लघु होता है। (राजनिघण्ट)

अरण्यशालि (सं० पु०) अरण्यजात: शालि:, मध्य-पदलोपी कर्मधा०। नीवारधान्य, जङ्गली चावल।

अरण्यश्वन (सं० पु०) वनकुक्कुर, लकड़बग्घा।

अरण्यशूकर (सं० पु०) अरण्यस्थ: शूकर:, मध्य-पदलोपी कर्मधा०। वनवराह, जङ्गली सूअर।

अरण्यशूरण (सं० पु०) अरण्यजात: शूरण:, शाक० तत्। वनज शूरण, जङ्गली जमीकन्द।

अरण्यश्वन् (सं० पु०) १ वृक, भेड़िया। २ कपि, बन्दर।

अरण्यषष्ठी (सं० स्त्री०) अरण्ये पूजनाय षष्ठी, शाक०-तत्। १ ज्यैष्ठमासकी शुक्लषष्ठी, अरण्ये पूजया षष्ठी। ज्यैष्ठशुक्लषष्ठीकी उपास्य देवी।

"ज्यैष्ठे मासि सिते पक्षे षष्ठी चारण्यसंज्ञिता।
व्यजनैककरासस्मटन्ति विपिने स्त्रिय:॥
तां विन्ध्यवासिनीं स्कन्दषष्ठीमाराधयन्ति च।
कन्दमूलफलाहारा लभन्ते सन्ततिं शुभाम्॥" (राजमार्तण्ड)

ज्यैष्ठमासके शुक्लपक्षकी षष्ठीको अरण्यषष्ठी कहते हैं। उस दिन स्त्रियां हाथमें एक-एक चामर ले वनमें जातीं और विन्ध्याचलवासिनी षष्ठी देवीको मनाती हैं। कन्द, मूल और फल खाकर व्रत रहनेसे शुभ सन्तान मिलता है।

स्थान-स्थानमें इस तिथिको षष्ठीकी प्रतिमा बनाकर भी पूजा की जाती है। षष्ठी देवीके ध्यानका मन्त्र नीचे लिखते हैं,—

"द्विभुजां गौरवर्णाभां पद्मवस्त्रोपशोभिताम्।
वराभयप्रदां षष्ठीं रत्नाभरणभूषिताम्॥
गन्धर्वै: संस्तुतां देवीं क्रोड़े चार्पितपुत्रिकाम्॥"

अरण्यसभा (सं० स्त्री०) वनसभा, जङ्गली अदालत।

अरण्यसम्भूत (सं० पु०) कर्कटक, गोलककर।

अरण्यहरिद्रा (सं० स्त्री०) वनहरिद्रा, जङ्गली हलदी। यह कुष्ठ और वातरक्तको मिटाती है। (भावप्रकाश) मतान्तर यह कटु, मधुर, रुच्य, अग्निदीपन, तिक्त एवं कुष्ठवातनाशक होती और रक्तदोष, विष, श्वास, कास तथा हिक्काको दूर करती है। (वैद्यकनिघण्ट)

अरण्यहलदीकन्द (सं० पु०) अरण्यहरिद्रा देखो।

अरण्या (सं० स्त्री०) ओषधि विशेष, कोई जड़ीबूटी।

अरण्याध्यक्ष (सं० पु०) अरण्ये रक्षणादौ नियुक्तोऽध्यक्ष:, शाक०-तत्। वनरक्षक, जङ्गलका कोई हाकिम जिसे सरकार प्रजाकी रक्षाके लिये जङ्गलमें रखे।

अरण्यानि, अरण्यानी देखो।

अरण्यानी (सं० स्त्री०) महदरण्यम्, अरण्य-ङीष् आनुक् च। १ महारण्य, वृहत् वन, बहुत बड़ा जङ्गल। २ अरण्यपालयित्री अधिदेवता, जङ्गलकी देवी। प्राचीन समयमें ऋषि वनदेवीका स्तव करते थे,—

"अरण्यान्यरण्यान्यसौ या प्रेव नश्यसि।
कथा ग्रामं न पृच्छसि न त्वा भीरिव विंदति॥
वृषारवाय वदते यदुपयाति चिच्चिकः।
आघाटिभिरिव धावयन्नरण्यानिर्महीयते॥
उत गाव इवादंत्युत वेश्मेव दृश्यते।
उतो अरण्यानिः सायं शकटीरिव सर्जति॥
गामंगैष आ ह्वयति दार्वंगैषो अपावधीत्।
वसन्नरण्यान्यां सायमक्रुक्षदिति मन्यते॥
न वा अरण्यानिं र्हंत्यन्यश्चेन्नाभिगच्छति।
स्वादोः फलस्य जग्ध्वाय यथाकामं नि पद्यते॥
आंजनगन्धिं सुरभिं बह्वन्नामकृषीवलां।
प्राहं मृगाणां मातरमरण्यानिमशंसिषं॥" (ऋक् १०।१४६।१-६)

अरण्यानि, अरण्यानि! आप मानो मिटी जा रही हैं। आप ग्रामका पथ क्यों पूछ नहीं लेतीं? क्या आप निर्भय रहती हैं? वृषकी पुकारके साथ जब चिच्चिकपक्षी वाघकी भांति बोलते-बोलते उड़ता तब अरण्यानीको बड़ा आनन्द आता है। गाय-भैंस चरने और मनुष्यका गृह देख पड़नेसे सायंकालको अरण्यानी मानो गाड़ी हांकती हैं। अरण्यमें रहनेसे गाय भैंसको पुकारने और वृक्ष काटनेपर मालूम देता, मानो वह चीत्कार कर रही हैं। अरण्यानी किसीको नहीं मारतीं। फिर भी कोई दूसरा (वनका पशु प्रभृति) चोट कर सकता है। सुस्वादु फल खा लोग उनके राज्यमें यथाभिलाष रहते हैं। हम अरण्यानीका स्तव करते, वह मृगादिकी माता हैं। वह आञ्जनगन्धि, सुरभि और अकृष्टक्षेत्रसे प्रचुर अन्न पहुंचातीं हैं।

अरण्यचन्द्रिका (सं० स्त्री०) अरण्ये पतिता चन्द्रिका ज्योत्स्नेव, ७-तत्। निष्फल वेशभूषा, बेफ़ायदा सजावट। ग्रामकी ज्योत्स्नाका आनन्द सब कोई लेता, किन्तु निर्जन वनकी चन्द्रिका किसी काम नहीं आती, इसीसे वह निष्फल है। जिस वेशभूषाको देख पतिका मन भूल न जाये, वह भी निष्फल और अरण्यचन्द्रिका कहाती है।

अरण्यचम्पक (सं० पु०) वनचम्पक, जङ्गली चम्पा। यह शीतल, लघु, और वीर्य एवं बल बढ़ानेवाला होता है।

अरण्यचर (सं० त्रि०) अरण्ये चरति, अरण्य-चर-ट, ७-तत् वा अलुक् स०। वनचर, जङ्गली, जो जङ्गलमें रहता हो।

अरण्यछाग (सं० पु०) वनछाग, जङ्गली बकरा।

अरण्यज (सं० त्रि०) १ वनमें उत्पन्न, जो जङ्गलमें पैदा हुआ हो। (पु०) २ तिलकक्षुप, तिलका पेड़।

अरण्यजार्द्रक (सं० क्ली०) अरण्यजार्द्रका देखो।

अरण्यजार्द्रका (सं० स्त्री०) अरण्यजा आर्द्रका, कर्मधा०। जङ्गली आदरक। यह कटु, अम्ल, रुचिकर, बल्य और आग्नेय होती है। (राजनिघण्टु)

अरण्यजीर (सं० पु०) अरण्यस्य जीरः, ६-तत्। कटुजीरक, जङ्गली जीरा।

अरण्यजीर उष्ण, तुवर एवं कटुक होता, वात रोकता और कफ तथा व्रणको मिटाता है।

अरण्यजीरक, अरण्यजीर देखो।

अरण्यजीव (सं० त्रि०) आरण्येन अरण्यजेन फलादिना जीवति, अरण्य-जीव इगुपधत्वात् क। वनोद्भव फलादि द्वारा जीवित, जो वनमें पैदा हुए फल वग़ैरह खाकर जीता हो। वानप्रस्थादि आचारवान् जन वनमें रहते और कन्दमूलफल खाकर अपना निर्वाह करते हैं।

अरण्यदमन (सं० पु०) देवनेका दरख़्त।

अरण्यद्वादशी (सं० स्त्री०) मार्गशीर्षकी शुक्ला द्वादशी। इस तिथिको लोग व्रताचरण करते हैं।

अरण्यद्वादशीव्रत (सं० क्ली०) अरण्यद्वादशी देखो।

अरण्यतुलसी (सं० स्त्री०) वनतुलसी, कृष्णवर्वरी, जङ्गली तुलसी। यह ह्रस्वदीर्घ भेदसे दो प्रकारकी होती है।

बड़ी अरण्यतुलसी उष्ण, कटु, एवं सुगन्धि

होती और वात, त्वग्दोष, विसर्प तथा विषको दूर करती है। छोटी अरण्यतुलसी कटु, उष्ण, तिक्त, रुच्य, अग्निदीपन, हृद्य, विदाह, लघुपित्तल, तथा रुच रहती और कण्डु, विष, छर्दि, कुष्ठ, ज्वर, वात, क्रमि, कफ, दद्रु तथा रक्तदोषको मिटाती है। इसका वीज दाह और ग्रीष्ममें लाभदायक होता है।

अरण्यत्रपुसक (सं० पु०) वन्यत्रपुष, जङ्गली ककड़ी।

अरण्यत्रपुसी (सं० स्त्री०) इन्द्रवारुणी, इन्द्रायण। २ महाकाल लता, लाल इन्द्रायण।

अरण्यधर्म ((सं० पु०-क्ली०) अरण्ये आचरणीयो धर्मः, ७-तत् वा शाक०-तत्। वानप्रस्थ धर्म। वानप्रस्थ देखो।

अरण्यधान्य (सं० क्ली०) प्राणान् दधाति, धा इति यत् मुटौ धान्यम्, अरण्ये जातं धान्यम् शाक० तत् ७-तत् वा। नीवारादि वनधान्य, जङ्गली चावल।

अरण्यधेनु (सं० पु०) वनजात गो, जङ्गली गाय।

अरण्यनृपति, अरण्यपति देखो।

अरण्यपति (सं० पु०) अरण्यानां लक्षणया तत्रस्थ चौराणां पतिः वा, अलुक्-स०, ६-तत्। १ वनका राजा, जङ्गलका मालिक। २ अरण्यचर व्याधका पति, जङ्गलमें घूमनेवाला शिकारीका मालिक। ३ रुद्र।

रुद्रही लीलाक्रमसे चौररूप बनाते अथवा विश्वमय कहाते हैं। इसलिये चौरादिको रुद्ररूप समझना चाहिये। दूसरे, चौरादि शरीरमें जीव और ईश्वर—दो रूपसे रुद्र रहते हैं। इसमें जीवका ही पर्याय चौरादि होता और वही जीव ईश्वररूप रुद्रको बताता है। (माधव)।

अरण्यपलाण्डु (सं० पु०) वनजात पलाण्डु, जङ्गली प्याज। यह मूत्रविरेचक, श्लेष्महर और अत्युग्र रहता है। मात्रामें अधिक हो जानेपर इसे वान्तिकृत् और मलभेदन पाते। शोथ, श्वास, कास और मूत्रसङ्गमें यह काम आता है। (अविसंहिता)।

अरण्यपिप्पली (सं० स्त्री०) वनपिप्पलीनाम क्षुप, जङ्गली पीपलका पेड़।

अरण्यायन (सं० क्ली०) अरण्ये अयनं वानप्रस्थधर्म अस्तास्मिन् अर्श-आदि अच्। ब्रह्मचर्य, ब्रह्मचारीका धर्मविशेष।

अरण्यीय (सं० त्रि०) वनयुक्त, जङ्गली।

अरण्येतिलक (सं० पु०) सप्तम्या अलुक्, ७-तत्। वनतिल, जङ्गली तिल। जङ्गली तिलसे तेल नहीं निकलता। इसलिये जो द्रव्य रूपवान् रह गुणरहित हो, वह भी इसी नामसे पुकारा जाता है।

अरण्येऽनूच्य (वै० त्रि०) अरण्ये वने अनूच्यः नियतपाठ्यो मन्त्रो यस्य, अलुक् बहुव्री०। १ अरण्य पाठके पाठ्य मन्त्र द्वारा संस्कृत। यह शब्द पुरोडासादिका विशेषण होता है। (पु०) २ अरण्यका पाठ्य मन्त्र विशेष।

अरण्यौकस् (सं० पु०) अरण्यं ओकः स्थानं यस्य, बहुव्री०। मुनि, वानप्रस्थ, जङ्गलमें रहनेवाला फ़क़ीर।

अरत (सं० त्रि०) न रतम्, नञ्-तत्। १ विरत, दुनियाकी चीजसे दूर रहनेवाला। २ मन्द, धीमा। (क्ली०) ३ अमैथुन, सोहबतदारीकी अदम मौजूदगी।

अरतत्रप (सं० त्रि०) अरता विरता त्रपा लज्जा यस्य, बहुव्री०। १ मैथुनमें लज्जा न करनेवाला, जिसे सोहबत दारीमें शर्म न लगे। (पु०) २ श्वान, कुत्ता।

अरति (सं० पु०) ऋच्छति गच्छति, ऋ गतौ इत्यतिः। १ उद्वेग, तेज़रफ़्तारी, झपट। 'अरतिरुद्वेगः'। (उज्ज्वलदत्त) २ क्रोध, गुस्सा। ३ गमन, रवानगी। ४ अधिकार, दख़ल। ५ आक्रमण, हमला। ६ सेवक, नौकर। ७ स्वामी, मालिक। ८ चिन्ता, फ़िक्र। ९ बुद्धिमान् व्यक्ति, दाना शख्स। (स्त्री०) रमक्तिन्, नञ्-तत्। १० अस्थिरचित्त, डावांडोल तबीयत। ११ रागका अभाव, अनिच्छा, तबीयतपर रङ्गका न चढ़ना। १२ रतिविरह, जुदाई। १३ इष्टवियोग, दिलचाही चीज़का न मिलना। १४ असन्तोष, लालच। १५ नायकको कन्दर्प-जनित दशा। १६ पित्तरोग, सफ़रेकी बीमारी। (त्रि०) नास्ति रतिर्यस्य, नञ्-बहुव्री०। १७ अनुरागहीन, धीमा, सुस्त। १८ असन्तुष्ट, नाख़ुश। १९ जैन शास्त्रोक्त कर्मविशेष। इसके उदयसे चित्त चञ्चल रहता और किसी बातमें न लगता है।

अरतिस, अरतीस (हिं॰ वि॰) तीन दहायी और आठ एकायीसे मिलकर बननेवाली। यह शब्द संख्यावाचक विशेषण होता है।

अरत्नि (सं॰ पु॰) ऋादि॰ ऋ गतौ कत्निच् यण् च, नञ्-तत्। १ कनिष्ठाङ्गुलि भिन्न बंधी मुट्ठी।

'बद्धमुष्टिः करो रत्निः सोऽरत्निः प्रसृताङ्गुलिः'। (उज्ज्वलदत्त)

२ कुर्पर, कुहनी, कोना। ३ बाहु, हाथ। ४ कुहनीसे कनिष्ठाङ्गुलि पर्यन्त परिमाण। इस मापसे प्राचीनकाल यज्ञकी वेदी बनती थी।

अरत्निक (सं॰ पु॰) स्वार्थे कन्। कुर्पर, कुहना।

अरत्निमात्र (सं॰ त्रि॰) हाथभर, जो मापमें एक हाथसे ज्यादा न हो।

अरथ (सं॰ त्रि॰) १ रथरहित, बेगाड़ा, जो रथपर चढ़ा न हो। (हिं॰) २ अर्थ देखो।

अरथात, (हिं॰) अर्थात् देखो।

अरथाना (हिं॰ क्रि॰) अर्थ लगाना, मानी बताना।

अरथिन् (सं॰ पु॰) रथविहीन योद्धा, जिस सिपाहीके पास लड़नेका रथ न रहे।

अरथी (वै॰ पु॰) न रथिः सारथिः, नञ्-तत्, वैदे दोघः। १ सारथि भिन्न, जो शख्स गाड़ा न हांकता हो। (हिं॰ स्त्री॰) २ विमान, जनाज़ा, टिखटी। इसे लकड़ीसे सिड्ढी जैसी बनाते और मुर्दा ढोनेके काममें लाते हैं।

अरद (सं॰ त्रि॰) न सन्ति रदा दन्ता यस्य, नञ्-बहुव्रो॰। १ दन्तविहीन बालक, जिस बच्चेके दांत न निकला हो। २ भग्नदन्त, वृद्ध, पोपला, जिसका दांत गिर गया हो।

अरदण्ड (हिं॰ पु॰) किसी किस्मका करील। यह गङ्गा किनारे उपजता है।

अरदन, अरद और अर्दन देखो।

अरदना (हिं॰ क्रि॰) १ लातसे मारना, रौंदना, कुचलना। २ मार डालना, क़त्ल करना।

अरदल (हिं॰ पु॰) वृक्ष विशेष, कोई दरख़्त। यह मन्द्राज प्रान्तके पश्चिम-घाट और सिंहलद्वीपमें उपजता है। इसका पीला गोंद पानीमें नहीं शराबमें घुलता है। उससे पीले रङ्गका बढ़िया वार्निश बनता है। बीजका तेल औषधमें दिया जाता है। इसकी लकड़ी भूरी होती और उसपर नीली धारी रहती है।

अरदली (हिं॰ पु॰=Orderly) चपरासी, हाज़िरबाश। यह किसी हाकिमके पास रहता और उससे आकर मिलनेवाले आदमीकी ख़बर कहता है।

अरदावा (हिं॰ पु॰) दलामला अन्न, जो अनाज कुचल डाला गया हो।

अरदास (हिं॰ स्त्री॰) १ अर्ज़दाश्त, निवेदनयुक्त उपहार, जो भेंट विनतीके साथ चढ़ती हो। २ ईश्वर-प्रार्थना। नानकपन्थी प्रत्येक शुभ कार्यके आरम्भमें अरदास लगाते हैं।

अरध, अर्ध देखो।

अरध्र (सं॰ त्रि॰) राध हिंसने कर्मणि रन् क्रस्वश्च, नञ्-तत्। १ शत्रु-कर्तृक अहिंस्य, जिसे दुश्मन् मार न सके। २ कर्मशील, जो सुस्त न हो। ३ समृद्ध, खुश-खुरम।

अरन (हिं॰ पु॰) १ किसी क़िस्मकी निहाई। यह नोकदार होता है। २ अरण्य देखो।

अरना (हिं॰ पु॰) १ जङ्गली भैंसा। यह जङ्गलमें रहता और मामूली भैंसेसे मज़बूत होता है। इसके सुडाल शरीर पर बड़ाबड़ा बाल रहता है। सींग लम्बा, मोटा और पैना होता है। यह बहुत ज़ोरदार होता और शेरसे भी लड़ता है। (क्रि॰) २ अड़ना देखो।

अरनाथ—अष्टादश तीर्थङ्कर। बलभद्र रामचन्द्र और नारायण लक्ष्मणके समयमें होनेवाले बीसवें मुनि सुव्रत तीर्थंकरसे पहिले हुए थे। इनके पिताका नाम सुदर्शन और माता का नाम मित्रसेना था। ये काश्यपगोत्री सोमवंशज राजा थे। फाल्गुन शुक्ला तृतीया को रेवती नक्षत्रमें जिस समय इन (अरनाथ) का जीव जयन्त विमान नामा स्वर्गसे चलकर रानी मित्रसेनाके गर्भमें आया, उस समय रानीने सोलह शुभ स्वप्न देखे और उनका फल पतिसे पूछा। उत्तरमें महाराजने उन स्वप्नोंका फल तीर्थङ्कर पुत्र रत्नको प्राप्ति होना बतलाया। गर्भके दिन पूरे होनेपर मार्गशीर्ष शुक्ला चतुर्दशीको पुष्यनक्षत्रमें इनका जन्म हुआ। युवा होनेपर राजा सिंहासनपर विराजे।

इक्कीस हज़ार वर्ष पर्यन्त तो ये मण्डलेश्वर राजा रहे, बाद इनके चक्रवर्तित्वके चिह्नस्वरूप सुदर्शन-चक्रादि नव निधि चतुर्दश रत्नोंका प्रादुर्भाव हुआ। जैनियोंके भूगोलानुसार जम्बुद्वीपस्थ भरत-क्षेत्र सम्बन्धी एक आर्य और पांच म्लेच्छ खण्डोंके संपूर्ण राजाओंको जीतकर छह खण्ड पृथ्वीके राजा-धिराज बननेवालेको चक्रवर्ती कहते हैं। इनके नवनिधि और १४ रत्नोंके सिवा ८६ हज़ार स्त्रियां, १८ करोड़ घोड़े, ८४ लाख हाथी, ८४ लाख रथ, तीन करोड़ गौवें थी। ३२ हज़ार मुकुटधारी राजा चरणोंमें नमते थे। इन्होंने इस विभूतिको २१ हजार वर्ष तक भोगा। एकदिन शरद् ऋतुके मेघोंको अकस्मात् नष्ट होते देख इनको वैराग्य उत्पन्न हुआ, सांसारिक भोग विलास उसी समान अनुभवमें आने लगे। तत्-काल ही अपने पुत्र अरविन्दकुमारको राज्य सौंप आप सहेतुक नामा वनको वैजयन्तिका नामक देवोंद्वारा वाहित पालकीमें विराजमान होकर गये। वहां मार्गशीर्ष शुक्ला दशमीके दिन सन्ध्या समय रेवती-नक्षत्रमें एक हज़ार राजाओंके साथ नग्न बालकके समान हो तपधारण कर मुनि हुए। उसी समय इनको चौथा मनःपर्यय ज्ञान (सबके मनस्थ पदार्थों-का जाननेवाला ज्ञान) उत्पन्न हुआ। तप ग्रहण करनेके पश्चात् प्रथमपारणा (आहार) चक्रपुर नगरके स्वामी अपराजितके यहां किया। इस प्रकार सोलह वर्षतक भगवान्‌के तप करनेपर उसी सहेतुक वनमें कार्तिक शुक्ला द्वादशीके दिन अपराह्न काल रेवती नक्षत्रमें आम्रवृक्षके नीचे ६ उपवास करनेके पश्चात् ४ घातिया कर्मोंका नाश और इनके केवलज्ञान (संसारके भूत भविष्यत् वर्तमानके सम्पूर्ण पदार्थोंको युगपत् जाननेवाला ज्ञान)का प्रादुर्भाव हुआ। उस समय चारो प्रकारके देव उत्सवके लिये आये। भग-वान्‌का समवशरण (सभामण्डप) रचा गया। इनके समवशरणमें कुम्भार्य प्रभृति ३० गणधर (भगवान् दिव्यध्वनिका विशेषार्थ करनेवाले) और पूर्वाङ्गके ज्ञाता ६१० मुनि, सूक्ष्म बुद्धिके धारक शिक्षक मुनि ३५८३५, अवधिज्ञानके धारी २८००, केवलज्ञान-नेत्रके धारक २८००, विक्रिया ऋद्धिके धारक ४३००, मनःपर्यय-ज्ञानके धारक २०५५, अनुत्तरवादी सोलह सौ, कुल पचास हज़ार मुनि और यक्षिला आदि साठ हज़ार आर्यिका (साध्वी), एकलाख साठ हज़ार श्रावक, तीन लाख श्राविका, असंख्यात देवदेवी और तिर्यञ्च सभासद् रहते थे। इन सबको समवशरणमें विराजमान हो धर्मोपदेश देते थे। जिस समय आयुमें एकमास शेष था, उस समय भगवान् समेतशिखर पर्वत (पार्श्वनाथ पहाड़) पर एक हज़ार मुनीश्वरोंके साथ प्रतिमा योगसे विराजे और चैत्र-कृष्ण अमावस्याके दिन रेवती नक्षत्रमें पूर्व रात्रिके समय मोक्षको प्राप्त हुए।

अरना (हिं॰ स्त्री॰) अरणी, वृक्ष विशेष। यह हिमालयपर होती है। इसका फल लोग खाते और गुठलीको भी काममें लाते हैं। काश्मीर और काबुलमें उपजनेवाली अरनी बहुत उम्दा होती, इसकी लकड़ीसे चरखेको कितनी हीं सचाव बनती है। यह माघ फाल्गुन फूलती-फलती और श्रावण-भाद्र मासमें पकती है। अरणि देखो।

अरन्तुक (सं॰ क्लो॰) तीर्थविशेष। यह कुरुक्षेत्रके अन्तर्गत और स्यमन्तपञ्चकका सीमाभूत-स्थान है।

अरन्धन (सं॰ क्लो॰) न-रन्धनं अभावे नञ्-तत्। पाकका अभाव, भोजनका न बनना, चूल्हेका न जलना। भाद्र और आश्विन मासकी संक्रान्तिको अरन्धनकी व्यवस्था दी गयी है। अरन्धनके पूर्व दिन स्त्रियां अन्न-व्यञ्जन पका रखती हैं। चूल्हेको लीप-पोतकर पूजा होती है। गांवमें लोग एक दूसरे को निम-न्त्रण देंगे। बालक-बालिका न्योता खाकर घूमते फिरती हैं। लोगोंको यही संस्कार है,—अरन्धनके दिन चूल्हा जलाने और भोजन बनानेसे सांप काटता है।

अरन्ध्र (सं॰ त्रि॰) नास्ति रन्ध्रं छिद्रं यस्य, नञ्-बहुव्रो॰। १ निविड़, घना। २ छिद्रशून्य, बेसूराख़। ३ निर्दोष, बेऐब।

अरप (वै॰ त्रि॰) १ अहिंसित, चोट न खाये हुआ। २ पापरहित, शुद्ध, बेगुनाह, पाकीज़ा।

अरपचन (सं० पु०) बुद्धपञ्चक, पांच बुद्धोंका नाम। इस शब्दका प्रत्येक अक्षर एक-एक बुद्धको बताता है।

अरपन, अर्पण देखो।

अरपन-गण्डा (हिं० वि०) असंख्य, बेशुमार।

अरपना (हिं० क्रि०) देना, बख़्शना, भेंट चढ़ाना।

अरपस् (वै० त्रि०) रप्यते व्यथार्थं सर्वं समक्षं कथ्यते, रप कर्मणि असुन्; नास्ति पापं यस्य, नञ्-बहुव्री०। पापशून्य, बेगुनाह।

अरपा (हिं० पु०) १ कोई मसाला। (वि०) २ दिया, बख़्शा।

अरब (हिं० वि०) १ अर्बुद, सौ करोड़। (पु०) २ सौ करोड़की संख्या। ३ घोटक, घोड़ा। ४ इन्द्र। (अ० पु०) देशविशेष, एक मुल्क। (Arabia)

यह प्रायोद्वीप दक्षिण-पश्चिम एशियामें अक्षा० ३४° ३०′ एवं १२° १५′ उ० और द्राघि० ३२° ३०′ तथा ६०° पू०के मध्य अवस्थित है। इससे पश्चिम लोहित-सागर, दक्षिण अदनकी खाड़ी तथा भारतसागर, पूर्व ओमन तथा ईरानकी खाड़ी और उत्तर सोरियाकी मरुभूमि है। आकारमें यह प्रायोद्वीप असतुल्य लम्बक-जैसा है। इसका क्षेत्रफल १२००००० वर्गमील होता है।

भूगोल—साधारणतः अरब ऊंची अधित्यका ठहरता, जो दक्षिण-पश्चिमसे उत्तर-पूर्वको ढलता और दक्षिण-पश्चिमके अन्त खूब ऊंचा पड़ता है। पश्चिममें यह ४०००से ८००० फोट तक ऊंचे उठता और समुद्रकूल एवं पर्वतके बीचकी ३०मील भूमि नीची छोड़ता है। पूर्वके अन्तमें जबील-अखूदर पहाड़ है। इसका भूमितल प्रधानतः ख़ाली और सूखा रहता है। इसमें एक-तिहाई रेगिस्तान और बाक़ी बसनेके योग्य जमीन् है। यहां पानीकी कमी रहती और वर्षा भी कम होती है। इसके पहाड़ बहुत कम ऊंचे हैं।

अरब शब्द हिब्रू भाषाका है। इसका अर्थ 'अस्त होना' है। मतलब यह, कि जो जाति सूर्यास्त होनेकी ओर रहती, वह अरब कहलाती है। कोई-कोई इस शब्दको हिब्रूके 'अराबा' शब्दसे निकला बतलाते हैं। अराबाका अर्थ 'मरुभूमि' है।

प्राचीन भूगोलवेत्ताने अरबकी सीमा कुछ अधिक निकाली थी। प्लिनीके मतमें मेसोपाटेमियाके कुछ अंश और आरमेनियाकी सीमातक अरबदेश रहा। (Hist. Nat. 5-24) जेनोफनने यूफ्रेटिस उपकूलके वालुकामय स्थान और अरक्सेस नदीके दक्षिण तीर पर्यन्त इसकी सीमा रखी थी। प्राचीन पाश्चात्य भूगोल-वेत्ताके मतसे अरब देश पांच प्रदेशमें विभक्त है,—१ यमन, २ हेजाज, ३ तिहामा, ४ नेजद और ५ ऐमामा। इस देशके कितने ही स्वाधीन राज्योंमें निम्नलिखित प्रधान हैं,—

१ यमन—यह प्रदेश लोहितसागरके उपकूल एवं हेजाज, नेजद और हद्रामौतकी सीमातक माना जाता है। इसमें साना, मोखा, जेबिद, बाइट-उल-फकी, होदेदा और लोहिया नगर विद्यमान है।

२ अदन—इसमें मशहूर अदन बन्दर मौजूद है।

३ कोकेबान् राज्य।

४ बेलोद-उल-कोबायल।

५ अबू आरिश। यह लोहितसागरके किनारे बसता और जेजान नामक नगर रखता है।

६ खोलान्।

७ शाहान्। इस राज्यमें बेदुयिन लोग रहते हैं।

८ नेजरान। यह प्रदेश अधिक उर्वर होता, ऊंट और घोड़ासे विख्यात है।

९ ओमन। यहां मस्कटके सुलतान्‌का अधिकार है। यहां यव, गेहूं, ज्वार, उड़द, अङ्गूर और खजूर उपजता है। जस्ते और तांबेकी खानि भी मौजूद है। रोस्तक नगरमें इमामका मकान् है।

१० हेजाज। यह मुल्क मुसलमानोंकी पुण्यभूमि है। मक्का और मदीना इसीके अन्तर्गत है। मुहम्मदके मरने बाद यहां कोनष्टाण्टिनोपलके मालिकका अधिकार हुआ था। वह इस पुण्यस्थानकी रक्षाके लिये कोई कर्मचारी रख देते रहे। उसके बाद वह्हाबियोंने सर उठाया और यहांके शरीफ़ने स्वाधीन बननेकी चेष्टा की। उसी समय तुर्कस्थानके पाशा और मक्केके प्रधान शरीफ़से झगड़ा भी हो गया था। शरीफ़ने पाशाका जिद्दानगरस्थ क़िला तोड़ और उन्हें विष देकर मार डाला। वह्हाबियोंने उससे

बिगड़ शीघ्र ही उनका निपात किया था। फिर मिस्रके शासनकर्ता मुहम्मद अली प्रधान बने और वहहाबियोंको हरा हेजाजपर अपना दखल जमा बैठे। कुछ दिन हेजाज मिस्रकी दृष्टिमें रहा था। सन् १८४० ई०को मिस्र और तुर्कस्थानमें युद्ध छिड़नेसे हेजाज तुर्कस्थान सुलतान्के हाथ लगा। इस प्रदेशका प्रधान नगर मक्का, मदीना और जद्दा है। मक्का देखो।

११ सिनायी पर्वतका मरुस्थल। यह अरबकी उत्तर-पश्चिम दिक् पर अवस्थित है। सिवा दो-एक शहरके यहां दूसरी जगह ऊसर और पहाड़ ही मिलता है। स्वाधीन बद्दूयिन राज्य चलाते हैं। सूज़, टोर वग़ैरह बन्दर इसी प्रदेशमें है। सिनाई पहाड़में गोल पत्थर बहुत होता, ज़्यादा ऊंची जगह कहीं-कहीं क़ीमती पत्थर भी मिल जाता है। ऊंची अधित्यका-पर जेबेलमूसा और उसीके पास बाइबिलोक्त सिनाई गिरि वर्तमान है। इसी जगह सेण्ट कैथरिनका मनोहर आश्रम बना है। जेबेल मूसाके स्वच्छ सलिलमें प्रस्रवण पाया जाता है। उसे देखते ही आंख ठण्डी होती है। यहां अमरूद, खजूर और अनार वग़ैरह सुखाद्य फल उपजता है।

१२ नेजद। इस प्रदेशसे उत्तर सीरियाकी मरुभूमि, दक्षिण यमन तथा हद्रामौत, पूर्व इराक-अरबी और पश्चिम हेजाज एवं लासा है। अरबके बीच यह प्रदेश सबसे बड़ा है। यहां बद्दूयिन जाति रहती है। बड़ी गर्मी पड़ते भी बीच-बीच साफ़ और ठण्डी हवा लोगोंको तर-ताज़ा बनाती है। यह राज्य धर्मोन्मत्त वहहाबियोंके अधिकारमें है। डेरायिया प्रधान नगर है। सन् १८१८ ई०में इब्राहीम पाशाने इस नगरको जीता था। उस समय यहां बड़ा-बड़ा बाईस मठ और तीस विद्यालय था। यह नगर अधिक उर्वर है। यव, गेहूं प्रभृति शस्य और खजूर, अनार, आड़ू, अङ्गूर, तरबूज़, खरबूज़ा वग़ैरह मेवा खूब पैदा होता है।

१३ लासा या हजारा। यह प्रदेश ईरान-खाड़ीके पश्चिम किनारे अवस्थित है। यहां अधिकांश बद्दूयिन ही बसे हैं। इसका प्रधान नगर लासा है। यहांके लोग समुद्रसे मोती निकाल और पिण्ड-खजूरको ले-दे अपनी जीविका चलाते हैं।

१४ हद्रामौत। इस प्रदेशसे दक्षिण-पूर्व भारत-महासागर, उत्तर-पूर्व ओमन, उत्तर नेजद और पश्चिम यमन पड़ता है। यहां नमकका कारबार बहुत है। कितनी ही जगह बद्दूयिन बसता है। इसका अधिकांश मस्क़ट-इमामके अधिकारमें था। दफ़र और केशिन प्रधान बन्दर है। सकोतरा द्वीपपर भी इसी राज्यका अधिकार है। यह स्थान अगर-चन्दनके लिये प्रसिद्ध है।

अरबमें कोई बड़ी नदी नहीं है। छोटी नदी अधिकांश गर्मीमें सूख जाती है। किसी-किसी प्रदेश-पर वर्षमें एकबार भी पानी नहीं बरसता।

पृथिवीके मध्य अरब देश अत्यन्त उष्णप्रधान है। भारतवर्षके युक्तप्रदेशमें जो लू लगती, उससे भी ज़्यादा गर्म और आग-जैसी हवा ग्रीष्मकालमें यहां चलती है। उसके सामने जानेसे फ़ौरन् मौत आती और थोड़ी ही देरमें देह सड़-गल जाती है। लू चलते समय गन्धक-जैसी खुशबू निकलती है। गर्म हवा जिस ओरसे आती, उस ओरकी लाली देख अरब-अधिवासीकी पहले ही आंख खुलती है। उसी समय वह ज़मीन्-पर उलटे लेट जाता और ऊंट वग़ैरह जानवर भी माथा झुका रखा पाता है। लू ज़मीन्से कुछ ऊपर रहती, इसलिये ऊपर कही हुई तरकीबसे मुसाफ़िर बचता है। मामूली तौरपर बीच-बीचमें ठहरकर तीन दिनतक लू चलती है।

उक्त प्रदेशको छोड़ ईरान खाड़ीका कितना ही द्वीप भी अरब जातिके अधिकारमें है। फिर इन द्वीपमें प्रत्येक स्वाधीन है, जिनमें आबोयाल, हरमूज, करिक वग़ैरह प्रसिद्ध है। इस स्थानके अधिवासीका प्रधान जीवनोपाय मोती निकालना, नाव चलाना और मछली पकड़ना है। खजूर, सांवेकी रोटी और समुद्रकी मछली यहांके लोगोंका एकमात्र खाद्य है।

अरबमें उत्पन्न द्रव्य—मुसब्बर, गूगुल और मुर वग़ैरह

खुशबूदार चीज़ मिलनेसे बहु प्राचीन कालावधि अरब सर्वत्र प्रसिद्ध है। यहां अकीक़, मरकत, वैदूर्य, इन्द्र-नील प्रभृति मणिमाणिक्य भी पाया जाता है। मोखेमें जैसा कहवा होता, वैसा दुनियामें किसी जगह नहीं देख पड़ता। वट, खजूर, नारियल, ताड़, केला, बादाम, खूबानी, सेब, नासपाती, किशमिश, पपीता, इमली, नारङ्गी और बबूल भी खूब उपजता है। जवासेसे तुरञ्जबीन् नामक जो अर्क़ निकलता, वह अरब जातिके बहुत काम आता है। जगह-जगह गेहूं, यव, ज्वार, उड़द, मसूर और तम्बाकू बोयी जाती है। रुई बहुत अच्छी होती है। यहांकी सोनामाखी बड़े ही फायदेकी चीज़ है। जैविद प्रदेशमें नील होता है। सिवा इसके रेड़, अमलतास, गन्ना, जाय-फल, तिल, पान, तरह-तरहका खरबूजा, सब्ज़ी, और जड़ी-बूटी भी देखनेमें आता है। जगह-जगह जस्ता और लोहा मिलता है।

जानवरमें ऊंट अरब जातिका पूरा साथी है। लड़कपनसे अरब जाति जैसे भूखप्यास मारती, उसके ऊंटकी भी वैसे ही चाल होती है। यह जानवर १५।१६ दिन बे-खाये-पिये काम कर सकता है। अरब जाति इस जानवरका दूध गायके दूधकी तरह पीती है।

अरबी घोड़ा दुनियामें मशहूर है। यहांका खच्चर गधा भी खूब तेज होता, जिसपर चढ़कर सिपाही दुश्मन्से लड़ता है। जगह-जगह जङ्गली बैल, मृग-नाभि-हरिण, हरिण, पहाड़ी बकरा, भेड़िया, हायना और शेर घूमते फिरता है। यमन और अदन प्रदेशमें झुण्डों बेदुमका बन्दर उछलते देखेंगे। उक़ाब, बाज़, चील वग़ैरह तरह-तरहकी चिड़िया भी उड़ती है।

अरबदेशका लोकतत्त्व—अरब लोग सेमतिक जातिसे उत्पन्न हुए हैं। इनका प्राचीन इतिहास ज्यादा न मिलेगा। प्राचीन अरब जातिके साथ भारतवर्षका वाणिज्य-संस्रव रहा। पुरातन इतिहासलेखक हेरोदोतास्ने लिखा है,—ईरान्के बादशाहने दरा-यास् ईस्तस्पिस् एशियाखण्डसे पश्चिम सब देशी लोगोंको जीत लिया था, किन्तु अरब उस समय भी स्वाधीन थे। जब कम्बायिसिस् मिश्र जीतने चले, तब उन्होंने अरब जातिका सहारा लिया था। अलकसन्दर अरब देशको अधिकार करनेके लिये तैयार हुये थे, किन्तु मर जानेसे उनकी आशा पूरी न पड़ी। दियोदोरासने कहा है,—यह जाति प्रबल पराक्रान्त और इनकी जन्मभूमि मरुप्रदेश होती है; फिर इसीको मालूम रहता, मरुमें कहां पानी मिलता है। रोमक कई बार इस देशपर चढ़ आये, किन्तु खानेकी चीज़ मौजूद न रहनेसे वापस गये। अग-स्तस्के राजत्वकालमें ईरियानुगलास नामक कोई व्यक्ति अरब जीतने आया और ओरोदास नामक किसी अरब-अधिवासीने उसे साहाय्य दिया, किन्तु खानेकी चीज़ हाथ न आनेसे उसको भी अरब छोड़ना पड़ा था।

अरब जातिका जो प्राचीन इतिहास मिलता, उससे हमें पूर्वतन अधिपतियोंका नाम ही मालूम देता है। इसका उल्लेख नहीं मिलता—किसने कौन समय कितने दिन राजत्व किया था। सेमितिक जातीय जोक्तनके पौत्र शेम प्रथम अरब आये थे, उसके बाद इसी जातिके इब्राहीम नामक दूसरे व्यक्तिने अरबमें घर बनाया।

प्रसिद्ध मुसलमान इतिहास-लेखक अबुलफ़ज़लने अरब जातिको दो भागमें बांटा है—प्राचीन और वर्तमान। प्राचीन भागमें आद, थमूद, तस्म, जादिस, जोहीम, आमलेक प्रभृति नामक कई शाखा है। इस जातिके यत्सामान्य प्रवाद भिन्न दूसरा कोई हाल नहीं मिलता। आद जादिके शद्दाद नामक किसी व्यक्तिने इरम शहर और उसका बाग़ लगाया था।

वर्तमान अरब जातिका दो दल होता है, खाती और असली। प्रथम दल खातन या जोक्तन और द्वितीय दल इब्राहीमके पुत्र इस्माइलके वंशसे उत्-पन्न हुआ है। खातन अरबके दक्षिण अञ्चल और इस्माइल वंश हेजाजमें रहता है।

खातनके लड़केका नाम यारब था। कोई-कोई कहता, इसी यारब शब्दसे इस देशका नाम अरब हुआ है। यारबके यशाव, यशावके अब्दुल साम और

अब्दुल नामके लड़के कलान् तथा हिम्यार थे। खातन-वंशमें हिम्यार सर्वप्रथम राजा हुए। उन्होंने खमूद जातिको यमनसे निकाल राजमुकुट पहना था। पचास वर्षके राजत्व बाद हिम्यार मर गये। उनकी मृत्यु पीछे किसीके मतसे तत्पुत्र वोखेल और किसीके मतसे भ्राता कलान् सिंहासनपर बैठे थे। अनेक पुरुष अतीत होनेपर आक्मान नामक कोई व्यक्ति यमनका राजा बना और एक बड़ा काम कर देशको उपकार पहुंचाया था। उससे पहले हिम्यार शस्य उत्पादनके लिये नहर निकाल समुद्रका पानी लाये थे। इस नहरसे यमनका विशेष उपकार होता, किन्तु मध्य-मध्य पार्वतीय प्रबल वायुसे जल उछल उछल समस्त यमनको डूबा बड़ा अनिष्ट करता था। यह क्लेश मिटानेको आक्माननें मारेबके बीच दो पहाड़से एक बड़ा बांध बंधवा दिया। सन् ई०के तीसरे शताब्द यह बांध टूट जानेसे यमन प्रदेश जलमें डूब गया था। उस समय उम्र-बीन आमिर ओरके मोसाकिया यमनके शासनकर्ता थे। उन्होंने भावी विपद् आते देख पहले ही यमन प्रदेशस्थ समस्त पैतृक सम्पत्ति बेंच डाली और आक प्रदेशमें जाकर रहने लगे। उम्रके मरनेपर उनके वंशधर नाना स्थानमें फैल गये थे। उम्र-पुत्र जेकनेका परिवारवर्ग सीरिया पहुंचा और दामस्कससे दक्षिण-पूर्व घसनी राज्य जा जमाया। कालक्रमसे इस वंशके सकल लोग ईसायी बन गये थे। उम्रके अपर पुत्र तालिबसे आउस और खज़रोज़ नामक दो दल हुए, जो यात्रेब (मदीने)में जाकर रहने लगे। उम्रके पौत्र रबिया मक्के गये और उनके सन्तान खुज़ा कहलाये थे। मक्केवाला काबा अतिप्राचीन कालसे अरब जातिका पवित्र तीर्थ समझा जाता है। खुज़ा वंशके अमरूने बीन लोहिया बेकर और यमनसे आये दूसरे लोगोंकी मददसे काबा जीत लिया। बेकरके दलवालोंने देखा, कि अपरिचित विदेशीयके काबा जीतनेसे उनकी हिंसा हुई थी। उन्होने कोराइसवाले इस्माइलको मिला खुज़ावोंको शासनाधिकारसे निकाल दिया। सन् ४६४ ई०को काबा कोराइस जातिके अधिकारमें पहुंचा था। मक्का देखो।

कोराइस-राज कोसायीके पौत्र हसन बड़े ही दयालु रहे। एकबार दुर्भिक्ष पड़ा, उसमें उन्होंने अपना सञ्चित रत्न सकल प्रसन्नतापूर्वक बांटा था। उनके पुत्र अब्दुल मतालिब थे। अब्दुल मतालिबके समय आब्राहाम नामक कोई युरोपीय और एक ईसाई कितनी ही फौज ले काबा जीतने आया था। किन्तु उन्होंने उसे युद्धमें हरा काबा तीर्थको बचा लिया। उसी समय दूसरी भी अद्भुत घटना हुई,—आब्राहामकी फौज मक्केमें घुस तो गई, किन्तु वह जिस हाथीपर चढ़कर आये, उसको हिम्मत आगे बढ़नेकी किसी तरह न पड़ी। उसी बीच हसन-पौत्र अबदुल्लाके एक पुत्र सन्तान भूमिष्ठ हुआ, जिसका नाम मुहम्मद रखा गया। (सन् ५७१ ई०) मुहम्मद देखो।

पुरातत्त्व—मुहम्मदके जन्म लेनेसे पहले अरब नक्षत्रोंकी उपासना करते और लम्बे-चौड़े मैदानमें पश्वादि चराते घूमते थे। अनन्त सुनील आकाश उनके शिरपर शोभा देखाता और नक्षत्रोंका किरण उन्हें आमोद देता था। सूर्य, चन्द्र प्रभृति ग्रहगण प्रतिदिन नव-नव भावसे निकल उनके मनमें भय, भक्ति और प्रेमकी आभा डालते रहा। उसीके साथ-साथ उन्होंने नक्षत्रोंका पूजना सीखा। उनके मध्य हिम्यार जाति प्रधानतः सूर्य, केनाना जाति चन्द्र, तायी जाति अगस्त्य और मिसाम जाति वृषको उपासना करती थी। यमन प्रदेशके सबा शहरमें शुक्रका कोई मन्दिर रहा। कहते हैं, पहले मक्केवाली मसजिदमें भी शनिकी पूजा होती थी। कुरानमें भी अल्लाट, अलउज्जा और मेनाट-तीन देवीका नाम मिलता है। नखले नगरमें अल्लाट देवीका मन्दिर रहा, जिन्हें थाकेफ जाति पूजती थी। मोगरोंने यह मन्दिर तोड़-फोड़ डाला। कोराइस और केनाना जाति अलउज्जा देवीको वृक्षमूर्तिसे पूजा करते रही। हुदसायली और खुज़ावोंकी उपास्य देवी मेनाट थीं। कोरायस आसेब देव और नेला देवीको भी पूजते रहे। ईरान खाड़ीके द्वीपको तिमिम नामक अरबजाति

सूर्योपासना करती, जो उसने प्राचीन पारसियोंसे सीखी थी। भूत, प्रेत, पिशाच, अप्सरी, किन्नरी प्रभृतिको भी प्राचीन अरब जाति मानते रही। अरबके पुराने लोग सामुद्रिक, इन्द्रजाल, फलितज्योतिष और भौतिक विद्याको बड़े आदरकी दृष्टिसे देखते थे। नक्षत्रादिकी गति समझनेको उनके पास मानयन्त्रादि विद्यमान रहा। कन्या सन्तानपर वह बहुत विमुख थे। कहते हैं, किसीके कन्या होनेपर जीते जी हो उसे जला डालते रहे। (प्राचीन अरब जातिके अपरापर विवरणको Journal of the Bombay Branch, Royal Asiatic Society, Vol. XII देखो।)

प्राचीन अरब जातिके साथ भारतवासी और अपरापर जातिका वाणिज्य होता था। (J. A. S. Bengal, VII. 519) रामायणादिमें लोहित-सागरका उल्लेख भी मिलता है।

सन् ई०के सप्तम शताब्द अरबका उत्तरांश यूनानियों, यूफ्रेतिस नदीका तटस्थान ईरानियों और दक्षिण भाग इथियोपियोंके अधिकारमें था; सिवा इसके अपर सकल स्थान स्वाधीन रहा। सन् ५७० या ५७१ ई०में मुहम्मदने जन्म लिया था। चालीस वत्सरके वयःक्रमकालपर उन्होंने अपना धर्ममत व्यक्त किया। यह धर्म फैलानेमें बारह वर्ष बीता और मक्केमें घोर विद्रोहानल भड़का था। मुहम्मदके विपक्षगणने उनका प्राण लेना चाहा। मुहम्मद मक्केसे यात्रेव भाग गये। उसी समय यात्रेव मदीना या मदीनात अल् नवी (अर्थात् भविष्यवक्ताका नगर) कहलाया और उनके शिष्यगणने सन् हिजरीकी गणना लगायी। फिर मक्का अधिकृत हुआ और अरब लोगोंको समझाने लगा,—सिवा अल्लाके दूसरा कोई ईश्वर नहीं, मुहम्मद उनके पैग़म्बर हैं। मुहम्मदने अरब वालोंको जगत्में अपना धर्म फैलानेका आदेश दिया था। उस समय यह बाहुबल और अस्त्रके साहाय्यसे चारो ओर नव धर्मको धूम उठाने लगे। इनका पूर्वमत और आचार-व्यवहार एककाल ही समयस्रोतमें डूबा, जिसका कुछ दिन बाद अस्तित्व तक न रहा।

उसी समय ईरान देश हीनतेजः हो गया। जरथुस्त्रका मत इतना शिथिल पड़ा, कि नव-नव धर्म उसपर अपना आधिपत्य जमाने लगा था। फिर मुहम्मदका मत ईरानमें फैला, जहां अरबोंकी संख्या बढ़ती गयी। सन् ई०के सप्तम शताब्द अब्बास नवधर्मके प्रधान रक्षक बने। ख़लीफ़ा मोयाविय़ाके स्पेन देश भाग जानेसे कर्दोवेमें उमैयद ख़लीफ़ाने अपना राज्य जमाया। क्रीट, कर्शिका, सरदनिया और सिसिली द्वीप अरबोंके हाथ जा पड़ा था।

अब्बास वंशके राजगणने बग़दादको अपनी राजधानी बनाया। इस वंशमें कितने ही विद्योत्साही राजा हुए थे। उनमें ख़लीफ़ा मनसूर हारुन्-अल्-रशीद और मामून् मशहूर हैं। इनके समय नानादेशीय विचक्षण पण्डित बग़दादको राजसभामें उपस्थित रहे। उनमें भारतवर्षीय शास्त्रविद् पण्डितगणका भी नाम मिलता है। वेन-अल्-अन्वा फितल कातुल अतबा नामक ग्रन्थमें देखेंगे,—इन नृपतियोंकी बग़दाद राजधानीमें भारतवर्षीय गणित, ज्योतिष और चिकित्साशास्त्र प्रभृति पढ़ाया जाता था।

अरबोंने वाणिज्यमें विशेष उन्नति पायी थी। ईरान, सीरिया, मौरितनिया और स्पेन देश जीतने बाद यह नाना देशोंमें पहुंच व्यवसाय-वाणिज्य चलाने लगे। सन् ई०के अष्टम शताब्द इन्होंने भारतवर्षमें पैर रखा था। उसी समय कितने ही हिन्दू नरपतियोंको इसलाम धर्मको दीक्षा दी गयी। इतिहास-रचयिता गिबन साहबने लिखा है,—अरबोंके द्वारा ही रोमक साम्राज्यका अधःपतन हुआ। कोई-कोई कहता,—सन् ई०के एकादश शताब्द अरबोंने ही सर्वप्रथम अमेरिकाका ढूंढ निकाला था।

अरबमें बदूयिन नामक जाति रहती है। कोई-कोई इसे अरबका आदिम अधिवासी बताते हैं। इसका धर्म दस्युवृत्ति है। इसमें सभी योद्धा और सभी मेषपालक रहते हैं। मरुभूमि इसका वासस्थान है। पहले यह अरबके प्राचीन धर्मको मानती

थी, मुहम्मदके धर्मप्रचार बाद कितने ही लोगोंने इसलाम धर्मको ग्रहण किया। अब यह जाति कालदिया, मेसोपोटेमिया, सीरिया, बर्बरी, न्यूबिया और सोदानके उत्तरांशमें भी रहती है। बदूयिन लोग धनजन और सुखसम्भोगकी अपेक्षा स्वाधीनताको अच्छा समझते हैं। इस जातिमें नानादल विद्यमान है। किसीको सावेक आचार व्यवहार भला मालूम होता और कोई अरबी रीति-नीतिका अनुयायी है। जिन लोगोंमें सावेक प्रथा चलती, उनमें एक कर्ता होता है। इस कर्ताको शेख़ कहते हैं। शेख़ अपने परिवार और दास-दासीके मध्य स्वयं राजा होता है। विपद्-आपद् पड़नेसे दूसरे शेख़का साहाय्य लिया जाता है। किसी प्रबल शत्रुसे लड़नेमें नाना दलके शेख़ एकमें मिल आगे बढ़ते हैं। शेख़ प्रायः घोड़ेपर चढ़ कर्मचारियोंका कार्यादि देखते घूमता और शिकार करनेको बहुत अच्छा समझता है। बदूयिन किसीको आते

अरबी डाकू।

देख उसके पास पहुंचता, और मुसाफ़िरसे कहता है,—नङ्गे हो जावो और तुम्हारे पास जो कुछ हो उसे रख दो। यदि वह देना अस्वीकार करता, तो ज़बरन् उसका माल-असबाब ले लेता; किन्तु जानसे किसीको नहीं मारता। दूसरे ऐसा भी देखते,—जब कोई पथिक मरुभूमिमें पहुंच क्लान्त हो और राह भूल जाता, तब बदूयिन बड़ी उदारताका काम करता है। दस्यु होते भी वह भ्रान्त पथिकको राह दिखाता, आहारादि दे प्राण बचाता और कभी यथासाध्य साहाय्य करनेसे भी नहीं हिचकता। बदूयिन जाति तम्बूमें रहती और काले रङ्गका कपड़ा पहनती है। इसके बड़े-बड़े तम्बूमें दो तीन कमरे होते, जिनसे एक-एकमें स्त्री-पुरुष और पालित उष्ट्र, मेषादि रहते हैं। बदूयिन घासकी चटाईपर सोता है। उसका आहारादि अतिनिकृष्ट है। मरुस्थानके बड़े-बड़े शेख़ सिर्फ़ भात खाकर अपना काम चलाते हैं।

४ अरब देशका घोटक, अरबी घोड़ा। ५ अरबका अधिवासी, जो अरबमें रहता हो।

अरबर (हिं० वि०) क्रमरहित, बेसिलसिला, जिसका कोई ओर-छोर न रहे। २ असाधारण, ग़ैरमामूली, सख्त।

अरबराना (हिं० क्रि०) १ भयभीत होना, डिगना। २ डावांडोल होना, इधर-उधर करना।

अरबरी (हिं० स्त्री०) भय, दहशत, घबराहट।

अरबिस्तान (फ़ा० पु०) अरब देश, अरबोंका मुल्क। अरब देखो।

अरबी (फ़ा० वि०) १ अरब देशीय, अरबके मुल्कका। (पु०) २ अरब देशका घोड़ा। यह निहायत ताक़तवर, मेहनती, तकलीफ़ उठाने और हुक्म माननेवाला होता है। इसका माथा चौड़ा, आंख बड़ी, कान हलका, गाल-जबड़ा मोटा, पुट्ठा ऊंचा, पूंछ ऊपरको चढ़ी, और अयाल चमकीला रहता है। अरबीकी बराबरी दूसरा घोड़ा नहीं कर सकता। ३ अरबी ऊंट। यह बहुत मज़बूत; तकलीफ़ उठाने और बेखाये-पिये रेगस्तानमें चलनेवाला है। ४ ताशा, किसी क़िस्मका बाजा। ५ अरबकी भाषा।

अरबी सेमितिक भाषासे निकली है। मुहम्मदने कुरान इसी भाषामें बनायी थी। इसकी लेखनप्रणाली हिब्रू भाषासे ली गयी है। सभी समझदार मुसलमान इस भाषाका आदर करते हैं। आजकल यह अरब, सीरिया, मिसर और उत्तर-अफ़्रीकामें चलती है। उसे छोड़ समस्त तुर्कस्थान, ईरान और हिन्दुस्तानके मुसलमान इसे धर्मभाषा मानते हैं। इस भाषामें अच्छे-अच्छे मुसलमान-शास्त्र लिख गये हैं। इसकी कितनी ही बात युरोपीयोंने अपने साहित्य-

भाण्डारमें मातृभाषाके तौरपर लेकर रखी है। हिन्दी भाषामें भी अरबीके कितने ही शब्द चलते हैं।

अरबीला (हिं० वि०) साधारण, मामूली, बेसमझ।

अरभक, अर्भक देखो।

अरम् (वै० अव्य०) १ शीघ्र, जल्द, फौरन्। २ योग्यतापूर्वक, माकूलियतके साथ। ३ पर्याप्तरूपसे, काफ़ी।

अरम (सं० त्रि०) न रम्यतेऽनेनात्र वा; रम करणे ऽधिकरणे वा अच्, नञ्-तत्। १ अधम, खराब। २ निकृष्ट, हक़ीर। (पु०) ३ नेत्ररोग विशेष, आंखकी कोई बीमारी।

अरमण (सं० त्रि०) आनन्द न देनेवाला, नागवार, जो खुश न करता हो।

अरमणीय (सं० त्रि०) आनन्दशून्य, नागवार।

अरमणीयता (सं० स्त्री०) अप्रियता, नागवारी।

अरमति (सं० स्त्री०) अरा अत्यर्था मतिः, कर्मधा० पूर्वपदस्य पुंवद्भावः। १ पर्याप्तबुद्धि, दानायी, समझदारी। २ दीप्ति, चमक। ३ पृथिवी, ज़मीन। ४ धन, दौलत। ५ पर्याप्तस्तुति, काफ़ी तारीफ़। ६ सर्वत्रगामिनी, सब जगह जानेवाली।

ऋग्वेदके अनेक स्थानमें यह शब्द आया और सायणाचार्यने इसका नाना प्रकार अर्थ लगाया है,—अरमतिः सविता देव आगात्। (ऋक् २।३८।४) इसके भाष्यमें सायणाचार्यने लिखा था, 'अरमतिः, अनुपरतिः'। मतलब यह, कि सुस्थिर न रहनेवाला अरमति कहाता है। ग्ना मो महीमरमतिं। (ऋक् ५।४३।६) भाष्यमें 'आ समन्तात् रममाणां सर्वत्र गन्त्रीं वा' सर्वत्र रममाणा, सब जगह जानेवाली ग्ना देवता। प्र वो महिमरमतिं। (ऋक् ७।३६।८) 'उपरतिरहिताम्' अर्थात् स्थिर न रहनेवाली। अध ग्मा नो अरमतिं (ऋक् ५।५४।६) भाष्यमें 'आरममाणं धनादिकम्' यानी भोग करनेका धनादि। प्रति नः स्तोमं त्वष्टा जुषेत स्यादस्मे अरमतिर्वसूयुः। (ऋक् ७।३४।२१) भाष्यमें 'पर्याप्तबुद्धिः' अर्थात् जिसकी बुद्धि पर्याप्त रहे। अरमतिरनर्वणो विश्वो देवस्य मनसा। (ऋक् ८।३१।१२) भाष्यमें 'अरमतिः पर्याप्तस्तुतिः' यानी काफ़ी तारीफ़ पानेवाला। इसी तरह अन्यान्य ऋक्में भी 'अरमति' शब्दका प्रयोग देखा जाता है।

अरममाण (सं० त्रि०) १ अप्रिय, नागवार। (वै०) २ चलित, बन्द न होनेवाला।

अरमपिष्ट (सं० त्रि०) अप्रिय, नागवार।

अरमनी (फ़ा० पु०) आरमेनिया प्रदेशका अधिवासी, जो शख्स आरमेनिया मुल्कका बाशिन्दा हो। यह अतिशय रूपवान् होता है।

अरमान (तु० पु०) अभिप्रेत, हौसला, ख़ाहिश।

अरयी, अरई देखो।

अरर (सं० क्ली०) ऋच्छति प्राप्नोति द्वारम्, ऋ गतौ अर। कपाट, किवाड़। 'अररं कपाटम्।' (उज्ज्वलदत्त) २ आच्छादन, ढक्कन। (पु०) ३ ऋषिविशेष। ४ वंशकोष। ५ उलूक, उल्लू। ६ यज्ञका भाग विशेष। ७ युद्ध, लड़ाई। (हिं० अव्य०) ८ आश्चर्य, तअज्जुब। होलीमें जो कबीर गाते, उसके आदिमें इसे लगाते हैं।

अररना दररना (हिं० क्रि०) पीसना, दलना, टुकड़े-टुकड़े करना।

अरराज—बिहारप्रान्तके चम्पारन ज़िलेका एक गांव। यह अक्षा० २६° ३३´ १०´´ उ० और द्राघि० ८४° ४२´ १५´´ पू० पर बसा है। इससे दक्षिण-पश्चिम कोई आध कोस भुरभुरे पत्थरका अशोक-स्तम्भ है। उसपर सुन्दर अक्षरमें उनका कुछ शासन अङ्कित है। प्रस्तरस्तम्भ ३६॥ फीट ऊंचा होगा। व्यास आधार पर ४२ और शीर्ष पर ३८ इञ्च पड़ता है। लोग इस स्तम्भको 'लौर' कहते हैं। इसीके नामपर पास ही लौरिया गांव बसता, जहां प्रति वर्ष महादेवका मेला लगता है। प्रतिमा किसी गहरे और सूखे कुयेंमें मिलेगी। उसी पर विशाल मन्दिर बना है।

अरराना (हिं० क्रि०) १ शब्दके साथ पतित होना, ज़ोरसे गिर पड़ना। २ चिल्लाना, ज़ोर-ज़ोर आवाज़ निकालना। ३ टूट पड़ना, एकाएक गिरना।

अररि (सं० क्ली०) रा दाने क्वि, नञ्-बहुव्री०। १ सुख, आराम। २ कपाट, किवाड़। ३ द्वार, दरवाज़ा।

अररिन्द (वै० क्ली०) अररि अनेः अदत्तं सुखमिति शेषः ददाति दा-क। १ जल, आब। २ सोमरस प्रस्तुत करनेका पात्रविशेष।

अररिया—१ बिहारके पुरनिया ज़िलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ५६´ १५´´से २६° २७´ उ० और

द्राघि० ८७° १´ ३०´´ से ८७° ४४´ ४५´´ पू० के मध्य अवस्थित है। रकबा १०४४ वर्गमील है। २ इसी नामकी तहसील का गांव। यह पनार नदी किनारे अक्षा० २६° ८´ १५´ उ०, और द्राघि० ८७° ३२´ ५६ पू० पर बसा और पुरनिया नगरसे पन्द्रह कोस उत्तर है।

अरिवस् (वै० क्लो०) रा दाने क्सु, नञ्-तत्। १ दान न करनेवाला व्यक्ति, जो देता न हो। २ शत्रु, दुश्मन्।

अरत (सं० पु०) ऋच्छति प्राप्नोति अरि भावम्। १ शत्रु, दुश्मन्। २ आयुध, हथियार। ३ असुर विशेष। (वि०) ४ गमनस्वभाव, चलनेकी आदत रखनेवाला।

अरतस् (सं० पु०) ऋ बाहु० असुन्। उपद्रव उठानेको आनेवाला शत्रु, जो दुश्मन धूम मचानेको आया हो।

अरे (सं० अव्य०) अरं शीघ्रं राति, रा-डे। अरर, अरे। यह सम्बोधन वाक्य मान्य व्यक्तिके लिये नहीं, स्नेहपात्र या नीचके लिये आता है।

अरल (सं० पु०) १ श्योणाक वृक्ष, सोना। २ सिन्धु प्रान्तकी एक नदी। कराची जिलेका मंछर झील इसी नदी द्वारा अपना जल सिन्धु नदमें पहुंचाता है। यह अक्षा० २६° २२´ से २६° २७´ उ० और द्राघि० ६७° ४७´ से ६७° ५३´ पू० पर अवस्थित है। नारा और मंछर झीलके साथ सिन्धुसे समानान्तर इसको पचास कोस तक बहते पायेंगे। सेहवानमें इसके किनारे रेलवेका बन्दर ष्टेशन बना है।

अरला (सं० स्त्री०) हंसपत्नी, हंसिनी।

अरलु (सं० पु०) अरं लायते गच्छति। १ श्योणाक वृक्ष, टेंटूका २ गङ्गाधरचूर्ण। ३ गर्भज्वर। ४ वेतस वृक्ष।

अरलुक, अरलु देखो।

अरलुपुटपाक (सं० पु०) श्योणाकत्वक्कृत पुटपाक, टेंटूके बकलेसे बनाया गया पुटपाक। जो पुटपाक अरलुकी त्वक्से बनता, वह अग्निदीपन और मधु एवं मोचरस मिलानेसे सर्व अतिसारको जीतने वाला निकलता है। (शार्ङ्गधर)

अरलेश्वर—बम्बई-प्रान्तके धारवाड़ जिलेका एक तअल्लुक। यह हङ्गलसे उत्तर-पूर्व पांच मील पर बसा और इसमें कदम्बेश्वरका प्रस्तर-मन्दिर बना है। मन्दिरमें मूर्तिकी दक्षिण ओर एक स्तम्भ पर शक ८८८, मकरतोरणपर शक १०१० और प्रधान द्वारके सम्मुख एक स्तम्भपर खर संवत्सर अङ्कित है।

अरव (सं० पु०) रु-अ-यण्, नञ्-तत्। १ रवका अभाव, आवाजकी अदममौजूदगी। (वि०) नञ्-बहुव्री०। २ रवशून्य, बे आवाज, शोर-गुल न करने वाला।

अरवन (हिं० पु०) १ कच्ची कटनेवाली फसल। २ सबसे पहले काटी और खलिहानमें न लगा घरमें लायी हुई फसल, अंवासी, कवारा। इस अन्नसे देवताकी पूजते और ब्राह्मणको खिलाते हैं।

अरवल (हिं० पु०) घोड़ेके कानकी जड़में गर्दनकी ओर रहनेवाली भौंरी। यह एक ओर रहनेसे अशुभ और दोनों ओर रहनेसे शुभ होती है।

अरवा (हिं० पु०) १ बे उबाले या भूने धानसे निकाला हुआ चावल। २ आला।

अरवा-कूरिची—मन्द्राज प्रान्तके कोयम्बतोर जिलेका एक गांव। यह अक्षा० १०° ४६´ ३०´´ उ० और द्राघि० ७७° ५७´ पू० पर बसा है। यहां चमड़े और कपड़ेका खासा रोजगार चलते देखेंगे। महिसूर-नृपतिने इस ग्राममें 'विजयमङ्गल' नामक जो किला बनवाया, उसे अंगरेजो फौजने तीन बार सन् १७६८, १७८३ और १७९० ई०में जबरन् छीन लिया था।

अरवाती (हिं० स्त्री०) ओलती, छज्जेके जिस किनारेसे पानी नीचे गिरे।

अरवाह (हिं० स्त्री०) लड़ाई, झगड़ा।

अरवाही (हिं० वि०) झगड़ालू, लड़ाका।

अरविन्द (सं० क्लो०) अराः चक्रस्य नाभिनेम्योरन्तरालस्थकाष्ठानि तादृशानि दलानि विद्यन्ते, अर-विद्-श। गवादिषु विन्देः संज्ञायाम्। पा ३।१।१३८ वार्त्तिक। ततः—शे मुचादीनाम्। पा ७।१।५९। १ पद्म, कमल। २ नीलोत्पल, नीले रङ्गका कमल। ३ रक्तकमल, लाल कमल। ४ सारसपक्षी। ५ ताम्र, तांबा।

अरविन्द-दलप्रभ (सं० क्ली०) ताम्र, तांबा।

अरविन्दनयन (सं० पु०) कमल जैसी आंखवाले विष्णु।

अरविन्दनाभ (सं० पु०) अरविन्दं नाभौ यस्य, बहुव्री० अच् समा०। नाभिमें कमल रखनेवाले विष्णु

अरविन्दनाभि (सं० पु०) विष्णु। "प्रजाइवाङ्गादरविन्द नाभेः" (माघ १।६५)

अरविन्दबन्धु (सं० पु०) कमलके साथी, सूर्य।

अरविन्दयोनि (सं० पु०) कमलसे निकलनेवाले ब्रह्मा।

अरविन्दलोचन, अरविन्दनयन देखो।

अरविन्दाक्ष, अरविन्दनयन देखो।

अरविन्दसद् (सं० पु०) कमलपर बैठनेवाले ब्रह्मा।

अरविन्दिनी (सं० स्त्री०) अरविन्दस्य निकटस्थ देशादिः, इनि-ङीप्। १ पद्मयुक्त देश, जिस मुल्कमें कमल रहे। २ पद्मसमूह, कमलका ढेर। ३ पद्म लता। ४ पद्मिनी।

अरवी (हिं० स्त्री०) आलु, कन्द विशेष। यह दो तरहको होती है,—सफ़ेद और काली। इसकी जड़से मिला डण्ठल निकलता और उसके नीचे पत्ता लगता, जो पान जैसा रहता है। खानेमें इसे ज़ायक़ेदार, लसदार और कनकनाहट लिये पाते हैं। इसके पत्ते-की लोग तरकारी बनाते हैं। यह वैशाख-ज्येष्ठ बोयी और श्रावणमासमें खोदी जाती है।

अरश्मन् (वै० त्रि०) नास्ति रश्मिरस्य, वेदे बाहु० अन् समा०। रज्जुरहित, बे-बागडोर, जिसमें रस्सी न रहे। यह शब्द रथादिका विशेषण होता है।

अरस (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ आस्वादका अभाव, ज़ायक़ेकी अदम-मौजूदगी। रस्यते आस्वाद्यते। २ मधुरादि रस भिन्न, जो चीज़ मीठा अर्क वगैरह न हो। ३ निकृष्ट रस, ख़राब अर्क। (त्रि०) नास्ति रसो यस्य, नञ्-बहुव्री०। ४ रसशून्य, बे अर्क, बद-मज़ा। ५ असार, कमजोर। ६ नीरस, धीमा। (अ० पु०) ७ छत। ८ प्रासाद, महल।

अरसठ, अड़सठ देखो।

अरसट्ट (हिं० पु०) माहवार आमद और खर्च लिखनेका खाता।

अरसन-परसन, अरस-परस देखो।

अरसना परसना (हिं० क्रि०) मिला-भेंटो करना।

अरस-परस (हिं० पु०) १ दर्शन-स्पर्शन, देखा-भाली। २ क्रीड़ा विशेष, कोई खेल, आंखमिचौनी, छुवा-छुवी। इस खेलमें पहले किसी लड़केको चोर बना उसकी आंख मूंदते और फिर सब लड़के भागते हैं। वह आंख खोलकर दूसरे लड़केको छूनने दौड़ता है। जो लड़का छू जाता, उसे ही दांव देना पड़ता है।

अरसा (अ० पु०) १ समय, वक़्त। २ विलम्ब, देर।

अरसात (हं० पु०) छन्दोविशेष। यह चौबीस अक्षरका होता और सात भगण एवं एक रगण रखता है।

अरसाना (हिं० क्रि०) आलस्य आना, सुस्ती दौड़ना, नींद लगना।

अरसाश (वै० क्ली०) रसशून्य पदार्थका भोजन, बेशोरबे चीज़की ख़ुरिश। २ शरीर साधन, जिस्मका रियाज़।

अरसाशिन् (सं० त्रि०) १ रसशून्य द्रव्य खानेवाला, जो बेशोरबा चीज़ खाता हो। २ शरीरको साधने-वाला, जो जिस्मपर रियाज़ उठाता हो।

अरसिक (सं० त्रि०) रसं वेत्ति; रस-ठन्, नञ्-तत्। १ अरसज्ञ, मज़ेको न समझनेवाला। २ रस-बोधरहित, जिसे कविताका लुत्फ़ न आये। ३ फीका, बेज़ायक़ा।

अरसी (हिं० स्त्री०) अलसी, तीसी।

अरसीला (हिं० वि०) अलस, काहिल, सुस्त।

अरसौंहां, अरसीला देखो।

अरसी ठक्कुर—कोई प्राचीन संस्कृत कवि।

अरहट (हिं० पु०) अरघट्ट देखो।

अरहन (हिं० पु०) तरकारीमें पड़नेवाला बेसन या आटा।

अरहना (हिं० स्त्री०) अर्हण, पूजा, परस्तिश।

अरहर (हिं० स्त्री०) आढ़की, तुवर। (Cajanus indicus) यह अनाज भारतमें अधिक बोया जाता है। इसे कोई भारत और कोई अफ़रीक़ाका पौधा बताता है। यह चार-पांच हाथ ऊंची रहती और

हरेक सीकमें तीन-तीन पत्ता रखती, जो एक ओर भूरी और दूसरी ओर हरी होती है। खानेमें पत्ती कसैली निकलती है। इसका बीज बरसातमें बोया जाता है। अग्रहायण-पौष मास इसमें पीला फूल लगता, जिसके झड़नेसे डेढ़ दो इञ्च और चार-पांच दानेवाली फली आती है। इसके बीजमें दो दाल होती है। यह फाल्गुनमें पकती और चैत्रमें कटती है।

अरहर दो तरहकी रहती,—छोटी और बड़ी। बड़ीका 'अरहरा' और छोटीका नाम 'रसमुनिया' है। पानी मिलनेसे इसका पौधा कई वर्ष हराभरा बना रहता है। देशभेदसे इसका नाम भेद भी पड़ जाता है। मध्यप्रदेशमें हरोना मिहो, बङ्गालमें मघवा, चैती और आसाममें इसे पलवा, देव या नली कहते हैं।

मुंहमें छाला पड़नेसे लोग इसकी पत्ती चबाते और फोड़ा-फुन्सीपर भी पीसकर लगाते हैं। लकड़ी जलायी जाती और छप्पर छानेमें काम आती है। ठहनी और पतले डण्ठलसे खांचा, दौरी वगैरह बुनते हैं। इसकी दाल जल्द हजम होती और बीमारको बड़ा फायदा पहुंचाती है। गुणमें इसे गर्म और सूखी पायेंगे। हिन्दुस्थानवासी प्रायः इसी दालको खाता है।

अरहस् (सं० पु०) गोपनका अभाव, पोशीदगीकी अदम-मौजूदगी।

अरहित (सं० त्रि०) सम्पन्न, भरा-पूरा।

अरहेड़ (हिं० स्त्री०) पशुदल, चौपायेका झुण्ड।

अरा, आरा देखो।

अराअरी (हिं० स्त्री०) बढ़ाचढ़ी, बाज़ी, होड़।

अराक़ (अ० पु०) १ अरब देशका प्रान्त विशेष। २ अराक़ प्रान्तका घोड़ा।

अराकान—१ वृटिश ब्रह्मदेशका प्रान्त विशेष। इसमें चार जिले हैं,—अकयाब, उत्तर-अराकान, क्योकप्यू और सण्डोवे। जङ्गलको छोड़ इसका क्षेत्रफल १४५२६ वर्गमील है। सन् १८२६ ई०को यह अंगरेजी राज्यमें मिला। हिन्दुवोंके निकट पूर्व यह स्थान 'रसाङ्ग' वा 'रभाङ्ग' नामसे परिचित था।

२ अराकान प्रान्तकी प्राचीन राजधानी।

अराकान और बङ्गालवाले टिपराके राजा बीच चटगांवकी सीमापर युद्ध हुआ और कई बार उन्होंने उसे अधिकार भी किया था। सन् ई०के १६वें शताब्दांत अराकान-नृपतिने फिर चटगांवको जीत अपने राज्यमें मिला लिया। यह गोवा, कोचिन, मलक्का वगैरहके साहसी और भगोड़े पोर्तुगीजोंको नौकर रख, अपनी चालाकी और हिम्मतके ज़ोरसे जहाज़ी बेड़के हाकिम बन लूट-मार करते थे। सुन्दरवन उनके घोर आक्रमणसे विनष्ट हुआ। ढाकासे मुसलमानोंके जहाज चल-फिर न सकते थे। पोर्तुगीज, मघ या अराकानवासियोंके सहारे कितनी ही बार बङ्गालसे आदमियोंको गुलाम बनाकर पकड़ ले गये। कहते हैं, मघोंके उपद्रवसे बाकरगञ्जके इधर-उधर लोगोंने रहना ही छोड़ दिया; किन्तु सन् १६३८ ई०में चटगांवके मघ-शासन-कर्ता मुकुटरायने अराकान राजासे लड़ अपना प्रान्त बङ्गालके शासक इसलाम खान् मुसहदीको सौंपा था।

सन् १६६४-६५ ई०में नवाब शायस्ता खान् बङ्गालके शासक बने। उसी वर्ष उन्होंने ढाकेमें कितनी ही नाव और तेरह हज़ार फ़ौज इकट्ठेकर मघ लुटेरोंको मार भगानेका प्रबन्ध बांधा। हुसेनबेग तीन हज़ार सिपाही नाव पर चढ़ा समुद्रकी राह आगे बढ़े और शायस्ता खान्के लड़के बुज़ुर्ग उम्मेदखान् दश हज़ार फ़ौज ले खुश्कीकी राह उन्हें मदद देने चले। हुसेनबेगने मघना नदी पहुंच आलमगीर नगरके क़िले पर एकाएक आक्रमण किया और अराकान-नृपतिकी फ़ौजको हरा उसे अपने हाथ लिया था। वहांसे वह सन्दाप टापूको रवाना हुए और बातकी बातमें धोकेसे मघोंका जहाज़ी बेड़ा जा जीता। हुसेनबेगने पोर्तुगीजोंसे अराकान-नृपतिकी नौकरी छोड़ बङ्गालमें जाकर बसनेको कहा और वैसा न करनेपर प्राणदण्ड देनेको धमकाया था। पोर्तुगीजोंके राज़ी होनेपर अराकान-नृपति उन्हें नष्ट कर बदला लेनेपर उद्यत हुए। उन्हें रातो रात अपना माल-असबाब छोड़ चटगांवसे भागना पड़ा था।

उम्मेदख़ान्की फ़ौजने फ़ेनी नदीपर पहुंच अराकानियोंको युद्धके लिये तैयार पाया था। किन्तु मुग़ल सवारोंको देख उनके छक्के छूट गये और पीछे पैरों चटगांवको भागना पड़ा। हुसेन-बेगने उम्मेदख़ान्की फ़ौज आयी सुन अपना जहाज़ी बेड़ा सन्दीपसे आगे बढ़ाया था। कुमरिया नामक स्थानके समीप अराकानियोंने तीन सौ हथियार बन्द नाव ले हुसेन बेगपर आक्रमण किया। यद्यपि हुसेनबेग पोर्तुगीजोंके सहारे शत्रुको पश्चात्पद करनेपर कृतकार्य हुए, किन्तु नावकी नयी लड़ाई देख उनके होश उड़ गये थे। उन्होंने अपना बेड़ा जल्द-जल्द किनारे लगा उम्मेदख़ान्की फ़ौजका सहारा लिया। दूसरे दिन अराकानियोंके युद्ध आरम्भ करने पर उम्मेदख़ान्ने ऐसा गोला मारा, कि उन्हें पीछे ही हटना पड़ा। उसके बाद दोनो फ़ौज चटगांवको रवाना हुई। चटगांवके अराकानी अपने जहाज़ी बेड़ेको हार देख रातको क़िला छोड़ भागे जा रहे थे। उसी समय मुग़ल सवारोंने उनके दो हज़ार आदमी क़ैद कर गुलामके तौरपर बेच डाले। अराकानियोंका आक्रमण रोकनेको उम्मेदख़ान् चटगांवमें कितनी ही फ़ौज छोड़ गये थे।

अराकान योमा—पर्वत श्रेणीविशेष। यह नागादेश और मणिपुरके पर्वतसे पश्चिम त्रिपुरा, चट्टग्राम और उत्तर-अराकान तक बङ्गालकी पूर्वसीमा निर्धारित करता है। उत्तर-अराकानमें इसकी जो शाखा आती, वह नीलपर्वत कहाती और समुद्रतलसे ७१०० फ़ीट ऊंची है। उत्तरकी दलेतघाटी नीची ऊंची रहनेसे चलने-फिरनेके काम नहीं आती। आनकी घाटी अच्छी है। यहां पानी कम मिलता और तरी ज़्यादा रहती है।

अराग (सं० त्रि०) विरक्त, रागहीन, धीमा, ठण्डा, जिसे शौक़ न रहे।

अराज (हिं० वि०) १ नृपतिरहित, राजाको न रखनेवाला। (पु०) २ अराजकता, बलवा।

अराजक (सं० त्रि०) नास्ति राजा यस्मिन्, नञ्-बहुव्री० कप्। राजशून्य, बेबादशाह।

अराजकता (सं० स्त्री०) राजा न रहनेको स्थिति, जिस हालतमें बादशाह न रहे।

अराजन् (वै० पु०) राजा न होनेवाला व्यक्ति, जो शख़्स बादशाह न हो।

अराजभोगिन् (सं० त्रि०) राजाके व्यवहार अयोग्य, जो बादशाहके काम आने क़ाबिल न हो।

अराजस्थापित (सं० त्रि०) राजाकी आज्ञासे अप्रतिष्ठित, जिसको सरकारी लैसन न मिला हो।

अराजिन् (वै० त्रि०) न राजते; राज-णिनि, नञ्-तत्। १ दीप्तिशून्य, धुंधला, रौशनी न रखनेवाला। २ अनभिभूत, जो रुका न हो। राजा अधिष्ठातृत्वेनास्त्यस्मिन्, व्रीह्यादि० इनि, ततो नञ्-तत्। ६ राजशून्य, बेबादशाह।

अराजीव (सं० पु०) अरं रथाङ्गं तद् प्रस्तुतेन आ सम्यक् जीवति, अर-आ-जीव-अच्। १ रथकार, गाड़ी बनानेवाला, बढ़ई। (त्रि०) नास्ति राजीवं यत्र, नञ्-बहुव्री०। २ पद्मशून्य, कमलसे खाली।

अराटकी (वै० स्त्री०) अजशृङ्गी, मेढ़ासिंगी।

अराड़ जाना (हिं० क्रि०) गर्भपात होना, हमल गिरना। यह शब्द पशुके गर्भपातका ही द्योतक है।

अराति (सं० पु०) न राति ददाति किमपि कुशलं वा। १ शत्रु, दुश्मन। रिपौ इत्यादि अभिधाति परारातिः। (अमर) २ ज्योतिषोक्त षष्ठस्थान। ३ कामादि छः रिपु। ४ छः संख्या। (वै० स्त्री०) ५ दानाभाव, बख़्शिशकी अदममौजूदगी। ६ अप्रसन्नता, नाराज़ी। ७ द्रोह, दुश्मनी। ८ असफलता, नाकामयाबी। ९ दुर्दिन, बुरा वक़्त। (त्रि०) अतिगमनशील, ख़ूब चलनेवाला।

अरातिदूषण (वै० त्रि०) शत्रु वा दुर्दिननाशक, दुश्मन या बुरे वक़्तको दूर करनेवाला।

अरातिदूषी, अरातिदूषण देखो।

अरातिभङ्ग (सं० पु०) शत्रुका पराभव, दुश्मनकी हार।

अरातिह, अरातिदूषण देखो।

अरातीयत् (वै० त्रि०) १ विद्रोही, कृपण, हसदी, बख़ील। २ शत्रुवत् आचरण-करनेवाला, जो तकलीफ़ देनेकी फ़िक्रमें लगा हो।

अरातीयु (वै० वि०) अरातिरिवाचरति, अराति-क्यच्-उ। शत्रुतुल्य आचरणशील, दुश्मनकी तरह काम करनेवाला।

अरातीवन्, अरातीयत् देखो।

अराद्धि (वै० स्त्री०) अपराध, दोष, पाप, गुनाह, इज़ाम, ऐब।

अराधन, आराधन देखो।

अराधना (हिं० क्रि०) १ आराधन लगाना, उपासना करना। २ पूजना, अरचना। ३ जप करना, ध्यान साधना।

अराधस् (वै० वि०) राधा धनं तन्नास्ति यस्य, बहुव्री०। १ धनरहित, बेदौलत। २ कृपारहित, नामेहरबान।

अराधी, आराधी देखो।

अराना, अड़ाना देखो।

अराबा (अ० पु०) १ रथ, गाड़ी, बहल। २ तोप रखनेकी गाड़ी। ३ जहाजी तोपोंका साथ-साथ एक ओरको दागा जाना।

अराम, आराम देखो।

अराय (वै० वि०) रायते यस्मादौ दीयते दक्षिणा दिक्षेन वा, रा कर्मणि घञ् युक् च, नञ् बहुव्री०। धनशून्य, दानहीन, ग़रीब, बख़ील।

अरायच्चयण (वै० वि०) १ पिशाचादिको नाश करनेवाला, जो शैतानको नापैद कर देता हो। (क्ली०) २ पिशाचादिका नाश, शैतानका मटियामेट।

अरायचातन, अरायच्चयण देखो।

अरायल—युक्तप्रदेशके इलाहाबाद ज़िलेका एक ग्राम। यह यमुनाके दक्षिण किनारे गङ्गाके सङ्गमपर बसा है। यहां हिन्दुओंका कोई बहुत पुराना शहर रहा, जिसके बसनेकी तारीख़ गुम हो गयी। अकबर बादशाहने फिरसे बनवा इसका नाम जलालाबाद रखा था।

अरायी (वै० पु०-स्त्री०) पिशाचादि, शैतान।

अरारूट, अरारोट देखो।

अरारोट (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, तीखुर। (Arrowroot, Maranta arundinacea) यह पहले अमेरिकाके डोमिनिका, बारबेडोस और जामेका प्रान्तमें मिला था। कहते हैं, सन् १७५६ ई०में लोग इसे जामेकाके बाग़में बोते और इसको जड़से खासा भोजन बनाते रहे। सबसे पहले यह सिलहटमें लगाया गया था। भारतमें तीखुर उत्पन्न होते भी कितने ही लोग इसे अमेरिकाका ही वृक्ष बताते हैं। किन्तु पूर्व समय भारतका तीखुर युरोपमें प्रसिद्ध था।

मई मास इसको जड़ ज़मीनमें गाड़ी जाती है। क्यारी तीन-चार इञ्च गहरी दो फ़ीटके फ़र्क़ पर रहती, जिसमें डेढ़-डेढ़ फ़ुट दूर जड़ गड़ती और उस पर ढांकनेको मट्टी चढ़ती है। दोमट और बलुई ज़मीन इसके लिये फ़ायदेमन्द है। पौधेको उगने पर आलूकी तरह निराते हैं। इसको पानीको बड़ी ज़रूरत रहती है। यह अगस्तमें फूलता और जनवरी फ़रवरीमें काम लायक़ होता है। किन्तु फ़सल तैयार होनेसे एक या दो महीने पहले इसमें पानी नहीं देते। क्योंकि उस समय सींचनेसे इसकी जड़ कच्ची रह जाती है। पत्ती झड़नेसे जड़को खोदकर निकालते हैं।

इसके बनानेकी तरकीब बहुत सीधी है। जड़को अच्छी तरह धो और लकड़ीकी बड़ी ओखलीमें कूटकर लेयी बना लेते हैं। फिर वही लेयी पानीसे भरे बरतनमें रखी जाती है। ऐसा करनेसे रेशा पानीपर तैरने लगता, जो फिर कूटा और उसी बर्तनमें डाला जाता है। रेशेको गाद अच्छी तरह निकल आनेसे फेंक देते हैं। अन्तको बर्तनका पानी दूध-जैसा देख पड़ता है। उस पानीको मोटे कपड़ेसे दूसरे बर्तनमें छान लेना चाहिये। गाद नीचे बैठ जानेसे मैला पानी फेंक साफ़ पानी भरते हैं। जब गाद अच्छी तरह जम जाती, तब बर्तनका पानी धीरेसे ढाल देते हैं। उसके बाद वही गाद काग़ज़ पर धूपमें सुखानेसे अरारोट बनता है।

यह रोगी और शिशुके लिये महोपकारी खाद्य है। इसके हज़म होनेमें कोई खट-खट नहीं। भारतवर्षके हलवायी इससे तरह-तरहको मिठाई बनाते, जिसे लोग व्रतके दिन खाया करते हैं।

अराल (सं० पु०) अरं शीघ्रं आलाति गृह्णाति मनः, अर-आ-ला-क। १ मदस्रावी हस्ती, मतवाला हाथी।

२ सर्जरस, राल, धूना। ३ शालवृक्ष। (त्रि०) ४ वक्र, टेढ़ा। ५ पहियेके आरों-जैसा फैला हुआ। 'अरालः समद-द्विपे। वक्रे सर्जरसे च।' (हेम)

अरालपक्ष्मनयन (वै० त्रि०) टेढ़ी पलकवाला।

अरालय—बम्बई कोल्हापुर राज्यवाले चमारोंके पूर्व-पुरुष। कहते हैं, कि इन्होंने अपनी खालका जूता बना महादेवजीको पहननेके लिये दिया था। उसोसे नाराज हो महादेवजीने इन्हें जन्म भरके लिये मोची बना डाला।

अराला (सं० स्त्री०) १ अपवित्र स्त्री, नापाक औरत। २ सरल स्त्री, हलीम औरत।

अरावन् (वै० त्रि०) रा-वनिप्, नञ्-तत्। अदाता, कृपण, बखील, बख्शिश न करनेवाला।

अरावल, हरावल देखो।

अरावली—पर्वतश्रेणी विशेष, एक लम्बा पहाड़। यह अक्षा० २५° एवं २६° ३०´ उ० और द्राघि० ७३° २०´ तथा ७५° पू०के मध्य अवस्थित है। इसका अङ्ग तीन सौ मील राजपूताने राज्य और अजमेर जिलेके बीच फैला है। इसमें कितनी ही खड़ी चटानें और चोटियां मौजूद हैं। उनकी चौड़ाई छःसे साठ मील और उंचाई एक हज़ारसे तीन हज़ार फीट-तक है। सबसे बड़ा पहाड़ आबू ५६५३ फीट ऊंचा है। अरावलीमें भुरभुरा, ठोस काला नीला, बिल्लौरी और रंगदार पत्थर मिलता है। इसकी चोटी शीशे-जैसी चमका करती है। उत्तर ओरसे लूनी और सखी नदी निकल कच्छके रनमें जा गिरती है। दक्षिण ओर भी कितनी ही नदी बहती, जिसमें चम्बल यमुनाकी बड़ी सहायक है। इस पर्वतमें कृषि क्षेत्र वा वन अधिक नहीं मिलता। कितनी ही जगह ढेरका ढेर पत्थर और रेत पड़ा, फिर कितनी ही चम-कीला पत्थर भी भरा है। चटानदार पहाड़के बीचकी उपत्यका रेतीला जङ्गल है। कहीं-कहीं तर जगह पर खेती भी होती है। अजमेर नगरके निकटकी भूमि अतिशय उर्वरा है। पर्वत पर मेर लोग दूर-दूर बसते हैं। यह पर्वतश्रेणी कुछ-कुछ दिल्ली तक चली आयी है।

अरास—गुजरात प्रान्तका स्थान विशेष। यह आनन्द और महीके बीच जो मैदान पड़ता, उसपर अवस्थित है। सन् १७२३ ई०को यहां हमीद खान् और सूरतके सूबेदार रुस्तम अली खान्से घमासान लड़ाई हुई थी। अन्तको पीलाजी गायकवाड़के साहाय्यसे रुस्तम अलीने हमीद खान्को मार भगाया।

अरासलार—मन्द्राज प्रान्तके तञ्जोर जिलेकी कावेरी नदीका मुहाना। यह प्रधान धाराके दक्षिण तट अक्षा० १०° ५६´ उ० एवं द्राघि० ७८° २२ पू०से फैलता और पूर्वकी ओर बीस कोस बह करिकालपर समुद्रमें जा गिरता है। इस मुंहानेसे हजारों एकर भूमि सिंचती और लाखों रुपया आता है।

अरि (सं० पु०) ऋच्छति गच्छति अनिष्टार्थम्। १ शत्रु, दुश्मन। २ रथाङ्ग, गाड़ीका हिस्सा। ३ चक्र, पहिया। ४ विट्खदिर, दुर्गन्ध खैर, अरिमेद। यह कषाय, कटु, तिक्त और रक्तपित्तघ्न होता है। (राजनिघण्टु) ५ काम, क्रोध, लोभ, मद, मात्सर्य—यह छः वृत्ति। ६ छः संख्या। ७ ज्योतिषोक्त लग्नसे छठां स्थान। ८ ईश्वर। ईश्वर अपराधीको शास्ति देनेसे इस नाम पर पुकारा जाता है। ९ ज्योतिष शास्त्रोक्त परस्पर अरिग्रह। रविका शुक्र एवं शनि, मङ्गलका बुध, बुधका चन्द्र, बृहस्पतिका बुध तथा शुक्र, शुक्रका रवि एवं चन्द्र और शनिका अरि रवि, चन्द्र तथा मङ्गल होता है। चन्द्रका कोई भी ग्रह अरि नहीं। सिवा इसके कोई राशिस्थ ग्रह अन्य राशिग्रहसे प्रथम, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम और नवम स्थानमें रहनेसे उसका तत्कालीन अरि बनता है। अकथह और अकड़म चक्रके चतुर्थ कोष्ठ एवं चतुर्थ कोष्ठस्थ मन्त्रको भी अरि कहते हैं।

अरिया कंध—उड़ीसा प्रान्तके अङ्गुल जिलेकी एक जाति। इसने अपनी प्राचीन पद्धति नहीं छोड़ी। इस जाति-के लोग भैंसेकी बलि चढ़ाते, विवाहमें सूअरका मांस खाते और हरिण एवं पक्षीको भी मार अपना पेट भरते हैं। बौदकंधने अपना सम्पूर्ण सामाजिक व्यवहार इस जातिसे बन्द कर रखा है।

अरिंद (हिं० पु०) इन्द्र-जैसा प्रबल शत्रु, जो दुश्मन निहायत ज़ोरदार हो।

अरिकर्षण (सं० पु०) शत्रुको खींचनेवाला व्यक्ति, जो शख़्स दुश्मनको मुती बना लेता हो।

अरिकुल (सं० क्ली०) शत्रुका वंश, दुश्मनका खान्दान्।

अरिकेशरी—१ बम्बई प्रान्तवाले उत्तर कोङ्कन ज़िलेके शिलाहारवंशज नृपति विशेष। सन् १०१७ ई०को यह समग्र कोङ्कनमें अपना राजत्व फैलाये थे। इनका दूसरा नाम केशोदेव रहा। २ सपादलक्षवाले चालुक्य नृपति प्रथम युद्धमल्लके पुत्र। यह जोलेमें राजत्व चलाते रहे। वह प्रान्त अब धारवाड़ ज़िलेमें मिल गया है। इन्होंने शक ८६३ में पम्पा नामक जन कविसे कनाड़ी भाषामें 'विक्रमार्जुनविजय' वा 'पम्पा-भारत' लिखाया था। इनके पुत्रका नरसिंह और पौत्रका नाम दुग्धमल्ल रहा।

अरिकेशी—केशीके शत्रु श्रीकृष्ण।

अरिक्कोद—मन्द्राज प्रान्तके मलबार ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० ११° १४´ १०´´ उ० और द्राघि० ७६° ३´ २१´ पू० पर अवस्थित और बेपुर नगरसे दश कोस पूर्व बेपुर नदीके ही दक्षिण किनारे बसा है। अरिक्कोद अपनी लकड़ीवाले व्यवसायके लिये प्रसिद्ध है।

अरिक्त (सं० त्रि०) पूर्ण, भरा-पूरा, जो खाली न हो।

अरिक्थभाज् (सं० त्रि०) ऋक्थं पितृपैतामहादि क्रमागतधनं भजते पतितादिना न लभते; अरिक्थ भज्-ण्वि, असूर्य्यम्पश्या इति वदसमर्थसमा०। अनंश, लावारिस, जो बुराकाम करनेसे अपने बाप-दादेकी जायदाद पा न सकता हो।

अरिक्थीय, अरिक्थभाज् देखो।

अरिक्षिप—श्वफल्कके एक पुत्र।

अरिगूर्ण, अरिगूर्त देखो।

अरिगूर्त (वै०पु०) अरये तद्बधाय गूर्त उद्यतः, शाक० तत्। शत्रुको मारनेपर उद्यत, जो दुश्मनका क़त्ल करनेको तैयार हो।

अरिघ्न (सं० पु०) शत्रुको नाश करनेवाला व्यक्ति, जो शख़्स दुश्मनको मार डालता हो।

अरिचिन्तन (सं० क्ली०) १ शत्रुके विरुद्ध किया हुआ षड्यन्त्र, जो साज़िश दुश्मनके खिलाफ़ की गयी हो। २ परराष्ट्र-प्रबन्ध, ग़ैरमुल्की मामलेका इन्तज़ाम।

अरिचिन्ता (सं० स्त्री०) अरिचिन्तन देखो।

अरिता (सं० स्त्री०) अरेर्भावः, तल् टाप्। शत्रुता, दुश्मनी।

अरितृ (वै० पु०) ऋच्छति गमयति पारान्तरम्। नाविक, कर्णधार, मलाह, केवट, मांझी।

अरित्र (वै० क्ली०) अर्यतेऽनेन, ऋ करणे इत्र। नौका चलानेका डण्डा, डांड़, । केनिपातक, पतवार, सुकान। 'अरित्रं केनिपातकम्' (अमर) ३ जहाज़, नाव। ४ सोमपात्र। ५ गमनसाधन वाहनादि, चढ़नेकी सवारी। (पु०) ६ व्यक्तिविशेष, किसी शख़्सका नाम। (त्रि०) ७ जाता हुआ, जो हांक रहा हो। ८ शत्रुसे बचानेवाला, जो दुश्मनसे हिफ़ाज़त रखता हो।

अरित्व (सं० क्ली० अरिता देखो।

अरिदमन (सं० त्रि०) १ शत्रुको दमन करनेवाला, जो दुश्मनको दबा देता हो। (पु०) २ दशरथके पुत्र और लक्ष्मणके लघुभ्राता शत्रुघ्न।

अरिदान्त (वै० पु०) अरिः शत्रुः दान्तः दमितो येन, बहुव्री०। शत्रुको अभिभूत करनेवाला, जो दुश्मनको हराता हो। २ यदुवंशीय क्षत्रियविशेष।

अरिद्विद्वादश (सं० पु०) अरीणां ग्रहाणां परस्परं द्वाभ्यां द्वादश ग्रहाः यत्र। डजन्त बहुव्री०। विवाहका निषिद्ध योगविशेष। धनु मकर, कुम्भ मीन, मेष वृष, मिथुन कर्कट, सिंह कन्या, तुला वृश्चिक—इन सबके परस्पर मिलनेसे अरिद्विद्वादश योग होता है। अर्थात् वरका राशि यदि धनु और कन्याका मकर हो, तो विवाह निषिद्ध है। इसीतरह कुम्भ मीनादि भी निषिद्ध हैं। द्विद्वादश कहनेका तात्पर्य किसी राशिसे दूसरे राशिका बारहवें स्थानमें पड़ना है।

अरिधायस् (वै० त्रि०) अरिभिरीश्वरैर्धीयते, अरि-धा-असुन्। १ ईश्वरधार्य। २ प्रसन्नतासे दुग्ध प्रदान करनेवाला, जो राज़ीसे दूध देता हो। ३ बहुमूल्य, क़ीमती।

अरिन् (सं० क्ली०) चक्र, पहिया।

अरिनन्दन (सं० त्रि०) अरीन् शत्रून् नन्दयति तोषयति; अरि-नन्द-णिच्-ल्यु, उप-समा०। १ शत्रुको सन्तुष्ट करनेवाला, जो दुश्मन्को खुश करता हो। २ इन्द्रियासक्त, नफ्सपरस्त। ३ व्यसनासक्त, बद आदत।

अरिनिपात (सं० पु०) शत्रुका आक्रमण, जो हमला दुश्मनने मारा हो।

अरिनुत (सं० त्रि०) शत्रु द्वारा भी प्रशंसाप्राप्त, जिसकी तारीफ् दुश्मन् भी करे।

अरिन्दम (सं० त्रि०) अरीन् शत्रून् दाम्यति शमयति दमयति वा, दमि शमनार्थां खच् मुम् च। १ पराभिभावक, दुश्मन्को जीतनेवाला। २ कामक्रोधका निवारक। (पु०) ३ व्यक्तिविशेष, किसी शख्सका नाम। ४ मुनिविशेष।

अरिपु—नल राजाके पिता।

अरिपुर (सं० क्ली०) शत्रुका नगर वा देश, दुश्मन्का शहर या मुल्क।

अरिपूरिम (सं० पु०) विट्खदिर, दुर्गन्ध खैर।

अरिप्र (सं० त्रि०) रिप्रं पापं तन्नास्ति यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ पापरहित, बेगुनाह। (क्ली०) रिप्रं कुत्सितं, ततो नञ्-तत्। २ कुत्सित न होनेवाला, जो खराब न हो।

अरिफित (सं० त्रि०) रेफ न बननेवाला, जो बदल कर 'र' न हो। यह विसर्गका विशेषण है।

अरिम (सं० पु०) अरिपूरिम देखो।

अरिमर्द (सं० पु०) अरिं अनिष्टकारित्वात् रोगविशेषरूपं मृद्नाति नाशयति; अरि-मृद-अण्, उप-समा०। १ कासमर्द वृक्ष, कसौंदी। इसका पत्र रुचिकर, वृष्य, विषकासरक्तघ्न, मधुर, वातकफघ्न, पाचक एवं कण्ठशोधन होता, विशेषत: कास तथा विषको दूर करता और धारक एवं लघु रहता है। (भावप्रकाश) (त्रि०) २ शत्रुको दमन करनेवाला, जो दुश्मन्को कुचल डालता हो।

अरिमर्दन (सं० त्रि०) अरीन् मृद्नाति, मृद्-ल्यु। १ शत्रुको मर्दन करनेवाला, जो दुश्मन्का कुचल डालता हो। (पु०) २ अक्रूरके सहोदर। यह श्वफल्कके औरस और गान्दिनीके गर्भसे उत्पन्न रहे। ३ कैकय नरेश भानुप्रभातके भाई। यही शापवश कुम्भकर्ण हुए थे।

अरिमित्र (सं० पु०) शत्रुका सहायक, दुश्मन्का दोस्त।

अरिमेजय (सं० पु०) अरीनेजयति कम्पयति; अरि-एज-णिच्-खश् मुम्च, उप-समा०। १ शत्रुको कंपानेवाला शख्स, जिससे दुश्मन् कांपे। २ अक्रूरके सहोदर।

अरिमेद (सं० पु०) अरिं रोगरूपं मेदति छिनत्ति मिद-अच्। १ विट्खदिर, दुर्गन्ध खैर। अरिमेदो विट्खदिरे (अमर) यह कषाय, उष्ण, तिक्त, भूतघ्न, शोफातिसार-कासनाशक और विसर्पघ्न होता है। (राजनिघण्टु) इसके व्यवहारसे मुख एवं दन्तरोग, कण्डू विष, श्लेष्मा, क्रमि, कुष्ठ और व्रण मिट जाता है। (मदनपाल) २ क्रमिविशेष, कोई कीड़ा।

अरिमेदक, अरिमेद देखो।

अरिमेदाद्यतैल (सं० क्ली०) तैलौषधभेद। यह मुखरोगको हितकर है। मूर्च्छित तिलका तैल ८ शराव, अरिमेद (विट्खदिर)की त्वचा १२॥ शराव, ६४ शराव जलमें क्वाथ करे। जब १६ शराव शेष रहे, तब आग परसे उतार और कपड़ेसे छान मञ्जिष्ठादिका कल्क द्रव्य प्रत्येक दो तोला और तैल यह सब तैलपाककी विधिसे पचाना चाहिये। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

अरियनकाऊ—मन्द्राज प्रान्तवाले तिरुवाङ्कोड़ राज्यके शङ्कोट्टा ज़िलेका एक गांव, घाटी और पुण्यस्थान। यह घाटीको चोटीसे आध कोस हस्ताकार उपत्यकामें अक्षा० ८° ५८´ ४५´´ उ० और द्राघि० ७७° ११´ १५´ पू० पर अवस्थित है। अस्लेम्बूमें कुइवेका कारबार खुलनेपर तिनेवेल्लीसे त्रिवन्द्रम् जाने-आनेको यह घाटी बड़ी राह बन गयी है।

अरियाकुप्पम्—मन्द्राज प्रान्तके दक्षिण-अरकाट ज़िलेका एक क़िला और मुहाना। यह पुंदिचेरीसे डेढ़ मील दक्षिण-पश्चिम फ्रान्सीसी अधिकारके अन्तर्गत अक्षा० ११° ५५´ उ० और द्राघि० ७९° ४२´ पू० पर

अवस्थित है। सन् १७४६-६० ई०को पुंदिचेरीमें जो युद्ध हुआ, उसमें इस किले और मुहानेने बड़ा काम किया दिया था।

अरियाना (हिं० क्रि०) अबे-तबे करना, तू-तड़ाक निकालना, तिरस्कारयुक्त वाक्यसे सम्बोधन लगाना।

अरियापाद—मन्द्राज प्रान्तके तिरुवाङ्कोड़ राज्यका पवित्र देवायतन। यह अक्षा० ८° १७´ उ० और द्राघि० ७६° ३८´ ५१ पू० पर अवस्थित है। इसका भवन उल्लेख-योग्य है। दूसरे जो कमरे आराम लेने वगैरहको बने, उनके सबब भी कितने हो लोग यहां आ पहुंचते हैं। अप्रेल मासमें बड़े समारोहसे वार्षिकोत्सव होता है। राज्यसे कितना हो धन मन्दिरके व्ययनिर्वाहार्थ दिया जाता है।

अरियाल खान्—निम्न बङ्गालदेशका नदविशेष। यह अक्षा० २२° ३७´ ३०´´ एवं २३° २६´ उ० और द्राघि० ६०° ७´ ३०´´ तथा ६०° ३३´ ४५´´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसे फरीदपुर नगरके पास पद्मासे निकल फरीदपुर और बाकरगञ्ज ज़िलेमें बहते पायेंगे। ग्रीष्ममें इसकी चौड़ाई १७०० और वर्षामें ३००० गज़ रहती है। अपनी कितनी ही शाखा फैला यह मोरगञ्जके पास मेघना नदीमें जा मिला है। इसमें हर जगह बड़ी नाव चल सकती है।

अरिराष्ट्र (सं० क्लो०) शत्रुका देश, दुश्मनका मुल्क।

अरिला (सं० स्त्री०) अरिरपि लायते गृह्यते गमनाभिवार्यते यया, अरि-ला करणे क्विप्। मात्रावृत्त विशेष। इसमें सोलह मात्रा रहती है। अन्तमें दो लघु वर्ण या एक यगण लगता है। जगण इसके बीच नहीं पड़ता। इस वृत्तको कहनेसे शत्रुका मन भी पिघल जाता है।

अरिलोक (सं० पु०) विद्रोही जन वा शत्रुका देश, दुश्मनी रखनेवाली क़ौम या दुश्मनका मुल्क।

अरिल्ल (हिं० पु०) अरिला देखो।

अरिवन (हिं० पु०) उबका, फंसरी, रस्सीके अगले छोरका फन्दा। इसमें लोटे या घड़ेको फांस कुयेंसे पानी निकालते हैं।

अरिष (सं० पु०) नास्ति रिषो ममस्य बाधको यस्मात्; रिष हिंसाया क, नञ्-बहुव्रो०। १ अपानमांसज रोग विशेष, जो बीमारी दस्तको रोक देती हो। (क्लो०) न रिष्यते केनापि प्रकारेण बाध्यते; रिष कर्मणि क, नञ्-तत्। २ अविच्छिन्न धारावर्षण, जो बारिश रुकती न हो।

अरिषड्‌ष्टक (सं० क्लो०) षट् च अष्टकञ्च द्वन्द्व० ततः अरिभूतं, मध्यपदलोपी कर्मधा० बहुव्रो० वा। विवाहनिषिद्ध योग विशेष। वर एवं कन्या उभयकी राशि गणनासे षष्ठ वा अष्टम होनेको षडष्टक कहते हैं। इस योगमें विवाह करनेसे दम्पतीका मृत्यु, या कलह होता है। ज्योतिषमें दो प्रकार का षड़ष्टक लगता है,—अरिषड़ष्टक और मित्रषड़ष्टक। उसमें सिंह-मकर, कन्या-मेष, मीन-तुला, कर्कट-कुम्भ, वृष-धनु और मिथुन-वृश्चिकवालेका नाम अरिषड-ष्टक है।

अरिषड्‌वर्ग (सं० पु०) अरीणां अन्तः शत्रूणां कामक्रोधादीनां षड्‌वर्गः, शिवभागवतवत् समासः। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य नामक छः अन्तः शत्रु।

अरिषण्य (वै० त्रि०) न रिष्यति हिनस्ति, रिष हिंसायां अन्यक्, नञ्-तत्। अहिंसक, जो किसीको तकलीफ़ न पहुंचाता हो।

अरिषण्यत् (वै० त्रि०) हिंसा न किया जानेवाला जिसको तकलीफ़ न पहुंचायी जाती हो।

अरिष्ट (सं० पु०) रिष हिंसायां क्त, नञ्-तत्। १ रीठेका वृक्ष। इसका गुण यह है—कटु, तीक्ष्ण, उष्ण, लेखन, गर्भपातकर, स्निग्ध, त्रिदोषनाशक और ग्रहपीड़ा-दाह-शूलनाशक। (वैद्यकनिघण्टु) २ लसुन। ३ निम्बवृक्ष। ४ गुड़ची। ५ काक। ६ कङ्क। ७ वृषभासुर। इसे कृष्णने मार डाला था। ८ बलिका पुत्र दैत्य विशेष। ९ अनिष्टसूचक भूकम्पादि उत्पात। १० अनिष्ट स्थानका रवि प्रभृति ग्रह। ११ औषध विशेष।

औषधोंसे बने हुए मद्यको आसव और क्वाथको अरिष्ट कहते हैं। गुड़ची, अभया, चित्रक, दन्ती, पिप्पलादि अनेक ओषधियोंसे बना हुआ क्वाथ भी अरिष्ट कहाता है। इसका गुण अर्श, शोथ, ग्रहणी, क्षयादि रोग नाशक है।

अनेक द्रव्य सात दिन तक पानीमें घुला करके रसको वस्त्रसे छान लिया जाता है। उसको चिकित्सक लोग अरिष्ट एवं ओषधि जलमें पकाकर सिद्ध हुये मद्यको भी अरिष्ट कहते हैं। यह त्रिदोष नाशक, और गर्भस्रावक होता है। (क्लो०) १२ सूतिकागार। नास्ति रिष्टं यस्मात्, नञ्-बहुव्रो०। १३ मरण चिह्न। १४ शुभदायक विधान। १५ सुखावस्थान, मजेकी बैठक। १६ शुभ, भलाई। १७ अशुभ चिह्न, बुरे आसार। १८ तक्र, मठा। (त्रि०) १९ अविनाशी, लज़वाल।

अरिष्टक (सं०पु०) १ फेनिल वृक्ष, रीठेका पेड़। २ निम्बवृक्ष, नीमका दरख्त। ३ रीठाकरञ्ज, बड़ा रीठा। ४ सरलद्रुम, चीड़का पेड़। (क्लो०) ५ मद्य, शराब।

अरिष्टकर्मन्—अन्ध्रवंशके नृपति विशेष। इनका वर्णन विष्णुपुराणमें विद्यमान है। अन्ध्रराजवंश देखो।

अरिष्टगात (वै० त्रि०) अरिष्टं अहिंसितं गच्छति, गम तु निपातनात् आकारादेशः। अहिंसित-गमन, मजेसे चलने या रहनेवाला।

अरिष्टगु (वै० त्रि०) अहिंसित पशु रखनेवाला, जिसके मवेशी चोट खाये न रहें।

अरिष्टगृह (सं० क्लो०) पड़ा हुआ कमरा।

अरिष्टग्राम (वै० पु०) पर्याप्त संख्यक सैन्य-सम्पन्न, जिसकी फ़ौज शुमारमें पूरी रहे। यह शब्द मरुतस्का विशेषण है।

अरिष्टताति (वै० स्त्री०) अरिष्टस्य भावः, अरिष्ट-तसिल्। सुखका भाव, रक्षा, हिफ़ाज़त। (त्रि०) २ शुभ, अच्छा, भलाई करने या आराम देनेवाला।

अरिष्टत्रय (सं० क्लो०) तीन अरिष्ट। यह तीन प्रकारका होता है—स्वस्थारिष्ट, वेधारिष्ट, कीटारिष्ट। उसमें स्वस्थारिष्ट पांच प्रकारका है—भोजनारिष्ट,छायाद्यरिष्ट, दर्शनेन्द्रियाद्यरिष्ट, श्रवणेन्द्रियाद्यरिष्ट, रसनेन्द्रियारिष्ट। प्रथम भोजनारिष्टमें रोगके विना ही हीनवर्णता, दुर्मनस्कता, और भोजनमें अनिच्छा होती है। दूसरेमें छायाप्राङ्मुखता (दो मालूम होना) और छाया छिद्रयुक्तता जान पड़ती है। तृतीयादिमें नाक, मेढ़, नेत्र, पायु इन स्थानोंसे अकस्मात् रक्तस्राव होने (खून चूने) लगता तथा रोगी कर्णबधिर, जिह्वा-कठिन और स्तब्ध हो जाता है। शरद् ऋतु सूर्यके ताप और वर्षाकाल मकानसे बाहर कहीं खुली जगहमें रहनेसे वेधारिष्ट उत्पन्न होता है। उसके होनेसे मनुष्योंको ज्वर, नीचे मुख रहना, श्वास-कास, अङ्ग जकड़ना, याने सर्वाङ्गमें पीड़ा रोग लगता है। कीटारिष्टसे बाजियोंके पेटमें कीटका गुच्छा हो जाता,जिससे वह कष्ट पाने लगते हैं। (जयदत्त अश्ववै० २१-२५-अ०)

अरिष्टदुष्टधी (सं० त्रि०) अरिष्टेन मरणसूचकनिमित्तेन दुष्टा असाध्वी धीर्बुद्धिर्यस्य, बहुव्रो०। १ आसन्न मरणसूचकनिमित्त दुष्ट बुद्धियुक्त, मौतसे खौफ खानेवाला। २ आसन्नकालमें विपरीत बुद्धियुक्त, जिसकी समझ मौक़ेपर बिगड़ जाये।

अरिष्टनेमि—१ विनताके गर्भ और कश्यपके औरससे उत्पन्न पुत्रविशेष। २ जिनविशेष। यह वर्तमान अवसर्पिणीके चौबीस तीर्थङ्करमें बाईसवें थे। सोमनाथ देखो।

अरिष्टफल (सं० पु०) कटुनिम्बवृक्ष, किसी क़िस्मकी कड़वी नीम।

अरिष्टभर्मन् (वै० त्रि०) संरक्षक, हिफ़ाज़त करनेवाला।

अरिष्टमथन (सं० पु०) असुरनाशन विष्णु।

अरिष्टरथ (वै० त्रि०) अहिंसित रथयुक्त, जिसके रथ बिगड़ा न रहे।

अरिष्टलक्षण (सं० क्लो०) मृत्युलक्षण, मौतका निशान्।

अरिष्टवीर (वै० त्रि०) अप्रताड़ित वीर रखनेवाला, जिसके घायल सिपाही न रहे।

अरिष्टशय्या (सं० स्त्री०) पड़ा हुआ पलंग।

अरिष्टसूदन, अरिष्टमथन देखो।

अरिष्टहन्, अरिष्टमथन देखो।

अरिष्टा (सं० स्त्री०) १ कटुकी। २ पटोलादि। ३ नागबला, गुलशकरी। ४ मद्य, शराब। ५ पट्ट, पट्टी। ६ दक्षकी कन्या। यह कश्यपको व्याही थीं।

अरिष्टासु (वै० त्रि०) अहिंसित शक्तिसम्पन्न, जिसकी असली ताक़तमें बल न पड़े।

अरिष्टाह्व (सं० पु०) रीठाकरञ्ज, बड़ा रीठा।

अरिष्टि (सं० स्त्री०) रिष-क्तिन्, अभावे नञ्-तत्। रिष्टि वा हिंसाका अभाव, चोटकी अदम-मौजूदगी।

अरिष्टिका (सं० स्त्री०) १ रीठी। २ कटुकी।

अरिष्ठ (वै० त्रि०) अरये अरौ वा तिष्ठति, अरि-स्था-क वेदे षत्वम्। शत्रुनाशके निमित्त स्थित, जो दुश्मनको मारने खड़ा हो।

अरिसिंह—काव्यकल्पलतासूत्र-रचयिता।

अरिह (सं० पु०) पुरुवंशीय नृप विशेष।

अरिहन (हिं० पु०) १ शत्रुघ्न। २ वीतराग। ३ रेहन।

अरिहा (सं० त्रि०) १ शत्रुसंहारक, दुश्मनको कत्ल करनेवाला। (पु०) २ शत्रुघ्न, लक्ष्मणके छोटे भाई।

अरी (हिं० अव्य०) अयि, एरी, ओरी, । (स्त्री०) २ अड़ो, मौका, जिस वक्त कोई काम अटक रहे। (वि०) ३ अटकी हुई।

अरीठा (हिं० पु०) अरिष्ठ, रीठा।

अरीढ़ (सं० त्रि०) लिह आस्वादे क्त, नञ्-तत्। १ शत्रु द्वारा अनभिभूत, जो दुश्मनसे दबा न हो। २ अनास्वादित, जो चखा न गया हो।

अरीत (हिं० स्त्री०) १ रीतिका अभाव, चालके खिलाफ काम। २ कुरीति, बुरी चाल।

अरीरुह (वै० त्रि०) चाटा न हुआ, जो चाटा न गया हो।

अरीहण (सं० पु०) राजा विशेष, कोई बादशाह।

अरीहणादि (सं०पु०) अरीहण आदिर्यस्य, बहुव्री०। निर्वृत अर्थवाले वुञ् प्रत्ययके निमित्त पाणिन्युक्त शब्दसमूह। इसमें निम्नलिखित शब्द होते हैं,—अरीहण, द्रुघण, द्रुहण, भगल, उलन्द्र, किरण, साम्परायण, क्रौष्टायण, औष्ट्रायण, त्रैगर्तायण, मैत्रायण, भास्त्रायण, वैमतायन, गौमतायन, सौमतायन, धौमतायन, सौमायन, ऐन्द्रायण, कौन्द्रायण, खाड़ायन, शाण्डिल्यायन, रायस्पोष, विपथ, विपाश, उद्दण्ड, उदञ्चन, खाण्डवीरण, वीरण, काशकृत्स्न, जाम्बवन्त, शिंशपा, रैवत, बैल्व, सुयज्ञ, शिरीष, बधिर, जम्बु, खदिर, सुशर्मन्, दलट, भलन्दन, खण्ड, कनल, यज्ञदत्त और सार।

अरु (सं० पु०) १ आरग्वध वृक्ष, लटजीरा। २ रक्तखदिर, लाल खैर। ३ क्षतव्रण, चोटका ज़ख़्म। ४ मर्म, जिसकी नाज़ुक जगह। ५ सन्धिस्थान, गांठ, जोड़। ६ सूर्य, आफ़ताब। (हिं० अव्य) ७ और।

अरुंषिका (सं० स्त्री०) अरुंषि मर्मस्थानान्यधिकृत्य जाता, ठन् पृषो० मुम्। क्षुद्ररोगविशेष, कोई बीमारी। इससे माथेपर कई मुंहवाले फोड़े उभर आते हैं।

अरुई, अरवी देखो।

अरुक् (सं० त्रि०) सुस्थ, जिसे बीमारी न रहे।

अरुकटि, अरकाट देखो।

अरुगण, अरुक् देखो।

अरुङ्निमेष (सं० स्त्री०) नेत्ररोग विशेष, आंखकी कोई बीमारी।

अरुच् (वै० त्रि०) नास्ति रुक् दीप्तिर्यस्य, बहुव्री०। दीप्तिहीन, बेरौशनी, जिसमें चमक न रहे।

अरुचि (सं० स्त्री०) नास्ति रुचिर्भोजनाभिलाषो यत्र; रुच्-इनि, नञ्-बहुव्री०। भोजनानिच्छा, खानेको जीका न चाहना। २ मुखपीड़ाविशेष, मुंहकी कोई बीमारी। इसमें खानेसे कोई चीज़ अच्छी नहीं लगती। ३ घृणा, नफ़रत। (त्रि०) नञ् ६-तत्। ४ निराभिलाष, बेख़ाहिश। ५ निस्पृह, लापरवा। ६ इच्छाहीन, बेतबीयत। ७ आसक्तिहीन, शौक़ न रखनेवाला। ८ दीप्तिहीन, बेरौशनी। अरोचक देखो।

अरुचिकर (सं० त्रि०) अरुचि उत्पन्न करनेवाला, जिसे खानेको जो न चहे।

अरुचिर (सं० त्रि०) अग्राह्य, घृणित, नागवार, नफ़रत अङ्गेज़।

अरुच्य, अरुचिर देखो।

अरुज् (सं० त्रि०) १ न पकनेवाला, जो पीप न देता हो। २ सुस्थ, तन्दुरुस्त।

अरुज (सं० पु०) न रुजति; रुज-क, नञ् तत्। १ आरग्वध वृक्ष, लटजीरा। २ दानव विशेष। (क्ली०) ३ कुङ्कुम, केशर। ४ सिन्दूर। (त्रि०) नास्ति रु-

जो रोगो येन यस्माद्वा, नञ् ३।५-बहुव्री०। ५ रोग नाशकारी वस्तु, बीमारी मिटानेवाली चीज़। नास्ति रुजो रोगो यस्य, नञ् ६-बहुव्री० गौणे ह्रस्वः। ६ रोग-शून्य, तन्दुरुस्त।

अरुझना (हिं० क्रि०) १ उलझना, मिलकर एकमें हो जाना। २ ठिठकना, चलते-चलते रुक जाना। ३ झगड़ा डालना, बहस करना।

अरुझाना (हिं० क्रि०) १ उलझाना, फन्दा लगा देना। २ लपट-झपट करना।

अरुण (सं० पु०) ऋच्छति इयर्ति वा सततं गच्छति, ऋ-उनन्। १ सूर्य, आफताब। "अरुण उदय अवलोकिय ताता" (तुलसी)। २ सूर्यका सारथि। ३ गरुड़। ४ सन्ध्या-राग, शामकी लाली। ५ निःशब्द, बेआवाज़ी। ६ दानव विशेष। ७ कुष्ठरोग विशेष, किसी किस्मका कोढ़। ८ अव्यक्तराग, पोशीदा रङ्ग। ९ कृष्णमिश्रित रक्त वर्ण, स्याही-मायल सुर्ख रङ्ग। १० आदित्यविशेष, बारहमें कोई सूर्य। माघमासके सूर्यको अरुण कहते हैं। "अरुणो माघमासे वै" (आदित्यहृदय) ११ ऋषिविशेष। यह लोग प्रजापतिके मांससे उत्पन्न हुए थे। "ततोऽरुणाः केतवो वात-रशना ऋषय उदतिष्ठन्।" (तैत्तिरीय आरण्यक १।२३।१) १२ देश विशेष, कोई मुल्क। १३ अरुण वर्ण, लाल रङ्ग। १४ प्रातःकाल, तड़का। १५ विषयुक्त कृमि विशेष, कोई जहरीला कीड़ा। यह छोटासा होता है। १६ गुड़। १७ नदविशेष, कोई दरया। १८ कोकि-लाक्षभेद, किसी किस्मका तालमखाना। १९ अतिविषा। २० श्योणाकवृक्ष। २१ मञ्जिष्ठा, मजीठ। २२ अर्क वृक्ष, अकोड़ेका पौधा। २३ पुन्नागवृक्ष, किसी किस्मके चम्पेका पेड़। २४ चित्रकक्षुप, चीतका पौधा। २५ रक्तापामार्ग, लाल लटजीरा। २६ रक्तकरवीर, लाल कनेर। (क्ली०) २७ अहिफेन, अफीम। २८ रक्तोत्पल, लाल कमल। २९ रक्तत्रिवृता, लाल छिरनपद्दी। ३० कुङ्कुम, केसर। ३१ सिन्दूर। ३२ माणिक्यभेद, लाल। ३३ त्रैलोक्यचिन्तामणि-रस। यह क्षय रोगपर दिया जाता है। ३४ पुच्छल तारा। इसकी शिखा चामरवत् होती है। रङ्गमें यह स्याही लिये सुर्ख़ नज़र आता है। इसका फल अच्छा नहीं। संख्यामें यह ७७ होता है। इसे वायुपुत्र भी कहते हैं। ३५ मन्दारपर्वतस्थ सरोवर।

अरुण—एक प्राचीन संस्कृत वैयाकरण।

अरुणकपिश (सं० पु०) द्राक्षाभेद, किसी किस्मका किशमिश।

अरुणकमल (सं० क्ली०) कृष्णसर्पवत् नित्य-कर्मधा०। रक्तोत्पल, लाल कमल।

अरुणगिरिनाथ—संस्कृतभाषामें योगानन्दप्रहसन-रच-यिता।

अरुणचूड़ (सं० पु०) ताम्रचूड़ पक्षी, मुर्गा।

अरुणज्योतिस् (सं० पु०) शिव।

अरुणतण्डुलीय (सं० क्ली०) रक्ततण्डुलीय शाक, लाल चोलाईकी भाजी।

अरुणता (सं स्त्री०) सुर्खी, ललाई, लाल रङ्ग।

अरुणदत्त—१ प्राचीन संस्कृत वैयाकरण और कोष-कार। उज्ज्वलदत्त और रायमुकुटने इनका उल्लेख किया है। २ मनुष्यालयचन्द्रिकारचयिता।

अरुणदांगी—मन्द्राज प्रान्तके तञ्जोर जिलेका एक किला और जनपद। प्राचीन समय इस किलेकी मन्द्राज प्रान्तमें बड़ी धूम रही। सन् ई०के १५वें शताब्द पाण्ड्य नृपतिके सेनापति सेतुपतिने इसे छीन अपने राज्यमें मिला लिया था। सन् ई०के १७वें शताब्द यह तञ्जोरके अधिकारभुक्त हुआ, जिसे सन् १६४६ ई० में रघुनाथ राव तेवानने अपने हाथ किया। सन्धिके अनुसार तञ्जोर राज्यको दुबारा मिलनेपर सन् १६९८ ई०में युद्ध छिड़नेसे फिर यह छिन गया था। सन् ई०के १८वें शताब्द रामनादवाले 'किलावन' के लड़केका यह जनपद सूबा बना। फिर इसे कई बार विभिन्न नृपतियोंने अधिकार किया था। अन्तको सन् १७४९ ई०में तञ्जोरके राजाने इसे पाया।

अरुणदूर्वा (सं० स्त्री०) कृष्णसर्पवत् नित्यकर्मधा०। रक्त दूर्वा, लाल दूब।

अरुणनाग (सं० पु०) मुद्राशङ्ख, मुरदासंख।

अरुणनेत्र (सं० पु०) १ पारावत, कबूतर। २ कोकिल, कोयल।

अरुणपुष्पी (सं० स्त्री०) बन्धुजीवक वृक्ष, लाल दुपहरीका पेड़

अरुणप्रिया (सं० स्त्री०) अरुणस्य प्रिया, ६-तत्। १ सूर्यकी भार्या। संज्ञा, और छाया सूर्यकी भार्या मानी गयी है। २ अप्सरा।

अरुणप्सु (वै० त्रि०) अरुण: रक्तवर्ण: प्सु: रूपं यस्य, बहुव्री०। रक्तवर्णविशिष्ट, लाल रङ्गवाला।

अरुणबभ्रु (वै० त्रि०) अरुणताविशिष्ट पीतवर्ण, सुर्खी लिये पीला।

अरुणमक्षिका (सं० त्रि०) रक्तमक्षिका, लाल माछी।

अरुणमल्लार (सं० पु०) मल्लार विशेष। इसके समग्र स्वर शुद्ध रहते हैं।

अरुणयुज् (वै० त्रि०) रक्तकिरणाभाविशिष्ट, जिस पर लाल किरणकी रोशनी पड़े।

अरुणलोचन (सं० पु०) अरुणे रक्ते लोचने यस्य, बहुव्री०। १ पारावत, कबूतर। २ कोकिल, कोयल। (त्रि०) १ रक्तवर्ण चक्षुयुक्त, सुर्ख आंखवाला।

अरुणशिखा (सं० पु०) कुक्कुट, मुर्गा। "उठे लखण निशि विगत सुनि अरुणशिखा धुनि कान।" (तुलसी)

अरुणसर्प (सं० पु०) तक्षक सर्प, ज़हरीला सांप।

अरुणसार (सं० पु०) हिङ्गुल, हींग।

अरुणसारथि (सं० पु०) सूर्य, जिसका गाड़ीवान् अरुण रहे।

अरुणा (सं० स्त्री०) ऋ-उनन् टाप्। १ अतिविषा। २ गुड़। ३ प्रदराविरस। ४ मञ्जिष्ठा, मंजीठ। ५ लाक्षातैल। ६ प्रपौण्डरीक, पांडरी। ७ त्रिवृता, लाल चोलाई। ८ जवा, कदम्बका फूल। ९ श्यामालता। १० इन्द्रवारुणी लता, लाल इन्द्रायण। ११ गुञ्जा लता, घुंघची। १२ पुनर्णवा। १३ मुण्डीरी, गोरखमुण्डी। १४ रक्तवर्णा गो, लाल गाय। १५ नदी विशेष।

अरुणाई (हिं० स्त्री०) अरुणता, सुर्खी, लाली।

अरुणाग्रज (सं० पु०) गरुड़, विष्णुका वाहन।

अरुणात्मज (सं० पु०) अरुणस्य आत्मज:, ६-तत्। सूर्यपुत्र शनि, सावर्णमनु, कर्ण, सुग्रीव, यम, अश्विनी कुमारद्वय और जटायुको लोग सूर्यका पुत्र मानते हैं।

अरुणात्मजा (सं० स्त्री०) अरुणस्य आत्मना स्वरूपेण जायते, जन-ड-टाप्, ६-तत्। सूर्यकन्या। यमुना और तपतीको सूर्यकन्या कहते हैं।

अरुणात्मिका (सं० स्त्री०) कुमरिच, लाल मिर्च।

अरुणानुज (सं० पु०) सूर्यके भाई गरुड़।

अरुणाभ (सं० क्ली०) वज्रलौह, खेड़ीका लोहा।

अरुणार, अरुनारा देखो

अरुणार्क (सं० पु०) रक्तार्क, लाल अकौड़ा। यह वात, कुष्ठ, कण्डू, विष, व्रण, प्लीहा, गुल्म, अर्श, कफ, उदरमल, क्रमि, मेद शोथ, एवं विसर्पको मिटाता और कटु, तिक्त तथा उष्ण होता है। इसका पुष्प क्रमि, कुष्ठ, कफ, अर्श, विष, रक्तपित्त, गुल्म तथा शोथको दूर करता और मधुर, तिक्त एवं धारक रहता है। (भावप्रकाश)

अरुणार्चिस् (सं० पु०) सूर्य, आफ़ताब।

अरुणावरज (सं० पु०) अरुणस्य अवरज:। गरुड़।

अरुणाश्व (वै० त्रि०) लाल घोड़े जोतनेवाला। यह मरुत्सका विशेषण है।

अरुणित (सं० त्रि०) अरुण क्रियते स्म; अरुण क्रत्यर्थे णिच्, कर्मणि क्त तारकादि० इतच् वा। १ लाल रंगा हुआ, जो रङ्गकर सुर्ख बनाया गया हो। २ रक्तवर्ण, सुर्ख, लाल।

अरुणिमन् (सं० पु०) अरुणता, सुर्खी, लाली।

अरुणिमा, अरुणिमन् देखो।

अरुणीकृत, अरुणित देखो।

अरुणीय—अथर्ववेदका पचीसवां उपनिषत्।

अरुणीययोग, अरुणीय देखो।

अरुणेक्षण, अरुणलोचन देखो।

अरुणोद (सं० क्ली०) अरुणं रक्तवर्णं उदकं जलं यस्य, बहुव्री० उदकस्योदादेश:। १ सरोवरविशेष, कोई तालाब। २ मन्दरपर्वतसे नि:सृत नदी विशेष। ३ समुद्रविशेष। जैन इस समुद्र द्वारा पृथिवीको आवेष्टित मानते हैं। ४ लोहितसागर।

अरुणोदक (सं० क्ली०) अरुणं रक्तवर्णं उदकं यस्य, बहुव्री० समासविधेरनित्यत्वान्नोदादेश:। मन्दर पर्वतस्थित सरोवर।

अरुणोदधि (सं० पु०) लोहित सागर। (Red Sea) यह मिस्र और अरबके बीच अवस्थित है। सुएज डमरूमध्य रहने पर पहले यह रूमके सागरसे अलग था, किन्तु उसके टूट जानेसे अब दोनों एक हो गये। इङ्गलेण्ड और भारतके बीच जहाज इसी राह आते-जाते हैं।

अरुणोदय (सं० पु०) अरुणस्य सूर्यसम्बन्धात् तत्किरणस्य उदयः आकाशे यत्र, बहुव्री०। सूर्योदयसे पूर्व चार दण्ड समय, तड़का।

"चतस्रो घटिकाः प्रातररुणोदय उच्यते।" (स्मृति)

"अरुणोदय सकुचे कुमुद उडगन ज्योति मलीन।" (तुलसी)

अरुणोदयविद्धा (सं० स्त्री०) अरुणोदयात् सूर्योदयात् प्राक् वक्त्रावलोकनसमये विद्धा, ७-तत्। अरुणोदयके समय दशमीसे विद्धा एकादशी।

"दशम्याः शेषसंयुक्तो यदि स्यादरुणोदयः।
नैवोपोष्यं वैष्णवेन तद्दिनैकादशीव्रतम्।" (गरुड़पुराण)

यदि सूर्योदयके अव्यवहित पूर्व हो दशमी सहित एकादशीका योग हो, तो उस दिन वैष्णवको व्रत रहना न चाहिये। किन्तु उपरोक्त निषेध शुक्लपक्षके लिये ही किया गया है,—

"एकादशीं दशाविद्धां वर्धमाने विवर्जयेत्।
पक्षहानौ स्थिते सोमे लङ्घयेद्दशमीयुताम्॥" (स्मृति)

अर्थात् शुक्लपक्षमें यदि एकादशी दशमीविद्धा पड़े, तो उस दिन वैष्णव व्रत न रहे; किन्तु कृष्णपक्षमें दशमी विद्धा एकादशीका व्रत करना चाहिये।

अरुणोदयसप्तमी (सं० स्त्री०) अरुणोदयकालमें पुण्यविशेषसाधनी सप्तमी। माघमासके शुक्ल पक्षकी सप्तमी; माकरी सप्तमी। भविष्यपुराणमें लिखा है कि अरुणोदय सप्तमीमें गङ्गास्नान कर अर्घ्यादि दान करनेसे आयु, आरोग्य, सम्पत् एवं कोटि सूर्यग्रहणकालीन गंगास्नानका फल होता है।

अरुणोमुखयति (वै० पु०) ब्राह्मणवेषधारी असुर विशेष, जो राक्षस ब्राह्मण बनकर घूमता हो। ऐतरेय ब्राह्मणमें लिखा, कि इन्द्रने इन राक्षसोंको शृगालादिसे भक्षण कराया था।

अरुणोपल (सं० पु०) अरुणः रक्ताभमध्यः उपलः प्रस्तरः। १ प्रस्तरविशेष, कोई पत्थर। २ अरुणवर्णमणि विशेष, चुन्नी। ३ पद्मराग, लाल।

अरुतहनु (वै० त्रि०) जिसके गाल या जबड़े टूट न सकें।

अरुद्ध (सं० त्रि०) अनिवारित, रोका न हुआ।

अरुन, (हिं०) अरुण देखो।

अरुनाना (हिं० क्रि०) १ सुर्ख पड़ना, लाल निकलना। २ सुर्ख बनाना, लाली चढ़ाना।

अरुनायी, (हिं०) अरुणाई देखो।

अरुनारा (हिं० वि०) अरुण, सुर्ख, लाल।

अरुनोदय, (हिं०) अरुणोदय देखो।

अरुन्तुद (सं० त्रि०) अरुः मर्म तुदति, अरुस्-तुद-खश्-मुम् अन्तलोपश्च। १ दुःखकर, तकलीफ़दिह। २ मर्मवेदना देनेवाला, जो गहरी चोट पहुंचाता हो। ३ तीक्ष्ण, तेज़।

अरुन्तुदत्व (सं० क्ली०) १ दुःख देनेकी स्थिति, तकलीफ़दिही। २ तीक्ष्णता, तेज़ी।

अरुन्धती (सं० स्त्री०) न कमपि रुन्धति रुध-शतृ-ङीप्। नञ्-तत्। १ जिह्वाग्र, जीभकी नोक। २ जो स्त्री किसीको रोध नहीं करती। ३ वशिष्ठपत्नी, कर्दम मुनिकी कन्या; नक्षत्रविशेष। कहते हैं, परमायु शेष हो जानेपर अरुन्धती नक्षत्र दिखाई नहीं पड़ता।

"दीपनिर्वाणगन्धञ्च सुहृद्वाक्यमरुन्धतीम्।
न जिघ्रन्ति न शृण्वन्ति न पश्यन्ति गतायुषः॥"

जिनकी आयु शेष हो आई है, उनकी नासिकामें दीपनिर्वाणका गन्ध नहीं लगता, वे लोग बन्धुवोंकी बात नहीं सुनते और अरुन्धती नक्षत्र भी नहीं देख सकते।

अक्षमाला भी वशिष्ठकी पत्नीका नाम है। वे शूद्रकन्या थीं, पतिके सद्गुण और अपनी पतिपरायणताके लिये सबमें पूजित हुई। मालूम होता है, अक्षमाला और अरुन्धती एक ही स्त्रीका नाम है। आकाशमें सप्तर्षिमण्डलमें वशिष्ठके निकट अरुन्धती वास करती हैं। विवाहमें सप्तपदी गमनके बाद जामाता बधूको अरुन्धती नक्षत्र दिखाया जाता है।

महाभारतमें लिखा है, वशिष्ठ अतिशय सच्चरित

थे। किन्तु अरुन्धती मन ही मन जानती, कि वशिष्ठके मनमें व्यभिचारका दोष उत्पन्न हुआ; इसीलिये वे पतिको अवज्ञा करती थीं। उसी पापसे उनकी प्रभा धूमारुणकी तरह मलिन हो गई है; उनके श्री नहीं है; कभी वे दिखाई देती हैं और कभी अलक्ष्य होकर दुर्निमित्तको भांति लोगोंके दृष्टिगोचर होती हैं। (आदिप० १३४ अ०)।

४ दक्षकन्या धर्मकी पत्नी। दक्षके पचास कन्यायें थीं। उनमेंसे दश धर्मको, तेरह कश्यपको और सत्ताईस चन्द्रको प्रदान की गयीं।

धर्मको जो कन्यायें व्याही गई थीं, उनके नाम ये हैं,—अरुन्धती, वसु, यामी, लज्जा, भानु, मरुत्वती, सङ्कल्पा, मुहूर्ता, साध्या, विश्वा और जिह्वा। अरुन्धती का पारिभाषिक नाम जिह्वा है। मृत्युकाल निकट आनेपर लोगोंको जिह्वाका अग्रभाग नहीं दिखाई देता। अतएव मृत्युके पूर्व अरुन्धती दिखाई नहीं देती। यह बात नक्षत्र और जिह्वाके अग्रभाग दोनोंमें घटती है।

अरुन्धतीजानि (सं० पु०) अरुन्धती जाया यस्य, निङ् समा०। अरुन्धतीके स्वामी वशिष्ठ मुनि।

अरुन्धतीदर्शनन्याय (सं० पु०) अरुन्धत्या दर्शनमिव न्यायः, शाक०तत्। अरुन्धतीके देखने जैसी चाल। अरुन्धती नक्षत्र देखनेमें पहले स्थूल दर्शन द्वारा स्थानको ठहरा, पीछे सूक्ष्म दर्शन द्वारा उसपर दृष्टि डालते हैं। इसीतरह प्रथम स्थूल दर्शन द्वारा किसी चीज़को देख पीछे सूक्ष्म दर्शन द्वारा उसके रूपमें मग्न होना अरुन्धतीदर्शनन्याय कहाता है।

अरुन्धतीनाथ, अरुन्धतीजानि देखो।

अरुप्पकोट्टयी—मन्द्राज प्रान्तवाले मदुरा ज़िलेके रामनाद राज्यका एक गांव। इसमें बल्लालोंकी अनोखी जाति अरम्बकूटन् रहती है, जो दूसरी बल्लाल जातिसे नहीं मिलती। इस जातिके लोग किसी किस्मकी नौकरी चाकरी करनेसे दूर रहते हैं। दूसरे लोगोंसे विवाह करना भी इनमें निषिद्ध है।

अरुम्बंध, अरुन्तुखयति देखो।

अरुवा (हिं० पु०) अरु, लताविशेष। इसका पत्ता पान-जैसा होता और जड़में कन्द बैठता है। लताकी गांठसे जो सूत निकलता, वह चार पांच अङ्गुल बढ़कर मोटा हो कन्द बन जाता है। कन्दकी तरकारी बनाते हैं। खानेसे यह कनकना लगता है। बरयी पानके साथ इसे बोता है। २ उल्लू चिड़िया।

अरुशहन् (सं० पु०) रक्तवर्ण मेघको नाशकरनेवाले इन्द्र

अरुष् (सं० त्रि०) नास्ति रुट् यस्य; रुष्-क्विप्। अक्रोध, गुस्सा न करनेवाला, जिसका मिज़ाज मुलायम रहे।

अरुष (सं० त्रि०) १ रक्तवर्ण, सुर्ख़, लाल। (पु०) २ ज्वाला, लपट। ३ सूर्य, दिन। ४ रक्तवर्ण मेघ, लाल बादल। यह तूफ़ान् प्रातः समय देख पड़ता है।

अरुषा (सं० त्रि०) भूम्यामलकी।

अरुषी (सं० स्त्री०) इयर्ति गच्छति वादित्त्योदयेनान्तं प्रतिदिनं प्रापयति वा स्तोऽऋन् ऐश्वर्यादि; ऋ-उषन्, पिप्पलादेराकृतिगणत्वादीकारः अथवा आ-रुच् दीप्तौ डुषच्, टिलोपः आङो ह्रस्वश्च; अरोचते अरुषी अथवा अरुषमिति रूपनाम सामर्थ्यादत्र शुक्लविषयं, शुक्लवर्णा अरुषी। १ उषा, तड़का। २ रक्तवर्ण अश्व, लाल घोड़ी। ३ ज्वाला, लपट। ४ मनुकी कन्या और और्वकी माता। महाभारतमें लिखा है, कि मनुकी कन्याका नाम अरुषी रहा। भृगुपुत्र च्यवनके साथ इनका विवाह हुआ था। अरुषीके पुत्रको और्व कहते रहे। वह जननीका ऊरुदेश तोड़ कर निकले थे।

"अरुषी तु मनोः कन्या तस्य पत्नी यशस्विनी।
और्वस्तस्यां समभवदूरुं भित्वा महायशाः।" (आदिप० ६६।१०)

अरुष्क (सं० स्त्री०) अरुमर्मस्थानपर्यन्तं कायति व्यथयति, अरुस्-कै-क अलम्। भल्लातक वृक्ष, भिलावेंका दरख़्त। भिलावेंका चूर गात्रमें लगनेसे व्रण पड़ जाता, इसीसे वह अरुष्क यानी दुःख देनेवाला कहाता है।

अरुष्कर (सं० पु०) अरुः व्रणं पीड़ां वा करोति; अरुस्-कृ-ट, उपसमा० अलम्। १ भल्लातक वृक्ष

भिलावेंका पेड़। 'वीरवृक्षोऽरुष्करोऽग्निमुखी भल्लातकी त्रिषु।' (अमर) २ पीड़ादायक वस्तु, तकलीफ़दिह चीज़। 'व्रण कार्यो ऽप्यरुष्करः।' (अमर) ३ अरुंषिका, माथेकी फुनसी। (क्लो०) ४ भल्लातक फल, भिलावां। ५ पञ्चतिक्त घृत। ६ चतुःसम लौह।

अरुष्कृत (सं० त्रि०) आहत, ज़ख़्मी, घायल, जो चोट खा गया हो।

अरुःमाण (वै० क्लो०) व्रणका औषध विशेष, ज़ख़्मकी कोई दवा।

अरुस् (सं० पु०) ऋच्छति सततं गच्छति, ऋ-उस्। १ सूर्य, आफ़ताब। २ रक्तखदिर, लाल खैर। (क्लो०) ३ मर्मस्थान, नाज़ुक जगह। ४ व्रण, घाव, चोट। ५ क्षत, ज़ख़्म। ६ नेत्र, आंख। (त्रि०) ७ आहत, ज़ख़्मी।

अरुसिका (सं० स्त्री०) मस्तककी त्वक्का दुःखदायी व्रण, खोपड़ेवाली खालकी तकलीफ़दिह फुनसी।

अरुहा (सं० स्त्री०) न किमपि रोहति, रुह-क। भूमि आमलकी, भुयिंआवला।

अरूक्ष (वै० त्रि०) न रूक्षम्, विरोधे नञ्-तत्। स्निग्ध, मसृण, चिकना, मुलायम, जो रूखा न हो।

अरूक्षता (वै० स्त्री०) स्निग्धता, चिकनायी, मुलायमियत।

अरूक्षित, अरूक्ष देखो।

अरूक्ष्णा, अरूक्ष देखो।

अरूढ़, आरूढ़ देखो।

अरूप (सं० त्रि०) नास्ति रूपं यस्य, बहुव्री०। १ रूपशून्य, बेशक्ल, जिसके सूरत न रहे। २ कुरूप, बदशक्ल, जिसके अच्छी सूरत न रहे। (क्लो०) ३ सांख्योक्त प्रधान। ४ वेदान्तोक्त ब्रह्म। कुत्सितार्थे नञ्-तत्। ५ कुत्सित रूप, खराब शक्ल।

अरूपक (सं० त्रि०) १ अलङ्कार-रहित, बे इस्तेयार। यह शब्द कविताका विशेषण है। (पु०) बौद्ध योगीकी भूमि वा अवस्था। यह चार प्रकारका होता है,—आकाशायतन, विज्ञानायतन, अविज्ञानायतन और नैवसंज्ञा संज्ञायतन।

अरूपता (सं० स्त्री०) १ रूपशून्यता, बेशक्लो। २ असमानता, नाहमवारी।

अरूपवत् (सं० त्रि०) अरूप देखो।

अरूपहार्य (सं० त्रि०) रूपेण ह्रियते; रूप-हृ-ण्यत्-३-तत्, ततो नञ्-तत्; यद्वा रूपेण न हार्यम्, असमर्थ समा०। सौन्दर्यादि द्वारा वश न होनेवाला, जो ख़ूबसूरती वगैरहसे क़ाबूमें न आता हो।

अरूपावचर (सं० पु०) बौद्ध दर्शनानुसार चित्तवृत्ति विशेष। इससे अरूपलोक देख पड़ता है। यह कुशल, विपाक एवं क्रियाके चार-चार प्रकार वृत्तिभेदसे बारह तरहका होता है।

अरूपिन (सं० त्रि०) अरूप देखो।

अरूरना (हिं० क्रि०) क्लेश उठाना, पीड़ा पहुंचना।

अरूलना (हिं० क्रि०) विदारित होना, लग जाना, घुसना।

अरूष (सं० पु०) ऋच्छति गच्छति, ऋ-ऊषन्। १ सूर्य, आफ़ताब। 'अरूषः सूर्यः।' (उज्ज्वलदत्त) २ सर्प, सांप।

अरूस, अड़ूसा देखो।

अरे (सं० अव्य०) १ ए, ओ, देख, सुन। २ आश्चर्य, तअज्जुब, ओह, भगवान्। यह अव्यय सम्बोधन वाक्य विशेष होता है। क्रोध या आश्चर्यके समय और नीच व्यक्तिसे बोलते इस शब्द द्वारा सम्बोधन किया जाता है।

अरेणु (वै० त्रि०) १ रेणुरहित, बेधूल। (क्लो०) २ रेणुरहित वस्तु, धूलसे खाली चीज़, आकाश, आसमान्।

अरेतस् (सं० त्रि०) वीजविहीन, वीज न रखनेवाला, बेतुख़्म, जिसमें तुख़्म न रहे।

अरेपस् (सं० त्रि०) रेपः पापं तदास्ति यस्य, नञ् बहुव्री०। निष्पाप, पापशून्य, निष्कल, बेगुनाह, पाकीज़ा।

अरेरना (हिं० क्रि०) मलना, घिसना।

अरेरे (सं० अव्य०) अरे वीप्सायां द्विर्भावः। अबे, ओबे,। यह नीचको बुलाने और क्रोध देखानेमें आता है।

अरैन—पञ्जाबके झेलम जिलेकी एक जाति। इस जातिके संख्यामें कोई साढ़े पन्द्रह हजार लोग खेती-बारीका काम बहुत अच्छी तरह करते हैं।

अरोक (सं० स्त्री०) रुच् दीप्तौ घञ्; रोकश्छिद्रं दीप्तिश्च, नञ्-बहुव्री०। १ छिद्रशून्य, बेसूराख़। २ दीप्तिशून्य, बेरौशनी। (हिं० वि०) ३ रोक न रखनेवाला, जो रुकता न हो।

अरोकदत् (सं० त्रि०) अरोका निश्छिद्रा दन्ता अस्य, बहुव्री० वा दत्रादेशः। १ सटे हुए दांत रखनेवाला, जिसके दांत सटा हुआ रहे। २ दीप्तिशून्य दन्त विशिष्ट, जिसके दांत काला रहे।

अरोकदन्त, अरोकदत् देखो।

अरोख, अरोष देखो।

अरोग (सं० त्रि०) नास्ति रोगोऽस्य, नञ् बहुव्री०। १ रोगशून्य, लामर्ज़, जिसे बीमारी न रहे। (क्ली०) अरोगस्य भावः, ष्यञ्। २ आरोग्य, रोगका अभाव, तन्दुरुस्ती, बीमारीकी अदम मौजूदगी।

अरोगण (वै० त्रि०) अरोग देखो।

अरोगना, आरोगना देखो।

अरोगिता (सं० स्त्री०) स्वास्थ्य, तन्दुरुस्ती।

अरोगिन्, (सं० त्रि०) अरोग देखो।

अरोगी, अरोग देखो।

अरोग्य (सं० त्रि) अरोग देखो।

अरोग्यता, अरोगिता देखो।

अरोच (हिं० पु०) अरुचि, नापसन्दी, बेख़ाहिशी।

अरोचक (सं० पु०) न रोचयति प्रीणयति रुच्-णिच्-ण्वुल्, नञ्-तत्। रोगविशेष, जिस रोगमें क्षुधा और इच्छा रहनेपर भी खाया न जाय, अरुचि, जिसमें खानेकी वस्तु सुस्वाद न लगे।

अरोचक अर्थात् अरुचि रोग खुद कोई स्वतन्त्र बीमारी नहीं है। यह दूसरे रोगका उपसर्ग मात्र है। स्त्रियोंको गर्भावस्थामें अरुचि होती है। नवज्वर, पुरातनज्वर, अजीर्णरोग, कास, क्षमि प्रभृति अनेक रोगोंमें अरुचि घुसी है। क्रोध, शोक, मानसिक चिन्ता और आलसी स्वभाव ये भी अरुचिके प्रधान कारण हैं।

अरुचि होनेका कारण रोग प्रभृतिसे पाकयन्त्रमें व्यतिक्रम पड़ना है। पाकयन्त्रमें व्यतिक्रम होनेसे जिह्वा और मुखग्रन्थिका रस नहीं निकलता। भीतर आमरस, पैंक्रियाटिक रस, पित्त एवं आंतका रस भी यथानियम बाहर नहीं होता। इसीसे कोई वस्तु खानेसे उसका परिपाक होना कठिन हो जाता है। वैद्यकग्रन्थमें अरोचक रोग प्रधानतः तीन श्रेणियोंमें विभक्त किया गया है। यथा—वातिक, पैत्तिक और श्लेष्मिक। इसके सिवा आगन्तुक और त्रिदोष जनित अरुचि भी होती है।

सचराचर देखनेमें आता है, कि अरुचि होनेपर किसीके मुंहसे अम्ल, किसीके मुंहसे लवणाक्त और किसीके मुंहसे तिक्तजल निकलता, शरीर दुर्बल और मन सर्वदा उद्विग्न बना रहता है। कोई काम करनेकी इच्छा नहीं होती। खानेकी चीज़में या तो किसी प्रकारका दुर्गन्ध मालूम होता है या कोई स्वाद ही नहीं आता। किन्तु यह उपसर्ग होनेपर हमारे देशमें प्रायः सभी रोगी अम्ल खाना पसन्द करते हैं।

अरोचककी चिकित्सा करनेमें पहले मूल रोगका प्रतीकार होना आवश्यक है। मूल रोग बना रहनेपर केवल आग्नेय औषध प्रयोग करनेसे कोई फल नहीं होता। अतएव जिस रोगके साथ अरुचि हो, उसकी उपयुक्त चिकित्सा करना कर्तव्य है। औषधोंमें एलोपैथीमतमें पेप्सिन् विशेष हितकर है। भोजनके पहले इसे तीन चार ग्रेन खाकर पीछे आहार करना चाहिये। कुनैन ४ ग्रेन, इपिकाक चूर्ण १ ग्रेन, जेन्सिपानका सार ८ ग्रेन—इसकी चार गोलियां बना भोजनके पहले एक एक गोली खानेसे आहारमें रुचि उत्पन्न होती है।

वैद्यशास्त्रके मतानुसार वायुजनित अरुचिमें वस्तिक्रिया, पैत्तिक अरुचिमें विरेचन और श्लेष्माजनित अरुचिमें वमन करानेकी व्यवस्था है। अजवायिन, इमली, सोंठ, अमलवेतस, दाड़िम, अमलकुल, प्रत्येक दो दो तोला; धनिया, लवण, जीरा, दारुचीनी, प्रत्येक एक एक तोला; पीपल १००, मिर्च १००,

चीना चार पल—सब चीजोंको एक साथ पीसे। फिर थोड़ा थोड़ा चूर्ण मुंहमें रख धीरे धीरे निगलनेसे अरुचि रोग नष्ट होता है।

अरोचक रोग होनेपर रोगीको यथासम्भव व्यायाम और निर्मल वायुसेवन करना चाहिये। परन्तु ज्वर और कासादि रोग रहनेपर व्यायाम मना है। सहज हो परिपाक होनेवाला और पुष्टिकर द्रव्य भोजन करना उचित है। शरीर दुर्बल होनेके डर जबर्दस्ती अधिक भोजन करना कर्त्तव्य नहीं, कारण उससे उदरामय उठ सकता है।

अरोचकिन् (सं० त्रि०) अरुचि रोगसे पीड़ित, जिसे भूख न लगनेकी बीमारी रहे।

अरोचमान (सं० त्रि०) दीप्तिशून्य, धुंधला, जो चमकता न हो।

अरोचिष्णु, अरोचमान देखो।

अरोड़ (हिं० वि०) वीर, बहादुर, कट्टर।

अरोड़ा—पञ्जाबकी कोई जाति। यह अपनेको खत्रीके बराबर समझता है।

अरोदन (सं० क्लो०) अभावे नञ्-तत्। १ रोदनका अभाव, अश्रुक्षरणकी अदममौजूदगी, जिस हालतमें न रोयें। (त्रि०) नास्ति रोदनं यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ रोदनशून्य, जो रोता न हो।

अरोधन (सं० क्लो०) अभावे नञ्-तत्। १ रोधाभाव, रोककी अदममौजूदगी। (त्रि०) २ आवरण रहित, बेपर्दा, जो खुला हो।

अरोध्य (सं० त्रि०) न रोध्यम्, नञ्-तत्। अबाध्य, बेरोक, मनमाना, जिसे कोई रोक न सके।

अरोपण (सं० क्लो०) अभावे नञ्-तत्। १ रोपणका अभाव, लगाये न जानेकी हालत। (त्रि०) नास्ति रोपणं यस्य, नञ्-बहुव्री०। रोपणशून्य, लगाया न जानेवाला।

अरोपन, अरोपण देखो।

अरोर—सिन्धु प्रान्तके शिकारपुर जिलेकी रोहरी तहसीलका एक टूटा-फूटा गांव। यह रोहरीसे पूर्व ढाई कोस अक्षां० २७° ३९´ उ० और द्राघि० ६८° ५९´ पू० पर अवस्थित है। पहले यहां सिन्धुके हिन्दू नृपतियोंकी राजधानी थी, सन् ७११ ई०में मुसलमानोंने इसको उनसे छीन लिया। यह पहले सिन्धु नदके किनारे बसा था। ध्वंसावशेषमें आलम गीरकी मसजिद है। कालिका देवीकी गुहाको हिन्दू पवित्र मानते और प्रति वर्ष धूमधामसे उसका मेला लगाते हैं।

अरोष (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ क्रोधाभाव, गुस्सेकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ क्रोधशून्य, बेगुस्सा, जिसे गुस्सा न हो।

अरोहन, आरोहण देखो।

अरोहना (हिं० क्रि०) आरोहण करना, चढ़ना।

अरोही, आरोही देखो।

अरौद्र (सं० त्रि०) न रौद्रम्, विरोधे नञ्-तत्। १ भीषणभिन्न, जो भयङ्कर न हो। २ सुन्दर आकृति, खूबसूरत। ३ रागद्वेषादिशून्य, खटखटसे बाहर। (पु०) ४ विष्णु।

अरौन—मध्य-भारतवाले ग्वालियर राज्यके गूना सूबेका एक परगना। यह परगना जागीरमें लगा है।

अर्क (सं० पु०) अर्च्यते असौ, अर्च कर्मणि कः यद्वा अर्कयति उपतापयति, चुरा० अर्क कर्तरि अच्; अर्क्यते स्तूयते वा, कर्मणि घञ्। १ सूर्य, आफताब। २ इन्द्र। ३ विष्णु। ४ पण्डित, इल्मदार शख्स। ५ क्वाथ, काढ़ा। ६ ज्येष्ठ, बड़ा। ७ रविवार। ८ अन्न, अनाज। ९ वज्र। १० मन्त्र। ११ वृक्ष, दरख्त। १२ सप्तमी तिथि। १३ उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र। १४ द्वादश संख्या। १५ त्रैलोक्यडम्बर रस। १६ किरण, विद्युत्प्रभा। १७ अग्नि, आग। १८ वृक्ष विशेष, आक, मन्दार। यह श्वेत और रक्त भेदसे दो प्रकारका होता है। इसका गुण कटु, उष्ण, वातजित्, दीपनीय, शोक, व्रण, कण्डू, कुष्ठ, कृमि, कफ, अर्श, विष, रक्त, पित्त, गुल्म, शोथादि रोगका नाशक है। १९ ताम्र। २० चिन्तामणि-रस। २१ स्फटिक। २२ रक्त पुष्प। (हिं०) २३ अरक, रस। (त्रि०) २४ अर्चनीय, परस्तिश किये जाने काबिल।

अर्ककला (सं० स्त्री०) शारदातिलक ग्रन्थोक्त कला

विशेष। इसका प्रयोजन सूर्यकी उपासनामें पड़ता है। संख्यामें यह बारह रहती है। इसका रूप पोत और अङ्ग ककारादिसे डकार पर्यन्त वर्णभूषित है। बारहो कलाका नाम तपिनी, तापिनी धूम्रा, मरीचि, ज्वालिनी, रुचि, सुषुम्ना, भोगदा, विश्वा, बोधिनी, धारिणी और क्षमा है।

अर्ककान्ता (सं० स्त्री०) अर्कः सूर्यः सूर्यकिरणो वा कान्तः प्रियो यस्याः, बहुव्री०। १ आदित्यभक्ता, कनफटो, हुलहुल। २ सूर्यप्रिया। ३ संज्ञा, नाम। ४ छाया, साया। ५ पद्म, कमल।

अर्ककीर्ति—जैन गुरु विशेष। बम्बई प्रान्तवाले कनारी जिलेके मालखेड़ा-राष्ट्रकूट नृपति तृतीय गोविन्दने विमलादित्यके शनिग्रहको शान्तिको कुछ भूमि जैन मन्दिर बनवानेके लिये ताम्रफलकपर लिख इनके नाम उत्सर्ग की थी। ताम्रफलकपर शक संवत्‌के ज्येष्ठ शुक्लपक्षकी दशमी तिथि तथा सोमवार अङ्कित है।

अर्कक्षीर (सं क्ली०) आकका दूध, मन्दारका दूध। यह क्रमि और व्रण नाशक तथा कुष्ट, अर्श, उदर-रोगादिमें हितकर है। (राजनिघण्ट)

यह तिक्त, लवण, उष्णवीर्य (गर्म) लघु, स्निग्ध, गुल्म, उदर, कुष्ट हरण करनेवाला तथा विरेचनमें हितकारक है। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

अर्कक्षेत्र (सं क्ली०) अर्कस्य क्षेत्रम्, ६-तत्। १ सिंहराशि। २ भाद्र मास। ३ उड़ीसा प्रान्तका तीर्थ विशेष।

अर्कगन्धिका (सं स्त्री०) क्षीरविदारी, कृष्ण भूमि कूष्माण्ड, काला बिलारीकन्द।

अर्कचन्दन (सं० पु०-क्ली०) अर्कस्य प्रियः प्रियं वा चन्दनः चन्दनं वा, शाक० तत्। रक्त चन्दन, लाल चन्दन।

अर्कच्छन्द (सं क्ली०) अर्कमूल, आककी जड़।

अर्कज (सं० पु०) अर्काज्जायते, अर्क-जन-ड,५-तत्। १ यम। २ शनि। ३ अश्विनीकुमारद्वय। ४ सुग्रीव, ५ कर्ण। उपरोक्त व्यक्ति सूर्यके पुत्र होनेसे अर्कज कहाते हैं।

अर्कजा (सं० स्त्री०) १ यमुना। २ तपती। उपरोक्त नदी सूर्यकी कन्या होनेसे अर्कजा कहाती हैं।

अर्कतनय (सं० पु०) ६-तत्। १ कर्ण। २ वैवस्वतमनु। ३ सावर्णिमनु।

अर्कतनया, अर्कजा देखो।

अर्कतैल (सं० क्ली०) कुष्ठाधिकारका तैल विशेष, कोढ़का कोई तेल। ८ पल कड़वा तेल, ८ पल आकके पत्तेका रस, १ पल निशा और १ पल मनःशिला एकमें घोंटनेसे यह तेल बनता है। (सारकौमुदी)

अर्कत्व (सं० क्ली०) दीप्ति, चमक।

अर्कत्विष् (सं० स्त्री०) प्रकाशका किरण, सूर्यकी दीप्ति, आफ़ताबकी रोशनी।

अर्कदल (सं० पु०) १ आदित्यपत्र क्षुप, कनफटिया। २ अर्कवृक्ष, आकका पेड़।

अर्कदिन (सं० क्ली०) सौर वार, सूर्यका दिन।

अर्कदुग्ध (सं० स्त्री०) अर्कस्य तन्नामक वृक्षस्य दुग्धं दुग्धवत् शुभ्रत्वात् निर्यासः, ६-तत्। मन्दारका रस, अकोड़ेका दूध।

अर्कनन्दन, अर्कज देखो।

अर्कनयन (सं० पु०) अर्कः सूर्यो नयनं यस्य, बहुव्री०। विराट् पुरुष। पुराणमें लिखते, कि विराट् पुरुषके सूर्य, चन्द्र और अग्नि यह तीन नेत्र हैं।

अर्कनामन् (सं० पु०) अर्क इति नाम यस्य, बहुव्री०। रक्तार्क, लाल अकोड़ेका पेड़।

अर्कनामा, अर्कनामन् देखो।

अर्कपत्र (सं० पु०) अर्कवत् प्रशस्तं पत्रं यस्य, बहुव्री०। १ अर्क वृक्ष, अकोड़ेका पेड़। २ आदित्यपत्रक्षुप, कनफटिया। (क्ली०) अर्कस्य पत्रम्, ६-तत्। ३ अर्क वृक्षका पत्र, अकोड़ेका पत्ता।

अर्कपत्रा (सं० स्त्री०) १ ईश्वरमूल वृक्ष, लता विशेष। यह विषका औषध होती है। २ सुनन्दा। ३ अर्कमूल।

अर्कपत्रिका, अर्कपत्रा देखो।

अर्कपत्री, अर्कपत्रा देखो।

अर्कपर्ण, अर्कपत्र देखो।

अर्कपर्णिका (सं॰ स्त्री॰) माषपर्णी।

अर्कपाद (सं॰ पु॰) १ सूर्यकान्तमणि, आतशी शीशा। २ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़।

अर्कपादप (सं॰ पु॰) पादैर्मूलैः पिबति पादेभ्यः सूर्यकिरणेभ्यः पाति रक्षति वा, पा-क पादपः, अर्कः अर्कवृक्ष इव उग्ररसः पादपः, शाक॰ तत्। १ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़। कर्मधा॰। २ अर्कवृक्ष, अकोड़ेका पेड़।

अर्कपुत्र, अर्कज देखो।

अर्कपुष्पा (सं॰ स्त्री॰) क्षीरकाकोली, दूधदार कन्द। यह हिमालय पर्वतपर उत्पन्न होती है।

अर्कपुष्पिका (सं॰ स्त्री॰) १ सूर्यवल्ली, अड़हुल। २ क्षीरवृक्ष, क्षीरकाकोली, रक्तापराजिता।

अर्कपुष्पी, अर्कपुष्पिका देखो।

अर्कप्रभागुटिका (सं॰ स्त्री॰) रसायनाधिकारमें रसकी कोई गोली। इसका विधान इस तरह लिखा है—शुद्ध पारा २ निष्क, शुद्ध ताम्रचूर्ण १ निष्क—इसका चिञ्चामूल वा फलके क्वाथमें १ प्रहर तक अच्छीतरह खल्लमें विमर्दन कर, गोलाकार बनाकर, तक्र और चिञ्चाफलके साथ दोलायन्त्रमें चार प्रहर पर्यन्त पाक कर, पीछे वटिका बनानी चाहिये। इसको १ पैसे भर पलाशबीजका तेल और गौका दूध मिलाकर एक वर्ष सेवनकरनेसे मनुष्य दश हस्तीके समान बलयुक्त बन सूर्य-जैसा प्रभाशाली हो जाता है। (प्रयोगामृत)

अर्कप्रिया (सं॰ स्त्री॰) अर्कं प्रीणाति, अर्क-प्री-क। १ आदित्यभक्ता, कनफटिया। २ जवापुष्प, जवांसेका फूल। ३ सूर्यप्रिया संज्ञा, छाया प्रभृति।

अर्कबन्धु (सं॰ पु॰) अर्कस्य बन्धुः स्ववंशोयत्वात् विद्यावत्त्वाद्वा, अर्क-बन्ध-उ। १ गौतम। यह इक्ष्वाकुकुलोद्भव शाक्यवंशीय बुद्ध रहे। 'गौतमशार्कबन्धु यं'। (अमर) अर्को बन्धुरस्य, बहुव्री॰। २ पद्म। कवि कहता, कि सूर्यको देखनेसे पद्म फूलता इसीसे अर्कबन्धु पद्मका नाम है।

अर्कबान्धव, अर्कबन्धु देखो।

अर्कभ (सं॰ क्ली॰) अर्केण युक्तं आक्रान्तं वा भं नक्षत्रम्, शाक॰ तत्। १ सूर्याक्रान्त नक्षत्र, सूर्यके साथ एक ही राशिमें पड़ा हुआ नक्षत्र। ६-तत्। २ सूर्यस्वामिक सिंहराशि। ३ उत्तरफल्गुनी नक्षत्र। (त्रि॰) अर्कस्येव भा दीप्तिर्यस्य, बहुव्री॰। ४ तेजस्वी, चमकदार। ५ रक्तवर्ण, सुर्ख़, लाल।

अर्कभक्ता (सं॰ स्त्री॰) अर्कस्य अर्के वा भक्ता आसक्ता अर्ककिरणसम्बन्धेन स्वसौन्दर्यात्। १ कनफटिया लता। २ ब्राह्मी। ३ सूर्यकी उपासना करनेवाली स्त्री।

अर्कभूति (सं॰ स्त्री॰) १ ताम्रभस्म, तांबेका कुश्ता। यह क्रमि, कफ, मेह, पित्त, और मनोविकारादिका नाशक होती है। २ क्षीर, ताम्ररस।

अर्कमण्डल (सं॰ क्ली॰) सूर्यका वृत्त, आफ़तावका दायरा।

अर्कमूर्तिरस (सं॰ पु॰) रसविशेष, यह रस सान्निपातिक ज्वरपर प्रयोग किया जाता है। इसमें इतने द्रव्य दिये जाते हैं,—लोहा ८ भाग, पारा २ भाग, गन्धक द्विगुण, षोडशांश विष. यह सब द्रव्य एकत्र खूब घोंट कर अर्कमूर्तिरस बनाया जाता है। इसको त्रिदोषदावानल भी कहते, जब उक्त द्रव्य ताम्रपात्रमें रखते और कागज़ी नीबू पित्तवर्ग (मत्स्य, महिष, मयूर, मृग, अश्व इन सबका पित्त पित्तवर्ग कहाता है), कण्टकारी, एवं आद्रकके रसमें हल करके बनाते हैं। (भैषज्यरत्नावली)

अर्कमूल (सं॰ पु॰) अर्कं सर्पनिवारणे प्रशस्तं मूलं यस्य, बहुव्री॰। ईश्वरमूल, अहिगन्ध। इसका मूल सर्प एवं वृश्चिकदंश पर उपकार करता है। उसे कूट पीस कर पिलाते और क्षत पर भी लगाते हैं। उसके सेवनसे स्त्रीका मासिक धर्म खुल जाता है। विशूचिका, अतीसार प्रभृति रोगमें भी उसे काली मिर्चके साथ पीसकर पिला देते हैं। पत्तोंके रसमें कुछ नशा रहता है। पेटकी बीमारीमें अर्कमूलकी छाल बहुत फ़ायदा पहुंचाती है। इसका रस तीससे सौ बूंद तक देना चाहिये। (स्त्री॰) अर्कमूला।

अर्करेतोज (सं॰ पु॰) अर्कस्य रेतसः जायते, अर्क-रेतस्-जन-ड। सूर्यके पुत्र विशेष। इनका दूसरा नाम रेवन्त, श्रवण और सूर्यवाहन है।

अर्कलवण (सं० क्लो०) अर्कक्षार, किसी क़िस्मका नमक।

अर्कलूष (सं० पु०) लूषयति यत्र पशून् हिनस्ति, अर्कः पश्चिमवासी लूषश्चेति कर्मधा०। ऋषिविशेष।

अर्कवत् (सं० त्रि०) विद्युत् प्रभाविशिष्ट, जिससे बिजलीकी चमक निकले।

अर्कवर्ष (सं० पु०) सौर वत्सर।

अर्कवल्लभ (सं० पु०) अर्कस्य वल्लभः प्रियः अर्क-पूजाप्रशस्तरक्तवर्णपुष्पत्वात्। १ बन्धुक वृक्ष, अड़हुलका पेड़। (पु० क्लो०) अर्को वल्लभो यस्य, बहुव्री०। २ पद्म।

अर्कवल्ली (सं० स्त्री०) आदित्यभक्ता, अड़हुल।

अर्कविवाह (सं० पु०) अर्कस्य कन्यात्वेन कल्पितस्य विवाहः, ६-तत्। तृतीय विवाह सिद्धिके निमित्त अर्क वृक्षको कन्या मानकर विवाह। तीसरा विवाह करनेसे पहले अकोड़ेके साथ विवाह करना चाहिये। (विधानपारिजात)

अर्कवेद, अर्कवेध देखो।

अर्कवेध (सं० पु०) अर्कस्य अर्कवृक्षस्येव वेधो वेधनं यत्र। तालीशपत्र वृक्ष। जिस मकानका सहन पूर्व-पश्चिम लम्बा पड़ता, वह भी अर्कवेध कहाता है।

अर्कव्रत (सं० पु०-क्लो०) अर्कोपासनार्थं व्रतं व्रतो वा, ६-तत्। १ माघ मासकी शुक्ल-सप्तमीको किया जानेवाला व्रतविशेष। २ आरोग्यसप्तम्यादि सूर्यव्रत। अर्को यथा पृथिव्या रसं गृह्णाति तद्वत् राज्ञः करग्रहणरूपं व्रतम्। ३ करग्रहण, राजस्वग्रहण, ख़िराजका लेना। सूर्यको तरह जलरूपी धन लेकर पीछे उसे मेघरूपी दानसे दे देना राजाका अर्कव्रत कहाता है।

अर्कशोक (वै० पु०) किरणकी दीप्ति, शुवाकी चमक।

अर्कसाति (वै० स्त्री०) पद्याविष्कार, कविताकी उत्तेजना, शायरीका ज़ोर।

अर्कसुता (सं० स्त्री०) १ कृष्णापराजिता, काली विष्णुकान्ता। २ यमुना।

अर्कसुधा (सं० स्त्री०) अर्कीयसुधा, अकोड़ेका दूध। यह गुल्मरोगको मिटाती है। (वैद्यकनिघण्टु)

अर्कसूनु, अर्कज देखो।

अर्कसोदर (सं० पु०) अर्कस्य इन्द्रस्य सोदरभ्रातेव उपकारकत्वात्। १ ऐरावतहस्ती। २ भयानक व्यक्ति, ख़ौफ़नाक शख़्स, जिसे देखनेसे डर लगे।

अर्कहिता (सं० स्त्री०) ६-तत्। १ अर्कभक्ता, अड़हुल। (त्रि०) २ सूर्यको हितकर, आफ़ताबको फ़ायदा पहुंचानेवाली।

अर्कादिगण (सं० पु०) गणविशेष। अर्क, अलर्क, नागदन्ती, विशल्या, भार्गी, रास्ना, इन्द्रपुष्पी, वृश्चिकाली, करञ्ज, प्रत्यक्पुष्पी, अलवणा, तापसवृक्ष, इस सबको अर्कादिगण कहते हैं। यह कफ, मेद, विष, कुष्ठ, व्रण प्रभृति रोगोंको शोधन तथा दमन करनेवाला है।

अर्काश्मन् (सं० पु०) अश्नोति व्याप्नोति संहन्ति वा; अर्क-अश-मनिन्, शाक० तत्। १ सूर्यकान्तमणि, आतशी शीशा। यह पत्थर सूर्यका किरण पड़नेसे जलने लगता है। अर्क इव रक्ता अश्मा, शाक० तत्। २ अरुणोपल, लाल, चुन्नी।

अर्काश्मा, अर्काश्मन् देखो।

अर्काह्व (सं० पु०) १ तालीशपत्र। २ सूर्यकान्तमणि, आतशी शीशा। ३ अर्कवृक्ष, अकोड़ेका पेड़।

अर्किन् (वै० त्रि०) अर्च्यतेऽनेन मन्त्रेण, अर्च करणे घञ् सोऽस्यास्ति इनि। अर्चनसाधन मन्त्रयुक्त, जिसमें अर्चनसाधन मन्त्र रहे।

अर्की (सं० पु०) मयूर, मोर।

अर्कीय (सं० त्रि०) अर्कसम्बन्धीय, आफ़ताबसे ताल्लुक़ रखनेवाला।

अर्केन्दुसङ्गम (सं० पु०) अर्कश्च इन्दुश्च तयोः सङ्गमो मिलनं यत्र, बहुव्री०। अमावस्या तिथि, सूर्य और चन्द्रका मिलन।

अर्केश्वररस (सं० पु०) रस विशेष। यह वातव्याधिके उपशमनार्थ दो प्रकारका होता, तृतीय रक्तपित्त और चतुर्थ कुष्ठको शमन करता है। पहला इस प्रकार बनाया जाता है—पारा ४ भाग और गन्धक १० भाग तांबेके पात्रमें निम्नाभिमुख बन्दकरके ऊपर भस्मसे भरा हुआ १ मट्टीका बरतन रखे। फिर

अच्छी तरह यत्नपूर्वक १ प्रहर तक उसे आगमें जलाना चाहिये। आगसे निकालने और शीतल होने पर तांबेका बरतन खोल पारे और गन्धकको खूब चूर्ण करे। पीछे मन्दारके दूधका पुट दे दे कर १० बार खल्लमें घोंटनेसे अर्केश्वररस तैयार होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

दूसरा प्रकार यह है।—पारेसे द्विगुण गन्धकको खूब तपाये हुए ताम्रचक्रसे रगड़ और चक्रमें लगे हुएको भी ले एकत्र करे। पीछे सबको चूर्ण बना मन्दारके दूध और त्रिफलाके जलका पुट दे दे १२ बार खल्लमें घोंटनेसे यह तय्यार होता है। इसकी मात्रा २ रत्ती है।

तीसरा प्रकार—पारद, मृतताम्र, मृत-अभ्रक, माक्षिक इन सबको गुडूचीके रसमें घोंट, पुट बना, और आगमें डालकर २१ बार पकानेसे यह तैयार होता है। इसको वासाके दूध और विदारीकन्दके साथ ४ रत्ती प्रमाण प्रतिदिन सेवन करना चाहिये। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

चौथा प्रकार—पारा ४ पल, गन्धक १२ पल ताम्रकी चक्रिका रसके ऊपर एक शरावक दे, मट्टीके पात्रमें रख, भस्मसे भर, उक्त पात्रको खूब दृढ़ बन्द और आगमें दो प्रहर पकाकर निकाल ले। पीछे ठण्ढा होनेपर सबको चूर्ण बना, १२ बार मन्दारके दूधमें सान और पुटमें बन्द करके पकाना चाहिये। पुनः त्रिफला, चित्रक, और भृङ्गराजके रसमें तीन बार घोंटनेसे यह तय्यार होता है। इसका नाम अर्केश्वररस है। यह रक्तमण्डल कुष्ठका विघातक होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

अर्कोत्तमा (सं० स्त्री०) बर्बरी, बबई।

अर्कोपल, अर्काश्मन् देखो।

अर्क्य (सं० त्रि०) अर्क कर्मणि वा यत्। अर्चनीय, परस्तिशके काबिल। २ स्तवनीय, तारीफ करने लायक।

अर्गजा, अरगजा देखो।

अर्गड, अर्गल देखो।

अर्गट (सं० पु०) कण्टकवृक्षविशेष, आर्तगल, कोई कंटीली झाड़ी। यह तुवर, शीतवीर्य, व्रण-विशोधन तथा व्रणरोपण होता और इसका फूल तिक्त, ज्वरपित्तघ्न एवं कफरक्तके रोग नाश करनेवाला है। (वैद्यकनिघण्टु)

अर्गल (सं० क्लो०) अर्जते ऋजुतया तिष्ठति, ऋज-अलच् न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्। १ कपाट बन्द करनेका काष्ठदण्ड, किवाड़ लगानेको लकड़ीका डण्डा, बेंड़का। २ प्रतिबन्ध, रोक। ३ कपाट। ४ चिटखनी। ५ कल्लोल। ६ रंगदार बादल। यह सुबह-शाम देख पड़ता है। ७ मांस, गोश्त। ८ देवीमाहात्म्य पाठके पहलेका स्तोत्र विशेष। मार्कण्डेयने ब्रह्मासे पूछा था—

"ब्रह्मन् केन प्रकारेण दुर्गामाहात्म्यमुत्तमम्।
शीघ्रं सिध्यति तत् सर्वं कथयस्व महाप्रभो॥"

हे महाप्रभो! दुर्गामाहात्म्य किसतरह पाठ करनेसे शीघ्र फलप्रद होता है? ब्रह्माने कहा,—

"अर्गलं कीलकञ्चादौ पठित्वा कवचं पठेत्।
जपेत् सप्तशतीं पश्चात् क्रम एष शिवोदितः॥"

शिवने बतया है, पहले अर्गल एवं कीलक और पीछे कवच पढ़के सप्तशतीको पाठ करना चाहिये। (स्त्री०) अर्गला, अर्गली।

अर्गलिका (सं० स्त्री०) चिटखनी, बिल्ली, दरवाजा बन्द करनेका छोटा खटका।

अर्गलित (सं० स्त्री०) अवरोधसे आबद्ध, चिटखनी-से बंधा हुआ।

अर्गली (हिं० स्त्री०) मिस्र, श्याम प्रभृति देशकी भेड़। (सं०) अर्गल देखो।

अर्गलीय (सं० त्रि०) प्रतिबन्धन-सम्बन्धीय, खटके-से ताल्लुक रखने वाला।

अर्गल्य, अर्गलीय देखो।

अर्ग्वध (सं० पु०) पृषो० साधुः। आरग्वध वृक्ष, लटजीरेका पेड़।

अर्घ (सं० पु०) अर्घ्यते क्रेयवस्तुनः मूल्यत्वेन दीयते अर्घ कर्मणि घञ्। (संज्ञायामर्घोऽभिधेयम्। पा ७।३।५३ सूत्रे वार्तिक) १ मूल्य, दाम, जो रुपया-पैसा कोई चीज खरीदनेका दिया जाता हो। अर्घ पूजायां

करणे घञ् न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्। २ पूजाका उपचार दूर्वा, तण्डुल प्रभृति। ३ पूजनोपचार अर्पण। इसमें जल, दुग्ध, कुशाग्र, दधि, सर्षप, तण्डुल और यव पडता है। ४ जलदान, सामने पानीका छोड़ना। ५ हस्तप्रक्षालनार्थ जल प्रदान, हाथ धोनेको पानीका दिया जाना। ६ हस्तप्रक्षालन-जल, हाथ धोनेका पानी। ७ मुक्ताविशेष, कोई मोती। ८ उपहार, भेंट, चढ़ावा।

अर्घट (सं० क्ली०) भस्म, कुशता।

अर्घदान (सं० क्ली०) अर्घ समर्पण, भेंटका चढ़ावा।

अर्घपात्र (सं० पु०) अर्घ देनेका बरतन, अर्घा। यह तांबेका होता और देवताको जल देनेके काम आता है।

अर्घबलाबल (सं० क्ली०) मूल्य निर्धारण, दामका निर्ख, वाजिब कीमत, भावको घटा-बढ़ी।

अर्घसंख्यापन (सं० क्ली०) वस्तु-मूल्य निर्धारण, चीजके दामका निर्ख। सौदागरसे चीजका दाम बंधाना राजाका काम है। यह सप्ताह वा पक्षके मध्यमें एक बार अवश्य होना चाहिये।

अर्घा (हिं० पु०) १ जलहरी। २ अर्घपात्र।

अर्घार्ह (सं० त्रि०) अर्घ देने योग्य।

अर्घीश (सं० पु०) अर्घः पूजोपचार विशेषोऽस्तास्य भक्तदेयत्वेन, अर्घ-ईश-ईश, कर्मधा०। सकल देवताके मध्य पूज्यतम महादेव।

अर्घ्य (सं० त्रि०) अर्घ्यते पूज्यते अर्घ-ण्यत् न्यङ्क्वादि कुत्वम्, अर्घमर्हति अर्घ-यत् वा। १ पूजनीय। अर्घाय देयं यत्। २ पूजा करनेको दूर्वा जल प्रभृति उपकरण। देवताको पूजा करनेके समय पाद्य अर्घ्य देकर पूजा होती है। उस समय घरमें अतिथि वा पूजनीय व्यक्तिके आनेसे गृहस्थ लोग पाद्य अर्घ्य देकर उसकी पूजा करते हैं।

(क्ली०) अर्घं मूल्यमधिक मर्हति यत्। ३ जरत्कारु तपोवनका उत्पन्न मधु। अतिशय मूल्यवान् होनेके कारण इसे अर्घ्य कहते हैं।

अर्घ्यके लिये जलदानकी व्यवस्था सामान्य और विशेष भेदसे दो प्रकार है। सामान्य अर्घ्यका नियम यह है,—प्रोक्षणी पात्रको बाईं ओर पहले एक त्रिकोणवृत्त बनाये। पीछे उसमें आधारशक्तिकी पूजा करनी होती है। आधारशक्तिकी पूजा हो जाने पर पात्रको अस्त्रमन्त्रसे धो डाले। धोनेके बाद प्रणवादि मन्त्र उच्चारण-पूर्वक उस पात्रमें जल भरना आवश्यक है। उसके अनन्तर अङ्कुशमुद्राद्वारा 'गङ्गे च यमुने' इत्यादि मन्त्रपाठ करते करते सूर्यमण्डलसे तीर्थको आवाहन करे। अन्तमें प्रणवमन्त्र द्वारा गन्ध-पुष्पादिसे पूजा करके धेनुमुद्रा दिखाना और आठ वा दश बार प्रणव पाठ करना चाहिये। यही सामान्य अर्घ्य है।

विशेष अर्घ्यका नियम यह है,—कोषिकी बाईं ओर त्रिकोणमण्डल बनाकर उसके ऊपर त्रिपदिका-को रखे। उसके बाद शङ्खको अस्त्रमन्त्रसे धोकर उस त्रिपदिकाके ऊपर रख एवं उलटी ओर मातृका मन्त्र पढ़ और गन्धपुष्पादि डाल शङ्खमें जल भर दे। इन सब प्रक्रियायोंके समाप्त हो जाने पर त्रिपदिकासे अग्निमण्डलकी, शङ्खसे सूर्यमण्डलकी एवं जलसे सोममण्डलकी पूजा करनी पड़ती है। उसके बाद अङ्कुशमुद्रा द्वारा सूर्यमण्डलसे गङ्गा प्रभृति तीर्थका आवाहन करे। गङ्गादि तीर्थका आवाहन हो जाने पर मन्त्रपाठपूर्वक हृदयसे देवताका आवाहन करना पड़ता है। कूर्चमन्त्र द्वारा अवगुण्ठन कर अस्त्रमन्त्र द्वारा गालिनीमुद्रा दिखा एकबार उस जलको देखे। अन्तमें अङ्गन्यास मन्त्र द्वारा विभक्तकर गन्धपुष्पादिसे देवताकी पूजा करनी होती है। देवताकी पूजा समाप्त हो जाने पर मत्स्यमुद्राद्वारा उस पर हाथ ढक दे एवं आठ बार मूलमन्त्र जपे। सबके अन्तमें धेनुमुद्रा दिखाकर शङ्खसे थोड़ासा जल कोषिमें डाल देना चाहिये।

अर्घ्यतम् (सं० अव्य०) उचित मूल्यपर, वाजिब दामसे।

अर्घ्याट (सं० पु०) शकला, तालमखाना।

अर्घ्यात, अर्घ्याट देखो।

अर्घ्याल, अर्घ्याट देखो।

अर्घ्यार्ह (सं० पु०) मुचुकुन्द वृक्ष।

अर्चक (सं० त्रि०) अर्चति अर्चयति वा, अर्च-ण्वुल्। पूजक, परस्तिश करनेवाला। (स्त्री०) टाप्-इत्वम्। अर्चिका।

अर्चत्रि (वै० त्रि०) शब्दकर, आवाज़ निकालनेवाला, जो गरज रहा हो।

अर्चत्र (वै० त्रि०) अर्चनमर्हति यत्, अर्च भावे अत्रि। पूजनीय, पूजने योग्य, जो परस्तिश किये जानेके क़ाबिल हो।

अर्चद्धूम (वै० त्रि०) दीप्तिमान धूमविशिष्ट, जिसके धुवां चमकदार रहे।

अर्चन (सं० क्ली०) अर्च भावे ल्युट्। पूजन, परस्तिश।

अर्चना (सं० स्त्री०) चुरा० अर्च-युच्, टाप्। पूजा, परस्तिश।

अर्चनानस् (वै० पु०) ऋषि विशेष।

अर्चनीय (सं० त्रि०) अर्चति, अर्च-अनीयर्। पूजनीय, परस्तिश पाने क़ाबिल।

अर्चमान, अर्चनीय देखो।

अर्चा (सं० स्त्री०) अर्च आधारे अ। १ प्रतिमा, मूर्ति। 'अर्चा प्रतिमा'। (स्मार्त) भावे अ। २ पूजा, परस्तिश। 'अर्चा पूजाप्रतिमयोः'। (विश्व)

अर्चावत् (सं० त्रि०) पूजित, जो परस्तिश किया गया हो।

अर्चाविडम्बन (सं० क्ली०) मिथ्या पूजा, झूठी परस्तिश।

अर्चि (सं० स्त्री०) अर्च-इन्। १ अग्निशिखा, आगकी लपट। २ कान्ति, चमक।

अर्चित (सं० त्रि०) अर्च-क्त। १ पूजित, परस्तिश पाया हुआ। २ भक्तिसे प्रदत्त, जो इज़्ज़तसे दिया गया हो।

अर्चितिन् (सं० त्रि०) सम्मान देता हुआ, जो इज़्ज़त कर रहा हो।

अर्चितृ (सं० पु०) पूजक, परस्तिश करनेवाला शख़्स।

अर्चिन् (वै० त्रि०) पूजा करता हुआ, जो परस्तिश कर रहा हो। २ दीप्तिमान, चमकदार।

अर्चिनी (सं० पु०) १ प्रकाशका किरण, रोशनीकी शुवा। २ व्यक्तिविशेष, किसी शख़्सका नाम।

अर्चिनेत्राधिपति (सं० पु०) यक्ष विशेष।

अर्चिमत् (सं० त्रि०) दीप्तिमान, चमकदार।

अर्चिमान् (सं० पु०) व्यक्तिविशेष। (त्रि०) अर्चिमत् देखो।

अर्चिमाल्य (सं० पु०) महर्षि मरीचिके पुत्र। वाल्मीकिने इन्हें बन्दर बताया है।

अर्चिरादिमार्ग (सं० पु०) अर्चिरादिभिस्तदभिमानिदेवैः उपलक्षितो मार्गः, शाक० तत्। देवतादिके गमनागमनका उत्तर पथ, उत्तरकी जिस राह देवता आयें-जायें।

अर्चिवत् (वै० त्रि०) दीप्तिमान, भभकते हुआ।

अर्चिष्मत् (सं० पु०) अर्चिरस्य मतुप्। १ सूर्य। २ अग्नि। ३ अग्निदेव। (त्रि०) ४ दीप्त, चमकीला।

अर्चिष्मती (सं० स्त्री०) १ अग्निपुरी। २ बौद्ध मतानुसार—दशमें एक पृथिवी।

अर्चिष्मान्, अर्चिष्मत् देखो।

अर्चिस् (सं० स्त्री०) अर्चति अर्च्यते, अर्च-इसि। १ शिखा, चोटी। 'अर्चिर्हेतिः शिखा स्त्रियाम्।' (अमर) २ कृशाश्वकी पत्नी और धूमकेतुकी माता। (पु०) ३ मयूख, किरण। 'अर्चिर्मयूखशिखयोः'। (हेम) ४ अग्नि, आग। (क्ली०) ५ दीप्तिमान, चमक-दमक।

'ज्वालाभासोर्नपुंस्यर्चिः।' (अमर)

अर्च्य (सं० त्रि०) अर्चितुमर्हम्, भादि अर्च-ण्यत्, चुरा० अर्च यत्, ऋच स्तुतौ ण्यत्, वा। १ पूजनीय अर्चनीय, स्तुत्य, परस्तिशके क़ाबिल, जो तारीफ़के क़ाबिल हो। 'समर्घ्यमारादभिवर्तमानम्।' (रघु २।१०) (अव्य०) २ पूजकर, परस्तिशके साथ।

अर्ज़ (अ० स्त्री०) १ प्रार्थना, निवेदन। २ आयतन, चौड़ाई।

अर्ज़-इरसाल (अ० स्त्री०) राजकोषमें धन पहुंचानेका आज्ञापत्र, जिस काग़ज़के ज़रिये रुपया सरकारी ख़ज़ानेमें दाख़िल करें।

अर्जक (सं० पु०) अर्जयति निष्पादयति सुखादि

वस्त्राणि वा स्वजाततूलेन, अर्ज--णिच्-ण्वुल्। १ कार्पास वृक्ष, कपासका पेड़। २ क्षुद्र तुलसीवृक्ष-भेद, बबयी। ३ श्वेत बर्वरी, सादी बबयी। ४ श्वेत पलाश वृक्ष, सफ़ेद टेसूका पेड़। (त्रि०) अर्जति अर्थान्, अर्ज-कर्तरि-ण्वुल्। ५ उपार्जक, पैदा करनेवाला, जो रुपया कमाता हो।

अर्जकार्ज (सं० पु०) असन वृक्ष, सज, असना।

अर्जदाश्त (अ० स्त्री०) निवेदनपत्र, दरख्वास्त।

अर्जन (सं० क्लो०) अर्ज भावे ल्युट्। १ स्वहेतुभूत व्यापार विशेष, उपार्जन, अपने अपने कामकी पैदायश। २ संग्रह, धरोहर। मनुने सात प्रकारके धनलाभको धर्मसङ्गत अर्जन बताया है,—

"सप्तवित्तागमाधर्म्या दायो लाभः क्रयो जयः।
प्रयोगः कर्मयोगश्च सत्प्रतिग्रह एव च ॥" (मनु १०।११५)

पैटक धन, गच्छित धन, (जो धरोहर कोई रखके मर जाये और जिसका दूसरा दावेदार न हो) बन्धु-बान्धव कर्टक दत्त धन और मूल्य द्वारा क्रीत वस्तु ब्राह्मण प्रभृति चार वर्णके पक्षमें धर्मसङ्गत अर्जन है। दूसरेको जीत जो धन मिलता, क्षत्रियके पक्षमें वह भी धर्मसङ्गत अर्जन होता है। व्याज, कृषि, वाणिज्य प्रभृतिसे जो धन आता, वह वैश्यके ही पक्षमें धर्मानुगत अर्जन कहाता है। सत्प्रतिग्रह ब्राह्मणके पक्षमें धर्म-सङ्गत अर्जन है। फिर ब्राह्मण याजन और अध्यापनसे जो धन पाता, वह भी धर्मसङ्गत अर्जन ही कहाता है। शूद्र एवं सङ्कर जातिके पक्षमें दास्यवृत्ति द्वारा प्राप्त धन धर्मसङ्गत अर्जन होता है।

अर्जनीय (सं० त्रि०) १ प्राप्तव्य, हासिल करने क़ाबिल। २ संग्रहणीय, इकट्ठा करने लायक़।

अर्जमा (हिं०) अर्यमा देखो।

अर्जित (सं० त्रि०) १ उपार्जन किया हुआ, जो कमाया गया हो। २ संगृहीत, इकट्ठा किया हुआ।

अर्ज़ी, अर्जदाश्त देखो।

अर्ज़ीदावा (अ० स्त्री०) दावेकी अर्ज़ी, जो दरख्वास्त दीवानीमें नालिश करनेको दी जाती हो।

अर्ज़ीमरम्मत (अ० स्त्री०) शोधनका आवेदनपत्र, जो दरख्वास्त पहली दरख्वास्तकी बिगड़ी बात बनानेको दी जाती हो।

अर्जुन (सं० पु०) अर्जयति यशः अर्ज-णिच्। १ पार्थ, पाण्डुपुत्र। २ अर्जुन घास। ३ हैहय कार्तवीर्य्य। ४ करवीर। ५ मयूर। ६ श्वेत वर्ण। ७ रूप। ८ नेत्ररोग विशेष। ९ इन्द्र पुत्र। १० अर्जुन वृक्ष। (त्रि०) ११ शुभ्रगुणविशिष्ट।

अर्जुन पाण्डु राजके तृतीय पुत्र रहे। इन्द्रके औरससे कुन्तीके गर्भमें इनका जन्म हुआ था। यह पहले एक इन्द्र थे। पीछे राज्यभ्रष्ट एवं हीनबल होकर हिमालयकी एक गुफामें रहने लगे। अन्तमें महादेवकी आज्ञाके अनुसार मर्त्यलोकमें आकर इन्होंने जन्म ग्रहण किया।

अर्जुन द्रोणाचार्य्यके प्रिय शिष्य रहे। यह महा-धनुर्धर और महायोद्धा थे। इनके पास अक्षय तूणीर, गाण्डीव धनुष एवं कपिध्वज रथ विद्यमान रहा। स्वयं श्रीकृष्ण इनके सारथी थे। अर्जुनका वीरत्व पृथिवी विख्यात है। इन्होंने लक्ष्य वेधकर द्रौपदीको प्राप्त और खाण्डववन जलाकर अग्निको तुष्ट किया था। कुरुक्षेत्रके युद्धमें इन्होंने अपरिसीम वीरत्व दिखाया। इन्होंने द्रौपदी, सुभद्रा और चित्राङ्गदाका पाणि-ग्रहण किया था। अभिमन्यु अर्जुनके पुत्र एवं परीक्षित पौत्र थे।

महाभारतके विराटपर्वमें अर्जुनके दश नाम लिखे हैं। यथा—अर्जुन, फाल्गुन, जिष्णु, किरीटी, श्वेत-वाहन, वीभत्सु, विजय, कृष्ण, सव्यसाची और धन-ञ्जय। इसके अतिरिक्त इनके और भी कई नाम प्रचलित हैं। यथा—पार्थ, शक्रनन्दन, गाण्डीवी, मध्यमपाण्डव, श्वेतवाजी, कपिध्वज, राधाभेदी, सुभ-द्रेश, गुडाकेश और वृहन्नल।

अर्जुन प्रभृति दश नाम क्यों पड़े थे, यह बात इन्होंने विराटपुत्र उत्तरसे स्वयं कही थी—पृथिवी भरमें मेरे जैसा रङ्ग और किसीका नहीं है और मैं सर्वदा विशुद्ध कर्मका अनुष्ठान किया करता हूं, इसीसे लोग मुझे अर्जुन कहते हैं।

"पृथिव्यां चतुरन्तायां वर्णो मे दुर्लभः समः ।
करोमि कर्म शुक्लञ्च तस्मान्मामर्जुनं विदुः ॥"

(विराटप० ४४ अ० २० श्लो० ।)

नीलकण्ठने इसकी टीकामें लिखा है,—अर्जुन इति ऋज गतिस्थानार्जनोपार्जनेषु इत्यत उनन् प्रत्यये भवति वर्णो दीप्तिः सम ऋजुः दीप्तिमत्त्वात् समत्वात् शुद्धकर्मकरत्वाच्च अर्जुन इत्यर्थः ।

यह समस्त देशको जीत केवल धनग्रहण करते हुए उसीमें रहते थे, इससे इनका नाम धनञ्जय हुआ। युद्धमें जाकर विना जय किये, यह कभी लौटते न थे, इसलिये इनका नाम विजय पड़ा। रणक्षेत्रपर अर्जुनके रथमें सफेद रंगके घोड़े जुते रहते थे, इसीसे लोग इन्हें श्वेतवाहन कहने लगे। हिमालयपृष्ठपर दिनके समय उत्तरफल्गुनी एवं पूर्वफल्गुनी नक्षत्रोंके सन्धिस्थानमें इनका जन्म हुआ था, इसीसे यह फाल्गुन नामसे विख्यात हुये। दानव-युद्धके समय इन्द्रने इन्हें उज्ज्वल रत्नकिरीट पहना दिया था, इसलिये लोग इन्हें किरीटी कहकर पुकारने लगे। अर्जुनने युद्धस्थलमें कभी घृणितकर्म नहीं किया, इसीसे वीभत्सु नाम पाया था। यह दाहने हाथकी तरह सव्य अर्थात् बांये हाथसे गाण्डीवको चढ़ाकर बाण छोड़ सकते थे, इससे इनका दूसरा नाम सव्यसाची रहा। (सव्येन वामेनापि हस्तेन सचितुं ज्याकर्षणादिक्रियायां सम्बन्धं शीलमस्येति सव्यसाची इत्यर्थः)। अर्जुनको कोई हरा न सकता था, इसीसे इन्होंने जिष्णु नाम पाया। देखनेमें अर्जुन उज्ज्वल कृष्ण वर्णके रहे, इसलिये बचपनमें या पाण्डुराज इन्हें प्यारसे कृष्ण कहकर पुकारा करते थे।

अर्जुनक (सं० त्रि०) १ अर्जुनसम्बन्धीय, अर्जुनसे ताल्लुक रखनेवाला। (पु०) २ अर्जुनपूजक, जो अर्जुनको पूजता हो।

अर्जुनकाण्ड (वै० त्रि०) श्वेतानुबन्ध-विशिष्ठ, सफेद ज़मीमेवाला, जिसके सफेद तिलम्मा रहे।

अर्जुनघृत (सं० क्ली०) घृतौषध भेद। यह हृद्रोगमें हित है। इसके बनानेका विधान इस प्रकार है—अर्जुनका त्वक् ६४ पल, जल ६४ शरावक, एकत्र ले पाक करे। जब चतुर्थांश यानी १६ शरावक शेष रहे तो उतारकर कपड़ेसे छान ले। पीछे इसमें अर्जुनकी छालका कल्क १ शराव, मूर्च्छित घृत ४ शराव मिलाकर एकत्र पचाडाले।

(चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

दूसरा प्रकार—घृत ४ शराव, अर्जुनस्वरस ४ शराव, कल्कार्थ अर्जुनत्वक् १ शराव छोड़ते हैं। बनानेकी रीति पूर्ववत् ही समझना चाहिये।

(भैषज्यरत्नावली)

तीसरा प्रकार—मूर्च्छित गायका घी ४ सेर, क्वाथार्थ अर्जुनकी छाल ८ सेर, जल ६४ सेर, किसी बरतनमें डाल पकाना चाहिये। शेष १६ सेर रह जानेसे उतार लेते हैं। कल्कार्थ अर्जुनकी छाल १ सेर, यह सब रख घीके साथ पकाये। मात्रा १ से २ तोले तक है। सब तरहके हृद्रोगमें यह विशेष उपकार करता है।

अर्जुनछवि (सं० त्रि०) श्वेत, सफेद।

अर्जुनतस् (सं० अव्य०) अर्जुनकी ओरसे।

अर्जुनत्वक् (सं० स्त्री०) अर्जुनवल्कल, अर्जुन पेड़का बकला।

अर्जुनध्वज (सं० पु०) ६-तत्। अर्जुनके रथ-ध्वज हनूमान्।

अर्जुननामाख्य (सं० पु०) अर्जुन वृक्ष।

अर्जुनपाकी (सं० स्त्री०) अर्जुनः शुभ्रः पाकः फलादिर्यस्याः गौरो जातित्वात् ङीप्। श्वेतपाकी, लता विशेष। इसका फल सफेद होता है।

अर्जुनरोग (सं० पु०) नेत्ररोगभेद, (Stye or hardeolum) बिलनी। यह सामान्य स्फोटक रोग भिन्न और कुछ भी नहीं, दुर्बल मनुष्यके पलक किनारे एक फोड़ा निकलता है। उष्ण जलका स्वेद और अलसीका प्रलेप देनेसे फोड़ा पक जाता है। फिर उसका ऊपरी भाग कुछ काट डालनेसे पीप निकलती है। हिन्दुस्थानमें अर्जुन होनेसे लोग पुरानी दीवारका कोयला घिसकर लगा देते हैं। एक फोड़ा होनेसे और तीन चार फोड़े निकल सकते हैं।

अर्जुनवृक्ष (सं०) वृक्षभेद। (Terminalia Arjuna) पाण्डुपुत्र अर्जुनके नामका पर्य्याय भी अर्जुनवृक्षमें प्रयुक्त होता है। पर्य्याय हैं—नदीसर्ज, वीरतरु, इन्द्रद्रु, ककुभ, अम्बर, पार्थ, चित्रयोधी, धनञ्जय, वैरातङ्क, किरीटी, गाण्डीवी, शिवमल्लक, सव्यसाची, कर्णारि, करवीरक, कौन्तेय, इन्द्रसूनु, वीरद्रु, कृष्णसारथि, पृथाज, फाल्गुन, धन्वी। यह अवध, बंगाल, मध्यभारत और दक्षिणाञ्चलमें बहुत होता है। इसका पेड़ अमरूदके पेड़ जैसा देख पड़ता है। पत्ती और छाल भी प्रायः अमरूद ही जैसी होती है। यह अमरूदके वृक्षसे भी बहुत बड़ा बैठता है। वर्षाकाल इसमें फल लगते हैं। फूल छोटे और कुछ सफेद होते हैं। उनसे बहुत ही कड़ा मीठा गन्ध निकलता है।

इसकी छाल रक्तवर्ण, अत्यन्त सङ्कोचक और बलकरी होती है। चमड़ेको चिकना करने और कपड़ा रंगनेमें वह व्यवहारका जाती है। वैद्यकशास्त्रके मतानुसार यह हृद्रोगका महौषध है। हृत्पिण्डके सब रोगोंमें वैद्य लोग इसे व्यवहार करते हैं। इसके क्वाथसे घावको धो डालनेसे पीप और (मवाद) नहीं निकलता, घाव शीघ्र ही सूख जाता है। हड्डी टूट जानेसे इसका क्वाथ वा चूर्ण सेवन करना पड़ता है। उससे दर्द कम पड़ता और हड्डी जुड़ जाती है।

अर्जुनस (सं० त्रि०) अर्जुनवृक्षसे अतिशय पूर्ण, जिसमें अर्जुनके पेड़ हदसे ज्यादा रहें।

अर्जुनसुधा (सं० स्त्री०) अर्जुनोत्थ सुधा, अर्जुनके पेड़से निकला रस। यह कफको काटती है। (वैद्यकनिघण्टु)

अर्जुनाख्य (सं० पु०) १ कासतृण। २ अर्जुन वृक्ष।

अर्जुनाद (सं० त्रि०) दर्भकाशखादक।

अर्जुनाद्यघृत (सं० क्ली०) घृतौषधविशेष। इसके प्रस्तुत करनेकी रीति यह है—अर्जुन, पटोल, निम्ब, वच, दीप्यक, मञ्जिष्ठ, भल्लातक, अगुरु, घन, गदा, अनल, चन्दन, खस, गोक्षुरक, सोमवल्क, हरिद्रा, त्रिफला, इतने द्रव्योंका क्वाथ तय्यार करके, पीछे अश्मन्तक और अजन, दीप्यक और लोध्र, मञ्जिष्ठ और अतिविषा इन पृथक् पृथक् दो दो द्रव्योंका कल्क कषाय तय्यार करना चाहिये। यदि कफ वातसे मेह उत्पन्न हुआ हो, तो तैल, और पित्तसे मेह उत्पन्न हुआ हो, तो घृतको इन सब द्रव्योंके साथ पकाते हैं। (भावप्रकाश)

अर्जुनायन (सं० क्ली०) उत्तरप्रान्तका देश विशेष, कोई शिमाली मुल्क। वराहमिहिरने इसका उल्लेख किया है।

अर्जुनारिष्टसम्बन्न (सं० त्रि०) अर्जुन एवं निम्ब वृक्षसे आवृत, जो अर्जुन और नीमके पेड़से भरा हो।

अर्जुनी (सं० स्त्री०) अर्जुन-अन्यतो ङीष्। १ उषा, अनिरुद्धकी स्त्री। अर्जुनमिति रूप नाम, तच्चात्रादित्यरश्मिसम्बन्धात् श्वेतम्, अर्जुनी श्वेता; यद्वा अर्जुन्यो गावः ता अस्याः सन्ति, वाहनत्वेन मत्वर्थीय ईकारः व्यत्ययेन हल्ड्यादिलोपः। २ बाहुदा नदी, करतोया नदी। यह हिमालयसे उत्पन्न हो गङ्गामें जा गिरी है। ३ गो, सफेद गाय। ४ दूती, कुटनी। 'अर्जुनी गवि। उषायां करतोयायां कुट्टन्यामपि च क्वचित्।' (विश्व)

अर्जुनोपम (सं० पु०) अर्जुनः वृक्षभेदः उपमा यस्य, गाणे ह्रस्वः। शाकद्रुम, साखूका दरख्त।

अर्ण (सं० पु०) तनादि० ऋण-अच्। अकारादि वर्ण, अक्षर, हर्फ। "साधकार्णाः"। (तन्त्र) २ शाकवृक्ष, साखूका पेड़। ३ तरङ्ग, लहर। ४ छन्दोविशेष, यह दण्डकका भेद है। (क्ली०) ५ युद्धकोलाहल, लड़ाईका शोर। (त्रि०) ६ गमनस्वभाव, चलने-फिरनेवाला। ७ फेन देता हुआ, जिससे फेन निकले। ८ निरानन्द, बेचैन।

अर्णभव (सं० पु०) शङ्ख।

अर्णव (सं० पु०) अर्णांसि जलानि दातृत्वेन सन्त्यस्य वा सलोपः। १ जलदाता, जो पानी पहुंचाता हो। २ सूर्य। ३ इन्द्र। ४ समुद्र। ५ तरङ्ग, लहर। ६ वायुमण्डल। ७ छन्दोविशेष। (त्रि०) ८ व्याकुल, जोश खाया हुआ। ८ फेन देता हुआ, जो खौल रहा हो। ८ निरानन्द, बेचैन। १० चार संख्या।

अर्णवज (सं० पु०) अर्णवात् जायते; अर्णव-जन-ड,

५-तत्। १ समुद्रफेन। २ मत्स्य विशेष। (त्रि०) ३ समुद्रजात, बहरसे पैदा।
अर्णवजमल (सं० पु०) समुद्रफेन।
अर्णवपोत (सं० पु०) जहाज, नाव।
अर्णवफेन, अर्णवजमल देखो।
अर्णवमन्दिर (सं० पु०) अर्णवः मन्दिरमिव यस्य अर्णवे मन्दिरं यस्य वा, बहुव्री०। वरुण, जिसके समुद्र ही घर रहे।
अर्णवमल, अर्णवजमल देखो।
अर्णवयान (सं० क्ली०) जहाज, नाव, समुद्रपर चलनेकी सवारी।
अर्णवान्त (सं० पु०) समुद्रका छोर, बहरका सिरा।
अर्णवोद्भव (सं० पु०) अर्णवः उद्भवः उत्पत्तिस्थानं यस्य, बहुव्री०। १ अग्निजार वृक्ष। २ चन्द्र, चांद। (क्ली०) ३ अमृत, आबहयात।
अर्णवोद्भवा (सं० स्त्री०) श्री, समुद्रसे निकली हुई लक्ष्मी।
अर्णस् (सं० क्ली०) ऋच्छति गच्छति, ऋ-असुन् नुट् च। १ जल, पानी। २ तरङ्ग, लहर। ३ समुद्र, बहर। ४ वायुमण्डल। ५ नदी, दरया।
अर्णस (सं० पु०) अर्णोऽस्त्यस्य, अर्णस्-अर्श आदि० अच्। १ समुद्र, बहर। (त्रि०) २ जलविशिष्ट, पानीदार।
अर्णस्वत् (वै०) अर्णस देखो।
अर्णा (सं० स्त्री०) नदी दरया।
अर्णास्वन् (सं० पु०) अर्णांसि सन्त्यस्मिन्, अर्णस्-विनि। अर्णस देखो।
अर्णोद (सं० पु०) अर्णांसि ददाति, अर्ण-दा-क। १ मेघ, बादल। २ मुस्तक, मोथा। (त्रि०) ३ जलदाता, पानी पहुंचानेवाला।
अर्णोद्भव (सं० पु०) अर्णसि भवति; अर्णस-भू-अच्, ७-तत्। १ शङ्ख। (त्रि०) २ जलजात, पानीसे पैदा।
अर्णोवृत् (वै० त्रि०) जलविशिष्ट, पानीदार।
अर्तगल, आर्तगल (सं० पु०) आर्तस्य पीड़ितस्य इव गलः गलनं पत्रपुष्पादेः यस्मात्, यद्वा आर्ता इव गला चीणकण्ठभागो यस्य; बहुव्री० पृषा० वा ह्रस्वः नीलझिण्टी, नीली झाड़ी।
अर्तन (सं० क्ली) ऋत-ल्युट् पचे इयङ्भावः। १ निन्दा, धिक्कारत, बुराई। (त्रि०) २ निन्दक, धिक्कारत करनेवाला।
अर्ति (सं० स्त्री०) अर्द-क्तिन्। १ पीड़ा, दर्द। अर्दति येन, करणे क्तिन्। २ धनुष्कोटी, कमानका सिरा। 'अर्तिः पीडाधनुष्कोट्योः।' (अमर)
अर्तिका (सं० स्त्री०) ऋत-ण्वुल्-टाप्। नाट्योक्त ज्येष्ठ भगिनी, खेलकी बड़ी बहन।
अर्तुक (सं० त्रि०) ऋत बाहु० उकञ्। स्पर्धक, स्पर्धाकारी, हसदी, झगड़ालू।
अर्थ (सं० पु०) अर्थते ऋ-(उषि-कुषि-गार्तिभ्यस्थन्। उण् २।४) इति थन्। यद्वा अर्थ्यते अर्थ-भावे कर्मणि वा अच्। अभिधेय, वाच्य, मानी। शब्दको शक्ति द्वारा बोध्य पदार्थ अर्थात् 'घट' ऐसा शब्द उच्चारण करनेसे जो वस्तु समझी जाती, वही घट शब्दका अर्थ है। अलङ्कारिकोंके मतसे अर्थ तीन प्रकारमें विभक्त है—वाच्यार्थ, लक्ष्यार्थ और व्यङ्ग्यार्थ। जिस शब्दसे जो अर्थ प्रतिपन्न होता है, उसे वाच्यार्थ कहते हैं। जैसे 'गृह' कहनेसे घर समझा गया। लक्षण द्वारा जो अर्थ समझते, उसे लक्ष्यार्थ कहते हैं। जैसे, गङ्गामें गोपगण वास करते हैं। गङ्गाके जलमें मनुष्य वास नहीं कर सकते, अतएव लक्षण द्वारा गङ्गाके कूलवर्ती गोपगण समझ पड़ते हैं। काव्यमें व्यञ्जना शक्तिद्वारा जिस अर्थका बोध होता है, उसे व्यङ्ग्यार्थ कहते हैं।

२ धन, दौलत। सब कोई धनकी प्रार्थना करता इससे धनका नाम अर्थ हुआ है। अर्थ तीन प्रकारका है—शुक्ल वर्ण, शबल वर्ण एवं कृष्ण वर्ण। शुक्ल वर्ण अर्थद्वारा ऐहिक कार्य्य करनेसे देवत्व, शबल वर्ण अर्थद्वारा मनुष्यत्व और कृष्णवर्ण अर्थद्वारा तिर्यक् योनित्व लाभ होता है। चतुर्वर्णके निज निज वृत्तिद्वारा उपार्जित अर्थका नाम शुक्ल है। जैसे ब्राह्मणका याजन अध्यापनादिद्वारा अर्जित, क्षत्रियका जयलब्ध, वैश्यका कृषि वाणिज्यादि लब्ध और शूद्रका दास्योपार्जित धन है।

अनन्तर वृत्तिद्वारा उपार्जित धनको शबल कहते हैं। अर्थात् अपनेसे नीच जातिकी वृत्तिद्वारा जो धन उपार्जन किया जाता, उसका नाम शबल है। जैसे ब्राह्मणका क्षत्रिय वृत्तिद्वारा उपार्जित और क्षत्रियका वैश्य वृत्तिद्वारा उपार्जित धन इत्यादि। अन्तरित वृत्ति द्वारा उपार्जित धनका नाम कृष्ण है। अर्थात् नीचेके एक वर्णको अतिक्रम कर उसके बादके वर्णकी वृत्ति द्वारा जो अर्थ उपार्जन किया जाता है, उसे कृष्ण कहते हैं। जैसे ब्राह्मणका वैश्यवृत्ति द्वारा और क्षत्रियका शूद्र वृत्ति द्वारा उपार्जित अर्थ। सब वर्णोंके पक्षमें पैतृक किंवा बन्धु बान्धव प्रदत्त अथवा विवाहके समय प्राप्त धन शुक्ल होता है। फिर उत्कोच, शुल्क एवं निषेध वस्तुकी विक्रीसे प्राप्त अथवा परोपकारके बदले मिला हुआ धन शबल कहा जाता है।

पाशा प्रभृति जुवा खेलने एवं नाच, गान, चोरी, परपीड़न, ठगपने तथा दुस्साहसके कामसे जो धन लाभ होता है, हमारे शास्त्रकार उसे कृष्ण कहते हैं।

३ प्रयोजन, मतलब अर्थ शब्दसे प्रयोजन भी समझा जाता है। प्रयोजन दो प्रकारका है,—मुख्य एवं गौण। जो दूसरेकी इच्छाके अधीन नहीं है, उसे मुख्य अर्थ कहते हैं। 'मुझे जिसमें सुख हो कभी दुःख न मिले'। यहां दो इच्छाओंका विषय सुख और दुःखका अभाव ही मुख्य प्रयोजन है। फिर जो अन्य इच्छाके अधीन है, उसे गौण अर्थ कहते हैं। जैसे भोजन करनेसे क्षुधा निवृत्ति होती है। यहां क्षुधानिवृत्ति भोजनकी इच्छाके अधीन रहनेसे गौण है। यद्यपि प्रयोजन नाना प्रकारका है, तथापि शास्त्रकार प्राधान्यके हेतु धर्म अर्थ काम मोक्ष यही चार प्रकारका अर्थ स्वीकार करते हैं। क्योंकि अन्यान्य प्रयोजन इन्हींमें आ जाता है। साङ्ख्यवादी सर्ग और अपवर्ग—यही दो प्रकारका पुरुषार्थ मानता है। दुःखकी अत्यन्त निवृत्ति अर्थात् मोक्षरूप प्रयोजन अन्य इच्छाके अधीन न रहनेसे प्रधान है, धर्म अर्थ काम उसके साधन हैं। उनमें भी धर्म अर्थका एवं अर्थ कामका साधन है। अर्थात् धर्म करनेसे अर्थ होता एवं अर्थ होनेसे काम्य कार्य्य अनायास ही हो जाता है।

४ निमित्त, वास्ता। कर्म्मणि अच्। ५ विषय। ६ शब्दादि। ७ ज्ञेयवस्तु; जाननेका विषय। ८ तन्त्र आवापादि। अर्थचिन्ता शब्द देखो। ९ यथार्थ। १० वस्तु-स्वभाव। ११ निवृत्ति। १२ ज्योतिषोक्त लग्नसे दूसरा गृह। १३ प्रकार। भावे अच्। १४ अभिलाष। १५ प्रार्थना। कर्मणि अच्। १६ अर्चनीय विष्णु। १७ फल।

अर्थकर (सं० त्रि०) अर्थंकरोति, अर्थ कृ हेत्वादौ ट। १ धनका साधन, रुपया देनेवाला। २ उपयोगी, मुफीद। (स्त्री) अर्थकरी।

'अर्थकरी च विद्या।' (हितोपदेश)

अर्थकर्मन् (सं० क्ली०) प्रधान कार्य, खास काम।

अर्थकाम (सं० पु०) १ उपयुक्तता एवं इच्छा, धन तथा अभिलाष, दौलत और खुशी। (त्रि०) २ धनस्पृह, दौलतका ख्वाहिशमन्द।

अर्थकिल्विषिन् (सं० त्रि०) धनका पापी, दौलतका बेयीमान, जो रुपया लेने-देनेमें साफ़ न हो।

अर्थकृच्छ्र (सं० क्ली०) अर्थे अर्थस्य वा कृच्छ्रं, ७ वा ६ तत्। १ धनका कष्ट, दौलतकी तकलीफ़। २ कष्टसाध्य प्रयोजन, मुश्किलसे निकलनेवाला काम।

अर्थकृत् (सं० त्रि०) अर्थं करोति, अर्थ-कृ-क्विप् तुक्। अर्थकर, दौलत देनेवाला।

अर्थकृत्या (सं० स्त्री०) लाभका कार्य, जो काम फायदेके लिये किया जाता हो।

अर्थक्रम (सं० पु०) अर्थस्य क्रमः, ६-तत्। जैमिन्युक्त छः के अन्तर्गत क्रमविशेष। छः प्रकारका क्रम यह है—शब्दक्रम, अर्थक्रम, पाठक्रम, स्थानक्रम, मुख्यक्रम और प्रवृत्तिक्रम। शब्दक्रम और अर्थक्रम साथ ही आनेपर अर्थक्रम बलवान् होनेसे उसीके अनुसार कार्यका अनुष्ठान करते हैं। यथा,—

"अग्निहोत्रं जुहोति यवागूं पचति"। (श्रुति)

अर्थात् अग्निहोत्र करता और यवागू पकाता है। किन्तु यवागू पकाकर ही अग्निहोत्रयाग होता

है। इसलिये श्रुतिका शब्दक्रम छोड़ अर्थक्रमसे पहले यवागूको ही पकाते हैं।

अर्थगत (सं॰त्रि॰) अर्थं गतम्, २-तत्। १ गतार्थ, बेफ़ायदा, बेमतलब। (पु॰) २ अलङ्कार शास्त्रोक्त अर्थाश्रित दोष विशेष, शायरीमें मानी बिगड़ जानेका ऐब।

अर्थगरीयस् (सं॰ त्रि॰) अर्थान्वित, अभिप्रायगर्भ, मानीदार, जिसमें मतलब खूब भरा रहे।

अर्थगौरव (सं॰ क्लो॰) ६-तत्। अल्प कथामें अर्थका आधिक्य, थोड़ी बातका बड़ा मतलब। इसी प्रकारका शब्द प्रशंसनीय होता है। भारवि कविकी रचना प्रायः अर्थगौरवसे भरी है, जिससे जनसमाजमें उनका बनाया किरातार्जुनीय अति आदरकी सामग्री ठहरा है।

अर्थघ्न (सं॰ त्रि॰) अर्थं हन्ति, ताच्छील्यादौ ट। अर्थनाशक, रुपया बरबाद करनेवाला, फ़ज़ूलखर्च।

अर्थचम्पिका (सं॰ स्त्री॰) कर्कटशृङ्गी, ककरा-सिंगी।

अर्थचिन्तक (सं॰ पु॰) राज्यके आय-व्ययकी चिन्ता रखनेवाला मन्त्री, जो वज़ीर बादशाहीके आमद-खर्चका ख़याल रखता हो।

अर्थचिन्ता (सं॰ स्त्री॰) अर्थानां मन्त्रिकर्तव्य तन्त्रा-यव्ययादीनां चिन्ता, ६-तत्। मन्त्रीके कर्तव्य राजाङ्ग-तन्त्र और आयव्ययादिकी चिन्ता, अपनी और दूसरेकी बादशाहीमें किये जानेवाले कामका ख़याल।

अर्थजात (सं॰ क्लो॰) अर्थानां जातम्, ६ तत्। १ अर्थसमूह, दौलतका ढेर। (त्रि॰) अर्थः जातो यस्य, बहुव्री॰। २ धनसम्पन्न, दौलतमन्द। ३ अभि-प्रायगर्भ, मानीदार।

अर्थज्ञ (सं॰ त्रि॰) अर्थं जानाति, अर्थ-ज्ञा-क। प्रयोजनज्ञ, मानी समझनेवाला, जो मतलब निकाल लेता हो।

अर्थतत्त्व (सं॰ क्लो॰) १ सत्य, मूल विषय, रास्ती, असली मतलब। २ किसी विषयकी सच्ची दशा, मामलेकी जो हालत असलमें रहे।

अर्थतस् (सं॰ अव्य॰) अर्थ—तसिल्। १ किसी प्रधान विषयपर, खास मतलबसे। २ अर्थानुसार, मानीके मुवाफ़िक़। ३ वस्तुतः, असलमें सच-सच। ४ अर्थात्, यानी।

अर्थद (सं॰ त्रि॰) अर्थान् धनानि ददाति, अर्थ-दा-क १ धनद, दौलत देनेवाला। २ उपयोगी, फ़ायदेमन्द। ३ उदार, सखी। (पु॰) ४ धनदान द्वारा सन्तोष-कारी शिष्य वा छात्र, जो शागिर्द या तालब-इल्म दौलत दे खुश करता हो। ५ कुबेर।

अर्थदण्ड (सं॰ पु॰-क्लो॰) जुर्माना, दौलतकी सज़ा, जो रुपया किसी मुजरिमसे सज़ाके तौरपर वसूल हो।

अर्थदूषण (सं॰ क्लो॰) अर्थानां दूषणम्, ६-तत्। अन्यके धनका अपहार, दूसरेकी दौलतका बिगाड़। सम्पत्तिका अनुचित ग्रसन, दौलतकी गैरवाजिब गिरफ़्तारी। ३ अनुचित व्यय, फ़ज़ूलखर्ची। ४ वाक्यार्थमें दोषारोपण, फ़िक़रेके मानीमें ऐबजोयी।

अर्थना (सं॰ स्त्री॰) अर्थ-युच्-टाप्। याच्ञा, मांग। २ भिक्षा, भीख। ३ अर्दना, तकलीफ़दिही।

"याच्ञा भिक्षार्थनार्दना।" (अमर)

अर्थनिबन्धन (सं॰ त्रि॰) धनसे प्रयोजन रखनेवाला, जिसका सबब दौलतमें रहे।

अर्थनिश्चय (सं॰ पु॰) अभिप्रायका निर्णय, इरादाका फैसला।

अर्थनीय (सं॰ त्रि॰) याच्ञाके योग्य, मांगने क़ाबिल।

अर्थपति (सं॰ पु॰) अर्थानां पतिः, ६-तत्। १ राजा, बादशाह। २ कुबेर। ३ अधीश्वर, दौलतमन्द शख़्स।

अर्थपर (सं॰ त्रि॰) १ धनोपार्जनपर कटिबद्ध, जो दौलत कमानेमें लगा हो। २ व्ययपराङ्मुख, कञ्जूस, जो खर्च करनेसे मुंह चोराता हो।

अर्थपिशाच (सं॰ त्रि॰) धनका प्रेत, दौलतका शैतान्, जो रुपयेके लिये शैतानी करनेसे चूकता न हो।

अर्थप्रकृति (सं॰ स्त्री॰) अर्थानां प्रयोजनानां प्रकृतिः कारणम्, ६-तत्। प्रयोजनहेतु नाटकाङ्ग कार्यका कारण पञ्चक।

अर्थप्रयोग (सं॰ पु॰) अर्थानां धनानां तन्त्रायव्याया-

दीनाञ्च प्रयोगः नियोगः। १ ऋणदान वाणिज्यादि रूप धनवृद्धिकर वृत्ति वा व्यवहार, दौलतका इस्तेमाल, जो काम रुपया बढ़ानेका हो। २ वृद्धिजीविका, सूदखोरी। ३ मन्त्रके कर्तव्य तन्त्र और आवापादिका यथाक्रम नियोग, अपनी और दूसरेकी बादशाहीके आमद-खर्चका काम। इसे मन्त्री करता है।

अर्थप्रसादनी (सं० स्त्री०) धामनवृक्ष।

अर्थप्राप्त (सं० पु०) शब्दं विना केवलेनार्थेन प्राप्तः, ३-तत्। अर्थप्रकाश करनेको शब्द न रहते भी तात्पर्य द्वारा समझा जानेवाला विषय, जो बात मानीदार लफ्ज न मिलते भी मतलबसे ही समझ ला जाती हो।

अर्थप्राप्ति (सं० स्त्री०) १ धनका आगम, रुपयेकी कमायी। २ अभिप्राय सिद्धि, मतलबका निकास।

अर्थबन्ध (सं० पु०) अर्थैः विषयैः शब्दादिभिः बन्धः। १ शब्दादि द्वारा बन्ध, लफ्ज वगैरहकी बन्दिश। २ धनकृत बन्धन, दौलतकी जकड़। ३ मूलपंक्ति, असल।

अर्थबुद्धि (सं० त्रि०) स्वार्थी, खुदगर्ज, जो अपना ही मतलब देखता हो।

अर्थबोध (सं० पु०) मुख्य आशयका अभिज्ञान, असली मतलबका ज़ाहिरा।

अर्थभाज् (सं० त्रि०) सम्पत्तिविभागका अधिकारी, जो रुपये-पैसेके बंटवारेका हक़दार हो।

अर्थभावना (सं० स्त्री०) अर्थानां भावना, ६-तत्। १ सर्वजनक याग-साधन भावना। २ अर्थचिन्ता, दौलतकी फ़िक्र।

अर्थभृत (सं० पु०) अधिक वेतन पानेवाला, जिसकी तनख़ाह बड़ी रहे।

अर्थभेद (सं० पु०) विभिन्नता, अर्थका अन्तर, फ़र्क़, मानीकी जुदायी।

अर्थमर्यादा (सं० स्त्री०) अर्थस्य कारणस्य मर्यादा, सकल कारण वस्तुका मिलन, पूरे मतलबकी चीज़का मिलान।

अर्थमात्र (सं० क्ली०) अर्थ एव मयूर व्यंसकादित्वात् चिदेव चिन्मात्रमितिवत् अवधारणार्थमात्र शब्देन नित्य सम्पत्ति, धन, जायदाद, दौलत, रुपया-पैसा।

अर्थमात्रा (सं० स्त्री०) अर्थस्य मात्रा, ६-तत्। १ अल्पधन, थोड़ी दौलत। २ धनांश, दौलतका हिस्सा। ३ बहुधन, बड़ी दौलत। ४ धन बाहुल्य, दौलतकी बढ़ती। ५ धनका परिमाण, दौलतका मिक़दार।

अर्थलाभ (सं० पु०) धनकी प्राप्ति, दौलतकी कमायी।

अर्थलुब्ध (सं० त्रि०) धनलोलुप, दौलतका ख़ाहिशमन्द, लालची कञ्जूस।

अर्थलेश (सं० पु०) धनकी अल्पता, दौलतकी कमी।

अर्थलाभ (सं० पु०) धनका अभिलाष, दौलतकी ख़ाहिश, लालच।

अर्थवत् (सं० त्रि०) अर्थोऽस्त्यस्य, अर्थ-मतुप मस्य वः। १ अर्थयुक्त, दौलतमन्द। २ सार्थक, मानीदार। (अव्य०) अर्थेन तुल्यं क्रिया अर्थे इव अर्थस्येव अर्थमर्हति वा वति। अर्थके न्याय, मतलबकी तरह, मानीके मुवाफ़िक़।

अर्थवत्त्व (सं० क्ली०) सार्थकता, मानीखेज़ी।

अर्थवर्गीय (सं० त्रि०) द्रव्याधिकरण युक्त, चीज़की मद रखनेवाला।

अर्थवाद (सं० पु०) अर्थस्य लक्षणया स्तुत्यर्थस्य निन्दार्थस्य वा वादः, वद-करणे-घञ्; ६-तत्। १ प्रशंसनीय गुणवाचक शब्द, प्रशंसनीय वाक्य। २ निन्दनीय दोषवाचक शब्द, निन्दनीय वाक्य। भावे घञ्। ३ स्तुत्यर्थ कथन। ४ निन्दार्थ कथन।

गौतमसूत्रके मतसे वेदका दो विभाग है—मन्त्र एवं ब्राह्मण। उसमें "आकृष्णेन रजसा" इत्यादिको ब्राह्मण और सन्ध्यावन्दनादिको मन्त्रभाग कहते हैं।

वेदका ब्राह्मणभाग तीन भागोंमें विभक्त है। यथा—विधि, अर्थवाद एवं अनुवाद। "विध्यर्थवादानुवादवचनविनियोगात्।" (गौ० सू० २।६१)

जिस वाक्यद्वारा कोई व्यवस्था की जाती, उस विधायक वाक्यका नाम विधि है। "विधिर्विधायकः।" (गौ० सू० २।६२) जैसे, 'जो मनुष्य स्वर्गलाभकी इच्छा रखे, वह अग्निहोत्र याग करे।' यहां स्वर्गलाभेच्छुक मनुष्यके लिये अग्निहोत्र यागकी विधि की गई।

अर्थवाद चार प्रकारका है,—स्तुत्यर्थवाद, निन्दार्थ-

वाद, परकृत्यर्थवाद एवं पुराकल्पार्थवाद। "स्तुतिनिन्दा परकृतिः पुराकल्प इत्यर्थवादः।" (गौ॰ सू॰ २।६३)

जिस कार्यकी विधि की गई है, उसी विहित कार्यका फल दिखाकर प्रशंसा करनेको स्तुत्यर्थवाद कहते हैं। जैसे, सन्ध्यावन्दनादि करनेसे दैनिक पापक्षय एवं निरापद ब्रह्मलोक प्राप्त होता है।

किसी कार्यमें अनिष्ट दिखाकर विहित कार्यमें प्रवृत्त करनेको निन्दा कहते हैं। जैसे, 'अमावस्या प्रभृति पर्वदिनमें स्त्री तैलादि व्यवहार करनेसे लोग नरकगामी होते हैं।' यहां पर्वदिनमें स्त्री तैलादि व्यवहारकी निन्दासे उसके निवारणकी विधि की गई।

जो किसी व्यक्तिके लिये कर्तव्य और किसीके लिये अकर्तव्य हो, वैसे परस्पर विरुद्ध वाक्यका नाम परकृति है। जैसे, शाक्तके लिये मद्यमांस द्वारा पूजा करनेकी व्यवस्था है, परन्तु वैष्णवके लिये वह मना है।

पूर्वके आचरित वाक्यका नाम पुराकल्प है।

स्मार्तने लिखा, विधिवाक्य भी किसी किसी जगह अवसन्न हो जाता है। वैसे स्थलमें स्तुत्यर्थवाद द्वारा कार्य करना पड़ता है। फिर किसी किसी स्थलमें विधि वाक्यके साथ एकत्र पाठ रहनेसे अर्थवाद प्रामाण्य भी होता है। श्रीकृष्ण तर्कालङ्कार कहते हैं, विधिके साथ असमभिव्याहृत वाक्यका नाम अर्थवाद है। अनुवाद देखो।

अर्थविज्ञान (सं॰ क्लो॰) अर्थस्य विज्ञानम्, ६-तत्। अर्थग्राहिता, मानीकी समझदारी। यह बुद्धिके आठमें एक गुण होता है,—

"शुश्रूषा श्रवणञ्चैव ग्रहणं धारणं तथा।
ऊहोऽपोहोऽर्थविज्ञानं तत्त्वज्ञानञ्च धीगुणाः॥" (हेम)

गुरुकी सेवा, शास्त्रोपदेशका श्रवण, ग्रहण तथा धारण, तर्क छोड़ समझदारी और निश्चित करण बुद्धिके यह आठ गुण होते हैं।

अर्थविद् (सं॰ त्रि॰) अर्थं कार्यप्रयोजनादि वा वेत्ति, अर्थ-विद् क्विप्। कार्याभिज्ञ, मतलब समझनेवाला, होशियार।

अर्थविप्रकर्ष (सं॰ पु॰) अर्थस्य अर्थबोधस्य विप्रकर्षः दूरत्वं विलम्ब इति यावत्, ६-तत्। विलम्बमें अर्थबोध, शीघ्र अर्थबोध न होना, पूर्वपूर्वकी अपेक्षा उत्तर उत्तरका विलम्बमें अर्थबोध, मानीका जल्द समझ न पड़ना।

वाक्यमें जो सब पद रहते हैं, स्थलविशेषमें उनके बीच पहले कारक पीछे लिङ्गादिका अर्थबोध होता, इसीसे कारककी अपेक्षा लिङ्ग और वाक्यादिका अर्थ समझनेमें विलम्ब लगता है।

श्राद्धविवेककी टीकामें श्रीकृष्ण तर्कालङ्कारने लिखा है,—"अत जैमिनिसूत्रं श्रुतिलिङ्ग-वाक्य-प्रकरण-स्थान-समाख्यानां समवाये पारदौर्बल्यमर्थविप्रकर्षात्।" श्रुति, लिङ्ग, वाक्य, प्रकरण, स्थान, समाख्या, ये सब न्याय यदि एक ही स्थानमें उपस्थित हों, तो क्रम-क्रमसे न्यायका दौर्बल्य होता है। इसके भाष्यमें कहा है—

"श्रुतिर्द्वितीया क्षमता च लिङ्गं
वाक्यं पदान्येव च संहतानि।
सा प्रक्रिया या कथमित्यपेक्षा
स्थानं क्रमो योगबलं समाख्या॥"

द्वितीय प्रकृति कारकका नाम श्रुति है। अनेक स्थलोंमें प्रकृत भाव प्रकाश करनेके लिये विशेष शब्दका प्रयोजन नहीं पड़ता, केवल द्वितीयादि विभक्तिसे ही वह उद्देश्य सिद्ध हो जाता है। जैसे 'अन्नं पचति।' भात पक रहा है। यहां अन्न शब्दमें केवल द्वितीया विभक्ति देखकर ही पच धातुका कर्मबोध होता है। इस कर्मको समझनेके लिये दूसरे पदका प्रयोजन नहीं है।

फिर उपपदमें भी द्वितीयासे ऐसे अर्थका बोध होता है। जैसे,—'मासमधीते'—एक मास काल पढ़ते हैं। यहां सब बात ठीक प्रकाश करके बोलनेमें,—'मासव्याप्य अधीते' एक महीनेसे पढ़ते हैं, इस तरह खोलकर कहना चाहिये। अतएव 'वे एक महीनेसे पढ़ते हैं' ऐसी बात कहनेसे 'एक महीनेसे' इसमें अन्यपदकी अपेक्षा रहती, इसलिये विलम्बमें यथार्थ बोध होता है। इसके रोकनेके लिये ही कारककी बात कही गई है।

ऊपरके भाष्यमें केवल द्वितीयाकी बात लिखी

है। वस्तुत: उससे सब कारकोंको ही समझना होगा। कारण, कारकोंमें जो विभक्ति रहती हैं, वही सब प्रकृतिके साथ अन्वित होकर अपना अपना अर्थ प्रकाश करती हैं। एवं अर्थ प्रकाश करते समय वे अन्य पदोंकी अपेक्षा नहीं करतीं। वाचस्पतिमिश्रने वेदान्तकी टीकामें इन बातोंको लिखा और तर्कालङ्कारने यों उदाहरण दिया है,— 'व्रीहीन् वहन्ति'। आशुधान्य अवधान करेगा अर्थात् कूटेगा। यहां 'व्रीहि' शब्दमें द्वितिया विभक्ति रहनेसे धानको कूटकर भूसी रहित करना होगा, ऐसा धात्वर्थ प्रकाश होता है। यहां इस अर्थके प्रकाशनको अन्य पदकी आवश्यकता नहीं पड़ी।

भाषरमें लिङ्ग शब्दका अर्थ क्षमता बताया गया है। क्षमता शब्दसे अर्थका सामर्थ्य समझ पड़ता है। जैसे,—'हविर्देवसदनं दामि'। इस मन्त्रको कहां नियोग करना चाहिये, यह लिखा न रहनेपर भी— 'दाप् लवणे'—इस छेदनार्थ दा धातुसे निष्पन्न दामि पदके हविश्छेद सामर्थ्य हेतु हविश्छेदनमें ही इसका विनियोग समझा जाता है।

परस्पर अन्वययुक्त तिङन्त और सुबन्त पदसमूहका नाम वाक्य है। कौन काम किसतरह करना होता, इस अपेक्षाका नाम प्रक्रिया वा प्रकरण है। समान देश वा क्रमको स्थान कहते हैं। योगबल वा यौगिकका नाम समाख्या है।

लिङ्गकी अपेक्षा श्रुतिका अर्थ बलवत् है। जैसे,- 'पायसेन दध्ना जुहोति'। (श्रुति)। पायस (पय: प्रकाशक मन्त्र, पय: पृथिव्या इत्यादि) और दधि द्वारा होम करे। यहां दधि द्वारा ही होम करना श्रुतिसम्मत है। उसमें अन्य किसी पदकी अपेक्षा न रहनेसे पहले उसीका अर्थबोध होता, अतएव वही प्रधान कहा जाता है। पीछे पय: पृथिव्या इत्यादि मन्त्र द्वारा होम करनेका बोध, मन्त्रके सामर्थ्य हेतु विलम्बमें होता है। इसलिये श्रुतिकी अपेक्षा इसे दुर्बल कहते हैं। इस तरह लिङ्ग वाक्यादिकी अपेक्षा बलवान् है।

अर्थवृद्धि (सं० स्त्री०) धन सञ्चय, दौलतका अम्बार।

अर्थवेद (सं० पु०) शिल्पशास्त्र, कारीगरीका इल्म।

अर्थवैकल्य (सं० क्ली०) १ सत्यातिक्रम, बातकी पोशीदगी। २ वाक्छल, वक्रोक्ति, खिलाफ्-बयानी।

अर्थव्यपाश्रय (सं० पु०) अर्थस्य प्रयोजनस्य व्यपाश्रय: स्थानम्, ६-तत्। १ प्रयोजन सम्बन्ध, अभिधेयका आश्रय, मतलबका जगह, मानीका ठिकाना (त्रि०) २ सप्रयोजन, मतलबी।

अर्थव्यय (सं० पु०) धनोत्सर्ग, दौलतका खर्च।

अर्थव्ययज्ञ (सं० त्रि०) अर्थस्य धनस्य व्ययप्रणाली जानाति; अर्थ-व्यय-ज्ञा-क, ६-तत्। न्यायव्ययी, क़ायदेसे खर्च करनेवाला।

अर्थव्ययसह (सं० त्रि०) मितव्ययी, किफ़ायती।

अर्थशास्त्र (सं० क्ली०) अर्थस्य मन्वादिप्रणीत राजनीत्यादि दृष्टविषयस्य शास्त्रम्, ६-तत्; तत्प्रतिपादकं शास्त्रम्, शाक० तत् वा। अर्थ नीतिविषयका शास्त्र, जिस इल्ममें दौलतका बयान् रहे। यह रुपये कमाने, बचाने और बढ़ानेकी बात बताता है।

सम्प्रति चाणक्य वा कौटिल्यका अर्थशास्त्र प्रकाशित हुआ है। उसे देखकर हम समझ सकते हैं, सन् ई०से चार-पांच शताब्द पहले हिन्दुवोंकी राजनीति कैसी रही। अर्थशास्त्रमें जिस प्राचीन धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक विषयकी आलोचना निकली, उसकी सूची नीचे लिखी है,—प्रथम विनयाधिकारमें राजवृत्ति, विद्यासमुद्देश, आन्वीक्षिकी-स्थापना, त्रयीस्थापना, वार्तास्थापना, दण्डनीति-स्थापना, वृद्धसंयोग, इन्द्रियजय, अरिषड्वर्गत्याग, राजर्षिवृत्त, अमात्योत्पत्ति, मन्त्रिपुरोहितोत्पत्ति, उपधासे अमात्यका शौचाशौचज्ञान, गूढ़पुरुषोत्पत्ति, संस्थोत्पत्ति, गूढपुरुषप्रणिधि, सञ्चारोत्पत्ति, स्वविषयमें कृत्याकृत्यके पक्षका रक्षण, परविषयमें कृत्याकृत्यके पक्षका उपग्रह, मन्त्राधिकार, दूतप्रणिधि, राजपुत्ररक्षण, अवरुद्ध वृत्त, अवरुद्ध अवस्थाकी वृत्ति, राजप्रणिधि, निशान्त प्रणिधि, आत्मरक्षितक। दूसरे अध्यक्ष प्रचाराधिकारमें—जनपदका निवेश, भूमिके छिद्रका विधान, दुर्गका विधान, दुर्गका निवेश, सन्निधाताका चेयकर्म, समाहर्ता समुदयका प्रस्थापन,

अक्षपटलका गाणनिक्य अधिकार, युक्तसे अपहृत समुदयका प्रत्यायन, उपयुक्तपरीक्षा, शासनका अधिकार, कोशमें रखने योग्य रत्नकी परीक्षा, आकर कर्मान्तका प्रवर्तन, अक्षशालामें सुवर्णका अध्यक्ष, विशिखामें सौवर्णिक प्रचार, कोष्ठके आगारका अध्यक्ष, पण्य (बाजी)का अध्यक्ष, कुप्यका अध्यक्ष, आयुधके आगारका अध्यक्ष, तुलाके मानका पौतव, देशकालका मान, शुल्कका अध्यक्ष, शुल्कका व्यवहार, सूत्रका अध्यक्ष, सीताका (चोनो) अध्यक्ष, सुराका अध्यक्ष, सूनका अध्यक्ष, गणिकाका अध्यक्ष, नौकाका अध्यक्ष, गायका अध्यक्ष, अश्वका अध्यक्ष, हस्तीका अध्यक्ष, हस्तीका प्रचार, रथका अध्यक्ष, पत्तिका अध्यक्ष, सेनापतिका प्रचार, मुद्राका अध्यक्ष, विवीतका अध्यक्ष, समाहर्ताका प्रचार, गृहपति वैदेहक-तापसका व्यञ्जन प्रणिधि, नागरक प्रणिधि। तीसरे धर्मस्थीयाधिकारमें—व्यवहारकी स्थापना, विवादके पदका निबन्ध, विवाहका संयुक्त, विवाहका धर्म, स्त्रीके धनका कल्प, आधिवेदनिक, शुश्रूषा, भर्म, पारुष्य, द्वेष, अतिचार, उपकार, व्यवहारका प्रतिषेध, निष्पतन, पथ्यनुसरण, ह्रस्वप्रवास, दीर्घप्रवास, दायका विभाग, पुत्रका विभाग, दायका क्रम, अंशका विभाग, वास्तुक, गृहका वास्तुक, वास्तुका विक्रय, सीमाका विवाद, मर्यादाका स्थापन, बाधाका बाधिक, विवीत क्षेत्रके पथकी हिंसा, समयका अनपाकर्म, ऋणका आदान, औपनिधिक, दास-कर्मकरका कल्प, स्वामीका अधिकार, भृतकका अधिकार, सम्भय-समुत्थापन, विक्रीत क्रीतका अनुशय, दत्तका अनपाकर्म, अस्वामिक विक्रय, स्वस्वामीका सम्बन्ध, साहस, वाक्-पारुष्य, दण्डपारुष्य, द्यूतका समाह्वय, प्रकीर्णक। चौथे कण्टक शोधनाधिकारमें—कारुकका रक्षण, वैदेहकका रक्षण, उपनिपातका प्रतीकार, गूढाजीवोंकी रक्षा, सिद्ध व्यञ्जनसे माणव प्रकाश, शङ्कारूप कर्मका अभिग्रह, आशु मृतककी परीक्षा, वाक्यकर्मका अनुयोग, सर्वाधिकरणका रक्षण, एकाङ्गके वधका निष्क्रय, शुद्ध-चित्र (अनेक) दण्डकल्प, कन्याका प्रकर्म, अतिचारका दण्ड। पांचवें योग वृत्ताधिकारमें—दाण्डकर्मिक, कोशका अभिसंहरण, भृत्यका भरणीय, अनुजीवीका वृत्त, समयका आचारिक, राज्यका प्रतिसन्धान, एकैश्वर्य। छठें मण्डल योन्याधिकारमें—प्रकृतिकी सम्पत्, शमका व्यायामिक। सातवें षाड्गुण्याधिकारमें—षाड्गुण्य समुद्देश, क्षयके स्थानकी वृद्धिका निश्चय, संश्रयकी वृत्ति, समहीन ज्यायस्में गुणका अभिनिवेश, हीनसन्धि, विगृह्यासन, सन्धायसन, विगृह्य यान, सन्धाय यान, सम्भूय प्रयाण, यातव्य और अमित्रके अभिग्रहकी चिन्ता, क्षय-लोभ-विराग हेतु प्रकृतियोंका सामवायिक विपरिमर्श, संहित प्रयाणिक, परिपणित, अपरिपणित, अपसृत, सन्धि; द्वैधीभाविक, सन्धि-विक्रम, यातव्य वृत्ति, अनुग्राह्य मित्रविशेष, मित्रसन्धि, हिरण्यसन्धि, भूमिसन्धि, अनवसित सन्धि, कर्मसन्धि, पार्ष्णिग्राहचिन्ता, हीनशक्ति-पूरण, बलवानसे विग्रह करके उपरोध हेतुक दण्डोपनत वृत्त, दण्डका उपनायी वृत्त, सन्धिका कर्म, सन्धिका मोक्ष, मध्यम चरित, उदासीन चरित, मण्डल चरित। आठवें व्यसनाधिकारमें—प्रकृतिके व्यसनका वर्ग, राजा और राज्यके व्यसनकी चिन्ता, पुरुषके व्यसनका वर्ग, पीड़नका वर्ग, कोशके सङ्गका वर्ग, स्तम्भका वर्ग, बलके व्यसनका वर्ग, मित्रके व्यसनका वर्ग। नवें अभियास्यत्कर्माधिकारमें—शक्ति, देश और कालके बलाबलका ज्ञान, यात्राका काल, बलके उपादानका काल, सन्नाहका गुण, प्रतिबल कर्मके पश्चात् कोपकी चिन्ता, बाह्य और अभ्यन्तरका प्रकृतिके कोपका प्रतिकार, क्षय, व्यय और लाभका विपरिमर्श, बाह्य और अभ्यन्तरकी आपत्, दूष्य शत्रुका संयुक्त, अर्थ, अनर्थ एवं संशयसे युक्त और उपाय तथा विकल्पसे उत्पन्न सिद्धि। दशवें संग्रामाधिकारमें—स्कन्धावारका निवेश, स्कन्धावारका प्रयाण, बलव्यसनके अवस्कन्दकालका रक्षण, कूट युद्धका विकल्प, स्वसैन्यका उत्साहन, स्वबल और अन्य बलका योग, युद्धकी भूमि, पत्ति-अश्व-रथ और हस्तीका कर्म, पक्षकक्षोंका बलाग्रसे व्यूह विभाग, सारगुल्फका बलविभाग, पत्ति-अश्व-रथ और हस्तीका युद्ध, दण्डभोगके मण्डलका असंहत व्यूहन, उसके प्रति

व्यूहका स्थापन। ग्यारहवें सङ्घवृत्ताधिकारमें भेदका उपादान, उपांशुका दण्ड। बारहवें आबलीयसाधिकारमें दूतका कर्म, मन्त्रका युद्ध, सेनाके मुख्यका वध, मण्डलका प्रोत्साहन, शस्त्र-अग्नि और रसका प्रणिधि, वीवधासारका प्रसारवध, योगका अतिसन्धान, दण्डका अतिसन्धान, एक विजय। तेरहवें दुर्गलम्भोपायाधिकारमें—उपजाप, योगका वामन, असर्पका प्रणिधि, पर्युपासनका कर्म, अवमर्द, लब्धप्रशमन। चौदहवें औपनिषदिकाधिकारमें—परघातका प्रयोग, प्रलम्भन, अद्भुत उत्पादन, भैषज्य और मन्त्रका प्रयोग, स्वबलके उपघातका प्रतीकार। पन्द्रहवें तन्त्रयुक्त्यधिकारमें—तन्त्रको युक्ति।

अर्थशौच (सं० क्लो०) अर्थानां अर्थोपार्जनानां शौचं शुचित्वम्, ६-तत्। अर्थार्जनकी शुद्धि, दौलत कमानेकी पाकीज़गी। मनुने सकल प्रकारके शौच मध्य न्यायार्जनको ही प्रधान माना है।

अर्थसंग्रह (सं० पु०) अर्थानां संग्रहः, ६-तत्। धनसञ्चय, दौलतका इकट्ठा करना।

अर्थसंस्थान (सं० क्लो०) अर्थानां संस्थानं स्थिति यस्मात् येन वा, अर्थ-सम्-स्था अपादाने करणे वा ल्युट्। १ धनोपार्जनसाधन प्रतिग्रहादि, दौलत कमानेका काम। भावे ल्युट्, ६-तत्। धनकी स्थिति, दौलतकी हालत, खज़ाना।

अर्थसञ्चय (सं० पु०) अर्थानां धनानां सञ्चयः समुच्चयः समूहश्च, ६-तत्। धनसंग्रह, धनसमूह, दौलतका अम्बार, रुपये पैसेका ढेर।

अर्थसमाज (सं० पु) अर्थानां धनानां अभिधेयानां कारणानां वा समाजः समूहः, ६-तत्। धनसमूह; अभिधेयसमूह; कारणसमूह।

न्यायशास्त्रके मतसे, जहां द्रव्यका कोई विशेष धर्म अर्थात् गुण उत्पादन करनेको अन्यान्य कारणोंके साथ दूसरे भी किसी विशेष कारणकी आवश्यकता होती है, वहां उस कारणसमूहको अर्थसमाज कहते हैं। एवं वे सब कारण मिलकर जिस धर्मविशिष्टको उत्पादन करते हैं, उसका नाम अर्थसमाजग्रस्त है।

जैसे, कपड़ा बुननेके लिये नाल, करघे और सूतकी आवश्यकता होती है। नीले रङ्गका कपड़ा बुननेमें नाल आदि चाहिये, लाल कपड़ा बुननेके लिये भी विना नाल वग़ैरह काम नहीं चल सकता। अतएव नाल, करघा और सूत कपड़े मात्रके ही सामान्य कारण हैं,—सभी कपड़ेके बुननेमें इन कई उपकरणोंकी आवश्यकता पड़ती है।

जो कारण, सब तरहके कपड़ोंकी उत्पत्तिसे पहले विद्यमान रहता, वह वस्त्रमात्रका प्रतिकारण कहा जाता है। नाल, सूत प्रभृति यदि नील वस्त्रके ही प्रति कारण होते, तो लाल रङ्गका कपड़ा बुनते समय इन सबको आवश्यकता न पड़ती। इससे नाल प्रभृति वस्त्रमात्रके सामान्य कारण हैं सही, परन्तु वर्णके सामान्य कारण नहीं हैं। अतएव नील प्रभृति वर्णोंके उत्पन्न करनेको अन्य कारणका विद्यमान रहना आवश्यक है।

देखा जाता है, कि सूत नीलवर्ण होनेसे वस्त्र भी नीलवर्ण होता है। परन्तु केवल सूत नील वर्णका होनेसे वस्त्र नील वर्णका नहीं बनता। सूत, सूतका नीला रङ्ग, नाल और करघा ये सब कारण एकत्र मिलनेसे नील वस्त्र उत्पन्न होता है। अतएव नील वस्त्रका कोई पृथक् कारण न रहते भी दोनों कारणोंके मिल जानेसे वह बन जाता है, इसलिये नीलवस्त्रत्व अर्थसमाजग्रस्त हुआ। इसीसे जो धर्म पृथक् कारणका कार्य्यतावच्छेदक न ठहर सामान्य दोनों कारणोंके मिलनेसे सिद्ध होता है, उस धर्मको अर्थसमाजग्रस्त कहते हैं।

अर्थसमाहार (सं० पु०) अर्थानां धनानां समाहारः सम्यक् आहरणम्, ६-तत्। १ धनार्जन, धनसंग्रह, रुपयेका पैदा करना, दौलतका अम्बार। अर्थानां अभिधेयानां समाहारः संक्षेपः, ६-तत्। २ अर्थका संक्षेप करना, मानीका मुख़्तसिर।

अर्थसम्बन्ध (सं० पु०) अर्थानां धनानां सम्बन्धः संस्रवः, ६-तत्। १ धनसम्बन्ध, अर्थसंसर्ग, दौलतका ताल्लुक़। शास्त्रकारोंने कहा है,—जिसके साथ विशेष प्रणय रखनेकी इच्छा हो, उससे किसी प्रकारका अर्थसम्बन्ध रखना न चाहिये।

"शिनेच्छेद्विपुलां प्रीतिं तेन सार्द्धमरिन्दम।
न कुर्यादर्थसम्बन्धं स्त्रियाः सन्दर्शनं तथा।" (स्मृति)

२ धनसम्बन्धके प्रयोजक शास्त्रीय अपतित पुत्रत्वादि। ३ लौकिक क्रयादि, दुनियावी खरीद वगैरह। अर्थस्य वाच्याद्यर्थस्य सम्बन्धः, ६-तत्। ४ वाच्यादि अर्थका सम्बन्ध, मानीका ताल्लुक।

अर्थसाधक (सं॰ पु॰) १ विषयके प्रतिफलका आनयन, बातके मतलबका निकास। २ दशरथके मन्त्रिविशेष। ३ पुत्रजीव वृक्ष, जियापूत। इसके फलकी माला बनाकर लड़कोंको पहनायी जाती है। लोग कहते, कि उससे वह नीरोग और भूत-प्रेतकी बाधासे दूर रहते हैं।

अर्थसाधन (सं॰ पु॰) १ पुत्रजीव वृक्ष, जियापूत। २ रीठकरञ्ज, बड़ा रीठा।

अर्थसार (सं॰ पु॰) अधिक सम्पत्ति, ज्यादा दौलत।

अर्थसिद्ध (सं॰ त्रि॰) अर्थेन अर्थयोग्यताविशेषेणैव सिद्धम्, ३-तत्। विना शब्द योग्यतासे ही सिद्ध होनेवाला, जो बेलफ़्ज़ मतलबसे ही साबित हो। जैसे 'पानी भरनेको घड़ा लावो' कहनेसे वही घड़ा लाना पड़ेगा, जिसमें छेद न हो। क्योंकि फूटे घड़ेमें पानी नहीं ठहरता। यह मत मीमांसकका है। (पु॰) २ पुत्रजीव वृक्ष, जियापूतका पेड़। ३ श्वेतनिर्गुण्डी, सफ़ेद संभालू। ४ कृष्णनिर्गुण्डी, स्याह संभालू।

अर्थसिद्धक, अर्थसिद्ध देखो।

अर्थसिद्धि (सं॰ स्त्री॰) अर्थेन तात्पर्येण योग्यताविशेषेण वा सिद्धिः, ३-तत्। १ तात्पर्य द्वारा सिद्धि, मतलबसे कामयाबी। ६-तत्। २ धनकी सिद्धि, दौलतकी कामयाबी।

अर्थहर (सं॰ त्रि॰) अर्थान् धनानि हरति अन्यायेन, ताच्छिलादौ। १ परका धन हरण करनेवाला, जो दूसरेकी दौलत चोरा लेता हो। (पु॰) २ चोर।

अर्थहीन (सं॰ त्रि॰) अर्थेन हीनः, ३-तत्। १ धनहीन, दरिद्र। बेदौलत, ग़रीब। २ अभिप्रायशून्य, बेमानी। ३ असफल, नाकामयाब।

अर्थागम (सं॰ पु॰) अर्थानामागमः, ६-तत्। १ आय, आमदनी। २ धनार्जन, रुपयेकी कमायी। अर्थ आगम्यतेऽनेन, करणे घञ्। ३ धनके उपार्जनका हेतु क्रयविक्रयादि, रुपया पैदा करनेको खरीद-फ़रोख़्त वग़ैरह। ४ शब्दार्थकी उपस्थिति, लफ़्ज़के मानीकी मौजूदगी।

अर्थात् (सं॰ अव्य॰) १ कार्यकी दशाके अनुसार, मामलेके मुवाफ़िक़। २ वस्तुतः, दरहक़ीक़त, असलमें। ३ यानी।

अर्थाधिकार (सं॰ पु॰) कोषाध्यक्षका कार्य, धन वा सम्पत्तिका रक्षण, ख़ज़ाञ्चीका काम, दौलत या जायदादकी रखवाली।

अर्थाधिकारिन् (सं॰ पु॰) कोषाध्यक्ष, वेतनाध्यक्ष, ख़ज़ाञ्ची, तनख़ाह बांटनेवाला।

अर्थाना (हिं॰ क्रि॰) अर्थ लगाना, मानी बताना, समझाना।

अर्थानुवाद (सं॰ पु॰) मानीका तर्जुमा, किसी मतलबको बार बार कहना।

अर्थान्तर (सं॰ क्ली॰) अन्योऽर्थं अर्थान्तरम्, राजा राजान्तरवत् मयूरव्यं॰ तत्। १ अन्य अर्थ, दूसरा मतलब। न्याय मतमें उद्देश्यसिद्धिको प्रयुक्त वाक्य अनुद्देश्य सिद्धिके अनुकूल पड़नेसे अर्थान्तर होता है। २ निष्प्रयोजन वाक्य, बेमतलब बात। ३ प्रकृतिके अनुपयुक्त वाक्य, जो बात कुदरतके मुवाफ़िक़ न हो। ४ बाईसके अन्तर्गत निग्रह स्थान विशेष। इसके कहनेसे प्रतिवादी द्वारा वादीका निग्रह होता है। ५ अन्य कारण, दूसरा सबब।

अर्थान्तरन्यास (सं॰ पु॰) अर्थान्तरं न्यस्यतेऽत्र, अर्थान्तर-नि अस् आधारे घञ्; अर्थान्तरस्य न्यासो यत्र वा। अर्थालङ्कार विशेष। एक प्रकारके अर्थ-द्वारा अन्य प्रकारका अर्थ समर्थन करनेको अर्थान्तर-न्यास कहते हैं। अलङ्कारिकोंने इसे आठ प्रकारमें विभक्त किया है। यथा,—

"सामान्यं वा विशेषेण विशेषस्तेन वा यदि।
कार्यञ्च कारणेनेदं कार्येण च समर्थ्यते
साधर्म्येणेतरेणार्थान्तरन्यासोऽष्टधा ततः।"

विशेष अर्थद्वारा सामान्य अर्थका समर्थन; सामान्य

अर्थद्वारा विशेषार्थका समर्थन; कारण द्वारा कार्य्यका समर्थन एवं कार्य्य द्वारा कारणका समर्थन। फिर ये आठ प्रकार समान धर्म और विधर्म द्वारा दो भागोंमें विभक्त किये गये हैं।

विशेष द्वारा सामान्यका समर्थन, यथा—

"बृहत्सहायः कार्य्यान्तं क्षोदीयानपि गच्छति।
सम्भूयाम्भोधिमभ्येति महानद्या नगापगा॥"

अति क्षुद्रतर व्यक्ति भी महत्की सहायतासे कार्य्यका पार पा जाता, इसीसे गिरि-निर्झरिणी, महानदी गङ्गाके साथ मिलकर समुद्रको प्राप्त होती है।

यहां श्लोकके दूसरे पादमें—गिरि-निर्झरिणी, बृहत् सहाय गङ्गाके साथ मिल समुद्रको प्राप्त होती,—इस विशेषद्वारा, क्षुद्रतर व्यक्ति महत्का आश्रय पानेसे कार्य्य उद्धार कर सकता, यह सामान्य समर्थन किया गया।

सामान्यद्वारा विशेषका समर्थन, यथा—

"यावदर्थपदां वाचमेवमादाय माधवः।
विरराम महीयांसः प्रकृत्या मितभाषिणः।"

महत् व्यक्ति स्वभावसे ही अल्पभाषी होते हैं। इसीसे माधव ऐसी अर्थयुक्त एक बात कहकर चुप हो गये।

यहां श्लोकके दूसरे पादमें,—महत् व्यक्ति अधिक नहीं बोलते,—इस सामान्यद्वारा श्लोकके प्रथमपादमें माधवने सारवान् अल्प बात कही—यह विशेष समर्थन किया गया।

कारण साधर्म्यद्वारा कार्यका समर्थन, यथा—

"पृथ्वि स्थिरा भव भुजङ्गम धारयेनां
त्वं कूर्मराज तदिदं द्वितयं दधीथाः।
दिक्कुञ्जराः कुरुत तत्त्रितये दिधीर्षां
मार्य्यः करोति हरकार्मुकमाततज्यम्॥"

जनकालयमें जब रामचन्द्र शिवधनु भङ्ग करनेको उठे, तब लक्ष्मणने पृथिवी आदिसे कहा—हे पृथिवि! तुम स्थिर हो! अनन्त! तुम इसे धारण करो। कूर्मराज! तुम पृथिवी और नागराज दोनोंको साधो। हे अष्टदिग्गज! तुम लोग पृथिवी, अनन्त और कूर्मराज इन तीनोंको ही धारण करनेकी इच्छा करो। क्योंकि आर्य्य रामचन्द्र धनुषको चढ़ा रहे हैं।

यहां, रामचन्द्र धनुषको चढ़ा रहे हैं—इस कारण द्वारा पृथिवी प्रभृतिके स्थिर होने इत्यादि कार्य्यका समर्थन किया गया।

कार्य्यसाधर्म्यद्वारा कारणका समर्थन, यथा—

"सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदाम्पदं।
वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः।"

सहसा कोई काम न करे। कारण, अविवेचना ही परम आपदका स्थान है। गुणानुरागिणी लक्ष्मी विवेचक मनुष्यको आपही वरण करती हैं।

यहां, लक्ष्मी आप ही वरण करती हैं—इस कार्यद्वारा, सहसा कोई काम न करे—इस विवेचना रूप कारणका समर्थन किया गया।

ऊपरके सब श्लोक समान धर्म्मविशिष्टके उदाहरण हैं। वैधर्म्यविशिष्ट यथा,—

"इत्थमाराध्यमानोपि क्लिश्नाति भुवनत्रयम्।
शाम्येत् प्रत्युपकारेण नोपकारेण दुर्जनः॥"

तारकासुर इस तरह पूज्य होनेपर भी त्रिभुवनको कष्ट देता है। कारण, दुर्जन अपकार करनेसे शान्त होता है।

यहां, दुर्जन अपकार करनेसे शान्त होता—इस वैधर्म्य द्वारा, दुर्जन सदयाचरण करनेसे शान्त नहीं होता, यही समर्थित हुआ। इस श्लोकमें, दुर्जनका अपकार करनेसे शान्त होना सामान्य एवं दुर्जनका अनुकूलाचरण करनेसे शान्त न होना विशेष है। और पूर्व श्लोकमें,—सहसा कार्य्य न करना आपदकर नहीं है, यह कार्य्य वैधर्म्यका समर्थन करता है।

अर्थान्वित (सं० त्रि०) १ धनसम्पन्न, दौलतमन्द, जिसके पास रुपया रहे। २ अभिप्रायगर्भ, मानीदार।

अर्थापत्ति (सं० स्त्री०) अर्थस्य अनुक्तार्थस्य आपत्तिः प्राप्तिः सिद्धिरिति यावत्। मीमांसकके मतसे, जो विषय प्रकाश करके नहीं कहा गया, किसी शब्दद्वारा उसी विषयकी सिद्धि। यथा,—'स्थूलकाय देवदत्त दिनमें भोजन नहीं करता'। देवदत्त दिनमें भोजन

नहीं करता, तो भी उसका शरीर स्थूल है। सुतरां स्थूलत्व देख यह समझा जाता, कि वह रातमें भोजन करता है। कारण, एकदम अनाहार रहनेसे वह क्षय हो जाता। देवदत्त क्षय हो जाता— यह अनुपपत्तिज्ञान, देवदत्त रातमें भोजन करता है, इस ज्ञानका जनक हुआ। इसलिये देवदत्त रातमें भोजन करता है, यह ज्ञान अर्थापत्ति कहा जाता है। नैयायिक व्यतिरेक व्याप्तिज्ञानसे इसे अनुमानका अन्तर्भूत बताते हैं, अतिरिक्त प्रमाण नहीं ठहराते। जो आदमी रात और दिनको भोजन नहीं करता, उसका शरीर भ न नहीं रह सकता—इसे ही वे लोग व्यतिरेकव्याप्ति कहते हैं।

अर्थस्यापत्तिर्यस्मात्, ५-बहुव्री०। अर्थापत्तिका साधन; उपपाद्य ज्ञान। जिसके विना किसी द्रव्य आदिकी उत्पत्ति नहीं होती, उसका नाम उपपाद्य है। रातको विना भोजन किये स्थूलता नहीं रह सकती, इसलिये स्थूलता उपपाद्य है। फिर जिसके अभावमें किसी वस्तुकी असिद्धि होती है, उसे उस वस्तुका उपपादक कहते हैं। रात्रिभोजनके अभावमें स्थूलता नहीं रह सकती, अतएव रात्रिभोजन ही उपपादक है। रात्रिभोजन कल्पनारूप प्रमीति ज्ञानका विषय है।

३ अर्थालङ्कार विशेष।

"दण्डापूपिकन्यायार्थागमोऽर्थापत्तिरिष्यते। (साहित्यदर्पण)

दण्डापूपन्यायद्वारा जिस अर्थकी सिद्धि हो, उसे अर्थापत्ति कहते हैं। जैसे, किसी जगह कुछ पूवा और एक लठ रखा था। सवेरे सबने देखा, कि पूवा नहीं और लठमें चूहेके दांतका चिह्न बना था। इसलिये लठमें चूहेके दांतका चिह्न देखकर यह स्थिर हुआ, कि पूवाको चूहा खा गया। इसीका नाम दण्डापूपन्याय है। ऐसे न्याय द्वारा जो ज्ञान सिद्ध होता है, अर्थापत्ति वही है। इसमें कभी प्रस्तावित अर्थद्वारा अप्रस्तावित अर्थकी और कभी अप्रस्तावित अर्थद्वारा प्रस्तावित अर्थकी उपस्थिति होती है।

प्रस्तावित अर्थसे अप्रस्तावित अर्थकी उपस्थिति, यथा—

"हारोऽयं हरिणाक्षीणां लुठति स्तनमण्डले।
मुक्तानामप्यवस्थेयं के वयं स्मरकिङ्कराः।" (साहित्यदर्पण)

यह हार रमणीके स्तनपर लोट रहा है। मुक्तावली हीकी जब यह दशा है, तब हमलोग तो कन्दर्पके दास हैं, हमारी बात कौन चलाये; अर्थात् हम लोग तो उसपर लोट ही जा सकते हैं।

इस श्लोकमें 'मुक्तानां' इस पदके दो अर्थ हैं। पहला—मुक्ता अर्थात् रत्नसमूहका और दूसरा— मुक्त अर्थात् मुक्तिपानेवालेका। मुक्तावली अचेतन पदार्थ है। उससे रमणीका आलिङ्गन असम्भव है। किन्तु असम्भव होनेपर भी वह जब स्त्रीको आलिङ्गन करता, तब हम लोगोंके लिये तो यह नितान्त सम्भवपर है। इसीको अर्थापत्ति कहते हैं। यहां मुक्तावली वर्णनीय होनेसे प्रस्तावित और कामपीड़ित व्यक्तिकी बात अप्रस्तावित विषय है।

अप्रस्तावित अर्थद्वारा प्रस्तावितकी उपस्थिति यथा,—

"विललाप सबाष्पगद्गदं सहजामप्यपहाय धीरताम्।
अतितप्तमयोऽपि मार्दवं भजते कैव कथा शरीरिणाम्॥" (रघु)

स्वाभाविक धैर्य परित्यागकर अजराजने वाष्पगद्गद स्वरसे विलाप किया था। अति तप्त होनेसे लोहा हो जब गल जाता, तब शरीरधारीकी कौन बात; अर्थात् वह तो अवश्य चञ्चल हो सकता है। अति तप्त लोहा हो जब गलकर चञ्चल हो जाता, तब प्राणी तो चञ्चल होगा ही—यहां यही अर्थापत्ति है। वर्णनका विषय न होनेसे लोहा अप्रस्तावित और शरीरधारी प्रस्तावित है। (तत्त्वकौमुदी)

अविधीयमान (विना कहे हुये) अर्थमें जो दूसरा अर्थ सहसा प्राप्त हो जाता, वह भी अर्थापत्ति कहाता है। जैसे,—मेघ न रहनेसे वृष्टि कैसे होगी! ऐसा बोलनेपर स्पष्ट मालूम पड़ता कि, मेघ रहनेसे वृष्टि होती है। इसमें, रहनेसे यह अर्थ प्रसज्य ठहरता है। (वात्स्यायन-न्यायभाष्य २।२।१)

कोई कोई मीमांसक अर्थापत्तिको दूसरा प्रमाण मानते हैं। नैयायिक और वैशेषिक कहते हैं, कि

अर्थापत्ति अनुमान ही के अन्तर्गत है; दूसरा कोई प्रमाण नहीं।

अर्थापत्ति, दो प्रकारको होती है—दृष्टार्थापत्ति, और श्रुतार्थापत्ति। इसमें, देवदत्त दिनको नहीं खाता—ऐसा देखनेपर दृष्टार्थापत्ति और विदित होनेपर श्रुतार्थापत्ति होती है। दृष्टार्थापत्तिका उदाहरण, यथा—जीवित देवदत्तका निजालय (गृह) में रहना न देखकर बाहर रहना कल्पना किया जाता है। यदि घरमें न रहनेसे बाहर रहना भी न माना जाय, तो जीवित रहनेकी उपपत्ति (विश्वास) नहीं हो सकती, इसलिये बाहर रहनेकी कल्पना होती है। श्रुतार्थापत्ति, यथा—स्थूल देवदत्त दिनको भोजन नहीं करता यहां दिनके भोजन न करनेवालेको, रात्रिमें भी भोजन न पानेसे स्थूलत्व कैसे हो सकता, इसलिये रात्रिमें भोजन करनेको कल्पना होती है। श्रुतार्थापति भी अनुमितानुमान है। जैसे, स्थूल देवदत्त इत्यादि वाक्यके द्वारा स्थूलत्वका अनुमान लगा उसी चिह्नसे रात्रिका भोजनका अनुमान किया जाता है।

अर्थापत्तिसम (सं॰ पु॰) जाति। अर्थापत्तिसे प्रतिपक्ष (अन्यपक्ष) की सिद्धिको अर्थापत्तिसम कहते हैं। (गौतमसूत्र ५। २१)

शब्द प्रयत्नान्तरीयक अर्थात् प्रयत्नसे उत्पन्न होने कारण, घटके सदृश अनित्य होता है। ऐसा पक्ष स्थापित करनेपर, अर्थापत्तिके द्वारा प्रतिपक्ष (नित्य) को साधन करनेवाला अर्थापत्तिसम कहा जाता है। यदि प्रयत्नान्तरीयकत्व और अनित्य साधर्म्यके हेतु शब्द अनित्य होता, तो नित्य साधर्म्य रहनेसे वह नित्य भी हो सकता है। क्योंकि इसके नित्यत्वमें अस्पर्शत्व साधर्म्य है। (वात्स्यायन ५।१।२१)

अर्थापत्तिके आभाससे, प्रतिपक्ष साधनको प्रत्यवस्थान अर्थापत्तिसम होता है। अर्थापत्ति ही उक्तसे अनुक्तको आक्षेप करती अर्थात् लाती है। यह शब्द अनित्य ठहरता, ऐसा कहने ही से विदित होता, कि अन्य नित्य है। एवं दृष्टान्तको असिद्धि और विरोध भी होता है। कृतकत्व (यानी प्रकृतिप्रत्ययसे निष्पन्न होने) के कारण शब्द अनित्य है—ऐसा कहनेपर अर्थात् उत्पन्न हुए दूसरे हेतुसे बोध या सत्प्रतिपक्ष पड़ जाता है। फिर यदि अनुमानसे अनित्य कहा जाय, तो प्रत्यक्षसे नित्य बोध होता है। (गौतमवृत्ति ५।२१)

अर्थाय (सं॰ अव्य॰) कारण वश, बसबब।

अर्थायिन् (सं॰ त्रि॰) धनका मान करने वा विषय प्राप्तिकी इच्छा रखनेवाला, जो दौलतकी इज्जत करता या कोई मतलब निकालना चाहता हो।

अर्थालङ्कार (सं॰ पु॰) अलङ्कार विशेष। इसमें अर्थका गौरव रहता है।

अर्थिक (सं॰ पु॰) अर्थयते; अदन्त चुरा॰ अर्थ-णिच्-णिनि कुत्सितार्थे कन्। प्रातःकाल निद्रित राजाको स्तुति पाठकर जगानेवाला, जो सवेरे सोते हुए बादशाहको तारीफ करके जगाता हो।

अर्थित (सं॰ त्रि॰) अदन्त चुरा॰ अर्थ-णिच्, गौणे कर्मणि क्त। १ याचित, जिससे कुछ मांगा जा चुके। (क्ली॰) २ इच्छा, ख्वाहिश, दरखास्त।

अर्थितव्य (सं॰ त्रि॰) याच्ञा किये जाने योग्य, जो मांगे जाने काबिल हो।

अर्थिता (सं॰ स्त्री॰) १ याच्ञा, कामना। २ भिक्षुकको दशा, मांगनेवालेकी हालत।

अर्थित्व (सं॰ क्ली॰) अर्थिता देखो।

अर्थिन् (सं॰ पु॰) अर्थयते; अदन्त चुरा॰ अर्थ-णिच्-णिनि, णिच् लोपः। १ याचक, मांगनेवाला। २ सेवक, खिदमतगार। ३ अनुजीवी, मातहत। 'सेवकार्थ्यानुजीविनः' (अमर) अर्थो धनमस्यास्ति, अस्त्यर्थे इनि। ४ धनशाली, दौलतमन्द। ५ धनस्वामी, दौलतका मालिक। ६ कार्याकाङ्क्षी, गर्जमन्द। ७ वादी, मुद्दई।

अर्थिसात् (सं॰ अव्य॰) अर्थिभ्यो देयमधीनं करोति, अर्थिन्सात्। याचकको ओरसे, मांगनेवालेकी तर्फ।

अर्थि, अर्थिन् देखो।

अर्थे (सं॰ अव्य॰) कारण वश, बसबब।

अर्थ्यात् (वै॰ त्रि॰) १ कार्यरत, परिश्रमी, काम करनेवाला, मिहनती। २ आशुकारी, जल्दबाज।

अर्थप्सु (सं॰ त्रि॰) धनाभिलाषयुक्त, दौलतका ख्वाहिशमन्द।

अर्थप्सुता (सं॰ स्त्री॰) धनाभिलाष, दौलतको ख्वाहिश।

अर्थेच्छा, अर्थप्सुता देखो।

अर्थोपक्षेपक (सं॰ पु॰) अर्थान् प्रयोजनानि उपक्षिपति, अर्थ-उप-क्षिप-ण्वुल्। नाटकका अङ्ग विशेष, खेलका कोई हिस्सा। विष्कम्भक, प्रवेशक, चूलिका, अङ्कावतार और अङ्कमुखको नाट्यशास्त्रमें अर्थोपक्षेपक कहते हैं।

अर्थोपम (सं॰ क्ली॰) अर्थोपमा देखो।

अर्थोपमा (सं॰ स्त्री॰) अर्थेनैव उपमा न तु शब्देनोक्ता। उपमालङ्कार विशेष।

"आर्थीतुल्यसमानाद्यास्तुल्यार्थौ यत्र वा वतिः।" (साहित्यदर्पण)

यदि तुल्य वा समानादि शब्द रहे अथवा तुल्यं क्रिया चेद्वतिः। पा ५।१।११५—इस सूत्रके अनुसार तुल्यार्थमें वति रहेगी, तो उसका नाम अर्थोपमा वा आर्थी उपमा होगा। तुल्य समानादि शब्द रहनेसे 'कमलके तुल्य मुख,' यह बात कहनेपर उपमेय मुखमें कमलका, 'कमल मुखके तुल्य' यह बात कहनेपर उपमान कमलमें मुखका और 'कमल एवं मुख तुल्य' इस बातके कहनेपर दोनोंमें दोनोंका सादृश्य समझा जाता है। ऐसे अर्थके अनुसन्धान हेतुसे ही सादृश्य झलकता, इसीसे उसका नाम आर्थी उपमा वा अर्थोपमा है। तुल्यार्थमें विहित वति रहनेपर भी ऐसे अर्थानुसन्धानसे सादृश्यका बोध होता है, अतएव वहां भी आर्थी वा अर्थोपमा कहना होगा। विशेष वर्णन उपमा शब्दमें देखो।

अर्थोपार्जन (सं॰ पु॰) धन वा सम्पत्तिकी प्राप्ति, दौलत या जायदादकी कमायी।

अर्थोष्मन् (सं॰ क्ली॰) धन, धनाभिमान, धनिकता, दौलत, दौलतका गरूर, दौलतमन्दी।

अर्थौघ (सं॰ पु॰) कोषाध्यक्ष, खज़ाञ्ची।

अर्थ्य (सं॰ त्रि॰) अर्थात् प्रयोजनात् अनपेतम्, अर्थ-यत्। १ न्याय्य, वाजिब। २ सार्थक, बामानी। ३ सप्रयोजन, मतलबी। ४ धनवान्, दौलतमन्द। ५ पण्डित, इल्मदार। अर्थ कर्मणि यत्। ६ याच्य, मांगा जाने क़ाबिल। ७ प्रार्थनीय, अर्ज़ किये जाने लायक़। अर्थाय साधु यत्। ८ अर्थसाधन, दौलत देनेवाला। (क्ली॰) ९ शिलाजतु। १० गेरू, लाल मट्टी।

अर्दन (सं॰ क्ली॰) अर्द-ल्युट्। १ याचन, अर्ज़। २ पीड़न, तकलीफ़दिही। ३ हनन, क़त्ल। ४ गमन, रवानगी। (त्रि॰) ५ विचलित, गमनशील, जो बेचैन घूमता हो। ६ पीड़क, तकलीफ़दिह।

अर्दना (सं॰ स्त्री॰) अर्द चुरा॰ भावे युच्। १ भिक्षा, भीख। २ वध, हिंसा, क़त्ल, तकलीफ़दिही। (हिं॰ क्रि॰) ३ पीड़ा पहुंचाना, मारना-कूटना, तकलीफ़ देना।

अर्दनि (सं॰ पु॰) १ अग्निरोग, हाज़मेकी बीमारी। २ याच्ञा, मांग। ३ अग्नि, आग।

अर्दली, अरदली देखो।

अर्दित (सं॰ त्रि॰) अर्द-क्त। १ याचित। २ गत। ३ पीड़ित। (क्ली॰) ४ वायुव्याधिविशेष, मुखमण्डलका पक्षाघात (Facial paralysis), शिरके अर्द्धभागका अवश हो जाना।

मुखमण्डलका दो प्रकारके स्नायुद्वारा स्पन्दन कार्य सम्पन्न होता है। यथा,—पोर्शियो डिउरा (Portio dura) वा सप्तमयुगल स्नायुकी मुखमण्डलस्थित शाखा एवं पञ्चम युगलस्नायुके तृतीयांशको गलगण्डविहीन (Non ganlionic) शाखा। पञ्चमयुगल स्नायुकी प्रथम एवं द्वितीयांश और तृतीयांशकी गलगण्डयुक्त शाखा द्वारा यहांका स्पर्शानुभावकता कार्य निकलता है।

पोर्शियो डिउरा एवं पञ्चम युगलके तृतीयांशको स्पन्दनकारी शाखाके ऊपर कोई आघात लगने अथवा दूसरा कारण पड़नेसे इस स्थानका व्यतिक्रम बढ़नेपर मुखमण्डलमें पक्षाघात होता है। सचराचर मुखमण्डलकी एक ही ओर पक्षाघात पड़ता है। जिस ओर पक्षाघात लगता है, रोगी उस ओरकी आंखको मूंद नहीं सकता। मुखकी दोनों ओरका भाव मिलानेसे बड़ी विलक्षणता दिखाई देती है। पक्षस्थ ओरकी नासिकाका स्पन्दन नहीं होता, रोगी उस

ओरको सिकोड़ भी नहीं सकता। हनु अर्थात् गालकी हड्डी कुछ लटक आती और मुखके शेषभागसे लार और खाद्यद्रव्य गिर पड़ता है। रोगीके हंसने पर असुस्थ ओर कुछ टेढ़ी हो जाती और बहुत खराब दिखाई देती है। रोगी साफ़ बोल और ओष्ठवर्णका उच्चारण कर नहीं सकता। किन्तु मुखका ऐसा व्यतिक्रम होनेपर भी रोगी अनायास खाद्य द्रव्यको चबा सकता है। इसीसे समझा जाता है, कि असुस्थ ओर चैतन्य न रहता सही, परन्तु पञ्चम युगल स्नायुमें कोई वैलक्षण्य नहीं पड़ता। प्रायः मुखको दोनो ओर पक्षाघात देखनेमें नहीं आता। फिर भी किसी किसी आदमीके वैसा हो सकता है। उस दशामें आंख और नाकके ऊपर विशेष दृष्टि रखनेसे रोग समझ पड़ता है।

शारीरिक दुर्बलता बढ़ने एवं दुर्बल मनुष्यके सोते समय मुखमें शीतल वायु लगनेसे यह रोग हो जाता है। सड़े दांत, स्नायुशूल, खोपड़ीके भीतरी अर्बुद, कानके निकटवर्त्ती शङ्खास्थिस्थित प्रस्तरांशीय रोग प्रभृति एवं अन्यान्य नाना कारणोंसे मुखमण्डलमें पक्षाघात लग सकता है। यह रोग प्राय सांघातिक नहीं होता, परन्तु मस्तिष्कमें पीड़ा रहनेसे विपद् आ सकती है।

चिकित्सा—यदि कोई मूल रोग हो, तो उसका प्रतीकार करना नितान्त आवश्यक है। लौहघटित बलकर औषध, हलका जुलाब, आयोडिड अव पोटाश प्रभृति औषधोंसे विशेष उपकार पहुंचता है। रागियोंको बिजलीका ज़ोर देने और घिसनेसे भी ज्यादा आराम मिलता है।

अवधौत मतसे मालिश करनेका घी—नेवलेकी चर्बी, सूवरकी चर्बी, बकरेकी चर्बी, सैन्धव नमक, अश्वगन्धाकी छालका रस पांच पुराना घी—आधा आधा पाव और कुचिलाका बीज लाये। पहले सब घी और चर्बीको किसी पत्थरके बरतनपर मिला धूपमें हाथसे रगड़े। दूसरे दिन धूपमें सेंधा नमक देकर सब चर्बी ऐसे घिसे, कि नमकका नाम मात्र भी न रहे। उसके बाद कुचिलेके एक एक बीजसे चर्बीको रगड़ना चाहिये। घिसते घिसते जब बीज चुक जाये, तब अश्वगन्धाका रस देकर चर्बीको धूपमें फिर रगड़े। इसतरह हर रोज़ पहर भर घिसकर चर्बीको धूपमें रख दे। अश्वगन्धा-रसके जलका अंश सूख जाने पर औषध व्यवहारके योग्य होता है। इसे पक्षाघात पर मालिश करनेसे शीघ्र प्रतीकार पहुंचता है।

होमियोपैथिक चिकित्सक मुखके पक्षाघातमें बेलेडोना, एकोनायिट, व्यारायिटा कार्बोनिका और काष्टिक वगैरह दवा देते हैं। आंखको ऊपरी पलकके स्पन्दनशून्य हो जानेका महौषध जेलसिमिनम है।

वैद्यशास्त्रमतसे—स्वेद, अभ्यङ्ग, शिरोवस्ति, पान, नस्य और भोजनके अनन्तर घृतपान करनेसे अर्दित रोग दूर हो जाता है।

मुखके पक्षाघातमें साधारणतः वैद्यलोग कटुतैल मर्दन, अश्वगन्धाका प्रलेप, घृत मर्दन एवं मांस-भोजनकी व्यवस्था करते हैं। अन्यान्य विस्तारित विवरण पक्षाघात शब्दमें देखो।

अर्दितिन् (सं० पु०) अर्दितमस्ति यस्य इनि। मुखके पक्षाघातका रोगी, जिसके मुंहमें लक़वा लग गया हो।

अर्द्यमान (सं० त्रि०) दुःखित, पीड़ित, आज़ुर्दा, थका-मांदा।

अर्देशीर—ईरानी शहर सीस्तानवासी बहमानके लड़के। सन् ११८४ ई०में इन्होंने पारसी धर्मग्रन्थ वन्दिदादकी एक नक़ल उतारी थी। हरबद महयार भारतसे सीस्तान जा उस नक़लको ले आये। सन् १३२३ ई०को काम्बे नगरमें ईरानवासी के खुशरु और रुस्तम मेहरबानने उसे देख दूसरी भी नक़लें उतारी थीं।

अर्देशीर नौशेर्वान्—ईरानी शहर किरमान्‌के पुरोहित। सन् १५७८ ई०में अकबर बादशाहके प्रार्थना करने पर पारसी धर्मोपदेशकोंने इन्हें भारत अपना मत फैलानेको भेजा था। इन्होंने यहां आ अकबरको अपने धर्मका सम्पूर्ण कर्मकाण्ड सिखाया और मौञ्जो-मेखला भी पहनायी। अकबरने इन्हींके उपदेशानुसार अपने जनानखानेमें अग्निदेवका मन्दिर बनाया और

अबुल्‌फ़ज़्‌लको उसे सौंप कहा था,—क्या रात क्या दिन, किसी समय इस मन्दिरकी पवित्र अग्नि बुझने न पावे।

अर्देशीर पपकान—प्राचीन समयके कोई मिस्रवासी व्यापारी। यह मिस्रसे जहाज़पर चर्ज़ें लाद प्राचीन समयमें भारत बेचने आते रहे। कुशानोंसे मिल कर्ण-पह्लवोंने एक बार इनपर सिन्धुनदके समीप घोर आक्रमण किया था।

अर्दोयी—काठियावाड़के गोंडल-नरेशको प्राचीन राजधानी। इसे गोंडलसे उत्तर-पूर्व और राजकोटसे दक्षिण छः कोस दूर पायेंगे। इसकी पूर्व ओर एक बुर्ज बना है। सन् १६५४-५५ ई०में कोटरा सङ्गानी राज्यके प्रतिष्ठाता सांगोजीको यह जागोरमें दे दी गयी थी। यहां को ज़मीन् बहुत अच्छी और पास ही गोंडल नदीमें गिरनेवाला नाला बहता है।

अर्द्यमान (सं० त्रि०) पीड़ित, आजुर्दा, जिसको तकलीफ़ मिल रही हो।

अर्ध (सं० पु०) ऋध वृद्धौ भावे घञ्। १ वृद्धि, बढ़ती। आधारे घञ्। २ गृह प्रभृति, मकान वग़ैरह। करणे घञ्। ३ एकदेश, खण्ड, टुकड़ा, हिस्सा। ४ वृद्धि-प्राप्तिका आधार, बढ़नेकी बुनियाद। ५ वायु, हवा। ६ समीप, पास। (त्रि०) ऋध णिच् कर्मणि अच्। ७ खण्डित, टूटा-फूटा। (क्लो०) अर्धं नपुंसकम्। पा २।२।२। ८ समानांश, दो बराबर टुकड़ेमें एक।

अर्धक (सं० पु०) जलसर्प, पनिहा सांप।

अर्धकघातिन् (सं० पु०) रुद्र।

अर्धकपाटसन्धिक (सं० पु०) वाहृदीर्घकपालोतरात्पपालिकर्णयस्पनाकृति विशेष।

अर्धकाल (सं० पु०) शिव।

अर्धकूट, अर्धकाल देखो।

अर्धकृत (सं० पु०) अर्धं कृतम्। असम्पूर्ण सम्पादित, पूरा न किया हुआ, जो अधूरा बना हो।

अर्धकेतु (सं० पु०) रुद्र विशेष।

अर्धकेशिकी (सं० पु०) छेदनार्थ शस्त्रधारा विशेष,

अर्धकोटी (सं० स्त्री०) आधा करोड़, पचास लाख।

अर्धकोश (सं० पु०) आधा खज़ाना।

अर्धकौड़विक, आर्धकौड़विक (सं० त्रि०) अर्ध-कुडव-परिमाणमर्हति, अर्ध-कुड़व-ठञ्। अधकुड़वके परिमाणयोग्य, जो सोलह तोलेके बराबर हो।

अर्धक्रोश (सं० पु०) आध कोस, एक मील।

अर्धखार (सं० क्लो०) अर्धं खार्याः, एकदेशी टच् समा०। खारीमानार्ध, आधी खारी, आठ द्रोण। (स्त्री०) अर्धखारी।

अर्धगङ्गा (सं० स्त्री०) अर्धं गङ्गायाः, एकदेशी तत्। कावेरी नदी। कावेरी नहानेसे गङ्गास्नानका आधा फल मिलता है।

अर्धगर्भ (सं० त्रि०) अर्धं वत्सरस्यार्धे अग्रहायणादौ पौषादौ वा ब्रह्माण्डस्यार्धे गगने वा गर्भं गर्भस्थानीयमुदकं येन। सूर्यके किरण विशेषसे सम्बन्ध रखनेवाला। अग्रहायण एवं पौषादि मास सूर्य अपने किरणसे पृथिवीका जल खींच आकाशके गर्भरूप मध्यस्थलमें धूमादि सञ्चार लगाता है। इसीसे ज्योतिषमें उक्त किरणको अर्धगर्भ कहते हैं।

अर्धगुच्छ (सं० पु०) अर्धः चन्द्रसमः गुच्छः, कर्मधा०। चतुर्विंशति गुच्छक हार, चौबीस लड़ीको माला।

अर्धगुञ्जा (सं० स्त्री०) अर्धं गुञ्जायाः, एकदेशी तत्। आधी रत्ती।

अर्धगोल (सं० पु०) वृत्तका अर्ध भाग, दायरेका आधा टुकड़ा, निस्फ़ दुनिया।

अर्धचक्रवर्तिन् (सं० पु०) नौ काले वासुदेव और विष्णुके नौ शत्रुका नाम। (जैनशास्त्र) वासुदेव देखो।

अर्धचक्रिन्, अर्धचक्रवर्तिन् देखो।

अर्धचन्द्र (सं० पु०) अर्धं चन्द्रस्य, एकदेशी तत्। १ चन्द्रका अर्ध भाग, चांदका निस्फ़ टुकड़ा। २ नखका क्षतचिह्न, नाखुनका दाग़। ३ गलहस्त, हाथसे गलेकी टीप। किसीका गला दबाते समय अङ्गुलीमें अर्धचन्द्रकी आकृति देख पड़ती है। ४ वाण विशेष, कोई तीर। यह अर्धचन्द्र जैसा बनता है।

भी अर्धचन्द्र कहते हैं। ६ मयूरपिच्छ, मोर-पङ्खकी आंख। ७ त्रिपुण्ड्र विशेष। यह अर्धचन्द्र जैसा लगाता है।

अर्धचन्द्रक (सं० पु०) अर्धचन्द्र इव मयूरस्य, सुप्सु० समा०। मयूरपिच्छका चन्द्र, मोरपङ्खका चंदोवा।

अर्धचन्द्रा (सं० स्त्री०) १ त्रिवृता, निसोत। २ कृष्णत्रिवृता, कालानिसोत।

अर्धचन्द्राकार (सं० पु०) अर्धचन्द्राकृति देखो।

अर्धचन्द्राकृति (सं० स्त्री०) अर्धचन्द्रस्य आकृतिरिव आकृतिर्यस्य। १ अर्धचन्द्राकार काच, निस्फ. चांद-जैसा शीशा। (त्रि०) २ अर्धचन्द्राकार, निस्फ चांद-जैसा।

अर्धचन्द्रिका (सं० स्त्री०) १ कर्णस्फोट लता, कन-फोड़ा। २ कृष्णत्रिवृता, कालानिसोत।

अर्धचोलक (सं० क्ली०) अर्धं चोलस्य, एकदेशी तत्, संज्ञायां कन्। आधी अंगिया, छोटी चोली।

अर्धजरतीयन्याय (सं० पु०) लौकिकन्यायभेद। इसका तात्पर्य यही है, कि एक वस्तु एक ही समयमें दो विपरीत धर्मयुक्त नहीं हो सकता। जो वृद्ध है, उसीका फिर तरुण होना असम्भव लगता है। मुर्गीका कोई अंश पकाया जाता, फिर वही मुर्गी किसी अंशसे अण्डे दे रही है—ऐसा कभी हो नहीं सकता।

अर्धजरतीयन्याय—इस वाक्यकी व्युत्पत्तिके विषयमें एक दृष्टान्त है। किसी वृद्ध नैयायिकके पास एक गाय थी। वे उस गायको बेचनेके लिये हाटमें ले गये। खरीदार लोग आकर उनसे पूछने लगे, गाय कितने वर्षकी है। ब्राह्मणने मन ही मन सोचा,—"वृद्धका ही अधिक आदर होता है। निमन्त्रणको जानेसे सभामें सब कोई मेरा सम्मान करता और सर्वत्र ही मुझे अधिक विदायी भी मिलती है।" यही समझकर उन्होंने कहा,—इसकी उम्र बहुत है। बूढ़ी गाय किस कामकी! सुतरां किसीने उसे न खरीदा।

नैयायिकने गायके साथ घर लौट ब्राह्मणीसे सब हाल कहा था। उस पर ब्राह्मणी झुंझलाकर बोल उठी,—"तुम्हारी कैसी बुद्धि है, तुमने ऐसी गायको बूढ़ी क्यों बताया? वृद्ध कहनेसे उसे कौन मोल लेगा!"

दूसरे दिन ब्राह्मण फिर उस गायको बाज़ार ले गये। खरीदारोंने जब गायकी उम्र पूछी, तब उत्तरमें उन्होंने कहा—"बाबू! यह तो अभी कुछ ही दिनकी और सिर्फ पहली बार वियानी है।" यह सुन वे लोग हंसकर कहने लगे,—कल आपने इसे वृद्ध और आज तरुण बताया, ऐसा कभी हो सकता है! इसपर ब्राह्मणने उत्तर दिया,—"यह बात असम्भव नहीं है। मेरी गाय वृद्ध और तरुण भी है। शास्त्रकार आत्माको पुरातन कहते हैं। अतएव इस गायके नवीन शरीरमें पुरातन आत्मा विद्यमान है। सुतरां गो शब्द कहनेसे गोदेहावच्छिन्न पुरातन आत्मा एवं तरुण गाय समझी जाती है।" किन्तु चना चबाना और शहनायीका बजाना एक ही साथ नहीं हो सकता,—

"एकसाथ नहिं होहि भुवालू।
हंसब ठठाय बजावब गालू॥" (तुलसी)

अर्धजल (सं० क्ली०) जलक्रिया विशेष, मुर्देका नहलाना। चितापर पहुंचानेसे पहले शवको जो नहलाते और आधा पानी आधा ज़मीनमें रखते, उसे अर्धजल कहते हैं।

अर्धजाह्नवी (सं० स्त्री०) अर्धं जाह्नव्याः, एकदेशी तत्। अर्धगङ्गा, कावेरी नदी।

अर्धज्योतिका (हिं० स्त्री०) ताल विशेष।

अर्धतनु (सं० स्त्री०) अर्ध शरीर, निस्फ जिस्म।

अर्धतिक्त (सं० पु०) असम्पूर्णः तिक्तः। निम्बवृक्ष विशेष, नेपाली नीमका पेड़।

अर्धतूर (सं० पु०) वादित्र विशेष, किसी किस्मका बाजा।

अर्धदग्ध (सं० त्रि०) अधजला, आधा जला, झुलसा हुआ।

"अर्धदग्ध जड़ नरनकी विधि हु न रिझवन योग।" (तुलसी)

अर्धदिन (सं० क्ली०) अर्धं दिनस्य, एकदेशी

तत्। १ आधा दिन, दोपहर। २ बारह घण्टेका दिन।

अर्धदिवस (सं० पु०) अर्धदिन देखो।

अर्धदेव (वै० पु०) अर्धं समीपे देवानाम्। देवताके समीप वर्तमान व्यक्ति, फरिश्तेके पास रहनेवाला शख्स।

अर्धद्रौणिक, आर्धद्रौणिक (सं० त्रि०) अर्धद्रोणेन क्रीतम्, ठञ्। आधे द्रोणसे खरीदा हुआ।

अर्धधार (सं० क्ली०) अर्धं धारा यस्य। वैद्यशास्त्रोक्त अस्त्रविशेष, किसी किस्मका नश्तर।

अर्धधारक, अर्धधार देखो।

अर्धनयन (सं० क्ली०) तृतीय नेत्र, ज्ञानचक्षु, तीसरी आंख। यह ललाटमें रहता और बड़े पुण्यसे खुलता है।

अर्धनाराच (सं० पु०) १ बाण विशेष। २ मर्कटबन्ध और कीलक पाशसे आबद्ध अस्थि। जैनशास्त्रमें इस हड्डीका उल्लेख है।

अर्धनारायण (सं० क्ली०) अर्धं अर्धपरिमितं स्थानं यस्य तादृशो नारायणो यत्र। १ गङ्गा प्रवाहसे चार हाथ दूर नारायणस्वामिक स्थानविशेष। २ विष्णु विशेष।

अर्धनारीश (सं० पु०) अर्धाङ्गे या नारी तस्या ईशः स्वामी। महादेव, आधे पुरुष और आधी स्त्रीकी आकृतिवाले शङ्कर। इनका निवासस्थान कण्ठदेशवर्ती विशुद्धपद्म माना गया है। ध्यान धरनेका मन्त्र नीचे लिखा है—

"नीलप्रवालरुचिरं विलसत्त्रिनेत्रं
पाशारुणोत्पलकपालकशूलहस्तम्।
अर्धाम्बिकेशमनिशं प्रविभक्तभूषं
बालेन्दुबद्धमुकुटं प्रणमामि रूपम्।" (तन्त्रसार)

अर्धनारीश्वर, अर्धनारीश देखो।

अर्ध-नारीश्वर-रस (सं० पु०) औषधभेद। यह रस सान्निपातिक ज्वरपर गुञ्जामात्र नस्यकर्ममें दिया जाता है। कोई कोई जीर्ण विषमज्वरमें भी यह नस्य हितकर बताते हैं। इससे तत्क्षणमें ही वामाङ्गज्वर नाश होता है। इसके प्रस्तुत करनेका विधान यह है—पारद, गन्धक, विष, टङ्कण, यह सब द्रव्य समभाग यानी बराबर बराबर ले एकत्र कज्जली बनाकर कृष्ण सर्पके मुखमें रख दे और उसके मुखको मट्टीसे बन्दकर किसी मट्टीके ही पात्रमें नीचे ऊपर लवण डाल बीचोंबीच स्थापित करे। पीछे उक्त पात्रको भी खूब बन्दकर तीव्र अग्निपर ४ प्रहर पर्यन्त जलानेसे यह तैयार होता है। (भैषज्यरत्नावली)

दूसरा प्रकार—पारा और गन्धक, यह दोनों समभाग, इन दोनोंके बराबर शुद्ध विष एवं जेपाल और मिर्च चतुर्गुण लाये। इन द्रव्योंको एकत्र कर त्रिफला रसके साथ घोंटना चाहिये। रसकी भावना पांच दी जाती है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

तीसरा—शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, विष, ताम्रका भस्म, समभाग ग्रहण कर जलके साथ खूब पीसे। पीछे सब को चक्राकार बना सर्पके मुखमें भर दे। मुखको लेपन कर, एक मट्टीके पात्रमें नीचे ऊपर लवण और बीचमें उक्त सर्प रख सिकता-(बालू, रेत)से परिपूर्ण करना चाहिये। ४ प्रहरतक मन्द मन्द आंचसे पाक करके पात्र उतार ले। जब शीतल हो जाय, तब उससे गोलक को निकाल, लेपन हटा, भस्म उठा यत्नसे खलमें विमर्दन करना होता है। यवमात्र यह चूर्ण नस्यमें मिलाकर दिया जाता है। (प्रयोगामृत ज्वरचिकित्सा)

अर्धनाव (सं० क्ली०) अर्धं नावः, एकदेशी तत्, टजन्तः। नौकाका अर्धांश, किश्तीका निस्फ, हिस्सा।

अर्धनिशा (सं० स्त्री०) अर्धं निशायाः, एकदेशी तत्। अर्धरात्र, आधीरात।

अर्धपञ्चाशत् (सं० स्त्री०) पञ्चविंशति, पचीस, पचासका आधा।

अर्धपण (सं० क्ली०) अर्धं पणस्य, एकदेशी तत्। पणका आधा, काकिणीद्वय, दश गण्डा।

अर्धपथ (सं० क्ली०) अर्धं पथः, एकदेशी तत्, अजन्तः। पथका अर्धांश, आधी राह। (अव्य०) राहमें, बीचोंबीच।

अर्धपल (सं० क्ली०) कर्षद्वय, चार तोला।

अर्धपाञ्चालक (सं० त्रि०) अर्धपञ्चाले भवः, वुञ्।

अर्धपञ्चाल-देशजात, जो अर्धपञ्चाल देशमें पैदा हुआ हो।

अर्धपादा (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भुयीं आंवला।

अर्धपादिक, आर्धपादिक (सं० त्रि०) अर्धपादं तच्छेदमर्हति, ठञ्। अर्धपादच्छेद योग, अर्धपाद परिमाण, दमड़ी भर।

अर्धपारावत (सं० पु०) अर्धेन अङ्गेन पारावत इव। १ वनकुक्कुट, जङ्गलकी मुर्गी। २ तित्तिर पक्षी, तीतर।

अर्धपुलायित (सं० क्ली०) अश्वकी एक गति, मोठा पोयिया।

अर्धपुष्पा (सं० स्त्री०) महाबला, कोई पौधा।

अर्धपूर्ण (सं० त्रि०) आधा भरा, निस्फ़ खाली।

अर्धपोहल (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, कोई पौधा। इसकी पत्ती मोटी होती है।

अर्धप्रस्थिक, आर्धप्रस्थिक (सं० त्रि०) अर्धप्रस्थेन क्रीतम् ठञ्। अर्धप्रस्थ-परिमित द्रव्य द्वारा क्रीत, जो आधे प्रस्थमें ख़रीदा गया हो।

अर्धप्रहर (सं० त्रि०) आधा पहर, डेढ़ घण्टा।

अर्धप्रादेश (सं० पु०) १ आधा बित्ता। २ आधा सेतु। ३ आधा मुल्क।

अर्धभाग (सं० पु०) अर्धं भागस्य एकदेशो तत्। १ आधा हिस्सा। २ खण्ड, टुकड़ा।

अर्धभागिक, अर्धभाग देखो।

अर्धभागिन्, अर्धभाज् देखो।

अर्धभाज् (सं० त्रि०) अर्धं भजति, भज-ण्वि, उप० समा०। अर्धांशका अधिकारी, आधेका हिस्सेदार।

अर्धभास्कर (सं० पु०) दोपहर।

अर्धभोजन (सं० क्ली०) अर्धाशन, आधे पेटका खाना।

अर्धभोटिका (सं० स्त्री०) किसी क़िस्मकी रोटी।

अर्धभ्रम (सं० क्ली०) अर्धं चरणार्धपर्यन्तं भ्रमो वर्णसाजात्यात् पाठक्रमेण आवर्तनं यत्र, बहुव्री०। जिस श्लोकमें आधे चरणके अक्षर एक एक करके बायीं ओरसे दाहनी अथवा दाहनी ओरसे बायीं किंवा ऊपरसे नीचे या नीचेसे ऊपरको पढ़नेपर एक ही जैसा पाते, उसे अर्धभ्रम कहते हैं,—

"धाहुरर्धभ्रमं नाम श्लोकार्धभ्रमणं यदि।" (सरस्वतीकण्ठाभरण)

यह शब्दालङ्कार विशेष है। इसमें शब्द गूंथनेके सिवा कोई अर्थवैचित्र्य नहीं होता। ऐसे श्लोकमें ऊपर लिखे हुए मतके अनुसार नाना ओरसे अक्षर गिरनेपर भी अर्थ जैसेका तैसा ही बना रहता है।

अ	भी	क	म	ति	के	ने	ह
भी	ता	न	न्द	स्य	ना	श	ने
क	न	तृ	का	म	से	ना	के
म	न्द	का	म	क	म	स्य	ति

(माघ १९।३२)

इस श्लोकमें प्रथम चरणके प्रथमार्धका चार अक्षर बायीं ओरसे दाहिनी ओर पढ़ जानेपर 'अभीकम' होता है। फिर प्रत्येक चरणका पहला अक्षर ऊपरसे नीचेकी ओर पढ़नेपर भी "अभीकम" ही आता है। द्वितीय चरणके प्रथमार्धका चार अक्षर बायीं ओरसे दक्षिणको पढ़नेपर 'भीतानन्द' और प्रत्येक चरणके प्रथमार्धका दूसरा अक्षर ऊपरसे नीचेको पढ़ जाते भी 'भीतानन्द' ही पड़ता है। तीसरे चरणके प्रथमार्धका चार अक्षर बायीं ओरसे दाहिनी ओर को पढ़ जानेपर 'कनतृसका' और प्रत्येक चरणके प्रथमार्धका तीसरा अक्षर ऊपरसे नीचेको पढ़नेपर भी 'कनतृसका' ही बैठता है।

चतुर्थ चरणके प्रथमार्धका चार अक्षर बायीं ओरसे दाहिनी ओर पढ़ जानेपर 'मन्दकाम' और प्रत्येक चरणके चौथे अक्षरको ऊपरसे नीचेकी ओर पढ़नेपर भी 'मन्दकाम' ही बनता है।

सब चरणके प्रथमार्धका अक्षर इसीतरह बायेंसे दाहने और ऊपरसे नीचेको पढ़ जाते भी एक ही जैसा रूप होता है।

दूसरे प्रथम चरणके शेषार्धका चार अक्षर बाईंसे दाहिनी ओरको पढ़ जानेपर 'तिकेनेह' और प्रत्येक चरणके शेषार्धका अवशिष्ट अक्षर नीचेसे ऊपरको पढ़ते भी 'तिकेनेह' ही लगता है।

द्वितीय चरणके शेषार्धका चार अक्षर बाईं

ओरसे दाहिनी ओरको पढ़ जानेपर 'स्यनाग्रने' और प्रत्येक चरणके शेषार्धकी उलटी ओरका दूसरा अक्षर नीचेसे ऊपरको पढ़ते भी 'स्यनाग्रने' ही मिलता है।

तृतीय चरणके शेषार्धका चार अक्षर बाईंसे दाहिनी ओर पढ़ जानेपर 'मसेनाके' और प्रत्येक चरणके शेषार्धकी उल्टी ओरका तीसरा अक्षर नीचेसे ऊपरको पढ़ते भी 'मसेनाके' ही गंठता है।

चतुर्थ चरणके शेषार्धका चार अक्षर बाईंसे दाहिनी ओर पढ़ जानेसे 'कमस्यति' और प्रत्येक चरणके शेषार्धकी उलटी ओरका चौथा अक्षर नीचेसे ऊपरको पढ़ते भी 'कमस्यति' ही निकलता है।

अर्ध अर्ध चरणमें अक्षरका इस रीतिसे भ्रम अर्थात् भ्रमण वा आवर्तन होनेपर श्लोकको अर्धभ्रम कहते हैं। अग्निपुराणमें अर्धभ्रम श्लोक 'अर्धभ्रमक' कहा गया है। अर्धभ्रम वा अर्धभ्रमक श्लोक अनुष्टुप् भिन्न और किसी छन्दमें नहीं रचा जाता।

अ	भी	क	म	ति	के	ने	हे
भी	ता	न	न्द	स्य	ना	ग्र	ने
क	न	त्स	का	म	से	ना	के
म	न्द	का	म	क	म	स्य	ति

अग्निपुराणमें इस तरह लम्बी पांच और तिरछी नौ रेखा खींचकर बत्तीस कोष्ठ बनानेकी व्यवस्था है। एक एक कोष्ठमें श्लोकके अक्षरोंको यथाक्रम रखकर ऊपर कही हुई रीतिसे पढ़ना पड़ता है। परन्तु माघ और भारविमें इस तरह रेखा खींचकर कोष्ठ बनानेकी व्यवस्था नहीं है।

अर्धमागधी (सं० स्त्री०) प्राकृत भाषा विशेष, कोई पुरानी जबान। पहले यह मथुरा और पटनाके बीच चलती थी। मागधी देखो।

अर्धमाणव, अर्धमाणवक देखो।

अर्धमाणवक (सं० पु०) अर्धं माणवकस्य, एकदेशी तत्। द्वादश यष्टिका माला, बारह लड़ीका हार।

अर्धमात्रा (सं० स्त्री०) अर्धं मात्रायाः, एकदेशी तत्। १ बिन्द्वर्ध-चन्द्राकार ब्रह्म। २ अर्धपरिमाण, आधा वजन। ३ सङ्गीतशास्त्र और पद्यको अर्ध-मात्राका उच्चारण काल। (त्रि०) ४ हल् वर्ण, व्यञ्जन।

अर्धमात्रिक (सं० पु०) निरूहणाधिकारका वस्ति विशेष, पिचकारीसे दिया जानेवाला कोई जुलाब। दशमूलीय कषायसे शताह्वाचको पोस डाले। फिर दो-दो पल सैन्धवाद्य एवं मधु और एक पल तैल मिलानेसे यह तैयार होता है। इसके सेवनसे सर्वरोग मिटता है। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

अर्धमार्गे (सं० अव्य०) आधी राहमें।

अर्धमास (सं० पु०) अर्धं मासस्य, एकदेशी तत्। एक पक्ष, पन्द्रह दिन, आधा महीना।

अर्धमासतम (सं० त्रि०) १ प्रति पक्ष किया जाने वा होनेवाला, जो हर पखवारे हो। २ एक पक्ष रहनेवाला, जो एक पखवारे टिकता हो।

अर्धमासशस् (सं० अव्य०) प्रतिपक्ष, पन्द्रह दिनमें, पखवारे-पखवारे।

अर्धमासीक, अर्धमासतम देखो।

अर्धमासूरी (सं० स्त्री०) लेखनार्थ अस्त्रधारा विशेष।

अर्धमुष्टि (सं० पु० स्त्री०) आधी मुट्ठी, जो मुट्ठी आधी बन्द और आधी खुली हो।

अर्धयाम (सं० पु०) अर्धं यामस्य प्रहरस्य, एकदेशी तत्। दिवा तथा रात्रिका अष्टांश, दिन और रातका आठवां हिस्सा, डेढ़ घण्टा।

अर्धरथ (सं० पु०) अर्धः असम्पूर्णः रथः। असम्पूर्ण रथी, अधूरा सिपाही। जो वीर रथपर बैठ युद्ध करनेमें दूसरे रथीकी अपेक्षा रखता, वह अर्धरथ कहाता है।

अर्धरात्र (सं० पु०) अर्धं रात्रेः, एकदेशी अजन्तः। १ रात्रिका अर्धभाग, दो प्रहर रात्रि, आधी रात। २ निशीथ, महानिशा, अवसरालय, निसम्पात, सुमसम, चौबीस घण्टेकी रात।

"अर्धरात्र गइ कपि नहिं आवा।" (तुलसी)

अर्धरात्रसमय (सं० पु०) रात्रिके अर्ध भागका समय, आधोरातका वक्त।

अर्धरात्राधंदिवस (सं० क्लो०) विषुव, विषुवत्, दिनरात बराबर होनेका समय।

अर्धर्च (सं० पु०-क्लो०) अर्ध ऋचः, एकदेशो अच् समा०। ऋक्‌का अर्धभाग।

अर्धर्चशस् (सं० अव्य०) प्रत्येक पदपर, हरेक मिसरेमें।

अर्धर्चादि (सं० पु०) अर्धर्च इति शब्द आदौ येषाम्। अर्धर्चाः पुंसि च। पा।२।४।३१। पाणिनिका कहा हुआ शब्द गणभेद। इस गणमें निम्नलिखित शब्द रहता, जो पुंलिङ्ग एवं क्लोवलिङ्ग भी होता है,—अर्धर्च, गोमय, कषाय, कार्षापण, कुतप, कपाट, शङ्ख, चक्र, गूथ, यूथ, ध्वज, कबन्ध, पद्म, गृह, सरक, कंस, दिवस, युष, अन्धकार, दण्ड, कमण्डलु, मण्ड, भूत, द्वीप, द्यूत, धर्म, कर्मन्, मोदक, शतमान, यान, नख, नखर, चरण, पुच्छ, दाड़िम, हिम, रजत, सक्तु, पिधान, सार, पात्र, घृत, सैन्धव, औषध, आढ़क, चषक, द्रोण, खलीन, पात्रीव, यष्टिक, वार, बाण, प्रोथ, कपित्थ, शुष्क, शोल, शुल्व, सीधु, कवच, रेणु, कपट, सीकर, मुसल, सुवर्ण, यूप, चमस, वर्ण, क्षीर, कर्ष, आकाश, अष्टापद, मङ्गल, निधन, निर्यास, जृम्भ, वृत्त, पुस्त, क्ष्वेड़ित, शृङ्ग, शृङ्खल, मधु, मूल, मूलक, शराव, शाल, वप्र, विमान, मुख, प्रग्रीव, शूल, वज्र, कर्पट, शिखर, कल्क, नाट, मस्तक, वलय, कुसुम, तृण, पङ्क, कुण्डल, किरीट, अर्बुद, अङ्कुश, तिमिर, आश्रम, भूषण, इल्वस, मुकुल, वसन्त, तड़ाग, पिटक, विटङ्क, माष, कोश, फल, दिन, दैवत, पिनाक, समर, स्थाणु, अनीक, उपवास, शाक, कर्पास, चषाल, खण्ड, दर, विटप, रण, बल, मल, मृणाल, हस्त, सूत्र, ताण्डव, गाण्डीव, मण्डप, पटह, सौध, पार्श्व, शरीर, फल, पुर, राष्ट्र, विश्व, अम्बर, कुट्टिम, मण्डल, ककुद, तोमर, तोरण, मञ्चक, पुङ्ख, मध्य, बाल, वल्मीक, वर्ष, वस्त्र, देह, उद्यान, उद्योग, स्नेह, स्वर, सङ्गम, निष्क, क्षेम, शूक, छत्र, पवित्र, यौवन, पालक, मूषिक, वल्कल, कुञ्ज, विहार, लोहित, विषाण, भवन, अरण्य, पुलिन, दृढ़, आसन, ऐरावत, शूर्प, तीर्थ, लोमश, तमाल, लोहदण्डक, शपथ, प्रतिसर, दारु, धनुस्, मान, शृङ्ग, वितङ्क, मव, सहस्र, ओदन, प्रवाल, शकट, अपराह्ण, नीड़, शकल, कुणप, ऋण, पूर्व, वुस्त, निगड़, स्थूल, नाल, कटक, कण्टक, कुमुद, दृष्वास, विड़ङ्ग, पिण्याक, विशाल आर्द्र, हन, योध कुक्कुट, कुड़व, खण्डल, पद्मक, क्षाल, वसु, स्तेन, स्तन, चत्र, कलह, वर्चस्क, तण्डक, तण्डुल।

अर्धलक्ष्मीहरि (सं० पु०) अर्धलक्ष्म्या आकारे यस्य तादृशो हरिः। लक्ष्मी सहित मिलित विष्णु।

"ऋषिः प्रजापति छन्दो गायत्री देवता पुनः।
अर्धलक्ष्मीहरि प्रोक्तः श्रीबीजेन षड़ङ्गकम्।" (गौतमीयतन्त्र)

इनके ध्यानका मन्त्र यह है,—

"उद्यत्प्रद्योतनशतरुचिं तप्तहेमावदातं
पार्श्वद्वन्द्वे जलधिसुतया विश्वधात्र्या च जुष्टम्।
नानारत्नोल्लसितविविधाकल्पमापीतवस्त्रम्
विष्णुं वन्दे दरकमलकौमोदकी चक्रपाणिम्॥"

अर्धवस्त्रसंवीत (सं० त्रि०) अर्धपरिच्छदविशिष्ट, आधे कपड़े पहने हुआ।

अर्धविसर्ग (सं० पु०) अर्धविसर्गस्य एकदेशो तत्। आधे विसर्ग—जैसा जिह्वामूलीय और उपध्मानीय।

अर्धवीक्षण (सं० क्लो०) अर्धं वीक्षणस्य, एकदेशो-तत्। अपाङ्ग दर्शन, तिरछा नज़ारा।

अर्धवीरुच्छा (सं० स्त्री०) कृष्णा दूर्वा, काली दूब।

अर्धवृत्त (सं० क्लो०) १ वृत्तका अर्धांश, दायरेका आधा हिस्सा। २ वृत्तके परिधिका अर्धांश, दायरेके घेरेका आधा हिस्सा।

अर्धवृद्ध (सं० त्रि०) आधा बुड्ढा, दरमियानी उम्र-वाला।

अर्धवृहती (वै० स्त्री०) अर्ध श्वास, आधी सांस।

अर्धवैनाशिक (सं० पु०) अर्ध असम्पूर्णः वैना-शिकः बौद्ध विशेषः। वैशेषिक शास्त्र-प्रणेता।

अर्धवैशस (सं० क्लो०) अर्धस्य वैशसः वधः। अर्ध विनाश, निस्फ़ क़त्ल।

अर्धव्यास (सं० पु०) वृत्तको त्रिज्या, दायरेका निस्फ़ क़ुतर।

अर्धशत (सं० क्लो०) १ पञ्चाशत, पचास। २ शत एवं पञ्चाशत, डेढ़ सौ।

अर्धशन (सं० क्लो०) अर्धं अशनस्य, एकदेशी तत्, नि० साधु। अर्धभोजन, आधी खुराक।

अर्धशफर (सं० पु०) अर्धः असम्पूर्णः शफरः। क्षुद्र मत्स्य विशेष, दण्डपाल, कोई छोटी मछली।

अर्धशब्द (सं० त्रि०) मन्द शब्दविशिष्ट, धीमी आवाज़वाला।

अर्धशराव (सं० पु०) प्रसृति द्वय, बत्तीस तोला।

अर्धशरावक, अर्धशराव देखो।

अर्धशेष (सं० त्रि०) आधा बाक़ी, जो सिर्फ आधा बच गया हो।

अर्धश्याम (सं० त्रि०) आधा बदरीला, जो बादल से निस्फ घिरा हो।

अर्धश्लोक (सं० पु०) अर्धं श्लोकस्य, एकदेशी तत्। श्लोकका अर्धभाग, प्रथम पादद्वय।

अर्धसञ्जात (सं० त्रि०) आधा जगा हुआ, जिसमें आधी फ़सल पैदा हो चुके।

अर्धसफर, अर्धशफर देखो।

अर्धसम (सं० त्रि०) अर्धेन समः। अर्धके समान, आधेके बराबर।

अर्धसमवृत्त (सं० क्लो०) वृत्तविशेष, सोरठा। इसमें प्रथम तृतीय और द्वितीय चतुर्थ पाद समान रहता है।

अर्धसह (सं० पु०) पेचक, उल्लू चिड़िया।

अर्धसीरिन् (सं० पु०) अर्धं सीरस्य हलकृष्टशस्यादिफलस्य अस्ति अस्य, अस्त्यर्थे इनि। अन्यके खेतमें खेती कर उपजका अर्ध भाग पानेवाला कृषक, जो किसान दूसरेका खेत कमाता और फसलका आधा हिस्सा पाता हो।

अर्धहार (सं० पु०) अर्धः हारः। चौंसठ या चालीस लड़ीका हार।

अर्धह्रस्व (सं० क्लो०) अर्धाक्षर, आधा हर्फ।

अर्धांश (सं० पु०) अर्धं अंशस्य, एकदेशी तत्। अर्धभाग, आधा हिस्सा।

अर्धांशिन् (सं० त्रि०) अर्धभागका अधिकारी, निस्फ हिस्सा पानेवाला।

अर्धांशोनजल (सं० क्लो०) अर्धांशहीन पक्व जल, जो पानी जलकर आधा रह गया हो। यह वातपित्त को मिटाता है। (राजनिघण्टु)

अर्धाकार (सं० पु०) १ अ अक्षरका अर्ध भाग। २ अवग्रह, समासके पदका विभाग।

अर्धाङ्ग (सं० क्लो०) १ शरीरका अर्ध भाग, निस्फ जिस्म। २ पक्षाघात, फ़ालिज, लकवा। इस रोगमें आधा अङ्ग मारे पड़ता है। ३ शिव।

अर्धाङ्गिनी (सं० स्त्री०) पत्नी, बीबी।

अर्धाङ्गी (सं० पु०) शिव।

अर्धार्ध (सं० पु०) अर्धं अर्धस्य तुल्यांशस्य, एक० तत्। समान भागका अर्धांश, चतुर्थांश, आधेका आधा, चौथायी।

अर्धालखिया—विहारके बनौधिया और जैसवार कलवारकी एक शाखा।

अर्धालिग (सं० पु०) जलसर्प, पनिहा सांप।

अर्धावभेदक (सं० पु०) शिरोरोग विशेष, अर्धकपाली, आधाशीशी। इसकी उत्पत्ति और लक्षण इस प्रकार लिखे है—रूक्षवस्तु खाने, अनशन प्राग्वातावश्याय, मैथुन, वेगसन्धारण (मूत्रादिक अवरोध करने), अधिक परिश्रम, व्यायाम प्रभृति कारणोंसे वायु कुपित हो केवल या कफसे मिल, शिर, भ्रू, नेत्र, कर्ण, ललाटके अर्धभागमें जो शस्त्र ताड़न सदृश तीव्र वेदना (पीड़ा) उत्पन्न करता, उसको अर्धावभेदक कहा जाता है। (माधवनिदान)

२ समान अंशमें विभाजन, बराबर हिस्सेका तक़सीम।

अर्धावशेष, अर्धशेष देखो।

अर्धाशन, अर्धशन देखो।

अर्धाष्टम—गुजरात प्रान्तका कोई प्राचीन ज़िला। सन् ११४३-११७४ ई०में पण्डितप्रवर हेमचन्द्र जैन चालुक्यनृपति कुमारपालके मन्त्री रहे। कहते हैं, कि विक्रमीय संवत् ११४५ को कार्तिकपूर्णमासीको हेमचन्द्रने इस ज़िलेके धन्धुक गांवमें चाचिग नामक किसी मोदी बनियेके घर जन्म लिया था। माता पाहिनी चामुण्ड गोत्रकी रहीं, हेमचन्द्रको लड़कपनमें लोग

चङ्गोदेव कहते थे। सन् १०७८-११७० ई०में जैनाचार्य देवचन्द्र पाटनसे धन्धुक गये, जिन्हें देख चङ्गोदेव पोछे जा बैठे। लड़केको होनहार पा देवचन्द्र चकराये और लोगोंको अपने साथ ले चाचिगके मकान् पहुंचे थे। उस समय चाचिग घरमें न रहा, किन्तु उसकी पत्नीने आदरके साथ आचार्यका स्वागत किया और मांगनेपर अपना पुत्र चङ्गोदेव उन्हें सौंप दिया। जैनाचार्यने पुत्रको कर्णावती पहुंचाया और उदयन मन्त्रीके लड़कों साथ जा रखा था। चाचिग मकान्में लड़केको न पा बहुत घबराया और विना देखे अन्नजल ग्रहण न करनेका शपथ उठाया। कर्णावती पहुंच उसने घुड़ककर आचार्यसे लड़केको वापस मांगा था। किन्तु उदयनके कहनेसे वह उन्हें देवचन्द्रके पास ही छोड़नेपर राज़ी हो गया। सन् १०८७ ई०में चाचिगने पुत्रको आठ वर्षको अवस्थापर दीक्षा दिला सोमचन्द्र नाम रखा था। जब वह पढ़-लिखकर धुरन्धर विद्वान् हुए, तब देवचन्द्र उन्हें हेमचन्द्र कहने लगे। सन् ११९० ई०में कोई इक्कीस वर्षकी अवस्थापर हेमचन्द्रने अपनी प्रकर्ष विद्याके कारण 'सूरि' उपाधि पायी थी। सिद्धराजने उनकी बात सुनते ही आश्चर्यमें आ विद्वद्वर कहके सम्मानित किया। सिद्धराजके साथ हेमचन्द्र सोमनाथपाटन पहुंचे और शिवलिङ्गके सामने पूज्य दृष्टिसे झुके थे। उन्होंने 'सिद्धहेमचन्द्र' नामक व्याकरण ग्रन्थ अपने और महाराजके नामपर बहुत ही अच्छा बनाया है। 'अभिधान-चिन्तामणि' और 'अनेकार्थनाममाला' पुस्तक भी उन्होंका लिखा है। उन्होंने कुमारपाल नृपतिसे अहिंसा रखनेकी प्रतिज्ञा करा ली थी। जब कुमारपालने धर्मका सबसे बड़ा काम करनेको पूछा, तब हेमचन्द्रने सोमनाथके मन्दिरका जीर्णोद्धार ही बता दिया। उनके कहनेसे कुमारपालने मद्य-मांसका व्यवहार छोड़ा और अपने राज्यमें जीवहिंसा न होनेका ढिंढोरा पिटाया था। कहते हैं, अनहिलवाड़के किसी बनियेकी कुल जायदाद एक जूं मारनेके कारण ज़ब्त हुई रही। कुमारपालके समय उन्होंने अच्छे-अच्छे साहित्यिक और धार्मिक ग्रन्थ लिखे। उनमें अध्यात्मोपनिषद् वा योगशास्त्र, त्रिषष्टिशलाकापुरुष-चरित, परिशिष्ट-पर्व, प्राकृत शब्दानुशासन, लिङ्गानुशासन, द्व्याश्रय, छन्दोनुशासन, देशीनाममाला और अलङ्कार-चूड़ामणि उल्लेख-योग्य है। सन् ११७२ ई०में ८४ वर्षको अवस्थापर हेमचन्द्र मरे थे। कुमारपाल नृपति उनको मृत्युपर फूट-फूट रोये और लाखों आदमी चिताको भस्म मस्तकपर लगानेको ले गये।

अर्धासन (सं० क्लो०) अर्धं आसनस्य, एक० तत्। १ आसनका अर्ध भाग। अर्धं सम्यन्नं असनं त्यागः। २ स्नेहदान, इज़्ज़तका सलाम। ३ अक़ुत्सन, इलज़ामको मुवाफ़ो।

अर्धिक (सं० त्रि०) अर्धमर्हति, टिठन्। अर्धभाग-विशिष्ट, निस्फ़, हिस्सेसे ताल्लुक़ रखनेवाला।

अर्धिन् (सं० त्रि०) अर्धं ग्रहीतत्वेन अस्त्यस्य, इनि। अर्ध भाग लेनेवाला, निस्फ़का हिस्सेदार।

अर्धीकरण (सं० क्लो०) अर्ध भाग बनानेकी क्रिया, आधा हिस्सा निकालनेका काम।

अर्धुक (वै० त्रि०) ऋध बाहु० उकञ्। वृद्धिशील, सम्पन्न, कामयाब।

अर्धेन्दु (सं० पु०) अर्धं इन्दोः, एक० तत्। १ चन्द्रका अर्ध भाग, आधा चांद। २ नख चिह्न, नाखूनका निशान। ३ अर्धचन्द्र बाण। ४ गलहस्त, गल बहियां। ५ अतिप्रौढ़ स्त्रीको योनिमें अङ्गुलि प्रयोग।

अर्धेन्दुमौलि (सं० पु०) अर्धेन्दुः मौलौ मस्तके यस्य। चन्द्रचूड़ शिव।

अर्धेन्दुशकला (सं० स्त्री०) १ नासारोग विशेष, नाकको कोई बीमारी। २ कपालरोगभेद, खोपड़ेका कोई आज़ार। ३ ओष्ठ रोग, होंठको बीमारी। ४ अर्बुदरोग, फोड़ा-फुन्सी। ५ गलरोग, गर्दनका आज़ार। ६ कर्णरोग, कानको बीमारी।

अर्धेन्द्र (सं० त्रि०) जिसमें आधा हिस्सा इन्द्रका रहे।

अर्धोक्त (सं० क्लो०) अर्धं उक्तम्। १ अर्ध, कथन, निस्फ़, कलाम। (त्रि०) २ आधा कहा हुआ, जो साफ़-साफ़ बताया न गया हो।

अर्धोक्ति (सं० स्त्री०) अर्धकथन, निस्फ कलाम।

अर्धोदक (सं० क्ली०) अर्धदेहव्यापकं उदकम्, शाक०-तत्। देहके निम्नार्धभाग पर्यन्त जल, जो पानी जिस्मके आधे हिस्से तक पहुंचता हो।

अर्धोदकक्षीर (सं० क्ली०) अर्धोदकसृत दुग्ध, आधे पानीमें पका हुआ दूध।

अर्धोदय (सं० पु०) अर्धस्य समृद्धस्य पुण्यस्य उदयो यत्र, बहुव्री०। योग विशेष। माघमासकी अमावस्याको रविवार, व्यतीपात और श्रवण नक्षत्र पड़नेसे यह योग लगता है। इसमें स्नान करनेसे परम पुण्य मिलता है। अर्धोदय दिनमें ही होता, रात्रिको कभी नहीं पड़ता।

अर्धोदयासन (सं० क्ली०) अर्धस्य उदयेन ऊर्ध्वक्षेपेण आसनम्। साधनकालका आसनविशेष।

अर्धोदित (सं० त्रि०) १ आधा निकला हुआ, जो आधा उठा हो। २ आधा कहा हुआ, जो पूरा न बताया गया हो।

अर्धोरुक (सं० क्ली०) अर्धोरू तत्र कायति, काय-ड। १ छोटा घांघरा। (त्रि०) २ ऊरुके मध्य भागतक पहुंचनेवाला।

अर्ध्य (सं० त्रि०) अर्धस्य इदं तत्र भव वा, अर्ध-यत्। १ अर्धसम्बन्धी, निस्फ़से ताल्लुक रखनेवाला। २ पूरा किया जानेवाला। ३ प्राप्तव्य, जो हासिल किये जानेको हो।

अर्नाथी—बम्बईके सूरत प्रान्तका एक ग्राम। यह धर्मपुरसे कोई साढ़े चार कोस दूर है। यहां गर्म पानीका एक झरना चलता, जिसपर प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ला पौर्णमासीको मेला लगता है।

अर्नाल—बम्बई प्रान्तीय थाना जिलेकी बसाइन तहसीलके अगाशी गांवका एक किला। मुसलमानोंके राज्यकाल पोर्तगीजोंने इसे बनाया था। यह वैतरण नदके मुहानेपर अवस्थित है। गुम्बद, मेहराब और कमरा वगैरह मुसलमानी ढङ्गका रहते भी इसके भीतर हिन्दू अधिकारका चिह्न देखेंगे।

अर्नेज—बम्बईके अहमदाबाद जिलेकी धोल्का तह-

दामाजी गायकवाड़के प्रबन्धानुसार अंगरेज-सरकार भूत-भवानी मन्दिरके सञ्चालकोंको हो दे देती है। प्रतिदिन प्रात:काल साधुवोंको सदाव्रत मिलता है।

अर्नोराज—गुजरातवाले सांभर प्रान्तके नृपति विशेष। चालुक्य नृपति कुमारपालको इन्होंने युद्धमें परास्त किया था। अन्तको कुमारपालने अपनी कन्या इन्हें व्याह दी। इनके नाती वीरधवल भीम नरेशके उत्तराधिकारी बने थे। भीम नरेशके विरुद्ध बलवा होनेपर इन्होंने शत्रुका मुंह तोड़ अपना प्राण छोड़ा।

अर्पण (सं० क्ली०) ऋ-णिच्-पुक्-ल्युट्। १ प्रदान, बख्शिश, सुपुर्दगी, निकास। २ निक्षेप, ढाल, फेंक-फांक। ३ स्थापन, जमाव, लगाव। ४,त्याग, छूट। कर्मणि ल्युट्। ५ हरि प्रभृति। अधिकरणे ल्युट्। ६ अग्नि प्रभृति। सम्प्रदाने ल्युट्। ७ देवता प्रभृति।

अर्पणीय (सं० त्रि०) प्रदान वा स्थापन किया जानेवाला, जो देने या रखनेको हो।

अर्पना, अरपना देखो।

अर्पल्ली—मध्यप्रदेशके चांदा जिलेका एक परगना। यह अक्षा० १९° २८´ १५´´ एवं १९° ४९´ ४५´´ उ० और द्राघि० ७९° ४८´ १५´´ तथा ८०° ११´ ३०´´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसके कितने ही गांवमें घोट सबसे बड़ा निकलेगा। जङ्गल और पहाड़ बहुत मिलता है। किन्तु जगह-जगह तालाब भरे और नाले बहा करते हैं।

अर्पित (सं० त्रि०) ऋ-णिच्-पुक्-क्त। १ प्रदत्त, दिया हुआ। २ स्थापित, जो रखा गया हो। ३ गच्छित, गया हुआ।

अर्पितकर (सं० त्रि०) १ हाथ फैलाते या बढ़ाते हुआ। २ विवाहित, जिसको शादी हो चुके।

अर्पिस (सं० पु०) ऋ-णिच्-पुक्-इसन्। १ अग्रमांस, आगेका गोश्त। २ हृदय, दिल।

अर्प्य (सं० त्रि०) ऋ-णिच्-पुक्-यत्। १ त्याज्य, छोड़ने क़ाबिल। २ निवेशनीय, लगाने लायक़।

अर्बदर्ब (हिं० पु०) द्रव्य, सम्पत्ति, दौलत, माल टाल।

अर्बुद (सं० क्ली०) अर्ब-विच् तस्मै उदेति उद-

"विंशतिर्द्विदशत: शतं दशदशत: सहस्रं, सहस्रादयुतं नियुतं प्रयुतं तत्तदभ्यस्तमर्बुदो मेघो भवत्यरणमम्बु तद्दोऽम्बुवदोऽम्बुमदभातीति वाम्बु-मद्भवतीति वा स यथा महान् बहुर्भवति वर्षस्तदिवार्बुदम्"। (निरुक्त नैघण्टु काण्ड ३।२।४)

इसकी टीकामें इस तरह लिखा गया है,—

'अरणशीलम् 'अम्बु' तस्य दाता मेघ:, स: 'अम्बुद:' तस्य ; 'स यथा' उदकभावमापद्यमान: 'महान् बहुर्भवति वर्षन् तदिवार्बुदम्', तदिव वर्षन् यद् बहुद्रव्यजातं भवति, तदर्बुदमित्युच्यते।' (देवराज)

अम्बुनि ददाति अम्बु-दा-क, मकारस्य रेफ:। २ मेघ। ३ पर्व्वत विशेष। आबू देखो। ४ असुर विशेष। (पु०) ५ कद्रुका सन्तान सर्पविशेष। ६ रोगभेद। ऊपरी चमड़ेके नीचे मांस, नस, नाड़ी एवं हड्डी आदि नाना स्थानोंमें जो गूमड़े निकल आते और स्वतन्त्र भावसे बढ़ते रहते उनको अर्बुद (tumor) कहते हैं। यह रोग अनेक प्रकारका होता है। उसमें एक सामान्य अर्बुद है। सामान्य अर्बुद रोगमें प्राण नष्ट नहीं होता। फिर कोई सांघातिक भी है। जैसे कर्कट प्रभृति रोग। रक्तमें कोई विशेष दोष लगनेसे इस जातिका गूमड़ा निकलता है। देहमें कर्कट आदि जातिके गूमड़े निकलनेपर प्राण रक्षाका कोई उपाय नहीं। इसके अतिरिक्त दूसरे प्रकारका भी गूमड़ा होता है। पहले उत्कट नहीं मालूम पड़ता, परन्तु अन्तमें सांघातिक ठहरता है।

अकसर गूमड़ेकेके भीतर एक गोलाकार कोष रहता, जिसे काट डालनेपर अन्दरसे कुछ रस निकलता है। किसी किसी जगह बाल, दांत, हाड़, रक्त, मेद और एक प्रकारका काला गलित पदार्थ भी निकल आता है।

वक्षस्थल, मूत्राशय, मस्तिष्क, कान, नाक, यकृत्, जिह्वा, अण्डाधार, योनि एवं जरायु प्रभृति शरीरके नाना स्थानोंमें अर्बुद उठता है।

उपदंश रोगकी शेष अवस्था अथवा कौलिक उपदंश रोगमें हाड़पर गूमड़ा पड़ता है। दांतकी जड़का हाड़ भी कभी कभी बढ़ जाता और उसमें एक प्रकारका स्राव निकल आता है। अंगरेजीमें इसे एपिउलिस कहते हैं। बिना हाड़ निकाले ऐसा गूमड़ा दूर नहीं होता। परन्तु यह चिकित्सा अतिशय उत्कट है। बड़ी बड़ी धमनियोंमेंसे भी गूमड़ा फूटता है। अंगरेजीमें इसे एनुरिजम् कहते हैं। यह रोग बहुत कठिन है। पुरुषके अण्ड-कोषमें जो गूमड़ा निकलता है, उसे हम लोग जल दोष वा कोषवृद्धि कहते हैं। किसी किसी किस्मका गूमड़ा पहले एक जगह उठता है, फिर धीरे धीरे दूसरी जगह खिसक जाता है। ज़हरीला गूमड़ा अस्त्रसे काट देनेपर बार बार उसी जगह अथवा शरीरके किसी दूसरे स्थानमें फूट पड़ता है। वह फिर अस्त्रसे काट न दिया जानेपर क्रमश: गलकर रोगीका प्राण ले लेता है।

सामान्य गूमड़ा निकलनेपर भी अस्त्र चिकित्सा भिन्न प्राय: दूसरे कोई प्रतीकार नहीं। गूमड़ा फूटने-पर सुचिकित्सकका परामर्श लेना उचित है। अव्य-वसायी गूमड़ेपर अनेक प्रकारकी दवा लगाकर ज़ख़्म बना डालता, परन्तु स्थलविशेषमें उससे विपद पड़ सकती है।

७ मस्सा भी एक प्रकारका अर्बुद रोग है। किसी किसीके सारे शरीरमें फुलौरी जैसा बड़ा बड़ा काला मस्सा निकलता है। किसी किसी मनुष्यकी पीठका ऊपरी भाग काला पड़ता, उस लकीरोंपर कीड़ेके क्षतजेसा ऊंचा नीचा और कहीं कहीं फुलौरीके माफिक मस्सा उतरता है। इसे पैशिक अर्बुद कहते हैं। किसी किसी मनुष्यके कपाल एवं शरीरके अन्यान्य स्थानमें पर्त पर्त पर एपिथिलियम् जमकर भेड़के छोटे सींग-जैसा अर्बुद उठता है।

अर्बुदाकार (सं० पु०) बहुवार वृक्ष, चालतेका पेड़।

अर्बुदाद्रिज (सं० पु०) मेषशृङ्गी, मेढ़ासींगी।

अर्बुदि (सं० पु०) अर्बुद इवाचरति, अर्बुद-क्विप्-इन्। १ सर्वव्यापक ईशान। २ असुर विशेष। यह आकारमें सांप-जैसा रहा। इन्द्रने इसे मार डाला था।

अर्बुदिन् (सं० त्रि०) अर्बुदग्रस्त, जो सूज गया हो।

अर्बूर (सं० क्ली०) १ पाढुक्या नामस्तूप, तगरका पेड़।

अर्भ (सं० पु०) ऋच्छति गच्छति स्वल्पं प्राप्नोति

मुखं वा, ऋ-मन्। १ बालक, बच्चा। २ कृश। ३ पञ्चजात शिशु, पन्द्रह दिनका बच्चा। (त्रि०) ४ अल्प, थोड़ा, कम।

अर्भक (सं० पु०) ऋध्यति वर्धते, ऋधु-वुन् भकारस्यान्तादेशः। अर्भकपृथुक पाका वयसि। उण् ५। ५३। १ बालक, बच्चा।

"गर्भकके अर्भक दलन परशु मोर अति घोर।" (तुलसी)

२ मूर्ख, विक्षिप्त, बेवकूफ, दीवाना। (त्रि०) ३ सूक्ष्म, बारीक। ४ कृश, कमज़ोर। ५ सदृश, बराबर।

अर्भक—कोई प्राचीन संस्कृत कवि। सुभाषितावलीमें इनका उल्लेख है।

अर्भग (वै० त्रि०) अर्भं अल्पं गायति, गैशब्दे टक्। बालक, बच्चा।

अर्भा (सं० स्त्री०) गुग्गुल।

अर्भावी—बम्बई प्रान्तके बेलगांव ज़िलेका एक छोटा गांव। यह गोकाकसे उत्तर दो कोस रायबागकी सड़कपर बसा है। कहते हैं, सन् १७९१ ई०के समय यहां एक सुन्दर भवन बना, जिसकी चारो ओर आमका बाग़ लगा था। कप्तान मूरने सङ्ग-तराशोकी बड़ी तारीफ़ की है।

अर्म (सं० पु०-क्ली०) ऋच्छति चक्षुषम् ऋ-मन्। अर्तिस्तुसुहु सृधृक्षि क्षुभाया वापदि यक्षिणीभ्यो मन्। उण् १।१३७। १ नेत्ररोगविशेष।

अर्मरोग (Pterygium) पांच प्रकारका होता है। यथा,—प्रस्तारी अर्म, शुक्ल अर्म, रक्त अर्म, मांस अर्म एवं स्नायु अर्म।

आंखको सफ़ेद जगह पर एक तरहका पतला चमड़ा चढ़ जाता है। साधारण बोलचालमें इसे नाख़ुना कहते हैं। यह चमड़ा नाकके निकटवर्ती चक्षुकोणसे लेकर प्रायः सब जगह निकलता देखा जाता है। एलोपाथीमतसे झिल्ली जैसे पतले नाख़ुनेको प्रस्तारी अर्म (membranous) कहते हैं। परन्तु यही नाख़ुना मोटा हो जानेपर मांस अर्म (fleshy) कहाता है। ऊपर लिखे अनुसार वैद्योंने इसे पांच प्रकारमें विभक्त किया है।

१। नाख़ुना यदि पतला, फैला हुआ, हलका नीला और कुछ लाली लिये होता, तो उसे प्रस्तार्यर्म कहते हैं।

२। नाख़ुना यदि कुछ सफ़ेद और कोमल रहता, तो वह शुक्लार्म कहा जाता है।

३। नाख़ुना यदि कमलके फूलकी पखड़ी तरह कुछ लाल और कोमल होता, तो उसका नाम रक्तार्म है।

४। खूब कोमल, पतले तथा यकृत्की तरह वर्णयुक्त नाख़ुनेको मांसार्म कहते हैं।

५। कठिन, शुक्लवर्ण, बहुमांसयुक्त एवं प्रस्तारी अर्मसे उत्पन्न नाख़ुनेका नाम स्नायु अर्म है।

इस रोगपर वैद्य लोग आंखमें लगानेके लिये चन्द्रप्रभावर्ती, नयनसुखावर्ती आदि औषधकी व्यवस्था करते एवं त्रिफलाघृत खानेको देते हैं।

एलोपाथीमतसे प्रथमावस्थापर नेत्रमें लगानेके लिये सङ्कोचक औषध उत्तम है। ६ बूंद टिंक्चर आयोडिन और ४ ड्राम गुलाब-जल एक साथ मिलाकर आंखमें डालनेसे बहुत लाभ होता है। मांस बढ़कर आंखकी पुतली पर आनेकी सम्भावना होनेसे नश्तर देकर उसे निकाल डालना पड़ता है।

(क्ली०) २ बहुकालके ग्राम एवं नगरादि।

अर्मक (सं त्रि०) १ सङ्कीर्ण, सूक्ष्म, तङ्ग, पतला। (क्ली०) २ सङ्कीर्णता, तङ्गी।

अर्मगांव—मन्द्राज प्रान्तके नेल्लूर ज़िलेका ढेव और चिरागघर। (Light House) यह अक्षा० १३° ५३′ उ० और द्राघि० ८०° १७′ पू० पर अवस्थित है। चिरागघरसे पूर्व उत्तङ्ग जल-चिह्नके ७५ फ़ीट ऊपर ढेव पड़ता, जो पांच-छः कोससे देखनेमें आता है। सन् १६२८ ई०को कोरोमण्डल सागरतट पर पहली अंगरेजी बसती पड़नेमें अरूमूगाम मूदलय्यरने बड़ा साहाय्य दिया था, उन्हींके नामपर यह स्थान अभिहित किया गया।

अर्मण (सं० पु०) ऋ बाहु० मन्। १ द्रोण परिमाण, ३२ सेर। २ कुटजावलेह। यह अतीसारको मारता है। (चक्रपाणिदत्त कृतसंग्रह)

अर्मन् (सं० क्ली०) ऋच्छति चक्षुषम्, ऋ-मनिन्। चक्षुरोग विशेष, आंखका कोई आज़ार, बिलनी। यह पांच प्रकारका होता है,—प्रस्तार्यर्म, शुक्लार्म रक्तार्म, मांसार्म, स्नाय्वर्म। अर्म देखो।

अर्मनी, अरमनी देखो।

अर्मोरी—मध्यप्रदेशके चांदा ज़िलेका एक नगर। यह चांदा शहरसे उत्तर-पूर्व कोई ४० कोस वाणगङ्गा नदीके वाम तटपर अवस्थित है। यहां बढ़िया मोटा कपड़ा, तसर, गाड़ी तैयार होती और लकड़ी मवेशी, लोहेकी बड़ी हाट लगती है।

अर्य (सं० पु०-स्त्री०) अर्यते गम्यते धनलोभाय रोगनाशाय वा, ऋ गतौ कर्मणि यत्। अर्यः स्वामिवैश्ययोः। पा ३।१।१०३। १ स्वामी, मालिक। २ वैश्य, बनिया। (त्रि०) ३ श्रेष्ठ, बढ़िया, अच्छा। ४ पूजनीय, परस्तिश पाने क़ाबिल। ५ सत्य, प्रिय, सच्चा, प्यारा। ६ कृपालु, मेहरबान्। आर्य देखो।

अर्यजारा (वै० स्त्री०) आर्यकी पत्नी।

अर्यपत्नी, अर्यजारा देखो।

अर्यमयदेवा (सं० स्त्री०) बारहवीं विधुप्रिया।

अर्यमन् (वै० पु०) अर्यं श्रेष्ठं माति मिमीते वा, अर्य-मा-कनिन्। १ सूर्य, आफ़ताब। २ उत्तर फल्गुनी नक्षत्र। ३ अर्कवृक्ष, अकोड़ेका पेड़। ४ पितृगणके राजा। ५ यम। ६ बारहके मध्य आदित्य विशेष। इनका आवाहन वरुण और मित्रके साथ प्रायः होता है। ७ हार्दिक मित्र, दिली दोस्त, लंगोटिहा यार।

अर्यमा, अर्यमन् देखो।

अर्यम्य (वै० पु०) अर्यमेव, स्वार्थे वेदे यत्। १ सूर्य। २ हार्दिक मित्र,, दिली दोस्त। (त्रि०) ३ हार्दिक, दिली, निहायत प्यारा।

अर्ययाणी (सं० स्त्री०) वैश्यस्त्री समूह, बनियेकी औरतका झुण्ड।

अर्यलूर—मन्द्राज प्रान्तके त्रिचनापल्ली ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० ११° ८′ २०″ उ० और द्राघि० ७८° ६′ ४०″ पू०पर अवस्थित है। यहां पेराम्बलूर एवं उदियरपल्लीमके डिपटी-कलक्टरका हेडक्वार्टर, डाकघर और दवाख़ाना बना, हफ़्तावार बाज़ार लगता और पेराम्बलूर तथा केलपलूरको पक्की सड़क गयी है।

अर्याणी (सं० स्त्री०) १ स्वामिनी, मालकन। २ वैश्यस्त्री, बनियेकी औरत।

अर्लेकत्ती—बम्बईके धारवाड़ ज़िलेका छोटासा गांव। यह कोड़से ढायी कोस उत्तर पड़ता है। इसमें प्राचीन कनाड़ियोंके तीन शिला-लेख विद्यमान हैं।

अर्लेश्वर—बम्बईके धारवाड़ ज़िलेका छोटासा गांव। यह हांगलसे ढायी कोस उत्तर-पूर्व लगता है। कदम्बेश्वरके मन्दिरमें तीन पाषाण-लेख मिला है। पहले मूर्तिसे दक्षिण स्तम्भपर सन् १०७६ ई० लिखा है। मन्दिरको घड़ियाल-मेहराबपर दूसरेमें सन् १०८८ ई० अङ्कित है। प्रधान द्वारके सामने स्तम्भपर जो तीसरा लेख है, उसकी तारीख़का कोई ठिकाना नहीं।

अर्वट (सं० क्ली०) भस्म, ख़ाक।

अर्वण, अर्वन् देखो।

अर्वती (सं० स्त्री०) १ बड़वा, घोड़ी। २ कुम्भदासी, कुटनी।

अर्वन् (सं० पु०) ऋच्छति गच्छति अध्वानं प्रापयति अध्वनः पारमिति वा, ऋ-वनिप्। १ घोटक, घोड़ा। २ गोकर्ण परिमाण, छोटा बालिश्त। 'अर्वा तुरङ्गगर्ह्ययोः। (उज्ज्वलदत्त) ३ गति, चाल, दौड़। ४ चन्द्रके दशमें एक घोड़ा। ५ इन्द्र। (त्रि०) ६ गमनशील, तेज़रफ़्तार। ७ अधम, ख़राब।

अर्वनस् (सं० त्रि०) घोटक सदृश नासिकायुक्त, जिसके घोड़े-जैसी नाक रहे।

अर्ववसु (सं० पु०) सूर्यके प्रधान सातमें एक किरण।

अर्वश (वै० त्रि०) शीघ्रग, तेज़रफ़्तार, जल्द-जल्द चलनेवाला।

अर्वा, अर्वन् देखो।

अर्वाक् (सं० अव्य०) आ-अर्व-अाक्। १ इतः, इस ओर। २ इस पार्श्वपर, इस बग़लमें। ३ लक्ष्य विशेषसे, किसी नुक़तेसे। ४ पूर्व, पहले। ५ पश्चात्, पीछे। ६ निम्न भागमें, नीचे। ७ समीप, नज़दीक।

अर्वाके (वै० अव्य०) समीप, पास।

अर्वाक्काल (सं० पु०) अर्वाक् अवर: काल:, कर्मधा०। १ अवरकाल, पश्चात् काल, पिछला वक्त.। (त्रि०) २ पश्चात्कालजात, पीछे पैदा हुआ।

अर्वाक्कालिक (सं० त्रि०) आसन्न काल सम्बन्धीय, नव, हालके ज़मानेसे ताल्लुक रखनेवाला, नया।

अर्वाक्कालिकता (सं० स्त्री०) नवीनता, नयापन, वक्त.को ताखीर।

अर्वाक्कूल (सं० क्ली०) नदीका आसन्न तट, दरियेका नज़दीक किनारा।

अर्वाक्सामन् (वै० पु०) सोमयाग करनेका तीन दिन।

अर्वाक्स्रोतस् (सं० पु०) अर्वाक् अधोगामिस्रोतो रेत: स्रावो यस्य, बहुव्री०। १ ऊर्ध्वरेता न होनेवाला व्यक्ति, जिसके वीर्य निकल पड़े। अर्वाक् निम्नगामी स्रोत: प्रवाहो यस्य। २ नद, दरया। (त्रि०) अर्वाक् अधोगामिस्रोतो रेत: स्रावो येन। ३ नीचेकी ओर वीर्य छोड़नेवाला। यह शब्द लिङ्ग एवं योनिका विशेषण होता है।

अर्वाग्बिल (वै० पु०) अर्वाग्बिलो यस्य, बहुव्री०। १ चमस। २ यज्ञका पात्रविशेष। (त्रि०) ३ निम्नाभिमुख, जिसके नीचेकी ओर मुंह रहे।

अर्वाग्वसु (वै० पु०) अर्वाक् मध्ये वसु जलरूपं धनं यस्य, बहुव्री०। १ मेघ, बादल। (त्रि०) २ धन प्रदान करनेवाला, जो दौलत दे रहा हो।

अर्वाच् (सं० त्रि०) अर्वन्तं अधमं अञ्चति प्राप्नोति, अर्वन्-अञ्च-क्विन् अस्त्याति; तस्य लुक्। १ पश्चात् कालवर्त्ती, पिछले वक्त.वाला। २ आधुनिक, नूतन, नया। ३ अज्ञ, नादान्। (अव्य०) अर्वाग्देशे देशात् देशो अर्वाक् काले कालात् कालो वा, अस्त्याति: तस्य लुक्। ४ पश्चाद् देशसे, पिछले मुल्कसे। ५ पश्चात् कालसे, पिछले वक्त.। ६ मध्यसे, बीचसे। (स्त्री०) ङीप्। अर्वाक्नी।

अर्वाचीन (सं० त्रि०) अर्वन्तमञ्चति, ख। १ पश्चात् काल जात, जो पिछले वक्त. पैदा हो। २ आधुनिक, नूतन, नया। ३ अज्ञ, नादान्। (अव्य०) ४ इस पार्श्वसे, इस ओर। ५ वहांसे, आगे।

अर्वाचीनता (सं० स्त्री०) नूतनत्व, नयापन।

अर्वाचीनत्व (सं० क्ली०) अर्वाचीनता देखो।

अर्वावत् (वै० त्रि०) अर्वा अधम उत्तर इति यावत् काल; अस्त्यास्य जन्मकालत्वेन; अर्वन्-मतुप्, मस्य व: न लोप: पू० दीर्घश्च। १ अर्वाचीन, नया। (स्त्री०) २ अर्वाचीनता, नयापन।

अर्वावसु (वै० पु०) अर्वा लक्षणया अर्वाञ्चा क्रियमाणोऽश्वमेधयागादिरस्मिन् आ सम्यग्रूपेण वसति, अर्वन्-वस-उ। १ देवताका होतृविशेष। २ होमकर्ता।

अर्वी—१ मध्यप्रदेशके वर्धा ज़िलेकी तहसील। यह अक्षा० २०° ४५′ एवं २१° ३′ १५″ उ० और द्राघि० ७८° १०′ ३०″ तथा ७८° ४०′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ८७७ वर्गमील निकलेगा। २ मध्यप्रदेशके वर्धा ज़िलेका शहर। यह अक्षा० २०° ५९′ ४५″ उ० तथा द्राघि० ७८° १६′ १६″ पू०पर अवस्थित और वर्धा नगरसे उत्तर-पश्चिम सवह कोस दूर है। महाराष्ट्र शासन-समयमें यहां अच्छी परगनेके हाकिमने अपनी कचहरी लगायी। कहते हैं, सवा तीन सौ वर्ष पहले तेलङ्ग राव वालीने यह शहर बसाया था। तेलङ्गरावको कोई हिन्दू और कोई मुसलमान बताते हैं। किन्तु उनकी क़ब्रको हिन्दू और मुसलमान दोनो ही पूजते हैं। व्यापारका खासा धूमधड़ाका देख पड़ता है।

अर्वुक (सं० पु०) अर्वति हिनस्ति शत्रून्, अर्व हिंसने बाहु० उकञ्। आटविक दक्षिण देशस्थ नृपविशेष। सहदेवने दिग्विजयको जा इन्हें जीत लिया था।

अर्श (सं० त्रि०) अर्शति गच्छति प्रायं सौख्यम्, ऋश-अच्। १ अश्लील, फुहश। २ पापिष्ठ, गुनहगार। (क्ली०) ३ हानि, नुकसान। ४ अर्शोरोग, बवासीरकी बीमारी।

(अ० पु०) ५ आकाश, आसमान। ६ स्वर्ग, जन्नत।

अर्श:कुठाररस (सं० पु०) रसभेद। यह रस अर्श यानी बवासीर रोगमें हितकर है। इसके बनानेको

रीति यह है—शुद्ध पारा १ पल, शुद्ध गन्धक २ पल, मृत ताम्र, मृतलौह प्रत्येक ३ पल, त्रिकटु, (सोंठ, मिर्च, पीपल) लाङ्गली, दन्ती, चित्रक, पुष्कर, प्रत्येक २ पल, यवक्षार, टङ्कण, सैन्धव, प्रत्येक ५ पल, गौका मूत्र २२ पल, थूहरका दूध ११ पल, इन सब द्रव्योंको एकत्र करके मृदु-अग्निसे जब तक पिण्ड न हो पकाना चाहिये। मात्रामें दो माष दिया जाता है। (प्रयोगामृत)

दूसरा—शुद्धपारा १ पल, शुद्ध गन्धक २ पल, मृतलौह २ पल, मृत ताम्र २ पल, दन्ती, त्र्यूषण (सोंठ, मिर्च-पीपल) शूरण, वंशलोचन, टङ्कण, यवक्षार, सैन्धव, प्रत्येक ५ पल, थूहरका दूध ८ पल, गोमूत्र ३२ पल, इन सब द्रव्योंको पूर्ववत् पाक करके दो माष बराबर प्रति दिन सेवन करना चाहिये। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

अर्शःसूदन (सं॰ पु॰) सूरण, जमींकन्द।

अर्शआदि (सं॰ पु॰) अर्शस् इति शब्द आदिर्येषाम्, बहुव्री॰। अर्श आदिभ्योऽच्। पा ५।२।१२७ अस्त्यर्थके अच् प्रत्यय निमित्त शब्दसमूह। इसमें निम्नलिखित शब्द सम्मिलित हैं,—अर्शस्, उरस्, तुन्द, चतुर, पलित, जटा, घाटा, अघ, कर्दम, अम्ल, लवण, स्वीय, अङ्गाङ्गी, भाव, वर्ण, आकृतिगण।

अर्शआद्य (सं॰ पु॰) अर्शः गुदव्याधिः आद्यो येषाम्, बहुव्री॰। अतिपापोद्भव रोग समूह, बड़े पापसे पैदा होनेवाली बवासीर वगैरहकी बीमारी।

अर्शस्, अर्शस् (सं क्ली॰) ऋच्छति प्राप्नोति गुदम् ऋ ऋर्तेरशुट् च। उण् ४।१९५। इत्यसुन् शुट् च सुट् दन्त्यादिरित्यन्ये। गुह्यरोगविशेष। अर्श रोगके प्रायश्चित्तमें ३८४०० कौड़ी किम्वा उनके दाम बराबर चांदी या सोना दान करना पड़ता है।

अर्शरोग (Hæmorhoids) सरलान्त्रसे नीचे मलद्वारके बाहर और भीतर भी होता है। इसमें भेड़के स्तन जैसी छोटी छोटी कलियां निकलती हैं। इन कलियोंकी चलती बोलीमें मस्सा कहते हैं। किसीके यह मस्सा मलद्वारसे बाहर, किसीके भीतर तथा किसीके बाहर और भीतर दोनों जगह निकलता है। बीच बीचमें अर्शसे अल्प वा अधिक रुधिर गिरा करता है। कभी कभी जलन होनेसे मस्सा खूब फूलता और उससे दूषित रस तथा पीब पड़ता है। उस समय रोग कठिन हो जाता है।

बालककाल वा यौवनावस्थामें यह रोग प्रायः किसीको नहीं होता। यौवनकाल बीत जानेपर ही अर्शरोग पैदा होता है। पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंको यह रोग अधिक सताता है। स्वभावतः जिसका कोठा साफ नहीं रहता और जो शारीरिक परिश्रम नहीं करता, उसीके अर्शरोग होनेकी अधिक सम्भावना है। फिर माता पिताके रहनेसे सन्तानको भी लग सकता है। अतिविरेचक औषध सेवन करने, नाना प्रकारका मसाला देकर मत्स्य, मांस, व्यञ्जन आदि खाने और सर्वदा शौकमें रहनेसे अर्शरोग होता है। जिन रोगोंमें यकृत्‌की क्रिया शिथिल पड़ जाती, अथवा मलद्वारसे सुचारुरूप रक्त सञ्चालित नहीं होता, उनमें यह रोग लगनेकी आशङ्का है। पेटमें आंव पड़ने और गर्भावस्था आनेसे किसी किसी स्त्रीके अर्श हो जाता है।

असलमें अर्श कोई स्वतन्त्र नहीं, दूसरे रोगका उपसर्ग मात्र है। सुतरां इसका मूल कारण दूर करना ही चिकित्साका प्रधान उद्देश्य है। जो लोग स्वभावसे ही आलसी हैं, उन्हें प्रातः काल एवं सन्ध्या समय निर्मल वायुमें बहुत देरतक टहलना चाहिये। उपयुक्त व्यायाम भी इस रोगके लिये बहुत ही अच्छा है। कितने ही भले आदमी घरके भीतर कन्धेपर बोझ ढोया करते हैं। ऐसा प्रवाद है, कि बहंगीपर बोझ ढोनेसे अत्यन्त कठिन अर्श रोग भी अच्छा हो जाता है। विश्वास आता, कि व्यायामादिसे यह उद्देश्य सिद्ध हो सकता है। उससे यकृत् और अन्त्रका रक्ताधिक्य मिटता, उत्तमरूपसे रक्त सञ्चालित होता रहता, मूत्राशयकी उग्रता कम पड़ जाती और परिपाक शक्ति बढ़ती है, सुतरां अर्श रोगका मूल कारण फिर नहीं रह सकता।

और एक बात पर ध्यान रखना आवश्यक है।

ऐसा उपाय करना चाहिये जिससे हर रोज़ सहज ही कोठा साफ़ हो जाया करे। मलत्याग करनेके समय ज़ोर देकर न कांखना और सुपथ्य द्वारा रोगीको कोठा साफ़ रखना चाहिये। बारबार जुलाब लेनेसे आंत तेजहीन हो जाती है। हिन्दुस्थानमें खूब पका हुआ नारियल, पपीता, पालक शाक, मूंगकी दाल, आम एवं दूध आदि सुपथ्य खानेसे हर रोज़ कोठा साफ़ हो सकता है। विशेष आवश्यक होनेसे बीच बीचमें हलका जुलाब ले लेना चाहिये। वैद्य शास्त्रके मतमें जमीकन्दसे अर्श रोग दूर हो जाता है।

अवधौत औषधमें काली घुंघियाके मूल अथवा अशोककी जड़को तांबेके यन्त्रमें रख कर कमरसे बांध लेनेपर कितनों ही का अर्श रोग अच्छा होता देखा गया है। थूहरके दूध साथ थोड़ीसी हल्दी मिलाकर लगाने अथवा घोषाफलका चूर्ण मलनेसे मस्सा गिर जाता है। कोड़ेका दूध, थूहरका दूध, कड़वे कद्दूका पत्ता, पनिहा करोंदेका फल, सब बराबर बराबर ले बकरीके दूध साथ पीसकर मस्सेपर लेप चढ़ानेसे उपकार होता है। परन्तु जब किसी तरहके उपायसे फायदा न हो, तब अच्छे डाक्टरसे मस्सेको कटवा डालना चाहिये।

अर्शस (सं० त्रि०) अर्शो गुदव्याधिरस्त्यस्य, अर्शस् अस्त्यर्थे अच्। अर्शोरोगयुक्त, जिसे बवासीरकी बीमारी रहे। 'अर्शोरोगयुतोऽर्शसः।' (अमर) अर्श रोग होनेपर जो व्यक्ति प्रायश्चित्त करनेसे दूर रहता है, उसे किसी वैध धर्म कार्यका अधिकार नहीं होता।

अर्शसान (वै० पु०) ऋच्छति नाशयित्वा गच्छति, ऋ-असानच् गुणः शुट् च। १ अग्नि, आतिश। 'अर्शसानोऽग्निः।' (उज्ज्वलदत्त) २ मन्देह नामक असुर। (त्रि०) ३ बाधक, हिंसक, चोट पहुंचानेकी कोशिश करनेवाला।

अर्शिन् (सं० त्रि०) अर्शमस्त्यस्य इनि। अर्शस देखो।

अर्शी, अर्शस देखो।

अर्शोद बेग—टीपू सुलतानके मालो हाकिम। सन् १७८४ ई०को इन्होंने मन्द्राजके मलबार प्रान्तमें रैयतवारी नियम चलाया, जिसपर काश्तकारको अपनी पैदायशका आधेसे कुछ ज़्यादा हिस्सा सरकारको देना पड़ता था।

अर्शोघ्न (सं० पु०) अर्शो गुदव्याधिं हन्ति; अर्शस-हन्-क, उप० समा०। १ सूरण, जमींकन्द। २ भल्लातक, भेलावां। ३ सर्जिक्षार, सज्जी मट्टी। ४ तेजबल। ५ श्वेतसर्षप, सफ़ेद सरसों। ६ कटु सूरण, कड़वा जमींकन्द। ७ तक्र विशेष, किसी क़िस्मका मठा। इसमें तीन हिस्से पानी और एक हिस्से मठा रहता है। (त्रि०) ८ अर्शोरोगहर, बवासीर मिटानेवाला।

अर्शोघ्नवर्ग (सं० पु०) वर्ग विशेष, दवाका कोई ज़खीरा। इसमें निम्नलिखित द्रव्य रहते हैं,—कुटज, बिल्व, नागरा, अतिविषा, धन्वयासक, दारुहरिद्रा, वचा और चव्य। यह वर्ग बवासीरको दूर करता है।

अर्शोघ्निवल्कला (सं० स्त्री०) तेजबल।

अर्शोघ्नी (सं० स्त्री०) १ तालमूली, काली मूसर। २ भल्लातक, भेलावां।

'अर्शोघ्नी तालमूल्यां स्यादर्शोघ्नः सूरणोऽपि च।' (विश्व)

अर्शोज (सं० पु०) भगन्दर रोग।

अर्शोयन्त्र (सं० क्ली०) यन्त्रविशेष, कोई आला। यह गोस्तनाकार होता और अर्शोरोग देखनेके काम आता है।

अर्शोयुज्, अर्शस देखो।

अर्शोरोग (सं० पु०) अर्शस् देखो।

अर्शोरोगयुत, अर्शस देखो।

अर्शोवर्त्मन् (सं० क्ली०) नेत्रवर्त्मगत रोग विशेष, आंखकी पलकका कोई रोग। इसमें आंखकी पलक पर ककड़ीके बीज-जैसी, कुछ कुछ दर्द करनेवाली, चिकनी और गर्म फुन्सी पड़ जाती है। यह रोग सन्निपातसे उत्पन्न होता है। (माधव निदान)

अर्शोहररस (सं० पु०) रसविशेष। यह बवासीरको दवा देता है। शुद्धाभ्र, कान्तभस्म एवं गन्धकको बराबर ले और ताजे, अनारके अर्कमें घोंट इसे तैयार करते हैं। एक माषा मात्रा खानेसे अर्शोरोग दूर होगा। रसरत्नाकर

अर्शोहित (सं० पु०) अर्शसि तद्रोगे हितः तन्नाशकत्वात्, ७-तत्। १ भल्लातक, भेलावां। २ सूरण, जमींकन्द। (त्रि०) ३ अर्शोहितकर, बवासीरमें फ़ायदा पहुंचानेवाला। अर्शसि अहितम्, ७-तत्। ४ अर्शोरोग बढ़ानेवाला, जिससे बवासीरकी बीमारी बढ़े।

अर्षण (सं० क्लो०) ऋष गतौ भावे ल्युट्। १ गमन, रफ़्तार। ऋष्यतेऽनेन, करणे ल्युट्। २ गमनसाधन शकटादि, गाड़ी वग़ैरह सवारी। (त्रि०) ३ गमनशील, चलने फिरनेवाला।

अर्षणी (वे० स्त्री०) भीषण पीड़ा, गहरा दर्द।

असंस्, अर्शस देखो।

अर्सा, अरसा देखो।

अर्सी, अलसी देखो।

अर्सीकीर—महिसुर राज्यके हसन ज़िलेका गांव। यह अक्षा० १३° १८ ३८″ उ० और द्राघि० ७६° १७′ ४१″ पूर्व पर अवस्थित है। यहां पाषाण-लेखसे अङ्कित मन्दिर बने, जिनमें चालुक्य-शिल्पके चिह्न वर्तमान हैं। होयसल बल्लाल नृपतियोंके भी कितने ही स्मारक देख पड़ते।

अर्ह (सं० पु०) अर्ह्यते पूज्यते; अर्ह चुरा० कर्मणि घञ्। १ स्तुति एवं नमस्कार प्रभृति द्वारा आराधनीय ईश्वर। २ विष्णु। ३ इन्द्र। ४ पूजा, परस्तिश। ५ गति, चाल। ६ योग्यत्व, क़ाबिलियत। ७ मूल्य, दाम। ८ सुवर्ण, सोना। (त्रि०) ९ पूजनीय, परस्तिश पाने लायक़। १० योग्य, क़ाबिल। ११ मूल्यवान्, क़ीमती।

अर्हण (सं० क्लो०) अर्ह भावे ल्युट्। १ पूजा, परस्तिश। अर्ह्यतेऽनेन, करणे ल्युट्। २ सम्मान साधन द्रव्य, इज़्ज़त बनानेका सामान।

अर्हणा (सं० स्त्री०) १ पूजा, परस्तिश। 'पूजा-नमस्यापचितिः सपर्य्यार्चार्हणाः समाः।' (अमर) (सं० अव्य०) २ योग्यताके अनुसार, ठीक-ठीक। ३ साधनके अनुसार, हैसियतके मुवाफ़िक़।

अर्हणीय (सं० त्रि०) अर्ह्यते, अर्ह कर्मणि अनीयर्। १ पूजनीय, परस्तिशके क़ाबिल। अर्ह्यतेऽनेन, करणे अनीयर् अर्हणे साधु छ वा। २ पूजासाधन, जिससे किसीकी परस्तिश करें।

अर्हत् (सं० त्रि०) अर्ह प्रशंसायां शतृ। १ पूज्य, पूजने लायक़। २ योग्य, क़ाबिल। ३ प्रशंसित, मशहूर। (पु०) ४ जिनदेव, जैनियोंके देवता।

जैनमतसे—जीवको इस संसारमें दुःख देनेवाले ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अन्तराय, वेदनीय, आयु, नाम, गोत्र ये आठकर्म हैं। इनमेंसे पहिले चार कर्मोंको घातिया (आत्माके अनन्तज्ञान, सर्वज्ञत्व, अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्तवीर्यको आवृत करनेवाले) और शेष चारको अघातिया कर्म कहते हैं। तपके प्रभावसे जिस समय यह आत्मा घातिया कर्मोंको नष्ट कर देता, उस समय इसके पूर्वोक्त चारो गुणोंका आविर्भाव होता है। उससे वर्तमान, भूत, भविष्यत् कालके सम्पूर्ण पदार्थोंको आत्मा युगपत् जानता और रागद्वेषविहीन (वीतराग) हो जाता है। ऐसे आत्माको अर्हत् (अर्हन्त) केवली, सर्वज्ञ, वीतराग आदि नामोंसे पुकारते हैं। अर्हत् (केवली) दो प्रकारके होते हैं—एक सामान्य, दूसरे तीर्थङ्कर। तीर्थङ्कर केवलियोंके केवलज्ञान होनेसे पहिले गर्भ, जन्म, और तपके समय देवता स्वर्गसे आकर उत्सव किया करते हैं। फिर सामान्य केवलियोंके केवलज्ञान होते समय ही देवता उत्सव करते हैं। जिस समय केवलज्ञान होता है, उस समय कुवेर इन्द्रकी आज्ञासे समवशरण (धर्मसभा) की रचना बनाते हैं। उसमें १२ श्रेणी (दर्जा) होती, जिनमेंसे एकमें मुनि, एकमें आर्यिका, एकमें श्राविका, एकमें श्रावक, एकमें पशुपक्षी, ४में चारो तरहके (भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक) देव, और चारमें चारो प्रकारकी देवाङ्गनायें बैठकर भगवान्का पवित्र उपदेश सुनती हैं। भगवान्के विराजनेका एक ख़ास स्थान होता, जिसे गन्धकुटी कहते हैं। कुवेर रत्नमय सिंहासनपर सुवर्णके कमल रचता है, भगवान् उसपर भी चार अङ्गुल अन्तरिक्ष विराजते हैं। देव उनपर चंवर ढुरते हैं, कल्पवृक्षोंके फूलोंकी वर्षा होती है। देवोंद्वारा बजाये गये दुन्दुभि बाजोंके

शब्दोंसे आकाश पूर्ण हो जाता है। उस समय भगवान्के शरीरका तेज एकसाथ उगे हुए अनेक सूर्यों के तेजसे भी अधिक चमकता है। उनके वैसे समयको विभूति दर्शनीय और अति विचित्र है। भगवान्के प्रभावसे चारो तरफ़ सौ सौ योजन (चार सौ कोस) तक दुर्भिक्ष नहीं पड़ता, परस्पर विरोधी जीव किसीको किसी प्रकार कष्ट नहीं पहुंचाते, भगवान् पर किसी तरहका उपसर्ग नहीं उठता, उनको क्षुधा तृषा नहीं लगती, उनके शरीरकी परछांई नहीं पड़ती, आंखोंके पलक नहीं झपते, केश और नख नहीं बढ़ते। उनका शरीर स्फटिकसा निर्मल रहता है। घातिया कर्मों के नाश होनेसे भगवान्के ये अतिशय प्रकट होते हैं, भगवान्का उपदेश अर्धमागधी भाषामें होता है जिसे सब अपनी अपनी भाषामें समझ लेते हैं। समवशरणमें कुत्ता, बिल्ली, सिंह, गाय, सांप, नेवला आदि परस्पर विरोधी जीव भी रहते हैं, परन्तु उन सबमें वहां प्रेम होता है, कोई किसीको कष्ट नहीं देता। भगवान् जहां जहां विहार करते, वहां वहां सब ऋतुओंके फल फूल लग जाते हैं। कांचके समान पृथिवी निर्मल देखती है। वायुकुमार देव यह एक योजन (चार-कोस) भूमिको साफ़ करते हैं। मेघकुमार देव शीतल, मन्द, सुगन्धित जल बरसाते हैं। स्वर्गके देव भगवान्के चरणोंके नीचे सुवर्णके कमलोंको रचते जाते हैं, सब दिशायें स्वच्छ हो जाती हैं। देवतालोग भगवान्का जयकार बोलते हैं, धर्मचक्र भगवान्के आगे चलता है। सब चौदह देवकृत अतिशय भगवान्को केवलज्ञान उत्पन्न होनेसे बनते हैं। भगवान् भूख, प्यास, राग, द्वेष, जन्म, जरा, मरण, रोग, शोक, भय, आश्चर्य, निद्रा, थकावट, पसीना, घमण्ड, मोह, अरति (अरुचि) और चिन्ता इन अठारह दोषोंसे रहित और क्षायिकसम्यक्त्व, क्षायिकचरित्र, केवलज्ञान, केवल-दर्शन, अनन्त-दान, अनन्तलाभ, अनन्तभोग, अनन्त उपभोग, और अनन्तवीर्यसे शोभायमान होते हैं। इसका पर्याय नीचे लिखते हैं,—अर्हत्, जिन, पारगत, त्रिकालवित्, क्षीणाष्टकर्मा, परमेष्ठी, अधीश्वर, शम्भु, स्वयम्भू, भगवान्, जगत्प्रभु, तीर्थङ्कर, तीर्थंकर, जिनेश्वर, वादी, अभयद, सार्व, सर्वज्ञ, सर्वदेशी, केवली, देवाधिदेव, बोधद, पुरुषोत्तम, वीतरागाप्त।

५ बुद्धविशेष। ६ बौद्धोंके सबसे बड़े पुरोहित।

अर्हत् आचार—काठियावाड़के वभभी या वालोह नगरनिवासी प्राचीन महापुरुष। सन ६३० ई०को इन्होंने वालोह नगरसे थोड़ी दूर बौद्धविहार बनाया था, जिसमें बोधिसत्व गुणमति और स्थिरमतिने अपने भ्रमणके समय ठहर सुप्रशंसित निबन्ध लिखा।

अर्हत्तम (सं० त्रि०) अतिशय योग्य, सर्वोत्तम, अति पूजनीय, निहायत क़ाबिल, सबसे अच्छा।

अर्हन्त (सं० पु०) अर्ह बाहु० झ। १ जैन देव, अर्हत्। २ बुद्धविशेष। ३ बौद्ध साधु। ४ शिव। (त्रि०) ५ योग्य, लायक़।

अर्हरिष्वणि (वै० त्रि०) शत्रुको रुलानेवाला, जो दुश्मनको रुला देता हो।

अर्हा (सं० स्त्री०) चुरा० अर्ह-अ टाप् च। १ पूजा, परस्तिश। २ त्रायमाणा लता।

अर्हित (सं० त्रि०) अर्ह-क्त। पूजित, परस्तिश पाये हुआ।

अर्ह्य (सं० त्रि०) अर्ह्यते; आदि अर्ह-यत्, चुरा० अर्ह-ण्यत्। १ योग्य, क़ाबिल। २ पूज्य, इज्ज़तदार। ३ उचित, मुनासिब, वाजिब।

अल (सं० क्ली०) अलति भूषयति वारयति पर्याप्नोति वा, अल-अच्। १ वृश्चिकपुच्छकण्टक, बिच्छूकी पूंछका कांटा, डङ्क। २ हरिताल। ३ मनःशिलादि धूमपान। ४ कङ्कोल। ५ काक, ज़ुल्फ़।

अलंग (हिं० पु०) पार्श्व, बग़ल।

अलक (सं० पु०-क्ली०) अलति भूषयति मुखम्, अल-क्वुन्। १ काक, ज़ुल्फ़।

'अलक कुटिल सोहे अलिमदगञ्जनी।' (दुलारेदास)

२ क्षिप्त श्वान्, पागल कुत्ता।

३ एक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थकार। यह जयानकके पुत्र रहे। अलङ्कारसर्वस्वमें रत्नकण्ठने इनका उल्लेख किया है। इन्होंने काव्यप्रकाशको परिकर अध्यायसे

पूरे उतारा था। विषमपदोद्योत और हरविजयटीका नामक ग्रन्थ इन्हींके लिखे हैं।

अलकतरा (अ० पु०) पदार्थविशेष, कोई चीज़। यह पत्थरका कोयला गलाकर तैयार किया जाता है। पत्थरके कोयलेका गैस जब भभकेसे खिंचता, तब जो गाढ़ी चीज़ बचती, वही अलकतरा होती है। इससे लकड़ीको अकसर रंगते हैं। कारण, यह कीड़ेके लिये ज़हर है; दीमक, घुन वगैरह फिर लग नहीं सकता। इससे कितने ही क्रमिनाशक औषध और रङ्ग बनाये जाते हैं।

अलकत्व (सं० क्ली०) काक केशत्व, जुल्फ़ रखनेकी हालत।

अलकनन्दा (सं० स्त्री०) नन्दति ह्लादते; नन्द-अच्-टाप्, अलका कुवेरपुरी नन्दा आनन्दिता यया, बहुव्री० पूर्वपदस्य पुंवद्भावः यद्वा अलके शिवकेश-कपाले नन्दते; अच्-टाप्,७-तत्। १ भारतवर्षीय गङ्गा।

२ युक्तप्रदेशके गढ़वाल ज़िलेकी नदी। गङ्गाकी यह प्रधान शाखा हिमालयसे निकल गढ़वाल ज़िलेके ऊपरी भागमें बहती और भारतकी पवित्र नदियोंमें किसीसे भी कम नहीं ठहरती। बदरी-नाथ जाते समय यात्री जगह-जगह इसके किनारे विश्राम लेते हैं। धौली तथा सरस्वती नदी मिलनेसे यह बनती और राहमें पिन्दर, नन्दाकिनी एवं मन्दा-किनीका जल पी लेती है। देवप्रयागमें भागीरथीके संयोगसे इसको ही गङ्गा कहने लगते हैं। इसके किनारे गढ़वालमें श्रीनगर सुशोभित है। पहले इसकी बालूसे सोना निकाला जाता था, किन्तु व्यय अधिक लगनेसे लोगोंने छोड़ दिया। ३ कुमारी, आठ-दश वर्षकी लड़की।

अलकप्रभा (सं० स्त्री०) अलका पर्याप्ता प्रभा यस्याः, बहुव्री०। कुवेरपुरी, अलका।

अलकप्रिय (सं० पु०) अलकानां चूर्णकुन्तलानां प्रियः, ६-तत्। १ कृष्णभल्लातक, काला भिलावां। २ बीजकवृक्ष, विजयसारका पेड़। ३ पीतशाल वृक्ष, पियासालका दरख़्त।

अलकम् (वै० अव्य०) निष्प्रयोजन, बेफ़ायदे।

अलकलड़ैतो (हिं० वि०) प्रिय, प्यारा, दुलारा, लाडला।

अलकसंहति (सं० स्त्री०) काककेश पंक्ति, जुल्फ़का लच्छा।

अलकसलोरा, अलकलड़ैतो देखो।

अलका (सं० स्त्री०) १ कुवेरपुरी। यह हिमालय पर अवस्थित है। इसमें शिव भी रहते हैं। २ कुमारी, आठ-दश वर्षकी लड़की। ३ वसा, चर्बी।

अलकाधिप (सं० पु०) अलकाया अधिपः स्वामी, ६-तत्। कुवेर।

अलकाधिपति, अलकाधिप देखो।

अलकानन्दा—बङ्गालके नवद्वीपाधिपति राजा कृष्णचन्द्र रायका स्थापित कुण्ड विशेष। यह नवद्वीपसे कोई एक कोस दूर गङ्गाके नीचे बना है। पहले इसके पास गङ्गा रहीं, इसीसे कृष्णचन्द्र राजाने कुण्ड किनारे एक कुटीर और कितनी ही देवमूर्ति स्थापित करायी थीं। यहांकी हरिहर मूर्ति अति मनोहर है। इसका एक भाग सादे पत्थर और दूसरा कसौटीसे तैयार हुआ है। अलकानन्दा कुण्डके जलमें रहनेवाले शिवका नाम हंसवाहन है। कोई-कोई उन्हें हंसवदन भी कहता है। शिवमूर्ति बारह महीने जलके भीतर ही रहती, केवल चड़कपूजाके समय संन्यासी बाहर निकालता है। चड़क-पूजा पूरी होते वैशाख मासके पहले ही दिन फिर शिव-मूर्ति जलमें डुबा दी जाती है।

अलकान्त (सं० पु०) काककेशकी सीमा, ज़ुल्फ़का सिरा।

अलकापति, अलकाधिप देखो।

अलकापुरी—उड़ीसा प्रान्तस्थ पुरीके जगन्नाथ मन्दिर-की एक गुहा। यह दो मंज़िली बनी है। ऊपर एक बड़ा और नीचे दो छोटा कमरा मिलता है। सब कमरेमें उम्दा मेहराबदार छत और बरामदा खिंचा है। अलमारी देखकर मन मोहित हो जाता है। चतुष्कोण स्तम्भकी चूड़ापर पत्थरके परदार शेर और आदमीके मुंहवाले जानवर बैठे हैं। किसी खम्भेकी दीवारगीरीपर हाथियोंका राजा भी देख

पड़ता। उसके शिरपर दूसरा हाथी छाता तान और तीसरा पङ्खा झल रहा है।

अलकायम—बरबरीकी फ़ातिमा जातिके २१ ख़लीफ़ा। सन् ८२४ ई०में इन्होंने अपने पिता अबीदुल्लहका उत्तराधिकार पाया था। इनके शासनाधिकार समय यज़ीद इब्न कौंदतने ही सिर्फ़ बलवा उठाया। यह बीस वर्ष राज्य चला सन् ८४५ ई०को स्वर्गवासी हुए थे। अन्तको इनके पुत्र इस्माइल अल मन्सूर खलीफा बने।

अलकायम बिल्लह—अब्बास वंशके २८वें खलीफा। इनका उपनाम अबूजफर अबदुल्लह रहा। सन १०३१ ई०को बगदादमें इन्होंने अपने पिता कादिर-बिल्लह-का उत्तराधिकार पाया और ४४ चान्द्र वत्सर ८ मास तक राज्य किया। सन १०७५ ई०को इनके गतायु होने पर सुलतान मलिक शाह सल्जूकी सिंहासनारूढ़ हुए थे। उन्होंने अपने प्रधान मन्त्री निज़ामुलमुल्कका लड़का बगदाद भेज अलकायमके पौत्र अल् मुक्-तदीको राज्यका उत्तराधिकारी बना दिया।

अलकाहिर बिल्लह—ईरानी अब्बासी जातिके १८वें ख़लीफ़ा। यह मोतज़िद बिल्लहके लड़के रहे, सन् ८३२ ई०के अक्टोबर मास अपने भाई अल्मुक्तदिरकी जगह बगदादमें सिंहासनारूढ़ हुए। इन्होंने सिर्फ़ एक वर्ष पांच महीने और इक्कीस रोज़ ही हुकूमत की थी, कि इब्न मक़्ल वज़ीरने सन् ८२४ ई०को २३ वीं अप्रेल बुधवारको जलते लोहेकी सलाईसे इनकी आंखें फोड़ मुक्तदिरके लड़के अलराज़ी बिल्लहको गद्दीपर बैठा दिया। कहते हैं, फिर उम्र भर इन्हें बगदादकी मसजिदमें भीख मांग दिन काटना पड़ा था।

अलकाम्बय (सं० पु०) कटुनिम्ब, कड़वी नीम।

अलक्त (सं० पु०) नास्ति रक्तः लोहितवर्णो यस्मात्, ५ बहुव्री०। लाक्षा, लाख, लाह। यहां रके स्थानमें विकल्पसे लकार हो गया है, पक्षमें अरक्त रूप भी होता है।

पीपल, पाकर, पलाश प्रभृति नाना प्रकारके वृक्षोंकी पतली पतली डालियोंके अग्रभागमें एक किस्मके पराङ्गपुष्ट कीड़े पैदा होते हैं। इस जातिके कीड़ोंका अग्रभाग सूक्ष्म रहता, उसीसे वे सब पेड़का रस चूस लेते हैं। प्रौढ़ावस्थामें नरोंके चार पंख निकलते हैं। दो पंख शरीरको दाहिनी ओर रहते और दो बाईं ओर। दोनों ओरके आगेके पर पतले और स्वच्छ रहते हैं। फिर पीछेके सीधे और मोटे होते हैं। मादीनोंके पर नहीं होते। मादीनसे नर प्रायः दूना बड़ा होता है। अनेक मनुष्योंने विशेष परीक्षा करके देखा है, कि एक एक नरके पास कमसे कम पांच हज़ार मादीन रहती हैं। इसलिये नरोंकी संख्या बहुत ही कम होती है।

यह कीड़ा पेड़की कोमल छालको छेद कर उसमें घुस जाता, फिर उसी छेदसे पेड़का रस और दूध निकलता है। उसी रसको कीड़े खाते हैं। धीरे धीरे यह दूध फूल और भोजकर ऊंचा हो जाता है। तब सब उसमें वास करते हैं। मादीन अण्डा देनेके बाद मर जाती है। अण्डोंके फूट जानेपर नन्हें नन्हें बच्चे मरे हुए कीड़ोंके शरीरोंके कोषोंमें वास करते हैं। ऐसे ही समय लाक्षाकोषके भीतर लाल रङ्ग पैदा होता है। किसी पेड़में एकबार लाह लगनेसे धीरे धीरे वह सारे पेड़ोंमें फैल जाती है। क्रमिदानाकी तरह लाह कीड़ेके शरीरका रङ्ग नहीं होती। रासायनिक परीक्षा द्वारा यह निश्चित हुआ है, कि लाहके कीड़े पेड़के रससे ऐसे रङ्गका द्रव्य उत्पन्न करते हैं। इसके सिवा यह भी देखा जाता है, कि पेड़का रस लाहके कीड़ोंके खानेकी सामग्री है। कारण लाह निकालकर शीघ्र ही सब कीड़ोंको मार न डालनेसे वे भीतरके रसको खा डालते हैं, इसलिये अच्छा रङ्ग पैदा नहीं होता। अनेक ही कहते हैं, कि मादीनकी देहसे एक किस्मके गुलाबी रङ्गका रस निकलता है। पेड़के दूधके साथ मिल-कर वही लाक्षारस हो जाता है।

श्याम, आसाम और वङ्गदेशमें ही अधिक लाह पैदा होती है। वङ्गदेशमें सालभरमें दो बार लाह उत्पन्न होती है; एक बार वैशाख और ज्येष्ठमें और एकबार कार्तिक और अग्रहायणमें। जिन पतली

पतली डालियोंमें लाह लगती, पहले उन्हें पेड़से काट लेना पड़ता है। फिर डालियोंके जिन जिन अंशोंमें लाह रहती है, उन उन अंशोंको छोटे छोटे टुकड़े करके धूपमें सुखा लेनेसे कीड़े मर जाते हैं। इसे खोपड़ा लाह कहते हैं। फिर किसी बड़े बरतनमें इस लाहको भरकर पकानेसे लाल रङ्ग अलग निकल आता है। अन्तमें उन पतली पतली डालियोंको ऊपर रखनेसे सब लाह नीचे टपक पड़ती है। किसी किसी स्थलमें खोपड़ा लाहको पहले चूरकर पानीमें धो डालनेसे वर्णक द्रव्य निकल आता है। उसके बाद लाह टपका ली जाती है।

समस्त लाह और लाहके रङ्गको संस्कृत भाषामें अलक्त, लाक्षा, याव प्रभृति कहते हैं। लाहके रसको पहले आगपर चढ़ाकर कुछ गाढ़ा करना पड़ता है। कोई कोई उसमें थोड़ीसी फिटकिरी मिला देते हैं। फिर सनकी गोली बनाकर उसपर उस रङ्गको ढाल देनेसे महावर तय्यार हो जाता है। यह महावर स्त्रियोंके लिये परम मङ्गलमयी सामग्री है। सधवा स्त्रियां शृङ्गार करनेके पहले पैरमें महावर दिलाती हैं। पहले इस देशके पुस्तक एवं मन्त्रादि महावरसे ही लिखे जाते थे। अब पहननेके यन्त्र आदि लिखनेमें महावर व्यवहार किया जाता है। लगानेके महावर भिन्न लाक्षारस वैद्यके तैल और औषधके अनुपानमें व्यवहृत होता है। इससे वस्त्र और चमड़ा भी रङ्गा जाता है। प्रति वर्ष कई हज़ार मन लाह इङ्गलैण्ड जाती है। वहां सैनिक विभागके वस्त्र रङ्गनेके काम आती है। अब क्रमिदानेका चलन हो जानेसे लाक्षारसका आदर दिन दिन कम होता जाता है।

लाक्षाका अपभ्रंश लाह है। संस्कृत भाषामें लाहके ये कई पर्याय पाये जाते हैं,—अलक्त, राक्षा, लाक्षा, जतु, याव, द्रुमामय, रक्षा, अरक्त, जतुक, यावक, अलक्तक, रक्त, पलङ्कषा, क्रमि, वरवर्णिनी।

महावर अर्थात् लाक्षारसके ये कई पर्याय देखे जाते हैं,—अलक्तक, जतुरस, राग, निर्भत्सन, जननी, जनकारी, सम्पद्या, शक्रवर्तिनी।

वैद्यशास्त्रके मतसे लाक्षारस तिक्त एवं उष्ण है। इससे कफ, वायुरोग, रक्तवमन, व्रण, कण्ठरोग प्रभृति नष्ट हो जाते है।

अलक्तक (सं० पु०) अलक्त स्वार्थे कन्। १ लाक्षा, लाख। यह तिक्त, उष्ण, रूक्ष एवं कफ, वात, आम और व्रण मिटानेवाला होता है। (राजनिघण्टु) यह वर्णकर, हिम, बल्य, स्निग्ध, लघु, तुवर तथा अनुष्ण रहता एवं कफ, पित्त, रक्त, हिक्का, कास, ज्वर, व्रण, उरक्षत, वीसर्प, क्रमि, कुष्ठ और विशेषत: व्यङ्गको दूर करता है। (भावप्रकाश) यह रजोरोधी और रक्त-पित्त, क्षय, प्रदर एवं सरक्त अतीसारका विघातक है। (अत्रिसंहिता) २ महावर। यह लाखसे बनता और सौभाग्यवती स्त्रीके पैरमें लगता है।

अलक्तकनगरी—बम्बई-प्रान्तके कनाड़ा जिलेका गांव। सन् ४८८-८९ ई०को यह किसी जैन-मन्दिरको जागीरमें लगा था।

अलक्तरस (सं० पु०) लाखका रस, लाहका रंग।

अलक्षण (सं० क्ली०) लक्ष्यते दृश्यते, चुरा० लक्ष-न अड़ागमश्च; न लक्षणम्, नञ्‌-तत्। १ अशुभ चिह्न, दुर्निमित्त, बुरे आसार। (त्रि०) नास्ति लक्षणं सुचिह्नं यस्य, नञ्‌-बहुव्री०। २ लक्षणशून्य, बेनिशान। ३ अशुभ-सूचक, बदशिगून, खराब।

अलक्षणीय, अलक्ष्य देखो।

अलक्षित (सं० त्रि०) न लक्षितम्, नञ्‌-तत्। १ अज्ञात, जो देखा न गया हो। २ लक्षण द्वारा अन-नुमित, जिसे चिह्नसे पहचान न सकें। ३ अज्ञात-चिह्न, बेनिशान।

अलक्षितात्मक (सं० त्रि०) अकस्मात् मृत्युप्राप्त, जो अचानक मर गया हो।

अलक्षितोपस्थित (सं० त्रि०) अज्ञातरूपसे उपस्थित होनेवाला, जो चुपके-चुपके आ पहुंचा हो।

अलक्ष्मी (सं० स्त्री०) लक्ष्यते चुरा० लक्ष-लक्षे मुट् च। उण्। ३।१६०। इति ई मुट् च। ततो विरोधे नञ्‌-तत् लक्ष्मीके विरुद्ध, निर्ऋति। अलक्ष्मी शब्दके स्थानमें आलक्ष्मी शब्दका व्यवहार है।

अलक्ष्मी शब्दके ये कई पर्याय देखे जाते हैं,—नरकदेवता, कालकर्णी, कालकर्णिका, ज्येष्ठादेवी।

पद्मपुराणके उत्तरखण्डमें अलक्ष्मीकी उत्पत्तिके बारेमें यों लिखा है—पहले एकबार समुद्रमन्थन हो गया। फिर दूसरी बार महादेवको प्रणामकर देवगण क्षीर-सागर मथने लगे। इस बार समुद्रसे ज्येष्ठा देवी निकलीं। उनके गलेमें लाल माला थी और वे वस्त्र धारण किये थीं। समुद्रसे निकलकर अलक्ष्मीदेवीने देवताओंसे पूछा,—कहो, अब मुझे क्या करना होगा? इसपर देवताओंने कहा,—"जिस घरमें हमेशा कलह होता, जिसके घरमें खपड़ा, भूसी, अङ्गार, हाड़, भस्म, बाल आदि गिरा करता, जो मिथ्यावादी सदैव कर्कश वचन कहता, जो दुष्ट सन्ध्या समय सोता, जो विना पैर धोये ही आचमन कर लिया करता, जो नराधम तृण अङ्गार खपड़े, पत्थर, बालू, लोहे या चमड़ेसे मुह धोता, जो तिलकी मिठाई, नक्र, ककड़ी, शजना, लहसुन, छत्रक, सूवर, बेल, भींगी, कद्दू, एवं श्रीफल खिलाता या खाता है,—हे देवि! तुम उसी नराधमके यहां जाकर वास करो।"

दीपान्विता अमावस्याकी रातमें अलक्ष्मी देवीकी पूजा होती है। सन्ध्याके उपरान्त पहले आचारके अनुसार गृहमें लक्ष्मीकी पूजा होती है। उसके बाद पुजारी मकानके बाहर जा और गोबरकी पुतली बनाकर काले फूलसे अलक्ष्मीकी पूजा करता है। अलक्ष्मीका ध्यान इस तरह है—

"अलक्ष्मीं कृष्णवर्णां द्विभुजां कृष्णवस्त्रपरिधानां
लौहाभरणभूषितां शर्कराचन्दनचर्चितां
गृहसम्मार्जनीहस्तां गर्दभारूढ़ां कलहप्रियां।"

अन्तमें पूजाके बाद मुंह फेरकर कृष्णवर्ण पुष्पद्वारा प्रणाम करके—

"अलक्ष्मीस्त्वं कुरूपासि कुत्सितस्थानवासिनी।
सुखरात्री मया दत्तां गृहाण पूजाञ्च शाश्वतीं।
दारिद्र्यकलहप्रिये देवी त्वं धननाशिनी।
याहि शत्रोर्गृहे नित्यं स्थिरा तत्र भविष्यसि।
गच्छ त्वं मन्दिरं शत्रोर्गृहं लीला चाश्रमं मम।
मदाश्रयं परित्यज्य स्थिता तत्र भविष्यसि॥"

इसके बाद ताली बजा करके बालक कहते हैं,—'अलक्ष्मी दूर हो, मा लक्ष्मी घरमें आओ।'

अलक्ष्य (सं० त्रि०) लक्ष्यते; लक्ष कर्मणि-यत्, नञ्-तत्। १ अज्ञेय, गायब, जो देख न पड़ता हो। २ अचिह्नित, निशान् न किया हुआ। ३ लक्षण-रहित, जिसके खास आसार न रहे। (पु०) ४ अस्त्रविशेष, कोई हथियार।

अलक्ष्यगति (सं० त्रि०) अदृश्य रूपसे गमनशील, जिसकी चाल देख न पड़े।

अलक्ष्यलिङ्ग (सं० त्रि०) रूप बदले हुआ, जो अपनी शक्ल छिपाये हो।

अलक्ष्यस्वामिन्—धर्मप्रचारक पुरुषविशेष। सन् १८६२। ६३ ई०में ये हिमालयके नीचे नेपाल, अवध आदि देशोंमें भ्रमण करते फिरते थे। इनकी कमरमें कोपीन और हाथमें एक चीमटा रहता था। इसके सिवा पास और कुछ भी न था। कठिन जाड़ेमें भी ये कुछ पहनते ओढ़ते न थे। साधनमें सर्वदा आकाशकी ओर देखकर 'अलख्' 'अलख्' कहा करते थे। अन्तमें अलक्ष्यस्वामी कटकके निकटवर्ती कुम्भपत्री नाम्नी असभ्य पहाड़ी जातिके बीचमें जाकर रहने लगे। अलेखिया और कुम्भपटिया देखो।

अलख (हिं० वि०) अलक्ष्य, जो देख न पड़ता हो।

अलख जगाना (हिं० क्रि०) उच्चैःस्वरसे ईश्वरका नाम लेना। २ ईश्वरके नामसे भीख मांगना।

अलखधारी (हिं० पु०) साधुविशेष, किसी किस्मके फकीर। यह गोरखपन्थी होते हैं। इनके बड़ी-बड़ी जटा रहती है। यह गेरुवा कपड़ा पहनते, भस्म रमाते और ऊनी सेलीमें घण्टी लगा लेते हैं। हाथमें दरयायी नारियलका खप्पर रहता है। भीख मांगनेमें यह अलख अलख पुकारते हैं। इन्हें किसी जगह ठहरते न पायेंगे।

अलखनामी, अलखधारी देखो।

अलखान—गुर्जर प्रान्तके प्राचीन नृपति विशेष।

अलखित—(हिं०) अलक्षित देखो।

अलग (हिं० वि०) अलग्न, जुदा, जो मिला न हो।

अलगगीर, भरकगीर देखो।

अलगण (सं० पु०) नेत्ररोग विशेष, आंखका कोई आज़ार।

अलगनी (हिं॰ स्त्री) कपड़ा टांगनेकी डोरी।

अलगरज़ (अ॰ वि॰) निर्द्वन्द्व, बेपरवा, जिसे कोई फ़िक्र न रहे।

अलगरज़ी (अ॰ स्त्री॰) १ निर्द्वन्द्वता, बेपरवायी, बेखटके रहनेकी हालत। (वि॰) २ अलगरज, बेपरवा।

अलगर्द (सं॰ पु॰) न लजते लज्जते कुत्रापि गमने; लज-क्विप्-लक्, ततो नञ् तत्—अलकभिक्-समर्दयति अर्दति वा, अलज्-अर्द-अच्। सर्पविशेष, किसी किस्मका सांप।

अलगर्दा (सं॰ स्त्री॰) सविष जलौका, ज़हरीली जोंक।

अलगर्ध, अलगर्द देखो।

अलगाना (हिं॰ क्रि॰) अलग करना, जुदा रखना, साथमें न मिलाना, हटा देना।

अलगाव (हिं॰ पु॰) पृथकत्व, जुदायी, फ़र्क़।

अलगावा, अलगाव देखो।

अलग़ोज़ा (अ॰ पु॰) वंशी विशेष, किसी क़िस्मकी छोटी बांसुरी।

अलग्न (सं॰ त्रि॰) लसज लज वा क्त, ततो नञ्-तत्। १ असंसृष्ट, जुदा। (क्ली॰) २ ज्योतिषोक्त पापग्रहयुक्त लग्न। ३ अप्रशस्त लग्न।

अलग्ल (सं॰ त्रि॰) असम्बन्ध सम्भाषण करते हुआ, जो बेसिर पैरकी बात उड़ा रहा हो। २ स्खलत्-वादी, साफ़ न बोलनेवाला, जो तोतला रहा हो।

अलघु (सं॰ त्रि॰) न लघुः, विरोधे नञ्-तत्। १ लघु न होनेवाला, गुरु, वज़नी, जो हलका न हो। "चलारो यत्र वर्णाः प्रथममलघवः।" (श्रुतबोध) २ दीर्घ, लम्बा, जो छोटा न हो। ३ गौरवयुक्त, घमण्डी। ४ भीषण, ख़ौफ़नाक। (स्त्री॰) विकल्पे ङीप्। अलघ्वी, अलघु।

अलघुप्रतिष्ठ (सं॰ त्रि॰) गौरवयुक्त प्रतिष्ठा-सम्पन्न, जो सच्चीदा तौरपर ठहराया गया हो।

अलघूपल (सं॰ पु॰) शिला, चट्टान, बड़ा पत्थर।

अलघूष्मन् (सं॰ पु॰) भीषण उष्णता, कड़ी गर्मी।

अलङ्करण (सं॰ क्ली॰) अलम्-कृ-भावे-ल्युट्। १ भूषण, ज़ेवर, गहना। करणे ल्युट्। २ कङ्कणादि भूषण द्रव्य, जिस चीज़से गहना बने। ३ शृङ्गार, सजावट।

अलङ्करिष्णु (सं॰ त्रि॰) अलङ्कर्तुं शीलमस्य, अलम्-कृ-इष्णुच्। १ भूषणकारी, सजानेवाला। २ भूषणशील, ज़ेवरका शौक़ीन, जिसे साज-बाज अच्छा लगे। ३ अलङ्कारयुक्त, मण्डित, भूषित, ज़ेवर पहने हुआ, सजा-बजा। ४ परिष्कृत, साफ़, सुथरा। (पु॰) ५ शिव।

अलङ्कर्तृ (सं॰ त्रि॰) अलम्-कृ-तृच्। भूषणकर्ता, सजानेवाला, जो गहना पहनाता हो।

'अलङ्कर्तालङ्करिष्णुः।' (अमर)

अलङ्कर्मीण (सं॰ त्रि॰) कर्मणे क्रियायै अलं समर्थः, ख। कर्मक्षम, कार्यदक्ष, होशियार, जो काम बनानेमें चालाक हो।

अलङ्कार (सं॰ पु॰) अलम्-कृ-भावे घञ्। १ भूषा, अलङ्क्रिया। अलंक्रियतेऽनेन अलम्-कृ-करणे घञ्। २ भूषण, आभरण, हार, केयूर प्रभृति। 'अलङ्कारस्त्वाभरणं परिष्कारो विभूषणं। मण्डनञ्च।' (अमर)।

मनुष्य जातिकी यह स्वाभाविक इच्छा रहती है, किस तरह सुन्दर दिखाई पड़े और किस तरह बात सुननेमें अच्छी लगे। पशु पक्षियोंमें भी यह साध एकदम कम नहीं है। मयूरीका मन लुभानेके लिये मयूर पूंछ फैलाकर उसके सामने नाचता फिरता है। पक्षिणीका चित्त आकर्षण होनेके लिये अनेक पक्षियोंका कण्ठस्वर सुमिष्ट होता है।

मनुष्य सजधज देखना पसन्द करता है। इसलिये क्या धनी क्या दरिद्र, क्या सभ्य क्या असभ्य—सभी अपनी अपनी रुचि सम्भावना एवं निपुणताके अनुसार नगर गृह एवं देहको सजाया करते हैं। असभ्य जातिके पास धन नहीं, रुचि भी मार्जित नहीं है, वैसी शिल्पनिपुणता भी नहीं है, इसीसे वे लोग सामान्य द्रव्यसे अपना अपना घर और देह सजा रखते हैं। अनेक असभ्य जातियोंके घरकी सजावट केवल मृत देहकी अस्थि रहती है। उनके अङ्गके भूषण भी सामान्य ही होते हैं। कौड़ी, फलके बीज, सूअर-

के दांत, पक्षोके पर, पशुकी पूंछ, उन लोगोंकी सम्भावना है। फिर सभ्य लोग काठ, कांच, पत्थर, वस्त्र आदि नाना प्रकारके द्रव्योंसे घरको सजते हैं। उन सब द्रव्योंमें कितनी ही प्रकारकी विचित्र चित्रकारी रहती है। उनके अङ्गके अलङ्कार भी मनोहर होते हैं। सोना, चांदी, मोती, मणि, विचित्र वस्त्र प्रभृतिसे वे लोग अङ्गको सजते हैं।

अति प्राचीन काल ही भारतवर्षमें नाना प्रकारके बहुमूल्य अलङ्कारोंका चलन हुआ था। यह देश उष्णप्रधान है, इसलिये सर्वाङ्गको वस्त्रसे ढक रखनेकी आवश्यकता नहीं होती, सर्वाङ्गमें आभरण पहननेका खूब सुभीता पडता है। पुरातन देवमन्दिरोंमें जो सब मूर्तियां खुदी हुई हैं, उनमें अनेक प्रकारके अलङ्कार देखे जाते हैं। उंगलीमें अंगूठी, गलेमें मोतीकी माला, हाथमें कङ्कण, कानमें कुण्डल—और कितने नाम लें। प्राचीन संस्कृत पुस्तकोंमें अनेक प्रकार अलङ्कारके नाम हैं। दैत्यवधके समय देवताओंने नाना प्रकारके अलङ्कारोंसे देवीको विभूषित किया था। शकुन्तलाको पतिगृह जानेके समय अच्छे अच्छे वस्त्र आभूषण पहनने थे। परन्तु अनसूया और प्रियम्वदा वनवासिनी थीं। वे चिरकालसे वनमें रहीं, अतएव भूषण पहनाना जानती न थीं। तथापि चित्रपटमें यह देखकर, कहां कौन अलङ्कार था, उन लोगोंने सखी शकुन्तलाको साज दिया। संस्कृत भाषाके मानसोल्लास, अमर, हेमचन्द्र प्रभृति पुस्तकोंमें भी अलङ्कारका विशेष विवरण है। इसीसे मालूम होता है, कि अतिप्राचीन काल भी इस देशमें बहुमूल्य वस्त्रालङ्कारका विशेष चलन था। संस्कृत पुस्तकोंमें इन सब अलङ्कारोंका विवरण है,—

१। मस्तकके अलङ्कार—माल्य, गर्भक, ललामक, आपीड़, बालपाश्या, पारितथ्या, हंसतिलक, दण्डक, चूड़ामण्डन, चूड़िकालम्बन, मुकुट।

माल्य—इसका दूसरा नाम माला वा स्रक् है। स्त्रियां फूलोंकी माला गूंथकर जूड़ेमें बांधती हैं।

गर्भक—इसका दूसरा नाम प्रभ्रष्टक है। कोई कोई कहता, कि यह जूड़ेकी माला विशेष है। किसीके मतानुसार यह आजकलकी घुण्डीदार सूई-जैसा एक प्रकारका कांटा होता है। स्त्रियां इसे जूड़ेमें खोंस देती थीं। अमरकी टीकामें महेश्वरने लिखा है, कि बालोंके बीचमें जो माला पहनी जाती, उसका नाम गर्भक और शिखासे जो माला लटकती रहती है, उसे प्रभ्रष्टक कहते हैं। "केशमध्ये धृता माला गर्भक इत्युच्यते। यन्माल्यं शिखायां लम्बमानं तत् प्रभ्रष्टकम्।"

ललामक—अमरकोषमें यह अलङ्कार भी एक प्रकारकी मालामें गिना गया है। इसकी जमीनपर तीन धारी सीधे सोनेके पत्ते, बीचमें मणिमय चांद, जिसकी दोनों ओर जड़े हुए रत्न और नीचे मोतीकी झालर रहती है। देखनेमें यह ज्यादातर बेंदी जैसा होता है। स्त्रियां इसे मस्तकके सामने पहनती हैं। इस अलङ्कारकी दोनों ओर और मध्यस्थलके चांदका ऊपरी भाग जूड़ेमें लगा रहता है। इसके मोतीकी झालर ललाटपर लटकती, इसीसे इसे ललामक या झूमड़ कहते हैं।

"पुरोन्यस्तं ललाटपर्य्यन्तं चिप्तं ललामकम्।" (महेश्वर)

आपीड़—इसका दूसरा नाम शेखर है। शिखामें पहननेकी मालाको आपीड़ वा शेखर कहते हैं।

बालपाश्या—महेश्वरके मतसे यह भी मांगका अलङ्कार है। परन्तु स्वामी बालमें लगानेकी मोती मालाको बालपाश्या कहते हैं।

"स्वामी तु प्रथमं बालं बन्धनं मुक्तावलीनामित्याह।" (महेश्वर)

पारितथ्या—यह अलङ्कार आजकलकी बेंदी है। यह सोनेकी होती। और इसमें रत्न जड़े रहते हैं। अमरसिंहके मतसे बालपाश्या एवं पारितथ्या दोनों एक ही अलङ्कार है।

हंसतिलक—यह सोनाका और देखनेमें पीपलके पत्ते जैसा होता है। इसके बीचमें मणिमुक्ता जड़े रहते हैं। स्त्रियां इसे ललाटके ऊपर पहनती हैं।

दण्डक—यह अलङ्कार बाला जैसा होता है। यह सोनेके पत्तरका बनता और इसपर मोती जड़ा जाता है। इससे झुनझुन् शब्द निकलता है।

चूड़ामण्डन—दण्डके ऊपरी भागकी शोभाके लिये

प्राचीन समयमें चूड़ामण्डनका चलन था। इस अलङ्कार की आकृति केतकीदलकी तरह होती है। यह सोनेका बनता है।

चूड़िका—यह सोनेकी बनती और इसकी आकृति कमल जैसी होती है। यह जूड़ेके पीछे पहना जाती है।

लम्बन—यह अलङ्कार चूड़िकामें लटका रहता, इसीसे इसका नाम लम्बन पड़ा है। इस समय इसे पश्चिमाञ्चलमें झालर कहते हैं। छोटे छोटे सोनेके फूलोंकी दोनों ओर मोती झूलते एवं मध्य-स्थलमें इन्द्रनील आदि मणि जड़े रहते हैं। यह अलङ्कार आजकल कई तरहका हो गया है।

मुकुट—यह सोने और मणिमुक्ताका बनता है। इसकी दोनों कंगूरे और बीचमें ऊंची चूड़ा रहती है। चूड़ेमें पक्षीके सुन्दर पर रहते हैं। मुकुट अनेक प्रकारका होता है। पहले इस देशके राजा और रानियां ही मुकुट पहनती थीं। इस समय भी ब्रह्म प्रभृति देशोंके बड़े बड़े घरानेकी प्राय: सभी स्त्रियां मुकुट पहनती हैं।

२। मुक्ताकण्टक, द्विराजिक, त्रिराजिक, स्वर्णमध्य, वज्रगर्भ, भूरिमण्डल, कुण्डल, कर्णपूर, कर्णिका, शृङ्खल एवं कर्णेन्दु—ये सब कानके गहने हैं।

मुक्ताकण्टक—समान आकारके मोतियोंको पतले तारमें गूंथ और गोलाकार बनाकर स्त्रीपुरुष दोनों ही पहनते थे। अनेक स्थानोंमें अब भी इसका चलन है।

द्विराजिक—इसका वर्तमान नाम गोखुरू है। सोनेके बाला जैसी दोनों घेरोंका बगलमें मोती और बीचमें नीलमणि जड़ा रहता है।

त्रिराजिक—गोखुरू जैसा होता है। बीचमें मोती जड़े रहनेके कारण यह त्रिराजिक कहा जाता है।

स्वर्णमध्य—गोखुरूका मध्यस्थल यदि सोनेका बना हो, तो उसे स्वर्णमध्य कहते हैं।

वज्रगर्भ—इसके मध्यस्थलमें माणिक, दोनों किनारे मोती और मोतीके मध्यभागसे नीचे रत्नका बुलाक लटकता रहता है।

भूरिमण्डन—यह भी प्राय: वज्रगर्भ जैसा ही अलङ्कार है। इसके किनारे मोती, बीचमें हीरा और उसके मध्यमें माणिक जड़ा रहता है।

कुण्डल—यह सिड्डीकी तरह चढ़ा उतार बनता है। इसमें पंक्तिसे हीरे जड़े और उसमें छ: या आठ घेरे रहते हैं। आजकल राजपूताना, पञ्जाब और गुजरात प्रभृति स्थानोंमें स्त्री-पुरुष सभी कुण्डल पहनते हैं। कुण्डलका दूसरा नाम कर्णवेष्टन है।

कर्णपूर—फूल जैसे कानके गहनेका नाम कर्णपूर है। इस समय कर्णफूल, झूमका, चम्पा, फुंदना प्रभृति कई तरहके कर्णपूरका चलन है।

कर्णिका—इसका दूसरा नाम तालपत्र वा ताड़पत्र है। हिन्दीमें इसे पतीला कहते हैं।

शृङ्खल—यह कानमें पहननेकी एक प्रकारकी झालर है और विशुद्ध सोनेका बनता है। संयुक्त-प्रान्तादि स्थानोंमें स्त्रियां इस समय भी इस गहनेको पहनती हैं।

कर्णेन्दु—स्त्रियां इस अलङ्कारको कानके पीछे पहनती थीं।

ललाटिका—इसका दूसरा नाम पत्रपाश्या है। सोनेका चांद या चौकोन-अठकोन पत्तेपर रत्न जड़े रहते हैं। हिन्दुस्थानकी स्त्रियां अब भी इस अलङ्कारको पहनती हैं।

३। प्रालम्बिका, उर:सूत्रिका, देवच्छन्द, गुच्छ, गुच्छार्द्ध, गोस्तन, अर्द्धहार, माणवक, एकावली, नक्षत्रमाला, सरिका, भ्रामर, नीललवणिका, वर्णसर, वज्रमङ्कलिका, वैकक्षिक—ये सब कण्ठके अलङ्कार हैं।

प्रालम्बिका—नाभीतक लटकती हुई सोनेकी मालाका नाम प्रालम्बिका है। नाभीतक लटकते हुए हारका साधारण नाम ललन्तिका वा लम्बन है। अमरने इसे एक प्रकारकी मालामें गिना है।

उर:सूत्रिका—नाभीतक लटकते हुए मुक्ताहारका नाम उर:सूत्रिका है।

देवच्छन्द—एक सौ लड़ीके हारको देवच्छन्द कहते हैं।

गुच्छ—बत्तीस लड़ीकी मोती-मालाको गुच्छ कहते हैं। "द्वात्रिंशद्यष्टिको गुच्छ: ।" (महेश्वर)

गुच्छार्ध—चौबीस लड़ीके मुक्ताहारका नाम गुच्छार्ध वा अर्धगुच्छ है। "चतुर्विंशतियष्टिको गुच्छार्ध: ।" (महेश्वर)

गोस्तन—चौलड़े मुक्ताहारका नाम गोस्तन है। "चतुर्यष्टिको गोस्तन: ।" (महेश्वर)

अर्धहार—बारह लड़ीके मुक्ताहारको अर्धहार कहते हैं। "द्वादशयष्टिकोऽर्धहार: ।" (महेश्वर) किन्तु मतान्तरमें ६५ लड़ीके हारको अर्धहार कहते हैं।

माणवक—बीस लड़ीके मुक्ताहारका नाम माणवक है। "विंशतियष्टिको माणवक: ।" (महेश्वर) परन्तु मतान्तरमें २४ लड़ीके मुक्ताहारका माणवक और १२ लड़ीके हारका नाम अर्धमाणवक है।

एकावली—एक लड़ीकी मोती मालाका नाम एकावली है।

नक्षत्रमाला—२७ मोतियोंके एकावली हारका नाम नक्षत्रमाला है। "सैवैकावली सप्तविंशतिमौक्तिकै: कृता नक्षत्रमाला स्यात् ।"

भ्रामर—बड़े बड़े मोतियोंका सुन्दर एकावली हार बनाया जाता, मध्यमाकार मोतियोंकी माला भ्रामर है।

"स्थूलमुक्ताफलै: कार्य्या कण्ठे त्वेकावली वरा।
मध्यमुक्ताफलै: कुर्य्याद्भ्रामरं सुविचक्षणम् ।" (मानसोल्लास)

नीलवणिका—यह पांच, सात अथवा नौ लड़का मुक्ताहार है। इसके उपान्तमें मनोहर नीलमणि जड़ा रहता है। इसके दाने सोनेके तारमें गूंथे जाते हैं। फिर एकके बाद दूसरे दानेको क्रमश: छोटा रख सब तारोंके अग्रभागोंको एक जगह मिलाकर बांध देना होता है। बांधकर उसपर इन्द्रनील मणि जड़ा जाता है। इसकी प्रत्येक लड़ीके मध्यमें नीलकान्त मणिकी धुकधुकी लटकती रहती है। ऐसे हारका नाम नीललवणिका है।

वर्णसर—नीललवणिका जैसा मुक्ताहार गूंथकर उसमें हरिन्मणि एवं नीलमणि लगा देनेसे उसे वर्णसर कहते हैं।

सरिका—गलेमें ठीक अंटने लायक, नौ वा दस मोतीके हारको सरिका कहते हैं।

वज्रसङ्कलिका—सरिका-हारके बाहर नीलकान्तमणिका गुच्छा लगानेसे उसे वज्रसङ्कलिका कहते हैं।

वैकक्षिक—गलेसे जो माला यज्ञोपवीतकी तरह टेढ़ी होकर वक्षस्थलके ऊपर आ पड़ती है, उसे वैकक्षिक कहते हैं।

४। पदक एवं बन्धूक ये दोनों वक्षस्थलके अलङ्कार हैं। पदक कई तरहका होता है। इस अलङ्कारका आज भी सब जगह चलन है। यह सोनेके छकोने या अठकोने फूल वा पत्रके आधारका बनता है। बहुमूल्य पदक देखनेमें पत्र जैसा होता है। उसके किनारे किनारे और बीचमें हीरकादि जड़े रहते हैं। रत्नरज्जुमें लटकाकर वक्षस्थलपर जो पदक धारण किया जाता है, उसे बन्धूक कहते हैं।

५। केयूर, पञ्चका, कटक, वलय, चूड़ एवं कङ्कण—ये सब बाहुके अलङ्कार हैं।

केयूर—अनन्त जैसे रत्नखचित बाघमुंहे कड़ेको केयूर कहते हैं। यह बाहुमें पहना जाता है। हिन्दुस्थानमें इसे बाजूबन्द कहते हैं। केयूरका दूसरा नाम अङ्गद है। मतान्तरसे केयूरमें झब्बा न रहनेसे उसे ही अङ्गद कहते हैं।

'सुवर्णमणिविन्यस्तमुक्ताजालकमङ्गदम्' (रत्नरहस्य

पञ्चका—सोने आदिके बने हुए विविध आकारके अलग अलग दानोंको एकत्र गूंथ देनेसे उसे पञ्चका कहते हैं। इसका हिन्दुस्थानी नाम पहुंची है।

कटक—रत्नखचित सोनेके पत्रका नाम कटक है।

वलय—हिन्दुस्थानमें इसे कड़ा कहते हैं। यह अनेक प्रकारका होता है। गरीब आदमी सीसे, पीतल और चांदीके कड़े पहनते हैं। मध्यम श्रेणीवाले सोनेका कड़ा बनाते और धनी लोग उसमें मीनाकारी कराकर अनेक प्रकारके हीरकादि जड़ाते हैं। हाथके कब्जेमें कड़ा पहना जाता है। बङ्गदेशमें इसे केवल स्त्रियां, परन्तु संयुक्तप्रान्त, पञ्जाब आदिमें स्त्रीपुरुष दोनों ही पहनते हैं। यह गहना गोल होता है। अच्छे कड़ेकी दोनों ओर बाघ, सिंह या सांपके मुंह बने रहते हैं।

चूड़—ऐसे परिमाणका गोलाकार अलङ्कार जो कड़ेकी तरह आसानीसे पहनाया न जा सके और बहुत ढीला भी न हो। यह सोनेकी पतली पतली शलाकाओंका बनाया जाता है। इसमें दोनों ओर कील लगाना पड़ता है। ऐसे करभूषणको चूड़ कहते हैं। अब यह अनेक प्रकारका हो गया है।

अर्धचूड़—चूड़के अर्धपरिमाण अलङ्कारका नाम अर्धचूड़ है। आजकलकी लहरिया चूड़ी जैसे वलयको आवापक कहते हैं। रत्नखचित वलयाकृति अलङ्कारका नाम पारिहार्य है।

कङ्कण—यह सोनेका होता और ठीक कलाईके घेरेके उपयोगी रहता है। इसके किनारे किनारे कङ्कड़ जैसे दाने पड़ते हैं। कङ्कण कई तरहका होता है।

६। उङ्गलीमें जो अलङ्कार पहना जाता है, उसे अङ्गुरीयक या अंगूठी कहते हैं। अति प्राचीन काल ही इस देशमें आजकल जैसी नामाङ्कित 'सील अंगूठी' का चलन हुआ था। इसका विवरण अङ्गुरि शब्दमें देखो। अंगूठीमें नाम खुदा रहनेपर उसे मुद्रा, मुद्रिका एवं अङ्गुलिमुद्रा कहते हैं। "साक्षराङ्गुलिमुद्रा स्यात्।" (अमर)

आजकलकी तरह पहले इस देशमें हीरकादि खचित नाना प्रकारकी अंगूठियां थीं और उनके अलग अलग नाम भी थे। जिस अंगूठीके दोनों ओर दो हीरे और बीचमें हरिन्मणि वा नीलमणि जड़ा रहता, उसे 'द्विहीरक' कहते हैं। त्रिकोण अंगूठीके बीचमें यदि हीरा और तीनों कोनोंपर दूसरे दूसरे मणि जड़े हों, तो वैसी अंगूठीका नाम 'वज्र' है। गोलाकार अंगूठीकी चारो ओर यदि हीरा और मध्यमें मणि जड़ा हो, तो उसका नाम 'रविमण्डल' है। ऋजु अथच आयत, चौकोन एवं क्रमशः जो उन्नत रहे, और मध्यस्थलमें हीरा जड़ा हो, तो वह 'नन्द्यावर्त' कहा जाती है। जिस अंगूठीमें चमकीला माणिक, उत्तम मुक्ता, सुरम्य प्रवाल, मरकत, पुष्पराग, हीरक, इन्द्रनील, पीतमणि एवं वैदूर्य जड़ा हो, उसका नाम 'नवरत्न' वा 'नवग्रह' है। अंगूठीका घेरा यदि हीरोंसे घिरा हुआ हो, तो उसे 'वज्रवेष्टक' कहते हैं। जिस अंगूठीकी दोनों ओर छोटे हीरे और बीचमें बड़ा हीरा जड़ा हो, उसका नाम 'त्रिहीरक' है। जो अंगूठी देखनेमें सांपके फन जैसी हो, जिसके गोल घेरेमें हीरे जड़े हों और जो अनेक रत्नोंसे सुशोभित हो, उसे 'शक्तिमुद्रिका' कहते हैं।

७। काञ्ची, मेखला, रसना, कलाप, काञ्चीदाम एवं शृङ्खल ये सब कमरके अलङ्कार हैं।

काञ्ची—आजकलके जञ्जीर जैसे एकहरे अलङ्कारको काञ्ची कहते हैं।

मेखला—अठलड़ी काञ्चीका नाम मेखला है। मालूम होता है, आजकलका चन्द्रहार और सूर्यहार पहले मेखलाके नामसे प्रसिद्ध था।

रसना—सोलह लड़ीकी काञ्चीका नाम रसना है।

कलाप—पचीस लड़ीकी काञ्चीका नाम कलाप है।

काञ्चीदाम—जो चार अङ्गुल चौड़े सोनेका बना हो, जिसमें झालर और घुंघुरू लगे हों और जो नितम्बके नीचे तक आ जाय, उस अलङ्कारका नाम काञ्चीदाम है। चावीदार जञ्जीरकी नाईं पहले शृङ्खल अलङ्कार बनता था।

८। पादचूड़, पादकटक, पादपद्म, किङ्किणी, पादकण्टक, मुद्रिका—ये पैरके अलङ्कार हैं।

पादचूड़—यह हाथके चूड़ेकी तरह सोनेकी शलाकाका बनता है। इसका घेर पांवके घेर जैसा और उसमें अनेक प्रकारके हीरकादि जड़े रहते हैं। ऐसे अलङ्कारको पादचूड़ कहते हैं।

पादकण्टक—सोनेके बने हुये, तीन श्रेणीयुक्त, जोड़के स्थानोंमें कीलोंसे बंधे हुये, चौकोन, छकोन या अठकोन, ऊपर सोनेके छोटे छोटे दाने उभरे हुए, झुन् झुन् शब्दयुक्त, अलङ्कारका नाम पादकण्टक है। इस समय यह हिन्दुस्थानमें पाजेबके नामसे प्रसिद्ध है।

पादपद्म—यह इस समय चरणचाप वा चरणपद्म कहा जाता है। इसमें तीन या पांच सिकलियां, इसमें नाना प्रकारके रत्न जड़े और सन्धिस्थानमें कील लगा रहती हैं।

किङ्किणी—आजकल इसे घुंघुरू कहते हैं। यह

सोनेकी बनाई जाती है। इसके भीतर उड़द रहता, इसीसे चलनेके समय बजती है।

मुद्रिका—यह रत्नकी बनी, चौड़ी और लाल रहती है। चलनेके समय यह भी बजती है।

नूपुर—यह सोनेका बनता, और इसमें नाना प्रकारके रत्न जड़े रहते हैं। एड़ीके पीछेसे उंगलीकी जड़तक घेरे रहता है। इसके भीतर भी उड़द रहता, इसीसे चलनेके वक्त इससे भी शब्द निकलता है। आजकल गृहस्थकी स्त्रियां नूपुर नहीं पहनतीं। नाचनेवाली ही नाचनेके समय इसे पहन लेती हैं।

मनुष्यकी आदिम अवस्थामें सोना चांदी या मणिमुक्ता नहीं थे। यदि कहीं किसीके यहां ये सब रत्न रहते भी, तो उस समय लोग इनका व्यवहार और आदर न करते थे। इसीसे प्रथमावस्थामें मनुष्य अस्थि प्रभृतिके अलङ्कार प्रस्तुत करते थे। धातुओंमें लोहा ही पहले मनुष्यके व्यवहारमें आया है। अब भी देखा जाता है, कि पर्वतके असभ्य और अशिक्षित आदमी चाहे और कुछ भी न जानें, पर खानिसे लोहा निकालकर अस्त्र आदि बना लेते हैं। इसीसे मालूम होता है, हमारे देशके आदमी सबसे पहले शङ्ख और लोहेके गहने बना सके थे। इसीलिये इन दोनों गहनोंकी अबतक इतनी मर्य्यादा है। स्त्रियां चाहे जितना बहुमूल्य अलङ्कार क्यों न पहने हों, परन्तु हाथमें लोहा अवश्य रहना चाहिये। लोहा न रहनेसे पतिके लिये बहुत अमङ्गल समझा जाता है। शङ्ख पहननेकी प्रथा दिन दिन उठती जाती है। परन्तु इस अलङ्कारको इस समय भी जो स्त्रियां पहनतीं, वे इसका विशेष आदर करती हैं। शङ्खकी चूड़ी पहननेके समय उसपर सिन्दूर, दूब और धान चढ़ाकर सम्मान करना पड़ता है। इसके सिवा चूड़ि हारिनको एकबार खिला भी देती हैं। इससे साफ़ ही मालूम होता है, कि लोहा और शङ्ख ही हम लोगके देशका प्रथम अलङ्कार था।

अब वङ्ग, विहार, संयुक्तप्रान्तादि स्थानमें नाना प्रकारके अलङ्कारका चलन हो गया है। ४०।५० वर्ष पहले इस देशकी स्त्रियोंका शिराभूषण कुछ भी न था। केवल बालक, बालिका और युवतियां चूड़ा बांधकर उसमें बड़ी बड़ी झुप्पी लगा देती थीं। झुप्पीका आकार मल्लिका फूलकी कलीके समान रहता, परन्तु वह उससे भी कुछ मोटी और बड़ी होती, अवस्थानुसार झुप्पी सोने और चांदीकी बनायी जाती थी। अब भी हिन्दुस्थानके नाना स्थानोंमें झुप्पीका चलन है और कितनी ही स्त्रियां केशविन्यास करके उसके शेषभागमें फूल जैसी एक बड़ी सी झुप्पी बांध देती हैं।

अब बङ्गाल और संयुक्तप्रान्तकी स्त्रियोंके शिरके कितने ही प्रकारके अलङ्कार हो गये हैं। बालिका और युवतियां मांगमें कोयी गहना पहनती हैं। इसका आकार ठीक सीमन्तकी तरह होता है। यह कानके ऊपरसे शिरके मध्यस्थल तक वक्र होकर आता है। इसकी ज़मीन सोनेकी होती है। बीच बीचमें रत्न जड़े रहते हैं। नीचेकी ओर किनारे-किनारे मोतीकी झालर लगती है। बीचमें लगी हुई धुक्धुकी कपालपर आ लटकती है। ऊपरकी ओर एक पेटी चूड़ेसे बंधी रहती है।

लटमें बांधनेके लिये चांदी वा सोनेकी जञ्जीर रहती है। जूड़ेमें लगानेके लिये झुप्पीदार नानाप्रकारके फूल, तितलियां, जरीका गोटा और फीता होता है। इनके सिवा शिरके और अधिक अलङ्कार नहीं देखे जाते।

मालूम होता है, प्राचीन काल भारतवर्षमें नाकका अलङ्कार न था। अमरादिकी पुस्तकोंमें इसका उल्लेख नहीं है। नथ, बेसर, बुलाक, बुन्दा प्रभृति नाकके अलङ्कार कबसे चले हैं—यह कहा नहीं जा सकता। नथ सोनेके गोलाकार तारका बनता है। इसको एक ओर बंसीकी तरह एक प्रकारका टेढ़ा कांटा रहता और दूसरी ओर इस कांटेको फंसानेके लिये एक छेद रखकर तारके कुछ अंशको नथमें लपेट देना पड़ता है। इसीसे छेदकी तरफ दूसरी ओरसे मोटी हो जाती है। इस मोटी ओर लोग अपनी अवस्थाके अनुसार मूंगा या मोती लगा देते हैं। उसके बाद नथके बीचमें

एक लटकन लगा रहता है। नाकको बाईं ओर नथ पहना जाता है। हिन्दुस्थानका नथ बहुत बड़ा और भारी होता है। उसे नाकमें पहने रहना कठिन है।

नकबेसरका गढ़न अति सामान्य है। यह पतले तारको बनाई जाती है। इसकी एक ओर लपेटकर एक छेद रखना पड़ता; दूसरी ओर कुछ सटी रहती; उसीमें यह बांध दी जाती है। लड़कियां नाकको बाईं ओर या नाकके दोनों छेदके बीचवाले अंशमें इसे पहनती हैं। बेसर और बुलाक दोनों नाकके छेदोंके बीचवाले अंशमें पहनी जाती हैं। बेसरको बनावट कई तरहको होती है। सचराचर सोनेके तारमें अर्धचन्द्राकार पेटीके नीचे छोटी छोटी झालर लगा रहती है। बुलाकके बीचमें कुन्दकलीको तरह गोल और एक मुख पतले मोतीके भीतर सोनेका तार पिरोया जाता है। इस तारका नीचेवाला मूंह सटा और ऊपरवाले भागसे अटा रहता, वही नाकमें लगाया जाता है।

मृतवत्सा स्त्रीके सन्तान उत्पन्न होनेपर कितनी ही स्त्रियां सूतिकागृहमें ही उस सद्यःप्रसूत शिशुकी नाक दाहिनी ओर छेदकर लोहे, चांदी या सोनेकी बेसर पहना देती हैं। प्रवाद है, उससे शिशुकी जोवनरक्षा होती है।

कानके अलङ्कारोंमें बाला, मुरकी, पात, झूमका, कर्णफल, बाली, बिजली प्रभृति अलङ्कार अधिक प्रसिद्ध हैं। इन सबमें आजकल सम्पन्न घरकी स्त्रियां नाना प्रकारके कर्णफूल, झूमके और बाले ही अधिक व्यवहार करती हैं। कर्णफूल प्रभृति गहनोंके पहननेके लिये कानके नीचेके भागमें बड़ा छेद करना पड़ता है, इसलिये भले घरकी स्त्रियां प्रायः उन्हें नहीं पहनतीं। इन सब अलङ्कारोंमें कर्णवेधके बाद लड़के कुछ दिनोंतक मुरकी और बाली पहनते हैं, परन्तु यह प्रथा दिन दिन उठती जाती है।

कण्ठमाला, पचलड़ी, सतलड़ी, हार, गोप, चम्पाकली, सुतिया, हंसुली, बाइढूंड़ी, यंत्र पदक, मुक्तामाला प्रभृति गलेके अलङ्कार हैं। इनमें बाइ-ढूंड़ी सीसेका बनता है। यह छोटा और गोल होता है। सूत या रेशमके तागेमें गूंथकर इसे बच्चोंको पहनाते हैं। प्रवाद है, कि बाइढूंड़ी गलेमें रहने और बीच बीच उसे चूस लेनेसे बच्चोंको कोई रोग नहीं पकड़ता। आजकल इस अलङ्कारको चलन प्रायः उठ गया है।

बंगला, पछेला, पहुंची, छल्ला, चूड़ी, कड़ा, पैंचे, बाजूबन्द, ताबीज़, जोशन, कंगन, रत्नचूड़, अंगूठी, हथफूल, कवच, अनन्त, करपद्म प्रभृति हाथके अलङ्कार हैं। इन सब अलङ्कारोंमें लड़के लड़कियां ताड़, बाजूबन्द और बाला पहनती हैं। स्त्रीपुरुष सभी अंगूठी पहनते हैं। अनन्त और कवच पुरुषोंको भी पहनते देखा जाता है।

चन्द्रहार, सूर्य्यहार, करधनी, जञ्जीर, विचे, कमरपेटी, नीमफल ये सब कमरके अलङ्कार हैं। इनमें वङ्गदेशकी इतर जातिके पुरुष भी करधनी पहनते हैं।

बिछिया, अनवट, छल्ला, तोडा, कड़ा, पाजेब, छड़ा, चरणपद्म, घुंघरू—ये सब पैरके अलङ्कार हैं। हिन्दुस्थानकी सम्भ्रान्त स्त्रियां बिछिया-अनवट पहनती। हिन्दू प्रायः पैरमें सोनेके गहने नहीं पहनते। आर्य, मणि, हीरक प्रभृति शब्द देखो।

२ वाक्यका गुण विशेष।

मुकुट, केयूर, हार प्रभृति अलङ्कार जिस तरह अङ्गोंकी शोभा बढ़ाते और देखनेसे नेत्रोंको आनन्द देते हैं, उसी तरह वाक्यके भी अलङ्कार हैं। अलङ्कार सुशोभित वाक्योंको सुनने या पढ़नेसे कान और मनको आनन्द होता है। वनवासी असभ्य लोगोंके अच्छे अलङ्कार नहीं हैं। अच्छे अच्छे गहने बना वे लोग अङ्गोंको सजाना नहीं जानते। पहले लोग अच्छे अच्छे अलङ्कारसे भाषाको सजाना भी न जानते थे। सबसे पहले सामान्य पद्यमें मिलाकर बात कहनेसे ही लोगोंको प्रिय लगता था। यदि कोई हंसी दिल्लगी या आनन्दकी बात कहना चाहता, तो वह उसे पद्य ही में कहता था। अक्षर संख्याका निर्दिष्ट परिमाण और वर्णका मेल रहनेसे वाक्य

सुननेमें मीठा लगता है, यह ज्ञान मनुष्यके मनमें पहले उदय हुआ था।

परन्तु केवल सुननेमें मीठा लगनेसे ही वाक्य सर्वाङ्ग सुन्दर नहीं होता, मनमें भी कुछ चुभना चाहिये। अतएव भावका रहना आवश्यक है। किन्तु अत्यन्त असभ्य अवस्थामें मनुष्य गूढ़ भाव नहीं ला सकता, इसलिये कुछ कुछ प्रहेलिका आरम्भ हुयी। फिर इन सब गुणोंने मार्ज्जित होकर काव्य-रूप धारण किया। यथार्थ भावसम्पन्न काव्य, न तो अत्यन्त असभ्य अवस्थाकी सम्पत्ति है, और न तो अत्यन्त सभ्यसमाज ही में इसका विकाश है। जिस समय मनुष्य प्रथम शिक्षित होता और उसका हृदय उदार एवं कोमल रहता, उसी समय कविता सुन्दरीकी मधुर मुरली सुननेमें आती है।

काव्यका अलङ्कार दो प्रकार है,—शब्द एवं अर्थघटित। शब्दालङ्कारसे कानको सुख मिलता और अर्थालङ्कारसे हृदय पुलकित होता है। अनुप्रास, यमक एवं करुणादि रसोंमें अल्प और दीर्घ-प्राणादि वर्णविन्यास करनेसे कविता सुननेमें मधुर लगती है। इसीको शब्दालङ्कार कहते हैं। इसके अतिरिक्त कवि लोग अनेक प्रकारके कौशलसे शब्दोंको सजकर कविता रचते हैं, अर्द्धभ्रम जिसका एक उदाहरण है। यह भी शब्दालङ्कार कहा जाता है। जिसमें अर्थका चमत्कार रहता है, उसे ही अर्थालङ्कार कहते हैं।

काव्यमें नीचे लिखे हुए अलङ्कारोंका व्यवहार अधिक देखनेमें आता है।

अतिशयोक्ति, अधिक, अन्वय, अनुकूल, अपगुण, अनुज्ञा, अनुप्रास, अनुमान, अन्योन्य, अपह्नुति, अप्रस्तुत-प्रशंसा, अभिधाहेतु, अर्थान्तरन्यास, अर्थापत्ति, अल्प, अवज्ञालङ्कृति, असङ्गति, असदर्थनिदर्शना, असम्भव, आवृत्तिदीपक, आक्षेप, उत्प्रेक्षा, उत्तर, उदात्त, उपमा, उपमेयोपमा, उल्लास, उल्लेख, एकावली। कारकदीपक, कारणमाला, काव्यलिङ्ग, चित्र, तद्गुण, तुल्ययोगिता, दीपक, दृष्टान्त, निदर्शना, निरुक्ति, परिकर, परिकराङ्कुर, परिणाम, परिवृत्ति, परिसंख्या, पर्याय, पर्यायोक्ति, पिहित, पुनरुक्तवदाभास, पूर्वरूप, प्रतिवस्तूपमा, प्रतिषेध, प्रतीप, प्रत्यनीक, प्रस्तुताङ्कुर, प्रहर्षण, प्रौढ़ोक्ति, भाविक, भाषासमावेश, भ्रान्तिमान्, मुद्रा, यमक, युक्ति, रत्नावली, रूपक, ललित, लेश, विकल्प, विचित्र, विधि, विभावना, विरोध, विरोधाभास विशेष, विशेषोक्ति, विषम, विषादन, व्याघात, व्याजनिन्दा, व्याजस्तुति, व्याजोक्ति, व्यतिरेक, श्लेष, सन्देह, सम, समाधि, समासोक्ति, समुच्चय, सम्भावना, सामान्य, सार, सूक्ष्म, स्तोकोक्ति, स्मृतिमान, स्वभावोक्ति, हेतु, हेत्वपह्नुति इत्यादि काव्यका अलङ्कार। तत्तत्शब्दमें विवरण देखो।

४ साहित्यविषयक दोषगुण-प्रतिपादक ग्रन्थविशेष। ५ सरस्वती कण्ठाभरण, काव्यप्रकाश, साहित्यदर्पण प्रभृति।

अलङ्कारक (सं० पु०) भूषण, शृङ्गार, ज़ेवर, सजावट।

अलङ्कारवत् (सं० त्रि०) अलङ्कृत, सजा हुआ।

अलङ्कारसुवर्ण (सं० क्ली०) शृङ्गीकनक, ज़ेवर बनानेका सोना।

अलङ्कारसुर (सं० पु०) बौद्ध मतानुसार—ध्यानविशेष।

अलङ्कारहीन (सं० त्रि०) भूषणरहित, ज़ेवरसे खाली, जो गहने न पहने हो।

अलङ्कुमारि (सं० त्रि०) अलंपर्याप्तं कुमार्यै अविवाहिताकन्याभरणाय। अविवाहिता कन्याके भरण-पोषणका उपयोगी, जो क्वारी लड़कीको परवरिश करने क़ाबिल हो। यह शब्द धन प्रभृतिका विशेषण होता है।

अलङ्कृत (सं० त्रि०) अलम्-कृ कर्मणि क्त। १ भूषित, आरास्ता। २ सनद्ध, जो तैयार हो गया हो।

अलङ्कृति (सं० स्त्री०) अलम्-कृ भावे क्तिन्। १ अलङ्कार, भूषण, ज़ेवर, गहना। करणे क्तिन्। २ काव्यका उपमादि अलङ्कार, शायरीकी तशबीह या मिसाल।

अलङ्क्रिया (सं० स्त्री०) अलम्-कृ-श। भूषितकरण, भूषा, साज, सजावट।

अलङ्गामिन् (सं० त्रि०) अलं पर्याप्तं गच्छति, अलम्-गम्-णिनि। १ प्रचुर गमनशील, खूब चलनेवाला, जो हमेशा चलता हो। २ शत्रुके प्रति गमनशील, दुश्मनकी तर्फ़ बढ़नेवाला।

अलङ्घन (सं० क्ली०) अनतिक्रम, अनत्यय, अभङ्ग, ग़ैरमुतजाविज़ी, न लांघनेकी हालत।

अलङ्घनीय, अलङ्घ्य देखो।

अलङ्घनीयता, अलङ्घ्यता देखो

अलङ्घ्य (सं० त्रि०) न लङ्घ्यम्, लङ्घ-ण्यत्। अनतिक्रम्य, जो लांघने लायक़ न हो।

अलङ्घ्यता (सं० स्त्री०) १ अनतिक्रम्यता, जिस हालतमें लांघ न सकें। २ गौरवान्वितता, इज़्ज़तदारी। ३ अधिकारयुक्त नियम, फ़र्द क़ायदा। ४ श्रेष्ठता, बड़ाई।

अलच्छ (हिं०) अलक्ष्य देखो।

अलज (सं० पु०) १ पक्षिविशेष, कोई चिड़िया। (हिं० वि०) २ निर्लज्ज, बेशर्म।

अलजी (सं० स्त्री०) अला पर्याप्ता सती जायते, जन-ड गौरा० ङीष्। १ प्रमेहपिटिकारोग, जिरियान्की फुन्सीका आज़ार। यह रक्त, सित, स्फोटवती और दारुण होती है। (सुश्रुत) २ नेत्रसन्धिज रोग, आंखके जोड़की बीमारी। ३ शूकदोष विशेष। जो बीमारी लिङ्ग बढ़ानेकी दवा लगानेसे पैदा हो।

अलज्ज (सं० त्रि०) निर्लज्ज, बेहया, जिसे शर्म न लगे।

अलञ्जर (सं० पु०) अलं पर्याप्तं जृणाति, जृ-अच्। झझ्झर, पानी रखनेकी मट्टीका बरतन।

अलञ्जीविक (सं० त्रि०) अलं पर्याप्तं जीविकायै। जीविकानिर्वाहको यथेष्ट, जो गुज़र करनेको काफ़ी हो। यह शब्द धनादिका विशेषण है।

अलञ्जुश (सं० त्रि०) अलं पर्याप्तं जुषते, अलम्-जुष बाहु० कर्मणि क। भक्षण करनेको पर्याप्त, खानेके लिये काफ़ी।

अलति (सं० पु०) अल बाहु० अतिच्। गीत विशेष, कोई नग़मह।

अलदासी—बङ्गालके तांतियों और मुरशिदाबादके कैवर्तोंकी एक शाखा।

अलदेमौ—अवधके सुलतानपुर ज़िलेका परगना। कहते हैं, पहले यह परगना भारोंके अधिकारमें रहा, जिनके अलदे नामक नरेशने गोमतीके वामतटपर क़िला बनाया था, उसीसे परगनेका यह नाम पड़ा। कितने ही पुराने क़िले और टूटे-फटे शहर भार अधिकारके चिन्हस्वरूप विद्यमान है। राजकुमारोंका प्रभाव यहां फैला, जिनका डेरे, मेवापुर, नानामौ और पारसपत्तोंमें राज्य है। इस परगनेका क्षेत्रफल ३४८ वर्गमील है। इसमें कितने ही पुश्तैनी चोर रहते हैं।

अलन्तम (सं० त्रि०) योग्य पर्याप्त, शक्तिशाली, लायक़, काफ़ी, ताक़तवर।

अलन्तराम (सं० अव्य०) अलम्—तरप् आमु। अतिशय, ज़्यादातर, बहुत।

अलन्दी—बम्बईके पूना ज़िलेका शहर। प्रत्येक वर्ष कार्तिक कृष्ण एकादशीको यहां ज्ञानेश्वरके मन्दिरमें बड़ा मेला लगता और सिर-कर (Poll tose) से बहुत रुपया आता है। मन्दिरका प्रबन्ध छः व्यक्तियोंके हाथमें रहता, जिन्हें अधिवासियोंकी अनुमतिसे कलक्टर चुन लेता है। मन्दिरमें तीन द्वार लगा—चन्दूलाल, सेंधिये और गायकवाड़का दूसरा द्वार प्रधान और बाज़ारके सामने है। मन्दिरकी चारो ओर जो मेहराबदार परिक्रमा खिंचा उसे अब लोगोंने अपने निवासका स्थान बना लिया है। मण्डप भी बड़ा और मेहराबदार है। ज्ञानेश्वरके समाधिपर लाल कपड़ेवाले साधुकी मूर्ति बैठी और उसके पीछे विठोवा तथा रखमायी देवताकी प्रतिमा प्रतिष्ठित है। ज्ञानेश्वर विष्णुका अवतार समझा जाता और अहर्निश दीपक जला करता है। कहते हैं, तीन सौ वर्ष पहले मन्दिर अम्बेकर देशपांडे, सवा सौ वर्ष पहले मण्डप सेंधियाके दीवान रामचन्द्रराव शेनवे, परिक्रमा एवं पश्चिम भित्ति पेशवा और बरामदा निज़ामके दीवान चन्दूलालने बनवाया। कोई छः सौ वर्ष हुए ज्ञानेश्वर साधुने इस नगरमें जन्म लिया था। इनके भाईका निवृत्ति तथा सोपान और बहनका नाम मुक्ता बायी रहा। पिता चैतन्यके सन्यासी

होनेसे यह लोग वर्णसङ्कर समझे जाते थे। किन्तु इन्होंने गोदावरी तटस्थ पैठान तीर्थ जाकर ब्राह्मणोंसे अपना संस्कार कराना और कलङ्क छोड़ाना चाहा। पहले उन्होंने इनकी बात बिलकुल सुनी न थी। अन्तको ज्ञानेश्वरने जब भैंसेसे वेद पढ़ाये और श्राद्धमें पितर बुलाये, तब चमत्कार देख वह संस्कार करनेपर सम्मत हुए। ज्ञानेश्वरके अलन्दी वापस आते राहमें वेद पढनेवाला भैंसा मरा और उन्होंने उसे समाधि दे म्हसोबा नाम रखा था। जुन्नार ताल्लुकके कोलवाड़ी गांवमें भैंसेका समाधि बना, जिसका पूजन चैत्र शुक्ल एकादशीको बड़े समारोहसे होता है। चङ्गदेव साधु जब आकाश मार्गसे सिंहपर चढ़ सांपका चाबुक फटकारते पहुंचे, तब ज्ञानेश्वर किसी दीवार पर बैठ और उसे उड़ा बहुत ऊंचे उनसे जा मिले थे।

अलन्धन (सं० त्रि०) अलं प्रभूतं धनमस्यास्य, अर्श आदित्वात् अच्। समृद्धिशाली, काफी दौलत रखनेवाला।

अलन्धूम (सं० पु०) अलं पर्याप्तः धूमः। धूमसमूह, काफी धुवां।

अलप (हिं० वि०) १ अल्प, थोड़ा। (स्त्री०) २ मरणसमय, मौतका वक्त।

अलपत् (सं० त्रि०) भाषण न करते हुआ, खमोश, जो बोलता न हो।

अलप्तिगीन्—बुखारीके प्रधान शिष्टजन। यह सामान शाहके समय खुरासान्में शासक-पदपर प्रतिष्ठित रहे। सन् ९६२ ई० को इन्होंने पद छोड़ अपने अनुयायियोंके साथ ग़ज़नीको यात्रा की। अमीर मन्सूर सामानीके सिंहासनारूढ़ होनेका विरोध बढ़ाना ही इनके वापस जानेका प्रधान कारण था। इन्होंने अपना छोटा राज्य स्थापित कर ग़ज़नीको राजधानी बनाया। सन् ९७६ ई० में इनके मरनेपर राज्यका अधिकार अबू इसहाक़ नामक पुत्रको मिला था।

अलपाका (अं० पु०) अमेरिकाका ऊंट। (Alpaca) यह दक्षिण-अमेरिकाके पेरु प्रान्तमें होता है। इसका बाल लम्बा और मुलायम रहता है। २ अलपाकाका ऊन। ३ वस्त्रविशेष, कोई कपड़ा। यह अलपाका ऊनके साथ रेशम या सूत मिलानेसे बनता और प्रायः काले रङ्गका होता है।

अलफ (अ० पु०) आगेके दोनों पैर उठा पिछले पैरोंके बल घोड़ेका खड़ा होना।

अलफ़्खान्—दिल्लीके तुर्की बादशाह अलाउद्दीन खिलजीके सेनापति या सिपहसालार। सन् १२९७ ई० में इन्होंने गुजराती राजपूतोंकी राजधानी पाटनको विध्वंस किया था।

अलफ़ा (अ० पु०) परिच्छदविशेष, किसी किस्मका कुरता। यह बहुत घेरेदार और लम्बा रहता है। बांह लगायी नहीं जाती। मुसलमान् फकीर इसे अकसर पहना करता है।

अलबट्टी (हिं० स्त्री०) कमर, टेंट, गांठ।

अलबत्ता (अ० अव्य०) १ निःसन्देह, बेशक। २ हां, ठीक ठीक, सचमुच। ३ परन्तु, लेकिन।

अलबम (फ़ा० Album) चित्र रखनेका पुस्तक, जिस किताबमें तसवीरें रहें।

अलबेला (हिं० वि०) १ बांकातिरछा, छैलछबीला। २ अनुपम, बेजोड़। ३ निर्द्वन्द्व, बेपरवा, झूमता हुआ। (स्त्री०) अलबेली।

अलबेलापन (हिं० पु०) १ ठाटबाट, चिकनपट्टी। २ ख़ूबसूरती, सुघरायी। ३ निर्बन्धता बेपरवायी, टाल-मटोल।

अलब्ध (सं० त्रि०) अप्राप्त, हाथ न आया हुआ, जो मिला न हो।

अलब्धनाथ (सं० त्रि०) मित्ररहित, बेदोस्त, जिसके कोई सहायक न रहे।

अलब्धभूमिकत्व (सं० क्ली०) समाधिकी अप्राप्ति, जिस हालतमें समाधि न पायें।

अलब्धाभीप्सित (सं० त्रि०) हताश, नाउम्मेद, जिसका हौसला मारे पड़े।

अलभमान (सं० त्रि०) लाभ न उठाते हुआ, जिसे फ़ायदा न पहुंचे।

अलभ्य (सं० त्रि०) प्राप्तिके अयोग्य, जिसे पा न सकें।

अलम् (सं० अव्य०) अल्प बाहु० असु। १ भूषित रूपसे, सजावटमें। २ पर्याप्त प्रकारमें, काफ़ी तौरपर। ३ वारण करके, रोकते हुए। ४ निरर्थक, बेफ़ायदे। ५ शक्तिसे, ज़बरन्। ६ अतिशय, निहायत। ७ सम्पूर्ण रूपमें, पूरा-पूरा। ८ प्रचुर, खूब। ९ नहीं, बस। १० शाबाश।

अलम (अ० पु०) १ पश्चात्ताप, अफ़सोस। २ पताका, झण्डा।

अलमनक (अं० Almanac) जन्त्री, पत्रा।

अलमर (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, कोई पौधा।

अल मसूदी—प्राचीन मुसलमान ऐतिहासिक। इन्होंने उमर बादशाहके भारतसे घृणा करनेका कारण यह लिखा है, किसी भविष्यवक्ताने उनसे भारतको अति दूरस्थ देश और बलवायियोंका घर बता दिया था।

अलमस्त (फ़ा० वि०) १ मदोन्मत्त, मतवाला। १ निर्द्वन्द्व, बेपरवा।

अलमारी (पोर्तगीज़ Ulmaria शब्दका अपभ्रंश) किसी क़िस्मका सन्दूक या खाना। यह लकड़ीकी बनती है। चीज़ रखनेके लिये इसमें कई दर रहते और इसे किवाड़से बन्द करते हैं। अकसर दीवारमें भी तख़्ता लगाकर यह बना दी जाती है।

अलमास (फ़ा० पु०) हीरक, हीरा।

अल-मुक़्तमी-बि-अमरिल्लाह—अब्बास वंशके ३१ वें खलीफा और अल-मुस्तज़हरके लड़के। सन् ११३९ ई०को यह अपने भतीजे अल-रशीदकी जगह गद्दीपर बैठे और कोई २४ वत्सर राज्यकर सन् ११६० ई०को मरे थे। इनके लड़के अल-मुस्तंजदने पीछे बग़दादकी खलाफ़त पायी।

अलमुतवक्किल-अल-अल्लाह—अब्बास वंशके १०वें खलीफा और अलमोतसिम-बिल्लाहके लड़के। इनका पहला नाम अबुलफ़ज़ल जाफ़र रहा। इन्होंने सन् ८४७ ई०को अपने भाई अलवासिकका उत्तराधिकार पा बग़दादमें ज़ुल्मकी धूम उठा दी। भूतपूर्व खलीफाके वज़ीरने इनके सिंहासनारूढ़ होनेपर पहले झगड़ा लगाया था, जिससे इन्होंने उन्हें क़ैद करा और पीछे गर्म कांटोंसे भरी लोहेकी भट्ठीमें फेंकवा बुरे तौरपर जलाकर मरवा डाला। इनके शासनकाल ईरानियोंने यूनानियोंके विरुद्ध कई बार विजय पाया था। यह यहूदियों और ईसाइयोंको बहुत घृणित समझते और फटकार देते रहे। किन्तु उतनेसे ही इन्हें शान्ति न मिली. इन्होंने लोगोंका करबला जाना बन्द और हसन वग़ैरह शहीदोंकी खाक जिन क़ब्रोंमें रखी थी, उनको बरबाद किया। यह १४ वर्ष ९ मास और ९ दिन राज्य चलाते रहे। सन् ८६१ ई०की २४ वीं दिसम्बरको इनके लड़के अल-मुस्तनसरने इन्हें मरवा खिलाफ़तका उत्तराधिकार अपने हाथ लिया। शत्रुने इनका शरीर काट सात टुकड़े कर दिया था।

अल मुतीय बिल्लाह—अब्बास जातिके २३ वें खलीफा और मुक़्तदिर बिल्लाहके लड़के। सन् ९४६ ई० को अलमुस्तकफ़ीके मरने बाद बग़दादके तख़्तपर बैठ यह २७ वत्सर ४ मास राजा रहे और सन् ९७४ ई० को मर गये। इनके लड़के अलतयने पीछे बग़दादकी गद्दी पायी थी।

अलमुत्तकी बिल्लाह—अब्बास वंशके २५ वें खलीफ़ा और अल मुक़्तदिरके लड़के। सन् ९४१ ई० को यह अपने भाई अलराज़ीकी जगह बग़दादके तख़्तपर बैठे और तीन वर्ष ११ मास ९ दिन राज्य कर सन् ९४५ ई० को मर गये। पीछे इनके भतीजे और अलमुक़्तफ़ीके लड़के अलमुस्तक़फ़ीको राज्यका उत्तराधिकार मिला था।

अल मुवफ़्फ़िक़ बिल्लाह—बग़दादवाले खलीफ़ा मुतवक्किल-बिल्लाहके लड़के और अल-मातमिद-खलीफाके भाई। अलमातमिद खलीफाको इन्होंने शत्रुसे लड़ते समय बड़ी मदद पहुंचायी थी। सन् ८९१ ई० को यह कुष्ठ रोगसे पीड़ित हो मर गये। मरते समय इन्होंने कहा था,—मैं एक लाख सिपाहियोंका सेनापति हूं, किन्तु उनमें अपने-जैसा हतभाग्य किसीको नहीं पाता। सन् ८९२ ई० को अलमोतमिदके मरनेपर इनका लड़का बग़दादमें सिंहासनारूढ़ हुआ।

अल मुस्ताली बिल्लाह—फ़ातिमा वंशके १६ वें खलीफा। यह अपने बाप अलमुस्तनसर बिल्लाहकी जगह मिश्र

और सिरियाके खलीफा बने थे। इनके समय फातिमा वंशका अधिकार घट और राजनीतिक प्रभाव मिट गया। एक ओर तुर्कों और दूसरी ओर फङ्कोंने सिरियाका कितना ही प्रान्त छीन लिया था। सन् १०८७ ई० के अक्तोबर मास उन्होंने सिरिया पहुंच अन्तियोकके सामने डेरा डाला और सन् १०८८ ई० को २० वों जूनको उसे अधिकार किया। दूसरे वर्ष वह मारतून नोमान और जुलायी मास ४० दिन अवरोध बाद जेरूसलमके मालिक बन बैठे थे। जेरूसलम शुक्रवारको सवेरे छूटा। सत्तर हजारसे ज्यादा मुसलमान अल अक़सा मसजिदमें मारा गया। इन्होंने सन् १०७६ ई० को २४ वीं अगस्तको कायरो नगरमें जन्म लिया था। सन् १०८४ ई० को २८ वीं दिसम्बरको यह खलीफा बने और सन् ११०१ ई० को १० वीं दिसम्बरको मर गये। इनके पुत्र अमर बि अहकाम-उल्लाहने खलाफतका उत्तराधिकार पाया था।

अलमुस्तैन बिल्लाह—अब्बास वंशके १२ वें खलीफा, मुहम्मदके लड़के और मौतसिम बिल्लाहके पोते। सन् ८६२ ई० को बगदादमें यह अपने चचेरे भाई अल-मुस्तनसर बिल्लाहके मरनेपर गद्दी बैठे थे, किन्तु इनके भाई अल-मौतिज़ बिल्लाहने सन् ८६६ ई० को जबरन् इन्हें तख्तसे उतारा और पीछे चुपके चुपके मरवा डाला।

अलमुस्तासिम बिल्लाह—अब्बास वंशके ३७ वें और अन्तिम खलीफा। इनका उपनाम अबू अहमद अबदुल्लाह रहा। सन् ११४२ ई० को यह अपने बापकी जगह बगदादमें तखतनशीन् हुए थे। इनके समय मुगल बादशाह और चङ्गेज़ खानके पोते हलाकू खान् दो महीने बग़दादको घेरे पडे रहे। उन्होंने इन्हें और इनके चार लड़कोंको आठ लाख अधिवासियोंके साथ पकड़ बहुत बुरे तौरपर मरवा डाला। इन्होंने १५ चान्द्र वत्सर और ७ मास राज्य किया था।

अलमुस्तकफ़ी बिल्लाह—अब्बास वंशके २२ वें खलीफ, अलमुकतफीके लड़के और अल मौतजिद बिल्लाहके पोते। सन् ८४५ ई० को इन्होंने अपने चाचा अलमुस्तफीका उत्तराधिकार पाया था। किन्तु बगदादमें १ वर्ष और ४ मास राज्य करने बाद सन् ८४६ ई०को इनके वज़ीरने इन्हें तखतसे उतार अलमुतीय बिल्लाहको खलीफ़ा बनाया।

अलमुस्तनसिर बिल्लाह—फातिमा वंशवाले मिश्रके ५ वें खलीफ और ताहिरके लड़के। सन् १०३६ ई० को इन्हें अपने पिताका उत्तराधिकार मिला था। इन्होंने बसासिरी नामक किसी तुर्कके साहाय्यसे सन् १०५४ ई० को बग़दाद जीता और अलकायम बिल्लाहको क़ैद किया। डेढ़ वर्ष तक यह मुसलमानोंके एकमात्र ख़लीफ़ा समझे जाते रहे। ६० वर्ष राज्य करने बाद सन् १०८४ ई० को इनकी मृत्यु हुई थी। इनके लड़के अल-मुस्ताली बिल्लाह अबुल क़ासिम पीछे तख़्तपर बैठे।

अल-मुस्तनसिर बिल्लाह प्रथम—अब्बास वंशके ११ वें खलीफा। सन् ८६१ ई० के दिसम्बर मास यह अपने पिता अलमुतवक्किलकी हत्या बाद बग़दादके तख़्तपर बैठे थे। छः महीने राज्य करने पीछे ही मृत्युने इन्हें धर दबाया। चचेरे भाई अलमुस्तैन बिल्लाहको इनका उत्तराधिकार मिला था।

अल-मुस्तनसिर बिल्लाह द्वितीय—अब्बास वंशके ३६ वें खलीफा। इनका उपनाम अबू जफ़र अलमन्सूर रहा। सन् १२२६ ई० को अपने पिता ताहिरके मरने बाद बग़दादमें यह सिंहासनारूढ़ हुए थे। कोई १७ वर्ष राज्यकर सन् १२४२ ई० को इन्होंने शरीर छोड़ा। इनके लड़के अल-मुस्तज़को राज्यका उत्तराधिकार मिला था।

अल-मुस्तफ़िर बिल्लाह--अब्बास वंशके २८ वें खलीफा और अलमुक़तदीके पुत्र। सन् १०८४ ई० को ईरानके सुलतान बरक्यारक़ सलजूक़ीने इन्हें बग़दादकी गद्दीपर बैठाया था। सन् १११८ ई० को २५ वत्सर राज्य करने बाद यह मरे और इनके लड़के अलमुस्तरशेद खिलाफ़तके मालिक हुए।

अल-मुस्तज़ी-बि अमर बिल्लाह—अब्बास वंशके ३३वें खलीफा। सन् ११७१ ई० को यह अपने बाप अल-मुस्तनजदकी जगह बगदादमें गद्दीपर बैठे थे।

इन्होंने कोई ७ वर्ष राज्य कर सन् ११७८ ई० को अपना शरीर छोड़ा। इनके लड़के अलनासिर बिल्लाहको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला था।

अलम्पट (सं० पु०) १ भवनका भीतरी भाग, मकान्का अन्दरूनी हिस्सा। २ अन्तःपुर, जनानखाना। (त्रि०) ३ जितेन्द्रिय, पाकदामन, जो परस्त्रीगामी न हो।

अलम्पशु (सं० पु०) अलं यज्ञे निरर्थकः पशुः। १ यज्ञके लिये अप्रशस्त पशु। (त्रि०) २ पशु पालने योग्य, जो मवेशी रख सकता हो।

अलम्पुरुषीण (सं० पु०) अलं समर्थः, पुरुषाय, अलम्पुरुष स्वार्थे ख। १ प्रतिमल्लादि पुरुष, जो शख्स दूसरेसे कुश्ती लड़ सकता हो। (त्रि०) २ पुरुषके योग्य, जो आदमी बन रहा हो। ३ पुरुषके अर्थ पर्याप्त, जो आदमीको काफ़ी हो।

अलम्बमुष्कक (सं० पु०) मुष्कक वृक्ष, मोखेका पेड़, वनपलास।

अलम्बल (सं० पु०) १ पर्याप्तबलयुक्त, खूब ताक़तवर। २ शिव।

अलम्बा (सं० स्त्री०) १ तिक्तालावू, कड़वी लौकी। २ स्थावर विषान्तर्गत पत्रविष, पत्तोंका ज़हर।

अलम्बुजा (सं० स्त्री०) गोरक्षमुण्डी, गोरखमुण्डी।

अलम्बुद (सं० क्ली०) बालक, बच्चा।

अलम्बुद्धि (सं० स्त्री०) अलं व्यर्था पर्याप्ता वा बुद्धिः। १ निरर्थक बुद्धि, फ़ज़ूल फ़हम, जो समझ किसी कामकी न हो। २ पर्याप्त बुद्धि, काफ़ी फ़हम, जो समझ पूरी हो।

अलम्बुष (सं० पु०) अलं पुष्णाति, अलम्-पुष-क पृषो० पकारस्य बकारः। १ वान्तिरोग, क़ैकी बीमारी। २ प्रहस्त, फैली हुई मुट्ठी। ३ रावणके एक मन्त्री। ४ राक्षस विशेष। घटोत्कचने इसे मार डाला था। ५ भूकदम्बवृक्ष, अजवायनका पेड़।

अलम्बुषा (सं० स्त्री०) १ लज्जावती लता। यह मधुर, लघु और क्रमि, कफ तथा पित्त मिटानेवाली होती है। (भावप्रकाश) २ भूकदम्ब, अजवायन। ३ महाश्रावणी, गोरखमुण्डी। ४ गुग्गुल। ५ कुरपगाद्य लौह। ५ लौहमल, लोहेका जङ्ग। ६ चूर्ण विशेष। यह आमवातको दूर करता है। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह) ७ अप्सरो विशेष, कोई परी। ८ गण्डूरी, घेरा, रोक। इस जलरेखाको कोई लांघ नहीं सकता। स्वर्णमृग मारनेको जाते समय रामचन्द्र सीताकी चारो ओर यही रेखा खींच गये थे, जिससे बाहर हो रावणने उन्हें हरण किया।

अलम्बुषाद्यचूर्ण (सं क्ली०) औषधविशेष। यह चूर्ण आमवातमें हित है। बनानेका प्रकार यों है—अलम्बुषा, गोक्षुर, गुडूची, वृद्धदारक, पीपल, त्रिवृत्ता, मुस्ता, वरुण, पुनर्णवा, त्रिफला, नागर, इन सब द्रव्योंको खूब महीन चूर्ण बना चूर्णके बराबर मण्डूर चूर्ण मिलाना चाहिये। इसका अनुपान दधि, मण्ड, काञ्जिक, दूध, तक्र, मांसका रस प्रभृति है। इनमें समय पर जो मिल जाये, उसीके साथ सेवन करे। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

अन्यप्रकार—अलम्बुषा, गोक्षुर, वरुणमूल, गुडूची, इन सबका क्रमशः भाग बढ़ाकर सबके समभाग वृद्धदारकका चूर्ण मिलाना होता है।

(चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

तीसरा—अलम्बुषा, गोक्षुर, वरुणका मूल, गुडूची, नागर यह सब बराबर एकत्र करके चूर्ण बनाना चाहिये। (भावप्रकाश)

अलम्बुसा, अलम्बुषा देखो।

अलम्बोर्धस्तनी (सं० स्त्री०) जिस स्त्रीका स्तन लम्बा और उभरा न हो, छोटे और झुके हुए सीनेकी औरत।

अलम्बौष्ठी (सं० स्त्री०) जिस स्त्रीके लम्बा ओष्ठ न रहे, छोटे होंठवाली औरत।

अलम्भूष्णु (सं० त्रि०) अलम्-भू-ग्ष्णु। समर्थ, क़ाबिल, पूरा।

अलय (सं० पु०) १ अविलयन, सनातनत्व, सबात, टिकाव,। (त्रि०) २ भवनविहीन, लामकान्, जिसके घर न रहे।

अलर-बलर (हिं० वि०) खराब, बुरा।

अल-रशीद—अब्बास वंशके ५वें खलीफा और मेहदीके

पुत्र। इन्हें लोग हारून-अल रशीद भी कहते थे। यह अलिफ़ लैलाके प्रधान नायक रहे और सन् १७० ई०को अपने बड़े भाई अलहादीकी जगह गद्दीपर बैठे। बग़दादमें ऐसा अच्छा और होशियार बादशाह दूसरा नहीं हुआ। यद्यपि इन्होंने अपना राज्य अधिक न बढ़ाया, तथापि जिस काममें हाथ लगाया, वही पूरा उतर गया। इनके समय मुसलमानी साम्राज्य अतिशय सम्पन्न रहा। इन्होंने अपना विशाल राज्य तीन लड़कोंमें नीचे लिखे तौरपर बांट दिया था, बड़ा लड़का अल्-अमीन सीरिया, इराक़, तीनो अरब, मेसोपटेमिया, असीरिया, मिडिया, पैलेष्टिन, मिस्र, इथियोपिया, जिब्राल्टरका ख़लीफा हुआ, मंझले अल्-मामून्को ईरान, किरमान, इण्डोज़, खुरासान, तबरिस्तान, काबुलिस्तान, ज़बूलिस्तान, मावरुन्नहर मिला; और छोटे अलक़ासिमने आरमेनिया, नतोलिया, जुरजान्, जारजिया, सरकेशिया और यूक्सायिन देश पाया। उपद्रव उठानेपर इन्होंने प्रत्येक बार यूनानियोंको युद्धमें हराया था। सन् ८०३ ई० को यूनानसम्राट् नीसफोरसने इनके पास निम्नलिखित आशयका एक पत्र भेजा,—"आपने इरान सम्राज्ञीसे जितना धन छीना है, उसे शीघ्र वापस दीजिये; वरं हमारी फौज जाकर आपका राज्य विध्वंस कर डालेगी।" यह पत्र पाते ही इन्होंने अपनी फौजको बटोरा और हेरेकली पर धावा मारा था। राहमें जो नगर वा ग्राम पड़े, उनको यह आग या तलवारसे उड़ाते गये। कुछ दिन इनके हरेकली नगर दृढ़ रूपसे घेरनेपर यूनानसम्राट् वार्षिक कर देनेको राज़ी हुए। सन् ८०४ ई० को फिर युद्ध बढ़ा और यूनान-सम्राट् नीसफोरसने बहुत बड़ी फौजके साथ इनपर धावा मारा। किन्तु वह ४० हज़ार सिपाही खो हार गये, जिसमें तीन ज़ख्म लगे और मुसलमान उनके मुल्कको बरबादकर लूटसे मालोमाल लौट पड़े। दूसरे वर्ष यह फिरोजिया पर चढ़े, यूनानकी शाही फौजके दांत तोड़े और शत्रुके देशको नाश कर बग़दाद वापस आये थे। सन् ८०६ ई० को इन्होंने १३५००० सिपाहियों और कितने ही स्वेच्छासेवकोंके साथ फिर यूनानपर धावा मारा और हेरेकलीको ले १६००० यूनानियोंको बन्दी बनाया। सायिप्रस द्वीप इनकी लूटमारसे बिलकुल तबाह हो गया था। इस विजयसे नीसफोरसन भीतचकित हो वार्षिक कर उसी समय भेज दिया, जो युद्धका प्रधान कारण रहा। इन्होंने २३ वर्ष राज्य किया और सन् ८०८ ई०को २४ वीं मार्च शनिवारको सन्ध्या समय खुरासान्में शरीर छोड़ा था। इनके बड़े लड़के अल् अमीनको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला।

अल-रशीद बिल्लाह—अब्बास वंशके ११वें ख़लीफ़ा। इन्होंने अपने बाप अल्मुस्तरशदके मरने बाद सन् ११३५ ई०को राज्यका उत्तराधिकार पाया था। सन् ११३६ ई०को यह मरे और अल-मुस्तज़्हिरके लड़के अलमुक्तफी गद्दीपर बैठे।

अल राज़ी बिल्लाह—अब्बास वंशके २०वें ख़लीफ़ा और अलमुक़्तदिरके पुत्र। सन् ८३४ ई०के अप्रेल मास वज़ीर इब्न मक़्लने इनके चाचा अलक़ाहिर बिल्लाहको तख़्तसे उतार इन्हें ख़लीफ़ा बनाया था। सन् ८३६ ई०में इन्होंने अपनेको सूदख़ोरोंसे घिरा पा और कोई लायक़ वज़ीर न देख अमीर्-उल-उमराका नया पद निकाला। इस पदके अधिकारी इमाद-उद्-दौला अली बोयाको राजस्वका अखण्ड स्वत्व प्राप्त था। ख़लीफ़ा भी उनसे बेपूछे रुपया-पैसा ले-दे न सकते रहे। सन् ८३७ ई०को मुसलमानोंका विशाल साम्राज्य निम्नलिखित लोगोंमें बंट गया था,—

अली बरीदी नामक किसी बलवायीके छीन लेते और निकाले न निकलते भी वसत, बसरा, कूफ़ा और अरबी इराक़ अमीर्-उल-उमराकी सम्पत्ति समझा गया। इमाद-उद-दौला अली इब्न् बोयाने फ़ार और फ़ारिस्तान (ईरान) पाया, जिनका निवास शीराज़्में रहा। इमाद-उद-दौलाके भाई रुक्न-उद-दौलाको अल-जबल, ईरानी ईराक़ और पारथियोंका प्राचीन देश मिला। यह इस्फ़हानमें रहते थे। देशका दूसरा भाग वाशमकिनके हाथ लगा। हमीदिया वंशके शहज़ादे दयार रबिया, दयार बिक्र, दयार मोदर और मोसल

नगरके राजा हुए। मिस्र और सिरीया मुहम्मद इब्न ताजके चङ्गुलमें पड़ा, जो पहले वहां शासक रहा। अफ़रीका और स्पेन बहुत दिन पहले ही स्वतन्त्र बन बैठा था। सिसिली और क्रीटमें स्थानीय नृपतिने राज्य चलाया। समानीय वंशके अल्-नस्र-इब्न-अहमदने खुरासान और मालवरन्नहरको धर दबाया। दोलामतीय प्रथम वंशके नरेशोंने तबरिस्तान, जुरजन और माजिन्दरान पर कब्ज़ा किया। कुछ समय पहले ही अबू अली मुहम्मद इब्न ईसेलियास अल् सामानीने किरमान प्राप्त छीन लिया था। करमतीय अबू ताहिर इमाम, बहरीन और हज्र जिलेके मालिक रहे। इसीतरह समग्र राज्य विच्छिन्न हो जानेपर खलीफ़ाका अधिकार घटा और सारा काम बिगड़ गया। इन्होंने ७ वर्ष २ मास और ११ दिन राज्य किया था। सन् ८४१ ई०को इनके मरनेपर भ्राता अल् मुत्तक़ीने सिंहासनका उत्तराधिकार पाया।

अलर्क (सं० पु०) अलम् अर्च्चति वा, अर्च्च-अच् अर्च्च-घञ् वा शकन्ध्वादित्वात् टेर्लोपः। १ पागल कुत्ता। २ श्वेत मन्दार। ३ कृमिविशेष। महाभारतके शान्तिपर्वमें इसका विवरण लिखा है। सत्ययुगमें अलर्क नामक एक असुर था, एकबार वह बलपूर्वक भृगुकी स्त्रीको हर ले गया। इसपर क्रुद्ध हो भृगुने उसे यह शाप दिया,—'रे दुर्मति! तूने जो पाप किया, उसके लिये तू मूत्रश्लेष्मभोजी कीट होकर भूतलमें जन्मग्रहण करेगा। फिर जब मेरे वंशमें राम नामक एक पुरुष अवतार लेंगे, तब उनके शुभदर्शनसे तू पापमुक्त होगा।'

द्वापरयुगमें ब्राह्मणका कपट वेश धारणकर कर्ण परशुरामसे ब्रह्म अस्त्रादि सीखने गये थे। एक दिन परशुराम कर्णकी जांघपर शिर रखकर सो रहे। उसी समय खून पीनेके लिये एक कीड़ा कर्णकी जङ्घामें काटने लगा। उस कीड़ेके आठ पैर, तेज़ दांत, सूई जैसे रोयें और सूअर जैसी सूरत था। कदाचित् गुरुकी नींद टूट जाय, इस भयसे कर्ण चुपचाप ज्योंके त्यों बैठे रहे आखिर उसको जङ्घासे रुधिर बहकर परशुरामको देहमें लगा और उनकी नींद टूट गई। उठकर उन्होंने देखा, तो पासमें उस कीड़ेको पाया। रामकी दृष्टि पड़ते ही वह कीड़ा पापमुक्त हो गया।

४ महाराज शत्रुजित्तनय ऋतध्वजके पुत्र। कुमार ऋतध्वज महर्षि गालवप्रदत्त कुवलय नामक अश्व पा कुवलयाश्व नामसे विख्यात हुए थे। वह किसी समय एक पापकर्मा दैत्याधम द्वारा उठाये गये गालवाश्रमका विघ्न मिटाने उक्त अश्वपर चढ़ दुर्मति शूकररूपी दैत्य मारनेको उसके पीछे पातालपुर पहुंचे और वहां गन्धर्वराज विश्वावसुकी दुहिता मदालसाका पाणिग्रहण किया। उसके बाद प्रधान-प्रधान असुरोंको मार मदालसाके साथ-साथ घोड़ेपर चढ़ अपने घर वापस आ गये। कालक्रमसे मदालसाके गर्भमें ऋतध्वजके विक्रान्त, सुबाहु और शत्रु-मर्दन नामक तीन पुत्रोंने जन्म लिया था। पीछे चौथा पुत्र भूमिष्ठ होनेपर मदालसाने स्वामीके आज्ञानुसार इसका अलर्क नाम रख दिया। राजकुमार अलर्कने कुमारकालमें कृतोपनयन हो, विशिष्ट ज्ञान पा मातृसमीप राजधर्म, वर्णधर्म, आश्रमधर्म एवं नित्यनैमित्तिकादि भेदसे गार्हस्थ्यधर्म सीख यौवनमें पदार्पण करते हुए यथाविधान दारपरिग्रह किया। इसके बाद पिता ऋतध्वज चरम वयसमें उपनीत हो इन्हें राज्य दे तपश्चरण निमित्त वनको गये थे। राजकुमार अलर्क राज्य पा माताके उपदेशानुसार न्यायसे पुत्रकी तरह प्रजापालन करने लगे। इसीतरह कुछ समय राज्य करने बाद यह अपने दूसरे बड़े भाई सुबाहुके चक्रान्तसे काशिराज द्वारा निपीड़ित होनेपर महामति दत्तात्रयके शरणापन्न हुए। उक्त महाभागके उपदेशानुसार आत्मविवेक लाभ कर इन्होंने सांसारिक बन्धनके छेदनको वासनासे काशीपति और अग्रज सुबाहुको समुदाय राज्य देनेका प्रस्ताव उठाया था। किन्तु वह राज्य देनेका हेतु सुनकर वे कुछ लिये-दिये ही अपने स्थानको वापस गये। पीछे यह भी अपने ज्येष्ठपुत्रको राज्य सौंप आत्मसिद्धिके लिये वनको चल दिये। (मार्कण्डेयपुराण)

अलर्षिराति (वै० त्रि०) सम्प्रदानोत्सुक, हौसलेमन्द, जल्द देनेवाला।

अललटप्पू (हिं० वि०) मनमाना, वाहियात।

अललबछेड़ा (हिं० पु०) १ घोड़ेका बच्चा। जबतक घोड़ा दूध पीता और सवारी नहीं देता, तबतक अलल बछेड़ा कहलाता है। २ अनभिज्ञ बालक, नादान् लड़का। (स्त्री०) अलल-बछेड़ी

अललाना (हिं० क्रि०) उच्चै:स्वरसे शब्द निकालना, जोर-जोर बोलना।

अललाभवत् (वै० त्रि०) उत्तेजित होनेवाला, जो उत्साही बन रहा हो।

अलले (सं० अव्य०) वाह-वाह, क्या खूब, शाबाश। नाटकमें जो पिशाचका अभिनय करता, उसकी बोलीमें प्राय: यह शब्द काम आता है।

अलवणा (सं० स्त्री०) १ ज्योतिष्मती, रतनजोत। २ हरीतकी, हर।

अलवर—१ राजपूताना प्रान्तका राज्य। यह अक्षा० २७° ५´ १५´´ एवं २८° उ० और द्राघि० ७६° १०´ तथा ७७° १५´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसमें उत्तर गुड़गांव, नाभा राज्यका बावल एवं जयपुरका कोट-कासम परगना, पूर्व भरतपुर तथा गुड़गांव और दक्षिण एवं पश्चिम जयपुर राज्य है। राज्यका क्षेत्रफल ३२४ वर्गमील है।

यह स्थान प्राय: पर्वतमय है। प्रतापसिंह नामक व्यक्ति वर्तमान महाराव नृपतियोंके आदि पुरुष रहे। पहले दो ग्राम और मचाग नामक स्थानके अर्धांशपर ही प्रतापसिंहका अधिकार था। सन् १७७१ ई०को जाटों, मुगलों और महाराष्ट्रोंमें परस्पर विवाद बढ़ा, उस समय जयपुरके महाराज भी नाबालिग़ थे। सुविधा पाकर प्रतापसिंह स्वाधीन हुए और इसका समस्त दक्षिण अंश दबा बैठे। प्रतापसिंह देखो। प्रतापके स्वर्गवास बाद उनके पोष्यपुत्र बख्तावर सिंहको यह राज्य मिला था। सन् १८०३-६ ई०को महाराष्ट्रोंसे युद्ध होते समय बख्तावरने अंगरेज़ोंका पक्ष लिया। इस युद्धके बाद ही अंगरेज़ सरकारने इस राज्यका अवशिष्ट उत्तरांश बख्तावरको सौंप दिया था। उससे सालको जगह राज्यका आय दश लाख हो गया।

पहले अलवरनरेश अंगरेज-सरकारको कोई कर देते न थे। सन् १८१२ ई०को बख्तावरने जयपुर राज्यका अधिकृत धोबी और सिक्रावा दुर्ग छीन लिया। अंगरेज-सरकारके कहनेसे भी उन्होंने इन दोनों दुर्गको वापस देनेसे इनकार किया। उसपर अंगरेजी फौज अलवर जा पहुंची। बख्तावरने फिर निस्तार न देख दोनो दुर्ग छोड़ दिया था। बख्तावरके मरनेपर उनके पोष्यपुत्र वाणीसिंह इस राज्यके महाराव बने।

बख्तावरके बलवन्त सिंह नामक कोई जारज पुत्र था। उनके मरनेपर उसने भी उत्तराधिकार पानेकी चेष्टा लगायी। वाणी और बलवन्त सिंहमें विवाद बढ़ गया था। सरकारने बलवन्त सिंहके लिये जो सुव्यवस्था निकाली, वह वाणीसिंहने न मानी। उसीसे अंगरेजी फ़ौज अलवर भेजी गयी थी। उस समय असुविधामें पड़ अलवरका उत्तर अर्धांश वाणी सिंहने बलवन्त सिंहको सौंप दिया। सन् १८५७ ई०को वाणीसिंह स्वर्गवासी हुए। उनके तेरह वर्ष वाले पुत्र शिवदान सिंह महाराव बने थे। सन् १८७० ई०को शिवदान सिंहने इहलोक परित्याग किया। उनका कोई भी उत्तराधिकारी न रहा। कितने ही अनुसन्धानके बाद नरुक वंशोद्भव ठाकुर मङ्गलसिंह अलवरके राजा बनाये गये।

अलवर-नरेश अंगरेज सरकारकी ओरसे सम्मानार्थ पन्द्रह तोपोंकी सलामी पाते हैं। यह राज्य चौदह भागमें बंटा है—१ तिजार, २ बहरोर, ३ मन्दावर, ४ कृष्णगढ़, ५ गोविन्दगढ़, ६ रामगढ़, ७ अलवर, ८ बाणसुर, ९ कतुम्बर, १० लक्ष्मणगढ, ११ राजगढ, यानागाजी, १३ बलदेवगढ और १४ प्रतापगढ।

इस राज्यका आधेसे अधिक भाग कृषिकार्यमें लगता और सावां, ज्वार, बाजरा, धान्य, यव, चना, गेहूं, अफीम, तम्बाकू, रुई, इक्षु तथा धान्य उपजता है। पहले इस राज्यमें कितने ही लोहेके कारखाने रहे, किन्तु अब एक भी नहीं देख पड़ता। तिजारा

नामक स्थानमें कागज़ बनता है। राजाके पास १८०० सवार, ८७५० पैदल, १० बड़ी और २८० छोटी तोप रहती है।

२ अलवर राज्यकी राजधानी—इस नगरका एक ओर पहाड़ और तीन ओर चहारदीवारी बनी है। लोग कहते हैं, कि निकुम्भ नामक राजपूतोंने चहारदीवारी उठवायी थी। नगरमें पांच फाटक लगे हैं। सड़कें भी खूब पोख़्ता बनी हैं। प्रधान भवन यह हैं,—१ महाराजका प्रासाद, २ महाराज बख़्तावर सिंहकी छतरी, ३ जगन्नाथका मन्दिर, ४ कचहरी, तहसीलदारी और ५ त्रिपोलिया यानी फ़ीरोज़ शाह बादशाहके भाई तरङ्ग सुलतानकी पुरानी क़ब्र। मुसलमानी इमारतमें भीकनकी सिजदहगाह बहुत अच्छी बनी है। त्रिपोलियाके ठीक १००० फ़ीट ऊपर क़िला खड़ा, जिसमें नरूक नरेशों का प्रासाद और दूसरी इमारत उठी है। शहरकी चहारदीवारी पहाड़ी चोटीके साथ घाटी पार कर कोई दो मील तक चली गयी है। कहते हैं, कि उसे भी निकुम्भ राजपूतोंने ही उठाया था। जैनियों और सरावगियोंके भी पांच बड़े-बड़े मन्दिर बने हैं। सीलीसेढ़ झील आध कोससे ज़्यादा लम्बी और औसतमें ४०० गज़ चौड़ा बैठता है। झीलसे इस नगरतक साढ़े चार कोस लम्बी नहर लगी, जिससे इधर उधरकी शोभा बढ़ गयी है। मछली बहुत देख पड़ती है। झीलके आस-पास शिकारकी कोई कमी नहीं। लोग प्रायः उसके किनारे आनन्द करने जाते हैं। वाणीविलास प्रासाद और उद्यान नगरसे आध कोस दूर और अपनी विचित्र शोभाके लिये मशहूर है। रजीडण्टोंके पासका तालाब बहुत अच्छा है। इस नगरमें चारों ओर पक्की सड़क गयी है।

अलवल् (हिं० पु०) मान, नख़रा, ढकोसला।

अलवांती (हिं० स्त्री०) प्रसूता, जच्चा, जो औरत बच्चा जन चुकी हो।

अलवासिक् बिल्लाह—अब्बास वंशके ८वें खलीफ़ा और अल मौतसिम बिल्लाहके पुत्र। सन् ८४२ ई०को ५वीं जनवरीको यह बगदादकी गद्दीपर बैठे थे। दूसरे ही वर्ष इन्होंने आक्रमण कर सिसिलीको जीत लिया। यह ५ वत्सर ७ मास १ दिन खलीफ़ा रहे और सन् ८४७ ई०को मर गये। इनके भाई अलमुतवक्किलने राज्यका उत्तराधिकार पाया।

अलवान् (अ० पु०) पश्मीने या उनकी चादर। यह अक्सर सादा रहता है, गोटा किनारी कुछ नहीं लगता।

अलवायी, अलवांती देखो।

अलवाल (सं० क्ली०) लवं जलकणा न आलाति गृह्णाति रहिभूमिर्यस्मात्; लव-आ-ल-क, ततो नञ्-तत्। थलहा, पेड़की चारो ओर पानी रोकनेको मट्टीका बना हुआ घेरा।

अलस् (सं० त्रि०) दीप्तिहीन, धुंधला, जो चमकता न हो।

अलस (सं० त्रि०) न लसति कस्मिंश्चित् कार्ये व्याप्रियते; लस अच् ततो नञ्-तत्। १ दीर्घसूत्री, क्रियामन्द, सुस्त, टालमटोल करनेवाला, जो ज़रूरी काम छोड़ बैठता या पड़ा रहता हो। 'मन्दस्तुन्द परिमृज आलस्यः शीतकोऽलसोऽनुष्णः।' (अमर) (पु०) २ पादरोग विशेष, खरवा। खराब कीचड़ लगनेसे पैरकी अंगुलीके बीचका सड़ना गलना अलस या खरवा कहाता है। (सुश्रुत) ३ विसूचिकाका अवस्थाभेद, किसी क़िस्मका हैज़ा। ४ क्षुद्रकुष्ठरोगभेद, किसी क़िस्मका कोढ़। ५ व्याल जाति ज्वर, कोई बुख़ार। ६ जिह्वारोग, ज़बानका आज़ार। ७ वृक्षभेद, कोई पेड़। 'अलसः पादरोगे स्यात् क्रियामन्दे द्रुमान्तरे।' (विश्व) ८ मुनि विशेष।

अलसक, अलस देखो।

अलसगमन (सं० क्ली०) १ मन्दगमन, सुस्त चाल। (त्रि०) अलसं गमनं यस्य, बहुव्री०। २ मन्दगामी, धीरे-धीरे चलनेवाला।

अलसता (सं० स्त्री०) आलस्य, सुस्ती।

अलसत्व (सं० क्ली०) अलसता देखो।

अलसा (सं० स्त्री०) न लसति व्याप्रियते; लस-अच्, ततो नञ्-तत् टाप्। १ कार्य करनेमें अक्षम स्त्री, जो औरत काम करनेमें होशियार न हो। २ हंसपदीलता, लाजवन्ती। 'अलसा हंसपद्याञ्च।' (विश्व)

अलसाना (हिं० क्रि०) अलस होना, सुस्त पड़ना, झुकना, झपकी लेना।

अलसी (हिं० स्त्री) अतसी, तीसी। इसका वृक्ष कोई गज-पौन-गज ऊपर उठता है। शाखा अधिक नहीं होती। छोटी पत्तीसे भरी दो-तीन टहनी आती, जो लम्बी, मुलायम और सीधी रहती है। फूल नीला और खूबसूरत लगता है। उसके टूट जानेपर छोटी गांठ पड़ती, जिसमें बीज बैठता है। इसका तेल जलाने, रंग चढ़ाने और स्याही बनानेका काम देता है। तेल निकलने बाद बीजका बचा हुआ अंश गाय-भैंसको खिलाते और खली कहते हैं। अलसीका बीज कूट और गर्मकर पुलटिस बनाया जाता, जो फोड़े-फुन्सीको बैठा या पकाकर अच्छा कर देता है। अतसी देखो।

अलसेक्षणा (सं० स्त्री०) मन्द दृष्टि डालनेवाली, जो औरत सुस्त नज़र फेंक रही हो।

अलसेट (हिं० स्त्री०) १ विलम्ब, वक़्फ़ा, देर। २ धोकाधड़ी, हेरफेर। ३ विघ्न, दिक़्क़त।

अलसेटिया (हिं० वि०) १ मन्द, ढीला, सुस्त। २ बाधक, रोकनेवाला।

अलसेलुका (सं० स्त्री०) रक्त लज्जालु, लाल लाजवन्ती।

अलसौंहां (हिं० वि०) अलस, सुस्त।

अलहदा (अ० वि०) पृथक्, जुदा, दूर।

अलहन (हिं० पु०) शामत, बुरा वक्त।

अलहिया (हिं० स्त्री०) रागिनी विशेष। यह हिण्डोल रागकी स्त्री और दीपककी पुत्रवधू है। इसमें समग्र स्वर कोमल रहता है। करुणा देखानेमें यह गायी जाती है।

अलहैरी (अ० पु०) उष्ट्रविशेष, कोई अरबी ऊंट। इसके एक ही कूबड़ रहता है। चलनेमें यह बहुत तेज़ पड़ता है।

अलाई, अलायी देखो।

अलागर—मन्द्राज प्रान्तके मदुरा जिलेकी निम्न पर्वतश्रेणी। यह पहाड़ लम्बाईमें छ: कोस बैठता और औसतपर समुद्रतलसे १००० फीट ऊंचा पड़ता है। इसमें भुरभुरा पत्थर भरा, किन्तु आधारपर भूगर्भसम्बन्धीय वस्तु भी मिलता है। यह अक्षा० १०° ११´ उ० और द्राघि० ७८° १७´ १५´´ पू०पर अवस्थित है। मदुरासे छः कोस उत्तर-पूर्व इसके नीचे कल्लनों या कल्लारोंका 'कल्लार अलागर कोविल' नामक प्राचीन मन्दिर बना है।

अलागलाग (हिं० स्त्री०) १ नृत्यविशेष, किसी क़िस्मका नाच। २ साफ़ खेल, अनोखा तमाशा।

अलाण्डी—बम्बईप्रान्तके पूना जिलेका एक हिन्दू तीर्थस्थान। यह अक्षा० १८° २७´ उ० और द्राघि० ७५° ६´ ३´´ पू० पर अवस्थित है।

अलाण्डु (सं० पु०) हिंस्र कीट वा जन्तु विशेष, कोई ज़हरीला कीड़ा या खूंख़ार जानवर

अलात (सं० पु०-क्ली०) न लत्यते आहन्यते; लत सौत्र० कर्मणि घञ्, पुंसो० वा क्लीवत्वम्। १ अङ्गार, धूमरहित आगका ढेला। २ कोयला।

अलातचक्र (सं० क्ली०) १ आगका फेरा। यह किसी जलती लकड़ीको जल्द-जल्द घुमानेसे आकाशमें खिंच जाता है। २ बनेठी। ३ नृत्यविशेष, किसी क़िस्मका नाच।

अलातृण (वै० त्रि०) अलम्-तृद हिंसायां ण; दकारलोपो गुणाभावोऽलमो मकारस्य अकारश्च निपात्यते, अलं पर्याप्तमातर्दनं हिंसा यस्य। (देवराज) १ आतर्दनशील, पीड़नशील, हिंसक, तकलीफ़ देनेवाला, जिससे कोई फ़ायदा न पहुंचे। (पु०) २ मेघ, बादल।

अलान (हिं०) आलान देखो।

अलाप (हिं०) आलाप देखो।

अलापना (हिं० क्रि०) १ विशुद्ध स्वरसे गान करना, ऊंची आवाज़में तान लड़ाना।

अलापी (हिं०) आलापिन् देखो।

अलापुर—१ विहार प्रान्तके दरभङ्गा राज्यका परगना। पहले यहां जङ्गली हाथी बहुत रहते, जिनको लूटखसोटसे उन्नतिके सब काम रुकते थे। अब यह परगना अतिशय समृद्ध बन गया है। इस परगनेका धान्य समग्र विहार प्रान्तमें प्रसिद्ध है।

२ युक्तप्रान्तके बदायूं जिलेका नगर। यह अक्षा० २७° ५४´ ४५´´ उ० तथा द्राघि० ७९° १७´ पू०

पर अवस्थित और बदायूं नगरसे दक्षिण-पूर्व साढ़े पांच कोस दूर है। सन् १४५० ई० को दिल्लीकी बादशाही छोड़ बदायूं आनेपर अलावुद्दीनने इसे अपने नामपर बसाया था। शहरकी जमीन सारस्वत ब्राह्मणोंके अधिकारमें वर्षोंसे चली आती है। अलावुद्दीन् ही उन्हें यह दे गये थे।

अलाबु, अलाबू (सं० स्त्री०) न लम्बते शब्दायते लवि (नञि लम्बेर्नलोपश्च। उण् १।८७) इति उ वा ऊ न लोपः णित्वाद्वृद्धिश्च। तुम्बी, तुम्बक, तुम्बा, पिण्डफला, महाफला, लबुका, तुम्बिका, कद्दू, लौकी।

अलाबु (Langenaria vulgaris, Bottle gourd) शब्दके अपभ्रंशमें हमलोग बराबर लौका या लौकी कहते हैं। यह एक प्रकारकी लताका फल है। इसके पत्ते गोल और डालीके पास कटे होते हैं। पत्तेकी जड़में बड़े-बड़े रेशे होते हैं। ठाट और वृक्षपर चढ़नेके समय यही रेशा पल्लव और शाखा आदिमें लपट जाता है। वसन्त और शीत कालमें कद्दू होता है। परन्तु यत्न करनेसे यह लता दूसरी ऋतुमें भी लग सकती है।

प्रधानतः कद्दू दो तरहका होता है,—लम्बा और गोल। इसके अलावा रङ्ग रूप भी कई तरहका देखा जाता है। कोई कद्दू खूब हरा, कोई हलका सफ़ेद, और कोई पीलापन लिये सफ़ेद होता है। किसी-किसी कद्दूका ऊपरी हिस्सा गोल और नीचेका चिपटा होता है। इसकी वीणा, तानपूरा और सितार बनाया जाता है। कितने ही कद्दू गोल होते हैं, परन्तु उनके नीचेका भाग चिपटा नहीं होता। किसी-किसी कद्दूके नीचेका भाग गोल होता सही, परन्तु शिरके ऊपर गड्ढा रहता, जिस पर फिर कुछ अंश उन्नत हो जाता है। उदासी लोग इसीको जल पीनेको तुम्बी बनाते हैं। जिस कद्दूके ऊपर ऐसा गड्ढा नहीं होता, वैष्णव सम्प्रदाय उसीसे गोपीयन्त्र प्रस्तुत करता है। कोई कोई कद्दू तीन चार हाथ लम्बा होता है। फिर एक जातिकी तुम्बीको 'कड़वी लौकी' कहते हैं। देखनेमें यह सब्ज, या कुछ पीत-मिश्रित श्वेतवर्ण होती और खानेमें कड़वी लगती है।

वैद्यशास्त्रके मतसे,—लौकी मिष्ट, हृद्य, रुचिकर, भेदक और गुरुपाक है। इससे पित्त और कफ नष्ट होता है। परन्तु राजवल्लभ कहते हैं, कि इससे कफ बढ़ता है। युरोपीय चिकित्सकोंने भी परीक्षा करके इसके गुणको देखा है। इसके बीजका तेल कपालमें लगानेसे शिरका दर्द दूर हो जाता है। पेशाब बन्द हो जानेपर लौकी, इसके पत्ते, डाली या रेशेका रस सेवन करानेसे पेशाब उतर आता है। ज्वरमें रोगी जब प्रलाप करता, उस समय इसका सत शिरमें लगा देनेसे बहुत उपकार होता है। प्रवाद है, कि अत्यन्त प्रसववेदनाके समय यदि घूरके ऊपरकी लौकीका अखण्ड मूल गर्भिणीके बालमें बांध दिया जाय, तो तुरत ही प्रसव हो जाता है।

लौकी लताकी डाली, अगले हिस्से, शाक और फल सबकी तरकारी बनती है। नवमी तिथिको अलाबु न खाना चाहिये। गोल कद्दू खानेका भी शास्त्रमें निषेध है।

अलाबुक (सं० पु०) अश्वके मुखका रोग विशेष, घोड़ेके मुंहका आज़ार। इसमें घोड़ेके मुंहसे दुर्गन्ध निकलता, तालु सूज जाता और घास या दाना खाने पर दर्द होने लगता है। (जयदत्त)

अलाबुका (सं० स्त्री०) १ कटुदुग्धालाबू, कड़वी सफ़ेद लौकी।

अलाबुनी (सं० स्त्री०) १ कटुदुग्धालाबू, कड़वी सफ़ेद लौकी। २ कटुतुम्बी, कड़वा कद्दू। ३ मिष्ट तुम्बीलता, मीठी लौकीकी बेल।

अलाबुपात्र (सं० क्ली०) तुम्बा, कद्दूका बरतन। इसे प्राय साधुसंन्यासी ही व्यवहार करते हैं।

अलाबुमय (सं० त्रि०) अलाबु-निर्मित, जो कद्दूसे बना हो।

अलाबुविधि (सं० पु०) अलाबुसे रक्तमोक्षण, लौकीसे खूनका निकालना।

अलाबुसुहृत् (सं० पु०) अम्लवेतस, अमलबेत।

अलाबू, अलाबु देखो।

अलाबूकट (सं० क्ली०) अलाबूनां रजः, अलाबू रजोऽर्थे कटच्। अलाबुका रजस, लौकीका रोयां।

अलाबूयन्त्र (सं॰ क्ली॰) यन्त्रविशेष, कोई आला।

अलाभ (सं॰ पु॰) हानि, लाभका अभाव, नुकसान्, फ़ायदा न होनेकी हालत।

अलाम (हिं॰ वि॰) अल्लामा, मक्कार, बातूनी, झूठी बात बना धोका देनेवाला।

अलामत (अ॰ स्त्री॰) लक्षण, निशान्, दिखावा।

अलायक (हिं॰ वि॰) नालायक, अयोग्य, ख़राब।

अलायी (हिं॰ वि॰) १ अलस, सुस्त, ढीला। २ बिहार प्रान्तके मुंगेर ज़िलेकी पहाड़ी नदी। जमुयी ग्रामसे दो कोस दक्षिण यह क्यूल नदमें गिरती और ग्रीष्म ऋतुमें सूख जाती है।

अलायीपुर, (आलाइपुर)—बङ्गाल प्रान्तके खुलना ज़िलेका गांव। यह भैरव एवं अठारहबङ्का नदीके सङ्गम और अक्षा॰ २२° ४८´ उ॰ तथा द्राघि॰ ८९° ४१´ पू॰ पर बसा है। यहां प्रधानतः मट्टीके बहुत बढ़िया बरतन बनते हैं।

अलाय्य (वै॰ त्रि॰) ऋ बाहु॰ आय्य, रस्य लकारः। १ गमनशील, आगे बढ़नेवाला। (पु॰) २ इन्द्र।

अलार (सं॰ पु॰) अरार्यते; ऋ-घञ् लुक् अच्, रस्य लकारः। १ कपाट, किवाड़। २ द्वार, दरवाज़ा। (हिं॰) ३ अलाव, धूनी, भट्ठी।

अलाल (हिं॰ वि॰) १ अलस, अकर्मण्य, काहिल, निकम्मा।

अलाव (हिं॰ पु॰) अलात, कौड़ा। शीतकालमें अपने दरवाज़ेके सामने तापनेको लोग जिस गड्ढेमें घास-फूस और लकड़ी-काठ डाल आग सुलगाते, उसे अलाव बताते हैं।

अलावज (हिं॰ पु॰) वादित्र विशेष, कोई बाजा। पुराने समय यह चमड़ेसे मढ़कर तैयार किया जाता था।

अलावनी (हिं॰ स्त्री॰) वादित्रविशेष, कोई बाजा। पुराने समय इसे तारसे बजाते थे।

अलावलपुर—पञ्जाब प्रान्तके जालन्धर ज़िलेकी करतारपुर तहसीलका शहर। यह अक्षा॰ ३१° २६´ उ॰ और द्राघि॰ ७५° ४२´ पू॰ पर अवस्थित है। इस नगरमें तीसरे दरजेकी म्युनिसपलिटी बैठती और जुलाहोंसे बड़ी आमदनी उठती है।

अलावा (अ॰ क्रि॰ वि॰) सिवा, अतिरिक्त, भिन्न, छोड़।

अलास (सं॰ पु॰) न लस्यति अनेन, करणे घञ्। १ जिह्वास्फोट, जीभका फोड़ा। २ जिह्वागत मुखरोग, जीभमें होनेवाली मुंहकी कोई बीमारी। इसमें दुष्ट कफशोणितसे जिह्वातलपर दारुण शोथ उठता है। उसके बढ़ जानेसे जीभ जकड़ और जड़में पक जाती है। (सुश्रुत)

अलास्य (सं॰ वि॰) अलस, काहिल।

अलाहाबाद—१ युक्तप्रान्तका डिविज़न या विभाग। यह अक्षा॰ २४° ४७´ एवं २६° ५७´ ४५´´ उ॰ और द्राघि॰ ७९° १९´ ३०´´ तथा ८३° ७´ ४५´´ पू॰ के मध्य अवस्थित है। कमिश्नर इस विभागका शासन करते हैं। इसमें कानपुर, फ़तेहपुर, बांदा, अलाहाबाद, हमीरपुर और जौनपुरका ज़िला लगता है। इसका क्षेत्रफल १३७४५ वर्गमील है। इस विभागमें कोई ६० लाख आदमी बसते हैं।

२ युक्तप्रान्तका ज़िला। यह युक्तप्रान्तीय छोटे लाटके नीचे अक्षा॰ २४° ४७´ एवं २५° ४७´ १५´´ उ॰ और द्राघि॰ ८१° ११´ ३०´´ तथा ८२° २१´ पू॰के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २८३३१ वर्गमील है। इसके उत्तर प्रतापगढ़ ज़िला, पूर्व जौनपुर मिर्ज़ापुर, दक्षिण रेवा राज्य और दक्षिण पश्चिम तथा पश्चिम बान्दा-फ़तेहपुर पड़ता है। यह ज़िला पूर्व-पश्चिम कोई सैंतीस कोस लम्बा और दक्षिण-उत्तर कोई बत्तीस कोस चौड़ा बैठता है।

भौतिक आकार—अलाहाबाद गङ्गा और यमुनाके सङ्गमपर है। इसमें अच्छे-अच्छे लोग अधिक रहते हैं। ऊसर बहुत कम है। खेत सींचनेको नहर-बम्बे वग़ैरहसे बड़ा सुभीता पड़ता है। अनाज और गन्ना खूब उपजता है। गङ्गासे दो कोस दक्षिण पहाड़ मिलता है। चीता, भेड़िया, हिरण और जङ्गली सूवर प्रायः देखनेमें आता है।

गङ्गा, यमुना, तौन और बेलन इस ज़िलेकी प्रधान नदी है। वर्षामें गङ्गा ६०-७० फ़ीट गहरी और जहाज़ चलाने लायक़ हो जाती है। राजघाट और

फाफामौमें गङ्गापार उतरनेको नाव खड़ी रहती है। पश्चिमकी ओर अलवर झील पड़ता, जो ढायी मील लम्बा और दो मील चौड़ा है। प्रतापपुर, देवरिया और राजापुरमें पत्थर निकलता है। अकबर बादशाहने प्रतापपुर और देवरियासे ही पत्थर मंगा अलाहाबादका किला बनवाया था।

इतिहास—महाभारतमें अलाहाबादके इधर उधरकी भूमि 'वारणावत' बतायी गयी है। पांचों पाण्डवने अपने वनवासका समय इसी प्रान्तमें बिताया। रामचन्द्रके वनवास समय भी चण्डाल-नृपति गुहकने सिङ्गरौरमें उनका स्वागत किया था। सन् ई० से २४० वर्ष पहले बौद्ध नृपति अशोकका अलाहाबादके किलेमें जो शिला-स्तम्भ खड़ा, उसपर इस प्रान्तका सच्चा और पुराना हाल लिखा है। उसमें अशोकके नाम साथ सन् ४थी ई० वाले समुद्रगुप्तके विजयका भी विस्तारित विवरण मिलता है। सन् १६०५ ई० को मुगल बादशाह जहांगीरने फिर स्तम्भ खड़ा करवा फ़ारसीमें अपने सिंहासनारूढ़ होनेका वर्णन दिया है। सन् ४१४ ई० में चीनके बौद्ध-परिव्राजक फाहियानने इस प्रान्तको कोशल-नरेशके अधीन पाया था। दो शताब्द बाद उनके देशवासी यूअन्चुअङ्ने प्रयागमें आकर दो बाद्ध मठ और कितना ही हिन्दू मन्दिर देखा। फिर सन् ११८४ ई० तक कोई हाल न मिला, जब शहाबुद्दीन गोरीने इस प्रान्तपर आक्रमण किया था। उस समयसे अङ्गरेजी राज्य आरम्भ होनेतक यह प्रान्त मुसलमानोंके हाथ रहा। सन् ई० के १३ वें और १४ वें शताब्द अलाहाबाद कोड़ेका परगना समझा जाता, जहां शासक अधिष्ठित था। सन् १२८६ ई० को कोड़ेमें मुईजुद्दीन् और उनके पिताका सुप्रसिद्ध मिलन हुआ। पुत्रने समय बल्बनके स्थानमें दिल्लीके सिंहासनका अधिकार पाया और पिता उसका विरोध करने दौड़ा था। किन्तु अन्तमें दोनों मिल-जुलकर राजधानी पहुंचे। सन् ई० के १३ वें शताब्दान्त अलाहाबाद अला- उद्दीन्के अधीन रहा, जिन्होंने कोड़ेमें अपने बुड्ढे चाचा सुलतान फीरोज़ शाहको धोकेसे मरवा डाला था। पीछे इस प्रान्तके शासकोंमें खूब मारकाट चली। सन् १५२८ ई० को बाबरने पठानोंसे इसे छीना था, अकबरने अलाहाबाद नाम रख दिया। अपने पिताके समय शाहज़ादे सलीम शासक बनकर अलाहाबादमें रहते थे। खुसरू बाग़का मक़बरा सलीमके बलवायी लड़केकी याद दिलाता है। सन् ई० के १८ वें शताब्द बुंदेलों और महाराष्ट्रोंने कई बार अलाहाबादपर धावा मारा, जब बुंदेलखण्डके महाराज छत्रसालने मुगल शासकोंपर अपनी तलवार उठायी थी। पीछे अराजकता फैलनेपर किसी समय अवधके नवाबों और किसी समय महाराष्ट्रोंका इस प्रान्तपर अधिकार रहा, अन्तको सन् १७६५ ई० में अंगरेजोंने अलाहाबाद नगर दिल्लीके नामधारी सम्राट् शाह आलमको वापस दिया। कुछ वर्ष तक अलाहाबादमें शाही दरबार लगा था, किन्तु सन् १७७१ ई० को शाह आलम् दिल्ली फिर पहुंचे और महाराष्ट्रोंके हाथ जा पड़े। अंगरेजोंने अलाहाबाद अवधके नवाबको पचास लाख रुपये नक़दमें दे डाला था। नवाबने खिराज अदा न कर सकनेपर गङ्गा और यमुनाके बीचका कितना ही देश अङ्गरेजोंको सौंपा, जिसे एकमें मिलाकर अलाहाबाद ज़िला बनाया गया। सन् १८५७ ई० की ६ठीं जूनको अलाहाबादके सिपाहियोंने बलवा उठा अपने बहुतसे राजपुरुषोंको वध किया था। उसी बीच नगरवासियोंने भी उद्दण्ड हो जेलके कैदियोंको छोड़ा और जिसी युरोपीय या युरेशीयको पाया, उसीको मारपीट ठिकाने लगाया। किन्तु सिखोंके साहाय्यसे किला अंगरेजोंके हाथ रहा। फिर ११वीं जूनको कर्नल नीलने बलवायियोंको हटा नगर और ष्टेशन ले लिया था। पीछे अलाहाबादके प्रबन्धमें कोई झगड़ा न पड़ा।

अलाहाबाद ज़िलेमें कोई पन्द्रह लाख आदमी रहते, जिनमें ब्राह्मण बहुत मिलते हैं। अलाहाबाद ही इस ज़िलेमें ऐसा शहर है, जिसमें पांच हज़ारसे ज्यादा आदमी रहता है। किलेमें खासी युरोपीय फ़ौज रहती है। यमुना किनारे कुछ टूटे-फूटे पुराने किलोंका ध्वंसावशेष भी देख पड़ता है। व्यापारियों

और श्रमजीवियोंको अपनी अपनी पञ्चायतके अनुसार काम करना होता है।

इस ज़िलेमें पड़ती ज़मीन बहुत कम मिलेगी। खादका व्यवहार बढ़ा और नहर निकलनेसे खेत सींचनेका सुभीता बंध गया है। अलाहाबाद शहरके आसपास अमरूद, नारङ्गी, शरीफ़े, अनार, नीबू, केले, करौंदे, जामन वग़ैरहका बाग़ लगा, जिससे खूब फल उतरता है। ग्रामोंमें आम, महुवा, इमली और आंवला बहुत है।

अलाहाबाद ज़िलेका व्यवसाय-वाणिज्य ठाकुरों और बनियोंके ही हाथ है। सिवा कङ्कड़ और सज्जी मट्टीके दूसरा धातु यहां नहीं मिलता। माघमें क़िलेके सामने त्रिवेणी सङ्गमपर बड़ा मेला लगता है। ईष्ट इण्डियन रेलवेने इसे पूर्व-पश्चिम इस छोरसे उस छोरतक पार किया है। नैनीमें यमुनापर लोहेके शहतीरोंका जो पुल बंधा, वह १११० गज लम्बा और नदीसे १०६ फीट ऊंचा है। इस ज़िलेमें महवायी, सिरसा रोड, करछाना, नैनी, अलाहाबाद, मनौरी, भारवारी, और सिराथू ईष्ट इण्डियन रेलवेके ष्टेशन हैं। ग्रेण्ड ट्रङ्क रोड नामक पक्की सड़क कोसतक अलाहाबाद ज़िलेमें रेलवेके समानान्तर निकली है। यमुनाके उसपार वाले परगनोंमें बड़ी गर्मी पड़ती और ख़ुश्की रहती है।

३ इस ज़िलेकी तहसील। इसका क्षेत्रफल ३१२ वर्गमील है।

४ इस प्रान्तकी राजधानी। इसका अक्षा० २५° २६′ उ० और द्राघि० ८१° ५५′ १५″ पू० है। यह नगर यमुनाके वाम तटपर बसा है। यमुना और गङ्गा मिलनेसे जो त्रिकोण बना, उसी पर क़िला खड़ा है। सन् १५७५ ई० को अकबरने क़िला बनवाया था। किन्तु त्रिवेणी सङ्गमपर एक पुराना क़िला भी रहा। सन् ई० से पहले ३रे शताब्द सलूकसके दूत मेगास्थेनिस यह नगर देखने आये थे। सन् ई० के ७ वें शताब्द चीन-परिव्राजक यूअनृचु अङ् इस नगरको देख लिख गये हैं,—"प्रयाग गङ्गा-यमुनाके सङ्गमपर बड़े-रेतीले मैदानसे पश्चिम बसा है। नगरके मध्य ब्राह्मणोंका मन्दिर मिलता है। उसमें एक रुपया चढ़ानेसे दूसरी जगह हज़ार रुपये चढ़ानेका फल होता है। मन्दिरके प्रधान भवन सम्मुख एक वृक्ष देख पड़ता, जिसकी शाखाप्रशाखा इधर-उधर खूब फैली है। लोग उसे नरभक्षक प्रेतका स्थान बताते हैं। वृक्षको चारो ओर उन यात्रियोंके अस्थिका ढेर लगा, जिन्होंने मन्दिरके सम्मुख अपना प्राण विसर्जन किया है। शरीर छोड़नेकी प्रथा अनादि समयसे चली आती है।" फिर जनरल कनिङ्गमने कहा है,—'हमारी समझमें चीन-परिव्राजकने जिस प्रसिद्ध वृक्षका वर्णन लिखा, वह निःसन्देह अक्षयवट है। आजकल यह वृक्ष ज़मीनके नीचे खम्भेदार दालानमें रखा, जो चीनपरिव्राजकके बताये मन्दिरका ध्वंसावशेष मालूम देता है।' रशीदुद्दीनने अक्षयवटको गङ्गा यमुनाके सङ्गमपर अवस्थित बताया है। उससे महमूद गज़नवीकी तारीख़ आती है।

प्राचीन समय अलाहाबादको कोई अंश भीलोंके हाथ रहा। सन् ११८४ ई० को पहले पहल मुसलमानोंने इसे शहाबुद्दीनकी देखरेखमें जीता था। सन् १५२८ ई० को बाबरने यह नगर पठानोंसे छीना और १५७५ को अकबरने क़िला बनवा इसका नाम अलाहाबाद रखा। अकबरका शासन समाप्त होते शाहज़ादे सलीम अलाहाबादके क़िलेमें शासक बनकर रहे थे। सलीम जब दिल्लीके सिंहासनपर बैठे, तब उनके लड़के ख़ुशरूने बलवा उठाया; किन्तु शीघ्र ही क़ैदकर अपने बड़े भाई ख़ुरमको सौंपा गया। सन् १६१५ ई० को ख़ुशरूके मरनेपर स्मरणार्थ अलाहाबादमें एक मक़बरा बनवाया गया था। सन् ई० के १८ वें शताब्द मुग़ल शक्ति नष्ट होते समय अलाहाबादने बहुत बुरे दिन देखे। सन् १७३६ ई० को यह महाराष्ट्रोंके हाथ जा पड़ा, जिन्होंने सन् १७५१ ई० तक राज्य किया था। किन्तु पीछे फ़र्रुख़ाबादके पठानोंने शहर तोड़फोड़ दिया। सन् १७५३ ई० में अवधके नवाब सफ़दर जङ्गने अलाहाबाद ले १७६५ तक अपने हाथ रखा। सन् १७६४ ई० के अक्टोबर मास बक्सरमें जीत होनेपर अंगरेज़ोंने अलाहाबाद

बादशाह शाह आलमको सौंप दिया था। किन्तु सन् १७७१ ई० को शाह आलमके महाराष्ट्रोंसे जा मिलनेपर अंगरेजोंने धोका समझ पचास लाख रुपये पर इसे अवधके नवाबको दे दिया। किन्तु नवाबके कर न दे सकनेपर उनसे अलाहाबाद नगर और ज़िला अंगरेजोंने पाया था। सन् १८३३ से १८३५ ई० तक अलाहाबाद युक्तप्रदेशकी राजधानी रहा, पीछे सरकार आगरे चली गयी। सन् १८५८ ई० को सिपाहियोंका बलवा मिटनेपर यह नगर फिर अपने प्रान्तकी राजधानी बना है।

सन् १८५७ ई० के विद्रोह समय इस नगरमें बड़ी मारकाट हुई। मेरठमें बलवा उठनेकी खबर १२ वीं मईको अलाहाबाद पहुंची थी। ६ ठीं जूनको सन्ध्या समय सिपाहियोंने खुले तौरपर उपद्रव उठा कितने ही अंगरेज़ोंको मार डाला और खज़ाना लूट लिया। बलवेके वक्त कितने ही जङ्गी और माली अंगरेज किलेमें रहे। लूटमारमें शहरके लोगोंने सिपाहियोंको साथ दिया, ईसायियोंका मकान जलाया और हरेक युरोपीयको पकड़ ठिकाने लगाया था। क़ैदखाना तोड़ा और क़ैदी छोड़ा गया। कोई मौलवी नगरके नरेश बने थे। ११वीं जूनको जनरल नीलके न पहुंचनेतक किलेकी फौज बलवायियोंका सामना पकड़ते रही। उन्होंने आते ही दारागञ्जके दलको मार भगाया। १५ वीं जूनको किलेकी तोपोंने गोले मार कीडगञ्ज और मूलगञ्जपर क़ब्ज़ा किया था। १८ वीं जूनको सबेरे अलाहाबाद बलवायियोंसे खाली हुआ।

किला आज भी देखने योग्य बना और गङ्गा-यमुनाके सङ्गमपर मस्तक उठाये खड़ा है। इहातेमें अफसरोंका मकान, बारुदखाना और बारिक है। पुराने महलमें अस्त्रागार रखा गया है।

बड़ी-बड़ी इमारतोंमें सरकारी दफतर, कचहरी, युरोपीय बारिक, अजायबखाना और लाईब्रेरी है। अलाहाबादका म्यूर सेण्ट्राल कालेज युक्तप्रदेशकी शिक्षाका प्रधान स्थान है। सन् १८७४ ई० में लार्ड नोर्थ ब्रुकने इसकी नीव डाली थी। नैनीका अलाहाबाद सेण्ट्राल जेल जैसा बड़ा क़ैदखाना भारतमें दूसरी जगह देख नहीं पड़ता।

यद्यपि इस नगरमें कोई बड़ा व्यापार नहीं होता, तथापि उत्तर भारतकी रेल खुल जानेसे कितना ही माल आया जाया करता है। प्रयाग शब्दमें अपरापर विवरण देखो।

अलिंश (वै० पु०) पिशाच, शैतान्।

अलि (सं० पु०) अलति दंशे, अल-इ। १ भ्रमर, भौंरा। २ वृश्चिक, बिच्छू। ३ काक, कौवा। ४ कोकिल, कोयल। ५ मदिरा, शराब। (हिं० स्त्री०) ६ सखी, सहेली।

अलिक (सं० क्लो०) अल्यते भूष्यते, अल कपिलिकादित्वात् इकन्। १ ललाट, मत्था। 'ललाटमलिकम्।' (अमर) २ कपोल, गाल।

अलिकमत्स्य (सं० पु०) १ अङ्गार। २ भिन्नतिल। ३ तैलभ्रष्टमांस। ४ पिष्टक।

अलिकसन्दर, अलीक्सन्दर देखो।

अलिकुल (सं० क्लो०) अलिकी पंक्ति, भौंरेका झुण्ड।

अलिकुलप्रिया (सं० स्त्री०) काष्ठशेवती, चमेली।

अलिकुलसङ्कुल (सं० पु०) अलिकुलेन भ्रमरसमूहेन सङ्कुलः व्याप्तः। १ कुब्जक वृक्ष, हरसिंघारका पेड़। (त्रि०) २ भ्रमरसमूह-व्याप्त, भौंरेके झुण्डसे भरा हुआ।

अलिकुलसङ्कुला (सं० स्त्री०) १ कण्टकशेवती, कंटीली सेवती। २ कुब्जक वृक्ष, हरसिंघारका पेड़।

अलिक्लव (वै० पु०) पक्षिविशेष, किसी क़िस्मकी चिड़िया। यह मुर्दाखोर होता है।

अलिगर्द (सं० पु०) अलिरिव वृश्चिक इव गर्दयति दंष्टुमाकाङ्क्षति, अलि-गृध-अच्। जलसर्प, पनिहा सांप।

अलिगु (सं० पु०) अलेर्भ्रमरस्येव मधुरा गौर्वाणी कान्तिर्वा यस्य, बहुव्री०। गर्गादिके अन्तर्गत ऋषिविशेष।

अलिङ्ग (सं० त्रि०) नास्ति लिङ्गं ज्ञापकहेतु चिह्नं यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ अनुमान लगानेके हेतुसे शून्य, जिसे फ़र्ज़ करनेको कोई सबब न मिले। २ लिङ्ग-

रहित, जो कोई जिन्स न रखता हो। (पु०) ३ वेदान्त मतसे सिद्ध परमात्मा। नञ्-तत्। ४ लिङ्गभिन्न, जो कोई जिन्स न हो। ५ दुष्टचिह्न, बुरा निशान्।

अलिङ्गिन् (सं० त्रि०) न लिङ्गी वेशधारी, नञ्-तत्। धर्मध्वजी, सच्चा।

अलिजिह्वा (सं० स्त्री०) क्षुद्रजिह्विका, गलेका कौवा। (Uvula) यह मुखमें कठिन तालुके प्रान्तभागपर ऊपरसे नीचेको लटकती और मांसमय होती है। जुकाम या खांसी होनेसे अलिजिह्वा आकारमें कुछ बढ़ जीभकी जड़के नीचे और गलेके पास पहुंच जाती; इसीसे खांसीका जोर ज्यादा पड़ता है। ज्यादा बढ़नेसे हमारे देशकी स्त्री सज्जी मट्टी और चना एकमें मिला इसके अग्रभागपर लगा देती हैं। एलोपेथी चिकित्साके मतसे इसपर काष्टिक लोशन लगाना चाहिये। किन्तु बहुत ही बढ़ जानेसे इसके अग्रभागका कियत् अंश काट डालना आवश्यक है। मुख देखो।

अलिजिह्विका, अलिजिह्वा देखो।

अलिञ्जर (सं० पु०) अलीन् मक्षिकादीन् जरति तुच्छयति तिरस्करोति वा; अलि-जृ-अच्, पृषो० मुम्। १ मृण्मय जलाधार, पानी रखनेको मट्टीका छोटा बरतन, झझ्झर, सुराही। २ फल विशेष, किसी किस्मका खरबूजा। यह रुक्ष, शीतल, भेदक, तुवर, मधुर, क्षार, तिक्त, स्वादिष्ट, वातकृत् एवं पकने पर कटु निकलता और श्वास कास तथा श्लेष्माको दूर करता है। (वैद्यकनिघण्टु)

अलिता (सं० स्त्री०) अलक्तक, चपरा। यह उष्ण एवं तिक्त होती; व्यङ्ग, अरुचि, कण्ठरुज, व्रणदोष, कफ तथा वातको दूर करती और दूसरे गुणमें लाक्षावत् रहती है। (वैद्यकनिघण्टु)

अलिदूर्वा (सं० स्त्री०) अलिरिव ग्रथिता दूर्वा, कर्मधा०। मालादूर्वा, किसी किस्मकी दूब। मालादूर्वा देखो।

अलिन् (सं० पु०) अलं वृश्चिक पुच्छस्थकण्टकं तदाकारं कण्टकं वा विद्यतेऽस्य, अस्त्यर्थे इनि। १ वृश्चिक, बिच्छू। २ भ्रमर, भौंरा।

अलिन (सं० त्रि०) अल बाहु० इनन्। १ पर्याप्त, काफी। २ इष्ट, प्यारा। ३ यथेप्सित, मनमाना। ४ तपस्याद्वारा अति वृद्धि-प्राप्त। (वै० पु०) ५ जाति विशेष, कोई कौम।

अलिनी (सं० स्त्री०) भ्रमरसमूह, भौंरेका झुण्ड।

अलिन्द (सं० पु०) अल्यते भूष्यते, अल कर्मणि बाहु० किन्दच्। १ द्वारप्रकोष्ठ, दरवाजेका कमरा। २ बहिर्द्वारस्थ चत्वर, बाहरी दरवाजेका चबूतरा। ३ द्वारदेश, बरामदा। ४ देश विशेष, कोई मुल्क। ५ तद्देशवासी, अलिन्दका बाशिन्दा। महाभारतके उद्योगपर्वमें अलिन्द-नृपतिका नाम लिखा है।

अलिपक (सं० पु०) न लिप्यते एकत्र सदाक्रम्यते; लिप कर्मणि क्वुन्, नञ् तत्। १ भ्रमर, भौंरा। २ कोकिल, कोयल। ३ कुक्कुर, कुत्ता। ४ रथ-हिण्डक, गाड़ीवान्।

अलिपत्रा, अलिपत्रिका देखो।

अलिपत्रिका (सं० स्त्री०) अलिर्वृश्चिक इव पत्रं यस्याः, बहुव्री०। वृश्चिकपत्राख्य लता, बिछुवाकी बेल।

अलिपर्णिका, अलिपत्रिका देखो।

अलिपर्णी, अलिपत्रिका देखो।

अलिप्रिय (सं० क्ली०) अलेः भ्रमरस्य प्रियः, ६-तत्। १ रक्तोत्पल, लाल कमल। २ धाराकदम्ब वृक्ष। ३ आम्रवृक्ष, आमका पेड़। ४ कदम्बवृक्ष, कदमका दरख्त।

अलिप्रिया (सं० स्त्री०) १ पाटलावृक्ष, पांडरीका पेड़। २ भूजम्बु वृक्ष, जङ्गली जामनका दरख्त।

अलिप्सा (सं० स्त्री०) अनभिलाष, बेख्वाहिशी, लालचका न रहना।

अलिमक (सं० पु०) अलिरिव मन्यते विरहवर्धकत्वेन, अलि-मन् कर्मणि क्वुन्। १ भेक, मेढक। २ कोकिल, कोयल। ३ भ्रमर, भौंरा। ४ मधुक-वृक्ष, दोपहरियाका पेड़। ५ पद्मकेशर, कमलका रेशा। 'अलिमकःपिकि भेके मधुके पद्मकेशरे।' (विश्व)

अलिमाला (सं० स्त्री०) भ्रमरसमूह, भौंरेका झुण्ड।

अलिमोदा (सं० स्त्री०) अलीन् भ्रमरान् मोदयति आह्लादयति ; अलि-मुद-णिच्-अण्, उप० समा०। अग्निकारी वृक्ष, अरनीका पेड़।

अलिमोहिनी (सं० स्त्री०) केविका पुष्पवृक्ष, केव ड़ेके फूलका दरख्त।

अलिम्पक, अलिमक देखो।

अलिम्बक, अलिमक देखो।

अलिया (हिं० स्त्री०) आलय, कोई चीज़ रखनेकी जगह। यह अकसर दीवारमें बनायी जाती है।

अलिल (सं० पु०) ऋच्छति सततं शून्ये परिभ्राम्यति, ऋ-इलच् रस्य लः। वेदान्तप्रसिद्ध गगनविहारी पक्षी विशेष, कोई ख़यालो परिन्द।

अलिवल्लभ (सं० पु०) अलीनां वल्लभः प्रियः, ६-तत्। रक्तपाटला वृक्ष, लाल पांडरीका पेड़। (स्त्री०) अलिवल्लभा।

अलिवाहिनी (सं० स्त्री०) अलीन् वाहयति सौरभेन इतस्ततो भ्रमयति, अलि-वह-णिच्-णिनि ङीप्। केविका वृक्ष, केवड़ेका पेड़।

अलिविराव (सं० पु०) भ्रमरसंगीत, भौंरेकी झनकार।

अलिविरुत (सं० क्ली०) अलिविराव देखो।

अलिसमाकुल (सं० पु०) पुष्पवृक्ष विशेष, किसी किस्मकी सेवतीका पेड़।

अली (हिं० स्त्री०) १ सखी, सहेली। २ पंक्ति, क़तार। (पु०) ३ भौंरा।

अली अकबर—बम्बई प्रान्तवाले कच्छ और सूरत ज़िलेके शासक। पहले यह घोड़ेके सौदागर रहे और ईरानके इस्फ़हान प्रान्तसे सात असली अरबी घोड़े आगरे बेचने लाये थे। शाहजहांने छः घोड़े पचीस हज़ार रुपयेमें ख़रीदे और सातवेंसे अत्यन्त प्रसन्न हो पन्द्रह हज़ार रुपये दिये। सन् १६४६ ई०को इनके किसी हिन्दू द्वारा मारे जानेपर मुवज्जिज़-उल्-मुल्कको शासनका उत्तराधिकार मिला था।

अली आबाद—युक्तप्रदेशके बाराबङ्की ज़िलेका गांव। यह अक्षा० २६: ५१´ उ० तथा द्राघि० ८१: ४१´ पू०में पड़ता और दरयाबादसे रुदौली जानेवाली सड़कपर बसता है। पहले अली-आबाद अपने करघों और कपड़ेके कामोंके लिये मशहूर था। इसमें ज़्यादातर जुलाहे रहते हैं।

अली इब्राहीम ख़ान्—विहार प्रान्तीय मुंगेर ज़िलेवाले हुसेनाबाद गांवके कोई सम्भ्रान्त पुरुष। दिल्लीके बादशाह शाह आलमने सरोपाव, पञ्चहज़ारीकी जगह और अमीन-उद्-दौला अज़ीज़-उल-मुल्कका ख़िताब दिया था। 'सैर-उल-मुतख़रीन्' में इनकी बड़ी तारीफ़ लिखी है। पहले अलीवर्दी ख़ान्ने इन्हें मुरशिदाबाद बुला बड़ी उपाधि दी पीछे यह नवाब मीर क़ासिम अली ख़ान्के एतबारी मुसाहब बन गये थे। इन्होंने उन्हें नेपालपर चढ़ने और अंगरेज़ोंसे लड़नेको रोका। पटनेमें मीर क़ासिमके हार जानेपर भी यह स्वामिभक्त बने रहे। बक्सरमें हार मीर-क़ासिमके उत्तरकी ओर भागनेपर इन्होंने मुरशिदाबाद वापस आ नवाब मुबारक-उद्-दौलाके दीवानका पद पाया। अन्तको इन्होंने मुहम्मद रज़ा ख़ान्को कह-सुनकर क़ैदसे छोड़ा दिया था। नवाब, मुन्नी बेगम और गवरनर-जनरलके ऊंची जगह देते भी यह उससे अलग रहे। फिर इन्होंने वरेन हेष्टिङ्गसके साथ जा चेतसिंहका उपद्रव शान्त होनेपर सन् १७८१ ई० को बनारसकी जजी पायी थी। भाईका नाम अलीक़ासम रहा। इनके लड़के नवाब अली ख़ान्को सरकारने ख़ान् बहादुरका ख़िताब दिया था।

अलीक (सं० क्ली०) अल्यते भूष्यते अलति दृष्टं निवारयति वा, अल-कीकन्। अलीकादयश्च। उण् ४।२५। १ ललाट, मत्था। २ मिथ्या, नारास्ती, झूठ। 'अलीकमप्रिये भाले वितथे।' (हेम) ३ स्वर्ग, बिहिश्त। (त्रि०) अलीकमस्त्यस्य। ४ अप्रिय, नागवार। ५ मिथ्याविशिष्ट, नारास्त। (हिं० स्त्री०) ६ बेराही, कुरीति। (वि०) ७ बेराह, मार्गसे विचलित।

अलीकता (सं० स्त्री०) मिथ्या, नारास्ती, झूठापन।

अलीकमत्स्य (सं० पु०) अलीकः भ्रष्टः मत्स्य-

द्रव। पिष्टक विशेष, तिल द्वारा अङ्गारपर भूना हुआ माषपिष्टक, तेलमें भुनी हुई उड़दकी पकोड़ी।

अलीकिन् (सं० त्रि०) १ अप्रिय, नागवार, जो भला मालूम न होता हो। २ असत्य, झूठ, धोका देनेवाला।

अलीक्य, अलीकिन् देखो।

अलीगञ्ज—१ युक्तप्रदेशके एटा जिलेकी तहसील। यह गङ्गा और कालीनदीके मध्य अवस्थित है। इसमें चार परगने लगते हैं,—आज़मनगर, बरना, पटियाली और निधिपुर। इसका भूमिपरिमाण प्रायः ५२५ वर्गमील है। २ इसी तहसीलका नगर। यहां पक्की सड़क, बाज़ार और बड़ा-बड़ा मकान बना है। सबमें सन् १८८१ ई०को बनी याक़ूत खान्की मसजिद और मट्टीका क़िला प्रधान है।

अलीगढ़—युक्तप्रदेशका एक जिला। यह अक्षा० २७° २८´ ३०´´ तथा २८° १०´ उ० और द्राघि० ७७° ३१´ १५´´ एवं ७८° ४१´ १५´´ पू० के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल १८५५ वर्गमील है। इससे उत्तर बुलन्दशहर जिला, पूर्व एटा, दक्षिण मथुरा जिला और पूर्व मथुरा जिला तथा यमुना नदी पड़ती है।

भौतिक दृश्य—यह जि़ला गङ्गा और यमुनाके बीच उस बड़े कछारका प्रधान अंश होता, जो साधारणतः दोवाब कहलाता है। धरातल चौड़ा और पूरा मैदान है, जो समुद्रतलसे ६०० फ़ीट ऊंचा पड़ता और दक्षिण-पूर्वको कुछ ढलता है। दोनो ओर नदीकी घाटी मौजूद है। बीचसे गङ्गाकी नहर निकली, जो मैदानको सींच देती और अकराबादके पास दो शाखामें बंट कानपुर तथा इटावेको चली जाती है। नहरसे खेत सदा हरे-भरे रहते, जिनके पास अच्छे-अच्छे गांव बसते हैं। अंगरेजी राज्य होनेसे इस ज़िलेका जङ्गल काट डाला गया है। कोई ५६७६ एकर भूमिमें आम वगैरहका बाग़ है। किसीको वृक्ष लगानेका शौक़ नहीं देखते। सरकारने अपनी ओरसे कितना ही बाग़ लगाया है। मट्टीमें जरख़ेज़ पिंडोल मिलता, जो पानी पानेसे कड़ा पड़ता, किन्तु इधर-उधर बालूदार ज़मीन भी मौजूद है। दक्षिणकी ओर उपज सबसे अच्छी होती है। धरातलसे कुछ ही फ़ीट नीचे प्रत्येक स्थानमें कङ्कड़ निकलता है। वह मकान बनाने और सड़कपर बिछानेके काम आता है। ऊंची जगह ऊसर पड़ता, जिसमें कुछ उपज नहीं सकता। दिनको ऊसर बरफ़-जैसा चमकता है। नहर निकलनेसे उसकी बढ़ती हुयी है। दक्षिण-पूर्व गङ्गा और पश्चिम यमुना नदी बहती है। नदी किनारे पशु चरते हैं। काली नदी इस जिलेमें उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण पूर्वको बहते हुयी एटा जिले जा पहुंचती है। इसपर दो जगह पुल बंधा है। नीमनदी कालानदीमें ही जाकर गिरती है। मलसायी और भोकमपुरमें पुल बंधा, और पानी खेत सींचनेके काम आता है। करवनदी, ईशान, सेंगर और रिन्द गर्मीमें सूख जाती है। साधारणतः इस ज़िलेका मैदान बहुत उपजाव है।

इतिहास—इस जिलेके प्राचीन इतिहासमें कोयल नगरका कुछ वृत्तान्त मिला, जिसके पास क़िला और रेलवे-ष्टेशन बना है। कहते हैं केशवराव किसी चन्द्रवंशीय नृपतिने उसे अपने नामपर बसाया, किन्तु बलरामने कोल दैत्यको मार वर्तमान नाम रखा था। फिर कोई इस ज़िलेको राजपूतोंकी सम्पत्ति बताता, जिनमें बेरनके राजाने सन् ई० के १२ वें शताब्दान्त-तक अपने अधीन रखा। सन् ११९४ ई० को क़ुतब्-उद्दीन् दिल्लीसे कोयलपर चढ़े थे। मुसलमान ऐतिहासिकका कहना है—'उस समय जो लोग होशियार रहे, वह मुसलमान हो गये; किन्तु जिन्होंने अपनी पुरानी चाल न छोड़ी, वह तलवारसे मारे पड़े।' फिर नगरमें मुसलमान शासकोंका प्रभाव बढ़ा, किन्तु हिन्दू राजावोंने भी अपना बल बनाये रखा था। सन् ई० के १४ वें शताब्द तैमूरके आक्रमणसे इसे बड़ी क्षति उठाना पड़ी। सन् १५२६ ई० को मुग़लोंके दिल्ली लेने बाद बाबरने अपने साथी कचक अलीको कोयलका शासक बनाया था। अकबरके समय इस ज़िलेमें बड़ी ही धूमधाम रही। कितनी ही मसजिद आज भी खड़ी और मुग़लोंके समयकी याद दिलाती है। किन्तु औरङ्गज़ेबके मरने बाद यह जिला बल-

वायियोंके हाथ जा पड़ा था। पहले महाराष्ट्रों और पीछे जाटोंका अधिकार रहा। सन् १७५७ ई० को सूरजमल नामक किसी जाट-नेताने कोयलपर क़ब्ज़ा कर लड़ने-भिड़नेका ख़ूब सामान जुटाया था। किन्तु सन् १७५९ ई० को अफ़ग़ानोंने जाटोंको मार भगाया और बीस वर्ष तक दोनोंमें मारकाट चली। सन् १७८४ ई० को सेंधियाने अपना दखल जमाया था। सन् १८०३ ई० तक महाराष्ट्रोंका इसपर अधिकार रहा। किन्तु ४ थी सितम्बरको अंगरेज़ोंने अलोगढ़का किला ले लिया। सन् १८५७ ई० को यहांके सिपाहियोंने भी बलवा किया था।

इस ज़िलेसे अनाज, रुयी और नील बाहर भेजा जाता है। हाथरस, कोयल, अतरोली, सिकन्दराराव और हरदुवागञ्जमें अनाजका बाज़ार लगता है। रेलवे लायिन भी चारो ओर फैली है।

२ इसी ज़िलेका नगर। यह अक्षा० २७° ५५′ ४१″ उ० और द्राघि० ७८° ६′ ४५″ पर अवस्थित है। पुराने 'कोर' क़िलेपर साबित खान्‌की मसजिद दूरसे देख पड़ती है। अलीगढ़-इनष्टिच्यूट नामक पुस्तकालयमें तीन सहस्रसे अधिक पुस्तक रखा है। ३ उक्त ज़िलेकी तहसील। इसका चेत्रफल १८७ वर्ग मील है। ४ अपनी तहसीलका गांव। इसका जल दूषित होनेसे लोगोंका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। ५ छोटे क़िलेका स्थान। यह कलकत्तेसे ढायी कोस दक्षिण-पूर्व है। सन् १७५६ ई० को ३० वीं दिसम्बरको लार्ड क्लाइवने इसे अधिकार किया था।

अलोगर्द, अलिगर्द देखो।

अलोजा (हिं० वि०) आलीजाह, ज्यादा, बहुत, अच्छा।

अलान (हिं० पु०) १ द्वारको दोनो ओरका बाज़ू। इसीमें किवाड़ लगता है। २ स्तम्भविशेष, कोई खम्भा। यह बरामदेके पास दीवारसे मिला रहता है। (वि०) ३ अनुचित, ग़ैरवाजिब, ख़राब।

अलोनक (सं० क्लो०) वङ्ग, शोषधातु, सीसा।

अलोपुर—१ बङ्गाल प्रदेशको चौबीस परगनेका प्रधान विभाग। भूमिपरिमाण प्रायः ४२० वर्गमील है। २ उक्त विभागका नगर। यह कलकत्तेसे दक्षिण पड़ता है। छोटेलाटका प्राचीन प्रासाद और दूसरी कितनी ही अट्टालिका खड़ी है। यहांकी पशुशाला (चिड़ियाख़ाना) भारतमें प्रधान है। ३ जलपायीगोड़ीका मध्यवर्ती भूभाग। यह कल्याणी नदी किनारे अवस्थित है। यहां लकड़ीके शहतीरोंकी आढ़त चलती है। ४ पञ्जाब प्रान्तके मुज़फ़्फ़रगढ़ ज़िलेका गांव। यहांसे सिन्धु और खुरासानको गल्ला, एवं नील भेजते हैं। ५ बुंदेलखण्डका भूभाग। यह देशी राजाके अधिकारभुक्त है। पन्नाके राजा हिन्दूपतिने इसे अचलसिंहको दे डाला था। ६ इसी भूभागका प्रधान नगर। यहां देशके अधिपतिका वास और किला है।

अलोबाग़—बम्बई प्रान्तके पूना ज़िलेका बन्दरगाह। सन् १६६२ ई०को शिवाजीने यहां अपना जहाज़ी बेड़ा तैयार किया था। सन् १६६४ ई०को इस बेड़ेने खम्भातकी खाड़ीमें पहुंच मक्के जानेवाले दो मुग़ल जहाज़ पकड़ा और उन्हें अलग ले जाकर लूट लिया।

अलोल (अ० वि०) पीड़ित, बीमार।

अलोवर्दी खान्—बङ्गालके एक नवाब। यह मिर्ज़ा मुहम्मदके पुत्र और नवाब शीराज़-उद्-दौलाके मातामह रहे। अलीवर्दीका पूर्व नाम मुहम्मद अली था। इनके पिता एक तुर्क रहे, जो राजपुत्र आज़म शाहके निकट नौकरी करते थे। अपने स्वामीका परलोक वास हो जानेपर ये दिल्लीसे कटक गये। वहां मुर्शिद-कुली खान्‌के जामाता शुजा-उद्-दीनने इनके पिताको यथेष्ट मान मर्यादा की और उनके पुत्रको राजमहलकी फौज़दारी दी। उन्होंने यत्न करके दिल्लीके बादशाहसे मुहम्मद अलीको 'अलीवर्दी खान्' उपाधि दिलवाया था। सन् १६२५ ई०को अलीवर्दी कटकके शासनकर्ता हुए। १७३० ई०को विहार-शासनकर्ताके किसी अपराध वश पदच्युत होने पर शासन-समितिके अनुरोधसे अलीवर्दी खान्‌ने ही उस पदको भी पाया। नूतन सम्मानसे सम्मानित हो यह पांच हज़ार सैन्य साथ ले पटनामें उपस्थित हुए।

उस समय पटनेमें बड़ा विभ्राट् उपस्थित था। बञ्जारा नामक एक चोरोंके दलने अन्न खरीदनेके छलसे नगरमें घुस और लूट-पाट लोगोंको व्यतिव्यस्त कर दिया। इस तरह उपद्रव मचा, कि सरकारी खज़ानेका रुपया भी डाकू लूट लेते थे। अलीवर्दीने उन दुष्टों और कितने ही दुर्दान्त ज़मींदारोंको दमन करनेके लिये अनेक आफ़गान-सैन्य संग्रह की। अब्दुलकरीम खान् उसके अध्यक्ष रहे। बहुत परिश्रमसे चोरों और जमींदारोंको दमन कर, उनका सञ्चित धनरत्नादि इन्होंने ग्रहण किया। इनकी रणदक्षता एवं सुचतुर बुद्धि देख दिल्ली-सम्राट्ने 'महावत्जङ्ग' उपाधिसे विभूषित किया था।

जो लोग बहुत चतुर होते, वे प्राय अधिक सन्दिग्ध रहते हैं। इन्होंने भी सन्देहके फन्देमें पड़ अपने प्रिय सैन्याध्यक्ष अब्दुल करीम खान्को हत्या कर डाली। सन् १७४० ई०को सम्राट् मुहम्मद शाहके प्रधान मन्त्री ऐजाक् खान्ने इनको बङ्गाल, विहार और उड़ीसाका शासनभार अर्पण किया। उक्त वर्षही अलीवर्दी खान्ने नवाब सरफ़राज़ खान्के विरुद्ध युद्धयात्रा की। उसी समय सरफ़राज़को मृत्यु हुई। अलीवर्दी सरफ़राजका सञ्चित बहुत द्रव्य प्राप्त किया, तथा मुहम्मद शाह और दिल्लीके प्रधान वजीरको प्रसन्न रखनेके लिये १ करोड़ ७० लाख रुपया नज़रानाके तौरपर पहुंचा दिया। उस समय सम्राट्ने इनको बङ्गाल, विहार और उड़ीसाका सूबेदार एवं सात हज़ार सैन्यका नायक बना, शुजा अल-मुल्क और हिसाम-उद्-दौला प्रभृति कतिपय उपाधि प्रदान किये थे।

मनुष्यका मन सब समय समान नहीं रहता। अलीवर्दी एक समय सम्राट्की आंखमें खटक गये। १७४१ ई०को सम्राटने मुरीद खान्को सरफ़राजका समस्त मणिरत्नादि एवं दो वर्षकी आमदनी वसूल करनेके लिये बङ्गाल भेजा। किन्तु अलीवर्दी कौशलसे मुरीदको राजमहलमें रख स्वयं कई लक्ष रुपया नगद ले उनके समीप उपस्थित हुये। इस घटनासे कुछ दिन बाद उड़ीसाके शासनकर्ता मुर्शिद-कुलीके विरुद्ध युद्धयात्रा की। मुर्शिद-कुली पराजित हो जामाता सहित बालेश्वर भाग गये। अलीवर्दी अपने भ्रातृपुत्र सैयद अहमदको उड़ीसाका भार दे मुर्शिदाबाद चले आये।

कुछ दिन बाद सैयदके अत्याचारसे प्रजा-विद्रोह उठा। लोगोंने सैयदको कैदकर बुकर खान्पर शासनभार डाला। यह समाचार सुनते ही अलीवर्दी ससैन्य महानदीके तीरपर उपस्थित हुए, और बुकर खान्को परास्त कर मुहम्मद मामून् खान्को शासन भार सौंपा। सन् १७४१ ई० को रघुजी भोंसलाने बङ्गालका चतुर्थांश कर लेने भास्करपण्डितको ससैन्य बङ्गाल भेजा।

वर्धमानमें महाराष्ट्रोंके साथ युद्ध हुआ था। उन्होंने प्रस्ताव किया, कि दश लाख रुपये पानेसे लौट जाते। अलीवर्दी पहले उनके प्रस्तावसे सम्मत हो गये थे। किन्तु लोभीकी आकाङ्क्षा शीघ्र नहीं जाती, अर्थलोलुप महाराष्ट्र करोड़ रुपया मांगने लगे। असम्भव प्रार्थना सुन इन्होंने रुपया देना अस्वीकार किया था।

सन् १७४२ ई० को भास्कर पण्डितके सैन्यगणने हठात् जगत्सेठका धनागार लूट लिया और हुगली, वर्धमान, बीरभूम, राजशाही, राजमहल, मेदिनीपुर तथा बालेश्वर पर्यन्त अधिकार किया। उसी समय अलीवर्दीखान्ने कलकत्तास्थ अङ्गरेजोंको कलकत्तेको चारो तर्फ नाला खोदनेको आज्ञा दी थी, उसे अब 'मरट्ठा-डिच' कहते हैं। सन् १७४३ ई०को रघुजी भोंसले नवाबसे लड़ने आये थे। उसी समय पेशवा बालाजी राव भी सम्राट्से प्राप्य ग्यारह लाख रुपये लेने इनके पास पहुंचे। पेशवासे रघुजीकी पुरानी शत्रुता रही। समय पाकर वह अलीवर्दीसे मिल गये, और रघुजीके पैर उखाड़ दिये। सन् १७४४ ई०को भास्कर पण्डितने फिर इनके विरुद्ध अस्त्र उठाया था। किन्तु अन्तको वह रणमें निहत हो वैकुण्ठधाम सिधारे।

सन् १७४५ ई०को सेनापति मुस्तफा खान्ने इनसे विवाद बढ़ा विहार पर आक्रमण मारा था। अलीवर्दी खान्के आदेशसे जब तथाकार शासनकर्ताने

नीचा देखाया, तब उन्होंने चुनारमें जा आश्रय लिया। सन् १७४४ ई० को रघुजी भोंसलेने फिर इनके विरुद्ध अस्त्र उठाया, किन्तु विहार और कटकके युद्धमें पराजय पाया था। उसी वत्सर अलीवर्दीके दौहित्र शीराज-उद्-दौलाका महासमारोहसे विवाह हुआ। सन् १७४७ ई० को इन्होंने मीरजाफर खान्को कटकके महाराष्ट्रोंपर आक्रमण करनेको भेजा था।

उस समय शमशेर खान् विहारके शासनकर्ता रहे। उन्होंने जैन्-उद्-दीनको मार डाला और अलीके भाई हाजी अहमद एवं उनकी कन्याको बन्दी बना विहारपर अधिकार जमाया। विद्रोहीको दबानेके लिये यह स्वयं ससैन्य विहार आये और भागलपुरमें महाराष्ट्रोंसे लड़ पड़े थे। फिर जामीजी और मीर हबीबने चालीस हज़ार सवारोंके साथ विद्रोहियोंमें मिल जानेकी चेष्टा चलायी। किन्तु सुचतुर और विचक्षण अलीवर्दीके रण-नैपुण्यसे उनकी आशा पूरे न उतरी। घोरतर युद्ध हुआ। विद्रोहियोंके अधिनायक सरदार खान् और शमशेर खान् खेत आये थे।

सन् १७५० ई० को इन्होंने कटकसे महाराष्ट्रोंको मार भगाया। किन्तु उन्होंने फिर इस प्रदेशको जीत लिया था। महाराष्ट्रोंके अत्याचारसे वङ्गदेशमें आबाल-वृद्ध-वनिता सभी व्यतिव्यस्त हुये। इतना उपद्रव बढ़ा, कि अन्तःपुरकी रमणी बालकोंको महाराष्ट्रोंका डर देखा-देखा सुलाते रहीं।

उपद्रवसे प्रजा बचानेके लिये यह महाराष्ट्रोंको कटक प्रदेश और बङ्गालका चतुर्थांश करस्वरूप देनेपर सम्मत हुये। इसी पर महाराष्ट्रोंके उत्पातसे वङ्ग देश छूटा था। इन्होंने भयभीत प्रजाको फिर अपने अपने देश ला गृहादि बनानेका आदेश दिया और जमीनमें प्रचुर शस्य उत्पन्न होनेपर ध्यान लगाया। १६ वत्सरके राजत्व बाद सन् १७५६ ई० को ६ठीं अप्रेलको नवाब अलीवर्दी खान् ८० वर्षकी अवस्थापर उदरीरोगसे आक्रान्त हो मर गये।

अलीवर्दी ज्ञानी और कार्यकुशल रहे। यह बाल्यकालमें कभी वृथा अलस-आमोदसे समय बिताते न थे। प्रातःकाल होनेसे दो घण्टे पहले शय्यासे उठते और ईश्वरका भजनादि कर सवेरे राजकार्य देखने सभामें जा पहुंचते। इन्हें पद्य और इतिहास बहुत प्रिय था। कहते हैं, इन्होंने राजा कृष्णचन्द्रसे बारह लाख रुपया नजराना मांगा और रुपया न आनेसे उन्हें कैद किया। पीछे कृष्णचन्द्रकी वैषयिक बुद्धिसे सन्तुष्ट हो इन्होंने उन्हें अव्याहति दी और उनसे धर्मसम्बन्धीय नाना विषय पर सर्वदा बात की थी। कृष्णचन्द्र प्रायः प्रति रजनीके प्रथम भाग नवाबके पास रहते और मध्य-मध्य उर्दू भाषामें महाभारत प्रभृतिको अनुवाद कर सुना देते। नवाब इससे बहुत आमोदित होते थे।

इनमें अर्थप्रयासका दोष रहा। किन्तु उससे यह प्रजाका सर्वनाश कर धन बटोरनेकी चेष्टा न चलाते थे। मरनेसे कुछ दिन पहले यह अपने उत्तराधिकारी शीराज-उद्-दौलाको समझाने लगे,—"शीराज! विदेशी लोगोंका विश्वास न करना। वह किसी तरह इस देशमें बढ़ने न पायें। सावधान! उन्हें इस देशमें कहीं किला बनाने न देना।"

अलीशाह—मूर जातिके वीर विशेष। सन् १५२८ ई० को अस्सी गुजराती नाव ले यह चौल नदीपर पहुंचे और अहमदनगरकी भूमि तथा पोर्तुगीज़ व्यवसायको बड़ी क्षति दी।

अलीष्ट (सं० पु०) तिलकवृक्ष, तिलका पेड़।

अलीह (हिं०) अलीक देखो।

अलु (सं० स्त्री०) १ क्षुद्र कलसी, छोटा घड़ा, गगरी। २ तुलसी वृक्ष। (क्ली०) ३ मूल, जड़।

अलुक् समास (सं० पु०) नास्ति विभक्तेर्लुग् यत्र, बहुव्री० अलुक् चासौ समासश्चेति, कर्मधा०। अलुगुत्तर पदे। पा ६।३।१। विभक्तिके लुक्से शून्य समास, जिस समासमें विभक्ति बनी रहे। दो प्रभृति पदमें समास सजानेसे मध्य पदकी विभक्तिका लोप हो जाता है। जिस स्थलमें विभक्ति बनी रहती, वह अलुक् समास कहलाता है। 'जले चरतीति जलचर' जैसा समास लगानेसे जल शब्दकी सप्तमी विभक्तिका लोप हो गया, किन्तु 'जलेचर' रूप रखनेसे वह

बनी रही ; सुतरां यह अलुक् समास ठहरा। इच्छाके अनुसार सकल स्थलमें अलुक् समास नहीं कर सकते। वैयाकरणने इसका विशेष नियम बना दिया है। अलुक् समास अवसरसे ही आता है।

अलुक (सं० क्लो०) १ आलुकसाधारण, जमींकन्द। यह शीतल, आग्नेय, मलस्तम्भन, मधुर, जड़, रुच, वृष्य, दुर्जर, बलवर्धन, स्तन्यवर्धन, मल-मूत्र कफ-वात-वृद्धिकर और रक्तपित्तघ्न होता है। (वैद्यकनिघण्टु) २ आलूबोखारा। ३ आमिष, मांस।

अलुझना, उलझना देखो।

अलुटना (हिं० क्रि०) आगे-पीछे पांव पड़ना, डग मगाना।

अलुन्दा—बम्बई प्रान्तके सतारा जिलेका गांव। यह सतारेसे उत्तर ढ़ायी कोस शिवगङ्गाके दक्षिण-तट पर बसा है। सतारेमें जो प्राचीन ताम्रफलक निकला, उसमें लिखा है, कि अलुन्दा विष्णुवर्धन प्रथमने ब्राह्मणोंको जागीरमें दे डाला था।

अलुप्त (सं० त्रि०) अक्षत, जो गुम या कम न हुआ हो।

अलुप्तमहिमन् (सं० त्रि०) अक्षत कीर्तिविशिष्ट, जिसकी कीर्ति बिगडी न हो।

अलुब्ध (सं० त्रि०) न लुब्धम्, नञ्-तत्। लोभ-शून्य, जो लालची न हो।

अलुब्धत्व (सं० क्लो०) लोभशून्यता, लालची न होनेकी हालत।

अलुभ्यत् (वै०) अलुब्ध देखो।

अलूक्ष (वै० त्रि०) न रूक्षम्, वेदे रस्य लः। अरुक्ष, मृदु, चिक्कण, मुलायम, चिकना, जो रूखा न हो।

अलून (सं० त्रि०) अक्षत, साबित, जो कटा न हो।

अलूना—लवण भक्षण न करनेवाला शैवसम्प्रदाय विशेष, जो शैव साधु नमक न खाता हो।

अलूप (हिं० वि०) लुप्त, गुम, देख न पड़नेवाला।

अलूबारी—बङ्गाल प्रान्तके दारजिलिङ्ग ज़िलेका गांव। सन् १८५६ ई०को इस गांवमें कार्सियङ्ग और दार-जिलिङ्गकी चाह-कम्पनीने पहले-पहल चाहका बाग़ लगाया था।

अलूमिनियम (अं० पु०) धातुविशेष, किसी किस्मका फल्ज़। (Aluminium) यह सफ़ेद और कुछ कुछ नीला होता है। धूप और पानीमें रखनेसे भी यह लाहे, तांबे या पीतलकी तरह ज्यादा नहीं बिगड़ता। इसके बरतनमें खानेकी कोई चीज़ रखनेसे जैसीकी तैसी ही बनी रहती है। इससे कच्चा लोहा और ईस्पात साफ़ किया जाता है। इससे रसोयीके बरतन भी बहुत बनते हैं। टारपीडो नाव, जहाज़ और मोटरमें यह खूब काम देता है। इससे तार भी तैयार होता है। इसके हलकेपनने लोगोंको मोहित कर लिया है।

अलूय—बम्बई प्रान्तवाले कनाड़ा ज़िलेके नृपति विशेष। ऐहोले ताम्रफलकमें लिखा, कि अलूय-तनय महाराज चित्रवाहके कहनेसे सन् ६०८ ई०को सालियोगे ग्राम उत्सर्ग किया गया था। पुलिकेशि द्वितीयने अलयके वंशजोंको रणमें परास्तकर अपने अधीन बनाया।

अलूया—उड़ीसा प्रान्तके सम्बलपुर ज़िलेका ब्राह्मण समाज विशेष।

अलूर—१ महिसुर राज्यके हसन जिलेका गांव। यहां चावलका बड़ा बाज़ार लगता है। २ मन्द्राज प्रान्तके बेलारी ज़िलेकी तहसील। इसका क्षेत्रफल ६४६ वर्गमील है। काली ज़मीन् रूयीकी पैदावारके लिये बहुत अच्छी है। किन्तु खेत सींचनेका सुभीता नहीं पड़ता। उक्त तहसीलका शहर। यह हुक्क-रोड़पर बसता और कोई प्रधानता नहीं रखता है।

अलूला (हिं० पु०) तरङ्ग, लहर।

अले, अरे देखो।

अलेक्सन्दर—जगद्विख्यात महावीर। मुसलमान लोग इन्हें सिकन्दर कहते हैं। सुप्राचीन शिलालेखमें 'अलिकसन्दर', 'अलिकसद' और 'अलसद' नाम मिलता है। मकदूनिया-नृपति फिलिपके औरस और ओलिम्पियाके गर्भसे इनका जन्म हुआ था।

एक समय वीरवर फिलिप ओलिम्पिक रणक्रीड़ामें जीते रहे। उनके सेनापति पार्मेनोने भी इलिरीय युद्धमें जीत और प्रभुके निकट पहुंच मस्तक झुकाया—अकस्मात् एफिसस नगरकी डायना देवीका मन्दिर

गिर गया। उसी समय मकदूनिया-नृपतिने सुना, कि उनके लड़का हुआ था। फिलिपने आकर पुत्रका मुंह देखा। दैवज्ञ लोग कहने लगे,—यह पुत्र पृथिवीका राजा होगा। फिलिपने कुमारका नाम अलेक्सन्दर रख दिया।

अलेक्सन्दरने शैशवावस्था बिता डाली। प्रथम लिओनिदास् नामक व्यक्ति इनके प्रधान शिक्षक बने थे। १३ वर्ष वयःक्रमके समय फिलिपने प्रसिद्ध दार्शनिक अरिष्टटलको पुत्रकी शिक्षामें लगा दिया। अरिष्टटलके सुशिक्षागुणसे अलेकसन्दरकी मनोवृत्ति खुल गयी थी। उसी शिक्षाके फलसे यह भविष्यत्‌में विस्तीर्ण साम्राज्यका शासन कर सके। समयानुसार अरिष्टटलने राजनीतिके सम्बन्धपर कोई ग्रन्थ लिखा, जिसका प्रधान उद्देश्य अलेक्सन्दरको शिक्षा देना था। इनके भाग्यमें जैसा शिक्षक रहा, वैसा किसी दूसरे युरोपीय राजाको न मिला।

पढ़ते समय अलेक्सन्दरके हाथमें सर्वदा ही इलियद रहता और आकिलेशके वीरत्वकी कहानी सुनना बहुत अच्छा लगता था। जब आकिलेशका वीरत्व इनके स्मृतिपथमें उदय होता, तब वीरमद चढ़ आता; तलवार झनझना उठती। लोग कहते, अलेक्सन्दर ही पहले आकिलेश रहे। वस्तुतः ट्रय-वीर आकिलेशके वंशमें इनकी माताने जन्म लिया था।

वीरत्वके परिचय देनेका समय आ पहुंचा। फिलिप इन्हें राज्य सौंप युद्धको चले गये। उस समय इनका वयस १६ वर्ष रहा। फिर कितने ही लोग विद्रोही भी बने थे। किन्तु इन्होंने उन्हें दबा दिया। उसी समयसे लोग इन्हें राजा और फिलिपको सेनापति कहने लगे। फिलिप इनका बड़ा प्यार करते और यह भी उन्हें बहुत चाहते थे।

वयस बढ़नेसे लोगोंकी मतिगति पलट जाती है। उसीसे ऐसा उपयुक्त पुत्र रहते भी फिलिपने क्लिओपेट्राको व्याह लिया था। विवाह करनेपर यह पितासे मन ही मन कुछ विरक्त हुए। थोड़े दिन बाद फिलिप गुप्त रूपसे मार डाले गये थे। लोग कहने लगे, सिकन्दर उस हत्याकार्यमें लिप्त रहे। पीछे यह स्वाधीन भावसे मकदूनियाके अधिपति बने, किन्तु निरापद रह न सके।

अट्टालास नामक क्लिओपेट्राके छोटे मामाने क्लिओपेट्राकेगर्भसे उत्पन्न फिलिपके दूसरे लड़केको राज्य दिलानेकी चेष्टा लगायी थी। उसी समय उत्तर और पश्चिमकी असभ्य जातिने भी स्वाधीन होनेको अस्त्र उठाये रहे। डिमस्थिनिस् मकदूनियाके विपक्ष हुए, जिससे समस्त यनान देशमें हल चल पड़ गयी। अलेक्सन्दरने देखा,—चारो ओर महा विपद् है; यदि हम इस महाविपद्‌से न छूटे, तो राज्य, धन, मान सब कुछ हाथसे निकल जायेगा। बुद्धिमान् महावीर अति सत्वर कोई निष्पत्ति ढूंढने लगे। इन्होंने हेकैटस् सेनापतिको आदेश दिया—आप फौजके साथ एशिया जायें और जैसे हो सके, दुर्वृत्त अट्टालासका मार या पकड़ हमारे पास ले आयें। महावीरका आदेश प्रतिपालित हुआ, हेकैटस्‌ने अट्टालास्‌को पराजित और निहत किया। इधर अलेक्सन्दर सेनापतिको आदेश सुना फौजके साथ यूनान जा पहुंचे थे। थेसेली विना युद्ध ही हाथ आ गया। वहांसे यह विओसियाकी ओर चल पड़े थे।

थिब्सके लोग स्वप्नमें देखते रहे,—हम फिर स्वाधीन होंगे, अधीनताका क्लेश अब उठाना न पड़ेगा। किन्तु उनका सुखस्वप्न टूट गया, सुननेमें आया, महावीर अलेक्सन्दर थिब्सके काडमिया दुर्गपर जा पहुंचे। अथेन्सके अधिवासी इन्हें पागल बता उपहास उड़ाते रहे, किन्तु अकस्मात् आगमन सुन सब डर गये। सभा अप्रस्तुत थे, उतना शीघ्र युद्धका आयाजन लगा न सके। उस समय उन्होंने विनीत भावसे इनके पास दूत भेजा, जिसने आकर कहा,—सभी अथेन्सवासी महावीरके आगमनसे आनन्दित हैं; दुःख केवल इसी बातका है, कि महावीरके पारस्य आक्रमणको उपयुक्त सैन्य इकट्ठा कर नहीं सकते। इन्होंने दूतको समादर दिया था। यूनानके सभी लोग इनसे झुक गये, केवल स्पार्टानोंने इनके अधीन रहना न चाहा।

अलेक्सन्दर मकदूनिया वापस आये थे। फिर यह रीतिमत रणसज्जा लगा असभ्य लोगोंको दबाने उत्तरको ओर चल पड़े। दानियुब नदीके तीर सोरमुस् नामक असभ्योंके अधिपति हार गये थे। उसी जगह अपरापर अनेक जातिने इनकी अधीनता स्वीकार की।

इधर स्वाधीनता-प्रिय यूनानी डिमस्थिनिसके उत्साहवाक्यसे प्रणोदित पड़ उत्तेजित हो गये थे। उन्होंने स्वदेशकी स्वाधीनताके उद्धारको जीवन उत्सर्ग करनेका सङ्कल्प किया। उसी समय यूनानमें गप उड़ी,—अलेक्सन्दर इलिरीय युद्धमें मारे गये हैं। थिबसवासी मकदूनियावालोंको अपने देशसे भगाने और यूनानके अपरापर स्थानमें दूत भेज सबको भड़काने लगे। पीछे संवाद मिला,—अलेक्सन्दर मरे नहीं, आज भी जीते और थिबसमें आ पहुंचे हैं। पहले इन्होंने सन्धिका प्रस्ताव फैलाया, किन्तु लोगोंने उसे हंसी-दिल्लगीमें उड़ा दिया था। अलेक्सन्दरके सेनापति पारदिकास् उन्हें समुचित शास्ति देनेको आगे बढ़े। भीषण समर हुआ था। असंख्य यूनानी मरे और रक्तकी नदी बह चली। यूनानके इतिहासमें ऐसा भीषण काण्ड कभी हुआ न था। कोई छः हजार थिबसके लोग मरे और साठ हज़ार उम्र भरके लिये गुलाम बने। यूनानके दूसरे लोग इस दृष्टान्तसे झुके और जन्मभूमिके स्वाधीन करनेकी आशा बिलकुल छोड़ बैठे थे।

अलेक्सन्दर मकदूनियाको लौट पड़े। इस बार यह गुरुतर व्रतके उद्यापनमें यत्नवान् हुए। बालककालसे इनके मनमें इस बातकी आशा रही,—ईरान राज्य जीतें और एशियाखण्डके अधीश्वर बनें। इनके पिताने बहुत दिनसे ईरान जीतनेको नानाप्रकार आयोजन लगाया था, किन्तु कृतकार्य हो न सके। फिर भी यह प्राण पर्यन्त सौंप ईरान जीतनेको आगे बढ़ थे। उसी समय इनके कतिपय बन्धुने विवाह कर लेनेको कहा, किन्तु इन्होंने उनकी कोई बात न सुनी और अपना जो कुछ धनादि था, वह बन्धुओंको दे डाला। इस महाकार्यक्षेत्रमें आनेसे पारदिकासने इनसे कहा,—आपने सब सामान तो दूसरेको दे डाला, अपने लिये क्या उपाय सोचा है? इन्होंने हंसकर उत्तर दिया,—आशा हमारे साथ है। इनकी अनुपस्थितिमें अन्तिपेतर मकदूनियाके शासनकर्ता हुए थे।

वसन्तके प्रारम्भमें अलेक्सन्दर एशियाभिमुख बढ़े, साथमें पांच हज़ार सवार और तीस हज़ार पैदल थे। सब लोग आबिडसमें जा पहुंचे। आबिडसके पास ही आब्रिसरी नामक स्थान भी है, जहां इनका मृत देह मृत्तिकाके मध्य गाड़ा गया था। यह केवल हिफाष्टियानको साथ ले आकिलेशका समाधिस्थान देखने पहुंचे और उसे देखते ही वीरमदसे उत्तेजित हुए। पूर्वपुरुषके वीरत्वकी बात सोचते-सोचते इन्होंने वह स्थान छोड़ा और फ़ौजमें मिल शीघ्र ईरान जीतनेको क़दम बढ़ाया।

नानास्थान लांघ यह ग्रानिकस नदी किनारे पहुंचे थे। उस नदीके पूर्वकूल ईरानके बादशाहकी फौज शत्रुकी राह देखते रही। इन्होंने उसी वक्त ईरानकी फौजपर हमला मारा। मकदूनियावाले वीरोंके युद्धकौशलसे ईरानियोंके पैर उखड़ गये थे। अलेक्सन्दरकी ही तलवारसे ईरान्-राज दरायुसके जामाता धराशायी हुए।

उसी समय रोडस द्वीपके शासनकर्ता मेमनन् नामक कोई यूनानी ईरानकी ओर मकदूनियासे बहुत लड़े थे। इन्होंने उन्हें भी नीचा देखाया। असंख्य यूनानी और ईरानी फौज काम आयी थी। कोई दो हज़ार सिपाही कैद हुए। पीछे इन्होंने एशिया-माइनर, लाइशिया, आइओनिया, करिया, पाम्फाइलिया और काप्पदोकिया नामक जनपद जीते थे। किड्ना नदी किनारे पहुंच यह बीमार पड़े। इस अवस्थामें इनके बन्धु पार्मेनिओने चिट्ठीमें लिखा था,—'सावधान! कोई चिकित्सक आपको विषाक्त औषध खिला मार न डाले।' इन्होंने बन्धुका पत्र पाते ही अपने चिकित्सक फिलिपको बुला भेजा और उनसे दवा खानेको कहा। औषध खानेसे फिलिप मर गये। लोगोंने समझ लिया,

फिलिप दरायुससे उत्कोच पा अलेक्सन्दरका सर्वनाश करनेपर उद्यत हुए थे।

अलेक्सन्दर अच्छे होते ही ईरानके बादशाहसे लड़नेको चल पड़े। साईलिशिया नामक स्थानमें कोई पांच लाख फौज साथ ले ईरानके बादशाहने इनका सामना पकड़ा था। सन् ई० से ३३३ वर्ष पहले पर्वत और जलपर घोरतर युद्ध हुआ। दरायुस पीछे हट गये। उनका परिवारवर्ग और धनरत्नादि विजेताके हाथ जा पड़ा था। विजयी मकदूनिया-पतिने दरायुसके परिवारवर्ग प्रति यथेष्ट सम्मान देखाया।

दरायुसने यूफ्रेतिस किनारे भाग दो बार सन्धिका प्रस्ताव उठाया था। किन्तु इन्होंने उनकी बात न मान कहला भेजा,—'यदि आप हमें समग्र एशियाका अधिपति स्वीकार करें, तो हम आपके प्रस्तावको रख सकते हैं। उसके बाद यह सिरीया और फिनिशियाकी ओर आगे बढ़े थे। राहमें दामास्कस और उसका राजकोषस्थ रत्नराशि इनके हाथ लगा। तायरमें पहुंचने पर वहांके लोगोंने इनपर तलवार उठायी थी। सन् ई० से ३३२ वर्ष पहले सात महीने अवरोधके बाद इन्होंने तायरको धूलमें मिलाया। वहांसे यह पालेष्टाइनको चले थे। भूमध्यस्थ सागरका तीरवर्ती स्थानसमूह इनके अधिकारभुक्त हुआ।

दूसरे वर्ष अलेक्सन्दर मिश्रमें जा पहुंचे। वहांके लोग बहुत दिन ईरानके अधीन रह बिलकुल निरुत्साह हो गये थे। अलेक्सन्दरको देख और उद्धारकारी समझ सबने अधीनता स्वीकार की। उसी समय मिश्रमें इन्होंने अलेक्सेन्द्रिया नगर बसाया था।

मिश्रके लोग ईरानके अधिकारमें अपनी प्राचीन प्रथाका अनुयायी धर्म-कर्म कर न सकते थे, किन्तु अलेक्सन्दरने उनकी पूर्व प्रथाको मान लिया। इन्होंने मिश्रस्थ आमनदेवके मन्दिरमें जा पुरोहितोंका बड़ा आदर-सम्मान किया था। उन्होंने भी इन्हें देवपुत्र समझ लिया। उसी जगह देववाणी सुन पड़ी थी,—'अलेक्सन्दर पृथिवीके राजा होंगे।' देवादेश सुन महावीर अलेक्सन्दर और भी उत्साहित हुए और वहांसे चल आसिरीया जा पहुंचे।

उधर ईरानके बादशाह दरायुस पांच लाख फौज जोड़ आरबेलाके रणक्षेत्रमें उतर पड़े थे। किन्तु जिसका अदृष्ट अच्छा होता, मनुष्य उसका क्या कर सकता है। इतनी ज्यादा फौज रहते भी दरायुस इनसे फिर हार गये। इन्होंने दरायुसको पकड़नेकी चेष्टा चलायी थी, किन्तु वह गुप्त भावसे धन-जन छोड़ भाग खड़े हुए।

उस समय बाबिलन और सूसा एशिया-खण्डका रत्न-भाण्डारस्वरूप रहा। इन्होंने अबाध दोनों स्थान ले लिया था। पीछे यह ईरानकी राजधानी पार्सिपोलिस नगरकी ओर बढ़े। उसी जगह इनका चरित्र कुछ बदल गया था। जो महावीर युद्ध भिन्न दूसरा आमोद न समझते और देहके स्वास्थ्यविधानको सर्वदा सचेष्ट रहते, वही व्यसनासक्त एवं रमणीगणसे वेष्टित हो मद्य पीते पीते मतवाले बने। ऐसी अवस्थामें एक वेश्याका यह बड़ा आदर करने लगे थे। किसी दिन उसी वारविलासिनीने इनसे पार्सिपोलिस जला डालने कहा। इन्होंने वेश्याकी मनस्तुष्टिके लिये ईरानकी बहुजनाकीर्ण मनोहर राजधानीको जला खाकमें मिला दिया था।

पीछे जब इन्हें चैतन्य आया, तब दुष्ट कर्मके निमित्त अनेक दुःख देखाया। विलम्ब न लगा यह ईरानके बादशाहको ढूंढने निकले थे। राहमें सुना, बेसास नामक वाह्लिकके छत्रपतिने दरायुसको कैद कर रखा है। वीर ही वीरको सम्मान देना जानता है। अलेक्सन्दरने जब सुना कि बेसास नामक किसी सामान्य छत्रपतिने प्रबल पराक्रान्त ईरानके बादशाहको कैद कर रखा था, तब मनमें बहुत कष्ट पाया और दरायुसको छोड़ाने अविलम्ब वाल्खमें जा पहुंचे। वहां जाकर देखा, दरायुस मृतप्राय रहे, बेसासने उन्हें दारुण रूपसे घायल किया था। अलेक्सन्दर उन्हें बचा न सके। इन्होंने ईरानियोंके प्रथानुसार महासमारोहसे दरायुसका समाधिकार्य पूरे उतारा था। पीछे दुर्वृत्त बेसासको समुचित

शान्ति देनेके निमित्त आगे बढ़े। उस समय बेसास हिर्कानिया, ईरान, बाख्त्रि और सगदियानाके अधिपति बन बैठे थे।

चारो ओर खबर फैल गयी,—'अलेकसन्दर बेसासको शास्ति देने आते हैं। सगदिनियाके छत्रपतिने बेसासको पकड़ा दिया। बेसासने समुचित शास्ति पायी थी। उसी समय पार्मेनिओके पुत्रने अलेक्सन्दरके विरुद्ध षड़यन्त्र लगाया। महावीर मकदूनियापतिको उसकी खबर मिल गयी थी। इन्होंने गुस्से में आ पितापुत्र दोनोको मार डाला। सेनापति पार्मेनिओ निर्दोष रहे, उन्हें अपने पुत्रके षड़यन्त्रकी बात मालूम न थी। सब लोग इस बातपर अलेक्सन्दरसे नाराज़ हुए, कि विना दोष ही सेनापति मारे गये। प्रवाद रहा,—जिस व्यक्तिने किसी समय चिकित्सकके विषपात्रसे अलेक्सन्दरको बचाया, उसे क्या यही पुरस्कार मिलना था।

सन् ई०से ३२८ वर्ष पहले इन्होंने शक लोगोंको जीत लिया, दूसरे वर्ष सग्दियाना जा पहुंचे। वह स्थान पर्वतमय रहा। शीतके समय युद्धकी विशेष सुविधा न मिलनेसे यह नौतक नामक स्थानमें ठहर गये थे। वसन्तकालमें पर्वत-पर्वत अविश्रान्त युद्धके बाद अलेक्सन्दरने सग्दियानाको अधिकारमें लाया। इस युद्धमें बाह्लिकवंशीय कोई राजपुत्र और रुक्षणा नामक उनकी कन्या बन्दी बनी थी। इन्होंने रुक्षणाके अनुपम रूपसे मुग्ध हो विवाह कर लिया। कुछ दिन बाद हर्मेलिस काल्लोस्थेनिस नामक अरिष्टटलके किसी शिष्यने इनके विपक्ष तलवार उठायी थी। इस बार मकदूनियाकी कितनी ही फ़ौज मारी गयी, किन्तु वीरकेशरी अलेक्सन्दरने उन्हें यथोचित शास्ति दे दी।

सन् ई०से ३२७ वर्ष पहले यह भारतपर आक्रमण करनेको आगे बढ़े थे। साथमें १,२०,००० फ़ौज रही। अलेक्सन्दरने सेनापति टलेमी और हिफाष्टियान कितनी ही चुनिन्दा फ़ौज ले सिन्धुकी ओर पहले ही दौड़ पड़े थे।

अलेक्सन्दर ससैन्य काबुर नामक स्थानमें जा पहुंचे। वहांइन्होंने कुशिमी (Choaspes) और गौरी नदी (Gyræus) पार हो वरणा (Aornos) को अधिकृत किया। पीछे यह सिन्धुनद पार भटक गये थे। सन् ई०से ३२६ वर्ष पहले इन्होंने पञ्जाबमें पैर रखा। राहमें सिन्धुनद-तीरवर्ती कितने ही पहाड़ी लोगोंसे लड़ना पड़ा था। उस समय तक्षशिलाराज बहुमूल्य उपहार ले और इनके पास पहुंच पहाड़ियोंके विरुद्ध साहाय्य दिया। इन्होंने वितस्ता (Hydaspes) नदीतीर जा देखा, कि पुरुष (Porus) नामक कोई प्रबल पराक्रान्त हिन्दू नरपति असंख्य सैन्य ले युद्ध करने आगे बढ़ा था। अविलम्ब ही रणवाद्य बजने लगा। हिन्दुओं और यवनोंमें घोरतर संग्राम उपस्थित हुआ था। अवशेषमें पुरुषराज हार गये। अलेक्सन्दर हिन्दू राजाका वीरत्व देख अतिशय सन्तुष्ट हुए और उनके साथ मित्रता स्थापन की। युद्धसे पहले पुरुषराज वितस्ता और चन्द्रभागाके जनपद पर ही शासन चलाते थे, पीछे अलेक्सन्दरने दूसरे भी कितने ही जनपद जीत उनको सौंप दिये। इस कामसे पुरुषराज पर तक्षशिला-नृपति बहुत नाराज हो गये थे।

एकमास यह वितस्ता किनारे रहे, उसके बाद बुकेफल और निकाया नामक दो नगर बसा चन्द्रभागाके पार जा पहुंचे। इरावती किनारे काथी नामक प्रबल जातिके साथ इन्हें कई बार लड़ना पड़ा था, किन्तु वह किसी तरह अधीन न हुई। इन्होंने काथी जातिका राज्यादि जीत उन लोगोंको बांट दिया, जो वशमें आ गये थे।

वर्षरा नदी किनारे आ इन्होंने सुना, कि उससे पूर्व ओर दूसरा भी रत्नाकर समृद्धिशाली जनपद है। यह खबर पा इन्हें लोभ लगा। किन्तु इनके किसी सैन्य सामन्तने आगे बढना चाहा न था। सिपाही बहुत दिनसे जन्मभूमि छोड़ घूमते रहे, उस समय उन्हें घर वापस जानेकी उत्कण्ठा हुई। अलेकसन्दरको बेमन लौटना पड़ा। इन्होंने अपने भारत-आक्रमणका स्मरणचिह्न बना रखनेको वर्षरा नदी किनारे बड़े-बड़े बारह बुर्ज बनवाये थे। आते समय

यह बघेरा नदी पर्यन्त अधिकृत सकल स्थान पुरुष-राजको सौंप चले।

इन्होंने वितस्ता नदी तीर वापस जा सिन्धुनदके मुहानेमें पहुंचनेको जहाजपर चढ़ दक्षिणाभिमुख यात्रा की थी। वर्तमान मूलतानके निकट मालव (Malli) नामक जातिसे भीषण युद्ध हुआ, जिसमें इनके गुरुतर आघात आया था। उस घटनासे सैन्यगण भी भग्नोत्साह हो गया था। किन्तु इन्होंने शीघ्र ही आरोग्य पाया। इनके आरोग्यका समाचार सुन अपरापर मालवगण बहुमूल्य उपढौकन भेज वशीभूत बना था।

इन्होंने वितस्ता और सिन्धु-नदके सङ्गमस्थानपर कई किले और जहाजी अड्डे निर्माण कराये। उस जगह मूषिक (Musicanus)-राज इनसे लड़ पड़े थे। किन्तु उत्थानमात्रसे ही वह खेत आये।

सिन्धु और कराचीके पासका समुदय स्थान जीत यह ईरान वापस पहुंचे थे। वहां इन्होंने दरायुसकी कन्या स्तातिरासे विवाह किया। उस समय कोई दश हजार मकदूनियाके सिपाही ईरानी लड़कियोंको व्याह प्रभुके अनुवर्ती हुए थे। इन्होंने उन्हें कितना ही यौतुक दे डाला।

ताइग्रीस नदीतीर पहुंच इन्होंने बुढ़े सिपाहियोंको देश वापस जाने कहा था। उसी समय हिफाष्टियान नामक इनके बन्धु और प्रिय सेनापति मर गये। बन्धुके मरनेसे यह बहुत ही कातर पड़े, मानो उनके साथ इनका वीर्यसूर्य भी अस्तमित हुए। बादशाहोंकी तरह बड़ी धूमधामसे हिफाष्टियानको मट्टी दी गयी थी।

अलेकसन्दर बाबिलनकी ओर बढ़े। राहमें कितने ही ब्राह्मणोंने इन्हें वहां जानेसे रोका था। किन्तु यह उनकी बात न मान बाबिलन जा पहुंचे। उस जगह यूनान, इटली, कार्थेज, स्किदीया, आइथोपिया प्रभृति स्थानके राजदूतगणने इनकी सम्मान-रक्षाकी थी।

बाबिलन राजधानी बनाया गया। उसी जगह अलेक्सन्दर महाकार्यमें व्याप्त हुए थे। इन्हें इच्छा रही,—समस्त जगत् जीतें और सभ्यताके आलोकसे विश्वमण्डलको चमकायेंगे। किन्तु मनकी वासना मनमें ही रह गयी। फिर जयका उद्योग लगाते-लगाते पीड़ित हुए और १२ वर्ष ८ मास राजत्व कर जगत्पूज्य महावीर सिकन्दरने कालका आतिथ्य स्वीकार किया। महासमारोहसे इनका शवदेह सुवर्ण आधारमें रक्षित रह अलेक्सन्द्रिया नगरमें गाड़ा गया था।

इस बातपर बड़ा झगड़ा उठा,—'अब राजा कौन होगा'। किसी समय कई बन्धुने इनसे पूछा था,—आपका उत्तराधिकारी कौन होगा। वीरवरने उत्तर दिया,—'योग्य व्यक्ति।' लोग इनका पद देनेको योग्य व्यक्ति ढूंढने लगे। उस समय रक्षणा गर्भवती रहीं। मृत्युके समय यह अपनी राज-अङ्गूरी पारदिकासको सौंप गये थे। उससे सबने समझ लिया,—रक्षणाके पुत्रको शैशवावस्थामें पारदिकास् रक्षकस्वरूप रह राजकार्य चलायेंगे। रक्षणाके पुत्र होनेपर वही बात आगे आयी।

ऐसा कहना ठीक नहीं पड़ता, कि अलेक्सन्दरने मनुष्यरक्तसे मेदिनी भर अपना आधिपत्य फैलाया था। इन्होंने पाश्चात्य सभ्यता, पाश्चात्य भाषा और पाश्चात्य-नीति अपने अधिकृत राजसमूहमें बांट दी। पश्चिम श्वेतद्वीप और पूर्व चीनराज्यके प्रान्तदेश तक सकल स्थानके महाकाव्यमें मकदूनिया-वीरका नाम मिलता है। विशेषत: पारस्य (ईरान) प्रभृति स्थानमें इनके सम्बन्धपर कितनी ही अद्भुत-अद्भुत उपकथा निकली हैं। यहांतक, कि प्राचीन कालके लोक इन्हें देवता माननेसे हिचकते न थे। वस्तुत: इन महावीरसे ही प्राचीन भूतत्त्व, प्राणितत्त्व, भूवृत्तान्त प्रभृति अनेक आवश्यकीय विषय उद्घाटित हुए हैं। फिर इन्हीं महावीरका अनुसरण लगा युरोपीयगण रत्नप्रसू भारतवर्षका पथ ढूंढ सका था।

अलेख (हिं० वि०) १ अनतुमेय, अलक्ष्य, समझमें न आनेवाला। २ लिखनेके नाक़ाबिल, बेतादाद, जिसका हिसाब न लगे।

२ उड़ीसा प्रान्तीय सम्बलपुर जिलेके कुम्भ-

पटियाको धर्म। सन् १८६४ ई०को अलेखस्वामीने इसे कटकमें फैलाया था, जहांसे शीघ्र सम्बलपुर जिलेमें आ पहुंचा। महिमाधर्म्मी देखो।

अलेखा, अलेख देखो।

अलेखो (हिं० वि०) न्यायविहीन, ज़ालिम, ग़ैर-वाजिब काम करनेवाला।

अलेच—बम्बईके काठिवाड़ राज्यका पर्वतविशेष। यह धांकके खागसरीतक फैला और दक्षिण-पश्चिम आगे जा ऊंचाईमें बढ़ गया है।

अलेपक (सं० त्रि०) नास्ति लेपः कुत्रापि कृमि-र्यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ निःसम्बन्ध, ताल्लुक़ न रखने वाला। २ निर्लेप, बेदाग़, जो फंसा न हो। लिप्-ण्वुल्, नञ्-तत्। ३ लेपन न करनेवाला, जो लीपता न हो। (पु०) ४ परमात्मा।

अलेले, अरे देखो।

अलेश (सं० त्रि०) १ अधिक, ज़्यादा, बहुत, जो कम न हो। (अव्य०) २ बिलकुल नहीं।

अलेशेज (सं० त्रि०) दृढ़, मज़बूत, क़ायम, जो डिगता न हो।

अलैया, अलहिया देखो।

अलोक (सं० पु०) न लोक्यते प्राणिभिरोच्यते; लोक कर्मणि घञ्, ततो नञ्-तत्। १ पातालादि, जमीनके भीतरका मुल्क। २ लोकका अभाव, दुनियाको अदम-मौजूदगी। ३ जगत्‌का अन्त, दुनियाका ख़ातिमा। ४ अदृश्य लोक, ग़ैरमुजस्सिम दुनिया। ५ जनका अभाव, लोगोंको अदम मौजूदगी। ६ अदृश्य वस्तु, देख न पड़नेवाली चीज़। (हिं०) ७ मिथ्या कलङ्क, झूठी बदनामी। (त्रि०) नास्ति लोको यत्र, नञ्-बहुव्री०। ८ निर्जन, वीरान्, जहां लोग न रहें। ९ अकृतपुण्य,पुण्य न करनेवाला। १० न देखनेवाला। (अव्य०) लोकस्याभावः, अभावे अव्ययी०। ११ लोकाभावमें, लोगोंके न रहते, एकान्तमें।

अलोकन (सं० क्ली०) अन्तर्धान, तिरोधान, अदर्शन, अदमरुयत, देख न पड़नेकी हालत।

अलोकना (हिं० क्रि०) दृष्टि डालना, नज़र लड़ाना, देखना-भालना।

अलोकनीय (सं० त्रि०) अदृश्य, गुप्त, देख न पड़ने-वाला।

अलोकसामान्य (सं० त्रि०) लोकसामान्यं इतर-जनसाधारणं न भवति, अन्यार्थे नञ्-तत्। असाधारण, महत्, ग़ैरमामूली, बड़ा, जो दूसरे लोगोंके बराबर न हो।

अलोका (सं० स्त्री०) नास्ति लोको दृष्टिर्यत्र चूर्ण-वालुकादिभिराच्छादनात्, स्त्रीत्वात् टाप्। १ इष्टक विशेष, किसी किस्मकी ईंट। २ भित्तिस्थ इष्टक, दीवारमें लगी हुई ईंट।

अलोकित (सं० त्रि०) अदृष्ट, देखा न हुआ।

अलोक्य (सं० त्रि०) लोकाय स्वर्गादि लोकभोगाय हितं तत्र साधु वा; हितार्थे साध्वर्थे वा यत्, ततो नञ्-तत्। १ असाधारण, अप्राप्त-प्राप्ता, ग़ैरमामूली, बेहुक्म। २ स्वर्गादि लोकको असाधन, जिसे करनेसे स्वर्ग न मिले।

अलोक्यता (सं० स्त्री०) स्वर्गादि प्राप्तिको अयो-ग्यता, बिहिश्त पहुंचनेकी नाक़ाबिलियत, जिस हालतमें स्वर्ग न जा सकें।

अलोना (हिं० वि०) १ अलवण, बेनमक, नमक न पड़ा हुआ। २ फीका, बेजायका, स्वादरहित।

अलोप (हिं०) लोप देखो।

अलोपा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, कोई दरख़्त। यह हमेशा हरा-भरा रहता है। इसकी लकड़ी सुर्ख़ मुलायम और मज़बूत होती है। यह नाव, गाड़ी, घर बनानेमें काम आती है और पानीमें पड़ी रहनेसे भी नहीं बिगड़ती।

अलोपाङ्ग (वै० त्रि०) दूषित अङ्ग न रखनेवाला, जो बेऐब अज़ा रखता हो।

अलोभ (सं० पु०) लोभो धनादिष्वतिस्पृहा तस्य अभावः, नञ्-तत्। १ धनादिकी अतिस्पृहाका अभाव, दौलत वग़ैरहके लालचकी अदममौजुदगी। (त्रि०) नास्ति लोभो यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ लोभरहित, लालच न रखनेवाला, सन्तोषी।

अलोभिन् (सं० त्रि०) लोभोऽस्त्यस्मिन् इनि ततो नञ्-तत्। लोभशून्य, लालचसे ख़ाली।

अलोपम (सं॰ पु॰) मत्स्य विशेष, किसी किस्मकी मछली। यह वितस्ति-परिमित, श्वेताङ्ग एवं सूक्ष्मशल्क होता है। इसका मांस बलवीर्य बढ़ाता और पुष्टिकर ठहरता है। (राजनिघण्टु)

अलोमशा (सं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, कोई दरख्त।

अलोमहर्षण (सं॰ स्त्री॰) रोमरोममें आनन्द न भरनेवाला, जिसमें खुशीसे रोगटे न उठें।

अलोल (सं॰ त्रि॰) न लोलम् नञ्-तत्। १ अचञ्चल, ठहरा हुआ, जो डालता न हो। २ तृष्णारहित, जो लालची न हो।

अलोला (सं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष, कोई बहर। इसके प्रत्येक चार पदमें चौदह चौदह अक्षर रहते हैं।

अलोलिक (हिं॰ पु॰) अचञ्चलता कयाम। ठहराव।

अलोलु (सं॰ त्रि॰) प्रत्यक्ष विषयसे निरपेक्ष, ज़ाहिर बातकी परवा न रखनेवाला।

अलोलुत्व (सं॰ क्ली॰) प्रत्यक्ष विषयसे निरपेक्षता, ज़ाहिर बातकी बेपरवायी।

अलोलुप (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। १ अनभिलाष, बेख्वाहिश, अच्छी चीज़ सामने पड़ते भी जिसका दिल न चले। २ लोभशून्य, लालच न करनेवाला।

अलोह (सं॰ पु॰) न लोहति ऐहिक-धनादि लब्धुमिच्छति लुह कर्तरि अच्, ततो नञ्-तत्। १ पाणिन्युक्त नड़ादिके अन्तर्गत ऋषि-विशेष। (क्ली॰) नञ्-तत्। २ लौहभिन्न वस्तु, जो चीज़ लोहा न हो।

अलोहित (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। १ रक्तशून्य, खूनसे खाली। २ अरक्त, जो लाल न हो। (पु॰) ३ रक्तपद्म, लाल कमल।

अलौङ्गपय—ब्रह्म-प्रदेशवाले पेगू जिलेके मोतसोको ग्रामाधिप। सन् १७५३ ई॰ तैलङ्गोंको बलवा मचाने इन्होंने हरा आवा राजधानीमें अपना राजवंश प्रतिष्ठित किया, १७५८ में पेगूको जीत अन्तिम तैलङ्ग नृपति व्याहमेङ्गतोरजाको कैदी बनाया। यह अपने वीरत्व गुणके कारण अधिक प्रशंसाभाजन हो गये हैं।

अलौकिक (सं॰ त्रि॰) लोकेषु विदितं ठञ्। नञ्-तत्। लोकमें अविदित, जिसे लोकमें नहीं जानते। नैयायिक मतसिद्ध चक्षु प्रभृति इन्द्रियके निकटस्थ न होनेपर भी वस्तुके प्रत्यक्ष होता हैं। जैसे एक घटको सम्मुख देखनेसे पृथिवीके सब घटोंका ज्ञान होता है। नैयायिक लोग प्रत्यक्षको लौकिक और अलौकिक यही दो प्रकारका कहते हैं। उनमें निकटस्थ जो घट देखा जाता है, उसका नाम लौकिक प्रत्यक्ष है। और जो घट सम्मुख नहीं देखा जाता अथच घटत्व रूप एक धर्म्माकान्तहेतु सभी हैं, ऐसा ज्ञान होता है, उसका नाम अलौकिक प्रत्यक्ष है।

अलौकिकत्व (सं॰ क्ली॰) शब्दका अप्राप्य उपागम, जिस हालतमें लफ्ज़ अजीब लगे।

अलौकिकसन्निकर्ष (सं॰ पु॰) न लोकेषु विदितः सन्निकर्षः। नञ्-तत्। प्रत्यक्षसाधनसन्निकर्ष इन्द्रिय और विषय अर्थात् प्रत्यक्षकी विषयीभूत जो वस्तु हैं, इन दोनोंके सम्बन्धका नाम सन्निकर्ष है। सामान्य लक्षण, ज्ञान लक्षण एवं योगज,-यही तीन प्रकारका अलौकिकसन्निकर्ष है। उनमें जिस किसी एक घटके नेत्रके निकटस्थ होनेसे घटत्व रूप सामान्यधर्म्मद्वारा सकल घटोंका जो ज्ञान होता है, वह सामान्य लक्षणके अधीन है। घट देखनेसे जो स्थान घटविशिष्ट समझा जाता है, वह ज्ञान लक्षणके अधीन है। एवं योगियोंके योगद्वारा जो सब घटपटादिका ज्ञान होता है, उसे योगज कहते हैं।

अल्क (सं॰ पु॰) १ वृक्षविशेष, कोई पेड़। २ शरीरका अवयव, जिस्मासी अज़ा।

अल्क-पल्क—बम्बई प्रान्तके नासिक ज़िलेका स्थानविशेष। सन् १६३५ ई॰को शाहजहांके सेनापति खान्खानान्ने अङ्कयी-तङ्कयी किलेके साथ इसे भी छीन लिया था।

अल्तमश—गुलाम खान्दानके सबसे बड़े पुत्र और ३रे पठान बादशाह। इन्होंने सन् १२११ से १२३६ ई॰ तक दिल्लीमें हुकूमत की। निम्नवङ्ग और सिन्धुके शासकोंको स्वाधीन बननेसे इनके हाथों नीचा देखना पड़ा था। किन्तु मुगल आक्रमणसे यह मरते मरते बचे।

चङ्गीज़ खान्‌की फौज किसी अफ़गान शाहज़ादेको ढूंढने सिन्धु तक घुस आयी थी, परन्तु दिल्ली पहुंच न सकी। सन् १२३६ ई० में इनकी मृत्यु हुई और शाहज़ादी रज़ियाको दिल्लीकी गद्दी मिली थी।

अल्ता—बम्बई प्रान्तके कोल्हापुर राज्यकी तहसील। सन् १८६७-६८ ई०की इसकी पैमायश, बन्दोबस्त शुरू और १८६९-७० को खतम हुआ था। इसमें इकतीस गांव बहुत अच्छे हैं।

अल्ताय बिल्लाह—बगदादके २५वें खलीफा और अल् मुतीय बिल्लाहके पुत्र। सन् ९७४ ई०को यह अपने बापकी जगह गद्दीपर बैठे थे। १७ वर्ष ९ मास राज्य करनेके बाद सन् ९९१ ई०को बहा-उद्-दौलाने इन्हें सिंहासनसे उतार क़ादिर बिल्लाहको खलीफा बनाया।

अल्ताहिर वि-अमर-बिल्लाह मुहम्मद—अब्बास वंशके ३५वें खलीफा और अल्-नासिर-बिल्लाहके पुत्र। सन् ६२२ ई०को यह अपने बापकी जगह बगदादको गद्दीपर बैठे थे। इन्होंने ९ मास ११ दिन राज्यकर अपना प्राण छोड़ा और इनके लड़के २रे अल्मुस्तनसरको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला।

अल्नावर—बम्बई प्रान्तके धारवाड़ जिलेका ग्राम। यह धारवाड़से दश कोस पश्चिम बेलगांव हलियाल तथा धारवाड़-गांव सड़कके नाके पर बसता है।

अल्प (सं० त्रि०) प्रथमचरमतयाल्पार्धकतिपयनेमाश्च। पा १।१।३३। १ क्षुद्र, छोटा। २ ईषत्, कम। ३ मरणार्ह, जो मरनेवाला हो। ४ अप्राप्य, नायाब, कम मिलनेवाला। ५ अचिरस्थायी, ज़्यादा न टिकनेवाला। (अव्य०) ६ थोड़ा, कम।

अल्पक (सं० त्रि०) अल्प-स्वार्थे कन्। १ क्षुद्र, ईषत्, छोटा, कम। (अव्य०) २ न्यून रूपसे, थोड़ा-थोड़ा। (पु०) ३ यवास, जवासा। ४ भूमिजम्बूवृक्ष, जङ्गली जामन।

अल्पकार्य (सं० क्ली०) क्षुद्र विषय, छोटा काम।

अल्पकेशिका, अल्पकेशी देखो।

अल्पकेशी (सं० स्त्री०) अल्पाः क्षुद्राः केशा इव पत्रमस्याः, स्वाङ्गात् ङीप्। १ भूतकेशी, सफ़ेद दूब। २ ईषत् केश-युक्त स्त्री, जिस औरतके बाल छोटे रहें।

अल्पक्रीत (सं० त्रि०) ईषत् धनसे क्रय किया हुआ, सस्ता, जिसकी खरीदमें थोड़ा रुपया लगे।

अल्पगन्ध (सं० क्ली०) अल्पो गन्धो यस्य, बहुव्री०। १ रक्तकैरव, लाल बघोला। २ रक्तकमल। ३ अल्पगन्ध-युक्त वस्तु मात्र, जिस चीज़में ज़्यादा खुशबू न रहे। (त्रि०) ४ अल्पगन्धि, अल्प-गन्ध-युक्त।

अल्पगोधूम (सं० पु०) तृणगोधूम, जङ्गली गेहूं।

अल्पघण्टिका (सं० स्त्री०) क्षुद्रशणपुष्पी, सनयी।

अल्पचेष्टित (सं० त्रि०) जड़, अलस, सुवत्तल, सुस्त।

अल्पच्छद (सं० त्रि०) ईषत् संवीत, बक्मिलतपोश, अच्छीतरह कपड़े न पहने हुए।

अल्पजीविन् (सं० त्रि०) अल्पायु, ज़्यादा न जीनेवाला, जिसे मौत जल्द आये।

अल्पज्ञ (सं० त्रि०) ईषत् ज्ञान युक्त, कम समझ।

अल्पज्ञता (सं० स्त्री०) ईषत् ज्ञान होनेकी स्थिति, कम समझी, जिस हालतमें कम समझें।

अल्पतनु (सं० त्रि०) अल्पा क्षुद्रपरिमाणा तनुः शरीरं यस्य, बहुव्री०। १ खर्व, वामन, छोटे जिस्मवाला। २ दुर्बल, अल्प अस्थियुक्त, दुबला।

अल्पता (सं० स्त्री०) १ न्यूनता, सूक्ष्मता, छोटाई बारीकी। २ अधीनता, मातहती।

अल्पत्व (सं० क्ली०) अल्पता देखो।

अल्पदक्षिण (सं० त्रि०) न्यून-दक्षिणा देनेवाला, जो ज़्यादा भेंट चढ़ाता न हो।

अल्पदृष्टि (सं० त्रि०) परिमित ज्ञानयुक्त, महदूद इल्म रखनेवाला, जिसके निगाह बढ़ी न रहे।

अल्पधन (सं० त्रि०) ईषत् धनसम्पन्न, थोड़ी दौलत रखनेवाला, जिसके पास ज़्यादा रुपया न रहे।

अल्पधी (सं० त्रि०) ईषत् बुद्धियुक्त, कमसमझ, जिसे ज़्यादा अक्ल न रहे।

अल्पनायिकाचूर्ण (सं० क्ली०) ग्रहणीमें हितकर औषध विशेष। पञ्चलवण १ भाग त्रूषण (मिर्च,

सोंठ, पीपल) प्रत्येक तीन माशा, पिचु ३ माशा, गन्धक ८ माष, पारा ४ माष, इन्द्राशन एक पल और तीन माशा, इस सबको चूर्ण करके एकत्र मिलाकर १ माशा परिमाण खाकरके पीछे काञ्जि पीना चाहिये। (रसचिन्तामणि)

अल्पनिद्रता (सं० स्त्री०) पित्तजन्य निद्राल्पता-रोग, नींद कम पड़नेकी बीमारी।

अल्पपत्र (सं० पु०) अल्पं पत्रं यस्य, बहुव्री०। १ क्षुद्रपत्र तुलसी वृक्ष, तुलसीके जिस पौधेकी पत्ती छोटी रहे। २ रक्तपद्म, लालकमल। ३ अल्पपत्र-युक्त वृक्ष मात्र, छोटी पत्तीका कोई भी पौधा।

अल्पपत्रक (सं० पु०) गिरिज मधूक वृक्ष, पहाड़ी दुपहरियेका पौधा।

अल्पपत्रिका (सं० स्त्री०) रक्त अपामार्ग क्षुप, लाल लटजीरा।

अल्पपत्री (सं० स्त्री०) मिश्रेया, सौंफका पौधा। २ मुषली, मूसरका पेड़।

अल्पपद्म (सं० क्लो०) अल्पं असम्पूर्णं पद्मम्, कर्मधा०। रक्त कमल, लाल कमल।

अल्पपरीवार (सं० त्रि०) ईषत् अनुयायिवर्ग-विशिष्ट, जिसके बन्धु प्रभृति कम रहे।

अल्पपर्णिका, अल्पपर्णी देखो।

अल्पपर्णी (सं० स्त्री०) मुद्गपर्णी, मसूर।

अल्पपशु (वै० त्रि०) न्यून पशुयुक्त, थोड़े मवेशी रखनेवाला

अल्पपुण्य (सं० त्रि०) क्षुद्र धर्मकार्यविशिष्ट, मज़हबके छोटे काम करनेवाला।

अल्पपुष्पिका (सं० स्त्री०) पीत करवीर, पीला कनेर।

अल्पप्रजस् (सं० त्रि०) ईषत् सन्तान वा प्रजायुक्त, जिसके औलाद या रैयत कम रहे।

अल्पप्रभाव (सं० त्रि०) अगुरु, तुच्छ, बेवजन, नाचीज़।

अल्पप्रभावत्व (सं० क्लो०) तुच्छता, हिक़ारत।

अल्पप्रमाण (सं० पु०) अल्पं प्रमाणं यस्य, बहुव्री०। १ लतापनस, तरबूज़। २ येलानक, खरबूज़ा। (त्रि०) अल्प गुरुतायुक्त, जिसके कम वज़न रहे। ४ न्यून प्रमाणविशिष्ट, जिसमें ज़्यादा सुबूत न देखें।

अल्पप्रमाणक, अल्पप्रमाण देखो।

अल्पप्रयोग (सं० त्रि०) ईषत् नियुक्त, ज़्यादा इस्तेमालमें न आनेवाला।

अल्पप्राण (सं० पु०) अल्पश्चासौ प्राणः प्राणवायोः वाह्यप्रयत्नविशेषश्चेति, कर्मधा०। १ वर्णविशेषके उच्चारण-विषयमें मुखसे वहिर्गत प्राणवायुका प्रयत्न विशेष, य, र, ल, व, क, ग, ङ, च, ज, ञ, ट, ड, ण, त, द, न, प, ब, और म इन अक्षरोंको मुंहसे निकालनेकी कोशिश।

"वाह्यप्रयत्नस्त्वेकादशधा विवारः संवारः श्वासो नादो घोषो ऽघोषोऽल्पप्राणो महाप्राण उदात्तोऽनुदात्तः स्वरितश्चेति।" (सिद्धान्तकौमुदी)

अल्पः प्राणः प्राणक्रिया यस्योच्चारणे, बहुव्री०। २ वर्णविशेष, अल्पप्राणक्रियासे जो निकलनेवाला वर्ण, जिस हर्फ़के बोलनेमें ज़्यादा कोशिश करना न पड़े। वर्गका प्रथम, तृतीय एवं पञ्चम वर्ण तथा य, र, ल, व, और अङ्गम लघु वैयाकरण, वेदसिद्ध वर्गका यम-नामक पञ्चम वर्ण संयुक्त द्विरुक्तके मध्यस्थित पूर्व सदृश प्रथम और तृतीय लघु वर्णको अल्पप्राण कहते हैं। (त्रि०) अल्पः प्राणः बलं वायुर्यस्य यत्र वा, बहुव्री०। ३ अल्प-बल-युक्त, कम ताक़त।

अल्पबल (सं० त्रि०) निर्बल, कमज़ोर।

अल्पबाध (सं० त्रि०) अधिक बाधा न डालनेवाला, जो कम दिक़ करता हो।

अल्पबुद्धि (सं० त्रि०) मूर्ख, नादान, कम समझ।

अल्पभाग्य (सं० त्रि०) ईषत् ऐश्वर्ययुक्त, कम-बख़्त।

अल्पभाषिन् (सं० त्रि०) ईषत् सम्भाषण करनेवाला, कमसखुन, जो ज़्यादा न बोलता हो।

अल्पमध्यम (सं० त्रि०) क्षुद्र कटिविशिष्ट, पतली कमरवाला।

अल्पमस्तक (सं० पु०) चित्रकक्षुप, चीतका पौधा।

अल्पमक्षिका (सं० स्त्री०) मक्षिकाविशेष, छोटी माछी।

अल्पमात्र (सं० क्लो०) १ न्यूनता, कमी। २ ईषत् समय, थोड़ी देर।

अल्पमारिष (सं० पु०) मारेषति न कमपि हिनस्ति, इगुपधात् क, अल्पः क्षुद्रकायश्चासौ मारिषश्चेति, कर्मधा०। क्षुद्रमारिष, छोटी चौलाई। 'तण्डुलीयोऽल्पमारिषः'। (अमर) इसका शाक लघु, शीतवीर्य, रुक्ष, पित्तघ्न, कफनाशक, मल-मूत्र-निःसारक, रुच्य, दीपन और विषघ्न होता है। (भावप्रकाश)

अल्पमूर्ति (सं० त्रि०) न्यून्य शरीर-विशिष्ट, छोटे जिस्मवाला।

अल्पमूर्तिस् (सं० स्त्री०) न्यून संख्यक पदार्थ, कोई छोटी चीज़।

अल्पमूल्य (सं० त्रि०) न्यून मूल्यविशिष्ट, कमक़ीमत, सस्ता।

अल्पमेधस् (सं० त्रि०) अल्पा ईषत् मेधा धारणा शक्तिर्यस्य, असिजन्त बहुव्री०। अल्प धारणा-शक्तियुक्त, दुर्मेध, अधिक स्मरण न रखनेवाला, कमसमझ, नावाक़िफ़, पागल।

अल्पम्पच (सं० त्रि०) अल्पं अल्पपरिमाणं पचति, अल्प-पच कर्तरि खश् मुम् च, उप०समा०। १ अल्प परिमित पाक करनेवाला, कृपण, लालची, जो पेट काटता हो। (क्लो०) २ अल्पपाकसाधन पात्र, छोटी हांडी।

अल्परसा (सं० स्त्री०) हेमवती, सोनजुही।

अल्पवयस् (सं० त्रि०) न्यून अवस्थावाला, कमसिन, जो उम्रमें ज्यादा न हो।

अल्पवयस्क, अल्पवयस्।

अल्पवर्तक (सं० पु०) तित्तिरपक्षी, तीतर।

अल्पवादिन् (सं० त्रि०) ईषत् भाषण करनेवाला, कम सखुन, जो ज्यादा बोलता न हो।

अल्पविद्य (सं० त्रि०) न्यून ज्ञानविशिष्ट, मूर्ख, कुशिक्षित, अशिक्षित, कम इल्म, जो सीखा-पढ़ा न हो।

अल्पविषय (सं० त्रि०) परिमित परिमाणवाला, तुच्छ विषय-संलग्न, महदूद गुञ्जायशका, जो छोटी बातमें पड़ा हो।

अल्पशः, अल्पशस् देखो।

अल्पशःपंक्ति (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, कोई बहर।

अल्पशक्ति (सं० त्रि०) न्यून बलविशिष्ट, कम ताक़त, कमज़ोर।

अल्पशमी (सं० स्त्री०) अल्पा चासौ शमी चेति, कर्मधा०। क्षुद्र शमीवृक्ष।

अल्पशस् (सं० अव्य०) १ निम्न परिमाणमें, हलके दरजेपर, कुछ, कम। २ पृथक्-पृथक्, अलग-अलग, दूरसे। ३ समय विशेषपर, कभी, जब, तब।

अल्पशुक्रता (सं० स्त्री०) पित्तजन्य शुक्राल्पता रोग, सफ़रा बिगड़नेसे पैदा हुई वीर्य कम पड़ जानेकी बीमारी।

अल्पशोफ (सं० पु०) सर्वाक्षिरोग, आंखकी कोई बीमारी।

अल्पसरस् (सं० क्लो०) अल्पं सरः, कर्मधा०। क्षुद्र जलाशय, छोटा तालाब।

अल्पसरोवर—बड़ोदा राज्यस्थ काडो ज़िलेके सिद्धपुर स्थानका पवित्र तालाब।

अल्पस्नायु (सं० त्रि०) ईषत् स्नायु-विशिष्ट, जिसके नसें कम रहें।

अल्पाकाङ्क्षिन् (सं० त्रि०) ईषत् अभिलाषशाली, कमख्वाहिश, जो थोड़ेसे ही खुश हो।

अल्पाक्षि (वै० त्रि०) सूक्ष्म चिह्न विशिष्ट, जिसमें बारीक धब्बे पड़ें।

अल्पायु (हिं०) अल्पायुस् देखो।

अल्पायुस् (सं० पु०) अल्पम् आयुर्जीवितकालो ऽस्य। बहुव्री०। १ बकरी। मालम होता है, इस स्थलमें चौपायोंमें ही आयुका परिमाण रखकर बकरीको अल्पायु कहा गया है। बङ्गाली डाकपुरुषके मतानुसार—'नरा गजा विशे शय, तार अर्द्धेक बाँचे हय। बाइश बलदा तेरो छागला, गुये गेंधे बरा पागला।' बकरीकी परमायु तेरह वर्ष होती है। पर कितने ही छोटे छोटे कीड़े एक घण्टेसे अधिक नहीं बचते। अतएव उन जैसा अल्पजीवी और कोई नहीं है।

कर्मधा०। २ जिस प्राणीका जितने समय जीवित रहना उचित है, उसकी अपेक्षा न्यून काल। मनुष्यकी परमायु न्यूनाधिक सौ वर्ष है। परन्तु पुराणादिमें

जो अधिक परमायुकी बात लिखी है, वह वर्णना बाहुल्य भिन्न और कुछ भी नहीं है।

हमारे देशके कितने ही आदमियोंकी धारणा है, विधाताने जितनी आयु निर्द्धारित कर दी है। उसका क्षय नहीं होता। पर शास्त्रकारों और प्राचीन वैद्यशास्त्रका ऐसा मत नहीं है। याज्ञवल्क्य कहते हैं,—

"वर्त्याधारस्नेहयोगाद् यथा दीपस्य संस्थितिः।
विक्रियापि च दृष्टैवमकाले प्राणसंक्षयः॥"

जैसे बत्ती, आधार और तेलके संयोगसे दीप जलता है, पर तेज हवा आदि लगनेसे तेल रहनेपर भी प्रदीप बुझ जाता है, उसी तरह क्रिया विकार होनेसे परमायु रहते भी प्राणीका जीवन नष्ट हो जाता है।

चरकमें भी लिखा है, कि नियति एवं परिमित आयुपर विश्वास करना असाधु है। जो लोग ऐसा विश्वास करते हैं, वे लोग भी मन्त्र, स्वस्त्ययन और व्यवहार करते देखे जाते हैं। तथा प्रचण्ड वा उन्मत्त जन्तुके निकटसे भाग जाते हैं। अतएव ऐसे आदमी मुहसे नियति एवं निर्दिष्ट परमायुकी बात कहते हैं, परन्तु वास्तवमें मन ही मन उसे स्वीकार नहीं करते। आयुः वृद्धि एवं क्षयका विवरण आयुः शब्दमें देखो।

अल्पारम्भ (सं० पु०) नियमित आरम्भ, क़ायदेका आग़ाज़, सिलसिलेवार शुरू।

अल्पाल्प (सं० त्रि०) अल्पः प्रकारः अल्पः द्विरुक्तिः। १ अति अल्प, निहायत क़लील, बहुत थोड़ा। अल्पं पादः तस्मादल्पं अर्धम्, ५-तत् वा। २ अर्ध, निस्फ़, आधा। (अव्य०) ३ थोड़ा-थोड़ा, धीरे-धीरे।

अल्पाल्पक, अल्पाल्प देखो।

अल्पास्थि (सं० क्ली०) परुषक फल, फालसा।

अल्पाहार (सं० पु०) १ लघु भोजन, हलका खाना। २ पथ्याचरण, परहेज़। (त्रि०) ३ पथ्यसे रहनेवाला, परहेज़गार।

अल्पाहारिन् (सं० त्रि०) लघुभोजन करनेवाला, परहेज़गार, जो कम खाता हो।

अल्पिका (सं० स्त्री०) १ वनमक्षिका जाति, कोई जङ्गली माछी। २ मुद्गपर्णी, मसूर। ३ अल्पमात्रा, थोड़ी खुराक।

अल्पित (सं० त्रि०) अल्पं क्रियते स्म, अल्प तत्करोत्यर्थे णिच् कर्मणि क्त। अल्पीकृत, कम किया हुआ, जो घट गया हो।

अल्पिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन अल्पम्, इष्ठनोडित्त्वात् अल्पस्य टिलोपः। अतिशय अल्प, निहायत कम, बहुत थोड़ा।

अल्पिष्ठकीर्ति (सं० त्रि०) न्यून प्रशंसाविशिष्ट, कम शोहरत, जो ज़्यादा मशहूर न हो।

अल्पीकृत (सं० त्रि०) १ क्षुद्र बनाया हुआ, जो छोटा किया गया हो। २ चूर्णीकृत, कुचला हुआ। ३ घटाया हुआ, जो अददमें कम किया गया हो।

अल्पीभूत (सं० त्रि०) १ न्यून पड़ा हुआ, जो छोटा पड़ गया हो। २ घटा हुआ, जो अददमें कम पड़ा हो।

अल्पीयस् (सं० त्रि०) इदमनयोः अतिशयेन अल्पम्। अल्पतर, ज़्यादा कम। जब दो द्रव्यमें एक ज़्यादा कम पड़ता, तब यह शब्द आता है। (स्त्री०) अल्पीयसी।

अल्पेच्छु, अल्पाकाङ्क्षिन् देखो।

अल्पेतर (सं० त्रि०) बृहत्, बड़ा, जो छोटा न हो।

अल्पेशाख्य (सं० त्रि०) क्षुद्र शाखाविशिष्ट, कमीना ख़ान्दान, जो अच्छे घरानेका न हो।

अल्पोन (सं० त्रि०) ईषत् न्यून, कुछ कम, जो बिलकुल पूरा या तैयार न हो।

अल्पोपाय (सं० पु०) क्षुद्र उद्योग, हक़ीर ज़रिया।

अल्‌फ़ ख़ान्—व्यक्ति विशेष, सन् १३०० ई० को इन्होंने गुजरातका सोमनाथ मन्दिर तोड़ा था। पाटनवाले भद्रकाली मन्दिरकी दीवारमें जो टूटा-फूटा पत्थरीला शिला-लेख मिला, उसमें सोमनाथके मन्दिरका वृत्तान्त सविस्तर लिखा है। इसमें सन् ११६९ ई० या वल्लभी ८५० पग है। लेखमें देखेंगे,—सोमेश देवका मन्दिर पहले सोमने सोने, रावणने चांदी, कृष्णने लकड़ी और भीमदेवने पत्थरका बनाया था। कुमारपालके अधीन गण्ड बृहस्पतिने फिर मन्दिरकी पूर्वावस्था स्थापन किया। गण्ड बृहस्पतिके लिये शिला

फलकमें निम्नलिखित विषय अङ्कित है,—'वह पाशु-पत पाठशालाके कान्यकुब्ज ब्राह्मण, मालव नरेशके शिक्षक और सिद्धराज जयसिंहके मित्र रहे। सोम-नाथमें उन्होंने कितने ही मन्दिरोंका जीर्णोद्धार कराया और नया देवालय बनवाया था। खास नृपतिके हाथ न लगाते यह कुमायूंके केदारेश्वरका मन्दिर भी ठीक करा गये; कुमारपालका समय बीतनेपर गण्ड बृहस्पतिके सन्तान सोमनाथके धार्मिक सञ्चा-लक रहे।'

अल्बीरूनी—अरब देशके कोई ग्रन्थकार। सन् १०३०-३१ ई० को इनका मूलग्रन्थ 'तारीख़ हिन्द' भारतमें संग्रह किया गया था। अबू रैहान् अल्बीरूनी देखो।

अलबूकार्क—पोर्तगीज़ भारतके द्वितीय शासक। सन् १५०८ ई० को इन्हें फ्रान्सिस्को डी अलमीदासे पोर्त-गीज़ भारतका शासनभार मिला था। इन्होंने पोर्त-गीज़ प्रभाव भारतमें बहुत फैलाया और कालीकट जीत न सकनेपर सन् १५१० ई०में गोवाको धर दबाया। सिंहलकी चारो ओर जलयात्रा कर यह मलक्काके मालिक बने और श्याम तथा स्पायिस द्वीपके साथ व्यवसाय चलाने लगे थे। सन् १५१५ ई० को इन्होंने ईरानी खाड़ी और लोहित-सागरकी जल-यात्रासे लौट गोवामें शरीर छोड़ा।

अल्मबाडे—मन्द्राज प्रान्तके कोयम्बटर ज़िलेका नगर। यह कावेरीके वामतट श्रीरङ्गपट्टनसे साढ़े बत्तीस कोस पूर्व, अक्षा० १२° ८´ उ० और द्राघि० ७७° ४८´ पू० पर अवस्थित है। सन् ई०के १७वें शताब्दमें यह स्थान अतिशय प्रधान रहा। सन् १७६८ ई० को कुछ दिन इस नगरमें अंगरेजी फौज पड़ी, हैदर अलीका दल आते-ही इसे छोड़ गयी थी।

अल्महदी—अब्बास वंशके ३रे खलीफा। सन् ७७५ ई० की ८वीं अक्तोबरको यह बग़दादमें अपने बापकी जगह गद्दीपर बैठे थे। अलमक़नाका बलवा ही सबसे बड़ी बात हुआ। इनके सिंहासनारूढ़ होनेपर छः वर्ष तक यूनानियोंसे युद्ध चला, किन्तु किसीका पक्ष गिरा न था। मक़नाका बलवा दब जानेसे इन्होंने अपने लड़के हारून् अल् रशीदको ८५ हज़ार सिपाही ले यूनानी राज्यपर आक्रमण करनेको कहा। वह यूनानी फौजको हरा और देशको आग और तलवारसे उड़ा कानष्टण्टिनोपल तक जा पहुंचे थे। यूनानी महारानीने भयभीत हो और ७०००० अशर्फी वार्षिक कर देनेको कह सन्धि कर ली। हारून् लूटसे मालोमाल बन बग़दाद वापस गये थे। कहते हैं, सन् ७८१ ई० को किसी दिन सवेरे सूर्य अकस्मात् धुंधला पड़ा और दोपहर तक अंधेरा छाया रहा। हसना नामक किसी वेश्याने अज्ञान वश इन्हें विष दे दिया था। उसने अपनी प्रतिद्वन्द्वी वेश्याको ज़हरसे भरी नासपाती नज़र की, जिसने उसे खलीफाको सौंपा। यह नासपाती खाते-खाते मर गये थे। इनके बड़े लड़के अल्हादी सिंहासनके उत्तराधि-कारी हुए।

अल्मामून्—अब्बास वंशके ७वें खलीफा और हारून् अल् रशीदके द्वितीय पुत्र। इनका उपनाम अबदुल्ला रहा। सन् ८१३ ई०की ६ठीं अक्तोबरको अपने भाई अल्-अमीनके मारे जानेपर यह बग़दादके खलीफा बनाये गये। सन् ८२० ई०को इन्होंने अपने सेनापति ताहिर इब्न हुसेन और उनके सन्तानको खुरासान राज्यका समग्र अधिकार सौंप दिया था। दूसरा झगड़ा न उठते भी अफरीकाके मुसलमानोंने सिसिली पर हमला मार कितने ही स्थान छीन लिये। इन्होंने क्रीटका अंश विशेष जीता, अच्छे-अच्छे यूनानी पुस्तकका अरबीमें अनुवाद कराया और बहुमूल्य ग्रन्थका संग्रह लगाया था। इन्हें बग़दादमें ज्योतिषकी पाठशाला स्थापन करनेका भी यश मिला। खुरासानकी राजधानी तूसमें यह रहने लगे। इनके ही उत्साहसे खुरासान विद्वानोंका स्थान और तूस बग़दादका प्रतिद्वन्द्वी हो गया। सन् ८३३ ई०की १८वीं अगस्तको एशिया माइनरमें २० वर्ष और कुछ मास राज्य करने बाद यह मरे और तरसूसमें गड़े थे। इनकी पत्नी पीछे ५० वर्ष जीकर सन् ८८४ ई०को २२ वीं सितम्बरको चल बसीं। राज्यका उत्तराधिकार इनके भाई मौतसिम-बिल्लाहको मिला था।

अलमोदा—भारतके प्रथम पोर्तुगीज शासक। इनका पूरा नाम फ्रान्सिस्को डी अलमोदा रहा। सन् १५०५ ई० में यह अपने साथ भारतको बीस जहाज और पन्द्रह हजार सिपाही लाये थे।

अलमुक्तदिर बिल्लाह—अब्बास वंशके १८वें खलीफ़ा और अल मौतजिद बिल्लाहके पुत्र। सन् ८०८ ई० को यह अपने भाई अलमुक्तफ़ोकी जगह बग़दादमें गद्दीपर बैठे थे। २४ वर्ष २ मास ७ दिन राज्य करने बाद सन् ८३२ ई०की २८वीं अक्तोबरको किसी खोजेने इन्हें मार डाला। राज्यका उत्तराधिकार इनके भाई अलकाहिर बिल्लाहको मिला था।

अलमुक्तफी बिल्लाह—अब्बास वंशके १७ वें खलीफा। यह सन् ८०२ ई० को अपने पिता अलमौतजिद बिल्लाहको जगह बग़दादमें गद्दीपर बैठे थे। इन्होंने करमतियोंपर कई बार विजय पाया, किन्तु उन्हें दबा न सके। फिर भी मावरुन्नहर पर आक्रमण करनेसे तुर्कोंको कितनी ही फ़ौज खो हारना पड़ा था। पीछे इन्होंने यूनानियोंसे लड़ साइरियाको छीन लिया। सन् ८०५ ई० को यह लड़ भिड़ अहमद इब्न तूलानके वंशसे सिरिया और मिस्र प्रान्त भी पा गये। उसके बाद फिर सफलताके साथ यूनानियों और कर्मतियोंसे लड़े थे। कोई साढ़े छः वर्ष राज्य चला,सन् ८०८ ई० को इन्होंने शरीर छोड़ा और युद्धके लिये खलीफोंमें बड़ा नाम पाया। इनके उत्तराधिकारी अलमुक्तदिर, अलकाहिर और अलराजीसे कर्मतियों और सूदखोरोंने सिवा बग़दाद नगरके सब कुछ छीन लिया था।

अलमुहतदी—अब्बास वंशके १४ वें खलीफा। यह अलवासिक बिल्लाहको कुर्ब नामक रखेलीसे पैदा हुए, जिसे लोग ईसाई कहते थे। सन् ८६८ ई० को अलमुतैज बिल्लाहके सिंहासन-च्युत होनेपर इन्हें बग़दादको गद्दी मिली। इनके शासनके आरम्भकाल ही नूबिया, इथिओपिया और काफ़रस्तानके जर्जीय अरबमें घुस बसरे और कूफ़ेतक जा पहुंचे थे। इन डाकुओंके गोलका सरदार अली इब्न मुहम्मद इब्न अबदुल रहमान रहा, जिसका नाम अल हबीब भी था। उसने झूठमूठ अपनेको अली इब्न अबूतालिबका वंशज बता कितने ही शियाओंको इकट्ठा किया, बसरा और रमला नगर ले बहुत बड़ी फौजके साथ ताइग्रीसको पार किया। सन् ८७० ई० को तुर्कोंने इन्हें आधा मास राज्य करने बाद ही मार डाला था। इनका उत्तराधिकार अलमौतमिदको मिला।

अलमेल—बम्बई प्रान्तके बीजापुर ज़िलेका प्राचीन ग्राम। कहते हैं, सन् ११५६-६७ ई०में कलचरि-नृपति बिज्जलने इसे बसाया था। यह सिन्दगीसे छः कोस उत्तर पड़ता है। अलमेलका अर्थ ऊपरकी खींचना है। प्रवाद है, किसीको हाथीके पैर नीचे दबानेका दण्ड दिया गया था। किन्तु वह अपने पुण्यबलसे हाथीको आकाशमें खींच ले गये; उसी दिनसे इस गांवका नाम अलमेल हुआ। यहां रायलिङ्गके मन्दिरमें तीन लिङ्ग प्रतिष्ठित हैं। एक लिङ्गमें चार मुख बने हैं। मन्दिर पर जो हाथी खिंचा, वह हौदेमें तीन आदिमियोंको चढ़ाये है। मण्डपके दर्शमें चार स्तम्भ कारुकार्यसे शोभित और समस्त द्वारपाल एवं छत्रधारी नाग चारो ओर दीवारोंपर बेल बूटेसे सजे हैं। मन्दिरके इधर-उधर कितनी टूटी-फूटी मूर्ति एवं नन्दीगण पड़ा और लक्ष्मीका एक छोटासा स्थान बना है। स्कूलके पास किसी पत्थरकी तख्ती पर एक ओर नागरी और तीन ओर कनाड़ी अक्षरोंमें शक १००७ (सन् १०८५ ई०) खोदा है। गांवसे बाहर हनूमानका टूटा-फूटा मन्दिर पड़ा, उसपर एक हाथीकी मूर्ति बनी, जो दो आदमियोंको रोके है। चारो ओर टूटी-फूटी मूर्ति मिलेगी। मन्दिरमें हनुमान, गणपति और दो लिङ्ग प्रतिष्ठित और दीवारोंपर द्वारपाल खचित हैं। इसके पास ईश्वरका नवीन मन्दिर और बावड़ी सङ्गमूसासे तैयार हुई है। सन् ११८४ फसलीके समय महाराष्ट्र-शासक रामाजी नरहरि बीनीवालेने यह मन्दिर बनवाया था। रामाजीने गणपतिका मन्दिर बनानेको भी भूमि प्रदान की थी। सुनते हैं, गणपति देवने रामाजी नामक किसी व्यक्तिसे स्वप्नमें कहा,—

समीपवर्ती कूपमें हमारी शिलामूर्ति पड़ी है, तुम उसे निकाल प्रतिष्ठित करो। सन् १८०० ई० को जब बाजीराव पेशवाके नीचे मालोजी राव घोरपड़े शासक रहे, तब भी उपरोक्त प्रकारसे भवानीकी मूर्ति मिली थी। भवानीका मन्दिर साफ़ और सुथरा बना है। सन् १७८८ ई०के समय स्थानीय शेषगिरि राव देशपाण्डेने रामदेवका मन्दिर बनवाया था। उसमें राम, सीता और लक्ष्मण सङ्ग मरमरके बने हैं। मन्दिरके व्ययनिर्वाहार्थ बाजीराव पेशवाने जागीर लगा दी है। प्रति वर्ष चैत्रमासमें मेला लगता, जिसमें दश दिन तक ब्राह्मणभोज होता है। मन्दिरके सम्मुख मारुतिका छोटा मन्दिर है! पावादि विश्वेश्वरका मन्दिर ठोस बना और हालमें संस्कार कराया गया है। उसमें एक ख़ाली शृङ्ग एवं नौ काष्ठखचित स्तम्भ विद्यमान और पास ही एक शिलालेख पड़ा है। गोविन्दराव मठवालेके पिछले इहातेमें देवप्पदिय साधुका समाधि बना है, जिसमें शिवलिङ्गका मठ, कूप और गूलरके पवित्र वृक्ष हैं। वृक्षके नीचे मारुतिकी मूर्ति बैठी है। चन्द्रसेन राव यादवने इस समाधिके व्ययनिर्वाहार्थ चौतीस रुपये नक़द और इक्यानबे रुपयेकी सालाना जागीर लगा दी है। सन् १७७४ ई०में देवप्पदिय स्वर्गवासी हुए थे। वह अलमेलके देशपाण्डे रहे, तहसीलके काग़ज़ पत्र रखनेका काम करते थे। पीछे उन्हें अठनी ऐनापुरके माधवमुनिने अपना शिष्य कर साधु बना दिया। माधवमुनिके मरनेपर देवप्पदियने उनका समाधि निर्माण कराया और प्रतिवर्ष उत्सव मनाया। किसी वर्ष उत्सवके समय देवप्पदियके पास बिलकुल धन न रहा। एकायेक पचास सवार आये और हरेक दो रुपये नक़द साधुको दे चलते बने। गांवसे ३०० हात फ़ासलेपर ग़ालिब साहबकी क़ब्र बनी, जो उसी जगह अपने गुरु अली उस्तादसे मिल गुम हुए थे। ग़ालिब साहबकी क़ब्रपर प्रतिवर्ष मेला लगता है। कहते, कि मठसे उत्तर कितनी ही जैनमूर्ति गड़ी हैं। सन् १८७६ ई०में गांवसे पश्चिम बड़े तालाबकी मरम्मत होते समय एक मन्दिर और कितनी ही मूर्तिका भग्नावशेष हाथ लगा। तालाबसे पूर्व लक्ष्मीका छोटासा मन्दिर बना है। पेशवाका बनवाया राजप्रासाद गिर गया है। थानेके पास टूटा-फटा क़िला पड़ा है। चम-ड़ौधेमें कालेपत्थरका जो कुवां बना, वह 'भगिनी-कूप' कहाता है। प्रवाद है, दो बहनोंने कुवां बनवाया था। किन्तु उसमें पानी न निकला। अन्तमें किसी साधुने बताया,—'जब तक तुम दोनो बहन अपना प्राणसमर्पण न करोगी, तबतक कुवां ख़ाली ही पड़ा रहेगा।' दोनो बहनें ईश्वरका ध्यान और पूजन कर कूपमें जा लेटीं और वह रातों रात भर आया।

अल्मोध—१ मध्यप्रदेशके छिन्दवाड़ा ज़िलेकी जागीर। यह महादेव पर्वतमें अक्षा० २२° १७′ एवं २०° २५′ उ० और द्राघि ७८° १८′ तथा ७८° ३०′ पू०के बीच अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ५२ वर्गमील निकलता है। यह जागीर भोपाओं या शिवालयके कुलक्रमागत रक्षकोंके नाम लगी है। २ मध्यप्रदेशके छिन्दवाड़े ज़िलेका गांव। यह बहुत ऊंचे बसता और निहायत उमदा मालूम होता है। चारो ओर ऊपर चढ़नेमें बड़ी तकलीफ़ पड़ती है।

अल्मोड़ा—युक्तप्रदेशके कुमायूं ज़िलेका प्रधान नगर और हेडक्वार्टर। यह समुद्रपृष्ठसे ५४८४ फ़ीट ऊपर अक्षा० २९° ३५′ १६″ उ० और द्राघि० २९° ४१′ १६″ पू०में अवस्थित है। इसको पहाड़की चोटी पर बसते और सैकड़ो वर्षसे अपने शासकोंका दुर्ग बनते देखते हैं। १७७४ ई०में पहले-पहल रोहिलाओंने कुमायूंपर चढ़ायी की थी। उन्होंने यह नगर लूटा, किन्तु कुछ मास पीछे देशीय दरिद्रता और जल-वायुके काठिन्यसे मर गये। सन् १८१५ ई०को गोरखा-युद्धके समय भी यह नगर कौशलका केन्द्र बना और २६वीं अप्रेलको बड़ी गोलाबारीके बाद अंगरेजोंके हाथ लगा। यहां मज़दूरीका काम खूब चलता है।

अल्मौतज़िद बिल्लाह—अब्बास वंशके १६वें ख़लीफ़ा, मुवाफ़िक़के पुत्र और अल्मुतवक्किल बिल्लाहके पौत्र। सन् ८९२ ई०को अपने चाचा अल्मोतमिद बिल्ला-

इके मरनेपर इन्हें बग़दादकी गद्दी मिली थी। सन् ८८५ ई०को मिस्रके ख़लीफ़ा खमरावियाकी लड़कीसे बड़ी धूमधामके साथ इनका विवाह हुआ। इन्होंने क़र्मतियोंसे युद्ध तो किया, किन्तु कितनी ही फ़ौज मारी गयी और सेनापति अल् अब्बास क़ैद हुए थे। अपने विवाहके बाद ही इन्होंने खमरावियाके लड़के हारुन्को सदाके लिये अवासम और किन्निस रीन्का शासक बनाया, जिन्हें उसने ४५ हज़ार दीनार (अशर्फ़ी) वार्षिक कर देनेपर मिस्र और सिरीयामें मिला लिया। सन् ९०२ ई०को ९ वर्ष ८ मास और २५ दिन राज्यकर यह मर गये। इनके लड़के अल् मुकतफ़ी बिल्लाहको राज्यका उत्तराधिकार मिला था।

अल्ल (हिं० पु०) वंशकी संज्ञा, ख़ान्दान्का नाम।

अल्लक (सं० पु०) १ कक्कोलविशेष, किसी क़िस्मकी शीतलचीनी। २ धान्यक, धनिया।

अल्लका (सं० स्त्री०) धान्यक, धनिया।

अल्लम-गल्लम (हिं० पु०) १ कूड़ा करकट, अलर-बलर। २ वाही-तबाही, आयं-बायं।

अल्लम प्रभुदेव—प्राचीन संस्कृत योगशिक्षक। स्वात्मारामने 'हठयोगप्रदीपिका'में इनका उल्लेख किया है।

अल्लहगञ्ज—युक्तप्रान्तके फ़र्रुखाबाद ज़िलेकी अलीगढ़ तहसीलका नगर। यह फतेहगढ़ शहरसे साढ़े छः कोस उत्तर-पूर्व अवस्थित है। इसमें थाना, डाकखाना, सराय और स्कूल बना है। सप्ताहमें दो बार बाज़ार लगता है।

अल्लहबन्द—बम्बई प्रान्तीय सिन्धु सीमाका मटिहा ढेर। यह अक्षा० २४°२१′ उ० और द्राघि० ६८° ११′ पू०पर अवस्थित है। इसमें बालू और घोंघेसे मिली खारी मट्टी भरी है। लम्बाईमें पचीस और कहीं-कहीं चौड़ाईमें यह आठ कोस बैठता है। सन् १८१९ ई०को भूकम्प होनेसे अल्लहबन्द ऊपर उठ आया था। सन् १८२५ ई०को सिन्धुनद बढ़नेपर यह बन्द टूटा और पानीने नीचे ढलकर एक झील बना दिया।

अल्ला (सं० स्त्री०) १ माता, मा। २ धान्यक, धनिया। (फ़ा० पु०) २ परमेश्वर, ब्रह्म। अल्लोपनिषत्में अल्लाके भजनकी बात लिखी है,—

"ओं अस्माल्लां इल्ले मित्रावरुणो दिव्यानि धत्ते।
इल्लल्ले वरुणो राजा पुनर्ददुः।
हयामि मित्रो इल्लां इल्लेति।
इल्लाल्लां वरुणो मित्रो तेजकामाः।
होतारमिन्द्रो होतारमिन्द्रो महासुरिन्द्राः।
अल्लो ज्येष्ठं श्रेष्ठं परमं पूर्णं ब्रह्मणमल्लां।
अल्लो रसुर महमदरकवरस्य अल्लो।
अल्लां आदल्लाबुकमेककं।
अल्लां बुकं निखातकम्।
अल्लो यज्ञेन हुतहुत्वः अल्ला।
सूर्यचन्द्रसर्वनक्षत्राः अल्लो ऋषीणां।
सविद्या इन्द्राय पूर्वः मायापरमन्त
अन्तरिक्षाः अल्ला पृथिव्या अन्तरिक्षं।
विश्वरूपं दिव्यानि धत्ते इल्ले।
वरुणो राजा पुनर्ददुः।
इल्लाकबर इल्लाकबर इल्लेति।

इल्लाल्लाः इल्ला इल्लाल्ला अनादिस्वरूपा अथर्वणी शाखां हुं ह्रीं जनान् पशून् सिद्धान् जलचरान् अदृष्टं कुरु कुरु फट्।

असुरसंहारिणीं हुं अलो रसुर महमदरकं वरस्य अलो अल्लां इल्लल्लेति इल्लल्लः"। अल्लोपनिषद देखो।

अल्लाना (हिं० क्रि०) चिल्लाना, गला फाड़-फाड़के आवाज़ निकालना, गुल मचाना, शोर करना।

अल्लामा (अ० स्त्री०) कलह करनेवाली स्त्री, लड़ाका औरत।

अल्लायी (हिं० स्त्री०) पशुका कण्ठगत रोग, चौपायेके गलेकी बीमारी, घंटियार।

अल्लु (सं० क्ली०) आलुक, आलूबोखारा।

अल्लूर—मन्द्राज प्रान्तके नेल्लूर ज़िलेका नगर। यह अक्षा० १४° ४१′ ३०″ उ० और द्राघि० ८०° ५′ २१″ पू०पर अवस्थित है। इसमें प्रधानतः धान बोनेवाले किसान रहते हैं। तीन उम्दा तालाबोंसे खेत सींचे जाते हैं। सब-मैजिस्ट्रेटकी कचहरी और डाकखाना मौजूद है।

अल्लेप्पी—मन्द्राज प्रान्तके त्रिवाङ्कोड़ राज्यका बड़ा बन्दरगाह और शहर। यह अक्षा० ९° २९′ ४५″ उ० और द्राघि० ७६° २२′ ३१″ पू०पर अवस्थित है। मन्द्राजसे ४६४ और कोचिनसे ३३ मील दक्षिण-समुद्रतट पर इसे पाते हैं। यह समुद्र और बाणके

खेत बीच पड़ा तथा सामने बड़ासा झील भरा है। बारहो महीने लक्कड़ डालनेका सुभीता है। यहांसे लाखों रुपयेका अनाज, कहवा, इलायची, अदरक, मिर्च, नारियल, रस्सी और मछली बाहर भेजते हैं। इस नगरमें त्रिवाङ्कोड़ राज्यके जङ्गलका माल इकट्ठा होता और रस्सी बनानेका दो कारखाना चलता है। डेढ़ मील लम्बा जो मट्टीका बांध है, वह समुद्रके जोरको रोकता और जहाजोंकी हिफाज़त करता है। २५ फीट ऊंचे बत्तीघरका आलोक समुद्रपर नौ कोससे देख पड़ता है। झीलसे नहर नगरमें आयी, जिसपर सात पुल बना है। महाराजका प्रासाद, कचहरी, मुनसिफो, अस्पताल, स्कूल वग़ैरह सब कुछ मौजूद है। सन् १८०९ ई०को इस नगरमें कुछ युरोपीय सिपाही नैयरोंने मार डाले थे।

अल्लोपनिषत् (सं० स्त्री०) बादशाह अकबरके समयमें रचित एक उपनिषत्। अल्ला और अथर्ववेद शब्द २०९ पृष्ठमें विवरणको देखो।

अल्वा—गुजरात प्रान्तके रेवाकण्ठ राज्यकी जागीर। इसमें सात ग्राम लगते हैं। अल्वेके उत्तर और दक्षिण वीरपुर, पांटलावडो; पूर्व गायकवाड़के गांव, पांटलावडो; और पश्चिम देवलिया ग्राम पड़ता है। क्षेत्रफल पांच वर्गमील है। इसके जागीरदार सड़सठ रुपये साल गायकवाड़को कर देते हैं। यहां मूर्ख भील ही ज्यादा रहते हैं।

अल्हजा (हिं० पु०) अलहजल, बातका बतङ्गड़, गपशप, बेतुकी।

अल्हड़ (हिं० वि०) १ अल्पवयस्क, कमसिन। २ अनुभवरहित, बेतजर्बा। ३ अकुशल, बेवकूफ। ४ निद्वन्द्व, बेपरवा। (पु०) ५ छोटा बछड़ा।

अल्हड़पन (हिं० पु०) १ अल्पवयस्कता, कमसिनी। २ अनुभवराहित्य, नातजर्बेकारी। ३ अकुशलता, नादानी। ४ निर्द्वन्द्वता, बेपरवायी।

अल्हादी— अब्बास वंशके ४थे खलीफा और अल्-मेहदीके पुत्र। सन् ७८५ ई०को ४थी अगस्तको यह अपने पिताकी जगह बग़दादमें गद्दीपर बैठे थे। इन्होंने एकवर्ष और एक महीने राज्य किया। सन् ७८६ ई०के सितम्बर मास अपने छोटे भाई हारून् अल्-रसीदको मार डालनेकी चेष्टा करनेपर वजीरने इन्हें जहर दिलाया था। इनके मरनेपर सुप्रसिद्ध हारून् अल्-रसीदने राज्यका उत्तराधिकार पाया।

अव (सं० अव्य०) अव-अच्। १ निश्चय, जरूर। २ नियोगमे, मेलमें। ३ तिरस्कारमें, झिड़ककर। ४ असम्पूर्ण रूपसे, अधूरे तौरपर। ५ शुद्ध होकर, सफायीसे। ६ परिभवमें, नीचेसे। ७ सादृश्य रूपसे, बराबर। 'अवालम्बनविज्ञानवियोगव्याप्तिशुद्धिषु। ईषदर्थे परिभवेऽप्यवौपम्येऽवधारणे॥' (विश्व)

यह चादिगणीय अव्यय है। इसके बाद अन्य शब्दका समास पड़नेसे अकार विकल्पमें उठ जाता है। जैसे—अव-गाह—वगाह, अवगाह। (वै० त्रि०) ७ अभिलाषयुक्त, ख़ाहिशमन्द, प्यार करनेवाला। (हिं० अव्य०) ८ और।

अवंश (सं० पु०) १ नीच वंश, कमीना ख़ान्दान्। (वि०) २ निराधार, बेसहारा, जो किसीपर टिका न हो।

अवकट (सं० क्ली०) अवैव, अव स्वार्थे कटच्। वैरूप्य, मुख़ालिफ़त, उलट-पुलट।

अवकटिका (सं० स्त्री०) माया, छल, छद्म, धोका, फ़रेब।

अवकम्पित (सं० त्रि०) अव-कपि चलने कर्तरि क्त। १ विचलित, परेशान्, घबराया हुआ। (पु०) २ बुद्धविशेष।

अवकर (सं० पु०) अव-कृ भावे अप्। १ उपहति, हनन, नाश, ज़वाल, क़त्ल, मटियामेट। अवकीर्यते, अव-कृ कर्मणि अप्। २ सम्मार्जनी प्रभृति द्वारा विक्षिप्त धूलि, जो कूड़ा-कर्कट झाड़से निकाला गया हो।

अवकर्षण (सं० क्ली०) अव कृष-ल्युट्। बलपूर्वक आकर्षण, ज़ोरकी कशिश।

अवकलन (सं० क्ली०) १ संग्रहण, जोड़तोड़। २ दृष्टि, नजर। ३ ज्ञान, समझ।

अवकलना (हिं० क्रि०) बुद्धि आना, समझमें बैठना, ज्ञान मिलना।

अवकलित (सं० त्रि०) अव-कल-क्त। दृष्ट, ज्ञात, गृहीत, देखा सुना या लिया हुआ।

अवका (सं० स्त्री०) अव-कन्-न्, क्षिपकादित्वात् न इत्वम्। शैवाल, सेवार।

अवकाद (वे० त्रि०) अवका भोजन करनेवाला, जो सेवार खाता हो।

अवकाश (सं० पु०) अव-काश-घञ्। १ विश्राम लेनेका समय, आरामका वक्त। २ अवसर, मौका। ३ समय, वक्त। ४ स्थान, मुक़ाम। ५ अतिरिक्त समय, फ़ुरसत। ६ दृष्टिपात, नज़र। ७ छन्दोविशेष, कोई बहर। इसे पढ़ते समय लघ्वा विशेषपर दृष्टि रखना पड़ती है।

अवकाशवत् (सं० त्रि०) विस्तृत, कुशादा, लम्बा-चौड़ा।

अवकाश्य (सं० त्रि०) अवकाश छन्द पढ़ते समय प्रवेश पाया हुआ।

अवकिरण (सं० क्ली०) फैलाव, बिखेरना।

अवकीर्ण (सं० त्रि०) अव-कृ कर्मणि क्त। १ व्याप्त। २ चूर्णीकृत, जो चूर्ण किया गया हो। ३ ध्वस्त। ४ नष्ट। भावे क्त। ५ नष्ट-ब्रह्मचर्य, जिस ब्रह्मचारीका ब्रह्मचर्य-व्रत भङ्ग हो गया हो।

अवकीर्णिन् (सं० पु०) अवकीर्णं ब्रह्मचर्य्यव्रतविरोधिरेत: चिस्रमनेन (इष्टादिभ्य। पा ५।२।८८) इति इनि। ब्रह्मचर्यव्रत-भङ्गकारी जन। जो ब्रह्मचारी स्त्रीसङ्गादि द्वारा व्रत भङ्ग करता है। 'अवकीर्णी क्षतव्रत:।' (अमर) स्त्रीसङ्गसे व्यतिरिक्त भी रेत: स्राव होनेपर व्रत भङ्ग होता है, परन्तु अवकीर्णित्व नहीं होता। अल्पप्रायश्चित्तसे ही यह दोष छूट जाता है। यदि ब्रह्मचारी इच्छावशत: स्त्रीगमन करें, तो उनको तज्जन्य दोषनिवृत्तिके लिये निम्नलिखितानुसार प्रायश्चित्त कर्तव्य है। वन या चतुष्पथमें जा लौकिक अग्निसे रक्षोदैवत गर्दभको मार किंवा नैऋत दैवत चरु पाक करके, 'कामाय स्वाहा, कामकामाय स्वाहा, निऋत्यै स्वाहा, रक्षो-देवताभ्यो स्वाहा' इस मन्त्रद्वारा आहुति प्रदान करनेसे शुद्धि लाभ कर सकते हैं। अनिच्छावश अर्थात् स्वप्नादिमें यदि ब्रह्मचारीका शुक्र स्खलन हो जावे, तो वह गन्धपुष्प द्वारा सूर्यकी पूजा कर फिर (पुनर्मामैतु इन्द्रियम्) इस ऋचाको तीन बार जप ले। यही उसका प्रायश्चित्त और इसीसे शुद्धिलाभ भी होता है। यथा—

"स्वप्ने सिक्त्वा ब्रह्मचारी द्विज: शुक्रमकामत:।
स्नात्वार्कमर्चयित्वा त्रि: पुनर्मामित्यृचं जपेत्॥" (मनु २।१८१)

अवकुञ्चन (सं० पु०) १ समेटना। २ बटोरना।

अवकुटार (सं० त्रि०) अव स्वार्थे कुटारच्। १ अत्यन्त-निम्न, बहुत नीचा। (क्ली०) २ वैरूप्य, विरूप, बदसूरत, जिसकी कान्ति अच्छी न हो।

अवकृष्ट (सं० त्रि०) अव-कृष्-क्त। १ दूरीकृत, दूर किया हुआ। २ निष्कासित, निकाला हुआ। 'निष्कासितोऽवकृष्ट: स्यात्।' (अमर) ३ निगलित, नीचे उतारा हुआ। ४ नीच, नीच जाति। अवकृष्ट गृहमार्जनादिना अवकर्षणमस्त्यस्य अर्श-आदि-अच्। (पुं०) ५ घरमें झाड़ू लगानेवाला दास या नौकर।

अवकृष्य (सं० त्रि०) अव-कृष्-कर्मणि क्यप्। १ आकर्षणीय, आकर्षण करने योग्य, जिसे खींचकर ले आवें। २ दूरीकरणीय, त्याज्य, जो छोड़ देने लायक़ हो। (अव्य) अव-कृष्-ल्यप्। ३ आकर्षण करके।

अवक्लृप्ति (सं० त्रि०) अव-कॢप्-क्तिन्। सम्भावना।

अवकेशिन् (सं० त्रि०) अव असम्पूर्णेन केन सुखेन ईशते ऐश्वर्यवान् भवति पत्रवादि सत्त्वेपि फलराहित्यात् अवक-ईश-इनि। १ बन्ध्य वृक्ष, जिस वृक्षमें फल लगता न हो। 'बन्ध्योऽफलोऽवकेशी च।' (अमर) अव असम्पूर्णा: केशा विद्यन्ते अस्य इति। अल्पकेशयुक्त, जिसके बाल थोड़ा रहे।

अवकोकिल (सं० त्रि०) अवक्रुष्टं कोकिलया प्रादि० स०। १ कोकिलकी तरह बोलनेवाला। (पु०) २ कोकिलाका शब्द, कोयलकी बोली।

अवकखन (हिं० पु०) देखना।

अवक्तव्य (सं० त्रि०) न वक्तव्यम्, नञ्-तत्। १ बोलनेके अयोग्य, जो बोलने लायक़ न हो। २ अश्लील। ३ निषिद्ध। ४ मिथ्या।

अवक्त्र (सं० त्रि०) नास्ति वक्त्रं मुखं यस्य। नञ् बहुव्री०। व्रणविशेष, किसी क़िस्मका फोड़ा। जिस फोड़ेके मुंह न रहे।

अवक्र (सं० त्रि०) न वक्रं विरोधे नञ्-तत्। सरल, सीधा, जो टेढ़ा न हो।

अवक्रन्द (सं० त्रि०) अवक्रन्दति अवक्रन्द कर्तरि अच्। जो धीरे धीरे रोवे।

अवक्रन्दन (सं० क्लो०) अवक्रन्द-भावे ल्युट्। धीरे धीरे रोना।

अवक्रम (सं० पु०) अव-क्रम-भावे घञ्। अवगम, निम्नगति। नीचे जाना।

अवक्रय (सं० पु०) अवक्रीणाति अनेन अव क्री-अच्। १ कोई चीज़ दे दूसरी चीज़ लेना, बदला। २ मूल्य, दाम। ३ भाड़ा, किराया। ४ कर। भावे अच्। ५ मूल्यदानपूर्वक ग्रहण। जिसे दाम देकर लें, खरीदा हुआ।

अवक्रान्ति (सं० स्त्री०) अव-क्रम-क्तिन्। १ निम्न-गमन, नीचे चलना। उतार, गिराव। २ झुकाव।

अवक्रामिन् (व० त्रि०) निकल जानेवाला, भगेड़ू।

अवक्रुष्ट (सं० त्रि०) अव-क्रुश-कर्मणि क्त। जिसके उपर आक्रोश किया गया हो। "अवक्रुष्टः कोकिलया।" (शि० कौ०)

अवक्रोश (सं० पु०) कर्कश स्वर, कड़ी बोली, कोसना, गाली, निन्दा।

अवक्लिन्न (सं० त्रि०) अव-क्लिद्-क्त। १ आर्द्र, ओदा, तर। २ भीगा हुआ, सड़ा, गलित, गीला।

अवक्लेद (सं० पु०) अव-क्लिद् भावे घञ्। १ पाका-न्तर पाचनशील वस्तु विशेष। जलादि संयोगसे कोई द्रव्य गलित हो जाता है, जैसे मिट्टीका कच्चा घट-प्रभृति। किसी वस्तुके पक्व जानेपर जो कुत्सित जल बाहर निकलता, उसको भी क्लेद कहते हैं। जैसे पूय। (क्लो०) अव-क्लिद् भावे ल्युट्। अवक्लेदन।

अवक्वण (सं० पु०) बेसुरा गीत, जो गाना बिना सुरतालके गाया जाये।

अवक्वाथ (सं० पु०) १ अधचुरा काढ़ा। २ जो क्वाथ बना न हो।

अवक्षय (सं० पु०) अव-क्षि-अच्। हृषिके पर नाशके पूर्वकी अवस्था, भावका विकार विशेष।

अवक्षयण (सं० क्लो०) अव-क्षि-णिच्-ल्युट्। नाश-जनक व्यापार विशेष। नाश करनेवाला व्यापार जिस व्यापारके करनेसे नाश हो।

अवक्षाम (वे० पु०) क्षतिपूरण, नुकसानदिही।

अवक्षिप्त (सं० त्रि०) अव-क्षिप् कर्मणि क्त। १ क्षिप्तवस्तु, फेंकी हुई चीज़। २ गच्छित धन, जो धन व्यय शून्य बन्धु जनके निकट रक्षित हुआ हो। ३ जो बन्धक रखा जाय। ४ गिरा हुआ। ५ अव-मानित।

अवक्षीण (सं० त्रि०) अव-क्षि कर्तरि क्त क्षेरिकार-दीर्घः तकारस्य नकारः। १ क्षयप्राप्त, जो क्षय हो गया हो। २ विनाशोन्मुख वस्तु, नाश होनेवाली चीज़। (क्लो०) भावे क्त। ३ अवक्षय। निष्ठायामण्यदर्थे। पा ६।४।६०। भाव और कर्मवाच्य भिन्न निष्ठा परे रहनेसे क्षि धातुको दीर्घ होता है। मुग्धबोधके मतमें भाव-वाच्य क्त परे रहनेपर भी उक्त धातुका विकल्प दीर्घ हो जाता है। क्षियो दीर्घात्। पा ८।२।४६। इस सूत्रसे दीर्घ क्षी धातुके परस्थित निष्ठा तके स्थानमें न होता है।

अवक्षुत (सं० त्रि०) अव-क्षु-क्त। जिस वस्तुपर छींक पड़ गई हो। यह वस्तु अपवित्र हो जाती, पुनः वैध कार्यमें निषिद्ध ठहरती है।

अवक्षेप (सं० पु०) अव-क्षिप् भावे घञ्। १ अधः-पतन, नीचे फेंकना। २ अपवाद, इल्ज़ाम। ३ निन्दा।

अवक्षेपण (सं० क्लो०) अव-क्षिप् भावे ल्युट्। १ नीचे फेंकना, गिराव। वैशेषिक दर्शनमें यह अवक्षेपण, आकुञ्चन आदि पांच कर्मों या क्रियाओंको कहते हैं। आधुनिक विज्ञानके अनुसार प्रकाश, तेज या शब्दकी गतिमें उसके किसी पदार्थसे होकर जानेपर वक्रताका होना माना गया है। २ अपवाद, निन्दा।

(स्त्री०) करणे ल्युट् ङीप्। अवक्षेपणी। १ बाग-डोर, लगाम। २ बाला ओषधि।

अवखात (सं० क्लो०) अव-खन्-क्त। निम्न खात, गम्भीर गर्त्त, गहिरा गड्ढा। जन-सन-खनां सञ्झलोः। पा ६।४।४२। झलादि सन् एवं झलादि कित् ङित् संज्ञक प्रत्यय परे रहनेसे जन, सन, एवं खन धातुके अन्तमें आकार आदेश होता है।

अवखाद (सं० पु०) अवखातो निन्दितो खादो खाद्यम्, प्रा० स०। निन्दित खाद्य।

"नाव अवखादो अस्ति वः।" ऋक् ८।४१।४।

'अवमन्तव्यः खादो ....।' (सायण)

अवगण (सं० त्रि०) गणभिन्न, अकेला।

अवगणन (सं० क्लो०) अव-गण भावे ल्युट्। १ अवज्ञा, निन्दा, तिरस्कार। २ पराभव, पराजय, हार। ३ अपमान। नीचा देखना। ४ गिनती।

अवगणित (सं० त्रि०) अव गण्यते स्म अव-गण-कर्मणि क्त। १ अगणित। २ निन्दित, अपमानित, अवज्ञात, तिरस्कृत। ३ पराजित, पराभूत। ४ नीचा देखा हुआ। ५ गिना हुआ।

अवगण्ड (सं० पु०) अव गम-ड। अमन्ताड्डः। उण् १।१०१। इति ड नास्येत्वम्। गण्डः कपोलः अव निन्दितो गण्डो येन। प्रादि बहुव्री०। गण्डस्य व्रण-विशेष, गालपरका कोई फोड़ा, गलगण्ड नामक रोग विशेष।

अवगत (सं० त्रि०) अव-गम-क्त। १ निम्नगत, नीचे गया हुआ। २ गत। ३ ज्ञात, मालूम, बुद्ध, बुधित, विदित। ४ जाना, प्रतिपन्न। ५ अवसित। ६ गिरा हुआ।

अवगतना (हिं० क्रि०) सोचना, समझना, विचारना।

अवगति (सं० स्त्री०) अव-गम भावे क्तिन्। १ निश्चय-ज्ञान। २ बुद्धि, धारणा, समझ। ३ कुगति, नीचगति।

अवगथ (सं० पु०) अव गच्छति अगमत् अव-गम (निशीथगोपोथावगथाः। उण् २।९) इति थक्। प्रातः-स्नात, जो प्रातःकाल स्नान करता हो। 'अवगथः प्रातःस्नातः।' (उज्ज्वलदत्त)

अवगदित (सं० त्रि०) अव-गद-कर्मणि क्त। अपवादयुक्त, जो निन्दायुक्त कहा गया हो।

अवगम (सं० पु०) अव गम-भावे अप्। निश्चय ।

अवगमन (सं० क्लो०) देख सुनकर किसी बातके अभिप्रायको जान लेना, जानना, समझना।

अवगर्हित (सं० त्रि०) निन्दित, जघन्य।

अवगाढ़ (सं० त्रि०) अव-गाह-क्त। यहां अव-शब्दके अकारका विकल्प लोप होनेपर 'वगाढ़' रूप होता है। (अपि शब्द देखो) १ निविड़। २ अन्तःप्रविष्ट। चिन्ता या जल प्रभृतिके मध्य प्रविष्ट। निमग्न। जो फिक्र या जलमें डूबा हो। ३ कठिन, या घन वस्तु विषयीभूत पदार्थ। जैसे घटज्ञानके विषय, घट-घटत्व एवं घट और घटत्वका संसर्ग सम्बन्ध। 'घट लावो' ऐसा बोलनेपर घटत्वविशिष्ट घट, उसका सम्बन्ध जो समवाय—यह तीन वस्तु जाना जाता है। अतः अवगाढ़ शब्दमें यह तीन ही मालूम पड़ता है।

अवगारना (हिं० क्रि०) समझाना, बुझाना, जताना, चितावना।

अवगाह (सं० पु०) अव गाह घञ्। १ स्नान। जलमें मलमलकर स्नान करना। २ अन्तःप्रवेश, भीतर प्रवेश। ३ अवगति। ४ ज्ञान द्वारा विषयी करना, जो ज्ञानसे जाना जाये। आधारे घञ्। ४ स्नानका स्थान, तालाब प्रभृति। (अवगाह देखो) इसका विकल्पसे आकार लोप होनेपर 'वगाह' रूप होता है (अपिशब्द देखो)

अवगाहन (सं० पु०) अव-गाह-ल्युट्। १ पानीमें घुसकर स्नान, निमज्जन। २ प्रवेश, पैठ। ३ मथन, विलोडन। ४ चाहना, खोज, छान, बीन। ५ चित्त धंसाना, लीन होकर विचार करना।

अवगाहना (हिं० क्रि०) १ घुसकर स्नान करना, नहाना, निमज्जन करना। २ डूबना, धंसना, पैठना, मग्न होना। ३ थहाना, छानना, छान बीन करना। ४ मथना, विचलित करना, हलचल डालना। ५ चलाना, डुलाना, हिलाना। ६ सोचना, विचारना, समझना। ७ धारण करना, ग्रहण करना।

अवगाह्य (सं० त्रि०) अवगाहितुमर्हम् अव-गाह-अर्हार्थे ण्यत्। १ स्नानादि योग्य जलादि। २ अन्तः प्रवेश्य। जिसका मर्म बुझा जाये। जिसमें प्रवेश किया जाये। ३ विषयी कार्य घटादि। (अव्य) अव-गाह-ल्यप्। अवगाहन करके।

अवगाहित (सं० पु०) स्नान किया हुआ। नहाया हुआ, जो स्नान कर चुका हो।

अवगीत (सं० त्रि०) अव-गै-क्त ऐकारस्य आत्वम् आत ईत्वं। १ निर्वाद। २ विवादशून्य। ३ अपवादग्रस्त। ४ दुष्ट। ५ गर्हित, निन्दित। मुहुर्दृष्ट, जो बारंबार देखा गया हो। (अवगीतन्तु निर्वादे मुहुर्दृष्टे विगर्हिते। विश्व) (क्ली०) भावे क्त। निन्दा। अपवाद।

अवगुण (सं० पु०) अव-गुण-क। १ दोष, दूषण, ऐब। २ अपराध, गुनाह, खोटाई।

अवगुण्ठन (सं० क्ली) अव-गुण्ठ-ल्युट्। १ मुख आवरण करना, मुख ढंकना। २ घूंघट डालना। करणे ल्युट्। मुखाच्छादनका वस्त्र, जिस कपड़ेसे मुंह ढांका जाये, पर्दा, घूंघट, बुर्का।

अवगुण्ठनमुद्रा (सं० स्त्री०) मुद्रा विशेष। तर्जनी अङ्गुली दीर्घ और उसका अग्र भाग थोड़ा वक्र बना बाहर रखकर वाम हाथकी मुट्ठी बांध इधर उधर भ्रमित करने (घुमाने)को अवगुण्ठनमुद्रा कहते हैं।

अवगुण्ठनवती (सं० स्त्री०) घूंघटवाली स्त्री, जो स्त्री मुंहपर घूंघट डाले हो।

अवगुण्ठिका (सं० स्त्री०) अवगुण्ठयति आच्छादयति। अव-गुण्ठ-णिच्-ण्वुल् णिच् लोपः स्त्रीत्वात् टाप् अत इत्वम्। १ जो स्त्री मुख आवृत करे (छिपावे) करणकी कर्तृत्व विवक्षामें वस्त्रको भी अवगुण्ठिका कहते हैं। २ घूंघट। ३ जवनिका, पर्दा, चिक।

अवगुण्ठित (सं० त्रि०) अव-गुण्ठ-णिच्-क्त इट् णिच् लोपः। १ आच्छादित। २ आवृत। ३ चूर्णीकृत, जा चूर्ण किया हो।

अवगुण्ठ्य (सं० त्रि०) अवगुण्ठ्यते आच्छाद्यते अव-गुण्ठ चुरादि णिच् कर्मणि यत् णिच् लोपः। १ आच्छाद्य, आच्छादन करने योग्य, जो छिपाने लायक हो। (अव्य०) अव-गुण्ठ-ल्यप् णिच लोपः। २ आच्छादन कर, छिपाकर।

अवगुम्फन (सं० पु०) गूंथन, गुहन, ग्रन्थन, गुंधायी।

अवगुम्फित (सं० त्रि०) अव-गुम्फ-कर्मणि क्त। ग्रन्थित, गूंथा हुआ, गुहा हुआ।

अवगुर्य (सं० त्रि०) अवगुर्य्यते उद्युज्यते अव-गुर-यत्। १ मारनेको उठाया जानेवाला। (अव्य) ल्यप्। २ मारनेको उठाकर। ३ उद्यम करके।

अवगृह्य (सं० क्ली०) अवगृह्यते सन्धिकार्यं निषिध्यते अव-ग्रह-क्यप्। १ अवग्रह, विच्छेद, पद पाठ कालमें किञ्चित् अवसान। अर्थात् जिस समय सन्धि न हो।

अवगोरण (सं० क्ली०) अव-गुर-ल्युट्। वध करनेके निमित्त अस्त्रादि ग्रहण, मारनेके लिये हथियारका उठाना।

अवग्रह (सं० पु०) अव-ग्रह-अप्। १ विच्छेद। दो पदके मध्य किञ्चित् अवसान अर्थात् सन्धिका प्रतिबन्ध। जैसे 'विश्वौजा' यहां 'विश्वोजा' ऐसा रूप नहीं होता है। २ वृष्टिरोध, अनावृष्टि, वर्षाका अभाव। ३ प्रतिबन्धक। ४ हस्तिका ललाट, हाथिका माथा। ५ गजसमूह, गजयूथ। ६ स्वभाव, प्रकृति। ७ स्थान विशेष। ८ रुकावट, अटकाव, अड़चन, बाधा। ९ बांध, बन्द। १० अनुग्रहका उलटा। ११ शाप, कोसना।

१२ जिनमतानुसार ज्ञानके मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय केवल ये पांच भेद हैं। पांच इन्द्रिय और मनकी सहायतासे जो ज्ञान होता है उसे मतिज्ञान कहते हैं। उसके मूलमें ४ भेद हैं—अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा। इन्द्रिय और पदार्थके योग्यस्थानमें (मौजूद जगहमें) रहनेपर सामान्य प्रतिभासरूप दर्शनके पीछे अवान्तर सत्ता सहित वस्तुके विशेष ज्ञानको अवग्रह कहते हैं। मतिज्ञानके पहिले होनेवाले सामान्य अवलोकन (प्रतिभासमात्र)को दर्शन कहते हैं, जैसे कि रास्तेमें चलते हुए किसी मनुष्यको तृणका स्पर्श हुआ तो "कुछ पदार्थ लगा" इस प्रकारके सामान्य प्रतिभासको तो दर्शन कहते हैं और कोमल कठोर आदि विशेष जानना अवग्रह है इसके दो भेद हैं। व्यञ्जनावग्रह, अर्थावग्रह। अव्यक्त पदार्थोंके ज्ञानको व्यञ्जनावग्रह कहते हैं जैसे—कोरा (नवीन) सरावामें जल दो चार बिन्दु डालनेसे गीला नहीं होता परन्तु बार बार सींचनेसे आर्द्र हो जाता है अर्थात् उसमें जल व्यक्त होने लगता है। उसी प्रकार श्रोत्रादि इन्द्रियोंके अवग्रहमें ग्रहण होनेयोग्य शब्दादि

रूप परिणत हुए पुद्गल परमाणुओंके स्कन्ध दो तीन समय पर्यन्त जबतक कि व्यक्त नहीं होते तबतक तो व्यञ्जनावग्रह है और बार बार ग्रहण करनेसे जब व्यक्त हो जाते हैं तब अर्थावग्रह होता है। व्यञ्जनावग्रह नेत्र और मनसे नहीं होता इनसे केवल अर्था-(व्यक्त) वग्रह ही होता है। इसके उत्तर भेद १२० हैं।

अवग्रहण (सं० क्लो०) अव-ग्रह भावे ल्युट्। १ प्रतिरोध। २ अनादर। ३ ज्ञान।

अवग्राह (सं० पु०) अव-ग्रह-घञ्। १ वृष्टि व्याघात, पानीका न बरसना। २ सूखा। ३ हस्तिका ललाट। ४ शाप, कोसना।

अवघट (सं० पु०) अव-घट आधारे घञ्। १ गर्त, गड्ढा। २ छिद्र। करणे घञ्। ३ पेषणयन्त्र, पीसनेका कल, जांता, चक्की प्रभृति। भावे घञ्। ४ चालन। ५ घोंटा वा घुरान। १ कुघट। २ अटपट। ३ अड़बड़। ४ विकट। ५ दुर्गम। ६ कठिन। ७ दुर्घट। (क्लो०) भावे ल्युट्, अवघटन (अवघट देखो)। (स्त्री०) युच् टाप् अवघटना।

अवघटित (सं० त्रि०) अव-घट-कर्मणि क्त। चालित, चलाया हुआ, जो चलाया गया हो।

अवघर्षण (सं०क्लो०) अव-घृष्-ल्युट्। १ नीचे रख घिसना। २ घर्षण। ३ मार्जन।

अवघात (सं० पु०) अव-हन-घञ्। १ चोट, अवहनन। २ चावल प्रभृति। ३ हनन। ४ ताड़नमात्र, सभी तरहका ताड़न। घन प्रहार।

अवघातिन् (सं० त्रि०) अवहन्ति अव-हन-णिनि उपधावृद्धिः हकारस्य घकारः। अवघातक, जो घात करता हो। (स्त्री०) ङीप्। अवघातिनी। अवघातिका, घात करनेवाली स्त्री। जो स्त्री घात करती हो।

अवघुष्ट (सं० त्रि०) अव-घुष्-क्त। प्रचारित, जनाया हुआ, जो सबको जना दिया गया हो।

अवघूर्णन (सं० क्लो०) अव-घूर्ण-भावे ल्युट्। सब जगह घूम करके।

अवघोटित (सं० त्रि०) अव-घुट विनिमये क्त। १ परिवर्तित, उलट-पलट किया हुआ। २ बदली वस्तु, बदलेकी हुई चीज। परिवर्त विवाहमें वर और कन्याको भी अवघोटित कहा जाता है। ३ सर्वदिग्वेष्टित, चारो तरफ घिरा हुआ। परिवृत्त, अनेक देश घूम प्रत्यागत। सबदेशसे घूमकर आया हुआ। ४ व्याहत, रुका हुआ।

अवघोषण (सं० क्लो०) अव-घुष्-भावे ल्युट्। इस तरह उच्च स्वरसे कहा हुआ, कि सब कोई जान गया हो। (स्त्री०) युच् टाप्—अवघोषणा, उच्च घोषणा। जोर-जोरसे कहना।

अवघ्राण (सं० त्रि०) अवघ्रायतेस्म अव-घ्रा-कर्मणि क्त, वा तकारस्य नकारः। जिसका घ्राण (गन्ध) ले लिया गया हो। जो वस्तु सुंघा हुआ हो। (क्लो०) भावे क्त। घ्राण लिया, सूंघा। नुदविदोन्दत्राघ्राह्रीभ्योऽन्यतरस्याम्। पा ८।२।५६। नुद, विद, उन्द, त्रै, घ्रा, ह्री ये सब धातुके निष्ठाको विकल्पसे न होता है।

अवघ्रात (सं० त्रि०) अवघ्रायतेस्म अव-घ्रा-कर्मणि क्त। यहां निष्ठाके स्थानमें नकार न हुआ। जिसका घ्राण ले चुके। जो सूंघा हुआ हो। (क्लो०) भावे क्त। सूंघा हुआ। निष्ठाके न होनेका सूत्र अवघ्राण शब्दमें देखो।

अवचक्षण (सं० त्रि०) अव कुत्सितं च ष्टे चक्ष-कर्तरि ल्यु। १ कुत्सिताख्यानकर्ता, खराब बात बोलनेवाला। २ निन्दाकारी, जो दूसरेको निन्दा करता हो। ३ अपवादकारी, झूठा किसीका दोष लगानेवाल। चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि। अयं दर्शनेऽपि। इकारोनुदात्तो युजर्थः विचक्षण प्रथमः। (सिद्धान्तकौ०) कात्यायनने वार्तिकसूत्र किया है 'असनयोश्च प्रतिषेधो वक्तव्यः।' अस् एवं अन् प्रत्यय विधान करनेसे ख्या नहीं होता। तज्जन्य नृ-चक्ष-अस् नृचक्षा राक्षसः। एवं वि-चक्ष-अन विचक्षण, अव-चक्ष-अन अवचक्षण इत्यादि रूपसिद्ध हुआ है।

अवचट (हिं० पु०) अनजान। अचक्का। कठिनाई। अवघट। अंडस। चपकुलिस।

अवचन (सं० क्लो०) न वचनं कुत्सायां, नञ्-तत्। १ निन्दा। अभावे नञ्-तत्। २ वचनाभाव, वचनका न रहना। (त्रि०) नास्ति वचनं यस्य। नञ् बहुव्री०। ३ वाक्यशून्य, जो बोलता न हो। ४ गुंगा।

अवचनीय (सं० त्रि०) वक्तुमर्हं वच्-अर्हार्थे अनीयर्

ततो नञ्-तत्। १ बोलनेके अयोग्य वाक्य, जो बात बोलने या कहने योग्य न हो। २ अश्लील वाक्य, फूहर या नीच बात। वचनीयं निन्द्यं ततो नञ्-तत्। अनिन्दनीय, प्रशंसनीय। जो प्रशंसाकरने योग्य हो।

अवचय (सं० पु०) अव-चि-अच्। पुष्पादि चयन करना, चुनकर इकट्ठा करना। फल या फल तोड़कर बटोरना।

अवचाय (सं० पु०) अव-चि-घञ्! १ हस्तद्वारा पुष्प फलादिका ग्रहण करना। यष्टि (लाठी) प्रभृति द्वारा या चौर्यादि द्वारा चयन होनेपर अच् प्रत्ययनिष्पन्न अवचय शब्द होता है। हस्तादाने चेरस्तेये। पा ३।३।४०। यदि हस्त द्वारा ग्रहण करना अर्थ मालूम परे तब ही चिधातुके उत्तर घञ् प्रत्यय होता है। हस्तादाने किं, वृक्षाग्रस्थानात् फलानां यष्ट्या प्रचयं करोति। अस्तेये किं पुष्पप्रचय चौर्य्येण। (उक्त सूत्रमें सि० कौ०)

अवचित (सं० त्रि०) अवचीयते स्म अव-ची-कर्मणि क्त। १ सञ्चित, इकट्ठा किया हुआ। २ गृहीत पुष्पादि "अवचितवलिपुष्पा" (कुमारसम्भव १।६०) जो पूजाके लिये पुष्प चयन करते हैं।

अवचितगढ़—बम्बई प्रान्तके कोङ्कण ज़िलेका क़िला। बाहरी दीवारको जो कंटीली शहरपनाह बनी है, उससे साबित होता है, कि प्राचीन वीर क़िलेको बहुत क़दर करते थे।

अवचूड़ (सं० क्लो०) अवनतं चूडाया:। ५ प्रादि० स०। १ ध्वजाका अधोमुख वस्त्र। ध्वजाका निम्न मुख अङ्ग चामरादि। (त्रि०) अवगता चूडा किरीटादि यस्य, प्रादि बहुव्री०। २ मस्तकका चूड़ा या किरीटादि शून्य, ध्वजाशून्य। ३ जिसका चूड़ा संस्कार हुआ न हो।

अवचूरी (सं० स्त्री०) टिप्पणी। टीका।

अवचूर्णन (सं० क्लो०) अव-चूर्ण भावे ल्युट्। १ पेषण, पीसना। चूर्ण करना। अव-चूर-णिच्-ल्युट्, णिच् लोप:। २ चूर्ण करना, ध्वंस करना। ३ सुश्रुतोक्त व्रणविशेष।

अवचूर्णित (सं० त्रि०) अव-चूर्ण पेषणे कर्मणि क्त जो चूर्ण किया हो। गुंडा किया द्रव्य। चूर्ण रवध्वसते, अवचूर्णि इस नामधातुके उत्तर क्त। चूर्ण करके जिसका ध्वंस किया गया हो।

अवचूल (सं० क्लो०) अवनता चूड़ा अग्रं यस्य बहुव्री। यहां डकारके स्थानपर पक्षमें लकार हो गया है। ध्वजाके अग्रभागमें बंधा अधोमुख वस्त्र और चामरादि। ध्वजादिका अङ्गविशेष। ऋक्के अच् मध्ये डकार स्थाने ळ होता है एवं ढकारके स्थानेमें ळहकार हो जाता है। सायणाचार्य्य "अग्निमीळे पुरोहितम्" इत्यादि १।१।१ ऋचाके भाष्यमें लिखे हैं—ईळे (ईडस्तौ) डकारस्य ळकारो बह्वृचाध्येतृसम्प्रदायप्राप्त: तथाच पठ्यते अज्मध्यस्थ ळकारं बह्वृचा जगु:। अज् मध्यस्थ ढकारस्य ळहकारं वा यथा क्रमम्।' इसी तरह वर्णव्यतिक्रम हो परिशेषमें ढकार मूर्द्धन्य वर्ण रहनेसे ळहकार हो जाता है। इसका विशेष विवरण डकार वर्णमें देखो।

अवचूलक (सं० क्लो०) अवचूलमिव प्रकृति, इवार्थे संज्ञायां वा कन् प्रत्यय:। चामर।

अवच्छद (सं० पु०) ढकना। सरपोश।

अवच्छिन्न (सं० त्रि०) अव-छिद-क्त। किसी विशेषण द्वारा जिसे विशेष रूपसे कहा गया है। जैसे—'जटावच्छिन्न तापस' ऐसा कहनेसे यह समझा जाता है, कि जटाद्वारा तापसको अन्यान्य व्यक्तियोंसे विशेष किया गया है। अर्थात् यहां जटा विशेषण स्वरूप है। जटा देखकर समझा जाता है, कि जटाधारी व्यक्ति एक तपस्वी हैं। विशेषण द्वारा विशेष करनेको एवं किसी वस्तु द्वारा सीमा निर्दिष्ट की जाय उसे भी अवच्छिन्न कहते हैं। जैसे, घटको कारणता दण्डत्वावच्छिन्न है, ऐसा कहनेसे घटकी कारणता सब दण्डोंमें ही है, दण्ड भिन्न और किसीमें नहीं है, यही समझा जाता है, सुतरां वहां दण्डत्व द्वारा घटकी कारणताकी सीमा निर्दिष्ट की गई है। जो एक वस्तुसे दूसरे वस्तुको व्यवच्छेद अर्थात् विभिन्न कर देता है, उसका नाम अवच्छेदक है। अवच्छेदकके धर्मको अवच्छेदकता कहते हैं। अवच्छेदकता-धर्ममें कहीं स्वरूप-सम्बन्ध विशेष और कहीं अनतिरिक्त वृत्तित्व देखा जाता है। जैसे, दण्डका दण्डत्व स्वरूप धर्म दण्ड ही में रहता है, दण्डभिन्न अन्य किसी

वस्तुमें दण्डत्व नहीं रह सकता। और भी दण्डमें जो सब धर्म है, उसके अतिरिक्त अन्य धर्मको वह विभिन्न कर देता है, इसलिये वह घटादिका कारणतावच्छेदक होता है। इसके उसके द्वारा दण्डका निरूपण किया जाता है।

जिसका अभाव है वही उस अभावका प्रतियोगी है। जैसे, 'घटका अभाव,' ऐसा कहनेमे घट ही उस अभावका प्रतियोगी है। प्रतियोगीके धर्मका नाम है प्रतियोगिता। 'घटका अभाव' कहनेसे, वह प्रतियोगिता घटभिन्न अन्य किसी वस्तुमें रह नहीं सकती। सुतरां वह पटादिके अभावको प्रतियोगिताको व्यवच्छेद कर देती है। इसलिये घटत्व उसका अवच्छेदक है। अतएव वह प्रतियोगिता ही घटत्वावच्छिन्न है।

परिमाणादिसे इयत्ता करनेको अवच्छिन्नत्व कहते हैं। जिस वस्तुको इयत्ताकी जाती है, वही वस्तु उसका परिमाणावच्छिन्न है। जैसे, द्रोणव्रीहि, द्रोण परिमाणावच्छिन्न व्रीहि; अर्थात् द्रोणपरिमित व्रीहि।

विशिष्ट अर्थात् स्थित अर्थमें भी 'अवच्छिन्न' शब्द प्रयुक्त होता है। जैसे,—'गृहावच्छिन्न आकाश,' गृहविशिष्ट अर्थात् गृहमें स्थित आकाश।

वेदान्त-मतमे, अन्तःकरणावच्छिन्न चैतन्य जीव, अर्थात् अन्तःकरणविशिष्ट वा अन्तःकरणमें स्थित चैतन्यका नाम जीवात्मा है।

अवच्छिन्नवाद (सं॰ पु॰) अवच्छिन्नस्य अन्तःकरण विशिष्टतया जीवस्य वादो व्यवस्थापनं यत्र। बहुव्री॰। वेदान्तमें ऐसा मत स्वीकार किया गया है, कि अन्तःकरणमें चैतन्य रूप जीवात्मा है। अतएव उसके प्रतिपादक मतको 'अवच्छिन्नवाद' कहते हैं।

यह अवच्छिन्नवाद दो प्रकारका है। कोई कोई कहते हैं, कि अन्तःकरणमें प्रतिविम्बविशिष्ट चैतन्यका नाम जीवात्मा है। और किसीके मतसे, अन्तःकरणविशिष्ट चैतन्यका ही नाम जीवात्मा है। इन दोनों पक्षोंमें अन्तःकरणावच्छिन्नवादी, अन्तःकरण प्रतिविम्बावच्छिन्नवादीको यह कहकर दोष देते हैं, कि रूपविशिष्ट वस्तुका ही प्रतिविम्ब होता है। किन्तु चैतन्य-रूपशून्य निरवयव वस्तु है, सुतरां उसका प्रतिविम्ब रहना असम्भव है। अधिकन्तु, प्रतिविम्ब आप कुछ भी नहीं है, वह अन्य वस्तुको छाया मात्र है, उसका अपना अस्तित्व कुछ भी नहीं है। सुतरां प्रतिविम्बको जीवात्मा कहनेसे जीवात्माका भी कुछ भी अस्तित्व नहीं रहता। अतएव जो खुद कोई चीज नहीं है, उसका बन्धन और मोचन कैसे सम्भव हो सकता है।

नैयायिककी तरह वेदान्तिक भी स्वीकार करते हैं, कि आकाश एकके सिवा दो वा उससे अधिक नहीं है। पर उसी एक आकाशके स्थानभेदसे विभिन्न प्रकारके नाम होते हैं। उसी तरह चैतन्य भी एक ही है, केवल अन्तःकरण प्रभृति आधारविशिष्ट कहनेसे उसका भिन्न भिन्न नाम होता है। घटके चारो ओर आकाश वेष्टित रहता है, पर उस घटको स्थानान्तरित करनेमे उसके चारो ओरका आकाश उसके साथ साथ नहीं जाता। जीवात्माकी भी ठीक वही दशा है। इहलोक और परलोकमें उसकी गतिविधि नहीं है। केवल उपाधि भेदसे ही उसे 'इहलोक गमन' किंवा 'परलोकगमन' ऐसा नाम दिया जाता है। उसी कारणसे जीवात्माके बन्धन एवं मोचनमें कोई व्याघात नहीं लगता।

जो उपाधिद्वारा इस अज्ञानाधीन संसारमें प्रवृत्ति होती है, उसीका नाम जीव है। उस जीवका बन्धन होता है। जिस उपाधिसे परमात्मारूपसे संसारमें प्रवृत्ति नहीं होती, उसका बन्धन भी नहीं होता, सुतरां मोक्ष होता है।

अवच्छिन्नत्व (सं॰ क्ली॰) १ व्यापकत्व। यथा सरोवरमें वह्निमत्ता (अग्निकी स्थिति) युक्त समुद्र निरूपित प्रतिबन्धकता रहनेपर, सरोवर वह्निमान् नहीं है, ऐसा निश्चयीभूत विषयको अवच्छिन्नत्व कहते हैं। (गदाधर)

२ सामानाधिकरण्य। जैसे वह्निव्याप्य धूमवान् पर्वत, ऐसा परामर्शनिरूपित धूमनिष्ठ दो विषय (सम्बन्ध और रूप) का अवच्छेद्य तथा अवच्छेदक भाव। ३ स्वरूपसंबन्ध विशेष, जैसे आगे (ऊपर)

वृक्ष कपिसंयोगी है मूलमें नहीं—इत्यादिमें कपि-संयोगका अग्रभाग अवच्छिन्नत्व है। ४ 'यह इसके युक्त रहनेपर ऐसा होता' ऐसा प्रतीतिसाक्षिक स्वरूप सम्बन्ध विशेष। (वह संसर्ग मर्यादासे प्रविष्ट रहता है) यथा "तद्विशिष्टविशेष्यकत्वावच्छिन्नतत्प्रकारकत्वं प्रामाण्यम्" (मथुरानाथ) इत्यादिमें रजत (चांदी) रहनेपर 'यह रजत' ऐसा ज्ञाननिष्ठ यह विशेष्यक, रजत प्रकारकका अवच्छेद्य अवच्छेदक भाव होता है। यहां पर यह नियम है, जिन दो विषयमें निरूप्य निरूपक भाव रहता, उन्हीं दो विषयोंमें अवच्छेद्य-अवच्छेकभाव भी होता है। यह एतद्विशेष्यकत्व अंशमें एतत्प्रकारक होता, इस तरह प्रतीतिसाक्षिकस्वरूप सम्बन्धविशेष यथा "तद्विशेष्यकत्वावच्छिन्नतत्प्रकारताशाल्यनुभवस्तत्प्रमेत्यादौ!" (मूल मथुरानाथी)

५ विशिष्टत्व, जैसे घटत्वावच्छिन्न घट इत्यादिमें घटका घटत्वावच्छिन्नत्व अर्थात् घटवृत्तित्व (घटमें रहनेवाला) सिद्ध होता है। ६ साहित्य, यथा—शरीरावच्छिन्न अर्थात् शरीरयुक्त आत्मामें भोग होता—इत्यादिमें आत्माका शरीरावच्छिन्नत्व है। ७ अनुकूलत्व या प्रयोजकत्व। जैसे फलावच्छिन्न व्यापारका धात्वर्थ—इसमें व्यापारका फलावच्छिन्नत्व है।

अवच्छुरित (सं० क्ली०) अव-छुर-भावे क्त। १ उच्चहास, ज़ोरसे हंसना। स्वार्थे कन् अवच्छुरितक। अट्टहास। (त्रि०) कर्मणि क्त। २ मिश्रित।

अवच्छेद (सं० पु०) अव-छिद्-भावे घञ्। १ छेदन। अलगाव, भेद। २ सीमा। ३ विशेष करना। ४ इयत्ता। ५ अवधारण, निश्चय, छानबीन। ६ व्याप्ति। अवछिद्यते अनेन करणे घञ्। ७ इयत्ता साधन, नापनेका यन्त्र (पात्र।) ८ संगीतसम्बन्धीय मृदङ्गके बारह प्रबन्धोंमें एक प्रबन्ध। ९ परिच्छेद, विभाग। जो वस्तु किसी आधारके एक देशमें रहे, दूसरे किसी अवयवमें न हो, उसको अव्याप्य-वृत्ति कहते हैं। जैसे घट यहां है, वहां नहीं; तो इस जगह आधारके अवयव द्वारा निरूपण कर अवयव बोला जायगा—यही अव्याप्यवृत्तिका निरूपक है। जैसे वानर वृक्षके अग्रभाग पर रहता, तो वृक्षके अग्रभाग ही के साथ वानरका संयोग होता, वृक्षके मूलके साथ संयोग नहीं रहता, इसलिये इस स्थलमें वानरका संयोग अव्याप्य वृत्ति ठहरता है। शास्त्रकार इसको कपिसंयोग कहते हैं। वृक्षके मूलमें वानरका संयोग नहीं होता, इस वास्ते वृक्ष मूल अव्याप्यवृत्तिका नियामक, अतएव यही वृक्षमूल और अग्रभागको अवच्छेद कहा जाता है। अवच्छेद देशव्यापी और कालव्यापी होता है। उसमें देशव्यापी होते भी सर्वत्र कालव्यापी नहीं रह सकता। इसलिये काल ही अव्याप्यवृत्तिताका निरूपक है। जैसे, जाग्रत आत्मामें ज्ञान होता; किन्तु सो जानेसे आत्मा रहते भी ज्ञान चला जाता है। इसलिये यहां निद्राकाल ही ज्ञानको अव्याप्यवृत्तिका निरूपक है।

अवच्छेदक (सं० त्रि०) अविच्छिनत्ति स्वस्मात् अन्यतो वा पृथक् करोति, अव-च्छिद-ण्वुल्। छेदक, तोड़नेवाला, जो अलग कर देता हो। २ इयत्ता-कारक, सीमाकारक, हद बांधनेवाला। ३ अवधारक, यक़ीन् रखनेवाला। ४ अवच्छिन्न शब्द द्वारा बतायी हुई अव्याप्यवृत्तिका विषय निरूपक।

विशेष विवरण अवच्छिन्न शब्दमें देखो।

अवच्छेदकता (सं० स्त्री०) १ अवच्छेद करनेकी स्थिति, अलग रखनेकी हालत। २ इयत्ता लगानेकी बात, हद बांधनेका काम।

अवच्छेदकत्व (सं० क्ली०) १ स्वरूपसम्बन्ध विशेष। यह कहीं प्रतियोग्यंशप्रकारीभूत धर्मवान् होता है। जैसे—प्रमेय धूमाभावप्रतियोगिताका अवच्छेदकत्व धूमत्वमें निश्चय किया गया अर्थात् "संभवतिलघौ गुरौ तदभावात्" इस नियम द्वारा प्रमेयत्वविशिष्ट धूमत्वमें अवच्छेदकत्व न मान शुद्ध धूमत्वमें ही अवच्छेदकत्व स्वीकार किया गया, फिर किसी स्थलमें अनतिरिक्त वृत्तित्व रहता है। यह दो प्रकारका होता है। प्रथम—"तच्छून्यावृत्तित्वे सति तदधिकरणवृत्त्यभावाप्रतियोगित्वम्।" जैसे घटाभाव प्रतियोगिताका अवच्छेदकत्व घटत्वमें है। दूसरा व्यावर्तकत्व—यथा घटकारणताका अवच्छेदकत्व दण्डत्वमें है। फिर किसी जगह—'तदधिकरणस्य तन्निष्ठ-धर्मावच्छेदकत्वम्'। यथा 'मूले वृक्षे न कपिसंयोगः शाखायाम्।'

अर्थात् कपिसंयोग मूलमें नहीं शाखामें होता, इत्यादि स्थलमें वृक्षाधिकरण मूलका वृक्षनिष्ठ कपिसंयोग भावावच्छेदकत्व, और वृक्षाधिकरण शाखादिका वृक्षनिष्ट कपिसंयोगावच्छेदकत्व है। २ अवच्छेदकत्व नामक विषयतात्मक स्वरूप सम्बन्ध विशेष। यथा वह्निसाधन पर्वतमें 'पर्वतो वह्निमान्' यह अनुमित्यात्मक ज्ञानीय वह्निनिष्ठ विधेयता निरूपितोद्देश्यतावच्छेदकत्व है। ३ स्वाश्रयजन्यत्व या स्वाश्रयविशेषणत्व। जैसे—धात्वर्थतावच्छेदक फल शालित्व कर्म होता है,—यहां पर फलमें धात्वर्थका अवच्छेदकत्व है। ४ व्यापकत्व। यथा—पर्वतत्वावच्छेदसे वह्निमें पर्वतत्व व्यापक अग्निप्रतियोगिक संयोगत्वका अवगाहमान संसर्गतावच्छेदकत्व होता है। ५ व्याप्यत्व। जो विषय अनुमितिका प्रतिबन्धक हो। जैसे 'ह्रदो न वह्निमान्' अर्थात् तालाब अग्नि युक्त नहीं—ऐसा निश्चय होनेपर 'ह्रदो वह्निमान्' इस अनुमिति जन्य ज्ञानका प्रतिबन्ध होता; अतएव उसका अवच्छेदकत्व है। ६ तदधिकरण वृत्तिसे ज्ञायमानत्व। जैसे घट पट नहीं—इत्यादिसे घटत्वमें पटनिष्ठ (पटमें रहनेवाली) प्रतियोगिताको अवच्छेदक माना जाता है। ७ विशेषणत्व। ८ नियामक। कोई नियामक, कोई अवच्छेदकत्व कहते हैं। सामान्यत: अवच्छेद्य और अवच्छेदक भाव दो तरह का होता है। स्वरूप सम्बन्ध रूप और व्याप्य व्यापक भाव। उसमें प्रथम इस समय—गोष्ठमें गो नहीं—ऐसा कहनेपर एतत्काल गवाभावका अवच्छेद्यावच्छेदक भाव है। दूसरे—पृथिवी रूपवती हैं—इत्यादिमें रूप और पृथिवीत्वका अवच्छेद्य अवच्छेद्यक भाव है। (गदाधरी)

अवच्छेदकत्वनिरुक्ति (सं॰ पु॰) अवच्छेदकत्वे तत् पदार्थनिर्णयविषये निर्निश्चया उक्तिर्यस्मिन्, बहुव्री॰। १ नवद्वीपनिवासी रघुनाथ शिरोमणि-कृत अवच्छेदकत्व पदार्थनिश्चायक न्यायशास्त्रके अनुमान-खण्डान्तर्गत ग्रन्थविशेष। (स्त्री॰) अवच्छेदकत्वे तत् पदार्थनिश्चयविषय उक्तिः, ७-तत्। २ अवच्छेद-पदार्थकी निश्चायक वृत्ति।

अवच्छेदन (सं॰ क्ली॰) १ कटायी, तराशी। २ विभाजन, तक्सीम, बंटवारा। ३ पहचान, शिनाख्त।

अवच्छेद्य (सं॰ त्रि॰) अवच्छेत्तुं अर्हम्, अव-छिद-अर्हार्थे ण्यत्। १ छेदनार्ह, काटनेके काबिल। २ अवधारणीय, यक़ीन् लाने लायक़। ३ विशेषणीय, तारीफ़के क़ाबिल। (पु॰) ४ अवच्छेदार्ह पदार्थ, अलग रखने लायक़ चीज़। जैसे घटनिष्ठ घटाभावको प्रतियोगिता घटत्व द्वारा ही अवच्छेद्य बनती अर्थात् उस जगह घटत्व ही अन्य प्रतियोगिता हटा घटप्रतियोगिताको अलग करता है।

अवच्छेद्यावच्छेद (सं॰ पु॰) साधारण बनानेवाला, जो विभेद न रखता हो।

अवछंग, उछंग देखो।

अवजनित (सं॰ त्रि॰) उत्पन्न हुआ, पैदा हुआ।

अवजय (सं॰ पु॰) अव-जि-अच्। पराजय, हार।

अवजित (सं॰ त्रि॰) १ परास्त, जीता हुआ, जो हार गया हो। २ अनवधारित, दिलसे उतर जानेवाला।

अवजुष्ट (सं॰ त्रि॰) देखा-भाला, जाना-माना, समझा-बूझा।

अवज्ञा (सं॰ स्त्री॰) अव-ज्ञा-अङ्-टाप्। १ अनादर, बेइज़्ज़ती। २ अवमानना, नाफ़रमानबरदारी। ३ पराजय, हार। ४ काव्यालङ्कारविशेष। इसमें एक वस्तु दूसरेके दोष-गुण नहीं लेता।

अवज्ञान (सं॰ क्ली॰) अव-ज्ञा-भावे ल्युट्। १ अवमान, अनादर, तिरस्कार।

अवज्ञेय (सं॰ त्रि॰) अव-ज्ञा-कर्मणि यत्। १ अनादरणीय, अपमानके योग्य। २ तिरस्कार्य्य, तिरस्कारके योग्य।

अवट (सं॰ पु॰) अवः तत्पर्य्यन्तमटति अव-अट्-अच्। १ गर्त, गड्ढा। २ भूमिके मध्यस्थित रन्ध्र, कुण्ड। ३ छिद्र। ४ कूप। "अन्तरमवटच्छिद्रं निम्नवनं रन्ध्रशीककुहरदया:।" (हलायुध) ५ देहस्थ निम्नस्थान, गलेके नीचे कांधे और कांख प्रभृतिका गड्ढा। ६ हाथियोंका फंसानेके लिये गड्ढा। इसे घाससे ढांक देते हैं।

७ नरक विशेष । (पुं०) नञ्-तत् । ८ वटवृक्ष भिन्न, वट छोड़ कर दूसरा कोई पेड़ ।

अवटना (हिं० क्रि०) १ मथना । २ किसी द्रव पदार्थको आगपर जला गाढ़ा करना ।

अवटनिरोधन (सं० पु०) अवटे गर्त्ते निरुध्यते अत्र अवट-निरुध-आधारे ल्युट् । नरक विशेष, जिस नरकमें गड्ढे के बीच पापी लोग कष्ट भोग करते हैं ।

अवटि (सं० स्त्री०) अवति रक्षति सर्पादिकं अव-अटि । १ गर्त, गड्ढा । २ कूप । (स्त्री०) वा ङीप् अवटी ।

अवटीट (सं० त्रि०) चपटी नाकवाला, जिस व्यक्तिकी नाक चपटी हो ।

अवटु (सं० पु०) अव-टीक्-डु । १ गर्त, गड्ढा । २ वृक्षविशेष, कोई पेड़ । ३ कूप, कुवां । ४ ग्रीवाका पश्चात् भाग । ५ देहका निम्न स्थान । न वटुः ब्राह्मणः नञ्-तत् । ६ जो ब्राह्मण न हो ।

अवटुज (सं० पु०) अवटौ अवटोर्वा जायते अवटु-जन-ड ७ वा ५ तत् । १ मस्तकका अन्तिम केश, चोटी । २ जुलफ् ।

अवटोदा (सं० स्त्री०) अवटस्य कूपस्य उदकमिव उदकं यस्याः, ६ बहुव्री०, उदकस्य उदादेश ततः स्त्रीत्वात् टाप् । भारतवर्षीय नदी विशेष, भारत-वर्षकी कोई नदी ।

अवडङ्क (सं० पु०) अव अवगतः वृद्धिं गतः, शब्दो यस्मात् ५-बहुव्री० । हट्टस्थान, बाजार । मता-न्तरसे इस अर्थमें अवद्रङ्ग शब्द व्यवहृत होता है ।

अवडीन (सं० क्ली०) अव-ओडीङ् विहायसागतौ भावे क्त, ओदित्वात्तस्य नकारः । अवरोहणरूप पक्षी की गति विशेष, आकाशके उपरसे पक्षियोंका नीचे आना । ओदितश्च । पा ८ । २ । ४५ । उकार इत्संज्ञक धातुके उत्तरस्थ निष्ठाके स्थानमें नकार होता है । "ओदित्त्वाध्यो डीङः पाठसामर्थ्यान्नेट्" (सि० कौ० ।)

अवत (सं० पु०) अव-अत-अच् । कूप । निघण्टुमें कूपका यह कितना ही पर्याय है—कूप, कातु, कर्त, वव्र, काट, खात, अवत, क्रिवी, सूद, उत्स, ऋश्यदात्, कारोतरात्, कुशय, केवट, अवट । "ऊर्ध्वं नुनुद्रेऽवतं ।" ऋक् १।८५।१० । 'अवतशब्दो भवतौल्ववतः कूपः । कूपनामसु चावतोऽवट इति पठितम् ।' (सायण)

अवतंस (सं० पु०-क्ली०) अवतन्स्यते अलंक्रियते अनेन । अव-तन्स्-करणे घञ् । १ कर्णपूर, कर्णपुर, कर्णभूषण । २ शिरोभूषण, शिरका भूषण, मुकुट-किरीट प्रभृति । 'अवतंसो कर्णपूरेऽपि भूषणे ।' (अमर) ३ टीका । ४ श्रेष्ठ । ५ माला, हार । ६ बाली मुरकी । ७ भाईका पुत्र, भतीजा । ८ दूल्हा । ९ गिरिशृङ्ग ।

अवतंसित (सं० त्रि०) अव-तंस-क्त । भूषित, अलङ्कृत । इसमें विकल्प अकारका लोप हो जाने-पर 'वतंसित' रूप रहता है । अपि शब्द देखो ।

अवतमस (सं० क्ली०) अवततं व्याप्तं तमः अजन्त-प्रादिस० । व्याप्त अन्धकार, भरा हुआ अन्धकार । अवसमन्धेभ्यस्तमसः । पा ५ । ४ । ७९ । अव, सम, अन्ध इन सब शब्दसे परस्थित तमस् शब्दके उत्तर अच् प्रत्यय होता है ।

अवतरण (सं० क्ली०) अव-तृ-भावे ल्युट् । १ ऊप-रसे नीचे आना, उतरना । २ पार होना । ३ शरीर धारण करना, जन्म ग्रहण करना । ४ प्रतिकृति, नकल । ५ प्रादुर्भाव । अवतीर्य्यते येन करणे ल्युट् । ६ नद्यादिका सोपान, घाटकी सिढ़ी । ७ सिढ़ी, जिससे उतरें । ८ तीर्थ, घाट ।

अवतरणिका (सं० स्त्री०) १ ग्रन्थकी प्रस्तावना, भूमिका, उपोद्घात, अवतरणी । २ परिपाटी, रीति ।

अवतरणी (सं० स्त्री०) अवतरति ग्रन्थोऽनया अव-तृ-करणे ल्युट् । १ ग्रन्थके प्रस्ताव निमित्त मुख-बन्ध, ग्रन्थकी प्रस्तावनाके लिये जो भूमिका इस अभि-प्रायसे लिखी जाती है, कि विषयकी संगति मिल जाय, ग्रन्थारम्भ, उपोद्घात । २ परिपाटी, रीति ।

अवतरना (हिं० क्रि०) प्रकट होना, उपजना, जन्मना ।

अवतार (सं० पु०) अवतीर्यते अनेनास्मिन् वेति करणे अधिकरणे वा । अवे तॄस्त्रोर्घञ् । पा ३।३।१२० । १ तीर्थ । २ वापी । ३ पुष्करिणी कूपादिका सोपान, तालाब कुवें वगैरहकी सिढ़ी । ४ प्रादुर्भाव, अवतरण । ५ देवताओंका शरीरोद्भव अवतार ।

पुराणादिमें असंख्य अवतारोंकी बात लिखी है। उनमें ये कई प्रसिद्ध हैं,—ब्रह्मा, नारद कपिल, दत्तात्रेय, यज्ञ, ऋषभदेव, पृथु, मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, वेदव्यास, धन्वन्तरि, मोहिनी, राम, बलराम, कृष्ण, नरनारायण, बुद्ध एवं कल्की।

पृथिवी और वेदके उद्धार तथा दुष्टोंके दमनके लिये विष्णुने दश बार भूमण्डलमें अवतार ग्रहण किया था। विष्णुके दश अवतार यथा,—१ मत्स्यावतार, २ कूर्मावतार, ३ वराह अवतार, ४ नृसिंहावतार, ५ वामन अवतार, ६ परशुराम अवतार, ७ रामावतार, ८ कृष्ण और बलराम अवतार, ९ बुद्ध अवतार, १० कल्की अवतार।

मुण्डमाला तन्त्रके मतानुसार प्रकृतिसे ही ये सब अवतार उत्पन्न हुए थे—कृष्णरूपा काली, रामरूपा तारिणी, कूर्मरूपा बगला, मीनरूपा धूमावती, नृसिंहरूपा छिन्नमस्ता, वराहरूपा भैरवी, परशुरामरूपा सुन्दरी अर्थात् षोड़शी, वामनरूपा भुवनेश्वरी, बुद्धरूपा कमला और कल्कीरूपा मातङ्गी। दशावतार देखो।

अवतारण (सं० क्ली०) अव-तृ-णिच्-ल्युट्। १ भूत की झाड़। २ वस्त्रके अञ्चलसे भूतका अर्चन। ३ ग्रन्थकी प्रस्तावना। (स्त्री०) करणे ल्युट् अवतारणी। 'अवतारणभूतादि ग्रहे वस्त्राञ्चलार्चने।' (विश्व)

अवतारना (हिं० क्रि०) १ उत्पन्न करना, रचना। २ उतारना, जन्म देना।

अवतारित (सं० त्रि०) अव-तृ-णिच्-क्त। १ अवरोपित। २ रचित।

अवतारी (हिं० वि०) १ उतरनेवाला, अवतार ग्रहण करनेवाला। २ देवांशधारी।

अवतीर्ण (सं० त्रि०) अव-तृ-कर्तरि क्त। १ कृतावगाहन, जो नदी प्रभृति मंझा चुका हो। २ कृतावरोहण, जो ऊपरसे नीचे आ गया हो। ३ अन्यरूपविशिष्ट प्रादुर्भूत, जो दूसरा रूप धर आया हो।

अवतूलन (सं० क्ली०) अव-तूल अवघट्टनार्थे णिच् भावे ल्युट् णिच् लोपः। तूलद्वारा अवघट्टन किया हुआ, जो रूईसे तौला गया हो।

अवतोका (सं० स्त्री०) अवपतितं गर्भस्थापत्यं यस्याः। प्रादि ६-बहुव्री०। जिस स्त्रीके गर्भ न रहे, स्रवद्गर्भा, गर्भ गिरानेवाली स्त्री। 'अवतोकातु स्रवद्गर्भा।' (अमर)

अवत्त (सं० त्रि०) अव-दा-क्त। १ खण्डित। २ दत्त, दिया हुआ। ३ देकर पुनः गृहीत। अव उपसर्गात्तः। पा ७।४।४१। क्तिसंज्ञक तकारादि प्रत्यय परे रहनेसे अजन्त उपसर्गसे पर घु संज्ञक दा स्थानमें तकार होता है।

अवत्तिन (सं० त्रि०) अवत्तमस्तास्य अवत्त (अत इनिठनौ। पा ५।२।११५ इति इनि)। जो खण्डित हो गया हो, जिसकी आशा नष्ट हो गयी हो।

अवत्सार (सं० पु०) न वत्सं सन्तानं ऋच्छति लभते वत्स-ऋ-घञ् ततो नञ् तत्। ऋग्वेदोक्त ऋषि विशेष। 'अवत्सारस्य स्पृणवाम रणभिः' (ऋक् ५।४४।१०) "अवत्सारस्य वेषामृषीणाम्।" (इति सायण)

अवदंश (सं० पु०) अवदृश्यते मद्यपानानन्तरं चर्व्यते अव-दंश-कर्मणि घञ्। मद्यपानके रुचिकर द्रव्य, मद्यपानके समय जो बड़े आदि खाए जाते हैं, गज़क, चाट, शुद्धि।

अवध्मात (सं० त्रि०) अव-ध्मा-क्त। १ अनादृत, तिरस्कृत, बेइज्जत, जो झिड़का गया हो।

अवदत्त (सं० त्रि०) अवदातुं दत्वा पुनर्ग्रहीतुं दातुं वा आदि कर्मणि कर्तरि क्त दद् आदेशः। १ खण्डित, जो देकर फिर ले लिया गया हो। २ दत्त। आदि कर्मणि क्तः कर्तरि च। पा ३।४।७१। आदिकर्म अर्थात् कर्मके पूर्व क्रियाका उल्लेख रहने पर कर्तृवाच्य क्त प्रत्यय होता है। भाव एवं कर्मवाच्यमें यथाविहित क्त प्रत्यय होता है। आदि कर्म कर्तरि प्रभृतिसे क्त विधान। यथा—प्रकृतः कटं देवदत्तः। प्रकृतः कटो देवदत्तेन। प्रकृतं देवदत्तेन। दो दद्घोः। पा ७।४।४६। क्ततसंज्ञक तकारादि प्रत्यय परे रहनेसे घुसंज्ञक दाके स्थानमें दद् आदेश हो जाता है। (अन्य मूल अवत्त शब्दमें देखो)

अवदन्त (सं० पु०) बालक, बच्चा।

अवदरण (सं० क्ली०) अव-दृ-भावे ल्युट्। विदारण, मारकाट।

अवदलित (सं० त्रि०) भड़का, फटा, टूटा, चिटखा, जो फट पड़ा हो।

अवदाघ (सं० पु०) अवदह्यते प्राणिनोऽस्मिन्; अव दह आधारे घञ्, नङ्गादित्वात् हस्य घत्वम्। १ निदाघ, धूप। २ ग्रीष्मकाल, गर्मीका मौसम।

अवदात (सं० पु०) अव-दैप् शोधे क्त। १ शुभ्र, सफेद रङ्ग। (त्रि०) २ सफ़ेद, उजला। ३ स्वच्छ, साफ़। ४ पीत, हरिद्राभ, पीला, वसन्ती। ५ सुन्दर, ख़ूबसूरत।

'अवदातं सिते पीते विशुद्धे प्रवरेऽपि च।' (विश्व)

अवदान (सं० क्ली०) अव-दो दैप् वा ल्युट्। १ प्रशस्त कर्म, अच्छा काम। २ खण्डन, तोड़ फोड़। ३ पराक्रम, ताक़त। ४ अतिक्रम, सबक़त। ५ शुद्धिकरण, सफ़ाईका काम। ६ उशीर, खस्।

'अवदानमतिक्रान्ते खण्डने शुद्धकर्मणि।' (हेम)

अवदान्त (सं० पु०) शिशुवृक्ष, पौधा।

अवदान्य (सं० त्रि०) १ कृपण, कञ्जूस। २ पराक्रमशाली, ताक़तवर। ३ उल्लङ्घनकारी, लांघ जानेवाला।

अवदारक (सं० त्रि०) अवदारयति, अव-दृ-णिच्-कर्मणि क्त। १ विदारक, फोड़नेवाला। २ खन्ता, बेलचा, कुदाल।

अवदारण (सं० क्ली०) अव-दृ-णिच्-भावे ल्युट्। १ विदारण, अवयव-विभाग, तोड़-फोड़, टुकड़े-टुकड़े उड़ाना। अवदार्यते खन्यते गर्तादिरनेन, करणे ल्युट्। २ खनित्र, खन्ता, बेलचा।

अवदारित (सं० त्रि०) अवदार्यते स्म, अव-दृ-णिच् कर्मणि क्त। १ विदारित, फटा हुआ। २ विभाजित, तक़सीम किया हुआ।

अवदावद (वै० त्रि०) असत् प्रशंसा न रखनेवाला, जो बुरा नाम न रखता हो।

अवदाह (सं० पु०) अवगतो दाहो गात्रज्वाला येन, प्रादि बहुव्री०। १ उशीर, खस। २ लामज्जक तृण। अवदाह भावे घञ्। ३ ज्वरादि जन्य गात्रदाह, बुख़ार वग़ैरहसे पैदा हुई जिस्मकी जलन। ४ अग्नि द्वारा दहन, आगसे जल जाना वग़ैरह।

अवदाहेष्ट (सं० क्ली०) वीरणमूल, खस।

अवदाहेष्टकापथ (सं० क्ली०) उशीर, खस।

अवदीर्ण (सं० त्रि०) अव-दृ-क्त ईर दीर्घः तकारस्य नकारः। १ विदीर्ण, फटा हुआ। २ द्रवीभूत, पिघला हुआ। ३ आश्चर्यान्वित, ताज्जुबमें पड़ा हुआ। ४ विभक्त, बंटा हुआ।

अवदोह (सं० पु०) अवदुह्यते, दुह-कर्मणि-घञ् १ दुग्ध, दूध। भावे घञ्। २ दोहन, दुहाई।

अवद्य (सं० त्रि०) न वद गर्ह्यार्थे यत् निपात्यते। 'अवद्यं पापम्।' (सिद्धान्तकौमुदी) १ अधम, पाजी। २ पापी, गुनहगार। ३ निन्द्य, हिक़ारतके क़ाबिल। ४ कथना-योग्य, निकृष्ट। ५ प्रतिकृष्ट, बुरा। (क्ली०) ६ अर्वा, चन्द्रके दशमें एक घोड़ा। ७ रेफ।

अवद्यगोहन (वै० त्रि०) अभिलाष मिटा देनेवाला, जो ख़ाहिश दूर कर देता हो।

अवद्यभी (वै० स्त्री०) पापका भय, गुनाहका ख़ौफ़।

अवद्यवत् (वै० त्रि०) कुत्सित, पश्चात्तापकारी, बदनुमां, अफ़सोसनाक।

अवद्योतन (सं० क्ली०) अव-द्युत-णिच् भावे ल्युट्। प्रकाशन, रोशनीदिही, उजालेका फैलाव।

अवद्योतिन् (सं० त्रि०) प्रकाश फैलानेवाला, जो चमक रहा हो।

अवद्रङ्ग (सं० पु०) हाट, बाज़ार।

अवध (सं० पु०) १ वधका अभाव, क़त्लकी अदम-मौजूदगी। २ कोशल, अयोध्या। यह अक्षा० २५° ३४′ एवं २८° ४२′ उ० और द्राघि० ७९° ४४ तथा ८३° ९′ पू० के मध्य अवस्थित है। युक्तप्रदेशके छोटे लाट इसका प्रबन्ध करते हैं। क्षेत्रफल २४२४६ वर्गमील है। इससे उत्तर नेपालका स्वतन्त्र राज्य, उत्तर-पश्चिम रोहिलखण्ड विभाग, दक्षिण-पश्चिम गङ्गा नदी, दक्षिण-पूर्व बनारस विभाग और पूर्व बसती ज़िला पड़ता है। इसकी राजधानी लखनऊ शहर है।

अवध खुला मैदान है। यह दक्षिण-पश्चिम गङ्गा नदीसे हिमालयकी तराई तक फैला है।

उत्तर सीमापर कुछ जङ्गल रहते भी बाक़ी जगहमें खेती किसानी और बसतीकी भरमार है।

गङ्गा, गोमती, घाघरा और राप्ती प्रधान नदी हैं। गोमती पीलीभीत ज़िलेसे निकलती और लखनऊ, सुलतानपुर, जौनपुर जाते हुई सैयदपुरके पास गङ्गामें गिरती है। कथना, सरायन, सायी और नन्द गोमतीकी शाखा है। प्रतापगढ़में बेहती और हरदोईमें सांदी बड़ी भील है। गोंडा और बहराईच ज़िलेमें राप्ती बहती है। घाघराके दक्षिण तटपर फ़ैज़ाबादका ज़िला आबाद है। खेरी, सीतापुर और हरदोई ज़िला खैरागढ़ जङ्गलसे गङ्गा किनारे क़न्नौज तक फैला है। लखनऊ, बाराबङ्की और उनाव बीचका ज़िला है। रायबरेली, प्रतापगढ़ गङ्गाके वामतट और सुलतानपुर गोमतीकी दोनों ओर बसा है।

अवधकी ज़मीन् अधिक उपजाऊ है। कहीं-कहीं चिकनी मट्टी या बालू देखते हैं। साधारणतः पानी २५ फ़ीट गहरे निकलता है। ऊसरमें सख़्तसे सख़्त घास जगती है! इस प्रान्तमें कोई मूल्यवान् धातु नहीं होता। पुराने समय नमक बहुत बनता था, जिसे अंगरेज़ सरकारने बन्द करा दिया। कङ्कड़ ज़्यादा होता और सड़क कूटनेके काम आता है। सालमें कितनी ही फ़सल होती और तालाब, आमका बाग़ या बांसकी कोठी भी जगह जगह मौजूद रहती है। गरीबोंके घरोंपर इमलीके पेड़ छाया किये हैं। केला, अमरूद, कटहल, नीबू और नारङ्गी गांवकी शोभा बढ़ाती है।

सरकारी जङ्गल बहुत अच्छा है। खैरागढ़में साख़के लट्ठे कटते और बहराम घाटमें उनके तख़्ते चिरते हैं। शीशम और दूसरी लकड़ी छत पाटनेके काम आती है। महुवेका फल-फूल और लकड़ी-काठ सब कुछ अच्छा होता है। भीलोंमें जङ्गली चावल, कमल गट्टा और सिंघाड़ा उपजता है।

पहले गोंडेके जङ्गलमें हाथी घूमता था, किन्तु अब कहीं भी देख नहीं पड़ता। इसी तरह जङ्गली भैंसा और चीता भी गुम हो गया है। किन्तु भेड़िया इधर-उधर घूमा करता है। नीलगाव बहुत होता और फ़सलको चर जाता है। गङ्गा और गोमतीके ऊसरमें हिरण छलांगे भरा करता है। भीलोंमें मुरग़ाबी और बतख़ तैरती है। सांप काटनेसे कितने ही आदमी सालमें मरते हैं। घराऊ जानवरोंमें घोड़ा, मवेशी, भैंस, गधा, सूअर, भेड़, बकरा और मुर्ग़ा प्रधान है।

इतिहास—फ़ैज़ाबादके पास हिन्दुओंका पवित्र तीर्थ अयोध्यापुरी विद्यमान है। अयोध्या देखो। घाघरासे उत्तर थोड़ी दूर करनलगञ्जके पास अगस्त्य मुनिका समाधि बना है। श्रावस्तीमें शाक्य मुनिने कितने ही बौद्ध चेले मूंडे थे। कश्मीरमें शकाधिपति कनिष्कके वैद्य सम्मेलन करनेपर श्रावस्तीसे दो पण्डित भेजे गये। श्रावस्तीका पतन होनेपर विक्रमादित्यने कश्मीरके राजा मेघवाहनको हरा अवध स्वतन्त्र कर दिया। सन् ४०० ई०को चीनपरिव्राजक फाहियानने श्रावस्ती नगरमें ऊंची दीवार और टूटा-फूटा मन्दिर तथा प्रासाद पाया, किन्तु बौद्ध महन्तोंका ज़ोर घट गया था। सन् ई०के ७वें शताब्द युअङ्ग-चुअङ्गने श्रावस्तीको बिलकुल ख़ाली देखा।

सन् ई० के ८-वें या ६-वें शताब्द ताड़रोंने जङ्गल साफ़ कराया था। कोई सौ वर्ष बाद किसी सोमवंशीयने अपना प्रभाव जङ्गली अधिवासियोंपर डाल दिया। सन् ई० के ११ वें शताब्द क़न्नौजके राठोर-नृपतिने अवधके जैनियोंको हराया था।

पीछे भारोंका राज्य फैल चला। किन्तु सन् १२४६ ई० को दिल्लीके बादशाह नसीर-उद्-दीन् मुहम्मदने उन्हें नीचा देखाया। सन् ११६४ ई० को क़न्नौजके गिरनेपर शहाबुद्दीन गोरीने अवधको लूटा मारा था। सबसे पहले मुहम्मद बख़्तियार खिलजीने अपना अड्डा यहां जमाया। कुतुबुद्दीनके मरनेपर उन्होंने अलतमशकी वश्यता अस्वीकार की और उनके लड़के गियासुद्दीन् बङ्गालके पुश्तैनी शासक बन बैठे। पीछे हिन्दुओंने बलवा खड़ा कर १२०००० मुसलमान मार डाले थे। शाहज़ादे नसीरुद्दीन बलवा दबाने भेजे गये और सन् १२४२ ई० को कमरुद्दीन कैरां अयोध्याके शासक बने। जौनपुरके नवाब इब्राहीम

शाह शरकीने नगर नगरमें मुसलमान शासक रख दिये थे। उनके समय बड़े-बड़े नृपति भाग खड़े हुये। किन्तु उनके मरनेपर राजा त्रैलोक्यचन्द्रने मुसलमानोंके विरुद्ध उपद्रव उठाया था। मुसलमानोंके पैर उखड़े और त्रैलोक्यचन्द्र राजा बन बैठे। बाबरने हमला मार अयोध्यामें मसजिद बनवायी थी।

महाराष्ट्रोंके अभ्युदय समय औरङ्गजेबका बादशाहत बिगड़ी और अवध स्वतन्त्र हो गया। सन् १७३२ ई० को शहादत अली खान् अवधके सूबेदार बने थे। सन् १७४३ ई० को उनकी मृत्यु हुई और दामाद सफ़दर जङ्गने नवाबी पायी। किन्तु सन् १७५३ ई० को सफ़दर जङ्गके लड़के शुजा-उद्-दौलाके समय एक नयी बात पड़ी थी। उन्होंने बङ्गालमें मीर कासिमको अंगरेजोंसे लड़ते देख विहार प्रान्तपर अधिकार करना चाहा। इसलिये वह भगेड़ू बादशाह शाह आलम और बङ्गालके निर्वासित नवाबका ले पटनेपर झपट पड़े। किन्तु उन्हें असन्तकार्य हो बक्सरको हटना हुआ। सन् १७६४ ई० के अक्तूबर मास मेजर मनरोने वहां उन्हें पूरे तौरपर हरा अवधपर अधिकार जमाया था। नवाब बरेलीको भागे और हतभाग्य बादशाह अंगरेजोंसे आ मिले। सन् १७६५ ई० को जो सन्धि हुई, उसके अनुसार अवध प्रान्तका कोड़ा, अलाहाबाद बादशाह और बाकी देश शुजाउद्दौलाको दिया गया। कोड़ा और अलाहाबाद बादशाहसे ले लेनेकी इच्छा देख सन् १७६८ ई०को नवाबकी फ़ौज ३५००० रखी गयी और उसे रणकौशल सीखनेकी आज्ञा न हुई।

सन् १७७५ ई० को शुजा-उद्-दौला मरे और उनके लड़के आसफ़-उद्-दौला गद्दीपर बैठे थे। उसी समय अंगरेजोंने उनसे सन्धि की, जिसके अनुसार उन्हें कोड़ा, अलाहाबाद दिया और बनारस, जौनपुर, ग़ाज़ीपुर, राजा चेतसिंहका राज्य लिया गया। किन्तु आसफ़-उद्-दौलाने खर्चसे तङ्ग आ अपनी मा बहू बेगमका धन छीनना चाहा था। बेगमके प्रार्थना करनेपर अंगरेजोंने बीचमें पड़ झगड़ा मिटा दिया। पीछे आसफ़-उद्-दौला फ़ैज़ाबादसे लखनऊमें आकर रहने लगे थे। सन् १७८१ ई० को चुनारमें नवाबसे मिल वारेन हेष्टिङ्गस्ने फिर सन्धिकी, जिसके अनुसार एक ब्रिगेडको छोड़ सारी अंगरेजी फ़ौज अवधसे हटा ली गयी। लखनऊ देखो।

सन् १७९८ ई० को आसफ़-उद्-दौलाका उत्तराधिकार सौतेले भाई शहादत अली खान्ने पाया था। सेंधियाके दबानेसे उन्होंने अपना आधा राज्य अंगरेजोंको इस लिये सौंप दिया, कि वह सेंधियाके आक्रमणसे देशको बचायेंगे। शहादत अलीके उत्तराधिकारी ग़ाज़ी उद्-दीन् हैदरने पहले पहल सन् १८१४ ई०को राजाका उपाधि पाया था। पीछे सन् १८२७ ई० को नसीर-उद्-दीन हैदर, १८३७ को मुहम्मद अली शाह और १८४१ को अमजद अली शाह गद्दी पर बैठे; सन् १८४७ ई० को अवधके अन्तिम नवाब वाजिदअली शाह राजा हुये थे। सन् १८५६ ई० के फरवरी मास अंगरेजोंने अवधपर अधिकार किया और बारह लाख रुपया वार्षिक वाजिद अलीके व्ययनिर्वाहार्थ बांध दिया।

सन् १८५७ ई० के मार्च मास लखनऊमें बलवा फूटा और जूनके मध्यतक समग्र अवध बलवाइयोंके हाथ जा पड़ा था। ४ थी जुलाईको सर हेनरी लारेन्स गोलीके घावसे मरे, किन्तु २५ वीं सितम्बरको औटराम और हेवलकने लखनऊको फ़ौजको जाकर उद्धार किया, जो तीन महीने किलेमें घिरी रही थी। (त्रि०) ३ न मारने योग्य।

अवध बख्श—एक हिन्दुस्थानी कवि। प्राय सन् १८४७ ई०को इन्होंने जन्म लिया था। इनके पदमें लालित्य भरा है। शिवसिंह सरोजमें इनका परिचय है।

अवधातव्य (सं० त्रि०) अव-धा-कर्मणि तव्य। १ मनोयोगका विषय। २ बोधका विषय, जिसमें मनोयोग किया जाये।

अवधान (सं० क्ली०) अव-धा-ल्युट्। १ मनोयोग विशेष। २ मनका योग, चित्तका लगाव, चित्तकी वृत्तिको निरोधकर उसे एक ओर लगाना। ३ समाधि। ४ ध्यान। ५ सावधानी, चौकसी।

अवधार (सं० पु०) अव-धृ-णिच्-अच्। निश्चय।

अवधारण (सं० क्ली०) अव-धृ-णिच्-ल्युट्। १ परिच्छेद। २ निरूपण। ३ संख्यादि द्वारा इयत्ता करना। ४ परस्पर विभिन्न रूपमें व्यवस्थापन होना। ५ निश्चय, विचारपूर्वक निर्धारण करना।

अवधारणीय (सं० त्रि०) अव-धृ-णिच् कर्मणि अनीयर्। निरूपण करने योग्य, निर्धारणके योग्य, निश्चययोग्य।

अवधारना (हिं० क्रि०) धारण करना, ग्रहण करना।

अवधारित (सं० त्रि०) अव-धृ-णिच् कर्मणि क्त। निर्धारित, निश्चित।

अवधार्य (सं० त्रि०) अव-धृ-णिच्-कर्मणि यत्। १ निश्चय करने योग्य, अवधारणीय, अवधारण करने योग्य। २ निर्णय, निर्णय करने लायक। (अव्य०) अव-धृ-णिच् ल्यप्। ३ अवधारण कर।

अवधि (सं० पु०) अव-धा-कि। १ सीमा। २ काल, ३ चित्ताभिनिवेश, अवधान, मनोयोग, अपादान, जिससे सीमा की जाय। पूर्व और पर सीमा यही दो प्रकारकी है। जैसे, कलकत्ता अवधिसे काशी अवधिका गाड़ीभाड़ा इतना है। यहां कलकत्ता पूर्व अवधि एवं काशी पर अवधि है।

प्रकारान्तरसे अवधि तीन प्रकारकी है—देशकृत, कालकृत एवं बुद्धिकल्पित। देशकृत, कलकत्ता अवधिसे इत्यादि। चन्द्रके ग्रास अवधिसे मोक्ष अवधि तक जप करना। यहां ग्रासकाल अवधिको कालकृत पूर्व अवधि, एवं मोक्षकाल अवधिको कालकृत पर अवधि कहते हैं। कुलकामिनी जो बात कहती हैं, वह सखीकर्णावधि अर्थात् इतना धीरे धीरे कि वह पासकी सखी ही सुन सकती, दूसरा कोई नहीं। यहां कुलकामिनीके मुखको कविका बुद्धिकल्पित पूर्व अवधि और जो सखी उसकी बात सुनती है, उस सखीके कानको पर अवधि कहते हैं।

अवधिज्ञान (सं० क्ली०) जैन शास्त्रानुसार ज्ञान विशेष। जिस ज्ञानके द्वारा इन्द्रियोंकी सहायताके विना द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी अवधि (मर्यादा)को लिये हुये पदार्थ प्रत्यक्ष (स्पष्ट) जाने जावें। वह अवधिज्ञान देव और नारकियोंको तो जन्मसे ही होता है। मनुष्य तथा तिर्यञ्चोंको तपश्चरण व्रत नियम द्वारा प्राप्त होता है। मनुष्य और तिर्यञ्चोंको जो अवधिज्ञान होता है, उसके ६ भेद हैं—अनुगामी, अननुगामी, वर्द्धमान, हीयमान, अवस्थित, अनवस्थित। जो अवधिज्ञान अन्य जन्ममें या क्षेत्रमें भी साथ जाय, वह अनुगामी है, जो साथ न जाय, जिस जन्ममें या जिस क्षेत्रमें उत्पन्न हुआ हो, उसी जन्म या क्षेत्रतक रहे, सो अननुगामी है। जो परिणामोंकी विशुद्धिसे जितने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी मर्यादासे उत्पन्न हुआ हो, उससे बढ़ता ही रहे घटे नहीं, सो वर्द्धमान, और जो संक्लेश परिणामोंसे घटता ही रहे, सो हीयमान है। जो कभी न घटे और न बढे एकसा ही रहे, सो अवस्थित और जो घटता बढ़ता भी रहे, सो अनवस्थित है। (पृथिवी, जल, अग्नि, पवन, अन्धकार और छाया आदिसे व्यवहित द्रव्योंका प्रत्यक्ष तथा आत्माका भी ज्ञान हो।

अवधि दर्शन (सं० पु०) जैनशास्त्रानुसार अवधिज्ञान द्वारा पदार्थोंके जाननेसे पहिले सामान्य सत्ताका प्रतिभास होना। अवधिज्ञान।

अवधिमत् (सं० त्रि०) अवधि रस्त्यस्य मतुप्। अवधि विशिष्ठ। अर्थात् निर्धारित समय युक्त। नव्य नैयायिक अवधिको ही पञ्चमीका अर्थ स्वीकार करते हैं।

अवधिमान (हिं० पु०) समुद्र।

अवधी (सं० त्रि०) १ अवध-सम्बन्धी, अवधका। २ अवधी बोली। अवधकी भाषा। विहारके मुसलमान और कायस्थ यही भाषा बोलते हैं। सभ्य सम्भाषणमें भी इसीका व्यवहार होता है। गयामें इसके बोलनेवाले हजारो आदमी मौजद हैं।

अवधीयमान (सं० त्रि०) अव-धा-कर्मणि शानच आकारस्य इत्वम्। जो विषय मनोयोग करने लायक हो।

अवधीर—अवज्ञायां अदन्तचुरादि प० सक० सेट्।

लट् अवधीरयति। लुङ् आववधीरत् लिट् अवधीरयामास। क्त्वा अवधीरयित्वा।

अवधीरणा (सं० स्त्री०) अवधीर-णिच्-भावे युच्। अवज्ञा, तिरस्कार।

अवधीरित (सं० त्रि०) अवधीर-णिच्-कर्मणि क्त। अवज्ञात, तिरस्कृत, अपमानित। जिसका तिरस्कार किया गया हो। "अवधीरितसुहृद्वाक्यस्य।" (पञ्चतन्त्र)

अवधूत (सं० त्रि०) अव-धू-क्त। १ कम्पित। २ कृष्ण यजुर्वेदान्तर्गत उपनिषद् विशेष। ३ अभिभूत, निवर्त्तित, अनादृत। (पु०) ४ संन्यासिविशेष।

अवधूत संन्यासियोंमें कुछ शैव और कुछ वैष्णव रहते हैं। महानिर्व्वाणतन्त्र एवं योगसारमें शैव अवधूतोंका विवरण लिखा है। वृहत्-शङ्करविजयमें भी इसी सम्प्रदायका विवरण देखा जाता है। महानिर्व्वाणतन्त्रमें प्रधानतः चार प्रकारके अवधूत संन्यासियोंकी कथा पाई जाती है,—ब्रह्मावधूत, शैवावधूत, वीरावधूत एवं कुलावधूत। ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्यका ब्रह्मोपासक होनेसे यति वा ब्रह्मावधूत कहते हैं। इस अवस्थामें वे लोग गृहस्थाश्रममें रह अथवा संसारधर्म त्यागकर संन्यासी हो सकते हैं। विधिपूर्वक पूर्णाभिषिक्त होनेपर संन्यासी शैवावधूत कहा जाता है।

वीरावधूतोंके शिरमें दीर्घ और असंस्कृत केश रहते हैं। कोई रुद्राक्ष और कोई हाड़की माला पहने रहता है। उनमें कोई विवस्त्र, कोई केवल कौपीन धारण किये हुए, एवं किसीके अङ्गमें भस्म और किसीके रक्तचन्दन लिप्त रहता है। उनके हाथमें मनुष्यकी खोपड़ी, काष्ठदण्ड, मृगचर्म्म, परशु, खट्टाङ्ग, डमरु एवं झर्झर रहता है। उनमें कोई कोई गेरुआ वस्त्र भी पहनते हैं। सभी वीराधूत गांजा और मद्य सेवन करते हैं।

कुलाचारके अनुसार अभिषिक्त होकर जो साधक गृहस्थाश्रममें रहता है, उसे कुलावधूत कहते हैं।

शङ्करदिग्विजयमें दश प्रकारके अवधूतोंकी बात लिखी है,—तीर्थ, आश्रम, वन, अरण्य, गिरि, पर्वत, सागर, सरस्वती, भारती एवं पुरी।

जो संन्यासी त्रिवेणी प्रभृति तीर्थ स्थानोंमें रह स्नानादि करते, उन्हें तीर्थ जो आशाविवर्जित हैं और साधनद्वारा पुनर्जन्मसे मुक्तिलाभ करते, वे आश्रम कहे जाते हैं। जो वन एवं निर्झरमें वास करते, उन योगियोंको वन कहते हैं। जो अरण्यमें वास करते और सर्वदा आनन्दित रहते हैं, उनका नाम अरण्य है। जो संन्यासी गिरिमें वास करते और गीताभ्यासमें निरत रहते एवं जिनकी बुद्धि गम्भीर और अचल होती है, उन्हें गिरि कहते हैं। जो पर्वतके मूलमें वास करते हैं, ध्यानमें प्रवीण एवं सारासार परब्रह्मतत्त्वज्ञ हैं, वे पर्व्वत कहे जाते हैं। जो संन्यासी सागरसदृश गम्भीर भावसे बैठकर ईश्वरकी आराधना करते हैं, उनका नाम सागर है। स्वरवादी एवं सुकवि संन्यासीको सरस्वती कहते हैं। सद्विद्वान् एवं दुःखविवर्जित संन्यासी भारती कहे जाते हैं। तत्त्वज्ञ एवं परब्रह्मनिरत संन्यासीका नाम पुरी है।

अवधूत वैष्णव रामानन्दके शिष्य हैं। इस समय भी वङ्गदेशके नाना स्थान एवं भारतवर्षके किसी किसी प्रदेशमें इसश्रेणीके वैष्णव बहुत पाये जाते हैं। इनका आचार व्यवहार अतिशय कुत्सित है। इस सम्प्रदायवाले जातिभेद नहीं मानते और न उनके पान भोजनका ही कोई नियम है। उनके शिरमें बड़े बड़े बाल, गलेमें स्फटिक प्रभृतिकी माला, कमरमें कौपीन, देहमें धज्जियोंका कुरता और हाथमें नारियलकी किश्ती रहती है। ये लोग सर्वदा अत्यन्त अपरिष्कार भावसे रहते हैं। लोग इन्हें बावले भी कहते हैं। वङ्गदेशके स्थान स्थानमें इनके अखाड़े हैं। एक एक अखाड़ेमें दो तीन अवधूत और उनकी कई दासियां रहती हैं। ये लोग रूप बदल सभी जातिको अपने सम्प्रदायमें मिला लेते हैं। गोपीयन्त्र और एकतारा प्रभृति इनके वाद्ययन्त्र हैं। भिक्षा मांगनेके समय गृहस्थके द्वारपर जाकर पहले ये लोग 'वीर अवधूत' का नाम स्मरण करते, फिर बाजा बजाकर गीत गाते हैं। इनमें कितने ही गृहस्थोंकी लड़कियोंको नष्ट करनेकी चेष्टा करते, इसीसे समाजके घृणापात्र हैं।

५ एक प्राचीन संस्कृत कवि। सुभाषितावलीमें इनका उल्लेख है। ६ भगवद्भक्तिस्तोत्ररचयिता।

अवधूनन (सं० क्ली०) अव-धू-णिच्-नुक-ल्युट्। १ चालन, झाड़। २ चिकित्सा विशेष।

अवधूलन (सं० क्ली०) धूलिं करोति अव-धूलि-कृत्यर्थे णिच् भावे ल्युट्। अवचूर्णन, चूर्ण करना, बुकनी बनाना।

अवधृत (सं० त्रि०) अव-धृ-कर्मणि क्त। अवधारित, निश्चित, नियमित, व्यवस्थापित।

अवधृष्य (सं० त्रि०) अव-धृष् कर्मणि क्यप्। १ अवधर्षणीय, तिरस्कारयोग्य। २ पराभवनीय। (अव्य०) अव-धृष्-ल्यप्। ३ तिरस्कारकर, अपमानकर।

अवधेय (सं० त्रि०) अव-धा कर्मणि यत्। १ निक्षेतव्य, ध्यानदेने योग्य। २ निवेश्य, स्थापनीय। ३ श्रद्धेय, श्रद्धाके योग्य। ४ ज्ञातव्य, जानने योग्य। (क्ली०) भावे यत्। ५ मनोयोग।

अवधेश—बुंदेलखण्डके प्रसिद्ध कवि। यह ब्राह्मण चरखारी राज्यके रहनेवाले थे। सन् १८४० ई०को इन्होंने इहलोक छोड़ा। कहते हैं, इनकी कविता रसीली रही। शिवसिंहने लिखा, कि उन्हें इनकी कविताका कोई पूर्ण पुस्तक मिला न था।

अवध्र (सं० त्रि०) अव-वध-रक् नञ्-तत्। अहिंसक। "अवध्रं ज्योतिरदिते ऋतावृधोदेवस्य।" (ऋक् ७।८२।१०) 'अवध्रम् अहिंसकम्।' (सायण)

अवध्वंस (सं० पु०) अव-ध्वन्स-घञ्। १ परित्याग, छोड़ना। २ नाश। ३ चूर्णन, चूर चूर करना। ४ निन्दा, कलङ्क। "अवध्वंस परित्यागे निन्दनेऽप्येव चर्णने।" (विश्व)

अवध्वस्त (सं० त्रि०) अव-ध्वन्स-क्त। १ नष्ट। २ निन्दित। ३ चूर्णित। ४ त्यक्त। 'अवध्वस्तस्तु चूर्णिते। त्यक्तनिन्दितयोश।' (हेम)

अवन (सं० क्ली०) अव-ल्युट्। १ प्रीणन, प्रसन्न करना। २ रक्षण, रक्षा करना, बचाव। ३ प्रीति। ४ हर्ष। 'अवनं रक्षणप्रीत्योः।' (हेम)

अवनत (सं० त्रि०) अव-नम्-क्त। १ अधोमुख। २ आनत, नीचा, झुका हुआ। ३ पतित, गिरा हुआ। ४ कम। ५ कृतनमस्कार, प्रणाम किया हुआ।

अवनति (सं० स्त्री०) अव-नम-क्तिन्। १ औद्धत्यका अभाव, अगर्व, विनय, नम्रता। २ घटती, कमती, घाटा, न्यूनता, हानि। ३ अधोगति, हीनदशा, तनज्जुली। ४ झुकाव, झुकना।

अवनद्ध (सं० त्रि०) अव-नह-क्त। १ खचित, रोपित, वेष्टित, बद्ध। (क्ली०) २ मृदङ्गादि वाद्य। नहोध पा ३।२४। झल परे या पदान्तमें वर्तमान नह धातुका हकारके स्थानमें धकार होता है।

अवनम्र (सं० त्रि०) अव-नम-र। अतिशय नम्र। अजस्र शब्दमें सूत्र देखो।

अवनय (सं० पु०) अव-नी भावे अच्। अधःपतन, नीचे गिरना।

अवनयन (सं० क्ली०) अव-नी-ल्युट्। अवस्थापन, गर्तमें प्रोक्षणका शेष जल डालना।

अवना (हिं०) आना।

अवनाट (सं० त्रि०) नासिकायाः नतम्। अवनतार्थे नासिकायाः नाटच् प्रत्ययः। चिपटी नाकवाला, जिसके नाक चिपटी रहे।

अवनाय (सं० पु०) अव-नी घञ्। अधोनयन, अधोप्रापण, नीचे लेजाना। अवोदोर्णियः। पा ३।३।२६। अव और उत् यही दो उपसर्गसे पर नी धातुके उत्तर घञ् प्रत्यय होता है। 'अवनायोऽधोनयनम्।' (सि० कौ०)

अवनाम (सं० पु०) अव-नम-घञ्। अवनति, मत्था नमाकर नमस्कार करना।

अवनि, अवनी (सं० स्त्री०) अवति रक्षति प्रजाः अव्यन्ते वा भूपैः अव-अनि (अर्तिसृधृधम्यश्यवितृभ्योऽनिः। उण् २।१०१। इति अनि) 'कृदिकारान्तत्वात् वा ङीषि अवनीत्यपि।' १ भूमि, मही, मेदिनी, पृथिवी, ज़मीन। २ त्रायमाणा लता। अवन्ति जगत् स्वोदकेन, अव्यन्ते प्राणिभिस्तिरादिनिर्माणेन अव-अनि। ३ नदी। (निरु०) वेदमें अवनीका अर्थ नदी होता और प्रायः बहुवचनान्त रूप देखा जाता है। "आसिञ्चन्तीरवनयः समुद्रम्।" ऋक् ५।८५।६। 'अवनयो नद्यः' (सायण) अवन्ति कर्मणि। ४ अङ्गुलि। "दशावनिभ्यो दशरबेभ्यो" ऋक् १०।९४।५। 'कर्मण्यवन्ति गच्छन्त्यवनयः। दशावनयोऽङ्गुलयः।' (सायण)

अवनिक्त (सं० त्रि०) अव-निज्-क्त। क्षालित, धौत, शोधित, धोया हुआ (वस्तु विशेष)।

अवनिनाथ (सं० पु०) ६-तत्। राजा, नृप।

अवनिपति, अवनीपति (सं० पु०) ६-तत्। नृप, राजा।

अवनिसिंह—मन्द्राजप्रान्तस्थ कनाड़ा जिलेके एक प्राचीन नृपति। काञ्चीपुरके पास कूरममें जो ताम्रफलक मिला, उसमें लिखा है,—'इन्हें सिंहविष्णु भी कहते थे। इन्होंने मलय, कालाभ्र, मालव, चोल, पाण्ड्य, सिंहल और केरल नरेशोंको नीचा दिखाया था। सन् ७८४ ई०वाले विनयादित्यके ताम्रफलकमें लिखा है,—सन् ४५४-५५ और ४६६ ई० को यह अपने राज्यपर अधिकृत रहे।

अवनीपाल (सं० पु०) ६-तत्। नृप, राजा।

अवनीश (सं० पु०) अवनीपाल देखो।

अवनेजन (सं० क्ली०) अव-निज्-भावे ल्युट्। १ प्रक्षालन, धोना। २ श्राद्धमें पिण्डदानको वेदीके बिछाए हुए कुशोंपर जल सींचनेका संस्कार विशेष। पार्वण श्राद्धके अन्न दान प्रभृति अनेक कार्योंमें अर्थात् पित्रादि या मातामहादि तीनके उद्देश्यसे एक वाक्यमें तीनोंका नाम ले एकवार उत्सर्ग करनेकी विधि है। अर्घ्य, अक्षय्योदक, पिण्डदान, अवनेजन, स्वधावाचन इन कितने कार्यमें प्रत्येकके निमित्त पृथक् पृथक् रूप मन्त्र पढ़ते हैं। यथा—

"अर्घेऽक्षय्योदके चैव पिण्डदानेऽवनेजनम्।
तन्त्रता विनिवृत्तिः स्यात् स्वधावाचन एव च॥" (स्मृति)

अवन्ति (सं० पु०) अव-झिच्। अवतेश। उण् ३।५०। मालवदेश एवं उसकी प्रधान नगरीका नाम।

"प्राप्यावन्तीनुदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्।
पूर्व्वोद्दिष्टामनुसर पुरीं श्रीविशालां विशालाम्।" (मेघदूत)

वत्सराजका इतिहास जाननेवाले वृद्ध लोग जिस अवन्ति प्रदेशके गांव-गांवमें रहते हैं वहां पहुंच पूर्व कथित महा श्रीसम्पन्न विशाला नगरीमें जाओ।

इस श्लोकमें कालिदासने अवन्ति प्रदेश और उसकी नगरीको पृथक् रूपसे देखाया है। यहां अवन्ति शब्दसे अवन्तिप्रदेश समझा जाता, इसलिये वह बहुवचनान्त है। पूर्व मेघके २७ वें श्लोकमें कालिदासने लिखा है, "सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः।" उज्जैनकी अट्टालिकाके ऊपरसे एकबार परिचय करके जानेमें विमुख न होना। अतएव कालिदासके समयमें अवन्ती, उज्जयिनी एवं विशाला ये तीनो ही नाम चलते थे।

हेमचन्द्रने अवन्तीके ये कई पर्याय लिखे हैं,—उज्जयिनी, विशाला, अवन्ती एवं पुष्पकरण्डिनी। 'उज्जयिनी स्याद्विशालाऽवन्ती पुष्पकरण्डिनी।' अवन्ती नगरीको किसने किस समयमें स्थापित किया और इसके दूसरे दूसरे नाम किस समयसे चले आते हैं, यह जाननेका कोई उपाय नहीं है।

अवन्ती नगरी अवन्ती नदीके किनारे बसी है। अवन्ती नदीका दूसरा नाम शिप्रा है। उज्जयिनी नगरीके वर्णनमें कालिदासने इस नदीका नाम भी लिखा है, 'शिप्रावातः प्रियतम इव' इत्यादि। मत्स्यपुराणमें लिखा है, कि अवन्तीमें मङ्गलग्रहका जन्म हुआ था। "अवन्त्याञ्च कुजो जातो मागधे च हिमांशुजः।" पहले अवन्ती नगरीमें कालिका एवं महाकाल नामक महादेवका मन्दिर था। शक्तिसङ्गमतन्त्रमें लिखा है,—

"ताम्रपर्णीं समासाद्य शैलार्द्धशिखरोद्गतः।
अवन्तीसंज्ञको देशो कालिका तत्र तिष्ठति॥"

कालिदासके मेघदूतमें महाकालका विवरण पाया जाता है,—

"पुण्यं यायास्त्रिभुवनगुरोर्धाम चण्डीश्वरस्य।
अप्यन्यस्मिन् जलधरमहाकालमासाद्य" इत्यादि।

अवन्ती नगरी महाराज विक्रमादित्यकी राजधानी थी। प्राचीन समयमें यह श्रीसौन्दर्य्य एवं विद्याके लिये विशेष प्रसिद्ध थी। रामकृष्ण अवन्ती नगरीके सान्दीपन आचार्य्यके निकट अस्त्रविद्या सीखने गये थे। "ततः सान्दीपनिं काश्यमवन्तीपुरवासिनम्। अस्त्रार्थं जग्मतु वीरौ बलदेवजनार्द्दनौ।" (विष्णुपु० २१।१९) परन्तु यह कौन अवन्ती है, सो ठीक नहीं कहा जा सकता।

अवन्तीका वर्त्तमान नाम उज्जैन है। यह उज्जयिनी शब्दका अपभ्रंश है, इस समय यह नगरी सेंधियाके अधिकारमें है। इसका परिधि प्रायः तीन कोस है। इस नगरीको चारो ओर शहरपनाह बना हुआ है, बीच बीचमें उसके ऊपर गोल गुम्बज

हैं। इसमें एक मसजिद, हिन्दुओंके अनेक देव-मन्दिर एवं इस समयकी एक राज-अट्टालिका देखनेमें आती है। ७५°५६´ पूर्व द्राघिमा एवं २३° २६´ उत्तर अक्षरेखामें अवन्ती अवस्थित है। हमारे देशके भूवेत्तागण कहते हैं, लङ्कासे सुमेरु पर्वततक रेखा खींचनेपर उससे १६ अंश दूर अवन्तीका स्थान निर्दिष्ट होता है। उज्जयिनी और मालव शब्द देखो।

अवन्ती नदी—इसका दूसरा नाम शिप्रा है। कितने ही अनुमान करते हैं, कि मालव देशमें पहले दो अवन्ती नदियां थीं। इनमें एक पारियात्र पर्वतसे निकली है। शिप्रा नदी चम्बल नदमें जा मिली है। दूसरी अवन्ती नदी सागरमतीकी एक शाखा है।

अवन्तिका (सं० स्त्री०) उज्जयिनी नगरी, उज्जेन। इस नगरीको मुनियोंने मोक्षदायिका बताया है,—

"अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः" ॥ (स्कन्दपुराण)

अवन्ति देशकी भाषा भी अवन्तिका कहाती है। आलङ्कारिकोंने व्यवस्था बांधी है, नाटकादिमें धूर्तोंकी भाषा अवन्तिका रहना चाहिये,—

"प्राच्य विदूषकादीनां धूर्तानां स्यादवन्तिका :" (साहित्य दर्पण)

अवन्तिखण्ड—स्कन्दपुराणका अंशविशेष।

अवन्तिदेव—१ कश्मीरके प्राचीन नृपति विशेष। २ संस्कृत भाषाके कोई कवि।

अवन्तिपुर, अवन्तीपुर (सं० क्ली०) अवन्तिः अवन्ती वा पूः। १ उज्जयिनी, उज्जेन। २ कश्मीर राज्यका नगर विशेष। राजा अवन्तिवर्माने विश्वौकःसार नामक स्थानमें इस नामकी पुरी बसायी थी। फिर इसमें उन्होंने अवन्तिस्वामी और अवन्तीश्वर नामक दो महादेव लिङ्गप्रतिष्ठित कराये। प्राचीन अवन्ति-पुर बेहात नदके दक्षिण कूलपर रहा, अब उसका कोई पता नहीं। किन्तु इन दोनों मन्दिर और नगरको चारो ओर प्राचीरका भग्नावशेष आज भी देखते हैं।

अवन्तिवर्मा—कश्मीरके कोई राजा। यह सुखवर्माके पुत्र रहे। उस समयके मन्त्री शूरने उत्पलापीड़ राजाको सिंहासनसे उतार अवन्तिवर्माको बैठा दिया था। इन्होंने सन् ८५५ ई० को राजा बन २८ वर्ष राजत्व किया।

अवन्तिब्रह्म, अवन्तीब्रह्म (सं० पु०) अवन्तिषु अवन्तीषु वा ब्रह्म-टजन्त। ७-तत्। अवन्ती देश-वासी ब्राह्मण।

अवन्तिभूपाल (सं० पु०) अवन्तीके नृपति, उज्जेनके राजा, राजा भोज।

अवन्तिसोम, अवन्तीसोम (सं० क्ली०) अवन्तिषु अवन्तीषु वा जातः सोम इव। काञ्जिक, कांजी। सौवीर, कुल्माष, अभियुत, धान्याम्ल, कुञ्जल।

'आरनालकसौवीरकुल्माषाभियुतानि च।
अवन्तिसोमधान्याम्लकुञ्जलानिच काञ्जिके ॥' (अमर)

अवन्ती (सं० स्त्री०) १ उज्जेन। २ उज्जेनकी रानी। ३ नदी विशेष। अवन्ति देखो।

अवन्तीदेश (सं० पु०) उज्जेन प्रान्त।

अवन्तीश्वर (सं० पु०) कश्मीरके नृपति अवन्ति-वर्माका बनवाया मन्दिर।

अवपतन (सं० क्ली०) उतार, गिराव।

अवपन्न (सं० त्रि०) अव-पद्-क्त। १ संसृष्ट, निकला हुआ। २ सहपक्क, साथ ही पका हुआ। ३ नीचे पड़ा हुआ।

अवपाक (सं० पु०) अव अपकर्ष पच्-घञ्। १ अपकृष्ट पाक, खराब भोजन। कर्मणि घञ। २ अपकृष्ट पक्कवस्तु, खराब तौरसे पकी हुई चीज़। अपकृष्टः पाको यस्य बहुव्री०। ३ मन्द पाककारक, खराब पकानेवाला।

अवपाटिका (सं० स्त्री०) क्षुद्र रोगान्तर्गत शूक-रोग, लिङ्गके घूंघटका चीरफाड़। जो मनुष्य हर्ष या बलसे अल्पीयःयोनिवाली (रजस्वला-धर्मरहित, थोड़ी उमरकी) स्त्रीके साथ सम्भोग करता, हाथसे लिङ्गपर धक्का मारता या घूंघटको ज़बरदस्ती खोलता, उसके यह रोग होता है। (भावप्रकाश)

अवपात (सं० पु०) अव-पत भावे घञ्। १ अधः-पतन, गिराव। अव-पत-णिच्-अच्। २ अधःपातन, फैलाव। अव पतति अस्मिन् आधारे घञ्। ३ हाथी पकड़नेका बड़ा गड्ढा।

अवपात्र (सं० त्रि०) अव भोजनो निकृष्टत्वात्, त्याज्यं पात्रं यस्य, बहुव्री०। पतित किंवा म्लेच्छ जातिका मनुष्य, जिस शख़्सके खानेसे बरतन झूठा हो जाये।

अवपात्रित (सं० त्रि०) अव-पात्र क्रत्यर्थे णिच्-क्त इट्-णिच् लोपः। अपांक्तेय, जिसको जातिवालोंने अपने साथ बैठाकर खिलाना छोड़ दिया हो।

अवपाद (सं० पु०) अव-पद-घञ्। अधःपतन, नीचेको गिराव।

अवपान (सं० क्ली०) अव-पा-ल्युट्। १ पिलायी। २ दूरस्थ पानीय द्रव्य, तालाब।

अवपालित (सं० त्रि०) अरक्षित, ग़ैर-महफ़ूज़, जिसकी ख़बर न ली जाये।

अवपाशित (सं० त्रि०) अव समन्तात् पाशो जातोऽस्य तारकादि० इतच्। पाशबद्ध, जालमें फंसा हुआ, जो फन्देमें पड़ा हो।

अवपीड़ (सं० पु०) पांच प्रकारके नस्यमें दूसरा शिरोनस्य। यह शोधन और स्तम्भन भेदसे दो प्रकारका होता है। अवपीड्यते यस्मात् स अवपीडः, अर्थात् जिससे अवपीड़ित हो। अवपीड़न करके देने कारण इसे अवपीड़ कहते हैं। ख़ूब कूट-पीसके तीक्ष्ण द्रव्यको छान लेते हैं। गलरोगादिमें यह बड़ा उपकार करता है। (परिभाषाप्रदीप)

गलरोग, सन्निपात, निद्रा, विषमज्वर, मनोविकार, क्रमि प्रभृति रोगमें अवपीड़न देना चाहिये। (वैद्यकनिघण्ट)

अवपीड़न (सं० क्ली०) अव-पीड़-णिच्-ल्युट्। १ निष्पीड़न, सख़्त तकलीफ़दिही। २ नस्यविशेष, किसी क़िस्मकी सुंघनी। (स्त्री०) अवपीड़ना।

अवपूर्ण (सं० त्रि०) भरा हुआ, लबरेज़।

अवप्रजन (सं० पु०) बुनावटके तानेका खातिमा।

अवप्लुत (सं० त्रि०) अव-प्लु-क्त। १ सकल दिक् सिक्त, चारो ओर सींचा हुआ। २ आर्द्र, भीगा। ३ अवतीर्ण, उतरा हुआ। ४ उपस्थित, मौजूद।

अवप्लुत्य (सं० अव्य०) नीचे कूद कर।

अवफ (सं० पु०) दाढ़ी, गफ़्फ़, पेटका मुलुना।

अवफव (सं० पु०) कुत्सित समाचार, ख़राब ख़बर।

अवबधा (सं० स्त्री०) त्रिकोणके आधारका खण्ड, मुसल्लसके क़ायदेका टुकड़ा।

अवबन्ध (सं० पु०) अवबध्यते आव्रियते चक्षुस्तेजोऽनेन, अव-बन्ध करणे घञ्। १ दृष्टि-आवरक रोग विशेष, मांड़ा, फूली वग़ैरह। भावे घञ्। २ सम्यक् बन्धन, खासी जकड़।

अवबाधा (सं० स्त्री०) अव-बाध-अ स्त्रीत्वात् टाप्। १ सकल दिक् वा सकल प्रकार बाधा, सब तर्फ़ या सब तरहसे आफ़त। २ प्रतिबन्धन, धरपकड़।

अवबाहुक (सं० पु०) अव हृतो बाहुर्येन, प्रादि बहुव्री०। १ वायुरोगविशेष, भुजस्तम्भ, तमब्बुज बाज़ू। (त्रि०) अवगतो बाहुर्यस्य, प्रादि-बहुव्री०। २ बाहुविहीन, बेबाज़ू, जिसके हाथ न रहे।

अवबुद्ध (सं० त्रि०) अव-बुध कर्मणि क्त। १ ज्ञात, जाना हुआ। कर्तरि क्त। २ प्रबुद्ध, जागरित, जागा हुआ।

अवबोध (सं० पु०) अव-बुध भावे-घञ्। १ जागरण, जागना। २ ज्ञान, बोध। ३ न्यायपरता, मुन्सिफ़ी। ४ शिक्षा, तालीम।

अवबोधक (सं० पु०-क्ली०) अव बोधयति अव-बुध-णिच्-ण्वुल्। १ सूर्य। सूर्योदयके पूर्व ही लोग जागते और उनको देखकर समय जानते हैं। इस लिये सूर्यका नाम अवबोधक है। २ ज्ञापक, जनानेवाला, जो किसी बातको जना दे। ३ बन्दी, चारण। ४ चौकीदार, पाहरू, जो रातको पहरा देता हो।

अवबोधकत्व (सं० क्ली०) शिक्षा, पथप्रदर्शन, वर्णन, तालीम, रहनुमायी, बयान्।

अवबोधन (सं० क्ली०) अव-बुध्-णिच्-ल्युट्। ज्ञापन, जनाना, चितावनी, समझाना।

अवभज्य (सं० अव्य०) तोड़ फाड़कर।

अवभञ्जन (सं० क्ली०) तोड़-फाड़।

अवभर्जित (सं० त्रि०) अव-भ्रंस-णिच् भर्जादेशः क्त। भूंजा वस्तु, भूंजी हुई चीज़।

अवभाषण (सं० क्ली०) अव-भाष-ल्युट्। १ कथन, बात। २ मन्द कथन, बुरी बात।

अवभास (सं० पु०) अव-भास भावे घञ्। १ प्रकाश, रोशनी, चमक। २ ज्ञान, समझ। ३ मिथ्या ज्ञान, झूठी समझ। ४ स्थान, जगह।

अवभासक (सं० त्रि०) अव-भासयति, अव-भास-णिच् ण्वुल्। १ प्रकाशक, रोशनी देनेवाला। (क्लो०) २ सर्व प्रकाशक कूटस्थ चैतन्य, परमात्मा।

अवभासकत्व (सं० क्लो०) प्रकाश, रोशनी, चमक-दमक।

अवभासकर (सं० पु०) देव विशेष।

अवभासप्रभ (सं० पु०) देवयोनि विशेष।

अवभासप्राप्त (सं० क्लो०) बौद्धमतसे जगत्‌विशेष, किसी दुनियाका नाम।

अवभासिका (सं० स्त्री०) शरीरके ऊपरका चर्म, ऊपरी खाल।

अवभासित (सं० त्रि०) अव-भास-णिच् क्त इट णिच् लोप:। १ प्रकाशित, रोशन। २ लक्षित, ज़ाहिर।

अवभासिन् (सं० त्रि०) प्रकाशमान, चमकीला।

अवभासिनी, अवभासिका देखो।

अवभिन्न (सं० त्रि०) विभाजित, खण्डित, विच्छिन्न, तक़सीम किया हुआ, टूटा फूटा, जो छिद गया हो।

अवभुग्न (सं० त्रि०) सिमटा, सुकड़ा, दबा हुआ।

अवभृथ (सं० पु०) अव अवसाने बिभर्ति पोषयति यज्ञम्, अव-भृञ्-क्थन्। १ प्रधान यज्ञ समाप्त होने-पर दूसरे यज्ञका आरम्भ, दीक्षान्त यज्ञ। २ होम विशेष। कोई यज्ञ करनेपर न्यूनातिरिक्त दोष लग-नेसे यह होम होता है। ३ अन्त्य दिवस, आख़री दिन। ४ यज्ञाङ्ग स्नान, यज्ञके समयका नहान। ५ अष्टक। "अच्छावभृतमोजसा।" ऋक् ८।९१।२७।

अवभृथस्नान (सं० क्लो०) यज्ञस्नान, यज्ञके बादका नहान।

अवभेदिन् (सं० त्रि०) भेदनकारी, विभाजक, तक़सीम करनेवाला, जो टुकड़े-टुकड़े उड़ा देता हो।

अवभ्र (सं० पु०) निकाल ले जाना, उड़ा देना।

अवभ्रट् (सं० त्रि०) अव भ्रशते भ्रश्यति वा, अव-भ्रन्श भ्रश वा क्विप्। अधःपतित, नीचे गिरा हुआ, जो ऊपरसे गिरकर नीचे आ गया हो।

अवभ्रट (सं० त्रि०) नासिकाया नतम्, प्रादि समास; नतार्थे नासिकाका भटच् प्रत्यय:। १ चपटी नाकवाला, जिसकी नाक नीचे बैठ रहे। (क्लो०) २ चपटी नाक रखनेकी हालत।

अवम (सं० पु०) अवति सर्वकार्येषु नेकृष्टं धार-यति। १ अधम, निकृष्ट, कमीना, ख़राब। २ दिन-क्षय, अहस्पर्श। एक बार दो तिथिका क्षय पड़नेसे जैसे तीन तिथिका, वैसे ही एक तिथिको तीन बारका स्पर्श होनेसे भी दिन क्षय, अहस्पर्श या अवम कहा जाता है। क्रमश: तिथिका स्थितिकाल कम पड़ने-पर बारघटित पूर्वोक्त अवम घट जाता है। फिर तिथि बढ़नेसे परोक्त अवम घटा करता है। जैसे—रविवारको ५८ दण्ड चतुर्थी और पीछे पञ्चमी हो, तो वह समस्त सोमवार भोग मङ्गलवारको भी दो दण्ड रह सकती है। ज्योतिषशास्त्रमें यह अवम तिथि यात्रादि अनेक कार्यमें निषिद्ध है। इसीसे इसको अवम अर्थात् निकृष्ट समझते हैं।

'निकृष्टप्रतिकृष्टार्वरेफयाप्यावमाधमा:।' (अमर)

अवति रक्षति सर्वापद:। ३ रक्षक, मुहाफ़िज़, सब तकलीफ़से बचानेवाला। ४ पितृगण विशेष। पितृ-गण तीन प्रकारका होता है, अवम, ऊर्व और काव्य। अव्यते निन्द्यतेऽनेन करणे अम्। ५ पाप, इल्ज़ाम।

अवमत (सं० त्रि०) अव-मन-क्त अनुनासिकलोप:। १ अवज्ञात, नामालूम। २ तिरस्कृत, बेइज़्ज़त। ३ अवगणित, बेशुमार। ४ अवमानित, बेक़द्र। ५ परिभूत, नापसन्द।

'अवगणितमवमतावज्ञातेऽवमानितञ्च परिभूते।' (अमर)

अवमताङ्कुश (सं० पु०) अवतोऽवज्ञातोऽङ्कुशस्त-त्ताड़नं येन, बहुव्री०। दुर्दान्त हस्ती, मतवाला हाथी, जिसे महावत अङ्कुश मार रोक न सके।

अवमति (सं० स्त्री०) अव-मन् भावे क्ति अनुना-सिक लोप:। १ अवज्ञा, नाफ़रमांबरदारी। २ अना-दर, बेइज़्ज़ती। ३ तिरस्कार। ४ घृणा, नफ़रत। (पु०) ५ प्रभु, मालिक।

अवमतिथि (सं० स्त्री०) अवम सर्वमङ्गलकार्येषु अधमा चासौ तिथिश्चेति, कर्मधा०। १ एकबार अह

तीन तिथि। २ तीन बार लग्न एक तिथि। इसका विवरण अवम शब्दमें देखो।

अवमत्य (सं० अव्य०) घृणासे, नफ़रतके साथ, नाक-भौं चढ़ाकर।

अवमदिन (सं० क्ली०) अवम मधमस्य तत् दिनश्चेति। १ एकबारगी ही लगी हुई तीन तिथि। २ तीन बार लगी हुई एक तिथि।

अवमन्तव्य (सं० त्रि०) अव-मन्-तव्य। अवज्ञेय, अनादरणीय, नफ़रत-अङ्गेज़, लानतपिज़ीर, जो दूर रखने लायक़ हो।

अवमन्तृ (सं० त्रि०) अव-मन्-तृच्। १ घृणा करनेवाला, जिसे नफ़रत रहे। २ घृणित, नफ़रत-अङ्गेज़, ख़राब। ३ अवज्ञा करनेवाला, गुस्ताख़।

अवमन्थ (सं० पु०) अवमथ्नाति विलोडयति, अव-मन्थ-अच्। १ शूकरोग भेद। जिसका लिङ्ग छोटा रहता और जो अवस्थाके विना ही वृद्धि करनेकी इच्छासे लिङ्गके ऊपर किसी वस्तुका प्रलेपादि लगाता, उसके सर्पिका प्रभृति १८ प्रकारका रोग उत्पन्न होता है। इस रोगमें लिङ्गपर बड़ी-बड़ी और घनी फुन्सियां पड़ जातीं एवं पीड़ा और रोमाञ्च होने लगता है।

२ कर्णपाली रोगभेद। (सुश्रुत)

अवमर्द (सं० पु०) अव-मृद-भावे घञ्। १ पीडन। २ चूर्ण करण। ३ चूर्ण हुआ राज्याङ्ग विशेष। ४ ग्रहण विशेष। इसमें राहु, सूर्य और चन्द्रको बड़ी देर तक छिपाये रखता है।

अवमर्दन (सं० क्ली०) १ पीड़न, ज़ुल्म। २ दलन, मालिश। (त्रि०) ३ पीड़ा पहुंचानेवाला, ज़ालिम।

अवमर्दित (सं० त्रि०) पिष्ट, पादाक्रान्त, पीसा, मला या कुचला हुआ।

अवमर्श (सं० पु०) स्पर्श, संयोग, छूवाछूत।

अवमर्ष (सं० पु०) अव-मृष्-घञ्। १ आलोचना। २ नाटकका सन्ध्यंश विशेष। इस अर्थमें 'विमर्ष' ऐसा पाठ भी प्रचलित है।

अवमर्षण (सं० क्ली०) १ अधैर्य, असहनशीलता, बेसब्री, बरदाश्त कर न सकनेकी हालत। २ विस्मरणशील।

अवमान (सं० पु०) अव-मन् भावे घञ्। अवज्ञा, तिरस्कार, अपमान, अनादर।

अवमानन (सं० क्ली०) अवमानना देखो।

अवमानना (सं० स्त्री०) अव-मन्-णिच्-युच् णिच् लोपः नित्य स्त्रीत्वात् टाप्। अपमान करना।

अवमाननीय (सं० त्रि०) घृणित, अनादरके योग्य, बेइज़्ज़तीके क़ाबिल।

अवमानित (सं० त्रि०) अव चुरा० मन-णिच्-क्त इट् णिच् लोपः। १ अपमानित, जिसका अपमान किया गया हो। २ अवज्ञात। ३ अवगणित। ४ अवमत। ५ परिभूत।

अवमानिता (सं० स्त्री०) अनादर, बेइज़्ज़ती।

अवमानिन् (सं० त्रि०) अवमन्यते अवमानयति वा अव-मन-णिनि। १ अपमानकर्ता, अनादर करनेवाला। अवमानमस्त्यस्य अस्त्यर्थे इनि। २ असमानविशिष्ट, अनादरयुक्त, तिरस्कार पाये हुआ।

अवमान्य, अवमाननीय देखो।

अवमार्जन (सं० क्ली०) अव-मृज भावे ल्युट्। १ धौत करण, धोलायी। २ प्रक्षालन, छांट। अवमृज्यते अनेन करणे ल्युट्। ३ जिसके द्वारा मार्जित (धोया) किया जाये, जल प्रभृति। ४ अङ्गसंशोधक। "वाजिनामवमार्जनानीमा।" ऋक् १।१६२।१५। 'अवमार्जनानि अङ्गसंशोधकानि।' (सायण)

अवमुच्य (सं० अव्य०) खोल या साज़ उतार कर।

अवमूत्रयत् (सं० त्रि०) ऊपर मूतनेवाला, जो किसीपर पेशाब करता हो।

अवमूर्धन् (सं० त्रि०) अवनतो मूर्धा यस्य। अधोमुख, नीचे मुंहवाला।

अवमूर्धशय (सं० त्रि०) अवमूर्धा सन् शेते, अव-मूर्धनाशी अच्। अधोमुख शयन-करनेवाला, जो सर लटकाकर सोता हो।

अवमूर्धशायिन्, अवमूर्धशय देखो।

अवमृज्य (सं० अव्य०) १ नोचखसोटकर। २ मार-तोड़कर।

अवमृश्य (सं० त्रि०) स्पर्श करने योग्य, जो छूनेको हो।

अवमोचन (सं० क्लो०) अव-मुच् भावे ल्युट्। १ उन्मोचन, खोलखाल। २ स्वातन्त्र्यप्रदान, आज़ाद कर देनेकी हालत।

अवमोटन (सं० क्लो०) अव-मुट्-णिच्-ल्युट्। मोच, बल।

अवयजन (सं० क्लो०) अव-यज गतौ करणे ल्युट्। १ अपगमनसाधन, जल्द जानेका काम। २ पृथक् याग, निराला यज्ञ।

अवयव (सं० पु०) अवयुयते कार्यद्रवेण सम्बध्यते, अव-यु मिश्रणे कर्मणि अप्। १ अंश, भाग, जिस उपादानसे कोई द्रव्य बने, हिस्सा, टुकड़ा। यु अमिश्रणे अप्। २ अङ्ग, उपकरण, समुदायका एकदेश, अजो जह्वीरेका कोई हिस्सा। ३ वाक्य विशेष, किसी किस्मका जमला।

न्यायमत-प्रसिद्ध परार्थके अनुमानसाधन वाक्यको भी अवयव कहते हैं। अनेकोंके मतसे वह पांच प्रकारका होता है। किन्तु कोई-कोई उसे तीन प्रकारका भी बताता है। पांच प्रकार यह हैं,—१ प्रतिज्ञा, २ हेतु, ३ उदाहरण, ४ उपनय, ५ निगम। पर्वतको अग्निविशिष्ट बताना प्रतिज्ञा वाक्य है। धूमहेतु हेतुवाक्य होता है। भट्टीकी तरह किसी वस्तुमें धूम होनेसे अग्नि रहना उदाहरण कहाता है। धूमको वह्निका व्याप्य बताना उपनय वाक्य है। किसी स्थानमें धूम रहनेसे अग्नि होनेका जो सिद्धान्त निकलता, वही निगम कहाता है।

अवयवशस् (सं० अव्य०) अंश-अंश, टुकड़े-टुकड़े।

अवयवस्थान (सं० क्लो०) शरीर, जिस्म, अजा रहनेकी जगह।

अवयवार्थ (सं० पु०) शब्दके मिश्रित अंशोंका अर्थ, लफ़्ज़के मुरक्कब हिस्सोंका मानी।

अवयविन् (सं० त्रि०) अवयवः कारणत्वेनास्त्यस्य इनि। १ अवयव रखनेवाला। जैसे, दो कपाल अवयवसे घड़ा बनता और अवयवी कहाता है। जन्य द्रव्यत्वका नाम अवयवित्व है। नैयायिक अवयवित्वको अवयवसे भिन्न और अतिरिक्त पदार्थ मानते हैं। मुक्तावलीमें अवयवीका प्रमाण देखाया गया है। यथा,—बहु परमाणु, एकत्र होनेसे ही अवयवी मानना पड़ता है। किन्तु आपत्ति आती, परमाणु इन्द्रियग्राह्य न रहनेसे घटादि कैसे प्रत्यक्ष हो सकता है। इसका उत्तर है,—एक परमाणुके प्रत्यक्ष न पड़ते भी परमाणु-समूहको साफ़-साफ़ देखते हैं। जैसे, दूरसे एक केश दृष्टिगत नहीं होता; किन्तु अधिक केश किसी स्थानमें रहने पर दूरसे ही झलकता है।

अवयवी (सं० पु०) पक्षी, चिड़िया। अवयविन् देखो।

अवया (वै० त्रि०) १ निकल जाने या बन्द होनेवाला। २ शत्रुके वर्जन निमित्त गमनकारी, जो दुश्मनको रोकने जाता हो।

अवयाज् (सं० क्लो०) अवयुज्य पृथक्कृत्य इज्यते, अव-यज कर्मणि ण्वि। १ अवयजन, पृथक् याग, अलगसे हविर्भाग स्थापन। (त्रि०) २ अपकृष्ट यागकारी, खराब यज्ञ करनेवाला।

अवयातहेलस् (वै० पु०) क्रोधको शान्त किये हुये व्यक्ति, जो शख्स अपना गुस्सा ठण्डा कर चुका हो।

अवयातृ (सं० त्रि०) अव-या-तृच्। १ पृथक्कर्ता, अलग करनेवाला। २ शान्तिस्थापक, जो ठण्डा पड़ जाता हो।

अवयान (सं० क्लो०) अव-या-ल्युट्। १ अपगम, उतार, हटाव। २ शान्ति, सदका।

अवयुन (वै० त्रि०) नास्ति वयुनं यस्य, नञ् बहुव्री०। १ कान्तिशून्य, बेरौनक़। २ प्रज्ञाशून्य, बेअक़्ल। नञ्-तत्। ३ अप्रज्ञान, समझमें न आनेवाला।

अवर (सं० त्रि०) न वरम्, नञ्-तत्। १ देवतासे श्रेष्ठ न होनेवाला, जो फ़रिश्तेसे अच्छा न हो। २ अल्पप्रिय न होनेवाला, जो कम प्यारा न हो। ३ चरम, बड़ा। ४ अधम, पाजी। ५ अर्वाचीन, नया। ६ पश्चाद्वर्ती, पीछे रहनेवाला। नास्ति वरः श्रेष्ठो यस्मात्, ५-बहुव्री०। ७ अतिश्रेष्ठ, बहुत बड़ा। (पु०) ८ पश्चाद्वर्ती देश, पीछेका मुल्क। ९ पश्चाद्वर्ती काल, पीछेका वक्त। न वरः, नञ्-तत्।

१० वैर न होनेवाला व्यक्ति, जो प्रथम दूल्हा न हो। (क्ली०) ११ हस्तिजङ्घाका पश्चाद्‌भाग, हाथीकी जांघका पिछला हिस्सा। (स्त्री०) १२ पश्चाद्‌वर्ती दिक्, पीछेकी सिम्त।

अवरक्षक (सं० त्रि०) पालक, मुहाफ़िज़, जो देखभाल रखता हो।

अवरज (सं० पु०) अवरस्मिन् काले जायते अवर-जन-ड। १ कनिष्ठ सहोदर भ्राता, छोटा भाई। 'जघन्यजे स्युः कनिष्ठ यवीयोऽवरजानुजाः।' (अमर) २ शूद्र। ३ नीच कुलोत्पन्न, अधम। (स्त्री०) टाप्। अवरजा। कनिष्ठ सहोदर भगिनी,छोटी बहिन। ४ शूद्रा। अवरस्या जायते जन-ड। पुम्वद्‌भावः। ५ छोटी बहनका लड़का, भागिनेय, भाञ्जा। (स्त्री०) टाप्। भागिनेयी।

अवरत (सं० त्रि०) अव-रम्-क्त अनुनासिकलोपः १ विश्रान्त। २ विरत, प्रेम न रखनेवाला। ३ अलग, पृथक्। ४ स्थिर, ठहरा हुआ। ५ अनवरत, सतत, हरवक़्त।

अवरतस् (सं० अव्य०) अवर-तसिल्। अवर, अवरको, अवरद्वारा, अवरके उद्देश्य, अवरसे, अवरका, अवरमें इत्यादि। सम्पूर्ण विभक्तिके स्थानमें तसिलस् प्रत्यय होता है।

अवरति (सं० स्त्री०) अव-रम् क्तिन्। १ विराम, ठहराव। २ निवृत्ति, छुटकारा। 'आरत्यवरति विरतीय उपरमे।' (अमर)

अवरदारक (सं० क्ली०) स्थावर विषान्तर्गत पत्र-विषविशेष, किसी पत्तीका ज़हर।

अवरपरम् (वै० अव्य०) एकके बाद दूसरा, एक-एक।

अवरपुरुष (सं० पु०) सन्तान, औलाद, बालबच्चे।

अवरवर्ण (सं० पु०) अवरः शेषीभूतो वर्णः। कर्मधा०। शूद्र।

अवरवर्णक, अवरवर्णज देखो।

अवरवर्णज (सं० पु०) अवरवर्णे जायते, अवर-वर्ण-जन-ड। १ शूद्र। २ निकृष्टवर्णजात रक्त।

अवरव्रत (सं० पु०) नास्ति वरं श्रेष्ठं यस्मात् तदवरं तथोक्तं व्रतं नियमो यस्य बहुव्री०। १ सूर्य। सूर्यको जगत्‌में प्रतिनियत किरण द्वारा पृथिवीका जल खींचकर पुनर्वार यथाकाल देना पड़ता है। यह दोनो काम सूर्यके प्रति उत्कृष्ट व्रत बन गये हैं। इसीसे सूर्यका नाम अवरव्रत है। २ अर्कवृक्ष, अकोड़ेका पेड़। (त्रि०) अवरं अधमं व्रतमस्य। ३ हीनव्रत, मन्दनियमयुक्त, अधम।

अवरशाला (सं० स्त्री०) बौद्ध मठ विशेष।

अवरशैल (सं० पु०) अवरः पश्चाद्‌वर्ती शैलः कर्मधा०। १ अस्ताचल। २ एक प्रसिद्ध बौद्धविहार।

अवरस्तात् (सं० अव्य०) अवर प्रमथाद्यर्थे अस्ताति। पश्चात् देश, काल किंवा दिक्।

अवरस्पर (वै० त्रि०) १ सबसे पिछला अगला रखने-वाला, जो औवलमें आखिरीका क़ाबिज़ हो।

अवरहस (सं० क्ली०) अव अवततं रहः अत्यन्तप्रा० स०। अति निर्जन, जहां कोई भी जीव न रहे।

अवराधक (हिं०) १ आराधना करनेवाला, जो पूजा करता हो। २ दास, सेवक।

अवराधन (हिं० पु०) आराधन, उपासना, पूजा, सेवा।

अवराधना (हिं० क्रि०) उपासना करना, पूजना, सेवा करना।

अवराधी (सं० पु०) पूजक, उपासक, आराधक।

अवरार्ध (सं० क्ली०) अवरस्य तत् अर्धञ्चेति, कर्मधा०। १ अपर भाग, ऊपरी हिस्सा। २ देहका पश्चाद्‌भाग, जिस्मका पिछला हिस्सा। ३ नाभिसे पाद पर्यन्त देहका निम्न भाग, तोंदीसे पैरतक जिस्मके नीचेका हिस्सा। (अव्य०) ४ क्रमशः, धीरे-धीरे।

अवरार्धतस् (सं० अव्य०) निम्न भागसे, नीचे-नीचे।

अवरार्ध्य (सं० त्रि०) अवरार्धे भवं यत्। १ शेष भाग जात, आख़िरी हिस्सेसे निकला हुआ। २ न्यून, कम। ३ अल्प, थोड़ा। ४ निम्न वा निकटस्थित, नीचे या पास पड़ा हुआ। (क्ली०) ५ अल्पतम भाग, छोटेसे छोटा हिस्सा।

अवरावर (सं० त्रि०) अतिशय निम्न, निहायत छोटा।

अवरिका (सं० स्त्री०) धन्याक, धनिया।

अवरीण (सं० त्रि०) अव अपकृष्टं रीयतेस्म, अव-री कर्मणि क्त। तिरस्कृत, धिक्कृत, फटकारा हुआ, जो डांटा-डपटा गया हो।

'अवरीणोऽधिक्कृतश्च।' (अमर)

अवरीयस् (सं० त्रि०) न वरीयः, नञ्तत्। १ नीच, कमीना, जो अच्छा न हो। २ अति अल्प, बहुत थोड़ा। (पु०) ३ सावर्ण मनुके पुत्रविशेष। (स्त्री०) अवरीयसी।

अवरुग्न (सं० त्रि०) अव-रुज्-क्त ओदित्वात्तस्य नः। रुग्ण, मरीज़।

अवरुज्य (सं० अव्य०) तोड़-फोड़ कर, टुकड़े-टुकड़े उड़ाके।

अवरुद्ध (सं० त्रि०) अव सर्वथा रुध्यतेस्म, अव-रुध कर्मणि क्त। १ प्रतिरुद्ध, रुंधा हुआ। २ बद्ध, बंधा हुआ। ३ गुप्त, छिपा हुआ।

अवरुद्धा (सं० स्त्री०) १ रखनी, नीचे बैठी हुई अपनी जातिकी स्त्री। २ उढरी, जो औरत नीचे बैठ गयी हो।

अवरुद्धि (सं० स्त्री०) अव-रुध भावे क्तिन्। १ अवरोध, घेरा। २ लाभ, फ़ायदा।

अवरुध्यमान (सं० त्रि०) अवरोधप्राप्त, घिरा हुआ।

अवरूढ़ (सं० त्रि०) अव-रुह-क्त। १ कृतावरोहण, उतरा हुआ। २ उत्पाटित, उखाड़ा हुआ।

अवरूप (सं० त्रि०) १ कुरूप, बदशकल। २ वर्ण-सङ्कर, कमीना।

अवरेखना (हिं० क्रि०) १ तस्वीर खींचना, रेखा लगाना। २ दृष्टि डालना, देखना-भालना। ३ अनुमान लगाना, अन्दाज़ बांधना। ४ स्वीकार करना, समझना-बूझना।

अवरेण (सं० अ०) निम्न भागमें, नीचे।

अवरेब (हिं० पु०) १ वक्र चलन, तिरछी रफ़्तार। २ कपड़ेका तिरछा काट। ३ फन्दा। ४ मुश्किल, बुरायी। ५ बहस, तकरार। ६ बोलीठोली, ताना-ज़नी।

अवरेबदार (हिं० वि०) १ तिरछे काटका। २ पेचीला।

अवरेबी, अवरेबदार देखो।

अवरोकिन् (वै० त्रि०) प्रकाशमान, रौशन, चमकीला।

अवरोचक (सं० पु०) अव अनादरे रोचयति; अव-रुच्-णिच्-ण्वुल्, णिच् लोपः। अरुचिकारक रोगविशेष, जिस बीमारीमें कोई चीज़ खानेसे अच्छी न लगे।

अवरोध (सं० पु०) अव-रुध भावे घञ्। १ विरोध, मुख़ालफ़त, झगड़ा। २ क़ैद, घेरा। अव-रुध कर्मणि घञ्। ३ तिरोधान, गुम पड़नेकी हालत। ४ राजाके अन्तःपुरमें रहनेवाली स्त्री। अव-रुध आधारे घञ्। ५ राजाका अन्तःपुर, बादशाहका महल। 'अवरोधस्तिरोधाने शुद्धान्ते राजवेश्मनि।' (विश्व) ६ ढक्कन। ७ बाड़ा। ८ चौकीदार। (वै०) ९ उतार, नीचेकी थाना। १० पौधेकी जड़से निकली हुई कोपल।

अवरोधक (सं० त्रि०) १ रोकनेवाला। (पु०) २ रक्षक, रहनुमां। (क्ली०) ३ घेरा, बाड़ा।

अवरोधन (सं० क्ली०) अव-रुध भावे ल्युट्। निरोध, रोकटोक। २ क़ैद, फंसाव। अवरुध्यन्ते राजयोषिता यस्मिन्, अव-रुध आधारे ल्युट्। ३ राजाका अन्तःपुर। (वै०) ४ उतरनेकी हरकत, उतार।

अवरोधना (हिं० क्रि०) १ बेड़ा बांधना। २ रोक-टोक करना।

अवरोधायन (सं० क्ली०) अवरोधस्य प्रतिरोधस्य राजयोषितो वा अयनं गृहम्, ६-तत्। राजाका अन्तःपुर, बादशाहका हरम।

अवरोधिक (सं० पु०) अवरोधे राजान्तःपुरस्य राज-योषितो वा रक्षणे नियुक्तः। रानीके प्रासादका रक्षक, मुहाफ़िज़ हिरम।

अवरोधिका (सं० स्त्री०) अन्तःपुरवासिनी राजाकी स्त्री, जो रानी महलमें रहती हो।

अवरोधित (सं० त्रि०) घेरा हुआ, रोका गया।

अवरोधिन् (सं० त्रि०) अवरुणद्धि, अव-रुध-णिनि। १ रोधक, रोकनेवाला। २ आवरक, ढांकनेवाला। अवरोधो रक्षकत्वेनास्त्यस्य। ३ राजाके अन्तःपुरका रक्षक, शाही महलका मुहाफ़िज़।

अवरोधिनी (सं० स्त्री०) अन्तःपुरवासिनी राजाकी स्त्री, घरमें रहनेवाली बादशाहकी बेगम।

अवरोधी, अवरोधिन् देखो।

अवरोपण (सं० क्ली०) अव-रुह-णिच् पः ल्युट्, णिच् लोपः। १ उत्पाटन, उखाड़पछाड़। २ धक्का, उतार देनेकी हालत। ३ छीनछान। ४ उतार, गिराव। ५ अस्त, गु.रूब।

अवरोपणीय (सं० त्रि०) अवरोपणके योग्य, उखाड़ डालने का.बिल।

अवरोपित (सं० त्रि०) अव-रुह-णिच्-पः क्त इट् णिच् लोपः। १ उत्पाटित, उखाड़ा हुआ। २ उतारा हुआ, जो नीचे गिरा दिया गया हो।

अवरोप्य (सं० अव्य०) १ उतार कर, नीचे गिराके। २ उत्पाटन करते या उखाड़ते हुए।

अवरोह (सं० पु०) अव-रुह घञ्। १ अवतरण, उतार। अवरोहति वृक्षशाखातः अधोमुखे नावतरति, कर्तरि संज्ञायां घः। २ शाखाशिफा, डालका अग्रभाग। 'शाखाशिफावरोहः स्यात्।' (अमर) अवरोहति तरोमूलतः अग्रपर्यन्तमारोहति, कर्तरि घः। ३ गुलञ्च प्रभृति लता, गुड़च वग़ैरहकी बेल, जो बेल पेड़की जड़से ऊपरको चढ़ती हो। अवरोहति स्वपुण्यफलभोगात् परं मनुष्यलोके अवतरत्यस्मात्, अपादाने घञ्। ४ स्वर्गादि लोक, बिहिश्त वग़ैरह। शास्त्रकारोंका कथन है, जिसका जैसा पुण्य होता, वह उसके अनुसार स्वर्गादि लोकमें सुख उठा फिर पृथिवी पर आ जन्म लेता है। ५ अलङ्कार विशेष। यह वस्तु विशेषके सौन्दर्य वा मोलको घटाते चला जाता है।

अवरोहक (सं० पु०) अश्वगन्धा, असगंध।

अवरोहण (सं० क्ली०) अव-रुह भावे ल्युट्। १ अवतरण, उतार। २ चढ़ाव।

अवरोहना (हिं० क्रि०) १ अवतरण करना, उतरना। २ आरोहण करना, चढ़ना। ३ उतारना, खींचना, रङ्ग भरना। ४ रोकना, आड़ लगाना।

अवरोहवत्, अवरोहशाखिन् देखो।

अवरोहशाखिन् (सं० पु०) अवरोहति छिन्नोपि पुनः प्ररोहति, अव-रुह-अच्। १ वट वृक्ष, बरगदका पेड़। वटकी डाल काट कर गाड़ देनेसे भी वृक्ष उपजता, इसीसे वह अवरोहशाखी कहाता है। (त्रि०) २ कटी हुई शाखासे उत्पन्न होनेवाला, जो क़लमसे पैदा होता हो।

अवरोहशाखी (सं० पु०) प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़।

अवरोहिका (सं० स्त्री०) अवरोहति वृक्षशाखातः अधोमुखेन गच्छति, अव-रुह-ण्वुल्-टाप्। अश्वगन्धा, असगंध।

अवरोहिणी (सं० स्त्री०) १ उच्च स्थानसे निम्न-देशमें आया हुई स्त्री, जो औरत ऊंचेसे नीचे उतरी हो। २ ज्योतिषोक्त दशा विशेष।

अवरोहिन् (सं० पु०) अवरोहः शाखाशिफा अस्त्यस्य, अवरोह-इनि। १ वट वृक्ष, बरगदका पेड़। २ उतरता हुआ स्वर। (त्रि०) ३ उतरनेवाला।

अवरोही, अवरोहिन् देखो।

अवर्ग (सं० पु०) स्वरत्वेन अकारस्य सजातीया वर्गः शाक० तत्। १ सकल स्वरवर्ण, कुल हर्फ़-इल्लत। (त्रि०) नास्ति वर्गः समूहो यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ वर्गशून्य, जिसके समूह न रहे।

अवर्चस् (वै० त्रि०) ज्योतिःहीन, आकृतिमें तुच्छ, कुरूप, बेरौनक़, सूरत-शकलमें हेच, बदनुमान्।

अवर्जिस् (वै० त्रि०) रोकटोक न करते हुआ, जो रोक न सकता हो।

अवर्ण (सं० पु०) अकारस्यैकस्थानीयो वर्णः अक्षरम्, शाक० तत्। १ ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित, अनुनासिक, और निरनुनासिक भेदसे अष्टादश संज्ञक अवर्ण, हर्फ़-इल्लत। मुग्ध-बोधके मतसे ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत अकार ही अवर्ण होता है। वर्ण्यते जनमनो रज्यतेऽनेन, वर्ण चुरा० णिच् करणे घञ् णिच् लोपः, वर्णः प्रशस्तादि ततो नञ-

तत्। २ व्रतभिन्न, जिस दिन व्रत न रहे। ३ प्रशंसा-भिन्न, निन्दा, बदनामी।

'अवर्णाचेपनिर्वादपरीवादापवादवत्।
उपक्रोशो जुगुप्सा च कुत्सा निन्दा च गर्हणे॥' (अमर)

(त्रि०) ४ कुरूप, बदशक्ल। ५ ब्राह्मणादि चार वर्णसे भिन्न, जो ब्राह्मण वगैरह चार वर्णमें न हो। ६ शुक्लादि वर्ण भिन्न, जो सफेद वगैरह रङ्ग न रखता हो। ७ स्वर्ण वा रौप्य भिन्न, जो सोना-चांदी न हो। ८ अक्षर भिन्न, जो हर्फ़ न हो। ९ गुण भिन्न, जो सिफत न हो। १० अतिक्रम भिन्न, जो मानेके क़ायदेसे अलग हो। ११ चित्र भिन्न, जो तस्वीर न हो। १२ यशोभिन्न, जो नामवरी न हो। १३ ताल विशेष भिन्न, जो ख़ास ताल न हो। १४ अङ्गराग भिन्न, जो तेल-फुलेल न हो। (क्लो०) कुङ्कुमभिन्न, जो चीज़ केसर न हो।

अवर्णवाद (सं० पु०) कटाक्ष, अपयश, आक्राश, तानाज़नी, बदनामी, गाली।

अवर्ण्य (सं० त्रि०) वर्णनके अयोग्य, जो बयान्के लायक् न हो। (पु०) २ प्रधान विषय, उपमान, बड़ी बात।

अवर्त्त (सं० पु०) १ प्रकाशशून्य वस्तु, जिस चीज़के नज़र पार न जा सके। २ भंवर, पानीका घेरदार फेरा। ३ घुमाव, चक्कर।

अवर्त्तन (सं० क्लो०) वृत-लुग्रट् अभावे नञ् तत्। १ वर्तमानका अभाव। २ उपस्थितिका न रहना, अदममौजूदगी, अस्थिति, रवानगी। (त्रि०) वर्तते जीवति अनेन करणे-लुग्रट्। वर्तनं जीविका ततो नञ्-बहुव्री०। ३ जीविकाशून्य, जिसके काम न रहे।

अवर्तमान (सं० त्रि०) १ अनुपस्थित, अप्रस्तुत, असत्। २ भूत या भविष्य।

अवर्ति (सं० स्त्री०) प्राशस्त्येन वर्तते अनया, वृत-करणे इन वर्तिः ततो नञ्-तत्। दरिद्रता, जीवन-राहित्य, जिसे जीनेकी कोई उम्मीद न रहे। "किमङ्ग वां प्रत्यवर्ति।" (ऋक् १।११८।३)

अवर्ती—गुजरातके काठियोंका एक समाज। यह शाखावतीसे विवाहादि सम्बन्ध लगाता, किन्तु अपने बीच वैसा करना ठीक नहीं समझता है।

अवर्त्य (वै० त्रि०) वृत-(दादिभ्यश्छन्दसि। उण् ४।१८८) न वर्त्य, नञ्-तत्। अवारणीय, जो रोकने लायक् न हो।

अवर्द्धमान (सं० त्रि०) न वर्द्धमानं विरोधे नञ्-तत्। १ वृद्धिशून्य, जो बढ़ता न हो। २ क्षयशील, नाश होनेवाला।

अवर्मन् (वै० त्रि०) कवचशून्य, बखतर न पहने हुआ।

अवर्ष (सं० पु०) अवर्षण देखो।

अवर्षण (सं० क्लो०) न वर्षणम्, अभावे नञ्-तत्। १ वर्षणाभाव, अवग्रह, अनावृष्टि। (त्रि०) २ वर्षण-शून्य, बारिशसे खाली।

अवर्षुक (सं० त्रि०) न बरसनेवाला।

अवर्ष्य (वै० त्रि०) वर्षणशून्य ऋतुमें उत्साह दिखानेवाला, जो पानी न बरसनेवाले साफ मौसममें काम करता हो।

अवलक्ष (सं० पु०) अवलक्ष्यते अव-लक्ष-घञ्। श्वेत-वर्ण, सफेद रङ्ग। 'अवलक्षो धवलोऽर्जुनः।' (अमर) (त्रि०) अर्श आदि-अच्। २ अलक्षविशिष्ट, सफेद, उजला।

अवलग्न (सं० पु०) अव-लग-क्त नि० इड़भावः तस्य न। १ देहका मध्यभाग, जिस्मके बीचका हिस्सा। (त्रि०) २ संलग्न, संयुत, लगा हुआ। ३ लटकते हुआ।

अवलङ्घना (हिं० क्रि०) लांघना, फांदना, पार होना।

अवलत्तिका (सं० स्त्री०) अव अवगता लत्तिका ज्याघातोऽनया अवलतति ज्याघातान् निवारयति वा अवलतमीव' क्षतिभिदिलतिभ्यः कित्। उण् ३।१४१। इति तिकन् किच्च। गोधा, ज्याघातनिवारक वाहुपट्टिका आदि अस्त्र विशेष।

अवलम्ब (सं० पु०) अवलम्बतेऽस्मिन् अव-लवि-आधारे घञ्। १ आश्रय, ठिकाना। करणे घञ्। २ अवलम्बनके आश्रय दण्डादि। भावे-घञ्। ३ किसी वस्तुका आश्रय करना, सहारा पकड़ना।

अवलम्बक (सं० पु०) १ छन्दोविशेष, कोयी बहर। २ श्रम विशेष, किसी किस्मका गु.काम।

अवलम्बन (सं॰ क्लो॰) अव-लबि भावे ल्युट्। १ आलम्बन, टेक। आधारे ल्युट्। २ आश्रय, आधार। करणे ल्युट्। ३ आश्रयके योग्य दण्डादि, सहारा लेने लायक़ लकड़ी वग़ैरह। ४ श्लेष्मविशेष, किसी क़िस्मका ज़ुकाम।

अवलम्बना (हिं॰ क्रि॰) आश्रय लेना, सहारा पकड़ना, ठहरना।

अवलम्बित (सं॰ त्रि॰) अव-लबि कर्मणि क्त। १ आश्रित, जिसका सहारा पकड़ा गया हो। २ शीघ्र, जल्द। कर्तरि क्त। अवतीर्ण।

अवलम्बितव्य (सं॰ त्रि॰) १ अवलम्बन लेने योग्य, सहारा पकड़ने क़ाबिल। २ शीघ्रताविशिष्ट, चालाक।

अवलम्बिन् (सं॰ त्रि॰) १ अवलम्बनकर्ता, अवलम्बन करनेवाला, सहायता लेनेवाला। २ अवतारक, जो उच्च स्थानसे निम्न स्थानमें उतरता हो। "भगवति मरीचिमालिनि अस्ताचलचूड़ावलम्बिनि" (हितोपदेश) ३ सहारा देनेवाला, रक्षा करनेवाला।

अवलम्बी, अवलम्बिन् देखो।

अवलम्बत् (सं॰ त्रि॰) १ सहारा लेते हुये। २ विश्वास रखते हुये। ३ राह देखते हुये।

अवला (सं॰ स्त्री॰) नास्ति बलं यस्याः। नञ् बहुव्री॰। १ स्त्री, योषित्। (स्त्रीयोषिदबला। अमर) २ प्रियङ्गु।

अवलिप्त (सं॰ त्रि॰) अव-लिप्-क्त। १ गर्वित, घमण्डी, जो घमण्ड रखता हो। "अवलिप्तासि देविलम्" (चण्डी) २ लेपन किया हुआ, लगा हुआ, पोता हुआ, जो सब तर्फ़ या सब प्रकार लेपनयुक्त हो। ३ आसक्त, लिपटा हुआ।

अवलिप्तता (सं॰ स्त्री॰) गर्व, ग़ुरूर, घमण्ड।

अवलिप्तत्व (सं॰ क्लो॰) अवलिप्तता देखो।

अवली (हिं॰ स्त्री॰) १ पंक्ति, क़तार। २ समूह, झुण्ड। ३ अन्नविशेष। यह पहले पहल खेतसे काटा जाता है। ४ जो अन्न गडरियां एकबार भेड़से काटता हो।

अवलीक (हिं॰ वि॰) अपराध शून्य, अपराधरहित, पापशून्य, जिसमें पाप न हो, निष्पाप, निष्कलङ्क, शुद्ध।

अवलीढ (सं॰ त्रि॰) अव लिह-क्त। १ भक्षित, भोजन किया हुआ, जो वस्तु खाया गया हो। २ चाटा हुआ, जो चीज जिह्वाके अग्रभाग द्वारा धीरे-धीरे खाया गया हो। ३ व्याप्त।

अवलीला (सं॰ स्त्री॰) अवरालीलायाः प्रा॰ समा॰। जो वस्तु क्रीड़ाके अपेक्षा सहज हो, अनायास, अनादर, अपमान।

अवलुञ्चन (सं॰ क्लो॰) अव-लुञ्च-ल्युट्। १ छेदन, काटना। २ उत्पाटन, उखाड़ना, नोचना। ३ बन्धन न करना। ४ अलग रखना। ५ छोड़ाना, खोलना। ६ अपनयन, दूरीकरना, हटाना। ७ ले जाना। ८ मुण्डन। ९ कौटिल्य, सुसती।

अवलुञ्चित (सं॰ त्रि॰) अवलुञ्चा उत्पाटनं सा संजातास्य। सञ्जातार्थे तारकादित्वात् इतच्। १ उत्पाटित, उखाड़ा हुआ नोचा हुआ। २ अपनीत, दूर किया हुआ, हटाया हुआ। ४ अकृत बन्धन, बन्धन न किया हुआ, बेबांधा। ५ छेदित, कटा हुआ। ६ खुला हुआ, मुक्त।

अवलुण्ठन (सं॰ क्लो॰) अव-लुठि भावे ल्युट्। १ भूमिमें पड़ लोट पोट होना, परिवर्तन, मट्टीमें उलट पलट करना, लोटना।

अवलुण्ठित (सं॰ त्रि॰) १ लेटा हुआ। २ लोटा हुआ।

अवलुम्पन (सं॰ क्लो॰) कूद फांद।

अवलून (सं॰ त्रि॰) कटा हुआ।

अवलेख (सं॰ पु॰) अव-लिख भेदने भावे घञ्। पृथक् किया हुआ पदार्थ, अलग लगायी हुई चीज।

अवलेखन (सं॰ क्लो॰) पृथक्करण, अलगाव।

अवलेखना (हिं॰ क्रि॰) १ खोदना, खनना, खुरचना। २ चिह्न बनाना, लकीर खींचना।

अवलेखा (सं॰ स्त्री॰) १ लूटपाट। २ साजबाज।

अवलेप (सं॰ पु॰) अव-लिप्-भावे-घञ्। १ गर्व, घमण्ड। २ लेपन, उबटन। ३ भूषण। ४ सम्बन्ध। ५ दूषण, दोष देना (दोष लगाना)।

अवलेपस्तु गर्वेस्यात् लेपने दूषणेऽपि च। (विश्व)

अवलेपन (सं० क्लो०) अव-लिप्-भावे ल्युट्। १ विलेपन, लगाना, पोतना, छोपना। २ सम्बन्ध। ३ गर्व, घमण्ड। ४ दूषण। करणे-ल्युट्। ५ चन्दनादि वह चीज़ जो लगाई या छोपी जाये, उपटन वगैरह।

अवलेह (सं० पु०) अव-लिह भावे घञ्। १ औषध-विशेष, जो औषध जिह्वाके द्वारा चाटकर खाया जाये। २ चटनी। ३ माजून। ४ जिह्वाग्रद्वारा आस्वादन करने योग्य वस्तुमात्र। अर्थात् जो चीज़ न बहुत गाढी और न अधिक पतली हो तथा चाटी जाये।

अवलेहन (सं० पु०) १ चाट, जोभकी नोक लगाकर खाना। २ चटनी प्रभृति।

अवलेह्य (सं० त्रि०) अव-लिह कर्मणि ण्यत्। जिह्वाग्रद्वारा आस्वादनीय, चाटने योग्य। जो वस्तु चाट-चाटकर खाया जाता हो, जैसे शहद प्रभृति।

अवलोक (सं० पु०) अव-लुक् लोक वा घञ्। दर्शन देखना, चाक्षुष ज्ञान।

अवलोकक (सं० त्रि०) देखनेवाला।

अवलोकन (सं० क्लो०) अव-लुक-लोक वा घञ्। १ दर्शन, देखना। २ अनुसन्धान करना। ३ विवेचना लगाना। करणे ल्युट्। ४ नेत्र। ५ देखभाल, जांच पड़ताल, निरीक्षण।

अवलोकना (हिं० क्रि०) देखना, जांचना, अनुसन्धान करना।

अवलोकनि (हिं० स्त्री०) नेत्र, दृष्टि, आंख।

अवलोकनीय (सं० त्रि०) देखने योग्य, दर्शनीय।

अवलोकित (सं० त्रि०) अव-लोक कर्मणि-क्त। १ दृष्ट, देखा हुआ। (क्लो०) भावे क्त। २ दर्शन। (पु०) अवलोकित मस्त्यस्य अच्। बुध विशेष।

'अवलोकितो बुद्धे प्रेक्षिते त्वऽवलोकितम्।' (विश्व)

अवलोकित—गुजरातके प्राचीन शिल्पकार। सन् ८२७ ई०को इनके लड़के योगेश्वरने राष्ट्रकूट-नृपति गोविन्दका कावी-ताम्रफलक लिखा था।

अवलोकितेश्वर (सं० पु०) बोधिसत्त्व विशेष। महायान और उसके परवर्ती विभिन्न बौद्ध सम्प्रदायका उपास्य देवता भेद। किसी किसी प्रत्नतत्त्वविद्के मतसे महायान सम्प्रदायके मध्य शैव प्राधान्यके साथ इन अवलोकितेश्वर वा लोकेश्वरकी पूजा चली थी। इसीसे विभिन्न अवलोकितेश्वर वा लोकेश्वरकी मूर्तियोंमें शैवतन्त्रोक्त पञ्चानन या सदाशिवका भाव देख पड़ता है। यहां तक, कि अनेक स्थानमें अवलोकितेश्वर शिव मानकर भी पूजे गये। जो देवता स्वर्गसे मुमुक्षुवोंके उद्धारको सर्वदा देखा करते हैं, इसीसे उनका नाम अवलोकितेश्वर रखा गया। किसी-किसी बौद्ध तन्त्रके मतसे अवलोकितेश्वर ध्यानी बुद्ध अमिताभके पुत्र रहे। साधनमालातन्त्रमें अवलोकितेश्वर वा लोकेश्वरको साधन विद्यमान है। यथा—

"पूर्ववत् क्रमयोगेन लोकनाथं शशिप्रभम्।
ह्रीः:काराक्षरसम्भूतं जटामुकुटमण्डितम्॥
वज्रधर्म्मजठान्तःस्थं अशेषरोगनाशनम्।
वरदं दक्षिणे हस्ते वामे पद्मधरं तथा॥
ललिताक्ष पर्य्यंस्थं तु महासौम्यं प्रभास्वरम्।
वरदोत्पलका सौम्या तारा दक्षिणतः स्थिता॥
वन्दनादण्डहस्तस्तु हयग्रीवोऽथ वामतः।
रक्तवर्णो महारौद्रो व्याघ्रचर्म्माम्बरप्रियः॥
एवं विधि समायुक्तं लोकनाथं प्रभावयेत्
सर्वक्लेशमल्गालोता भवेत् पूर्णमनोरथः॥
अत मन्त्र ओम् ह्रीः स्वाहा।" (साधनमालातन्त्र)

साधनमाला, साधनसमुच्चय प्रभृति बौद्ध-तन्त्रमें तीस प्रकारके अवलोकितेश्वरकी मूर्ति बनाने और पूजनेकी बात है। इसीसे प्रत्येक मूर्तिका भिन्न रूप, भिन्न ध्यान और भिन्न वीजमन्त्र देखनेमें आता है। इन सब विशेष-विशेष अवलोकितेश्वरकी मूर्तियोंके बीच खसर्पण-लोकेश्वर, हलाहल-लोकेश्वर, सिंहनाद-लोकेश्वर, हरि-हरि हरि-वाहनोद्भव-लोकेश्वर, त्रैलोक्यवशङ्कर-लोकेश्वर, रक्तलोकेश्वर, पद्मनर्तकेश्वर-लोकेश्वर, नीलकण्ठावलोकितेश्वर, मायाजालक्रमार्य्यावलोकितेश्वर, यन्त्रपिण्डी लोकनाथ, सहस्रभुज लोकनाथ, शील लोकनाथ, जयतुङ्ग लोकनाथ, महाविश्व लोकनाथ प्रभृति प्रधान हैं। नेपालसे आविष्कृत तान्त्रिक बौद्ध ग्रन्थके प्राचीन पुस्तकमें मगधके कपोतपर्वत, नेपालके स्वयम्भुचैत्र, समतट, सिंहलद्वीप, गान्धारान्तर्गत कूटपर्वत, सुवर्णद्वीपके विजयपुर, कटाह-

द्वीपान्तर्गत बलवतिपर्वत, दक्षिणापथका मूलवास, महाचीनके वुहरूपक ग्राम, राढ़के अन्तर्गत कन्याराम, धार्मराजिक चैत्य और वेत्रवन, कोङ्कणाख्य शिवपुर और श्रीखदिरवन, मगधके जारुह पर्वत, नालन्दा, वन्दीकोट, वरेन्द्रके तुलाक्षेत्र, वेदकोट वा वेदपुर, पोतलक इत्यादि प्राचीन स्थानमें अधिष्ठित अवलोकितेश्वरकी मूर्तिका सन्धान मिलता है। आजकल तिब्बतमें अवलोकितेश्वर अधिष्ठातृ-देवता मानकर पूजे जाते हैं। लोकेश्वर और बोधिसत्त्व देखो।

अवलोकिन् (सं० त्रि०) अवलोकयति पश्यति अव-लुक् लोक् वा णिनि। १ दर्शक, देखनेवाला, जो देखे। २ अनुसन्धानकारी, खोज करने वाला। ३ विवेचनाकारी। (स्त्री०) ङीप्। अवलोकिनी। जो स्त्री अवलोकनादि करे।

अवलोचना (हिं० क्रि०) दूर करना।

अवलोप (सं० पु०) अव-लुप-घञ्। १ खण्डन। २ नाशकरना, विलोप।

अवलोभन (सं० क्ली०) मानसिक, अभिलाष, दिली, मुराद।

अवलोम (सं० पु०) अवनद्ध लोम-आनुकूल्यं अजन्त प्रा० तत्। अनुकूल।

अवल्गजा (सं० स्त्री०) कृष्णा सोमराजी, काली वकची।

अवल्क (सं० पु०) मेषशृङ्गी, मेढ़ा सींगी।

अवल्गुज (सं० पु०) अवल्गोरशोभनात् जायते जन-ड। १ सोमराजी, बकची। २ कृष्णसोमराजी, काली बकची।

अवल्गुजबीज (सं० क्ली०) सोमराजी बीज, बकचीका तुख्म।

अवल्गुली (सं० स्त्री०) विषाक्त कीट विशेष, कोई जहरीला कीड़ा।

अववदिढ़ (वै० पु०) विचारसे बोलने वाला, मुन्सिफ।

अववर्षण (सं० क्ली०) सम्यक् वर्षण, सर्वत्र वर्षा होना, हर जगह पूरे पानीका बरसना।

अववाद (सं० पु०) अव-वद्-घञ्। १ निन्दा। २ विश्वास। ३ आज्ञा। ४ अवलम्बन।

'अववादस्तु निन्दायामाज्ञाविस्रम्भयोरपि।' (विश्व)

५ निर्देश, शासन, शिष्टि।

'अववादस्तुनिर्देशो निदेश: शासनञ्च स:। शिष्टिश्चाज्ञा च' (अमर)

अवविद्ध (सं० त्रि०) फेंका हुआ, जो गिरा दिया गया हो।

अवव्रश्च (सं० पु०) टुकड़ा, किरच, फांस, रेजा, छिपती।

अवश (सं० पु०) न उश्यते अभिलष्यते वश घ, नञ्-तत्। पराधीन, विवश, परवश, लाचार, कामादिके वशीभूत, जो वशतापन्न अर्थात् वशमें न हो।

अवशकुथिका (सं० स्त्री०) जानुदेश, जांघ।

अवशक्थिका (सं० स्त्री०) वस्त्रविशेष, कपड़ा यह बैठनेमें पैर और पीठसे बंधता है।

अवशङ्गम (सं० त्रि०) दूसरेकी इच्छापर कार्य न करनेवाला, जो दूसरेकी न सुनता हो।

अवशस् (सं० त्रि०) अव-शन्स-क्विप्। अववाद, अपवाद।

अवशसन् (वै० त्रि०) मिथ्याभिलाष, झूठी ख्वाहिश।

अवशा (वै० स्त्री०) १ गोभिन्न, जो गाय न हो। २ अधम गौ, खराब गाय।

अवशातन (सं० क्ली०) अव-शद-णिच्-ल्युट्। नाश पाना, शीर्णता करण। शदेरगतौ त:। पा ७।३।४२।

अवशिरस् (सं० त्रि०) अवनतं शिरोऽस्य प्रादि-बहुव्री०। अवाङ्मस्तक, जिसका मत्था नीचे और पैर उपरको हो।

अवशिष्ट (सं० त्रि०) अव-शिष्-क्त। १ अतिरिक्त, परिशिष्ट, अधिक, शेष, कोई कार्य सम्पन्न होकर बचा हुआ। अव अवगतं शिष्टं अतिक्रान्तं तत्। अव शास्-क्त। करनेपर भी यह पद सिद्ध होता, परन्तु उसका अर्थ शिष्टके प्राप्त होता है। २ अल्प शिष्ट, शिष्ट नहीं।

अवशीन (सं० पु०) वृश्चिक, विच्छू।

अवशीभूत (सं० त्रि०) न वशीभूतम् अभूततद्-भावे च्वि अत इत्वम्। अनायत्त, जो वशतापन्न न हो, जो अवज्ञा करके कथा अर्थात् बात न सुने, स्वतन्त्र।

अवशीर्ष (सं० त्रि०) अवनतं शीर्षं यस्य, प्रादि-

बहुव्रो० वा कप्। १ अवाङ्मस्तक, मुंह लटकाये हुआ। २ मुंडभर, जिसके सर नीचे और पैर ऊपर रहे। (पु०) ३ नेत्ररोग, आंखका आज़ार।

अवशेन्द्रियचित्त (सं० त्रि०) मन और इन्द्रियपर वश न रखनेवाला, जिसके दिल और अज़ा क़ाबूमें न रहे।

अवशेष (सं० पु०-क्ली०) अव-शिष भावे घञ्। १ कृतकार्य वा कृतपदार्थका शेष, किये हुये कामका खातिमा। कर्मणि घञ्। २ अवशिष्ट, बची-बचायी चीज़।

अवशेषित (सं० त्रि०) अवशिष्ट, बाक़ी, बचा हुआ।

अवशोष (सं० पु०) अव शुष भावे घञ्। अत्यन्त शुष्क होनेकी बात, निहायत खुश्की।

अवश्य (सं० त्रि०) न-वश-यत्। १ अनायत्त, जो ताबेमें न हो। २ अनधीन, आज़ाद रहनेवाला। (अव्य०) ३ निश्चय, ज़रूर, बिलाशक।

अवश्यक (सं० त्रि०) १ निश्चयात्मक, ज़रूरी। (पु०) २ तुषार, पाला। ३ अर्धावभेदक शिरोरोग, आधाशीशी। ४ गुड़।

अवश्यकता (सं० स्त्री०) निश्चय, ज़रूरत।

अवश्यकरण (सं० क्ली०) अवश्यं करणम्, मकारलोपः। १ नियत करण, मुक़र्रर करनेकी बात। २ अकरणकी निवृत्ति, न करनेका दूर होना।

अवश्यकार्य (सं० त्रि०) निःसन्देह कर्तव्य, जिसे करना ज़रूर रहे।

अवश्यकारिन् (सं० त्रि०) ज़रूरी काम करनेवाला।

अवश्यपाच्य (सं० त्रि०) निःसन्देह पाक किया जानेवाला, जिसके पकानेमें कोई शक न रहे।

अवश्यपुत्र (सं० पु०) अवश्यश्चासौ पुत्रश्चेति, कर्मधा०। किसी प्रकार शासन किया न जानेवाला पुत्र, खोटा बेटा, जो लड़का हाथसे बेहाथ निकल गया हो।

अवश्यम् (सं० अव्य०) अव-श्यै डमु। १ निश्चय, ज़रूर। २ नित्य, हमेशा। ३ प्रयत्न, तजवीज़से। 'अवश्यं' नित्यप्रययोः।' (विश्व) ४ भृश, ज़ोरसे। ५ बाढ़, बुलन्द, आवाजोस। ६ अतिशय, निहायत। 'अवश्यं भृशयोर्बाढ़म्।' (हलायुध) (त्रि०) ७ अनायत्त, बेक़ाबू।

अवश्यमेव (सं० अव्य०) निःसन्देह; ज़रूर बिलज़रूर।

अवश्यभाविन् (सं० त्रि०) निःसन्देह होनेवाला, जो ज़रूर ही हो।

अवश्या (सं० स्त्री०) अवश्यायते शैत्यं प्राप्नोति, अव-श्यै-क टाप्। १ कुज्झटिका, कुहरा। २ अवशीभूत स्त्री, जो औरत क़ाबूमें न हो।

अवश्याय (सं० पु०) अव-श्यै-ण। १ कुज्झटिका, कुहरा। २ नीहार, ओस। 'अवश्यायस्तु नीहारः।' (अमर) ३ अभिमान, घमण्ड। ४ दर्प, शेखी। 'अवश्यायो हिमे दर्पे।' (हेम) ५ शिशिर, ठण्डक।

अवश्याया (सं० स्त्री०) कुज्झटिका, कुहरा।

अवश्रयण (सं० क्ली०) अव-श्रि-ल्युट्। चूल्हेसे उतार स्थानान्तरमें रखना।

अवश्वक्रम (वै० अव्य०) उड़ जानेकी तरह, एक फूंकमें, सरासर।

अवष्कयणी, अवष्कयिणी (सं० स्त्री०) अवस् रक्षणं चिकेति जानाति दुग्धदानादिना अवस्-कि-ल्युट्-ङीप्। पक्षे मष्कगतौ अयन् पृषो० मकारस्य वकारः। मष्कय एकहायनो वत्सः सोऽस्त्यस्याः इति ङीप्, नञ्-तत्। अचिरप्रसूता गौ, अल्प दिनकी ब्यायी गाय, जिस गौके थोड़े दिनका बच्चा हो। 'चिरप्रसूता वष्कयी।' (अमर) "वत्सं वष्कयं अधि।" ऋक् १।१६४।५। 'बष्कयो तामेकहायनो वत्सः।' (सायण)

अवष्टब्ध (सं० त्रि०) अव-स्तम्भ-क्त षत्वम्। १ आसन्न, नज़दीकी, लगा हुआ। २ आक्रान्त, नज़दीक आया हुआ। ३ आश्रित, मुहताज। ४ अवलम्बित, सहरा पकड़े हुआ। ५ प्रतिरुद्ध, रुका हुआ।

अवष्टभ्य (सं० अव्य०) १ सहारेसे बलमें, पकड़कर। २ रोकते हुये, गिरफ़तारीसे।

अवष्टम्भ (सं० पु०) अव-स्तम्भ-घञ् षत्वम्। १ प्रारम्भ, आग़ाज़, शुरू। २ अनम्रता, कड़ापन। ३ आलम्बन, सहारा। कर्मणि घञ्। ४ स्तम्भ, खम्भा। ५ सुवर्ण, सोना। ६ मुकाम, ठहराव। ७ उत्तमता, उम्दगी। ८ रोक, अटकाव। ९ पक्षाघात, लक़वा।

अवष्टम्भन (सं० क्ली०) अवष्टम्भ देखो।

अवष्टम्भमय (सं० त्रि०) सोनेका, जो सोनेसे बना हो।

अवष्वाण (सं० पु०) अव-स्वन-घञ्। आवाजसे भोजन, सवाद।

अवस् (सं० क्ली०) अव भावे असुन्। १ रक्षा, हिफाजत। कर्मणि असुन्। २ यशः, नामवरी। ३ धन, दौलत। ४ गमन, रवानगी। ५ तृप्ति, प्रसन्नता, आसूदगी, खुशी। ६ अभिलाष, ख्वाहिश। (अव्य०) ७ निम्न देशमें, नीचे।

अवस (सं० पु०) अवति रक्षति, अव-असच्। अत्यविचमितमिनि०० महिभ्योऽसच्। उण् ३।११७। १ राजा, बादशाह। २ सूर्य। ३ अन्न, अनाज। ४ रक्षक, मुहाफिज। ५ पाथेय विशेष तोशह, रसद। ६ आकन्द वृक्ष।

अवसक्त (सं० त्रि०) अव-सञ्ज-क्त। १ संलग्न, लगा हुआ। २ अभिलाषयुक्त, ख्वाहिशमन्द। (क्ली०) भावे क्त। ३ संसर्ग, लगाव।

अवसक्तिका, अवसकथिका देखो।

अवसकथिका (सं० स्त्री०) अवसक्ते अववद्धे सकथिनी ऊरू यस्याम्, बहुव्री० कप् टाप्। १ पर्यङ्कबन्ध, अदवाइन। २ योग करनेका आसन विशेष। ३ लंगोटी, चिट।

अवसज्जन, अवसञ्जन देखो।

अवसञ्जन (सं० क्ली०) आलिङ्गन, हमागोशी, मुहब्बतमें छातीसे छातीका मिलाना।

अवसण्डीन (सं० क्ली०) अव-सम्-डी-क्त ओदित्वात्तस्य नः। पक्षियोंकी आकाशसे उतरनेको कोई गति, जिस चालसे चिड़ियां नीचे उतरें।

अवसथ (सं० पु०) १ जनपद, बसती। २ ग्राम, गांव। ३ कालेज, स्कूल, मदरसा, पाठशाला। (क्ली०) गृह, मकान।

अवसथ्य, अवसथ देखो।

अवसन्न (सं० त्रि०) अव-सद् कर्तरि क्त। १ विषादप्राप्त, नाखुश। २ विनाशोन्मुख, बरबाद जानेवाला। ३ निजके कार्यसाधनमें अक्षम, जो अपना काम बना न सकता हो। ४ समाप्त, खत्म। ५ अनुपयुक्त, नाक़ाबिल।

अवसन्नता (सं० स्त्री०) १ दुःख, रञ्ज। २ अनुत्साह, दिलगीरी। ३ समाप्ति, खातिमा।

अवसन्नत्व (सं० क्ली०) अवसन्नता देखो।

अवसभ (वै० त्रि०) सभासे पृथक्, जो महफ़िलसे निकाल दिया गया हो।

अवसर (सं० पु०) अव-सृ अधिकरणे घ। १ प्रस्ताव, तज़किरेकी बात चीत। 'प्रस्तावः स्यादवसरः।' (अमर) २ सङ्गति विशेष, मौक़ा। ३ वत्सर, काल। ४ मन्त्र विशेष। ५ वर्षण, पानीका बरसना। ६ वृष्टि, बारिश। ७ समयका अवकाश, फ़ुरसत। ८ काल, वक्त। ९ उतार, नीची जगह। १० अलङ्कार विशेष। इसमें किसी विषयके सामयिक सङ्घटनका वर्णन करते हैं।

अवसरवाद (सं० पु०) दार्शनिक सिद्धान्त विशेष, कोई मन्तक़ी वसूल। यह वाद विलायतियोंका है। इसके अनुसार जीव नहीं, ईश्वर ही कर्ता और ज्ञाता होता; वह समय शारीरिक कार्य चलाता है।

अवसरालय (सं० पु०) अवसराय आलयो यत्र, बहुव्री०। अर्धरात्र, आधीरात।

अवसरी बदरुल—बम्बई प्रान्तके पूना ज़िलेका नगर। यह खेडसे साढ़े सात कोस दूर पड़ता है। पश्चिम द्वारके पास भैरवका मन्दिर खड़ा है, जिसे शङ्करसेठ नामक किसी बनियेने सौ वर्ष हुये बनवाया था। दालानमें हिन्दुओंके कितने ही पौराणिक चित्र खचित हैं। द्वारके गणपति प्रतिवर्ष नाना प्रकारके वर्णसे रञ्जित किये जाते हैं। दीपक रखनेको दो स्तम्भ भी द्वारके सम्मुख अति सुन्दर बने हैं नक्कारखानेपर पत्थरका जो घोड़ा खड़ा, वह मानो हवासे बात कर रहा है।

अवसर्ग (सं० पु०) अव-सृज-घञ्। १ अप्रतिबन्ध, रोक-टोककी अदममौजूदगी। २ स्वतन्त्रता, आज़ादी। ३ स्वेच्छाचार, मनमानी।

अवसर्जन (वै० क्ली०) मुक्ति, छुटकारा।

अवसर्प (सं० पु०) अवसर्पति पश्चादगच्छति स्वामिनः, अव-सृप-अच्। १ चर, जासूस। २ भृत्य, नौकर। ३ दास, गुलाम।

अवसर्पण (सं० क्ली०) उतार, नीचेको कदमका रखना।

अवसर्पिणी (सं० स्त्री०) १ जैनियोंका युग विशेष। २ अधोगामिनी स्त्री, नीचे उतरनेवाली स्त्री।

अवसर्पिन् (सं० त्रि०) अव-सृप-णिनि। अधोगन्ता, निम्नगामी, नीचे जानेवाला।

अवसर्पी, अवसर्पिन् देखो।

अवसव्य (सं० त्रि०) अपसव्य, दक्षिण, दाहना, जो बायां न हो।

अवसा (वै० स्त्री०) स्वातन्त्र्य, अप्रतिबन्धकत्व, छुटकारा, आज़ादी।

अवसातृ (वै० पु०) मुक्तिदाता, छुटकारा देनेवाला, जो छोड़ देता हो।

अवसाद (सं० पु०) अव-सद-घञ्। १ नाश, बरबादी। २ विषाद, रञ्ज। ३ स्वकार्यमें अक्षमत्व, अपना काम कर न सकनेकी हालत। ४ अवसन्नता, पज़मुर्दगी। ५ कारणकी खराबी, सबबकी बुराई। ६ समाप्ति, खातिमा।

अवसादक (सं० त्रि०) अवसादयति, अव-सद्-णिच ण्वुल्-णिच् लोपः। १ अवसन्नकारक, डुबानेवाला, जो काम बिगाड़ देता हो। २ कार्यमें अक्षमता-सम्पादक, थकानेवाला, जो सख्त हो। ३ समाप्त होनेवाला, जो खत्म हो। ४ खेदकारी, रञ्जीदा करनेवाला।

अवसादन (सं० क्ली०) अव-सद्-णिच् भावे ल्युट्। १ विनाशन, बरबादी। २ कार्यमें अक्षमता सम्पादन, थका डालनेकी बात। ३ सुश्रुतोक्त व्रणचिकित्सा, फूले हुये ज़ख्मको घटाना।

अवसादनी (सं० स्त्री०) महाकरञ्ज, बड़ा करौंदा।

अवसादित (सं० त्रि०) डुबाया, थकाया, मुरझाया या सताया हुआ।

अवसान (सं० क्ली०) अव-सो-ल्युट्। 'विरामोऽवसानम्।' पा १।४।११०। १ विराम, ठहराव। २ समाप्ति, अञ्जाम। ३ सीमा, हद। ४ समापन, नतीजा। ५ शेष, अखीर। ६ मृत्यु, मौत। अवस्यति तिष्ठति अस्मिन्, आधारे ल्युट्। ७ स्थान, जगह। ८ दहन स्थान, जलानेका मुकाम। ९ श्मशान, मरघट। "अवसानं दहनस्थानम्।" (सायण) १० शब्दका अन्तिम भाग, लफज़का आखिरी हिस्सा। ११ छन्दका अन्त, बह्रका खातिमा। (वै० त्रि०) १२ वस्त्र धारण न करते हुये, जो पोशाक पहन रहा न हो।

अवसानक (सं० त्रि०) शेष होनेवाला, विनाशोन्मुख जो खत्म पड़ या मर रहा हो।

अवसानदर्श (वै० त्रि०) किसीके वासस्थानपर दृष्टि डालता हुआ, जो किसीकी मञ्जिल-मकसूदको देख रहा हो।

अवसान्य (सं० त्रि०) छन्दके अन्तसे सम्बन्ध रखनेवाला।

अवसाम (सं० क्ली०) अवरं साम अजन्त प्रादितत्। अधम साम, जो साम मरणकालमें गाया जाता हो।

अवसाय (सं० पु०) अव-सो-ण। १ समाप्ति, खातिमा। २ शेष, बाकी। ३ निश्चय, पोख्तगी। (अव्य०) ल्यप्। ४ समापन करके, पूरे उतारके। ५ निश्चय करके, ठहराके। ६ विमोचन करके, छोड़के।

अवसायक (सं० त्रि०) अव-सा-ण्वुल्। १ निश्चयकारक, ठीकठाक करनेवाला। २ समापक, पूरे उतारनेवाला।

अवसायिता (हिं० स्त्री०) ऋद्धि।

अवसायिन् (सं० त्रि०) अधिवासी, बाशिन्दा।

अवसाय्य (सं० अव्य०) पूर्ण कराके, पूरे उतारके।

अवसारण (सं० क्ली०) हटाव, सरकाव।

अवसि (हिं० क्रि० वि०) निश्चय, जरूर।

'अवसि देखिये देखन योगू।' (तुलसी)

अवसिक्त (सं० त्रि०) अव-सिच्-क्त। १ क्षतसेक, अजामें छींटे मारे हुआ। २ आप्लुत, सींचा हुआ। ३ स्नात, नहाया हुआ।

अवसित (सं० त्रि०) अव-सो-क्त। १ समाप्त, खत्म। २ ऋद्ध, खुश-खुरम। ३ राशीकृत, ढेर किया हुआ। ४ ज्ञात, मालूम। ५ निश्चित, ठहराया हुआ। ६ सम्बद्ध, मिला हुआ। (क्ली०) ७ पक्का और मंडा हुआ धान्य, जो चावल पक और मंड चुका हो। ८ आवासस्थान, रहनेका मुकाम।

अवसितमति (सं० त्रि०) हताश, दिलगीर, जो अपना काम कर न सका हो।

अवसी (हिं० पु०) अपक्क दशामें काटा हुआ शस्य, जो अनाज कच्चा ही काट लिया गया हो, गद्दर।

अवसुप्त (सं० त्रि०) सोया हुआ, जो नींदमें हो।

अवसृष्ट (सं० त्रि०) अव-सृज-क्त। १ दत्त, दिया हुआ। २ त्यक्त, छोड़ा हुआ। ३ निःसृत, निकाला हुआ।

अवसे (सं० अव्य०) अव तुमर्थे असन्। रक्षा करनेके निमित्त, हिफ़ाज़त रखनेके लिये।

अवसेक (सं० पु०) अव-सिच्-घञ्। १ सकल दिक् सेकका काम, चारो ओर छिड़काव। २ नेत्रवस्ति रोग-विशेष, आंखका कोई आज़ार। ३ रक्तमोचण, खूं‌रेज़ी।

अवसेकिम (सं० पु०) अवसेकेन निर्वृत्तः, अव-सेक-इमन्। वटकविशेष, बड़ा या मुंगोड़ा।

अवसेख (हिं०) अवशेष देखो।

अवसेचन (सं० क्ली०) अव-सिच्-ल्युट्। १ सकल दिक् सेचनका काम, चारो ओर सिंचाई। २ अधो-दिक् रक्तप्रसावक रोगविशेष, नीचेकी ओर खून बहाने वाला आज़ार। ३ रक्तमोचण, खूं‌रेज़ी। अवसेचन जोंक या सींगी लगाने और नश्तर देनेसे होता है।

अवसेय (सं० त्रि०) अवसातुं शक्यं अर्हं वा, अव सो शक्यार्थे अर्हार्थे वा यत्। १ निर्णयको शक्य, जो फैसल किया जा सकता हो। २ समाप्य, पूरे उतरने क़ाबिल। ३ अवशेष्य, खत्म होने लायक़।

अवसेर (हिं० स्त्री०) १ विलम्ब, वक्फा। २ चिन्ता, फ़िक्र। ३ दुःख, परेशानी।

अवसेरना (हिं० क्रि०) क्लेश पहुंचाना, तकलीफ देना।

अवस्कन्द (सं० पु०) अवस्कन्द्यते युद्धादनन्तरं विश्रा-माय प्रतिगम्यतेऽस्मिन् आधारे घञ्। १ जयेच्छुके सैन्यनिवेशका स्थान, जिस जगह लड़नेवालेकी फ़ौज पड़े। २ शिविर, डेरा। ३ तम्बू। भावे घञ्। ४ अवतरण उतार। ५ अवगाहन स्नान, पानीमें घुसकर की जानेवाली सलगु। ६ आक्रमण, हमला।

अवस्कन्दन (सं० क्ली०) अव-स्कन्द-ल्युट्। १ सकल अङ्ग डुब जाने वाला स्नान, जो गुसल सब अङ्ग डुबानेसे हो। २ अवगाहन, पानीका मंझाना। ३ अवतरण, उतार। ४ आक्रमण, हमला।

अवस्कन्दित (सं० त्रि०) १ आक्रमण किया गया, जो मारा गया हो। २ अधः पतित, नीचे पड़ा हुआ। ३ मिथ्याप्रमाणित, जो झूठा ठहरा हो। ४ स्नात, नहाया हुआ, जो नहा रहा हो।

अवस्कन्दिन् (सं० त्रि०) १ ऊपर छलांग मारता या ढाकता हुआ। २ आक्रमण करता हुआ, जो हमला मार रहा हो।

अवस्कयनी (सं० स्त्री०) बहुत दिनके अन्तर प्रसूता गौ, जो गाय बहुत दिन बाद व्यायी हो।

अवस्कर (सं० पु०) अवकीर्यते कोष्ठादधो विक्षिप्यते, अव-कृ कर्मणि अप् सुट्। १ उच्चार, तलफ़ुज़ा। २ शमल, तकलीफ। ३ शकृत्, गोबर। ४ पुरीष, मैला। ५ वर्चस्क, कूड़ाकर्कट। ६ विष्ठा, गू गोबर। ७ विष, ज़हर। ८ मलमात्र। अपादाने अप्। ९ गुह्यदेश। "अवस्करो मूत्रगुह्ययोः।" (विश्व)

अवस्करक (सं० त्रि०) अवस्करे जातः वुन्। १ विष्ठा-जात, गू-गोबरसे पैदा। २ गोपनीयस्थान जात, पोशीदा मुक़ामसे पैदा हुआ। (पु०) ३ कृमि-विशेष, कोई कीड़ा। ४ भङ्गी, मेहतर। ५ झाड़ू।

अवस्करमन्दिर (सं० पु०) १ टट्टी, पाखाना, नाली।

अवस्कव (सं० त्रि०) अव वैपरीत्ये स्कुनाति स्कुनोति वा, अव स्कु उद्धृतौ कर्तरि अच्। १ विपद्से उद्धार न करनेवाला, जो आफ़तसे बचाता न हो। २ हिंसक, क़ातिल। (पु०) ३ कृमिविशेष, कोई कीड़ा।

अवस्तरण (सं० क्ली०) अव-स्तॄ भावे ल्युट्। विस्तार, आवरणके नीचे फैलाव।

अवस्तात् (सं० अव्य०) अवरस्मिन् अवरस्मात् अवरं इत्येतेषु अर्थेषु अस्ताति तस्मिन्नवादेशः। नीचे निम्न भागमें।

अवस्तात्प्रपदन (सं० त्रि०) नीचेसे प्राप्त हुआ, जो नीचेसे मिला हो।

अवस्तार (सं॰ पु॰) अवस्तियते, अव-स्तृ कर्मणि घञ्। १ जवनिका, क़नात, परदा, चिक। २ शय्या, पलंग।

अवस्तु (सं॰ क्ली॰) न वस्तुः, अप्रशस्तो नञ्-तत्। १ अप्रशस्त वस्तु, नाक़ाबिल चीज़। २ तुच्छ वस्तु, हक़ीर चीज़। ३ वस्तुका अभाव, चीज़की अदम-मौजूदगी। ४ वेदान्तमतसे—अज्ञानादि जड़समूह, दुनियावी चीज़की बेसबाती, नापायदारी।

अवस्तुत्व (सं॰ क्ली॰) अवस्तुता देखो।

अवस्त्र (सं॰ त्रि॰) १ वस्त्रविहीन, नग्न, कपड़ेसे खाली, नंगा।

अवस्त्रता (सं॰ स्त्री॰) वस्त्र न होनेकी बात, कपड़ा न रखनेकी हालत, नङ्गापन।

अवस्था (सं॰ स्त्री॰) अव-स्था-(वासरूपोऽस्त्रियाम्) इति क्तिन् बाधनात् अङ्। स्त्रीत्वात् टाप्। कालकृत देहादिकी दशा, आकार, अवस्थान, स्थिति, कालकृत भाव विकार विशेष। यास्कके मतानुसार यह छः प्रकारकी है। यथा—१ जन्मना। २ विद्यमान रहना। ३ वृद्धि होना। ४ विपरीत होना। ५ क्षीण होना। ६ नाश होना।

योगशास्त्रके मतसे अवस्था पांच प्रकारकी है। यथा,—अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश।

"अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः।" पातञ्जल साधनपाद सू॰ ३।

अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश—इन्हींको क्लेश कहते हैं।

"अविद्या क्षेत्रमुत्तरेषां प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम्।" पात॰ सा॰पा॰सू॰४।

मोह अर्थात् अनात्माके प्रति आत्माभिमानको अविद्या कहते हैं। उक्त अविद्या,—प्रसुप्ततनु, विच्छिन्न एवं उदर यह चार प्रकारसे विभक्त अस्मिताकी, प्रसुप्तादि चार प्रकारसे विभक्त राग, द्वेष, एवं अभिनिवेशकी जन्मभूमि है।

इस बातके कहनेका कारण यही है, कि मोह न उत्पन्न होनेसे अस्मितादिकी उत्पत्ति नहीं होती इसलिये अस्मितादिकी अपेक्षा अविद्या ही प्रधान है।

"अनित्याशुचिदुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या।"

पात॰ सा॰ पा॰ सू॰ ५।

अनित्य वस्तुमें नित्य अशुचिमें शुचि, दुःखमें सुख आत्मभिन्न वस्तुमे आत्मा ऐसे बोध करानेवाला मोहका नाम अविद्या है।

"दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मतेवास्मिता।" पात॰ सा॰ पा॰ सू॰ ६।

दृग्शक्ति प्रकृति भिन्न पुरुष एवं जिस शक्तिसे देखा जाता है, इन दोनोंमें अभिन्न विश्वास करनेको अस्मिता कहते हैं। जैसे,—आत्मा और देह सम्यग् विभिन्न होनेपर भी आत्मा एवं देहको अभिन्न सोचकर हम लोग यह कहा करते हैं—"मैं हूं।"

"सुखानुशयी रागः।" पात॰ सा॰ पा॰ सू॰ ७।

सुखकी आशा करनेको राग कहते हैं।

"दुःखानुशयी द्वेषः।" पात॰ सा॰ पा॰ सू॰ ८।

यो एकवार दुःख भोग चुका है, फिर जिसमें दुःख न आवे, इसलिये दुःखकर पदार्थको देखनेसे उसके मनमें जो क्रोध होता है, वह विद्वेष कहा जाता है।

"स्वरसवाही विदुषोऽपि तथारूढोऽभिनिवेशः।" पात॰ सा॰ पा॰ सू॰ ९।

स्वरवाही अर्थात् पूर्व जन्ममें मृत्यु हुई थी, उसी दुःखको खयाल कर, लोगोंके मनमें अकारण ही ऐसा जो भय होता है कि, इस जन्ममें शरीर और विषयादि विनष्ट न हों, पुनः पुनः उसके संकल्पको अभिनिवेश कहते हैं।

सांख्यके मतसे अवस्था तीन प्रकारकी है। यथा,—[illegible]त, अभिव्यक्त, एवं तिरोभाव। कार्य्यके प्रका[illegible]नेके पहले वह सूक्ष्म भावसे कारणमें अव[illegible]ति करती है। इसे प्रागभाव अवस्थाको अनागत अवस्था कहते हैं। उसके बाद कारणके कार्य्यद्वारा जो फल प्रकाश होता, उसे अभिव्यक्त अवस्था कहते हैं। शेषमें कारणके ध्वंसको तिरोभाव कहते हैं।

वेदान्तिकोंके मतसे—जीवदशामें जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति एवं मृत्युके बाद मोक्ष यही चार प्रकारकी अवस्था है। इस मतके अनुसार मुग्धावस्था सुषुप्तिके अन्तर्गत है।

वयोभेदसे कुछ अवस्थायें होती हैं। स्मृतिशास्त्रमें इनका निरूपण किया गया है। यथा,—पांच वर्षकी उम्र तक कौमारावस्था, दश वर्ष तक पौगण्डावस्था,

पन्द्रह वर्ष तक कैशोरावस्था, उसके बाद यौवनावस्था। मतान्तरसे, सोलह वर्ष तक बाल्यावस्था। उसके बाद तरुणावस्था। सत्तरसे नब्बे वर्ष तक वृद्धावस्था; अन्तमें वर्षीयावस्था।

वैद्यशास्त्रके मतसे पन्द्रह वर्षकी उम्र तक बाल्यावस्था, तीस वर्षतक कौमारावस्था, पचास वर्ष तक यौवनावस्था, उसके बाद वृद्धावस्था।

अलङ्कारिकोंके मतसे अवस्था दश प्रकारकी है। यथा—नायक नायिकाके सम्बन्धमें अभिलाष, चिन्ता, स्मृति, गुणकथन, उद्वेग, संलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता एवं मरण। मतान्तरसे, आंखसे आंख और मनसे मनका मिलन, संकल्प, जागरण, कृशता, रति, लज्जात्याग, कामोन्मत्तता, मूर्च्छा एवं मरण यही कई कही गई हैं।

अवस्था-चतुष्टय (सं० क्ली०) अवस्थाके चार भेद, उम्रकी चार हालतें। बचपन, लड़कपन, जवानी और बुढ़ापाको अवस्थाचतुष्टय कहते हैं।

अवस्थात्रय (सं० क्ली०) अवस्थाके तीन भेद, उम्रकी तीन हालतें। जागने, स्वप्न देखने और सोनेका नाम अवस्थात्रय है।

अवस्थाद्वय (सं० क्ली०) अवस्थाके दो भेद, उम्रकी दो हालतें। सुख और दुःख अवस्थाद्वय कहा जाता है।

अवस्थान (सं० क्ली०) १ स्थिति, टिकाव। २ गृह, मकान। ३ स्थितिकाल, ठहरनेका वक्त। ४ स्थानविशेष, मुक़ाम।

अवस्थापन (सं० क्ली०) अव-स्था-णिच्-ल्युट् पुक् णिच् लोपः। १ निवेशन, लगाव। २ स्थापन, जमावट। ३ रक्षण, हिफ़ाजत।

अवस्थापित (सं० त्रि०) अव-स्था-णिच्-पुक्-क्त इट् णिच् लोपः। १ निवेशित, लगाया हुआ। २ स्थापित, रखा हुआ। ३ रक्षित, महफूज़।

अवस्थाप्य (सं० त्रि०) अव-स्था-णिच्-पुक् यत् णिच् लोपः। १ निवेशनीय, रखने लायक़। (अव्य०) १ स्थापन करके, लगा या जमाके।

अवस्थाय (सं० अव्य०) ठहर या रह कर।

अवस्थायिन् (सं० त्रि०) अवतिष्ठते, अव-स्था कर्तरि णिनि युक्। १ अवस्थानयुक्त, ठहरनेवाला। २ स्थापित, रखा हुआ। (स्त्री०) अवस्थायिनी।

अवस्थित (सं० त्रि०) अव-स्था कर्तरि क्त आत इत्वम्। १ वर्तमान, हाज़िर। २ स्थित, ठहरा हुआ। ३ अवस्थितिविशिष्ट, लगा हुआ। ४ दृढ़, जमा हुआ।

अवस्थिति (सं० स्त्री०) अव-स्था-क्तिन् आत इत्वम्। अवस्थान, ठहराव, मुक़ाम।

अवस्पर्तृ (वै० त्रि०) अवसा रक्षणेन आपद्भ्यः पारयितः, अवस्-पृ-णिच् बाहु० तृन् णिच् लोपः। आपद्से रक्षा करनेवाला, जो आफ़तसे बचा लेता हो।

"अवस्पर्तरधिवक्तारमस्मयु।" (ऋक् १।१२।८)

अवस्यन्दन (सं० क्ली०) अव-स्यन्द्-ल्युट्। १ क्षरण, चुआव, गिराव। २ गमन, रवानगी। ३ गलेसे गलेका मिलाना, गलबैहां।

अवस्यन्दनीय (सं० त्रि०) क्षरणजात, चूने या टपकनेसे पैदा हुआ।

अवस्यु (वै० त्रि०) अवस्-क्यच्-उ। रक्षणेच्छु, जो हिफ़ाजत चाहता हो। 'त्वामवस्युरा चके।' (ऋक् १।२५।१९)

अवस्रंसन (सं० क्ली०) अव-स्रन्स्-ल्युट्। १ अधःपतन, नीचेकी गिराव। २ क्षरण, चुआव।

अवस्रंसित (सं० त्रि०) अव-स्रन्स-णिच्-क्त इट् णिच् लोपः। १ दलित, दला-मला। २ पातित, गिरा-पड़ी।

अवस्रस् (सं० त्रि०) अव-स्रन्स क्विप् (सम्पदादिभ्यः क्विप्। पा ३।३।९४ वार्त्तिक।) १ भ्रंशनशील, गिरनेवाला। २ खण्डित, जो गिरा हो। 'द्यामवस्रसः।' ऋक् १।१।५।

अवस्वत् (सं० त्रि०) अवो रक्षणं तदस्त्यस्य मतुप् मस्य वः। रक्षणयुक्त, महफूज़।

अवस्वन्य (वै० त्रि०) घोर शब्द करता हुआ, जो बुलन्द आवाज़ लगा रहा हो।

अवह (सं० त्रि०) न वहति वह-अच्, नञ्-तत्। १ नद्यादि स्रोतःशून्य, जो नदी नालेसे खाली हो। (पु०) २ तृतीय स्कन्धस्थ वायु, आकाशके तृतीय स्कन्धपर रहनेवाला वायु।

अवहत (सं० त्रि०) अव-हन् कर्मणि क्त। अल्प आघात द्वारा वितुषीकृत, अधकूटा।

अवहति (सं० स्त्री०) अव-हन-क्तिन्। १ अवघात, चोट। २ अल्प आघातसे वितुषी करनेका व्यापार, नर्म-कुटाई। ३ ढेंकी या ओखलीमें अल्प-अल्प आघात।

अवहनन (सं० क्ली०) अव-हन भावे ल्युट्। १ अव-घात, मारकूट। २ धान्यादिका वितुषीकरण व्यापार, धानकी कुटाई। अवहन्यते रुधिरमनेन करणे ल्युट्। देहस्थ रक्तवह स्थानविशेष, फेफड़ा।

अवहरण (सं० क्ली०) अव-हृ-ल्युट्। १ स्थाना-न्तरका ले जाना, चोरी, ऐयारी। २ युद्धस्थानसे सैन्य-गणका शिविरमें जाना, मोरचाबन्दीसे फौजकी डेरेको रहनुमायी।

अवहलोड़—बम्बई प्रान्तके पञ्चमहल जिलेका ग्राम। यहांसे आधकोस दूर जो मन्दिर बना उसमें संस्कृत शिलालेख विद्यमान है।

अवहस्त (सं० पु०) अवरं हस्तस्य, एकदेशि-तत्। हस्तपृष्ठ, हाथका ऊपरी हिस्सा।

अवहार (सं० पु०) अवहरति स्वामिनमज्ञापयित्वा गृह्णाति वस्तुजातम्, अव-हृ कर्तरि ण। (अवहाराधाराराबा-पानामुपसंख्यानम्। पा ३।३।१२२ वार्तिक।) १ चौर, चोर। २ निहङ्ग, घड़ियाल, नाकू। ३ जलमातङ्ग, सूंस। ४ निमन्त्रण, पुकार, बुलावा। ५ निमन्त्रित विप्र-गणके उद्देश्यसे आने या ले जानेवाला द्रव्य, भेंट, पूजा, सीधा। ६ युद्धस्थानसे सैन्यगणको विश्रामके लिये शिविरमें गमन, मोर्चेबन्दीसे फ़ौजकी आरामके लिये डेरेमें रहनुमायी। ७ युद्ध या पाशक्रीड़ाका विराम, लड़ाई या खेलका ठहराव।

अवहारक (सं० पु०) अव-हृ-ण्वुल्। १ ग्राह, घड़ियाल। २ जलहस्ती, सूंस। (त्रि०) ३ युद्धसे सैन्यगणको निवारण करनेवाला, जो लड़ाईसे फ़ौज-को हटा ले जाता हो। ४ स्थानान्तरको ले जाने-वाला, जो दूसरी जगह पहुंचाता हो।

अवहार्य (सं० त्रि०) अव-हृ-ण्यत्। १ दान किया जानेवाला, जो वापस देना पड़ता हो। २ स्थानान्तरमें ले जाने योग्य, जो दूसरी जगह पहुं-चानेके क़ाबिल हो। ३ समाप्य, पूरा करने लायक। ४ दण्ड्य, सज़ा पाने काबिल।

अवहालिका (सं० स्त्री०) अवहलति अधःस्थित्वा ऊर्ध्वं सूयति, अव-हल विक्षेपे ण्वुल् ततो टाप् इत्वम्। प्राचीर, दीवार।

अवहास (सं० पु०) अव-हस्-घञ्। १ उपहास, मज़ाक़, ठट्ठा। २ मृदुहास्य, मुसकराहट, मुसकी।

अवहास्य (सं० त्रि०) अव-हस् कर्मणि ण्यत्। उपहासके योग्य, मज़ाक़के क़ाबिल।

अवहित (सं० त्रि०) अव-धा-क्त। १ सावधान, होशियार। २ विज्ञात, मशहूर। ३ नियत, नियुक्त, लगाया, रखा हुआ।

अवहितकरणकलाप (सं० त्रि०) स्थिर, ठहरा हुआ, जिसके हवास काम न करें।

अवहितता (सं० स्त्री०) १ विनय, अर्ज़। २ ध्यान, गौर।

अवहिताञ्जलि (सं० त्रि०) हाथ जोड़े हुये, दस्त-बसता।

अवहित्था (सं० स्त्री०) न वहिस्तिष्ठति, अव-स्था-क पृषो० साधु। १ बाहरके आकारका गोपन, ऊपरी सूरतका छिपाव, ज़मानासाज़ी, फफरदलाली। २ नायक और नायिकाका व्यभिचार भाव विशेष।

अवही (हिं० पु०) किसी क़िस्मका बबूल। यह पञ्जाबके कांगड़े जिलेमें उपजता और आठ फीटकी लपेट रखता है। मैदानमें इसका आधिक्य रहता। लोग इसकी लकड़ीसे हलमाची बनाते और तख़्ते चीर छतको पाटते हैं।

अवहेल (सं० क्ली०) अव-हेड हेल वा, घञर्थे क। १ अनादर, बेइज़्ज़ती। २ अवज्ञा, नाफ़रमांबरदारी।

अवहेलन, अवहेल देखो।

अवहेलना (हिं० क्रि०) तिरस्कार करना, फटकार देना, बात न मानना।

अवहेलाव (सं० स्त्री०) अवहेल देखो।

अवहेलित (सं० त्रि०) अव-हेल-इतच्। १ अव-हेलाविशिष्ट, बेइज़्ज़त। (क्ली०) भावे क्त। २ अनादर, बेइज़्ज़ती।

अवह्वर (सं० त्रि०) अव-ह्वृ-अच्। १ कुटिल, टेढ़ा। (पु०) २ वक्र पथ, टेढ़ी राह। ३ हुनर, पेच। ४ छल, धोका।

अवां, आवां देखो।

अवांसी (हिं० स्त्री०) फसलमें सबसे पहले काटनेवाला बोझ, ददरी। यह नवान्नमें काम आती है।

अवाई, अवायी देखो।

अवाक् (सं० त्रि०) १ मौन, खामोश। २ निस्तब्ध, चकराया या घबराया हुआ। (अव्य०) ३ निम्न दिक्, नीचेकी ओर। ४ दक्षिण ओर, जनूबकी तर्फ।

अवाकर (सं० पु०) १ टकसालघर। २ खजाना।

अवाकिन् (सं० त्रि०) सम्भाषण न करता हुआ, जो बोल न रहा हो।

अवाक्ष (वे० पु०) अवकाके साधनको बना हुआ शब्द। (त्रि०) २ मौन, खमोश।

अवाक्पुष्पी (सं० स्त्री०) अवाक् अधोमुखं पुष्पमस्याः, बहुव्री०। १ हैमपुष्पी, सौंफ। २ शतपुष्पी, सतावर। ३ चोरपुष्पी, चौरायी।

अवाक्शाख (सं० पु०) अवाची शाखा यस्य, बहुव्री०। भगवद्गीतोक्त संसार वृक्ष।

अवाक्शिरस् (सं० त्रि०) अवाक् शिरो यस्य, बहुव्री०। अधोमुख, सर लटकाये हुए।

अवाक्श्रुति (सं० त्रि०) नास्ति वाक् च श्रुतिश्च यस्य, बहुव्री०। वाक्शक्ति एवं श्रवणशक्ति न रखनेवाला, जो बोल और सुन न सकता हो।

अवाख्य (सं० त्रि०) रक्षक, पथप्रदर्शक, रहनुमान्, मुहाफिज्।

अवागी (हिं० वि०) मौन, खमोश, चुपका।

अवाग्र (सं० त्रि०) अवनतमग्रं यस्य। १ नम्र, मुलायम, झुका हुआ। २ अवनत अग्रभाग विशिष्ट, झुकी हुई चोटी वाला।

अवाग्रभाग (सं० त्रि०) निम्नभाग, नीचेका हिस्सा।

अवाङ्मान (सं० क्लो०) अपमान, बेइज्जती।

अवाङ्नरक (सं० क्लो०) जिह्वा छेदनका दण्ड, जुबान काट लेनेकी सजा।

अवाङ्मनसगोचर (सं० पु०) वाक् च मनश्च वाङ्मनसे तयोर्गोचरो न भवति। वाक्य और मनसे अगोचर परमात्मा, जो परमेश्वर न तो वाक्से कहा और न मनसे समझा जा सकता हो।

अवाङ्मुख (सं० त्रि०) अवाङ्मुखं यस्य। १ अधोमुख, मुंह लटकाये हुए। (पु०) २ अस्त्र विशेष, कोई हथियार।

अवाच् (सं० त्रि०) अवाञ्चति, अव-अञ्च-क्विप्। १ अधोगत, नीचेकी ओर पहुंचा हुआ। २ मौन, खमोश। ३ निम्नकी ओर दृष्टि डालनेवाला, जो नीचे ताक रहा हो। नास्ति वाक् यस्य। (पु०) ४ दक्षिण, जनूब। ५ वाक्यरहित, जो औरत बोल न सकती हो। ६ वागेन्द्रियशून्य, बेजुबान् औरत। ७ ब्रह्म।

अवाची (सं० स्त्री०) १ दक्षिण दिक्, जनूब। २ अधोमुखी, नीचेको मुंह लटकायी हुई स्त्री। ३ भगवती।

अवाचीन (सं० त्रि०) १ विपर्यस्त, नीचेको निगाह डालता हुआ। २ दक्षिणीय, जनूबी। ३ अधःपतित, नीचे गिरा हुआ। (पु०) ४ नृपति विशेष, किसी राजाका नाम।

अवाच्छिद्य (सं० अव्य०) झपटके, छीनकर।

अवाच्य (सं० क्लो०) वच-ण्यत् न कुत्वम्, नञ्-तत्। १ मन्दवाक्य, गाली-गलौज। २ वचनके अयोग्य, जो बात कहने काबिल न हो। ३ निन्दा, हिकारत। ४ उपदेशसे कहा न जानेवाला, जो सिखानेके तौरपर न कहा जाता हो। ५ अभिधेयभिन्न, नाम न लिया जाने वाला। (त्रि०) अवाच् भावार्थे यत्। ६ अवर कालादि जात, पिछले वक्त, पैदा हुआ। ७ अभिधा वृत्ति द्वारा समझाया न जा सकनेवाला, जिसे नाम लेकर न बता सकें। ८ उद्देश्य करके बोला न जानेवाला, जो मतलबसे कहा जा न सकता हो। ८ दक्षिणीय, जनूबी।

अवाच्यता (सं० स्त्री०) १ अयोग्य कर्म, नाकाबिल काम। २ अश्लीलता, फुहश, गालीगुफ्ता।

अवाच्यदेश (सं० पु०) १ स्त्रीका अधोदेश, योनि।

अवाज, आवाज़ देखो।

अवाजिन् (वै० त्रि०) वाचामिनो वाजिनः, नञ्-तत्। १ मूर्ख, बेवकूफ़। (पु०) २ अनुत्तम अश्व, ख़राब घोड़ा।

अवाजी (हिं० वि०) १ शब्दकारी, आवाज़ लगानेवाला।

अवात (वै० त्रि०) नास्ति वातं हिंसनं यत्र। १ अहिंसित, जो मारा न गया हो। २ अशुष्क, जो सूखा न हो। ३ जीता न हुआ, जो फ़तेह न हुआ हो। ४ वायुशून्य, बेहवा।

"वत्सनवातः पुरुहूत इन्द्रः।" (ऋक् ६।१८।१) 'अवाता अशुष्काः।' (सायण)

अवातित (सं० त्रि०) अधःपतित, नीचे गिरा हुआ।

अवातुल (सं० त्रि०) फूला न हुआ, जो बादीसे सूजा न हो।

अवादा, वादा देखो।

अवादिन् (सं० त्रि०) न वादी, वद-णिनि। १ अविरोधी, मुख़ालिफ़त न करनेवाला। २ अवदनशील, शान्त, झगड़ा न लगानेवाला।

अवाध (सं० त्रि०) नास्ति बाधा यत्र। बाधाशून्य, अनर्गल, आफ़तसे अलग।

अवाध्य (सं० त्रि०) नञ्-तत्। बाधाके अयोग्य, निषेध न सुननेवाला या बाधा न माननेवाला, जो रोकनेसे न मानता हो।

अवान (सं० क्ली०) अव-अन-अच्। १ शुष्क फलादि, सूखा मेवा वग़ैरह। (पु०) २ श्वासप्रश्वास, सांस लेनेका काम।

अवान्तर (सं० त्रि०) अवगतमन्तरं मध्यम्, प्रादि-समा०। १ प्रधानके मध्यगत, बड़ेके बीचमें पड़ा हुआ। २ प्रसङ्गक्रमसे उत्थापित, बातके सिलसिलेसे निकला हुआ।

अवान्तरदिश् (सं० स्त्री०) अवान्तरा द्वयोर्दिशो-र्मध्ये दिक्। दो दिक्के मध्यस्थित कोण वा दिक्, कम्पासका दरमियानी मुक़ाम।

अवान्तरदिशा, अवान्तरदिश् देखो।

अवान्तरदेश (सं० पु०) बीचके प्रान्तका स्थान, दरमियानी जगह।

अवान्तराम् (वै० अव्य०) मध्य, बीच, दरमियान।

अवापित (सं० त्रि०) वप्-णिच्-क्त-पुक्, नञ्-तत्। १ आरोपित, जो बोया न गया हो। २ छेदन न किया हुआ, जो काटा न गया हो।

अवापितधान्य (सं० क्ली०) न वापितं धान्यम्, नञ्-तत्। रोपित धान्य, लगाया हुआ धान। राजवल्लभके मतसे वापितकी अपेक्षा अवापित धान्यमें गुण अल्प होता है।

अवाप्त (सं० त्रि०) अव-आप्-क्त। प्राप्त, दस्तयाब, जो हाथ आ गया हो।

अवाप्तवत् (सं० त्रि०) १ ग्रहण करते या लेते हुये, जो पाया ले रहा हो। २ रखता हुआ, जो पाल रहा हो।

अवाप्तव्य (सं० त्रि०) अव-आप्-तव्य। प्राप्तव्य, जो लाना या कमाना हो।

अवाप्ति (सं० स्त्री०) अव-आप्-क्तिन्। प्राप्ति, हासिल।

अवाप्य (सं० त्रि०) अव-आप्-ण्यत्। १ प्राप्य, मिलनेवाला। न वाप्यम्, नञ्-तत्। २ वपनके अयोग्य, आरोप्य, जिसे बो न सकें, जो लगाया जाता हो। (अव्य०) अव-आप्-ल्यप्। ३ पाकर, हासिल होनेसे।

अवाम (सं० क्ली०) न वामम्। १ दक्षिण, दाहना। २ अनुकूल, राज़ी। ३ शोभन, ख़ूब सूरत।

अवाय (सं० पु०) अव-इन्-घञ्। १ अवयव, अजो। "अनवायं किमीदिने।" ऋक् ७।१०४।२। (त्रि०) २ अनुकूल, राज़ी। (हिं०) ३ अनिवार्य, कट्टर।

अवायी (हिं० स्त्री०) आगमन, आमद, पहुंच।

अवार (सं० पु० क्ली०) न वार्यते जलेन गमनायत्र; वृ-आधारे घञ्, नञ्-तत्। १ नदी प्रभृतिका पूर्वपार, दरया वग़ैरहका नज़दीकी किनारा। नास्ति वारो गमनस्य वारणमत्र। २ प्रार्थना भिन्न, जो बात अर्ज़ न हो। "अतनीरवारतः।" ऋक् १०।६५।६।

अवारजा (फ़ा० पु०) १ पत्रविशेष, कोई बही। इसमें असामीका जोत, जमाख़र्च, याददाश्त, गोशवारा वग़ैरह लिखा जाता है।

अवारण (सं० क्ली०) वृ-णिच्-ल्युट्, अभावे नञ्-तत्। १ निषेधका अभाव, मुमानियतकी अदममौजदगी। (त्रि०) नास्ति वारणं यत्र। २ निषेध-शून्य, जिसकी मुमानियत न रहे।

अवारणीय (सं० त्रि०) न वारणीयम्। १ निषेध किया न जानेवाला, जिसे रोक न सकें। २ दमन किया न जानेवाला, जिसे दबा न सकें। (पु०) ३ असाध्य रोग, मर्ज-लादवा।

अवारतस् (वै० अव्य०) इस तर्फ़को, इस ओर।

अवारपार (सं० पु०) अवारमर्वाक् तीरं पारश्चोत्तरीरश्चते स्तोयस्य अर्श-आद्यच्। उभयकूलयुक्त समुद्र, बहर-आज़म।

अवारपारीण (सं० त्रि०) अवारपारं गामी ख। १ पारग, पार उतरनेवाला। २ सामुद्रिक, बहरी।

अवारिका (सं० स्त्री०) नास्ति वारि यत्र, बहुव्री० कप्। धान्यक वृक्ष, धनियेका पौधा। 'अवरिका' पाठ भी देखनेमें आता है।

अवारिजा, अवारजा देखो।

अवारित (सं० त्रि०) न वारितम्। १ अनिषिद्ध, जिसकी मुमानियत न रहे। २ अनिवारित, जो दबाया न गया हो।

अवारितद्वार (सं० त्रि०) द्वार खुला रखनेवाला, जिसके दरवाज़ा बन्द न रहे।

अवारितव्य (सं० त्रि०) निषेध करनेके अयोग्य, जो रोका जा न सकता हो।

अवारी (हिं० स्त्री०) १ लगाम, बागडोर। २ तट, किनारा, मोड़। ३ आननविवर, मुंहका छेद।

अवारीण (सं० त्रि०) अवारं गामी ख। पारग, पार उतरनेवाला।

अवार्य (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ अनिवार्य, जिसे हटा न सकें। २ अवारणीय, रोका जा न सकनेवाला।

अवावट (सं० पु०) १ कुण्डगोलकादि। २ द्वितीय पिताकर्तृक सजातीया स्त्रीसे जात पुत्र, जो लड़का दूसरे बाप और अपनी जातिकी औरतसे पैदा हो।

अवावन् (सं० पु०) ओणृ-वनिप्। अव-सारक, चोर।

अवाश्य (सं० त्रि०) अनभिप्रेत, जिसकी ख्वाहिश न रहे।

अवास, आवास देखो।

अवासस् (सं० त्रि०) नास्ति वासो यस्य। वस्त्रहीन, नग्न, दिगम्बर, नङ्गा, कपड़े न पहने हुआ।

अवासिन् (सं० त्रि०) न वासी, नञ्-तत्। निवासशील भिन्न, जो बाशिन्दा न हो।

अवास्तव (सं० क्ली०) नञ्-तत्। १ मिथ्या, झूठ। २ अयथार्थ, उलट-सुलट।

अवास्तु (वै० त्रि०) गृहविहीन, लामकान्, जिसके घर न रहे।

अवाहन (वै० त्रि०) वाहनविहीन, बेसवारी।

अवाह्य (सं० त्रि०) न वाह्यम्, वह-ण्यत्। १ वहन करनेको अक्षम, जिसे ले जा न सकें। २ भीतरी, जो बाहरी न हो।

अवि (सं० पु०) अव-इन्। १ मेष, भेड़। २ सूर्य। ३ पर्वत। ४ नाथ। ५ मूषिक। ६ कम्बल। ७ आकन्द वृक्ष, आकका पेड़। ८ वायु। ९ प्राचीर। (स्त्री०) १० लज्जा। ११ ऋतुमती स्त्री। १२ सोम छाननेकी साफी। (वै० त्रि०) १३ अच्छा।

अविक (सं० पु०) अविरेव स्वार्थे कन्। अवेः कः॥ पा ५।४।२८। १ अविशब्दार्थ, अविशब्दका अर्थ। २ मेष, भेड़। "गन्धारिणामिवाविका।" (ऋक् १।१२६।७) (क्ली०) ३ हीरक, हीरा।

अविकट (पु०) अवीनां संघातः अवि-कटच्। संघाते कटच् वक्तव्यः (पा ५।२।२९ सूत्रे वार्तिक) १ मेष समूह, भेड़का झुण्ड। (त्रि०) न विकटम् वि-कटच्। २ अविशाल, छोटा। ३ अविस्तार, जो फैला न हो। ४ अकराल, जो भयङ्कर न हो।

अविकटोरण (सं० पु०) अविकटे मेषसंघाते देयः उरणः मेषः। राजाको मेष रूप करदान, राजाको भेड़ ही मालगुज़ारी देना।

अविकत्थन (सं० त्रि०) श्लाघाशून्य, शेख़ी न रखनेवाला।

अविकल (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ व्याकुल न रहनेवाला, जो बेचैन न हो। २ पूर्ण, भरा-पूरा। ३ निश्चल, चिन्ताशून्य, शान्त। ४ अविसम्वादी।

अविकल्प (सं० क्लो०) विकल्पताशून्य, निश्चित। असन्दिग्ध, सन्देहसे रहित, जिसे किसी तरहका सन्देह न रहे।

अविकार (सं० पु०) नञ-तत्। १ विकारका अभाव, दोषका न रहना। (त्रि०) नास्ति विकारो यस्य। २ विकारशून्य, विकाररहित, निर्दोष, जिसमें ऐब न हो।

अविकारिन् (सं० त्रि०) नञ्-तत्। विकार न करनेवाला, जो विकारजनक न हो।

अविकारी (सं० पु०) अविकारिन् देखो।

अविकार्य (सं० त्रि०) नञ-तत्। विकार्यशून्य, जिसके परिणाममें कोई विकार्य न रहे। विकार्य दो प्रकारका होता है। किसी वस्तुके पूर्व प्रकृतिका एकदम विनष्ट हो जाना अर्थात् अवस्थान्तर प्राप्त कर लेना और गुणका कुछ परिवर्तन होना।

अविकृत (सं० त्रि०) प्रकृतगुणयुक्त, जो अवस्थान्तरित न हुआ हो, जो बिगड़ा न हो। क्तिन् अविकृति (स्त्री०) विकारका अभाव।

अविक्रान्त (सं० त्रि०) १ अतुलनीय, जो बराबरी करने लायक न हो, अनुपम। २ दुर्बल, कमजोर।

अविक्रिय (सं० त्रि०) नञ्-बहुव्री०। विकारशून्य, जिसमें विकार न लगा हो, बेदाग़।

अविक्रीत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। जो विक्रीत न हुआ हो। जो बेचा न गया हो।

अविक्रेय (सं० त्रि०) नञ्-तत्। विक्रयके अयोग्य, जो बेचने लायक़ न हो।

अविक्षत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अविनष्ट, जो चीज़ खराब न हुयी हो, शुद्ध, स्वच्छ।

अविक्षित (सं० त्रि०) नास्ति विशेषेण क्षितं क्षयो यस्य। विशेष रूप क्षयशून्य, जो अधिक नष्ट न हुआ हो। "रातो अविक्षितं"। ऋक्। ८।११।८

अविक्षिप (सं० त्रि०) विक्षेप्तुं न शक्यं क्षिप-क। विक्षिप्त करनेमें अशक्त, जो पागल कर न सकता हो।

अविक्षीय, अविक्षित देखो।

अविगत (सं० पु०) १ जो विगत न हो। २ अज्ञात, जाननेके अयोग्य। ३ अनिर्वचनीय, जिसका वर्णन न हो सके। ४ नाश शून्य, जिसका नाश न होता हो, नित्य।

अविगन्धा, अविगन्धिका (सं० स्त्री०) अजगन्धा वृक्ष, कोई पेड़।

अविगर्हित (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अनिन्दित, जिसकी निन्दा न की जा सके, प्रशंसनीय।

अविगीत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अनिन्दित, प्रशंसनीय।

अविघ्न (सं० पु०) विज-क्त, नञ-तत्। १ कमरख। २ करमर्दक वृक्ष। ३ पानी आंवला। ४ जो उद्विग्न न रहता हो।

अविग्रह (सं० त्रि०) नास्ति विग्रहो समासवाक्यं यस्य। १ व्याकरणोक्त जिस पदमें नित्य समास रहे। नास्ति विशेषरूपेण ग्रहो यस्य। २ अज्ञात, जो विशेष रूपसे जाना न गया हो। नास्ति विग्रहो मूर्ति यस्य। ३ मूर्तिशून्य, निरवयव, निराकार, जिसके शरीर न हो। ४ मीमांसकोक्त विग्रहशून्य देवता, परमेश्वर।

अविघ्न (सं० पु०) विहन्यतेऽस्मिन् वि-हन-अवार्थेक विघ्नः, नञ्-तत्। १ विघ्नाभाव, विघ्नकी अदम मौजूदगी। नञ्-बहुव्री०। २ विघ्नशून्य, जिसे किसी तरहका विघ्न न हो। (अव्य०) ३ विघ्नाभावसे।

अविघात (सं० पु०) विघातका अभाव, विघ्नका न होना।

अविचक्षण (सं० त्रि०) वि-चक्ष-ल्युट् विचक्षणम्। नञ्-तत्। अपटु, मन्द, मूर्ख, बेवक़ूफ़, जो विचक्षण न हो।

अविचल (सं० पु०) स्थिर, अचल, अटल, जो विचलित न हो।

अविचाचलि (सं० त्रि०) चल-यङ्-कि किन् वा; अतिशयेन चाचलिः, ततो नञ्-तत्। अतिशय चञ्चल-

रहित, जो बहुत ज्यादा चलता न हो। 'ध्रुवःतिष्ठाविचाचलिः। (ऋक् १०।१७३।१।)

अविचार (सं॰ पु॰) १ अन्याय, अत्याचार। २ अज्ञान, अविवेक। (त्रि) नञ्-बहुव्री॰। ३ विचारशून्य, जिसे विचार न रहे, मूर्ख, बेवक़ूफ़। अवीनां मेषाणां चारो यत्र बहुव्री॰। ४ जहां भेंड़ चरता हो। न विगतश्चारो दूतो यस्य। ५ दूतयुक्त, जिसके भृत्यादि रहे।

अविचारित (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। अविवेचित, विना विचारा, जिसके विषयमें कुछ विचारा न गया हो।

अविचारिन् अविचारी देखो।

अविचारी (सं॰ पु॰) १ विचारहीन, अविवेकी, बे समझ। २ अत्याचारी, अन्यायी। (स्त्री॰) अविचारिणी।

अविचाल्य (सं॰ त्रि॰) न विचाल्यम् अन्यथाकार्य नञ्-तत्। स्थिर, ठहरा, टिका।

अविचेतन (त्रि॰) विशेषेण चेतनो प्रादि तत्, ततो नञ्-बहुव्री॰। १ संज्ञारहित, बदहोश, बेहवास। २ विज्ञानरहित। "यदन्यविचेतनानि।" ऋक् ८।१००।१।

अविच्छिन्न (सं॰ स्त्री॰) नञ् तत्। १ अविच्छेद, जिसका विच्छेद न हुआ हो। २ सन्तत, जो बीचमें खाली न हो। ३ अटूट, निरन्तर लगातार, जो टूटा न हो।

अविच्छेद (सं॰ पु॰) अभावे-नञ्-तत्। १ विच्छेदका अभाव। (त्रि॰) नञ्-बहुव्री॰। २ विच्छेदशून्य।

अविज्ञ (सं॰ त्रि॰) अनिपुण, जो प्रवीण न हो।

अविज्ञात (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। अज्ञात, जो अच्छी तरह जाना न हो, अनजाना, बेसमझा-बूझा।

अविज्ञातृ (सं॰ त्रि॰) विज्ञाता जीवस्तद्भिन्नः। परमेश्वर।

अविज्ञेय (सं॰ त्रि॰) दुर्ज्ञेय, जाननेके अयोग्य, जो जाना न जा सके।

अविडीन (सं॰ क्ली॰) नञ्-तत्। पक्षियोंका सम्मुख दिशामें गमन।

अवित (सं॰ त्रि॰) अव-क्त। पालित, जो पाला गया हो। रक्षित, रक्षा पाये हुये।

अवितत् (वि॰) विरुद्ध, प्रतिकूल, उलटा, जो इच्छाके मुताबिक़ न हो।

अवितत्करण (सं॰ पु॰) १ पाशुपत दर्शनके अनुसार कर्म जो अन्य मतवालोंके विचारमें निन्दित हो। २ जैनशास्त्रानुसार कार्याकार्यकी विवेचनामें उद्विग्न पुरुषकी तरह लोकनिन्दित कर्म करना। ३ विरुद्धाचरण।

अवितत्य (सं॰ वि॰) असत्य, मिथ्या, झूठ।

अवितथ (सं॰ क्ली॰) नञ्-तत्। १ सत्य। (त्रि॰) २ सत्यविशिष्ट, जिसमें सत्य रहे।

अवितद्भाषण (सं॰ पु॰) व्याहत और निरर्थक शब्दोंका उच्चारण, उलटा-सुलटा कहना, अण्ड-बण्ड बकना।

अवितर्कित (सं॰ वि॰) १ तर्कशून्य, जिसमें तर्क न किया गया हो। २ निःसन्देह, विना तर्कका।

अवितर्क्य (सं॰ क्ली॰) तर्कयितुमशक्यम्। नञ्-तत्। तर्क करनेको अशक्य, जिससे तर्क हो न सके।

अवितारिन् (सं॰ त्रि॰) वितारो वितरणं अस्त्यस्य इनि, नञ्-तत्। ठहरनेवाला, टिकाऊ, स्त्रियां ङीप्। अनपायिनी। अवितारिणी स्थः। ऋक् ८।५।६।

अवितृ (सं॰ त्रि॰) अव-तृच्। रक्षक, रक्षा करनेवाला।

अवित्त (सं॰ त्रि॰) विद् क्त-नञ्-तत्। १ अविख्यात, जो मशहूर न हो। नञ्-बहुव्री॰। २ धनरहित, धन हीन, निर्धन, जिसके धन न रहे।

अवित्ति (सं॰ स्त्री॰) विद-क्तिन् अभावे नञ्-तत्। १ लाभका अभाव, अलाभ। २ ज्ञानाभाव, ज्ञानका न होना। (त्रि॰) नञ्-बहुव्री॰। ३ ज्ञानशून्य, जिसके ज्ञान न हो। ४ लाभशून्य, जिसको लाभ न हो।

अवित्यज (सं॰ पु॰) न विशेषेण त्यज्यते रसायनादिषु त्यज्-कर्मणि बाहु॰ क, नञ्-तत्। पारद, पारा।

अवियुर (सं॰ त्रि॰) अय-उरच् सम्प्रसारणं किच्च। नञ्-तत्। अवियुक्त, वियोगशून्य, जिसे वियोग न रहे।

अविथ्या (सं॰ स्त्री॰) अवये हिता अवि-थ्यन्। युथिष्टच, जूहीका पेड़।

अविद (सं॰ वि॰) मूर्ख, अनजान।

अविदग्ध (सं॰ वि॰) कच्चा, जो जला या पका न हो।

अविदाहिन् (सं॰ त्रि॰) न विदाही, नञ्-तत्। १ असन्तापक, जो किसीको सन्ताप न दे। २ अदाहक, जो किसीको न जलावे।

अविदित (सं॰ त्रि॰) न विदितम्, नञ्-तत्। अज्ञात, जो जाना न गया हो। १ परमेश्वर। २ अप्रकट, गुप्त।

अविदुग्ध (सं॰ क्लो॰) ६-तत्। मेषी दुग्ध, भेड़का दूध।

अविदूर (सं॰ क्लो॰) न विदूरम्, नञ्-तत्। १ समीप, कुर्ब। (त्रि॰) २ निकटस्थ, नजदीकी।

अविदूरतः (सं॰ अव्य॰) निकट, पास, नजदीक।

अविदूष्य (सं॰ क्लो॰) मेषीदुग्ध, भेड़का दूध।

अविदूस (सं॰ क्लो॰) अवेर्मेष्या दुग्धम्, अवि दुग्धे दूसच् न षत्वम्। मेषीदुग्ध, भेड़का दूध।

अविद्ध (सं॰ त्रि॰) वेधा न हुआ, जो छेदा न गया हो।

अविद्धकर्णा, अविद्धकर्णी देखो।

अविद्धकर्णिका, अविद्धकर्णी देखो।

अविद्धकर्णी (सं॰ स्त्री॰) अविद्धः निश्छिद्रः पर्णः एव कर्णो यस्याः बहुव्री॰ स्त्रीत्वात् ङीप्। पाठा नामक लता, हरज्योरी।

'पाठाम्बष्ठाविद्धकर्णी स्थापनी श्रेयसी रसा।
एकाष्ठीला पापचेली प्राचीना [वनतिक्तका॥' (अमर)

अविद्धदृश् (सं॰ त्रि॰) सर्वद्रष्टा, सबको देखनेवाला।

अविद्धवर्चस् (सं॰ त्रि॰) सुप्रसिद्ध, मशहूर, जिसके नामपर दाग न लगे।

अविद्धा (सं॰ स्त्री॰) दुष्टगिराव्यधन।

अविद्य (सं॰ त्रि॰) १ मूर्ख, बेवकूफ। २ विद्यासे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो इल्मसे सरोकार न रखता हो।

अविद्यमान (सं॰ त्रि॰) विदद्दिवा॰ कर्तरि शानच् ततो नञ्-तत्। १ अनुपस्थित, गैरहाजिर। २ असत्, नेस्तनाबूद।

अविद्या (सं॰ स्त्री॰) न विद्या विरोधे नञ्-तत्। विद्याविरोधिनी, अज्ञान, ज्ञानाभाव, अहम्मति, मैं ही ऐसा ज्ञान। अथाज्ञानमविद्याहम्मतिः स्त्रियाम्। (अमर) विशेष विवरण अवस्था शब्दमें देखो।

न्यायके मतसे ज्ञानाभावको अविद्या कहते हैं। सांख्यादिके मतसे, यह ज्ञानका विषयीभूत प्रागभाव ज्ञान अनागतावस्था है। यह अवस्था शब्दोक्त अविद्या अस्मिता इत्यादि रूपसे पांच प्रकारकी है। इस अविद्याको नैयायिक लोग अदृष्ट कह कर स्वीकार करते हैं। चणिकविज्ञानवादी कहते हैं, कि वाह्य वस्तु नहीं है। केवल उसका चणिक ज्ञान होता है। वाह्य वस्तु न रहनेपर भी मिथ्याज्ञानरूप अविद्याद्वारा सब वाह्य वस्तु ही कल्पित होती है। सांख्यवादी उसे यह कहकर दोष देते हैं, जो कोई वस्तु ही नहीं है, ऐसी अविद्या किसीका वन्धक नहीं हो सकती। इसीसे अद्वैतवादियोंमें अविद्या न रहनेपर वे लोग वद्ध नहीं होते। जैसे स्वप्नमें देखी हुई रस्सीसे प्रकृत वन्धन नहीं पड़ता। यहां भाष्यकारने एक आपत्ति उठाई है।

"न विरोधी न चोत्पत्तिर्न वन्धो न च साधकः।
न मुमुचुर्नवै मुक्त इत्येषा परमार्थता॥
वन्धमोचौ सुखं दुःखं मोहापत्तिश्च मायया।
स्वप्ने यथात्मनः ख्यातिः संसृतिर्नतु वास्तवी॥" (भाष्य)

उत्पत्ति नहीं, वन्धन नहीं एवं उसका साधक नहीं, मुमुक्षु नहीं, मुक्त भी नहीं। स्वप्नमें आत्मविषयक ज्ञान होता, फिर उसकी स्मृति मात्र रह जाती है। परन्तु वह जिस तरह वास्तविक नहीं, उसी तरह अविद्याद्वारा वन्धन, मोच, सुख, दुःख एवं मोह की उत्पत्ति होती है। वास्तवमें यह सब कुछ भी नहीं है।

अतएव वन्धनादि विषयपर कोई विरोध न रह गया। अन्तमें भाष्यकारने यही कहकर समाधान किया, वैसा होनेसे विज्ञानद्वारा अद्वैत (जीव और परमात्माका एकत्व) श्रवणके बाद वन्ध निवृत्तिकी

लिये योगाभ्यासका विरोध हो जाता है। कारण, पहले हो यदि, बन्ध मिथ्या ठहरनेका ज्ञान उत्पन्न हो, तो बन्ध मोचनके निमित्त लोग बहु आयाससाध्य योगादिका अनुष्ठान किस लिये करते हैं। वेदान्ती कहते हैं, कि अविद्या ज्ञानविरोधी अज्ञान-रूप अपर पर्य्यायधारी पदार्थ विशेष है। यह अविद्या मूलाविद्या एवं तूलाविद्या भेदसे दो प्रकारकी है। उसमें हिरण्यगर्भ नामक मूलाविद्या एवं प्रतिजीवमें नाना माया नामक तूलाविद्या है। यह माया मूलाविद्याकाही काम है। इसीसे उसे अविद्या भी कहते हैं। अतएव 'अविद्यिको जीवः' अर्थात् जीव मायाविशिष्ट है, भाष्यमें ऐसा ही लिखा हुआ है। जिनके अन्तःकरणमें तत्त्वज्ञानकी उत्पत्ति होती है, उन्होंको अविद्याविमुक्त होती है। इसलिये अविद्यानिवृत्त व्यक्ति ही मुक्तिलाभ करते हैं। अतएव एकको मुक्ति होनेसे दूसरेकी नहीं होती। वेदान्तीमतसे बन्ध एवं मोक्षको ऐसी ही व्यवस्था निरूपित हुई है। वैशेषिक अविद्याको विपर्ययका संशयज्ञान कहते हैं। और वह इन्द्रियदोष एवं संस्कारदोषसे उत्पन्न होता है, यही उन लोगोंका विश्वास है। वे लोग ऐसी मीमांसा करते हैं, कि वातपित्तादिजनित शरीरकी अपटुता ही इन्द्रियदोष है। संस्कारदोष विशेष शास्त्रादिके अदर्शन इन्हीं दोनों दोषोंसे मिथ्याज्ञान उत्पन्न होता है।

अविद्रिय (वै० त्रि०) १ करशून्य, बेकिराया। २ घनीभूत, ठोस, जो पोला न हो।

अविद्रिया (सं० स्त्री०) वि-द्रा कुत्सायागतो कि औणादिकः। विद्रिः निन्दा न विद्रिः अविद्रि अनिन्दा तां याति एति या-विच्। १ प्रशस्त। २ अनिन्दागामी, जो निन्दा न पाये। "अविद्रियाभिरूतिभिः।" ऋक् १।१४६।१५।

अविद्वता (सं० स्त्री०) मूर्खता, बेवकूफी, लाइल्मी।

अविद्वान् (सं० पु०) मूर्ख, नाखांदा, जो इल्मदार न हो।

अविद्विष् (सं० त्रि०) घृणा न करनेवाला, जो नफरत न रखता हो।

अविद्वेष (सं० पु०) न विद्वेषः, अभावे विरोधे वा नञ्-तत्। १ विरोधका अभाव, अनुराग, हसदको अदममौजूदगी, मुहब्बत। (त्रि०) नास्ति विद्वेषो यस्य, नञ् बहुव्री०। २ विरोधशून्य, मुहब्बती।

अविध (सं० त्रि०) नास्ति विधा प्रकारो यस्य, नञ् बहुव्री० गौणे ह्रस्वः। प्रकारशून्य, बेतरह, जिसमें कोई सिफ़त न पाये।

अविधवा (सं० स्त्री०) न विगतो धवः पतिर्यस्याः, नञ्-बहुव्री०। सधवा, सुहागन, जो रांड न हो।

अविधा (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। प्रकारका अभाव, तरहको अदममौजूदगी।

अविधान (सं० क्ली०) न विधानम्, अभावे नञ्-तत्। १ विधानका अभाव, तरीके़की अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति विधानं यत्र यस्य वा। २ विधानशून्य, बेतरीके़।

अविधानतः (सं० अव्य०) विना विधान, बेतरीके़।

अविधि (सं० पु०) न विधिः, अभावे नञ्-तत्। १ विधिका अभाव, क़ायदेकी अदम मौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ विधानशून्य, बेतरीके़।

अविधिपूर्वक (सं० त्रि०) विधिविरुद्ध, बेक़ायदे, ऊटपटांग।

अविन (सं० पु०) अवति रक्षति यज्ञम् यथाविध्यनुष्ठानेन। अध्वर्यु, यजुर्वेदज्ञाता, यागकर्त्ता।

अविनय (सं० पु०) न विनयः, अभावे नञ्-तत्। १ विनयका अभाव, अजुको अदममौजूदगी। विरोधे नञ्-तत्। २ दुर्नय, दुर्नीति, बदमाशी। (त्रि०) नञ्- बहुव्री०। ३ विनयशून्य, नाशायिस्ता।

अविनश्यत् (सं० त्रि०) नष्ट न होनेवाला, जो मर न रहा हो।

अविनश्वर (सं० त्रि०) विरोधे-नञ्-तत्। १ अविनाशी, चिरस्थायी, लाज़वाल, सुदामी, जो कभी मिटता न हो। (पु०) २ कूटस्थ परमेश्वर।

अविनाभाव (सं० पु०) विना व्यापकमृतेन भावः स्थितिः, नञो भावेन सम्बन्धात् सूर्यं न पश्यति, असूर्यम्पश्यो इति वत् असमर्थ-समा०। व्यापकस्थितिकी अनुरोधी सत्तारूप व्याप्ति, व्याप्य और व्यापक भावसम्बन्ध।

अविनाभाविन् (सं० त्रि०) व्यापकं विना न भवति, भू-णिनि अविनाभाववत् शाक् असमर्थ समा०। व्याप्य, जिसमें कोई चीज़ घुस जाये।

अविनाभूत (सं० त्रि०) व्यापकं विना न भूतम्, अविनाभाववत् शाक० असमर्थ-समा०। व्याप्त, मामूर, घुसा हुआ।

अविनाश (सं० पु०) रक्षा, विनाशका अभाव, हिफ़ाज़त, नेस्तनाबूदीकी अदम-मौजूदगी।

अविनाशिन् (सं० त्रि०) न विनश्यति, वि-नश-णिनि, नञ्-तत्। अविनश्वर, नित्य, लाज़वाल, मुदामी।

अविनाशी, अविनाशिन् देखो।

अविनासी (हिं० वि०) १ अविनाशी, लाज़वाल। (पु०) २ ईश्वर।

अविनिगम (सं० पु०) न्यायविरुद्ध सिद्धि, मन्तिक़के ख़िलाफ़ नतीजा।

अविनिर्मोक (सं० त्रि०) छूटसे ख़ाली, जिसमें कुछन छुटे।

अविनिवर्तिन् (सं० त्रि०) पश्चात्पद न होनेवाला, आगे बढ़नेवाला।

अविनीत (सं० त्रि०) न विनीतम्, नञ्-तत्। १ विनयशून्य, नाशायिस्त। २ अशिक्षित, मूर्ख, बेवक़ूफ़। ३ कुक्रियासक्त, बुरे काममें लगा हुआ। ४ उद्धत, बखेड़िया। 'अविनीतः समुद्धतः।' (अमर)

अविनीता (सं० स्त्री०) कुलटा स्त्री, व्यभिचारिणी, जो औरत भली न हो।

अविनीय (सं० पु०) वि-नी क्यप् निपातनात्; नञ्-तत्। १ कल्कभिन्न, जो ओषधियोंका निचोरा रस न हो। २ पिष्ट औषध भिन्न, जो कूटी पीसी दवा न हो। ३ पापभिन्न, जो पाप न हो। (त्रि०) नास्ति विनीयो यस्य, नञ्- बहुव्री०। ४ चूर्ण औषध-शून्य, जिसमें कूटी-पीसी दवा न रहे। ५ पापशून्य, बेगुनाह। (अव्य०) ६ विनय न कर, बे अर्ज़ गुज़ारे।

अविनेय (सं० त्रि०) विनेतुमशक्यम्, वि-नी शक्यार्थे यत् ततो नञ्-तत्। दुर्दमनीय, कट्टर।

अविन्ध्य (सं० पु०) राक्षस विशेष, कोई राक्षस। यह रावणका एक मन्त्री रहा।

अविन्ध्या (सं० स्त्री०) विन्ध्यपादनिःसृता नदी विशेष, कोई दरया।

अविपत्तिकरचूर्ण (सं० क्ली०) अम्लपित्ताधिकारका चूर्ण, सफ़ूफ़. यह मेदेको तुर्शी पर दिया जाता है। त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल), त्रिफला (आंवला, हर, बहेरा), मुस्तक, वीज, विड़ङ्ग, एवं एला पत्र सबको बराबर-बराबर ले कूट-पीसके छान डाले। फिर सबके बराबर इसमें लवङ्ग डालना चाहिये। अन्तमें त्रिवृच्चूर्ण सबसे दूना डाल पीछे सबके बराबर चीनी छोड़े। इस चूर्णको चिकने बरतनमें रखते और अम्लपित्तपर भोजनके आदिमें मधु या घृत मिलाकर खाते हैं। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

अविपक्व (सं० त्रि०) अपक्व, कच्चा, जो पका न हो।

अविपक्वबुद्धि (सं० त्रि०) अनुभवरहित, बेतजर्बा, जिसे वक़फ़ियत न रहे।

अविपच्च (सं० त्रि०) शत्रुशून्य, बेदुश्मन्।

अविपट (सं० पु०) अवीनां विस्तारः, अवि विस्तारे पटच्। मेषका विस्तार, ऊर्णामय वस्त्र, ऊनी कपड़ा।

अविपत्तिकरचर्ण, अविपत्तिकरचूर्ण देखो।

अविपद् (सं० स्त्री०) ऐश्वर्य, आनन्द-मङ्गल, खुशहाली, अमनचैन।

अविपन्न (सं० त्रि०) १ अप्रताड़ित, जिसके चोट न लगी। २ विशुद्ध, ख़ालिस, साफ़।

अविपर्यय (सं० पु०) विपर्ययका अभाव, सिलसिलेबन्दी।

अविपश्चित् (सं० त्रि०) न विपश्चित्, विरोधे नञ्-तत्। विचारशून्य, अविवेकी, नाख़ांदा, बेवक़ूफ़।

अविपाक (सं० पु०) विशेषेण पच्यते फलरूपेण, वि-पच-घञ् ततो नञ्-तत्। १ अपरिपाक, बदहज़मी। २ फल रूपसे अपरिणत धर्म और अधर्म प्रभृति।

अविपाल (सं० त्रि०) अवीन् पालयति, अवि-पा-णिच्-ल-ः। मेषपालक, गड़रिया।

अविपित्तक (सं० पु०) चूर्णविशेष। यह अम्लपित्त रोगको दूर करता है। अविपत्तिकरचर्ण देखो।

अविपुल (सं० त्रि०) न विपुलम्, विरोधे नञ्-तत्। क्षुद्र, छोटा, नाचीज़।

अविप्र (सं० पु०) अमेधावी, जो पूजन न करता हो। "अविप्रोवा यदविधद्विप्रे:।" ऋक् ८।६१।९।

अविप्रकृष्ट (सं० त्रि०) न विप्रकृष्टम्, विरोधे नञ्-तत्। निकटस्थ, नजदीकी, जो दूर न हो।

अविप्रिय (सं० पु०) न विप्रियं अपकार:, नञ्-तत्। १ अनपकार, भलाई। २ आनुकूल्य, मेहरबानी। अवीन् मेषान् प्रीणाति, अवि-प्री-क। ३ श्यामाक तृण, सावां घास। (त्रि०) नास्ति विप्रियं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ४ अपकारशून्य, बुरायी न करनेवाला, नेक।

अविप्रिया (सं० स्त्री०) १ श्यामालता, सावां। २ श्वेतालताक्षुप, सफेद बेल।

अविप्लुत (सं० त्रि०) न विप्लुतं नष्टम्, नञ्-तत्। अविनष्ट, जो विप्लवयुक्त न हो। राजशून्य युद्धका नाम विप्लव है।

अविभक्त (सं० त्रि०) वि-भज-क्त, नञ्-तत्। १ विभागरहित, जो बंटा न हो। अविभक्त वस्तुके स्वामीको भी अविभक्त कहते हैं। "अविभक्ता विभक्ता वा सपिण्डा: स्थावरे समा:।" (स्मृति) २ संसृष्ट, मिला हुआ, जो अलग न किया गया हो। ३ अभिन्न, एक। ४ भेदरहित, एकभावापन्न। ५ अव्यावृत्त। ६ अनिराकृत, जो निकाला न गया हो।

अविभावित (सं० त्रि०) न विभावितम्, नञ्-तत्। १ अलक्षित, जो लक्ष्य किया जा न सके। २ अचिन्तित, विना विचारा।

अविमुक्त (सं० त्रि०) वि-मुच्-क्त, नञ्-तत्। १ जो मुक्त न हो अर्थात् मुक्तिलाभ न कर सके, वह। २ कनपटी, जाबाल उपनिषद्के अनुसार यह ब्रह्मका स्थान है। ३ काशीक्षेत्र। काशीखण्डमें लिखा है, "न विमुक्तं शिवाभ्यां यदविमुक्तं ततो विदुः।" अर्थात् शिव और शिवाके परित्याग न करनेसे काशीको अविमुक्त कहते हैं। ४ मूर्धा (ब्रह्मरन्ध्र) और चिबुक (दाढ़ी)का मध्यवर्ती स्थान। कोई कोई काशीके निकटस्थ गङ्गातटसे पांच कोश पर्यन्त स्थानको अविमुक्त-क्षेत्र कहते हैं।

अवियोग (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ वियोगका अभाव। विरोधे नञ्-तत्। २ संयोग, मिलाप। (त्रि०) नास्ति वियोगो यस्य नञ्-बहुव्री०। ३ वियोगशून्य, संयुक्त।

अवियोगव्रत (सं० क्ली०) स्वामिना अवियोगजनकं व्रतम्, शाक० तत्। कल्किपुराणके अनुसार एक व्रत, जिसके करनेसे स्वामीका वियोग नहीं होता है, अवैधव्यव्रत। यह व्रत अग्रहायण शुक्ल-तृतीयाको किया जाता, इसमें स्त्रियां स्नान और चन्द्र दर्शन करके दूध पीती हैं।

अविरण (वै० क्ली०) विरमणं विनाश:, नञ्-तत् वेदे नस्य लुक्। १ अविनाश। २ अविगतरण। ३ संग्राम नाश। "न भोऽविरणाय पूर्वी।" ऋक् १।१।१६४।८।

अविरत (सं० क्ली०) वि-रम् भावे क्त अनुनासिक लोप: विराम: नञ्-तत्। १ विरामका अभाव, सतत, निरन्तर, अनवरत, अश्रान्त, सन्तत, अनिश, नित्य, लगातार सततेऽनवरताश्रान्तसन्तताविरतानिशम्। (अमर) यह सब शब्द क्रियाविशेषणमें प्रयुक्त होता है। (त्रि०) कर्तरि क्त नञ्-तत्। २ विश्रामशून्य, सन्तत कार्यसे अनिवृत।

अविरति (सं० स्त्री०) विरामो विरति:, वि-रम् भावे क्तिन् अभावे नञ्-तत्। १ निवृत्तिका अभाव, लीनता। २ विषयासक्ति, विषयादिमें स्थिरचित्तता, विषयमें तृष्णाका होना। ३ विरामका अभाव, अशान्ति। (त्रि०) नास्ति विरति: यस्य नञ् बहुव्री०। ४ विरामशून्य। जैनशास्त्रानुसार धर्मशास्त्रकी मर्यादासे रहित बर्ताव करना। यह बन्धनके चार हेतुओंमें एक और बारह प्रकारका होता है। पांच इन्द्रियाविरति, एक मनोविरति और छ: काया विरति।

अविरथा, अवथा देखो।

अविरल (सं० त्रि०) नञ्-तत्। घन, सघन, निविड़, मिला हुआ, मध्यविच्छेदरहित। अव्यवच्छिन्न।

अविराम (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ विरामका अभाव, फ़ुरसतकी अदम मौजूदगी। २ अविच्छेद, लगाव। (त्रि०) नास्ति विरामो यस्य। नञ् बहुव्री०। ३ विरामशून्य, सन्तत, निरन्तर।

अविरुद्ध (सं० त्रि०) न विरुद्धं। नञ्-तत्। १ विरोधशून्य, जो विरुद्ध न हो। २ अप्रतिकूल, अनुकूल, मुवाफ़िक। ३ एकत्र सहावस्थित। ४ बन्धनरहित।

अविरोध (सं० पु०) न विरोधः, नञ्-तत्। अवैर, अविद्वेष, एकत्र अवस्थान, जिदका अभाव अनुकूलता, मेल, अगति, मुवाफ़िकत, साधर्म्य, समानता अविरोधी। (त्रि०) जो विरोधी न हो, अनुकूल, मित्र, हित।

अविलक्षण (सं० त्रि०) विलक्षणो विजातीयः, नञ्-तत्। अविजातीय, जो दूसरी जात न हो, भेदक धर्मशून्य।

अविलक्ष्य (सं० त्रि०) नास्ति विशेषेण लक्ष्यं व्याजः उद्देश्यं शरव्यं वा यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ व्याजशून्य, कपटसे रहित। २ उद्देश्यशून्य। ३ शरव्यशून्य, जो सिकार न हो। ४ प्रतिकारशून्य, जिसका प्रतिकार हो न सके। (अव्य) ५ लक्ष्य न करके, निशाना न बैठाकर।

अविलम्बित (सं० त्रि०) वि-लबि-क्त, नञ्-तत्। विलम्बशून्य, त्वरया युक्त। (अव्य०) शीघ्र, सत्वर, चपल, जल्द।

अविला (सं० स्त्री०) अविं मेषं लाति पतित्वेन गृह्णाति अवि-ला-क-स्त्रीत्वात् टाप्। १ मेषी, भेड़ी। (त्रि०) नास्ति विलं यत्र नञ्-बहुव्री०। २ गर्तशून्य, जहां गड्ढा न हो।

अविलास (सं० पु०) न विलासः, नञ्-तत्। १ विलासका अभाव। २ अप्रकाश हावभाव आदि कलाका अभाव। ३ लीलाका अभाव। (त्रि०) ४ हावभावादि रहित।

अविलोकन, अवलोकन देखो।

अविवक्षित (सं० त्रि०) नञ्-तत्। बोलनेमें अनीप्सित, जो तात्पर्यके विषयीभूत न हो।

अविवर (सं० क्लो०) न विवरम्, नञ्-तत्। १ विवर न होनेवाला, जो छिद्र न हो। (त्रि०) नास्ति विवरं यत्र, नञ्-बहुव्री०। २ नीरन्ध्र। ३ घन। ४ गर्तशून्य।

अविवाक्य (सं० क्लो०) नास्ति विशेषेण वाच्यो मन्त्रादिर्यत्र, नञ्-बहुव्री०। अग्निष्टोम यज्ञका शेष दशम दिन, इस दिन यज्ञ करनेवाला कोई समन्त्र कर्मादि न करे, ऐसा श्रुति स्मृतिमें निषेध है।

अविवाद (सं० पु०) विरुद्धो वादः वाक्यं व्यवहारविशेषश्च विवादः, अभावे नञ्-तत्। १ विरुद्ध वाक्यका अभाव, एक वाक्य। २ व्यवहार विशेषका अभाव। ३ विरोधका अभाव। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ४ विरुद्ध वादादि शून्य, विवादरहित, निर्विवाद।

अविवाहित (सं० त्रि०) विवाहसञ्जातोऽस्य विवाहितम्, नञ्-तत्। अनूढ़, क्वारा, जो ब्याहा न हो। विवाहित पुरुष यदि किसीसे प्रसक्त हो, तो उस स्त्रीको भी अविवाहित कहा जायेगा।

अविवाहिन् (सं० त्रि०) १ विवाह न करनेवाला, जो शादी न करता हो। २ विवाह सम्बन्धीय, शादीसे ताल्लुक रखनेवाला। ३ विवाहार्थ निषिद्ध, जो शादीके लिये मना हो।

अविविक्त (सं० त्रि०) न विवक्तम्, नञ्-तत्। १ असम्पृक्त न होनेवाला, जो अलग न हो। २ एकीभूत, गंठा हुआ। ३ अपवित्र, नापाक। ४ जनाकुल, आबाद, जो उजाड़ न हो। ५ अविवेकी, जो परहेजगार न हो।

अविविक्तदृश् (सं० त्रि०) असम्पृक्त दृष्टिसे न देखनेवाला, जो सबको बराबर देखता हो। जो पुरुष इस संसारमें सम्पूर्ण पदार्थको ईश्वरका रूप समझ भेदभावसे नहीं देखता, वही अविविक्तदृश् कहाता है।

अविवृक्ष (सं० पु०) मेषशृङ्गी, मेढ़ासींगी।

अविवेक (सं० पु०) विवेकः विशेषेण ज्ञानम्, अभावे नञ्-तत्। विशेष ज्ञानका अभाव, अविवेचना, अविमृश्यकारिता, बेवफ़ूफ़ी, नादानी। अविवेक ही विषम आपदका स्थान है अर्थात् अविवेचनासे ही अतिशय आपद् आती है। नैयायिकोंका मत है—अन्योन्य तादात्म्य आरोपके हेतु विशेष ज्ञानका अभाव अविवेक कहाता, जैसे शुक्तिमें रजतका ज्ञान है। वास्तविक शुक्ति रजत नहीं होती। ऐसे स्थान पर अतादात्म्यमें तादात्म्यज्ञान गंठता है। इसी हेतु विशेष ज्ञानका अभाव मिथ्याज्ञान होनेसे अविवेक

कहाता है। सांख्यवादी समझाता, अन्योन्य तादात्म्य ज्ञानरूप मिथ्याज्ञान ही अविवेक है। (त्रि०) २ विवेकशून्य, बेवकूफ़, गंवार।

अविवेककृत (सं० त्रि०) अविवेचनासे किया हुआ, जो बे-सोचे समझे हो।

अविवेकता (सं० स्त्री०) अविवेचना, बेवकूफ़ी, नादानी।

अविवेकत्व (सं० क्ली०) अविवेकता देखो।

अविवेकिन् (सं० त्रि०) अविवेचक देखो।

अविवेकी, अविवेचक देखो।

अविवेचक (सं० त्रि०) नञ्-तत्। कर्तव्याकर्तव्य विवेचनारहित, जिसे भला-बुरा समझ न पड़े।

अविवेचना (सं० स्त्री०) अविवेकता, बेवकूफ़ी, नादानी, भला-बुरा समझ न पड़नेकी हालत।

अविवेन (वै० त्रि०) वि-वेन पुंसि संज्ञायां घ, नञ्-तत्। १ इच्छाशील, अविगतकाम, यथाकाम, ख्वाहिशमन्द, चाह रखनेवाला। "पिबन्ति मनसाविवेनम्।" ऋक् ४।२५।१। २ मेधावी न होनेवाला, जो अक़्लमन्द न हो। (अव्य०) ३ इच्छाशील होकर, खुशी-खुशी।

अविशङ्क (सं० त्रि०) निर्भय, बेख़ौफ़, निडर, जिसे शङ्का न रहे।

अविशङ्का (सं० स्त्री०) न विशेषेण शङ्का, अभावे नञ्-तत्। विशेष शङ्काका अभाव, एतबार, भरोसा।

अविशङ्कित (सं० त्रि०) वि-शकि कर्तरि क्त; विशेषेण शङ्का सञ्जातोऽस्येति तारकादित्वादितच् वा, ततो नञ्-तत्। विशेषरूप शङ्कारहित, जिसे ख़ौफ़ न लगे।

अविशस्तृ (वै० त्रि०) नञ्-तत्। शमिता, विशसनमें अकुशल, जो यज्ञमें भली भांति पशुवध कर न सकता हो।

अविशिर (सं० क्ली०) सूर्यावर्तका फल, लटजीरेका बीज।

अविशुद्ध (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। १ विशुद्ध न होनेवाला, जो ख़ालिस न हो। २ अपवित्र, नापाक।

अविशुद्धि (सं० स्त्री०) विरोधे नञ्-तत्। शुद्धिके विपरीत, दोष, नापाकी, छुवाछूत। पञ्चशिखाचार्यका मत है, कि सोमादि यज्ञमें पशु एवं यवमुद्गादि बीजके नाशका कारण होनेसे अविशुद्धि हिंसादोषकी साधिका ही कही जायेगी। ज्योतिष्टोमादिमें यज्ञके लिये कोयी प्रधान अपूर्व एवं पश्वादि हिंसाजनित दुरदृष्ट निकलता है। किन्तु अल्प प्रायश्चित्तसे ही वह दुरदृष्ट मिट जाता है।

अविशेष (सं० पु०) न विशेषः, अभावे नञ्-तत्। १ भेदक धर्मका अभाव, अभेद। २ ऐक्य, एका। (त्रि०) नास्ति विशेषो यत्र यस्य वा। ३ विशेषशून्य, तुल्य, बराबर।

अविशेषज्ञ (सं० त्रि०) विशेषं न जानन्ति, विशेष-ज्ञा-क। विशेषानभिज्ञ, भेदक-धर्मानभिज्ञ, जो ज़्यादा जानता न हो।

अविशेषित (सं० त्रि०) न विशेषितम्, नञ्-तत्। जिसमें अन्य वस्तुसे विशेषरूप भेद न डाले, जो दूसरी चीज़से ज़्यादातर अलग की न गयी हो।

अविश्रान्त (सं० त्रि०) वि-श्रम-क्त दीर्घत्वं मस्य नलत्वं, ततो नञ्-तत्। विरामरहित, सन्तत, जो रुकता या थकता न हो।

अविश्लिष्ट (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। विश्लिष्ट न होनेवाला, जो मिला न हो।

अविश्वभिन्व (वै० त्रि०) सब वस्तुमें व्याप्त न होनेवाला, जो सब चीज़में भरा न हो।

अविश्वविन्न (वै० त्रि०) प्रत्येक स्थानमें अज्ञात, जो हरेक जगह मालूम न पड़ता हो।

अविश्वसनीय (सं० त्रि०) वि-श्वस्-अनीयर्, नञ्-तत्। विश्वास करनेके अयोग्य, जो एतबार करने लायक़ न हो।

अविश्वस्त (सं० त्रि०) नञ्-तत्। विश्वासकी योग्यतासे हीन, सन्दिग्ध, एतबारकी लियाक़तसे ख़ाली, जो एतबारी न हो।

अविश्वास (सं० पु०) न विश्वासः, अभावे नञ्-तत्। १ विश्वासका अभाव, सन्देह, एतबारकी अदममौजूदगी। (त्रि०) २ विश्वासशून्य, बेएतबार, जिसे कोयी एतबारी न समझे।

अविश्वासा (सं० स्त्री०) चिरप्रसूत गो, जो गाय बहुत दिनकी व्यायी हो।

अविश्वासिन् (सं० त्रि०) न विश्वसिति, वि-श्वस्-णिनि। विश्वास न करनेवाला, जिसे एतबार न आये।

अविश्वासी, अविश्वासिन् देखो।

अविष (सं० पु०) अवति रत्नादीन् जनान् वा, अव रक्षणे कर्तरि टिषच्। १ समुद्र। २ राजा। ३ आकाश। (त्रि०) ४ रक्षक, रखवाला। ५ विषशून्य, जहरसे खाली।

अविषक्त (सं० त्रि०) न विषक्तं विश्लिष्टम्, नञ्-तत्। असंलग्न, असंयुक्त, जो लगा या मिला न हो।

अविषम (सं० त्रि०) न विषमम्, विरोधे नञ्-तत्। १ विषम न होनेवाला, सम, हमवार, जो नाहमवार न हो। २ संयुक्त, मिला हुआ। ३ सुगम, सीधा, जिससे आने-जानेमें कोई खटका न रहे।

अविषय (सं० पु०) न विषयः, नञ्-तत्। १ अगोचर, गुम हो जानेकी हालत। २ अप्रतिपाद्य माया, दुनियाकी भूठी चीज़। ३ अनुपस्थिति, गैर हाज़िरी। (त्रि०) ४ अदृश्य, गुम। ५ इन्द्रियातीत, मालूम न होनेवाला।

अविषयीकरण (सं० क्ली०) वृथा चेष्टा, बेकामका काम।

अविषह्य (सं० त्रि०) न विशेषेण सह्यम्, नञ्-तत्। १ सह्य करनेको अशक्य, जो सहा न जाता हो। (अव्य०) २ सह्य न करके, बे-बरदाश्त किये।

अविषा (सं० स्त्री०) १ अतिविषा। २ निर्विषघ्ण, जदार। यह घास हिमालयपर उत्पन्न होती है। इसमें सफेद कन्द निकलता है। कन्दको ज़ख़्मपर घिसकर लगा देनेसे सांप बिच्छूका ज़हर उतर जाता है। अविषा मुस्तक जैसा आकार रखती है।

अविषाद (सं० पु०) १ प्रसन्नता, आनन्द-मङ्गल, खुशी, चैन-चान। (त्रि०) २ प्रसन्न, खुश।

अविष्टम्भ (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ आलम्बाभाव, आश्रयका अभाव, पनाहकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ आलम्बनशून्य, बेसहारा।

अविष्ठ (वै० त्रि०) अतिशयेन अविता रक्षिता, अवितृ-इष्ठन् तृणोलोपः। १ अतिशय रक्षक, बड़ा मुहाफ़िज़। २ अतिशय प्रसन्न, निहायत राज़ी। ३ अतिशय ध्यान देनेवाला, जो बहुत गौर करता हो।

"यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठः।" ऋक् ।७।१८।१।

अविष्या (वै० स्त्री०) अव-गतौ-इसुन्, अविगतिमिच्छति क्यच् भावे अ स्त्रीत्वात् टाप्। १ अभिलाष, ख़ाहिश। २ गमनेच्छा, जानेकी तबीयत। "अविष्यामनु व्रतं।" ऋक् २।३८।३।

अविष्यु (सं० त्रि०) अविष-क्यच्-उ। रक्षा करनेकी इच्छा रखनेवाला, पालनकाम। "माता सूरा अविष्यवः।" ऋक ८।४५।२३।

अविस् (सं० क्ली०) अव-भावे-इसुन्। १ रक्षण, हिफ़ाज़त। २ गति, चाल।

अविसंवाद (सं० पु०) न विशेषेण संवादः अभावे नञ्-तत्। १ प्रमाणके अनुसरणका अभाव, सुबूतके मुवाफ़िक़ न चलना। न विसंवादः विरोधे नञ्-तत्। २ प्रमाणका अनुसरण, सुबूतकी हमराही। ३ यथार्थ विषयार्थक, वाजिब बातका मानना।

अविसंवादिन् (सं० त्रि०) न विसंवदति णिनि विरोधे नञ्-तत्। १ प्रमाणानुयायी, सुबूतपर चलनेवाला। २ यथार्थवादी, वाजिब बोलनेवाला। ३ सफल पदार्थ, पता पाये हुआ।

अविसर्गिन् (सं० त्रि०) संलग्न, लगा हुआ, जो छोड़ता न हो।

अविसोढ़ (सं० क्ली०) अवेर्दुग्धम् अवि-सोढच् न पलम्। मेषी दुग्ध, भेड़का दूध।

अविस्तर (सं० त्रि०) विस्तारशून्य, छोटे मिक़्दार या दायरेवाला, जो फैला न हो।

अविस्तार (सं० पु०) विस्तारका अभाव, इस्तेमालकी अदममौजूदगी।

अविस्तीर्ण (सं० त्रि०) सङ्कुचित, अनियुक्त, विस्ताररहित, छोटा, फैला न हुआ, सिकुड़ा हुआ, जो काममें न लगा हो।

अविस्मृत (सं० त्रि०) क्षुद्र, संलग्न, मिला हुआ, जो सटा हो।

अविस्थल (सं० क्ली०) महाभारतोक्त ग्राम विशेष। उद्योग पर्वमें अविस्थल प्रभृति पांच ग्रामका उल्लेख किया है।

अविस्पष्ट (सं० त्रि०) न विशेषेण स्पष्टम्, नञ्-तत्। अस्पष्ट वाक्य, जो साफ़ न बोला गया हो।

अविस्मरण (सं० क्ली०) न विस्मरणं अभावे नञ्-तत्। १ विस्मरणका अभाव, याद न रहनेकी अदम-मौजूदगी। २ स्मरण, याद।

अविस्मृत (सं० त्रि०) न विस्मृतम् नञ्-तत्। भूला न हुआ, जो विस्मृत न हो।

अविस्र (सं० त्रि०) पूतिगन्ध रहित, जिससे साफ़ बू न निकले।

अविहत (सं० त्रि०) अवरोधशून्य, जो रोका न गया हो।

अविहतमति (सं० त्रि०) गमनमें अवरोध न रखनेवाला, जिसे जानेमें रोक न रहे।

अविहर (हिं० वि०) १ विहड़ न होनेवाला, जो टूटा न हो, अखण्ड, अनश्वर।

अविहर्यतक्रतु (सं० पु०) हर्यति प्रेप्साकर्मा इति यास्कः। हर्यगतिकान्त्योः कान्तिरभिलाषः। वि-हर्य्य-अतच् विहर्यतोऽभिलषितः। अविहर्यतोऽनभिलषित इत्यर्थः। तादृश क्रतु कर्म यस्य। १ अनभिलषितकर्मा, जो अभिलाषसे काम न करता हो। २ इन्द्र। "येनाविहर्य्यतक्रतो अमित्रान्।" ऋक् १।६३।२। 'हे अविहर्य्यतक्रतो अप्रेप्सितकर्मन्निन्द्र।' (सायण)

अविहित (सं० त्रि०) न वेदादि-शास्त्रेण विहितम्, नञ्-तत्। १ निषिद्ध, जिसे शास्त्र न करनेको कहे। २ अकृत, जो किया न हो। अवेर्हितम् ६-तत्। ३ भेड़का हितकर। (पु०) ४ श्यामाक घास।

अविह्रुत (सं० त्रि०) वि-ह्रु-क्त उतच् किञ्च तेन न गुणः नञ्-तत्। अहिंस्य, हिंसाके अयोग्य, जो मारने लायक न हो। "तानि ज्मत्माविह्रुतम्।" ऋक् ५।८८।२। 'अविह्रुतमहिंस्यम्।' (सायण)

अविह्वरत् (सं० त्रि०) पतनशून्य, जो फिसलता या गिरता न हो।

अविह्वल (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। १ व्याकुल न होनेवाला, जो बेचैन न हो। २ स्वस्थ, तनदुरुस्त।

अवी (सं० स्त्री०) अवत्यात्मानमन्यस्मात्। अव रक्षणे अवितॄस्तृतन्त्रिभ्य ईः। उण् ४।१५८। इति ई। १ ऋतुमती स्त्री, रजस्वला स्त्री। २ वनकुलत्थ, जङ्गली कुलथी। 'अवीर्नारी रजस्वला।' (सिद्धान्तकौमुदी)

अवीकाश (सं० पु०) वि-काश-भावे-घञ् उपसर्गदीर्घः प्रकाशः ततो नञ्-तत्। १ प्रकाशका अभाव, रोशनीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ प्रकाशशून्य, अन्धेरा।

अवीक्षण (सं० क्ली०) न वीक्षणम् नञ्-तत्। १ दर्शनका अभाव, देख न पड़ना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ दर्शनशून्य, जो देख न पड़ता हो। अवीनां ईक्षणं ६-तत्। ३ मेषका दर्शन, भेड़का देखना।

अवीक्षित (सं० त्रि०) न वीक्षितम् नञ्-तत्। अदृष्ट, जो देखा न गया हो। भावे क्त अभावे-नञ्-तत्। (क्ली०) २ वीक्षणाभाव, दर्शनाभाव। अविना मेषेण ईक्षितम्। ३-तत्। ३ मेषदृष्ट, जो भेड़से देखा गया हो।

अवीची, अवीचि (सं० पु०-स्त्री०) वयति सततं चलति वेञ्-ईच् डिच्च। न वीचिः वीची वा, नञ्-तत्। १ जो वस्तु श्रेणी या कतार न हो। २ जो तरङ्ग या लहर न हो। ३ अवकाश भिन्न, जो शै मौका न हो। ४ सुखभिन्न, आराम न होनेवाली चीज़। ५ अनल्प, बड़ी चीज़। ६ एक नरक। भागवतके पञ्चम स्कन्धमें उक्त नरकका विशेष विवरण लिखा है। (त्रि०) ७ नास्ति वीचिस्तरङ्गो यत्र। तरङ्गशून्य जलाशय, लहरसे खाली।

अवीज (सं० त्रि०) नास्ति वीजमस्य, नञ्-बहुव्री०। १ वीजशून्य फलादि, कदली, केरा प्रभृति, बेतुख्म। (स्त्री) २ द्राक्षा, किशमिश। (त्रि०) ३ वीजका अनाधायक, जो वीज न रखता हो। नञ्-तत्। ४ अप्रशस्त, खराब। ५ अङ्कुरोत्पादनके अयोग्य, तीन वर्षका वीज जिससे कोपल निकल न सके। (क्ली०) वीजं शुक्रं तन्नास्ति यस्य नञ्-बहुव्री०। ६ शुक्रहीन, क्लीवादि, नामर्द। ७ कारणशून्य,

निर्मूल, बेजड़। (पुं०) ८ योगशास्त्रोक्त निर्बीज चित्त वृत्तिका परिणाम निरोध, योग भिन्न अन्यत्र चित्त वृत्ति निवारण।

अवीजक (सं० त्रि०) १ बीजशून्य, तुख्मसे खाली। २ पवनरहित, जो बोया न गया हो।

अवीजधर्मी (सं० त्रि०) बीजका धर्म न रखनेवाला, जो तुख्मकी खसलतसे खाली हो।

अवीजा (सं० स्त्री०) गोस्तनीसदृशगुण द्राक्षा, किशमिश।

अवीत (सं० क्ली०) न वीतं चित्तादवगतम्, नञ्-तत्। अनुमान, फ़र्ज़, अन्दाज़।

अवीदुग्ध (सं० क्ली०) मेषीदुग्ध, भेड़का दूध।

अवीमूत्र (सं० क्ली०) मेषीमूत्र, भेड़का मूत।

अवीर (सं० त्रि०) न वीरम्। १ जो वीर न हो। २ जो बलवान् न हो। वीरः पुत्रादि स नास्ति यस्य नञ्-बहुव्री०। ३ पुत्रादिशून्य, जिसके लड़का वग़ैरह न रहे।

अवीरघ्नी (वै० स्त्री०) अवीरहन् देखो।

अवीरता (वै० स्त्री०) पुत्रका अभाव, पिसरकी अदममौजूदगी, बालबच्चेका न होना।

अवीरहन् (वै० त्रि०) मनुष्यवध न करनेवाला, जो आदमियोंको मारता न हो।

अवीरा (सं० स्त्री०) १ पुत्र और पतिसे रहित स्त्री, जिस औरतके लड़का और खाविन्द न रहे। २ स्वतन्त्र स्त्री, आज़ाद औरत।

अवीर्य (वै० त्रि०) निर्बल, प्रभावरहित, कमज़ोर, बेअसर।

अवीह (हिं० वि०) अभय, निडर, जो डरता न हो।

अवु (सं० त्रि०) अव-उ। जो हविर्द्वारा तर्पण करता हो। "अवीवायिद्वात्ननुवः प्रियासुशप्रिया स्वर्वा।" ऋक् १०।११२।५। 'अवीर्हविर्भिः तर्पयितः। अवतेरौणादिक उप्रत्ययः।' (सायण)

अवुक (सं० पु०) छाग, बकरा।

अवृक (वै० त्रि०) वृणोति समन्तादश्नाप्नोति, वृ-कक् ततो नञ्-तत्। १ मृगभिन्न, जो हिरण न हो। नास्ति वृकः आवरकः मृगो वा यस्य यत्र वा, नञ्-बहुव्री०। २ मृगशून्य, हिरणसे खाली। ३ हिंसक रहित, जहां खूंखार जानवर न रहे। ४ सच्चा, रास्त। ५ रक्षित, महफ़ूज़। (क्ली०) ६ रक्षा, शान्ति, हिफ़ाज़त, मेल। 'प्रणो यच्छतादवृकं।' ऋक् १।४८।१५।

अवृक्ष (सं० त्रि०) वृक्षशून्य, दरख्तसे खाली।

अवृक्षक, अवृक्ष देखो।

अवृजिन (वै० त्रि०) छल न करनेवाला, सच्चा, जो अपने दोस्तको वक्त पर छोड़ता न हो। यह शब्द आदित्यगणका विशेषण है।

अवृत (वै० त्रि०) १ अप्रतिहत, जो रोका न गया हो। २ अधीन न बना हुआ, जो दबाया न गया हो। ३ अनिर्वाचित, जो चुना न गया हो। ४ अरक्षित, जो बचाया न गया हो।

अवृत्ति (सं० स्त्री०) वृत्तिर्वर्तनादिः, नञ्-तत्। १ स्थितिका अभाव, न ठहरनेकी हालत। २ जीविकाका अभाव, रोज़ीकी अदममौजूदगी। ३ विवरणका अभाव, तफ़सीलकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति वृत्तिः स्थित्यादिर्यस्य। ४ स्थितिहीन, बेठिकाना। ५ जीविकाशून्य, बेरोज़गार। ६ विवरणरहित, बेतफ़सील।

अवृत्तित्व (सं० क्ली०) अनस्थित्व, अदम-मौजूदगी।

अवृथा (सं० अव्य०) कृतकार्य होकर, सफलतासे, कामयाबीके साथ।

अवृथार्थ (सं० त्रि०) कृतकार्य, सफलमनोरथ, कामयाब।

अवृद्ध (सं० पु०) पुष्पवृक्षभेद, किसी क़िस्मका फूलदार पेड़।

अवृद्धिक (सं० क्ली०) नास्ति वृद्धिः लाभरूपः यस्मिन्, नञ्-बहुव्री०; शेषाद्विभाषेति वा कप्। वृद्धिहीन मूलधन, सूदसे खाली जमा। (त्रि०) २ वृद्धिरहित, न बढ़नेवाला। ३ व्याज न रखनेवाला, जिसपे सूद न लगे।

अवृध (वै० त्रि०) न वर्धते, वृध-कर्तरि-क। वृद्धिशून्य, बेबाढ़। "पर्वीरश्वा अवृधा अयज्वान्।" ऋक् ७।६।३।

अवृष्टि (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ वृष्टिका अभाव, बारिशकी अदममौजूदगी। २ दुर्भिक्ष, कहत। (पु०) नास्ति वृष्टिर्वर्षणं यस्मात्, नञ्-५-बहुव्री०। ३ वृष्टिशून्य मेघ, जो बादल बरसता न हो।

अवृष्टिसंरम्भ (सं० पु०) नास्ति वृष्टेर्वर्षणस्य संरम्भः संवेगो यस्मात्, नञ् ५-बहुव्रो०। अति वेगसे न बरसनेवाला मेघ, निविड़ मेघ, वृष्टिसे पूर्वकालवर्ती गम्भीर मेघ, जो बादल ज्यादा बरसता न हो।

अवृह (सं० पु०) बौद्ध देव-विशेष; बौद्ध देवताओंकी एक श्रेणी।

अवृहत् (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। वृहद्भिन्न, क्षुद्र, छोटा, जो बड़ा न हो।

अवेक्षक (सं० त्रि०) अवेक्षते विशेषेणालोकयति, अव-ईक्ष-ण्वुल्। १ दर्शक, देखनेवाला। २ पर्यालोचक, मुवायिना करनेवाला। ३ आयव्ययादिका अध्यक्ष, आमद-खर्चका हिसाब रखनेवाला।

अवेक्षण (सं० क्लो०) अव-ईक्ष-ल्युट्। १ दर्शन, देखभाल। २ पर्यालोचन, मुवायिना। ३ अवधान, गौर। ४ प्रतिजागरण, चौकीदारी।

अवेक्षणीय (सं० त्रि०) अवेक्ष्यते, अव-ईक्ष-अनीयर्। १ दर्शनीय, देखने लायक। २ आलोचनीय, मुवायिनेके काबिल।

अवेक्षा (सं० स्त्री०) अव-ईक्ष भावे-अ-टाप्। १ दर्शन, देखभाल। २ अवधान, गौर, खयाल। ३ पर्यालोचना, मुवायिना।

अवेक्षित (सं० त्रि०) अव-ईक्ष कर्मणि क्त। १ दृष्ट, देखा-भाला। २ पर्यालोचित, मुवायिना किया हुआ।

अवेक्षितृ (सं० त्रि०) अवेक्षते, अव-ईक्ष-तृच्। १ दर्शक, देखनेवाला। २ पर्यालोचक, मुवायिना करनेवाला।

अवेक्षिन्, अवेक्षितृ देखो।

अवेक्ष्य (सं० त्रि०) अव-ईक्ष कर्मणि ण्यत्। १ दृश्य, देखने लायक। २ पर्यालोचनीय, जांचने काबिल। (अव्य०) ल्यप्। ३ देख या विवेचना करके, गौरके साथ, मुवायिनेके मुवाफिक।

अवेज (हिं० पु०) एवज, बदला।

अवेणि (सं० त्रि०) १ गूंथा न हुआ, जो मोड़ मोड़के बनाया न गया हो। २ लहरदार न होनेवाला, जिसमें दरयाकी तरह लहरें न उठें। यह शब्द अलकका विशेषण है।

अवेदनाज्ञ (सं० त्रि०) वेदनां न जानाति; अवेदना-ज्ञा-क, असमर्थ-समा०। वेदनानभिज्ञ, जो दर्दको जानता न हो।

अवेदयान (सं० त्रि०) अज्ञान, नादान, जो जानता न हो।

अवेदविद् (सं० पु०) वेद न पढ़नेवाला ब्राह्मण।

अवेदविहित (सं० त्रि०) वेदमें न मिलनेवाला, जो वेदमें पाया न जाता हो।

अवेदि (सं० स्त्री०) वेदिर्वेदनम्, अभावे नञ्-तत्। १ ज्ञानाभाव, इल्मको अदम-मौजूदगी। वेदिः परिष्कृता भूमिः सा न भवति, नञ्-तत्। २ अपरिष्कृता भूमि, साफ न की हुई ज़मीन।

अवेद्य (सं० त्रि०) विद्यते ज्ञायते, विद कर्मणि ण्यत् ततो नञ्-तत्। १ अज्ञेय, जाना जा न सकनेवाला। विद लाभे ण्यत्, नञ्-तत्। २ अलभ्य, नायाब, जो मिल न सकता हो। ३ व्याहा न जानेवाला। (पु०) ४ गोवत्स, गायका बछड़ा।

अवेद्या (सं० स्त्री०) अविवाह्या स्त्री, जिस औरतसे शादी हो न सके।

अवेनत् (वै० त्रि०) अज्ञान, बेहोश, जिसे कुछ मालूम न पड़े।

अवेल (सं० त्रि०) नास्ति वेला सीमा यस्य यत्र वा, नञ्-बहुव्रो०। १ सीमारहित, बेहद। २ निर्मर्याद, बेइज्जत। (पु०) ३ अपलाप, झूठ, इल्मको पोशीदगी।

अवेला (सं० स्त्री०) १ गुवाकचूर्ण चर्वितपूग, सुपारीका टोहरा। 'अवेलस्त्वपलापे स्यादवेला पूगचूर्णके।' (विश्व) नवेला, नञ्-तत्। २ अप्रशस्त काल, बुरा वक्त। ३ अनुचित काल, नामुनासिब वक्त। चलित भाषामें शेष वेलाको ही अवेला कहते हैं।

अवेश (हिं० पु०) १ आवेश, जोश, भड़क। २ चैतन्य, फुरती, होश। ३ भूतावेश, शैतानका साया।

अवेष्ट (सं० त्रि०) अव-यज-क्त अव-इष-क्त वा। १ नाशित, नेस्तनाबूद। नास्ति वेष्टा यत्र, नञ्-बहुव्रो०। २ वेष्टनरहित, खुला, जो बंधा न हो।

अवेष्टि (वै० स्त्री०) यज्ञ द्वारा प्रायश्चित्त, जो शान्ति यज्ञसे हो।

अवैतनिक (सं० त्रि०) वेतनशून्य, बेतनख्वाह, अजरेरी, जो बगैर उजरत काम करता हो।

अवैदिक (सं० त्रि०) वेदसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो वेदमें न हो।

अवैद्य (सं० त्रि०) वैद्य न होनेवाला, जो तबीब न हो।

अवैध (सं० त्रि०) विधेरागतं तत आगतमिति अण्, ततो नञ्-तत्। विधिमें न होनेवाला, निषिद्ध, बेक़ायदा।

अवैधव्य (सं० क्ली०) विधवाया: विगतभर्त्ता: भव:, भवार्थे ष्यञ् अभावे नञ्-तत्। पतिराहित्याभाव, सधवावस्था, सोहाग, अहवात।

अवैमत्य (सं० क्ली०) वैमत्यं अनेकमत्यम्, अभावे नञ्-तत्। १ मतभेदाभाव, ऐकमत्य, रायमें फ़र्क़ का न पड़ना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ ऐकमत्ययुक्त, हमराय।

अवैयात्य (सं० क्ली०) वियातो धृष्ट: भावार्थे ष्यञ् आद्यचो वृद्धि: ततो नञ्-तत्। १ धाष्टर्याभाव, शेकड़ीका न होना। २ सलज्जत्व, शरमिन्दगी। (त्रि०) नास्ति वैयातं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ सलज्जत्व युक्त, लज्जा-विशिष्ट, शरमीला, जो ढीठ न हो।

अवैर (सं० क्ली०) वैरं विरोध:, नञ्-तत्। १ विरोधका अभाव, दुश्मनीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति वैरं यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ विरोधशून्य, दुश्मनी न रखनेवाला। (पु०) ३ युधिष्ठिर।

अवैरहत्य (वै० क्ली०) मनुष्योंकी अहिंसा, वधसे रक्षा, आदमियोंका मारा न जाना, क़त्लसे हिफ़ाज़त।

अवैराग्य (सं० क्ली०) वैराग्यं विषयवैमुख्यं तेन नञ्-तत्। विषयाभिलाष, दुनियावी चीज़की ख्वाहिश। सांख्योक्त धर्माधर्म ज्ञानाज्ञान वैराग्यावैराग्य ऐश्वर्या-नैश्वर्य इस आठ प्रकार प्रकृति धर्मके अन्तर्गत यह भी एक धर्मविशेष है।

अवैलक्षण्य (सं० क्ली०) वैलक्षण्यं भेदकधर्म: वैयात्य-वत् भावार्थे ष्यञि सिद्धम्; अभावे नञ्-तत्। १ भेदक-धर्मका अभाव, अभेद, फ़र्क़ का न पड़ना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ भेदक धर्माभावविशिष्ट, अभिन्न, बेफ़र्क़, एक-जैसा।

अवोक्षण (वै० क्ली०) अव-उक्ष भावे-ल्युट्। तिरछे हाथसे जलसेकरूप वेधकार्य। अभ्युक्षण देखो।

अवोद (सं० पु०) अव-उन्द भावे-घञ् निपा० न लोप:। १ अवक्लेदन, छिड़काव। 'अवोदोऽवक्लेदनम्।' (सिद्धान्तकौमुदी) २ आर्द्रक, अदरक। (त्रि०) तत: अस्त्यर्थे अर्श आदि अच्। ३ क्लिन्न, क्लेदयुक्त, तर, भीगा, छिड़का हुआ।

अवोदेव (वै० अव्य०) देवानामवस्तात् पश्चादर्थे अव्ययी०। देवतादिके पश्चाद् दशादिमें।

अवोष (सं० पु०) अव-उष कर्मणि-घञ्। १ उष्णान्न, गर्म दाल भात या पूरी-तरकारी।

अवोषीय (सं० त्रि०) तप्तान्नको हितकर, गर्म खानेमें डालने या मिलाने क़ाबिल।

अवोष्य, अवोषीय देखो।

अब्द (सं० पु०) अवतीत्यब्द: ; अव-रक्षणे-कर्तरि-द पृषो० हृभाव:। १ वत्सर, साल। २ मेघ, बादल। ३ पर्वतविशेष, काई पहाड़। ४ पुस्तक, किताब। ५ मुस्तक, मोथा। अब्द देखो।

''यमकादौ भवेदैक्यं डलोर्बवोर्लरोस्तथा।'' (साहित्यदर्पण)

'अब्दस्तु वत्सरे मेघे गिरिभेदे च पुस्तके।' (विश्व)

अब्दप (सं० त्रि०) अब्दं वत्सरं पाति, अब्द-पा-क : ज्योतिषोक्त वत्सराधिप, वर्षका राजा।

अव्य (वै० त्रि०) अवो भवं अवि दिगादि० यत्। मेषशरीरजात, भेड़के जिस्मसे पैदा। ''अव्यो वारै: परि-पूरित:।'' ऋक् ८।२।२।

अव्यक्त (सं० पु०) वि-अञ्ज-क्त, नञ्-तत्। १ विष्णु। 'विष्णावव्यजिताव्यक्तौ।' (अमर) २ कन्दर्प। ३ शिव। ४ सांख्यमतसे—सर्वकारण-प्रधान। ५ वेदान्तमें—अज्ञान। ६ सूक्ष्मशरीर। (क्ली०) ७ निराकार परमेश्वर। ८ प्रकृति। ९ आत्मा। (त्रि०) १० अस्पष्ट, छिपा हुआ। ११ मूर्ख, बेवक़ूफ़।

'अव्यक्तं प्रकृतावात्मन्यव्यक्तोऽस्फुटमूर्खयो:।' (हेम)

अव्यक्तक्रिया (सं० स्त्री०) बीजगणितकी क्रिया जिस तरीक़े से जब्रोमुक़ाबला लगे।

अव्यक्तगणित (सं० त्रि०) बीजगणित, जब्रो-मुक़ाबला।

अव्यक्तगति (सं० त्रि०) गुप्तरीतिसे गमन करने-वाला, जो चुपके-चुपके जाता हो।

अव्यक्तपद (सं० पु०) १ जिस पदका तालव्यादि स्थानों द्वारा स्पष्ट उच्चारण न हो सके, जैसे पशु पक्षियोंकी बोली। (त्रि०) २ उच्चारणशून्य, ग़ैरमलफ़ूज़ी।

अव्यक्तमार्ग, अव्यक्तवर्त्मन् देखो।

अव्यक्तमूर्ति (सं० त्रि०) गुप्त रूप रखनेवाला, जिसके शक्ल देख न पड़े।

अव्यक्तमूलप्रभव (सं० पु०) प्रभवत्यस्मात् प्र-भू अपादाने-अप् प्रभवः कारणं मूलञ्च तत् प्रभवश्चेति कर्मधा० ततः अव्यक्तं प्रधानं अविद्या वा मूलप्रभवो यस्य, बहुव्री०। संसार-वृक्ष, दुनियाका दरख़्त।

अव्यक्तराग (सं० पु०) न व्यक्तः स्पष्टप्रतीतः रागो रक्तिमा, नञ्-तत्। १ ईषद्रक्तवर्ण, जो रङ्ग कुछ लाल हो। २ अरुणवर्ण, लाल रङ्ग। 'अव्यक्तरागस्त्वरुणः।' (अमर) (त्रि०) अव्यक्तः रागो यस्य, बहुव्री०। ३ अरुणवर्ण विशिष्ट, सुर्ख़, लाल।

अव्यक्तराशि (सं० स्त्री०) बीजगणितमें—अज्ञात अङ्क वा अलक्षित परिमाण, नामालूम अदद या मिक़दार।

अव्यक्तलक्षण (सं० पु०) शिव, जिन महादेवकी बात मालूम न पड़े।

अव्यक्तलिङ्ग (सं० क्ली०) अव्यक्तस्य लिङ्गमनुमापकम्। १ सांख्यमतसिद्ध महत्तत्त्वादि। (त्रि०) अव्यक्तं लिङ्गं चिह्नं यस्य, बहुव्री०। २ अव्यक्तचिह्न, जिसके कोई निशान् मालूम न पड़े, अर्थात् जो पहिचाना न जाय। न व्यक्तं दाम्भिकत्वेन प्रकाशितं लिङ्गं यस्य, बहुव्री०। गुप्ताश्रमयुक्त, पोशीदा हालतमें रहनेवाला।

अव्यक्तवर्त्मन् (सं० त्रि०) गुप्तमार्गानुयायी, जिसकी चाल समझ न पड़े।

अव्यक्तवाक् (सं० त्रि०) स्पष्ट रीतिसे न बोलने-वाला, जो साफ़-साफ़ बात न कहता हो।

अव्यक्तव्यक्त, अव्यक्तलक्षण देखो।

अव्यक्तसाम्य (सं० क्ली०) बीजगणितके अनुसार अव्यक्त राशि या वर्णका समीकरण, जो मिलान जब्रोमुक़ाबलासे छिपी अददका हो।

अव्यक्ता (सं० स्त्री०) कृष्णा गोकर्णी, काली अप-राजिता।

अव्यक्तादि (सं० त्रि०) अलक्षित आरम्भविशिष्ट, जिसका आग़ाज़ समझ न पड़े।

अव्यक्तानुकरण (सं० पु०) शब्दका अस्फुट अनु-करण, आवाज़की ग़ैरमलफ़ूज़ी नक़ल। जैसे मनुष्य पपीहेकी बोली साफ बोल नहीं सकता, परन्तु उसकी नक़ल करके 'पिउ कहां' कहता है।

अव्यग्र (सं० त्रि०) १ ध्यानविशिष्ट, ख़याल रखनेवाला, जो इधर-उधर देखता न हो। २ स्थायी शान्त, सञ्जीदा, ठण्डा, जो डावांडोल न हो। ३ सन्तुष्ट, बेपरवा।

अव्यङ्ग (सं० स्त्री०) अवेरङ्ग शृङ्गमिवाङ्गं यस्याः, बहुव्री०। १ शूकशिम्बि, केवांच। (त्रि०) न विकलं अङ्गं यस्य। नञ्-बहुव्री०। २ विकलाङ्गभिन्न, पूर्ण, जो पूरे अङ्गोंसे युक्त हो। नञ्-तत्। ३ अव्यक्त, छिपा हुआ। ४ शाकद्वीपीय सौर ब्राह्मणका धारणीय पवित्रसूत्र भेद। २०० अङ्गुल उत्तम और १२० अङ्गुलका अव्यङ्ग मध्यम होता है। इसे पहन सूर्यको पूजा करनेसे अधिक पुण्य मिलता है। इसका सविशेष वर्णन भविष्यपुराणके ब्राह्मपर्वमें इस प्रकार लिखा है।

> "अव्यङ्गधारिणोमर्त्या पूजयन्ते दिवस्पतिम्।
> दृष्ट्वा व्यङ्गस्तुकैतेषां कौतूहलसमन्वितः॥
> सांबः प्राह नमस्कृत्य भूपः सत्यवतीसुतम्।
> कथं वरोऽयमव्यंगः कथितो मुनिसत्तम॥
> कुत एष समुत्पन्न कस्मात्र स शुचिः स्मृतः।
> बन्धनीय कदा चायं किमर्थं चैव धार्यते॥
> किंप्रमाणश्च भगवनव्यङ्गश्चायं किमुच्यते॥
>
> (भविष्यपु० ब्राह्मपर्व १४१ अ०)

एक समय भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजीके पौत्र साम्ब अव्यङ्गधारण किये, सूर्य भगवान्‌की पूजा करते हुए ब्राह्मणोंको देख, कौतूहलान्वित हो मुनिशार्दूल श्रीव्यासजीके समीपमें जा प्रणाम कर बोले,—हे मुनिसत्तम! यह अव्यङ्ग श्रेष्ठ क्यों है? इसकी उत्पत्ति किससे हुई है? क्यों यह एकान्त पवित्र ठहरता, एवं कब और किस वास्ते धारण किया जाता

तथा किस परिमाणका होता और अव्यङ्ग क्यों कहाता है? साम्बके इस प्रश्नको सुनकर महर्षि भगवान् व्यासने उत्तर दिया,—मैं अव्यङ्गका सविस्तर लक्षण कहता हूं, सुनो। देवता, ऋषि, नाग, गन्धर्व, अप्सरस्, यक्ष, राक्षस प्रभृति यह सबही देवता ऋतुक्रमसे भगवान् सूर्यके शरीरमें वास करते हैं। उनमें वासुकिने जहां वर्षमें एकबार सूर्योदय होता है, ऐसे अपने स्थानपर आ शीघ्र दिवाकरको नमस्कार करके गांगेयसे भूषित इषत्‌रक्तयुत शुभ्र 'अव्यङ्ग' सूर्यके प्रीत्यर्थ समर्पण किया। भगवान् प्रभाकरने भी उनको प्रसन्नताके लिये उक्त अव्यङ्गको अपने मध्य भागमें बांध लिया। यह नागराजके अङ्गसे उत्पन्न और भानु द्वारा धारण किया गया, अतएव सूर्यकी भक्ति रखनेवाले पुरुष सूर्यकी प्रसन्नताके लिये इसको धारण करते हैं। तत्त्वविधानसे भोजक शुचि होता है। इसके नित्य धारण करनेसे, सूर्य प्रसन्न होते हैं। सूर्योपासक जो भोजक इसे धारण नहीं करते, वे सौरहीन पूजाके अयोग्य एवं उच्छिष्ट समझे जाते और सूर्यको पूज नहीं सकते हैं। यदि हठात् वे सूर्य भगवान्‌को पूजते, तो रौरव नरकमें पड़ते हैं। यह जानकर अव्यङ्गके विना सूर्योपासक व्यक्ति न हंसे, न खड़ा हो, और न पूजा करे अर्थात् क्षणमात्रभी उसको अव्यङ्गहीन नहीं रहना चाहिये। यह एक वर्णका बनाया जाता है। २०० अङ्गुलका उत्तम, १२० अङ्गुलका मध्यम और १०८का ह्रस्व होता है,इससे अधिक ह्रस्व न रहना चाहिये। इसी आकृतिका 'अव्यङ्ग' विश्वकर्माने बनाया था। मध्यमावस्थामें भोजकोंके १०० अङ्गुलका भी हो सकता है। संस्कृत अर्थात् स्नान-संध्यादि शौचयुक्त भी इसके विना पवित्र नहीं होता, फिर इसके धारणसे उसी समय पवित्र हो जाता है। एवं हविर्होमादि उसकी सब क्रियायें शुभ हो जाती हैं। हे राजन् अव्यङ्ग, पतिताङ्ग, खार, इन नामोंसे पहचाने जाते हैं।

जन्द अवस्तामें अवयाङ्गको 'ऐवयाङ्गहनेम्' और पारसीमें 'कुश्ती' कहते हैं। यह एक प्रकारका सूत्र होता, जिससे पारसियोंके 'इजशन' नामक पूजनमें 'बारसम' या समिधा बांधना पड़ती है। इसे खजूरकी पत्तीसे तैयार करते हैं। काटनेसे पहले पुजारी खजूरकी पत्ती, पेड़ और अपनी छुरीपर सङ्कल्पका जल छिड़क देता है। 'अरवोसगाह' या यज्ञस्थलपर जलकुम्भमें डालकर लानेसे पत्ती लम्बी-लम्बी चीर कर धागे-जैसी धज्जी बनायी जाती है। फिर छः धज्जीको एक साथ तीन इस ओर और तीन उस ओर रख किसी सिरेपर गांठ लगा देते हैं। उसके बाद दाहनी ओरकी लच्छीसे एक त्रिपद् और बायीं ओरकी लच्छीसे दूसरा त्रिपद् जोरसे मरोड़ा जाता, जिसमें मिलाकर रखनेपर दोनों त्रिपद् मुड़कर एक सूत्रक बनता और फिर दूसरे सिरेपर गांठ लगानेसे दृढ़ हो जाता है। इस तरह तैयार होनेपर ऐव्यङ्गहनम्को कर्मकाण्डके लिये 'अरसमदान' पर रखते हैं।

भारतीय आर्य ब्राह्मण जिस प्रकार यज्ञोपवीत पहनते और विना उसके किसी कर्मकाण्डके अधिकारी नहीं होते, उसी प्रकार सौर ब्राह्मण सूर्यपूजा और पारसी भी अव्यङ्गके विना अग्निपूजा नहीं कर सकते।

अवयाङ्गाङ्ग (सं० त्रि०) सुचारुरूपनिर्मित, पूर्ण, सूडौल, समूचा, जिसके अङ्ग पूरा रहे।

अव्यङ्गाङ्गी (सं० स्त्री०) अव्यङ्गं सौष्ठवमङ्गं यस्याः, बहुव्री० अङ्गात् ङीप्। सर्वाङ्गसम्पन्न स्त्री, जिस स्त्रीके किसी अङ्गमें विकार न हो।

अवयाचस् (वै० त्रि०) अप्रशस्त, तङ्ग, जो लम्बा-चौड़ा न हो।

अव्यञ्जन (सं० क्ली०) नास्ति व्यञ्जनं शुभाशुभचिह्नं शृङ्गे यस्य नञ्-बहुव्री०। १ शृङ्गहीन पशु, सिंह व्याघ्रादि। (त्रि०) २ सुलक्षणशून्य, जिसके कोई शुभलक्षण न रहे। ३ चिह्नशून्य। ४ उपकरण शून्य।

अव्यण्डा (सं० स्त्री०) न विगतमण्डं वीजं यस्याः। १ शूकशिम्बि, केवाच। २ भूम्यामलकी, भुयिं आंवला।

अवयति (वै० स्त्री०) १ सन्तोष, आसूदगी, छकाछकी। २ अभिलाष, ख्वाहिश।

अव्यतिकर (सं० पु०) नञ्-तत्। १ संसर्गाभाव, संगतिका न रहना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ संसर्गशून्य, बेमेल।

अव्यतिकीर्ण (सं० त्रि०) वि-अति-कृ-क्त, नञ्-तत्। असङ्कीर्ण, भिन्न, जुदा, जो मिला न हो।

अव्यती (वै० स्त्री०) सपत्नीभिः सह पर्यायेण पतिमागच्छति सावयती वि-अत-ई औणादिकः। न तादृशी: अव्यती। जो स्त्री सपत्नी सहित पतिके पास जाती हो। "मे अव्यत्यं पृणामि।" ऋक् १०।८५।५।

अव्यथ (सं० पु०) न व्यथते बिभेति व्यथ कर्तरि अच्। १ सर्प। (स्त्री०) नास्ति व्यथा किमपि दुःखं यस्याः सेवनेन, नञ्-बहुव्री०। २ हरीतकी, हर। ३ सोंठ। ४ पद्मचारिणी वृक्ष। (त्रि०) ५ व्यथा-शून्य।

'अव्यथातु हरितक्यां पन्नगे निर्व्यथेपि च।' (विश्व)

'अव्यथातिचरा पद्मा चारटी पद्मचारिणी।' (अमर)

अव्यथमान (वै० त्रि०) अस्थायी भावसे गमन न करनेवाला, जो कांपता न हो।

अव्यथय (सं० पु०) न व्यथयन्ति अभि संग्रामेषु व्यथ (सर्वधातुभ्यो इन्। उण् ४।११७) इन्। अथवा व्यथिरिति क्रोध नाम, आरोहण-ताडन-बन्धनादिभिर्न क्रुध्यन्तीत्यर्थः, नञ्-तत्। १ घोड़ा। यह शब्द बहु वचनान्त है। 'असन्दे हार्थमेतदादीनि बहुवचनान्तानि नामानि।' (निरुक्त)

अव्यथा (सं० स्त्री०) न व्यथा नञ्-तत्। १ व्याथाका अभाव, बीमारीका न होना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ सोंठ। ३ हरीतकी, हर। ४ पद्मचारिणी वृक्ष। ५ आंवला। ६ गोरखमुण्डी।

अव्यथि (वै० त्रि०) न व्यथते क्लिश्यति व्यथ-इन्। १ व्यथाशून्य, जिसे पीड़ा न रहे। २ दुःखशून्य, जो दुःखी न हो। ३ दुःख न देनेवाला। (स्त्री०) ४ अश्व, घोड़ा। "समुद्रमव्यथिर्जगन्वान्।" ऋक् १।११६।१५।

अव्यथिषी (सं० स्त्री०) १ पृथिवी, ज़मीन्। २ रात्रि, रात।

अव्यथिन् (सं० त्रि०) न व्यथते व्यथ वा इन्। नञ्-तत्। १ निर्भय, बेखौफ। २ व्यथाशून्य, जिसे तकलीफ न रहे।

अव्यथिष (सं० पु०-स्त्री०) न व्यथते, व्यथ-टिषच्। १ सूर्य। २ समुद्र। 'अव्यथिषोऽब्धिसहस्रयोः।' (सिद्धान्तकौमुदी)

अव्यथिषी (सं० स्त्री०) १ पृथिवी, ज़मीन्। २ अर्धरात्र, आधीरात। 'अव्यथिषी धरारात्र्योः।' (सिद्धान्तकौमुदी)

अव्यथी (सं० पु०) अश्व, घोड़ा।

अव्यथ्य (सं० त्रि०) न व्यथ्यते, व्यथ कर्तरि यत् ततो नञ्-तत्। १ व्यथाशून्य, बेदर्द। २ दुःखित न होनेवाला, जो रञ्जीदा न हो।

अव्यथ्या (सं० स्त्री०) हरीतकी, हर।

अव्यधा (सं० स्त्री०) दुष्टशिरावेधन, ख़राब नसका चीरफाड़।

अव्यनत् (वै० त्रि०) श्वासप्रश्वासरहित, निर्जीव, सांस न लेनेवाला, बेदम।

अव्यपदेश्य (सं० त्रि०) न व्यपदिश्यते विशेषेणादिश्यते, वि-अप-दिश कर्मणि ण्यत् ततो नञ्-तत्। १ सङ्कल्प-वाक्यमें प्रयोग किया न जानेवाला, जो ठहराया जा न सकता हो। २ आदेश किया न जानेवाला, जिसे हुक्म दिया जा न सके। ३ अनिर्वचनीय, कहा न जा सकनेवाला। (क्लो०) ४ न्याय मतसिद्ध निर्विकल्प ज्ञान, जिस इल्ममें द्वितीयत्व न रहे। जाति गुण क्रियाका अन्य हेतुक निर्देश हो न सकनेसे परब्रह्मको भी अव्यपदेश्य कहते हैं।

अव्यपेक्षा (सं० स्त्री०) विशेषेण अपेक्षा व्यपेक्षा, ततः अभावे नञ्-तत्। १ किसी पदमें दूसरे पदके विशेष रूप सम्बन्धका अभाव, एक लफ्ज़से दूसरे लफ्ज़के मतलबका अलगाव। जैसे, 'राजाका गृह और परिच्छद'—यहां गृह और परिच्छदका राजासे सम्बन्ध है, किन्तु आपसमें दोनों अलग हैं। इसीसे गृह और परिच्छदमें अव्यपेक्षा आती है। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ अपेक्षाशून्य, बेनिस्बत, जो लगाव रखता न हो।

अव्यभिचरित (सं० त्रि०) नव्यभिचरितम्, नञ्-तत्। व्यभिचारशून्य, आवारगीसे ख़ाली। साध्यके अभावविशिष्ट पदार्थमें रहनेवालेको व्यभिचरित और साध्यके अभावविशिष्ट पदार्थमें न रहनेवालेको अव्यभिचरित हेतु कहते हैं। जिसमें धूम उसीमें अग्नि रहता है। अतएव जिस हेतु पर्वतमें धूम देखें, उसी हेतु पर्वतको अग्निविशिष्ट भी मानेंगे। इस जगह पर्वत पक्ष, अग्नि साध्य और धूम हेतु है। साध्यविशिष्ट पर्वतमें हो धूम रहता है। साध्यका

अनधिकरण जल इदादि उसमें नहीं होता। इसीसे पर्वतमें अग्नि अनुमानके लिये धूमको अव्यभिचरित हेतु कहते हैं। प्राचीन नैयायिक इसीको व्यभिचरित हेतु बताते हैं। 'धूमवान् वह्नि' वह्नि हेतु धूम विशिष्ट, अर्थात् यह नहीं, जहां वह्नि वहीं धूम भी रहता है। क्योंकि अग्निदग्ध लौहपिण्डमें अग्नि तो होता, किन्तु धूम देख नहीं पड़ता। इसीसे उसे व्यभिचरित हेतु कहते हैं। इङ्गलण्डीय पदार्थवित् पण्डितोंका मत है,—जहां अग्नि हो, वहां अल्प वा अधिक और सहज दृश्य वा अदृश्य धूम अवश्य ही रहेगा। धूमसे व्यतिरेक अग्नि ठहर नहीं सकता।

अव्यभिचार (सं० पु०) न व्यभिचारः, अभावे नञ्-तत्। व्यभिचारका अभाव, अन्यथाका अभाव, नैयत्य-रूप, पायदारी, हमेशगी।

अव्यभिचारिन् (सं० त्रि०) न व्यभिचरति; वि-अभि-चर-णिनि, नञ्-तत्। १ किसी भी प्रतिकूल हेतु द्वारा रोका न जा सकनेवाला, जो भूलता-भटकता न हो। २ किसी प्रकार असत् पथको अव-लम्बन न करनेवाला, जो किसी तरह बुरी राह जाता न हो। ३ न्यायमतसे—साध्य साधक व्याप्तिविशिष्ट हेतु। ४ किसी प्रकार बाधा न उठानेवाला, जो किसी तरह बिगड़ता न हो। ५ पुण्यात्मा, नेक, परहेजगार, भला।

अव्यभिचारी, अव्यभिचारिन् देखो।

अव्यय (सं० क्लो०) वि-इण् एरजित्यच् व्ययस्ततो नञ्-तत्। स्वरादि-निपातनमव्ययम्। पा १।१।३७। सकल विभक्ति और सकल वचनमें एकरूप शब्दवृत्ति धर्म, जो शब्द सब विभक्ति, वचन और लिङ्गमें एक ही तरह लगता हो। जैसे स्वर प्रातर इत्यादि।

"सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु।
वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्॥" (आथर्वण श्रुति)

(पु०) २ शिव। ३ विष्णु। ४ आद्यन्तरहित, परब्रह्म। (त्रि०) ५ विकारशून्य, जिसमें कोई फर्क न पड़े। ६ प्रवाहरूप सर्वत्र स्थित, सब जगह भरा रहनेवाला। ७ अव्ययफलदाता, मुराद पूरी करने-वाला। नञ्-बहुव्री०। ८ व्ययहीन, बेखर्च। ९ अवि-नश्वर, लाजवाल। (वै०) १० अविमय, भेड़से निकलने-वाला, जो भेड़के चमड़ेसे बना हो।

अव्ययत्व (सं० क्लो०) अनश्वरत्व, बरबाद न होनेकी हालत।

अव्ययवर्ग (सं० पु०) अव्ययका समूह, हमेशा एक जैसे रहनेवाले लफ्ज़ोंका ज़खीरा।

अव्यया (सं० स्त्री०) गोरक्षमुण्डी, गोरखमुंडी।

अव्ययात्मन् (सं० त्रि०) अव्यय आत्मा स्वभावो यस्य, बहुव्री०। अविनश्वर, लाज़वाल, जो बिगड़ता न हो।

अव्ययीभाव (सं० पु०) अनव्ययमव्ययं भवति भू कर्तरि घः तस्मिन् परे अव्यय-च्वि। व्याकरणसिद्ध समास विशेष। जिस विभक्ति प्रभृतिके अर्थमें अव्यय पदके समर्थके (आकाङ्क्षित पदके) सहित समास होता है, उसे ही अव्ययीभाव समास कहते हैं।

अव्ययीभावः। पा २।१।५। अधिकारोऽयम्। (सिद्धान्त कौ०) अव्यय-मित्यादि। पा २।१।६। विभक्ति, समीप, वृद्धि, अर्थाभाव, अत्यय, असंप्रति, शब्दप्रादुर्भाव, पश्चात्, यथानुपूर्व, यौग-पद्य, सादृश्य, सम्पत्ति, साकल्य, अन्त, इन सब अर्थों में अव्ययीभाव समास होता है। ऊपर लिखे हुए अर्थोंके व्यतीत असादृश्यादि अर्थोंमें भी अव्ययीभाव समास आता है। यथा—अपदिशम् इत्यादि।

अव्ययीभावश्च। पा १।१।४१। अव्ययीभावाश्रित पद भी अव्यय होता है। यथा,—'अधिहरि'। अव्ययीभावमें क्लीवलिङ्गके कार्य साधनके लिये क्लीवलिङ्ग भी लगता है। निद्रा सम्प्रति न युज्यते इति अतिनिद्रम्। नपुंसकलिङ्ग स्वीकार करनेसे ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य। पा १।२।४७। इस सूत्रद्वारा निद्राशब्दमें आकार ह्रस्व हुआ है। एवं 'दिशोर्मध्यमपदिशम्।' अयं नपुंसकं स्यात्। (सिद्धान्त कौ०) पा २।४।८४। क्लीबेऽव्ययन्त्वपदिशं दिशोर्मध्ये। (अमर) अकारान्त भिन्न अन्य अव्ययीभावको परस्थित विभक्ति-का लुक् होता है। अव्ययादाप्सुपः। पा २।४।८२। अव्ययके परस्थित आप् एवं सुप्का लुक् होता है। यहां आप् लुक्का विधान अनर्थक है। 'आप् ग्रहणं व्यर्थमलिङ्गत्वात्।' (सिद्धान्तकौमुदी) नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः। पा २।४।८३। अकारान्त अव्ययीभावको परस्थित पञ्चमी भिन्न

विभक्तिका लुक् नहीं होता। किन्तु उसके स्थानमें अम् आता है। यथा,—कृष्णस्य समीपम् उपकृष्णम्। यहां विभक्तिके स्थानमें अम् हो गया है। 'उपकृष्णात् गतः।' कृष्णके समीपसे चले गये हैं। यहां पञ्चमी विभक्तिका लुक् एवं उसके स्थानमें अम् भी नहीं हुआ। पञ्चम्यन्त अकारान्त शब्दका ही रूप हुआ है। तृतीयासप्तम्योर्बहुलम्। पा २।४।८४। अकारान्त अव्ययीभावको परस्थित तृतीया एवं सप्तमीका बहुलभाव अर्थात् तृतीया और सप्तमीके स्थानमें अम् होता, कभी तृतीयान्त अकारान्त शब्दका ही रूप धारण करता, और कभी नित्य अम् आता है। यथा—अपदिशम् अपदिशेन। अपदिशं अपदिशे। 'बहुलग्रहणात् सुमद्रसुन्मत्तगङ्गमित्यादौ नित्यमम्भावः।' (सिद्धान्त कौमुदी)

अव्ययेत (सं० पु०) यमकानुप्रासभेद। इसमें यमकाक्षरोंके बीच दूसरा पद नहीं पड़ता।

अव्यर्थ (सं० पु०) नञ्-तत्। १ सफल, मुफ़ीद, जो बेफ़ायदे न हो। २ सार्थक, बामानी, पुर-असर।

अव्यलीक (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। १ प्रिय, प्यारा, खुशगवार। २ सत्य, रास्त, सच्चा।

अव्यवधान (सं० क्ली०) नञ्-तत्। १ व्यवधानका अभाव, फ़र्क़की अदममौजूदगी। २ नैकट्य, क़ुर्ब, पड़ोस। (त्रि०) नास्ति व्यवधानं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ व्यवधानशून्य, आड़से खाली। ४ निकटस्थ, पासका।

अव्यवसाय (सं० पु०) निश्चय उद्यमश्च व्यवसायः। अभावे नञ्-तत्। १ निश्चयका अभाव, यक़ीनका न होना। २ उद्यमका अभाव, व्यवसायका न रहना। (त्रि०) नास्ति व्यवसायो यस्य। नञ्-बहुव्री०। ३ निश्चयशून्य, उद्यम रहित, आलसी।

अव्यवसायिन् (सं० त्रि०) न व्यवस्यति वि-अव-सो णिनि एच आत्वं युक् च, नञ्-तत्। १ उद्यमशून्य, निरुद्यमी। २ अनुद्यत, आलसी, पुरुषार्थहीन। ३ निश्चयशून्य।

अव्यवसायी, अव्यवसायिन् देखो।

अव्यवस्था (सं० स्त्री०) वि-अव-स्था अङ्-टाप्, ततो नञ्-तत्। १ कर्तव्याकर्तव्यकी नियमका अभाव, यह करना और यह न करना चाहिये जैसे विचारका न होना। २ शास्त्रादि-विरुद्ध व्यवस्था, अविधि। (त्रि०) नास्ति व्यवस्था यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ मर्यादाशून्य, बेक़ायदा। ४ अविहित। ५ स्थितिरहित, चञ्चल।

अव्यवस्थित (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ शास्त्रादि मर्यादारहित, बेमर्याद। २ अनियतरूप, बेठिकानेका। ३ अस्थिर, चञ्चल।

अव्यवहार्य्य (सं० त्रि०) वि-अव-हृ-ण्यत्, नञ्-तत्। जो व्यवहारके योग्य न हो। ब्रह्महत्यादि महापातक द्वारा कोई मनुष्य पतित होनेसे जब तक प्रायश्चित्त नहीं करता, तबतक अव्यवहार्य्य रहता है। ऐसी अवस्थामें उसका याजन, उसके साथ वेदपाठ और भोजनादि करना न चाहिये। किन्तु उस पतित व्यक्तिके प्रायश्चित्त करनेपर सपिण्ड ज्ञातिवाले उसके साथ पवित्र जलाशयमें स्नान करके जलपूर्ण नवीन घट प्रक्षेप और कुटुम्बवाले उसे ग्रहण करेंगे। फिर उसका याजन, उसके साथ वेदपाठ और पहलेकी तरह भोजनादि सब लोग कर सकेंगे। कोई कभी उसकी निन्दा न करेंगे। परन्तु विना प्रायश्चित्त किये उसके साथ व्यवहार करना उचित नहीं।

> "प्रायश्चित्ते तु चरिते पूर्णकुम्भमपां नवम्।
> तेनैव सार्द्धं प्रास्येयुः स्नात्वा पुण्ये जलाशये।" मनु ११।१८७।
> "एनस्विभिरनिर्णिक्तैर्नार्थं किञ्चित् सहाचरेत्।
> कृतनिर्णेजनांश्चैव न जुगुप्सेत कर्हिचित्॥" मनु ११।१९०।

प्रायश्चित्तके बाद व्यवहारके विषयमें याज्ञवल्क्यसंहितामें ऐसा प्रमाणवाक्य लिखा हुआ है,—

> "प्रायश्चित्तैरपैत्येनो यदज्ञानकृतं भवेत्।
> कामतो व्यवहार्य्यस्तु वचनादिह जायते।" याज्ञवल्क्य-संहिता ३।२२६।

विज्ञानेश्वरने इस श्लोककी ऐसी व्याख्या की है,—प्रायश्चित्त करनेसे अज्ञानकृत पाप दूर होता है, फिर ज्ञानकृत तथा कामकृत पापका उपयुक्त प्रायश्चित्त करनेसे दोषी मनुष्य इस संसारमें व्यवहारके योग्य हो जाता सही, परन्तु उसका पाप दूर नहीं होता। प्रायश्चित्तविधायक श्रुतिवचन द्वारा यही निश्चित हुआ है।

परन्तु शूलपाणिने 'कामतो व्यवहार्य्यस्तु' यहां 'व्यवहार्य्यस्तु'के पहले एक अकार प्रश्लेष कर 'अव्यवहार्य्य' पद ग्रहण किया है। इससे वे कहते हैं, कि प्रायश्चित्त करनेसे पाप चला जाता है, किन्तु अपराधी व्यक्ति समाजमें व्यवहारयोग्य नहीं होता। रघुनन्दन एवं भवदेवने भी शूलपाणिका ही मत ग्रहण किया है।

'कामतो व्यवहार्य्यस्तु'—वास्तवमें यहां अकार है कि नहीं, इसमें विषम सन्देह है। काशीके स्वर्गीय बालशास्त्री अद्वितीय पण्डित थे। उन जैसे धर्मशास्त्रप्रवीण व्यक्ति आजकल प्राय: देखनेमें नहीं आते। उनका कहना है, कि धर्मशास्त्र काव्य नहीं है। काव्यमें दो तीन प्रकारका अर्थ होनेसे कविकी गुणज्ञता प्रकट होती है। परन्तु धर्मशास्त्रमें दो अर्थ होनेसे महाविपद् है। अबतक किसी पुस्तकमें 'व्यवहार्य्यस्तु' के पूर्व लुप्त अकारका चिह्न नहीं देखा गया। अतएव 'अव्यवहार्य्य:' इस प्रकारका पद स्वीकार करना युक्तियुक्त नहीं है। इसके अतिरिक्त मनुसंहितामें महापातकादि जनित पतित व्यक्तिके प्रायश्चित्तके बाद व्यवहार्य्यके सम्बन्धमें जैसी व्यवस्था की गई है, उसके श्लोकोंको ठीक क्रमसे पढ़नेसे ऐसा निश्चित होता है,—किसी किसी पापमें प्रायश्चित्त करनेपर भी पतित व्यक्ति अव्यवहार्य्य होता है। इसीसे महात्मा बालशास्त्रीने ऐसी व्यवस्था दी थी, कि कोई ब्राह्मण ज्ञानकृत ब्रह्महत्या पापका अपराधी होनेसे (हमें स्मरण होता है, कि इन्दोर राज्यमें) वह प्रायश्चित्तके बाद समाजमें व्यवहार्य्य हो सकेगा। फलत: मिताक्षरा, मदनपारिजात, जिकन, नृसिंहप्रसाद, अपरार्क प्रभृति बहुमान्य प्राचीन मतानुसार महापातकादिके प्रायश्चित्तके बाद दोषी व्यक्ति समाजमें व्यवहार्य होता है। केवल जो मनुष्य बालक, स्त्री एवं शरणागतका प्राण नष्ट करता है, और उपकार करनेसे उपकारको नहीं मानता, वह प्रायश्चित करनेपर भी व्यवहार्य नहीं होता।

"बालघ्नांश्च कृतघ्नांश्च विशुद्धानपि धर्म्मत:।
शरणागतहन्तृंश्च स्त्रीहन्तृंश्च न संवसेत्।" मनु ११।१९१।

हमने काशी, मिथिला, गवालियर, काश्मीर, महाराष्ट्र, तैलङ्ग प्रभृति नाना स्थानोंके प्रसिद्ध प्रसिद्ध पण्डितोंके साथ परामर्श किया था; उन लोगोंने भी कहीं 'कामतो व्यवहार्यस्तु' इत्यादि वचनमें लुप्त अकार नहीं देखा। जयपुराधिपतिके पुस्तकालयमें चार सौ वर्षका हाथका लिखा हुआ एक पुराना पुस्तक है। उसमें भी 'व्यवहार्य:' पद ही देखनेमें आया। कलकत्तेमें स्वर्गीय तारानाथ तर्कवाचस्पति महाशयने जो धर्मशास्त्रसंग्रह पुस्तक छपवाया था, श्रीयुक्त भवानीचरण-वन्द्योपाध्यायने जो धर्मशास्त्र प्रकाशित किया था एवं बम्बई नगरमें जो याज्ञवल्क्यसंहिता प्रकाशित हुई थी, उनमेंसे किसीमें भी 'अव्यवहार्य:' पद गृहीत नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त याज्ञवल्क्यसंहिताकी चार पांच बहुमान्य टीकायें हैं। सभी टीकाकारोंने 'व्यवहार्य' पद ही रखकर व्याख्या की है। अतएव इस स्थलमें अकार प्रश्लेष करना कहांतक विवेचनासङ्गत है, सो नहीं कहा जाता।

इससे पहले मिशनरी लोगोंने यहांके कितने ही मनुष्योंको खृष्टान कर डाला था। हमारे देशमें ऐसी प्रथा प्रचलित है, यदि कोई हिन्दू एक बार यवन हो जाय, तो वह फिर समाजमें ग्रहण नहीं किया जाता। इसलिये बिना समझे एकबार खृष्टानी धर्म अवलम्बन करनेसे फिर समाजमें नहीं आ सकते। इस अनिष्टकरी प्रथाको रहित करनेके लिये स्वर्गीय महात्मा राजा-राधाकान्त देव बहादुरने बङ्गदेशके समस्त पण्डितोंको इकट्ठा किया था। भाटपाड़ाके सिवा नवद्वीप प्रभृति सभी स्थानोंके उस समय प्रसिद्ध प्रसिद्ध पण्डित सभामें उपस्थित थे। बहुत कुछ विचार करनेके बाद उन लोगोंने यही स्थिर किया, कोई हिन्दू खृष्टानी धर्म अवलम्बन करनेके बाद अभक्ष्यभक्षणादि दोषसे दूषित होनेपर यदि फिर अपने धर्ममें लौट जाना चाहे, तो चतुर्विंशति वार्षिकव्रतानुकल्प दानादिरूप प्रायश्चित्तके बाद समाजमें व्यवहारके योग्य हो सकता है। इस पण्डित समाजने 'कामतो व्यवहार्यस्तु' में अकार प्रश्लेष नहीं किया। वस्तुत: विचार करनेसे

शूलपाणिका अकार प्रक्षेप करना असङ्गत जान पड़ता है।

अव्यवहित (सं० त्रि०) वि-अव-धा-क्त, नञ्-तत्। व्यवधान रहित, लगा हुआ। जिन दो द्रव्योंके बीच कोई वस्तु नहीं होता, उन्हें अव्यवहित कहा जाता है।

अव्यवहृत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ व्यवहारसे बाहर, जो इस्तेमालमें न आया हो। २ भोगादि द्वारा दूषित, जो काममें लगनेसे बिगड़ा हो। ३ बोलचालसे बाहर, जो बोलनेमें न आता हो।

अव्यवाय (सं० पु०) अवकाशका अभाव, संयोग, वक़फ़ेकी अदममौजूदगी, विसाल, फ़ुरसतका न मिलना, लगे रहनेकी हालत।

अव्यसन (सं० क्लो०) न व्यसनम्, नञ्-तत्। १ व्यसनाभाव, बुरी आदतकी अदममौजूदगी, अच्छी चाल। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ व्यसनरहित, बुरी आदत न रखनेवाला, परहेज़गार, अच्छा, भला, जो बुरा काम करता न हो।

अव्यसनिन् (सं० त्रि०) नञ्-तत्। व्यसनशून्य, बे ऐब, भला। (स्त्री०) अव्यसनिनी।

अव्यस्त (सं० त्रि०) न व्यस्तं विक्षिप्तं विपर्यस्तं पृथग्भूतं वा, नञ्-तत्। १ अविक्षिप्त, जो घबराया न हो। २ अविपर्यस्त, जो बिखरा न हो। ३ समस्त, समूचा, जो टूटा-फूटा, सड़ा-गला या बिगड़ा-बिगड़ाया न हो। ४ अपृथग्भूत, मिला हुआ, जो अलग न हो।

अव्याकुल (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ निराकुल, जो घबराया न हो। २ स्वच्छन्द, आज़ाद, जो बंधा न हो। ३ स्वस्थ, तन्दुरुस्त।

अव्याकृत (सं० त्रि०) वि आ-कृ-क्त, नञ्-तत्। १ अप्रकाशित, जो ज़ाहिर न हो। (क्लो०) २ वेदान्त मतसे—अप्रकटीभूत एवं बीजरूप जगत्का कारण। ३ अज्ञान, नादानी। ४ सांख्यादि मतसे—प्रधान, मुख्य वस्तु।

अव्याख्या (सं० स्त्री०) व्याख्याका अभाव, वर्णनकी स्वच्छताका अभाव, गोपन, बयानकी सफ़ाईका न होना, पोशीदगी।

अव्याख्यात (सं० त्रि०) व्याख्यारहित, गुप्त, बे-बयान्, पोशीदा, जो खोलकर बताया न गया हो।

अव्याख्यान (सं० क्लो०) अव्याख्या देखो।

अव्याख्येय (सं० त्रि०) १ व्याख्याके अयोग्य, बेबयान्, जिसे कोई समझ न सके। २ व्याख्याकी आवश्यकता न रखनेवाला, सरल, आसान्, जिसके बयान् करनेकी ज़रूरत न पड़े।

अव्याघात (सं० त्रि०) १ व्याघातरहित, रोका न जानेवाला। २ समूचा, भरा हुआ, लगातार, जो टूटा-फूटा न हो।

अव्याज (सं० पु० क्लो०) न व्याजम्, अभावे नञ्-तत्। १ छलका अभाव, धोकेकी अदममौजूदगी। "इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः।" (शकुन्तला) २ शाठ्यका अभाव, बदमाशीकी अदममौजूदगी।

अव्यापक (सं० त्रि०) व्याप्नोति ण्वुल्, ततो नञ्-तत्। १ व्यापक न होनेवाला, जो मामूर न हो। २ परिच्छिन्न, घिरा हुआ। ३ इयत्ता-विशिष्ट, महदूद।

अव्यापकता (सं० स्त्री०) अव्यापकत्व देखो।

अव्यापकत्व (सं० क्लो०) १ व्यापक न होनेका विषय, मामूर न होनेकी बात।

अव्यापन्न (सं० त्रि०) जीवित, ज़िन्दा, जो मरा न हो।

अव्यापार (सं० पु०) न व्यापारः, अभावे नञ्-तत्। १ व्यापारका अभाव, कामकी अदममौजूदगी, बेकारी। २ अकार्य, जो अपना काम न हो। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ व्यापारशून्य, बेकाम। व्यापार देखो।

अव्यापारी (सं० पु०) १ उद्यमरहित, बेकाम। २ सांख्यमतमें—क्रियाजनक संयोगसे रहित, जो काम कर न सकता हो।

अव्यापिता (सं० स्त्री०) अव्यापकत्व देखो।

अव्यापित्व (सं० क्लो०) अव्यापकत्व देखो।

अव्यापिन् (सं० त्रि०) न व्याप्नोति, वि आप-णिनि, नञ्-तत्। १ अव्यापक, जो समाया न हो। २ परिच्छिन्न, घिरा हुआ। ३ इयत्ताविशिष्ट, छोटा मोटा।

अव्यापी, अव्यापिन् देखो।

अव्याप्त (सं० त्रि०) न व्याप्तम्, नञ्-तत्। परिछिन्न, महदूद, जो समाया न हो।

अव्याप्ति (सं० स्त्री०) न व्याप्तिः, अभावे नञ्-तत्। व्याप्तिका अभाव, मामूर न होनेकी बात। व्याप्ति देखो।

अव्याप्य (सं० त्रि०) १ व्याप्य न होनेवाला, जिसमें घुस न सकें। २ संपूर्ण विषयसे पृथक्, जो हर हालमें लग न सके। ३ अद्भुत, निराला, खास। (अव्य०) ४ व्याप्त न होके, बेघुसे।

अव्याप्यवृत्ति (सं० त्रि०) अव्याप्य सर्व्वावच्छेदमव्याप्य वृत्तिः स्थितिर्यस्य, बहुव्री०। अव्याप्य वर्त्तते इत्यव्याप्य वृत्तिः (न्यायभाष्य)। निज अधिकरणके अंश विशेष वा काल विशेषमें अस्थित पदार्थ, जो पदार्थ अधिकरणादिमें व्यापक न रहता हो। जैसे घट और उसका संयोग गृहके सब स्थानमें वैसे ही आत्मामें ज्ञान भी सर्व्वदा भरा नहीं रहता। अतएव स्वाधिकरणमें अंशभेद और कालभेदसे ही संयोगादि रहते हैं, इसीसे उसका नाम अव्याप्यवृत्ति है। एवं वृक्षके आगे कपिसंयोग है, किन्तु मूलमें नहीं,—इसे दैशिक अव्याप्यवृत्ति कहते हैं। आत्मामें इस समय सुखादि हैं, परन्तु दूसरे समय नहीं रहते—यह भी अव्याप्यवृत्ति कहा जाता है।

अतएव देश और काल व्याप्यवृत्तिके नियामक हैं। उनमें देशमें रहनेसे देश, वा कभी काल भी उसका अवच्छेदक होता है, जैसे गोष्ठमें इस समय गो हैं; यहां गोष्ठ और समय ये दोनों ही गो अवस्थिति संयोगके नियामक होते हैं। एवं इस समय आत्मामें सुखादि हैं, यहां कालस्थित पदार्थ जो सुखादि हैं, उनका नियामक आत्मारूप देश हुआ। इसीसे संयोग विभागादिरूप जो अव्याप्यवृत्ति है, वह दैशिक और कालिक है। उसी तरह आत्मामें सुख दुःख इच्छा द्वेष यत्न धर्म अधर्म भावनाख्य संस्कार देशावच्छेदमें रहनेपर भी घटावच्छेदमें नहीं रहते एवं आत्मामें भी सर्व्वदा नहीं रहते, इसलिये वे अव्याप्यवृत्ति हैं, एवं शब्द जिस देश और जिस कालमें रहता, वही देश और वही काल उस शब्दका नियामक होता है। गन्धादि भी कालिक अव्याप्यवृत्ति हैं। वे स्वाधिकरणमें ही उत्पत्तिकालमें नहीं रहते। नैयायिक लोग कहते हैं, कि घटादिके उत्पत्तिकालमें गन्धादि नहीं रहता। उसके बाद उसकी उत्पत्ति होती है। फिर वही गन्धादि प्रलयपर परमात्मामें भी नहीं रहता। अतएव वह अव्याप्यवृत्ति है। संयोग सम्बन्धसे घटादि भी उसीतरह दैशिक एवं कालिक अव्याप्यवृत्ति है।

अव्यायत (सं० त्रि०) अनधिकृत, टिका हुआ, जो छीना न गया हो।

अव्यायाम (सं० पु०) न व्यायामः, नञ्-तत्। १ व्यायामका अभाव, कसरतकी अदममौजूदगी। २ विशेषरूप विस्तारका अभाव, बड़े फैलावका न रहना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ परिश्रमादि व्यापारशून्य, कसरत वगैरहके कामसे खाली।

अव्यावर्तक (सं० त्रि०) न व्यावर्तयति इतरेभ्यो निवारयति; वि-आ-वृत-णिच्-ण्वुल्, णिच् लोपः, ततो नञ्-तत्। १ अकृतनिवारण, निवारण न करनेवाला, जो रुकता न हो। २ अन्यसे भेद न करनेवाला, जो सबको बराबर समझता हो।

अव्यावर्तन (सं० क्ली०) वि-आ-वृत-णिच्-ल्युट्, लोपः ततो नञ्-तत्। १ अन्यको निवारणका न करना, दूसरेको न रोकना। २ प्रत्यावर्तनका अभाव, वापस न आनेकी हालत। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ व्यावृत्तिशून्य, अन्यके निवारणसे शून्य, वापस न आनेवाला, जिसे कोई न रोके।

अव्यावृत (सं० त्रि०) १ संयुक्त, लगा हुआ। २ जैसेका तैसा, जो उलटा-सुलटा न हो।

अव्याहत (सं० क्ली०) न व्याहतम्, नञ्-तत्। १ व्याघातका अभाव, रोकका न लगना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ व्याघातशून्य, बेरोक। व्याहतं मिथ्यार्थकं तन्न भवति। ३ सत्यविशिष्ट, सच्चा, जो झूठा न हो। ४ नूतन, नया। ५ हताश न होनेवाला, जो नाउम्मेद न रहे।

अव्याहतत्व (सं० क्ली०) अव्याहतस्य भावः त्व।

१ व्याघातका अभाव, रोकका न पड़ना। २ वाग्गुण विशेष, किसी क़िस्मकी ज़बान्दानी।

अव्याहारिन् (सं० त्रि०) उच्चारण न करनेवाला, जो बोलता न हो।

अव्याहित (सं० त्रि०) निर्द्वन्द्व, निर्विवाद, बेझगड़ा, जिसपे कोई झगड़ा न उठे।

अव्युच्छिन्न (सं० त्रि०) अव्याहत, बेरोक।

अव्युत्थिति (सं० स्त्री०) न विशेषेण उत्थितिः नञ्-तत्। १ उत्थिका अभाव, न उठनेकी बात। २ वाक्यका गुण विशेष।

अव्युत्पन्न (सं० त्रि०) न व्युत्पन्नम्, नञ्-तत्। १ अनभिज्ञ, अनुभवशून्य। २ शब्दके पदका अर्थ न समझनेवाला, जिसे जुमलेका मतलब समझ न पड़े। ३ अवैयाकरण, व्याकरणन जाननेवाला। ४ व्युत्पत्ति वा सिद्धिशून्य, जो बन-चुन सकता न हो।

अव्युष्ट (वै० त्रि०) प्रत्यूषके सदृश न चमकनेवाला, जो तड़केकी तरह रौशन् न हो।

अव्यृद्धि (वै० स्त्री०) सफलता, कामयाबी, न चूकनेकी हालत।

अव्येष्यत् (वै० त्रि०) अन्तर्धान न होनेवाला, जो गुम पड़ता न हो।

अव्रण (सं० त्रि०) नास्ति व्रणो यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ व्रणशून्य, बेदाग़। २ क्षतादि रहित, बेज़ख़्म।

अव्रणशुक्र (सं० पु०) नेत्रके कृष्णभागका रोगविशेष, जो बीमारी आंखकी स्याहीमें हो। यह अभिष्यन्दन, ज्वालायुक्त, शङ्खेन्दुकुन्दसदृश वर्ण, नभस्थ तनुमेघाकृति और सुसाध्य होता है। (सुश्रुत)

अव्रत (सं० त्रि०) नास्ति व्रतं नियमो यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ शास्त्रविहित नियमशून्य, मज़हबी काम न करनेवाला। २ न्यायशून्य, उद्धत, पापी, बेक़ायदा, नाफ़रमान्बरदार, बुरा। (पु०) ३ जैनमतसे व्रतका त्याग। यह पांच प्रकारसे होता है,—हत्या, असत्य भाषण, अदत्तदान, ब्रह्मचर्यत्याग और परिग्रह।

अव्रत्य (वै० त्रि०) व्रताय हितं यत्, नञ्-तत्। १ व्रतकालमें अनाचरणीय, जो व्रतमें किया न जाता हो। (क्ली०) २ [illegible]

अब्रह्मण्य (वै० क्ली०) ब्रह्मणि वेदे साधु माध्वर्थे यत् ब्रह्मण्यं वेदसिद्धं कर्म मा हिंस्यात् सर्वा भूतानीतिश्रुतेः सर्वभूत हिंसाभावरूपं तत्सदृशम्, सादृश्ये नञ्-तत्। वाध्यविषयकी अवध्योक्ति, तमाशेमें न मारनेकी बात। 'अब्रह्मण्यमवध्योक्तौ।' (अमर)

"अब्रह्मण्यमब्रह्मण्यम्।" (शकुन्तला)

अव्राजिन् (सं० त्रि०) साधुवत् भ्रमण न करनेवाला, जो फ़क़ीरकी तरह घूमता न हो।

अव्रात्य (वै० पु०) व्रात्य न होनेवाला पुरुष, जो षोड़शसंस्कारसे युक्त हो।

अव्वल (अ० वि०) प्रथम, पहला, जो सबसे आगे हो। २ श्रेष्ठ, बड़ा, सबसे अच्छा। (पु०) ३ प्रारम्भ, आग़ाज़, शुरू।

अव्वलन (अ० क्रि० वि०) प्रथमतः, पहले-पहल, सबसे आगे।

अशकुन (सं० क्ली०-पु०) न शकुनम्, अप्राशस्त्ये नञ्-तत्। दुर्निमित्त, अनिष्टसूचक काकादि दर्शन, फ़ाल-बद, बुरा शिगून्। यह दो प्रकारका होता है, साधारण और असाधारण। इसमें उल्कापातादि साधारण और काकादि दर्शन असाधारण है। हमारे देशमें कहीं जाते या कोई कार्य आरम्भ करते समय छींक होना, खाली घड़ेका देखना आदि अशकुन, फिर भरे घड़े मिलना, बाज़ारसे सौदा लिये आदमीका आना आदि शकुन समझा जाता है।

अशकुम्भी (सं० स्त्री०) अश्नाति आशु सर्वतो व्याप्नोति, अश-अच्-टाप् अशा; कुम्भयति जलमाच्छादयति, कुम्भ चुरा० णिच् अच् णिच् लोपः गौरादि० ङीप् कुम्भी; अशा चासौ कुम्भी चेति विशेषणयो कर्मधा; पूर्वपदस्य पुंवद्भावः। पानीयोपरिज वृक्ष, जलकुम्भी, ताकापाना।

अशक्त ((सं० त्रि०) अयोग्य, अक्षम, नाक़ाबिल, नामुमकिन, ताक़त न रखनेवाला।

अशक्तता (सं० स्त्री०) अशक्तत्व देखो।

अशक्तत्व (सं० क्ली०) अयोग्यता, अक्षमता, निर्बलता, असमर्थता, कमज़ोरी नाक़ाबिलियत, ताक़त न रखनेकी हालत।

अशक्ति (सं० स्त्री०) अयोग्यता, निर्बलता, नपुंसकता, नाक़ाबिलियत, कमज़ोरी, नामर्दी। सांख्यमतसे—बुद्धि एवं इन्द्रियके विपर्यय अर्थात् नाकाम हो जानेको भी अशक्ति कहते हैं। यह अशक्ति अट्ठायास प्रकारकी होती है,—ग्यारह इन्द्रिय और सत्रह बुद्धिकी। बुद्धिकी सत्रह अशक्तिमें नव तुष्टि और आठ सिद्धिकी अशक्ति आती है।

अशक्य (सं० त्रि०) न शक्यम्, शक-यत्, नञ्-तत्। १ असाध्य, असम्भव, ग़ैरमुमकिन, जो बन न सकता हो। २ अकरणीय, किया न जानेवाला। (पु०) ३ काव्यालङ्कार विशेष। इसमें बाधा वश किसी कार्यके हो न सकनेका भाव देखाते हैं।

अशक्यार्थ (सं० त्रि०) निष्प्रयोजन, प्रभावशून्य, बेफ़ायदा, बेतासीर, लाहासिल, जिससे काम न बने।

अशग—शान्तिपुराण रचयिता प्राचीन संस्कृत कवि।

अशङ्क (सं० त्रि०) १ निर्भय, निर्द्वन्द्व, बेख़ौफ़, जिसे कोई डर न रहे। २ रक्षित, निश्चित, महफ़ूज़, पक्का।

"निपट निरङ्कुश अवध अशङ्क।" (तुलसी)

अशङ्का (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ संशयका अभाव, शकको अदममौजूदगी। २ भयका अभाव, ख़ौफ़की अदममौजूदगी।

अशङ्कित (सं० त्रि०) शकि-क्त, नञ्-तत्। १ अभीत, ख़ौफ़ न खाये हुआ। २ सन्देहरहित, बेशक, पक्का।

अशठ (सं० त्रि०) पुण्यात्मा, नेक, भला, जो बुरा न हो।

अशत्रु (सं० पु०) न शत्रुः कर्मणि, नञ्-तत्। १ चन्द्र। २ मित्र, दोस्त। ३ युधिष्ठिर। (त्रि०) नास्ति शत्रुर्यस्य, नञ्-बहुव्री०। शत्रुरहित, बेदुश्मन्, जिसे किसीसे दुश्मनी न रहे।

अशन् (वै० पु०) १ फेंककर मारनेका पत्थर। २ मेघ, बादल।

अशन (सं० क्ली०) अश्-ल्युट्। (पु०) अश्-ल्यु। १ पीतशाल वृक्ष। साधारण बोलचालमें इसे आसनका पेड़ कहते हैं। असन जैसा दन्त्य सकारका भी प्रयोग होता है। २ व्याप्ति। ३ भोजन। कर्मणि-ल्युट्। ४ भोज्य। (क्लो०) ५ अन्न।

स्थान विशेषसे अनेक प्रकारके वृक्ष अशन वा आसन नामसे प्रसिद्ध हैं। यथा—(Pterocarpus Marsupium) इसका मारवाड़ी नाम आसन है। हिन्दीमें सज और उड़िया भाषामें इसे पियासाल कहते हैं। इसका पेड़ बहुत बड़ा होता है। संयुक्तप्रदेशमें बांदा प्रभृतिसे उत्तर यह बहुत पैदा होता है। ऊपरकी लकड़ी भूरी, काले दाग़ वाली, अत्यन्त कठिन और स्थायी होती है। पक्की आसनकी लकड़ीमें पालिश अच्छी लगती है। इसके भीतरकी लकड़ीमें लाल दूध रहता, लकड़ी भीग जाने वा कच्ची रहनेपर उसमें पीला दाग पड़ जाता है। इसकी लकड़ीके दरवाजे, खिड़कियां, कड़ियां, नौकायें, गाड़ियां आदि बनती हैं। रेलगाड़ीके स्लिपर बनानेमें यह बहुत काम आता है।

(Terminalia tomentosa) इसे हिन्दीमें आसन कहते हैं। इसका बंगला नाम भी आसन वा पियासाल है। पञ्जाब, दक्षिण भारतवर्ष और ब्रह्मदेशमें यह बहुत उत्पन्न होता है। इसके ऊपरकी लकड़ी कुछ सफेद और लाल होती एवं भीतरकी लकड़ी भूरी कृष्णवर्ण, कठिन, और लहरदार रेखा सहित रहती है। इसकी पक्की हुई लकड़ीमें पालिश अच्छी मालूम देती है। सब लोग इसे 'काला आसन' कहते हैं।

(Populus ciliata) इसका पञ्जाबी नाम सफेदा, आसन इत्यादि है। शिमला पहाड़पर इसे बेलुन और नेपाली 'बक्लीकाठ' कहते हैं। इसका पेड़ बड़ा होता है। लकड़ी धूसर वर्ण, उज्ज्वल और कोमल होती है।

(Briedelia retusa) इसका भी मारवाड़ी नाम आसन है। पञ्जाबमें इसे पाथर कहते हैं। अवध, वङ्गदेश, दक्षिण भारत एवं ब्रह्मदेशमें यह बहुत पैदा होता है। इसकी लकड़ी धूसर रंगकी होती और उसमें पालिश अच्छी लगती है।

अशनक, असनक (सं० पु०) असन पुष्पाकार धान्य विशेष, असनके फूल-जैसा धान।

अशनकृत् (वै० त्रि०) भोजन बनाते हुआ, जो खाना पका रहा हो।

अशनपति (वै० पु०) भोजनका प्रभु, खुराकका मालिक।

अशनपर्णी (सं० स्त्री०) अशनस्य पीतसालस्य पर्णमिव पर्णमस्याः; बहुव्री० पर्णान्तजातित्वात् ङीप्। १ विजयसार। २ गोकर्णीलता, अपराजिता।

अशनपुष्प (सं० पु०) अशनपुष्पाकार शालि, असनाके फूल-जैसा धान।

अशनमल्लिका (सं० स्त्री०) आस्फोता, सामान्य अपराजिता।

अशनवत् (वै० त्रि०) भोजन रखनेवाला, जिसके पास खुराक रहे।

अशना (सं० स्त्री०) असनमिच्छति; अशन इच्छार्थे क्यच् पृषो० अशनायः, ततः क्विपः सर्वाभावः अकार पकारयोर्लोपश्च। १ भोजनेच्छा, खानेकी ख़ाहिश। २ शुक्ल निष्पावा, सफेद सेम।

अशनाया (सं० स्त्री०) अशनमिच्छति, अशन इच्छार्थे क्यच् पृषो० अशनाय; ततः अ-टाप्। १ भोजनेच्छा, खानेकी ख़ाहिश। "च्युताशनायः फलवद्विभूत्या।" (भट्टि) २ शुक्लनिष्पावा, सफेद सेम।

अशनायित (सं० त्रि०) अशनमिच्छति; अशन-क्यच् पृषो० अशनाय, कर्तरि क्त इट् अतो लोपः। १ भोजनेच्छायुक्त, खानेकी ख़ाहिश रखनेवाला। २ क्षुधित, भूखा। (क्ली०) भावे क्त। ३ भोजनेच्छा, खानेकी ख़ाहिश, भूख।

अशनायुक (सं० त्रि०) अशनं भोक्तुमिच्छां याति प्राप्नोति, अशनाया-कु अकारलोपः ततः स्वार्थे कन्। भोजनेच्छायुक्त, खानेका ख़ाहिशमन्द।

अशनि (सं० पु० स्त्री०) अश्नुते व्याप्नोति तेजसा विश्वम्, अश् व्याप्तौ अनि। १ मेघोत्पन्न तेज, बादलसे निकली चमक। २ इन्द्र। ३ अनुयाज, अन्तिम यज्ञ। ४ इन्द्रका अस्त्र। ५ उल्का विशेष। ६ विद्युत्। ७ अग्नि। ८ विद्युदग्नि। ९ हीरक, हीरा

'अशनिः स्त्रीपुंसयोः स्यादचलायां पवावपि।' (मनोरमा)

भागवतके षष्ठस्कन्धमें लिखा है,—इन्द्रने वृत्तासुरको मारनेके लिये दधीचि मुनिका अस्थि लेकर विश्वकर्मासे अशनि बनवाया था।

अशनिप्रभ (सं० पु०) राक्षस विशेष, किसी आदमखोरका नाम।

अशनिमत् (वै० त्रि०) विद्युत् फेंकनेवाला, जो बिजलीसे भरा हो।

अशनीय (सं० त्रि०) अशनके योग्य, भोजनके उपयुक्त, खाने लायक़।

अशपत् (वै० त्रि०) शाप न देते हुआ, जो कोस न रहा हो।

अशब्द (सं० पु०) नञ्-तत्। १ शब्दभिन्न अर्थ, लफ़्ज़से जुदा मानी। २ वाच्य, बोली ठोली। (त्रि०) नास्ति शब्दो वेदादौ वाचकशब्दो वा यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ शब्दहीन, आवाज़से खाली।

अशम् (वै० अव्य०) अकुशलतासे, बेखैरवाफ़ियत, नुक़सान्में।

अशम (सं० पु०) अदमन, अशान्ति, भड़क, जोश ख़रोश, बेक़रारी।

अशम्भु (सं० पु०) अशुभ, अमङ्गल, बुराई।

अशरण (सं० त्रि०) शरणशून्य, बेपनाह, जिसके कोई बचाव न रहे।

अशरफी (फा० स्त्री०) १ मोहर, सावरिन, गिनी। यह सिक्का सोनेका बनता था। २ पुष्पविशेष, गुल-अशरफ़ी। यह पीला होता है।

अशराफ़ (अ० वि०) भद्र, भला, शरीफ़, जो बदमाश न हो।

अशरीर (सं० त्रि०) नास्ति शरीरं तदभिमानो वा यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ देहशून्य, गैरमुजस्सिम, जो जिस्म न रखता हो। (पु०) २ परमात्मा। ३ शरीरका अभिमान न रखनेवाले जीवन्मुक्त शुक-नारदादि। ४ मीमांसोक्त देवमात्र। ५ कामदेव।

अशरीरत्व (सं० क्ली०) शरीरस्य भावः त्व। १ शरीर-सम्बन्ध-राहित्य, जिस्मके ताल्लुकका न रहना। २ मोक्ष, जीने-मरनेसे छुटकारा।

अशरीरिन् (सं० त्रि०) देहशून्य, गैरमुजस्सिम, जिसके जिस्म न रहे।

अशर्म, अशर्मन् देखो।

अशर्मन् (सं० क्ली०) विरोधे नञ्-तत्। १ असुख, दुःख, दर्द, तकलीफ़। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ सुखशून्य, दुःखी, कमबख्त, तकलीफ़ पानेवाला।

अशस् (वै० त्रि०) आशीर्वाद न देनेवाला, अशुभचिन्तक, प्रशंसा न करनेवाला, बदख़ाह, बददुवा देनेवाला, जो तारीफ़ करता न हो।

अशस्त (वै० त्रि०) अशुभ, ख़राब, जो अच्छा न हो।

अशस्तवार (वै० त्रि०) १ अवर्णनीय कोषसे सम्पन्न, जिसके पास बयान्से बाहर ख़ज़ाना रहे। २ स्वेच्छासे धन देनेवाला, जो बेमांगे दौलत बख़्शता हो।

अशस्ति (वै० स्त्री०) १ शाप, बददुवा। २ शाप देनेवाली, जो बददुवा देती हो।

अशस्तिहन् (वै० त्रि०) शाप छोड़नेवाला, जो बददुवाको रद कर देता हो।

अशस्त्र (सं० त्रि०) शस्त्ररहित, बेहथियार, जो तलवार वग़ैरह न बांधे हो।

अशाका, अशाखा देखो।

अशाखा (सं० स्त्री०) नास्ति शाखा यस्याः, नञ्-बहुव्री०। १ शूलीतृण, सोला घास। २ शाखाशून्य लता, जिस बेलमें डालें न रहें। नारियल, ताड़ और खजूरको अशाखा कह सकते हैं।

अशान्त (सं० त्रि०) न शान्तम्, विरोधे नञ्-तत्। १ दुरन्त, असन्तुष्ट, वन्य, भयङ्कर, नाखुश, ख़ूख़ार, जङ्गली, ख़ौफ़नाक, जो ठण्डा न हो। २ अविरत, सन्देहयुक्त, बेचैन, फ़िक्रमन्द, जो घबरा रहा हो। ३ अधार्मिक, बेमज़हब, जो पवित्र न हो।

अशान्तता (सं० स्त्री०) शान्त न होनेका भाव, शमताराहित्य, जोश ख़रोश, भड़भड़ियापन।

अशान्ति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ शान्तिका अभाव, चञ्चलता। २ शमताका अभाव, अस्थिरता, हलचल। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ शमताशून्य, जल्दबाज़।

अशालीन (सं० त्रि०) प्रगल्भ, ढीठ, निर्भय।

अशालीनता (सं० स्त्री०) धृष्टता, ढिठाई।

अशाश्वत (सं० त्रि०) न शाश्वतं नञ्-तत्। १ अनित्य, उत्पत्तिविनाशशाली, पैदा और नाश होनेवाला। २ अस्थिर, हरवक़्त न ठहरनेवाला।

अशासन (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ शासनका अभाव, हुकूमरानीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ शासनशून्य।

अशासावेदनीय (सं० पु०) जैनशास्त्रानुसार कर्मविशेष। इसके प्रादुर्भावसे दुःखका अनुभव होता है।

अशास्य (सं० त्रि०) शास-बाहुल० ण्यत् नञ्-तत्। शासन करनेके अशक्य, जिसको किसी प्रकार शासन किया न जा सके।

अशिक्षित (सं० त्रि०) न शिक्षितम्, विरोधे नञ्-तत्। १ शिक्षाशून्य, जो शिक्षा न पाया हो, बेपढ़ा-लिखा। २ अविनीत, अभद्र, अनाड़ी, गंवार, मूर्ख, बेवक़ूफ़। ३ गति नैपुण्यहीन, जो अच्छी चाल न चलता हो।

अशित (सं० त्रि०) अश-कर्मणि-क्त। १ भक्षित, खाया हुआ। कर्तरि-क्त। २ भोजनसे तृप्त, आसूदा। भावे क्तः (क्ली०) ३ भक्षण, खाना।

अशित्र (सं० पु०) अश संहतौ (अशित्रादिभ्य इत्रोत्रौ। उण् ४।१७२) इति इत्र। चौर, चोर। अश्यते देवैर्भक्ष्यते, अश भोजने कर्मणि इत्र। देवभक्ष्यचरु, देवताके खाने योग्य खीर।

अशिथिल (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। जो शिथिल न हो, दृढ़, फ़ुरतीला।

अशिपद (वै० त्रि०) न श्लीपदः पादरोगभेदः, वेदे पृषो० ल लोपः। नञ्-तत्। १ श्लीपदरोगका अभाव, फ़ीलपावे बीमारीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति श्लीपदो रोगो यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ श्लीपदरोगशून्य, जिसके फ़ीलपावा न रहे। "अशिपदाः भवन्तु।" ऋक् १।५०।८।

अशिमिद (सं० त्रि०) शिमि वधकर्मा शिमिं हिंसां ददाति, शिमि-दा-क; ततो नञ्-तत्। अहिंसक, जो किसी जीवको मारता न हो। "अशिमिदाः भवन्तु।" ऋक् १।५०।८।

अशिर-आशिर, (सं० पु०) अश्नाति सर्वं भुङ्क्ते,

अशिर—(अशेर्णित्। उण् १।५२) इति किरच् णित्पक्षे वृद्धिः। १ राक्षस। अश्नाति व्याप्नोति विश्वम्। २ सूर्य। ३ अग्नि। ४ हीरा। (अशिरो राक्षसे वज्रावशिर-स्तपनेऽपि च। विश्व) (स्त्री०) टाप्। व्यापिका स्त्री, हर जगह जाने या रहनेवाली औरत।

अशिरस् (सं० पु०) नास्ति शिरो मस्तकमस्य, नञ्-बहुव्री०। १ कबन्ध, मस्तकहीन वीर। (त्रि०) २ अग्रशून्य, जिसका अग्रभाग न हो। वा कप्। अशिरस्क। कबन्ध, बेसिरका धड़, जिसका माथा न हो।

अशिरस्स्नान (सं० क्ली०) शिरसा सह स्नानमव-गाहनम्, शाक० तत् ततो नञ्-तत्। बेशिर डुबाये स्नान, गला पर्यन्त डूबा कर स्नान।

अशिव (सं० क्ली०) न शिवम् विरोधे नञ्-तत्। १ मङ्गल न होनेवाला, अमङ्गल। (त्रि०) २ जो मङ्गलयुक्त न हो, उग्र। नास्ति शिवं कल्याणमस्मात्, नञ्-५ बहुव्री०। अमङ्गलसूचक। अमङ्गल शब्द देखो।

अशिशिषा (सं० स्त्री०) अशितुमिच्छा, अश-सन् द्विर्भाव इट् भावे अ-टाप्। भोजनेच्छा, खानेको ख्वाहिश।

अशिशु (सं० पु०) न शिशुः, विरोधे नञ्-तत्। १ शिशु न होनेवाला, जो बच्चा न हो, युवा। कोई कोई कहते हैं, आठ वर्ष तक शिशु—फिर नवसे पन्द्रह वर्ष पर्यन्त अशिशु कहलाता है। (त्रि०) नास्ति शिशुः यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ शिशुरहित, बेऔलाद, जिसके बाल-बच्चा न रहें। (स्त्री०) अशिश्वी, शिशु रहिता स्त्री। सख्यशिश्वीति भाषायां। पा ४।१।६२। इस सूत्रसे सखी और अशिश्वी यह दो ङीष् प्रत्ययान्त शब्द निपातन द्वारा सिद्ध होता है। नास्याः शिशुरस्ति इति अशिश्वी। वेदमें "अशिशु" ही रूप बनता है।

अशिष्ट (सं० त्रि०) न शिष्टम्, नञ्-तत्। १ जो उपदेश पाये न हो। २ जो शासन किया न गया हो। शिष्टः साधुः, विरोधे नञ्-तत्। ३ असाधु, दुःशील, अविनीत, उजड्ड, बेहूदा। ४ नास्तिक। ५ वर्णसङ्करकारक व्यभिचारविशिष्ट, जो सब वर्णोंका अन्नादि भक्षण करता हो।

अशिष्टता (सं० स्त्री०) १ असाधुता, दुःशीलता, बेहूदगी, ढिठाई।

अशिष्ठ (सं० त्रि०) अश्नाति अश-भोजने अच्, अतिशायने इष्ठन्। १ अतिशय भोक्ता, बहुत खाने-वाला। (पु०) २ अग्नि। सबको भक्षण करने कारण अग्निको भी अशिष्ठ कहते हैं।

अशिष्य (सं० त्रि०) शिष्यते, शास-कर्मणि क्यप् आत इत्वं षत्वञ्च शिष्यम्, ततो नञ्-तत्। शासनका अविषय, जिसके प्रति या जिस विषयमें कोई नियम न हो। तदशिष्यं संज्ञा प्रमाणत्वात्। पा १।२।५३। युक्तवद्व्यक्ति वचनं न कर्तव्यं संज्ञानां प्रमाणत्वात्। (सिद्धान्तकौमुदी) पाणिनि प्रथम सूत्र बनाया—लुपियुक्तवद् व्यक्तिवचनं। पा १।२।५१। प्रत्ययके लुप् होनेपर प्रकृतिका लिङ्ग और वचन आता है। उसके बाद 'तदशिष्यम्' इत्यादि सूत्र किया। इसका तात्पर्य यह है कि लुप् करने पर प्रकृतिके लिङ्ग और वचन होनेका शासन अर्थात् नियम नहीं रहता। कारण संज्ञा ही उसका प्रमाण है अर्थात् पूर्वाचार्योंने प्रत्ययके लुप् करनेपर जिन सकल शब्दमें प्रकृतिका न्याय लिङ्ग और बहुवचन प्रयोग किया है, वे ही सब शब्द बहुवचनान्त होंगे एवं उसी प्रकार साधित पदके स्थलमें जहां एकवचनान्त प्रयोग किया है वहां एकवचनान्त ही प्रयोग होगा। 'अवन्तीनां निवासो जनपद अवन्तयः' यहां बहुवचनान्त और 'ब्रह्मावर्तानां निवासो जनपदः ब्रह्मावर्तम्' यहां एकवचनान्त ही प्रयोग हुआ है। कविकुल-चूड़ामणि कालिदासने मेघदूतमें उभय प्रकार प्रयोग ग्रहण किया है। जैसे—"प्राप्यावन्तीन्" (पू० मेघ० ३०।) यह बहुवचनान्त पदका निदर्शन है। "ब्रह्मावर्तं जनपद-मथ च्छायया गाहमानः।" (पू० मेघ०।४८) यहां एकवचनान्त पदका निदर्शन है। इसीलिये विश्वकोषके अवन्ति-शब्दमें कई एक बहुवचनान्त जनपद शब्द दिखा करके अवशेषमें कहा है कि उससे अन्यथा भी होता है।

अशिश्विका (सं० स्त्री०) अनपत्या, जिस औरतके औलाद न रहे।

अशीत (सं० क्ली०) न शीतम्, विरोधे नञ्-तत्। १ उष्णता, गर्मी। २ उष्णस्पर्श, गर्म चीज़। (त्रि०)

कालभेदे नास्ति शीतं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ शीत-शून्य, सर्दीसे खाली, जिसे ठण्ढक न मालूम पड़े। किसी प्राचीन कविने कहा है,—

"अशीतास्तरवो माघे फाल्गुने पशुपक्षिणः।
चैत्रे जलचराः सर्वे वैशाखे नरवानराः॥"

माघ मासमें वृक्ष, फाल्गुनमें पशु-पक्षी, चैत्रमें जलचर और वैशाखमें नर-वानरका शीत छूट जाता है। ४ अस्सिवां, अस्सीका, जो गिननेसे अस्सीकी जगह पड़ता हो।

अशीतकर (सं० पु०) अशीतः उष्णः करः किरणो यस्य। उष्णांशु, सूर्य, आफ़ताब।

अशीतकिरण, अशीतकर देखो।

अशीतम (वै० पु०) अश्नाति, अश भोजने इन् ततः मतुप्। भोक्तृप्रधान अग्नि, सबको खा जानेवाली आग।

अशीतरुच्, अशीतकर देखो।

अशीतल (सं० त्रि०) उष्ण, गर्म, जो ठण्डा न हो।

अशीता (सं० स्त्री०) भूमिकुष्माण्ड, भुईंकुम्हड़ा।

अशीति (सं० स्त्री०) अष्टानां दशतां अशीभावः ति प्रत्ययश्च, अष्टौ दशतः परिमाणमस्य। पङ्क्तिविंशति त्रिंशच्चत्वारिंशत् पञ्चाशत् षष्टिसप्तत्यशीति-नवतिशतम्। पा ५।१।५९। १ अस्सी संख्या। २ अस्सी संख्याविशिष्ट, जो चीज़ अस्सीकी अदत रखती हो। (त्रि०) ३ अस्सी संख्या परिमित।

अशीतिक (सं० त्रि०) अस्सी वर्षवाला, जो अस्सी सालकी उम्रका हो।

अशीतिभाग (सं० पु०) अस्सिवां भाग या हिस्सा, अस्सीमें एक टुकड़ा।

अशीर्ण (सं० त्रि०) शीर्ण न होनेवाला, सड़ा न हुआ, जो कमज़ोर पड़ा न हो।

अशीर्षन्, अशीर्षिक देखो।

अशीर्षिक (वै० त्रि०) नास्ति शीर्षं यस्य। १ मस्तक-रहित, सर न रखनेवाला, जिसके मत्था न रहे। २ अस्त्रशून्य, हथियारसे खाली।

अशील (सं० क्ली०) न शीलम्, विरोधे नञ्-तत्। १ दुष्ट शील, बुरा मिज़ाज। २ दुष्टस्वभाव, ख़राब ख़सलत। (त्रि०) नास्ति शीलं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ शीलताशून्य, नाशायिस्ता। ४ दुष्टशील, बद-मिज़ाज।

अशीलजा, अशील्ला, अशीता देखो।

अशुच् (सं० स्त्री०) न शुक् अभावे नञ्-तत्। १ शोकका अभाव, अफ़सोसकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति शुगस्य, नञ्-बहुव्री०। २ शोकशून्य, अफ़सोस न रखनेवाला, जो रञ्जीदा न हो।

अशुचि (सं० त्रि०) १ अग्नि न होनेवाला, जो आग न हो। २ आषाढ़ मास न होनेवाला, जो असाढ़ न हो। ३ कृष्णवर्ण, काला, जो शुक्ल या सफ़ेद न हो। ४ शृङ्गाररस न होनेवाला। ५ शौचशून्य, पाकीज़गीसे खाली। ६ अपवित्र, नापाक, मैला कुचैला।

अशुचिता (सं० स्त्री०) अपवित्रता, नापाकीज़गी, गन्दगी।

अशुचित्व, अशुचिता देखो।

अशुद्ध (सं० त्रि०) न शुद्धम् विरोधे नञ्-तत्। शुद्ध नहीं, दोषयुक्त, अपवित्र। कोई भी विषय नाना प्रकारसे अशुद्ध हो सकता है। किसी पदको लिखनेके समय व्याकरणादि लक्षणानुसार विहित कार्य न करनेसे दुष्ट वा अशुद्ध कहते हैं।

शास्त्रनिषिद्ध कर्मके अनुष्ठानका नाम दोष है। उक्त दोषसे दूषित व्यक्ति वा द्रव्यको दुष्ट वा अशुद्ध कहते हैं। जिस द्रव्यके स्पर्श करनेसे विना स्नान किये शुद्धलाभ नहीं होता, उसका नाम दुष्ट और उस द्रव्यके स्पर्श करनेवाले व्यक्तिको दुष्ट वा अशुद्ध कहा जाता है। स्वास्थ्यके अभावसे शारीरिक जो वातपित्तादिका दोष होता है, उस दोषयुक्त व्यक्तिको भी दुष्ट वा अशुद्ध समझेंगे। रजस्वला होनेपर कहा जाता, कि स्त्री अशुद्ध है। बृहस्पति एवं शुक्रके वार्द्धक्य, अस्त और बाल्यादिसे काल अशुद्ध होता है। किसी ग्रन्थके लिखनेमें लिपिकरप्रमाद वा स्खलनादि दोष हो जानेसे वह भी अशुद्ध कहलाता है।

अशुद्धवासक (सं० पु०) सन्दिग्ध आचरणवाला, आवारा, जिसके कोई ठौर-ठिकाना न रहे।

अशुद्धि (सं० स्त्री०) नञ्-तत्। १ शुद्धिका अभाव, पाकीजगीकी अदममौजूदगी। २ दोष, ऐब। (त्रि०) नास्ति शुद्धिर्यस्य, नञ्-बहुव्रो०। ३ शुद्धिहीन, पाकीजगीसे बाहर। ४ दुष्ट, बदमाश। ५ अशुद्ध, नापाक।

अशुन (हिं०) अश्विनी देखो।

अशुभ (सं० क्लो०) नञ्-तत्। १ अमङ्गल, बदबख्ती। २ अशुभसूचक मङ्गलादि पापग्रह। ३ पाप, इजाब। (त्रि०) नास्ति शुभं यस्मात् नञ्-५-बहुव्री०। ४ अशुभविशिष्ट, खराब, बुरा। यात्राकालमें काकादिका बोलना और शून्य कलसी प्रभृतिका देख पड़नाभी अशुभ समझा जाता है।

अशुभोदय (सं० पु०) अपशकुन, बदशिगूनी।

अशुभ्र (सं० पु०) नञ्-तत्। १ शुभ्र न होनेवाला वर्ण, जो रङ्ग सफ़ेद न हो। २ कृष्ण, काला रङ्ग। (त्रि०) ३ कृष्णवर्ण, स्याह, काला।

अशुश्रुषा (सं० स्त्री०) १ शुश्रुषाका अभाव, कमतवज्जोही, नौकरी या अदब करनेमें चूकका पड़ना।

अशुष (वै० त्रि०) न शुषति; इगुपधत्वात् कः, नञ्-तत्। १ भक्षण करता हुआ, जो खा रहा हो। २ अशोषक, जो सुखाता न हो। ३ शुष्क न होनेवाला, जो सूखता न हो।

अशुष्क (सं० त्रि०) सरस, नव, हरित, तर, ताजा, हरा, जो सूखा न हो।

अशूकज (सं० पु०) सुखशालि, शूकशून्य धान्य, किसी किस्मका चावल।

अशूकजक, अशूकज देखो।

अशूद्र (सं० पु०) शूद्र न होनेवाला व्यक्ति, जो शख्स शूद्र न हो।

अशून्य (सं० त्रि) नञ्-तत्। १ अहीन, जो खाली न हो। २ पूर्ण, भरा-पूरा।

अशून्यशयन, अशून्यशयनव्रत देखो।

अशून्यशयनद्वितीया, अशून्यशयनव्रत देखो।

अशून्यशयनव्रत (सं० क्लो०) न शून्यं शयनं शय्या येन यस्माद्वा, नञ्-बहुव्री०। व्रत विशेष। पुरुषके यह रखनेसे उसकी शय्या भार्याशून्य और स्त्रीके यह व्रत रखने उसकी भी शय्या पतिशून्य नहीं होती। भविष्यपुराणमें लिखा है,—वर्षाकालस्य चातुर्मास्यके मध्य श्रावणमासवाले कृष्णपक्षकी द्वितीयासे लगा प्रतिकृष्णद्वितीयाके कार्तिक मास पर्यन्त यह व्रत रखना पड़ता है। यह विष्णुव्रत चार वत्सरमें समापन होता है। नियतेन्द्रिय बन जो यह व्रत करता है, उसकी शय्या शून्य नहीं होती।

अशूला (सं० स्त्री०) संभालू।

अशृङ्ग (सं० त्रि०) शृङ्गशून्य, सींग या चोटी न रखनेवाला।

अशृण्य (सं० पु०) अल्पवयस्क अश्वविशेष। (त्रि०) पालनके अयोग्य, नया, कट्टर, जिसे कोई पाल न सके या जिसके लगाम न लगे।

अशृत (सं० त्रि०) न शृतं पक्कम्, नञ्-तत्। १ अपक्क, जो पका न हो। अविक्लिन्न, जो मुलायम न हो।

अशेव (वै० त्रि०) शीङ् स्वपने वन्, नञ्-तत्। असुखकर, तकलीफ़दिह। २ क्लेशकर, दर्द-अङ्गेज।

"व्येतु दिद्युद् द्विषामशेवा।" ऋक् ७।३४।१३।

अशेष (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ शेषाभाव, बाक़ीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति शेषोऽस्तो यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ शेषशून्य, गैरमहदूद, जिसके छोर न रहे। ३ शेषरहित, बाकी न रखनेवाला, पूरा, समूचा।

अशेषतस् (सं० अव्य०) सम्पूर्ण रूपसे, पूरे तौरपर।

अशेषता (सं० स्त्री०) सम्पूर्णता, तमामी, कुल्लियत।

अशेषम्, अशेषतस् देखो।

अशेषस् (वै० त्रि०) सन्तानशून्य, बे-औलाद, जिसके बालबच्चे न रहे।

अशेषसाम्राज्य (सं० पु०) शिव, जिन महादेवके राज्यका छोर न है।

अशेषेण, अशेषस् देखो।

अशैल (सं० पु०) अर्हत् विशेष, जैनियोंके कोई देवता।

अशोक (सं० पु०) नास्ति शोको यस्मात्। नञ्-५-बहुव्री०। १ स्वनामख्यात वृक्षविशेष। कविलोग

वर्णन किया करते हैं, कि स्त्रियोंका पादाघात पानेसे अशोकवृक्ष फूल उठता है। 'पदाघातादशोकः, इत्यादि। परन्तु इस वर्णनका कारण क्या है, सो कुछ भी स्थिर नहीं किया जाता

अशोक दुर्गोत्सवकी नवपत्रिकामें लगता है। यथा,—

"कदली दाडिमी धान्यं हरिद्रा मानकं कचुः।
बिल्वोऽशोको जयन्ती च विज्ञेया नवपत्रिकाः।"

अशोकका फूल लाल और पीला होता है, इसीसे उसके वृक्षका नाम भी रक्ताशोक एवं पीताशोक है। शास्त्रकारोंने लिखा है कि चैत्रमासकी शुक्लाष्टमीको अशोककी आठ कलियोंको खा लेनेसे फिर शोक नहीं रहता। अशोकपानका मंत्र—

"त्वामशोक हराभीष्ट मधुमाससमुद्भव।
पिबामि शोकसन्तप्तो मामशोकं सदा कुरु।"

हे चैत्रमासजात शिवके इष्टसाधन अशोक मैं शोकसन्तप्त होकर तुम्हे पान करता हूं, तुम सर्वदा मुझे शोकरहित करो।

२ वकुलवृक्ष। (क्लो०) ३ पारा। (स्त्री०) ४ कटुकवृक्ष। (त्रि०) नञ्-बहुव्री। ५ शोकशून्य। (पु०) ६ विष्णु

(Saraca indica) अशोकके ये कई पर्याय देखे जाते हैं,—शोकनाश, विशोक, वञ्जुलद्रुम, वञ्जल, मधुपुष्प, अपशोक, कङ्केलि, केलिक, रक्तपल्लव, चित्र, विचित्र, कर्णपूर, सुभग, देहली, ताम्रपल्लव, रोगितरु, हेमपुष्प, रामावामाङ्घ्रिघातन, पिण्डीपुष्प, नय, पल्लवद्रु।

अशोकका वृक्ष देखनेमें ठीक लीची या नागकेशरके पेड़ जैसा होता है। वसन्तऋतुमें यह फुलता है। फूल गुच्छेदार, हलका गुलाबी रंगका और देखनेमें बहुत कुछ रङ्गनके फूलके नाईं होता है। जब फूल खिलते हैं, उनके सौन्दर्य्यसे संसार आलोकित हो जाता है।

भावप्रकाशकी मतसे इसकी छाल शीतल, तिक्त एवं कषाय है। इससे तृष्णा, दाह, क्रमि, शोष एवं विषका नाश होता है। वैद्य लोग स्त्रियोंके रजोदोषमें इसकी छाल व्यवहार करते हैं। २ प्रसिद्ध मौर्यसम्राट्। [अशोक-प्रियदर्शी देखो।]

अशोककानन, अशोकवाटिका देखो।

अशोकघृत (सं० क्लो०) घृतभेद, कोई घी। यह प्रदराधिकारपर दिया जाता है। ४ शरावक गव्यघृत और २ शरावक अशोकमूलका बकला १६ शरावक जलमें पकाये, ४ शरावक शेष रहनेपर नीचे उतार ले। फिर २ शरावक जीरक १६ शरावक जलमें गर्मकर ४ शरावक बाकी बचनेसे उतारे और ४ शरावक केशराजरस, ४ शरावक तण्डुलोदक एवं ४ शरावक छागदुग्ध उसमें मिलाये। अन्तको चार-चार तोले जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती, यष्टिमधु, पियालवीज, परुषकफल, रसाञ्जन, यष्टिमधु, अशोकमूल, द्राक्षा, शतावरी और तण्डुलीयकमूलका चूर्ण डालते हैं। इन सब वस्तुओंके एकमें पक जानेपर शर्करा देना चाहिये। (भैषज्यरत्नावली)

अशोकतरु (सं० पु०) अशोकवृक्ष, अशोकका पेड़।

अशोकतीर्थ (सं० क्लो०) अशोकनामकं तीर्थं, शाक० तत्। काशीक्षेत्रके अन्तर्गत तीर्थविशेष।

अशोक-त्रिरात्र (सं० क्लो०) त्रयो रात्रयः समाहृताः त्रयाणां रात्रीणां समाहारो वा अच् समा० ततः अशोकाख्यां त्रिरात्रं शाक० तत्। नास्ति शोको येन तादृशं त्रिरात्रं वा। हेमाद्रिके व्रतखण्डसे उद्धृत विष्णुधर्मोत्तरोक्तव्रताङ्गविशेष। यह व्रत अग्रहण, ज्येष्ठ, या भाद्र मासकी पूर्णिमासे आरम्भ करके एक वर्षके बाद उद्यापन किया जाता है। इसमें प्रत्येकदिन एक बार ही भोजन करना पड़ता है। विधिपूर्वक इस व्रतको करनेसे शोकका भय नहीं रहता।

अशोकनग, अशोकतरु देखो।

अशोकनृपति, अशोक-प्रियदर्शी देखो।

अशोक-पुष्पमञ्जरी (सं० स्त्री०) दण्डक छन्दभेद। इस छन्दमें २८ अक्षर रहता और लघु गुरुका कोई नियम नहीं ठहरता है।

अशोकपूर्णिमा (सं० स्त्री०) नास्ति शोको यया, नञ्-बहुव्री० ततः तथोक्ता; पूर्णिमाः कर्म० वा पूर्वपदस्य

पुष्यद्भावः। फाल्गुण पूर्णिमासे लेकर एक वर्ष पर्य्यन्त करने योग्य हेमाद्रि-व्रतखण्डधृत विष्णुधर्मोत्तरोक्त व्रताङ्ग विशेष। यह व्रत फाल्गुण मासकी पूर्णिमासे प्रारम्भ करके १ वर्ष तक किया जाता है। इसमें फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ यह ४ महीनाकी पूर्णिमाको उपवास करते और आषाढ़ादि ४ महीनाकी पूर्णिमाको केवल जल खाकर रहते हैं। फिर कार्त्तिकादि ४ मासकी पूर्णिमाको केवल जल पान करना पड़ता है। इसतरह १ वर्ष पर्यन्त व्रत करके माघकी पूर्णिमाको उद्यापन कर देना चाहिये।

अशोक-प्रियदर्शी (पियदशी) भारतके एक विख्यात मौर्य-सम्राट्; अशोक नामसे ही सर्वत्र परिचित हैं, किन्तु यह 'अशोक' नाम उनके किसी अनुशासन पत्र वा सामयिक ग्रन्थमें नहीं पाया जाता। इसीसे एक दिन अध्यापक विलसन साहबने प्रियदर्शी और अशोक दोनोंकी अभिन्नताके सम्बन्धमें सन्देह प्रकाश किया था। किन्तु सिंहलके 'द्वीपवंश' नामक प्राचीन पालिग्रन्थमें अशोकके 'पियदस्सि' एवं 'पियदस्सन' ये दो नामान्तर पाये जाते हैं और संप्रति मासकी अनुशासनमें अशोकनाम मिला।

दो विभिन्न ओरसे अशोक वा प्रियदर्शीकी संक्षिप्त जीवनी मिलती है। एक तो उनके राजत्वकालमें उन्हींकी आज्ञासे उत्कीर्ण बहुसंख्यक शिलालिपिसे एवं दूसरे बौद्ध और जैन धर्म्मग्रन्थोंसे। परन्तु दुःखका विषय है, कि ग्रन्थगत विवरणके साथ उनके अनुशासन लिपिसमूहकी एकता नहीं है, इसीसे मालूम होता है, कि प्रियदर्शी और अशोकके अभिन्नत्व सम्बन्धमें किसी किसीने सन्देह प्रकाश किया है।

बौद्धग्रन्थमें अशोकका परिचय।

अशोकावदान और दिव्यावदानके मतसे शाक्यबुद्धके समसामयिक मगधके राजा विम्बिसार थे। उनके पुत्र अजातशत्रु, उनके पुत्र उदायी वा उदायीश, उनके पुत्र मुण्ड, उनके पुत्र काकवर्णी, उनके पुत्र सहलि, उनके पुत्र तूलकुचि, उनके पुत्र महामण्डल, उनके पुत्र प्रसेनजित्, उनके पुत्र नन्द और उनके पुत्र विन्दुसार थे। इन्हीं विन्दुसारके पुत्र अशोक थे। बड़े ही आश्चर्यकी बात है, कि अवदानग्रन्थमें अशोकके सुप्रसिद्ध पितामह चन्द्रगुप्तका नाम तक छोड़ दिया गया है। चन्द्रगुप्तका नाम न रहनेसे कोई कोई अनुमान करते हैं, कि चन्द्रगुप्तके साथ मौर्य्यवंशका आविर्भाव वा तिरोभाव होता है। अशोकके साथ चन्द्रगुप्तका कोई सम्बन्ध न था। इधर हिन्दू, जैन और पालिबौद्ध ग्रन्थोंमें चन्द्रगुप्तके अशोकके पितामह होनेका स्पष्ट उल्लेख रहनेपर भी प्रियदर्शीके निज अनुशासनसमूहमें कहीं भी उनके पिता वा पितामहका नाम नहीं पाया जाता।*

जन्मकथा।

पूर्वोक्त दोनों अवदानोंमें लिखा है,—चम्पा नगरीमें किसी ब्राह्मणके यहां एक परम सुन्दरी कन्या

(१) खृष्टानी तृतीय शताब्दीमें दिव्यावदानका अनुवाद चीनी भाषामें हुआ, (Beal's Chinese Tripitakas) सुतरां मूल ग्रन्थ उससे बहुत पहले अन्तत: ई० के पहली वा दूसरी शताब्दीमें किसी समय रचा गया होगा, इसमें सन्देह नहीं। इसलिये अशोककी वंशावलीके सम्बन्धमें प्राचीन प्रमाण समझ कर उल्लेख किया। बड़े आश्चर्यका विषय है, कि अवदान ग्रन्थके साथ हिन्दू, जैन, यहां तक कि बौद्धोंके पालि ग्रन्थोंका भी ऐक्य नहीं है। यह बात नीचेका सूचीपत्र देखनेसे ही मालूम हो जायगी,—

विष्णुपुराण।	परिशिष्टपर्व्व।	पालि महावंश।
१ शिशुनाग।	(हेमचन्द्ररचित)	
२ काकवर्ण।		
३ क्षेमधर्म्म।		
४ क्षत्रौजा।		१ विम्बिसार।
५ विम्बिसार।	१ श्रेणिक।	२ अजातशत्रु।
६ अजातशत्रु।	२ कुणिक।	३ उदायिभद्दक।
७ दर्शक।	३ उदायी।	४ अनुरुद्धक।
८ उदयाश्व।	(निःसन्तान)।	५ मुण्ड।
९ नन्दिवर्द्धन।	४ नन्द।	६ नागदासक।
१० महानन्दि।	५ वंशक्रमसे ९ नन्द।	७ सुसुनाग।
११ सुमाल्यप्रभृति ९ नन्द।	६ चन्द्रगुप्त।	८ कालाशोक।
१२ चन्द्रगुप्त।	७ विन्दुसार।	९ तथा १० पुत्र।
१३ विन्दुसार।	८ अशोक।	१० चन्द्रगुप्त।
१४ अशोक।	९ कुणाल।	११ विन्दुसार।
	१० सम्प्रति।	१२ धर्म्माशोक।

हुई।' एक ज्योतिषीने उस कन्याको देखकर कहा,—'यह कुमारी राजरानी और राजमाता होगी।' धनका लोभ बड़ा भारी लोभ है। ब्राह्मण लालचमें पड़ गये। कन्याको यौवनावस्थाप्राप्त देख वे उसे साथ लेकर पाटलीपुत्र आये और राजा विन्दुसारको प्रदान कर दिया। विन्दुसारने ब्राह्मणकन्याको अन्त:पुरमें भेज दिया। उसका सौन्दर्य्य देखकर राजमहिषियोंको टकटकी लग गई। उन लोगोंने सोचा, कि ऐसी सुन्दरी पाकर राजा क्या फिर हम लोगोंको पूछेंगे। इसलिये आपसमें सलाहकर उन लोगोंने उसे नाइन बनाकर रखा और क्षौर कर्म्म सिखाने लगी। कुछ दिनोंके बाद यही ब्राह्मणकुमारी राजा विन्दुसारका हजामत बनाने लगी। एक दिन परम प्रसन्न होकर राजाने कहा,—"मैं तुमपर बहुत प्रसन्न हूं, बोलो क्या मांगती हो। मैं तुम्हारी अभिलाष पूर्ण करूंगा।" यह सुन विप्रकन्याने शिर झुकाकर धीरे धीरे कहा,—"मैं आपको चाहती हूं।" इसपर राजाने कहा,—"सो क्या, मैं क्षत्रियमूर्द्धाभिषिक्त और तुम नाइन, तुम्हें भला कैसे ग्रहण करूं।"* इसके उत्तरमें उस विप्रकुमारीने कहा, "मैं नाइन नहीं, ब्राह्मणकी कन्या हूं। आपकी पत्नी होनेके लिये ही पिताजी दे गये हैं। पुरमहिलाओंने मुझे यह काम सिखाया है।" यह सुन राजाने उसकी कामना पूर्ण की। फिर वही दरिद्रकन्या पटरानी हो गई। सहवाससे उसके दो पुत्र हुए—१म अशोक, २य विगतशोक वा वीतशोक।

अशोकसे पहले पटरानीके गर्भसे सुसीम नामक विन्दुसारका लड़का पैदा हुआ था।

तक्षशिलावासियोंने विन्दुसारके विरुद्ध अस्त्र धारण किया। विन्दुसारने अशोकको वहीं छोड़ दिया। मार्गमें दलबल संग्रहकर अशोक तक्षशिला आये। विना युद्ध ही नगरवासियोंने उनके लिये तक्षशिलाको छोड़ दिया और उनकी यथेष्ट अभ्यर्थना की।

उधर विन्दुसारके प्रधान मन्त्री खल्लाटकने ज्येष्ठ राजकुमार सुसीमके आचरणसे कुछ विरक्त होकर उन्हें ही तक्षशिला भेजनेका प्रबन्ध किया एवं अशोकको राजा बनानेके लिये उन्हें राजधानीमें बुला लिया।

विन्दुसारकी आयु शेष हो आई। अमात्यगण खूब सजधजकर अशोकको राजाके सम्मुख ले गये और अनुरोध किया, कि जबतक सुसीम लौटकर न आवें तबतक अशोक उनके पदपर विराजें। यह सुनकर विन्दुसार बहुत ही रुष्ट हुए। यह देख अशोकने कहा, कि यदि धर्म है, तो मैं ही राजा हूंगा। तुरत ही अशोकका पट्टबन्ध हुआ। देखते देखते विन्दुसारने रक्त वमन कर प्राणत्याग दिया।

अब अशोक पाटलीपुत्रके राजसिंहासनपर विराजे। राधगुप्त उनके प्रधान मन्त्री हुए। यह समाचार तक्षशिला भेजा गया। सुसीमने पिताकी मृत्यु और अशोकके राजसिंहासन अधिकार करनेकी बात सुनी। इसके बाद तुरत ही उन्होंने ससैन्य पाटलिपुत्रकी यात्रा की। इधर अशोक भी प्रस्तुत थे। शहरके सदर फाटकपर एक नग्न मनुष्य, तीसरेपर राधगुप्त, चौथेपर स्वयं अशोक उपस्थित थे। द्वारके सामने खाइ खोद और उसमें खदिर एवं अङ्गार भरकर एक अशोकमूर्ति उसपर बैठा दी गई।

सुसीमने सोचा, कि अशोकको मार डालनेसे ही राजसिंहासन मिल जायगा। यह विचारकर अशोकसे युद्ध करनेके लिये पूर्वद्वारमें प्रवेश किया। प्रवेश करते ही अङ्गार भरी हुई खाईमें गिर पड़े। तुरत ही उनकी जान निकल गई।

अशोक प्रतिष्ठित हुए सही, परन्तु वे अमात्यगणकी और विशेष अवज्ञा प्रकाश करने लगे। एकदिन राजाने अमात्योंसे कहा,—'तुम लोग फलफूलका पेड़ काटकर कांटेके पेड़को सींच रहे हो।' अमात्योंने इसका उत्तर राजाके प्रतिकूल दिया। उससे अत्यन्त रुष्ट होकर अशोकने तुरत ही पांच मनुष्योंके शिर काट डाले।

* "अहं राजा क्षत्रियो मूर्द्धाभिषिक्तः कथं मया सार्द्धं समागमो भविष्यति।" (दिव्यावदान २६ अः)। यहां विन्दुसार अपनेको क्षत्रिय होनेका परिचय दे रहे हैं। पर चन्द्रगुप्त कहीं भी 'क्षत्रिय' के नामसे परिचित नहीं हुए। सर्वत्र ही वे 'वृषलके नामसे परिचित हैं। [चन्द्रगुप्त देखो]।

धीरे धीरे अशोककी प्रवृत्ति भीषणसे भीषणतर हो उठी। उन्होंने एक रमणीय वधागार स्थापन किया और चण्डगिरिक नामके एक जुलाहेको उसका रक्षक बनाया। मनुष्यका प्राण हरण उसका परम-प्रिय कार्य था। सैकड़ों मनुष्य अनजानमें उस वधागारमें जाकर भूखसे सूखकर मर गये। कुछ दिनोंके बाद समुद्र नामक एक साधु भिक्षाकी इच्छासे उस वधागारमें गये। उस घरमें जो जाता था वह फिर बाहर न निकलता था। पर कई दिन बीत गये, उस साधुके प्राण न निकले। यह देख दुर्वृत्त चण्डगिरिक अवाक हो गया। उसने उस साधुके प्राणनाश करनेकी यथेष्ट चेष्टा की, पर किसी तरह साधुके प्राण न निकले। अन्तमें चण्डगिरिकने इस बातकी खबर राजाको दी। राजा स्वयं साधुको देखने आये। आकर उन्होंने देखा, कि उस भिक्षुके आधे शरीरसे जल बह रहा और आधेमें आग धधक रही है, तथा सारा शरीर शून्यमें लटक रहा है। यह देख राजाने विस्मयके साथ उस साधुका परिचय पूछा। भिक्षुने उत्तर दिया,—"मैं वही परम कारुणिक धर्मान्वय बुद्धपुत्र हूं; संसारके महाभय भव-बन्धनसे मुक्त हो गया हूं। महाराज! सुनिये। भगवान् कह गये हैं, कि मेरे परिनिर्वाणके सौ वर्ष बाद पाटलिपुत्रमें अशोक नामक एक राजा होगा। वह चतुर्भाग चक्रवर्ती धर्मराज मेरा शरीर धातुविस्तार करेगा। ८४००० धर्मराजिका प्रतिष्ठा करेगा। अतएव हे नरेन्द्र! उस नाथको पूजा करके धर्म विस्तार करो।"

यह सुन राजा विचलित हुए। बुद्धके नामसे उनके हृदयमें चित्तप्रसाद उपस्थित हुआ। उन्होंने हाथ जोड़कर भिक्षुसे कहा,—"दशवलसुत! मुझे क्षमा कीजिये। मैंने बुद्धगण और धर्मको शरण ली।" इसके बाद राजाने सम्मानसहित भिक्षुको विदाय किया। अब अशोककी रुधिरपिपासा दूर हो गई। उस नरपिशाच चण्डगिरिक वा उस रमणीय वधागारका अस्तित्व लोप हो गया। अब वह चण्डाशोक धर्माशोकके नामसे गिना जाने लगा।

अजातशत्रुने जो द्रोणस्तूप निर्माण किया था, अशोकने उसे खुदवा डाला और उसमेंसे शरीरधातु निकालकर नागोंकी सहायतासे रामग्राममें एक बड़ा भारी स्तूप प्रतिष्ठित किया। इसके बाद नानास्थानोंमें नानाधातुगर्भ सुवर्ण, रजत, स्फटिक एवं वैदूर्यरचित चौरासी सहस्र करण्डकी स्थापना की।

अशोक धर्मोन्मत्त हो उठे। एकदिन उन्होंने स्थविरयशाको कहा, कि मैं एक दिनमें चौरासी हजार धर्मराजिका स्थापन करना चाहता हूं। स्थविर-यशाने भी बुजुर्गी दिखाई। अशोकराजका मनोरथ पूर्ण हुआ। तबसे वे धर्माशोकके नामसे प्रसिद्ध हुए।

एक दिन अशोकने सुना, कि मथुरामें उपगुप्त नामका स्थविर है। उसके ऐसा न्यायशास्त्रज्ञ और बुद्धभक्त और कोई नहीं है। राजाने उसे देखनेकी इच्छा प्रकटको मन्त्रियोंने उपगुप्तको लानेके लिये दूत भेजना चाहा। परन्तु यह बात राजाको अच्छी न लगी। उन्होंने स्वयं जाकर उपगुप्त शास्त्रीसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की। उधर उपगुप्तने भी सुना, कि मौर्य-सम्राट् मेरे निकट आना चाहते हैं। अशोकके धर्मानुरागसे सन्तुष्ट होकर उन्होंने तुरत ही नावपर बैठ मथुरासे पाटलिपुत्रकी यात्रा की। उपगुप्तके पहुंच जानपर राजपुरुषने अशोकको यह शुभ समाचार दिया। उपगुप्तके आगमनका समाचार घोषणा करनेके लिये मौर्यराजने घण्टा बजानेको आज्ञा दी। राजाके आदेशसे पाटलिपुत्र-नगरी खूब सज दी गई। पिछली रातमें उठकर स्वयं राजा नगरसे आगे जाकर उन्हें ले आये। उपगुप्तके समागमसे अशोक कृतार्थ हुए। अशोकको साथ ले जाकर उपगुप्तने कपिलवास्तु, भार्गवाश्रम, वाराणसी प्रभृति बुद्धके लीलाक्षेत्रोंको दिखाया। उन सब पवित्र बुद्धक्षेत्रोंमें सम्राट्ने बुद्धकी अर्चना एवं स्मरणार्थ स्तूपादि निर्माण करा दिये।*

जिस समय अशोकने ८४००० धर्मराजिका प्रतिष्ठित की, उसी समय देवी पद्मावतीके गर्भसे 'धर्मवर्द्धन' नामक एक परम रूपवान् पुत्र उत्पन्न हुआ। उसके

* बृहत्-अशोकावदान एवं दिव्यावदानान्तर्गत अशोकावदान द्रष्टव्य है।

नेत्र ठीक कुणाल पक्षीके नेत्र थे। वही नेत्र कुणालके शत्रु हो उठे। कुणालने यौवनसीमापर पदार्पण किया। अशोककी प्रधान महिषी तिष्यरक्षिता उन नेत्रोंको देखकर उनपर आसक्त हो गई। एकदिन कुणालको एकान्तमें पा कर रानीने अपनी असदिच्छा प्रकट की। इसपर उन्होंने दोनों कानोंपर हाथ रखकर कहा,—'मा! ऐसी धर्मविरुद्ध बात अब न कहियेगा। अधर्मकी अपेक्षा मेरी मृत्यु ही श्रेय है।' तिष्यरक्षिताकी मनस्कामना पूर्ण न हुई। उसी समयसे रानी कुणालका छिद्र खोजने लगी।

उधर तक्षशिलामें विद्रोह मच गया। वहां जानेके लिये अशोक स्वयं प्रस्तुत थे, परन्तु मंत्रियोंके परामर्शसे महासमारोहके साथ कुणालको वहां भेज दिया।

कुछ दिनोंके बाद अशोकको दारुण व्याधिने ग्रसा। उनके मुखसे विष्ठा निकलने लगी। इस रोगकी चिकित्सा कोई भी न कर सका। यह देख राजाने कुणालको बुलाकर राजसिंहासनपर बैठानेकी इच्छा की। यह सुन तिष्यरक्षिताने सोचा, कि यदि ऐसा होगा, तो मेरी जान न बचेगी। यह विचार कर उन्होंने राजासे कहा, कि मैं आपका रोग अच्छा कर दूंगी, परन्तु किसी वैद्यको यहां न आने दूंगी। राजा इस बातपर राजी हो गये। अब रानीने वैद्यको बुलाकर कहा,—"देखिये, यदि ऐसा और कोई रोगी हो तो उसे मेरे पास ले आइये।" वैद्य खोज ढूढ़कर एक ग्वालेको ले गये। उसकी भी अवस्था राजा ही जैसी थी। एक गुप्त स्थानमें ले जाकर रानीने उसका पेट फाड़कर पाकाशयकी परीक्षा की, तो देखा, कि उसकी अंतड़ीमें असंख्य कीड़े किल्बिल्-किल्बिल् कर रहे थे। मरिच, पिप्पली, शृङ्गवेर आदिसे कीड़े न मरे। अन्तमें पियाजका रस देते ही कीड़े मर कर मलद्वारसे निकलने लगे। यह देख रानीने अशोकसे जाकर कहा, कि अब आप कोई चिन्ता न कीजिये। औषध मिल गई है। आपको पियाज खाना पड़ेगा। यह सुन राजाने कहा,—"यह क्या। मैं क्षत्रिय हूं। पियाज कैसे खाऊंगा।" इसपर तिष्यरक्षिताने कहा,—"प्राणरक्षाके लिये औषधस्वरूप पियाज खानेमें कोई दोष नहीं है।" पीछे पियाज खाकर राजा अच्छे हो गये। और परम प्रसन्न होकर उन्होंने तिष्यरक्षिताको सात दिनके लिये राज्यभार सौंप दिया।

दुष्ट तिष्यरक्षिताको अब वैर चुकानेका सुभीता हो गया। उसने अशोकके नामसे तक्षशिलावासियोंको आज्ञा दी, कि मौर्यकुलकलङ्क कुणालकी आंखें निकाल लो।

इस दारुण आदेशको पाकर तक्षशिलाके सभी आदमी नितान्त दुःखित हुए। कुणालका चरित्र अति विशुद्ध, शान्त और सबको प्रिय था। उनका अनिष्ट करनेसे सभी विमुख हुए। सभी राजाकी निन्दा करने लगे। पश्चात् कुणालने उस पत्रको पाया। उन्होंने अपने हाथसे अपनी आंखोंको निकालकर पिताकी आज्ञा पालन की। यह देख सभी हाहाकार कर उठे। पर उस शान्तमूर्ति दृढ़चेता कुणालका मन विचलित न हुआ।

तक्षशिला आनेके पहले काञ्चनमालाके साथ कुणालका विवाह हो गया था। प्राणवल्लभके उन चित्तविमोहन नेत्रको अपहृत होते देख वह मूर्च्छित हो गई। पीछे स्त्रीको शान्तकर कुणालने भिखारीका वेश धर और पत्नीका हाथ पकड़कर तक्षशिला त्याग किया। अब कुणाल वीण बजाते हुए राह राह घूमने लगे। साथमें केवल काञ्चनमाला थी। भिक्षा ही दोनोंकी उपजीविका थी। इसी तरह कुणाल पाटलिपुत्र पहुंचे। उन्हें कोई पहचान न सका। यहांतक, कि द्वारपालोंने भी उन्हें राजप्रासादमें घुसने न दिया। एक दिन खूब सबेरे राजभवनके निकट बैठ कुणाल वीणा बजा, बजाकर गाने लगे,—"यदि भवमें दुःखसे पीड़ित हो, यदि इस संसारका दोषका जानते हो, यदि ध्रुवसुखपानेकी इच्छा रखते हो, तो शीघ्र इस आयतनको त्यागकरो—त्याग करो।"

यह स्वर अशोकके कानमें पड़ा। उसी समय उन्हें निश्चय हो गया, कि यह स्वर तो मेरे प्रिय पुत्र कुणालका है। उन्होंने कुणालको लानेके लिये तुरत ही आदमी भेज दिया। कुणाल सस्त्रीक पिताके

पास आये। अशोक नयनरञ्जन पुत्रको नेत्रविहीन देखकर मूर्च्छित हो गये। कुछ देरके बाद जब मूर्च्छा टूटी, तो कुणालको गोदमें बैठाकर राजाने पूछा,—"बताओ बेटा! तुम्हारे ये दोनों सुन्दर नेत्र किस तरह नष्ट हुए।"

इसपर कुणालने कहा,—"बीती बातके लिये शोक मत कीजिये। सभी अपना अपना कर्मफल भोग करते हैं, मैं भी भोग करता हूं। क्यों किसीको दोष दूं।"

अन्तमें जब राजाको मालूम हो गया, कि यह काम तिष्यरक्षिताका ही है, तब उन्होंने उसे बुलाकर लाल लाल आंखे करके कहा,—"केवल तेरी आंखे ही नहीं, नाक, आंख, मुह सब अङ्गोको काट डालूंगा, तब तुझे मालम होगा, कि तूने मेरे हृदयको कैसा कष्ट दिया है।"

अब कुणालने हाथ जोड़कर पितासे कहा,—"राजन्! तिष्यरक्षिता अनार्य्यकर्म्मा है, आप आर्य्य-कर्म्मा होकर स्त्रीवध न कीजिये। मैत्री और क्षमाकी अपेक्षा और कोई धर्म नहीं है। मेरी आंखें निकलवाकर यदि माता सचमुच ही प्रसन्न हुई हों, तो उसी सत्यके गुणसे मेरी आंखें फिर हो जायंगी।" विश्वाससे क्या नहीं होता। ध्रुवविश्वासके प्रभावसे तुरत ही कुणालकी आंखें पहले ही की तरह हो गईं, पर अशोकने तिष्यरक्षिताको क्षमा नहीं किया। उस पापिष्ठाकी देह जतुगृहमें दग्धीभूत हुई।*

जिस समय राजा अशोकने ८४००० धर्मराजिकाकी प्रतिष्ठा और पञ्चवार्षिकव्रतका अनुष्ठान किया उसी समय उनके भाई वीतशोक तीर्थिकोंपर अनुरक्त हो गये। वे लोग उन्हें समझाते, कि श्रमण शाक्यपुत्रोंका मोक्ष नहीं है। वीतशोक भी वही समझते, वरं श्रमणोंके साथ कितनी ही बार उनका विरोध हो जाता था। अशोकको यह अच्छा न लगता था।

उन्होंने वीतशोकको बुद्धमतमें लानेका एक अपूर्व उपाय निकाला। अपने मन्त्री उपगुप्तको बुलाकर पूछा, कि किसी तरह वीतशोकको सिंहासनपर बैठा सकते हो! एकदिन अमात्यगण अशोकका पट्टमौलो लेकर स्नानागारमें गये और वीतशोकसे कहा,—"राजाकी मृत्युके बाद आप ही राजा होंगे। इस समय सजधजकर सिंहासन पर बैठिये, तो देखें, कि आप कैसा शोभते हैं।" वीतशोक मन्त्रियोंको पट्टमें आ गये और अशोकके राजवस्त्राभरणको पहनकर सिंहासनपर विराजे। ठीक उसी समय अशोक आ पहुंचे। 'कोई है?' अशोकके इतना कहते ही सशस्त्र घातकोंने आकर वीतशोकको चारो ओरसे घेर लिया। अब अशोकने गम्भीर स्वरसे कहा,—"देखो वीतशोक! मेरी उपेक्षा करके तुम सिंहासनपर बैठे हो। अच्छा सात दिनके लिये मैंने राज्य छोड़ दिया, इसके बाद घातकोंके हाथसे तुम्हारी मृत्यु होगी।"

सात दिनके लिये वीतशोक राजा हुए। नाच गान और आनन्दकी नदी बह चली। सातवें दिन घातकोंने आकर उनके अन्तिम दिनकी बात सुना दी। राजवेशमें वीतशोक अशोकके पास आये। अशोकने पूछा, "भाई! इन कई दिनोंमें कैसा सुख भोग किया। नाच गानमें कैसा आनन्द पाया।" इसपर वीतशोकने कहा,—"सुख कहां है। नाचगान देखा नहीं, सुना नहीं, गन्धमें आघ्राण पाया नहीं, रसास्वादन किया नहीं। देखा है केवल यही, मानो नीलवस्त्रधारी घातकगण द्वारपर खड़े हैं।"

अशोकने कहा,—"भाई! यदि मृत्युसे इतना डरते हो, तो उसकी चिन्ता क्यों नहीं करते जिसमें मरण हो ही नहीं।" वीतशोकने कहा,—"मैंने उसी सम्यक्सम्बुद्धकी शरण ली। धर्म और भिक्षु-सङ्घकी शरण ली।" वीतशोकने उसी समय प्रव्रज्या ग्रहण की। धूली, चीवर और वृक्षमूल ही वीतशोकका आश्रयस्थान हुआ। वे भिक्षा मांगकर जो लाते उसीसे अपनी शरीर रक्षा करते। नानादेश, नाना नगरोंमें होते हुए वे प्रत्यन्त देशमें पहुंचे। यहां वे महाव्याधिग्रस्त हुए। यह समाचार पाते ही अशोकने उनकी चिकित्साके लिये औषधादि भेज दिये।

* दिव्यावदानमें कुणालावदान।

इसी समय पुण्ड्र्वर्द्धन-नगरवासी निर्ग्रन्थ उपासकोंने अपने उपास्य जिनदेवके पादमूलमें बुद्धदेवकी मूर्ति आंक दी थी। बौद्धोंने जाकर यह समाचार अशोकको दिया। इसपर अत्यन्त क्रुद्ध होकर अशोकने पुण्ड्र्वर्द्धनके सब आजीवकोंको मार डालनेकी आज्ञा दी। एक दिनमें अठारह हजार आजीवक मार डाले गये।

इसके बाद पाटलिपुत्रके निर्ग्रन्थोंने भी जिनदेवके पादमूलमें बुद्धप्रतिमाका चित्र अङ्कित किया था। उन लोगोंके लिये भी अशोकने वैसा ही दण्डविधान किया था। यहांतक, कि अन्तमें उन्होंने घोषणा कर दी थी, कि जो निर्ग्रन्थका शिर काटकर लायेगा वह दीनार पायेगा।

इस समय वीतशोक महाव्याधिग्रस्त होकर एक आभीरके यहां रात काटते थे। उनके लम्बे नख और दाढ़ीको देख आभीरपत्नीने उन्हें निर्ग्रन्थ समझा और यह बात अपने स्वामीसे कही। ग्वाला वीतशोकका शिर काटकर दीनार पानेकी आशासे अशोकके पास ले गया। उस शिरको देख अशोक मूर्च्छित हो गये। जब वे प्रकृतिस्थ हुए तब अमात्योंने कहा,—"वीतरागोंको वृथा कष्ट हो रहा है। सबको अभय दे दीजिये।" उसी दिन राजाने घोषणा कर दी, कि अबसे मेरे राज्यमें कोई हिंसा न करे। इसके बाद अशोकने अपना सर्वस्व बौद्धसङ्घमें अर्पण कर दिया।* (अशोकावदान)

महावंशवर्णित अशोक।

सिंहलके महावंशमें दो अशोकोंका परिचय पाया जाता है। प्रथम अशोक 'कालाशोक'के नामसे ख्यात हैं। बुद्धनिर्वाणके सौ वर्ष बाद यही कालाशोक पुष्पपुरमें राज्य करते थे। इन्हीं प्रथम अशोकके समय सद्धर्मसङ्गीतिमें बुद्धके उपदेशमूलक शास्त्रसमूह संगृहीत हुए हैं।

इन कालाशोकके दश पुत्रोंने पहले २२ वर्ष, फिर ९ पुत्रोंने २२ वर्षतक राज किया। उनके सबसे छोटे लड़केका नाम धननन्द था। चाणक्यके कौशलसे धननन्दने राज्य खो दिया और मोरियवंशसम्भूत चन्द्रगुप्तने राज्यलाभ किया। इन्होंने ३४ वर्ष राज किया था। उसके बाद उनके पुत्र बिन्दुसारने २८ वर्ष राज्यभोग किया। उनकी सोलह रानियोंके गर्भसे १०१ पुत्र हुए थे। उनमें सबसे बढ़कर अशोक ही पुण्यतेजा और महासमृद्धिसम्पन्न थे। वे पिताकी अधीनतामें उज्जयिनीका शासन करते थे। जब उन्होंने पिताके मृत्युशय्यापर पड़े रहनेका समाचार सुना, तो तुरत ही पाटलिपुत्र आकर राजसिंहासन अधिकार कर लिया और ९९ भाईयोंको विनाशकर जम्बुद्वीपमें एकाधिपत्य करने लगे। बुद्धनिर्वाणके २१८ वर्ष बाद उनका अभिषेक हुआ। राज्यलाभके चौथे वर्ष महासमारोहके साथ उनका अभिषेककार्य सम्पन्न हुआ था। अभिषेकके समय उनके छोटे भाई तिष्यको 'उपराज'की पदवी दी गई थी।

अशोकके पिता ब्राह्मणभक्त थे। वे प्रतिदिन साठ हजार ब्राह्मणोंको भोजन कराते थे। अशोकने भी तीन वर्षतक ऐसा ही किया था। अभिषेक हो जानेके बाद उनकी मति गति फिर गई। वे अपनी सभामें सब सम्प्रदायोंके अमात्योंको लाकर शास्त्रविचार करने लगे और सबको समभावसे भिक्षा देनेकी व्यवस्था कर दी।

श्रमण-न्यग्रोधको देखकर बौद्धधर्मकी ओर उनका चित्त आकृष्ट हुआ। यह न्यग्रोध और कोई नहीं उनका भतीजा ही था। अशोकने जिस समय बिन्दुसारके बड़े लड़के सुमनकी हत्या की थी, उस समय उनकी गर्भवती पत्नीने चण्डालके गृहमें आश्रय लिया था। उनके गर्भसे न्यग्रोधका जन्म हुआ और अपने पूर्व सुकृतके बलसे सम्मान लाभ किया।

अशोकके हृदयमें एक ओर ब्राह्मणधर्मके प्रति वीतराग और दूसरी ओर बौद्ध धर्मके प्रति अनुराग प्रबल होने लगा। अब वे प्रतिदिन साठ हजार श्रमणोंको सेवा करने लगे।

इस चौथे वर्षमें ही उपराज तिष्य, अशोकके

* अशोकावदानके अन्तमें लिखा है, कि अशोकने जो कीर्तिस्तम्भ प्रतिष्ठित किये थे, उन्हें उन्हींके वंशधर मौर्यवंशीय शेष नृपति पुष्यमित्र ध्वंस कर गये। (पुष्यमित्र देखो)

भाञ्जे और सङ्घमित्राके स्वामी अग्निब्रह्माने संन्यास धर्म अवलम्बन किया। उनकी देखादेखी हजारों मनुष्य बौद्धधर्ममें दीक्षित हुए थे। अशोककी धर्मासक्तता क्रमसे प्रबल होने लगी।

उपराज तिष्यके संन्यासधर्म ग्रहण कर लेने पर अशोकने अपने प्रियपुत्र (महिन्दो) महेन्द्रको उपराज बनानेकी इच्छा की थी, पर कुछ ही दिनोंमें महेन्द्रने भी संन्यास ग्रहण कर लिया। स्थविर महादेवने महेन्द्रको दीक्षित किया। स्थविर माध्यन्तिकने उनके लिये कर्मवचन अनुष्ठान किया। इसी समय धर्मपाल सङ्घमित्राके उपाध्याय एवं आयुपाली उनके आचार्य हुए। अशोकके षष्ठवर्षमें महेन्द्र और सङ्घमित्रा दोनोंने प्रव्रज्या ग्रहण किया।

कहावत प्रसिद्ध है, कि बहुते योगी मठ उजार। धीरे धीरे बौद्ध आचार्य और उपाध्यायोंकी संख्या इतनी बढ़ी एवं इतना मतभेद होने लगा, कि अन्तमें गोलमाल मच गया और भारतके सर्वत्रके बौद्धारामोंमें उपोषध एवं प्रावरण बन्द हो गया। इस तरह सात वर्ष बीत जानेपर इसकी खबर अशोकको लगी। उन्होंने कहला भेजा, कि मेरे अशोकाराममें जितने भिक्षु रहते हैं सभी उपोषधव्रत पालन करें। इसपर भिक्षुसङ्घने उत्तर दिया, कि तीर्थिकोंके साथ हम लोग उपोषधव्रत पालन न कर सकेंगे। राजाको यह समाचार मिला। धर्मपालन न करनेसे किसे अधर्म हुआ। राजाके मनमें सन्देह उत्पन्न हुआ। उन्होंने मोग्गलिपुत्त तिष्यके निकट जाकर अपने मनका कष्ट कहा। तिष्यने 'तित्तिरजातक' सुनाकर सम्राटको कहा,—'प्रतीक्षा न रहनेसे पाप नहीं होता।' मोग्गलिपुत्तके उपदेशसे राजाको ज्ञान हुआ।

अब अशोकके अधीन राजगण एवं बन्धुगण सम्राट्के परामर्शसे स्तूपादि बनवाने लगे। सम्राट्ने भी बौद्धधर्मके प्रचारके लिये महेन्द्रको सिंहल भेज दिया।

सिंहलराज प्रियतिष्यने महेन्द्रसे बौद्धधर्मकी दीक्षा ली। उसके बाद धर्मप्रचारके उद्देश्यसे सङ्घमित्रा भी सिंहल गई थी और सिंहलराजमहिलाओंने उनसे दीक्षा ली थी।

अशोकके सम्बन्धमें जैनमत।

हेमचन्द्ररचित त्रिषष्ठिशलाकापुरुषचरितके मतसे,—विन्दुसारसे अशोकश्रीने जन्मलाभ किया। विन्दुसारकी मृत्यु हो जानेपर उन्होंको राज्य मिला था। अशोकके कुणाल नामक एक पुत्र हुआ। अशोकने कुणालको उज्जयिनीपुरी दी। वे वहां जाकर रहने लगे। उनकी रक्षाके लिये कुछ शरीररक्षक नियुक्त हुए। इस तरह कई वर्ष बीत जानेपर एकदिन राजा अशोकने एक नौकरसे सुना, कि कुणालका अध्ययनकाल उपस्थित हुआ है, यह सुनकर राजा बहुत सन्तुष्ट हुए और तुरत ही उन्होंने अपने हाथसे कुणालको एक पत्र लिखा। सहज ही समझमें आ जानेके लिये यह पत्र प्राकृत भाषामें ही लिखा गया। उसमें एक जगह 'अध्ययन करो' के स्थानमें 'अधीउ' लिखा गया था।

जिस समय राजा पत्र लिख रहे थे, उस समय उनके पास कुणालकी एक विमाता बैठी हुई थी। पत्रको धीरे धीरे राजाके हाथसे लेकर उसने पढ़ा। पढ़नेपर उसके मनमें हिंसा उत्पन्न हुई। कुणालको राज्यसे वञ्चित कर अपने पुत्रको राजसिंहासनपर बैठानेके लिये वह मन ही मन कोई उपाय सोचने लगी। उसी समय राजा कुछ अनमने हो उठे। अवसर पाकर कुणालकी विमाताने अपनी कामना पूर्ण की। पत्रमें जहां 'अधीउ' लिखा था, उसमें अपनी आंखके काजलसे एक विन्दु बैठाकर 'अधीउ' को उसने 'अंधीउ' बना दिया। राजाने भूलसे दूसरी बार पत्रको नहीं पढ़ा, अपने नामकी मुहर देकर चिट्ठीको उज्जयिनी भेज दिया।

उधर कुणालने पितृनामाङ्कित पत्रको पाकर पहले उसे माथे पर चढ़ाया, फिर एक वाचकसे उसे पढ़ाने लगे, पत्र पढ़कर एकदम विषण्ण हो गया। उसे विषण्ण देख कुणाल आप ही पत्र पढ़ने लगे। पत्रमें 'अंधीउ' देख उन्होंने सोचा, कि हमारे मौर्यवंशमें कभी किसीने गुरुकी आज्ञा लङ्घन नहीं की। अतएव यदि मैं करूं, तो सभी मेरे दृष्टान्तपर चलेंगे। सुतरां मैं गुरुकी आज्ञा लङ्घन न करूंगा। इतना कह उन्होंने

तप्तशलाकासे अपने हाथसे अपनी दोनों आंखें फोड़ डालीं। उधर अशोक यह समाचार पाकर अपने कूटलेखके लिये आत्माको बार बार धिक्कारकर अत्यन्त दु:खित हुए। वे चिन्ता करने लगे,—"हाय! मेरी सब आशा भरोसा मट्टी हो गयी। मैंने जिसे युवराज बनाकर फिर राजा बनानेका इरादा कर लिया था, वह अब राज्य वा मण्डल किसीके उपयुक्त नहीं है। मेरी मनकी इच्छा मन ही में रह गयी।" इस तरह सोच विचारकर राजाने कुणालको एक समृद्धिशाली ग्राम दिया। कुणाल उसमें रहने लगे।

कुछ दिनोंके बाद उनको शरत्श्री नाम्नी स्त्रीके गर्भसे एक पुत्र हुआ। कुणाल विमाताका मनोरथ व्यर्थ करनेके इरादेसे राज्य लाभ करनेके लिये पाटलिपुत्र गये। वहां जाकर गाने बजानेसे सबका मन मोह लिया। सभी उन्हें प्यार करने लगे। धीरे धीरे यह बात राजाके कानमें पड़ी। वे अन्धे गायकको अपने प्रासादमें बुलाकर पर्देकी ओटसे उसका गाना सुनने लगे। अन्धेने गीतिच्छन्दमें अति मधुर स्वरसे इन बातोंको कहा,—"हाय! चन्द्रगुप्तका प्रपौत्र, विन्दुसारका पौत्र और अशोकश्रीका पुत्र यह अन्धा आज राह राह भीख मांगता फिरता है।" गाना सुनकर राजाने अन्धेसे पूछा,—"तुम कौन हो।" इसके उत्तरमें अन्धेने कहा,—"महाराज! मैं आपका पुत्र कुणाल हूं। आपहीके आदेशसे मैं अन्धा हुआ हूं।"

यह बात सुन राजाने सहसा पर्देको हटा दिया और डबडबाई हुई आंखोंके साथ पुत्रको आलिङ्गन करके पूछा,—"वत्स! तुम क्या चाहते हो।" इस पर कुणालने कहा,—"पिता! मेरे एक पुत्र हुआ है। आप उसीको राजतिलक दीजिये।" पुत्र कुणालकी बातसे तुष्ट होकर राजाने उसकी बात स्वीकार की एवं महासमारोहके साथ पौत्रको राजभवनमें लाकर उसका नाम 'सम्प्रति' रखा।

पहले वचन दे देनेके कारण अशोकने दश ही दिनके बाद बहुत ही कम उम्रमें अपने पौत्रको राज-सिंहासनपर बैठा दिया। राजसिंहासनपर बैठनेके समय सम्प्रति दुधपीते बच्चे थे। धीरे धीरे उम्रके साथ साथ उनकी बुद्धि, विक्रम और विद्या प्रभृति राजोचित समस्त गुण बढ़ने लगे। उन्होंने जैनधर्म ग्रहण किया।

उसी समय धर्मविप्लव उपस्थित हुआ, सुतरां सब जैन आकर पाटलिपुत्रमें इकट्ठे हुए। इकट्ठे होकर सबने उसी समय एक सङ्घ जोड़ा और उसका नाम श्रीसङ्घ रख दिया। इस सङ्घमें जैन धर्मशास्त्र संगृहीत हुआ। (परिशिष्ट पर्व)।

प्रियदर्शीके अनुशासनसे * परिचय।

बौद्ध एवं जैन ग्रन्थोंसे अशोकका जो विवरण लिखा गया है, उसमें प्रकृत बात रहनेपर भी अत्युक्ति और काल्पनिक बातें मिल गई हैं, इसमें सन्देह नहीं। इसलिये उनका प्रकृत परिचय जाननेके लिये उनके राज्यकालके उत्कीर्ण अनुशासनोंको ही अवलम्बन करना पड़ता है। इन अनुशासनोंसे प्रियदर्शीका अतिसंक्षिप्त परिचय मिलता है। वही अब कहा जाता है।

अनुशासनसे प्रियदर्शीके बालकपनका परिचय नहीं मिलता। उनकी गिरिलिपिसे प्रकट है, वे पहले अतिशय मृगयाप्रिय और युद्धप्रिय थे। राजा होकर ही वे बौद्धधर्मके अनुरागी नहीं हुए। पहले वे अतिशय मांसप्रिय थे। प्रथम गिरिलिपिसे प्रकट है, 'सुपथ्यके लिये उनकी पाकशालामें प्रतिदिन बहुत जीववध होता था। उनके अभिषेकके आठवें वर्षके बाद उन्होंने कलिङ्ग जय किया। उसमें एक लाख पचास हजार आदमी कैद हुए थे। लाख आदमी (युद्धमें) निहत हुए और उससे कई गुना कालके कलेवा हो गये।' इस संक्षिप्त विवरणसे मालूम पड़ता है, कि जिस समय वे राजपदपर अधिष्ठित हुए थे, उस समय वे समग्र भारतके एकच्छत्र अधिपति न हो सके थे, अथवा बौद्ध वा जैनधर्मपर भी उनका विशेष श्रद्धा थी, ऐसा नहीं मालूम होता। उनकी दूसरी,

* प्रियदर्शीका अनुशासन दो श्रेणियोंमें विभक्त है। कुछ तो गिरि-मालाके ऊपर खुदे हुए हैं, वे गिरिलिपि (Rock edict) और बाकी कुछ स्तम्भमें उत्कीर्ण हैं, वे स्तम्भलिपि (Columnar edict) के नामसे प्रसिद्ध हैं।

पांचवी और तेरहवीं गिरिलिपिसे मालूम होता है उनके राजत्वके चौदहवें वर्षके भीतर वर्त्तमान भारतका दश आनेसे भी अधिक उनके साम्राज्यभुक्त हो गया था। उस समय उत्तरमें हिमालयकी पाद-देशस्थ तराई (जङ्गल), दक्षिणमें मैसूर और गोदावरीका उत्तरांश, पूर्वमें वङ्गोपसागर और ब्रह्मपुत्रनद एवं पश्चिममें भारतकी वर्त्तमान पश्चिमसीमा—इस विस्तीर्ण भूभागमें उनका शासनदण्ड परिचालित हुआ था। सीमान्तवर्त्ती प्रदेशोंमें जो सब राजे राज्य करते थे और जो सब नगर अवस्थित थे, उनके सम्बन्धमें तेरहवी लिपिमें इस तरह लिखा हुआ है,—

"विजयमें यही (विजय) देवगणके प्रिय (प्रियदर्शी) मुख्य विजय (समझते हैं) यथा—धर्मविजय, उन्होंने देवगणका प्रिय पाया है। यहां (उनके अधिकारमें) और सर्व अपरान्त देशमें छः सौ योजन दूरपर अन्तिओक जहां राजा हैं, बादमें चार राजा तुरमय, अन्तिकिनि, मक और अलिकसुदर नामके (हैं), दक्षिणमें चोड़, पाण्डु (पाण्ड्य), ताम्बपनिय (ताम्रपर्णी) और हिड़ राजा भी (हैं)।" *

यवन, कम्बोज, पेतेनिक, गन्धार, रिष्टिक वा राष्टिक, विश और व्रजि, नाभक और नाभस्रति, भोज, अन्ध्र और पुलिन्दगणने भी उनकी अधीनता स्वीकार की थी।

दक्षिणसीमान्तवर्त्ती अविजित देशोंमें चोड़, पाण्ड्य, सत्यपुत्र, केरलपुत्र और ताम्रपर्णीका उल्लेख उनके अनुशासनमें है। †

शासनकी सुव्यवस्था करनेके लिये उन्होंने कुछ नियम बनाये थे। प्रत्येक प्रधान शहर 'महामात्य' नामक राजकर्मचारीके अधीन रहता था। समस्त साम्राज्य कई प्रदेशोंमें विभक्त किया गया था। प्रत्येक प्रदेशका शासन करनेके लिये एक-एक 'प्रादेशिक' नियुक्त थे। कई प्रदेशोंका एक-एक राज्य गठित था। एक एक राज्य 'राजुक' नामक एक प्रधान कायस्थ-कर्मचारीके अधीन रहता था। राज्य कई प्रधान खण्डोंमें विभक्त थे। उनमें पाटलिपुत्र, उज्जयिनी, तक्षशिला और तोसलि प्रधान था। पाटलिपुत्रमें सम्राट्की राजधानी थी।* उज्जयिनी, तक्षशिला और तोसलिका शासनभार एक एक राजकुमारके हाथमें दे दिया गया था। सम्राट्ने स्वराज्य एवं परराज्यका समाचार जाननेके लिये 'प्रतिवेदक' नामक एक श्रेणीका कर्मचारी नियुक्त कर रखा था। वे लोग खासकर प्रजा और मंत्रियोंके गुप्त कार्यादिका समाचार सम्राट्को देते थे।

कलिङ्ग विजयके समय बहुतसे आदमियोंके खूनसे उनके हृदयका भाव पलट गया। इसी समयसे उनके चित्तमें ममता और अहिंसा वृत्ति जाग उठी।

वयोवृद्धि और ज्ञानवृद्धिके साथ पहले उनका अनुराग बौद्ध धर्मपर हुआ, फिर तो अन्तमें वे पक्के बौद्ध हो गये। और बौद्धधर्मके प्रचारके लिये कमर कसकर खड़े हो गये। असि वा बलप्रयोग द्वारा अथवा प्रलोभन दिखाकर अपना महदुद्देश्य साधन करनेके लिये अग्रसर नहीं हुए। सब जीवोंपर दया, दान, धर्म उपदेश और साधुसेवा ही उनके धर्मप्रचारका सहाय हो उठी।

उन्होंने दशवें वर्ष घोषणा की,—"पहले सुखसम्भोगके लिये जो विहारयात्रा होती थी, वह अबसे धर्मयात्रा होगी।" श्रमण, ब्राह्मण, एवं वृद्धोंसे भेट मुलाकात, दीन दरिद्रोंको दान, धर्मप्रचार और धर्मजिज्ञासाके लिये ही इस धर्मयात्राकी सृष्टि हुई।" बारहवें वर्ष सम्राट्ने धर्मप्रचारका यथोचित प्रबन्ध कर दिया। उसी वर्ष उनका धर्मानुशासन लिपिबद्ध हुआ। सद्धर्मपालनके लिये सब जीवोंके प्रति अहिंसा, ब्राह्मण, श्रमण, और कुटुम्बियोंके साथ सद्व्यवहार, पितामाता, गुरुजन तथा वृद्धोंकी शुश्रुषा प्रभृति, आज्ञायें प्रचारित हुईं। राजुक और प्रादेशिकोंको आदेश दिया गया, कि उन लोगोंको राजकाज निर्वाह और धर्मप्रचार करनेके लिये प्रति पांचवे वर्ष अपने अपने इलाकेका दौरा करना होगा। पिता, माता, बन्धुबान्धव, ज्ञाति, ब्राह्मण और श्रमणोंकी शुश्रुषा,

---

* Epigraphia Indica, Vol. II. P. 473-5.

† दूसरी और तेरहवीं लिपि द्रष्टव्य।

जीवोंका दान और पाखण्डियोंके ऊपर निन्दा-विमुखता इत्यादि चलते हैं, कि नहीं, इसपर लक्ष्य रखना होगा। प्रजाकी इच्छा, अमात्य वा पञ्चायतका विवाद वा ठगोंकी बात सुनानेके लिये प्रतिवेदकगण जब चाहें उनके पास जा सकेंगे। सब काम शीघ्र सुसम्पन्न हो जानेके लिये ही सम्राट्ने ऐसा आदेश किया था।

उस समय भी यज्ञयूपमें यथेष्ट पशुवध होता था, यज्ञके लिये पशुवध करना ब्राह्मणधर्ममें निन्दित नहीं वरं अनुष्ठेय है। सम्राट्ने घोषणा कर दी,—"आहारके लिये किसी जीवका वध करना अकर्त्तव्य है। यज्ञयूपमें भी जीवनाश करना उचित नहीं। राजरन्धनशालामें आहारके लिये किसी जीवकी हत्या न होगी।"*

प्रियदर्शीने निज राज्यमें और दूरदेशीय विभिन्न स्वाधीनराज्योंमें भी मनुष्य एवं साधारण पशुकी प्राणरक्षाके लिये दो प्रकारके चिकित्सालय संस्थापन किये थे। जहां औषध न मिलती थी, वहां नवीन बीज रोपन कराया था। उनकी आज्ञासे सर्वसाधारणके लिये कुयें खुदवाये गये थे।

उनके धर्मानुशासनका प्रचार होता है, कि नहीं और सर्वसाधारण उसके अनुसार काम करते हैं कि नहीं, यह देखनेके लिये प्रियदर्शीने अपने अभिषेकके तेरह वर्षके बाद 'धर्ममहामात्य' नामक कुछ अमात्योंको नियुक्त किया था।†

इस समय सर्वसाधारणके हितके लिये प्रियदर्शीका चित्त आपही आकृष्ट हुआ था, दूसरेके लिये उनका हृदय व्याकुल हो उठा था। इस समय उन्होंने जो सद्धर्म प्रचार किया, उसकी मूल नीति यही थी,—

१ जीवकी अहिंसा, २ पितामाताकी शुश्रुषा, ३ बन्धु और ज्ञातिवर्गके साथ सद्व्यवहार, ४ ब्राह्मण एवं श्रमणोंको दान देना और उनकी शुश्रूषा करना, ५ दीन और भृत्योंके साथ सद्व्यवहार, ६ विधर्मियोंके प्रति निन्दाविमुखता, ७ श्रम, भावशुद्धि, कृतज्ञता और दृढ़भक्ति।*

* ७ वीं गिरिलिपि।

† पञ्चम गिरिलिपि।

गिरिलिपिमालाको आलोचना करनेसे ऐसा नहीं मालूम होता, कि वे राजत्वके चौदहवें वर्ष तक सम्पूर्णरूपसे बौद्ध हो गये थे। ब्राह्मणधर्ममें लालित पालित होनेके कारण ब्राह्मणधर्मपर भी उनका अनुराग ह्रास न हुआ था। अशोकके पितामह चन्द्रगुप्त जैनधर्मानुरागी थे। अधिक सम्भव है, कि आजीवक और जैनसंसर्गसे उन्होंने पहले अहिंसाधर्म सीखा हो, और वयोवृद्धि एवं ज्ञानवृद्धिके साथ साथ बौद्धाचार्योंके प्रभावसे वे धीरे धीरे बौद्ध हो गये हों।

दाक्षिणात्यमें मैसूरके अन्तर्गत चित्तलदुर्गके अधीन सिद्दापुरसे आविष्कृत गिरिलिपिमें लिखा है,—

"देवगणके प्रिय (प्रियदर्शी) ने यह कहा है, कि ढाई वर्षसे अधिक मैं उपासक था, किन्तु (उस समय भी) कोई चेष्टा नहीं की। छः वर्ष क्यों, उससे भी अधिक समय तक मैं सङ्घमें उपगत था। उस समयमें (धर्म) की वृद्धिके लिये चेष्टा की थी। जो सब मनुष्य (ब्राह्मण) जम्बूद्वीपमें सत्य अनुमित थे, वे सब इस समय देवगणसहित असत्य प्रतिपन्न हुए।" †

प्रियदर्शीने ठीक किस समय बौद्धधर्म ग्रहण किया, यह जाननेका उपाय नहीं। उनकी तेरहवीं गिरिलिपिसे प्रकट है, कि उन्होंने अभिषेकके आठवें वर्षके बाद (नववर्षमें) कलिङ्ग विजय किया। वहां बहुतसे प्राणियोंकी हत्या देखकर उनके मनमें अनुताप हुआ। उसी अनुतापसे उनका मन धर्मपथपर दौड़ा। ऐसे स्थलमें ऐसा मालूम पड़ता है, कि अभिषेकके दशवें वर्ष वे उपासक हुए।

पालिमहावंशके मतसे, राज्यलाभके चार वर्ष बाद अशोकका अभिषेक हुआ। यदि यही सच है, तो राज्यलाभके अन्ततः चौदह वर्ष बाद उन्होंने बौद्धधर्मग्रहण किया। निग्लीवके अनुशासनमें लिखा है, अभिषेकके चौदह वर्ष बाद प्रियदर्शीने कोणागमन नामक गतबुद्धके पूर्वस्थित स्तूपको बढ़ाया।‡

* द्वितीय गिरिलिपि। † पञ्चम गिरिलिपि। ‡ सप्तम गिरिलिपि।

पलेरियाकी गिरिलिपिसे भी मालूम होता है, कि अभिषेकके बीस वर्ष बाद उन्होंने शाक्यबुद्धके जन्मस्थान लुम्बिनी ग्राममें जाकर बुद्धकी पूजा की और उस ग्रामको बुद्धके उद्देशमें कररहित कर दिया।

प्रियदर्शीने बौद्धशास्त्रके प्रचारके लिये भी विशेष चेष्टा की थी। जयपुरके अन्तर्गत भाव्रासे आविष्कृत गिरिलिपिमें ऐसा ही लिखा है,—

'राजा प्रियदर्शी मागधसङ्घको अभिवादन करके कहते हैं, निरापद सच्चरित्रकी इच्छा करते हैं। आप लोगोंको मालूम है, बुद्ध, धर्म और सङ्घका प्रसाद और शुभकामना करता हूं। भगवान् बुद्धने जो कुछ कहा है, सभी सुभाषित है। जहांतक मैं आदेश कर सकता हूं वहां तक मैं उसकी घोषणा करना इसलिये उत्तम समझता हूं, कि उससे सद्धर्म चिरस्थायी होगा, धर्मपर्याय यही हैं—विनयसमुत्कर्ष, आर्य्यवस, अनागतभय, मुनिगाथा, मोनेयसूत्र, उपतिष्यप्रश्न और लाघुलोवादमें मृषावाद, भगवान् बुद्ध कर्त्तृक परिभाषित हैं। मेरी इच्छा है, कि बहुतसे भिक्षु और भिक्षुणियां अविरत इन धर्मपर्यायोंको सुनें और ध्यान करें; उपासक और उपासिकायें भी ऐसा ही करें। इसी अभिप्रायसे यह लिखवाया, जिसमें सर्व साधारणको मेरी इच्छा मालूम हो जाय।'

उक्त धर्मपर्याय वा धर्मशास्त्रोंमें कुछका आभास पाया गया है। विनयसमुत्कर्ष—विनयपिटकका सारांश प्रातिमोक्ष (पातिमोक्ख), अनागतभय—सूत्रपिटकके अङ्गुत्तरनिकायशाखाका 'आरण्यकानागतभयसूत्त,' उपतिष्यप्रश्न—विनयपिटकका महावग्ग ग्रन्थके 'शारिपुत्र-प्रश्न,' मुनिगाथा—सूत्रपिटकके सुत्तनिपातके अन्तर्गत 'मुनिगाथा' नामक १२वां सूत्र, लाघुलोवादमें मृषावाद—मज्झिमनिकायका अम्बलट्ठिका राहुलोवाद नामक ६१वां सूत्र।

सिंहलके दीपवंश और महावंशमें भी लिखा है, कि अशोकके समयमें दूसरी धर्मसङ्गीति हुई थी और उसमें बुद्धके उपदेशमूलक शास्त्रोंका संग्रह हुआ था।

केवल स्वराज्यमें ही नहीं, विदेशमें भी धर्मप्रचार करनेके लिये प्रियदर्शीने विशेष यत्न किया था। जहां अन्तियोक (Antiochus), तुरमय (Ptolemy), अलिकसुदर (Alexander) आदि यवनराज राज्य करते थे। मिस्र, ग्रीस प्रभृति सुदूरदेशोंमें भी प्रियदर्शीने धर्मप्रचारक भेजे थे। ससेरामकी गिरिलिपिमें २५६ विबुध वा धर्मप्रचारकोंका उल्लेख है। सिंहलके दीपवंशमें दश प्रधान धर्मप्रचारकोंके नाम और उनमेंसे कौन किस देशमें भेजे गये थे, उसका उल्लेख है। यथा,—काश्मीर और गान्धारमें मज्झन्तिक (मध्यान्तिक), महिष (महिसुर)में महादेव, वनवासी (वा उत्तर कानड़ा)में रक्षित, अपरान्त देशमें वाह्लिकदेशीय धर्मरक्षित, महाराष्ट्रमें महाधर्मरक्षित, योनदेश (सिरीय और अन्यान्य ग्रीकराज्यों)में महारक्षित, हिमवत्प्रदेशमें मज्झम (मध्यम), सुवर्णभूमि (ब्रह्म मलय आदि स्थानों)में सेन और उत्तर एवं सिंहलमें महेन्द्र (महिन्दो)।

वयोवृद्धि और राज्यवृद्धिके साथ साथ प्रियदर्शीकी दया भी विश्वव्यापिनी हो गई थी। उनके पञ्चम स्तम्भलिपिमें लिखा है,—

'देवगणके प्रिय राजा प्रियदर्शी यह कहते हैं, अभिषेकके छब्बीस वर्ष बाद नीचे लिखे हुए जीवोंका वध बन्द कर दिया गया—शुक, सारिका, अरुन, चक्रवाक, हंस, नान्दीमुख, गिलाट्, जतुका, अम्बाकपीलिका, ददी, अनठिकामत्स्य, वेदवेयक, गङ्गापुटक, संयुक्तमत्स्य, कफटशय्यक, पन्नसस, सृमर, षण्डक, ओकपिण्ड, पलसत, श्वेतकपोत, ग्राम्यकपोत, और दूसरे दूसरे चौपाये, जो भोगमें नहीं आते और खाये नहीं जाते; अजका (बकरी), एड़का (भेड़ी), शूकरी, गर्भिणी वा दुग्धवती ये सभी अवध्य हैं। उनके छः महीनेसे कमके बच्चे भी अवध्य है। वधिकुक्कुट न काटना, तुषमें जीव दग्ध न होगा। अनिष्टार्थ वा हिंसार्थ वनको न जलाना। जीवद्वारा अन्य जीवका पोषण न करना। तीन चातुर्मास्य, पौषपूर्णिमा, चतुर्दशी, पञ्चदशी एवं प्रतिपद् और प्रति उपवासके दिन मत्स्य अवध्य है। इन सब दिनोंमें मछलीको किसी भी न होगी। उस दिन नागवन और केवटभोगमें जो और और जीव रहेंगे, वे

भी अवध्य हैं। अष्टमी, चतुर्दशी और पूर्णिमा, तिष्य और पुनर्व्वसु नक्षत्रयुक्त दिन, तीन चातुर्मास्य, और पर्व दिनमें वृष, अज, मेष, शूकर और अन्यान्य जीव खासि न किये जायंगे। तिष्य और पुनर्वसु, चातुर्मास्य पूर्णिमा और चातुर्मास्य पक्षमें अश्व वा गोको लाञ्छित न करना।'

वे बौद्धधर्म्मावलम्बी और बौद्धोंपर अनुरक्त होनेपर भी ब्राह्मण और श्रमणपर समान भक्ति दिखाते थे। बौद्ध होनेके बाद उन्होंने यज्ञमें पशुवध होनेकी निन्दा की है और 'जो सब मनुष्य जम्बुद्वीपमें सत्य अनुमित होते अब देवगणसहित असत्य प्रतिपन्न हुए' इत्यादि उक्ति द्वारा ब्राह्मणधर्मपर कटाक्ष करनेपर भी वे विद्वान् ब्राह्मणका यथेष्ट समादर करते थे।

वे जीवनके अन्ततक बौद्ध रहे, कि नहीं, सो नहीं कहा जा सकता। वे अभिषेकके बीस वर्ष बाद आजीवक जैनियोंपर भी सदय हुए थे, यह बराबरकी लिपिसे प्रकट होता है। इसीसे कोई कोई अनुमान करते है, कि अशोकने अन्तमें आजीवकधर्म अवलम्बन किया था। जैन ग्रन्थोंसे भी मालूम होता है, कि अशोककी जीवद्दशामें राज्यकाल शेष हो आनेपर और उनके शिशुपौत्र सम्प्रतिके उनके द्वारा राजपद लाभ करनेपर पाटलिपुत्रमें श्रीसङ्घ हुआ था, और पहले बौद्धशास्त्र जिस तरह संग्रहीत हुआ था, इस श्रीसङ्घमें उसी तरह जैनाचार्योंने जैनशास्त्र संग्रह किया था।

अशोक प्रियदर्शीका कालनिर्णय।

'तीत्थुगलिय-पयन्न'* और 'तीर्थोद्धारप्रकीर्ण'† नामक प्राचीन जैन-शास्त्रके मतसे जिस रातको तीर्थङ्कर महावीर स्वामीने सिद्धि पायी, उसी रातको पालक राजा अवन्तीके सिंहासनपर बैठे थे। पालकवंश ६०, उसके बाद नन्दवंश १५५, मौर्यवंश १०८, पुष्यमित्र ३०, बलमित्र एवं भानुमित्र ६०, नरसेन वा नरवाहन ४०, गर्दभिल्ल १३ और शकराजने ४ वर्ष राजत्व किया। महावीरस्वामीके परिनिर्वाणसे शकराजके अभ्युदयकाल पर्यन्त ४७० वर्ष वीते थे। इधर सरस्वती-गच्छकी पट्टावलीसे देखते, कि विक्रमने उक्त शकराजको हराया सही, किन्तु सोलह वर्ष तक राज्याभिषिक्त न हुए। उक्त सरस्वती-गच्छकी गाथामें स्पष्ट लिखा है,—"वीरात् ४९२, विक्रमजन्मान्त वर्ष २२, राज्यान्त वर्ष ४" अर्थात् शकराजके ४७० और विक्रमाभिषेकाब्दके ४८८ अर्थात् सन् ई०से ५४५-४ वर्ष पहले महावीरस्वामीको मोक्ष मिला था।

पूर्ववर्ती ऐतिहासिक वीरमोक्षके ४७० वर्ष बाद शकराजका पराजय और विक्रमका अभिषेक-मान सन् ई० से ५२७ वर्ष पहले वीरमोक्षाब्द ठहराते रहे। किन्तु अब हम सरस्वतीगच्छकी गाथासे अच्छी तरह समझते हैं, कि वह भी १७ वर्ष बाद अर्थात् सन् ई० से ५४५ वर्ष पहले वीरमोक्ष हुआ था। आश्चर्यका विषय है, कि सिंहल, ब्रह्म, श्याम प्रभृति बौद्ध-समाजमें उक्त वीरमोक्षके दूसरे वर्ष ही बुद्धका निर्वाणाब्द निर्णीत किया गया। सिंहलवाले पाली महावंशके मतसे बुद्ध-निर्वाणके २१८ वर्ष बाद अशोकका राज्याभिषेक हुआ था।‡ इधर जैनाचार्य हेमचन्द्रके परिशिष्टपर्वमें लिखा है,—वीरमोक्षाब्दके

* "जं रयणिं सिद्धिगओ अरहं तित्थंकरो महावीरो।
तं रयणिमवंतिराअभिसित्तो पालओ राया॥
पालगरन्नो सट्ठी पणपन्नसय वियाण नंदाणं।
मरुआणं अट्ठसयं तीसापुण पूसमित्ताणं॥
बलमित्त-भानुमित्ता सट्ठीचत्ताय हौंति नरसेणे।
गद्दभसयमेगं पुण पत्तिवओ तो सगोराया॥
पंचयमासा पंचयवासा छच्चे वहुंति वाससया।
परिनिव्वयस्स अरहतो उपन्नो सगो राया॥" (तीत्थुगलियपयन्न)

† "जं रयणिं कालगओ अरिहा तित्थंकरो महावीरो।
तं रयणिं अवंति वई अभिसित्तो पालयो राया॥ १॥
सट्ठी पालग रन्नो पणपन्नसयंतु होई नंदाणं।
अट्ठसयं मुरियाणं तीसंचिअ पुस्समित्तस्स॥ २॥
बलमित्त-भानुमित्ता सट्ठी वरिसाणि चत्त नरवाहणी।
तह गद्दभिल्लरन्नो तेरसवरिसा सगस्स चउ॥ ३॥"
(तीर्थोद्धारप्रकीर्ण)

‡ "जिननिव्वानतो पच्छा पुरे तस्साभिसेकतो।
अट्ठारसंवस्ससतं इयमेवं विजानियं॥"
(महावंश ५म परि०

१५५ वर्ष बाद चन्द्रगुप्तका अभिषेक हुआ। महावंश और परिशिष्टपर्वके उक्त प्रमाणको मान हमने किसी समय सन् ई०से ३७२ वर्ष पहले चन्द्रगुप्त और ३२५ वर्ष पहले अशोकका राज्याभिषेक स्थिर किया था। किन्तु आजकल तीत्थुगालियपयन्न, तीर्थोद्धारप्रकीर्ण एवं सरस्वती प्रभृति गच्छकी प्राचीन गाथासे देखते, कि वीरमोक्षके दिन ही अर्थात् सन् ई०से ५४५ वर्ष पहले पालकराजका अभिषेक हुआ और पालकवंशने ६० वर्ष राज्य किया। हेमचन्द्रके अपने परिशिष्टपर्वमें पालकवंशका ६० वर्ष एकबारगी ही छोड़ देनेसे उनकी गणनामें भूल पड़ी। हम बृहत्-खरतरगच्छ एवं तपागच्छकी पट्टावलीसे समझ सकते, कि नन्दवंशके उच्छेद और चन्द्रगुप्तके अभिषेक-वर्ष ही पट्टधर स्थूलभद्रने मोक्ष पाया था। वीरमोक्षके २१८ वर्ष बाद ही यह घटना हुई। जैन शब्द देखो। ऐसे स्थलमें प्राचीन जैनसम्प्रदायके मतसे (५४५-२१८) सन् ई०के ३२६-२५ वर्ष पहले चन्द्रगुप्तका अभिषेक हुआ था।

इधर सिंहलके दीपवंशमें विनयाचार्य स्थविरगणका इसी तरह काल माना गया है। उपाली ७४, दर्शक ५०, सोमक ४४, सिग्गव ५५ और तिस्स मोग्गलिपुत्तका ६८ वर्ष काल बताते हैं। सिंहलके महावंशमें लिखा है शाक्यबुद्धके परिनिर्वाण बाद उपाली ही विनयाचार्य हुए थे। उधर दीपवंशमें लिखा है,—अशोकाभिषेकके २७म वर्षमें मोग्गलिपुत्तने मोक्ष पाया। सुतरां दीपवंश और महावंशके आचार्यपरम्परासे समझ सकते, कि बुद्धनिर्वाणके (७४+५०+४४+५५+६८) २९१ वर्ष बाद अशोककी बात है। इस गुरुपरम्पराके अनुसार बुद्धनिर्वाणके २१८ वर्ष बाद अशोकका अभिषेक हो नहीं सकता। राजकीय विवरणोंकी अपेक्षा धर्माचार्यगण गुरुपरम्परासे इतिहासकी प्रति सावधान हो रहा करते थे। ऐसी दशामें गुरुपरम्परासे इतिहास समधिक विश्वासयोग्य है। पूर्वमें जैनशास्त्रानुसार बता दिया है, कि सन् ई० से ३२६-२५ वर्ष पहले चन्द्रगुप्तका अभिषेक हुआ था। ठीक उसी समय बुद्धनिर्वाणाब्द २१८ वर्ष होता है। उत्कलकी खण्डगिरिस्थ हाथी-गुफावाले खारवेल-भीखुराजके शिलालेखसे समझ सकते हैं, कि उक्त कलिङ्गराजके समय पर्यन्त मौर्याब्द चलता रहा। कहनेसे क्या है—चन्द्रगुप्तके अभिषेकसे ही मौर्याब्द चला था। सम्भवतः महावंशकारने भ्रमक्रमसे चन्द्रगुप्तका अभिषेकाब्द वा मौर्याब्द ही अशोकका अभिषेकाब्द समझ लिया होगा। जो हो, अब बौद्ध और जैन उभय शास्त्रसे मालूम पड़ता, कि वीरमोक्ष २१८ एवं बुद्धनिर्वाणके २१८ वर्ष बाद चन्द्रगुप्तका अभिषेक हुआ था। हिन्दू, बौद्ध और जैन—इन तीनों सम्प्रदायकी विवरणी देखनेसे समझ पड़ता, कि चन्द्रगुप्त २४, उनके पुत्र विन्दुसार २५ और उनके पुत्र अशोकने ३६ वर्ष (अभिषेकसे ४ वर्ष पूर्व) राजत्व किया।* ऐसे स्थलमें सन् ई० से २७७-७६ वर्ष पहले अशोकने राज्य पाया और सन् ई० से २७३-२७२ वर्ष पहले राज्याभिषेक हुआ था। [चन्द्रगुप्त और मौर्य शब्दमें विस्तृत विवरण देखना चाहिये।]

अशोकके चरित्रकी समालोचना।

बौद्धके आविर्भावकालसे अबतक भारतमें जितने राजा राज्य कर गये हैं, उनमें किसीके साथ प्रियदर्शीकी तुलना नहीं होती। जीवनके प्रथमांशमें जो उद्धत प्रकृति, नरशोणितलिप्सा एवं स्वगणविद्वेषके कारण समाजकी दृष्टिमें अतिष्टस्थ और निन्दास्पद हो उठा था, वही दुष्टप्रकृति सम्भोग और समृद्धिकी गोदमें लालितपालित होनेपर भी कैसा संशोभित एवं विशुद्ध होकर अतुलनीय और आदर्शस्वरूप हो सकता है, अशोकका चरित्र उसका प्रकृष्ट प्रमाण है। राजनीतिक कार्य्यकुशलता, युद्धनिपुणता एवं लोकचरित्रशिक्षामें उन्होंने भारतविश्रुत अकबरको भी पराजित कर दिया था। वीर्य्यवत्ता और राज्यवृद्धिमें कोई मोगल-सम्राट् उनके समकक्ष नहीं हैं। अकबर जिस तरह विदेशियोंसे संस्रव रखते, देशी विदेशी सभी पण्डितोंका आदर सम्मान करते और हिन्दू,

* Journal of the Bihar and Orissa Research Society, Vol I. (1915) p. 96.

मुसलमान, खृष्टान, पार्श्वी प्रभृति सभी प्रजाको सम-भावसे देखते थे, उसी तरह अशोक भी ग्रीस प्रभृति दूरदेशोंके साथ सम्बन्ध रखते, ब्राह्मण वा श्रमण सभी पण्डितोंकी यथेष्ट श्रद्धाभक्ति करते एवं हिन्दू, बौद्ध, जैन प्रभृति सभीके उपकारके लिये समान यत्न करते थे। बुद्धदेवका प्रचार किया हुआ धर्म भारतके केवल कुछ ही अंशमें आवद्ध था, किन्तु इन्हीं अशोकके समयमें बुद्धके विमल उपदेश समस्त एशिया, यहां तक, कि युरोपखण्डमें भी प्रचारित हो गये। अशोकके समयमें भी बौद्धधर्ममें विशेष जटिलता एवं खुंटिनाटीको स्थान न मिला था। उनके अनुशासनमें सबजीवोंपर दया एवं साधारणकी प्रतिपाद्य साम्य-नीति ही उपदिष्ट हुई है।

युरोपीय पुराविद्गणने अशोकके साथ कनृष्टण्टा-इन, सोलोमन, लुई दी पायस् प्रभृति प्रातःस्मरणीय धार्मिक राजगणकी तुलना की है।

अशोकमञ्जरी (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष। यह दण्डक छन्दके अन्तर्गत है। इसमे २८ अक्षर होते हैं और लघुगुरुका कोई नियम नहीं रहता।

अशोकमल्ल—प्राचीन संस्कृत कवि। इन्होंने नृत्याध्याय नामक ग्रन्थ लिखा था।

अशोकमल्ल राजन्—निघण्टुसार नामक ग्रन्थ-रचयिता प्राचीन संस्कृत-कवि।

अशोकरोहिणी (सं० स्त्री०) अशोक इव रोहति वा अशोक-रुह-णिनि। कटुका, कुटकी।

अशोकवन, अशोकवाटिका देखो।

अशोकवाटिका (सं० स्त्री०) १ अशोककी वाटिका, जो फुलवारी अशोककी हो। २ रम्य उद्यान, जो फुलवारी रञ्ज मिटाती हो। ३ रावणका प्रसिद्ध उद्यान। जगज्जननी सीता इसीमें रही थीं।

अशोकषष्ठी (सं० स्त्री०) नास्ति शोको यस्याः, नञ् ५-बहुव्री० ततः कर्म० पूर्वपदस्य पुंवद्भावः। चैत्रमासकी शुक्लषष्ठी। चैत्र मासकी कृष्ण और शुक्ल दोनों षष्ठीकी पूजा की जाती है। इस व्रतको करनेसे शोक नहीं होता। किन्तु इस लोगोंके देशमें स्त्री ही चैत्र मासकी शुक्ला षष्ठीको पूजन एवं छः अशोककी कली पान करती हैं, इसीको अशोकषष्ठी कहते हैं। इस दिन स्त्रियां न तो खेतसे पैदा कोई चीज़ खातीं और न जोती जमीन पर पैर ही रखती हैं। कहावत, है,—'जोती खावों न जोती रोदों। आज मेरे हरदों में दी दी।'

अशोका (सं० स्त्री०) नास्ति शोको दुःखमेवनेन यस्याः, नञ् ६-बहुव्री०। कटुका, कुटकी। चैत्र शुक्ला षष्ठी।

अशोकारि (सं० पु०) अशोको ह्रियतेऽनेन कृ-इन् गुणः ततः पञ्चमी-तत्। १ अशोकदायक, आराम देनेवाला। २ कदम्बवृक्ष, कदम्बका पेड़।

अशोकाष्टमी (सं० स्त्री०) नास्ति शोकः यस्याः, नञ्-५-बहुव्री। चैत्रमासकी शुक्लाष्टमी। हेमाद्रिके व्रतखण्डमें लिङ्गपुराणका एक वचन गृहीत हुआ है, उसका अर्थ यही है, कि पुनर्वसुनक्षत्रयुक्त चैत्र मासकी शुक्ल अष्टमीमें जो अशोककी आठ कलिका पान करेगा, वह शोक प्राप्त न होगा। इसमें अशोक कलिकाद्वारा रुद्रकी अर्चनाका विधान है।

जिस दिन ढाई पहरके समय अष्टमी हो उसी दिन अशोककलिका पान करनेकी विधि है। पुनर्वसुनक्षत्रमें फलाधिक्य मात्र है। पुनर्वसुनक्षत्रका योग न हो, तो केवल अष्टमीमें ही अशोकपान करना। पुनर्वसुनक्षत्रयुक्त चैत्रमासकी शुक्ल-अष्टमीके वृषलग्नमें ब्रह्मपुत्रनदके जलमें स्नान करना आवश्यक है। पृथिवीमें जितने तीर्थ, नदी वा सागर हैं, सभी उस तिथिमें ब्रह्मपुत्रनदमें आते हैं। इसीसे उसमें स्नान करनेसे समस्त पाप दूर हो जाता है। स्नानका मन्त्र, यथा—

> ब्रह्मपुत्र महाभाग शान्तनोः कुलनन्दन।
> अमोघागर्भसम्भूत पापं लौहित्य मे हर॥

इस तिथिको ब्रह्मपुत्रमें स्नान करनेके लिये बहुत यात्री आते हैं। वहांकी पुलिस विशेष यत्नके साथ यात्रियोंकी हिफ़ाज़त करती है।

लोहित सरोवरसे ब्रह्मपुत्र निकला है, इसीसे उसका नाम लौहित्य है। कालिकापुराणमें और एक विधान यह है, कि नियतेन्द्रिय होकर चैत्रमास

भर लौहित्यके जलमें स्नान करनेसे ब्रह्मपद प्राप्त होता है। विष्णुके मतसे यदि बुधवारको पुनर्वसु नक्षत्र युक्त चैत्रमासकी शुक्ल अष्टमी हो, तो सब नदियोंमें स्नान करनेसे वाजपेय यज्ञका फल लाभ होता है।

अशोच (सं० पु०) शुच्-अच् नञ्-तत्। शोका भाव, रञ्जकी अदममौजूदगी।

अशोच्य (सं० त्रि०) शुच-कर्मणि-ण्यत्, नञ्-तत्। १ शोकानर्ह, रञ्ज न करने काबिल। २ आत्मघाती।

अशोथनेत्रपाक (सं० पु०) विना शोथ नेत्रपाकरोग, जिस आंखके फोड़ेमें सूजन न रहे।

अशोधन (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ शोधनाभाव, सफ़ाईकी अदममौजूदगी, गन्दगी, मैलापन। २ भूलचूक, ग़लती। (त्रि०) नास्ति शोधनं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ शोधनशून्य, मैला-कुचेला, गन्दा। ४ अशुद्ध, ग़लत।

अशोधित (सं० त्रि०) शुध्-णिच्-क्त इट् गुणः णिच् लोपः, ततः नञ्-तत्। १ जलादि द्वारा धौत न किया हुआ, मैला, गन्दा, जो पानी वग़ैरहसे साफ़ किया न गया हो। २ परिशोधन किया हुआ, जो अदा न किया गया हो। ३ शुद्ध न किया हुआ, जो सही न किया गया हो।

अशोभन (सं० क्ली०) शुभ-भावे-ल्युट्, अभावे नञ्-तत्। १ मङ्गलका अभाव, खुशीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) कर्तरि ल्यु नञ्-तत्। २ कुरूप, जो खूबसूरत न हो। ३ कुत्सित, ख़राब, बुरा।

अशोरी (अशेरी) बम्बई प्रान्तका थाना जिलेके महिमताल्लुकका किला। यह पर्वतके शिखरपर अवस्थित है। इसके इधर उधर ऐसा उच्च स्थान नहीं पड़ता, जिसपर तोप लगाया जा सके। पर्वत काट कर एक सङ्कीर्ण मार्ग निकाला गया है। इस मार्गसे दो मनुष्यके साथ आ-जा नहीं सकते। थोड़े ही वीर इसकी रक्षाको यथेष्ट होते और पाषाण लुढ़काकर कितनी ही सेनाको नाश कर सकते हैं। अस्सी वर्ष तक महाराष्ट्रोंका इसपर अधिकार रहा था।

अशोषणीय, अशोष्य देखो।

अशोष्य (सं० त्रि०) शुष्-णिच्-ण्यत् णिच् लोपः, नञ्-तत्। शोषण किये जानेको अशक्य, जिसे कोई सुखा न सके।

अशौच (सं० क्ली०) शुचेर्भावः शौचं ततो नञ्-तत्। शुचिका अभाव, शुचित्वका अभाव, स्मृतिशास्त्रप्रसिद्ध विहित कर्ममें अनधिकारसम्पादक अशुद्धावस्था।

निकटके ज्ञातिकुटुम्बमें किसीकी मृत्यु होजाने किम्वा किसीके पुत्र-कन्या उत्पन्न होनेसे शरीर कुछ दिन अशुद्ध रहता है। इसीको हम लोग सचराचर अशौच कहते हैं।

शास्त्रमें दो प्रकारका अशौच निर्दिष्ट हुआ है,—कालकृत एवं वस्तुका स्वाभाविक धर्मकृत। शरीरमें व्रण आदि हो जानेसे जबतक वे सब अच्छे न हो जायं तबतक देह अशुचि रहती है। निकट ज्ञातिके किसीके पुत्र कन्या जन्मने या किसीकी मृत्यु होनेसे कुछ दिनके लिये शरीर अशुचि हो जाता है; इसका नाम कालकृत अशौच है। मल-मूत्र, चाण्डालादि जाति स्वभावतः अशुद्ध हैं।

ज्ञातिके पुत्र कन्या उत्पन्न होनेसे जो अशौच होता, उसे शुभ अशौच कहते हैं। ज्ञातिकी मृत्यु होनेसे जो अशौच होता है, उसका नाम अशुभ अशौच है।

अतिप्राचीन कालसे सब देशोंमें सभी जाति गुरुजनकी मृत्युके बाद किसी न किसी तरहसे अशौच ग्रहण करती आती है। अशौचके समय शोक प्रकाश करनेके लिये कितने ही शोकसूचक वस्त्र धारण करते हैं। हमारे देशके हिन्दू मातापिताकी मृत्युके बाद गलेमें नये कपड़ेका टुकड़ा बांधते हैं। अशौचके समयमें वे लोग तेल नहीं लगाते, जूता नहीं पहनते, छाता नहीं लगाते और हजामत नहीं बनवाते। दिनमें केवल हविष्यान्न भोजन करते और रातमें थोड़ासा दूध आदि पी लेते हैं। ऐसे समयमें स्त्रीसंसर्गादि सब तरहके सुख भोग निषिद्ध हैं।

प्राचीन यहूदियोंमें अशौचकाल केवल सात दिन था, कोई कोई तीस दिन अशौच मानते थे। अशौचके समय सभी हजामत बनवा डालते, वस्त्र फाड़

डालते, जूता न पहनते, तेल न लगाते और स्नान न करते थे। संयम सहित सभी भूमिपर सो रहते थे। ग्रीस देशवासी तीस दिन अशौच मानते थे। केवल स्पार्टावालोंमें दश ही दिन अशौच माननेकी प्रथा थी। अशौचके समय वे लोग हजामत बनवाकर काला कपड़ा पहन लेते और किसीके सामने बाहर न होते थे। रोमदेशमें स्वामीके मरनेपर स्त्री एक वर्ष तक अशौच मानती थी, पर पुरुषोंका अशौच थोड़े ही दिन रहता था। अशौचके समय स्त्रियां सफेद और पुरुष काला कपड़ा पहनते थे। पहले स्पेनदेशवासी भी अशौचके समय सफेद कपड़ा ही पहनते थे। आजकल युरोपवासी अशौचके समय काला कपड़ा पहनते हैं; कोई कोई हाथपर काला कपड़ा लगा लेते हैं। पत्र लिखनेके समय जो कागज और लिफाफा व्यवहार करते, उसके चारो ओर काली लकीर छपी रहती है। तुर्क लोग अशौचके समय गहरे नीले रङ्गका कपड़ा पहनते हैं।

हिन्दूओंके जनन और मरण अशौचका नियम यों है,—सात पुरुषतक ब्राह्मणका १० दिन, क्षत्रियका १२ दिन, वैश्यका १५ दिन और शूद्रका एक महीना। चाण्डाल, मेहतर, मोची आदि नीच जातिवाले केवल दश ही दिन अशौच मानते हैं।

अशौचके कुछ दिन बीत जानेपर यदि ज्ञाति कुटुम्बियोंको वह समाचार मिले, तो उन्हें बाकी कई दिन ही अशौच मानना होता है। मरणका अशौच बीत जानेके बाद यदि एक वर्षके भीतर ज्ञातियोंको वह समाचार मिले, तो त्रिरात्र अशौच रहता है। एक वर्षके बाद मरणाशौच सुननेसे सपिण्डगण स्नान करके शुद्ध हो जाते हैं। किन्तु एक वर्षके बाद मातापिताका मृत्यु-समाचार पानेपर पुत्रके लिये एक दिन अशौच रहता है। एक वर्षके बाद पतिकी मृत्युका समाचार पानेसे स्त्रियोंको एक दिन अशौच होता है। दूसरे वर्ष सुननेसे सद्यः अशौचान्त हो जाता है। किन्तु शुभ अशौच वा खण्डाशौच बीत जानेके बाद उसकी खबर मिलनेपर फिर अशौच नहीं मानना पड़ता।

दीक्षागुरुकी मृत्युके बाद त्रिरात्र अशौच होता है। जिससे वेदवेदाङ्गादि शास्त्र पढा जाता है, उसकी मृत्युका अहोरात्र अशौच होता है।

सब वर्णोंके लिये दश पुरुषतक जनन और मरण अशौच त्रिरात्र होता है और चौदह पुरुषतक पक्षिणी अर्थात् दो दिन और एक रात। (पूर्व दिन एवं मध्यकी रात और उसके बादका दिन, इसीका नाम पक्षिणी है)।

जन्मनाम स्मरणतक अर्थात् उभय पूर्वपुरुषोंके नाम स्मरणतक सब वर्णोंका एक दिन अशौच होता है। उसके बाद स्नान करके ज्ञातिगण शुद्ध हो जाते हैं। मातामहकी मृत्युमें त्रिरात्र।

मौसेरा भाई, फुफेरा भाई, ममेरा भाई, भाञ्जा, पितामहीभगिनीपुत्र, पितामही-भ्रातृपुत्र, दौहित्र, भगिनी, मामी, मातुल, मासी, फूफू, गुरुपत्नी, मातामही एवं एक ग्रामवासी श्वसुर सासकी मृत्युमें पक्षिणी। मातामह भगिनी पुत्र, मातामहीभगिनीपुत्र, मातामहीभ्रातृपुत्र, और एक ग्रामवासी स्वगोत्र व्यक्तिके मरनेमें अहोरात्र। पितामाताकी मृत्युमें विवाहिता कन्याका त्रिरात्र अशौच। (विशेष विशेष कारणसे विशेष विशेष अशौचकालका विवरण शुद्धितत्त्वमें देखो)।

अशौचका समय बीतजानेपर सज्जाति हिन्दू भोजन बनानेकी हांड़ी वगैरहका फेंक देते हैं। मरणाशौचके अन्तवाले दिन क्षौरकर्म्मादि करना पड़ता है। ज्ञातिगण घरसे कुछ दूर अथवा गांवके किनारे जाकर हजामत बनवाते; उसके बाद स्नान करके सब कोई घर आते हैं। मातापिताके मरणाशौचमें पुत्र इसी दिन पूरक पिण्डादि देते हैं। अन्तमें क्षौरकर्मके उपरान्त स्नानादि करके स्त्रियोंके साथ घर आते और पूर्णघट तथा अवव्यञ्जनादिका दर्शन करते हैं।

पूर्वकाल आर्योंमें अशौचान्तके दिन जो सब क्रियायें प्रचलित थी, अब उनमें एक भी नहीं है। तैत्तिरीय आरण्यकमें इसे 'शान्तिकर्म'के नामसे लिखा है। आश्वलायनने इस क्रियाको श्मशानमें सम्पन्न

करनेकी व्यवस्था दी है। ज्ञातियोंमें स्त्रीपुरुष सभी मिल कर रक्तवर्ण वृषचर्मपर बैठते थे। इस चर्मका शिर पूर्वको ओर रखा जाता और बाल उत्तरकी ओर फिरा दिये जाते थे। वृषचर्मपर बैठनेका मन्त्र यह है—

"आरोहतायुर्जरसं गृणाना अनुपूर्वं यतमाना यतिष्ट।
इह त्वष्टा सुजनिमा सुरत्नो दीर्घमायुः करोतु जीवसे वः॥
यथाऽहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथर्त्तव ऋतुभिर्यन्ति क्लृप्तः।
यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूंषि कल्पयैषां॥"

तुम लोग दीर्घकालतक जीनेकी इच्छा करते हो, इस आयुष्कर चर्मपर आरोहण करो। इस कर्मको सुजात एवं सुरत्नभूषित अग्नि तुम लोगोंको दीर्घायु दान करें। जिस तरह दिनके बाद दिन और ऋतुके बाद ऋतु आती है, जिस तरह ज्येष्ठ कनिष्ठको नहीं परित्याग करते, हे धातः! उसी तरह तुम भी इन लोगोंकी परमायु वृद्धि करो।

इसके बाद मृतव्यक्तिका पुत्र आग जलाकर वरुणकाठके स्रुक्से चार बार आहुति देता था। फिर ज्ञातिगण अग्निसे उत्तर पूर्व मुख खड़े होकर रक्तवर्ण वृषचर्म स्पर्शपूर्वक एक मन्त्र पढ़ते थे। अन्तमें स्त्रियां 'इमा नारीरविधवाः' इत्यादि * मन्त्र पढ़कर आंखमें काजल देती थीं। यह काजल हिमालय पर्वतके त्रैककुदका बनाया जाता और कुशकी नोकसे आंखमें लगाया जाता था। †

स्त्रियोंके आंखमें काजल लगा लेनेके बाद सभी वृषका चलाते चलाते पूर्वकी ओर जाते। जानेके समय यह मन्त्र पढ़ना पड़ता था,—

"इमे जीवा वि मृतैरावर्त्तिन्नभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य।
प्राञ्चोऽगामा नृतये हसायद्राघीय आयुः प्रतरां दधानाः॥"‡

ये लोग मृतव्यक्तिको परित्यागकर लौटे जाते हैं। हम लोगोंके कल्याण, जय और आल्हादके निमित्त अपने देवताओंको आह्वान करते हैं। हम लोग दीर्घायु लाभकर पूर्वमुख जाते हैं।

इस तरह मन्त्र पढ़कर स्त्रियां सबके आगे आगे घर जातीं। मृतव्यक्तिका पुत्र शमीशाखासे वृषके पदचिन्होंको मिटता जाता। उसके बाद अध्वर्यु मन्त्र पढ़ते हुए सबके पीछे लोष्टद्वारा वृत्त करते थे। परिधि बनाकर तुरत ही यह मन्त्र पढ़ना पड़ता था—

"इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मानोऽनुगादपरो अर्द्धमेतं।
शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीरन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन॥"

'जीवित मनुष्योंके लिये मैं यह परिधि देता हूं। अर्द्धवयसमें हम लोगोंको किम्बा और किसीको जिसमें इसे अतिक्रम करना न पड़े। इस पर्वताकार लोष्टद्वारा मृत्युको ओरमें रखकर हम लोग जिसमें सौ शरत्काल (सौ वर्ष) जीते रहें।

अन्तमें घर आकर सभी यवागू और छागमांस खाते थे।

अशौचत्व (सं० क्लो०) अशुद्धता, नापाकी, गन्दगी, मैलापन, साफ न रहनेकी हालत।

अशौचसङ्कर (सं० पु०) अशुचि अवस्थाभेद। जनन एवं मरण अशौचके मध्य पुनर्वार जनन एवं मरण अशौच आनेसे अशौचसङ्कर कहाता है। शुद्धितत्त्वमें इसका विस्तारित विवरण बताया है।

अशौचान्त (सं० पु०) अशौचकालके छूटनेका दिन। दशम दिन ब्राह्मण और द्वादश दिन क्षत्रियका अशौचान्त होता है।

अशौर्य (सं० क्लो०) अभावे नञ्-तत्। १ वीरत्वका अभाव, बहादुरीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ पराक्रमशून्य, बेहिम्मत, जो बहादुर न हो।

अश्न (वै० त्रि०) अश्नुते व्याप्नोति अश्नाति वा, अश-नन्। १ व्यापक, मामूर, समा जानेवाला। २ भोजनशील, खाऊ, पेटू। ३ व्याप्त, समाया हुआ। (पु०) ४ असुर विशेष। ५ सोमलता कूटनेका पत्थर। ६ मेघ, बादल।

---

* बोधायनके मतसे शान्तिकर्ममें आंखमें काजल लगानेके समय 'इमा नारीरविधवाः' इत्यादि मन्त्र प्रयुक्त होता था। अनुमरण एवं अनुमृता शब्द देखो।

† "यदाञ्जनं त्रैककुदं जातं हिमवतस्परि।
तेनामृतस्य मूले नारातीर्जम्भयामसि।" (तैत्तिरीय आरण्यक ६।१०।८।)

‡ ऋग्वेदके १० वें मण्डल १८ वें सूक्तमें यह मंत्र है। यहां उसका कुछ प्रभेद देखा जाता है।

"स्वदुहव्यैर्गो नाश्नो भति यत्य गुर्यात्"। (ऋक् १।१७३।२।)

अश्नया (वै० स्त्री०) क्षुधा, भूख।

अश्नीतपिबता (सं० स्त्री०) अश्नीत पिबत इत्युच्यते यस्मात् निर्देशक्रियायाम्, मयूरव्यं० समा०। भोजन एवं पानका आदेश, खाने-पीनेकी आज्ञा।

अश्म (सं० पु०) १ पर्वत, पहाड़। २ स्वर्ण-माक्षिक, सोनामाखी। (वै०) ३ मेघ, बादल।

अश्मक (सं० पु०) अश्मेव स्थिरः निश्चलत्वात्, इवार्थे कन्। सात्वाचयवप्रत्ययकलकुटाश्मकादिञ्। पा ४।१।१७३। १ ऋषि विशेष। २ देश विशेष, कोई मुल्क। महाभारतमतसे यह देश भारतवर्षके दक्षिण अवस्थित। किन्तु वृहत्-संहितामें इसे उत्तर-पश्चिम माना है। किसी-किसीने इसे भारतके मध्यस्थलमें बताया है। अश्मक देखो।

अश्मकदली (सं० स्त्री०) अश्मते अश-मनिन् कर्मधा०। काष्ठकदली, पहाड़ी केला।

अश्मकर (सं० क्ली०) स्वर्ण, सोना।

अश्मकुट्ट (सं० पु०) अश्मनि प्रस्तरे धान्यादिकं कुट्टयति, कुट्ट-अण्, उप०-समा। १ वानप्रस्थविशेष। इनके पास उखल प्रभृति नहीं रहता, प्रस्तरसे ही धान्यादि कुटते हैं। (त्रि०) २ पत्थरसे कूटने पीसनेवाला। ३ पत्थरसे कूटा-पीसा।

अश्मकुट्टक, अश्मकुट्ट देखो।

अश्मकच्छा (सं० स्त्री०) वेलन्तरवृक्ष, कोई दरख्त। यह कटीली होती है।

अश्मकेतु (सं० स्त्री०) अश्मेव केतुरस्याः। क्षुद्र पाषाणभेद क्षुप, कोई खुशबूदार पेड़।

अश्मगन्धा (सं० स्त्री०) अश्मन इव गन्धो लेशोऽस्याः। पृश्निपर्णी लता, पथरचटा।

अश्मगर्भ (सं० पु०) अश्मेव जातो गर्भो यस्य। मरकत, हरित्मणि, पन्ना।

अश्मगर्भक (सं० पु०) तिनिश वृक्ष, जङ्गलका पेड़।

अश्मगर्भज, अश्मगर्भ देखो।

अश्मगुड़ (सं० पु०) अश्मनिर्मितो गुड़ः। १ पत्थरका गोला। २ पत्थरका बट्टा।

अश्मघ्न (सं० पु०) अश्मानं हन्ति, हन्-टक्। पाषाणभेदनवृक्ष, कोई पेड़।

अश्मचक्र (वै० त्रि०) पाषाण-परिधि-वेष्टित, पत्थरके दायरेसे घिरा हुआ।

अश्मज (सं० क्ली०) अश्मनो जायते, जन-ड। १ शिलाजतु। अश्मेव जायते। २ लौह, लोहा। ३ गेरू।

अश्मजतु (सं० क्ली०) अश्मनो जायते, जन-तुन् डिच्च। शिलाजतु।

अश्मजतुक, अश्मजतु देखो।

अश्मजाति (सं० स्त्री०) अश्मनो जातिः सामान्यमस्य। मरकत मणि, पन्ना।

अश्मदारण (सं० पु०) अश्मानं दारयति, दृ-णिच्-ल्यु। १ प्रस्तर तोड़नेका यन्त्र विशेष, टांकी, जिस औज़ारसे पत्थर फोड़ें। २ प्रस्तर विशेष, जिस पत्थरसे धज्जी उड़े।

अश्मदिद्यु (वै० त्रि०) अतिशयेन द्योतते, यङ्-लुक् द्युतिगमिजुहोतीनां द्वे च। पा ३।२।१७८ सूत्रे वार्तिक, तथा, द्युतिस्वाप्योः संप्रसारणम्। पा ७।४।६७। इति सम्प्रसारणे बाहु० डु प्रत्ययः दिद्यु आयुधं अश्म व्यापकं अश्ममयं वा दिद्यु यस्य। १ व्याप्त आयुध, जो हथियार चला रहा हो। २ अश्ममय आयुध, बहुत कड़े हथियार रखनेवाला। "दिद्यु अहसो नरो अश्म दिद्यवः।" (ऋक् ५।५४।३।)

अश्मन् (सं० पु०) अश व्याप्तौ अश भोजने मनिन्। १ पाषाण, पत्थर। २ पर्वत, पहाड़। ३ चकमक पत्थर। ४ चट्टान। ५ मेघ, बादल। ६ विद्युत्, बिजली। ७ आकाश। ८ ब्राह्मण विशेष। (त्रि०) ९ व्यापक, मामूर, समाया हुआ। (वै०) १० भोजन करता हुआ, जो खा रहा हो। अश्मन् शब्द उत्करादि गणके मध्य पठित है।

अश्मन्त (सं० क्ली०) अश्मनोऽन्तोऽत्र, शाक० पररूपत्वम्। १ अशुभ, बुरा। २ मरण, मौत। ३ चूल्हा, भट्ठी। ४ अनवधि, ग़ैरमहदूद वक्त। ५ क्षेत्र, मैदान, खेत।

अश्मन्तक (सं० क्ली०) अश्मानं अन्तयति, अन्त-णिच्-ण्वुल् शकन्ध्वादित्वात् पररूपत्वम्। १ चबूतरा,

भट्ठी। २ मक्षिका आच्छादन। ३ दीपाधार, दीवट। (पु०) ४ अक्षोटवृक्ष, कोई पेड़। ५ तृणविशेष, कोई घास। ६ अश्मपत्र। ७ कोविदारक वृक्ष।

अश्मन्मय (वै० त्रि०) अश्मनो विकारः, मयट् वेदे न नलोपः। पाषाणमय, पथरीला, पत्थरका बना हुआ।

अश्मन्वत्, (वै० त्रि०) प्रस्तरका, पथरीला।

अश्मन्वती (वै० स्त्री०) ऋग्वेदोक्त नदीभेद। आर्यशब्दमें विवरण देखो।

अश्मपुष्प (सं० क्ली०) अश्मनः पुष्पमिव। शैलज, शिलाजतु।

अश्मभाल (सं० क्ली०) अश्मव भाजयति चूर्णितं करोति, भज-णिच्-अण् पृषो० जकारस्य लत्वम्। लौहभाण्ड विशेष, इमामजिस्ता, खल।

अश्मभिद् (सं० पु०) अश्मानमुद्भिद्य जायते। १ पाषाणभेदी वृक्ष, जो दरखत पत्थरको भेद कर सकता हो। यह मूत्रकृच्छ्रके लिये उपयोगी होता है। पाषाणभेदी देखो।

अश्मभेद, अश्मभेदक, अश्मभिद देखो।

अश्ममय (सं० त्रि०) अश्मन्मय देखो।

अश्मयोनि (सं० पु०) अश्मा योनिरस्य। १ मरकत मणि, पन्ना। २ अश्मान्तक वृक्ष।

अश्मर (सं० त्रि०) अश्मन् चतुर्थ्यां र। प्रस्तरसम्बन्धीय, पथरीला।

अश्मरी (सं० स्त्री०) अश्मानं राति रा-क गौरादित्वात् ङीष्। मूत्रकृच्छ्र रोग विशेष, पथरी। यकृत्, पैंक्रियस् एवं मूत्रयन्त्रमें पथरी हो सकती है। मनुष्य एवं गोरु, घोड़ा, भेड़ा, शूकर, शशक प्रभृति और और पशुओंके वृक्कमें भी पथरी होती है। फिर मूत्रानुप्रणालीसे वह मूत्राशयमें आ जाती और धीरे धीरे बढ़ती रहती है। कभी कभी कोई बड़ी पथरी तौलमें आधसेर तक होती है।

वृक्कमें पथरी होनेसे ऐसा लक्षण दिखाई देता है,—कटिमें पीड़ा, ऊपर दाबनेसे कुछ कोमल मालूम होता है, पेशाबका रङ्ग खराब हो जाता है; मूत्रत्याग करनेके समय कभी कभी खून निकल आता और शरीर क्षय एवं अमुस्थ हो जाता है। कभी कभी वृक्कमें भी पथरी बड़ी भारी हो जाती है। ऐसी दशामें उरुसन्धिस्थानके निकट फूल और पाक उठता है। तब नश्तर देकर पथरीको निकालना पड़ता है।

वृक्कसे मूत्रप्रणाली होकर मूत्राशयमें पथरीको आनेके समय रोगीको अत्यन्त कष्ट होता है। बार बार पेशाब करनेकी इच्छा होती है। पेशाब थोड़ा और खून सहित आता है। अण्डकोषमें दर्द होता है और वह सिमटकर ऊपर उठता है। उसके भीतर भी बहुत पीड़ा होती है। ऐसी अवस्थामें रोगी कभी कभी वमन भी करता है।

मूत्रानुप्रणालीसे मूत्राशयमें पथरीके आजानेपर रोगीको बार बार पेशाब करनेकी इच्छा होती है। मूत्रपथ, पुरुषाङ्ग एवं उरुसन्धिस्थलमें पीड़ा होती है। कभी कभी पथरीके मूत्रपथके मुहपर आ जानेसे हठात् पेशाब बन्द हो जाता है। पथरीकी उग्रतासे कभी कभी पेशाबके साथ खून भी आता है। हृदयसे नीचे न आकर पथरी मूत्राशयमें ही पहले ही से उत्पन्न होती है।

मूत्रयन्त्रकी पथरी अनेक प्रकारकी होती है। उनमें छः प्रकारकी बहुत देखी जाती है। यथा,—

१। यूरेट् अव् एमोनिया। यह प्रायः शैशवावस्थामें होती है। इस पथरीका रङ्ग कादे जैसा होता है; ऊपर समतल, कभी कभी दानेदार भी होती है। फुकानलमें कर्कश शब्द होता है; लिकरपोटासीयम्के साथ एमोनिया निकलता है। कार्बोनेट अव् पोटास वा सोडाके सहयोगसे गल जाती है। यूरिक-एसिडकी पथरी उसे द्रव नहीं होती। इस जातिकी पथरी बहुत कम देखनेमें आती है।

२। यूरिक एसिड वा लिथिक एसिडकी पथरी। यह काटा रक्तवर्णकी होती है। ऊपरी भाग समतल और कभी कभी दानेदार होता है। फुकानलसे विजत हो जाती, तब उग्र गन्ध निकलता है, अन्तमें दग्ध हो जानेपर थोड़ासा भस्म रह जाता है। पोटाश द्रवसे गल जाती है। इस द्रवमें सिर्काका

मिला देनेसे श्वेतवर्ण चूर्ण गिरता है। इस जातिकी पथरी सचराचर देखी जाती है।

३। अगज़ोलेट् अव् लाइम—यह कटा कथ्य वर्णकी होती है। ऊपरी भाग ऊंचा नीचा होता है। फुकानलसे विकृत हो जाती है। लवण-द्रावकसे द्रव होती है।

४। फस्फेट अव् लाइम—पांसुट कटावर्ण। समतल। फुकानलसे द्रव नहीं होती। लवणाम्लसे द्रव हो जाती है।

५। एमोनिया मेगनेसियन फस्फेट—प्रायः श्वेतवर्ण। उच्चनीच। फुकानलसे एमोनिया निकलता है। जलमिश्र द्रावकसे यह द्रव जाती है।

६। सिष्टिक् अक्साइड—इसका रङ्ग श्वेत होता है। ऊपरी भाग उच्चनीच। फुकानलसे धूम निकल जाता है। जलमिश्र लवणद्रावकसे द्रव हो जाती है।

मूत्राशयमें शलाकाखण्ड वा और कोई द्रव्य पड़ा रहनेसे उसके चारो तरफ भा नाना प्रकारके पदार्थ जम जाते हैं। उसका लक्षण भी पथरी हो जैसा है।

एलोपैथी चिकित्सा—इस रोगकी चिकित्सामें तीन उद्देश्य साधन करने पड़ते हैं। १—रोगीका बल बढ़ाना और कष्ट दूर करना। २—जिसमें नई पथरी पैदा न हो और पैदा हुई पथरी बढ़ने न पावे। ३—मूत्राशयसे पथरी निकालना।

प्रथम उद्देश्य साधनके लिये रोगीको पुष्टिकर लघु पथ्य देना। कमरमें दर्द रहनेसे बेलोडोनाके पलस्तरसे बहुत कम पड़ जाता है, मूत्राशयसे खून निकलता हो तो टिंचर ष्टील दश बूंद जलके साथ अथवा पांच छः ग्रेन गेलिक एसिड सेवन कराना। हृदयसे मूत्रानुप्रणाली होकर पथरीके मूत्राशयमें उतरनेके समय अतिशय कष्ट होता है। ऐसी अवस्थामें गर्मजलसे स्नान, यवका मांड़, ७ बूंद अफीमका अरिष्ट सेवन प्रभृति व्यवस्थासे उपकार होता है।

द्वितीय उद्देश्य साधनके लिये पथरीके विधानोपादानकी अवस्था समझकर चिकित्सा करनी पड़ती। इउरिक एसिड धातुसे निरामिष पथ्य प्रशस्त है। यवके मांड़से विलक्षण उपकार होता है। ऐसा उपाय करना चाहिये जिसमें नित्य कोष्ठ परिष्कार हो। इस तरह पथरीमें क्षार औषध बहुत उपकार करती है। उसमें बाइकार्बोनेट अव् पोटाससे बहुत फायदा होता है। लिकर पोटाससे भी विशेष लाभ होता है। फस्फेटाधिक्य धातुमें नाइट्रोमिउरटिक द्रावक सेवनसे रोगका प्रतीकार होता है। इसमें अधिक मानसिक चिन्ता करनी उचित नहीं। आग्ज़ेलिक् एसिड आधिक्य धातुमें शर्करा सेवन करना मना है। इसमें भी नाइट्रो-मिउरेटिक द्रावक उपकार करता है।

३—पथरीके मूत्राशयमें आ जानेपर अथवा मूत्राशयमें पथरी पैदा होनेपर पहले बहुत देरतक पेशाब न करना। उसके बाद जोरसे पेशाब करनेसे छोटे छोटे कङ्कर निकल सकते हैं। पथरी बड़ी हो तो नस्तर दिलाना चाहिये।

हमारे देशके वैद्य वरुण छालका क्वाथ सेवन कराते हैं। इससे पथरी गल जाती है। मूत्रकृच्छ देखो।

अश्मरीकृच्छ् (सं० पु०) मूत्रकृच्छ्र, जिस बीमारीमे पेशाब न आये या कम उतरे।

अश्मरीघ्न (सं० पु०) अश्मरीं हन्ति, हन्-टक्। वरुणवृक्ष, बिलासी।

अश्मरीप्रिय (सं० पु०) महाशालिधान्य, बड़ा धान।

अश्मरीभेद (सं० पु०) पाषाणभेद वृक्ष, जो पेड़ पत्थर भेद कर सकता हो।

अश्मरीभेदन (सं० क्लो०) पाषाणभेदक, अश्मरीघ्न, जिससे पेशाब न उतरने या कम आनेकी बीमारी मिटे।

अश्मरीरिपु (सं० पु०) १ वृहच्चणक, बड़ा चना। २ ज्वार।

अश्मरीशर्करा (सं० स्त्री०) मूत्रकृच्छ्र विशेष, पेशाबकी कोई बीमारी। इस रोगमें हृत्पीड़ा, सक्थिसदन, कुक्षिशूल, कम्प, तृष्णा, ऊर्धग अनिल, कार्ष्ण्य, दौर्बल्य, पाण्डुता, अरोचक, अविपाक आदि लक्षण देख पड़ता है। (सुश्रुत)

अश्मरीहर (सं० पु०) अश्मरीं हरति, हृ-अच्। १ देवधान्य, ज्वार। २ वरुण वृक्ष, बिलासी।

अश्मर्याहरणयन्त्र (सं० क्ली०) अश्मरी नामक मूत्रकृच्छ्रके सञ्चय करनेका यन्त्र, जिस आलेसे बिगड़ा पेशाब इकट्ठा होवे।

अश्मलाक्ष (सं० क्ली०) शिलाजित। (स्त्री०) अश्मलाक्षा।

अश्मवत् (सं० त्रि०) अश्मा अस्त्यत्र मतुप् मकारस्य वकारः। १ पाषाणविशिष्ट, जिसमें पत्थर रहे। २ पाषाणकी तरह कठिन, जो पत्थर जैसा कड़ा हो।

अश्मवर्मन् (वै० क्ली०) पत्थरकी दीवार या ढाल।

अश्मव्रज (सं० त्रि०) पाषाण-सम्बन्धीय, जो चटानमें शामिल हो।

अश्मसम्भव (सं० क्ली०) शिलाजतु।

अश्मसार (सं० पु० क्ली०) अश्मनः सार इव। १ लौहादिधातु, लोहा। २ सारलौह, इस्पात।

अश्मसारमय (सं० त्रि०) लौहनिर्मित, लोहेका बना हुआ।

अश्मसारा (सं० स्त्री०) काष्ठकदली, पहाड़ी केला।

अश्मसुता (सं० स्त्री०) पाठा, आकनादि, हरज्योरी।

अश्महन् (सं० पु०) पाषाणभेद, पत्थरचटा।

अश्महन्मन् (वै० क्ली०) हन्यते अनेन हन्-मनिन् हन्म आयुधम्, अश्मनिर्मितं हन्म शाक० तत्। १ लौहनिर्मित अस्त्र, लोहेका बना हथियार। "दिवस्पर्यग्नि तप्ते भिर्युवमश्महन्मभिः।" (ऋक् ७।१०४।५।) २ विद्युताघात, बिजलीकी कड़क।

अश्महा, अश्महन् देखो।

अश्मह्रुत् (सं० पु० क्ली०) १ कवाटवक्रक्षुप, किसी किस्मका दरख्त। २ शिलाजतु।

अश्मादि—(अश्मादिभ्यो रः। पा ४।२।८०) चातुर्थिक र प्रत्ययके निमित्त पाणिनि उक्त शब्दगणविशेष। अश्मन्, यूथ, ऊष, मीन, नद, दर्भ, वृन्द, गुद, खण्ड, नग, शिखा, कोट, पाम, कन्द, कान्द, कुल, गह्व, गुड़, कुण्डल, पीन, गुह।

अश्मार्म (सं० क्ली०) अश्मकारक मर्म, पथरी रोग।

अश्मास्य (वै० त्रि०) चटानसे बहनेवाला।

अश्मीर (सं० पु० क्ली०) अश्मास्त्यस्य इरन्। पथरी रोग।

अश्मोत्थ (सं० क्ली०) अश्मनः उत्तिष्ठति, उत्-स्था-क। शिलाजतु।

अश्यामा (सं० स्त्री०) श्वेतत्रिवृता, सफेद त्रिवृता।

अश्र (सं० क्ली०) अश्नुते नेत्रम्, अश-बाहु० रक्। १ चक्षुजल, आंखका पानी, आंसू। २ रुधिर, खून। ३ कोण, कोना।

अश्रद्ध (सं० त्रि०) १ श्रद्धाहीन, एतबार न रखनेवाला।

अश्रद्दधान (सं० त्रि०) श्रत्-धा-शानच्। श्रद्धाहीन, एतबार न रखनेवाला, जिसे श्रद्धा न रहे।

अश्रद्धा (सं० स्त्री०) श्रत्-धा-अङ्। श्रदन्तरोरुपसर्गवद्वृत्तिः। पा १।४।१०८। श्रद्धा। नञ्-तत्। १ अभक्ति, ना एतबारी, दृढ़ विश्वास या प्रेमका न होना। २ अरोचक, भूख न लगनेकी बीमारी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ श्रद्धाशून्य, बेएतबारी।

अश्रद्धेय (सं० त्रि०) श्रत्-धा-यत्, नञ-तत्। आदरके अयोग्य, जो इज्जतके काबिल न हो।

अश्रप (सं० पु०) राक्षस, आदमखोर, जो खून पीता हो।

अश्रम (सं० पु०) १ अक्लान्तता, ताज़गी। २ श्रमका अभाव, मेहनतकी अदममौजूदगी, सुस्ती, काहिली। (वै० त्रि०) ३ अक्लान्त, जो थका-मांदा न हो।

अश्रमण (वै० त्रि०) १ अक्लान्त, बेतकान्, जो थका-मांदा न हो। (सं० पु) २ साधु वा बौद्ध महात्मा न होनेवाला व्यक्ति।

अश्रवण (सं० क्ली०) श्रवणका अभाव, न सुनना, गरानी-गोश, बहरापन।

अश्रातस् (वै० अव्य०) अपक्व रीतिसे, बे पकाये, कच्ची हालतमें।

अश्राद्ध (सं० त्रि०) श्राद्ध न करनेवाला, श्राद्धसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो श्राद्ध कर न सकता हो।

अश्राद्धभोजिन् (सं० त्रि०) श्राद्धं न भुङ्क्ते, भुज-णिनि असमर्थ समा०। श्राद्धमें भोजन न करनेवाला, जो श्राद्धमें खाता न हो।

अश्राद्धिन् (सं० पु०) श्राद्धं भुक्तमनेन श्राद्ध इनि ततो नञ्-तत्। अश्राद्धभोजिन् देखो।

अश्राद्धेय (सं० पु०) नञ्-तत्। श्राद्धके अयोग्य, जो श्राद्धके लायक न हो। पिताके घर अनूढ़ावस्थामें ऋतुमती होनेवाली कन्या साथ जो विवाह करता, वह ब्राह्मण अश्राद्धेय और अपांक्तेय ठहरता है।

अश्रान्त (सं० त्रि०) श्रम कर्तरि क्त, नञ्-तत्। १ श्रमरहित, बेतकान्, जो थका-मांदा न हो। (अव्य०) २ अविश्राम, अनवरत, नित्य, लगातार, बराबर, हमेशा।

अश्राव्य (सं० त्रि०) श्रवण वा कथनके अयोग्य, जो सुनने या कहने लायक न हो।

अश्रि (सं० स्त्री०) अा-श्रि-इण् ह्रस्वो डिद्वद्भा-वश्च। १ गृहादिका कोण, मकान वगैरहका कोना। २ अस्त्रादिका अग्रभाग, हथियार वगैरहकी नोक।

अश्रित (सं० त्रि०) १ कठिन प्रवेश, जिसमें कोई पहुंच न सके। २ अनवरत, जो रुकता न हो।

अश्रिन् (सं० त्रि०) आंसू बहानेवाला, जो रो रहा हो।

अश्रिमत् (सं० त्रि०) कोणविशिष्ट, नुकीला।

अश्री, अश्रि देखो।

अश्रीक (सं० त्रि०) नास्ति श्रीर्यस्य, बहुव्री० वा कप्। १ शोभाशून्य, बदनुमान्, जो देखनेमें खूबसूरत न हो। २ हतभाग्य, कमबख्त, जो अच्छा न हो।

अश्रीमत् (सं० त्रि०) हतभाग्य, कान्तिशून्य, बदबख्त, बेरौनक, जो चमकीला न हो।

अश्रीर (सं० त्रि०) न श्री अश्री अस्त्यर्थे र। १ कुत्सित, खराब। २ अमङ्गल, अशुभ, नागवार। बदनुमान्, जो अच्छा लगता न हो। "अश्रीरं चित् क्रतुधा।" ऋक् ८।२८।६।

अश्रील (सं० त्रि०) असमृद्ध, हतभाग्य, बद-बख्त, जो बढ़ता न हो।

अश्रु (सं० क्लो०) अश्नुते व्याप्नोति नेत्रमदर्शनाय अश-रु निपात्यते, अथवा अश-क्रुन्-रुट् च। नेत्रजल, अश्क, आंसू, जो पानी आंखसे निकलता हो। काव्यके नव सात्त्विक अनुभावोंमें यह भी आता है।

अश्रुकणा (सं० स्त्री०) नेत्रजलका बिन्दु, अश्कका कतरा, आंसूका बूंद।

अश्रुत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ सुना न जाने-वाला, जो सुन न पड़ता हो। २ वेदविरुद्ध, जो वेदसे मिलता न हो। (पु०) ३ कृष्णके पुत्र विशेष। ४ द्युतिमत्के पुत्र।

अश्रुतपूर्व (सं० त्रि०) पहले सुना न जानेवाला, जो पेश्तर सुन न पड़ा हो।

अश्रुतवत् (सं० अव्य०) न सुनेकी तरह, गोया सुन ही न पड़ा हो।

अश्रुति (सं० स्त्री०) १ श्रवणका अभाव, सुन न पड़नेकी हालत। २ वेद द्वारा अप्रतिपादित विषय, जो बात वेद बताता न हो।

अश्रुतिधर (सं० त्रि०) १ श्रवण पर आघात न लगाता हुआ, जो सुननेपर चोट मारता न हो। २ वेद न जाननेवाला।

अश्रुनाली (सं० स्त्री०) भगन्दर रोग।

अश्रुपरिपूर्णाक्ष (सं० त्रि०) नेत्रमें जल भरा हुआ, जिसके आंखमें आंसू भरे।

अश्रुपरिप्लुत (सं० त्रि०) नेत्रजलसे नहाया हुआ, जो आंसूसे तर पड़ गया हो।

अश्रुपात (सं० पु०) ६-तत्। क्रन्दन, नेत्र-जलका प्रवाह, रुलाई, आंसूका गिरना।

अश्रुपूर्ण (सं० त्रि०) नेत्रजलसे भरा हुआ, अश्कसे लबालब, जो आंसूसे भरा हो।

अश्रुपूर्णाकुल (सं० त्रि०) रोते और दुःख उठाते हुए, जो रोते और क्षुब्ध रहा हो।

अश्रुपूर्णाक्ष, अश्रुपरिपूर्णाक्ष देखो।

अश्रुमुख (सं० त्रि०) अश्रुपूर्णं मुखं यस्य। १ नेत्र-जलपूर्ण मुखयुक्त, जिसके मुंहमें आंसू भरा रहे। (पु०) २ गतिविशेष, कोई चाल। ज्योतिषमें—मङ्गल जब अपने उदय-नक्षत्रसे दसवें, ग्यारहवें और बारहवें नक्षत्रपर टेढ़ा चलता, तब अश्रुमुख निक-लता है।

अश्रुलोचन (सं० त्रि०) नेत्रमें अश्रु रखनेवाला, जो आंखमें आंसू भरे हो।

अश्रुपहत (सं॰ त्रि॰) अश्रु द्वारा ताड़ित, जो आंसूसे सताया गया हो।

अश्रेयस् (सं॰ त्रि॰) न श्रेयान्। १ हीनतर, बदतर, खराबसे खराब। २ अकल्याण, बुरा, नाकाम, जो फ़ायदेमन्द न हो। (क्ली॰) ३ हीनतर होनेकी अवस्था, बदतरी, खराबी, बुराई।

अश्रेष्ठ (सं॰ त्रि॰) १ अनुत्तम, नीचतर, अबतर। २ कुत्सित, खराब, जो भला न हो।

अश्रोत्रिय (सं॰ पु॰) १ वेद न पढ़नेवाला ब्राह्मण, जो ब्राह्मण वेद पढ़े न हो। २ ईश्वरका ज्ञान न रखनेवाला व्यक्ति, जो वेदान्ती न हो।

अश्रौत (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। श्रुतिविरुद्ध, जो वेदमें मिलता न हो।

अश्लाघनीय, अश्लाघ्य देखो।

अश्लाघा (सं॰ स्त्री॰) श्लाघाका अभाव, शील, सौजन्य, खुदशिनासीकी अदममौजूदगी, शायस्तगी लियाक़त।

अश्लाघ्य (सं॰ त्रि॰) १ अप्रशंसनीय, निन्द्य, नाकाम, जो तारीफ़के लायक़ न हो। २ नीच, कमीना।

अश्लिष्ट (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। १ असङ्गत, नामुनासिब, जो ठीक न हो। २ असम्बन्ध, बेसिलसिला, जो मिला-जुला न हो। ३ श्लेषशून्य, भावरहित, जो पेचीदा न हो।

अश्लीक, अश्लील देखो।

अश्लील (सं॰ क्ली॰) श्रियं लाति गृह्णाति, ला-क रेफस्य लकारः, श्रीरस्त्यस्य लच् वा, पूर्ववत् रेफस्य लत्वं नञ्-तत्। १ कुत्सित, कुरूप, नागवार, बदनुमान्। २ गालीगुफ़्तेवाला, खराब, फहड़। (क्ली॰) ३ गालीगलौज, तूतड़ाका, अबे-तबे। ४ लज्जाजनक वाक्य, शर्मकी बात। ५ ग्राम्यभाषा, गंवारू बोली। ६ काव्यका दोष विशेष।

अश्लीलता (सं॰ स्त्री॰) गाली-गलौज, फहड़पन।

अश्लेषा (सं॰ स्त्री॰) न श्लिष्यते, आलिङ्गवे पिशाचिभि यत्रोत्पन्नः श्रिय्रादासृणमासं, श्लिष-घञ, नञ्-तत्। १ अश्वादिके अन्तर्गत नवम नक्षत्र। यह चक्राकार और षड्नक्षत्रात्मक है। सर्प इसका अधिदेवता है। अश्लेषा नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य दुष्ट और लोकोत्पीड़क होता है। यदि इसी नक्षत्रमें पुत्रोत्पन्न हो, तो छः मासतक उसका मुंह देखना न चाहिये। उपरोक्त कारणसे ही इस नक्षत्रको अश्लेषा कहते हैं। २ अनैक्य, पृथक्त्व, जुदाई, मुफ़ारक़त, अलाहदगी।

अश्लेषाज (सं॰ पु॰) अश्लेषा नक्षत्रे जायते; जन-ड, ७-तत्। केतुग्रह, दुमदारसितारा।

अश्लेषाभव, अश्लेषाज देखो।

अश्लेषाभू, अश्लेषाज देखो।

अश्लेषाशान्ति (सं॰ स्त्री॰) अश्लेषायां जनननिमित्ता शान्तिः, शाक॰ तत्। अश्लेषा नक्षत्रमें जन्मनिमित्त शान्ति कर्म। ग्रहशान्ति देखो।

अश्लोण (सं॰ त्रि॰) अपङ्ग, जो लंगड़ा न हो।

अश्व (सं॰ पु॰) अश्नुते व्याप्नोति अध्वानं अश्-(अशूप्रुषिलटिकणिखटिविशिभ्यः क्वन्। उण् १।१४९) इति क्वन्। घोटक। अश्व शब्दके ये कई पर्याय पाये जाते हैं,—पीति, पीती, वीति, घोट, घोटक, तुरग, तुरङ्ग, तुरङ्गम, वाजी, वाह, अर्व्वा, गन्धर्व्व, हय, सैन्धव, सप्ति। निरुक्तमें अश्वके ये २६ नाम लिखे हैं,—अत्यः हयः, अर्वा, वाजी, सप्तिः, वह्निः, दधिक्राः, दधिक्रावा, एतग्वा, एतशः, पैद्वः, दौर्गहः, उच्चैःश्रवसः, तार्क्ष्यः, आशुः, ब्रध्नः, अरुषः, मांश्चत्वः, अव्यथयः, श्येनासः, सुपर्णाः, पतङ्गाः, नरः, ह्वार्याणाम्, हंसासः, अश्वाः।

कौन अश्व किस देवताका है, निरुक्तमें यह भी कहा गया है। १—हरी इन्द्रस्य। २—रोहितोऽग्नेः। ३—हरित आदित्यस्य। ४—रासभावश्विनोः। ५—अजाः पूष्णः। ६—पृषत्यो मरुताम्। ७—अरुण्यो गाव उषसः। ८ श्यावाः सवितुः। ९—विश्वरूपा बृहस्पतेः। १० नियुतो वायोः।

१ इन्द्रके अश्वका नाम हरि है, २ अग्निका रोहित, ३ आदित्यका हरित, ४ अश्विनीकुमारका रासभ, ५ पूषाका अज, ६ मरुत्का पृषतीगण, ७ उषस्का अरुणो गो, ८ सविताका श्याम, ९ बृहस्पतिका विश्वरूप, १० वायुका नियुत।

अमृतादि सप्त स्थानसे घोड़ेकी उत्पत्ति हुई है। इसलिये अश्वोत्पत्तिस्थान कहनेसे सात संख्या समझी जाती है।

घोड़ा किस स्थानका आदि जन्तु है, इस विषयमें बहुत मतभेद है। वेदमें घोड़ेकी बात लिखी है। अतएव पहले ही एशियाके नाना स्थानोंमें घोड़े पाये जाते थे और आर्यगण घोड़ोंको रथमें जोतते थे, इसमें सन्देह नहीं। कोई कोई कहते हैं, कि अफ्रिका घोड़ाका आदि वासस्थान है और मिश्रके आदमियोंने पहले पहल घोड़ा पोसना शुरू किया था। एशिया, अफ्रिका, युरोप और अमेरिकामें बहुत दिनोंके मरे हुए ममथ और गेंड़ेकी हड्डियोंके साथ घोड़ोंकी हड्डियां भी पाई जाती हैं। कोलम्बसने जिस समय अमेरिका आविष्कार किया था, उस समय वहां घोड़े न थे। इसीसे हड्डी देखकर विश्वास होता है, कि पहले अमेरिकामें घोड़े थे, परन्तु कोलम्बसके समयमें वहांके घोड़ोंका नाश हो गया था। युरोपियोंके वहां घोड़ा छोड़ देनेसे अब फिर वहां बहुतसे जङ्गली घोड़े हो गये हैं।

स्थानभेदसे घोड़ोंकी आकृति और वर्ण नाना प्रकारका होता है। कोई घोड़ा बड़ा और कोई छोटा होता है। सचराचर अल्प रक्तवर्ण, श्वेत एवं कृष्ण वर्णके घोड़े देखनेमें आते हैं। अष्ट्रेलिया, अरब, और बरबराके घोड़े ही अधिक प्रसिद्ध हैं। कच्छ देशका घोड़ा मझोले डीलका होता है। और ब्रह्मदेशका छोटा घोड़ा बलवान्, कष्टसहिष्णु, बुद्धिमान् और प्रभुभक्त होता है। अरबी घोड़े इन्हीं सब गुणोंके लिये अधिक विख्यात हैं।

पहले आर्यगण घोड़ा काटकर यज्ञ करते थे, उसका नाम अश्वमेध है। यज्ञ समाप्त हो जानेपर याज्ञिकगण उसके हृदयकी वसा और मांससे होम करते और कुछ मांस खाते भी थे। आजकल किसी किसी देशके आदमी घोड़ेका मांस खाते हैं। फ्रान्समें इसका बहुत चलन है। लण्डनमें कुत्ते और बिल्लियोंके खानेके लिये घोड़ेका मांस बिकता है। कितने ही जातियां घोड़ीका दूध पीती हैं। काल्मक लोग घोड़ीके दूधसे एक प्रकारकी मदिरा तय्यार करते हैं। घोड़ेके केशर और पूंछके बालसे चिड़िया फसानेकी फन्दा, जाली, पापोश और एक प्रकारका कपड़ा बनाया जाता है। इसके चमड़ेसे मेज मढ़ी जाती है।

अस्तबलको साफ सुथरा और सूखा रखना और ऐसा बनाना चाहिये, जिसमें हवा खूब आती हो। चना, यव, गेहूं, यव और गेहूंकी भूसी, सूखी घास घोड़ेका खास खुराक है। हमारे देशके धनी घी, चीनी और गुड़ भी घोड़ेको खिलाते हैं। डाकपुरुषके वचनानुसार घोड़ा साठ वर्ष जीता है। पालतू घोड़ा तीस, पैंतीस और चालीस वर्ष तक जीता रहता है।

घोड़ा चौपाया है। शरीरके परिमाणानुसार गदहेसे इसके कान छोटे होते हैं। देह और पूंछमें बाल होते हैं। इसके खुर जुड़े रहते हैं। चारो पैरोंमें घुटनेके ऊपर भीतरका ओर अस्थिमय चिन्ह होता है। इसीसे लोग कहते हैं, कि पहले घोड़ेके पंख होते थे। वे पंख अब कट गये हैं, केवल उनके चिन्ह मात्र रह गये हैं। बुद्ध आदमी पक्षीराज घोड़ेका किस्सा भी कहते हैं। पक्षीराज घोड़ेके पर होते हैं, उसीसे वह शून्यमें उड़ सकता है। घोड़ा खड़ा खड़ा सोता है।

आइन्-इ-अकबरीमें घोड़ा सात श्रेणियोंमें विभक्त किया गया है,—अरबी, पारसी, मुजन्नस, तुर्की, याबू, ताजी और जङ्गली। घोड़के पैर ऊंचा कर दीर्घभावसे चलनेको टाप् कहते हैं। पैरका कर धीरे धीरे चलनेका नाम कदम है। पीठका हिलाकर दौड़नेको दुल्की कहते हैं। लोहेके ब्रुससे घोड़ेका खरहरा किया जाता है। घोड़ेके टापमें लोहेकी नाल बांधी जाती है, इससे दौड़नेके समय पैरोंमें चोट नहीं लगती। घोड़ेकी पीठपर बैठनेके आसनका नाम जीन है। जीन चमड़े वा कपड़ेका बनता है। जीनके दोनों ओर पैर रखनेके लिये रिकाब लटकती रहती है। घोड़ेके मुहके लगामको खींचकर इशारा करनेसे चाहे जिधर ले जा सकते हैं। पहले सूतजातिवाले ही घोड़का रथ हांकते थे। राजा नल अश्वविद्यामें विशेष

ट्स थे। (महाभारत वन०)। जयादित्यके 'अश्ववैद्यक' और नकुलके अश्वचिकित्सामें सर्वप्रकार अश्वके रोगकी चिकित्सा सविस्तार वर्णित हैं। घोटक देखो। रति-शास्त्रानुसार अश्वजातीय पुरुष। उसका लक्षण—काठके समान देह, धृष्ट, निर्भय, मिथ्यावादी, दरिद्र और द्वादशाङ्गुल मेढ़्रयुक्त।

अश्वक (सं० त्रि०) १ अश्वके सदृश, अश्व-जैसा, घोड़ेके मानिन्द, जो घोड़ेकी तरह काम करता हो। (पु०) २ टट्टू, छोटा घोड़ा। ३ खराब घोड़ा, जो घोड़ा अच्छा न हो। ४ आवारा घोड़ा, जिस घोड़ेके मालिकका पता न मिले। ५ कोई घोड़ा। ६ कुलिङ्ग पक्षी, गरगैया। ७ कोई प्राचीन जनपद। भारतके उत्तरपश्चिमप्रान्तमें अवस्थित था। ग्रीक पुराविदोंने Assakani नाममें उल्लेख किया।

अश्वकन्दक (सं० पु०) अश्वगन्धा, असगंध।

अश्वकन्दा (सं० स्त्री०) अश्वस्य गन्धः इव गन्धः कन्दे यस्याः बहुव्री० वा कप्। १ अश्वगन्धा, असगंध। २ वनस्पति विशेष, कोई जड़ी बूटी।

अश्वकन्दिका, अश्वकन्दा देखो।

अश्वकर्ण (सं० पु०) अश्वस्य कर्ण इव पत्रं यस्य। १ अश्वका कर्ण, घोड़ेका कान। २ शालवृक्ष विशेष, किसी किस्मके शालका पेड़। ३ लताशाल। इसका अपर पर्याय जरन्द्रुम, तार्क्ष्यप्रसव, शस्यसम्बरण, धन्य, दीर्घपर्ण, कुशिक और कौशिक है। ४ पलाश भेद, किसी किस्मके ढाकका पेड़। ५ पर्वत विशेष, कोई पहाड़। (क्ली०) ६ काण्डभग्ननामा अस्थिभङ्ग विशेष। हड्डियोंका खास किस्मसे टूट जाना।

अश्वकर्णक, अश्वकर्ण देखो।

अश्वकर्णिका (सं० स्त्री०) अश्वकर्ण देखो।

अश्वकातरा (सं० स्त्री०) हयकातरा, घोड़ाकायर। यह तिक्त, वातघ्न और दीपन होती है। (राजनिघण्टु)

अश्वकातरिका, अश्वकातरा देखो।

अश्वकायरिवा, अश्वकातरा देखो।

अश्विनी (सं० स्त्री०) अश्वस्य कं सुखं तत् सदृश,-कारोड स्तस्य इनि स्त्रीत्वात् ङीप्। अश्विनी नक्षत्र।

अश्वकुटी (सं० स्त्री०) तबेला, अस्तबल, घोड़ोंके रहनेकी जगह।

अश्वकुशल (सं० त्रि०) घोड़ा पहचाननेवाला, जो घोड़ेपर खूब चढ़ता हो।

अश्वकोविद, अश्वकुशल देखो।

अश्वक्रन्द (सं० पु०) १ देवसेनापति विशेष। २ पक्षी, कोई चिड़िया।

अश्वक्रान्ता (सं० स्त्री०) १ सङ्गीतशास्त्रोक्त मूर्छना विशेष। इसका सरगम इस तरह बंधा है,— गमपधनि सरेगमपधनि। २ तन्त्रोक्त जनपदभेद।

अश्वखरज (सं० पु०) अश्वस्य खरी च, अश्वा च खरश्च वा ताभ्यां जायते पुंवद्भावः। अश्वतर, खच्चर।

अश्वखुर (सं० पु०) अश्वस्य खुरमिव आकृतिरस्य। १ नखीनामक गन्धद्रव्य, नख। २ घोटकखुर, घोड़ेका सुम।

अश्वखुरा (सं० स्त्री०) श्वेतापराजिता, कौवाठेंठी।

अश्वखुरी, अश्वखुर देखो।

अश्वगति (सं० स्त्री०) १ घोटककी गति, घोड़ेकी चाल। २ छन्दोविशेष, कोई बहर। इसमें चार चरण और प्रत्येक चरणमें सोलह अक्षर रहता है।

अश्वगन्धा (सं० स्त्री०) अश्वस्य गन्ध इव गन्धो मूले यस्याः। वृक्षविशेष। (Withania Somnifera) अश्वगन्धाका अपर पर्याय यह है—हयगन्धा, वाजिगन्धा, अश्वगन्धिका, वल्या, तुरगगन्धा, कम्बुका, अश्वावरोहिका, कम्बुकाष्ठ, अवरोहिका, वाराहकर्णी, वातघ्नी, श्यामला, कामरूपिणी, काला, प्रियकरी, गन्धपत्री, हयप्रिया, वराहपत्री।

वैद्यशास्त्रके मतमें—यह कटु, उष्ण, तिक्त, बलकर और शुक्रवृद्धिकारी है। इससे वायु, कास, क्षय, व्रण, ज्वर प्रभृति अनेक रोग नष्ट होता है। यह पेड़ भारतवर्षके उष्ण एवं शुष्क स्थानमें उत्पन्न होता है। यहां बङ्गालादि देशमें भी कहीं-कहीं देखा जाता है। अधिकतर यहां इसके परिवर्तनमें आड़श् (अड़ुसा) वृक्ष व्यवहृत होता है। बहुत लोग कहते हैं कि अश्वगन्धा और आड़श् एक ही गाछ है।

अश्वगन्धाके मूल बलकर, धातुपरिवर्तक, शुक्रवृद्धिकर होता है। यह क्षय, कास, बालकोंका दौर्बल्यरोग एवं वातकी पीड़ामें विशेष उपकार करता है। कोई-कोई कहते हैं, कि इससे प्रस्राव और निद्रा होती हैं। पृष्ठाघात, पुरातन क्षत एवं किसी स्थान फूल उठने पर इसके पत्ते और छालका लेप देनेसे उपकार होता है। अस्थिभङ्ग (हड्डीटूट) हो जाने पर या वातपीड़ा, ग्रन्थिपीड़ादिमें इसका लेप यन्त्रणा निवारण करता है। इसका फल मूत्रकर होता है। इससे अश्वगन्धाघृत, अश्वगन्धातैल प्रभृति नानाप्रकार औषध प्रस्तुत होता है।

अश्वगन्धाघृत (सं० क्लो०) औषध विशेष। यह चार प्रकारका होता है। इसमें पहला बालरोगाधिकारमें गुणद है। बनानेकी रीति यह है—घृत ४ शराव, अश्वगन्धा कल्क १ श०, दूध ४ शराव, जल १६ शराव। यह सब चीज एक साथ पचानेसे तैयार होता है। मतान्तरसे इसमें दूध ४० शराव मिलानेको भी लिखा है। (सारकौमुदी, भैषज्यरत्नावली)

दूसरा वातव्याधिहितकारक। अश्वगन्धा १६ शराव ६४ शराव जलमें पाककरके शेष १६ शराव कषाय तैयार करना चाहिये। पीछे घृत ४ शराव और दूध १६ शराव मिलाकर विधिपूर्वक पचाया जाता है। (चक्रदत्त—वातव्याधिचिकित्सा)

तृतीय और चतुर्थ प्रकार—वातव्याधि एवं वृष्यमें उपकारक है। इसे प्रस्तुतकरनेकी विधि—अश्वगन्धा १२॥० शराव जल ६४ शरावका पादशेष १६ शराव सुपवित्र क्वाथ एवं छागमांस २५श० जल १२८ शरावमें खूब पाक करके शेष रस ३२ श०, गव्य दूध १६ श० तथा काकोली, क्षीरकाकोली, मधुक, मेदा, महामेदा, जीवन्ती, जीवक, बला, इलायची, शतावरी, द्राक्षा, विदारी, कृष्णजीरक, मुद्गपर्णी, शूकशिम्बी, पीपली, ऋषभक यह सब द्रव्य प्रत्येक १ कर्ष, एकत्र मिलाकर पाक करना चाहिये। जब पाक सिद्ध हो जाय, तब आगपरसे उतार शीतल होनेपर चीनी ४ पल और मधु ८ पल मिलाना होता है। (भावप्रकाश)

अच्छी अवस्थामें उत्पन्न भया हुआ अश्वगन्धा १०० पल शुभदिनमें लाकर खूब महीन कूटकरके १ द्रोण जलमें धीरे धीरे पाक करना, जब चतुर्थांश शेष रह जायतो उतारकर कपड़ेसे छान लेना चाहिये। फिर घृत १ प्रस्थ एवं गौका दूध ३ प्रस्थ तथा २०० पलमांसका पूर्वोक्त प्रकारसे निकाला हुआ कषाय। काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा जीरक, कृष्णजीरक, स्वयंगुप्ता, ऋषभक, एला, मधुक, मृद्वीका, शूर्पपर्णी, जीवन्ती, चपला, बाला, नारायणी, विदारी यह सब औषधियोंका खूब महीन पीसा हुआ चूर्ण डालकर एकत्र पाक करना चाहिये। पाकसिद्ध तथा शीतल हो जानेपर मधु एवं चीनी मिलानी होती है। (रसरत्नाकर, भैषज्यरत्नावली)

अश्वगन्धातैल (सं० क्लो०) औषधभेद। यह दो प्रकारका होता है। पहला वातव्याधिमें हितकर है। इसके तैयार करनेकी रीति इस तरह है—तिलका तैल ४ शराव अश्वगन्धा १२॥० शराव और जल ६४ शरावका शेष १६ शराव क्वाथ, मृणालादिका मिला हुआ कल्क १ शराव एक साथ विधिपूर्वक पकाना चाहिये। (चक्रदत्त)

दूसरा रसायनाधिकारमें उपकारक। इसमें कल्कके लिये अश्वगन्धा, कुष्ठ, मांसी, सिंहीफल यह सब १ शराव, दूध १६ शराव, तिलका तैल ४ शराव। एकत्र पचानेसे तैयार होता है। (चक्रदत्त)

अश्वगन्धाद्यचूर्ण (सं० क्लो०) औषधविशेष। यह चूर्ण स्वरभङ्गनाशक है। अश्वगन्धा, अजमोदा, पाठा, त्रिकटु (सोंठ मिर्च पीपल) त्रिफला, शतपुष्प, अम्लबीज, सैन्धव यह सब सम भाग और इसके आधे भाग वचको एक साथ पीस कर चूर्ण तैयार करना चाहिये। फिर मधु और घीके साथ १ कर्षमात्र प्रति दिन सेवन करनेसे बहुत फायदा दिखलाता है। (रसरत्नाकर)

अश्वघोष भदन्त—एक प्राचीन बौद्ध आचार्य। सुभाषितावलीमें इनके कितने ही कविता उद्धृत हुआ हैं।

अश्वदेव—प्राचीन संस्कृत कवि। सुभाषितावलीमें इनका उल्लेख है।

अश्वमोयुग (सं० क्लो०) अश्व द्विवे मोयुगच्। अश्वद्वय, घोड़ेकी जोड़ी।

अश्वगोष्ठ (सं० क्लो०) अश्वानां स्थानम्, स्थानार्थे गोष्ठच्। अश्वशाला, अस्तबल, घोड़साल।

अश्वग्रीव (सं० पु०) अश्वस्य ग्रीवा इव ग्रीव यस्य। १ विष्णुद्वेष्टा असुर विशेष। यह कश्यपकी दनु नाम्नी स्त्रीसे पैदा हुआ था। २ हयग्रीव नामक विष्णुका अवतार विशेष। हयग्रीव देखो।

अश्वघास (सं० पु०) अश्वका ग्रहल, घोड़ेकी चरागाह, जिस मैदान्में घोड़े चरें।

अश्वघोष—एक सुप्रसिद्ध बौद्धाचार्य और दार्शनिक कवि। इन्होंने बुद्धचरित, चतुःशतिका प्रभृति बहुत संस्कृत ग्रन्थ और अनेक संस्कृत कविता लिखे हैं। दार्शनिक बौद्ध-समाजमें 'अश्वघोष-भदन्त' नामसे प्रसिद्ध हैं। यह सुप्रसिद्ध आचार्य पार्श्वके शिष्य थे। सुतरां माध्यमिकाचार्य नागार्जुनके पूर्व हुये थे। महायान-सम्प्रदाय उन्को पूर्वाचार्य बोलते हैं। ४०५ ईस्वीमें कुमारजीव चीनभाषामें अश्वघोष-चरितका अनुवाद किया था।

२ परवर्ती बौद्धाचार्य, यहांके आर्यशूर कहते हैं। इनकी रची अनेक संस्कृत कविता प्रचलित है।

३ काश्मीरके कर्कोटक-राजवंशका प्रतिष्ठाता दुर्लभवर्धनके पूर्व पुरुष। एसीआटिक सोसाइटीसे प्रकाशित राजतरङ्गिनीमें 'अश्वघामकायस्थ', स्टेइन साहबके प्रकाशित राजतरङ्गिनीमें 'अश्वघाम-कायस्थ' एवं काश्मीरके संगृहीत विश्वकोष-कार्यालयमें रक्षित ३०० वर्षका प्राचीन हस्तलिखित राजतरङ्गिनीकी पोथीमें अश्वघोष-कायस्थ नाम भी परिचित होता है।

अश्वघ्न (सं० पु०) अश्वं हन्ति, हन्-टक् उप० समा०। श्वेतकरवीर वृक्ष, सफ़ेद कनेरका पेड़।

अश्वचक्र (सं० क्लो०) १ जयाचार्योक्त चक्र विशेष। इसमें अश्वके चिह्नसे शुभाशुभ देखते हैं। २ घोड़ेका फेरा। शतरञ्जमें मात न दे घोड़ेकी चालसे बादशाहको घुमाते रहना भी अश्वचक्र कहाता है। ३ अश्वसमूह, घोड़ेका जखीरा। (पु०) ४ शम्बर दैत्यके सेनापति विशेष। जाम्बवतीपुत्र शाम्बने इन्हें मार डाला था।

अश्वचलनशाला (सं० स्त्री०) घोड़दौड़का मैदान्, जिस जगह घोड़े दौड़ाये जायें।

अश्वचिकित्सक (सं० पु०) अश्ववैद्य, सलोतरी, बैतार, घोड़ेको दवा देनेवाला हकीम।

अश्वचिकित्सा (सं० स्त्री०) घोड़ेके रोग निवारणका उपाय, बैतारी, सलोतरीपन। शालिहोत्र, नकुल, जयादित्य प्रभृति रचित कई प्राचीन अश्व-चिकित्सा ग्रन्थ विद्यमान हैं।

अश्वचेष्टित (सं० क्लो०) अश्वस्य चेष्टितम्, ६-तत्। १ अश्वका चेष्टित, घोड़ेका रुख़। २ अश्वका कायकृत व्यापार विशेष, जो काम घोड़ा करता हो। ३ दैव शुभ और अशुभसूचक चिह्न, घोड़ेके जिस निशांसे आगेका भलाबुरा जान पड़े। वृहत्-संहितामें इसका विवरण यों लिखा है,—घोड़ेका सर्वाङ्ग जल या अग्निकणायुक्त हो जानेसे दो वर्ष तक वृष्टि नहीं पड़ती। मेढ़ जलनेसे राजाका अन्तःपुर नष्ट होता है। उदर प्रदीप्त होनेसे धनागार शून्य पड़ता है। गुह्य और पुच्छमें आग लगनेसे हार होती, एवं मुख और शिर प्रज्वलनेसे जय मिलता है।

अश्वजघन (सं० पु०) नरघुड़, जिस शख्सके जिस्मका निचला हिस्सा घोड़े-जैसा रहे।

अश्वजित् (वै० त्रि०) १ विजय द्वारा अश्व पानेवाला, जो जीतसे घोड़े लेता हो। (पु०) २ बौद्ध भिक्षु विशेष।

अश्वजीवन (सं० पु०) चणक, चना, जिसे खाकर घोड़ा जीता है।

अश्वतर (सं० पु०) अनुरश्वः, अश्व-तनुत्वे ष्टरच्। १ अश्वखरज, खच्चर। इसका मांस बल्य, वृंहण और कफपित्तकर होता है। (मदनपाल) २ सर्पविशेष। यह भूतलवासी नागोंके प्रधान हैं। ३ गन्धर्व विशेष। ४ बछेड़ा। स्त्रियां ङीष्। अश्वतरी, यह अग्निकी वाहन। (ऐतरेयब्राह्मण ४।१।७।१)

अश्वतीर्थ (सं० क्लो०) तीर्थविशेष। यह स्थान गङ्गा किनारे कान्यकुब्जके निकट अवस्थित है।

अश्वत्थ (सं० पु०) अश्वे पर्वतादिस्थाने प्रदेशे तिष्ठतीति स्था-क सकारस्य तकारः। स्वनामख्यात वृक्ष-

विशेष। (Ficus religiosa) इसका हिन्दी नाम पीपर वा पीपल है। पीपल शब्द पिप्पल शब्दका अपभ्रंश है। अनेक स्थानोंमें यह पांकड़ नामसे प्रसिद्ध है, परन्तु पांकड़ स्वतन्त्र वृक्ष हैं।

अश्वत्थके ये कई पर्याय देखे जाते हैं,—बोधिद्रुम, चलदल, पिप्पल, कुञ्जराशन, अच्युतावास, चलपत्र, पवित्रक, शुभद, बोधिवृक्ष, याज्ञिक, गजभक्षण, श्रीमान्, चीरद्रुम, विप्र, मङ्गल्य, श्यामल, गुह्यपुष्प, सेव्य, सत्य, शुचिद्रुम, धनुर्वृक्ष।

अश्वत्थवृक्ष कई प्रकारका होता है। यथा—गईभाण्ड, गजकण्डु, वेलिया पिप्पल, नन्दीवृक्ष इत्यादि। अश्वत्थका वृक्ष बहुत बड़ा होता है। चारो ओर इसकी शाखा प्रशाखायें फैल जाती हैं, चैत्र वैशाखके महीनेमें जब नये पत्ते निकलते और वायुके झोंकेसे झर झर हिलते हैं, तब इस वृक्षकी अपूर्व शोभा दिखाई देती है। किसी किसी पीपलके नये पत्ते हरित मिश्रित श्वेतवर्णके और किसीके लाल होते हैं; इसीसे कवि लोग स्त्रियोंके करपल्लवके साथ इसकी तुलना करते हैं। पीपलके पेड़में आघात करनेसे सफेद दूध निकलता है। चिड़ीमार इसीसे चिड़िया फसाते हैं। इसके दूधसे गटापार्चा बन सकता है। यह वृक्ष डूमर जातिका है, इसीसे इसमें फूल नहीं लगते। यह एक वर्षमें दो बार फलता है। फल जब पकते हैं तो चिड़ियां उन्हें खाती हैं। हाथी, गोरू, भैंस, बकरी, भेड़ आदि जन्तु इसके पत्तेको खाना बहुत पसन्द करते हैं।

अश्वत्थ हमलोगोंके देशका पवित्र वृक्ष है। न इसका पत्ता तोड़ना चाहिये और न इसे काटकर लकड़ी बनानी चाहिये। पर इस नियमका प्रतिपालन सब कोई नहीं करते। वैशाख महिनेमें हो कितने इसका पत्ता नही तोड़ते और शूद्र लोग प्रायः उस पेड़को काटना नहीं चाहते। अश्वत्थवृक्ष स्वयं विष्णुरूपी है। पद्मपुराण उत्तरखण्ड १६० अध्यायमें लिखा है, कि एकदिन गौरीशङ्कर एकान्तमें क्रीड़ाकौतुक कर रहे थे, उसी समय देवताओंने अग्निको ब्राह्मणके वेशमें वहां भेज दिया। अग्निके वहां पहुंचने पर सुखमें वाधा पड़नेके कारण पार्वतीने क्रुद्ध होकर देवताओंको यह शाप दिया,—'तुमलोग वृक्षयोनि प्राप्त हो।' उसी शापसे ब्रह्मा पलाशवृक्ष, विष्णु अश्वत्थवृक्ष एवं रुद्र वटवृक्ष हुए। भगवद्गीतामें भी लिखा है, कि श्रीकृष्णने अर्जुनको कहा था,—"सब वृक्षोंमें मुझे अश्वत्थवृक्ष समझना।"

अश्वत्थवृक्षके मूलमें थाला बनाकर वैशाख मासमें जल देनेसे महा फल होता है। पीपलके पेड़को देखकर प्रणाम करनेसे आयु और सम्पद् बढ़ती है। अगर वांयां अङ्ग करके अथवा और कोई अशुभ लक्षण दिखाइ पड़े, तो पीपलके मूलमें जल देनेसे कोई अनिष्ट नहीं होता। जल देनेका मन्त्र,—

"चक्षुःस्पन्दं भुजस्पन्दं तथा दुःस्वप्नदर्शनम्।
शत्रु णाञ्च समुत्थानमश्वत्थ शमयाशु मे॥"

वैद्यशास्त्रके मतानुसार अश्वत्थ मधुर, कषाय और शीतल हैं। इससे कफ, पित्त और दाह नष्ट होता हैं। इसका फल शीतल और अतिशय हृद्य है इससे रक्त, पित्त, विष, दाह, छर्दि, शोष, अरुचि एवं योनिदोष नष्ट होता है।

इसकी छाल सङ्कोचक है। कोमल छाल और पत्तेको कलोसे पुरातन प्रमेह रोगमें उपकार होता है। फलको चूर्ण कर खानेसे भूख बढ़ती और कोठा साफ होता है। इसका वीज शीतल एवं धातु-परिवर्तक है। चर्मरोगमें इसकी छालका क्वाथ सेवन करनेसे उपकार होता है। इसका नवीन पल्लवाङ्कुर विरेचक है, अवधूत लोग हरिताल भस्म करनेके समय अश्वत्थभस्म व्यवहार करते हैं। होमादि कार्यमें पीपलकी लकड़ी लगती है। शांईवृक्षपर जो पीपल जमता है, ऋषिगण उसकी अरणि बनाते थे। पीपलका तख़्ता बहुत दिन नहीं टिकता और न उसपर अच्छी पालिश हो होती है।

अश्वत्थक (सं० पु०) अश्वत्थस्य मूलं अश्वत्थः तद्युक्तः कालोप्यश्वत्थः, तस्मिन् देयमृणम् इत्यर्थ (कलाप्यश्वत्थयवबुसाद्वुन्। पा ४।३।४८) १ अश्वत्थका फल लगते समय देने योग्य ऋण। स्वार्थे कन्। २ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़।

अश्वत्थकुष (सं० पु०) अश्वत्थस्य पाकः (पीलुआदि-कर्णादिभ्यः कुणच्। पा ५।२।२४) पके हुये पीपलका फल, पकुहा।

अश्वत्थफलका (सं० स्त्री०) हबुषा।

अश्वत्थफला, अश्वत्थफलका देखो।

अश्वत्थभित्, अश्वत्थभेद देखो।

अश्वत्थभेद (सं० पु०) अश्वत्थस्य भेदो विशेषो यत्र। नन्दी वृक्ष, किसी किस्मका पीपर।

अश्वत्थसन्निभा (सं० स्त्री०) अश्वत्थिका, किसी किस्मका पीपर।

अश्वत्था (सं० स्त्री०) १ पूर्णिमा तिथि। २ क्षुद्राश्वत्थवृक्ष, किसी किस्मका पीपर।

अश्वत्थामन् (सं० पु०) अश्वस्येव स्थाम शब्दोयस्य पृ० सकारस्य तकारादेश। १ कृपीके गर्भ और द्रोणाचार्यके औरससे जात एक महावीर। इन्होंने भूमिष्ठ होते ही उच्चैःश्रवा अश्वकी तरह शब्द निकाला था, इसीसे इनका नाम अश्वत्थामा पड़ा। "अश्वस्येवास्य यत् स्थाम नदतः प्रदिशो गतम्। अश्वत्थामैव बालोऽयं तस्मान्नाम्ना भविष्यति॥" (महाभारत आदिपर्व १३०।४७-४८) अश्वत्थामाने कुरुक्षेत्रके युद्धमें महावीरत्व दिखाया था। कहते हैं, इनकी मृत्यु नहीं, यह अमर हैं। २ पाण्डवपक्षके मालवराज इन्द्रवर्माका हाथी। कुरुक्षेत्रके युद्धमें द्रोणाचार्य महाविक्रमसे पाण्डवोंकी सैन्यको विनष्ट कर रहे थे। इसलिये श्रीकृष्णचन्द्र अर्जुनसे बोले, 'द्रोणको उन्मना करके विना मारे और कोई रक्षा नहीं है। अतएव सब कोई उनके निकट यह सम्वाद दीजिये, कि अश्वत्थामा हत हो गया।' पाण्डव पक्षके लोगोंने ऐसा ही किया, परन्तु द्रोणाचार्यने किसी की बात न मानी। वे बोले—युधिष्ठिरके मुखसे यह समाचार विना सुने हमको विश्वास नहीं हो सकता। युधिष्ठिर सत्यवादी रहे, मिथ्याबातमें उन्हें नरकवत् घृणा थी। इधर अश्वत्थामा मारागया यह विना बोले युद्धमें पराजय होते रहा। उसी समय मालवराजके अश्वत्थामा नामक हस्तीकी मृत्यु हुई थी। इसीसे युधिष्ठिर कौशल करके 'अश्वत्थामाहतः' कुछ उच्चैःस्वरसे कहके 'इति गज' यह बात अल्प धीरे धीरे बोले। सुतरां द्रोणाचार्य शेष कथा सुन न पानेसे समझे, कि सत्यही उनका पुत्र अश्वत्थामा विनष्ट हो गया।

अश्वत्थामा, अश्वत्थामन् देखो।

अश्वत्थिक (सं० त्रि०) अश्वत्थेन चरति, अश्वत्थ-ठन्। (पा ४।४।१०) अश्वत्थ फल खानेवाला जन्तु, जो जानवर पीपरका फल खाता हो।

अश्वत्थिका, अश्वत्थी देखो।

अश्वत्थी (सं० स्त्री०) पिप्पलादेराकृतिगणत्वात् ङीष्। १ क्षुद्रपत्राश्वत्थवृक्ष, पाकर। यह मधुर, कषाय, रक्तपित्तघ्न, विषघ्न, दाहघ्न और गर्भिणीके लिये हितकर होती है। (राजनिघण्टु) २ वृक्षविशेष, कोई पौधा। यह वनमें उत्पन्न होती और पीपलजैसे छोटे-छोटे पत्ते रखती है। इसका पर्याय—लघुपत्री, पवित्रा, ह्रस्वपत्रिका, पिप्पलिका, वनस्था, अश्वत्थिका।

अश्वद (सं० त्रि०) अश्वप्रदान करनेवाला, जो घोड़ा बख्शता हो।

अश्वदंष्ट्रक (सं० पु०) १ गोक्षुर वृक्ष, गोखुरूका पेड़। २ हिंस्रजन्तु विशेष, कोई खूंख़ार जानवर।

अश्वदंष्ट्रा (सं० स्त्री०) अश्वस्य दंष्ट्रा इव आकारोऽस्य तत्सादृश्यात्। गोक्षुरवृक्ष, गोखुरूका पेड़।

अश्वदा (वै० पु०) अश्व प्रदान करनेवाला पुरुष, जो शख्स घोड़ा बख्शता हो।

अश्वदावन्, अश्वदा देखो।

अश्वदूत (सं० पु०) घोड़सवार हरकारा, जो शख्स घोड़ेपर चढ़कर खबर देता हो।

अश्वनाय (सं० पु०) अश्वं नयति, अश्व-नी-अण् उप० समा०; यद्वा नयति, कर्तरि णः नायः; अश्वस्य नायः, ६-तत्। अश्वपालक, सयीस, जो शख्स घोड़ा पालता हो।

अश्वनाश (सं० पु०) श्वेतकरवीर, सफ़ेद कनेर।

अश्वनिबन्धिका (सं० स्त्री) अश्वपालिका, सयीस।

अश्वनिर्णिज् (वै० त्रि०) अश्वविभूषित, घोड़ोंसे सजा हुआ।

अश्वन्त (सं० त्रि०) अश्वस्य घोटकस्य वक्रः व्याप-कस्य धर्मस्य वा अन्तो नाशो यत्र, शकन्ध्वादि टेर्लोपः

बहुव्री०। १ अशुभ, बुरा। २ मृत, मुर्दा। (पु०) ३ क्षेत्र, मैदान्। ४ चुल्ली, चूल्हा, भट्ठी। ५ अनवधि, मुद्दतकी अदममौजूदगी। ६ मरण, मौत। ७ प्राणि-हिंसाका स्थान, मक़तल, जिस जगहमें जानवर मारे जायें। अश्वन्तमशुभे चैव चुल्लामनवधौ मतौ। (हेम)

अश्वप (सं० पु०) अश्वं पाति रक्षति, अश्व-पा-क। १ अश्वपालक, सयीस। २ अग्निपालक, आगकी हिफ़ाज़त करनेवाला। ३ साग्निक, जो आगके साथ हो।

अश्वपति (वै० पु०) ६-तत्। १ अश्वपालक, सयीस। २ रामायणप्रसिद्ध कैकेय राजविशेष। यह भरतके मातुल रहे। ३ असुरविशेष। ४ राजोपाधिभेद।

अश्वपत्यादि (सं० पु०) अश्वपतिरिति शब्द आदि येषाम्, बहुव्री०। अश्वपत्यादिभ्यश्च। पा ४।१।८४। प्राग्दीव्यतीय अर्थमें यण् प्रत्ययके निमित्त पाणिन्युक्त शब्द-समूह। यथा,—अश्वपति, ज्ञानपति, शतपति, धनपति, गणपति, स्थानपति, यज्ञपति, राष्ट्रपति, कुलपति, गृहपति, धान्यपति, बन्धुपति, धर्मपति, सभापति, प्राणपति, क्षेत्रपति, पशुपति, अधिपति।

अश्वपर्ण (वै० त्रि०) अश्वानां पर्णं गमनं यत्र, बहुव्री०। अश्वके पर्णवाला, जिसमें घोड़के बाज़ू रहें। यह शब्द रथ एवं मेघका विशेषण है। "समश्व पर्णाश्चरन्ति।" ऋक् १।४७।२१।

अश्वपर्णिका (सं० स्त्री०) भूतकेशीलता, भूतकेस।

अश्वपर्णी, अश्वपर्णिका देखो।

अश्वपस्त्य (वै० त्रि०) व्याप्तगृह। "अश्व प्रजावद्रयिमश्वपस्त्य" ऋक् ८।८६।४१। 'अश्वपस्त्यं व्याप्तगृह' (सायण)

अश्वपाद (सं० त्रि०) अश्वस्य पाद इव पादो यस्य, बहुव्री०। अश्वके पैरकी तरह पादयुक्त, जिसके घोड़े-जैसा पैर रहे।

अश्वपाल (सं० पु०) अश्वान् पालयति, पा-णिच्-लुक्-अण् अच् वा, णिच् लोपः। घोटकरक्षक, सयीस।

अश्वपुच्छक (सं० पु०) खड्गलता, कांस, कुश।

अश्वपुच्छा (सं० स्त्री०) १ पृश्निपर्णी, पठौनी। २ माषपर्णी, किसी क़िस्मके दालदार अनाजकी झाड़ी।

अश्वपुच्छिका, अश्वपुच्छी देखो।

अश्वपुच्छी (सं० स्त्री०) अश्वस्य पुच्छमिव पुच्छं केशरो यस्याः, बहुव्री०। माषपर्णी वृक्ष, किसी क़िस्मके दालदार अनाजका पेड़।

अश्वपुटभावना (सं० स्त्री०) द्वाविंशत्पलपरिमित द्रव्यकी भावना, दवाना बायीस मिनट तक आब-जुलाल।

अश्वःपुत्री (सं० स्त्री०) १ सल्लकी वृक्ष, कुंदरुका पेड़। २ द्रवन्ती।

अश्वपृष्ठ (सं० क्लो०) घोटकका पृष्ठ, घोड़ेकी पीठ।

अश्वपेज (सं० पु०) ऋषिविशेष।

अश्वपेजिन् (सं० त्रि०) अश्वपेज ऋषि-प्रणीत ग्रन्थ पढ़नेवाले। यह शब्द बहुवचनान्त है।

अश्वपेशस् (वै० त्रि०) अश्वेन पेशस रूपं निरूपणीयं यस्य। अश्व द्वारा निरूपणीय, जिसे घोड़ा देखे-भाले। "अश्वपेशसमश्वे।" ऋक् २।१।१६।

अश्ववडव (सं० पु०) अश्वश्च वड़वा च, द्वन्द्व०। विभाषा वृक्ष-मृग-तृण-धान्य-व्यञ्जन-पशुशकुन्यश्ववडव-पूर्वापराधरोत्तराणाम्। पा २।४।१२। अश्व एवं अश्वा, घोड़ा-घोड़ी।

अश्वबन्ध (सं० पु०) १ अश्वपालक, सायीस, घोड़ा बांधनेवाला। २ पद्यविशेष, कोई बहर। चित्रकाव्यके अनुसार यह छन्द घोड़ेकी मूर्तिमें इसतरह लिखा जाता, जिसमें अक्षरसे अङ्ग-प्रत्यङ्ग तथा आभूषणादिका नाम निकलता है।

अश्वबन्धन (सं० क्लो०) १ घोटकका बन्धन, घोड़ेकी अगाड़ी-पिछाड़ी। (त्रि०) २ घोटकके बन्धनमें काम आनेवाला। जो घोड़ा बांधनेमें काम आता हो।

अश्वबला (सं० स्त्री०) १ मेथिका, मेथी। २ नारीकी भाजी।

अश्ववाल (सं० पु०) अश्वस्य बालः केशर इव तदाकारपुष्पत्वात्। काशतृण, कांस।

अश्वबाहु (सं० पु०) अश्वौ दीर्घौ बाहू यस्य, बहुव्री०। यदुवंशीय चित्रकके पुत्र। हरिवंशमें इनका विशेष विवरण है।

अश्वबुध्न (वै० त्रि०) अश्वोंपर अवस्थित, घोड़ोंपर टिका हुआ।

अश्वबुध्न (वै॰ त्रि॰) अश्वोंपर अवस्थित, जो घोड़ेके रोज़गारसे अपना काम चलाता हो।

अश्वभा (सं॰ स्त्री॰) विद्युत्, बिजली।

अश्वमहिषिका (सं॰ स्त्री॰) अश्वमहिषयोर्वैरम्, वुन्। अश्व और महिषका वैर, घोड़े और भैंसेकी दुश्मनी।

अश्वमार (सं॰ पु॰) अश्वं मारयति; अश्व-मृ-णिच्-अण्, उप॰ समा॰। १ करवीर वृक्ष, कनेरका पेड़। २ श्वेतकरवीर, सफ़ेद कनेर। ३ उपादिका, बड़ी पोय। ४ पालङ्क शाक, पलाककी भाजी। ५ श्वेत-करवीरमूल, सफ़ेद कनेरकी जड़।

अश्वमारक, अश्वमार देखो।

अश्वमाराख्य (सं॰ पु॰) श्वेतकरवीरवृक्ष, सफ़ेद कनेरका पेड़।

अश्वमाल (सं॰ पु॰) सर्पविशेष, किसी क़िस्मका सांप।

अश्वमिष्टि (वै॰ त्रि॰) १ अश्वाभिलाषी; घोड़ेकी तलाश करनेवाला। २ अग्निदेव।

अश्वमुख (सं॰ पु॰) अश्वस्य मुखमिव मुखमस्य, बहुव्री॰। किन्नर। कहते हैं, कि किन्नरका मुख घोड़े-जैसा और अन्य अङ्ग मनुष्यके समान होता है।

अश्वमुच् (सं॰ पु॰) अश्वहरण करनेवाला, जो शख़्स घोड़ा चोराता हो।

अश्वमूत्र (सं॰ क्ली॰) घोटकमूत्र, घोड़ेका पेशाब। यह तिक्त, उष्ण, तीक्ष्ण, विषघ्न, वात-कोप-शमन, पित्तकर और दीपन होता है। (राजनिघण्ट) अश्व-मूत्र भेदक एवं कफ, दद्रु और क्रमिको दूर करने-वाला है। (मदनपाल)

अश्वमूत्रिका (सं॰ स्त्री॰) शल्लकी वृक्ष, शलगमका पेड़।

अश्वमूत्री, अश्वमूत्रिका।

अश्वमेध (सं॰ पु॰) अश्वो घोटकः प्राधान्येन मेध्यते हिंस्यतेऽत्र, मेध हिंसने आधारे घञ्। १ पूर्वकालका प्रधान यज्ञविशेष। इस यज्ञमें घोड़ेका बलि चढ़ता था। अश्वमेधके घोड़ेका वर्ण मेघ-जैसा कृष्ण, मुख सुवर्णके तुल्य, उभय पार्श्व अर्धचन्द्राकार चिह्नसे अङ्कित, पुच्छ विद्युत्-जैसा प्रभायुक्त, उदर कुन्दके फूल-जैसा श्वेतवर्ण, पैर हरा, कर्ण सिन्दूर-जैसा रक्त-वर्ण, जिह्वा प्रज्वलित अग्निके सदृश, चक्षु सूर्य-जैसा तेजस्कर एवं सर्वाङ्ग सुगन्धयुक्त रहता और वेगवान् होता था।

प्राचीन समय राजा ही अश्वमेध यज्ञ करते थे। पहले निन्यानवे यज्ञ करके शेषमें अश्व छोड़ना पड़ता था। घोड़ेके कपालमें जयपत्र बांधते और उसके साथ सेनासामन्त भेजते थे। कहते हैं, अश्वमेधका घोड़ा अपनी इच्छासे पृथिवी घूम आता था। किसी पराक्रान्त राजाके घोड़ा बांध रखनेपर रक्षक उससे लड़ते रहे।

इस यज्ञमें २१ यूप बनाना चाहिये,—६ बेल, ६ खदिर, ६ पलाश, २ देवदारु एवं एक श्लेष्मातक काष्ठका। इस यज्ञमें गो, छाग और मेष सर्व समेत तीन सौ पशु यूपमें बांधे जाते थे। पीछे घोड़ा मारकर ब्राह्मण लोग उसके वक्षःस्थलका मेद अग्निमें संस्कार करते थे। देहके अवशिष्ट अङ्गद्वारा होम होता रहता था। कहा है कि उससमय याज्ञिक कदा-चित् यज्ञके बाद अश्वका कुछ-कुछ मांस भी खाते थे।

अश्वमेध यज्ञ करनेसे मोक्ष और स्वर्ग मिलता एवं ब्रह्महत्यादि सकल पाप मिट जाता है।

"यथाश्वमेधः क्रतुराट् सर्वपापापनोदनः।
तथाघमर्षणं सूक्तं सर्वपापापनोदनम्॥" (मनु ११।२६१)

अश्वमेध यज्ञके अनुकल्प पृथिवीके संपूर्ण तीर्थोंका भ्रमण है।

शाकद्वीप वा पूर्व स्काइथीया प्रभृति स्थानमें भी अश्वमेध यज्ञ प्रचलित था। स्काइथीय वा शक लोग अनेक प्रकार अनुष्ठान करनेके बाद यज्ञीय घोड़ा छोड़ देते थे। पीछे राजा प्रभृति किसी प्रधान व्यक्तिकी मृत्यु होनेपर उसी घोड़ेको मार यज्ञ करते रहे। कायरसके समय गिदसरा भी कदाचित् अश्वमेध यज्ञ करते थे। स्कान्दनेभियामें भी पूर्व कदाचित् यह प्रथा प्रचलित रही।

महाराज दशरथने अश्वमेध यज्ञ किये थे। उसका सविस्तार विवरण रामायणके आदिकाण्डमें इस प्रकार लिखा है—

वसन्त काल उपस्थित होनेपर वीर्य्यवान् राजा दशरथ पुत्रलाभार्थ अश्वमेध यज्ञ करनेकी अभिलाषसे ऋषि वशिष्ठजीके निकट गये। वशिष्ठ ऋषिने यज्ञकर्मकुशल वृद्ध ब्राह्मण, परमधार्मिक वृद्ध स्थापत्य-कर्म-कुशल व्यक्ति, कर्मकारक भृत्य, चर्मकार प्रभृति शिल्पी, चित्रादि शिल्पकार, सूत्रधार, खनक, गणक, नट, नर्तक और बहुश्रुत शास्त्रज्ञ शुचि पुरुषोंको कहा, कि तुम लोग राजाकी आज्ञासे यज्ञोपयोगी समुदाय कार्य निर्वाह करो, तथा बहु सहस्र ईंट लाकर अनेक गुणसमन्वित राजयोग्य अनेक गृह, ब्राह्मणोंके वासयोग्य बहुविध अन्नपानयुक्त सुदृढ़-उत्तम गृह और अनेक देशोंसे आनेवाले नृपति तथा अन्यान्य ग्रामवासी प्रभृतियोंके लिये यथायोग्य गृह निर्माण करो। * * * सब लोग मिल करके आये और वशिष्ठजीसे बोले, आपका अभिमत समस्त कार्य सुविहित हो गया, कोई एक कार्य भी अङ्गहीन न हुआ।

अनन्तर वशिष्ठ ऋषिने सुमन्त्रको बुलाकर यह बात कही, पृथिवीमें जितने धार्मिक नृपति एवं समस्त देशीय ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, इन सबको आदर-सत्कारपूर्वक बोला लावो। सुमन्त्रने वशिष्ठजीकी बात सुनकर, राजाओंको अयोध्यानगरीमें आनयनार्थ कार्यदक्ष पुरुषोंको आदेश किया। पीछे स्वयं भी शीघ्र ही गमन किया। अनन्तर कई एक दिनमें महीपाललोग राजा दशरथके निमित्त अनेक रत्न लेकर अयोध्यानगरीमें समागत हुए। परे वशिष्ठ प्रधान द्विजोत्तमके साथ ऋष्यशृङ्गको आगे करके यज्ञभूमि पर गये और यथाशास्त्र विधिसे यज्ञकर्म आरम्भ किये। श्रीमान् राजा दशरथ पत्नियोंके सहित दीक्षित हुए। अनन्तर सम्वत्सर पूर्ण होनेपर अश्व प्रत्यागत हुआ और सरयू नदीके उत्तरतीरपर यज्ञ आरम्भ किया गया। वेदपारग याजकोंने शास्त्रानुसार विधिपूर्वक अनुष्ठान करने लगे। प्रवर्ग्य और उपसद नामक दो कर्म यथाविधि करके, अन्यान्य कर्म सकल निर्वाह किया। पीछे सब देवताओंकी पूजा करके सन्तोषपूर्वक प्रातःसवन प्रभृति कर्म निर्वाह किया। तदनन्तर प्रस्तरसे सोमलताको कूट करके रस निकाला। फिर मध्यंदिनका सवन अनुष्ठित हुआ। श्रेष्ठ वही ब्राह्मण-महात्माने दशरथका तृतीय सवन भी शास्त्रानुसार यथावत् समाधान किये। उस समय सकलदिवसमें एक ब्राह्मण, या परिश्रान्त क्षुधित नहीं रहे। इस यज्ञके उपलक्षमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, तापस, संन्यासी, वृद्ध, बालक, महिला, एवं व्याधित सभी व्यक्ति भोजन करते थे। अध्यक्षगण पुनः पुनः अन्न एवं विविध वस्त्र प्रदान करते थे। इस प्रकार सहर्ष सोत्साह यज्ञ हुआ। यज्ञयूप उत्थापनके समय शिल्पशास्त्राभिज्ञ व्यक्तिगण विल्वकाष्ठ निर्मित ६, खदिर निर्मित ६, वैल्वयूपके समीप स्थापनके लिये पलाशनिर्मित ६, श्लेष्मातक निर्मित १, व्यस्त बाहु परिमित देवदारु काष्ठका बनाया हुआ २। यह सब मिल करके २१ यूप विधिपूर्वक विन्यास किया गया। यह स्वर्णयुक्त रूपशाली अष्टकोणसमन्वित सुदृढ़ एक विंशति यूप काञ्चनसे भूषित प्रत्येक एक विंशति वस्त्रसे अलङ्कृत और गन्धपुष्पसे पूजित हो करके ऐसा शोभायमान हुआ, जैसे दीप्तिशाली सप्त-महर्षि स्वर्गमें विराजमान रहते हैं। इसके बाद शिल्पियोंने ईंटसे शास्त्रोक्त परिमाण चयनीय अग्निकुण्ड निर्माण किया, जो गरुड़की तरह त्रिकोणाकृति और स्वर्णनिर्मित पक्षसमन्वित एवं अष्टादश हस्त परिमित हुआ था। अनन्तर इस यज्ञमें शामित कर्म उपस्थित होनेपर ऋषियोंने,शास्त्रमें जौन जौन देवताको जो जो वलि विहित है, उन देवताओंके उद्देश्यसे वहां वलि प्रोक्षण किये। उस समय बहुतर जलचर, भुजङ्ग, पशु, पक्षी और वही अश्व प्रभृति सकल वलि प्रोक्षण करके वे ही सब यूपोंमें तीन सौ (३००) पशु और श्रेष्ठ अश्वरत्नके बन्धन किये। पीछे कौशल्यादेवीने परम प्रमोदके साथ सब भावसे उस श्रेष्ठ अश्वको परिचर्या करके तीन खड्ग तलवारसे छेदन किये। उन्होंने धर्मकामनासे सुस्थिर चित्तसे उस अश्वके सहित एक रात्र व्यतीत की।

अनन्तर होता, उद्गाता, अध्वर्यु ऋत्विग् प्रभृतिने

शास्त्रमें अश्वका जो अङ्ग हवनार्थ विहित है उसको यथाविधि अग्निमें हवन किया। इसके बाद राजा दशरथने न्यायानुसार यज्ञ समापन होनेपर, होताको पूर्व देश, अध्वर्युको पश्चिम देश, ब्रह्माको दक्षिण देश एवं उद्गाताको उत्तरदेश, दक्षिणा प्रदान की। ऋत्विक् प्रभृति ब्राह्मणोंको समग्र पृथिवी दक्षिणा प्रदान करके अत्यन्त हर्ष हुये थे। अनन्तर सब कोई बोले, हे भूपते! हम लोगको राज्यका प्रयोजन नहीं, सुतरां पृथिवी पालन कर नहीं सकते हैं। अतएव आप इसका मूल्य देकर ले लीजिये। मणि, रत्न, वसन, गौ इनमें जो उपस्थित हो, वही देकर पृथिवी ले लीजिये। उस समय प्रजापालक दशरथने वेदपारग ब्राह्मणको दश लाख गौ और दश कोटी सुवर्ण प्रदान किया और इसी तरह ऋत्विग् प्रभृतिको भी दिया। अनन्तर अभ्यागतोंको कोटि सुवर्ण प्रदान कियो। उस समय ऐसा कोई याचक न रहा जो दान न पाया हो।
(रामायण आदिकाण्ड १३श और १४श सर्ग)

ऐतरेय-ब्राह्मणमें जनमेजय पारिक्षित, शार्यात मानव, शतानीक सात्राजित, आम्बष्ठ, युधांश्रौष्ठि औग्रसैन्य, विश्वकर्मा भौवन, सुदास् पैजवन, मरुत्त आविक्षित, अङ्गराज वैरोचन, भरत दौष्मन्ति, दुर्मुख पाञ्चाल, अत्यराति जानन्तपि प्रभृति राजाओंका अश्वमेध यज्ञका प्रसङ्ग है। (ऐतरेय-ब्राह्मण ८ प० १९ अ० इसी ९ खण्ड देखिये) रामायणमें राजा दशरथ और रामका, महाभारतमें युधिष्ठिरका अश्वमेध यज्ञ सविस्तृत वर्णित है। हिन्दुराजगणमात्र ही किसी न किसी समय अश्वमेध यज्ञका अनुष्ठान अवश्य करते थे, इसका आभास पाया जाता है। बौद्ध और जैन प्रभावकाल मौर्यवंशके समय वैदिक क्रिया सहित अश्वमेध यज्ञ बन्द हो गया था। शुङ्गवंश-प्रतिष्ठाता पुष्यमित्रने फिर अश्वमेध यज्ञका प्रवर्तन किया, नाना पुराण और मालविकाग्निमित्र नाटकमें इसका परिचय मिलता है। इसके बाद शकाधिकार कालमें पुनः अश्वमेधयज्ञ बन्द हो गया, पीछे चतुर्थ शताब्दीसे गुप्त-सम्राट् समुद्रगुप्तने पुनः अश्वमेधयज्ञ प्रवर्तन किया। इस उपलक्षमें उनका अश्वमेध-मुद्रा प्रचलित है। गुप्तवंशके बाद उत्तरभारतसे अश्वमेध यज्ञानुष्ठान एक प्रकार लोप हो जाने पर भी दाक्षिणात्यमें चालुक्य, यादव प्रभृति वंश बराबर अश्वमेधयज्ञ करते रहे। नाना शिलालिपि और ताम्रलेखसे इसका आभास पाया जाता है।

प्रधान प्रधान राजपुत नरपतियोंने अश्वमेध यज्ञ करते हैं। वङ्गदेशीय स्मार्त रघुनन्दन कलिमें अश्वमेध यज्ञका निषेध किये, तथापि हिन्दुराजगण यज्ञ करनेसे विरत नहीं हुये। जयपुरका सुप्रसिद्ध नरपति सवाई जयसिंह ई०के १८श शताब्दीमें अश्वमेध यज्ञ किये थे। महानन्द-पाठक रचित 'अश्वमेध-पद्धती'में इसका परिचय पाया जाता है और उस अश्वमेध यज्ञके विषयमें कविकलानिधि कृष्ण भट्ट कर्तृक राजपुतानाका डिङ्गल भाषामें रचित प्राकृत गाथा भो गीत हुआ करती है। यह गाथा अश्वमेधपद्धतिसे उद्धृत हुई है। राजेन्द्रवर्मा नामक एक सामन्तराजाने अश्वमेधयज्ञ करनेकी अभिलाषसे याज्ञिक पण्डित महानन्दपाठकके द्वारा उक्त अश्वमेधपद्धति सङ्कलन कराये थे। यह पद्धति अति वृहत् है। इसमें अश्वमेध-यज्ञमें जो जो द्रव्यका प्रयोजन तथा जिस जिस अनुष्ठानका आवश्यक है सो सबका विस्तारपूर्वक वर्णन है। कलकत्ता एसोआटिक सोसाइटीमें इसकी हस्तलिखित एक पोथी है।

पूर्व कालमें साधारणतः सार्वभौम नरपति अश्वमेध यज्ञ करते थे। किन्तु इस समय जब हिन्दु समाजमें कोई सार्वभौम नृपति नहीं है तो किस तरह अश्वमेधयज्ञ हो सकता है? इसके उत्तरमें पद्धतिकार महानन्द पाठक ऐसा प्राचीन प्रमाण उद्धृत किये है,

"अथ कात्यायनसूत्रे चाश्वमेधः। राजयज्ञोऽश्वमेध सर्वकामस्य। अभिषेकादिगुणवान् क्षत्रियो राजेत्युच्यते। आपस्तम्बसूत्रे राजा सार्वभौम अश्वमेधेन यजेत। सार्वभौम इत्याह माण्डलिकस्यापाधिकारः। इति मेधा क्षत्रियस्य इति मेतानसूत्रात् क्षत्रियमात्रस्यापाधिकारः। * * * त्रिकाल-भाष्येतु वर्णानां वर्णानामधिकार उक्तः।" अर्थात् कात्यायनश्रौतसूत्रके मतसे अश्वमेध राजयज्ञ है। अर्थात् सर्व फलकामनाके लिये राजा मात्र ही अश्वमेधयज्ञ कर सकते हैं, अभिषिक्त और गुणवान् क्षत्रियमात्र ही

'राजा' कहे जाते हैं। आपस्तम्बश्रौतसूत्रमें सार्व-भौम राजा ही इस यज्ञको कर सकते हैं ऐसी उक्ति है इससे विदित होता है कि माण्डलिकका भी अधिकार है। विशेषत: वैतानसूत्रके मतसे क्षत्रिय मात्रका एवं सिद्धान्तभाष्यके मतसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य यह तीन वर्णका अधिकार पाया जाता है।

ऋक्संहिता (१म मण्डल १६२ सूक्त), तैत्तिरीय-संहिता, वाजसनेय-संहिता (२२ अ०) ऐतरेय-ब्राह्मण और शतपथ-ब्राह्मण (१३काण्ड)में अश्वमेध यज्ञका प्रसङ्ग है। सकल वेदका सब श्रौतसूत्रमें भी अश्वमेधयज्ञका विधान विस्तृत भावसे वर्णित है। आपस्तम्ब-श्रौतसूत्रमें अश्वमेधयज्ञका जो विधि वर्णित हुआ है यह नीचे लिखा जाता है—

"राजा सार्वभौमो ऽश्वमेधेन यजेत। अप्यसार्वभौम:। १ चित्रा नक्षत्रं पुण्यनाम। २ देवयजनमध्यवस्यति यत्राप: पुरस्तात् स्रुता: सूपावगाहा अनपस्वरी:। ३ फाल्गुन्यां पौर्णमास्यां सांग्रहण्येष्ट्या यजते। तस्या योत्तरामावास्या तस्यां संज्ञान्या। ४ वैशाख्यां पौर्णमास्यां प्राजापत्यमृषभं तूपरं सर्वरूपं सर्वेभ्य: कामेभ्य आलभते। ५ तस्या योत्तरामावास्या तस्यामपदातीनृत्विज आवहन्ति। ६ अन्वहमितरानाविहन्त्या सुब्रह्मण्याया:। ७ अमावास्यामिष्ट्वा देवयजनमभिप्रपद्यते। ८ केशश्मश्रु वपते। ९ नखानि निकृन्तते। १० दन्तो धावते। ११ स्नाति। १२ अहतं वास: परिधत्ते। १३ वाचं यत्वोपवसति। १४ ये रातयस्ते जागरयन्ति। १५ वाग्यतस्येतां रात्रिमग्निहोत्रं जुहोति। १६ द्रष्ट्रे नम उपद्रष्ट्रे नमो ऽनुद्रष्ट्रे नम: ख्यात्रे नम उपख्यात्रे नमो ऽनुख्यात्रे नम: शृण्वते नम उपशृण्वते नम: सते नमो ऽसते नमो जाताय नमो जनिष्यमाणाय नमो भूताय नमो भविष्यते नमश्चक्षुषे नम: श्रोत्राय नमो मनसे नमो वाचे नमो ब्रह्मणे नमस्तपसे नम: शान्ताय नम इत्येकविंशत्या नमस्कारैरुद्यन्तमादित्यमुपतिष्ठते। १७ (इति १मा कण्डिका)

नमो ऽग्नये पृथिविक्षित इत्येतैश्च यथालिङ्गम्। १ ये ते पन्थान: सवितरिति पूर्वया द्वारा प्राग्वंशं प्रविश्याहवनीये वैतसमिध्ममभ्याधायैकादश पूर्णाहुतीर्जुहोति। हिरण्यगर्भ: समवर्तताग्र इत्यष्टौ। देवा देवेषु पराक्रमध्वमिति तिस्र:। २ चतुष्टय्य आपो दिग्भ्य: समाभृता:। ३ तासु ब्रह्मौदनं पचति। ४ पात्र्यां राजतं रुक्मं निधाय तस्मिन्ब्रह्मौदनमुद्धृत्य प्रभूतेन सर्पिषोपसिच्य सौवर्णं रुक्ममुपरिष्टात्कृत्वा कर्षन्ननुच्छिन्दंश्चतुर्भ्य आर्षेयेभ्यो महर्त्विग्भ्य उपोहति। ५ प्राशितवद्भ्यश्चतुर: साहस्रान्सौवर्णान्निष्कान्ददाति चतुरश्चाश्वतरीरथानेतौ च रुक्मौ। ६ द्वादशारत्निरशनां दर्भमयी मौञ्जी वा रशना। ७ तां ब्रह्मौदनोच्छेषेणानक्ति। ८ अश्वस्य रूपाणि समामनन्ति। कृष्ण: श्वेत: पिशङ्ग: सारङ्गो ऽरुणपिशङ्गो वा। ९ यस्य वा श्वेतस्याल्पं कृष्णं स्यात्तमालभेत। मातृमन्तं पितृमन्तं पृष्ठे वहेच दान्तं सोमपं सोमपयो: पुत्रम्। १० विज्ञायत एष वै सोमपो यं श्रियं जातं पुरा तृणाद्यात्सोमं पाययन्ति। एतौ वै सोमपौ यौ श्रियं जातौ पुरा तृणाद्यात्सोमं पाययन्तीति। ११ अध्वर्युं राज्याय परिददाति। १२ (२या कण्डिका)

ब्राह्मणा राजानश्चायं वोऽध्वर्यू राजा। या ममापचिति: सा व एतस्मिन्। यद्‌ एष करोति तद्व: कृतमसदिति। १ यावद्यज्ञमध्वर्यू राजा भवति। २ देवस्य त्वा सवितु: प्रसव इति रशनामादायेमामगृभ्णन्रशनामृतस्येत्यभिमन्त्र्य ब्रह्मन्नश्वं मेध्यं भन्त्स्यामि देवेभ्यो मेधाय प्रजापतये तेन राध्यासमिति ब्रह्माणमामन्त्रयते। ३ तं बधान देवेभ्यो मेधाय प्रजापतये तेन राध्नुहीति प्रत्याह। ४ अभिधा असीत्यश्वमभिदधाति। ५ आनयन्ति श्वानं चतुरक्षं विश्वग्बन्धेन बद्धम्। ६ पितुरनुजाया: पुत्र: पुरस्तान्नयति। मातुरनुजाया: पुत्र: पश्चात्। ७ सैध्रकं मुसलम्। ८ पौंश्चलेय: पेशसा जानु वेष्टयित्वा पश्चादन्वेति। ९ अपो ऽश्वमभ्यवगाहयन्ति श्वानं च। १० यत्र शुनो ऽप्रतिष्ठा तदध्वर्यु: प्रसौति जहीति। ११ यो अर्वन्तमिति सैध्रकेण मुसलेन पौंश्चलेय: शुन: प्रहन्ति। १२ तमश्वस्याधस्पदमुपास्यति परो मर्त: पर श्वेति। १३ दक्षिणापप्लाव्याहं च त्वं च वृत्रहन्निति ब्रह्मा यजमानस्य हस्तं गृह्णाति। १४ अभि क्रत्वेन्द्र भूरध ज्मन्नित्यध्वर्युर्यजमानं वाचयति। १५ आहरन्त्यैषीकमुदूहं वरत्रया विबद्धम्। १६ तस्मिन्नार्द्रां वैतसशाखोपसंबद्धा भवति। १७ तं द्वे शते दक्षिणतो धारयत:। द्वे उत्तरत:। १८ तेनाश्वं पुरस्तात्प्रत्यञ्चमभ्युदूहन्ति। १९ (३या कण्डिका)

शतेन राजपुत्रै: सहाध्वर्यु: पुरस्तात् प्रत्यङ् तिष्ठन्प्रोक्षत्यनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वायं राजा वृत्रं वध्यादिति। १ शतेनाराजभिरुग्रै: सह ब्रह्मा दक्षिणत उदङ् तिष्ठन्प्रोक्षत्यनेनाश्वेन, मेध्येनेष्ट्वायं राजाप्रतिधृष्यो ऽस्त्विति। २ शतेन सूतग्रामणिभि: सह होता पश्चात्प्राङ् तिष्ठन्प्रोक्षत्यनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वायं राजास्यै विशो बहुग्वै बह्वश्वायै बह्वजाविकायै बहुव्रीहियवायै बहुमाषतिलायै बहुहिरण्यायै बहुहस्तिकायै बहुदासपुरुषायै रयिमत्यै पुष्टिमत्यै बहुरायस्पोषायै राजास्त्विति। ३ शतेन क्षत्तृसंग्रहीतृभि: सहोद्गातोत्तरतो दक्षिणा तिष्ठन्प्रोक्षत्यनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वायं राजा सर्वमायुरेत्विति। ४ अत्रैतमैषीकमपप्लाव्यानुदकमश्वमाक्रमयन्नास्तरा स्थानमाक्रमणं चेदं विष्णु: प्र तद्विष्णुर्दिवो वा विष्णवित्यश्वस्य पदे तिस्रो वैष्णवीर्हुत्वाऽश्वस्य लोकाननुमन्त्रयतेऽग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति। ५ शतकृत्व एतमनुवाकमावर्तयति दशदशसंपातम्। अपरिमितकृत्वो वा। ६ (४र्थी कण्डिका)

अथैनं प्रतिदिशं प्रोक्षति। १ प्रजापतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीति पुरस्तात् प्रत्यङ् तिष्ठन्। २ इन्द्राग्निभ्यां त्वेति दक्षिणत उदङ्। ३ वायवे त्वेति पश्चात्प्राङ्। ४ विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युत्तरतो दक्षिणा। ५ देवेभ्यस्त्वेत्यधस्तात्। ६ सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपरिष्टात्। ७ पृथिव्यै त्वान्तरिक्षाय त्वा दिवे त्वेति शेषम्। ८ विभूर्मात्रा प्रभु: पित्रेत्यश्वस्य दक्षिणे कर्णे यजमानमश्वनामानि वाचयित्वाऽग्नये स्वाहा स्वाहेन्द्राग्निभ्यामिति पूर्वहोमान् हुत्वा भूरसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्यश्वमुत्सृज्य देवा आशापाला इति रक्षिभ्य: परिददाति। ९ शतं कवचिनो रक्षन्ति। १० अपर्यावर्तयन्तो ऽश्वमनुचरन्ति। ११ चतु:शता इत्येकेषाम्। १२ शतं कवच्या राजपुत्रा: संनद्धा: संनद्धसारथिन: शतमुग्रा अराजान: संनद्धा: संनद्धसारथिन: शतं वैश्या विपथिन: शतं शूद्रा वरूथिन:। १३ ते ऽश्वस्य गोप्तारो भवन्ति। १४

यद्यद् ब्राह्मणजातमुपेयुस्तान् पृच्छेयुः कियद्यूयमश्वमेधस्य विद्येति । १५ यो न विद्यात् तं जित्वा तस्य गृहात् खाद्यं पानं चोपनिवपेयुः । १६ यद्ब्राह्मणानां कृतान्नं तदेषामन्नम् । १७ रथकारकुले वसतिर्भवति । १८ इह धृतिः स्वाहेति सायमश्वस्य चतुर्षु पत्सु चतस्रो धृतीर्जुहोति । १९ (५मी कण्डिका)

सवित्रे प्रातरष्टाकपालं निर्वपति । १ तस्य पुरस्तात्स्विष्टकृत आयनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहेत्युद्द्रावान् जुहोति । २ ईंकाराय स्वाहेंकृताय स्वाहेत्यश्वचरितानि । ३ अञ्ज्येताय स्वाहा कृष्णाय स्वाहा श्वेताय स्वाहेत्यष्टाचत्वारिंशतमश्वरूपाणि । एकमतिरिक्तम् । ४ अथ ब्राह्मणो वीणागाथी गायतीत्यददा इत्ययजथा इत्यपच इति तिस्रः । ५ सवित्रे प्रसवित्र एकादशकपालं मध्यंदिने । सवित्र आसवित्रे द्वादशकपालमपराह्णे । ६ दक्षिणेनाहवनीयं होता हिरण्यकशिपावुपविशति पारिप्लवं भौवन्यवं चाचिख्यासन् । ७ तं दक्षिणेन हिरण्यकशिपौ ब्रह्मा यजमानश्च । ८ पुरस्तादध्वर्युर्हिरण्मये कूर्चे । ९ दक्षिणतो वीणागणकिन उपोपविशन्ति । १० उपविष्टेष्वध्वर्यो३ इत्यध्वर्युर्होतामन्त्रयते । ११ हो३यि होतरित्यध्वर्युः प्रतिगरिष्यामि । ओं होतरिति वा । १२ संस्थितयोरध्वर्युः संप्रेष्यति वीणागणकिनः पूर्वैः सह सुकृद्भी राजभिरिमं यजमानं संगायतेति । १३ सायं धृतिषु हूयमानासु राजन्यो वीणागाथी गायतीत्यजिना इत्ययुध्यथा इत्यमुं संग्राममहन्निति तिस्रः । १४ (६ष्ठी क०)

सायंप्रातर्ब्राह्मणौ वीणागाथिनौ गायेताम् । १ एवमेतानि सावित्रादीनि संवत्सरं कर्माणि क्रियन्ते । २ सकृद्वाश्वचरितानि जुहोति । ३ त्रिंशिमास एष संवत्सरो भवति । ४ अपवृत्तास्विष्टिषु वीणागाथिभ्यां शतमनोयुक्तं च ददाति । ५ शतं चानोयुक्तं चैत्येके । ६ ऊर्ध्वमेकादशान्मासादाश्वत्थे व्रजेऽश्वं बध्नन्ति । ७ तस्मै भक्ताय यवसमाहरन्ति । ८ यद्यश्वमुपतपद्विन्देदाग्नेयमष्टाकपालं निर्वपेत्सौम्यं चरुं सावित्रमष्टाकपालम् । ९ पौष्णं चरुं यदि श्रोणः । १० रौद्रं चरुं यदि महती देवताभिमन्येत । ११ वैश्वानरं द्वादशकपालं निर्वपेन्मृगाखरे यदि नागच्छेत् । १२ यद्यधीयादग्नयेऽंहोमुचेऽष्टाकपालः सौर्यं पयो वायव्य आज्यभागः । १३ यदि वडवामधीयात्प्राजापत्यं चरुं द्वादशकपालं वा । १४ यदि नश्येद्वायव्यं चरुम् । १५ यदि सेनाभीत्वरी विन्देतेन्द्राय जयत एकादशकपालम् । १६ यदि प्रामहा नयेयुरिन्द्राय प्रसह्वन एकादशकपालम् । १७ यद्यन्धः स्यात्सौर्यं चरुमेककपालं वा । १८ यदि श्वभ्रेऽवपतेद्वारुणं चरुम् । १९ यद्यविज्ञातेन यक्ष्मणा म्रियेत प्राजापत्यं चरुं द्वादशकपालं वा । २० (७मो कण्डिका)

यदमित्रा अश्वं विन्देरन्हन्येतास्य यज्ञः । १ अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः । २ एतस्य संवत्सरस्य योत्तमामावास्या तस्यामुखां संभरति । ३ तेधात्वीया दीक्षणीया । ४ आकूत्यै प्रयुजेऽग्नये स्वाहेति चत्वार्यौद्ग्रहणानि जुहोति । ५ स्वाहाधिमाधीताय स्वाहेति त्रीणि वैश्वदेवानि । ६ सोऽयं दीक्षाहुतिकालो विहृतः । ७ सप्ताहमन्वहमौद्ग्रहणैर्वैश्वदेवैश्चोत्तरैः प्रचरति । ८ षडुत्तमेऽहन्यौद्ग्रहणानि जुहोति । सर्वस्मै स्वाहेति पूर्णाहुतिमुत्तमाम् । ९ षडहमाग्नावैष्णवेन प्रचरति । १० सप्तम्यामाग्निक्यां विहविषेति वाजसनेयकम् । ११ भुवो देवानां कर्मणेत्युदीक्षाभिः कृष्णाजिनमारोहन्तमभिमन्त्रयते । १२ आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामस्मिन् बीजमिति जातमुखामुपतिष्ठते । १३ विसृष्टवाचि यजमाने संप्रेष्यति वीणागणकिनो देवैरिमं यजमानं संगायतेति । १४ एवं उदीपवसथात् । १५ प्रजापतिना सुत्यास्ववभृथोदयनीयानूबन्ध्योदवसानीयास्विति । १६ देवैरन्ततः । १७

(८मी कण्डिका)

वेदिकाले द्विस्तावा वेदिः । त्रिस्तावोऽग्निरेकविंशावा । १ वैश्वानरेण प्रचर्याग्नये गायत्रायेति दशहविषं सर्वपृष्ठां निर्वपति । २ समिद्धिश्चामाशश्चान इति यथालिङ्गं याज्यानुवाक्याः । ३ कस्त्वा युनक्ति स त्वा युनक्त्विति परिधीन्युनक्ति । ४ अस्य यज्ञस्यर्द्ध्यै मह्यं संनत्या इति सर्वत्रानुषजति । ५ रथवाहने हविर्धाने राज्जुदालमेकविंशत्यरत्निमग्निष्ठं मिनोति । ६ पौतुद्रवावभितः । तयो द्वैल्वा दक्षिणतः । त्रय उत्तरतः । त्रयः खादिरा दक्षिणतः । त्रयः उत्तरतः त्रयः पालाशा दक्षिणतः । त्रय उत्तरतः । ७ खादिराः पालाशा वान्तत इत्येके । ८ एकादशैकादशिनीः प्राचीः संमिन्वन्तीति कात्यबवि ब्राह्मणं भवति । ९ चतुष्टय आपो दिग्भ्यः समाभृताः । १० तासां वसतीवरीर्गृह्णाति । ११ श्वो भूते प्रतायते गोतमचतुष्टोमयोः पूर्वो रथंतरसामा । १२ पशुकाल आग्नेयं सवनीयं पशुमुपाकरोति ऐकादशिनान्वा । १३ दक्षिणाकाले यद्ब्राह्मणानां दिक्षु वित्तं तन्मध्ये समशः प्रतिविभज्यास्वहं ददाति । १४ (९मी कण्डिका)

प्राचीं दिशमध्वर्यवे । दक्षिणां ब्रह्मणे । प्रतीचीं होत्रे । उदीचीमुद्गात्रे । यदन्यद्भूमेः पुरुषेभ्यश्च । अपि वा प्राचीं होत्रे । प्रतीचीमध्वर्यवे । १ महिषीं ब्रह्मणे ददाति । वावातां होत्रे । परिवृक्तीमुद्गात्रे । पालाकलीमध्वर्यव इति विज्ञायते । २ पत्नीसंयाजान्तमहः संतिष्ठते । ३ संस्थितेऽहन्यभित आहवनीयं षट्त्रिंशतमाश्वत्थानुपतल्पान्मिन्वन्ति । ४ अस्तमित आदित्ये षट्त्रिंशतमध्वर्यव उपतल्पानधिरुह्य खादिरैः स्रुवैः सर्वां रात्रिमन्नहोमाञ्जुहोति । आज्यं मधु तण्डुलान्पृथुकांल्लाजान्करम्भान्धानाः सक्तून्मसूस्यानि प्रियङ्गुतण्डुलानिति । ५ चतुष्टयमेके समामनन्ति । आज्येन जुहोति लाजैर्जुहोति धानाभिर्जुहोति सक्तुभिर्जुहोति । ६ एकस्मै स्वाहेत्येतेषामनुवाकानामयुजः आज्येन युजोऽन्नेन । आजिरनान्ततः । ७ अव प्रयुक्तानां प्रयाचमाणानां च मन्त्राणां प्रयोगमेके समामनन्ति । ८ (१० क०)

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यश्वनामानि । १ आयनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहेत्युद्द्रावान् । २ अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमान् । ३ पृथिव्यै स्वाहान्तरिक्षाय स्वाहेत्येतं हुत्वाग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वदीक्षाः । ४ पृथिव्यै स्वाहान्तरिक्षाय स्वाहेत्येकविंशिनीं दीक्षाम् । ५ भुवो देवानां कर्मणेत्युदीक्षाः । ६ अग्नये स्वाहा वायवे स्वाहेत्येतं हुत्वार्वाङ्यज्ञः संक्रामत्वित्याप्तीः । ७ भूतं भव्यं भविष्यदिति पर्याप्तीः । ८ आ मे गृहा भवन्त्वित्याभूः । ९ अग्निना तपोऽन्वभवदित्यनुभूः । १० स्वाहाधिमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानि । ११ दद्भ्यः स्वाहा हनूभ्यां स्वाहेत्यङ्गहोमान् । १२ अञ्ज्येताय स्वाहा कृष्णाय स्वाहा श्वेताय स्वाहेत्यश्वरूपाणि । १३ औषधीभ्यः स्वाहा मूलेभ्यः स्वाहेत्योषधिहोमान् । १४ वनस्पतिभ्यः स्वाहेति वनस्पतिहोमान् । १५ मेषस्त्वा पचतैरवत्वित्यपाव्यानि । १६ कूप्याभ्यः स्वाहाद्भ्यः स्वाहेत्यपां होमान् । १७ अम्भोभ्यः स्वाहा नभोभ्यः स्वाहा महोभ्यः स्वाहेत्यम्भांसि नभांसि महांसि । १८ (११ कण्डिका)

नमो राज्ञे नमो वरुणायेति यव्यानि । १ मयोभूर्वातो अभि वातूस्रा इति गव्यानि । २ प्राणाय स्वाहा व्यानाय स्वाहेति संततिहोमान् । ३ सिताय स्वाहासिताय स्वाहेति प्रमुक्तीः । ४ पृथिव्यै स्वाहान्तरिक्षाय स्वाहे-

त्येतं हुत्वा दत्वते स्वाहादन्तकाय स्वाहेति शरीरहोमान्। ५ यः प्राणतो य आत्मदा इति महिमानौ। ६ आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्चसानि। ७ अग्नि गौजमित्येतं हुत्वाग्नये समनमत्पृथिव्यै समनमदिति संनतिहोमान्। ८ भूताय स्वाहा भविष्यते स्वाहेति भूताभव्यौ होमौ। ९ यदक्रन्दः प्रथमं जायमान इत्यश्वस्तोमीयं हुत्वैकस्मै स्वाहेत्येताननुवाकान्पुनःपुनरभ्यासं रात्रिशेषं हुत्वोषसे स्वाहेत्युषसि। व्युच्छन्त्यै स्वाहेति व्युच्छन्त्याम्। व्युष्टयै स्वाहेति व्युष्टायाम्। उदेष्यते स्वाहेत्युपोदयम्। उद्यते स्वाहेत्युद्यति। उदिताय स्वाहा सुवर्गाय स्वाहा लोकाय स्वाहेत्युदिते हुत्वा प्रश्नातामन्नपरिशेषाग्नि दधाति। १० (१२ कण्डिका)

प्रतायत एकविंश उकथ्यो महानाम्नीसामा। १ अन्तरेणाग्रयणोकथ्यौ प्राकृतं सोममभिषुत्य यः प्राणतो य आत्मदा इति महिमानौ गृह्णाति। राजतेन पूर्वं सौवर्णेनोत्तरम्। २ सूर्यस्ते महिमेति पूर्वं सादयति। चन्द्रमास्ते महिमेत्युत्तरम्। ३ आयुर्यज्ञस्य पवते मधु प्रियं पिता देवानां जनिता विभावसुः। दधाति रत्नं स्वधयोरपीच्यं मदिन्तमो मत्सर इन्द्रियो रस इत्यश्वस्य ग्रीवासु सौवर्णनिष्कं प्रतिमुच्याग्निस्ते वाजिन्युङ्ङनु त्वारभ इति वालधावश्वमन्वारभ्य बहिष्पवमानं सर्पन्त्याग्निर्मूर्धेति। ४ उद्गातारमपरुध्याश्वमुद्गीथाय वृणीते। ५ तस्मै वडवा उपरुन्धति। ६ ता यदभिहिङ्करोति स उद्गीथः। यत्प्रत्यभिहिङ्कुर्वन्ति स उपगीथः। ७ उदगासीदश्वो मेध्यो यज्ञिय इति शतेन शतपलेन च निष्केणोद्गातारमुपशिक्षामां देवतामुद्गायेति संप्रेष्यति। ८ तेन हिरण्येन स्तौत्रमुपाकरोति। ९ बहिःस्थाने भवति। १० नमो राज्ञे नमो वरुणायेति वैतसशाखयाश्वतूपरगोमृगानग्निष्ठ उपाकरोति येषां चामादिष्टो देशः। ११ प्लक्षशाखाभिरितरान्पशून्नश्वे पर्यङ्ग्यान्। आग्नेयं कृष्णग्रीवं पुरस्ताल्ललाटे। पौष्णमन्वञ्चम्। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टाद्ग्रीवासु। आग्नेयौ कृष्णग्रीवौ बाह्वोः। त्वाष्ट्रौ लोमशसक्थौ सक्थ्योः। शितिपृष्ठौ बार्हस्पत्यौ पृष्ठे। सौर्ययामौ श्वेतं कृष्णं च पार्श्वयोः। धात्रे पृषोदरमधस्तात्। सौर्यं बलक्षं पुच्छे। १२ अन्यथाग्निष्ठादष्टादशिनः। १३ (१३ कण्डिका)

रोहितो धूम्ररोहित इति नवनव प्रतियूपमन्यैन्द्राग्नदशमानेके समामनन्ति। १ एवमारण्यान्। २ तान्यूपान्तरालेषु धारयन्ति। ३ इन्द्राय राज्ञे सूकर इत्येकादश दशत आलभ्यन्ते। ४ वसन्ताय कपिञ्जलानालभते। ग्रीष्माय कलविङ्कान्। वर्षाभ्यस्तित्तिरीन्। शरदे वर्तिकाः। हेमन्ताय ककरान्। शिशिराय विकिरान्। ५ कृष्णा भौमाः। धूम्रा आन्तरिक्षाः। बृहन्तो दैवाः। शबला वैद्युताः। सिध्मास्तारका इति पञ्चदशिनः। ६ कृष्णग्रीवा आग्नेयाः। बभ्रवः सौम्याः। उपध्वस्ताः सावित्राः। सारस्वत्यो वत्सतर्यः। पौष्णाः श्यामाः। पृश्नयो मारुताः। बहुरूपा वैश्वदेवाः। वशा द्यावापृथिव्याः। ७ कृष्णग्रीवा इत्युक्तम्। ८ एता ऐन्द्राग्नाः। पृश्नयो मारुताः। कृष्णा वारुणाः। कायास्तूपराः। ९ अग्नये ऽनीकवते प्रथमजामालभते। मरुद्भ्यः सांतपनेभ्यः सवात्यान्। मरुद्भ्यो गृहमेधिभ्यो बष्कान्। मरुद्भ्यः क्रीडिभ्यः संसृष्टान्। मरुद्भ्यः स्वतवद्भ्यो ऽनुसृष्टान्। १० कृष्णग्रीवा इत्युक्तम्। ११ एता ऐन्द्राग्नाः। प्राशृङ्गा ऐन्द्राः। बहुरूपा वैश्वकर्मणाः। १२ पितृभ्यः सोमवद्भ्यो बभ्रून्धूम्रानूकाशान्। पितृभ्यो बर्हिषद्भ्यो धूम्रान्बभ्रुनूकाशान्। पितृभ्यो ऽग्निष्वात्तेभ्यो धूम्रान्रोहितास्त्रैयम्बकान्। १३ कृष्णाः पृषन्त इत्येके। १४ (१४ कण्डिका)

श्वेता आदित्याः। १ कृष्णग्रीवा इत्युक्तम्। २ एता ऐन्द्राग्नाः। बहुरूपा वैश्वदेवाः। प्राशृङ्गाः शुनासीरीयाः। श्वेता वायव्याः श्वेताः सौर्या इति चातुर्मास्याः पशवः। ३ हयानेकादशिनामालभन्ते। प्राकृतानाश्वमेधिकांश्च। ४ अग्नये ऽनीकवत इत्याश्वमेधिकान्। सोमाय स्वराज्ञ इति दशिनः। ५ उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलब्धाय स्वाहेति नियुक्ते। हुताय स्वाहेति हुते। ६ पत्न्यो ऽश्वमलंकुर्वन्ति। महिषी वावाता परिवृक्तीति। ७ शतं शतमेकैकस्याः सचिवाः राजपुत्रीदाराश्चोग्राणामराज्ञां सूतग्रामण्यामिति। ८ सहस्रं सहस्रं मणयः सुवर्णरजतसामुद्राः। ९ वालेषु मणीनावयन्ति। भूरिति सौवर्णान्महिषी प्राग्वहात्। भुव इति राजतान्वावाता प्रत्यग्वहात्प्राक्श्रोणेः। सुवरिति सामुद्रान्परिवृक्ती प्रत्यक्श्रोणेः। १० वालेषु कुमार्यः शङ्खमणीनुपग्रथ्नन्त्यप्रसंसाय। न वा। ११ अथास्य स्वदेशानाज्येनाभ्यञ्जन्ति। वसवस्त्वाञ्जन्तु गायत्रेण छन्दसेति गौल्गुलवेन महिषी। रुद्रा इति कासाम्बवेन वावाता। आदित्या इ [illegible] त्कृतेन परिवृक्ती। १२ गौल्गुलवेन सुरभिरश्वो मेधमुपाकृतः। देवां उपप्रेष्यन्वाजिन्वर्चोदा लोकजिद्भव॥ कासाम्बवेन सुरभिरश्वो मेधमुपाकृतः। देवां उपप्रेष्यन्वाजिन्वर्चोदा लोकजिद्भव॥ मौस्तकृतेन सुरभिरश्वो मेधमुपाकृतः देवां उपप्रेष्यन्वाजिन्वर्चोदा लोकजिद्भवेत्येतैश्च प्रतिमन्त्रम्। १३ (१५ कण्डिका)

युञ्जन्ति ब्रध्नमिति दक्षिणस्यां युगधुर्येतमश्वं युनक्ति। १ युञ्जन्त्यस्य काम्येति प्रष्टी। २ केतुं कृण्वन्नकेतव इति रथे ध्वजमवगूहति। ३ जीमूतस्येवेति कवचमध्यूहते। ४ धन्वना गा इति धनुरादत्ते। ५ वक्ष्यन्तीवेति ज्यामभिमृशति। ६ ते आचरन्तीति धनुरार्त्नी संमृशति। ७ बह्वीनां पिता बहुरस्य पुत्र इति पृष्ठ इषुधिं निनह्यति। ८ रथे तिष्ठन्नयति वाजिन इति सारथिमभिमन्त्रयते। ९ तीव्रान्घोषान् कृण्वते वृषपाणय इत्यश्वान्। १० स्वादुषंसदः पितरो वयोधा इति तिसृभिः पितॄनुपतिष्ठते। ११ ऋजीते परि वृङ्धि न इत्यात्मानं प्रत्यभिमृश्या जङ्घन्तीत्यश्वाजनिमादायाहिरिव भोगैरिति हस्तघ्नमभिमन्त्रयते। १२ वनस्पते वीड्वङ्गो हि भूया इति पञ्चमी रथम्। १३ आमूरज प्रत्यावर्तयेमाः केतुमद्दिति दुन्दुभीन्संह्रादयन्ति। १४ आक्रान्वाजी क्रमैरत्यक्रमीद्वाजीतुरगुदकान्तमभिप्रयाय ये ते पन्थानः सवितरित्यध्वर्युर्यजमानं वाचयति। १५ स्वयं वाजिन्नपो ऽवजिघ्रेत्ययो ऽश्वमवघ्राप्य यद्वातो अपो अगमदिति प्रदक्षिणमावर्तयति। १६ यतः प्रयाति तदवतिष्ठते। १७ वि ते मुञ्चामीत्येतमश्वं विमुच्य रथवाहनं हविरस्य नामेति रथवाहने रथमत्याधाय द्यौस्ते पृष्ठमित्यश्वस्य पृष्ठं संमार्ष्टि। १८ लाजी३ञ्छाची३न्यशो ममा३ इति पत्न्यो ऽश्वायान्नं परिशेषानुपवपन्ति। १९ यद्योपन्यूनमत्ति तस्य प्रजा राष्ट्रं भवति। २० (१६ कण्डिका)

आक्रान्वाजी क्रमैरत्यक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठमित्यश्वमभिमन्त्र्य यथोपाकृतं नियुज्य प्रोक्ष्योपपाययति। १ यद्युपायमानो न पिबेदग्निः पशुरासीदित्युपपाययेत्। २ समिद्धो अञ्जन्कृदरं मतीनामित्यश्वस्याप्रियो भवन्ति। ३ मेषस्त्वा पचतैरवत्विति पर्यग्नौ क्रियमाणे ऽपाव्यानि जुहोति। ४ पर्यग्निकृतानारण्यानुत्सृजन्ति। ५ वडवे पुरुषो च। ६ अजः पुरो नीयते ऽश्वस्य। ७ वैतसशाखायां तार्प्यं कृताधीवासं हिरण्यकशिपु चास्तीर्य सौवर्णं रुक्ममुपरिष्टात्कृत्वा तस्मिन्नश्वतूपरगोमृगानग्निघ्नन्ति। प्लक्षशाखास्वितरान्पशून्। ८ श्यामूलेन क्षौमेण वाश्वं संज्ञपयन्ति। स्पन्द्याभिरितरान्पशून्। ९ प्राणाय

स्वाहा व्यानाय स्वाहेति संज्ञप्यमाने पश्चावाहुती जुहोति । संज्ञप्ते वा । १० यामेन साम्ना प्रस्तोतानूपतिष्ठते । ११ अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति प्रतिप्रस्थाता पत्नीरुदानयति । १२ ता दक्षिणान्केशपक्षानुद्ग्रथ्य सव्यान्प्रस्रस्य दक्षिणानूरूनाघ्नाना: त्रिभिरभिधून्वत्यस्त्रि: प्रदक्षिणमश्वं परियन्त्यावन्ती स्थेति । १३ सव्यानुद्ग्रथ्य दक्षिणान्प्रस्रस्य सव्यानूरूनाघ्नाना अनभिधून्वत्यस्त्रि: प्रतिपरियन्ति । १४ प्रदक्षिणमन्ततो यथा पुरस्तात् । १५ नवकृत्व: संपादयन्ति । १६ अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति महिष्यश्वमुपसंविश्य । १७ (१७ कण्डिका)

गणानां त्वा गणपतिं हवामह इत्यभिमन्त्र्याहं स्यां त्वं स्या: सुराया: कुलज: स्यात्तव मांश्चतुर: पदो व्यतिषजावहा इति पदो व्यतिषजते । १ तौ सह चतुर: पद: संप्रसारयावहा इति पद: संप्रसारयते । २ सुभगे काम्पीलवासिनीति क्षौमेण वाससाध्वर्युर्महिषीमश्वं च प्रच्छाद्य वृषा वाजीत्यभिमन्त्रयते । ३ उत्सक्थ्योर्गृदं धेहीति प्रजननेन प्रजननं संधायाम्बे अम्बाल्यम्बिक इति महिष्यश्वं गर्हते । ४ ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रयतादिति पत्न्यो ऽभिमेधन्ते । ५ त्रिर्महिषी गर्हते । त्रि: पत्न्यो ऽभिमेधन्त उत्तरयोत्तरयर्चा । ६ दधिक्राव्णो अकारिषमिति सर्वा: सुरभिमतीमृचमन्तत: जपित्वापो हि ष्ठीयाभिर्मार्जयित्वा गायत्री त्रिष्टुबिति द्वाभ्यां सौवर्णीभि: सूचीभिर्महिष्यश्वस्यासिपथान्कल्पयति प्राक्क्रोडात् । एवमुत्तराभ्यां राजतीभिर्वावाता प्रत्यक्क्रोडात्प्राङ्नाभे: । एवमुत्तराभ्यां लौहीभि: सीसाभिर्वा परिवृक्ती शेषम् । ७ तूष्णीं तूपरगोमृगयोरसिपथान्कल्पयन्ति । ८ कस्त्वा छ्यति कस्त्वा विशास्तीत्यश्वस्य त्वचमाच्छ्यति । ९ चन्द्रं नाम मेद: । तदुद्धरति । १० नाश्वस्य वपा विद्यते । ११ उद्धरतीतरेषाम् । १२ कर्णं छित्त्वा ताईषूपमंनह्यति । १३ नाश्वस्य गदा विद्यते । १४ शृतामुवपामुत्तरत उपरिष्टादग्ने वैतसशाखायामश्वतूपरगोमृगाणां वप: सादयति । १५ (१८ कण्डिका)

दक्षिणत: प्लक्षशाखास्वितरेषां पशूनाम् । १ पूर्वौ परिवप्यमहिमानौ हुत्वाश्वतूपरगोमृगाणां वपा: समवदाय संप्रेष्यति । २ प्रजापतये ऽश्वस्य तूपरस्य गोमृगस्य वपानां मेदसामनुब्रूहि । प्रजापतये ऽश्वस्य तूपरस्य गोमृगस्य वपाना मेदसां प्रेष्येति संप्रैषौ । चन्द्रवपयोर्मेदसामनुब्रूहि चन्द्रवपयोर्मेदसां प्रेष्येति वा । ३ समवदायेतरेषां वपा: संप्रेष्यति । ४ विश्वेभ्यो देवेभ्य उस्राणां छागानां मेषाणां वपानां मेदसामनुब्रूहि । विश्वेभ्यो देवेभ्य उस्राणां छागानां मेषाणां वपानां मेदसां प्रेष्येति संप्रैषौ । ५ उत्तरौ परिवप्यमहिमानौ हुत्वा चात्वाले मार्जयित्वाभितो ऽग्निष्ठं ब्रह्मोद्याय पर्युपविशेते । दक्षिणो ब्रह्मा । उत्तरो होता । ६ किं स्विदासीत्पूर्वचित्तिरिति तस्यानुवाकस्य पृष्टानि होतु: प्रतिज्ञातानि ब्रह्मण: । ७ ब्रह्मण उदञ्चं विजयं संज्ञापयन्ति । ८ प्रजापतये ऽश्वस्य तूपरस्य गोमृगस्यास्थि लोम च तिर्यगसंभिन्दन्त: सूक्ष्मविशसं विशस्तेति संप्रैषवत्कुर्वन्ति । ९ अश्वस्य लोहितं स्विष्टकृदर्थं निदधाति । १० शफं गोमृगकण्ठं च माहेन्द्रस्य स्तोत्रं प्रत्यभिसिञ्चति । ११ हिरण्यगर्भ: समवर्तताग्र इति षट् प्राजापत्या: पुरस्तादभिषेकस्य जुहोति । अयं पुरो भुव इति षट् च प्राणभृत: । १२ व्याघ्रचर्मणि सिंहचर्मणि वाभिषिच्यते । १३ (१९ कण्डिका)

ऋषभचर्माभिषिच्यमानस्योपरि धारयन्ति । १ सहस्रशीर्षा पुरुष इति पुरुषेण नारायणेन सौवर्णेन शतमानेन शतक्षरेण शतकृष्णलेन यजमानस्य शीर्षन्नधिनिदधाति । २ प्रजापतेस्त्वा प्रसवे पृथिव्या नाभावन्तरिक्षस्य बाहुभ्यां दिवो हस्ताभ्यां प्रजापतेस्त्वा परमेष्ठिन: स्वाराज्येनाभिषिञ्चामीति महिम्नो: संस्रावेणाभिषिञ्चति । ३ वायवारभिषिञ्चतीत्येके । ४ मधुश्च माधवश्चेति मासनामभिरभिषिच्यमानमभिजुहोति । ५ वसन्ताय स्वाहा ग्रीष्माय स्वाहेत्यृतुभ्य: षट् । ६ वि न इन्द्र मृधो जहि नीचा यच्छ पृतन्यत: । यो अस्माँ अभिदासत्यधरं गमया तम: ॥ वि रक्षो वि मृधो जहि वि वृत्रस्य हनू रुज । वि मन्युमिन्द्र वृत्रहन्नमित्रस्याभिदासत इति वैमृधीभ्यां यजमानो मुखं विमृष्टे । ७ ऊर्ध्वा अस्य समिधो भवन्तीति प्राजापत्याभिराप्रीभिरभिषिच्यमानस्य हस्तं गृह्णाति । ८ प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्त: ॥ प्रजापतिं प्रथमं यज्ञियानां देवानामग्रे यजतं यजध्वम् । स नो ददातु द्रविणं सुवीर्यं रायस्पोषं वि ष्यतु नाभिमस्मे ॥ तवेमे लोका: प्रदिशो दिशश्च परावतो निवत उद्वतश्च । प्रजापते विश्वसृज्जीवधन्य इदं नो देव प्रति हर्य हव्यमिति षट् प्राजापत्या उपरिष्टादभिषेकस्य जुहोति । ९ प्राची दिशामिति षट् चापानभृत: । १० अथ यजमानो जागतान्विष्णुक्रमान्क्रामति । ११ (२० कण्डिका)

पशुकाल उत्तरत उपरिष्टादग्ने वैतसे कटे ऽश्वं प्राञ्चं यथाङ्गं चिनोति । १ एवं पुरस्तात्प्रत्यञ्चं तूपरम् । पश्चात्प्राचीनं गोमृगम् । २ दक्षिणत: प्लक्षशाखास्वितरान् पशूनासादयति । ३ वपावच्चर्या । ४ हविष इतान्तो नमति । ५ आक्रान्वाजी क्रमैरत्यक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठमिति वैतसेन कटेनाश्वतूपरगोमृगान् संहुतानूहन्वे लुवर्दाय स्वाहा बलिवर्दाय स्वाहेत्यश्वमभिजुहोति । ६ अथ कटमनुप्रहरति । ७ ये ऽश्वस्य हुतस्य गन्धमाजिघ्रन्ति सर्वे ते पुण्यलोका भवन्तीति विज्ञायते । ८ हविषा प्रचर्याञ्जनमदानं कृत्वा स्तेगान्दंष्ट्राभ्यां मण्डूकाञ्जम्भ्येभिरित्येतैश्चतुर्दशभिरनुवाकै: प्रतिमन्त्रं शरीरहोमाञ्जुहोति । ९ द्विवाकीर्त्यं पञ्चदशम् । अरणीमनुवाक्यं षोडशम् । द्यौस्ते पृष्ठमित्येतं सप्तदशमाज्येनैव । १० यदक्रन्द: प्रथमं जायमान इत्येतैस्त्रिभिरनुवाकै: षट्त्रिंशतमश्वस्तोमीयाञ्जुहोति । ११ क्रमैरत्यक्रमीदित्येतां षट्त्रिंशीम् । १२ अष्टादश जुहोतीत्येके । १३ इमा नु कं भुवना सीषधामेति द्विपदा: । १४ अन्ततो ऽश्वस्य लोहितेन शतेन स्विष्टकृतं यजति । १५ (२१ कण्डिका)

गोमृगकण्ठेन प्रथमामाहुतिं जुहोति । अश्वशफेन द्वितीयाम् । अयस्मयेन कमण्डलुना तृतीयाम् । १ पत्नीसंयान्तमह: संतिष्ठते । २ श्वो भूते प्रतायते सर्वस्तोमो ऽतिरात्रो बृहत्सामा । ३ पशुकाले गव्यानेकादशिनानालभन्ते प्राजापत्यान्वैश्वदेवान्वा । प्राजापत्यमृषभं तूपरं सर्वरूपं सर्वेभ्य: कामेभ्यो द्वादशमुपालभ्याम् । ४ समानमावभृथात् । ५ अवभृथेन प्रचर्यात्रेयं शिपिविष्टं खलतिं विक्लिधं शुक्लं पिङ्गाक्षं तिलकावलमवभृथमभ्यवनीय तस्य मूर्धञ्जुहोति मृत्यवे स्वाहा भ्रूणहत्यायै स्वाहा जुम्बकाय स्वाहेति तिस्र: । ६ तस्मै शतमनोयुक्तं च ददाति । ७ शतं चानोयुक्तमित्येके । ८ सह पुण्यकृत: पापकृतश्च हस्तसंरब्धा ग्राममभ्युदायन्ति । सर्वे ते पुण्यलोका भवन्तीति विज्ञायते । ९ सौरीर्नव श्वेता वशा अनूबन्ध्या भवन्ति । १० अर्धकेषाम् । रोहिणीरैन्द्री: सौरी: श्वेता: शितिपृष्ठा बार्हस्पत्या: । ११ अत्र वा दक्षिण आलभते । १२ छगल: कल्माष: किकिदीविर्विदीगय इति ते त्रयस्त्वाष्ट्रा: । १३ पात्नीवत आग्नेय ऐन्द्राग्न आश्विनस्ते विशालयूप आलभ्यन्ते । १४ (२२ क०)

अर्धकेषाम् । एतेषां प्रथमजं कालकाञ्जुमश्विभ्यां मध्यमे विशालयूप आलभते । तेषामेव मध्यमजमूर्जे दक्षिणे । उत्तमजं पृथिव्या उत्तरे । १ तेषां पशुपुरोडाशानग्नये ऽंहोमुचे ऽष्टाकपाल इति दशहविषं मृगारेष्टिमनु-

निर्वपति। २ समानं तु स्विष्टकृदिडम। ३ अग्रमन्वे प्रथमस्य प्रचेतस इति यथालिङ्गं याज्यानुवाक्या:। ४ त्रैधातवीययोदवस्यति। ५ तस्यां सहस्रं ददाति।६ उदवसाय विशापदूपमे के समामनन्ति। ७ तदाहु द्वादश ब्रह्मौदनान् संस्थिते निर्वपेद्द्वादशभिर्वेष्टिभिर्यजेतेति। ८ तदु तथा न कुर्यात्। द्वादशैव ब्रह्मौदनान् संस्थिते निर्वपेत्। तेष्वन्वहं द्वादशानि शतानि ददाति। ९ पिशङ्गास्त्रयो वासन्ता इत्यृतुपशुभि: संवत्सरं यजते। १० अथैकेषाम्। आग्नेया वासन्ता:। ऐन्द्रा ग्रैष्मा:। मारुता: पार्जन्या वा वार्षिका:। ऐन्द्रावारुणा: शारदा:। ऐन्द्राबार्हस्पत्या हैमन्तिका:। ऐन्द्रावैष्णवा: शैशिरा:। ११ संवत्सराय निवपस इति द्वयोर्द्वयोर्मासयो: पशुबन्धेन यजते। १२ संतिष्ठते ऽश्वमेध:। १३ (२३ कण्डिका) (आपस्तम्बश्रौतसूत्र २० प्रश्न)

अश्वमेधकाण्ड (सं० क्ली०) शतपथब्राह्मणका माध्यंदिनशाखाके तेरहवां तथा काण्वशाखाके १५श काण्ड।

अश्वमेधदत्त—पौराणिक नृपतिभेद। (महाभारत आदि० और विष्णुपुराण)

अश्वमेधिक (सं० क्ली०) अश्वमेधमधिकृत्य कृत: ग्रन्थ:, ठक् ठन् वा। १ महाभारतके अन्तर्गत चतुर्दश पर्व। (पु०) २ अश्वमेध यज्ञके योग्य अश्व। (त्रि०) ३ अश्वमेध यज्ञसम्बन्धीय।

अश्वमेधीय, अश्वमेधिक देखो।

अश्वमोहक (सं० पु०) श्वेतकरवीर, सफ़ेद कनेर।

अश्वया (वै० स्त्री०) अश्व प्राप्त करनेकी इच्छा, घोड़ा लानेकी ख़ाहिश।

अश्वयान (सं० क्ली०) अश्वभ्रमण, घोड़ेकी सवारी। घोटकारोहण वात-पित्त, अग्नि एवं श्रम बढ़ाता, मेद, वर्ण एवं कफ मिटाता और बली पुरुषका हितकर होता है। (दिनचर्या)

अश्वयु (वै० त्रि०) अश्वमिच्छति, अश्व-क्यच्-उ:। १ अश्वयुक्त, घोड़ा लिये हुआ। २ अश्वकी इच्छासे युक्त, जिसे घोड़ेकी ख़ाहिश रहे।

अश्वयुज् (सं० स्त्री०) अश्वेन अश्वमुखेन युज्यते, युज्-क्विप्। वडवाशालाभिजिदश्वयुक्शतभिषजी वा। पा ४। ३। ३६। १ अश्विनी नक्षत्र। (त्रि०) २ अश्विनी नक्षत्रजात, जो अश्विनी नक्षत्रमें पैदा हो। (वै० त्रि०) ३ अश्व लगानेवाला, जो घोड़ा कस या जोत रहा हो। (पु०) ४ अश्विनी नक्षत्रयुक्त काल। ५ चान्द्र आश्विन मास। ६ अश्वयुक्त रथादि, घोड़ागाड़ी।

अश्वयुज (सं० पु०) आश्विन मास, क्वारका महीना।

अश्वयूप (वै० पु०) यज्ञीय अश्व बांधनेका स्थान, जिस जगह अश्वमेध यज्ञका घोड़ा बांधा जाये।

अश्वयोग (वै० त्रि०) अश्व जोतवाता हुआ, जो घोड़ा जोतवा रहा हो।

अश्वरक्ष, अश्वरक्षक देखो।

अश्वरक्षक (सं० पु०) अश्वं रक्षति, रक्ष-ण्वुल्। घोटकपालक, घोड़ेका सायीस।

अश्वरत्न (सं० क्ली०) अश्व: रत्नमिव, उपमिति समा०। १ घोटकश्रेष्ठ, बढ़िया घोड़ा। २ उच्चै:-श्रवा, इन्द्रका घोड़ा। "उच्चै:श्रवसं सर्वोत्तमश्वरत्नम्।" (चण्डी)

अश्वरथ (सं० पु०) अश्वयुक्तो रथ:, शाक० तत्। घोटकयुक्त रथ, घोड़ागाड़ी, जिस गाड़ीमें घोड़े जुतें।

अश्वरथा (सं० स्त्री०) अश्व रथ इव यस्याम्। गन्धमादन पर्वतके निकटकी नदी।

अश्वराज (सं० पु०) अश्वानां अश्वेषु मध्ये वा राजा। उच्चै:श्रवा नामक घोटक, इन्द्रका घोड़ा।

अश्वराधस् (वै० त्रि०) घोड़े सजाता हुआ, जो घोड़ेको साज़सामान्से ठीक कर रहा हो।

अश्वरिपु (सं० पु०) १ करवीर वृक्ष, कनेरका पेड़। २ महिष, भैंसा।

अश्वरोधक (सं० पु०) अश्वं रुणद्धि, रुध-ण्वुल्। श्वेतकरवीर वृक्ष, सफ़ेद कनेरका पेड़।

अश्वरोह (सं० पु०) अश्वं रोहति, रुह-अण् उप० समा०। अश्वारोही, घोड़ेका सवार।

अश्वरोहका (सं० स्त्री०) अश्वगन्धा, असगंध।

अश्वरोहा, अश्वरोहका देखो।

अश्वल (सं० पु०) अश्वं लाति, ला-क ६-तत्। १ अश्वग्राहक ऋषि विशेष। २ इन ऋषिकी याज्ञवल्क्यके प्रति प्रश्न एवं प्रत्युत्तर रूप आख्यायिकाका प्रतिपादक ब्राह्मण (वेदांश) विशेष। ३ विदेहपति राजा जनकके होतपुरोहित। (क्ली०) ४ क्षुद्रतृण विशेष, किसी क़िस्मकी छोटी घास। यह तृण बल्य, वृष्य एवं पशुको हितकर होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

अश्वलक्षण (सं० क्ली०) लक्ष्यते ज्ञायते शुभाशुभमनेन, लक्ष करणे ल्युट् ६-तत्। घोटकका शुभाशुभ-

सूचक चिह्न विशेष, जिस निशानसे घोड़ेका भला-बुरा समझ पड़े।

अश्वललित (सं० क्लो०) वृत्तरत्नाकरोक्त तेईस अक्षरके पादका पूर्ण वृत्त विशेष। जिस वृत्तमें यथा-क्रम न ज भ ज भ ज भ ल ग नामक गण रहता और जिसके आठ तथा बारह अक्षरमें यति पड़ता, उसका नाम अश्वललित है। छन्दोमञ्जरीकारने इसीको अद्रितनया कहा है।

अश्वलाला (सं० स्त्री०) अश्वस्य लालेव आकारेण। १ ब्रह्मसर्प। २ हलाहल सर्प, जहरीला सांप।

अश्वलोमन् (सं० पु०) १ घोटकलोम, घोड़ेका रोयां। २ सर्पविशेष, किसी किस्मका जहरीला सांप।

अश्वलोमा, अश्वलोमन् देखो।

अश्ववक्त्र (सं० पु०) अश्वस्य वक्त्रमिव वक्त्रमस्य, शाक० बहुव्री०। १ किन्नर, किम्पुरुष, देवयोनि विशेष। २ हयग्रीव, विष्णुमूर्तिविशेष। तन्त्रसारमें इनका ध्यान इस प्रकार है—

"शरच्छशाङ्कप्रभमश्ववक्त्रं मुक्तामयैराभरणैः प्रदीप्तं।
रथाङ्गशङ्खाञ्चितबाहुयुग्मं जानुद्वयन्यस्तकरं भजामः॥"

अश्ववत् (सं० त्रि०) अश्वा सन्त्यस्य भूम्नि मतुप् मस्य व। १ अश्वयुक्त, जिसके पास घोड़ा रहे। (अव्य) अश्वे इव अस्य वा वति। २ घोड़ेकी तरह। अश्वमर्हति वति। अश्वपानेके योग्य, घोड़ा पाने लायक।

अश्ववदन (सं० पु०) किसी देशका प्राचीन नाम। हयमुख देखो।

अश्ववह (सं० पु०) अश्वेनोह्यते, अश्व-वह कर्मणि वा अच्। १ अश्वके वहनीय, घोड़ेके ले जाने लायक। २ अश्वारोही, घोड़ेपर चढ़नेवाला या घोड़ेपर चढ़े हुए।

अश्ववार (सं० पु०) अश्वं वारयति, अश्व-चुरा० वृ-णिच्-अण्। १ हयनिवारक, घोड़ेको रोकनेवाला। २ अश्वारोही, घोड़सवार। ण्वुल्, अश्ववारक, घुड़सवार। ल्यु, अश्ववारण, अश्वारोही।

अश्ववाल (सं० पु०) १ वैश्यजातिका स्वनामप्रसिद्ध श्रेणिभेद, ओसवाल। वणिक् देखो। २ घोड़ेका लोम। ३ तृणभेद। अश्ववाल देखो।

अश्ववाह् (सं० पु०) अश्वं वहति उद्दिष्ट-यज्ञस्थानं प्रापयति, अश्व-वह्-ण्वि उपधा वृद्धिः। अश्वको यज्ञशालामें ले जानेवाला, जो अश्वमेधके घोड़ेको यज्ञस्थलमें ले जाता हो।

अश्ववाह (सं० पु०) अश्वं वाहयति चालयति, वह-णिच्-अण् णिच् लोपः। घोड़सवार, जो घोड़ेपर चढ़ता हो। ण्वुल्। अश्ववाहक, घोड़ा हांकनेवाला। ल्यु। अश्ववाहन, जिसको घोड़ेपर सवारी रहे।

अश्वविक्रयिन् (सं० त्रि०) अश्वं विक्रेतुं शीलमस्य, वि-क्रि-शीलार्थे णिनि। घोड़ा बेंचकर जीविका करनेवाला, जो सौदागर घोड़े बेंचता हो।

अश्वविद् (सं० पु०) अश्वं लक्षणया तन्मानसं वेत्ति विद्-क्विप् ६-तत्। १ नलराज। महाभारत—वन पर्वके ७२ अध्यायमें राजा नलको अश्वतत्त्वज्ञताका विषय वर्णित है। (वै० त्रि०) २ अश्वलाभकर्ता, जो घोड़ा लाता हो।

अश्ववैद्य (सं० पु०) अश्वस्य अश्वानां वा वैद्यः चिकित्सकः ६-तत्। अश्वचिकित्सक, जो घोड़ेकी चिकित्सा करता हो। नकुल, शालिहोत्र, जयदत्त प्रभृतिके बनाये अश्वशास्त्रमें अश्वचिकित्साका वर्णन है।

अश्वशङ्कु (सं० पु०) अश्वस्य शङ्कु, ६-तत्। १ घोड़ा बांधनेका खूंटा। अश्वस्य शङ्कुरिव। २ दनुके पुत्रविशेष। महाभारत आदिपर्व ६० अध्यायमें दनुके चालीस पुत्र मध्य अश्वशङ्कुका हो नाम परिगृहीत हुआ है।

अश्वशाला (सं० स्त्री०) अश्वस्य अश्वानां वा शाला गृहं, ६-तत्। १ घोड़ेका घर, घुड़साल, अस्तबल। जयदत्तकृत अश्वशास्त्रमें घोड़ेका गृह निर्माण करनेके लिये ऐसा विधि लिखा है—अस्तबलको पूर्व और उत्तर तरफ कुछ ढाल होना चाहिये। उसमें बालू, काठ, किम्बा कोई दुष्ट कीट रहने न पाय। घरके भीतर पूर्ण रूप सूखा हो। अस्तबलको एक तरफ बेरीके काष्ठकी आड़ रखी जाती है। घोड़ेके सम्मुख दृष्टातेमें बालू पड़ता है। इच्छा होनेपर घोड़ा उसी जगह लोटपोट लेता है। अनेक लोग अस्तबलमें वानर बांध देते हैं। उन्हें विश्वास है, इससे घोड़ेको किसी प्रकारकी पीड़ा नहीं होती।

अश्वशास्त्र (सं० क्लो०) अश्वस्य लक्षणज्ञापकं शास्त्रं, शाक० तत्। शालिहोत्रकृत घोड़ाके लक्षणादिका ज्ञापक शास्त्र। नकुल और जयदत्तका बनाया भी कोई अश्वशास्त्र है।

अश्वशिरस् (सं० क्लो०) अश्वस्य शिरः ६-तत्। १ घोड़ेका मस्तक। अश्वस्य शिर इव शिरो यस्य, बहुव्रो०। २ दानव विशेष, कोई दैत्य। महाभारत मध्य दनुके चालीस पुत्रोंमें इसका नाम ग्टहीत हुआ है। ३ हयग्रीव नामक विष्णुकी मूर्ति।

अश्वसृगालिका (सं० स्त्री०) अश्वसृगालयोर्वैरं द्वन्द्वात् वैर-वुन् टाप् अत इत्वम्। घोड़े और सृगालकी लड़ाई।

अश्वचन्द्रा (सं० त्रि०) अश्वैः चन्द्रति आल्हादयति, चदि-णिच्-रक्-णिच् लोपः टाप्। ३ तत्। वेदे पृषो० सुडागमः। घोड़ेसे आह्लाद लेनेवाली स्त्री, जो औरत घोड़ेसे मज़ा पाती हो।

अश्वषड्गव (सं० क्लो०) अश्वानां षट्कं, अश्व षट्के षड्-गवच्। (प्रकृत्यर्थस्य षट्त्वे षड्गवच्। वार्त्तिक, पा ५।२।२९ सूत्रे)। छः घोड़ा।

अश्वसनि (सं० त्रि०) अश्वं सनुते ददाति, सन् सर्वधातुभ्यो इन्। उण् ४।११२। इति इन् ६-तत्। अश्वदाता, जो घोड़ा देता हो।

अश्वसा (सं० त्रि०) अश्वं सनुते अश्व-सन जनसनखनक्रमगमोविट्। पा ३।२।६७। इति विट्। विड्वनोरनुनासिकस्यात्। पा ६।४।४१। इति आत्वम्। अश्वदाता, घोड़ा दान करनेवाला, जो घोड़ा देता हो।

अश्वसाद (सं० पु०) अश्वं सादयति गमयति, अश्व-सद-णिच् उपधावृद्धिः अण्-णिच् लोपः उपस०। अश्वचालक, घोड़ा हांकनेवाला, घुड़सवार।

अश्वसादिन् (सं० पु०) अश्वेन सीदति गच्छति, सद-णिनि ३-तत्। अश्वारोही, घोड़ेपर चढ़नेवाला, घोड़सवार।

अश्वसूक्त (सं० पु०) वेदका सूक्त विशेष। इसमें घोड़ेका बयान है।

अश्वसेन (सं० पु०) अश्वानां सेना यस्य, बहुव्रो०। १ जिनपितृविशेष। २ नृप विशेष, कोई राजा। इनके पुत्र सनत्कुमार थे। ३ तक्षकपुत्र सर्पविशेष।

अश्वसेननृपनन्दन (सं० पु०) ६-तत्। सनत्कुमार।

अश्वस्तन (सं० त्रि०) श्वोभवः श्वस्-ट्यु तुट् च श्वस्तनः नञ्-तत्। केवल वर्तमान दिन जात, दूसरे दिन न रहनेवाला।

अश्वस्तनिक (सं० त्रि०) अश्वस्तमस्त्यस्य, मत्वर्थे ठन् नञ्-तत्। जो ग्टहस्थ केवल वर्तमान दिनके योग्य धन सञ्चय कर सकता हो, जिसके धन दूसरे दिन न रह सके।

अश्वस्तोमीय (सं० क्लो०) अश्वस्य स्तोमं स्तुतिरस्ति, अश्व मत्वर्थे छ। अश्वकी स्तुतिसे युक्त सूक्त विशेष। ऋग्वेदके १ला मण्डलका १६२ सूक्तमें अश्वकी स्तुति है—

"मा नो मित्रो वरुणो अर्यमायुरिन्द्र ऋभुक्षा मरुतः परि ख्यन्।
यद्वाजिनो देवजातस्य सप्तेः प्रवक्ष्यामो विदथे वीर्याणि॥"
(ऋक् १।१६२।१)

हम अश्वकी स्तुति करनेको प्रवृत्त हुए हैं। मित्र, वरुण, अर्यमा, आयु, इन्द्र, ऋभुक्षा, मरुत् प्रभृति देवता जिसमें निन्दा न करें। इस हेतु वह बलवान् देवजात अश्वके यज्ञ विषयमें वीर्यकी कथा हम कहेंगे। इसी तरह २२ ऋक्में भी घोड़ेकी स्तुति की गई है।

अश्वस्थान (सं० क्लो०) ६-तत्। अश्वके रखनेका ग्टह, जहां घोड़े बांधे जायें, अस्तबल।

अश्वहन्तृ (सं० पु०) अश्वं हन्ति, हन-तृच्। ६-तत्। करवीर फूलका वृक्ष, कनेरका पेड़। (त्रि०) अश्वनाशक, घोड़ेको नाश करनेवाला।

अश्वहय (वै० पु०) अश्वेन हिनोति गच्छति, हि-कर्तरि अच्। अश्वयुक्त रथ पर सर्वदा गमन करनेवाला, जो घोड़ागाड़ीपर चलता हो। "प्रत्यर्धिर्यज्ञानामश्वहयो रथानां।" (ऋक् १०।२६।५)

अश्वहृदय (सं० क्लो०) अश्वस्य हृदयं मनोगत भावादि। १ अश्वविद्याविशेष। २ अश्वाभिलाष, घोड़ेकी ख़ाहिश।

अश्ववाच (सं० पु०) अश्वस्य वाचीव अच्-समा०। देवसर्षपका वृक्ष, सरसोंका पेड़।

अश्वादि—गोत्रापत्य अर्थमें फञ् प्रत्यय होनेके लिये पाणिन्युक्त शब्दगणविशेष। अश्वादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०। अश्व, अश्मन्, शङ्ख, विद, पुट, रोहिण, खर्जूर, खर्जुल, पिञ्जुर, भड़िल, भण्डिल, भड़ित, भण्डित, भण्डिक, प्रहृत, रामोद, क्षत्र, ग्रीवा, काश, गोलाङ्क्य, अर्क, स्वन्, ध्वन, पाद, चक्र, कुल, पवित्र, गोमिन्, श्याम, धूम, धूम्र, वाग्मिन्, विश्वानर, कुट, वेश, आत्रेय, नत्त, तड, नड, ग्रीष्म, अर्ह, विशम्य, विशाला, गिरि, चपल, चुनम, दासक, वैल्य, धर्म, अनडुह्य, पुंसिजात, अर्जुन, शूद्रक, सुमनस्, दुर्मनस्, क्षान्त, प्राच्य, कित, काण, चुम्प, श्रविष्ठा, वीक्ष्य, पविन्दा, आत्रेय भरद्वाज, भरद्वाज आत्रेय, कुत्स, आतव, कितव, शिव, खदिर, पथ, कन्हू, स्रुव, सूनु, कर्कटक, रुक्ष, तरुक्ष, तलुक्ष, प्रसुल, विलम्ब, विष्णुज। यही शब्द अश्वादि हैं।

अश्वामघ (वै० त्रि०) अश्वो मघं धनं यस्य, वेदे दीर्घः। १ अश्वरूप धन रखनेवाला, जिसके घोड़ा ही धन रहे। २ घोड़ा दानकरने वाला, जो घोड़े ही दान करता हो। "अश्वामघा गोमघावां हुवेम।" ऋक् ७।७१।१।

अश्वायुर्वेद (सं० पु०) अश्वस्य आयुर्विद्यते अनेन, विद्-णिच्-घञ्। घोड़ेकी आयु और चिकित्सा बताने वाला शास्त्र विशेष। पहले शालिहोत्रने अपने पुत्र सुश्रुतको यह विद्या सिखायी थी। पीछे जयदत्तने यह विद्या सङ्कलन की। गर्गऋषि नकुलगण प्रभृतिने अश्वायुर्वेद रचना किया।

अश्वारि (सं० पु०) ६-तत्। १ घोड़ेका शत्रु। २ महिष, भैंसा।

अश्वारूढ़ (सं० पु०) अश्व आरूढ़ः अनेन, बहुव्री०। घोड़ेपर चढ़ा हुआ, घोड़सवार।

अश्वारोह (सं० पु०) अश्वमारोहति आ-रुह-अण्, उप० समा०। १ अश्ववाहक, घोड़ेको हांकने वाला, घोड़सवार। (स्त्री०) अश्वगन्धा।

अश्वारोहण (सं० पु०) घोड़ेकी सवारी।

अश्वारोही (सं० पु०) घोड़ेका सवार, सवार।

अश्वावतान (सं० पु०) अश्वस्य इव अवतानो यस्य। ऋषिविशेष, कोई मुनि।

अश्वावतारी (सं० पु०) वृत्तविशेष, कोयी छन्द। इसमें इकतीस मात्रा होती और वीरछन्द पड़ता है।

अश्विन् (सं० पु०) द्विव०। अश्वाः सन्ति ययोः इनि। अश्विन्यां नक्षत्रे भवौ (अश्विवेलायाः तनखत्रे भवो ऽण्। पा ४।३।१६) इति अण्, ततः स्त्रीप्रत्ययस्य लुक्। अश्वा उत्पत्तिः स्थानत्वेन सन्त्यस्य इनि वा। स्वर्गवैद्य अश्विनीकुमारद्वय।

निरुक्तमें अश्विन् शब्दका ऐसा विवरण मिलता है—"अथातो द्युस्थाना देवता तासामश्विनौ प्रथमगामिनौ भवतोऽश्विनौ यद्व्यश्नुवाते सर्वं रसेनान्यो ज्योतिषान्योऽश्वैरश्विनावित्यौर्णवाभस्तत् कावश्विनौ। द्यावापृथिव्यावित्येके ऽहोरात्रावित्येके सूर्याचन्द्रमसावित्येके। राजानौ पुण्यकृताविति ऐतिहासिकास्तयोः कालः ऊर्ध्वमर्द्धरात्रात् प्रकाशीभावस्यानुविष्टम्भमनुतमोभागो हि मध्यमो ज्योतिर्भाग आदित्य स्तयोरेषा भवति।" (निरु० १२।१।१)

अनन्तर अन्तरीक्षके देवताओंका वर्णन करते हैं। उनमें अश्विन् प्रथम हैं। उनमें एक रसद्वारा और दूसरे ज्योतिः द्वारा सर्वत्र व्याप्त हैं। इसीसे उन्हें अश्विन् कहते हैं। और्णवाभके मतसे, अश्वयुक्त पुण्यवान् राज द्वयका नाम अश्विन् है। किन्तु यह अश्विन् कौन हैं—किसीके मतसे, पृथिवी एवं अन्तरीक्ष ठहरते हैं। कोई कोई कहते, वे दिन और रात हैं। किसी किसीका कहना है, कि वह सूर्य और चन्द्र हैं। ऐतिहासिक बताते हैं, कि वे पुण्यवान् राजा हैं। आलोकप्रकाशमें कुछ विलम्ब रहते अर्द्धरात्रके पूर्व उन लोगोंका समय निर्दिष्ट है। अन्धकार भाग मध्यम एवं ज्योतिर्भागको आदित्य कहते हैं। उन लोगोंका समय सूर्योदय तक हो है।

महाभारतके अनुशासन पर्वमें लिखा है,—च्यवनने इन्द्रसे कहा, अन्यान्य देवताओंके साथ अश्विन्को भी सोमरस पीनेको मिले। इन्द्र इस बातपर राजी न हुए। उन्होंने कहा,—अश्विन् देवताओंके बराबर नहीं हैं, इसलिये हम लोग उनके साथ सोम पान नहीं कर सकते। इसपर च्यवनने फिर कहा,—अश्विन् सूर्यके सन्तान हैं; अतएव वे देवता हैं, इसलिये उनके साथ सोमपान करनेमें हानि नहीं है। फिर भी इन्द्र राजी न हुए। इसके बाद च्यवनने एक यज्ञ आरम्भ किया। उसी यज्ञसे

देवता परास्त होते हैं। उस यज्ञका अनुष्ठान देख इन्द्र एक पहाड़ उखाड़कर अपने वज्र समेत च्यवनकी ओर दौड़े। परन्तु महर्षिका योगबल असामान्य था; उन्होंने तुरत ही जल छिड़ककर इन्द्रको पकड़ लिया। फिर उनके यज्ञकुण्डसे मद नामक एक राक्षस उत्पन्न हुआ। उसके स्वर्गसे मर्त्यतक मुंह पसारनेसे उसमें इन्द्रादि देवता चले गये। लाचार और कोई उपाय न देख देवताओंने अश्विन्के साथ सोमपान किया।

इस उपाख्यानसे अनुमान होता है, कि आर्योंने प्रथमतः सहज ही अश्विन्को देवता नहीं स्वीकार किया। इधर अनेक ऋङ्मन्त्रोंमें (१।५८।८;८।८५;८।३५।७-१०।) मिलता है, कि सोमपान करानेके लिये ऋषियोंने अश्विन्को यज्ञस्थलमें बुलाया था।

ऋग्वेदमें अश्विन्के जन्मका विवरण यों लिखा है;—'त्वष्टाने अपनी कन्या सरण्युका विवाह करनेकी इच्छा की। यह समाचार पाकर जगत्के देवतादि आ उपस्थित हुए। विवस्वान्की विवाहिता भार्या यमकी माता भाग गईं। उसके बाद मर्त्य-लोगोंसे अमरकन्या (सरण्यु) छिपा दी गई। अन्तमें सरण्यु जैसी ही और एक कन्या उत्पन्न कर देवताओंने विवस्वान्को समर्पण की। उसी अश्वरूपिणी सरण्युके गर्भ और विवस्वान्के औरससे अश्विन्का जन्म हुआ।'*

यहां सायणाचार्यने लिखा है, कि सरण्यु एव विवस्वान्ने अश्विनी एवं अश्वरूपमें सम्भोग किया था, उसीसे अश्विन्का जन्म हुआ। ('यथदा तज्जायापतिभावमश्वरूपात्मना सम्भोगकाले रेतः पतितमासीत् तदाश्विनौ जनयामासेत्यर्थः' इति सायणः)।

निरुक्तमें (१२।१।१०) इन दो ऋक्का ऐसा विवरण लिखा है,—"तत्र इतिहासः समाचक्षते,त्वाष्ट्री सरण्युर्विवस्वत आदित्याद्यमौ मिथुनौ जनयाञ्चकार। सा सवर्णामन्यां प्रतिनिधायाश्वं रूपं कृत्वा प्रदुद्राव। स विवस्वानादित्योऽश्वमेव रूपं कृत्वा तामनुसृत्य सम्बभूव। ततोऽश्विनौ जज्ञाते सवर्णायां मनुः।"

त्वष्टाकी कन्या सरण्युके गर्भ और आदित्य विवस्वान्के औरससे यमज सन्तान उत्पन्न हुआ था। फिर वे अपनी ही जैसी और एक स्त्रीको रख और खुद घोड़ीका रूप धर कर भाग गईं। विवस्वान्ने घोड़ेका रूप धर पीछे पीछे जाकर उनके साथ सम्भोग किया। उसीसे अश्विन्का जन्म हुआ। सवर्णाके गर्भ और सूर्यके औरससे मनुका जन्म हुआ था।

ऋग्वेदके ७ मण्डलके १२ सूक्तके २ ऋक्के भाष्यमें सायणाचार्यने अश्विन्का जन्मवृत्तान्त यों लिखा है,—त्वष्टाके दो यमज सन्तान हुआ, उनमें सरण्यु कन्या और त्रिशिरा पुत्र सन्तान था। उन्होंने विवस्वान्के साथ सरण्युका विवाह कर दिया। उनके गर्भ और विवस्वान्के औरससे यम और यमी नामकी यमज पुत्रकन्या उत्पन्न हुई थी। सरण्युने स्वामीसे छिपाकर अपनी ही जैसी एक स्त्री उत्पन्न कर उसीके पास अपना यमज सन्तान रख दिया। फिर वह घोड़ीका रूप धरकर भाग गईं। विवस्वान्ने बिना जाने ही उस काल्पनिक सरण्युके साथ भोग किया, उसीसे मनुका जन्म हुआ। मनु अपने पिताकी ही भांति तेजस्वी राजर्षि हुए थे। किन्तु पीछे जब विवस्वानको मालूम हुआ, त्वष्टाकी कन्या प्रकृत सरण्यु कहीं चली गई हैं, तब सरण्युकी तरह उन्होंने भी घोड़ेका रूप धरकर उनका पीछा किया। स्वामीको पहंचानकर सरण्यु सम्भोगकी इच्छासे उनके पास गईं। अश्वरूपी विवस्वान्ने उनकी इच्छा पूर्ण की। उस समय अतिशय वेगसे भूमिपर शुक्रपात हुआ। अश्वरूपिणी सरण्युने गर्भकी कामनासे उस शुक्रको सूंघा। सूंघते ही दो पुत्र जन्मे। उनमें एकका नाम नासत्य और दूसरेका दस्र हुआ। अश्विन्के नामसे उन्हीं दोनोंकी स्तुति की जाती है।†

---

* "त्वष्टा दुहित्रे वहतुं कृणोतीतीदं विश्वं भुवनं समेति।
यमस्य माता पर्युह्यमाना महो जाया विवस्वतो ननाश।
अपागूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वी सवर्णामददुर्विवस्वते।
उताश्विनावभरद्यत्तदासीदजहादु द्वा मिथुना सरण्यूः।"
(ऋक् १०।१७।१-२)

† "अभवन्मिथुनं त्वष्टुः सरण्युस्त्रिशिरा सह।
स वै सरण्युं प्रायच्छत् स्वयमेव विवस्वते॥

तैत्तिरीय-संहितामें "अश्विनौ वै देवानामनुजावरौ" (७।२।७।२) अश्विन् और और देवताओंसे छोटे कहे गये हैं। ऋक्के (५।११६।१७) भाष्यमें सायणाचार्यने लिखा है, कि सविताकी कन्या सूर्याके साथ अश्विन्का विवाह हुआ था। ऐतरेय-ब्राह्मणमें (४।७) इस इतिहासका कुछ विवरण देखनेमें आता है।

अश्विनी (सं० स्त्री०) अश्वस्तदुत्तमाङ्गाकारोऽस्त्यस्य, इनि ङीप्। १ सत्ताईस नक्षत्रके अन्तर्गत प्रथम नक्षत्र। २७ नक्षत्र दक्षकी कन्या हैं, इसलिये अश्विनीको दाक्षायणी कहते हैं। इनका दो पर्याय देखा जाता है—अश्वयुक् और दाक्षायणी। अश्विनी चन्द्रकी भार्या हैं। इनका आकार घोड़ेके मुखकी तरह और अधिष्ठात्री देवता अश्वारूढ पुरुष है। अश्विनी नक्षत्रमें उत्पन्न हुआ मनुष्य विनीत, सम्पत्तिशाली, सत्वान्वित एवं पुत्रवान् होता है। इनके मस्तकके ऊपर उदित होनेसे कर्कलग्नका १ दण्ड ३० पल गत हो जाता है। २ घोड़ी।

अश्विनीकुमार (सं० पु० द्विव०) सूर्यके दो पुत्र। वड़वा-रूपधारिणी सूर्यपत्नी त्वाष्ट्री (त्वष्टाकी पुत्री) प्रभाके गर्भसे अन्तरीक्षमें अश्विनीकुमार द्वयने जन्म लिया था। यह स्वर्ग (देवताओं)के वैद्य हैं। उक्त अर्थमें अश्विनीपुत्र, अश्विनीसुत, स्वर्वैद्य, दस्र, नासत्य, आश्विनेय, नासिक्य, गदागद, पुष्करस्रज् प्रभृति नाम व्यवहृत होते हैं।

अश्विय (सं० त्रि०) १ अश्वसम्बन्धीय। (पु० बहुव०) २ अश्वारूढ़ सैन्य।

अश्वियुग (सं० क्ली०) ज्योतिषोक्त कालविशेष। यह पांच वर्षका होता है। इसमें यथाक्रम पिङ्गल, काल-युक्त, सिद्धार्थ, रौद्र और दुर्मति संवत्सर पड़ेगा।

अश्वोघृत (सं० क्ली०) घोटकी (घोड़ी)-के दूधसे निकला घृत। इसका गुण कटु, मधुर, कषाय, ईषत् दीपन, गुरु, मूर्च्छाहर और वाताध्मीकरण है। (राजनिघण्ट)

अश्वीन (सं० क्ली०) अश्वके एक दिन गमनयोग्य पथ; जो पथ अश्व एक दिनमें अतिवाहन कर सके।

अश्वीय (सं० क्ली०) अश्वानां समूहः छ। १ अश्वका समूह, घोड़ेका झुण्ड। (त्रि०) हितार्थ अश्वप० छ, यत् च। २ घोड़ेको हितकर, जो अश्वके लिये मुफीद हो।

अश्वोरस (सं० क्ली०) अश्वानामुर इव मुख्यम्, अच् समा०। प्रधान घोड़ा, उत्तम अश्व।

अषड्क्षीण (सं० त्रि०) अविद्यमानानि षडक्षीण्यस्येति बहुव्रीः। (बहुव्रीहौ सकथ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच्। पा ५।४।११३) इति षच् ततः ख प्रत्ययः। जो मन्त्रणा दो जननेकी हो, जो मन्त्रणा करनेके समय छः चक्षु न रहे अर्थात् तीन जनने जिस मन्त्रणाको न किया हो।

अषाढ़, अशाढ़ (सं० पु०) अषाढया नक्षत्रेण या युक्ता पौर्णमासी आषाढी सा यत्र मासे अण् वा ह्रस्वः। १ मासविशेष, जिस महीनेकी पूर्णिमा पूर्वाषाढ नक्षत्रमें पड़े, आषाढ, असाढ़। आषाढी पूर्णिमा प्रयोजनमस्य, प्रयोजनार्थे अण्। २ ब्रह्मचारीका पलाशदण्ड।

अषाढ़क (सं० पु०) स्वार्थे कन्। अषाढ़ देखो।

अषाढ़ा, अषाढा (सं० स्त्री०) षाढ़ि साहनं सह-णिच्-क्तिन् ढत्वम् अर्श० अच्, नञ्-तत् पृषो० वा शत्वं डत्वञ्च। अश्विनीसे पूर्व विंश एवं उत्तर एकविंश नक्षत्र।

अष्ट (सं० त्रि०) आठ संख्या, जो संख्यामें आठ हो।

अष्टक (सं० पु०) अष्टौ अध्यायाः परिमाणमस्य सूत्रस्य, अष्टन् संज्ञायां स्वार्थे कन्। १ पाणिनिका

ततः सरण्वां जाते ते यमयम्यौ विवस्वतः।
तावप्युभौ यमावेव ह्यास्तां यम्या च वै यमः॥
सृष्टा भर्त्तुः परोचन्तु सरण्यु सदृशीं स्त्रियं।
निक्षिप्य मिथुनं तस्यामश्वा भूत्वा प्रचक्रमे॥
अविज्ञानाद्विवस्वांस्तु तस्यामजनयन्मनुं।
राजर्षिरासीत् स मनुर्विवस्वानिव तेजसा॥
स विज्ञाय अपक्रान्तां सरण्युमात्मरूपिणीं।
त्वाष्ट्रीं प्रतिजगामाशु वाजी भूत्वा सलक्षणः॥
सरण्युस्तु विवस्वन्तं विज्ञाय हयरूपिणं।
मैथुनायोपचक्राम तांच तत्रारोह सः॥
ततस्तयोस्तु वेगेन शुक्रं तदपतद्भुवि।
उपाजिघ्रच्च सा त्वश्वा तच्छुक्रं गर्भकाम्यया॥
आघ्राणमात्राच्छुक्रं तत् कुमारौ सम्बभूवतुः।
नासत्यश्चैव दस्रश्च यौ स्तुतावश्विनावपि॥

अष्टाध्यायी सूत्रग्रन्थ। २ अष्टाध्याययुक्त ऋग्वेदका अंशविशेष। ३ आठ चीजका एकत्र संग्रह। यथा—हिङ्ग्वष्टक। ४ आठश्लोकवाला स्तोत्र वा काव्य। जैसे रुद्राष्टक, गङ्गाष्टक, भ्रमराष्टक। ३ मनुके अनुसार अवगुणविशेष। इसमें १ पैशून्य, २ साहस, ३ द्रोह, ४ ईर्ष्या, ५ असूया, ६ अर्थदूषण, ७ वाग्दण्ड, और ८ पारुष्य ये आठ अवगुण हैं। (त्रि॰) ८ अष्ट संख्या-परिमित।

अष्टकटुरतैल (सं॰ क्ली॰) तैलविशेष। यह तैल वातरक्त और ऊरुस्तम्भमें हित है। तैल ४ शरावक, दही ४ शरावक, तक्र ३२ शरावक, पीपल एवं सोंठ प्रत्येक २ पल (मतान्तरसे मिला हुआ दो पल) यथा विधि पकाना चाहिये। (रसरत्नाकर)

अष्टकर्ण (सं॰ पु॰) अष्टौ कर्णौ यस्य। चतुर्मुख ब्रह्मा। ब्रह्माके चार मुख और प्रत्येक मस्तकमें दो दो कर्ण है, अतएव उनको अष्टकर्ण कहते हैं।

अष्टकर्मन् (सं॰ पु॰) अष्टौ कर्माण्यस्य। आठ प्रकार कर्मयुक्त राजा। अष्टगतिक शब्दसे भी यह अर्थ मालूम पड़ता है। राजाका आठ प्रकार कर्म यह है—

"आदाने च विसर्गे च तथा प्रैषनिषेधयोः।
पञ्चमे चार्थवचने व्यवहारस्य चेक्षणे।
दण्डशुध्योः सदा रक्तस्तेनाष्टगतिको नृपः॥"

१ करादिका लेना, २ विसर्ग अर्थात् भृत्यादिको धन देना, ३ प्रैष यानी अमात्यादिका दृष्टादृष्ट अनुष्ठान, ४ निषेध—अर्थात् दृष्टादृष्टके विरुद्ध क्रिया, ५ अर्थवचन—कार्यमें सन्देह होनेके निमित्त उसका नियम करना, ६ व्यवहारका ईक्षण अर्थात् प्रजादिको ऋण देनेके प्रति दृष्टि। ७ दण्ड अर्थात् पराजित व्यक्तिसे अर्थग्रहणादि व्यापार, ८ शुद्धि अर्थात् पापादि करने पर उसका प्रायश्चित्त। मेधातिथिके मतमें—अकृतारम्भ, कृतानुष्ठान, अनुष्ठित विशेषण, कर्मफल-संग्रह, साम, दान, भेद, एवं दण्ड।

अष्टकमल (सं॰ पु॰) हठयोगके अनुसार मूलाधारसे ललाट पर्यन्त ये आठ कमल भिन्न भिन्न स्थानोंमें माने गये हैं। मूलाधार, विशुद्ध, मणिपूरक, स्वाधिष्ठान, अनाहत, आज्ञाचक्र, सहस्रारचक्र, और सुरतिकमल।

अष्टका (सं॰ स्त्री॰) अश्नन्ति पितरोऽस्यां तिथौ अश्, इण्भिभ्यश्च तकन्। उण् ३।१४८। इति तकन्। १ श्राद्ध विशेष। २ तिथिविशेष, अष्टमी। ३ गौणचान्द्र, पौष, माघ एवं फाल्गुन मासको कृष्णाष्टमी। ४ अष्टमीके दिनका कृत्य अष्टका याग। ५ अष्टकामें कृत्य श्राद्ध। अष्टका श्राद्ध तीन प्रकारका होता है—अपूपाष्टका, मांसाष्टका एवं शाकाष्टका, यह यथाक्रम गौणचान्द्र पौष, माघ एवं फाल्गुन मासकी कृष्णाष्टमीको किया जाता है।

अष्टकाङ्ग (सं॰ क्ली॰) अष्टमङ्गं यस्य। चौसर खेलनेका पासा। इसकी प्रत्येक पङ्क्तिमें आठ घर रहनेसे इसको अष्टाङ्ग कहते हैं।

अष्टकिक (सं॰ त्रि॰) अष्टका ऽस्त्यस्य, व्रीह्या॰ ठन्। अष्टकायुक्त। उक्त अर्थमें 'अष्टकी' शब्द भी प्रयुक्त होता है।

अष्टकुल (सं॰ क्ली॰) कुलविशेष। पुराणके अनुसार सर्पोंके आठकुल हैं—शेष, वासुकि, कम्बल, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, और शङ्ख तथा कुलिक तक्षक, महापद्म, शङ्ख, कुलिक, कम्बल, अश्वतर, धृतराष्ट्र और बलाहक।

अष्टकुली—अष्टकुल सम्बन्धीय, जो सर्पोंके आठ कुलमें उत्पन्न हो।

अष्टकृष्ण (सं॰ पु॰) आठ प्रकारके कृष्ण। वल्लभ कुलके लोग आठ कृष्ण मानते हैं—१ श्रीनाथ, २ नवनीतप्रिय, ३ मथुरानाथ, ४ विट्ठलनाथ, ५ द्वारकानाथ, ६ गोकुलनाथ, ७ गोकुलचन्द्रमा और ८ मदनमोहन।

अष्टकृत्वस् (सं॰ अव्य॰) अष्टन् संख्यायाः क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृत्वसुच्। पा ५।४।१७। इति कृत्वसुच्। आठवार।

अष्टकोण (सं॰ क्ली॰) अष्टौ कोणा अस्य। १ अष्टकोणयुक्त क्षेत्र, जिस खेतमें आठ कोने रहें। २ यन्त्र विशेष, तन्त्रानुसार कोई यन्त्र। ३ कुण्डल विशेष, अठकोना कुण्डल। चलित भाषामें इसको अठकोना कहते हैं। (त्रि॰) ४ आठ कोनेका।

अष्टक्य (सं॰ त्रि॰) अष्टकेन क्रीतः, गवा॰ यत्।

आठ संख्यक द्रव्यसे क्रय किया हुआ, जो आठ संख्यक द्रव्यसे खरीदा गया हो।

अष्टखण्ड—ऋग्वेद आठ अष्टकमें ऋकसंहिता विभक्त है।

अष्टगन्ध (सं० पु०) आठ खुशबूदार चीज़ोंका मिलान।

अष्टगव (सं० क्लो०) अष्टानां गवां समाहार; अच्। आठ गौ। आठ बैलगाड़ीके अर्थमें 'अष्टागव' रूप होगा।

अष्टगुण (सं० त्रि०) अष्टभिर्गुण्यते, गुण अभ्यासे कर्मणि क। आठगुण। ५×८, ६×८ इत्यादि।

अष्टगुणमण्ड (सं० पु०) मण्डविशेष। भुने मूंग और चावलको दशगुण जलमें पाक करना चाहिये। पाक तैयार हो जानेपर उसमें नीचे लिखे द्रव्य मिलाना पड़ता है—हिङ्गु, सैन्धव, धान्य, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण। इसका गुण क्षुधावर्धन, बलकर और वस्तिशोधन है। (वैद्यक-निघण्टु)

अष्टगृहीत (सं० त्रि०) अष्टकृत्वो गृहीतम्। आठ बार ग्रहण किया हुआ, जो आठबार लिया गया हो।

अष्टचत्वारिंशत्, अष्टाचत्वारिंशत् (सं० स्त्री०) अष्टाधिका चत्वारिंशत्। (विभाषाचत्वारिंशत् प्रभृतौ सर्वेषाम्। पा ६।३।४९।) ४८, अड़तालीस संख्या।

अष्टतय (सं० त्रि०) अष्टावयवा यस्य, अष्टन्-तयप्। १ आठ अवयवयुक्त, जिसके आठ अवयव रहें। (क्लो०) २ आठ संख्या।

अष्टतारिणी (सं० स्त्री० बहुव०) कर्मधा०। भगवतीकी आठमूर्ति—तारा, उग्रा, महोग्रा, वज्रा, काली, सरस्वती, कामेश्वरी, चामुण्डा।

> "तारा चोग्रा महोग्रा च वज्रा काली सरस्वती।
> कामेश्वरी च चामुण्डा इत्यष्टौ तारिणी मता॥" (तन्त्रसार)

अष्टताल (सं० पु०) आठ तरहकी ताल—१ आड़ २ दोज, ३ ज्योति, ४ चन्द्रशेखर, ५ गञ्जन, ६ पञ्चताल, ७ रूपक और ८ समताल।

अष्टत्रिक (सं० क्लो०) अष्टावृत्तं त्रिकम्। ८×३ आठ गुणित तीन अर्थात् २४ चौबीस। (त्रि०) २ चौबीस संख्यायुक्त।

अष्टत्व (सं० क्लो०) अष्टानां भावः त्व। आठ संख्या, ८।

अष्टदंष्ट्र (सं० पु०) ६-बहुव्रो०। ऋग्वेदोक्त दानव-विशेष, कोई राक्षस।

अष्टदल (सं० पु०) अष्टौ दलानि यस्य। १ अष्टपत्र पद्म, आठ पत्तेका कमल। (त्रि०) २ आठदलका, अठकोना, अठपहलू।

अष्टदिक्करिणी (सं० स्त्री०) बहुव०। अष्ट दिक्स्थाः करिण्यः। आठ दिशाकी हथिनी। अभ्रमु, कपिला, पिङ्गला, अनुपमा, ताम्रकर्णी, शुभ्रदन्ती, अङ्गना और अञ्जनावती यह आठ ऐरावतकी पत्नी।

अष्टदिक्पाल (सं० पु०) अष्टौ दिशः पालयति, पा-णिच्-अण्, उप० समा०। दिक्के आठ रक्षक इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, सोम, और ईशान। यह अष्ट दिक्पाल हैं।

अष्टदिग्गज (सं० पु०) बहुव०। अष्टदिक्स्थाः गजाः। आठ हाथी—ऐरावत, पुण्डरीक, वामन, कुमुद, अञ्जन, पुष्पदन्त, सार्वभौम और सुप्रतीक। यह आठ दिग्गज हैं।

अष्टदिश् (सं० स्त्री०) बहु०। आठ ओर; पूर्व, अग्नि, दक्षिण, नैर्ऋत, पश्चिम, वायु, उत्तर, और ईशान, यही आठ दिशायें हैं।

अष्टद्रव्य (सं० क्लो० बहुव०) आठ चीज़; अश्वत्थ, उदुम्बर (गूलर), प्लक्ष (पाकर), न्यग्रोध (बट), तिल, सिद्धार्थ (सरसों), पायस (खीर) और आज्य (घी) यह आठ द्रव्य कहलाते और हवनमें काम आते हैं।

अष्टधा (सं० अव्य०) अष्टन्-प्रकारे धाच्। आठप्रकार, आठ तरह, आठ दफे।

अष्टधाती (हिं० वि०) १ अष्टधातुसे प्रस्तुत, जो आठ धातुओंसे बना हो। २ दृढ़, मज़बूत। ३ उत्पाती, उपद्रवी।

अष्टधातु (सं० पु० बहुव०) अष्टौ धातवः, कर्मधा०। आठधातु—सोना, चांदी, तांबा, रांगा, जसता, सीसा, पीतल, लोहा। कोई-कोई पारेको भी धातु मानता है।

अष्टनाग (सं० पु०) आठ सर्पराज १ अनन्त, २ वासुकी, ३ कम्बल, ४ कर्कोट, ५ पद्म, ६ महापद्म, ७ शङ्ख, और ८ कुलिक।

अष्टपद (सं० पु०) अष्टपाद देखो।

अष्टपदी (सं० स्त्री) १ आठ पदोंका समूह। २ गीतिविशेष, कोई गीत। इसमें आठ पद रहते हैं। ३ वेला पुष्पका गाछ। यह शीत, लघु एवं कफ, पित्त, और विषका नाशक है।

अष्टपर्वत—१ महेन्द्र, २ मलय, ३ सह्य, ४ शुक्तिमान्, ५ ऋक्षवान्, ६ विन्ध्य, ७ पारिपात्र और ८ हिमालय, यह अष्टकुलाचल है। पद्मपुराणमें केवल सात ही कुलाचल गृहीत हुआ है।

अष्टपाद—अष्टपात् (सं० पु०) अष्टौ पादा यस्य, बहुव्री० वा अन्त्यलोपः। १ माकड़ी, लूता। २ शरभ, टिड्डीपक्षी। ३ शार्दूल।

अष्टपादिका (सं० स्त्री०) लता विशेष। १ काष्ठमल्लिका। २ छापरमाली।

अष्टपुष्पी (सं० स्त्री०) अष्टानां पुष्पाणां समाहारः। पुष्पाष्टक। अष्टपुष्पी, भी रूप होता है।

अष्टभाव (सं० पु०) स्तम्भ, स्वेद, रोमाञ्च, स्वरभङ्ग, वैस्वर्य, कम्प, वैवर्ण्य, और अश्रुपात। (वैद्यक निघण्ट)

अष्टभुजा (सं० स्त्री०) अष्टौ भुजाः अस्याः। देवीकी मूर्तिविशेष, दुर्गा।

अष्टभुजी (सं० स्त्री०) अष्टभुजा देखो।

अष्टम (सं० त्रि०) अष्टानां पूरणः डट् मयट् च। आठ संख्याका पूरण, आठवां।

अष्टमकालिक (सं० त्रि०) अष्टमः कालः भोजने ऽस्तास्य, ठन्। जो वानप्रस्थ तीन दिन उपवास करके चतुर्थदिनकी रात्रिमें भोजन करते हैं।

अष्टमङ्गल (सं० क्लो०) अष्ट प्रकारं मङ्गलद्रव्यम्, शाक० तत्। आठ प्रकार मङ्गल द्रव्य वा पदार्थ—मृगराज (सिंह), वृष, नाग, कलश, चामर, वैजयन्ती, भेरी और दीपक। किसी किसीके मतमें—ब्राह्मण, गौ, अग्नि, स्वर्ण, घृत, सूर्य, जल एवं राजा। दुर्गोत्सव और विवाहादि कर्ममें अष्टमङ्गल द्रव्य लगता है। (पु०) श्वेतवर्ण मुख वक्षः खुर केश पुच्छ-युक्त घोड़ा भी अष्टमङ्गलमें गृहीत है।

अष्टमङ्गलघृत (सं० क्लो०) बाल-रोग-हरघृतौषध, बच्चोंकी बीमारी छुड़ानेवाला घी। वच, कुष्ठ, ब्राह्मी, सर्षप, शारिवा, सैन्धव और पिप्पलीके एक शरावक कल्कमें ४ शरावक घृत डाले, फिर घृतपाकविधिसे एक आढक जलमें इन सब चीजोंको पका ले। यह घी बच्चोंके लिये बहुत अच्छा होता है। (भावप्रकाश)

अष्टमान (सं० क्लो०) अष्टौ मुष्टयः ; परिमाणमस्य। प्रसृतिद्वय, एक कुड़व, बत्तीस तोला।

अष्टमासिक (सं० त्रि०) प्रति अष्ट मासमें एक बार होनेवाला, अठमासी, हश्तमाही, जो आठ महीनेमें एक बार हो।

अष्टमिका (सं० स्त्री०) शुक्तिपरिमाण, तोलचतुष्टय, चार तोला।

अष्टमी (सं० स्त्री०) अष्टानां पूरणी। तिथि विशेष, चन्द्रकी सोलह कलाके मध्य प्रतिपत्से अष्टम कला, आठवीं। शुक्लाष्टमी एवं कृष्णाष्टमी दो अष्टमी होती है। पञ्चपर्वके मध्य रहनेसे अष्टमीको वेदपाठ, स्त्रीसङ्ग, तैलाभ्यङ्ग, मांसभोजन प्रभृति निषिद्ध है। इस तिथिको नारियल और अरहरकी दाल खाना न चाहिये। पहले अष्टमीको किसी अपराधीकी परीक्षा की न जाती थी। अष्टमीको प्रायश्चित्त करना भी मना है।

अशू-क्त, अष्ट संघातं व्याप्तिं वा माति ; मा-क गौरा० ङीष्। २ और काकोली, एक जड़ी।

अष्टमुष्टि (सं० पु०) अष्टौ मुष्टयः परिमाणमस्य, अण् द्विगोर्लुक्। कूंचो बराबर नाप।

अष्टमूत्र (सं० क्लो०) गोच्छागमेषमहिषाश्वहस्त्युष्ट्रगर्दभीमूत्र, गाय, बकरी, भेड़, भैंस, घोड़ी, हथिनी, उंटनी और गधोका पेशाब।

अष्टमूर्ति (सं० पु०) अष्टौ भूम्यादयो मूर्तयो यस्य, बहुव्री०। भूमि प्रभृति अष्टमूर्तिधर शिव। अष्टन् शब्दमें इन आठ मूर्तियोंका विवरण देखो।
(स्त्री०)) कर्मधा०। २ आठ मूर्ति।

अष्टमूर्तिधर (सं० पु०) अष्टानां मूर्तीनां धरः। भूमि प्रभृति आठ प्रकार मूर्तिधारी शिव। अष्टन् शब्दमें अष्टमूर्तिका विवरण देखो।

अष्टमूल (सं० त्रि०) त्वग्मांसशिरास्नाय्वस्थिसन्धिकोष्ठमर्म-मूल ; त्वग्, मांस, शिरा, स्नायु, अस्थि, सन्धि, कोष्ठ और मर्म यह आठ मूल।

अष्टमौक्तिकस्थान (सं० क्लो०) गज-हस्ति-सर्प-मत्स्य-मेघ-वंश-शूकर-शुक्ति, मोती पैदा होनेकी आठ जगह, घोंघा-हाथी-सांप-मछली-बादल बांस-सूअर सांप।

अष्टरत्नि (सं० त्रि०) अष्टौ रत्नयः ऊर्ध्व मानमस्य। आठ मुष्का हाथ बराबर (आठ फीट)।

अष्टरसाश्रय (सं० त्रि०) कविताके आठ रससे भरा हुआ।

अष्टर्च (सं० पु०) आठ पदका भजन।

अष्टलोहक (सं० क्लो०) बहुव०। अष्ट धातु विशेष। यथा,—१ सुवर्ण, २ रजत, ३ ताम्र, ४ रङ्ग, ५ शीष, ६ पित्तल, ७ कान्तलोह, ८ मुण्डलोह; या १ सोना, २ चांदी ३ तांबा, ४ रांगा, ५ सीसा, ६ पीतल, ७ लोहा, ८ फौलाद।

अष्टवर्ग (सं० पु०) अष्टविधानामौषधिद्रव्यानां वर्गो गणः। १ आठ प्रकार औषधि विशेषका गण। यथा,—१ मेद, २ महामेद, ३ ऋद्धि, ४ वृद्धि, ५ जीवक ६ ऋषभक, ७ काकोली, ८ क्षीरकाकोली। अष्टवर्गके मध्य समस्त द्रव्य अब नहीं मिलता और यह भी कहा जा नहीं सकता, वह क्या पदार्थ है। अष्टवर्ग शीतल, अति शुक्रल, वृंहण, दाह-पित्त-रक्तशोषघ्न, स्तन्यकृत् और गर्भदायक होता है। (मदनपाल) यह रक्तपित्त, व्रण वायु और पित्तको मिटाता है। (राजनिघण्ट्) मतान्तरसे यह हिम, स्वादु, वृंहण, गुरु, भग्नसन्धानकृत् एवं कामविलास-बल-वर्धन होता और तृष्णा, दाह, ज्वर, मेद तथा क्षयको दूर करता है। (भावप्रकाश) अष्टवर्गप्रतिनिधि देखो।

अष्टादीनां राहुभिन्नरव्यादीनां वर्गो यत्र, बहुव्री०। २ शुभाशुभ फलसूचक जन्मकालीन राहुभिन्न अष्टग्रह, समुदायका चक्र। जैसे,—सूर्य सिंहसे २,४,७,८,९, १०, ११ और कर्कटसे ३,६,१०,११ राशिपर रहनेसे शुभ फल देता है। इसी तरह अन्यान्य ग्रहके फलाफलकी कथा ज्योतिष शास्त्रमें लिखी है।

अष्टवर्गप्रतिनिधि (सं० पु०) अष्टवर्गका प्रतिनिधि, जो चीज अष्टवर्गकी जगह काम आती हो। मेदामहामेदाके अभावमें अश्वगन्धा, जीवक ऋषभकके स्थानमें भूमिकुष्माण्डका मूल, काकोली क्षीरका कोलीकी जगह अश्वगन्धाका मूल और ऋद्धि-वृद्धिके स्थानमें वाराहीकन्द पड़ता है। (भावप्रकाश) मतान्तरसे मेदाकी जगह अश्वगन्धा, महामेदाके स्थानमें शारिवा, जीवकके लिये गुड़ूची, ऋषभक न मिलनेसे वंशलोचन, ऋद्धिके बदले बला और वृद्धिके अभावमें महाबला डालना चाहिये।

अष्टविध (सं० त्रि०) आठ तरहका, आठ तरहवाला।

अष्टविधान (सं० क्लो०) चर्व्य-चोष्य-लेह्य-पेय खाद्य, भोज्य-भक्ष्य-निश्चेय-रूप भोजनद्रव्य।

अष्टशत (सं० क्लो०) आठ सौ।

अष्टश्रवण (सं० पु०) अष्टौ श्रवणानि श्रवांसि वा यस्य। ब्रह्मा। इनके चार मुख रहनेसे आठ श्रवण होते हैं।

अष्टश्रवस्, अष्टश्रवण देखो।

अष्टसाहस्रिक (सं० त्रि०) अष्टसहस्र परिमित, आठ हजारवाला।

अष्टसिद्धि (सं० स्त्री०) आठ प्रकार सिद्धि, अष्टसिद्धि यथा—१ अणिमा, २ महिमा, ३ लघिमा, ४ प्राप्ति, ५ प्राकाम्य, ६ ईशित्व, ७ वशित्व, एवं ८ कामावसायिता।

अष्टाकपाल (सं० त्रि०) अष्टासु कपालेषु संस्कृतम्, अण्, तस्य लुक्। १ अष्टकपालमें संस्कृत पुरोडाशादि, मट्टीके आठ खप्परमें पका हुआ पुरोडाशादि। २ यज्ञ विशेष। इस यज्ञके लिये आठ कपालमें पुरोडाशादि पका देवताको बुलाते हैं।

अष्टाक्षर (सं० त्रि०) अष्टाक्षराणि यत्र पादे। १ आठ अक्षरका, जो आठ हर्फ रखता हो। (पु०) २ ग्रन्थकार विशेष। ३ आठ अक्षरयुक्त अनुष्टुभ् जातीय वर्णवृत्त विशेष।

अष्टागव (सं० क्लो०) आठ बैलकी गाड़ी, जिस गाड़ीमें आठ बैल जुतें।

अष्टाङ्ग (सं० पु०) अष्टौ अङ्गानि यस्य। १ यम-नियम-आसन-प्राणायाम-प्रत्याहार-धारणा-ध्यान-समाधि इत्यादि। अष्टाङ्ग योगविशेष। २ घुटना, पैर, हाथ, छाती, शिर इन सबको भूमिपर रख और प्रणम्य

व्यक्तिकी ओर देख सादर सम्भाषणपूर्वक प्रणाम करना।

"पद्भ्यां जानुभ्यामुरसा शिरसा दृशा।
वचसा मनसाचेति प्रणामोऽष्टाङ्ग ईरितः।" (तन्त्रसार)

दोनों पांव, दोनों हाथ, दोनों घुटने, वक्षस्थल और मस्तकको भूमिमें टिकानेके बाद एक बार मस्तक उठाकर नमस्यको भक्तिभावसे दर्शन करना, फिर प्रणामका मन्त्र कहते कहते गद्गद मनसे भूमिष्ठ होना। कोई कोई कहते हैं, वचनस्थ 'दृशा' पदसे ऐसा समझा जाता है, कि प्रणाम करनेके समय पहले दाहिनी आंख फिर बाईं आंखके कोनेको भूमिमें छुवाये। ३ जल, दुग्ध, कुशाग्र, दधि, घृत, तण्डुल, यव, श्वेतसरसों—इन सबका अष्टाङ्ग अर्घ्य। सूर्यके अर्घ्यके द्रव्य ये हैं,—जल, दुग्ध, कुशाग्र, घृत, मधु, दधि, रक्तचन्दन और रक्तकरवीर।

४ शारीफलक अर्थात् पाशा खेलनेका चौखट। इस चौखटको प्रत्येक पंक्तिमें आठ घर रहते, इसीसे इसे अष्टाङ्ग कहते हैं। ५ अष्टाङ्ग चिकित्सा,यथा—१ शल्य, २ शालाक्य, ३ कायचिकित्सा, ४ भूतविद्या,५कौमार-भृत्य, ६ अगदतन्त्र, ७ रसायनतन्त्र, ८ वाजीकरण।

१। शल्य—शरीरके किसी स्थानमें तीर आदि अस्त्र या और कोई चीज चुभ जानेपर उसका विधान।

२। शालाक्य—ऊर्द्ध्वजत्रुप्रदेशस्थित (Supra-clariculan region) एवं नेत्र, कर्ण, मुख, नासिका प्रभृति स्थानोंकी चिकित्सा।

३। कायचिकित्सा—सकल शरीरके कष्टों, यथा ज्वर, उदरामय, उन्माद आदि रोगोंकी चिकित्सा।

४। भूतविद्या—भूत पिशाचादिकी चिकित्सा।

५। कौमारभृत्य—शिशुपालनके लिये धात्री-विद्या एवं दुग्धादिका दोष संशोधन।

६। अगदतन्त्र—सर्प कीटादिके डस लेनेपर झाड़फूंक और औषध प्रयोग।

७। रसायनतन्त्र—ऐसा उपाय जिसमें शरीर शीघ्र ही वृद्ध जैसा न बने एवं आयु और बल बढ़े।

८। वाजीकरण—शरीरकी क्षीण और शुष्क प्रभृति दुर्बलताके लक्षण प्रकाश होनेका प्रतिविधान।

अष्टाङ्गघृत (सं० क्ली०) वाजीकरणका घृत।

अष्टाङ्गधूप (सं० पु०) कर्मधा०। धूपविशेष। गुग्गुल, निम्बपत्र, वच, कुष्ठ, हरीतकी, यव, श्वेतसर्षप और घृत इन सब चीजोंको इकट्ठाकर कपड़ेमें मजबूतीसे बांधे। फिर रोगीके सारे शरीरको कपड़ेसे ढक और निर्धूम अङ्गारके ऊपर इस पोटलीको रखकर धूप दे। इससे विषमज्वर नष्ट होता है।

अष्टाङ्गनय, अष्टाङ्ग देखो।

अष्टाङ्गपात, अष्टाङ्गप्रणाम देखो।

अष्टाङ्गप्रणाम (सं० पु०) अष्टाङ्गद्वारा प्रणाम, सिजदा, झुक-झुकके की जानेवाली बन्दगी।

अष्टाङ्गमैथुन (सं० क्ली०) मैथुनके आठ अङ्ग विशेष। स्मरण, कीर्तन, केलि, दर्शन, गोपनीय वार्ता-लाप, सङ्कल्प, अध्यवसाय, और क्रियानिष्पत्ति—यही मैथुनके आठ अङ्ग हैं।

अष्टाङ्गयोग (सं० पु०) आठ अङ्गसे होनेवाला योग। १ यम २ नियम ३ आसन ४ प्राणायाम ५ प्रत्याहार ६ धारणा ७ ध्यान एवं ८ समाधि। यमादिका विवरण अपने-अपने शब्दमें देखो।

अष्टाङ्गरस (सं० पु०) रसविशेष। यह अर्शमें उपकारक है। लौहकिट्ट, मण्डूर, फलत्रय (त्रिफला) यह सब एकत्र मिलानेसे अष्टाङ्गरस तैयार होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) गन्धक, रसेन्द्र (पारा), मृतलौहकिट्ट, तीन पल त्र्यूषण, वह्निभृङ्ग, इन सबको बराबर लेकर शाल्मली और गुड़ूचीके रसमें ३ पहर अच्छी तरह घोटनेसे यह बनता है। मात्रा निष्कमात्र है। (रसेन्द्रसार-संग्रह)

अष्टाङ्गलवण (सं० क्ली०) कफसे उत्पन्न मदात्यय-नाशक औषध विशेष। इसे बनानेका क्रम यह है। सोंचरलवण (सज्जीमाटी), कृष्णजीरक, अम्लवेतस, अम्ललोणिका, इन सबका चूर्ण समभाग एवं दालचीनी, एलायची और मिर्चका चूर्ण प्रत्येक अर्द्धभाग तथा चीनी एक भाग यह सब चीज एकत्र मिलाना चाहिये। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

अष्टाङ्गवैद्यक (सं० क्ली०) वैद्यकके आठ अङ्ग, दवा करनेके आठ तरीके। यथा,—शालाक्य,

काय, भूत, अगद, बाल, विष, वाजी और रसायन। अष्टाङ्ग देखो।

अष्टाङ्गार्घ्य (सं० पु०) आठ वस्तुसे दिया जानेवाला अर्घ्य। यथा—जल, दुग्ध, कुश, दधि, घृत, शालि, यव एवं सर्षप। कहीं कहीं शालि, यव और सर्षपके स्थानमें मधु, रक्तकरवीर पुष्प एवं चन्दन छोड़ देते हैं।

अष्टाङ्गावलेह (सं० पु०) अष्टाङ्गावलेहिका देखो।

अष्टाङ्गावलेहिका (सं० स्त्री०) अवलेहविशेष। कट्फल, कुष्ठ, काकड़ाशृङ्गी, सोंठ, पीपल, मिर्च, दुरालभा, कालाजीरा इन सब चीजोंको अच्छी तरह कूट-पीस मधुके साथ अवलेह करनेसे अत्यन्त कठिन सन्निपात ज्वर, हिक्का, श्वास, कास, कण्ठरोग दूर हो जाता है। किन्तु ऊर्ध्वग श्लेष्मामें उष्ण स्वेदादिकी आवश्यकता होनेपर मधु न देकर अदरकके रससे अवलेह तय्यार करना चाहिये।

अष्टाङ्गी (सं० त्रि०) अष्ट अङ्गयुक्त, आठ अङ्गवाला, जिसके आठ अङ्ग रहें।

अष्टातय (सं० त्रि०) १ अष्ट अंश विशिष्ट, आठ हिस्से रखनेवाला। (क्लो०) २ अष्ट वस्तुका समुच्चय, आठ चीजका जखीरा।

अष्टादंष्ट्र, अष्टदंष्ट्र देखो।

अष्टादश (सं० त्रि०) अष्टादशानां पूरणः डट् स्त्रियां ङीप्। १ अठारह संख्याका पूरण, अठारहवां। अष्टौ च दशच, अष्टाधिका दश वा, अष्टादशन्। २ संख्याविशेष, अठारह। ३ अठारह संख्याविशिष्ट, जो अठारह हो। विद्या, पुराण, स्मृति एवं धान्य इनमें प्रत्येकको संख्या अठारह है। इसलिये इन सकल शब्दसे अठारह संख्या मालूम पड़ती है।

विद्या—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्दः, ज्योतिष, यह षड़ङ्ग, चतुर्वेद, मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र, पुराण, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद, अर्थशास्त्र यही अठारह प्रकार विद्या है।

पुराण—१ ब्राह्म, २ पाद्म, ३ वैष्णव, ४ शैव, ५ भागवत ६ नारदीय, ७ मार्कण्डेय, ८ आग्नेय, ९ भविष्य, १० ब्रह्मवैवर्त, ११ लिङ्ग, १२ वाराह, १३ स्कान्द, १४ वामन, १५ कौर्म, १६ मात्स्य १७ गारुड़, १८ ब्रह्माण्ड।

स्मृतिकार—१ विष्णु, २ पराशर, ३ दक्ष, ४ संवर्त, ५ व्यास, ६ हारीत, ७ शातातप, ८ वशिष्ठ, ९ यम, १० आपस्तम्ब, ११ गौतम, १२ देवल, १३ शङ्ख, १४ भरद्वाज, १५ उशना, १६ अत्रि, १७ शौनक, १८ याज्ञवल्क्य। पुनश्च, १ मनु, २ अत्रि, ३ विष्णु, ४ हारित, ५ याज्ञवल्क्य, ७ अङ्गिरा, ८ यम, ९ आपस्तम्ब, १० सम्बर्त ११ कात्यायन, १२ बृहस्पति, १३ पराशर, १४ व्यास, १५ शङ्ख और लिखित और १६ दक्ष, १७ गौतम, शातातप, १८ वशिष्ठ।

धान्य—१ यव, २ गोधूम, ३ धान्य, ४ तिल, ५ कङ्गु, ६ कुलिका, (कुलथी) ७ माष (उर्द), ८ मुद्ग (मूंग) ९ मसूर, १० निष्पाव, ११ सर्षप (सरसो), १२ गवेधुक, १३ नीवार, १४ आढ़क (अरहर), १५ सतीनका, १६ चराक १७ अणिक, १८ श्याम।

अष्टादशधान्य (सं० क्लो०) अष्टादश देखो।

अष्टादशभुजा (सं० स्त्री०) अष्टादश भुजा यस्याः। देवी-माहात्म्योक्त महालक्ष्मी। महालक्ष्मी देखो।

अष्टादशमूल (सं० क्लो०) विल्व, अग्निमन्थ, श्योणाक, गाम्भारी, पाठा, पुनर्णवा, वाट्या, अलक, माषपर्णी, जीवक, एरण्ड, ऋषभक, जीवन्ती, शतावरी, शरेक्षुत्, दर्भ, कास और शालिधान्यकी जड़।

अष्टादशविवादपद (सं० क्लो०) बहुव्री०। ऋणदानादि अठारह प्रकारके विवादका स्थल। (मनु ८।३।७) यथा,—१ ऋणदान, २ निक्षेप, ३ अस्वामिविक्रय, ४ सम्भूय-समुत्थान, ५ दत्ताप्रदानिक, ६ वेतनादान, ७ सम्विद्-व्यतिक्रम, ८ क्रयविक्रयानुशय, ९ स्वामिपाल, १० सीमाविवाद, ११ वाक्पारुष्य एवं दण्डपारुष्य, १२ स्तेय, १३ साहस, १४ स्त्रीसंग्रहण १५ स्त्रीपुंसधर्म, १६ विभाग, १७ द्यूत, १८ आह्वय।

१ ऋणदान—अर्थात् कर्ज देना लेना। शास्त्रकारोंने इसे सात प्रकारमें विभक्त किया है। किस तरहका ऋण चुकाना उचित है और किस तरहके ऋणके लिये पुत्रादि दायी नहीं, इन्हीं सब विषयों-

को लेकर सात विभाग किया गया है। जैसे,—१ पिताके ऋण लेनेपर पुत्र उसे चुकावेगा। २ परन्तु पिता सुरापानादि दोषमें आसक्त होकर कर्ज ले, तो पुत्र उसके लिये दायी नहीं। ३ जो पुत्र पिताके धनका अधिकारी न होगा, वह पिताका ऋण भी परिशोध न करेगा। ४ जो पुत्र पिताके धनका अधिकारी होगा, वही पिताके ऋणके लिये भी दायी ठहरेगा। ५ विदेशस्थ पिताका ऋण बीस वर्षके बाद और जो ऋण वृद्धिके साथ लिया जाता, उसे वृद्धिके साथ ही परिशोध करना आवश्यक है। ६ उत्तमर्णमें ऋणदान। ७ उत्तमर्णमें ऋण आदान। सब मिलाकर यही सात प्रकार हैं।

२ निक्षेप—अपना धन दूसरेके पास जमा रखनेको निक्षेप कहते हैं।

३ अस्वामिविक्रय—जिस धनमें जिसका स्वत्व नहीं होता, उसी धनको वह यदि बेच देता, तो अस्वामिविक्रय कहा जाता है।

४ सम्भूय-समुत्थान—अनेक आदमी मिलकर जो वाणिज्यादिका अनुष्ठान करें, तो उसका नाम सम्भूय समुत्थान है।

५ दत्ताप्रदानिक—जो वस्तु एकवार किसीको दे दी गई है, क्रोधादि करके यदि वह छीन ली जाय, तो उसे दत्ताप्रदानिक कहते हैं।

६ वेतनादान—भृत्य प्रभृतिके वेतन न देनेका नाम वेतनादान है।

७ सम्विद्‌व्यतिक्रम—सब लोग मिलकर कोयी कार्य करनेकी प्रतिज्ञाके बाद यदि उसके विरुद्ध चलें, तो वह सम्विद्‌व्यतिक्रम कहा जाता है।

८ क्रयविक्रयानुशय—किसी द्रव्यको खरीदकर उसे बेचनेके बाद यदि अधिक लाभकी आशाकी अनुशोचना की जाय, तो उसे क्रयविक्रयानुशय कहते हैं।

९ स्वामिपाल—स्वामी और पशुपालकके साथ जो विवाद होता, उसका नाम स्वामिपाल है।

१० सीमाविवाद—भूमि प्रभृति सीमाके लिये प्रजामें जो झगड़ा होता है, उसे सीमाविवाद कहते हैं।

११ वाक्‌पारुष्य और दण्डपारुष्य—अर्थात् गाली-गुफ्ता और मारपीट।

१२ स्तेय—दूसरेकी वस्तु चुरानेको स्तेय कहते हैं।

१३ साहस—बलपूर्वक किसीकी चीजको छीन लेना साहस है।

१४ स्त्रीसंग्रहण—किसी स्त्रीके साथ परपुरुषका अनुराग होनेसे उसका नाम स्त्रीसंग्रहण है।

१५ स्त्रीपुंसधर्म—दम्पतीमें जैसा सद्भाव और नियम रहना आवश्यक है, वह स्त्रीपुंसधर्म कहा जाता है।

१६ विभागविवाद—पैतृक धनके विभाग करनेमें जो विवाद उपस्थित होता, उसका नाम विभाग-विवाद है।

१७ द्यूत—बाजी लगाकर जूआ पाशा वगैरह खेलनेको द्यूत कहते हैं।

१८ आह्वय—बाजी लगाकर मेढ़ा वा चिड़िया लड़ानेका नाम आह्वय है।

अष्टादशशतिकमहाप्रसारणी-तैल (सं० क्लो०) तैलौषध विशेष। यह तैल वात व्याधिमें उपकारक होता है। प्रस्तुत करनेकी रीति यह है—तिलका तैल १६ सेर, क्वाथके लिये मूल और पत्र सहित ३७॥ सेर, गन्धप्रसारणी १२॥ सेर, झिण्टीमूल १२॥ सेर, शतावर १२॥ सेर, अश्वगन्धा १२॥ सेर, दशमूल प्रत्येक १२॥ सेर, केतकी १२॥ सेर—इन सब द्रव्योंको प्रत्येकके ४ गुण जलमें पाक करके पृथक् पृथक् क्वाथ प्रस्तुत करना चाहिये। [illegible] काञ्जी १६ सेर, छागके मांसका क्वाथ १६ सेर, चूर्ण १६ सेर, दूध १६ सेर दही १६ सेर। कल्कार्थ तगर, मदनफल, कुष्ठ, नागेश्वर मुस्ता, गुड़त्वक् रास्ना, सैन्धव, पीपल, जटामांसी यष्टिमधु, मेद, महामेद, जीवक, ऋषभक, शलफा, नखी, सोंठ, देवदारु, काकोली, क्षीरकाकोली, वच और भिलावेंकी मींगी यह सब प्रत्येक ८ तोला एकत्र करके पका ले। (भैषज्यरत्नावली)

अष्टादशाङ्ग (सं० पु०) कषायविशेष। यह सन्निपात ज्वरमें हित और चार प्रकारका होता है—दशमूलादि, भूनिम्बादि, द्राक्षादि, मुस्तादि। अष-

लेमें दशमूल सोंठ, शृङ्गी, पौष्कर, दुरालभा, भार्गी, कुटजबीज, पटोल, कटुरोहिणी इतने द्रव्य रहते हैं। दूसरेमें—भूनिम्ब, देवदारु, दशमूल, महौषधाब्द, तिक्ता, इन्द्रबीज, धनियां, और इभकणा (गजपीपल) यह सब द्रव्य पड़ता और यह कषाय तन्द्रा, प्रलाप, अरुचि, दाह, मोह, ज्वर प्रभृति रोगोंको शीघ्र नाश कर देता है।

तीसरेमें—द्राक्षा, अमृता, सोंठ, शृङ्गी, मुस्तक, रक्तचन्दन, नागर, धनिया, बालक, कण्टकारि, पुष्कर, और पिचुमर्द इतने द्रव्य पड़ते हैं।

चौथा—मुस्ता, पर्पट, खस्, देवदारु, महौषध, त्रिफला, धन्वयास (दुरालभा), नीली, कम्पिल्लक, त्रिवृत्, किराततिक्तक, पाठा, बला, कटुरोहिणी, मधुक, और पीपलीमूल, यह सर्वद्रव्योंसे बनाया जाता है। (चक्रदत्त, भैषज्यरत्नावली)

अष्टादशाङ्गलौह (सं० क्लो०) पाण्डु-रोगाधिकारका लौहविशेष। इसको प्रस्तुत करनेकी रीति यह है—चीराइता, देवदारु, दारुहल्दी, मोथा, गुड़ुच, कुटकी, पटोल, दुरालभा (जवासा), पर्पटक (धनपापर), निम्ब, त्रिकटु (सोंठ पीपल मिर्च), वह्निफलत्रिक, विड़ङ्गफल, जटामांसी, यह सब द्रव्य सम यानि बराबर ले अच्छीतरह चूर्ण बना घृत और मधु (सहद)-के साथ वटिका बनानी चाहिये। तक्रके साथ इसे सेवन करनेसे सब प्रकारका पाण्डुरोग निर्मूल होता है। (भावप्रकाश—म० २भ०)

अष्टादशोपचार (सं० पु०) बहुव०। तन्त्रोक्त पूजाका अठारह प्रकार उपचार। यथा,—१ आसन, २ स्वागत, ३ पाद्य, ४ अर्घ, ५ आचमनीय, ६ स्नान, ७ वस्त्र, ८ उपवीत, ९ भूषण, १० गन्ध, ११ पुष्प, १२ धूप, १३ दीप, १४ अन्न, १५ तर्पण, १६ माल्यानुलेपन, १७ नमस्कार और १८ विसर्जन।

अष्टादिशाब्दिक (सं० पु०) शब्दं वेत्ति अधीते वा शाब्दिकः, आदिभूतः शाब्दिकः, शाक०तत्। ततः अष्टौ च ते आदिशाब्दिकाश्चेति, कर्मधा० संज्ञात्वात् द्विगुः। आठजन प्रसिद्ध शाब्दिक। यथा,—इन्द्र, चन्द्र, काशकृत्स्न, आपिशली, शाकटायन, पाणिनि, अमर और जैनेन्द्र। इन आठ लोगोंने प्रथम शब्द-शास्त्रको प्रणयन किया था, इसीसे इनका यह नाम पड़ा।

अष्टाध्यायी (सं० स्त्री०) १ शतपथ-ब्राह्मणका एकादश काण्ड। इसमें आठ शासन सम्मिलित हैं। २ पाणिनि-व्याकरण।

अष्टानवत (सं० त्रि०) अट्ठानवे संख्या-सम्बन्धीय, अट्ठानवेवां।

अष्टापद (सं० पु०-क्लो०) अष्टौ अष्टौ पदानि पंक्तौ विद्यन्ते अस्मिन्, संख्या शब्दस्य वीप्सायां शात्वं अर्धर्चादिः। १ चौपर खेलनेकी कपड़ेका बना घर, बिसात। अष्टसु धातुषु पदं प्रतिष्ठा यस्य। २ स्वर्ण, सोना। ३ शरभ। यह आठ पैरका पक्षी होता और अपने चङ्गुलमें सिंहको भी दबाकर उड़ जाता है। ४ मकड़ी। ५ धतूरा। अष्टं यथा स्यात् तथा पद्यते। ६ क्रमि, कीड़ा। ७ चन्द्रमल्लिका। अष्टसु दिक्षु आपद्यते। ८ कील, कांटा। ९ कैलासपर्वत। अष्टाभिः सिद्धिभिरापद्यते। १० अणिमादि अष्टसिद्धि।

अष्टापदपत्र (सं० क्लो०) सुवर्णपत्र, सोनेका वरक।

अष्टापदी (सं० स्त्री०) चन्द्रमल्लिका, चांदनीका पेड़।

अष्टापाद् (सं० पु०) आठ पैर वाला, जिसमें आठ पद रहें।

अष्टापाद (सं० त्रि०) आठसे बंटा हुआ जिसके आठ जड़में रहे।

अष्टापाद्य (सं० त्रि०) अष्टाभिरापद्यते गुण्यते, आ-पद कर्मणि ण्यत्। अष्टगुण, अठगुणा, अठहरा, जिसमें आठ तह रहे।

अष्टाविंशति (सं० स्त्री०) अष्टाधिका विंशति, आत् अल्पादेशः। १ अट्ठाईस संख्याविशिष्ट। पूरणे डट्। अष्टाविंश। पूरणे तमप्। अष्टाविंशतितम।

अष्टाविंशतितत्त्व (सं० क्लो०) अष्टाविंशतिस्थानेषु तत्त्वम्। रघुनन्दनभट्टाचार्य-प्रणीत मलमासादि अष्टाविंशति विषयक स्मृतिनिबन्ध विशेष। यथा,—मलमास, दायतत्त्व, संस्कार, शुद्धिनिर्णय, प्रायश्चित्त, विवाह, तिथि, जन्माष्टमीव्रत, दुर्गोत्सव, व्यवहार, एकादशी प्रभृतिका निर्णय, तड़ागोत्सर्ग, वृक्षोत्सर्ग, वृषोत्-

सर्ग, दीक्षा, सामवेदीका श्राद्ध, यजुर्वेदीका श्राद्ध, और शूद्रका कृत्यतत्त्व।

अष्टार (सं० त्रि०) अष्टौ अरा इव कोणा यस्य। अष्टकोणयुक्त, अठकोना। इस अर्थमें 'अनास्र' 'अष्टकोण' इत्यादि शब्द भी प्रयुक्त होते हैं।

अष्टारचक्रवत् (सं० पु०) अष्टारं अष्टकोणं चक्रमस्त्यस्य, मतुप् मस्य वः। जिन विशेष। हाथमें अठकोन चक्र रहनेसे इन्हें 'अष्टारचक्रवान्' कहते हैं। इनके अपर पर्याय यह हैं,—मञ्जुश्री, ज्ञानदर्पण, मञ्जुभद्र, मञ्जुघोष, कुमार, स्थिरचक्र, वज्रधर, प्रज्ञाकाय, वादिराट्, नीलोत्पली, महाराज, नील, शार्दूलवाहन, धियाम्पति, पूर्वजिन, खड्गी, दण्डी, विभूषण, बालव्रत, अङ्कचौर, सिंहकेली, शिखधर, वागीश्वर। यह जैनसाधु और नृपति भी रहे।

अष्टारथ—भीमरथके पुत्रविशेष।

अष्टावक्र (सं० पु०) अष्टकृत्वो वक्रः; वृत्तौ संख्यासुजर्थे परा (अष्टनः संज्ञायाम्। पा ६।३।१२५) इति दीर्घः। ऋषिविशेष। सुमतिके गर्भ और कहोड़के औरससे इनका जन्म हुआ था। उद्दालकसे कहोड़ शास्त्रादि पढ़ते रहे। शिष्यकी सेवा शुश्रूषासे तुष्ट होकर उद्दालकने उनके साथ अपनी कन्या सुमतिका विवाह कर दिया। सुमतिका दूसरा नाम सुजाता है।

कुछ दिनोंके बाद सुमति गर्भवती हुईं। एकदिन पत्नीके समीप बैठकर कहोड़ वेदपाठ कर रहे थे। पढ़नेमें स्थान स्थान पर कुछ भूल हो रहा था। सुमतिके गर्भस्थ सन्तानने उन भूलोंको बता दिया। इसपर कहोड़ने क्रोध करके कहा,—"अभी तू भूमिष्ठ नहीं हुआ। गर्भ हीमें तेरा स्वभाव इतना वक्र है, अतएव तू अष्टावक्र होकर जन्म ग्रहण करेगा।" उसी शापके प्रभावसे जन्म लेनेपर उस शिशुका शरीर आठ जगहसे टेढ़ा हुआ था।

अष्टावक्र जिस समय गर्भ हीमें थे, उसी समय एकदिन सुमतिने कहोड़से कहा,—"मेरा दशवां मास उपस्थित है। तुम्हारे पास धन नहीं, इसलिये राजा जनकसे जाकर धन मांगो।" कहोड़ जनकसे धन मांगने गये। वहां बन्दी नाम वरुणके एक पुत्र थे। वेदमें उनकी दक्षता असाधारण थी। वेदविचारमें कहोड़को परास्तकर उन्होंने समुद्रमें डाल दिया। समुद्रतलमें वरुणके निकट जाकर वे उनके यज्ञमें अभिषिक्त हो गये।

इधर अष्टावक्रका जन्म हुआ। बारह वर्षकी अवस्थामें पिताकी दुरवस्था सुनकर वे जनकपुरी गये। उनके साथ उनके मामा श्वेतकेतु भी थे। वहां वेदविचारमें बन्दीको परास्तकर वे अपने पिताको उद्धार कर लाये। पुत्रसे सन्तुष्ट होकर कहोड़ने उन्हें समङ्गा नदीमें स्नान करनेको कहा। समङ्गामें स्नान करनेसे अष्टावक्रकी वक्रता दूर हो गई, पर वक्र नाम न गया।

अष्टावक्रने जनकराजको जो उपदेश दिया था, उसका नाम अष्टावक्रसंहिता है। इन्हींके आशीर्वादसे भगीरथने दिव्य गङ्गा लाभ किया और इन्हींके शापसे कृष्णकी महिषियां डाकूके हाथमें पड़ीं। वक्रेश्वर देखो।

अष्टावक्ररस—शोधित पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, स्वर्ण १ भाग, रौप्य ॥० भाग, सीसा, तामा, खर्पर, वङ्ग प्रत्येक ।० भाग। इन सब वस्तुओंको वटकी भुरीके रसमें एक पहर और घृतकुमारीके रसमें एक पहर घोटना। फिर समतल बोतलमें रखकर उसके मुंहको चां-खड़ीके टुकड़ेसे बन्द कर बालूभरी हांड़ीमें इस बोतलको रख देना। बालू बोतलके गलेतक भरा रहे। फिर क्रमशः तीन दिन तक उसे आगपर रखना। जर्द्ध पातित होकर जो औषध बोतलके गलेमें लग जाये उसे निकाल लेना। इसकी मात्रा दो रत्ती है। पानके रसके साथ खाना होता है। इसके सेवनसे सम्पूर्णरूपसे बलवीर्यकी वृद्धि होती है।

अष्टावक्रीय (सं० क्ली०) अष्टावक्रमधिकृत्य कृतः ग्रन्थः छ। अष्टावक्रको अधिकार करके रचित ग्रन्थ, अर्थात् जिस ग्रन्थमें अष्टावक्रका उपाख्यान हो। महाभारत वनपर्वके १३२से १३३ अध्याय। अष्टावक्रने विचारसे वरुणपुत्र बन्दीको परास्त करके अपने पिता कहोड़को उद्धार किया था। इन कई अध्यायमें अष्टावक्रके शास्त्रार्थका विवरण है।

अष्टाश्रि (सं० त्रि०) अष्टकोण-विशिष्ट, अठकोना। (क्ली०) अष्टकोण गृह, अठकोना घर।

अष्टास्र (सं० क्लो०) अष्टकोनाकृति, मुसम्मम, अठपहल्।

अष्टास्रय (सं० वि०) अष्टकोण-विशिष्ट, अठकोना।

अष्टाह (सं० वि०) अष्ट दिवस पर्यन्त स्थायी, जो आठदिन ठहरता हो।

अष्टि (सं० स्त्री०) अश्यते भूमौ क्षिप्यते, अश्-क्तिन् पृषो० षत्वम्। १ फलादिका बीज। २ आँठी, गुठी। ३ सोलह अक्षरका छन्दोविशेष। ४ सोलह संख्या। अशव्याप्तौ क्तिन्। ५ व्याप्ति। अश-करणे क्तिन्। ६ भोगसाधन देह। यह चञ्चला, चक्रिता, पञ्चमार आदि भेदसे कई प्रकारकी होती है।

अष्ट्रिय, अष्ट्रिया, अष्ट्रोहंगरी—(अष्ट्रीया एवं हंगरीका साम्राज्य) मध्य युरोपका एक बड़ा साम्राज्य। इसका क्षेत्रफल (१८०५ ई०में) २३९८७७ वर्गमील है। इसके उत्तर जर्मन् और रूससाम्राज्य, पश्चिम सुजालंन्द और लीटेनष्टीन हङ्गरी, आद्रियाटिक सागर एवं इटली, दक्षिण रूमानिया, तुर्की और मोण्टेनिग्रो, और पूर्व रूस और रुमानिया है। सन् १८०१ ई०की मर्दुमशुमारीमें अष्ट्रियाकी लोकसंख्या ४५४०५२६७ है।

अष्ट्रियाके प्रदेश और नगर ये हैं—

प्रदेश।	नगर।
उपर अष्ट्रीया और निम्न अष्ट्रीया। इनका दूसरा नाम अष्ट्रीयाकी आर्कडची है	वियेना, लिनज्, आया।
साल्जवर्ग	साल्जवर्ग।
ष्टीरिया	ग्राज्।
कारिन्थिया	क्लागेनफुर, विल्लाच।
कार्निओला	लैबाच।
कुस्तेनलण्ड	त्रिष्टि, केपो-दि-इस्त्रिया।
तिरोल, बोराइलवर्ग	इन्सब्रुक, ट्रेण्ट, बोत्जेन।
बोहिमिया	प्रेग, रिचेनवर्ग, पिलसेन बूदवीस्।
मोरेविया	ब्रून, ओलमूस्, अस्तारलिस।
सिलिसिया	ओपाल, तेशेन।
गालिसिया	लेम्बर्ग, ब्रोदी, क्राकौ।
बकोविना	जार्नोविज्।
दालमेशिया	जारा, रगुसा।
हङ्गरी	बुदापेस्त, प्रेसवर्ग, कोमर्ण एराद, तोके, टेम्सेजेन।
त्रान्सिलवेनिया—	क्लसेनवर्ग, हार्मान्सताद, क्रन्सताद।
साविया और तेमिरुका वानाट	तेमेश्वर।
क्रोशिया एवं स्लावोनिया	अग्राम, एसेक।
सैनिक सीमाप्रदेश	कार्लसताद, पितर्वेदिन, स्तेमलिन, वार्सेज।

पर्वत—कार्पेथियान पर्वत, सदेतिक श्रेणी और रिसियान वा ताइरोलिश अल्पस् यहांके प्रधान पर्वत हैं। अष्ट्रीयाका प्राय: बारह भाग पर्वतसे भरा है। इसके पूर्ण क्षेत्रफलका $\frac{4}{5}$ भाग समुद्रतलसे ६०० फीट ऊंचा पड़ता है। अल्पस् पर्वत तीन भागोंमें विभक्त है, पश्चिम और पूर्व अल्पस्। पूर्व अल्पस् बिलकुल अष्ट्रीयामें हो पड़ता और मध्य अल्पस्‌की भी कितनी हो श्रेणी आ पहुंची है। दानूब नदी बोहेमियान पर्वतसे अल्पस्‌को अलग करती है। कार्पेथियान पर्वत इस देशके पूर्व और उत्तर पूर्व मेहराब-जैसा लगता है। इसके समग्र क्षेत्रफलमें चतुर्थांशसे कुछ हो अधिक भूमिसमतल मिलता। गालिशियामें सबसे बड़ा समतलभूमि पड़ता है। दक्षिणमें आयिसोञ्जोको और लम्बारडो वेनेशियन समतलभूमिका कुछ अंश अष्ट्रीयामें आ गया है। दानूबके आस-पास कई छोटे-छोटे समतलभूमि मौजूद हैं। दूसरी बड़ी नदियोंके पास जो मैदान् हैं, उनमें कुछकी भूमि बहुत हो उपजाऊ है।

झील—अष्ट्रीयामें बड़ी झील न रहते भी अल्पस्‌की कितनी हो पहाड़ी झीलें बहुत सुन्दर हैं। काष्ट प्रदेशकी मौसमी झील जिर्कनिज़ सबसे बड़ी है। गालिशिया और दालमिशियामें बड़े-बड़े दल-दल भरे, किन्तु नदियोंसे नहरें निकलने और सफायीके काम होने कारण दूसरे प्रान्तोंके दल-दल बहुत हो कम पड़ गये हैं।

हङ्गरीमें नसिद्लार और ब्लातेन झील ही अधिक प्रसिद्ध है। इनमें पहलीका परिमाण ४०० वर्गमील और दूसरीका १०० वर्गमील है। नसिद्लारके ऊपर बारहो महीने वाष्पीय जहाज चलते हैं। इन दोनों झीलोंके चारो ओर अङ्गूरके बाग लगे हुए हैं।

नदनदी—अष्ट्रीयामें कितनी ही नदियां बहती हैं, किन्तु इष्ट्रिया और कष्ट प्रान्तमें नाला भी ढूंढे नहीं मिलता। इसकी नदियोंकी धारामें तीन ओरको जाती हैं,—उत्तर, दक्षिण और पूर्व। किसी प्रधान नदीका मुहाना इस देशमें नहीं पड़ता। दानूब नदीमें जहाजरानी खूब हो सकती है। लिञ्ज और वियेनाके बीच इस नदीकी शोभा देखते ही बनती है।

दानूब नदी प्रायः २३४ वर्गमील अष्ट्रीयाके भीतर बहती हुई ओसोवा होकर चली गयी है। दक्षिण भागमें इन, त्रौन, एन्स, लिथा, राब, द्री और सेव, तथा वामभागमें मार्च, ओवाग, निउता, ग्रान, थिस और वेगाओथिमिस इसकी शाखायें हैं। विश्चुला नदी बालटिक सागरमें गिरती है। इसकी शाखाका नाम बग है। एल्ब नदीकी शाखाओंके नाम मेलदो और एजार, निस्तार एवं आदिज। राइन नदका केवल सात कोस अंश कन्सनन्स झीलके ऊपर होकर चला गया है। इसोञ्जो, जार्मान्ना, कार्क और मारेन्ता नदी आद्रियातिक समुद्रमें जाकर गिरी है।

खनिज प्रस्रवण—अष्ट्रीयाकी तरह अधिक और मूल्यवान् खनिजप्रस्रवण युरोपके दूसरे प्रान्तमें देख नहीं पड़ते। विशेषतः यह बोहेमियामें मिलते, जहां कितने ही मनुष्य इन्हें देखने पहुंचा करते हैं। कार्लसबड, मेरीनबड, फ्रानजेन्सबड और बिलिनके चारस्वभाव प्रस्रवण सबसे बड़े हैं। गीसूबलका चारस्वभाव और अम्लीकृत जल चौका-बर्तनके काम आता है। सब मिलाकर कोई १५०० प्रस्रवण अष्ट्रीयामें वर्तमान हैं।

सागरतट—अष्ट्रीयाकी सम्पूर्ण सीमाका दशमांश ही सागरतट है। आद्रियाटिक-तट १००० मील विस्तृत और अधिक दन्तुरित हैं। इष्ट्रियाका प्रायोद्वीप, त्रिष्ट और क्वारनेरो अखातके बीच पड़ता, जिसमें बहुत सुरक्षित खाड़ी है। क्वारनेरोके अखातमें क्वारनेरो द्वीप भी मिलते, जिनमें चेरसो, वेगलिया और लूमिन प्रधान हैं। इसोञ्जो मुहानेके पश्चिम तटपर कच्छोंकी भरमार है। किन्तु त्रीष्टके अखात और इष्ट्रियन प्रायोद्वीपका तट ढालू होनेसे बहुतसे बङ्क और पोताश्रय सुरक्षित हैं। अष्ट्रीयाके प्रधान समुद्र पोताश्रय एवं आयुधागार त्रीष्ट, कपोडिष्ट्रिया, पिरानो, परेञ्जो, रोविग्न और पोला हैं। दालमेशिया-तट पर भी कितने ही सुरक्षित बङ्क मिलते, जिनमें ज़ारा, कटारो और रगूसा मुख्य है। किन्तु कहीं-कहीं यह बहुत ही ढालू है, जहां कोई चढ़कर जा नहीं सकता। हां, तटके साथ द्वीपोंका समूह लगा, जहां शीत ऋतुके समय आद्रियाटिकमें तूफान चलनेपर जहाजोंको लङ्गर डालनेका सुगम स्थान मिल जाता हैं।

भूतत्त्व—अष्ट्रो-हङ्गरीय साम्राज्यमें अल्प्स और कार्पेथियान पर्वत प्रधान हैं। इन दोनोंके बीच हङ्गरीकी समभूमिका टरसियारी स्तर और बाहर उत्तरकी ओर दूसरा प्रदेश पड़ता है। कारपेथियान अल्प्स पर्वतके बीचके छिद्रने मिवोसीन समयसे इन दोनो प्रान्तोंको जोड़ा है। बाहरी ओर पहले गड्ढा रहा, किन्तु अब वह पूर गया है। गालिशियामें नोष्टरकी पुरानी चटानें निकल पड़ी हैं। सिलूरियान और दिवोनियान गर्भपर भुरभुरा पत्थर झलक मारता है। मालूम होता है, दिवोनियान समयके बाद भूमि सूख गयी थी। किन्तु उपर क्रिटेशेउस समय आरम्भ होते ही क्रिनोमेनियान समुद्र फट पड़ा। १२।१५ कोसका उन्नतावनत देश नोष्टरको कार्पेथियान उपकण्ठसे पृथक् करता है। प्रूथ उपत्यकामें मिवोसीन समयसे अधिक पुराना गर्भ देखनेमें नहीं आता। उपरोक्त उन्नतावनत देशमें और उत्तर-पश्चिम और पलेओजिक स्तर क्रिटेशेउस गर्भके नीचे दब गया है। लेमबर्गमें १६५० फीट छेदनेपर भी सिनोनियान आधार मिला न था। क्राकोसे पश्चिम क्रिटेशेउस गर्भ जुरासिक और त्रियासिक स्तरसे विस्तृत है। साइलेशियामें पलेओजिक गर्भ फिर धरातल-

पर निकल आया है। ङ्गरीके बीच पहाड़ मैदान-पर खड़ा और उत्तर-पूर्व ओर कार्पेथियानसे जा मिला है।

कृषिकार्यमें सुभीतेके लिये अष्ट्रीयामें जगह जगह-पर नहर खोदी गई है। परन्तु ये सब नहरें बहुत पुरानी नहीं हैं। निम्न अष्ट्रीयामें वियेनासे निउस्ताद तक जो नहर है, वह बीस कोस और ङ्गरोंके अन्तर्गत दानूब एवं थिसके बीचमें जो वाक्मार नहर है, वह पैंतीस कोस लम्बी है। वेगा एवं तेमिसके बीचमें रोमकोंने जो नहर खुदवाई थी, उसे वेगा नहर कहते हैं। उसकी लम्बाई ४२ कोस है।

कृषि—अष्ट्रीयामें मेहनतका कितना ही काम खुला रहते भी कृषिकार्य लोगोंको बहुत लाभ पहुंचाता है। सन् १८०० ई०को इस देशके कोई आधे आदमी कृषिकार्यसे ही अपना निर्वाह करते थे। भूमि बहुत उपजाऊ है। ७४१०२००१ एकर भूमिमें खेती होती और बाकी दूसरे काम लगती है। बोहेमिया, गालि-शिया, मोरेविया और निम्न अष्ट्रीयामें अधिक कृषिकार्य चलता है। निम्नलिखित द्रव्य खूब पैदा होते हैं,—गेहूं, राई, यव, बाजरा, मकई-ज्वार और आलू। किन्तु जो द्रव्य खेत जोतनेसे उपजता, उससे इस देशका पेट नहीं भरता। ङ्गरीसे बहुतसा गेहूं और मकयी-ज्वार मंगा अष्ट्रीयाके लोग अपना उदरपोषण करते हैं। अष्ट्रीयासे सिर्फ़ यव और बाजरा बाहर भेजा जाता है। टिरोल और साल्ज़बर्गमें खेती बहुत कम होती है। यहांसे कितना ही मेवा बाहर जाता है। टिरोलका सेब, बोहेमियाका बेर और दालमेशियाका अञ्जीर तथा अनार बहुत प्रसिद्ध है। अङ्गूर भी बहुत उत्पन्न होता है।

जङ्गल—अष्ट्रीयामें खेतीसे तिहाई जङ्गल पड़ता है। बुकोविनामें सबसे अधिक और गालिशियामें सबसे न्यून जङ्गल है। सिन्दूर, देवदारु, बीच, आश और बूकीज़ार-जैसे वृक्षोंसे राज्यको बड़ा आय होता है। जङ्गलका काम वैज्ञानिक रीतिसे चलाते हैं।

भूसम्पत्ति—सैकड़े पीछे राज्यका २९वां अंश जागीरमें लगा है। बुकोविना, साल्ज़बर्ग, गालिशिया, सालिशिया, और बोहेमियामें कितने ही छोटे-छोटे राजा बसते हैं। जागीरको ज़मीन् ज़्यादातर जङ्गली है।

रेलवे—अष्ट्रीयामें रेलका काम बड़ी धूमधामसे चलता है। देश पर्वतमय होनेसे रेल बनानेमें गवर्न-मेण्टको बहुत मत्था मारना और रुपया खर्च करना पड़ा है। सेमेरिङ्ग रेलवे सन् १८५४ ई०को तैयार हुई थी। यह ऐसे पार्वत्य देशपर पड़ी, कि बनावटको देख लोगोंकी बुद्धि चकरा जाती है। आदिसे अन्त-तक रेलवेका अधिकार अष्ट्रीय सरकार अपने ही हाथ रखती है।

अष्ट्रीया-निम्न—एन्स नदीके निम्न प्रदेशको निम्न अष्ट्रीया कहते हैं। इससे पूर्व ङ्गरी, उत्तर बोहेमिया एवं मोरेविया, पश्चिम बोहेमिया तथा उपर-अष्ट्रीया और दक्षिण ष्टीरिया पड़ता है। इसका क्षेत्रफल ७६५४ वर्गमील है। दानूब नदी इसे दो भागमें विभक्त करती है। वाल्डवीरेलका पार्वत्य प्रदेश बोहेमिय और मोरेविय अधित्यकासे सम्बन्ध रखता है। दानूब, एन्स और मार्च नदीमें जहाज़ आता जाता है। बडेनमें गन्धकी, डिउस-अलटेनबर्गमें फौलादी, पयरा-बर्थमें लोहेका और बोसलौमें उष्ण प्रस्रवण प्रवाहित है। जल-वायु स्वास्थ्यकर होते भी प्रायः बदलते रहता है। भूमि अधिक उपजाऊ नहीं ठहरती और न उससे इसके अधिवासियोंका काम ही निकलता है। मवेशी तो अधिक नहीं देख पड़ता, किन्तु शिकार और मछलीका बाज़ार गर्म रहता है। अल्पस् पर्वतके नीचे कुछ कोयला और लोहा निकलता है। किन्तु इस प्रदेशमें काम-काज खूब होता है। वीनरकाल और सेमरिङ्ग प्रदेशमें कितने ही कारखाने खड़े हैं। धातु, चक्की, दवा, काग़ज़, चमड़े, रेशम, कपड़े औज़ार, चीनी और तम्बाकूका काम बहुत देख पड़ता है। वियेना बहुत बड़े व्यापारका केन्द्र है। अष्ट्रीया जैसा धन-जन सम्पन्न प्रदेश दूसरा नहीं निकलता। यहां सैकड़े पीछे निन्यानबे मनुष्य पढ़े लिखे हैं।

अष्ट्रीया-ऊपर—एन्स नदीके ऊपरका प्रान्त ऊपर अष्ट्रीया कहाता है। इससे उत्तर बोहेमिया, पश्चिम बावेरिया, दक्षिण साल्ज़बर्ग एवं ष्टीरिया और पूर्व

निम्न अष्ट्रीया पड़ता है। अलपायिन प्रदेशमें भूरा कोयला बहुत है। सारजिनबर्गको नहरसे दानूब और एल्बके बीच जहाज आते-जाते हैं। यहांका जलवायु न तो बहुत अच्छा न ख़राब ही है। अधिवासी जर्मन जातिके और रोमान केथलिक हैं। कृषिकार्य ऐसी धूमसे चलता, कि अन्न बहुत उपजता है। इस प्रदेश-जैसे चरागाह अष्ट्रीयामें दूसरी जगह नहीं मिलते। मवेशी पैदा और लकड़ी तैयार करनेसे इस प्रदेशको अधिक लाभ होता है। खनिज पदार्थमें लवण अधिक निकलता है। तीस खनिज निर्झरमें इसचालका सैन्धव और हालका फौलादी स्रोत प्रधान है। ष्टीरमें लोहे और दूसरे धातुका काम बहुत बनता है। कल पुर्जा, नैनू, रुई और कागज़ भी तैयार होता है। यहांसे नमक, पत्थर, लकड़ी, जानवर, ऊनी और फौलादी चीज़ तथा कागज़ बाहर भेजा जाता है।

अष्ट्रीया-हङ्गरी—इसका सरकारी नाम अष्ट्रो-हङ्गरीय-मनार्की है। इससे पूर्व रूस एवं रुमानिया, दक्षिण रुमानिया, सरविया, तुर्किस्थान, तथा मण्टीनीग्रो, पश्चिम आद्रियाटिक सागर, इटली, सुजारलेण्ड, लीकटनष्टीन एवं जर्मन साम्राज्य तथा रूस पड़ता है। इसका क्षेत्रफल २३९९७७ वर्गमील है। सर्वसाधारण अपनी भाषामें इसे डुयेल मनार्की वा द्वैतराज्य कहते हैं। सन् १८७८ ई०को बरलिनमें जो सन्धि हुई थी, उसके अनुसार बोसनिया और हरजेगोविना राज्योंका प्रबन्ध अष्ट्रीया-हङ्गरीके हाथ लगा और सन् १९०८ को उन्हें अपने अधिकारभुक्त भी किया।

शासन—अष्ट्रीया और हङ्गरी दोनो राज्य पूरे तौरपर एक दूसरेसे स्वतन्त्र हैं। प्रत्येक अपना अपना पारलियामेण्ट और शासन रखता है। किन्तु दोनोका राजा एक ही होता, जो अष्ट्रीया-सम्राट् और हङ्गरीका ईश्वर-प्रेरित नृपति कहाता है। दोनो राज्योंसे घनिष्ट सम्बन्ध रखनेवाले कुछ कार्योंका प्रबन्ध भी एक ही रीतिसे किया जाता है—जैसे परराष्ट्र विभाग, विदेशमें समर्थक एवं दूतविषयक निरूपण, सैन्य, रणतरी और संयुक्त व्ययसे सम्बन्ध रखनेवाला राजस्व।

सम्राट्को सम्पूर्ण सेनाका एकमात्र अधिकार प्राप्त है। क्राकौ, वियेना, ग्राज, बूदापेस्त, प्रेसबर्ग, कासवौ, तमिश्वर, प्राग, जोजेफष्टेट, प्रिजमसल, लेमबर्ग, हरमनष्टेट, अग्रम्, इन्सब्रक और सरजेवोमें सेना रहती है।

गालेशियाके क्राकौ और प्रिजमसल, हङ्गरीके पीटरवारड, बोवरद एवं तमिश्वर और बोसनिया-हरजगोविनाके सराजवो स्थानमें किला बना है। अल्पसकी सीमा टिरोलमें भी कितना ही किला खड़ा, जिसका केन्द्र ट्रेण्ट और फ्राञ्जेनफेष्टसे बना है। करिन्थियाको जो सामरिक रथपथ आते, उनपर मलबरथ, प्रेडिलपास आदिमें बहुतसे बचावके स्थान निर्मित हैं। वियेना और बूदापेस्त राजधानियोंमें कोई किला नहीं। आद्रियातिक तटपर पाला नौकाश्रयको रक्षा जल और स्थल दोनो ओरसे की गयी है। ट्रीष्ट, जारा और कटारोमें भी किलेबन्दी देख पड़ती है। पोला और ट्रीष्टमें जहाजोंका बड़ा अड्डा है।

अष्ट्रीयामें नाना प्रकारके धातु एवं पार्थिव पदार्थकी खानि है। उससे प्रतिवर्ष प्रायः १९७५००,०००, रुपयेका खनिज वस्तु निकाला जाता है—पत्थरका कोयला ६०८९७१०५) लोहा १८००००००) नमक ८००००००) और सोना चांदी प्रायः ६००००००) रुपयेका। हङ्गरी, त्रान्सिलवेनिया, साल्ज़बर्ग और टिरोलमें सोना होता है। इन सब स्थानों और बोहेमियामें चांदीकी खानें हैं। इद्रिया, हङ्गरी, त्रान्सिलवेनिया, स्ताइविरिया और करिन्थियामें पारा पाया जाता है। बोहेमियामें टीन, क्राकौ और करिन्थियामें जस्ता, करिन्थियामें सीसा और यहांके अनेक स्थानोंमें तांबा और लोहा मिलता है। हङ्गरीमें सुर्मा, साल्ज़बर्ग और बोहिमियामें शङ्खविष; हङ्गरी, ष्टीरिया एवं बोहिमियामें कोवल्ट, गालिसिया, बोहिमिया, हङ्गरी और साल्ज़बर्ग प्रभृति स्थानोंमें गन्धक, बोहिमिया, मोरेविया और करिन्थिया वगैरहमें ग्राफाइट पाया जाता है।

यहां अट्टालिका आदि बनानेकी प्रचुर सामग्री मिलती है। चीनके बरतनकी मट्टी, मार्बल, जिप्सम, खड़िया, गोदन्तमणि, गार्नेट नामक रत्नमणि, अकीक,

यशब, फीरोजा, नीलम, जबरजद पद्मराग, वैदुर्य सफायर, पोखराज प्रभृति अनेक प्रकारके मणि यहांके आकरोंमें पाये जाते हैं।

अष्ट्रीया और हङ्गरीके पर्वतोंमें यथेष्ट सेंधानमक होता है। प्रति वर्ष ८१००००० मन नमक निकाला जाता है। इसके सिवा समुद्र और खानिके जलको गर्म करके भी नमक तय्यार होता है। भारतवर्षकी तरह अष्ट्रीयाके लवणका व्यवसाय राजाके ही हाथमें है। यहां प्राय: १६०० खनिज कुण्ड है। उनमें निम्न अष्ट्रीयाके गन्धककुण्ड एवं कार्ल्सबाद, मारिनबाद और आोफेनके लवणकुण्ड ही अधिक प्रसिद्ध हैं। इन कुण्डोंमें स्नान करनेके लिये रोगी लोग जाया करते हैं।

अष्ट्रीयामें अनेक प्रकारके उद्भिद् एवं शस्यादि उत्पन्न होते हैं। गेहूं, धान, आलू, नारङ्गी, नीबू, पाट, सन, तम्बाकू, होप, नील आदि यथेष्ट उपजता है। यहां शराब भी खूब तय्यार की जाती है। हङ्गरीकी तोके शराब सब जगह प्रसिद्ध है।

वन्य पशुओंमें भालू, भेड़िया, शृगाल, शियागोश, विवर, सामंत, उद्बिड़ाल, बकरी, सांभर हरिण, सफ़ेद खरहा वगैरह देखनेमें आते हैं। यहां रेशमके कीड़ोंकी खेती खूब होती है। पालतू पशुओंमें घोड़ा, गधा, भेड़, बकरा और सूवर ही प्रधान है। फलत: इङ्गलेण्डकी तरह यहां पालतू जानवरोंकी लोग उतनी देखभाल नहीं करते। गवर्नमेण्ट घोड़ा और भेड़ पालती है। मोरेविया, बोहिमिया, सिलिशिया, निम्न अष्ट्रीया, हङ्गरी और गालिशियामें कुछ अच्छा पशम पैदा होता, परन्तु विचारकर देखनेसे उसका अधिकांश निकृष्ट है। अष्ट्रीयाके बारह आना आदमी खेती करते हैं।

यहां शिल्पकर्मकी आजतक वैसी उन्नति नहीं हुई। कपास, रेशम और पशमके वस्त्रादि, कांचके काम, लोहे और ईस्पातकी चीजें ही अधिक बनती हैं। अष्ट्रीया पहाड़ी देश है, सिवा आद्रियाटिक समुद्रके दूसरी राहसे देशान्तर जानेका अच्छा सुभीता नहीं पड़ता। इसीसे यहां वाणिज्यकी उन्नति भी नहीं होती। आद्रियाटिक समुद्रमें वाणिज्यके प्रधान बन्दर ये हैं,—इस्त्रिया, त्रिष्ट, रोविग्न, पाइरेणो, सिला और निउवा।

अष्ट्रीयाके निवासी एक जातिके नहीं हैं। उनका धर्म और भाषा भी एक प्रकारकी नहीं है। यहांके अधिवासियोंमें स्लाव, रोमक, लेटिन, यहूदी, आर्मनी और जिप्सी ही अधिक हैं। अष्ट्रीयाके विद्यालयोंको एक प्रकारसे दातव्य ही कहना चाहिये। प्राय: सर्वत्र ही कुछ कुछ मूलधन है। उसीके आयसे विद्यालयका खर्च चलता है, छात्रोंको प्राय: फीस नहीं देनी पड़ती। यदि कहीं फीस है, तो केवल नामके लिये थोड़ीसी। अष्ट्रीयामें कुछ जातीय विद्यालय हैं। छ: वर्षसे बारह वर्षतककी उम्रके लड़कोंको इन विद्यालयोंमें जाना पड़ता है। इनके सिवा हालमें कितनी ही ऐसी पाठशालायें खोली गई हैं, जिनमें लोग सभी कुछ लिखना पढ़ना सीख सकें। वियेना, प्रेग, ग्रेट, इन्सब्रक, प्रेस्थ, क्राको, क्लसेनवर्ग, लेम्बर्ग और जार्णीइच नगरमें विश्वविद्यालय है।

अष्ट्रीयाका शासनभार सम्राट्के अधीन है। हाप्सबर्ग-लोथिङ्गेन परिवारके आदमी सम्राट् होते हैं। दैवात् राजपरिवारमें कोई वंशधर न रहनेपर बोहिमिया एवं हङ्गरीके राजकीय मनुष्य नवीन राजा मनोनीत करते हैं। किन्तु दूसरे विभागोंके शेष राजा अपना उत्तराधिकारी ठीक कर जाते हैं। यहांके सम्राट्को रोमन-काथलिक मतावलम्बी होना आवश्यक है। इङ्गलेण्डकी लार्ड एवं कमन्स सभाकी तरह यहां भी उच्च एवं निम्न सभा है। भूस्वामी, आर्कविशप, विशप एवं राजा लोग यहांकी उच्च सभाके सदस्य होते हैं। स्वयं सम्राट् इन सभासदोंको मनोनीत करते हैं। निम्न सभामें ३५३ सभ्य रहते, उनमें बोहिमियाके ९२, दालमेशियाके ९, गालिशियाके ६३, उच्च अष्ट्रीयाके १७, निम्न अष्ट्रीयाके ३७, साल्जबर्गके ५, स्टाइरियाके २३, करिन्थियाके १०, कार्णियोलाके ९, बुकोविनाके ९, मोरेवियाके ३६, सिलिशियाके १०, टाइरोलके १७, वोरारलबर्गके ३, इस्त्रिया और त्रिस्तके ४ मनुष्य मनोनीत किये जाते हैं।

अष्ट्रीयाका शासनभार सात मन्त्रिविभागोंके हाथमें अर्पित है। यथा,—१ साधारणशिक्षा एवं धर्मकार्यका विभाग, २ कृषिविभाग, ३ राजस्वविभाग, ४ राज्यके अन्तर्भूत विषयव्यापार, ५ जातीयरक्षा, ६ वाणिज्य-विभाग, ७ विचारविभाग।

यहांके राजस्वकी अवस्था अतिशय शोचनीय है। उन्नीसवीं शताब्दीके प्रारम्भमें लगातार पन्द्रह वर्षतक युद्ध होता रहा, उसमें अष्ट्रीयाका बहुत धन खर्च हो गया। इससे लोगोंका विश्वास बहुत घटा था। सैकड़े पीछे २५) रुपये बट्टेपर भी कोई गवर्नमेण्टको कर्ज़ देनेपर राज़ी न हुआ। अन्तमें ५०) बट्टेपर सैकड़े पीछे ५) सूदके हिसाबसे गवर्नमेण्टको कर्ज़ लेना पड़ा था। उसके बाद क्रिमिया, इटली और प्रुशियाके युद्धमें ऋण और भी बढ़ गया। सन् १८०५ ई०में समग्र अष्ट्रीया साम्राज्यका आय १११०१८५०००) वार्षिक व्यय प्रायः ११११८५०००) और १८०३के अन्त समस्त साम्राज्यका ऋण २३५०८६००००) रुपये था। हमारे भारतवर्षके साथ तुलना करनेसे अष्ट्रीयाका आय व्यय नितान्त अल्प है।

इतिहास—पहले अष्ट्रीया इतना बड़ा साम्राज्य न था, एन्स नदके नीचे एक छोटासा स्थान रहा। सन् ८८० ई०को सार्लेमेनके समय इसके दक्षिण-पूर्व अष्टिचमें एक सीमा निर्देश की गई। ११५६ ई०में एन्सके ऊपरके देशोंके साथ यह स्थान मिला दिया गया था। उसके बाद १२८२ ई०में हाप्सवर्ग परिवारके साथ मिल जानेसे यह राज्य क्रमसे बलवान् हुआ। हाप्सवर्गके राजाओंको कहीं विवाहसूत्रसे नया स्थान मिला; कहीं धीरे धीरे नई जगह खरीद ली थी। इस तरह अष्ट्रीया साम्राज्य प्रबल बना। अन्तमें १४०८ ई०से यह लोग जर्मनीके भी अधिपति हो गये। १४२६—२७ ई०में बोहिमिया और हङ्गरी राज्य हाथ आया। अब अष्ट्रीया बड़ा भारी साम्राज्य हो गया है। १८०४ ई०में पुत्र-पौत्रादि वंशावलीके क्रमसे फ्रान्सिस यहांके सम्राट् हुए थे। दो वर्ष बाद वे जर्मनी और इतालीके भी राजा माने गये।

इस समय जो स्थान अष्ट्रीयाकी उपीके नामसे प्रसिद्ध है, अति प्राचीन समयमें वहां तरिस्किम् नामको केल्टिक जातिके आदमी वास करते थे। ईसा मसीहके जन्मसे चौदह वर्ष पहले रोमकोंने दान्यूब नदके उत्तर नोरिकमको जय किया। मार्को-मन्निरा उस समय इस प्रदेशके अधीश्वर थे। दान्यूबके दक्षिण रोमकोंका नोरिकम और पान्नोनिया प्रदेश उस समय ताइरोल रिशियाका एक विभाग मात्र था। खृष्टीय ५ वीं और ६ ठीं शताब्दीमें बो-आइ, वन्दल, गथ, हून, लम्बार्ड, और अवरी प्रभृति जाति-योंने इन सब स्थानोंको अधिकार कर लिया। अन्तमें ष्ठ्ठ जातिवाले जाकर इतालीमें बसे। उस समय एन्स नदके एक ओर अवरी और दूसरी ओर एक जातिके जर्मनोंका अधिकार था। ७८८ ई०में अवरी-योंने बेरियापर आक्रमण किया, किन्तु शार्लेमिनने उन लोगोंको खदेड़ कर एन्स नदके किनारेके प्रदेशको जर्मनीमें मिला लिया। उसके बाद ९०१ ई०में हङ्गरीके राजाने इस स्थानको जीता था। अन्तमें ९५५ ई०को प्रथम ओत्तोने उसे फिर जर्मनीके अन्तर्भूत किया।

९८३ ई०में सम्राट्ने बाबेन्वर्गके लिओपोल्डको इस स्थानका शासनकर्ता नियुक्त कर दिया था। ११४१—११७७ ई०में हेनिरी जैसोमिर्गत्ने एन्स नदके ऊपर और नीचेके प्रदेशोंको भी मिला लिया। इस वंशसे छठें लिओपोल्डने कई बार हङ्गरीके साथ युद्ध किया था। १२४६ ई०में उनके उत्तराधिकारी फ्रेदारिक मगियारोंके साथ युद्ध करनेमें खेत आये। उनके सन्तान-सन्तति न थी, सुतरां बाबेनवर्गका राजवंश यहींसे ध्वंस हो गया।

द्वितीय फ्रेदारिकके समय अष्ट्रीयामें बहुत उलट-पलट पड़ा, परन्तु अन्तमें हाप्सवर्ग परिवारके प्रथम आलबर्टके सम्राट् होनेपर अष्ट्रीयाके अभ्युदयका सूत्र-पात हुआ। उन्होंने हङ्गरी और बावेरियाके साथ युद्ध किया था। अन्तमें मुआर्लैण्डके संग्राममें जन् स्वावियाने उन्हें विनष्ट कर दिया। उनके पांच सन्तान थे। उनमेंसे किसी किसीने फ्रेदारिकको सम्राट् बनाना चाहा, परन्तु बेबेरियाके डिउकने इस प्रस्तावको

अङ्गीकार कर उन्हें परास्त किया। अन्तमें उनके भाई द्वितीय आलब्रेस, उनकी मृत्युके बाद तृतीय आलब्रेस् एवं रुदल्फ और १३९५ ई०में ४र्थ आलब्रेस् डिउक हुए। तत्पुत्र पञ्चम आलब्रेसने सम्राट् सिगिसमुन्दकी कन्याके साथ विवाह किया था। उसी सम्बन्धसे वे हङ्गरी और बोहिमियाके राजा बनाये गये। इधर २य आलब्रेसके नामसे वे जर्मनीके भी सम्राट् हुए। १४५७ ई०में उनके सन्तान लादिसलेकी मृत्युके बाद अष्ट्रीयाका राजवंश विलुप्त हो जानेपर ष्टीरिया-राजपरिवारके हाथमें उनका स्वत्वाधिकार आ गया।

ष्टीरिया-राजपरिवारके ३य फ्रेदारिक सम्राट् हुए। उनके पुत्रका नाम प्रथम मक्षमिलन था। १४७७ ई०में चार्लस-दि-बोल्डकी कन्या मेरियाका पाणिग्रहण करनेपर उन्हें नेदर्लैण्डका भी अधिकार मिला। फ्रेदारिककी मृत्युके बाद मक्षमिलनने अपने सन्तान फिलिपको नेदर्लैण्डका राजा बना दिया। स्पेनकी जोहानाके साथ फिलिपका विवाह हुआ। उसी सम्बन्ध सूत्रसे हाप्सबर्ग-राजपरिवार स्पेनका अधीश्वर बना था। १५०६ ई०में फिलिप स्वर्ग सिधारे। १५१८ ई०में मक्षमिलन भी परलोक चले गये। उस समय उनके पौत्र प्रथम चार्लस स्पेनके राजा थे। जर्मनीका सिंहासन शून्य होनेसे वे पञ्चम चार्लसके नामसे वहांके सिंहासनपर बैठे। इधर सन्धिपत्रकी शर्तके अनुसार उन्हें नेदर्लैण्डके सिवा जर्मनीके अन्यान्य समस्त स्थानोंको अपने भाई प्रथम फार्दिनान्दके हाथमें सौंप देना पड़ा। फार्दिनान्द हङ्गरीके राजा द्वितीय लूइके बहनोई थे। लूइकी मृत्यु होनेपर बहुत विवादके बाद फार्दिनान्दको निम्न हङ्गरीका अधिकार मिला। अन्तमें पञ्चम चार्लसके परलोक गमन करनेपर फार्दिनान्द ही जर्मनीके सम्राट् बनाये गये।

१५५६ ई०में सम्राट्की मृत्यु हुई। ज्येष्ठ पुत्र द्वितीय मक्षमिलन अष्ट्रीया, हङ्गरी और बोहिमियाके सम्राट् बने थे। ताइरोल और ऊपर अष्ट्रीया २य पुत्र फार्दिनान्दके अंशमें पड़ा। छोटे लड़केका नाम कारल था। उन्हें ष्टीरिया और करिन्थिया आदि स्थान हिस्सेमें मिले। १५७६ ई०में मक्षमिलनकी मृत्यु हुई। उनके पांच पुत्रोंमेंसे द्वितीय रुदलफको राज्य मिला। इनके समयमें साम्राज्यकी अवस्था वैसी अच्छी न थी। रूम और बोहिमियाके साथ विरोध उठ खड़ा हुआ। इधर जेसुटलोग बोहिमियाके प्रोतेस्तान्त मतावलम्बियोंको सताने लगे। यह देख उन्होंने प्रोतेस्तान्तोंको सम्पूर्ण स्वाधीनता दे दी। परन्तु साम्राज्य रुदल्फके हाथमें बहुत दिनोंतक न रहा। उन्होंने अपने छोटे भाई माथियासको साम्राज्यका भार सौंप दिया। इन्हींके समय रोमन काथलिक और प्रोतेस्तान्तोंमें घोरतर विरोध शुरू हुआ था। वह विरोध लगातार तीस वर्ष तक चला। माथियासके बाद द्वितीय फार्दिनान्द और उनके बाद तृतीय फार्दिनान्दको सिंहासन मिला। इसी समय अष्ट्रीयामें बहुत दिनोंतक धर्मयुद्ध होता रहा। उसके बाद तृतीय फार्दिनान्दके पुत्र प्रथम लिओपोल्ड सम्राट् हुए। इस समय स्पेनका राजसिंहासन नृपतिशून्य था, सिंहासनके लिये लिओपोल्ड और फ्रान्सके सम्राट् चतुर्दश लुईसे झगड़ा हुआ। परन्तु युद्ध समाप्त होनेके पहले ही १७०५ ई०में लिओपोल्ड संसारसे चल बसे। उनके बड़े लड़के प्रथम जोसेफ् सम्राट् हो युद्ध करने लगे। १७११ ई०में उनकी भी मृत्यु हुई। इसीसे उनके भाई षष्ठ कारल सम्राट् बने। इनके समयमें सब लड़ाई झगड़ा मिट गया। औत्रेचमें पीछे सन्धि हुई। उसी सन्धिसूत्रसे नेदर्लैण्ड, मिलन, मान्तुया, नेपल्स और सिसिली अष्ट्रीयाके अन्तर्गत हो गया। उस समय अष्ट्रीयाका भूमिपरिमाण १८०००० वर्गमील, लोकसंख्या २८००००००, सैन्यसंख्या १३००००, और वार्षिक आय प्राय: २८०००००० रुपया था। किन्तु थोड़े ही दिनोंमें फ्रान्स और स्पेनसे युद्ध छिड़ गया। उसमें अष्ट्रीयाके सम्राट् परास्त हुए। १७३७ ई०को वियेनामें सन्धिपत्र लिखा गया। उसकी शर्तके अनुसार अपने अधिकारसे उन्हें नेपल्स और सिसिली स्पेनके दन् कारलको देना पड़ा। इधर सार्दिनियाके राजाको मिलानका कुछ अंश देनेसे उसके बदलेमें केवल पार्मा

और पाइसेब्ला मिला। १७३९ ई०को बेलग्रेडमें और एक सन्धि हुई। उसकी शर्तके मुताबिक रूमके सुलतानको बेलग्रेड, सर्विया, वल्लाचिया और बोस्नियाका कुछ अंश देना पड़ा।

१७४० ई०में सम्राट्की मृत्यु हुई। उनके पुत्र न था; केवल एकमात्र कन्या थी, जिसका नाम मेरियाथेरिसा था। लोरेनके डिउक फ्रान्स-स्तेफानके साथ उसका विवाह हुआ। मेरियाने राज्यका भार अपने हाथमें लिया। परन्तु यह बात सबको पसन्द न आयी। चारो ओरसे आपत्ति उठने लगी और घोरतर युद्ध आरम्भ हो गया। केवल इङ्गलेण्डने मेरियाका पक्ष ग्रहण किया। इसी अवसरमें प्रुशियाके द्वितीय फ्रेदारिकने सिलिशियाकी जय कर लिया और अष्ट्रीयाके इलेक्टरको सप्तम कार्लके नामसे सम्राट बना दिया। किन्तु १७४५ ई०में कारलकी मृत्यु हो जानेपर मेरियाके स्वामी प्रथम फ्रान्सके नामसे जर्मनीके सम्राट् हुए। सिलिशिया लौटा लेनेके लिये फ्रान्स, रूस, साक्सन् और स्विजरलेण्डके साथ परामर्श किया गया। लगातार सात वर्षतक युद्ध होता रहा; परन्तु सब निष्फल गया, अष्ट्रीयाको सिलिशिया न मिला। इसी समय राज्यका खर्च चलानेके लिये पहले पहल अष्ट्रीयामें ऋणका कागज प्रचलित हुआ।

फ्रान्सकी मृत्युके बाद उनके पुत्र द्वितीय जोसेफ जर्मनीके सम्राट् हुए। जोसेफके बाद उनके भाई द्वितीय लिओपोल्डके नामसे जर्मनीके सिंहासनपर बैठे। लिओपोल्डके लड़केका नाम द्वितीय फ्रान्स था। १८०४ ई०में ये पुत्रपौत्रादि वंशावलीक्रमसे अष्ट्रीयाके सम्राट् हुए। फ्रान्स मेरिया-लुइसाके पिता और फ्रान्सके प्रसिद्ध सम्राट् नेपोलियानके श्वशुर थे। इन्होंने ही उद्योग लगा अपने दामादको एल्बा द्वीपमें निर्वासित कर दिया था। फ्रान्सकी मृत्युके बाद उनके पुत्र प्रथम फार्दिनान्द सम्राट् हुए। १८६५ ई०में प्रुशियासे युद्ध होनेके बाद सम्राट् फ्रान्सिस् जोसेफ जर्मनीके साथ सब प्रकारका सम्बन्ध त्याग देनेके लिये वाध्य हुए थे। उसके दूसरे वर्ष बड़ी धमधामके साथ वे हङ्गरीके सिंहासनपर बैठाये गये।

युरोपमें जो महासमरानल प्रज्वलित हुआ है, अष्ट्रीया ही उसका प्रवर्तक है। बोसनिया अष्ट्रीयाका भुक्त राज्य और सरजेभो उसकी राजधानी है। रूस-तुर्की युद्धके बाद १८७८ ई०में जयलब्ध भूखण्ड बांटनेके समय अष्ट्रीयाने जर्मनीकी सहायतासे बोसनिया प्रदेशकी रक्षा करनेके लिये भार ग्रहण किया था। अष्ट्रीया सर्वभावसे बोसनियाके उन्नति साधनके लिये यत्नवान् हुआ। किन्तु बोसनियाके स्वाधीनताप्रिय स्लावगण अष्ट्रीयाकी अधीनतासे मुक्त होनेके लिये अतिशय व्यग्र हो उठा। संभ्रान्त मुसलमान अधिवासीको छोड़कर बोसनियाके जन साधारण सब स्लाव हैं। १९०८ ई०में समस्त बोसनिया अष्ट्रीयाके सम्पूर्ण अधिकारभुक्त हो गया। स्वाधीनताप्रयासी स्लाव प्रजागण अष्ट्रीयाके विपक्ष अभ्युत्थानके लिये गुप्त समितिसे षड़यन्त्र करने लगा। इधर अष्ट्रीयाने प्रजाशासन करनेके लिये अनेक उपाय अवलम्बन किये।

अष्ट्रीया-सम्राट् फ्रान्सिस् जोसफके भ्रातृपुत्र युवराज फ्रान्सिस फार्दिनान्द और उनकी पत्नी डाचेस हेजसबर्गने बोसनियाके दर्शनार्थ सरजेभोको गमन किया। इतिहासमें सन् १९१४ ई०की २८ वीं जनका रविवार एक चिरस्मरणीय दिन है। उसी दिन सरजेभो नगरमें अष्ट्रीयासाम्राज्यके युवराज और उनकी पत्नी ग्रेभीलोप्रिन्सेफ नामक सार्वजातीय एक स्लाव बालककी गोलीसे निहत हुईं। बलकानकी बलवृद्धि अष्ट्रीयाके प्रबल असन्तोषका कारण हुई। इसलिये अष्ट्रीया राजपुत्रकी हत्या होते सार्वियाके ऊपर कितने ही अल्टिमेटम (चरमाभिसन्धिपत्र) भेजे गये। सार्वियाने उसमें सब शर्तोंको मान लिया, केवल उसकी स्वाधीनता विरोधी दो शर्तके सम्बन्धमें मीमांसाके लिये लोगोंको मध्यस्थ ठहरना चाहा। सार्वियाका प्रत्युत्तर हस्तगत होनेके बाद अष्ट्रीयाने सार्वियाके विरुद्ध युद्ध घोषणा की। अनन्तर रूसने सार्वियाका पक्ष ग्रहण किया। इधर जर्मनीने अष्ट्रीयाका पक्ष ले फ्रान्सपर आक्रमण किया। ४थी अगस्तको बेलजियमकी स्वाधीनता भङ्ग होते देखकर निरपेक्ष इङ्गलेण्डने जर्मनीके विरुद्ध युद्धघोषणा की। फिर इटली कुछ

दिनके बाद अष्ट्रीयाके विरुद्ध युद्ध घोषणा कर उठा। उधर तुर्की और बुलगारियाने जर्मनी एवं अष्ट्रीयाका पक्षग्रहण किया। जिस सार्वियाके कारण महासमरानल प्रज्वलित हुआ, वही सार्विया राज्य इस समय अष्ट्रीया प्रभृति शक्तिके करतलगत है। सार्वियाके राजा राज्यभ्रष्ट होकर भी सारे लोग अंगरेजों और फ्रान्सीसियोंके साथ अष्ट्रीयाके विरुद्ध युद्ध कर रहे हैं। सन् १८१६ ई०की ४थी अगस्तको इस महासमरका तृतीय वर्ष आरम्भ हुआ है। इस महाकुरुक्षेत्रका परिणाम क्या होगा, यह कहा नहीं जा सकता। ऐसा विश्वव्यापी युद्ध किसी इतिहासमें देखा या सुना नहीं गया।

अष्ट्रेलिया, अस्ट्रेलिया—पृथिवीके सब द्वीपोंसे बड़ा द्वीप। यह भारतवर्षके पूर्वदक्षिण प्रशान्त-महासागरमें १०° ४७´ एवं १२´ १½´ दक्षिण अक्षांश तथा ११३° और १५३° ३०´ पूर्व द्राघिमाके मध्यमें अवस्थित है। पूर्वसे पश्चिम यह १२५० कोस लम्बा और उत्तरसे दक्षिण ८७५ कोस चौड़ा है। इसका भूमिपरिमाण प्राय ३०००००० वर्गमील है। इसके उत्तरमें नवगिनि और पूर्व द्वीपपुञ्ज, दक्षिणमें तास्मानिया-द्वीप, पश्चिममें भारत-महासागर और पूर्वमें प्रशान्त महासागर है।

अष्ट्रेलियाके अधिवासियोंकी उत्पत्ति समझना क्या सीधी बात है ? यह निकटवर्ती लोगोंसे आकार प्रकारमें बिलकुल भिन्न मालूम पड़ते हैं। फिर इनकी चाल-ढाल भी किसीसे न मिलेगी। खेती करना और घर बनाना इनके लिये स्वप्नका विषय है।

नहीं कह सकते, कब अष्ट्रेलियाका इन्होंने अधिकार किया था। इनके यहां पहुंचनेका ठीक-ठीक हाल किस्सा-कहानीमें भी नहीं सुन पड़ता। किन्तु आकार प्रकारमें सादृश्य रहनेसे इन्हें स्वतन्त्र जातिके मनुष्य मान सकते हैं। तीन-चारसे अधिक गणना यह नहीं जानते। यह बात साफ़ जाहिर है, अष्ट्रेलियाके अधिवासी पृथक् जातिके मनुष्य ठहरते, निकटवर्ती लोगोंमें किसीसे सम्बन्ध नहीं रखते और बहुत दिनसे इस देशमें रहते हैं।

पहले पहल जब युरोपीयोंने इस द्वीपको आविष्कार किया था, तब यहांके असभ्य आदमी देखनेमें हबशियों जैसे मालम हुये। इसीसे अनेक आदमियोंका विश्वास है, कि ये लोग अफ्रीकासे आकर यहां बसे होंगे। असभ्य लोग छोटी छोटी नावोंपर चढ़कर समुद्रके किनारे किनारे मछली पकड़ते फिरते हैं। एकाएक तूफान आ जानेसे नावें बहती बहती गहरे पानीमें चली जाती हैं। वैसी दशामें कोई तो डूब जाती और कोई किसी दूरके टापूमें जा लगती है। अष्ट्रेलियाके असभ्य लोग इसी तरह अफ्रिकासे आये होंगे। किन्तु ए० आर० वल्लासके मतसे यह आर्य जातिके मनुष्य ठहरते और जापानियों तथा जूलुवोंकी अपेक्षा हम लोगोंसे अधिक सम्बन्ध रखते हैं। डाक्टर क्लास (Dr Klatsch) इन्हें दक्षिण-अमेरिका, दक्षिण-अफ्रीका और अष्ट्रेलियाका आदिम अधिवासी बताते हैं। कोयी कोयी इन्हें मन्द्राज प्रान्तके द्राविड़ीयोंकी सन्तान-सन्तति कहता है। कारण, इनकी और द्राविड़ीयोंकी भाषा एवं रीति-नीति बहुत कुछ मिलती-जुलती है। किन्तु इस बातका ठीक उत्तर नहीं आता, इन्होंने भारतीय महासागरको कैसे पार किया था।

अष्ट्रेलियाके अधिवासी उंचाईमें युरोपीयकी बराबर निकलते, किन्तु शरीरके सङ्गठनमें नीचे पड़ते हैं। इनके हाथ-पैर बहुत पतले होते हैं। काले लोगोंके पिंडलियां नहीं देख पड़तीं। खोपड़ा अयोग्य रूपसे मोटा पड़ता, किन्तु मस्तिष्कशक्ति न्यून ही निकलती है। शिर लम्बा तथा कुछ सङ्कीर्ण बैठता, मत्था चौड़ा पीछेको हटा रहता, भ्रकुटी लटक आती, आंख बड़ी, काली तथा डूबी हुयी होती और नथनोंके पास नाक मोटी एवं बहुत चौड़ी पड़ जाती है। मुंह बड़ा और होंठ मोटा रहता है, किन्तु आगेको वह उभर नहीं आता। दांत बड़े, सफ़ेद और मज़बूत होते हैं। नीचेका कल्ला भारी बैठता, गालकी हड्डी कुछ ऊंची लगती और ठुड्डी छोटी रहती है। युरोपीयकी अपेक्षा गर्दन मोटी और छोटी निकलेगी। चमड़ेका रङ्ग तांबे-जैसा और बाल लम्बा तथा काला होता है।

यहांके मनुष्य साधारणतः मध्यमाकार और बलिष्ठ हैं। अष्ट्रेलियाके अन्तर्गत पापुयाके आदमियोंके शिरके बाल पशम जैसे होते, किन्तु अन्यान्य जातियोंके सीधे वा घूंघरवाले रहते हैं। अष्ट्रेलियाके प्रायः सभी पुरुष दाढ़ी मूछ रखते हैं। इनकी बुद्धि नितान्त मन्द नहीं है। इनकी भाषामें अनेक

अष्ट्रेलियाके स्त्रीपुरुष।

बातें हैं। किन्तु एक जातीय वस्तुमात्रको समझानेके लिये सामान्य कोई नाम नहीं है। जैसे,—पेड़ कहनेसे हम लोग जड़, धड़, शाखा, पल्लव, पत्र सहित द्रव्यको समझते, उसके बाद एक एक जातीय वृक्षको विशेषरूपसे समझानेके लिये अन्य अन्य शब्द रखते, परन्तु इनकी भाषामें वैसे शब्द नहीं हैं। इसीसे सब चीज़ोंके अलग अलग नाम हैं। संस्कृत भाषाकी तरह इनकी भाषामें भी धातुके अनेक प्रकार रूप होते हैं। क्रियापद, विशेष्य और विशेषणके एकवचन, द्विवचन और बहुवचन ये तीन वचन हैं।

तास्मानियामें अब पहलेके आदमी नहीं हैं। यहांकी आदिम असभ्य जाति निर्मूल हो गई है। समस्त अष्ट्रेलियाके आदिम निवासियोंकी संख्या इस समय १८००००से अधिक नहीं है।

अष्ट्रेलियावासियोंका सामाजिक काम पञ्चायत द्वारा चलाया जाता है। प्रवीण मनुष्य ही पञ्चायतके योग्य होते हैं। अन्दामानके आदमी देहमें गुदना गुदवाते हैं। वही प्रथा यहां भी प्रचलित है। ये लोग यौवनावस्थामें गुदना गुदवाते हैं। गुदना गुदवानेके समय पञ्चायती सभा बैठती है। उसके सामने युवकयुवतियोंकी छाती और पीठमें गुदना गोदते हैं।

इन लोगोंमें ओझे रहते हैं। किसीकी मृत्यु होनेपर ओझे वहां इकट्ठे होते हैं। इकट्ठे होकर लाशसे पूछते हैं,—"तुम क्यों मरे!" मर जानेपर मनुष्य नहीं बोलता, तो भी बुद्धिबलसे ओझालोग सब समझ लेते हैं। अन्तमें यही निश्चित होता, कि निकटका कोई शत्रु जादू करके आदमियोंको मार डालता है। रोगसे आदमी मरता है, अष्ट्रेलियावाले ऐसा विश्वास नहीं करते। युद्धमें किसीकी मृत्यु हो जानेपर ये लोग उसका मांस खाते और हृक्कके मेदसे यज्ञ करते हैं। ईश्वर वा देव देवी क्या हैं, सो अष्ट्रेलियावाले नहीं जानते। तब देवता ही कहो चाहे और कुछ कहो, इन लोगोंने इतना समझा, कि एक महाबली पराक्रान्त वृद्ध मनुष्य बहुत समयसे कहीं सो रहा है। उसका शरीर बड़ा भारी और नाम बुहाई है। वह एक हाथपर शिर रखकर सोता, इधर हाथकी कुहनी तक बाल जम गई है। एकदिन उसकी नींद टूटेगी, परन्तु कब, सो कुछ ठीक नहीं है। जागकर वह इस समस्त चराचरको खा डालेगा।

अष्ट्रेलियावासी खेती करना नहीं जानते। इनका न तो कोई स्थायी वासस्थान और न पालतू पशु पक्षी ही है। केवल पाले हुए कुत्ते ये रखते हैं। कितने ही अनुमान करते हैं, कि ये लोग अपने पूर्वनिवाससे कुत्तोंको साथ लेते आये थे। अष्ट्रेलियाके कुत्ते भों भों करके भूंकना नहीं जानते। इनकी पूंछें लम्बी और उनमें गीदड़के से बाल होते हैं। कान छोटे और सीधे रहते हैं। इस जातिके कुत्ते यहांके जङ्गलमें भी पाये जाते हैं। ये बड़े तेजस्वी होते हैं।

अष्ट्रेलियाके असभ्य आदमियोंके घर नहीं है। फिर ये लोग एक जगह रहते भी नहीं। जब जहां जाते, तब वहीं पेड़ोंके डाल पत्तेसे झोपड़े बना लेते हैं। ये लोग कुछ भी शिल्पकर्म नहीं जानते। जानवरोंके चमड़े और पेड़ोंके बकले ही इनके परिधेय वस्त्र हैं। बल्लम और जाल शिकारकी चीजें हैं। बल्लमके सिरेपर लोहेकी गांसी नहीं रहती; उसकी जगह पत्थर या जानवरकी हड्डी लगती है। पेड़के रेशे और घासफूससे

ये लोग चटायीकी तरह एक प्रकारका कपड़ा बुन लेते हैं। पंख अथवा पशुकी पूंछ इनके शिरके आभूषण हैं। छोटे छोटे शङ्खों और घोंघोंकी ही यह माला है। इनमें किसी किसी जातिके आदमी तरुण होनेपर सामनेके ऊपरवाले दो दांतोंको तोड़ देते हैं। अङ्गकी और और शोभाओंके साथ इन दो दांतोंका न रहना भी एक बड़ी शोभा है। इनका और एक सम्प्रदाय है। उसमें सुन्नतकी रीति प्रचलित है।

बल्लमके सिवा ये लोग दांव और कुदालको भी काममें लाते हैं। परन्तु ये सब लोहेके अस्त्र नहीं होते; बनैले पशुको हड्डीसे बनाये जाते हैं। इन्हींसे युद्ध और शिकार होता है। इनके पास और एक विचित्र अस्त्र रहता है, उसका नाम है बुमेराङ्ग। वह एक टेढ़ी लकड़ीकी गांसी होता, परन्तु उसके बनाने का ढङ्ग बड़ा ही विचित्र है। सामने छोड़कर मारनेसे वह फिर पीछे लौट आता है। स्त्रियां मरे हुए जानवरोंके नखों और पेड़ोंके रेशोंसे जाल बुनती हैं। इन जालोंसे ये कङ्गरू आदि बनैले पशु और मछलियां वगैरह पकड़ती हैं। समुद्रमें मछली पकड़नेके लिये छोटी नाव या डोंगी रहती है। आजकल असभ्य जातियोंकी संख्या धीरे धीरे कम होती जाती है।

यहांके आदमियोंके विवाहका कुछ ठीक नहीं है। किसीके एक और किसीके अनेक स्त्री हैं। किन्तु विवाहिता स्त्रियां प्राय: सभी सती होती हैं; तब ऐसा भी नहीं है, कि इनमें कोई असती नहीं निकलती। यदि कभी किसीका चरित्र खराब होता, तो वह जानसे मार डाली जाती है। परन्तु कुमारियों और विधवाओंका चरित्र-दोष उतना गुरुतर नहीं समझा जाता। युरोपीयों दुष्टोंने बहुतोंको व्यभिचारिणी बना डाला, इसके लिये बीच बीचमें लड़ाई हो जाती थी।

युरोपीयोंको अष्ट्रेलिया आविष्कार किये तीन सौ वर्षसे कम नहीं हुआ। इसका कुछ ठीक नहीं, पहले पहल यहां कौन आया था। उत्तमाशा अन्तरीप आविष्कृत हुआ, पश्चिममें अमेरिकाके ऊपर भी सभ्य लोगोंकी दृष्टि पड़ी थी। नये देश, नये द्वीप, ढूंढ़नेके लिये चारो ओर युरोपीयोंके जहाज़ छूटे। ऐसा प्रवाद है, १६०६ ई०में तरेन नामक कोई स्पेनवासी पेरूसे अष्ट्रेलिया आया था। उसके बाद यवद्वीपसे डच लोग यहां पहुंचे। १६४२ ई०में तास्मान नामक एक डच अष्ट्रेलियाके नाना स्थानोंको देख गया। उसीके नामके अनुसार अष्ट्रेलियाके दक्षिणकूलवर्ती द्वीपका नाम तास्मानिया हुआ है। १६८६ ई०में अंगरेज लोग पहले पहल यहां आये थे। उसी वर्ष कप्तान विलियम दाम्पियार नामक एक समुद्री डाकू इसके उत्तरपश्चिम किनारे होकर लौट गया। दो वर्षके बाद अष्ट्रेलियाका विशेष अनुसन्धान करनेके लिये अंगरेजोंने दाम्पियारको यहां भेज दिया। १७६८से १७७७ ई०तक विख्यात नाविक कप्तान कूकने अष्ट्रेलियाकी चारो ओर समुद्रतटको अच्छी तरह देखा था। १७८८ ई०में अंगरेज लोगोंने अष्ट्रेलियाके दक्षिण-पूर्व प्रदेश और निउ-साउथ-वेल्समें अपराधियोंको निर्वासित करना आरम्भ किया। अंगरेज अपराधी जहां आकर रहते थे, उस स्थानका नाम जाचन् बन्दर पड़ा। आजकल वही बन्दर प्रसिद्ध सिदनी नगर हो गया है। १८०३ ई०में वान-दि-मान द्वीपमें भी अपराधी भेजे जाने लगे। कालक्रमसे निर्वासितोंके पुत्रपौत्रादिक स्वाधीन हो गये। वे दुर्वृत्त लोगोंकी सन्तान हैं, यह परिचय देनेमें उन्हें बड़ी घृणा होती थी; इसीसे उन लोगोंने वान-दि-मान द्वीपका नाम तास्मानिया रख दिया। १८२५ ई०तक तास्मानिया निउ-साउथ-वेल्सके अधीन था, उसके बाद पृथक् हो गया।

१८३५ ई०में तास्मानियाके कुछ आदमियोंने समुद्रकी खाड़ी पार करके निउ-साउथ-वेलस्का दक्षिणी भूभाग अधिकार कर लिया। पहले इस स्थानका नाम फिलिप बन्दर था। अब यह विक्टोरिया नामका एक पृथक् प्रदेश हो गया है। इसके प्रधान नगरका नाम मेलबोरन है। १८२७ ई०में एक अंगरेज वणिक्सम्प्रदायने पश्चिम अष्ट्रेलिया प्रदेश संस्थापित किया था। इसके प्रधान नगरका नाम पार्थ है। दूसरे वणिक्

सम्प्रदायने दक्षिण अष्ट्रेलिया प्रदेश संस्थापित किया, उसके प्रधान नगरको आदिलेद कहते हैं। १८५८ ई०में नव दक्षिण अष्ट्रेलियाका उत्तर भाग पृथक् प्रदेश हो गया। वह अब क्वीन्सलेण्डके नामसे प्रसिद्ध है। ब्रिसवेन् उसकी राजधानी है।

इस समय अष्ट्रेलियाके प्रदेश और प्रधान प्रधान नगर यह हैं,—

प्रदेश।	नगर।
क्वीन्सलैण्ड (पहला नाम मोर्तन)	ब्रिसवेन, वोयामतन, मेरिवर्ग।
निउ-साउथ-वेल्स	सिदनी, पारामित्ता और विन्दशर, लिवरपुल, वाथर्ष्ट।
विक्टोरिया … …	मेलबोरन, गिलङ्ग, वाल्लारात।
दक्षिण अष्ट्रेलिया …	आदिलेद।
पश्चिम अष्ट्रेलिया …	पार्थ, फ्रिमान्तल।

पर्वत—नीलपर्वत, लिवरपुल-श्रेणी, अष्ट्रेलियाका अल्प, इसका दूसरा नाम बरगङ्ग पर्वत है; ग्राम्पियन, पिरिनिस्, फ्लिन्दार्स, ष्ट्यार्टश्रेणी, सीलारश्रेणी, विक्टोरिया पर्वत, दार्लिङ्गश्रेणी।

नदनदी—ह्वीकेसवरी, हण्टर, ईष्टिङ्गस, ब्रिसवेन; मरे और इसकी शाखा—माकोइरि, दार्लिङ्ग, लचलान, मरम्बिजी, टइममेरा, यरयर, सोयान, विक्टोरिया, आलवार्ट, फिन्दार्स, गिलवार्ट, मिचेल, ग्रेगरी, लिचहार्ट।

झील—विक्टोरिया वा अलेकसन्द्रिया, तोरेन्स, गेयार्दनार, एयार, होप।

अन्तरीप—युर्क, मेलविल्ली, फ्लातारी, सन्दो, हाउ, विलसन, ओतवे, स्पेनसार, चाथाम, लिउविल, उत्तर-पश्चिम-अन्तरीप, देविक, लन्दनदारी, देल।

उपसागरादि—पूर्वमें शेलबोरन्, प्रिन्सेस शार्लोती, हालिफाक्स, ग्लड साउण्ड, हार्वि, मोर्तन, माकोयारी बन्दर, ष्टेफिन्स बन्दर, जाक्सन बन्दर; दक्षिणमें पश्चिम बन्दर, फिलिप बन्दर, पोर्तलेण्ड, एनकाउण्टार, सेण्ट विन्सेण्ट, स्पेन्सार, वृहत् अष्ट्रेलियान बाइट, किङ्ग जार्जका साउण्ड; पश्चिममें—फ्लिन्दार्स, जिओग्राफी, फेसिन्सस बन्दर, शार्क, एक्समाउथ, किङ्ग साउण्ड, कोलियार, आदमिरालटी, काम्ब्रिज, वानदिमान, एसिंग्टन बन्दर; उत्तरमें—कासलरियाग, आरन्हेम, लेविल्ली, कार्पेन्तारिया।

तास्मानिया प्रदेशके प्रधान नगर होवार्त और लसेंष्टन हैं।

उपसागर—वृहत् सोयान् बन्दर, ष्टरम, नरफोल्क, इस प्रदेशमें दालरिम्पल बन्दर, देवी बन्दर, माकोयार बन्दर।

अन्तरीप—पिनार, दक्षिण अन्तरीप, दक्षिण-पश्चिम अन्तरीप, सोरेल, पश्चिम पहराट, ग्रिम।

पर्वत—बेनलोमन्द, वेलिंग्टन, पश्चिमगिरि, काम्फेल श्रेणी, हम्बोल्ट।

नद—दार्वेण्ट, तमर, जर्दान।

अष्ट्रेलियाके उत्तर अंशकी बहुतसी ज़मीन खाली पड़ी है, आज भी अच्छी तरह नहीं बसी। एक तो उत्तर अंश यों ही गर्म है, उसपर जलका अभाव, इसीसे युरोपीयोंने वहां उपनिवेश नहीं बनाया। इस द्वीपकी दक्षिण दिशा ही अधिक समृद्धिशालिनी है।

अष्ट्रेलियामें ज़्यादा ऊंचे पहाड़ नहीं हैं। पश्चिम और पूर्व किनारे दो पर्वतश्रेणियां हैं, उनमें पूर्व ओरकी पर्वतश्रेणी ८५० कोस लम्बी और १५०० फुट ऊंची है। इसके पूर्व किनारेसे अनेक छोटी छोटी नदियां निकली हैं। वे पश्चिम ओर बहती हुई अष्ट्रेलियाके मध्य झीलों और चश्मोंमें जा गिरी हैं। अष्ट्रेलियाका ऐसा आकार देख भूतत्त्वविद् पण्डित अनुमान करते हैं, कि पहले यहां समुद्र था। पीछे समुद्रगर्भमें अग्न्युत्पात हुआ, इसीसे क्रमशः मट्टी उभर आयी है परन्तु मध्यभागमें अभीतक अच्छी तरह मट्टी नहीं निकली, इसीसे वह स्थान नालों और झीलोंसे भरा हुआ है।

अष्ट्रेलियाका जलवायु शरीरके लिये गुणकर है। परन्तु द्वीप बहुत बड़ा होनेसे सब स्थानोंकी अवस्था एक सी नहीं है। उत्तर और मध्यभाग उष्ण, दक्षिण ओर न अतिशीत न उष्ण है। मध्यभागमें जलका अतिशय अभाव है। गर्मीके दिनोंमें वहां लू चलती और भूमि तपकर तवा हो जाती है।

प्रशान्त-महासागरसे जलवाष्प उड़कर आता है, इसीसे उत्तर-पश्चिम ओर वर्षाकाल होता है। यहां वर्षाकाल अग्रहायणसे फाल्गुन तक रहता है। अष्ट्रेलियाकी दक्षिण ओरके समुद्रसे भी जलवाष्प उड़ कर आता है। परन्तु ऊंचे पहाड़ नहीं हैं, इसीसे वह किसी चीज़में अटक और जम जाता तथा जल नहीं होने पाता। हमारे देशके राजपूतानेमें जिस तरह कभी कभी थोड़ी वर्षा होती, यहां भी उसी तरह पानी बरसता है। दक्षिण अष्ट्रेलियाके आदिलेद नगरमें वृष्टिका परिमाण मैदानपर १५—२० इञ्चसे अधिक नहीं पड़ता। किन्तु विक्टोरिया और निउ-साउथ-वेल्समें पर्वत हैं, इसीसे वहांकी वृष्टिका परिमाण गड़में ४४—४८ इञ्च पड़ता है। क्वीन्सलेण्डमें वृष्टि ५० इञ्च होती है। फिर उत्तरमें बड़े बड़े पहाड़ हैं, इसीसे वहांका वृष्टि परिमाण प्रायः ८० इञ्च है।

विक्टोरिया प्रभृति स्थानोंकी ऋतु यों है,—आधे भाद्रोंसे आधे अग्रहायण तक वसन्त, आधे अग्रहायणसे आधे फाल्गुन तक ग्रीष्म,आधे फाल्गुनसे आधे ज्यैष्ठतक शरत्, आधे ज्यैष्ठसे आधे भाद्रो तक शीत।

हम लोगोंके देशकी तरह अष्ट्रेलियामें अधिक जीव जन्तु नहीं होते। वहांके चौपायोंमें कङ्गरू ही प्रधान है। इसके आगेके पैर छोटे और पीछेके बड़े होते हैं। इसीसे दूसरे जन्तुओंकी तरह यह अच्छी तरह दौड़ नहीं सकता, किन्तु इसकी पूंछमें बहुत ताक़त रहती है। दौड़नेकी आवश्यकता आ पड़नेपर यह पूछपर जोर देकर एक एकबार १८।२० हाथ कूद सकता है। यदि कोई घोड़ेपर सवार होकर कङ्गरूका शिकार खेलता, तो वह घोड़ेको टपकर भाग जाता है।

कङ्गरूके पेटके निचले हिस्सेमें एक थैली होती है। छोटे छोटे बच्चे उसी थैलीमें छिपे रहते हैं। थैलीके ऊपर वक्षस्थलमें स्तन निकलता है। भूख लगनेपर बच्चे थैलीमें बैठे ही अनायास दूध पिया करते हैं। दूसरे चौपायोंके पेटमें बच्चे होनेके बाद बच्चेको नाड़ीके साथ माके फूलका संयोग रहता है। उसी फूलका राह माताके शरीरका रस बच्चेके देहमें आता, जिससे वह हृष्टपुष्ट होता है। कङ्गरूमें वह बात नहीं है। इसके गर्भाशयमें एक थैली रहती है, उसीसे बच्चेके भरण-पोषणका काम चलता है।

अष्ट्रेलियामें और एक प्रकारका जन्तु होता है। इसे एकगुह्य कहते हैं। गोमेषादिके मलमूत्र त्याग करनेके पथ भिन्न भिन्न हैं, परन्तु एकगुह्यमें ऐसा होता। यह पक्षियोंकी तरह एक ही राहसे मलमूत्र त्याग करता है। इसके स्तन नहीं होता। कङ्गरूकी तरह इसके पेटमें भी थैली रहती है। इस थैलीसे आप ही दूध टपक पड़ता है। उसे ही बच्चे पीते हैं। इस द्वीपमें प्रायः ६९० प्रकारके पक्षी हैं। काकातुआ और तोते अनेक रङ्गके हैं। एमू नामक एक बड़ा भारी पक्षी है। यह देखनेमें अफ्रीकाके उष्ट्रक पक्षी जैसा ही होता है। इस द्वीपमें ६३ क़िस्मके सांप हैं। उनमें ४२ क़िस्मके जहरीले हैं। पांच प्रकारके सांपोंका विष ठीक इस देशके काले जैसा ही मारात्मक है।

अष्ट्रेलियामें गाय भेड़ आदिके चरने लायक़ बहुत जमीन खाली पड़ी है। पशुओंके चरने लायक़ ऐसी भूमि संसारमें और कहीं नहीं है। अंगरेज लोग दूसरे देशोंके जानवरोंको इस द्वीपमें ले आये हैं। भेड़की पैदावार चारो ओर है। प्रति वर्ष यहांसे बहुत सा पशम दूसरे देशोंके भेजा जाता है। भेड़का मांस भी यथेष्ट है। पहले अष्ट्रेलियामें इतना मांस होता, कि खाये न चुकता, बहुतसा नष्ट हो जाता था। अब जहाजमें एक प्रकारकी कल बना दी गई है। उसमें कितने ही कमरे उत्तर-मेरु प्रदेश जैसे बहुत ही ठण्ढे रहते हैं। उनमें मांस रख देनेसे बहुत दिनोंतक नष्ट नहीं होता। इन्हीं सब कमरोंमें मांस भरकर रोज़गारी लोग इङ्गलैण्ड भेज देते हैं, इससे प्रतिवर्ष बहुत लाभ होता है। अष्ट्रेलियाके घोड़ेकी पैदावार भी प्रसिद्ध है। पहले यहां घोड़े न थे। अंगरेजोंने यहां घोड़ा लाकर पैदा करने लगे। अब अष्ट्रेलियासे अनेक स्थानोंको घोड़े भेजे जाते हैं। यहांकी नद-नदियोंमें भी अनेक प्रकारकी मछलियां छोड़ दी गई हैं।

वृक्षादिमें एनकालिपतस् वृक्ष ही प्रधान है। इसके

पत्तेसे काजपूत जैसा एक प्रकारका तेल बनता, जो वातरोगकी दवा है। इस पेड़का गोंद बहुत मंहगा बिकता है। यहां झाऊके पेड़की छालसे चमड़ेमें रङ्ग दिया जाता है। बबूलकी तरह दो किस्मके पेड़ होते हैं। उनकी छालमें भी खूब रङ्ग रहता है। रङ्गके लिये हरसाल बहुत सी छाल इङ्गलेण्ड भेजी जाती है। अब इस द्वीपमें गेहूं, यव, मकई, सरसों, मटर, जव, आलू, नाना प्रकारकी शाकसब्जी और फल खूब पैदा होता है।

अष्ट्रेलियामें सोना, चांदी, तांबा, लोहा, सीसा, कोयला, टीन आदि नाना प्रकारका धातु मिलता है। सोनेके कारण ही यह स्थान इतना समृद्धिशाली है। १८५१ ई०में यहां सोनेकी खानि निकली थी। खानिके निकलते ही लोग अपना अपना काम काज छोड़ सोना लेनेके लिये दौड़े, जिससे कुछ दिनों तक अष्ट्रेलियामें बहुत खलबली रही। १८५१ से १८८० ई०तक सर्वसमेत २८६००००००० रुपयेका सोना निकला था।

अष्ट्रेलिया और नवजीलन्द अंगरेजोंके उपनिवेश हैं। यहांके आदमी इस देशका शासन आपही करते हैं। इनकी पार्लीमेण्ट सभा है। सभाके सभ्योंको ये लोग आप ही मनोनीत करते हैं। अष्ट्रेलियाके प्रत्येक प्रदेशमें इङ्गलण्डसे शासनकर्ता भेजे जाते हैं। शासनकर्ता महासभाके मत विरुद्ध कोयी काम नहीं कर सकते। राज्यशासनप्रणाली ठीक इङ्गलेण्ड ही जैसी है। यहांके प्रत्येक विभागकी सभा पृथक् पृथक् होती है। एक विभागके साथ दूसरे विभागका कोई सम्पर्क नहीं है। इङ्गलेण्डके साथ अष्ट्रेलियाका सम्बन्ध केवल नाममात्रका है। इङ्गलेण्ड यहांके शासनकर्ता नियुक्त करे, और यदि कोई जाति इस स्थानपर आक्रमण मारे, तो इङ्गलेण्ड बचानेको दौड़ेगा। सम्पर्क बस इतना ही है। अष्ट्रेलियाके प्रत्येक विभागमें अपनी सेना थोड़ी ही है। सिवा इसके यहांके सभी आदमी वीर और साहसी हैं। पहले अष्ट्रेलियाका आय कुछ भी न था, परन्तु अब यहांकी अवस्था ऐसी नहीं।

कहते हैं, अष्ट्रेलियाकी भूमि बहुत ही प्राचीन है। इसमें जहाज़ चलाने योग्य न तो कोई नदी और न भड़कनेवाला आग्नेयगिरि या बरफसे ढंका पर्वत ही विद्यमान है। जिस समय एशिया और युरोप जलमें मग्न था, उस समय भी यहां भूमि वर्तमान रही। यहां बहुत ऊंचे पर्वत नहीं, चारो ओर मदान-जैसा पड़ा है।

लोकसंख्या—अष्ट्रेलियामें प्रधानतः अंगरेज वंशके ही युरोपीय रहते हैं। अंगरेजोंको छोड़ दूसरे युरोपीय सैकड़े पीछे सवा तीनसे ज्यादा नहीं पड़ते। सन् १८०६ ई०में आदिम अधिवासियोंको छोड़ अष्ट्रेलियाकी लोकसंख्या ४१२०००० रही। सन् १८८१ ई०से दूसरे स्थानके अधिवासियोंका यहां आकर रहना रुक गया था, किन्तु अब कुछ-कुछ फिर जारी हो गया है।

रक्षा—पहले अष्ट्रेलियाकी रक्षा इङ्गलेण्ड पर ही निर्भर रही, किन्तु सन् १८९९-१९०२ ई०को बोअर-युद्धमें यहांसे ६३१० स्वेच्छासेवक अश्वारोही जानेपर इस बातकी ओर लोगोंका ध्यान खिंचा। सिदनीमें जहाजोंका बड़ा बेड़ा रहता, जो इस देशके इर्दगिर्द पहरा देता है। अब यहां लोग खूब फौजमें भरती होते हैं। आजकल जो विश्वव्यापी युद्ध चलता, उसमें अष्ट्रेलियाके योद्धाओंने वीरताके अनोखे उदाहरण देखा जगत्को विस्मित कर दिया है।

शिक्षा—अष्ट्रेलियामें शिक्षाका अधिक प्रचार है। प्रत्येक राज्यके युवककी बलवती शिक्षा दी जाती है। सैकड़े पीछे ८ आदमी अपढ़ हैं। स्कूलमें छात्रको विना मूल्य या नाममात्र मूल्यपर शिक्षा मिलती है। सिडनी, मेलबोर्न, एडीलेड और होबर्टमें अच्छे-अच्छे विश्वविद्यालय वर्तमान हैं।

वाणिज्य-व्यवसाय—कोई सवा दो हजार जहाजोंसे चलता है। ऊन, चमड़ा, चरबी, मांस मक्खन, लकड़ी, गेहूं, आटा, फल, सोना, चांदी, जस्ता, तांबा तथा टीन यहांसे बाहर भेजा और कपड़ा, बाफतनी, कल-पुर्जा, लोहा-लक्कड़, शराब, भड़कनेवाली चीज, थैला, बोरा, किताब, कागज, चाय एवं तेल मंगाया जाता है।

रेलवे—अष्ट्रेलियाकी समय रेलवे गवर्नमेण्टने ऋण लेकर बनाई है। कहीं छोटी और कहीं बड़ी रेल चलती है। ऋणपर जितना व्याज देना पड़ता, उससे कुछ अधिक लाभ हो जाता है। डाक और तारका भी खासा प्रबन्ध है।

	भूमिका परिमाण वर्गमील	लोकसंख्या सन् १८०६ ई०
निउ साउथ वेल्स्	३१०७००	१५३००००
विक्टोरिया	७८८४	१२२३०००
दक्षिण-अष्ट्रेलिया	९०३६९०	३८१०००
क्वीन्सलैण्ड	६६८४९७	५२४०००
पश्चिम-अष्ट्रेलिया	९७५९२०	२७००००
तास्मानिया	२६२१५	१८००००
	१९७२९०६	
नवगिनी	९००००	
	३०६२९०६	

अष्ट्रेलेशिया—यह कुछ द्वीपपुञ्ज है। नव गिनी, अष्ट्रेलिया, तास्मानिया, नव-जिलान्द, नव-ब्रिटानिका, सोलेमान द्वीप, नव-हिब्राइदिस, नव-कालिदोनिया, लयालटी द्वीप प्रभृति इसके अन्तर्गत हैं। ये सब ५०° दक्षिण अक्षांश एवं ११०° से १८०° पूर्व द्राघिमांशके मध्यमें अवस्थित हैं। अष्ट्रेलेशिया शब्दका अर्थ है—'दक्षिण एशिया सम्बन्धी।' ऐसा नाम होनेका कारण यही है, ये सब द्वीप एशियाके दक्षिण प्रशान्त महासागरमें हैं।

अष्ठि, अष्टि देखो।

अष्ठिला, अष्ठीला देखो।

अष्ठिवत्, अष्ठीवत् देखो।

अष्ठीला (सं० स्त्री०) अष्ठिसदृशं कठिनाश्मानं राति. र-क रस्य लकारः दीर्घः। १ गुल्मरोग विशेष, लरक अटयी, किसी किस्मका फोड़ा। अष्ठीला प्रायः हथौड़ी-जैसी होती और नाभिसे नीचे निकलती है। इसकी गांठ कड़ी रहती है। यह कठिन पदार्थ किसी-किसीके पेटमें घूमता फिरता और किसीके पेटमें टिका रहता है। इसकी ऊपरी ओर लम्बी रहती और टेढ़ेपनसे किञ्चित् उन्नत हो जाती है। इसकी चिकित्सा गुल्मरोग जैसी हो है। गुल्म देखो।

२ वायुरोग विशेष, बातकी कोई बीमारी। ३ वर्त्तुलाकार पाषाणखण्ड, गोल पत्थरका टुकड़ा। ४ फलवीजगर्भ, नाक, बीचका हिस्सा। ५ अंठली, गुठली। ६ आघात, ज़ख्म।

अष्ठीलिका, अष्ठीला देखो।

अष्ठीवत् (पु० क्ली०) नास्ति अतिशयितमस्थि यस्मिन्, मतुप् पृषो० निपातनात् सिद्धः। १ जानु, घुटना। २ शुक्ररोग विशेष, लिङ्ग बढ़ जानेकी बीमारी।

अष्ठीवान्, अष्ठीवत् देखो।

अस (हिं० सर्व०) ऐसा, यह।

"अस विचारि जिय जागहु ताता।
मिलहि न जगत सहोदर भ्राता॥" (तुलसी)

(वि०) २ ऐसा, इस प्रकारका।

"अस विचार जिनके मन माहीं।
पाप समीप महीप न आहीं॥" (तुलसी)

असंक्लिन्न (सं० त्रि०) सम्यक् आर्द्र न होनेवाला, जो अच्छीतरह भीगा न हो।

असंज्ञा (सं० स्त्री०) नञ्-तत्। १ संज्ञाका अभाव, होशकी अदममौजूदगी, बेहोशी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ संज्ञाशून्य, ज्ञानरहित, जो इशारा कर न सकता हो।

असंयत् (वै० त्रि०) हृदयमें न चुभनेवाला, जो अच्छा न लगता हो।

असंयत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अबद्ध, बन्धनशून्य, जो बंधा न हो।

असंयतात्मन् (सं० त्रि०) अबद्धहृदय, जिसके क़ाबूमें रूह न रहे।

असंयत्त (वै० त्रि०) स्थिरभावापन्न, जो घबराया न हो।

असंयुक्त (सं० त्रि०) नञ्-तत्। वियुक्त, जुदा, जो मिला न हो।

असंयुत, असंयुक्त देखो।

असंयोग (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ संयोगका अभाव, विलानकी अदममौजूदगी, मिलका न होना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ संयोगशून्य, जुदा, जो मिला न हो।

असंरुद्ध (सं॰ त्रि॰) बन्धनशून्य, बेरोक, जो घिरा न हो।

असंलग्न (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। विभक्त, असम्बद्ध, अलग, बेसिलसिला, जो ठीक न बैठा हो।

असंवत्सरभृत (वै॰ त्रि॰) पूर्ण वत्सर न रखा हुआ, जो पूरे साल रहा न हो। यह शब्द पवित्र अग्निका विशेषण है।

असंवत्सरभृतिन् (वै॰ त्रि॰) पूर्ण वत्सर (पवित्र अग्निको) न रखनेवाला, जो पूरे साल (आतिश पाक) न रखता हो।

असंविदान (सं॰ त्रि॰) अज्ञान, मूर्ख, नासमझ, गंवार। २ असंप्रज्ञ, जो होनहार न हो।

असंवृत (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। १ अनावृत, जो ढंका न हो। २ ईषदावृत, जो अच्छीतरह ढंका न हो।

असंव्यवहित (सं॰ अव्य॰) १ झटित्, फौरन्। २ अविलम्ब, समयपर।

असंशय (सं॰ पु॰) अभावे नञ्-तत्। १ सन्देहका अभाव, शकको अदममौजूदगी, खटकेका न रहना। (त्रि॰) नास्ति संशयो यत्र, नञ्-बहुव्री॰। २ सन्देह-शून्य, बेशक, जिसे खटका न रहे। (अव्य॰) निः-सन्देह, बिलाशक।

असंश्रव (सं॰ त्रि॰) नास्ति संश्रवः सम्यक् श्रवणं यत्र, बहुव्री॰। १ संश्रवसे हीन, जो सुन न पड़ता हो। (पु॰) २ संश्रवहीन अस्तित्व, जिस हालतमें सुन न सकें। ३ दूरदेश, जो बात सुन न पड़ती हो। (अव्य॰) ४ बेसुने, कानमें न पड़नेसे।

असंश्राव्य (सं॰ अव्य॰) बेसुने, सुनाई न देनेसे।

असंश्लिष्ट (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। १ विभक्त, संश्लेष-शून्य, असङ्गत, जुदा, लगाव न रखनेवाला, जो वाजिब न हो। (पु॰) २ सबसे पृथक् रहनेवाले महादेव।

असंसक्त (सं॰ त्रि॰) पृथक्, असंयुत, विभक्त, निरीह, जुदा, लापरवा, जो अलग हो।

असंसर्ग (सं॰ पु॰) अभावे नञ्-तत्। १ संसर्गका अभाव, साथका न होना। (त्रि॰) नञ्-बहुव्री॰। २ सम्बन्धशून्य, मेलसे खाली।

असंसर्गाग्रह (सं॰ पु॰) असंसर्गस्य परस्परसम्बन्धा-भावस्य अग्रहः। मीमांसकके मतानुसार ज्ञानद्वयके परस्पर सम्बन्धाभावका बोध न होना। यथा,—यह रजत है।

असंसक्ति (सं॰ स्त्री॰) संसर्गका अभाव, निरीहता, अलाहदगी, लापरवाई, लगाव न रहनेकी हालत।

असंसारी (सं॰ त्रि॰) अलौकिक, अद्भुत, निरीह, निस्पृह, अनोखा, निराला, जो दुनियासे दूर रहता हो।

असंसिद्ध (सं॰ त्रि॰) अपूर्ण, अकृत, नातमाम, जो पूरे न पड़ा हो।

असंसृक्तगिल (वै॰ त्रि॰) समूचा निगलजानेवाला, जो बेचबाये लील जाता हो। रुद्रके खानेकी स्तुति इस शब्दसे की जाती है।

असंसृति (सं॰ स्त्री॰) जीवनके नव मार्ग, प्रत्या-गमनका अभाव, परमात्मामें लय जिन्दगीकी नयी चालका न पकड़ना।

असंसृष्ट (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। संसर्गरहित, जुदा, जो किसीके साथ न रहे।

असंस्कृत (सं॰ त्रि॰) १ गर्भाधानादि संस्काररहित, जिसका गर्भाधानादि संस्कार न हुआ हो। २ अपरि-ष्कृत, जो साफ़ न किया गया हो। (पु॰) ३ अप-शब्द, खराब बात।

असंस्तुत (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। १ अपरिचित, जिससे परिचय अर्थात् जान पहचान न हो। २ उत्तम रूपसे जिसकी स्तुति की न गयी हो।

असंस्थान (सं॰ क्ली॰) १ संस्थानका अभाव, इक्ति-सालती, अदममौजूदगी। २ विप्लव, बेतरतीबी। ३ राहित्य, न्यूनता, कमी।

असंस्थित (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। १ परलोक न गया हुआ, जो इसी लोकमें हो। २ चञ्चल, चुलबुला।

असंस्थिति (सं॰ स्त्री॰) १ विप्लव, बेतरतीबी। न्यूनता, कमी।

असंहत (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। १ एकत्र न रहनेवाला, जो इकट्ठा न हो। २ असंलग्न, जो लगा न हो।

असंहार्य (सं० पु०) उद्दण्ड, प्रचण्ड, भाकाविल-मुकाविला, जो मारा जा न सकता हो।

असंहित (सं० त्रि०) वेदकी संहितामें सम्मिलित न होनेवाला, जो संहितामें न हो।

असकताना (हिं० क्रि०) ऐंड़ाना, जंभाई लेना, जंघना, हिचकना, आलस्य या सुस्तीमें पड़ना।

असकना (हिं० पु०) यन्त्रविशेष, एक औज़ार। इसे अङ्गुलद्वय विस्तृत और यव परिमित घन लोहेसे बनाते हैं। देखनेमें यह रीति-जैसा खुरखुरा होता और तलवारके म्यानकी भीतरी लकड़ी साफ़ करनेमें काम आता है।

असकल (सं० त्रि०) असम्पूर्ण, अधूरा, जो पूरा न हो।

असकृत् (सं० अव्य०) नञ्-तत्। पौनःपुन्य, बार-म्बार, अनेक बार।

असकृत्समाधि (सं० पु०) आवृत्त ध्यान, आवर्तित भावना, बारबार चित्तको ईश्वरमें लय करना।

असकृद्गर्भवास (सं० पु०) आवृत्त जन्म, बारबार की पैदायश।

असक्त (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ शक्तिशून्य, जिसे ताक़त न रहे। २ सङ्गशून्य, निराला, साथ न रहने-वाला। ३ फलाभिलाषशून्य, लापरवा, जिसे किसीकी चाह न रहे।

असक्थ, असक्थि (सं० त्रि०) नास्ति सक्थि यस्य, वा षच् समा०। बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच्। पा ५।४।११३। ऊरुशून्य, बेजानू, जिसके जांघ न रहे।

असक्र (वै० त्रि०) १ बराबर बहनेवाला, जो सूखता न हो। २ दूसरी जगह न जानेवाला।

असक्रा (वै० स्त्री०) सम्-क्रम-विट् पृषो० समो ऽन्तलोपः, नञ्-तत्। अप्राप्तपूर्वा, जो पहले न मिली हो। "धेनुं न इषं पिन्वतमसक्राम्।" ऋक् १।११२।८। 'असक्रा ता यावज्जीवमनपायिनीमक्षत् सजातैरप्राप्तपूर्वामित्यर्थः।' (देवराज) 'अस-क्रामसंक्रमणीं।' निरु० ६।२९।

असखि (सं० पु०) न सखा, न टच् समा०। बन्धु न होनेवाला, जो मित्र न हो, शत्रु।

असखिन्, असखि देखो।

असगंध (हिं० पु०) अश्वगन्धा, एक पेड़। यह सीधी झाड़ी-जैसा होता है। इसका फल छोटा और गोल रहता है। इसकी मोटी जड़ दवाके लिये बाज़ारमें बिकती है। अश्वगन्धा देखो।

असगोत्र (सं० त्रि०) न समानं गोत्रमस्य, वा समा-नस्य सः। भिन्नगोत्र, जो एकगोत्रका न हो।

असगुन, अशकुन देखो।

असङ्कल्प (सं० पु०) विरोधे नञ्-तत्। १ सङ्कल्पका अभाव, पेशबन्दीकी अदममौजूदगी। नञ्-बहुव्री०। २ सङ्कल्पशून्य, जो पेशबन्द न हो।

असङ्कल्पित (सं० त्रि०) सङ्कल्प किया न हुआ, जो पहलेसे ठीक न ठहरा हो।

असङ्कसुक (सं० त्रि०) नञ्-तत्। स्थिरमान, जो ठहरा हो।

असङ्कीर्ण (सं० त्रि०) १ विशुद्ध, एकत्र न किया हुआ, खालिस, बेमेल। परस्पर विरुद्ध।

असङ्कुल (त्रि०) एक दूसरेसे न मिलनेवाला, खुला। (पु०) १ विस्तीर्ण पथ, खुली राह।

असङ्केत (सं० त्रि०) स्थिर न किया हुआ, जो माना न गया हो।

असङ्केतित (सं० त्रि०) अनिमन्त्रित, जो बुलाया न गया हो।

असङ्क्रान्तमास (सं० पु०) नञ्-तत्। शुक्लप्रति-पदादि दर्शान्त चान्द्रमासके मध्य सूर्यकी संक्रमण-शून्य, मलमास, अधिकमास।

असङ्क्षेप (सं० पु०) नञ्-तत्। संक्षेप न होनेवाला, जो घटा न हो।

असङ्ख्य (सं० त्रि०) न संख्यम्, नञ्-तत्। १ असंख्य-नीय, अगणनीय, जिसे गिन न सकें। २ न विद्यते संख्या यस्य, बहुव्री०। ३ इयत्ताशून्य, बेशुमार। (पु०) ४ विष्णु।

असङ्ख्यता (सं० स्त्री०) आनन्त्य, अमितता, बेइन्तिहाई।

असंख्यात (सं० त्रि०) इयत्ताशून्य, अनेक, बहुत, बेशुमार।

असंख्येय (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ जिसकी

संख्या की जा न सके, बेशुमार। (पु०) २ शिव। (दे० क्ली०) ३ अगणित संख्या, बहुत बड़ी अदत। ४ असंख्य समारोह, बेशुमार भीड़।

असङ्ख्येयगुण (सं० त्रि०) अगणित, बेशुमार, जो गिना न जाये।

असङ्ख्येयता (सं० स्त्री०) आनन्त्य, अपरिमाणत्व, बेइन्तिहाई।

असङ्ग (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ सम्बन्धका अभाव, लगावका न रहना। २ युयुधानके पुत्रविशेष। नञ्-बहुव्री०। ३ सम्बन्धशून्य, किसीसे वास्ता न रखनेवाला, न्यारा। पृथक्, जुदा, अलग।

असङ्ग—एक महायानी बौद्ध और बौद्ध तन्त्रपद्धतिके प्रतिष्ठाता। समन्तभद्रके शिष्य पहले यह महीशासक और पेशावरके प्रसिद्ध तपस्वी थे। सन् ई०के ६ठें शताब्दमें इन्होंने अपने धर्मका मूलग्रन्थ 'योगाचारभूमिशास्त्र' लिखा। चीनपरिव्राजक यूअन चुअङ्गने ७वें शताब्दके आदिमें पेशावर जाके देखा, कि इनका मठ टूटा पड़ा था। असङ्गने भूतप्रेतोंको बुद्ध और अवलोकितेश्वरका पूजक बता अपने मतावलम्बियों और बौद्धोंको झगड़ा मिटाया। किन्तु इनके अनुयायी बौद्ध धर्मसे कोई सम्बन्ध न रखते और दिन रात यन्त्र मन्त्र तन्त्र द्वारा सिद्धि ढूंढनेमें लगे रहते थे। तन्त्रपद्धति प्रचलित होनेसे बौद्ध मतका ह्रास हुआ और ध्यानी त्रिमूर्तियों एवं तान्त्रिक देवताओंकी प्रतिमा मठों तथा मन्दिरोंमें विराजने लगी। स्थिरमति, दिङ्नाग और धर्मकीर्ति असङ्गके शिष्य रहे। बुद्धकी मृत्युके ९०० वर्ष पीछे इनका जन्म हुआ था। सन् ई०के ६ठें शताब्द विक्रमादित्य शिलादित्यके समय असङ्ग और इसका कनिष्ठ सहोदर वसुबन्धुके आश्रयसे बौद्ध साहित्य फिर चमक उठा। असङ्ग योगाचारके प्रधान अध्यापक रहे। इन्होंने बहुत दिनतक अयोध्यामें रहे, अन्तमें मगधके राजगृहमें देह रखा किये थे।

असङ्गत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। असंयुक्त। असम्बन्ध। अन्याय, अनुचित, अयुक्त, बे ठीक। असङ्गत वाक्य, जिस वाक्यमें परस्पर बात न मिले। असङ्गत वाद्य, जिस वाद्यमें गानेके साथ बाजा न मिले।

असङ्गति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। सङ्गतिका अभाव, साथका न होना।

असङ्गम (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ सङ्गमका अभाव, मिलनका न होना। (त्रि०) नास्ति सङ्गमो यस्य, नञ्-बहुव्री०। सङ्गमशून्य, मिलनरहित, जो किसीसे मिलता न हो।

असङ्गवत् (सं० त्रि०) असंयुक्त, जो लगा न हो।

असङ्गिन् (सं० त्रि०) सञ्ज-घिनुण् यस्य गत्वम् नञ्-तत्। सम्बन्धशून्य, जो लगा न हो।

असचद्विष् (वै० त्रि०) १ अपनी पूजा न करनेवालोंको अपराधी बनाता हुआ, जो अपने दुश्मनोंपर इलजाम लगाता हो। २ शत्रुशून्य, जिसके दुश्मन न रहे।

असच्छाखा (सं० स्त्री०) कल्पित शाखा, मसनयी शाख, जो डाल सच्ची न हो।

असच्छास्त्र (सं० क्ली०) असत् असद्विषयकत्वेन अनिष्टप्रयोजकं शास्त्रम्, कर्मधा०। हिन्दुमतमें बौद्धशास्त्र। इससे केवल असदर्थ ही प्रतिपादित हुआ है। अतएव यह वैदिक कर्मके विरुद्ध है और इसीसे इसका नाम असच्छास्त्र हुआ है।

असज्जन (सं० पु०) विरोधे नञ्-तत्। सज्जन न होनेवाला, जो सज्जन न हो। दुर्जन, खराब आदमी।

असज्जितात्मन् (सं० त्रि०) निरीह आत्मा रखनेवाला, जिसके रूहमें लगाव न रहे।

असढ़िया (हिं० पु०) सर्पविशेष, पनिहा सांप। इसकी आकृति लम्बी और पीठ चित्तीदार होती है। यह विषाक्त नहीं ठहरता।

असण (हिं० पु०) गर्त, गड्ढा।

असत् (सं० त्रि०) अस्-शतृ अकारलोपः, ततो नञ्-तत्। १ सत् न होनेवाला, मसनूयी, जो सच्चा न हो। २ असाधु खराब। ३ निन्दित, बदनाम। ४ दुष्टाचार, बदमाश। ५ अविद्यमान, जो हाजिर न हो। ६ अकिञ्चित्कर, नाचीज। ७ अव्यक्त, पोशीदा। ८ अनित्य, जो टिकता न हो। ९ निरुपाख्य निःस्वरूप निषेधरूपसे प्रतीयमान अभावलाश्रय (अभाव)। १० ब्रह्मभिन्न। ११ जड़, बेहरकता।

१२ अभ्यासे किया जानेवाला, जो दिलसे न हो। १३ निष्फल, बेफ़ायदा। (पु०) न चिरं सन् विद्यमानः। १४ इन्द्र। एक इन्द्र चिरकाल नहीं रहते, इसीसे उन्हें असत् कहते हैं।

असत्कम (हिं०) असत्कर्मन् देखो।

असतायी (सं० स्त्री०) पापकर्म, दुराचार, इज़ाब, बदमाशी।

असती (सं० स्त्री०) व्यभिचारिणी, नापाकदामन, जो औरत बिगड़ गयी हो।

असतीसुत (सं० पु०) जारज, दासीपुत्र, मुत्फ़ेहराम, दोग़ला, जो बिगड़ी औरतका लड़का हो।

असत्कर्मन् (सं० क्ली०) असच्च तत् कर्म चेति, कर्मधा०। १ वेदादि निषिद्ध कर्म, बुरा काम। (त्रि०) नास्ति सत्कर्म यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ साधु आचारशून्य, भला काम न करनेवाला।

असत्कर्मा (सं० स्त्री०) असत्कर्मन् टाप्। असाध्वी, कुलटा, नापाकदामन औरत।

असत्कल्पना (सं० स्त्री०) १ असत्यकर्म, झूठा काम, जो बात कभी न हो।

असत्कार (सं० पु०) १ अपमान, बेइज़्ज़ती। २ अपराध, जुर्म, जिस बातसे नुक़सान् पहुंचे।

असत्कृत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अनादृत, आदर न पाये हुआ। २ बुरे तौरसे किया हुआ, जो अच्छी तरह किया न गया हो।

असत्कृत्य (सं० त्रि०) पापकर्मा, बुरा काम करनेवाला।

असत्ख्याति (सं० स्त्री०) असतः सत्वशून्यस्य अनिर्वचनीयस्य ख्यातिर्ज्ञानम्, ६-तत्। अनिर्वचनीयरजत प्रपञ्चका ज्ञान। जैसे सीपमें रजतज्ञान अनिर्वचनीय रूपसे उत्पन्न होता है। एवं परमब्रह्ममें जैसे जगत् अनिर्वचनीय रूपसे प्रतीयमान है। यह वेदान्तियोंका मत है। 'यह रजत है' ऐसा ज्ञान सभी लोगोंमें प्रसिद्ध और सभी लोगोंको स्वीकार्य है। अथच वह प्रकृत ज्ञान नहीं है। यह चार तरहका होता है—१ अख्याति, २ अन्यथाख्याति, ३ आत्मख्याति, ४ असत्ख्याति।

असत्ता (सं० स्त्री०) असतो भावः भावे तल्-टाप्। १ अविद्यमानता, न रहनेकी हालत, अनस्तित्व, नेस्ती। २ असाधुत्व, बदमाशी। ३ अव्यक्तता, नारास्ती, साफ़ न मालूम पड़नेकी हालत।

असत्त्व (सं० क्ली०) सतो भावः भावे त्व नञ्-तत्। १ अविद्यमानत्व, नेस्ती। २ अव्यक्तत्व, नारास्ती। ३ असाधुत्व, बदमाशी। सत्त्वं द्रव्यं नञ्-तत्। ४ द्रव्य न होनेवाला, जो द्रव्य न हो, क्रिया। सत्त्वं प्रकाशादि सम्पादकं प्रकृतेर्गुणभेदः ततो नञ्-तत्। ५ रजोगुण। ६ तमोगुण। सत्त्वं जन्तुमात्रं नञ्-तत्। ७ जो जन्तु न हो। (त्रि०) नास्ति सत्त्वं जन्तुर्यत्र, नञ्-बहुव्री०। ८ जन्तुशून्य, जिस जगह जीव न हो। सत्त्वं सात्विकः गुणभेदः, नञ्-बहुव्री०। ९ सात्विक गुणरहित, जिसमें सात्विक गुण न हो। १० तामसिक गुणादियुक्त, क्रोधी, तामसी। सत्त्वमर्थक्रियाकारित्वम्, नञ्-तत्। ११ प्रयोजनके अनुपयुक्त, कार्यके अयोग्य, जो कामके लायक़ न हो, बेकाम। १२ निर्बल, कमज़ोर।

असत्पथ (सं० पु०) सन् पन्थाः ऋक्पूरब्धूःपथामानक्षे। पा ५।४।७४। इति अः सत्पथः ततो नञ्-तत्। १ शास्त्रादि निषिद्ध कार्यादि, जिस कार्यके लिये शास्त्रमें निषेध रहे। २ मन्दपथ, ख़राब राह, कुपथ, कापथ, व्यध्व, दुरध्व, अपथ, कदध्वा, विपथ, कुत्सितवर्त्म।

असत्परिग्रह (सं० पु०) परिगृह्यते, परिग्रह—(ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च। पा ३।३।५८) इति कर्मणि अप् परिग्रहः परिजनादिः, ततो नञ्-तत्। "परिग्रहः परिजने पत्नी स्वीकारमूलयोः।" (विश्व) १ असत् परिवार, दुष्टपत्नी, बुरे बाल-बच्चे। २ मन्दपक्षका अवलम्बन, बुरी राहका पकड़ना। ३ अनुचितमूल्य, ग़ैरवाजिब क़ीमत। (त्रि०) नास्ति सत् परिग्रहो यस्य, नञ्-बहुव्री०। ४ सत्परिवारशून्य, जिसके अच्छा परिवार न रहे। ५ सत्पत्नीरहित, जिसके भली औरत न रहे। ६ असत्पक्षाश्रित, जो बुरी राहपर हो। ७ अन्याय मूल्ययुक्त, जो ग़ैरवाजिब दाम ले चुका हो।

असत्पुत्र (सं० पु०) १ निःसन्तान पुरुष, जिसके औलाद न रहे। २ दुष्ट पुत्र, बदमाश लड़का।

असत्प्रतिग्रह (सं० पु०) असतः निषिद्धस्य तिलादेः असद्भ्योशूद्रादिभ्यो वा प्रतिग्रहः। १ निषिद्ध द्रव्य ग्रहण, न छूने लायक चीज लेना, शास्त्रमें लेनेको मना किया हुआ द्रव्य लेना। जैसे—तिल, उभयमुखी गौ, प्रेतान्न, चण्डालादिका अन्न। २ असत्पात्रसे ब्राह्मण द्वारा दान ग्रहण, जो दान ब्राह्मण बुरे लोगोंसे लेता हो।

असत्प्रतिग्राही (सं० पु०) असत्पात्रसे दान लेनेवाला, जो बुरे लोगोंसे बख्शिश पाता हो।

असत्य (सं० क्लो०) न सत्यं विरोधे नञ्-तत्। १ मिथ्या, झूठ, जो सत्य न हो। २ मिथ्यावाक्यादि, झूठ बात। (त्रि०) ३ मिथ्यावादी, झूठ बोलनेवाला। सीपमें रजत ज्ञान प्रभृति मिथ्याज्ञान है। त्रैकालिक बाधशून्य ही सत्य उससे खाली असत्य है। (स्त्री०) टाप्, असत्या—संयु प्रजापतिकी एक भार्या।

असत्यता (सं० स्त्री०) मिथ्यात्व, नारास्ती, झूठापन।

असत्यवाद (सं० पु०) मिथ्यावाद, झठ बात।

असत्यवादिन् (सं० त्रि०) झूठा, झूठ झाड़नेवाला।

असत्यवादी, असत्यवादिन् देखो।

असत्यसन्ध (सं० त्रि०) असत्ये मिथ्याभूते सन्धा अभिसन्धानं यस्य, गोस्त्रियो रुपसर्जनस्य इति ह्रस्वः, बहुव्री०। १ मिथ्या अभिसन्धियुक्त, झूठी प्रतिज्ञा करनेवाला। २ विश्वासघातक, दग़ाबाज़। ३ नीच, कमीना। ४ अन्यरूपमें स्थित, बनावटी। ५ आत्माके अन्यरूप अभिमानसे युक्त, जो रूहको कुछ और समझता हो। जैसे—असत्यदेहादिमें आत्माभिमान असत्यसन्धा होता, तद्विशिष्ट हो असत्यसन्ध कहा जाता है। छान्दोग्य उपनिषद्में यही आत्माभिमान जिस अनर्थका हेतु होता, वह दृष्टान्तके सहित प्रकाशित किया गया है।

असत्संसर्ग (सं० पु०) दुष्टसङ्ग, बुरी सोहबत।

असत्सङ्ग (सं० त्रि०) कुसङ्गमें पड़ा हुआ, जो बुरेसे लगा हो।

असथन (हिं० पु०) जायफल। यह शब्द डिङ्गल भाषासे लिया गया है।

असद—(मिर्ज़ा असद-उल्ला ख़ां) एक विख्यात मुसलमान कवि। इनका जन्म आगरेमें हुआ था। दिल्लीके शेष बादशाह बहादुर शाहने इन्हें नवाबको उपाधि दी। यह फ़ारसी और उर्दू भाषामें बहुत कविता कर गये हैं। मृत्युसे कुछ पहले इन्होंने भारतवर्षके मोगल बादशाहोंका इतिहास लिखना आरम्भ किया था। सन् १८५२ ई०को ६० वर्षकी उम्रमें इनकी मृत्यु हुई। इनके 'इनषा' काव्यका मुसलमानोंमें बहुत आदर होता है। इनका साधारण नाम मिर्ज़ा नौशा था।

असद ख़ां—तुर्कीवंशोद्भव एक सम्भ्रान्त व्यक्ति। इनके पिता ईरानराज शाह अब्बासके अत्याचारसे उनका जन्मस्थान छोड़कर भारतवर्ष चले आये थे। यहां नरजहांकी एक कुटुम्ब-कन्याके साथ उनका विवाह और उसीके गर्भसे असदका जन्म हुआ। सम्राट् जहांगीरने असदके पिताको ज़ुलफ़िक़ार ख़ांकी उपाधि प्रदान की। लड़कपनमें असदको लोग इब्राहीम कहकर पुकारते और शाहजहां बहुत प्यार करते थे। उन्होंने आसफ़ ख़ां नामक वज़ीरकी लड़कीसे व्याह इन्ह दूसरे बख़्शीके पदपर नियुक्त कर दिया। १६७१ ई०को असद ख़ां चारहज़ारी मनसबदार हो गये और कुछ ही दिनोंके बाद सातहज़ारी वज़ीरका महासम्मान लाभ किया। बहादुरशाहके राजत्वकालमें वकील मुतलकका पद इन्हें मिला। उसी समय इनके पुत्रने भी अमीर-उल्-उमरा ज़ुलफ़िक़ार ख़ांकी उपाधि पाई। फ़र्रुख़सियारके बादशाह होनेपर असद पदच्युत एवं अपमानित हुए। इनका लड़का भी मारा गया था। उसी समयसे इन्होंने दक्षिनेकी सामाना अवस्थामें अपने दिन बिताये। १७३१ ई०को ८० वर्षकी उम्रमें असदकी मृत्यु हुई।

२ दूसरे भी एक असद ख़ांका नाम पाया जाता है। इनका असल नाम ख़ुशरू था। बङ्गालसे जा और विश्वासघात कर इन्होंने मल्लिकार्जुनपर आक्रमण किया और उनके १०४ मन्दिरोंको तोड़ फोड़कर उसी जगह मसजिद बनवा दी। आदिलशाहने इन्हें साम्पगाम और बेलगाम दो स्थान जागीर दिये थे।

असदध्येतृ (सं० पु०) असत् निन्दितं निषिद्धं वा अधीते, असत्-अधि-इङ्-तृच्। निन्दित शास्त्र अध्ययनकर्ता, असदध्ययनशाली, वेदकी निज शाखा छोड़ अन्यशाखा पढ़नेमें श्रम उठानेवाला, जो खराब किताब पढ़ता हो। काण्वशाखाध्ययनकारी व्यक्ति कौथुमी शाखा पढ़नेसे असदध्येता या शाखारण्ड कहाता है।

असदाचार (सं० पु०) न सदाचारः, अभावे नञ्-तत्। १ सुन्दर आचारका अभाव, बदचलनी, बुरी चाल। (त्रि०) नास्ति सदाचारो यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ सदाचारशून्य, बदचलन, जो अच्छी चाल चलता न हो।

असदाचारिन् (सं० त्रि०) सदाचारशून्य, बदचलन, बुरा, खराब। (स्त्री०) असदाचारिणी।

असदि तूसी—एक विख्यात मुसलमान कवि। यह ग़ज़नीके सुलतान महमूदकी सभामें रहते और प्रसिद्ध कवि फ़िरदौसीके गुरु थे। सुलतान महमूदने इन्हें शाहनामा लिखनेके लिये कहा, परन्तु बुढ़ापेके कारण यह लिखनेपर राज़ी न हुए; तब फ़िरदौसीने शाहनामा लिखा और ग़ज़नीसे जानेके समय उसका अवशिष्ट अंश लिखनेके लिये इनसे अनुरोध किया। अरब द्वारा ईरान जयसे लेकर असदिने शेषतक शाहनामा लिख दिया। इसके सिवा इन्होंने फ़ारसीमें और भी कई पुस्तक लिखे थे।

असदृश (सं० त्रि०) न सदृशम्, नञ्-तत्। अयुक्तरूप, अननुरूप, असमान, नाहमवार, बेमिसाल, जो मिलता न हो।

असदृशव्यवहारिन् (सं० त्रि०) अयुक्तरूपसे व्यवहार करनेवाला, जो ठीक तौरसे पेश न आता हो।

असद्ग्रह (सं० पु०) असति अविद्यमाने वस्तुनि आग्रहः, ७-तत्। १ दुष्ट व्याज, बुरी चालाकी। २ चापल्य, मनोलौल्य, तलव्वन मिज़ाजी, छिछोरापन। ६-तत्। ३ मिथ्याज्ञान, झूठी समझ। ४ शुक्तिमें रजतज्ञान, रस्सीको सांप समझना।

असद्ग्रहिन् (सं० त्रि०) दुष्ट व्याज बढ़ानेवाला, जो मरदूद फरेब फैलाता हो।

असद्ग्राह, असद्ग्रह देखो।

असद्दृश् (सं० त्रि०) विकृत चक्षुविशिष्ट, बुरी आंखवाला।

असद्धेतु (सं० पु०) सन् व्यभिचारादि दोषरहितो हेतुः सद्धेतुः, विरोधे नञ्-तत्। न्यायशास्त्रप्रसिद्ध व्यभिचारादि दोषयुक्त हेतु, झूठा सबब, जो सबूत सच्चा न हो। जैसे—धूमवान् वह्निः, वह्निहेतुक धूमविशिष्ट अर्थात् जहां अग्नि वहां धूम भी रहता है। न्यायशास्त्रके मतसे यह असद्धेतु कारण है। क्योंकि तपाये हुये लोहेमें आग रहते भी धुआं देख नहीं पड़ता। न्यायमतसे हेतुदोष पांच प्रकारका होता है। यथा,—१ अनैकान्त, २ विरुद्ध, ३ असिद्ध, ४ कालात्ययोपदिष्ट, ५ छलाभास।

असद्यस् (सं० अव्य०) न उसी दिन, न फौरन्, दूसरे दिन, देरसे।

असद्वाद (सं० पु०) अनुपयुक्त सम्भाषण, ऊटपटांग बातचीत। किसी प्रकारकी सत्ताको स्वीकार न करना असद्वाद कहाता है।

असद्भाव (सं० पु०) सतो विद्यमानस्य भावः अभावे नञ्-तत्। १ अविद्यमान पदार्थमें विद्यमान अभिप्राय, न होनेवाली चीज़को मान लेना। विरोधे नञ्-तत्। २ दुष्ट अभिप्राय, बुरा मतलब। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ दुष्ट अभिप्राययुक्त, जो बुरा मतलब रखता हो। चलित भाषामें अप्रणयको असद्भाव कहते हैं।

असद्वृत्ति (सं० स्त्री०) सती वेदादिरहिता वृत्तिः स्वभावः व्यवहारः वर्तनं विवरणं वा, अभावे नञ्-तत्। १ मन्दस्वभाव, बुरा मिज़ाज। १ सदाचारका अभाव, नेकचलनीको अदममौजूदगी। ३ सद्व्यवहारका अभाव, अच्छीतरह पेश न आनेकी हालत। ४ असज्जीविका, बुरी या झूठी रोज़ी। ५ मिथ्या विवरण, जो बयान् ठीक न हो। विरोधे नञ्-तत्। ६ निषिद्ध आचारादि, मरदूद काम। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ७ असत् स्वभावयुक्त, बदमिज़ाज। ८ मन्द व्यवहारयुक्त, जो बुरे तौरसे पेश आता हो। ९ मन्द वर्तन वा जीविकायुक्त, बदमाश। १० मन्द विवरण-युक्त, बुरे बयानसे भरा।

असद्व्यवहार (सं० पु०) सन् साधुः व्यवहारः, नञ्-तत्। १ मन्द व्यवहार, खराब राह-रस्म। नञ्-बहुव्रो०। २ दुष्ट व्यवहारविशिष्ट, बुरे तौरसे पेश आनेवाला।

असद्व्यवहारिन् (सं० त्रि०) कुमार्गगामी, बुरी राह चलनेवाला।

असन (सं० पु०) अस-क्षेपे ल्यु। १ पीतसाल वृक्ष, असनाका पेड़। असन देखो। यह कटु, उष्ण, सारक तथा तिक्त होता और वात, गलदोष एवं रक्तमण्डलको मिटाता है। (राजनिघण्टु) यह कुष्ठ, वीसर्प, श्वित्र, प्रमेह, गुह्यकृमि, कफ तथा रक्तपित्तको दूर करता और त्वच्य, केश्य एवं रसायन निकलता है। (भावप्रकाश) २ जीवकद्रुम। ३ वकवृक्ष। ४ वीर। भावे ल्युट्। ५ क्षेपण, फेंक-फांक। ६ निशाना, गोली, धड़ाका।

असनपर्णिका, असनपर्णी देखो।

असनपर्णी (सं० स्त्री०) असनस्य पीतशालस्य पर्णमिव पर्णमस्याः, बहुव्रो० गौरादि ङीप्। अपराजिता, गोधी।

असनपुष्प (सं० पु०) षष्टिकधान्य जातिभेद, सठिया धान।

असनपुष्पक, असनपुष्प देखो।

असना (वै० स्त्री०) १ वाण, गोली, जो हथियार फेंककर मारा जाता हो। (हिं०) २ वृक्षविशेष, कोई पेड़। इसका काष्ठ कठोर होता और गृहनिर्माणमें लगता है। पत्र माघ-फाल्गुनमें झड़ता है। असन देखो।

असनादिगण (सं० पु०) गणविशेष, कोई खास दवा। इसमें असन, तिनिश, भूर्ज, श्वेतवाह, प्रकीर्य, खदिर, कदर, भण्डी, शिंशपा, मेषशृङ्गी, चन्दनत्रय, ताल, पलाश, जोङ्गशाक, शाल, क्रमुक, धव, कुलिङ्ग, छागकर्ण और अश्वकर्ण पड़ता है। इसके सेवनसे श्वित्र, कुष्ठ, कृमि, कफ, पाण्डु, प्रमेह और मेदरोग दूर हो जाता है। (वाग्भट)

असनाम (हिं० पु०) स्नान, गुस्ल, नहाना।

असनायी (हिं० स्त्री०) प्रीति, मुहब्बत, लगी।

असनि (सं० त्रि०) अस-अनि। क्षेपक, फेंकनेवाला।

कृश्यादि० चतुरर्थ्यां क। असनिक, क्षेपकके निकटस्थ देशादि।

असनी—युक्तप्रदेशके हरदोयी ज़िलेका गांव। यह स्थान बहुत पुराना और गङ्गाके तटपर बसता है। इसमें उच्च कोटिके अनेक कान्यकुब्ज ब्राह्मण प्रतिष्ठित हैं।

असन्तति (सं० स्त्री०) सन्ततिर्धारा, अभावे नञ्-तत्। १ धाराका अभाव, औलादकी अदममौजूदगी। (त्रि०) सन्ततिर्वंशस्य, नञ्-बहुव्रो०। २ धारारहित, बे-औलाद, जिसके बाल-बच्चा न रहे।

असन्तान (सं० पु०) सन्तानः देवतरुः, नञ्-तत्। १ देवतरुभिन्न, देवदारको छोड़ दूसरी चीज़। सन्तानो विस्तारस्य अभावे नञ्-तत्। २ विस्तारका अभाव, तङ्गी। (त्रि०) नास्ति सन्तानो यत्र, नञ्-बहुव्रो०। ३ देवतरुरहित, देवदारसे खाली। ४ विस्तारशून्य, तङ्ग। ५ वंशरहित, लावलद, बे-औलाद, जिसके बाल-बच्चा न रहे।

असन्ताप (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ सन्तापका अभाव, तकलीफ़की अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्रो०। २ सन्तापरहित, तकलीफ न पानेवाला। ३ सन्ताप न पहुंचानेवाला, जो तकलीफ़ देता न हो।

असन्तुष्ट (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ सन्तोषशून्य, नाखुश, नाराज़। २ अधिक धन पाते भी धनाभिलाष रखनेवाला, जो ज़्यादा दौलत हासिल कर भी उसके लिये मरता हो।

असन्तुष्टि (सं० स्त्री०) १ सन्तोषका अभाव, नाखुशी नाराज़ी। २ अतृप्ति, आसूदा न रहनेकी हालत। ३ धन रहते भी धनके लिये मरना, लालच।

असन्तोष (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ सन्तोषका अभाव, क़नायतकी अदममौजूदगी। २ तृप्तिका अभाव, अधैर्य, बेक़रारी। ३ अप्रसन्नता, नाखुशी। (त्रि०) नञ्-बहुव्रो०। ४ सन्तोषशून्य, जिसे क़नायत न रहे। ५ अधिक धनाभिलाषी, ज़्यादा दौलत चाहनेवाला।

असन्तोषी (सं० त्रि०) सन्तोष न रखनेवाला, जिसे क़नायत न रहे।

***असन्दिग्ध** (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ सन्देहसे अविषय, जिस विषयमें कोई सन्देह न रहे। २ सन्देहशून्य,

शकसे खाली। ३ स्पष्ट, साफ़। ४ प्रकट, ज़ाहिर। ५ विश्वासी, एतबारी। (अव्य०) निःसन्देह, बेशक।

असन्दित (वै० त्रि०) सम-दो अवखण्डने कर्मणि-क्त (द्यतिस्यति इत्यादि। पा ७।४।४०) इति इत्वं, नञ्-तत्। १ बन्धनशून्य, जो बंधा न हो। २ अनिरुद्ध, जो रुका न हो। "पतत्रामसन्दितः" (ऋक् ४।४।२) 'असन्दितः परैरनिबद्धः।' (सायण)

असन्दिन् (वै० त्रि०) सन्दा बन्धनमस्त्यस्य, इनि, नञ्-तत्। बन्धनशून्य, जो बंधा न हो। "वर्हिसस्याव-सन्दिनं।" (ऋक् ८।१०२।१४।)

असन्दिष्ट (सं० त्रि०) समाचार न पाये हुआ, बेख़बर, जिसको हाल न मिला हो।

असन्धान (सं० स्त्री०) वियोग, विश्लेष, विभेद, फ़र्क़, अलाहदगी, मुफ़ारक़त, बिछा।

असन्धि (सं० पु०) सन्धिका अभाव, पैवस्तगीकी अदममौजूदगी, सटासटी, गमचा।

असन्धित (सं० त्रि०) बन्धनशून्य, स्वतन्त्र, आज़ाद, खुला हुआ।

असन्धेय (सं० त्रि०) सन्धि करनेके अयोग्य, जो सुलह करनेके क़ाबिल न हो।

असन्न (वै० त्रि०) व्याकुल, बेचैन, जिसे आराम न मिले।

असन्नद्ध (सं० त्रि०) सन्नद्धः स्वकार्ये क्षमः, नञ्-तत्। १ अतत्पर, जो तैयार न हो। २ दृप्त, गर्वित, अहङ्कारी, घमण्डी, जो अपनेको बहुत लगाता हो। ३ पण्डिताभिमानी, जो यथार्थ पण्डित न होते भी मन ही मन अपनेको पण्डित समझता हो। ४ निरस्त्र, बेहथियार। ५ उत्पन्न, पैदा।

असन्निकर्ष (सं० पु०) सन्निकर्षका अभाव, पृथक्त्व, दूरता, दूरी, फ़ासिला।

असन्निकृष्ट (सं० त्रि०) १ अनुभवमें न आया हुआ, नामालम, जो ज़ाहिर न हो। २ दूरस्थ, जो नज़दीक न हो।

असन्निहित (सं० त्रि०) दूरस्थ, जो पास न हो।

असन्न्यस्त (सं० त्रि०) सन्न्यास ग्रहण न किये हुआ, जो दुनियाको तर्क कर न चुका हो।

असन्मान (सं० पु०) अपमान, बे-इज़्ज़ती, बे-क़दरी, गुस्ताखी, शोखी, ढिठायी।

असपत्न (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। १ शत्रु न होनेवाला, जो दुश्मन् न हो। २ मित्र, दोस्त। नञ्-बहुव्री०। ३ शत्रुशून्य, दुश्मन्से खाली। ४ आक्रमण किया न गया, जो हमलेसे बचा हो। (क्ली०) ५ शान्ति, सुलह, जिस हालतमें झगड़े न पड़ें।

असपिण्ड (सं० पु०-स्त्री०) साक्षात् भोक्तृत्वेन दातृत्वेन समानः पिण्डः देहारम्भकावयवभेदश्च येषां वा ते सपिण्डाः, नञ्-तत्। सप्तम पुरुष पर्यन्त पुरुष और स्त्री।

असबन्धु (वै० त्रि०) असम्बन्धीय, रिश्ता न रखने-वाला।

असबर्ग (फ़ा० पु०) खोरासान मुल्ककी एक बड़ी घास। इसमें पीत वा स्वर्णाभ पुष्प आते हैं। पञ्जाबी इसके शुष्क पुष्प अफ़ग़ानोंसे खरीद रेशमके रङ्गमें छोड़ते हैं।

असबाब (अ० पु०) द्रव्य, चीज़, सामान, लवाज़िमा, अटाला।

असभयी (हिं० स्त्री०) असभ्यता, नाशायस्तगी।

असभ्य (सं० त्रि०) सभायां साधुः, साधु-य नञ्-तत्। सभाया यः। पा ४।४।१०५। सभाके अनुपयुक्त, जो महफ़िलके क़ाबिल न हो। २ असामाजिक, बैठकसे ताल्लुक़ न रखनेवाला। ३ खल, दुष्ट, अशिष्ट, गंवार, उजड्ड, नाशायस्ता।

असभ्यता (सं० स्त्री०) सभ्यताका अभाव, असामा-जिकता, खलता, नाशायस्तगी, बेहूदगी।

असम (सं० त्रि०) नास्ति समो यस्य। १ अतुल्य, बेमिसाल, अपनी बराबरी न रखनेवाला। २ असदृश, नाहमवार, जो बराबर न हो। समः युग्मसङ्ख्यान्वितः तद्भिन्नम्। ३ विषम, ताक़, बेजोड़। मेषादि द्वादश-राशिके मध्य मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनुः और कुम्भ विषम है। (पु०) ४ बुद्धविशेष। ५ काव्यालङ्कार विशेष। इसमें उपमानकी अप्राप्ति देखायी जाती है।

असमक्ष (सं० क्ली०) १ अप्रत्यक्ष, ग़ैबत, जिस हालतमें देख न सकें। २ अनुमित्यादि ज्ञान, क़यास, फ़र्ज़। (त्रि०) [illegible] ४ अप्रत्यक्षका विषयीभूत, ग़ैरहाज़िर, [illegible]।

असमग्र (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। असम्पूर्ण, नातमाम, जो पूरा न हो।

असमञ्ज, असमञ्जस देखो।

असमञ्जस—इक्ष्वाकुवंशके सगर राजाका ज्येष्ठपुत्र। इनकी माताका केशिनी और पुत्रका नाम अंशुमान् रहा। यह बाल्यकालमें अतिशय दुष्ट थे। पुरवासियोंको सदा पीड़ित रखनेपर सगर राजाने इन्हें नगरसे निकाल दिया था।

असमञ्जस (सं॰ पु॰) समञ्जसं युक्तियुक्तम्, नञ्-तत्। १ असङ्गत वा अनुपयुक्त विषय, खैंचतान, सकुच, सोच-विचार। (त्रि॰) २ असदृश, अतुल्य, ग़ैरमुशाबेह, नामुवाफ़िक़, जो मिलता न हो। (अव्य॰) ३ असङ्गत भावमें, नामुवाफ़िक़ तौरपर।

असमत (अ॰ स्त्री॰) सतीत्व, पाकदामानी।

असमद (सं॰ स्त्री॰) सन्धि, सम्मेलन, सुलह, मेल, लड़ाई न रहनेकी हालत।

असमद (सं॰ त्रि॰) सह मदेन गर्वेण वर्तते समदः स नास्ति यस्य यत्र वा। १ गर्वरहित, फ़खर न करनेवाला। २ कलहहीन, मिलनसार। ३ विरोधशून्य, दुश्मनी न रखनेवाला।

असमन (सं॰ त्रि॰) न समं सह नीयते भोजनादौ; सम-नी बाहु॰ कर्मणि ड, नञ्-तत्। १ विभिन्नवर्ण, ग़ैरज़ात, जो साथ बैठकर खा न सकता हो। २ अतुल्य, नामुवाफ़िक़। ३ विभिन्न दिक् गमनशाली, इधर-उधर भटकनेवाला।

असमनेत्र (सं॰ पु॰) असमानि अयुग्मानि नेत्राण्यस्य। १ त्रिनेत्र शिव। असमलोचनादि शब्द भी इस अर्थमें आ सकता है। (क्ली॰) असमञ्च तत् नेत्रञ्चेति, कर्मधा॰। २ कपालका तृतीय नेत्र, मत्थेमें पोशीदा रहनेवाली तीसरी आंख। (त्रि॰) ३ सम नेत्र न रखनेवाला, जिसके जुफ़्त चश्म न रहे।

असमय (सं॰ पु॰) अप्रशस्तो नञ्-तत्। १ अप्रशस्तकाल, नादुरुस्त वक्त। २ दुष्टकाल, बुरा वक्त। ३ अनुपयुक्तता, नामाकूलियत, बे-अन्दाजगी।

असमरथ (वै॰ त्रि॰) असदृश रथ रखनेवाला, जिसके लाजवाब गाड़ी रहे।

असमर्थ (सं॰ त्रि॰) समर्थं शक्तम्, नञ्-तत्। १ अशक्त, कमज़ोर। २ दुर्बल, लाग़र, जो मोटा न हो। ३ कार्यमें अक्षम, काम कर न सकनेवाला। समर्थः सङ्गतार्थः। ४ असङ्गतार्थ, वाजिब मानी न रखनेवाला। ५ अयोग्य, असम्पूर्ण, नाक़ाबिल, नातमाम, जो लायक़ या पूरा न हो।

असमर्थसमास (सं॰ पु॰) कर्मधा॰। जिसके साथ जिसका अन्वय लग सके, उसे छोड़ दूसरे पदसे समासका होना। जैसे—श्राद्धं न भुङ्क्ते। यहां भुज धातुके साथ नञ्का अन्वय होना आवश्यक है; किन्तु समास करनेसे अश्राद्धभोजी रूप बनता, जिसमें नञ्का अन्वय श्राद्धके साथ लगता है।

असमर्पण (सं॰ क्ली॰) अमोचण, अवितरण, अदमसुपुर्दगी, नाहवालगी, दूसरेको किसी चीज़का न सौंपना।

असमर्पित (सं॰ त्रि॰) वितरण न किया हुआ, जो सौंपा न गया हो।

असमबाण (सं॰ पु॰) असमा अयुग्मा (पञ्च) वाणा यस्य, बहुव्री॰। कन्दर्प, पञ्चशर, कामदेव।

असमवायिकारण (सं॰ क्ली॰) समवेति सम्-अव-इण्-णिनि, नञ्-तत्, असमवायि च यत् कारणञ्चेति कर्मधा॰। आकस्मिक हेतु, नागहानी सबब। न्यायमतसे द्रव्य समवायिकारण ठहरता, सिवा उसके द्रव्यस्थित गुणादि असमवायिकारण होता है। जैसे तन्तु वस्त्रका समवायी और उसका संयोग असमवायी कारण है। वैशेषिकमें कार्यसे नित्यसम्बन्ध न रखनेवालेको असमवायी-कारण कहते हैं। जैसे हवाके झोंकेसे फलका गिरना। ऐसे स्थलमें फल हवाके झोंकेसे ही नहीं, पत्थर मारनेसे भी गिर सकता है।

असमवायित्व (सं॰ क्ली॰) अनिरूढ़ वस्तुकी स्थिति, ग़ैर वातिनी चीज़की हालत।

असमवायिन् (सं॰ पु॰) समवेति, सम्-अव-इण्-णिनि, ततो नञ्-तत्। १ असम्बन्ध, बेसिलसिला। २ अमिलित जो मिला न हो। ३ न्यायोक्त समवाय सम्बन्धशून्य, जिसमें मन्तिक़के वातिनी ताल्लुक़ न रहे।

असमवृत्त (सं० क्ली०) न समानि भिन्नलक्षणकत्वात् अतुल्यानि पदानि यत्र तदसमं तथोक्तञ्च तत् वृत्तञ्चेति, कर्मधा०। छन्दःशास्त्रोक्त विषम वृत्त, जिस वृत्तके पूर्वापर पादमें समान अक्षर न रहें।

असमवेत (सं० त्रि०) असंयुक्त, असम्बद्ध, पृथक्, अलाहदा, जुदा, अलग, जो इकट्ठा न हो।

असमवेतरूप (सं० अव्य०) असङ्गत, अनन्वय, बेसरोपा, बेठौरठिकाने।

असमशर, असमबाण देखो।

असमष्ट (सं० त्रि०) सम्-अश-क्त कलोपः, नञ्-तत्। अव्याप्त, जो मामूर या समाया न हो।

असमष्टकाव्य (वै० त्रि०) अप्राप्तव्य प्रज्ञाविशिष्ट, जो हासिल न होने लायक होशियारी रखता हो।

असमसायक, असमबाण देखो।

असमस्त (सं० त्रि०) सम्-अस्-क्त, नञ्-तत्। १ असंयुक्त, पृथक्, भिन्न, अलग, जुदा, जो मिला न हो। २ एकत्र किया न हुआ, जो मिलाया न गया हो। ३ असम्पूर्ण, अधूरा, नातमाम, जो पूरा न हो। ४ व्याकरणोक्त समासशून्य। ५ विभक्त्यादि कार्ययुक्त।

असमाति (वै० त्रि०) समं साम्यमतति, अत-इन्, नञ्-तत्। अतुल्य, बेमिसाल, जिसके बराबर कुछ न रहे।

असमान (सं० त्रि०) १ अतुल्य, नामुवाफ़िक़, जो बराबर न हो। २ विजातीय, ग़ैरज़ात, जो स्वजातीय या अपनी ज़ातका न हो।

असमानकारण (सं० त्रि०) विभिन्न हेतुयुक्त, जो वही सबब न रखता हो।

असमानयानकर्मन् (सं० पु०) न समानं तुल्यकालिकं यानकर्म गतिक्रिया यत्र। सन्धिविशेष, आगे-पीछे पहुंचनेकी बात। तुम आगे जावो, हम पीछे आते हैं—ऐसा नियम करके पूर्वापर गमनेच्छुक दो व्यक्ति जो गमन करें, उस गमनकर्मरूप सन्धिविशेषका यह नाम पड़ा है।

असमाप (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ असमाप्ति, नातमामी, अधूरापन। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ समाप्तिशून्य, नातमाम, अधूरा।

असमापित, असमाप्त देखो।

असमाप्त (सं० त्रि०) नञ्-तत्। असम्पूर्ण, नातमाम, अधूरा, जो पूरा पड़ा न हो। २ सम्यक् रूपसे अप्राप्त, जो अच्छीतरहसे मिला न हो।

असमाप्ति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ समाप्तिका अभाव, नातमामी, अधूरापन। २ सम्यक्‌रूप अप्राप्ति, जो प्राप्ति अच्छीतरहसे न हो। ३ समाप्तिशून्य, जो पूरा न हो।

असमावर्तक, असमावृत्त देखो।

असमावृत्त (सं० पु०) नञ्-तत्। गुरुगृहमें रहनेवाला ब्रह्मचारी, पूर्वसमय उपनयनके बाद ब्रह्मचर्य अवलम्बन कर गुरुके मकान पर वेद, वेदान्त, वेदाङ्ग प्रभृति शास्त्र पढ़ना पड़ता था। पीछे क्षतविद्य हो गृहस्थ धर्म आश्रय करनेके लिये जो गुरुकी अनुमति लेकर अपने घर आता, उसीका नाम समावृत्त था। फिर जिसका वह समय उपस्थित न होता, अथवा जो यावज्जीवन गुरुके घर ही पर रहता, वह असमावृत्त कहता था। स्वार्थे कन्। असमावृत्तक।

असमाहार (सं० पु०) समाहारो मेलनं संघातः सम्यगाहरणञ्च, अभावे नञ्-तत्। १ मेलनका अभाव, फ़र्क़, अलाहदगी। २ संघातका अभाव, निर्द्वन्दता, सन्नाटा। ३ आहरणका अभाव, फिर हाथ न आनेकी बात। (त्रि०) मिलनादिशून्य, अलाहदा, जो लगा न हो।

असमाहार्य (सं० त्रि०) पुनरलभ्य, नाक़ाबिल उसूल, डूबा हुआ।

असमाहित (सं० त्रि०) नञ्-तत्। समाधिशून्य, चित्तकी एकाग्रतासे रहित, योगशून्य, असन्निवेशित, जो रचित न हो।

असमीक्ष्य (सं० अव्य०) एकायक, बेदेखेभाले, अन्वेषणसे।

असमीक्ष्यकारिन् (सं० त्रि०) समीक्ष्य विविच्य न करोति, असमीक्ष्य-कृ-णिनि। विना विवेचना किये कार्य करनेवाला, जो बेसोचे काम करता हो।

असमीचीन (सं० त्रि०) अयुक्त, अनुचित, ग़ैरवाजिब, ग़लत।

असमूचा (हिं॰ वि॰) १ असम्पूर्ण, अधूरा। २ किञ्चित्, थोड़ा, कुछ।

असमृद्ध (सं॰ त्रि॰) १ अलक्ष्मीवत्, नाकामयाब, जो हराभरा न हो। २ हताश, दिलगीर, जो हार बैठा हो।

असमृद्धि (सं॰ स्त्री॰) सम् सम्यक् ऋद्धिः समृद्धिः नञ्-तत्। १ समृद्धिका अभाव, अदम-इक्बालमन्दी, बढ़तीका न होना। (त्रि॰) नञ्-बहुव्री॰। २ समृद्धि-शून्य, नाकामयाब, जो हराभरा न हो।

असम्पत्ति (सं॰ स्त्री॰) सदृशात्मलाभः लक्ष्मीर्वा सम्पत्तिः नञ्-तत्। १ सदृश आत्माका अभाव, नाका-मयाबी। २ धनका अभाव, बदबख्ती। (त्रि॰) नञ्-बहुव्री॰। ३ सम्पत्तिशून्य, बदबख्त, जिसके पास दौलत न रहे।

असम्पन्न (सं॰ त्रि॰) सम्पन्नः सम्पदुयुक्तः अनुरूपात्म-स्वरूप लाभस्य ततो नञ्-तत्। सम्पत्तिशून्य, जिसके पास रुपया न रहे।

असम्पर्क (सं॰ पु॰) अभावे नञ्-तत्। १ सम्बन्धका अभाव, मुफारकत, अलाहदगी। (त्रि॰) नञ्-बहुव्री॰। २ सम्बन्धशून्य, अलाहदा, जुदा।

असम्पर्कीय (सं॰ त्रि॰) सम्बन्धरहित, जो ताल्लुक् रखता न हो।

असम्पूर्ण (सं॰ त्रि॰) नञ्-तत्। अनिष्पन्न, साव-शेष, नातमाम, अधूरा।

असम्पृक्त (सं॰ त्रि॰) असम्बन्ध, बेसिलसिला, जो लगा न हो। २ असंयुक्त, अलाहदा, जो मिला न हो।

असम्प्रज्ञात (सं॰ त्रि॰) न सम्यक् ज्ञातः ज्ञातव्यादि-भेदो यत्र, नञ्-बहुव्री॰। भली भांति न समझा हुआ, जिसमें कुछ भी समझ न सकें। पातञ्जलोक्त निर्वि-कल्प समाधि दो प्रकारका होता है,—सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात। जिस समाधिमें ज्ञेय, ज्ञान एवं ज्ञाताका भेदज्ञान रहता, वह सम्प्रज्ञात (सविकल्प), और जिसमें यह सब मिट जाता, वह असम्प्रज्ञात (निर्विकल्प) समाधि कहाता है।

असम्प्रति (सं॰ अव्य॰) तिष्ठद्गु प्र॰ सम्य॰। तिष्ठद्गु प्रभृतीनि च। पा २।१।१८। १ अयोग्यकाल, बुरे वक्त। २ अनुपस्थितकाल,बेवक्त। ३ विपरीतकाल,दूसरे वक्त, बेमौके।

असम्प्राप्य (सं॰ अव्य॰) विना प्राप्ति, बेपहुंच, बेपाये।

असम्बद्ध (सं॰ क्ली॰) सम्बन्धं परस्परमन्वितं न भवति सम्-बन्ध-क्त, नञ्-तत्। १ अर्थका अबोधक अनन्वितार्थ वाक्य। (त्रि॰) २ सम्बन्धशून्य, बेसिलसिला, जो मिला न हो। ३ अयथार्थ, गैरमुनासिब। ४ निरर्थक बोलनेवाला, जो फिजूल बक रहा हो।

असम्बद्धप्रलाप (सं॰ पु॰) कर्मधा॰। असङ्गत वाक्य, अप्रस्तुत वाक्य, निष्प्रयोजन कथन, बेहूदागोयी, लन्त-रानी, बक-बक। यह स्मृतिशास्त्रोक्त दश प्रकारके पापमें पापविशेष होता है।

असम्बन्ध (सं॰ पु॰) अभावे नञ्-तत्। १ सम्बन्ध-का अभाव, अलाहदगी। २ पदके परस्पर अन्वयका अभाव, जुमलोंकी मुफारकत। (त्रि॰) ३ सम्बन्ध-शून्य, बेसिलसिला।

असम्बाध (सं॰ त्रि॰) न सम्यग् बाधा परस्परं व्यथा प्रतिबन्धो वा यत्र। परस्पर सङ्घर्षरूप पीड़ा-रहित, वसीय, जो तङ्ग न हो। २ विरल, पृथक्, अलग, जो घना न हो। ३ बाधारहित, जिसे कोई तकलीफ न रहे। ४ असंवृत, खुला। (वै॰ क्ली॰) ५ असंवृतस्थान, कुशादा जगह।

असम्बाधा (सं॰ स्त्री॰) अभावे नञ्-तत्। १ सम्यक् बाधाका अभाव, किसीतरहकी तकलीफका न रहना, दिक्कतकी अदममौजूदगी। २ चौदह अक्षरके पादसे युक्त वर्णवृत्तविशेष। इसका लक्षण यों लिखा है—जिस वृत्तमें क्रमसे मगण, तगण, नगण, सगण और दो गुरु रहता एवं पांच और नव अक्षरपर यति पड़ता, उसका नाम असम्बाधा है। (वृत्तरत्नाकर)

असम्भव (सं॰ पु॰) अभावे नञ्-तत्। १ सम्भवका अभाव, अदमहस्ती, न होनेकी बात। २ न्यायोक्त लक्ष्यमात्रमें लक्षणकी अप्राप्ति। ३ काव्यालङ्कारविशेष। इसमें असम्भव विषयका होना प्रकट करते हैं। (त्रि॰) न सम्भवति, अच् नञ्-तत्। ४ असङ्गत, विरुद्ध, खिलाफ, नामुमकिन। ५ असत्, अविद्यमान, नेस्त-नाबूद, जो कहीं न हो।

असम्भव्य (सं० त्रि०) भवत्यसौ भव्यमनेनेति वा; सम्-भू कर्तरि निपातनात् वा यत् गुणः यकारस्य अज्वद्भावो अव्-च, नञ्-तत्। १ सम्भवशून्य, बेक़याम, जो गुज़र न सकता हो। (क्ली०) भावे यत्। २ असम्भवमात्र, नामुमकिन् बात। (वै० अव्य०) ३ असम्भव रीतिसे, नामुमकिन तौरपर।

असम्भावना (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। सम्भावनाका अभाव, अनहोनी, न होनेकी बात। उत्कट कोटिक संशय अर्थात्—यदि इस प्रकार हो—ऐसे तर्क एवं योग्यता प्रकाशकी अत्युक्तिको सम्भावना कहते। सम्भावनाका अभाव ही असम्भावना है

असम्भावनीय (सं० त्रि०) सम् चुरा० भू अनीयर्, नञ्-तत्। सम्भावनाशून्य, असङ्गत, नामुमकिन, ऊटपटांग।

असम्भावित (सं० त्रि०) सम्भव न समझा हुआ, जो मुमकिन खयाल किया न गया हो।

असम्भाव्य (सं० त्रि०) असम्भावनीय देखो। (अव्य०) असम्भव रीतिसे, नामुमकिन तौरपर।

असम्भाष्य (सं० त्रि०) १ सम्भाषणके अयोग्य, जो बोलने क़ाबिल न हो। २ दुष्ट, जिससे बोल न सकें। (क्ली०) ३ कुत्सित कथन, बुरी बात, जो बात कही जा न सकती हो।

असम्भूत (सं० त्रि०) उत्पत्तिरहित, नापैद, जो पैदा न हो।

असम्भूति (वै० स्त्री०) सम्-भू-क्तिन्, अभावे नञ्-तत्। १ सम्भवका अभाव, अनहोनी, न होनेकी बात। सम्भूतिः कार्योत्पत्तिः सा नास्ति यस्याः। २ अव्याकृत नामक प्रकृतिरूप कारण।

असम्भृत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ अयत्न सिद्ध, बे तदबीर बना हुआ। २ सुन्दररूपसे अपालित, जो अच्छी तरह पाला न गया हो।

असम्भेद (सं० पु०) सम्भेदो मिलनं भेदश्च, अभावे नञ्-तत्। १ मेलनका अभाव, न मिलनेकी हालत। २ भेदका अभाव, फ़र्क़का न पड़ना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ मेलनशून्य, अलाहदा। ४ भेदशून्य, जिसमें फ़र्क़ न रहे।

असम्भोग (सं० पु०) सम्भोगका अभाव, अनियुक्ति, बरतरफ़ी, काममें न लानेकी हालत।

असम्भ्रम (सं० पु०) सम्भ्रमः उत्सुकतया कार्यव्यस्तता सम्यक् भ्रान्तिश्च, अभावे नञ्-तत्। १ स्थिरता, क़याम, टिकाव। २ कार्यकी व्यस्तताका अभाव, फ़ुरसत। ३ भ्रमका अभाव, शककी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ५ सम्भ्रमशून्य, भूलसे खाली, सच्चीदा, ठण्डा। चलती बोलीमें असम्मान वा अनादरको असम्भ्रम कहते हैं।

असम्मत (सं० त्रि०) सम्-मन् क्त, अभावे नञ्-तत्। १ अस्वीकृत, नापसन्द, जो माना न गया हो। २ पृथक्, अलाहदा, मुफ़ारक़, जो मिलता न हो। ३ विरुद्ध, प्रतिद्वन्द्वी, खिलाफ़, उलटा।

असम्मतादायिन् (सं० त्रि०) १ स्वामीकी इच्छाके बिना ही ग्रहण करनेवाला, जो मालिककी बिला मर्ज़ी लेता हो। (पु०) २ तस्कर, चोर।

असम्मति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ सम्मतिका अभाव, इख़्तिलाफ़ राय, मशविरेका न मिलना। २ अस्वीकृति, नाराज़ी, नारज़ामन्दी, अनबन। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ सम्मतिशून्य, मुफ़ारक़, राय न देनेवाला। ४ अस्वीकृत, नाराज़।

असम्मर (हिं० पु०) खड्ग, छुरा।

असम्मान (सं० क्ली०) अपमान, निरादर, बेइज़्ज़ती, तौहीनी।

असम्मित (वै० त्रि०) सम्-मा-क्त, नञ्-तत्। अपरिमित, बेहद, जो नपा न हो।

असम्मुग्ध (सं० त्रि०) सम्-मुह-क्त, नञ्-तत्। १ अज्ञातसन्देह, शक न करनेवाला। २ पाण्डित्यके अभिमानसे रहित, इल्मदारीका फ़ख़र न रखनेवाला, जिसे पढ़ने-लिखनेका घमण्ड न रहे।

असम्मूढ़ (सं० त्रि०) सम्-मुह-क्त, नञ्-तत्। स्थिरनिश्चय, ठीक समझनेवाला, सञ्जीदा, जो भूलता न हो।

असम्मृष्ट (सं० त्रि०) सम्-मृश्-क्त, नञ्-तत्। १ परस्पर सङ्घर्षशून्य, आपसमें न टकरानेवाला। २ बाधारहित, बेरोक, जिसमें झगड़े न लगें। सम्-मृष-क्त,

नञ्-तत्। ३ क्षमाका अविषय, जिसे माफ़ी न मिले। (वै०) ४ शुद्ध न किया हुआ, जो साफ़ न हो।

असम्मोष (सं० पु०) किसी वस्तुका बचने न देना, जिस हालतमें कोयी चीज़ छूटने न पाये, सकल-समेट।

असम्मोह (सं० पु०) सम्-मुह भावे घञ्, विरोधे नञ्-तत्। यथार्थज्ञान, सही समझ। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ भ्रमरहित, जिसमें शक न रहे। ३ स्थिर बुद्धि, सञ्जीदा, जो डांवाडोल न हो।

असम्यक्कारिन् (सं० त्रि०) अकुशल, अपटु, गावदी, बेसलीका, नावाक़िफ़, धामड़। २ दुराचार, भ्रष्ट-चरित्र, बदवज़ा, बदकार, लुच्चा।

असम्यच् (सं० त्रि०) समञ्चति सम्-अञ्च-क्विप्, नञ्-तत्। १ कुरूप, बदसूरत। २ अनुचित, नामुनासिब, ग़ैरवाजिब, जो ठीक न हो। ३ अपूर्ण, नातमाम, अधूरा, जो पूरा न हो। (स्त्री०) ङीप्। असमीची।

असम्यञ्च, असम्यच् देखो।

असयाना (हिं० वि०) १ मूर्ख, बेवकूफ़। २ छद्म-शून्य, सादालौह, जो चालाक न हो।

असर (अ० पु०) १ प्रभाव, गुण, सिफ़त। २ दिवसका चतुर्थ प्रहर, दिनका चौथा पहर।

असरन (हिं०) अशरण देखो।

असरा (हिं० पु०) धानविशेष, किसी क़िस्मका चावल। यह आसामके कछारमें पैदा होता है।

असरार (हिं० क्रि० वि०) अनवरत, सिलसिलेवार, हरदम, हमेशा।

असरु (सं० पु०) म्रियते दुर्गन्धेन म्रायते, मृ-उन्, नञ्-तत्। भूकदम्ब, कुकुरमुत्ता, ककरौंदा।

असर्वज्ञ (सं० त्रि०) प्रत्येक विषय न जाननेवाला, जो सब कुछ जानता न हो।

असर्ववीर (वै० त्रि०) सम्पूर्ण वीरोंको एकत्र न करनेवाला, जो सब बहादुरोंको इकट्ठा न किये हो।

असल (सं० क्ली०) अस्यते क्षिप्यते अनेन, अस-कलच्। १ अस्त्रक्षेपके उपयुक्त मन्त्रविशेष, जो मन्त्र हथियार चलानेमें पढ़ने क़ाबिल हो। २ लोह, लोहा। ३ आयुध, हथियार। (अ० त्रि०) ४ सत्य, सच्चा। ५ श्रेष्ठ, उम्दा, बड़ा। ६ विशुद्ध, ख़ालिस, जो मिलावटी न हो।

असलियत (अ० स्त्री०) तथ्य, सत्य, वास्तविकता, विशुद्धता। २ जड़, मूल, बुनियाद, ठिकाना। ३ मूल-तत्त्व, तत्व, सार, निचोड़।

असली (हिं० वि०) १ असल, मुख्य। २ सत्य, सच्चा। ३ विशुद्ध, ख़ालिस।

असलील (हिं०) अश्लील देखो।

असलोक (हिं०) श्लोक देखो।

असवर्ण (सं० त्रि०) न समानो वर्णो यस्य, नञ्-बहुव्री० समानस्य सादेशः। असजातीय, विभिन्न वर्ण, जो एक जाति या अपनी जातिका न हो। जैसे—ब्राह्मण और क्षत्रियादि। ब्राह्मणादिका क्षत्रिय प्रभृतिकी कन्यासे विवाह असवर्ण कहाता है।

असवस् (सं० पु०) प्रधान वायु वा श्वास। यह शब्द सदा बहुवचनान्त रहता है।

असवार, सवार देखो।

असवारी (हिं०) सवारी देखो।

असश्चत् (वै० त्रि०) सश्चतिर्गतिकर्मा, सश्चतिरस्यते-र्वार्थे वर्तते सश्च-शतृ असश्चत् (निरुक्त) नञ्-तत्। १ परस्पर आश्रित, आपसमें मिला हुआ। २ अगमनशील, जो चलता न हो। ३ सङ्गवर्जित, तनहा, जो साथसे अलग हो। स्त्री० ङीप् असश्चन्ती। "गईऽसश्चन्ती दिवे दिवे।" ऋक् ८।३१।१। "मधु जिह्वा असश्चतः।" ऋक ९।७३—४। "असश्चतः सङ्गवर्जिताः" (सायण)

असश्चतस् (सं० स्त्री०) अनन्त धारा, अक्षय प्रवाह, लाज़वाल चश्मे, हमेशा बहनेवाले दरया। यह शब्द सदा बहुवचनमें ही व्यवहृत होता है।

असश्चता (सं० अव्य०) अक्षय नियमानुसार, लाज़वाल तौरपर।

असश्चिवस् (वै० त्रि०) अक्षय, अनन्त, लाज़वाल, बन्द न होनेवाला, जो कभी सूखता न हो।

असश्चुस् (वै० त्रि०) सश्च-वा उसुन्, नञ्-तत्। अप्रतिबद्ध, जो रुका न हो। (स्त्री०) ङीप् असश्चुषी। "विश्वमन्नसश्चुषी।" ऋक् ९।८६।१८।

अससत् (वै० वि०) सस स्वप्ने शतृ, नञ्-तत्। जागरूक, निजकार्यमें मनोयोगी, जो अपने काममें दिल लगाता हो। (स्त्री०) ङीप्। अससती। रेजन्ते अससन्तो अजरा:। ऋक् १।१४३।३।

असह (सं० त्रि०) न सहते सह-अच् नञ्-तत्। १ सह्यकरनेमें अशक्त, अक्षम, नामुतहम्मिल, जो बरदाश्त न करता हो। (क्ली०) २ वक्षस्थलका मध्यभाग, सीनेका दरमियान।

असहन (सं० पु०) न सहति सह-ल्यु नञ्-तत्। १ शत्रु, वैरी, दुश्मन्। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ क्षमाशून्य, असहिष्णु, नामुतहम्मिल, बरदाश्त न करनेवाला। (क्ली०) भाविलुप्त, अभावे नञ्-तत्। ३ क्षमाका अभाव, बेसब्री, इज्तिराब, जिस हालतमें बरदाश्त न करें।

असहनशील (सं० त्रि०) असहिष्णु, सहन न करनेवाला, चिड़चिड़ा, तुनकमिज़ाज।

असहनशीलता (सं० स्त्री०) असहन, असहिष्णुता, तुनकमिज़ाजी इज़्तिराब, चिड़चिड़ापन।

असहनीय (सं० त्रि०) दु:सह, अक्षन्तव्य, असह्य, शदीद, गैरमुमकिन्-उल-तहम्मुल, जो बरदाश्त न हो।

असहमान (सं० त्रि०) अक्षम, नामुतहम्मिल, बरदाश्त न करनेवाला।

असहाय (सं० त्रि०) नास्ति सहायो यस्य, नञ्-बहुव्री०। सहचरशून्य, नि:सहाय, निरवलम्ब, निराश्रय, अनाथ, बेकस, बेचारा। (स्त्री०) ङीप्। असहायी।

असहायता (सं० स्त्री०) १ सहचरशून्यता, निराश्रयता, बेकसी, लाचारी। २ निर्जनता, विजनता, तनहायी, गोशानशीनी।

असहायत्व (सं० क्ली०) असहायता देखो।

असहायवत्, असहाय देखो।

असहित (सं० त्रि०) नि:सङ्ग, सहचरशून्य, तनहा, जिसके साथ कोयी न रहे।

असहितव्य, असहनीय देखो।

असहिष्णु (सं० त्रि०) न सहिष्णु नञ्-तत्। १ अक्षम, असहनशील, नामुतहम्मिल, जो सह न सकता हो। २ कलहप्रिय, विवादशील, जूदरञ्ज, झगड़ालू, टण्टेबाज़।

असहिष्णुता, असहनशीलता देखो।

असही (हिं० वि०) अक्षम, ईर्षालु, जूदरञ्ज, जो किसीको बढ़ती देख न सकता हो।

असह्य (सं० त्रि०) न सह्यम्। असहनीय देखो।

असह्यपीड (सं० त्रि०) दु:सह दु:ख देनेवाला, जो शदीद दर्द पैदा करता हो।

असा (अ० पु०) सोंटा, डंडा। देखावके लिये यह चांदी या सोनेके पत्तसे मढ़ दिया जाता है। राजाओंकी सवारी या बरात निकलते समय सेवक असा लेकर आगे बढ़ते हैं।

असांच (हिं० वि०) असत्य, झूठ, नारास्त, जो सच्चा न हो।

असाक्षात् (सं० अव्य०) न साक्षात्। परोक्षमें, पीठ पीछे।

असाक्षात्कार (सं० पु०) न साक्षात्कार:, अभावे नञ्-तत्। १ प्रत्यक्षका अभाव, गैबत। विरोधे नञ्-तत्। २ परोक्ष ज्ञान, अदृश्य या इन्द्रियके अगोचर विषयका ज्ञान, पीठ पीछेकी बात, जो काम देखा-सुना न हो। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ प्रत्यक्षका अविषय, प्रत्यक्षशून्य, देखने-सुननेमें न आनेवाला।

असाक्षिक (सं० त्रि०) नास्ति साक्षी साक्षात् द्रष्टा अधिष्ठाता वा यस्य, शेषाद्विभाषेति कप्। साक्षिशून्य, बेगवाह, जो देखा-सुना न हो।

असाक्षिन् (सं० त्रि०) न साक्षि नञ्-तत्। वचन वा दोषादि हेतुसे साक्ष्य कर्ममें अग्राह्य, जो गवाही दे न सकता हो। श्रोत्रियादिको साक्षी करनेमें वाचनिक निषेध है। फिर जिसके साक्ष्यमें मिथ्यावाद प्रभृति दोष ठहरता, वह भी साक्षीमें परिगणित नहीं होता। पिता और भ्राता प्रभृति आत्मीय व्यक्ति साक्षी नहीं हो सकते। स्त्री, बालक, प्रवञ्चक, उन्मत्त, परिवादग्रस्त, रङ्गावतारी (नाटक करनेवाला) पाषण्ड, कूटकारी और विकलेन्द्रिय व्यक्ति साक्षी होनेके अयोग्य हैं। किन्तु संग्रहण, चौर्य और पारुष्य साहसमें निषिद्ध व्यक्ति भी साक्षी बन सकते हैं।

असाची, असाचिन् देखो।

असाच्य (सं० क्लो०) साच्यका अभाव, गवाहीका न होना, अदम शहादत।

असाढ़ (हिं० पु०) आषाढ़मास, सालका चौथा महीना।

असाढ़ा (हिं० पु०) १ बढ़े हुए रेशमका बारीक धागा। २ कच्ची शक्कर, साफ़ न की हुयी चीनी।

असाढ़ी (हिं० वि०) १ आषाढ़का, आषाढ़में होनेवाला। (स्त्री०) २ आषाढ़में बोया जानेवाला अन्न, खरीफ़, जो अनाज असाढ़में बोया जाता हो। ३ गुरु-पूर्णिमा, आषाढ़की पूर्णमासी। इस दिन हिन्दू अपने गुरुका पूजन करते हैं।

असाढू (हिं० पु०) स्थूल शिला, मोटी चटान।

असात्म्य (सं० क्लो०) १ सात्म्य वैपरीत्य, प्रकृति-विरोध, जिस्मी खासियतकी मुखालफ़त। (त्रि०) २ प्रकृत्यसुखावह, नागवार, तन्दुरुस्ती खराब करनेवाला।

असाद (वै० त्रि०) आसनशून्य, नशिस्तगाह न रखनेवाला, जो बैठा न हो।

असाधन (सं० क्लो०) अभावे नञ्-तत्। १ सम्पादनका अभाव, अदमतकमील, सुबूत न पहुंचनेकी हालत। साधनहेतुः नञ्-तत्। २ अकारण, सबबका न होना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ कारणशून्य, बेसबब, जो ज़रिया, सामान या औज़ार रखता न हो।

असाधनीय, असाध्य देखो।

असाधारण (सं० त्रि०) साधारणं सामान्य धर्मयुक्तम्, नञ्-तत्। विशेष, असामान्य, गैरमामूली, जो साधारण न हो। (पु०) २ न्याय मतमें, सपक्ष और विपक्ष दोनोंसे व्यावृत्त हेतु। जैसे वह्निसाधनमें गगनादि हेतु है। यह हेतु पक्ष पर्वतादि एवं पक्ष भिन्न जलादिमें कहीं नहीं रहता, अतएव दोनोंसे व्यावृत्त (निराकृत) है। (क्लो०) ३ प्रकार, भेद, जिन्स, किस्म। (स्त्री०) असाधारणी।

असाधारणानैकान्तिक (सं० पु०) असाधारणं तत् अनैकान्तिकश्चेति कर्मधा०। न्यायशास्त्रोक्त सर्व सपक्ष व्यावृत्त हेत्वाभास विशेष। यथा—'शब्दोनित्यः शब्दत्वात्।' शब्दत्व विशिष्ट होनेसे शब्द नित्य पदार्थ है। शब्दत्व सकल नित्य पदार्थसे व्यावृत्त अथच शब्दमात्रमें स्थित है, इसीसे शब्दत्वका उक्त नाम पड़ा।

असाधित (सं० त्रि०) सम्पादनशून्य, नाकामिल, जो पूरे न पड़ा हो।

असाधु (सं० त्रि०) न साधु नञ्-तत्। असच्चरित, अविनीत, अशिष्ट, दुष्ट, खल, दुर्जन, असंस्कृत, बदमाश, गुस्ताख, बुरा, बिगड़ा हुआ। (स्त्री०) असाध्वी, व्यभिचारिणी पत्नी।

असाधुता (सं० स्त्री०) दुष्टता, अशिष्टता, बदमाशी, गुस्ताखी, खोटायी।

असाधुत्व (सं० क्लो०) असाधुता देखो।

असाधुवृत्ता (सं० स्त्री०) व्यभिचारिणी पत्नी, जो औरत पाक-साफ़ न हो।

असाध्य (सं० त्रि०) सध-णिच्-यत् साध-यत् वा नञ्-तत्। दुष्कर, कठिन, सिद्ध करनेके अयोग्य, जो सिद्ध हो न सकता हो। जैसे असाध्य रिपु एवं असाध्य रोग।

असान्तापिक (सं० त्रि०) सन्तापाय न भवति ठक्। सन्ताप पहुंचानेमें असमर्थ, तकलीफ़ न देनेवाला।

असान्द्र (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। अनिविड़, पृथक्, विरल, बुराक़, काग़ज़ी, जो सटा न हो।

असान्निध्य (सं० क्लो०) अन्तर, विप्रकर्ष, दूरता, फ़ासला, बिछा।

असामञ्जस्य (सं० क्लो०) अभावे नञ्-तत्। १ सामञ्जस्यका अभाव, मीमांसाका अभाव, अयुक्तत्व, सन्निवेशका अभाव, अन्तरण, अस्थापन, नादुरुस्ती, नाक़ाबिलियत। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ सामञ्जस्यके अभावसे युक्त, अमीमांसाविशिष्ट, असन्निवेशित, नाक़ाबिल, जो दुरुस्त न हो।

असामर्थ्य (सं० क्लो०) अभावे नञ्-तत्। सामर्थ्यका अभाव, पटुत्वका अभाव, अक्षमत्व, नाताक़ती, कमज़ोरी।

असामयिक (सं० त्रि०) असमयोचित, अकालिक, अकालोद्भव, गैरवक्त, बेफ़सल।

असामान्य (सं० त्रि०) नास्ति सामान्यं तुल्यता

यस्य । १ असाधारण, ग़ैरमामूली । इस अर्थमें असाम्य शब्दभी प्रयुक्त होता है।

असामि (वे० त्रि०) १ सम्पूर्ण, समूचा, जो अधूरा न हो। (अव्य०) २ पूर्णरूपसे, पूरे तौरपर, बिलकुल, सब।

असामि शवस् (वे० त्रि०) पूर्णशक्ति-सम्पन्न, पूरी ताक़त रखनेवाला।

असामी (हिं० पु०) १ पुरुष, नर, आदमी। २ व्यवहारी, लेने-देनेवाला। ३ कृषक, काश्तकार, लगानपर खेत जोतनेवाला। ४ प्रतिवादी, ऋणी। ५ अपराधी, मुलज़िम। ६ मित्र, दोस्त। ७ काम देनेवाला आदमी। ८ आसाम देशका अधिवासी, जो शख़्स आसामका बाशिन्दा हो। (स्त्री०) ९ वेश्या, रण्डी। १० स्थान, नौकरी, जगह। (वि०) ११ आसामदेश सम्बन्धीय, जो आसामका हो।

असाम्प्रत (सं० त्रि०) अयोग्य, अनुचित, नाक़ाबिल, ग़ैरवाजिब, जो होनहार न हो।

असाम्प्रतम् (सं० अव्य०) नञ्-तत्। अयुक्त, अयोग्य, अनुचित वा अन्याय्य रूपसे, नामुनासिब तौरपर।

असाम्य (सं० क्ली०) १ अन्तर, फ़र्क़। २ अनुपयुक्तता, नाक़ाबिलियत। ३ अप्रियता, नाख़ुशी।

असार (सं० पु०-क्ली०) नास्ति सारो यस्य। १ एरण्ड वृक्ष, रेंड़का पेड़। (क्ली०) नास्ति सारो यस्मात् ५ नञ्-बहुव्री०। २ अगरुचन्दन। (त्रि०) नञ्-तत्। ३ सारशून्य, ख़ाली। ४ शक्तिरहित, नाताक़त। ५ व्यर्थ, बेफ़ायदा। ६ निर्बल, कमज़ोर।

असारता (सं० स्त्री०) १ निःसारता, निःसत्वता, बेअसरी। २ अयोग्यता, नाक़ाबिलियत।

असारदधि (सं० क्ली०) गृहीत-नवनीत-दधि, मलाई उतारा हुआ दही। यह संग्राही, शीतल, लघु, विष्टम्भि, दीपन एवं रुच होता और ग्रहणी रोगको नाश करता है। (भावप्रकाश)

असारा (सं० स्त्री०) कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

असालत (अ० स्त्री०) १ कुलीनता, ख़ान्दानीपन। २ तत्त्व, निचोड़।

असालतन् (अ० क्रि० वि०) स्वयं, ख़ुद, अपने आप।

असाला (हिं० स्त्री०) तरातेज़क, हालों, हालिम, चंसुर।

असावधान (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अवधानहीन, प्रमत्त, बेपरवा, धामड़।

असावधानता (सं० स्त्री०) अनवधानता, लापरवाही।

असावधानत्व (सं० क्ली०) असावधानता देखो।

असावधानी, असावधानता देखो।

असावरी (हिं० स्त्री०) आसावरी, आशावरी, रागिणी विशेष। यह भैरव रागकी भार्या होती और प्रातःकाल सात बजेसे नौ बजेतक जमती है।

असासा (अ० पु०) वस्तु, द्रव्य, माल, असबाब।

असासुलबैत (अ० पु०) गृहद्रव्य, मकान्का सामान्।

असाहस (सं० क्ली०) साहसका अभाव, बेहिम्मती, नरमी।

असाहसिक (सं० त्रि०) शान्त, ठण्डा, नर्म, जो हिम्मती न हो।

असाहाय्य (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ साहाय्यका अभाव, मददका न मिलना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। साहाय्यशून्य, जिसे मदद न मिले।

असि (सं० अव्य०) अस दीप्तौ इन्। १ भवान्, आप, तुम। विभक्तिका प्रतिरूपक होनेसे यह 'त्वं' अर्थमें लगता है। (पु० स्त्री०) अस्यते छेदनार्थं क्षिप्यते, अस क्षेपणे (खनिकष्यज्यसि इत्यादि। उण् ४।१३९।) इति इ। २ खड्ग, तलवार। असि शब्दके पर्याय यह हैं—निस्त्रिंश, चन्द्रहास, रिष्टि, कौक्षेयक, मण्डलाग्र, करपाल, कृपाण, प्रवालक, भद्रात्मज, रिष्ट, ऋष्टि, धाराविष, शौक्षेय, तरवारि, तरवाज, कृपाणक, करवाल, कृपाणी, शास्त्र, विशसन। असिकी स्तुति इस प्रकार की जाती है—

> "असिर्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः।
> श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्मपालो नमस्तु ते॥"

असिः प्रहरणमस्य। प्रहरणम्। पा ४।४।५७। इति ठक् आसिक, खड्गधारी, तलवारबन्द। वा ङीप्। ३ वाराणसीके दक्षिण क्षुद्र नदीविशेष। असि नदी गङ्गाके सङ्ग आकर मिल गयी है। वरणा और असि

इन्हीं दोनो नदीके नामसे 'वाराणसी' शब्द बना है। यथा —

"असिश्च वरणा यत्र चैवरत्वा कृतौ कृते।
वाराणसीति विख्याता तदारभ्य महामुने॥" (काशीखण्ड)

ग्रस्यते क्षिप्यते असु-इन्। ४ श्वास, सांस।

असिक (सं० क्लो०) असि-संज्ञायां कन्। १ अधर एवं चिबुकका मध्यभाग, होंठ और दाढ़ीके बीचकी जगह। २ एक देशका नाम, कोयी मुल्क।

असिक्लिका, असिक्नी देखो।

असिक्नी (सं० स्त्री०) सो-क्त सिता केशादौ शुभ्रा जरती तद्भिन्ना ङीप् न क्नादेशो वा। असितपलितयो: प्रतिषेध:। असिता। छन्दसि क्नमित्येके। पा ४।१।३९ वार्तिक। १ अन्त:-पुरचारिणी अवृद्धा दासी, मकानके भीतर रहनेवाली जवान् दासी। २ नदीविशेष, Akesines, चन्द्रभागा, पञ्जाबकी चिनाब। ३ कन्याविशेष, वीरण प्रजा-पतिकी जो कन्या दक्षको व्याही थी। ४ रात्रि, रात।

असिगण्ड (सं० पु०) असि: क्षिप्तो गण्डो यत्र। क्षुद्रोपाधान, गलतकिया।

असिजीविन् (सं० पु०) असिना तद् व्यापारेण जीवति, असि-जीव-णिनि। खड्गसे जीविका करने-वाला पुरुष, जो व्यक्ति अस्त्रद्वारा युद्धादि करके जीविका चलाता हो। यह ब्राह्मणके लिये अति निन्दनीय कार्य है।

असित (सं० पु०) सो-क्त सित: विरोधे नञ् तत्। १ कृष्णवर्ण, कालारङ्ग,। २ कृष्णपक्ष, अंधेरा पाख। ३ नीलवृक्ष, नीलका पेड़। (क्लो०) ४ अगुरुकाष्ठ, अगरुचन्दन। ५ शनिग्रह। ६ कालाराक्षस। ७ कश्यप वंशज व्यक्तिविशेष। ८ नीलगिरि पर्वत। ९ काला सांप। १० देवल ऋषि। हरिवंशके अष्टादश अध्यायमें इनका विवरण है। (त्रि०) ११ कृष्ण वर्णयुक्त, काला। असित शब्द अनुदात्तान्त एवं इसके उपधामें तकार है, इसलिये (वर्णादनुदात्तात्तोप-धात्तो न:। पा ४।१।३९।) इस सूत्रके अनुसार इसका स्त्री लिङ्गमें 'असिता' और 'असिती' दो प्रकार रूप होता है। परन्तु विशेष वार्तिक सूत्रद्वारा उसका निषेध किया गया है। इस कारण इसका वेदमें 'असिता' एवं 'असिक्नी' उभय प्रकार रूप होता है।

असितकार्चिस् (सं० पु०) असितयति असित-कृत्यर्थे णिच् ण्वुल् णिच् लोप: तथोक्ता अर्चि: शिखा यस्य। अग्नि, आग। अग्निकी शिखा लगनेसे सभी वस्तु काले पड़ जाते, इसलिये अग्निको असितकार्चि: कहते हैं।

असितक्नी (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, कोयी पौधा।

असितकेशान्त (सं० त्रि०) कृष्ण-केशविशिष्ट, काली जुल्फ़ोंवाला।

असितगिरि (सं० पु०) कर्मधा०। नीलगिरि, नील-पर्वत, काला पहाड़।

असितग्रीव (सं० पु०) असिता ग्रीवा यस्य। १ अग्नि, आग। २ नीलकण्ठ शिव। ३ मयूर, मोर।

असितजफल (सं० पु०) नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़।

असितज्ञु (वै० त्रि०) कृष्णवर्ण जानुविशिष्ट, काले घुटनेवाला।

असिततिल (सं० पु०) कृष्णतिल, काला तिल।

असितद्रुम (सं० पु०) कृष्णताल, काला ताड़।

असितनयन (सं० त्रि०) कृष्णनेत्रयुक्त, काली आंखवाला।

असितपल्लवा (सं० स्त्री०) १ भूमिजम्बु, भुयिंजामन। २ नदीजम्बुवृक्ष, पनिहा जामुन।

असितफल (सं० पु०) असितं कृष्णवर्णं फलं यस्य। मधु नारिकेल, मीठा नारियल।

असितभ्रू (सं० त्रि०) कृष्णभ्रूविशिष्ट, काली पलकों-वाला।

असितमृग (सं० पु०) कर्मधा०। कृष्णसार मृग, काला हरिण।

असितवल्ली (सं० स्त्री०) नीलदूर्वा, काली दूब।

असितवेत्र (सं० क्लो०) श्यामालता, काली बेल।

असितसार (सं० पु०) तिन्दुकवृक्ष, तेंदूका पेड़।

असितसारक, असितसार देखो।

असिता (सं० स्त्री०) १ यमुना नदी। २ कृष्णनीली वृक्ष। ३ कालातिविषा। ४ हरिवंशयुक्त एक अप्सरा।

५ पिङ्गला नामकी नाड़ी। यमुना नदीका जल कृष्ण-वर्ण होनेसे असिता नाम पड़ा है।

असिताङ्ग (सं० पु०) १ मुनिविशेष, कोई मुनि। (त्रि०) २ कृष्णवर्ण-विशिष्ट, काला।

असिताञ्जनी (सं० स्त्री०) कृष्णकार्पासी, काली कपास।

असितानन (सं० त्रि०) कपि, लङ्गूर।

असिताभ्रशेखर (सं० पु०) १बुद्धविशेष। २ नीली-बुद्ध।

असिताम्बुज (सं० क्ली०) कर्मधा०। नीलपद्म, काले कमलका फूल।

असिताम्बुरुह, असिताम्बुज देखो।

असितार्चिस् (सं० पु०) असिता कृष्णा अर्चिः शिखा यस्य। अग्नि, आग। अग्निकी धुयेंकी कृष्णवर्ण शिखा निकलनेसे असितार्चिः कहते हैं।

असितालता (सं० स्त्री०) १ नीलदूर्वा, कालीदूब। २ श्यामालता, काली बेल।

असितालु (सं० पु०) नीलालु, कोयी पौधा।

असिताश्मन् (सं० पु०) कर्मधा०। अश्मनो जाति-त्वेऽपि समानविधेरनित्यतया न समासान्त प्रत्ययः। मणि विशेष, इन्द्रनील मणि, नीलकान्तमणि, नीलम्।

असित्र (सं० त्रि०) अस-क्षेपे ष्ट्रन्। क्षेपक, फेंकने-वाला, जो अपनी चीज फेंक देता हो।

असितोत्पल (सं० क्ली०) कर्मधा०। नीलपद्म, काला कमल।

असितोपल, असिताश्मन् देखो।

असिदंष्ट्र (सं० पु०) असिरिव तीक्ष्णा दंष्ट्रा यस्य। १ मकर, घड़ियाल। कामदेवकी ध्वजापर इनकी मूर्ति विराजमान रहती है। २ जलजन्तु विशेष, पानीका कोयी जानवर।

असिदंष्ट्रक, असिदंष्ट्र देखो।

असिदन्त (सं० पु०) १ मकर, घड़ियाल। २ कुम्भीर, गोह।

असिद्ध (सं० त्रि०) सिद्धं निष्पन्नं पक्वञ्च, नञ्-तत्। १ अनिष्पन्न, जो निकला न हो। २ अपक्व, बेपका, कच्चा। ३ अपूर्ण, नामुकम्मिल। ४ निष्फल, बेफायदा। ५ अप्रमाणित, साबित न होनेवाला। (पु०) ६ न्याय मतमें आश्रयद्वारा असिद्धत्व प्रभृति दोषसे दूषित कारण, जो सबब अन्दाज़से समझ न पड़ता हो।

असिद्धि (सं० स्त्री० सिध क्तिन्, नञ्-तत्। १ अनि-ष्पत्ति, निकास न होनेकी सूरत। २ पाकका अभाव, न पकनेकी हालत, कच्चापन, कच्चायी। ३ अपूर्णता, पूरा न पड़नेकी हालत। ४ योगशास्त्रोक्त सिद्धिका अभाव, नाकामयाबी। ५ न्यायमतसे आश्रयासिद्धि प्रभृति हेतुदोष। यह तीन प्रकारका होता है— १ आश्रयासिद्धि। २ स्वरूपासिद्धि। ३ व्याप्यतासिद्धि। सिद्धिः साध्यवत्ता निश्चयः, अभावे नञ्-तत्। ६ साध्य-विशिष्टके निश्चयका अभाव, अनिश्चय, यक़ीनका न आना।

असिधारा (सं० स्त्री०) ६-तत्। खड्गका तीक्ष्ण अग्रभाग, तलवारकी बाढ़।

असिधाराव्रत (सं० क्ली०) नरके असिधारामुद्दिश्य व्रतम्, शाक० तत्। व्रतविशेष, जिस व्रतसे खलन-नादि दोष होनेपर नरकमें असिधाराका आघात लगता है। यादवने लिखा है, सुन्दर युवा युवतीके सङ्गमें पतिकी तरह आचरण रखें, किन्तु कामभाव देखा या सङ्ग कर न सकेंगे। इसीको असिधाराव्रत कहते हैं।

असिधाव (सं० पु०) असिं खड्गं धावयति मार्ज-यति धाव-अण्। खड्गमार्जनकारी, हथियार साफ़ करनेवाला, जो हथियारपर सेकल चढ़ाता हो, सेकलगर।

असिधावक, असिधाव देखो।

असिधेनु (सं० स्त्री०) असिधेनुकेव। उप० समा०। छुरिका, छुरी।

असिधेनुका, असिधेनु देखो।

असिन्व (वै० त्रि०) अतोषणीय, आसूदा न होनेके काबिल।

असिन्वत, असिन्व देखो।

असिन्वता (वै० स्त्री०) षिञ्-बन्धने, अनेकार्थत्वात् धातूनामत्रसकृत्यादनार्थः, लटः शतरि श्नुः (उगितश्च। पा ४।१।६।) इति ङीप् पूर्वसवर्णदीर्घः। असकृत्-

दन्त्याविव्यर्थः। अनुविशेष्यते (निरुक्त)। असङ्ग्राह, खु.श न होनेवाली। "असिन्वती बप्सती भूर्यत्तः।"(ऋक्१०।७९।१)

असिपत्र (सं० पु०) असिरिव तीक्ष्णधारं पत्रमस्य, बहुव्री०। १ इक्षुवृक्ष, ईखका पेड़। २ गुगु नामक तृण। ३ सहुण्ड वृक्ष, सेंहुड़का पेड़। (क्ली०) असेः पत्रमिव आच्छादकत्वात्। ४ खड्गकोष, तलवारका म्यान। ५ उभयदिग् धारयुक्त खड्ग या तलवार, दुधारा। ६ नरकविशेष। इस नरकके वृक्षोंमें तलवार जैसे पत्ते लगे हैं।

असिपत्रतृण (सं० क्ली०) गुण्डातृण, छोटा कांस। यह शीत एवं मधुर होता और कफ वात, रक्तदोष, अतिसार तथा दाहको मिटाता है। दीर्घ और लघु भेदसे इसे दोप्रकार देखते हैं। दीर्घमें गुण अधिक रहता है।

असिपत्रक (सं० पु०) श्वेतदर्भ, सफेद कुश।

असिपत्रवन (सं० क्ली०) असिरिव पत्रमस्य तथोक्तं वनं यस्मिन्। पुराणोक्त नरकविशेष। इस नरकमें चार हज़ार कोसतक आग जलती और उसके बीच तलवारकी धार जैसे पत्तेवाले पेड़ोंका वन है।

असिपत्रव्रत (सं० क्ली०) अश्वमेध यज्ञके मध्य कर्तव्य व्रतविशेष, जो व्रत अश्वमेध यज्ञके बीचमें करना उचित हो।

असिपथ (वै० क्ली०) यज्ञीय आयुधका मार्ग, बलिदानवाली तलवारकी राह।

असिपुच्छ (सं० पु०) असिरिव धारायुक्तः वक्रः सूक्ष्माग्रो वा पुच्छोऽस्य। शिशुक, सकुची मछली।

असिपुच्छक, असिपुच्छ देखो।

असिपुत्रिका (सं० स्त्री०) असेः पुत्रीव स्वार्थे कन् ईकार ह्रस्वः टाप्। छुरिका, छुरी।

असिपुत्री, असिपुत्रिका देखो।

असिमत (वै० त्रि०) छुरिकायुक्त, छुरी बांधे हुआ।

असिमेद (सं० पु०) असिः छिन्नो मेदो निर्यासरूपावसा यस्मात्। १ खदिर क्षुप, खैरका झाड़। २ विट्खदिर, दुर्गन्ध खैर।

असिर (वै० त्रि०) अस-क्षेपे किरच्। १ क्षेपक, फेंकनेवाला। (पु०) २ किरण, प्रभा। ३ बाण, तीर।

असिलोमन् (सं० पु०) असि इव तीक्ष्णानि लोमान्यस्य। दनुके पुत्रविशेष। महाभारत आदिपर्व ६५ अध्यायपर दनुके चालीस पुत्रोंमें इनका नाम लिखा है। हरिवंशके देवासुरयुद्धमें वायुके साथ इनका युद्ध वर्णित है। अपरोंमें भी इनका नाम देख पड़ता है।

असिष्टण्ट (अं० वि०) सहायक, मददगार, हाथ नीचे काम करनेवाला।

असिष्ठ (वै० त्रि०) शस्त्र प्रहारमें कुशल, जो हथियार खूब चलता हो।

असिहत्य (सं० त्रि०) असिना हत्यं घात्यं असि-हन-बाहु० क्यप्; ३-तत्। १ खड्गद्वारा वधके योग्य, तलवारसे मारने लायक। (क्ली०) २ खड्गयुद्ध, तलवारकी लड़ायी।

असिहेति (सं० पु०) अस्तेर्हिनोतेर्वा (असि-यसि-जसि-सासि-हेति-कीर्तयश्च। पा ३।३।९७।) इति निपा० क्तिन् हेतिः शस्त्रम्; असिरेव हेतिः शस्त्रं यस्य, बहुव्री०। खड्ग द्वारा युद्धकारी, जो तलवारसे लड़ता हो। 'नैस्त्रिंशिकोऽसिहेतिः स्यात्।' (अमर)

असी (सं० स्त्री०) नदीविशेष। असि देखो।

असीतक (वै० क्ली०) अगुरु काष्ठ, अगरुचन्दन।

असीतका (सं० स्त्री०) कृष्णापराजिता, काली अपराजिता।

असीतकादिचूर्ण (सं० क्ली०) चूर्णविशेष, आमवात रोग पर दिया जानेवाला चूर्ण। असीतक, भागधिका, गुड़ूची, श्यामा, वाराही, गजकर्ण एवं शुण्ठीको बराबर कूट-पीस चूर्ण बनाये और गर्म पानीके साथ सेवन करे। (माधवनिदान)

असीम (सं० त्रि०) १ सीमारहित, बेहद। २ अनन्त, बेशुमार। ३ अपार, अगाध।

असील, असल देखो।

असीस (सं० स्त्री०) आशिष् देखो।

असीसना (हिं० क्रि०) आशीर्वाद देना, दुआ मांगना, भला चाहना।

असु (सं० पु०) अस्यते क्षिप्यते अस क्षेपे उ। १ चित्त, दिल। कर्त्तरि उ। २ ताप, तकलीफ्। अस्यन्ते क्षिप्यन्ते चाल्यन्ते वा प्राणिनो एभिः, करणे बाहुलकात् उ। ३ प्राणवायु। 'पुंसि भूम्न्यसवः प्राणाः।' (अमर)

असुकर (सं० त्रि०) सुखेन क्रियते, सु-कृ-खल्, विरोधे नञ्-तत्। दुष्कर, दुशवार, मुश्किल, कठिन।

असुक्षण, असूक्षण देखो।

असुख (सं० क्लो०) न सुखं विरोधे नञ्-तत्। दुःख, तकलीफ्। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ सुखशून्य, दुःखी, रञ्जीदा।

असुखजीविका (सं० स्त्री०) सुखशून्य जीवन, जो जि़न्दगी मजे़दार न हो।

असुखपीड़ित (सं० त्रि०) दुःखसे ग्रसित, रञ्जसे भरा हुआ।

असुखावह (सं० त्रि०) दुःख उत्पन्न करनेवाला, तकलीफ़दिह, जो रञ्ज लाता हो।

असुखाविष्ट, असुखपीड़ित देखो।

असुखिन् (सं० त्रि०) सुखशून्य, कमबख्त, रञ्जीदा।

असुखोदय (सं० त्रि०) दुःखमें समाप्त होनेवाला, जो तकलीफ़में पूरा हो।

असुखोदर्क (सं० त्रि०) दुःखदायी, तकलीफ़ देनेवाला।

असुग, (हिं०) आशुग देखो।

असुगम (सं० त्रि०) सुखेन गम्यते ज्ञायते बुध्यते वा, सु-गम-खल्, विरोधे नञ्-तत्। १ दुर्गम, जो हासिल न हो। २ दुर्बोध, जो समझ न पड़ता हो।

असुचि (हिं०) अशुचि देखो।

असुत (वै० त्रि०) १ दबाया न हुआ, जो निचोड़ा न गया हो। यह सोमरसादिका विशेषण है। (सं० त्रि०) २ सन्तानरहित, बेऔलाद, जिसके बालबच्चा न रहे।

असुतर (सं० त्रि०) दुर्गम, जो आसानीसे गुज़र जानेवाला न हो।

असुतृप् (वै० त्रि०) तृप्त न होनेवाला, जो आसूदा किया जा न सकता हो।

असुतृप (सं० पु०) असवः परलोकाः प्राणाऽऽत्मतयेन तृप्यति, तृप् इगुपधात् क इति क प्रत्ययः, ३-तत्। यमदूतविशेष।

असुधारण (सं० क्लो०) असूनां प्राणादिपञ्चवायुवृत्तीनां धारणम्, ६-तत्। १ जीवन धारण, जि़न्दगी।

असुनिरस (सं० त्रि०) अप्रिय, उद्दण्ड, नागवार, तकलीफ़ देनेवाला।

असुनीत (वै० क्लो०) आत्मलोक, रूहानी दुनिया।

असुनीतस् (वै० पु०) आत्मप्रभु, रूहोंका मालिक।

असुनीति (वै० स्त्री०) असून् नयति। असु शब्दे उपपदे नी क्विन्। (निरुक्त) १ प्राणवायु। न सुनीति, नञ्-तत्। २ अनीति, जो उत्तम नीति न हो।

असुन्दर (सं० त्रि०) साधारण, कुरूप, सादा, बदशक्ल। २ अयोग्य, अनुचित, गैरवाजिब, नादुरुस्त, जो ठीक न हो। (पु०) ३ व्यङ्गविशेष। इसे देखते वाच्यार्थमें विशेष भाव रहता है। यह गुणीभूत व्यङ्गका हो अङ्ग है।

असुन्व (सं० त्रि०) सुञ्-अभिषवे बाहु० अ: (स्वादिभ्यः श्नुः। पा ३।१।७३) इति सु उकारस्य वः नञ्-तत्। जो सोमलताको सींचता न हो।

असुपाद (सं० पु०) कालविशेष। देहधारियोंको एक श्वास खींच पुनः श्वास ग्रहण करनेमें जितना काल लगता, उसका चतुर्थांश असुपाद कहाता है।

असुप्त (सं० त्रि०) निद्राके वशीभूत न होनेवाला, जो सोता न हो।

असुप्तदृश् (सं० त्रि०) निद्रामें नेत्र न बन्द करनेवाला, जो हमेशा आंख खोले रहता हो।

असुविधा (सं० स्त्री०) १ कठिनता, अड़चन। २ दुःख, दिक़्क़त।

असुभ, (हिं०) अशुभ देखो।

असुभङ्ग (सं० पु०) १ जीवनका नाश, जि़न्दगीका तोड़फाड़। २ जीवनसम्बन्धीय भय, जि़न्दगीके लिये खौफ़। ३ जीवनका सन्देह, जि़न्दगीका खतरा।

असुभृत् (सं० त्रि०) असून् प्राणान् बिभर्ति, असु-भृ-क्विप् तुगागमश्च, ६-तत्। प्राणधारी, प्राणी, मख़लूक़, आमवर।

असमत् (सं० त्रि०) असवः सन्त्यस्य, मतुप्। प्राणी, जीवमात्र, जानवर।

असुम्न (वै० त्रि०) प्रतिकूल, खिलाफ़, जो मिलता न हो।

असुर (सं० पु०) अस्यति क्षिप्यति देवान् असु क्षेपणे (असेरुरन्। उण् १।४३) इति उरन्। १ सुरविरोधी दैत्य। 'असु क्षेपणे अस्मादुरन् प्रत्ययः। अस्यति इत्यसुरो दैत्यः।' (उज्ज्वलदत्त) २ प्राचीन भारतियों और पारसियोंके प्रधान देवता। यह वरुणके प्रतिनिधि होते और पारसी इन्हें अहुर-मज़्दके नामसे पूजते हैं। जन्द अवस्तामें असुरको अहुर कहते हैं। भेद इतना ही है, कि जरथुस्त्रीय धर्ममें असुरका अर्थ देवता और हमारे धर्ममें राक्षस है। किन्तु ऋग्वेदमें कितनी ही जगह असुर शब्द देवताओंके लिये भी व्यवहार किया गया है। असति दीप्यते, अस-दीप्तौ उरन्। ३ सूर्य। ४ राहु। ५ हस्ती। ६ बादल। ७ प्रेत। 'असुरः सूर्यदैत्ययोः।' (हेम) (वै० त्रि०) ८ आत्मवान्, जिन्दा। 'अनति गच्छति अन्तरीक्षे दीप्यते स्वयं आदत्ते वा जलं। यद्वा सु र ऐश्वर्य सु रतीति सुर-का ईश्वरः स्वतन्त्र इत्यर्थः। असु र अनीश्वरः इन्द्रादिपरतन्त्र इत्यर्थः।' (निरुक्त) ९ निराकार, ईश्वरीय, जो आदमीके काबूका न हो। (क्लो०) १० सामुद्रलवण, समुद्रका नमक। ११ देवदारुवृक्ष। १२ उन्मादरोगविशेष, किसी किस्मका पागलपन। इस रोगमें पीड़ित व्यक्तिके खेद नहीं छुटता और वह देवी-देवता तथा गुरु-ब्राह्मणादि को खरी-खोटी कहते रहता है। कोई वस्तु उसे सन्तुष्ट नहीं करती, वह बुरी राह पकड़ लेता है।

१३ लोहारडांगे और पूर्व सरगुजाकी एक अनार्य जाति। असुर लोहा गलाके ही अपना निर्वाह करते हैं। कर्नल डालटन इन्हें उन्हीं असुरोंके वंशज बताते, जिन्हें प्राचीन काल मुण्डकोंने मारपीट निकाल दिया था। किन्तु हारजेलिङ्गसका कहना है, कि असुर खानिका काम करने और मन्दिर बनानेवाले उन सभ्य शिल्पियोंके सन्तान ठहरते, जिनके चिह्न छोटा-नाग-पुरमें इस सिरेसे उस सिरेतक मिलते हैं। इनके तेरह गोत्र हैं। अपने गोत्रकी स्त्रीसे कोई पुरुष विवाह नहीं करता। अनेक पत्नीकताके विधानमें विवाहोच्छेदके लिये बड़ी अनुमति लेनी पड़ती है। इनकी स्त्रियां छोटानागपुरके शहरों और बड़े-बड़े गांवोंमें नाचकूद अपना निर्वाह करती हैं। असुरोंके धर्मका वृत्तान्त अज्ञात है। डालटनके मतानुसार यह सिङ्गबोङ्ग नामक देवताको पूजते हैं।

१४ असुरिया राज्य। यह शब्द हिब्रु भाषाका है। १५ प्राचीन नगर-विशेष। यह असुरिया राज्यकी राजधानी रहा। इसीके नामपर असुरिया (Assyria) राज्य असुर कहाया है। मुख्य असुरियाके राज्यकी दक्षिण सीमापर इस नगरको बाबिलोनियाके सेमेतिकोंने पूर्वकालमें बसाया था। सन् ई०से २२५० वर्ष पहले बाबिलोनियाके नृपति खमूरबीकी स्मृति-प्रस्तावनामें असुर और निनिवीः दोनो नगरोंका नाम आया है। किन्तु प्रस्तावनामें जो असुरकी शब्द लिखा, उससे विदित होता, कि इस नामका कोई प्रान्त भी रहा; क्योंकि 'की' का अर्थ 'भूमिसीमा' है। आजकल यह ताइग्रीस नदीके पश्चिमतट उच्च एवं निम्न जाब नदीके बीचोबीच काले-शेरघाट नामसे प्रसिद्ध है। सर ए० एच० लेयार्ड साहबने जो मट्टीका वर्तुल यहांसे खोदकर निकाला, उसमें तिगलथ पिलेसर प्रथमका वृत्तान्त लिखा है। सन् १९०४ ई०में जो आवि-ष्कार हुआ, उससे प्रमाणित होता है, कि असुर देवके पुजारी बाबिलोनियाके अधीन यहां शासन करते थे। बाबिलोनियाका राज्य घटनेसे पूजारी स्वतन्त्र नृपति बने और असुर अपने प्रान्तकी राजधानी हुआ। इस नगरकी चारो ओर पक्की दीवार रही। सन् ई०से १२७० वर्ष पहले तुकुलती-इनारिस्ती या तुकुलती मासुने नदीकी ओर इसकी रक्षा करनेको गहन परिखा खोदायी और भूमिकी ओर भित्ति बनवायी थी। सन् ई०से पहले १५ वें शताब्दमें भी यह दक्षिण की ओर बहुत बढ़ा रहा। नगरके उत्तरांशमें मन्दि-रोंकी शोभा देख पड़ती थी। सिवा असुर देवके अनु और हदादका मन्दिर भी बहुत बड़ा था। दूसरे देवताओंके अनेक मठ रहे। निनिवीःके राजधानी होते भी असुर देशका धार्मिक केन्द्र बना था। १६ असुरियाके प्रधान देव। प्रथमतः यह असुर

नगरके रक्षक देव रहे। इनके उड़नेवाले परिधिमें शरासन लगा है। दूसरे देवताओंके जो वर्णन मिलते, उनसे वह असुर देवके लघुरूप ही प्रमाणित होते हैं। असुरियाके वीर इन्हींका नाम लेकर युद्ध करनेको आगे बढ़ते रहे। सन् ई॰से १२०० वर्ष पहले उस-पियाने इनके मन्दिरकी नींव डाली थी।

असुरकुमार (सं॰ पु॰) भवनाधीश-सम्बन्धीय देवविशेष।

असुरक्ष (सं॰ त्रि॰) सुखेन रक्ष्यते; सु-रक्ष-खल्, नञ्-तत्। स्वच्छन्दसे रक्षित किया न जानेवाला, जिसे आज़ादीसे बचा न सकें।

असुरक्षपण (वै॰ त्रि॰) असुर-नाशकारी, असुरोंको मार डालनेवाला।

असुरक्ष्य (सं॰ त्रि॰) कठिनतासे बचाने योग्य, जो मुश्किलसे रह सकता हो।

असुरगुरु (सं॰ पु॰) असुरोंके गुरु शुक्राचार्य।

असुरग्रह (सं॰ पु॰) भूतग्रहविशेष।

असुरत्व (वै॰ क्ली॰) अमूर्तता, परमार्थनिष्ठा, नफ़्सानियत, रूहानियत।

असुर-बनी-पाल—असुरियाके बड़े राजा। ऐयरके १२वें दिन यह धूमधामसे असुरियाके राज्य-सिंहासन पर अपने पिता ईसरहद्दोन द्वारा बैठाये गये थे। सन् ई॰से ६६८ वर्ष पहले पिताके मरनेपर इन्होने मिस्रकी युद्धप्रवृत्ति समाप्त करना चाहा। तिरहाकह इथि-वोपियाको भगे और असुरीय सेनाको नाइलपर चढ़नेमें ४० दिन लगे थे। तिरहाकहके साथ साज़िश करनेपर सैसके मण्डलेश्वर नेको और दो दूसरे नृपति कैद कर निनेवी: भेजे गये। सन् ई॰से ६६७ वर्ष पहले तिरहाकहके उत्तराधिकारी तन्दमन उच्च मिस्रमें पहुंचे और थेबेसने असुरियाके विरुद्ध विद्रोह उठाया। मेमफिसपर एकायक अधिकार कर विद्रोहियोंने असुरीय सेनाको वहांसे निकाल बाहर किया था। उसी समय तायरमें भी विद्रोह उठ खड़ा हुआ। किन्तु असुर-बनी-पाल विद्रोही प्रान्तमें सेना भेजते ही रहे। अन्तको असुरीय सेनाने थेबेस लूटा और दो सूबादार हाथियोंको निनेवी: जय-चिह्नको तरह भेज दिया। इसी बीच तायरने भी पानी न मिलनेसे आत्मसमर्पण किया था। असुरीय सेनाने फिर अरारतसे दक्षिणपूर्व मनाकी राजधानी दबा ली। इलामके व्यूमन कैद कर निनेवी: भेजे और उनकी जगह उम्मनिगस सिंहासन पर बैठाये गये थे। सिलिसिया और तबलके नृपतियोंने अपनी कन्यायें असुर-बनीपालको व्याह दीं। किन्तु सन् ई॰से ६६० वर्ष पहले लीदिया-नृपतिके साहाय्यसे सम्मेतिकसने असुरीय सेनाको मिस्रसे निकाल बाहर किया था। उधर बाबिलोनियामें भी असन्तोष बढ़ा और समसुम-युकिनने जातीय दलके नेता बन अपने भाईके विरुद्ध युद्धघोषणा की। किन्तु उन्हें अकृतकार्य हो पीछे हटना पड़ा था। सन् ई॰से ६४८ वर्ष पहले बाबि-लनने आत्मसमर्पण किया और समसुमयुकिनको आगमें जल मरना पड़ा। अन्तको असुरीय सेनाने अरबको भी पराजय किया, किन्तु वह सिमेरीय-सीदीय दलका सामना पकड़ न सकी। सन् ई॰से ६२६ वर्ष पहले असुर-बनी-पालके मरनेपर असुरीय सम्राज्य विध्वंस हो गया। यह रसिक, दीर्घ-सूत्री और निर्दय रहे, किन्तु कला-कौशलका बड़ा आदर करते थे। निनेवी:का बड़ा पुस्तकालय इन्हीं की सम्पत्ति है।

असुरमाया (सं॰ स्त्री॰) पैशाचिक कुकृति, आसेबज़द अफ़सून, भूतोंका जादू।

असुररक्षस (वै॰ क्ली॰) १ असुर एवं राक्षस। २ पिशाच, भूत, आसेब, शैतान्।

असुरराज (सं॰ पु॰) असुरेषु राजते; राज-क्विप्, ७-तत्। १ बलिराज। यह प्रह्लादके पौत्र थे। २ वकासुर। ३ असुरोंका अध्यक्ष,शैतानोंका बादशाह।

असुररिपु (सं॰ पु॰) ६-तत्। १ असुरोंका शत्रु, आसेबोंका दुश्मन्। २ विष्णु। असुरारि प्रभृति शब्दसे भी विष्णुका बोध होता है।

असुरसा (सं॰ स्त्री॰) न सुष्ठु रसो यस्याः, नञ्-बहुव्री॰। बबरी, तुलसी विशेष, बबयी।

असुरसूदन (सं॰ पु॰) असुरोंको नाशकरनेवाले विष्णु।

असुरसेन (सं० पु०) दैत्य विशेष। इसके देहपर गया नामक नगर प्रतिष्ठित है।

असुरहन् (सं० त्रि०) असुरं हन्ति, असुर-हन्-क्विप्। दैत्यनाशक, आसेबको बरबाद करनेवाला। यह शब्द अग्नि, इन्द्र प्रभृति देवताओंका विशेषण है।

असुरा (सं० स्त्री०) अस्यति क्षिपति जनान् अन्धकारेण, असु क्षेपणे उरन् टाप्। १ रात्रि, रात। २ राशि। ३ वेश्या, रण्डी। ४ हरिद्रा, हलदी। ५ राई। 'क्षवः सुधाभिजननी राजिका क्षवकासुरी।' (अमर)

असुराई, असुरायी देखो।

असुराचार्य (सं० पु०) असुराणामाचार्यो गुरुः, ६-तत्। दैत्योंके गुरु शुक्राचार्य।

असुराधिप (सं० पु०) ६-तत्। १ प्रह्लादपौत्र बलि-दैत्य। २ असुरोंका अध्यक्ष, असेबोंका बादशाह।

असुरायी (हिं० स्त्री०) असुरता, दुष्टता, बुरायी।

असुरारि (सं० पु०) देवता, असुरका शत्रु।

असुराह्व (सं० क्ली०) असुरस्याह्वा संज्ञा यस्य, शाक-बहुव्री०। कांस्य, कांसा।

असुराह्वपतङ्ग (सं० पु०) तैलपायिपतङ्ग, तिलचट्टा।

असुराह्वविट् (सं० पु०) कांस्यमल, कांसेका मैल।

असुराह्वा (सं० स्त्री०) असुराह्व देखो।

असुरिया, असुरीय देखो।

असुरी (सं० स्त्री०) १ राजिका, राई। २ असुर-पत्नी, असुरकी स्त्री।

असुरीय (Assyria) असुरिया और बाबिलोनियाका बड़ा साम्राज्य। यह टिगरिस और युफ्रेटस नदीकी दोनों ओर बसा था। बाबिलोनिया देखो।

असुर्य (सं० त्रि०) असुराय हितम्, गवा० यत्। १ असुरको हितकर,आसेबको फायदा पहुंचानेवाला। २ अमूर्त, बेशक्ल। ३ असुरसम्बन्धीय आसेबसे ताल्लुक रखनेवाला। (क्ली०) ४ अमूर्तता, रूहानियत। ५ असुरसमूह, शैतानोंका गिरोह। ६ मेघजल, बादलका पानी।

असुलभ (सं० त्रि०) सुखेन लभते, सु-लभ-खल्, विरोधे नञ्-तत्। दुष्प्राप्य, असाध्य, मुश्किलसे हासिल होनेवाला।

असुष्वि (वै० त्रि०) सु बाहु० कि द्विर्भावः, नञ्-तत्। सोमलताका पीड़क न होनेवाला, जो सोमलताको निचोड़ता न हो।

असुसू (सं० पु०) असून् प्राणान् सुवति यमसदनं प्रेरयति, असु-सू प्रेरणे क्विप्। बाण, जान मारनेवाला तीर।

असुस्थ (सं० त्रि०) सुखेन तिष्ठति, सु-स्था-क, विरोधे नञ्-तत्। दुःस्थ, दुःखेस्थित, रोगयुक्त, बीमार, जो आराममें न हो।

असुहृद् (सं० पु०) शत्रु, दुश्मन्, जो शख्स दोस्त न हो।

असू (सं० स्त्री०) न सूते, सू-क्विप्, नञ्-तत्। प्रसव न करनेवाली स्त्री, अकीमा, बांझ।

असूक्षण (सं० क्ली०) सूक्ष सूर्क्ष वा लुयट्, नञ्-तत्। अनादर, अवज्ञा, अवहेला, बे-इज्जती, नाफ़रमांबरदारी।

असूक्ष्म (सं० त्रि०) सूक्ष्-स्मन् विरोधे नञ्-तत्। स्थूल, मोटा, जो बारीक न हो।

असूझ (हिं० वि०) सूझ या देख न पड़नेवाला, अदृश्य, पोशीदा, जो नज़र न आता हो।

असूत (वै० त्रि०) सूयते स्म, सू-क्त-नञ्-तत्। १ अप्रसूत, बांझ, प्रसव न करनेवाली। (सं०) नास्ति सूतो यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ सारथिशून्य, जिसके गाड़ीवान् न रहे। 'असूत सा नागवधूपभोग्यम्।' (कुमार० १।२०) (पु०) सूतः सारथिः, नञ्-तत्। ३ सारथि न होनेवाला व्यक्ति, जो शख्स गाड़ीवान् न हो। (हिं० वि०) ४ प्रतिकूल, सम्बन्धशून्य, खिलाफ, बेसिलसिला, जो मिला न हो।

असूति (वै० स्त्री०) १ उत्पत्तिका अभाव, पैदा न न होनेकी बात। २ प्रतिबन्ध, रोक। ३ अप्रसूतता, बांझपन।

असूतिक (वै० त्रि०) असूत देखो।

असूयक (सं० त्रि०) असूय कण्ड्वादि० यक् ण्वुल्। दोषारोपशील, नुक्ताचीन्, हासिद, भलाईमें बुराई लगानेवाला।

असूयन (सं० क्ली०) परिवाद, पैशन्य, मिथ्याभिशाप, निन्दाभियोग, दोषमत।

असूययित्वा (सं० अव्य०) मिथ्याभिशाप देकर, तोहमत लगाके।

असूया (सं० स्त्री०) असू असूय वा यक् अ-टाप्। १ परगुणमें दोषारोप, दूसरेको सिफ्तमें तोहमतका लगाना। मनुने असूयाको पापमें गिना है। 'असूया तु दोषारोपो गुणेष्वपि।' (अमर) २ विरोध, झगड़ा। ३ शत्रुता, दुश्मनी। ४ सञ्चारी भाव विशेष। काव्यमें यह रसके अन्तर्गत आती है। ५ पतिको स्त्री।

असूयितृ (सं० त्रि०) असन्तुष्ट, जातामर्ष, कुपित, नाखुश, जो बखेड़ा कर रहा हो।

असूयु (सं० त्रि०) असु असू वा कण्ड्वादि० यक् उन्। १ असूयाशील, तोहमत लगानेवाला। (पु०) २ असूया, तोहमत।

असूर (सं० त्रि०) सूरो स्तम्भे धातूनामनेकार्थत्वात् स्तुतौ भावे घञ् नञ्-बहुव्री०। १ स्तोत्ररहित, स्तवरहित, जिसे तारीफ् न मिले। (वै० क्ली०) २ सोमरस निकालनेवालेकी अनुपस्थिति। ३ स्तोत्ररहित स्थान, जिस जगहको कोई तारीफ् न करे।

असूर्क्षण, असूक्षण देखो।

असूर्त (वै० त्रि०) सूरो स्तम्भे क्त बाहुल० न तस्य नत्वम्। १ अप्रेरित, जो भेजा न गया हो। २ दूरस्थ, जो नज़दीक न हो।

असूर्य (वै० त्रि०) सूर्यशून्य, आफ्तावसे खाली।

असूर्यम्पश्य (सं० त्रि०) सूर्यमपि न पश्यति, असूर्य-दृश-खश् मुम् च, असमर्थ-समा०। अत्यन्तगुप्त, सूर्यको भी न देखनेवाला, निहायत पोशीदा, जो आफ्तावको भी देखता न हो।

असूर्यम्पश्या (सं० स्त्री०) १ नृपपत्नी विशेष, बादशाहकी औरत। २ अन्तःपुरमें रहनेवाली स्त्री मात्र, महलके भीतर रहनेवाली औरत। यह सुन्दर स्त्रीके विशेषणमें भी आती है। ३ सती-साध्वी स्त्री, पाकदामन औरत।

असूल, उसूल देखो।

असृक् (सं० क्ली०) १ सृक्कानाम गन्धद्रव्य, मेथी। २ कुङ्कुम, केसर। ३ रक्त, खून।

असृक्कर (सं० पु०) असृक् रक्तं करोति असृज-कृ-ट, उप० स०। शरीरस्थ रस धातु। वैद्यशास्त्रके मतसे अन्नादि भक्षण करनेपर पहले वह सब एक प्रकारके रसरूप (काइल)में परिणत होकर फिर रक्त हो जाता है। सुश्रुतमें लिखा है,—रससे रक्त, रक्तसे मांस, मांससे मेद, मेदसे अस्थि, अस्थिसे मज्जा एवं मज्जासे शुक्र उत्पन्न होता है। भावप्रकाशमें भी कहा है,—प्राणवायु भुक्तद्रव्यको पहले आमाशयमें ले जाता है। वहां भुक्तद्रव्य कषाय, मधुर, लवण, कटु, तिक्त, अम्ल—इन छः रसोंसे युक्त होकर फेनका आकार धारण करता, उसीका नाम रस है।

असृक्प (सं० पु०) १ जलौका, जोंक। २ राक्षस-विशेष। यह रक्त पिया करता है।

असृक्पात (सं० पु०) रक्तप्रवाह, खूनका गिरना।

असृक्पावन् (वै० त्रि०) रक्तप, खून पीनेवाला।

असृक्स्राव (सं० पु०) रक्तप्रवाह, खून्का गिरना या निकलना।

असृक्स्राविन् (सं० त्रि०) रक्त निकालनेवाला, जो खून बहा रहा हो।

असृगुत्थ (सं० पु०-क्ली०) केसर, अयाल, घोड़े या शेरके गर्दनका बाल।

असृग्गद (सं० पु०) कोष्ठ, मेदा, कोठा।

असृग्दर (सं० पु०) असृग्दार्यते व्यज्यते अनेनेति। रक्तप्रदर। यह रोग विरुद्ध मद्यादिके अशन, अजीर्ण, गर्भप्रपात, अति मैथुन, यानाध्वशोक, अतिकर्षण, भाराभिघात और दिनके शयनसे उत्पन्न होता है। इसमें सवेदन साङ्गमर्द, दौर्बल्य, भ्रम, मूर्छा, मद, तृषा, दाह, प्रलाप, पाण्डुत्व और तन्द्रारोग नष्ट हो जाता है। (भावप्रकाश)

असृग्दरशैलेन्द्ररस (सर्वाङ्गसुन्दर) (सं० पु०) रक्त-प्रदरका रसविशेष। इसके बनानेकी रीति यह है—ईंटका चूर्ण, शोधित अभ्रक १ पल, सोहागा २ तोला, दारुचिनी, एलायची, तेजपत्र, कपूर, नलद (खस), जाजफल, बाला, मुस्ता (मोथा), नागेश्वर, लवङ्ग, कुष्ठ और त्रिफला प्रत्येक चार-चार आनाभर ले जलमें मर्दन करके २ रत्ती प्रमाण वटी बनानी चाहिये। इस औषधिको सेवन करनेसे अङ्ग-

मर्द और वेदनायुक्त सर्वप्रकार प्रदर नष्ट होता है।

(प्रयोगामृत)

असृग्दोह (सं० त्रि०) रक्त चूसनेवाला, जो खून बहाता हो।

असृग्धरा (सं० स्त्री०) असृक् रक्तं धरति, असृज्-धृ-अच्-टाप्। चर्म, चमड़ा।

असृग्धारा (सं० स्त्री०) १ चर्म, चमड़ा। २ रक्त-प्रवाह, खूनका दरया।

असृग्वहा (सं० स्त्री०) असृक् शोणितं वहति सर्वत्र सञ्चालयति, असृज्-वह-अच्। नाड़ी, नब्ज्। नाड़ी, शरीरके सकल स्थानमें रक्तवहन करती, इसीसे उसका यह नाम पड़ा है।

असृग्विमोक्षण (सं० क्लो०) असृजो रक्तस्य देहा-द्विमोक्षणं निःसारणम्, ६-तत्। रक्तका मोक्षण, खूनका निकास। देहमें यदि रक्त बढ़े या किसी-तरह बिगड़े, तो उसे देहसे निकाल डालना चाहिये। उसी निःसारणका नाम असृग्विमोक्षण है। पूर्वकालमें सकल देशके चिकित्सक ज्वर प्रभृति नाना प्रकार रोगमें रक्तमोक्षण करते थे। रग और कुहनीके ऊपरसे सचराचर रक्त निकाला जाता है। रक्त निकालनेसे पहले रोगीको शय्यापर बैठा देना चाहिये। क्यों कि मत्था नीचा रहनेसे हठात् अधिक रक्त गिर सकता, जिससे रोगीके प्राण जानेकी सम्भावना रहती है। रोगीको बैठाकर हाथपर पट्टी बांध देना चाहिये। उसके बाद शिराको फूल आनेपर हाथाङ्गुष्ठसे दबाकर नश्तर लगाते हैं। फिर प्रयोजनानुसार रक्त निकल या रोगीके मूर्छित हो जानेसे क्षत स्थानपर अङ्गुलि लगा पट्टी खोल डाले। परिशेषमें क्षतस्थानको दबाकर बांधनेसे फिर रक्त नहीं निकलता।

रगमें धमनीके मध्यस्थलमें तिरछा नश्तर लगानेसे भी रक्तमोक्षण किया जाता है। प्रयोजनानुरूप रक्त निकल जानेसे इस धमनीको बिलकुल काट डालना चाहिये। न काटनेसे उस जगह एन्यूरिजम नामक अर्बुद निकल सकता है। किन्तु काट देनेसे उसके उभय मुख शुड़कर सूख जाता है। कुहनीवाली शिराकी तरह पैरकी शिरासे भी रक्तमोक्षण करते हैं। नासारोग या ज्वरकालमें अत्यन्त मस्तकवेदना होने और मत्था भारी पड़नेपर कितने ही लोग नासिकाके भीतरसे रक्त निकाल डालते हैं। सचराचर नाकका आभ्यन्तरिक पर्दा (Schneaian membrane) फाड़ रक्तमोक्षण किया जाता है।

तीन प्रकारकी प्रणालीसे रक्तमोक्षण करते हैं। १म—अस्त्रप्रयोगसे इसकी बात पहले ही बतायी जा चुकी है। २य—कटोरी तथा सींगी और ३य—जोंक लगानेसे।

सींगी लगानेके लिये शीशेकी छोटी कटोरियां रहती हैं। सींगी लगाते समय शीशेकी कटोरी नश्तर, सुराका प्रदीप प्रभृति निकटमें प्रस्तुत रखे; फिर जिस स्थानसे रक्त निकालना हो, उसे पहले धोकर उष्ण वस्त्रसे अच्छी तरह रगड़े। उसके बाद कटोरीमें अल्प सुरा डाल आग लगा देना चाहिये। अग्निके तापसे जब कटोरी अल्प उष्ण होती और भीतरका वायु निकल जाता, तब धौत स्थानमें यह कटोरी उलटाकर लगानेसे चर्मपर चिपक बैठती है। यह सकल प्रक्रिया शीघ्र-शीघ्र करना चाहिये। चर्मपर कटोरी चिपक बैठनेसे धीरे-धीरे वह स्थान रक्तवर्ण हो जाता है। उस समय कटोरी निकाल रक्तवर्ण स्थानको तिरछा-तिरछा चीर दे और अतिशीघ्र पहले-की तरह फिर कटोरी लगाये। धीरे-धीरे कटोरीके भीतर रक्त निकल आता है। प्रयोजनमत रक्त निकल जानेसे कटोरीको हटा क्षतस्थानपर लिपट वस्त्र लपेट देना चाहिये। अधिक रक्त निकालना आवश्यक होनेसे दो-तीन कटोरियां लगानी पड़ती हैं।

पश्चिम-देशके कञ्जड़ शीशेकी कटोरी नहीं, सींगी लगाते हैं। महिषके शृङ्गको दोनो ओरसे छेद लेते हैं। शरीरके किसी स्थानपर अल्प चीरकर शृङ्गको मोटी ओर लगा देते हैं। पीछे दूसरी ओर मुंहसे सांसको ऊपर खींच शरीरका रक्त निकाल लेते हैं। जोंक लगानेसे पहले शरीरका उपरिभाग अच्छीतरह परिष्कृत करे। फिर कपड़ेसे जोंकका अङ्ग पोंछ डाले। शेषको किसी ग्लास या प्यालेमें रख चर्मपर

उलटकर लगानेसे जोंक चिपक जाती है। चर्मको कुछ चीर डालनेसे भी उस स्थानपर जोंक लगानेमें कष्ट नहीं पड़ता। जोंक छुट जानेसे क्षतस्थानपर स्वेद या अलसीका प्रलेप चढ़ता, जिससे और भी किञ्चित् रक्त निकल आता है। किन्तु अधिक रक्तस्राव होनेसे क्षतस्थानपर मकड़ीका छोटा जाला रख या काष्टिक लगा देना चाहिये। अन्तमें उस स्थानको वस्त्रसे बांध देते हैं।

दुर्बल व्यक्ति, बालक, गर्भवती स्त्री और पीड़ा विशेषसे सहज ही निर्बल हो जानेवाले रोगीका रक्त-मोक्षण करना न चाहिये। किन्तु विशेष आवश्यक आनेपर सावधानसे यत्सामान्य रक्त निकाल लेते हैं।

असृज् (सं० क्ली०) अस्यते क्षिप्यते इतस्ततो अन्य-नाड़ीभिः, अस ऋजि—यद्वा न सृज्यते अन्यरङ्गवत् शरीरेण सममेव जातत्वात्, सृज्-क्विप्। १ रक्त, खून। अमरकोषमें असृज्के यह पर्याय लिखे हैं,—रुधिर, लोहित, अस्र, रक्त, क्षतज, शोणित। २ मङ्गलग्रह। रक्तवर्ण रहनेसे मङ्गलग्रह असृज् कहलाता है। ३ कुङ्कुम, केसर। ४ विष्कुम्भसे षोड़श योग। असृज् योगमें जन्म लेनेसे मनुष्य धनी कुत्सित और दुरात्मा होता है। वह विदेश जाता और महाप्रलोभी बलवान् निकलता है।

असृण (सं० क्ली०) स्वर्णगैरिक, सोनगेरू।

असृणि (सं० त्रि०) अप्रतिहत, बेरोक, जो रोका न गया हो।

असृत (सं० त्रि०) १ असिद्ध, जो तैयार न हो। २ अपक्व, कच्चा, जो पका न हो।

असृग्मिश्र (सं० त्रि०) रक्तसे आच्छादित वा मिश्रित, खून आलूदा, जो खूनसे भरा हो।

असृङ्मुख (दे० त्रि०) नृशंस मुख-विशिष्ट, खूनी दहनवाला, जिसके खूनी मुंह रहे।

असृपाट (सं० पु०) असृपाटी देखो।

असृक्पाटी (सं० स्त्री०) असृजो रक्तस्य पाटी गमन-मनया रीत्या पृषो० साधु। रक्तधारा, खूनका दरया।

असृष्ट (सं० त्रि०) १ अरचित, जो बनाया न गया हो। २ अप्रदत्त, जो बंटा न हो। ३ प्रवाहित, जारी, जो रोका न गया हो।

असृष्टान्न (सं० त्रि०) अन्नको न बांटनेवाला, जो अनाज न देता हो।

असेग (हिं० वि०) असह्य, बरदाश्त न होनेवाला, जो सहा न जाता हो।

असेचन, असेचनक देखो।

असेचनक (सं० त्रि०) न सिच्यति मनो ऽस्मात्, सिच् अपादाने ल्युट् संज्ञायां कन्—यद्वा सिच्यति मनस्तोष-यति, सिच् कर्तरि ल्युट् स्वार्थे कन्; नास्ति सेचनकः मनस्तोषको यस्मात्, नञ् ५-बहुव्री०। १ अत्यन्त प्रियदर्शन, निहायत खूबसूरत, जिसे देखनेसे पेट न भरे। २ सेकशून्य, बेसींच। (क्ली०) सेचनं सेकः, स्वार्थे कन् अभावे नञ्-तत्। ३ सेकका अभाव, सिंचायीका न होना।

असैन्य (वै० त्रि०) १ सैन्यके अयोग्य, फौजके नाका-बिल। २ आघात न करनेवाला, जो ज़ख़्म न देता हो।

असेरी—बम्बई प्रान्तके कोङ्कण जिलेका एक ग्राम। यहां एक पहाड़ी किला बनी, जिसमें एक छोटी गुफा खुदी है।

असेवन (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। २ सेवाका अभाव, शुश्रूषाका न होना, खदम-ताबेदारी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। सेवाशून्य, ताबेदारी न करनेवाला।

असेवित (सं० त्रि०) १ अनपेक्षित, विस्मरित, खयाल न किया हुआ, जो भूलमें पड़ गया हो। २ लुप्तव्यव-हार, मतरूक, जो छूट गया हो।

असेवितेश्वरद्वार (सं० त्रि०) धनियोंके द्वारपर बैठके राह न देखनेवाला, जो बड़े आदमियोंके दरवाजे पर नौकरी या याच्ञाके लिये ठहरता न हो।

असेव्य (सं० त्रि०) १ सेवाके अयोग्य, जो ताबेदारी किये जानेके लायक न हो। २ अभ्यासके अयोग्य, जो काममें लानेके लायक न हो।

असेसर (अं० पु०) सभ्य, सभासद, सालिस, शामिल, पञ्च। Assesor फौजदारीका मुकद्दमा फैसल करने-में जजको राय देनेके लिये असेसर चुना जाता है।

असैना (हिं० पु०) वृक्षविशेष, कोई पेड़। इसकी लकड़ी बहुत मज़बूत होती है।

असैला (हिं० वि०) शैलीपर न चलनेवाला, बेक़ायदा, जो राहसे जाता न हो।

असो, आसौ (हिं० क्रि० वि०) वर्तमान वत्सर, इस साल।

असोक (हिं०) अशोक देखो।

असोकी (हिं० वि०) शोकशून्य, अफ़सोस न करनेवाला।

असोच (हिं० वि०) शोच न करनेवाला, जिसे फ़िक्र न रहे।

असोज (हिं० पु०) आश्विन मास, क्वारका महीना।

असोस (हिं० वि०) शुष्क न होनेवाला, जो सूखता न हो।

असोसियेशन (अं० क्ली०) १ सङ्गम, संसर्ग, साहचर्य, हमनशीनी, साथ, मिलाप। २ सभा, समाज, पंक्ति, परिषद्, मजलिस, अञ्जुमन, जमात। Association.

असौंध (हिं० स्त्री०) दुर्गन्ध, बदबू।

असौच, अशौच देखो।

असौनामन् (हिं० त्रि०) ऐसे-वैसे नामवाला, जिसके नामका ठिकाना न रहे।

असौन्दर्य (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ सौन्दर्यका अभाव, बदसूरती, भोंड़ापन। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ सौन्दर्यशून्य, बदशक्ल, भोंड़ा।

असौम्य (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। १ सौन्दर्यशून्य, बदसूरत, भोंड़ा। २ अप्रिय, नागवार, डरावना।

असौम्यस्वर (सं० त्रि०) असौम्यः कुत्सितः स्वरो यस्य, बहुव्री०। काककी तरह मन्द स्वरयुक्त, कर्कश स्वरयुक्त, कांव-कांव करनेवाला, जो बड़बड़ाता हो।

असौष्ठव (सं० क्ली०) सुष्ठु भवम्, सुष्ठु-अण् नञ्-तत्। १ सौन्दर्यका अभाव, बदसूरती, भोंड़ापन। २ अयोग्यता, नाक़ाबिलियत। ३ अलङ्कार शास्त्रमें आरदशा विशेष। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ४ सौष्ठवरहित, बदसूरत।

अस्क (हिं० पु०) १ बुलाक, नाकमें पहननेका लटकन। नैनीतालकी ओर लटकनदार जो छोटीसी नथनी पहनी जाती, वही अस्क कहाती है।

२ मन्द्राज प्रान्तके गञ्जाम ज़िलेकी एक ज़मीन्दारी। इसका क्षेत्रफल १६० वर्गमील है। पहले यह गुमसूर राज्यका एक अंश रही। २ मन्द्राज प्रान्तके गञ्जाम ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा १८° ३६´ ३५´´ उ० और द्राघि० ८४° ४२´ ६´´ पू० पर अवस्थित है। गुमसूर यहांसे ५ कोस दक्षिण पड़ता है। ऋषिकुल्या और महानदीके सङ्गमपर इस नगरका दृश्य विद्यमान है। नगरके पास ही ऋषिकुल्या नदीपर १८ वित्ते लम्बा इमारती पुल बना है। अस्कमें ज़मीन्दारीका हेडक्वार्टर होनेसे उसके प्रभु निवास करते हैं। नगरमें छोटी कचहरी, क़ैदखाना, थाना और डाकघर बना है। सन् १७२५-३६ ई०को गुमसूर विद्रोह उठनेपर सरकारी सेनाने कुछ दिनके लिये इसे अधिकार कर लिया था। इसकी चारो तरफ उपजाऊ भूमि विद्यमान है। गन्नेकी खेती अधिक होती है। इसके निकट ही जो चीनीके कारखाने हैं, उनमें हज़ारों आदमी काम करते और लाखों रुपयेका माल बनाते हैं।

अस्कन्दगिरि—युक्तप्रदेश-बांदाके एक कवि। इनका जन्म सन् १८५८ ई०में हुआ था। यह गोसाईं नवाब हिम्मत बहादुरके वंशज रहे। शृङ्गाररसकी कविता इनका प्रधान लक्ष्य थी। 'अस्कन्दविनोद' नामक काव्यग्रन्थमें इन्होंने अपना चातुर्य प्रकट किया है।

अस्कन्दित (सं० त्रि०) अचरित, अप्रतिहत, जो गिरा न हो।

अस्कन्दितव्रत (सं० त्रि०) व्रतशील, अहदका सच्चा, बातका धनी।

अस्कन्न (वै० त्रि०) स्कन्द-क्त, नञ्-तत्। १ अचरित, जो बिखरा न हो। २ अनाच्छादित, जो ढंका न हो। ३ स्थायी, पायदार।

अस्कम्भन (वै० त्रि०) स्कम्भ-ल्युट्, नञ्-तत्। १ बोधका अभाव, नासमझी। २ स्तम्भ वा साहाय्यका अभाव, सहारेका न मिलना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ बोधशून्य, नासमझ।

अस्कृधोयु (वै० त्रि०) कृती च्छेदने बाहु० कु तकारस्य धकार:। कृधु ह्रस्वनाम। नञ् पूर्वं धातो: अकार: उपजन:, धुशब्दस्य धो भाव:—यद्वा नञ् पूर्वात् करोतेर्निष्ठायामकृतशब्दस्य अस्कभाव:। दधातेर्भ्रियतेर्वा बाहुलकात् उसि प्रत्यय:, णित्वाद् युगागम: धकारस्य धोभाव:। (निरुक्त) अह्रस्व, अनल्प, अविच्छिन्न, बड़ा, भारी, बहुत, ज़्यादा, जो कटा न हो। "अस्मे धत्त यदसदस्कृधोयु यूयं।" (ऋक् ७।५३।११)

अस्खलित (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ स्खलनशून्य, जो फिसल न पड़ता हो। २ अप्रमत्त, जो मतवाला न हो। ३ स्थायी, मज़बूत, जो हिला न हो।

अस्खलितप्रयाण (सं० त्रि०) अग्रसर बननेमें स्खलित न होनेवाला, जो मज़बूतीसे क़दम बढ़ा रहा हो।

अस्त (सं० पु०) अस्यन्ते सायं प्रातर्वा सूर्यस्य चान्द्रस्य वा किरणा यत्र, अस् क्षेपणे आधारे क्त। १ पश्चिमाचल, अस्तपर्वत। २ सूर्यास्त, ग़ुरूब-आफ़ताब। ३ ज्योतिषोक्त लग्नसे सप्तमस्थान। समग्र ग्रह अपने लग्नसे सप्तम स्थानपर पहुंचकर अस्त हो जाते हैं। (क्ली०) ४ गृह, मकान्। ५ मृत्यु, मौत। ६ दर्शनका अयोग्यत्व, देख न पड़नेकी हालत। (त्रि०) ७ क्षिप्त, फेंका हुआ। ८ अवसित, निकाला हुआ। ९ अवसानप्राप्त, ख़तम। १० निरस्त, हटाया हुआ। ११ प्रेरित, जो रवाना कर दिया गया हो। (अव्य०) १२ गृहमें, मकान् पर।

अस्तक (सं० पु०) अस्तं अपुनरावृत्तिं अवसानं वा करोति, अस्त-णिच्-ण्वुल्। १ निर्वाणमोक्ष। (वै० क्ली०) २ गृह, मकान्।

अस्तकोप (सं० त्रि०) विगतकोप, जो ग़ुस्सा करके ठण्डा पड़ गया हो।

अस्तग (सं० त्रि०) अस्तमदर्शनं पश्चिमाचलं वा गच्छति, अस्त-गम-ड ६-तत्। अदृश्य, सूर्यकी किरणसे आच्छन्न, पश्चिमाचलगत, डूबा हुआ, जो बैठ गया हो।

अस्तगत, अस्तग देखो।

अस्तगमन (सं० क्ली०) अस्तस्यादर्शनस्य गमनं प्राप्ति:, ६-तत्। डूब जानेकी हालत, ग़ुरूब। ग्रह सकलके पहले किसी राशिमें रह पीछे उसके सप्तम राशिपर उदय एवं अदृश्य होनेको अस्तगमन कहते हैं। सूर्य चन्द्रादिके अस्ताचल जानेको भी अस्तगमन ही कहा जाता है।

अस्तगिरि (सं० पु०) पश्चिमाचल, मग़रबी पहाड़। इस पर्वतपर सूर्य जाकर डूबता है।

अस्तङ्गत (वै० त्रि०) १ डूबा हुआ, जो बैठ गया हो। २ नष्ट, बरबाद। ३ अवनत, झुका हुआ।

अस्तधी (सं० त्रि०) निर्बुद्धि, अहमक़।

अस्तन (हिं०) स्तन देखो।

अस्तबल (अ० क्ली०) अश्वशाला, तवेला, घोड़साल। Stable.

अस्तब्ध (सं० त्रि०) अस्थायी, विचलित, नापायदार, जो ठहरा न हो।

अस्तब्धत्व (सं० क्ली०) अस्थायित्व, विचलित दशा, नापायदारी, घबराहट।

अस्तमती (सं० स्त्री०) अस्तमतति, अत-अच् गौरादि० ङीष्। शालपर्णीवृक्ष, सलूनका पेड़।

अस्तमन (सं० क्ली०) अन बाहु० भावे अप् अस्तं अदर्शनस्य अन: गति:। १ भूगोलकक्षामें आच्छादनहेतु सूर्यादिकी अदर्शनप्राप्ति, ज़मीन्‌की दूसरी ओर जानेसे आफ़ताब वग़ैरहका देख न पड़ना। अस्त सूर्यादेरदर्शनस्य अन: प्राप्तिर्यस्मिन् काले, बहुव्री०। २ सूर्यादिके अस्त होनेका समय, आफ़ताब वग़ैरहके डूबनेका वक़्त।

अस्तगमननक्षत्र (सं० क्ली०) अस्त होनेका नक्षत्र, जिस नक्षत्रपे किसी ग्रहका अस्त रहे।

अस्तमनवेला (सं० स्त्री०) सूर्यास्तका समय, जिस वक़्तपे आफ़ताब डूबे।

अस्तमय (सं० पु०) अस्तं ईयते गम्यतेऽस्मिन्, अस्तं इण एरजिति अच्। १ प्रलय, क़यामत। २ सूर्यादिका अदर्शन, आफ़ताब वग़ैरहका देख न पड़ना। ३ अन्य ग्रह सकलका सूर्यके साथ योग, दूसरे सितारोंका आफ़ताबसे मिल जाना।

अस्तमयन (सं० क्ली०) अस्तमय देखो।

अस्तमित (सं० त्रि०) डूबा या बैठा हुआ, जो डूब या बैठ गया हो।

अस्तमीके (वै० अव्य०) अस्तं माति: कीकन् धातोर्लोपश्च निपात्यते, अस्त प्राप्यतेऽस्मिन्। अन्तिकमें, घरपर, पास, नज़दीक।

अस्तर (फ़ा० पु०) १ भितल्ला, दोहरे कपड़ेके नीचे की तरह। २ दोहरे चमड़ेके नीचेकी तरह। ३ जमीन्, चन्दनका तेल। इससे अतर बनता है। ४ बारीक साड़ीके नीचे लगनेवाला वस्त्र। ५ नीचेका रङ्ग। इसपर दूसरा रङ्ग चढ़ता है। (हिं०) ६ अस्त्र, हथियार।

अस्तरकारी (फ़ा० स्त्री०) १ चूनेका रगड़ रगड़ कर चढ़ाया जाना। २ बनावट, साज़।

अस्तरण (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। स्तरणका अभाव, विस्तारका न होना, न फैलनेकी हालत।

अस्तवत् (सं० त्रि०) अवरोधित, निवारित, अटका हुआ, जो रोका गया हो।

अस्तव्यस्त (सं० त्रि०) आकुल, अव्यवस्थित, अस-व्यस्त, ख़राब-ख़स्ता, पसर-पसर, अटपटांग।

अस्तसङ्ख्य (सं० त्रि०) अगणित, बेशुमार।

अस्ता (वै० स्त्री०) १ आयुध, वाण, हथियार, तीर। (अव्य०) २ भवनमें, घरपर।

अस्ताग (सं० पु०) अर्हत् विशेष। यह उत्सर्पिणी युगके पन्द्रहवें अर्हत् रहे।

अस्ताघ (सं० त्रि०) अस्तं नष्टं अघं आविल्य यत्र, बहुव्री०। अति गभीर, निहायत गहरा।

अस्ताचल (सं० पु०) कर्मधा०। पश्चिमाचल, अस्त-पर्वत, जिस पहाड़पे आफ़ताब डूबे।

अस्ताचलावलम्बिन् (सं० त्रि०) अस्ताचलका अव-लम्ब लेनेवाला, जो अस्ताचलको पकड़े हो। सन्ध्याको डूबते समय सूर्य अस्ताचलावलम्बी कहाता है।

अस्ताद्रि, अस्ताचल देखो।

अस्तापुर—उड़ीसा प्रान्तके बालेश्वर जिलेका एक नगर। यहां एक सरकारी स्कूलमें परीक्षोत्तीर्ण विद्यार्थियोंको प्राथमिक अध्यापन कार्यकी शिक्षा दी जाती है।

अस्तावलम्बन (सं० क्ली०) क्षितिजके पश्चिम भाग-पर ग्रहका उदय, उफ़ुक़के मग़रबी हिस्सेपे सितारेका ठहराव।

अस्तावलम्बिन् (सं० त्रि०) अस्तका अवलम्ब लेने-वाला, जो डूब रहा हो।

अस्ति (सं० अव्य०) अस्-अ-तिप्। अस्तिनास्तिदिष्टं मतिः। पा ४।४।६०। १ होके, ठहरकर। (स्त्री०) २ स्थिति, विद्यमानता, हस्ती, हाज़िरी।

अस्तिकाय (सं० पु०) अस्तिकायः स्वरूपं यस्य, बहुव्री०। जैनमतसिद्ध विद्यमान-स्वरूप पदार्थ विशेष। हालत, सूरत। अस्तिकाय पांच प्रकारका होता है,—१ जीवास्तिकाय, २ पुद्गलास्तिकाय, ३ धर्मास्ति-काय, ४ अधर्मास्तिकाय और ५ आकाशास्तिकाय। शाङ्करभाष्यमें उपरोक्त जैन अस्तिकायका मत काट दिया गया है।

अस्तिक्षीर (सं० त्रि०) दुग्धविशिष्ट, दूधसे लबरेज़।

अस्तिक्षीरा (सं० स्त्री०) अस्ति क्षीरं यस्याः, बहुव्री०। सुपधिकारेऽस्तिक्षीरादीनां बहुव्रीहिर्वक्तव्यः। (काशिका) टाप्। बहु दुग्धवती गो, खूब दूध देनेवाली गाय।

अस्तित्व (सं० क्ली०) अस्ति भावः त्व। विद्यमानता, मौजूदगी, हाज़िरी।

अस्तिनास्ति (सं० अव्य०) कदाचित्, शायद।

अस्तिनास्तिता (सं० स्त्री०) अस्तिनास्तित्व देखो।

अस्तिनास्तित्व (सं० क्ली०) सन्दिग्ध विद्यमानता, मशकूक मौजूदगी।

अस्तिप्रवाद (सं० क्ली०) जैन पूर्व विशेष, जैनियोंके किसी पूर्वका नाम। जैनियोंके चौदह पूर्वों वा प्राचीन लेखोंमें चौथेको अस्तिप्रवाद कहते हैं। पूर्व देखो।

अस्तिमत् (सं० त्रि०) अस्ति विद्यमानं धनमस्य, मतुप्। धनी, दौलतमन्द, रुपयेवाला। (स्त्री०) ङीप्। अस्तिमती।

अस्तिस् (सं० स्त्री०) जरासन्धसुता कन्या, प्राप्तिकी भगिनी और कंसकी पत्नी।

अस्तीन् (हिं०) आस्तीन देखो।

अस्तु (सं० अव्य०) अस भावे तुन्। १ ऐसा हो हो, जो चाहे सो हो, ख़ैर, भला, क्या मुज़ायका है। २ फिर, आगे।

अस्तुङ्कार (सं० त्रि०) प्रबल, समर्थ, ताक़तवर, ज़ोरदार, दवा-जैसा।

अस्तुत (वै० त्रि०) १ अप्रशंसित, जो तारीफ़के क़ाबिल न हो। २ स्तोत्रशून्य, जो भजनमें गाया न गया हो। (हिं०) ३ प्रशंसित, मुसतहसिन।

अस्तुति (सं० पु०) १ प्रशंसाका अभाव, अपकीर्ति, धिक्कारत, थुड़ू-थुड़ू। (हिं०) २ स्तुति,प्रशंसा तारीफ़।

अस्तुरा (फ़ा० पु०) क्षुर, छुरा। इससे बाल बनाते हैं।

अस्तृत (वै० त्रि०) अप्रतिहत, ज़बरदस्त, अजीत।

अस्तृतयज्वन् (वै० त्रि०) अदम्य रूपसे यज्ञ करनेवाला, जो यज्ञ करनेमें थकता न हो।

अस्तेन (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ साधु, भला, अच्छा, जो चोर न हो। (क्ली०) २ स्तेयका अभाव, ईमान्दारी, चोरी न करनेकी हालत।

अस्तेय (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। स्तेय वा चौर्यका अभाव, ईमान्दारी, साहूकारी। पातञ्जलसूत्रमें लिखा, कि अहिंसा, सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य और परिग्रह यम कहाता है।

अस्तोभ (सं० त्रि०) स्तुभ्यते येन, स्तुभ करणे घञ्, नास्ति स्तोभः हुंफड़ादिः निरर्थकः शब्दो यत्र। अनर्थक शब्दशून्य, बेफ़ायदा आवाज़ न रखनेवाला।

अस्त्र (वै० क्ली०) गृह, घर, मकान।

अस्त्रान (सं० क्ली०) स्त्रै भावे क्त, नञ्-तत्। १ निन्दा, धिक्कारत, बुरायी। २ भर्त्सन, झाड़-फटकार। (त्रि०) ३ असंहत, जो मिला न हो।

अस्त्र (सं० क्ली०) अस्यते क्षिप्यते, अस् क्षेपणे ष्ट्रन्। १ क्षेपणीय वाणादि, फेंककर मारा जानेवाला तीर वग़ैरह। २ आयुध, हथियार। करणे ष्ट्रन्। ३ चाप, कमान्। ४ रिपु कर्तृक प्रहार-साधन खड्गादि, ढाल वग़ैरह। ५ करवाल, तलवार। ६ व्याघ्रनख, शेरका नाख़ून्। ८ चिकित्सास्त्र, नश्तर वग़ैरह।

अस्त्रकण्टक (सं० पु०) अस्त्रं कण्टक इव। वाण, तीर, कांटे-जैसा हथियार। अग्रभाग कण्टक-जैसा रहनेसे वाणका यह नाम पड़ा है।

अस्त्रकार (सं० त्रि०) अस्त्रं करोति निर्मिमीते; अस्त्र-कृ-अण् उप० समा०। अस्त्रनिर्माणकर्ता, हथियार बनानेवाला।

अस्त्रकारक, अस्त्रकार देखो।

अस्त्रकारिन्, अस्त्रकार देखो।

अस्त्रक्षेपक (सं० त्रि०) वाण फेंकनेवाला, जो तीर चला रहा हो।

अस्त्रचला (हिं० वि०) अस्त्र फेंकनेवाला, जो तीर मार रहा हो।

अस्त्रचिकित्सक (सं० पु०) अस्त्रवैद्य, जर्राह, नश्तर लगानेवाला तबीब।

अस्त्रचिकित्सा (सं० स्त्री०) अस्त्रेण चिकित्सा, ३-तत्। अस्त्रादिसे क्षतव्रणादिका प्रतीकार, जर्राही, चीरफाड़। यह आठ भागमें विभक्त है,—१ छेदन चीरना, २ भेदन—फाड़ना, ३ लेखन—खुरचना, ४ वेधन-चुभाना, ५ मेषण-धुलायी, ६ आहरण-काटछांट, ७ विस्रावण—क्षतके पूय आदिको बहा देना और ८ सिलायी-ज़ख़ममें टांके लगाना।

अस्त्रजित् (सं० पु०) अस्त्रं तदाघातजं व्रणं जयति तन्निवारकत्वात्, अस्त्र-जि-क्विप् तुक्। कवाटवक्रवृक्ष, कंटुवेका पेड़।

अस्त्रजीव, अस्त्रजीविन् देखो।

अस्त्रजीविन् (सं० पु०) अस्त्रेण तद्व्यापारेण जीवति, णिनि। अस्त्र द्वारा युद्धादिकर जीविका चलानेवाला, जो हथियारसे लड़ अपनी जिन्दगी बसर करता हो, योद्धा, सिपाही।

अस्त्रधारक, अस्त्रधारिन् देखो।

अस्त्रधारण (सं० क्ली०) अस्त्रका अवस्थान, हथियारका बांधना।

अस्त्रधारिन् (सं० त्रि०) अस्त्रं धरति धारयति वा, अस्त्र-धृ चुरा० धारि वा णिनि। अस्त्रधारक, हथियार बांधनेवाला।

अस्त्रनिवारण (सं० क्ली०) प्रहारसे रक्षाका उपाय, हथियारकी चोटका बचाव।

अस्त्रमन्त्र (सं० पु०) अस्त्राणां विप्रकर्षाकर्षयोर्मन्त्रः, ६-तत्। तन्त्रोक्त फट् मन्त्र, अस्त्रप्रयोग एवं प्रक्षिप्त अस्त्रके आकर्षणका मन्त्र।

अस्त्रमार्ज (सं० पु०) अस्त्रं मार्ष्टि, अस्त्र-मृज-अण्, उप० समा०। शाणकर, सैक़लगर, हथियार पर शान रखनेवाला, जो हथियार साफ़ करता हो।

अस्त्रमार्जक, अस्त्रमार्ज देखो।

अस्त्रयुद्ध (सं० क्लो०) अस्त्रद्वारा युद्ध, हथियारकी लड़ाई।

अस्त्रलाघव (सं० क्लो०) अस्त्रनैपुण्य, हथियार चलानेकी सफ़ाई।

अस्त्रविद् (सं० पु०) अस्त्रं तत्प्रयोगादि वेत्ति, अस्त्र-विद्-क्विप्, ६-तत्। अस्त्रप्रयोगादिमें अभिज्ञ, जो हथियार खूब चलाता हो।

अस्त्रविद्या (सं० स्त्री०) ६-तत्। अस्त्रक्षेपण एवं आकर्षणज्ञापक विद्या, अस्त्रक्षेपणादिका ज्ञान, जङ्गका इल्म। २ अस्त्रविद्याबोधक शास्त्र, जिस किताबमें लड़ायी सिखानेकी बातें रहें।

अस्त्रविद्दस्, अस्त्रविद् देखो।

अस्त्रवृष्टि (सं० स्त्री०) वाणकी वर्षा, तीरोंकी बारिश।

अस्त्रवेद (सं० पु०) विद्यते ज्ञायते येन, विद् करणे घञ्, अस्त्रस्य तत्क्षेपणादेः वेदः शास्त्रम्, ६-तत्। धनुर्वेद, जिस शास्त्रमें हथियार चलानेकी तरकीबें रहें।

अस्त्रवैद्य (सं० पु०) अस्त्रचिकित्सक, जर्राह, नश्तर लगानेवाला हकीम।

अस्त्रशस्त्र (सं० क्लो०) सकल प्रकार आयुध, सब क़िस्मका हथियार, तलवार बन्दूक वगैरह।

अस्त्रशाला (सं० स्त्री०) अस्त्रागार, सिलहख़ाना, हथियार रखनेकी जगह।

अस्त्रशिक्षा (सं० स्त्री०) सामरिक व्यायाम, जङ्गी कसरत, हथियार चलानेकी तालीम।

अस्त्रसायक (सं० पु०) अस्त्रं क्षेप्यं सायक इव। १ नाराचास्त्र। नाराचास्त्र वाणकी तरह चलनेसे अस्त्र-सायक कहाता है। अस्यते क्षिप्यते शत्रुरनेन, अस करणे ष्ट्रन् ततः कर्मधा०। २ सकल लौहमय वाण, लोहेका तीर।

अस्त्रहीन (सं० त्रि०) अस्त्रेण तत्प्रयोगेन वा हीनम्, ३-तत्। अस्त्रशून्य, अस्त्रव्यापारशून्य, बेहथियार, जो हथियार चलाना जानता न हो।

अस्त्रागार (सं० क्लो०) ६-तत्। आयुधागार, अस्त्रगृह, सिलहख़ाना, हथियार-घर।

अस्त्राघात (सं० पु०) ६-तत्। अस्त्रका आघात, अस्त्रका प्रहार, हथियारकी चोट।

अस्त्राहत (सं० त्रि०) ३-तत् अस्त्रद्वारा आहत, हथियारसे मारा गया।

अस्त्रि (वै० पु०) वाण मारनेवाला, जो शस्त्र स तीर चलाता हो।

अस्त्रिन् (सं० त्रि०) अस्त्रं धनुरस्त्रास्य इनि। धनुर्धर, शस्त्रधारी, तीर-कमान्से लड़नेवाला, जो हथियार बांधे हो।

अस्त्री (सं० स्त्री०) १ स्त्रीभिन्न, जो चीज़ औरत न हो। व्याकरणमें—स्त्रीलिङ्गको छोड़ पुंलिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग।

अस्त्रीक (सं० त्रि०) पत्नीरहित, स्त्रीशून्य, बे-औरत, जो औरत रखता न हो।

अस्त्रैण (वै० त्रि०) अस्त्रीक देखो।

अस्थन्वत् (वै० त्रि०) अस्थिमय, हड्डीदार।

अस्थल (हिं०) स्थल देखो।

अस्थला (सं० स्त्री०) अप्सरस् विशेष, किसी परीका नाम।

अस्था (वै० स्त्री०) शतकोटि, ह्रादिनी, सेका, बिजली, गाज।

अस्थाग (सं० त्रि०) अस्थामस्थितिं गच्छति, अस्था-गम-ड। अगाध, अतलस्पर्श, निहायत गहरा।

अस्थान (सं० क्लो०) अप्राशस्त्ये नञ्-तत्। १ अप-कृष्ट स्थान, अयोग्य स्थान, ख़राब जगह। (त्रि०) अतलस्पर्शी, निहायत गहरा। (अव्य०) ३ अयुक्त रूपमे, बेमौक़े। (हिं० पु०) ४ स्थान, जगह।

अस्थाने (सं० अव्य०) स्थाने युक्तम्, नञ्-तत्। अयुक्तरूपसे, नाक़ाबिल तौरपर।

अस्थायिन् (सं० त्रि०) न तिष्ठति स्था-णिनि-युक्, नञ्-तत्। चञ्चल, शिताब, जल्द गुज़र जानेवाला। (स्त्री०) ङीप्। अस्थायिनी।

अस्थायी (हिं०) स्थायी देखो।

अस्थावर (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। १ जङ्गम, मनक़ूला, जो चल-फिर सकता हो। (हिं०) २ स्थावर, ग़ैर-मनक़ूला, जो चलता फिरता न हो।

अस्थि (सं० क्ली०) अस्यते अस (असिसञ्जिभ्यां क्थिन्। उण् ३।१५४) इति क्थिन्। हाड़, अस्थि शब्दके ये कई पर्याय देखे गये हैं,—कीकस, कुल्य, मेदोज। फलके बीज गुठलीको भी अस्थि कहते हैं।

भावप्रकाशके मतानुसार मेद शरीरके अग्निसे पकता है। उसके बाद वायुद्वारा शोषित होनेपर अस्थि पैदा होता है। हाड़ शरीरका सारभाग है। जैसे वृक्षका सारभाग वृक्षको, उसी तरह शरीरका सारपदार्थ हाड़ देहको रक्षा करता है। इसीसे शरीरका मांस और चमड़ा नष्ट हो जानेपर भी अस्थि नष्ट नहीं होता।

रासायनिक परीक्षा द्वारा मनुष्यके हाड़में सैकड़े पीछे ये सब चीजें पाई जाती हैं,—

जान्तवपदार्थ (जिलेटिन)	···	३३·३०	भाग।
फस्फेटचूर्ण	··· ···	५३·०४	,,
कार्बन चूर्ण	··· ···	११·३०	,,
फस्फेट अव मेग्नेशिया	···	१·१६	,,
सोडा और नमक ···	···	१·२०	,,

प्रथम अवस्थामें हाड़की बनावट मांसपेशी जैसी रहती है। इसमें छोटे-छोटे छेद एक साथ मिले रहते हैं। परन्तु शिरकी खोपड़ी और कन्धेके हाड़में वैसा नहीं रहता। क्रमसे इस मांसपेशीमें पार्थिव पदार्थ, फस्फेटचूर्ण और कार्बन चूर्णके जमनेसे वह सख्त हो जाता है। किसी प्रकारके जलमिश्र द्रावकमें हाड़ भिगाकर रखनेसे पार्थिव पदार्थ गल और वह फिर कोमल एवं स्थितिस्थापक हो जाता है। हाड़में अत्यन्त ताप लगानेसे जान्तव पदार्थ नहीं रहता, इसीसे जरासा हिला देनेपर वह चूर-चूर हो जाता है। अतएव दोनों प्रकारके पदार्थोंके न रहनेसे हाड़ कठिन होना कैसे सम्भव है।

बचपनके हाड़में पार्थिव पदार्थ कम रहता है, इसीसे खेलते-खेलते लड़कोंके इतना गिर पड़नेपर भी हड्डी नहीं टूटती। फिर परिपक्व वयसमें थोड़ी सी चोट लग जानेसे ही बहुत पीड़ा होती और सहज ही हाड़ टूट जाता है।

शिशुओंको यथेष्ट दुग्ध द्वारा लालन पालन न करनेसे उनके हाड़में पार्थिव पदार्थ कम पैदा होता, सुतरां वह कोमल हो जाता है। इसीसे कितने ही रोगी बच्चोंके उठकर चलने फिरनेपर शरीरके भारसे पैर टेढ़े पड़ते हैं। इसका नाम है रिकेट्स रोग। दरिद्रोंके घरमें ही यह अधिक देखा जाता है।

अस्थि ही शरीर निर्माणका प्रधान उपादान है। देहको प्रधान प्रधान इन्द्रियां रह सकनेके लिये ही अस्थिमें गह्वर निर्मित होता और देह सुकौशलसे चालित होनेके लिये कोमलांश इसके साथ मिलता है। हाड़ श्वेतवर्ण, कठिन और स्थितिस्थापक है। हाड़का उपरीभाग कठिन, संयत और चिकना तथा भीतरी भाग ठीक मधुमक्खीके छत्ते जैसा छिद्र-युक्त है।

शरीरके हाड़ चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं, यथा—दीर्घास्थि, क्षुद्रास्थि, प्रशस्तास्थि एवं विषमास्थि। शरीरकी ऊर्द्ध एवं अधःशाखामें दीर्घास्थि है। ये सब हाड़ खोखले हैं। इनके भीतर मज्जा रहती है।

सारे कङ्कालमें २८४ पृथक् पृथक् हाड़ हैं। यथा—मेरुदण्डमें २६, करोटी ८, कर्णास्थि ६, मुखास्थि १४, पञ्जर एवं वक्षोस्थि २६, ऊर्द्धशाखा ६४, अधःशाखा ६०। इनके सिवा दांत, प्यातिल्ला सेसामेद एवं अन्यान्य वार्मियन अस्थियां ८० हैं।

हमारे देशके शल्यतन्त्र मतसे मनुष्यके शरीरमें सर्वसमेत ३०० अस्थि हैं। इनमें दो हाथों और दो पैरोंके १२०, दोनों पार्श्व, कटिदेश, वक्षःस्थल, पृष्ठ एवं उदरमें ११७, ग्रीवाके ऊपर ६३—यही ३०० अस्थि हैं।

पैरकी प्रत्येक अंगुलीमें तीन-तीन करके १५, पदतलमें ६, कूर्चा (भ्रूमध्य)में २, एड़ीमें १, गुल्फमें २, जानुमें १, उरुदेशमें १, इसी तरह दूसरे पैरमें भी ३०, अस्थि रहते हैं सुतरां हाथ और पैरमें सब मिलाकर १६० हुये।

प्रत्येक पार्श्वमें छत्तीस छत्तीस करके ७२, लिङ्ग वा योनिमें १, गुह्यमें १, दोनों नितम्बोंमें २, पृष्ठवंशमें १, वक्षःस्थलमें ८, पृष्ठमें ३० और नेत्रद्वयमें २ अस्थि हैं।

ग्रीवादेशमें ८, कण्ठनालीमें ४, दोनों हनुओंमें २,

दन्तमें ३२, नासिकामें ३, तालुमें १, गण्डस्थलमें २, दोनों कानोंमें २, शङ्ख (ललाट)में २ और मस्तकमें ६ अस्थि हैं।

शल्यतन्त्रमें ये सब अस्थि पांच श्रेणियोंमें विभक्त हैं। यथा—१ तरुणास्थि, २ कपालास्थि, ३ रुचकास्थि, ४ वलयास्थि, ५ नलकास्थि।

अक्षिकोष, नासिका, कर्ण एवं ग्रीवामें तरुणास्थि, मस्तक, शङ्ख, तालु, गण्डस्थल, स्कन्ध, जानु एवं नितम्बमें कपालास्थि, दन्तमें रुचकास्थि; हस्त, पद, पार्श्व, पृष्ठ, वक्ष और उदरमें वलयास्थि; हस्तपदके अङ्गुलितल, कूर्चदेश, मणिबन्ध, बाहुद्वय एवं जङ्घामें नलकास्थि है।

शरीरके किस किस स्थानमें कितनी हड्डियां है और उनका गठन आदि कैसा है, इसका विस्तारित विवरण उस उस शब्दमें देखो।

मनुष्य प्रभृतिके कुछ हाड़ोंके भीतर मज्जा है। अनेक मछलियोंके कांटोंके अन्दर छेद नहीं होता। हाथी आदि, कुछ जानवरोंके शिरके हाड़में वायु रहता है। इच्छा करने हो से हमलोग निश्वास खींच फेफड़ेको वायुसे भर सकते हैं। फेफड़ा वायुसे परिपूर्ण रहनेपर जलमें डूब जाते भी शरीर ऊपर उतरा आता है। पक्षी भी इसीतरह निश्वास खींच कर हाड़के भीतर वायु भर सकते हैं। इसीसे इच्छा करते ही वे सब ज़मीनपरसे अनायास ही ऊपर उड़ जाते हैं।

दुर्बल मनुष्यके लिये यदि मांसका शोरबा पकाया जाय, तो उसमें हाड़ रहना आवश्यक है। कारण, हाड़का जिलेटिन शोरबेके साथ मिल जानेसे वह लघु पथ्य होता है। जिलेटिन पुष्टिकर है, कि नहीं इसमें मतभेद है। परन्तु यह स्पष्ट देखा जाता है, कि कुत्ते हाड़ खाकर हृष्टपुष्ट होते हैं। फिर यह भी सुननेमें आता है, कि दुर्भिक्षके समय नरवे और स्युडिनके आदमी मछलीका कांटा और अनेक जन्तुओंका हाड़ खाकर प्राणधारण करते हैं।

सचराचर हाड़की छुरी, कङ्घी आदि और नाना प्रकारके अस्त्रोंकी मूठ बनती है। असभ्य लोग हाड़से तीर और बल्लमकी गांसी तय्यार करते हैं। दक्षिण अमेरिका और तातारको कोई कोई जाति लकड़ीके अभावमें हाड़ जलाकर आग बनाती है। उसी आगसे उसकी रसोई आदिका काम चलता है। भूमिमें अस्थिभस्म डालनेसे उसकी उर्वरताशक्ति बढ़ती है। हाड़के कोयलेसे चीनी आदि कितनी ही चीजें साफ़ की जाती हैं।

अस्थिक, अस्थि देखो।

अस्थिकुण्ड (सं० क्लो०) नरकविशेष। इस नरकमें हड्डी ही हड्डी देखायी देती है। जो लोग गयामें विष्णुपदपर पिण्डदान नहीं करते, वह अस्थिकुण्ड-नरकमें डाले जाते हैं। (ब्रह्मवैवर्त्त)

अस्थिकृत् (सं० पु०) करोति, कृ-क्विप् अस्थ्नः कृत्, ६-तत्। अस्थिकारक मेदोधातुविशेष, मग़ज़, हड्डीका गूदा। वैद्यशास्त्रमतमें मेदोधातुसे अस्थि बनता है।

अस्थिगतज्वर (सं० पु०) अस्थिमें पहुंचा हुआ ज्वर, हड्डीका बुख़ार। भेद एवं अस्थिका कूजन, श्वास, विरेक, छर्दि और गात्रोंका विक्षेपण अस्थिगतज्वरमें होता है। (वैद्यकनिघण्टु) इसका प्रतिकार वामित्व औषध, वस्तिकर्म और अभ्यङ्गोद्वर्तन है।

अस्थिग्रन्थि (सं० पु०-स्त्री०) ग्रन्थिरोग, गांठकी बीमारी।

अस्थिच्छलित (सं० क्लो०) सुश्रुतोक्त काण्डभग्न नामक रोग विशेष, शिकस्तगी-उस्तुख़ान, हड्डी-टूटन।

अस्थिज (सं० पु०) अस्थ्नो जायते, अस्थि-जन-ड। १ अस्थि-धातुजात मज्जा, मग़ज़, गूदा। २ वज्र, बिजली, गाज। (वै० त्रि०) ३ अस्थिमें उत्पन्न, जो हड्डीसे पैदा हो।

अस्थिजननी (सं० स्त्री०) १ वसाधातु, चर्बी। २ मेदोधातु, मग़ज़, गूदा।

अस्थित (सं० त्रि०) चञ्चल, नापायदार, जो ख़ामोश न खड़ा हो।

अस्थिति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ स्थितिका अभाव, अस्थैर्य, जगह या हालतकी अदममौजदगी। २ मर्यादाका अभाव, हदका न होना। (त्रि०) नञ्-

बहुव्री०। ३ मर्यादाशून्य, बेहद। ४ स्थैर्यरहित, डावांडोल।

अस्थितुण्ड (सं० पु०) अस्थीव कठिनं तुण्डमस्य। पक्षिविशेष, कोई चिड़िया। इसके मुंहमें हड्डी ही हड्डी रहती है।

अस्थितेजस्, अस्थिजत देखो।

अस्थितोद (सं० पु०) १ अस्थिकी सूचीविद्धवत् वेदना, हड्डीमें सूई चुभने-जैसा दर्द। २ अस्थिपीड़ा, हड्डी को बीमारी।

अस्थित्वच् (सं० स्त्री०) अस्थिकी त्वक्, हड्डीके ऊपरको झिल्ली।

अस्थिधन्वन् (सं० पु०) अस्थिमयं धनुरस्य, अनङ् समा०। शिव, हड्डीकी कमान् बांधनेवाले शङ्कर। अस्थिनिर्मित धनुष रखनेसे शिवको अस्थिधन्वा कहते हैं।

अस्थिपञ्जर (सं० पु०) अस्थिपञ्जर इव। १ शरीरस्य अस्थिसमूह, जिस्मकी हड्डीका जखीरा। २ पिञ्जराकार कङ्काल, ठठरी। कङ्काल देखो।

अस्थिप्रक्षेप (सं० पु०) मृतस्य अस्थ्नां गङ्गायां यथाविधि प्रक्षेपः, ६-तत्। सत्कार बाद मृत व्यक्तिके अस्थिविधानका क्रमसे गङ्गामें समर्पण किया जाना, हड्डीका गङ्गामें सेराना।

अस्थिफल (सं० पु०) पनसवृक्ष, कटहलका पेड़।

अस्थिभक्ष (सं० पु०) अस्थि भक्षयति, अस्थि चुरा० भक्ष-ण। १ कुक्कुट, कुत्ता। २ शृगाल, गीदड़। ३ अस्थिखानेवाली पक्षी, जो चिड़िया हड्डी निगल जाती हो।

अस्थिभक्षा (सं० स्त्री०) ओषधि विशेष, कोई जड़ी बूटी।

अस्थिभङ्ग (सं० पु०) अस्थ्नो भङ्गः, ६-तत्। १ अस्थिभञ्जन, शिकस्तगी उस्तुख्वान्, हड्डीटूटन। २ इसी नामका रोगविशेष, हड़फूटन।

अस्थिभुज्, अस्थिभक्ष देखो।

अस्थिभूयस् (वै० त्रि०) अस्थिमय, सूखा हुआ, जिसमें सूखकर हड्डी ही हड्डी रहे।

अस्थिभेद (सं० पु०) १ अस्थिभङ्ग, शिकस्तगी-उस्तख्वान्। २ अस्थिविशेष, किसी क़िस्मको हड्डी।

अस्थिभेदक (सं० त्रि०) अस्थि भङ्ग करनेवाला, जो हड्डी तोड़ता हो।

अस्थिमत् (सं० त्रि०) अस्थीनि सन्त्यस्य मतुप्। पृष्ठवंशविशिष्ट, जो हड्डी ही हड्डी रखता हो।

अस्थिमय (सं० त्रि०) अस्थ्नो विकारः मयट्। अस्थिनिर्मित, हड्डीका बना हुआ, जिसमें हड्डी ही हड्डी रहे।

अस्थिमर्म (सं० क्ली०) ६-तत्। अस्थिका मर्म, हड्डीका नाजुक मुकाम। यह अष्टसंख्यक होता है। कटिमें दो, नितम्बमें दो, अंशफलकमें दो और शङ्खमें दो अस्थिमर्म रहता है।

अस्थिमाला (सं० स्त्री०) अस्थिनिर्मिता माला। १ अस्थिनिर्मित जपको गुटिका, हड्डीसे बनी जप करनेकी माला। ६-तत्। २ अस्थिश्रेणी, हड्डीको कतार। ३ अस्थिसूत्र, हड्डीका हार।

अस्थिमालिन् (सं० पु०) अस्थिमाला सूत्रग्रथितास्थिसमूहोऽस्त्यस्य, अस्थिमाला इनि। शिव, हड्डीका हार पहननेवाले महादेव।

अस्थियुज् (सं० पु०) अस्थि युनक्ति, युज्-क्विन्। हड़जोड़का पेड़।

अस्थियोग (सं० पु०) भग्न अस्थिका संश्लेष, टूटी हड्डीका मिलान।

अस्थिर (सं० त्रि०) न स्थिरम्, नञ्-तत्। १ स्थिर न रहनेवाला, नापायदार, जो टिकता न हो। २ कम्पायमान, चञ्चल, चुलबुला, जो कांप रहा हो। ३ अनिश्चित, मुश्तबा, नामालूम। ४ अविश्वसनीय, नाक़ाबिल-एतबार, जो पक्का न हो। (हिं०) ५ स्थिर, टिका हुआ।

अस्थिरता (सं० स्त्री०) १ स्थिरताका अभाव, चाञ्चल्य, अनिश्चितता, नापायदारी, चुलबुलाहट, तग़ैयुर, डावांडोलपन। (हिं०) २ ठहराव, मज़बूती।

अस्थिरत्व (सं० क्ली०) अस्थिरता देखो।

अस्थिराङ्क्रिक (सं० पु०) हिन्ताल वृक्ष, गोलपट्टेका पेड़।

अस्थिवत् (सं० त्रि०) अस्थिमय,उस्तुख़ानी, हड्डीदार।

अस्थिविग्रह (सं० पु०) अति-श्रीणत्वात् अस्थि

मारो विग्रहो देहो यस्य, बहुव्री०। १ शिवके अनुचर भृङ्गी। इनके सूखे शरीरमें हड्डी ही हड्डी देख पड़ती हैं। (त्रि०) २ अतिक्षीण शरीर-युक्त, जो सूखकर लकड़ी बन गया हो।

अस्थिशृङ्खला (सं० स्त्री०) अस्थ्नां शृङ्खलेव योजनहेतुः। अस्थिसंहार, हड़जोड़।

अस्थिशृङ्खलिका, अस्थिशृङ्खला देखो।

अस्थिशेष (सं० त्रि०) अस्थिमात्रं शेषो यस्य, शाक० बहुव्री०। मांसादिशून्य, अतिकृश, निहायत लागर, बहुत दुबला, जिसके जिस्मपे हड्डी ही हड्डी देख पड़े।

अस्थिशोष (सं० पु०) अस्थिका निर्जलत्व और क्षय, हड्डीकी खुश्की और घटती।

अस्थिसंहार (सं० पु०) अस्थीनि संहरति संयोजयति, अस्थि-सम्-हृ-अण्। ग्रन्थिमान् वृक्ष, हड़जोड़का पेड़।

अस्थिसंहारक (सं० पु०) गरुड़ पक्षी, हड़गीला।

अस्थिसंहारिका (सं० स्त्री०) अस्थिसंहार देखो।

अस्थिसङ्घात (सं० पु०) अस्थिमेलनस्थल, हड्डीके जोड़की जगह। अस्थिसङ्घात अष्टादश होते हैं,— गुल्फमें पांच; जानु, वङ्क्षण, कटिदेश एवं मस्तकमें एक-एक।

अस्थिसञ्चय (सं० पु०) मृतस्य दाहानन्तरं अस्थ्नां सञ्चयः। शवदाहानन्तर चिताके अस्थिका संग्रह, मुर्दा जलाने बाद चिताको हड्डियोंका इकट्ठा करना। वैदिक समय अस्थि इकट्ठा कर ब्राह्मण मट्टीमें गाड़ देते थे। आज भी अग्निहोत्री ब्राह्मण और क्षत्रिय राजा ऐसा ही करते हैं। सुविधा पानेसे प्रायः सकल ही सञ्चित भस्म और अस्थिको गङ्गाजलमें छोड़ते हैं। संवर्तने लिखा है,—प्रथम, तृतीय, पञ्चम, सप्तम अथवा नवम दिन ज्ञातिके साथ चितासे अस्थिसञ्चय करना चाहिये। किसी स्थलमें द्वितीय दिन भी अस्थि-सञ्चयका विधान है। वैष्णव चतुर्थ दिवस अस्थिसञ्चय करते हैं। अन्त्येष्टि शब्द देखो।

अस्थिसन्धानकर (सं० पु०) लशुन, हड्डीमें घुस जानेवाला लहसुन।

अस्थिसन्धानजननी (सं० स्त्री०) अस्थिसंहार देखो।

अस्थिसन्धि (सं० स्त्री०) १ अस्थिसम्मेलनस्थान, हड्डी मिलनेकी जगह। २ अस्थियोग, टूटी हड्डीका मिलान।

अस्थिसन्धिक, अस्थिसंहार देखो।

अस्थिसमर्पण (सं० क्ली०) मृत व्यक्तिके अस्थिका गङ्गामें फेंका जाना, हड्डीका सेराना।

अस्थिसमुद्भव (सं० पु०) मज्जा, चर्बी।

अस्थिसम्बन्धन (सं० पु०) राल, धूना।

अस्थिसम्भव (सं० पु०) अस्थिः सम्भवः कारणं यस्य, बहुव्री०। १ अस्थिजात मज्जा धातु, हड्डीसे पैदा होनेवाली चर्बी। २ वज्र। इन्द्रने दधीची मुनिकी हड्डियोंसे वज्र बनाया था। इसीसे वज्रको अस्थि-सम्भव कहते हैं। ३ (त्रि०) अस्थिसे उत्पन्न, जो हड्डीसे पैदा हो।

अस्थिसम्भवस्नेह (सं० पु०) मज्जा, चर्बी।

अस्थिसार (सं० पु०) अस्थ्नां सारः पाकपरिणामः, ६ तत्। १ मज्जा धातु, चर्बी। (त्रि०) अस्थ्येव सारो यस्य, बहुव्री०। २ रक्तमांसशून्य, जिसमें गोश्त और खून न रहे। चलित भाषामें अतिशीर्ण व्यक्तिको भी अस्थिसार कहते हैं।

अस्थिसारस्थिता (सं० स्त्री०) मज्जा, चरबी।

अस्थिस्थूण (सं० पु०) शरीर, जिस्म, जिस चीजमें हड्डीके खम्भे रहें।

अस्थिस्नेह (सं० पु०) मज्जा धातु, चरबी।

अस्थिस्नेहसंज्ञ, अस्थिस्नेह देखो।

अस्थिस्रांस (वै० त्रि०) अस्थिको पृथक् पृथक् गिर-वानेवाला, जो हड्डियोंको इधर-उधर बिखरवा देता हो।

अस्थूरि (वै० पु०) न तिष्ठति, स्था बाहु० क्रिः। १ बहु अश्वयुक्त रथ, जिस गाड़ीमें बहुतसे घोड़े जुतें। (त्रि०) २ बहु अश्वयुक्त, जिसमें एकसे ज्यादा घोड़े रहें। ३ एक ही ओर न रखनेवाला, जो एकसे ज्यादा पहलू रखता हो। "अस्थूरि नो गार्हपत्यानि सन्तु।" (ऋक् ६।१५।१९।)

अस्थूल (सं० त्रि०) १ लघु, विरल, सूक्ष्म, पतला, जो मोटा न हो। (हिं०) २ स्थूल, मोटा, भारी।

अस्थेयस् (सं० त्रि०) चपल, अनवस्थित, अधीर, नापायदार, बेसबात, मुतग़य्यर, जो ठहरा न हो।

अस्थैर्य (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ चपलता, अधैर्य, नापायदारी, बेसबाती। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ स्थैर्यहीन, बेसबात, जो ठहरा न हो।

अस्नात (वै० त्रि०) स्नानसे प्रेम न रखनेवाला, जो नहाता न हो।

अस्नान (हिं०) स्नान देखो।

अस्नाविर (वै० त्रि०) स्नावाः शिराः यस्मिन् न विद्यन्ते, नञ्-बहुव्री०। शिरा-वर्जित, स्थूल शरीर-शून्य, नसें न रखनेवाला।

अस्निग्ध (सं० त्रि०) १ कर्कश, परुष, कठिन, रूखा, सख्त, जो चिकना न हो। २ निर्दय, नामिहरबान्।

अस्निग्धदारु (सं० क्ली०) अस्निग्धं चाक्चिक्यशून्यं दारु कर्मधा०। देवदारु।

अस्निग्धदारुक, अस्निग्धदारु देखो।

अस्नेह (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ स्नेहका अभाव, मुहब्बतकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ स्नेहशून्य, मुहब्बतसे खाली।

अस्पताल (अं० क्ली०) Hospital, औषधालय, दवाखाना।

अस्पन्द (सं० पु०) अस्पन्दन देखो।

अस्पन्दन (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ चलनका अभाव, अदमहरकती। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ क्रियाशून्य, हरकत न करनेवाला।

अस्पर्श (सं० पु०) स्पृश भावे घञ्, अभावे नञ्-तत्। १ स्पर्शका अभाव, जिस हालतमें छू न सकें। (हिं०) २ स्पर्श, छुवायी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ स्पर्शशून्य, जो छूता न हो।

अस्पर्शन (सं० क्ली०) अशुद्ध वस्तुका न छूना, नापाक चीज़से किनाराकशी।

अस्पर्शनीय (सं० त्रि०) स्पर्शके अयोग्य, अशुद्ध, नापाक, जिसे छू न सकें।

अस्पर्शयोग (सं० पु०) नास्ति स्पर्शः विषयसम्बन्धो यत्र तादृशो योगः, कर्मधा०। १ विषयस्पृहाशून्य, जिस बातमें किसी वस्तुका लालच न रहे। २ निर्विकल्पक ज्ञान, निराली समझ।

अस्पर्शा (सं० स्त्री०) आकाशवल्ली, आसमानी बेल।

अस्पर्शित (सं० त्रि०) जो छूआ न गया हो।

अस्पष्ट (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अव्यक्त, मखलूत, नासाफ़, नामालूम।

अस्पृत (वै० त्रि) अनिवार्य, दुर्धर, ग़ैर-क़ाबिल-मुज़ाहिमत, नाक़ाबिल-मुक़ाबला, जो जीता न गया हो।

अस्पृश्य (सं० त्रि०) न स्प्रष्टुमर्हम्, अर्हार्थे यत्, नञ्-तत्। स्पर्शागोचर, नाक़ाबिल-मस, जो छूने लायक़ न हो।

अस्पृष्ट (सं० त्रि०) स्पर्श न किया हुआ, जो छूआ न गया हो।

अस्पृष्टरजस्तमस्क (सं० त्रि०) अतिशय शुद्ध, निहायत पाकीज़ा, जो बुराईसे छू न गया हो।

अस्पृष्टवह्नि (सं० त्रि०) अग्निका स्पर्श न किये हुआ, जो आगसे छू न गया हो।

अस्पृष्टि (सं० स्त्री०) स्पर्शका अभाव, न छूनेकी हालत, छूआछूतसे किनारा।

अस्पृह (सं० त्रि०) १ अनिच्छुक, सन्तुष्ट, ख़ाहिश न रखनेवाला, ख़ुरसन्द, जो लालची न हो। २ विरक्त, लापरवा।

अस्पृहणीय (सं० त्रि०) अकाम्य, अनिष्ट, अप्रशस्त, नामरग़ूब, नारवा, जो चाहने लायक़ न हो।

अस्पृहा (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ इच्छाका अभाव, ख़ाहिशका न होना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ स्पृहारहित, निस्पृह, जो लालची न हो।

अस्फुट (सं० त्रि०) न स्फुटं प्रकाशम्, नञ्-तत्। १ प्रकाशरहित, अव्यक्त, नासाफ़, पोशीदा, देख न पड़नेवाला। (क्ली०) २ अव्यक्त वाक्य, नासाफ़ कलाम, जो बात समझ न पड़ती हो।

अस्फुटफल (सं० क्ली०) अव्यक्त परिणाम, नासाफ़ नतीजा। २ त्रिकोणादिका बृहत् क्षेत्रफल, मुसल्लस वग़ैरहका मोटा रक़बा।

अस्फुटवाक्, अस्फुटवाच् देखो।

अस्फुटवाच् (सं० त्रि०) अस्फुटा अव्यक्ता वाक् यस्य। १ अव्यक्तवर्णजल्पित, तुतलाकर करनेवाला, जो साफ़

न बोलता हो। (स्त्री०) अस्फुटा चासौ वाक् चेति, कर्मधा०। २ अव्यक्त वाक्य, नासाफ़ कलाम, तोतली बोली।

अस्फोत (सं० पु०) काञ्चनवृक्ष, कचनारका पेड़।

अस्मत्रा (सं० अव्य०) अस्मद् बाहु० त्राच्। हमारे साथ, हमलोगोंमें।

अस्मत्राच्, अस्मद्राच् देखो।

अस्मद् (सं० त्रि०) अस्यते क्षिप्यते देहनाशात् पश्चात् अस क्षेपणे (युष्यसिभ्यां मदिक्। उण् ११३६) इति मदिक्। उत्तम पुरुष, मैं यह अर्थ समझानेका सर्वनामविशेष, देहाभिमानी जीव। अस्मद् शब्दका रूप तीनो लिङ्गोंमें एक ही सा रहता है।

युष्मद् और अस्मद् शब्दके उत्तर इदमर्थमें छ एवं अण् प्रत्यय होता है। आवयोः अस्माकं वा अयं अस्मदीयः। यह हम दोनों आदमियों वा बहुत आदमियोंका है। (तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ। पा ४।३।२) खञ् और अण् प्रत्यय परे रहनेपर बहुवचनार्थमें युष्मद् शब्दके स्थानमें युष्माक, अस्मद् शब्दके स्थानमें अस्माक आदेश होता है। आस्माकीनः। आस्माकः। यह हम दो आदमियोंका है। (तवकममकावेकवचने। पा ४।३।३) खञ् एवं अण् प्रत्यय परे रहनेसे एकवचनार्थमें युष्मद् शब्दके स्थानमें तवक एवं अस्मद् शब्दके स्थानमें ममक आदेश होता है। मामकीनः। मामकः। यह मेरा है। मम अयम् अस्मद् छ। मदीय। (प्रत्ययोत्तरपदयोश्च। पा ७।२।९८।) प्रत्यय वा उत्तर पद परे रहनेसे म पर्यन्त एकार्थ युष्मद् शब्दके स्थानमें त्वद् एवं अस्मद् शब्दके स्थानमें मद आदेश होता है। मदीयः। उत्तरपद परे रहनेसे, मत्पुत्रः ऐसा रूप होगा, तसिल् अस्मत्तः। एकवचनमें मत्तः। मामिच्छति। (सुप आत्मनः क्यच्। पा ३।१।८। मद्यति। अस्मानिच्छति अस्मयति। मामाचष्टे मापयति। (सि० कौ०। पा ३।१।२१ सूत्रमें।) मादयतीति न्याय्यम्। (सि० कौ० उक्त सूत्रमें)

अस्मदीय (सं० त्रि०) हमारा, हम लोगोंका।

अस्मद्रात (वै० त्रि०) हम लोगों द्वारा दिया हुआ।

अस्मद्रुह् (वै० त्रि०) अहित, विपक्ष, अननुकूल, बद अन्देश, मुखालिफ़, जो हमसे या मुझसे दगा करता हो।

अस्मद्र्यक् (वै० अव्य०) हमारी ओर, हम लोगोंकी तर्फ़।

अस्मद्र्यञ्च् (वै० त्रि०) अस्मानञ्चति, अस्मद्-अञ्च-क्विन् अद्र्यादेशः। १ अस्मदभिमुख, हमारे प्रति प्रसन्न, हमसे मुखातिब, जो हमारी ओर घूमा हो। (अव्य०) २ हमारी ओर, हम लोगोंकी तर्फ़।

अस्मद्विध (सं० त्रि०) अस्माकमिव विधा धर्मोऽस्य, बहुव्री०। १ अस्मादृश, हमारे-जैसा, मेरी तरह। २ हम लोगोंमें एक।

अस्मन्त (सं० क्ली०) चुल्ली, चूल्हा, भट्टी।

अस्मयु (वै० त्रि०) आत्मन अस्मान् इच्छति, अस्मद्-क्यच्-उ बाहु० दलोपः। हमें चाहनेवाला, जो हमारे लिये अच्छा हो।

अस्मरण (सं० क्ली०) अनवधान, स्मृतिलोप, फ़रामोशी, बिसराहट, याद न रहनेकी हालत।

अस्मरणीय (सं० त्रि०) स्मरणके अयोग्य, जो याद आने क़ाबिल न हो।

अस्माक (वै० त्रि०) अस्माकमिदम्, अस्मद्-अण् अस्मकादेशः पृषो० वेदे वृद्ध्य-भावः। अस्मत् सम्बन्धी, हमारा, हमसे ताल्लुक़ रखनेवाला।

अस्मादृश्, अस्मादृश, अस्मद्विध देखो।

अस्मार्त (सं० त्रि०) १ स्मरणातिक्रान्त, अतिप्राचीन, क़दीम, ज़मानै दराज़का, पुराना। २ नियम-विरुद्ध, अविधि, खिलाफ़-क़ानून, नाजायज़, हराम। ३ शास्त्र-विधानसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो हिन्दुओंके दस्तूरमें न हो।

अस्मित (सं० त्रि०) विकसित, शिगुफ़्ता, खिला या फूला हुआ।

अस्मिता (सं० स्त्री०) अस्मिभावः, तल्। आत्मश्लाघा, ममता, खुदफ़रोशी, डींग। अस्मिताको योगशास्त्र क्लेश, सांख्य मोह और वेदान्त हृदयग्रन्थि बताता है।

अस्मृति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ स्मृति-हानि, विस्मरणशीलता, फ़रामोशी, बिसराहट। २ अन्याय्यता, अव्यवस्था, नाजायज़ी, जो बात क़ानूनके खिलाफ़ हो। (वै० अव्य०) ३ सप्रमाद, असमीक्ष्य, बेपरवायीसे।

अस्मेर (वै० त्रि०) विश्वासापन्न, विश्वस्त, एतबार रखनेवाला, जो नाखुश न हो।

अस्मेहिति (वै० स्त्री०) हमारा सन्देश, हमलोगोंका पैगाम, जो खबर हमारे लिये हो

अस्यन्दमान (वै० त्रि०) फिसल न पड़नेवाला, जो गुजर न रहा हो।

अस्यवामीय (सं० क्ली०) अस्यवामेति शब्दोऽस्त्यत्र सूक्ते मत्वर्थे छ। अस्यवाम शब्दयुक्त सूक्त, जिस भजनमें अस्यवाम शब्द पहले लगे।

अस्यहत्य (सं० पु०) हन बाहु० क्यप्, नञ्-तत्; असिना अहत्यः, ३-तत्। खड्गसे न मारा जानेवाला, जो तलवारसे मारा न जाता हो।

अस्यहेति (सं० पु०) असिः खड्ग अहेतिर्यस्य, बहुव्री०। खड्ग अस्त्र न रखनेवाला योद्धा, जो सिपाही तलवारका हथियार न रखता हो।

अस्युद्यत (सं० त्रि०) असिरुद्यत उत्थापितो येन, बाहु० परनिपातः, बहुव्री०। उद्धृतखड्ग, जो तलवार उठाये हो।

अस्र (सं० पु०-क्ली०) असु क्षेपणे बाहु० रन्। १ कोण, गोशा, काना। २ केश, बाल। ३ रक्त, खून, लहू। ४ चक्षुका जल, आंसू।

अस्रकण्ठ (सं० पु०) अस्रः कोण इव कण्ठो यस्य। बाण, तीर। अग्रभाग नोकीला होने और युद्धकाल कण्ठमें रक्त लग जानेसे बाणको अस्रकण्ठ कहते हैं।

अस्रखदिर (सं० पु०) अस्रवर्णः रक्तवर्णः खदिरः, शाक कर्मधा०। रक्तखदिर वृक्ष, लाल खैरका पेड़।

अस्रघ्न (सं० पु०) तेजबल, किसी किस्मका पौधा।

अस्रज (सं० क्ली०) मांस, गोश्त।

अस्रजित् (सं० पु०) वनस्पति विशेष, कोई जड़ी बूटी।

अस्रप (सं० पु०) अस्रं रक्तं पिबति, अस्र-पा-क। १ राक्षस, आदमखोर, खून पीनेवाला शख्स। २ जलौका, जोंक। ३ मत्कुण, खटमल। ४ मूल नक्षत्र। 'राक्षसः कौणपः क्रव्यात् क्रव्यादोऽस्रप आशरः'। (अमर)

अस्रपत्र, अस्रपत्रक देखो।

अस्रपत्रक (सं० पु०) अस्रमिव लोहितं पत्रमस्य, बहुव्री० संज्ञायां कन्। भेण्डावृक्ष, मजीठ।

अस्रपा (सं० स्त्री०) अस्रं रक्तं पिबति, अस्र-पा-क्विप् क वा, कपत्ते स्त्रीत्वात् टावपि। जलौका, जोंक। २ डाकिनी, डायन।

अस्रपित्त (सं० क्ली०) रक्तपित्त, इफ़रात खून।

अस्रफला (सं० स्त्री०) अस्रमिव रक्तं फलमस्याः। शल्लकीवृक्ष, सलायीका पेड़।

अस्रफली, अस्रफला देखो।

अस्रमातृका (सं० स्त्री०) अस्रस्य रक्तस्य मातेव उत्पादिका, संज्ञायां कन्। रसधातु, कैमूस, अन्न खानेपर आमरससे मिल पाकयन्त्रमें प्रथम दुग्धवत् उत्पन्न होनेवाला रस।

अस्ररेणु (सं० पु०) सिन्दूर, सेंदुर।

अस्ररोधिका (सं० स्त्री०) लज्जालुकालता, लाजवती।

अस्ररोधिनी, अस्ररोधिका देखो।

अस्रवत् (सं० त्रि०) न स्रवति चरति, स्रु मतौ शतृ, नञ्-तत्। १ प्रवाहरहित, जो बहता न हो। अस्र-मस्त्यस्य मतुप् मस्य वः। २ रक्तयुक्त, खून-आलूदा। (वै० त्रि०) ३ छिद्ररहित, जिसमें सूराक न रहे। (अव्य०) अस्रस्येव तत्र तस्येवेति वति। ४ रक्तकी भांति, खूनकी तरह।

अस्रविन्दुच्छदा (सं० स्त्री०) अस्रविन्दुः रक्तविन्दुरिव छदः पर्णं यस्याः, बहुव्री०। लक्ष्मणानामक वृक्ष, कोई गांठदार पेड़।

अस्रशिम्बी (सं० स्त्री०) रक्तशिम्बी, लाल सेम।

अस्रस्रुती (सं० स्त्री०) रक्तस्राव, खूनका बहाव, फसद।

अस्राम (वै० त्रि०) १ असंहत, अविकलगति, मुलायम, जो नाक़िस न हो।

अस्रार्जक (सं० पु०) अस्रं रक्तं अर्जयति सेवनया, अस्र सुरा०-अर्ज-ण्वुल्। १ श्वेततुलसी वृक्ष। २ रक्तोत्पादक रस, खून पैदा करनेवाला अर्क। (त्रि०) ३ रक्तोत्पादक, खून पैदाकरनेवाला।

अस्राह्व (सं० पु०-क्ली०) कुङ्कुम, केसर।

अस्रि (सं० स्त्री) अस्-क्रि। १ रक्त, खून। २ कोण, गोशा। ३ कोटि, करोड़।

अस्निध् (वै० त्रि०) न स्नेधति शोषति, स्निध्-क्विप्,

नञ्-तत्। १ अश्रान्त, जो थका-मांदा न हो। २ हानि न पहुंचानेवाला, जो नुकसान न करता हो। ३ शान्तस्वभाव, प्यारा, सुलहपसन्द, जो लड़ता-भिड़ता न हो।

अस्नीवयस् (वै॰ त्रि॰) अरणी खाद्यविशिष्ट, जो टपक पड़नेवाला खाना रखता हो।

अस्नु (सं॰ क्ली॰) अस्यते क्षिप्यते, अस् क्षेपणे क्त। चक्षुका जल, अश्क, आंसू। अस्नुके निरोधसे पीनसादि रोग उत्पन्न होते हैं।

अस्नुक (सं॰ पु॰) अश्रीरवृक्ष, कोई पौधा।

अस्नुव (सं॰ क्ली॰) पोथकी, दाने-दानेकी सूखत, बहनेवाले ज़ख़्ममें दानेका पड़ना।

अस्नुवाहिनी (सं॰ स्त्री॰) अस्नुवाहक धमनीद्वय, आंसू निकालनेवाली दोनो नाड़ी।

अस्नेमन् (वै॰ त्रि॰) स्निग्ध-मलिन्, गुणो वा लोपश्च। १ प्रशस्त, तारीफ़के क़ाबिल। २ प्रशस्त, लाज़वाल, जो सड़ता-गलता न हो।

अस्न, अस्ल देखो।

अस्नी, अस्ली देखो।

अस्नील, अश्लील देखो।

अस्नोक, श्लोक देखो।

अस्व (सं॰ त्रि॰) नास्ति स्वं धनमस्य, बहुव्री॰। १ निर्धन, जिसके पास दौलत न रहे। स्वः आत्मीय, नञ्-तत्। २ अनात्मीय, जो अपना न हो।

अस्वक, अस्व देखो।

अस्वकीय, अस्व देखो।

अस्वग (वै॰ त्रि॰) निरालय, निराश्रय, लामकान्, जो खास अपने मकान् न जाता हो।

अस्वगता (वै॰ स्त्री॰) निराश्रयता, खानेबदोशी, ठिकाना न लगनेकी हालत।

अस्वच्छ (सं॰ त्रि॰) प्रकाशाभेद्य, कलुष, तारीक, कसीफ़, धुंधला, जो साफ़ न हो।

अस्वच्छन्द (सं॰ त्रि॰) विरोधे नञ्-तत्। १ पराधीन, मातहत, जो मनमाना काम कर न सकता हो। २ शिक्ष्य, तरबियतपिज़ीर, सधने योग्य।

अस्वजाति (सं॰ स्त्री॰) न स्वजातिः, नञ्-तत्। १ भिन्न वर्ण, अन्य कुल, मुख़्तलिफ़ ज़ात, जुदा क़ौम, जो दूध अपना न हो। जैसे, क्षत्रियादि ब्राह्मणकी स्वजाति नहीं होता। (त्रि॰) न स्वस्येव जातिर्यस्य, नञ्-बहुव्री॰। २ भिन्न जाति, मुख़्तलिफ़ क़ौमका, जो अपने दूधका न हो।

अस्वतन्त्र (सं॰ त्रि॰) न स्वतन्त्रम्, विरोधे नञ्-तत्। १ पराधीन, मातहत, जो आज़ाद न हो। २ शिक्ष्य, तरबियत-पिज़ीर, ग़रीब।

अस्वता (सं॰ स्त्री॰) स्वत्वका न पहुंचना, हक़का न होना।

अस्वत्व (सं॰ क्ली॰) अस्वता देखो।

अस्वन्त (सं॰ क्ली॰) असूनां चन्द्रगन्तुप्राणानां अन्तो नाशो यस्मात्, ५-बहुव्री॰। १ चुल्ली, चुल्हा। (त्रि॰) सुष्ठु न अन्तो यस्य, असमर्थे बहुव्री॰। २ दुष्ट परिणाम, जिससे अच्छा नतीजा न निकले। (पु॰) ३ मरण, मौत।

अस्वप्न (सं॰ पु॰) नास्ति स्वप्नो निद्रा अज्ञता वा यस्य, नञ्-बहुव्री॰। १ देवता, जो कभी सोता या भूलता न हो। २ निद्रानाश, निद्राभाव, बेदारी, बेकली, नींद न आनेकी हालत। (त्रि॰) ३ निद्रारहित, बेदार, बेकल, जो सोता न हो। ४ कार्यदक्ष, होशियारीसे काम करनेवाला।

अस्वप्नज् (वै॰ त्रि॰) निद्रारहित, बेदार, जिसे नींद न आये।

अस्वभाव (सं॰ पु॰) असाधारण आचरण वा प्रकृति, ग़ैरमामूली चाल या मिज़ाज। (त्रि॰) २ भिन्न-प्रकृतिविशिष्ट, मुख़्तलिफ़-तबीयत।

अस्वर (सं॰ पु॰) अप्रशस्तः स्वरो यत्र। १ स्वर-वर्ण-रहित व्यञ्जनमात्र, हर्फ़-सही। २ उदात्तादि स्वर-वर्जित लौकिक उच्चारण, जिस तलफ़्फ़ुज़में ऊंचे हर्फ़ हलत न रहें। 'स्यादनीचस्तरोऽस्वरः।' (अमर) (त्रि॰) ३ मन्दस्वरयुक्त, जिसकी ख़राब आवाज़ रहे। ४ अविस्पष्ट, मख़्लूत, मिला जुला। (अव्य॰) ५ अविस्पष्ट रूपसे, मख़्लूत तौरपर।

अस्वरूप (सं॰ त्रि॰) न स्वस्येव रूपं यस्य, नञ्-बहुव्री॰। असमान स्वभाव, जो बिलकुल मुख़्तलिफ़ हो।

अस्वर्ग्य (सं० त्रि०) स्वर्गाय हितम्, स्वर्ग-यत्, नञ्-तत्। स्वर्गके अयोग्य, जिसे करनेसे स्वर्ग न मिले।

अस्ववेश (वै० त्रि०) निजका गृह न रखनेवाला, जो घरसे निकाल दिया गया हो।

अस्वस्थ (सं० त्रि०) न स्वस्मिन् स्वभावे तिष्ठति, स्व-स्था-क, नञ्-७-तत्। अप्रकृतिस्थ, रोगादिसे अभिभूत, बीमार, जो तनदुरुस्त न हो।

अस्वस्थता (सं० स्त्री०) १ स्वास्थ्यका अभाव, मज़बूत न रहनेकी हालत। २ पीड़ा, व्यथा, निर्बलता, बीमारी, कमज़ोरी।

अस्वातन्त्र्य (सं० क्लो०) न स्वातन्त्र्यम्, अभावे नञ्-तत्। १ स्वातन्त्र्यका अभाव, पराधीनता, मातहती, आज़ाद न रहनेकी हालत। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ पराधीन, मातहत, जो आज़ाद न हो।

अस्वादु (सं० त्रि०) नीरस, विरस, बेलज़्ज़त, बेमज़ा, सीठा, फीका।

अस्वादुकण्टक (सं० पु०) अस्वादुरमधुरः कण्टको यस्य। गोखुरू, जिसके मीठा कांटा न रहे।

अस्वाध्याय (सं० त्रि०) नास्ति स्वाध्यायो वेदाध्ययनमस्य। १ विधिपूर्वक वेदाध्ययन न करनेवाला, जो क़ायदेसे पढ़ता न हो। (पु०) २ अध्ययन-निषिद्ध काल, जिस वक्तमें पढ़ न सकें। जैसे अष्टमी प्रभृति तिथि या रविवार वग़ैरहकी छुट्टी। अधि-इङ् कर्मणि घञ्, स्वस्य अध्यायः, नञ्-तत्। ३ स्वीय अपाठ्य शास्त्रादि, अपने न पढ़नेकी किताब, जिसे पढ़ न सकें।

अस्वाभाविक (सं० त्रि०) १ निसर्गविरुद्ध, सृष्टिक्रमबाह्य, खिलाफ़-तबा, साख़्ता, जो ज़ाती न हो। २ कृत्रिम, मसनूयी, बनावटी।

अस्वामिक (सं० त्रि०) नास्ति स्वामी यस्य, बहुव्री०। शेषाद्विभाषेति कप्। स्वामिरहित, लावारिश, जिसके मालिक न रहे। पर्वत, पुण्य, नदी और तीर्थको शास्त्रकारोंने अस्वामिक बताया है। इन सकल स्थानोंमें प्रतिग्रह न करना चाहिये। दायभागकी टीकामें महारण्यके वृक्ष, नदीके जल और निधिको भी अस्वामिक कहा है।

अस्वामिकृत (सं० त्रि०) स्वामिना कृतम्, नञ्-तत्। स्वामिभिन्न अन्य द्वारा किया हुआ, जो मालिकने न किया हो।

अस्वामिन् (सं० त्रि०) १ स्वत्वरहित, जो हक़दार न हो। २ स्वामिरहित, लावारिश, जिसके मालिक न रहे।

अस्वामिविक्रय (सं० पु०) न स्वामिना कृतो विक्रयः शाक० नञ्-तत्। १ स्वामिभिन्न अन्य द्वारा विक्रय, मालिकको छोड़ दूसरेके ज़रिये की हुई फ़रोख़्त। २ एतद्विषयक व्यवहार, इसी कामकी बात चीत। ३ इसका विचार, इसी बातका ख़याल। अस्वामिविक्रयका विचार याज्ञवल्क्य-संहितामें अच्छीतरह लिखा है।

अस्वाम्य (सं० क्लो०) अभावे नञ्-तत्। १ समताका अभाव, नाहमवारी, बराबरीका न मिलना। २ स्वामित्वका अभाव, हक़दारीका न होना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ समताशून्य, नाहमवार, जो बराबर न हो। ४ स्वामित्वशून्य, मिलकियत न रखनेवाला, जो मालिक न हो।

अस्वार्थ (सं० त्रि०) १ अपने लिये न होनेवाला, जो ख़ास अपने वास्ते न हो। २ उचित पदार्थके अर्थ न होनेवाला, जो वाजिब बातके लिये न हो। ३ भिन्न अर्थ विशिष्ट, मुख़्तलिफ़ मानी रखनेवाला। ४ निस्पृह, मुतसङ्ग, नाख़ुदपरस्त, जो अपनी ग़रज़ न रखता हो।

अस्वावेश (सं० त्रि०) स्वस्मिन् आत्मनि स्वस्थाने स्वभावे वा आविशति, स्व-आविश-अच्, ७-तत्। आत्मा, स्वभाव वा वासस्थानमें अस्थित, जो अपने आपे, मिज़ाज या मुक़ामपर न हो।

अस्वास्थ्य (सं० क्लो०) अभावे नञ्-तत्। १ स्वास्थ्यका अभाव, उद्वेग, बीमारी, तन्दुरुस्तीका न रहना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ उद्विग्न, पीड़ित, बीमार, जो तन्दुरुस्त न हो।

अस्वीकार (सं० पु०) न स्वीकारः, अभावे नञ्-तत्। १ स्वीकारका अभाव, नामञ्ज़ूरी, इनकार। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ स्वीकार, अङ्गीकार एवं प्रतिग्रह इत्यादिसे रहित, नामञ्ज़ूर।

अस्वीकृत (सं० त्रि०) न स्वीकृतम्, नञ्-तत्। अनङ्गीकृत, अप्रतिग्रहीत, नामञ्जूर, जो माना न गया हो। चलती बोलीमें इनकार करनेवालेको अस्वीकृत कहते हैं।

अस्वेद (सं० पु०) १ दबा हुआ पसीना। (त्रि०) २ पसीनेसे खाली, जो पसीजता न हो।

अस्वैरिन् (सं० पु०) स्वैरी स्वाधीनः, नञ्-तत्। पराधीन, मातहत, जो स्वाधीन या खुदमुख़्तार न हो। (स्त्री०) ङीप्। अस्वैरिणी।

अस्सायी—निज़ाम राज्यके अन्तिम उत्तरपूर्व प्रान्तका एक ग्राम और रणक्षेत्र। यह अक्षा० २०° १५´ १५´´ उ०, तथा द्राघि० ७५° ५६´ १५´´ पूर्व पर अवस्थित और औरङ्गाबादसे उत्तर-पूर्व ४१ मील दूर है। सन् १८०३ ई०की २३वीं सितम्बरको सर अर्थर वेलेस्लिने देखा, कि सेंधिये और राघवजी भोंसलेके साथ कितनी ही महाराष्ट्र-सेनाका वामभाग इस ग्राममें पड़ा था। सेनामें १६००० शिक्षित पैदल—२०००० सवार और कितने ही आदमी रहे। १०० तोपें फ्रान्सीसी अफसरोंके हाथमें थीं। इधर जनरल वेलेस्लिके पास साढ़े चार हज़ारसे ज्यादा सिपाही और सवार न रहे। किन्तु उन्होंने साहसपूर्वक केलना नदी पार की और शत्रुको भीषण युद्धके बाद इस स्थानसे पीछे हटाया। इसी बीच जो महाराष्ट्र मुर्देका बहाना कर लेट गये थे, वह पीछेसे आगे बढ़नेवाली सरकारी सेनापर गोले फटकारने लगे। फिर भी जनरल वेलेस्लिने पीछे घूम उनपर धावा मारा और तोपोंको अधिकार किया। महाराष्ट्र-सेनाके १२००० आदमी काम आ और दांत खट्टे हो गये थे। इस ग्रामके अधिवासियोंने कितनी ही बन्दूकें, तोपके गोले और लड़ाईकी दूसरी चीजें पायी हैं।

अस्सी (हिं० वि०) संख्याविशेष, अशीति, दश और आठका गुणन-फल।

अह (सं० अव्य०) अहि-घञ् पृषो० न लोपः। १ निःसन्देह, अवश्य, बेशक, ज़रूर, हां, अच्छा। २ अर्थात्, यानी। ३ माना, समझलिया, दरहक़ीक़त। ४ न्यूनसे न्यून, कमसे कम। ५ वाह-वाह, शाबाश। ६ छी-छी, नफ़रत। (हिं०) अहम् देखो।

अहंटू (हिं० वि०) प्रकाण्ड, बड़ा, भारी।

अहंयु (सं० त्रि०) अहमहङ्कारोऽस्त्यस्य। १ गर्वयुक्त, अभिमानी, फ़ख़्र रखनेवाला, घमण्डी।

'अहङ्कारवानहंयुः स्यात्।' (अमर)

(पु०) २ योद्धा, सिपाही।

अहंवाद (सं० पु०) साहसिकता, धृष्टता, गुस्ताख़ी, शेख़ी, डींग-भरा।

अहंवादिन् (सं० त्रि०) साहसिक, धृष्ट, अत्यभिमानी, गुस्ताख़, बहुत ज्यादा फ़ख़्र रखनेवाला, जो अपनी ही कहता हो।

अहंश्रेयस् (सं० त्रि०) अहं अहमेव श्रेयान् यत्र, बहुव्री०। अपनेको ही बड़ा समझनेवाला, जो अपनेको ही आरामकी जगह मानता हो।

अहंश्रेयस, अहंश्रेयस् देखो।

अहंसन (वै० त्रि०) अपने ही निमित्त प्राप्त करनेवाला, जो अपने ही लिये हासिल करता हो।

अहःकर, अहस्कर देखो।

अहःपति, अहर्पति देखो।

अहःशेष, अहश्शेष देखो।

अहक (हिं० स्त्री०) अभिलाषा, ख़्वाहिश।

अहकाम (अ० पु०) १ आज्ञायें, हुक्म। २ नियम, क़ायदे। यह शब्द 'हुक्म'का बहुवचन है।

अहङ्कर्तव्य (सं० त्रि०) १ अपने हीसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो दूसरेसे ताल्लुक़ न रखता हो। (क्ली०) २ अहङ्कारका विषय, फ़ख़्रकी चीज़।

अहङ्कार (सं० पु०) अहमिति ज्ञानं क्रियतेऽनेन, अहं कृ-करणे-घञ्। १ आत्माभिमान, ख़ुदी, डींग। २ आत्मामें उत्कर्षका अवलम्बन, गर्व, गुस्ताख़ी, घमण्ड। ३ गर्वका आश्रय अन्तःकरण विशेष, दिलमें फ़ख़्रके रहनेकी जगह। वेदान्त परिशिष्टमें मन, बुद्धि, अहङ्कार और चित्तको अन्तःकरण कहते हैं। ४ सांख्यमतसिद्ध महत्तत्त्वके अभिमानका कारण, पञ्चतन्मात्रका कारण तत्त्वविशेष। ५ वैष्णवमतसे—चैतन्यपुरुषका चेतन। इन्द्रियादि निखिल शरीरमें जो अहम्भाव समाया, उससे लगी प्रवृत्ति ही अहङ्कार

है। यह प्रकृति वैकारिक, तैजस और भूत भेदसे त्रिविध रहती है।

अहङ्कारवत् (सं० त्रि०) स्वार्थपरायण, खुदगर्ज़, घमण्डी।

अहङ्कारिन् (सं० त्रि०) अहमित्यभिमानं करोति, अहं-कृ-णिनि। अभिमानयुक्त, गर्वयुक्त, मगरूर, खुदबीन्, जो अपनेको बड़ा समझता हो।

अहङ्कारी, अहङ्कारिन् देखो।

अहङ्कारीपुर—अवध प्रान्तके फ़ैज़ाबाद जिलेका नगर। यह फ़ैज़ाबाद शहरसे ग्यारह कोस पड़ता है। इसे दरबार सरदार अहङ्कारी रायने अपने नामपर बसाया था। यहांसे कलकत्तेको कितना ही कच्चा चमड़ा भेजा जाता है। अवध-रुहेलखण्ड रेलवेका यह एक बड़ा ष्टेशन है। ष्टेशनके पास बहुत बड़ा बाज़ार जमने लगा है।

अहङ्कार्य (सं० क्ली०) अपने करनेका काम, जो बात दूसरेसे बन न सकती हो।

अहङ्कृत (सं० त्रि०) अहमिति ज्ञानं कृतं येन, बहुव्री०। १ आत्माभिमानी, खुदफरोश, डींग लेनेवाला। २ सगर्व, मगरूर, घमण्डी। ३ अभिज्ञ, माहिर, वाकिफ़कार।

अहङ्कृति (सं० स्त्री०) अहम्-कृ-क्तिन्। अहङ्कार, खुदसितायी, घमण्ड।

अहटाना (हिं० क्रि०) १ ढूंढना, खोजना, आहट लेना, पता लगाना। २ पीड़ा देना, दर्द करना।

अहत (सं० क्ली०) न हन्यते स्म, हन-क्त, नञ्-तत्। १ नूतन वस्त्र, नया कपड़ा, जो कपड़ा धुला न हो। (त्रि०) २ अप्रतिहत, जो मारा न गया हो। ३ नूतन, नया, जो धुला न हो। ३ शुद्ध, निष्कलङ्क, जो बिगड़ा न हो। ५ आशान्वित, जो नाउम्मेद न हो।

अहति (वै० स्त्री०) न हतिः, अभावे नञ्-तत्। १ हननका अभाव, न मारनेकी हालत। २ अविनाश, सलामती। (त्रि०) ३ अविनष्ट, जो बरबाद न गया हो।

अहद (अ० पु०) १ प्रतिज्ञा, वचन, इक़रार, वादा, बात। २ सङ्कल्प, विचार, इरादा। ३ समय, वक़्त, ज़माना।

अहददार (फ़ा० पु०) प्रतिज्ञा करनेवाला, जो शख़्स कोई काम अञ्जाम देनेका इक़रार करता हो। मुसलमानी बादशाहीमें करका ठेका लेनेवाला अहददार कहाता था। यह सैकड़ा पीछे तीन रुपया पाते और सारा कर चुकाते रहा।

अहदनामा (फ़ा० पु०) १ प्रतिज्ञापत्र, इक़रारनामा। इसके अनुसार दो या उससे ज़्यादा लोग कोई काम करना ठहराते हैं। २ सन्धिपत्र, सुलहनामा, जिस पत्रके अनुसार झगड़ा-झञ्झट मिट जाये।

अहदी (अ० पु०) १ योद्धा, सिपाही। यह अकबरके समय कठिन कार्य उपस्थित होनेसे कमर बांधते थे। साधारणतः पड़े-पड़े खाना ही इनका काम रहा। इसीसे सुस्त आदमीको भी लोग अहदी कहने लगे हैं। (त्रि०) २ अलस, सुस्त, काम न करनेवाला।

अहदीखाना (फ़ा० पु०) अलसके रखनेका स्थान, जहां काहिल रहें।

अहदेहुकूमत (फ़ा० पु०) राजत्वकाल, शासनका समय, शाहीका ज़माना।

अहन् (सं० क्ली०) न जहाति त्यजति स्वकालं हा-आ-लोपः। दिवस। 'अहोरात्रः' 'अहङ्कारः' इत्यादि स्थलमें अहन् शब्दका अर्थ केवल दिन है। दशाह अशौच, अहन्यहनि इत्यादि स्थानमें अहन् शब्दका अर्थ दिन और रात दोनो ही है। एक लघु अक्षरके उच्चारण-कालको मात्रा वा निमिष कहते हैं। दो निमिषका नाम त्रुटि है। पांच त्रुटिका एक प्राण, छः प्राणकी एक विनाड़िका वा विपल, साठ विनाड़िकाकी एक नाड़िका वा दण्ड, और साठ नाड़िकाका एक अहोरात्र होता है। एक अहोरात्रमें तीस मुहूर्त होते हैं।

अहन (सं० त्रि०) १ प्रकाशक, रोशनी देनेवाला, जा उजेला फैलाता हो। (क्ली०) २ प्रातःकाल, सवेरा।

अहननीय (सं० त्रि०) वधके अयोग्य, जो क़तल करने क़ाबिल न हो।

अहना (सं० स्त्री०) अहरस्तस्य परवर्तित्वेन, अहन् अर्श आदि अच् टाप् निपा० टिलोपाद्यभावः। उषा, तड़का, सवेरा।

अहन्तव्य, अहननीय देखो।

अहन्ता (सं० स्त्री०) अहमित्यव्ययमस्मदर्थे तस्य भावः तल्-टाप्। अस्मदर्थका भाव, 'मैं' की बात।

अहन्य (वै० त्रि०) अजय्य, दुर्जय, अविनाशी, लाज्वाल, ज़बरदस्त।

अहन्स, अहन्य देखो।

अहन्पुष्प (सं० पु०) दोपहरियाका फूल।

अहन्य, अहन्य देखो।

अहमक (अ० वि०) जड़, मूर्ख, नादान, बेसमझ।

अहमहमिका (सं० स्त्री०) प्रतिद्वन्द्विता, सङ्घर्ष, हमसरी, मुक़ाबला, लाग-डांट।

अहमद (मुल्ला)—एक विख्यात मुसलमान पण्डित। इनके पूर्वज सिन्धुप्रदेशके टट्ट नामक स्थानमें वास करते थे। वे सब हनीफ़ा सम्प्रदायमें भुक्त थे, परन्तु अहमद शिया थे। यह सन् १५८२ ई०को अकबर बादशाहको सभामें आये। इसके पहले इन्होंने 'खुलासात् उल् हयात्' नामक एक धर्मग्रन्थ लिखा था। अकबरने इन्हें 'तारीख़-अलफ़ी'के सङ्कलन करनेका भार दिया। शिया संप्रदाय प्रथम खलीफ़ाकी निन्दा किया करता है। इससे दूसरा सम्प्रदाय विरक्त होता है। मिर्ज़ा फ़ूलाद् बिरलास् नामक एक मनुष्य शायद दूसरे सम्प्रदायमें भुक्त था। उसने एक दिन आधीरातके समय मुल्लाको बुलाया। अहमद निःशङ्कचित्त एवं सरल प्रकृतिके आदमी थे। मिर्ज़ा फ़ूलाद्की बातोंमें यह भूल गये। उस दुष्टने लाहोरके पथपर मुल्लाको मार डाला। अकबरने इस घटनाको सुन हाथीके पैर नीचे कुचलकर उसे मार डालनेका हुक्म दिया। मुल्ला अहमदने 'तारीख़-अलफ़ी'को शुरूसे चङ्गेज़ खांके समय तक दो भागोंमें लिखा था। आसफ़ खां जाफ़र बेग नामक एक मनुष्यने इस पुस्तकको समाप्त किया।

अहमद अयाज़—इनका उपाधि मलिक ख़ाजा जहान् रहा। इन्होंने दिल्लीवाले मुहम्मदशाह बीन तुग़लकके अधीन प्रशंसनीय कार्य किया था। सन् १३५२ ई०को ठट्टेमें राजाके मरनेपर यह भूतपूर्व राजाके लड़केको दिल्लीमें सिंहासन देने पर सचेष्ट हुये, किन्तु फ़ीरोज़ शाह तृतीय द्वारा फांसी चढ़ाये गये।

अहमदअली खान् (सैयद)—बङ्गालके नवाब नाज़िम। इन्हें अपने भायी अली जाहका उत्तराधिकार मिला था। सन् १८२४ ई०की ३० वीं अक्तोबरको इनकी मृत्यु हुयी।

अहमद-इब्न काज़रूनी (जमरबीन)—बम्बयी प्रान्तस्थ खाम्बायत स्थानके नवाब। इन्होंने खम्बायतमें सन् १३२५ ई०को मुहम्मद शाहबीन तुग़लक् शाहके समय जुमा मसजिद बनवायी थी। मसजिद २०० फ़ीट चौड़ी और २१० फ़ीट लम्बी है। खम्भे जैन मन्दिरोंसे निकालकर लगाये गये हैं। मेहराबोंकी नक्काशी बहुत ख़ूबसूरत है। मसजिदके दक्षिण कोणपर मरमरके दो क़ब्र बने, जिनपर सुन्दर शिलालेख खुदे हैं। एकमें अहमद इब्न काज़रूनीके मसजिद बनाने तथा प्राण छोड़ने और दूसरेमें हाजी हुसेन इब्न गीलानीकी कन्या फातिमाका इनके साथ विवाह देनेका वृत्तान्त लिखा है।

अहमद कबीर (सैयद)—एक मुसलमान फ़क़ीर। इनके पिताका नाम सैयद जलाल था। मख़दूम जहानियान् जहान् गश्त् और राजक़त्ताल नामक इनके दो पुत्र थे। वे दोनो ही सिद्ध थे। मुसलमान लोग तीनो आदमीको विशेष भक्ति करते हैं। मुलतानके उच्च नामक स्थानमें अहमद कबीरका समाधिमन्दिर है।

अहमद खान्—होलकरकी सेनाके प्रधान सेनापति। सन् १८०२ ई०के समय यह आनन्दराव गायकवाड़के भाई फ़तेसिंहको सङ्गादके पास धर दकर ले गये थे। उस समय सङ्गाद गायकवाड़ अफ़सर बालाजी लक्ष्मणके हाथ रहा। उनके भाग खड़े होनेपर गोविन्द राव मामा कमाविसदार बने। किन्तु होलकरके सिपाही किला छीन न सके। अन्तको फ़तेहसिंह कुछ पठान सेना ले गुजरात जा पहुंचे थे। फ़तेहसिंहने बड़ोदा जाकर कहा, 'मैं अहमद खान्को पचास हज़ार रुपये देनेकी शर्तपर छोड़ा गया हूं।'

अहमद खां बङ्गश—फर्रुखाबादके नवाब मुहम्मद खां बङ्गशके पुत्र। सन् १७४९ ई०के दिसम्बर मास इनके भाई कायमजङ्गकी मृत्यु होनेपर वज़ीर सफ़दरजङ्गने उनकी सम्पत्तिको हड़प जानेकी चेष्टा की थी। उसी समय कुछ अफ़ग़ानसैन्य संग्रह कर अहमद खांने वज़ीरके सहकारी राज्य नवलरायको पराजित और विनष्ट किया। इस घटनाके बाद यह फ़र्रुखाबादके नवाब हो गये। (१७५१ ई०)।

१७७१ ई०को अहमद खांकी मृत्यु होनेपर इनके पुत्र दिलेर हिम्मत खां नवाब बने।

अहमद खां सूर—शेरशाहके भतीजे। यह सिकन्दरशाह सूर उपाधि धारणकर कुछ भले आदमियोंकी सहायतासे पञ्जाबके राजा हो गये। सन् १५५५ ई०के मई मास इन्होंने इब्राहीम खां सूरको युद्धमें परास्त कर दिल्लीका सिंहासन अधिकार किया था। परन्तु यह अधिक दिन राज्यभोग न कर सके। हुमायूंने इनकी सेनाको हरा दिया। अन्तको सरहिन्द नामक स्थानमें यह अकबरसे पराजित हुए और पहाड़ी प्रदेशमें भाग कर अपनी जान बचाई। वहांसे कई बार इन्होंने अकबरके विरुद्ध धावा किया, परन्तु किसी तरह सफलमनोरथ न हुए। अन्तमें यह बङ्गदेश गये और कुछ राज करनेके बाद परलोक सिधारे।

अहमद खान् सैयद—१ युक्तप्रान्तस्थ अलीगढ़ ज़िलेके मुसलमान संशोधक। इनका उपाधि सी० एस० आई० रहा। इन्होंने मुहम्मद साहबके जीवन एवं कार्यपर एक ग्रन्थ लिखा और अलीगढ़ कालेज प्रतिष्ठित किया था।

२ दक्षिणप्रान्तस्थ अहमदाबाद-शासक मुज़फ़्फ़र शाहके लड़के। सन् १४१२ ई०को असावल ग्रामके पास इन्होंने अहमदाबाद नगर बसाया था। इनके समय अहमदाबादमें कितने ही सुन्दर भवन बनाये गये। सन् १४४३ ई०को मरने बाद इनके लड़के मुहम्मद शाहने राज्यका उत्तराधिकार पाया।

अहमदगढ़—बुलन्दशहरके अन्तर्गत एक गांव। इस गांवकी उत्तर ओर अनूपशहरके राजा अणिराजका बनवाया एक सुन्दर सरोवर विद्यमान है।

अहमद अलेबी—बम्बई प्रान्तस्थ सूरत ज़िलेके एक चालाक अरब व्यापारी। पहले यह अंगरेज़ोंके बड़े मित्र समझे जाते थे। किन्तु सन् १७३३ ई०को इन्होंने यथाशक्ति अंगरेज़ों और सूरतके शासनकर्ता नवाब तेगबख़्तके बीच घोर वैमनस्य बढ़ा दिया। सन् १७३५ ई० तक यह नवाबके सहायक रहे, किन्तु अन्तको यहांतक बिगड़े, कि उनसे लड़नेको भी तैयार हुये थे। सन् १७३६ ई०को १२ वीं जुलाईको अपने ही घरमें यह जानसे मारे गये।

अहमदनगर—बम्बई विभागके अन्तर्गत एक ज़िला और शहर। यह अक्षा० १८° १०′ ०″ एवं २०° ०′ ०″ उ० और द्राघि० ७०° ४२′ ४०″ तथा ७५° ४५′ ५०″ पू०के मध्य अवस्थित है। सह्याद्रि पर्वत अहमदनगरके पश्चिम फैला हुआ है। इसकी कुछ शाखायें अहमदनगरके पूर्वतक चली आई हैं। यहां प्रवरा और मूला नामक दो नदियां बहती हैं। इस ज़िलेको प्रधान नदी गोदावरी है। आबादी साढ़े सात लाखसे ज़्यादा है। यहांके रहनेवालोंमें महाराष्ट्रोंकी संख्या ही अधिक है।

इस ज़िलेके बड़े नगर यह हैं—१ अहमदनगर, २ सोणाई, ३ पथमर्द, ४ सङ्गमनेर, ५ खर्दा, ६ श्रीगोण्डा, ७ भीमगार।

सन् १४९४ ई०को अहमद शाहने अहमदनगर बसाया था। यह शहर सीना नदीके बायें किनारेपर बसा है।

अहमदशाहकी मृत्यु होनेपर उनके लड़के बुर्हान् निज़ाम शाह राजा हुए। उनके समयमें अहमदनगरकी बहुत श्रीवृद्धि हुई थी। सन् १५५३ ई०को वह परलोक सिधार गये। पीछे उनके पुत्र हुसेन निज़ाम शाह राजा हुए। हुसेनने अहमदनगरको चारो तरफ बारह फीट ऊंची शहरपनाह बनवा दी। १५६२ ई०में बीजापुरराजने उन्हें पराजित किया, इससे उनके सौसे अधिक हाथी और ६६० तोपें बीजापुरराजके हाथ लगीं। इनमें बड़ी भारी एक तोप पीतलकी बनी थी। शायद इतनी बड़ी तोप दुनियामें और कहीं नहीं है। यह तोप अभीतक बीजापुरमें

मौजूद है। १५६४ ई०को बीजापुर, गोलकुण्डा, बीदर आदिके राजाओंके साथ विजयनगरके रामराजका युद्ध हुआ था। इस युद्धमें हुसेनने रामराजके विपक्षमें अस्त्र धारण किया, परन्तु हिन्दूराजसे सभी पराजित होकर बन्दी बने।

१५८८ ई०में हुसेन शाह अपने लड़के मीरन हुसेन निज़ाम शाह द्वारा गुप्तभावसे मारे गये। मीरन भी अधिक दिन राज्यसुख भोग न कर सके। दश महीनेके अन्दर ही यमपुरीको यात्रा कर गये। उनके बाद उनके भतीजे इस्माईल निज़ाम राजा हुए। इस्माईलके पिता पुत्रका राज्यभोग देख न सके। पुत्रको सिंहासनसे उतार एवं बुर्हान् निज़ाम शाह (२य) नाम धारण कर आप सिंहासनपर बैठ गये। उनके बाद उनके लड़के इब्राहीम निज़ामशाह राजा हुए। वह बीजापुरराजके साथ युद्ध करनेमें हार गये। इसके बाद अहमद नामक उनके एक ज्ञातिको अहमदनगरका सिंहासन मिला, परन्तु जब कुछ दिनोंके बाद यह मालूम हुआ, कि अहमद इब्राहीमके साक्षात् ज्ञाति नहीं, तब इब्राहीमके बालक पुत्रको उसकी मामी चांद बीबीने सिंहासनपर बैठा दिया। चांद बीबी देखो।

१५९९ ई०को सम्राट् अकबरके पुत्र दानियालने अहमदनगरपर चढ़ाई की। इस समयके बादसे अहमदनगरके राजा नाममात्रके राजा हुए। उनकी कोई विशेष क्षमता न थी। १६६३ ई०को सम्राट् शाहजहांने अहमदनगरको राजशून्य कर दिया। १७५९ ई०को यह नगर पेशवाको मिला, १७९७ ई०को दौलतराव सेंधियाके अधिकारमें आया और १८१७ ई०को ब्रटिश गवर्नमेण्टके अधिकारभुक्त हो गया।

अहमद निज़ाम शाह बहरी—दक्षिणापथवाले निज़ामशाही वंशके स्थापयिता। यह निज़ाम-उल्-मुल्क बहरीके पुत्र थे। सन् १४८६ ई०को इन्होंने दुन्दाजपुरका दुर्ग अवरोध किया। इनके पिताने महमूद शाह बहमानीसे कुछ जागीर पायी थी। इस जागीरके निकटस्थ स्थानोंको अहमदने अधिकार किया और पिताकी मृत्युके बाद निज़ाम-उल्-मुल्कका उपाधि लिया। यह बड़े भारी योद्धा रहे। युद्धके समयमें प्रायः सेनापतिका भार ग्रहण करते थे। सुलतान महमूद शाहने अहमदका बल ह्रास करनेका सङ्कल्प किया। परन्तु सुलतानकी सेना अहमदसे हार गई। इस घटनाके बाद ही अहमदने श्वेतछत्र धारण किया और स्वाधीन राजा हो गये। १४९४ ई०को इन्होंने ही अहमदनगर बसाया। अहमदनगर शब्दमें इनके उत्तराधिकारियोंका संक्षिप्त विवरण देखो।

अहमदपुर—१ पञ्जाब प्रान्तके झङ्ग ज़िलेकी शोरकोट तहसीलका नगर। २ बङ्गाल प्रान्तके वीरभूम ज़िलेका व्यवसायी ग्राम और ईष्ट इण्डियन रेलवेकी लुप लायिनका ष्टेशन। रेलवे खुल जानेसे यहां चावलका व्यवसाय बढ़ गया है। ३ पञ्जाब प्रान्तके भावलपुरकी अपनी तहसीलका नगर। यह अक्षा० २९° ८´ ३०´´ उ० और द्राघि० ७१° १८´ पू० पर अवस्थित है। यहां प्रधानतः हथियार, रूई और रेशमका व्यवसाय होता है। ४ पञ्जाब प्रान्तके भावलपुर राज्यकी सादिक़ाबाद तहसीलका नगर।

अहमद बख़्श खान्—पञ्जाब प्रान्तस्थ फ़ीरोज़पुर और लोहारूके जागीरदार नवाब। इन्होंने फ़ख़रुद्दौलाका उपाधि पाया था। मरने पीछे इनके पुत्र नवाब शमसुद्दीनको उत्तराधिकार मिला, जो सन् १८३५ ई०के अक्तोबर मास वधके कारण फांसी पर चढ़ाये गये।

अहमद बेग—बम्बई प्रान्तस्थ भड़ोंचके नवाब। सन् ई०के १८ वें शताब्द कामाजी होमाजी नामक पारसी जुलाहेने एक मुसलमानको काफ़िर कहने पर इनके द्वारा मुसलमान होने या प्राण गंवानेका दण्ड पाया था। किन्तु उसने अपना धर्म न छोड़ हंसते-हंसते प्राण दे दिया।

अहमद बेग काबुली—मुसलमान कर्मचारी विशेष। इन्होंने पहले अकबर भ्राता मुहम्मद हकीम और पीछे अकबर तथा जहांगीरके अधीन काबुलमें काम किया था। कुछ समयतक यह कश्मीरके शासक रहे। सन् १६१४ ई०को इनकी मृत्यु हुई।

अहमद बेग खान्—नूरजहान्‌के भ्राता मुहम्मद शरीफ्‌के लड़के। इन्होंने बङ्गालमें जहांगीरके अधीन कार्य किया और विद्रोह बढ़ते समय शाहजादे शाह-जहान्‌को साहाय्य दिया था। अन्तको शाहजहांने इन्हें तत्ते, सीविस्थान और मुलतानका शासक बनाया। इन्होंने अवधमें जैस तथा अमेठी जागीर पाया और वहीं अपना शरीर छोड़ा।

अहमद शाह—दिल्लीके बादशाह मुहम्मदशाहके लड़के। इनका उपाधि मुजाहिदुद्दीन मुहम्मद अबुन नस्र रहा। इनकी माताका नाम ऊधम बायी था। सन् १७२५ ई०को १४ वीं दिसम्बरको यह दिल्लीके किलेमें उत्पन्न हुये और सन् १७४८ ई०की १५ वीं अप्रेलको राजसिंहासनपर बैठे थे। ६ वर्ष ३ मास ८ दिन राज्य करने बाद सन् १७५४ ई०को २ री जूनको प्रधान मन्त्री इमादुलमुल्क ग़ाजीउद्दीन खान्‌ने इन्हें और इनकी माताको क़ैद कर आंखें फोड़वा दीं। पीछे २१ वर्ष जीवित रह सन् १७७५ ई०को १ ली जनवरीको इन्होंने रोगग्रस्त हो शरीर छोड़ा था। दिल्लीमें खादिम शरीफ्‌की मसजिदके सामने इनका शवदेह गाड़ा गया।

अहमद शाह—(१म) गुजरातके २य राजा। तातार खांके पुत्र और मुज़फ़्फ़र शाहके पौत्र। मुज़फ़्फ़र शाह अपनी जिन्दगी हीमें अहमदको राज्यभार दे गये।

अहमद शाहने शाबरमती नदीके किनारे अहमदाबाद नामक नगर बसाया था। अहमदाबाद देखो। ३३ वर्ष राज करनेके बाद सन् १४४८ ई०की ४ थी जुलाईको इनकी मृत्यु हुई।

२ गुजरातके नवाब अहमद शाह द्वितीय। यह अहमदाबाद शासक शाहजादे अहमद खान्‌के लड़के रहे। महमूद शाह तृतीयके मरनेसे राज्यका दूसरा उत्तराधिकारी न मिलने पर प्रधान मन्त्री इतमाद खान्‌ने इन्हें सन् १५५४ ई०की १८ वीं फरवरीको गुजरातका राज्यसिंहासन सौंपा था। इन्होंने सात वर्ष और कुछ मास राज्य किया। सन् १५६१ ई०को २१ वीं अप्रेलको राजप्रासादकी दीवारके नीचे इन्हें कोई मारकर डाल गया था। इनका उत्तराधिकार मुज़फ़्फ़र शाह तृतीयके हाथ लगा।

अहमद शाह अबदाली—एक विख्यात अफ़ग़ान वीर। लड़कपनमें नादिरशाह इन्हें पकड़ ले गये और अपना दास बनाकर रखा था। उनके पास रहकर इन्होंने सामान्य दासके कामसे लेकर सेनाध्यक्षका भारतक पाया। सन् १७४७ ई०की ११ वीं मईको नादिर विनष्ट हुए थे। यह खबर पाते ही अहमद शाहने ईरानी सेनापर आक्रमण किया, परन्तु इस युद्धमें कृतकार्य न हो ससैन्य कन्दहारमें जा पहुंचे। काबुल और कन्दहार इनके हाथ लगा, उसीके साथ साथ सिन्धु और काबुलसे भेजे हुए ईरानके बहुतसे रत्न भी इन्हें मिले। एकबारगी ही अतुल धन पाकर हिन्दुस्थान जय करनेकी वासना इनके मनमें जाग उठी थी। पेशावर और लाहोरको इन्होंने जीत भी लिया। १७४८ ई०को इन्होंने लाहोरसे दिल्लीपर चढ़ायी की। उस समय दिल्लीके सम्राट् मुहम्मद शाह बीमार थे। उन्होंने अपने पुत्र अहमदको अहमद शाह अबदालीसे लड़नेके लिये भेजा। सरहिन्दके पास दोनों सेनायें भिड़ गईं। शुक्रवारको वज़ीर कमर-उद्दीन अपने तम्बूमें ईश्वरके भजनमें निमग्न थे। उसी समय शत्रुके गोलेकी चोटसे घायल होकर वह मर गये। यह शोचनीय व्यापार देखकर मुग़लसेना रणमदसे उन्मत्त हो गयी। उस दिनके युद्धमें हज़ारों अफ़ग़ान खेत आये। रङ्ग खराब देखकर अहमद शाहने पीठ दिखाई और काबुल जाकर नई राह निकालनेकी चेष्टा करने लगे। १७५७ ई०को यह आगरे तथा दिल्लीतक आये और राहमें मथुराको लूटकर कन्दहार लौट गये। इसी समय महाराष्ट्रोंके अत्याचारसे समस्त हिन्दुस्थान उत्पीड़ित हो गया था। रुहेलाधिप नाज़िर-उद्दौला, अवधके नवाब शुजा उद्दौला तथा दूसरे भी कितने ही मुसलमानोंने महाराष्ट्रोंके अत्याचारसे छुटकारा पानेकी आशापर अहमद शाह अबदालीको बुलाया और उनके लिये दिल्लीका तख्त तक छोड़ देना चाहा। अबदाली फिर सेना लेकर भारतवर्षमें आये। महाराष्ट्रोंसे इनकी कई लड़ाइयां हुईं। उनमें

पानी पतका युद्ध ही प्रधान है। १७६१ ई०में यह युद्ध हुआ था। इस युद्धमें महाराष्ट्रोंने पूर्णरूपसे पराजय स्वीकार कर लिया।

स्वदेश लौट जानेके समय अबदाली शाह आलम-को भारतवर्षका सम्राट् बना शुजा उद्दौला आदि नवाबोंको उनकी अधिनता स्वीकार करनेका आदेश दे गये थे। २६ वर्ष राज करनेके बाद १७७३ ई०को अहमद शाह अबदालीने प्राणत्याग किया। क़न्दहारके राजभवनके पास ही इनको मट्टी दी गई थी। इनकी क़ब्रको लोग सिद्धाश्रम समझते हैं। इनकी मृत्युके बाद इनके लड़के तैमूर शाह तख़्तपर बैठे। अहमद शाह अबदालीको शाह दुरानी भी कहते हैं।

अहमद शाह वली बहमानी—दक्षिणापथके एक सुल-तान। यह बहमान्‌वंशीय सुलतान दावूद शाहके पुत्र थे। पहले इनके बड़े भाई फ़ीरोज़ शाहको राज्य मिला, परन्तु उन्होंने अपनी इच्छासे अपने छोटे भाई अहमदशाहको दे दिया। सन्१४२२ ई०को अहमद शाह राजसिंहासनपर बैठे थे।

एक दिन अहमद शाह शिकार खेलने गये। परन्तु आखेट करते करते एक मनोहर स्थानमें जा पहुंचे। वहां स्वच्छसलिला नदी बहते रही। फलसे लदे हुए वृक्ष वनकी शोभा बढ़ा और अनेक प्रकारके पक्षी कलरवसे कानन गुंजा रहे थे। यह दृश्य देख सुलतानका मन मुग्ध हो गया। इन्होने उस स्थानमें अहमदाबाद बीदर नामक सुन्दर नगर और दुर्ग बनाया। यहीं दमयन्तीके पिताका राज्य था। १२ वर्ष राज करनेके बाद १४३६ ई०को अहमद शाह कालके कलेवा हो गये।

अहमदाबाद—१ बम्बई विभागके अन्तर्गत गुजरात-प्रदेशका एक ज़िला। यह अक्षा० २१° ५७´ ३०´´ तथा २३° २४´ ३०´´ उ० और द्राघि० ७१° २०´ एवं ७२° २७´ २०´´ पू०के मध्य अवस्थित है। इस ज़िलेकी उत्तर सीमामें बड़ोदा, उत्तर पूर्वमें महीकान्ता, पूर्वमें बालासिनोर एवं कैरा ज़िला, दक्षिणपूर्वमें कम्बे और पश्चिममें काठियावाड़ है।

अहमदाबादके भूतत्त्वकी पर्य्यालोचना करनेसे अनायास ही स्वीकार करना पड़ता है, कि पहले यह स्थान समुद्रमें था और इसे वर्त्तमान भूमिके आकारमें परिणत हुए बहुत दिन नहीं बीते।

पहले अहमदाबाद अनहिलवाड़ राजाओंके अधिकारमें था। सन् ७४६ ई०में उन्होंने इस स्थानको किसानी करनेके लिये लोगोंको दे दिया। १२९७ ई० तक यह जगह उन्हींके हाथमें रही। उसके बाद भीलोंने इसे दख़ल कर लिया। फिर १५७२ ई०को अकबर शाहने इसे भीलोंसे छीना था। १७५३ ई०को पेशवाने इस जगहको दख़ल किया। १८१७ ई०को गायकवाड़ने अपना और पेशवाका हिस्सा ब्रटिश गवर्नमेण्टको दे दिया था।

अहमदाबाद ख़ूब उपजाऊ है। बम्बई प्रदेशमें यह वाणिज्यका प्रधान स्थान है। यहांके अधिकांश आदमी खेती-किसानी करके जीविका निर्वाह करते हैं। उनमें कुनबी, राजपूत और कोरी ही प्रधान हैं। कुनबी सचराचर तीन श्रेणियोंमें विभक्त हैं,—अञ्जना, कदावा और लेवा। इस समय हिन्दुस्थानमें जिस तरह सामान्य गृहस्थके यहां कन्याका जन्म होनेसे वह अपनेको विपद्‌ग्रस्त समझता, कुनबियों-की भी वही दशा है। इस विपद्‌से बचनेके लिये कुनबी जन्मते ही कन्याको मार डालते रहे। अहा! मा होकर भी सन्तानके ऊपर ऐसा अत्याचार करना पड़ता था! बिना बहुत ख़र्च किये कन्याका विवाह न होता था। किसीने बहुत कष्टसे कन्याको पाला पोसा। किन्तु वह जब बड़ी हुई, तो मन लायक़ पति न मिला। ऐसी हालतमें प्राय: पहले उसका विवाह फूलके गुलदस्तेसे होता था। फिर वह गुलदस्ता कुयेंमें फेंक देनेसे कन्या विधवा हो जाती रही। ऐसे स्थलमें वह कन्या पुनर्विवाह कर सकती थी। उसमें बहुत ख़र्च भी न लगते रहा। किसी स्थलमें विवाहित पुरुषके साथ कन्याका विवाह कर दिया जाता था। परन्तु शर्त यह ठहरा ली जाती थी, वर विवाह करनेके बाद ही कन्याको परित्याग कर देगा। वरके परित्याग कर देनेपर फिर जिसकी इच्छा हो, वह उस कन्यासे विवाह कर सकता था।

कुनबियोंकी शिशुहत्या रोकनेके लिये सन् १८७० ई०में एक आईन जारी हुआ।

यहांके राजपूतोंमें दो श्रेणियां हैं। एक श्रेणीके आदमियोंकी जमीन वगैरह है। वे प्रायः सभी आलसी हैं। फिर दूसरी श्रेणीके मनुष्योंका जीवनोपाय किसानी है। यहांके प्रायः सभी कोरी किसान हैं, और अति सामान्य अवस्थामें कालयापन करते हैं।

इस ज़िलेकी लोकसंख्या प्रायः साढ़े आठ लाख है। इसके प्रधान नगर हैं—अहमदाबाद,धोल्का, वरिजाम, धोलेरा, धन्धक, गोधा, परान्तिज, मोराश और सानन्द।

यह स्थान रेशमी और ऊनी कपड़ेके लिये प्रसिद्ध है। यहां श्रावक और ओसवाल जैन वास करते हैं। बम्बई गजेटियरके चौथे भागमें अहमदाबादका विस्तृत विवरण देखो।

२ अहमदाबादनगर। यह नगर गुजरातमें सर्वश्रेष्ठ है। शाबरमती नदीके बायें किनारे बसा है। इसका दृश्य अति सुन्दर है। दूरसे देखनेपर नयन और मन शीतल हो जाता है। इस नगरके पूर्व और पश्चिम और ऊंची शहरपनाह बनी है। यह शहरपनाह प्रायः एक कोस लम्बी होगी। गुजरातके राजा अहमद शाहने इसे सन् १४१२ और १४४३ ई०के बीच बसाया था।

१५७३ ई०में यह स्थान अकबरके अधिकारभुक्त हुआ। सन् ई०की सोलहवीं और सतरहवीं शताब्दोमें इस स्थानकी समृद्धि खूब बढ़ी थी। फिरिस्ता नामक पारसी इतिहास ग्रन्थमें लिखा है, कि उस समय गुजरातके ३६० नगरोंमें शहरपनाह रही। महाराष्ट्रोंके उत्थानसे वह सब कीर्त्ति विलुप्त हो गई। १७३८ ई०को दामाजी गायकवाड़ और मुनीव खां नामक एक मनुष्यके हाथमें यह शहर आया था। दोनोंने मिल जुलकर कुछ दिन इसका उपभत्व भोग किया।

१७५३ ई०में महाराष्ट्रोंने इस स्थानको दखल कर लिया। बीचमें मुनीव खांने कुछ दिनोंके लिये इसे अधिकार किया था, परन्तु फिर वह महाराष्ट्रोंके हाथमें चला गया। (१७५७ ई०)

१७८० ई०को बृटिश सेनापति गडर्नने इस स्थानपर चढ़ाई की और १८८१ ई०को यह अंगरेजोंके दखलमें आ गया। यहां जैनश्रावकोंके १२० मन्दिर हैं। स्थानीय हिन्दू तीन तीन वर्षपर एकबार नङ्गे पैर इस नगरकी परिक्रमा करते हैं।

इस नगरकी सोने और चांदीकी ज़री प्रसिद्ध है। यहां जो काग़ज़ तय्यार होता, वह गुजरात प्रदेशमें काम आता है।

अहमदी—एक तुर्की कवि। इनका पूरा नाम ख़्वाजा अहमद जाफ़री रहा। यह अमेसियामें रहते थे। किसी दिन विश्वविजयी तातार-नृपति तैमूरलङ्गने कफोली जाते समय इनके ग्राममें विश्राम किया। इन्होंने अपनी बनायी ग़ज़ल उन्हें जा सुनायी थी। तैमूरलङ्ग साहित्यप्रेमी रहे। उनमें और इनमें हार्दिक स्नेह बढ़ गया। किसी दिन दोनो स्नानागारमें बैठे थे। तैमूर इनसे कूट प्रश्न करते और उत्तर पर हंसते जाते थे। बादशाहने अनुचरोंको ओर सङ्केतकर पूछा,—यदि आपसे कोयी इन तीन सुन्दर बालकोंका मूल्य पूछे, तो क्या बतायियेगा? अहमदीने बड़े शान्त भावसे उत्तर दिया, पहलेका एक ऊंट चांदी, दूसरेका १८२ सेर मोती और तीसरेका दाम सोनेका ४० खूंटा है। तैमूरने कहा,—बहुत ठीक, अब मेरा भी मूल्य बता दीजिये। कविने कहा,—चौबीस अशरफ़ीसे कम न ज्यादा। तैमूरने हंसते-हसते फिर अहमदीसे पूछा,—क्या, चौबीस अशरफ़ीकी तो मैं सदरी ही पहने हूं? कविने उत्तर दिया,—तभी तो, वरं आपका मूल्य कौड़ी भी नहीं आता। तैमूरने कविको इस चातुर्य और स्पष्ट कथनपर कितना ही पुरस्कार दिया था। इन्होंने 'कुल्लियात ख़्वाजा अहमद जाफ़री', तुर्की-भाषाका 'सिकन्दरनामा' और तैमूरलङ्गको वीरताका वर्णन बनाया है। सन् १४१२ ई०को इनकी मृत्यु हुयी।

अहमहमिका (सं० स्त्री०) अहमहं शब्दोऽस्यत्र वीप्सायां द्विर्भावः ठन् निपातनात् न टेर्लोपः। १ परस्पर अहङ्कार, आत्मश्लाघा, खुदबीनी, लाफ़ज़नी,

हमाहमो। २ युद्धविषयक दर्प, लड़नेकी चढ़ाऊपरी, मारकाट, धरपकड़।

अहमिति, अहम्मति देखो।

अहमेव, अहङ्कार देखो।

अहम्पूर्व (वै० त्रि०) अहं पूर्वं करोमि अहं पूर्वं करोमि इत्यभिधानं यस्य। प्रथम होनेका अभिलाषी, उत्साह हेतु मैं पहले करूंगा मैं पहले करूंगा कहनेवाला, जो मैं पहले मैं पहले कहता हो।

अहम्पूर्विका (सं० स्त्री०) अहंपूर्वं अहंपूर्वं इत्यभिधानं यत्र। १ योद्धाओंका उत्साहसे मैं ही पहले जाऊंगा मैं ही पहले जाऊंगा कहना, जयेच्छु आक्रमण, हमसरीका हमला। २ गर्व, घमण्ड।

अहम्प्रत्यय (सं० पु०) अहमेवं रूपप्रत्ययः विश्वासः, रूप० कर्मधा०। मैं और मेरेका ज्ञान, अहं शब्दाभिलाषी आत्मा। चार्वाक् कहता, कि अहम्प्रत्यय देहके ही मध्य रहता है। बौद्ध इसे क्षणिक विज्ञान बताता और आस्तिक दर्शनके अनुसार देहादिसे व्यतिरिक्त समझता है।

अहम्प्रथमिका, अहम्पूर्विका देखो।

अहम्भद्र (सं० त्रि०) अहमेव भद्र इति निर्णयो यत्र। अपनेको ही भद्र समझनेवाला, जो अपने हीको बड़ा मानता हो। (क्ली०) २ आत्माभिमान, खुदबीनो, अपनी बड़ाई।

अहम्मति (सं० स्त्री०) अहमित्येवं मतिः ज्ञानम्, रूप० कर्मधा०। अविद्या, अज्ञान, खुदबीनी, जोम, अपनी बड़ाई।

अहम्मान (सं० क्ली०) अहम्मति देखो।

अहर (सं० त्रि०) न हरति, हृ-अच्, नञ्-तत्। १ हारक न होनेवाला, जो छीन न लेता हो। नास्ति हरो हारको यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ हारकशून्य, वाहनहीन, जिसे खींचनेवाला न रहे। (पु०) गणितशास्त्रके मतसे—शुद्धराशि अर्थात् जो राशि फिर बंटता न हो, तक्सीम न होनेवाली अदद। ४ असुरविशेष। ५ द्वादश मनु।

अहरणीय (सं० त्रि०) हरण किया न जानेवाला, जो चोराने या ले जाने लायक न हो।

अहरट्टक् (सं० पु०) गृध्र, उकाब, गीध।

अहरन (हिं० स्त्री०) शूर्मी, स्थूणा, सनदां, निहायी।

अहरना (हिं० क्रि०) गढ़ना, बनाना, छील-छाल करना।

अहरनि, अहरन देखो।

अहरा (हिं० पु०) १ सुलगाये जानेवाले कण्डोंका ढेर। २ मुकाम, ठहरनेकी जगह। ३ पानी पीनेका अड्डा। यह संस्कृतके आहरण शब्दका अपभ्रंश है।

अहरागम (सं० पु०) प्रातःकालकी उपस्थिति, सवेरेकी आमद, तड़केकी पहुंच।

अहरादि (सं० पु०) अह्नः आदिः, ६-तत्। अहरादीनाम्पत्यादिषु वा रेफः। (महाभाष्य) १ प्रातःकाल, सवेरा। २ गणविशेष। इसमें निम्नलिखित शब्द पठित हैं,—अहन्, गिर् और धुर्।

अहरित (वै० त्रि०) जो पीला न हो।

अहरी (हिं० स्त्री०) १ चरही, पशुओंके पानी पीनेका हौज। २ हौज, पानी भरनेकी जगह। ३ पानी पीनेका अड्डा।

अहर्गण (सं० पु०) अह्नां गणः। मास, दिनसमूह, महीना। इसके पर्याय यह हैं,—द्युवृन्द, दिनौघ, द्युगण, दिनपिण्ड।

२ ग्रहोंमें भावादि ज्ञापक सृष्टि, श्वेतवराहकल्प किम्बा कल्प आरम्भसे इष्ट दिन पर्यन्त बीतनेवाले दिनोंका समूह। सृष्टिके एक हजार युगमें ब्रह्माका एक दिन होता, जो मनुष्यका कल्प भी कहाता है। ब्रह्माका रात्रिमान भी एक हजार युग है। इन्हीं दो युग सहस्रको ३६० से गुणा करनेपर ब्रह्माका एक वर्ष होता है। ऐसे ही सौ वर्षसे ब्रह्माका परमायु आता है। पूर्वोक्त कालसे आधा ब्रह्माका अर्धपरमायु है। ब्रह्माके इसी अर्धपरमायुमें सन्धि सहित छः मनु बीत चुके हैं। वैवस्वतमनुवाले युगके तीन चरण गत हुये हैं। उनके २८ युगमें सत्ययुग बीता था। सूर्यसिद्धान्तने निम्नलिखित नियमसे इसकी गणना की है,—मनुष्यके ४३२०००००० वर्षका ब्रह्माका एक दिन होता, और इतना ही समय रातमें भी लगता

है। इन दोनोंको जोड़ देनेसे ब्रह्म अहोरात्रमान ८६४००००००० वर्ष होता है। इसको ३६०से गुणा करनेपर ३११०४००००००००० आता, जो ब्रह्माका एक वर्ष है। ब्रह्माके वर्षको एक सौसे गुणा करनेपर ३११०४०००००००००००वर्ष निकलते हैं। यही ब्रह्माका परमायु है। इसका आधा १५५५२०००००००००० वर्ष ब्रह्माका अर्ध परमायु ठहरता है। मन्वन्तर संख्या ३०६७२०००० वर्ष है। इसके छगुने—१८४०३२०००० वर्षोंमें छः मनु बीत चुके हैं।

अहर्जर (वै० पु०) अहोभिः परिवर्तमाना लोकान् जरयति, अहन्-जृ-करणि-अप्। संवत्सर, साल, दिनोंको बुड्ढा बनानेवाला ज़माना।

अहर्जात (वै० त्रि०) दिनमें उत्पन्न, रात्रिसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो दिनको पैदा हो।

अहर्दिव (वै० अव्य०) अहनि च दिवा च निपा० अजन्त समा० द्वन्द्व। १ दिन-दिन, प्रतिदिन, रोज़ बरोज़, हररोज़। (त्रि०) २ प्रतिदिन होनेवाला, जो हररोज़ हो।

अहर्दिवि (वै० अव्य०) दिन-दिन, प्रतिदिन, रोज़-बरोज़, हररोज़, लगातार, बराबर।

अहर्दृश् (वै० त्रि०) दिन देखनेवाला, जीवित, जिन्दा, जो दिन देखता हो।

अहर्नाथ (सं० पु०) अह्नो नाथः, ६-तत्। १ दिन-नाथ सूर्य, दिनका मालिक आफ़ताब। २ अर्कवृक्ष, अकोड़ेका पेड़।

अहर्निश (सं० क्ली०) अहश्च निशा च समा० द्वन्द्व०। १ दिवारात्रि, रातदिन, तमाम दिन। (अव्य०) २ सदा, हमेशा, बराबर।

अहर्पण (सं० पु०) मांस, गोश्त।

अहर्पति (वै० पु०) अह्नः पतिः उदयेन प्रकाशक-त्वात्। १ सूर्य, आफ़ताब। २ अर्कवृक्ष, अकोड़का पेड़। ३ शिव।

अहर्बान्धव (सं० पु०) अह्नि बान्धव इव अन्धकार-दूरीकरणात्। १ सूर्य। २ अर्कवृक्ष।

अहर्भाज् (वै० स्त्री०) अहर्बहुदिवसं भजति तिष्ठति, अहन्-भज-ण्वि। १ इष्टका विशेष, बहुत दिन टिकने-वाली ईंट। (त्रि०) २ दिवस-सम्बन्धीय, दिनी।

अहर्मणि (सं० पु०) अह्नि अह्नो वा मणिरिव प्रकाशकत्वात्। १ दिनमें मणि-जैसा चमकनेवाला सूर्य। २ अर्कवृक्ष।

अहर्मुख (सं० क्ली०) प्रातःकाल, सवेरा, दिनका निकलना।

अहर्लोक (वै० पु०) अहर्बहुदिवसं लोक्यते दृश्यते अहन्-लोक कर्मणि घञ्। १ इष्टकाविशेष, बहुत दिन टिकनेवाली ईंट। (त्रि०) २ दिवसका स्थान ग्रहण करनेवाला, जिसे दिनकी जगह मिले।

अहर्विद् (वै० पु०) अहः एकाहसाध्यं अग्निष्टोमं वेत्ति, अहन्-विद्-क्विप्। १ एकाहसाध्य अग्निष्टोम-वेत्ता, जो एक ही दिनमें किये जानेवाले अग्निष्टोमको जानता हो। (त्रि०) २ बहुकालस्थायी, बहुत दिन टिकनेवाला। ३ विदित, बहुत दिनसे समझा हुआ। ४ कालज्ञ, मौक़ा देखनेवाला।

अहर्वृन्द (सं० क्ली०) अह्नः वृन्दं समूहः, ६-तत्। दिनसमूह, दिनका ज़खीरा।

"मेषादीनामहर्वृन्दं षण्णां सप्ताष्टचन्द्रकम्।
तुलादीनामष्टसप्तचन्द्रकन्तु लिखेत् पृथक्॥" (मलमासतत्त्व)

मेषादि छः मासके १८७ और तुलादि छः मासके १७८ जोड़ ज्योतिषके नियमानुसार वत्सर ३६५ दिनका गिना जाता है।

अहर्ष (सं० त्रि०) मन्दभाग्य, कमबख़्त, जो खुश न हो।

अहर्षित, अहर्ष देखो।

अहल (सं० त्रि०) अकृष्ट, असीत्य, जो हलसे जोता न गया हो।

अहलकार (फ़ा० पु०) कर्मचारी, कामकरनेवाला शख़्स। यह शब्द प्रायः अदालतके नौकरोंपर व्यवहार होता है।

अहलमद (फ़ा० पु०) न्यायालयका कर्मचारीविशेष, अदालतका एक मुलाज़िम। अहलमद अदालतकी मिसलें रजिष्टरपर चढ़ाता, हुक्म निकालता और फ़ैसलेके काग़ज़ हिफ़ाज़तसे रखता है।

अहल्या, अहिल्या और आल्या देखो।

अह्लाद (हिं०) आह्लाद देखो।

अहलादी (हिं०) आल्हादिन् देखो।

अहल्य (सं० त्रि०) न हलेन कृष्यम्। १ हलद्वारा अकृष्य, जो हलसे जोता न जाता हो। (पु०) २ देशविशेष।

अहल्या (सं० स्त्री०) १ अप्सरोविशेष, एक परी। २ गौतमपत्नी। पुराणमें कहा कि, अहल्याका नाम लेनेसे महापातक नाश होता है। यथा—

"अहल्या द्रौपदी कुन्ती तारा मन्दोदरी तथा।
पञ्चकन्याः स्मरेन्नित्यं महापातकनाशनम्॥"

यह वृद्धाश्वकी कन्या रहीं, इनके स्वामीका नाम गौतम था। इन्द्रने गौतमका रूप बना अहल्याका धर्म नष्ट किया। इसी अपराधके कारण गौतमके शापसे इन्द्रके शरीरमें सहस्र योनि हुयी और अहल्या पाषाण बन गयी थीं। पीछे त्रेतायुगमें मर्यादापुरुषोत्तम रामचन्द्रजीके पादस्पर्शसे इनका शाप छूटा। (रामायण)

३ राजा इन्द्रद्युम्नकी पत्नी। योगवाशिष्टमें इनकी कथा लिखी है। यह गौतमपत्नी अहल्या एवं इन्द्रका वृत्तान्त सुन इन्द्रनामक किसी व्यक्तिके प्रणयमें आसक्त हुयी थीं। इसीसे राजाने इनको नगरसे निकलवा दिया।

रामायणके उत्तरकाण्डमें (उ० अ० १९—२१) अहल्याका विवरण इस तरह लिखा है,—ब्रह्मा एक दिन इन्द्रसे कहने लगे, हे अमरेन्द्र! मैंने बुद्धिसे कल्पना कर प्रजागणकी सृष्टि रची है। उसमें सबका एक वर्ण, एक भाषा एवं एक विषय है। किसी लक्षण या आकृतिमें उसका कोयी इतरविशेष नहीं पड़ा। इसके बाद मैंने एकाग्रचित्तसे प्रजाके विषयमें चिन्ता की थी। उसके मध्यमें विशेषता देखानेको मैंने एक स्त्री बनायी। जिस प्राणीका जो अङ्गप्रत्यङ्ग उत्तम रहा, मैंने उसीको उद्धृत किया था। इससे रूपगुणसम्पन्ना अहल्या कन्याका निर्माण हुआ। हल शब्दसे वैरूप्य समझते और हलसे जो प्रभूत हो, उसको हल्य कहते हैं। जिसके शरीरमें कुछ भी वैरूप्य नहीं होता, उसीको अहल्या कहा जाता है। "हलं नामेह वैरूप्यं हल्यं तत्प्रभवं भवेत्। यस्या न विद्यते हल्यं तेनाहल्येति विश्रुता॥" इसीसे मैंने उसका अहल्या नाम रखा था। हे देवेन्द्र! कन्या निर्माण करके, मुझे यही चिन्ता होने लगी। यह कहां रहेगी और इसका विवाह किससे किया जायेगा? हे पुरन्दर! तुम स्वर्गके राजा हो, इस लिये तुमने मन ही मन स्थिर किया,—यह कन्या हमारी होगी। किन्तु मैंने उसको गौतमके तत्त्वावधानमें गच्छित रखा। बहुत वर्षतक गच्छित रखकर उसको उन्होंने प्रत्यर्पण कर दिया। उन महामुनिका स्थैर्य और तपःसिद्धि देख मैंने वह कन्या उन्हीं को सम्प्रदान की। महामुनि उसको लेकर रसभावसे सहवास करने लगे। गौतमको कन्यादान करनेसे देवता निराश हुये थे। तुमने कामातुर हो क्रुद्धमनसे मुनिके आश्रममें पहुंच उस दीप्त अग्निसदृश स्त्रीको देखा। उस समय वह कामार्त और क्रोधसे प्रज्वलित हुयी और तुमने उसका धर्म नष्ट किया। महर्षिने तुमको आश्रममें देख लिया था। उस समय तेजस्वी ऋषिने यह शाप दिया,—तुम्हारे इस ऐश्वर्य और भाग्यका विपर्यय हो।

कुमारिलभट्ट कहते हैं,—अहल्या और इन्द्रका गल्प केवल रूपक वर्णना मात्र है। अहल्या शब्दसे रात्रि और इन्द्रसे सूर्यका बोध होता है। यही घटना अवलम्बन कर अहल्या और इन्द्रका वृत्तान्त कल्पन किया गया है,—दिनमें सूर्योदय होनेसे रात्रि नहीं रहती। (अहनि लीयमानतया)

मुद्गलसे मौद्गल गोत्रीय ब्राह्मणगण उत्पन्न हुआ है। वह क्षत्रियका अंश हैं। मुद्गलके पुत्रका नाम वृद्धाश्व था। वृद्धाश्वसे यमज पुत्रकन्या दिवोदास एवं अहल्या और शरद्वान्के औरस तथा अहल्याके गर्भसे शतानन्दका जन्म हुआ। (विष्णुपुराण ४।१८।१८) इस स्थलकी टीकामें श्रीधरस्वामी लिखते,—शरद्वान् और गौतम एक ही व्यक्ति हैं। (शरद्वतो गौतमात् स्वाम खलितम्)

भागवतपुराणमें भी लिखा है, (४।२१।११)—मुद्गलसे मौद्गल्य गोत्रीय ब्राह्मण, भार्म्य मुद्गलसे यमज पुत्रकन्या दिवोदास एवं अहल्या और गौतमके औरस तथा अहल्याके गर्भसे शतानन्दका जन्म हुआ था।

अहल्यानन्दन (पु०) ६-तत्। शतानन्द ऋषि।

अहल्याबाई—मालवदेशके राजा खाण्डेरावकी पत्नी। इनके एक पुत्र और एक कन्या थी। पुत्रका नाम मालीराव रहा। खाण्डेरावकी मृत्युके बाद मालीरावने अल्पकाल राजत्व चला सन् १७६६ ई०में परलोकगमन किया। अहल्याकी कन्याका नाम मुक्ताबाई था। उनका विवाह यशोवन्त रावसे हुआ।

मालीरावकी मृत्युके बाद अहल्याबाई स्वयं राजेश्वरी हुईं। ये स्वभावसे अतिशय धर्मशीला और बुद्धिमती थीं। परन्तु इनके अपने हाथमें राज्यभार लेनेसे गङ्गाधर यशोवन्त नामक एक राजपुरोहित विरोधी हो गये। उनकी इच्छा थी, कि रानी एक दत्तक-पुत्र गहण करतीं। दत्तक-पुत्र ग्रहण करनेसे वह स्वयं राज्यके कर्ता हो सकते, किन्तु अहल्याबाई इस प्रस्तावमें सम्मत न हुईं। पीछे राघवदादा नामक महाराष्ट्रीय राजाके पितृव्य गङ्गाधरके सपक्ष बन अहल्याके विरुद्ध युद्धका उद्योग करने लगे। यह बात सुनकर अहल्याबाईने महाराष्ट्रदेशके राजा माधवरावको विशेष अनुरोधसे एक पत्र लिखा था। माधवरावने पत्र पाकर अपने भतीजे राघवदादाको विरोधसे शान्त किया, इसीसे युद्ध न हुआ। पीछे अहल्याबाईने गङ्गाधरको क्षमा कर प्रधान मन्त्री बनाया था। फिर तुकाजी होलकर नामक एक मनुष्य सेनापति नियुक्त हुये। तुकाजी बहुत बुद्धिमान व्यक्ति थे। इसलिये उन्होंने शीघ्र ही अन्य अन्य कार्यका भार भी पा लिया। अहल्याबाई स्वयं महेश्वरमें रह शातपुरा पर्वतके उत्तर सकल देशका राजस्व इकट्ठा करती थीं। इधर मालव, निमाड़ और दाक्षिणप्रान्तका कर भी इनके पास जा पहुंचता। तुकाजी शातपुरा पर्वतके दक्षिण रह होलकरके अधिकारस्थ सम्पूर्ण देशका राजस्व संग्रह करते थे। अहल्याबाईके समय राज्यमें किसी प्रकारकी विशृङ्खला न रही। सब कर्मचारी नियमित रूपसे वेतन पाते थे। कर्मचारियोंको वेतन देकर जो रुपया उद्वृत्त रहता, युद्धादिके निमित्त वह संग्रह किया जाता था। दिन दिन अहल्याबाईकी प्रतिपत्ति बढ़ने लगी। भारतवर्षीय सब राज्योंके वकील और प्रतिनिधि इनकी सभामें उपस्थित रहते थे। इधर अहल्या रानीके भी प्रतिनिधि पूना, हैदराबाद, श्रीरङ्गपत्तन, नागपुर, लखनऊ एवं कलकत्ते नगरमें रह सकल कार्य निर्वाह करते थे। फलतः राजकार्यकी ऐसी सुव्यवस्था पहले कभी न हुयी थी। हिन्दूमहिलायें घरसे बाहर नहीं निकलतीं, परन्तु अहल्याबाई राजसभामें बैठ मन्त्रियों और पारिषदोंसे सम्पूर्ण राजकार्यका परामर्श लेती थीं। यह प्रतिदिन सूर्योदयसे पूर्व ही उठ स्नानादिके पीछे प्रातःकृत्य चलाती रहीं। पूजा आदिके बाद कुछ काल धर्मग्रन्थ पुराण प्रभृतिका पाठकर अपने हाथसे थोड़े ब्राह्मणोंको भोजन करा अहल्या भोजन करती थीं। यह मत्स्य मांस खाती न थीं। भोजनके बाद कुछ काल विश्राम कर साढ़े बारह बजेके बाद राजवस्त्र पहन सभामें जाते रहीं। संध्याकाल पर्यन्त दरबार होता था। सायंकृत्य एवं रात्रिके भोजन बाद यह पुनः सभामें बैठती थीं।

पहले इन्दौर अति सामान्य ग्राम था, अहल्याबाईके यत्नसे क्रमशः समृद्धिशाली और प्रसिद्ध नगर हो गया। यह कभी प्रजाके ऐश्वर्यपर लोभ करती न थीं। इनको निज व्ययके लिये पांच लाख रुपये वार्षिक आयकी सम्पत्ति निर्दिष्ट रही। इससे भिन्न होलकर राज्यसे दो करोड़ रुपया इन्होंने पाया था। यह रुपया सत्कर्ममें ही व्यय किया गया। पहले इन्होंने कयी दुर्ग बनवाये थे। उसके बाद विन्ध्य पर्वतपर जाम नामक दुर्गमें एक राह बनवायी। केदारनाथके यात्रियोंकी सुविधाके लिये एक धर्मशाला और एक तालाब निर्माण कराया। यह धर्मशाला मन्दर नामक स्थानसे उत्तर आज भी विद्यमान है। महेश्वर और मालवप्रान्तमें भी इनकी बनवायी अनेक धर्मशाला तथा कूप हैं। इससे अतिरिक्त सेतुबन्धरामेश्वर, द्राविड़ और श्रीक्षेत्रमें एक एक कीर्त्ति खड़ी है। बड़ोदा-राज्यस्थ काडी ज़िलेके सिद्धपुर नामक स्थानमें कमलपुरी गोसायियोंका जो बढ़िया धर्मशाला खड़ा, वह अहल्याबाईका ही बनवाया है। काठियावाड़

जूनागढ़में इन्होंने सोमनाथका दूसरा-नया मन्दिर खड़ा कराया, जो १८ फीट लम्बा और ४२ फीट चौड़ा है। मन्दिरको चारो ओर ८२ फीट चौड़ा अहाता खिंचा है। अहातेमें धर्मशाला और अन्नपूर्णा एवं गणपतिका दो छोटा मन्दिर है। सोमनाथके मन्दिरपर तीन गुम्बज लगे हैं। शङ्खलेश्वर लिङ्गके नीचे १२ फीट लम्बी-चौड़ी कोठरी खुदी, जिसमें सोमनाथका लिङ्ग विराजमान है। गुम्बजोंमें ३२ खम्भे लगे हैं। परन्तु सकल स्थानको अपेक्षा गयाधामवाली इनकी कार्त्ति ही अधिक प्रशंसनीय है। गयामें इनके प्रतिष्ठित अनेक देवालय हैं, जिनके मध्यमें विष्णुपदमन्दिर और लाटमन्दिर अतिशय आश्चर्यमय हैं। मन्दिरको कारीगरी विश्वकर्माने मानो अपने हाथ निकाली है। ऊपरी मेहराब अति चमत्कार है, मानो शून्यपर आप ही लटकती है। फिर एक मन्दिरमें रामसीताकी प्रतिमूर्ति है, जिसके समीप अहल्याबाई बैठ भक्ति भावसे शिवपूजा करती हैं। इनके समस्त देवालयोंमें प्रतिवर्ष विस्तर अर्थ और खाद्यद्रव्यादि दान किया जाता था। इससे भिन्न यह नित्य दरिद्रोंको भोजन कराती थीं। ग्रीष्मकाल आनेसे पथिकोंके लिये अहल्या स्थान स्थान पर जलसत्र बैठा देते रहीं। शीतकालमें दरिद्रोंका यह वस्त्र वितरण करती थीं। पशु-पक्षियोंके लिये भी खाद्यद्रव्य निर्दिष्ट था। कृषक शस्यक्षेत्रमें पक्षियोंको बैठन न देते थे। असंख्य असंख्य पक्षी दल बांधकर ऊपर उड़ा करते, परन्तु कुछ भी खाने न पाते रहे। यह देखकर अहल्या रानी कृषकोंसे फसली खेत खरीद कर पक्षियोंके निमित्त छोड़ देती थीं। इसीतरह सन् १७६५ से १७९५ ई० तक प्रायः तीस वर्ष सुखपूर्वक राजत्व चला साठ वर्षकी अवस्थामें इन्होंने स्वर्गगमन किया।

अहल्याराज (सं० पु०) ६-तत्। इन्द्र।

अहल्यास्थान—विहारप्रान्त दरभङ्गा जिलेके अहियारी ग्रामका मन्दिर। प्रति मास इस मन्दिरमें धार्मिक मेला लगता और दिन रात ठहरता है। प्रायः दश सहस्र यात्री एकत्र होते हैं। पहले तिरसठ परगनेके देवकली कुण्डमें स्नान कर पीछे लोग यहां सीताका पदचिह्न देखने आते हैं। पदचिह्न चपटे पत्थर पर उतरा है। कहते हैं, गौतम ऋषि यहीं रहते थे।

अहल्याह्रद (सं० पु०) अहल्यया कृतो-ह्रदः, शाक ३-तत्। गौतमके आश्रमका स्वनामख्यात तीर्थविशेष।

अहश्चिक (सं० पु०) अहनि लोयते अनेन दृश्यते अहन् ली निपा० ड संज्ञायां ठन्। प्रेत, दिनको देख न पड़नेवाला शैतान्।

अहवन—अवधके राजपूतोंका एक वंश। कहते हैं, कि गुजरात अनहलवाड़ पाटनके छवार शासक भ्रातृद्वय गोपी और सोपी अहवनोंके पूर्वपुरुष रहे। दोनो ही नेता सन् ई०का शताब्द आरम्भ होते समय अवध आये थे। इनमें कुछ हिन्दू और कुछ मुसलमान होते, किन्तु साथ ही बैठकर खाते हैं। हिन्दू हिन्दुओं और मुसलमान मुसलमानोंके साथ विवाह करते हैं।

अहवनीय (सं० त्रि०) हवनके अयोग्य, जिसे आहुतिमें डाल न सकें।

अहवात (हिं० पु०) सोहाग, जिस हालतमें खाविन्द जिन्दा रहे।

अहवान (हिं०) आह्वान देखो।

अहवाल (अ० पु०) वृत्तान्त, बातें, खबरें। २ दशायें, हालतें। यह शब्द 'हाल'का बहुवचन है।

अहविस् (वै० त्रि०) हव्यरहित, बालविहीन।

अहश्शस् (वै० अव्य०) प्रतिदिन, रोज़ रोज़।

अहश्शेष (सं० पु०) अह्नः शेषः। १ दिवसका शेष, सन्ध्या, शाम। अह्नः शेषो यत्र, बहुव्री०। २ अशौचव्रतादिके पूरे होनेका दिन।

अहसान (अ० पु०) १ उपकार, भलायी, सलूक, नेकी। २ अनुग्रह, मेहरबानी।

अहस्कर (सं० पु०) अहः करो अहन्-कृ-ट उप० समा०, अह्नकरो यस्य बहुव्री० वा, कस्कादित्वात् सः। १ सूर्य। २ अर्कवृक्ष।

अहस्त (सं० त्रि०) न स्तः हस्तौ यस्य नञ्-बहुव्री०। १ हस्तशून्य। जैसे छागादि प्राणी। २ छिन्नहस्त, हस्तरहित, जिसके टूटा हाथ रहे। नास्ति हस्तः शुण्डो यस्य। ३ शुण्डरहित, बेसूंड।

अहस्पति (सं० पु०) अह्नः पतिः तत् वा सत्वम्। १ सूर्य। २ अर्कवृक्ष।

अहह (सं० अव्य०) अहम् अहङ्कारं जहाति, अहम्-हा-क पृषो० साधु। १ ओ, ए। २ अरे, क्या। ३ हाय हाय, खेद। ४ क्लेश, तकलीफ। ५ प्रकर्ष, क्या खूब।

अहहा (सं० अव्य०) अहम् आत्माभिमानं जहाति। अहम्-हा-डा। अहह देखो।

अहा (हिं०) अहह देखो।

अहाता (अ० पु०) १ अङ्गन, प्राङ्गण, घेरा। २ चत्वर, चहारदीवारी।

अहान (हिं०) आह्वान देखो।

अहार (हिं०) आहार देखो।

अहार—१ राजपूतानेके उदयपुर राज्यका विध्वस्त नगर। यह उदयपुर नगरसे ३ मील पूर्व पड़ता है। कहते हैं, आशादित्यने पुरातन राजधानी तम्बा नगरीके स्थानमें इसे प्रतिष्ठित किया था। उज्जन हाथ आनेसे पहले विक्रमादित्यके तुवार पूर्वपुरुष तम्बा नगरीमें ही निवास करते रहे, जिसका नाम बिगड़ कर पहले आनन्दपुर और पीछे अहार हुआ। इस स्थानकी पूर्व ओर कितने ही पुश्तेके निशान मिलते, जिन्हें 'धल-कोट' कहते हैं। धलकोटमें पत्थरकी तराशी हुयी चीजें, मट्टीके बरतन और सिक्के हाथ लग जाते हैं। कुछ बहुत पुराने जैनमन्दिरोंका आज भी पता चलता, जिनका मसाला दूसरे अधिक पुराने गिरे मन्दिरोंसे लिया गया है। भूमि चैत्यों और मन्दिरोंके टूटे पत्थरसे भरी, जो रानाओंकी छतरी बनानेमें लगा है।

२ युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिलेका एक प्राचीन नगर। यह गङ्गाके दाहने किनारे बुलन्दशहर नगरसे २१ मील दूर बैठता है। यहां थाना, पोष्टाफिस और स्कूल बना है। ज्येष्ठ मासमें गङ्गास्नानका बड़ा मेला लगता है। नगरमें कितने ही साधारण मन्दिर बने हैं। नगरकी अवस्था अब बिगड़ गयी है। शीत और ग्रीष्म ऋतुमें गङ्गापर नावका पुल बांध दिया जाता है। औरङ्गजेबके समय अहारके नगार ब्राह्मण मुसलमान हो गये थे, जो सन् १८५७ ई०तक अपने निज-कियतका हक्क पाते रहे। सिपाही विद्रोहके बाद उनकी भूमि मुरादाबादके राजा गुरुसहाय मलको दी गयी थी।

अहारिन् (सं० त्रि०) ले न जानेवाला, जो लेता न हो।

अहारी (हिं०) आहारी देखो।

अहार्य (सं० पु०) न ह्रियतेऽसौ, हृ-ण्यत्, नञ्-तत्। १ पर्वत, उठ न सकनेवाला पहाड़।

'अहार्यधरपर्वताः।' (अमर)

(त्रि०) २ हरण करनेको अशक्य, जिसे चोरा न सकें। ३ अभेद्य, जो टूट न सकता हो।

अहार्यता (सं० स्त्री०) रक्षा, गुप्ति, हिफाजत, जिस हालतमें चीज उठाकर ले न जा सकें।

अहाहा (हिं०) अहह देखो।

अहि (सं० पु०) आहन्ति आहन्यते वा, आ-हन्-इण्, तस्य डित्वं डित्वात् टिलोपः आङो ह्रस्वश्च। १ सर्प, सांप। २ वृत्रासुर, आसमानका सांप। ३ ऋग्वेदोक्त असुरविशेष। यह इन्द्रका अतिशय शत्रु था। ४ सूर्य। ५ राहु। ६ पथिक, राहगीर। ७ खल, खराब आदमी। ८ वञ्चक, ठग। ९ सर्पस्वामिक अश्लेषा नक्षत्र। १० जल, पानी। ११ मेघ, बादल। १२ द्यावापृथिवी, आसमान और जमीन्। १३ सीसक, सीसा। १४ पृथिवी, जमीन्। १५ गो, गाय। १६ नाभि, तोंदी। १७ उत्तरावर्त। १८ वप्रोदय। (त्रि०) १९ व्यापक, मुहरह, मामूर। २० व्याप्त, परागन्दा, फैला हुआ। २१ आघातकर्ता, चोट चलानेवाला, जो मारता हो।

अहिंसक (सं० त्रि०) न हिंसकः, हिन्स-वुञ्, नञ्-तत्। हिंसारहित, मासूम, जो मारता न हो।

अहिंसा (सं० स्त्री०) हिन्स-अ टाप्, नञ्-तत्। १ अद्रोह, अनपकार, बेगुनाही, मासूमियत, भोलापन। २ योगशास्त्रमें—मनोवाक्काय द्वारा परपीड़ाका अभाव, दिल जुबान् या हाथ-पैरसे किसीको तकलीफ न देना। ३ प्राणिपीड़ा-निवृत्ति, जानवरोंको न मारना। ४ अशास्त्रीय प्राणिपीड़ाका अभाव, [illegible] [illegible] वध न करना।

शास्त्रकारोंने लिखा, कि वेदविहित हिंसा अहिंसा कहाती है। मनुने भी वैध हिंसामें कोयी दोष नहीं बताया। मीमांसक भी इसी मतको मानते हैं। किन्तु सांख्यमतसे वैध हिंसा पुरुषके लिये पापजनक होती है। बौद्ध और जैन अहिंसाको ही परमधर्म समझते हैं।

अहिंसान (सं० त्रि०) न हिनस्ति, हिन्स शीलार्थे शानच्, नञ्-तत्। हिंसा न करनेवाला, जो मारता-पीटता न हो।

अहिंसानिरत, अहिंसान देखो।

अहिंसित (वै० त्रि०) पीड़ारहित, जो मारा न गया हो।

अहिंसमान, अहिंसित देखो।

अहिंस्र (सं० त्रि०) १ अहिंसक, मासूम, जो मारता-काटता न हो। (क्लो०) २ हिंसाशून्य व्यवहार, जिस काममें मार-काट न रहे। (पु०) ३ कुलिक वृक्ष, काकरोलका पेड़।

अहिंस्रा (सं० स्त्री०) कण्टकपाली वृक्ष, काकरोलका पेड़। यह विष और शोथको दूर करता है। (राजनिघण्टु)

अहिक (सं० पु०) अन्ध सर्प, अन्धा सांप। इसमें विष नहीं होता। २ शाल्मलीवृक्ष, सेमलका पेड़।

अहिका (सं० स्त्री०) शाल्मलीवृक्ष, सेमलका पेड़।

अहिकान्त (सं० पु०) अहिभिः काम्यते स्म, कम-क्त, ३-तत्। वायु, सांपोंकी प्यारी चीज़ हवा। कहते, कि सांप वायुको खाकर जीते हैं।

अहिकुटी (सं० पु०) भारद्वाजपक्षी, चकोर।

अहिकोष (सं० पु०) निर्मोक, खुरण्ड, मुरदारगोश्त, केंचली।

अहिक्षत्र, अहिच्छेत्र देखो।

अहिक्षेत्र (सं० पु०) अहिना शोभितं क्षेत्रम्, शाक० तत्। १ हस्तिनापुरके पूर्वदेशका क्षेत्र। अहिच्छत्र देखो। २ सर्पके रहनेकी भूमि, जिस जगहमें सांप रहें।

अहिगण (सं० पु०) १ वृत्तविशेष, एक बहर। इसके आदिमें एक गुरु और अन्तमें तीन लघु मात्रा रहती हैं। ६-तत्। २ सर्पसमूह, सांपोंका जखीरा।

अहिगन्धफला (सं० स्त्री०) सनकीवृक्ष, लुबानका पेड़।

अहिगन्धा (सं० स्त्री०) सर्पगन्धा, सांपगन्धा, एक पेड़।

अहिगोप (वै० त्रि०) सर्पसे रक्षित, जिसको सांप बचाता हो।

अहिघ्न (वै० क्ली०) स्वर्गीय नदीकी राह रोकनेवाले वृत्रासुरका हनन।

अहिघ्नी (वै० पु०) सर्पविनाश, सांपोंका क़त्ल।

अहिच्छत्र (सं० पु०) अहेः फणाकारः छत्रः छादकः, शाक० ६-तत्। १ मेषशृङ्गीवृक्ष, मेढ़ासींगीका पेड़। २ देशविशेष। अर्जुनने यह देश जीत द्रोणाचार्यको दिया था। हेमचन्द्रकोषमें इसका नाम 'प्रत्यग्रथ' लिखा है।

अहिच्छत्रका दूसरा नाम अहिक्षेत्र है। कहते हैं, कोयी अहीर मैदानमें सो रहा था। उसी समय एक सांप उसके मस्तकपर अपना फण फैलाकर जा बैठा। वही अहीर पीछे राजा हो गया, लोग उसे आदिराज कहने लगे। इसीसे अहिक्षेत्रका नाम 'आदिकोट' भी है।

कौरवोंने द्रुपदराजको युद्धमें हरा पञ्चालदेश दो भागोंमें बांटा था। उसमें गङ्गातीरस्थ माकन्दी देशसे चर्मण्वती नदी पर्यन्त दक्षिण पाञ्चाल द्रुपदके अंशमें पड़ा। इसकी राजधानीका नाम काम्पिल्य रहा। उत्तर पञ्चाल जनपदको अहिच्छत्र कहते थे। इसकी राजधानी अहिच्छत्रा नामसे प्रसिद्ध रही। द्रोण यहांके राजा बने थे।

चीनपरिव्राजक युअङ्-चुयाङ्का कहना है, कि इस स्थानमें एक नागह्रद रहा। इसी ह्रदके किनारे बुद्धदेवने सात दिन तक अपना मत प्रकाश किया था। चीनपरिव्राजकके समय यहां बारह मठ रहे। उनमें कोई एक हजार सन्न्यासी निवास करते थे। सिवा इसके ब्राह्मणोंके भी नौ देवालय रहे। इनमें भी कोयी तीन सौ ब्राह्मण महादेवकी पूजा करते थे।

अहिच्छत्रक (सं० क्ली०) गोमयज, कुकुरमुत्ता, सांपकी टोपी।

अहिच्छत्रा (सं० स्त्री०) १ शताह्वाक्षुप, सौंफका झाड़। २ शर्करा, चीनी। ३ अहिच्छत्र देशकी राजधानी। इसकी चारो ओर प्राचीर बना था। उसका परिधि कोयी तीन कोस रहा। यहां रामगङ्गा और गङ्गान नदीके मध्य एक किला था, जहां अली मुहम्मद खांने कितनी ही मसजिदें बनवायीं।

अहिजाहक (सं० पु०) कृकलास, गिरगिट।

अहिजित् (सं० पु०) अहिं सर्पं असुरविशेषं वा जितवान्, अहि-जि-क्विप्-तुक्। १ कृष्ण। यमुना नदीमें कालीय अहि अर्थात् सर्प जीत लेनेसे कृष्णको अहिजित् कहते हैं। २ इन्द्र। ऋग्वेदमें लिखा, कि इन्द्रने अहि नामक असुरको मारा था।

अहिजिन, अहिजित् देखो।

अहिजिह्वा (सं० स्त्री०) अहेर्जिह्वेव। नागजिह्वा नामक लता, नागफनी। इसका अग्रभाग सांपकी जीभ-जैसा होता है।

अहिजिह्विका (सं० स्त्री०) महाशतावरी, बड़ी शतावर।

अहिण्डुका (सं० स्त्री०) हिण्ड-उकञ् टाप्, नञ्-तत्। सुश्रुतोक्त कीटविशेष, एक ज़हरीला छोटा कीड़ा।

अहित (सं० पु०) नञ्-तत्। १ शत्रु, दुश्मन्। (क्लो०) २ क्षति, नुक़सान्। ३ कुपथ्य, बीमारीमें न खाने लायक चीज़। (त्रि०) ४ अप्रतिष्ठित, जो रखा न गया हो। ५ अयोग्य, नाक़ाबिल। ६ हानि-कारक, नुक़सान्‌दिह। ७ प्रतिद्वन्द्वी, हासिद। ८ प्रतिकूल, मुख़ालिफ़।

अहितकारिन् (सं० त्रि०) प्रतिद्वन्द्वी, मुख़ालिफ़, जो भलायी न करता हो।

अहितद्रव्य (सं० क्लो०) अखाद्य द्रव्य, न खाने लायक़ चीज़। शिम्बीधान्यमें माष कलाय, फलमें लकुच (बड़हल), दुग्धमें मेषीदुग्ध, तैलमें कुसुम्भतैल और इक्षुविकारमें फाणित अहितद्रव्य है। (भावप्रकाश)

अहितनामन् (वै० त्रि०) अद्यपर्यन्त नामसे रहित, जो अबतक बेनाम हो।

अहितपदार्थ (सं० पु०) १ वृद्ध रमणी, बुड्ढी औरत। २ पूतिमांस, गन्दा गोश्त। ३ प्रभातनिद्रा, सवेरेकी नींद।

अहितमनस् (सं० त्रि०) विरोधी, मुख़ालिफ़, बुरा चेतनेवाला।

अहिताहितविचारशून्यबुद्धि (सं० त्रि०) भलाई-बुराई न समझनेवाला, जिसे अच्छा बुरा समझ न पड़े।

अहिताहार (सं० पु०) अहितकर द्रव्यका भक्षण, नुक़सान् पहुंचानेवाली चीज़का खाना। अहिताहार पीड़ा उत्पन्न करता है। (वाग्भट)

अहितुण्डिक, (सं० पु०) अहेस्तुण्डं मुखं तेन दिव्यति, ठन् ठञ् वा। व्यालग्राही, सपेरा।

अहितैच्छु (सं० त्रि०) अशुभचिन्तक, बदख़्वाह।

अहित्य (सं० पु०) वनमेथिका, जङ्गली मेथी।

अहिदत्, अहिदन्त देखो।

अहिदन्त (सं० त्रि०) सर्पदन्तविशिष्ट, सांपके दांत रखनेवाला।

अहिद्विष् (सं० पु०) अहिं सर्पं वृत्रासुरं वा द्विष्टवान्, अहि-द्विष् भूते क्विप्। १ गरुड़। २ मयूर, मोर। ३ नकुल, नेवला। ४ इन्द्र।

अहिनकुल (सं० क्लो०) अहिश्च नकुलश्च समाहार द्वन्द्वम्। सर्प एवं नकुल, नेवलासांप।

अहिनकुलता, अहिनकुलिका देखो।

अहिनकुलिका (सं० स्त्री०) अहिनकुलयोर्वैरम्, वुन्। १ सर्प एवं नकुलका स्वाभाविक विरोध, नेवले और सांपकी ज़ाती दुश्मनी। २ नित्यविद्वेषभाव, हमेशा रहनेवाली दुश्मनी।

अहिनामभृत् (सं० पु०) बलदेव, कृष्णके बड़े भाई।

अहिनाह (हिं० पु०) शेषनाग, सर्पोंके राजा।

अहिनिर्मोक (सं० पु०) अहिना निर्मुच्य त्यज्यते, अहि-निर्-मुच् कर्मणि घञ् ३-तत्। सर्पका निर्मोक, सांपकी केंचुली।

अहिनिर्लयनी (सं० स्त्री०) अहिः निलीयते अस्याम्, अहि-नि-ली आधारे ल्युट् ङीप्। अहिनिर्मोक देखो।

अहिपताक (सं० पु०) अहिषु मध्ये पताका तदा-कारोऽस्त्यस्य, अर्श आदि० अच्। सर्पविशेष, कोई सांप। यह ज़हरीला नहीं होता।

अहिपति (सं० पु०) ६-तत्। १ शेषनाग। २ वासुकि। ३ बड़ा सांप।

अहिपुत्रक (सं० पु०) अहिः पुत्र इव कायति शोभते गतिकाले, अहिपुत्र-कै-क। नौकाविशेष, एक नाव। यह नाव तीन हाथसे ज्यादा प्रशस्त नहीं रहती, किन्तु दैर्घ्यमें ३० हाथ तक होती है।

अहिपुष्प (सं० क्ली०) नागकेशर पुष्प, कबाबचीनीका फूल।

अहिपूतन (सं० क्ली०) बालरोगविशेष, शिशुका गुह्यक्षत, बच्चोंके पिछले जिस्मका ज़ख्म। Intertrigo स्थूलकाय शिशुओंके अधिक घर्म निकलने अथवा घर्षण लगनेसे गाली प्रभृति स्थान रक्तवर्ण पड़ जाता किंवा मलद्वार अपरिष्कार रहनेसे कण्डु उत्पन्न होता है। इसकी चिकित्सामें धात्रीके स्तनदुग्धपर दृष्टि रखना चाहिये। क्षतस्थानको त्रिफलाके जलसे धोते और उसमें नारियलका तेल लगाते हैं। (स्त्री०) अहिपूतना।

अहिपूतना (सं० स्त्री०) बालरोगविशेष। इस रोगकी उत्पत्ति होनेका कारण यह है—अपान स्थान अच्छी तरह न धोने तथा विष्ठा-मूत्रयुक्त रहनेपर, लड़केके शरीरमें रक्त एवं कफसे कण्डू अर्थात् खुजलाहट पैदा होती है। खुजलानेसे बहुत शीघ्र स्फोट (फोड़ा) और स्राव निकलता है। पीछे सब फोड़े एकत्र मिलकर भयङ्कर व्रण हो जाता है। इसको अहिपूतन या अहिपूतना रोग कहते हैं। (माधवनिदान—क्षुद्ररोगचिकित्सा)

अहिफल (सं० पु०) दीर्घकर्कटिका, लम्बी ककड़ी। (स्त्री०) अहिफला।

अहिफेन (सं० पु०) अहेः फेनं गरलमिव तेजस्त्वात्, ६ तत्-स०। १ सांपकी लार। २ अफीम। यह पोस्तके फलसे भारतवर्ष, पारस्य, तुरुष्क, मिश्र, जर्मणी, फ्रांस् और इङ्गलेण्डमें पैदा होता है। इनमें सबसे अधिक भारतवर्ष ही अफीमका घर है। किन्तु तुरुष्कको अफीम उत्तम होती है।

अफीमका पेड़ दो तरहका देखा जाता, एकका (Papaver somniferum) फूल लाल एवं बीज काला और दूसरेका (Papaver officinale) फूल तथा दाना सादा रहता है। भारतवर्षमें सफेद ही पोस्त अधिक है। यह गङ्गातटकी भूमिमें बहुत पैदा होता है। पटना और बनारस विभागमें प्राय: २०० कोस दीर्घ और १०० कोस प्रशस्त भूमिमें अफीमकी कृषि की जाती है। भारतवर्षकी अफीमका व्यवसाय गवरमेण्टके अधीन है। पटना और गाजीपुरमें इसका प्रधान कारखाना है। इससे अतिरिक्त मालव, खान्देश और कच्छ देशमें भी अफीम पैदा होती है।

ब्रह्मदेश और मलक्कामें भारवर्षकी अफीम अधिक बिकती है। अफीमकी भूमि विलक्षण उर्वरा होना चाहिये। कृषक लोग वर्षा कालमें खेतको खाद डाल अच्छीतरह जोत देते हैं। इसके बाद कार्तिकमें खेतको पुन: जोत और मयी देकर बीज बोते हैं। बीज डालकर भी जोतना पड़ता है। अन्तत: ६-७ हाथ लम्बी क्यारी बनाते हैं। क्यारीके किनारे किनारे जल देनेके लिये नाली रहती है। १०।१५ दिनमें बीज अङ्कुरित होता है। पौधा कुछ बढ़ जानेपर कृषक खेतको निरा घास और फस निकाल देते हैं। माघमासके शेषमें फूल आता है। झड़ जानेसे कृषककी स्त्री और बालक बालिका फूल खेतसे उठा लाती हैं। फिर उन्हें मट्टीके खप्परमें थोड़ा गरम करके रोटी बनाते हैं। इसी रोटीमें अफीमका गोला लपेटा जाता है।

फूल फटनेसे प्राय एक मासके मध्य ही पोस्तकी छोटी डालियोंमें टेहनी छोटे अनारकी तरह बढ़ने लगती है। उस समय कृषक बहुत सवेरे उठकर चाकूसे टेहनीको दो तीन जगह लम्बा-लम्बा चीर देते हैं। उसीके द्वारा दूध बहकर बाहर निकलता है। सूर्योदयके बाद चीरनेसे अधिक दूध नहीं होता। वृष्टि होनेसे भी दूध धो जाता है, इसीसे उस दिन अफीम नहीं जमती। दूसरे दिन प्रात:-काल कृषक उस दूधको निकाल मट्टीके पात्रमें रखते हैं। समस्त वृक्षोंका दूध इकट्ठा होनेपर कृषक मकान पहुंच किसी कांसेके बरतनमें छोड़ देते हैं। कुछ देर कांसेके बरतनमें रहनेसे दूधका पानी निकलता है। यह जल बाहर फेंक न

देनेसे अफीम नष्ट हो जाती है। शेषको यह दूध प्रतिदिन एकबार हिला देनेसे गाढ़ा होता है। उत्तमरूपसे गाढ़ा होनेमें क्रमशः एक महीना लगता है। फिर सब अफीम इकट्ठा कर मट्टीके बरतनमें रखते हैं। अफीम प्रस्तुत हो जानेपर कृषक गवरमेण्टके गुदाममें ले जाते हैं। वज़न हो जानेसे कुली इसको एक चहबच्चेके भीतर जमा करते हैं।

उसके बाद कुली कटहरेमें अफीमको तोड़कर गोला बनाते हैं। उसी गोलेपर अफीमके पत्तेकी रोटी लपेट लेयी लगा देते हैं। लेयी दूध जैसी होती और खराब अफीमसे बनती है। पत्तेकी रोटी लगा देनेसे अफीमके गोलोंको टीनके बरतनमें रखते हैं। टीनका बरतन शिकञ्जेपर लटका करता है। उसी जगह बालकोंके हिलाने-डुलानेसे अफीम धीरे-धीरे सूख जाती है।

भारतवर्ष, चीन, ब्रह्मदेश तथा मलक्कामें कच्ची अफीम, पका चण्डू और मदक खानेको लोग इसे खरीदते हैं। युरोपमें अफीमसे औषध तय्यार किया जाता है। भारतवर्षके अनेक स्थानमें मनुष्य पोस्तके वीजका बड़ा बनाकर खाते हैं। अफीम बाहर करने पर बोंड़ी सूख जाती है। उस समय पश्चिम देशके दरिद्र लड़के उसके वीज निकाल कच्चे ही खाते हैं। पोस्तकी बोंड़ीको जलमें उबाल उसी जलसे वेदनाके स्थानपर स्वेद देनेसे पीड़ा कम होती है। देखनेमें अफीम लाल होती है। यह ग्रीष्ममें कठिन एवं वर्षाकालमें कुछ पतली पड़ती और चिपचिपाने लगती है। यह तिक्त और एकप्रकार विशेष गन्ध-युक्त रहती है। यह अग्निसे गल जाती है। जल, सुरा और जलमिश्र द्रावक द्वारा इसका धर्म (नशा वगैरह) गृहीत होता है। लिट्मस् कागज़में इसका जलीय द्रावक लगानेसे आरक्तिम (थोड़ा लाल) वर्ण होता है।

अफीममें जो पदार्थ रहते, वह नीचे लिखे हैं,—

१। अफीममें मेकोनिक एसिड नामक एक प्रकार अम्ल रहता है। यह अम्ल पतला, दानेदार और मोतीके सदृश शुभ्र स्वच्छवर्ण है। यह जलमें गल जाता है। लौहघटित पार्श्लरके सङ्ग मिलानेसे यह रक्तवर्ण निकलता है। चूना, बेराइटा, लोहा और सीसा धातुके सङ्ग योग देनेसे एकप्रकार लवण बनता, जो जलमें गल जाता है।

२। अफीमके प्रधान वीर्य्यका नाम मर्फिया है। यह श्वेतवर्ण होता और इसीसे अफीम खानेपर नशा आता है।

३। दूसरे वीर्य्यका नाम कोडाइया है। यह चतुष्प्रदेश या अष्टप्रदेश दानायुक्त होता और सुरा, इथर तथा स्फुटित जलमें मिलानेसे गल जाता है।

४। तीसरे वीर्य्यका नाम पेपेवेरिन् है। इसमें सूयी-जैसे छोटे-छोटे दाने होते हैं। यह गन्धकके अर्कसे मिलानेपर नीलवर्ण लगता है।

५। थिवाइया या प्यारेमर्फिया चौथा वीर्य्य होता, जो चिपटा, दानायुक्त और देखनेमें चांदी जैसा उज्वल रहता है।

६। नार्कोटिन् अफीमका समक्षाराम्ल लवण है। यह तीन प्रदेश युक्त एवं उज्वल होता और सुरा, इथर तथा द्रावकमें गल जाता है। एतद्भिन्न, नार्सिया, मेकोनाइन प्रभृति दूसरे भी पदार्थ अफीममें रहते हैं।

उत्तम अफीममें सैकड़े पीछे ४—८ मेकोनिक एसिड, ४—१२ मर्फिया, १ अंशसे कम कोडिया, थिवाइया एवं पेपेवेरिन्, ६—१० नार्कोटिन्, ६—१२ नार्सिया, ४—६ कोचौक, २—४ गोंद और अन्यान्य पदार्थ, ४०—५० पर्यन्त होता है।

अफीम उत्तेजक, मादक, निद्राकारक, धारक, स्वेदजनक, पीड़ानिवारक, अवसादक और पर्याय-निवारक है। इसकी क्रिया मस्तिष्क ही में अधिक प्रकाश पाती है। और और औषधके अभावमें अन्य किसी द्रव्यकी व्यवस्था की जा सकती, किन्तु अफीम जैसी दूसरी चीज़ दुनियामें नहीं होती। शिशुवों और स्त्रियोंके लिये अफीम मिला औषध देना प्रशस्त नहीं है, किन्तु बहुत आवश्यक होने-पर अत्यन्त सावधानतासे प्रयोग करना चाहिये।

बालकोंको कदापि अफीम न खिलाये। उनके कोमल शरीरमें अफीम मिला औषध मर्दन करनेसे भी विषक्रिया हो सकती है। अफीम खानेसे किस-किस यन्त्रमें कौन-कौन क्रिया प्रकाश पाती, उसका विवरण नीचे लिखा है—

वायुमण्डल—पूर्णमात्रामें अफीम खानेसे १०।१५ मिनिटके बाद पहले मत्था भारी पड़ता, उसके बाद शरीर सुस्थ, सबल एवं प्रफुल्ल हो जाता है। मुख थोड़ा सूखने लगता है। क्रमशः मुखमण्डल कुछ उज्ज्वल और कनीनिका कुञ्चित होती है। कुछ देरके बाद जब इस तरहकी उत्तेजना कम हो जाती, तब खूब निद्रा आती है। ८—१० घण्टे बाद निद्रा टूटती है। फिर देह अवसन्न, मन उद्यमशून्य, एवं शरीर ग्लानियुक्त लगता और कोयी कार्य करनेकी इच्छा नहीं होती। मात्रा अधिक रहनेसे सर्वाङ्ग तपकता और शीघ्र निद्रा आना दुर्घट पड़ता है। अफीमकी मात्रा कम होनेसे भी उत्तम निद्रा नहीं लगती। जो नित्य अफीम सेवन करता, उसको नियमित समय पर मौताद न मिलनेसे बार-बार जंभायी आती, शरीर टूटता, नेत्रसे जल गिरता और अन्यान्य उपसर्ग भी उठता है। अफीम खानेसे स्पर्शशक्ति कम पड़ जाती, जिससे वेदना निवारण होती है। परन्तु अधिक मात्रापर अफीम सेवनमें आसक्त न होनेसे ज्ञानका वैलक्षण्य होना कठिन है।

रक्तसञ्चालन यन्त्र—अफीम खानेसे १०-१५ मिनिट बाद नाड़ी पुष्ट एवं चञ्चल, शरीर उष्ण और मुख उज्ज्वल लगता है। क्रमशः नशा कम होनेसे नाड़ी क्षीण तथा मृदुगामिनी हो जाती है।

श्वासयन्त्र—अफीम खानेके बाद नाड़ी चञ्चल होती और उसीके साथ निश्वास प्रश्वास भी कुछ जोर चलने लगता है। मुखमण्डल पहले उज्ज्वल रहता, पीछे श्वासक्रिया मृदु पड़नेसे मलिन हो जाता है। अफीम सेवन करनेसे श्वास यन्त्रवाली श्लैष्मिक झिल्लीकी भी स्पर्शशक्ति घटती है।

स्रावणक्रिया—अफीम सेवन करनेसे शरीरकी सम्पूर्ण स्रावणक्रिया कम पड़ जाती है। ग्रन्थिसे अच्छीतरह रस न निकलने पर मुख सूखने लगता है। पाकाशयमें आमरस उत्तम रीतिसे नहीं टपकता, इसीसे क्षुधामान्द्य और अजीर्णरोग उत्पन्न होता है। पित्त प्रभृति कोई रस यथेष्ट मात्रामें बाहर न निकलनेसे कोष्ट बद्ध और मल कठिन पड़ जाता है। अनेक स्थानमें पेशाब परिमाणसे अल्प होता, परन्तु कहीं कहीं अधिक मूत्र भी आता है। अफीम खानेसे सम्पूर्ण स्रावण क्रिया कम हो जाती, किन्तु उससे विलक्षण घर्म निकलता है। अफीम खानेसे पोषणक्रिया भी घटती, किन्तु उससे शरीर कृश नहीं होता। कारण अफीम देहके पेशीसूत्रको क्षय होने नहीं देती। यौवन कालके बाद स्वभाव होसे शरीरके विधानोपादानका क्षय होना आरम्भ हो जाता है। अफीम उसी क्षयको निवारण करती है। इसी लिये अनेक मनुष्य कहते हैं, चालीस वर्षके बाद सबको अफीम खाना चाहिये। उदरामय, काश, वात प्रभृति नाना प्रकार पीड़ाके उपलक्षमें अनेक आदमी अफीम खाने लगते हैं। पहले पहल इससे विलक्षण उपकार भी होता है, परन्तु क्रमशः मात्रा विना वृद्धि किये अफीम फिर उपकार नहीं करती। अनेक अफीमची प्रतिदिन एक तोलेसे भी अधिक अफीम खाते हैं। विलायतमें कितने ही व्यक्ति पीड़ाको दबानेके लिये डेढ़ बोतल अफीमका अरिष्ट प्रत्यह सेवन करते हैं। क्रम-क्रमसे अभ्यास न करनेपर १५।२० ग्रेण अफीम खानेसे ही मनुष्यकी मृत्यु हो जाती है। अधिक मात्रामें अफीम खानेसे रोगी शीघ्र ही अज्ञान पड़ता, धीरे धीरे श्वास प्रश्वास निकलता, गला बजने लगता, मुख मलिन, नेत्र रक्तवर्ण एवं मुदित तथा कनीनिका कुञ्चित रहती, प्रथम अवस्थामें नाड़ी स्थूल होती एवं धीरे धीरे चलती, रोगी पुकारनेसे नेत्र खोलकर देखना चाहता, किन्तु चेष्टा करनेमें बहुत विरक्त हो जाता है। उसके बाद नाड़ी क्रमशः अधिक क्षीण लगती और बहुत देरके बाद कभी-कभी उसका स्पन्दन होता है। श्वासप्रश्वासमें अतिशय विशृङ्खल आता है। शरीर शीतल और घर्माक्त हो जाता है। अचेतन अवस्थामें

कितनोंहीके मुखसे फेन निकलने लगता है। अफीम खानेपर ६ घण्टासे २० घण्टाके मध्य रोगीकी मृत्यु होती है। अफीम खाकर मरनेसे देहमें यह लक्षण देख पड़ता है,—मस्तिष्कमें रक्ताधिक्य, मस्तिष्कके उदरमें रस सञ्चय, फेफड़ेमें रक्ताधिक्य, रक्तका पतला और मलिन होना एवं मस्तिष्कमध्यसे रक्त निकलना।

चिकित्सा।—अफीमसे विषाक्त होनेपर हमारे देशमें निसोथ और सुगमुनिया शाकका रस, पुरातन काग़ज़का भिजाया हुआ जल प्रभृति अनेक प्रकार द्रव्य खिलाया जाता है। परन्तु उससे कुछ भी उपकार नहीं होता। ऐसे औषधका प्रयोग करना चाहिये, जिससे प्रथम ही वमनके साथ अफीम बाहर निकल जाये। सल्फेट् अव जिङ्क ३० ग्रेण अथवा इपिकाकुयाना एक ड्राम खिलाकर उष्ण जल पीलाये। वमन करते करते जब अफीमका गन्धहीन जल निकल आवे, तब जान ले कि पेटमें अफीम नहीं है। ष्टमाक पम्प द्वारा भी उदर परिष्कार करना उचित है। वमनके बाद रोगीके शिरपर बराबर शीतल जल डालते रहना चाहिये। रोगीको हरगिज़ सोने या सुस्थिर भावसे रहने न दे। दो आदमी बांह पकड़के उसको टहलावें, एक आदमी पीछेसे कपड़ेका कोड़ा बनाकर मारे, या कभी बालोंको नोचे। औषधोंमें बेलेडोना और धतूरा उत्तम है। बेलेडोनाका अरिष्ट ५-६ विन्दु जलमें एक एक घण्टे पर पिलाना चाहिये, उसकी क्रिया प्रकाश होनेसे फिर देनेकी कोयी जरूरत नहीं। हमारे देशके सन्यासी कहते कि, धतूरेका थोड़ा बीज खिला देनेसे, रोगीका प्राण बच जाता है। सिर्का, नीबूका रस, माजूफलका क्वाथ, क़हवा, चाय प्रभृति द्रव्य भी कुछ उपकार करता है। रोगीको अवसन्न होनेपर एमोनिया और ब्राण्डी दे तथा वक्षःस्थलपर सरसोंका उबटन लगाये। श्वासकष्ट होनेसे कृत्रिम श्वासक्रिया कराना चाहिये। इस अवस्थामें ताड़ित व्यवस्था करना भी उचित है। अधिक अफीम उदरस्थ होनेपर यदि बाहर निर्गत न हो, तो रोगीके बचनेकी कोई सम्भावना नहीं है। कभी कभी रोगीको अधिक मात्रामें अफीम खिलानेसे शीघ्र कोई फल देख नहीं पड़ता, किन्तु हठात् एकदिन मृत्यु हो सकती है। डाक्टर पार्शिभालने ऐसी ही एक घटनाका उल्लेख किया है। जो लोग नियमित रूपसे अफीम, मदक या चण्डू खाते, वे किसीतरह छोड़ नहीं सकते। पहले उनका शरीर वैसा विकृत नहीं होता। क्रमशः अधिक मात्रामें बहुत दिनतक अफीम वग़ैरह खानेसे क्षुधामान्द्य बढ़ता, शरीर क्षय एवं निस्तेज लगता, मुख मलिन तथा अल्प पाण्डुवर्ण दिखाता, देह क्रमशः टेढ़ा पड़ता, स्मरणशक्ति बिलकुल बिगड़ जाती, कभी अच्छी तरह कोष्ठ नहीं खुलता, बीच बीच उदरामय उठता और इसी अवस्थामें कुछ दिन जी-जाग पीछे अफीमची अकालमृत्यु पाता है।

अहिफेनवटिका (सं० स्त्री०) अफीमकी गोली। यह पिण्ड खजूर जैसी बनती और रक्तातिसार पर चलती है। (रसेन्द्रसार-संग्रह)

अहिफेनबीज (सं० क्ली०) अफीमका बीज, पोस्त, खसखस।

अहिफेनासव (सं० पु०) अफीमकी शराब। साढ़े बारह सेर महुवेकी शराबको ४ पल अहिफेन और एक-एक पल मुस्तक, जातीफल, इन्द्रयव एवं एला डाल किसी बरतनमें बन्दकर एक मास रख छोड़े। पीछे आधे मासेके हिसाब इसे अतीसार और विशूचिकापर देनेसे बड़ा उपकार होता है। (भैषज्यरत्नावली)

अहिबुध्न (सं० पु०) अहेरिव बुध्नो ग्रीवा यस्य। १ रुद्रविशेष। २ रुद्राधिष्ठित उत्तरभाद्रपद नक्षत्र। ३ मुहूर्तविशेष। ४ शिव।

अहिबेल (हिं०) अहिवल्ली देखो।

अहिब्रध्न, अहिबुध्न देखो।

अहिब्रध्नदेवता (सं० स्त्री०) उत्तरभाद्रपद नक्षत्र।

अहिभय (सं० क्ली०) अहेरिव भयम्। १ राजाके स्वपक्षसे भय, बादशाहका डर। घरमें सर्प रहनेसे गृहस्थको जैसे हमेशा डर लगता, वैसे ही राजाको ओरसे भी डर लगनेको अहिभय कहते हैं। ६-तत्।

२ सर्पभय, सांपका डर। ३ विश्वासघातकी आशङ्का, दगाबाज़ीका दगदगा।

अहिभयदा (सं॰ स्त्री॰) अहिभयं द्यति खण्डयति, अहि-भय द्यो-क। सर्पका भय छोड़ानेवाली भूम्यामलकी, भुयिं आंवला।

अहिभानु (सं॰ पु॰) अहिर्व्याप्यः भानुः लक्षणया भानुगतिः यस्य। प्रवाहवायु, हवा। ज्योतिषमें लिखा, कि प्रवाह-वायु द्वारा ही सूर्यकी गति होती है।

अहिभुज् (सं॰ पु॰) अहिं भुङ्क्ते, अहि-भुज-क्विप्। १ सांपके खानेवाले गरुड़। २ मयूर, मोर। ३ नकुल, नेवला। ४ तार्च्य, साल या साखूका पेड़। ५ नाकुली-नाम महाकन्द शाक, छोटा चांद। कहते हैं, इसके खानेसे सांपके लड़ते समय काटनेमें नेवलेपर विष नहीं चढ़ता।

अहिभृत् (सं॰ पु॰) अहिं सर्पं बिभर्ति भूषणरूपेण धारयति, अहि-भृ-क्विप् तुक्। सर्पको आभूषणकी तरह पहननेवाले शिव।

अहिम (सं॰ क्ली॰) न हिमम्, विरोधे नञ् तत्। १ उष्णस्पर्श, लस-गर्म। (त्रि॰) २ उष्णस्पर्शयुक्त, जो छूनेमें गर्म हो।

अहिमकर, अहिमद्युति देखो।

अहिमतेजस्, अहिमद्युति देखो।

अहिमद्युति (सं॰ पु॰) अहिमा उष्णा द्युतिरस्य। १ सूर्य, गर्म रोशनीवाला आफ़ताब। २ अर्कवृक्ष, अकोड़ेका पेड़।

अहिमन्यु (वै॰ त्रि॰) अहिरिव हिंस्रो मन्युः क्रोधो यस्य, बहुव्री॰। १ हननशील, हिंस्र, खूंख़ार, सांपकी तरह झपटनेवाला। (पु॰) ६-तत्। २ सर्पका क्रोध, सांपका गुस्सा। ३ वायु, हवा।

अहिमरुचि, अहिमद्युति देखो।

अहिमर्दनी (सं॰ स्त्री॰) अहिः मृद्यतेऽनया, अहि-मृद-करणे-ल्युट्। १ गन्धनाकुली नामक कन्द विशेष, छोटा चांद। २ अहिलता विशेष।

अहिमांशु, अहिमद्युति देखो।

अहिमात (हिं॰ पु॰) चाकका गड्ढा। इसीके सहारे चाक कीलपर चढ़ता है।

अहिमाय (वै॰ त्रि॰) अहेरिव कुटिला माया यस्य। सर्पवत् कुटिल, सांप-जैसा टेढ़ा।

अहिमार (सं॰ पु॰) अहिं मारयति, अहि-मृ-णिच् अण् णिच् लोपः, उप॰ समा॰। १ विट्खदिर, गन्ध-खेर। २ गरुड़। ३ मयूर, मोर। ४ वृत्रासुरनाशक इन्द्र।

अहिमारक, अहिमार देखो।

अहिमाली (सं॰ पु॰) सर्पका हार पहननेवाले शिव।

अहिमेद, अहिमार देखो।

अहिमेदक, अहिमार देखो।

अहियारी—विहार प्रान्तके दरभङ्गा राज्यका एक ग्राम। यह अक्षा॰ २६° १८′ उ॰ और द्राघि॰ ८५° ५०′ ४५″ पू॰ पर अवस्थित है। अहल्यास्थान देखो।

अहिर, अहीर देखो।

अहिरानी—बम्बई प्रान्तके खान्देश ज़िलेकी भाषा। अहीरोंका प्रभाव अधिक रहनेसे खान्देशकी महाराष्ट्र भाषा अहिरानी कहाती है।

अहिरिपु (सं॰ पु॰) ६-तत्। १ सर्पके शत्रु गरुड़। २ मयर, मोर। ३ नकुल, नेवला। ४ लथा। ५ इन्द्र। ६ गन्धनाकुलीवृक्ष, छोटा चांद।

अहिबुंध्न, अहिबुध्न देखो।

अहिर्बुध्न्य (वै॰ पु॰) योऽहि स एव बुध्न्यश्चेति समानाधिकरणत्वाहिर्बुध्न्यशब्दोऽसमस्तः, तथा च अहिना बुध्न्येन स्तुतौ लिङ्गम्। अग्नि, आग। "मानोऽहि-र्बुध्न्योरिषे धान्मा।" (ऋक् ७।३४।१८)

अहिर्बुध्न्यदेवता, अहिब्रध्न देवता देखो।

अहिर्ब्रध्न, अहिबुध्न देखो।

अहिलता (सं॰ स्त्री॰) अहिलोकस्य पातालस्य लता, शाक॰ तत्। १ गन्धनाकुली, छोटा चांद। २ ताम्बूली, पानकी बेल।

अहिलव (हिं॰ पु॰) आधिक्य, बढ़ती, भरमार।

अहिला (हिं॰ पु॰) १ अभिप्लव, सैलाब, बूढ़ा। २ असामञ्जस्य, झगड़ा।

अहिलासरियार—विहारके शाकद्वीपीय ब्राह्मणोंका एक विभाग।

अहिलोकिका (सं॰ स्त्री॰) भूम्यामलकी, भुयिं आंवला।

अहिलोचन (सं॰ पु॰) शिवके अनुचर विशेष।

अहिवा (सं॰ स्त्री॰) वनमेथिका, जङ्गली मेथी।

अहिवट (सं॰ पु॰) छन्दोविशेष, एक दोहा। इसमें पांच गुरु और अड़तीस लघु लगते हैं।

अहिवत—बम्बई नासिक जिलेके चांदोर पर्वतकी घाटी। यह समस्थलसे पश्चिम डिंडोरी और वानीके बाजारोंको अभोनासे मिलाती है। केवल स्थानीय क्रयविक्रय होता है।

अहिवल्ली (सं॰ स्त्री) नागवल्ली, पान।

अहिवात, अहवात देखो।

अहिवातिन, अहिवाती (हिं॰ स्त्री॰) सधवा, सौभाग्यवती, जो रांड न हो।

अहिवासी—युक्तप्रान्तके मथुरा और मेवात स्थानकी ज़मीन्दार, काश्तकार और मज़दूर जाति। इसका अर्थ है—अहिवासका रहनेवाला अर्थात् सांपके रहनेकी जगहका बाशिन्दा। पुराणमें इस जातिका सम्बन्ध सौभरि ऋषिसे यों दिखाया गया है—

वृद्धावस्थामें सौभरि ऋषिको सन्तान उत्पन्न करनेकी उत्कण्ठा हुयी और उन्होंने मान्धाता राजासे जाकर पचासमें एक कन्या मांगी। राजाने कहा,पचासमें आपको जो पसन्द करे, वही दे दी जायेगी। किन्तु मार्गमें ऋषिने ऐसा मनोहर रूप बना लिया था, कि देखते ही पचासों कन्या मोहित हो गयीं। अन्तमें वह पचासोंको अपने घर व्याह लाये। उन्होंने विश्वकर्माको आज्ञा दे प्रत्येकके लिये सुन्दर प्रासाद बनवाया और पचास रूप रख सबके साथ आनन्दसे दिन काटा। ऋषिके डेढ़ सौ सन्तान हुये थे। किन्तु उन्होंने मायाका प्रभाव बढ़ते देख सबको छोड़ दिया और विष्णुके चरणकमलोंमें ध्यान लगाया। वह अपने सन्तान त्याग पत्नियोंके साथ वनको गये थे। ऋषिको पक्षियोंपर बड़ा क्रोध चढ़ता, कारण वह मलमूत्रादि उनके आश्रमपर डाल देते रहे। इसीसे यदि कोयी पक्षी उनके आश्रमपर पहुंचता, तो वह उसे शाप दे भस्म कर देते थे। इसी बीच गरुड़ सर्पोंका सर्वनाश करनेमें लगी रहे। सर्पोंने गरुड़से प्रार्थना की,—यदि आप अधिक वध न करें, तो हम आपके अर्थ एक सर्प नित्य भेज देंगे। गरुड़ इस बात पर सम्मत हो गये। किन्तु कालीय नामक एक बड़े अहिने गरुड़के भक्ष्य सर्पोंको बचाया और उन्होंने उसका पीछा पकड़ा था। कहीं शरण न मिलनेपर उससे कहा गया,—तुम सौभरि ऋषिके आश्रममें जाकर बैठ रहो, वहां ऋषिके शापसे गरुड़की दाल न गलेगी। इसीसे मथुरा जिलेके जिस सुनरख ग्राममें ऋषिका आश्रम रहा और कालीयने जाकर शरण लिया था, उसका नाम 'अहिवास' अर्थात् सांपके रहनेकी जगह पड़ा। अहिवास ही अहिवासी जातिकी उत्पत्तिका स्थान है। इस जातिके लोग अपनेको सौभरिके वंशज बताते और सुनरखको अपना प्रधान स्थान समझते हैं। वृन्दावनमें कालीमर्दन घाटके पास ही सुनरख ग्राम अवस्थित है। बलदेव मन्दिरके पण्डा अहिवासी ही हैं। इस जातिमें कोयी ७२ कुल होते, जिनमें डिंढिया और बिजरावत प्रधान हैं। पञ्चायतमें चौधरी जातिका विवाद मिटाता और अपराधीको अर्थ दण्ड देता या जातिच्युत करता है। विधवाविवाह, पतिके मरनेपर उसके भायीसे विवाह कर लेना, वेश्यासेवा, अनेकभर्तृका आदि विषय बहुत निषिद्ध समझे जाते हैं। कृष्ण-बलदेव अहिवासियोंके उपास्य देव हैं। किन्तु सोमवती अमावस्याको गङ्गा और मङ्गल एवं शनिवारको हनूमानका भी पूजन होता है। सौभरि ऋषिके आश्रमकी यात्रा की जाती है। गौड़, सनाढ्य और गुजराती ब्राह्मण अहिवासियोंके पुरोहित होते हैं। दीपमालिका, दशहरा और होलिका इनके बड़े त्योहार हैं। यह गङ्गा, यमुना और बलदेवका शपथ उठाते हैं। व्यवसाय ही इनकी प्रधान जीविका है। यह राजपूतानेसे नमक अपनी गाड़ियोंमें भर उत्तरभारतमें जा कर बेचते और वहांसे चीनी तथा दूसरी चीजें बदलेमें लाद लाते हैं। पुरुषोंके व्यापार करनेको दूर देश चले जानेसे स्त्रियां खेतीका काम चलाती हैं। आगरा, फर्रुखाबाद, मैनपुरी, इटावा, एटा, बदायूं, शाहजहांपुर, पीलीभीत, कानपुर, फतेहपुर, इलाहाबाद, झांसी और जालौनमें अहिवासी रहते हैं।

अहिविदष्ट (सं० त्रि०) सर्पसे डसा हुआ, जिसको सांपने काटा हो।

अहिविद्विष, अहिरिपु देखो।

अहिविषापहा (सं० स्त्री०) अहिलता, छोटा चांद।

अहिशुष्म (वै० त्रि०) अश्नोति व्याप्नोति अह व्याप्तौ इन्, अहि व्यापिशुष्मं यस्य, बहुव्री०। व्यापकबल, बड़ा ज़ोर।

अहिशुष्मसत्वन् (वै० पु०) इन्द्र।

अहिश्वतना (सं० स्त्री०) शिशुरोगविशेष, बच्चोंकी एक बीमारी। इसमें पानी-जैसा पतला दस्त उतरता और गुह्यदेशसे मल निकला करता है। गुह्यदेश रक्तवर्ण रहे, आबदस्त लेने या पोंछनेसे खुजलाये और फोड़ा पड़ जायेगा।

अहिसक्थ (सं० क्ली०) अहिरिव दीर्घं सक्थि यस्य, षच् बहुव्री०। १ सर्पतुल्य दीर्घ सक्थियुक्त, सांप-जैसा लम्बा। (पु०) २ तदाकार देश, सांप-जैसा लम्बा मुल्क।

अहिसाव (हिं० पु०) सांपका बच्चा, छोटा सांप। यह अहिशावक शब्दका अपभ्रंश है।

अहिस्कन्ध (सं० पु०) गुल्फ, घुटिका, टखना, काब।

अहिहत्य (सं० क्ली०) अहेः हत्यम्, ६-तत्। १ वृत्रासुरका हनन। १ सर्पहनन, सांपका मारा जाना।

अहिहन् (वै० पु०) अहिहत्य देखो।

अहिहन (सं० पु०) अहिं सर्पं वृत्रासुरं वा हतवान्, अहि-हन भूते क्विप्। १ गरुड़। २ इन्द्र।

अहिहयकुल (हैहयकुल) कार्तवीर्यका वंश। सन् १०५४-५५ ई०के समय कार्तवीर्य-वंशज महामण्डलेश्वर रेवारस निज़ाम राज्यके खेमभावी स्थानके समीप शासन करते थे। हैहयवंश देखो।

अही (सं० स्त्री०) गम्यते ऽनया चौरादिहविः, गम्यते दत्तया पुण्यम्, अंहति शृङ्गादिना मनुष्यान्, न हतव्या वा, अहि-ङीप्। १ गोरू, मवेशी। २ द्युलोक एवं पृथिवी, जमीन और आसमान्। (वै० पु०) ३ असुरविशेष। इसे इन्द्रने जीता था।

अहीन (सं० पु०) अह्नां समूहः, अहर्गण-साध्यो वा ख। १ बहुदिन साध्य द्विरात्रादि याग। २ द्वादश दिवस साध्य याग, बारह दिनमें पूरा होनेवाला यज्ञ। अहीनामिनः स्वामी। ३ सर्पराज वासुकि। (त्रि०) न हीनम् नञ्-तत्। ४ समग्र, पूरा, जो कम न हो। ५ पूरित, भरा हुआ। ६ बहु दिवस स्थायी, बहुत दिन चलनेवाला। ७ अभ्रष्ट, जो महरूम किया न गया हो। ८ सम्पन्न, क़ब्ज़ा हासिल किये हुआ। ९ अजघन्य, अनिकृष्ट, जो हक़ीर न हो।

अहीनगु (सं० पु०) अहीना समग्रा गौ पृथिवी यस्य, पुंवद्भाव गोस्त्रियोरुपसर्जनस्येति ह्रस्वः, बहुव्री०। सूर्यवंशीय राजविशेष। यह देवानीकके पुत्र थे।

अहीनर (सं० पु०) चन्द्रवंशीय उदयनके पुत्र।

अहीनवादिन् (सं० त्रि०) न हीनः वादी, नञ्-तत्। अभियोगके अन्यथा प्रमाणावादीसे भिन्न, ठीक-ठीक गवाही देनेवाला।

अहीनवादी, अहीनवादिन् देखो।

अहीन्द्र (सं० पु०) १ शारिवा, अनन्तमूल। २ सांख्यशास्त्र-रचयिता पतञ्जलि मुनि।

अहीमती (सं० स्त्री०) अहिरस्त्यस्याम्, अहि-मतुप् ङीप्, शरादित्वात् दीर्घः। नदीविशेष, कोयी दरया।

अहीर (सं० पु०) आभीर शब्दस्य निपा० साधु। आभीर, ग्वाला। यह गाय-भैंस पालते और दूध-दही बेचते हैं। (स्त्री) अहीरिनी। आभीर देखो।

अहीरगोर—उड़ीसा प्रान्तके बालेश्वर जिलेकी एक स्वेच्छाचारी जाति। इस जातिके लोग खजूरकी पत्तियोंसे चटाई बना एक-एक आने बाज़ारमें बेचते हैं।

अहीरगणादि (सं० पु०) गणविशेष, कुछ खास अलफ़ाज़। अरीहणादि देखो।

अहीरणि (सं० पु०) अहीन् ईरयति दूरी-करोति, अहि-ईर-अनि। द्विमुख सर्प, दुमुंहा सांप। कहते, कि इसे देखते ही दूसरे सांप भाग जाते हैं।

अहीरणिन्, अहीरणि देखो।

अहीरी (सं० पु०) १ रागविशेष। इसमें सकल ही स्वर कोमल रहते हैं। (हिं०) २ मध्यप्रदेशके दक्षिण चांदा जिलेकी जमीन्दारी। यह अक्षा०

१८° ५७´ ३०´´ से २०° ५२´ ३०´´ उ० और द्राघि ७९° ५७´ से ८१° १´ पू० तक अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २६७२ वर्गमील है। अहीरीके पूर्व और दक्षिण पहाड़ पड़ता, जिसका जङ्गल बहुत प्रसिद्ध है। कितने ही काट कर लाते भी साखूके सैकड़ों वृक्ष खड़े हैं। यहांके अधिवासी प्राय: पूर्णरूपसे गोंड ठहरते और गोंडी एवं तेलङ्गी भाषा बोलते हैं। इस ज़मीन्दारीके स्वत्वाधिकारी चांदावाले जमीन्दारोंमें सबसे श्रेष्ठ समझे जाते और गोंड राजवंशसे सम्बन्ध रखते हैं।

अहीरीगांव—बम्बई प्रान्तके नासिक ज़िलेका ग्राम। यह निफादसे उत्तर-पश्चिम पांच कोश दूर है। सन् १८१८ ई०में गङ्गाधर शास्त्रीके घातक त्राम्बकजी डेंगलिया इसी गांवमें दो बार क़ैद हुये। गुप्त समाचार पा खान्देशके पोलिटिकल एजण्ट कप्तान ब्रिगस्‌ने कुछ घुड़सवार कप्तान स्वानष्टनके अधीन अहीरगांव भेजे थे। उन्होंने एकायेक उस घरको जाकर घेरा, जिसमें त्राम्बकजी छिपे रहे। किन्तु वह दूसरे मञ्जिलमें घासके नीचे दबककर जा बैठे। सवार त्राम्बकजीको क़ैदकर चांदोर लाये थे, जहांसे वह चुनारगढ़ क़ैदीकी तरह भेजे गये। त्राम्बकजी बाजीराव पेशवाके बड़े प्यारे रहे और सन् १८१६ ई०को थाना जेलसे निकल भागे थे।

अहीश (सं० पु०) १ सर्पराज, शेषनाग। २ लक्ष्मण। ३ बलराम।

अहीशुव (वै० त्रि०) अहीं शुवति, शु-क। असुर-विशेष। इसे इन्द्रने जीत लिया था।

"अव दीधेदहीशुव:।" (ऋक् १०।१४४।३)

अहु (सं० त्रि०) अह व्याप्तौ उन्। व्यापक, भरा हुआ। (स्त्री०) ङीप्। अह्वी, व्यापिका। अंहते, आधारे उन्। अंहु। (क्ली०) भग।

अहुटना (हिं० क्रि०) निवृत्त होना, निकलना, हटजाना, भागना।

अहुटाना (हिं० क्रि०) निकाल देना, भगाना, हटाना, दूर करना।

अहुठ (हिं० वि०) अध्युष्ट, साढ़े तीन, साढ़े तीन फेरे खाये हुआ।

अहुत (सं० पु०) नास्ति हुतं हवनं यत्र, नञ्-बहुव्री०। १ होमशून्य वेदपाठ, ब्रह्मयज्ञ। (त्रि०) २ होम न किया गया, जो आगमें डाला न गया हो। ३ बलिरहित, जिसे बलि न मिला हो। ४ बलिद्वारा अप्राप्त, जो होम करनेसे हाथ न आया हो।

अहुनाद् (वै० त्रि०) बलिदानके अयोग्य, जिसे बलि देनेकी आज्ञा न रहे।

अहुठन (हिं० पु०) स्थूण, ठीहा, पोढ़। यह लकड़ीका टुकड़ा होता है। कृषक पृथिवीमें गाड़ इसपर चारा काटते हैं।

अहृणान (वै० त्रि०) हृणी रोषणे कण्ड्वादि० तच्छिलेश् शानच् वेदे निपा० साधु, नञ्-तत्। अक्रोधन, अक्रोधी, मुशफ़िक़, मेहरबान्, जो नाराज़ न हो।

"किं मे हव्यमहृणान:।" (ऋक् ७।८६।२)

अहृणीयमान (वै० त्रि०) १ पापगत होनेपर अलज्ज-मान, जिसे बुरा काम करनेपर शर्म न आये। २ अक्रोधन, मेहरबान्। ३ सन्तुष्ट, राज़ी। ४ प्रसन्नता-पूर्वक दिया जानेवाला, जो खुशीसे बख़्शा गया हो।

"राजाना सवमहृणीयमान:।" (ऋक् ५।६२।६)

अहृति—सन्ताल परगनेकी मालपहाड़िया जातिका एक गोत्र। यह लोग व्याध या शिकारी होते हैं।

अहृद्य (सं० त्रि०) अनीप्सित, नागवार, जो चाहा न गया हो

अहे (सं० अव्य०) १ छी-छी, धिक्कार, धत। २ अलग, दूर, हटावो। ३ ओ, देखो, इधर। यह क्षेप, वियोग और सम्बोधनमें लगता है। (हिं० पु०) ४ वृक्ष विशेष, एक पेड़। इसका काष्ठ भूरा होता और गृह, हल, शकट प्रभृतिके निर्माणकार्यमें काम आता है।

अहेड़ (सं० त्रि०) हेड़ अनादरे अच्, नञ्-तत्। अवज्ञाशून्य, अनादररहित, इज़्ज़तदार, जो बे-इज़्ज़त न हो।

अहेड़मान (सं० त्रि०) हेड़-शानच्, नञ्-तत्। आद्रियमाण, अवज्ञाशून्य, इज़्ज़तदार।

अहेतु (सं॰ पु॰) नञ्-तत्। १ हेतुभिन्न, सबब-की अदममौजूदगी। २ काव्यालङ्कार विशेष। इसमें कारण उपस्थित रहते भी कार्यकी अनिष्पत्ति देखायी जाती है। (त्रि॰) नञ्-बहुव्री॰। ३ हेतुशून्य, बे-सबब।

अहेतुक (सं॰ त्रि॰) अहेतु देखो।

अहेतुता (सं॰ स्त्री॰) हेतुका अभाव, बे-सबबी।

अहेतुत्व (सं॰ क्ली॰) अहेतुता देखो।

अहेतुसम (सं॰ क्ली॰) त्रैकाल्यासिद्धे र्हेतोरहेतुसमः। तीनों कालमें असिद्धिहेतु यानि हेतुत्वके असम्भव कथनको अहेतुसम कहते हैं। हेतु ही साधन है, अतः इसे साध्यके पूर्व, पश्चात् वा सङ्ग रहना चाहिये। यदि साध्यके पूर्व साधन माना जाये, तो साध्यके विद्यमान न रहनेपर यह किसका साधन और साधनको पीछे रखें, तो किसका साध्य होगा? यदि साध्य और साधनको एक ही समयमें विद्यमानता मानो जाय, तो कौन किसका साधन एवं कौन किसका साध्य निकलेगा। यह हेतुसे अलग नहीं हो सकता। अतएव इसीको अहेतुसम कहते हैं।

अहेर (हिं॰ पु॰) आखेट, शिकार।

अहेरिया—मध्य दोआबकी एक जाति। यह शिकारियों और चोरोंका काम करती है। कोई-कोई अहेरियोंको एक प्रकारका धानुक बताता, किन्तु यह उनकी तरह मृतक शरीरको नहीं खाता। गोरखपुर ज़िलेमें धानुकोंके जो अहेरिया वंशज रहते, वह सांपको पकड़ कर खा जाते हैं। प्रधानतः अहेरिया भीलों और बहेलियोंके वंशज मालूम होते हैं। किन्तु यह अपनेको किसी सूर्यवंशी राजाका वंशज प्रमाणित करते हैं। इनका कहना है,—'एक सूर्य-वंशी राजकुमारको आखेटका बड़ा प्रेम था। वह इसोसे चित्रकूटमें जाकर रहने लगे। आखेटमें राज-कुमारकी बड़ी चेष्टा देख लोग उन्हें 'अहेरिया' कह-कर पुकारते थे। उन्होंसे हमारा अहेरिया वंश निकला है।' यह लोग चित्रकूट और अयोध्याकी तीर्थयात्रा करते हैं। पञ्चायत जातिका विवाद मिटाती है। सरपञ्च सर्वदा एक ही आदमी रहता है। यदि सरपञ्च बीमार पड़ जाता या नाबालिग़ होता, तो पञ्चायतका कोई सभ्य उसके स्थानमें काम करता है। किन्तु उसके अयोग्य प्रमाणित होनेपर सर्वसम्मतिसे दूसरा सरपञ्च चुना जाता है। इनमें चार-चार विवाह होते और कितने ही लोग दो बहनोंको साथ ही व्याह लाते हैं। विधवा-विवाहकी प्रथा भी प्रचलित है। धनी मृतकको जलाते और निर्धन नदीमें बहा या भूमिमें गाड़ देते हैं। भूतप्रेतकी पूजा बहुत होती है। अलीगढ़ ज़िलेको अतरोला तहसीलके गङ्गीरो गांवमें मेघासुरका मन्दिर बना है। रामायण-रचयिता वाल्मीकि मुनिको यह अपना महात्मा समझते हैं। पतरी और टोकरी बना तथा ढाकसे शहद और गोंद निकालकर नगरमें बेचना इनका काम है। किन्तु सेंध लगाने और डाका डालनेमें यह बड़े ही चालाक होते हैं। सन् १८४५ ई॰के समय इन्होंने बड़ी लूटमार उठायी थी।

अहेरी (हिं॰ पु॰) आखेटक, शिकारी, जो शिकार मारता हो।

अहेरु (सं॰ स्त्री॰) न हिनोति गच्छति, हि-रु नञ्-तत्। शतमूली, शतावर।

अहेलत्, अहयन देखो।

अहेलमान, अहयान देखो।

अहेलयत्, अहयाम देखो।

अहैतुक (सं॰ त्रि॰) हेतुत आगत ठञ्, नञ्-तत्। १ हेतुसे अप्राप्य, जो सबबसे मिल न सकता हो। २ उपपत्तिशून्य, नापैद, जो पैदा न हो। ३ साहाय्य-शून्य, बे-सहारा।

अहो (सं॰ अव्य॰) अह-डो। १ शोक, अफ़-सोस, आह! हाय। २ धिक्कार, लानत, छी-छी। ३ दया, रहम, हां। ४ ओ! ऐ, देखो। ५ आश्चर्य, ताज्जुब, अरे। ६ धन्य, वाह् वाह! क्या खूब! शाबाश! ७ क्यों, कैसे, किसतरह।

अहोद (वै॰ पु॰) १ यज्ञ न करनेवाला पुरुष। २ यज्ञ करनेमें अधम।

अहोपुरुषिका (सं॰ स्त्री॰) १ स्वावलम्बन, खुद-इख़्तियारी, अपना भरोसा। २ आत्मश्लाघा, खुद-सिताई, अपनी तारीफ़।

अहोम—आसाम उपत्यकामें रहनेवाली शानवंशीय एक जाति। वर्तमान शताब्दके आरम्भ समय और ब्रह्म-वासियोंके आक्रमण करनेसे पहले आसाम उपत्यकामें अहोम जातिका बड़ा प्रभाव रहा। कहते हैं,—सन् ७७७ ई०को सुकम्पा नामक नृपतिके समय उनके भाई समलोनफा सेनापति थे, जिन्होंने सदियासे कामरूप तक समग्र देश अपने अधीन किये। समलोनफेसे ही अहोम राजवंश चला है। किन्तु मतभेदसे सन् १२२८ ई०को पोङ्ग राज्यके अधिकारी,सुकफाने शानसे निकाले जानेपर आसाम जीत अहोम नाम ग्रहण किया और प्रान्तका भी नाम आसाम रख दिया। सन् १६५४ ई०को अहोम-नृपति चतुमला हिन्दू बनाये गये थे। सन् १२२८ ई०से डेढ़ शताब्द तक अहोम-नृपति बैखटके दिहिङ्गनदीके पास थोड़े देशपर राज्य करते रहे। किन्तु सन् १३७६ ई०को पहले-पहल लखीमपुर और शिवसागरके चूता राजाओंसे उन्हें लड़ना पड़ा था। यह युद्ध १२४ वर्ष चला। अन्तमें अहोमोंने सन् १५०० ई०के समय चूता नृपति-को हरा शिवसागर जिलेका गढ़गांव अपनी राज-धानी बनाया। सन् १५६३ ई०को कोच-नृपतिने इनके नये देशपर आक्रमण कर गढ़गांव राजधानी छीन ली थी, किन्तु उसे अपने अधिकारमें रखनेकी चेष्टा न की। अहमोंको फिर अपना अधिकार प्रति-ष्ठित करनेमें नौगांव और पूर्व दरङ्गके कछारियोंसे लड़ना पड़ा था। फिर औरङ्गजेबके सेनापति मीर जुमलेने इनपर आक्रमण किया, किन्तु उन्हें अहोम राजधानी छीनने और उसके नृपतियोंपर कर लगाने बाद ग्वालपाड़ेको पीछे हटना पड़ा। उस समय ब्रह्मपुत्र-उपत्यकामें सदियासे ग्वालपाड़े और दक्षिण पर्वतसे भूटान सीमातक अहोमोंकी तूती बोलती थी। सन् १६९५ ई०के समय रुद्रसिंहने सिंहासनारूढ़ हो इस राज्यको उन्नतिके शिखर पर चढ़ाया। उसके दूसरे शताब्द गृह विवाद और विदेशीय आक्रमणसे अहोम राज्य बिगड़ने लगा था। मोआमेरियोंके धार्मिक विद्रोह खड़ा करने पर अहोमोंको अपनी राजधानी गढ़गांवसे रङ्गपुर उठा ले जाना पड़ी। किन्तु यहीं अन्त न हुआ, आपसमें झगड़ा बढ़ जानेसे धीरे-धीरे इनकी राजधानी कामरूपके गौहाटी स्थानमें जा पहुंची थी। सन् १८१० ई०में किसी प्रति-पक्षीने अपने साहाय्यके लिये ब्रह्मदेशवासियोंको बुलाया। किन्तु वह स्वयं राजा बन बैठे और निर्दय रूपसे समग्र उपत्यकामें शासन करने लगे। सन् १८२४-२५ ई०के समय अंगरेजोंने ब्रह्मदेश-वासियोंको यहांसे निकाल बाहर किया। अहोम-नृपति टेकके स्थानमें लोगोंसे अपना काम लेते थे। दूसरे विषयमें बिलकुल उन्होंने हिन्दुओंका जैसा ही आचरण दिखाया।

अहोर—१ राजपूतानाके उदयपुर राज्यका प्राचीन नगर। यह उदयपुर नगरसे एक कोस दूर है। २ युक्तप्रदेशके रुहेलखण्डकी एक जाति। यह राम-गङ्गा नदीके किनारे रहती तथा कृषिकर्मसे अपना काम चलाती है। इस जातिके लोग जाटों और गूजरोंके साथ खुले तौरपर शराब और हुक्का पीते, किन्तु अहोरोंको नीच समझते हैं। कहते हैं, पहले रुहेलखण्डमें अहोरोंका राज्य रहा। सम्भवतः तोमरोंके समय (सन् ७००-११५० ई०) इन्हें बहुत अधिकार प्राप्त था। अहोरोंमें सैकड़ों कुल होते हैं। मेरठ, बुलन्दशहर, एटा, बरेली, बिजनौर, बदायूं, मुरादाबाद, पीलीभीत, कुमायूं और तरायीमें कितने ही अहोर निवास करते हैं।

अहोरथन्तर (सं० क्ली०) अह्नि गेयं रथन्तरं साम-भेदः न रोरः। दिवसमें गाने योग्य रथन्तर नामक साम, जो साम सिर्फ़ दिनमें गाया जाता हो।

अहोरात्र (सं० पु०) अहश्च रात्रिश्च, अजन्त समाहा० द्वन्द्व। १ दिवारात्र, दिनरात, एक दिन, सूर्य निकल-नेसे दूसरे दिन सूर्य निकलने तक चौबीस घण्टे मनुष्यका दिन। मनुष्यके एक मासमें पैत्र और एक वत्सरमें दैव अहोरात्र होता है। (अव्य०) २ सर्वदा, रातदिन, हमेशा।

अहोरा-बहोरा (हिं० पु०) विवाह विशेष, किसी किस्मकी शादी। इसमें नववधू ससुराल पहुंच उसी दिन अपने घर वापस आ जाती है।

अहोरूप (सं० क्लो०) अह्नो रूपम्। दिवस रूप, दिनको शक्ल।

अहोरौरा—युक्तप्रान्तके मिर्जापुर ज़िलेका एक शहर। यह अक्षा० २५° १´ १५´´ उ० तथा द्राघि० ८३° ४´ २०´´ पू०पर अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल १२३ एकर है। अहोरौरा चुनारसे दक्षिण-पूर्व छः और बनारससे दक्षिण नौ कोस पड़ता है। अन्न, तिलहन, लाख तथा जङ्गली चीजका व्यापार यहां होता और चीनी, कांचकी चूड़ी, खिलौना एवं रेशम बनता है। नगरसे दश कोस उत्तर ई० आई० रेलवेका अहोरौरारोड नामक ष्टेशन बना है।

अहोवत (सं० अव्य०) अहो च वत च द्वन्द्व। १ हाय, खेद, अफसोस। २ ओ, ऐ, देखिये! ३ राम राम, रहम!

अहोवल (सं० पु०) १ सङ्गीत-पारिजात-रचयिता। सङ्गीतरत्नाकरसे पीछे सङ्गीतपारिजात बना था। २ ईशानेन्द्र और नृसिंहेन्द्रके शिष्य एवं 'पुरश्चरण-कौस्तुभ'-रचयिता। ३ 'सङ्गीत-पारिजात' एवं 'काव्य माला'-रचयिता। ४ नृसिंहभट्टके पुत्र। इन्होंने 'महिम्न-स्तवटीका', 'रुद्रभाष्य' और 'सङ्कल्प-सूर्योदयटीका' नामक ग्रन्थ बनाये थे।

अहोवल शास्त्रिन्—मीमांसासूत्रप्रकाशिका-रचयिता रामकृष्णके गुरु। इनका दूसरा नाम बोधानन्दघन भी रहा।

अहोवलसूरि—'याज्ञिकसर्वस्व' एवं 'आपस्तम्बश्रौत-सूत्रभाष्य'-रचयिता। इन्होंने रुद्रदत्तका उल्लेख किया है।

अहोवलम्—मन्द्राज प्रान्तके करनूल ज़िलेका प्रसिद्ध ग्राम। यह अक्षा० १५° ८´ ३´´ उ० और द्राघि० ७८° ४६´ ५८´´ पू० पर अवस्थित है। निकटवर्ती पर्वतपर तीन देवालय बने, जिन्हें स्थानीय लोग बहुत पवित्र समझते हैं। इनमें जो पर्वतके आधार पर खड़ा, वह देखने योग्य है। भित्तियों और द्वारप्रकोष्ठोंपर रामायणके मनोहर दृश्य खिंचे हैं। चटान काटकर जो पत्थरके स्तम्भ निकले, वह मण्डलमें आठ फीट बैठते हैं।

अहोही (सं० अव्य०) आश्चर्यरूपसे, अनोखे तौरपर।

अह्नवाय्य (वै० त्रि०) ह्नु धातु० आय्य, नञ्-तत्। अपलाप न करनेवाला, जो बहाना न करता हो।
"सत्यं तत्तुर्वशे यदौ विदानो अह्नवाय्यं।" (ऋक् ८।४५।२७)

अह्नाय (सं० अव्य०) ह्नु-घञ् वृद्धिः पृषो० रक्षा-रस्य यत्नम्, नञ्-तत्। १ शीघ्र, जल्द। २ पुरातन, पहले, पुराने वक्त। ३ सपदि फौरन्।

अह्रिषु (वै० त्रि०) अह्रिं आहन्तारं शत्रुं ऋषति, अह्रि-ऋष-उ। १ शत्रुके अभिमुख गमन करनेवाला, जो दुश्मनके सामने जाता हो। २ सर्पवत् गमनशील, जो सांपकी तरह चलता हो। "अह्रिषुर्णा चिन्वयां अविष्या-गणः।" (ऋक् २।३८।२)

अह्नाट (सं० पु०) दबी दूब।

अह्रय (वै० त्रि०) न जिह्रेति, ह्री-अच्, नञ्-तत्। १ निर्लज्ज, बेशर्म। २ विषयासक्त, शहवतपरस्त, मज़ा उड़ानेवाला। "उपक्षितिं भीजः सूरिर्यो अह्रयः।" (ऋक् ८।७०।१३)

अह्रयाण (वै० त्रि०) ह्री धातु० आनच्, नञ्-तत्। अह्रय देखो।

अह्रि (वै० पु०) ह्री-क्रि, नञ्-तत्। १ कवि, शायर। २ शुक्र।
"शुक्रं दुदुह्रे अह्रयः।" (ऋक् ९।५४।१)
(त्रि०) ३ निर्लज्ज, बेशर्म। ४ विषयासक्त, शहवतपरस्त।

अह्रुत (सं० त्रि०) ह्रु-क्त पृषो० साधु, नञ्-तत्। १ अवक्र, सीधा, जो टेढ़ा न हो।

अह्रीक (सं० पु०) नास्ति ह्रीर्लज्जा यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ क्षपणक, बौद्ध साधुविशेष। क्षपणक लज्जाहीन होनेसे विवस्त्र रहते थे।

अह्रीयमाण, अह्रय देखो।

अह्रुत (वै० त्रि०) १ अलोल, जो हिलता न हो। २ सरल रेखामें जानेवाला, जो रास्त खतपर चल रहा हो। ३ सरल, सीधा, जो टेढ़ा न हो।

अह्रुतप्सु (वै० त्रि०) सरल आकृति-विशिष्ट, सीधी शक्लवाला।

अह्वल (सं० पु०) न ह्वलति, ह्वल-अच्, नञ्-तत्। १ भल्लातक वृक्ष, भेलावेंका पेड़। (वै० त्रि) २ अलोल, जो कांपता न हो। (स्त्री) अह्वला।

आ

आ——आकार, संस्कृत एवं हिन्दी भाषाकी वर्ण-मालाका दूसरा अक्षर। अकार और अकार (अ+अ) मिलकर आकार होता है। इसके दीर्घ और प्लुत दो भेद हैं। हिन्दी भाषाके चलित स्वर वर्णोंमें यह दूसरे स्थानपर लिखा जाता है। इसका संक्षिप्त रूप ा है। अर्थात् अकार और समस्त हल् वर्णोंमें आकार योग करनेपर ा ऐसी आकृति बनाते हैं। जैसे, अ+आकार=आ, क+आकार=का इत्यादि। आकारका ह्रस्व अकार है। अकार अकार और आकार आकारमें मिल जानेसे आकार होता है। जैसे, नव+अङ्कुर=नवाङ्कुर; सुख+आलय=सुखालय; महा+आशय=महाशय। कामधेनु-तन्त्रमें लिखा, कि आकार शङ्खज्योतिर्मय वर्ण है। इसमें ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र विराजते हैं। यह पञ्च प्राणमय होता है। इसका उच्चारण-स्थान कण्ठ है।

(अव्य) आप्-क्विप् पृषो॰ प-लोपः। १ वाक्य। २ स्मरण। ३ अनुकम्पा। ४ समुच्चय। ५ अङ्गीकार। ६ ईषदर्थ। ७ क्रियायोग। ८ सीमा। ९ व्याप्ति। १० कोप। ११ पीड़ा। "सविसर्गस्तु इति यो निपातः स पीड़ायां कोपे च वर्त्तते। आः स्मरणेऽप्याकारो कोपसन्तापयो रपीति कोषान्तरम्।" (महेश्वर)

"ईषदर्थे क्रियायोगे मर्य्यादाभिविधौ च यः।
एतमातं ङितं विद्यात् वाक्यस्मरणयोरङित्॥" (भाष्य)

ईषदर्थ, क्रियायोग, मर्य्यादा (पूर्वसीमा) और अभिविधि (शेषसीमा)में आ-ङित् होता, अर्थात् इसके साथ ङ अनुबन्ध रहता है। जैसे,—आङ्। कार्यकालमें ङ इत् हो जानेसे केवल आकार रह जाता है। किन्तु वाक्य एवं स्मरणके अर्थमें ङ-अनुबन्ध नहीं रहता।

ईषदर्थ—आ-रक्त अर्थात् अल्प रक्तवर्ण। क्रियायोग—आ-हरति। मर्य्यादा—आसमुद्रं राजदण्डः, अर्थात् समुद्र तक राजदण्ड चलता है। अभिविधि—आसत्यलोकादापातालात्—अर्थात् सत्यलोक एवं पाताल व्यापकर। इन स्थानोंमें ङ-इत् आकार गृहीत हुआ है।

प्रगृह्य संज्ञक आ-निपात है। इसका ङ-इत् नहीं होता। स्मरण एवं वाक्यपूरणमें यह आता है। आकार प्रगृह्य होता, अर्थात् इसकी सन्धि नहीं लगती,—प्रकृत दशामें ही रहता है। निपात एकाजनाङ्। पा १।१।१४। आङ्-निपात भिन्न जो एकाच्-निपात होते, उन्हें प्रगृह्य कहते हैं।

वाक्य—आ एवं नु मन्यसे? क्या आप ऐसा नहीं सोचते? स्मरण—आ एवं किल तत्। हां सचमुच ही ऐसा होता है। इस स्थलमें वाक्य शब्दसे वाक्यार्थका प्रकाशकत्व और स्मरणसे अन्य प्रमाण द्वारा प्राप्त वाक्यका स्मरण समझा जाता है। फिर आकार एवं एकारको सन्धि नहीं होती, परन्तु ङित् रहनेसे लगता है। जैसे ईषदर्थमें आङ्+उष्ण=ओष्ण।

आङ् मर्यादावचने। पा १।४।८९। मर्यादा एवं अभिविधि अर्थमें आङ्की कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है। पञ्चम्यपाङ्परिभिः। पा २।३।१०। कर्मप्रवचनीय अप, आङ् एवं परि शब्दके योगमें पञ्चमी पड़ती है। आङ् मर्यादाभिविध्योः। पा २।१।१३। मर्य्यादा एवं अभिविधि अर्थमें आङ्के पञ्चम्यन्त समर्थके साथ विकल्पसे अव्ययीभाव समास होता है।

(पु॰) १२ महेश्वर। १३ पितामह। १४ वाक्य। (स्त्री॰) १५ लक्ष्मी।

हिन्दी भाषामें कुछ शब्द लिखते समय एक ही अक्षरके लिये कोई 'आ' कोई 'या' और कोई 'वा' लिखा करते हैं। जैसे—हुआ, हुवा; मुआ, मुया इत्यादि। किन्तु किसी लेखकने आजतक यह प्रमाणित नहीं किया, वास्तवमें ऐसे स्थलपर कौन अक्षर रखना उचित है।

आं (हिं० अव्य०) १ आश्चर्य, ताज्जुब, क्या हुआ! (पु०) २ बालकके रोदनका शब्द।

आंक (हिं० पु०) १ अङ्क, अदद। २ चिह्न, निशान्। ३ वर्ण, हर्फ़। ४ निश्चय, यक़ीन्। ५ भाग, हिस्सा। ६ कुल, ख़ानदान। ७ क्रोड़, गोद। ८ पहियेकी धुरी डालनेका ढांचा। यह गाड़ियोंकी बल्लियोंके नीचे लगता और मज़बूत लकड़ीका बनता है। ९ छन्दोविशेष। इसमें नौ मात्रा रहती हैं।

आंकड़ा (हिं० पु०) १ अङ्क, अदद। २ पेंच, फन्दा। ३ पशुरोग विशेष, चौपायोंकी एक बीमारी। ४ मदार, आक। (स्त्री०) आंकड़ी।

आंकन (हिं० पु०) दाना निकाला हुआ ज्वारका भुट्टा।

आंकना (हिं० क्रि०) १ अङ्कित करना, निशान लगाना, दागना। २ कूतना, तख़मीना करना, ठहराना, दाम लगाना। ३ अनुमान बांधना, फ़र्ज़ करना। ४ लिखना।

आंकनी (हिं० स्त्री०) लेखनी, कलम।

आंकर (हिं० वि०) १ आकर जैसा, गहरा। जोतायी दो तरहकी होती है—आंकर खूब गहरी और स्याह वा सेव। २ महंगा, गरान्। ३ अत्यधिक, बहुत, ज़्यादा।

आंकल (हिं० पु०) अङ्कित-वृषभ, दागा हुआ सांड़।

आंकुड़ा, अंकुड़ा देखो।

आंकुस (हिं०) अङ्कुश देखो।

आंकू (हिं० पु०) आंकनेवाला, कूतनेवाला, दाम-लगानेवाला।

आंख (हिं० स्त्री०) १ अक्षि, देखनेका इन्द्रिय, चश्म। इससे जीवोंको रूप, विस्तार और आकारका ज्ञान होता है। शरीरमें इस इन्द्रियपर आलोकके द्वारा वस्तुका विम्ब उतर आता है। जीव जितना उन्नत वा क्षुद्र होता, आंख भी उतनी ही जटिल एवं सरल रहती है। क्षुद्र जीवकी आंख बहुत सादी होती और कहीं विन्दु ही जैसी देख पड़ती है, रक्षाके लिये पलक या बरौनी नहीं लगती। बहुत छोटे जीवोंमें आंखका स्थली और संख्याका नियम नहीं है। शरीरके किसी अंशमें एक, दो या चार विन्दु निकलते, जो आंखका काम देते हैं। मकड़ेके आठ आंखें होती हैं। रीढ़वाले कीड़ेकी आंख खोपड़ेके नीचे गड्ढेमें रहती, जिसपर पलक और बरौनी चढ़ती है। यह बाहरसे देखनेमें गोल और लम्बी तथा दोनो किनारे नोकदार निकलती है। सामनेकी सफ़ेद झिल्लीके पीछे जो झिल्ली पड़ती, उसमें एक छिद्र रहता है। इसी छिद्रमें मोटे शीशे-जैसा एक द्रव्य होता, जो प्रकाशको भीतर पहुंचा ज्ञानतन्तुपर प्रभाव डालता है। आंखके पर्याय नीचे देखिये—लोचन, नयन, नेत्र, ईक्षण, अक्षि, दृक्, दृष्टि, अम्बक, विलोचन, वीक्षण, प्रेक्षण, चक्षु। २ ध्यान, इरादा। ३ विवेक, पहंचान। ४ कृपा, मेहरबानी। ५ सन्तति, औलाद। ६ आलूके ऊपरका निशान्। ७ ईखकी ठांठी। ८ अनन्नासका दाग़। ९ सूईका सूराख़।

आंखड़ी, आंख देखो।

आंखफोड़टिड्डा (हिं० पु०) १ हरे रङ्गका एक कीड़ा। यह मदारके वृक्ष पर रहता और उसीकी पत्तियां खाता है। २ कृतघ्न, एहसान-फ़रामोश।

आंखमिचौली, आंखमोचली, (हिं० स्त्री०) एक खेल। एक लड़का किसी दूसरे लड़केकी आंख मूंद देता है। जब दूसरे लड़के छिप जाते, तब उस लड़केकी आंख खोली जाती और वह लड़कोंको छूनेके लिये ढूंढ़ते फिरता है। जिस लड़केको वह छू लेता, वही चोर ठहरता है। यदि वह किसीको छू नहीं पाता, तो फिर वही चोर बनाया जाता है। ७ बार इसी तरह चोर होनेपर सब लड़के उसके पैर बांध और चारो ओर कुण्डल खींच देते हैं। दूसरे लड़के बारी-बारी कुण्डलमें पैर रखते और उसे बुढ़िया-बुढ़िया कह कर चिढ़ाते हैं। कुण्डलके भीतर किसीको छू लेनेपर चोर लड़केका दांव उतरता है।

आंखी, आंख देखो।

आंग (हिं० पु०) १ अङ्ग, अज़ो। २ प्रति चौपाये पर ली जानेवाली चरायी। ३ कुच, स्तन।

आंगन (हिं० पु०) अङ्गन, अजिर, घरके भीतरका सहन, चौक।

आंगी (हिं० स्त्री०) अङ्गिका, अंगिया, चोली, छोटा कपड़ा।

आंगुर (हिं०) अङ्गुल देखो।

आंगुरी (हिं०) अङ्गुली देखो।

आंगुल, अङ्गुल देखो।

आंची (हिं० स्त्री०) महीन कपड़ेसे मढ़ी हुई चलनी। इससे मदा चालते हैं।

आंच (हिं० स्त्री) १ अग्निशिखा, आगकी लपट। २ ताप, गर्मी। ३ अग्नि, आतश। ४ तेज, प्रताप। ५ आघात, चोट। ६ अहित, अनिष्ट, हानि। ७ विपत्ति, सङ्कट, सन्ताप, आफ़त। ८ प्रेम, दाह। ९ कामताप।

आंचका (हिं० पु०) नावका लटकता हुआ रस्सा। इसके छोरपर छल्लोंमें वह रस्सा लगता, जिसपर ठहर ख़लासी जहाज़का पाल खोलता और लपेटता है।

आंचना (हिं० क्रि०) सुलगाना, आंचा देना।

आंचर, आंचल देखो।

आंचल (हिं० पु०) १ अञ्चल, धोती या दुपट्टेका छोर। २ स्त्रियोंकी साड़ीका छातीपर रहनेवाला किनारा। ३ साधुका अंचला।

आंचू (हिं० पु०) एक कंटीली झाड़ी। इसमें शरीफे जैसे छोटे छोटे फल लगते, और मीठे रससे भरे दाने पड़ते हैं।

आंजन (हिं०) अञ्जन देखो।

आंजना (हिं० क्रि०) अञ्जन लगाना।

आंट (हिं० स्त्री०) १ हस्ततलमें तर्जनी एवं अङ्गुष्ठके मध्यका स्थान। २ दांव, वश। ३ वैर, लाग डांट। ४ ग्रन्थि, गांठ। ५ पूला, गट्ठा, पेंच।

आंटना (हिं० क्रि०) १ समाना, अंटना, अमाना। २ पूरे उतरना, काफ़ी निकलना। ३ आना, मिलना। ४ पहुंचना।

आंट-सांट (हिं० स्त्री०) १ गुप्त अभिसन्धि, साज़िश, बन्दिश। २ मेलजोल।

आंटी (हिं० स्त्री०) १ लम्बी घासका छोटा गट्ठा, पूला। २ लड़कोंके खेलनेकी गाली। ३ कुश्तीका एक पेंच। इसमें टांगसे टांग लगा और कमरपर लाद लड़नेवालेको चित्त मारते हैं।

आंठी (हिं० स्त्री) १ अष्टि, गांठ। २ बीज, गुठली। ३ दही, मलायी वगैरहका लच्छा। ४ नवोढ़ाका उन्नत स्तन।

आंड़ (हिं० पु०) अण्डकोश।

आंड़ी (हिं० स्त्री०) १ अंटी, गांठ, कन्द। २ कोल्हूकी जाटका गोला। ३ बैलगाड़ीके पहियेमें जड़ी हुई लोहेकी सामी। ४ सूतकी पोनी।

आंड़ू (हिं० पु०) अण्डकोशयुक्त, जिसके कूचा अण्डकोश न रहे। यह शब्द चौपायेका विशेषण है।

आंड़ेबांड़े खाना (हिं० स्त्री०) इधर-उधर घूमना, चक्कर काटना।

आंत (हिं० स्त्री०) अन्त्र, प्राणियोंके पेटमें गुदातक जानेवाली लम्बी नली। भुक्त पदार्थ पेटमें पचकर इसी नलीमें जाता, जहांसे रस अङ्गप्रत्यङ्गमें पहुंचता और मल बाहर निकलता है। मनुष्यकी आंत डीलडौलसे पांच-छ: गुण दीर्घ होती है। मांसभक्षियोंकी अपेक्षा शाकाहारियोंकी आंत छोटी बैठती है।

आंतकट्टू (हिं० पु०) पशुरोगविशेष। इस रोगमें चौपायेको दस्त बहुत आता है।

आंतर (हिं० पु०) १ अन्तर, दो वस्तुओंके बीचका स्थान। २ एकबार जोतनेके लिये घेरा जानेवाला खेतका हिस्सा। ३ पासा, पानकी क्यारियोंके बीच आने-जानेकी जगह। ४ तानेमें दोनों सिरोंके बीच खूंटियोंकी लकड़ी। यह सांथी अलग करनेको थोड़ी-थोड़ी दूरपर गाड़ी जाती है।

आंदू (हिं० पु०) १ अन्दू, लोहेका कड़ा, बेड़ी। २ बांधनेका सीकड़।

आंध (हिं० स्त्री०) १ अन्धकार, धुंध। २ रतौंधी। ३ कष्ट, तकलीफ़।

आंधना (हिं० क्रि०) वेगसे धावा मारना, टूट पड़ना।

आंधर (हिं० वि०) अन्ध, अन्धा। (स्त्री०) आंधरी।

आंधरा, आंधर देखो।

आंधारम्भ (हिं० पु०) अन्धेरखाता, मनमानी बात।

आंधी (हिं० स्त्री०) प्रचण्ड वायु, ज़ोरसे चलनेवाली,

हवा। इससे इतनी धूलि उड़ती, कि चारो ओर अन्धकार छा जाता है। भारतवर्षमें इसके आनेका समय वसन्त और ग्रीष्म है।

आंब, आम देखो।

आंबा हलदी, आमा हलदी देखो।

आंयबांय (हिं० पु०) असम्बन्धप्रलाप, व्यर्थकी बात, अंडबंड, अनापशनाप, ऊटपटांग।

आंव (हिं० पु०) आम, अन्न न पचनेसे उत्पन्न होनेवाला एक प्रकारका चिकना सफेद लसदार मल। आम देखो।

आंवठ (हिं० पु०) १ किनारा, बारी। २ कपड़ेका छोर। ३ बरतनकी बारी।

आंवड़ना (हिं० क्रि०) उमड़ना, ऊपरको उठना।

आंवड़ा (हिं० वि०) गभीर, गहरा।

आंवन (हिं० पु०) १ लोहेकी सामी, मुंहड़ी। यह पहियेके उस छेद पर लगती, जिसमें धुरीका डण्डा रहता है। २ एक औज़ार। इससे लोहेका छेद बढ़ाते हैं।

आंवरा, आमलकी देखो।

आंवल (हिं० स्त्री०) साम, खेड़ी, जेरी, किसी किस्मकी झिल्ली। इससे गर्भमें बच्चे लिपटे रहते हैं। आंवल प्रायः बच्चा होनेके पीछे गिर जाती है।

आंवलगट्टा (हिं० पु०) आंवलेका सूखा फल। यह औषधमें पड़ता और शिर मलनेके काम आता है।

आंवला (हिं० पु०) वृक्ष विशेष। इसकी पत्तियां इमलीकी तरह छोटी छोटी होती हैं। आंवलेकी लकड़ी कुछ सफ़ेदी लिये रहती और छाल प्रतिवर्ष उतरा करती है। कार्तिकसे माघ तक इसका कागज़ी नीबू-जैसा फल रहता है। छाल पतली होनेसे नसें देख पड़ती हैं। स्वादमें यह कसैलापन लिये खट्टा होता है। गुणमें इसे शीतल तथा लघु पाते और दाह, पित्त एवं प्रमेहका नाशक बताते हैं। इसके योगसे त्रिफला, च्यवनप्राश प्रभृति अनेक औषध प्रस्तुत होते हैं। आंवलेका मुरब्बा भी बहुत अच्छा बनता है। इसकी पत्तियोंसे चमड़ा सिझाते हैं। लकड़ी पानीमें न सड़नेसे कुओंके नीमचक आदि उसीके बनते हैं। आमलकी देखो।

२ कुश्तीका पेंच। इससे विपक्षीको नीचे लाते हैं।

आंवलापत्ती (हिं० स्त्री०) किसी क़िस्मकी सिलाई। इसमें पत्तीकी तरह दोनों ओर तिरछे टांके लगते हैं।

आंवलासारगन्धक (हिं० पु०) अति शुद्ध एवं पारदर्शक गन्धक। यह बहुत साफ़ और खानेमें खट्टा होता है।

आंवां (हिं० पु०) मट्टीके बर्तन पकानेका गड्ढा।

आंशिक (सं० त्रि०) अंशसम्बन्धी, अंशविषयक, हिस्सेका।

आंशुकजल (सं० क्ली०) किरण दिखाया हुआ जल। जलको एक तांबेके पात्रमें रख दिनभर धूप और रातभर चांदनी देखाते हैं। वैद्यकशास्त्र इस जलकी बड़ी प्रशंसा करता है।

आंस (हिं० स्त्री०) १ पीड़ा, दर्द। २ पाश, सुतली, डोरी। ३ रेशा।

आंसी (हिं० स्त्री०) भाजी, बैना, इष्टमित्रोंके यहां बंटनेवाली मिठाई।

आंसू (हिं० पु०) अश्रु, अस्रक, आंखका पानी। यह आंखमें नाककी ओर जानेवाली नलीके पास जमा रहता है। इससे आंखकी झिल्ली तर रहती है और ढेलेपर तिनका तथा गर्द नहीं बैठती। थूककी तरह यह भी पैदा होता और शारीरिक वा मानसिक आघातसे बढ़ता है। पीड़ा, शोक, क्रोध और हर्षमें आंसू आ जाता है। अधिक होनेसे यह गालोंपर बहता और कभी-कभी भीतरी नलीकी राह नाकमें दाखिल होता है।

आंसूढाल (हिं० पु०) पशुरोग विशेष, चौपायोंकी एक बीमारी। इसमें जानवरकी आंखसे पानी निकला करता है।

आंहड़ (हिं० पु०) भाण्ड, बरतन।

आंहां (हिं० अव्य०) नहीं।

आइ (हिं०) आयुस् देखो।

आइना (हिं०) आईना देखो।

आइन्दा (फ़ा॰ वि॰) १ भविष्यत्, मुस्तक़बिल, आगे आनेवाला। (पु॰) २ भविष्यत्काल, इस्तिक़्बाल आनेवाला ज़माना। (क्रि॰ वि॰) ३ भविष्यत्में, आक़िबतपर, आगे।

आइस, आइसु, आयस देखो।

आई (हिं॰ स्त्री॰) १ मृत्यु, मौत। २ आयुस्, जिन्दगी।

आईन (फ़ा॰ पु॰) १ व्यवस्था, सूत्र, दस्तूर, चलन। २ शासन, प्रशिष्टता।

आईन-इ-अकबरी—ऐतिहासिक ग्रन्थविशेष। यह पुस्तक फ़ारसी भाषाके प्रसिद्ध अकबरनामिका तृतीय खण्ड है। महाकवि शेख़ अबुल फ़ज़ल इसके रचयिता हैं। इसमें सम्राट् अकबरके राजत्वकालका समस्त विवरण लिखा है। यह पांच अध्यायमें सम्पूर्ण हुआ है। प्रथम अध्यायमें अकबरके परिवार और समाजका विवरण तथा स्वयं सम्राट्का वृत्तान्त प्रभृति अनेक विषय लिखा है। द्वितीय अध्यायमें सम्राट्के कर्मचारियोंका विवरण है। तृतीय अध्यायमें शासन एवं विचार विभागका वृत्तान्त तथा भूमिकी माप और राजस्व निरूपणका विषय दिया गया है। चतुर्थ अध्यायमें सामाजिक नियम, विद्या आलोचनाके उत्कर्ष साधन, विदेशी राजाओंके आक्रमण, परिव्राजक और मुसलमान-फ़क़ीर प्रभृतिकी बातें हैं। पञ्चम अध्यायमें नीतिवाक्य ग्रथित हुए हैं।

आईना (फ़ा॰ पु॰) आदर्श, शीशा, आरसी।

आईनादार (फ़ा॰ पु॰) नापित, हज्जाम, शीशा दिखाने-वाला नौकर।

आईनाबन्दी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ शीशेका साज़। २ फ़र्श-बन्दी, पत्थर या ईंटकी जुड़ाई। ३ टट्टीकी तैयारी। इस पर रोशनी करते हैं।

आईनासाज़ (फ़ा॰ पु॰) दर्पण या शीशा बनाने-वाला।

आईनासाज़ी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ आईनासाज़का काम। २ कांच पर क़लई चढ़ाना।

आईनी (फ़ा॰ वि॰) राजनियमके अनुकूल, क़ानूनी, क़ायदेसे चलनेवाला।

आउ (हिं॰) आयुस् देखो।

आउज (हिं॰ पु॰) वाद्यविशेष, ताशा। यह गलेमें डालकर दो लकड़ियोंसे बजाया जाता है।

आउझ, आउज देखो।

आउट (अं॰ वि॰) बहिर्भूत, खेलसे हारकर निकला हुआ। (Out) क्रिकेटके खेलमें यह शब्द प्रयुक्त होता है। गेंद विकेटमें लगने या बल्लेसे मारा हुआ गेंद हाथमें रुक जानेसे खेलाड़ी आउट होता है।

आउटराम—(Sir James Outram, Lieutenant-General G. C. B.) एक प्रसिद्ध अंगरेज वीर। ये भारतवर्षके एक प्रधान सेनापति रहे। सन् १८०३ ई॰को डर्बीशायरके अन्तर्गत बटार्लीहालमें इनका जन्म हुआ था। इनके पिताका नाम बेञ्जामिन आउटराम रहा। पहले इन्होंने अबर्डीनके अन्तर्गत उदनी और पीछे मारिष्काल कालेजमें शिक्षा पायी। १८१९ ई॰को निम्नश्रेणीके सेनापति होकर यह भारतवर्ष आये थे। उसके बाद १३नं॰ बम्बई देशीय पदातिकाके लेफ्टेनण्ट और आडजूटाण्ट हुए। इन्होंने खानदेशके असभ्य भीलोंको युद्धकौशल सिखाया और अन्तमें भीलोंकी सेना ही साथ ले जाकर दौङ्ग जातिको परास्त किया था। १८३५ से १८३८ ई॰ तक ये मही-कण्ठमें सुशृङ्खला स्थापन करनेपर व्यापृत रहे। लार्ड किन्के सदस्य बनकर ये अफ़ग़ानस्थानपर आक्रमण करने गये थे। ये गुजरातके पोलिटिकल एजेण्ट और सिन्धुदेशके कमिशनर भी हुए। उसी समय सिन्धु-देशके अमीर विद्रोही बन बैठे थे। सर चार्ल्स नेपि-यरकी मन्त्रणाके अनुसार सेनापति आउटरामने उन लोगोंको दमन किया। पीछे ये सितारे और बड़ोदे राज्यके रेसिडेण्टके पदपर सुशोभित हुये थे। उसी समय अवध अंगरेजीराज्यके अन्तर्गत हो गया। लार्ड डालहउसीने आउटरामको वहांका रेसिडेण्ट और कमिशनर नियुक्त कर दिया था।

बहुत दिनोंतक भारतवर्षमें रहनेसे आउटराम बीमार पड़े और १८५३ ई॰को इङ्गलैण्ड चले गये। परन्तु ईरानसे लड़ाई छिड़ जानेपर इन्हें कमिशनर बनकर सेनाके साथ ईरान उपसागरमें पहुंचना पड़ा

था। वहां कार्य्य सिद्ध करके यह भारतवर्ष लौट आये। उसी समय यहां सिपाही-विद्रोह उठा था। लार्ड कनिङ्गके परामर्शानुसार ये लखनऊ गये। पहले हावेलक साहबने विद्रोहियोंको कितना ही दमन कर दिया था, परन्तु फिर बड़ा गड़बड़ मच गया। आउटराम आलमबागमें ठहर सिपाहियोंसे युद्ध करने लगे। असंख्य असंख्य विद्रोही चारो ओर ओलेकी भांति गोले बरसाते थे। अन्तको इनकी मददपर लार्ड क्लाइड आ पहुंचे। उसी समय ये सेना सहित गोमतीकी पूर्व ओर जा तुमुल संग्राम करने लगे। उससे विद्रोही परास्त हो कर भागे थे। इसके बाद ये अवधके चीफ कमिश्नर और १८५८ ई०को लेफ्टिनण्ट जनरल बने। अन्तको भारतवर्षको प्रधान मन्त्रिसभा (Supreme Council)के यह सदस्य हुए थे। १८६० ई०को यह बीमार होकर इङ्गलेण्ड चले गये। १८६१-६२ ई०का शीतकाल मिश्रमें बीता; फिर फ्रान्समें कुछ दिन रहने बाद १८६३ ई०को ११वीं मार्चको पेरिस नगरमें इन्होंने प्राण छोड़ा था। इनकी प्रतिमूर्त्ति कलकत्तेके मैदानमें विद्यमान है। नङ्गी तलवार लिये महावीर आउटराम घोड़ेकी पीठपरसे पीछे देख रहे हैं। उधर इनके घोड़ेकी लातसे एक तोप चूर चूर हो गयी है।

आउन्स (अं० Ounce) अंगरेजी मानविशेष, किसी किस्मकी तौलका मिक़दार। यह दो प्रकारका होता है। एकसे कड़ी वस्तु तौलते और दूसरेसे द्रव पदार्थ नापते हैं। तौलनेका आउंस सवा दो तोलेके बराबर है। बारह आउन्ससे एक पाउंड बनता है। नापनेका आउंस सोलह ड्रामका है। एक ड्राममें साठ बूंद होते हैं।

आउबाउ, आयं बायं देखो।

आउल, आउलिया—वैष्णव सम्प्रदाय विशेष। ये कर्ताभजाको शाखामात्र होते, इसीसे इन्हें सहज कर्त्ताभजा भी कहते हैं। ये प्रकृति ले कर साधन करते हैं। एक एक आउलके साथ अनेक प्रकृतियां रहतीं, उनमें कोई वेश्या और कोई कुलवती होती हैं। सब जातिके प्रकृति-पुरुष एक साथ बैठकर खानपान करते हैं, जिसमें कोई जातिविचार नहीं। मनुष्यमात्रका स्वभाव है—यदि कोई किसीको स्त्रीके पास जाता, तो मनमें ईर्ष्या उत्पन्न होती है; परन्तु आउलोंका मन अत्यन्त उदार है। इनमें यदि किसीकी प्रकृतिके निकट दूसरा पुरुष चला जाये, तो मनमें विद्वेष नहीं होता। आउल दाढ़ी मूछ नहीं रखते।

आउलियाचान्द (औलियाचांद)—एक सम्प्रदाय-प्रवर्त्तक, इन्होंने ही पहले पहल कर्त्ताभजाकी सृष्टि की थी। आउलियाचांदके प्रकृत इतिहास जाननेका कोई उपाय नहीं है। अनेक आदमी अनेक प्रकारकी बातें करते हैं। कोई कोई कहते हैं,—एक बार कहींसे एक संन्यासी आये थे। उनके पैरमें खड़ाऊं, देहमें कफनी और कमरमें कौपीन रहा। खड़ाऊं पहने ही वे एक बड़ेइमलीके पेड़पर चढ़ बैठा करते थे। इच्छा होनेसे कभी नीचे उतर आते, नहीं तो दिन रात वहीं बैठे रहते। एक दिन किसी गृहस्थका लड़का मर गया। उसकी माता पुत्रशोकसे रोते हुई लड़केकी लाशको उसी इमलीके पेड़के तलेसे लिये जाती थी। दया करके संन्यासीने मरे लड़केको जिला दिया। उसी समयसे आउलियाकी दैवशक्ति प्रकाश हो गई।

कोई कोई दूसरी ही बात कहते हैं। उलाग्राममें शायद महादेव नामक एक तंबोली रहता था। एक दिन वह अपने भीटमें पान तोड़ने गया। पान तोड़ते तोड़ते उसने भीटमें एक आठ बर्षके लड़केको देखा। १६१८ शकमें फाल्गुन मासके प्रथम शुक्रवारको शायद वह लड़का मिला था। बालक कौन है, किसका लड़का है, नाम क्या है, निवास कहां है—यह सब कोई बता न सका। खुद लड़केने भी अपना कोई परिचय न दिया। महादेव उसे अपने घर लाकर लड़केकी तरह पालने लगा और उसका नाम पूर्णचन्द्र रखा। कहते हैं, कि पूर्णचन्द्र बारह वर्षतक उसी तंबोलीके यहां रहे थे। उसके बाद वह एक गन्धवणिक्के यहां आ कर दो वर्ष ठहरे। वहांसे वह एक ज़मींदारके यहां पहुंच कर डेढ़ वर्ष रहे। उसके बाद पूर्वबंगालमें

आकर डेढ़ वर्ष बिताया। अन्तमें नाना देश घूम फिर कर सत्ताईस वर्षकी उम्रमें बेजरा ग्राम पहुंचे थे। वहां सबसे पहले हटुघोष उनके शिष्य हुए। उसके बाद घोषपाड़ेके रामशरण पाल भी उनसे उपदेश पा कर कर्त्ताभजाका मत प्रचार करने लगे थे। आज भी होलीके दिन बड़ी धूम-धामसे वहां मेला लगता है।

कोई कोई कहते हैं, कि छिहत्तरवें मन्वन्तरके समय रामशरण पाल सुखसागरके बाज़ारमें चावल खरीदने गये थे। वहीं आउलियाचांदसे मुलाकात हुयी। आउलियाचांद रामशरणके मकान पर आकर उन्हें उपदेश देने लगे। एक बात और भी सुननेमें आती है। रामशरण पाल एक दिन अपना खेत जोत रहे थे। आउलियाचांद वहां जा पहुंचे पीछे उनके घर आकर उन्हें धर्म्मोपदेश देने लगे।

आउलियाचांद देहपर कफ़नी डाले रहते, कौपीन पहनते, हिन्दू मुसलमान दोनोंको समान समझते और सबके यहां भोजन करते थे। म्लेच्छ जातिसे इन्हें घृणा न रही। मुसलमान लोग भी इनसे उपदेश लेते थे। मालूम होता है, मुसलमानोंने ही इनका नाम 'आउलिया' रखा था। फारसी भाषामें औलिया शब्दके माने बुजुर्ग हैं। प्रवाद है, कि आउलियाचांद खड़ाऊं पहनकर गङ्गाके ऊपर घूमते-फिरते थे। इन्होंने अनेक कोढ़ियोंको अच्छा कर और मरे हुए आदमियों को भी जिला दिया था। अनुमान होता है, इन्हीं शक्तियोंके कारण मुसलमान इन्हें औलिया कहते थे।

आउलियाचांदके कई नाम सुननेमें आते हैं। आउलेचांद, प्रभु, आउलिया महाप्रभु, आउलिया फकीर, आउले ब्रह्मचारी, कङ्गालीप्रभु, फकीर ठाकुर, सांई, गोसांई, इन कई नामोंसे ये जनसमाजमें प्रसिद्ध हैं। कर्त्ताभजा लोग कहते हैं, कि श्रीचैतन्य महाप्रभु औडिवेमें जाकर अन्तर्हान और पीछे वही आउलिया चांदके रूपमें आविर्भूत हुए थे।

सबसे पहले बाईस आदमी आउलियाचांदके शिष्य बने रहे। उनके नाम ये हैं,—१ हटुघोष, २ बेचूघोष, ३ रामशरण पाल, ४ नयन, ५ लक्ष्मीकान्त, ६ नित्यानन्द दास, ७ खेलाराम उदासीन, ८ कृष्णदास, ९ हरिघोष, १० कन्हाई घोष, ११ शङ्कर, १२ निताइ घोष, १३ आनन्दराम, १४ मनोहर दास, १५ विष्णुदास, १६ किनु, १७ गोविन्द, १८ श्यामकांसारी, १९ भीमराय राजपूत, २० पांचू रुद्रदास, २१ निधिराम घोष, २२ शिशुराम।

इस तरहकी गल्प सुननेमें आता है, कि १६०१ शकको वोयाले ग्राममें आउलियाचांदकी मृत्यु हुई। प्रभुके परलोक गमन करनेपर श्यामवैरागी, हरिघोष, हटुघोष, कन्हाई घोष, रामशरण पाल, भीमराय राजपूत, सहस्रराम घोष और बेचूघोष—इन आठ शिष्योंने इनको कफ़नीको वोयाले ग्राममें समाधिस्थ किया था। पीछे चाकदहसे तीन कोस पूर्व परारि नामक ग्राममें इनका मृतदेह गाड़ा गिया।

अब बङ्गालके अनेक भले आदमियोंने आउलियाचांदका मत ग्रहण किया है। उनमें सुवर्णवणिक् ही अधिक हैं। कितनी ही वेश्यायें भी इसी मतानुसार चलता हैं। आउलियाचांदके सब शिष्योंका मन एक है, सभी मन मन प्राण प्राण आपसमें मिलते रहते, इसीसे इन मतावलम्बियोंको 'एकमन' भी कहते हैं। फिर ये लोग आउलियाचांदको 'जय कर्त्ता' कह सम्बोधन करते, इसीसे इस सम्प्रदायके आदमी 'कर्त्ताभजा' नामसे भी विख्यात हैं। कर्त्ताभजा देखो।

आउलिया सम्प्रदायके गुरुका नाम 'महाशय' और शिष्यका 'वराती' है। दीक्षा करनेके समय महाशय शिष्यको पहले यह उपदेश देते हैं,—"गुरु सत्य हैं"। गुरु शिष्यसे पूछते हैं,—"क्या तू यह धर्म्म ग्रहण कर सकेगा?" शिष्य उत्तर देता है,—"सकूंगा।" उसके बाद गुरु कहते हैं,—"तो झूठ न बोलना और चोरी, परस्त्रीगमन तथा अपनी स्त्रीका सङ्ग भी अधिक न करना।" शिष्य अङ्गीकार करता है,—"न करूंगा।" अन्तमें गुरु कहते हैं,—'बोल, तुम सत्य और तुम्हारा वाक्य सत्य।" तब शिष्य यह कहकर मन्त्र ग्रहण करता है,—"तुम सत्य और तुम्हारा वाक्य सत्य।" मन्त्र देनेके बाद गुरु यह बात

कह देते हैं,—बिना मेरी आज्ञाके यह बात किसीसे न बताना।

क्रमसे शिष्यके मनमें प्रगाढ़ भक्ति उपजनेपर गुरु इस तरह उपदेश करते हैं,—"कर्त्ता आउले महाप्रभु! मैं तुम्हारे प्रतापसे चलता फिरता हूं, तिलार्द्ध भी तुमसे अलग नहीं, मैं तुम्हारे सङ्ग हूं, दुहाई महाप्रभु।"

आउलियाचांद महाप्रभु दश पापकर्म्म निषेध कर गये हैं। वे दशो पापकर्म्म ये हैं,—

तीन शारीरिक पापकर्म्म—परस्त्रीगमन, परद्रव्य अपहरण एवं जीवहत्या।

तीन मानसिक पाप—परस्त्रीगमनकी इच्छा, परद्रव्य ग्रहणकी इच्छा एवं दूसरेके प्राणनाश करनेकी इच्छा।

चार वाचनिक पाप—झूठ बोलना, कटु वाक्य कहना, अनर्थक बात बढ़ाना और प्रलाप उठाना।

देखनेमें आता है, कि पहले इस सम्प्रदायमें कुछ भी व्यभिचार दोष न था। इन लोगोंका एक प्रचलित वचन है,—"औरत हिजड़ो मर्द खोजा, तब होवे कर्त्ताभजा।" इस नियमके अनुसार सभी पुरुष स्त्रियोंको बहन समझते और बहन ही कहकर पुकारते थे। इनमें जातिभेद नहीं, सभी एक साथ भोजन और शयन करते रहे। परन्तु इसी तरह स्त्रीपुरुषके एक साथ वास करते करते अब व्यभिचार दोष इस सम्प्रदायके साधनका एक अङ्ग हो गया है।

इस सम्प्रदायवालोंके मुंहसे सुननेमें आता, कि एकमात्र ईश्वरकी उपासना करना ही इनके साधनका बीजमन्त्र है। किन्तु आउलियाचांद खुद मनुष्य थे, इसीसे ये लोग कहते हैं, कि मनुष्य ही सत्य और मनुष्य गुरु ही परम पदार्थ है। चैतन्य सम्प्रदायके वैष्णव जिस तरह गद्गद होकर अश्रुपात करते और पुलकित होते, आउलिया सम्प्रदायके साधकोंमें भी ठीक वैसे ही नियम हैं। रातको गुरुशिष्यमें प्रेमालापन और गूढ़ साधनके समय अश्रुपात, रोमाञ्च और मोह बढ़ जाता है।

आउस (हिं० पु०) आशुधान्य, किसी किस्मका धान, औसहन। इसे मयी-जून मास बोते और अगस्त सितम्बरमें काटते हैं। वैद्यशास्त्रके मतसे यह मधुर एवं पाकमें गुरु होता और अम्ल तथा पित्तको बढ़ाता है।

आक (हिं० पु०) अर्क, मन्दार, अकवन। अर्कवृक्ष (Calotropis gigantea. अंगरेजी Mudar)। यह अर्क शब्दका अपभ्रंश है। बंगालामें आकन्द। आकका पेड़ दो तरहका होता है,—सफेद और लाल। नदीके किनारे रेतीली ज़मीनमें यह पेड़ बहुत उपजता है। साधारण आकके ये कई पर्य्याय देखे जाते हैं,—क्षीरदल, पुच्छी, प्रताप, क्षीरकाण्डक, विक्षीर, क्षीरी, खर्जूघ्न, शीतपुष्पक, जम्भन, क्षीरपर्णी, विकीरण, सदापुष्प, सूर्य्याह्व, आस्फोतक, तूलफल, शुकफल, वसुक, आस्फोत, गणरूप, मन्दार, अर्कपर्ण।

सफेद आकके ये कई पर्य्याय हैं,—अलर्क, राजार्क, प्रतापस, गणरूपी। लाल आकके पर्य्याय हैं,—विशोर, सदापुष्पी, रूपिका, आदित्यपुष्पिका, दिव्यपुष्पिका, अर्क। आकके घूवेको बुढ़िया कहते हैं।

आकका पेड़ दो हाथसे लेकर चार पांच हाथ तक ऊंचा होता है। इसका फूल सफेद और लाल रहता है। सेमरकी तरह इसमें भी फल लगता है। फलसे पक जानेपर अच्छी रुई निकलती है। इसका फल, पत्ता और फूल तोड़नेपर डालीसे दूध निकलता है। आकके पेड़में प्रायः बारहो महीने फूल उतरता है। डालकी छालके नीचे रेशम जैसा चिकना सफ़ेद सूत रहता है।

वैद्यशास्त्रके मतसे यह कटु, उष्ण और आग्नेय है। इससे वात, शोथ, व्रण, अर्श, कुष्ठ, क्रिमि प्रभृति नष्ट हो जाता है। युरोपीयचिकित्सकोंने परीक्षा करके देखा, कि इसका मूल, बकला और दूध वमनकार, घर्मकार, धातुपरिवर्तक और विरेचक है। इसके मूलकी छालका चूर्ण १५।२० ग्रेन सेवन करनेसे रक्तआमाशय रोग नष्ट होता है। इस रोगमें यह ठीक इपिकाकुयानाकी तरह काम करता है। अधिक मात्रा सेवन करनेसे वमन होता है। २ ड्राम शुष्क मूलकी छालको आधसेर गर्म जलमें भिंगा आधी

छटांककी मात्रा सेवन करनेसे पुराना उपदंश और कुष्ठरोग अच्छा हो जाता है। इससे पेड़ोके कीड़े, खांसी, शोथ और उदरी रोग दूर होते हैं। इसके मूलकी छाल, डालकी छाल, पत्ता, दूध और फलको समभाग लेकर अच्छी तरह पीसना। फिर छोटे मटर जैसी गोली बनाकर सुखा लेना। प्रतिदिन सबेरे एक गोली खानेसे अनेक प्रकारके चर्मरोग नष्ट होते हैं। इसके फूलका चूर्ण २।३ रत्ती सेवन करनेसे भूख बढ़ती और हंफनी खांसी अच्छी हो जाती है। जखममें आकका दूध लगानेसे वह सूख जाता है। कण्डेके राखमें आकका दूध मलाकर नस लेनेसे छींक आती है, इससे सर्दीका सिरका दर्द आराम हो जाता है। कहते हैं, कि श्वेत आकन्दके मूलको मिर्चके साथ पीसकर सेवन करानेसे सांपका विष उतर जाता है।

आकके दूधसे गाटापार्चा तय्यार हो सकता है। तकियेमें इसकी रूई भरी जाती है। इसके सूतको कातकर कपड़ा बुननेसे ठीक फलालेन जैसा कपड़ा तय्यार होता है। इसकी रूईसे अच्छा कागज भी बनता है। आककी छालका सूत बहुत भारसह होता है। कितने ही आदमी इससे धनुषका गुण बनाते हैं। आकका तथा और और सूत कितना भारसह सकते हैं, चौथाई इञ्च मोटी तीन तारकी रस्सीमें उसकी परीक्षा की गई थी—

आक	...	प्राय:	सेर	२०६
सन	...	„	„	२०५
मुगरा	...	„	„	१७१
कपास	...	„	„	१७३
मुर्वामूल	...	„	„	१५८
मिस्तापाट	...	„	„	१४५
नारियलकी छाल	...	„	„	११२

आकड़ा, आक देखो।

आकत्थन (सं० क्लो०) आत्मश्लाघा, खुदवीनी, डींग।

आकत्य (सं० क्लो०) न कत: स्वच्छताकारी, नञ्-तत्। तस्य भाव ष्यञ्। अस्वच्छताकारित्व, गन्दगीका पैदा करना।

आकन (सं० पु०) आ-कन्-अच्। ऋषिविशेष, कोई मुनि। (हिं० पु०) २ जोते खेतसे निकाला घास-फूस। ३ जोते खेतसे घासफूसका हटाना।

आकनादी—(Cissampelos Parreira) पाठालता। इसके ये कई संस्कृत पर्याय देखे जाते हैं,—अम्बष्ठा, अम्बष्ठिका, प्राचीना, पापचेलिका, यूथिका, स्थापनी, श्रेयसी, विद्धकर्णिका, एकाष्ठीला, कुचेली, दीपनी, वनतिक्तिका, तिक्तपुष्पा, वृहत्तिक्ता, शिशिरा, वृकी, मालती, वरा, देवी, वृत्तपर्णी।

आकनादी और निमृया दोनों एकही लता हैं, कि भिन्न भिन्न, इस विषयमें उद्भिदतत्त्वज्ञ बहुत विरोध करते हैं।

यह तिक्त, गुरु और उष्ण है। इससे वात, पित्त, ज्वर, दाह, अतिसार, शूल प्रभृति रोग नष्ट होते हैं। वैद्यलोग पुराने ज्वरमें पाठामूल व्यवहार करते हैं। सांप काटलेने पर इसके मूलको मिर्चके साथ पीसकर सेवन करने और जखमपर लगानेसे उपकार होता है।

आक़बत (फ़ा० स्त्री०) परलोक, यमसदन, मरनेके बाद जानेकी जगह।

आक़बत अन्देश (फ़ा० वि०) १ परलोकका विचार रखनेवाला, धार्मिक, जो मरनेके डरसे बुरा काम करता न हो। २ दूरदर्शी, आगेका ख्याल रखनेवाला।

आक़बत अन्देशी (फ़ा० स्त्री०) १ परलोकका विचार, मरनेके बाद जानेवाली जगहका खयाल। २ धार्मिकता, सवाबका काम। ३ दूरदर्शिता, दूरन्देशी।

आक़बती लङ्गर (सं० पु०) अगले मस्तूलका रस्सी या विङ्गोनके पास बीचके टटकमें रहनेवाला लङ्गर। यह सङ्कटके समय पड़ता है।

आकबाक (हिं० पु०) वृथा वाक्य, बेहूदा बात, बकझक।

आकम्प (सं० पु०) आ ईषदर्थे कपि चलने घञ्। अल्प कम्पन, कंपकंपी।

आकम्पन (सं० वि०) आ कम्पते आ ईषदर्थे कपि चलने-युच्। चलनशब्दार्थादकर्मकाद्युच्। पा ३।२।१४८। १ अल्प कम्पनशील, थोड़ा कांपनेवाला। (क्लो०) भावे ल्युट्। अल्पकम्पन, थोड़ा कांपना। आ-कपि-णिच्-

भावे ल्युट। ३ थोड़ा कंपाना। (त्रि०) ४ थोड़ा कंपानेवाला।

आकम्पित (सं० त्रि०) आ-कपि कर्त्तरि क्त। १ ईषत् कम्पित, थोड़ा कांपाहुआ। (क्ली०) भावे क्त। २ ईषत् कम्पन, थोड़ा कांपना। णिच् कर्त्तरि क्त। ३ ईषत् चालित, जो थोड़ाही हिलाया गया हो।

आकम्प्र (सं० त्रि०) आ-कपि-र। नम्र कम्पि इत्यादि रः। पा ३।२।१६। ईषत् कम्पनशील, थोड़ा कांपनेवाला।

आकर (सं० पु०) आकुर्वन्ति सम्यनिष्पादयन्ति व्यवहारं यत्र, आ-कृ आधारे घ। १ समूह, ढेर। आकीर्य्यते धातवोऽत्र, आ-कृ-आधारे अप्। २ धातु एवं रत्नादिका उत्पत्तिस्थान, खानि। खानि देखो। ३ भाण्डार, खज़ाना। ४ किसी द्रव्यके रहनेका स्थान मात्र। जैसे, पद्माकर सरोवर, गुणाकर व्यक्ति, रत्नाकर समुद्र। ५ अवन्तिके निकटवर्त्ती प्राचीन जनपद। ६ महाभाष्य। ७ तलवार चलानेका एकभेद। (त्रि०) ८ गुणित, गुण। जैसे पांच आकर, दश आकर। ९ दक्ष, कुशल, व्युत्पन्न, चतुर, होशियार। १० श्रेष्ठ, बढ़िया।

आकरकरहा, (Pyrethum indicum) एकजड़ी विशेष। गुलचीनी एवं आकरकरहे नामसे बाज़ारमें प्रायः एकही वस्तु बिक्री होती है। यह कश्मीर और लाधकमें उत्पन्न होता है। इसका मूल कुछ कड़वा होता एवं मुंहमें रखनेसे कासको निवारण करता है। इससे अतिरिक्त यह मस्तकवेदना (शिरके दर्द) और शूलरोग, वायुगुल्म, सान्निपातिक ज्वरमें भी व्यवहृत होता है।

आकरकरहा, आकरकढ़ा देखो।

आकरखना, आकर्षना देखो।

आकरज (सं० क्ली०) रत्न, खानिसे निकलनेवाला जवाहर।

आकरण, आकारण देखो।

आकरिक (सं० त्रि०) आकरे नियुक्तः ठञ्। खान खोदनेवाला, रत्नादिके उत्पत्ति स्थानपर राजनियुक्त कर्मचारी।

आकरिन् (सं० त्रि०) आकरः उत्पत्तिस्थानमस्त्यस्य, आकर प्राशस्त्ये इनि। प्रशस्त आकरजात, जो बढ़ी खानिसे निकला हो।

आकरोट, अखरोट (Aleurites moluccana)। यह संस्कृत आक्षोट शब्दका अपभ्रंश है। एक प्रकारके फलका पेड़। यह पञ्जाब, आसाम आदि स्थानोंमें पहाड़ पर जमता है। फल देखनेमें बहेड़ा जैसा होता है। ऊपर शिरा रहता और इसका छिलका बादाम जैसा कड़ा रहता है। भीतरका गूदा तेलाक्त और खानेमें प्रायः बादामकी तरह लगता है। भारतवर्षके दक्षिण और लङ्कामें इसका तेल निकाला जाता है। उसका नाम 'केकुना तेल' है। तेल निकाल लेनेके बाद खली गाय बैलको खिला दी जाती है। पांसके लिये वह खेतमें भी डाली जाती है। अखरोट देखो।

आकर्ण (सं० अव्य०) आ-कर्ण कर्णपर्य्यन्तं। आङ् मर्यादाभिविध्योः। पा २।१।१३। इति अव्ययी० समास। कर्णपर्यन्त, कानतक। जैसे आकर्णसन्धान अर्थात् कानतक खींचके तीर चलाना।

आकर्णन (सं० क्ली०) आ-कर्ण-ल्युट्। श्रवण, सुनायी।

आकर्णित (सं० त्रि०) सुनाहुआ, जो कानमें पड़ गया हो।

आकर्ण्य (सं० अव्य०) श्रवण करके, सुनके।

आकर्ष (सं० पु०) आकृष्यते अनेन, आ-कृष करणे-घञ्। १ पाशक, पासेका खेल। २ बिसात, चौपड़। ३ इन्द्रिय। ४ धनुर्धारीको विद्याका अभ्यास, तीर मारनेका मश्क। भावे घञ्। ५ आकर्षण, खिंचाव, कशिश, एक जगहकी चीज़को जोरसे दूसरी जगह ले जाना। आधारे घञ्। ६ कष्टिप्रस्तर, कसौटी। वृक्षस्य फल पत्रादि आकृष्यते अनेन, करणे-घञ्। ७ अङ्कुशाकार, अंगुसी, फल-फूल तोड़नेकी लग्गी। आकर्षः श्व आकर्षः। पा ५।४।३। सूत्रे वि० को०। आकर्षति कर्त्तरि अच्। ८ आकर्षणकर्त्ता, खींचनेवाला। आकर्षेण चरति ठन्। (त्रि०) आकर्षिक, आकर्षणकारी। (स्त्री०) आकर्षिकी, आकर्षणकारिणी स्त्री।

'आकर्षः पासके धन्वाभ्यासार्थे द्युते इन्द्रिये। आकर्षो शारिफलकेऽपि।' (हेम)

आकर्षक (सं० पु०) आकर्षति सन्निकृष्टं लोहं, आ-कृष-ण्वुल्। १ चुम्बक। (त्रि०) आकर्षविधः कन्।

पा ३।३।१७। इति कन्। २ आकर्षणकर्त्ता, खींचनेवाला। ३ आकर्षणकुशल, जो अच्छी तरह खींचता हो।

आकर्षण (सं॰ क्लि॰) आ-कृष ल्युट्। १ किसी स्थानसे वस्तुको बलपूर्वक दूसरे स्थानपर खींच ले जाना। खिंचाव। आकृष्यते अनेन, करणे ल्युट्। २ आकर्षण-साधन, तन्त्रशास्त्रोक्त ६ कर्मके अन्तर्गत प्रयोग विशेष। इस प्रयोग द्वारा स्त्री प्रभृतिका मन चञ्चल करके उनको किसी अभीष्ट स्थान पर ले जाते हैं। त्रिपुरासारतन्त्रमें इसकी प्रक्रिया यों लिखी है—'ॐ श्रीं क्लीं, ह्रीं त्रिपुरा देवि! अमुकीं आकर्ष आकर्ष स्वाहा'। यह मन्त्र दश हजार बार जप किया जाता है। रक्तचन्दन और कुङ्कुमसे षड़कोण चक्र बना ह्रीं बीजसे पूजा करना चाहिये। त्रिपुराका ध्यान नीचे लिखा है—

"भावयेत्तु तथा देवीं त्रिनेत्रां चन्द्रशेखरां।
बालार्ककिरणप्रख्यां सिन्दूरारुणविग्रहां।
पाशञ्च दक्षिणे पाणौ अथमानाञ्च वामके॥" (त्रिपुरासारतन्त्र)

इसी तरह ध्यानपूर्वक षोड़शोपचारसे देवीकी पूजा और उक्त मन्त्रका दश हजार जप करने पर उर्वशी, रम्भा प्रभृति अप्सरोगणको भी आकर्षण कर सकते हैं। फिर इसी प्रयोगसे दूरका कोई भी द्रव्य अपने साधकके पास आ पहुंचता है।

आकर्षणशक्ति (सं॰ स्त्री॰) कुव्वतकशिश, खींचनेकी ताकत। यह शक्ति (Gravitation) प्रायः प्रत्येक पदार्थमें होती, जिससे आपस खिंचतान चला करती है। समस्त जगत्को इसीने मिला-जुला रखा है। पृथिवीके द्रव्य दूसरी जगह जा न पड़नेका कारण आकर्षणशक्ति ही है। जब जल चन्द्रको ओर खिंचता, तब समुद्रमें ज्वार चढ़ता है। आकाशमें नवग्रहादि इसी शक्तिके सहारे ठहरते और अपनी कक्षापर घूमते हैं। आकर्षणशक्तिने ही पृथिवीमें वायुमण्डलको पकड़ रखा है। यदि पृथिवीमें यह शक्ति न होती, तो वृक्षसे फल गिरनेपर न जाने कहां चला जाता। वैज्ञानिकोंने गुरुत्वाकर्षण, चुम्बकाकर्षण, संलग्नाकर्षण, केशाकर्षण, रासायनिकाकर्षण आदि कयी प्रभेदोंमें इसे बांटा है। आकर्षणशक्तिका प्रभाव कहीं अधिक और कहीं न्यून पड़ता है। भ्रमरको पद्म और चकोरको चन्द्र इसी शक्तिसे अपनी ओर खींच लेता है। भास्कराचार्य गोलाध्यायमें आकृष्टिशक्तिका नाम उल्लेख किया है।

आकर्षणी (सं॰ स्त्री॰) आकृष्यते उच्चस्थं फलादि निकटं नीयते अनया आ-कृष-करणे ल्युट् टित्वात् ङीप्। वृक्षसे फल तोड़नेकी अंकुसी। तन्त्रोक्त मुद्रा-विशेष। यथा तन्त्रसारमें,—

"मध्यमातर्जनीभ्यान्तु कनिष्ठानामिके समे।
अङ्कुशाकाररूपाभ्यां मध्यमे परमेश्वरि॥
अङ्गुष्ठन्तु नियुञ्जीत कनिष्ठानामिकोपरि।
इयमाकर्षणी मुद्रा त्रैलोक्याकर्षिणी मता॥"

अङ्कुशाकार तर्जनी और मध्यमा अंगुलीके साथ पहले कनिष्ठा और अनामिकाको समान रूपसे रख हथेलीके बीचमें उन दोनों अंगुलियोंको गुटाकर उस पर अंगूठा धरना। इसीका नाम आकर्षणीमुद्रा है। इस मुद्रा द्वारा स्वर्ग, मर्त्य एवं पाताल आकर्षण किया जाता है।

आकर्षन (हिं॰) आकर्षण देखो।

आकर्षना (हिं॰ क्रि॰) आकर्षण करना, खींचना।

आकर्षादि, आकषादि (सं॰ पु॰) आ-कर्षः आ-कषः वा आदिर्यस्य, बहुव्री॰। कन् प्रत्ययके निमित्त पाणिन्युक्त शब्दगण विशेष। इस गणमें निम्नलिखित शब्द हैं,—आकर्ष, आकष, त्सरु, पिशाच, पिचण्ड, अशनि, अश्मन्, निचय, विजय, जय, चय, आचम, अप, नय, पाद, पीठ, ह्रद, ह्राद, ह्लाद, गद्गद, शकुनि, निषाद, दीप। (पा ५।२।६४।)

आकर्षिक (सं॰ त्रि॰) आकर्षेण आचरति आ-कर्ष-ठन्। आकर्षात् ठल्। पा ४।४।९। आकर्षणकारी, खींचनेवाला, जो आकर्षण द्वारा आचरण करता हो। (स्त्री॰) षित्वात् ङीष् आकर्षिकी, आकर्षण करनेवाली।

आकर्षित (सं॰ त्रि॰) आकृष्ट, खींचा हुआ।

आकर्षिन् (सं॰ त्रि॰) आकर्षति आ-कृष-णिनि गुणः। आकर्षणकर्ता, खींचनेवाला। (स्त्री॰) ङीप्। आकर्षिणी, खींचनेवाली। सं-पूर्वक आकर्षिन् शब्द द्वारा (सम्याकर्षिन्) दूरगामी गन्ध समझ पड़ता, कारण यह दूरस्थ व्यक्तिको आकर्षण करता है। 'समाकर्षी तु निर्हारी'। (अमर)

आकलकोट—बम्बई प्रान्तके शोलापुर जिलेकी एक तहसील ; यह नगर शोलापुरसे दक्षिण-पूर्व २३ मील पड़ता है। मैनदूरगी फाटकसे बाहर दक्षिणी नवाबोंके समयकी पुरानी मसजिद खड़ी है।

आकलन (सं० क्ली०) आ-कल-ल्युट्। १ आग्रह्ण, ग्रास। २ ग्रहण, लेना। ३ संग्रह, सञ्चय, इकट्ठा करना, बटोरना। ४ गणन, शुमार, गिनना। ५ अनुसन्धान, जांच, खोज। ६ अनुष्ठान, सम्पादन। ७ परिसंख्या। ८ बन्धन, जकड़। ९ आकाङ्क्षा, ख्वाहिश।

आकलनीय (सं० त्रि०) १ आकलन करनेके योग्य, लेने लायक़। २ एकत्र करने योग्य, इकट्ठा करने लायक़। ३ गणना करने योग्य, शुमार लगाने क़ाबिल। ४ अनुष्ठान करने योग्य। ५ अनुसन्धान करने योग्य, जांचने या पता लगाने क़ाबिल।

आकलित (सं० त्रि०) आ-कल-क्त। १ अनुगत, लिया हुआ। २ अनुष्ठित, सम्पादित, किया हुआ। ३ परिगणित, गिना हुआ। ४ ग्रथित, गुंथा हुआ। ५ परीक्षित, जांचा हुआ।

आकली (सं० स्त्री०) १ चटका, गौरैया, गरगैया। (हिं०) २ आकुलता, बेकली।

आकल्प (सं० पु०) आकल्पते, आ-क्लृप घञ्। १ वेशरचना, शिंगार करना, भूषण, अलङ्करण। सज्जीभूत करना, सजावट, बनाव। २ उन्नति, उभार। ३ रोग, आज़ार। (अव्य०) ४ कल्प पर्यन्त। "आकल्पं नरके वसेत्।" (स्मृति

आकल्पक (सं० पु०) आ-कल्प-कन्। १ तमः, अंधेरा। २ मोह, यादका न भूलना। ३ ग्रन्थि, गांठ। ४ उत्कण्ठा, हर्ष, खुशी। ५ मूर्च्छा, ग़श।

आकल्य (सं० क्ली०) रोग, आज़ार।

आकश (सं० पु०) अकर्करा, अकरकरहा।

आकशक, आकश देखो।

आकष (सं० पु०) आकष्यते यत्र आ-कष (गोचरसञ्चर इत्यादि। पा ३।३।११९ सूत्रे चकारो अनु-क्त-समुच्चयार्थः। आतकश इति सि० कौ०) इति घ प्रत्ययः। निकष प्रस्तर, स्वर्णादि कसनेका पत्थर, कसौटी।

आकषक (सं० त्रि०) आकषे कुशलः, आकष-कन्। कसनेवाला, कसौटी लगानेवाला।

आकषिक, आकषक देखो।

आकसमात (हिं०) अकस्मात् देखो।

आकस्मात् (हिं०) अकस्मात् देखो।

आकस्मिक (सं० त्रि०) अकस्मादित्यव्ययम् कारणभावार्थकं अकस्मात् कारणं विनैव भवः वा (विनयादिभ्यो ठक्। पा ५।४।३४।) इति ठक् टि-लोपः। अकस्मात् जात, विना किसी कारणके होनेवाला, हठात् उत्पन्न, सहसा होनेवाला, नागहान, बेखबर। (स्त्री०) ङीप्। आकस्मिकी। चार्वाक् इस जगत्को आकस्मिक कहते हैं। क्योंकि उनके मतमें सकल पदार्थ अकस्मात् अर्थात् कारणव्यतिरेकही उत्पन्न होते हैं। वह बताते हैं, कि वनमें कोई बीज नहीं बोता ; उसमें जल नहीं देता, तथापि वह बीज जैसे स्वयं अङ्कुरित और वर्द्धित होता, वैसेही जगत्का कोई कारण नहीं, आपही एक भावसे चलता है। फिर अग्निमें उष्णता गुण और जलवायुमें शैत्य गुण स्वाभाविक होता, वैसेही अन्य सब वस्तुका गुणभी स्वाभाविक है अर्थात् उसका कोई कारण नहीं।

आकस्मिकत्व (सं० क्ली०) लोलना, अस्थिरता, नागहानी, बेख़बरी।

आका (हिं० पु०) १ आकाय, अलाव। २ भट्टी, भाड़। ३ पजावा, आंवा। (आसामीभा०) ४ आसामके उत्तर-सीमावर्ती पार्वतीय एक असभ्य जाति। इस जातिके लोगोंका मुंह गोल और चिपटा, नाक मोटी, आंख कुछ छोटी, गालकी हड्डी ऊंची, तथा देह मध्यमाकार रहता है। देखनेमें यह न अधिक मलिन और न अधिक ताम्रवर्णही हैं। इनकी स्त्रियां सुश्री नहीं होतीं, उनके गठनमें भी लावण्यता नहीं रहती है। पर्वतपर भरणी नदीके जलोच्छ्वासके ऊर्द्ध भागपर इस जातिका वासस्थान है। यहांका पथ अत्यन्त दुर्गम पड़ता, तराईसे चढ़ने पर प्राणान्त परिच्छेद होता है। आका जाति दो प्रधान सम्प्रदायमें विभक्त है। एक सम्प्रदायका नाम हज़ारी-कोयाद है। इस शब्दका अर्थ—हज़ार रश्मनशालाका खादक लगता है।

द्वितीय सम्प्रदायका नाम—कुपचोर है। इस शब्दसे कार्पास-क्षेत्रके (रूईकी खेतके) चोरका बोध होता है। यह दोनो शब्द आसामी भाषाके अपभ्रंश हैं। पहले ये लोग पर्वतसे नीचे उतरकर जनपदके मध्य महा उत्पात उठाते और ब्रह्मपुत्र नदमें नौका एवं तीर्थयात्रियोंकी द्रव्यसामग्री लूट लेते थे। कृषकोंके खेतसे कपास और अन्नादि हरण करनेसे इनके दोनो सम्प्रदायोंका इस प्रकार नाम पड़ा है।

आकाओंके उत्तर मिश्मी जाति है। वह भी असभ्य होते हैं। आकाओंके साथ मिश्मी-कन्याका आदान-प्रदान चलता है। मिश्मी लोग कभी पर्वतके नीचे नहीं उतरते, केवल आका हा विपद् पड़नेपर आत्मीय स्वजनको उद्धार करनेके लिये पर्वतसे नीचे आते हैं। आकाओंके सर्वसमेत २३० और मिश्मी जातिके ४०० मकान् बने हैं।

असभ्यावस्थापर सकल ही जातिको केवल बाह्य जगत्में ऐशी शक्ति देख पड़ती है। सृष्टिके मध्य जहां कुछ अद्भुत एवं भयङ्कर होता और विपद् आनेकी सम्भावना रहती, वहीं देवता तथा ईश्वर विद्यमान है। आकालोग पर्वतमें रहते हैं। पर्वतको भयङ्कर एवं उच्च चूड़ा, कल्लोलिनी नदी, और वन्य पशुपूर्ण निविड़ जङ्गलको ही ये लोग देवता समझते हैं। फुच जङ्गल और जलके देवता हैं। युद्धकी अधिष्ठात्री-देवी फिरन् और सिमन् हैं। सतु चेत्र एवं गृहके देवता हैं। इनके पुरोहितका नाम देवरी है। देवरीको पूजादि कितनी ही देवक्रिया करना पड़ती है। एक एक कुटीरमें जङ्गलादिकी देवमूर्ति स्थापित है। पुरोहित उन सकल देवताओंकी पूजा करते हैं। शस्य काटने पर वे देवतादिको उसका अग्रभाग उत्सर्ग कर देते हैं। विवाहके समय हमलोग हाथमें राखी बांधते हैं। आका असभ्य हैं, किन्तु इनमें भी यह मङ्गलाचरण प्रचलित है। विवाहके पूर्व पुरोहित जा कर वर एवं कन्याके हाथमें सूतकी ग्रन्थि बांध देता है। पीड़ा होनेपर कोई औषधका अपेक्षा नहीं करता। ओझा मन्त्र पढ़के रोगीको झाड़ते एवं पुरोहित फुच देवताके समीप कुक्कुटादि बलि देकर स्वस्त्ययन करते हैं।

आकाओंका गृह प्रायः काष्ठ एवं प्रस्तरसे बना और भीतर तख्ता बिछा रहता है। ये प्रायः धनुः-शर लेकर सर्वदा भ्रमण करते हैं। हस्ति-प्रभृति बृहत् जन्तुका शिकार करनेमें आका तीरको गांसीपर काष्ठविष चढ़ा देते हैं।

ये पर्वतोत्पन्न अनेक प्रकारका द्रव्य संग्रह करके तिब्बत, भूटान एवं सिकिममें और पहाड़के नीचे वाणिज्य करने आते; तद्भिन्न अपने प्रयोजनानुसार तांबे और कांसेके पात्र तथा वस्त्रादि क्रय करके ले जाते हैं।

आका आसाम-निकटवर्ती जनपदके भीतर बीच बीच अतिशय अत्याचार करते हैं। सन् १८१८ ई०में इनके सर्दार टागीराजको अंगरेजोंने गिरफ्तार करके गौहाटीके जेलमें क़ैद किया था। उसी जगह वह एक हिन्दू गुरुको पा कर उनके निकट हरिभक्ति और हरिमन्त्रमें दीक्षित हुए। गुरु शिष्यको चाहते और शिष्य गुरुको मानते थे। क्रमशः दोनोंके मध्यमें विलक्षण अनुराग उत्पन्न हुआ। सन् १८३२ ई०में टागीराजने अपने गुरुको ज़ामिन बना मुक्ति पायी। किन्तु जब फिर पर्वतका स्वाधीन वायु उनके अङ्गमें लगा, तब वह हरिभक्ति और गुरुके प्रति श्रद्धा कुछ भी न रही। पूर्वमें जिन लोगोंने षड़यन्त्र करके उन्हें पकड़वा दिया था, टागीराजने प्रथम ही उन्हें नष्ट किया। निकटके अंगरेजोंको चौकी भी लूटी। अंगरेजोंके जितने कर्मचारी उनके सम्मुख पड़े, उनमें अनेक हत एवं आहत हुए थे।

उपरोक्त अत्याचार निवारण करनेके लिये ब्रटिश सैन्य प्रेरित हुआ। यह निश्चय करना दुर्घट पड़ गया, आकाराज कहां रहते और किस पर्वतसे किस पर्वत-पर भाग जाते थे। अंगरेज बहुत दिनतक उनके पीछे पीछे फिरे, किन्तु कोई सन्धान लगा न सके। अन्तमें टागीराजने सोचा, कि बहुत दिन उसतरह उद्विग्न रहनेकी अपेक्षा मृत्यु वा कारावास ही अच्छा था। युद्धका वैसा कोई उपकरण न रहा, जो अंग-

रेजोंकी गोलाबृष्टिके सम्मुख खड़े रह सकते, सुतरां वे आप ही जा कर हाजिर हुए। फिर सन्धिकी बात चली। वह जैसे राजा थे, उनके लिये वार्षिक तनख्वाहकी व्यवस्था भी वैसी ही हुई। अंगरेजोंने कहा,—"आप शान्त शिष्ट हो जावो, लोगोंके प्रति अब उत्पीड़न न करो; आपको प्रतिवर्ष ३६०) रुपया पेन्शन मिलेगा। किन्तु आपको किसीके ऊपर अत्याचार न करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा करना चाहिये।" टागीराज उसीमें सम्मत हो गये। उस समय अङ्गीकारके निमित्त पवित्र द्रव्यकी आवश्यकता पड़ी थी। कुक्कुट आया, भल्लूक और व्याघ्रचर्म आया। तुम्हारे हमारे समीप जो अपवित्र ठहरता, संसारमें दूसरी जगह वही पवित्र है। हिन्दूके लिये गोमय और आकाके लिये हस्तिविष्ठा पवित्र है। शपथके लिये ढेरकी ढेर हस्तिविष्ठा मंगायी गयी। प्रथम सत्यपाठमें मुर्गीका बलि चढ़ा था। उसके बाद आकाराज एक हाथमें भल्लूक-चर्म और दूसरे हाथमें व्याघ्रकृत्ति लेकर बोले—'जो होना था हुआ, अब सावधान बना, फिर कभी मैं अङ्गरेजोंकी बात न टालूंगा।' परिशेषमें अञ्जली भर हस्तीकी विष्ठा उठाकर कहा,—'अङ्गरेजोंके साथ विरोध इस जन्मके लिये मिट गया, जीवन रहते फिर कभी विवाद न करूंगा।' अन्तमें एकबार हरिनामकीर्त्तन करके प्रतिज्ञा समाप्त हुई।

मिश्मी-सर्दार

आका एवं मिश्मी लोगोंकी आकृति-प्रकृति, वेश-भूषा, लोक-लौकता, आहार-व्यवहार, सब एक ही प्रकार है। यह मिजु मिश्मी-सर्दारकी प्रतिमूर्त्ति है। इस,चित्रपटसे आका और मिश्मी लोगोंके सभ्य वेशभूषा पहननेका प्रमाण मिलता है। विगत सन् १८८१ ई०को कलकत्तेकी प्रदर्शनीमें अनेक असभ्य जातिकी प्रतिमूर्ति दिखायी गई थी। प्रतिमूर्ति बनाते समय आका लोगोंकी भी आकृति देनेकी कल्पना हुई। इसलिये आसाम सरकारके कर्मचारियोंने नमूनेकी तरह किसी आकाको कलकत्ते भेजनेकी चेष्टा की थी। किन्तु उस प्रस्तावपर समस्त आका जाति एकबारगी ही खिन्न हो गयी। इससे अधिक असङ्गत कथा दूसरी क्या हो सकती है, कि प्रतिमूर्ति बनवानेके लिये जीवित मनुष्यको कलकत्ते जाना पड़े। इस अपमानका प्रतिशोध लेनेके लिये आका वृटिश प्रजाके कयी आदमी अपने पर्वतमें पकड़ ले गये। उसीसे अङ्गरेजोंके साथ एक सामान्य युद्ध हुआ था। अन्तको आका परास्त हो पर्वतके उपरिभागमें भाग गये।

आका-राजकी मूर्ति देखनेसे शिवदूतका स्मरण आता है। इनका सर्वाङ्ग गोदनेसे चित्रित, कण्ठमें पत्थर तथा हड्डीकी माला, मस्तेपर पक्षीका पुच्छ, और शरीर पर लत्ता लिपटा है। ये पार्वतीय वनके मध्य दिवानिशि जङ्गली फलोंकी माला पहनकर घूमते एवं धनुर्वाण लेकर मृगया करते हैं। तीरमें कौन विष चढ़ा रहता है, इसका ठीक निश्चय नहीं होता। कोई कोई अनुमान करते, कि तीरमें मीठा विष (Aconitum ferox) लगाते हैं। किन्तु दूसरे कहते, कि आसामी लोग जिसको विष (Coptis Teeta) बताते, आका वही तीरकी गांसीपर चढ़ाते हैं। इस विषाक्त अस्त्र द्वारा शरीर पर आघात लगनेसे शीघ्र ही मृत्यु होती है। कहते, किसीको आघात लगनेसे आका क्षतस्थानपर इन्द्रयव (Sausseria Lappa) घसकर प्रलेप देते एवं उसीका क्वाथ सेवन कराते हैं। इसकी परीक्षा करना उचित है, कि इन्द्रयवमें यथार्थ विषनाशक-शक्ति होती है या नहीं।

सन्धिके बाद देश आकर आकाराजने स्वजातिके मध्य हरिभक्तिका प्रचार किया। इस समय प्रायः समस्त ही आका वैष्णव हो गये हैं। प्रत्येक आका गृहस्थके घरमें बहुत गो रहती हैं। यह गोमांस खाते, किन्तु गोका दूध किसीतरह पवित्र नहीं सम-

भते। आका कण्ठागत प्राण होनेपर भी गोदुग्ध नहीं छूते। संसार विचित्र स्थान ठहरता, केवल कार्य वैपरीत्यसे ही इसका व्यापार चलता है। यह सुन हम हंसते, कि आका गोमांस खाते—किन्तु गोदुग्ध नहीं छूते। फिर अरण्यके आका यह देख हंसते, कि हमलोग दुग्ध खाते हैं; किन्तु गोमांस स्पर्श नहीं करते। यह सूअर, मुर्ग एवं कबूतर पालते हैं। इन सकल जीवोंका मांस ही आकाओंका प्रधान खाद्य है। ये प्रायः सब जन्तुओंको खाते हैं। केवल मुर्गाबी, राजहंस एवं कुत्ते वग़ैरह जिन पशुवोंका मांस सचराचर मनुष्यका खाद्य नहीं, वही इनमें खानेको निषिद्ध है। मृत्युके बाद ये शव दाह नहीं करते, मट्टीमें गाड़ देते हैं। इस अन्त्येष्टिक्रियाकी प्रणाली मिश्मी शब्दमें देखो।

आका (अ० पु०) स्वामी, मालिक, सरपरस्त।

आकाखेल—सिन्धुनदके उत्तरपश्चिम पार कोहाट निकटवर्ती अफ़रीदी जातिके मध्य एक पठानसम्प्रदाय। अन्यान्य पठानोंकी तरह आकाखेल भी अतिशय वीर्यवान् और दुर्दान्त होते हैं। दस्युवृत्ति, नरहत्या एवं युद्ध प्रभृति आसुरिक कार्य ही इन लोगोंका व्यवसाय है। आकाखेलोंके मध्य अनेक भिन्न भिन्न सम्प्रदाय हैं। यथा—मारूफ़खेल, मरगब खेल, शेरखेल, सन्दलखेल, मुण्डाखेल, इत्यादि। पूर्वमें अङ्गरेजाधिकारके बीच पहुंच ये सर्वदा ही उपद्रव करते थे। सन् १८५६ ई०को अंगरेजोंने इस जातिका भारतवर्षमें प्रवेश करना रोक दिया। इससे आकाखेलोंकी बहुत क्षति होने लगी थी। एकदिनकी नहीं, भारतवर्षमें आ वाणिज्य कर न सकनेसे चिरकालकी क्षति हुई। इसी कारण आकाखेलोंने २६७०) रु० अर्थदण्ड देकर हिन्दुस्थानमें प्रवेश करनेकी अनुमति ली। ब्रटिश गवर्णमेण्ट केवल अर्थ पाकर ही सन्तुष्ट न हुई थी। उसने इनसे यह प्रतिज्ञा भी करायी—आका-खेलोंके मध्य कोई व्यक्ति अङ्गरेजी अधिकारमें रहकर अत्याचार न करेगा। उस दिनसे इस जातिका दौरात्म्य कितना ही कम पड़ा सही, किन्तु बिलकुल शान्त नहीं हुआ।

आकाङ्क (सं० त्रि०) १ इच्छुक, अभिलाषी, ख्वाहिशमन्द, चाहनेवाला। २ व्याकरणमें—अर्थपूर्तिके लिये शब्दकी आवश्यकता रखनेवाला, जो माने पूरे करनेको लफ्ज़ चाहता हो।

आकाङ्क्षक, आकाङ्क देखो।

आकाङ्क्षणीय (सं० त्रि०) स्पृहणीय, काम्य, क़ाबिल तमन्ना, पसन्दीदा, मनभाऊ।

आकाङ्क्षत् (सं० त्रि०) १ अभिलाष रखनेवाला, जिसे उम्मेद रहे। २ दृष्टि डालनेवाला, जो देखता हो।

आकाङ्क्षा (सं० स्त्री०) आ-काङ्क्ष-(गुरोश्च हलः। पा ३।३।१०३) इति अ टाप्। १ अभिलाष, इच्छा, ख्वाहिश, पसन्द। २ जिज्ञासा, प्रश्न, सवाल, पूंछताछ। ३ अभिप्राय, मतलब। "वाक्यं स्याद् योग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्त पदोच्चयः।" (साहित्यद०) ४ दृष्टिपात, नज़ारा। ५ व्याकरणमें—अर्थपूर्तिके लिये शब्दापेक्षा, माने पूरे करनेको लफ्ज़की जरूरत। योग्यता, आकाङ्क्षा एवं आसत्तियुक्त पद समूहका नाम वाक्य है। "आकाङ्क्षाप्रतीति-पर्यवसान-विरहः। स च श्रोतुर्जिज्ञासा स्वरूपः। निराकाङ्क्षस्य वाक्यत्वे गौरश्वः पुरुषो हस्तीत्यादीनामपि वाक्यत्वं स्यात्" (साहित्यद०) ६ न्यायशास्त्रके मतसे वाक्यार्थ ज्ञानका हेतु सम्बन्ध विशेष। यथा—"स्वरूपयोग्यत्वे सत्यजनितान्वयबोधजनकत्वम्।" (तर्का०)। 'यत्पदं यत्पदेन सह याद्दशानुभवजनकं भवेत्, तत्पदस्य तत्पदसमभिव्याहारस्याद्दशान्वयबोधे आकाङ्क्षा।' (न्या० म०) 'यस्य पदस्य येन पदेन विनान्वयबोधजनकत्वं नास्ति तस्य पदस्य तेन पदेन समभिव्याहार आकाङ्क्षा।' (त० कौ०) अर्थात् जिस पदके व्यतिरेकसे जौन पदका अन्वय नहीं होता, उसी पदमें वही पदत्व रूप सम्बन्ध या एक पदके व्यतिरेकमें अन्वयका अभाव आकाङ्क्षा कहाता है। जैसे दास भार्या कहनेपर 'किस दासकी भार्या?' ऐसी आकाङ्क्षा रहनेसे अन्वयका अभाव होता है। पीछे 'चैत्रस्य' चैत्रकी—इस सम्बन्धिपदके उल्लेख करने पर, उसके सहित अन्वय होता है। उस समय आकाङ्क्षा छूटती है। वाक्यमें पदोंका परस्पर सम्बन्ध रहता और उसी सम्बन्धसे वाक्यार्थका ज्ञान होता है। जब वाक्यमें एक पदका अर्थ दूसरे पदके अर्थ ज्ञानपर आश्रित रहता, तब आकाङ्क्षा रहती है। जैसे—'घड़ा लावो'—इसमें केवल 'लावो' कहनेपर श्रोताको

'क्या लावें' को आकाङ्क्षा होती है। कारण, 'लावो' पदका ज्ञान घटज्ञानके आश्रित है। ७ जैनमतानुसार अतिचार विशेष। यह एक प्रकारकी इच्छा होती, जो अन्य मतावलम्बियोंकी विभूति पर दौड़ती है।

आकाङ्क्षित (सं० त्रि०) आ-काङ्क्ष कर्मणि क्त। १ इच्छित, ईप्सित, ख्वाहिश किया हुआ। २ प्रश्न किया हुआ, पूछा गया। ३ ध्यान किया हुआ, खयालमें लाया गया। ४ अपेक्षित, ज़रूरी।

आकाङ्क्षितव्य, आकाङ्क्षणीय देखो।

आकाङ्क्षिन् (सं० त्रि०) आ-काङ्क्ष-णिनि। १ इच्छायुक्त, इच्छा करनेवाला, इच्छुक, चाहनेवाला। २ प्रत्याशी, पूछनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। आकाङ्क्षिणी।

आकाङ्क्षी, आकाङ्क्षिन् देखो।

आकाङ्क्ष्य (सं० त्रि०) १ स्पृहणीय, काम्य, क़ाबिल-तमन्ना, पसन्दीदा। (क्ली०) २ अर्थपूर्तिके लिये शब्दापेक्षा,मानी पूरा करनेको लफ़्ज़की ज़रूरत।

आकापर्वत—आका नामक एक पहाड़। इस पर्वतको सचराचर आका ही कहते हैं। यह गिरिमाला आसामके ठीक उत्तरमें अवस्थित है। इसके दक्षिण दरङ्ग प्रदेश, पूर्व दफ़ला पर्वत और पश्चिम भोटान राज्य है। आका पर्वतके रहनेवाले अति असभ्य जाति होते हैं। आका देखो।

आकाय (सं० पु०) आ-चि कर्मणि घञ् चितौ कुत्वम्। निवास चितिशरीरोपसमाधानेष्वादेश्च कः। पा ३।३।४१। १ चीयमान अग्नि, सञ्चित अग्नि, यज्ञके लिये रखी हुई आग। २ चिता। ३ गृह, निवास, मकान्।

आकायाब (अक्याब)—अंगरेजाधिकृत ब्रह्मदेशके अन्तर्गत आराकान विभागका एक ज़िला। कहते हैं, गौतमके जन्मसे पहले आराकानकी राजधानी रामवन्दो वाराणसीके राजाको कर देती थी। प्रायः सन् ८०० ई०को मुसलमानोंने आराकानपर आक्रमण किया। नवीं शताब्दीमें आराकानके राजाने वङ्गदेशपर चढ़ाई की थी। उन्होंने चटगांवमें सीतागङ्ग नामक एक जयस्तम्भ निर्माण कराया।

आकायाबमें महाती नामक एक मन्दिर है। गवयी नामक राजाने उसे बनवाया था। पहले आकायाब ब्रह्मदेशीय सैन्यका दुर्ग रहा। उसके बाद १८२५ ई०को अंगरेजी सेनाने आकर इसे दख़ल कर लिया। तेरहवीं शताब्दीको आराकानवासी पूर्ववङ्गमें आ पहुंचे थे। उस समय ढाका ज़िलेके अन्तर्गत सुवर्णग्राम प्रभृतिके राजाओंने उन्हें कर देकर छुटकारा पाया। इसीको हमलोग सचराचर मगोंका दौरात्म्य कहते हैं। मगोंने मेघना नदीके किनारे सब देशोंमें आकर बड़ा अत्याचार किया था। क्रमसे उन्होंने चटगांव अधिकार कर लिया और वहां पोर्त्तगीजोंको आश्रय दिया। पोर्तुगीज़ भी अत्यन्त अत्याचार करने लगे। वे नावपर हमेशा मेघनामें घूमते फिरते और वणिक्, पथिक तथा तीर्थयात्रीका सर्वस्व लूट लेते थे। कविकङ्कणमें जो—'हरामदके डरसे' इत्यादि उल्लेख किया गया है, वे हरामद (Armada) यही जलडाकू रहे। ऐसा अत्याचार देखकर कुछ दिनोंके बाद आराकानवासियोंने सब पोर्त्तुगीजोंको चटगांवसे निकाल बाहर किया। यहांसे भागकर वे लोग सान्तुयिप द्वीपमें जाकर रहे। परन्तु उनके सेनापतिने क्रोधमें आकर आराकानपर आक्रमण किया था। आराकानके राजाने युद्धमें उनका प्राणविनाश कर सान्तुयिप द्वीप अधिकार और वहांके सब आदमियोंको क़ैद कर लिया।

१६६१ ई०को शाहशुजाने औरङ्गजेबके डरसे भागकर आराकानमें आश्रय लिया था। किन्तु वहांके राजाने शाहशुजाकी कन्यासे रूपलावण्यपर मोहित होकर विवाह करना चाहा, परन्तु शाहशुजा उस बातपर राजी न हुए। इसलिये आराकानके राजाने शाहशुजा और उनके पुत्रादिको एक नदीमें डुबाकर मार डाला।

१७८४ ई०को आराकान ब्रह्मराज्यमें मिला लिया गया था। इससे आराकानवासियोंने चटगांव तथा अन्यान्य अंगरेजी राज्यके स्थानोंमें आकर आश्रय लिया। ब्रह्मवासियोंने उन्हें गिरफ़्तार करा देनेके लिये अंगरेजोंसे अनुरोध किया, परन्तु किसीने उनको

बात न सुनी। इसीसे १८२४ ई०को ब्रह्मदेशके साथ अंगरेजोंका युद्ध हुआ था। पीछे १८२६ ई०के सन्धि-सूत्रसे आराकान और तेनासारिम अंगरेजी राज्यमें मिला लिया गया।

आकायाबमें जलपथसे ही वाणिज्य होता है। धान, सुपारी, पान, केला, सरसों, नारियल, नील और नाना-प्रकारकी सब्जी यहांसे दूसरी जगह भेजी जाती है।

आकाय्य (वै० त्रि०) स्पृहणीय, काम्य, पसन्दीदा।

आकार (सं० पु०) आ-कृ-घञ्। १ मूर्ति, सूरत। २ अवयव संस्थान विशेष, डीलडौल, बनावट। ३ हृदयगत भावज्ञापक मुखकी प्रसन्नता और विवर्णता, दिलका हाल बतानेवाले मुंहकी खुशी और बदरङ्गी। ४ रूप, हर्ष और दुःखसूचक देहकी चेष्टा, सूरत, खुशी और तकलीफ बतानेवाले जिस्मकी हालत। भावे घञ्। ५ हृद्गत भाव-ज्ञापन, मनोगत भाव प्रकाश, दिलके हालका ज़ुहूर। ६ इङ्गित, निशान्। ७ सांख्यादि मतसिद्ध अभेद स्थानीय पदार्थ विशेष। सांख्यवादी कहता,—जैसे शरीरकी पुष्टिसे भोजन, मनुष्यकी भाषासे जन्मभूमि और संभ्रमसे स्नेह, वैसेही ज्ञानरूप आकारसे ज्ञेय वस्तुका अनुमान होता है। ८ आकार अक्षर, आ।

आकारकरभ (सं० पु०) अकाराम्भक, अकरकरहा। (स्त्री०) आकारकरभा।

आकारगुप्ति (सं० स्त्री०) आकारस्य मनोगतभावस्य गुप्तिः गोपनम्. ६-तत्। व्याज, मिथ्या हेतु, इत्यादि जनित मुखकी प्रसन्नता एवं भयजनित विषादादिका प्रकृत हेतु न बता अन्य हेतु द्वारा उसका गोपन, बहाना, सूरतका छिपाना।

आकारगोपन (सं० क्ली०) आकारगुप्ति देखो।

आकारण (सं० क्ली०) आ-कृ-णिच्-ल्युट् णिच् लोपः। १ आह्वान, बुलावा। २ समराह्वान, ललकार। (अव्य०) ३ कारण पर्यन्त।

आकारणीय (सं० त्रि०) आह्वान किया जानेवाला, जो बोलाया जाता हो।

आकारिक (सं० त्रि०) आकारे कुशलम्, ठञ्। इङ्गितादिमें निपुण, इशारा करनेमें होशियार।

आकारित (सं० त्रि०) १ आहूत, बोलाया हुआ। २ प्रतिज्ञात, निरूपित। ३ याच्या किया हुआ, मांगा गया। ४ ठहराया हुआ।

आकारी (हिं० वि०) आह्वान करने या बुलाने-वाला।

आकारीठ (हिं० पु०) संग्राम, युद्ध, लड़ायी।

आकाल (अव्य०) १ काल पर्यन्त (आङ् मर्यादाभिविध्योः। पा २।१।१३) इति अव्ययी०। २ पूर्व दिन निमित्तके जिस समयसे दूसरे दिनके उसी समयतक। जैसे, पूर्व दिन एक कालमें विद्युत्गर्जनके साथ साथ वर्षण और इधर उधर उल्कापात होनेसे दूसरे दिन उसी समयतक अनध्याय रहता है।

"निमित्तकालमारभ्य परेद्युर्यावत् स एव कालस्तावदाकालम्।"

(आर्त)

जिस समयमें जिस कार्यका विधान है उसी समय तक। जैसे ब्राह्मणके उपनयनका काल सोलह वर्ष-तक है। यहां 'आकालं ब्राह्मणं उपनयेत्' प्रयोग किया जा सकता है। इतरभाषामें दुर्भिक्षको भी अकाल कहते हैं।

आकालिक (सं० त्रि०) आकाले भवं ठञ्। १ असा-मयिक। २ पूर्व दिन निमित्त पड़नेसे दूसरे दिन उसी समय तकका।

"निर्घाते भूमिचलने ज्योतिषाञ्चोपसर्जने।

एतानाकालिकान् विद्यदनध्यायानृतावपि॥" (मनु ४।१०५)

'निमित्तकालमारभ्य परेद्युर्यावत् स एव कालस्तावदाकालं तत्र भवाः आकालिकाः।' (कार्त) ३ असमय-जात, जो बेवक्त पैदा हो। (स्त्री०) ङीप्, आकालिकी। 'आकालिकीं इन्द्रिमवेक्ष्य गत्वा।' (श्रुति) आशुविनाशिनी, जल्द मिट जानेवाली। विद्युत् शीघ्र ही विनाश हो जाती, इसलिये वह भी आकालिकी कहाती है।

आकालिकत्व (सं० क्ली०) प्रस्तावसादृश्यका अभाव, चापल्य, बेफ़सली, बेमहली, नागहानी।

आकालिकप्रलय (सं० पु०) प्रलय विशेष, कपिलके शापसे असमयमें जगत्का प्लावन।

आकाश (सं०-पु०-क्ली०) आ समन्तात् काशन्ते दीप्यन्ते सूर्यादयोऽत्र। आ-काश् दीप्तौ—(पुंसि संज्ञायां

च: प्रायेण। पा ३।३।११८) इति घ प्रत्यय:। अथवा न काशते पृथिव्यादिवत् अप्रत्यक्षत्वात् काश अच् नञस्थान्दसो दीर्घ:। (निघण्टु)

१ पञ्चभूतमें भूतविशेष, शून्य, आसमान्। साधारण बोलचालमें हमलोग केवल ऊपरके शून्य स्थानको ही आकाश कहते हैं। इसका अपभ्रंश 'आकास' शब्द भी प्रचलित है। आकाश शब्दके पर्य्याय ये हैं,—द्यो, द्यौ, अभ्र, अभ्व, व्योम, पुष्कर, अम्बर, नभ:, अन्तरीक्ष, गगन, अनन्त, सुरवर्त्म, ख, वियत्, विष्णुपद, विहाय, नाक, अनङ्ग, नभस, मेघवेश्म, महाविल, मरुद्वर्त्म, मेघवर्त्म, त्रिपिष्टप।

न्यायके मतसे यह नित्य, असीम, एवं अशरीरी होता है। शब्द इसका विशेष गुण है। संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग एवं विभाग—ये पांच आकाशके सामान्य गुण हैं। कर्ण इसका इन्द्रिय है। आकाश एक होते भी उपाधि भेदसे नाना प्रकारका है। जैसे घटाकाश, पटाकाश इत्यादि। वेदान्त-मतसे आकाश जन्य पदार्थ है। २ परब्रह्म। ३ छिद्र। गणित-शास्त्रमें आकाश शब्दसे शून्य समझा जाता है।

तैत्तिरीय-उपनिषत्के मतसे परब्रह्मसे पहले आकाश उत्पन्न हुआ था। फिर आकाशसे वायुकी उत्पत्ति हुई। बाइबिलमें भी लिखा, कि ईश्वरने पहले आकाश बनाया था। आकाशका कर्म स्थान देना है अर्थात् आकाशके अभावमें कुछ भी नहीं रह सकता।

शब्दसमवायिकारणत्वको भी आकाश कहते हैं। परन्तु इसपर प्रश्न हो सकता, अतीन्द्रिय पदार्थ होनेसे इसकी सत्ताका क्या प्रमाण है? इस सन्देहको दूर करनेके लिये शास्त्रकारोंने निम्नलिखित प्रमाणोंसे सत्ता बताई है—शब्द पृथिव्यादि आठसे अतिरिक्त द्रव्यमें आश्रित है। क्योंकि आठ द्रव्योंके आश्रित माननेपर समवायिकारणत्वसे जो नहीं, वह नहीं हो रह जाता है। यद्यपि आकाश अतीन्द्रिय होता, तथापि विलक्षण शब्दात्मक कार्य अन्य किसी प्रकार उत्पन्न न हो सकनेसे इसे मानना पड़ता है। "शब्दो गुण: चक्षुर्ग्रहणायोग्यबहिरिन्द्रियग्राह्यजातिमत्वात् स्पर्शवत्" अर्थात् चक्षु इन्द्रियसे अग्राह्य एवं स्पर्शके समान बहिरिन्द्रिय (त्वचादि)से ग्राह्य और जातिमत्व होनेसे शब्दको गुण कहते हैं। गुण होनेसे संयोगकी तरह शब्द द्रव्यसमवेत है। इस अनुमानसे शब्दका द्रव्यसमवेतत्व सिद्ध होनेपर पृथिव्यादि आठ द्रव्यमें शब्दाधिकरणत्वकी वाधासे शब्दाधिकरण गगनात्मक नवम द्रव्य सिद्ध होता है। (न्यायसिद्धान्तमुक्तावली)

शाब्दिक 'नक्षत्रचक्रमत्र तिष्ठति' अर्थात् इसपर नक्षत्र रहते हैं—कहकर निर्दिष्टवस्तुविषयमें पृथिव्यादिका आधारत्व असम्भव होनेसे तदाधार यानी नक्षत्रादिके आधारको ही आकाश बताते हैं। (लघुमञ्जूषा)

इसपर भर्तृहरिने भी कहा है—

"आधारशक्ति: प्रथमा सर्वसंयोगिनामयम्।
इदमत्रे ति भावानामभावानाञ्च कल्पते॥ १॥
व्यपदेशसमाकाशनिमित्तं तु प्रचक्षते।
कालात् क्रिया विभज्यन्ते आकाशात् सर्वमूर्तय:॥ २॥
एतावानेव भेदोऽयमभेदोपनिवन्धन:॥" (वाक्यपदीय)

अर्थात् आकाश इसमें है या नहीं—इत्यादि भाव एवं अभावादि संयोगियोंकी पहली आधारशक्ति तथा व्यपदेशका निमित्त कहा जाता है। जैसे कालसे क्रिया अलग की जाती, वैसे ही आकाशसे सब मूर्ति विभक्त होती है।

सांख्य मतमें निष्क्रमणादि कर्मसे आकाश सिद्ध होता है।

वेदान्ती भी इसीको समर्थन करते हैं—

"शब्द: श्रोत्रे न्द्रियं चापि छिद्राणि च विविक्तता।
वियतो दर्शिता एते गुणा गुणविचारिभि:॥" (वाचस्पतिमिश्र)

यह शब्दगुणक, एक, विभु तथा नित्य है। लाघवसे एक, सर्वत्र कार्योपलब्धिसे विभु और विभुसे नित्य माना जाता है। आकाशमें ६ गुण रहते हैं—संख्या, परममहत् परिमाण, एक पृथक्त्व, संयोग, विभाग, शब्द।

आकाशकक्षा (सं० स्त्री०) ६-तत्। (Horizon) गगनान्तराल, क्षितिज, उफ़ुक़, आसमान्से लगा हुआ ज़मीन्का किनारा। ज्योति:शास्त्रमें इसका परिमाण १८७१२०६९२०६९२००००००० योजन निश्चित किया गया है। चक्रवाल।

आकाशकल्प (सं० पु०) ईषदसमाप्तः आकाशः, आकाश (ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्य देशीयरः। पा ५।३।६७) इति कल्पप् प्रत्ययः। परब्रह्म। आकाशकी तरह निःसङ्ग, प्रधान एवं अविनश्वर होनेसे परब्रह्मको भी आकाश-कल्प कहते हैं।

आकाशकुसुम (सं० क्लो०) आकाशे उदितं कुसुमम्, शाक० तत्। १ खपुष्प, आसमानका फूल। २ असम्भव विषय, अनहोनी बात। आकाशमें फूल नहीं खिलता, अतएव "आकाशकुसुम" कहनेसे मिथ्या विषयका बोध होता है।

आकाशग (सं० त्रि०) आकाशमें चलनेवाला, जो आसमान्में घूमता हो।

आकाशगङ्गा (सं० स्त्री०) आकाशस्था गङ्गा, शाक० तत्। १ मन्दाकिनी, वियद्गङ्गा, स्वर्णदी, सुरदीर्घिका, आकाशनदी प्रभृति शब्द भी इसी अर्थमें प्रयुक्त होते हैं। २ नक्षत्रमण्डल विशेष। यह आकाशमें उत्तर-दक्षिण विस्तृत है। इसमें अनेक छोटे-छोटे नक्षत्र रहते, जो आंखसे देख न पड़नेपर सफ़ेद सड़क जैसे मालूम होते है। यह कहीं कम और कहीं ज्यादा चौड़ी है। आकाशगङ्गाकी शाखायें भी इधर-उधर फैल गयी हैं। ग्रामीण लोग इसे आकाश-जनेऊ, डहर या हाथीकी सूंड़ कहते हैं।

आकाशगर्भ (सं० पु०) बोधिसत्त्व विशेष।

आकाशगा (सं० स्त्री०) आकाशे गच्छति आकाश-गम-ड-टाप्। स्वर्गगङ्गा।

आकाशगामिन् (त्रि०) आकाशे गन्तुं शीलमस्य, आकाश-गम शीलार्थे णिनि। आकाशगमनमें क्षम, शून्यचारी, आसमान्में फिरनेवाला।

आकाशचमस (सं० पु०) चन्द्र, चांद।

आकाशचारिन्, आकाशगामिन् देखो।

आकाशचारी (सं० पु०) १ सूर्यादि ग्रह, आफ़ताब वग़ैरह तारा। २ वायु, हवा। ३ पक्षी, चिड़िया। ४ देवता। ५ राक्षस। (त्रि०) आकाशगामिन् देखो।

आकाशचोटी (हिं० स्त्री०) आकाशकी शिखा, शीर्ष-विन्दु, बिलकुल शिरके ऊपर पड़नेवाला कल्पित विन्दु।

आकाशज (सं० त्रि०) गगनजात, आसमान्से पैदा।

आकाशजननिन् (सं० पु०) आकाशजननी देखो।

आकाशजननी (सं० स्त्री०) आकाशस्थां जननीव शुभप्रदानात्। छिद्रयुक्त प्रगण्डी, झरोका। दुर्गके भीतरी आदमियोंका बाहरका काम देखाने और शत्रु-पर गोला प्रभृति मारनेके लिये दीवारमें छेद रहते हैं। ऐसे छेदवाली दीवारको प्रगण्डी कहते हैं। दुर्गसे बाहर शत्रुके प्रति स्वयं छिपे रहकर छेदोंसे आग्नेयास्त्र आदि फेंकनेपर शत्रुका नाश होता, इसीसे इसका नाम आकाशजननी है। महाभारत शान्ति-पर्वके ६९वें अध्यायमें इसका विवरण लिखा है।

आकाशजल (सं० क्लो०) १ वृष्टिका नीर, मेहका पानी। २ तुषार, ओस। मघा नक्षत्रमें जो पानी पड़ता, वह पात्रमें भरकर रख छोड़ा जाता और औषधमें व्यवहृत होता है।

आकाशदीप, आकाशप्रदीप देखो।

आकाशदीया (हिं०) आकाशप्रदीप देखो।

आकाशधुरी (हिं० स्त्री०) खगोलध्रुव, आसमान्की धुरी।

आकाशध्रुव (सं० पु०) आकाशधुरी देखो

आकाशनदी, आकाशगङ्गा देखो।

आकाशनिद्रा (सं० स्त्री०) प्रशस्त स्थानका शयन, खुली जगहकी नींद।

आकाशनीम (हिं० स्त्री०) नीमके पेड़पर फैलने-वाली बेल, नीमका बांदा।

आकाशपटल (सं० क्लो०) अभ्रधातु, अबरक।

आकाशपुष्प, आकाशकुसुम देखो।

आकाशप्रतिष्ठित (सं० पु०) बुद्धविशेष, किसी बुद्धका नाम।

आकाशप्रदीप (सं० पु०) आकाशे सलक्ष्मीकविष्णो-स्तोषार्थं दीयमानः प्रदीपः शाक-तत्। आकाशदीया, आसमानी चिराग़। सौर कार्तिक मासमें प्रतिदिन उच्चस्थानपर जो प्रदीप जलाते, उसे आकाशप्रदीप कहते हैं।

हेमाद्रिधृत आदिपुराणमें आकाशप्रदीपका नियम इस तरह लिखा है,—गृहके निकट किसी प्रकार

को यज्ञीय लकड़ीका आदमीके बराबर एक स्तम्भ गाड़े और उसमें यवाङ्गुल तुल्य छेद करके दो हाथकी पट्टी लगाये। फिर चौकोन अष्टदलाकृति कर्णिकाके बीचमें दीप देना चाहिये।

आजकल आकाशप्रदीप देनेकी रीति दूसरी ही तरह प्रचलित है। गृहस्थ लोग घरके बाहर या भीतर एक बड़ा बांस गाड़, उसके सिरेपर लाल झण्डा उड़ा और अठपहलू लालटेनमें दीप जला देते हैं।

समस्त कार्तिक मास आकाशप्रदीप देनेका नियम है। कार्तिक मासके प्रथम दिनमें ब्राह्मण वृक्षकी पूजा करते हैं। इससे लक्ष्मीदामोदरकी ही पूजा होती है। पीछे सन्ध्या समय लालटेनको दीप रख और रस्सीसे खींचकर ऊपर चढ़ा देते हैं। प्रदीपमें तिलतैल अथवा घृतादि देनेका ही नियम है। आकाशप्रदीप देनेका मन्त्र यह है,—

"दामोदराय नभसि तुलायां लोलया सह।
प्रदीपं ते प्रयच्छामि नमोऽनन्ताय वेधसे॥" (अपरार्क)

कार्तिक मासमें लक्ष्मी सहित दामोदरको मैं आकाशमें यह प्रदीप देता हूं। वेधा अनन्तको नमस्कार है।

इसका दूसरा मन्त्र भी देखनेमें आता है; यथा—

"निवेद्य धर्माय हराय भूम्यै दामोदरायाप्यथ धर्मराजे।
प्रजापतिभ्यस्त्वथ सत्पितृभ्यः प्रेतेभ्य एवाथ तमःस्थितेभ्यः॥"

आकाशफल (सं० क्लो०) सन्तान, औलाद, बाल-बच्चा।

आकाशबुद्धलक्ष (सं० पु०) नाट्य भाषामें—दर्शक-मण्डलीको देख न पड़नेवाले पदार्थपर टकटकी बांधना।

आकाशबेल, अमरबेल देखो।

आकाशभाषित (सं० क्लो०) भाष-भावे क्त, आकाशे भाषितम्, ७-तत्। १ देववाणी, जो बात देवता आकाशमें अदृश्य रूपसे रहकर कहता हो। २ नरा-श्रित, साक्षात् देववाणी सुन नहीं पड़ती। किन्तु कोई व्यक्ति अन्यको लक्ष्यकर जब किसी कामके होने या न होनेकी बात कहता, तब उसका फल मिल जाता है। ३ अदृश्य भावसे कथन, पोशीदा तौरपर बोलना। नाट्यशालामें किसी देवताका वाक्य निकालते समय नट अदृश्य रहकर देववाणीकी तरह जो बात कहता, वही आकाशभाषित है। इसमें वक्ता बेपूछे आकाशकी ओर देख प्रश्नका उत्तर देने लगता, है। दर्शक यही समझता, मानो उससे कोई बात करता है।

आकाशमण्डल (सं० क्लो०) आकाशो मण्डलमिव। १ गगनमण्डल, हवाका कुरा। आकाशकी कोई आकृति वा इयत्ता नहीं, किन्तु मण्डलाकार वेष्टनके अभावमें भी गोल मालूम पड़ता है। इसीसे गगनको आकाशमण्डल कहते हैं। नभोमण्डल प्रभृति शब्द भी इस अर्थमें प्रयुक्त हो सकते हैं। २ तन्त्रोक्त भूतशुद्धिके अन्तर्गत चिन्तनीय भ्रूमध्यसे परब्रह्म पर्यन्त अवस्थित वृत्ताकार स्वच्छ नभोमण्डल।

आकाशमय (सं० पु०) आकाश-मयट्। १ आकाश-तुल्य आत्मा, शतपथब्राह्मणमें लिखा,—आत्मा ही ब्रह्म एवं आत्मा ही विज्ञानमय, मनोमय, वाङ्मय, प्राणमय, चक्षुर्मय, श्रोत्रमय और पृथिवीमय हैं। फिर शतपथब्राह्मणके भाष्यकारने बताया, कि आत्मामें इस संसारका वह होना वास्तविक नहीं केवल उपाधि-विशिष्ट मात्र है।

आकाशमांसी (सं० स्त्री०) आकाशे जटा मांस इव यस्याः, शाक-बहुव्री०। जातित्वात् ङीप्। सूक्ष्म जटामांसी, यह शीतल, शोफघ्न, व्रणनाड़ीघ्न, लूता-गर्दभजलादि रोगघ्न और वर्णकर होता है।

(राजनिघण्टु)

आकाशमुखी—शैव सम्प्रदाय विशेष। जो सन्यासी सदा ऊर्ध्वमुख रहते उन्हें आकाशमुखी कहते हैं।

आकाशमूली (सं० स्त्री०) आकाशते अभूमिवद्ध-तया प्रकाशते, प्रकाश भावे घञ् तथोक्तं मूलमस्याः, बहुव्री०। जलौषधि, कुम्भिका, पाना।

आकाशयान (सं० क्लो०) आकाशे शून्ये जायते-ऽनेन, आकाश-या-ल्युट्, ७-तत्। व्योमयान, हवाई जहाज, ऐरोप्लेन।

आकाशरक्षिन् (सं० पु०) आकाशे रक्षति, आकाश-

रक्ष-स्थिनि। दुर्गके बहिःस्थित प्राचीरपर खड़े हो रक्षा करनेवाला वीर, जो सिपाही किलेकी बाहरी दीवारपर हिफ़ाजत रखता हो।

आकाशललित (सं० क्लो०) आकाशस्य ललितम्। आकाशसे पतितजल, आसमान्से गिरा हुआ पानी।

आकाशलोचन (सं० क्लो०) मानमन्दिर, रसदगाह, अबज़रबेटरी। इस स्थानसे ग्रहोंकी स्थिति या गति देखते हैं।

आकाशवचन, आकाशभाषित देखो।

आकाशवत् (सं० त्रि०) आकाशः शून्यं अस्त्यस्य गम्यत्वेन, आकाश-मतुप् मस्य वत्वम्। १ आकाशगामी, आसमान्में चलनेवाला। २ विस्तृत, कुशादा, लम्बा-चौड़ा, आसमान्-जैसा।

आकाशवर्त्मन् (सं० क्लो०) आकाशे शून्य वर्त्म पन्थाः, ७-तत्। शून्यमार्ग, आकाशपथ, आसमानी राह।

आकाशवल्लरी, आकाशवल्ली देखो।

आकाशवल्लिका, आकाशवल्ली देखो।

आकाशवल्ली (सं० स्त्री०) आकाशस्य वल्ली लतेव। आकाशबेल, अमरबेल। यह तिक्ता, पिच्छला, नेत्ररोगघ्नी, अग्निवर्धनी, हृद्या और पित्तश्लेष्मनाशिनी होती है। (भावप्रकाश) इसे मधुरा, कटु, पित्तघ्नी, शुक्रवृद्धिकरी, रसायनी और बल्या पाते हैं। (राजनिघण्टु)

आकाशवाणी (सं० स्त्री०) आकाशभाषित देखो।

आकाशवायु (Atmosphere) वायुमण्डल, हवाका कुरा, जो वाष्पराशि पृथिवीको चारो ओरसे घेरे हुए है, उसे आकाशवायु कहते हैं। उद्भिद् एवं प्राणीके जीवन धारण करनेको आकाशवायु नितान्त आवश्यक है। इस वायु योगमें शब्द एक स्थानसे दूसरे स्थान जाता है। इसीसे सूर्यका उत्ताप लगता और रौद्रका रूपान्तर होता है। आकाशवायु रहनेसे गोधूलिके समय रोशनीके बाद धीरे-धीरे अन्धकार होता है। नहीं तो सूर्यास्त होनेके बाद एकदम अन्धकार छा जाता। इससे मरीचिका प्रभृति अद्भुत भौतिक दृश्य देखनेमें आते हैं। मध्याकर्षणके निमित्त आकाशवायुका आकार ठीक अण्डे जैसा है। इसका सारा भार पृथिवीके ऊपर पड़ा हैं। अन्यान्य तरल वस्तुओंकी तरह इसमें भी भार डालनेकी क्रिया ठीक जलके तुल्य है। परन्तु इसकी भीतरी अवस्था और और तरल वस्तुओं जैसी नहीं है। आकाशवायुके परमाणु परस्पर प्रतिक्षिप्त हुआ करते हैं। सुतरां जिस परिमाणसे प्रतिक्षेपका ज़ोर पहुंचता, इसका भार भी उसी परिमाणसे अन्य अन्य तरल वस्तुओंसे पृथक् रहता है। इसलिये बाहरका ज़ोर देखकर इसे और और तरल वस्तुओंके समान कहते हैं। अतएव समान आकारका जल और आकाशवायु लेनेसे बाहरके भारमें आकाशवायुका ही अधिक परिवर्तन होता है, जलका नहीं। इसीसे ऊपरकी अपेक्षा पृथिवीके निकट वायुका जो तह रहता, वह अधिक घन है। कारण अधिक उंचाईपर चारो ओरसे अति अल्प परिमित वायुका भार पड़ता, इसीसे परमाणुका प्रतिक्षेप बल फैल जाता है।

तौलनेसे वायुका गुरुत्व स्पष्ट मालूम होता है। पहले वायुपूर्ण कांचका एक गोलपात्र तौल पीछे वायुनिष्काशन-यन्त्रसे उसकी हवा बाहर निकाल फिर तौलनेसे उतना भारी नहीं मालूम पड़ता। इसलिये जिस परिमाणसे भार कम पड़ जाता, वही वायुका गुरुत्व है। तापमान-यन्त्रमें ६०° और वायुमान-यन्त्रमें ३०° ताप हानेसे १०० घन इञ्च परिमित शुष्क वायुका वज़न प्रायः ३१·०७४ ग्रेन होता है।

किसी चीज़को डुबाकर रखनेसे उसकी चारो ओर जल हट जाता है। आर्किमिडिसने स्थिर किया, किसी चीज़को डुबाकर रखनेसे उसकी चारो ओर जल जिस परिमाणसे हटता, ठीक उसी जलके परिमाण चीज़का वज़न कम पड़ता है। वायुके सम्बन्धमें भी ठीक यही नियम देखा जाता है। इसकी परीक्षा अति सहज ही हो सकती है। किसी छोटी तराज़ूमें डण्डीकी एक ओर वायुपूर्ण कांचके पात्रको मुंह बन्द करके लटका और दूसरी ओर

उतने ही वजनका बाट चढ़ा है। फिर तराज़ूको वायुनिष्काशन-यन्त्रमें रखकर सब हवा बाहर निकाल देनेसे जिधर भारी चीज़ रहेगी, अधिक भारके कारण तराज़ूकी डण्डी भी उधर ही झुक जायगी।

आकाशवायुकी आकृति अण्डेके समान होती है। केन्द्रके निकट पृथिवीके दोनों प्रान्त पतले और दबे हुए तथा मध्यस्थल ऊंचा है। यह भली भांति निश्चित नहीं हुआ, शून्यमें कहांतक आकाशवायु है। अनेकोंको अनुमान होता, कि ५० से १०० कोस तक यह वायु रह सकता है।

वायुमें भार होना इसका एक विशेष गुण है। जलकी कलमें यह गुण साफ़ मालूम पड़ता है। नलके भीतर डण्डी अच्छीतरह सटी रहनेपर बगलसे हवा आ जा नहीं सकती। डण्डीको खींच कर ऊपर उठा लेनेसे भीतर खाली हो जाता है। उस समय नलके बाहर जल उठ आनेसे उसपर वायुस्तम्भका भार पड़ता, सुतरां वायुके गुरुत्वसे वह ऊपरकी ओर चढ़ता है। नलकी डण्डी प्राय: ३४ फीट उठ आनेपर जल ऊपरकी ओर झपटकर दौड़ता है। इससे साफ़ ही मालूम पड़ता, किसी वायुस्तम्भका वज़न ठीक वैसे ही चक्राकार और ३४ फीट ऊंचे जलस्तम्भके समान है।

जलकी अपेक्षा पारा १३·६ गुण भारी है। पारदस्तम्भकी एक ओर वायुका भार न पड़ने और दूसरी ओर लग जानेसे जलस्तम्भकी अपेक्षा इसकी ऊंचाई १३·६ गुण कम होती, अर्थात् प्राय: ३० इञ्च रहती है।

रासायनिक परीक्षा द्वारा निश्चित हुआ, कि १०० ग्रेन शुष्क वायुमें यह सकल पदार्थ विद्यमान है—यवक्षार ७६·८४, अक्सिजन २३·१० और आराम्ल ०·०६ ग्रेन।

आकाशवृत्ति (सं॰ स्त्री॰) अनिश्चित जीवनसाधन, ग़ैरमुक़र्रर माश, जो कमायी बंधी न हो।

आकाशवृत्तिक (सं॰ त्रि॰) १ अनिश्चितप्राप्तिवाला, जो मुक़र्रर माश रखता न हो। २ आकाशके जलपर आश्रित, जिसे सिवा मेहके दूसरा पानी न मिले।

आकाशसलिल (सं॰ क्ली॰) आन्तरिक्ष जल, वर्षोदक, मेहका पानी। यह हृद्य, दीपन, पथ्यद, तृष्णानाशक, श्रमघ्न और मेध्य होता है। किन्तु वह आकाशसलिल कलुष एवं दोषदायक है। (राजनिघण्टु)

आकाशस्थ (सं॰ त्रि॰) गगनस्थायी, हवायी, आसमानमें रहनेवाला।

आकाशस्फटिक (सं॰ पु॰) आकाशस्य स्फटिक इव। स्फटिक विशेष, किसी क़िस्मका बिल्लोरी पत्थर। कहा जाता, कि यह आकाशमें उत्पन्न और सूर्यकान्त एवं चन्द्रकान्त भेदसे दो प्रकारका होता है।

आकाशानन्त्यायतन (सं॰ क्ली॰) १ असीमताका स्थान, ला-इन्तिहायीका मुक़ाम। २ बौद्ध जगत् विशेष।

आकाशास्तिकाय (सं॰ पु॰) कर्मधा॰। जैनमतसिद्ध जीव एवं आवरणभिन्न पदार्थ विशेष, जैनोंके छ: पदार्थोंमें एक। इसका कोयी रूप नहीं रहता। लोक तथा अलोक दोनो स्थानोंमें यह विद्यमान है। जीव एवं पुद्गल इसीके मध्य अवकाश पाता है।

आकाशी (हिं॰ स्त्री॰) १ चांदनी। यह धूप वग़ैरह बचानेके लिये तनती है। (वि॰) २ आसमानी।

आकाशीय (सं॰ त्रि॰) आकाशस्येदम्। आकाशसम्बन्धी, हवायी।

आकाशेश (सं॰ पु॰) १ आकाशके ईश, इन्द्र। २ धर्मशास्त्रानुसार—निराश्रय व्यक्ति, बेकस शख़्स। बच्चे, औरत, ग़रीब और बीमारको तरह सिवा हवाके दूसरी चीज़ पर क़ब्ज़ा न रखनेवालेको आकाशेश कहते हैं।

आकाश्य, आकाशस्थ देखो।

आकिञ्चन, आकिञ्चन्य देखो।

आकिञ्चन्य (सं॰ क्ली॰) अकिञ्चनस्य भाव: ष्यञ्। दरिद्रता, ग़ुरबत, ग़रीबी।

आकिदन्ति (सं॰ पु॰) १ देशविशेष, एक मुल्क। २ एतद्देशवासी, इसी देशका रहनेवाला। (पा ४।१।११८)

आक़िल (अ॰ वि॰) अक़्लमन्द, बुद्धिमान्, समझदार।

आकीर्ण (सं॰ त्रि॰) व्याप्त, विक्षिप्त, मामूर, फैला हुआ।

आक्षीम् (वै० अव्य०) आ-क्षम् बाहु० डीमि। १ वर्जन, रोकटोक। २ वितर्क, मुबाहसा।

आकुञ्चन (सं० क्ली०) आ कुचि-ल्युट्। १ सङ्कोचन, इनकिबाज़, दबाव। २ सञ्चय, इकट्ठा करना। ३ वक्रता, टेढ़ापन। ४ वैरूप्य, मरोड। वैशेषिक इसे पांच प्रकारके कर्मोंमें एक कर्म मानते हैं।

आकुञ्चनीय (सं० त्रि०) आकुञ्चनशील, सिकुड़ने लायक, सिमट जानेवाला।

आकुञ्चित (सं० त्रि०) आ-कुचि-क्त। १ सङ्कुचित सिकुड़ा या सिमटा हुआ। २ आभुग्न, टेढ़ा।

आकुट्टीहिंसा (हिं० स्त्री०) हिंसित कर्म, जीवके साथ तकलीफ़ दिए कामका करना।

आकुण्ठन (सं० क्ली०) १ गुठला जानेकी हालत, कुन्द पड़नेकी बात। २ लज्जा, शर्म।

आकुण्ठित (सं० त्रि०) १ कुन्द, गुठला, जो चलता न हो। २ लज्जित, शर्मिन्दा।

आकुर्वती (सं० स्त्री०) पर्वत विशेष। (रामायण)

आकुल (सं० त्रि०) आ-कुल-क। १ व्यग्र, घबराया हुआ। २ अनियमित, बेतरतीब। ३ विह्वल, आपेसे बाहर। ४ प्रतिकूल, मुख़ालिफ़। ५ व्याप्त, मामूर, भरा हुआ। उद्विग्न, निराकुल, पर्याकुल, व्याकुल और समाकुल शब्द भी उपरोक्त अर्थमें आ सकते हैं। (क्ली०) ६ निवासित स्थान, जिस जगहमें लोग रहें। (पु०) ७ अश्वभेद, किसी क़िस्मका घोड़ा।

आकुलकृत् (सं० स्त्री०) अकर्करा, अकरकरहा।

आकुलता (सं० स्त्री०) आकुलत्व देखो।

आकुलत्व (सं० क्ली०) १ सञ्चय, समुदाय, अम्बार, ढेर। २ व्याकुलता, मोह, घबराहट।

आकुला (सं० स्त्री०) तप्तापक्व गोधूमादि, गर्म और कच्चा गेहूं वग़ैरह। तप्त एवं अपक्व गोधूमको आकुला कहते हैं। यह गुरु, वृष्य, मधुर और बलकारी होती है। (राजनिघण्टु)

आकुलाकुल (सं० त्रि०) आकुल प्रकारे द्विर्भावः। अत्यन्त आकुल, निहायत परेशान्।

आकुलि (सं० पु०) आ-कुल-इन्। १ असुर पुरोहित विशेष। २ व्याकुलत्व, परेशानी।

आकुलित (सं० त्रि०) आ-कुल-क्त। १ व्याकुलीभूत, घबराया हुआ। २ क्षुब्ध, परेशान्। ३ दुःखित, आफ़तज़दा, मुसीबतमें पड़ा हुआ।

आकुलीकृत (सं० त्रि०) अनाकुलं आकुलं कृतं आकुलं अभूततद्भावे च्वि क्त कर्मणि क्त। व्याकुलताप्रापित, जो परेशान् किया गया हो।

आकुलीभूत (सं० त्रि०) अनाकुलं स्वयमाकुलं भूतम्, आकुल-च्वि-भू-क्त। आप ही आकुल होनेवाला, जो ख़ुद-ब-ख़ुद घबरा गया हो।

आकुलेन्द्रिय (सं० त्रि०) क्लान्तचित्त, दिलमें घबराया हुआ।

आकुष्ट (सं० त्रि०) निष्कासित, निकाला हुआ।

आकूणित (सं० त्रि०) आ-कूण-क्त। ईषत् सङ्कुचित, कुछ सिकुड़ा हुआ।

आकूत (सं० क्ली०) आ-कू भावे क्त। १ आशय, मानी, मतलब, इरादा। २ अभिप्राय, इच्छा, ख़ाहिश।

आकूति (सं० स्त्री०) आ-कू-भावे-क्तिन्। १ अभिप्राय, मतलब। संज्ञायां क्तिन्। २ स्वायम्भुव मनुद्वारा निज शतरूपा नाम्नी पत्नीसे उत्पादित कन्याविशेष। भागवतके तृतीय स्कन्धमें आकूतिकी उत्पत्तिकी कथा यों लिखी है,—ब्रह्माका शरीर पहले दो भागोंमें विभक्त हुआ था। उसका एक भाग पुरुष और दूसरा स्त्री बना। उसमें पुरुषका स्वायम्भुव मनु और स्त्रीका नाम शतरूपा पड़ा था। स्वायम्भुव मनुने शतरूपाके गर्भसे पांच सन्तान उत्पन्न किये। उनमें दो पुत्र और तीन कन्या थीं। पुत्रोंके प्रियव्रत एवं उत्तानपाद और कन्याओंके नाम आकूति, देवहूति और प्रसूति रहे। पीछे स्वायम्भुव मनुने हो आकूतिका विवाह रुचिके साथ कर दिया।

आकूतिप्र (वै० त्रि) अपनी इच्छा पूर्ण करनेवाला, जो अपनी ख़ाहिशको पूरा करता हो। (अथर्व स० १।२७।२)

आकूती (हिं०) आकूति देखो।

आकृत (वै० त्रि०) १ निकट आनीत, नज़दीक लाया हुआ। २ समीपस्थ, पास रहनेवाला।

आकृति (सं० स्त्री०) आ-क्रियते अनया आक्रियते आकिरन्यया,

आ-कृ करणे क्तिन्। १ शरीर, जिस्म। २ आकार, शक्ल। ३ लक्षण, निशान्। ४ व्यवहार, चालचलन। ५ जाति, कौम। ६ छन्दोविशेष। इसमें बायीस-बायीस अक्षरके चार पद होते हैं। ७ अवयव संस्थान विशेष, बनावट। तर्कशास्त्रके मतमें जातिलिङ्गको आकृति कहते हैं। जिससे जाति और जातिलिङ्ग जाना जाता, वही आकृति है। जैसे गौमें गोत्वादि जाति एवं शास्नादि संस्थानविशेष लिङ्ग है। यह जीव तथा उसके अवयवोंके नियत एवं व्यूह (तर्क)से अनेक प्रकारको होती है। (वात्स्यायनभाष्य २।२।७०)

आकृतिगण (सं॰ पु॰) आकृतौ आकारे प्रसिद्धो गणः, शाक॰-तत्। आदर्शसूची, नमूनेकी फेहरिस्त। यह व्याकरणके नियम विशेषसे सम्बन्ध रखता है। इसमें प्रत्येक शब्द नहीं, केवल आदर्श प्रकाशित होता है।

आकृतिच्छत्रा (सं॰ स्त्री॰) आकृतिं छादयति, छद स्वार्थे णिच्, ष्ट्रन् ह्रस्वः णिच् लोपः टाप्, २-तत्। १ जलौषधि, पाना। २ घोषातकी लता, लटजीरा।

आकृतिमत् (सं॰ त्रि॰) आकारयुक्त, सूरतवाला।

आकृष्ट (सं॰ त्रि॰) आ-कृष-क्त। आकर्षणयुक्त, खींचा हुआ।

आकृष्टमानस (सं॰ त्रि॰) भ्रान्तचित्त, दिलमें घबराया हुआ।

आकृष्टवत् (सं॰ त्रि॰) १ आकर्षक, खींचनेवाला। २ सम्मोहक, फरेफ्ता करनेवाला।

आकृष्टि (सं॰ स्त्री॰) आ-कृष-क्तिन्। आकर्षण, कशिश, खेंचतान।

आकृष्टिमन्त्र (सं॰ पु॰) आकर्षणका मन्त्र, दूसरे शख्सको खींच लानेवाला अफ़सून्।

आकृष्य (सं॰ अव्य॰) आकर्षण करके, खींचके।

आकृष्यमाण (सं॰ त्रि॰) आकर्षण किया जानेवाला, जो खींचा जा रहा हो।

आके (वै॰ त्रि॰) आङ् क्रामति, (बलाकादयश्च। उण् ३।१४) आके प्रत्यये धातोर्लोपश्च निपात्यते। १ अर्वाक्गन्ता, पीछे चलनेवाला। (अव्य॰) २ अन्तिक, निकट, नज़दीक, पास, पड़ोसमें।

आकेकरा (वै॰ स्त्री॰) आके निकटे करो यस्याः। १ वक्राक्षि, कैंची आंख। २ निकटकी दृष्टि, पासकी नज़र। नेत्रका विशेषण बननेसे यह शब्द क्लीवलिङ्ग होता है।

आकेनिप (वै॰ त्रि॰) आके निकटे निपतति, आ-के-नि-पत-ड। १ निकट पतित होनेवाला, निकट-गामी, पाससे गुज़रनेवाला, जो नज़दीक गिर रहा हो। के आकनि पक्षि अध्यात्मस्थाने पतन्त इत्यर्थः। २ मेधावी, अक्लमन्द।

आकौशल (सं॰ क्ली॰) अकुशलस्य भावः, अकुशल-अण्, द्विपदवृद्धिः पूर्वस्य वा। अपाटव, अपटुता, नावाकिफ़ी, बेहुनरपन।

आक्न (सं॰ त्रि॰) आनमित, प्रवण, खमीदा, खमदार, मुड़ा हुआ।

आक्रन्द (सं॰ पु॰) आ-क्रन्द-घञ्। १ चीत्कार-पूर्वक रोदन, चिल्लाहटकी रुलायी। २ आह्वान, पुकार, बुलावा। ३ शब्द, आवाज़। आक्रन्द्यते आहूयते, आ-क्रन्द कर्मणि घञ्। ४ मित्र, दोस्त। ५ भ्राता, भायी। आक्रन्द्यते परस्परं स्पर्धया आहूयते यत्र, आधारे घञ्। ६ दारुण युद्ध, घमासान लड़ायी। ७ दुःखियोंका रोदनस्थान, अफ़सुर्दोंके रोनेकी जगह। आक्रन्दति अच्। ८ समीपस्थ राजाके पीछेका नरेश। ९ युद्धध्वनि, ललकार। १० राजा। ११ प्राबल्य, ज़ोर। १२ बलापहारी, ग़ासिब, दबा बैठनेवाला शख्स। १३ महबल। युद्धकी जिस अवस्थामें एक यह दूसरेसे बलवान् निकलता, उसे आक्रन्द कहते हैं।

आक्रन्दन (सं॰ क्ली॰) आ-क्रन्द-ल्युट्। १ चीत्कार-पूर्वक रोदन, चिल्लाहटकी रुलायी। २ आह्वान, पुकार।

आक्रन्दिक (सं॰ त्रि॰) आक्रन्दे रोदनस्थाने गच्छति, आक्रन्द-टक् ठञ् वा। दुःखीके रोदनस्थानको जाने-वाला, जो अफ़सुर्दोंके रोनेकी जगहको जाता हो। (स्त्री॰) आक्रन्दिका; रोदनस्थानगन्त्री स्त्री।

आक्रन्दित (सं॰ क्ली॰) आ-क्रन्द भावे क्त। १ क्रन्दन, चिल्लाहट। २ रोदन, रुलायी। (त्रि॰) ३ क्रन्दन-

करनेवाला, जो चिल्ला रहा हो। ४ आमन्त्रित, प्रार्थित, बुलाया हुआ।

आक्रन्दिन् (सं० त्रि०) आक्रन्दति, आ-क्रन्द-णिनि। १ रोदनपूर्वक आह्वानकर्ता, रो-रोके बुलानेवाला। २ कलकल करनेवाला, जो चीख़ या चिल्ला रहा हो।

आक्रम (सं० पु०) आ-क्रम-घञ् न वृद्धिः। १ समीप गमन, उपस्थिति, प्राप्ति, रसायी, हासिल, पहुंच। २ अवस्कन्द, आपात, हमला, धावा। ३ अतिभारारोपण, ज्यादा लादनेकी बात। ४ शक्ति, बल, ताक़त, ज़ोम।

आक्रमण (सं० क्ली०) आ-क्रम-ल्युट्। १ अवस्कन्द, हमला। २ दमन, निग्रह, दबाव। ३ प्रसारण, फैलाव। ४ अग्रगमन, बढ़ावढ़ी। आक्रम्यते परलोकोऽनेन करणे घञ्। ५ परलोकप्राप्तिसाधन विद्याकर्मादि। आक्रमति अभिभवति क्षुधाम्, आ-क्रम-अच्। ६ अन्न, अनाज। (वै० त्रि०) ७ निकट उपस्थित होनेवाला, जो नज़दीक आ रहा हो।

आक्रमणीय (सं० त्रि०) १ निकट उपस्थित होने योग्य, जिसके पास जायें। २ आपात पाने योग्य, जिसपर हमला पड़े। ३ आरोहण किया जानेवाला, जो दबाने लायक़ हो।

आक्रमित (सं० त्रि०) आपात किया हुआ, जिसपर हमला पड़ा हो।

आक्रमिता (सं० स्त्री०) प्रौढ़ा नायिकाभेद। यह अपने नायकको सर्वप्रकार वश कर लेती है।

आक्रम्य (सं० अव्य०) आक्रमण करके, हमला मारकर। (त्रि०) आक्रमणीय देखो।

आक्रान्त (सं० त्रि०) आ-क्रम-क्त। १ अधिष्ठित, नज़दीक पहुंचा हुआ। २ पराभूत, हारा हुआ। ३ प्राप्त, पाया हुआ। ४ अधिकृत, जो क़ब्ज़ेमें आ चुका हो। ५ अवस्कन्दित, हमला खाये हुआ। ६ अधःकृत, जो नीचा देख चुका हो। ७ परिवृत, घिरा हुआ। ८ विह्वल, घबराया हुआ। ९ पीड़ित, तकलीफ़ पाये हुआ। १० व्याप्त, भरा हुआ।

आक्रान्तमति (सं० त्रि०) १ मनसा पराभूत, दिलसे हारा हुआ। २ अवगाढ़-हृदय, जो दिलपर धक्का खा चुका हो।

आक्रान्ति (सं० स्त्री०) आ-क्रम-क्तिन्। १ आक्रमण, हमला। २ उत्थान, चढ़ायी। ३ पराभव, हार। ४ बल, ताक़त।

आक्रय (वै० पु०) आपणिक, दुकानदार।

आक्रामक (सं० त्रि०) उपप्लवी, ग़नीम, चढ़ आनेवाला। (स्त्री०) आक्रामिका।

आक्रीड़ (सं० पु०) आक्रीड्यतेऽत्र, आ-क्रीड़-घञ्। १ क्रीड़ास्थान, खेलकी जगह। २ उद्यानादि, बाग़ वग़ैरह। 'पुमानाक्रीड़ उद्यानं राज्ञः साधारणं वनम्।'। (अमर) ३ क्रीड़ा, खेलकूद। ४ करुत्थामके किसी पुत्रका नाम। (त्रि०) आक्रीड़ति, आ-क्रीड़ कर्तरि अच्। ५ विहारशील, खिलाड़ी।

आक्रीड़न (सं० क्ली०) विहार, विलास, खेल, तमाशा।

आक्रीड़िन् (सं० त्रि०) आ-क्रीड़-घिणुन्। क्रीड़ाशील, खिलाड़ी। (स्त्री०) आक्रीड़िनी।

आक्रुष्ट (सं० त्रि०) आक्रुश्यते स्म आ-क्रुश-क्त। १ निन्दित, तिरस्कृत, घुड़का हुआ। २ शब्दित, चिल्लाया हुआ। ३ अपवादित, गाली खाये हुआ। ४ शप्त, कोसा हुआ। (क्ली०) ५ आह्वान, पुकार।

आक्रोश (सं० पु०) आ-क्रुश-घञ्। १ शाप, बद-दुवा। २ निन्दा, धिक्कारत। ३ अपवाद, गाली। ४ आह्वान, पुकार।

आक्रोशक (सं० त्रि०) आक्रोशति, आ-क्रुश-वुञ्। आक्रोशकर्ता, कोसनेवाला।

आक्रोशन (सं० क्ली०) आक्रोश देखो।

आक्रोशनीय (सं० त्रि०) आक्रोश देने योग्य, कोसने क़ाबिल।

आक्रोशपरिषह (सं० पु०) आक्रोशका सहन, गालीको बरदाश्त। जैन-मतमें २२ परिषह (दुःखोंका सहन) मुनिके लिये धारणीय बतलाया है। उनमें १२ वां परिषह आक्रोश-परिषह है। तीव्र मोहनीय कर्मके उदयसे मिथ्यादृष्टि आर्य म्लेच्छ, दुष्ट, पापाचारी, उन्मत्त, गर्विष्ठ प्रभृति मनुष्यों द्वारा

कहे गये क्रोधरूपी अग्निको प्रज्वलित करने और हृदयमें शूलके समान लगनेवाले कठोर वचनोंको यद्यपि मुनिलोग सुनते हैं, तो भी परिणाममें कलुषित नहीं होते। वे यह सोचकर क्षमाभाव धारण करते हैं कि,—'इनके अज्ञान है, हमारे देखनेसे इनके दुःख उपजा है। इसलिये ये विचारे ऐसे वचन कह रहे हैं। इनका कुछ भी अपराध नहीं, हमारे ही अशुभ-कर्मका उदय है।'

आक्रोशित (सं० त्रि०) शापित, कोसा हुआ।

आक्रोशितव्य, आक्रोशनीय देखो।

आक्रोश्य, आक्रोशनीय देखो।

आक्रोष्टृ (सं० पु०) १ आक्रोशकर्ता, कोसनेवाला। २ आह्वानकर्ता, पुकारनेवाला।

आक्लान्त (सं० त्रि०) लगा, भरा या लिपटा हुआ।

आक्लिन्न (सं० त्रि०) १ आर्द्र, तर, जो सूखा न हो। २ कोमल, मुलायम, जो सख्त न हो।

आक्लेद (सं० पु०) आ-क्लिद-घञ्। आर्द्रीभाव, तरी, छिड़काव।

आक्लेदिभाव (सं० पु०) आर्द्रकारित्वके गुणका हेतु।

आक्षद्यूतिक (सं० क्ली०) अक्षद्यूतेन निर्वृत्तम्, ठक्। द्यूत खेलनेमें उत्पन्न हुआ वैर, जुवेका झगड़ा।

आक्षपण (सं० क्ली०) उपवास, अनाहार, फ़ाक़ा-कशी।

आक्षपाटिक (सं० पु०) अक्षपाटे क्रीड़ास्थाने विचार-स्थाने वा नियुक्तः। १ अक्षक्रीड़ाध्यक्ष, जुवेके खेलका मालिक। २ विचाराध्यक्ष, मुनसिफ़। ३ प्राड्विवाक, राजाका प्रतिनिधि विचारक।

आक्षपाद (सं० त्रि०) अक्षपादस्य गौतमस्येदम्, अक्षपाद-अण्। १ गौतम मुनिका मत। अक्षपादे-नोक्तम्, अण्। २ गौतम मुनिका बनाया हुआ शास्त्र, गौतमसूत्र। यह शास्त्र पांच अध्यायमें समाप्त हुआ है। इसमें प्रमाण प्रमेय आदि षोड़श तत्त्व वर्णित हैं। अक्षपाद प्रणीतं वेत्ति, अण्। ३ न्यायशास्त्रज्ञ, नैयायिक, मन्तिकी, मन्तिक़दान्।

आक्षाण (वै० त्रि०) व्याप्यमान, फैला हुआ। "आक्षाणो शूर वज्रिवः।" ऋक् १०।२२।११।

आक्षार (सं० पु०) आ-क्षर-णिच्-घञ्, णिच् लोपः। पुरुषपर अगम्यागमन अथवा स्त्रीपर अगम्य गमनका दोषारोप, तोहमत, इलज़ाम।

आक्षारण (सं० क्ली०) आक्षार देखो।

(स्त्री०) आक्षारणा।

आक्षारित (सं० त्रि०) आ-क्षर-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। १ अगम्य स्त्री-पुरुष विषयक अपवाद द्वारा दूषित, छिनाला करनेका मुलज़िम। २ कलङ्कित, झूठ-मूठका मुलज़िम। ३ अपराधी, गुनहगार। ४ निन्दित, गाली खाये हुआ।

आक्षिक (सं० त्रि०) अक्षैः दीव्यति जयति जितं वा, अक्ष-ठक्। १ द्यूतसम्बन्धीय, जुवेके मुताल्लिक़। २ अक्ष द्वारा जीतनेवाला, जो पासेसे जीत लेता हो। ३ अक्ष द्वारा जित, पांसेसे जीता हुआ। (क्ली०) द्यूतऋण, जुवेमें खोया हुआ रुपया। (पु०) ४ आच्छुकवृक्ष, आलका पेड़।

आक्षिकपण (सं० पु०) ग्लह, बाज़ी, दाव, होड़।

आक्षिकशीधु (सं० पु०) विभीतक और गुड़से बना धातकीपुष्पका मद्य, किसी क़िस्मकी शराब। यह पाण्डुरोगघ्न, बल्य, संग्राहक, लघु, कषाय, मधुर, शीधु, पित्तघ्न और असृक्प्रसादन होता है। (सुश्रुत)

आक्षिकी (सं० स्त्री०) विभीतक-त्वक् और शालि-तण्डुलसे बनी हुई सुरा, किसी क़िस्मकी शराब। यह पाण्डु, शोफ, अर्श, पित्त, अस्र, कफ तथा कुष्टको दूर करती, रुक्ष, दीपन, रेचन, [illegible] होती और कुछ वात बढ़ाती है। (मदनपाल) कोई-कोई तिन्तिड़ीकी सुराको भी आक्षिकी कहते हैं।

आक्षित् (सं० त्रि०) आ-क्षि-क्विप्-तुक्। आवर्तमान, वापिस आनेवाला।

आक्षिपत् (सं० त्रि०) १ फेंकने, मारने या उछालने-वाला। २ अपशब्द कहने या गाली देनेवाला। ३ लज्जित करने या शरमानेवाला। (स्त्री०) आक्षि-पती, आक्षिपन्ती।

आक्षिप्त (सं० त्रि०) आ-क्षिप-क्त। १ फेंका या उछाला हुआ। २ गिराया या दूर किया हुआ। ३ उभारा हुआ। ४ आकृष्ट, लाया या पहुंचाया

हुआ। ५ निन्दित, झिड़का हुआ। ७ सदृश, बराबर।

आक्षिप्तिका (सं० स्त्री०) गीत विशेष, किसी किस्मका गाना। इसे रङ्गमञ्चपर पहुंचनेवाला पात्र गाकर सुनाता है।

आक्षिप्य (सं० अव्य०) अपमान करके, झिड़की देकर।

आक्षीव (सं० पु०) आ-क्षीव-णिच्-अच्, णिच् लोप:। १ शोभनाञ्जन वृक्ष, सहिंजन। (त्रि०) क्षीव-क्त, निपा० क्तस्य अ, क्षीवो मत्त: आ-ईषत् सम्यग्वा, प्रादि समा०। २ अल्प उन्मत्त, किसी कदर मतवाला। ३ सम्यक् उन्मत्त, खूब मतवाला।

आक्षेप (सं० पु०) आ-क्षिप-घञ्। १ भर्त्सन, झिड़की। २ अपवाद, गाली। ३ आकर्षण, कशिश। ४ धनादि अमानत रखना। ५ अर्थालङ्कार विशेष।

"वस्तुनो वक्तुमिष्टस्य विशेष प्रतिपत्तये।
निषेधाभास आक्षेपो वक्ष्यमाणोक्त गोद्विधा॥"
(साहित्यदर्पण)

बोलनेके लिये ईप्सित विषयकी विशेष प्रतिपत्तिके निमित्त (वैलक्षण्य देखानेके लिये) जो निषेधाभास होता, उसीका नाम आक्षेप है। वक्ष्यमाण विषयके किसी स्थलमें सामान्य प्रकारसे सब विषयोंको निषेध-उक्ति रहती, फिर किसी अंशान्तरमें निषेध होता है। इससे पहले यही दो भेद किये गये हैं। इनके सिवा और भी दो भेद हैं, यथा,—उक्त विषयके किसी स्थलमें वस्तुरूप और किसी स्थलमें वस्तुकथनका निषेध। अतएव दोनोंमें दो दो करके आक्षेपके चार भेद होते हैं, यथा,

"अरशरशतविधुराया भणामि सख्या: क्वते किमपि।
क्षणमिह विश्राम्य सखे निर्दयहृदयस्य किं वदाम्यथवा॥"

हे सखे! तुम यहां कुछ देरतक विश्राम करो; कामके सैकड़ों वाणोंसे कातर सखीके लिये तुमसे कुछ कहना है। अथवा तुम निर्दयहृदय हो, तुमसे और क्या कहूं।

यह नायकके निकट विरहिणीकी प्रिय सखी कहती है। इस श्लोकमें 'कामके सैकड़ो वाणोंसे कातर' एवं 'निर्दयहृदय' वाक्य द्वारा सामान्यत: सूचित सखी विरहके वक्ष्यमाण विशेष विषयपर 'ऐसे विरहमें मरणकी ही सम्भावना है' कहनेको सोचकर पीछे बोली,—'क्या कहूं'। यहां नहीं कहूंगी, यह वक्ष्यमाण विशेषका निषेध हो गया। उल्लिखित न होनेपर भी इस बातका भाव समझा जाता है। इसीका नाम निषेधाभास है।

"तव विरहे हरिणाक्षी निरीक्ष्य नवमालिकां विदलितां।
हन्त नितान्तमिदानीमा: किं हतजल्पितैरथवा॥"

यह किसी विरहिणीके नायकसे दूती कहती है। हरिणाक्षी (तुम्हारी नायिका) तुम्हारे विरहमें नवमालिका पुष्पको विकसित देखकर इस समय नितान्त ही खेद और सन्तापका विषय हो गई है, अथवा जो बात कही नहीं जा सकती, उससे और प्रयोजन ही क्या।

इस श्लोकमें, "वह अब जीवित न रहेगी" यह क्रिया अंश ही निषेधाभास है। अप्रिय वाक्य प्रयोगके निन्दाहेतु यह वाक्य सुहृत्का अनिष्टजनक है। निकटमें कहा जा न सकनेसे यही वस्तुका विशेष है।

वालअ णाहं दूती तुअपिओसित्ति णमहवावारो।
सामरइतुज्झअअसोवण्णं धम्मक्खरं भणिमः॥ (प्रा० क्र०)
वालक नाहं दूती तस्या: प्रियोऽसीतिनमव्यापार:।
सां मियते तवायश एवं धर्माक्षरं भणाम:॥ (सं० क्र०)

नायिकाकी भेजी हुई दूती नायकसे कहती है,—हे बालक! मैं दूती नहीं हूं अर्थात् दूतियां जिस तरह नाना मिथ्या प्रवञ्चन वाक्य कहती हैं, मैं वैसी नहीं हूं। नायिकाका प्रिय बना मेरा काम नहीं है। परन्तु उसका मरणान्त क्लेश उठाना तुम्हारे लिये अपयशकी बात है, इसीसे यह धर्मवाक्य तुमसे कहती हूं।

यहां—'मैं दूती नहीं हूं' इस उक्त वाक्यका ही निषेधाभास होता है।

विरहे तव तन्वङ्गी कथं क्षपयतु क्षपाम्।
दारुणव्यवसायस्य पुरस्ते भणितेन किम्॥

यह दूतीकी उक्ति है,—कृशाङ्गी तुम्हारे विरहमें किसतरह रात काट सकती, तुम्हारा व्यवसाय

भतिशय भयङ्कर है। भतएव तुमसे कहकर और क्या होगा।

यहां कहनेका ही निषेधाभास हुआ। प्रथममें सखीका भवश्यम्भावी मरण, द्वितीयमें भप्रक्क वक्तव्यत्वादि, तृतीयमें यथार्थ कथन, और चतुर्थ उदाहरणमें दुःखातिशय ही विशेष है।

६ निवेशन, दाखिला। ७ उपस्थापन, नजदीकका रखना। ८ भनुमान, क़यास जातिशक्तिवादीके मतमें भाक्षेप (भनुमान) से व्यक्तिका बोध होता है।

आक्षेपक (सं॰ त्रि॰) आ-क्षिप्-ण्वुल्। १ निन्दक, धिक्कारत करनेवाला। २ आकर्षक, खींचनेवाला। (पु॰) ३ रोग, बीमारी। ४ वातरोग विशेष, तशन्नुज। कुपित वायुके धमनीमें प्रवेश करने और बार-बार देह कंपानेको भाक्षेपक कहते हैं। इसमें पट्ठे और नसें भपने भाप ऐंठ जाती हैं। कोई भङ्ग भपनी भवस्था-पर नहीं रहता और शरीर टेढ़ा होने लगता है। भाक्षेपक होनेसे घोड़ा भागे बढ़कर पीछे हटता, भङ्ग स्तब्ध पड़ जाता और वेदनार्त देखायी देता है। 'भाक्षेपकोऽनिलव्याधौ व्याधे निन्दाकरेऽपि च।' (विश्व)

भाक्षेपण (सं॰ क्ली॰) आ-क्षिप-ल्युट्। प्रासन, प्रेरण, फेंक, उछाल।

भाक्षेपिन् (सं॰ त्रि॰) भाक्षिपति, आ-क्षिप-णिनि। १ आकर्षकारी, खींचनेवाला। भाक्षेपः सूक्ष्मदृष्ट्या पर्यालोचममस्त्यस्य, इनि। २ सूक्ष्म दृष्टि द्वारा भालोचना कर आकर्षणकर्ता, बारीक बीनीसे देखभालकर खींचनेवाला।

भाक्षेपी, भाक्षेपिन् देखो।

भाक्षैतग्र (सं॰ क्ली॰) भध्यात्ममोह, नवाक़फ़ियत-रूहानी।

भाक्षोट (सं॰ पु॰) आ-भक्ष-भोट। गिरिजाक्षोट वृक्ष, पहाड़ी भखरोटका पेड़। भखरोट देखो। यह मधुर, बल्य स्निग्धोष्ण, वातपित्तघ्न, रक्तदोषहर, शीतल और कफकोपन होता है। (राजनिघण्टु)

भक्षोड़ (सं॰ पु॰) आ-भक्ष-भोड़। भखरोटका पेड़।

भक्षोदन (सं॰ क्ली॰) मृगया, भाखेट, शिकार।

भक्सायिड (भं॰ क्ली॰) द्रव, सुब्ब सुवाव, मोरचा।

यह भक्सिजन और दूसरे धातुके योगसे बनता है। जिस धातुका जो भाक्सायिड होता, वह उसीके नामसे पुकारा भी जाता है।

भाक्सिजन, भक्सिजेन देखो।

भाख (सं॰ पु॰) भाखन्यतेऽनेन, भा-खन-ड। खनित्र, खन्ता, खुरपी।

भाखण (सं॰ त्रि॰) कठोर, सख़्त, कड़ा।

भाखण्डयिठ (सं॰ पु॰) भञ्जक, भेदक, ग़ारतगर, मुख़रिब, बिगाड़ू।

भाखण्डल (सं॰ पु॰) भाखण्डयति परबलम्, भा-खण्ड-णिच् बाहु॰ भलच्, णिच् लोपः। १ दूसरेका बल तोड़नेवाले इन्द्र। २ हन्ता, क़ातिल। (त्रि॰) ३ भेदक, बिगाड़ू। ४ शत्रुनाशक, दुश्मन्‌को बरबाद करनेवाला।

भाखण्डि (सं॰ त्रि॰) भा-खण्ड-इन्। भेदक, तोड़ डालनेवाला।

भाखत (हिं॰ पु॰) १ भक्षत, देवदेवीपर चढ़ाने या भाशीर्वाद देनेका चावल। यह कभी सादा रहता और कभी कुङ्कुम भादिसे रंग लिया जाता है। २ नेगी परजोंको दिया जानेवाला भन्न। यह विवाहादिके समय कोई शुभ कार्य भारम्भ होनेसे पहले बंटता है।

भखता (फ़ा॰ वि॰) बधिया। जिस घोड़े, कुत्ते या बकरेके भण्डकोश चीरकर निकाल लिये जाते, उसे भाखता कहते हैं।

भाखन (सं॰ पु॰) भाखन्यतेऽनेन खन घ। १ खनित्र, खन्ता। (हिं॰ क्रि॰ वि॰) २ क्षण-क्षण, बार-बार।

भाखना (हिं॰ क्रि॰) १ वर्णन करना, बताना। २ आकाङ्क्षा रखना, ख़ाहिश करना। २ भांख लगाना, नजर डालना।

भाखनिक (सं॰ पु॰) भाखन्यतेऽनेन, खन करणे इकन्। १ खनित्र, खन्ता। २ खनक, सुरङ्ग लगाने या कान खोदनेवाला। भा सम्यक् खनति भित्तिं भूमिं वा, आ-खन कर्तरि इकन्। ३ चौर, चोर। ४ शूकर, सूभर। ५ मूषिक, चूहा। (त्रि॰) ६ खननकर्ता, खोदनेवाला।

आखनिकवक (सं॰ पु॰) आखन्यतेऽनेन, आ-खन करणे इकवक। १ खनित्र, खन्ता। आखनति भित्तिं चौरं वा, आ-खन कर्तरि इकवक। २ चौर, चोर। ३ शूकर, सूअर। ४ मूषिक, चूहा। ५ निर्बल व्यक्तिके प्रति वीरत्व प्रकाश करनेवाला पुरुष। (त्रि॰) ६ खननकर्ता, खोदनेवाला।

आखर (वै॰ पु॰) आखन्यते ऽनेन, आ-खन करणे डर। १ खनित्र, खन्ता। २ मृगव्रज, जानवरका भाट। ३ तवेला, अस्तवल।

"सुपर्णा वाचमक्रतोप द्यवाखरे।" (ऋक् १०।९४।५)

(हिं॰ पु॰) ४ अक्षर, हर्फ़।

आखरेष्ठ (वै॰ त्रि॰) आखरमें स्थित, भाटमें रहनेवाला।

आखा (हिं॰ पु॰) १ आचरणका पात्र, किसी क़िस्मकी चलनी। यह बारीक कपड़ेसे मढ़ा रहता और मैदा छाननेके काम आता है। २ अधारी, गठरी। (वि॰) ३ अक्षय, समूचा, जो टूटा-फूटा न हो।

आखात, अखात देखो।

आखातीज (हिं॰ स्त्री॰) अक्षयतृतीया। आखातीजको हिन्दू वट पूजते और ब्राह्मणको व्यजन, कलश आदि द्रव्य प्रदान करते हैं। अक्षयतृतीया देखो।

आखान, आख देखो।

आखानवमी (हिं॰) अक्षयनवमी देखो।

आखिर (फा॰ वि॰) १ अन्त्य, पिछला। (पु॰) २ अन्त, छोर। ३ फल, हासिल। (क्रि॰ वि॰) ४ शेषमें, सबसे पीछे।

आखिरकार (फा॰ क्रि॰-वि॰) शेषमें, सबसे पीछे।

आखिरी (फा॰ वि॰) अन्त्य, पिछला।

आखिल्य (सं॰ क्ली॰) साकल्य, सामग्र्य, सबका सब, कुल।

आखु (सं॰ पु॰) आखनति, आ-खन-कु प्रत्ययस्य डिद्भावश्च। १ मूषिक, चूहा। २ वन्यमूषिक, जङ्गली चूहा। ३ चौर, चोर। ४ शूकर, चोर। ५ खनित्र, खन्ता। कर्मणि कु डित्। ६ देवदारु वृक्ष।

आखुक, आखु देखो।

आखुकरीष (वै॰ क्ली॰) आखोः करीषम्, ६-तत्। मूषिककी शुष्क विष्ठा, चूहेका सूखा मैला।

आखुकर्णपर्णिका (सं॰ स्त्री॰) आखुकर्णाविव पर्णान्यस्याः, बहुव्री॰ वा कप्। क्षुद्रमूषिककर्णी, छोटी मूसाकानी।

आखुकर्णी (सं॰ स्त्री॰) आखोः मूषिकस्य कर्ण इव पर्णमस्याः, ङीप्। १ जलजमूषिककर्णी, पानीकी चूहाकानी। यह ह्रस्व और दीर्घ भेदसे दो तरहकी होती है। छोटी चूहाकानी कटु, उष्ण, कफपित्तहरी तथा आनाहज्वरशूलातिहरी रहती है। (राजनिघण्टु) २ द्रवन्तीक्षुप। ३ दन्तीभेद।

आखुग (सं॰ पु॰) आखुना मूषिकेन गच्छति, आखु-गम-ड। १ मूषिकवाहन गणेश। २ कार्तिकेय।

आखुगन्धी (सं॰ स्त्री॰) कर्पूरहरिद्रा, काफूरी हलदी।

आखुघात (सं॰ पु॰) आखुं हन्ति, आखु-हन बहुल-वचनात् अण् प्रत्ययः। शूद्रादि नीचजाति, चूहे-मारनेवाला कमीना।

आखुजित् (सं॰ स्त्री॰) भूम्यामलकी, भुयिं आंवला।

आखुपर्णी, आखुपर्णिका देखो।

आखुपर्णिका (सं॰ स्त्री॰) आखोः कर्णाविव पर्णमस्याः, शाक॰ बहुव्री॰, वा कप् टाप् अत इत्वम्। १ स्थूलमूषिककर्णी, बड़ी मूसाकानी। २ क्षुद्रदन्ती। ३ कृष्णदन्ती। ४ बृहद्दन्ती। ५ मण्डूकपर्णी।

आखुपाषाण (सं॰ पु॰) आखुनामा पाषाणः, शाक॰ तत्। लौहचुम्बक, सङ्गमिकनातीस। यह स्निग्ध, पारदका नियामक, लौहभेदकर, वीर्य बढ़ानेवाला, कान्तिवर्धन, और त्रिदोष तथा सर्वव्याधिनाशक होता है। किन्तु अशुद्ध रह जानेसे समधातुको बिगाड़ता, दाह उत्पन्न करता और चित्त भटकाता है। उस समय लालास्राव होने लगता, कितनी ही वेदना बढ़ती, बहुत सी व्याधि घेर लेती, तथा मृत्यु भी हो जाती है। तृषा बहुत मालूम पड़ती है। (वैद्यकनिघण्टु)

आखुफला (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रदन्ती।

आखुभुज् (सं० पु०) आखुं भुङ्क्ते, आखु-भुज-क्विप्। १ मूषिकभक्षक बिड़ाल, चूहे खानेवाला बिलाव। २ रक्तापामार्ग, लाल लटजीरा।

आखुमांस (सं० क्ली०) मूषकमांस, चूहेका गोश्त।

आखुरथ (सं० पु०) मूषिकवाहन, चूहेकी गाड़ीपर चढ़नेवाले गणेश।

आखुविष (सं० पु०) दारुमोच, किसी किस्मका ज़हर।

आखुविषजित् (सं० पु०) सप्तपर्णवृक्ष।

आखुविषहा (सं० स्त्री०) आखो मूषिकस्य विषं हन्ति, आखु-विष-हन्-ड-टाप्। १ देवदारुवृक्ष। २ पीतदेवदाली लता।

आखुविषापहा, आखुविषहा देखो।

आखुश्रुति (सं० स्त्री०) क्षुद्र-मूषिककर्णी, छोटी मूसाकानी।

आखूत्कर (सं० पु०) आखुभिरुत्कीर्यते, आखु-उद्-कृ कर्तरिविति कर्मणि अप्। मूषिककी निकाली हुयी मट्टी।

आखूत्थ (सं० त्रि०) आखुभ्य उत्तिष्ठति, आखु-उद्-स्था-क। १ आखुसे उत्थित, आखूद्भव, चूहेसे निकला हुआ। (पु०) २ आखुका उत्थान, चूहोंका निकलना।

आखेट (सं० पु०) आखेटन्ति बिभेति प्राणिनो ऽस्मात्, आ-खिट अपादाने घञ्। १ मृगया, शिकार, अहेर। २ भय, ख़ौफ।

आखेटक (सं० क्ली०) आखेट स्वार्थे कन्। १ मृगया, शिकार। कर्तरि ण्वुल्। २ मृगया जन्तु, शिकारी जानवर। (त्रि०) ३ मृगयु, शिकारी। ४ भयङ्कर, ख़ूंख़ार।

आखेटशीर्षक (सं० क्ली०) आखेटते बिभेति, आ-खिट् कर्तरि अच्; आखेटं शीर्षं यत्र आ कप्। गह्वर, खानिक, कान, सुरङ्ग।

आखेटिक (सं० पु०) आखेटे कुशलम्, ठक्। १ मृगयाकुशल कुक्कुर, शिकारी कुत्ता। (त्रि०) २ मृगयु, शिकारी। ३ भयङ्कर, खौफनाक।

आखेटी (सं० त्रि०) मृगयु, शिकारी।

आखोट (सं० पु०) आखोटति स्खलति गतिराहित्यात्, आ-खुट-अच्। अक्षोटवृक्ष, अखरोटका पेड़। अखरोट देखो।

आखोड़, अखरोट देखो।

आख़ोर (फा० पु०) १ उच्छिष्ट तृण, जो चारा जानवर खाकर छोड़ देता हो। २ असार, मल, रद्दी, कूड़ा। ३ निष्प्रयोजन द्रव्य, निकम्मी चीज़। (वि०) ४ निरर्थक, बेफायद। ५ असार, फोक। ६ मलिन, गन्दा।

आख्यस् (सं० पु०) प्रजापति, दुनियाका मालिक।

आख्या (सं० स्त्री०) आ-ख्या-अङ्, ख्या इत्याकार लोपः टाप्। संज्ञा, रूढ़, वाचकशब्द, इस्म, लकब, तखल्लुस, नाम।

आख्यात (सं० त्रि०) आख्यायते स्म, आ-ख्या कर्मणि क्त। १ कथित, कहा हुआ। 'आह भाषितमुदितं अभिलपितमाख्यातमभिहितं लपितम्।' (अमर) २ पठित, पढ़ा हुआ। ३ प्रकाशित, खोला हुआ। ४ साधा हुआ, गरदाना गया। (क्ली०) ५ क्रियापद, फेल।

आख्यातव्य (सं० त्रि०) १ कथनयोग्य, कहा जानेवाला। २ प्रकाशनयोग्य, ज़ाहिर करने लायक़।

आख्याता, आख्यातृ देखो।

आख्याति (सं० स्त्री०) आ ख्या भावे क्तिन्। १ कथन, बात। कर्मणि क्तिन्। २ कीर्ति, शोहरत। ३ नाम, इस्म, लक़ब।

आख्यातृ (सं० पु०) आ सम्यक् ख्याति, आ-ख्या-तृच्। उपदेशक, बोलने या कहनेवाला।

आख्यान (सं० क्ली०) आ-ख्या भावे ल्युट्। विभाषाख्यानपरिप्रश्नयोरिञ् च। पा ३।३।११०। १ कथन, बयान। २ वक्तृता, बोली। ३ कथा, किस्सा, कहानी। ४ उपन्यास विशेष। इसमें आख्याता हो अपने मुखसे सब बात कहता है, पात्रके बोलनेका कोयी काम नहीं। ५ प्रसिद्ध आख्यान-संज्ञक सर्गयुक्त आर्ष सौपर्ण मैत्रावरुणादि।

"स्वाध्यायं श्रावयेत् पित्र्ये धर्मशास्त्राणि चैव हि।
आख्यानानीतिहासांश्च पुराणानि खिलानि च ॥" (मनु ३।२३२)
'आख्यानानि सौपर्णमैत्रावरुणादीनि।' (कुल्लूक)

आख्यानक (सं० क्ली०) कथा, छोटा किस्सा।

आख्यानकी (सं० स्त्री०) विषयवृत्त विशेष, दण्डकका एक भेद। यह इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्राके योगसे बनती है। इसके विषम चरणमें त, त, ज, ग एवं ग और सममें ज, त, ज, ग तथा ग रहता है।

आख्यापक (सं० त्रि०) कहला देनेवाला, जो ज़ाहिर करा देता हो।

आख्यापन (सं० क्ली०) कहलाना, ज़ाहिर कराना।

आख्यायक (सं० पु०) आख्यायते कथयति, आ-ख्या-ण्वुल्। १ वार्तावह, दूत, नामावर, क़ासिद, एलची। (त्रि०) २ कथक, कहनेवाला।

आख्यायिका (सं० स्त्री०) आ-ख्या-ण्वुल्-टाप् युक्। १ गल्प, किस्सा। २ गल्पकथा विशेष, सच्ची कहानी। इसमें कभी-कभी पात्र भी बोलने लगता है।

आख्यायिन् (सं० त्रि०) आख्याति कथयति, आ-ख्या णिनि युक्। कथक, कहनेवाला।

आख्येय (सं० त्रि०) १ कहा या बयान् किया जाने वाला। २ कथनोपयोगी, कहने लायक़।

आग (हिं० स्त्री०) १ अग्नि, आतिश। २ दाह, जलन। ३ उष्णता, गरमी। ४ कामाग्नि, मुहब्बतका जोश। ५ वत्सल्य प्रेम, बच्चेकी मुहब्बत। ६ ईर्ष्या, हसद। (वि०) ७ अत्युष्ण, निहायत गर्म। (पु०) ८ हलुका अग्रभाग, अगोरा। ९ हलका खड्डा। यह हलकी नाकपर रहता, जिसमें रस्सीसे जुवा बंधता है। (सं० त्रि०) १० आकस्मिक, नागहानी। ११ अकस्मात् होनेवाला, जो एकायेक गुज़रता हो।

आगड़ा (हिं० स्त्री०) मरी हुयी बाल। इसका दाना सूख जाता है।

आगण (हिं० पु०) अग्रहायण, अगहनका महीना।

आगत (सं० त्रि०) आ-गम-क्त। १ उपस्थित, आया या पहुंचा हुआ। २ गुज़रा हुआ। ३ निवास करने या रहनेवाला। ४ प्रत्यावर्तित, वापस आया हुआ। ५ अंशमें पड़ा हुआ, जो अपने हिस्सेमें आया हो। ६ गिरा हुआ, टो आ पड़ा हो। ७ प्राप्त, पाया हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ८ आगमन, आमद।

आगतक्षोभ (सं० त्रि०) व्याकुल, परेशान्, घबराया हुआ।

आगतपतिका (सं० स्त्री०) नायिका विशेष। जिस स्त्रीका पति परदेशसे वापस आता, उसीका नाम आगतपतिका है।

आगतसाध्वस (सं० त्रि०) भयातुर, खौफ़ज़दा, डरा हुआ।

आगत स्वागत (सं० क्ली०) आदर-सत्कार, मेह-मांदारी।

आगति (सं० स्त्री०) आ-गम-क्तिन्। १ आगमन, आमद, अवायी। २ प्राप्ति, हासिल। ३ प्रत्यावर्तन, वापिसी। ४ मूल, जड़। ५ समापत्ति, इत्तेफ़ाक़।

आगत्य (सं० अव्य०) आ-गम-ल्यप्, वा मालोपे तुक्। आकर, पहुंचके।

आगल (सं० पु०) देवघटन, इत्तिफ़ाक़।

आगन्तव्य (सं० त्रि०) १ आगम्य, आनेवाला। २ प्राप्त, हासिल किया हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ३ आगमन, आमद।

आगन्तु (सं० पु०) आ-गम-तुन्। १ अतिथि, पाहुना। २ देवघटन, इत्तेफ़ाक़िया चोट। (त्रि०) ३ आगमनशील, आनेवाला। ४ अवलम्बनशील, सट जानेवाला। ५ वाह्य, बेरूनी, बाहरसे आनेवाला। ६ देवायत्त, इत्तिफ़ाक़ी।

आगन्तुक, आगन्तु देखो।

आगन्तुकज्वर (सं० पु०) अभिघातसे उत्पन्न ज्वर, जो बुख़ार चोटके सबब आया हो।

आगन्तुज (सं० त्रि०) आगन्तोः हठादागतात्जायते, जन-ड। हठात् उत्पन्न, जो एकायेक पैदा हो। यह शब्द रोगादिका विशेषण है।

आगन्तुव्रण (सं० पु०) सद्योव्रण, ताज़ा ज़ख़्म, टटका घाव।

आगम (सं० पु० क्ली०) आ-गम-घ। १ आगमन, आमद, अवायी।

"गुरुवदेवागम एव पूज्यताम्।" (माघ १।१०)

'आगम आगमनमेव।' (मल्लिनाथ)

२ प्राप्ति, आमदनी। ३ उत्पत्ति, पैदायश। आग-म्यते प्राप्यतेऽनेन, आ-गम करणे घ। ४ आमदाम-

भेदादि उपाय, कानूनी तहसील। ५ शास्त्रका परिश्रम, इल्मकी मेहनत। 'प्रज्ञानुरूपशास्त्रपरिश्रमः।' (मल्लिनाथ) व्यवहारमातृकाकार एवं वाचस्पति मिश्रने लिखा, कि आगम शब्दका अर्थ क्रयादि है। ६ तत्त्व आवेदक शास्त्र, जड़ बतानेवाला इल्म। ७ शास्त्रमात्र, मजहबी रिसाला। ८ वेद। ९ मन्त्र। १० तन्त्रशास्त्र।

"आगतं शिववक्त्रात्तु गतञ्च गिरिजामुखम्।
मतञ्च वासुदेवस्य तस्मादागम उच्यते॥"
पदार्थादर्श राघवभट्टधृत (१म पः)।

११ व्याकरणोक्त प्रकृति वा प्रत्ययका अनुपघाती अट् इट् इत्यादि शब्दविशेष। १२ उपस्थिति, पहुंच। १३ योग, जोड़। १४ मार्ग, राह। १५ नदीमुख, दरयाका मुंहाना। १६ सम्पत्तिकी वृद्धि, जायदादकी बढ़ती। १७ नीतिशास्त्र। (त्रि०) १८ निकट जानेवाला, जो पास पहुंच रहा हो।

आगमजानी (हिं०) आगमज्ञानी देखो।

आगमज्ञानी (सं० त्रि०) आगम जान लेनेवाला, जो होनहारको समझ जाता हो।

आगमन (सं० क्ली०) आ-गम भावे ल्युट्। १ आगति, आमद, अवाई।

"अरुणोदय सकुचे कुमुद उडगण ज्योति मलीन।
तिमि तुम्हार आगमन सुनि भये नृपति बलहीन॥" (तुलसी)

२ प्रत्यावर्तन, वापसी। ३ उत्पत्ति, निकास।

आगमनकारण (सं० क्ली०) आगमका हेतु, आनेका सबब।

आगमनतस् (सं० अव्य०) आगमके कारण, आनेसे, आ पहुंचनेके सबब।

आगमनिरपेक्ष (सं० त्रि०) प्रमाणपत्रका भरोसा न रखनेवाला, जो सनदका मुहताज न हो।

आगमनीत (सं० त्रि०) पठित, परीक्षित, पढ़ा या आंचा हुआ।

आगमरहित (सं० त्रि०) १ प्रमाणपत्र न रखनेवाला, जिसके पास सनद न रहे। २ शास्त्रशून्य, मजहबी रसालेसे खाली।

आगमवक्ता (सं० पु०) १ शिव। २ ज्योतिषी, भविष्य कहनेवाला, जो होनहारको बता देता हो।

आगमवत् (सं० त्रि०) आगमोऽस्त्यस्य, आगम अस्त्यर्थे मतुप्, मस्य वत्वम्। १ आगमयुक्त, आ पहुंचनेवाला। (अव्य०) २ वेदकी तरह।

आगमवाणी (सं० स्त्री०) भविष्यवाणी, पेशीनगोयी।

आगमविद्या (सं० स्त्री०) वेदविद्या।

आगमवृद्ध (सं० त्रि०) आगमेन शास्त्रालोचनया वृद्धः प्रवीणः, ३-तत्। शास्त्रालोचना द्वारा मार्जितबुद्धि, जो मजहबी रिसाले पढ़-पढ़के होशियार बन गया हो।

आगमवेद (सं० त्रि०) आगमं वेत्ति, आगम-विद्-अच्, ६-तत्। आगमज्ञ, होनहार जाननेवाला। (स्त्री०) आगमवेदी।

आगमवेदिन् (सं० त्रि०) आगमं वेत्ति, आगम-विद्-णिनि, ६-तत्। १ आगम-वेत्ता, होनहार जाननेवाला। (पु०) २ शङ्कराचार्यके परमगुरु गौड़पादाचार्य।

आगमसापेक्ष (सं० त्रि०) प्रमाणपत्रयुक्त, सनदयाफ्ता।

आगमसोची (हिं० वि०) आगमका ध्यान रखनेवाला, जो होनहारका खयाल रखता हो।

आगमापायिन् (सं० त्रि०) आगमश्च अपायश्च तौ स्तोऽस्य, इनि। उत्पत्ति एवं विनाशशील, पैदा होने और मर जानेवाला।

आगमापायी, आगमापायिन् देखो।

आगमावर्ता (सं० स्त्री०) आगम-मात्रेण प्राप्तिमात्रेण आवर्त्तते कण्डूयनमस्याः, आगम-आ-वृत अपादाने घञ्। १ वृश्चिकाली क्षुप, बढ़न्ता। २ क्षुद्रमेषशृङ्गी, छोटी मेढ़ासींगी।

आगमिक (सं० त्रि०) आगमादागतम् ठञ्। आगमप्राप्त, आया हुआ, आ पहुंचनेवाला।

आगमित (सं० त्रि०) आ-गम स्वार्थे णिच्-क्त इट्, णिच् लोपः। १ अधीत, पठित, पढ़ा हुआ। २ ज्ञात, समझा हुआ। ३ यापित, पहुंचाया हुआ।

आगमिन्, आगामिन् (सं० त्रि०) आ-गम-इनि णित्। १ भावी, आने या होनेवाला। २ सामुद्रिकशास्त्रवेत्ता, हाथकी रेखा देखनेवाला। ३ भविष्यवक्ता, पेशीनगो।

आनमिष्ठ (वै० त्रि०) नम्र या नीचताके उपस्थित होनेवाला, जो भूमीसे या अङ्ग-अङ्ग आ रहा हो।

आगमी, आगमिन् देखो।

आगम्य (सं० त्रि०) १ सुलभ, सुगम, मुमकिन्-उल्-दखल, पहुंचने क़ाबिल। (अव्य०) २ उपस्थित होके, पहुंचकर।

आगर (सं० पु०) आगरति सिञ्चति जलं वर्षायां प्रायेणात्र, आ-गृ सेचने आधारे अप्। १ अमावस्या। वर्षाकालमें अमावस्याको प्रायः वृष्टि होनेसे 'आगर' कहते हैं। (हिं) २ आकर, खान, ढेर, ख़ज़ाना। ३ नमक बनानेका गड्ढा। ४ अर्गल, ब्योंड़ा। ५ गृह, घर। ६ छप्पर। (वि०) ७ उत्तम, बढ़िया। ८ कुशल, होशियार।

आगरबध (हिं० पु०) कण्ठमाला, गलेकी एक बीमारी। इससे गलेमें छोटी-छोटी फुन्सी निकल आती हैं।

आगरा—१ युक्तप्रदेशका एक ज़िला। यह अग्रवण शब्दका अपभ्रंश होता और अक्षा° २६° ४४′ ३०″ तथा २७° २४′ उ० एवं द्राघि० ७७° २८′ तथा ७८° ५′ ४५″ पू०के मध्य पड़ता है। इससे उत्तर मथुरा एवं एटा, पूर्व मैनपुरी तथा इटावा, दक्षिण ढोलपुर एवं ग्वालियर और पश्चिम भरतपुर है। २ अपने ज़िलेकी तहसील। ३ अपने ज़िलेका शहर।

आगरा नगर यमुना नदीके दक्षिण तटपर अवस्थित है। यहां बहुत दिनतक मुसलमान राजाओंकी राजधानी रही। अकबरसे पूर्व प्रथम लोदी-वंशीय मुसलमान सम्राटोंने यहां अवस्थान किया था। इब्राहीम लोदी बाबरसे युद्धमें परास्त हुए। इसके एक वर्ष बाद फतेहपुर-सीकरीमें बाबरने राजपूत-सैन्यको पराभूत किया। इसके पीछेही आगरेमें राजधानी संस्थापित हुई थी। बाबरके परलोक जानेपर उनके पुत्र हुमायूं शेरशाह द्वारा परास्त एवं दूरीभूत किये गये। अन्तमें हुमायूंके पुत्र अकबरने शत्रुवोंको युद्धमें हरा और दिल्लीसे राजधानी उठा आगरेमें संस्थापित की। अकबरके राजत्वकाल इस नगरमें अनेक दुर्ग और मनोहर हर्म्य बने थे। सन् १६५८ ई०को औरङ्गजेब दिल्लीमें अवस्थिति करने लगे। उसी समयसे आगरे नगरका पतन आरम्भ हुआ। १७८४ ई०को यह सेंधियाके हाथ लगा था। परिशेषमें १८०३ ई०को लार्ड लेकने यह स्थान अंगरेजोंके अधिकारभुक्त किया।

आगरेकी अट्टालिका सर्वत्र प्रसिद्ध है। जहांगीरने अपने श्वशुरके स्मरणार्थ जहांगीर-महल नामक एक क़बर निर्माण करवायी थी। मोती मस्जिद, जामा मस्जिद, ख़ास महल, ताजमहल प्रभृति अपूर्व स्थान शाह-जहांके समयमें बनाये गये। जामामस्जिद अर्थात् बृहत् मस्जिद, श्वेत और रक्तवर्ण प्रस्तरसे बनी है। शाह-जहांकी कन्या जहानाराके स्मरणार्थ यह निर्माण की गयी है। जहानारा औरङ्गजेबकी भगिनी रहीं। औरङ्गज़ेबने उनको काराबद्ध किया था। दिल्लीके निकट उनकी कबर स्फटिककी तरह परिष्कार (साफ सुथरे) श्वेत पत्थरसे बनी है।

आगरेका प्रसिद्ध दुर्ग लाल पत्थरका है। इसकी चहारदीवारी ४६ हाथ ऊंची और परिधि अन्यून डेढ़ मील है। क़िलेके भीतर अनेक मकान बने हैं। सबसे पहले दीवान-इ-आम है। इसे औरङ्गजेबने निर्माण कराया था। उसके बाद दीवान, खास, दीवान-खासके बाद खास-महल और खासमहलके दक्षिण जहांगीर-महल है। यह अट्टालिका सुन्दर श्वेत प्रस्तरसे बनी है। मोतीमस्जिद दीवान-आमके उत्तर है। प्रवाद है—एकबार सम्राट् मानसिंहके ऊपर रुष्ट हुये थे। इसलिये मानसिंह क़िलेके ऊपरसे घोड़ा फंदा नीचे कूद पड़े। नीचे जाकर घोड़ेने तत्क्षणात् प्राणत्याग किया था। मानसिंहके इस वीरत्वके स्मरणार्थ अद्यावधि क़िलेके पास पत्थरके घोड़ेका शिर ज़मीन्में गड़ा है। अब क़िलेके पास रेलका ष्टेशन भी बन गया है।

युक्तप्रदेश या केवल भारतवर्ष ही नहीं, ताज-महल भुवन विख्यात है। पत्थरकी नक़्क़ाशी और मकान बनानेकी कारीगरीकी बात उठाते समय ताजमहलका नाम आगे लेना पड़ता है। विचित्र उद्यानके भीतर यह मनोहर क़ब्र खड़ी है। इसमें नीचेसे ऊपरतक श्वेत पत्थर लगा है। कितना समय

व्यतीत हुआ। किन्तु यह आज भी नयी देख पड़ती, मानो कलकी बनी है।

बाहरसे पहले कुछ ऊपर चढ़ने पर उद्यानका द्वार मिलता है। उसके बाद नीचे उतरनेपर बाग़की ज़मीन् है। सामने चौड़ी और पक्की राह निकली है। दोनों तरफ जलकी प्रणाली, बड़े बड़े पुरातन आमके पेड़ और फल-फलके नानाविध वृक्ष हैं। नन्दनवनके सदृश यह स्थान यत्नपूर्वक सजाया गया है। सामने ही ताजमहल है। पहले अनेक प्रशस्त चतुष्कोण पीठ श्वेत प्रस्तरसे बंधे हैं। इसकी चारो ओर कलकत्तेके क़िलेवाले मैदानके मान्यूमेण्ट जैसे चार उच्च स्तम्भ हैं। उनके भीतर ऊपर चढ़नेको पथ बना है। बीचमें ताजमहलका गुम्बज़ है। गुम्बजके नीचे दीवारमें बहुमूल्य रत्न जड़े एवं कितने ही बेलबूंटे कटे हैं। गुम्बजके भीतर धीरे धीरे कोई बात कहनेसे उसी समय ऊपरकी ओर प्रतिध्वनि पर प्रतिध्वनि होती और सातबार वही बात सुन पड़ती है। मध्यस्थलमें उज्ज्वल श्वेत पत्थरकी क़ब्र बनी है। उसके किनारे-किनारे पत्थरका ही कटहरा है। ऊपरकी क़ब्र असली नहीं है। सम्मुख द्वारकी बगलसे नीचे उतरना पड़ता है। इसी जगह सम्राट् शाह-जहांके पास प्रिय-महिषी मुमताज-महलका क़ब्र है। सम्राट् प्रेयसीके प्रणयसिन्धुमें डूब और प्राणके साथ प्राण दे मानो साथ ही सो रहे हैं।

शाहजहांकी प्रियतमा महिषी अर्जुमन्द बानूके स्मरणार्थ ताजमहल निर्मित हुआ है। अर्जुमन्दबानूका दूसरा नाम मुमताजमहल था। सन् १६२८ ई०को मुमताजकी मृत्यु हुई। उसके बाद ही यह मनोहर क़ब्र लोग निर्माण करने लगे। कहते हैं, कि बीस हज़ार कारीगरोंने बीस वर्ष तक कार्य चला ताजमहलको समाप्त किया था। मृत्युके बाद शाह-जहान् भी मुमताज रानीके पास ही गाड़े गये।

ताजमहल देखो।

तुला (रूई) और लवण आगरेका प्रधान वाणिज्य द्रव्य है। कहते हैं—यहां परशुराम अवतीर्ण हुये थे। गत सिपाही विद्रोहके समय आगरेके अंगरेजोंको बहुत कष्ट झेलना पड़ा। उसके बाद करनेल-ग्रेथेने विद्रोहियोंको दमन किया।

आगरी (हिं० पु०) लोनिया, नमक तैयार करनेवाला।

आगल (हिं० पु०) १ अर्गल, व्योंड़ा। (वि०) २ अगला, आगे रहनेवाला। (क्रि० वि०) ३ आगे, सामने।

आगला, अगला देखो।

आगलित (सं० त्रि०) अवसन्न, म्लान, पझमुर्दा, मुरझाया हुआ।

आगवन (हिं० पु०) आगमन, आना।

आगवाह (हिं० पु०) धूम, आगको उड़ा ले जानेवाला धूआं।

आगविष्ठ (वै० त्रि०) निकट आगमन करनेवाला, जो नज़दीक आ रहा हो।

आगवीन (सं० त्रि०) गोः प्रत्यर्पण-पर्यन्तं यः कर्म करोति, आङ् पूर्वाद्गोः कर्मकरेऽर्थे ख प्रत्ययो निपात्यते। 'आगवीनः।' पा ५।२।१४। गृहस्थके घरसे छोड़ देनेपर प्रत्यर्पण पर्यन्त गोका काम करनेवाला, जो लोगोंके मकानसे चरागाहको रवाना करने पर मवेशीकी देख-भाल रखता हो।

आगस् (सं० क्ली०) एति गच्छति दण्डदानात्, इण-असुन् धातोरागादेशश्च। अपराध, दण्ड, पाप, जुर्म, कुसूर, इज़ाब, सज़ा। 'पापापराधयोरागः।' (अमर)

आगस्कृत (सं० त्रि०) आगस्-कृ-क्त। १ अपराधी, मुजरिम। २ वाधित, प्रतिरुद्ध, खिजाया हुआ।

आगस्ती (सं० स्त्री०) अगस्त्यस्येयम्, अगस्त्य-अण्-ङीप् यलोपः। अगस्त्यकी दक्षिण दिक्।

आगस्तीय (सं० त्रि०) अगस्त्याय हितम्, छण् य लोपः। अगस्त्यका हितकारक, अगस्त्यको फ़ायदा पहुंचानेवाला।

आगस्त्य (सं० त्रि०) अगस्त्यस्येदम्, अगस्त्य-यञ्, य लोपः। १ अगस्त्य मुनि सम्बन्धीय। २ दक्षिण दिक्का। (पु०) अगस्त्येरपत्यम्, गर्गादि यञ्। ३ अगस्त्यका अपत्य। अगस्त्य कण्वादि० यञ्। ४ अगस्त्यका गोत्रापत्य। (क्ली०) ५ वकपुष्प। (स्त्री०) आगस्ती।

आगा (सं॰ त्रि॰) १ निकट उपस्थित होनेवाला, जो अपनी ओर आ रहा हो। (हिं॰ पु॰) २ अग्रभाग, अगला हिस्सा। ३ वक्षःस्थल, सीना, छाती। ४ मुख, मुंह। ५ ललाट, मत्था। ६ लिङ्ग। ७ अंगरखे या कुरतेके आगेका हिस्सा। ८ घरके सम्मुखका भाग। १० सेनाका अग्रभाग। ११ नौका अग्रभाग, मांग। १२ गृहके सम्मुखको भूमि। १३ आगेका डेरा। १४ पहननेके कपड़ेका पल्ला। यह आगे रहता है। १५ परिणाम, नतीजा।

आगा अब्दुस्सलाम—ईरानके पोशीदा इमाम। इनका निवासस्थान केखुत रहा। सन् १५८४ ई॰के समय गुजरातके कपूर लोहाना और दूसरे खाजा हिन्दुस्थानी इस्मायिलियोंकी दशांश झोली इनके गांव लेकर पहुंचे। धर्मार्थ प्रेरित व्यक्तियोंका अभाव मिटाने और अपने भारतीय अनुयायियोंको राह देखानेके लिये इन्होंने 'पन्दयाद-जवांमर्दी' नामक पुस्तक लिखा था। उसका अनुवाद सिन्धी तथा गुजराती भाषामें हुआ और बड़े आदरकी दृष्टिसे देखा गया। खाजा पीरोंकी तालिकामें 'पन्दयाद-जवांमर्दी'ने २६ वां स्थान पाया है। इस पुस्तकमें खाजाओंकी प्रार्थना तथा संस्कार करनेका विषय अच्छीतरह लिखा गया है।

आगा इसलाम शाह—वर्तमान हिज हायिनेस आगा खान्के पूर्वज। गुजरातके पीर सदरुद्दीनने इसमायिलिया धर्म सुदृढ़ बनानेके लिये इन्हें अलीका अवतार प्रसिद्ध कर दिया था।

आगाज़ (अ॰ पु॰) आरम्भ, शुरू।

आगातृ (सं॰ पु॰) गान द्वारा प्राप्ति करनेवाला, जो गानेसे हासिल करता हो।

आगाध (सं॰ त्रि॰) अगाधः अतलस्पर्श एव, स्वार्थे अण् आद्यचोवृद्धिः। १ अतलस्पर्श, निहायत गहरा। २ सहजमें समझ न पड़नेवाला, जो आसानीसे समझमें आता न हो।

आगान (सं॰ क्ली॰) १ गानसे प्राप्ति करनेका कौशल, गानेसे कमानेका हुनर। (हिं॰ पु॰) २ वर्णन, बयान्।

आगान्तु (सं॰ पु॰) आ-गम-तुन्, निपा॰ वृद्धिः। अतिथि, मिहमान्, पाहुना।

आगापीछा (हिं॰ पु॰) १ सोच-विचार, खेंचतान। २ आदि-अन्त, भलाई-बुराई। ३ देहकी अगाड़ी और पिछाड़ी।

आगामिक (सं॰ त्रि॰) आगमयति भविष्यद्वस्तु बोधयति, आ-गम-णिच् वृद्धिः, पृषा॰ न ह्रस्वः ण्वुल् णिच् लोपः। भविष्यद्विषय ज्ञापक, आयिन्दे‌की बातके मुताल्लिक्।

आगामिन् (सं॰ त्रि॰) आगमिष्यति, आ-गम-इनि, णित्वाद् वृद्धिः। आगन्तुक होनहार, आगे आनेवाला।

आगामी, आगामिन् देखो।

आगामुक (सं॰ त्रि॰) आ-गम-उकञ्, णित्वादुपधा-वृद्धिः। आगमनशील, आ पहुंचनेवाला।

आगार (सं॰ क्ली॰) अग कुटिलायां गतौ घञ्, आगन्तुमृच्छति, ऋ-अण् उप॰ समा॰। १ गृह, मकान्, घर। २ कोष, खज़ाना। जैन मतमें बाधक नियम एवं व्रतभङ्गको आगार कहते हैं।

आगारगोधिका (सं॰ स्त्री॰) ६-तत्। गृहगोधिका, छिपकली।

आगारदाह (सं॰ पु॰) गृहदाह, आतशज़नी, आतशज़दगी।

आगारदाहिन् (सं॰ त्रि॰) गृहदाही, आतशज़न, आगलगाऊ, घरजलाऊ।

आगारधूम (सं॰ पु॰) आगारं गृहं धूमयति, आगार-धूम तत्यर्थे णिच्-अण्, णिच् लोपः। १ दीपककी कालिमा, चिरागकी कालक। ७-तत्। गृहस्थित धूम, घरका धुआं।

आगारधूमाद्यतैल (सं॰ क्ली॰) तैलभेद, धुवेंकी कालिकका तेल। गृहधूम एक तोले, हरिद्रा दो तोले और सुराकिट्ट (शराबका मैल) तीन तोले तीन पल तेलमें पकानेसे यह औषध बनता है। इसे उपदंशपर लगानेसे बड़ा उपकार होता है।

(चक्रपाणिदत्तकृतसंग्रह)

आगारलोमिका (सं॰ स्त्री॰) गृहलोमिका, शाखा-यष्टिका।

आगाह (फ़ा० वि०) १ विज्ञ, ज्ञानी, ज़ाहिर, आगमनेवाला। (हिं० पु०) २ भविष्यद्विषय, आगे आनेवाला हाल।

आगाही (फ़ा० स्त्री०) विज्ञता, इत्तिला, ख़बर।

आगि, आग देखो।

आगिल (हिं० वि०) १ अगला, आगे रहनेवाला। २ भविष्यत्, होनहार, आगे आनेवाला।

आगिला, आगिल देखो।

आगिवर्त (हिं० पु०) अग्निवर्त, आग बरसानेवाला बादल।

आगी, आग देखो।

आगुर् (वै० स्त्री०) आ-गुर-क्विप्। १ प्रतिज्ञा, अनुमति, रज़ामन्दी। २ प्रशंसा-सम्बन्धीय घोषणा, फ़रयाद-तहसीन्। पुरोहित इसे यज्ञीय संस्कारमें उच्चारण करता है।

आगुरण (सं० क्ली०) आ-गुर-ल्युट् पृषो० गुणा-भावः। उद्यम, काम, काज।

आगुरव, अगुरु देखो।

आगू (सं० स्त्री०) आ सम्यग् गच्छति, आ-गम-क्विप्, मलोपः। १ प्रतिज्ञा, क़ौल। 'सम्विदागूः प्रतिज्ञानम्।' (अमर) (हिं०) आगे देखो।

आगूरण, आगुरण देखो।

आगूर्ण (सं० त्रि०) आ-गुर गूर वा क्त, रेफात् परतया तस्य नः। १ उद्यत, मुस्तैद, काम करनेवाला। (क्ली०) भावे क्त। २ उद्यम, कामकाज।

आगूर्त (वै०) आगूर्ण देखो।

आगूर्तिन् (वै० त्रि०) आगूर्त अनेन, इष्टादि० इनि। कृतोद्यम, कामकाजी।

आगे (हिं० क्रि० वि०) १ अग्रभागमें, थोड़ी दूर। २ सम्मुख, सामने। ३ जीवित अवस्थामें, हाज़िर रहते। ४ इसके अनन्तर, फिर। ५ भविष्यत् समय, आयिन्दा। ६ पीछे, बाद। ७ पूर्व, क़ब्ल, पहले। ८ अधिक, ज़्यादा। ९ क्रोड़पर, गोदमें।

आगौन (हिं०) आगमन देखो।

आग्नापौष्ण (वै० त्रि०) अग्निश्च पूषा च द्वन्द्व आनङ्, अग्नापूषाणौ तौ देवतेऽस्य अण्, द्विपद वृद्धिः वाहु० नेत्। अग्नि एवं सूर्य देवसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आग्नावैष्णव (वै० त्रि०) अग्निश्च विष्णुश्च द्वन्द्व आनङ्, अग्नाविष्णू तौ देवते ऽस्य अण् द्विपद वृद्धिः। अग्नि एवं विष्णु देव सम्बन्धीय।

आग्निक (सं० त्रि०) आग्नेरिदम्, बाहु० ठक्। अग्नि-सम्बन्धी, आतशी।

आग्निदात्तेय (सं० त्रि०) अग्निदत्तस्येदम्, अग्नि-दत्त चातुरर्थ्यां सख्यादि ठञ् द्विपद वृद्धिः। अग्नि-दत्तके समीपस्थ, अग्निदत्तके पासका।

आग्निपद (सं० त्रि०) अग्निपदे दीयते कार्यं वा, व्युष्टादि० अण्। १ अग्निस्थानमें दीयमान। २ अग्नि-स्थानमें कर्तव्य।

आग्निमारुत (सं० त्रि०) अग्निश्च मरुतश्च द्वन्द्व आनङ्, अग्नामारुतौ तौ देवतेऽस्य, अण् द्विपदवृद्धिः। इत्। १ अग्नि एवं मरुत देवसे सम्बन्ध रखनेवाला। (पु०) २ अगस्त्य मुनि। (क्ली०) ३ अग्नि एवं मरुत देवका स्तोत्र विशेष।

आग्निवारुण (सं० त्रि०) अग्निश्च वरुणश्च द्वन्द्व० ईत्, अग्नीवरुणौ तौ देवते अस्य, अण् द्विपद वृद्धिः इत्। अग्नि एवं वरुण देव सम्बन्धीय।

आग्निवेश्य (सं० पु०) अग्निवेश्यस्य ऋषेरपत्यम्, अग्निवेश्य-यञ्। अग्निवेश्यका अपत्य। (स्त्री०) ङीप् यलोपः अग्निवेशी।

आग्निशर्मि (सं० पु०-स्त्री०) अग्निशर्मणोऽपत्यम्, इञ् आद्यच वृद्धिः। अग्निशर्माका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य।

आग्निष्टोमिक (सं० पु०) अग्निष्टोमं क्रतुं वेत्ति तत्प्रतिपादक-ग्रन्थमधीते वा, ठक्। अग्निष्टोमस्य व्याख्यान-स्तत्रभवो वा आग्निष्टोमिकः। (सिद्धान्तकौमुदी) १ अग्निष्टोम यज्ञज्ञात व्यक्ति। २ अग्निष्टोम यज्ञ प्रतिपादक ग्रन्थ पढ़नेवाला। अग्निष्टोम यज्ञस्य व्याख्यानः ग्रन्थः, ठञ्। ३ अग्निष्टोम यज्ञके व्याख्यानका ग्रन्थ। (त्रि०) ४ अग्निष्टोम यज्ञ सम्बन्धीय। ५ अग्निष्टोम यज्ञमें मन्त्र पढ़नेवाला।

आग्निष्टोमिकी (सं० स्त्री०) अग्निष्टोमस्य दक्षिणा, ठक् ङीप्। अग्निष्टोम यज्ञकी दक्षिणा।

आग्निहोत्र (सं० त्रि०) अग्निहोत्रके उपयुक्त।

आग्नीध्र (सं० क्ली०) अग्निमिन्धे, अग्नि-इन्ध-क्विप्, अग्नीत् तस्य शरणं गृहम्, रण् प्रत्ययः। १ यजमानका स्थान। यहां यज्ञीय अग्नि प्रज्वलित किया जाता है। २ यज्ञीय अग्नि जलानेवालेका कार्य। (पु०) ३ साग्निक द्विज, अग्नि प्रज्वलित करनेवाला पुरोहित। ४ स्वायम्भुव मनुके एक पुत्र। ५ प्रियव्रत-राजाके एक पुत्र। (वै० त्रि०) ६ अग्नीध् द्विज सम्बन्धीय।

आग्नीध्रा (सं० स्त्री०) यज्ञीय अग्निकी रक्षा।

आग्नीध्रीय (सं० त्रि०) १ आग्नीध्र वा यज्ञीय अग्निस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला। (पु०) २ आग्नीध्रका अग्नि। ३ आग्नीध्रका उद्यान।

आग्नीध्र्य (सं० त्रि०) आग्नीध्र पुरोहित सम्बन्धीय।

आग्नीध्रा (सं० स्त्री०) आग्नीध्रस्थानमर्हति, यत् टाप्। अग्निस्थितिके योग्य शाला।

आग्नेन्द्र (सं० त्रि०) अग्निश्च इन्द्रश्च द्वन्द्व० आनङ्, तौ देवते अस्य, अण् न परपदवृद्धिः वृद्धाभावाश्च इत्। अग्नि एवं इन्द्र देव सम्बन्धीय। (स्त्री०) आग्नेन्द्री।

आग्नेय (सं० त्रि०) अग्नेरिदं अग्निर्देवता वास्य, ठक्। १ अग्निसम्बन्धी, आतिशी। २ अग्निदेवता-विषयक, अग्नि देवपर चढ़ाया जानेवाला। ३ अग्निसे आगत, आगसे निकला हुआ। अग्नौ अग्न्युद्दीपने साधु ठक्। ४ आग लगनेसे जल्द जल उठनेवाला। लाह, घी, लोबान प्रभृति द्रव्य आग्नेय होते हैं। पाण्डवोंको जलाकर मार डालनेके लिये वारणावतमें लाह वगैरहसे ही घर बनाया गया था। ५ पित्तोद्दीपक,क्षुधाजनन,भूख बढ़ानेवाला। ६ अग्निके समान, आग-जैसा। (क्ली०) ७ कृत्तिका नक्षत्र। कृत्तिका नक्षत्रके देवता अग्नि होते. इसीसे उसे आग्नेय कहते हैं। ८ स्वर्ण, सोना। अग्निके वीर्यसे उत्पन्न होनेपर स्वर्णका नाम आग्नेय पड़ा है। ९ रक्त, खून। रक्तको जठरानलसे निकलने या देहस्थ पित्तरूप अग्निका विकार होनेसे आग्नेय कहा जाता है। १० अग्निष्टुत् सामवेद। ११ स्नान विशेष। भस्म लगाकर नहानेका नाम आग्नेय है। १२ राजाका चरित्र विशेष। १३ अस्त्रविशेष, किसी किस्मका हथियार। १४ बन्दूक वगैरह। जो हथियार आग लगनेसे चलते या जिनसे आतिशी टुकड़े निकलकर चोट मारते, उन्हें आग्नेय कहते हैं। अग्नेरागतम्, ठक्। १५ अग्निप्रकृतिका कीटविशेष। यह कीट चौबीस प्रकारका होता है,— १ कौण्डिल्यक, २ करभक, ३ वर, ४ पत्रवृश्चिक, ५ विनाशिका, ६ ब्रह्मणिका, ७ विन्दुल, ८ भ्रमर, ९ बाह्यकी, १० पिच्चिट, ११ कुम्भ, १२ वर्चःकीट, १३ अरिमेदक, १४ पद्मकीट, १५ दुन्दुभि, १६ मकर, १७ शतपादक, १८ पाञ्चाल, १९ पाकमत्स्य, २० कृष्णतुण्ड, २१ गर्दभी, २२ क्लीत, २३ कृमिसरारी और २४ उत्क्लेशक। यह कीट जिसे काटता, उसको पित्तज रोग हो जाता है। अग्नायी देवता अस्य, ठक् पुंवद्भावः। १६ स्वाहा देवताका स्थालीपाक। १७ अग्निपुराण। १८ ब्राह्मण। १९ घृत। २० अग्निकोण। २१ बारूद वगैरह भड़क उठनेवाली चीज़। २२ ज्वालामुखी पर्वत। २३ प्रतिपत् तिथि। २४ दीपन औषध। (पु०) २५ कार्तिकेय। महादेवका वीर्य अग्निमें गिरने और उससे उत्पन्न होनेके कारण कार्तिकेयका नाम आग्नेय पड़ा है। २६ देशविशेष। इसी देशमें स्वाभाविक अग्निकी उत्पत्ति हुयी थी। यह दक्षिणापथके निकट किष्किन्धा देश समीपस्थ माहिष्मतीपुरसे मिला है। यहीं अग्निने नीलराजकी कन्यासे सौन्दर्यविमोहित हो विवाह किया था। पीछे उसकी रक्षा करनेको अग्नि स्वयं इसी देशमें रहने लगे। इस विषयका विवरण महाभारतके सभापर्वमें लिखा है। २७ अगस्त्य। (स्त्री०) आग्नेयी।

आग्नेयकीट (सं० पु०) आगमें उड़नेवाला कीड़ा। सेंध लगा और चिराग़ बुझा देने कारण चोरको भी आग्नेयकीट कहते हैं।

आग्नेयपुराण (सं० क्ली०) अग्निपुराण।

आग्नेयवायु (सं० पु०) अग्निकोणस्थ समीरण, दखिनहरा।

आग्नेयास्त्र (सं० क्ली०) अस्त्रविशेष, एक हथियार। प्राचीन समय इस अस्त्रके प्रयोगसे अग्निवृष्टि होने लगती थी। अस्त्र देखो।

आग्नेयी (सं० स्त्री०) अग्निकी शुभसूचक छाया।

आग्न्याधानिकी (सं० स्त्री०) अग्न्याधानस्य दक्षिणा, ठक्। अग्न्याधान यज्ञकी दक्षिणा।

आग्न्याधेयिक (सं० त्रि०) अग्न्याधेय सम्बन्धी।

आग्रभोजनिक (सं० पु०) अग्रभोजनं नियतं दीयतेऽस्मै, ठञ्। १ नियत अग्रभोजनदानका सम्प्रदान। २ अग्रदानी ब्राह्मण, श्राद्धका अग्रभोजन द्रव्य लेनेवाला। (त्रि०) ३ सबसे पहले भोजन करनेवाला।

आग्रमास (सं० पु०) चित्रक वृक्ष, चीतका पेड़।

आग्रयण (सं० पु०) आग्रं अयनं भोजनं शस्यादेर्येन, शकन्ध्वादि० अकारलोपः। १ नूतन शस्य लानेके लिये साग्निक-कर्तव्य यज्ञविशेष, शस्यके पाकान्तमें समाधेय यागविशेष, नवशस्येष्टि, नवान्न-विधान। आश्वलायन-श्रौतसूत्रमें इसका विशेष विवरण लिखा है। वर्षामें सावां, हेमन्तमें व्रीहि और वसन्तमें यवसे आग्रयण यज्ञ किया जाता है। २ अग्निविशेष। (क्ली०) ३ वर्षा ऋतुके अन्तमें नव फलोंका हवन। (स्त्री०) आग्रयणी।

आग्रस्त (सं० त्रि०) विद्ध, सच्छिद्र, छेदा हुआ, जिसमें छेद रहे।

आग्रह (सं० पु०) आगृह्य वशीभूयते मनो येन, आ-ग्रह-अप्। १ आवेश, हौसला। २ आसक्ति, खिंचाव। ३ अभिनिवेश, मुस्तैदी। ४ आश्रम, ठिकाना। ५ अनुग्रह, मेहरबानी। ६ ग्रहण, गिरफ्तारी, पकड़। ७ आक्रमण, हमला। ८ उत्कर्षसाधन, सबक़त ले जानेका काम, बढ़ाबढ़ी। ९ संवर्धन, हिमायत। १० साहस, हिम्मत। ११ हठ, ज़िद।

आग्रहयण (सं० त्रि०) अग्रहायण मास सम्बन्धी, अगहनवाला।

आग्रहायण (सं० पु०) अग्रहायणी मृगशिरो नक्षत्रम्; मृगशिरस्तस्मिन्वाग्रहायणी, तया युक्ता पौर्णमासी। अग्रहायण मास, चान्द्रमार्गशीर्ष मास, अगहनका महीना।

आग्रहायणक (सं० क्ली०) आग्रहायण्यां देयं ऋणम्, आग्रहायणी-चात्-वुञ्। १ अग्रहायण मासकी पूर्णिमाको दिया जानेवाला ऋण, जो क़र्ज़ अगहन सुदी पूरनमासीको अदा हो। (त्रि०) २ अग्रहायण मासकी पूर्णमासीको दिया जानेवाला।

आग्रहायणिक (सं० क्ली०) आग्रहायण्यां देयं ऋणम्, आग्रहायणी-ठञ्। अग्रहायण मासकी पूर्णिमाको दातव्य ऋण, अगहन सुदी पूरनमासीको चुकाया जानेवाला क़र्ज़। (पु०) २ आग्रहायणी पौर्णमासीयुक्त मास, अगहनका महीना। मतभेदसे यही वत्सरका प्रथम मास है। (त्रि०) ३ अग्रहायणकी पूर्णिमाको दिया जानेवाला।

आग्रहायणी (सं० स्त्री०) अग्रे हायनमस्याः, प्रज्ञादि० अण्-ङीप्। संवत्सराग्रहायणीभ्याञ्च। पा ४।३।५०। १ अग्रहायण मासकी पूर्णिमा, अगहन महीनेकी पूरनमासी। २ पाकयज्ञ विशेष। ३ मृगशिरा नक्षत्र।

आग्रहारिक (सं० त्रि०) अग्रहारोऽग्रभागो नियतं दीयते ऽस्मै, ठञ्। १ अग्रदानी। २ अग्रहार लेनेवाला।

आग्राहिका (सं० स्त्री०) अनुग्रह, संवर्धन, साहाय्य, मेहरबानी, हिमायत, मदद।

आग्रही (सं० त्रि०) आग्रह करनेवाला, ज़िद्दी, जो दूसरेकी बात मानता न हो।

आग्रायण (सं० पु०) अग्रनाम्नः ऋषेः गोत्रापत्यम्, नडादि० फक्। १ अग्रनामक ऋषिके गोत्रापत्य। यह बड़े वैयाकरण रहे। अग्रे अयनं शस्यस्य अस्यस्य, अण्। २ नवशस्येष्टि, नवान्न निमित्त साग्निक कर्तव्य यागविशेष।

आग्रायणेष्टि (सं० स्त्री०) आग्रायण यज्ञका उत्सव, नवान्नका जलसा।

आघ (हिं० पु०) अर्घ, मूल्य, दाम, क़ीमत।

आघट्टक (सं० पु०) आघट्टयति रोगान्, आघट्टण्वुल्। १ रक्त अपामार्ग क्षुप, लाल चिचड़ीका पेड़। २ घर्षक, रगड़नेवाला। ३ घर्षण उत्पन्न करनेवाला, जिससे रगड़ लग जाये।

आघट्टन (सं० क्ली०) घर्षण, मर्दन, रगड़, मालिश। (स्त्री०) आघट्टना।

आघट्टित (सं० त्रि०) आ-घट्ट-क्त इट्। मार्जित, चालित, रगड़ा या हिलाया हुआ।

आघमर्षण (सं० क्ली०) अघमर्षणो हितम्, अण्। पापनाशके लिये हितकर सूक्त विशेष।

आघर्ष (सं० पु०) आ-घृष-घञ्। १ मर्दन, मालिश। २ मन्थन, मथायी।

आघर्षण (सं० त्रि०) १ विदारक, खुरच लेनेवाला। (क्ली०) २ मर्दन, रगड़।

आघर्षणी (सं० स्त्री०) लोममयी मार्जनी, बालोंकी कूंची।

आघर्षित (सं० त्रि०) मार्जित, रगड़ा हुआ।

आघाट (सं० पु०) आ-हन कर्तरि संज्ञायां घञ्, पृषो० तस्य टः। १ अपामार्ग, चिचड़ी। २ वाद्य-विशेष, एक बाजा। यह नाचनेवालेके साथ ही साथ बजाया जाता है। ३ झल्लक, जलाजल, झांझ, मंजीरा, खड़ताल। ४ सीमा, हद। (त्रि०) ५ आघात-कर्ता, चोटीला।

आघाटि (वै० पु०) झल्लक, झांझ, मंजीरा।

आघाटिन् (सं० त्रि०) आ-हन-णिनि, पृषो० तस्य टः। आघातकर्ता, चोट करनेवाला।

आघात (सं० पु०) आ-हन-घञ्, नस्य तः हस्य घश्च। १ वध, क़त्ल। २ आहनन, ठोकर, धक्का। ३ घात, ज़ख़म। ४ ताड़न, मारपीट। ५ ताड़ना देनेवाला, जो मारता हो। ६ मूत्रसङ्ग, हबसुलबौल, पेशाबकी रोक। ७ अभाग्य, कमबख़्ती। आधारे घञ्। ८ वधस्थान, मक़तल, बूचड़ख़ाना।

आघातज्वर (सं० पु०) अभिघात-जन्य ज्वर, चोटसे आनेवाला बोख़ार।

आघातन (सं० क्ली०) आहन्यते ऽत्र, आ-हन स्वार्थे णिच् आधारे ल्युट्, णिच् लोपः। १ वधस्थान, क़त्लगाह। भावे ल्युट्। २ हनन, मारपीट।

आघार (सं० पु०) आघ्रियते वह्नौ सिच्यते, आ-घृ कर्मणि घञ्। १ घृत, घी। भावे घञ्। १ ज्वालित अग्निमें वायुकोणसे आरम्भ कर आग्नेयकोण और नैऋत कोणसे आरम्भ कर ऐशानी दिक् पर्यन्त अविच्छेद धाराक्रमपर घृत-सेचन। इसमें 'अग्नये स्वाहा' एवं 'सोमाय स्वाहा' मन्त्र पढ़ा जाता है। ऋग्वेदी उपरोक्त मन्त्र मन ही मन पढ़ते, किन्तु यजुर्वेदी उच्चैःस्वरसे उच्चारण करते हैं।

आघी (हिं० स्त्री०) १ ब्याजके स्थानमें दिया जाने-वाला अन्न। खेतकी फ़सल तैयार होनेपर किसान महाजनको यह सूद देता है। २ ब्याजके स्थानमें अन्नका लेनदेन।

आघु, आघ देखो।

आघूर्ण, आघूर्णित देखो।

आघूर्णन (सं० क्ली०) १ लोठन, परिभ्रमण, गर्दिश, चक्कर, घुमाव, लुढ़काव। २ चाञ्चल्य, आन्दोलन, बेसबातो, तजलजुल, डांवाडोली।

आघूर्णित (सं० त्रि०) आ-घूर्ण-क्त इट्। १ चलित, चक्कर काटनेवाला। २ भ्रान्त, भटका हुआ।

आघृणि (सं० पु०) १ क्रोध, ग़ुस्सा। २ पूषा देव। (त्रि०) ३ प्रज्वलित, आगकी तरह भभकनेवाला। ४ प्रदीप्त, चमकदार।

आघृणिवसु (वै० त्रि०) १ प्रज्वलित, आगसे भरा हुआ। २ अधिक धनसम्पन्न, निहायत दौलतमन्द। (पु०) ३ अग्नि।

आघोष (सं० पु०) अघोषण देखो।

आघोषण (सं० क्ली०) आ-घुष-ल्युट्। सकल स्थानमें प्रचारके लिये उच्चैःस्वरसे शब्द करना, आह्वान, आम-न्त्रण, मुनाजात, पुकार।

आघ्राण (सं० त्रि०) आ-घ्रा-क्त, तकारस्य नः, रेफात् परतया णत्वम्। १ गृहीत-गन्ध, सूंघा हुआ। २ तृप्त, आसूदा, छका हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ३ गन्ध-ग्रहण, सूंघायी। ४ तृप्ति, आसूदगी, छकाछकी।

आघ्रात (सं० त्रि०) आघ्रायते स्म, आघ्रा कर्मणि क्त वा तस्य नत्वाभावः। १ गृहीतगन्ध, सूंघा हुआ। २ तृप्त, आसूदा। (पु०) ३ ग्रहण विशेष, किसी क़िस्मका कुसूफ़। इसमें चन्द्र या सूर्यमण्डल एक ओर मलिन पड़ जाता है। आघ्रात-ग्रहण लगनेसे सुवृष्टि होती है।

आघ्रेय (सं० त्रि०) आ-घ्रा-यत्। १ घ्राण द्वारा ग्राह्य, सूंघा जा सकनेवाला। २ घ्राण करने योग्य, सूंघने क़ाबिल।

आङ् (सं० अव्य०) आ आङ्० डाङ्, प्रयोगे तस्य ङित्वम्। आ शब्दार्थ। इस अव्ययका विवरण आ शब्दमें देखो।

आङ्कुशायन (सं० त्रि०) अङ्कुशेन निर्वृत्तम्, अङ्कुश पक्षादि० फक्। १ अङ्कुश द्वारा निर्वृत्त वा निष्पादित, जो आंकुसके ज़रिये पूरा पड़ा हो।

आङ्कुशिक (सं० त्रि०) अङ्कुश प्रहरणमस्य, ठक्। अङ्कुश प्रहारयुक्त, आंकुसकी मारवाला।

आङ्गी (सं० स्त्री०) मृदङ्ग, तम्बूर, तबला, ढोलक।

आङ्ग (सं० क्लो०) अङ्ग स्वार्थे-अण्। कोमलाङ्ग, नाज़ुक अज़ो। २ अङ्गदेशजात द्रव्य, अङ्ग मुल्कमें पैदा हुई चीज़। ३ अङ्गदेशके नृपति। ४ व्याकरण प्रसिद्ध अङ्गके अधिकारसे विहित कार्य। (त्रि०) अङ्गे भवम्, अण्। ५ अङ्गदेशजात, अङ्ग मुल्कमें पैदा हुआ। ६ व्याकरणमें—अङ्गाधिकार सम्बन्धी। ७ शारीरिक, जिस्मानी। ७ नाटकके नीच व्यक्तियोंसे सम्बन्ध रखनेवाला, स्वांगके छोटे लोगोंसे मुतअल्लिक़।

आङ्गक (सं० त्रि०) अङ्गेषु जनपदेषु भवम्, वुञ्। १ अङ्गदेश-जात, अङ्ग मुल्कमें पैदा हुआ। अङ्गाः क्षत्रियाः तद्देश नृपतयोः भक्तिरस्य, वुञ्। २ अङ्गदेशके क्षत्रियोंका सेवक। (पु०) ३ अङ्गदेशके राजा। ४ अङ्गदेशका अधिवासी।

आङ्गदी (सं० स्त्री०) अङ्गदके राज्यकी राजधानी।

आङ्गविद्य (सं० त्रि) अङ्गं अङ्गनाम विद्यां वेद, अङ्ग विद्या-अण्। १ व्याकरणादि अङ्गविद्या जाननेवाला। शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छन्दःसमूह वेदका अङ्ग होनेसे अङ्गविद्या कहाता है। उपरोक्त सकल विद्याके जाननेवालेको ही आङ्गविद्य कहते हैं। अङ्गविद्यायां भवम्, अण्। २ अङ्गविद्यादि जात, अङ्गविद्या आदिसे पैदा। (क्लो०) तद्व्याख्यानो ग्रन्थः, ऋगयनादि अण्। ३ अङ्गविद्याका व्याख्यान-ग्रन्थ।

आङ्गार (सं० क्लो०) अङ्गाराणां समूहः, भिक्षादि० अण्। अङ्गारसमूह, अङ्गारका ढेर।

आङ्गिक (सं० पु०) अङ्गेन अङ्गचालनेन निर्वृत्तम्, ठक्। १ भावप्रकाशक अङ्गनिष्पन्न नटादिका भ्रूविक्षेपादि। आलङ्कारिकोंके मतसे भावप्रकाशक भ्रूविक्षेपादि आङ्गिक, वाचिक, आहार्य और सात्त्विक चार प्रकारका होता है। आङ्गिक अङ्ग, वाचिक वचन, आहार्य वेशभूषा और सात्त्विक स्वभावसे बनता है। २ स्त्रियोंका हाव, भाव, भ्रूभङ्गि प्रभृति चेष्टाविशेष, औरतोंको चटक-मटक। अङ्गं मृदङ्गं तद्वाद्यं शिल्पमस्य, ठक्। ३ मृदङ्ग बजानेवाला, तबलची। ४ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़। (त्रि०) ५ शारीरिक, सशरीर, जिस्मानी, बदनी। ६ सङ्केत-सूचित, नक़ल करके देखाया हुआ।

आङ्गिरस (सं० पु०) अङ्गिरसोऽपत्यम् अङ्गिरस्-अण्। अङ्गिरा ऋषिका सन्तान। अङ्गिराके तीन पुत्र रहे—बृहस्पति, उतथ्य और संवर्त। अङ्गिरसा दृष्टं साम अण्। २ अथर्ववेदोक्त सूक्तविशेष। अथर्ववेद देखो। अङ्गिनां अङ्गानाञ्च रसः सारः, स्वार्थे अण्। ३ आत्मा, रूह। (त्रि०) ४ अङ्गिरा ऋषिसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो अङ्गिरासे पैदा हो।

आङ्गिरसेश्वर (सं० पु०) आङ्गिरसेन प्रतिष्ठित ईश्वरः, शाक० ३-तत्। काशीस्थ शिवलिङ्ग विशेष। इसे आङ्गिरसने प्रतिष्ठित किया था।

आङ्गुरिक, आङ्गुलिक देखो।

आङ्गुलिक (सं० त्रि०) अङ्गुलि-ठक् वा रत्वम्। अङ्गुलि-सदृश, अङ्गुश्त-जैसा।

आङ्गूष (वै० पु०) आङ् पूर्वात् घुष् कर्मणि घञ्। स्तोत्र, स्तोम, आघोष।

"एनाङ्गूषेण वयमिन्द्रवन्तः।" ऋक् १।१०५।१९।

आङ्गूष्य (वै० त्रि०) १ स्तोत्रविषयक, जोरसे तारीफ़ करनेवाला। २ प्रशं[illegible]तारीफ़ करने लायक़।

आङ्ग्र (सं० त्रि०) [illegible] आङ्गम्, चतुरर्थ्यां सङ्काशादि० ण्य। [illegible] (क्लो०) आम्रकटस्य।

आच (हिं० पु०) [illegible]

आचचाण (सं० [illegible] अर्घ, मूल्य०ष्टे, आ-चक्ष-शानच्। व्याख्यानकर्ता, [illegible]) आला।

आचक्षुस् (सं० पु०) आ-चक्ष बाहु० उसि। विद्वान् पुरुष, पण्डित, इल्मदार, देख भालके काम करनेवाला आदमी।

आचतुर (सं० अव्य०) चतुः पर्यन्तम्, अव्ययी टच्। चार पुरुष पर्यन्त, चार पीढ़ी तक।

आचतुर्य (सं० क्लो०) अपाटव, बेवक़ूफ़ी।

आचम (सं० पु०) आ-चम-अच्। आचमन।

आचमन (सं॰ क्ली॰) आ-चम भावे-ल्युट्। १ क्लीवेर, कसा घास। २ भोजनान्त मुखक्षालन, भोजनके बाद मुंहका धोना। ३ पूजादिके पूर्व हाथको गोकर्णाकार बना और उसमें जल रख तीन बार पान एवं ओष्ठ द्वयको दो बार मार्जन करके यथा स्थान हस्त प्रदान करना। ४ कर्ण संस्कारक अङ्ग विशेष। ५ क्रिया विशेष। ६ आचमनका जल। भरद्वाज मुनिने आचमनका ऐसा नियम बताया है—दक्षिण हस्तकी अङ्गुलियोंके पर्व सरल और विस्तृत करके हाथ गोकर्णाकार बनाये एवं अङ्गुलि परस्पर संलग्न रखे। इसी अवस्था-पर एक मटर डूबने लायक जल उसमें ले तथा अङ्गुष्ठ एवं कनिष्ठा दो अङ्गुलि छोड़ ब्राह्मणको "ॐ विष्णु" मन्त्रद्वारा तीन बार जल पीना चाहिये।

कात्यायनने लिखा है—तीन बार उपरोक्त प्रकारसे जलपान करके ओष्ठद्वयको दो बार मार्जनपूर्वक मुखके ऊपर हाथ रखे। पीछे एकबार हाथ धो डाले। फिर अङ्गुष्ठ एवं तर्जनी इन दोनों अङ्गुलिके अग्रभाग संलग्न करके नासिकाद्वयको स्पर्श करते हैं। उसके बाद अङ्गुष्ठ और अनामिकासे दोनों आंख एवं दोनो कान छू लेते हैं। तदनन्तर नाभि, वक्षःस्थल, मस्तक एवं स्कन्धद्वयपर हाथ लगाये।

तान्त्रिक संध्यामें—"आत्मतत्त्वाय स्वाहा, विद्यातत्त्वाय स्वाहा, शिवतत्त्वाय स्वाहा", मन्त्रद्वारा तीन बार जलपान करना पड़ता है। काली, तारा एवं विष्णुपूजाके लिये पृथक् रूप आचमनका विधि है। देवल कहते हैं—चलते फिरते, सोते-पड़ते, हंसते-बोलते, कांपते-बांपते या छाती देखते-भालते, आचमन करना न चाहिये। बाल, धोतीके नीचेका भाग या मृत्तिका स्पर्श करके भी आचमन करना मना है।

आचमनक (सं॰ क्ली॰) आचमनस्य कं जलमत्र। १ निष्ठीवनपात्र, पीकदान। आचम्यते अनेन, करणे ल्युट् स्वार्थे कन्। २ आचमनका जलादि, कुल्ली करनेका पानी।

आचमनी (हिं॰ स्त्री॰) आचमन करनेका पात्र, जिस चीजसे पूजाके समय जल मुंहमें फेंका जाये। आचमनी छोटे चमच-जैसी पीतल या तांबेकी बनती है। यह पञ्चपात्रमें रहती और आचमन करने या चरणामृत देनेके काम आता है।

आचमनीय (सं॰ क्ली॰) आचमनाय दीयते द्रव्याद्र, आ-चम-करणे बाहु॰ अनीयर् वा। १ आचमनके निमित्त देय जातिफलादि चूर्ण मिश्रित छः पल परिमित जल, कुल्ली करनेको दिया जानेवाला पानी। कर्मणि अनीयर्। २ पेय जल, पीनेका पानी। (त्रि॰) ३ आचमनार्थ व्यवहृत, कुल्ली करनेमें लगनेवाला।

आचमित (सं॰ त्रि॰) आचमन किया हुआ, जो पी लिया गया हो।

आचम्य (सं॰ क्ली॰) आ-चम-यत्। १ आचमनके योग्य जलादि, कुल्ला करने क़ाबिल पानी। (अव्य॰) आ-चम-ल्यप्। २ आचमन करके, कुल्ली डालकर।

आचय (सं॰ पु॰) आ-चि-अच्। १ दूरस्थ पुष्पादि-का चयन, दूरसे फूल वगैरहका तोड़ लाना। २ समूह, ढेर।

आचयक (सं॰ त्रि॰) आचये नियुक्तः, आचय आकर्षादि॰ कन्। चयनमें नियुक्त, फूल वगैरह तोड़नेका काम करनेवाला।

आचरज (हिं॰) आश्चर्य देखो।

आचरजित (हिं॰) आश्चर्यित देखो।

आचरण (सं॰ क्ली॰) आ-चर-ल्युट्। १ आचार, चाल-चलन। २ उपस्थिति, आमद पहुंच। ३ आचार-का नियम, चलनका तरीक़। करणे ल्युट्। ४ रथ, शकट, गाड़ी।

आचरणीय (सं॰ त्रि॰) आ-चर-अनीयर्। १ अनुष्ठेय, करने क़ाबिल। २ उपयुक्त, वाजिब।

आचरन (हिं॰) आचरण देखो।

आचरना (हिं॰ क्रि॰) आचरण करना, व्यवहार बांधना, चलन बनाना।

आचरित (सं॰ क्ली॰) आ-चर भावे क्त इट्। १ आचार, चलन। २ ऋणीसे अर्थ लेनेका उपाय विशेष, कर्ज-दारसे रुपया वसूल करनेकी तरकीब। (त्रि॰) कर्मणि

क्त। ३ अनुष्ठित, दस्तूरके तौरपर किया हुआ। ४ साधारण, मामूली। ५ नियम द्वारा नियत, कायदेसे ठहराया हुआ।

आचरितव्य, आचरणीय देखो।

आचर्य (सं० क्लो०) आचर्यते यत्र, आ-चर आधारे यत्। १ गमनके योग्य स्थान, जाने लायक जगह। कर्मणि यत्। २ आचरणीय कर्म, करने काबिल काम। ३ शुभकर्म, नेक काम। (वि०) ४ उपस्थित होने योग्य, पहुंचने लायक। ५ कर्तव्य, करने काबिल।

आचान, आचानक, अचान, अचानक देखो।

आचान्त (सं० त्रि०) आ-चम-क्त। १ आचमन-कर्ता, कुल्ली करनेवाला। २ कृताचमन, आचमन किया हुआ।

आचाम (सं० पु०) आ-चम भावे घञ् वृद्धिः। १ आचमन, गरारा, कुल्ला। भक्तमण्ड, भातका मांड़। ३ भक्ष्य वस्तु, खानेकी चीज।

आचामक (सं० त्रि०) आचमनकर्ता, कुल्ली करनेवाला।

आचामनक, आचमनक देखो।

आचाम्य (सं० क्लो०) १ आचमन-कार्य, कुल्ली करनेका काम। २ आचमनका जल, कुल्ली करनेका पानी। ३ आचमन, कुल्ला। (त्रि०) ४ आचमनमें काम आनेवाला, जो कुल्ली करनेमें लगता हो।

आचार (सं० पु०) आ-चर-भावे घञ्। १ आचरण, चालचलन। २ अनुष्ठान, काम। ३ नियम, तरीक। ४ पद्धति, रिवाज। ५ सदाचरण, भली चाल।

५ बम्बई प्रान्तके रत्नागिरि जिलेकी मालवन तहसीलका एक ग्राम। यह मालवनसे उत्तर दश मील लगता है। इसमें रामेश्वरका मन्दिर बना, जिसकी चारो ओर पत्थरकी दीवार और पोख़ता अहाता खिंचा है। विश्राम-गृह इतना लम्बा चौड़ा है, कि सब जातिके हिन्दू उसमें रह सकते हैं। रामनवमीके अवसर पर निकटस्थ ग्रामोंसे हजारो आदमी वार्षिकोत्सव देखने आते हैं। सन् १६७४ ई०को कोल्हापुरके शम्भु महाराजने जो दानपत्र लिखा, उसके अनुसार इस ग्रामकी कोई ढाई हजार रुपये सालकी आमदनी मन्दिरके ही खर्चमें लगती है।

आचारज (हिं०) आचार्य देखो।

आचारजी (हिं० स्त्री०) आचार्यका कार्य, पुरोहितायी।

आचारतन्त्र (सं० क्लो०) बौद्धोंके चार तन्त्रोंमें एक।

आचारदीप (सं० पु०) आचारार्थः नीराजनार्थो दीपः १ नीराजनके निमित्त दीप, सफायीका चिराग। २ आरतीका दीया। ३ राजाओंके वाजि-नीराजनका प्रदीप। ४ नागदेव भट्ट-प्रणीत आचारनिर्णय विषयक ग्रन्थ विशेष।

आचारभ्रष्ट (सं० त्रि०) स्वधर्मत्यागी, बदचलन।

आचारवत् (सं० त्रि०) आचारः शास्त्रविहितानुकरणीयत्वेन सोऽस्त्यस्य, मतुप् मस्य वत्वम्। शास्त्रोक्त अनुष्ठानयुक्त, नेकचलन। (स्त्री०) आचारवती।

आचारवर्जित (सं० त्रि०) आचारेण वेद-स्मृत्यादि सदनुष्ठानेन वर्जितम्, ३-तत्। १ शास्त्रोक्त आचारहीन, खिलाफ़-शरियता। २ बहिष्कृत, अपांक्तेय, खारिज, निकम्मा।

आचारवान्, आचारवत् देखो।

आचार-विचार (सं० पु०) चाल-चलन, राह-रस्म, कामकाज।

आचारविरुद्ध (सं० त्रि०) पद्धतिके प्रतिकूल, खिलाफ़-शरियता।

आचारवेद (सं० त्रि०) आचारं वेत्ति, विद्-टच्। आचारज्ञ, राह-रस्म जाननेवाला। (स्त्री०) आचारवेदी।

आचारवेदिन्, आचारवेद देखो।

आचारवेदी (सं० स्त्री०) आचारस्य वेदीव। १ पुण्यभूमि, अच्छी जगह। २ आर्यावर्त देश।

आचारहीन, आचारभ्रष्ट देखो।

आचाराङ्ग (सं० क्लो०) आचारो ऽङ्गमिव। दृष्टिवाद, जैनमतसे—द्वादश अङ्गोंके मध्य अङ्ग विशेष। द्वादशाङ्ग देखो।

आचारिक (सं० त्रि०) १ चिरकाल-भुक्त, अनादि-परम्पराप्राप्त, क़दीमी, रिवाजी। (क्लो०) २ नियम विशेष, कोई क़ायदा। इससे भोजन, पथ्यापथ्य, प्राणधारणके क्रम और स्वास्थ्यकी रक्षा रखते हैं।

आचारिन् (सं० त्रि०) आचरति यथाशास्त्रम्, आ-

५ आचारके सम्बन्धमें शास्त्रोंमें कहा है—"धर्मोन्नायकाः सर्व एव शरीरव्यापाराः आचारपदप्रतिपाद्यतामापद्यन्ते। धर्मसाधनानां च शरीरेणैवाऽतिसन्निकृष्टो विद्यते सम्बन्ध इति शारीर शुभव्यापारलक्षणः सदाचारः प्रथमधर्मत्वेनोपवर्णितः।"

अर्थात् धर्मकी उन्नति करनेवाले सब प्रकारके शारीरिक व्यापारोंको आचार कहते हैं। धर्मसाधनोंका शरीरके साथ अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है और इसीसे शरीरके शुभव्यापार लक्षणयुक्त आचार-[को] स्मृतिशास्त्रकारोंने प्रथम धर्मरूपसे वर्णन किया है। निम्न लिखित स्मृतिवाक्योंका सारांश यह है, कि स्मृति और श्रुतिके [मत]से आचार ही परमधर्म है। क्योंकि आचारपालनसे मनुष्य सब[से श्रेष्ठ] होता है और महात्मा लोग आचारके बलपर ही साधु[ओं]को प्राप्त हुए थे। आचार पालनसे ऐश्वर्य, कीर्ति, आयु, धर्म, पुण्य आदिकी प्राप्ति होती है। विना आचार पालनके [वेदो]ंका फल नहीं मिलता, अतः सबसे श्रेष्ठ आचारका अवश्य पालन करना चाहिये।

"आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च। तस्मादस्मिन् सदायुक्तो नित्यं स्यादात्मवान्द्विजः॥
आचाराद्विच्युतो विप्रो न वेदफलमश्नुते। आचारेण तु संयुक्तः सम्पूर्णफलभाग्भवेत्॥
एवमाचारतो दृष्ट्वा धर्मस्य मुनयो गतिम्। सर्वस्य तपसो मूलमाचारं जगृहुः परम्॥

(मनु १।१०८—११०)

[आचा]रो भूतिजनन आचारः कीर्तिवर्धनः। आचाराद्वर्धते ह्यायुराचारो हन्त्यलक्षणम्॥
आगमानां हि सर्वेषामाचारः श्रेष्ठ उच्यते। आचारः प्रभवो धर्मो धर्मादायुर्विवर्धते॥
आचाराल्लभते ह्यायुराचाराल्लभते श्रियम्। आचाराल्लभते कीर्तिं पुरुषः प्रेत्य चेह च॥
दुराचारो हि पुरुषो नेहाऽऽयुर्विन्दते महत्। यस्मादुत्रसन्ति भूतानि तथा परिभवन्ति च॥
तस्मात् कुर्यादिहाचारं यदीच्छेद् भूतिमात्मनः। अपि पापशरीरस्य आचारो हन्त्यलक्षणम्॥
आचारलक्षणो धर्मः सन्तश्चारित्रलक्षणाः। साधूनाञ्च यथावृत्तमेतदाचारलक्षणम्॥"

शरीरकी चेष्टाएं अनन्त होनेसे आचार भी अनन्त है। तौभी कुछ ऐसे सर्व सामान्य आचार हैं जिनका संक्षेप रूप दिखाया जा सकता है।

"मातापित्रोर्गुरुजनानांचाऽनुदिनं सायं प्रातर्यथाविध्यभिवादनमाचरणीयम्। तत्सविधे सविनयं स्थातव्यम्। उक्तानां शुश्रूषणादिना ह्यायुर्विवर्धते नियमाऽधिकनिद्रालस्यशरीरसौन्दर्यार्थप्रयत्न भोजनाच्छादनासक्तिप्रभृतीनि निन्द्यकर्माणि सततमेव परिहर्तव्यानि बुद्धिमद्भिः श्रेयोऽर्थिभिः। ब्राह्मे मुहूर्ते शयनं परित्यजेत् प्रत्यहं प्रतिमुहूर्तमात्मनो वर्णाश्रमाऽनुगतधर्मसाधनानामनुसन्धानमुत्साहपुरुषार्थयोः सम्वर्धनं शौचशीलमितभाषणविनयाश्च नित्यमनुष्ठेयाः श्रेयोऽभीप्सुभिः। गमनं चङ्क्रमोत्थानोपवेशनाऽभ्यवहरण-परिधानभाषणादिभिः सकलाभिः शारीरं चेष्टाभिः समं सम्बध्यते धर्माऽधर्मयोः सम्बन्धः तस्माद्विवेकिभिर्यथा वेदशास्त्रानुपदिष्टां मातृपितृ-गुरुजनानामुपदेशं सम्यगादाय धर्मं स्वकीयं संरक्षणीय मित्येष सदाचारः।"

अर्थात् माता, पिता, गुरु आदिकी सुबह शाम वन्दन करना, उनके आगे विनीत भावसे रहना आयुवर्धक है। अतिरिक्त निद्रा, आलस्य, शरीर-सौन्दर्यके अर्थ विशेष प्रयत्न, भोजन आच्छादनमें आसक्ति आदि निन्द्य आचार बुद्धिमानोंको छोड़ देने चाहिये। बड़े सबेरे उठना, प्रतिदिन वर्णाश्रमके अनुसार धर्मोंका पालन करना, उत्साहपूर्वक पुरुषार्थोंका विस्तार करना; शौच, शील, मितभाषण, विनय आदि रखना कल्याणकारक है। इस प्रकारसे बैठने उठने, चलने फिरने आदि सभी शरीरकी चेष्टाओंके साथ धर्माधर्मका सम्बन्ध होनेके कारण विवेकी पुरुषोंको वेदशास्त्रानुमोदित माता पिता गुरुजनोंके उपदेशानुसार आचारपालन द्वारा अपना धर्म रक्षण करना चाहिये। शास्त्रोंमें आचारके सम्बन्धमें लिखा है—

"पापेनापिहितं पापं पापमेवानुवर्तते। धर्मेणापिहितो धर्मो धर्ममेवानुवर्तते॥
अमृतं ब्राह्मणोच्छिष्टं जनन्याहृदयं कृतम्। तज्जनाः पर्युपासन्ते सत्यं सन्तः समासते॥
अपूज्यस्यैव पूजातः पूज्यानां चाप्यपूजनात्। नृघातकसमं पापं शश्वत् प्राप्नोति पूरुषः॥
उत्थायोत्थाय हि सदा प्रष्टव्या वृद्धसम्मताः। तेऽभ्योगे परं मूलं तन्मूला सिद्धिरुच्यते॥
वृद्धानां वचनं श्रुत्वा योऽभ्युत्थानं प्रयोजयेत्। उत्थानस्य फलं सम्यक् तदा स लभतेऽचिरात्॥
ये दम्भान्नाचरन्तिस्म येषां वृत्तिश्च संयता। विषयांश्च निगृह्णन्ति दुर्गाण्यतितरन्ति ते॥
प्रत्याहुर्नोच्यमाना ये न हिंसन्ति च हिंसिताः। प्रयच्छन्ति न याचन्ते दुर्गाण्यतितरन्ति ते॥
मातापित्रोश्च ये वृत्तिं वर्तन्ते धर्मकोविदः। वर्जयन्ति दिवा स्वप्नं दुर्गाण्यतितरन्ति ते॥
स्वेषु दारेषु वर्तन्ते न्यायवृत्तिमृतावृतौ। अग्निहोत्रपरः सन्तो दुर्गाण्यतितरन्ति ते॥
ये तपश्च तपस्यन्ति कौमारब्रह्मचारिणः। विद्यावेदव्रतस्नाता दुर्गाण्यतितरन्ति ते॥
सर्वान् देवान्नमस्यन्ति सर्वधर्मांश्च शृण्वते। ये श्रद्दधानाः शान्ताश्च दुर्गाण्यतितरन्ति ते॥
मधु मांसञ्च ये नित्यं वर्जयन्तीह मानवाः। जन्मप्रभृतिमद्यञ्च दुर्गाण्यतितरन्ति ते॥
यात्रार्थं भोजनं येषां सन्तानार्थञ्च मैथुनम्। वाक्सत्यवचनार्थाय दुर्गाण्यतितरन्ति ते॥
कपिला क्षीरपानेन ब्राह्मणीगमनेन च। वेदाक्षरविचारेण शूद्रश्चाण्डालतां व्रजेत्॥
राजान्नं तेज आदत्ते शूद्रान्नं ब्रह्मवर्चसम्। आयुः सुवर्णकारान्नमवीरायाश्च योषितः॥
विष्ठावार्ध्युषिकस्यान्नं गणिकान्नमथेन्द्रियम्। मृष्यन्ति ये चोपपतिस्त्रीजितान्नञ्च सर्वशः॥
परदाराभिहर्तारः परदाराभिमर्शिनः। परदारप्रयोक्तारस्ते वै निरयगामिनः॥
ये परस्वापहर्तारः परस्वानाञ्च नाशकाः। सूचकाश्च परेषां ये ते वै निरयगामिनः॥
तत्यच्छेदं गृहच्छेदं दारच्छेदञ्च भारत। मित्रच्छेदं तथाशायास्ते वै निरयगामिनः॥
विषमव्यवहाराश्च विषमाश्चैव वृद्धिषु। लाभेषु विषमाश्चैव ते वै निरयगामिनः॥
पर्यश्नन्ति च ये दारानग्निभृत्यातिथींस्तथा। उत्सन्नपितृदेवेज्यास्ते वै निरयगामिनः॥
वेदविक्रयिणश्चैव वेदानाञ्चैव दूषकाः। वेदानां लेखकाश्चैव ते वै निरयगामिनः॥
ब्राह्मणानां गवाञ्चैव कन्यानाञ्च युधिष्ठिर। येऽन्तरं यान्ति कार्येषु ते वै निरयगामिनः॥
शिलाभिः शङ्कुभिर्वापि श्वभ्रैर्वा भरतर्षभ। ये मार्गमवरुन्धन्ति ते वै निरयगामिनः॥
उपाध्यायांश्च भृत्यांश्च भक्तांश्च भरतर्षभ। ये त्यजन्त्यविकारांस्ते ते वै निरयगामिनः॥
बालानामथ वृद्धानां दासानां चैव ये नराः। अदत्वा भक्षयन्त्यग्रे ते वै निरयगामिनः॥
शुश्रूषाभिस्तपोभिश्च विद्यामादाय भारत। ये प्रतिगृह्णन्ति दान्ताः नराः स्वर्गगामिनः॥
दानेन तपसा चैव सत्येन च युधिष्ठिर। ये धर्ममनुवर्तन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः॥
भयात् पापात्तथा बाधाद्दारिद्र्याद्व्याधिधर्षणात्। यत्कृते प्रतिमुच्यन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः॥
क्षमावन्तश्च धीराश्च धर्मकार्येषु चोत्थिताः। मङ्गलाचारसम्पन्नाः पुरुषाः स्वर्गगामिनः॥
सर्वहिंसानिवृत्ताश्च नराः सर्वसहाश्च ये। सर्वस्याश्रयभूताश्च ते नराः स्वर्गगामिनः॥

लोष्टमर्दी तृणच्छेदी नखखादी च यो नरः । नित्योच्छिष्टः संकुसुको नेहायुर्विन्दते महत् ॥
नहीदृशमनायुष्यं लोके किञ्चन विद्यते । यादृशं पुरुषस्येह परदारोपसेवनम् ॥
यावन्तो रोमकूपाः स्युः स्त्रीणां गात्रेषु निर्मिताः । तावद्वर्षसहस्राणि नरकं पर्युपासते ॥
पुरीषमूत्रे नोदीक्षेन्नाधितिष्ठेत् कदाचन । नातिकल्यं नातिसायं न च मध्यन्दिने स्थिते ॥
पन्था देयो ब्राह्मणाय गोभ्यो राजभ्य एव च । वृद्धाय भारतप्ताय गर्भिण्यै दुर्बलाय च ॥
प्रदक्षिणञ्च कुर्वीत परिज्ञातान्वनस्पतीन् । चतुष्पथात् प्रकुर्वीत सर्वानेव प्रदक्षिणान् ॥
उपानहौ च वस्त्रञ्च धृतमन्यैर्न धारयेत् । ब्रह्मचारी च नित्यं स्यात् पादं पादेन नाऽऽक्रमेत् ॥
अमावस्यां पौर्णमास्यां चतुर्दश्याञ्च सर्वशः । अष्टम्यां सर्वपक्षाणां ब्रह्मचारी सदा भवेत् ॥
वृथा मांसं न खादेत पृष्ठमांसं तथैव च । आक्रोशं परिवादञ्च पैशुन्यञ्च विवर्जयेत् ॥

नारुन्तुदः स्यान्न नृशंसवादी न हीनतः परमभ्याददीत ।
ययास्य वाचा पर उद्विजेत न तां वदेदुशतीं पापलोक्याम् ॥
वाक्सायका वदनान्निष्पतन्ति यैराहतः शोचति रात्र्यहानि ।
परस्य वा मर्मसु ये पतन्ति तान् पण्डितो नाऽवसृजेत् परेषु ॥

रोहते सायकैर्विद्धं वनं परशुनाहतम् । वाचा दुरुक्तया विद्धं न संरोहति वाक् क्षतम् ॥
कर्णिनालीकनाराचान्निर्हरन्ति शरीरतः । वाक्शल्यस्तु न निर्हर्तुं शक्यो हृदि शयो हि सः ॥
नास्तिक्यं वेदनिन्दाञ्च देवतानाञ्च कुत्सनम् । द्वेषस्तम्भाभिमानञ्च तैक्ष्ण्यञ्च परिवर्जयेत् ॥
न ब्राह्मणान् परिवदेन्नक्षत्राणि न निर्दिशेत् । तिथिपक्षस्य नो ब्रूयात्तथास्यायुर्न रिष्यते ॥
कृत्वा मूत्रपुरीषे तु रथ्यामाक्रम्य वा पुनः । पादप्रक्षालनं कुर्यात् स्वाध्याये भोजने तथा ॥
संयावं कृसरं मांसं शष्कुलीं पायसं तथा । आत्मार्थं न प्रकर्तव्यं देवार्थन्तु प्रकल्पयेत् ॥
भक्षयेच्चास्वहस्तानि पर्वस्वपि विवर्जयेत् । उदङ्मुखश्च सततं शौचं कुर्यात् समाहितः ॥
उभे मूत्रपुरीषे तु दिवा कुर्यादुदङ्मुखः । दक्षिणाभिमुखो रात्रौ तथाह्यायुर्न रिष्यते ॥
अवलोक्यो न चादर्शो मलिनो बुद्धिमत्तरैः । न चाज्ञातां स्त्रियं गच्छेद्गर्भिणीं वा कदाचन ॥
उदक्शिरा न स्वपेत तथा प्रत्यक्शिरा न च । प्राक्शिरास्तु स्वपेद्विद्वानथवा दक्षिणाशिराः ॥
न भग्ने नाऽवदीर्णे च शयने प्रस्वपीत च । नान्तर्धानेन संयुक्ते न च तिर्यक्कदाचन ॥
न नग्नः कर्हिचित् स्नायान्न निशायां कदाचन । स्नात्वा च नाऽवमृज्येत गात्राणि सुविचक्षणः ॥
नोत्सृजेत पुरीषञ्च क्षेत्रे ग्रामस्य चान्तिके । उभे मूत्रपुरीषे तु नाऽप्सु कुर्यात् कदाचन ॥
प्राङ्मुखो नित्यमश्नीयाद्वाग्यतोऽन्नमकुत्सयन् । प्रस्कन्दयेच्च मनसा भुक्त्वा चाग्निमुपस्पृशेत् ॥
आयुष्यं प्राङ्मुखो भुङ्क्ते ऋतं भुङ्क्ते उदङ्मुखः । धन्यं पश्चान्मुखो भुङ्क्ते यशस्यं दक्षिणामुखः ॥
मूत्रं नोत्तिष्ठता कार्यं न भस्मनि न गोव्रजे । आर्द्रपादस्तु भुञ्जीत नार्द्रपादस्तु संविशेत् ॥
आर्द्रपादस्तु भुञ्जानो वर्षाणां जीवते शतम् । त्रीणि तेजांसि नोच्छिष्ट आलभेत कदाचन ॥
अग्निं गां ब्राह्मणञ्चैव तथाह्यायुर्न रिष्यते । त्रीणि तेजांसि नोच्छिष्ट उदीक्षेत कदाचन ॥
सूर्याचन्द्रमसौ चैव नक्षत्राणि च सर्वशः । ऊर्ध्वं प्राणा ह्युत्क्रामन्ति यूनः स्थविर आयति ॥
प्रत्युत्थानाभिवादाभ्यां पुनस्तान् प्रतिपद्यते । अभिवादयीत वृद्धांश्च दद्याच्चैवासनं स्वयम् ॥
कृताञ्जलिरुपासीत गच्छन्तं पृष्ठतोऽन्वियात् । न चासीतासने भिन्ने भिन्नकांस्यञ्च वर्जयेत् ॥
नैकवस्त्रेण भोक्तव्यं न नग्नः स्नातुमर्हति । स्वप्तव्यं नैव नग्नेन न चोच्छिष्टोऽपि संविशेत् ॥
उच्छिष्टो न स्पृशेच्छीर्षं सर्वे प्राणास्तदाश्रयाः । केशग्रहं प्रहारांश्च शिरस्येतानि वर्जयेत् ॥
न संहताभ्यां पाणिभ्यां कण्डूयेदात्मनः शिरः । नचाभीक्ष्णं शिरःस्नायात्तथास्यायुर्न रिष्यते ॥
शिरःस्नातस्तु तैलञ्च नाङ्गं किञ्चिदपि स्पृशेत् । तिलसृष्टं न चाश्नीयात्तथास्यायुर्न रिष्यते ॥
गुरुणा चैव निर्बन्धो न कर्तव्यः कदाचन । अनुमान्यः प्रसाद्यश्च गुरुः क्रुद्धो युधिष्ठिर ॥
सम्यङ्मिथ्याप्रवृत्तेऽपि वर्तितव्यं गुराविह । गुरुनिन्दा दहत्यायुर्मनुष्याणां न संशयः ॥
दूरादावसथान्मूत्रं दूरात् पादावसेचनम् । उच्छिष्टोत्सर्जनञ्चैव दूरे कार्यं हितैषिणा ॥
रक्तमाल्यं न धार्यं स्याच्छुक्लं धार्यन्तु पण्डितैः । वर्जयित्वा तु कमलं तथा कुवलयं प्रभो ॥
पर्वकालेषु सर्वेषु ब्रह्मचारी सदा भवेत् । समानमेकपात्रे तु भुञ्जेन्नाऽन्नं जनेश्वर ॥
सायं प्रातश्च भुञ्जीत नान्तराले समाहितः । वालेन तूपभुञ्जीत परश्राद्धं तथैव च ॥
वाग्यतो नैकवस्त्रश्च नाऽसंविष्टः कदाचन । भूमौ सदैव नाश्नीयान्नानासीनो न शब्दवत् ॥
तोयपूर्वं प्रदायाऽन्नमतिथिभ्यो विशाम्पते । पश्चाद्भुञ्जीत मेधावी नचाप्यन्यमना नरः ॥
समानमेकपङ्क्त्या तु भोज्यमन्नं नरेश्वर । विषं हालाहलं भुङ्क्ते योऽप्रदाय सुहृज्जने ॥
पराऽपवादं न ब्रूयान्नाऽप्रियञ्च कदाचन । न मन्युः कश्चिदुत्पाद्यः पुरुषेण भवार्थिना ॥
न दिवा मैथुनं गच्छेन्न कन्यां न च बन्धकीम् । नचास्नातां स्त्रियं गच्छेत्तथायुर्विन्दते महत् ॥
वृद्धो ज्ञातिस्तथा मित्रं दरिद्रो यो भवेदपि । गृहे वासयितव्यास्ते धन्यमायुष्यमेव च ॥”

(महाभारत)

भावार्थ—पापसे पाप और पुण्यसे धर्म उत्पन्न होता है। अपूज्यकी पूजा और पूज्यकी अपूजा करनेसे मनुष्य नरहत्याके समान पापी ठहरता, इससे ऐसा न करना चाहिये। जो प्रतिदिन प्रातःकालमें उठ वृद्धोंसे सम्मति पूछता, किसीसे कुछ नहीं लेता, स्वयं दूसरेको देता, माता पिताका पालन करता, अपनी स्त्रीमें ही तृप्त रहता, सब देवतोंमें प्रेम, सब धर्मों में श्रद्धा रखता, सत्य बोलता और किसीकी बुराई नहीं करता, वह सदा सुखी रह बड़ेसे बड़े दुर्गतिसे पार हो जाता है। दूसरेकी स्त्री वा धन हरण न करना, किसीकी निन्दा चुगली न करना, बालक, वृद्ध एवं दासको विना दिये स्वयं भोजन न करना, क्षमा रखना, दान, तप एवं सत्यमें रत रहना, पुरीष एवं मूत्रको न देखना एवं अधिक काल वहां पर ठहरना भी न चाहिये। दूसरेका जुता एवं वस्त्र न पहनना, अमावस्या, पौर्णमासी प्रभृति पुण्यकालमें सदा ब्रह्मचर्यसे रहना, मांसादि अभक्ष्य पदार्थोंको न खाना, दिनमें उत्तरमुख और रात्रिमें दक्षिणमुख हो मूत्र-पुरीष त्याग करना चाहिये। उत्तरशिर करके तथा टूटी फटी शय्यापर नहीं सोना और नग्न हो स्नान न करना। प्रतिदिन पैर धोकर उत्तर या पूर्वमुख बैठ मौन हो भोजन करना, एकपंक्ति बैठे हुये कोई चीज, विना दूसरेको दिये आप नहीं खाना, क्योंकि वह हलाहल विषके समान हो जाती है। दूसरेकी निन्दा या अप्रिय वचन नहीं कहना, कभी अतिक्रोध न करना, दिनमें मैथुन न करना, एवं कन्या और वन्धकीके साथ भी रमण न करना। उपरोक्त आचरणको शास्त्रकारोंने आचार बतलाया है। इसे सेवन करनेसे मनुष्य इस लोकमें धर्मात्मा, धनवान्, यशस्वी, एवं निरामय रहता और परलोकमें स्वर्गका सुखानुभव करता है।

चर-णिनि। १ शास्त्रोक्त अनुष्ठाता, क़दीम चाल चलनेवाला।

आचारी (सं० स्त्री०) आ-सम्यक् चारः प्रसरणं यस्याः, गौरादि० जातित्वाद्वा ङीप्। १ हिलमोचिका, कोई सब्ज़ी। (पु०) २ रामानुज साम्प्रदायिक वैष्णव। (त्रि०) ३ शास्त्रोक्त अनुष्ठाता, क़दीम चाल पकड़नेवाला।

आचार्य (सं० पु०) आ-चर-ण्यत्। इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडहिमारण्ययवयवनमातुलाचार्याणामानुक्। पा ४।१।४९। १ गुरु, मुरशद, उस्ताद। मनु कहते हैं,—जो ब्राह्मण शिष्यको उपनयन पहना सकल्प और सरहस्य वेद पढ़ाता, वही वेदाध्यापक आचार्य कहाता है। किन्तु आजकल वेदकी आलोचना नहीं होती, इसलिये बालकको जो उपनयन कर गायत्री सुनाता, वही आचार्य है। २ मत-संस्थापक शङ्कराचार्यादि। ३ यज्ञादिमें कर्मोपदेश। ४ पूज्यमात्र। ५ शिक्षकमात्र। ६ भट्टाचार्य। सचराचर हम गणक वा दैवज्ञ ब्राह्मणको आचार्य अथवा ग्रहाचार्य कहा करते हैं। (स्त्री०) आचार्या। आचार्यको पत्नी आचार्यानी कहलाती है।

आचार्यक (सं० क्ली०) आचार्यस्य कर्म भावो वा, वुञ्। १ आचार्यका कर्म वा धर्म, मुरशद पाकका काम। (त्रि०) २ आचार्यसे निकलनेवाला, जो मुरशद पाकसे पैदा हो। (स्त्री०) आचार्यता।

आचार्यता (सं० स्त्री०) गुरुका कर्म, उस्तादी।

आचार्यत्व (सं० क्ली०) आचार्यता देखो।

आचार्यदेव (सं० पु०) अपने इष्टदेवको गुरु माननेवाला व्यक्ति, जो शख़्स परमेश्वरको मुरशद मानता हो।

आचार्यभोगीन् (सं० त्रि०) आचार्यभोगाय हितम्, ख। आचार्यके भोग योग्य, मुरशदको खुश करनेवाला, जो उस्तादके काम लायक़ हो।

आचार्यमिश्र (सं० त्रि०) आचार्यो मिश्रः। अतिशय पूज्य, बुज़ुर्गवार, क़ाबिल ताज़ीम।

आचार्यवान् (सं त्रि०) आचार्य रखनेवाला, जिसके मुरशद रहे। (स्त्री०) आचार्यवती।

आचार्यानी (सं० स्त्री०) आचार्यपत्नी, मुरशदकी औरत।

आचार्यीय (सं० त्रि०) आचार्य-विषयक, मुरशदका।

आचार्योपासन (सं० क्ली०) आचार्यको सेवाशुश्रूषा, मुरशदको फ़रमांबरदारी।

आचिख्यासा (सं० स्त्री०) आख्यातुमिच्छा, आख्या-सन्-अ प्रत्ययादिति अ टाप्। आख्यानके निमित्त इच्छा, बोलनेको ख़्वाहिश।

आचिख्यासु (सं० त्रि०) आख्यातुमिच्छुः, आ-ख्या-सन् उ। आख्यानके निमित्त इच्छुक, बोलनेका ख़्वाहिशमन्द।

आचिख्यासोपमा (सं० स्त्री०) अलङ्कार-शास्त्रको एक उपमा।

आचित् (वै० त्रि०) ध्यानमें लानेवाला, जो ख़याल करता हो।

आचित (सं० त्रि०) आ-चि-क्त। १ व्याप्त, मामूर, भरा हुआ। २ गुम्फित, बंधा हुआ। ३ ग्रथित, गूंथा हुआ। ४ संग्रह किया हुआ, इकट्ठा। (क्ली०) ५ द्विसहस्र पलका मानविशेष, पचीस मनको तौल। (पु०) ६ शाकट भार, एक गाड़ी माल।

'आचित्य' दशभाराः स्युः शकटोभार आचितः।' (अमर)

आचितादि (सं० पु०) आचित आदिर्यस्य। गणविशेष। इसमें निम्नलिखित शब्द पठित हैं,—आचित, पर्याचित, अस्थापित, परिगृहीत, निरुक्त, प्रतिपन्न, अपश्लिष्ट, प्रश्लिष्ट, अपहृत, उपस्थित, संहिता।

आचितिक (सं० त्रि०) आचित मानके बराबर, जो पचीस मन चीज़ पका रहा हो।

आचितीन, आचितिक देखो।

आचिन्त्य (सं० त्रि०) १ सर्वप्रकार सोचने योग्य, सबतरह ख़यालमें लाने क़ाबिल। (हिं० वि०) २ अचिन्त्य, ख़यालमें न आनेवाला।

आचीर्ण (सं० त्रि०) भुक्त, आस्वादित, खाया हुआ।

आचु (सं० पु०) आच्छुक वृक्ष, आलका पेड़।

आचूगिदेव—प्रथम परमर्दिदेवके पिता। बम्बई प्रान्तस्थ धारवाड़ ज़िलेको रोन तहसीलके कोड़ीकोय गांवमें मूल ब्रह्मदेवके मन्दिरको दीवारपर इनके समयका एक शिलालेख विद्यमान है।

आचूषण (सं० क्ली०) आ-चूष-ल्युट्। १ ओष्ठादि संयोग विशेष द्वारा आकर्षण, चुसाव, दमकशी, जज़्ब। करणे ल्युट्। २ शरीरस्थ रक्त चूसनेकी सींगी। ३ सींगीका लगाना।

आचेश्वर (सं० पु०) आच द्वारा प्रतिष्ठित मन्दिर।

आच्छक (सं० पु०) रञ्जनद्रुम, आलका पेड़। यह लाल रङ्ग तैयार करनेमें लगता है।

आच्छद् (वै० स्त्री०) आच्छाद्यतेऽनेन, आ-छद-णिच्-क्विप् ह्रस्वः णिच् लोपः। १ आच्छादन, ढक्कन, ओहार। २ कोष, विधान, म्यान।

आच्छद (सं० पु०) आ-छद-घ। आच्छादनवस्त्र, ढांकनेका कपड़ा।

आच्छद्विधान (वै० क्ली०) रक्षा रखनेका प्रबन्ध, हिफ़ाज़त करनेका इन्तिज़ाम।

आच्छन्न (सं० त्रि०) आ-छद-क्त। १ आवृत, ढका, छिपा या लिपटा हुआ।

आच्छाक, आच्छक देखो।

आच्छाद (सं० पु०) आच्छाद्यतेऽनेन, आ-छद-णिच् करणे घञ्, णिच् लोपः। आवरण, परदा।

आच्छादक (सं० त्रि०) आच्छादयति, आ-छद्-णिच्-ण्वुल्, णिच् लोपः। आच्छादनकर्ता, ढाकने या छिपानेवाला।

आच्छादन (सं० क्ली०) आच्छाद्यतेऽनेन, आ-छद्-णिच् करणे ल्युट्, णिच् लोपः। १ आवरण, परदा। २ अन्तर्धान, छिपाव। ३ कोष, म्यान। ५ वस्त्र। कपड़ा। ६ लबादा, झूल, ओहार। ७ छतका ढांचा। यह लकड़ीका बनता है। ८ कार्पास, कपास।

आच्छादनफला (सं० स्त्री०) रक्तकार्पास, लाल-कपास।

आच्छादनी (सं० स्त्री०) कार्पास, कपास।

आच्छादित (सं० त्रि०) आ छद्-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। १ आवृत, ढका हुआ। २ गुप्त, पोशीदा।

आच्छादिन् (सं० त्रि०) आच्छादयति, आ-छद्-णिच्-णिनि, णिच् लोपः। आच्छादनकारी, ढाकनेवाला। (स्त्री०) आच्छादिनी।

आच्छाद्य (सं० त्रि०) आच्छाद्यते, आ-छद्-णिच् कर्मणि यत्। १ आच्छादनीय, ढाकने लायक। २ गोप्य, छिपाये जानेवाला। (अव्य०) आ-छद्-णिच्-ल्यप्, णिच् लोपः। आच्छादन करके, पहनकर, छिपाते हुये।

आच्छिद्य (सं० अव्य०) १ काटकर, फांककर। २ अलग करते हुये, खयाल न लाते हुये। ३ तथापि, फिर भी।

आच्छिन्न (सं० त्रि०) आ-छिद्-क्त। १ बलद्वारा गृहीत, जोरसे लिया या छीना हुआ। २ सम्यक्‌रूप छिन्न, अच्छीतरह कटा हुआ।

आच्छुक (सं० पु०) आ-छो बाहु० डु संज्ञायां कन्। स्वनामख्यात वृक्ष, आलका पेड़।

आच्छुरित (सं० क्ली०) आ-छुर्-क्त-इट्। १ शब्दयुक्त हास्य, क़हक़हा, खिलखिलाहट। २ नखाघात, नाखूनकी रगड़। ३ नखद्वारा वाद्य, उंगलीके नाखून एक दूसरे पर रगड़ आवाज़का निकालना। (त्रि०) ४ मिश्रित, मिलावटी। ५ उच्छेदित, नोचा, खुरचा या बकोटा हुआ। ६ उत्तेजित, खिजाया हुआ।

आच्छुरितक (सं० क्ली०) आच्छुरित एव, आच्छुरित-स्वार्थे कन्। १ शब्दयुक्त हास्य, खिलखिलाहट। २ नखाघात, खराश, बुकटा, नुहड़ा।

'स्यादाच्छुरितकं हासनखाघातप्रभेदयोः।' (विश्व)

आच्छेद (सं० पु०) आ-छिद्-घञ्। १ समन्तात् छेदन, पूरी काट-छांट। २ ईषत् छेदन, थोड़ी कटायी।

आच्छेदन (सं० क्ली०) आच्छेद देखो।

आच्छोटन (सं० क्ली०) आ-स्फुट्-ल्युट्, पृषो० स्फस्य च्छः। १ चुटकीका बजाना। २ उंगलीका चिटकाना।

आच्छोटित (सं० त्रि०) आ-स्फुट्-क्त, पृषो० स्फस्य च्छः। १ फोड़ा हुयी, जो चिटकायी गयी हो। २ जो चुटकी बजानेके काम आयी हो। यह शब्द अङ्गुलि प्रभृतिका विशेषण है।

आच्छोदन (सं० क्ली०) आच्छिद्यते ऽत्र, आ-छिद्-ल्युट्, पृषो० इतओत्। मृगया, शिकार।

आच्युतदन्ति (सं० पु०) अच्युत-दन्तस्यापत्यम्, अच्युत-दन्त-इञ्। आयुधजीवि-विशेष, कोयी लड़ाका कौम।

आच्युतदन्तीय (सं॰ पु॰) दामन्यादि॰ स्वार्थे छ। एकत्रस्थित अनेक आयुधजीविविशेष।

आच्युतन्ति (सं॰ पु॰) अच्युतं तस्यापत्यम्, इञ्। आयुधजीविविशेष, कोयी लड़ाका क़ौम।

आच्युतिक (सं॰ पु॰) अच्युतस्य छात्रः, काश्यादि॰ ठञ् ञिठ् वा। अच्युतका छात्र। (स्त्री॰) आच्युतिकी।

आछत (हिं॰ क्रि॰ वि॰) रहते, होते, समक्ष, सामने।

आछना (हिं॰ क्रि॰) १ रहना, ठहरना। २ होना, मौजूद मिलना।

आछा, अच्छा देखो।

आछी (हिं॰ वि॰) १ भक्षक, खानेवाला। २ भली, जो बुरी न हो।

आछेप (हिं॰) आक्षेप देखो।

आछो, अच्छा देखो।

आछोटण (हिं॰) आच्छोदन देखो।

आज (सं॰ क्ली॰) आज्यतेऽनेनेति, आ-अञ्ज् घञर्थे क। १ घृत, घी। २ छागघृत, बकरीका घी। (पु॰) ३ गृध्र, उकाब, गीध। (त्रि॰) ४ छागजात, बकरीसे पैदा हुआ। (हिं॰ क्रि॰ वि॰) ५ अद्य, इमरोज़। (पु॰) ६ विद्यमान दिवस, गुज़रनेवाला दिन।

आजक (सं॰ क्ली॰) अजानां समूहः, वुञ्। छागसमूह, बकरियोंका झुण्ड।

आजकरीण (सं॰ त्रि॰) आजकेनोपलक्षिता रोणी नाम काचित् नदी तस्याः सन्निकृष्टस्थानादि अण्। रोणी। पा ४।२।७८। छागसमूहयुक्त नदीके निकटस्थ, बकरियोंके झुण्डसे भरे हुये नदी किनारेका। यह शब्द देशादिका विशेषण है।

आजकल (हिं॰ क्रि॰ वि॰) सम्प्रति, अधुनातनकाल, दरींविला, इन दिनों।

आजकार (सं॰ पु॰) अजस्य विष्णोरयम्, अज्-अण्, आकारः शकन्धादि। शिवका रूप। त्रिपुरासुरके वधकाल रूपका आकार बनाने और काम करनेसे विष्णुको आजकार कहते हैं। विष्णुके रूपरूप धारणका विषय हरिवंशमें लिखा है।

आजकाल, आजकल देखो।

आजक्षीर (सं॰ क्ली॰) छागदुग्ध, बकरीका दूध। यह गव्यगुण, ग्राही, दीपन, लघु और सर्वरोगघ्न होता है। (मदनपाल)

आजगर (सं॰ त्रि॰) वृहत् सर्प-सम्बन्धीय, अजगरी। महाभारतके एक अध्यायको आजगर कहते हैं।

आजगव (सं॰ क्ली॰) अजगवमेव, प्रज्ञाद्यण्। १ शिवका धनुष्। २ अजगवकी तरह अति कठिन धनुष।

आजधेनवि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) अजेव धेनुरस्य, पृषो॰ पुंवद्भावः, तस्यापत्यं बाह्वादेराकृतिगणत्वादिञ्। छागीरूप धेनुयुक्त मुनिका अपत्य, बकरीसे गोका काम लेनेवाले फ़क़ीरकी औलाद।

आजनन (सं॰ क्ली॰) आ अभिव्याप्तौ जननम्, प्रादि समा॰। १ विख्यात जन्म, मशहूर पैदायश। (त्रि॰) आ विख्यातं जननं यस्य, बहुव्री॰। २ विख्यातजन्मा, शोहरतके साथ पैदा होनेवाला। (अव्य॰) जननात् आ सीमार्थे, अव्ययी॰। ३ जन्म पर्यन्त, जीते जी।

आजनवनीत (सं॰ क्ली॰) छाग-दुग्ध-जात नवनीत, बकरीके दूधका मक्खन। यह मधुर, कषाय, त्रिदोषघ्न, चक्षुष्य, दीपन और बल्य होता है। (राजनिघण्टु)

आजनि (वै॰ स्त्री॰) हांकनेकी छड़ी।

आजन्म (सं॰ अव्य॰) जन्मनः आ पर्यन्तम्, सीमार्थे अव्ययी॰। जन्मपर्यन्त, उम्रभर।

आजन्मन्, आजन्म देखो।

आजन्मसुरभिपत्र (सं॰ पु॰) आजन्म जन्मपर्यन्तं सुरभि सुगन्धि पत्रं यस्य, बहुव्री॰। मरुवक वृक्ष, नागदौना। (स्त्री॰) आजन्मसुरभिपत्रा।

आजमखां—ख़ां-आज़मके पुत्र। इन्हें लोग प्रायः मिर्ज़ा अज़ीज़ कोका कहते, क्योंकि इनकी माताने धात्रीरूपसे अकबरको दूध पिलायी थी, यह भी उन्हें खेलाते रहे। सर्वोत्तम सेनापति होनेसे सम्राट् अकबरने अपने शासनके १६वें वर्ष इनको आजमखां उपाधि प्रदान किया। इन्होंने जितने ही वर्ष

गुजरातका शासन चलाया था। सन् १५८२ ई०को दरबारमें बहुत दिन उपस्थित हो न सकनेसे अकबरने इन्हें दिल्ली बुलाया। किन्तु इनके मनमें हज जानेकी लगी थी। फिर इनके मित्रोंने यह भी कहा,—बादशाह ज़रूर नाराज़ मालूम पड़ते और आपको केवल क़ैद करनेका अवसर ढूंढ़ते हैं। उस पर यह जहाज़में अपने कुटुम्बको बैठा और खज़ाना लाद बिना कुछ कहे-सुने हजाज़को रवाना हो गये। किन्तु वहां रहनेमें अड़चन आनेसे इन्हें भारत लौटना और बादशाहके सामने हाज़िर होना पड़ा था। बादशाहने प्रार्थना सुनते ही इन्हें क्षमाकर पूर्वपदपर प्रतिष्ठित कर दिया। सन् १६२४ ई०को इन्होंने अहमदाबादमें प्राण छोड़ा था। इनका शवदेह दिल्ली भेजा और वहीं गाड़ा गया। इनकी क़ब्र मरमरकी बनी और ६४ खम्भे लगनेसे 'चौसठखम्भा' कहलाती है। इनका महल अहमदाबादमें सबसे बड़ी इमारत है। आजकल उसमें क़ैदी रखे जाते हैं।

आज़मगढ़—१ युक्तप्रान्तके बनारस विभागका एक ज़िला। यह अक्षा० २५° ३८′ एवं २६° २५′ उ० और द्राघि० ८२° ४२′ तथा ८३° ४८′ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २१४७ वर्गमील है। आज़मगढ़से उत्तर फैज़ाबाद तथा गोरखपुर, पूर्व बलिया, दक्षिण ग़ाज़ीपुर और पश्चिम जौनपुर एवं सुलतानपुर ज़िला है। यह गङ्गाके मैदानका एक अंश और आकार-प्रकारमें विषम चतुष्कोण-जैसा देख पड़ता है। इसकी भूमि समुद्रतलसे २५५ फ़ीट ऊंची है। दक्षिण-पूर्वकी ओर धरातल ढालू रहनेसे नदियां भी उधरको ही बहती हैं। दक्षिणमें कितने ही झील भरे हैं। इस ज़िलेमें रेह बहुत होता, किन्तु उससे नमक निकालनेपर व्यय भी कम नहीं पड़ता। जङ्गलमें ढाक और बबूलकी ख़ूब बढ़ती है। घाघरा प्रधान नदी है। दूसरी नदियोंके नाम यह हैं,—तूनिस, छोटी सरयू, फरायी, बसनायी, गङ्गी, बेसू, कुंवार, उंगरी, माझूयी, सिलानी, कयार और सुखसोयी। गम्भीर वन, कोतल, जम्बावन, गूमाडीह, कोयल, सलोना, पकारीपेवा, नरजा और रतोयी सबसे बड़े झील हैं। धातुमें केवल कङ्कड़ ही पाया जाता है।

इतिहास—प्रवाद सुनते, कि आज़मगढ़के आदिम निवासी राजभर, सूयिरी, सङ्गारिया और चेरू हैं। कहते हैं, किसी समय इस ज़िलेका प्रधान भाग राजभरोंके ही अधिकारमें रहा। आज़मगढ़पर तीन बार घोर आक्रमण पड़ा है। पहले राजपूतोंने आकर राजभरोंसे भूमि छीन ली थी। पीछे भूमिहार ब्राह्मण पहुंचे। मुसलमानोंके धावा मारनेपर यह ज़िला दिल्लीकी बादशाहतमें मिला लिया गया था। सन् ई०के १४वें शताब्दान्त जौनपुरने अपना स्वातन्त्र्य प्रतिष्ठित किया और उसके शरकी नृपतियोंने आज़मगढ़पर भी अपना अधिकार जमाया। किन्तु उनके वंशका पतन होनेपर यह ज़िला फिर दिल्लीमें मिल गया था। सिकन्दरपुरका क़िला सिकन्दर-लोदीने अपने नामपर बनवाया रहा। किन्तु सन् ई०के १७ वें शताब्दान्त गौतम राजपूतोंने अस्त्रशस्त्रके बल आज़मगढ़ अधिकार कर लिया। गौतम-वंशके अभिमानचन्द्रसेन सन् १६०० ई०के समय बढ़े थे। अन्तको वह मुसलमान हो गये और अकबरके अधीन रह इतना धन कमाया, कि इस ज़िलेमें दौलताबादकी जमींन्दारी ख़रीद सके। अभिमानचन्द्रसेन और उनके भाईके लड़कोंने अपने पड़ोसियोंको यहांतक लूटा, कि सन् ई०के १८ वें शताब्दारम्भमें गोमती नदी तथा वर्तमान ग़ाज़ीपुर ज़िलेके मध्यका देश उनके हाथ आ पड़ा था। फिर भी लखनऊके खानख़ाना नवाब कोई नब्बे हज़ार रुपये वार्षिक आज़मगढ़से कर पाते रहे। किन्तु सन् ई०के १८वें शताब्दारम्भमें इस नगरके नवाब महावत खांने कर देना न चाहा, अपनी राजधानीको सुरक्षित बनाया और तिलासरैमें आगे बढ़ जौनपुरकी फौजको युद्धमें बिलकुल हरा दिया। जौनपुरके साहाय्य मांगनेपर लखनऊके नवाब शहादत खांने महावत खांसे लड़नेको बहुत बड़ी सेना भेजी थी। महावत खां गोरखपुरको भागे, किन्तु पकड़ लिये गये। सन् १७५८ ई०को आज़मगढ़ अवधका

चकला बना था। सिवा नादिर खां डाकूकी लूट-मारके सन् १८०१ ई०तक इस ज़िलेमें लखनवी वज़ीरोंके अधीन शान्ति प्रतिष्ठित रही। इसी वर्ष आज़मगढ़ उस करके बदले ईष्ट इण्डिया कम्पनीको सौंपा गया, जो लखनऊके खज़ानेसे अंगरेज़ोंको सामरिक धनरूप साहाय्य और अन्य-अन्य व्ययके लिये मिलता था। नादिरखांने अपनी ज़मीन् छीन लेनेकी नालिश कम्पनीपर की, किन्तु कोई सुनायी न हुई; केवल राजाका उपाधि और पेन्शन उनके लड़कोंको दिया गया। फिर कोई बड़ी बात पड़ी न थी। किन्तु सन् १८५७ ई०को ३री जूनको १७ वीं रेजीमेण्टके देशी सिपाहियोंने बलवा उठा कुछ अफसर मार डाले और सरकारी खज़ाना फ़ैज़ाबाद ले गये। युरोपीय ग़ाज़ीपुरको भागे थे। किन्तु १६ वीं जूनको ग़ाज़ीपुरसे फौजने आकर फिर इस नगरपर अधिकार जमा लिया। १८ वीं जुलाईके युद्धमें अंगरेज़ोंको पीछे हटना और २८वींके दिन दानापुरमें बलवा भड़क उठनेसे ग़ाज़ीपुर वापस जाना पड़ा था। ६वींसे २५वीं अगस्ततक आज़मगढ़ पलवारोंके अधीन रहा, किन्तु २६वींको राजभक्त गोरखोंने उन्हें निकाल बाहर किया। २० वीं सितम्बरको पलवारोंके प्रधान वेणीमाधवके हार जानेपर अंगरेज़ोंका फिर अधिकार प्रतिष्ठित हुआ था। नवम्बरमें बलवायी अतरौलियेसे निकाले गये। सन् १८५८ ई०के जनवरी मास गोरखे शमशेरजङ्गके अधीन गोरखपुरसे फैज़ाबादको आगे बढ़े, जिसपर बलवायी फिर इस नगर वाध्य हो वापस आये। फरवरी मासके मध्य कुंवरसिंह लखनऊसे भाग इस ज़िलेमें दाखिल हुये थे। अतरौलियेमें अंगरेज़ी फौजने उनपर आक्रमण किया, किन्तु हारकर आज़मगढ़को पीछे हटना पड़ा। कुंवरसिंहने अप्रेल मासके मध्यतक इस नगरको घेर रखा था। अन्तको वह हार गये और गङ्गा पार करते अपना प्राण खो बैठे। किन्तु नवम्बर मास तक बलवायी तहसील और थाने लूटते रहे थे। पीछे सेनापति केलीने इस ज़िलेमें विद्रोहियोंको दबा शान्ति स्थापित की।

प्रत्नतत्त्व—इस ज़िलेमें कितने ही दुर्गोंका ध्वंसावशेष पाया जाता है। कहते, यह किले भरोंके समय बने थे। कितने ही किले बहुत बड़े देख पड़ते, किन्तु उनके बननेके दिनों और बनवानेवालोंके नामोंका पता हम नहीं पाते। घोसीका किला सबसे बड़ा है। कहा जाता,कि राजा घोषने पिशाचोंके साहाय्यसे उसे बनवाया था। यही बात कुंवारसे नहायी तकके रम्भ और वृन्दावन किलेसे नर्जे तालतककी कुल्याके विषयमें भी प्रसिद्ध है। गोपाल परगनेके महाराजगञ्जमें भैरवका प्राचीन मन्दिर विद्यमान है। लोग कहते हैं,—किसी समय अयोध्या नगर इतना विस्तृत रहा, कि उसमें बयालीस बयालीस कोस दूर चार फाटक लगे थे; भैरव-मन्दिर पूर्व द्वारका ध्वंसावशेष है।

इस ज़िलेमें निम्नलिखित नगर बड़े हैं,—१ आज़मगढ़, २ मऊ, ३ मुबारकपुर, ४ मुहम्मदाबाद, ५ दुबरी, ६ कोयागञ्ज, ७ वालिदपुर और ८ सरायमीर।

कृषि—आज़मगढ़की भूमि कहीं बांगर और कहीं कछार है। मही तीन तरहकी होती है,—मटियारी, करायल और काबिस। अब ऊसरमें भी चावल पैदा करने लगे हैं। किन्तु इस ज़िलेकी कृषि प्रधानतः सुवृष्टिपर ही निर्भर है। खरीफ़में चावल, अरहर, ज्वार और रबीमें गेहूं, यव, चना, मटर, वग़ैरह पैदा होता है। इस ज़िलेमें सरकारी नहर नहीं चलती। क्षत्रिय एवं वैश्य व्यापार करते और पटना, मिर्ज़ापुर तथा कलकत्तेको पैदावार भेज देते हैं।

वाणिज्य-व्यवसाय—आज़मगढ़का व्यापार जल तथा स्थल दोनो मार्गसे होता है। घाघरा नदी उत्तर तथा पश्चिमसे अन्न मंगाने और बङ्गाल एवं पूर्वको चीनी भेजनेके काम आती है। इस नगरसे ग़ाज़ीपुर, जौनपुर, गोरखपुर, बलिया और फ़ैज़ाबादको पक्की सड़क गयी है। चीनी, गुड़, नील, अफीम, मोटा कपड़ा तथा जलानेकी लकड़ी यहांसे बाहर भेजते और अन्न, विलायती कपड़ा एवं सूत, कपास, रेशम, तम्बाकू, नमक, लोहालक्कड़, दवा, चमड़ेकी चीज़, पत्थरकी चक्की वग़ैरह दूसरीजगह हसे मंगाते हैं।

पहले आज़मगढ़से कलकत्तेकी राह कितनी ही साफ़ चीनी युरोप भेजी जाती थी। किन्तु अब वह बात नहीं रही।

साधारणत: इस ज़िलेका स्वास्थ्य अच्छा रहता, किन्तु वर्षा और शरत् ऋतुमें ज्वरका प्रकोप बढ़ जाता है। २ अपने ज़िलेकी तहसील। इसका क्षेत्रफल ४४२ वर्गमील है। ३ अपनी तहसीलका नगर। यह तोंस नदीपर बनारससे ८१ मील उत्तर अक्षा० २६° ३´ उ० और द्राघि० ८३° १३´ २०´´ पू० अवस्थित है। आज़मगढ़ नगरका क्षेत्रफल १३७४ एकर और लोकसंख्या प्राय: बीस हज़ार है। सन् १६६५ ई०को निकटके शक्तिशाली ज़मीन्दार आज़मखांने यह नगर प्रतिष्ठित किया था।

आज़माना (हिं० क्रि०) आज़मायश करना, परीक्षा लेना, जांचना।

आजमायश (फ़ा० स्त्री०) परीक्षा, जांच।

आजमार्य (सं० पु० स्त्री०) अजमारस्यापत्यम्, आजमार-ण्य, रेफात् परस्याकारस्य लोप:। कुर्वादिभ्यो ण्य:। पा ४।१।१५१। अजमारकी कन्या वा पुत्ररूप सन्तान, अजमारकी औलाद।

आजमीढ़ (सं० त्रि०) अजमीढ़ो नाम कश्चिद्देश: तत्र भव:, अण्। १ अजमीढ़-देश-जात, अजमीढ़ मुल्कका पैदा। (पु०) अजमीढ़स्य राजा अण्। २ अजमीढ़ देशका राजा। "तै: सत्कृत: सचतामाजमीढ़ो यथोचितं पाण्डुपुत्रान् समेयात्।" (महाभारत)

आजमूत्र (सं० क्ली०) छागमूत्र, बकरेका पेशाब।

आज़मूदा (फ़ा० वि०) परीक्षित, जांचा या परखा हुआ।

आजयन (सं० क्ली०) आ सम्यक् जायतेऽस्मिन्, आ-जि आधारे ल्युट्। युद्ध, लड़ायी।

आजरस (वै० अव्य०) जरापर्यन्तम्, सीमार्थे अजन्त अव्ययी०। १ जरा पर्यन्त, बुढ़ापे तक। (त्रि०) आगता जरा यस्य, प्रादि० बहुव्री० अच्, जरसादेशश्च। २ जराप्राप्त, बुड्ढा। "प्रजापति राजरसाय।" (ऋक् १०।८५।४३।) (सं० पु०) ३ छागमांस-खाद, बकरेके गोश्तका खाद्य।

आजवन (सं० क्ली०) प्रयाण, आक्रमण, युद्ध, धावा, हमला, लड़ायी।

आजवल्ल (सं० पु०) वनतुलसी, जङ्गली तुलसी। यह कटु, उष्ण, शीत, दाहकर, प्रिय, रुच्य, हृद्य, दीपक, लघु, पाकमें पित्तल, तिक्त, मधुर, सुख-प्रसव एवं प्रशस्य होता और वात, कफ, नेत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, अरुचि, विषकामला, कुम्भकामला, अनाहवात, शूल, अग्निमान्द्य, रक्तदोष, श्वास, कास, दद्रु, हृत्-पार्श्व-वेदना, कण्डु, कुष्ठ और वमनको दूर करता है। आजवल्लका सुगन्ध, कटु, उष्ण, रुचिकर, पित्तोत्पादक एवं निद्राजनक रहता और वमन, वात ग्रहबाधा, पार्श्वशूल, कास, श्वास, कफ, शोथ तथा अङ्गके दौर्गन्ध्यको मिटाता है। (वैद्यकनिघण्टु)

आजवस्तिक, आजवस्तेय:देखो। (स्त्री०) आजवस्तिका।

आजवस्तेय (सं० स्त्री० पु०) अजवस्ते: ऋषेरपत्यम्, शुभ्रादि० ढक्। अजवस्ति नामक ऋषिका पुत्र-कन्या-रूप सन्तान। (स्त्री०) ङीप्। आजवस्तेयी।

आजवाह (सं० त्रि०) अजो वाह्यतेऽत्र, अज्-वह-णिच् आधारे घञ्, ६-तत्; अजवाहो नाम कश्चिद्देश: तत्र भवादि अण्। अजवाह देश जातादि, अजवाह मुल्कका पैदा वगैरह। बदरिकाश्रमसे उत्तरस्थ पर्वतमय उच्च स्थानका नाम अजवाह है। क्योंकि वहां लोग बकरेपर ही बोझ ढोते हैं।

आजवाहक, आजवाह देखो।

आजा (हिं० पु०) पितामह, जद, दादा, बापका बाप। (स्त्री०) आजी।

आजागुरु (हिं० पु०) गुरुका गुरु, उस्तादका उस्ताद।

आजातशत्रव (सं० पु०) अजातशत्रोरपत्यम्, अजातशत्रु-अण्। १ युधिष्ठिरके अपत्य, धर्मराजके लड़के। २ अजातशत्रु नामक राजाके अपत्य। ३ भद्रसेन नामक राजा।

आजाति (सं० स्त्री०) आ-जन्-क्तिन्। १ आजनन, जन्म, पैदायश। (अव्य०) जातिपर्यन्तम्, सीमार्थे अव्ययी०। २ जन्म पर्यन्त, उम्रभर। ३ जातिपर्यन्त, कौमतक।

आज़ाद (फ़ा० वि०) १ मुक्त, जो बंधा न हो। २ निश्चिन्त, वेपरवा। ३ स्वतन्त्र, जो मातहत न हो। ४ निर्भय, वेख़ौफ़। ५ स्वतन्त्रभाषी, वेधड़क बोलनेवाला। ६ उद्धत, अक्खड़। ७ अकिञ्चन, जो गरीब न हो। ८ नामधाम-रहित, गुमनाम। (पु०) ९ साधु-सम्प्रदाय विशेष, एक फ़क़ीर। यह मुसलमान होते और दाढ़ी, मूंछ तथा भौं मुंड़ा डालते हैं। इनमें न तो कोयी रोज़ा रखता और न नमाज़ ही पढ़ता है। आज़ाद किसी क़िस्मके सूफ़ी और अद्वैतवादी होते हैं।

आज़ादगी (फ़ा० स्त्री०) आज़ादी, स्वतन्त्रता।

आज़ादाना (फ़ा० वि०) आज़ाद, स्वतन्त्र, जो मातहत न हो।

आज़ादी, आज़ादगी देखो।

आजाद्य (सं० त्रि०) अजं छागं अस्ति तस्य मुनेरपत्यम्, अज-अद्-अण् गर्गादि० यञ्, उप० समा०। अजभक्षक मुनिका अपत्य। (स्त्री०) ङीप् य-लोपः। आजादी। अजभक्षक मुनिकी कन्या।

आजान (सं० अव्य०) जनो जननमिव, जन-अण् सीमार्थे अव्ययी०। १ सृष्टिकाल पर्यन्त, दुनिया रहने तक। (पु०) २ उत्पत्ति, पैदायश। ३ जन्मभूमि, वतन।

आजानज (सं० त्रि०) आजानां जायते, आजान-जन-ड। सृष्टिकाल पर्यन्त जात, दुनियाके बननेतक पैदा हुआ। वेद दो प्रकारके होते हैं, आजानवेद और कर्मवेद। सृष्टिकाल-प्रकाशित आजान और कर्मकाल प्रकाशित कर्मवेद कहाते हैं।

आजानदेव (सं० पु०) आजानं सृष्टिकालात् प्रभृति देवः देवत्वमाप्तः। चिरप्रसिद्ध वा कर्मद्वारा प्रकाशित न होनेवाले देव।

आजानि (वै० स्त्री०) आ-जन अन्तर्भूतण्यर्थे इनि, छन्दसीति दीर्घः। १ उत्पत्ति, पैदायश। २ श्रेष्ठ कुल, शरीफ़ खान्-दान्। ३ माता, मा।

"आजानीवयस्ते अयं।" (ऋक् ३।१७।३)

आजानिक्य (सं० क्ली०) आजानी भवम्, ठन् तस्य भवाद्यर्थ प्रत्यय० यञ। आजन्म-सिद्ध बड़ाईका भाव और कर्म, पैदायशसे साबित योग्यका क़याम और काम।

आजानु (सं० अव्य०) जांघ या घुटनेतक।

आजानुबाहु (सं० त्रि०) घुटनेतक लम्बे हाथवाला।

आजानेय (सं० पु०) आजे विपक्षमध्ये आनेयो युद्धार्थम्। १ कुलीन अश्व, सुढङ्गा घोड़ा। (त्रि०) २ कुलीन, मुहज्ज़ब, बढ़िया।

आजानेय्य (वै० त्रि०) कुलीन, मुहज्ज़ब, बढ़िया।

आजायन (सं० पु०) अजस्यापत्यम्, नड़ादि० फक्। १ अज नामक राजाके अपत्य। २ अज नामक ब्राह्मणके लड़के।

आज़ार (फ़ा० पु०) रोग, वेदना, दर्द, बीमारी। २ कष्ट, मुसीबत।

आजि (सं० पु०-स्त्री) अजत्यस्याम् इण् णित्वादुपधावृद्धिः। अज्यतिभ्याञ्च। उण् ४।१३०। १ समरभूमि, लड़ायीका मैदान्। २ संग्राम, लड़ायी।

'आजिः संग्रामः।' (उज्ज्वलदत्त)

३ समतल क्षेत्र, हमवार मैदान्।

'आजिः स्यात् समभूमौ च संग्रामे।' (मेदिनी)

४ क्षण, लमहा। ५ मार्ग, राह। भावे इण्। ६ आक्षेप, फटकार। ७ दौड़का खेल।

आजिकृत् (वै० त्रि०) १ पुरस्कारके लिये लड़नेवाला, जो इनाम पानेको दौड़ रहा हो। २ युद्ध करनेवाला, जो लड़ रहा हो।

आजिक्रिया (सं० स्त्री०) युद्ध, लड़ायी, ठनाठनी।

आजिगीषु (सं० त्रि०) उत्साही, हौसलेमन्द, सबक़त ले जानेकी ख़्वाहिश रखनेवाला।

आजिग्रह (सं० त्रि०) लेने या पकड़नेवाला।

आजिज़ (अ० वि०) १ हलीम, नम्र। २ परेशान्, क्षुब्ध।

आजिज़ी (अ० स्त्री०) ग़रीबी, मुलायमियत, नम्रता, दीनता।

आजिज्ञासेन्य (वै० त्रि०) १ अनुसन्धानके योग्य, जांचने क़ाबिल।

आजितुर् (वै० त्रि०) युद्धमें विजय पानेवाला, जो लड़ायीमें जीतता हो।

आजिनीय (सं॰ त्रि॰) अजिन चतुरर्थ्यां कृशाश्वादि॰ छण्। चर्मके निकटस्थ, चमड़ेके पासवाला। यह शब्द देशादिका विशेषण है।

आजिपति (वै॰ पु॰) युद्धके स्वामी, लड़ायीके मालिक।

आजिरि (सं॰ त्रि॰) अजिर चतुरर्थ्यां सुतङ्गमादि॰ इञ्। १ अङ्गनके समीपस्थ, हातेके पास होनेवाला। २ चबूतरेके पासवाला। यह शब्द स्थानादिका विशेषण है।

आजिरेय (सं॰ त्रि॰) अजिर शुभ्रादि॰ ढक्। अजिरसे उत्पन्न होनेवाला, जो आंगनसे पैदा हो।

आजिहीर्षा (सं॰ स्त्री॰) आहर्तुमिच्छा, आ-हृ-सन् भावे अ प्रत्ययादिति अ टाप्। आहरणकी इच्छा, चोरी करनेका लालच।

आजिहीर्षु (सं॰ त्रि॰) आहरण करनेकी इच्छा रखनेवाला, जो माल उड़ा देना चाहता हो।

आजीकूण (सं॰ क्ली॰) आजीं कुणति आप्नोति यस्मिन्, आजी-कुण आधारे क। मर्यादा रखनेवाला देश, जो मुल्क इज्जत बचाता हो।

आजीगर्ति (सं॰ पु॰-स्त्री॰) अजीगर्तस्यापत्यम्, अजीगर्त-बाह्वादि॰ इञ्। अजीगर्तका पुत्र वा कन्यारूप सन्तान।

आजीव (सं॰ पु॰) आ-जीव्यते ऽनेन, आ-जीव करणे घञ्। १ जीवनोपाय द्रव्यादि, जिन्दगी बख्शनेवाली चीज़ वग़ैरह। २ उपाय, तदबीर। प्राचीन शास्त्रकारोंने लिखा है,—अन्नप्राशनके दिन दाल-भात खिलाने बाद लड़केके सम्मुख वस्त्र, अस्त्र, पुस्तक, लेखनी, स्वर्ण, रौप्य प्रभृति रख देना चाहिये। बालक सकल द्रव्यमें जिसे हाथसे पकड़े, वही उसका जीवनोपाय होगा। आ-जीव भावे घञ्। ३ जीवनके निमित्तका अवलम्बन, माश, पेशा। आजीवति, कर्तरि अच्। ४ जीवनोपायकारी, पेशाकश। आजीवति कर्म नृपमाश्रित्य वा, आ-जीव-अण्, उप॰ समा॰। ५ किसी कर्मके अवलम्बनसे जीवित रहनेवाला। ६ राजाके आश्रयसे जीनेवाला। ७ प्राचीन भिक्षु सम्प्रदाय विशेष।

आजीवक—१ अति प्राचीन धर्मसम्प्रदाय। कोई कोई इस सम्प्रदायको जैन सम्प्रदायके ही अन्तर्गत बताते हैं। किन्तु भगवतीसूत्र और आचाराङ्गसूत्र पाठ करनेसे मालूम होता, कि आजीवक सम्प्रदाय जैन सम्प्रदायसे भिन्न है। शेष तीर्थङ्कर महावीरस्वामीके समसामयिक मङ्खलीपुत्र गोशाल इस सम्प्रदायके एक प्रधान आचार्य थे। भगवतीसूत्रसे जाना जाता,कि मङ्खली नामक एक भिक्षुके औरस और उनकी पत्नी भद्राके गर्भसे गोशालका जन्म हुआ था। इसीसे उनका नाम मङ्खलिपुत्र-गोशाल पड़ा। महावीरस्वामीने संसार छोड़ने और भिक्षुकजीवन ग्रहण करनेके बाद दूसरे वर्ष जब राजगृहके समीपवर्ती किसी तन्तुवायके घरमें उपवास किया, उसी समय वहां सामान्य भिक्षुकरूपसे गोशाल भी जा पहुंचे। गोशाल महावीर॰ स्वामीका परिचय पाकर उनके शिष्य होनेको उद्यत हुये थे। किन्तु महावीरस्वामीने यह बात न सुनी। उसके बाद जब महावीरने कुल्लाग-ग्राममें आकर बहुल नामक ब्राह्मणके घर अवस्थान किया, तब गोशालने फिर भी वहां पहुंचकर उनका पैर पकड़ लिया था। उस समय महावीरने गोशालकी प्रार्थना पूर्ण की। फिर ६ वर्ष गोशाल उनके सङ्ग शिष्य रूपसे रहे एवं उसी समयसे क्रमशः सुख, दुःख, रति, विरति, मोक्ष और बन्धन प्रभृति विषय समझने लगे। पीछे कूर्मनामक ग्राममें महावीरके साथ गोशालका मत भेद हुआ। राहमें फलपुष्पशोभित तिल वृक्षको देखकर गोशालने महावीर स्वामीसे जिज्ञासा की,—यह वृक्ष मरेगा या नहीं एवं मरनेके बाद इसके सप्तजीवका क्या परिणाम होगा। महावीर स्वामीने उत्तर दिया,—वृक्ष मर जायगा, किन्तु इसी वृक्षके बीजसे पुनः सप्तजीव उत्पन्न होगा। गोशालने उनकी बातपर विश्वास न कर वृक्षको उखाड़ डाला था। कयी मास बाद दोनों जब उस स्थानको वापस गये, तब यह देख दङ्ग रह गये, कि पानी पड़नेसे उसी तिलका एक बीज पेड़ हो गया था। महावीरस्वामीने गोशालसे कहा,—इसने

तुमसे पूर्वमें जो बताया, उसका प्रत्यक्ष प्रमाण देख लीजिये ; पहला वृक्ष मर गया था, परन्तु उसीके बीजसे नूतन वृक्ष उत्पन्न हुआ। गोशाल फिर भी उनकी बातपर विश्वास कर न सके, और पेड़का एक बीज उठा उसकी छाल नोच-नोचकर देखने लगे, कि प्रकृत ही उसके मध्य अति सूक्ष्म सात दाने थे। इसीसे गोशालको धारणा हुई, केवल वृक्षलता ही नहीं—सकल जीवका जन्मान्तर सम्भव है। फिर कठोर योगसाधन कर गोशालने अमानुषिक क्षमता प्राप्त किये एवं स्वयं एक जिनके नामसे परिचित हुये। किन्तु महावीरस्वामीने उनका कभी जिनत्व स्वीकार किया न था। निर्ग्रन्थ एवं आजीवक सम्प्रदायके मध्य बहुत दिनतक परस्पर द्वेषभाव रहा। आजीवकगणको विश्वास था,—परिणाममें मोक्ष या परममार्ग पानेपर सब जीवोंको चौरासी लाख कल्प सप्त देवयोनि, सप्त जड़योनि, सप्त जीवयोनि और सप्त जन्मान्तर अतिक्रमण करना पड़ता है।

बौद्ध सम्प्रदायका 'समनफलसुत्त' पढ़नेसे मालूम कर सके, कि महाराज अजातशत्रुसे मङ्खलिपुत्र गोशाल मिले थे। अजातशत्रुने बुद्धसे गोशालका मत इसतरह प्रकट किया,—

"महाराज! वितरण, दान, बलिविधान, पुण्य, पाप, पापपुण्यका फलाफल, वर्तमान जगत्, स्वर्ग नरक, पिता, माता, देव, अप्सरा, जीवलोक, श्रमण, ब्राह्मण आदि कहीं कुछ भी नहीं होता और न उसकी विद्यमानताका कोई प्रमाण ही दे सकता है। जो लोग इन द्रव्योंका अस्तित्व बताते, वह झूठे हैं।"*

'भगवतीसूत्र'में भी देखते हैं,—"जब मङ्खलिपुत्र गोशाल चौबीस वर्ष सन्न्यासमें बिता चुके, तब श्रावस्तीके कुंभार-बाजारमें हालाहला नाम्नी कुंभारिनके साथ रहने और आजीवक मत फैलाने लगे। किसी समय निम्नलिखित छः दीक्षाचर उनके पास पहुंचे थे,—साण, कलन्दु, कणियार, अच्छिद, अग्निवेशायण और अज्जुण गोमायुपुत्र। उन्होंने इन दश पुस्तकोंसे अपनी बुद्धिके अनुसार कुछ वाक्य उद्धृत किये,—'दिव्यं, औत्पातं आन्तरिक्षं, भौम्यं, अङ्गं, स्वरं, लक्षणं, व्यञ्जनं, गीतमार्गलक्षणं और नृत्यमार्गलक्षणं। उपरोक्त दश पुस्तकोंमें पहले आठ पूर्व और पिछले दो मार्गका अंश हैं। छहो दीक्षाचरोंने गोशालका ही मत माना था। गोशालने स्वयं महानिमित्त मतसे अपने लिये छः विषय चुने थे,—मुक्ति, बन्धन, सुख, दुःख, जीवन और मरण।"

उद्धृत प्रमाणको देखकर कहा जा सकता, कि शाक्यबुद्ध और शेष तीर्थंकर महावीर स्वामीके अभ्युदयसे पहले ही आजीवक सम्प्रदाय चल पड़ा था। सम्राट् अशोकके पौत्र दशरथके अनुशासनसे मालूम हुआ, कि उन्होंने आजीवक भिक्षुकोंकी सेवाके लिये कितना ही दान दिया।

आजीवन (सं० क्ली०) आ-जीव्यतेऽनेन, आ-जीव करणे ल्युट्। १ वृत्तिका उपाय, पेशेकी फिक्र। भावे ल्युट्। २ जीवनके निमित्त उपायका ग्रहण, जिन्दगीके लिये पेशाकशी। 'स्त्रीणामाजीवनार्थंच।' (स्मृति) (अव्य०) ३ जीवन पर्यन्त, उम्र भर।

आजीवनार्थ (सं० पु०-क्ली०) वृत्ति, पेशा, कामकाज।

आजीविका (सं० स्त्री०) आजीवयति, आ-जीव-णिच् ण्वुल्, णिच् लोपः। जीविकावृत्ति, जीवनके धारणका उपाय, पेशा, माश, रोजी, रोजगार।

आजीविन् (सं० पु०) १ आजीविका-युक्त, पेशेवर, रोजगारी। २ भिक्षु विशेष। आजीवक देखो।

आजीव्य (सं० क्ली०) आ-जीव्यतेऽनेन, बाहु० करणे ण्यत्। १ जीवनोपाय वृत्त्यादि, रोजी, रोजगार। २ वृत्तिके निमित्त अवलम्बनीय नृपादि, रोजगारके लिये पकड़े जानेवाले बड़े आदमी। आजीव्यतेऽत्र, आधारे बाहु० ण्यत्। ३ आजीवन देश, जिस मुल्कमें जीयें। (त्रि०) ४ जीवनोपायके सदृश अभ्यास किया जानेवाला, जो रोजगारकी तरह मश्क् किया जा सकता हो। ५ वृत्तिके योग्य, जो रोजगार देता हो। ६ वासक्षम, रहने काबिल। ७ सफल, मेवेसे लदा हुआ।

आजु, आज देखो।

आतुर (सं० त्रि०) आ-त्वर-क्विप्-उट्। १ अधो-

* Vide Bunyin Nanjio's Chinese Tripitaka, No. 545.

धित श्रम, बेगार। २ नरकको प्रति व्यसन, जहन्नुमके तयीँ सुपुर्दगी।

आज (सं० त्रि०) आजवति, आ-जु-क्विप् दीर्घः। वेतनरहित कर्मकारक, बेगारी।

आज्ञप्त (सं० त्रि०) आ-ज्ञा-णिच् पुक् क्तः क्त। वा दान्तशान्तपूर्णदस्तस्पष्टच्छन्नज्ञप्ताः। पा ७।२।२७। आदिष्ट, जो हुकुम पा चुका हो।

आज्ञप्ति (सं० स्त्री०) आ-ज्ञा-णिच्-पुक् ह्रस्वः क्तिन्। आज्ञा, हुकुम, इत्तिला।

आज्ञा (सं० स्त्री०) आ-ज्ञा-अङ्-टाप्। १ आदेश, हुकुम। २ अनुमति, इजाजत।

आज्ञाकर (सं० त्रि०) आज्ञां आदेशं करोति प्रतिपालयति, आज्ञा-कृ-ट, उप० समा०; आज्ञया करोति, आज्ञा-कृ-अच्, ३-तत् वा। १ आदेशप्रति पालक,हुकुम माननेवाला। (पु०) २ आज्ञानुसार कार्यकारी भृत्यादि, हुकुमके मुताबिक काम करनेवाला नौकर।

आज्ञाकरण (सं० क्लो०) अनुवर्तन, वश्यता, फ़रमांबरदारी।

आज्ञाकरत्व (सं० क्लो०) भृत्यका धर्म, नौकरका काम।

आज्ञाकारी, आज्ञाकर देखो। (स्त्री०) आज्ञाकारिणी।

आज्ञागत (सं० त्रि०) आज्ञां आदेशं गतं प्राप्तम्, २-तत्। १ आज्ञाप्राप्त, हुकुम पाये हुआ। ३-तत्। २ आज्ञा द्वारा गत, जो हुकुमसे गया हो।

आज्ञाचक्र (सं० क्लो०) आज्ञाख्यं चक्रम्, शाक० तत्। तन्त्रप्रसिद्ध देहस्थ, सुषुम्ना नाड़ीके मध्यगत, भ्रूमध्यस्थित, द्विदल एवं पद्माकार चक्र विशेष।

"मूलाधार-स्वाधिष्ठान-मणिपूरकानाहत-विशुद्धाज्ञाख्यानि षट्चक्राणि मिता।" (भूतशुद्धि)

षट्चक्रका आज्ञापद्म द्विदल होता, जिसके एक दलमें 'ह' और दूसरेमें 'क्ष' वर्ण रहता है। यह श्वेतवर्ण है। आज्ञाचक्रके मध्य शुक्लवर्णा, षण्मुखी एवं ज्ञानमुद्रा-चिह्निता हाकिनी शक्ति वास करती है। आज्ञापद्मका ध्यान धरनेसे साधक अन्यके शरीरमें घुस और मुनिश्रेष्ठ, सर्वदर्शी, सर्वज्ञ तथा सकलका हितकारी हो सकता है।

आज्ञात (सं० त्रि०) आ-ज्ञा-क्त। १ सम्यक् ज्ञात, अच्छीतरह समझा हुआ। २ आज्ञाप्राप्त, हुक्म पाये हुआ। (पु०) ३ शाक्य मुनिके पहले पांच शिष्योंमें एकका नाम।

आज्ञातीर्थ (सं० क्लो०) ६-तत्। आज्ञा चक्र। रुद्रयामल तन्त्रके आज्ञाचक्रमें मानस-स्नान करनेको लिखनेसे उसका नाम आज्ञातीर्थ पड़ा है।

आज्ञादृ (वै० पु०) आदेशकर्ता, हुक्म देनेवाला।

आज्ञान (सं० क्लो०) आ-ज्ञा-ल्युट्। १ आज्ञाप्रदान, हुक्मका देना। २ मानस वृत्ति विशेष। आज्ञान वा प्रज्ञानके पर्याय यह हैं,—संज्ञान, विज्ञान, प्रज्ञान, मेधा, दृष्टि, धृति, मति, मनीषा, जुति, स्मृति, सङ्कल्प, क्रतु, असु, काम और वश। आज्ञान अन्तःकरण संज्ञक सकल ज्ञानको उपलब्धिका कर्ता है। अन्तःकरण वृत्ति प्रज्ञानरूप ब्रह्मसे बाह्य और अन्तर्वर्ती विषयपर आश्रित रहती है। शाङ्करभाष्यमें इसकी विवृति यों बनी है,—संज्ञान संज्ञप्ति चेतनभाव, आज्ञान आज्ञप्ति ईश्वरभाव, विज्ञान कलादि परिज्ञान, प्रज्ञान प्रज्ञप्ति प्रज्ञता, मेधा ग्रन्थधारणका सामर्थ्य, दृष्टि इन्द्रिय द्वारा सकल विषयकी आकाङ्क्षा और वश स्त्रीसङ्ग विषयक अभिलाष।

आज्ञानुग (सं० त्रि०) आज्ञां आदेशं अनुगच्छति, आज्ञा-अनु-गम [illegible] । स्वामीके आज्ञानुसार गमनकारी, मौ: सुख, दुःख, [illegible]बिक चलनेवाला।

आज्ञानुगत, आज्ञा[illegible]ति विष[illegible]

आज्ञानुगामिन् (सं० त्रि०) आज्ञामनुगच्छति, आज्ञा-अनु-गम-णिनि, ६-तत्। आज्ञानुसारी, हुक्मके मुताबिक जानेवाला। (स्त्री०) आज्ञानुगामिनी।

आज्ञानुयायिन् (सं० त्रि०) आज्ञामनुयाति, आज्ञा-अनु-या-णिनि, ६-तत्। आज्ञानुसार गमनकारी, हुक्मके मुताबिक चलनेवाला।

आज्ञानुवर्तिन् (सं० त्रि०) आज्ञां अनुवर्तते, आज्ञा-अनु-वृत-णिनि, ६-तत्। आज्ञानुसार वर्तमान, हुक्मपर हाजिर होनेवाला।

आज्ञानुसारिन् (सं० त्रि०) आज्ञामनुसरति, आज्ञा-अनु-सृ-णिनि, ६-तत्। आज्ञानुसार कर्मकारी, हुक्मके मुताबिक काम करनेवाला।

आज्ञापक (सं० त्रि०) आज्ञापयति आदिशति, आ-ज्ञा-णिच्-पुक्-ण्वुल्, णिच् लोपः। आदेष्टा, अनुमति-कर्ता, हुक्म देनेवाला।

आज्ञापत्र (सं० क्ली०) आज्ञाज्ञापकं पत्रम्, शाक० तत्। आदेशज्ञापक पत्र, हुक्मनामा।

आज्ञापन (सं० क्ली०) आदेश, हुक्म, इत्तिला।

आज्ञापालक, आज्ञानुग देखो।

आज्ञापित (सं० त्रि०) आदेश किया हुआ, जो हुक्म पा चुका हो।

आज्ञाप्य (सं० त्रि०) आदेश पानेवाला, जिसे हुक्म मिले।

आज्ञाप्रतिघात, आज्ञाभङ्ग देखो।

आज्ञाभङ्ग (सं० पु०) आज्ञाया आदेशस्य भङ्गः स्खलनम्। आदेशका अन्यथाकरण, नाफ़रमानी, उदूल-हुक्मी।

आज्ञावह (सं० त्रि०) आज्ञां वहति, आज्ञा-वह-अच्। आज्ञानुसार कार्यकारी, हुक्मके मुताबिक़ काम करनेवाला।

आज्ञासम्पादिन् (सं० त्रि०) आज्ञां सम्पादयति, आज्ञा-सम-पद्-णिच्-णिनि, णिच् लोपः। आदिष्ट विषय-सम्पादक, बताया हुआ काम करनेवाला।

आज्य (सं० क्ली०) आ सम्यक् अज्यते अनक्ति अनेन आ-अञ्ज करणे बाहु० क्यप्, न लोपः। १ घृत, घी। २ हविः। ३ श्रीवास, तारपीनका तेल। ४ धार्मिक गीत विशेष।

आज्यदोह (सं० पु०) सामवेदीय पाठ्य सूक्तविशेष। इसमें तीन ऋचा रहती और जप वा पाठ करनेसे पवित्रता आती है। सामग यह ग्रन्थ पढ़ते हैं,—वामदेव्य, वृहत्साम, ज्येष्ठसाम, रथन्तर, पुरुषसूक्त, रुद्रसूक्त, आज्यदोह, साम, शान्तिक, भागुड़ और पश्चात् द्वारपालद्वय। इनमें तीन देवव्रतसंज्ञक हैं।

आज्यप (सं० पु०) आज्यं पिबति, आज्य-पा-क, उप० समा०। १ पुलस्त्यके पुत्र और वैश्योंके पितृदेव। आदिपर्वमें लिखा है,—

"सोमपा नाम विप्राणां क्षत्रियाणां हविर्भुजः।
वैश्यानामाज्यपा नाम शूद्राणान्तु सुकालिनः॥
सोमपास्तु कवेः पुत्राः हविष्मन्तोऽङ्गिरःसुताः।
पुलस्त्यस्याज्यपाः पुत्रा वशिष्ठस्य सुकालिनः॥ (महाभारत)

अर्थात् ब्राह्मणोंके सोमप, क्षत्रियोंके हविर्भुज, वैश्योंके आज्यप और शूद्रोंके पितृदेव सुकालिन हैं। शुक्राचार्यके सोमप, अङ्गिराके हविष्मत्, पुलस्त्यके आज्यप और वशिष्ठके पुत्र सुकालिन रहे। श्राद्धादि पितृदेव होनेसे इनके तर्पण करनेका विधान है।

आज्यपा, आज्यप देखो।

आज्यपात्र (सं० क्ली०) घृतभाजन, घियांड़ा, घी रखनेका बरतन।

आज्यभाग (सं० पु०) आज्यस्य भागः, ६ तत्। १ घृतका एक देश, घीका कोयी हिस्सा। २ घृतकी वैदिक आहुति। उत्तरकी ओर स्रुव द्वारा अग्निके उद्देश्य जो आहुति ऋग्वेदी देते, उसे आज्यभाग कहते हैं। फिर अग्निकी दक्षिण ओर सोमके उद्देश्य दीयमान आहुति भी आज्यभाग हो है। यजुर्वेदो अग्निके उत्तर-पूर्वार्धमें 'अग्नये स्वाहा' एवं 'इद-मग्नये' और दक्षिण-पूर्वार्धमें 'सोमाय स्वाहा' तथा 'इदं सोमाय' कहकर जो आहुति डालते, उसे भी आज्यभाग बताते हैं। 'अग्नये स्वाहा' और 'सोमाय स्वाहा' अग्निमें आहुति देनेके मन्त्र हैं। 'इदमग्नये' और 'इदं सोमाय' दोनो मन्त्र पात्रमें आज्यभाग रखते समय पढ़े जाते हैं।

आज्यभुक्, आज्यभुज् देखो।

आज्यभुज् (सं० पु०) आज्यं मन्त्रेण विधिवद्दग्नौ दत्तं घृतं भुङ्क्ते, आज्य-भुज-क्विप्। देवता, अग्नि, हुत घृत-खानेवाले।

आज्यवारि (सं० पु०) घृतका समुद्र, घीका बहर।

आज्यस्थाली (सं० स्त्री०) आज्यपात्र देखो।

आञ्चन (सं० क्ली०) शरीरसे कण्टकों या बाणोंका आंशिक निष्कर्षण, जिससे कांटों या तीरोंका कुछ-कुछ निकास।

आञ्छन (सं० क्ली०) अस्थि वा पादका सन्निवेश, हड्डी या पैरका बैठाना, यानी फैला, झुका या खींचकर असली जगह फिर लाना।

आञ्जन (सं० क्ली०) आ-अञ्ज-ल्युट्। १ समन्ता-

दभ्यञ्जन, सकल दिक्‌में कज्जल, गहरी कालिक। अञ्जनायां भवः, अण्। अञ्जनाके पुत्र हनूमान्। (त्रि०) अञ्जनस्येदम्, अण्। २ अञ्जन सम्बन्धी, सुरमयी। (स्त्री०) आञ्जनी।

आञ्जनाभ्यञ्जनीय (सं० क्ली०) उत्सवविशेष, एक जलसा। (स्त्री०) आञ्जनाभ्यञ्जनीया।

आञ्जनिक्य (सं० क्ली०) अञ्जनाय हितम्, अञ्जन-ठन् ततः पुरो० भावे कर्मणि च यक्। प्रत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्। पा ४।१।१२८। अञ्जन साधनत्व, सुरमेका कमाल।

आञ्जनीकारी (सं० स्त्री०) अञ्जन लगाने या बनाने-वाली स्त्री, जो औरत सुरमा लगाती या बनाती हो।

आञ्जनेय (सं० पु०) अञ्जनाया अपत्यम्, ढक्। स्त्रीभ्यो ढक्। पा ४।१।१२०। अञ्जनाके गर्भजात हनूमान्।

आञ्जलिक्य (सं० क्ली०) अञ्जलिरिव, स्वार्थे कन् ततः पुरो० भावे कर्मणि च यक्। अञ्जलिका बनाव, दोनो हाथका एकत्र मिलान।

आञ्जिक (सं० पु०) दानव विशेष।

आञ्जिनेय (सं० पु०) अञ्जिन्यां भवः, ढक्। सरी-सृप विशेष, किसी किस्मका गिरगिट।

आट (सं० पु०) सर्पविशेष, किसी सांपका नाम।

आटना (हिं० क्रि०) मूंदना, दबाना, छिपाना, तोपना।

आटरुष, आटरूष देखो।

आटरूष (सं० पु०) अटरूष एव, स्वार्थे अण्। वासक वृक्ष, अड़ूसेका पेड़। अटरूष देखो।

आटलाण्टिक महासमुद्र—आटलाण्टिक नामक महा-सागर, आटलाण्टिक बहरे-आज़म। (Atlantic Ocean) यह यूरोपीय पश्चिम तट एवं अफ़रीका और उत्तर तथा दक्षिण अमेरिकाके पूर्व तट बीच अवस्थित है। भूमध्यरेखा इसे उत्तर तथा दक्षिण आट-लाण्टिक नामक दो भोगमें विभक्त करती है। उत्तर आटलाण्टिक अपनी लम्बी तटरेखाके लिये प्रसिद्ध है। इससे कितने ही उपसागर मिले, जिनमें पश्चिम-की ओर करीबियन सागर, मेक्सिकोका अखात, सेण्ट-लारेन्सका समुद्रवङ्क एवं हडसन-खाड़ी और पूर्वपर भूमध्य, कृष्ण, उत्तर तथा बालटिक सागर प्रधान हैं। किन्तु दक्षिण आटलाण्टिककी तटरेखा बहुत छोटी है। इसमें भीतरी सागर देख नहीं पड़ते।

उत्तर आटलाण्टिकका क्षेत्रफल १३२६२००० और दक्षिण आटलाण्टिकका १२६२७००० वर्गमील लगता है। पृथिवीकी कितनी ही बड़ी-बड़ी नदियां आटलाण्टिक महासमुद्रमें आकर गिरती हैं। कोयी अक्षा० ५०° उ०से ४०° दक्षिण तक इसमें पानीके नीचे जो पहाड़ पड़ता, उसकी गहराईका औसत १०२०० फीट है। आटलाण्टिक महासमुद्रके प्रधान-प्रधान द्वीप नीचे लिखे जाते हैं,—भूमध्यसागरस्थ द्वीप, आयिसलैण्ड, वृटिश आयिल्स, अज़ोरेस, मदिरा, कनारीज़, केप वर्ड द्वीप, असेनसन, सेण्ट हेलना, ट्रिष्टन दा कुनहा और गोवेट द्वीप।

उत्तर आटलाण्टिककी २४७८८ और दक्षिण आटलाण्टिककी गहरायी औसतमें २५११९ फीट है। आटलाण्टिक महासमुद्रके तलमें मृदुमृत्तिका भरी है। सकल महासमुद्रोंसे इसका जल खारी है। मालूम होता, कि आटलास पर्वत अथवा काल्पनिक आटलाण्टिस द्वीपसे यह नाम निकला है।

आटविक (सं० त्रि०) अटव्यां चरति भवो वा, ठक्। १ अरण्यचारी, जङ्गलमें रहनेवाला। २ वन्य, जङ्गली। (पु०) ३ लकड़हारा। ४ अरण्यचारी सैन्य विशेष, जङ्गलमें लड़नेवाली फौज। सैन्य छः प्रकारका होता है,—१ मौल, २ भृत्य, ३ सुहृत्, ४ श्रेणी, ५ द्विषद् और ६ आटविक। (रघु० ४।२६)

आटवी (सं० स्त्री०) अटव्याः सन्निकृष्टो पूः, अण्। दक्षिण दिक्‌स्थ यवनपुरी विशेष। महाभारतमें इस नगरीका वर्णन मिलता है।

आटव्य (सं० पु०) उपाध्याय विशेष, किसी उस्ताद-का नाम। वायुपुराणमें इनका वर्णन है।

आटा (हिं० पु०) १ अन्नका चूर्ण, पिसान। २ बुकनी।

आटि (सं० पु० स्त्री०) आ सम्यक् अटति, आ-अट् बाहु० इण्। १ शरारिपक्षी, एक चिड़िया। २ मत्स्य विशेष, कोई मछली।

आटिक (सं० त्रि०) आटाय गमनाय प्रवृत्तः, ठन्। गमनपर प्रवृत्त, जानेमें लगा हुआ।

आटिकी (सं० स्त्री०) आटं गमनं अर्हति, अण्-ङीष्। १ गृहसे बाहर जाने योग्य अजातपयोधर स्त्री, बालिका। २ उषस्तिकी स्त्रीका नाम।

आटिक्य (सं० त्रि०) आटिक स्वार्थे ष्यञ्। गमनमें प्रवृत्त, जो जलयात्रामें हो।

आटी (हिं० स्त्री०) अटक रहनेवाली चीज़, डाट, पखड़, टेक। (सं०) आटि देखो।

आटीकन (सं० क्ली०) आटीक्यते ईषद्गम्यते, आ-टीक भावे ल्युट्। वत्सकी प्रथम-प्रथम अल्प गति, बछड़ेका पहले-पहल धीरे-धीरे चलना।

आटीकनक, आटीकन देखो।

आटीकर (सं० पु०) वृष, बैल।

आटीमुख (सं० क्ली०) आट्याः शरारिपक्षिण्या मुखमिव मुखं यस्य, शाक० बहुव्री०। व्रण विस्रावणका शस्त्रविशेष, ज़ख़्म चीरनेका एक नश्तर। सुश्रुतमें लिखा,—यह शरारि पक्षीके मुंह-जैसा होता है।

आटीवदन, आटीमुख देखो।

आटोप (सं० पु०) आ-तुप्-घञ्, पृषो० तस्य टत्वम्। १ दर्प, घमण्ड। २ संरम्भ, आग़ाज़, किसी कामका हाथमें लेना। ३ आडम्बर, तड़क-भड़क। ४ उदरके मध्य सवेदन गुड़गुड़ा शब्द, दर्दके साथ पेटकी गुड़-गुड़ाहट। यह जठरसे उत्पन्न होता है। (भावप्रकाश) ५ फलन, सूजन।

आट्टखलक (सं० क्ली०) अट्टखली देखो।

आट्टोप (सं० पु०) रोगविशेष, किसी क़िस्मकी बीमारी। इसमें उदरके अन्त्र तन जाते हैं।

आट्णार (वै० पु०) शतपथब्राह्मणके परका नाम।

आट्णारिक, आटणारिक देखो।

आठ (हिं० वि०) अष्ट, हश्त, दोसे चौगुना।

आठक (हिं० वि०) आठके बराबर, आठसे कुछ कम या ज़्यादा।

आठवां (हिं० वि०) अष्टम, हश्तुम, आठकी जगह रहनेवाला।

आठें (हिं० स्त्री०) अष्टमी तिथि।

आठों, आठें देखो।

आड़ (हिं० स्त्री०) १ यवनिका, परदा। २ ललाटके तीरान्तर खींची हुई समरेखा, जो सीधी सतर मत्थेपर आड़ी निकाली जाती हो। ३ वारण, रोक। ४ रक्षा, हिफ़ाज़त। ५ रोड़ा, ईंट या पत्थरका टुकड़ा। यह पहियेके नीचे गाड़ी एक जगह खड़ी रखनेको अटका दी जाती है। ६ अष्टताल भेद। ७ थनी। ८ तिलसे भरी हुई बोंड़ी। ९ कलकूला। यह चीनीके कार्यालयमें व्यवहृत होती है। १० वृश्चिक आदिका डङ्क। ११ स्त्रियोंके मत्थेपर लगनेवाली लम्बी टिकली। १२ आभूषण विशेष, टीका। स्त्रियां इसे ललाटपर धारण करती हैं।

आड़गीर (हिं० पु०) खेतके समीपका वृक्ष, जो घास खेतके पास जगती हो।

आड़ण (हिं० स्त्री०) ढाल।

आड़ना (हिं० क्रि०) १ रोक रखना, छेक लेना। २ आबद्ध करना, बांध देना। ३ वारण करना, रोकना। ४ अटकाना, गहने रखना।

आड़बन, आड़बन्द देखो।

आड़बन्द (हिं० पु०) चिट, जांघियेपर बंधनेवाला लंगोट।

आडम्बर (सं० पु०) आ-डवि क्षेपणे अरच्। १ हर्ष, खुशी। २ दर्प, गुरूर। ३ तूर्यस्वन, तुरहीकी आवाज़। ४ युद्धकालीन घोषणा, लड़ायीके वक्तकी ललकार। ५ आरम्भ, शुरू। ७ चक्षुका लोम, बरौनी। ७ मेघका शब्द, बादलकी गरज। ८ युद्ध, लड़ायी। ९ हस्तीका गर्जन, हाथीकी चिग्घार। 'आडम्बरस्तूर्यरवे संरम्भे गजगर्जिते।' (मेदिनी) १० रणदुन्दुभि, डङ्का। ११ क्रोध, गुस्सा। १२ नेत्रच्छद, पलक। (क्ली०) १३ शरीरका मर्दन, जिस्मकी मालिश।

आडम्बराघात (वै० पु०) रणदुन्दुभि बजानेवाला, जो लड़ायीके डङ्केपर चोब मारता हो।

आडम्बरिन् (सं० त्रि०) मत्वर्थे इनि। अभिमानी, मग़रूर, घमण्डी। (स्त्री०) आडम्बरिणी।

आडम्बरी, आडम्बरिन् देखो।

आड़ा (हिं० पु०) १ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह

धारीदार होता है। २ स्थूलकाष्ठ, शहतीर। ३ दारु-फलक, लकड़ीका तख़्ता। यह नाव या जहाज़की बगलमें लगता है। ४ लकड़ीका सामान। इस पर जुलाहे सूत फैलाते हैं। ५ नौ मात्राका ताल विशेष। इसका ठेका इसतरह बजाते और एक खाली तथा तीन ताल भरे लगाते हैं,—

+ । ।+ १। ।+ ०।
धिधि ताधि धिता तिति
।×१। ।×
ताधि धिधा :।:।

(त्रि०) ६ वक्र, तिरछा। (स्त्री०) आड़ी।

आड़ाखेमटा (हिं० पु०) ताल विशेष। इसमें कोई बारह और कोई साढ़े तेरह ताल बताते, जिसमें एक खाली तथा तीन भरे रहते हैं। ठेकेका बोल यह है,—

+। । । १। ।
धागे तेकेटे धेने धागे धागे
। ०। । । १।
तेने ताके तेकेटे धेने धागे
। ।
धाग धेने :।:।

आड़ाचौताला (हिं० पु०) सात मात्राका ताल विशेष। इसमें चार ताल भरे और तीन खाली पड़ते हैं। यह छोटा चौताला भी कहाता है। मृदङ्गका हाथ इसतरह निकालते हैं,—

+। १। ०। १।
धागे धादा धिन्ना कत्ति
०। १। ०।
नाधा तेकेट्धा धिन्ना :।:।

आड़ाठेका (हिं० पु०) ताल विशेष। आड़ा देखो।

आड़ाना, अड़ाना (हिं० पु०) जंगला राग विशेष। यह दो प्रकारका है। एकमें सुघरायी, कान्हरा एवं सारङ्ग और दूसरेमें सोरठ वा मलार तथा कान्हरा मिला रहता है। अड़ानेमें सारङ्गका ही भाग अधिक लगता है। स्वरग्राम यह हैं,—

नि स ऋ ग म प ध

आड़ापञ्चताल (हिं० पु०) ताल विशेष। इसमें पांच आघात और नौ मात्रा देते हैं। ठेकेकी चाल यों है,—

+ १ १
धि तिर किट धिना धि धि ना
१
ना तुना कत्ता धि धि ना धि धि ना।

आड़ारक (सं० पु०) आड़ उद्यमे वञ्, तत आरक्। ऋषिविशेष।

आड़ालोट (हिं० पु०) चाञ्चल्य, तलव्वन-मिज़ाजी, कंपकंपी, सकुच।

आड़ि (सं० पु०-स्त्री०) आड़ उद्यमे इण्। १ स्वनाम-ख्यात मत्स्यविशेष, एक मछली। २ शरारि पक्षी, एक चिड़िया। यह गृध्र-जैसी होती है।

आडिक, आड़ि देखो।

आड़िका, आड़ि देखो।

आड़ी (हिं० स्त्री०) १ ताल विशेष। किसी तालमें पूर्ण समयके तृतीय, षष्ठ वा द्वादश भागपर पूरा ताल लगानेका नाम आड़ी है। २ चर्मकारोंकी कुट्टी। ३ तर्क, ओर। ४ सहायक, मदद देनेवाली। ५ तिरछी। (सं०) आड़ि देखो।

आड़ीकी, आड़ि देखो।

आडु (सं० त्रि०) ईषदपि पानेके लिये चेष्टा करने-वाला, जो कोई चीज़ हासिल करनेमें लगा हो।

आड़ू (सं० पु०) अण दण्डकः ञ णित्, णित्वा-दुपधावृद्धिः णस्य डश्च। अणो डश्च। उण् १।८६। १ प्लव, बेड़ा, चौघड़ा। (हिं०) २ फल विशेष, एक मेवा। स्वादमें यह खटमिट्ठा होता और देहरादूनकी ओर बहुत उपजता है। इसका फल चौड़ा और गोल दो तरहका होता है। इसे शफ़तालू भी कहते हैं। ३ आड़ूका पेड़।

आढ़ (हिं० पु०) १ आढ़क, चार सेरकी तौल। (स्त्री०) २ आड़, परदा। ३ आश्रय, सहारा। ४ अन्तर, फ़र्क़। ५ आड़ि, एक मछली। ६ स्त्रियोंके मस्तकका आभूषण, टीका। (वि०) ७ आढ्य, भरा हुआ।

आढ़क (सं॰ पु॰) आढौक्यते धान्यादिः परिमाणार्थं गम्यते, आ-ढौक कर्मणि घञ्, पृषो॰ औकारस्य आत्। १ शमीधान्य विशेष, अरहर। २ अष्टशरावमित धान्य-मान-विशेष, अनाज मापनेको लकड़ीका बरतन। इसमें चार सेर अन्न आता है। ३ प्रस्थ चतुष्टय, चार सेरकी तौल। आठ मुष्टिका एक कुञ्चि, आठ कुञ्चिका एक पुष्कल और चार पुष्कलका एक आढ़क होता है। मतान्तरसे—१२ प्रसृतिमें १ कुड़व,४ कुड़वमें १ प्रस्थ और ४ प्रस्थमें १ आढ़क बैठता है। सुश्रुतमें लिखा,स्वर्णादि तौलनेका आढ़क २५६ पल होता है।

आढ़कजम्बु (सं॰ पु॰) आढ़कमिता जम्बु यस्मिन् देशे, बहुव्री॰। स्थूल जम्बु-युक्त देश, जिस मुल्कमें बड़े-बड़े जामुन रहें।

आढ़कजम्बुक (सं॰ त्रि॰) स्थूलजम्बुयुक्त देशजात, जो बड़े-बड़े जामुनके मुल्कमें पैदा हो।

आढ़किक (सं॰ त्रि॰) आढ़कं सम्भवति अवहरति पचति वा, ख-ठञ् वा। १ आढ़क परिमित, जिसमें एक आढ़क द्रव्य रख सकें। २ आढ़क परिमित वीज बोया हुआ, जिसमें एक आढ़क वीज डाल सकें। (स्त्री॰) आढ़किकी।

आढ़किका, आढ़की देखो।

आढकी (सं॰ स्त्री॰) आढकेन मीयते, आढक-अण्, जातित्वात् ङीप्। १ अरहर। यह श्वेत, रक्त और पीत भेदसे तीन प्रकारकी होती है। साधारण आढकी कषाय, मधुर, कफ एवं पित्तको जीतनेवाली, ईषत् वातकर, रुच्य,गुरु और ग्राहिणी रहती है। (राजनिघण्टु) यह तुवर, रूक्ष, मधुर, शीतल, लघु, ग्राहिणी, वातजननी, वर्ण्य और पित्त कफ तथा रक्तको जीतनेवाली है। (भावप्रकाश) अरहर मृदु एवं कषाय होती और सरक्त पित्त, क्षत, कफ, मुखव्रण, गुल्म, ज्वर, अरोचक, कास, छर्दि तथा हृद्रोगको दूर करती है। (अत्रिसंहिता) श्वेत दोषकरी; रक्त रुच्य, पित्त एवं ताप मिटानेवाली, और पीत आढकी दीपन तथा पित्तदाहघ्न है। (राजनिघण्टु) २ परिमाणभेद, चार सेरकी तौल। ३ सौराष्ट्रमृत्तिका, खु,शबूदार मट्टी। ४ गोपीचन्दन। ५ गन्धद्रव्य विशेष।

आढकीन, आढ़किक देखो।

आढकीयूष (सं॰ पु॰ क्ली॰) तुवरीयूष, अरहरका पानी। यह वल्य होता है। (राजनिघण्टु) आढकीयूष मधुर, विशेषण, वातनिवारक, श्लेष्मापह और पित्तहर है। (अत्रिसंहिता)

आढ़त (हिं॰ स्त्री॰) व्यवसाय विशेष, एक रोज़गार। इसमें व्यापारीका माल अढ़तिया अपनी दुकान पर रखता और कुछ दलाली खा कर बेच देता है। २ आढ़ती माल बिका देनेके बदलेका रुपया।

आढ़तदार, अढ़तिया देखो।

आढ़तिया, अढ़तिया देखो।

आढ़ती (हिं॰ वि॰) आढ़तसे सरोकार रखनेवाला।

आढौलक, आटौ कम देखो।

आढ्य (सं॰ त्रि॰) आ-ध्यै-क, पृषो॰ साधु। १ धनी, दौलतमन्द। २ युक्त, मिला हुआ। ३ विशिष्ट, भरा हुआ। ४ सम्पन्न, कसीर। 'इभ्य आढ्यो धनी।' (अमर) (स्त्री॰) आढ्या।

आढ्यक (सं॰ क्ली॰) धन, बहुतायत, दौलत, कसरत।

आढ्याकुलीन (सं॰ पु॰-स्त्री॰) आढ्यकुले भवः, ख। आढ्यकुल-जात, जो ऊंचे खान्दानमें पैदा हो।

आढ्यङ्करण (सं॰ क्ली॰) अनाढ्यमाढ्यङ्करोत्यनेन, आढ्य-कृ करणे ख्युन् मुम्, उप॰ समा॰। आढ्यसुभगस्थूलपलितनग्नान्धप्रियेषु च्व्यर्थेष्वच्वौकृञः करणे ख्युन्। पा ३।२।५६। अभ्युदयका उपाय, बढ़नेका ज़रिया। (त्रि॰) २ अभ्युदयकारी, दौलत देनेवाला। (स्त्री॰) आढ्यङ्करणी।

आढ्याचर (सं॰ त्रि॰) भूतपूर्व आढ्यम्, आढ्य-चरट्। भूतपूर्वे चरट्। पा ५।३।५३। पूर्वमें आढ्य, जो पहले दौलतमन्द रहा हो। (स्त्री॰) आढ्याचरी।

आढ्यतम (सं॰ त्रि॰) अतिशयेन आढ्यम्, आढ्य तमप्। अतिशायने तमबिष्ठनौ। पा ५।३।५५। अतिशय आढ्य, निहायत दौलतमन्द।

आढ्यता (सं॰ स्त्री॰) विभव, ऐश्वर्य, तालेवरी, मालदारी।

आढ्यपदि (सं॰ अव्य॰) आढ्यं पदं ग्रहणं यत्र, द्विदण्ड्यादि॰ इच्, इजन्तत्वादव्ययत्वम्। द्विदण्ड्यादिभ्यश्च। पा ५।४।१२८। आढ्यपद ग्रहणयुक्त सुघमें।

आव्यपवन (सं० पु०) उरुस्तम्भ रोग, जांघका भोला।

आव्यम्भवन (सं० पु०) अनाव्यं आव्यं भवत्यनेन, आढ्य-भू करणे खुरन् मुम्, उप-समा०। अनाव्यको आव्य बनानेवाला द्रव्य, जो चीज़ ग़रीबको अमीर कर देती हो।

आव्यम्भविष्णु (सं० त्रि०) अनाव्यं आव्यं भवति, आढ्य-भू कर्तरि खिष्णुच् मुम्, उप० समा०। आढ्यता-प्राप्त, जो अमीर बन रहा हो।

आढ्यम्भावुक (सं० त्रि०) अनाढ्यं आढ्यं भवति, आढ्य-भू कर्तरि च्व्यर्थे खुकञ् मुम्, उप० समा०। आव्यम्भविष्णु देखो।

आढ्यवात (सं० पु०) आढ्यो वातो यत्र, बहुव्री०। वातरक्त, वातरोगभेद, फ़ालिज। वैद्यशास्त्रके मतसे कफ-मेदो-द्वारा आवृत हो उरुदेशमें वायु पहुंचनेपर यह रोग होता है।

आढ्या (सं० स्त्री०) अजमोदा, अजमोद।

आढ्याड् (सं० त्रि०) आढ्य बननेकी चेष्टा करनेवाला, जो दौलत हासिल करनेमें लगा हो।

आणक (सं० त्रि०) अणकमेव, स्वार्थे अण्। १ अधम, कमीना। २ कुत्सित, ख़राब। (क्लो०) ३ समीपमें सो मैथुनका करना। ४ आना, रुपयेका सोलहवां हिस्सा। (स्त्री०) आणका।

आणव (सं० क्लो०) अणोर्भावः, पृथ्वादि० वा अण्। १ अणुत्व, सूक्ष्मता, खुर्दी, बारीकी। (त्रि०) २ अतिशय सूक्ष्म, निहायत बारीक।

आणवीन (सं० त्रि०) अणु-धान्यानां सर्षपादीनां भवनं क्षेत्रं वा, अणु-खञ्। सरसों-जैसा छोटा अन्न उत्पन्न करनेवाला, जिसमें छोटा अनाज बोयें। यह शब्द क्षेत्रादिका विशेषण है। (स्त्री०) आणवीना।

आणि (सं० पु०-स्त्री०) अण्-इण्। १ तन्नामक मर्मस्थान, आणि नामकी नाज़ुक जगह। यह बाहुका मर्म होता और जानुके ऊर्ध्व भागमें दोनो पार्श्वपर तीन अङ्गुल बराबर रहता है। (सुश्रुत) २ अक्षाग्रकील, धुरेका कांटा। इससे पहिया बाहर निकल नहीं सकता। ३ गृहकोण, मकान्का गोशा। ४ सीमा, हद। ५ असिधारा, तलवारकी बाढ़। (स्त्री०) आणी।

आणीवेय (सं० पु०-स्त्री०) अणिरस्त्यस्य वा दीर्घः आणीयः ऋषिविशेषः तस्यापत्यम्, शुभ्रादि० ढक्। आणीव ऋषिका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य। (स्त्री०) आणीवेया।

आण्ड (सं० त्रि०) अण्डे भवः, अण्। १ अण्डसे जन्म लेनेवाला, जो अण्डेसे पैदा हो। यह शब्द पक्षी, सर्प प्रभृतिका विशेषण है। (पु०) २ हिरण्य-गर्भ ब्रह्मा। अण्डमेव, स्वार्थे अण्। ३ पुरुषका वृषण, अण्डकोष, फ़ोता, बैज़ा, ख़ाया, खुसया, पेलड़। अण्डं वृषणमस्त्यस्य, अण्। ४ अण्डकोष-युक्त, जिसके फ़ोता रहे। अण्डेन निर्वृत्तम्, अण्ड-अण्। ५ अण्डनिष्पन्न कपालरूप आकाश एवं भूलोक। दो कपालसे जैसे घट बनता, वैसे ही पर-ब्रह्म स्वप्रसूत अण्डके ही दो टुकड़े उतार आकाश एवं भूलोक तैयार करता; इसीसे इन दोनो लोकका नाम आण्ड पड़ा है। ६ अण्ड, अण्डा। ७ समुत्पन्न श्रावकगण, झोल।

आण्डज (सं० पु०) अण्डे जायते, अण्ड-जन-ड स्वार्थे अण्। १ अण्डजात पक्षी सर्पादि, अण्डेसे पैदा होनेवाले परिन्द सांप वग़ैरह। (क्लो०) २ अण्डजात जीवका शरीर, अण्डेसे पैदा होनेवाले जानवरका जिस्म। (त्रि०) ३ अण्डजात, अण्डेसे पैदा। (स्त्री०) आण्डजा।

आण्डवत् (सं० त्रि०) अण्ड वा वृषण-विशिष्ट, जिसके अण्डा या फ़ोता रहे। (पु०) आण्डवान्। (स्त्री०) आण्डवती।

आण्डाद (वै० पु०) १ अण्डभक्षक, अण्डाख़ोर। २ दानव विशेष।

आण्डायन (सं० त्रि०) अण्डेन निर्वृत्तम्, अण्ड पक्षादि० फक्। अण्डनिर्वृत, अण्डनिष्पन्न, अण्डेसे निकला हुआ।

आण्डी (वै० स्त्री०) वृषण, फ़ोता।

आण्डीक (वै० त्रि०) अण्डोत्पादक, अण्डे देनेवाला। जो पेड़ अण्डे-जैसे गोल-गोल फल रखता, वह आण्डीक कहाता है। (स्त्री०) आण्डीका।

आण्डीर (वै० त्रि०) आण्डमस्त्यस्य, आण्ड-ईरच्। काण्डाण्डादीरन्नीरचौ। पा ५।२।१११। १ अण्डयुक्त, अण्डेदार। (पु०) २ पुरुष, नर। (स्त्री०) आण्डीरा।

आण्डीवत (सं० पु०) राजाविशेष।

आण्डीवतायनि (सं० त्रि०) आण्डीवतेन निर्वृत्तम्, कणवादि० फिञ्। अण्डीवत राजाकर्तृक निर्वृत्त, अण्डीवत राजासे निकला हुआ।

आत् (वै० अव्य०) १ अत-विण्। आद गुणः। पा ६।१।८७। अनन्तर, बाद, पीछे। (सं० पु०) २ आकार, आ।

आत (सं० त्रि०) आ-अत्-अच्। १ सतत-गत, प्रसृत, गुज़रा हुआ। (दे० पु०) २ मञ्च, पाड़। ३ द्वारका आधार, दरवाज़ेका ठाट। ४ आकाशका चतुर्थांश, आसमान्की चौथायी। (हिं० पु०) ५ शरीफ़ा।

आतक (सं० त्रि०) अत-ण्वुल्। १ सतत गमनकारी, गुज़र जानेवाला। (पु०) २ सर्पविशेष, किसी नागका नाम।

आतङ्क (सं० पु०) आ-तकि-घञ्। १ रोग, बीमारी। २ सन्ताप, तकलीफ़। ३ सन्देह, शक। ४ मुरज वाद्यकी ध्वनि, मुरचङ्गका आवाज़। ५ भय, खौफ़। ६ ज्वर, बुख़ार।

'आतङ्कोरोग-सन्ताप-शङ्कासु मुरजध्वनौ।' (मेदिनी)

आतञ्चन (सं० क्लो०) आ-तञ्च-ल्युट्। १ वेग, धावा। २ प्रायण, पहुंच। ३ आप्यायन, भराव। ४ दधि प्रस्तुत करनेको दुग्धमें अम्ल द्रव्यका प्रक्षेप, दही बनानेके लिये दूधमें खटायीका डालना। ५ निक्षेप, फेंक-फांक। ६ उपद्रव, गड़बड़। ७ द्रव-द्रव्यके प्रक्षेपसे कठिन वस्तुका चूर्णन, पतली चीज़ डालकर सख्त शैका तोड़ना। ८ गलित स्वर्णादिका द्रव्यान्तरके संयोगसे जारण, सोनेका फूकना।

'आतञ्चनं प्रतीवाय जवनाप्यायनार्थकम्।' (अमर)

करणे ल्युट्। ९ दधि प्रस्तुत करनेका अम्ल, दही जमानेकी खटायी।

आतत (सं० त्रि०) आ-तन-क्त। विस्तृत, कुशादा, फैला हुआ।

आततज्य (सं० त्रि०) आतता आरोपिता ज्या यस्य। रोदा खींचे हुआ, चढ़ी कमानवाला।

आततायिता (सं० स्त्री०) वध, क़त्ल, चोरी।

आततायित्व (सं० क्लो०) आततायिता देखो।

आततायिन् (सं० त्रि०) आततेन विस्तीर्णेन शस्त्रादिना अयितुं वधाद्यर्थं गन्तुं शीलमस्य, आतत-अय-णिनि। १ वध करनेको उद्यत, जो जान मारनेको तैयार हो। २ अधिज्य, कमान चढ़ाये हुआ। घरमें आग लगाने, भक्ष्य वस्तुमें विष मिलाने, अनिष्टके निमित्त शस्त्र उठाने, धन चोराने, भूमि छीनने और स्त्री निकाल ले जानेवालेको वशिष्ठने आततायी बताया है। किसी-किसी मतसे आततायीको मार डालनेमें कोयी पातक नहीं, किन्तु मतान्तरसे पाप पड़ता है। पाण्डवोंने शत्रुको मार इसी पापक्षयके निमित्त अश्वमेधयज्ञ किया था। (पु०) आततायी। (स्त्री०) आततायिनी।

आतताविन् (वै० त्रि०) आततायिन् देखो। (पु०) आततावी। (स्त्री०) आततावीनी।

आतन (सं० क्लो०) १ दर्शन, नज़ारा, देखाव। २ विस्तृति, फैलाव।

आतनि (वै० त्रि०) आ-तन-इन्। विस्तारक, फैलानेवाला।

आतान (वै० त्रि०) विस्तृत रज्जु, फैली हुयी रस्सी।

आतायिनी (सं० पु०) श्येनपक्षी, बाज़।

आतप् (वै० त्रि०) आतपति, आ-तप-क्विप्। १ तापदायक, गर्म। (पु०) २ ताप, गर्मी।

आतप (सं० पु०) आतपति, आ-तप-घ। पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण। पा ३।३।११८। १ रौद्र, धप। इसके सेवनसे स्वेद निकलता, मूर्च्छा आती, रक्त बढ़ता, तृष्णा लगती, दाह होता, श्रम चढ़ता, चित्त उभरता और वैवर्ण्य देख पड़ता है। (मदनपाल) आतप कटु, रूक्ष और नेत्ररोगप्रकोपन है। (राजनिघण्टु) (त्रि०) २ सन्तापदायक, तकलीफ़ पहुंचानेवाला। (स्त्री०) आतपा।

आतपतण्डुल (सं० पु०) प्रसिद्ध तण्डुल, अरवा चावल।

आतपत्र (सं० क्लो०) आतपात् रौद्रात् त्रायते, आ-तप-त्रै-क। छत्र, धूप बचानेवाला छाता। महाभारतीय

अनुशासन-पर्वके ८५ अध्यायमें युधिष्ठिरने भीष्मसे पूछा था,—'श्राद्ध एवं अन्य-अन्य पुण्यकर्ममें छाता और जूता उत्सर्ग करनेका क्या कारण है?' भीष्मने उत्तर दिया,—'पूर्वकालमें भृगुवंशोद्भव जमदग्नि बाणप्रयोग सीखनेके लिये किसी स्थानको ताक पुनः पुनः शर छोड़ने लगे। जो शर छूटता, उनकी पत्नी रेणुका उसे उठा लाती थीं। क्रमसे मध्याह्नकाल उपस्थित हुआ और रौद्र प्रखर पड़ा। पथकी बालू तपकर आग बन गयी थी। रेणुका क्लान्त हो वृक्षकी छायामें बैठीं और बाण लानेमें अनेक विलम्ब लगाने लगीं। जमदग्निने क्रुद्ध हो उतने विलम्बका कारण पूछा था। रेणुकाने विनय-वाक्यमें स्वामीसे कहा,—मस्तकपर प्रखर सूर्यका ताप लगता और रौद्रसे पथ जला जाता है, अब मैं आ-जा नहीं सकती। यह बात सुन जमदग्नि सूर्यके प्रति बाण फेंकने लगे थे। सूर्यने ब्राह्मणके वेशमें उनके पास पहुंच और छाता तथा जूता देकर कहा,—आजसे जो छाता और जूता देगा, उसे महत् फल मिलेगा। उसी समयसे श्राद्धादि पुण्य-कार्यमें छाता और जूता दिया जाता है।'

आतपत्रक (सं० क्लो०) क्षुद्र छत्र, छोटा छाता। जो चटायी या टोकरी मस्थेपर छातेकी जगह रखते, उसे भी आतपत्रक कहते हैं।

आतपन (सं० पु०) ताप उत्पन्न करनेवाले शिव।

आतपर्णिका, आतपर्णी देखो।

आतपर्णी (सं० स्त्री०) चोरिका, खिरनी।

आतपवत् (सं० त्रि०) आतपोऽस्त्यस्य, आतप-मतुप्, मकारस्य वकारः। तापयुक्त, रोशन किया हुआ, जो आफ्‌ताबको रोशनी पाता हो। (पु०) आतपवान्। (स्त्री०) आतपवती।

आतपवर्ष्य (वै० त्रि०) आतपे निमित्ते सति वर्षन्ति, बाहु० कर्तरि यत्। रौद्रके समय वृष्टिसे उत्पन्न, जो धूप रहते मेह बरसनेसे पैदा हो। यह शब्द जलादिका विशेषण है। (स्त्री०) आतपवर्ष्या।

आतपवारण (सं० क्लो०) आतपं रौद्रं वारयति, आतप-वृ-णिच्-ल्युट्। छत्र, धूपको दूर रखनेवाला छाता।

आतपशुष्क (सं० त्रि०) रौद्रमें सूखा हुआ, जो धूप लगनेसे कड़ा पड़ गया हो।

आतपात्यय (सं० पु०) ६-तत्। १ रौद्रका अपगम, धूपकी रवानगी। आतपस्य अत्ययो यत्र, बहुव्री०। २ वर्षाकाल, धूपको दूर करनेवाली बारिश।

आतपाभाव (सं० पु०) ६-तत्। १ रौद्रका अभाव, धूपका देख न पड़ना। आतपस्य अभावो यत्र, बहुव्री०। २ छाया, साया, परछाहीं। ३ छायायुक्त स्थान, सायेदार जगह।

आतपिन् (सं० त्रि०) १ रौद्रसम्बन्धीय, धूपसे ताल्लुक रखनेवाला। (पु०) आतपी। सूर्य।

आतपीय (सं० पु०) आतपस्य सन्निकृष्ट देशादि उत्करादि० छ। रौद्रके निकटस्थ स्थानादि, धूपके पासकी जगह। (स्त्री०) आतपीया।

आतपोदक (सं० क्लो०) आतपे रौद्रे लक्ष्यमाणं उदकमिव, शाक० तत्। १ मरीचिका, मृगतृष्णा, सुराब, धोका।

आतप्य (वै० त्रि०) रौद्रमें विद्यमान, धूपमें रहने-वाला।

आतम (हिं०) आत्मन् देखो।

आतमा (हिं०) आत्मन् देखो।

आतमाम् (सं० अव्य०) आ-तमप्-आमु। १ अति-शय सान्मुख्य, बिलकुल सामने। २ समन्ताद्भाव, सकल दिक्, चारो ओर, सब जगह।

आतर (सं० पु०) आतायते अनेन, आ-त करणे अप्। पार जानेका भाड़ा, उतरायी, नावका मह-सूल। 'आतरस्तरपण्यं स्यात्।' (अमर)

आतर्दन (सं० क्लो०) उद्‌घाटन, उन्मोलन, शिगाफ़, साल, फांक।

आतर्पण (सं० क्लो०) आ-तृप्-ल्युट्। १ तृप्ति, आसूदगी, छकाहट। आ-तृप्-णिच्-ल्युट्, णिच् लोपः। २ तृप्तिका उत्पन्न करना, आसूदगीका लाना। ३ मङ्गलद्रव्यका आलेपन, पोतायी। आले-पनमें व्यवहृत होनेवाला वर्णक, ऐपन, पोतनेका रङ्ग।

आतव (सं० पु०) आ-तु-अप्। हिंसाका करना,

तकलीफका पहुंचाना। २ एक राजा। (त्रि०) कर्तरि अच्। ३ हिंसक, तकलीफ देने या मारनेवाला।

आतवायन (सं० पु०) आतवस्यापत्यम्, आतव अश्वादि० फक्। आतव राजाके पुत्र और कन्यारूप अपत्य, आतवकी औलाद।

आतश (फा० स्त्री०) अग्नि, आग।

आतशक (फा० स्त्री०) उपदंश, मेढ्ररोग, गर्मी, फिरंगकी बीमारी। हस्तके अभिघात, नख एवं दन्तके पात, आधावन, अति उपसेवन और योनिके प्रदोषसे विविध अपचार पर पांच प्रकारका उपदंश शिश्नमें होता है। सतोद भेद, स्फुरण, और सकृष्ण स्फोट निकलनेसे पवनोपदंश समझा जाता है। पीत, बहुक्लेदयुत और सदाह स्फोट पित्तोपदंशका लक्षण है। रक्तात्मक उपदंशमें सकृष्ण स्फोट पड़ता और उससे रुधिर टपका करता है। कफोपदंशका स्फोट सकण्डुर, शोथयुत, महत्, शुक्ल, घन और स्रावयुत रहता है। त्रिमलोपदंश नानाविध स्रावरोगसे निकलता और असाध्य होता है। (माधवनिदान) अतिमैथुन, अति ब्रह्मचर्य तथा ब्रह्मचारिणी, चिरोत्सृष्टा, रजस्वला, दीर्घरोमा, कर्कशरोमा, सङ्कीर्णरोमा, निगूढ़रोमा, अल्पद्वारा, महाद्वारा, अप्रिया, अकामा, अपरिष्कार सलिलप्रक्षालित-योनि, अक्षालितयोनि, योनिरोगोपसृष्टा, दुष्टयोनि वा वियोनि नारीके अत्यर्थ उपसेवन और हाथके नाखून तथा दांतकी नोकका विष लगने एवं शूकके निपातन, अर्दन, हस्तके अभिघात, चतुष्पदीगमन, गन्दे सलिलके प्रक्षालन, अवपीड़न, मैथुनान्तमें शुक्रमूत्रके वेगधारण एवं प्रक्षालनादिसे मेढ्रमार्गका जो प्रकुपित दोष क्षत वा अक्षतमें स्वयं उभर आता, वही उपदंश कहाता है। छर्दि, विरेक, ध्वज, मध्य नाड़ीका वेध, जलौका, परिपातन, सेक, प्रलेप, यव, शालि, जाङ्गलपशुमांस, मुद्गरस, घृत, कठिल्लक, शिग्रुफल, पटोल, वनमूलक, शालिशाक, तिक्त कषाय, मधु, कूपवारि और तप्त उपदंशको दूर करता है। दिवानिद्रा, मूत्रवेग, गुरु अन्न, मैथुन, गुड़, आयास, अम्ल और तक्र उपदंशके रोगीको बचाना चाहिये। (सुश्रुत)

आतशखाना (फा० पु०) अग्न्यागार, आग रखनेकी जगह। पारसी जिस स्थानमें अग्निस्थापन करते, उसे भी आतशखाना कहते हैं।

आतशखोर (फा० वि०) अग्निभक्षक, आग खानेवाला।

आतशगाह, आतशखाना देखो।

आतशज़न (फा० वि०) गृहदाही, घरमें आग लगानेवाला।

आतशज़नी (फा० स्त्री०) गृहदाह, घर फूंक देनेका काम।

आतशदान (फा० पु०) अग्नि रखनेका पात्र, अंगीठी, बोरसी।

आतशपरस्त (फा० वि०) १ अग्निपूजक, आगकी परस्तिश करनेवाला। (पु०) २ पारसी।

आतशबाज़ (फा० पु०) हवायीगर, आतशबाज़ी तैयार करनेवाला।

आतशबाज़ी (फा० स्त्री०) १ आग्नेय चूर्णसे निर्मित क्रीड़नकके छूटनेका दृश्य, बारूदसे भरे खिलौनोंके चलनेका नज़ारा। २ आग्नेय चूर्णसे निर्मित क्रीड़नक, बारूदका खिलौना। यह कयी तरहकी होती है,—अनार, फुलझड़ी, महताबी, चकरी, वाण, छछूंदर, हवायी, बमगोला, फटाका इत्यादि।

आतशी (फा० वि०) १ आग्नेय, आगके मुताल्लिक़। २ अग्न्युत्पादक, आग पैदा करनेवाला। ३ अग्निमें डालनेसे न बिगड़नेवाला, जो आगमें पड़नेसे जलता न हो।

आता (सं० स्त्री०) आभिमुख्येन अत्यते गम्यते प्राणिभिः, आ-अत-घञ्। अकर्तरि च कारके। पा ३।३।१९। दिक्, जानिब, तर्फ़, ओर।

आतान (वै० पु०) आतन्यते, आ-तन्-घञ्। १ आभिमुख्यमें विस्तार, कुशादगी, फैलाव। २ खींचतान। कर्मणि घञ्। ३ विस्तार्य, फैलाया जानेवाला। ४ कर्तव्य कार्य, फर्ज़।

आतानक (सं० त्रि०) आ-तन्-ण्वुल्। विस्तारक, फैलानेवाला।

आतापि (सं० पु०) आ-तप्-इण्। १ एक असुर।

आतापिके भाईका नाम वातापि रहा। दस्युवृत्ति ही इनकी प्रधान जीविकाका उपाय थी। घरमें आनेपर वातापि अपने भाई आतापिका मांस काटकर अतिथिको खिला देते रहा। शेषमें भोजनके बाद वातापिके पुकारनेसे यह जीवित हो और अतिथिका पेट फाड़कर बाहर निकल आता था। मृत्यु होनेपर दोनो असुर उसका सर्वस्व छीन लेते। एकदिन अगस्त्य मुनि भी आतापिके घर अतिथि हुये थे। आगतस्वागतके अनन्तर वातापि बोला, भगवन्! क्या आप मांस खाना चाहते हैं। ऋषिके सम्मत होनेपर उसने अपने भाई आतापिको गुप्त रीतिसे काटकर ऋषिके आगे ला रखा था। अगस्त्य उत्तम रूपसे वही मांस पकाकर खा गये। वातापि उन्हें सामान्य अतिथि जैसा समझ दूर जाके आतापिको पुकारने लगा, किन्तु ऋषिने जठरानलमें भस्मीभूत कर दिया था। इसीलिये यह उनका उदर विदीर्ण कर दूसरे दिनकी तरह बाहर निकल न सका। अगस्त्य और वातापि देखो। २ चिल्लपक्षी, चील।

आताविन् (सं० पु०) आतपति, आ-तप्-णिनि। १ चिल्ल, चील। २ एक असुर। आतापि देखो।

आतापी, आतापि देखो।

आतार (सं० पु०) आतीर्यतेऽनेन, आ-तॄ करणे घञ्। नौकाका शुल्क, नावका भाड़ा, नदीपार जानेका महसूल, उतराई, खेवा।

आतार्य (सं० त्रि०) १ पार किया जानेवाला, जिसके पार उतरा जाये। (वै०) २ पार जानेके मुताल्लिक, जो पार उतरनेसे सम्बन्ध रखता हो।

आताली (सं० अव्य०) आ-तल बाहु० इण्। कातर व्यक्तिको व्याकुल करके, खौफ़ज़दा शख़्सको बेचैन बनाकर।

आति (सं० पु०) अत-इण्। १ मरारी पक्षी। (त्रि०) २ सर्वदा गमनकारी, हर वक़्त चलनेवाला।

आतिथिग्व (सं० पु०) अतिथिं गच्छति, अतिथि गम्-ड्व। १ दिवोदास नामक राजा। तस्यापत्यम्, अण्। २ दिवोदास राजाके पुत्र।

आतिथेय (सं० क्ली०) अतिथये इदम्, अतिथि-ढक्। १ अतिथिसेवा, मेहमांदारी। २ अतिथिके निमित्त भोजनादि, मेहमानके लिये खाना वग़ैरह। (त्रि०) तत्र साधु ढञ्। पथ्यतिथिवसति स्वपते र्ढञ्। पा ४।४।१०४। अतिथि सेवामें कुशल, मेहमांदारीमें होशियार। (स्त्री०) आतिथेयी।

आतिथ्य (सं० क्ली०) अतिथये इदम् ञ्य। अतिथेर्ञ्यः। पा ५।४।२६। १ अतिथि-परिचर्या, पहुनाई, मेहमान्दारी। २ अतिथिको देने योग्य वस्तु। स्वार्थे ष्यञ्। ३ अतिथि, पाहुना, मेहमान्।

'आतिथ्योऽतिथौ तद्योग्यपि।' (हेम)

(त्रि०) ४ अतिथिका सत्कार करनेवाला, मेहमांदार।

आतिथ्यरूप (वै० त्रि०) आतिथ्य नियमके स्थानापन्न, मेहमांदारीके चलनकी जगह रहनेवाला।

आतिथ्यसत्कार (सं० पु०) आतिथ्यका कल्प, मेहमांदारीका काम।

आतिदेशिक (सं० त्रि०) अतिदेशादागतः, ठक्। अन्यत्र आरोपित, अतिदेश-प्राप्त, दूसरी जगह रखा हुआ।

आतियात्रिक (सं० त्रि०) अतियात्रायां नियुक्तः ठक्। आतिवाहिक। आतिवाहिक देखो।

आतिरश्चीन (सं० त्रि०) ईषत् तिर्यक, कुछ-कुछ टेढ़ा।

आतिरेक्य (सं० क्ली०) अतिरिच्यते, कर्मणि घञ् तस्य भाव ष्यञ्। अतिशय वृद्धि, इफ़रात, बढ़ती।

आतिवाहिक (सं० पु०) अतिवाहे इहलोकात् परलोक-प्रापणे नियुक्तः, ठक्। इस लोकसे परलोक ले जानेवाला ईश्वर-नियुक्त अर्चिरादि अभिमानी देवगण, धूमादि अभिमानी देवगण। अतिवाहनमें नियुक्त देव दो रूप होते, प्रथम दक्षिण एवं द्वितीय उत्तर पथपर स्थित हैं। जो लोग इहलोकमें वापी कूप तड़ागादि बनाते और अग्निष्टोम याग प्रभृति वैदिक कर्मकाण्ड करते, वे परलोक जानेको दक्षिण द्वार पाते हैं। उसी स्थानपर ईश्वर नियुक्त धूमादिगण रहता, जो सकल व्यक्तिको परलोक ले जाता है। फिर जो लोग इहलोकमें ज्ञानी होते अर्थात् ज्ञान-

मार्ग द्वारा परमात्माकी चिन्ता करते, वह परलोक जानेको उत्तरद्वार पर पहुंचते है। वहां ईश्वर-नियुक्त अभिमानी देवगण ज्ञानी मनुष्यका परलोक ले जाता है। इसीका नाम अर्चिरादि है। शाङ्करसूत्रके शाङ्करभाष्यमें इसका विशेष विवरण लिखा है।
अतिवाह अतिवाहकाले (लोकान्तरगतिकाले) भव: ठञ्। २ मनुष्यके मृत्युका जात देह। विष्णुधर्मोत्तर पुराणमें लिखा, कि मनुष्य मरनेपर आतिवाहिक शरीर पाता है। उसी शरीरसे तेज, वायु एवं आकाश तीन भूत ऊपर चढ़ जाते हैं। आतिवाहिक शरीर केवल मनुष्यके ही होता है, अन्य प्राणीके नहीं। (प्रायश्चित्त-विवेक) आतिवाहिक शरीरको 'भोग-शरीर' भी कहते हैं। (त्रि०) ३ इहलोकसे परलोक जानेमें नियुक्त, इस दुनियासे दूसरी दुनियामें पहुंचानेके काम आनेवाला।

आतिविश्वान्य (सं० त्रि०) ज्ञानको अतिक्रमण करनेवाला, जो समझसे सबकत ले जाता हो।

आतिश, आतश देखो।

आतिशय्य (सं० क्ली०) अतिशय एव, स्वार्थे ष्यञ्। आधिक्य, प्राधान्य, कसरत, बहुतायत।

आतिश्वायन (सं० त्रि०) अतिक्रान्तं श्वानं कुक्कुरम्, पृषो० न समासान्त: अतिश्वादास:, मत्वर्थीनत्वात् फक्। पक्षादिभ्य: फक्। पा ४।२।८०। दासके निकटस्थ, नौकरके नजदीक। यह शब्द देशादिका विशेषण है।

आतिष्ठ (सं० क्ली०) अति-स्था-क भावम्, अतिष्ठस्य भाव: अण्। उत्कर्ष, अन्यको अतिक्रम करनेवाली स्थिति, बढ़ती, जिस हालतमें दूसरेसे बढ़े रहें।

आतीपाती (हिं० स्त्री०) क्रीड़ा विशेष, पहाड़ी छिलो, एक खेल। इसमें कितने ही बालक एकत्र होते और एकको चोर बनाते हैं। फिर चोर लड़का यह कहकर किसी पेड़की पत्ती लाने भेजा जाता है,—'आती मार छाती, लावो नीमकी पाती।' इस वाक्यमें नीमकी जगह जिस पेड़की पत्ती मंगाना चाहते, उसीका नाम रखते हैं। चोर-लड़केके पत्ती तोड़ने जाते ही दूसरे इधर उधर किसी गुप्तस्थानमें छिप जाते हैं। मंगायी हुई पत्ती हाथमें लिये वह जिस लड़केको छू लेता, उसे चोर बनना और दांव देना पड़ता है। ग्रीष्मकालकी चन्द्रयोत्स्नामें ही यह क्रीड़ा प्राय: हुआ करती है।

आतु (सं० पु०) आडू देखो।

आतुच् (वै० स्त्री०) आधारे क्विप्। सूर्यका अस्तगतिकाल, सन्ध्या, आफ़ताबके गुरूब होनेका वक्त, शाम। "यन्मध्यन्दिन आतुचि।" (ऋक् ८।२७।२१) 'आतुचिर्गमनार्थ:' (सायण)

आतुज् (सं० पु०) शत्रुको नाश करनेवाला, धन देनेवाला, जो दुश्मनको बरबाद करता या दोस्तको दौलत देता हो।

आतुजि (वै० त्रि०) आ-तुज हिंसाबलादान-निकेतनेषु इन् किच्च। इगुपधात् कित्। उण् ४।११८। १ हिंसक, चोट देनेवाला। २ बलग्राहक, छीन लेनेवाला। ३ आक्रमणकारी, झपट पड़नेवाला।

आतुर (सं० त्रि०) अत सातत्य-गमने उरच्, पृषो० अकारदीर्घ:। मद्गुरादयश्च। उण् १।४१। १ आहत, जख़मी। २ पीड़ित, तकलीफ़ उठानेवाला। ३ रोगी, बीमार। ४ कार्याक्षम, नाकाम। ५ व्याकुल, परेशान। 'आमयाव्यी-विकृतो व्याधितोऽपटु:। आतुर:।' (अमर) "आतुरे नियमो नास्ति।" (स्मृति) (क्रि० वि०) ६ शीघ्र, जल्द, फ़ौरन्। (स्त्री०) आतुरा।

आतुरता (सं० स्त्री०) १ पीड़ा, तकलीफ़। २ रोग, बीमारी। ३ कार्याक्षमता, निकम्मापन। ४ व्याकुलता, परेशानी। ५ शीघ्रता, फुर्ती।

आतुरताई (हिं०) आतुरता देखो।

आतुरसन्न्यास (क्ली०) ६-तत्। सन्न्यास विशेष, जो सन्न्यास बीमार लेता हो। भारतवर्षके दक्षिण किसी-किसी स्थानमें मृत्युकाल आ पहुंचनेसे मुमुर्षु व्यक्तिको सन्न्यास दे निर्गुण उपासना सिखाते हैं। इसीका नाम आतुरसन्न्यास है। आतुर-सन्न्यास लेने बाद मुमुर्षुके बच जानेपर कोई घरमें घुसने नहीं पाता। तुलसीदास नामक एक ब्राह्मणको ऐसी ही दशा हुई थी। मुमुर्षुकाल पाकर आतुरसन्न्यास धर्म दिया गया सही, किन्तु मृत्यु उनका कुछ बिगाड़ न सका। इसीसे वह ग्रामोंमें रहने और

वेदान्त पढ़ने लगे थे। तुलसीदासका तत्त्वज्ञान और नीतिवीरत्व अतिशय प्रसिद्ध है। तुलसीदास देखो।

आतुरी (हिं०) आतुरता देखो।

आतुरोपक्रमणीय (सं० पु०) आतुरं रोगिणमधिकृत्य रोगनिवारणाय उपक्रमणीयः, शाक० तत्। १ पीड़ितकी चिकित्साके लिये उपक्रमणीय व्यापार विशेष, बीमारकी शफ़ाके लिये अमलमें लाया जानेवाला काम। इसमें आयु, व्याधि, ऋतु, अग्नि, वयस, देह, बल, सत्वसात्म्य, प्रकृति, भेषज और देश पर ध्यान रखना पड़ता है। तदधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, क। २ तत्प्रतिपादक ग्रन्थ, इसी मजमूनकी किताब।

आतुर्य (सं० क्लो०) आतुरस्य भावः, घञ्। १ आतुरत्व, घबराहट। २ पीड़ा, तकलीफ़। ३ फलनाशक ज्वरांशविशेष, किसी क़िस्मका बुखार। वस्तुभेदसे ज्वरांश नानाविध होता है। इसका वर्णन हरिवंशके १८३ अध्यायमें अच्छीतरह लिखा है।

आतृण (सं० क्लो०) आ-तृद्-क्त। १ छिद्र, शिगाफ़, छेद। २ सच्छिद्र क्षत, खुला ज़ख़्म। (त्रि०) ३ हिंसित, चोट खाये हुआ। ४ छिन्न, कटा-फटा।

आतृप्य (सं० पु०) आतृप्यतेऽनेन, आ-तृप बाहु० क्यप्। १ आतका पेड़, शरीफ़ेका दरख़्त। (क्लो०) २ आतका फल, शरीफ़ेका मेवा। यह तृप्ति-जनक, रक्तवर्धक, स्वादु, शीतल, हृद्य, बल्य, मांसकर और दाह, रक्त, पित्त एवं वातघ्न होता है। (राजनिघण्टु) (त्रि०) ३ तृप्त होने योग्य, जो आसूदा किया जा सकता हो।

आतोदिन् (वै० त्रि०) वेधक, साहसी, मारनेवाला, जो धक्का दे रहा हो। (पु०) आतोदी। (स्त्री०) आतोदिनी।

आतोद्य (सं० क्लो०) आ समन्तात् तुद्यते, आ-तुद-ण्यत्। वीणादि चार वाद्य, बीन वगैरह चार बाजे। इनमें वीणादि तत, मुरजादि अनद्ध, वंशी प्रभृति शुषिर और कांस्य तालादि वाद्य घन होता है।

आत्त (सं० त्रि०) आ-दा-क्त। १ गृहीत, मञ्जूर किया हुआ। २ असन्दिग्ध, पक्का। ३ आकृष्ट, खींचा हुआ।

आत्तगन्ध (सं० त्रि०) आत्तो गृहीतः गृहुणा गन्धः गर्वो यस्य, शाक० बहुव्री०। १ शत्रुकर्तृक अभिभूत, दुश्मनसे दबा हुआ। २ गृहीत-गन्ध, सूंघा हुआ।

आत्तगर्व (सं० त्रि०) आत्तो गृहीतो गर्वो यस्य, बहुव्री०। अभिभूत, पराजित, दबा या हारा हुआ।

आत्तमनस्क (सं० त्रि०) हर्षमें मन खो बैठनेवाला, जो खुशीमें आपेसे बाहर निकल जाता हो।

आत्तलक्ष्मी (सं० त्रि०) धन गंवा देनेवाला, जो दौलत खो बैठा हो।

आत्तवचस् (वै० त्रि०) वचनशून्य, जो बोल न सकता हो।

आत्म (हिं०) आत्मन् देखो।

आत्मक (सं० त्रि०) द्रव्यकी प्रकृतिसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो चीजकी कुदरतसे ताल्लुक़ रखता हो। यह शब्द प्रायः पदके समासान्तमें आता है। जैसे—सङ्कल्पात्मक, पद्मात्मक, विषात्मक, ऋणात्मक इत्यादि। (पु०) आत्मन् देखो। (स्त्री०) आत्मिका।

आत्मकर्मन् (सं० क्लो०) आत्मना क्रियते, आत्मन्-कृ-मणिन्। सर्वधातुभ्यामणिन्। उण् ४।१४४। स्वीय कर्तव्य कर्म, अपने हाथका काम।

आत्मकल्याण (सं० क्लो०) स्वीय मङ्गल, अपना भला।

आत्मकाम (सं० त्रि०) आत्मनं कामयते, आत्मन्-कम-णिङ्-अण्, उप० समा०। अपनी ही ओर देखनेवाला, स्वार्थी, मतलबी। २ अन्य विषय परित्याग कर केवल आत्माका अभिलाष रखनेवाला, जो दूसरी बातें छोड़ रूहका ही हाल जानना चाहता हो।

आत्मकामेय (सं० त्रि०) आत्मकामाय इदम्, ढक्। आत्मकामका सम्बन्धी, अपने या रूहके कामसे ताल्लुक रखनेवाला।

आत्मकामेयक (सं० त्रि०) आत्मकामेय स्वार्थे राजन्यादि० वुञ्। आत्मकामेयाकीर्ण, आत्मकामेयोंसे आबाद।

आत्मकार्य (सं० क्लो०) स्वीय कर्म, घराऊ काम।

आत्मकीय, आत्मीय देखो।

आत्मकृत (सं० त्रि०) १ स्वीय सम्पादित, अपने हाथों किया हुआ। १ स्वीय प्रतिकूलाचरित, अपने ख़िलाफ़ किया हुआ।

आत्मगत (सं० अव्य०) स्वगत, पार्श्वत:, जनान्तिक, अलग, किनारे। यह शब्द प्राय: नाट्य भाषामें आगामी वचन गुप्त रखनेको व्यवहृत होता है। पात्र जो कुछ कहता, मानो वह उसीके लिये रहता और सिवा दर्शकमण्डलीके दूसरा कोयी सुन नहीं सकता।

आत्मगति (सं० स्त्री०) १ जीवनके अस्तित्वकी वृत्ति, रूहकी हस्तीका तरीक़। २ स्वीय वृत्ति, अपनी चाल।

आत्मगत्या (सं० अव्य०) स्वीय कर्मसे, अपने हाथों।

आत्मगन्धक (सं० पु०) गन्धवोल। (वैद्यकनिघण्टु)

आत्मगन्धिहरिद्रा (सं० स्त्री०) कर्पूरहरिद्रा, आमाहलदी।

आत्मगुप्त (सं० त्रि०) आत्मना गुप्त: रक्षित:। निज शक्ति द्वारा रक्षित, अपनी ताक़तसे टिका हुआ।

आत्मगुप्ता (सं० स्त्री०) कपिकच्छु, केवांच। 'आत्मगुप्ताजहाऽव्यण्डा।' (अमर) केवांच शुक्रवर्धक, मधुर-तिक्त, मांससंवर्धक, गुरु, वातघ्न, बल्य और कफ-पित्त-रक्तघ्न होता है। आत्मगुप्ताका वीज वातको मिटाता और शुक्रको बहुत बढ़ाता है। (भावप्रकाश) इसका फल स्त्रियोंको प्रसन्न कर देने कारण वाजीकरण है। (वाग्भट)

आत्मगुप्ति (सं० स्त्री०) गुहा, दरी, खो, गोहा, जानवरको छिप रहनेकी जगह।

आत्मगौरव (सं० क्ली०) स्वीय प्रभाव, अपना रसूख।

आत्मग्राहिन् (सं० त्रि०) आत्मानं आत्मार्थमेव वा गृह्णाति, आत्मन्-ग्रह-णिनि। उदरम्भरि, स्वार्थपर, आत्मज्ञ, खुदगर्ज, लालची, मतलबी, पेटू, अपनी ही फ़िक्र रखनेवाला। (पु०) आत्मग्राही। (स्त्री०) आत्मग्राहिणी।

आत्मघात (सं० पु०) १ आत्महत्या, प्राणत्याग, क़त्लनफ़स, खुदकुशी, आपघात। जब मनुष्य असह्य दुःखमें पड़ जाता और उससे छुटकारा पानेका उपाय नहीं देखता, तब अपने हाथों फांसी लगा, विष खा या अस्त्र मार प्राण दे देता है। इसीका नाम आत्मघात है। हमारे शास्त्रानुसार यह चार प्रकारका होता है,—वैध, अवैध, ज्ञानकृत एवं अज्ञानकृत। मनु एवं वृद्ध गर्गने लिखा, जब मनुष्य अत्यन्त वृद्ध बन शौचवर्जित तथा लुप्तक्रिय होता, और चिकित्सा करते भी आरोग्यकी सम्भावना नहीं रहती, तब उच्च स्थानसे गिर, अग्निमें कूद, अनशन रह या जलमें डूब प्राण छोड़नेसे त्रिरात्र अशौच माना जाता है। उसके दूसरे दिन अस्थि सञ्चय करना आवश्यक है। तीसरे दिन उदक तथा पूरक पिण्डदान और चौथे दिन श्राद्ध होता है। अवैध आत्मघातमें अशौच, उदकक्रिया और श्राद्धादि कुछ भी करना न चाहिये।

२ पाषण्डमार्ग, नास्तिकता, इलहाद, बिदत।

आत्मघातक, आत्मघातिन् देखो।

आत्मघातिन् (सं० त्रि०) आत्मानं देहं हन्ति शास्त्रविरुद्धेन उद्बन्धनादिना विनाशयति, आत्मन्-हन्-णिनुण्, ६-तत्। आत्मनाशी, स्वनाशावह, खुदकुशी करनेवाला, जो अपने हाथों अपनी जान लेता हो। (पु०) आत्मघाती। (स्त्री०) आत्मघातिनी।

आत्मघोष (सं० पु०) आत्मानं घोषयति क का कु कू इत्यादि स्वशब्दै: लोके प्रचारयति, आत्मन्-घुष-घञ्। १ काक, कौवा। २ कुक्कुट, मुर्गा। कौवा कांव-कांव और मुर्गा कुकड़ूकूं बोल अपना परिचय देनेसे आत्मघोष कहाता है।

आत्मज (सं० पु०) आत्मन: देहात् मनसो वा जायते, आत्मन्-जन-ड। १ पुत्र, पिसर, बेटा। २ कन्दर्प, कामदेव। ३ रक्त, खून।

आत्मजन्मन् (सं० क्ली०) आत्मना जन्म पुत्ररूपेण उत्पत्ति:, ६-तत्। १ आत्माको पुत्ररूपमें उत्पत्ति, रूहका पिसरकी शक्लमें पैदा होना।

आत्मजन्मा, आत्मज देखो।

आत्मजय (सं० पु०) १ स्वीय विजय, अपनी जीत। २ आत्माका जय, रूहका जीता जाना।

आत्मजा (सं० स्त्री०) आत्मन्-जन-ड-टाप्। १ कन्या, दुख़्तर, बेटी। २ मनोजात बुद्धि प्रभृति, अक़्ल, समझबूझ। ३ शुक्राशिम्बी, केवांच।

आत्मजात, आत्मज देखो।

आत्मजिज्ञासा (सं० स्त्री०) जीवनकी विचारणा, रूहकी तलाश।

आत्मजिज्ञासु (सं० त्रि०) जीवनकी विचारणा करनेवाला, जो रूहकी तलाशमें हो।

आत्मज्ञ (सं० पु०) सिद्ध, साधु, ब्रह्मज्ञ, आक़िल, दानिशमन्द, दाना, अपनी और रूहकी कुदरत समझनेवाला।

आत्मज्ञान (सं० क्लो०) आत्मनो ज्ञानम्, ६-तत्। १ यथार्थ रूप आत्मका ज्ञान, रूहका इल्म। श्रुतिमें लिखा, कि यथार्थ ज्ञान ही मोक्षसाधन होता है। २ खीय ज्ञान, सच्ची समझ। आत्मबोधादि शब्दोंका भी यही अर्थ है।

आत्मज्ञानी, आत्मज्ञ देखो।

आत्मतत्त्व (सं० क्लो०) आत्मनस्तत्त्वम्, ६-तत्। आत्माका यथार्थ स्वरूप, चैतन्य रूप, रूहकी सच्ची शक्ल। मतभेदसे कर्तृत्वरूप वा आत्मरूप परमपदार्थको भी आत्मतत्त्व कहते हैं।

आत्मतत्त्वज्ञ (सं० पु०) आत्माका यथार्थरूप समझनेवाला वेदान्ती, जो शख्स रूहकी सच्ची शक्लको पहचानता हो।

आत्मता (सं स्त्री०) अमूर्तता, असांसारिकता, नफ्सानियत, रूहानियत।

आत्मतुष्टि (सं० त्रि०) आत्मन्येव तुष्टिर्यस्य, बहुव्री०। आत्मज्ञान द्वारा तुष्टि पानेवाला, जो हमेशा सिर्फ रूहके इल्मसे खुश रहता और परब्रह्मको पहचानता हो। (स्त्री०) ६-तत्। आत्माका सन्तोष, रूहकी आसूदगी।

आत्मत्याग (सं० पु०) १ स्वार्थत्याग, दूसरेकी भलाईके लिये अपने नुकसानका किया जाना। २ आत्मघात, खुदकुशी।

आत्मत्यागिन् (सं० त्रि०) आत्मानं देहं त्यजति, आत्मन्-त्यज सम्पृजादि० घिणुन्। १ स्वार्थत्यागी, दूसरेके लिये अपना नुकसान् करनेवाला। २ आत्मघाती, खुदकुशी करनेवाला।

आत्मत्राण (सं० क्लो०) खीय रक्षण, अपनी हिफाज़त।

आत्मदर्श (सं० पु०) आत्मा दृश्यतेऽत्र, आत्मन्-दृश आधारे घञ्। १ दर्पण, आयीना। २ आदर्श, नमूना। भावे घञ्, ६-तत्। ३ आत्माका दर्शन, आत्मसाक्षात्कार, रूहका नज़ारा।

आत्मदर्शन (सं० क्लो०) आत्मा दृश्यते साक्षात्क्रियतेऽनेन, आत्मन्-दृश करणे ल्युट्। १ आत्मसाक्षात्कारका साधन श्रवण, मनन और निदिध्यासन, रूहके नज़ारेका ज़रिया सुनना, सोचना और समझना। भावे ल्युट्। २ आत्मसाक्षात्कार, सकलभूतमें आत्मज्ञान, रूहका नज़ारा, सब चीजोंमें रूहका देखा जाना।

आत्मदा (वै० त्रि०) व्यक्तिगत अस्तित्व देनेवाला, जो नफ्सी जिन्दगी बख्शता हो।

आत्मदान (सं० क्लो०) आत्माका दान, आत्मत्याग, प्रत्यादेश, रूहकी बख्शिश, खुदकुशी, इस्तेफ़ा।

आत्मदूषि (वै० त्रि०) आत्माको दूषित करनेवाला, जो रूहको बरबाद कर देता हो।

आत्मदेवता (सं० स्त्री०) आत्मनो देवता। निजका इष्टदेवता।

आत्मद्रोहिन् (सं० त्रि०) आत्मनो द्रुह्यति, आत्मन्-द्रुह-णिनि। आत्मतापी, वक्रप्रकृति, चिड़चिड़ा, बखील, रूहसे दुश्मनी रखनेवाला। (पु०) आत्मद्रोही। (स्त्री०) आत्मद्रोहिणी।

आत्मध्यान (सं० क्लो०) आत्मनो ध्यानं चिन्ता-रूप-योग-विशेषः। आत्मसाक्षात्कारका साधन मनोवृत्ति-विशेष, रूहका खयाल। शङ्खस्मृतिमें इसका प्रकरण देख पड़ता है।

आत्मन् (सं० पु०) अत्यते गम्यते ज्ञायते इति यावत्, अत-गतौ मनिण्। सातिभ्यां मनिन्मनिणौ। उण् ४।१५२। १ पुरुष, आदमी। २ स्वभाव, कुदरत। ३ प्रयत्न, तदबीर। ४ मन, दिल। ५ धृति, इस्तक़लाल। ६ मनीषा, बुद्धि, अक्ल। ७ शरीर, जिस्म। ८ ब्रह्म।

'आत्मा पुंसि स्वभावे च प्रयत्नमनसोरपि।
धृतावपि मनीषायां शरीरब्रह्मणोरपि॥' (हेम)
'आत्मा पुरुषः।' (उज्ज्वलदत्त)

९ अर्क, सूर्य। १० अग्नि, आग। ११ वायु, हवा। १२ जीव, जान्।

'आत्मा चित्ते धृतौ यत्ने धिषणायां कलेवरे।
परमात्मनि जीवेऽर्के हुताशनसमीरयोः। स्वभावे।' (हेम)

११ पुत्र, बेटा।

'आत्मा वै पुत्रनामासि।' (श्रुति)

श्रुतिमें आत्माका अहं-प्रत्यय विषयत्व लिखा है—अर्थात् पुरुष, 'अहमस्मि' समझ कर आत्मज्ञान पा सकता है। साङ्ख्यभाष्यमें अहं प्रत्यय विषयसे भी बहुवादी प्रतिपत्ति देखायी गयी है। यथा—प्राकृत एवं लौकायतिक लोग चैतन्यविशिष्ट देहमात्रको आत्मा कहते हैं। कोई चेतन इन्द्रिय और कोई मनही को आत्मा बतलाते हैं। फिर कोई आत्माको क्षणिक विज्ञानमात्र और कोई शून्यमय समझते हैं। कोई कहता, कि आत्मा संसारी कर्ता एवं भोक्ता देहादिसे व्यतिरिक्त है। फिर देहादिसे व्यतिरिक्त सर्वशक्ति सर्वज्ञ ईश्वर ही किसीके मतसे आत्मा है। किसीके मतमें भोगशील ही आत्मा होता है।

जीवात्मा और परमात्मा देखो।

न्यायमतमें आत्मत्वजातियुक्त अर्थात् अमूर्तसमवेत-द्रव्यत्वापर जाति, समवायसे ज्ञानइच्छादि रखनेवाले और ज्ञानाधिकरणका नाम आत्मा है। जैसे—

'आत्मा वाऽरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः।' (श्रुति)

आत्मा द्विविध होता है, जीवात्मा और परमात्मा।

"द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये परञ्चापरमेव च।" (श्रुति)

"तमेवं विदित्वाऽतिमृत्युमेति।" (न्यायसिद्धान्तमञ्जरीप्रकाश)

उसमें आद्य (जीवात्मा) प्रतिशरीर भिन्न, विभु, नित्य, कर्ता एवं भोक्ता है। द्वितीय (परमात्मा) ईश्वर, सर्वज्ञ तथा केवल एक है। (तर्ककौमुदी)

वैशेषिक आत्माको अप्रत्यक्ष अर्थात् अनुमानगम्य कहते हैं। अनुमान यह है—करणव्यापार करण-व्यापारत्वसे छेदनादि क्रियामें वास्यादि शस्त्रादि व्यापार-वत् सकर्तृक होता है। करणव्यापारसे कर्ताका अनु-मानगम्य होनेपर तत्सजातिमें ज्ञानक्रिया करण भी सकर्तृक है। अतएव चक्षुरादि ज्ञान साधनसे आत्माका अनुमान किया जाता है। परन्तु नैयायिक उसमें जीवा-त्माको मानस-प्रत्यक्ष-विषय मानते हैं। (भाषापरिच्छेद)

जैनमतमें नाना अपेक्षाओंसे आत्माके नाना भेद किये गये हैं, जिनमें मुख्य दो हैं—संसारी आत्मा और मुक्तात्मा। संसारी आत्मा वह कहलाता, जो अनादि कालसे अपने द्वारा किये शुभ एवं अशुभ कर्मोंके प्रभावसे कभी मनुष्यका शरीर धारण करता और कभी जानवर (तिर्यञ्च) होता है। कभी नरकमें जाता तथा कभी देवता हो स्वर्गके सुख भोगता है। मुक्तात्मा वह है, जो तपश्चरणादिके द्वारा समस्त शुभ अशुभ कर्मोंका नाशकर अपना शुद्ध स्वभाव (अनन्तज्ञान दर्शन सुख आदि) पा सांसारिक दुःख सुखोंसे सर्वदाके लिये मुक्त हो गया है। जैनशास्त्रोंमें सामान्य आत्माका लक्षण "उपयोगो लक्षणं" (तत्त्वार्थसूत्र) अर्थात् ज्ञान और दर्शन जिसके हो वह आत्मा है, यह बतला फिर विशेष रीतिसे संसारी आत्माको पहिचाननेका उपाय इस प्रकार लिखा है—"तिक्काले चदुपाणा इन्दिय बलमायु आणपाणोय। ववहारा सो जीवो णिच्चयणयदो दु चेदणा जस्स" (श्रीमन्नेमिचंद्र सिद्धान्तचक्रवर्ती) अर्थात् संसारी जीवके अधिकसे अधिक १० प्राण तक होते हैं उनमेंसे जिसके कमसे कम चार प्राण तक हों अर्थात् पांचों इन्द्रियोंमेंसे एक तो स्पर्शन इन्द्रिय, मानसिक, वाचनिक और कायिक इन तीन बलोंमेंसे एक कायिक बल, आयु और आणप्राण (श्वासोच्छ्वास) हो वही जीव या आत्मा है। इसी लक्षणसे हम वनस्पति आदिमें भी जीव (आत्मा) समझते हैं। क्योंकि उसके उपर्युक्त चारो ही प्राण स्पष्टतया दृष्टिगोचर होते हैं। यह संसारी आत्मा ही कर्मोंका नाशकर परमात्मा हो जाता है। क्योंकि समस्त आत्माओंमें सर्वज्ञता आदि गुण तो समान हीं है, यदि अन्तर है तो केवल व्यक्ति, अव्यक्तिका। जिन आत्माओंके स्वाभाविक गुण कर्मोंके अभावसे प्रकट-व्यक्त हो जाते हैं, वे परमात्मा कहलाते हैं और जिनमें वे गुण प्रकट नहीं होते वे आत्मा कहे जाते हैं।

यह प्रायः दूसरे शब्दके आदिमें आता और 'अपना' अर्थ रखता है। जैसे—आत्मबन्धु, अपना साथी और आत्मप्रीति अपनी खुशी।

आत्मनिलय (सं॰ त्रि॰) सर्वदा हृदयमें रहनेवाला, जो बहुत प्यारा लगता और दिलसे न उतरता हो।

आत्मनिन्दा (सं० स्त्री०) स्वीय तिरस्कार, अपनी मलामत।

आत्मनिवेदन (सं० क्ली०) १ स्वीय समाचार, नियाज़ या पढ़ाया।

आत्मनिवेदनासक्ति (सं० स्त्री०) स्वीय विनियोगका अवलम्बन, अपने नियाजकी धुन।

आत्मनिष्ठ (सं० त्रि०) आत्मनि आत्मज्ञाने निष्ठा यस्य, बहुव्री०। १ आत्मज्ञानमें निष्ठा रखनेवाला, जो आत्मज्ञान लाभके लिये यत्न करता हो, ब्रह्मनिष्ठ, मुमुक्षु। आत्मनि तिष्ठति आत्मन्-नि-स्था-क षत्वम्। २ आत्मामें रहनेवाला, जो रूहमें मौजूद हो।

आत्मनीन (सं० त्रि०) आत्मने हितम् ख। आत्मन्विश्वजन-भोगोत्तरपदात् खः। पा ५।१।९। १ आत्महितकर, अपनी भलाई करनेवाला। १ स्वीय सम्बन्धीय, अपना। ३ बलवान्, ज़ोरावर। (पु०) ४ पुत्र, बेटा। ५ श्यालक, साला। ६ नाटकप्रसिद्ध विदूषक, मसख़रा। ७ पथ्य, बीमारके खानेकी चीज़। ८ प्राणधार, जानवर।

आत्मनेपद (सं० क्ली०) आत्मने आत्मार्थफलबोधनायैव पदम्, अलुक् समा०। तङानावात्मनेपदम्। पा १।४।१००। १ आत्मगामी फलबोधक व्याकरण-प्रसिद्ध तङादि, जिस पदके रहनेसे आत्मगामी ही फल समझ पड़े। तिङ् यङन्त धातुके अर्थका स्वार्थकर्तृत्वबोधनके योग्य आख्यात आत्मनेपद कहाता है। जैसे चैत्रः पापच्यते, इत्यादिमें आत्मनेपद हुआ है। (ग० प०) आत्मगामि-फल बोधक तिङादि, अर्थात् अपने फलको जनानेवाला तिङ् प्रभृति प्रत्यय भी आत्मनेपद है यथा—इदमहं संप्रददे। आत्मनेपदार्थ कभी कर्मत्व और कभी कर्मका ही बोधक है। कहीं-कहीं इसमें कर्तृत्व भी रहता है। यथा—ऋत्विग्यजतः।

धातु तीन प्रकारका होता है। परस्मै, आत्मने और उभयपद। इन तीन प्रकारके धातुवोंमें जहां क्रियाफल कर्तृनिष्ठ (कर्तामें) रहता वहां आत्मनेपद और दूसरे स्थानमें परस्मैपद होता है। "स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले।" (पा १।३।७२) इसके ही अनुसार दानादि स्थलमें स्वगत फल रहनेसे 'ददे' और परगत फल होनेसे 'ददाति' वाक्य प्रयोग बुध लोग करते हैं।

चिन्तामणिकार (गङ्गेशोपाध्याय) क्रियाफलमें कर्ताकी अभिप्राय इच्छा रहनेसे ही आत्मनेपद मानते हैं। इसीसे याजकादि द्वारा दक्षिणादि लाभकी इच्छासे यागादि किये जानेपर 'यजन्ति याजकाः' परस्मैपद एवं परगत यागादिफल रहते भी इच्छासे किये जानेपर 'यजन्ते याजकाः' आत्मनेपद ही होता है।

आत्मनेपदिन् (सं० त्रि०) आत्मनेपदं विहितत्वेनास्त्यस्य, आत्मने-पद-इनि। आत्मनेपद सम्बन्धीय। पाणिनिने इसके विषयमें लिखा,—गणपाठमें हलन्त अनुदात्तेत् एवं स्वरान्त ङ इत् धातु आत्मनेपदी होते हैं। फिर कर्तृगामी क्रियाफल-विशिष्ट स्वरित एवं ञित् धातु भी आत्मनेपदी हो हैं। सिवा इसके अर्थ विशेषमें उपसर्ग विशेषके योगसे कर्तृवाच्य धातु आत्मनेपदी बन जाता है। (पु०) आत्मनेपदी। (स्त्री०) आत्मनेपदिनी।

आत्मनेभाषा (सं० स्त्री०) आत्मने आत्मोद्देशेन भाषा परिभाषा, अलुक्-समा०। व्याकरण-प्रसिद्ध आत्मनेपदका अर्थ, संस्कृतकी दरमियानी फ़स्ल।

आत्मन्वत् (वै० त्रि०) आत्मा अस्त्यस्य, मतुप्। आत्मविशिष्ट, जानदार, ज़िन्दा, जो मरा न हो। (पु०) आत्मन्वान्। (स्त्री०) आत्मन्वती।

आत्मन्विन् (वै० त्रि०) आत्मन् अस्त्यर्थे बाहु० विनि। मनस्वी, प्रशस्तमना, दिलदार। (पु०) आत्मन्वी। (स्त्री०) आत्मन्विनी।

आत्मपरित्याग (सं० पु०) स्वीय समर्पण, अपना नियाज़।

आत्मपुराण (सं० पु०) आत्मनः पुराणं सृष्टादि कर्तृत्वादिरूप निमित्तमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, अण्। उपनिषत्के अर्थका पुस्तक विशेष। यह शङ्करानन्द-प्रणीत और अट्ठारह अध्यायमें समाप्त है। इसके प्रथममें ऐतरेय, द्वितीयमें बृहदारण्यकके कौषीतकी ब्राह्मण, तृतीयमें अजातशत्रु संवाद, चतुर्थमें बृहत् मधुकाण्ड, पञ्चममें बृहद्याज्ञवल्क्य-काण्ड, षष्ठमें बृहद्याज्ञवल्क्य

जनकसंवाद, सप्तममें वृहदारण्यकका-मैत्रेयी-संवाद, अष्टममें श्वेताश्वतर, नवममें काठक, दशममें तैत्तिरीय, एकादशमें गर्भादि, द्वादशमें छान्दोग्यके श्वेतकेतु-संवाद, त्रयोदशमें छान्दोग्यके सनत्कुमार-नारद-संवाद, चतुर्दशमें छान्दोग्यका प्रजाके प्रति इन्द्रसंवाद,पञ्चदशमें तलवकार, षोड़शमें मुण्डक, सप्तदशमें प्रश्न और अष्टादश अध्यायमें माण्डूक्य, इशा, जावालि प्रभृति प्रणीत उपनिषत्‌का अर्थ है। यह ग्रन्थ सुगम उपाय द्वारा वेदान्त समझनेके लिये अतिशय उपयोगी है। काकारामशास्त्रीने इसकी टीका बनायी है।

आत्मप्रकाश (सं० पु०) चैतन्यका प्रकाश, रूहकी रौशनी।

आत्मप्रबोध (सं० पु०) आत्माका ज्ञान, रूहकी पहचान।

आत्मप्रभ (सं० त्रि०) आत्मना स्वयमेव प्रभा यस्य, बहुव्री०। स्वयं प्रकाशमान, अपने आप चमकनेवाला। (पु०) २ परमात्मा। (स्त्री०) आत्मप्रभा। ३-तत्। स्वयंप्रभा, स्वयंप्रकाश, जो रौशनी अपने-आप निकली हो।

आत्मप्रभव (सं० पु०) प्रभवत्यस्मात्, प्र-भू अपादाने अप्, आत्मा देहः मनो वा प्रभवो यस्य। १ तनुज, पुत्र, बेटा। २ मनोभव, कन्दर्प। आत्मा परमात्मैव प्रभवः कारणं यस्य, बहुव्री०। ३ आकाश परमाणु प्रभृति, आसमान् वग़ैरह। (स्त्री०) आत्मप्रभवा। १ कन्या, बेटी। २ बुद्धि, समझ।

आत्मप्रवाद (सं० पु०) १ आत्मविषयक कथनोपकथन, रूहके बारेमें बातचीत। २ जैनोंके चौदह पूर्वोंमें सातवां पूर्व। पूर्व देखो।

आत्मप्रशंसा (सं० स्त्री०) स्वीय श्लाघा, अपनी तारीफ्।

आत्मप्रीति (सं० स्त्री०) स्वीय आनन्द, अपना मज़ा।

आत्मवध, आत्मघात देखो।

आत्मवन्धु (सं० पु०) आत्मनो वन्धुः ६-तत्। १ निजका मित्र, अपना साथी। मौसेरा, फुफेरा तथा ममेरा भाई ही शास्त्र-सम्मत आत्मवन्धु है। आत्मैव वन्धुः कर्मधा०। २ अपना साथ देनेवाला आत्मा, रूह।

आत्मबुद्धि (सं० स्त्री०) स्वीय ज्ञान,अपने रूहका इल्म।

आत्मबोध (सं० पु०) १ आत्मज्ञान, रूहका इल्म। २ स्वीय ज्ञान, अपने आपकी जानकारी। ३ शङ्कराचार्य-प्रणीत ग्रन्थविशेष। ४ अथर्ववेदका एक उपनिषत्। (त्रि०) ५ आत्मज्ञानी, रूहका इल्म रखनेवाला।

आत्मभव (सं० पु०) १ स्वीय अस्तित्व, अपना वजूद। (त्रि०) २ स्वयं जात, अपने आप निकला हुआ।

आत्मभाव (सं० पु०) १ आत्माका अस्तित्व, रूहका वजूद। २ स्वीय प्रकृति, अपनी कुदरत। ३ शरीर, जिस्म।

आत्मभू (सं० पु०) आत्मनो मनसः देहाद्वा भवति, आत्मन्-भू-क्विप्, ३-तत्। १ मनसे उत्पन्न होनेवाला कन्दर्प। २ अपने देहसे उत्पन्न होनेवाला पुत्र, बेटा। आत्मनो स्वयमेव भवति। ३ स्वयं उत्पन्न होनेवाला ईश्वर। ४ शिव। ५ विष्णु। आत्मनः ब्रह्मणः भवति। ६ ब्रह्मसे उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मा। (त्रि०) ७ स्वीय मन वा देहसे उत्पन्न होनेवाला, जो अपने दिल या जिस्मसे पैदा हो। ८ स्वयं उत्पन्न, अपने-आप पैदा होनेवाला।

आत्मभूत (सं० त्रि०) आत्मनः देहात् मनसो वा भूतः। १ देह वा मनसे उत्पन्न, जिस्म या दिलसे पैदा। २ अनुकूल, वफ़ादार। (पु०) ३ तनुज, बेटा। ४ कन्दर्प। (स्त्री०) टाप्। आत्मभूता। १ कन्या, बेटी। २ बुद्धि, अक्ल।

देहादि पहले आत्मसम्बन्धी नहीं रहता; पीछे जन्म लेनेमें आत्मासे सम्बन्ध हो जानेपर आत्मभूत कहाता है।

आत्मभूय (सं० क्ली०) आत्मनो भावः, आत्मन्-भू-क्यप्, ६-तत्। भुवः क्यप्। पा ३।१।१०७। आत्मत्व, ब्रह्मरूप, रूहानियत।

आत्ममय (सं० त्रि०) आत्मात्मकः, आत्मन्-मयट्। आत्मस्वरूप प्राप्त, रूहानी। (स्त्री०) ङीप्। आत्ममयी।

आत्ममात्रा (सं० स्त्री०) परमात्माका क्षुद्रांश।

आत्ममानिन् (सं० त्रि०) आत्मानमुत्कर्षेण मन्यते, मन-णिनि, ६-तत्। १ गर्वित, अपने उत्कर्षका अभि-

मानी, मग़रूर, अपनी बड़ाईका फ़ख़्र रखनेवाला। २ सकल प्राणीको अपना-जैसा समझनेवाला, जो सब जानवरोंको अपनी बराबर जानता हो।

आत्ममूर्ति (सं० पु०) आत्मनो मूर्तिरिव मूर्तिर्यस्य, बहुव्री०। स्वीय आकृति-जैसा भ्राता, अपनी शक्लके मानिन्द भाई। एक मातापिताके सन्तानकी आकृति प्राय: सदृश होनेसे भ्राताको आत्ममूर्ति कहते हैं। (स्त्री०) ६-तत्। २ वेदान्त मतसे आत्माका स्वरूप चैतन्यादि, जानदारी। ३ न्यायमतसे कर्तृत्वादि, बसीला, ज़रिया।

आत्ममूल (सं० त्रि०) १ आत्मभू, स्वयम्भू, अपने आप मौजूद रहनेवाला।

(क्ली०) आत्मा ब्रह्मैव मूलं कारणं यस्य, बहुव्री०। २ जगत्, दुनिया।

याज्ञवल्क्य-संहितामें लिखा,—जैसे कुम्भकार मृत्तिका, दण्ड, चक्र, सलिल, सूत्र प्रभृति द्वारा घट; गृहकर्ता मृत्तिका, तृण एवं काष्ठसे गृह; स्वर्णकार स्वर्ण वा रौप्यसे अलङ्कार और रेशमका कीड़ा अपनी लारसे धागा बनाता, वैसे ही परमात्मा कारण तथा करणसे योनि-योनिमें आत्माकी सृष्टि करता है।

आत्ममूली (सं० स्त्री०) आत्मैव रक्षणे मूलं कारणमस्या अन्य जन्तु कर्तृक व्याहतत्वात् जातित्वात् ङीप्। दुरालभा लता, धमासा।

आत्मम्भरि (सं० त्रि०) आत्मानं बिभर्ति, आत्मन्-भृ-इन्-मुमच, उप० समा०। फलेग्रहिरात्मम्भरिश्च। पा ३।२।२६। कुक्षिम्भरि, उदरम्भरि, नफ़्सपरस्त, पेटू। (स्त्री०) आत्मम्भरी।

आत्मयाजिन् (सं० त्रि०) आत्मानं ब्रह्मरूपेण कर्मकरणादिकं भावयन् यजते, आत्मन्-यज-णिनि। १ कर्मयोगी, भला काम करनेवाला। २ अपने अर्थ यज्ञ करनेवाला। ३ स्वीय बलि चढ़ानेवाला। (स्त्री०) आत्मयाजिनी।

आत्मयाजी (सं० पु०) बुद्धिमान् पुरुष, अक़्लमन्द आदमी, अपनी और रूहकी कुदरत समझनेवाला शख़्स।

आत्मयोनि (सं० पु०) आत्मैव योनिरस्य, बहुव्री०। १ हिरण्यगर्भ। २ ब्रह्मा। ३ विष्णु। ४ शिव। ५ कामदेव। आप ही आप पैदा हो जानेवालेको आत्मयोनि कहते हैं।

आत्मरक्षक (सं० त्रि०) स्वीय रक्षा रखनेवाला, जो अपनेको बचाता हो। (स्त्री०) आत्मरक्षिका।

आत्मरक्षण (सं० क्ली०) स्वीय परित्राण, अपनी हिफ़ाज़त।

आत्मरक्षा (सं० स्त्री०) आत्मन एव रक्षा यस्या:। महेन्द्रवारुणी लता, कुंदरू। ६-तत्। २ आत्मानुसार विघ्नकारियोंसे अस्त्र द्वारा अपनी रक्षाका करना।

आत्मरत (सं० त्रि०) आत्मासे प्रेम रखनेवाला, जो रूहका मज़ा उड़ाता हो। (स्त्री०) आत्मरता।

आत्मरति (सं० स्त्री०) आत्माका आनन्द, रूहका मज़ा।

आत्मराम (सं० पु०) आत्मनि रमते, संज्ञायां कर्तरि घञ्। आत्मज्ञान मात्रसे तृप्त योगीन्द्र।

आत्मलाभ (सं० पु०) आत्मनो लाभ:, ६-तत्। यथास्वरूप ज्ञान द्वारा आत्माकी प्राप्ति, इल्मसे रूहका हासिल।

आत्मलिङ्ग (सं० क्ली०) आत्माके अस्तित्वका परिचायक सुख-दु:ख प्रभृति, जो आराम तकलीफ़ वग़ैरह रूहका वजूद देखाता हो।

"धर्माधर्मौ सुखदु:खमिच्छाद्वेषौ तथैव च।
प्रयत्नज्ञानसंस्कारमात्मलिङ्गमुदाहृतम्॥"
(कामन्दकीय नीतिसार)

आत्मलोक (सं० पु०) आत्मैव लोक: आत्मप्रकाश:। स्वप्रकाश, आत्मा, रूह।

आत्मलोमन् (सं० क्ली०) ६-तत्। १ शरीरस्थ लोम, जिस्मका बाल। २ श्मश्रु, दाढ़ी।

आत्मवञ्चक (सं० त्रि०) आत्मानं वञ्चति, आत्मन्-वञ्च-ण्वुल्। कृपण, बख़ील, अपनेको ही धोका देनेवाला। (स्त्री०) आत्मवञ्चका।

आत्मवञ्चना (सं० स्त्री०) स्वीय प्रतारणा, ज़ाती ख़राब, अपने आपको धोका देनेकी बात।

आत्मवत् (सं० त्रि०) आत्मा मन: वशीभूतत्वेनास्त्यस्य,

आत्मन्-मतुप्, मस्य वः। १ वशीभूत-चित्त, दिलको क़ाबूमें रखनेवाला। २ निर्विकारचित्त, साफ़दिल। (अव्य०) ३ आत्मेव, अपनीतरह। (पु०) आत्मवान्। (स्त्री०) आत्मवती।

आत्मवत्ता (सं० स्त्री०) १ स्वीय भुक्ति, अपनी मदाखलत। २ स्वीय सादृश्य, अपनी मुशाबहत।

आत्मवध, आत्मघात देखो।

आत्मवध्या (सं० स्त्री०) आत्मघात देखो।

आत्मवश (सं० त्रि०) आत्मनो वशमायत्ततात्र यस्य वा। १ स्वाधीन, खुदमुख्तार, अपनी ही मातहतीमें रहनेवाला। (पु०) २ आत्मसंयम, इन्द्रियजय, ज़ब्तजात, अपने ऊपर क़ाबू। (स्त्री०) आत्मवशा।

आत्मवश्य (सं० त्रि०) आत्मा मनो वश्यो यस्य, बहुव्री०। १ वशीभूत-चित्त, दिलको क़ाबूमें रखनेवाला। २ कर्मक्षम-शरीर, अपने जिस्मपर कामका बोझ उठा लेनेवाला। आत्मना वश्यम्, ६-तत्। ३ आत्माके वशनीय, रूहके क़ाबूमें आ जानेवाला।

आत्मविक्रय (सं० पु०) ६-तत्। स्वदेहविक्रय, खुदफ़रोशी, अपना जिस्म किसीके हाथ बेच गुलाम बननेका काम। यह उपपातकके मध्य गिना गया है,—

"गोवधोऽयाज्य-संयाज्य-पारदार्यात्मविक्रयः।
गुरुमातृपितृत्यागः स्वाध्यायाग्न्योः सुतस्य च॥" (मनु ११।६०)

अर्थात् गोवध, अयाज्ययाजन, परस्त्रीगमन, आत्मविक्रय, मातापिता प्रभृति गुरुजनकी सेवा न करना, पाठ होम आदि ब्रह्मयज्ञ एवं स्मार्ताग्निका त्याग और पुत्रका जातकर्मादि संस्कार न करना उपपातकके मध्य परिगणनीय है।

आत्मविक्रयिन् (सं० त्रि०) स्वीय विक्रय करनेवाला, खुदफ़रोश, जो अपने आपको बेच डालता हो। (पु०) आत्मविक्रयी। (स्त्री०) आत्मविक्रयिणी।

आत्मविज्ञान (सं० क्ली०) योगाभ्यास-समाधिसे परमात्माके स्वरूपका विज्ञान।

आत्मविद् (सं० पु०) आत्मानं याथार्थ्येन वेत्ति, आत्मन्-विद्-क्विप्, ६-तत्। १ आत्मज्ञ, रूहको समझनेवाला। आत्मानं स्वपक्षं वेत्ति। २ स्वपक्षज्ञाता, अपनी तर्फ़का हाल जाननेवाला। ३ शिव।

आत्मविद्या (सं० स्त्री०) आत्मनो विद्या, ६-तत्। ब्रह्मविद्या, योगशास्त्र, रूहका इल्म।

आत्मविवृद्धि, आत्मवृद्धि देखो।

आत्मविस्मृति (सं० स्त्री०) स्वीय विस्मरण, अपने आपको याद न रखनेकी हालत।

आत्मवीर (सं० त्रि०) आत्मा प्राणः वीर इव यस्य, बहुव्री०। १ अतिशय बलयुक्त, निहायत ज़ोरावर। २ उपयुक्त, वाजिब। ३ विद्यमान, मौजूद। (पु०) आत्मनो वीरः आत्मीयत्वेन श्रेष्ठः, ६-तत्। ४ श्यालक, साला। ५ पुत्र, बेटा। ६ विदूषक, स्वांगका मसखरा। ७ बलवान् पुरुष, ताक़तवर आदमी।

आत्मवृत्तान्त (सं० पु०) स्वीय चरित-रचन, स्वीय उपाख्यान, तुज़क, खास अपना तज़किरा।

आत्मवृत्ति (सं० स्त्री०) आत्मनो वृत्तिः, ६-तत्। १ स्वीय जीवनोपाय, खास अपना पेशा। (त्रि०) आत्मनि स्वस्मिन् वृत्तिर्यस्य, शाक० बहुव्री०। २ अपनी-जैसी वृत्ति रखनेवाला, हमपेशा, जो अपना-जैसा काम करता हो।

आत्मवृद्धि (सं० स्त्री०) स्वीय उत्कर्ष, अपनी बढ़ती।

आत्मशक्ति (सं० स्त्री०) आत्मनः इव शक्तिः, ६-तत्। स्वीय क्षमता, अपनी ताक़त। २ आत्मानुरूप क्षमता, रूहानी कुवत। ३ परमेश्वरके जगत् उत्पादन करनेकी माया।

आत्मशल्या (सं० स्त्री०) आत्मा स्वरूपं शल्यमिव यस्याः। शतावरी, सतावर।

आत्मशुद्धि (सं० स्त्री०) आत्मनः देहस्य मनसो वा शुद्धिः, ६-तत्। देहशुद्धि, चित्तशुद्धि, अपने जिस्म या दिलकी सफ़ाई।

आत्मश्लाघा (सं० स्त्री०) आत्मनः श्लाघा, ६-तत्। १ स्वीय मिथ्या गुणका प्रकाश, अपने झूठे हुनरका इज़हार। २ स्वीय प्रशंसा, अपनी तारीफ़। ३ निज मुखसे स्वीय गर्वका प्रकाशन, अपने मुंह अपने गुरूरकी बघार।

आत्मश्लाघिन् (सं० त्रि०) स्वीय प्रशंसा करनेवाला, जो अपनी तारीफ़ करता हो। (पु०) आत्मश्लाघी। (स्त्री०) आत्मश्लाघिनी।

आत्मसंयम (सं० पु०) आत्मनो मनसः संयमः

नियमनम्। मनोवशीकरण, सुखदुःखसमता, मनके विकारका त्याग, मसला-जबर, खुशी और गमसे बेपरवायीका मकीदा।

आत्मसंवेदन (सं० क्ली०) स्वीय ज्ञान, अपनी जानकारी।

आत्मसंस्कार (सं० पु०) स्वीय संस्कार, ज़ाती इसलाह, अपना सुधार।

आत्मसद् (वै० त्रि०) आत्मवर्ती, ज़ाती, जो अपने ही में रहता हो।

आत्मसनि (वै० त्रि०) जीवनोद्गारदायक, जिन्दगीका नफ्स बख्शनेवाला।

आत्मसन्देह (सं० पु०) आभ्यन्तरिक विकल्प, भीतरी शक।

आत्मसमुद्भव (सं० पु०) आत्मनः सर्वं समुद्भवमस्य, बहुव्री०। १ अपनेसे उत्पन्न होनेवाला पुत्र, बेटा। २ मनसिज। ३ हिरण्यगर्भ, ब्रह्मा। आत्मना स्वयमेव समुद्भवति, आत्मन्-सम्-उत्-भू कर्तरि अच् अप् वा। ४ स्वयं उत्पन्न होनेवाले शिव। ५ विष्णु। ६ परमात्मा। (त्रि०) ७ स्वीय शरीरजात, अपने जिस्मसे पैदा। ८ स्वयमुत्पन्न, अपने आप पैदा होनेवाला।

आत्मसमुद्भवा (सं० स्त्री०) १ अपने देहसे उत्पन्न होनेवाली कन्या, बेटी। २ बुद्धि, अक्ल।

आत्मसम्भव (सं० पु०) आत्मत्वेन सम्भवः, आत्मन्-सम्-भू कर्तरि अच्, शाक० ३-तत्। "आत्मा वै जायते पुत्रः।" (श्रुति) यद्वा आत्मासम्भवोऽस्य, अपादाने अप्, बहुव्री०। १ पुत्र, बेटा। २ हिरण्यगर्भ। ३ चतुर्मुख। ४ शिव। ५ विष्णु। ६ परमात्मा। (त्रि०) ७ मनमें उत्पन्न होनेवाला, जो दिलमें पैदा होता हो।

आत्मसम्भवा (सं० स्त्री०) १ कन्या, बेटी। २ भगवती, देवी। ३ बुद्धि, अक्ल।

आत्मसाक्षिन् (सं० त्रि०) आत्मनः बुद्धिवृत्तेः साक्षी प्रकाशकः। १ बुद्धिवृत्तिप्रकाशक, अक्लकी हालत चमका देनेवाला, जो दिलको राह देखाता हो। वेदान्तादिके मतसे चैतन्य आत्मसाक्षी सिद्ध हुआ है। (पु०) आत्मसाक्षी। (स्त्री०) आत्मसाक्षिणी।

आत्मसात् (सं० अव्य०) कार्त्स्न्येनात्मनोऽधीनो भवति सम्पद्यते अधीनं करोति वा, साति। सकल प्रकार अपने अधीन, सब तरह अपने ताबेमें रहनेवाला।

आत्मसात्कृत (सं० त्रि०) विनियोगित, उपकल्पित, मख्सूस किया या अपनाया हुआ।

आत्मसिद्ध (सं० त्रि०) १ स्वयं निष्पन्न, अपने आप बना हुआ। २ आत्माको वशमें रखनेवाला, जो रूहको क़ाबूमें रखता हो।

आत्मसिद्धि (सं० स्त्री०) आत्मरूपा सिद्धिः। आत्मभाव-लाभ, मोक्ष, ज़ाती मज़मत।

आत्मसुख (सं० त्रि०) आत्मैव सुखमस्य। १ आत्मलाभ मात्रसे सुखी, अपने आप खुश रहनेवाला। (क्ली०) आत्मैव सुखं सच्चिदानन्दरूपत्वात्। २ आत्मरूप परमानन्द, रूहानी खुशी।

(पु०) ३ हरिहराचार्यके शिष्य और उत्तमसुखके विद्यार्थी। इन्होंने योगवाशिष्ठटीका और योगवाशिष्ठसंक्षेपटीका नामक दो ग्रन्थ बनाये हैं।

आत्मस्तुति (सं० स्त्री०) स्वीय प्रशंसा, अपनी तारीफ़।

आत्मस्थ (सं० त्रि०) आत्मनि आत्मज्ञानाय तिष्ठते यतते, आत्मन्-स्था-क, ४-तत्। आत्मस्वरूप समझनेको यत्नवान्, जो रूहके रङ्ग परखनेकी फिक्रमें हो। २ प्रकृतिस्थ, सञ्जीदा। ३ मनोवृत्तिमय, दिली।

आत्महत्या (सं० स्त्री०) आत्मनो देहस्य हननम्, आत्मन्-हन्-क्यप्। हनस्त च। पा ३।१।१०८। आत्मघात, स्ववध, खुदकुशी। हन् धातुके पहले कोई उपपद न रहनेसे हत्या शब्दकी उपलब्धि असम्भव है। इसीसे 'वहां हत्या हुई' और 'वही हत्याकाण्ड' इत्यादि प्रयोग व्याकरणविरुद्ध ठहरता है।

आत्महन् (सं० त्रि०) आत्मानं हतवान्, आत्मन्-हन्-क्विप्। १ यथार्थ आत्मज्ञान-रहित, ठीक रूहका इल्म न रखनेवाला। २ देहादिका अभिमानी, जिस्म वगैरहका ग़रूर रखनेवाला। ३ आत्मघाती, खुदकुश। (पु०) ४ पुजारी, धन लेकर प्रतिमापूजन करनेवाला पुरुष।

आत्महनन (सं० क्ली०) स्ववध, खुदकुशी।

आत्महिंसा (सं० स्त्री०) आत्मघात देखो।

आत्महित (सं० त्रि०) १ स्वकार्योपयोगी, अपनेको फायदा देनेवाला। (क्ली०) २ स्वीय लाभ, खास अपना फायदा।

आत्मा, आत्मन् देखो।

आत्मादिष्ट (सं० त्रि०) १ स्वतः विवेचित, अपने आप नसीहत किया हुआ। (पु०) २ सन्धिविशेष, किसी किस्मको सुलह। स्वतः चाहनेवाला पक्ष ही इसे सूचित करता है।

आत्माधीन (सं० पु०) आत्मनोऽधीनः। १ पुत्र, बेटा। २ श्यालक, साला। ३ विदूषक, मसखरा। (त्रि०) ४ बलयुक्त, स्वाधीन, ज़ोरावर, आज़ाद। ५ वर्तमान, मौजूद।

आत्मानन्द (सं० पु०) आत्माका आनन्द, रूहका मज़ा। यह ध्यानको एकत्र करनेसे हृदयमें मिलता है।

आत्मानुभव (सं० पु०) स्वीय अनुभव, अपना तजरुबा।

आत्मानुरूप (सं० त्रि०) आत्मनोऽनुरूपं सर्वप्रकारेण सदृशम्। जाति, गुण किंवा क्रियादि द्वारा अपने तुल्य, अपने-जैसा।

आत्मापहारक (सं० त्रि०) आत्मानं अपहरति निह्नुते, आत्मन्-अप-हृ-ण्वुल्। धूर्त, आत्माके यथास्वरूपका अपह्नवकारी, आत्मपरिचय न देनेवाला, मक्कार, ठग, जो छोटेसे बड़ा बनता या अपना ठीक-ठीक पता न बताता हो।

आत्माभिमान (सं० पु०) स्वीय अहङ्कार, अपने आपका गुरूर।

आत्माभिमानिन् (सं० त्रि०) स्वीय अहङ्कार रखनेवाला, जिसे अपने आपका घमण्ड रहे। (पु०) आत्माभिमानी। (स्त्री०) आत्माभिमानिनी।

आत्माभिलाष (सं० पु०) जीवकी इच्छा, रूहकी ख्वाहिश।

आत्माराम (सं० त्रि०) आत्मा आराम इव यस्य, बहुव्री०। १ आत्माको उपवन समझनेवाला, जो रूहको बाग़ मानता हो। उपवन जैसा मनोज्ञ होता, वैसा ही आत्मा रखनेवाला आत्माराम कहाता है। २ योगी विशेष। काशीखण्डमें लिखा,—जिसका आत्मा सर्वदा परितृप्त रहता और जो समस्त विश्वको आत्मरूप समझता, वही आत्माराम योगीका स्वरूप होता है। हिन्दीमें आत्माराम तोतेको भी कहते हैं।

३ जयन्तभट्टके पुत्र। कर्कके कात्यायन-श्रौतसूत्रभाष्यपर इन्होंने 'भावविशोधिनी' टीका लिखी है।

आत्मार्थ (सं० त्रि०) स्वीय निमित्त-साधक, अपना काम देनेवाला।

आत्मालम्भ (सं० पु०) हृदयस्पर्श।

आत्मावलम्बिन् (सं० त्रि०) स्वीय अवलम्बन रखनेवाला, जो अपना ही सहारा पकड़ता हो। (पु०) आत्मावलम्बी। (स्त्री०) आत्मावलम्बिनी।

आत्माशिन् (सं० पु०) आत्मानं स्वकुलमश्नाति, आत्मन्-अश्-णिनि, ६-तत्। स्वकुलभक्षक मीन, अपने अण्डे खानेवाली मछली। एक जब अपने अण्डे छोड़ चली जाती, तब दूसरी आकर उन्हें खा डालती; इसीसे मछली आत्माशी कहाती है। (पु०) आत्माशी। (स्त्री०) आत्माशिनी।

आत्माश्रय (सं० पु०) आत्मानं आश्रयति, आत्मन्-आ-श्रि-अच्, ६-तत्। १ निजका आश्रय, अपना सहारा। २ निज स्वापेक्षित्व हेतुक अनिष्ट प्रसङ्गरूप तर्कका दोष विशेष। न्यायमतसे जो प्रसङ्ग अपने आपकी अपेक्षा रखता, वह आत्माश्रय कहाता है।

"स्वस्य स्वापेक्षापादकः प्रसङ्गः।" (तर्कामृत)

फिर अपने स्वापेक्षितत्वमें अनिष्ट प्रसङ्ग दोष भी आत्माश्रय ही है। यह उत्पत्ति, स्थिति और ज्ञप्ति भेदसे तीन प्रकारका है,—घटसे उत्पन्न होनेपर अनधिकरणका अव्यवहितोत्तरवर्ती, तथा घटमें रहनेसे अव्याप्य और घटज्ञानसे अभिन्न ठहरनेमें घटज्ञान सामग्रीजन्य है। (गौतमसूत्रवृत्ति)

आत्मिक (सं० त्रि०) १ आत्मासे सम्बन्ध रखनेवाला, रूहानी। २ स्वीय, अपना। ३ मानसिक।

आत्मीकृत, आत्मसात्कृत देखो।

आत्मीभाव (सं० पु०) परमात्माका अंशविशेष बन जानेकी दशा।

आत्मीय (सं॰ त्रि॰) आत्मन इदम्, आत्मन्-छ। १ आत्मसम्बन्धीय, रूहानी। २ स्वर्गीय, आसमानी। ३ अन्तरङ्ग, दिली।

आत्मीयता (सं॰ स्त्री॰) १ आत्मसम्बन्ध, खास अपना ताल्लुक। २ मित्रता, दोस्ती।

आत्मेश्वर (सं॰ त्रि॰) आत्मनो मनस ईश्वरः, ६-तत्। १ मनका संयमनशील, दिलको क़ायदेपर रखनेवाला। (पु॰) २ अपने आपका स्वामी, अपने दिलपर हुकूमत रखनेवाला। ३ परमात्मा।

आत्मोत्पत्ति (सं॰ स्त्री॰) आत्मन उत्पत्तिः स्वोपाध्यन्तःकरणवृत्तिकर्षणाऽपूर्वदेहसंयोगः, ६-तत्। किसी कारणवश अन्तःकरणवृत्तिके कर्मसे अपूर्व देह-संयोगरूप आत्माका जन्म। प्राचीन शास्त्र कहता, कि शरीर प्रतिक्षण नूतन होता है। उसके मध्य किसी कारणवश मन ही मन कोई बात चाहनेपर तत्कालीन अपूर्व देहसे आत्माका संयोग ही आत्मोत्पत्ति माना जाता है।

आत्मोत्सर्ग (सं॰ पु॰) स्वार्थत्याग, ज़ाती इखराज, अपनी भलायीका छोड़ना, दूसरेके लिये अपने आपका निकास।

आत्मोदय (सं॰ पु॰) स्वीय उत्कर्ष, अपनी चमक।

आत्मोद्धार (सं॰ पु॰) १ आत्माका उद्धार, मुक्ति, रूहका छुटकारा, निजात। सांसारिक विषयका त्याग और पारमार्थिक पदार्थका ग्रहण आत्मोद्धार कहाता है।

आत्मोद्भव (सं॰ त्रि॰) १ आत्मासे निकला हुआ, जो रूहसे पैदा हो। २ स्वयं उत्पन्न, अपने आप पैदा होनेवाला। (पु॰) ३ पुत्र। ४ कन्दर्प।

आत्मोद्भवा (सं॰ स्त्री॰) आत्मनैव उद्भवति, आत्मन्-उत्-भू-अच्-टाप्। माषपर्णी वृक्ष, रामकुरथी। २ वन-मुद्ग, मोट। आत्मनः देहात् मनसो वा उद्भवो यस्याः। ३ कन्या, बेटी। ४ बुद्धि, अक़्ल।

आत्मोन्नति (सं॰ स्त्री॰) १ स्वीय उन्नति, अपनी तरक़्क़ी।

आत्मोपजीविन् (सं॰ त्रि॰) आत्मना देहव्यापारेण उपजीवति, आत्मन्-उप-जीव-णिनि, ३-तत्। १ अपने देहके व्यापारसे जीवन चलानेवाला, जो अपने आप मेहनतसे ज़िन्दगी बसर करता हो। २ अपनी पत्नी द्वारा जीवन निर्वाह करनेवाला, जो अपनी औरतके सहारे जीता हो। ३ मजदूर, दिनको काम करने-वाला। (पु॰) आत्मोपजीवी। (स्त्री॰) आत्मोप-जीविनी।

आत्मोपनिषद् (सं॰ स्त्री॰) परमात्मा-विषयक उप-निषद्का उपाधि, एक किताब। इसमें परमात्माका वर्णन विशद रीतिसे किया गया है।

आत्मोपम (सं॰ त्रि॰) आत्मा देह उपमा यस्य, बहुव्री॰। अपने सदृश, अपनी मानिन्द, जो अपनेसे मिलता-जुलता हो। यह शब्द पुत्रादिका विशेषण है। (स्त्री॰) आत्मोपमा।

आत्मोपम्य (सं॰ क्ली॰) आत्मन औपम्यम्, आत्मन्-उपमा-ष्यञ्, ६-तत्। १ अपना सादृश्य, अपनी मिसाल। (त्रि॰) आत्मनः स्वस्य औपम्यं यत्र यस्य वा। २ आत्मसदृश, अपने-जैसा। (स्त्री॰) आत्मो-पम्या।

आत्मज (सं॰ त्रि॰) आत्म सम्बन्धीय, ज़ाती, अपने आपसे ताल्लुक़ रखनेवाला। समासान्तमें यह शब्द किसी द्रव्यकी प्रकृतिका बोधक है।

आत्यन्तिक (सं॰ त्रि॰) अत्यन्तं भवति, अत्यन्त भावार्थे ठञ्। १ अतिशय, बहुत ज़्यादा। २ अति-रिक्त, काफ़ीसे ज़्यादा। ३ प्रधान, बड़ा।

आत्यन्तिक-दुःख-निवृत्ति (सं॰ स्त्री॰) आत्यन्तिकी दुःखनिवृत्तिः, कर्मधा॰, पूर्वपदस्य पुंवद्भावः। अप-वर्गमुक्ति, मुदामी तकलीफ़से छुटकारा।

आत्यन्तिक-प्रलय (सं॰ पु॰) कर्मधा॰। प्रलय-विशेष, बड़ी क़यामत। वेदपरिशिष्टमें चार प्रकारका प्रलय लिखा है,—नित्य, प्राकृत, नैमित्तिक और आत्यन्तिक। इसमें मोक्षको आत्यन्तिक प्रलय कहते हैं।

आत्ययिक (सं॰ त्रि॰) अत्ययः नाशः प्रयोजनमस्य, ठक्। १ क्षयकर, घातुक, मुज़िर, उजाड़ू। २ अपरि-हार्य, ताकीदी।

आत्यूह (सं॰ पु॰) वक्र, टेढ़ा।

आत्यूह (सं॰ पु॰) दात्यूह पक्षी, मुर्गाबी।

आत्रेय (सं॰ पु॰) अत्रेरपत्यम्, ढक्। १ अत्रिके सन्तान, अत्रिके लड़के। दत्त,दुर्वासा और चन्द्र अत्रिके पुत्र रहे। २ सदस्यसे सम्बन्ध रखनेवाले पुरोहित। ३ शरीरस्थ रसधातु, जिस्मका अर्क। ४ शिव। (त्रि॰) ५ अत्रिसे उत्पन्न होनेवाला, जो अत्रिसे पैदा हुआ हो।

आत्रेय—१ प्राचीन दर्शनज्ञ, एक पुराने मुनि। ब्रह्मसूत्र और मीमांसासूत्रमें इनका नाम आया है। २ वैयाकरण विशेष, कोई पुराने क़वायददान्। 'माधवीयधातुवृत्ति'में कई स्थानपर इनके वाक्य उद्धृत किये गये हैं। ३ अर्थि-प्रत्यर्थि-पक्षसमर्थक विशेष, एक पुराने धर्मशास्त्रकार। दानखण्डमें हेमाद्रिने इनके वाक्य उद्धृत किये हैं। ४ एक वैद्यक ग्रन्थ-कर्ता। इन्होंने उष्टपयःकल्पभेद, नाड़ीज्ञान, हारीत्-संहिता भेद, आत्रेयहारीतोत्तरार्द्ध और आत्रेयसंहिता नामक ग्रन्थ बनाये हैं।

आत्रेयभट्ट—नलोदयटीका-रचयिता।

आत्रेयिका (सं॰ स्त्री॰) ऋतुमती, जो औरत हैज़में हो।

आत्रेयी (सं॰ स्त्री॰) १ ऋतुमती, हैज़ रखनेवाली औरत। २ नदविशेष। यह बङ्गालके उत्तर राजसाही ज़िलेमें बहती है। ३ अत्रिवंशकी स्त्री।

आथना (हिं॰ क्रि॰) होना, रहना।

आथर्वण (सं॰ पु॰) अथर्वणा मुनिना दृष्टो वेदः, अण्; आथर्वणमधीते वेत्ति वा, पुनः अण्। १ अथर्ववेदज्ञ ब्राह्मण। २ पुरोहित। 'आथर्वणः पुरोहिते। आथर्व-ब्राह्मणे च।' (हेम) अथर्वणिकस्यायं धर्मः आम्नायो वा, अण् इक लोपश्च। आथर्वणिकस्येकलोपश्च। पा ४।३।१३३। ३ अथर्ववेदी धर्म। उपनिषद देखो। ४ अथर्वा ब्राह्मणके सन्तान। ५ अथर्ववेद। (क्ली॰) अथर्वाणां समूहः, अण्। ६ अथर्ववेदका समूह। ७ निश्चतशाला, तस्लियेका मकान्। यहां बलिदानके बाद पुरोहित यजमानको यज्ञके पूर्ण होनेका शुभ संवाद जाकर सुनाता है।

आथर्वणिक (सं॰ पु॰) अथर्वाणं वेदं वेत्ति अधीते वा, दक्षादि॰ निपा॰ ठक्। अथर्ववेद समझने या पढ़नेवाला ब्राह्मण।

आथर्वणिक-रुद्रोपनिषद् (सं॰ स्त्री॰) उपनिषद्-विशेष।

आद (सं॰ त्रि॰) ग्रहण करनेवाला, जो पा रहा हो। यह शब्द किसी-किसी समासान्तमें आता है। (स्त्री॰) आदा।

आदंश (सं॰ पु॰) आदन्श भावे घञ्। १ दंशन, बुरका, काटकूट। आदश्यतेऽत्र, आधारे घञ्। २ दंशन-स्थान, बुरकेकी जगह, जिस जगहपर कोई काट खाये। आदश्यतेऽनेन, करणे घञ्। ३ दन्त, दांत, जिस चीज़से काटा जाये।

आदघ्न (वै॰ त्रि॰) मुख पर्यन्त पहुंचनेवाला, जो मुंहतक आ जाता हो। यह शब्द जलादिका विशेषण है।

आदत (अ॰ स्त्री॰) १ मिज़ाज, ख़ुसूसियत, प्रकृति, स्वभाव। २ महारत, अभ्यास, चाल, टेव।

आदत्त (सं॰ त्रि॰) १ गृहीत, पकड़ा हुआ। २ स्वीकृत, हाथमें लिया या शुरू किया हुआ।

आददान (सं॰ त्रि॰) ग्रहण, स्वीकार वा आरम्भ करनेवाला, जो लेता, मानता या शुरू करता हो।

आददि (वै॰ त्रि॰) आ-दा-कि द्विर्भावः। आदृगमहन-जनः किकिनौ लिट् च। पा ३।२।१७१। १ लाभवान्, हासिल करने या पानेवाला। २ ग्रहण करनेवाला, जो उठा ले जाता हो।

आदम (अ॰ पु॰) यहूदियों और मुसलमानोंके धर्मानुसार आदि मानव। पुस्तकोंमें देखा और लोगोंसे सुना, कि परमेश्वरने अपने अनुरूप प्रथम आदमको बनाया था। यही पृथिवीके आदि पुरुष रहे। यहूदियोंके 'तालमूद' ग्रन्थमें इनका कितना ही अलौकिक विवरण लिखा है। वह कहते हैं,—'प्रथम आदमकी विराट्मूर्ति रही, खड़े होनेपर उनकी शिखा आकाशसे जा लगती। सूर्यमण्डलकी अपेक्षा उनका मुख अधिक ज्योतिर्मय देख पड़ता था। उस समय देवता आकर ससम्भ्रम उनके पास खड़े हुवे और समस्त प्राणी उनकी पूजा करने लगे। उसके बाद ईश्वरने अपनी महिमा देखानेको उन्हें सुला दिया। नींद लेनेपर देवताओंने आदमके शरीरका एक-एक अङ्ग निकाला, जिससे उनका

आकार खर्व हो गया। किन्तु उससे आदम अङ्गहीन न हुये थे। आदमकी प्रथम पत्नीका नाम लिलिथ रहा। वही दैत्योंकी माता मानी जाती हैं। लिलिथके आदमको छोड़ जानेपर परमेश्वरने इवको सृष्टि की थी। इवका दूसरा नाम हौवा रहा। हौवाके साथ आदमका विवाह हुआ। परिणयके उत्सवमें चन्द्रसूर्य नक्षत्र नाचने, कोई कोई देवता वाद्य बजाने और कोई नानाविध खाद्यसामग्री पहुंचाने लगे थे। पीछे आदम और हौवाको सुखसम्पत्ति सामूएल दैत्य देख न सका। उसने हिंसावश उन्हें पापपथमें घुमा दिया।'

कुरान्‌का मत दूसरी तरह है। समस्त देवता जाकर आदमको पूजने लगे, किन्तु इबलीस अलग बैठे रहे थे। इसी अपराधपर वह सुखोद्यानसे निकाले गये। इबलीसने उसका प्रतिशोध लेनेके लिये आदम और हौवाको कुपथमें डाल दिया था। उसके बाद दोनोंमें विच्छेद पड़ा। आदम अनुतप्त हृदयसे मक्केके मन्दिर पास किसी तम्बूमें रहने लगे थे। उसी जगह जिबरीलने उन्हें ईश्वरका प्रत्यादेश सुना दिया। दो सौ वत्सर विच्छेदके बाद आदमको आराफट पर्वतपर पुनर्वार हौवाका साक्षात् मिला।

जेनिसिसके मतमें जगत् सृष्टिके षष्ठ दिवस परमेश्वरने कर्दमसे आदमको बनाया था। उसके बाद हौवाने जन्म लिया। यह दम्पती सुखोद्यानमें रहते थे। इनमें न तो जरा-मृत्यु और न प्रथम लज्जा, भय, शोक, ताप आदिका कोई ज्ञान ही रहा। परमेश्वरने इनसे उद्यानके सकल फलादि खानेको कहा, केवल एक वृक्षके फल छूनेको रोका था। पीछे शैतान्‌ने अनेक प्रलोभन देखा इन्हें उसी वृक्षका फल खिला दिया। खृष्टधर्मके मतसे उसी अपराधपर आदमके साथ मनुष्य जातिका पतन हुआ है।

२ विष्णुके प्रसिद्ध किये हुये एक अवतार। प्राय: सन् १४३० ई०के बाद कश्मीर, सिन्धु और पञ्जाबमें खाजाओंके प्रधान बनने पर सदरुद्दीनने आदमको विष्णुका अवतार मशहूर कर दिया था। ३ गुजरातके एक प्रधान मुल्ला। इनके बेटेका इब्राहीम और नातीका नाम अली रहा। अलीने गुजरातमें सन् १६२४ ई०को अपने नाम पर बोहरोंका एक सम्प्रदाय बनाया था। ५ गुजराती लोहाना वंशके राजपूत सुन्दरजी। मुसलमानधर्म ग्रहण करनेपर इनका नाम आदम पड़ा था। पीछे लोहाना वंश भी मोमिन कहलाया। इन्हें आदर-दृष्टिसे सरोया और नये सम्प्रदायका प्रधान पद दिया गया था।

आदमगिरि—सिंहलके एक पहाड़का नाम। इसे सोमगिरि वा सोमशैल भी कहते हैं। यह सिंहलके दक्षिण प्राय: ७४२० फीट ऊंचा है। इसी पर्वतपर मनुष्यके पैरका चिह्न मिलता है। मुसलमानोंके मतमें सुखोद्यानसे निकाले जानेपर आदमने यहीं हजार वर्ष तक खड़े रह अनुताप किया था। इसीसे अद्यावधि उनका पदचिह्न चमक रहा है। बौद्ध इस चिह्नको आपाद बताते हैं। उनके मतमें बुद्ध सिंहलमें जाते समय इस शैलचूड़ पर अपना पदचिह्न छोड़ गये थे। हिन्दू इसे महादेवका पदचिह्न मानते हैं। इस पुण्यस्थानपर काष्ठका आच्छादन बना है। हिन्दू, बौद्ध और मुसलमान् यात्री पदचिह्नका दर्शन करने जाते हैं।

आदमचश्म (अ० पु०) मनुष्यके समान नेत्र रखनेवाला अश्व, जिस घोड़ेके आदमीकी तरह आंख रहे। आदमचश्म बड़ा कट्टर होता है।

आदमज़ाद (फ० पु०) १ आदमकी औलाद, आदमी, मनुष्य।

आदम-जो-तन्दो—बम्बई प्रान्तके सिन्धु-हैदराबाद जिलेकी हाला तहसीलका नगर। यह अक्षा० २५° २६´ उ० और द्राघि० ६८° ४१´ १५´´ पूर्वपर अवस्थित है। यहां रेशम, रुई, अनाज, तेल, चीनी और घीका व्यापार होता है।

आदम जोहन—भारतके एक भूतपूर्व गवरनर जनरल या बड़े लाट। सन् १८२३ ई०को कुछ महीने इन्होंने भारतके बड़े लाट लार्ड आमहर्ष्टकी जगह काम किया था।

आदमपुर—पञ्जाब प्रान्तके जलन्धर जिलेकी करतारपुर तहसीलका एक बड़ा ग्राम। इसमें तीसरे दरजेकी म्युनिसपलिटी बैठती है।

आदम विलियम पार्किक—मन्द्राजके एक भूतपूर्व गवरनर। यह सन् १८७५ से १८८० ई० तक मन्द्राजके गवरनर रहे।

आदम सर फ्रेडरिक—मन्द्राज प्रान्तके एक भूतपूर्व गवरनर। इनका समय १८२७-३२ रहा।

आदम-सेतु—बालुका तथा शिलाका एक धरण, रेत और चटानकी एक पहाड़ी। यह अक्षा० ८° ५' से ८° १२' ३०" उ० और द्राघि० ७९° २२' ३०" से ८०° पू० तक अवस्थित है। इसकी लम्बाई १७ मील है। यह उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण-पूर्वको विस्तृत है। भारतीय तटसे कुछ दूर रामेश्वरम् द्वीप इसके निकलनेकी जगह है। यह सिंहलके पास मनार द्वीप तक चला गया है। इसीसे मनार खाड़ीकी उत्तर सीमा प्रायः बन्द है। समुद्रमें लहर चढ़ते समय इसपर कहीं-कहीं तीन-चार फीट पानी चढ़ जाता है। रामायणमें लिखा है, कि लङ्कापर चढ़ते समय रामने इसी सेतुको अपनी फौज उतारनेके लिये प्रधान मार्ग बनाया था।

आदमियत (अ० स्त्री०) १ इन्सानियत, मनुष्यत्व, आदमी होनेकी हालत। २ शायस्तगी, सभ्यता।

आदमी (अ० पु०) १ इन्सान्, मनुष्य। २ भृत्य, नौकर। ३ स्वामी, खाविन्द।

आदर (सं० पु०) आ-दृ-अप् गुणः। १ मर्यादा, इज्जत। २ अनुराग, प्यार। ३ सम्मान, खातिर। ४ आरम्भ, आगाज़। ५ आसक्ति, लगाव। ५ यत्न, तदबीर।

आदरण (सं० क्ली०) सत्कार, तवज्जो, ख़याल।

आदरणीय (सं० त्रि०) आ-दृ-अनीयर्। सम्माननीय, इज्जत किये जाने क़ाबिल। २ ध्यान देने योग्य, ख़याल करने काबिल। (स्त्री०) आदरणीया।

आदरना (हिं० क्रि०) आदर देना, इज्जत करना, मानना।

आदरभाव (सं० पु०) आदर-सत्कार, खातिर-तवज्जो, मानपान।

आदरस (हिं०) आदर्श देखो।

आदर्तव्य (सं० त्रि०) आ-दृ-तव्य। आदरणीय देखो।

आदर्दरि (वै० त्रि०) कुचल डालने वा टुकड़े उड़ा देनेवाला।

आदर्य, आदरणीय देखो।

आदर्श (सं० पु०) आदृश्यतेऽत्र, आ-दृश आधारे घञ्। १ दर्पण, आयीना। २ प्रतिलिपि, किसी किताबकी कापी। ३ आदि हस्तलिपि, असली लिखावट। इसे देखकर नकल उतारते हैं। ४ नमूना। ५ स्थानका चित्र, जगहका नक्शा। ६ टीका।

'आदर्शो दर्पणे टीका प्रतिपुस्तकयोरपि।' (मेदिनी)

आदर्शक (सं० त्रि०) भवादौ वुञ्। १ प्रदेशके सीमासूचक स्थानसे उत्पन्न, जो मुल्की हद बतानेकी जगहसे निकला हो। (पु०) २ दर्पण, आयीना।

आदर्शन (सं० क्ली०) १ देखाव, नज़ारा। २ दर्पण, आयीना।

आदर्शमण्डल (सं० पु०) आदर्श इव मण्डलस्य। सर्प विशेष, एक सांप। इसके शरीरपर दर्पण-जैसे चिह्न होते हैं। (क्ली०) आदर्शो मण्डलमिव। २ गोलाकार दर्पण, गोल आयीना।

आदर्शमन्दिर (सं० पु०) शीश महल, आयीनाघर।

आदर्शित (सं० त्रि०) देखलाया या ज़ाहिर किया हुआ।

आदहन (सं० क्ली०) आ-दह भावे ल्युट्। १ दाह, जलन। २ हिंसा, मारकाट। ३ कुत्सन, निन्दा, धिक्कारत। आदह्यतेऽत्र, आधारे ल्युट्। ४ श्मशान, मुर्दा फूंकनेकी जगह। ५ जलानेका स्थान, जला डालनेकी जगह।

आदा (हिं० पु०) अदरक देखो।

आदातव्य (सं० त्रि०) लिया जानेवाला, लेने क़ाबिल।

आदाता आदातृ देखो।

आदातृ (सं० पु०) आ-दा-तृच्। ग्रहीता, लेनेवाला।

आदादिक (सं० त्रि०) अदादिगणे पठितम्, ठक्। अदादिगण पठित। यह शब्द धातुका विशेषण है।

आदान (सं० क्ली०) आ-दा भावे ल्युट्। १ ग्रहण, पकड़। २ अश्वका अलङ्कार विशेष, घोड़ेका एक गहना।

'आदानं ग्रहणेऽपि स्यादलङ्कारे च वाजिनाम्।' (मेदिनी) ३ प्राप्ति, खीकृति, पहुंच, मञ्जूरी। ४ निजका अर्थग्रहण, अपने आप लेनेका काम। ५ लक्षण, अलामत। ६ निदान, बीमारीकी पहचान। ७ बन्धन, जकड़।

आदानवत् (सं० त्रि०) पानेवाला, जिसके कुछ हाथ लगे। (पु०) आदानवान्। (स्त्री०) आदानवती।

आदान-प्रदान (सं० क्ली०) लेन-देन।

आदाना, आदानी देखो।

आदानी (सं० स्त्री०) आदीयते, आ-दा कर्मणि लुट् ङीप्। हस्तिघोषा, हाथी चिचार।

आदापन (सं० क्ली०) निमन्त्रण, न्योता।

आदाब (अ० पु०) १ संयम, तरीक। २ ध्यान, खयाल। ३ प्रणाम, सलाम। यह 'अदब' शब्दका बहुवचन है।

आदाय (सं० त्रि) आददाति गृह्णाति, आ-दा-ण युक्। १ ग्रहीता, लेनेवाला। (पु०) आ-दा भावे घञ् युक्। २ आदान, लेनेका काम। (अव्य०) आ-दा-ल्यप्। ३ ग्रहणपूर्वक, लेकर।

आदायचर (सं० त्रि०) आदाय चरति, चर ट, उप० समा०। भिक्षासेनादायेषु च। पा ३।२।१७। ग्रहणपूर्वक गमनकारी, लेकर चल देनेवाला।

आदायमान (सं० त्रि०) आददान, ले लेनेवाला। यह शब्द पद्यमें आता है।

आदायिन् (सं० त्रि०) आददाति गृह्णाति, आ-दा-णिनि-युक्। ग्रहीता, लेनेवाला। (पु०) आदायी। (स्त्री०) आदायिनी।

आदार (वै० पु०) आ-दृ वेदे बाहु० घञ्। १ आदर, इज्जत। २ प्रलोभन, आकर्षण, लालच, कशिश। ३ प्रोत्साहक, मुफ़सिद, विघ्नकी गांठ। ४ वृक्ष विशेष, एक पौदा। सामलता न मिलनेसे उसके स्थानमें यह व्यवहृत होता है।

आदारबिम्बी (सं० स्त्री०) आदरिणी बिम्बीव, पृषो० पुंवद्भावः। लताविशेष, एक बेल। इसमें अम्ल-वेतसके तुल्य पुष्प खिलते हैं।

आदारिन् (वै० त्रि०) १ प्रलोभक, आकर्षक, लालच देनेवाला, जो अपनी ओर खींच लेता हो। २ नाशक, बिगाड़ू। (पु०) आदारी। (स्त्री०) आदारिणी।

आदि (सं० पु०) आ-दा-कि। उपसर्गे घोः किः। पा ३।३।९२। १ आरम्भ, आगाज़। २ प्राक्सकृता, पहला फल। ३ प्रथम, पहला। ४ कारण, सबब। ५ सामीप्य, पड़ोस। ६ प्रकार, तरह। ७ अवयव, अङ्ग। (त्रि०) ८ आद्य, पहलेका। ९ पूर्व पौरस्त्य, सामने खड़ा हुआ। 'पुंस्यादिः पूर्व पौरस्त्य प्रथमाद्याः।' (अमर) इति शब्दसे मिले हुये आदि अर्थात् इत्यादि द्वारा गण समझा जाता है, जैसे—शाखा पल्लव पत्र इत्यादि। यह प्रायः समासके अन्त या मध्यमें आरम्भसूचक रहता है, जैसे—गृहादियुक्त, अर्थात् मकान् वग़ैरह रखनेवाला।

आदितः (सं० अव्य०) किसीसे लेकर, वग़ैरह। यह प्रायः समासान्तमें आदि शब्दकी तरह व्यवहृत होता है।

आदिकर (सं० पु०) आदिं करोति, अहेतादावपि ट। प्रथमकारक, अव्वल बनानेवाला।

आदिकर्ता, आदिकर्तृ देखो।

आदिकर्तृ (सं० पु०) आदिं करोति आदिः कर्ता वा। आदिकारक, परमेश्वर। ब्रह्मा, कृष्ण वा विष्णुको भी आदिकर्ता कहते हैं।

आदिकर्मन् (सं० क्ली०) कर्मधा०। आदिकर्मणि क्तः-कर्तरि च। पा ३।४।७१। कर्मसे पहले क्रियापद लगा वाक्यारम्भ विशेष, मफ़ूलसे पेश्तर फ़ेल रख जुमलेका आगाज़। जैसे—मार डाला रावणको रामने। 'मार डाला' क्रियापद पहले रहनेसे उपरोक्त वाक्य व्याकरणानुसार आदिकर्मा है। २ प्रथम-जात कर्म-मात्र, पहले निकला हुआ काम। (त्रि०) आदि आदिभूतं कर्म यस्य, बहुव्रीο। ३ आदि-कर्म युक्त, अौवल काम करनेवाला।

आदिकवि (सं० पु०) आदिः आदिभूतः कविः। १ हिरण्यगर्भ ब्रह्मा। प्रथम उत्पन्न हो स्वयं वेद और कवित्व प्रकाश करनेपर ब्रह्माका नाम आदिकवि पड़ा है। प्रवाद है—पहले पहल वाल्मीकिके मुखसे 'मा निषाद' इत्यादि अनुष्टुप् छन्द निकला था, इसीसे उन्हें भी आदिकवि उपाधि मिला। किन्तु कोयी

कोयी वाल्मीकिकी अपेक्षा व्यासको प्राचीन कवि बताता है।

आदिकारण (सं० क्ली०) आदिभूतं कारणम्, शाक० तत्। १ परमेश्वर, सकल कारणका मूलकारण, सबब-उल्-सबब। महर्षि कपिलने अस्तित्वका प्रमाण न पानेसे ईश्वरको नहीं माना है। उन्होंने विना ईश्वर जगत्की सृष्टिका प्रकार ठहरानेको कहा है, पहले कुछ उपादान न रहनेसे कोयी वस्तु कैसे उत्पन्न हो सकता है। प्रत्येक द्रव्य बनानेमें उपादान आवश्यक है। पहले दुग्ध रहनेसे ही पीछे दधि बन सकता है। दुग्ध न होनेसे दधि कैसे मिलेगा! इसीसे उन्होंने प्रकृति और पुरुष नामक दो नित्य पदार्थ माने हैं। प्रकृति जड़ पदार्थ है। इसीके विकारसे जगत् उत्पन्न हुआ है। यह प्रकृति ही उनके मतसे आदिकारण है। आदिकारण नित्य होता और अपनी उत्पत्तिके लिये अन्य कारणकी आवश्यकता नहीं रखता। कपिलने आदिकारणको बारबार 'अमूलमूल' कहा है। सांख्यवादियोंके मतसे इसका दूसरा नाम प्रधान भी है। नैयायिक प्रभृति आदि कारण शब्दसे निमित्त निकलनेपर ईश्वर और समवायिकारणार्थ आनेपर परमाणु समझते हैं। २ निदान, बीमारीको पहचान। ३ व्यवच्छेद, वीजगणित, जब्र-मुकाबला, जब्र-मुकाबलेसे सवाल निकालनेका तरीक्।

आदिकाल (सं० पु०) प्राचीन समय, जामिद ज़माना।

आदिकाव्य (सं० क्ली०) आदिभूतं काव्यम्, शाक० तत्। चार चरणयुक्त छन्दोबद्ध वाक्य, वाल्मीकिरचित रामायण।

आदिकृत्, आदिकर्ता देखो।

आदिकेशव (सं० पु०) आदिभूतः केशवः शाक० तत्। १ काशीस्थ केशवमूर्तिविशेष। २ विष्णु भगवान्।

आदिगदाधर (सं० पु०) १ काशीस्थ विष्णुमूर्ति-विशेष। २ गया तीर्थस्थ विष्णुमूर्ति विशेष।

आदिग्ध (सं० त्रि०) लिप्त, भरा, आलूदा, चुपड़ा या भरा हुआ।

आदिजिन (सं० पु०) आदिभूतः जिनः, शाक० तत्। ऋषभदेव, जैनोंके आदि देव। ऋषभ देखो।

आदित (हिं०) आदित्य देखो।

आदितस् (सं० अव्य०) आदिसे, आरम्भमें, शुरूसे, पहले।

आदिता (सं० स्त्री०) पूर्वता, प्रथमता, क़दामत, तक़दीम।

आदिताल (सं० पु०) कर्मधा०। ताल विशेष, एक ठेका। इसमें एक लघु ताल लगता है।

"एक एव लघुर्यत्र आदितालः स कथ्यते।
गुरुवत् पुरतो वाद्यः प्रायेणैतन्निदर्शनम्।" (सङ्गीतदा०)

आदितेय (सं० पु०) अदित्या अपत्यम्, ढक्। १ अदितिके सन्तान, अदितिके लड़के। २ देवता। ३ सूर्य।

आदित्य (सं० पु०) अदित्या अपत्यम् ण्य। दित्यदित्यादित्य इत्यादि। पा ४।१।८५। १ अदितिके सन्तान, अदितिके लड़के। २ सकल देवता। ३ सूर्य। आङ् पूर्वात् दाते दीप्यते वा (अप्राप्यादित्यात्) यत्। अकारेकारयो-रिकार, दाजस्तुक् दीप्यतेः पकारस्य तकारश्च निपात्यते। (निघण्टु) ४ सूर्य अधिष्ठित गगन, जिस आसमान्में सूरज रहे। ५ सूर्यका तेजोमण्डल। ६ आदित्यमण्डलान्तरगत हिरण्यवर्ण परमपुरुष विष्णु। ७ उपासक लोगोंके अतिवाहनको दक्षिण और उत्तर पथमें ईश्वर नियुक्त धूमादि एवं अर्चिरादि अभिमानी देवगण। ८ अर्क-वृक्ष, मदारका पेड़। ९ श्वेतार्क क्षुप, सफ़ेद अकोड़ेका पेड़। (त्रि०) आदित्यस्यापत्यम्, आदित्य-ण्य यो-लोपः। १० सूर्यके पुत्र। ११ इन्द्र। १२ वामन। १३ वसु। १४ विश्वेदेवा। १५ बारहमात्राका छन्द। (त्रि०) १६ अदिति-सम्बन्धीय। ऋग्वेदकी (२।२७।१) ऋचामें आदित्यगणकी संख्या छः लिखी है—मित्र, अर्यमा, भग, वरुण, दक्ष और अंश। फिर (९।११४।३) ऋक्में इनकी संख्या सात है। किन्तु इस स्थलमें उनका नाम नहीं लिखा। (१०।७२।८) ऋक्में अदितिके आठ सन्तान कहे हैं। इनमें सात पुत्र उन्होंने देवताओंके दे दिये, केवल मार्तण्ड रह गये थे। अथर्ववेदमें (८।९।२१) आठ आदित्यका उल्लेख है। किन्तु बहुधा द्वादश आदित्यका ही नाम देख पड़ता है—विवस्वान्, अर्यमा, पूषा, त्वष्टा, सविता, भग,

धाता, विधाता, वरुण, मित्र, शक्र एवं उपक्रम। ऋग्वेदके (२।२७।१) भाष्यमें सायणाचार्यने तैत्तिरीय संहिताकी एक ऋक् उद्धृत की है। उसमें मित्र, वरुण, धाता, अर्यमा, अंशु, भग, इन्द्र और विवस्वान् इन आठ आदित्यका ही नाम मिलता है।

तैत्तिरीय संहितामें (६।५।६।१) आदित्यका जन्म-विवरण इस प्रकार लिखा है—अदितिने पुत्रकी कामनासे देवताओंके निमित्त ब्रह्मौदन पाक किया था। उन्होंने अदितिको उच्छिष्ट दे दिया। वह इस प्रसादको खानेसे गर्भवती हुई थीं। उससे चार आदित्यने जन्म लिया। अदितिने द्वितीय वार भी पाक बनाया। किन्तु इस समय उन्होंने सोचा, कि उच्छिष्ट खानेसे जब ऐसे सन्तान उत्पन्न हुये, तब चरुका अग्रभाग लेनेसे और भी तेजस्वी सन्तान उत्पन्न हो सकते। ऐसा विचार वह चरुका अग्रभाग खाकर गर्भवती हुईं। पीछे उन्होंने एक अपक्क अण्ड प्रसव किया था। फिर अदितिने आदित्योंके लिये तृतीय वार यह मन्त्र पढ़कर चरु चढ़ाया,—("भोगाय मे इदं श्रान्तमस्तु") अर्थात् यह श्रान्त (परिश्रम) मेरे भोगके लिये हो। इसपर आदित्योंने कहा,—'हम वर देते हैं। जो इससे जन्म लेगा, वह हमारा ही होगा और इस प्रजासे जो समृद्ध बनेगा, वह हमारे ही भोगमें लगेगा।' उसीसे आदित्य विवस्वान्-का जन्म हुआ। तैत्तिरीय-ब्राह्मणमें भी बिलकुल ऐसा ही एक विवरण मिलता है। उसमें लिखा, कि अदितिने प्रथम ब्रह्मौदन प्रसाद खा कर धाता तथा अर्यमा, द्वितीय वार मित्र एवं वरुण, तृतीय वार अंश एवं भग और चतुर्थ वार इन्द्र तथा विवस्वान्‌को प्रसव किया। तैत्तिरीय-संहितामें यह भी देखा, कि प्रजापतिसे द्वादश आदित्यका जन्म हुआ था। इधर शतपथब्राह्मणमें द्वादश आदित्यको द्वादश मासके साथ मिला दिया है।

आदित्यकान्ता, आदित्यभक्ता देखो।

आदित्यकेतु (सं॰ पु॰) आदित्यः केतुर्यस्य, बहुव्री॰। १ आदित्य-ध्वज-रथ-युक्त धृतराष्ट्रके पुत्र। अपने भाई सुनाभके मारे जानेपर इन्होंने उदोदर प्रभृति छः भ्राताओंके साथ भीमसे युद्ध किया था। पीछे यह भी निहत हुये। २ अरुण, सूर्यके सारथि।

आदित्यकेशव (सं॰ पु॰) ६ तत्। काशीस्थ केशव मूर्ति विशेष।

आदित्यगर्भ (सं॰ पु॰) किसी बोधिसत्त्वका नाम।

आदित्यतेजा, आदित्यभक्ता देखो।

आदित्यपत्र (सं॰ पु॰) आदित्यस्य अर्कवृक्षस्य पत्र-मिव पत्रमस्य। १ क्षुपविशेष, एक पौदा। इसके कुछ पर्याय यह हैं,—अर्कपत्र, अर्कदल, सूर्यपत्र, तपनच्छद, कुष्ठारि, विटप, सुपत्र, रविप्रिय, रश्मिपति और रुद्र। आदित्यपत्र कटु एवं उष्ण होता, कफ, वातरोग, गुल्म तथा अरोचकको हटाता और अग्निवृद्धि करता है। (राजनिघण्टु)

२ आदित्यभक्ता भेद। (क्ली॰) ६-तत्। ३ अर्क-वृक्षका पत्र, मदारका पत्ता। (स्त्री॰) आदित्यपत्रा।

आदित्यपत्रक, आदित्यपत्र देखो।

आदित्यपर्णिका, आदित्यपर्णिनी देखो।

आदित्यपर्णिनी (सं॰ स्त्री॰) आदित्यवर्णं पर्ण-मस्त्यस्या इनि। १ आदित्यभक्ता, सूरजमुखी। २ ओषधि विशेष, एक बूटी। इसका मूलदेश सुन्दर रक्तवर्ण होता, सुनहला फूल आता और कोमल-कोमल पांच पत्ता लगता है।

आदित्यपर्णी, आदित्यपर्णिनी देखो।

आदित्यपाकतैल (सं॰ क्ली॰) तैलभेद, किसी किस्मका तेल। मञ्जिष्ठा, लाक्षा, त्रिफला, हरिद्रा, मनःशिला, हरताल एवं गन्धकचूर्ण सम भाग लेकर सबके बराबर तैलमें पकाना चाहिये। किन्तु विना जलके पाक बन नहीं सकता, इसलिये तैलके तुल्य जल भी डालना पड़ता है। इसे धूपमें तयार करना अच्छा है। जब तक पानी न सूखे, तबतक धूप दिखाता जाये। आदित्यपाकतैल कुष्ठरोगको दूर करता है। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

आदित्यपुराण (सं॰ क्ली॰) आदित्येनोक्तं पुराणम्, शाक॰ तत्। उपपुराण विशेष। सौरपुराण, भास्कर-पुराण, सूर्यपुराण इत्यादि शब्दसे भी आदित्यपुराणका ही बोध होता है।

आदित्यपुष्पा (सं॰ स्त्री॰) १ लालकीपुष्पवृक्ष, जिसके फूलका पेड़। २ गोरक्षाकोली।

आदित्यपुष्पिका (सं॰ स्त्री॰) आदित्यवर्णं रक्तं पुष्पमस्याः। १ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़। २ लोहितार्क-वृक्ष, लाल मदार।

आदित्यपुष्पी, आदित्यपुष्पिका देखो।

आदित्यभक्ता (सं॰ स्त्री॰) आदित्ये विषये भक्ता, ७-तत्। हुरहुर, कानफटिया। यह श्वेत एवं पीत भेदसे दो प्रकार है। यह वृक्ष शीतल, कटु एवं तिक्त रहता और कफ, त्वग्दोष, कण्डु, व्रण, कुष्ठ, भूतग्रह तथा शीतज्वरको दूर कर देता है। (राजनिघण्टु) इसमें स्वादु पाकरसत्व, गुरुत्व, क्षाररसत्व, अपित्तवर्धकत्व, विष्टम्भित्व, वातहरत्व और कर्णशूल मिटानेका गुण पाते हैं। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

यह वृक्ष शीतल, रूक्ष, स्वादुपाक, सर, गुरु, कटु, अपित्तल, क्षार, विष्टम्भ और कफ-वात-घ्न होता है। फिर दूसरा तिक्त, कषाय, उष्ण, सर, रूक्ष, लघु एवं कटु लगता और कफ, पित्त, रक्त, श्वास, कास, अरुचि, ज्वर, विस्फोटक, कुष्ठ, मेह, अश्मयोनिरोग, कृमि और पाण्डुको दूर करता है। (भावप्रकाश)

आदित्यमण्डल (सं॰ क्लो॰) सूर्यका वृत्त, आफ़ताबका कुरा।

आदित्यवत् (सं॰ त्रि॰) आदित्यसे आवृत, आफ़तावसे घिरा हुआ। (पु॰) आदित्यवान्। (स्त्री॰) आदित्य-वती।

आदित्यवनि (वै॰ त्रि॰) आदित्यकी कृपा प्राप्त करने-वाला, जो आदित्यको अपने तावेमें ला रहा हो।

आदित्यवर्ण (सं॰ त्रि॰) सूर्यके वर्ण-विशिष्ट, आफ़-ताव-जैसा, जिसके सूरजकी तरह रङ्ग रहे।

आदित्यवर्मा—भारतीय दाक्षिणात्यके एक प्राचीन नृपति। यह पुलकेशी राजाके पुत्र रहे। कृष्णा और तुङ्गभद्राके समीपस्थ प्रान्तपर इनका अधिकार था। अपने शासनके पहले वर्ष इन्होंने जो ताम्रफलक प्रदान किया, वह करनूल ज़िलेमें मिला है।

२ सुमात्राके एक नृपति। सुमात्रामें आविष्कृत शिलालिपिसे मालूम करते, कि वहां सन् ई॰के ७म शताब्दान्त आदित्यवर्मा नामक प्रबल पराक्रान्त नृपति हुए थे। इनकी कीर्तिका बहु ध्वंसावशेष आज भी सुमात्राद्वीपके नाना स्थानमें पड़ा है। ३ ब्रह्मदेशके एक राजा। अल्प दिन हुये ब्रह्मदेशसे जो राजकीय पुरातत्त्वविवरण छपे, उनके अनुसार सन् ई॰के नवें शताब्द आदित्यवर्मा नामक सौरनृपति प्रबलप्रतापसे वहां राजत्व चलाते थे।

आदित्यवल्लभा, आदित्यभक्ता देखो।

आदित्यवल्लिका, आदित्यभक्ता देखो।

आदित्यवल्ली, आदित्यभक्ता देखो।

आदित्यवार (सं॰ पु॰) रविवार, सूर्यका दिन, एतवार।

आदित्यव्रत (सं॰ क्लो॰) आदित्यस्य तदुपासनार्थं व्रतम्, ६-तत्। १ सूर्यकी उपासनाके निमित्त व्रत-विशेष। इसमें नमक नहीं खाते। (त्रि॰) आदित्य-व्रतस्य ब्रह्मचर्यमस्य, ठञ्। २ आदित्यव्रतिक, आदित्य-व्रतके निमित्त ब्रह्मचर्य-युक्त, रविवारका व्रत करने-वाला।

आदित्यशक्ति—बम्बई प्रान्तस्थ कनाड़ी ज़िलेके एक नृपति। ग्वालियर-राज्यस्थ नौसारी ज़िलेके बगुमरेसे जो दानपत्र दिया गया, उसमें निम्नलिखित वृत्तान्त मिला है,—इनके पिताका नाम भानुशक्ति और पुत्रका नाम पृथिवीवल्लभ निकुम्भल्लशक्ति रहा। इनका समय सन् ६५५ ई॰ बताते हैं।

आदित्यशूर—राढ़देशके कोई शूरवंशीय प्रसिद्ध नर-पति। इनका दूसरा नाम धरणीशूर रहा। सिंहेश्वर नामक स्थानमें आदित्यशूरकी राजधानी थी। प्रायः सन् ८७१ से ९०५ ई॰ तक इन्होंने राजत्व किया। इनके समय भी अनेक ब्राह्मण और कायस्थ उत्तर राढ़में प्रतिष्ठित हुए थे।

आदित्यसदृश (सं॰ त्रि॰) सूर्यके समान, आफ़ताब जैसा। (स्त्री॰) आदित्यसदृशी।

आदित्यसूनु (सं॰ पु॰) ६-तत्। १ सूर्यपुत्र सुग्रीव। २ कर्ण। ३ यम। ४ शनि। ५ सावर्णि मनु। ६ वैवस्वत मनु।

आदित्यसेन—मगधके गुप्तवंशीय एक सम्राट्। यह सम्राट्

हर्षवर्धनके प्रियसखा माधवगुप्तके पुत्र रहे। सम्राट् हर्षकी मृत्युके बाद उत्तराधिकारियों और मन्त्रियोंमें जब साम्राज्यके अधिकार पर झगड़ा चला, तब आदित्यसेनने धीरे-धीरे बल बढ़ा और परम भट्टारक महाराजाधिराज उपाधि ले समस्त प्राच्य भारतका अधिकार पाया था। गुप्तवंश शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

आदित्याचार्य (सं० पु०) ग्रन्थकार विशेष, एक मुसन्निफ़।

आदित्व (सं० क्ली०) आदिता देखो।

आदित्सा (सं० स्त्री०) ग्रहण करनेकी इच्छा, लेलेनेकी ख्वाहिश।

आदित्सु (सं० त्रि०) आदातु-मिच्छुः, आ-दा-सन्-उ। ग्रहणके निमित्त इच्छुक, लेनेका ख्वाहिशमन्द।

आदिदेव (सं० पु०) आदिभूतो देवः, शाक० तत्। १ नारायण। २ शिव। ३ सूर्य। 'आदिदेवो महानिशिशिवलिङ्गतदोद्भवः।' (श्रुति) आदौ दीव्यति, आदि-दिव-अच्, ७-तत्। ४ आदिकारण। परमेश्वर।

आदिदैत्य (सं० पु०) आदिभूतो दैत्यः, शाक० तत्। हिरण्यकशिपु नामक दैत्य। दितिके प्रथम गर्भसे जन्म लेने कारण हिरण्यकशिपुको आदिदैत्य कहते हैं। भागवत आदिस्कन्धके ६५वें अध्यायमें इसका विवरण लिखा है।

आदिन् (सं० त्रि०) अत्ति, अद्-णिनि। भक्षक, खानेवाला। यह शब्द समासान्तमें व्यवहृत होता है। जैसे—अन्नादिन्,अनाज खानेवाला। (पु०) आदी। (स्त्री०) आदिनी।

आदिनव (वै० पु०) आदीनवस्य पृषो० वेदे ह्रस्वः। दुर्भाग्य, बाधा, कमबख़्ती, बखेड़ा।

आदिनवदर्श (वै० त्रि०) साथमें पासा या कावतैन खेलनेवालोंसे चालाकी करनेवाला।

आदिनाथ (सं० पु०) १ ग्रन्थकार विशेष, एक मुसन्निफ़। २ आदितीर्थङ्कर। गुजरातके शत्रुञ्जय नामक स्थानमें इनका मठ स्थापित है। कहते हैं, (सन् ११४३-११७४ ई०) अनहिलवाड़के बल्लभीराज कुमारपालके प्रधान मन्त्री किसी समय मन्दिरमें आदिनाथका पूजन करनेको पहुंचे. उसी समय चूहे दीपककी बत्ती घसीट ले गये। मन्दिर लकड़ीका रहा, इसीसे आग लगते ही भस्मीभूत हुआ। लकड़ीकी इमारतको विपद्जनक देख मन्त्रीने पक्का मन्दिर बनानेका विचार किया था। शत्रुञ्जय देखो।

आदिपर्वन् (सं० क्ली०) आदिभूतं पर्व, शाक० तत्। प्रथम अध्याय, पहला बाब। महाभारत अष्टादश पर्वके अन्तर्गत प्रथम पर्वको भी इसी नामसे पुकारते हैं।

आदिपुराण (सं० क्ली०) आदिभूतं पुराणम्, शाक० तत्। १ पुराण विशेष, अष्टादश पुराणके अन्तर्गत प्रथम पुराण, चतुर्लक्षात्मक ब्रह्मनिर्मित पुराण विशेष, ब्रह्मपुराण। २ जिनसेनरचित ग्रन्थविशेष। इसमें दाक्षिणात्यके महाराज अमोघवर्ष और राष्ट्रकूट-नृपति अकलङ्क, प्रभाचन्द्र एवं पात्रकेशरीका उल्लेख विद्यमान है। जिनसेन देखो।

आदिपुरुष (सं० पु०) आदिभूतः पुरुषः, शाक० तत्। १ मनुष्यके आदिबीजस्वरूप हिरण्यगर्भ। २ ब्रह्मा। ३ नारायण।

आदिपूरुष, आदिपुरुष देखो।

आदिबल (सं० क्ली०) उत्पादक शक्ति, पैदा करनेवाली ताक़त।

आदिबलप्रवृत्त (सं० त्रि०) शुक्रशोणितान्वयज, मनी और खूनके मेलसे पैदा हुआ। शुक्र और शोणितके योगसे उत्पन्न होनेवाले कुष्ठ, अर्श प्रभृति रोग आदिबलप्रवृत्त कहाते हैं। यह दो प्रकारके होते हैं,—मातृज और पितृज। (सुश्रुत) ऐसे रोगोंको आध्यात्मिक भी कहते हैं।

आदिबुद्ध (सं० त्रि०) १ आरम्भसे ही मालूम किया हुआ, जो शुरूमें ही समझ पड़ा हो। (पु०) २ प्रथम बुद्ध, उत्तरीय बौद्धोंके प्रधान देव।

आदिभञ्ज—भञ्जवंशके प्रथम नृपति। कहते, कि मयूरभञ्जके अन्तर्गत आदिपुरमें यह राजत्व करते थे। भञ्जवंश देखो।

आदिभव (सं० पु०) आदौ भवतीति, आदि-भू-अच्। १ हिरण्यगर्भ, परमेश्वर। २ ब्रह्मा। ३ विष्णु। (त्रि०) ४ अग्रज, शुरूमें पैदा हुआ।

आदिभूत, आदिभव देखो।

आदिम (सं० त्रि०) आदि-डिमच्। अवादि पश्चाड्डिमच्। (वार्तिक—पा ४।३।२३) प्रथमजात, आदिमें उत्पन्न, पहला, अगला, बुनियादी।

आदिमत् (सं० त्रि०) आदिरस्त्यस्य, मतुप्। आदियुक्त, सकारण, आदि सीमायुक्त, इब्तिदायी, आगाज़ या सबब रखनेवाला। (पु०) आदिमान्। (स्त्री०) आदिमती।

आदिमल्ल—विष्णुपुर या मल्लभूमके मल्लवंशीय प्रथम नृपति। इन्होंके समयसे मल्लाब्द चला है। मल्लभूम या विष्णुपुर देखो।

आदिमा (सं स्त्री०) भूमि, ज़मीन्।

आदिमूल (सं० क्ली०) प्रथमजात आधार वा कारण, पहली बुनियाद या सबब।

आदियोगाचार्य (सं० पु०) योगके प्रथम गुरु। यह शब्द शिवका उपाधि है।

आदिरस (सं० पु०) प्रधान रस, पहला जज़्बा। शृङ्गार रसका ही दूसरा नाम आदिरस है।

आदिराज (सं० पु०) आदिभूतो राजा, शाक० टजन्त तत्। राजाहः सखिभ्यष्टच्। पा ५।४।९१। १ प्रथम नृपति, पहले बादशाह। २ पृथु नामक नृपति। भागवतके चतुर्थ स्कन्दमें आदिराज पृथुका विवरण लिखा है। ३ कुरुके एक पुत्र। ४ मनु। कालिदासने रघुवंशमें वैवस्वत मनुको आदिराज कहा है।

आदिल (फ़ा० वि०) अदल या इन्साफ़ करनेवाला, न्यायी।

आदिल खान्—बम्बई प्रान्तस्थ खानदेशके नवाब। सन् १४५७ ई०को मुबारिक खान्के मरने पर यह खान्देशके नवाब बने थे। इन्होंने १५०३ ई० तक राज्य किया। इनके समय खानदेशकी बड़ी श्रीवृद्धि हुई थी। आदिलखान् गुजरातको कर देनेसे असम्मत रहे, किन्तु कोई १४९९ ई०के समय वैसा करनेपर बाध्य किये गये। गोपालराय कविने इनकी प्रशंसापर कुछ पद्य लिखा था।

आदिलशाही—दाक्षिणात्यके बहमानी राजवंशका एक भाग। सन् १४४९ ई०को द्वितीय अमूरके किसी पुत्रने बीजापुरमें अपनी राजधानी प्रतिष्ठित की थी। औरङ्गजेबने १६८६-८८ ई०को बीजापुर जीत दिल्लीकी बादशाहतमें मिला लिया।

आदिवंश (सं० पु०) प्रथम कुल, बुनियादी खानदान्।

आदिवराह (सं० पु०) आदिभूतो वराहः, शाक० तत्। यज्ञवराह रूपमें अवतीर्ण विष्णुका एक अवतार। हरिवंशमें लिखा, पहले यह जगत् प्रजापतिके मूर्तिधर हिरण्मय अण्डमें परिणत हुआ था। हजार वर्षके बाद नारायणने उसी अण्डको ऊर्द्ध्वमुख उठाके दो भागमें विभक्त किया। उसके जल भागसे पर्वतकी सृष्टि हुई थी। सकल पर्वतोंके भारसे व्यथित हो तथा नारायणात्मक जलराशिमें डूब जब पृथिवी रसातलको जाने लगी, तब नारायणने यज्ञवराह मूर्ति धारण कर ऊपर उठा ली। आदिवराहकी मूर्ति दश योजन विस्तृत और शत योजन उन्नत रही। इनके देहकी कान्ति मेघकी तरह नील वर्ण एवं गर्जन जलद जैसी गम्भीर थी। श्वेतवर्ण, दीप्तियुक्त एवं उग्र दंष्ट्रासे पर्वत पर्यन्त विदीर्ण हो जाते रहे। चक्षु विद्युत्-अग्नि या सूर्य-किरणकी तरह तीव्र था। स्कन्ध स्थूल, विस्तृत और गोलाकार रहा। विक्रम व्याघ्रकी तरह अति भयङ्कर और कटिदेश पीन एवं उन्नत था। शरीरमें देखनेसे बिलकुल वृषका लक्षण मिलता रहा। चतुर्वेद पैर, यूप दांत, क्रतु हाथ, चिती मुख, अग्नि जिह्वा, दर्भ लोम, प्रणव मस्तक, दिवारात्र चक्षुद्वय, वेदाङ्ग कर्णभूषण, आज्य नासिका, स्रुव तुण्ड, सामवेदध्वनि कण्ठनिस्वन, क्रियामय गोदानादि घोणा, पशु जानु, मख आकृति, उद्गाता अन्त्र, होम लिङ्ग, महाफल बीज तथा ओषधि, वायु अन्तरात्मा, मन्त्र स्फिक्, सोमरस शोणित, वेदि स्कन्ध, हविः गन्ध, हव्यकव्य वेग, प्रागवंश शरीर, दक्षिणा हृदय, वेदोपकरण ओष्ठका अलङ्कार, होमाग्नि नाभिभूषण, छन्दः गतिपथ, गुह्य उपनिषत् आसन और छाया आदिवराहकी पत्नी थीं।

"आपो वा इदमग्रे सलिलमासीत् तस्मिन् प्रजापतिर्वायुर्भूत्वाचरत् स इमामपश्यत्। तां वराहो भूत्वा हरत्।" (तैत्तिरीयसंहिता ७।१।५।१)

अर्थात् प्रथम यह जगत् जलमय रहा, तब जगत्

जल ही जल देख पड़ता था। प्रजापति वायु बन उसमें घूमने लगे। उन्होंने इसे देख और वराह ही आहरण किया था।

"रात्रौ चैकार्णवे ब्रह्मा नष्टे स्थावरजङ्गमे॥
सुष्वापाम्भसि यस्तस्मात् नारायण इति स्मृतः।
शर्वर्यन्ते प्रबुद्धो वै दृष्ट्वा शून्यं चराचरम्॥
स्रष्टुं तदा मतिं चक्रे ब्रह्मा ब्रह्मविदांवरः।
उदकेराप्लुतां क्ष्मां तां समादाय सनातनः॥
पूर्ववत् स्थापयामास वाराहं रूपमाश्रितः।"

(लिङ्गपुराण पूर्वभाग ४।५८-६०)

लिङ्गपुराणमें लिखते,—रात्रिको एकार्णवमें स्थावर जङ्गम समस्त नष्ट हो जानेसे ब्रह्मा जलपर सोते, इसीसे नारायण कहाते हैं। ब्रह्मविदोंमें श्रेष्ठ ब्रह्माने रात्रि बीतनेपर जागरित हो और चराचरको शून्य पा सृष्टि रचनेकी इच्छा की। फिर उन्होंने आदि-वराहमूर्ति धारणकर जलप्लावित पृथिवीको उठा पूर्ववत् रख दिया।

ब्रह्माण्डपुराण (६।१-११)में भी लिखा कि, पहले सकल स्थान जलमें लय हो गया था। पीछे पृथिवी बनी और फिर देवताओंके साथ स्वयम्भ ब्रह्माने भी जन्म लिया। उन्होंने ही वराहमूर्ति धारणकर पृथिवीको जलमें डूबनेसे बचाया।

इस प्रकार मतभेद पड़नेका कारण है। आज भी विष्णुको ही नारायण कहा जाता, किन्तु वास्तविक देखा ठीक नहीं बैठता। मनुसंहितामें नारायण शब्दकी व्युत्पत्ति इसतरह लिखी,—'नरनामक परमात्माके देहसे उत्पन्न होनेपर जलका नाम नारा पड़ा है। यही जल प्रलयकालमें परमात्माका अयन अर्थात् स्थान होता, इसीसे उन्हें नारायण कहते हैं। सृष्टिके समय जलमें रहनेसे ब्रह्मा ही प्रकृत नारायण ठहरते हैं। (मनुसंहिता १।९—१२)

आदिवाराह (सं० त्रि०) आदिवराह सम्बन्धीय।

आदिविद्वस् (सं० पु०) आदिभूतो विद्वान् निखिलसम्प्रदायप्रवर्तकात्। कपिल। सकल सम्प्रदायके प्रवर्तक होने और उपासना द्वारा जगत्कर्ताको सिद्ध करनेसे कपिल आदिविद्वान् कहे जाते हैं।

आदिविपुला (सं० स्त्री०) छन्दो विशेष। यह एक प्रकारकी आर्या होती और पहले दलके प्रथम तीन गणमें अपूर्ण पाद रखती है।

आदिविपुलाजघनचपला (सं० स्त्री०) छन्दो विशेष। यह एक प्रकारकी आर्या होती और प्रथम पादके तीन गणमें अपूर्ण पाद एवं द्वितीय दलमें दूसरा तथा चौथा गण जगण रखती है।

आदिवृक्ष (सं० पु०) अश्मन्तक वृक्ष, एक पेड़।

आदिश् (वै० स्त्री०) १ अभिप्राय, इरादा। २ प्रयुक्ति, तदबीर। ३ वर्णना, कैफ़ियत। ४ प्रदेश, जगह। ५ बलि विशेष।

आदिशक्ति (सं० स्त्री०) आदिभूता शक्तिः। १ परमेश्वरकी मायारूप शक्ति। २ देवीमूर्ति विशेष।

माया देखो।

आदिशरीर (सं० क्ली०) आदि आदिभूतं शरीरम्, शाक० तत्। १ भोगके निमित्त परमेश्वर-सृष्ट आद्य लिङ्गाख्य शरीर। आदिकारणात् परं जातं सूक्ष्मं शरीरम्। २ अविद्याख्य सूक्ष्म शरीर। वेदान्तके मतमें कारण, सूक्ष्म एवं स्थूल भेदसे शरीर तीन प्रकारका होता है।

आदिशूर—गौड़ एवं वङ्गमें ब्राह्मण्य धर्मके प्रतिष्ठाता पराक्रान्त नृपति। बंगला कुलपञ्जिका नामक विभिन्न जातीय समाजके इतिहाससे आभास मिलता, कि बौद्धधर्मका प्रभाव उड़ा वैदिक धर्म चलानेके लिये जिस वंशने सर्वप्रथम उपयुक्त आयोजन लगाया, उसी वंशके प्रथम व्यक्तिका आदिशूर नाम प्रसिद्ध था। ६५४ शकाब्दको इन्होंने ही साग्निक ब्राह्मण बुला प्रथम अपने देशमें बसाये। तत्पर तद्वंशीय आदित्यशूर भी किसी किसी उत्तरराढ़ीय-कुलपञ्जीमें आदिशूर नामसे प्रसिद्ध हुए थे। पीछे गौड़ाधिप बल्लालसेनके पिता विजयसेन अपने गौड़ाधिकारमें वैदिक-धर्मको प्रतिष्ठाकर आदिशूर कहाये। शूर और सेनवंश देखो।

आदिश्य (सं० अव्य०) आ-दिश्-ल्यप्। अनुशासन देके, हुक्म लगाकर।

आदिश्यमान, आदिष्ट देखो।

आदिष्ट (सं० क्ली०) आ-दिश् भावे क्त। १ आदेश, हुक्म। २ उपदेश, नसीहत। ३ उच्छिष्ट भोजनका

हुद्रांश, खायी हुई चीज़का टुकड़ा। (त्रि०) कर्मणि क्त। ४ उपदिष्ट, नसीहत पाये हुआ। ५ व्याकरण-प्रसिद्ध स्थानी जात। जिस वर्णका किसीके स्थानमें आदेश होता, वह आदिष्ट कहाता है। जैसे इक्के स्थानमें आदेश होनेसे यण् (यवरल)को आदिष्ट कहते हैं। ६ आज्ञप्त, हुक्म पाया हुआ।

आदिष्टिन् (सं० पु०) आदिष्टं आदेशो व्रतादेशोऽस्त्यस्य, इनि। १ व्रतादेशयुक्त ब्रह्मचारी। २ अनुतापदग्ध पुरुष, पशेमान् शख्स। (त्रि०) आदिष्टमनेन, इष्टादि० इनि। ३ आदेशकर्ता, हुक्म देनेवाला। (पु०) आदिष्टी। (स्त्री०) आदिष्टिनी।

आदिसर्ग (सं० पु०) आदिः आदिभूतः सर्गः, शाक० तत् कर्मधा० वा। प्राकृत प्रलयके बाद प्रथम सृष्टि, कुदरती क़यामतके पीछे पहली पैदायश।

आदी (अ० वि०) १ आदत रखनेवाला, अभ्यस्त, जो किसी बातकी महारत रखता हो। (हिं० स्त्री०) २ अदरक।

आदीचक (हिं० पु०) आर्द्रक विशेष, किसी क़िस्मकी अदरक। इसकी तरकारी बनती है।

आदीनव (सं० पु०) आ-दी भावे क्त, आदीनस्य वानं प्राप्तिः, बाहु० क। १ दोष, बुराई। २ क्लेश, तकलीफ़। ३ बाधाजनक पुरुष, तकलीफ़ पहुंचानेवाला शख्स। (त्रि०) कर्मणि क्त। आदितश्च। पा ७।२।४५। ४ दुर्दम, ऐबी। ५ क्लेशयुक्त, तकलीफ़ उठानेवाला।

आदीपक (सं० त्रि०) आदीपयति अन्यस्य गृहमग्निना, आ-दीप-णिच्-ण्वुल्, णिच् लोपः। १ अन्यके गृहमें अग्नि लगानेवाला, जो दूसरेका मकान् जला देता हो। २ उद्दीपक, जला डालनेवाला। ३ प्रकाशक, रोशनी देनेवाला।

आदीपन (सं० क्ली०) आ-दीप्-णिच्-ल्युट्, णिच् लोपः। १ अन्यके गृहमें अग्नि लगानेका कर्म, आतिशज़नी। २ द्रव्य विशेषसे उत्सवके समय गृह पोतनेका काम, लिपायी पोतायी।

आदीपित (सं० त्रि०) आ-दीप्-णिच्-क्त इट्, णिच् लोपः। उद्दीपित, प्रकाशित, लीपा-पोता, चमकाया हुआ।

आदीप्त (सं० त्रि०) जलाया या जलता हुआ, जो भभक रहा हो।

आदृरि (वै० त्रि०) आ-दृ अन्तर्भूतण्यर्थे किं। १ विदारणकर्ता, कुचल डालनेवाला। २ सचेत, होशियार।

आदृत (सं० त्रि०) आ-दृ कर्मणि क्त। १ सम्मानित, पूजित, इज़्ज़तदार। कर्तरि क्त। २ सोत्साह, अत्यासक्त, हौसलेमन्द, मेहनती। ३ आदर करनेवाला, ख़ातिरदार। (क्ली०) भावे क्त। ४ आदर, ख़ातिर, इज़्ज़त।

आदृत्य (सं० त्रि०) आद्रियते, आ-दृ-क्यप्। एतिस्तुशास्वृदृजुषः क्यप्। पा ३।१।१०९। १ आदरणीय, ख़ातिर किये जाने क़ाबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ आदर करके, ख़ातिरदारीके साथ।

आदृष्टि (सं० स्त्री०) आ ईषत् दृष्टिः, प्रादि० समा०। त्रिभाग-सङ्कुचित दृष्टि, उपान्त सम्मीलितनेत्र, बारह आने मुंदी हुई नज़र। चक्षुके दोनो कोण संलग्न और मध्यस्थल अल्प खुला रहनेको आदृष्टि कहते हैं।

आदे—बम्बई प्रान्तके रत्नगिरि ज़िलेका एक ग्राम। यह केलसीसे दक्षिण डेढ़ कोस एक छोटी और गहरी खाड़ीपर बसा है। सन् १८१८ ई०को बन्दरगाह रहा, अन्नादिका थोड़ा व्यवसाय चलता था। इसमें परशुरामका मन्दिर बना है।

आदेय (सं० त्रि०) आदीयते, आ-दा-यत्। ग्राह्य, लेने क़ाबिल।

आदेयकर्मन् (सं० क्ली०) जैनमतसे—वाक्सिद्धि देनेवाला कर्म,जिस कामसे आदमीकी बात ठीक निकले।

जैनशास्त्रानुसार जीवोंको इस संसारमें भ्रमण करानेवाले ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अन्तराय, आयु, नाम, वेदनीय और गोत्र नामके आठ कर्म हैं उनके उत्तरोत्तर बहुतसे भेद हैं। उनमेंसे नाम कर्मकी जो गति आदि ४२ प्रकृतियां हैं उन्हींकी ३८वी प्रकृति आदेय नामकी प्रकृति है इसके उदयसे जीवका प्रभासहित शरीर होता।

आदेवक (सं० त्रि०) आदीव्यति, आ-दिव-ण्वुल्। द्यूतकारक, क़िमारबाज़, जुवा खेलनेवाला, खेलाड़ी।

आदेवन (सं० क्ली०) आ-दिव भावे ल्युट्। १ द्यूत, पासेका खेल, क़िमारबाज़ी, जुवा। करणे ल्युट्। २ द्यूतसाधन पासा, जुवा खेलनेकी कौड़ी। आधारे ल्युट्। ३ बिसात, जिस चीज़पे पासा फेंका जाये। ४ द्यूत खेलनेका स्थान, जुवाड़खाना।

आदेश (सं० पु०) आ-दिश् भावे घञ्। १ उपदेश, नसीहत। २ आज्ञा, हुक्म। ३ लोप, तख़रीब। 'लोपोप्याऽदेश उच्यते।' (व्याकरणकारिका) ३ व्याकरण-प्रसिद्ध किसी वर्णके स्थानमें अन्य वर्णको उत्पत्ति। स्थानिवदा देशोऽनल्विधौ। पा १।१।५६। आ-दिश् कर्मणि घञ्। ४ समाचार, खबर। ५ भविष्यत्‌वाणी, पेशीनगोयी। ६ प्रणाम, बन्दगी।

"आगमोऽनुपघाती यः प्रकृतेः प्रत्ययस्य वा।
तयोर्यं उपघाती स आदेशः परिकीर्तितः।" (व्या० का०)

व्याकरणमें प्रकृति वा प्रत्यय इन दोनोंको जो नहीं उठाता, उसे आगम कहा जाता है। फिर इन्हीं दोनोंके नाश करनेवालेका नाम आदेश है।

आदेशक (सं० त्रि०) आदिशति, आ-दिश-ण्वुल्। आदेश देनेवाला, जो हुक्म लगाता हो।

आदेशकारिन् (सं० त्रि०) वचनग्राहिन्, सुश्रुषु, ताबेदार, हुक्म बजा लानेवाला।

आदेशन (सं० क्ली०) आ-दिश भावे ल्युट्। आदेश-चेष्टित, हुक्मरानी, हुकूमत, हुक्म देनेका काम।

आदेशिन् (सं० त्रि०) आदिशति, आ-दिश-णिनि। शासक, हाकिम, हुक्म देनेवाला।

आदेशी (सं० पु०) १ आज्ञापक, हाकिम। २ ज्योतिषी, नजूमी।

आदेश्य (सं० त्रि०) आदिश्यते, आ-दिश कर्मणि ण्यत्। उपदेश्य, आज्ञाप्य, कथनीय, समझाया वा सुनाया जानेवाला।

आदेष्टा, आदेष्टृ देखो।

आदेष्टृ (सं० पु०) आ-दिश-तृच्। १ आज्ञापक, हुक्मरान्। २ यजमान, पुरोहितसे काम लेनेवाला।

आद्य (सं० त्रि०) आदौ भवम्, आदि-यत्। [illegible] यत्। पा ४।३।५४। १ आदिमें उत्पन्न हुआ, जो शुरूसे हो। २ प्रधान, बड़ा। ३ आरम्भ हो जानेवाला। ४ पूर्वगामी, पहले आनेवाला। (पु०) ५ अङ्गुष्ठ, अंगूठा। (क्ली०) ६ आरम्भ, आग़ाज़। अद्यते अद कर्मणि यत्। ७ भक्षणीय द्रव्य, खानेकी चीज़। ८ धान्य, अनाज।

आद्यधातु (सं० पु०) शरीरस्थ रसधातु, कैलूस। यह भोजनसे पेटमें बनता और पित्तके सहारे रक्तमें परिणत होता है।

आद्यपुष्प (सं० क्ली०) त्रिभागकुङ्कुमोपेत क्षीवेरचन्दन।

आद्यमाषक (सं० पु०) आद्यः माषकः, कर्मधा०। पञ्च गुञ्जा परिमित माषक मान, पांच रत्तीका मासा।

आद्यमाषा (सं० स्त्री०) माषपर्णीलता, रामकुरथी।

आद्यबीज (सं० पु०) कर्मधा०। १ मूलकारण, बुनियादी सबब। २ ईश्वर। ३ सांख्यप्रसिद्ध प्रधान।

आद्यश्राद्ध (सं० क्ली०) कर्मधा०। मृत्युके बाद, अशौचान्तका पहला श्राद्ध। यह ब्राह्मणके मरनेके ग्यारहवें, क्षत्रियके तेरहवें, वैश्यके षोड़शहवें और शूद्रके एकतिसवें दिन होता है। श्राद्ध देखो।

आद्या (सं० स्त्री०) आदौ भवा, आदि-यत्-टाप्। १ तन्त्रोक्त दुर्गा। सत्ययुगमें सुन्दरी, त्रेतामें भुवनेश्वरी, द्वापरमें तारिणी और कलिमें काली आद्या कहाती हैं। (तन्त्रसा०) २ भूमि, ज़मीन्।

आद्याकाली (सं० स्त्री०) नित्यसमा० संज्ञात्वात् पुंवद्भावः। तन्त्रोक्त प्रथमा प्रकृति। सकलका आदि-रूप होने और कालको निगल जानेसे भगवतीका यह नाम पड़ा है।

आद्यादि (सं० पु०) आदिरिति आदियस्य, बहुव्री०। तसि प्रकरणे आद्यादिभ्य उपसंख्यानम्। (काशिका) पञ्चमीके स्थानमें तसि प्रभृति प्रत्ययके निमित्त काशिका और वार्तिकमें कहा हुआ शब्द गणविशेष। इसमें आदि, मध्य, अन्त, पृष्ठ, पार्श्व प्रभृति शब्द पठित हैं।

आद्युदात्त (सं० त्रि०) आदिः उदात्तो यस्य। आदिमें उदात्त स्वर रखनेवाला। यह शब्द प्रत्ययादिका विशेषण है।

आद्यून (सं० त्रि०) आ-दिव-क्त-ऊठ् नत्वञ्च। ओदः गुड्ढानुमासिके च। पा ६।४।१९। १ औदरिक, पेटू, खाऊ।

ज्यादा खा डालनेवाला। २ आरम्भशून्य, आग़ाज़ न रखनेवाला।

आद्योत (सं० पु०) प्रकाश, चमत्कार, रोशनी, उजाला।

आद्योपान्त (सं० पु०) आद्य-मवधीकृत्य अन्त: पर्यन्त:, शाक० तत्। १ प्रथमावधि शेषपर्यन्त, शुरूसे अखीरतक, सब, बिलकुल। यह शब्द हिन्दीमें क्रिया-विशेषणकी तरह व्यवहृत होता है।

आद्रा (हिं०) आर्द्रा देखो।

आद्रिसार (सं० त्रि०) लौहनिर्मित, आहनी, लोहेसे बना हुआ।

आद्वादशम् (वै० अव्य०) द्वादश पर्यन्त, बारहतक।

आध (हिं० वि०) अर्ध, आधा। यह प्राय: यौगिक शब्दोंके आदिमें आता है। जैसे—आधमन, आधसेर।

आधमन (सं० क्ली०) आ-धा-कमनम्। १ बन्धकदान, रेहन, अमानत, धरोहड़। २ स्फीति, सूजन, मोटायी।

आधमर्ण्य (सं० क्ली०) आधमर्णस्य भाव: कर्म वा, ष्यञ्। ऋणीका धर्म, क़र्ज़दारी, मक़रूज़ी।

आधर्मिक (सं० त्रि०) अधर्मं चरति, ठक्। अधर्मशील, फ़ासिक़, सिया-बातिन्, बेईमान्।

आधर्ष (सं० पु०) आ-धृष भावे घञ्। आधर्षण देखो।

आधर्षण (सं० क्ली०) आ-धृष भावे ल्युट्। १ अपराध-स्थापन, जुर्म लगानेका काम। २ दण्ड, सज़ा। ३ तिरस्कार, बलहेतु पीड़न, झिड़की, छेड़-छाड़।

आधर्षित (सं० त्रि०) आ-धृष-क्त इट्, क्लिवा भाव:। निष्ठा शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृष:। पा १।२।१९। १ अवमानित, सज़ायाफ़्ता। २ तिरस्कृत, झिड़का हुआ। ३ बलद्वारा पराजित, चोट खाया हुआ।

आधर्ष्य (सं० त्रि०) आधृष्यते, आ-धृष-ण्यत्। १ अवमाननीय, झिड़का जाने क़ाबिल। २ बलहेतु पीड़नीय, ज़ोरसे पीटा जानेवाला। ३ दुर्बल, लाग़र। (क्ली०) भावे ण्यत्। ४ दुर्बलता, कमज़ोरी।

आधसिंह—भूपतिविशेष, एक राजा। यह बाप्पावंशीय रावल भरतरीजीके पुत्र रहे। इनकी राजधानी चितौर थी।

आधा (हिं० वि०) अर्ध, निस्फ़, नीम। (स्त्री०) आधी।

आधाझारा (हिं० पु०) अपामार्ग, चिचड़ी।

आधान (सं० क्ली०) १ संस्कार-पूर्वक अग्नि प्रभृतिका स्थापन, रखनेका काम। २ ग्रहण, पकड़। ३ प्राप्ति, हासिल। ४ धारण, गुञ्जायश, समायी। ५ अग्न्याधान। ६ गर्भाधान। ७ बन्धकदान, निवेशन, रेहन, धरोहड़। ८ प्रतिभू, ज़ामिनी। ९ नियुक्ति, मनसूबियत। १० आधार, किसी चीज़के रहने या रखनेकी जगह। ११ पात्र, बरतन। १२ वृत्त, घेरा।

आधानवती (सं० स्त्री०) गर्भवती, जिस औरतके हमल रहे।

आधानिक (सं० पु०) आधानं गर्भाधानप्रयोजनमस्य, ठक्। गर्भाधानके निमित्त वेदविहित गर्भपात्रका संस्कार, गर्भधारणसंस्कार।

आधाय (सं० त्रि०) आदधाति, आ-धा-ण। १ आधानकर्ता, रखनेवाला। (पु०) भावे घञ्। २ आधान, रखनेका काम। (अव्य०) ल्यप्। ३ आधान-पूर्वक, रखके।

आधायक (सं० त्रि०) आधानकर्ता, रख देनेवाला। (स्त्री०) आधायिका।

आधार (सं० पु०) आध्रियते परस्परया क्रिया यत्र, आ-धृ अधिकरणे घञ्। आधारोऽधिकरणम्। पा १।४।४५। १ अधिकरण, सहारा। २ आश्रय, मदद। ३ शस्य सम्पादनार्थ जलरोधका बन्धन, पानीका बांध। ४ वृक्षके जल देनेका स्थान, थाला। ५ पात्र, बरतन। ६ नहर। ७ सम्बन्ध, रिश्ता। ८ व्याकरण-प्रसिद्ध कारक। व्याकरणमें आधार तीन प्रकारका माना गया है—औपश्लेषिक, वैषयिक और अभिव्यापक। जैसे—चबूतरेपर बैठा है। इस स्थानमें देवदत्तादि किसी कर्तृपदका अध्याहार होता और उसीसे 'बैठा है' क्रियाका आधार चबूतरा ठहरता है। इस लिये चबूतरा ही कर्तृद्वारा क्रियाका आश्रय-रूप औपश्लेषिक (एकदेश सम्बन्धयुक्त) आधार है। 'लोटेमें डालता है' वाक्यमें दुग्धादि पदका अध्याहार और उससे 'डालता है' क्रियाका आश्रय लोटा होता है। अतएव यह कर्मद्वारा क्रियाश्र-

रूप औपश्लेषिक आधार है। 'मोक्षकी इच्छा होती है' कहनेसे मोक्ष विषयमें इच्छा रहनेका अर्थ निकलता, इसीसे यह वैषयिक आधार है। 'परमात्मा सकल स्थानमें है' बोलनेपर आत्मा कर्तासे 'है' क्रियाका आधार सकल स्थान होता है। इसलिये यह अभिव्यापक आधार है।

आधारक (सं॰ पु॰) भित्तिमूल, नीव।

आधारण (सं॰ क्लो॰) वहनकार्य, बारबरदारी, सहारा देनेका काम।

आधारशक्ति (सं॰ स्त्री॰) आधारस्य शक्तिः, ६-तत्, आधार एव शक्तिः, कर्मधा॰ वा। १ सकल आधारकी शक्तिका रूप, माया, प्रकृति, कुदरत। २ चन्द्रकी अमा नाम्नी महाकला। 'आधारशक्तिरूपा अमानाम्नी महाकला मोक्ता।' (स्मार्त रघुनन्दन) ३ तन्त्रोक्त मूलाधारस्थ कुण्डलिनी परमदेवता।

आधाराधेयभाव (सं॰ पु॰) आधारस्य आधेयस्य ती तयोर्भावः, ६-तत्। आधार और आधेयका सम्बन्धविशेष। जैसे घट और भूतल। यहां भूतल आधार और घट आधेय होनेसे दोनोका सम्बन्ध आधाराधेय भाव कहाता है।

आधारिन् (सं॰ त्रि॰) आश्रयस्थित, सहारा पकड़नेवाला। (पु॰) आधारी। (स्त्री॰) आधारिणी। यह शब्द प्रायः समासान्तमें आता है—जैसे, दुग्धाधारी।

आधारी (सं॰ पु॰) १ आधारस्थित, सहारा पकड़नेवाला। (हिं॰ स्त्री॰) २ सहारा लेनेकी लकड़ी। साधु प्रायः इसके सहारे बैठा उठा करते हैं।

आधार्य (सं॰ त्रि॰) स्थापनीय, रखा जानेवाला।

आधार्याधारसम्बन्ध, आधाराधेयभाव देखो।

आधावमान (सं॰ त्रि॰) शीघ्रगामी, दौड़ या झपट पड़नेवाला।

आधासीसी (हिं॰ स्त्री॰) अर्धकपाली, आधेसरका दर्द।

आधि (सं॰ पु॰) आधीयते अधिक्रियते शोकादितो मनोऽनेन, आ-धा करणे कि। १ मानस दुःखकर व्याधिविशेष, दिली तकलीफ। २ दुर्भाग्य, कमबख्ती। ३ धर्म वा कर्तव्यका विचार, मजहब या फर्जकी फिक्र। ४ आशा, तमन्ना। ५ अपने कुलकी जीविकाके निमित्त उत्सुक मनुष्य, अपने खान्दानकी रोजीके लिये हौसला रखनेवाला शख्स।

आ ईषत् धीयते अधिक्रियते उत्तमर्णत्वेनात्र असौ वा, आ-धा अधिकरणे कर्मे वा कि। ६ अधमर्णकर्तृक उत्तमर्णके निकट रक्षित बन्धक द्रव्य, रेहन या अमानतकी चीज। ७ बन्धक, रेहन, अमानत। ८ अधिष्ठान, रखनेकी जगह। ९ आधान, जगहकी बन्दिश। १० लक्षण, निर्देश, सिफत, खासियत।

आधिक, आधिक देखो।

आधिकरणिक (सं॰ पु॰) अधिकरणे विचारस्थाने नियुक्तः, ठक्। विचारस्थानमें नियुक्त प्राड्विवेकादि, अदालतमें इनसाफ करनेवाले मुन्सिफ वगैरह।

आधिकारण्य (सं॰ क्लो॰) अधिकार, इख्तियार।

आधिकारिक (सं॰ त्रि॰) १ प्रधान, श्रेष्ठ, आला, इख्तियारवाले हाकिम या शैके मुताल्लिक। २ पदसम्बन्धी, हुजूरी, मनसबी, हाकिमाना।

आधिक्य (सं॰ क्लो॰) अधिकस्य भावः, ष्यञ्। १ अधिकता, बहुतायत, ज्यादती। २ आतिशय्य, बड़ाई।

आधिज (सं॰ त्रि॰) पीड़ादिसे उत्पन्न, दर्द वगैरहसे पैदा होनेवाला।

आधिज्ञ (सं॰ त्रि॰) आधिं मनःपीड़ां जानाति, अधि-ज्ञा-क। १ व्यथाका अनुभावक, मनोदुःखयुक्त, व्यथित, मुसीबतजदा, दर्दसे तकलीफ उठानेवाला। २ वक्र, टेढ़ा।

आधित्व (सं॰ क्लो॰) बन्धकका वृत्तान्त, रेहनका हाल, गहने रखनेकी बात।

आधित्वोपाधि (सं॰ पु॰) बन्धक रखनेका प्रयोजन, रेहनकी शर्त।

आधिदैविक (सं॰ त्रि॰) अधिदेवे भवः देवान् वातादीन् अधिकृत्य प्रवृत्तं वा, ठञ्, अनुशतिकादि॰ द्विपदवृद्धिः। १ देवताधिकृत, देवताधिकारमें प्रवृत्त। इस अर्थमें यह शब्द शास्त्रादिका विशेषण है। २ वायुप्रभृतिजन्य, हवा वगैरहसे पैदा हुआ। यहां 'आधिदैविक' दुःखादिका विशेषण है। वैद्यकमतसे दुःख सात प्रकारके होते, जिनमें काल, दैव एवं स्वभावके बलसे उत्पन्न होनेवाले आधिदैविक हैं। अधिक

शीत, ग्रीष्म वा वृष्टि होनेको कालबलजात, बिजली गिरने तथा भूतादि चढ़नेको दैवबलजात और बुभुक्षा-तृष्णादि लगनेको स्वभावबलजात कहते हैं।

आधिपत्य (सं० क्ली०) अधिपतेर्भावः कर्म वा, ब्राह्मणादित्वात् ष्यञ्। स्वामित्व, सरदारी, अज़मत।

आधिबन्ध (सं० पु०) आधिः प्रजानां कथं पालनं स्यादिति चिन्ता एव बन्धः। बहुप्रजारक्षणार्थं चिन्ता, बहुतसी रैयतकी हिफ़ाज़त रखनेका ख़याल।

आधिभोग (सं० पु०) आधेर्बन्धकद्रव्यस्य भोगः, ६-तत्। बन्धक-द्रव्यका भोग, रेहनकी चीज़का काममें लाना। आधिर्मनोव्यथाया भोगः। २ मनो-व्यथाका अनुभवरूप भोग, दिली तकलीफ़का उठाना।

आधिभौति (सं० त्रि०) भूतानि व्याघ्रसर्पादीन्यधि-कृत्य जातम्, अधिभूत-ठञ् छिपदवृत्तिः। १ व्याघ्र-सर्पादिजनित, शेर और वग़ैरहसे मिला हुआ। २ क्षित्यादिसम्भूत, ज़मीन् वग़ैरहसे पैदा हुआ। ३ जीवसम्बन्धीय, जानवरके मुताल्लिक़। वैद्यकमतमें रुधिर, वीर्य, भोजन एवं विहारके विकारसे उत्पन्न व्याधिको आधिभौतिक ही कहते हैं।

आधिभौतिक, (सं० त्रि०) आधिभौति एव स्वार्थे क। आधिभौति देखो।

आधिमन्यव (सं० पु०) अधिमन्यवे हितम्, अण्। ज्वरका सन्ताप, बुख़ारकी जलन।

आधिम्लान (सं० त्रि०) चिन्तासे विशीर्ण, फ़िक्रसे मुरझाया हुआ।

आधिरथि (सं० पु०) अधिरथः धृतराष्ट्र-सारथिः तस्यायम्, इञ्। सूतपुत्र कर्ण, धृतराष्ट्र-सारथि अधिरथके लड़के।

आधिराज्य (सं० क्ली०) अधिराजस्य भावः कर्म वा ष्यञ्। आधिपत्य, सरदारी, ताजवरी।

आधिवेदनिक (सं० क्ली०) अधिवेदनाय अधिक-विवाहाय हितम् ठक्, तत्र काले दत्तं ठञ् वा। द्वितीय विवाहके समय प्रथम स्त्रीके सन्तोषार्थ दिया जानेवाला धन, जो दौलत दूसरी शादीके वक़्त पहली औरतको दी जाती हो।

आधिमर्मी (सं० स्त्री०) मर्मभेद, किसी किस्मकी पाक़ी या छेनी।

आधिस्तेन (सं० पु०) आधेर्बन्धभोगात् स्तेन इव। गोपनमें रक्षित धन बलपूर्वक भोग करनेवाला, जो आदमी ज़ोरावरीसे छिपाकर रेहन रखी हुई चीज़को काममें लाता हो।

आधी (वै० स्त्री०) चिन्ता, अभिलाष, शोचना, ख़याल, ख़्वाहिश, फ़िक्र। (हिं०) आधा देखो।

आधीकरण (सं० क्ली०) अनाधेः आधेः करणम्, आधि-च्वि-कृ-ल्युट्। १ ऋण लेनेको किसी वस्तुका बन्धक रखना, क़र्ज़ पानेके लिये कोई चीज़ वग़ैरह रखनेका काम।

आधीकृत (सं० त्रि०) आधि-च्वि-कृ-क्त। बन्धक रखा हुआ, जो रेहन कर दिया गया हो।

आधीकृत्य (सं० अव्य०) बन्धक रखकर, रेहन करके।

आधीत (सं० त्रि०) १ विचारा हुआ, जो ख़यालमें लाया गया हो। (क्ली०) २ विचारका प्रयोजन वा विषय, इरादा या उम्मीद की हुई बात।

आधीन (हिं०) अधीन देखो।

आधीनता (हिं०) अधीनता देखो।

आधीयमान (सं० त्रि०) बन्धक रखा जानेवाला, जो रेहन किया जाता हो।

आधीयमानचित्त (सं० त्रि०) मनको लगा देनेवाला, जो दिलको किसी बातपर झुका देता हो।

आधीरात (हिं० स्त्री०) अर्धरात्रि, रातके बारह बजनेका वक़्त।

आधुत (सं० त्रि०) आ-धु-क्त। १ चालित, हटाया हुआ। २ ईषत् कम्पित, जो कुछ हिल गया हो।

आधुनिक (सं० त्रि०) अधुना भवम्, ठञ्। सम्प्रति-जात, अर्वाचीन, अप्राचीन, नया, हालमें पैदा होनेवाला।

आधूत, आधुत देखो।

आधृर्य (सं० स्त्री०) निर्बलता, कमज़ोरी।

आधृत (सं० त्रि०) सम्मिलित, प्रोत्साहित, समाया हुआ, जो सहारा पा चुका हो।

आधृष्ट (सं० त्रि०) निवारित, विजित, जो रोक या जीत लिया गया हो।

आधृष्टि (सं० स्त्री०) आ-धृष भावे क्तिन्। १ परिभव, पराजय, शिकस्त, हार। २ आक्रमणकार्य, हमला मारनेका काम।

आधेक (हिं० वि०) अर्धके समान, आधेके बराबर, जो आधेसे ज्यादा न हो।

आधेनव (सं० क्ली०) गोका अभाव, गायोंकी अदममौजूदगी।

आधेय (सं० स्त्री०) आधीयते, आ-धिङ् कर्मणि यत्। १ उत्पाद्य, बनाया या किया जानेवाला। २ बन्धक रखा जानेवाला, जिसे रेहन किया जाये। ३ अमानत रखा जानेवाला, जिसे धरोहड़के तौरपर रखा जाये। ४ रखा हुआ, जो जगह पा चुका हो। ५ दिया जानेवाला, जो दे डाला गया हो। (क्ली०) भावे यत्। ६ आधान, रखनेका काम। ७ गुणविशेष। इसका स्वभाव बदल और उसमें अन्य गुण लगा दिया जाता है। ८ जलाकर रक्तवर्ण किया हुआ घटादि, जो घड़ा जलाकर सुर्ख बना दिया जाता हो।

"आधेयशक्रियाजश्च सोऽसत्प्रकृतिर्गुणः।" (व्याकरणकारिका)

(पु०) ९ विधिक्रमसे स्थापनीय वह्नि। १० अधिकरणमें अभिनिवेशनीय द्रव्य, सहारा पकड़नेवाली चीज।

आधोरण (सं० पु०) आ-धोर गतिचातुर्ये लुच्। हस्ती चलानेमें निपुण हस्तिपक, होशियार महावत।

आध्मात (सं० त्रि०) आ-ध्मा-क्त। १ शब्दित, बजाया हुआ, जो आवाज दे रहा हो। २ दग्ध, जला हुआ। ३ वातदोष-जात उदरस्फीतता-सम्पादक रोगयुक्त, फूला हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ४ आघ्रात, सूजन। ५ शब्द, आवाज। ६ अग्निसंयोग, आगकी चपेट। (पु०) ७ वायुरोगभेद, एक बीमारी। इसमें पेट फूलता और बोला करता है। ८ समर, लड़ायी।

आध्मान (सं० पु०) आ-ध्मा आधारे ल्युट्। १ वातव्याधि विशेष, एक बीमारी। (क्ली०) भावे लुग्रट्। २ उदरस्फीतता, पेटका फूलना। साटोप एवं अति उग्र रोगसे पेट फूलनेको आध्मान कहते हैं। यह रोग घोर और वातके निरोधसे उत्पन्न होता है। आध्मानमें पहले लङ्घन, पीछे दीपन एवं पाचन तथा फलवर्तिक्रिया, वस्तिकर्म और शोधन करना चाहिये। (सुश्रुत) ३ फूंक, हवाका भरना। ४ दर्प, विकत्थन, शेखी, डींग। ५ धौंकनी।

आध्मानी (सं० स्त्री०) आ-ध्मा करणे लुग्रट् ङीप्। नलिका नामक वणिग्द्रव्य, अम्बारी। यह खुशबूदार होती है।

आध्मापन (सं० क्ली०) आ-ध्मा-णिच् करणे ल्युट्, णिच् लोपः। १ शब्दनिष्पादन, आवाज़का निकालना। २ शरीरमें विद्ध बाणादिके उद्धारका उपाय विशेष, जिस्ममें चुभे हुये तीर वग़ैरह निकालनेकी एक तरकीब।

आध्यक्ष्य (सं० क्ली०) अध्यक्षस्य भावः, ष्यञ्। अध्यक्षता, एहतिमाम, निगहबानी।

आध्यशिख—स्थान विशेष, किसी जगहका नाम।

आध्या (सं० स्त्री०) आ-ध्यै भावे घञ्। १ चिन्तन, चिन्ता, फ़िक्रमन्दी, फ़िक्र। २ औत्सुक्यहेतु स्मरण, अफ़सोसके साथ यादगारी।

आध्यात्मिक (सं० त्रि०) आत्मानं मनः शरीरादिकमधिकृत्य भवः, ठञ्। १ स्वीय, अपना, ख़ास अपने मुताल्लिक़। २ ऐशो, परमात्मासे सम्बन्ध रखनेवाला। ३ आत्मसम्बन्धीय, रूहानी पाक-साफ़। (स्त्री०) आध्यात्मिकी।

आध्यान (सं० क्ली०) आ-ध्यै-लुग्रट्। १ चिन्ता, फ़िक्र। २ उत्कण्ठापूर्वक स्मरण, अफ़सोसके साथ यादगारी।

आध्यापक (सं० पु०) अध्यापक एव,स्वार्थे अण्। अध्यापक, गुरु, उस्ताद, मुरशद, पढ़ाने या सिखानेवाला।

आध्यायिक (सं० त्रि०) अधीयतेऽध्याया वेदस्तमधीते, ठञ्। १ अधीतवेद, जो वेद पढ़े हो। २ अध्ययनशील, पढ़ने-लिखनेवाला। (स्त्री०) आध्यायिकी।

आध्यासिक (सं० त्रि०) अध्यासेन कल्पितम्, ठक्। अयथार्थ, झूठा, माना हुआ। वेदान्तमतसे अध्यास द्वारा अयथार्थ वस्तुमें यथार्थज्ञान आध्यासिक कहाता है, जैसे—शुक्तिमें रजतादिकी कल्पना और परब्रह्ममें जगत्का आरोप।

आध्र (सं० पु०) आ-धृ-क। १ आधार, सहारा। (त्रि०) २ निर्बल, कमजोर, गरीब।

आध्वनिक (सं० त्रि) अध्वनि कुशलम्, ठक्। पथमें कुशल, पथका विषय भली भांति समझनेवाला, राहगीर, जो मुसाफिरोंका हाल अच्छीतरह जानता हो। (स्त्री०) आध्वनिकी।

आध्वरायण (सं० त्रि०) आध्वरो यज्ञाभिज्ञस्तस्य गोत्रापत्यम्, नड़ादि फक्। आध्वर वा अच्छीतरह यज्ञविषय समझनेवालेका पुत्र या कन्यारूप अपत्य, आध्वरके लड़के औलाद।

आध्वरिक (सं० पु०) अध्वरस्य व्याख्यानो ग्रन्थः, ठक्। १ अध्वरके व्याख्यानका ग्रन्थ। अध्वरं यज्ञं वेत्ति तत्प्रतिपादकग्रन्थमधीते वा। २ अध्वर-प्रतिपादक ग्रन्थका अध्ययनकर्ता। (त्रि०) ३ सोमयज्ञ-सम्बन्धीय।

आध्वर्यव (सं० त्रि०) अध्वर्य्योर्यजुर्वेदविद इदम्, अध्वर्यु-अञ्। १ अध्वर्यु-सम्बन्धीय। (क्ली०) २ अध्वर्यु पुरोहितका कर्मादि।

आन (सं० पु०) आनिति जीवत्यनेन, आ-अन करणे क्विप् आन् प्राणवायुः ततः अदूरभवादौ अण्। सुवस्त्वादिभ्योऽण्। पा ४।२।७८। १ अन्तर्मुखश्वास, मुंहके भीतरकी सांस। २ जीवनसाधन शरीर मध्यस्थित प्राणवायुका नासिका द्वारा वहिर्निःसारण-रूप उच्छ्वास। ३ वहिर्मुखश्वास। ४ मुख, नासिका, मुंह, नाक। ५ श्वास, श्वसित, सांस लेनेका काम।

(हिं० स्त्री०) ६ सीमा, हद। ७ शपथ, कसम। ८ दोहायी। ९ अन्दाज़, तरीक, ढङ्ग। १० क्षण, लमहा। ११ बनावट, ठसक। १२ लज्जा, शर्म। १३ भय, खौफ। १४ विचार, लिहाज। १५ प्रतिज्ञा, अहद। १६ हठ, जिद। (वि०) १७ अन्य, दूसरा।

आनक (सं० पु०) आनयति सोत्साहात् करोति, अन्-णिच्-ण्वुल्। १ पटह, नक्कारा। २ भेरी, ढोल। ३ मृदङ्ग, ढोलक। ४ शब्दयुक्त मेघ, गरजनेवाला बादल। 'आनकः पटहे भेर्यं अनन्मेघमृदङ्गयोः।' (हेम) (त्रि०) ५ उत्साहक, हौसलेबख्श।

आनकदुन्दुभि (सं० पु०) आनकः उत्साहकः दुन्दुभिः देववाद्यविशेषो यस्मै, बहुव्री०। १ वसुदेव। कृष्णके जन्म होनेपर देवताओंके साधुवादपूर्वक वाद्य बजानेसे वसुदेवका यह नाम पड़ा है। (हरिवंश)

आनकदुन्दुभी (सं० स्त्री०) वृहत् पटह, बड़ा नक्कारा।

आनकस्थलक (सं० त्रि०) आनकस्थल्यां भवः, अदूर-देशादौ वुञ्। धूमादिभ्यश्च। पा ४।२।१२७। आनकस्थलीके निकटस्थ, आनकस्थलीके पास।

आनकस्थली (सं० स्त्री०) आनकप्रधाना स्थली, शाक० तत्। आनकस्थली नामक एक जनपद, किसी मुल्कका नाम। (पा ४।२।१२७)

आनकामनि (सं० त्रि०) कर्णादि० फिञ्। आनकके निकटस्थ, जो आनकसे दूर न हो। यह शब्द जन-पदादिका विशेषण है।

आनक्य, चाणक्य देखो।

आनडुह (सं० त्रि०) अनडुह इदम्, अण्। १ वृष-सम्बन्धीय, बैलका। यह शब्द गोमय किंवा चर्म मांसादिका विशेषण है। (स्त्री०) अनडुही। (क्ली०) २ तीर्थविशेष। अनडुहतीर्थ सह्यपर्वतके निकट विद्यमान है। हरिवंशके ९५वें अध्यायमें इसका नामोल्लेख मिलता है। कृष्ण और बलराम इस तीर्थमें घूमने गये थे।

आनडुहक (सं० त्रि) अनडुहा कृतम्, संज्ञायां कुला-लादिभ्यो वुञ्। (पा ४।३।११८) वृषसम्बन्धीय, बैलका। यह शब्द गोमय, चर्म, मांसादिका विशेषण है।

अनडुहायन (सं० त्रि०) अनडुहो गोत्रापत्यं अश्वादि० फञ्। आनडुह्य-जात, आनडुह्यसे पैदा होनेवाला। अनडुहके पुत्र या कन्या रूप अपत्य।

आनडुह्य (सं० पु०) अनडुहो गोत्रापत्यम्, गर्गादि० यञ्। अनडुत् नामक मुनिके गोत्रापत्य।

आनडुह्यायनि (सं० त्रि०) चतुरर्थ्यां कर्णादि फिञ्। आनडुह्यके निकटस्थ देशादि।

आनत (सं० त्रि०) आ-नम-क्त। १ अधोमुख, विनय-हेतु नम्रीभूत, पतित, खूब झुका हुआ। (पु०) २ जिन-देव विशेष। कल्पभवमें यह एक वैमानिक नामक देवता माने गये हैं।

आन-तान (सं॰ स्त्री॰) १ अटपटांग, अंडबंड, इधर-उधर। २ मर्यादा, आबरू। ३ हठ, ज़िद।

आनति (सं॰ स्त्री॰) आनमति नम्रीभवत्यनया, आ-नम करणे क्तिन्। आनुगत्य जन्य सन्तोष, अधोमुखी भाव, नम्रता, झुकाव।

आनादयत् (सं॰ त्रि॰) बजवानेवाला, जो आवाज निकला रहा हो।

आनद्ध (सं॰ त्रि॰) आ-नह्-क्त। १ बद्ध, ग्रथित, बंधा या गुंथा हुआ। (क्लो॰) २ वेशभूषादि, पहनाव। ३ चर्म द्वारा बद्धमुख वाद्यादि, चमड़ेसे मढ़े हुये मुंहका बाजा। इसके मध्य बायां, तबला, ढोलक, पखावज आदि नृत्यगीतमें काम देता है, सङ्कीर्तनमें मृदङ्ग बजता है। ढक्का, ढोल, नक़ारा, तासा, दमामा प्रभृति वाद्य अन्नप्राशन विवाहादिमें व्यवहृत होता है। युद्धकालमें भी डङ्का, ढोल, तासा और दमामा बजाया जाता है। खञ्जनी, डमरु, गोपीयन्त्र, तम्बूर, हुडुक प्रभृति आनद्ध यन्त्र ग्राम्य हैं।

आनद्धवस्तिता (सं॰ स्त्री॰) मूत्रसङ्ग, हबसुलबौल, पेशाबका बन्धेज।

आनन (सं॰ क्लो॰) अनित्यनेन भक्षपानादि हेतुत्वात्, अन करणे ल्युट्। मुख, मुंह। "तदाननं मृत्सुरभि क्षितीश्वरः।" (रघुवंश ३।३) २ समस्त मस्तक, चेहरा। "कचित्पुमितानना।" (रघुवंश १।४१)

आनन-फानन (अ॰-फ़ा॰-वि॰) फौरन, जल्द, अतिशीघ्र, झटपट, बातकी बातमें।

आनना ((हिं॰ क्रि॰) आनयन करना, लिवालाना।

आननाब्ज (सं॰ क्लो॰) आनन-कमल, कमल-जैसा मुख।

आनन्तर्य (सं॰ क्लो॰) अनन्तरमेव, स्वार्थे ष्यञ्। १ अव्यवहित परिणाम, मुत्तसल-नज़दीक। अनन्तरस्य भावः। २ अव्यवधान, अनन्तरता, फ़राबत, नज़दीकी।

आनन्त्य (सं॰ त्रि॰) नास्ति अन्तः शेषो यस्य स एव, स्वार्थे ष्यञ्। १ अनन्त, असीम, अविनाशी, लाज़वाल, बेहद। अनन्तस्य भावः, ष्यञ्। २ सीमाशून्यत्व, बेपायानी, हदका न रहना। ३ स्वर्गादिराहित्य, चिरविख्याति, हयात-जाविदानी, बक़ा, कभी मिट न सकनेवाली हालत।

आनन्द (सं॰ पु॰) आ-नन्द-घञ्। १ हर्ष, सुख, आह्लाद, ख़ुशी, आराम। २ विष्णु। ३ विष्णुके एक गण। ४ शिव। ५ बलराम। ६ सूत्र-संग्रहीता बुद्धशाक्यमुनिके उत्साही अनुचर, प्रियशिष्य और भतीजेका नाम। ७ साठ संवत्सरके मध्य आनन्द नामक वर्ष विशेष। ज्योतिषके अनुसार इस संवत्सरमें शस्यकी खूब उत्पत्ति होती, किन्तु मूल्य वृद्धि रहती है। घृत एवं तैलका मूल्य समान रहता है। इसमें प्रजा हंसी-ख़ुशी अपने दिन काटता है। (क्लो॰) ८ मद्य, शराब। ९ सम्मद। १० राजजम्बुवृक्ष।

आनन्दक (सं॰ त्रि॰) हर्षित करनेवाला, जो खुश कर देता हो।

आनन्दकर, आनन्दक देखो।

आनन्दकानन (सं॰ क्लो॰) आनन्दानि आनन्दयुक्तानि काननानि गृहाणि यत्र, बहुव्री॰; यद्वा आनन्दजनकं काननमिव। अविमुक्त काशीक्षेत्र। काशीके सकल ही गृह आनन्दयुक्त हैं। फिर काशीवासियोंके मनमें भी सर्वदा आनन्द बना रहता है, इसीसे काशीको आनन्दकानन कहते हैं। काशीखण्डके २६वें अध्यायमें आनन्दकाननका विवरण दिया है। काशी देखो।

आनन्दकृष्ण वसु—कलकत्तेके एक प्रधान विद्वान्। सन् १८२२ ई॰को कलकत्तेमें अपने मातामह सर राजा राधाकान्तदेव बहादुरके घर इन्होंने जन्म लिया था। इनके पिता मदनमोहन वसु कायस्थोंमें मुख्य कुलीन रहे। कुछ दिन घरमें पढ़ने बाद इन्होंने भूतपूर्व हिन्दू-कालेजमें (वर्तमान प्रेसिडेन्सी कालेज) नाम लिखाया था। वहां क्रमागत सात वत्सर छात्रोंका शीर्षस्थान दबा यह प्रधान वृत्ति पाते रहे। शेष परीक्षामें आनन्दकृष्णको सिवा क़ानूनके अन्य सकल विषयपर सर्वोच्च पद मिला। भारतके बड़े लाट प्रथम लार्ड हार्डिञ्जने टाउनहालमें जो पुरस्कार बांटा था, उसमें शारीरिक असुस्थताके कारण इनका जाना बन न पड़ा। इसीसे स्वस्थ होनेपर आनन्दकृष्णको उन्होंने हिन्दू कालेजमें सभा लगा प्राप्य पुरस्कार दिया था। दौहित्रकी योग्यतासे बड़े लाटने सर राजा राधाकान्तदेव बहादुरको भी अभिनन्दित किया।

आनन्दकृष्णने सुप्रसिद्ध विद्यासागरको अंगरेजी पढ़ायी थी। फिर अक्षयकुमारदत्त इनसे साहित्य और अङ्कशास्त्र सीखते रहे। इन्होंने अक्षयकुमारको अक्षयकीर्ति 'उपासक-सम्प्रदाय' बनानेमें भी यथेष्ट साहाय्य दिया। सुधी श्रीयुक्त नगेन्द्रनाथ घोषने कहा है,—"इस देशमें साधारणत: जैसे होता, वैसे ही आनन्दकृष्ण द्वारा उपकार पहुंचते भी कोई मानता-न था।"

राय हेमचन्द्रकर बहादुरके अनुरोधसे इन्होंने 'गांजेकी रिपोर्ट' लिखी रही। सरकारने उसी रिपोर्टपर हेमचन्द्रकी बड़ी प्रशंसा की। हेमचन्द्र कहा करते थे,—"आनन्दकृष्ण ही राजकार्यमें हमारे साफल्यके अन्यतम कारण हैं।"

इलवर्टबिल वितर्कमें राजा राजेन्द्रनारायण देवके स्वाक्षरित सकल पत्र इन्होंने लिखे थे। वह पत्र पढ़ पार्लामेण्टके सभ्य केवल सर डो॰ एम॰ माकफारलेन ही नहीं, अपरञ्च मिष्टर ग्लाडष्टोन, बड़े लाट लार्ड रिपन और भारतबन्धु मिष्टर ब्राडलाने भी बड़ी प्रशंसा की। मिष्टर ब्राडलाने अपने पत्रमें इस रचनाकी सुदीर्घ समालोचना निकाली थी। कांगरेस-बन्धु मिष्टर ह्यूम और सुपण्डित डाक्टर विभारिज दोनो आनन्दकृष्णसे घरमें आकर मिलते रहे। डाक्टर विभारिजने नन्दकुमारके मुकद्दमेपर अपना प्रसिद्ध पुस्तक बनाते समय इनसे कयी बार अनेक उपदेश लिये थे। आनन्दकृष्ण सिवा संस्कृत, बंगला, अंगरेजी, फारसी और उर्दूके ग्रीक (यूनानी), लेटिन एवं हिब्रू (यहूदी) भाषामें भी व्युत्पन्न रहे।

मातामहके 'शब्दकल्पद्रुम'की रचनामें इन्होंने यथेष्ट साहाय्य दिया। विदेशीय विद्वज्जनसमाजको राजा सर राधाकान्त देवकी ओरसे उस समय पत्रादि आनन्दकृष्ण ही लिखते थे। यह बङ्गालके एक विस्तृत इतिहास और बंगला वैज्ञानिक शब्दाभिधानका मसविदा छोड़ गये हैं। हिन्दी विश्वकोषके प्रधान सम्पादक श्रीयुक्त नगेन्द्रनाथ वसु जिस समय बंगला 'विश्वकोष' बनाते, उस समय आनन्दकृष्ण 'कर्म', 'गीता' आदि शब्दोंपर अमूल्य निबन्ध लिख भाषा और भावका आदर्श देखाते थे। नगेन्द्र बाबू अपने मुंहसे इनकी शतशः प्रशंसा करते और गुरुके समान आदरणीय समझते हैं। सन् १८८७ ई॰को १४वीं सितम्बरको सबेरे गीतापाठके उपरान्त रोगयातनाविहीन अवस्थामें सहसा आनन्दकृष्णका प्राणवियोग हुआ।

आनन्दगिरि—शङ्कराचार्यके अनुशिष्य। इन्होंने शङ्कर-दिग्विजय नामक पुस्तक बनाया, जिसमें शङ्कराचार्यका चरित उतारा है। सिवा इसके उपनिषद्भाष्य प्रभृतिको टोका और वाक्यवृत्तिविवरण भी लिखा है। यह अति सुपण्डित व्यक्ति रहे। सन् ई॰के ८म शताब्द इनका जन्म हुआ था।

आनन्दघन—दिल्लीके एक प्राचीन कवि। रागकल्पद्रुम और सुन्दरीतिलकमें इनकी कविता विद्यमान है। शिवसिंहने इनकी रचना सूर्य-जैसी प्रकाशमान बतायी है। इनका कोई पूर्ण पुस्तक न रहते भी पांच सौ छोटी-छोटी पुस्तिकायें देखनेमें आती हैं। महादेव प्रसादके बनाये साहित्यभूषणको देखते हैं यह जातिके कायस्थ और (सन् १७१८—१७४८ ई॰) मुहम्मदशाहके मुन्शी रहे। मरनेसे पहले वृन्दावनवास करने लगे थे। नादिरशाहके मथुरापर अधिकार करते ही इनकी मृत्यु हुई। सम्भवत: कोकसार इन्हींका बनाया है। कभी-कभी यह अपनेको घन-आनन्द भी लिख देते थे।

आनन्दज्ञान, आनन्दगिरि देखो।

आनन्दज्ञानगिरि, आनन्दगिरि देखो।

आनन्दचन्द्र—संस्कृत बालबोधक एवं प्रायश्चित्तोद्धारके रचयिता।

आनन्दज (सं॰ त्रि॰) आनन्दात् जायते, आनन्द-जन-ड, ५-तत्। आनन्दजात, खुशीसे निकला हुआ। यह शब्द अश्रुपातादिका विशेषण है।

आनन्दता (सं॰ स्त्री॰) प्रसन्नता, खुशी, मज़ेदारी।

आनन्दतीर्थ—माण्डूक्योपनिषद्भाष्य, गीताभाष्य, गीता-तात्पर्यनिर्णय, महाभारततात्पर्यनिर्णय, तैत्तिरीयोप-निषद्भाष्य आदिके रचयिता।

आनन्दतृतीया (सं॰ स्त्री॰) व्रतविशेष। वैशाख,

श्रावण अथवा अग्रहायण मासके शुक्लपक्षकी तृतीयाको यह होता है। सावित्रीके शापसे लक्ष्मीने गौरीको छोड़ दिया था। पीछे महादेवके उपदेशसे उन्होंने व्रतकर लक्ष्मी पायी। (भविष्योत्तरपु०)

आनन्दथु (सं० पु०) आ-टु नदि भावे अथुच्। द्वितोऽथुच्। पा ३।३।८९। प्रीति, हर्ष, प्रमोद, आनन्द, आह्लाद, खुशी।

आनन्दद, आनन्दक देखो।

आनन्ददत्त (सं० पु०) आनन्दो दत्तो येन, बहुव्री०। १ आनन्द देनेवाला उपस्थ। २ मेढ़।

आनन्ददेव—१ वल्लभदेवके पिता। कुमारसम्भवकी टीका प्रभृति पुस्तक इन्होंने लिखे थे। २ अग्निप्रायश्चित्त-रचयिता।

आनन्दधर—विद्याधरके शिष्य। इन्होंने माधवानल-कामकन्दला कथा लिखी थी।

आनन्दन (सं० क्लो०) आनन्दयत्यनेन, आ-नदि-णिच् करणे ल्युट्। १ गमनागमन कालमें बन्धुके आरोग्य स्वागतादिका प्रश्न, आने-जानेके वक्त अजोजकी तन्दुरुस्ती और खुशामदी वगैरहका सवाल। २ गमना-गमनके समय आलिङ्गन, आनेजानेके वक्तकी हमागोशी। भावे ल्युट्। ३ सुखजनन, आरामदिही। ४ सभ्यता, शायस्तगी। ५ आनन्ददायक द्रव्य, खुश करनेवाली चीज।

आनन्दनाथ मल्लिकार्जुनयोगीन्द्र—नृसिंहके शिष्य और योगिनीहृदयदीपिका तथा श्रीविद्यापद्धति (सन् १५१४ ई०) नामक पुस्तकके रचयिता।

आनन्दपट (सं० पु०) आनन्दजनकं पटम्, शाक० तत्। नवोढ़ावस्त्र, नूतन बालिकाके विवाहका हरिद्राक्त वस्त्र, दूल्हनकी पोशाक।

आनन्दपुर—गुजरातके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। वर्तमान नाम वड़नगर है। वड़नगर देखो।

आनन्दपूर्ण (सं० पु०) आनन्देन पूर्णस्तृतः। आनन्द-मय परमात्मा, परब्रह्म।

आनन्दपूर्ण मुनीन्द्र—अभयानन्दके शिष्य। इनका उपाधि विद्यासागर रहा। निम्नलिखित पुस्तक इनके बनाये हैं,—सुरेश्वरके बृहदारण्यकवार्तिककी न्याय-कल्पलतिका नाम्नी टीका, पञ्चपादिकाटीका, ब्रह्मसिद्धि-व्याख्यारत्न, वेदान्तविद्यासागर, महाभारतकी व्याख्या-रत्नावली और समन्वयसूत्रवृत्ति।

आनन्दप्रभव (सं० पु०) आनन्दः प्रभवः अपादानं यस्य, बहुव्री०। १ रेतः, नुत्फा। २ वीर्य, मनी। ३ भूतादिप्रपञ्च, जानवर। श्रुतिके मतमें आनन्द-रूप परब्रह्मसे जन्म लेने, आनन्दरूप परब्रह्मद्वारा जीते रहने और अन्तकाल आनन्दरूप परब्रह्ममें मिल जाने कारण प्राणिसमूहको आनन्दप्रभव कहते हैं।

आनन्दबधायी (हिं० स्त्री०) सुखका वाद्य, खुशीका बाजा।

आनन्दबोधाचार्य—प्रमाणरत्नमाला-रचयिता।

आनन्दबोधेन्द्र—एक प्राचीन टीकाकार।

आनन्दभुज् (सं० पु०) आनन्दं भुङ्क्ते, आनन्द-भुज् क्विप्। परब्रह्मके साक्षात्कारसे आनन्द लेनेवाला, प्राज्ञ, तत्त्वज्ञानविशारद।

आनन्दभैरव (सं० पु०) १ तन्त्रोक्त शिवमूर्तिविशेष। २ रसौषधविशेष। यह तीन प्रकारका होता है। प्रथम—हिङ्गुल, विष, व्योष, मरिच, टङ्कण एवं जाती-कोषको बराबर-बराबर चूर्ण कर जम्बीरके रसमें घोंट डाले और रत्ती-रत्तीकी गोली बना ले। इसके सेवनसे शीताङ्गसन्निपात शान्त हो जाता है। द्वितीय—हिङ्गुल, विष, व्योष, टङ्कण और गन्धकका चूर्ण बराबर-बराबर डाल जम्बीरके रसमें दो प्रहर घोंटने और रत्ती-रत्तीकी गोली बनानेसे तैयार होता है। यह ज्वरातिसारके लिये महौषध है। तृतीय—वङ्गभस्म, मृत स्वर्ण और रसको चौद्रमें घोंटनेसे बनता है। दो गुञ्जा नित्य खानेसे प्रमेह दूर होता है।

(रसेन्द्रसारसंग्रह)

आनन्दभैरवी (सं० स्त्री०) १ रागविशेष। इसमें शङ्कराभरण और भैरव दोनो राग मिले रहते हैं। २ आनन्दभैरव-देवकी पत्नी। रुद्रयामलमें इनके प्रश्नका आनन्दभैरवने उत्तर दिया है। ३ वटी विशेष, दवाकी गोली। पिप्पली, जातीकोष (जावत्री), विष, त्रिकटुक (सोंठ, मिर्च, पीपल), गन्धक, सोहागा, मृत-ताम्रक, धतूरका बीज एवं हिङ्गुल बराबर ले

दिनभर विजयाके द्रवमें घोंटे और चणकके समान वटी बनाये। इसे खाकर मनुवरीके मूलका कषाय पीनेसे शीताङ्ग सन्निपात दूर होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

आनन्दमत्ता, आनन्दसम्मोहिता देखो।

आनन्दमय (सं० पु०) आनन्दः प्रचुरोऽस्य, आनन्द प्राचुर्ये मयट्। १ प्रचुरानन्दस्वरूप परमात्मा। (त्रि०) २ आनन्दसमूहसम्पन्न, खुशीसे भरा हुआ। (स्त्री०) ङीप्। आनन्दमयी। तारामूर्तिविशेष।

आनन्दमयकोष (सं० पु०) आनन्दमयस्य परमात्मनः कोष इवावरकः। १ वेदान्तमतसे—पञ्चकोषके मध्य पञ्चम कोष, निद्रायत अन्तरुनी रूह। २ अविद्यास्वरूप कारणशरीर। ३ सुषुप्ति, गहरी नींद। ४ सत्वप्रधानज्ञान, सच्ची समझ।

आनन्दयितव्य (सं० क्ली०) आनन्दका विषय, सुखका इन्द्रियार्थ, मजेकी चीज़।

आनन्दयिता (सं० पु०) आनन्द देनेवाला पुरुष, जो आदमी खुश कर देता हो।

आनन्दराज गजपति—मन्द्राजप्रान्तस्थ विजयनगरके राजा। सन् ई०के १८वें शताब्दान्त इन्होंने मन्द्राजका समस्त प्रान्त बङ्गालकी अंगरेज़-सरकारको सौंप दिया था।

आनन्दराम बड़ुया—आसामके एक प्रसिद्ध विद्वान् और राजकर्मचारी। सन् ई०के १९वें शताब्दके मध्यभागमें एक वृहत् संस्कृत-अंगरेजी अभिधान, बहु संस्कृत कोषग्रन्थ और अलङ्कारग्रन्थ प्रकाश किया। अंगरेज-सरकारने इन्हींको एक वृहत् प्रादेशिक अभिधान बनानेका भार दिया था।

आनन्दराव पंवार—एक सुप्रसिद्ध सेनाध्यक्ष। सन् १७४९ ई०को इन्होंने जागीरमें बाजीराव पेशवासे धार प्रान्त पाया और वहां अपना वंश बढ़ाया था। इनके स्वर्गवासी होनेपर सेंधिया और होलकरने कई बार धारको लूटा-मारा, किन्तु आनन्दराव द्वितीयकी पत्नी और रामचन्द्र पंवारकी धर्ममाता माती बाईकी होशियारीसे नष्टभ्रष्ट न हुआ।

आनन्दलहरी (सं० स्त्री०) १ शङ्कराचार्यका बनाया हुआ स्तोत्र। इसमें पार्वती-प्रशंसाके आनन्दकी लहर उठती है। २ वाद्ययन्त्र विशेष, एक बाजा। छोटी ढोलक-जैसी खोखली लकड़ीका एक मुंह तङ्ग तथा दूसरा बड़ा होता और चमड़ेसे मढ़ा रहता है। फिर दूसरे छोटे बरतनके मुंह पर भी चमड़ा चढ़ाया जाता है। इन दोनो यन्त्रोंके चमड़ेमें बीचो बीच छेद बना तांत लगा देते हैं। ढोलकको बायीं कोखमें लटका और बरतनको बायें हाथमें पकड़ छिपटीसे तांत बजाते हैं। यह कितनी ही गोपीयन्त्र-जैसी होती है।

आनन्दवन—रामतापनी उपनिषत्‌की टीका 'श्रीरामकाशिका'के रचयिता। यह एक प्रसिद्ध परमहंस परिव्राजक रहे। २ सुखोद्यानस्वरूप काशीक्षेत्र, बनारस।

आनन्दवर्धन (सं० त्रि०) १ आनन्दको बढ़ानेवाला, जो खुशीको दोचन्द कर देता हो। (पु०) २ एक संस्कृतवित् पण्डित, इनका बनाया 'ध्वन्यालोचन' नामक ग्रन्थ विद्यमान है।

आनन्दवल्ली (सं० स्त्री०) तैत्तिरीय उपनिषत्‌का द्वितीय विभाग।

आनन्दव्रत (सं० पु०) व्रतविशेष। इसमें चैत्रादि चार मास व्रत और पीछे वस्त्रयुक्त तिल किंवा हिरण्य दान करना पड़ता है।

आनन्दशर्मा (सं० पु०) 'व्यवस्थादर्पण' नामक स्मार्त्त ग्रन्थके रचयिता। इनके पिताका नाम रामशर्मा था।

आनन्दसम्भव (सं० पु०) आनन्दस्य ब्रह्मानन्दस्य सम्भवः प्रकाशः, ६-तत्। १ तत्त्वज्ञान-द्वारा ब्रह्मानन्दका प्रकाश। (त्रि०) आनन्दः सम्भवोऽस्य। २ भूतादि, प्राणी, खुशी रखनेवाला।

आनन्दसम्मोहिता (सं० स्त्री०) नायिका विशेष। आनन्दमें भली भांति मोहित हो जानेवाली प्रौढ़ा नायिकाको आनन्दसम्मोहिता कहते हैं।

आनन्दा (सं० स्त्री०) आनन्दयति, आ-नदि-णिच्-अच्, णिच् लोपः। १ विजया, भांग। २ वार्षिकी पुष्पवृक्ष, बेला। ३ आराम-शीतला। इसकी पत्ती खुशबूदार होती है। ४ सुद्गपर्णी, मुगानी।

आनन्दार्णव (सं० पु०) आनन्दः अर्णव इव असीमत्वात्। १ ब्रह्मानन्द। २ परमेश्वर। ३ ज्योतिषप्रसिद्ध योग विशेष।

आनन्दाश्रम (सं॰पु॰) एक प्राचीन टीकाकार।

आनन्दि (सं॰ पु॰) आ-नन्द-इन्। १ हर्ष, खुशी। २ कौतुक, तामाशा। ३ महन्त नृसिंहके एक शिष्य। इन्होंने प्रबोधानन्द-सरस्वतीके विरचित चैतन्य-चरितामृत नामक ग्रन्थकी टीका लिखी है।

आनन्दित (सं॰ त्रि॰) आ-नदि-क्त। १ हर्षयुक्त, खुश। २ हृष्ट, आसूदा। ३ सुखी, आराम लेनेवाला। आ-नदि-णिच्-क्त। ४ अभिनन्दित, खुश किया हुआ।

आनन्दिन् (सं॰ त्रि॰) आ-नदि-णिनि। १ आनन्द-युक्त, खुश। आ-नदि-णिच्-णिनि। २ आनन्दजनक, खुश कर देनेवाला। (पु॰) आनन्दी। (स्त्री॰) आनन्दिनी।

आनन्दी (सं॰ स्त्री॰) आनन्दयति, आ नदि-णिच्-अच्, गौरादि॰ ङीष्। वृक्षविशेष, एक पेड़। आनन्दा देखो। (त्रि॰) आनन्दिन् देखो।

आनन्दोदयरस (सं॰ पु॰) रसभेद। पारद, गन्धक, लौह,अभ्रक एवं विष समांश,मरिच अष्ट और सोहागा चतुर्गुण डाल भृङ्गराजरस, अम्ल तथा दाड़िमकी सात भावना देनेसे यह बनता है। सन्ध्याको गुञ्जाद्वय पर्णखण्डमें खानेसे पाण्डुरोगको दूर करता है। (भैषज्यरत्नावली)

आनपत्य (सं॰ क्ली॰) असन्तानता, लावल्दी, अपुत्रता।

आनबान (हिं॰ स्त्री॰) चमक-दमक, सजधज, तड़क भड़क, रङ्गरूप, ठाटबाट, अदा-अन्दाज़, तर्ज़-तरीक़।

आनभिम्लात (सं॰ पु॰) अनभिम्लातके एक वंशजका नाम।

आनम (सं॰ पु॰) नति, चापका प्रसारण, झुकाव, कमानका फैलाव।

आनमन (सं॰ क्ली॰) आनम्यते आयत्तीक्रियते ऽनेन, आ-नम करणे ल्युट्। १ सन्तोषके निमित्त पश्चाद्गमनादि नम्रता, दूसरेको खुश करनेके लिये पीछे चलने वगै-रहका झुकाव। भावे ल्युट्। २ सम्यक् नति, खासा झुकाव। आ-नम-णिच्-ल्युट्। ३ नम्रतासम्पादक व्यापार, नरमीका काम।

आनमित (सं॰ त्रि॰) आ-नम-णिच्-क्त इट्, णिच् लोपः। आवर्जित, आनतीकृत, आकुञ्चीकृत, झुका हुआ, झुकाया गया।

आनम्य (सं॰ त्रि॰) आ-नम्-णिच्-यत्। १ नम्र बनाने योग्य, झुका देने क़ाबिल। (अव्य॰) आ-नम्-ल्यप्। नत हो या नमस्कार करके, नरमीके साथ, अदब बजाकर। इसी अर्थमें 'आनत्य' शब्द भी आता है।

आनय (सं॰ पु॰) आ-नी भावे अच्। १ देशसे देशान्तरको ले जानेका कार्य, लवायी, लेते आनेका काम। आनीयते वेदाध्ययनाय अत्र, आधारे ऽच्। २ उपनयनसंस्कार, जनेवू देनेका काम।

आनयन (सं॰ क्ली॰) आनय देखो।

आनयितव्य (सं॰ त्रि॰) आनयनयोग्य, ले आने क़ाबिल।

आनर (अं॰ क्ली॰ = Honour.) आदर, अर्हण, इज़्ज़त, अदब, आबरू।

आनरेबिल (अं॰ वि॰ = Honourable) आदरणीय, इज़्ज़तदार। बड़े तथा छोटे लाटकी कौन्सिलके मेम्बर, हाईकोर्टके जज और कुछ निर्वाचित व्यक्ति ही आनरेबिल कहाते हैं।

आनरेरी (अं॰ वि॰ = Honorary.) १ अवैतनिक, अलाभकर, इज़्ज़तयाफ़्ता, ताज़ीमी, मुफ़्तमें काम करने-वाला। जो लोग आदरके लिये काम करते और वेतनादि कुछ नहीं लेते, वही आनरेरी कहाते हैं— जैसे आनरेरी मजिस्ट्रेट, अवैतनिक विचारपति और आनरेरी सेक्रेटरी, अवैतनिक मन्त्री। २ विना लाभ किया जानेवाला, जो मुफ़्तमें हो।

आनर्त (सं॰ पु॰) आ नृत्यते ऽत्र, आधारे घञ्। १ नृत्यशाला, नाचघर। २ युद्ध, लड़ायी। भावे घञ्। ३ नर्तन, नाच। ४ सूर्यवंशीय एक राजा। हरिवंशके १०वें अध्यायमें इनका विशेष विवरण दिया गया है। ४ आनर्तराजकृत जनपदविशेष। यह देश गुज-रातमें अवस्थित है। वर्तमान नाम काठियावाड़ है। आनर्तकी राजधानी द्वारका या कुशस्थली रही। काठियावाड़ देखो। ६ आनर्तदेशवासी जन, आनर्त

मुल्कका बाशिन्दा। ६ आनर्तदेशीय राजा। ७ चन्द्रवंशीय एक राजा। हरिवंशके ३२वें अध्यायमें लिखा है,—आनर्तके पितामहका वर्षकेतु, पिताका विभुराज और पुत्रका नाम सुकुमार था। (क्ली०) कर्तरि अच्। ८ जल, पानी। तरङ्ग, नृत्य जैसा देख पड़नेसे जलको आनर्त कहते हैं। (त्रि०) ९ नर्तक, रक्कास, नचनिया, नचवैया, नाचनेवाला।

आनर्तक (सं० त्रि०) आनृत्यति, आ-नृत्-ण्वुल्। १ नर्तक, नचनिया। आनर्तदेशे भवम्, वुञ्। २ आनर्तदेशजात, आनर्त मुल्कका पैदा।

आनर्तनगरी (सं० स्त्री०) आनर्त देशकी राजधानी।

आनर्तपुर (सं० क्ली०) आनर्त देशस्य प्रधानं पुरम्। द्वारवती पुरी।

आनर्तीय (सं० त्रि०) आनर्तदेशे भवः, वृद्धत्वाच्छ। १ आनर्त देशजात। (पु०) २ व्यक्तिविशेष, किसी शख्सका नाम।

आनर्थक्य (सं० क्ली०) अनर्थकस्य भावः, ष्यञ्। १ दक्षताका अभाव, अयोग्यता, नाकाबलियत, बद अस-लूबी। २ निष्प्रयोजनत्व, बेमुनफ़ाती, बेसूदी।

आनलवि (सं० पु०) व्यक्ति विशेष, किसी आदमीका नाम।

आनव (सं० त्रि०) अनिति अनुः प्राणी तस्येदम्, अन-उण्-अण्। १ मानवीय, इन्सानी, मानखायी। २ दयालु, परोपकारशील, खैरखाह, भला चाहने-वाला। (स्त्री०) आनवी।

आनव्य (सं० क्ली०) आनोर्नरस्येदम्, यत्। नर-सम्बन्धीय तन्वोक्त दो प्रकारका मल।

आनस (वै० त्रि०) अनसः शकटस्य पितुर्वा इदम्, अण्। १ शकटसम्बन्धीय, गाड़ीसे तानुक रखनेवाला। २ पितृसम्बन्धीय, पिदरी, बापसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आना (हिं० पु०) १ आणक, गण्डा, रुपयेका १६वां हिस्सा। चार पैसे या बारह पाईका एक आना होता है। २ किसी वस्तुका षोड़शांश, किसी चीज़का १६वां हिस्सा। ३ आगमन, आमद। (क्रि०) ४ आगमन करना, आगे बढ़ना, किसीको ओर कदम रखना। ५ उपस्थित होना, हाजिर होना, शामिल होना। ६ प्रत्या-वर्तन करना, लौटना। ७ आरम्भ होना, लगना। ८ फलपुष्प प्रदान करना, फलना-फूलना। ९ उत्पन्न होना, निकलना। १० परिपक्व होना, पक जाना। ११ स्खलित होना, ढीला पड़ना। १२ चढ़ना, छा जाना। १३ देख पड़ना, नमूदार होना। १४ पहुंच जाना, दाखिल होना। १५ बिकना, फ़रोख्त होना। १६ तैयार होना, कमर कसना। १७ मिलना, हाथ लगना।

आनाकानी (हिं० स्त्री०) १ अनाकर्णन, सुनी-अनसुनी, कान न देनेका काम। २ बहानेबाज़ी, टाल मटोल। ३ गुप्तवार्ता, कानाफूसी।

आनाखु (सं० पु०) इक्षुतुल्या, कास।

आनाथ्य (सं० क्ली०) अनाथस्य भावः, ष्यञ्। स्वामि-शून्यत्व, पतिराहित्य, यतीमी, मालिक न रहने की हालत।

आनानास (Ananassa sativa) अनन्नास, एक पेड़। इसका पत्ता किनारे-किनारे तिरछे तौरपर कटा और फलपर आंख-जैसा दाग़ रहता है। फलके ऊपरसे डाल निकलती है। कच्चा अनन्नास हरा और पक्का खूब पीला होता है। फलके भीतर छोटा-छोटा बीज रहता है। पक्का अनन्नास बकला अच्छीतरह छील डालनेसे खानेमें अच्छा लगता है। आजकल भारत-वर्षके अनेक स्थानमें उम्दा अनन्नास उत्पन्न होता है। कोयी-कोयी कहता, कि यह दक्षिण अमेरिकाके ब्राजिल प्रान्तका वृक्ष है। सन् १५९४ ई०को पोर्तुगीज इसे दक्षिण-अमेरिकासे भारतवर्ष लाये थे। किन्तु अबुल-फ़ज़लने आईन-अकबरीमें अनन्नासका उल्लेख किया है। इसका बड़ेसे बड़ा फल कोई १४ सेर तक वज़नमें बैठता है। श्रीहट्ट (सिलहट)का अनन्नास अति सुमिष्ट और सुस्वादु होता है। बङ्गालमें कितनी ही जगह वृक्षके नीचे इसे लगाया करते हैं। किन्तु अधिक छाया इसके लिये उपयोगी नहीं ठहरती। मट्टीको पहले अच्छीतरह बना—चुनाके तर ज़मीनमें अनन्नास लगाना चाहिये। अधिक छायामें इसे लगाना मना है। वर्षाकालमें इसका फल परिपक्व होता है। अनन्नासके पत्तेका रेशा बारीक, साफ़ और बोझको

बरदाश्त करनेवाला है। पत्तेको १८ दिन पानीमें डुबोकर रखनेसे बहुत सुन्दर रेशा उतरता है। हार पिरोनेके लिये भारतमें उसकी आवश्यकता रहती है। रेशा रेशमके स्थानमें व्यवहृत होता और उन या रूईमें भी मिलाया जाता है। वह सीने और पिरोनेके बड़े काम आता है। उससे चटाई और कागज़ बनाते हैं। फिलिपाईन द्वीपपुञ्जमें अनन्नासके रेशेसे कपड़ा तैयार किया जाता है। रङ्गपुरके चमार उससे जूता गांठते हैं। भारतवासी पत्तेके नये रसको क्रमिनाशक और रक्तशोधक समझते हैं। उसे चनेके पानीमें मिलाकर पिलानेसे अन्त्रका क्रमि मर जाता है। परिपक्व फलका विशुद्ध रस पेटकी कुड़कुड़ी तथा पाण्डुरोगको दूर करता, पेशाब लाता, पसीना बहाता और ठण्ढा होता है। पत्तेका नया रस पीनेसे हिचकी नहीं आती। कच्चा अनन्नास खानेसे गर्भपात होता है। पत्तेके श्वेत अंशका ताज़ा रस चीनीके साथ मिलाकर पीनेसे रेचक है। इसका फल भी रक्तशोधक है। महेके पास मलवर-तट और ब्रह्मदेशमें अनन्नास बहुत उत्पन्न होता है। इसका तेल मिठाईमें स्वाद बढ़ानेको डाल देते हैं। अनन्नास देखो।

आनाम्य (सं० त्रि०) आ-नम् कर्मणि ण्यत्, अनिट्कत्वात् कुत्वाभावः। नमस्कार्य, सलाम किये जाने काबिल, जिसके लिये झुकना पड़े।

आनाय (सं० पु०) आनीयते मत्स्याद्यनेन, आ-नी करणे घञ्। जालमानायः। पा ३।३।१२४। मत्स्यादि पकड़नेके निमित्त शणसूत्रादि निर्मित जाल, मछली मारनेका दाम।

आनायिन् (सं० त्रि०) आनायति, आ-नी-णिनि। १ एक स्थानसे किसीको स्थानान्तरमें ले जानेवाला, जो किसीको एक जगहसे दूसरी जगह पहुंचा देता हो। (पु०) आनायी। (स्त्री०) आनायिनी।

आनायी (सं० पु०) आनायो जालमस्यास्ति, आनाय-इनि। जालिक, मछुवा, धीवर, माहीगीर।

आनाय्य (सं० पु०) आनाय्यते गार्हपत्यादानीय संस्क्रियतेऽसौ, आ-नी-ण्यत्, निपा० आयादेशः। आनाय्योऽनित्ये। पा ३।१।१२७। १ वेदप्रसिद्ध दक्षिणाग्निविशेष, यह गार्हपत्यसे लेकर दक्षिणकी ओर रखा जाता है। (त्रि०) २ समीप उपस्थित किया जानेवाला, जो नज़दीक लाया जाता हो। (अव्य०) ३ मंगाकर, बुलवाके, इकट्ठाकरके।

आनाह (सं० पु०) आ-नह-घञ्। १ दैर्घ्य, लम्बाई। प्रधानतः वस्त्रके दैर्घ्यको ही आनाह कहते हैं। आनह्यते अपसरणप्रतिरोधेन बध्यते विण्मूत्राद्यनेन, आ-नह करणे घञ्। २ विण्मूत्ररोधक व्याधि, कोष्ठबद्ध, पाखाना और पेशाब रोकनेवाली बीमारी। इसका लक्षण इस प्रकार है—जब आमाशयमें आम एकबार भर जाता या क्रमशः बार बार बढ़ता, तब वायु कुपित हो इसे उत्पन्न करता है। यह स्वयं पैदा नहीं होता।

आनाहिक (सं० पु०) आनाहे आनाहरोगप्रतीकारे विहितः, ठक्। १ आनाह रोगके प्रतीकारका विधि, पाखाना और पेशाब बन्द होनेकी बीमारी दूर करनेका तरीक़। (त्रि०) २ आनाह रोगमें व्यवहृत होनेवाला।

आनि, आन देखो।

आनिचेय (सं० त्रि०) आ समन्तान्निचीयते, आ-नि-चि कर्मणि यत्। समन्तात् सञ्चनीय, चारो ओर इकट्ठा किया जानेवाला।

आनिरुद्ध (सं० त्रि०) अनिरुद्धस्यापत्यम्, वृष्णित्वात् अण्। अनिरुद्धसे उत्पन्न। उषापति अनिरुद्धके पुत्र या कन्यारूप सन्तानका यह शब्द विशेषण है।

आनिहृत (वै० त्रि०) अनिहृत एव, स्वार्थे अण्। १ पूर्ण रीतिमें संसारसे निकला हुआ, जो बिलकुल दुनियासे बाहर चला गया हो। (पु०) २ अविनश्वर प्रकृति, लाज़वाल क़ुदरत। ३ देवहृदय तुल्य देवता विशेष। (स्त्री०) आनिहृती।

आनिल (सं० त्रि०) अनिलस्येदम्, अनिल-अण्। १ वायु सम्बन्धीय, हवायी। (पु०) अनिलो देवताऽस्य। २ वायुदेवताके लिये हवनीय घृतादि। ३ हनूमान्। ४ भीम। वायुसे उत्पन्न होने कारण हनूमान् और भीमसेन आनिल कहाते हैं।

आनिला (सं० पु०) अवाजके लश्करकी कुम्बी।

आनिलि (सं० पु०) अनिलस्यापत्यम्, अनिल-इञ्,

आयचो हृद्धि:। १ भीम। २ हनूमान्। पाण्डुराजकी स्त्री कुन्ती और अञ्जनाके साथ इन्द्रके सहवास करनेसे हनूमान् और भीमको आनिलि कहते हैं।

आनीजानी (हिं॰ वि॰) आनेजानेवाली, उठन्तू, गमनागमनशील, जो आकर चली जाती हो। यह शब्द केवल स्त्रीलिङ्गमें ही लगता है।

आनीत (सं॰ त्रि॰) आ-नी कर्मणि क्त। गृहीत, लाया, मंगाया या पाया हुआ।

आनीति (सं॰ स्त्री॰) आ-नी-क्तिन्। आनयन, एक जगहसे दूसरी जगह किसीको ले जानेका काम।

आनीय (सं॰ अव्य॰) ग्रहण करके, लाके।

आनील (सं॰ पु॰) आ ईषदर्थे नील:, प्रादि॰ समा॰। १ ईषत् नील वर्ण, हलका आसमानी रङ्ग। २ नील-वर्ण घोटक, आसमानी रङ्गका घोड़ा। (त्रि॰) आ स-मन्तात् नीलम्। ३ नीलवर्णयुक्त, आसमानी। "तदीय-मानीलमुखस्तनद्वयम्।" (रघुवंश ३।८)

ी॰ नीली घोड़ी।

आनु (सं॰ त्रि॰) अनिति जीवति, अन-उण्, णित्वा-दुपधावृद्धि:। प्राणी, जान्दार, जो जीता हो।

आनुकल्पिक (सं॰ त्रि॰) अनुकल्पं वेत्ति तद्बोधक ग्रन्थमधीते वा, उक्थादि ठक्। १ अनुकल्पाभिज्ञ, अनुकल्पबोधक ग्रन्थ पढ़नेवाला। अनुकल्पेन प्राप्तम्। २ अनुकल्प द्वारा प्राप्त। अनुकल्पाय हितम्। ३ अनु-कल्प-साधन, जिससे अनुकल्प बने।

आनुकूलिक (सं॰ त्रि॰) अनुकूलं वर्तते, ठक्। उपकारक, आनुकूल्य द्वारा वर्तमान, मेहरबान्, मुवा-फिक्। (स्त्री॰) आनुकूलिकी।

आनुकूल्य (सं॰ क्ली॰) अनुकूलस्य भाव: कर्म वा, ष्यञ्। १ अनुकूलाचरण, मेहरबानी। २ उपयोगिता, मुवाफ़क़त।

आनुक्रष्ट, अनुक्रष्ट देखो।

आनुगङ्ग (सं॰ क्ली॰) अनुगङ्गं भवम्, परिमुखादि॰ अञ्। परिमुखादिभ्य एवेष्यते। (सिद्धान्तकौमुदी) गङ्गाका पश्चाद्भव।

आनुगतिक (सं॰ त्रि॰) अनु-गम भावे क्त तेन निर्वृत्तम्, अक्षद्यूतादि॰ ठक्। अनुगमन द्वारा निर्वृत्त, पश्चाद्गमन द्वारा जात, पैरौकारी या फ़रमांबर-दारीसे ताल्लुक रखनेवाला।

आनुगत्य (सं॰ क्ली॰) अनुगतस्य भाव: कर्म वा, ष्यञ्। १ अनुगमनरूप आचरण, पश्चाद्गतका धर्म, पैरौकारी, फ़रमांबरदारी। २ परिचय, परिज्ञान, आश्नायी, जानपहचान।

आनुगादिक (सं॰ त्रि॰) अनुगदति, अनु-गद-णिनि, स्वार्थे ठक्। पश्चात् कथक, पीछे बोलनेवाला।

आनुगुणिक (सं॰ त्रि॰) अनुगुणं अनुकूलं अनुरूपं वा अधीते वेद वा, अनुगुण ठक्। वसन्तादिभ्यष्ठक्। पा ४।२।६३। अनुकूलज्ञ, स्वरूपज्ञ, अनुकूलबोधक ग्रन्थ पढ़नेवाला।

आनुगुण्य (सं॰ क्ली॰) अनुगुणस्य भाव: कर्म वा, ष्यञ्। अनुकूलाचरण, सहायता, मेहरबानी, मदद।

आनुग्रामिक (सं॰ त्रि॰) अनुग्रामं भवम्, ठञ्। जानपद, ग्रामके पश्चात् जात, देहक़ानी, देहाती, जङ्गली। (स्त्री॰) आनुग्रामिकी।

आनुचारक (सं॰ क्ली॰) अनुचरति पश्चाद्गच्छति, अनु-चर-ण्वुल्-अण्। अनुचारको भृत्य: तस्य धर्म्यम्। अण् महिष्यादिभ्य:। पा ४।४।४८। अनुचरका धर्मयुक्त आचरण, भृत्यका कर्तव्य कर्म, नौकरका फ़र्ज।

आनुजावर (सं॰ त्रि॰) मरणादनन्तर-प्रकाशित, मृत्यूत्तर-जात, बापकी वफ़ातके बाद पैदा हुआ, जो मरी हुयी माके पेटसे निकला हो। (स्त्री॰) आनु-जावरी।

आनुति (सं॰ पु॰-स्त्री॰) आनुतस्यापत्यम्, इञ्। इञ: प्राचाम्। पा २।४।६०। १ अनुत नामक मुनिका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य। (स्त्री॰) आ-नु-क्तिन्। २ सम्यक् स्तवका कार्य, अच्छीतरह तारीफ करनेका काम।

आनुतिल्य (सं॰ त्रि॰) अनुतिलं भवम्, परिमुखादि॰ ञ्य। तिलके पश्चात् जात, तिलसे पीछे पैदा हुआ।

आनुहृष्टिनेय (सं॰ त्रि॰) अनुहृष्टौ भव अनु-हृष्टि-ठक् इनङ् च। यथादिभ्य। पा ४।१।१२२। कल्याण्यादीनामिनङ् च। पा ४।१।१२६। अनुकूल दृष्टिजात, नेकनज़रीसे निकला हुआ।

आनुनाग्य (सं० त्रि०) अनुनागं विनाग्रस्य पश्चाद्भवम्, सङ्काादि० ण्य। नागके पश्चात् जात, बरबादीके बाद पैदा हुआ। (स्त्री०) आनुनाग्यी।

आनुनासिक्य (सं० क्लो०) अनुनासिकस्य भावः, ष्यञ्। "प्रतिज्ञानुनासिक्याः पाणिनीयाः।" (परिभाषेन्दुशेखर) अनुनासिकका धर्म, नासिकाके साथ उच्चार्यत्व, हर्फ़ गुन्नाका काम, नाकके ज़रिये तलफ़्फ़ुज़ करनेकी हालत, गुन्नापन।

आनुपथ्य (सं० त्रि०) अनुपथं भवम्, परिमुखादि० ञ्य। पथके पश्चात् होनेवाला, जो राहके पीछे पैदा हो।

आनुपदिक (सं० त्रि०) अनुपदं धावति, अनुपद-ठक्। १ पश्चात् धावमान, पीछे दौड़नेवाला। पदस्य वेदपाठविशेषस्य पश्चात् अनुपदं तद्वेत्ति तद्बोधकग्रन्थ-मधीते वा, उक्थादि० ठक्। २ पदग्रन्थ पढ़नेवाला। ३ पदाभिज्ञ, पदको समझनेवाला।

आनुपद्य (सं० त्रि०) अनुपदं भवम्, परिमुखादि० ञ्य। पदके पश्चात् जात, पदसे पीछे होनेवाला।

आनुपूर्व (सं क्लो०) आनुपूर्वी देखो।

आनुपूर्वी (सं० स्त्री०) पूर्वमनुक्रम्य अनुपूर्वं तस्य भावः ष्यञ् आनुपूर्व्यम्, ततो वा ङीषि यलोपः। १ परिपाटी, मूलावधिक्रम, तरतीब, सिलसिला, ढङ्ग। २ स्मृतिके अनुसार—जातिका सरल क्रम, क़ौमका सीधा सिलसिला। ३ न्यायमतसे—क्रमसे निकाला हुआ फल, जो नतीजा सिलसिलेसे हासिल हो। (क्लिं० वि०) ४ परिपाटीयुक्त, सिलसिलेवार।

आनुपूर्वेण, आनुपूर्व्या देखो।

आनुपूर्व्य (सं० क्लो०) आनुपूर्वी देखो।

आनुपूर्व्या (सं० अव्य०) क्रमानुसार, सिलसिलेसे, ढङ्गसे।

आनुमत (सं० त्रि०) अनुमासम्बन्धीय, रज़ामन्दीसे ताल्लुक़ रखनेवाला। (स्त्री०) आनुमती।

आनुमानिक (सं० त्रि०) अनुमानादागतम्, ठक्। १ अनुमान-प्राप्त, युक्तिसिद्ध, हवालेसे साबित, मुन्तज। २ व्याप्तिविशिष्ट लिङ्गज्ञान हेतु अवगत, नतीजेसे ताल्लुक़ रखनेवाला। धूमदर्शन हेतु वह्निका अनुमान होता है। अतएव स्वीय व्याप्तिविशिष्ट धूमहेतु अवगत होने कारण पर्वतादि-स्थित वह्नि आनुमानिक है। (क्लो०) ३ अनुमान, अन्दाज़, फ़र्ज़, क़यास। ४ सांख्यमतसिद्ध प्रधान।

आनुमानिकत्व (सं० क्लो०) युक्तिसिद्ध होनेकी स्थिति, मुन्तजी।

आनुमाष्य (सं० त्रि०) अनुमाषं भवम्, परिमुखादि० ञ्य। माषके पश्चात् जात, उड़दसे पीछे पैदा होनेवाला।

आनुयव्य (सं० त्रि०) अनुयवं भवम्, परिमुखादि० ञ्य। यवके पश्चात् जात, यवसे पीछे उपजनेवाला।

आनुयूप्य (सं० त्रि०) अनुयूपं भवम्, परिमुखादि० ञ्य। यूपके पश्चात् जात, यूपसे पीछे होनेवाला।

आनुरक्ति (सं० स्त्री०) आ-नु-रञ्ज-क्तिन्। १ अनुराग, जोश, मुहब्बत। २ आनुगत्य, पैरोकारी, फ़रमांबरदारी।

आनुराहतायन (सं० पु०) अनुरहतका पुत्र किंवा पौत्र।

आनुराहति (सं० पु०-स्त्री) अनुरहतोऽपत्यम्, वाह्वादि० इञ्। अनुरहतका अपत्य।

आनुरूप्य (सं० क्लो०) अनुरूपस्य भावः, ष्यञ्। १ सादृश्य, मुशाबहत, बराबरी। २ औचित्य, मुनासिबत।

आनुरोहतायन (सं० त्रि०) अनुरोहतसे उत्पन्न।

आनुरोहति (सं० पु०-स्त्री०) अनुरोहतोऽपत्यम्, वाह्वादि० इञ्। अनुरोहत् मुनिके पुत्रपौत्रादि।

आनुलेपिक (सं० त्रि०) अनुलेपिकायाः स्त्रिया धर्म्यम्, अण्। अनुलेपिकाके धर्मसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो तेल लगानेवाली औरतके कामका हो।

आनुलोमन (सं० त्रि०) अनुलोमकारी, अपनेसे छोटी जातिके साथ शादी करनेवाला

आनुलोमिक (सं० त्रि०) अनुलोमं वर्तते, अनुलोम-ठक्। १ यथाक्रम कार्यकारी, क्रमानुयायी, तरतीबके साथ काम करनेवाला, बाक़ायदा, इन्तिज़ामी। २ अनुकूल, रज़ामन्द, मेहरबान।

आनुलोम्य (सं० क्लो०) अनुलोमस्य भावः कर्म वा,

ष्यञ्। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।१२४। १ अनुक्रम, तरतीब। २ अनुकूलता, मेहरबानी। ३ सारल्य, सादगी, सिधायी। ४ नियमित परम्परा, कायदेकी चाल। ५ किसीको ठीक जगह पहुंचा देनेका काम। (त्रि०) ६ प्रकृत रूपसे उत्पन्न, कुदरती कायदेसे पैदा हुआ। (स्त्री०) आनुलोम्यी।

आनुवंश्य (सं० त्रि०) अनुवंशभवम्, परिमुखादि० ञ्य। बांसके पेड़से पीछे होनेवाला।

आनुवासनिक (सं० क्ली०) अनुवासन-वस्ति, पिचकारी या नल। यह तैलादि स्नेहोपकरण अथवा क्वाथादि भरकर लगाया और गोपुच्छाकार सुवर्णादि या हाथीके दांतसे नेत्र-युक्त बनाया जाता है। इसकी लम्बाई का परिमाण वयोभेदसे अनेक प्रकारका है—१ वर्षसे ६ वर्ष ६ अङ्गुल, ८ वर्ष ८ अङ्गुल और १६ वर्ष वालेके लिये १२ अङ्गुल रहता है। इसका परिधि यथाक्रम कनिष्ठिका, अनामिका और मध्यमाङ्गुलि-परिमित होता है। इसमें प्रत्येक क्रमशः डेढ़, ढाई और साढ़े तीन अङ्गुल वस्तिके मुखमें रखना चाहिये। वस्तिद्वारमें प्रवेशनीय नेत्र मुख यथाक्रम मयूर, कङ्क एवं श्येन पुच्छकी मध्य नाड़ी-जैसा स्थूल बनाये, जिससे द्रव्यका स्थापन और परिमाण पूर्वोक्त वयोनुरूप यथाक्रम रोगीके दो चार तथा आठ अञ्जलि दिया जा सके। इसीतरह उत्तरोत्तर वयोनुरूप नेत्रका परिमाण बढ़ा लेते हैं।

दूसरा प्रकार यह है—पचीस वर्षसे अधिक उम्रवाले रोगीके लिये नेत्र दैर्घ्य द्वादश अङ्गुल और मूल परिणाह अङ्गुष्ठोदर जैसा रखे। गृध्रिनी-पत्र-नाड़िकावत् अग्रभाग और बदराखिवत् वा कलाय परिमित छिद्रवक्त्र बनता है। वस्तिके बन्धनार्थ नेत्र-मूलमें कर्णिकाद्वय लगाते हैं। द्रव्यमान रोगीके द्वादश अञ्जलि रहे। इस कल्पमें माधुक तैल ग्राह्य है। (सुश्रुत) वस्ति देखो।

आनुविधित्सा (सं० स्त्री०) अनु-वि-धा-सन्-अ-टाप्, नञ्-तत्। कृतघ्नता, प्रत्युपकार करनेकी अनिच्छा, एहसान-फ़रामोशी, नमकहरामी, नाशुक्रगुजारी।

आनुवेश्य (सं० त्रि०) अनुवेश्मं वसति, ञ्य। अव्ययीभावाच। पा ४।३।५९। निजगृहके पार्श्व स्थित भवनमें रहनेवाला, जो अपने घरके कोनेमें बसा हो। किसीके घरमें ही रहनेवाले पड़ोसीको आनुवेश्य कहते हैं।

आनुशातिक (सं० त्रि०) अनुशतिकस्येदम्, अनुशतिक-अण्, द्विपदवृद्धिः। अनुशतिकादि सम्बन्धीय। अनुशतिकादि देखो।

आनुशासनिक (सं० त्रि०) अनुशासनाय हितम्, अनुशासन-ठञ्। १ शासनके पक्षमें हितकर, शासन-सम्बन्धीय, तादीबसे ताल्लुक रखनेवाला। (पु०) २ महाभारतका एक पर्व। इस पर्वमें मनुष्यके कर्तव्य कर्मपर कितना ही उपदेश लिखा है। (स्त्री०) आनुशासनिकी।

आनुश्रविक (सं० त्रि०) गुरुपाठादनुश्रूयते अनुश्रवो वेदस्तत्र विदितम्, ठक्। वेदविहित, श्रुतिपर आश्रित, बड़ोंके मुंहसे सुना जानेवाला। (स्त्री०) आनुश्रविकी।

आनुश्रातिक, आनुश्रविक देखो।

आनुषक्, आनुषक् देखो।

आनुषङ्गिक (सं० त्रि०) अनुषङ्गादागतम्, ठक्। १ सम्बन्धित, अमराही, लाहु। २ अनुरूप, हमजिन्स-वत, बराबरका। ३ अपरिहार्य, नाज़ुजीर, आ जानेवाला। ४ व्याकरणानुसार—अप्रधान,अध्याहार्य,अभ्यूहनीय, महज़ूफ़, नाकिस, जिसके एक हिस्सा न रहे। (स्त्री०) आनुषङ्गिकी। अनुषङ्ग देखो।

आनुषक् (सं० अव्य०) आ-अनु-सञ्ज-क्विप्। आनुपूर्वी, परिपाटीसे, बिलानागा, मुतवातिर, लगातार।

आनुषण्ड (सं० त्रि०) अनुषण्ड देशे भवम्, कच्छादि० अण्। अनुषण्ड देशजात, जो अनुषण्ड मुल्कमें पैदा हो। (स्त्री०) आनुषण्डी।

आनुषण्डक, आनुषण्ड देखो।

आनुषक (सं० त्रि०) प्रतिपत्तिशील, तरक्की देनेवाला। पाजुषकको सामर्थ आनुसूक और आनुसूक भी लिखते हैं।

आनुष्टुभ् (सं० त्रि०) अनुष्टुप् छन्दोऽस्य, उत्सादि० अञ्। १ अनुष्टुप् छन्दोयुक्त। अनुष्टुभ इदम्, अञ्। २ अनुष्टुप्-सम्बन्धीय। (स्त्री०) स्वार्थे अण्,

छन्दसोऽणीवभावः। १ अनुष्टुप् छन्द। (स्त्री०) आनुष्टुभी।

आनुष्टुभ, आनुष्टुभ् देखो।

आनुसाय्य (सं० त्रि०) अनुसायं भवम्, परिमुखादि० ञ्य। सन्ध्याके पश्चात् जात, शामके बाद पैदा होनेवाला।

आनुसीत्य (सं० त्रि०) अनुसीतं भवम्, परिमुखादि० ञ्य। लाङ्गलके पश्चात् जात, हलके पीछे पैदा होनेवाला।

आनुसीय, आनुसीत्य देखो।

आनुसूय (सं० त्रि०) अनुसूयया अत्रिपत्न्या दत्तम्, अण्। अनुसूया-दत्त, अत्रिपत्नी अनुसूयाका दिया हुआ।

आनुसृतिनेय (सं० त्रि०) अनुसृतौ भवम्, सख्यादि० ठक् कल्याण्यादि० इनङ् च। अनुसरण-जात, पश्चाद्गमन-जात, पैरोकारीसे पैदा होनेवाला।

आनुसृष्टिनेय (सं० त्रि०) अनुसृष्टौ भवम्, ठक् इनङ् च। १ सृष्टिके पश्चाद्जात, खल्क़से पीछे पैदा होनेवाला। २ दानके पश्चाद् जात, बख़्शिशसे पीछे निकलनेवाला।

आनुहारति (सं० त्रि०) अनुहरति भवम्, धान्यादि० इञ्, अनुशतिकादित्वाद्द्विपदवृद्धिः। हरण करनेवालेसे पश्चाद् उत्पन्न, जो चोरानेवालेसे पीछे पैदा हो।

आनूक (वै० अव्य०) विपुल, वहुशः, बहुतायतसे।

आनूप (सं० त्रि०) अनूपदेशे भवम्, अनूप-अण्। १ अनूपदेश जात, तर मुल्कमें पैदा होनेवाला। २ जलबहुल, जलप्राय, शोरबोर, तरबतर, मरतूब, भीगा। (पु०) ३ महिष, भैंस। ४ अनूपदेशवासी प्राणीमात्र, मुल्क मरतूबका जानवर। ५ सागर निकटवर्त्ती गुजरातका अंश, वर्त्तमान ओखमण्डल। ६ हिज्जलवृक्ष, समुन्दर फल। ७ मनवासका पेड़। ८ भौम जलविशेष, मुल्क मरतूबका पानी। ९ जल, पानी। (स्त्री०) आनूपी।

आनूपक (सं० त्रि०) आनूपो जलप्रायदेशस्तो मनुष्यस्तस्मिन् तत्स्थिते इवसिते च वाच्ये वुञ्। मनुष्य तत्स्थयोर्वुञ्। पा ४।२।१२७। जलप्राय देशमें रहनेवाला, मुल्कमरतूबका बाशिन्दा।

आनूपजल (सं० क्ली०) अनूपदेशस्य जल, मुल्कमरतूबका पानी। यह स्वादु, स्निग्ध, गुरु एवं पित्तहर होता और पामा, कण्डू, वात, कफ तथा ज्वर उत्पन्न करता है। (राजनिघण्टु)

आनूपजाङ्गलसाधारणमांस (सं० क्ली०) वक, हरिण, मृग, क्रोड़ वा सारङ्गका मांस, किसी किस्मके जानवरका गोश्त। यह लघु, स्वादु, बल्य, वृष्य और रुच्य होता है।

आनूपपक्षिमांस (सं० क्ली०) सारस, हंस, चक्रवाकादिका मांस, पानीमें रहनेवाली चिड़ियाका गोश्त। यह शीतल, स्निग्ध, वात एवं कफको दूर करनेवाला और गुरु होता है। (राजनिघण्टु)

आनूपभूमि (सं० स्त्री०) सजलभूमि, तरज़मीन्।

आनूपमांस (सं० क्ली०) जलप्रिय जीवका मांस, पानीसे मुतअल्लक़ रखनेवाले जानवरका गोश्त। यह मधुर, स्निग्ध, गुरु, अग्निमान्द्यकर, कफकर, मांसपोषक, अभिष्यन्दि और हित है। (भावप्रकाश)

आनूपवर्ग (सं० पु०) अनूपदेशस्थ प्राणीका वर्ग, मुल्क-मरतूबके जानवरका ज़ख़ीरा। यह पञ्चविध होता है—कुलचर, प्लव, कोशस्थ, पादी और मत्स्य। गज, गो आदि कूलचर पशु ठहरता, जिसका मांस वातहर, वृष्य और मधुर होता है। हंस, सारस आदि प्लव बोला जाता, भक्ष्य मांस रक्त पित्तादिको दूर करता है। शङ्ख आदि कोशस्थ कहाता; उसका मांस स्वादु रस एवं पाकत्वादि गुणसे युक्त रहता है। कूर्म, कुम्भीरादिका नाम पादी है। (सुश्रुत)

आनृण्य (सं० क्ली०) अनृणस्य भावः कर्म वा ष्यञ्। ऋणशून्यता, क़र्ज़से छुटकारा पानेका काम।

आनृत (सं० त्रि०) अनृतं शीलमस्य, अनृत-अण्। छत्रादिभ्यो णः। पा ४।४।६२। सर्वदा मिथ्याका अनुशीलन करनेवाला, जो हमेशा नाराइतीका मश्क़ बढ़ाता हो।

आनृतक (सं० त्रि०) आनृताकीर्ण, झूठोंसे भरा हुआ।

आनृशंस, आनृशंस्य देखो।

आनृशंसि (सं० पु०-स्त्री०) अनृशंसस्यापत्यम्, इञ्। दयालुका अपत्य, रहीमकी औलाद।

आनृशंसीय (सं० त्रि०) आनृशंसौ भवम्, आनृशंसि-छ। गहादिभ्यश्च। पा ४।२।१३८। दयालुके अपत्यसे उत्पन्न, जो दयालुकी औलादसे पैदा हो।

आनृशंस्य (सं० क्ली०) अनृशंसस्य भावः कर्म वा, ष्यञ्। १ अनिष्ठुरता, अनुकम्पा, नरमी, मेहरबानी, रहम। (त्रि०) स्वार्थे ष्यञ्। २ कारुण्ययुक्त, मेहरबान्।

आने—आनाका बहुवचन। आना देखो।

आनेगांव (हिं० पु०) अन्य ग्राम, दूसरे गांव।

आनेतव्य, आनेय देखो।

आनेता, आनेतृ देखो।

आनेतृ (सं० पु०) आ-नी-तृच्। आनयनकर्ता, लानेवाला, जो ले आता हो। (स्त्री०) आनेत्री।

आनेय (सं० त्रि०) आनीयते, आ-नी कर्मणि यत्। "आनेयोऽन्यः घटादिः गेयमुलादेरानीतो दक्षिणाग्निश्च।" (सिद्धान्तकौमुदी) एक देशसे देशान्तरको लानेयोग्य, लाया जानेवाला।

आनेवाला (हिं० वि०) अन्य स्थानसे वक्ताके समीप उपस्थित होनेवाला, जो दूसरी जगहसे बोलनेवालेके पास जाकर पहुंचता हो।

आनैपुण (सं० क्ली०) अनिपुणस्य भावः, अण् उत्तरपदवृद्धिः। अचातुर्य, अपाटव, बेसलीकगी, अनाड़ीपना।

आनैपुण्य, आनैपुण देखो।

आनैश्वर्य (सं० क्ली०) अनीश्वरस्य भावः, अनीश्वर-ष्यञ्, उत्तरपदवृद्धिः पूर्वपदस्य वा वृद्धिः। १ शक्ति वा आधिपत्यका अभाव, ताकत या हुकूमतकी अदममौजूदगी। २ ऐश्वर्य विरोधी सांख्यादि मतसिद्ध बुद्धिका धर्म। धर्म, अधर्म, ज्ञान, अज्ञान, वैराग्य, अवैराग्य, ऐश्वर्य, अनैश्वर्य, आठ प्रकार बुद्धिका धर्म भावरूप होता है। उसमें ज्ञानभिन्न सभी बन्धका हेतु है।

आन्त (सं० त्रि०) अम-क्त, वा इड़भावः, उपधा दीर्घः। अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति। पा ६।४।१५। १ पीड़ित, तकलीफज़दा। २ अमित, बेहद। "आन्तः अमितः।" (सिद्धान्तकौमुदी) ३ निर्गत, गुजरा हुआ। ४ अन्तिम, आखिरी। (अव्य०) ५ अन्ततक, पूरे तौरपर, बिलकुल।

आन्तर (सं० त्रि०) अन्तर्मध्ये भवम्, अण्। अभ्यन्तर, अभ्यन्तर-जात, बीचसे पैदा होनेवाला।

आन्तरतम्य (सं० क्ली०) अन्तरतमस्य अत्यन्तसदृशस्य भावः, ष्यञ्। सौसादृश्य, निहायत मुत्तसिल नातेदारी।

आन्तरप्रपञ्च (सं० पु०) अन्तरश्चासौ प्रपञ्चः विस्तारश्चेति, कर्मधा०। अभ्यन्तरजात आध्यात्मिक द्वैतविस्तार, दिलके अन्दर पैदा होनेवाला दुयीका झगड़ा।

आन्तरागारिक (सं० त्रि०) अन्तरागारस्य धर्म्यम्, ठक्। अन्तःपुरकी रक्षाके निमित्त नियुक्त पुरुषसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो जनानेकी हिफ़ाजत करनेवाले शख्सके मुताल्लिक हो।

आन्तराल (सं० त्रि०) अन्तरालं मध्यस्थितिं वेत्ति, अण्। शरीरके मध्य आत्माकी स्थिति जाननेवाला, जो जिस्मके अन्दर रूहका क़याम समझता हो।

आन्तरिक (सं० त्रि०) अन्तरे भवम्, ठक्। १ अन्तर्गत, अन्दरूनी, भीतरी। २ मानसिक, दिली, दमाग़ी।

आन्तरिक्ष (सं० त्रि०) अन्तरिक्षे भवम्, अण्। आकाश-जात, आसमान्से पैदा होनेवाला। (क्ली०) २ आकाश, आसमान्।

आन्तरिक्षजल (सं० क्ली०) आकाश-सलिल, आसमान्का पानी। यह चतुर्विध होता है—धार, कार, तौषार और हैम। वर्षाभवको धार, वर्षोपलोद्भवको कार, नीहार-तोयको तौषार और प्रातर्हिमोद्भवको हैम जल कहते हैं। फिर धार भी द्विविध रहता है—सामुद्र और गाङ्ग। आश्विनमें स्वाति एवं विशाखापर रवि रहनेसे मेघ जो वारि छोड़ता, वह गाङ्ग और मार्गशीर्षादि मासमें पड़नेवाला सामुद्र कहाता है। गाङ्ग गुणाढ्य, अदोष, स्वादु, शीतल, रुचिप्रद, कफपित्तघ्न, एवं पाचन; और सामुद्र शीत, गुरु तथा कफ-वातकर रहता, किन्तु दोनो प्रकारका जल रसाश्रयमें वन भूमिपर गिरनेसे

नाना रसत्वको प्राप्त हो जाता है। दधिलिप्त रौप्य पात्रमें शाल्योदनपिण्ड डालकर वर्षामें रख देनेपर यदि एक मुहूर्तमें नहीं बिगड़ता, तो धार जल गाङ्ग कहलाता है। (राजनिघण्टु)

आन्तरीक, आन्तरिक देखो।

आन्तरीपक (सं० त्रि०) अन्तरीपे भवम्, वुञ्। अन्तरीप-जात, टापू, जमीन्की गर्दनमें पैदा होनेवाला।

आन्तर्गणिक (सं० त्रि०) अन्तर्गणं भवम्, ठक्। गणमध्य जात, एक गण वा जातिकी भिन्न श्रेणीसे उत्पन्न।

आन्तर्गेहिक (सं० त्रि०) अन्तर्गेहं भवम्, ठक्। गृह-मध्यजात, मकान्के अन्दर होनेवाला।

आन्तर्वेश्मिक, आन्तर्गेहिक देखो।

आन्तर्य (सं० क्ली०) अन्तरस्य भावः, ष्यञ्। अन्त-वर्तित्व, निस्वायत मुत्तसिल नातेदारी।

आन्तिका (सं० स्त्री०) अन्तिकेव, अण् अजादि० टाप्। ज्येष्ठा भगिनी, अन्तिका, बड़ी बहन।

आन्त्र (सं० क्ली०) अमत्यनेन, अम-गतौ क्त, उपधा दीर्घः। अमिचिमिदि शसिभ्यः क्तः। उण् ४।१६३। अनुनासिकस्य क्विझलोःक्ङिति। पा ६।४।१५। १ वायुवाहक नाड़ीविशेष, हवा निकालनेवाली एक आंत। (त्रि०) अन्त्रस्येदम्, अण्। २ अन्त्रसम्बन्धीय, आंतसे तासुक रखनेवाला। (स्त्री०) आन्त्री।

आन्त्रिक (सं० त्रि०) अन्त्रसम्बन्धीय, आंतसे तासुक रखनेवाला।

आन्द (सं० पु०) घृणित मनुष्योंकी एक श्रेणी, गन्दे लोगोंकी एक जात।

आन्दोल (सं० पु०) पुनः पुनः दोलन, झुलावा।

आन्दोलक (सं० पु०) आन्दोलयति, आन्दोल-ण्वुल्। १ दोलनकर्ता, झुलानेवाला। २ किसी विषय-की चालना करनेवाला, जो कोई बात उठाता हो।

आन्दोलन (सं० क्ली०) आन्दोल-भावे ल्युट्। १ प्रेङ्खण, झोंका, पेंग। २ कम्प, कंपकंपी। ३ अनु-सन्धान, खोज। ४ विवेचना, परख।

आन्दोलित (सं० त्रि०) चालित, प्रेङ्खित, झोंका खाये हुआ।

आन्धस (सं० पु०) पक्क शालिका मण्ड, भातका मांड़।

आन्धसिक (सं० पु०) अन्धो भक्तं शिल्पमस्य, ठक्। पाचक, नानबायी।

आन्धीगव (सं० क्ली०) अन्धीगुना तन्नामक मुनिना दृष्टं साम, अण्। तृतीय सवनमें गेय आर्भवपवमान सूक्तगत सूक्त विशेष।

आन्ध्य (सं० क्ली०) अन्धस्य भावः, ष्यञ्। अन्धता, नाबीनायी, अंधलायी।

आन्ध्र (सं० पु०) आ-अन्ध-रण्। १ जनपद विशेष, तामिल और तेलगु मुल्क। (त्रि०) २ आन्ध्रदेश-सम्बन्धीय, तेलगु और तामिल मुल्कसे तासुक रखने-वाला। अन्ध्र और अन्ध्रराजवंश देखो।

आन्ध्रदेशपूग (सं० क्ली०) अन्ध्रदेशका पूग, तेलगु और तामिल मुल्ककी सुपारी। यह पकनेपर मधुर, किञ्चित् अम्ल, तुवर, वातकफघ्न और मुखजाड्यकर होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

आन्न (सं० त्रि०) अन्नं लब्ध्वा, ण। अन्नाराणः। पा ४।४।८५। १ सन्तुष्ट, आसूदा, खा चुकनेवाला, जो खानेको पा गया हो। २ अन्न-सम्बन्धीय, अनाजसे तासुक रखनेवाला। (स्त्री०) आन्नी।

आन्यतरेय (सं० त्रि०) अन्यतरस्यापत्यम्, ठक्। अन्यतरसे उत्पन्न। (स्त्री०) आन्यतरेयी।

आन्यभाव्य (सं० क्ली०) अन्यो भावो यस्य अन्यभावः तस्य भावः, ष्यञ्। अन्यरूपत्व, दूसरी बनावट।

आन्वयिक (सं० त्रि०) अन्वये प्रशस्तकुले भवम्, ठञ्। १ प्रशस्त-कुलजात, खान्दानी, अच्छे घरवाला। २ क्रमानुगत, बाक़रीना, ठीक।

आन्वष्टक्य (सं० क्ली०) अन्वष्टकेव, अन्वष्टका स्वार्थे ष्यञ्। अन्वष्टका शब्दार्थ। "अपरेद्युरान्वष्टक्यम्।" (आश्वलायनगृह्यसूत्र) अन्वष्टका देखो।

आन्वाहिक (सं० त्रि०) अहनि अहनि अन्वहं तत्र भवम्, ठञ्, अनुशतिकादित्वात् द्विपदवृद्धिः। दैनिक, रोज़ाना, हर रोज होनेवाला।

आन्वीक्षिकी (सं॰ स्त्री॰) अन्वीक्षया ईक्षा पर्यालोचना सा प्रयोजनमस्याः, ठञ्। १ तर्कविद्या, इल्ममन्तिक। 'आन्वीक्षिकी दण्डनीतिस्तर्कविद्यार्थशास्त्रयोः।' (अमर) २ गौतम-प्रणीत न्यायविद्या। अक्षपादने इसे पांच अध्यायमें पूरा किया है। आदिम सूत्रमें प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, जाति और निग्रहका विषय है। इन्हीं सकल ज्ञानके तत्त्वज्ञान हेतु मोक्ष मिलता है। अन्वीक्षा शीलमस्याः तस्यै हितं वा, ठक्। ३ दुर्गा।

आन्वीप (सं॰ क्लो॰) अनुगता अपो यस्मिन्, अनु-अप-ईत्। व्यन्तरुपसर्गेभ्योऽप ईत्। पा ६।३।९७। अनुकूलत्व, मेहरबानी।

आन्वीपक (सं॰ त्रि॰) आन्वीपं वर्तते, ठक्। अनुकूल, मेहरबान्।

आप (सं॰ पु॰) आप्यते, आप कर्मणि घञ्। १ अष्ट वसुके अन्तर्गत चतुर्थ वसु। आठो वसुके नाम यह हैं,—धव, ध्रुव, सोम, आप, अनिल, अनल, प्रत्यूष, प्रभास। अपां समूहः, अण्। २ जलसमूह, पानीका ढेर। आप्यते सर्वत्र व्याप्यते। ३ आकाश, सब जगह मौजूद रहनेवाला आसमान्। समासान्तमें इस शब्दका अर्थ 'पानेवाला' लगता है। जैसे—दुराप, मुश्किलसे मिलनेवाला। (हिं॰ सर्व॰) ४ स्वयं, खुद। इस अर्थमें यह उत्तम, मध्यम और अन्य तीनो पुरुषके लिये आता है। जैसे—मैं आप कहता हूं, तुम आप चले जावो, वह आप समझ लेगा। ५ तुम। ६ वह। उपरोक्त दोनो अर्थमें यह आदरसूचक है। ७ परमेश्वर।

आप-आप करना (हिं॰ क्रि॰) आदर देना, इज्ज़त बढ़ाना, खुशामद देखाना।

आपक (सं॰ त्रि॰) आप-व्याप्ती ण्वुल्। प्रापक, पहुंचानेवाला, जो किसीको कोई चीज़ या जगह वग़ैरह मुहैया करता हो।

आपकर (सं॰ त्रि॰) अपकरे भवम्, अण् अच्। अपकार-जात, नागवार, बुरा।

आपक्व (सं॰ क्लो॰) आ ईषत् पक्वम्, आ-पच्-क्त। अल्प पक्व द्रव्य, कुछ पकी हुई चीज़।

आपचिति (सं॰ पु॰) अपचितस्यापत्यम्, इञ्। अपचितका पुत्र। (स्त्री॰) अञ् टाप्। अपचिता। क्रौड्यादिभ्यश्च। पा ४।१।८०। अपचितकी कन्या।

आपगा (सं॰ स्त्री॰) अपां समूहः आपस्तेन तस्मिन् वा गच्छति, अप्-अण्-गम-ड। नदी, दरया।

'नदी सरित् इत्यादि निम्नगापगाः।' (अमर) आपगा देखो।

आपगाजल (सं॰ क्लो॰) नदीजल, दरयाका पानी। यह दीपन, रूक्ष, वातल, लघु और लेखन होता है। (मदनपाल)

आपगावारि, आपगाजल देखो।

आपगासलिल, आपगाजल देखो।

आपगेय (सं॰ पु॰) आपगायां गङ्गायां भवः। गङ्गाके पुत्र भीष्म, गाङ्गेय।

आपच्चिक (सं॰ त्रि॰) आपदं चिक्कति छिनत्ति, आपद-चिक्क-अण्, पृषो॰ दलोपः। आपत् उड़ा देनेवाला, जो मुसीबत छोड़ा देता हो।

आपटव (सं॰ क्लो॰) न सन्ति पटवोऽस्य तस्य भावः। अपाटव, भद्दापन।

आपण (सं॰ पु॰) आपणायते विक्रयार्थं सम्यक् स्तूयते प्रशस्यते द्रव्यमत्र, आपण पृषोदरादित्वात् आधारे घ। क्रयविक्रयस्थान, हट्ट, बाज़ार, दुकान, बेचनेके लिये जिस जगह अपनी-अपनी चीज़की तारीफ़ की जाये।

आपणिक (सं॰ त्रि॰) आपणान्निषद्याया आगतम्, ठक्। १ हट्टागत, बाज़ारसे आया हुआ, बाज़ारू। आपणस्य धर्म्यम्। २ वाणिज्यसम्बन्धी, सौदागरी, तिजारती। (पु॰) आपणस्य विक्रयः राजग्राह्यः। ३ हट्टका राजकर, बाज़ारकी चुङ्गी। आपणायते विक्रयार्थं द्रव्यं स्तौति, आ-पण-इकन्। आङि पणिपनि-पतिखनिभ्यः। उण् २।४५। ४ वणिक्, सौदागर।

'आपणिको वणिक्।' (उज्ज्वलदत्त)

आपत्, आपद देखो।

आपत (हिं॰) आपद देखो।

आपतत् (सं॰ त्रि॰) सन्निकृष्ट, आ पड़नेवाला, जो पास पहुंच रहा हो। (स्त्री॰) आपतन्ती।

आपतन (सं॰ क्लो॰) आ-पत-भावे ल्युट्। १ आग-

मन, आमद। २ अवतरण, उतार, होनी। ३ प्राप्ति, पहुंच। ४ ज्ञान, समझ।

आपतायी (हिं॰ वि॰) आपद् उठानेवाला, जो आफत डाल देता हो।

आपतालिका (सं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष।

आपति (सं॰ पु॰) आ-पत-इन्। १ सततगामी वायु, टूट पड़नेवाली हवा। २ सदागति, चलफिर। (वै॰ त्रि॰) ३ सन्निकृष्ट, आ पड़नेवाला, जो झपटा चला आता हो।

आपतिक (सं॰ पु॰) आपतति शीघ्रम्, आ-पत-इकन्। १ श्येनपक्षी, बाज़ चिड़िया। (त्रि॰) दैवायत्त, इत्तिफ़ाक़ी, आपड़नेवाला। 'श्येनदैवायत्तयोश्च मत आपतिको बुधैः।' (उणादिकोष)

आपतित (सं॰ त्रि॰) आ-पत-क्त-इट्। १ हठात् आगत, इत्तिफ़ाक़ी, जो आ पड़ा हो। २ अवतरित, उतरा हुआ।

आपत्कल्प (सं॰ पु॰) आपदि उचितः कल्पः विधिः, शाक॰ तत्। आपत्कालमें किया जानेवाला कर्म, जो काम आफ़त पड़नेसे किया जाता हो।

आपत्काल (सं॰ पु॰) आपद्युक्तः कालः। आपद्-युक्त काल, मुसीबतका वक़्त।

आपत्कालिक (सं॰ त्रि॰) आपत्काले भवम्, ठञ् छिठ_वा। काश्यादिभ्यष्ठञ्‌ञिठौ। पा ४।२।११६। आपत् काल-जात, मुसीबतके वक़्त होनेवाला। (स्त्री॰) आपत्कालिका वा आपत्कालिकी।

आपत्ति (सं॰ स्त्री॰) आ-पद-क्तिन्। १ आपद्, आफ़त। २ जीवनोपायकी अप्राप्ति, रोज़ी रोज़गारकी तकलीफ़। ३ प्राप्ति, हासिल। ४ रोगादि द्वारा अभिभूत अवस्था, बीमारी वग़ैरहसे जकड़ जानेकी हालत। ५ अर्थादिकी सिद्धि, दौलत वग़ैरहकी याफ़्त। ६ अनिष्ट प्रसङ्गकी अर्थापत्ति, बुरी बातका एतराज़। ७ व्याप्यके आहार्य हेतु व्यापकमें उसका आरोप, किसीके साथ रिश्तेदारीका दाखिल।

आपत्य (सं॰ त्रि॰) अपत्याधिकारे विहित अण्। आपत्यस्य च तद्धितेऽनाति। पा ६।४।१५१। सन्तानसम्बन्धीय, औलादी। व्याकरणमें पैतृक संज्ञाओंके विधानसे सम्बन्ध रखनेवालेको आपत्य कहते हैं। (स्त्री॰) आपत्यी।

आपथि (वै॰ त्रि॰) अभिमुखं पन्थाः यस्य, वेदे निपातनात् इत् समा॰। सम्मुखके पथसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो राहमें हो।

आपथी (सं॰ पु॰) यात्री, मुसाफ़िर, राह चलनेवाला आदमी।

आपथ्य, आपथी देखो।

आपद् (सं॰ स्त्री॰) आ-पद-क्विप्। सम्पदादिभ्यः क्विप्। पा ३।३।९४। विपत्ति, दुर्घटना, आफ़त, भड़क्का।

आपद (हिं॰) आपद देखो।

आपदकाल (सं॰ पु॰) आपदा कृतोऽकालः, शाक॰ तत्। विपद् द्वारा पड़ा हुआ समय, जो वक़्त आफ़तके ज़रिये वाके हो।

आपदा, आपद देखो।

आपदेव (सं॰ पु॰) आपस्य जलसमूहस्य देवः। १ जलाधिष्ठातृदेवता, वरुण, जलदेवता। २ ऐष्टिक-प्रायश्चित्त, खेटपीठमाला, गोत्रप्रवरनिर्णय, भक्तिकल्प-तरु और रुद्रपद्धति नामक ग्रन्थके रचयिता। ३ वेदान्त-सारदीपिका-रचयिता। ४ सापिण्ड्यकल्पलता-रच-यिता। ५ स्फोटकनिरूपण-रचयिता। ६ अनन्त-देवके पुत्र, आपदेवके पौत्र, अनन्तदेवके पिता और गोविन्दके शिष्य। इन्होंने अधिकरणचन्द्रिका, मीमांसा-न्यायप्रकाशिका, वादकौतूहल, स्मृतिचन्द्रिका और आपदेवीय नामक स्मृतिग्रन्थ लिखा है।

आपद्गत (सं॰ त्रि॰) विपद्में पड़ा हुआ, जो तकलीफ़में आ गया हो।

आपद्ग्रस्त (सं॰ त्रि॰) हतभाग्य, कमबख़्त, तक-लीफ़का मारा।

आपद्धर्म (सं॰ पु॰) आपदि आपत्काले अनुष्ठेयो धर्मः, शाक॰ तत्। १ विपद्कालका धर्मानुष्ठान, मुसीबतके वक़्तका मज़हब। आपद् आनेसे ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्यके लिये अपना धर्म निबाहना कठिन है। ऐसे समय शास्त्रने उनके लिये जो कर्तव्य कर्म ठहराया, उसीका नाम आपद्धर्म है। (क्ली॰) आपद्धर्ममधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, अण्।

२ महाभारतका एक क्षुद्र पर्व। यह शान्तिपर्वके अन्तर्गत है।

आपधाप, आपाधापी देखो।

आपन (सं॰ क्ली॰) आप भावे ल्युट्। १ प्राप्ति, पहुंच। कर्मणि-ल्युट्। २ मरिच, मिर्च। (हिं॰ सर्व॰) ३ अपना, स्व जाति।

"आपन चरित कहा मैं गायी।" (तुलसी)

आपनपो, अपनपी देखो।

आपनपौ, अपनपौ देखो।

आपना, अपना देखो।

आपनिक (सं॰ पु॰) आपनाय्यते जनैः स्तूयन्ते, आपन-इकन्। १ इन्द्रनीलमणि, सफ़ीर, नीलम्। २ किरात, व्याध, सैयाद, बहेलिया।

'आपणिकः इन्द्रनीलः किरातश्च।' (उज्ज्वलदत्त)

आपनेय (सं॰ त्रि॰) आ-अप-नी कर्मणि यत्। प्राप्त किये जाने योग्य, पाया जानेवाला।

आपनो, अपना देखो।

आपन्न (सं॰ त्रि॰) आ-पद्-क्त। १ आपद्ग्रस्त, मुसीबतज़दा, तकलीफ़में पड़ा हुआ। २ प्राप्त, पाया हुआ।

आपन्नसत्त्वा (सं॰ स्त्री॰) आपन्नं प्राप्तं सत्त्वं गर्भरूपः प्राणी यया, बहुव्री॰। गर्भिणी नारी, हामिला औरत।

'आपन्नसत्त्वास्याद गुर्व्यन्तर्वत्नी च गर्भिणी।' (अमर)

आपन्नार्ति-प्रशमनफल (सं॰ त्रि) दुःखियोंकी पीड़ा दूर करनेवाला, जो आफ़तज़दोंका दर्द मिटा देता हो।

आपमित्यक (सं॰ त्रि॰) आपमित्य परिवर्त्य निर्वृत्तम्, कक्। अपमित्य याचिताभ्यां ककन्कनौ। पा ४।४।२१। १ विनिमयसे क्रय किया हुआ, जो बदलेमें खरीदा गया हो। (क्ली॰) २ विनिमय द्वारा क्रय किया हुआ सम्पदादि, जो जायदाद वगैरह बदलेमें मिली हो। (स्त्री॰) आपमित्यकी।

आपया (वै॰ स्त्री॰) आपेन जलसमूहेन याति, आप-या-क। वेदोक्त नदी विशेष। यह कुरुक्षेत्रके मध्य सरस्वतीके समीप अवस्थित और पुराणमें आपगा नामसे प्रसिद्ध है।

आपयिता, आपयितृ देखो।

आपयितृ (सं॰ पु॰) अप-णिच्-तृच्। प्रापणकर्ता, मुहैया करने या पहुंचानेवाला।

आपराधय्य (सं॰ क्ली॰) अप-राध-णिच् बाहु॰ य अपराधयः तस्य भावः, ष्यञ्। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।१२४। अपराधकर्तृत्व, गुनहगारी।

आपराह्णिक (सं॰ त्रि॰) अपराह्णे भवम्, वुन्। पूर्वाह्णापराह्णार्द्रामूलप्रदोषावस्करादवुन्। पा ४।३।१८। अपराह्ण-जात, अपराह्ण-व्यापक, दिनके तीसरे पहर होनेवाला। (स्त्री॰) आपराह्णिकी।

आपरूप (हिं॰ वि॰) १ स्वरूपविशिष्ट, अपनी सूरत-शकल रखनेवाला। (सर्व॰) २ स्वयं आप, खुद वह, हुज़ूर, हज़रत।

आपर्तुक (सं॰ पु॰) ऋतुमधिकृत्य अध्यायः तत्र विहितः कल्पः, अप-ऋतु संज्ञायां कन् स्वार्थे अण्। १ ऋतुविशेषमें यागादिके निमित्त निर्दिष्ट अध्याय-बोधक वेदका कल्पग्रन्थ। (त्रि॰) २ नियमित समयसे मुक्त, जो मौसमख़ासमें अटका न हो। (स्त्री॰) आपर्तुकी।

आपव (सं॰ पु॰) आपुनाति स्पर्शमात्रेण आपु जलं तदधिष्ठाता वरुणोऽपि आपुः तस्यापत्यम्, अण्। कल्पभेदसे वरुणके अपत्य वशिष्ठ मुनि। महाभारतीय आदिपर्वके ९९वें अध्यायमें इनका विवरण लिखा है। वशिष्ठ देखो। आपं जलसमूहं वाति आश्रयतया प्राप्नोति, आप-वा-क। २ नारायण, परमपुरुष। सृष्टिसे प्रथम नारायणका आवासस्थान जल रहा। इसका विशेष विवरण हरिवंशके १।२ अध्यायमें विद्यमान है।

आपवर्ग्य (सं॰ त्रि॰) अविकल्प मोक्ष देनेवाला, जो आखिरी निजात बख़्शता हो।

आपस् (सं॰ क्ली॰) आप्नोति व्याप्नोति प्रलये समस्तम्, आप-असुन्। आपः कर्माख्यायां ह्रस्वो नुट् च। उण् ४।२०७। १ जल, पानी। २ धार्मिक उत्सव, मज़हबी जलसा। ३ पाप, गुनाह।

आपस (हिं॰ स्त्री॰) आत्मीयता, रिश्ता, मेलजोल, भैयाचारी।

आपसदारी (हिं॰ स्त्री॰) रिश्तादारी, भाईबन्दी।

आपसी (हिं॰ वि॰) आत्मीय, सम्बन्धी, रिश्तेदार, मेली।

आपसे आप (हिं॰ क्रि॰ वि॰) स्वयं, स्वभावतः, खुदबखुद, अचानक, एकाएक।

आपस्कार (सं॰ क्ली॰) शरीरका मूल वा ग्रंथ, जिस्म या तनेका सिरा।

आपस्तम्ब (सं॰ पु॰) अप विपर्याय तस्मिन्भवः अण् आपः तस्य वारणे स्तम्ब इव। अष्टादश स्मृतिकारके मध्य एक ऋषि। तैत्तिरीय यजुर्वेदमें आपस्तम्ब नाम रहते भी ऋषिका विशेष विवरण नहीं मिलता। इन्होंने धर्मसूत्र, गृह्यसूत्र एवं कल्पसूत्र सङ्कलन किया है। आपस्तम्बस्मृति दश अध्यायमें सम्पूर्ण हुई, उसमें केवल प्रायश्चित्तका विधान है। आपस्तम्बका यज्ञपरिभाषामें लिखो है,—मन्त्र और ब्राह्मणको वेदके समान समझना चाहिये। "मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्।" (यज्ञपरिभाषा) किन्तु यह बात सब लोग नहीं मानते।

कितने ही कल्पसूत्रको भी वेदके समान बताते हैं। किन्तु गुरु प्रभाकरने उसे असङ्गत कहा है। उनके मतमें कल्पसूत्रका वेदत्व प्रतिपन्न हो नहीं सकता। "बौधायनापस्तम्बाश्वलायनकात्यायनादिनामाङ्किताः कल्पसूत्रादिग्रन्थाः निगम-निरुक्तषडङ्गग्रन्थाः मानवादिस्मृतयश्च अपौरुषेयाः धर्मबुद्धिजनकत्वात् वेदवत्। न च मूलप्रमाणसापेक्षत्वे न वेदवैषम्यमिति शङ्कनीयम्। उत्पन्नाया बुद्धेः स्वतःप्रमाण्याङ्गीकारेण निरपेक्षत्वात्। नैवं उक्तानुमानस्य कालात्ययोपदिष्टत्वात्। बौधायनसूत्रापस्तम्बसूत्रमित्येवं पुरुषनाम्ना ते ग्रन्था उच्यन्ते।" (जैमिनीय न्यायमालाविस्तर)

बौधायन, आपस्तम्ब, आश्वलायन, कात्यायन प्रभृतिके नामपर चलित कल्पसूत्रादि ग्रन्थ बने; निगम, निरुक्त एवं षडङ्ग तथा मन्वादि प्रणीत स्मृतिशास्त्र अपौरुषेय हैं। उपरोक्त समस्त ग्रन्थोंको देवतुल्य आदर देना चाहिये। क्योंकि उनसे धर्मबुद्धि उत्पन्न होती है। मूलप्रमाणकी अपेक्षा रहनेपर उन्हें वेदसे विभिन्न समझना उचित नहीं ठहरता। इसलिये उनसे जो ज्ञान निकलता, वह निरपेक्ष रहता और स्वतःसिद्ध प्रमाण माना जाता है। किन्तु यह युक्ति असङ्गत है। क्योंकि बहुकाल बीतनेपर उक्त अनुमान सिद्ध हुआ है। बौधायनसूत्र, आपस्तम्बसूत्र इत्यादि मनुष्योंके नामपर यह ग्रन्थ चलते हैं।

(पु॰-स्त्री॰) आपस्तम्बस्यापत्यम्, अञ्। अनृष्यानन्तर्ये बिदादिभ्योऽञ्। पा ४।१।१०४। २ आपस्तम्बका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य, आपस्तम्बकी औलाद। (स्त्री॰) आपस्तम्बी।

आपस्तम्बीय (सं॰ त्रि॰) आपस्तम्बस्येदम्, आपस्तम्बक, आपस्तम्बेन प्रोक्तमधीते वा, अण् बाहु॰ तस्य लुक्। १ आपस्तम्ब-सम्बन्धीय। २ आपस्तम्बका बनाया ग्रन्थ पढ़नेवाला।

आपस्तम्बेय (सं॰ त्रि॰) आपस्तम्बयां भवः, ढक्। आपस्तम्बकी कन्यासे उत्पन्न, जो आपस्तम्बकी लड़कीसे पैदा हो।

आपस्तम्भिनी (सं॰ स्त्री॰) अपां विकारः अण् आपस्तं स्तम्भते निवारयति, आप-स्तम्भ-णिनि-ङीप्। लिङ्गिनी लता।

आपा (हिं॰ पु॰) १ स्वीय भाव, अपना वजूद। २ स्वीय तत्त्व, अपनी बुनियाद। ३ दर्प, गुरूर। मुसलमान बड़ी बहन और महाराष्ट्र बड़े भाईको 'आपा' कहते हैं।

आपाक (सं॰ पु॰) आ समन्तात् पच्यते घटादि अत्र, आ-पच् आधारे घञ्। १ कुम्भकारका आवा, कुम्भारका पजावा। भावे घञ्। २ ईषत् पाक। ३ सम्यक् पाक। (अव्य॰) मर्यादार्थे अव्ययी॰। ४ पाक पर्यन्त, पकनेतक।

आपाकेस्थ (वै॰ त्रि॰) आवेमें खड़ा हुआ।

आपागणेश—गुजरातके प्रधान शासक। सन् १७६१ ई॰को सदाशिव रामचन्द्रके स्थानमें पेशवाकी ओरसे यह गुजरातके प्रधान शासक बनाये गये थे। इन्होंने मोमिन खानके साथ मित्रको तरह व्यवहार किया और खम्बातपर धावा मार उस वर्षके लिये चौरासी हजार रुपया कर लगया। पीछे यह डाकोरकी राह अहमदाबाद वापस आये थे।

आपाङ्ग्य (सं॰ क्ली॰) अपाङ्गे नेत्रप्रान्ते देयम्, अञ्। अपाङ्गदेय अभ्यञ्जन, आंखके किनारे लगनेवाला सुरमा।

आपाण्डु आपाण्डुर देखो।

आपाण्डुर (सं॰ त्रि) ईषत् विवर्ण, जर्दी-मायल, पीला सा।

आपात (सं॰ पु॰) आ सम्यक् पातः पतनम्। १ पतन, पड़ाव, धावा, झपट, पहुंच। आ हठात् पातः। २ अविवेचनापूर्वक आगमन, बेसोचेसमझे आ पड़नेकी हालत। ३ वर्तमान काल, जमाना-हाल। ४ उपक्रम, आगाज़। ५ समीप आगमन, पासकी पहुंच। आपतति यस्मिन्, आधारे घञ्। ६ पतन-काल, गिरनेका वक्त। ७ फेंकफांक। ८ धक्का। ९ घटना, सूरत। (त्रि॰) १० आगमनशील, झपट पड़नेवाला।

आपाततः (सं॰ अव्य॰) आपात-तसिल्। अकस्मात्, प्रथम आक्रमणपर, शीघ्र, पहली बारमें, फौरन्, बातकी बातमें।

आपातलतिका (सं॰ स्त्री॰) वृत्तरत्नाकरोक्त वैतालीय वृत्त विशेष। जिस वृत्तमें भगणसे उत्तर दो गुरुवर्ण लगता और अन्य समस्त वैतालीय-जैसा ही रहता, वह आपातलतिका कहाता है। (वृत्तरत्नाकर)

वैतालीय देखो।

आपातिन् (सं॰ त्रि॰) आक्रमणकारी, अधोगामी, वर्तमान, आ पड़नेवाला, उतारू, जो वाक़े हो। (पु॰) आपाती। (स्त्री॰) आपातिनी।

आपाद (सं॰ पु॰) १ फललाभ, आगति, पलटा।

आपादन (सं॰ क्ली॰) आ-पदि-णिच्-ल्युट्। १ आपत्ति-विषयीकरण, सम्पादकके ज्ञानद्वारा सम्पाद्यका निश्चय, रहनुमायी, पहुंचवानेकी हालत।

आपादमस्तक (सं॰ अव्य॰) आदिसे अन्ततक, बिलकुल, सरसे पैरतक।

आपाधापी (हिं॰ स्त्री॰) १ स्व-स्व कार्यकी चिन्ता, अपने-अपने कामकी फ़िक्र। २ लड़ायी-भिड़ायी, मारकाट।

आपान (सं॰ क्ली॰) आ सम्यक् पीयते सुरा अत्र, आधारे ल्युट्। १ पानभूमि, शराबकी दुकान्, साथमें बैठकर शराब पीनेकी जगह। २ भैरवीचक्र, शराब पीनेवालोंका जत्था। 'आपानं पानगोष्ठिका।' (अमर) भावे ल्युट्। ३ मिलित होकर सुरापान, सोहबतकी शराबख़ोरी।

आपानक, आपान देखो।

आपानमन्यु (वै॰ त्रि॰) पान करनेसे उत्साह देने-वाला, जो पीनेसे जोश बख़्शता हो। यह शब्द सोम-रसका विशेषण है।

आपापन्थी (हिं॰ वि॰) १ स्वीय मार्गका अवलम्बन करनेवाला, जो मनमानी राह पकड़ता हो।

२ सम्प्रदाय विशेष। इस सम्प्रदायको चले सौ वर्षसे अधिक नहीं गुज़रा। आपापन्थी एक प्रकारके रामात् होते और साथ ही बाउलोंका कुछ आचार-व्यवहार रखते हैं। इनमें मुसलमानी धर्मका गन्ध भी लग गया है। किसी ज्ञानवान् व्यक्तिके प्रथम यह सम्प्रदाय चलानेसे हम कह सकते,—सिवा हिन्दुवों और मुसलमानोंका धर्म मिलानेकी चेष्टाके इसमें दूसरी कोई बात नहीं। आपापन्थियों, सत्नामियों और पलटूदासियोंका व्यवहार प्रायः एक ही तरह रहता है।

सौ वर्षसे कम ही की बात है, कि वङ्गदेशान्तर्गत वीरभूम ज़िलेके मल्लारपुर ग्राममें मुन्नादास नामक कोई स्वर्णकार रहते थे। अयोध्यासे पश्चिम माड़वा ग्राममें उनकी गद्दी रही। मुन्नादासके शिष्यका गुरु-दास और गुरुदासके चेलेका नाम भगवानदास था। प्रतिवर्ष अग्रहायण मासके मध्य माड़वा ग्राममें मेला लगता है। उसी समय गुरुकुण्डमें नहानेको अनेक शिष्य जाते और गद्दीके महन्तको प्रणाम करते हैं।

मुन्नादास किसीके शिष्य न रहे। वह अपने मनको ही गुरु मानते थे। आपापन्थी कहा करते हैं,—

रामानुजकी फौजमें बारा बाड़ी पोल।
आपापन्थी मनमुखी फिरता टोंपी टोल॥

इस दोहेके 'मनमुखी' शब्दसे आपापन्थी सम्प्रदायके गुरुका खासा परिचय मिलता है। जो अन्य किसी को गुरु नहीं समझता और मनमाना काम करता, वही मनमुखी होता है। मुन्नादासने प्रथम यही किया था। उन्होंने अपने मनसे उपदेश लेने बाद इस मतको चलाया। किन्तु आजकल आपापन्थियोंको प्रथम राममन्त्र सुनाया जाता है। गद्दीके महन्त

और उदासीन गृहस्थोंके गुरु होते और शिष्योंको मन्त्रदीक्षा देते हैं।

आपापन्थियोंके मध्य गृही एवं उदासीन दो प्रकारके लोग हैं। उदासीन गेरुआ वस्त्रका कुरता, कौपीन और साफा पहनते हैं। किसी-किसीके गलेमें तुलसीकी गुरिया और नाकसे कपालतक ऊर्ध्व पुण्ड्र भी देखते हैं। केश रखनेका नियम विभिन्न है। कोई मत्था मुंडवा डालता और कोई दाढ़ी मूछ फटकारता है। महन्तोंके गलेमें जो ऊर्णामयी माला रहती, वह सेली कहाती है। उन्हें दास या साहब कहते हैं। परस्पर मुलाकात होनेसे 'बन्दगी साहब' बोलकर अभिवादन देना पड़ता है। प्रवाद है,—पहले आपापन्थियोंके शायद किसी प्रकारका सम्प्रदायिक चिह्न न रहा।

उदासीन राममन्त्रके जपसे मनको दृढ़ बना सकनेपर गायत्री-साधन करते हैं। अपने शुक्रके पीनेका नाम गायत्री-क्रिया है। हाथमें रख मन्त्र-पाठपूर्वक साधक पहले अपने शुक्रसे कपालपर ऊर्ध्व पुण्ड्र देता, फिर नेत्रमें अञ्जनकी तरह किञ्चित् लगा अवशिष्ट पी जाता है। इसका विशेष विवरण सतनामी शब्दमें देखो।

आपामर (सं० अव्य०) मर्यादार्थे अव्ययी०। पामर पर्यन्त, ग़रीबतक, सब।

आपायत (हिं० वि०) आप्यायित, आसूदा, छका हुआ।

आपायिन् (सं० त्रि०) आ पिबति, आ-पा-णिनि। सुरापानकर्ता, मद्यपायी, शराबखोर, शराबी, शराब पीनेवाला, जिसे शराब पीनेका शौक़ रहे। (पु०) आपायी। (स्त्री०) आपायिनी।

आपालि (सं० पु०) आ-पा भावे क्विप् आप: सम्यक् पानं शोणितादे: तदर्थमलति व्याप्नोति केशान्, अल-इन्। केशकीट, जूं, चिल्लड़।

आपि (सं० पु०) आप्-णिच्-इन्। १ धनादि प्रापक, दौलत वग़ैरह मुहैया करनेवाला। आप्यते, आप कर्मणि इन्। २ आप्तबन्धु, रफ़ीक़, साथी।

आपिञ्जर (सं० क्ली०) ईषत् पिञ्जरम्, प्रादि समा०। १ स्वर्ण, सोना। (पु०) २ ईषद्रक्तवर्ण, सुर्ख़ी-मायल-रङ्ग। (त्रि०) ३ आरक्त, सुर्ख़ी-मायल, लाल सा।

आपित्व (वै० क्ली०) बन्धुत्व, सुह्यता, इत्तिहाद, उलफ़त, रब्त।

आपिशल (सं० त्रि०) १ आपिशलिसे उत्पन्न होनेवाला। (पु०) २ आपिशलिका शिष्य। (क्ली०) आपिशलिना प्रोक्तम्, अण्। ३ आपिशलि-प्रणीत शास्त्र।

आपिशलि (सं० पु०) अपिशलस्य तन्नामक मुनिभेदस्यापत्यम्, इञ् आद्यचो वृद्धि:। एक आदिशाब्दिक मुनि, एक प्राचीन वैयाकरण।

आपी (सं० त्रि०) आ-पै-क्विप्, पी सम्प्रसारणं दीर्घ:। १ स्थूल, वृद्धियुक्त, मोटा, चढ़ा-बढ़ा। (स्त्री०) २ पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र। (हिं० सर्व०) ३ स्वयं, खुदबखुद, आपही।

आपीड़ (सं० पु०) आ-पीड्-अच्। १ शिरोभूषण, सेहरा, हार। 'शिखास्वापीडशेखरौ।' (अमर) २ गृहसे बाहर निर्गत काष्ठ, घरसे बाहर निकली हुई लकड़ी, मंगौरी। (त्रि०) ३ पीड़ा करनेवाला, जो दर्द लाता हो।

आपीड़न (सं० क्ली०) १ सङ्कोचन, इनक़िबाज़, दबाव। २ उपगूहन, बग़लगीरी, हमागोशी। ३ व्यथा, तकलीफ़दिही।

आपीड़ा (सं० स्त्री०) १ छन्दोविशेष। २ सम्यक् पीड़ा, खासा दर्द।

आपीड़ित (सं० त्रि०) आ-पीड्-क्त। १ निष्पीड़ित, दबाया हुआ। २ सम्यक् निबद्ध, मज़बूतीसे बंधा हुआ। ३ हिंसित, नुक़सान पहुंचाया गया। ४ शिरोभूषण द्वारा अलङ्कृत, सेहरेसे आरास्ता-पैरास्ता।

आपीत (सं० क्ली०) आ ईषत् पीतम्, प्रादि समा०। १ रौप्यमाक्षिक धातु, रूपामाखी। २ स्वर्णमाक्षिक, सोनामाखी। ३ पद्मकेसर, फूलकी धूल। (पु०) ४ तूणीवृक्ष, तुनका पेड़। ५ अल्पपीतवर्ण, ज़र्दी-मायल रङ्ग। (त्रि०) ६ अल्पपीतवर्णयुक्त, ज़र्दी-मायल, पीलासा। ७ अल्प पान किया हुआ, जो थोड़ा पीया गया हो।

आपीन (सं० क्ली०) आ-प्याय-क्त, पी आदेशः तकारस्थाने नकारः। प्यायः पी। पा ६।१।२८। १ ऊधस्, आयन, बाख। २ सुवर्णमुखी, सोनामुखी। (पु०) ३ कूप, कुवां।

आपीनवत् (वै० त्रि०) अभिवृद्धिवाचक। 'आपीनमभिवृद्धिः तद्वाचकस्य आप्यायस्व इति शब्दस्य विद्यमानत्वादिय सौम्यापीनवती' (ऐतरेयब्राह्मण १।३।६ भाष्ये सायण)

आपु, आप देखो।

आपुन, अपना देखो।

आपुप, आपूप देखो।

आपुस, आपस देखो।

आपूप (सं० पु०) १ पिष्टक, पपरी, टिकिया, रोटी। २ आनूपजन्तुमात्र, पानीका जानवर।

आपूपिक (सं० त्रि०) अपूपः शिल्पमस्य, ठक्। १ अच्छी रोटी बनानेवाला। अपूपे अपूपभक्षणे साधु ठञ्। गुडादिभ्यष्ठञ्। पा ४।४।१०३। २ रोटीके साथ खाया जानेवाला। अपूपो भक्तिरस्य, अचित्तत्वात् ठक्। अचित्ताददेशकालात् ठक्। पा ४।३।९६। ३ अपूपभक्त, रोटीको पसन्द करनेवाला। अपूपः पण्यमस्य। ४ अपूपविक्रेता, रोटी बेचनेवाला। अपूपस्तद्भक्षणं शीलमस्य। ५ अपूपभक्षणशील, रोटी खानेवाला। अपूपस्तद्भक्षणं हितमस्य। ६ रोटी खानेसे फ़ायदा उठानेवाला। (क्ली०) अपूपानां समूहः। ७ अपूपसमूह, रोटीका ढेर। (पु०) ८ कान्दविक, नानबायी। ९ भक्ष्यकार, मुरब्बासाज़, हलवाई।

आपूप्य (सं० पु०) अपूपाय साधुः, वा ञ्य। चूर्ण, पिष्ट, आटा, पिसान, मैदा।

आपूर (सं० पु०) आपूर्यते अनेन, आ-पूर करणे घञ्। १ जलादिका प्रवाह, पानी वगैरहकी रविश। भावे घञ्। २ सम्यक् पूरण, खासा भराव। ३ अल्प पूरण, हलका भराव। ४ अभिव्याप्ति, इन्द्रिराज। (त्रि०) ५ व्याप्त होनेवाला, मामूर या भरा हुआ।

आपूरण (सं० क्ली०) आ-पूर भावे ल्युट्। १ सम्यक् पूरण, खासा भराव। (पु०) २ किसी नागका नाम। (त्रि०) ३ व्याप्त होनेवाला, जो मामूर या भरा हो।

आपूरना (हिं० क्रि०) आपूरण करना, भर देना।

आपूरित (सं० त्रि०) आ-पूर-क्त-इट्। अभिव्याप्त, भरा हुआ।

आपूर्ति (सं० स्त्री०) आ-पूर-क्तिन्। १ ईषत् पूरण, हलकी भरायी। २ सम्यक् पूरण, खासी भरायी।

आपूर्य (सं० अव्य०) पूरण करके, भरकर, भरावसे।

आपूर्यमाण (सं० त्रि०) आ-पूर कर्मणि शानच्। १ सम्यक्पूर्यमाण, अच्छी तरह भरा जानेवाला। (पु०) २ शुक्लपक्ष।

आपूर्यमाणपक्ष (सं० पु०) शुक्लपक्ष, उजला पख। चन्द्रके आपूरित रहनेसे शुक्लपक्षका यह नाम पड़ा है।

आपूष (सं० क्ली०) आपूष्यति शरीरमनेन, आ-पूष वृद्धौ अच्। शरीरको पुष्ट (शुद्ध) करनेवाला रङ्ग, रांगा।

आपृक्, आपृच् देखो।

आपृच् (सं० त्रि०) आ-पृच्-क्विप्। १ संसर्गयुक्त, उलझा हुआ। (अव्य०) २ सङ्कुल, उलझकर।

आपृच्छा (सं० स्त्री०) आ-प्रच्छ-अङ्, सम्प्रसारणं टाप्। १ प्रश्न, पूछताछ, सवाल। २ आलाप, आभाषण, बातचीत। ३ यातायातके समयका शुभप्रश्न, विदा-विदायी।

आपृच्छ्य (वै० त्रि०) आ-प्रच्छ वेदे निपातनात् क्यप्। छन्दसि इत्यादि। पा ३।१।१२३। १ जिज्ञास्य, पूछा जाने क़ाबिल। २ श्लाघ्य, क़ाबिल-तारीफ़। (अव्य०) आ-प्रच्छ-ल्यप्। ३ जिज्ञासापूर्वक, पूछकर।

आपेक्षिक (सं० त्रि०) अपेक्षातः आगतम्, ठक्। तुलना द्वारा प्राप्त, अन्यकी तुलनासे निर्धारित होनेवाला, जो इन्तज़ार रखता हो। (स्त्री०) आपेक्षिकी।

आपोक्लिम (सं० क्ली०) ज्योतिषोक्त जन्मलग्नसे तृतीय, षष्ठ, नवम एवं द्वादश स्थान।

आपोमय (सं० त्रि०) आपस् विकारे प्राचुर्ये वा मयट्। १ जलरूप, पानीसे मिल जानेवाला। २ जलप्रचुर, पानीसे भरा हुआ।

आपोमात्रा (सं० स्त्री०) अतिसूक्ष्म भौतिक जलका सार, रक्षीक, हवृतिदायी पानीका माद्दा।

आपोमूर्ति (सं० पु०) स्वारोचिष मनुके एक पुत्र।

प्रथम मन्वन्तरके सात ऋषिमें यह भी एक रहे। हरिवंशके ६ठें और ७वें अध्यायमें विस्तृत विवरण लिखा है।

आपोऽशान (सं० क्ली०) अप्‌ आपो-भावे अश्‌० शानच्. आपसा अशीन अशानम्, ३-तत्। जल द्वारा ऊपर और नीचे आस्तरण-रूप अपाच्छादनकर्म। इसका मन्त्र भोजनसे पहले और पीछे पढ़ा जाता है।

आप्त (सं० त्रि०) आप्‌-क्त। १ प्राप्त, पाया या हासिल किया हुआ। २ विश्वस्त, एतबारी। तपो ज्ञानके बल जो रजस्तमसे निर्मुक्त रहते और त्रिकाल-को अपनी बुद्धिसे अमल रखते, वह विबुध आप्त एवं शिष्ट होते तथा संशयरहित वाक्य बोलते हैं। ३ युक्तियुक्त, ठीक। ४ कुशल, लायक। ५ सम्पूर्ण, पूरा। ६ सम्बन्धी, दिली, रिश्तादार। ७ सत्य, सचा। ८ सम, बराबर। ९ विस्तीर्ण, फैला हुआ। १० नियुक्त, रखा हुआ। ११ व्यवहृत, आम तौरपर इस्तेमाल किया जानेवाला। १२ अकृत्रिम, असली। १३ अभियुक्त, मुजरिम।

(पु०) १४ स्वनामख्यात नागराज। १५ भ्रम-प्रमादरहित ज्ञानयुक्त ऋषि। १६ योग्य पुरुष, लायक आदमी। १७ मित्र, दोस्त। १८ अर्हत् विशेष। १९ शब्दप्रमाण। (क्ली०) २० लब्धि, हासिल, किस्मत। २१ अंशसाम्य, मसावात-मिकदार।

आप्तकाम (सं० त्रि०) आप्तः प्राप्तः कामो येन, बहुव्री०। १ तृप्त, तुष्ट, राजी, जो अपनी मुराद पा चुका हो। २ ब्रह्म एवं आत्माको अभिन्न समझनेवाला।

आप्तकारिन् (सं० त्रि०) आप्तं युक्तं करोति, आप्त-कृ-णिनि, ६-तत्। १ युक्तकारक, वाजिब तौरपर इन्तज़ाम करनेवाला। (स्त्री०) आप्तकारिणी।

आप्तकारी (सं० पु०) आप्तश्चासौ कारी चेति, कर्मधा०। विश्वस्त भृत्य प्रभृति, एतबारी नौकर वग़ैरह।

आप्तगर्भा (सं० स्त्री०) आप्तः प्राप्तः गर्भो यया, बहुव्री०। गर्भिणी स्त्री, हामिला औरत।

आप्तगर्व (सं० त्रि०) आप्तो गर्वः येन बहुव्री०। दृप्त, मुतकब्बिर, घमण्डी।

आप्तदक्षिण (सं० त्रि०) आप्ता दक्षिणा येन बहुव्री०। दक्षिणा पाये हुआ, जो नज़राना ले चुका हो।

आप्तवचन (सं० क्ली०) आप्तसूत्र, श्रुतिप्रकाश, हासिल किया हुआ मन्त्र, इलहाम।

आप्तवज्रसूचि (सं० स्त्री०) उपनिषत् विशेष।

आप्तवाक् (सं० पु०) विश्वस्त साक्ष्य देनेवाला, जो ठीक बात कहता हो।

आप्तवाक्य (सं० क्ली०) अभ्रान्त वचन, दुरुस्त कलाम।

आप्तवाच् (सं० स्त्री०) आप्ता युक्ता भ्रमप्रमादादि दोषरहिता वाक्, कर्मधा०। १ वेद। २ वेदमूलक स्मृति इतिहास पुराणादि। ३ विश्वस्त व्यक्तिका साक्ष्य, एतबारी शख्सकी बात। (त्रि०) आप्ता युक्ता वाग् यस्य, बहुव्री०। ४ भ्रमप्रमादादि वाक्य-रहित, ठीक बात बोलनेवाला।

आप्तव्य (सं० त्रि०) प्राप्त किया जानेवाला, जो हासिल किये जाने काबिल हो।

आप्तश्रुति (सं० स्त्री०) आप्ता चासौ श्रुतिश्चेति, कर्मधा०, पूर्वपदस्य पुंवद्भावः। १ वेद। (त्रि०) २ वेद-सम्बन्धीय। इस अर्थमें यह शब्द स्मृतिपुराणादिका विशेषण है।

आप्ता (सं० स्त्री०) जटा, उलझे हुये बालोंका गुच्छा।

आप्ति (सं० स्त्री०) आप्‌-क्तिन्। १ प्राप्ति, आमद। २ संयोग, रिश्ता। ३ स्त्रीसंयोग, मुबाशरत। 'आप्तिः स्त्रीसंयोगसंप्राप्त्योः।' (मेदिनी) ४ सम्बन्ध, ताल्लुक। ५ लाभ, फायदा। 'प्राप्तिः सम्बन्धलाभयोः।' (हेम) ६ समाप्ति, खातिमा। ७ सम्पद्, दौलत। ८ हित, भलाई।

आप्तोक्ति (सं० स्त्री०) १ आगम, वृद्धि, लफ्ज़की आखिर सलामत। २ स्त्रीकृत एवं केवल व्यवहार द्वारा प्रतिष्ठित वाक्य, मशहूर और चलनसे ही क़ायम की हुई लफ्ज़।

आप्तोर्याम (सं० क्ली०) याग विशेष। यह ब्रह्माके उत्तर-मुखसे उत्पन्न हुआ था।

आप्त्य (सं० त्रि०) आप्‌-तव्य वेदे दृषो० साधुः।

१ प्राप्तव्य, मिलनेयोग्य । (पु०) २ देव श्रेणीविशेष। आप्त देवता त्रितके समान होते हैं।

आप्नवान (सं० पु०) अप्नवान एव, स्वार्थे अण्। वत्सगोत्रप्रवर ऋषि विशेष।

आप्य (सं० त्रि०) अपामिदम्, अण् चतु० स्वार्थे ष्यञ्। १ जलसम्बन्धीय, आबसे तालुक् रखनेवाला। २ जलीय, आबी, पनिहा। ३ जलमय, पानी रखनेवाला। ४ जलमें निवास करनेवाला, जो पानीमें रहता हो। आप्-यत्। ५ प्राप्य, हासिल किये जाने क़ाबिल। (क्ली०) ६ कुष्ठौषधि, कूट। (वै०) ७ सम्मान, अहद-पैमान्। (पु०) ८ चाक्षुषसम्बन्धीय देवविशेष। चाक्षुष-मनुके समय आप्य, प्रभूत, ऋषभ, पृथुक और लेखा नामक पांच देवता रहे। (हरिवंश) ९ वेदोक्त एक वीरपुरुष। इनके सन्तानका नाम त्रित रहा। इन्होंने अजगवसे युद्ध किया और तीन मस्तक तथा सात लाङ्गलविशिष्ट असुर मार पशुवोंको बचा लिया था।

आप्यान (सं० क्ली०) आ-प्याय भावे क्त। १ प्रीति, आसूदगी। २ वृद्धि, बढ़ती। (त्रि०) कर्तरि क्त। ३ प्रीत, आसूदा। ४ वृद्ध, बढ़ा हुआ।

आप्याय (सं० पु०) सम्पूर्ण वा स्थूल होनेका भाव, भर जाने या मोटे पड़नेकी हालत।

आप्यायक (सं० त्रि०) तृप्तिकारक, आसूदा करनेवाला।

आप्यायन (सं० क्ली०) आ-प्याय-ल्युट्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ प्रीति, आसूदगी। ३ तृप्त करनेका भाव, आसूदा बनानेकी हालत। ४ वृद्धि पानेका भाव, बढ़ जानेकी हालत। ५ अग्रगमन, अगवानी। ६ उत्तम अवस्था उत्पन्न करनेवाला द्रव्य, जिस चीज़से अच्छी हालत आये। ७ बलकारक औषध, ताक़तवर दवा। ८ मोटायी। ९ दीक्षणीय मन्त्रका संस्कारविशेष। शिष्यको मन्त्रदीक्षा देते समय जनन, जीवन, ताड़न, बोधन, अभिषेक, विमलीकरण, आप्यायन, तर्पण, दीपन और गोपन दश प्रकार संस्कार होता है। मन्त्रके प्रत्येक वर्णको सौ, दश वा सात बार 'ॐ क्रौं' कहके प्रोक्षण करनेका नाम आप्यायन संस्कार है।

आप्यायनशील (सं० त्रि०) तृप्त करनेवाला, जो राज़ी रखता हो।

आप्यायित (सं० त्रि०) आ-प्याय णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। १ प्रीणित, रज़ामन्द। २ पूरित, भरा हुआ। ३ वर्धित, बढ़ा हुआ। ४ आनन्दित, खुश।

आप्र (वै० त्रि०) आ-पृ-क। १ पूरक, पूरा कर देनेवाला। २ कार्यरत, उत्सुक, मशगूल, हौसलेमन्द। ३ पहुंचने योग्य, जो पहुंच जाता हो।

आप्रच्छन (सं० क्ली०) आ-प्रच्छ-ल्युट्। १ गमनागमनके समय बन्धुगणका कुशलप्रश्न, आगत-स्वागत, विदाविदायी, मुलाक़ातोंसे मिलते या छूटते वक्त ख़ैरियतकी पूछताछ।

आप्रच्छन्न (सं० त्रि०) आ-प्र-छद-क्त, तकारस्य नकारः। १ अत्यन्त गुप्त, निहायत पोशीदा। २ ईषद्-गुप्त, कुछ पोशीदा।

आप्रतिनिवृत्त (सं० त्रि०) निवारित, रोका या पीछे फेरा हुआ।

आप्रतिदिवं (वै० अव्य०) सर्वदा, दिन-ब दिन, हमेशा।

आप्रपद (सं० अव्य०) प्रपदं पादाग्रं तत् पर्यन्तम्, मर्यादायें अव्ययी०। १ पादाग्र पर्यन्त, पैरके सिरेतक। (क्ली०) २ पादाग्र पर्यन्त पहुंचनेवाला परिच्छद, पैरकी उंगलियोंतक लटकनेवाली पोशाक।

आप्रपदीन (सं० त्रि०) आप्रपदं पादाग्रपर्यन्तं व्याप्नोति, ख। आप्रपदं प्राप्नोति। पा ५।२।८। मस्तकसे पादाग्रपर्यन्त लम्बमान, सरसे पैरके सिरेतक फैला हुआ। यह शब्द वस्त्रादिका विशेषण है।

आप्रपदीनक (सं० क्ली०) मस्तकसे पादाग्र पर्यन्त लम्बमान वस्त्र, सरसे पैरके सिरेतक फैली हुई पोशाक वग़ैरह।

आप्रवण (सं० त्रि०) ईषत् प्रवणम्। अल्प नम्र, कुछ-कुछ झुका हुआ। (क्ली०) आ-प्र-ल्युट्। २ ईषत् द्रवण, थोड़ा बहाव। ३ अल्प क्षरण, हलकी टपक।

आप्रावृष (सं० अव्य०) वर्षा ऋतु यावत्, मौसमे-बरसात तक।

आप्री (वै० क्ली०) आप्रीणात्यनया, आ-प्रीङ गौरा-

दित्वात् ङीष्। १ अनुरञ्जन, दुरुस्तिगी, मेलमिलाप। २ शान्तिकर पद, कफ़ाराबख़्श फ़र्द। ३ आमन्त्रण विशेष, कोई मुनाजात। यह प्रयाजा द्वारा यजनीय होती और क्रमागत देवत्वप्राप्त पदार्थोंके अर्थ उच्चारणकी जाती है। इसे पशुमेधका आरम्भक कहते हैं। किन्तु दूसरे लोग इसको आप्री देवताओंको शान्तिकरी ही बताते हैं। यह इसी कारण आप्री पद कहाती भी है। बारह पदमें निम्नलिखित बारह पदार्थोंका स्तव किया गया है,—१ सुसमिध, २ तनूनपात्, ३ नराशंस, ४ इड़, ५ बर्हिस्, ६ यज्ञ-शालाद्वार, ७ रजनी एवं प्रभात, ८ प्रचेतसस्, ९ इला, सरस्वती तथा मही, १० त्वष्टि, ११ वनस्पति और १२ स्वाहा। सायणने उपरोक्त बारहो पदार्थोंको अग्निके ही अन्तर्गत माना है।

आप्रीत (सं० त्रि०) आ-प्री-क्त। १ सम्यक् प्रीत, खूब खुश। २ ईषत् तृप्त, कुछ आसूदा।

आप्रीतप (वै० पु०) आप्रीतं सम्यक् तृप्तं पाति, आप्रीत-पा-क। विष्णु। विष्णु अपने क्राधके शान्त करनेवालोंकी रक्षा रखते, इसीसे उपरोक्त नामपर पुकारे जाते हैं।

आप्रीतपा, आप्रीतप देखो।

आप्लव (सं० त्रि०) आ-प्लु-घञ्, आपपदे ऋदोरविति अप्। १ जलप्लावन, सेलाब, बूड़ा। २ स्नान, गुसल।

आप्लवन (सं० क्ली०) आ-प्लु-ल्युट्। आप्लव देखो।

आप्लवव्रतिन्, आप्लवव्रती देखो।

आप्लवव्रती (सं० पु०) आप्लवः समावर्तन स्नानमेव व्रतमस्यास्य, इनि। स्नातक गृहस्थ विशेष। यह सकल वेद पढ़ दारपरिग्रहके निमित्त समावर्त स्नान और स्त्रीलाभसे पहले स्मृतिशास्त्रोक्त व्रतका आचरण करता है।

आप्लाव, आप्लव देखो।

आप्लावित (सं० त्रि०) आ-प्लु-णिच्-क्त, णिच् लोपः। १ जलादिप्रवाह द्वारा अभिव्याप्त, पानीकी बाढ़से ग़रक़ाब किया हुआ। २ स्नात, नहाये हुआ।

आप्लाव्य (सं० त्रि०) आप्लवते, आ-प्लु कर्तरि ण्यत्। भव्यगेय प्रवचनीयोपस्थानीय जन्याप्लाव्यापात्या वा। पा ३।४।६८। १ जल-प्लावनकर्ता, सेलाब लानेवाला। कर्मणि ण्यत्। २ जलादि द्वारा प्लावितव्य, जो सेलाबमें डूबने क़ाबिल हो। (क्ली०) ३ आप्लावन, सेलाब। (अव्य०) ४ भिगोके, छिड़ककर।

आप्लुत (सं० त्रि०) आ-प्लु-क्त। १ स्नात, नहाये हुआ, जो गुसल कर चुका हो। २ आर्द्रीभूत, भीगा हुआ। (पु०) ३ स्नातक गृहस्थ विशेष आप्लवव्रती देखो। (क्ली०) आ-प्लु भावे क्त। ४ स्नान, गुसल।

आप्लुतव्रतिन्, आप्लवव्रती देखो।

आप्लुतव्रती, आप्लवव्रती देखो।

आप्लुताङ्ग (सं० त्रि०) सम्यक् स्नात, अच्छीतरह नहाये हुआ।

आप्लुत्य (सं० अव्य०) आ-प्लु-ल्यप्-तुक्। १ स्नान करके, नहाके। २ उल्लम्फन करके, कूदकर।

आप्लुष्ट (सं० त्रि०) आ-प्लुष्-क्त। १ अल्पदग्ध, झुलसा हुआ। २ सम्यक् दग्ध, अच्छीतरह जला हुआ।

आप्वन् (सं० पु०) आप्नोति व्याप्नोति, आप्-वन्। यो वक्षयणिक्षा ग्रीवाप्वमीराः। ऋक् १।१५२। वायु, दुनियामें भरी हुई हवा।

आप्वा (सं० स्त्री०) ग्रीवा, गर्दन। (पु०) आप्वन् देखो।

आप्सव (सं० स्त्री०) मनुविशेष।

आफ़त (अ० स्त्री०) १ शामत, तबाही, आपत्, भीड़। २ क़बाहत, अनिष्ट, बुराई। ३ मुसीबतका वक़्त, अनिष्टका समय, बुरा ज़माना।

आफ़तका परकाला (हिं० पु०) १ अतिशय दुष्ट व्यक्ति, निहायत बदकार शख़्स, जो आदमी बहुत बुरा काम करता हो। २ अतिशय निपुण व्यक्ति, निहायत चुस्त चालाक शख़्स, जो आदमी बहुत होशियार और तेज़ हो।

आफ़ताब (फ़ा० वि०) १ आदित्य, सूर्य। 'परत न ताब लखि मुख माहताब जब निकसी सिताब आफ़ताबकी भभकसी।' (पद्माकर) २ ताशके हुक्म या काले-पान रङ्गका इक्का। रङ्ग-मारमें यही सबसे पहले खेला जाता है।

आफ़ताबपरस्त (फ़ा० पु०) सूर्योपासक, सूरजको पूजा करनेवाला। पारसी आफ़ताब-परस्त होते हैं।

आफ़ताबपरस्ती (फ़ा० स्त्री०) सूर्योपासना, सूरजकी पूजा।

आफ़ताबा (फ़ा० पु०) पात्रविशेष, किसी किस्मका गड़ुवा। इसकी पीठपर पकड़नेकी मूठ और मुंहपर मूंदनेको ढक्कन लगाते हैं। हाथ-मुंह धुलानेमें इससे पानी छोड़नेपर बड़ा सुभीता रहता है।

आफ़ताबी (फ़ा० वि०) १ आफ़ताबसे ताल्लुक रखनेवाला, सौर। २ वृत्ताकार, गोल। (स्त्री०) ३ किसी किस्मकी आतशबाजी। ४ वीजन विशेष, किसी किस्मकी पङ्खी, छतरी। यह ताम्बूलवत् वर्तुल ज़रदोज़ीसे बनती और काष्ठयष्टिकाके अग्रभागपर लगती है। बीचमें आफ़ताबकी शक्ल काढ़ी रहनेसे ही इसे आफ़ताबी कहते और सवारी शिकारी या बरात वग़ैरहमें दिखानेके लिये नौकर आगे लेकर निकलते हैं। ५ ओसारी, आड़। आतप निवारणके लिये इसे द्वारके ऊपर लगा देते हैं। ६ एक गुलकन्द। यह धूपमें तैयार होती है। ७ सुनहली ढाल। यह कछुवेकी पीठसे बनती है।

आफलोदयकर्म (सं० त्रि०) फलोदयपर्यन्तं कर्म यस्य, बहुव्री०। फल न मिलनेतक काम करनेवाला, जो ग़र्ज़ पूरी न होनेतक काम करता हो।

आफिङ्ग (सं० क्ली०) अफ़ीम देखो।

आफ़ियत (अ० स्त्री०) क्षेम-कुशल, खैरियत। यह प्रायः खैर शब्दके साथ व्यवहृत होता है, जैसे—खैर व आफ़ियत।

आफ़िस (अं० क्ली०=Office) दफ़्तर, कचहरी, उद्योगस्थान, कारख़ाना।

आफ़ीन (सं० क्ली०) अफ़ीम देखो।

आफुक (सं० क्ली०) अफ़ीम देखो।

आफू (हिं० स्त्री०) अफ़ीम देखो।

आफूक (सं० क्ली०) अफ़ीम देखो।

आब (फ़ा० पु०) १ अप्, पानी। (स्त्री०) २ रङ्गकी प्रभा, लौहादिकी समता, जवाहरकी झलक, फ़ौलाद वग़ैरहकी खसलत। ३ द्युति, नूर, चमक। ४ इज़्ज़त, सम्मान, चाल-चलन। किसी कविने दर्पणके उपलक्षसे निम्नलिखित प्रहेलिका कही है,—

"एक नार पीयाको भानी।
तन वाको सगरो ज्यों पानी॥
आब रखे पर पानी नांह।
पीया राखे हिरदे मांह॥"

आबकार (फ़ा० पु०) शराब बनानेवाला, अबकार, मद्यप्रस्तुतकर्ता, कलाल।

आबकारी (फ़ा० स्त्री०) १ शराब बनानेका काम। २ मयखा, मैखाना, हौली, भट्ठी, शराब तैयार होनेकी जगह। ३ शराबकी चुङ्गी, सुराका राजस्व।

आबख़ोरा (फ़ा० पु०) पानपात्र, मटकैना।

आबख़ोरे भरना (हिं० क्रि०) दूध या शरबतसे आबख़ोरे भर कर किसी देवता पर चढ़ाना, धर्मार्थ दूध या शरबत पिलाना।

आबगीना (फ़ा० पु०) १ स्फटिकका पानपात्र, मीनेका आबख़ोरा। २ दर्पण, शीशा। ३ हीरक, हीरा।

आबगीर (फ़ा० पु०) पानी झाड़नेका कूंचा। इसे जुलाहे अपने काम लाते हैं।

आबजारी (फ़ा० पु०) १ बहता पानी, नदी, नाला। २ बहते या चलते हुये आंसू।

आबगोश्त (फ़ा० पु०) १ किसी किस्मका शुनका या दाख। २ शोरबा, यख़, उबाले हुये गोश्तका अर्क़। उष्ण जलमें मांस पकानेसे यह बनता है।

आबताब (फ़ा० स्त्री०) १ प्रभा, चमकदमक। २ उत्कर्ष, बड़ाई।

आबताबा (फ़ा० पु०) गड़ुवा। आफ़ताबा देखो।

आबदस्त (फ़ा० पु०) १ पुरीषत्यागके उपरान्त अपान प्रक्षालन, पाख़ाने होने पीछे मिक़्अदको धुलायी। २ अपानके प्रक्षालनका जल, मिक़्अद धोनेका पानी। कहते हैं, उष्ण जलसे कभी आबदस्त न लेना चाहिये। इसके लिये शीतल जल उपयुक्त होता है। फिर दस्त आये या न आये, आबदस्त लेनेसे ही शरीरको बड़ा लाभ पहुंचता है।

आबदस्त लेना (हिं० क्रि०) मिक़्अद धोना, अपान प्रक्षालन करना, सौंचना।

आबदाना (फ़ा० पु०) १ अन्नजल, दाना-पानी,

खुराक। २ भाग्य, क़िस्मत। ३ व्यापार, रोज़गार, कामकाज।

आबदार (फ़ा० वि०) १ परिष्कृत, सुजल्ला, मांझा हुआ। २ श्वेत, शुद्ध, साफ़। (पु०) ३ कहार, पानीकी देखरेख रखनेवाला नौकर।

आबदारख़ाना (फ़ा० पु०) पानीय जल रखनेका स्थान, परण्डा, जिस जगहपे पीनेका पानी रहे।

आबदारी (फ़ा० स्त्री०) आबदारका काम। इस अर्थमें यह शब्द प्रायः व्यवहृत नहीं होता। २ कान्ति, चमक। ३ शुक्लता, सफ़ेदी, सफ़ायी।

आबदीदा (फ़ा० वि०) नेत्रमें जल भरे हुआ, रोनेवाला।

आबदीदा होना (हिं० क्रि०) नेत्रमें अश्रु भर लेना, आंखें डबडबाना।

आबन्ध (सं० क्ली०) आ सम्यक् बन्धम्, आ-बन्ध भावे क्त। १ दृढ़बन्धन, मज़बूत गांठ। २ प्रेम, स्नेह, मुहब्बत, प्यार। ३ अलङ्कार, ज़ेवर, गहना। (त्रि०) कर्मणि क्त। ४ बद्ध, प्राप्त, प्रतिबद्ध, बंधा, मिला या रुका हुआ।

'आबन्धो दृढ़बन्धे स्यात् प्रेमालङ्कारयोर्द्वयोः।' (मेदिनी)

आबध (सं० पु०) बन्धन, बांध, जकड़।

आबनाय (फ़ा० पु०) समुद्रसङ्कट, नाका।

आब-नुक़रा (फ़ा० पु०) १ चांदीका पानी। २ पारा।

आब-नजूल (फ़ा० पु०) एक बीमारी। इससे अण्डकोष फूल जाता और पीड़ा देने लगता है।

आबनमक (फ़ा० पु०) १ जल एवं लवणका औचित्य, पानी और नमककी काफ़ी मिक़दार। २ व्यञ्जन, मसाला। ३ आस्वादन, ज़ायक़ा। ४ अवष्टम्भ, सहारा।

आबनूस (फ़ा० पु०) कोविदार, तेंदू। यह वृक्ष लङ्का एवं दक्षिण भारतमें उत्पन्न होता और कहीं कहीं हिन्दूस्थानमें भी देख पड़ता है। अतिशय पुरातन होनेपर इसका काष्ठ श्यामवर्ण और भारवान् निकलता है। आबनूससे कितने ही प्रदर्शनीय वस्तु सन्दूक़, क़लमदान, छड़ी, दीवारगीर वग़ैरह प्रस्तुत होते हैं।

आबनूसका कुन्दा (फ़ा० वि०) श्यामवर्ण, काला, बदशक्ल। (पु०) २ हबशी। ३ काला-काला आदमी।

आबनूसी (फ़ा० वि०) १ आबनूससे बना हुआ। २ आबनूसके रङ्गका, श्यामवर्ण, काला।

आबन्ध (सं० पु०) १ ग्रन्थि, गांठ। २ युग वा लाङ्गलकी ग्रन्थि, जुवे या हलकी गांठ। यही बैलको जुवे या हलसे अटका रखता है।

आबन्धन (सं० क्ली०) गांठ लगानेका काम, बांध।

आबपाशी (फ़ा० स्त्री०) अभ्युक्षण, सिंचाई, खेत पटानेका काम।

आब-रवां (फ़ा० पु०) १ बहता पानी, नदी, नाला। २ चलते हुये आंसू। ३ सूक्ष्मवस्त्र विशेष, किसी क़िस्मका निहायत उम्दा मल-मल।

आबरू (फ़ा० स्त्री०) आब-रू। १ आदर, इज़्ज़त, बड़प्पन। "आबरू जगमें रहे तो जान जाना पश्न है।" (लोकोक्ति) २ पद, दरजा। ३ आभास, देखावा। ४ अभिमान, घमण्ड।

आबरूरेज़ी (फ़ा० स्त्री०) आदरका नाश, बड़प्पनका बिगाड़।

आबर्ह (सं० पु०) आबृह्यते उत्पाट्यते, आ-बर्ह-घञ्। १ उत्पाटन, उखाड़। २ हिंसा, मारकाट। (त्रि०) ३ उत्पाटक, उखाड़ डालनेवाला।

आबर्हण (सं० क्ली०) आ-बर्ह-ल्युट्। उत्पाटन-कार्य, उखाड़ डालनेका काम।

आबर्हिन् (सं० वि०) आबर्होऽस्त्यस्य, इनि। उत्पाटनयुक्त, उखड़ने क़ाबिल।

आबला (फ़ा० पु०) व्रण, फोला, छाला, फफोला।

आबलाफरङ्ग (फ़ा० पु०) युरोपीय पिटिका, उपदंश, आतशक। आतशक देखो।

आबल्य (सं० क्ली०) निर्बलता, कमज़ोरी।

आबशिनास (फ़ा० पु०) जलपरीक्षक, पानी पहचाननेवाला। जहाज़का जो कर्मचारी पानीकी गहराई नापकर राह बताता, वह आबशिनास कहलाता है।

आबशोर (फ़ा० पु०) समुद्रजल, खारा पानी।

आबशोरा (फ़ा० पु०) यवक्षारसे युक्त किया हुआ जल, जो पानी शोरेसे ठण्ढा हो। २ जम्बीरके रस और शर्करासे बना हुआ शर्बत, नीबूके अर्क और चीनीसे तैयार होनेवाला शर्बत।

आबेहयात् (फ़ा० पु०) १ अमृत, जिन्दगी बढ़ानेवाला पानी। २ राजाके पीनेका पानी। ३ साफ़ ठण्ढा मीठा पानी।

आबहराम (फ़ा० पु०) १ अशुद्ध वा त्याज्य जल, नापाक पानी। २ आसव, शराब। ३ कपटाश्रु, कठरोना, फफड़ दलाली।

आबहवा (फ़ा० स्त्री०) जलवायु, पानी और हवा।

आबहवा बदलना (हिं० क्रि०) रुग्णावस्थामें स्वास्थ्यके लाभार्थ एक स्थानसे दूसरे स्थानको जाना, बीमारीकी हालतमें सेहतके लिये अपने रहनेकी जगह छोड़ दूसरी जगहको रवाना होना। आज कल प्रायः डाक्टर रोगियोंको आबहवा बदलनेकी अनुमति दिया करते हैं। संक्रामक रोग होनेसे हिन्दुस्थानी भी घर छोड़ बाग़में जाकर डेरा डालते हैं। वास्तवमें बात ठीक है। आबहवा बदलनेसे प्रायः सभी रोग शान्त हो जाते हैं। हमारे देशमें कार्तिक शुक्ला नवमीको आमलकी वृक्षके नीचे जाकर भोजन बनाने और खानेकी जो रीति चली आती, वह निःसन्देह आबहवा बदलनेसे ही सम्बन्ध रखती है।

आबाज़ाई—भारतकी उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तका एक गांव और क़िला। यह पेशावर नगरसे बारह कोस उत्तर स्वात-नदीके वामतटपर अवस्थित है। सामने नदी १५० गज़ चौड़ी बहती और घाट पार करनेके लिये नाव रहती है। सन् १८५२ ई०को अंगरेज-सरकारने आबाज़ायी ग्राम और पर्वतके बीच क़िला बनवाया था। इसके खड़े रहनेसे उतमानखेल और दूसरे पहाड़ी लोगोंका अंगरेजी भूमिपर धावा मारना रुक गया। क़िलेके तारेमें छः बुर्ज बना और बीचमें चौखुण्टा गढ़गज लगा है। सारा काम मट्टीका ही है। चारो ओर ३० चौड़ी और ८ फीट गहरी खायी खिंची है। दीवार १६ फीट ऊंची खड़ी, जो पेंदेपर १०, और चोटीपर ४ फीट मोटी पड़ी है। डेढ़-दो सौ पैदल-सवारकी फौजमें एक १८ और एक १२ मनी तोप रहती है। आबाज़ायी ग्राम अत्यन्त रमणीय है। नदीके टतपर वनका दृश्य देखते ही बनता है।

आबाजी पुरन्धरे—बम्बई प्रान्तस्थ पूना जिलेकी सासवाद तहसीलके मुनीब। सन् १७१४ ई०को सुप्रसिद्ध वीर शिवाजीके पौत्र शाहूसे कितने ही ज़िलोंकी मालगुज़ारी वसूल करनेका काम पानेपर धनाजी यादवने इन्हें सासवादका मुनीब बनाया था। आप बालाजी पेशवाके बड़े मित्र रहे।

आबाजी सोमदेव—सुप्रसिद्ध महाराष्ट्र-वीर शिवाजीके सेनापति। सन् १६४८ ई०को इन्होंने एकाएक आक्रमण कर बम्बईके थाना ज़िलेका कल्याणनगर मुसलमानोंके हाथसे छीन लिया था।

आबाद (फ़ा० वि०) १ जनसम्बाध, गुलज़ार, बसा हुआ। २ कृष्ट, जोता हुआ। ४ प्रसन्न, खुश। कानूनमें वह पुरी वा भूमि आबाद कहाती, जो आय दे सकती है।

आबादकार (फ़ा० पु०) १ वनको उत्पाटनकर बसनेवाला कृषक, जो किसान जङ्गल काटकर खेती करता हो। २ कोई ज़मीन्दार। यह सीधे सरकारको कर देते हैं, और नम्बरदारसे कोई सम्बन्ध नहीं रखते।

आबादानी (हिं० स्त्री०) १ जनसम्बाध देश, आबाद जगह। "भूखेकी धन प्यासेकी पानी।
जङ्गल जङ्गल आबादानी॥" (लोकोक्ति)

२ सभ्यता, शायस्तगी। ३ ऐश्वर्य, इक़बालमन्दी, बढ़ती। "जिसका खाये धन पानी।
उसकी कीजे आबादानी॥" (लोकोक्ति)

४ प्रकाश, रोशन।

आबादी (फ़ा० स्त्री०) १ कर्षण, कृष्ट स्थान, ज़राअत, खेतीबाड़ी। २ विस्तारित वा उत्कृष्ट कर्षण, बढ़ायी वा तरक़्क़ी दी हुई ज़राअत, बढ़िया जोत। ३ ग्राम्य भूमिका जनसम्बाध भाग, गांवकी ज़मीनका बसा हुआ हिस्सा। ४ लोकसंख्या, बसती। ५ करवृद्धि, इज़ाफ़ा जमा, बढ़ोतरी लगान। ६ औचित्य, मुनासिबत। ७ प्रसन्नता, खुशी। ८ प्रकाश, रोशनी।

आवाध (सं० पु०) आ-बाध-घञ्। आबाधे च। पा ६।२।१०। १ पीड़ा, दर्द। 'आबाधे पीडायाम्।' (सिद्धान्तकौमुदी) २ आक्रमण, धावा। (त्रि०) नास्ति बाधा यस्य, बहुव्री०। ३ पीड़ाशून्य, बेदर्द। ४ विषम त्रिभुज क्षेत्रकी मध्यस्थित लम्बरेखाके उभय पार्श्वपर पड़नेवाला।

आबाधा (सं० स्त्री०) आ-बाध भावे अ, नित्य स्त्रीत्वात् टाप्। १ पीड़ा, दर्द। आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक तीन प्रकारके तापको आबाधा कहते हैं। २ त्रिभुजके आधारका खण्ड, क़िता-क़ायदा-मुसल्लस।

आबाल्य (सं० क्लो०) शैशवके सङ्ग समाप्त होनेवाली अवस्था, जो उम्र बचपनके साथ खतम हो।

आवि (सं० पु०) असुर विशेष, एक राक्षस। यह अन्धक दैत्यका पुत्र रहा। महादेवके अन्धकको मार डालनेसे आवि मनमें अत्यन्त क्रुद्ध हुआ था। यह सोचने लगा, पिताके शत्रुको कैसे मारें। परिशेषमें ब्रह्माको तुष्ट बना इसने अपने रूपसे अन्यथा न होनेपर सदा जीवित रहनेका वर मांग लिया।

महादेवने उमाको व्याह जब मन्दर पर्वतपर वास किया, तब पार्वतीका रूप काला था। शिवने किसी दिन परिहाससे उमाको कृष्णवर्णा कहकर पुकारा। पार्वतीको उससे बड़ी लज्जा आई थी। वह गौरवर्ण बननेको हिमालयके उपकण्ठस्थ अरण्यमें जा घुसीं। चलते समय नन्दीसे कह गयी थीं,—'देखो! जबतक हम वापस न आयें, तबतक अन्य नारी यहां फटकने न पायें।'

पार्वती चलती बनीं। आवि दैत्य बहुकालसे सुयोग ढूंढ़ता था। किसी दिन अवसर देख भुजङ्ग-वेशसे महादेवके घरमें घुस पड़ा। नन्दी द्वारके रक्षक रहे। उन्होंने भुजङ्गको शिवका अङ्गभूषण समझ कुछ कहा न था। घरमें उमाकी मूर्ति बना असुर महादेवको मारने लगा। किन्तु ब्रह्माने कह हो दिया था,—रूप बदलनेसे आवि मरेगा। इसीसे महादेवने अनायास इसे ठिकाने बैठा दिया। (पद्मपुराण)

आवियार—दाक्षिणात्य प्रदेशकी एक विद्यावती महिला। भूतत्त्व और चिकित्सा शास्त्रमें इन्हें विलक्षण व्युत्पत्ति रही। अनेकको विश्वास था, कि ब्रह्माकी पत्नीने शापभ्रष्ट हो पृथिवीपर अवतार लिया। इनका रचित नीतिशास्त्र तामिल विद्यालयमें पढ़ाया जाता है।

आविल (सं० त्रि०) आ-बिल भेदने क। १ अस्वच्छ, कलुष, गन्दा, जो साफ़ न हो। 'मदिरामबिलामपि। (नैषध १।३) चलित कथामें विष्ठादिसे परिपूर्ण स्थानका नाम आविल है २ भेदक, तोड़ डालनेवाला। (वै० अव्य०) ३ छिद्रपर्यन्त, छेदतक।

आविलकन्द (सं० पु०) आविलो भूमेराभेदकः कन्दो मूलमस्य, बहुव्री०। लताविशेष, एक बेल।

आबी (फ़ा० वि०) १ जलसम्बन्धीय, पानीसे तात्लुक रखनेवाला। २ वारिज, पानीसे पैदा होनेवाला। ३ जलचर, पानीमें रहनेवाला। ४ सिक्त, सींचा हुआ। ५ नीलवर्ण, नीला। (पु०) ६ सांभर। यह लवण समुद्रका जल आतपसे शुष्क होनेपर बनता है। ७ पक्षी विशेष, एक चिड़िया। यह जलके समीप रहता है। पैर और मिनक़ार हरा होता है। ऊपरका भूरा और नीचेका पर सफ़ेद है। ८ अङ्कुर। (स्त्री०) ९ सिक्तभूमि, सींचकी ज़मीन्।

आबीघोड़ा (हिं० पु०) करियाद, दरियायी घोड़ा।

आबी बनाना (हिं० क्रि०) चमकाना, रङ्ग चढ़ाना। दूध, पानी और लाजवर्दके रङ्गमें वस्त्र भिगाना तथा चमकाना आबी बनाना कहाता है।

आबीरोटी (हिं० स्त्री०) पानीके हाथकी रोटी, पानी लगा-लगाकर बननेवाली चपाती।

आबुत्त (सं० पु०) आपनम् आप-क्विप्, आपे प्राप्तेऽ उत्ताम्यति, उद्-तम-ड। भगिनी-पति, बहनोयी। 'आ समाक् बुध्यते आवुत्तो नाम्नीतितः मनीषादिः।' (भरत) 'आवुत्तो-ऽव्युत्पन्नः।' (रघुनाथ) यह शब्द नाट्योक्तिमें आता और वकारसे भी अनेक स्थलमें लिखा जाता है।

आबू (हिं० पु०) अर्बुद पर्वत, राजपूताने सिरोही राज्यके अरावली पहाड़की चोटी। यह अक्षा० २४° ३५′ ३७″ उ० और द्राघि० ७२° ४५′ १६″ पू०पर अवस्थित है। अरावली पर्वतका शृङ्ग होते भी आबू उससे कोई सम्बन्ध नहीं रखता। चारो ओर जो

मरुभूमि पड़ती, उसके बीच इसकी आकृति ५००० फीट ऊंचे आवले-जैसी मालूम देती है। इसीसे संस्कृतमें अर्बुद कहते हैं। कोई-कोई 'अर'का पर्वत एवं 'बुध'का अर्थ ज्ञान लगाते और इस पर्वतको ज्ञानोदयका साधन होनेसे अर्बुद पुकारते हैं। डीसासे आबू प्राय: बाईस कोस दूर है। प्रधान चूड़ा गुरु-शिखर कहाती है। पहले यहां महन्त रहते थे। इसमें रामकुण्ड, आमोददेवी, हक्का, देवली, विमली, अचलगढ़ और नागरताल नामक दूसरे भी कई उच्च शिखर हैं। तलदेश कोई साढ़े छ: कोस दीर्घ तथा पांच प्रशस्त और परिधि प्राय: पचीस कोस परिमित है। चारो ओर घना जङ्गल है। शृङ्गके ऊपर चढ़नेमें बहुत कष्ट पड़ता है। उत्तर एवं पश्चिम दिक् निहायत ढालू है। दक्षिण तथा पूर्व ओर उच्च-नीच स्थानके मध्य प्रशस्त उपत्यका आ गयी है। उपत्यकासे ही आने-जानेमें सुभीता पड़ता है। पूर्वदिक् दक्षिणपूर्वकोणसे पत्थर काट पथ बना, जो प्राय: पांच कोस लगता है। इसी पथसे आदमी और बैल-गाड़ीका चढ़ना-उतरना होता है। ऊपरी भागमें प्राय: तीन दीर्घ और एक कोस प्रशस्त समतल भूमि है। जङ्गली गुलाब, सेवती और क़िस्म क़िस्मके पेड़ वर्षाका जल मिलनेसे हरे पड़ जाते हैं। विचित्र-वर्ण कालिका तथा दुर्गा लताके द्वार लहलहाने लगते हैं। चारो ओर पहाड़ी निर्झरका जल झरझराया करता है। किनारे-किनारे गो, मेष, छागल और महिष चरते फिरते हैं। ऊपर अच्छा सा नक्की तालाब है। कहते हैं, माहिक असुर ब्रह्माके वरसे अतिशय प्रबल बन गया था। देवताओंने उसके भयमें छिपनेको नखसे एक गर्त खोदा। उसी गर्तका नाम नक्की तालाब है। कारण, वह नखसे खोदा गया था। वह प्राय: आठ सौ हाथ लम्बा और बीस-पचीस हाथ गहरा है। जलमें स्थान-स्थानपर क्षुद्र-क्षुद्र द्वीप मनोहर तरु तथा लतावनसे सुशोभित हैं। पश्चिम दिक् तालाबपर बांध पड़ा है। पहले न तो कोई मछली और न चिड़ियाको ही मारने पाता था। किन्तु अब वह नियम उठ गया।

आबू पर्वतके निकट असभ्य जातिके लोग रहते हैं। वह भीलोंकी एक शाखा मालूम पड़ते और लोक कहाते हैं। लोक सम्पूर्ण स्वाधीन हैं, किसीको कर नहीं देते। राजा कोई नहीं होता; केवल एक-एक सरदार रहता, जिसका उपाधि रावत है। क्षुद्र-क्षुद्र कुटीर बनाकर रहते, धनुर्वाणसे मृगया मारते घूमते और पशुपालन एवं कृषिकार्य किया करते हैं।

आबू शृङ्गका जलवायु खूब स्वास्थ्यकर है। ग्रीष्ममें समुद्रसे मन्द-मन्द शीतल वायु आता और रुग्ण शरीरमें लगनेसे मानो नव जीवनका आविर्भाव देखाता है। शीतकालमें भी यहां शरीर स्वस्थ रहता है। किन्तु डाक्टर कुकके कथानुसार उपदंश, वातरोग, फेफड़ेकी पीड़ा किंवा अन्य यान्त्रिक व्याधिमें आबूपर टिकना न चाहिये।

गवरनर-जनरलके राजपूतानेमें ठहरनेवाले एजण्ट ग्रीष्मकाल लगनेसे यहीं आकर रहते हैं। राजपूताना ष्टेट-रेलवेके आबूरोड-ष्टेशनसे पर्वतपर चढ़नेको अच्छी राह निकली है। ष्टेशनकी चारो ओर ऊंचा-ऊंचा पत्थर पड़ा; जिसमें कोई लटका, कोई विशाल शरीर फैला सोया और कोई नववधूकी तरह घूंघट काढ़ खड़ा है। अंगरेज़ इस स्थानिको नन कहते हैं। गिर्जा, बारीक, विद्यालय, हस्पताल—कहांतक बतायें—सभ्य अंगरेजोंके आकर रहनेसे जो आवश्यक पड़ता, वह सभी यहां विद्यमान है।

आबू पर्वत सिरोहीके सेठोंकी सम्पत्ति है। यहांका राजस्व देवालयके कार्यमें ही लगता है। आबूपर सेठोंके कामदार, नायब और थानेदार रहते हैं। दूसरे लोगोंमें कई मुसलमान् दुकान्दार हैं। चमार और भील कुलीका काम करते हैं। लोक जोतते-बोते हैं। ग्रीष्मकालमें आबूकी जनसंख्या बढ़ और अन्य समय घट जाती है।

आबू शृङ्ग बहुकालसे हिन्दुवोंका प्रसिद्ध तीर्थस्थान है। बोध होता, कि मार्कण्डेयपुराण, पद्मपुराण और भागवतमें इसी पर्वतकी कथा उल्लिखित है। पहले शायद आबूपर वशिष्ठ मुनिका आश्रम रहा। आज भी उनके नामका एक मन्दिर देख पड़ता है।

मन्दिरकी शिलापर लिखा है,—"वशिष्ठ मुनि हिमालयमें तपस्या करते थे। बहुकाल कठोर तपस्या करने बाद वह सिद्ध हुये और वहांसे चलते समय ब्रह्माकी अनुमतिसे हिमालयका एक शृङ्ग उखाड़ लाये। वही यह आबू पर्वत है।" वस्तुपालके मन्दिरमें लिखा, अर्बुदशेखर गौरीपतिके श्वशुरका पुत्र और शशिभृत् गङ्गाधरका श्यालक है। उपरोक्त लेखमें भी आबू हिमालयका अंश बताया गया है।

अर्बुद पर्वतमें अग्निकुल राजपूतवंश उत्पन्न हुआ था। इसी वंशका अपर नाम परमार है। 'पर'का शत्रु और 'मार'का अर्थ नाशक है। पहले दैत्य वेदध्वंस करते थे। दैत्योंको मारनेके लिये वशिष्ठने यज्ञ आरम्भ किया। उसी यज्ञकुण्डसे कोई महावीर निकले थे। उन्होंने दैत्योंको मार डाला, जिससे उनका नाम परमार पड़ा।

अर्बुदाचल जैनसम्प्रदायका एक प्रधान तीर्थ है। यहां बहु दूरदेशसे धार्मिक जैन तीर्थ दर्शन करनेको आते हैं। आबूके मन्दिरादिमें जो विवरण लिखा, उसमें एक कौतुक देख पड़ा है। जैनोंने भी अनेक स्थलमें शिव और भगवतीका नाम ले मङ्गलाचरण किया है। इसीसे जान पड़ा, कि उस समय हिन्दू धर्मके साथ जैन मतका सामञ्जस्य बढ़ गया था। आबूपर अनेक शिवालय और विष्णुमन्दिर भी रहे। किन्तु इस समय उनमें कितने ही टूट-फूट गये हैं। पहले अचलेश्वर नामक शिवालयमें अघोरपन्थी रहते थे।

आबूपर कुल पांच मन्दिर बने हैं। उनमें एक ऋषभनाथका है। वह जैनोंके चौबीस तीर्थङ्करमें प्रथम रहे। अपने मन्दिरमें आप चतुर्मूर्तिसे मिले बैठे हैं। मन्दिर तितल्ला है। पूर्व, पश्चिम, उत्तर एवं दक्षिण चार द्वार लगे हैं। मन्दिरसे पश्चिम ओर चार और तीन दिक् एक-एक मण्डप है। प्रत्येक मण्डपमें आठ खम्भे खड़े हैं। ऋषभनाथके उत्तर दूसरे बड़े मन्दिरमें वाञ्छा शाहका मण्डप है। फिर दक्षिण-पूर्व दिक् पादीश्वर एवं गोरखलाञ्छनका मन्दिर लगा है। ऋषभनाथसे पश्चिम आदिनाथ और उत्तर नेमीनाथका मन्दिर है। उपरोक्त दोनो मन्दिर साफ़ सफ़ेद पत्थरके बने हैं। खम्भे, छत और मण्डपके भीतरकी खोदायीका काम बहुत अच्छा है। संवत् १०८८ को किसी सेठने आदिनाथका मन्दिर बनवाया था। पीछे संवत् १३७९के ज्येष्ठमासकी शुक्ला नवमीको उसकी मरम्मत हुई। आदिनाथके मन्दिरकी चारो ओर ५५ प्रकोष्ठ वेष्ठित हैं। प्रत्येक प्रकोष्ठमें एक-एक तीर्थङ्करकी पाषाणमयी मूर्ति पैरपर पैर चढ़ा योगासनसे बैठी है। उत्तर-पश्चिम दिक्के किसी प्रकोष्ठमें अम्बाजीकी प्रतिमूर्ति है। द्वारके सम्मुख पत्थरके नौ हाथी खड़े हैं। अङ्ग-प्रत्यङ्ग ऐसी सफ़ायीसे बना, कि नक़ली कहा जा नहीं सकता। शरीरमें केवल जीवन और चलत्शक्तिका अभाव है। हाथियोंपर रत्नभूषित हौदे रखे, सम्मुख महावत और पीछे विमलशाह सेठ बैठे हैं। दूसरी जगह द्वारपर विमलशाह देवताके दर्शन करनेको हाथीसे उतरे हैं। जगत्में ऐसी जीवन्त प्रतिमूर्ति और कहीं नहीं देखते।

संवत् १२८७ एवं १२९३ को वास्तुपाल तथा तेजोपालने नेमीनाथका मन्दिर निर्माण कराया था। यह दोनो सहोदर रहे। अनहिलपत्तनमें इनका वासस्थान था। गुजराती राजा वीरधवलके समय दोनो भाई प्रधान मन्त्री रहे।

पहले आबू पर्वतपर ८०८ शिवलिङ्ग और अन्य देव देवीकी मूर्ति प्रतिष्ठित थी। प्रस्तरपर खुदा, कब किस महात्माने मन्दिर बनवाया और कब किस महात्माने सकल मन्दिरका संस्कार कराया। किन्तु अनेक दिन बीत जानेसे सकल अक्षर पढ़नेमें नहीं आते। यह ठहरना कठिन पड़ा, सकल मन्दिर बनवानेमें कितना रुपया लगा था। आबू पर्वतकी चारो ओर प्रायः डेढ़सौ कोसतक कहीं सफ़ेद पत्थर नहीं निकलता। अतएव बहुत दूरसे ऊंटकी पीठपर लदकर यह पत्थर आया होगा। फिर पहाड़पर चढ़ानेमें भी कम खर्च नहीं पड़ा। किसने खोलकर कहा,—खम्भे, मेहराब, और खोदायीमें कितना काल बीता था।

आबू पर्वतपर जैन राजाओंका नगर न रहा। यदि होता, तो उसका कोई न कोई चिह्न अवश्य देख पड़ता। किन्तु इस शृङ्गसे दक्षिण चन्द्रावती नामक बड़े नगरका चिह्न आज भी चमकता है। गुजरात-नृपतिके मन्त्रियों और परमारोंने उसे बनवाया था। आजकल उसका भग्नावशेष रोज परिष्कार होता है। अहमदाबादके सुलतान, गिरनारके ठाकुर और सिरोहीके सेठ समस्त प्रस्तरादि उठा ले गये हैं।

यहां सफेद पत्थरकी दो खानि हैं। किन्तु उनका पत्थर अतिशय कठिन और उज्ज्वल है। इनमेंसे ऊपर काम होनेसे टूट जाता है। कहा जा न सका, जैनमन्दिर बनते समय कहांसे पत्थर मंगाया गया था।

आबूपर गेहूं, यव, ज्वार, मकई, धान, दाल, आलू और कयी तरहकी दूसरी फसल भी तैयार होती है। शिमला, नैनीताल प्रभृतिके पहाड़ी मधुकी भांति यहां भी उत्कृष्ट मधु मिलता है। वन्य पशुके मध्य शेर और स्याहगोश कभी-कभी पहाड़पर चढ़ता है। किन्तु चीता, भालू, सेह और खरगोश प्राय: सर्वदा ही देख पड़ता है। गीदड़ और लोमड़ी यहां नहीं। सांभर हरिण दल बांधकर चरते-चरते पहाड़पर आता, किन्तु चित्रमृग नीचे ही घूमा करता है। आबू पर्वतपर सर्पका भय अधिक नहीं, कहीं-कहीं कोई अजगर कभी मिल जाता है।

मन्दिरके प्रस्तरखण्डमें इसका समस्त विवरण खुदा, आबूपर मन्दिर कब किस राजा वा धनाढ्यने बनवाया और कब किस महात्माने उसका संस्कार करवाया था। स्थान-स्थानमें उन महात्माका वंश-विवरण और मन्त्री तथा कारीगरका नाम देखायी देता है। हिन्दी विश्वकोषमें इस विषयका विस्तारित विवरण लिखना असम्भव है। हम कुछ प्रसिद्ध व्यक्तियोंके नाम परिवार और समयके साथ नीचे लिखते हैं,—

अणहिलवाड़का चापोत्कटवंश—वनराज, योगराज, क्षेमराज, भूयड़, वीरसिंह, रत्नादित्य, सामन्तसिंह।

अणहिलवाड़का चौलुक्य-राजपरिवार—मूलराज, चामुण्ड सन् ९९६ ई० ; वल्लभ, दुर्लभ १००९ ; भीम, कर्णदेव, सिद्धराज १०९३ ; कुमारपाल ११४३ ; अजयपाल, मूलराज, भीमदेव ११७८ और तत्पुत्र त्रिभुवनपाल सन् १२४२ ई०।

अणहिलवाड़का बाघेला-परिवार—धवल, अर्णोराज, लवणप्रसाद, वीरधवल सन् १२१९ ई०, वीसलदेव, अर्जुनदेव, सारङ्गदेव, कर्णदेव।

वीरधवलका मन्त्री—तेज:पाल, वस्तुपाल। (सन् १२१९ से १२३७ ई०)

चन्द्रावतीका चौहानराजवंश—तेजसिंह सन् १३३१ ई० ; कान्हरदेव, सामन्तसिंह सन् १३३९ ई०।

मेदपाटपरिवार गुहिलवंश—बप्पक, गुहिल, भोज, शील, कालभोज, भर्तृभट, सिंह, महायिक, खुमान, अल्लट, नरवाहन, शक्तिकुमार, शुचिवर्मा, नरवर्मा, कीर्तिवर्मा, हंसपाल, वैरिसिंह, विजयसिंह, अरिसिंह, चोड़, विक्रमसिंह, क्षेत्रसिंह, सामन्तसिंह (विक्रम-संवत् १२८७); कुमारसिंह, मथनसिंह, पद्मसिंह, ज्यैत्रसिंह, तेज:सिंह, समरसिंह (सन् १२७८ ई०)। रत्नसिंह, जयसिंह, लक्ष्मसिंह, अजयसिंह, हम्मीर, क्षेत्रसिंह, लक्षसिंह, मोकलदेव सन् १४२८ ई०, कुम्भकर्ण सन् १४३८ ई०।

शाकम्भरी चौहान-वात्स्य—सिन्धुपुत्र, लक्ष्मण, माणिक्य, अधिराज, महीन्दु, सिन्धुराज, कुलवर्धन, प्रभुराम, धुन्धन चौहान, समरसिंह, दशरथ, लावण्यकर्ण एवं लुधन सन् १३२१ ई०।

आबोधन (सं० क्ली०) आ समन्तात् बोधयति आ-बुध णिच् ल्युट् णिच्लोप:। १ विद्या, बुद्धि, इल्म, समझ। २ शिक्षा, समाचार, तालीम, आगाही।

आब्द (सं० त्रि०) अब्दे मेघे भवं तस्येदं इति वा, अण्। १ मेघजात, बादलमें पैदा होनेवाला। २ मेघसम्बन्धीय, अबरी, बादलसे ताल्लुक रखनेवाला।

आब्दिक (सं० त्रि०) वार्षिक, सालाना, साली। (स्त्री०) आब्दिकी।

आब्दिका (सं० स्त्री०) तिन्तिड़ी, इमली।

आब्बोट लेफटिनेण्ट—लाहोर-सरकारके अधीनस्थ राजकीय पदाधिकारी। पञ्जाबके हजारा जिलेमें इनके भूमिकर बांध देनेपर सन् १८४८ ई०को पूर्ण रीतिसे

शान्ति विराजने लगी थी। मूलतानमें उपद्रव उठनेपर किलेकी फौज आब्बोटसे बिगड़ पड़ी, किन्तु मुसलमानोंने कोई बाधा न डाली। उस समय यह अशिक्षित मुसलमानी सेनाके सहारे अपने स्थानपर डटे रहे। अन्तको गुजरातके समरमें आब्बोटने विजयी हो हज़ारा जिला अंगरेज़ी राज्यसे मिला दिया। यह सन् १८४७ से १८५३ ई० तक हज़ारा ज़िलेके डिपुटी कमिश्नर थे।

आब्बोटाबाद (अबोटाबाद)—१ पञ्जाब प्रान्तके हज़ारा ज़िलेकी तहसील। यह अक्षा० ३४° उ० और द्राघि० ७३° १६´ पू० पर अवस्थित है। क्षेत्रफल ७१४ वर्ग मील है। जिन पार्वत्य उपत्यकाओंमें डोढ़ और हरोह नदी बही, उनकी भूमि कुछ इस तहसीलमें आ गयी है। पूर्वकी ओर भी पार्वत्य देश है। उत्तर एवं उत्तरपूर्व पहाड़को बग़लमें जङ्गली पेड़ खड़े हैं। पूर्वमें प्रधानत: खराल तथा ढूंड, केन्द्रमें जदून और पश्चिममें अवानों एवं गूजरोंके साथ तनावली लोग रहते हैं। २ आब्बोटाबाद तहसीलकी नगरी और छावनी। यह मेजर जेम्स आब्बोटके नामसे अभिहित और अक्षा० ३४° ८´ १५´´ उ० तथा द्राघि० ७३° १५´ ३०´´ पू० पर अवस्थित है। ओरास-मैदानके दक्षिण कोणमें पड़नेसे शोभा विचित्र देख पड़ती है। यह रावलपिण्डीसे ६३, मोरीसे ४०, और पेशावरसे ११७ मील दूर है। छावनीमें दो-तिहाई और नगरीमें एक-तिहाई लोग रहते हैं। किलेमें गुर्खा तथा पञ्जाबी फौज और पहाड़ी तोपख़ाना है। साल भर कुएंका पानी ख़ूब मिलता, किन्तु गर्मीमें तीन महीने सूख जाता है। बाज़ार, कचहरी, ख़ज़ाना, क़ैदख़ाना, हस्पताल, डाकबंगला, पोष्टाफ़िस और तारघर सभी कुछ मौजूद है। दिसम्बरसे मार्च मास तक कभी-कभी बर्फ गिरती है। पानी बरसनेसे कोई मास खाली नहीं जाता। प्रधानत: सितम्बर और अक्टोबर मास ज्वरका प्रकोप होता है।

आभ (हिं० पु०) १ अभ्र, आसमान्। २ आब, जल। (स्त्री०) ३ आभा, चमक।

आभग (सं० पु०) आ सम्यक् भगं माहात्म्यं यस्य, बहुव्री०। अतिशय माहात्म्ययुक्त देवता। जो देवता यज्ञमें यथेष्ट भाग पाता, वही आभग कहाता है।

आभण्डन (सं० क्लो०) आ-भण्ड-ल्युट्। निरूपण, तशरीह।

आभयजात्य (सं० त्रि०) अभय जातस्यापत्यम्, यञ्। गर्गादिभ्यो यञ्। पा ४।१।१०५। अभयजातसे उत्पन्न होनेवाला, जो अभयजातसे निकला हो। (स्त्री०) ङीप्, य लोप:। आभयजाती।

आभरण (सं० क्लो०) आभ्रियन्ते अङ्गेषु आध्रियन्ते शोभार्थम्, आ-भृ कर्मणि ल्युट्। १ भूषण, अलङ्कार, ज़ेवर, गहना। आभरण चार प्रकारका होता है,—आवेध्य, बन्धनीय, क्षेप्य और आरोप्य। अङ्गको छेदकर पहना जानेवाला आवेध्य, बंधनेवाला बन्धनीय, डाला जानेवाला क्षेप्य और लटकनेवाला आरोप्य कहता है। कुण्डलादि आवेध्य, कुसुमादि बन्धनीय, नूपुरादि क्षेप्य और हारादि आरोप्य है। अलङ्कार देखो। भावे-ल्युट्। २ सम्यक् पोषण, परवरिश।

आभरत् (सं० त्रि०) लानेवाला। (स्त्री०) आभरन्ती।

आभरद्वसु (वै० त्रि०) सम्पत्ति प्रभृति लानेवाला, जो माल-असबाब ला रहा हो।

आभरित (सं० त्रि०) आभर: आभरणं जातोऽस्य, आ-भृ तारकादित्वात् इतच् इट् च। पूरित, अलङ्कृत, भरा या ज़ेवरसे सजा हुआ।

आभर्मन् (सं० क्लो०) आ-भृ-मनिन्। गर्भादिका सम्यक् भरण, पोषण, परवरिश।

आभा (सं० स्त्री०) आ-भा-अङ् टाप्। १ दीप्ति, रोशनी। २ स्फुरण, चमक। ३ शोभा, ख़ूबसूरती। ४ छाया, परछाहीं। ५ उपमान, हमक़ान्। ६ बबुर-वृक्ष, बबूल। ७ महाशतावरी, बड़ी सतावर। ८ वातरोग विशेष, बावकी बीमारी।

समासान्तमें 'आभा'का आभ हो जाता और सदृशका अर्थ लगता है। जैसे—हेमाभ, हेमसदृश।

आभागुग्गुल (सं० पु०) गुग्गुलभेद। आभाफल, त्रिक तथा व्योषको समान भाग लेने एवं सबकी बराबर गुग्गुल मिलानेसे यह औषध प्रस्तुत होता और भग्नसन्धिको जोड़ देता है। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

आभाणक (सं॰पु॰) १ नास्तिकविशेष, किसी क़िस्मका मुलहिद। २ लोकोक्ति, मसल।

आभाति (सं॰ स्त्री॰) आ-भा-क्तिन्। १ प्रतिबिम्ब, अक्स। २ द्युति, दमक।

आभार (सं॰ पु॰) आ-भृञ्-घञ्। १ सम्यक् भार, भारी बोझ। २ गृहस्थीका भार, घरका बोझा। ३ उपकार, एहसान्। वर्णवृत्त विशेष। इसमें आठ तगण रहते हैं। जैसे—श्रीकृष्ण श्रीकृष्ण श्रीकृष्ण बोलो न। संसार से पार हो जाव जो लो न॥

आभारिन् (सं॰ त्रि॰) आभारयुक्त, एहसानमन्द। (पु॰) आभारी। (स्त्री॰) आभारिणी।

आभाष (सं॰ पु॰) आ-भाष्-अच्। १ सम्बोधन, गुज़ारिश। २ भूमिका, तमहीद।

आभाषण (सं॰ क्ली॰) आ-भाष भावे ल्युट्। परस्पर कथोपकथन, आलाप, सम्बोधन, बातचीत। 'स्यादाभाषणमालापः।' (अमर)

आभाष्य (सं॰ त्रि॰) आ-भाष्-ण्यत्। १ आमन्त्रणीय, सम्बोधनीय, आलाप्य, बातचीत किये जाने क़ाबिल, जिससे बात हो सके। (अव्य॰) ल्यप्। २ सम्बोधन करके, बोलके।

आभास (सं॰ पु॰) आभासते, आ-भास-अच्। १ उपाधिके तुल्यता हेतु प्रतिबिम्ब, अक्स, परछाहीं। २ दुष्ट हेतु प्रभृति, झूठा दिखावा। भावे घञ्। ३ तुल्य प्रकाश, औपम्य, शबाहत, मिलती-जुलती रौशनी। आभास्यतेऽनेन, आ-भास-णिच् करणे अच्, णिच् लोपः। ४ ग्रन्थावतरणके निमित्त अभिप्राय वर्णनरूप व्याख्यान विशेष, किताब बनानेके लिये मतलब बतानेकी बात। चलती बोलीमें इङ्गित वा सामान्य अभिप्रायको भी आभास कहते हैं।

आभासन (सं॰ क्ली॰) आ-भास्-ल्युट्। द्योतन, प्रकाशन, दरख़शानी, सफ़ाई।

आभासुर (सं॰ त्रि॰) आ-भास-घुरच्। भञ्जभासमिदो घुरच्। पा ३।२।१६१। १ सम्यग्-दीप्ति-शील, खूब चमकनेवाला। (पु॰) २ गणदेव विशेष। यह संख्यामें साठ होते हैं।

आभास्वर (सं॰ त्रि॰) आ-भास-वरच्। स्थेशभासपिसकसो वरच्। पा ३।२।१७५। १ सम्यग्दीप्तिशील, खूब चमकनेवाला। (पु॰) २ गणदेव विशेष। इनकी संख्या चौंसठ है। ३ द्वादश परिमित गणदेव विशेष।

आभिचरणिक (सं॰ त्रि॰) अभिचरणं प्रयोजनमस्य, ठञ्। अथर्ववेदादि-प्रोक्त मन्त्र प्रभृतिके मारण, उच्चाटन, वशीकरणादि अभिचारसे सम्बन्ध रखनेवाला, आक्रोशगर्भ, लानती। (स्त्री॰) आभिचरणिकी।

आभिचारिक (सं॰ त्रि॰) अभिचारप्रयोजनार्थे ठञ्। १ आक्रोशगर्भ, लानती, बददुवासे तासुक़ रखनेवाला। (क्ली॰) २ अभिचार, जादू।

आभिजन (सं॰ त्रि॰) अभिजनादागतं अभिजनस्येदं वा, अभि-जन-अण्। १ वंश-परम्परादागत, नसली। (क्ली॰) २ वंशका महत्व, नसलकी बुलन्दी। (स्त्री॰) आभिजनी।

आभिजात्य (सं॰ क्ली॰) अभिजातस्य भावः, ष्यञ्। १ कौलीन्य, शराफ़त। २ पाण्डित्य, सौन्दर्य, इल्मदारी, ख़ूबसूरती।

आभिजित (सं॰ त्रि॰) अभिजिति नक्षत्रे जातम्, अण्। अभिजित् नक्षत्रजात, अभिजित्में पैदा होनेवाला। (स्त्री॰) आभिजिती।

आभिजित्य, आभिजित देखो।

आभिधा (सं॰ स्त्री॰) अभिधैव, स्वार्थे ऽण्। अभिधा देखो।

आभिधातक (सं॰ क्ली॰) अभिधां तकति सहते, अच्। अभिधा देखो।

आभिधानिक (सं॰ त्रि॰) अभिधानादागतम्, ठक्। १ अभिधान-सम्बन्धीय, फ़रहङ्गनवीसीसे तासुक़ रखनेवाला, जो लुगात या कोषमें हो। (पु॰) २ कोषकार, फ़रहङ्गनवीस, लुगात या डिकशनरी बनानेवाला शख़्स। (स्त्री॰) अभिधानिकी।

आभिधानीयक (सं॰ क्ली॰) अभिधानीयस्य भावः, वुञ्। योपधगुरूपोत्तमाद् वुञ्। पा ५।१।१३२। १ कथनीयत्व, इस्मका वस्फ़, नामका गुण। (त्रि॰) २ शब्दसम्बन्धीय, लफ़्ज़से तासुक़ रखनेवाला। (स्त्री॰) आभिधानीयकी।

आभिप्लविक (सं॰ त्रि॰) अभिप्लवे विहितम्, ठक्।

१ अभिप्लवविहित, अभिप्लव नामक धार्मिक संस्कारसे सम्बन्ध रखनेवाला। यह शब्द सूक्त सामादिका विशेषण है। (पु॰) अभिप्लवाय हितम्। २ गवामयन यागके अन्तर्गत षड्ह-विशेष।

आभिमानिक (सं॰ त्रि॰) अभिमाने निर्वृत्तम्, ठक्। सांख्यमत-सिद्ध अभिमानहेतु उत्पादित (उभय इन्द्रिय, शब्दादि पञ्चतन्मात्र)।

आभिमुख्य (सं॰ क्ली॰) अभिमुखस्य भावः, ष्यञ्। अभिमुखत्व, तर्फ, ओर। २ सम्मुखत्व, सामना। ३ प्रसन्नता, खुशी।

आभिरूपक (सं॰ क्ली॰) अभिरूपस्य भावः, वुञ्। इन्द्वमनोज्ञादिभ्यश्च। पा ५।१।१३३। सौन्दर्य, खूबसूरती।

आभिरूप्य (सं॰ क्ली॰) अभिरूपस्य भावः, ष्यञ्। १ सौन्दर्य, उत्कर्ष, पाण्डित्य, खूबसूरती, सरफ़राज़ी, इज्जतदारी।

आभिषिक्त (सं॰ त्रि॰) अभिषिक्तमभिषेकः तेन निर्वृत्तम्, अञ्। सङ्कलादिभ्यश्च। पा ४।२।७५। अभिषेक-निष्पन्न, अभिषेकसे निकला हुआ।

आभिषेचनिक (सं॰ त्रि॰) अभिषेचनं राज्याभिषेकः सामान्याभिषेको वा प्रयोजनमस्य, ठञ्। राज्याभिषेकके उपयुक्त। जिस द्रव्यसे राज्याभिषेक करनेका विधि होता, वह आभिषेचनिक कहाता है। मृत्तिका, सुवर्ण, विविध रत्न, नाना उपकरण-युक्त आभिषेचनिक भाण्ड, स्वर्णमय ताम्रमय रजतमय एवं त्रिकोणाकार पृथिवी, पूर्णकुम्भ, पुष्प, लाजा, घृत, दुग्ध, शमी, पिप्पल और पलासकी समित्, मधुयुक्त घृत, यज्ञ-डुम्बुरका स्रुव और स्वर्णभूषित सङ्ख राज्याभिषेकमें काम आनेसे आभिषेचनिक है।

आभिषेचनिकी (सं॰ स्त्री॰) अभिषेचनमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, ठक्-ङीप्। १ राज्याभिषेकके अधिकारपर लिखित महाभारतका पर्व। अभिषेचनं स्नानं प्रयोजनमस्य, ठञ्। २ स्नानार्थ विधान, गुसलका कायदा। ३ विहित स्नानका द्रव्य और मन्त्रादि। ४ तत्तत् कार्यमें अधिकार पानेको वैदिक, तान्त्रिक और पौराणिक मन्त्र। ५ तत्तत् द्रव्य-विशेष। ७ अभिषेकका विधान। ८ रुद्राभिषेक द्रव्य। ९ रुद्राभिषेकका विधान। १० वेदाभिषेकादि साधन द्रव्य।

आभिहारिक (सं॰ त्रि॰) अभिहारः प्रयोजनमस्य तत्र साधु वा, ठञ्। १ अभिहारके उपयुक्त। २ उपढौकनसम्बन्धीय। ३ भेंटका, नज़रानेसे ताल्लुक रखनेवाला।

आभीक (सं॰ क्ली॰) अभीकेन दृष्टं साम अण्। अभीक नामक ऋषिका दृष्ट साम विशेष। यह अत्यन्त मधुर होता है।

आभीक्ष्ण (सं॰ त्रि॰) १ अधिक, नित्य, ज्यादा, मुदामी। (अव्य॰) २ सदा, अल-अद्दवाम।

आभीक्ष्ण्य (सं॰ क्ली॰) अभीक्ष्णमित्यव्ययं तस्य भावः, ष्यञ्। आभीक्ष्ण्ये णमुल् च। पा ३।४।२२। सर्वदा, सातत्य, पौनःपुन्य, अविच्छेदसे, रूप क्रियाका करना, ज्यादा, तकरार, दोहराव।

आभीय (सं॰ त्रि॰) पाणिनिके 'भ'में समाप्त होनेवाले अध्यायसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आभीर (सं॰ पु॰) आ सम्यक् भियं भीति राति ददाति, रा-क। १ गोप, अहीर। २ सङ्कीर्ण जाति विशेष, भील। आभीर ब्राह्मणके औरस और अम्बष्ठाके गर्भसे उत्पन्न हैं। विष्णुपुराणादिमें इन्हें म्लेच्छजाति कहा गया है। सिन्धुनदके कूलवर्ती आभीरोंने कृष्णकी रमणियोंको छीन लिया था। आजकल युक्तप्रदेशके ग्वालोंमें प्रायः सकल ही आभीर जातीय हैं। शकोंसे पहले आभीर जातिने सिन्धुप्रदेशमें दश पुरुष राजत्व किया था। अहीर देखो।

आभीरनट (सं॰ पु॰) रागविशेष। इसमें आभीर और नट दोनो राग मिले रहते हैं।

आभीरपल्लि, आभीरपल्ली देखो।

आभीरपल्लिका, आभीरपल्ली देखो।

आभीरपल्ली (सं॰ स्त्री॰) ६-तत्, कृदिकारन्तात्वाद्वा ङीप्। गोपप्रधान ग्राम, घोष, अहिराना, जिस गांवमें बहुतसे अहीर रहें।

'घोष आभीरपल्ली स्यात्।' (अमर)

आभीरी (सं॰ स्त्री॰) आभीरस्य पत्नी आभीरजातिर्वा, स्त्रीत्वात् ङीप्। १ गोप जातिकी स्त्री, गोपी, अहीरिन।

२ महाशूद्री। 'आभीरी तु महाशूद्री।' (अमर) ३ आभीरोंकी भाषा।

आभील (सं० क्ली०) आ सम्यक् भियं लाति, आभी-ला-क। १ कष्ट, तकलीफ़। २ भय, खौफ़।

'स्यात् कष्टं कृच्छ्रमाभीलं त्रिष्वेषां भेद्यगामि यत्।' (अमर)

(त्रि०) ३ कष्टयुक्त, तकलीफ़ उठानेवाला।

"कामिनी त्रिवलीबन्धे तस्या एव च लक्षणी।
आभीलं त्रिषु कष्टेना नाभिगण्डेऽपि दृश्यते॥" (व्याडि)

४ भयानक, खौफ़नाक।

आभीशव (सं० क्ली०) अभीशुना दृष्टं साम अण्। साम विशेष, अभीशुका देखा हुआ साम।

आभु (सं० त्रि०) आ समन्तात् भवति, आ-भू-डु। १ विभु, व्यापक, मामूर, भरा या समाया हुआ। २ रिक्त, खाली। ३ बद्धमुष्टि, बखील, कञ्जूस।

आभुग्न (सं० त्रि०) आ-भुज कर्तरि कर्मणि वा क्त, तकारस्य नकारः। १ आकुञ्चित, मुड़ा हुआ। २ अल्पवक्र, कुछ टेढ़ा। ३ चारो ओर भग्न, हर तर्फ़ टूटा हुआ।

"आभुग्नेन विवर्तिता वलिमता मध्येन कमलनी।" (शकुन्तला)

आभू (वै० त्रि०) आ-भू-क्विप्। आभु देखो।

आभूक (वै० त्रि०) रिक्त, शून्य, निर्बल, खाली, नातवान्।

आभूखन (हिं०) आभरण देखो।

आभूति (सं० स्त्री०) आ-भू-क्तिन्। १ क्षमता, सामर्थ्य, इस्तेदाद, क़ाबिलियत। २ पराक्रान्त बल, दबा देनेकी ताक़त।

आभूषण (सं० पु०) आभरण देखो।

आभूषित, आभरित देखो।

आभूषेण्य (वै० त्रि०) १ आज्ञा माने जाने योग्य, हुक्म बजाये जाने क़ाबिल। २ प्रशंसनीय, तारीफ़ लायक़।

आभेरी (सं० स्त्री०) राग विशेष, एक रागिणी। सचराचर इसे आभोरीकल्याण वा अहीरीकल्याण कहते हैं। कल्याण, गुर्ज्जरी, श्याम और देशकारके योगसे यह बनी है। स्वरग्राम है,—स ऋ ग म प ध नि।

आभोग (सं० पु०) आ-भुज आधारे घञ्। १ परिपूर्णता, तमामी, कुल्लियत।

'आभोगः परिपूर्णता।' (अमर)

२ वरुणका छत्र। ३ यत्न, तदबीर।

'आभोगः परिपूर्णता वरुणच्छत्रयत्नयोः।' (विश्व-हेम)

"अयमाभोगस्तपोवनस्य।" (शकुन्तला)

४ भणिता, सङ्गीतादिके शेषमें कविका नामकथन, गाने वग़ैरहके अख़ीरमें शायरके नामका पढ़ना।

'यत्रैव कविनाम स्यात् स आभोग इतीरितः।' (सङ्गीतदामोदर)

किन्तु आजकल ऊंचे स्वरमें आवाज़ लगानेको भी आभोग कहते हैं। ५ सम्यक् सुखादिका अनुभव, अच्छीतरह आराम वग़ैरहका उठाना।

आभोगय (वै० त्रि०) आभोगं याति, आभोग-या-क। १ आस्वाद्य, मज़ा लिये जाने क़ाबिल। यह शब्द सोमरसादिका विशेषण है। (क्ली०) २ वृत्ति, जीविका, रोज़ी, रोज़गार।

आभोगि (वै० स्त्री०) आभोगं विषयस्य सम्यक् सुखानुभवं करोति, आभोग क्रत्यर्थे णिच्-इन्। विषयाभोग, सम्यक् सुखानुभव, अच्छीतरह आरामका उठाना।

आभोगिन् (सं० त्रि०) आभोगोऽस्त्यस्य, इनि। १ परिपूर्ण, भरा-पूरा। २ यत्नवान्, तदबीर लड़ानेवाला। ३ सम्यक् सुखादियुक्त, ख़ूब आराम लेनेवाला। (पु०) आभोगी। (स्त्री०) आभोगिनी।

आभ्यन्तर (सं० त्रि०) अभ्यन्तरे भवम्, अण्। मध्यवर्ती, दरमियानी, अन्दरूनी, भीतरी, बीचवाला। (स्त्री०) आभ्यन्तरी।

आभ्यन्तरतपस् (सं० क्ली०) मध्यवर्ती तपस्या, अन्दरूनी तोबा। यह प्रायश्चित्त, वैयावृत्ति, स्वाध्याय, विनय, व्युत्सर्ग एवं शुभ ध्यानसे छः प्रकारका होता है।

आभ्यन्तरिक, आभ्यन्तर देखो।

आभ्यवकाशिक (सं० त्रि०) असंवृत वायुमें रहनेवाला, जो खुली हवामें रहता हो।

आभ्यवहारिक (सं० त्रि०) अभ्यवहाराय हितम्, ठक्। भोजनीय, खाने लायक़। भोज्य, भोज्य, भोजनीय, अभ्यवहार्य, आभ्यवहारिक इत्यादि शब्दके अर्थ प्रभेद पर मतान्तर मिलता है। पाणिनिने

(७।३।६९) 'भोज्यं भक्ष्ये' सूत्र कहा है। किन्तु कात्यायनके कथानुसार उपरोक्त सूत्रमें 'भक्ष्य'के स्थानपर 'अभ्यवहार्य' शब्द लिखना उचित था। उनके ऐसा कहनेका तात्पर्य यह होता—भक्ष्यसे कठिन द्रव्यका खाना समझा जाता है, तरल का नहीं। किन्तु पतञ्जलिने यह बात न मान कात्यायनको दोषी ठहराया है।

आभ्यागारिक (सं० त्रि०) आगारस्य अभि अभ्यागारं तस्मिन् तत्स्थकुटुम्बाभरणे व्यापृतः ठक्। कुटुम्बके भरणमें व्यापृत, खान्दानकी परवरिशमें लगा हुआ। 'उपाधृाभ्यागारिकौ तु कुटुम्बव्यापृते नरि।' (हेम)

आभ्यादायिक (सं० क्लो०) आभिमुख्येनादायः आदानं यस्य तस्मिन् हितम्, ठक्। पिता किंवा माताके कुलसे प्राप्त, नैहर या ससुरालसे मिला हुआ।

आभ्याशिक (सं० त्रि०) समीपस्थ, पड़ोसी, नज़दीकी। (स्त्री०) आभ्याशिकी।

आभ्यासिक (सं० त्रि०) अभ्यासे निकटे भवम्, ठक्। १ निकटस्थित, नज़दीक रहनेवाला। अभ्यासात् आम्रे डितोच्चरणादागतम्। २ अभ्यास-प्राप्त, मश्कसे हासिल। ३ पुनःपुनः उच्चारण-जात, बारबार कहनेसे पैदा। (स्त्री०) आभ्यासिकी।

आभ्युदयिक (सं० क्लो०) अभ्युदयः पुत्रजननादिः स प्रयोजनं यस्य, ठक्। १ वृद्धि-निमित्तक श्राद्ध विशेष, बढ़तीके लिये पिण्डका पारना। नान्दी देखो। अन्नप्राशन और विवाहसे पूर्व जो नान्दी श्राद्ध किया जाता, वह सुखसौभाग्य बढ़ानेके लिये होनेसे आभ्युदयिक कहाता है। "अबान्ददात्याभ्युदयिकेषु" (सिद्धान्तकौमुदी)

(त्रि०) २ माङ्गलिक, इक़बाल-बख्श। ३ उदय वा आरम्भ सम्बन्धीय, उरूज या आग़ाज़के मुताल्लिक़। (स्त्री०) आभ्युदयिकी।

आभ्रिक (सं० त्रि०) अभ्रया खनति, ठक्। १ अवदारण द्वारा खनन करनेवाला, जो कुदाल या फावड़ेसे खोदता हो। अभ्रात् मेघात् आगतम्। २ बादलसे निकला हुआ। यह शब्द जल प्रभृतिका विशेषण है।

आभ्र (सं० त्रि०) अभ्रे आकाशे भवं अभ्रस्यापत्यं वा, अण्। कुर्वादिभ्यो ण्यः। १ आकाशजात, आसमानी। २ अभ्र नामक पुरुषसे पैदा होनेवाला।

आम् (सं० अव्य०) अम गत्यादौ णिच् बाहु० कर्मभावः क्विप्, णिच् लोपः। हां, ठीक, ज़रूर, समझा। यह स्वीकृति वा स्मृतिका द्योतक है।

आम (सं० त्रि०) आ ईषत् अम्यते पच्यते, आ अम घञ्। १ अपक्व, जो पकाया न गया हो। २ जो परोसा न गया हो। ३ कच्चा, जो पक्का न हो। ४ न पचा हुआ, जो हज़म न हो। 'आमोऽपक्वे तु वाच्यवत्।' (विश्व) वैद्यमतसे तरुणज्वर और अपक्व स्फोट भी आम कहाता है। क्त) ५ अपाक, ख़ामी, कच्चापन। ६ मलावरोध, क़ब्ज़। ७ तुषरहित धान्य, भूसी निकाला हुआ दाना। यथा,—

"शस्यं च वगतं प्राहुः सतुषं धान्यमुच्यते।
आमं वितुषमित्युक्तं स्विन्नमन्नमुदाहृतम्।" (वशिष्ठ)

खेतमें रहनेवालेको शस्य, सतुषको धान्य, तुषरहितको आम और पकाये जानेवाले द्रव्यको अन्न कहते हैं। शूद्रजाति दुग्ध किंवा तण्डुलादि यदि कच्चा दे, तो पात्रान्तरसे ब्राह्मण ले ले। शूद्रका आम अन्न और अन्न उच्छिष्टके तुल्य होता, इसीसे पूजापार्वणमें आमसे शूद्रादिका कार्य करना पड़ता है। आपत्काल या अग्नि न मिलनेपर और तीर्थस्थानमें द्विजातिके लोग भी आमसे श्राद्ध कर सकते हैं। चन्द्रसूर्यके ग्रहणमें आमसे श्राद्धादि करनेकी व्यवस्था है। किन्तु शूद्रादिको सकल समय आमसे ही काम लेना चाहिये। (पु०) अम्यते पीड्यतेऽनेन अम करणे घञ्। ८ रोगमात्र, बीमारी। ९ मलबंधस्थरोग, दुर्द बिगड़नेकी बीमारी। १० अपक्वामजरा, हजम न हुआ खाना सड़नेकी बीमारी। आहारका रससार जो अग्निलाघवसे नहीं पचता, वही आम कहाता और बहुव्याधिका समाश्रय होता है। इसे कोई आम, कोई अन्नरस, कोई मलसञ्चय, कोई प्रथमा और कोई दोषदुष्टि कहता है। अल्पसत्व एवं उसमे धातुमान्द्य, अपाचित, दुष्ट और आमाशयगत रसका नाम आम है। (विजयरक्षित) ११ षट्प्रकार अजीर्ण रोग, छः क़िस्मकी बदहज़मीका आज़ार। अजीर्ण देखो।

(हिं० पु०) १२ आम्र, अम्बा। आमका फल दो तरहका होता है, पालका और टपकेका। भूसे, पैरे या पत्तेमें दबाकर पकाया जानेवाला पाल और आप ही आप पककर चूनेवाला टपकेका आम कहलाता है। पालवालेका 'पालका लड़ुवा' और डालसे चूनेवालेका नाम 'टपका' है। इसके विषयमें अनेक लोकोक्ति सुनते, जिनमें कुछ नीचे लिखते हैं,—

१ आमके आम गुठलियोंके दाम। अर्थात् आम ऐसा उत्तम पदार्थ होता, कि उसका रस चूस लेते भी गुठलीका दाम खड़ा हो जाता है। यह कहावत उस चीज़ पर चलती, जो दुचन्द फ़ायदा पहुंचाती है।

२ आम खाने या पेड़ गिनने। प्रयोजन यह, कि व्यर्थ प्रश्न करनेसे कोई लाभ नहीं निकलता।

३ बाड़ीमें बारह आम सट्टीमें अट्ठारह आम। यानी बाग़में पैसेके बारह और बाज़ारमें अट्ठारह आम बिकते हैं। इस लोकोक्तिसे किसी वस्तुका न्यून मूल्य लगाना प्रमाणित है।

वैद्यशास्त्रके मतसे कच्चा आम वायु, रक्त तथा पित्तको बढ़ाता और कषाय, अम्ल एवं सुगन्धि होता है। यह कफ और आमाशयको नष्ट करता है। आधा पक्का और आधा कच्चा पित्तकारी है। पक्का आम वर्ण, रुचि, मांस, शुक्र और बलको बढ़ाता है। यह पित्त तथा कफको नष्ट करनेवाला, स्वादु, तुष्टिकर, अधिक धातुकर, हृद्य, गुरु, तृप्तिजनक, कान्तिजनक और तृष्णा एवं श्रमको हटानेवाला है। मधु मिलाकर आमका रस पीनेसे क्षयरोग, प्लीहा, वात और श्लेष्माको लाभ पहुंचता है। आमका पत्ता रुचिकारी और कफ तथा पित्तको नाश करनेवाला है। फूल रुचि और अग्निको बढ़ाता है। बकला कषाय, अम्ल एवं भेदक होता और कफ तथा वातको नाश करता है। चूसकर खाया जानेवाला आम रुचिकर, बलवीर्यकारी, लघु, शीतल, सारक और वातपित्तनाशक है। यह शीघ्र परिपाक होता है। इसका छना हुवा रस गुरु, रुचिकर, हृद्य, तृप्तिजनक, कफकर और वात-पित्त-नाशकारी है। आमकी फांक गुरु, पुष्टिकर, रोचक, मधुर, बलकारी और शीघ्र पाक होनेवाली है। गुठली कषाय, अम्ल, भेदक और कफ-वात-नाशक होती है। अधिक आम खानेसे मन्दाग्नि, रक्तामय, चक्षुरोग और विषमज्वर बढ़ता है।

बीजसे उत्पन्न होनेवालेको बीजू और क़लमसे तैयार होनेवाले आमको क़लमी कहते हैं। हिमालय-पर इसका पेड़ जङ्गलमें आप ही आप उगता है। पत्ता हरा और लम्बा होता है। माघ-फाल्गुन मास मौर आता और चैत्र-वैशाखमें उसके झड़ जानेसे छोटा-छोटा फल लगता है। कच्चे फलको साधारणत: टिकोरा, केरी या अंबिया कहते हैं। कच्चेका सफ़ेद और पक्के आमका गूदा पीला होता है। क़लमी आमकी गुठली बहुत छोटी रहती और उसपर वैसेही गूदेकी मोटी तह चढ़ती है। आमका क़लम इसतरह तैयार किया जाता है,—

प्रथम किसी पात्रमें अच्छी मट्टी और हड्डीकी खाद डाल बीज बोते हैं। पौधा निकल आनेसे बढ़िया आमकी डालपर चढ़ा और बांध दिया जाता है। पीछे दोनोंके आपसमें मिल जानेसे पहला पौधा अलग निकाल लेते हैं। इससे क़लममें साथवाले आमका गुण खिंच आता है। क़लमी आम कई तरहका होता है। जैसे—बम्बैया, मालदहा, लंगड़ा, सफ़ेदा, कृष्णभोग, पायरी, हापुस, फ़जली, तोतापरी इत्यादि।

आमके रसको निकाल और किसी बर्तन या कपड़े पर सुखाकर जो रोटी बनाते, उसे अमावट या अमरस कहते हैं। अंबियाकी चटनी बहुत अच्छी होती और नमक, मिर्च, पुदीना तथा चीनी या गुड़ डाल कर बनती है। इसका अचार या मुरब्बा भी डालते हैं। हिन्दुस्थानी पके आमको सिरकेमें डुबो रखते और बहुत दिनतक खाया करते हैं। आमकी फांक सुखाकर रखनेसे चटनी बनाने और दालमें डालनेके काम आती है। हिन्दुस्थानमें प्रवाद है,—पहले आम पृथिवीपर न रहा। इन्द्रको जीत रावण इसे स्वर्गसे ले आया था।

आमका काष्ठ अधिक दृढ़ न होते भी चौखट, बाज़ू, उतरंग, कपाट और तख़्ता बनानेके काम आ जाता है। बकले और पत्तेसे पीला रङ्ग तैयार करते हैं। पशुको प्रथम आमका पत्ता खिलाया फिर उसके पेशाबसे प्योरी रङ्ग बनाया जाता है। अन्यान्य विवरण आम्र शब्दमें देखो।

(अ० वि०) १३ सामान्य, सार्वत्रिक, मामूली, मशमूल।

आमदुख्तियार (अ० पु०) सामान्य अधिकार, मामूली हुक्म।

आमक (सं० त्रि०) १ अपक्व, कच्चा। (पु०) २ कुष्माण्ड, कुम्हड़ा।

आमकुम्भ (सं० पु०) अपक्व मृत्तिकाका घट, कच्ची मट्टीका घड़ा।

आमख़ास (अ० पु०) प्रासादके भीतर नृपतिके बैठनेका स्थान, महलमें बादशाहको नशिस्तका कमरा।

आमगन्धि (सं० त्रि०) आमस्यापक्वस्य गन्ध इव गन्धो यस्य, इत् समा०। १ विस्र-गन्धयुक्त, बिसायंध छोड़नेवाला। (क्लो०) २ चिता-धूमादिका गन्ध, कच्चे गोश्त या जलती लाशको बू, बिसायंध।

आमगन्धिक, आमगन्धि देखो।

आमगन्धिहरिद्रा (सं० स्त्री०) आमाहलदी।

आमघ्नी (सं० स्त्री०) कटुका, कुटकी।

आमचणक (सं० पु०) अपक्व चणक, कच्चा चना। यह शीतल, रुच्य, सन्तर्पण, तृष्णा-दाह-हर, अश्मरी-शोष-घ्न, कषाय और ईषत्-कटु-वीर्य होता है। (राजनिघण्ट)

आमज्वर (सं० पु०) आमो अपक्वः ज्वरः, कर्मधा०। अपक्व ज्वर, ताजा बुखार। तरुण अवस्थाको न लांघनेवाले बुखारको आमज्वर कहते हैं। इसका लिङ्ग लाला-प्रसेक, हृल्लास, हृदयकी अशुद्धि, अरोचक, तन्द्रा, आलस्य, अविपाक, वैरस्य और गुरुगात्रता आदि है। (माधवनिदान)

आमड़ा (हिं० पु०) आम्रातक, एक पेड़ और फल। यह हिन्दुस्थानमें कम, किन्तु बङ्गालमें बहुत उत्पन्न होता है। वृक्ष बड़ा लगते भी आम-जैसा नहीं देख पड़ता। सचराचर आमड़ा दो प्रकारका होता है,—देशी और विलायती। देशी आमड़ेकी पत्ती कुछ बड़ी लगती और शरीफ़ेकी पत्तीसे मिलती-जुलती है। फल छोटा होता, गुठली बड़ी निकलती और गूदेका नाम नहीं मिलता; केवल गुठलीपर बकला चिपका रहता है। पकनेपर आम्र-जैसा गन्ध उठता और स्वाद अम्ल-मधुर लगता है। इसका अचार भी डालते हैं। देखनेमें फल बेरके बराबर होता है।

विलायती आमड़ा यवद्वीपसे आया है। फल बड़ा और पत्ता ढालू होता है। सुपक्व फल खानेमें मीठा लगता है। मुकुल फूटनेसे पहले पके बेरके साथ अम्ल-व्यञ्जन बनाकर खानेपर मुखरोचक होता है। कच्चे आमड़ेका भी व्यञ्जन बनता है। देशी आमड़ेसे दूध निकलनेपर वृक्ष सूख जाता है, किन्तु विलायतीमें दूध नहीं होता। इसकी लकड़ी हलकी और मुलायम रहती है, कोई चीज़ बनानेके काम नहीं आती। वृक्षमें पक्का फल रहते रहते पत्ता झड़ और मुकुल फूट पड़ता है। कोई-कोई वृक्ष वर्षमें दो बार फलता है। संस्कृतमें आमड़ेको आम्रातक, पीतन, कपीतन, वर्षपाकी, पीतनक, कपिचूड़ा, अम्र-वाटिक, भृङ्गीफल, रसाढ्य, तनुक्षीर, कपिप्रिय, अम्बरातक, अम्बरीय, कपिचूड़ और अम्रावर्त कहते हैं।

वैद्यशास्त्रके मतसे इसका कच्चा फल कषाय, अम्ल और हृदय एवं कण्ठ खोलनेवाला है। पक्का फल मधुराम्ल एवं स्निग्ध रहता और पित्त तथा कफको मारता है। किन्तु आमड़ा गुरु होता और सर्वदा खानेसे तृप्ति, बल, अजीर्ण एवं विष्टम्भिको बढ़ाता है। सुननेमें आता, कि सर्वदा खानेसे ज्वर, कुष्ठ, कास और ग्रन्थिका वातरोग उत्पन्न होता है। सुतरां इसे कुपथ्य समझना चाहिये। कोई अङ्ग कट जानेसे आमड़ेकी हरी पत्ती बांटकर प्रलेप देनेपर रक्त नहीं निकलता। कानमें दर्द होनेसे भी पत्तीका रस छोड़ते हैं। सामान्य रक्तामाशय रोगमें बकलेका क्वाथ पिलानेसे पीड़ा दब जाती है। पित्तजनित

अजीर्ण रोगमें पके फलका गूदा खिलानेसे क्षुधा बढ़ती है। यह बीज और कलम दोनोसे तैयार होता है। उद्भिद्‌वेत्ताओंके कथनानुसार देशी और विलायती दोनो प्रकारका आमड़ा एक ही वृक्ष ठहरता, केवल स्थानविशेषमें मृत्तिका और जल-वायुके गुणसे रूपान्तर हो जाता है। इसके थालेको गोड़ने और विशेष यत्न करनेसे जल्द कीड़ा पड़ने तथा वृक्ष सूखने लगता है।

आमण्ड (सं॰ पु॰) १ एरण्डवृक्ष, रेड़का पेड़। २ शुक्ल एरण्ड, सफ़ेद रेड़का पेड़।

आमण्डक, आमण्ड देखो।

आमण्डवास (सं॰ पु॰) आसव, शराब।

आमता (सं॰ स्त्री॰) अपाक, खामी, कचायी।

आमतिन्तिड़ि (सं॰ स्त्री॰) अपक्व तिन्तिड़ी, कच्ची इमली।

आमतिन्तिड़ी, आमतिन्तिड़ि देखो।

आमत्वक् (सं॰ त्रि॰) कोमल चर्मावृत, नर्म चमड़ेवाला।

आमद (फ़ा॰ स्त्री॰) १ आगमन, अवाई। २ आय, आमदनी। रियावत वग़ैरहका बालायी आमद कहते हैं। (त्रि॰) ३ प्रकृत, कुदरती। ४ विशुद्ध, साधारण, साफ़, सादा।

आमद आमद (फ़ा॰ स्त्री॰) आगमन-समाचार, आनेकी खबर।

आमद-ख़र्च (फ़ा॰ पु॰) आयव्यय, नफ़ा-नुक़सान। "अन्धीकी आमद चौरासीका खर्च।" (लोकोक्ति)

आमदनी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ आय, आमद, नफ़ा। २ अधिक लाभ, दस्तूरी। ३ कर, राजस्व, महसूल, चुङ्गी। ४ देशान्तरसे आनीत द्रव्य, इदखालमाल, बाहरसे अपने मुल्कमें लायी हुई चीज़। ५ द्रव्यके आनयनका समय, माल आनेका मौसम।

आमद-मुलाहिज़ा कागज़ात (फ़ा॰ पु॰) पत्रका उपसर्पण, दस्तावेज़का गुज़ार।

आमद-रफ़्त (फ़ा॰ स्त्री॰) १ आवागमन, आवाजायी। २ मार्ग, राह। ३ सङ्गति, राह-रस्म।

आमदवाला (फ़ा॰ पु॰) १ धनी पुरुष, दौलतमन्द आदमी। २ बाहरसे बोझ माल मंगानेवाला सौदागर।

आमन (वै॰ क्ली॰) १ प्रवाह, अभिलाष, रग़बत, मुहब्बत। (हिं॰ स्त्री॰) २ वर्षमें एक ही फ़स्ल उत्पन्न करनेवाली भूमि, जो ज़मीन् सालमें एक ही फ़स्ल देती हो। ३ हैमन्तकालमें उत्पन्न होनेवाला धान्य। यह धान्य जुलाई-अगस्त मास बोया और दिसम्बरमें काटा जाता है।

आमनस् (सं॰ त्रि॰) अनुकूल, दयालु, रहमदिल, मिहरबान्।

आमनस्य (सं॰ क्ली॰) अप्रशस्तं मनो यस्य स अमनस्तस्य भावः, ष्यञ्। १ वैमनस्य, दुश्मनी। २ दुःख, पीड़ा, दर्द, तकलीफ़।

आमना (हिं॰ क्रि॰) आना, समाना, अमाना।

आमनाय (हिं॰) आम्नाय देखो।

आमना-सामना (हिं॰ पु॰) सम्मुखीन होनेका भाव, मुक़ाबला, मुलाक़ात, भेंट।

आमनी (हिं॰) आमन देखो।

आमने-सामने (हिं॰ अव्य॰) प्रत्यक्ष, सम्मुख, रूबरू, मुक़ाबिलेमें, मुंहपर। आमने-सामने घर कहें और बीच कहें मैदान्। (लोकोक्ति) यह कहावत निर्लज्ज और घृणित स्त्रीपर चलती है।

आमन्त्र (सं॰ पु॰) आमादजीर्णात् त्रायते, आम-त्रै-क, पृषोदरादित्वात् मुमागमः। १ एरण्डवृक्ष, रेड़का पेड़। फलका तेल पीनेसे अजीर्ण मल गिर पड़ता, इसीसे एरण्डवृक्ष आमन्त्र कहाता है। आ-मन्त्र-अच्। २ आमन्त्रण।

आमन्त्रण (सं॰ क्ली॰) आ पदस्य चुरा॰ मन्त्र-णिच् ल्युट्, णिच् लोपः। १ अभिनन्दन, खुश्क। २ सम्बोधन, पुकार। ३ निमन्त्रण, नेवता। ४ विवेचन, विचारण, ताम्मुल, ग़ौर। ५ सम्बोधन कारक, निदायिया। (स्त्री॰) टाप्। आमन्त्रणा।

आमन्त्रणीय (वै॰ त्रि॰) सम्बोधन किया जानेवाला, जो पूछा जाने क़ाबिल हो।

आमन्त्रयिता (सं॰ पु॰) निमन्त्रण देनेवाला पुरुष, मेज़बान्, जो ब्राह्मणोंको न्योता देता हो।

आमन्त्रयितृ (सं॰ त्रि॰) आमन्त्रण देनेवाला, जो बुलाता हो। (पु॰) आमन्त्रयिता। (स्त्री॰) आमन्त्रयित्री।

आमन्त्रित (सं॰ त्रि॰) आ अदन्त चुरा॰ मन्त्र-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। आमन्त्रितम्। पा २।३।४८। १ आवश्यक कर्ममें नियोजित, न्योता पाये हुआ। (क्ली॰) २ व्याकरण-परिभाषित सम्बोधनार्थक प्रथमा विभक्ति, निदायिया। ३ सम्बोधन, पुकार।

आमन्त्रितत्व (सं॰ क्ली॰) १ स्व-कर्तव्यप्रकारक बोधजनक प्रत्याख्यानार्ह वाक्यका प्रतिपादित्व। वैयाकरण आमन्त्रितत्वको स्वाभिलषित कामाचारसे प्रवृत्त इष्ट-साधनताका बोधन समझते हैं। २ आज्ञादेनेवालेके प्रवृत्त प्रयोजनका इतरप्रवृत्तिप्रतिबन्धनसे उस प्रवृत्ति विषयमें इष्टसाधनताबोधन।

आमन्त्र्य (सं॰ त्रि॰) आ अदन्त चुरा॰ मन्त्र-णिच्-यत्, णिच् लोपः। १ आमन्त्रणीय, न्योता दिये जाने काबिल। २ सम्बोधनीय, बुलाया जानेवाला। ३ आवश्यक कार्यमें नियोग्य, ज़रूरी काममें लगाया जानेवाला। (अव्य॰) ल्यप्। ४ सम्बोधन करके,बुलाके। (क्ली॰) ५ सम्बोधनकारक शब्द, निदायियेका लफ़्ज़।

आमन्द (सं॰ पु॰) आमं रोगं द्यति खण्डयति, आम-दो-ड बाहुलकात् मुम्। वासुदेव, रोगको दूर करनेवाले विष्णु भगवान्।

आमन्दा (सं॰ स्त्री॰) आमन्दं ईषत् मन्दं करोति, आ-मन्द कृत्यर्थे णिच्-अच्-टाप्, णिच् लोपः। खट्वाविशेष, नेवारका पलंग।

आमन्द्र (सं॰ पु॰) आ ईषत् मन्द्रः, प्रादि॰ समा॰। १ ईषत् गम्भीर शब्द, कुछ-कुछ भरी हुई आवाज़। (त्रि॰) २ ईषत् गम्भीर शब्दयुक्त, कुछ-कुछ बड़बड़ा-हट लिये हुये, जो थोड़ा घुनघुनाता हो।

आमपत्रिका (सं॰ स्त्री॰) चिल्लीशाक, किसी क़िस्मकी सब्ज़ी।

आमपाक (सं॰ पु॰) आमस्य अजीर्णविशेषस्य पाकः। वैद्यशास्त्रोक्त शोफरोगादिके अङ्ग आमका पाक विशेष।

आमपात्र (सं॰ क्ली॰) कर्मधा॰। अपक्वपात्र, मट्टीका कच्चा बरतन।

आमपीनस (सं॰ क्ली॰) १ कफ। २ कफाक्रमण, ज़ुकाम।

आममांस (सं॰ पु॰) अपक्व मांस, कच्चा गोश्त।

आममांसाशी (सं॰ पु॰) राक्षस, कच्चा गोश्त खाने-वाला आदमी।

आममुख़्तियार (फ़ा॰ पु॰) सम्पूर्ण क्षमता रखने-वाला कर्मचारी, जो नौकर मालिकका सब काम कर सकता हो।

आमय (सं॰ पु॰) आमीयते समाक् वध्यतेऽनेन, आ-मीञ् हिंसायां करणे ऽच्। १ आघात, हानि, चोट, नुक़सान्। २ रोग, बीमारी। 'रोगव्याधिगदामयाः' (अमर) ३ अजीर्ण, बदहज़्मी। ४ उष्ट्र, ऊंट। (क्ली॰) ५ कृष्णागुरु, काला अगर। ६ कुष्ठ, वृक्षविशेष।

आमयव्याप्त, आमयाविन् देखो।

आमयावित्व (सं॰ क्ली॰) अजीर्ण, बदहज़्मी।

आमयाविन् (सं॰ त्रि॰) आमयोऽस्त्यस्य, विनि दीर्घश्च। आमयस्योपसंख्यानं दीर्घश्च। (वार्तिक) रोगयुक्त, बीमार। (पु॰) आमयावी। (स्त्री॰) आमयाविनी।

आमरक्त (सं॰ क्ली॰) आममपक्वं रक्तम्, कर्मधा॰। रक्तामाशय रोग, लाल आंव गिरनेकी बीमारी। अतिसार देखो।

आमरक्तातिसार, अतिसार देखो।

आमरख (हिं॰) आमर्ष देखो।

आमरखना (हिं॰ क्रि॰) आमर्ष आना, क्रोध चढ़ना, गुस्सा देखाना।

आमरण, आमरणान्त देखो।

आमरणान्त (सं॰ त्रि॰) मृत्यु पर्यन्त चलनेवाला, जो जीते जी टिका रहता हो।

आमरणान्तिक (सं॰ त्रि॰) आमरणान्तं मरणरूप-सीमान्त पर्यन्तं व्याप्नोति, ठक्। मरणकाल पर्यन्त व्यापक, मरनेके वक्त तक रहनेवाला।

आमरस (सं॰ पु॰) अपक्व रस, कैमूस-ख़ाम। यह पाकस्थलीका कच्चा रस है। कोई द्रव्य खानेसे प्रथम इसी रस द्वारा परिपाक आरम्भ होता है। पाकस्थली की भीतरी ओर जो श्लैष्मिक झिल्ली रहती, वह अत्यन्त पतली पड़ती है। क्षुद्र क्षुद्र विस्तर ग्रन्थिका मुख ऊपरको रहता है। कितने ही सरल और कितने ही ग्रन्थि जटिल होते हैं। भाराक्रान्त

मुखकी ओर शाखा प्रशाखामें विभक्त है। जटिलको पेप्टिक ग्रन्थि (Peptic gands) कहते हैं। कोई द्रव्य खानेपर सकल ग्रन्थिसे एक प्रकार जो रस निकलता, वही आमरस (Gastric juice) कहाता है।

क्षुधाके समय पाकस्थलीके ग्रन्थि पिङ्गलवर्ण देख पड़ते और ऊपरको ओर अति सामान्यरूप सरस रहते हैं। सूक्ष्म शिरा कुञ्चित होती है। उस अवस्थामें उनके भीतर यत्सामान्य रक्त यातायात करता है।

उसके बाद कोई द्रव्य खानेसे पाकस्थली उत्तेजित हो जाती है। फिर सीधी-सीधी शिरा फैलनेसे श्लैष्मिक झिल्लीमें अधिक रक्त आ पहुंचता, इसीसे उसका रूप लालवर्ण देख पड़ता है। उसी समय ग्रन्थिके मुखमें विन्दु-विन्दु रस जम क्रमसे बाहर निकल जाता है। इसी रसको आमरस कहते हैं।

आमरस जल-जैसा होता है। इसमें कई प्रकारका चार पदार्थ पाया जाता है। तद्भिन्न हायिड्रोसायेनिक एसिड रहनेसे आमरस अम्ल लगता है। इसके एक प्रधान उपादानका नाम पेप्सिन (Pepsin) है।

खाद्यद्रव्य प्रथम उदरस्थ होनेपर पाकस्थली सिकुड़ जाती है। उसी समय भुक्तद्रव्य घूमने लगता, इसीसे उसमें आमरस अच्छीतरह मिलते रहता है। इसीप्रकार पुनः पुनः घूम-घूम कर आमरसके साथ मिल जानेपर भुक्तद्रव्य शेषको पिण्डाकार बनता है। उसे कायिम (chyme) कहते हैं। कायिमका कितना ही अंश द्वादशाङ्गुल अन्त्रमें प्रवेश करता और बहुतसा बहिर्वाह क्रिया द्वारा रक्तमें मिल जाता है। (हिं०) अमरस देखो।

आमरिता, आमरिठ देखो।

आमरिठ (वै० पु०) नाशक, हन्ता, ग़ारतगर, सुखरिब, बरबाद करनेवाला।

आमर्द (सं० पु०) आ-मृद-घञ्। १ बलहेतु निष्पीड़न, रौंदन, टक्कर। २ सङ्कोचन, दबाव। ३ नगर विशेष, किसी शहरका नाम।

आमर्दकी (सं० स्त्री०) १ फाल्गुन शुक्ला एकादशी। २ आमलकी, आंवला।

आमर्दन (सं० क्ली०) आ-मृद भावे ल्युट्। आमर्द, बलहेतु निष्पीड़न, रौंदन।

आमर्दिन् (सं० त्रि०) आ-मृद-णिनि। १ बलहेतु निष्पीड़नकर्ता, कुचल डालनेवाला। २ बाधक, दबानेवाला। आ-मृद-णिच्-णिनि, णिच् लोपः। अन्यसे मर्दन करवानेवाला, जो दूसरेसे दबवाता हो।

आमर्श (सं० पु०) आ-मृश स्पर्शे, घञ्। १ सम्यक् स्पर्श, खास लम्स, अच्छीतरह छूनेका काम। २ अनुमति, मशवरा, सलाह।

आमर्शण (सं० क्ली०) आ-मृश-ल्युट्। सम्यक् स्पर्शका कार्य, अच्छीतरह छूनेका काम।

आमर्ष (सं० पु०) मृष चान्तौ घञ्, नञ्-तत् दीर्घः। अन्येषामपि दृश्यते। पा ६।३।१३७। १ अक्षमा, कोप, असहन, इज़तिराब, बेचैनी। २ रसका सञ्चारी भाव विशेष। इसमें अन्यका दर्प असह्य होता और उसे नष्ट कर देनेका भाव बढ़ता है।

आमर्षण (सं० क्ली०) कोप, तैश, झंझल।

आमल, आमलक देखो।

आमलक (सं० क्ली०) आमलक्याः फलम्। फले लुक्। पा ४।३।१६१। १ आंवलेका फल, आंवरा। (पु०) आ-मल-क्वुन्। बहुलमन्यत्रापि। उण् २।३०। २ आमलकी वृक्ष, आंवलेका पेड़। ३ पद्मकाष्ठ, एक खुशबूदार लकड़ी।

आमलका (सं० स्त्री०) स्वनामख्यात वृक्ष विशेष, आंवलेका पेड़। इसका गुण प्राय हरीतकीके तुल्य है। विशेषमें यह रक्तपित्त एवं प्रमेहको शान्त करती, स्वास्थ्य सुधारती और रसायन होती है। इसका फल भी अम्लतासे वायु, मधुरतासे पित्त एवं रुक्षकषायत्वसे कफको नाश करता, इसलिये त्रिदोषघ्न कहाता है। इसकी मज्जा तुवर, मधुर एवं वमनकृत् होती और वात तथा पित्तको शमन करती है। २ भूम्यामलकी, भुयिं आंवला।

आमलकायस (सं० क्ली०) रसायन विशेष, ब्राह्म-रसायन। विधिवत् सूखा निरस्थि आमलक ८ शराव तथा जीवनीयादिक मिलित ८ शराव दशगुण वारिमें उबाले और चौथाई रह जानेसे छान ले। फिर

यथाविहित अग्निपर उसका चूर्ण बनानेसे यह रसायन तैयार होता है। (चरक)

आमलकी (सं० स्त्री०) आमलकात् अम्बुजलात् जातम्, आमलकः ततः स्त्रीलिङ्गे गौरादि० ङीष्। "ख्याता आमलकी नाम्ना जाता कादमलात् यतः।" (वृहद्धर्मपुराण) आमला नामक वृक्ष और फल, अंवरा। Phyllanthus Emblica. इसे संस्कृतमें तिष्यफला, अमृता, वयस्था, कायस्था, श्रीफला, धात्रिका, शिवा, शान्ता, धात्री, अमृतफला, वृष्या, वृत्तफला, रोचनी, कर्षफला तथा तिष्या, और हिन्दीमें आंवला या अंवरा कहते हैं। यह वृक्ष भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र ही उपजता है। पेड़ बड़ा, पत्ता सीधा और फल बेर-जैसा देख पड़ता है। फाल्गुन-चैत्र मास आंवला पकता है।

आमलकी वृक्षकी उत्पत्तिके विषयपर लिखा है,—किसी पुण्यदिन भगवती एवं लक्ष्मी प्रभासतीर्थको गयी थीं। भगवतीने लक्ष्मीसे कहा,—'देवि! आज हम स्वकल्पित किसी नूतन द्रव्यसे हरिको पूजना चाहती हैं।' लक्ष्मी भी उत्तरमें बोल उठीं, 'शिवको भी किसी नूतन द्रव्यसे पूजनेकी हमारी इच्छा है।' फिर दोनोंके चक्षुसे अमल अश्रुजल भूमिपर गिरा। उसीसे माघ मासके शुक्ल पक्षकी एकादशी तिथिको आमलकी वृक्ष उत्पन्न हुआ था। देवता एवं ऋषि इस वृक्षको देख फूले न समाये। यह तुलसी और विल्व वृक्षके तुल्य है। पत्रसे शिव और विष्णु दोनोंकी पूजा होती है। आमलकी वृक्षको नमस्कार करनेका मन्त्र यह है—,

"नमाम्यामलकीं देवीं पद्ममालाद्यलङ्कृताम्।
शिवविष्णुप्रियां दिव्यां श्रीमतीं सुन्दरप्रभाम्॥" (वृहद्धर्मपुराण)

कच्चा आंवला कषाय; विरेचक, अम्लनाशक, चक्षु-तथा चर्मरोग निवारक होता और चबानेसे मुखको सुस्वादु बना देता है। इससे शुक्र बढ़ता और रक्तस्राव रोगमें उपकार पहुंचता है। उदरामय, रक्तामाशय तथा अम्बरोगमें सकल प्रकार आमलकी ही प्रशस्त है। लवणाक्त रोगमें इसके द्वारा कितनी होको लाभ हुआ है। आमलकीका रस शीतल, मृदुविरोचक एवं मूत्रकर होता और आंख आनेपर उपकार करता है। शुष्क आमलकीका क्वाथ क्षतस्थानपर लगानेसे अधिक रस नहीं निकलता, ज़ख़्म साफ़ हो और धीरे-धीरे सूख जाता है।

पका आंवला उबालकर चीनीकी कड़ी चाशनीमें डालनेसे मुरब्बा बनता है। आंवलेका मुरब्बा चांदीके वर्क़में लपेट कर खानेसे बलवीर्य बढ़ता और प्रमेह रोग दूर होता है।

आमलकीपत्र (सं० क्ली०) तालीशपत्र।

आमलक्यादि (सं० पु०) तदादिवर्ग, आंवला वर्ग-रह। इसमें आमलकी, हरीतकी, पिप्पली और विभीतक चार द्रव्य पड़ते हैं। यह सर्वज्वरापह, चक्षुष्य, दीपन, वृष्य और कफारोचक-नाशक होता है। (सुश्रुत)

आमलक्यादिचूर्ण (सं० क्ली०) औषधविशेष, यह सर्वज्वर-हितकर एवं भेदी और दीपन होता है। आमलक, चित्रक, हरीतकी, पिप्पल और सैन्धवको एकत्र चूर्णकर प्रातःकाल उष्ण या शीतल जलसे सेवन करनेपर सर्वज्वर नाश होता है।
(भावप्रकाश, ज्वरचिकित्सा)

आमलच्छद (सं० पु०) तालीशपत्र।

आमला, आमलकी देखो।

आमलाद्यलौह (सं० क्ली०) औषध विशेष। इसमें सर्व-चूर्णके तुल्य लौह पड़ता है। आमलकी और पिप्पल-का चूर्ण सिताके समान रहना चाहिये। यह लौह योगराज कहाता और रक्तपित्तको मिटाता है
(रसेन्द्रसारसंग्रह)

आमली (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भुयिं आंवला।

आमवात (सं० पु०) आमोऽपाक हेतुको वातः, शाक० तत्। वातरोग विशेष, दर्द-कमर (Lumbago) इसका लक्षण इस प्रकार है,—अङ्गमें पीड़ा, अरुचि, तृष्णा, आलस्य, गुरुता, ज्वर, अन्नका अपरिपाक और शूल। विरुद्ध आहार तथा चेष्टासे अग्नि मन्द होने अथवा भोजनोपरान्त व्यायाम करनेसे आम वायु द्वारा प्रेरित हो कफस्थानको दौड़ता और अत्यर्थ विदग्ध हो धमनीमें प्राप्त होता है। फिर वात, पित्त एवं कफसे दूषित हो अन्नज रस नानावर्ण तथा

अतिपिच्छल स्रोतमें वहता और बहुत शीघ्र दौर्बल्य, हृदय गौरवता आदि उत्पन्न करता है। यह सब व्याधियोंका आश्रय और अति दारुण आम नामक महारोग है। जब एकबार कफ और वात दोनों कुपित हो अन्तको त्रिक सन्धिमें प्रवेश करते, तब शरीरको स्तब्ध कर देते हैं। (माधवनिदान) आमवात रोगका कारण मत्स्य मांसके सङ्ग दुग्ध-पान-जैसा विपरीत गुण करनेवाला विरुद्ध भोजन, भोजनके बाद ही व्यायाम, आलस्य और स्निग्ध अन्न ग्रहण है। अजीर्ण रोगमें धीरे-धीरे दुष्ट आमरस सञ्चित होता, पीछे मस्तक और गात्रमें पीड़ाका धावा लगता है। उपदंश, शीतल वायु-सेवन और आर्द्र स्थानका वास भी प्रधान कारण है।

इस रोगमें प्रथम पृष्ठवंशसे नीचे कमरके भीतर वेदना होने लगती है। इसीके साथ क्रमशः शरीरके अन्य-अन्य ग्रन्थि भी सूजते हैं। पहले पीड़ा अति अल्प मालूम पड़ती, पीछे त्रिक अस्थिमें सूई-जैसी चुभा करती और कमर अकड़ जाती है। रोगी शय्यामें करवट ले सा या उठकर बैठ नहीं सकता। साथही ज्वर, पिपासा, निद्राभाव प्रभृति लक्षण देख पड़ता है। प्रायः डेढ़ माससे कम समय उपशममें नहीं लगता।

एलोपाथीके मतसे वेदना-स्थानमें तारपीन तेल द्वारा कोयले या बालूका स्वेद लगाने, वेलेडोनाका पुलटिस चढ़ाने और पिचकारी द्वारा कमरके भीतर मरफिया पहुंचानेपर उपकार होता है। मरफिया अफीम, आयोडिड अव पोटाश प्रभृति औषध खिलाना चाहिये। वेदनास्थानको सर्वदा रूईसे बंधा रखते हैं।

वैद्यशास्त्रके मतसे आमवात रोगमें लङ्घन, स्वेद, तिक्त आग्नेय एवं कटु द्रव्य, वस्तिक्रिया, विरेचन तथा स्नेह पानकी व्यवस्था करना उचित है। बालूकी पोटली तपाकर स्वेद लगानेसे उपकार होता है। पटसन या दूसरे पौदेकी साफ़की हुयी डाली मसूर, तिल, यव, रक्त एरण्डका मूल, अलसी, पुनर्णवा और सनका बीज कूट-पीसकर दो पोटली बनाये। फिर बहु छिद्रयुक्त ढक्कन लगा हण्डीमें कांजी पकाते और ढक्कनपर दोनो पोटली रख देते हैं। उष्ण होनेपर पोटलीसे वेदनास्थानमें स्वेद देता जाये। इसे सङ्कर स्वेद कहते हैं।

रास्नादि दशमूल, रास्नापञ्चक प्रभृतिका पाचन, आमगजसिंहमोदक, रसोनपिण्ड, बृहद्योगराज-गुग्गुल इत्यादि औषध उपकार करता है।

पीतपर्णिका (आर्टिकेरिया) नामक व्याधिको भी चलती बोलीमें आमवात कहते हैं। इससे शरीरमें स्थान स्थानपर रक्तवर्ण, अल्प उच्च और विषम कण्डू निकलता है। उसीके साथ सर्वाङ्ग अतिशय तपा करता है। किसी-किसी स्थानमें यह पीड़ा अल्पक्षण किंवा दो-तीन दिन रहती है। किन्तु पुरातन आम-वात (Rheumatism) रोग एक वत्सर पर्यन्त टिक सकता है।

कुकरमुत्ता, ककड़ी, अधिक अम्ल, उग्रद्रव्य, कुष्माण्ड, कांटेदार मछली और अन्य अन्य मन्द सामग्री खानेसे यह रोग उत्पन्न होता है। पित्ता-धिक्य होने, पाकयन्त्रमें अधिक अम्ल जमने किंवा किसी कारण उदरकी उग्रता बढ़नेसे आमवात दौड़ पड़ती है। पुरातन वातरोग, रुग्ण देह, पुरातन व्याधि प्रभृति स्थलमें भी यह निकल आता है।

अदरक, अजवायन और पुराना गुड़ मिलाकर खानेसे सामान्य आमवात छूट जाता है। कोई-कोई गोमूत्र और नीमकी पत्ती पीसकर शरीरमें लगा लेते हैं। कण्डू निकल आनेपर कितने हो लोग पैसे आर गायके नीचेको रस्सीसे शरीरको खुजलाते हैं। किन्तु पाकस्थली किंवा अन्त्रमें क्रियाविकार पड़नेसे यह रोग बढ़ता है। इसीसे इपिकाक चूर्ण १५ किंवा २० ग्रेन खिला प्रथम वमन कराना चाहिये। पीछे पडोफिलम चौथायी ग्रेन, रेवाचीनीका चूर्ण ३ ग्रेन, सोंठका बुरादा २ ग्रेन और सोडा बायिकार्ब २ ग्रेन एकत्र मिलाकर पुड़िया बांधे। ऐसी ही एक पुड़िया प्रत्यह रोगीको खिलाये। उदरमें उत्तेजना न रहनेसे लायिकर आर्सेनिक १ बिन्दु अदरकके रसमें

रोज दो बार देनेपर उपकार होता है। आनुषङ्गिक अन्य पीड़ा उठनेसे उपयुक्त चिकित्सा कराना आवश्यक है। मद्य, कहवे, चाय, अधिक अम्ल, अधिक मिष्ट, कच्चे फल और कुपथ्यसे बचना चाहिये। उदरमें अम्ल रहनेसे प्रतिकार करते हैं। वातरोग देखो।

आमवातगजसिंहमोदक (सं० पु०) आमवात-हितकारक औषध विशेष। प्रस्तुत करनेकी रीति इस प्रकार है—शुण्ठी १ प्रस्थ, यमानी ८ पल, जीरा २ पल, धनिया २ पल, सौंफ १ पल, लवङ्ग १ पल, टङ्कण १ पल, मिर्च १ पल, त्रिवृता, त्रिफला, क्षार, और पिप्पली प्रत्येक १ पल, शठी, एला, तेजपत्र, चविका १ पल, अभ्रक, लौह, वङ्गका चूर्ण एक एक पल और सबसे तीन गुण शर्करा मिला घृत और मधुके साथ कर्ष प्रमाण मोदक बनाना चाहिये। पहले शर्करा को थोड़े पानीमें घोल मृदु अग्निसे उबालते और पीछे उपरोक्त चूर्ण मिला तथा मोदक विधिसे पका घृत एवं मधु डालते हैं। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

आमवातारिगुटिका, आमवातारिवटिका देखो।

आमवातारिवटिका (सं० स्त्री०) आमवात, हित-कारक औषधविशेष। पारा, गन्धक, सोहागा, सैन्धव, लौह, ताम्र, शङ्खभस्म प्रत्येक १ तोला, गुग्गुल १४ तोला, त्रिफला चूर्ण ३॥ तोला और चित्रकचूर्ण ३॥ तोला घृतके साथ मर्दन कर वटी बनाना चाहिये। (रसरत्नाकर)

आमवातेश्वररस (सं० पु०) आमवातमें देने योग्य भैषज्यविशेष। शुद्ध गन्धक एवं शुद्ध ताम्र आध आध पल और पारद तथा मृत लौह पावपाव पल एरण्डमूलके रसमें सात बार घोंटकर चूर्ण बनाना चाहिये। पीछे पञ्चकोलके क्वाथमें २० और गुडूचिके रसमें १० बार मर्दन करके सब चूर्णके बरा-बर भूंजा हुआ सोहागा मिलाना पड़ता है। सोहागेसे आधा विड़ (असोचर), विड़के बराबर मरिच, तिन्तिड़ी एवं क्षार सदृश तथा सूततुल्य दन्तिक और त्रिकटु, (सोंट, मिर्च, पीपल), त्रिफला (अंवरा हरितकी, बहेर) लवङ्ग प्रत्येक अर्द्धभाग डालनेपर यह रस तैयार हो जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

आमशूल (सं० पु०) आमजन्य शूलरोगभेद, दद-शिकम, आंवकी मरोड़।

आमश्राद्ध (सं० क्ली०) आमान्नेन श्राद्धम्, शाक० तत्। आमान्नका श्राद्ध, जो श्राद्ध कच्चे अन्नसे किया जाता हो।

"आपद्यनग्नौ तीर्थे च चन्द्रसूर्यग्रहे तथा॥
आमश्राद्धं द्विजैः कार्यं शूद्रेण च सदैव तु॥" (प्रचेताः)

आपत्काल, अग्निके अभाव और चन्द्र-सूर्य-ग्रहणमें द्विजको आमश्राद्ध करना उचित है। शूद्र सकल ही समय आमश्राद्ध करे। निरग्नि आमश्राद्धमें चावल नहीं धोते। किन्तु वृद्धिश्राद्ध, संक्रान्ति एवं ग्रहणके समय चावल धोकर श्राद्ध करना पड़ता है।

आमहर्ष्ट (Amherst) भारतवर्षके एक गवरनर जनरल या बड़े लाट। इन्हें लार्ड हेष्टिङ्गसका पर अधिकार मिला था। लार्ड हेष्टिङ्गसके भारतवर्षसे चले जानेपर अर्ल आमहर्ष्टको इस देश पहुंचनेमें कुछ विलम्ब हुआ। किन्तु इतने बड़े देशके कर्ताका उचित समय अपने कामपर न पहुंचना बड़े दोषकी बात है। इसीसे उस समयकी कौन्सिलके प्रधान सभ्य आदम साहब गवरनर जनरलका काम चलाने लगे थे। किन्तु दो दिनके निमित्त इस विशाल साम्राज्यका कर्तृत्व पा वह एक कलङ्क छोड़ गये हैं। तत्काल मुद्रायन्त्र सम्पूर्ण स्वाधीन रहा। बकिमहाम नामक किसी कृतविद्य व्यक्तिने एक संवादपत्र निकाला। सम्पादक स्पष्टवादी रहे, न्यायकी मर्यादा रख गवर्णमेण्टका दोषगुण खोलकर लिख देते थे। परन्तु गवर्णमेण्ट भली रहते भी सकल समय उसके कर्मचारी विचक्षण हो नहीं सकते। इसीसे संवादपत्रकी स्पष्ट कथा उन्हें कटु लगने लगी। सन् १८२३ ई०का आदम साहबने मुद्रायन्त्रकी स्वाधीनता छीननेके लिये एक कानून बनाया था। इधर बकिमहाम साहब भी भारतवर्षसे निकाल बाहर किये गये।

उसके बाद आदम शाहबने अधिक दिन गवरनर जनरलका काम किया न था। अर्ल आमहर्ष्ट इस देशमें आ पहुंचे। इनके समय कम्पनीको भरतपुर मिल गया था। सन् १८२६ ई०को ब्रह्मदेशमें प्रथम

युद्ध छिड़ा। यह भी उस समयकी प्रसिद्ध घटना है। युद्धमें अंगरेजोंका कोई तेरह करोड़ रुपया लगा था। किन्तु तेरह करोड़ रुपया बिगड़नेसे ब्रह्मदेशके अनेक प्रसिद्ध स्थान हाथ आये। मार्तावान उपकूल, आसाम, मणिपुर, अराकान प्रभृति स्थानोंपर अंगरेजोंका अधिकार जम गया था। सन् १८२८ ई०को लार्ड आमहर्ष्ट अपना पद छोड़ विलायत वापस और १८५७ के मार्च मास मर गये।

आमहीय (सं० लि०) आमहाय सम्यक् पूजायै हितम्, छ। सम्यक् रूपसे पूजा करनेको उपयुक्त, जिससे अच्छीतरह पूजा बन पड़े। यह शब्द मन्त्र विशेषका विशेषण है।

आमहीयव (सं० क्ली०) अमहीयुना ऋषिणा दृष्टं साम अण्। साम विशेष।

आमहीया (सं० स्त्री०) ऋक् विशेष, ऋग्वेदकी किसी मन्त्रका नाम।

आमां, आवां देखो।

आमाजीर्ण (सं० क्ली०) आमरसाजीर्ण, आंवकी बदहज़मी। इसमें भुक्त द्रव्य नहीं पचता, जैसेका तैसा मलद्वारसे बाहर निकल जाता है।

आमातिसार (सं० पु०) १ आमकृतोऽतिसारः, शाक० तत्। षड्विधातिसारान्यतम रोगविशेष, पेचिस, आंव लहूका दस्त। कफ बिगड़ जानेसे यह जठरमें उत्पन्न होता है। २ विष्ठा, मैला। इसमें पूतिगन्धि और कठोर द्रव्य मिला रहता है। अतिसार देखो।

आमातीसार, आमातिसार देखो।

आमात्य (सं० पु०) अमात्य एव, स्वार्थे अण्। १ मन्त्री, आमिल। २ नायक, सरदार। अमात्य देखो।

आमाद् (सं० लि०) आममत्ति, आम-अद्-विट्। अदोऽनन्ने। पा ३।२।६८। अपक्व मांसादि खानेवाला, जो कच्चा गोश्त वग़ैरह खाता हो।

आमादगी (फ़ा० स्त्री०) उपकल्पन, साधन, सज्जीकरण, तैयारी।

आमादगी-दङ्गा (फ़ा० स्त्री०) शान्तिभङ्ग करनेका उपकल्पन, झगड़ेको तैयारी।

आमादगी-शर-फ़िसाद, आमादगी-दङ्गा देखो।

आमादगी-हमला (फ़ा० स्त्री०) अवस्कन्दका उपकल्पन, धावेकी तैयारी।

आमादा (फ़ा० वि०) सन्नद्ध, तैयार।

आमानस्य (सं० क्ली०) अप्रशस्तं मानसमस्य अमानसस्तस्य भावः, ष्यञ्। दुःख, मुसीबत।

आमानाह (सं० पु०) आमका आनाह, आंवका क़ब्ज़।

आमानुबन्ध (सं० पु०) १ आमसातत्य, आंवका लगाव। २ आम सञ्चय, आंवका जोड़।

आमान्न (सं० क्ली०) अपक्वान्न, कच्चा चावल।

आमाम्र (सं० क्ली०) बालाम्र, कच्चा आम, अंबिया। यह कषाय, अम्ल-रस, रुच्य और वात-पित्त-वर्धक होता है। हिन्दुस्थानमें हरे पुदीने, नमक, मिर्च और चीनीसे प्रायः अंबियाकी चटनी बनाकर लोग रोटी या पूड़ीके साथ खाते हैं। अंबिया छीलकर अरहरको दालमें भी छोड़ी जाती है। करेलेकी तरकारीमें इसका पड़ना बहुत आवश्यक समझते हैं। अंबियासे अमचर बनता, जो सालभर चटनी बनाने और दाल-तरकारीमें डालनेके काम आता है। आमकी प्रायः सभी खटायी, फंकिया, फांका, अचारी वग़ैरह इसीसे तैयार की जाती है। वसन्तके दिन प्रथम अंबिया देवता पर चढ़ाते हैं। लू लगनेसे भूनकर इसका पना पिलाया जाता है। लड़के प्रायः नमकके साथ अंबिया खाते हैं। इसका दूसरा नाम केरी भी है।

आमाल (अ० पु०) १ आचार, इस्तेमाल। २ कर्म, काम। ३ मन्त्र, जादू। ४ मान, पैमायश। ५ अनुष्ठान, कारवायी। ६ परिणाम, असर। ७ प्रबन्ध, इन्तिज़ाम। ८ उन्मादक पान, नशीला शर्बत। ९ दिनका समय। १० बत्तियां, पिचकारियां। यह अमल शब्दका बहुवचन है।

आमालक (सं० पु०-क्ली०) पर्वतके निकटकी भूमि, पहाड़के पासकी ज़मीन्।

आमालनामा (अ० पु०) कर्मपत्र, कामका चिट्ठा। जिस बहीमें नौकरोंका काम-काज लिखते, उसे आमालनामा कहते हैं।

आमावस्था (सं० स्त्री०) अपक्व अवस्था, कच्ची हालत।

आमावास्य (सं० त्रि०) अमावस्यायां भवम्, अण्। सन्धिवेलाद्यृतुनक्षत्रेभ्योऽण्। पा ४।३।१६। १ अमावस्या-जात, अमावसको पैदा होनेवाला। २ अमावस्या वा उसके उत्सवसे सम्बन्ध रखनेवाला। ३ अमावस्याको पढ़नेवाला। (क्ली०) ४ अमावस्याका हवन।

आमाशय (सं० पु०) आमस्य अपक्वान्नस्य आशयः, ६-तत्। १ जठर, कोष्ठ, देहके मध्य और नाभिके ऊर्ध्व रहनेवाला भुक्त अपक्वान्नादिका स्थान, मेदा, पचौनी, जिसके बीच और तोंदीके ऊपर खाये हुये कच्चे अनाज वग़ैरहकी जगह। सुश्रुतके मतसे देहमें सात आशय होते हैं,—वाताशय, पित्ताशय, श्लेष्माशय, रक्ताशय, आमाशय, पक्वाशय और मूत्राशय। इससे अतिरिक्त स्त्रियोंके गर्भाशय भी रहता है। आमाशयका स्थान नाभि और स्तनके मध्यभागमें है। इसका प्रशस्त अंश नाभिके ऊपर वामदिक्‌को दौड़ा और धीरे-धीरे सूक्ष्म बनते हुये दक्षिण ओरको घूम यकृत्‌के अधोभागमें जा पहुंचा है। आमाशय मांस और सूक्ष्म चर्मसे गठित है। इसपर क्षुद्र-क्षुद्र विवर रहते, जिनका व्यास $\frac{1}{200}$ से $\frac{1}{100}$ इञ्चतक देखते हैं। इन्हीं विवरोंमें आमरस भर जाता है। आमरस देखो।

२ प्रवाहिका रोग, इशाल, दस्त लगनेकी बीमारी।

आमाहल्दी (हिं० स्त्री०) आम्रहरिद्रा। Curcuma Amada. यह बङ्गालमें तथा पहाड़पर होती और आधी बरसात बीतनेपर फूलती है। वैद्यशास्त्रके मतसे आमाहल्दी तिक्त, अम्ल, रुचिप्रद, लघु, अग्निदीपन, उष्ण, तुवर, सर एवं मत रहती और कफ, उग्रव्रण, कास, श्वास, हिक्का, ज्वर, मुखरोग तथा रक्तदोषको दूर करती है। (वैद्यकनिघण्टु) इसका कन्द शीतल होता, कण्डूमें उपकार पहुंचाता और अग्निवर्धन एवं वायुनाशनके लिये भी व्यवहारमें आता है। अम्लान अवस्थामें इससे हरे आम-जैसा गन्ध निकलता है। किन्तु आमाहल्दीमें अदरकसे अधिक गुण नहीं देखते। लोग चत और सन्धिभिघात पर इसे बांटकर लगाते हैं। आमाहल्दीकी जड़ कफनाशक, स्तम्भक और अतीसार तथा मेहविकारमें उपकार करनेवाली है। यह मसाले और तरकारीकी तरह भी काम आती है।

आमिक्षा (सं० स्त्री०) आ-मिक्ष्यते सम्यक् सिच्यते, आ-मिह मिष वा कर्मणि सक्-टाप्। उत्तप्त और घनीभूत दुग्धका मिश्रद्रव्य, पञ्छेका कुन्दा, खौलते दूधमें दही डालकर बनायी हुई चीज़।

'आमिक्षा सा शृतोष्णे या क्षीरेस्याद्दधियोगतः।' (अमर)

आमिक्षीण (सं० क्ली०) आमिक्षायै हितम्, ख। दधि, दही, जिस चीज़से पञ्छेका कुन्दा बने।

आमिक्षीय (सं० त्रि०) आमिक्षायै हितम्, छ। विभाषा हविरपूपादिभ्यः। पा ५।१।४। १ आमिक्षा बनानेके लिये उपयुक्त, जिससे पञ्छेका कुन्दा बन सके। २ दधिसे प्रस्तुत किया हुआ, जो दहीसे बना हो।

आमिक्ष्य, आमिक्षीय देखो।

आमिख (हिं०) आमिष देखो।

आमितौजि (सं० पु०-स्त्री) अमितौजस्-इञ्। बाह्वादिभ्यश्च। पा ४।१।९६। अमितौजाका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य।

आमित्र (सं० त्रि०) अमित्र-अण्। १ शत्रुसम्बन्धीय, दुश्मन्‌से ताल्लुक रखनेवाला। "नाशामामित्रो व्यथिरा दधर्षति।" (ऋक्संहिता ६।२८।३) 'आमित्रः अमित्रस्य शत्रोः सम्बन्धि।' (सायण) २ अमित्रसे उत्पन्न। "तस्मादत्रामित्रौ संगत्य नाशा।" (शतपथ-ब्राह्मण १३।१।६।१) 'आमित्रौ अमित्रयोः पुत्रौ।' (हरिस्वामी)

आमिन (हिं० स्त्री०) आम्रविशेष, किसी क़िस्मका छोटा आम। यह अवधमें उत्पन्न होती और खानेमें खूब मीठी लगती है। वास्तवमें यह शब्द 'आम'का स्त्रीलिङ्ग है।

आमिल (अ० पु०) १ सम्पादक, निर्वाहक, मुरतकिब, काम करनेवाला। २ अधिकारी, हाकिम। ३ आय-संग्राहक, तहसीलदार। ४ मायी, ऐन्द्रजालिक, ओझा, मदारी, जादूगर।

आमिल-पुलिस (हिं० पु०) नगररक्षी, पुलिसका अफ़सर। यह शब्द हिन्दीमें अरबी 'आमिल' और अंगरेज़ी 'पुलिस'के योगसे बना है।

आमिश्र (सं० त्रि०) संसृष्ट, मिला-जुला। निघण्टुके निघण्टु काण्डमें (१।१।१) देवराजने इसका प्रयोग किया है।

आमिश्र (वै० त्रि०) आभिमुख्य-मिश्र, अच्छ मिलानेवाला, जो मिलाने बैठा हो। "स सोम आमिश्रतमः सुतोऽभूत्।" ऋक् ६।२९।४। 'आमिश्रतमः आभिमुख्येन मिश्रितमः।' (सायण)

आमिष (सं० क्ली०) अम् गतौ भोजने शब्दे सेवायाञ्च टिषच्। अमि दीर्घश्च। उण् १।४७। १ मांस धातु, उमसर-गोश्त। २ भक्ष्यमांस, खानेका गोश्त। ३ भोग्य-वस्तु, काममें लाने लायक चीज़। ४ भोजन, गिज़ा। ५ सम्भोग, विषय, मज़ा, मजे़दारी। ६ उत्कोच, रिशवत। ७ लाभ, फ़ायदा। ८ कामगुण, ख़ाहिश। ९ मनोहररूप, दिलकश सूरत। १० तृष्णा, लालच।

आमिष शब्दसे मत्स्य एवं मांस उभयका बोध होता है। 'देवदत्त आमिष नहीं खाता' कहनेसे समझ पड़ता, कि वह मत्स्य एवं मांस दोनोंसे दूर रहता है। अण्ड आमिषमें ही गण्य है। किन्तु शरीरसे निकलते भी दुग्ध आमिष नहीं कहाता। शास्त्रकारोंने षष्ठी, अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या तथा पूर्णिमा तिथि, रविवार और संक्रान्तिको आमिष खाना रोका है। इसका विस्तारित विवरण 'मत्स्य' और 'मांस' शब्दमें देखो। सज्जातीय विधवा और ब्रह्मचारी दोनो आमिष नहीं खाते। किन्तु तन्त्रके मतानुसार जो ब्रह्मचर्य रखता, वह आमिष खा सकता है।

आमिषकर (सं० क्ली०) शोणित, ख़ून, गोश्त बनानेवाली चीज़।

आमिषगन्धिनी (सं० स्त्री०) पूतनी, पुदीना, गोश्तको तरह महकनेवाली चीज़।

आमिषप्रिय (सं० पु०) १ काकपक्षी, कौवा। (त्रि०) २ मांसभक्षक, गोश्तखोर।

आमिषभुक् (सं० त्रि०) मत्स्य-मांस-भक्षक, मछली और गोश्त खानेवाला।

आमिषभुज्, आमिषभुक् देखो।

आमिषाशिन्, आमिषभुक् देखो। (पु०) आमिषाशी। (स्त्री०) आमिषाशिनी।

आमिषस्नेह (सं० पु०) वसा, चरबी, गोश्तका रोगन।

आमिषी (सं० स्त्री०) आमिष-अच्-ङीष्। अर्श आदिभ्यो ऽच्। पा ५।२।१२७। मिषी, जटामांसी, बालछड़।

आमिस् (वै० पु०) १ मांस, गोश्त। "न यं तव्यामिषि गृभीता।" (ऋक् ६।४६।१४।) 'आमिषि आमिषे मांसे।' (सायण) २ शव, मुर्दा। इस शब्दका प्रयोग केवल वेदकी प्राचीन संहितामें मिलता है।

आमी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र एवं अपक्व आम्र, छोटा और कच्चा आम, केरी, अंबिया। २ वृक्ष विशेष, एक पेड़। इसे तुक्का या भान भी कहते हैं। परिमाणमें आमी छोटी होती और प्रतिवर्ष आश्विन-कार्तिक मास पत्ते झाड़ती है। आभ्यन्तरिक काष्ठ किञ्चित श्यामता लिये पीत, दृढ़ और कठोर निकलता है। सज्जाके कितने ही वस्तु इससे बनते हैं। हिमालयके वैष्णव इसके मालसे पेटक प्रस्तुत करते हैं। शिमले, हज़ारे, कुमायूं आदिके पर्वतपर आमी ख़ूब उपजती है। ३ यव अथवा गोधूमको दग्ध मञ्जरी।

आमीं (अ० अव्य०) १ ओम्, भवतु, एवमस्तु, तथास्तु, ऐसा ही हो, तेरे मुंह घी-खांड़! २ ईश्वर बचाये!

आमीचा, आमिक्षा देखो।

आमीन्—थानेश्वरके दक्षिण-पूर्वका एक बड़ा जङ्गल। इसे अभिमन्युखेड़ा या चक्रव्यूह भी कहते हैं। यहीं जयद्रथने अभिमन्युको मार डाला था। इस जङ्गलमें आमीन् नामक ग्राम भी बसा, जिसमें अदिति और सूर्यदेवका मन्दिर खड़ा है। यहां सूर्यकुण्ड विद्यमान है। गौड़ ब्राह्मण अधिक रहते हैं। स्त्रियां पुत्र-प्राप्तिकी कामनासे अदितिको पूजतीं और सूर्यकुण्ड नहाती हैं। (अ० अव्य०) आमीं देखो।

आमीलन (सं० क्ली०) नेत्रोंका विराम, आंखोंका बन्द करना।

आमीवत्, आमीवत्क देखो। (पु०) आमीवान्। (स्त्री०) आमीवन्ती।

आमीवत्क (वै० त्रि०) सम्मुख प्रापक, सामना पकड़नेवाला। (स्त्री०) आमीवत्का।

आमुक्त (सं० त्रि०) १ बद्ध, जो खोल दिया गया हो। २ विमुक्त, छूटा हुआ। ३ क्षिप्त, फेंका हुआ।

४ धारण किया या पहना हुआ। ५ प्रसाधित, जो क़तारमें हो।

आमुक्ति (सं० स्त्री०) १ निवृत्ति, छुटकारा। २ मोक्ष, निजात। (अव्य०) ३ जीवनके अन्त पर्यन्त, कयामके अख़ीरतक।

आमुख (सं० क्ली०) १ आरम्भ, आग़ाज़। २ प्रस्तावना, उनवान्। (अव्य०) ३ मुख पर्यन्त, मुंहतक।

आमुप (सं० पु०) कण्टकयुक्त वंशविशेष, बीहड़ बांस। Bambusa spinosa. यह मन्द्राज प्रान्तके उत्तर-पूर्व विभाग, बङ्गाल, आसाम और ब्रह्मदेशमें स्वतः उत्पन्न होता है। युक्तप्रान्तमें इसे लगाया करते हैं। आमुपका रङ्ग पीला होता और सूक्ष्म सूत्रवत् रेखाका चिह्न पड़ जाता है। बकला चमड़े-जैसा कड़ा रहता है। फूल कम आता है। पत्ती छोटी तथा नीचेकी ओर बालदार होती और पेंदीमें उभरी हुई टहनी रहती है। बीहड़ बांस बहुत मोटा नहीं होता, किन्तु अपर जातिकी अपेक्षा दृढ़ ठहरता है। लम्बाई ३०से ५० फीटतक बैठती और लकड़ी साफ़ सुथरी निकलती है। यह दूसरे बांसकी तरह कितने ही काम देता है।

आमुर् (वै० पु०) बाधक, बरबाद करनेवाला। "नहि घा ते शतं चन राधो वरन्त आमुरः।" (ऋक् ४।३१।९।) सायणाचार्यने ऋग्भाष्यमें इस शब्दका बाधक, राक्षस, अभिमारक और आमूढ़ प्रभृति अनेक अर्थ लगाया है।

आमुरा—वृक्षविशेष, एक पेड़। Amoora cucullata. इसे लतमी या नतमी भी कहते हैं। यह बङ्गाल, नेपाल, अन्दामान एवं ब्रह्मदेशमें उपजता, मध्यम मानका होता और सदा हराभरा रहता है। आमुरा धीरे-धीरे बढ़ता है। बकला खाकी होता है। पत्तियां नीचेकी ओर चिकनी, तिरछा लम्बी-चौड़ी, दोनो किनारे चपटी और नोकपर ढकी देख पड़ती हैं। फूल फाड़ीदार निकलता है, किन्तु कोल नहीं छोड़ता। लकड़ी लाल, दानेदार परन्तु चटख़ जानेवाली होती और वज़नमें प्रति घनफट २२।२३ सेर बैठती है। निम्न बङ्गालमें इससे खूंटे, खम्भे वगैरह बनाते और सुन्दरवनमें जलानेका काम लेते हैं।

आमुरि (वै० पु०) मारयिता, नाशक, बरबाद-करनेवाला। "क्रत्वा वरिष्ठं वर आमुरिमुत।" (साम १।४।२।४।१।) 'आमुरिं शत्रूणामाभिमुख्येन मारयितारमिन्द्रं।' (सायण)

आमुष्यकुलक (सं० क्ली०) पाणिनोक्त गण विशेष।

आमुष्यपुत्रक, आमुष्यकुलक देखो।

आमुष्यायण (सं० पु०) अमुष्य-फक्। आमुष्यायणामुष्यपुत्रिकामुष्यकुलिकेति च। पा ४।३।२१ वार्तिक। अमुष्यपुत्र, बड़े आदमीका बेटा।

आमूल (सं० अव्य०) मूल पर्यन्त, माद्दे तक, मस-दरसे, एक-क़लम, तमाम।

आमृज्य (सं० अव्य०) प्रक्षालनपूर्वक, पोंछ या मींड़कर।

आमृण (सं० त्रि०) भेद्य, क़ाबिल-मजरूही, जिसे नुक़सान् लग सके।

आमृत (सं० त्रि०) मर्त्य, क़ाबिल-मौत, मरने-वाला।

आमृत्योस् (सं० अव्य०) मृत्यु पर्यन्त, मरनेतक।

आमृष्ट (सं० त्रि०) मर्दित, मला या मीड़ा हुआ।

आमेज़ करना (हिं० क्रि०) मिलाना, भर देना। इसमें आमेज़ शब्द फ़ारसीका पड़ता, जो मिलानेका अर्थ रखता और सदा दूसरे शब्दके साथ लगता है।

आमेज़ना, आमेज़ करना देखो।

आमेज़िश (फ़ा० स्त्री०) मिश्रण, मिलौनी, मेल।

आमेन्य (वै० त्रि०) बाण वा शक्तिद्वारा गम्य, सम्पूर्ण परिमेय, तीरसे हाथ आनेवाला, जो सब तर्फ़से नापा जाता हो। "आमेन्यस्य रजसो यदभ्र आँ अपो वृणाना वितनोति।" (ऋक् ५।४८।१) 'आमेन्यस्य समन्तान्मातव्यस्य।' (सायण)

आमेर—अम्बर नगर एक शहर। यह राजपूतानेमें जयपुरके समीप अवस्थित है। प्रथम जयपुर राज्यकी राजधानी यहीं रही। अम्बर देखो।

आमोक्षण (सं० क्ली०) आ-मोक्ष भावे ल्युट्। धारण, परिधान, कसने या बांधनेका काम।

आमोख़्ता (फ़ा० पु०) परिचित पाठ, पुराना सबक़।

आमोख़्ता पढ़ना (हिं० क्रि०) पुनर्दर्शन करना, पुराना सबक़ फेरना।

आमोख़ता फेरना, आमोख़ता पढ़ना देखो।

आमोचन (सं० क्लो०) आ-मुच्-ल्युट्। १ शिथिलीकरण, छोड़ देनेका काम। २ परिधान, संयोग, लगाव, पहनाव।

आमोद (सं० पु०) आ-मुद्-लुयट्। १ प्रमोद, शादमानी, मौज। 'प्रमदोमुत्प्रीत्यामोदः।' (हेम) २ दूरगामी गन्ध, तेज़ महक। 'आमोदो गन्धहर्षयोः।' (मेदिनी) ३ परिमल, दुरियात। ४ शतावरी।

५ बम्बई प्रान्तके भड़ोंच ज़िलेकी तहसील। अविरल प्रान्त बायीस लम्बा तथा तेरह मील चौड़ा है। उत्तर ढाढर नदी, पूर्व बड़ोदा राज्य और दक्षिण तथा पश्चिम भड़ोंच एवं वागरा तहसील अवस्थित है। क्षेत्रफल १७६ वर्गमील है। विश्लिष्ट ग्राम कहीं नहीं देख पड़ते। ढाढर नदीके समीप जङ्गल है। पानीकी कमी रहती है। कूप थोड़े और तालाब छोटे हैं। भूमि काली होते भी पश्चिमकी ओर भूरी पड़ती है, जो जोती-बोयी जा नहीं सकती। पूर्वमें पैदावार अच्छी होती है। (त्रि०) ६ प्रीतिप्रद, मसरूर या खुश करनेवाला।

आमोदक (सं० पु०) यमानिका, अजवायन।

आमोदजननी (सं० स्त्री०) नागवल्ली, पान।

आमोदन (सं० क्लो०) आ-मुद्-लुयट्। आमोदकरण, प्रहर्षजनन, महज़ूज़ी, मसरूरी, रिझानेका काम।

आमोद-प्रमोद (सं० पु०) हर्ष-सन्तोष, खुशी-खुरमी, राग रङ्ग।

आमोदा (सं० स्त्री०) १ शतावरी, सतावर। २ कैमूरगिरि शिखरस्थ ग्राम विशेष, कैमूर पहाड़की चोटीपर बसनेवाला गांव। यह बोरी बन्दरसे साढ़े तीन कोस दक्षिण-पूर्व है। गोंड़ राजत्व करते हैं। यहां स्वामीके मरनेसे पत्नी सहगामी होती है। सतीका बड़ा आदर सम्मान और स्मरणार्थ स्तम्भस्थापन किया जाता है। सन् १५६४ ई०को गोंड़राज प्रेमनारायणके राजत्वकाल एक स्त्री सहमृता हुई, जिसके स्मरणस्तम्भमें सब बात खुदी है। (Cun. Arch. Reports IX. 39)

आमोदित (सं० त्रि०) १ प्रीत, शादमान्, खुश। २ सौरभित, सुवत्तर, सोंधा।

आमोदिन् (सं० त्रि०) आमोद-इनि। १ हर्षयुक्त, शादमान्, खुश। २ गन्धयुक्त, सुवत्तर, सोंधा। समासान्तमें यह शब्द 'गन्धयुक्त'का अर्थ रखता है; जैसे—कदम्बामोदिन्, कदम्बके गन्धसे युक्त। (स्त्री०) आमोदिनी।

आमोदी (सं० पु०) १ मुखवासन, मुंहको महकानेवाला। २ कर्पूरादिवटिकाकृत मुखगन्ध, काफ़ूरकी डलीसे बना हुआ मुंह महकानेका मसाला। वर्तमान समयके ताम्बूल-विहारादिको आमोदी ही समझना चाहिये।

आमोष (सं० पु०) आ-मुष् भावे घञ्। हरण, सरका, चोरी। "यथा विभ्यदामोषमतीयादेवमेव योऽस्य स्वर्गं लोको जितो भवति।" (शतपथ-ब्राह्मण १।२।५।२।८)

आमोषिन् (सं० त्रि०) हरणकर्त्ता, चोर, मूसनेवाला। (पु०) आमोषी। (स्त्री०) आमोषिणी।

आमोहनिका (सं० स्त्री०) अपूर्व सुगन्ध, निराली महक।

आम्नात (सं० त्रि०) आ-म्ना-क्त। १ सुन्दर अभ्यस्त, सम्यगधीत, नाम लिया हुआ, जो भूला न हो। (क्लो०) आ-म्ना भावे क्त। २ सम्यगभ्यास, अच्छी महारत।

आम्नातिन् (सं० त्रि०) आम्नातमनेन, इनि। अभ्यास रखनेवाला, जिसे महारत रहे। (पु०) आम्नाती। (स्त्री०) आम्नातिनी।

आम्नान (सं० क्लो०) आ-म्ना-लुयट्। १ वेदादिपाठ, वेदादिका अभ्यास। 'आम्नानं पठनम्।' अथर्वप्रातिशाख्यभाष्य ४।१०१। २ आवेदन, नामग्रहण, तज़किरा।

आम्नाय (सं० पु०) आम्नायते सम्यगभ्यस्यते, आ-म्ना कर्मणि घञ्। १ वेद, स्मृति। 'श्रुतिः स्त्री वेद आम्नायस्त्रयी।' (अमर) २ आगमप्रधान तर्कशास्त्र। भावे घञ्। ३ सम्यगभ्यास, सम्यक् पाठ, अच्छा महावरा, ख़ासा सबक़। ४ सम्प्रदाय। 'पचाम्नायः सम्प्रदायः।' (अमर) ५ उपदेश, नसीहत। 'आम्नायो निगमेऽपि च उपदेशे।' (मेदिनी) ६ कुल, खान्दान्। ७ कुलपरम्परा, खान्दान। रस्म।

८ शिक्षादान, तालीम देनेका काम। ९ तन्त्रशास्त्र। महादेवने स्वयं कहा है—

"मम पञ्चमुखेभ्यश्च पञ्चाम्नाया विनिर्गताः।
पूर्वश्च पश्चिमश्चैव दक्षिणश्चोत्तरस्तथा।
ऊर्ध्वाम्नायश्च पञ्चैते मोक्षमार्गाः प्रकीर्तिताः।" (तन्त्र)

आम्नायसारिन् (सं॰ त्रि॰) १ वेदानुयायी, धार्मिक, पाक-साफ। २ वेदतत्त्वयुक्त। (पु॰) आम्नायसारी। (स्त्री॰) आम्नायसारिणी।

आम्प्रत्यय (सं॰ त्रि॰) आम्-प्रत्यययुक्त, लफ्ज़को आखिर बलामत आम्‌को रखनेवाला।

आम्ब (सं॰ पु॰) धान्य विशेष, आमन धान।

"अव्यायाम्बायां चरुं वरुणाय धर्मपतये।" (तैत्तिरीयसंहिता १।८।१०)

'आम्बाः धान्यविशेषाः।' (सायण) यह धान्य शीत कालमें उपजता है। कृषक वैशाख मास खेतको मट्टी हलसे बना रखते हैं। वर्षा आनेसे बीज पड़ता है। खेतको तीन बार जोता करते हैं। शिखा कुछ बढ़नेपर अच्छा आम्ब दूसरे खेतमें उखाड़ कर लगाया जाता है। पहले खेतको पानीसे भर कृषक पुनः पुनः हल चलाते रहते हैं। उस समय खेतमें कीचड़ भरा रहता है। फिर शिखायुक्त धान्य हाथ-डेढ़ हाथके अन्तर जमा देते हैं। जमीन् ज्यादा नर्म रहनेसे वर्षाके जलमें आम्ब बिगड़ सकता है। यह धान्य बङ्गालमें अधिक उपजता और बङ्गवासियोंका जीवन-स्वरूप होता है। राजनिघण्टु, भावप्रकाश और मदनविनोदमें आम्बके निम्नलिखित पर्याय मिलते हैं,—शालि, मधुर, वृष्य, व्रीहिश्रेष्ठ, नृपप्रिय, धान्योत्तम, केदार, सुकुमारक, रक्तशालि, कलम, पाण्डुक, शकुनाहृत, सुगन्धक, कर्दमक, महाशालि, दूषक, पुष्पाण्डक, पुण्डरीक, महिष-मस्तक, दीर्घशूक, काञ्चनक, हायन, लोध्रपुष्पक, कलामक, पुण्ड्र, लोहित, गरुड़, शकुनीहृत, सुगन्धिक, पूर्णचन्द्र, प्रमादक, शीतभीरु, काञ्चन, पाण्डुगौर, शारिवा, रोध्रपुष्प, दीर्घलात और महादूषक।

वैद्यशास्त्रके मतसे यह मधुर, स्निग्ध, बलकारक, मलको कठिन एवं अल्प बनानेवाला, कषाय, लघुपाकी, रुचिकर, कण्ठ-स्वर-परिष्कारक, शुक्र-पुष्टि-कर, अल्प वायु तथा कफकर, शीत, पित्तनाशक, और मूत्र-कर होता है।

खेतमें बीज पड़ने पीछे पौदा फूटता है। पौदा उखाड़ कर दूसरे खेतमें न लगानेसे जो धान उपजता, वह अल्प गुणविशिष्ट होता है। किन्तु पौदेको उखाड़ दूसरी जगह लगा देनेसे आम्ब धान्य नूतन अवस्थामें शुक्रवर्धक और पुराना पड़ने पर परिपाक-लघु एवं उपकारी है। इससे अधिक मल नहीं बढ़ता। बे-जोते खेतका धान्य अल्पतिक्त, मधुर, कषाय, पित्त-तथा कफनाशक और वायु एवं अग्निवर्धक है। जोते खेतमें उपजनेसे यह बलकर, मेधाजनक, गुरु, कफ तथा शुक्रवर्धक एवं कषाय होता, अल्प मल लाता और वायु-पित्तको नाश करता है। खेत जल जानेसे उपजनेवाला आम्ब कषाय, लघु, रूक्ष, मल-मूत्रकर और कफनाशक है।

रक्तशालिको हिन्दीमें दाऊदखानी या मिश्री चावल कहते हैं। वैद्यशास्त्रके मतसे यह बलकर, त्रिदोषनाशक, चक्षुके पक्षमें उपकारी, मूत्र-शुक्र-अग्नि-वर्धक और पुष्टिकर है। इससे वर्ण एवं स्वर परिष्कार पड़ता और पिपासा, ज्वर, विष, व्रण, श्वास, कास तथा दाहका नाश होता है।
(मदनविनोदनिघण्टु)

आजकल आम्ब धान्य पृथिवीपर प्रायः सकल स्थानमें उपजा करता है। भारतवर्षके अतिरिक्त जापान, चीन, सिंहल, भारत-महासागरके द्वीपसमूह, ब्रह्म, श्याम, लोहितसागर-तीरस्थ स्थान, मिस्र (इजिप्ट), मादागास्कर, पूर्व अफरीका, दक्षिण-यूरोप, अमेरिकान्तर्गत ब्रेजिल और उरुगुया पराना प्रभृति प्रदेशमें इसकी खेती की जाती है। नैपाली बंगलेसे नहीं मिलता, आकारमें कुछ प्रभेद पड़ता है। अमेरिकामें अब उत्कृष्ट आम्ब होने लगा है। किन्तु सकल स्थानकी अपेक्षा बङ्गालमें ही वह अधिक उपजता है। ब्रटिश सरकार अमेरिकासे आम्ब मंगा मन्द्राज प्रदेशके स्थान-स्थानमें खेती कराती है। हिमालय प्रदेशका बीज आजकल अवध और बङ्गालमें खूब बोया जाता है।

आम्बता—युक्तप्रान्तके सहारनपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २९° ५१´ १५´´ उ० और द्राघि० ७७° २२´ ३५´ के मध्य अवस्थित है। पहले मुग़ल-फ़ौजकी यहां चौकी रही। शाह अबुलमालीका सुन्दर समाधि-मन्दिर बना है। पीरज़ादे निष्कर भूमि भोगते हैं। इस नगरमें ईंटके बड़े-बड़े मकान् खड़े हैं।

आम्बरीषपुत्रक (सं० पु०) अम्बरीषपुत्र चतुरर्थ्यां वुञ्। गोत्रोच इत्यादि। पा ४।२।३९। १ अम्बरीष ऋषिके पुत्र। २ देशविशेष।

आम्बष्ठ (सं० पु०) अम्बष्ठस्यापत्यम्, अण्। शिवादिभ्योऽण। पा ४।१।११२। १ अम्बष्ठका पुत्र वा कन्या-रूप अपत्य। २ अम्बष्ठ देशका रहनेवाला।

आम्बात विहार प्रदेशके कृषकोंकी एक श्रेणी। आम्बात दो प्रकारके होते हैं,—घरवायत और बहरायत। घरवायत अनेक दिनसे प्रतिष्ठित और सरवार, नरहन, पटवार तथा परवार श्रेणीमें विभक्त हैं। बहरायतोंमें खवास, घिवहार, रुघार आदि उपाधि प्रचलित है। पटने, तिर्हुत, दरभङ्गे, मुजफ्फ़र-पुर, सारन, चम्पारन, मुङ्गेर, भागलपुर, राजशाही, दीनाजपुर, सन्थाल परगने वगैरहमें यह देख पड़ते और प्रायः बड़े आदमियोंकी नौकरी करते हैं।

आम्बातोंमें बाल्य-विवाहकी प्रथा है। शैशव अवस्थामें पुत्र वा कन्याका विवाह कर सकनेपर यह अपनेको मानी समझते हैं। पैसा कम रहनेसे विवाह होना कठिन है। बहु विवाहकी रीति भी देख पड़ती है। स्वामी मर जाने पर सिवा ज्येष्ठ-सहोदरके दूसरे देवरसे स्त्रीका पुनर्विवाह होता है। सतीका बड़ा आदर है। प्रायः सकल ही शाक्त हैं। कालीके निकट बकरेका बलिदान देते हैं। उपास्य देवता पांच है—भवानी, गोरैया, सोखा, बंदी और पैकूराम। पान, सुपारी, मीठे भात और केलेसे भवानीको पूजते हैं। गोरैयेपर सूअरका छौना चढ़ता है। सोखाको रोटी प्यारी है। बंदीके लिये मिठाई आती है। पैकूराम सर्वप्राचीन देवता हैं। बहुत दिनसे आम्बातोंके पूर्वपुरुष उनकी पूजा करते आये हैं। आश्विन मास पितृपुरुषोंके उद्देशसे तर्पण होता है। ब्राह्मण इनके हाथका जल पी लेते हैं।

आम्बाद—दक्षिण हैदराबादका एक ताल्लुक़। इसका परिमाण ८६० वर्गमील है। २४१ ग्राम बसते हैं। महाराष्ट्रोंके अधीनता स्वीकार करनेपर आम्बादमें अंगरेज़ोंका अधिकार हुआ था। कुछ दिन बाद यह निज़ामके राज्यमें मिला और सन् १८६२ ई०को स्वतन्त्र ज़िला बना। उस समय पथरी, पुरभानी, जलनापुर, नरसी, पैठन और आम्बादमें तहसीलदारी रही। चार वत्सर पीछे अनेक परिवर्तन पड़ा था। ज़िलेकी बड़ी अदालत औरङ्गाबाद उठ जानेपर यह फिर ताल्लुक़ हुआ। कृषकोंका ही अधिक वास है।

आम्बिकेय (सं० पु०) अम्बिकाया अपत्यम्, ढक्। स्त्रभ्यादिभ्यश्च। पा ४।१।१२३। १ धृतराष्ट्र। विचित्रवीर्यकी अकालमृत्यु होनेपर सत्यवतीके आदेशसे व्यासदेवने अम्बिकागर्भमें धृतराष्ट्रको उत्पादन किया था। यह बात महाभारत-आदिपर्वके १०६ठें अध्यायमें विवृत है।

अम्बिकाया दुर्गाया अपत्यम्। २ कार्तिकेय। ३ पर्वत विशेष, एक पहाड़। यह शाकद्वीपके मध्य अव-स्थित है। इसी पर्वतपर हिरण्याक्ष मारा गया था। (मत्स्यपुराण)

आम्बोली—रक्तकुरण्टक भेद, किसी क़िस्मकी झाड़ी। यह प्राकृत शब्द ठहरता और कोङ्कण देशमें चलता है।

आम्भस (सं० त्रि०) जलात्मक, आबी, पनीला।

आम्भसिक (सं० पु०) अम्भसा वर्तते, ठक्। १ मत्स्य, मछली। (त्रि०) २ जल-सम्बन्धीय, दरयायी।

आम्भि (सं० त्रि०) अम्भसो जातादि, इञ् सलोपः। बाह्वादिभ्यश्च। पा ४।१।९६। जलजात, आबी, पानीसे पैदा।

आम्भृणी (सं० स्त्री०) वाक्, अम्भृण ऋषिकी कन्या।

आम्म (हिं० पु०) प्राणीविशेष, एक जानवर। यह नकुल सदृश होता है।

आम्र (सं० पु०) अम गत्यादिषु रन् दीर्घश्च।

अमितसौरभः। उष् २१२६। १ स्वनामख्यात वृक्षविशेष, आमका पेड़। 'आम्रश्चूतो रसालोऽसौ।' (अमर) (क्ली०) आम्रस्य फलम्, अण्। २ आम्रफल, खानेका आम। आम, अम्ब, कोशाम्र, महाराजाम्र, रसालाम्र, राजाम्र और साधारणाम्र शब्द देखो।

आम्रकवि—आदित्यनागके पुत्र। उदयपुरमें गुहिल वाहनका जो टूटा-फूटा शिलालेख मिला, उसे इन्होंने ही बनाया था।

आम्रकूट (सं० पु०) पर्वतविशेष, एक पहाड़। हिन्दीमें इसे अमर-कण्टक कहते हैं। अमरकण्टक देखो।

आम्रगन्धक (सं० पु०) आम्रस्येव गन्धो यस्य, बहुव्री० कप्। १ समष्ठिलक्षुप, किसी क़िस्मका झाड़। २ आमाहलदी। आमाहलदी देखो।

आम्रगन्धा (सं० स्त्री०) १ मूलकाण्डप्रसिद्ध वृक्ष-विशेष, कपूरहलदी।

आम्रगन्धि, आमगन्धा देखो।

आम्रगन्धिहरिद्रा (सं० स्त्री०) आम्रहरिद्रा, आमाहलदी।

आम्रगुप्त (सं० पु०) गोत्रप्रवर्तक ऋषि-विशेष।

आम्रतैल (सं० क्ली०) आम्रस्थित तैल, आमकी तेल। यह ईषत् तिक्त, मधुर, नातिपित्तकृत्, वातकफहर, रूक्ष, सुगन्ध, और विशद होता है। (मदनपाल) सहकार तैल ईषत् तिक्त, अतिसुगन्धि, कफ-हर, सूक्ष्म, मधुर, कषाय और नाति-रक्त-पित्तकर है। (अत्रिसंहिता)

कच्चे आमको टुकड़े टुकड़े कर अथवा बीचसे फार नमक, मिर्च मसाला भरते और सरसोंके तेलमें डाल देते हैं। दो-चार दिन बाद तेलको धूप देखायी जाती है। जब आम नमकके कारण पकता, तब यह तेल बनता है।

आम्रत्वचा (सं० स्त्री०) आम्रवल्कल, आमकी छाल। यह कषाय होती है। (राजनिघण्टु)

आम्रनिशा (सं० स्त्री०) आम्रहरिद्रा, आमाहलदी।

आम्रपल्लव (सं० पु०-क्ली०) आम्रकिसलय, आमका पत्ता। यह रुच्य और कफ-पित्तघ्न होता है। (भावप्रकाश) आमका पत्ता अच्छीतरह चबाकर रगड़नेसे दांत ख़ूब मज़बूत पड़ते और चमकने लगते हैं।

आम्रपाली (सं० स्त्री०) स्त्री विशेष, किसी मशहूर औरतका नाम। यह एक वीवरमणी रहीं। बुद्धके वैशालीमें ठहरते समय इन्होंने विश्रामार्थ बाग़ भेंट किया और स्मरणार्थ मन्दिर बनवाया था। फा-हियान और हियोनसियाङ्ग ध्वंसावशेष देख गये। कहते, कि वैशालीमें महानामन् नामक एक लिच्छवि नृपति रहते थे। उनके उद्यानमें कदलिवृक्षसे इन्होंने जन्म लिया। यह अत्यन्त सुन्दर और सुगठित रहीं। महानामन्ने आम्रपाली नाम रखा। किन्तु वैशाली-की व्यवस्थाके अनुसार उत्कृष्ट स्त्री विवाह न करने और लोकप्रीतिके लिये रक्षित रहनेको बाध्य थी। इसीसे यह वेश्या बन गयीं। मगध नरेश बिम्बिसार गोपाल द्वारा समाचार पा वैशाली पहुंचे और लिच्छि विसे युद्ध चलते भी सात दिन इनके पास रहे थे। आम्रपाली बिम्बिसारके सहवाससे गर्भवती हुयीं। इन्होंने पुत्रको बड़ा होनेपर पिताके पास भेज दिया था। वह राजाके पास पहुंचते ही निर्भय भावमें छातीसे जा चिपटा। उसपर राजाने निरूपण किया, बालक भयका नाम भी जानता न था। इसीसे उसे लोग अभय कहने लगे।

बुद्धके वैशाली पहुंचने पर आम्रपालीने जाकर साक्षात् किया और दूसरे दिन अपने घरमें भोजन करनेको निमन्त्रण दिया था। बुद्धने इनका निमन्त्रण अङ्गीकार किया। किन्तु उसी दिन थोड़ी देर बाद वैशाली नृपति लिच्छविस भी बुद्धसे मिलने गये। बुद्धने राजाका निमन्त्रण इस लिये स्वीकार न किया, कि आम्रपालीके पास जाना ठहर चुका था।

आम्रपुष्प (सं० क्ली०) आम्रमुकुल, आमका बौर। यह रुच्य और दीपन होता है। (राजनिघण्टु) इसमें अतीसार, कफ, पित्त, प्रमेह एवं रक्तदुष्टि दूर करने और शीत तथा वात बढ़ानेका गुण विद्यमान है। (भावप्रकाश) आमका बौर पहले-पहल वसन्तमें विष्णु भगवान्पर चढ़ता है। खुशबू बहुत मीठी होती है। यह पञ्चबाणका एक अङ्ग है।

आम्रपेशिका, आम्रपेशी देखो।

आम्रपेशी (सं० स्त्री०) आम्रस्य पेशीव। शुष्कखण्ड-

खण्ड, अमचूर। यह अम्ल-मधुर, कषायरस, भेदक और वात-कफघ्न होती है। (भावप्रकाश) अमचूर अक्सर लोग सुखाकर रख छोड़ते और दालमें डालते या चटनी बनाते हैं। अमचूरकी चटनी हरी धनिया मिला देनेसे बहुत अच्छी लगती है।

आम्रप्रसाद—नृपति विशेष। भावनगरके शिलालेखमें इनका उल्लेख है।

आम्रफल (सं० क्ली०) आम्र, आम। आम देखो।

आम्रफलपानक (सं० क्ली०) आम्रफल-कृत पानक विशेष, आमका पना। कच्चे आमको पानीमें फुला हाथसे खूब मले और चीनी, कपूर, मिर्च मिला दे। यह प्रपाणक श्रेष्ठ, सद्य रुचिकर, बल्य और शीघ्र इन्द्रिय तर्पण है। भीमसेनने अपने लिये इसे बनाया था। (भावप्रकाश)

आम्रमय (सं० त्रि०) आम्रस्य विकारः अवयवो वा, वृक्षित्वात् मयट्। आम्रकृत, आमसे बना हुआ।

आम्रमूल (सं० क्ली०) आम्रशिफा, आमकी जड़। यह सुगन्ध, रुच्य, संग्राहि और शीतल होता है। (राजनिघण्ट)

आम्ररसाकृति (सं० पु०-स्त्री०) आम्रस्येवाकृतिः स्वादो यस्य, बहुव्री०। पीताख्य रसाल विशेष, किसी किस्मका आम।

आम्रलेह (सं० पु०) आम्रकृत लेह, आमकी चटनी। तरुण आम्रको भून गुड़ या चीनीके साथ मले और सैन्धव, मरिच, तथा भर्जित हिङ्गु मिला दे। यह रुचिकृत्, मधुर, तृप्तिकारक, हृद्य, स्निग्ध और गुरु होता है। (वैद्यकनिघण्ट)

आम्रवण (सं० क्ली०) आम्रस्य वनम्, ६-तत्, नित्य णत्वम्। प्रनिरन्तः शरेचुप्लक्षाम्रकार्ष्यखदिरपीयूक्षाभ्योऽसंज्ञायामपि। पा ८।४।५। आम्रवृक्ष समूहात्मक वन, आमका जङ्गल।

आम्रवन्द (सं० पु०) आम्रवन्दा, आमका बंदा। इसके पड़नेसे वृक्ष सूखने लगता है।

आम्रवट, आम्रातक देखो।

आम्रवाट, आम्रातक देखो।

आम्रवीज (सं० क्ली०) आम्रास्थि, आमकी गुठली। यह कषाय, छर्दि-अतीसार-घ्न, ईषत् अम्ल, मधुर और हृदय-दाहघ्न है। (भावप्रकाश)

आम्रवेतस (सं० पु०) अम्लवेतस, चूक।

आम्रहरिद्रा (सं० स्त्री०) आम्रनिशा, आमाहल्दी।

आम्रात (सं० पु०) आम्रं आम्ररसं अतति, आम्र-अत-पचाद्यच्। १ स्वनाम-प्रसिद्ध वृक्ष विशेष, अमड़ेका पेड़। अमड़ा देखो। (क्ली०) आम्रातस्य फलम्, अण्। फले लुक्। पा ४।३।१६३। २ अमड़ेका फल। यह अपक्व वातघ्न, गुरु, उष्ण एवं रुचिकृत् होता, पकनेपर तुवर, स्वादुरसपाक, हिम, तर्पण, श्लेष्मल, स्निग्ध, वृष्य, विष्टम्भि, बृंहण, गुरु तथा बल्य रहता और वात पित्त, क्षत, दाह, क्षय, अस्रको जीत लेता है। आम फल कषायाम्ल और पक्व मधुर-अम्ल, स्निग्ध एवं पित्त-कफघ्न है। (राजनिघण्ट) ३ आम्रावर्त, अमावट।

आम्रातक (सं० पु०) आम्र इव अतति, आम्र-अत-ण्वुल्। १ आम्रात, अमड़ेका पेड़। 'अथ द्वौ पीतनकपीतनौ आम्रातके।' (अमर) आम्रातकस्य फलम्। २ अमड़ा। आम्रेण तत्फलरसेन तकति प्रकाशते तद्रसं सहते वा, आम्र-आ-तक पचाद्यच्। ३ अमरस, अमावट। ४ पर्वतविशेष।

आम्रातकेश्वर (सं० पु०) आम्रातक इव ईश्वर-लिङ्गमत्र, शाक० बहुव्री०। तीर्थस्थान विशेष। यह नर्मदाके उत्तरकूलमें अवस्थित है। यहां महादेवका दर्शन होता और नहानेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। (मत्स्यपुराण)

आम्रावती (सं० स्त्री०) आम्र आम्ररसोऽस्त्यस्याम्, मतुप् मस्य वः दीर्घः। शरादीनाञ्च। पा ६।३।१२०। १ नदी विशेष। इसका जल आम्ररस-जैसा मीठा होता है। २ नगर विशेष, एक पुराना मशहूर शहर।

आम्रावर्त (सं० पु०) आम्रवृक्ष इव आम्रस्य आवर्तते, आम्र-आ-वृत पचाद्यच्। १ आम्रातकवृक्ष, अमड़ेका पेड़। (क्ली०) २ अमड़ेका फल। आम्रेन आम्ररसेन आवर्त्यते निष्पाद्यते, आम्र-आ-वृत-णिच् कर्मणि घञ्। ३ अमावट। पके आमका रस कपड़े या किसी बरतन पर निचोड़ धूपमें सुखानेसे यह बनता; सारक, रुच्य तथा लघु होता और तृष्णा, छर्दि, वात एवं पित्तको मिटाता है। (भावप्रकाश)

आम्रास्थि (सं० क्ली०) आम्र-वीज-मज्जा, आमकी

गुठलीका दाना। इसे हिन्दीमें बिजली कहते हैं। आम्रास्थि बहुत चिकना होता है। हिन्दुस्थानी बच्चे आपसमें बैठ इसे निकालते और दाहने हाथसे कनिष्ठा तथा अङ्गुष्ठके बीच दबा ऊपरको सरका देते हैं। यह जिस ओर जाकर गिरता, उसी ओर निर्वाचित बालकका विवाह होना समझा जाता है।

आम्रिमन् (सं० क्ली०) अम्लरसोऽस्त्यस्य, यज्ञादित्वात् अण्; दृढ़ादिगणे आम्र इति पाठसामर्थ्यात् रलयोरभेदत्वेन लस्य रत्वम्, तत आम्रस्य भावः इमनिच। १ अम्लत्व, खटाई। २ पाणिनोक्त गणविशेष।

आम्रेडन (सं० क्ली०) पौनरुक्त्य, तकरार-अलफ़ाज़।

आम्रेड़ित (सं० त्रि०) आ-म्रेड़ उन्मादे क्त-इट्, आङ् पूर्वोऽसमक्तत्भाषणे। १ पुनरुक्त, दोहराया या बार बार कहा हुआ। 'आम्रेडितं द्विस्त्रिरुक्तम्।' (अमर) (क्ली०) आम्रेडितं भर्त्सने। पा ८।१।९५। २ पौनरुक्त्य, दोहराव, तकरार।

आम्ल (सं० पु०) १ तिन्तिड़ी, इमलीका पेड़। २ अम्लवेतस, अमलबेत। ३ अम्लरस, खटाई। यह पाचन, रुच्य, लघु, पित्त-कफ-प्रद, लेखन, उष्ण, क्लेदन, बाह्य शीतस्पर्शताकर एवं वात-नाशकर होता और अत्यन्त सेवनसे तिमिर, दाह, तृष्णा, भ्रम, ज्वर, कण्डू, पाण्डुरोग, विसर्प, स्फोट तथा कुष्ठ उपजाता है। (वैद्यकनिघण्टु)

आम्लका (सं० स्त्री०) नागरदेश-प्रसिद्ध पलाशी लता, एक बेल।

आम्लटक (सं० पु०) चुक्रक्षुप, चूक, तुर्शेका झाड़।

आम्लपञ्चक (सं० क्ली०) अम्लरसयुक्त फलपञ्चक, पांच खट्टे फलोंका जख़ीरा। कोल, दाड़िम, वृक्षाम्ल, चुक्रिका एवं अम्लवेतस अथवा जम्बीर, नारङ्ग, अम्लवेतस, तिन्तिड़ी तथा बीजपूरक नामक पांच खट्टे फलोंको आम्लपञ्चक कहते हैं। (राजनिघण्टु)

आम्लपत्रक (सं० पु०) चुक्रा, चूक, तुर्शा।

आम्लपत्री (सं० स्त्री०) पलाशी लता। यह नागरदेशमें पलाशी और काश्मीरमें शटी कहाती है।

आम्लपित्त (सं० क्ली०) स्वनामख्यात रोग विशेष, मेदेका खट्टापन। अम्लपित्त देखो।

आम्लफल (सं० क्ली०) कपित्थ फल, कैथा।

आम्ललोटिका (सं० स्त्री०) क्षुद्र चिञ्चा, छोटी इमली।

आम्ललोणिका (सं० स्त्री०) अम्ललोणिका, सेह, चलमोरी।

आम्लवक्त्रत्व (सं० क्ली०) पित्त-जन्य रोग-विशेष, जर्द-आबसे पैदा होनेवाली बीमारी। इससे मुंह खट्टा पड़ जाता है।

आम्लवती (सं० स्त्री०) अम्ललोणिका, अमलोनिया।

आम्लवर्ग, अम्लवर्ग देखो।

आम्लवल्ली (सं० स्त्री०) लता विशेष, एक खट्टी बेल। महाराष्ट्रमें आंवटवेल नाम प्रसिद्ध है। यह दीपन, तीक्ष्णाम्ल एवं रुचिद होती और कफ, शूल, गुल्म, वात तथा प्लीहाको खो देती है। (वैद्यकनिघण्टु)

आम्लवास्तुक (सं० पु०) चुक्रिका, तुर्शा, चूक।

आम्लवेतस (सं० पु०) आम्लो अम्लरसयुक्तो वेतसः, शाक० तत्। १ अम्लवेतस वृक्ष, अमलबेतका पेड़। अम्लवेतस और अमलबेत देखो।

आम्लवेतसक (सं० पु०) स्वार्थे संज्ञायां वा कन्। तिन्तिड़ीवृक्ष, इमलीका पेड़।

आम्ला (सं० स्त्री०) आ सम्यक् अम्लो रसो यस्याः। १ तिन्तिड़ी वृक्ष, इमलीका पेड़। २ लिङ्गिनी लता, एक बेल। ३ शीवल्ली, एक कंटीली बेल।

आम्लातक (सं० पु०) आम्रातक, आमड़ा।

आम्लातकी (सं० स्त्री०) पलाशी लता, किर्मदाना, किर्मिज़-फ़रङ्गी।

आम्लानीक (सं० पु० पीतझिण्टी क्षुप, पीले फलका झाड़।

आम्लिका (सं० स्त्री०) आम्लमनोज्ञादित्वाद्भावे वुञ्। १ अम्लोद्गार, मेदेकी खटाई। २ तिन्तिड़ी वृक्ष, इमलीका पेड़। 'तिन्तिड़ी त्वाम्लिका चिञ्चा तिन्तिड़ीका कपिप्रिया।' (वाचस्पति)

आम्ली, आम्लिका देखो।

आय (सं० पु०) आ-इण्-अच् वा अय-घञ्। १ लाभ, फ़ायदा। २ धनागम, आमद। ३ ज्योतिषोक्त लग्न एवं राशिसे एकादश स्थान, ग्यारहां कमरो

मसकन। ४ वनितागार-पालक, जनानेका नाज़िर। कर्मणि अच्-घञ्। ५ ज़मींदारीसे स्वामिप्राप्त धनादि, ज़मींदारीकी आमदनी।

"ततस्य: सदोत्थाय पद्मे दायव्ययौ स्वयम्।" (याज्ञवल्क्य)
'ग्रामेषु स्वामिग्राह्यो भाग आयः।' (सिद्धान्तकौमुदी)

आयःशूलिक (सं० त्रि०) अयः शूलेनार्थान् अन्विच्छति:, अयः-शूल-ठक्। अयः शूलदण्डाजिनाभ्यां ठकठञौ। पा ५।२।७६। 'तीक्ष्ण उपायोऽयःशूलं तेनान्विच्छति आयःशूलिकः साहसिकः।' (सिद्धान्तकौमुदी) 'आयःशूलिकः यो मृदुनोपायेनान्वेष्टव्यानर्थान् रभसेनान्विच्छति।' (महाभाष्य) १ तीक्ष्ण कर्म द्वारा अर्थकर, लठके ज़ोरसे रुपया लानेवाला। (पु०) २ साहसिक पुरुष, रुपया पैदा करनेके लिये सर फोड़नेवाला आदमी। (स्त्री०) आयःशूलिकी।

आय जाना (हिं० क्रि०) आ जाना, पहुंचना।

"आय गये बगमेल धरहु धरहु धावहु सुभट।
यथा विलोकि अकेल बाल रविहि घेरत दनुज॥" (तुलसी)

आयजि (वै० त्रि०) अभिमुखेन इज्यते, आ-यज औणादिक इ प्रत्ययः। आयष्टव्य, सर्वतो यज्ञसाधन, चारो ओरसे यज्ञ करनेवाला। "आयजी वाजसातमा।" (ऋक् १।२८।६)

आयजिष्ठ (वै० त्रि०) देवताके सम्मुख यागका विषयीभूत। "होतारमस्यायजिष्ठः।" (ऋक् १।१२७।१) 'आयजिष्ठ आभिमुख्येन देवानां यष्टृतमः।' (सायण)

आयज्यु (वै० त्रि०) १ लाभ उठानेकी चेष्टा करनेवाला, जो हासिल करनेमें लगा हो। २ यज्ञ करनेको तत्पर, जो यज्ञ करना चाहता हो।

आयत् (सं० त्रि०) आगमन करनेवाला, जो आ रहा हो। (स्त्री०) आयती।

आयत (सं० त्रि०) आ-यम-क्त, अनुनासिक लोपः। १ विस्तृत, दीर्घ, तवील, दराज़, लम्बा। आ-यम कर्मणि क्त। २ आकृष्ट, खिंचा हुआ। ३ दृढ़, मज़बूत। ४ नियमित, बक़ायदा। (पु०) १ ज्यामितिका दीर्घ-चतुरस्र आकार, तक़वीर-उल्क़दसकी शक्ल मुस्ततील। (अ० स्त्री०) ६ इञ्जील या क़ुरान्‌की बात।

आयतच्छदा (सं० स्त्री०) आयतो दीर्घच्छदः पत्रं यस्याः, बहुव्री०। कदलीक्षुप, केलेकी झाड़ी।

आयतन (सं० क्ली०) आयतन्ते धर्मार्थं साधवोऽत्र, आ-यत आधारे ल्युट्। १ अधिष्ठान, बुनियाद। २ आश्रय, सहारा। ३ हेतु, सबब। ४ विश्रामस्थान, आरामगाह। ५ मठ, मन्दिर। ६ चबूतरा। ७ धान्य-संग्रहस्थान, खिरमन, खलियान। ८ रोगनिदान, बीमारीका सबब। ९ यज्ञस्थान। वेदमें आयतन दो प्रकारका होता है,—पृथिवी और अन्तरीक्ष। शरत्, अनुष्टुप्, एकविंशतिस्तोम एवं वैराजसाम, पृथिवी और हेमन्त, पंक्ति, त्रिणवस्तोम तथा शाक्वरसाम अन्तरीक्षका आयतन है। १० अवच्छेदक, मुहद्दस। ११ प्रतिमा, शक्ल। १२ बौद्ध-मतोक्त षड़ेन्द्रियस्थान, छः अन्दरूनी निशस्तगाह। चक्षु, कर्ण, नासिका, जिह्वा, समस्त शरीर और मनको भोट देशके बौद्ध आयतन कहते हैं। किसी-किसीने पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय, मन और बुद्धिको मिलाकर द्वादश आयतन माने हैं,—

"अर्थानुपार्ज्य बहुशो द्वादशायतनानि वै।
परित: पूजनीयानि किमन्यैरिह पूजितै:॥
ज्ञानेन्द्रियाणि पञ्चैव तथा कर्मेन्द्रियाणि च।
मनो बुद्धिरिति प्रोक्तं द्वादशायतनं बुधैः॥" (बोधिचित्तविवरण)

फिर दूसरे मतमें—

"दुःखं संसारिण: स्कन्धास्ते च पञ्च प्रकीर्तिता:।
विज्ञानं वेदनासंज्ञा संस्कारो रूपमेव च॥
पञ्चेन्द्रियाणि शब्दाद्या विषया: पञ्चमानसम्।
धर्मायतनमेतानि द्वादशायतनानि तु॥" (विवेकविलास)

जैनशास्त्रानुसार—"सम्यक्त्वादिगुणानामायतनं गृहमावास आश्रय आधारकरणं निमित्तमायतनं भण्यते" (बृहद्द्रव्यसंग्रह) अर्थात् आत्माको संसारसे मुक्त करनेवाले सम्यग्दर्शन (वास्तविक पदार्थोंमें श्रद्धा न करना), सम्यग्ज्ञान (समस्त पदार्थोंकी विपरीतता, अनध्यवसाय और संशयरहित ज्ञान होना), सम्यक्चारित्र (संसारके दुःखोंसे भयभीत हो सांसारिक कार्योंके परित्यागपूर्वक सुतपका तपना) ये तीन कारण हैं। इनके आश्रयभूत जो पदार्थ हैं, उन्हें आयतन कहते हैं। और ऐसे आयतन छः हैं—सुदेव, सुशास्त्र, सुगुरु, सुदेवाराधक, सुशास्त्राराधक और सुगुरुसमाराधक। सर्वज्ञ, वीत-

राग, मोक्षमार्गोपदेष्टा निर्दोष देवको सच्चा देव, सच्चेदेव द्वारा उपदिष्ट वादियोंद्वारा अखंडनीय मोक्ष-मार्गके बतलानेवाले शास्त्रको सुशास्त्र, सुशास्त्रके अनुसार मोक्षमार्गके ऊपर चलानेवाले तपस्वीको सुगुरु और इन तीनोंके माननेवालेको आराधक कहते हैं।

आयतनत्व (सं० क्ली०) वेदी वा संस्थान होनेका भाव, मज़बा या निशस्तगाह होनेका तौर।

आयतनवत् (सं० त्रि०) संस्थानयुक्त, निशस्तगाह रखनेवाला। (पु०) आयतनवान्। (स्त्री०) आयतनवती।

आयतनवान् (सं० पु०) ब्रह्माका चतुर्थ पाद।

आयतपत्रा (सं० स्त्री०) कदलीवृक्ष, केलेकी झाड़ी।

आयतपत्री, आयतपत्रा देखो।

आयतस्तु (सं० पु०) आयतं स्तौति, आयत-स्तु दीर्घः। क्विब्वचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च। पा ३।२।१७८ वार्तिक। आयतस्तावक, सनाख्वान्, लम्बी-चौड़ी तारीफ़ करनेवाला शख्स।

आयताक्ष (सं० त्रि०) विस्तृत नेत्र वा दीर्घ नयन-च्छद रखनेवाला, जिसके बड़ी आंख या लम्बा पपोटा रहे।

आयतापाङ्ग (सं० त्रि०) दीर्घ कोण-युक्त नयन रखने-वाला, जिसके लम्बे गोशेका चश्म रहे।

आयतायति (सं० स्त्री०) विस्तृत सातत्य, तवील सबात, दूर-दराज़ आख़िरत।

आयतार्ध (सं० पु०) ज्यामितिके दीर्घ चतुरस्र आकारका अर्ध भाग, तहरीर उक्लैदसकी मुस्ततीलका आधा हिस्सा।

आयति (सं० स्त्री०) आ-या-क्तिन्। १ उत्तरकाल, आयन्दा ज़माना। २ आगमन, आमद। ३ प्रभाव, असर। ४ फलदानकाल, नतीजा देनेका वक्त। ५ आयाम, तूल, पन्ना। ६ संयम, दिलको दबाना। ७ सङ्गम, मुलाक़ात। 'आयतिस्तु स्त्रियां दैर्घ्ये प्रभावागामिकालयोः।' (मेदिनी) ८ प्रापण, क़बूलियत। ९ मेरुकन्याभेद, मेरुकी एक बेटी। (विष्णुपुराण)

आयतिमत् (सं० त्रि०) १ विस्तृत, तवील। २ प्रभाव-शाली, असीम। ३ संयमशील, अपने दिलपर क़ाबू रखनेवाला। (पु०) आयतिमान्। (स्त्री०) आयति-मती।

आयता (वै० स्त्री०) आ-यती प्रयत्ने इन्। वाहु, बाज़ू।

आयतीगव (वै० अव्य०) आयन्ति गावोऽत्र, तिष्ठद्गु प्र० अव्ययी०। तिष्ठद्गु प्रभृतीनि च। पा २।१।१७। गोष्ठसे गौके आगमनकाल, हारसे मवेशियोंके घर आते वक्त।

आयतीसम (सं० अव्य०) आयन्ति समा अत्र, तिष्ठद्गु प्र० अव्ययी०। वत्सके आगमनकाल, बछड़ेके आते वक्त।

आयत्त (सं० त्रि०) आ-यत-क्त। अधीन, वशीभूत, मातहत। 'अधीनो निघ्न आयत्तोऽस्वच्छन्दो गृह्यकोऽप्यसौ।' (अमर)

आयत्तता (सं० स्त्री०) अधीनता, इताअत।

आयत्तत्व (सं० क्ली०) आयत्तता देखो।

आयत्ति (सं० स्त्री०) आ-यत-क्तिन्। १ स्नेह, मुहब्बत। २ वशित्व, इताअत। ३ सामर्थ्य, ताक़त। ४ प्रभाव, अज़मत। ५ सीमा, हद्द। ६ शयन, ख़्वाब। ७ उपाय, तदबीर। ८ द्वन्द्व। 'आयत्तिस्तु स्त्रियां स्नेहे वशित्वे वासरे बले।' (मेदिनी) ९ दिन, रोज़। १० भविष्यत्-काल, आयन्दा ज़माना। ११ सन्मार्गका सातत्य, चालचलनकी मज़बूती।

आयथातथ्य (सं० क्ली०) न यथातथं तस्य भावः, नञ्-तत्, ष्यञ् वा पूर्वपदस्य वृद्धिः। अनौचित्य, नामुनासिबत।

आयद (फा० वि०) १ अवतीर्ण, उतरा हुआ। २ योग्य, क़ाबिल।

आयद होना (हिं० क्रि०) १ उतरना, आ बैठना, पड़ना। २ अधीन बनना, ताबेमें आना।

आयद्वसु (वै० त्रि०) वसु प्राप्त करनेवाला, जिसके पास सामान् पहुंचे।

आयन (वै० क्ली०) अयनमेव, स्वार्थे अण्; आ अयनम्, प्रादि समा० वा। १ सम्यक् आगमन, खासी आमद। "आयने ते परायणे दूर्वा रोहन्तु पुष्पिणीः।" (ऋक् १०।१४२।८) "आयने [illegible]।" (सायण) (त्रि०) अयनसम्बन्धीय, अयन। २ अयनसम्बन्धी, [illegible]

सरतान्‌से ताल्लुक रखनेवाला। (हिं० पु०) ३ गवादिका स्तन, बाख्।

आयनवलना (सं० स्त्री०) क्रान्तिमण्डलको सामयिक परिवृत्तिवलना, अयन-सम्बन्धी विचलन, खुत-मोतदिलुल-नहार और रासुल-सरतान्‌का टेढ़ापन। वलना दो प्रकार है, आक्ष और आयन। ग्रहणगणनामें दोनो प्रकारको वलनाजांच लेना चाहिये। नतज्याको अक्षज्या द्वारा गुणन और फलको त्रिज्यासे हरण करनेपर जो अङ्क आता, वही आक्षवलनाज्या कहाता है। इस ज्यासे सम्बन्ध रखनेवाले चाप भागके निकल आनेपर आक्षवलनांश ठीक होता अर्थात् वही चापभाग आक्षवलनांश ठहरता है। इसी प्रकार जिस ज्योतिष्ककी ग्रहण-गणना आवश्यक आती, उसीके स्थानको जांच हो जाती है। फिर निर्णीत स्थानमें तीन राशि अर्थात् ९० अंश मिलाकर गिनी जानेवाली क्रान्ति ही आयनवलना है। (सूर्यसिद्धान्त)

पाश्चात्य ज्योतिर्विद् कहता, कि ज्योतिष्कगणको क्रान्तिगणना द्वारा समानुक्रमणिका बनानेसे लम्बके अनुसार कार्य करनेपर सुभीता बैठता; क्योंकि उसमें उत्तर एवं दक्षिण भेदका प्रयोजन नहीं पड़ता। वलना शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

आयन्ता, आयन्तृ देखो।

आयन्ती-पायन्ती (हिं० स्त्री०) १ सरहाना-पायताना, ऊंचा-नीचा, ऐताना-पैताना। (क्रि० वि०) २ ऊपर-नीचे, चढ़-उतरकर।

आयन्तृ (वै० पु०) बांधने या उठानेवाला। सायणने इसका अर्थ आनेवाला लगाया है।

आयमन (सं० क्ली०) आ-यम-ल्युट्। १ विस्तार, फैलाव। णिच्-ल्युट्। २ नियमन, पाबन्दी। ३ दृढ़ एवं सङ्कुचित वस्तुका आकर्षण-पूर्वक दीर्घीकरण, खैंचतान। "यथा दृढ़स्य धनुष आयमनम्।" (छान्दोग्य उ० १।३।५)

आयमा (अ० स्त्री०) निष्करभूमि, माफी जमीन्। यह इमाम या मुल्लाको मिलती और मालगुजारीसे बरी रहती है।

आयम्य (सं० त्रि०) १ विस्तार्य, फैलने क़ाबिल। २ संयमयोग्य, रोका जानेवाला। (अव्य०) ३ विस्तार या संयमपूर्वक, फैला या रोककर।

आयर्लैण्ड—एक युरोपीय द्वीप। यह अक्षा० ५१° २६′ से ५५° २१° उ० और द्राघि० ५°२५′ से १०° ३०′ पू० तक विस्तृत है। उत्तर, दक्षिण एवं पश्चिम आटलाण्टिक महासागर और पूर्वमें नार्थ चानेल, आयिरिस सागर तथा सेण्ट जार्ज चानेल है। क्षेत्रफल ३२५३१ वर्गमील पड़ता है। चार प्रदेश और बत्तीस जिला है। बड़ा पहाड़ देखनेमें नहीं आता। प्रधान नगर और बन्दरका नाम डबलिन है। मध्यकी समतलभूमि उत्तर और पूर्वके पर्वतको विभाग करती है। नदी पूर्व और पश्चिम बहती है। ह्रद बहुत और जलवायु अच्छा है। भूमि अधिक उर्वरा है। खनिज द्रव्य बहुत कम निकलता है। ऊन, लिनेन्, रेशम और रुईका काम बनता है। आयर्लैण्ड ग्रेटब्रिटेनके संयुक्त राज्यका एक भाग है। भाषा प्रधानतः अंगरेजी है। प्रायः सन् १४५० ई०के समय लोगोंने तांबेको काममें लाना सीखा था। पहले अग्नि, सूर्य, कूप तथा वृक्षको पूजा होते रही। अब ईसाई धर्म फैल गया है। कोई-कोई पाश्चात्यपण्डित आयर्लैण्डको पुराणोक्त 'स्वर्णप्रस्थ' ठहराता है। पहले सोने और चांदीको यहां खानि रही।*

इतिहास—आयर्लैण्डके आदिम अधिवासियोंका हाल जानना कठिन है। ऐतिहासिकोंने जो कुछ लिखा, वह कथा-कहानीके ही आधारपर खड़ा है। कौन बता सका, सन् १८५३ ई०से पहले आयर्लैण्डका क्या भाव रहा! लोग कहते, सन् ई०से पांच-छः शताब्द पहले ग्विडेल नामक आक्रमणकारी आये थे। भाषा केलटिक रही। वर्तमान समय कोनाटों और मनष्टेरियोंमें केलटिक भिन्न आकार मिलनेसे ग्विडेलोंका आदिम अधिवासियोंके साथ विवाहादि सम्बन्ध रखना प्रमाणित होता है। आदिम अधिवासियोंकी भाषाका सन्धान नहीं लगता। सम्भवतः ग्विडेलोंने ही अलष्टर, लीन्ष्टर, कोनाट, पूर्व मनष्टर और पश्चिम मनष्टर विभाग बनाया था। फिर सन्

* (Asiatic Researches. Vol. VII. p. 205.)

ई०से तीन और पांच शताब्दके बीच दक्षिण-पूर्व आयर्लैण्डमें ग्रेटब्रटेनसे बेलजिक लोगोंका आकर बसना जाना जाता है। बेलजिक लोहेका काम बनाते तथा गाल-प्रान्ततक व्यापार चलाते थे। स्काट-लैण्डसे पिक्ट लोगोंने भी धावा मार अल्स्टर और द्वीप पर अधिकार जमा लिया। आक्रमणका समय निर्धारित नहीं होता। ग्रीक और रोमक लेखकोंने भी कथा-कहानीकी ही बात दोहरायी है। स्ट्रेबोके मतसे आयर्लैण्डके लोग जङ्गली और राक्षस रहे, विवाहादि सम्बन्ध समझते न थे। सोलिनस सुन्दर गोचरोंको सराहते, किन्तु अधिवासियोंको असभ्य और युद्धप्रिय बताते हैं। विजेता अपने शत्रुका रक्त पीकर मुंहमें लपेट लेते और भला बुरा जानते न थे। किन्तु टोलेमीने मनापी कासी, इवेरनो, वेल्लबोरी, गङ्गनी, औतिनी, नागनाती, अर्दिनी, वेनिनो, रोबोगदो, दारिनी, वोलन्ती, कोरोंदी आदि सोलह प्रकारके लोगोंकी बात कही है। इवेरनो विदेशियोंके साथ व्यापार करते थे। उन्हींके इवेरियो नामसे आयर्लैण्ड शब्द बना है।

कथा-कहानियोंमें सन् ई०के ९वें शताब्द कितने ही लोगोंका आयर्लैण्ड आना-जाना सुनते हैं। प्रथमतः मध्य यूनानसे पारथोलनके अधीन बहुतसे लोग आकर डबलिन प्रान्तमें बसे थे। किन्तु तीन सौ वर्ष बाद सबके सब महामारीमें मर मिटे। तल्लघ्त स्थानमें पुरानी लाशें मिली हैं। पिछे सीदियाके नेमेद नौ सौ वीर ले आ पहुंचे और फोमोरियन नामक समुद्रदस्युवोंसे खूब लड़े-भिड़े। टोरी द्वीपमें उनका क़िला बना था। बड़े कष्टके बाद नमेदियोंने शत्रुको जीता और क़िला तोड़ा। किन्तु फोमोरियनोंको अफ़रीक़ासे सेनासामग्री मिल गयी। दूसरे युद्धमें दोनो दल प्रायः नष्ट हुये थे। तीस नेमेदीय भागकर बचे, जिनमें तीन नेमेदके अपत्य रहे। सिमनब्रेक नामक नेमेदके अपत्य यूनान जा पहुंचे। वहां उनका वंश इतना बढ़ा, कि यूनानियोंने निर्भय हो सबको गुलाम बना डाला था। अधिक दशा बिगड़नेपर उन्होंने यूनान-से भाग आयर्लैण्डमें आ आश्रय लिया। अतः-पर वही इतिहासमें बोल्ग कहाते हैं। उनमें पांच भ्राता नेता रहे, जिन्होंने अलग अलग पांचो प्रान्त अधिकार किये। कीटिङ्ग, माकफिरबिस प्रभृति ग्रन्थकारोंने अपने समय बोल्गोंका रहना बताया, किन्तु जल्पक, कापटिक, पैशुन्य, मुखर, निन्द्य, तुच्छ, जघन्य, अधीर, कठोर और आतिथ्य-विमुख लिखा है। फिर बोल्गोंके बसते-बसते त्वाथ दे दानन नामक दूसरे आक्रामक आ पहुंचे थे। उन्हें भी लोग नेमेदका ही वंशज बताते हैं। वह यूनानसे आये, प्रेतसिद्धिविद्यामें अभ्यास बढ़ाये और अपने साथ सुप्रसिद्ध प्रस्तर-मूर्त्ति लियाफायलके अतिरिक्त दगदेका मुकुट एवं लुगेद लाम्फादका कृपाण तथा शूल लाये थे। लिया-फायल तारामें प्रतिष्ठित किया गया। फिर—बोल्ग नृपति योच्छदके राज्य सौंपनेसे इनकार करनेपर मोयतुरके मैदानमें घोर युद्ध हुआ था। बोल्ग बहुत मरे और जो बचे, वह भागकर अरन, इसले, राथलिन तथा हेब्रायिड्समें जा छिपे। बीस वर्ष बाद त्वाथ देको फोमोरियनोंका सामना पकड़ना पड़ा था। किन्तु मोयतूरके युद्धमें वह बिलकुल हारे और मिलेसियनोंके आनेतक त्वाथ दे शान्ति-पूर्वक शासन करते रहे। अन्तको मिलेडके आठ पुत्र सीदियासे आयलैण्ड जीतने चले थे। त्वाथ देने बहुतोंको मारा-काटा। किन्तु दो बार युद्ध होने बाद मिलेसियन जीते और एवेरफिन्ट एवं एरेमोन नामक दो भाई आधे-आधे आयर्लैण्डके स्वामी बने।

मिलेडके भाई लुगेड दक्षिण-पश्चिम मनष्टरमें राज्य करते थे। कहते, देशीय नृपति रोडेरिकके समयतक मिलेसिय शासन चलाते रहे। एवेरफिण्ड और एरेमोनमें युद्ध होनेसे एवेरफिण्ड मारे गये थे। एरेमोनके ही समय सीदियासे पिक्ट आ पहुंचे। केबर किनचेटने सन् ९० ई०को मिलेसियनोंको निकाल बाहर किया था। परन्तु त्वाथलके सिंहा-समारूढ़ होनेपर उन्हें फिर अधिकार मिला। सन्

२५४-२६६ ई० समय कलाकौशल बढ़ानेवाले कोर-माकका राज्य रहा। अलष्टरके आदिम अधिवासियोंको उल्लिडियन कहते हैं। योचैद मुयिगमडोयिनके पुत्र नियल नोयिगियलाके शासन करते ताराका मिलेसियन राज्य प्रतिष्ठित हुआ था। नियलने विदेशियोंपर चढ़ सेण्ट पाट्रिकको कैद किया। वेल्स, इङ्गलैण्ड और आयिल-अव-मानमें मिले शिला-लेखोंसे उपरोक्त विषय प्रमाणित है।

किन्तु अब लोग नहीं मानते, कि आयर्लेण्डवासी प्रधानत: मिलेसीय हैं। मूर्तिपूजकोंका वृत्तान्त प्राय: अविदित है। हां, कितने ही महापुरुषोंके उपाख्यान सुननेमें आते हैं। किन्तु पवित्र वृक्ष-युक्त कूपों, प्रस्तर-स्तम्भों और अस्त्र-शस्त्रोंपर ऐसे बहुतसे चिह्न मिलते, जिनसे जीवपूजा प्रमाणित होती है। सूर्य और अग्नि भी पूजे जाते थे। अप्सराओंको आयर्लेण्डवासी बड़े आदरकी दृष्टिसे देखते रहे। आज भी उनकी कथा-वार्ता देहाती लोगोंमें हुआ करती है। कितने ही मनुष्य अप्सराओंके साथ व्याहे गये थे। ब्रिजिट कला-कौशल और सौभाग्यकी देवी रहीं। किलडारमें उनके नामपर सदा अग्नि जलता और हेब्रायिडस तथा डोनेगालमें सुभिक्ष होनेके लिये पूजन किया जाता था। क्लिडना और ऐवेल अप्सराओंकी रानी हैं। आना, बोडव और माचा नामक तीन युद्धविषयक देवियोंका बात प्राय: होते रहती है। क्रोम क्रोच देवकी मूर्ति सोने-चांदी की बनी थी। उनकी चारो ओर बारह मूर्तियां पीतलकी रहीं। किसी पुराणमें क्रोम क्रोच आयर्लेण्डीय दस्युमूर्ति कहे गये हैं। सेण्ट पाट्रिकने उक्त मूर्तिको उखाड़ कर फेंक दिया था। उनको गदाका चिह्न आज भी मूर्तिपर अङ्कित है। लोग अधिक धान्य, मधु और दुग्ध पानेके लिये अपने लड़के क्रोम क्रोचके सामने बलि चढ़ाते थे। एक समय दुर्भिक्ष पड़ा। पाद-रियोंने कहा, किसी निरपराध दम्पतीके पुत्रको लाकर तारा देवीपर चढ़ाया और उसका रक्त मृत्तिकामें मिलाया जाता। ड्रूयिड़ पादरियोंका बड़ा मान रहा। वह अभिचारसे मुखपर व्रण मार लोगोंको विक्षिप्त बना और अग्नि तथा रक्त आकाशसे बरसा सकते थे। उन्हें बादलोंको देख और पवित्र काष्ठ-खण्डको उठा आगामी विषय बता देनेका अभिमान रहा। मन्त्र मारनेसे लोग अदृश्य हो जाते थे। आयर्लेण्डवासियोंको वैकुण्ठ होनेका विश्वास था। कोण्डला कायम जीते-जी नावपर चढ़ शान और फेबालके साथ वैकुण्ठ पहुंचे। दलरियादा नृपति मोनगनने मरनेके बाद भेड़िये, हिरण, हंस आदि कई जीवोंका आकार धारण किया था। बूढ़ा आनेपर फिनतान भी कितने ही जीवोंके रूपमें बहुत दिन विद्यमान रहे और अन्तको सन् ई०के ६ठें शताब्द फिर त्वान-माक-केरिलके रूपमें उत्पन्न हुये। किन्तु सन् ई०से ४०० वर्ष पहले आयर्लेण्डमें वेल्स प्रान्तके ईसायी धर्मकी चर्चा आ फैली थी। ४३१ ई०को पेलाज्यूसने ईसायी धर्मका झण्डा आ उड़ाया। उनके मरनेपर सेण्ट-पाट्रिक-विकलो पहुंचे थे। उन्होंने लोगोंको समझा-बुझा गिरजे बनवाये और ईसायी धर्म सिखानेको स्कूल खोलवाये। नृपति लोयिगायर और ड्रूयिड़ पुरोहितने उनका बड़ा विरोध किया। अपना धर्म छोड़ना अस्वीकार करते भी, लोयिगायरके कितने ही सम्बन्धी ईसायी हो गये। आरमाघमें गिरजा सेण्ट-पाट्रिकने बनवा दिया। पहले आयर्लेण्डमें कोई शहर न था। सेण्ट पाट्रिकके मरनेपर ईसायी धर्म ढीला पड़ा और साधु समाजका प्रभाव बढ़ा। साधुगण आयर्लेण्डमें घूमा करते और बड़े आदमियोंके दरवाजे डेरा डालते थे।

सन् ७९५ ई०को नार्थमेनोंने आक्रमण कर लामबेका गिरजा लूटा और जलाया। उस समय प्रान्तिक राज्य आपसमें लड़-झगड़ रहे थे। लोगोंको युद्धविद्या विदित न थी। सम्भवत: पहले पहल नारवेजियनोंने आक्रमण किया। उन्हें माल मारने और आदमियोंको गुलाम बनानेकी आवश्य-कता रही। ८०१ ई०को वह नावपर चढ़ शानोन पहुंच गये थे। ई०के नवें शताब्द मध्य इस द्वीपके प्रत्येक स्थानपर आक्रमणकी धूम रही।

८२० ई०को समय आयर्लेण्डमें नारवीजियन पहुंच डबलिन, मीथ, किलडेर, विकलो, वाटरफोर्ड, किलकेनी और टिपेरेरी प्रान्तमें बस गये। ८३० ई०को टरगेसियस शाही जहाजोंका बेड़ा ले झपट पड़े थे। उन्होंने लाफरीमें किला बनाया और क्लोनमाक्नाइस तथा मीथको विध्वंस किया। आरमाघका मठ दश बार उठाया और गिराया गया था। महन्त और छात्र आक्रमणके भयसे बहुमूल्य ग्रन्थ बगलमें दाब भाग खड़े हुये। टरगेसियसने आयर्लेण्डमें कितने ही नगर बनवाये थे। ८४० ई०को डबलिन, वाटरफोर्ड तथा लायिमरिक तैयार हुआ और इङ्गलेण्ड, फ्रान्स एवं नारवेके साथ व्यापार चला। ८४४ ई०में टरगेसियसको मायलसेकलेनने कैद कर डुबा दिया और दो वर्ष बाद उनके साथी डोमरायरको भी वध किया था। ८३३से ८४५ ई०तक मन्ष्टरके नृपति तथा काशेलके पादरी फेडिलमिडने आयर्लेण्डका कितना ही भाग लूटा और कुछ दिन आरमाघके पादरीका अधिकार अपने हाथमें लिया। ८४८ ई०को दक्षिण इङ्गलेण्डसे एक डेनिश जहाजी बेड़ा डबलिनमें आ पहुंचा था। पहले तो नारवीजियनों और डेन्सोंमें मेल रहा, किन्तु दो वर्ष बाद डेन्सोंने डबलिनपर आक्रमण मारा। ८५१ ई०को कारलिङ्गफोर्ड लोफमें ३ दिन युद्ध होने बाद डेन्सोंको विकिङ्गोंने डबलिनसे भगा दिया। ८ वें शताब्दके आरम्भसे मध्यतक अनेक स्त्री कैद हो जानेपर आयर्लेण्डके अधिवासियों और आक्रमणकारियोंमें विवाहादि सम्बन्ध बढ़ गया था। इससे वर्णसङ्कर जाति उत्पन्न हुई। इस जातिके लोग गालोवे कहाते और समुद्रमें लूटमार किया करते थे। इन्होंने ईसायी धर्म छोड़ मूर्तिपूजाका आश्रय लिया। ढला हुआ सिक्का न रहनेसे विदेशीय व्यापार बढ़ न सका था। स्थान-स्थान पर सामयिक मेला होते और उसमें वस्त्र, आभूषणादि खरीदा जाते रहा। परन्तु शीघ्र ही स्काण्डिनेविय नगरोंमें सिक्का ढलने लगा, व्यापार बढ़ा और फेमिङ्ग, इटालीय आदि व्यवसायियोंका दल आ बसा। इन्हीं स्काण्डिनेविय व्यवसायियों द्वारा ११वें एवं १२वें शताब्द अवशिष्ट युरोपके साथ आयर्लेण्डका सम्बन्ध जुड़ गया था। उपरोक्त विषयका प्रमाण कितने ही नगर और स्वयं इस द्वीपके आयर्लेण्ड नाममें मिला, जो स्काण्डिनेविय शब्दसे निकला है। आयरिश लोग स्काण्डिनेविय फौजमें भरती होते थे।

मनष्टरकी बड़ी जाति एलिल ओलम, काशेल इवोगन और क्लेयरकी डालकेसिय कोरमाक कासरे उत्पन्न हुई है। १०१४ ई०के गुडफ्रायिडेको क्लोण्टार्फका भीषण युद्ध बढ़ा था। कुछ देर घमासान होने बाद नार्स दलके पैर उखड़ गये। मायेल-सेकलेन डबलिनको भागे थे। दोनों ओरके कितने ही सरदार काम आये। ब्रियन अपने मूरचद और मायेलमोर्दा पुत्रके साथ मर मिटे थे। हार कर भी नार्समेनोंने अपने अधिकृत नगर न छोड़े और धीरे-धीरे आयर्लेण्डवासी बन गये। डालकेसिय फौजके अधिक निर्बल हो जानेसे मायेलसेकलेनको फिर आयर्लेण्डका सिंहासन मिला था।

सन् १०२२ ई०को मायेलसेकलेनकी मृत्यु हुई। १०६४ ई० समय ब्रियनके पुत्र डोनचदका प्रभाव बहुत बढ़ा था। उन्होंने आधे आयर्लेण्डको जीत अपने पिताका पद पाया। ११०२ ई०को मागनस बारेफुटने पश्चिमकी ओर इस द्वीपको जीतनेके लिये धावा मारा था। किन्तु म्यरचेरटाकने बड़ी फौजके साथ उनका विरोध किया। अन्तको सन्धि होनेपर मागनसका विवाह आयिरिश-राजकुमारी बियाडम्युनके साथ हुआ था।

लीनष्टर-नृपति डियारमायिटका जन्म-सम्बन्ध विदेशियोंसे बहुत मिलते रहा। सन् ११५२ ई०को टोरडेलवाक ओकोनोरसे ब्रेयिफन नृपति टिगेरननको सिंहासनसे उतार ओरोरकको पत्नी डेरवफोरगायिलको पकड़ ले गये।

ईसायी धर्म प्रतिष्ठित होते भी विवाहादि सम्बन्धमें बड़ा गड़बड़ रहा। लोग धन देकर स्त्री व्याह लेते थे। साधारण स्त्री भी लड़का होनेसे पत्नीके समान स्वामीपर स्वत्व रखते रही। वर्णसङ्कर पुत्र स्वजातीयोंसे अलग

समझा जाता न था। टिरोनके राजा ह्यूग-ओनील उपरोक्त विषयका उदाहरण हैं।

सन् ११५५ ई०को सालिसबरीके जोह्न २य हेनरी नृपतिका सन्देश ले ४र्थ पोप एड्रियनके पास आयर्लैण्ड आये थे। पोपने उत्तरमें यहांका पैतृक अधिकार उन्हें सौंपने कहा और प्रतिष्ठापनका चिह्न-स्वरूप अङ्गुरीयक भी साथ ही भेज दिया। ११६६ ई०को डियारमायिट-माक-मुरक्कद प्रजापीड़नके कारण लीन्ष्टरसे सिंहासनच्युत हुये और अपना पद फिर पानेके लिये हेनरीके पास पहुंचे थे। फ्रान्सीसियोंसे लड़ते भी राजाने अवसर पा डेरमोडको इङ्गलैण्डमें फौज तैयार करनेकी आज्ञा दी। इसी-तरह लीन्ष्टरमें सज धज और अपनी प्रजासे धन ले डेरमोड ब्रिष्टोल रिचार्ड-डी-क्लारसे साहाय्य मांगने गये। वेल्समें भी उन्होंने राबर्ट-फिटज-ष्टेफेन और मौरिस-फिटजजेराल्डसे आयर्लैण्डपर चढ़ायी करने-का वचन लिया। ११६८ ई०को १ली मईको फिटजष्टेफेन कुछ सेना ले वेक्सफोर्डमें आ उतरे और दूसरे दिन मौरिसडेप्रेनडेरगाष्ट भी सदलबल उसी जगह पहुंच गये। डेरमोडके उनके साथ रहने पर वेक्सफोर्डके डेन्सोंने शीघ्र ही वश्यताको स्वीकार किया। प्रायः एक वत्सर पीछे रेमोण्ड-ले-ग्रोसको अर्ल रिचार्ड ने अपनी अग्रगामी सेनाके साथ भेजा था। ११७० ई०को २३वीं अगस्तको स्वयं अर्ल रिचार्ड २०० वीर और १००० दूसरे सिपाही ले वाटरफोर्ड पहुंच गये। अल्प समय उन्होंने वेरिनमें डेरमोडके सिंहासनच्युत किये जानेका बदला लेनेको युद्ध ठाना और विजय पानेपर डेरमोडने अपनी कन्याका हाथ उन्हें पकड़ा दिया। नर्मान नेताओंमें अधिक सम्बन्ध-सूत्रसे ग्रथित थे। कितने ही दक्षिण वेल्स नृपति रिस-आप-टूडोरकी कन्या और १म हेनरीकी पत्नी नेष्टाके वंशज रहे। नेष्टाकी कन्या अङ्गारेथ विलियम-डे-बारीको व्याही थीं। उन्हींसे आयर्लैण्डके बारोस उत्पन्न हुये। रेमोण्ड-ले-ग्रोस, हेरवी-डे-मोण्टमोरेन्सी और कोजाग्स भी नेष्टाके वंशज रहे। वह उनके द्वितीय पति ष्टेफेन-दी-काष्टेलानसे उत्पन्न हुये थे।

सन् ११८५ ई०को प्रिंस जोह्न वाटरफोर्डमें जहाजसे आ उतरे और सरदार उनका सम्मान करनेको आगे आये। २य हेनरीने ह्यूघ डेलासीको ८०००० एकर भूमि दे डाली थी। अपने भ्राता १म रिचार्डके समय जानके प्रधान कर्मचारी पेमब्रोक-अधिपति विलियम मारशालाने अर्ल-रिचार्ड या ष्ट्रोङ्गबोको कन्याको व्याह लीनष्टर पर अपना स्वत्व जमाया। १२१० ई०को जोह्न नृपतिने कौनौटराज काथाल क्रोवडेर्ग ओकोनोरके साथ वाटरफोर्डसे डबलिनको राह कारिकफेरगुस पर धावा मारा, किन्तु ट्रिमसे आगे क़दम न बढ़ाया। १२१३ ई०को उन्होंने अपना अधिकार पोपको सौंप दिया था।

सन् १२१७ ई०को १४वीं जनवरीको ३य हेनरीने ओक्सफोर्डसे अपने कर्मचारी जिवोफरे-डी-मारिसकोको लिख भेजा, कोई आयर्लैण्डवासी गिरजेमें रखा न जाता। किन्तु १२२४ ई०को ३य होनोरियसने उपरोक्त आज्ञा अनुचित बताकर उठा दी। फिर १३३३ ई०में अलष्टरके नव अधिपति विलियम-डे-बुर्घको माण्डेविलेस आदिने वध किया।

३य एडवार्डके विदेशीय युद्धमें लगे रहनेसे आयर्लैण्डवासी लिसाट ओमोरने लोक्सपर फिर अपना अधिकार जमा लिया था। मारिस फिटजगेराल्ड डेसमोण्डके अधिपति बने और उन्हींके तीन भाइयोंसे ह्वाइट, ग्लिन और केरी नाइटोंके वंश चले।

६ष्ठ हेनरीके प्रधान कर्मचारी सर जोह्न टालबोटने ट्रिमने पारलियामेण्ट बैठा आयर्लैण्डमें रहनेवाले सब अंगरेजोंको मूछ रखनेकी आज्ञा दी। इससे आयिरिश जाति विभिन्न मालूम पड़ती थी।

सन् १४४९ ई०को योर्कराज रिचार्डके आयर्लैण्डमें प्रधान कर्मचारीका पद पाते समय आयर्लैण्डवासी जाक-काडने विद्रोह बढ़ाया। १४५० ई०को रिचार्ड इङ्गलैण्ड वापस और ओरमोण्ड तथा व्योफोर्टके अधिपति जेम्सको राज्य सौंप गये। जेम्स और किलडार कुलमें पीढ़ियों झगड़ा चला था। रिचार्डने फिर डबलिनमें आ स्वातन्त्र्य पाया, नया सिक्का ढाला और अंगरेजी पारलियामेण्टको भङ्गभङ्ग किया।

विलियम आवेरी रिचार्डको बन्दी करने आये थे। किन्तु वह स्वयं शत्रुके हाथ पड़ फांसी पर चढ़ाये गये। टोटोनके भीषण युद्धक्षेत्रमें ओरमोण्डको अंगरेज़ोंने बन्दी बना लिया था। उनका मस्तक बहुत दिनतक लण्डनके पुलपर लटकते रहा। डेसमोण्डने एलिजाबेथको प्रसन्न करनेके लिये उपद्रव उठानेपर प्राणदण्ड पाया था।

३य रिचार्डके शासनकाल आयिरिश योरकिष्टोंके प्रधान किलडार-अधिपतिका प्रभाव बढ़ा। किन्तु ष्टोकके युद्धमें एङ्गलो-आयिरिश सिपाहियोंके सरदार खेत आये थे। ७म हेनरीके राजत्वकाल वाटरफोर्ड-वाले नागरिक क्रोनमेल, कालान, फेथार्ड और बुटलरके सम्बन्धियोंसे मिल हथियार बांधनेको तैयार हुये। ड्रोगहेडाकी पारलियामेण्टसे अंगरेज़ी कौन्सिलने आयर्लेण्डके कानून् बनानेका काम पाया था। ८म हेनरीने भोगविलास और विदेशीय साहसमें निमग्न रहनेसे आयर्लेण्डपर ध्यान न दिया। राजकीय प्रभाव पेल नामक प्रान्तमें ही सीमाबद्ध रहा। कीलडार-अधिपतिका राजासे भी अधिक बल बढ़ गया था। एङ्गलो-नारमन सरदार नीच-वर्णोंके राजा हुये। इन्हें लोग आयिरिश जातिके मनुष्य कहने लगे थे। सन् १५३४ ई०को हेनरीने राज्यका भार अपने हाथ उठाया और डबलिनको किलडारवालोंके आवेष्टनसे छोड़ाया। किन्तु उनका राज्य १० कोससे अधिक विस्तृत न था। दूसरी जगह अंगरेज़ भी आयिरिश भाषा और रीतिनीतिका अवलम्बन करते रहे। माकमुरोघ कावानाघ वार्षिक-वृत्ति राजधनागारसे पाते, जिन्हें आयर्लेण्डवासी राजा डेरमोडका प्रतिनिधि बताते थे। किन्तु हेनरीने आयर्लेण्डके नृपतिकी चाल ढाल पकड़ी और पोपके लिये राज्य करनेकी बात उठ गयी। सेलरिक और विरोधी दोनो दलके लोग दरबार करने लगे थे। उस समय कितने ही साधारण लोग प्रधानपुरुष बन बैठे। इन्होंसे स्केफिङ्गटन, ग्रावाजोन, सेण्ट लेजर, फिटज विलियम, बिङ्गफीलड, बेलिनघाम कारु, बिनघाम, लोफटुस और अन्यान्य आयर्लेण्डके वंश चले हैं। केल्टोंमें ओनील और ओब्रीन क्रमागत टिरोन एवं थोमोण्डके अधिपति लण्डनसे जाकर बन आये थे। ओडोनोलके वंशज टिरोनेलके सरदार कहाये। मिथ्यावर्णवाले प्रधान माकविलियम, क्लानरीकार्डके नायक माने गये।

सन् १५६० ई०के आरम्भमें एक पारलियामेण्ट लगा था। उसने हेनरी और एडवर्डकी पौरोहित्य-सम्बन्धी आज्ञा बहाल कर दी। एलिजाबेथका राज्य रहा। उनके पिताने टिरोनका आधिपत्य अपने कल्पित पुत्र मैथूको सौंपा, जो डनगेनोनका वाली बना और कारीगरकी औरतका लड़का रहा। माता पतिके जीते उसे डनडाल्कसे कोन अपने-लड़के-जैसा लायी थी। किन्तु राजपुत्र शानने बालिग होनेपर यह प्रबन्ध अस्वीकार किया और पिताको उससे अनभिज्ञ बताया। टिरोनके मरनेपर डनगेनन अधिपति एवं मैथूपुत्र ब्रियान ओनीलने उनकी सम्पत्ति पानेका खल देखाया। परन्तु शान चुने गये थे। ओनील स्वजातियोंके बीच प्रधान एवं अधिपति और शानके धर्मपुत्र निर्वाचित हुये। लार्ड लेफटीनेण्टने दो बार शानको वध करनेकी ठानी थी। १५६६ ई०को विप्लव बढ़नेपर रानीने वीर सिड़नीको तलवार पकड़ायी और शानने पीछे हटते-हटते माकडोनेल्सोंके हाथ अपनी जान गंवायी थी। शीघ्र ही दक्षिणमें उपद्रव उठनेपर फिर हलचल पड़ गयी। डेसमोण्डके अधिपति बलवेका बीज बोनेसे छः वर्ष लण्डनमें नज़रबन्द रहे। उन्होंने निकल भागनेकी चेष्टा लगायी थी। पकड़े जानेपर एलिजाबेथने उनकी भूमि स्वाधिकार-भुक्त की। अवसर देखकर अंगरेज-साहसिकोंने पश्चिम-मनष्टरके अर्धभागमें अंगरेज़ी जङ्गी अड्डा ग्रेनोनसे कोर्क बन्दरतक लगाना चाहा। ओरमोण्डके भाइयोंको उखाड़ पखाड़ और उनकी सम्पूर्ण सम्पत्ति छीन सर पेटेरने बटलरोंको बलवा करनेपर भड़का दिया था। अन्तको बुटलर शान्त हुये, किन्तु कारलोके अंगरेज़ी नायक कारुका विरोध करते रहे। दोनो ओरसे बड़ा अत्याचार चला। सर पेटेरको मनष्टरका भी अच्छीतरह खल प्राप्त न था,

कोर्कसे उनका अनुयायी दल भगाया गया। फिर सर जोह्न पेरोट मनष्टारके प्रेसिडेण्ट बने थे। उन्होंने जेमस् फिट्जगेराल्डको पर्वतोंपर हटाया, सब जगह किला तोड़ा और बलवाइयोंको साहाय्य देनेवाली फौजका काम तमाम किया। अलष्टारमें भी इसीतरह विप्लव बढ़ा था। एसेक्स्-अधिपति वालटेयार-डेवेरे-उक्सने धोकेसे सर ब्रयान ओनीलको पकड़ लिया और उनके साथियोंको बध किया। राथलिनमें समग्र स्काच मार डाले गये थे। किन्तु ऐसेक्स अत्यन्त गर्हित भावसे मरे। तीन वर्ष लड़ने-भिड़ने बाद साथियोंने उन्हें छोड़ दिया था।

१५७५ ई०के अन्त सिड्नेय फिर प्रधान राज-प्रतिनिधि बने और धड़ाधड़ एक जगहसे दूसरी जगह पहुंचने लगे। मनष्टारमें एक वर्षके बीच सर विलियम-ड्रूरीने ४०० आदमियोंको फांसी दी थी। फिर सर निकोलास-मालवीयने कोनाट-बारकेसोंको मारते समय लड़के-बुड्ढे किसीको न छोड़ा और सब मकान एवं सामान जला दिया। डेसमोण्डसोंने बड़ा उद्योग लगानेको विचारा था। धर्मयुद्धकी घोषणा हुई। फिट्जमरिस् थोड़े साथी ले केरीमें आ उतरे थे। साथमें सुप्रसिद्ध निकोलास-सनडार्स भी रहे। उन्हें पोपने दूत बना और आशीर्वादात्मक ध्वज पकड़ा भेजा था। कास्टलेकोनेलके समीप युद्ध होनेपर फिट्ज-मरिस् खेत आये, किन्तु सनडार्स और डेसमोण्डसके भाई लड़ते रहे। अन्तको डेसमोण्डने तलवार उठायी थी। रातको उन्होंने अंगरेजी नगर योघल पर आक्रमणकर लोगोंको मार डाला। सचेत होनेपर एलिजाबेथने ओरमोण्डको मनष्टारका सेनापति बना युद्ध करने भेजा था। वाटलर गेरालडिनों और राजभक्त विप्लवकारियोंसे लड़ते रहे। १५८० ई०को विकलोमें लार्ड वालटिन्ग्लासने उपद्रव उठाया। ग्लेनमालूरमें लार्ड ग्रे-डा-विलटोन पूर्ण रीतिसे परास्त हुये थे। स्मेरविकमें इटालियों और स्पानियार्डोंका एक दल आ उतरा। ग्रे उधरको जा पड़े थे। युद्धमें विदेशियोंने आत्मसमर्पण किया, किन्तु सबको तल-वारका पानी पीना पड़ा। स्पेन्सर और राइले विद्यमान रहे। १५८१ ई०को सनडार्स गुप्त रीतिसे विनष्ट हुये और १५८३ ई०को केरी पर्वतके युद्धमें डेसमोण्ड भी मारे गये। इसके उपलक्षमें पांच लाख एकर आयिरिश भूमि सरकारने सर्वस्वदण्ड की थी। युद्धकी भीषणताका वर्णन हो नहीं सकता। ओरमोण्डने कुछ ही मासमें ५००० मनुष्योंको प्राण-दण्ड दिया था। दुर्भिक्षने कृपाणसे अधिक काम किया। अतिजीवी चल न सकते थे। वह जङ्गलों और घाटियोंसे घिसट-घिसट कर बाहर निकले।

१५८४ ई०को ह्युघ-ओ'नीलने टिरोनके कुछ भागका आधिपत्य पाया था। १५८७ ई०को वह समग्र टिरोनके अधिपति और १५९३ ई०को सभी जातिके प्रधान बने। सरकारसे उनका झगड़ा किसी तरह रुक न सकता था। ह्युघ रो ओडोनेलके योग देनेपर अलष्टर सरकारके विपक्षमें खड़ा हो गया। १५९८ ई०को फिट्ज-टमास-फिट्जगेराल्डने डेस-मोण्डका उपाधि ग्रहण किया था। आयर्लेण्डके दोनो सिरे शीघ्र ही विप्लवसे भभकने लगे और डेसमोण्ड प्रान्तमें सेक्सनोंके मुंह देखनेको न मिले। एडमण्ड-स्पेन्सरने अपना सर्वस्व खोया और भागकर लण्डनको दुर्गप्राकारमें प्राणपरित्याग किया। टिरोनने अपना अधिकार बढ़ाया, येलोफोर्डके युद्धमें सर हेनरी-बाग-नालको हराया, मनष्टारपर धावा लगाया और लार्ड बेरीमोरका प्रान्त जा ढहाया था। टिरोनके मित्र ह्युघ-रो-ओडोनेलने कोनोट-प्रेसिडेण्ट सर कोनयर्स-क्लिफोर्डको जा उखाड़ा। १५९९ ई०को ऐसेक्स-अधिपति रबार्ट डेवेरेउक्स बड़ी सेनाके साथ आये, किन्तु टिरोन उन्हें कर-बल-छलसे नीचे लाये थे। उन्होंने सेनापतिका पद छोड़ पागलकी चाल पकड़ी और अन्तको फांसी पायी। १६०० ई०को सर जार्ज-केरुके मनष्टारका प्रेसिडेण्ट बननेपर बलवा शीघ्र दब गया था। चार्लस्-ब्लाउण्ट ऐसेक्सका उत्तराधिकार पाकर केरुके साथ हुये और किन-सेलमें उतरनेवाले स्पानियार्ड हारकर सरकारके हाथ लगे। सेना नष्ट-भ्रष्ट होनेसे प्रजा भी दब गयी थी। इसीतरह एलिजाबेथने आयर्लेण्ड जीत लिया।

महारानीने डबलिनमें जो विश्वविद्यालय प्रतिष्ठित कराया था, उससे लोगोंने अच्छा फल पाया।

१६०३ ई०को १म जेम्स्के सिंहासनारूढ़ होनेपर लोगोंने सोचा था,—इनसे आयर्लण्डका उपकार होगा। यह दोनो आयर्लैण्डवासी और स्काच हैं। किन्तु अधिपतियोंके उपद्रव उठानेसे केल्टोंकी बात बिगड़ गयी।

१६३५ ई०को १म चार्लसके राजत्वकाल लार्ड डेपुटी ष्ट्राफोर्ड लोगोंसे ज़बर्दस्ती रुपया वसूल करने लगे। कोनाट और मनष्टरके ज़मीन्दार अधिक धन देनेपर वाध्य हुये। आयिरिश जातिसे रुपया वसूल कर स्काच और इङ्गरेज लोगोंके दबानेको फौज रखनेमें खर्च किया जाता था। रोमन काथोलिकोंको दुःख वा सुख कुछ भी न मिला। प्रधान उसष्टरके साथ बारह पादरियोंने विपक्षमें आन्दोलन कर कहा था—दारिद्रका भार सहना महापाप है। ष्ट्राफोर्डको फांसी दी और फौजकी तलवार छीन ली गयी। १६४१ ई०को काथोलिक राजद्रोहियोंने सारा देश अपने हाथ किया, केवल डबलिन बच गया। उनका विचार प्रोटेष्टाण्टोंको निर्वासित करनेका था। कितने ही प्रोटेष्टाण्ट बड़े निर्दय भावसे वध किये गये। १६४२ ई०को अंगरेजोंमे जेनेराल रवार्ट मोनरोके अधीन अलष्टार फौज भेज इसका बदला लिया था। किन्तु मोनरोके हारते भी कोई फल न हुआ। १६४५ ई०को रेनुसिनी पोपकी ओरसे आयर्लैण्डके स्वत्वाधिकारी बनकर आये थे। उन्होंने केल्टोंको साथ दिया। १६४७ ई०के जुलाई मास पारलियामेण्टवालोंने आरमोण्डसे डबलिन छीन लिया था। १६४८ ई०को क्रोमवेल अपनी सेना ले रणक्षेत्रमें उतरे। उन्होंने हरे-भरे खेत काट छिपकर लड़नेवालोंको भूखों मार डाला था। ४० हज़ार लोग निर्वासित किये और शानोनमें कृषिकर्म करनेको ज़बरदस्ती आयिरिश काथोलिक कृषक भेजे गये। लड़नेवाले सिपाहियोंको लूटका कितना ही माल मिला। सिपाहियोंके अपनी जायदाद बेच जानेसे अफसर राजा बने थे। आयिरिश कर्मजीवी उपनिवेशकोंके साथ रहे। शान्ति फिर प्रतिष्ठित हो गयी थी। १७७८ ई०को ग्राहानने आयर्लैण्डकी जातीयता मान ली।

१७९८ ई०को थिवोबाल्ड-वोल्फे-टोनने फिर विप्लव बढ़ाया था। उसके शान्त होते ही आयर्लैण्ड ग्रेटब्रिटेनमें मिलाया गया। १८०३ ई०को रवार्ट एमिटने शिर उठाया, किन्तु कोई फल पाया न था। इसके बाद काथोलिकोंके करसे निस्तार पानेका विवाद बढ़ा। रोमन कायालिक विशप होनेको लोगोंने आन्दोलन किया था। सबके स्वीकृत होनेपर भी डानोयेल-ओकोनलने विरोध किया। अन्तको १८३८ ई०में करकी व्यवस्था पास हो गयी। कर उठा देनेका आन्दोलन भी चला न था।

१८५८ ई०को विदित हुआ,—जोहन ओमाहोनीने अमेरिकामें फोनिक्स-द्रोह दहकाया था। इङ्गलेण्डमें इससे लोगोंपर अत्याचार होने लगे। १८६९ ई०को आयिरिश चर्च तोड़ा और १८७० ई०को भूमिप्रश्न मरोड़ा गया। किन्तु इससे आयर्लैण्डका आन्दोलन दब न सका। १८७४ ई०को होमरूलका पक्ष भी प्रबल पड़ा। १८८१ ई०को कृषिपर बहुतसे भीषण अत्याचार हुये थे। प्रायः मवेशियोंके निर्दय भावसे मारे जानेपर इङ्गलैण्डमें हाहाकार छा गया, परन्तु सरकारने ध्यान देना अनुचित समझा। सन्देहजनक लोगोंके कोयेर्सन-कानूनसे पकड़े जानेपर कोई फल निकला न था। अमेरिकासे लगातार रुपया मिलनेपर अत्याचार चलते रहा। ग्लाडष्टोनने पूर्ण रूपसे नीति बदल देनेकी ठानी थी। १८८२ ई०को २री मईको आयिरिश सरदारकी इच्छाके विरुद्ध पारलियामेण्टके पारनेल, डिलटोन और ओकेली नामक सभासद बन्धनसे मुक्त किये गये। बेदखली पीछा हिसाब पानेसे छूटी थी। इसे किलमेनहाम-सन्धि कहते थे। लार्ड कोयेर और फोरष्टरने उसी समय पदत्याग किया। उनका उत्तराधिकार पा ६ठीं मईको लार्ड स्पेन्सर और लार्ड फ्रेडेरिक कावेण्डिस डबलिन पहुंचे थे। उसी सन्ध्याको फीनिक्स उद्यानमें

लार्ड फ्रेडेरिक और उपमन्त्री टमास-हेनरी-बर्क मार डाले गये। बधके लिये अङ्ग काटनेवाली छुरियां चली थीं। घातकोंकी छाया भी कोई देख न सका। फिर अभियोगमें साक्ष्य देनेका शपथ उठानेवाले फील्ड नामक व्यवसायी पर भी उसी घातकदलने आक्रमण किया था। उनके कई आघात आये, किन्तु उन्होंने भागकर अपने प्राण बचाये। उन्होंने घातकोंके गाड़ीवान्को पहचान लिया था। इसीसे राजद्रोहका पता लगा। डब-लिन-कारपोरेशनके सभ्य और घातकदलके प्रधान उपायज्ञ जेमृस् केरिने कहा,—'फ्रीमान्स जार्नाल' नामक समाचारपत्रमें एक लेख निकलते ही 'मुझे डबलिन किलेके अफसरोंको एक सिरेसे बध करनेकी आज्ञा मिली थी। साक्ष्यसे विदित हुआ, कि फोरष्टरको वध करनेकी भी कई बार पहले चेष्टा चली रही। बीस अभियुक्तोंमें पांचको फांसी और बाकीको दीर्घ बन्धनका दण्ड मिला। जुलाई मास केरि जहाज़पर चढ़ दक्षिण अफरीकाको रवाना हुये थे। किन्तु राहमें ही पाद्रिक ओडा-नेलने उन्हें मार डाला। घातक अभियुक्त बन लण्डन आया और सन् १८८३ ई०की १७वीं दिसम्बरको प्राणदण्ड पाया था।

राजनीतिसे काम निकलते न देख १८८६ ई०को फिर राजद्रोहका डङ्का बजा। लोगोंकी इच्छा थी, कि मालगुजारी कृषकोंके अनुमति-अनुसार दी जाती। सन् १८८७ ई०को सर एम-हिक्स्-बीचके पद-त्यागने और मिष्टर आर्थार बालफोरके प्रधान मन्त्री बननेपर 'क्रायिमस एक्ट' अर्थात् अपराध करनेसे दण्ड मिलनेका क़ानून् पास हुआ और उपद्रव उठाने-वालोंका कार्य ढीला पड़ा। अन्तको नाशनाल-लीग अर्थात् जातीय-दल तोड़ा गया था। धीरे-धीरे आयर्लैण्डमें शान्ति विराजने लगी। किन्तु सन् १८८७ ई०के सितम्बर मास फिर मिचेल्स टौनमें विप्लव बढ़ा था। पुलिसने गोलीसे दो मनुष्योंको मारा। मिष्टर हेनरी लाबोयर और मिष्टर ब्रूनर पार्लियामेण्टके दोनो सदस्य पुलिसके विरुद्ध और होमरूलके पक्षमें थे। सन् १८९३ ई०को 'होमरूल-बिल' क़ानून् चला, जिससे इम्पीरियल पारलियामेण्टमें एकसौ तीनके स्थान आयिरिश सदस्यगण अस्सी ही रह गया। किन्तु ग्रेटब्रटेनके सम्बन्धमें किसीको मत प्रकाश करनेका अधिकार मिला न था। जातीयदलने आक्षेपकर कहा,—यह क़ानून् आयर्लैण्डको बन्धनमें रखना चाहता है। गत १९१६ ई०को सिनफीन दलने बड़े वेगसे विद्रोह बढ़ाया था। किन्तु अंगरेज-सरकार-की दूरदृष्टि और उद्योगितासे शीघ्र शान्त हो गया।

आयल्लक (सं० पु०) आ-या-शतृ आयत् तं आयन्तं आगच्छन्तं लाति गृह्णाति, आयत्-ला-क संज्ञायां कन्। उत्कण्ठा, इज़्तिराब, बेकली।

आयवन (वै० क्ली) चलानेका चमस, चमचा।

आयवस (वै० पु०) १ गोचरभूमि, चरागाह। २ वेदोक्त एक राजा। "भयोराश आयवसस्य जिष्णोः।" (ऋक् १।१२२।१५) 'आयवसस्य सर्वतः प्राप्तान्नस्य एतन्नाम्नो राज्ञः।' (सायण)

आयस (सं० त्रि०) अयसो विकारः, अण्। १ लौह-मय, आहनी। २ लौहमय अस्त्रशस्त्र वा कवचसे सज्जित, आहनी हथियार बांधने या लोहेका बख्तर पहननेवाला। "आयच्छया वाहुर्वैत्रमायसमधारयो।"(ऋक् १।५२।८) 'आयसः अयोमयकवचयुक्तदेहः।' (सायण) अय एव, स्वार्थे अण्। ३ तीक्ष्ण लौह, इस्पात। ४ सामान्य लौह, मामूली लोहा। ५ आयुध, हथियार। ६ लौह-निर्मित वस्तुमात्र, लोहेकी चीज़। ७ वायुयन्त्र, औज़ार-हवा।

आयसमल (सं० क्ली०) १ मण्डुर लौह, जङ्ग। २ लौहमल, लोहेका कीट।

आयसी (सं० स्त्री०) अङ्गरक्षिणी, बदनका बख्तर, छातीका तवा। 'जालिका त्वङ्गरक्षिणी। जालप्रायायसी।' (हेम)

आयसु (हिं० पु०) आज्ञा, इजाजत, हुक्म।

"आयसु दीनह सखी सयानी।
निज समाज ले गयीं सयानी॥" (तुलसी)

यह शब्द 'आदेश'का अपभ्रंश मालम होता है।

आयस्कार (सं० पु०) अयस्कार एव, स्वार्थे अण्। १ लौहकार, लोहार। २ हस्तीकी जङ्घाका ऊर्ध्व भाग, हाथीकी रान्का ऊपरी हिस्सा।

आयस्त (सं० त्रि०) आ-यस्-क्त। १ क्षिप्त, फेंका हुआ। २ दुःखित, तकलीफ़ज़दा। ३ प्रतिहत, चोट खाये हुआ। ४ तीक्ष्णीकृत, पैनाया हुआ। ५ आयास-युक्त, कोशिश करनेवाला। ६ क्रुद्ध, नाराज़। 'आयस्तः क्षेपिते तेजिते हते। क्रुद्धे क्लिष्टेऽपि।' (हेम)

आयस्थान (सं० क्ली०) ६-तत्। लाभस्थान, राजाके शुल्क ग्रहणका स्थान, मणि प्रभृतिका आकरस्थान, आमदनीकी जगह।

आयस्थूण (सं० त्रि०) अयोमयी स्थूणा लौहप्रतिमा गृहस्तम्भो वा यस्य स अयस्थूणः तस्यापत्यम्, अण्। शिवादिभ्योऽण्। पा ४।१।११२। अयस्थूणसे उत्पन्न, जो अयस्थूनसे पैदा हो। (स्त्री०) आयस्थूणी। "अयस्थूणायान्तेवासिन उक्तोवाचापि।" (बृहदारण्यक-उ०)

आयस्यत् (सं० त्रि०) आ दिवा० यसु यत्ने शत्र। यत्न-विशिष्ट,तदबीर लड़ानेवाला। "अथायस्यन् कषायाय:।"(भट्टि)

आया (हिं० क्रि०) १ उपस्थित हुआ, जो पहुंचा हो। यह शब्द 'आना' क्रियाका भूतकाल है। (पोर्तगीज स्त्री०) २ धात्री, धाय, बालकोंको दुग्ध पिलाने और खेलानेवाली स्त्री। (फ़ा० अव्य०) ३ वा, कोई, जौनसा, क्या।

आयाकोट—मलबार प्रदेशका एक नगर। यह अक्षा० १०° ३६′ १५″ उ० और द्राघि० ७६° २१′ १५″ पू० पर अवस्थित है। यहां सेण्ट-टमास आकर उतरे थे। नगर अतिप्राचीन है।

आयाचित (सं० त्रि०) आशु निवेदित, ताकीदन् मांगा हुआ।

आयात (सं० त्रि०) १ आगत, आया हुआ। (क्ली०) २ आधिक्य, बहुतायत।

आयाति (सं० पु०) आ-या-क्तिच्। १ हरिवंशोक्त नहुष राजाके चतुर्थ पुत्र, सुप्रसिद्ध ययातिके सहोदर। (स्त्री०) आ-या भावे क्तिन्। २ आगमन, आमद, पहुंच, आवायी।

आयान (सं० क्ली०) आ-या-ल्युट्। १ आगमन, आमद। "अश्विनावामायाने वाजिनीवसू।" ऋक् ८।२२।१८। 'आयाने गृहं प्रति आगमने।' (सायण) २ स्वभाव, आदत। जिसका जो स्वभाव होगा,वह उससे आजीवन नहीं छूटता। इसीसे स्वभावको आयान कहते हैं। (अव्य०) ३ यान-पर्यन्त, रवानगीतक। ४ वाहनपर्यन्त, सवारीतक।

आयापन (सं० क्ली०) आमन्त्रण, तलब, बुलावा।

आयापन्थी—सम्प्रदाय विशेष। इसका विशेष प्रमाण न पाया, किस व्यक्तिने आयापन्थी सम्प्रदाय चलाया था। ब्राह्मणसे अति नीच जाति पर्यन्त इसमें मिले हैं। आयापन्थी आया माताको पूजते हैं। पहले केवल राजपूतानेके असभ्य जाति ही आया माताकी पूजा करते थे। इसका कुछ ठौर-ठीक नहीं, कितने दिनसे आया माताकी पूजा होते आयी है। सन् ई०के १६वें शताब्द यह सम्प्रदाय बहुत बढ़ गया था। राजस्थानमें लिखा है,—१६३५ ई०को राणा उदयसिंह किसी आयापन्थी ब्राह्मणकी कन्याके प्रति अनुरक्त हुये। ब्राह्मणने सुना, कि कन्याका धर्म बिगड़ा था। उस समय वह कन्याको मारनेके लिये यज्ञकुण्ड बना होम करने लगे। कन्याका देह खण्ड-खण्ड उड़ा अपने गावके मांस साथ आयामातापर चढ़ाया था। उन्होंने फिर अभिशाप दिया,—तीन प्रहर, तीन दिन या तीन वत्सरके मध्य उदयसिंह इस पापका प्रतिफल पायें। अन्तको ब्राह्मण ज्वलन्त अग्निमें कूद पड़े थे। अभिशाप विफल न हुआ, निर्धारित समय उदयसिंहका प्राण छूट गया। (Tod's Rajasthan, Vol. II. p. 31.) आयापन्थी ब्राह्मण मद्यमांसादि ग्रहण करते हैं।

आयापाना—वृक्षविशेष, किसी क़िस्मका पेड़। Eupotorium ayapana. अमेरिकासे यह वृक्ष भारतवर्ष आया है। सूखा पत्ता और डण्ठल औषधमें पड़ता है। गुण घर्मजनक और बलकर है। मरिच शहरमें यह चायकी पत्तीके बदले काम देता और अमेरिकामें पुरातन ज्वरपर चलता है।

आयाम (सं० पु०) आ-यम-घञ्। १ दैर्घ्य, लम्बान। 'दैर्घ्यमायाम आरोहः।' (अमर) "षट्चतुर्दशलायामविस्तारोन्नति-शालिनी।" (शारदाति०) ह्रस्व एवं दीर्घ महत्तत्त्वके अन्त-र्भूत रहनेसे सांख्यवादी अणु तथा महत् दो प्रकारका आयाम मानते हैं। वैशेषिकोंके मतमें चार आयाम हैं,—स्थूल, अणु, ह्रस्व और दीर्घ। यह अण

महदादिकी तरह गुण एवं गुणी उभय वाची नहीं, केवल गुणमात्रवाची होते हैं। आ-यम-णिच्-अच्। यस आयामः। पा ३।१।१६। २ नियम, क़ायदा। "प्राणायामवयं कृत्वा कल्पमुत्थाय वे दिजः।" (मनु) ३ वातरोगभेद, बावकी एक बीमारी। यह दो प्रकारका होता है,— अभ्यन्तरायाम और वाह्यान्तरायाम। ४ असङ्कुचिताग्र-देश व्रणका दीर्घकरण, ज़ख़्मके मुंहका बढ़ाया जाना।

आयामकाञ्जिक (सं० क्ली०) काञ्जिकभेद, किसी क़िस्मकी कांजी। निस्तुष दर-दलित यव ८ शरावक ६४ शरावक जलमें उबाल १६ शरावक रहनेसे मण्ड निकाल ले। फिर यह मण्ड, ८ शरावक यवशक्तु और ६४ मध्यविध मूलक ६४ शरावक जलमें डाल एकत्र करे। उसे यवक्षारादिक प्रत्येक पलद्वय और पिप्पल्यादि प्रत्येक पलमित छोड़ विशुद्ध घटमें पञ्चदश दिन यावत् रखनेसे आयामकाञ्जिक बनता है। इसे ग्रहणी अधिकारपर देनेसे उपकार होता है। (भैषज्यरत्नावली)

आयास (सं० पु०) आ-यस्-घञ्। १ अतियत्न, कोशिश, दौड़-धूप।

"आयासशतलब्धस्य प्राणेभ्योऽपि गरीयसः।
एकैव गतिरर्थस्य दानमन्या विपत्तयः॥" (स्मृति)

२ श्रान्ति, सुस्ती, मांदगी।

आयासक (सं० त्रि०) आ-यस-ण्वुल्। १ आयासयुक्त, कोशिश करनेवाला। आ-यस-णिच्-ण्वुल्। २ आयास-जनक, सुस्ती लानेवाला, जो थका डालता हो।

आयासिन् (सं० त्रि०) आयस्यति, आ-यस्-णिनि। १ यत्नवान्, मशक़्क़ती। २ श्रान्त, सुस्त, थका-मांदा। (पु०) आयासी। (स्त्री०) आयासिनी।

आयिन् (सं० त्रि०) आ-योऽस्यस्य, इनि। लाभ-युक्त, आमदनीवाला। (पु०) आयी। (स्त्री०) आयिनी।

आयिन्दा (फ़ा० वि०) १ आगामी, आनेवाला। (क्रि० वि०) २ भविष्यत्में, आगे। फ़ारसीमें, भविष्यत्कालको ज़माना-आयिन्दा कहते हैं।

आयिन्दा-रविन्दा (फ़ा० पु०) पान्थ, अध्वनीन, मुसा-फ़िर, राही।

आयिये (हिं० क्रि०) पधारिये, तशरीफ़ लाइये। यह शब्द आना क्रियाकी आज्ञाका सम्मान-सूचक रूप है। साधारण रीतिसे कहनेमें 'आवो' होता है।

आयिसलेण्ड—अर्थात् तुषारद्वीप। आटलाण्टिक महासागरके उत्तरांशमें अवस्थित एक द्वीप। आय-तन ४०४३७ वर्ग मील है। सैकड़े पीछे ८३ अंश अधित्यका और अवशिष्ट निम्नभूमि है। यह द्वीप पश्चिम और दक्षिण भागमें ही विस्तृत है। उक्त भूमिका अधिकांश आग्नेय-गिरि और हिम-भूमिसे पूर्ण है। उद्भिद्का चिह्नतक नहीं, जलका कहां ठिकाना है! किन्तु उसमें जो ह्रद आदि पड़ा, वह मत्स्यसे भरा है। ५१७० वर्ग मील भूमि चिरतुषारसे मण्डित है। समुद्र जलपर १२००से ४००० फ़ीट चढ़नेमें बर्फ़की सीमा मिलती है।

मरकर फ़ाज़ोट, अजरसा, आयलकुसा और छोटी-छोटी दूसरी नदीसे आयिसलेण्डका जल बहकर समुद्रमें पहुंचता है। निम्न भूमि और पर्वतमालाके मध्यवर्ती नीचे प्रदेशपर आंधीमें विकीर्ण वालुकाकण एवं क्षुद्र-क्षुद्र प्रस्तरखण्डसे आकाश छा जाता है। उस समय अधिवासियोंको बड़ा कष्ट होता है। १०७ आग्नेयगिरि है। अश्कजा आग्नेय-गिरि सर्वापेक्षा वृहत् है। १८७५ ई०को अग्न्युत्पातसे उसका भस्म दूरवर्ती ष्टकहल्म शहरतक पहुंचा था। यह भस्म शस्यादिके पक्षमें बहुत ही अनिष्टकर होता है। १७८३ ई०को स्कैपटरलकी आग्नेयगिरिके प्रथम एवं शेष उत्पातसे सैकड़े पीछे ५३ गृहपालित पशु, ७७ घोड़े, ८२ भेड़ और २० आदमी मरे थे। १८४५ ई० तक हेकला आग्नेयगिरिके सर्वसमेत अठा-रह बार अग्न्युद्गिरणका समाचार मिला है। भूमिकम्प प्रायः हुआ करता है। उससे भी समय-समय अत्यन्त क्षति पहुंचती है। आयिसलेण्डके प्रत्येकांशमें उष्ण जलके निर्झर वर्त्तमान हैं। किन्तु दक्षिण-पश्चिम भागमें उनकी संख्या अधिक है। फिर उसी स्थानपर विख्यात गेसार प्रस्रवण है। गन्धक, रेग, मट्टी और कार्बोलिक एसिडके झरने आग्नेयगिरि-प्रदेशमें स्थान-स्थान पर देख पड़ते हैं। मेक्सिको उपसागरका

उष्णप्रवाह आने और शीत कुछ कम पड़नेसे दक्षिण तथा पश्चिम प्रदेश वासयोग्य बना है।

समझ नहीं सकते, एकान्त दारुण शीत, बालुकावृष्टि, आग्नेयगिरिके भीषण उत्पात और प्रचण्ड भूमिकम्पसे जो कष्ट पाते, वह लोग कैसे रहते हैं। भारतवर्षमें प्रकृतिकी दयाका शेष नहीं। हम जगन्माताकी साक्षात् अन्नपूर्णा मूर्ति मानो जन्मभूमिमें प्रत्यक्ष देखते हैं। हम माताके प्यारे बालक हैं। सुखमें पालन-पोषण होता है। दुःखमें पलनेसे आयिसलेण्डके लोगोंकी हड्डी कड़ी पड़ जाती है। वह उद्यमशील और शक्तिसम्पन्न हैं।

इतना विशाल द्वीप होते भी आयिसलेण्डकी लोकसंख्या केवल ८४००० अर्थात् मध्यमावस्थामें प्रति वर्ग मील दो आदमीके हिसाबसे पड़ती है। किन्तु पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियां कुछ अधिक हैं। पहले अधिवासी प्रधानतः पशुपालन द्वारा ही जीविका चलाते थे। पीछे वह मत्स्यके व्यवसायसे उन्नत होने लगे। किन्तु शीतकालमें तूफान आनेसे अनेक धीवर नाव डूबनेपर मर जाते हैं। इस व्यवसायमें सैकड़े पीछे तीस अधिवासी नियुक्त हैं। प्रत्येक वत्सर विदेशको लाखों मन मत्स्य-तैल, लवणाक्त मांस, ऊन और चमड़ा भेजा जाता है। भेड़ और घोड़ेकी भी खूब रफ्तनी होती है। १८९८ ई०के हिसाबमें यहां ७३५४४२ अर्थात् मध्यमावस्थामें आदमी पीछे ९ भेड़ रहे। १८९८ ई०को ४४००० अर्थात् दो आदमीमें १ घोड़ा निकला। वनमें बड़ा पेड़ नहीं होता। खेत अकृष्ट हैं। जीवनधारणके लिये विदेशीय शस्यका मुंह देखना पड़ता है। आटा, चीनी, क़हवा, शराब, तम्बाकू, नमक, लकड़ीका तख्ता, कोयला, लोहा और धातुकी दूसरी चीज़ वग़ैरह बाहरसे मंगाते हैं। आजकल आलू और गाजरकी खेती कुछ-कुछ बढ़ी है। फलवृक्षके लिये नहीं ही कहना पड़ेगा। चार कृषिविद्यालय, एक कृषिसमिति और उसकी शाखासभासे खेतीकी उन्नति की जाती है। राजधानी रैकजिफिकमें कितने ही सामुद्रिक बीमा-आफिस और विद्यालय विद्यमान हैं।

प्रचलित मुद्रा, वज़न और माप डेनमार्ककी तरह है। जातीय बाङ्क प्रतिष्ठित है। बड़ी सड़क, रेलपथ और वैद्युतिक आलोककी व्यवस्था कहीं नहीं। घोड़ेकी पीठपर ही माल-असबाब ढोया जाता और लोगोंका आना-जाना होता है। १९११ ई०के अक्तोबर मास एक जातीय विश्वविद्यालय खुला है।

आजकल अनेक विषयकी उन्नति होने लगी है। टेलिफोन द्वारा संवाद चलता है। कई पक्के मार्ग और सेतु बने हैं। खनिजका अनुसन्धान होता है। राजधानीमें कलके पानी और नालेका काम लगा है। दक्षिण एवं पश्चिम ३२° फारिन हीटसे ५०° पर्यन्त तापमानयन्त्रमें उत्ताप चढ़ता है। इसी अक्ष-रेखापर स्थित सायिबेरिया प्रदेशके मध्यवर्ती याकूटस्क नगरमें वायुका उत्ताप ५०° से ६८° तक चढ़ता अर्थात् ग्रीष्मके दिन और शीतकालकी रात्रिमें १०८° का पार्थक्य पड़ता है। किन्तु समुद्र-वेष्टित आयिसलेण्डमें १८° मात्र विभिन्नता देखते हैं। इसका प्रधान कारण पूर्वोक्त मेक्सिको-उपसागरके उष्ण जलस्रोतका आयिसलेण्डके किनारे आना है।

दक्षिण-पश्चिम प्रदेशमें प्रति वत्सर २४ से ४८°४ इञ्च पर्यन्त वृष्टि होती है। परन्तु सायिबेरियामें इसी अक्षरेखा पर ८ इञ्च मात्र पानी बरसता है। आयिसलेण्डमें सबसे छोटे दिनको ३ घण्टे ४८ मिनट सूर्यका प्रकाश रहता है।

आयिसलेण्डमें ४३५ प्रकारके पुष्प और बहुविध उद्भिद्का अस्तित्व मिला है। अनेक स्थलमें वेत्रवन है। ३से १० फोट पर्यन्त बेत बढ़ता है। मकोय जातिके दो प्रकार फल व्यतीत दूसरे फलका वृक्ष नहीं होता। सुभीतेकी जगह राई और उड़दकी खेती करते हैं। बारह सिंगा, लोमड़ी, चूहा, तरह-तरहका हंस, कोई सौ क़िस्मकी समुद्री चिड़िया और समीपवर्त्ती समुद्रमें सील नामका जानवर तथा काड, ह्वेल वग़ैरह मछली देख पड़ती है। उत्तरमेरुसे तुषारके साथ श्वेत भल्लूक कभी कभी बहकर चला आता है। स्तन्यपायी जन्तुकी संख्या विरल है।

८५० ई०को स्काण्डिनेवियाके अधिवासियोंने आयिसलेण्ड आविष्कार किया था। उसी समय नरवेवासी कतिपय सम्भ्रान्त व्यक्ति एवं अनुचरगण और आयर्लेण्डकी रानी आउड़ने आत्मीय स्वजन सहित स्वदेश छोड़ यहां आ उपनिवेश लगाया। उसके बाद जनसंख्या बढ़ने और साधारणतन्त्र चलने पर ९३० ई०को महासभा बनी थी। तदवधि ४०० वत्सर पर्यन्त आयिसलेण्डका अभ्युदयकाल ठहराया जाता है। उस समय यह द्वीप विभिन्न नायकोंके अधिकारमें विभक्त रहा। ईसायी धर्म ग्रहणकर लोग याजक-सम्प्रदाय द्वारा विभिन्न खण्डमें शिक्षा पाते थे। तथापि स्वायत्त-शासन और साधारण-तन्त्रमें सम्मिलित रहे। ई०के १३वें शताब्द जब गाडमण्ड नामक व्यक्तिने याजकोंके अधिकार-सम्बन्धपर विवाद बढ़ाया, तब गृहयुद्ध होने लगा और बड़े-बड़े सरदारोंका वंश बिलकुल मिट गया। कुरुक्षेत्र-युद्धमें ज्ञातिविरोधपर महा वीर सकल और आत्मीय कुटुम्बगणके ध्वंसनाशसे भारत दुर्बल बना था। सर्वत्र ऐसा ही व्यापार है। १२६७ ई०के मध्यभाग आयिसलेण्ड नरवेके अधीन हुआ। स्वायत्त-शासनकाल लोग कितने ही दुर्दान्त, अराजक और स्वेच्छाचार-परायण रहे सही, किन्तु मनुष्योचित कार्य और उन्नति की चेष्टामें किसी प्रकार न्यून न थे। गृहविवादसे शक्तिहीन बन वह परमुखापेक्षी एवं परप्रसादप्रत्याशी और पूर्वका सद्गुण सकल निकल जानेसे शिल्प, वाणिज्य तथा युद्धकार्य भूल निरीह कृषकदलमें परिणत हो गये। उद्यमहीन जनोंके पक्षमें अल्प परिश्रम ही जीवनका लक्ष्य बना। १२८० ई०को नरवे राज्य हाथ आनेसे आयिसलेण्ड भी डेनमार्कके अधीन हुआ था। तदवधि यह द्वीप अधिक पराधीन बन गया। डेनमार्कके लोग नरवेसे आयिसलेण्डकी सन्धिका नियम समस्त न मान मनमाना कर लगाने लगे। १६०२ ई०को राजा ४र्थ खृष्टियानने डेनमार्कमें व्ययके लिये धनका प्रयोजन पड़नेसे यहांका समस्त व्यवसाय राज्यके एकाधिकारपर खींच लिया था। फिर उससे उत्पन्न राजस्व डेनमार्क जाने लगा। खाद्य और प्रयोजनीय द्रव्यजात अग्निमूल्य हो गया था। यदि उस समय हुष्टलके अंगरेज़वणिक् नदियोंमें नावें न लटते और गन्धक, चमड़ा, मछली तथा ऊनके बदले खाद्यद्रव्य न देते, तो कितने ही लोग अनाहार मर जाते। क्रमशः अधिवासियोंकी अवस्था इतनी बिगड़ी, कि १७८७ ई०में डेनमार्कको सरकारको बाध्य हो डेनमार्क और आयिसलेण्डके मध्य बेमहसूल वाणिज्य होनेकी व्यवस्था करनी पड़ी थी।

१७९२ ई०को फरासी-राष्ट्रविप्लवमें फ्रान्स-नृपति १६श लूईका शिर काटा गया। फरासी पण्डितोंने उससे पहले ही लेखनी उठा युरोपमें मनुष्यमात्रके अधिकारपर तुमुल आन्दोलन उपस्थित किया था। आयिसलेण्डके वाणिज्य-नीति-परिवर्तनमें वह भी कुछ कार्यकारी हुआ।

१८४८ ई०को फरासी राष्ट्र-विप्लवसे फिर युरोपमें प्रजादिके अधिकार-सम्बन्धपर तीव्र आन्दोलन उठा था। फरासियोंने उससे राजा लई फिलिपको भगा दिया। इङ्गलेण्डमें कार्नला सम्बन्धीय विद्राहके बाद १८५६ ई०को मिष्टर कबडेनकी प्ररोचनासे स्वाधीन वाणिज्य-नीति बनी थी। किन्तु डेनमार्कमें उसका प्रचलन न रहा। अवस्थाका विशेषत्व देख १८५४ ई०को आयिसलेण्डमें समस्त देशोंसे विनाशुल्क वाणिज्य करनेकी व्यवस्था हुयी। व्यवस्थापत्रपर लिखा गया, प्रकृत पक्षसे जब आयिसलेण्डमें मेष घोटक एवं मत्स्यके अतिरिक्त अन्य वस्तु न उपजे, तब खान-पानके लिये सभी कुछ विदेशसे आयेगा।

ई०के १६वें शताब्दान्त और १७वें शताब्दारम्भमें जलदस्युके अत्याचारसे अधिवासियोंकी अवस्था बहुत शोचनीय हुई थी। १७६५ और १७८१ ई०को शीतला, दुर्भिक्ष, मेषको मृत्यु एवं आग्नेयगिरिके उत्पातसे अधिवासियोंकी दुर्दशा असीम रही। ई०के १८वें शताब्द आयिसलेण्डमें सर्वापेक्षा दुःसमय पड़ा। स्वाधीन व्यवसाय पाकर ही अधिवासी आत्मशासनाधिकारके लिये चीत्कार करने लगे थे।

१८०० ई०से आयिसलेण्डमें एथलिङ्गका अधिवेशन रोका गया। १८४५ ई०का राजा ८म खृष्टानने उसे केवल परामर्श करनेका अधिकार दे फिर जमाया था। नूतन आयिसलेण्डके जन्मदाता कहलानेवाले जोन सिगर्डसन स्वायत्तशासन-आन्दोलनके नेता रहे। १८७४ ई०को उपनिवेशके दशशत सांवत्सरिक उत्सव दिन ही उदारहृदय डेनमार्कराजके आयिसलेण्डको महासभाको आईन-कानून बनानेकी क्षमता देनेसे स्वायत्तशासन पानेके लिये भी धूमधाम कर सके। उत्सवके बाद भी राजाके अधीनस्थ एकजन शासनकर्ता कुछ दिन आयिसलेण्डपर शासन चलाते रहे। १८०४ ई०को आयिसलेण्डका विधिसमूह सम्पूर्ण सुधार, शासनकर्ता एक दायित्व-सम्पन्न मन्त्रीके अधीन बनाये गये। महासभा चालीस सभ्योंसे गठित हुई। आभिजात्य-सम्पन्न अंशमें चौदह और निम्न-साधारण अंशमें छब्बीस लोग रहे।

नौकर-चाकरों और २५ वर्षसे कम उम्रवालोंको मत देनेकी क्षमता उस समय भी मिली न थी। महासभाके चौदह सभ्योंमें आठ महासभा और छः राजकर्तृक मनोनीत हुये। १८११ ई०को महासभा कर्तृक विधिसमूहका शोधन होनेपर ठहराया गया, कि राजाको महासभाके सदस्य नियुक्त करनेका अधिकार न रहा। निम्नश्रेणीके व्यक्तियों और स्त्रियोंको भी मत देनेका स्वत्व मिला था। बिना रक्तपात केवल शिक्षाविस्तार, तथा देशकार्यके उद्यम और संयत आन्दोलनसे आयिसलेण्डने स्वाधीन व्यवसाय, स्वायत्त-शासन और स्त्री-स्वाधीनतादि प्राप्त किया। पराधीन जाति होते भी अधिवासी स्वाधीनताका पूर्ण सुख उठाने लगी। जो जिस अवस्थाके उपयुक्त रहता, भगवान् उसे उसी अवस्थापर पहुंचा देता है।

इस स्थलपर यह कहना आवश्यक है, कि आयिसलेण्डके लाग डेनमार्ककी पारलियामेण्टमें प्रतिनिधि भेज न सके थे। युरोपीय राजनैतिक क्षेत्रमें उनका स्वार्थ विजड़ित नहीं।

१८७४ ई०के प्रवर्तित विधि-अनुसार एलथिङ्ग वोट द्वारा आयिसलेण्डके आयव्ययका हिसाब बनाया जाता है। ८४ हज़ार लोगोंके राज्यमें काम ज्य,दा नहीं होता। इसीसे दो वत्सरमें केवल एक बार अधिवेशन होनेपर दोनो वर्षका हिसाब साथ ही लगता है। जातीय धनागारमें प्रति वर्ष साढ़े चार लाख मुद्रा जमा होता है। देशपर किसी प्रकारका ऋण नहीं। सैनिक वा युद्धपोत-सम्बन्धीय कोई कर देना नहीं पड़ता। अधिवासी स्वेच्छासे आयपर सामान्य परिमाण शुल्क लगा धनियोंसे विलासके द्रव्यजात शराब, तम्बाकू, कहवा चीनी इत्यादिकके व्यवहारोपलक्ष्यमें कुछ राजस्व वसूल कर लिया करते हैं।

१८११ ई०को जोन सिगार्डसनने आयिसलेण्डके पश्चिम भाग प्राचीन वंशमें जन्म लिया था। सुशिक्षा पाकर १८३० ई०को वह आयिसलेण्ड-विशपके मन्त्री हुये। १८३३ ई०को डेनमार्क पहुंच कोपनहेगन विश्वविद्यालयमें इस द्वीपके इतिहास और भाषाकी गवेषणा द्वारा शीघ्र युरोपीय शिक्षित समाजमें उन्होंने ख्याति पायी। प्राचीन आयिसलेण्डके इतिहास और व्यवस्था-संग्रहमें उन्होंने विस्तर परिश्रम किया था। उन जैसा विद्वान् और राजनीतिज्ञ व्यक्ति अद्यापि दूसरा व्यक्ति आयिसलेण्डमें उत्पन्न नहीं हुआ। उन्नतहृदय, दृढ़चरित्र, अध्यवसाय और स्वदेशानुरागके प्रभावसे समग्र अधिवासी उनके अनुगामी बने। डेनमार्क-सरकारके सर्वदा दृढ़ भावसे प्रतिबन्धकताचरण करते भी लोगोंने स्वाधीन वाणिज्य और स्वायत्तशासन पाया है। किसी एक मनुष्यके भी पृथिवीविख्यात होनेपर देशका गौरव बढ़ जाता है। उन्होंने आयिसलेण्डको बिलकुल डेनमार्कसे मिला देनेके प्रस्तावका तीव्र प्रतिवाद किया था। एक संवादपत्रके सम्पादक रूपसे ही वे स्वदेशवासियोंकी सभ्यता और उन्नतिके प्रधान पोषक बने। १८७४ ई०को डेनमार्कराज ७म खृष्टियानके स्वयं आयिसलेण्ड जाकर स्वायत्तशासन देनेसे स्वदेशवासियोंने जोन सिगार्डसनको सर्वप्रकार सम्मान और उपाधि दिया था। वे जीवनके अधिकांश समय कोपनहेगनमें ही रहे।

वहां मरनेपर उनका शव रेकजविक लाया और समग्र देशवासियोंके उद्योगसे समस्मान गाड़ा गया था। समाधिके स्मारकपर लिखा,—The beloved son of Iceland, his honour sword & shield. आयिस लैण्डके प्रियपुत्र, इनका गौरव खड्ग और चर्म था।

१००० ई०को इस द्वीपमें ईसाईधर्म फैला रहा। आजकल आयिसलैण्डवासी मार्टिन-लूथर-प्रवर्तित प्रोटेष्टाण्ट मतके अवलम्बी हैं। धर्मकार्यकी सुविधाके लिये द्वीप २० उपाचार्योंके अधिकार और १४२ गिरजोंके उपचक्रमें विभक्त है। फिर गिरजासे सम्बन्ध रखनेवाले प्रत्येक पल्लीके धर्मकार्यकी व्यवस्था कमिटीसे सम्पन्न होती है। उपाचार्यगणका कार्यपरिदर्शन प्रादेशिक कमिटीके हाथ न्यस्त है। गिरजाका कोई पद खाली होनेपर गवरनर-जनरल बहादुर विशपसे परामर्श ले तीन मनुष्य चुन देते हैं। धर्ममण्डलीके तीनमें एकको मनोनीत करनेपर गवरनर-जनरल बहादुर उसे काम सौंपते हैं। साधारण राजकार्यका विशेष उच्चपद अधिकार-शून्य होनेपर आज भी डेनमार्कके राजा लोक-निर्वाचन करते हैं।

सन् १८४७ ई०को रेकजाविक नगरमें एक धर्मशिक्षाका विद्यालय खुला था। वहां अधिकांश पुरोहित शिक्षा पाते हैं। उनमें कोपनहेगन-विश्वविद्यालयके उपाधिधारी भी कोई कोई रहते हैं।

जनसाधारणके स्वास्थ्यने अधिक उन्नति लाभ की है। विशेषत: बालक-बालिकाकी मृत्युसंख्या बहुत घट गयी है। परिच्छन्नता, अपेक्षाकृत उत्कृष्ट आवासभूमि, खाद्यद्रव्यकी उत्कर्षता और वैद्यों तथा धात्रियोंकी संख्या वृद्धि ही इस उन्नतिका कारण है। १८७६ ई०से एक मेडिकल-स्कूल (चिकित्सा-विद्याशिक्षालय) भी खुला है। इस समय द्वीपके प्रत्येक स्थानमें दो-चार डाक्टर और धात्री विद्यमान हैं। पहले समस्त द्वीप ढूंढनेसे भी एक डाक्टर वा धात्रीका पता लगना कठिन था। अब एक प्रधान चिकित्सकके हाथ द्वीपके स्वास्थ्य, मेडिकल-स्कूल और डाक्टरगणके तत्त्वावधानका भार न्यस्त है। १६ सहकारी, २० प्रादेशिक अस्त्रचिकित्सक और एक नेत्रवैद्य रहते हैं। ४ छोटे हस्पताल और ४ औषधालय प्रतिष्ठित हैं। धात्रियोंको मेडिकल-स्कूलमें कुछ दिन वक्तृता सुनना और रीतिमत शिक्षा देना पड़ता है।

अधिक परिमाणसे उच्च शिक्षाके विद्यालय न खुलते भी मत्स्योपजीवियोंके ग्राम और लोकपूर्ण स्थानमें विद्याचर्चा उत्तम रूपसे फैल गयी है। अनेक समय बालक निज-निज आवासमें ही पढ़-लिख लेते हैं। किसी-किसी स्वल्पप्रज स्थलमें भ्रमणकारी शिक्षक विद्यादान देते हैं। धर्मयाजक सर्वदा संवाद रखनेको वाध्य होते, सकल बालक पढ़-लिख और हिसाब-किताब कर सकते हैं या नहीं। शिक्षा-विस्तारके लिये ही लोकसंख्याको देखते पुस्तक और सामयिक पत्रका प्रचार अत्यन्त अधिक है। मासिकपत्रोंको छोड़ १८ साप्ताहिक संवादपत्र निकलते हैं। रेकजाविकके जातीय पुस्तकागारमें ४०००० मुद्रित पुस्तिका और ३०० हस्तलिपि रक्षित हैं। राजधानीकी लोकसंख्या ६७०० मात्र है। प्राच्य शिल्पविज्ञानकी कितनी ही बहुमूल्य सामग्री संग्रह हुई है। शिक्षित लोगोंकी समितियोंमें साहित्य, प्रजाबन्धु और प्राच्यविज्ञान-समितिका नाम विशेष उल्लेखयोग्य है। युरोप-विख्यात भास्कर थारवल्डसेनकी मूर्ति राजधानीमें शोभित है।

भाषाका नाम आयिसलेण्डिक है। किन्तु ८७४ ई०को नरवेसे आनेवाले उपनिवेशियोंके वंशधर अद्यापि अपनी प्राचीन भाषा ही बोलते हैं। वर्तमान काल नरवे देशमें भाषाका अनेक परिवर्तन और संशोधन हुआ है। विदेशमें रहनेसे लोगोंको अपनी भाषा बहुत प्यारी लगती है। इसीसे उपनिवेशी पितृ-पितामहकी भाषाको अक्षुण्ण रख सके हैं। ऐसी अवस्थापर आयिसलैण्डकी भाषा और साहित्यचर्चा भाषातत्त्वविदोंके अनुसन्धानपक्षमें विशेष सहायक है। स्थानीय भाषा तथा साहित्यचर्चासे इस बातके समझनेको बड़ी सुविधा पड़ी, उत्तर-युरोपके दुर्दान्त योद्धाओंकी भाषा कैसे बनी और किस परिवर्तनसे वर्तमान स्काण्डिनेवियाकी भाषा निकली थी।

यहां सङ्गीतचर्चाका प्राबल्य है। उत्कृष्ट गायक-गायिका बहुत हैं। किन्तु अच्छा कवि कहीं नहीं मिलता। आयिसलेण्डके गीतका स्वर कर्णमें गूंजा करता है। श्रोता अनेक क्षण पर्यन्त उसे भूल नहीं सकता। अन्यान्य देशमें जिस गुणके लिये कविताका आदर होता, वह सभी आयिसलेण्डके गद्य महाकाव्यमें देख पड़ता है। वाल्मीकिके रामायण, होमरके ट्रय वर्णन, एवं राजस्थानीय चारणोंके गीतकी तरह सभ्यताके प्रारम्भकाल (११४०-१२२० ई०) यहांकी गाथामें अपने वीरवृन्दका वीरत्व और नरवे तथा डेनमार्कके नरपतिगणका सार्वांशिक कार्य भाटों द्वारा रचित हो साधारणके आमोद-आह्लाद, समाज और नायकके प्रकोष्ठमें सुनाया जाता था। प्रथम कई एक पुरुष लोगोंके मुंह-मुंह चलने बाद वह लिखा गया। आजकल प्राय: तीन भाग नष्ट होनेसे सौमें चालीस गीत बाकी बचे हैं।

सम्प्रति आयिसलेण्डमें जलप्रपातसे तड़ित् निकाल रेलगाड़ी और कलकारखाना चलानेकी कल्पना लगा रहे हैं। लकड़ी और कोयला न मिलनेपर गैसकी आगसे खाना पकाते और शहरमें रोशनी करते हैं।

साक्षात् सम्बन्धमें डेनमार्क भिन्न अन्य किसी देशको आयिसलेण्डसे डाक नहीं जाती। निर्धारित समय डेनमार्कसे जहाज़ आ और हरेक बन्दरमें ठहर चिट्ठी-पत्री इकट्ठा करता है। डेनमार्कसे फिर उसे डाक विभाग द्वारा पृथिवीमें अन्यत्र भेजते हैं।

आयी (हिं० क्रि०) उपस्थित हुई, आ पहुंची। यह शब्द 'आना' क्रियाका एकवचन सामान्य-भूतका स्त्रीलिङ्ग है। (स्त्री०) आई देखो।

आयी-गयी (हिं० स्त्री०) हानि-लाभ, नफ़ा-नुक़सान्।

आयु (वै० त्रि०) एति गच्छति, इण् गतौ उन्। छन्दसीण:। उण् १।२। १ जीवित, गमनशील, जिन्दा, चलता-फिरता। (पु०) २ मनुष्य, आदमी। ३ अन्न, अनाज। ४ जीव, जानवर। ५ मनुष्यजाति, आदमीकी क़ौम। ६ प्रथम मनुष्य, पहला आदमी। ७ जीवित-काल, जिन्दगी। 'आयु जीवितकालो वा।' (अमर) ८ वायु, हवा। ९ अपत्य, औलाद। १० अनुह्लादपुत्र। (हरिवंश ३।७) ११ मण्डूकराज। (महाभारत—वनपर्व १९२।३८) १२ कृष्णके एक पुत्र। (भागवत १०।६१।१७) १३ उर्वशी और पुरुरवाके पुत्र। नहुषराज इन्हींके पुत्र थे। (रामायण ७।५६ अध्याय) १४ औषध, दवा। १५ घृत, घी। १६ वसा, चर्बी। आयुस् शब्द देखो।

आयु:शेष (सं० पु०) ६-तत्। जीवित कालकी समाप्ति, मृत्यु, मौत, जिन्दगीका ख़ातिमा।

आयु:शेषता (सं० स्त्री०) जीवनके अतिरिक्त अन्य वस्तु न रहनेकी दशा, सिर्फ़ ज़िन्दगी बाक़ी बचनेकी हालत।

आयुक्त (सं० त्रि०) आ-युज् कर्मणि क्त। आयुक्त-कुशलाभ्यां चासेवायाम्। पा २।३।४०। १ सम्यग् व्यापारित, मुक़र्रर। 'आयुक्त: व्यापारित:।' (सिद्धान्तकौमुदी) २ ईषद्-युक्त, मिला या लगा हुआ। 'आयुक्ता गौ: शकटे ईषद्युक्त:।' (सिद्धान्तकौमुदी) (क्लो०) आ-युज् भावे क्त। ३ सम्यग् नियोजन, तक़र्रुरी, तैनाती। (पु०) ४ सचिव, प्रतिनिधि वा नियोगी, वज़ीर, गुमाश्ता या नायब।

आयुक्तिन् (सं० त्रि०) आयुक्तमनेन, आ-युज्-क्त इष्टादि-त्वात् इनि। सम्यक्‌नियोगकर्ता, तैनात करनेवाला।

आयुज् (वै० त्रि०) नियोग करनेवाला, जो जोड़ता या मिलाता हो।

आयुत (सं० त्रि०) आ-यु-क्त। १ आर्द्रीभूत, गलित, पिघला हुआ, जो पसीजा हो। (क्लो०) भावे क्त। २ आर्द्रीभूत घृत, पिघला हुआ घी।

आयुध (सं० पु०) आयुध्यतेऽनेन, आयुध करणे घञर्थे क। १ शस्त्रमात्र, कोयी हथियार। आयुध तीन प्रकार होता है,—प्रहरण, हस्तयुक्त और यन्त्र-युक्त। खड्गकी तरह चलनेवाला प्रहरण—चक्रवत् छूटनेवाला हस्तयुक्त और वाण सदृश यन्त्रसे निकलने-वाला यन्त्रयुक्त कहाता है।

शस्त्रकी भांति प्रहरण कार्य साधनेवाले वस्तुका भी नाम आयुध है। जैसे,—नखायुध, दण्डायुध इत्यादि। "नखतुण्डायुध: खग:।" (भट्टि ५।१०५) इसका प्रमाण नीचे लिखते, कि अति पूर्वकालसे भारतवासी आयुध-धारण करते हैं,—"स्थिरा व: सन्त्वायुधा पराणुदे वीळू उत प्रतिष्कभे।" ऋक् १।३९।२। उस समय ऋषि यज्ञरक्षार्थ

आयुध रखते थे,—"ऋषीणामस्यायुधम्।" अथर्व ३।११३।२। वैदिक समयमें सूर्मी, इषु और धनुः कयी आयुध चलते रहे। (कृष्णयजुः १।५।६।७, ऐतरेयब्राह्मण ७।१९) सूर्मी लोहेसे बनता, अभ्यन्तरमें छेद रहता, और वर्तमान छोटी तोप-जैसा देख पड़ता था। एकके छोड़नेसे सौ आदमी मर जाते।

अथर्ववेदके समय सीसकी गोली भरकर भी अस्त्र चलाते थे,—

"सीसायाध्याह वरुणः सीसायाग्निरुपावति।
सीसं म इन्द्रः प्रायच्छत् तदङ्ग यातु चातनम्॥
यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम्।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नोऽसो अवीरहा॥"(अथर्व १।१६।२,४)

रामायण महाभारत और तत्परवर्ती समय भारतवासी नानाप्रकार आयुध बनाते रहे। उनमें कयी नाम नीचे लिखते हैं,—शक्ति, तोमर, नालिक, द्रुघण, भिन्दिपाल, लगुड़, पाश, चक्र, गदा, मुद्गर, पिनाक, दन्तकण्टक, भूषण्डी, परशु, गोशीर्ष, लवित्र, स्थूण, असि, प्रास, सीर, मुषल, पट्टिश, परिघ, मयूखी, शतघ्नी, दण्ड, दण्डचक्र, धर्मचक्र, कालचक्र, ऐन्द्रचक्र, शूल, ब्रह्मशिर, कौमोदकी, वरुणपाश, वायवास्त्र, क्रौञ्चास्त्र, शोषण, वर्षण, नन्दन, गान्धर्व, अविद्या, विद्या, हयशिर, गारुड़ास्त्र, नागास्त्र, विलापन, सन्तापन, प्रशमन, प्रस्वापन, जृम्भण, नाराच, वज्र, तुलागुड़ा, हला, खड्गपुत्रिका, लवित्र, आस्तर, कुम्भ, मौष्टिक इत्यादि। प्रत्येक शब्दमें तत्तद्विवरण देखो।

(वै०) २ पात्र, बरतन। (सं० क्लो०) ३ अलङ्कारमें लगनेवाला सुवर्ण, जो सोना ज़ेवर तैयार करनेमें काम आता हो।

आयुधजीविन् (सं० त्रि०) शस्त्र द्वारा जीविका चलानेवाला।

आयुधजीवी (सं० पु०) भट, योद्धा, मुजाहिद, सिपाही।

आयुध-दीर्घपृष्ठ (सं० पु०) सर्प, सांप। तलवार-जैसी लम्बी पीठ रखनेसे सांपका यह नाम पड़ा है।

आयुधधर्मिणी (सं० स्त्री०) आयुधस्येव धर्मोऽस्यस्याः, इनि ङीप्। जयन्ती वृक्ष, धनदेनेका पेड़।

आयुधन्यास (सं० पु०) आयुधानां न्यासः। श्रीपूजाका अङ्गन्यासविशेष। इस न्यासमें चक्र, गदा प्रभृति आयुधोंके नामपर अपने-अपने स्थान मन्त्र द्वारा हाथ लगाना पड़ता है। वैष्णवपूजनसे पूर्व वाह्यशुद्धिके लिये आयुधन्यास करते हैं। तन्त्रसारके श्रीविद्या-पूजा-प्रकरणमें विवरण लिखा है।

आयुधागार (सं० क्लो०) ६-तत्। शस्त्रगृह, सिलाखाना, राजाके हथियार रखनेका घर।

आयुधागारिक (सं० त्रि०) आयुधागारे नियुक्तम्, ठन्। अगारान्ताट्ठन्। पा ४।४।७०। राजाके अस्त्रागारमें नियुक्त, सिलाखानेका मुहाफिज़। जो व्यक्ति प्रत्येक अस्त्र रखने एवं पहचाननेका तत्त्व समझता और सर्वदा सतर्क रहता तथा कार्यदक्ष होता, वही राजाके आयुधागारमें नियुक्त किया जा सकता है। (कौटिलीय अर्थशास्त्र)

आयुधिक (सं० पु०) आयुधेन तद्व्यवहारेण जीवति, ठन्। १ शस्त्राजीव, सिपाही। (त्रि०) २ शस्त्रसम्बन्धीय, हथियारसे निस्बत रखनेवाला।

आयुधिन् (सं० त्रि०) आयुधमस्त्यस्य, इनि। शस्त्र-धारी, हथियारबन्द। (स्त्री०) आयुधिनी।

आयुधी (सं० पु०) योद्धा, सिपाही।

आयुधीय (सं० पु०) आयुध-छ। आयुधाच्छ च। पा ४।४।१४। आयुधिक देखो।

आयुर्दद, आयुर्दा देखो।

आयुर्दा (वै० त्रि०) आयुर्दाता, जिन्दगी बख्शनेवाला। 'आयुर्दा आयुषो दाता।' (शुक्लयजुर्भाष्ये महीधर ३।१७)

आयुर्दाय (सं० पु०) आयुषो दायः दानम्, ६-तत्। बल विशेषमें स्थिति और योग प्रभृति द्वारा रव्यादि कर्तृक आयुर्दान, आयुर्गणन, उम्रकी बख्शिश। ज्योतिषशास्त्रके अनुसार नवग्रहके बलाबलपर मनुष्यका जीवनकाल घटता-बढ़ता है। इसीसे उन्हें आयु देनेवाले मानते हैं।

आयुर्दावन्, आयुर्दा देखो।

आयुर्द्रव्य (सं० क्लो०) आयुः साधनं द्रव्यम्, शाक० तत्। १ औषध, दवा। २ घृत, घी। चार्वाकोंने आयु बढ़ानेका गुण रहनेसे ऋण लेकर भी घृत पीनेका उपदेश दिया है। "ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।"

आयुर्बल (सं० पु०) आयुष्का बल, उम्रका ज़ोर। ज्योतिषमें नवग्रहके बलाबलपर आयुका घटना-बढ़ना माना है।

आयुर्युध (वै० त्रि०) आजीवन युद्धकर, उम्रभर लड़नेवाला। "ये पथां पथिरक्षस ऐल हृदा आयुर्युधः।" वाजसनेय संहिता १६।६०। 'आयुषा जीवनेन युध्यन्ते ते यावज्जीवयुद्धकराः यद्वा आयुर्जीवनं पणीकृत्य युध्यन्ति ते आयुर्युधः।' (महीधर)

आयुर्योग (सं० पु०) उचितस्यायुषो ज्ञापको योगः, शाक तत्। १ ज्योतिषोक्त ग्रहयोगविशेष। इससे उचित आयु मिलता है। २ औषध, दवा।

आयुर्वृद्धि (सं० स्त्री०) आयुषो वृद्धिः, ६-तत्। द्रव्य विशेषके सेवन द्वारा आयुकी वृद्धि, किसी खास चीज़के इस्तेमालसे उम्रका बढ़ना। शिवने दुर्गासे कहा है, हे देवि! अभ्रक तुम्हारा और पारद हमारा वीज है। इसीसे जो दोनोंको मिलाकर सेवन करता, वह मृत्यु और दारिद्र्यके भयसे छूट जाता है।

"अभ्रकं तव वीजन्तु मम वीजन्तु पारदः।
अनयोर्मेलनं देवि मृत्युदारिद्र्यनाशनम्॥"
(सर्वदर्शनसंग्रहधृत तन्त्रवचन)

प्राणायामसे भी सर्वव्याधि छूटता और परमायु बढ़ता है। पूर्वभुक्तवस्तु जीर्ण होनेपर भोजन करना और मलमूत्रादिका वेग न रोकना परमायुर्वृद्धिका एक उपाय है। सुश्रुतके मतमें ब्रह्मचर्य, अहिंसा, दुःसाहस-परित्याग, सद्योमांस एवं अन्न भक्षण, बाला स्त्री-सेवन और दुग्ध-घृत तथा उष्णजलपान आयुर्वृद्धिकर होता है।

आयुर्वेद (सं० पु०) आयुर्विद्यते ज्ञायते लभ्यते वा अनेन, विद् करणे घञ्। ऋग्वेदका उपवेदविशेष, अथर्ववेदका उपाङ्ग, शल्यादि स्थानाष्टक-सम्पन्न धन्वन्तर्यादि प्रणीत चिकित्साशास्त्र, इल्म-ग़दविया। आयुका हिताहित और व्याधिका निदान तथा शमन जिस शास्त्रमें रहता, वही आयुर्वेद कहाता है। (वैद्यशास्त्र) हित, अहित, सुख, दुःख, और आयु तथा उसका हिताहित एवं मान बतानेवाले शास्त्रका नाम आयुर्वेद है। (चरक)

आयुर्वेदसे इन दुर्ज्ञेय विषयोंका ज्ञान मिलता,—आयुके लिये क्या हितकर एवं क्या अनिष्टकर होता और उसका कितना परिमाण तथा कैसा स्वरूप रहता है। महर्षि सुश्रुतके मतमें जिससे आयु बढ़ता किंवा मालूम पड़ता, वह शास्त्र आयुर्वेद कहाता है।

"अनेन पुरुषो यस्मादायुर्विन्दति वेत्ति वा।
तस्मान्मुनिवरैरेष आयुर्वेद इति स्मृतः॥" (भावमिश्र)

अर्थात् रोगाक्रान्त व्यक्तिका रोगनिवारण और सुस्थ व्यक्तिकी स्वास्थ्यरक्षा ही आयुर्वेदका प्रयोजन है।

इस विषयमें कुछ मतभेद पड़ता, आयुर्वेद किस वेदके अन्तर्गत आता और किस वेदका उपाङ्ग ठहरता है,—"सर्वेषामेव वेदानामुपवेदा भवन्ति। ऋग्वेदस्यायुर्वेद उपवेदः। अथर्ववेदस्य शस्त्रशास्त्राणि।" (चरणव्यूह)

सकल वेदका एक-एक उपवेद होता है। ऋग्वेदका उपवेद आयुर्वेद है। अथर्ववेदके उपवेदको शस्त्रशास्त्र अर्थात् शस्त्रतन्त्र कहते हैं।

किन्तु सुश्रुतके मतमें आयुर्वेद अथर्ववेदका उपाङ्ग है, "इह खल्वायुर्वेदो नाम यदुपाङ्गमथर्ववेदस्य।" (सुश्रुत सूत्र० १ अ०)

किसी-किसी पुराणमें लिखा, कि ब्रह्माने ऋक्, यजुः, साम और अथर्ववेदका सार निकाल आयुर्वेद बनाया था। असली बात यह, कि आयुर्वेदका वीज सकल वेदमें ही मिलता है। उसके मध्य ऋग्वेदमें कुछ अधिक है। किन्तु वैद्यकगणके अथर्ववेदपर ही अधिक निर्भर करनेका क्या कारण है? "तत्र चेत् प्रष्टारः स्युः चतुर्णामृक्सामयजुरथर्ववेदानां कं वेदमुपदिशन्त्यायुर्वेदविदः? तत्र भिषजा पृष्टेनैवं चतुर्णामृक्सामयजुरथर्ववेदानामात्मनोऽथर्ववेदे भक्तिरादेश्या। वेदो ह्याथर्वणः। स्वस्त्ययन-बलि-मङ्गल-होमप्रायश्चित्तोपवास-मन्त्रादि-परिग्रहाच्चिकित्सां प्राह।" (चरक सूत्रस्थान ३० अध्याय)

यदि कोई पूछे—आयुर्वेदवेत्ता ऋक्-यजुः-साम-अथर्व चारमें किस वेदके अवलम्बनसे उपदेश दे, तो चिकित्सक ऋक्, यजुः, साम, अथर्व चारोंमें अथर्ववेदपर अपनी भक्ति देखाये। क्योंकि अथर्व-प्रोक्त वेद ही स्वस्त्ययन, बलि, मङ्गल, होम, नियम, प्रायश्चित्त, उपवास और मन्त्रादिको स्वीकारकर चिकित्सातत्त्वका उपदेश देता है।

सुश्रुतमें लिखा, पहले ब्रह्माने सहस्र अध्याय और लक्षश्लोकात्मक आयुर्वेद प्रकाश किया था। ब्रह्मासे

प्रजापति, प्रजापतिसे अश्विनीकुमारद्वय, अश्विनीकुमारद्वयसे इन्द्रदेव, इन्द्रदेवसे धन्वन्तरि और धन्वन्तरिसे सुश्रुतने आयुर्वेद पढ़ा। लोकोंके मङ्गलार्थ सुश्रुत मुनिने आयुर्वेद रचा है। ब्रह्माने आयुर्वेद निम्नलिखित आठ भागमें बांटा था,—१ शल्यतन्त्र, २ शालाक्यतन्त्र, ३ कायचिकित्सातन्त्र, ४ भूतविद्यातन्त्र, ५ कौमारभृत्यतन्त्र, ६ अगदतन्त्र, ७ रसायनतन्त्र और ८ वाजीकरणतन्त्र।

१। शल्यतन्त्र—जर्राही या चीर-फाड़को कहते हैं। तृण, काष्ठ, पाषाण, पांशु, धातु, इष्टक, अस्थि, केश, नख आदि कारणवश शरीरमें घुस और मलमूत्रको रोक पीड़ादायक होते हैं। उन्हें निकालनेके लिये यन्त्र, चार एवं अग्नि बनाने तथा लगाने और नानाप्रकार रोगनिर्णय करनेका उपाय इस तन्त्रमें लिखा है।

२। शालाक्यतन्त्रमें स्कन्धसन्धिके उपरिस्थ चक्षु, कर्ण, मुख, नासिका, जिह्वा, दन्त, ओष्ठ, अधर, गण्ड, तालु, अलिजिह्वा प्रभृति स्थानके सकल रोग मिटानेकी बात है।

३। कायचिकित्सातन्त्रमें ज्वर, अतीसार, रक्तपित्त, शोष, उन्माद, अपस्मार, कुष्ठ, मेह इत्यादि सर्वाङ्गव्यापी रोगकी शान्ति कही है।

४। भूतविद्यातन्त्रमें देव, असुर, गन्धर्व, यक्ष, रक्ष, पितृलोक, पिशाच, नाग, ग्रहादि द्वारा आक्रान्त व्यक्तिके आरोग्यपर उपायस्वरूप शान्तिकर्म और बलिदान विवृत है।

५। कौमारभृत्यमें बालकका प्रतिपालन, धात्रीके दुग्धका दोष-संशोधन और स्तन्यदोष एवं ग्रहदोषसे उत्पन्न रोगकी चिकित्सा है।

६। अगदतन्त्र सर्प, कीट, लूता, वृश्चिक, मूषकादिके दंशजनित विषको दूर करनेका उपाय बताता है। सिवा इसके अपरापर विषका लक्षण भी उसमें विद्यमान है।

७। रसायनतन्त्रमें युवावत् बलिष्ठ बनने, परमायु, मेधा एवं बल प्रभृति बढ़ने और देहके रोगसे बचनेका विषय वर्णित है।

८। वाजीकरणतन्त्रमें अल्प अथवा दुष्टको बढ़ाने, विकृतको स्वाभाविक अवस्थापर लाने और क्षयप्राप्त शुक्रको उपजानेका विधान है। क्षीण शरीरको सबल करने और मनको सर्वदा प्रफुल्ल रखनेका विषय भी वर्णित है।

इस अष्टाङ्गमें आजकलका देहतत्त्व (Physiology), शारीरविज्ञान (Anatomy), शस्त्रविद्या (Surgery), भैषज्य एवं द्रव्यगुणतत्त्व (Materia-medica), चिकित्सातत्त्व (Practice of medicine), रोगनिदान (Pathology) और धात्रीविद्या (Midwifery) प्रभृति विषय विद्यमान है। सिवा इसके सदृश-चिकित्सा-प्रणाली (Homeopathy), विरोधि-चिकित्सा-प्रणाली (Allopathy) जल, चिकित्सा-प्रणाली (Hydropathy) और तन्त्रशास्त्रमें वर्णचिकित्सा (Chromopathy) भी मिलती है।

आयुर्वेदका चिकित्सा-तत्त्व वैदिककालसे प्रचलित है। इसमें किसी बातकी कमी देख नहीं पड़ती।

शारीर-विज्ञान और अस्त्रचिकित्सा प्रथम अङ्गके अन्तर्गत है। यजुर्वेदमें अस्त्रचिकित्साका आभास मिलता है— "हृदयास्याग्रे ऽवद्यत्यथ जिह्वाया अथ वक्षसः।"

उपरोक्त मन्त्रद्वारा यज्ञार्थ निहत पशुका हृदय, वक्षः, यकृत्, मुक्त (वृक्क), वामहस्त, उभय पार्श्व, श्रोणि, गुदनाल-मध्य-भाग, अन्त्र-चर्म (वपा) और मेदः (वसा) प्रभृति अस्त्र-विशेषसे बाहर निकाल अग्निमें आहुति देनेकी विधि विद्यमान है। शस्त्रविद्या ज्ञात न रहनेसे यह सकल कार्य होना कैसे सम्भव था? वेदमें शारीरतत्त्वरहनेका विलक्षण प्रमाण मिला है,—

"यथा वृक्षो वनस्पतिस्तथैव पुरुषोऽमृषा।
तस्य लोमानि पर्णानि त्वगस्योत्पाटिका बहिः।
त्वच एवास्य रुधिरं प्रस्यन्दि त्वच उत्पटः।
तस्मात् तदा तृणात् प्रैति रसो वृक्षादिवाहतात्।
मांसान्यस्य शकराणि किनाटं स्नाव तत् स्थिरम्।
अस्थीन्यन्तरतो दारूणि मज्जा मज्जोपमाकृता।
यत् वृक्षो वृक्णो रोहति मूलान्नवतरः पुनः।" (बृहदारण्यक ३।९।२८)

फिर अन्य स्थलमें शिरा-प्रशिरा नामादि भी है,—

"य एषोऽन्तर्हृदये लोहितपिण्डः। अथैनयोरेतत् प्रावरणम्।
यदेतदन्तर्हृदये जालकमिव। अथैनयोरेषा सृतिः सञ्चरणीरेषा।
हृदयादूर्ध्वं नाड़ी उच्चरति यथा केशः सहस्रधा।

*   *   *   *

भिन्न एवैत्यस्य हिता नाम नाड्योऽन्तर्हृदये प्रतिष्ठिताः।"

सिवा इसके अथर्ववेदीय गर्भ और शारीरोपनिषत्में शारीरविज्ञान विशेष रूपसे कथित है। यजुर्वेदीय बृहदारण्यकका १म और ६ष्ठ अध्याय देखो।

उद्भिद्विद्या भी आयुर्वेदमें पायी जाती है। उद्भिद्-तत्त्व न समझनेसे ओषधिका गुणागुण ठहराना कठिन है। प्राचीन वैदिक ऋषि ओषधिका विषय अच्छीतरह जानते थे। ऋग्वेदमें प्रमाण है,—

"सुचे वाक्षष्वन्ननयंत सिन्धून्धन्वातिष्ठन्नोषधीर्निम्नमापः।" (ऋक् ४।२३।७)

अर्थात् (वह) क्षेत्र सकल शस्यसम्पन्न और नदी सकल प्रेरित करें। जलविहीन स्थान ओषधियुक्त और निम्नस्थान जलमय हो। फिर देखिये,—

"मधुमतीरोषधीर्द्याव आपो" (ऋक् ४।५७।३)

प्रयोजन यह, कि ओषधि सकल द्युलोकसमूह और जलसमूह मधुयुक्त बने। ऋषियोंका ओषधि विषय जानना निम्नलिखित वचन द्वारा भी प्रमाणित है,—

"या ओषधिः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।
मनै नु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च॥" (ऋक् १०।९७।१)

महाभारतमें रोगहर, विषहर, शल्यहर और कृत्याहर कयी प्रकारके आयुर्वेदवित् चिकित्सकोंका नाम मिलता है। देहतत्त्व, शारीरविज्ञान, शल्यविद्या, चिकित्सा-तत्त्व, रोगनिदान, धात्रीविद्या प्रभृति शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

अश्वायुर्वेद, गजायुर्वेद और वृक्षायुर्वेद नामसे आयुर्वेदके कयी विभाग होते हैं। (अग्निपुराण २८१—२९१ अध्याय)

मधुसूदन-सरस्वतीने अपने बनाये 'प्रस्थानभेद' ग्रन्थमें कामशास्त्रको भी आयुर्वेदका अङ्ग माना है। आयुर्वेदको चिकित्साप्रणाली यूनानी, ईरानी और अरबी चिकित्साशास्त्र चलनेसे पहले होचनी रही। बहुकाल पूर्व भारतवर्षमें सर्वप्रथम मूल खुला था, पीछे अपर जातिने सादर उसे अपना लिया।

'उयुन-उल्-अम्बा फितुल-कातुल-अतबा' नामक अरबी ग्रन्थमें लिखते, कि सन् ई०के ८म शताब्द भारतवर्षीय पण्डितोंके अधीन बग़दादकी राजसभामें बैठ लोग ज्योतिष और आयुर्वेद पढ़ते थे। सरक्, सस्रद् और येदान नामक तीन आयुर्वेदिक ग्रन्थ भारतवर्षसे लोग अरबदेश ले गये। तीनो ग्रन्थ चरक, सुश्रुत और निदान नामके अपभ्रंश-जैसे हैं। इससे स्पष्ट समझमें आता, कि पाश्चात्य चिकित्सकोंने भारतवासियोंसे आयुर्वेद पाया था।

आयुर्वेददृक्, आयुर्वेददृश् देखो।

आयुर्वेददृश् (सं० पु०) वैद्य, चिकित्सक, तबीब, हकीम।

आयुर्वेदमय (सं० पु०) आयुर्वेद प्रचुरः, आयुर्वेद प्राचुर्ये मयट्। १ धन्वन्तरि। प्रचुर आयुर्वेद जाननेसे धन्वन्तरिको यह उपाधि मिला है। (त्रि०) २ आयुर्वेदाभिज्ञ, इल्म-अदवियासे वाक़िफ़।

आयुर्वेदिक, आयुर्वेददृश् देखो।

आयुर्वेदिन् (सं० त्रि०) आयुर्वेदो वेद्यतयास्त्यस्य, इनि। १ औषधीय, तिब्बी, दवादारूसे तााल्लुक़ रखनेवाला। २ वैद्य, तबीब (स्त्री०) आयुर्वेदिनी।

आयुर्वेदी (सं० पु०) वैद्य, हकीम, दवा-दारू देनेवाला।

आयुषक्, आयुषज् देखो।

आयुषक—जैनशास्त्रानुसार देह अथवा पुरुषका संयोग। आयुको घोषणा करनेवाला।

आयुषज् (वै० त्रि०) आयुना सजते, आयु-सञ्ज-क्विप् षत्वम्। १ आयुःसम्बन्धी, उम्रसे सरोकार रखनेवाला। २ मानवयुक्त, मनुष्योंके योगका, आदमियोंका सहारा पकड़नेवाला। (अव्य) ३ मनुष्योंके संयोगसे, आदमियोंके मेलमें।

आयुष्क (सं० त्रि०) आयुषा कायति, आयुष्-कै-क। आयु द्वारा प्रकाशमान, उम्रसे झलकनेवाला।

आयुष्कर (सं० त्रि०) परमायुर्जनक, उम्र बढ़ानेवाला।

आयुष्काम (सं० त्रि०) आयुः कामयते, आयुस्-कम्-णिङ्-अण्। आयुरभिलाषुक, उम्रकी ख़ाहिश रखनेवाला।

आयुष्कृत् (सं० त्रि०) आयुः करोति, आयुस्-कृ-क्विप्-तुक्। आयुर्वर्धक, उम्र बढ़ानेवाला। अभ्र-पारदादि आयुष्कृत् होता है। आयुर्वृद्धि देखो।

आयुष्टोम (सं० पु०) आयुःसाधनं स्तोमः, शाक० तत् षत्वम्। १ आयुःसाधन ऋक्समुदाययुक्त स्तोमविशेष। २ आयुष्टोम स्तोमयुक्त अतिरात्रविशेष। आयुष्टोमयज्ञ करनेसे उम्र बढ़ती है।

आयुष्पा (वै० त्रि०) आयुकी रक्षा करनेवाला, जो उम्रकी हिफाज़त रखता हो।

आयुष्प्रतरण (वै०) आयुष्कृत् देखो। (स्त्री०) आयुष्प्रतरणी।

आयुष्मत् (सं० त्रि०) प्रशस्तमायुरस्त्यस्य, आयुस्मतुप् षत्वम्। १ प्रशस्तायुष्क, उम्रवाला, तनदुरुस्त। २ जीवित, जिन्दा। ३ अक्षय, क़ायम, चालू। ४ वृद्ध, उम्ररसीदा। (पु०) आयुष्मान्। (स्त्री०) आयुष्मती।

आयुष्मान् (सं० पु०) १ प्रशस्तायुः व्यक्ति। २ ज्योतिषोक्त विष्कुम्भसे तृतीय योग विशेष। यथा—विष्कुम्भ, प्रीति, आयुष्मान् इत्यादि। आयुरिति शब्दोऽस्त्यस्य, मतुप्। ३ आयुस् शब्दयुक्त मन्त्रविशेष। ४ उत्तानपादके एक पुत्र। ५ संह्रादके एक पुत्र। ६ जीवक महाक्षुप, दीपहरिया।

आयुष्य (सं० त्रि०) आयुःप्रयोजनमस्य, यत्। स्वर्गादिभ्यो यत्। (महाभाष्य) १ आयुर्हितकर, हयातबख्श। २ पथ्य, बीमारके खानेलायक। अभ्र पारदादि द्रव्य और प्राणायामादि कर्म आयुष्य होता है। "पुरं जातेऽग्निं मथित्वा तस्मिन्नायुष्य होमान् जुहोति।" (स्मृति) (क्ली०) ३ आयुर्हितकर बल, हयातबख्श ताक़त। ४ सजीवीकरण संस्कार। यह पुत्रजन्मके बाद किया जाता है।

आयुष्यसूक्त (सं० क्ली०) कर्मधा०। 'आयुष्मानिति शान्त्यर्थं जप्त्वा तत्र समाहितः' छान्दोगपरिशिष्टोक्त आभ्युदयिक श्राद्धादिमें पाठ्य सूक्त विशेष।

आयुस् (सं० क्ली०) एति गच्छति अहरहः, इण गतौ उसि, णित्वाद् वृद्धिः। एतेर्णिच्च। उण् २।११८। १ जीवित काल, जीस्त। 'अथायुर्जीवितावधी।' (उणादिकोष) 'आयुर्जीवनम्।' (उज्ज्वलदत्त)

सत्ययुगके लोग नीरोग रहते, इससे उनके सकल कार्य बन जाते थे। परमायु चार सौ वर्ष रहा। त्रेतादियुगमें पादक्रमसे परमायु घटता अर्थात् त्रेतामें तीन, द्वापरमें दो और कलिमें एक सौ वर्ष मनुष्य जीता है,—

"अरोगाः सर्वसिद्धार्थाश्चतुर्वर्षशतायुषः।
कृते त्रेतादिषु ह्येषामायुर्ह्रसति पादशः॥" (मनु १।८३)

पुराणान्तरमें सत्यादि युगमें लक्ष वत्सर प्रभृति परमायु होनेकी बात लिखी है। प्राणी प्रत्यह २१६०० श्वास और उच्छ्वाससे प्राणक्रिया चलाता है। ३६०दिनसे २१६००संख्याको गुण करनेपर ७७७६००० आता, जो एक वत्सरका संख्यान होता है। श्रुत्यादिमें पुरुषका स्वाभाविक परमायु एकशत वत्सर निरूपित है। शत द्वारा ७७७६००० को गुण करनेपर ७७७६००००० निकलता है। अतएव मनुष्यके जीवनकालमें ७७७६००००० संख्यक प्राणक्रिया हो सकती है। प्राणायामादि द्वारा वायुको रोकनेपर क्रियाकी अनुत्पत्तिके अनुसार परमायु बढ़ता है। पूर्वोक्त प्राणक्रिया सुस्थ व्यक्तिके लिये ही कही है। रोगादि उपसर्ग और शीघ्र यातायातमें अधिक प्राणक्रिया होनेसे परमायु घटता है। पुरुषका एकशत वत्सर परमायु स्वाभाविक ठहरता, किन्तु कर्म और कुपथ्यादिवश न्यून भी निकल जाता है।

वेदादिमें मनुष्यका परमायु शत वत्सर लिखित है,—"समिधा यस्त आहुतिं निशितिं मर्त्यो नशत्।
वयावन्तं स पुष्यति क्षयमग्ने शतायुषं॥" (ऋक्संहिता ६।२।५)

अर्थात् हे अग्नि! जो मर्त्य समिध् काष्ठ-द्वारा तुम्हें मन्त्र-संस्कृत आहुतिसे परिपुष्ट करता, वह पुत्रपौत्रादिसम्पन्न गृहमें शत वत्सर जीवित रहता है।

२ यज्ञविशेष। प्रायः इसे आयुष्टोम कहते हैं। यह दीर्घजीवन प्राप्त होनेके लिये किया जाता है। फिर इसमें अभिप्लव यज्ञके 'गो' और 'ज्योतिः'का भाग भी लगता है। ३ खाद्य, खुराक।

आयुसुस् (सं० पु०) पुरुरवा और उर्वशीके पुत्र।

आयुस्कार, आयुष्कार देखो।

आयुस्तेजस् (सं० पु०) बुद्ध विशेष।

आये (सं० अव्य०) प्यारे, ओजी। प्रीतिके साथ किसीको पुकारनेमें यह व्यवहृत होता है।

आयेशा—इसलाम धर्मप्रचारक मुहम्मदकी ३य पत्नी। यह आबू-बक्रकी कन्या थीं। सात वत्सर वयसमें मुहम्मदके साथ इनका विवाह हुआ था। सुननेमें आया,

कि बाल्यावस्थामें विवाह होनेसे ही इनके बाप अब-दुल्लाका नाम बदलकर अबू बक्र अर्थात् अक्षताके पिता पड़ा था। कोई सन्तान न होते भी मुहम्मद इन्हें बहुत चाहते थे। किसी अरबी लेखकने कहा है,—अबूबक्र इतनी तरुण कन्या मुहम्मदको देनेके विरोधी रहे। किन्तु मुहम्मदने विवाहके लिये ईश्वरीय आज्ञा होनेका बहाना किया। इसपर उन्होंने अपनी कन्या एक मञ्जूषा खर्जूरके साथ भेज दी थी। आयेशाको एकान्तमें पा मुहम्मदने अमर्याद वस्त्र पकड़ लिया। उसपर यह सक्रोध बोल उठीं,—'लोगोंके विश्वस्त बताते भी आप व्यवहारसे मुझे वञ्चक मालूम पड़ते हैं।' अपने पतिके मरनेपर इन्होंने अलीके उत्तराधिकार पर आपत्ति डाली थी। कयी बार इन्हें अलीके साथ घोर युद्ध करना पड़ा। साहसिक होते भी इनके आचरणका बड़ा आदर रहा। अलीने इन्हें कैद कर विना पीड़ा दिये छोड़ा था। आयेशा भविष्यद्वादिनी और सत्यसन्धोंकी माता कहाती रहीं। सन् ५८ हि० या ६७८ ई०को इनकी मृत्यु हुई। लोग कहते हैं,—आयेशाने सनिश्चय और सावमान यजीदके साथ अनुरक्त होना अस्वीकार किया था। इसपर मुआवियाने उन्हें विनोदनके लिये बुला भेजा। आयेशाके स्वागत-गृहमें एक बड़ा गड्ढा खोद और मुंह पत्तोंसे ढांक दिया गया था। प्राणनाशक स्थानपर कुरसी बिछी। यह उस पर बैठते ही गड्ढेमें जा पड़ी थीं। उसी समय गड्ढेका मुंह पत्थरसे गरा और चूनेसे भरा गया।

आयोग (सं० पु०) आयुज्यते सर्व्वत्र मङ्गलादौ आ-युज्-घञ्। १ गन्धमाल्योपहार, फूल फुलेल वगैरहकी भेंट। २ व्यापार, हादसा। ३ रोध, रोक। 'आयोगो। गन्धमाल्योपहारे व्यापृतिरोधयोः।' (हेम) ४ नियुक्ति, तैनाती। ५ तट, किनारा।

आयोगव (सं० पु०) आयोगं अप्रशस्तयोगं वाति गच्छति, अयोग-वा-क स्वार्थे अण्। १ वैश्याके गर्भ और शूद्रके औरससे उत्पन्न जाति विशेष। "शूद्रादायोगवः" (मनु १०।१२) काठका काम करते-करते अब सुतार या बढ़ई नाम हो गया है। २ अयोगव-वंशका मनुष्य। (स्त्री०) जातित्वात् ङीप्। आयोगवी।

आयोजन (सं० क्ली०) आ सम्यक् युज्यते कर्म येन, आ-युज-ल्युट्। १ उद्योग, जांफिशानी। २ आहरण, झपटा-झपटी, धरपकड़। ३ संग्रहकार्य, जोड़-तोड़। नैयायिक-मतमें कर्म और व्याख्यानको आयोजन कहते हैं।

आयोजित (सं० त्रि०) आ-युज-णिच्-क्त लोपः, आयोजनमस्य जातम्, तारकादित्वादितच् वा। सम्यक् सम्पादित, बना चुना।

आयोद (सं० पु०) आयोदस्यापत्यम्, बाहुलकात् अण्। धौम्यमुनि।

आयोधन (सं० क्ली०) आ सम्यक् युध्यन्ति योद्धारोऽस्मिन्, आ-युध आधारे ल्युट्। १ रणक्षेत्र, लड़ाईका मैदान्। भावे ल्युट्। २ युद्धक्रिया, जङ्ग-जदल, लड़ाई-भिड़ाई। ३ संहार, खूंरेजी। 'युद्धमायोधनं जन्यं प्रधनं प्रविदारणम्।' (अमर २।८।१०३)

आर (सं० पु०) आ सम्यक् ऋ गच्छति कालवशात्, आ-ऋ कर्तरि घञ्। १ मङ्गलग्रह, मिररीख। यूनानियोंके होराशास्त्रमें भी मङ्गल ग्रहको आरस् कहते हैं। २ शनिग्रह, ज़ोहल, कैवान्। ३ मधुराम्लवृक्ष, एक पेड़। गौड़ देशमें इसे रेफल कहते हैं। ४ प्रान्तभाग, कुर्ब, नजदीकी। भावे घञ्। ५ गमन, रविश, चाल। आ अभिव्याप्तौ अर्थे ऋ गम्यते यत्र, आ-ऋ आधारे घञ्। ६ दूर, फासला। (क्ली०) ७ मुण्डलौह, लोहेका लुब्ब-लुबाब। ८ पित्तल, बिरञ्ज। अरा-चक्रमिव, स्वार्थे अण्। ९ कोण, जाविया। 'आरः क्षितिसुतेऽर्कजे।' (विश्व) 'आरो रीतिः शनिर्भौमः।' (हेम [illegible]) १० एक भील। ११ सक्थि, पहियेका अरा। १२ हरिताल।

(हिं० पु०) १३ कलकुला। इससे इक्षुरस निकालते हैं। १४ मट्टीका लौंदा। यह पात्रनिर्माणमें लगता है। १५ आग्रह, इसरार। (स्त्री०) १६ लोहेकी कील। यह पतली होती और सांटेमें लगती है। गाड़ीका बैल या भैंसा जब नहीं चलता, तब हांकनेवाला इसे उसके पीछे चुभो देता है। १७ पादकण्टक, पञ्जेका कांटा। यह मुर्गेके होता और लड़नेमें चलता

है। १८ दंश, नेत्र, डङ्क। १९ चर्मप्रभेदिका, सुवा, सूजा, सुतारी। (अ० क्ली०) २० क्री, शर्म। (अ० क्ली०) २१ अंगरेजी वर्णमालाका १८वां अक्षर। यह संस्कृतके रकार, हिंदीके 'र' और फ़ारसी या उर्दूके 'र' से उच्चारणमें मिलता है।

आरआना (हिं० क्रि०) लज्जा लगना, शर्माना।

आरक (सं०) आर देखो।

आरकात् (वै० अव्य०) अतिदूर, अलग।

आरकूट (सं० पु०-क्ली०) आरस्य पित्तलस्य कूट इव। १ पित्तलाभरण,पीतलका गहना। आरमयः कूटोऽस्य। २ पित्तल,बिरञ्ज। 'रीतिस्त्रियामारकूटो। न स्त्रियां।'(अमर २।१०।९७)

आरक्त (सं० पु०) आ-ईषत् रक्तः, प्रादिसमासः। १ ईषद् रक्तवर्ण, मायल ब-सुर्खी, लालसा रङ्ग। (त्रि०) २ सम्यक् रक्त, अहमर, ख़ूब लाल। ३ ईषद् रक्त, सुर्ख़ सा। ४ सम्यक् अनुरक्त, ख़ूब रंगा हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ५ अनुराग, रङ्ग। ६ रक्तचन्दन।

आरक्तपुष्पी (सं० स्त्री०) बन्धुजीवकवृक्ष, दो पहरियाका पेड़।

आरक्ष (सं० पु०) आ सम्यक् रक्षति, आ-रक्ष-अच्। १ हस्तीके मस्तकस्थ कुम्भका अधःस्थल, हाथीकी पेशानीके शिगाफ़का जोड़। २ हस्तीके मस्तकका चर्म, हाथीकी पेशानीका चमड़ा। ३ सन्धि, वस्ल, जोड़। भावे घञ्। ४ रक्षोक्रिया, हिफ़ाज़त। 'आरक्षो रक्षके हस्तिकुम्भाधरे। अधोः।' (हेम ३।७२९) (त्रि०) आ सम्यक् रक्ष्यते, आ-रक्ष कर्मणि घञ्। ५ रक्षणीय, हिफ़ाज़त किये जाने क़ाबिल।

'आरक्षो रक्षणीये स्याच्छीर्षं मर्मणि दन्तिनाम्।' (विश्व)

आरक्षक (सं० त्रि०) १ रक्षा करनेवाला, जो हिफ़ाज़त रखता हो। (पु०) २ रक्षी, मुहाफ़िज़, चौकीदार।

आरक्षा (सं० स्त्री०) आ-रक्ष भावे अ-टाप्। सम्यक् रक्षा, हिफ़ाज़त।

आरक्षिक (सं० पु०) १ प्रहरी, मुहाफ़िज़, चौकीदार। २ दण्डाधिकारी, पुलिसका हाकिम।

आरक्ष्य (सं० त्रि०) रक्षा किये जाने योग्य, जो हिफ़ाज़त रखे जानेके क़ाबिल हो।

आरग्वध (सं० पु०) आ रगे शङ्कायां क्विप्, आरगं रोगभयं हन्ति, आरग् हन्-अच् वधादेशश्च। १ राजवृक्ष, अमलतास। अमलतास देखो। २ सुवर्णालुपत्र। ३ सुवर्णालुफल। ४ अरग्वध पत्र। ५ अरग्वध फल।

आरग्वधपञ्चक (सं० क्ली०) कषायविशेष, एक जोशांदा। आरग्वध, तिक्तकरोहिणी, हरीतकी, पिप्पलिमूल और मुस्तक पांच द्रव्य डालनेसे यह बनता और वातकफज्वरमें लाभदायक होता है। (अत्रिसंहिता २१ अ०)

आरग्वधादि (सं० पु०) गण विशेष, अमलतास वगैरह चीज़ोंका ज़खीरा। इसमें आरग्वध, इन्द्रयव, पाटल, काक, तिक्ता, निम्बा, अमृता, मधुरसा, स्रुव, वृक्ष, पाठा, भूनिम्ब, सैर्यक, पटोल, करञ्जयुग्म, सप्तच्छद, अग्निसुषवीफल और बाणघोण्टा द्रव्य पड़ता है। यह छर्दि, कुष्ठ, विषमज्वर, कफ, कण्डू, प्रमेह एवं दुष्टव्रणको दूर करता और विशेषतः बलासघ्न होता है। (वाग्भट सूत्रस्थान १५ अ०)

आरग्वधाद्यतैल (सं० क्ली०) १ योनिव्यापत्‌के अधिकारका तैल। चार शरावक सर्षप तैल, ४ शरावक गर्दभमूत्र, ४ शरावक आरग्वध-मूल-त्वक्, १ पल शङ्खचूर्ण और २ पल हरिताल एकत्र पकानेसे यह बनता है। (चक्रपाणि-दत्तकृतसंग्रह) २ कुष्ठरोगका तैल। आरग्वधत्वक्, वटत्वक्, कुष्ठ, हरिताल, मनःशिला, हरिद्रा और दारुहरिद्राके मिलित पादिक-कल्कसे ४ सेर तैलको पकानेपर यह तैयार होता है।

(भैषज्यरत्नावली)

आरङ्ग (अरङ्ग)—मध्यप्रदेशके रायपुर ज़िलेका एक नगर। यह महानदीके तीर अवस्थित है। सत्नामी, कबीरपन्थी, हिन्दू, मुसलमान और असभ्य जातिके लोग रहते हैं। पूर्वकाल इस नगरमें हैहयवंशी राजपूतोंका राजत्व था। आजकल उनके बनवाये आम्रवृक्ष-वेष्टित बड़े बड़े भवन, मन्दिर और तड़ाग भग्नावस्थामें पड़े हैं। धातु-निर्मित पात्रादिका व्यवसाय चलता है।

आरङ्कर (वै० पु०) मधुकर, नहल।

आरचित (सं० त्रि०) विन्यसित, मुरत्तब, सजा या संवारा हुआ।

आरज (हिं०) आर्य देखो।

आरजा, आरिजा देखो।

आरज़ू (फा० स्त्री०) १ आकाङ्क्षा, चाह। २ पूजा, अरदास। ३ प्रत्याशा, उम्मीद। ४ अनुराग, प्यार।

आरज़ू करना (हिं० क्रि०) १ आकाङ्क्षा लगाना, चाहना। २ अधिक अभिलाष रखना, ललचाना। ३ प्रयोजन देखाना, मांगना। ४ प्रार्थना सुनाना, दरखास्त देना।

आरज़ू कराना (हिं० क्रि०) अधिक अभ्यर्थना चाहना, ज्यादा मिन्नतका खाहिशमन्द होना।

"थोड़ा देना, बहुत आर-ज़ू कराना।" (लोकोक्ति)

आरज़ूमन्द (फा० वि०) १ निर्बन्धशील, मुतकाज़ी, लागू। २ वाञ्छी, मुश्ताक, चाहू।

आरट (सं० त्रि०) आ सम्यक् रटति शब्दायते, आ-रट-अच्। १ सम्यक् शब्दकर्ता, अच्छीतरह आवाज़ लगानेवाला। (पु०) २ नट, बाज़ीगर। ३ मांस,गोश्त।

आरटी (सं० स्त्री०) गौरादित्वात् ङीष्। १ नटी, बाज़ीगरनी। २ शब्दकर्त्री, आवाज़ लगानेवाली।

आरट्ट (सं० पु०) आ-रट्-टच्। १ ययाति-वंशीय सेतुपुत्र। इनके लड़केका नाम गान्धार था। (मत्स्यपुराण) २ जनपद-विशेष,पञ्जाबसे आगेका देश। महाभारतमें लिखा है,—

"पञ्चनद्यो वहन्त्येता यत्र पीलुवनान्युत।
शतद्रुश्च विपाशा च तृतीयैरावती तथा॥
चन्द्रभागा वितस्ता च सिन्धुः षष्ठा बहिर्गिरेः।
आरट्टा नाम ते देशा नष्टधर्मा न तान् व्रजेत्॥" (कर्णपर्व ४५ अ०)

अर्थात्—हिमालयसे बाहर जिस स्थानमें पीलुवन देखायी देता और शतद्रु, विपाशा, इरावती, चन्द्रभागा एवं वितस्ता नदीका प्रवाह पड़ता, वह आरट्ट देश बहुत धर्महीन ठहरता है। वहां जाना उचित नहीं। आरट्ट देशका आचार-व्यवहार बहुत जघन्य है। लोग मृण्मय पात्रमें उष्ट्र, गर्दभ एवं मेषका दुग्ध और तज्जात दधि प्रभृति खाते हैं। अन्नग्रहणमें किसी प्रकारका विचार नहीं रखते। पहले आरट्टदेशीय दस्युगणने चोरीसे किसी पतिव्रता रमणीका सतीत्व बिगाड़ डाला था। इसपर उसने अभिशाप दिया,—'तुमने अधर्माचरणपूर्वक मेरा सतीत्व बिगाड़ा है। अच्छा! तुम्हारी कुलकामिनी भी व्यभिचारिणी बन जायेंगी। फिर तुम कभी इस घोरतर पापसे न छूटोगे। इसीसे पुत्रके बदले भागिनेय धनाधिकारी होता है। इस देशके लोगोंको वाहीक कहते हैं। वह प्रायः सकल ही तस्कर,कामुक एवं मद्यपायी होते,पर-वस्तुके उपभोगको अपना धर्म समझते और संस्कार-हीन रहते हैं। स्त्रियां मनःशिला-जैसा उज्ज्वल अपाङ्ग देश रखती, ललाट, कपोल एवं चिकुरमें अञ्जन लगाती और गर्दभ, उष्ट्र तथा अश्वके शब्दतुल्य मृदङ्गादि उठा केलि-प्रसङ्ग करती हैं। सभी गुड़की सुरा पीती और कम्बलाजिन पहनती हैं। वह मद्य-पानसे निर्लज्ज बन और नग्न हो नगरके बाहर जा अपर पुरुषकी कामना करती हैं। (कर्णपर्व ४५—४६ अ०)

यनान ग्रीसके प्राचीन भूगोलवेत्ताओंने इस देशका नाम आड्रेष्टि (Adraistae), सुद्रकि (Sudrakæ) और आरेष्टी (Arestœ) लिखा है। वाहीकोंके समय तक्षशिला नगरमें राजधानी प्रतिष्ठित थी। वाहीक देखो।

आरट्टज (सं० त्रि०) आरट्टदेशे जायते, आरट्ट-जन-ड। १ आरट्ट देशोद्भव, आरट्ट मुल्कमें पैदा होनेवाला। (पु०) २ आरट्टदेशवासी, आरट्टका बाशिन्दा। ३ आरट्ट देशीय घोटक, टट्टू।

आरड़ा—बङ्गालदेशान्तर्गत मेदिनीपुर जिलेका एक ब्राह्मणप्रधान स्थान। यहां बांकुड़ारायके समय कविकङ्कणने अपना चण्डी बनायी थी।

आरण (वै० क्ली०) आङ् पूर्वादर्तेर्ल्युट्। १ गाम्भीर्य, ऊमक,गहरायी। २ अन्धकूपादि, अन्धा कूआं वगैरह।

"अन्तकं जसमानमारणे।" ऋक् १।११२।६।
'आरणमन्धकूपादि तत्रासुरैः।' (सायण)

आरणज (सं० पु०) देवविशेष, एक देवता। यह कल्पभवका भाग पूरा करते हैं।

आरणाल (सं० क्ली०) काञ्जिक, कांजी। निस्तुषी-कृत आम गोधूमसे बननेवाला काञ्जिक आरणाल कहाता है। (परिभाषाप्रदीप ३य खण्ड)

आरणालक, आरणाल देखो।

आरणि (सं० पु०) आ-ऋ-अनि। अर्तिसृधृधम्यश्यवितृभ्यो-ऽनिः। उण् २।१०३। आवर्त, जलका घूर्णन, गिर्दाब, भंवर, पानीका चक्कर।

आरणेय (सं॰ पु॰) अरण्यां भवः, अरणी-ढक्। १ शुकदेव। अरणीसुत देखो। (क्ली॰) अरणिमरणि-हरणमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः। २ महाभारतके वन-पर्वमें अरणिहरण-अधिकारपर व्यासकृत अवान्तर पर्व विशेष। वनपर्वमें ३११से ३१४ अध्याय पर्यन्त आरणेयपर्व वर्णित है। (त्रि॰) ३ अरणि-सम्बन्धीय। अरणि देखो।

आरणेयपर्व (सं॰ क्ली॰) आरणेय देखो।

आरणेयपर्वन् (सं॰ क्ली॰) आरणेय देखो।

आरण्य (सं॰ त्रि॰) अरण्ये भवः, ण। १ वनजात, सहरायी, जङ्गली। (पु॰) २ वनजात पशु प्रभृति, जङ्गली जानवर। पैठीनसिने वनज पशु सात प्रकारके कहे हैं,—महिष, वानर, भल्लूक, सर्प, रुरु, पृषत और मृग। ३ अकृष्टपच्य धान्यविशेष, जङ्गली धान। इसका पर्याय तृण-धान्य वा नीवार है। ४ ज्योतिषोक्त मकर राशिसे प्रथम अर्ध-दिवसीय सिंहराशि। ५ मेष-राशि। ६ वृषराशि। ७ अरण्यजात गोमय। अरण्यं अरण्यवासमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः। ८ युधिष्ठिरादिके वनवास अधिकारपर व्यासकृत भारतान्तर्गत पर्व-विशेष। प्रायः इसे वनपर्व कहते हैं। ८ रामके वनवास अधिकारपर वाल्मीकि-कृत आरण्यकाण्ड।

आरण्यक (सं॰ त्रि॰) अरण्ये भवः, वुञ्। अरण्यान्मनुष्ये। पा ४।२।१२९। १ वनजात, सहरायी, जङ्गली। २ अरण्य गेय, जङ्गलमें गाने लायक। (क्ली॰) ३ वेदका अंश विशेष। संसार छोड़ अरण्यमें जा अभ्यास करनेसे वेदके इस अंशको आरण्यक कहते हैं। वेदके प्रत्येक ब्राह्मणका स्वतन्त्र आरण्यक रहता है। ऐत-रेयका ऐतरेय, तैत्तिरीयका तैत्तिरीय, शतपथका वृहद् और कौषीतकी-ब्राह्मणका कौषीतकी आरण्यक है। यह उपनिषत्का मूल होता है। उपनिषत्में जो ब्रह्मतत्त्व विशेष रूपसे कहते, आरण्यकमें उसका मूल-सूत्र देखते हैं। समस्त विषय खोलकर लिखते— वानप्रस्थ लेनेसे मानव किस प्रकार आचार-सम्पन्न होते, कौन पथ पकड़नेसे ब्रह्मज्ञान लाभ करते और कैसे ब्रह्मको पहंचानते हैं। वेदकी संहिता शेष करने पर आरण्यक पढ़ना पड़ता है।

"वेदस्याधीत्य चाप्यन्तमारण्यकमधीत्य च।" (मनु ४।१२४)

योगाभिलाषी पुरुषको योगशास्त्र और आरण्यक अध्ययन करना चाहिये,—

"ज्ञेयं चारण्यकमहं यदादित्यादवाप्तवान्।
योगशास्त्रञ्च मत्प्रोक्तं ज्ञेयं योगमभीप्सता॥" (याज्ञवल्क्य)

४ भारतान्तर्गत वनपर्व। ५ रामायणके अन्तर्गत आरण्यकाण्ड।

आरण्यककाण्ड (सं॰ क्ली॰) १ रामायणका ३य काण्ड। २ शतपथब्राह्मणका १४श भाग।

आरण्यकुक्कुट (सं॰ पु॰) अरण्ये भवः आरण्यवासी कुक्कुटश्चेति, कर्मधा॰। वनकुक्कुट, जङ्गली मुर्गा। मांस स्निग्ध, पुष्टिकर, श्लेष्मवर्धक, गुरु और वात, पित्त, क्षय, वमि एवं विषम ज्वरको मिटानेवाला है। (स्त्री॰) जातित्वात् ङीप्। आरण्यकुक्कुटी।

आरण्यगान (सं॰ क्ली॰) आरण्यं वनगेयं गानम्, शाक॰ तत्। सामवेदात्मक गानग्रन्थ विशेष। सामगान चार प्रकारका होता है,—गेय, आरण्य, उह्य और उह्य। छन्दोगब्रह्मचारियोंको कयी वत्सर यह गान सीखना और भिन्न भिन्न अवस्थामें रहना पड़ता था। अरण्यमें ठहर एक वत्सरके मध्य वह आरण्यगान अभ्यास करते रहे। इसीसे आरण्यगान नाम हुआ है।

यह प्रथम तीन पर्वमें विभक्त है,—अर्क, द्वन्द्व और व्रतपर्व। अर्कमें दो, द्वन्द्वमें एक और व्रतपर्वमें तीन प्रपाठक पड़ता है। सब मिलाकर आरण्य-गानमें छः प्रपाठक हैं। प्रत्येक प्रपाठक दो भागमें विभक्त है। एक-एक भागमें १०से ३४ पर्यन्त गान होते हैं। अन्यान्य गानकी तरह आरण्यगान भी ऋङ्मूलक है। किन्तु कयी गानका न तो ऋक्मन्त्र मिलता और न सायणाचार्यकी व्याख्याका ही ठिकाना लगता है। कोई-कोई आरण्यगानको गेयगानका अन्यभाग सम-झता, किन्तु यह विषय सम्प्रदायसिद्ध नहीं है।

आरण्यकसंहिता (सं॰ स्त्री॰) छन्द आर्चिकका षष्ठ-प्रपाठक। इसे अरण्यमें पढ़ना पड़ता है।

आरण्यकार्चिक (सं॰ क्ली॰) आरण्यसंहिता देखो।

आरण्यगोमय (सं॰ पु॰) वन्य गोमय, जङ्गली गोबर, बिनवां कण्डा।

आरण्यपर्व, आरण्य देखो।

आरण्यपर्वन्, आरण्य देखो।

आरण्यपशु (सं० पु०) कर्मधा०। स्मृत्युक्त महिषादि सप्तप्रकार पशु। आरण्य शब्दमें विवृति देखो।

आरण्यमक्षिका (सं० स्त्री०) दंशक, मच्छर, डांस।

आरण्यमुद्ग (सं० पु०) वनमुद्ग, जङ्गली मूग।

आरण्यमुद्गा (सं० स्त्री०) आरण्यमुद्गस्येवाकारे पर्णोऽस्यस्याः, अर्श आदित्वात् अच्-टाप्। मुद्गपर्णी, मुगानी।

आरण्यराशि (सं० पु०) निपातनात् कर्मधा०। १ प्रथमार्ध दिवसीय सिंह लग्न। २ प्रथमार्ध दिवसीय मकर लग्न। ३ मेषराशि। ४ वृषराशि।

आरण्यविम्बिका (सं० स्त्री०) तुण्डिका, तरोयी।

आरण्योपलभस्म (सं० क्ली०) वनकरीषभस्म, जङ्गली गोबरको खाक।

आरत (सं० त्रि०) शान्त, वेहरकत, सीधा। (हिं०) आर्त देखो।

आरति (सं० स्त्री०) आ-रम-क्तिन्। १ उपराम, निवृत्ति, लवक्कुफ, ठहराव। २ नीराजन, आरत्रिक, आरती। देवताकी प्रतिमाके समीप ब्राह्मण पूजान्तमें बहु प्रकार आरति उतारते हैं। पञ्चाङ्ग आरति ही अधिक रहती, जा पहले दीपमाला, दूसरे वारिपूर्ण शङ्ख, तीसरे धौतवस्त्र, चौथे आम्र अथवा बिल्वादि पत्र और पांचवें प्रणिपातसे होती है। किसी-किसी स्थलमें दीपमालाके बाद प्रज्वलित कपूर द्वारा भी आरति करते हैं। साधारणतः पञ्च वर्तिकाविशिष्ट रहनेसे आरति उतारनेकी दीपमालाको पञ्चप्रदीप कहते हैं। कभी-कभी एक, सात या उससे भी अधिक शिखाविशिष्ट प्रदीपसे आरति होती है। घृत, कपूर, अगुरु-चन्दन प्रभृति उत्तम उत्तम द्रव्य द्वारा ही दीपकी वर्तिका बनाना प्रशस्त है। तैलसे आरति करना निकृष्ट समझा जाता है। आरति उतारते समय प्रतिमाके पदतलपर चार, नाभिदेशपर दो, मुखमण्डलपर एक और समस्त अङ्गपर सात बार दीपमाला घुमाना पड़ती है। घण्टा, शङ्ख और वाद्यादि बजाते रहते हैं। इससे साधारणके मनमें अभिनव उत्साह और भक्तिभावका आविर्भाव होनेपर अनिर्वचनीय आनन्द आता है।

पहले हिन्दुस्थानमें पत्नी प्रतिदिन पतिकी आरती करती थी। आजकल केवल विवाहमें वरकी आरती उतारते हैं। कहीं-कहीं पूजादिमें आचार्यकी भी आरती होती है। ३ आरति उतारनेका पात्र। ४ आरतिका स्तोत्र।

आरती (हिं०) आरति देखो।

आरथ (सं० पु०) ईषद्रथः, प्रादि० समा०। एक अश्वद्वारा गमन-साधन रथ, एक्का।

आरद्ध (सं० त्रि०) आरध-क्त। १ संसिद्ध, दुरुस्त। (पु०) तिकादित्वात् फिञ्। २ सेतुपुत्र। (ब्रह्माण्डपु०) मत्स्यपुराणमें आरद्द और विष्णुपुराणमें इनका नाम आरद्वत् लिखा है। आरद्द देखो।

आरद्धायनि (सं० पु०-स्त्री०) आरद्धका पुत्र वा कन्या-रूप अपत्य।

आरन (हिं०) आरण्य देखो।

आरनाल (सं० क्ली०) आर्छति आ-ऋ-अच् आरः, नल गन्धे घञ् नालः; आरः दूरगामी नालो गन्धो यस्य, बहुव्री०। काञ्जिक, कांजी। कांजी देखो।

आरनालक (सं० क्ली०) आरनाल स्वार्थे कन्। काञ्जिक, कांजी। 'आरनालकसौवीरकुल्माषाभिषुतानि च।
अवन्तिसोमधन्याम्लकुञ्जलानि च काञ्जिके॥' (अमर)

आरपार (हिं०-क्रि०-वि०) तीरान्तर, पार, वारपार, इस किनारेसे उस किनारे तक। यह शब्द संस्कृतके 'पार'में तदनुयायी 'आर' मिलानेसे बना है।

आरपार करना (हिं० क्रि०) बेधना, सालना।

आरबल (हिं०) आयुर्बल देखो।

आरब्ध (सं० त्रि०) आ-रभ-क्त। १ कृतारम्भण, प्रस्तावित, शुरू किया हुआ। (क्ली०) भावे क्त। २ आरम्भ, इब्तिदा, उठान।

"व्रतयज्ञविवाहेषु श्राद्धे होमेऽर्चने जपे।
आरब्धे सूतकं नस्यादनारब्धे तु सूतकम्।" (तिथितत्त्वधृत विष्णु)
'आरब्ध परिसमाप्तिक्रियाकालो वर्तमानः।' (दुर्गा)

आरब्धकर्म (सं० क्ली०) न्यायमतमें—१ कर्मसामग्री सम्पादन। जिन जिन वस्तुवोंसे कार्य सम्पादन होता,

उनका संग्रह करना आरब्धकर्म कहाता है। जैसे घटादि प्रस्तुत करनेको दण्ड, चक्र (चाक) प्रभृति सामग्रीका एकत्र किया जाना और ग्रन्थस्थलमें मङ्गलाचरण लगाना। वेदान्ती, फल देनेके लिये सम्मुखीन पुण्यपापान्यतरात्मक अदृष्ट विशेष समझते हैं।

आरब्धि (सं० स्त्री०) आरम्भ, इब्तिदा, शुरू।

आरभट (सं० पु०) शूर, वीर, दिलावर शख्स, बहादुर आदमी। २ शौर्य, बहादुरी।

आरभटी (सं० स्त्री०) आरभ्यते ऽनया, आ-रभ-अटि-ङीप्। १ अर्थविशेषयुक्त नाट्यरचना, अखाड़ेमें अजीब और मुहीब कैफ़ियतका इज़हार। माया, इन्द्रजाल, युद्ध, क्रोध, उद्भ्रान्ति, वध, बन्धन, नानाप्रकार छलना, प्रवञ्चना, दम्भ, मिथ्यावाक्य आदिसे युक्त वृत्तिको आरभटी कहते हैं। परित्याग, अधःपतन, वस्तु उत्थापन और सम्फेट चार अङ्ग हैं। २ सरस्वतीकण्ठाभरणोक्त शब्दालङ्काररूप वृत्तिविशेष। ३ धृष्टता, दिलावरी।

आरभमाण (सं० त्रि०) आरम्भ करनेवाला, जो पूरे उतारनेके इरादेसे शुरू करता हो।

आरभ्य (सं० त्रि०) आरभ्यते, आ-रभ कर्मणि ण्यत्। १ आरम्भणीय, शुरू होने काबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ आरम्भ करके, उठाकर।

"आरभ्य कुतपे श्राद्धं कुर्यादारौहिणं बुधः।" (स्मृति)

बौद्ध इस शब्दका अर्थ 'सम्बन्धीय' लगाते हैं।

आरभ्यमाण (सं० त्रि०) आरम्भ होनेवाला, जो शुरू किया जाता हो।

आरमण (सं० क्लो०) आ-रम भावे ल्युट्। १ आराम, विश्राम, अमन, इतमीनान्। आरभ्यतेऽनेन, करणे ल्युट्। २ आरति-साधन, आरामगाह। ३ आह्लाद-ग्रहण, अखज़-खुरमी।

आरमेनिया—काकेशस पर्वत और कृष्णसागरका उत्तरवर्ती एक देश। यह अक्षा० ३७° ३०´ से ४१° ३०´ उ० और द्राघि० ३७° से ४८´ पूर्व तक विस्तृत है। आरमेनियामें ईरान्, रूस और तुर्कस्थानका अधिकार है।

भूगोलको देखते आरमेनिया ईरान्‌की बड़ी अधित्यकासे पश्चिम एकखण्ड है। समावृत पर्वतश्रेणी उत्तर-पूर्वसे दक्षिण-पश्चिमको दौड़ी और आरारातमें धरातलसे १७००० फीट ऊपर चढ़ी है। शैलमालाके बीच दीर्घ एवं उन्नत दरी पड़ती, जिसमें निम्न भूमिको जल ले जानेवाले विषम गिरिकन्दर मिलनेसे पहले नदी बहती है। आरमेनिया कहीं आर्केयिक और कहीं पालेओजोयिक शिलात्मक है। दक्षिणकी ओर वान-ह्रदको बढ़नेवाले आग्नेय-गिरिके भड़कनेसे शिला विच्छिन्न हो गयी है। अरासके उत्तर अलगेउज-दाघ और अरज़रूमसे दक्षिण बिङ्गूल-दाघ बहुत उच्च पर्वत है। यूफ्रेतिस, तिग्रिस, अरास, कुरकस् और केलकिट-इर्माक नदी प्रधान है। वान ५१०० और उरमिया ४००० फीट दीर्घ चार ह्रद है। सेवान (५८७० फीट) तथा चलदीर ह्रद क्रमशः अरास एवं कार्सचाई नदीमें गिरता है। अधित्यकाका आकार निर्जन और एकरूप देख पड़ता है। दरीमें प्रशस्त कृषियोग्य भूमि विद्यमान है। पर्वतपर वृक्ष तो बहुत है, किन्तु वृक्षका नाम नहीं। यफ्रेतिस और तिग्रिसका गिरिकन्दर वन्यता तथा श्रेष्ठतामें अद्वितीय है। जलवायुमें भेद रहता है। उच्च स्थानमें हेमन्त-काल दीर्घ लगता, अधिक शीत पड़ता और ग्रीष्म अल्प, शुष्क एवं उष्ण ठहरता है। अरज़रूममें कभी-कभी जून मास बर्फ गिरता है। अरास दरी और पश्चिम तथा दक्षिण प्रान्तका जलवायु अधिक संयत है। अधिकांश नगर ४०००से ६००० फीट ऊंचे बसा है। साधारणतः गिरिनितम्बपर ग्राम बसाते और शीतातपकी तीव्रतासे बचनेके लिये पर्वतगात्र कुछ कुछ खोदकर भवन बनाते हैं। अधिकांश प्राचीन नगर अरक्सेसके निकट प्रतिष्ठित थे। आरमेनिया खनिज द्रव्यसे सम्पन्न है। अनेक उष्ण एवं शीतल निर्झर विद्यमान है। स्थानानुसार उद्भिद्में परिवर्तन पड़ता है। धान्य तथा कठिन फल उच्च भूमिपर उपजता और अरक्सेसकी उष्ण एवं जलसिक्त उपत्यकामें चावल बोया जाता है। ग्रीष्ममें उष्णताका अधिक प्राबल्य रहनेसे अङ्गूर बहुत ऊंचे पर्वतपर उगता और कार्पास तथा दक्षिणके अन्य फलका वृक्ष अधिक गभीर दरीमें लगता है। कुर्द-समुदायका

पालन करनेवाले गोप्रचरमें प्राचीन सुप्रसिद्ध घोटक और अश्वतर चराया जाता था। नदीमें चेंटी और वान-ह्रदमें एक किस्मकी छोटी मछली मिलती है। इस देशमें आश्चर्यभूत कृत्रिमरचनाका आधिक्य है। आरारातके दृश्यकी प्रशंसा कोरेनेके मूसा और फार्बके लाजेरस-जैसे स्वदेशानुरागी ऐतिहासिकने बहुत लिखी है।

आरमेनियामें ग्रिगोरीय, रोमनकाथोलिक, प्रोटेष्टाण्ट अरमनी, अन्य ईसायी, यहूदी, जिप्सी और मुसलमान लोग रहते हैं। अरज़रुम, वान, बिटलिस, खरपुट, दयारबकर, सिवास, अलेपो, अदान और ट्रेबिजाण्ड नामक सात तुर्की विलायतमें प्रायः ६०००००० मनुष्योंका निवास है। पृथिवीपर कुल २८००००० अरमनियोंका होना अनुमान किया जाता है। किन्तु वर्तमान युरोपीय युद्ध बढ़नेपर तुर्कोंने अपनी विलायतके कितने हो अरमनी मार डाले हैं।

इतिहास—विषम पर्वतमें कठोर पार्वत्यजाति रहती है, जो किसीकी अधीनता स्वीकार नहीं करती। आक्रमण होते समय निम्नभूमिके रहनेवाले पर्वतों-पर भाग जाते थे। यह देश पश्चिम और पूर्वके बीच उद्घाटित द्वारमार्ग सदृश विद्यमान है। बहुत प्राचीन समयसे ईरानी अधित्यकाको एशिया-मायिनरके उर्वर स्थान तथा रक्षित पोताश्रयसे मिलानेवाला मार्ग अधिकार करनेके लिये लोग लड़ते-झगड़ते आये हैं।

आरमेनियाके आदिम अधिवासी अज्ञात हैं। किन्तु ई॰के ८वें शताब्द मध्य यहां वह लोग बसते, जो सामान्य रूपसे अनार्य भाषा बोलते थे। इन पूर्व अरमनियोंमें असीरीय और यहूदी जातिके कुछ सेमेटिक आ मिले। ६४० और ६०० ई॰के पहले आर्योंने आरमेनियाको अधिकार किया था। उन्होंने अपनी भाषाका प्रचार बढ़ाया। ईरान और पारथियाके लोग फौजमें भरती किये जाते थे। राजनैतिक दृष्टिसे जेता और विजेता मिलकर एक हो गये। किन्तु नगरके अतिरिक्त अन्य स्थानमें विवाहादि सम्बन्ध चला न था। अरबों और सेलजुकोंके आक्रमण करने बाद कुस्तुनतुनिये तथा सिलसियेमें अनेक आर्य एवं सेमेटिक अरमनी जा बसे। मुग़लों और तातारियोंने अभिजात राज्य बिगाड़ डाला था। इसीसे समझा जा सकता, वर्तमान अरमनियोंके आकार प्रकार और आचार-व्यवहारमें क्यों विभेद पड़ता है। टारस पर्वतके निभृतस्थानवासी कृषक दीर्घकाय एवं सुन्दर निकलते, यद्यपि किञ्चित् तीक्ष्ण वदनाकृति-युक्त, चपल और बलिष्ठ लगते हैं। आरमेनिया और एशिया-मायिनरके लोग मांसल, संहत एवं स्थूल आकृतिविशिष्ट हैं। केश सरल एवं कृष्णवर्ण और घ्राण विशाल तथा वक्र रहता है। वह भूमि-कर्षण भली भांति करते, किन्तु निर्धन, मूढ़, अनभिज्ञ एवं निरुत्साह होते और ई॰से ८०० वर्ष पहलेके अपने पूर्वपुरुषोंकी तरह आधी-सुरङ्गके घरमें बसते हैं। नगरवासियोंकी आकृति ईरानी आदर्श-जैसी देख पड़ती है। वह शिल्प, धनागारपतित्व तथा व्यवसाय करते और अपने श्रम, सूक्ष्मज्ञान, कार्य एवं धीर चित्तके लिये बड़ी योग्यता रखते हैं। रोमक समयमें स्कोदिया, चीन और भारतके साथ उनके पूर्वपुरुष भली भांति व्यापार चलाते थे। उत्तम श्रेणीके पुरुष सम्यक् परिष्कृत, शिक्षित तथा तुर्कस्थान, रूस, ईरान और मिश्रमें उच्च पदपर प्रतिष्ठित हैं। मूलतः अरमनी पूर्वके लोग होते और यहूदियोंकी तरह जिस दशामें पड़ जाते, उसीके अनुसार अपना कार्य चला लेते हैं। वह मितव्ययी, गम्भीर, उद्यमशील और मेधावी हैं। आचरणकी दृढ़तासे उन्होंने कठिनसे कठिन परीक्षामें अपने धर्म और स्वदेशाभिमानको बचाया है। प्राचीन रीति-नीतिके पूरे पक्षपाती होते भी उन्नति करनेका अभिलाष रखते हैं। किन्तु उन्हें लाभके लिये बड़ी लिप्सा रहती है। तुच्छ विषयपर विवाद बढ़ाते, स्वार्थपर और अस्थिरचित्त होते हैं। अति-शयोक्ति और कूटप्रबन्धकी प्रवृत्तिसे अरमनियोंके इतिहासपर अभद्र प्रभाव पड़ा है। धार्मिक स्पर्धासे उनमें गभीर पार्थक्य आ गया है। अनियत दम्भ, और बुद्धिचापल्य जातीय उन्नतिमें बाधा डाल रहा है। निर्दय शासनके अधीन बहुत दिन रहनेसे लोगोंमें

निःसन्देह साहस, स्वावलम्बन, सत्य और आर्जवका अभाव बड़ा है।

आरमेनियाका आदि इतिहास काल्पनिक और बियायिनीय नृपतियोंके पारम्पर्यपर आश्रित है। असीरीय और बाबिलोनीय सम्राटोंने जिन यहूदियोंको कैद कर यहां बसाया था, उन्होंने ही अनेक वृत्तान्त बताया। सेमिरामिस और आरा नरेशको कथा वेनस (Venus) तथा आदोनिस्‌की कल्पनासे मिलती है। टिग्रेनेसका गुण बहुत गाया और उनके शत्रु लुकुल्लुस्‌का भी वैभव देखाया गया है। सम्भवतः बियायिनीय राज्यको कायखरेसने उखाड़ा था। उसके बाद ही आर्य और अरमनियोंके पूर्वपुरुष इस देशमें आबसे। किन्तु उनके फैलनेमें विलम्ब हुआ था। ई०से ४०१ वत्सर पूर्व जब दश हज़ार आर्य अधित्यका पार कर ट्रेबिजाण्ड गये, तब उन्हें कहीं अरमनी न मिले। मेद और ईरानियोंने आरमेनियाको मण्डल-राज्य बनाया था। ई०से ३३१ वर्ष पहले अरबेलाका युद्ध समाप्त होनेपर अलेकसन्दर और उनके उत्तराधिकारी, शासक नियुक्त कर इस देशका राज्य चलाते रहे। ई०से ३१७-२८४ वर्ष पहले अर्दवतेस्‌ने सेलीकीवंशको अधीनतासे अपनेको छोड़ाया और ई०से १९० वत्सर पूर्व जब रोमकोंने अन्तिओकस्‌को हराया, तब बड़ी आरमेनिया तथा छोटी आरमेनियाके शासक अर्तक्सियास्‌ एवं जदुरियादेस्‌ने रोमको अनुमतिसे अपनेको स्वतन्त्र नृपति बनाया। ई०से ९४-५६ वर्ष पहले अर्तक्सियास्‌ने अरक्सेसपर अर्तक्सता नगरको राजधानी किया और उनका सुप्रसिद्ध उत्तराधिकारी पञ्चम मिथ्रदातेसका जामाता तिग्रनेस हुआ। तिग्रनेसने उत्तर मेसोपोटेमियामें तिग्रनोसर्ता नामक नवीन राजधानी निनेवेह तथा बाबिलनके आदर्शपर प्रतिष्ठित कर यूनानी और दूसरे कैदी बसाये थे। अपने ससुरको राज्य न सौंपनेसे तिग्रनेसको रोमके साथ लड़ना पड़ा। ई०से ६८ वर्ष पहले लुकुलुसने तिग्रनेसको तिग्रनोसर्ताके द्वारपर ही जीत लिया था। ई०से ६६ वर्ष पहले तिग्रनेसने अपना राज्य पोम्पेको सौंप दिया। पोम्पेने मिथ्रदातसको फोसिसके पार खदेर भगाया था। उन्हें रोमके करद राज्यकी भांति आरमेनियापर शासन करनेको आज्ञा मिली।

लुकुल्लुस और पोम्पेमें युद्ध होनेसे पार्थियाके साथ रोमका सम्बन्ध विरल पड़ गया था। रोमके अधीन रहते भी आरमेनिया भौगोलिक स्थिति, सामान्य भाषा, धर्म, विवाहव्यवहार और अस्त्रशस्त्र एवं परिच्छदादिकी समतामें पार्थियासे पृथक्‌ न रहा। फिर एशिया-मायिनरको तरह रोमका प्रभाव भी इस देशपर अधिक बढ़ा न था। बहुत दिनतक पूर्व और पश्चिमके नृपति अपना अधिकार जमानेको लड़े-झगड़े। ३८७ ई०को रोम और ईरानने आरमेनिया आपसमें बांट लिया था। रोमका विभाग शीघ्र ही दियोसेसिस-पोण्टिकामें मिलाया गया। ईरानी हिस्सेपर ४२८ ई०तक एक अर्सकिवंशीय नृपति करद राज्यकी तरह शासन चलाते रहे। पीछे सम्राट्‌के निर्वाचनानुसार ईरानी और अरमनी शिष्टजनोंको इस प्रान्तका अधिकार सौंपा गया। विभाग होनेसे पहले सेण्ट-ग्रिगोरीने तिरिदातसको ईसायी धर्मकी दीक्षा दी थी। उन्होंने ईसायी धर्मको राज्यका धर्म बनाया, जिसे कनस्तन्ताइनने आदर्शकी भांति व्यवहार किया। वंटवारेके बाद अरमनी वर्णमालाका आविष्कार हुआ था। ४१० ई०को बायिबिलका अनुवाद देशभाषामें बना। इससे अरमनी परस्पर मिल गये और यूनानियोंका धर्माधिकार रुकनेपर कुस्तुन्तुनियाका पौरोहित्य-सम्बन्धी आश्रय छोड़ बैठे। ४९१ ई०को पाट्रियार्कने चालसेदोनको मन्त्रणासभाका आदेश बिलकुल सुना न था। निर्वाचित शासकोंके समय ईसायियोंपर अनेक अभियोग आया। वह बलपूर्वक मगी धर्म ग्रहण करनेपर वाध्य हुये थे। अराजकताका प्रभाव भी बहुत बढ़ा। असीरीयों पार्थियों, ईरानियों, सीरीयों एवं यहूदियों और कहीं कहीं अर्सकीवंशके अधीनस्थ शासकोंके वंशका अभ्युदय हुआ था। निर्वाचित शासकोंमें बहुदी बग्रतिद और ईरानी ममिगोनीय रहे। ५७१-५७८ ई०को ईरानी ममिगोनीयोंके प्रधान

वर्तान बैजन्तायिन्की सहायतासे स्वतन्त्र बन बैठे। ६३२ ई०को हेराक्लियसके विजयसे आरमेनिया फिर बैजन्तायिनोंके हाथ पड़ गया था। किन्तु ६३६ ई०को अरबी आक्रमणके बाद जो युद्ध हुआ, उससे खलीफाओंको इस देशका अधिकार मिला। उन्होंने अरबी और अरमनी शासक नियुक्त किये थे। १म बग्रतिद-अशोट नामक शासकको ८८५ ई० समय खलीफा मोतमिदने आरमेनियाके सिंहासनपर बैठाया। उन्होंने जो वंश प्रतिष्ठित किया, वह १०७९ ई०को २य कगीगके साथ समाप्त हो गया था। ९०८ ई०को खलीफा मोकतदिरने वानके शासक अर्त्सनियन-कगीगको उसी प्रान्तका राजा बना दिया। वान और सिवास प्रान्तमें १०८० ई०तक उनके वंशजोंने राजत्व चलाया था। ९६२से १०८० ई०-तक कार्स और जार्जियामें बग्रतिदोंने अपना वंश बढ़ाया। उपरोक्त प्रान्तमें इस वंशके लोग १८०१ ई०तक राज्य करते रहे, पीछे रूसके पैर जमे। ९८४ से १०८५ ई०तक दियारबक्र एवं मेलासगीर्दके बीचका देश अरबों, बैजन्तायिनों तथा सेलजुकों और मेरवानीवंशके अधीन रहा। अरबोंका आक्रमण होनेसे कितने ही सभ्य अरमनी कुस्तुन्तुनिया भाग गये थे। वहां उन्होंने प्राचीन रोमकोंके साथ विवाह-व्यवहार बढ़ाया और सिपाही बन बहुतसा धन कमाया। अर्सकि वंशज अर्त-वासदेसने बलपूर्वक दो वर्षतक बैजन्तायिन सिंहासनको अपने अधिकारमें रखा था। आर्दम्बूरीय ५म लिवो और जोहन जिमीसिस् सम्राट् बने। मेमि-गोनीय मानुयेल और दूसरे लोग साम्राज्यके सर्वोत्तम सेनापति रहे। ९९१ और १०२१ ई०को २य वासिलने आरमेनियापर आक्रमण किया था। अन्तको वासपुरागान नृपति सेनेकहेरिमने अपना राज्य सिवास और उसको सीमाके साथ उन्हें सौंप दिया। वह कितने ही अरमनियोंके साथ फिर सिवास-में आकर रहने लगी। वासिल आरमेनियामें बड़े बड़े दुर्ग बनाना और उनमें सेना रख पूर्व सीमाप्रदेशको रक्षा करना चाहते थे। किन्तु उनके उत्तराधिकारियोंके कारण यह बात हो न सकी। उन्होंने प्रान्त रक्षाको न देख नास्तिक लोगोंको धार्मिक बनानेपर ध्यान दिया था। अनी-नृपति कगिग २य कप्पादोकियाके बदले अपना राज्य छोड़नेपर वाध्य हुये। सेलजूकोंके आक्रमण और बैजन्तायिन सिपाहियोंके उपप्लावनसे लोक त्राहि त्राहि पुकारने लगे थे। सन् १०७१ ई०को आल्प-असलान द्वारा ४र्थ रोमनसके हारने और पकड़े जाने बाद आरमेनिया सेलजूक साम्राज्यका एक अंश हो गया। किन्तु सन् ११५७ ई०को इस देशमें फिर अरबों, कुर्दों और सेलजूकोंके छोटे-छोटे राज्य प्रतिष्ठित हुये। अन्तको सन् १२३५ ई०के समय मुगलोंने आक्रमणकर सबको मार भगाया था।

सेलजूकोंके आनेसे तीन शताब्द बाद आरमेनियामें पशुचारणोपजीवी लोग घूमते रहे। उनका प्रधान उद्देश्य एशिया-मायिनरको जाते समय राहमें पशुवोंके लिये गोचरभूमि ढूंढ़ना था। किन्तु तैमूरने इस देशको बहुत नष्ट किया। कृषक समभूमिसे भगाये और क्षेत्र मट्टीमें मिलाये गये थे। अनेक अरमनी पर्वतमें आ छिपे। उन्होंने मुसलमानी धर्म ग्रहण और कुर्दोंके साथ विवाह व्यवहार स्थापन किया था। कितनों होने कुर्द सरदारोंको चौथ दे अपना प्राण बचाया और कितनों होने काप्पादोकिया या सिलि-शियामें जा घर बनाया। उस स्थानमें १०८० ई०को बग्रतिड रूफेनने एक राज्य जमाया, जो छोटी आरमेनियाको राजधानी कहाया था। तीन शताब्दतक इस राज्यमें उपद्रव होते रहा। चारो ओर मुसलमान बसते और ईसाइयोंको धूमधामसे इटालीके साथ व्यापार करते देख जलते थे। १३७५ ई०को मिस्रने इसे अधिकार किया। क्योंकि गृहविवाद बढ़ा और लूसीगन नरेशोंका प्रजामें रोमन-चर्चको प्रतिष्ठा करनेको दांत लगा था। सिलिशियाको प्रशंसा सार्वजनिक गीतोंमें सुन पड़ती है। टारसपर्वतके जीटन प्रान्तमें अरमनियोंको एक छोटी श्रेणी अपनी स्वतन्त्रता आजतक अक्षुण्ण रख सकी है। तैमूरके मरनेपर आक तथा काराकुयुन-लीका आधिपत्य मिला और कोमल शासनके कारण

कैथोलिकस्‌का अधिष्ठान १४४१ ई०को एच्‌मियाड-जिनमें फिर प्रतिष्ठित हुआ। पहले वह सेलजुक आक्रमणके समय सिवास और वहांसे छोटे आरमेनियामें उठ गया था।

१५१४ ई०को १म सलीमके ईरानी अभियानसे यह देश उस्मानी तुर्कोंके हाथ लगा। इदरिस नामक बिटलिसके कुर्द ऐतिहासिकपर बन्दोवस्तका भार पड़ा। उन्होंने देखा, कि कृषियोग्य स्थान प्राय: शून्य पड़ा और पर्वतमें स्वाधीन कुर्दों, अरब, तथा अरमनी दुर्गाधिपोंका परस्पर विग्रह बढ़ा था। रिक्त स्थानमें कुछ बसाये और आरमेनियाके छोटे-छोटे विभाग बनाये गये। समतलभूमिमें तुर्की अफसर और पर्वतपर स्थानीय नृपति शासन करते थे। इस नीतिसे देशकी अशान्ति मिटी, किन्तु कुर्दोंकी उन्नति अधिक हुई। १५३४ ई०के समय पश्चिमकी ओर अङ्गोरातक कुर्द फैल पड़े थे। १५७५ और १६०४ ई०को ईरानियोंने आक्रमण किया। शाह अब्बास कयी हज़ार अरमनी जुल्फेसे अपनी नवीन राजधानी इस्फहान ले गये थे। १६३९ ई०की सन्धिके अनुसार एरिवान प्रान्त ईरानको मिला। १८२८-२९ ई०को रूस और तुर्कस्थानमें युद्ध होने तथा आर्पा-चायीतक रूसी सीमा बढ़ आनेपर अनेक अरमनी तुर्की राज्य छोड़ रूसी प्रान्तमें जा बसे थे। १८७७-७८ ई०के युद्धमें भी कुछ लोगोंने वैसा ही काम किया। १८३४ ई०को कुर्दोंका स्वातन्त्र्य शिथिल पड़ा और १८४३ को बेदरखान्‌ बे तथा १८८० को शेख़ आबिदुल्लका भड़काया बलवा अच्छी तरह दवाया गया था।

१४५३ ई०को २य मुहम्मदने कुस्तुन्तुनिया अधिकार कर मुसलमान-भिन्न प्रजाको मुल्ला या प्रधान धर्मयाजकोंकी साधारण दीवानी, फौजदारी और धर्म-सम्बन्धीय यावतीय शासनकी पूर्ण क्षमता दी। इस नियमानुसार ब्रूसाके अरमनी मुल्लाको कुस्तुन्तुनियामें प्रधान आचार्यका और मन्त्रीका पद मिला। अरमनी अपना धर्म स्वतन्त्रतापूर्वक निर्वाह और सन्तानको धार्मिक शिक्षा दे सकते थे। किन्तु पादरीका प्रभाव घट गया। १८६२ ई०को नवीन व्यवस्था बननेसे प्रधान धर्माचार्य तो अपने पदपर प्रतिष्ठित रहे, किन्तु उनके प्रकृत अधिकार १४० सभ्योंकी समितिके हाथ आ पड़े। यह लोग ग्रिगोरीय अरमनी कहाते थे।

१३३५ ई०को छोटे आरमेनियाका पाश्चात्य शक्तियोंके साथ सम्बन्ध बढ़नेपर एक अरमनी समाज बना, जिसने रोमक-चर्चका मत ग्रहण किया। १४३९ ई०को फ्लोरेन्सकी मन्त्रि-सभामें इस समाजको 'संयुक्त अरमनी चर्च' उपाधि मिला था। किन्तु प्रधान धर्माचार्य प्राय: इस समाजके लोगोंपर अभियोग लगा बैठते थे। १८३० ई०का फ्रान्सके हस्तक्षेप करनेपर अरमनियोंने स्वतन्त्र समाज बनाया और अपना धर्माचार्य नियुक्त कर लिया। इन्होंने शिक्षा और साहित्यमें बड़ी उन्नति की थी। कुस्तुन्तुनिया, अङ्गोरा और स्मिरनामें अनेक रोमन-काथलिक अरमनी विद्यमान हैं।

१८३१ ई०को कुस्तुन्तुनियामें अमेरिकाके धर्म-प्रचारक पादरियोंने प्रोटेष्टाण्ट प्रथाकी नीव डाली थी। किन्तु प्रधान धर्माचार्य और रूसने बड़ा विरोध किया। १८४६ ई०को प्रधान धर्माचार्यने प्रोटेष्टाण्ट धर्म माननेवाले अरमनियोंको जातिसे निकाल दिया था। इस कार्यसे उन्होंने अपना चर्च फ्रान्स और रूसके आपत्ति उठाते भी अलग बना लिया। धर्म-प्रचारक व्यक्तियोंने खरपुत, मार्सिवान और एण्टाबमें कालेज्‌ और स्कूल खोले थे। लोग सुन्दर साहित्य पढ़ने लगे। उन्नति और धार्मिक स्वतन्त्रता फूट पड़ी थी।

१८७६ ई०को अबदुल हमीदके तुर्की सिंहासनारूढ़ होनेपर अरमनियोंकी दशा पहलेसे सुधर गयी। किन्तु १८७७-७८ ई०को युद्ध बन्द होनेपर अरमनी प्रश्न उठ खड़ा हुआ। सानष्टेफानोंकी सन्धिके अनुसार तुर्कस्थानने रूसको अरमनियोंका सुधार करने और कुर्दों तथा सरकेशीयोंका उपद्रव रोकनेका वचन दिया था। १८७८ ई०की १३वीं जुलाईको बरलिनके सन्धिपत्रानुसार भी रूस ही अरमनियोंका साक्ष्य रहा। १८७८ ई०की ४थी जूनको सुलतानने

अंगरेजोंका पोर्टके ईसाइयों और दूसरे लोगोंकी रक्षा रखनेका वचन दिया था। अङ्गरेजोंने सुधार होनेसे पहले रूससे अधिकृत स्थान छोड़ देनेको कहा। १८८० ई०को यूरोपीय शक्तियोंने मिलजुलकर जो आवेदनपत्र पोर्टको भेजा, उसका कोई फल न हुआ। किन्तु अंगरेज सुलतान्का ध्यान बरलिनके सन्धिपत्रकी ओर खींचते ही रहे।

१८०१ ई०में जर्जिया अधिकार करनेपर रूसको अरमनियोंकी चिन्ता लगी थी। १८२८-२८ ई०को अनेक अरमनी रूसी राज्यकी प्रजा बने। उसने अरमनियोंका अपने नये देशका उन्नतिसाधन समझ स्वाधीनता दी थी। बहुतसे लोग सरकारी नौकरी पाने और काम-काज बढ़ानेसे धनी बन बैठे। किन्तु १८८१ ई०को २य अलेक्सेन्द्रका वध होनेपर रूस अरमनियोंसे बिगड़ पड़ा था। स्कूल बन्द किये गये। अरमनी भाषाका प्रभाव घटा। रूसने अपने चर्चमें उन्हें मिलाना चाहा। किन्तु रूसके अधीन स्वराज्य पानेकी आशा न रहनसे अरमनियोंका ध्यान तुर्की आरमेनियाकी ओर खिंचा था। १८०० ई०को रूसने तुर्की आरमेनियामें रेलवे बनानेका अधिकार पाया।

बर्लिनका सन्धिपत्र देख ग्रिगोरीय अरमनी हताश हुये थे। उन्हें अभिलाष रहा, कि ईसाइयोंके अधीन आरमेनिया और सिलिशिया मिलकर स्वाधीन प्रान्त बन जाता। वह साम्राज्यमें इधर-उधर फैले थे। अधिक-संख्या कहीं न रही। दक्षिणके तुर्की बोलनेवाले उत्तरके अरमनी भाषा बरतनेवालोंसे कष्टपूर्वक सम्भाषण कर सकते और पूर्वके अन्न पर्वतवासी कुस्तुन्तुनिया तथा स्मिरनाके सुशिक्षित नागरिकोंसे धर्म भिन्न विषयमें मिलते-जुलते न थे। किन्तु सुधार होते न देख यूरोपमें शिक्षा-पाये लोग विद्रोह बढ़ा अपना अभिप्राय सिद्ध करनेको उद्यत हुए। टिफलिस और अनेक यूरोपीय नगरमें राजद्रोहके पुस्तक तथा पत्र फैलानेको गुप्त सभा (Huntchagist) बनी थी। तुर्की आरमेनियासे दूत अस्त्रशस्त्र और विदारणशील पदार्थ पहुंचाते रहे। अनेक युवकोंने अराजकता सम्पादन करनेकी समिति बनायी थी। किन्तु पादरी और अमेरिकाके धर्मप्रचारक व्यक्ति उक्त कार्यको न तो उचित समझते और न उससे साफल्य होते देखते थे। अधिकांश लोग विद्रोहके विरोधी रहे। १८८३ ई०को ५वीं जनवरीको अपने वैफल्यसे संक्षुब्ध हो दूतोंने भयप्रद पत्र लिखे और युजगात तथा मार्सिवानके अमेरिकन कालेजकी भित्तिपर विद्रोहात्मक घोषणापत्र लगाये। विद्रोही अमेरिकाके धर्मप्रचारकोंको अपने दलमें मिलाना चाहते थे। और इस कार्यमें वह सफलमनोरथ भी हुये। अमेरिकनोंपर घोषणापत्र निकालनेका अभियोग उपस्थित हुआ। दो अरमनी शिक्षक बन्दी बने। बालिका-विद्यालय जला डाला गया था। विद्रोह सरलतापूर्वक दबते भी कैसारिये और दूसरे स्थानमें भड़क उठा।

विद्रोही पुरातन डारोनको नवीन आरमेनियाका केन्द्र बनाना चाहते थे। किन्तु मुश और सासुनके धनी लोगोंने इस आन्दोलनको उत्साह न दिया। १८८३ ई०के ग्रीष्मकाल मुशके समीप एक दूत पकड़ा गया था। शासकने कुर्द सवारोंको पार्वत्य प्रान्तपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। किन्तु अरमनियोंने कुर्दोंको मार भगाया और १८८४ ई०को भी युद्ध होनेपर अपना स्थान न छोड़ा। इसके बाद शासकने सुशिक्षित सेनाको बुलाया और सुलतानने विद्रोह दबानेके लिये राजभक्त प्रजा एकत्र होनेका आदेश निकाला था। निर्दय भावसे अनेक लोगोंका वध होनेपर यूरोपमें हलचल पड़ गया। सुलतानने विद्रोहकी दशा जांचनेके लिये कितने ही व्यक्ति नियुक्त किये। १८८४-८५ ई०को अंगरेजोंने फ्रान्स एवं रूसके सहारे अरजरूम, वान, बिटलिस, सिवास, खरपुत और दियारबकरमें प्रबन्ध करनेपर दबाव डाला था। किन्तु तुर्कीने एक न सुनी। सासुनमें हत्याकाण्ड करनेवालोंको उपहार और उपाधि मिला था। १८८५ ई०को ११वीं मईको ब्रटेन, फ्रान्स और रूसने मिलकर एक शोधन-व्यवस्था सुलतानके समक्ष रखी। सुलतानने उत्तर देनेमें

विलम्ब लगाया था। ब्रुटेन नियन्त्रणके पक्ष और फ्रान्स तथा रूस विपक्षमें रहा। अगस्त मास अंगरेजोंने फिर सन्धिक्रम चलाया। टारसुसमें उपद्रव उठा। जातीय आन्दोलनका समर्थन न करनेवाले अरमनियोंका वध किया गया। प्रधान धर्माचार्यके प्राण जानेका भी संशय था। लोगोंने कहा, कि अंगरेजी राजदूत अरमनियोंका वध करा जहाजी बेड़ा कुस्तुन्तुनिया ले जाना चाहता था। १ली अक्तोबरको कुछ सशस्त्र अरमनी आवेदनपत्र ले तुर्की सरकारके पास पहुंचे, किन्तु पुलिस द्वारा हटाये गये। गोली चलनेसे बहुतसे अरमनी और थोड़े मुसलमान मरे थे। उसके बाद अंगरेजी राजदूतकी प्रेरणासे १७वीं अक्तोबरको सुलताननने संस्कार-व्यवस्था स्वीकार की। और ८वीं अक्तोबरको कुस्तुन्तुनियासे समस्त व्यक्तियोंने ट्रेबिजाण्ड पहुंच अरमनियोंका संहार किया था। सुलतान संस्कार-व्यवस्थाका प्रकाश न किया और १८९६ ई०के जनवरी मास तक संहार पर संहार होते गया। यूरोपीय शक्तियां चुपचाप तमाशा देखती रहीं। १४वीं से २२वीं जूनतक फिर वान, एगिन और निकसरमें बहुतसे अरमनियोंका संहार हुआ। २६वीं अगस्तको राजद्रोहियोंने कुस्तुन्तुनियाका सरकारी बङ्क छीन लिया था। सुलतान्‌को अभिप्राय विदित रहा। शीघ्र ही पहलेसे समझाये और शस्त्र बंधाये हुये नीचजन सड़कोंपर छोड़े गये। उन्होंने छ:-सात हज़ार ग्रिगोरीय अरमनियोंको मार डाला था। जिस प्रान्तके लिये संस्कार व्यवस्था बनी, उसीपर आपत्ति अधिक पड़ी थी। विदेशियोंकी रक्षा रही। राजादेश न माननेसे खरपुतमें अमेरिकन भवनोंको क्षति पहुंची थी। एकाएक लेन देन समय बज़ारपर आक्रमण हुआ। पुरुष पण्यशालमें रहे। स्त्रियां घरपर बैठी थीं। शिक्षित, धनी और मानी अरमनी मारे गये। सम्पत्ति नष्ट होनेसे उनके वंश मट्टीमें मिले थे। जहां रक्षाका उद्योग किया गया, वहां संहार बहुत अधिक हुआ। केवल ज़ीटनमें तीन मास लड़ लोगोंने अपना मान बचाया था। कुछ नगरोंपर पुलिस और पलटनने भी संहारमें उत्साहके साथ योग दिया। खरपुतपर तोप चली थी। कहीं-कहीं भेरी बजते संहार आरम्भ और समाप्त हुआ। कुछ अरमनी निरस्त्र करके भी मारे गये थे। शासकों और पदाधिकारियोंने जहां हत्याकाण्डमें बाधा डाली, वहां शान्ति रही। स्थानीय मुसलमानोंने लाजियों, कुर्दों और सरकासीयोंने हत्याकाण्डमें योग दिया। किन्तु अनेक मुसलमानोंने अपने मित्र अरमनियोंको बचा लिया था। किसीको दण्ड न मिला। अनेकोंने हत्याकाण्डमें योग देनेसे उपहार पाया था। कारागृहों और गिरजाघरोंमें स्त्री-पुरुष निर्दय भावसे मारे गये। गिरजाघर, मठ, स्कूल तथा भवन लुटे और मट्टीमें मिले। पचास हज़ारसे अधिक अरमनी मरे थे। अनेकोंको मुसलमान बनना और अनेकोंको दारिद्र्‌का दुःख भोगना पड़ा। सम्पत्ति अधिक विनष्ट हुई। गृहस्वामीके मारे जानेसे स्त्री-पुत्र निराश्रय हो गये थे। ग्रेटब्रुटेन और अमेरिकाने दुःख-निर्वापणका उद्योग लगाया। पदाधिकारियोंके विरोध बढ़ाते भी कुछ सफलता मिली थी। १९०४ को मुश और १९०८ ई०को वानमें फिर हत्याकाण्ड हुआ। १९०८ ई०को अरमनियोंका अभाव दूर करनेके लिये सुलताननने नवीन व्यवस्था प्रदान की।

भाषा एवं साहित्य—मूल अरमनी भाषामें अनेक ईरानी शब्द आ मिले हैं। अश्व, आखेट, युद्ध, सेना, परिच्छद, व्यवसाय, मुद्रा, पञ्जिका, मान, न्यायालय, सङ्गीत, औषध, पाठशाला, शिक्षा, साहित्य और कलाकौशल सम्बन्धीय शब्द प्रायः ईरानी हैं। विशुद्ध अरमनी शब्दोंमें त्रिलिङ्गवाची ईरानी प्रत्यय लगाते हैं।

मूल अरमनी भाषाके स्वरशास्त्रमें आर्यप्रणाली नहीं चलती। संज्ञा, सर्वनाम, प्रथम एवं द्वितीय पुरुष और क्रियाका बहुवचन 'क' लगानेसे बनता है। ई०से ७०० और ८०० वर्ष पहले आरमेनियामें सम्भवत: थिनप्रेजिय और जर्जिय भाषाका अधिक प्रचार रहा। सेमेटिकका भी खासा प्रभाव पड़ा है।

आजकल अरमनी दो प्रकारकी देख पड़ती, एक आरारात एवं टिफलिस और दूसरी स्तम्बूल तथा एशिया-मायिनरके प्रादेशिक नगरमें चलती है। पिछली तुर्की शब्दोंसे भरी है। किन्तु श्रेष्ठ भाषा पश्चिम आरमेनियाकी अपेक्षा वानके नवीन वाग्व्यवहारसे अधिक मिलती है। ई०के ५वें शताब्द पीछे भाषान्तर करनेवालोंने केवल शब्द अनुवाद बना यूनानीका नियम सुरक्षित रखा है। ऐसा ही शब्दार्थ सिरीयकके अनुवादमें भी देख पड़ता है।

अरमनियोंका देवालय-सम्बन्धी साहित्य स्वतन्त्र रहा। किन्तु ४थे और ५वें शताब्द ईसायी धर्माध्यापकवर्गने उसे समूल नष्टकर डाला। खोरेनवासी मूसाके इतिहासमें उसकी केवल बीस पंक्ति अवशिष्ट है। ४०० ई०के समय मेसरोप नामक ईसायोंने अरमनी वर्णमाला निकाली थी। सम्भवतः वह अधिक प्राचीन थी। मेसरोपने केवल उसमें स्वर अपनी ओरसे मिलाये। किन्तु यूनानी धर्माध्यापक और सम्राट् थिवोडोसियस्‌को प्रसन्न करनेके लिये अरमनियोंने आख्यान उठाया, कि दिव्यरूपसे उसका प्रकाशन हुआ था। वर्णमालाके पूर्ण होनेपर अरमनी चर्चके प्रधान धर्माध्यापक साहाकने एडेस्सा, आथेन्स, कुस्तुन्तुनिया, अलेक्‌सन्द्रिया, अन्तिओक, कायसेरिया और दूसरे स्थान कितने ही लोगोंको यूनानी तथा सिरीय धर्मशास्त्र अनुवाद करनेको भेजा था। नवटेष्टामेण्ट, युसेवियस-इतिहासका पाठभेद आदि उससे प्रस्तुत हुआ। ५वें शताब्द मौलिक यूनानीसे भी अनेक ग्रन्थ अनुवाद किये गये। ६ठें तथा ७वें शताब्दके पुस्तक बहुत अल्प अवशिष्ट हैं। पाठान्तरपर किसीका नाम नहीं मिलता। ८वें शताब्द साहित्यसम्बन्धी उद्योगकी बड़ी धूम रही। १०वें तथा ११वें शताब्द भी अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थोंका अनुवाद हुआ था। १२वें, १३वें, १४वें और १५वें शताब्द सुप्रसिद्ध ग्रन्थकारोंने लेखनी उठायी। १६वें शताब्द प्रथमतः अरमनी भाषामें पुस्तक छपे। १५६५ ई०को वेनिसमें मुद्रायन्त्र खुला था। १७वें शताब्द लेम्बर्ग, मिलन, पारि, इस्‌फहान, लेमबर्ग, आमष्टेरडाम, मार्सेयिल्स, कुस्तुन्तुनिया, लिपजिग और पादुवानेमें मुद्रणकार्य आरम्भ हुआ।

वैद्यक, ज्योतिष, भाषाविज्ञान, कोष, इतिहास आदि विद्यासम्बन्धीय ग्रन्थोंका अनुवाद अरमनीमें हुआ है। अब स्थान-स्थानपर अरमनी मुद्रायन्त्र चलते और नये-पुराने ग्रन्थ छपते हैं। अंगरेजी, फरासी, रूसी और जर्मन ग्रन्थोंका पाठान्तर किया जाता है। वालार्शापाट, स्तम्बूल, वेनिस, वीयना, पारि, रोलाण्ड्स, पिट्रोग्राड, मोस्को और जोयुल्फाके पुस्तकागारमें अरमनी भाषाके पुरातनग्रन्थ रखे हैं।

पाश्चात्य पण्डितोंके कथनानुसार आरमेनिया ही आर्यजातिका आदिम वासस्थान है। जर्मन जातिके पूर्वपुरुष यहींसे जाकर यूरोपमें रहे थे। यहूदियोंके धर्मशास्त्रमें इस देशका नाम मिलता है। भूतत्त्व देख समझा गया, कि हमारे पुराणशास्त्रमें आरमेनियाका नाम हिरण्मयवर्ष लिखा है। अध्यापक विलसन संस्कृत संज्ञा पारचैत्र बताते हैं। (Ariana Antiqua, p. 147.) पेरेङ्गापर्वत पतङ्गगिरि है। (ब्रह्माण्डपुराण ४२ अध्याय) किसी-किसीके मतमें अरक्षस् नदीको पुराणोक्त अरुणोदा समझना चाहिये।

पुरातन गृहादिका ध्वंसावशेष, कोणाकार शिलालेख और मन्दिर प्रभृति देख समझते, कि अति पूर्वकाल आरमेनियामें नानाजातिके लोग आकर रहते थे। भारतवासी हिन्दुवोंके पहुंचनेका भी प्रमाण मिला है। सिरीय देशके किसी पादरीने लिखा,—"हिन्दुवोंका एक दल यहां आ बसा है। वह देमितर और किसनली नामक देवताओंको पूजते थे। सिवा इसके दूसरी भी अनेक देवमूर्ति स्थापन की। आष्टिषट नगरमें वह देवतापर बलि चढ़ाते रहे।" (Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. V. 331) प्राचीन अरमनी आर्यजाति-सम्भूत हैं। अपरापर जातिकी भांति लोग नाना प्रकार उपासक और सम्प्रदायभुक्त थे। आजकाल अधिकांश ईसायी धर्म फैल गया है।

आरम्बथ (वै० क्लो०) आ-लवि-लुट्, वेदे लस्य रत्वम्। आलम्बन, इमदाद, सहारा।

आरम्भ (सं॰ पु॰) आ-रभ-घञ्-नुम्। 'रभेरशब्लिटोः।' पा ७।१।६२। १ उद्यम, मुहीम। २ त्वरा, तुन्दी, तेज़ी। ३ गृहादि सम्पादन व्यापार, मकान् वग़ैरह बनानेका काम। ४ उपक्रम, उनवान, शुरू। ५ प्रथमकाव्य, औवल मसनवी। ६ प्रस्तावना, तमहीद। ७ वध, मक़ातला। ८ दर्प, खुदबीनी। 'आरम्भस्तु वधदर्पयोः। त्वराया-मुद्यमे च।' (हेम) क्रियासमूहात्मक पाकादिमें प्रथम उपक्रमको आरम्भ कहते हैं। श्रौत वा स्मार्त कार्यके आरम्भ होने बाद अशौच लगनेसे कोई बाधा नहीं पड़ती। यज्ञके आदिमें 'साधुभवान् आस्ताम्' प्रभृति वाक्य द्वारा वरण, व्रत एवं जपका सङ्कल्प, संस्कारका नान्दीश्राद्ध, साग्निक श्राद्धका पाक और निरग्नि श्राद्धमें भोक्ता ब्राह्मणका निमन्त्रण भी आरम्भ है। द्रव्यान्तरसे द्रव्य और गुणान्तरसे गुणके उत्पादन-व्यापारको वैशेषिक आरम्भ मानते हैं। 'प्रक्रमः स्यादुपक्रमः। स्यादभ्यादानमुद्घात आरम्भः।' (अमर ३।२।२६)

"द्रव्याणि द्रव्यान्तरमारभन्ते गुणाश्च गुणान्तरम्।" (वैशेषिकसूत्र)

अर्थात् द्रव्य द्रव्यान्तर और गुण गुणान्तरको आरम्भ करता है। कुलाल, दण्ड, चक्र, सलिल एवं सूत्र जैसे घटका, वैसे ही आत्माकाश तथा परमाणु ब्रह्माण्डका कारण है। फिर घटकी तरह ब्रह्माण्ड भी बनता-बिगड़ता है। पृथिवी, जल, अग्नि और वायुके कर्मसे संयोजित परमाणु दोके क्रमपर महत् ब्रह्माण्डको आरम्भ करता है।

९ आद्यप्रवृत्ति, पहला काम, शुरू। जैसे यह आरम्भ करता हूं। १० अप्रवृत्तकी आद्यप्रवृत्ति, जिसका उलट फेर न हो उसका पहला आरम्भ। जैसे सृष्ट्यारम्भ। ११ कर्तव्य कर्मकी इच्छा मीमांसक तथा नाटकालङ्कारज्ञ इसे औत्सुक्यारम्भ कहते हैं।

आरम्भक (सं॰ त्रि॰) आरभते, आ-रभ-ण्वुल्-नुम्। आरम्भकारक, मुब्तदी, शुरू करनेवाला। वैशेषिकमत-सिद्ध महत्त्वादिजनक अवयव सकलका विजातीय संयोग आरम्भक होता है। (स्त्री॰) आरम्भकी।

आरम्भण (सं॰ क्ली॰) आ-रभ-ल्युट्-नुम्। १ ग्रहण, धारण, अमल, मश्क्। कर्मणि ल्युट्। २ मुष्टि, गिरिफ्त, पकड़। आरभ्यते ऽनेन, करणे ल्युट्। ३ उपादान कारण, तक़रीबी बानी।

आरम्भणीय (सं॰ त्रि॰) आ-रभ शक्यार्थे अनीयर्-नुम्। आरम्भ कियेजाने योग्य, शुरू हो सकनेवाला।

आरम्भता (सं॰ स्त्री॰) उपक्रम, इब्तिदा, उठान।

आरम्भना (हिं॰ क्रि॰) आरम्भ होना, उठना।

आरम्भवाद (सं॰ पु॰) आरम्भस्य वादः परीक्षापूर्वक कथाविशेषः। वैशेषिकादिके अभिमत परमाणुसे जगत्-की उत्पत्तिका वाद, ज़र्रेसे दुनिया बननेकी बात।

आरव (सं॰ पु॰) आ-रु-अप्। १ सम्यक् शब्द, नारा, शोर, पुकार। २ देशवासी विशेष। अरब देखो।

आरष, आरषी (हिं॰) आर्ष देखो।

आरस (हिं॰) आलस्य और आदर्श शब्द देखो।

"आरस निंद्रा और जम्हायी।
यह तीनो हैं कालके भायी॥" (लोकोक्ति)

आरसा (हिं॰ पु॰) रज्जु, रस्सा।

आरसी (हिं॰ स्त्री॰) १ दर्पण, शीशा।

"फ़ारसी बोली आयी-ना। तुर्की ढूंढी पायी ना॥
हिन्दी बोलूं आरसी आये। खुसरो कहे को न बताये॥" (कूटप्रश्न)

इस प्रश्नके दो अर्थ हैं,—१, जिस चीजकी फ़ारसी नहीं आती, जो तुर्कीमें ढूंढे नहीं मिलती और जिसकी हिन्दी बोलते शर्म लगती है, उसका नाम खुसरो-कहता, लेकिन कोयी नहीं समझता। २, जो फ़ारसीमें आयीना, तुर्कीमें पायीना और हिन्दीमें आरसी कहाता, उसका नाम खुसरो बताता है, लेकिन कोई नहीं समझता। पहलेमें प्रश्न और दूसरे अर्थमें उत्तर विद्यमान है।

२ ऊर्मिका, अङ्गुश्तरी, छल्ला। इसे स्त्रियां अपने दाहने हाथके अंगूठेमें छोटासा शीशा जड़ाकर पहनती हैं।

"हाथ कङ्गनको आरसी क्या है।" (लोकोक्ति)

आरस्य (सं॰ क्ली॰) न रस, नञ्-तत्; अरसस्य भावः, अचतुरादित्वात् ष्यञ्। १ रसभिन्नत्व, लज़्ज़तका फ़र्क़। नास्ति रसो यस्य, बाहुलकात् तु त्वतलौ न ष्यञ्। २ अरसत्व, बेलज़्ज़ती, फीकापन।

आरा (सं॰ स्त्री॰) आ-ऋ-अच्-टाप्। १ चर्मप्रभेदक अस्त्रविशेष, चमड़ा छेदनेकी सुतारी। 'आरा चर्मप्रभेदिका।

(अमर ३।१०।३५) ३ प्रतोद, कोड़ा, पैना। ३ आरामुखी जलपक्षी। (हिं० पु०) ४ क्रकच, करौत। यह लोहेकी पटरीसे बनता और चार-पांच हाथ लम्बा तथा छः-सात अङ्गुल चौड़ा रहता है। आकार चाप-जैसा वक्र होता है। पटरीमें सामनेकी ओर दांत काटते और दोनो सिरोंपर पकड़नेको मूंठ लगाते हैं। इससे लकड़ी चीरनेका काम निकलता है। पहले लट्ठेको दो कड़ियोंके सहारे एक सिरा जमीनसे मिला और दूसरा ऊपरको उठा खड़ा करते हैं। फिर आरा उसपर रख दो आदमी नीचे-ऊपर खींचने लगते हैं। दांतके ज़ोरसे लकड़ीका बुरादा उड़-उड़कर इधर-उधर गिरता और तख्ता उतरते चला जाता है। ५ आर, पहियेका फेरा। ६ आड़ा, दासा। यह लकड़ी या पत्थरसे बनता और घोड़िया रखनेके काम लगता है। इससे घोड़िया ठीक बैठ जाती और नापजोख बराबर उतरती है।

७ विहार प्रान्तके शाहाबाद जिलेकी आरा तह-सील। यह अक्षा० २५° १०′ १५″ एवं २५° ४७′ उ० और द्राघि० ८४° १९′ तथा ८४° ५४′ पू०पर अवस्थित है। क्षेत्रफल ८१५ वर्गमील है। हिन्दू, मुसलमान और ईसायी बहुतसे लोग रहते हैं। इसमें आरा, बेलौती और पीरूका थाना लगता है।

८ शाहाबाद ज़िलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २५° ३३′ ४६″ उ० और द्राघि० ८४° ४२′ ४२″ पू० पर अवस्थित है। म्यूनिसपलिटीको हजारों रुपये सालकी आमदनी है। नगर बहुत अच्छा बना है। जेल, अस्पताल और ईष्ट-इण्डिया-रेलवेका ष्टेशन है।

१८५७ ई०को बलवा होनेपर आरा प्रसिद्ध हुआ। बलवायी सिपाही दानापुरसे नदी पार कर आरे पर झपटे थे। उन्होंने राजकोष लूट जेलके कैदियोंको छोड़ दिया। कुछ युरोपीय और सिख घिर गये थे। उद्धारके लिये जो अंगरेजी फौज आयी, उसने घातकी जगह हार खायी। फिर भी कोई बारह अंगरेज, तीन-चार ईसायी और पचास सिख एक मकानसे लड़ते रहे। खाने-पीनेका सामान और गोलाबारूद सब कुछ इकट्ठा था। २७वीं जुलाईको सिपाहियोंने ज़ोरसे धावा मारा, किन्तु भीषण अग्नि-वृष्टि होनेसे उनका दल टूट गया। भकसे उड़ जाने-वाली चीजें जलाकर मिर्चका धूवां देने, आदमियों तथा घोड़ोंकी लाशें इकट्ठाकर बदबू फैलाने और मकानतक सुरङ्ग लगानेसे भी रक्षकोंके पैर उखड़े न थे। इसी प्रकार एक सप्ताह बीतनेपर मेजर-विनसेण्ट ईयर ४ तोप लेकर आ पहुंचे। राहमें उन्हें भी कयी जगह लड़ना पड़ा था। ईयरके तोप चलानेपर बलवायी जङ्गलमें जा छिपे और दनादन गोली बरसाने लगे। अंगरेजी फौजके सङ्गीन निकाल आगे बढ़नेसे लोग प्राण छोड़कर भागे थे। इस युद्धमें कुंवरसिंह प्रधान रहे।

शोन नदीकी बड़ी नहरसे एक छोटी शाखा आरेको आयी है। यह देहरीमें शोनभद्रसे निकल गङ्गा नदीमें जा गिरी है। सरकार व्यापारके जहाज़ चलाती और खेतोंमें पानी पहुंचाती है।

आराकश (हिं० पु०) क्राकचिक, करौतिया, आरा खींचनेवाला। यह शब्द हिन्दी 'आरा' और फ़ारसी 'कश' मिलाकर बना है।

आराकान—ब्रह्मदेशका एक विभाग। ग्रामीण नाम रखैङ्ग्प्य है। संस्कृत भाषामें रसाङ्ग और रभाङ्ग भी कहते हैं। आराकानके इतिहासमें देखा—जिन प्रथम नृपतिने बनारसमें राज्य चलाया उन्हींके पुत्रने यह देश अपने भागमें पाया। दूसरोंके कथनानुसार एक वन्य मृगीने कुलदान नदीके प्रान्तमें ऋष्यशृङ्ग जैसा मान-वीय शिशु उत्पन्न किया था। मेद या म्रू नृपति आखेट करने निकले। नवजात शिशुको वनमें देख वह घर उठा लाये थे। लोगोंके मध्य उसका पालन-पोषण हुआ और मारयो (मौर्य्य) नाम पड़ा। बड़े होनेपर बालकने एक म्रू-सरदारकी कन्यासे विवाह किया और अन्तको आराकानका राज्य लिया था। इसी बालकसे आराकानी वंश चला।

मारयोके राज्य-पानेका समय ई०से २६६६ वर्ष पूर्व बताते हैं। मारयोके वंशजोंने १८३३ वत्सर राज्य किया था। उसके बाद विप्लव बढ़ा। अन्तिम

नृपतिकी रानीने अपनी दो कन्याओंके साथ पर्वतमें जाकर आश्रय लिया था। छोटे भाईको टागौङ्गका राज्य सौंपनेपर बाध्य होनेवाले कान-राजगयी नामक एक क्षत्रिय उत्तर आराकान आ पहुंचे और अपने साथियोंके साथ क्यौक्रपानडौङ्ग पर्वतपर जम बैठे। मारयोवंशकी अन्तिम रानीके मिल जानेसे उन्होंने उनकी दोनो कन्या व्याह ली थीं। कुछ वर्ष पीछे कानराजगयी पर्वतसे उतर निम्नभूमिमें बसे तथा प्रधान नगरके अधिपति बने। आराकानी ऐतिहासिकोंके कथनानुसार १७८२ वर्ष उनके वंशजोंने राजत्व चलाया। १४६ ई०को चन्द्रसूर्य नामक नृपति सिंहासनपर बैठे थे। उन्हींके समय बुद्धकी धातुमय एक प्रतिमा बनी, जो बहुत प्रसिद्ध हुई। उसकी अलौकिक शक्तिका उपाख्यान पीछे वर्षों चला था। १७८४ ई०को आराकान जीतनेपर ब्रह्मदेशवासी प्रतिमा उठा ले गये। अमरपुरसे उत्तर एक मठमें आज भी उसकी पूजा धूमधामसे होती है। ई०के ८वें शताब्दतक इस प्रान्तमें बौद्धधर्मका प्राबल्य रहा। कानराजगयी-वंशज ५१वें नृपतिके राज्यसमय पुरातन राजधानी गुप्तभावसे नष्ट होनेपर विप्लव बढ़ा। ज्योतिषियोंने स्थानपरिवर्तनकी आवश्यकता देखायी थी। इसीसे महातैङ्गचन्द्र नृपति सदल बल अपना प्रासाद छोड़ नयी राजधानी वेथालीमें जाकर रहने लगे। चन्द्र-कुलनामधारी नौ नरेशोंने उस नगरमें उत्तरोत्तर राज्य किया। इन राजावोंके सिक्के देखनेसे विदित होता, कि उस समय सम्भवतः हिन्दूधर्म चलता था। किन्तु आराकानी इतिहासमें उक्त नरेशोंका आदि स्थान नहीं लिखा।

इस वंशके बाद म्रो जातीय एक नृपति और उनके भ्रातृगणने ३६ वत्सर राजत्व किया था। एक चन्द्रवंशज नरेशके फिर सिंहासनारूढ़ होनेपर राजधानी बदली, किन्तु शीघ्र ही उपद्रव उठनेसे छोड़ दी गयी।

उसके बाद उच्च इरावदीके शानोंने आराकानपर आक्रमण कर १८ वर्ष राज्य चलाया था। उन्होंने निर्दय भावसे लोगोंको सताया और मठोंको लुटाया। ९९५ ई०में उनके चले जानेसे पुगान नरेश आनर्त या अनोयरहत बुद्धकी सुप्रसिद्ध मूर्ति पानेको आराकानपर झपटे। किन्तु दैवी व्यवधानसे विना मूर्ति पाये ही उन्हें पीछे पैरों हटना पड़ा था। कुछ वर्ष बाद अनोयरहतके साहाय्यसे चन्द्रवंशीय एक नृपति फिर सिंहासनपर बैठे। पिङ्गतसामें राजधानी प्रतिष्ठित हुई थी। आराकान पुगान नृपतिके अधीन ६० वर्षतक करद राज्य रहा। पीछे एक उत्कृष्टपदस्थ, मेङ्गबिलू नामक नरेशको मार स्वयं राजा बना। सिंहासनके उत्तराधिकारी मेङ्गरीबय अपनी रानीको ले पुगान भाग गये थे। वहां क्यनसित्था नृपतिने उनका स्वागत किया। २५ वर्षतक राजकीय परिवार निर्वासित रहा। मेङ्गरीबयके पुत्रका नाम लेत्यमेङ्गनान था। पिताके मरनेपर पुगानके वर्तमान नृपति अलौङ्गसीथुने उसे आराकानके सिंहासनपर बैठाना चाहा। वर्षा ऋतुके अन्त भूमि और समुद्रमार्गसे उन्होंने एक-एक लाख प्यूस तथा तालेङ्ग सेना भेजी। घोर युद्ध होने बाद दूसरे वर्ष उनकी प्रतिज्ञा पूरी हुई। बुद्धगयामें ब्रह्मदेशकी भाषाका जो शिलालेख मिला, उसमें लिखा,—एक लाख प्यूसोंके अधीश्वर लेत्यामेङ्गनाने पुगान नरेशके प्रति अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार इस मन्दिरका जीर्णोद्धार कराया है। आराकान देखो।

आराग (सं० पु०) प्रलयान्तके सातमें एक सूर्य।

आराग्र (सं० क्ली०) आराया अग्रम्, ६-तत्। १ चर्मभेदिकाका अग्रभाग, सुतारीकी नोक। १ लोहेका तख्ना। यह चाबुकके सिरेपर लगता है। ३ अर्धचन्द्राग्रमुख, चक्करदार तीरकी नोकका किनारा। (त्रि०) ४ तीक्ष्णीकृत, तेज़ किया या पैनाया हुआ, सुतारीकी तरह जो सिरेपर पैना और पेंदेमें चौड़ा हो।

आराजी (अ० स्त्री०) भूमि, क्षेत्र, ज़मीन्, खेत, मुतफ़र्रिक़ ज़मीन्के हिस्से। यह शब्द 'अरज़'का बहुवचन है।

आराज्ञी (सं० स्त्री०) सम्यक् राजते, आ-राज-कनिन्-ङीप्। देश विशेष, एक मुल्क। यवानी

इतिहास-वेत्ताओंने इसका नाम आरेष्टी (Arestae) और आड्रेष्टी (Adraistae) लिखा है। आरट्ट देखो।

आराड (सं० पु०) शाक्य मुनिके एक शिक्षक।

आराढि (सं० पु०) सौजात नामक एक ऋषि, अराढ़के पुत्र। ऐतरेय-ब्राह्मणमें इनका उल्लेख विद्यमान है। (१।४।४)

आरात् (सं० अव्य०) आ-रा-बाहुलकात् आति। १ असन्नवर्त्ती स्थानसे, जुदा जगहसे। २ असन्निकृष्ट, दूर, फर्कसे। ३ विप्रकृष्ट देशके प्रति, बायद मुकामको। ४ बाह्य प्रदेशपर, बाहर। ५ समीप, नजदीक। 'आराद्दूरसमीपयोः।' (अमर) ६ शीघ्र, अव्यवहितकाल।

आराति (सं० पु०) आ-रा-क्तिच्। शत्रु, अदू, दुश्मन। 'पराराति प्रत्यर्थि परपन्थिनः।' (अमर)

आरातीय (सं० त्रि०) आराद्भवः जातः आगतो वा, छ आरात्छ्छ्त्ववर्जनात् नाव्ययस्य टिलोपः। वृद्धाच्छः। पा ४।२।११४। १ दूरस्थ, दूर-दराज। २ आसन्न, नजदीकी, लगा हुआ।

आरात्तात् (वै० अव्य०) दूरस्थ देशसे, दूर-दराज मुकामसे।

आरात्रिक (सं० क्ली०) आ रात्रि रात्रेः पूर्वसीमा तत्र निर्वृत्तम्, ठञ् मर्यादार्थे ऽव्ययीभावः। आङ्मर्यादाभिविध्योः। पा २।१।१३। १ नीराजनकर्म, आरति। आरति देखो। २ संस्कार विशेष, एक रस्म।

आराधक (सं० त्रि०) अर्चक, आबिद, पूजा-पाठ करनेवाला।

आराधन (सं० क्ली०) आ-राध-ल्युट्। १ साधन, फजीलत, काम। २ प्राप्ति, याफ्त, पहुंच। ३ तोषण, रजाजोयी, मनौनी। ४ पचन, तब्बाखी, रसोईका काम। ५ अर्चन, इबादत, पूजा-पाठ।

'आराधनञ्च पचने प्राप्तौ सन्तोषणेऽपि च।' (मेदिनी)

आराधना (सं० स्त्री०) आ-राध-णिच्-युच्-टाप्। १ सेवा, खिदमत, नौकरी। 'शुश्रूषाराधनोपास्ति।' (हेम ३।१६१) (हिं० क्रि०) २ आराधन करना, इबादत देना, पूजना।

आराधनी (सं० स्त्री०) पूजा, इबादत, बन्दगी।

आराधनीय (सं० त्रि०) आराधयितुं शक्यम्, आ-राध-णिच् शक्यर्थे अनीयर्, णिच् लोपः। आराधन किये जाने योग्य, जिसे कोई पूजे।

आराधय (सं० पु०) आ-राध-णिच् बाहुलकात् श। आराधनकारक, इबादत करनेवाला, जो पूजता हो।

आराधयितृ (सं० त्रि०) आ-राध-णिच्-तृच्। परिचारक, रजाजोईकी कोशिश करनेवाला, जो मनानेमें लगा हो। (पु०) आराधयिता। (स्त्री०) आराधयित्री।

आराधयिष्णु (सं० त्रि०) १ आराधनशील, कफाराबख्श, मन्नतका। २ परिचारक, रजाजो, मनानेवाला।

आराधय्य (सं० क्ली०) आ-राध-ष्यञ्। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।१२४। आराधनकर्तृत्व, आबिदका काम, पुजारीपन।

आराधित (सं० त्रि०) आ-राध-णिच्-क्त, णिच् लोपः। १ सेवित, मनाया हुआ। २ सिद्ध, सम्पन्न, कामिल, पूरा। ३ अर्चित, इबादत पाये हुआ, जो पूजा गया हो। "आराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।" (उद्भट)

आराध्य, आराधनीय देखो।

आराध्यमान (सं० त्रि०) १ पूर्ण होनेवाला, जो पूरा किया जाता हो। २ पूजा जानेवाला।

आराम (सं० पु०) आरम्यतेऽत्र, आ-रम-घञ्। १ उपवन, रौजा, फुलवाड़ी। 'आरामः स्यादुपवनं कृत्रिमं वनमेव यत्।' (अमर) २ पञ्चदश रगणयुक्त दण्डक वृत्त-विशेष।

"यदिह नयुगलं ततः सप्त रेफास्तदा चण्डवृष्टिप्रयातो भवेद्दण्डकः।
प्रतिचरणविवृद्धिरेफाः स्युरर्णार्णवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दामशङ्खादयः॥"
(वृत्तरत्नाकर)

प्रथम दो नगण और तत्पर सात रगण रहनेसे दण्डक चण्डवृष्टिप्रयात कहाता है। फिर प्रथम दो नगण और तत्पर क्रमशः आठसे रगण बढ़नेपर अर्ण आदि नाम होता है। अर्थात् दो नगणके बाद आठसे अर्ण, नौसे अर्णव, दशसे व्याल, ग्यारहसे जीमूत, बारहसे लीलाकर, तेरहसे उद्दाम, चौदहसे शङ्ख, पन्द्रहसे आराम, सोलहसे संग्राम, सत्रहसे सुरामवैकुण्ठ, अट्ठारहसे सार, उन्नीससे कासार, बीससे विसार, इक्कीससे संहार, बाईससे नीहार, तेईससे मन्दर,

चौबीससे केदार, पच्चीससे आसार, छब्बीससे सत्कार, सत्ताईससे संस्कार, अट्ठाईससे माकन्द, उन्तीससे गोविन्द, तीससे सानन्द, इकतीससे सन्दोह और बत्तीस रगण लगनेसे दण्डकको आनन्द कहते हैं।

(फ़ा० पु०) ३ विश्राम, क़रार। ४ निर्वापण, फ़राग़त, सुबीता। ५ उद्धार, छुटकारा। ६ सामर्थ्य, इख़तियार। गृहसुखको 'रोटी टुकड़ेका आराम' कहते हैं।

आराम करना (हिं० क्रि०) १ विश्राम लेना, सुसताना। २ निद्रागत होना, सोना। ३ ऐंड़ना, ख़ाली बैठना। ४ सुखसे निर्वाह करना, मज़ेमें रहना। ५ स्वस्थ बनाना, अच्छा कर देना। यह शब्द फ़ारसीका 'आराम' और हिन्दीका 'करना' मिलाकर बना है।

आरामगाह (फ़ा० स्त्री०) विश्रामस्थली, सुसताने या सोनेकी जगह।

आरामघोलि, आरामघोलिका देखो।

आरामघोलिका (सं० स्त्री०) पत्रशाक विशेष, एक सब्ज़ी। यह अम्ल, रुच, रुच्य, अभिलाषप्रद और पित्त-श्लेष्मकर होती है। छोटी आरामघोलिका जीर्णज्वरको दूर करती है। (राजनिघण्टु)

आराम चाहना (हिं० क्रि०) विश्राम अथवा निद्राका अभिलाषी होना, सुसताने या सोनेकी ख़ाहिश रखना।

आरामतलब (फ़ा० वि०) १ विलासासक्त, नफ़्स-परस्त, आनन्दी। २ आलस्यशील, सुस्त, कामचोर।

आरामदान (हिं० पु०) १ ताम्बूलपिटक, पानका डब्बा। २ शृङ्गारसम्पुट, साज़का सन्दूक़।

आराम देना (हिं० क्रि०) १ शान्तिप्रदान करना, तसल्ली बख़शना। २ रोगोपशम करना, भला-चङ्गा बनाना। ३ सन्तोषण करना, आंसू पोछना।

आराम पहुंचाना, आराम देना देखो।

आरामपायी (हिं० स्त्री०) पादुका विशेष, किसी क़िस्मकी जूती। इससे पैरको बहुत आराम मिलता है।

आराम पाना, आराम करना देखो।

आराम लेना, आरामकरना देखो।

आरामवल्लिका (सं० स्त्री०) मल्लिका विशेष, किसी क़िस्मकी चमेली।

आरामवाला, आरामतलब देखो।

आरामवाली (हिं० स्त्री०) १ वल्लभा, बीबी, जोड़। २ आलस्यशील स्त्री, निकम्मी औरत।

आरामशाह—सुलतान् कुतबुद्दीन् ऐबकके पुत्र और दिल्लीके सम्राट्। १२१० ई०को यह पितृसिंहासन पर बैठे थे। कुछ दिन बाद बदायूंके शासनकर्ता अलतमास इन्हें राज्यच्युत कर स्वयं सम्राट् बने।

आरामशीतला (सं० स्त्री०) आरामे उद्याने शीतला, ७-तत्। सुगन्धिपत्रयुक्त शाकविशेष, एक खुशबूदार सब्ज़ी। वर्वर्यादि गणमें इसका पाठ है। आराम-शीतला तिक्त, शीतल, पित्तघ्न, दाह-शोषहर और व्रण-विस्फोटघ्न होती है। (राजनिघण्टु) यह कटु लगती और पित्त, कफ तथा अर्शको दूर करती है। (मदनपाल)

आरामसे (हिं० क्रि०-वि०) यथा सुख, ख़ुशीसे।

आराम होना (हिं० क्रि०) १ स्वास्थ्यलाभ करना, बहाली पाना। २ सुखप्राप्ति करना, आसूदगी आना, ख़ुश रहना। ३ लक्षणानुसार—प्राणत्याग करना, मरना।

आरामिक (सं० वि०) आरामे उद्यानरक्षणे नियुक्तः, ठक्। उद्यानपाल, बाग़वान्, माली।

आरामुख (सं० पु०) व्यधनार्थ शस्त्र विशेष, छेदनेका एक औज़ार।

आरायश (फ़ा० स्त्री०) १ अलङ्कार, अलङ्क्रिया, आरास्तगी, संवार। २ शोभाकर वृक्ष और पुष्प, ख़ुशनुमा पेड़ और फूल। यह भोडल तथा झिल-मिलसे बनती और बारातके जुलूसमें निकलती है।

आरायश करना (हिं० क्रि०) अलङ्कार पहनाना, सजाना।

आरारात—पार्वतीय आरमेनियाका भूभाग। यह ३८° ४२´ उ० और द्राघि० ४४° ३५´ पू०पर अवस्थित है। प्राचीन अरमनी इसे 'ऐराट' (आर्याट) अर्थात् आर्योंका क्षेत्र कहते थे। इसका कुछ तुर्कों और कुछ अंश रूसियोंके अधिकारमें है। प्राचीन बाबि-लिलके मतसे इसी प्रदेशमें आरारात गिरिमाला है। जलप्लावनके बाद यहीं नूहका पोत आ लगा था (Genesis VIII)। अरमनी पोतके पहुंचनेका

स्थान मासिस-ख्सर बताते हैं। तुर्क इस पर्वत शृङ्गको आघ्रिदाव (आर्तगिरि) और ईरानी कोह-नूह (नूहका पर्वत) कहते हैं। आरारात आग्नेय-शैलसम्भूत और समुद्रतलसे प्राय: १७२६० फीट ऊंचा है। स्थानीय लोग आज भी गिरिशृङ्गपर नूहके पोतका रहना मानते हैं। उनके विश्वासानुसार पहले वन था, अब पहाड़ हो गया। आरमनियोंके कथनानुसार एरिवान नामक स्थानमें नूहने द्राक्षालता लगायी और पोतसे उतर नखजीवन नगर (अवतरण-भूमि)में प्रथम रहनेकी कुटी बनायी थी। पाश्चात्य पण्डित हमारे मनुके साथ नूहका ऐक्य ठहराते हैं। किन्तु हिन्दुवोंके शास्त्रमें कहे हुये मनु इस जगह नहीं, हिमालयके निकट नौबन्धन नामक स्थानपर उतरे थे। मनु और नौबन्धन शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

आराल (सं० त्रि०) ईषदरालम्, प्रादि-समा०। अल्पकुटिल, किसी कदर टेढ़ा।

आरालिक (सं० त्रि०) अरालं कुटिलं चरति, ठक्। पाचक, बावरची, नानबायी। पाचक देखो। धनलोभसे शत्रु-प्रेरित पाचक भोजनमें विषादि मिला देता, इसीसे कुटिल आचरणकारी समझा और इस नामसे पुकारा जाता है। 'भक्तकार: सूपकार: सूदारालिकवल्लवा:।' (हेम ३।३८७)

आराव, आरव देखो।

आरावली (सं० स्त्री०) विन्ध्यनग, विन्ध्याचल पहाड़की एक शाखा। अरावली देखो।

आराविन् (सं० त्रि०) आरौति, आ-रु-णिनि। १ सम्यक् शब्दकारक, ऊंची आवाज़ देनेवाला। (पु०) आरावी। जयसेनका उपाधि। (स्त्री०) ङीप्। आराविनी।

आरास्ता (फ़ा० वि०) १ निष्पन्न, तैयार। २ अलङ्कृत, सजा हुआ।

आरास्ता-करना (हिं० क्रि०) १ विधान करना, तरतीब देना। २ नियत करना, ठीकठाक लगाना। ३ संग्रह करना, बटोरना। ४ निष्पन्न करना, तैयारी-पर लाना। ५ अलङ्कृत करना, सजाना।

आरास्ता-पैरास्ता (फ़ा० वि०) १ समलङ्कृत, सजा-बजा। २ सन्नोकृत, मुसलह, हथियारबन्द।

आरि (सं० पु०) १ कण्टकवृक्ष, एक पेड़। २ खदिर-सार, कत्था, खैर। (हिं०) आर देखो।

आरिज़ा (अ० पु०) १ वृत्तान्त, वाक़िया, माजरा। २ आकुलत्व, बीमारी।

आरिज़ा क़ानूनी (अ० पु०) न्याय्य विकार, शरयी नुक़्स।

आरिज़ा जिस्मानी (अ० पु०) तनू-दौर्बल्य, काठीका बोदापन।

आरिज़ा दमाग़ी (अ० पु०) बोधव्याधि, दिलकी बीमारी।

आरित्रिक (सं० त्रि०) अरित्रं नौकादण्ड: तत्र भव:, ठञ् ञिठ् वा। काश्यादिभ्यष्ठञ्ञिठौ। पा ४।२।११६। अरित्रभव, नावके डण्डेमें होनेवाला। (स्त्री०) ठञि ङीप्। आरित्रिकी। ञिठि-टाप्। आरित्रिका।

आरिन्दम (सं० पु०) सनश्रुत राजाके पिता। (ऐतरेयब्राह्मण ७।३४)

आरिन्दमिक (सं० त्रि०) अरिन्दमे भवादि:, काश्यां ठञ् ञिठ् वा। अरिन्दमसे होनेवाला, जो दुश्मनके मारनेवालेसे हो।

आरिया (हिं० स्त्री०) एक पतली ककड़ी। यह वितस्ति-परिमित बढ़ती और अत्यन्त शीतल लगती है।

आरिश्मीय (सं० त्रि०) रिशति, रिश हिंसे मनिन्। अरिश्म: तस्य सन्निकृष्टदेशादि:, कृशादित्वात् छन्। अरिश्मके निकटस्थ, अरिश्मके पास होनेवाला।

आरी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र क्रकच, छोटा आरा। इसमें एक ही ओर पकड़ रहती है। बढ़यी दोनो पैर अड़ा और बायें हाथ पकड़ लकड़ी आरीसे चीरते हैं। २ लोहेकी कील। यह गाड़ी हांकनेके पैनेमें लगती है। ३ चमड़ा छेदनेकी सुतारी। ४ किनारा, छोर। (अ० वि०) ५ परिश्रान्त, थका-मांदा। ६ निराश्रय, बेचारा।

आरी आना (हिं० क्रि०) परिश्रान्त होना, थक जाना।

आरीहणक (सं० त्रि०) अरीहणेन निर्वृत्तम्, अरी-हणादित्वात् वुञ्। शत्रुघातक द्वारा सम्पन्न, दुश्मन्-के मारनेवालेका तैयार किया हुआ।

आरो होना, आरी आना देखो।

आरु (सं० पु०) ऋ-उण्। १ वृक्षविशेष, अकलका पेड़। यह वङ्गदेशके उत्तर-पूर्वाञ्चलस्थ पर्वत, जयन्ती-गिरि, कोयम्बातूर, कनाड़े, सुन्दे, सिंहल, पेगू और तेनेसेरिम प्रभृति स्थानमें होता है। वृक्ष बहुत बड़ा है। वङ्गालमें इसकी लकड़ीके तख्ते और सिंहलमें पीपे तथा बरंगे बनते हैं। बम्बईका आरु बहुत अच्छा होता और नावका पेंदा तैयार करनेमें लगता है। किन्तु सिलहट, कछाड़ और चटगांवकी लकड़ी सबसे बढ़िया और कीमती निकलती है। आजकल वङ्गालमें इससे कितनी ही चीज़ बनायी जाती है।

२ कर्कट, सरतान्, केकड़ा। ३ शूकर, सूअर।

'आरु: पुंसि तरोर्भेदे तथा कर्कटदंष्ट्रिणो:।' (मेदिनी)

४ कुष्माण्डलता, कुम्हड़ेकी बेल।

आरुक्, आरुज् और आरुट् देखो।

आरुक (सं० क्ली०) १ वृक्ष विशेष। यह हिमालय-पर्वतपर होता और गुणमें शीतल रहता है। हिन्दीमें इसे आड़ू कहते हैं। पत्रपुष्पादि भेदसे चातुर्जात्य है। सभी गुण समान रहते हैं। आरुक जारक होता और वात, मेह, अर्श तथा कफको मिटाता है। (मदनपाल) यह मधुर एवं हिम होता और अर्श, प्रमेह, गुल्म तथा रक्तदोषको दूर करता है। (राजनिघण्टु) (पु०) २ आलू-बोखारा। यह ग्राही, तुवर, हृद्य, शीतल, मलावष्टम्भक, उष्ण, मधुर, सुखप्रिय, पाचक, अम्ल एवं मुखस्वच्छकर होता और कफ, पित्त, मेह, गुल्म, अर्श एवं रक्तवात-रोगको मिटाता है। आरुक पकनेपर मधुर, गुरु, कफपित्तकर, उष्ण, वृष्य और धातुविवर्धक निकलता है। (वैद्यकनिघण्टु)

आरुज् (सं० त्रि०) भञ्जन करनेवाला, जो तोड़ डालता हो।

आरुज (वै० त्रि०) आरुजति, आ-रुज-क। १ सम्यक् पीड़क, तोड़ डालनेवाला। "विद्वा छित्वा धनञ्जयमिन्द्रदृढा वि हारुजं।" ऋक् ८।४५।१३। 'आरुजं आभिमुख्येन भङ्क्तारम्।' (सायण) (सं० पु०) २ रावणपक्षीय राक्षसविशेष। (महाभारत वनपर्व)

आरुजत्नु (वै० त्रि०) रुजो भङ्गे इत्यौणादिक-कत्नुच् प्रत्ययः, कित्वाद्गुणाभावः। भञ्जक, भेदकारी, तोड़ डालनेवाला। "वीळु चिदारुजत्नुभिः।" ऋक् १।६।५। 'आरुजत्नुभिः भञ्जकैः।' (सायण)

आरुणक (सं० त्रि०) अरुण-वुञ्। अरुण देशभव, अरुण मुल्कमें पैदा होनेवाला।

आरुणडांगी—मन्द्राज प्रदेशके तञ्जोर जिलेका एक भूभाग। पहले यहां चोल राजाओंका राजत्व रहा। ई०के १५वें शताब्द पाण्ड्यराजके सेनाध्यक्ष सेतु-पतिने इसे अधिकार किया था। १७वें शताब्द आरुणडांगी तञ्जोर राज्यमें मिलायी गयी। १८वें शताब्द रामनाड़का एक व्यक्ति किलावनके शासनमें पहुंचा था। १७४८ ई०को फिर तञ्जोरके राजाने इसपर अपना अधिकार जमाया।

आरुणपराजिन् (सं० पु०) प्राचीन कल्पग्रन्थ विशेष। इसमें ब्राह्मणोंका क्रियासंस्कार वर्णित है।

आरुणपराजी, आरुणपराजिन् देखो।

आरुणि (सं० पु०) अरुणस्यापत्यम्, इञ्। अत इञ्। पा ४।१।९४। १ उद्दालक गोतम मुनि। यह वैशम्पायनके नौमें एक शिष्य रहे। दूसरोंके नाम हैं,—आलम्ब, लता, कमल, ऋचाभ, ताण्ड्य, श्यामायन, कठ और कलापी। २ औद्दालकि, अरुण उपवेशीके पुत्र और श्वेतकेतुके पिता। (शतपथ तथा ऐतरेय-ब्राह्मण ८।७) ३ प्रजा-पतिके पुत्र सुपर्णेय। (तैत्तिरीय आरण्यक १०।७१) ४ पन्द्रहवें द्वापरके व्यास। (देवी भागवत १।३।२९) ५ विनताके पुत्र वैनतेय। ६ आयोदधौम्यशिष्य मुनिविशेष। ७ सूर्य-तनय। ८ सामवेदका एक ब्राह्मण। (पु० स्त्री०) ९ गरुड़ाग्रजके पुत्र वा कन्यारूप अपत्य। (स्त्री०) ङीप्। आरुणी।

आरुणिन् (सं० पु०) आरुणिना वैशम्पायनान्ते-वासिना प्रोक्तमधीयते, णिनि। वैशम्पायनशिष्य आरुणि-प्रोक्त ग्रन्थ अध्ययनकारी छात्र सकल।

आरुणी (वै० स्त्री०) अरुणवर्णा वड़वा, लाल रङ्गवाली घोड़ी। "अदारुणीषु, तविषीरयुग्ध्वम्।" ऋक् १।६४।७। 'आरुणीषु अरुणवर्णासु वड़वासु।' (सायण) वायु देवकी घोड़ियां लाल होनेसे आरुणी कहाती हैं।

आरुणेय (सं० पु०) आरुणेरुद्दालकस्यापत्यम्, ढक्। उद्दालकके पुत्र श्वेतकेतु।

आरुण्य (सं० क्ली०) राग, सुर्खी। (भागवते श्रीधर १०।२११।१७)

आरुत (सं० क्ली०) आ-रु भावे क्त। १ आराव, शोर-गुल, हुल्लड़। (त्रि०) आ-रु कर्तरि क्त। २ आराव-युक्त, पुरशोर, आवाज़से भरा हुआ।

आरुद्ध (सं० त्रि०) आरुध्यतेऽस्य, आ-रुध कर्मणि क्त। प्रतिरुद्ध, बद्ध, मसदूद, रुका हुआ।

आरुरुक्षु (सं० त्रि०) आरोढ़ुमिच्छुः, आ-रुह-सन्-उ। आरोहण करनेका इच्छुक, चढ़ने या बढ़नेकी ख़ाहिश रखनेवाला।

आरुरुक्षमाण (सं० त्रि०) आरोहणकी इच्छा करता हुआ, जो चढ़नेकी ख़ाहिश कर रहा हो।

आरुषाय (सं० त्रि०) अरुषः सन्निकृष्टदेशादिः, कृशाश्वादित्वात् छण्। अरुषसन्निकृष्ट, अरुषसे नज़दीक।

आरुषी (सं० स्त्री०) मनुकी एक कन्या। यह च्यवनकी पत्नी रहीं। च्यवनोत्पादित पुत्र और्व इनका उरुदेश फाड़कर भूमिष्ठ हुये थे।

(महाभारत आदिपर्व ६६ अध्याय)

आरुष्कर (सं० क्ली०) भल्लातक, भेलावां।

आरुह् (वै० त्रि०) १ आरोहण करनेवाला, जो चढ़ रहा हो। (स्त्री०) आरुक्। वृक्षप्ररोह, कुरा, टेहनी।

आरुह (सं० त्रि०) आरोहति, आ-रुह-क। १ आरोहणकर्ता, सोपानादि पर चढ़नेवाला। (पु०) २ आरोहण, उभार, चढ़ाव।

आरुह्य (सं० अव्य०) आरोहण करके, चढ़कर।

आरू (सं० पु०) ऋच्छति, ऋ-ऊ-णित्। णित्वद्धि-पर्यन्तः। उण् १।६७। १ पिङ्गलवर्ण, भूरा रङ्ग। (त्रि०) २ पिङ्गलवर्णयुक्त, भूरा।

आरूक, आरुक देखो।

आरूटपक (सं० पु०) वसा, चरबी।

आरूढ़ (सं० त्रि०) आ-रुह कर्तरि क्त। १ आरोहणकर्ता, चढ़नेवाला, चढ़ा हुआ। "प्रफुल्लकमलारूढाम्।" (जगद्धात्रीध्यान) यह शब्द प्रायः समासमें लगता है, जैसे—अश्वारूढ़ादि। कर्मणि क्त। २ आरोहण किया जानेवाला, जो चढ़नेके काम आता हो। (क्ली०) भावे क्त। ३ आरोहण, उभार।

आरूढ़यौवना (सं० स्त्री०) नायिका विशेष। यह एक प्रकारकी मध्या नायिका होती और स्वामिसहवाससे प्रसन्न रहती है।

आरूढ़वत् (सं० त्रि०) आरोहणमें प्रवृत्त, जो चढ़ रहा हो। (पु०) आरूढ़वान्। (स्त्री०) आरूढ़-वती।

आरूढ़ि (सं० स्त्री०) आ-रुह-क्तिन्। आरोहण, चढ़ायी।

आरे (वै० अव्य०) १ दूर, दूर-दराज़। २ समीप, नज़दीक। "आरे स्याम दुरितस्य भूरेः।" ऋक् १।१८९।८। हिन्दीमें यह शब्द 'आरा' का बहुवचन है।

आरेअघ (वै० त्रि०) निष्पाप, इज़ाको दूर किये हुआ। 'आरे दूरे अघं पापं यस्य तादृशौ।' (सायण)

आरेअवद्य (वै० त्रि०) निष्कलङ्क, हिक़ारतको दूर किये हुआ।

आरेक (सं० पु०) आ-रिच्-घञ्। सन्देह, एहति-माल, गुमान्।

'सन्देहद्वापरारेकाविचिकित्सा तु संशयः।' (हेम ६।११)

आरेचित (सं० त्रि०) आ-रिच्-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। ईषत् आकुञ्चित, सन्देहयुक्त, गैरमुतमैया, गोल।

आरेवत (सं० पु०) आ सम्यक् रेवयति अधो गम-यति मलम्, आ-रेव-णिच्-अतच्। १ स्थूलारग्वधवृक्ष, बड़े अमलतासका पेड़। मलको अच्छीतरह निकाल डालनेका गुण रखनेसे अमलतास 'आरेवत' कहाता है।

आरेहण (वै० क्ली०) लेहन, चुम्बन, चूमचाट।

आरो (हिं०) आरव और आरा देखो।

आरोक (सं० पु०) १ रुचिरता, चमाचमी, झला-मली। २ जालसूत्र मध्य प्रकाशका क्षुद्र बिन्दु, बाफ़्तेके धागेमें रोशनीका छोटा नुक़ता। ३ शिखा, चोटी।

आरोग (सं० पु०) सूर्य विशेष। (हिं) आरोग्य देखो।

आरोगना (हिं० क्रि०) भक्षण करना, नोश फ़र-माना, जीमना। भोजन करनेसे शरीर आरोग्य रहता, इसीसे खाना आरोगना कहाता है।

आरोग्य (सं० क्ली०) अरोगस्य भावः, ष्यञ्। रोग-शून्यत्व, आराम, तन्दुरुस्ती। हिन्दीमें यह शब्द विशेषणकी तरह भी व्यवहृत होता है।

"ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत् क्षत्रबन्धुमनामयम्।
वैश्यं क्षेमं समागम्य शूद्रमारोग्यमेव च॥" (मनु २।१२७)

परस्पर साक्षात् होनेपर ब्राह्मणसे कुशल, क्षत्रियसे अनामय, वैश्यसे क्षेम अर्थात् धन-धान्य-निरापद और शूद्रसे आरोग्य पूछना चाहिये।

आरोग्यता (हिं० स्त्री०) आरोग्य देखो।

आरोग्यपञ्चक (सं० क्ली०) स्वास्थ्यका पञ्च द्रव्य, तन्दुरुस्तीकी पांच चीज़। इसमें पथ्या, आरग्वध, तिक्ता, त्रिवृत् और आमलक डालते हैं। आरोग्यपञ्चकका क्वाथ पीनेसे साम जीर्णज्वर छूट जाता है। (भावप्रकाश)

आरोग्यव्रत (सं० क्ली०) आरोग्यार्थं व्रतम्, शाक० तत्। व्रत विशेष। यह व्रत सूर्यका होता और माघ मासकी शुक्लसप्तमीसे लगाकर प्रति शुक्लसप्तमीको एक वत्सर पर्यन्त किया जाता है। षष्ठीको संयम रखते और सप्तमीके दिन उपवासकर यथाविधि भोजन करते हैं। (वराहपुराण)

आरोग्यशाला (सं० स्त्री०) आरोग्यार्था शाला, शाक० तत्। चिकित्सालय, दारुल-शफ़ा, अस्पताल। चिकित्साके निमित्त राजादि इसे उपयुक्त स्थानपर बनवा देते हैं। वैद्यकशास्त्रमें लिखते—आरोग्य दान करनेसे चतुर्वर्ग देनेका फल पाते, क्योंकि उसे धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष सकलका साधन ठहराते हैं। आरोग्यशालामें महौषध और उत्तम उपकरणकी सामग्री रहना आवश्यक है। रोगीके आहारीय बहु अन्न, सरस व्यञ्जन और दुग्धादि रखनेकी भी व्यवस्था होना चाहिये। शास्त्रज्ञ, प्राज्ञ, औषध सकलका बलवीर्यदर्शी, ओषधि एवं मूलका यथार्थ गुणज्ञ और आहरणकालवित् वैद्य नियुक्त करे। जो व्यक्ति शालि, मांस एवं औषधका बलवीर्य नहीं जानता, प्रियम्वद नहीं होता और सड़े-गले द्रव्यके परित्यागका कारण नहीं समझता, वह वृथा ही वैद्य कहाता है।

आरोग्यशालाका क्रम एवं वैद्यका लक्षण देखनेसे समझते, पहले भी हिन्दू राजाओंके अधिकार-समय दातव्य औषधालय और राजनियुक्त प्रवीण चिकित्सक रहते थे। यूरोपमें सर्वप्रथम ई०के ४थे शताब्द आरोग्यशाला (Hospital) खुली थी। आजकल वहां जितने अस्पताल देखते, उनमें सेण्ट-बार्थलम्यूको सर्वप्राचीन पाते हैं। वह ११२३ई०में बनाया गया था।

आरोग्यशिम्बी (सं० स्त्री०) आरग्वधवृक्ष, अम-लतासका पेड़।

आरोग्यस्नान (सं० क्ली०) आरोग्ये रोगराहित्ये सति तन्निमित्तकं स्नानम्, शाक० तत्। रोगसे छूटनेका स्नान, बीमारी रफ़ा होनेपर किया जानेवाला गुस्ल।

आरोग्याम्बु (सं० क्ली०) पादशेषोष्ण जल, गर्म करनेसे चौथाई बचा हुआ पानी। जो तोय पादशेष होता, वह आरोग्याम्बु कहाता है। (भावप्रकाश) इसे सेवन करनेसे सर्वरोग दूर होता है।

आरोचन (सं० त्रि०) तेजस्वी, रोशन, चमकीला। (वै०) अरुषी। (निरुक्त १२।७)

आरोढ़व्य (सं० त्रि०) आरोहणका काम देनेवाला, जिसपर चढ़ा जाये।

आरोढ़ृ (सं० त्रि०) आरोहण करनेवाला, जो चढ़ता हो। (पु०) आरोढ़ा। (स्त्री०) आरोढ़ी।

आरोधक (सं० त्रि०) आ-रुध् कर्तरि ण्वुल्। आवरक, रोकनेवाला।

आरोधन (वै० क्ली०) आ-रुध भावे ल्युट्। १ अव-रोधन, निरोध, रोक। २ गुप्तस्थान, पोशीदा जगह। "मध्ये आरोधने दिवः।" ऋक् १।१०५।११। 'आरोधने सर्वस्यावरके।' (सायण)

आरोधना (हिं० क्रि०) अवरोधन करना, रोकना।

आरोधनीय (सं० त्रि०) आरुध्यते, कर्मणि ल्युट्। १ अवरोधन किया जानेवाला, जिसे रोका जाये। करणे ल्युट्। २ आरोधन साधन, रोक देनेवाला।

आरोप (सं० पु०) आ-रुह-णिच्-ल्युट्, हस्य प णिच् लोपः। रुहः पोऽन्यतरस्याम्। पा ७।३।४३। १ न्यास, स्थापन, निवेशन, तक़र्रुरी, लगाव, जोड़। २ प्रदेश, सूरत। ३ अन्य पदार्थमें अन्य धर्मका अवभासरूप मिथ्याज्ञान। जिसमें जो धर्म नहीं रहता, उसमें उसी धर्मको लगा देनेसे बुद्धिका नाम आरोप-ज्ञान

पड़ता है। जैसे शुक्तिमें रजतज्ञान। वेदान्तिक इसे अध्यास कहते हैं।

आरोप आहार्य और अनाहार्य भेदसे दो प्रकारका होता है। जहां बोध निश्चय रहते भी न्यास करनेको जो चाहता, वहां आहार्य आरोप आता है। जैसे, न होनेका निश्चय रहते भी मुखको चन्द्र कहते हैं। अपरोक्ष ज्ञानका नाम अनाहार्य आरोप है। वेदान्त-मतसे वस्तुमें अवस्तुका भ्रम दौड़ना अध्यारोप ठहरता है। अध्यारोप देखो।

आरोपक (सं० त्रि०) आ-रुह-णिच्-ण्वुल्। आरोपणकर्ता, लगानेवाला।

आरोपण (सं० क्लो०) आ-रुह-णिच्-ल्युट्। १ न्यास, तक़रीर, लगाव। २ ऊपर उठा देनेका काम। ३ पेड़का लगाना। ४ विश्वास, सुपुर्दगी। ५ तन्तुप्रयोग, तार चढ़ायी।

आरोपणीय (सं० त्रि०) आ-रुह-णिच्-अनीयर्। १ चढ़ाया जानेवाला, जिसे ऊपरको उठाया जाये। २ स्थापनीय, रखा जानेवाला।

आरोपना (हिं० क्रि०) १ निवेशन करना, लगाना, बैठाना। २ चढ़ाना, ऊपरको उठाना।

आरोपित (सं० त्रि०) आ-रुह-णिच्-क्त-इट। १ आरोहण कराया हुआ, जो चढ़ाया गया हो। २ स्थापन किया हुआ, जो लगाया गया हो। ३ आकस्मिक, इत्तिफ़ाक़िया।

आरोप्य (सं० त्रि०) आ-रुह-णिच्-यत्। १ आरोपणीय, लगाया जानेवाला। (अव्य०) २ आरोपकरके, लगाकर।

आरोप्यमाण (सं० त्रि०) चढ़ाया जाता हुआ, जो खिंच रहा हो।

आरोह (सं० पु०) आ-रुह-घञ्। १ आक्रमण, हमला। २ नीच स्थलसे ऊर्ध्व स्थानको गमन, नीचेसे ऊपरको उठान। ३ अङ्कुरादिका प्रादुर्भाव, कोंपल वग़ैरहका फूटना। ४ हस्ती या घोटकके ऊपरकी बैठक, हाथी या घोड़ेकी सवारी। ५ दीर्घत्व, लम्बान। ६ उच्चत्व, बुलन्दी। ७ नितम्ब, चूतड़। ८ मान, पैमायश। 'आरोहो दीर्घमानयोः। आरोहणे नितम्बे च।' (विश्व) ९ आरोहणकर्ता, सवार। १० दर्प, ग़रूर। ११ अवतरण, उतार। १२ आकर, खान।

आरोहक (सं० त्रि०) आ-रुह-ण्वुल्। १ आरोहणकर्ता, चढ़नेवाला। २ उन्नतशील, उठनेवाला। ३ उठा देनेवाला। (पु०) ४ अश्वारूढ़, सवार। ५ वृक्ष, दरख़्त।

आरोहण (सं० क्लो०) आ-रुह-ल्युट्। १ नीच-स्थलसे ऊर्ध्व स्थानको गमन, नीचेसे ऊपरका जाना। २ अङ्कुरादिका प्रादुर्भाव, कोंपल वग़ैरहका फूटना। आरुह्यतेऽनेन, करणे ल्युट्। ३ सोपान, सिढ़ी। ४ अभिक्रम, हमला। 'आरोहणं त्वभिक्रमः।' (हेम) 'आरोहणं स्यात् सोपाने समारोहे प्ररोहणे।' (मेदिनी) (वै०) ५ शकट, गाड़ी। ६ नृत्यस्थली, नाचनेकी जगह।

आरोहणिक (सं० त्रि०) आरोहणसम्बन्धीय, चढ़नेके मुताल्लिक़। (स्त्री०) आरोहणिकी।

आरोहणीय (सं० त्रि०) आरुह्यते, आ-रुह कर्मणि अनीयर्। १ आरोहणके योग्य, चढ़ा जानेवाला। आरोहणं प्रयोजनमस्य, छ। अणुप्रवचनादिभ्यश्छः। पा ५।१।१११। २ आरोहण-साधन, चढ़नेमें काम देनेवाला।

आरोहवत् (सं० त्रि०) आरोहः प्रशस्त-नितम्ब-स्थानमस्य, मतुप् मस्य व पचे इनि। प्रशस्त नितम्ब-युक्त, चौड़े चूतड़ रखनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। आरोहवती, आरोहिणी। (पु०) आरोहवान्।

आरोहिणी (सं० स्त्री०) ग्रहके नक्षत्रकी एक दशा। ज्योतिषमें ग्रहविशेषकी आरोहिणी दशाका फल इसतरह लिखा है,—

सूर्यकी आरोहिणी दशा आनेपर नर महत्त्व, सुख, परोपकारित्व, स्त्री, पुत्र, भूमि, गो, अश्व, हस्ती और कृषिकार्यसे सम्पन्न रहता है।

चन्द्रकी आरोहिणी दशामें स्त्री, पुत्र, धन, वस्त्र, सुख, कान्ति, राज्य, सुखभोग, देवार्चन और ब्राह्मण-तृप्ति सभी हाथ आ जाता है।

कुजकी आरोहिणी दशा सुख, राजपूजा, प्राधान्य, धैर्य, मनोभिलाष, सौभाग्य, गो, हस्ती और अश्व प्रदान करती है।

बुधकी आरोहिणी दशा लगनेसे यशोत्सव, गो,

वृष, अश्वसमूह, भूषण, वस्त्र, पान, वाणिज्य, भूमि, अर्थ और परोपकार बढ़ता है।

वृहस्पतिकी आरोहिणी दशाका फल महत्त्व, अर्थ, भूमि, गानक्रिया, स्त्री, पुत्र, राजपूजा और स्ववीर्यहेतु यशःप्रतापकी वृद्धि है।

शुक्रकी आरोहिणी दशाको प्रताप, वस्त्र, अलङ्कार, कान्ति, पूजा, प्रवृत्तिसिद्धि, स्वजनके साथ विरोध, मातृविनाश और परस्त्रीप्रसङ्ग देनेवाली समझना चाहिये।

शनिकी आरोहिणी दशासे विपाक अवस्थामें नृप-लब्ध भागर, वाणिज्य, कृषि, भूमि, गो, अश्व और पुत्र पाते हैं।

आरोहिन् (सं० त्रि०) आरोहति, आ-रुह-णिनि। आरोहणकर्ता, चढ़नेवाला। (पु०) आरोही। (स्त्री०) आरोहिणी।

आरोही (सं० पु०) उद्भिद्का जातिभेद, किसी किस्मका पौदा। आरोही अपना भार संभाल नहीं सकता। यह कभी-कभी अपने-आप टहनियोंमें लिपट जाया करता, जैसे गुड़ची आदि है।

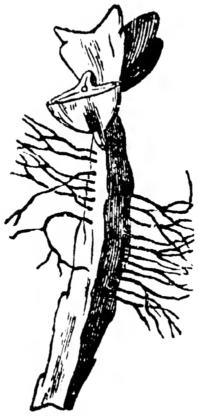

१

२

किसी-किसीमें केवल मूल निकलता, जो काण्डको पकड़ लेता है। १ चित्र देखो। कोई काण्ड अपने पत्तेके आगे दूसरे वस्तुसे मिल बैठता है। जैसे, करिहारी। २ चित्र देखो। अपर वस्तु पकड़नेके लिये आरोही जातिके वृक्षकाण्डसे धागे-जैसा अङ्कुर फूटता, जो कलिका वा पत्रका रूपान्तरमात्र होता है।

आर्क (सं० त्रि०) अर्क-अभि-व्याप्य, आफ़ताबी।

आर्कलूष (सं० पु०) अर्कलूषस्य ऋषिभेदस्यापत्यम्, अञ्। अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ्। पा ४।१।१०४। अर्कलूषके पुत्र। (स्त्री०) ङीप्। आर्कलूषी।

आर्कलूषायण (सं० पु०) अर्कलूषस्यापत्यम्, यूनि अपत्ये फक्। अर्कलूषके युवापत्य।

आर्कलूषि (सं० पु०-स्त्री०) अर्कलूषस्यापत्यम्, बाह्वा-देराकृतिगणत्वात् इञ्। अर्कलूषके पुत्र वा कन्या-रूप अपत्य।

आर्कायण (सं० त्रि०) अर्कस्य गोत्रम्, हरितादित्वात् अञ्। अर्कके गोत्रसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आर्कायणि (सं० त्रि०) अर्क कर्णादित्वात् फिञ्। १ अर्कके निकटस्थ, अर्कके पासवाला। आर्कायणि देश प्लिनि-कथित 'आराकोटस्' मालूम पड़ता है। उनके मतसे रानी सेमिरामिसने इस देशमें एक नगर बसाया था। (Pliny vi. 25) अर्कास्याय-नाय सूर्यलोकस्य प्राप्तये हितम्, अण्। २ सूर्यलोक-साधन, सूर्यलोकको पहुंचा देनेवाला।

आर्कायन (सं० पु०) यज्ञविशेष। भगीरथने सोलह बार यह यज्ञ किया था। (महाभारत—अनुशासनपर्व १०३ अध्याय)

आर्कि (सं० पु०) अर्कस्यापत्यम्, इञ्। सूर्यपुत्र। यम, शनि, वैवस्वत मनु, सुग्रीव और कर्ण आर्कि कहाते हैं।

आर्क्ष (सं० त्रि०) ऋक्षस्येदम्, अण्। १ नक्षत्र-सम्बन्धीय, कवाकिबदार, तारोंसे भरा हुआ। २ भल्लूक-सम्बन्धीय, भालूके मुताल्लिक। (पु०) ३ ऋक्षके अपत्य। यह शब्द अश्वमेध, श्रुतर्वन् और संवरणका विशेषण है।

आर्क्षवर्ष (सं० त्रि०) तारकित वत्सर वा राशिचक्र, कवाकिबदार साल या दौर।

आर्क्षोद (सं० पु०) ऋक्षोदः पर्वतोऽभिजनोऽस्य, अण्। अभिजनश्च। पा ४।३।९०। ऋक्षोद पर्वतपर पित्रादि क्रमसे वासकारी द्विज विशेष, ऋक्षोद पहाड़का पुश्तैनी बाशिन्दा।

आर्क्ष्य (सं० पु०) ऋक्षे भवम्, यञ्। गर्गादिभ्यो यञ्। पा ४।१।१०५। नक्षत्रभव, तारेसे पैदा।

आर्गयण, आर्गयन देखो।

आर्गयन (सं० त्रि०) ऋगयनस्य ज्ञातो ग्रन्थः तत्र भवः

वा अण्। ऋगयनके व्याख्यानग्रन्थसे निकला हुआ।

आर्गल (सं० पु०) अर्गलमेव, स्वार्थे अण्। द्वाररोधक काष्ठविशेष, आगल, चटखनी।

आर्गध, आरग्वध देखो।

आर्घा (सं० स्त्री०) आ-अर्घ-अच्। पीतवर्ण, दीर्घमुख और भ्रमरवत् मधुमक्षिका विशेष, नहल। मालव देशमें यह देख पड़ती है।

आर्घ्य (सं० क्ली०) आर्घया निर्वृत्तं यत्। १ आर्घाख्य मक्षिका द्वारा निष्पादित मधु, आर्घाका शहद। जरत्कारोश्रममें मधुक वृक्षसे निकलनेवाला श्वेतवर्ण निर्यास आर्घ्य कहाता है। आर्घा नामक मक्षिकाका आर्घ्य ही श्रेष्ठ और सेवनसे चाक्षुष्य, अस्रदोषघ्न तथा कफ एवं पित्तको नाश करनेवाला है। इसका रस कषाय एवं कटु होता और पक्व जानेपर तिक्त, बलवर्धक तथा पुष्टिकर निकलता है। (भावप्रकाश) (त्रि०) २ आर्घा-सम्बन्धीय, नहलके मुताल्लिक।

आर्घ्यशर्करा (सं० स्त्री०) आर्घ्य मधु जात शर्करा, आर्घ्य शहद की शक्कर। यह गुणमें आर्घ्य मधु-जैसी ही होती है। (राजनिघण्ट)

आर्घ्या (सं० स्त्री०) मधुमक्षिका विशेष, एक नहल। यह पीततुण्ड और भ्रमर-सदृश होती है। (राजनिघण्ट)

आर्च (सं० त्रि०) अर्चा अस्त्यस्य, ण। प्रज्ञाश्रद्धार्चाभ्यो णः। पा ५।२।१०१। १ अर्चायुक्त, पूजा जानेवाला। २ अर्चक, परस्तिश करनेवाला। ३ ऋक-सम्बन्धीय, ऋग्वेदसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आर्चत्क (सं० पु०) ऋचत्कके पुत्र। (ऋक् १।११६।२२)

आर्चभिन् (सं० पु०) बहुवचनम्. ऋचाभेन वैशम्पायनस्य शिष्यविशेषेण प्रोक्तमधीते, णिनि। ऋचाभके शिष्यका बनाया ग्रन्थ पढ़नेवाला।

आर्चिक (सं० क्ली०) ऋचि भवं ऋचो व्याख्यानो ग्रन्थो वा, ठञ्। सामवेदीय ग्रन्थविशेष। ऋङ्मूलक होनेसे सामको आर्चिक कहते हैं।

आर्चीक (सं० त्रि०) ऋचीके पर्वते भवम्, अण्। १ ऋचीक पर्वतसे उत्पन्न। (पु०) स्वार्थे अण्। २ ऋचीक पर्वत। यह पर्वत पुष्कर तीर्थके निकट अवस्थित है। (महाभारत, वनपर्व २५ अध्याय)

आर्जव (सं० क्ली०) ऋजोर्भावः, अण्। १ सारल्य, रास्ती, सीधापन। २ सदाचार, रास्त किरदारी, सचायी। आर्जव दैहिक और मानसिक दो प्रकारका होता है। देहमें जो अंश वक्र नहीं, वही सरल है। इसीतरह व्यवहार्य वस्तु यष्टि प्रभृतिमें भी आर्जव और वक्रत्व रहता है। मानसिक सारल्यमें वाह्य और आन्तरिक दोनोंका प्रकाश भावसे झलकता है। कौटिल्यपूर्वक जो आर्जव बाहर देखाते हैं, उसे मानसिक कह नहीं सकते।

३ भावशुद्धि, ईमान्दारी। ४ निष्कापट्य,रास्तबाजी।

आर्जीक (वै० पु०) ऋजीकस्येदम्. अण्। ऋजीक देश-सम्बन्धी।

"सुषोमे शर्यणावत्यार्जीके पस्त्यावति।" (ऋक् ८।७।२९।)

'आर्जीके ऋजीकानामदेशाः तत्सम्बन्धि।' (सायण)

मूलतः कदाचित् दुग्धपात्रको आर्जीक कहते हैं। सम्भवतः यह शब्द दैवी पात्रका द्योतक होता, जिसमें सोमरस परिष्कार किया जाता, अथवा उससे बनी आकाशनदीको बताता है। सायण आर्जीकका अर्थ ऋजीक देशका कूट लगाते हैं।

आर्जीकीय (वै० पु०) वेदोक्त देश विशेष। "अयं ते शर्यणावति सुषोमायामधिप्रियः। आर्जीकीये मदिन्तमः।" (ऋक्-संहिता १०।७५।५) 'आर्जीकीये एतन्नामके देशे।' (सायण)

आर्जीकीया (वै० स्त्री०) आर्जीकीय-टाप्। १ वेदोक्त नदीविशेष। "आर्जीकीये मरुद्वृधा सुषोमया।' (ऋक्) 'आर्जीकीया विपाडित्याहु ऋजीकप्रभवावजुगामिनी वा।' (यास्क ९।१।५) २ विपाशा नदी। (Hyphasis), वर्तमान नाम वियस है।

आर्जुनायन (सं० पु०) अर्जुनस्य गोत्रापत्यम्, फञ्। अश्वादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०। १ अर्जुनके गोत्रापत्य। २ भारतका उत्तरपश्चिम-सीमास्थित एक जनपद।

वराहमिहिरने पांच-छः बार यह शब्द देशविशेष और तद्देशवासीके लिये लिखा है। काबुल और पेशावरका मध्यवर्तीस्थान पुरा 'अर्जुन' नामसे अभिहित था, संप्रति 'नगरहार' नामसे प्रसिद्ध है। (स्त्री०) टाप्। आर्जुनायना।

आर्जुनायनक (सं० त्रि०) आर्जुनायनस्य विषयो देशः,

वुञ्। राजन्यादिभ्यो वुञ्। पा ४।२।५३। आर्जुनायनाकीर्ण, आर्जुनायनसे भरा हुआ।

आर्जुनावक (सं० त्रि०) अर्जुनावदेशे भवम्, वुञ्। धूमादिभ्यश्च। पा ४।२।१२७। अर्जुनाव नामक देशभव, अर्जुनाव मुल्कका पैदा।

आर्जुनि (सं० पु०) अर्जुनस्यापत्यम्, इञ्। बाह्वादिभ्यश्च। पा ४।१।९५। १ अर्जुनके पुत्र अभिमन्यु। २ अर्जुनके औरस और द्रौपदीके गर्भसे उत्पन्न श्रुतकर्मा।

"पाञ्चाल्यपि तु पञ्चभ्यः पतिभ्यः शुभलक्षणा।
लेभे पञ्चसुतान् वीरान् श्रेष्ठान् पञ्चाचलानिव॥ ७५
युधिष्ठिरात् प्रतिविन्ध्यं सुतसोमं वृकोदरात्।
अर्जुनाच्छ्रुतकर्माणं शतानीकञ्च नाकुलिम्॥ ७६
सहदेवाच्छ्रुतसेनम्।" (महाभारत—आदिपर्व २२२ अध्याय)

आर्जुनेय (सं० पु०) अर्जुन्या गाभ्या अपत्यम्। अर्जुनीके अपत्य कौत्स ऋषि। कुत्स ऋषिकी गाभी अर्जुनी द्वारा प्रतिपालित होनेसे कुत्सके पुत्रका यह नाम पड़ा है।

आर्ट (अं० क्ली० Art.) १ कला, शिल्प, कारीगरी। २ विद्या, हुनर। ३ युक्ति, हिमत। ४ कपट, ऐयारी, चालाकी। जिस पाठशालामें शिल्प सिखाते, उसे 'आर्ट स्कूल' कहते हैं।

आर्टिकिल (अं० क्ली० Article) १ द्रव्य, जिन्स, चीज़। २ लेख, मज़मून। ३ पद, दफ़ा।

आर्टिक्युलेटा (अं० क्ली० Articulata) जन्तुविशेष, किसी क़िस्मके जानवर। इसका शरीर और अङ्ग ग्रथित रहता है। किन्तु अन्तर्गत कङ्काल अस्थिमय नहीं और प्रधान मज्जातन्तुगत सूत्र उन्मुख होता है। इनमें स्थलचर एवं जलचर सम्बन्धीय दो विभेद और क्रमि, जालिक, बहुपाद, कवची तथा कीटक पांच गण हैं। क्रमि, जालिक तथा बहुपाद स्थल और कवची एवं कीटक जलमें रहते हैं। स्थलचर देहमें शाखा-प्रतिशाखा-रूपसे विस्तीर्ण वायुनाड़ी और जलचर अधोगण्ड द्वारा श्वास लेते हैं।

क्रमिका शरीर तीन भागमें विभक्त है। शीर्ष एवं वक्षःस्थल उदरसे पृथक् रहता है। पाद छः होते और प्रायः दो या चार पक्ष निकलते हैं।

जालिकका शीर्ष एवं वक्षःस्थल एक ही खण्डमें मिला और उदरसे जुदा होता है। पादसंख्या आठ है।

बहुपाद उदरसे पृथक् वक्षःस्थल नहीं रखते और कीटक-जैसे देख पड़ते हैं। पाद बहुत होते हैं। शतपदी इन्होंमें परिगृहीत है।

कवचीके देहमें दो भाग होते हैं। शीर्ष एवं वक्षःस्थल एकहीमें मिला और उदरसे जुदा रहता है। पाद प्रधानतः दश या चौदह, कभी कभी अधिक और क्वचित् न्यून भी होते हैं। केकड़ा और झींगा मछली वग़ैरह इन्हीं जानवरोंमें शामिल है।

कीटकका वक्षःस्थल उदरसे भिन्न नहीं होता और पावका अभाव रहता है। कभी-कभी पादके स्थानमें फूलीहुई गांठे निकल आती हैं। केंचुवा, जोंक, चक्करदार और अन्तड़ियोंका कीड़ा कीटक होता है।

आर्डर (अं० क्ली० Order) १ आदेश, इर्शाद, हुक्म। २ विधान, दस्तूर, ढङ्ग। ३ आनुपूर्व्य, दस्तूर। ४ आचार, ज़ाबिता। ५ वर्ग, मर्तबा। ६ आश्रम, हलक़ा। ७ अवस्था, दुरुस्ती। ८ धैर्य, अमन। ९ उपचार, तदबीर। १० पत्र, रुक्क़ा, मांग। ११ समाहार, दरजा।

आर्डिनेरी (अं० वि० Ordinary) १ आचारिक, मामूली। २ सामान्य, आम दरजेवाला। ३ निर्भूषण, बेरौनक़। ४ प्रसिद्ध, बाज़ारी। ५ अप्रधान, अदना, कम-क़दर।

आर्त (सं० त्रि०) आ-ऋत क्त। १ पीड़ित, बेज़ार, दिक़। २ दुःखित, मुसीबतज़दा। ३ आहत, मजरूह।

आर्तगल (सं० पु०) आर्तः पीड़ा गलति क्षरति, आ-ऋत भावे क्त गल अच्। १ नीलझिण्टी, कटसरैया। (Barleria Cærulea) यह उष्ण, तिक्त एवं कटु होता है और वातकफ, शोथ, कण्डु, शूल, कुष्ठ तथा व्रणपर चलता है। (वैद्यकनिघण्टु)

आर्ततर (सं० त्रि०) अत्यन्त पीड़ित, निहायत बेज़ार, घबराया हुआ।

आर्तता (सं० क्ली०) पीड़ा, दर्द, तकलीफ़।

आर्तना (वै॰ स्त्री॰) १ भयकर समर, मुज़िर जङ्ग, उजाड़ झगड़ा। २ अक्लष्ट वन्य भूमि, ग़ैर-मजरूवा, जङ्गली ज़मीन्।

आर्तनाद (सं॰ पु॰) करुणस्वन, दर्दनाक आवाज़।

आर्तपर्णि (सं॰ पु॰) ऋतपर्णस्यापत्यम्, इञ्। ऋतपर्ण राजाके पुत्र सुदास।

आर्तबन्धु (सं॰ पु॰) दुःखित व्यक्तिका मित्र, ग़रीबोंका दोस्त।

आर्तभाग (सं॰ पु॰) ऋतभागस्य ऋषेर्गोत्रापत्यम्, अञ्। आनुष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ्। पा ४।१।१०४। ऋतभाग ऋषिके पुत्र जरत्कारु।

आर्तव (सं॰ क्ली॰) ऋतुरस्य प्राप्तः, अण्। १ ऋतुभव पुष्पादि, मौसमी फूल। २ ऋतु, हैज़। ३ ऋतुमती स्त्रीका रक्त, हैज़ी आलायश।

'आर्तवम्नृतुसम्भूते स्त्रीरजः पुष्पयोरपि।' (विश्व)

सुस्थ अवस्थामें नियमित समयपर युवती स्त्रीके जरायुसे जो शोणित बहता, वह आर्तव कहाता है। अंगरेज़ीमें इसका नाम काटामेनिया (Catamania) या मेनसेस (Menses) है। सचराचर भारतवर्षमें बारहसे पचास वर्षतक मास-मास आर्तव निकलता है,—

"द्वादशाद्वत्सरादूर्ध्वं मापञ्चाशत्समं स्त्रियः।
मासि मासि भगद्वारा प्रकृत्यैवार्तवं स्रवेत्॥" (भावप्रकाश)

इङ्गलेण्ड देशको स्त्रियां सोलह वर्षसे ऋतुमती होने लगतीं है। प्रायः ४५।५० वर्ष बीतनेपर उनका आर्तव रुक जाता है। लापलेण्डमें २०।२५ वर्षतक स्त्रीका आर्तव प्रायः बन्द रहता और उसके बाद ६० वत्सर पर्यन्त यथारीति निकला करता है। उपरोक्त प्रमाण द्वारा जान पड़ता, कि शीत-प्रधानकी अपेक्षा ग्रीष्म-प्रधान देशमें शीघ्र-शीघ्र आर्तव आता है। कभी-कभी आठ या नौ वत्सर वयसमें भी स्त्री ऋतुमती हो जाती है।

आर्तव निकलनेसे पहले अथवा उसके साथ-साथ शरीरमें अवसन्नता, आयास, दौर्बल्य, चक्षुकी चारो ओर विवर्णता और ईषत् असित रेखा, पृष्ठदेश एवं ग्रीवाके वृहत् ग्रन्थिमें व्यथा, कटि, उरुद्वय तथा वस्तिके अधोभागमें यातना और भार-बोध, सामान्य ज्वर प्रभृति लक्षण देख पड़ता है। शोणित गिर जानेसे फिर उतना कष्ट नहीं रहता। केवल शरीर दुर्बल और मुखका भाव कुछ मलिन हो जाता है। रजः निकलते समय स्त्रीके देहमें एक प्रकारका गन्ध आता है। किसी-किसीके पूर्व लक्षण देख पड़नेपर शुभ्र जल-जैसा कुछ तरल पदार्थ निकलता है। ऐसी अवस्थामें पुष्टिकर आहार और औषध खिलानेसे स्वाभाविक आर्तव आने लगता है। फिर स्तनमें वेदना बोध या दुग्ध सञ्चार होता है। ऋतुमती स्त्रीके शारीरिक और मानसिक परिवर्तन पड़ता है। देह पुष्ट एवं लावण्ययुक्त, गठन सुगोल, स्तनद्वय वर्धित और नितम्ब प्रसारित होता है। स्वभाव लज्जा तथा विनीत भावसे दब जाता और स्त्रीजातिका कार्य एवं आचरण चलने लगता है।

दैहिक और आर्तव शोणितमें अनेक प्रभेद है। आर्तव शोणितमें सूक्ष्म अंश (Fibrine) रहते भी साधारण रीतिसे रक्त निकलकर जमता या गलता नहीं।

अण्डाधार ही आर्तव निःसृत करनेका प्रधान उद्दीपक है। उसके अभावमें ऋतु नहीं होता। अण्डाधार रहनेसे जरायुके अभावमें भी ऋतुका सकल लक्षण देख पड़ता है। अण्डाधारसे अण्ड निकलना ही ऋतुका प्रधान कारण है। प्रत्येक ऋतुकाल अण्डाधारका (Graafian vesicles) कोष फटता और अण्ड आगे बढ़कर अण्डप्रणालीके बीचसे जरायुमें घुसता तथा आर्तवके साथ निकल पड़ता है। अण्ड गिरनेपर जो स्थान चक्रदण्डवत् पीतवर्ण और शुष्क हो जाता, वह कर्पोरा-लूटिया (Corpora Lutea) कहाता है। स्त्रीके मरनेपर अण्डाधारका समुदय कर्पोरा-लूटिया गिननेसे उत्पन्न हुये सन्तानकी संख्या बतायी जा सकती है। अन्तःसत्त्वा देखो।

ऋतुके समय रक्ताधिक्यसे जरायुकी धमनी तथा शिरा फूल जाती और अल्प अल्प बननेपर क्लेदोत्पादक (Mucus membrane) झिल्लीमें बिन्दु-बिन्दु रक्तकी उत्पत्ति होती है। पीछे जरायुकोटर आर्तवसे बह चलता है।

गर्भावस्थामें ऋतुका होना और ऋतु आनेसे पहले या सन्तानको स्तन्य पिलाते समय गर्भ धारण करना आदि सकल लक्षण अस्वाभाविक है।

आर्तववाहिनी नाड़ीका मुख गर्भसे रुक जानेपर आर्तव देख नहीं पड़ता। उस समय यह अधोभागसे निकल न सकनेपर ऊर्ध्व दिक्को गमन करता है। आर्तव आग्नेय है। इसके आधिक्यसे कन्या उत्पन्न होती है। (सुश्रुत शारीर ३ अध्याय)

शशक-शोणित अथवा लाक्षा-रस जैसा होने और वस्त्र रञ्जित कर न सकनेसे आर्तवको निर्दोष समझना चाहिये,—

"शशासृक्प्रतिमं यत्तु यद्वा लाक्षारसोपमम्।
तदार्तवं प्रशंसन्ति यद्वासो न विरञ्जयेत्।"

(सुश्रुत शारीर २ अध्याय)

वात, पित्त, कफ और शोणित चारो अलग-अलग या मिल-जुलकर आर्तवको बिगाड़ देते हैं। इसमें दूषण आनेसे भी सन्तान उत्पन्न नहीं होता। आर्तवका दोष वर्ण और वेदना द्वारा समझ पड़ता है। विगलित वास आने और पूय वा मल-जैसा बन जानेसे इसका दोष नहीं छूटता, दूसरा लक्षण रहनेसे चिकित्सा-साध्य होता है। आर्तव बिगड़नेसे नानाप्रकारकी पीड़ा उठती है।

डेनमान, हामिलटन, चार्चिल प्रभृति पाश्चात्य-चिकित्सकोंके मतसे आर्तव रोग तीन प्रकारका होता है,—१ आर्तवरोध वा आर्तवाभाव (Amenorrhœa), २ आर्तवक्लेश (Dysmenorrhœa) और ३ असृग्दर अथवा अधिक शोणित-स्राव (Menorrhagia)।

आर्तवरोध—कौमारावस्था बीतते ऋतुका न होना है। महर्षि सुश्रुतने इस रोगका नाम आर्तवविनाश लिखा है। दो अण्डाधार पड़ने, अण्डाधारको उपरिस्थ कोषसमूह तथा जरायु न होने अथवा पीड़ा उठने, जरायुमुखका निम्न बहिर्भाग (Os Uteri) रुद्ध रहने, योनिका अभाव आने, उभयपार्श्व मिल जाने, द्वार रुकने किंवा सतीछेदी (Hymen) न खुलनेसे आर्तव रोध होता है। अण्डाधार और जरायुके अभावमें यह रोग नहीं छूटता, किन्तु योनिद्वार रुकनेपर औषध वा अस्त्रचिकित्सा द्वारा आरोग्यलाभ हो सकता है। पुनर्वार रुक न जानेके लिये मुक्त स्थानको तैलयुक्त क्षौमवस्त्र (Lint), वस्त्र अथवा अङ्गुलसे दबा देते हैं। जननेन्द्रिय स्वाभाविक अवस्थापर रहते भी किसीके आर्तवरोध पड़ता है। उसमें कोई अत्यन्त हृष्टपुष्ट और कोई क्षीण, कोमलाङ्ग वा विवर्ण बन जाती है। ऋतुका सकल लक्षण झलकते भी आर्तव नहीं निकलता। कहीं-कहीं मासान्तरमें ऋतुशोणितके बदले कितना ही शुक्लवर्ण तरल पदार्थ टपकता है।

रोगकी अवस्था और ऋतुका कालाकाल भेद देख भिन्न भिन्न उपायसे चिकित्सा करना चाहिये। हृष्टपुष्ट स्त्रीको विरेचक औषध खिला आहार घटा देते हैं, पुष्टिकर खाद्यादि बिलकुल व्यवहारमें नहीं लाते। ऋतुके चार दिन पूर्वसे सात दिन तक उष्ण जलमें नाभि पर्यन्त डुबोया रखे और प्रत्यह तीन बार पांच-पांच ग्रेन पिलरियाईको खिलाया करे। दुर्बल स्त्रीको पुष्टिकर आहार देना आवश्यक है। एलोस, गेहूंका मांड़, हींग तथा उलटकम्बलकी जड़का बकला एक-एक ग्रेन एवं सलफेट-अव-आयरन आधा ग्रेन मिलाकर गोली बनाते और दिनमें तीन बार खिलाते हैं।

२ आर्तवक्लेश—दुर्बल अवस्थामें हठात् स्नायुसम्बन्धीय वा मानसिक पीड़ा किंवा यातना होनेसे उपजता है। अधिक वा नियमित आर्तव निकलते भी जरायुमें व्यथा उठती और दो-तीन मास किंवा अधिककाल तक रहती है। यह रोग स्नायुसम्बन्धीय (Neuralgic), प्रदाहयुक्त (Inflammatory) और रोधक (Mechanical) भेदसे तीनप्रकार है।

स्नायुसम्बन्धीय आर्तवक्लेश प्रायः तीस वत्सर वयसके बाद होता है। इस अवस्थामें १५।२० ग्रेन ब्रोमायिड-अफ्-पोटासियम और १०।१२ बूंद क्लोरोफार्म आध छटांक पानीके साथ देनेसे व्यथा मिट जाती है।

प्रदाहयुक्त आर्तवक्लेशमें प्रथमतः ज्वर तथा शिरःपीड़ाका सञ्चार होता, मुखमण्डल तथा चक्षुद्वय रक्तवर्ण पड़ता और नाड़ीका वेग बढ़ता है। ऋतु आनेपर यातनाका ठिकाना नहीं लगता। इस रोगमें रेचक और ऋतुनिःसारक औषध देना चाहिये।

ऋतुके साथ अधिक यातना उठनेपर रक्तमोक्षणादिकी चिकित्सा चलाये। कोई-कोई जरायु-मुखके निम्न वहिर्भागमें जोंक लगाते हैं। टिञ्चर एकोनायिट एवं टिञ्चर बेलेडोना पांच पांच बूंद, वायिनम एर्गिटमनी दश बूंद और जल आध छटांक एकमें मिलाकर दो-तीन घण्टेके अन्तर पिलानेसे भी उपकार होता है।

जन्मावधि हो या प्रदाहरोगके पीछे रोधक आर्तव-क्लेश जरायुके निम्नमुखका (Cervix Uteri) कोटर अप्रशस्त पड़नेसे उपजता है। जरायुके निम्नमुखमें एक पतली बुजि प्रवेश करे। ग्रन्थि-वेदना होनेसे दो-तीन दिनके अन्तर बुजि चलाते हैं। इस उपायसे रोधक दब जाता है।

३ असृग्दर—शोणितमें भिन्न प्रकारका लक्षण लाता और अङ्गमर्द एवं वेदना बढ़ाता है। अतिशय शोणित निकलनेसे दौर्बल्य, भ्रम, मूर्च्छा, तिमिरदृष्टि, तृष्णा, दाह, प्रलाप, पाण्डु, तन्द्रा और वायुजन्य अन्यान्य उपद्रव की उत्पत्ति होती है। दो-तीन ग्रेन मात्रामें अफीमकी गोली बनाकर खिलाना चाहिये। इससे उपकार न होनेपर पांच ग्रेन आर्गट-अफ्-रायीको ५ ग्रन सोहागेके साथ मिलाकर देते हैं। कोई चिकित्सक उदरके अधोभाग एवं योनि-द्वारमें ठण्डा पानी या बरफ रखने और कोई शूगर-अफ्-लेड तथा लडेनम जलमें मिला योनिके मध्य पिचकारी लगानेको कहता है। किसी तरह रक्त न रुकनेसे योनिके मध्य अस्त्र भर देना चाहिये।

होमिओपाथिक—डाक्टर अल्पवयस्क युवतीके आर्तव-रोधमें मुख रक्तवर्ण, मस्तिष्क भार वा मस्तिष्क व्यथा प्रभृति लक्षण देख पड़नेपर एकोनायिट, मुख-विवर्णता अधिक तृष्णा, आशङ्का आदिकी अवस्थामें आर्सेनिक, ऋतुकाल नासिकासे रक्त गिरते ब्रायिओनिया और उदर फूलने तथा दुर्बल होनेसे चायना वगैरह व्यवहार करते हैं। आर्तवक्लेशमें असित रक्त-जैसा स्राव होनेसे आसृकाब; अल्प स्राव पड़नेसे एपिस मेल; दृष्टिविभ्रम, मस्तिष्क-घर्षण एवं व्यथाके साथ शोणित-स्राव होनेसे बेलेडोना और स्त्रीके चीत्कारपूर्वक रोने तथा शोणितके अल्प आने या रुक जानेसे क्याक-टास प्रभृति दिया जाता है। असृग्दरपर सचराचर एकोनायिट, बेलेडोना, ब्रायिओनिया वगैरह चलता है। शोणितस्राव न रुकने तथा अधिकक्षण होते रहनेसे सलफर या प्लाटिना और अल्प समयके मध्य अधिक स्राव आनेसे नक्सवोमिका, फसफरस आदि प्रयोग किया जाता है।

अतिरिक्त स्राव होनेसे जरायुका सङ्कोचन-शक्ति खोलने और रक्त रोकनेके लिये निम्नलिखित औषध तथा उद्भिद् व्यवहारमें आते हैं,—अशोकत्वक्, कङ्कोल (कबाबचीनी), केशराज, रक्तोत्पलमूल, आयापाना, तण्डुलीयमूल (चौलायी), दूर्वा, दाड़िमपुष्प, अलक्त, कांजड़ाशाक, नन्दीवृक्ष, शाल्मलीपुष्प, अश्वत्थका वल्कल एवं फल, विसन्धशा, ओड़पत्र, वज्रदन्ती (कुलेखाड़ा), रक्तचन्दन, पद्मकाष्ठ, पीत अगुरु, लक्ष्मणामूल, कमलोत्तरपुष्प, नागदमनीमूल, वीरतरु, लज्जालु, राजयोग, नागपुष्पी, कारवल्लीलतामूल, मुरमुरिया, आउकशाक, रक्तकाञ्चनपुष्प, स्थलपद्म, वट, प्लक्ष, कङ्कु, शालवृक्ष और पाषाणभेदी।

आर्तव निकालनेके द्रव्य यह हैं,—अग्निशिखा, रसशोधन, सहा, विटकारञ्ज, रेणुक, उलटकम्बल, स्राविका, ऋतुपर्णी, गोरोचना, निशादल, सिद्धि, शिग्रुवृक्ष, और दारुगन्ध-तैल।

ऋतुमती शब्दमें अपर विवरण देखो।

२ मासिकधर्म, माहवारी ऐयाम। ३ मदके समय पशुकी योषा द्वारा निकाला हुआ रस, जो रतुवत् जुफ्तीके वक्त जानवरकी मादा निकालती है। ४ पुष्प, तुरा। (त्रि०) ५ समयोचित, बरवक्त। ६ ऋतुज, मासिक, माहवारी, हैजके मुतालिक।

आर्तवी (सं० स्त्री०) घोटकी, मादियान, घोड़ी।

आर्तवेयी (सं० स्त्री०) ऋतुमती स्त्री, हैजी जन, जो औरत कपड़ोंसे हो।

आर्तस्वर, आर्तनाद देखो।

आर्ति (सं० स्त्री०) आ-ऋ-क्तिन्। १ पीड़ा, बीमारी। २ मनोव्यथा, अजीयत। ३ धनुष्कोटि, कमानका अखीर। 'आर्तिः पीडा धनुष्कोट्योः।' (मेदिनी)

आर्तिमत् (सं० त्रि०) पीड़ित, बीमार, आजुर्दा। (पु०) आर्तिमान्। (स्त्री०) आर्तिमती।

आर्तिहन् (सं० त्रि०) पीड़ानिवारक, दर्द दूर करनेवाला। (पु०) आर्तिहा।

आर्तिहर, आर्तिहन् देखो।

आर्त्नि, आर्त्नी देखो।

आर्त्नी (वै० स्त्री०) आ-ऋ बाहुलकात् नि, ऋदिकारान्ताद्वा ङीप्। १ गतिकर्त्री, चलनेवाली स्त्री। २ धनुष्कोटि, कमानका अखीर।

आर्त्विज (सं० त्रि०) ऋत्विज इदम्, अण्। ऋत्विज-सम्बन्धी. पुरोहितसे सरोकार रखनेवाला।

आर्त्विजीन (सं० पु०) ऋत्विजं तत्कर्म अर्हति खञ्। यज्ञर्त्विग्भ्यां घखञौ। पा ५।१।७१। ऋत्विक्, पुरोहित। (स्त्री०) आर्त्विजीनी।

आर्त्विज्य (सं० क्ली०) ऋत्विजो भावः कर्म वा, ष्यञ्। ऋत्विक्कर्म, याजन।

आर्त्तवेयी (सं० स्त्री०) आर्तवयुक्त स्त्री, जो औरत कपड़ोंसे हो।

आर्त्व्य (सं० पु०) अथर्ववेदोक्त हिमूर्द्धा नामक असुरके पिता। (अथर्वसंहिता ८।१०।२२)

आर्थ (सं० त्रि०) अर्थादागतम्, अण्। १ वस्तु-सम्बन्धी, शयके मुताल्लिक्। २ वाक्यार्थकी मर्यादा द्वारा प्राप्त, माही, पुरमतलब। यह पद 'शाब्द'के विरुद्ध है।

आर्थपत्य (सं० क्ली०) द्रव्यका अधिकार, चीज़पर क़ब्ज़ा।

आर्थी (सं० स्त्री०) आर्थ-ङीप्। अलङ्कार शास्त्रोक्त अर्थ-सम्भव व्यञ्जना, उपमालङ्कार विशेष। 'आर्थी तुल्यसमानाद्यास्तुल्याद्य यत्र वा वतिः।' (साहित्यदर्पण) तुल्य एवं समानादि शब्द रहने और सदृशार्थमें वति प्रत्यय लगनेसे आर्थी उपमा होती है। भट्ट मतसे भावनाविशेष अर्थात् भावयिताके किसी व्यापारका नाम आर्थी है।

आर्थिक (सं० त्रि०) अर्थं गृह्णाति, ठक्। १ अर्थग्राहक, पुरमानी। २ धनसम्बन्धी, ज़रदार। ३ ससार, माही।

आर्द (सं० त्रि०) आ-अर्द-अच्। सम्यक् पीड़क, पुरदर्द, दुःखदायी।

आर्द्धकंसिक (सं० त्रि०) कंसः परिमाणभेदः, अर्द्धमासौ कंसश्चेति तेन क्रीतम्, ठक्। अर्द्ध कंस परिमित वस्तु द्वारा क्रीत, एक मनमें खरीदा। दो मनका एक कंस होता है। इसीप्रकार आर्द्धप्रस्थिक, आर्द्ध-कौडविक और आर्द्धद्रौणिक शब्द भी बनता है।

आर्द्धधातुक (सं० क्ली०) आर्द्धधातुकं शेषः। पा ३।४।११४। सूत्रविशेष-परिभाषित तिङ् एवं शित् भिन्न धातुके उत्तर विहित प्रत्यय विशेष।

आर्द्धपुर (सं० क्ली०) अर्द्धं पुरस्य, एकदेशि-तत् ततः स्वार्थे अण्। पुरका समानार्ध।

आर्द्धरात्रिक (सं० त्रि०) अर्द्धरात्रे भवम्, ठञ्। १ अर्धरात्र-प्रभव, आधीरातका पैदा। (पु०) २ ज्योतिष-शास्त्रका शाखाभेद।

आर्द्धवाहनिक (सं० त्रि०) अर्धवाहनेन जीवति, ठक्। वेतनादिभ्यो। पा ४।४।१२। अर्ध वेतनसे जीनेवाला, जो आधी तनखाहसे ज़िन्दगी काटता हो।

आर्द्धिक (सं० त्रि०) १ ब्राह्मणविवाहित वैश्यकन्योत्पन्न जातिविशेष।

"वैश्यकन्यासमुत्पन्नो ब्राह्मणेन तु संस्कृतः।
आर्द्धिकं स तु विज्ञेयो भोज्यो विप्रै न संशयः॥" (पराशर)

(पु०) अर्धं क्षेत्रशस्याधमर्हति, ठक्। स्वामीके निकट क्षेत्रजात-शस्यका वेतनरूप अर्धग्रहीत कृषक-विशेष, जो किसान मालिकसे उजरतके तौरपर खेतमें पैदा होनेवाले अनाजका आधा हिस्सा पाता हो।

"आर्द्धिकं कुलमित्रञ्च गोपालो दासनापितौ।
एते शूद्रेषु भोज्यान्ना यश्चात्मानं निवेदयेत्॥" (मनु)

अर्थात् कृषि चलाने, पुरुषानुक्रमसे अपने वंशके मित्र रहने, गो पालने, दास बनने और क्षौरकर्म एवं आत्मसमर्पण करनेवाले शूद्रका अन्न खा सकते हैं।

आर्द्र (सं० त्रि०) अर्द गतौ रक् दीर्घश्च धातोः। अर्देर्दीर्घश्च। उण् २।१८। १ क्लिन्न, तर-ब-तर, भीगा। 'आर्द्रं सार्द्रं क्लिन्नं तिमितं स्तिमितं समुन्नमुत्तञ्च।' (अमर) २ नूतन, सरसब्ज़, हरा। ३ काठिन्यशून्य, नर्म। ४ आनुकूल्य-युक्त, आज़ाद, खुला। (क्ली०) ५ अश्विनीसे षष्ठ नक्षत्र। आर्द्रा देखो। (पु०) ६ पृथुके एक पौत्र।

आर्द्रक (सं० क्ली०) अर्दयति रोगान्, अर्द अन्तर्भूत-ण्यर्थे रक् दीर्घश्च संज्ञायां कन्, आर्द्रायां सरसभूमौ

जातं वा वुन्, आर्दयति जिह्वाम्, आर्द्रे अत्यर्थं पिच् क्वोन् वा। बहुलमन्यत्रापि। उण् २।३०। १ शृङ्गवेर, अदरक। 'आर्द्रकं शृङ्गवेरं स्यात्।' (अमर) यह शुण्ठीके समान गुण रखनेवाला एवं कटु होता और पकनेसे मधुर पड़ जाता है। भोजनसे पहले लवणके साथ खानेपर आर्द्रक अग्निदीपन, रुचिकर और जिह्वा-कण्ठ-शोधन है। इसे ग्रीष्म और शरत् ऋतुमें खाना न चाहिये। (भावप्रकाश) आर्द्रक नागरगुण, भेदन, दीपन और गुरु है (मदनपाल) अदरक देखो।

(पु०) २ शुङ्गवंशीय वसुमित्र नृपतिके पुत्र। (विष्णुपुराण ४।२४।१०) पुराणान्तरमें अन्द्रक, अभ्रक और भद्रक नाम भी लिखा है।

(त्रि०) ३ आर्द्रानक्षत्रजात।

आर्द्रकस्वरस (सं० पु०) आर्द्रकका स्वरस, अदरकका अर्क।

आर्द्रकाष्ठ (सं० क्लो०) हरिद्वर्ण दारु, सबज़ हेज़म, हरी लकड़ी।

आर्द्रचिक्कण (सं० क्लो०) आम-चिक्कण-गुवाक, कच्ची चिकनी सुपारी।

आर्द्रज (सं० क्लो०) शुण्ठी, सोंठ।

आर्द्रता (सं० स्त्री०) १ क्लेद, तरी, सील। वैद्यक-मतमें सरस और नीरस भेदसे आर्द्रता दो प्रकारकी होती है। वास्तूक एवं सर्षप शाक, निर्गुण्डी, एरण्ड, धत्तूरादिमें सरस और वट, अश्वत्थ, करीर प्रभृतिमें नीरस आर्द्रता रहती है। नीरस आर्द्रता भी सदुग्ध और गुप्तरस भेदसे दो प्रकारकी है। फिर सदुग्ध पदार्थमें कोई मृदु और कोई तीक्ष्ण होता है। शातला, (पीला सेहुंड) वज्र, शीहुण्ड, आदि तीक्ष्ण और दुग्धिका, अर्क, क्षीरिका प्रभृति मृदुदुग्ध है। (परिभाषाप्रदीप)

२ नवीनता, ताज़गी। ३ कोमलता, नर्मी।

आर्द्रत्व (सं० क्लो०) आर्द्रता देखो।

आर्द्रदाड़िमनिर्यास (सं० पु०) आर्द्र दाड़िमका स्वरस, ताज़े अनारका अर्क।

आर्द्रदानु (वै० त्रि०) क्लेद देनेवाला, जो तरी पहुंचाता हो।

आर्द्रनयन (सं० त्रि०) अश्रुलोचन, अश्कबार, आंखें डबडबाये हुआ।

आर्द्रपदी (सं० स्त्री०) आर्द्रौ पादौ यस्याः, निपातनात् पादस्यान्त्यलोप ङीप् पदादेश। कुम्भपदीषु च। पा ५।४।१२९। आर्द्रचरण स्त्री, भीगे पैरवाली औरत।

आर्द्रपवि (वै० त्रि०) क्लिन्नप्रान्तयुक्त, बाहरी किनारा तर रखनेवाली। यह शब्द शकटादिका विशेषण है।

आर्द्रपवित्र (वै० त्रि०) १ क्लिन्नशोधनी, तरसाफी-वाली। (पु०) २ सोम। शोधनी सदा क्लिन्न रहनेसे सोमका यह नाम पड़ा है।

आर्द्रमरिच (सं० क्लो०) आममरिच, कच्चा मिर्च। यह किञ्चित् उष्ण, पाक एवं रसमें लघु, अपिच्छिल, कटुक, गुरु, अग्निप्रदीपन, तिक्त, रुचक, स्वादु, स्तन्य-कर, कफ-वात-हर और हृद्रोग तथा कृमिका दूर करनेवाला है। (वैद्यकनिघण्टु)

आर्द्रमासा (सं० स्त्री०) नित्यकर्म-धा०। वनमुद्ग, मसवन।

आर्द्रवटक (सं० पु०) प्रसिद्ध भोज्यद्रव्य, मशहूर खानेकी चीज़। लोग इसे आदा बड़ा कहते हैं। माषपिष्टका वटक बना तैलमें पकाये और हाथसे चूर कर डाले। फिर भृष्टहिङ्गु, मरिच, आर्द्रक एवं जीरकचूर्ण, निम्बूरस तथा यवानी मिला, गोल-गोल बना, और तैलसे तल वटकको क्वथित जलमें डुबो देते हैं। यह पाचक होता है। (भावप्रकाश)

आर्द्रवृक्ष (सं० पु०) कर्मधा०। सरस वृक्ष, तर दरख़्त।

आर्द्रवृक्षीय (सं० त्रि०) सरस वृक्ष-सम्बन्धी, ताज़े पेड़के मुताल्लिक़।

आर्द्रशाक (सं० क्लो०) आर्द्रशाकमस्य। सरस आर्द्रक, ताज़ा अदरक।

आर्द्रहस्त (वै० त्रि०) क्लिन्नपाणि, तर दस्त रखने-वाला, जिसके भीगा हाथ रहे।

आर्द्रा (सं० स्त्री०) नक्षत्रविशेष। पूर्ण चक्रमें २८ या २७ नक्षत्र होते हैं। मूला वा ज्येष्ठा नक्षत्रको प्रथम रखनेपर उभय मतसे आर्द्रा षोड़श स्थानीय है। इसी प्रकार श्रविष्ठा नक्षत्रको प्रथम-स्थानीय माननेसे आर्द्रा स्थान एकादश पाता है। फिर मेषराशिगत अश्विनी

नक्षत्रको प्रथमस्य ठहरानेसे आर्द्रा षष्ठस्थानीय है। यही मत आजकल प्रचलित है। आर्द्राका पतकीय (Tabular Celestial latitude) ११° एवं स्फुट विक्षेप १०° ५०′ उत्तर और पतकीय ध्रुवक (Tabular Celestial longitude) ६७° तथा स्फुट (True Celestial longitude) ६५° ५″ है। पाश्चात्य ज्योतिर्विदोंमें किसी-किसीके अनुमानसे एतद् नक्षत्र-स्थानीय १३३ संख्यक तारा (Tauri) है। २०० वत्सर पूर्व युरोपीय पतकमें इस नक्षत्रके उक्त योग ताराका ध्रुवक ८८° ३८′ ४४″ रहा। सूर्यसिद्धान्तके मतसे विक्षेप ९° और ध्रुवक ६७° २०′ कला निकलता है। इसमें पाश्चात्य ज्योतिर्वेत्तावोंके अनुमानसे १३७ यागतारा (Tauri) है।

आर्द्रा नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य अधिक क्षुधायुक्त, कृशशरीर, कलिप्रिय, क्रोधी, अशान्त और शरणागतके प्रति निर्दय होता है। (कोष्ठीप्रदीप)

इसी नक्षत्रपर सूर्य आनेसे वर्षा होने लगती है। कृषक आर्द्रामें धान्य बोते हैं।

२ कृष्णातिविषा, काली सिङ्गिया, तेलियाबिष। ३ आर्द्रक, अदरक।

आर्द्रालुब्धक (सं० पु०) केतुग्रह, लुब्धक-तारा-जम्ब।

आर्द्रावीर (सं० पु०) शक्तिकी उपासना करनेवाला, वाममार्गी।

आर्द्राशनि (सं० स्त्री०) १ तड़ित्, सेका, गाज। २ अस्त्रविशेष, एक हथियार।

आर्द्रास्य (सं० क्ली०) आर्द्रक, अदरक।

आर्द्रिका (सं० स्त्री०) १ क्षुद्रार्द्रक, छोटी अदरक। २ आर्द्रधनिका, हरी धनियां। यह तिक्त, मधुर, मूत्रल, पित्तको न बढ़ानेवाली, भेदी, गुरु, तीक्ष्ण, उष्ण, दीपन, कटु, पाकमें रुच और वात-कफापह होती है। (वाग्भट)

आर्ध (सं० त्रि०) सामि, नीम, आधा। यह शब्द समासान्त पदके आदिमें आता है।

आर्धद्रौणिक (सं० त्रि०) सामि-द्रोण-क्रीत, आधे द्रोणमें खरीदा हुआ, जो चार मन रखता हो। (स्त्री०) आर्धद्रौणिकी।

आर्धधातुक, आर्द्धधातुक देखो।

आर्धप्रस्थिक (सं० त्रि०) सामि-प्रस्थ-क्रीत, दश सेरसे खरीदा हुआ। (स्त्री०) आर्धप्रस्थिकी।

आर्धमासिक (सं० त्रि०) १ अर्धमास टिकनेवाला, जो आधमहीने रहता हो। २ एक पक्ष अभ्यासकरनेवाला, जो पन्द्रह दिन गौर करता हो।

आर्धरात्रिक, आर्द्धरात्रिक देखो।

आर्धिक, आर्द्धिक देखो।

आर्धुक (वै० त्रि०) हितकर, आरामद, फायदेमन्द। (स्त्री०) आर्धुकी।

आपयिता आर्पयितृ देखो।

आर्पयितृ (वै० पु०) हानिकारक व्यक्ति, नुकसान् पहुंचाने या चोट देनेवाला शख्स।

आर्भव (सं० पु०) ऋभुणा दृष्टं साम ऋभुर्देवतास्य वा, अण्। १ तृतीय सावनमें गेय पञ्चसूक्तात्मक समसामात्मक पवमान विशेष। (त्रि०) २ ऋभु-सम्बन्धीय। (स्त्री०) आर्भवी।

आर्य (सं० पु०) आर्यते गम्यते पूजा, ऋ-ण्यत्। १ महाकुल, कुलीन, सभ्य, सज्जन, साधु, फरमांबरदार या वफ़ादार शख़्स। 'महाकुलकुलीनार्यसभ्यसज्जनसाधवः।' (अमर) २ पूज्य, श्रेष्ठ, सत्कृत, नाट्योक्तिमें मान्य, उदारचरित, शान्तचित्त, इज्जतदार शख़्स। ३ स्वामी, हक़दार, वारिस। ४ मित्र, यार। ५ वैश्य, बनिया। ६ बुद्ध, बौद्धमतके चार सिद्धान्त समझने और उनके अनुसार चलनेवाला। ७ मनु सावर्णके एक पुत्र। ८ अपने देशके देवताका भक्त, मुल्ककी उलूहियतका पाबन्द। ९ वेदोक्त प्राचीन जाति विशेष।

पाश्चात्य पण्डित 'अर्' धातुसे आर्य शब्द बनाते हैं। अर् धातुका अर्थ भूमिकर्षण है। लेटिन, ग्रीक (यूनानी), एङ्गलो-सेक्सन, अंगरेजी, रूसी, आयरिश, कर्णिश, वेल्सी, प्राचीन पार्स, लिथुयेनिक प्रभृति अनेक युरोपीय भाषामें हल वा कृषिवाचक शब्द इसी अर् धातुसे निकलते हैं। उनके मतानुसार कृषिकार्य करनेसे ही इस जातिका नाम आर्य पड़ा है। उक्त युरोपीय जाति भी आर्यवंशसे समुद्भूत है। रेभरेण्ड कृष्णमोहन वन्द्योपाध्यायके मतसे असीरियाकी मिस्र-

लिपिका 'अरि' शब्द हलवाचक ठहरता, जो आर्यका प्रतिरूप हो सकता है। अतएव पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे आर्य नामको प्राचीन कृषक जातिका द्योतक मानना पड़ता है।

क्या आर्य कृषक थे? प्राचीन जातिके मध्य कृषिकार्य प्रधान जीवनोपाय रहनेसे क्या आर्य शब्द कृषिपद-वाच्य हो सकता है? वैदिक और लौकिक उभय विध प्रयोगमें आर्य शब्द शत शत बार आया है। किन्तु आर्य शब्द अथवा इसके मूल धातु ऋसे कहीं भूमिकर्षणका अर्थ नहीं निकलता। जहां आर्य शब्द पड़ा, वहीं 'श्रेष्ठ' और 'विप्र' प्रभृति अर्थसे जड़ा है। इसीसे सायणका 'अरणीय' अर्थ ही आर्य शब्दका मूल अर्थ है। हम समझते, कि वैदिक समय इस जातिके लोग नाना स्थानोंमें जाकर रहते थे। इसीसे आर्य नाम निकला होगा।

पारसियोंके अवस्ता नामक प्राचीन धर्मशास्त्रमें 'ऐर्य' शब्द श्रद्धास्पद और साधारण दोनो अर्थपर लगा है। कावसजी एदलजी कांगेने बन्दीदादका अनुवाद जो गुजरातीमें किया, उसके शेष अभिधानमें ऐर्य शब्दका प्रकृत अर्थ अर्य और आर्य लिया है। आरमनी भाषामें 'अरि' ईरानी और साहसिकको कहते हैं। अतएव वेद व्यतीत एशियाखण्डकी अपर भाषाओंमें भी जब विकृताकारप्राप्त आर्य शब्दका अर्थ हल वा भूमिकर्षण लगना कठिन पड़ता, तब समझपर नहीं चढ़ता, पाश्चात्य पण्डितों द्वारा कथित आर्य शब्दके मूल अथवा अर् धातुके अर्थसे कहांतक हल अथवा भूमिकर्षणका भाव कढ़ता है!

सायणाचार्यने ऋग्भाष्यमें आर्य शब्दका अर्थ नानाप्रकार लगाया है,—'१ विदुषोऽनुष्ठातॄन् (१।५१।८), २ विद्वांसः स्तोतारः (१।१०३।३), ३ विदुषे (१।१११।२१), ४ अरणीयं सर्वैर्गन्तव्यम् (१।१२३।०।८), ५ उत्तमं वर्णं त्रैवर्णिकम् (३।३४।९), ६ मनवे (४।२६।२), ७ कर्मयुक्तानि (६।२२।१०), ८ कर्मानुष्ठातृत्वेन श्रेष्ठानि (६।३३।१०)।'

अर्थात् १ विज्ञ यज्ञानुष्ठाता, २ विज्ञ स्तोता, ३ विज्ञ, ४ अरणीय वा सर्वगन्तव्य, ५ उत्तम वर्ण त्रैवर्णिक, ६ मनु, ७ कर्मयुक्त और ८ कर्मानुष्ठानसे श्रेष्ठ।

शुक्लयजुःसंहिता (१४।३०)के भाष्यमें महीधरने आर्य शब्दका अर्थ 'स्वामी' और 'वैश्य' लिखा है। किन्तु वेदके प्रयोग एवं यास्कके अर्थसे आर्य शब्द मानवका द्योतक है। सायणके भाष्यसे भी यज्ञादि कर्मानुष्ठान द्वारा मानवजातिका श्रेष्ठ बनना प्रमाणित होता है।

इस प्रकार आर्य शब्दसे मानवजातिका भाव निकलता है। किन्तु आर्य नाम पड़नेका कारण क्या है! वर्तमान पण्डितोंके मतमें 'ऋ' और 'ण्यत्' से आर्य शब्द बनता है। ऋ धातुका अर्थ चलना और फैलना है। अतएव आर्य शब्दका मूल अर्थ सायणोक्त 'अरणीय वा गन्तव्य' ठहरता है। इस जातिने सर्वत्र गमन करनेसे आर्य नाम पाया होगा। आर्य शब्दका दूसरा रूप 'अर्य' है। महीधरके मतसे वैश्यको आर्य कहते हैं। इस मतको माननेपर वैश्य होने या सर्वत्र व्यवसाय करनेको जानेसे यह जाति आर्य कहायी है। वेदमें आर्य जातिका परिचय जो पाते, उसको विस्तृत भावसे नीचे देखाते हैं,—

आर्यजातिका उद्भव, पुरातत्त्व, इतिहास और सम्बन्ध-निर्णय अत्यन्त प्रयोजनीय है। क्योंकि उसीपर सभ्य जगत्‌का प्राचीन सम्पूर्ण इतिवृत्त निर्भर है। पहले देखना चाहिये—अति प्राचीनकाल आर्य शब्द कैसे व्यवहृत होता था। जगत्‌के आदिग्रन्थ ऋक्संहितादिमें आर्यशब्द बहुधा स्थान-स्थानपर मिलता है। इससे प्रतीति हुयी, कि उस समय पृथिवीपर श्रेष्ठ जाति ही आर्य नामसे प्रसिद्ध रही। यथा,—

"विजानीह्यार्यान् ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान्।"

(ऋकसंहिता १।५१।८)

'हे इन्द्र! पहंचानो, कौन आर्य और कौन दस्यु है। कुशयज्ञके हिंसाकारियोंको शासन कर अपने वशमें लावो।'

"विद्वान् वज्रिन्दस्यवे हेतिमस्यार्यं सहो वर्धया द्युम्नमिन्द्र।"

(ऋक् १।१०३।३)

'हे वज्रिन्! हमारी प्रार्थना समझ दस्युवोंके प्रति वज्र निक्षेप करो और हे इन्द्र! आर्यगणका सामर्थ्य तथा धन बढ़ावो।'

"अभि दस्युं बकुरेणा धमन्तोरु ज्योतिश्चक्रथुरार्याय।" (ऋक् १।११७।२१)

हे अश्विद्वय! वज्रसे दस्युको मार आर्यके प्रति ज्योतिःप्रकाश करो।

"इन्द्रः समत्सु यजमानमार्यं।" (ऋक् १।१३०।८)

इन्द्र युद्धके समय आर्य यजमानको बचावें।

"हिरण्ययमुत भोगं ससान हत्वी दस्यून् प्रार्यं वर्णमावत्।"

(ऋक् ३।३४।९)

इन्द्रने हिरण्मय धन दिया और दस्यु मार आर्यवर्णको बचा लिया है।

"अहं भूमिमददामार्यायाहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय।" (ऋक् ४।२६।२)

मैं (इन्द्र)-ने आर्यको भूमि दी है। मैंने मर्त्य (हव्यदाता)को वृष्टि पहुंचायी है।

"यया दासान्यार्याणि वृत्रा करो वज्रिन्त्सुतुका नाहुषाणि।"

(ऋक् ६।२२।१०)

"साह्याम दासमार्यं त्वया युजा सहस्कृतेन सहसा सहस्वता।"

(ऋक् १०।८३।१२)

"मवदश्मभिरस्तुवन् शूद्रार्याबस्त्रज्येताम्।" (शुक्लयजुः १४।३०)

"तयाहं सर्वं पश्यामि यश्च शूद्र उतार्यः।" (अथर्वसं० ४।२०।४)

"शूद्रार्यौ चर्मणि व्यायच्छेते।" (ताण्ड्य ब्रा० ५।५।१४)

तैत्तिरीयसंहितामें आर्य और शूद्रका चर्मनिमित्त कलह लिखा है। (७।५।९।८) ऐतरेय-ब्राह्मणमें भी आर्यशब्द आम्नात है। "अयुत मार्यस्य राष्ट्रं भवति। (८।५।२)

निरुक्तकार यास्कने जातिवचनमें एकत्र आर्य शब्द व्यवहार किया है। "विकारमस्यार्येषु।" (२।१।४)

उन्होंने अन्यत्र आर्य-शब्दके व्याख्यानमें लिखा है,—"आर्यः ईश्वरपुत्रः।" (६।५।२)

अर्थात् ईश्वरके पुत्रका नाम आर्य है।

निघण्टु (२।२२) में ईश्वरनामपर 'अर्य' शब्द परिपठित है। उसीसे अपत्यार्थ प्रत्ययमें आर्य शब्द बनता है। जैसे मुसलमानोंके धर्मप्रवर्तक मुहम्मद साक्षात् ईश्वरदूत और ईसाइयोंके ईसा ईश्वरात्मज, वैसे ही पहले हमारे भी पूर्वपुरुष रूपवत्व, बलवत्व, विद्वत्त्व, सत्यवादिता आदि बहु सद्गुण एवं पवित्र आचारोंसे ईश्वरपुत्र माने गये हैं। इसीसे ईश्वरपुत्र इनका व्यपदेश हुआ और यही हमारे आर्यनामका निदान है।

महामुनि पाणिनिने भी एक स्थानपर आर्यशब्दका उल्लेख किया है,—"आर्यब्राह्मणकुमारयोः। ६।२।५८।

आर्य जाति अति प्राचीन है। पूर्व समय यह आदर्श-विज्ञानादि ब्रह्मविज्ञानान्तवित्तम और अतिसभ्य रहे। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य भेदसे आर्य त्रिविध होते हैं। दस्यु और दास द्विविध शूद्रोंसे भिन्न ठहरनेपर इन्हें ईश्वरपुत्र कहा है। किन्तु अब कालचक्रके परिभ्रमण-नियमसे, वेदविज्ञान, ऐक्यबल और अन्तर्वाणिज्य तथा बहिर्वाणिज्य खो मुमूर्षु दशामें पड़े बारबार श्वास लेते, इसीसे जीवित समझे जाते हैं। आर्यावर्त शब्दमें प्राचीन आर्यावासका परिचय देखो।

जातिनिर्णय—जगत्के आदिग्रन्थ ऋक्संहितासे विज्ञप्ति होती—अति पूर्वकाल आर्यजाति स्वतन्त्र समझी जाती थी। उस समय वर्तमान कालकी तरह जातिभेद वा वर्णविभागकी प्रथा प्रचलित न रही। इस जातिके ऋषि, राजा और गृहस्थ साधारण आर्य नामसे ही परिचित थे। विजित अनार्य दस्युसे पृथक् रखनेके लिये 'आर्यवर्ण' शब्द द्वारा अपना परिचय देते रहे। प्राचीन ऋक्संहितामें उस समय आर्य और शूद्र केवल दो ही वर्णविभागका प्रसङ्ग पड़ता था। शूद्र कहनेसे प्रधानतः दस्यु वा दास जातिका बोध होते रहा। क्रम-क्रम आर्योंकी संख्या जितनी बढ़ी, नाना विषयमें उतनी ही उन्नति देख पड़ी। उसी समय विशेष-विशेष व्यक्तिको निर्धारित कार्यमें लगानेके लिये वर्णविभागकी आवश्यकता आयी थी। ऋक्संहितामें वर्णविभाग-सम्बन्धपर निर्दिष्ट है,—

"ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥" (ऋक् १०।९०।१२)

'इस (पुरुष)के मुखसे ब्राह्मण, बाहुसे राजन्य, ऊरुसे वैश्य और पदसे शूद्र निकला है।' सिवा इसके यजुर्वेद (वाजसनेयसं० ३१।११, तैत्तिरीय ५।१।१०।३), अथर्ववेद (५।१७।९) और ऐतरेय-ब्राह्मण (७।१९) प्रभृति प्राचीन ग्रन्थमें भी वर्णविभागकी कथा लिखी है। वैदिकयुगके आर्योंमें ऋत्विक् वा पुरोहित, राजपुरुष और साधारण व्यवसायी वा श्रमजीवी तीन

अेणो भिन्न भिन्न रहो। उस समय तीनो अेणोके मध्य आहारादि वा विवाहादि कार्य निषिद्ध न था।

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

धर्मविश्वास और उपास्य देवगण—यज्ञानुष्ठान ही वैदिक आर्यों का श्रेष्ठ धर्म परिगणित रहा। प्राचीन ऋषि समधिक प्रभाव-सम्पन्न भिन्न भिन्न प्राकृतिक पदार्थ-समुदायको पूजते थे। भगवान्‌की सत्ता समायी समझ अग्नि, वायु, ज्योतिष्क प्रभृति नैसर्गिक वस्तुके उपासक रहे। मानसिक स्फूर्तिका पूर्ण विकाश हुआ था। ऋक्संहितामें आर्याराध्य देवताओंके नाम यह लिखे हैं,—अंश, अग्नि, अदिति, अनुमति, अरण्यानी, अर्यमन्, अश्विन्, आग्नेयी, इन्द्र, इन्द्राणी, इला, उच्छिष्ट, उषस्, ऋतु, ऋभु, काम, काल, गुङ्गु, शुक्र, त्रित, त्रैतन, त्वष्ट्, दक्ष, दक्षिणा, दिति, द्यौस, धिषणा, नक्त, निष्टिग्री, पितृ-पुरुष, पूषा, पृश्नि, पृथिवी, प्रजापति, प्राण, ब्रह्मा, ब्रह्मचारी, ब्रह्मणस्पति, भग, भारती, मरुद्गण, मही, मित्र, राका, रुद्रगण, रोदसी, रोहित, लक्ष्मी, वनस्पति, वरुण, वरुणानी, वरुत्री, वायु, विश्वकर्मन्, बृहस्पति, श्येन, श्रद्धा, सरस्वत्, सरस्वती प्रभृति नदी, सिनिवाली, सूर्य, सूर्या, सोम, स्कम्भ, हिरण्यगर्भ, होत्रा।

पाश्चात्य पण्डितोंने शब्दशास्त्रके प्रभावसे प्राचीन पारसिकों (ईरानियों) और आर्यों का एकत्र रहना ठहराया है। सगर राजाने प्राचीन पारसिकोंको वेद और देवकी उपासनका अनधिकारी बनाया और श्मश्रु मुण्डन न करानेका आदेश सुनाया था। (विष्णुपुराण ३।४) जबतक पारसिक आर्योंसे मिलित थे, तबतक वैदिक देवताओंके उपासक भी रहे। तत्कालीन वैदिक देवताओं और ऋषियोंके नाम अवस्ता ग्रन्थमें लिखे हैं,—

वैदिक नाम	आवस्तिक नाम
अङ्गिरा	अङ्ग्र्
अथर्वन्	आथ्रवन्
अरमति	आर्मैयिति
अर्यमन्	अयिर्यमन्
[illegible]	वेरेथ्रघ्न
काव्य उशनस्	कव उस्
त्रित	थ्रित
त्रैतन	थ्रयेतन
नराशंस	नरियेसंह
नासत्य	नावोंहयिथ्य
मित्र	मिथ्र
यम	यिम
वरुण (असुर)	अहुर मज्द
वायु	वयु
सोम	होम

वेदसंहिताके अनेक स्थल (ऋक् ७।२३, ६।१, १३।१, ३०।३, ३६।२, ६६।२, ८८।५)में देवताओंको असुर शब्दसे सम्बोधन किया है। अवस्ता-शास्त्रमें भी देवता असुर कहे गये हैं। पारसिक शब्दमें अपर विवरण देखो।

फिर पाश्चात्य पण्डितोंने ग्रीक (यूनानी) प्रभृति यूरोपीय प्राचीन सभ्य जातिको आर्य-सम्भूत माना है। उक्त मतसे प्राचीन आर्यों के साथ एकत्र बसते यूनानियोंका विश्वास और धर्म जो रहा, उसे उन्होंने पृथक् होते भी न छोड़ा। मक्षमुलर प्रभृति पाश्चात्य शाब्दिकोंको कुछ वेदोक्त देवताओंके नाम ग्रीक शास्त्रमें मिले हैं,—

वैदिक नाम	ग्रीक नाम
अश्विवान्	इक्विवोन्
अरुषा	ईरस्
अहना	डाफ्नी
गन्धर्व	केण्टौरस्
पणि	पारिस
वृत्र	अरथ्रस्
सरण्यु	ऐरिनुस्
सरमा	हेलना
हरित्	खारिट्

प्राचीन आर्य तैंतीस देवताओंकी उपासना करते थे,—

"आ नासत्या त्रिभिरेकादशैरिह देवेभिर्यातं मधुपेयमश्विना।
प्रायुस्तारिष्टं नी रपांसि मृक्षतं॥" (ऋक् १।३४।११)

हे नासत्य अश्विद्वय! यहां तेंतीस देवताओंके साथ मधु पीने आवो, हमारा आयु: बढ़ावो और पाप छोड़ावो। ८।३५।३ ऋक् देखो।

ऋक्संहितामें इन तेंतीस उपास्य देवताओंके नाम नहीं दिये। अन्यत्र कहते हैं,—

"ये देवा दिव्येकादशस्थ पृथिव्यामध्येकादश
अप्सु सदो महिनैकादशस्थ।" (कृष्णयजु०सं० १।४।१०)

आकाश, पृथिवी और अन्तरिक्षमें ग्यारह-ग्यारह देवता रहते हैं। याज, अनुयाज और उपयाज ग्यारह-ग्यारह रहनेसे तेंतीस देवता होते हैं। (ऐतरेयब्रा० २।१८) अष्टवसु, एकादश रुद्र और द्वादश आदित्यसे तेंतीस देवता गिने जाते हैं। (शतपथब्रा० ४.५।७.२)

उस समय आर्यऋषि अधिक देवताओंका अस्तित्व भी मानते थे,—

"त्रीणि शतात्रीसहस्राण्यग्निं त्रिंशच्च देवा नव चासपर्यन्।"

(ऋक १०।५२।६)

तीन हज़ार तीन सौ उन्तालीस (३३३९) देवताओंने अग्निकी उपासना की है। किन्तु अति प्राचीन कालसे आर्य एक ईश्वरको स्वीकार करते आये हैं,—

"अचिकित्वाञ्चिकितुषश्चिदत्र कवीन्पृच्छामि विद्मने न विद्वान्।
वियस्तस्तम्भ षडिमा रजांस्यजस्य रूपे किमपि स्विदेकं।"

(ऋक् १।१६४।६)

हम ज्ञानहीन हैं। कुछ न जानकर ज्ञानियोंसे समझनेके लिये पूछते—जो छहो लोक स्तम्भन करते, वह क्या एक अजरूपमें रहते हैं?

सिवा इसके २।१२।१, ३।५५।२१-२२, ५।८५।३-५ इत्यादि ऋक् पढ़नेसे एक ईश्वरकी बात आपही मनमें उठ आती है। निम्नलिखित मन्त्रमें इसका आभास है, कि आर्योंके हृदयमें कैसे ईश्वरवाद प्रवेश हुआ,—

"प्र सु स्तोमं भरत वाजयन्त इन्द्राय सत्यं यदि सत्यमस्ति।
नेन्द्रो अस्तीति नेम उ त्व आह क ईं ददर्श कमभि ष्टवाम॥"

(ऋक् ८।१००।३)

हे शुभाभिलाषिन्! इन्द्रका रहना यदि सत्य हो, तो तुम उनके उद्देशसे सत्य बोलो। नेम (ऋषि) कहते, इन्द्र नामके कोई नहीं। किसने उन्हें देखा है? किसकी स्तुति करेंगे?

उसी अति प्राचीनकाल यज्ञकार्य सुसम्पन्न करनेके लिये विभिन्न ऋत्विक् नियुक्त होते थे, यथा—देवगणको आह्वान करनेके लिये 'होता', हव्यदान करनेके लिये 'अध्वर्यु', अग्नि प्रज्वलित करनेके लिये 'अग्निमिन्ध', पत्थरसे सोमको कूट रस निकालनेके लिये 'ग्रावग्राभ', नियमानुसार कर्मका अनुष्ठान करनेके लिये 'शास्ता' वा 'प्रशास्ता' और समस्त यज्ञ सम्पादन करने लिये 'मेधावी' वा 'ब्रह्मा'। (१।१६२।५)

आर्य ऋषिगणने ठहराया, कि भिन्न-भिन्न देवता परमात्माका नाम मात्र है। १०।११४।५ ऋक्, सायणकृत उसके भाष्य और ७।४ निरुक्तमें उक्त विषय वर्णित है।

आर्योंकी रीति और अवस्था—आर्य पुत्रपौत्रादिके साथ एकत्र रहते तथा खाते (ऋक् १।११४।६), और तत्कालमें सकल पुत्र पितृधनके अधिकारी होते थे (१।७३।९)। पितृगृहमें अवस्थित अविवाहित कन्या पितृकुलसे धन पाते रहते (ऋक् २।१७।७)। पुत्र तथा कन्या उभयके वर्तमान रहते, पुत्र पिताकी क्रियाका अधिकार पाता और कन्याका सम्मान किया जाता था (ऋक् ३ ५१।२)। पुत्र न रहनेसे दौहित्रको अपना पुत्र बना लेते रहे (ऋक् ३।३१।१)। स्त्रियां पतिके साथ यज्ञ करती (ऋक् १।३१।३) और रथपर बैठ अपर स्थान घूमती फिरती थीं। इसी प्रकार अविवाहित अवस्थामें अधिक वयसतक रहनेसे पिता किंवा गुरुजन कोई आपत्ति उठाते न थे। विवाहके समय वर सुवर्णालङ्कारसे भूषित होते रहे (ऋक् ५।६०।४)। वधू वस्त्रावृत रहती थी (ऋक् ८।२६।१२)। यौवन आनेसे स्त्रियोंका विवाह होते रहा (ऋक् १०।८५।२२)। सुन्दरी भद्र स्त्रियोंके मनोमत पतिको वरण करती थीं (ऋक् १०।२७।१२)। विवाहके बाद स्त्रियोंको पतिगृह जाते समय उपढौकन मिलते रहा (ऋक् १०।८५।२०)। पतिके गृह पहुंच पत्नी कर्त्री बनती (ऋक् १०।८५।२७) और श्वशुरपर प्रभुत्व, श्वश्रूपर वशित्व एवं ननान्दृ तथा देवरपर कर्तृत्व रखती थी।

पुर (नगरादि) और ग्राम स्वतन्त्र रहे (१।४४।२०, —४।४।४,—११।५।१ ; १०।१४४।१)। लोहमय नगर

(७।३।७, १५।१४); प्रस्तरमय शतसंख्यक पुरी (४।३०।२१) और सहस्रद्वार तथा सहस्र स्तम्भ-विशिष्ट अट्टालिका बनाते थे (१।१११।४, २।४१।५, ७।८८।५)। उत्कृष्ट गृह तथा सामान्य कुटीर (१।१०।१८) और शतद्वार-विशिष्ट यन्त्रगृह प्रभृतिका निर्माणकार्य अवगत रहा (१।५१।३)। इष्टकादि द्वारा गृह प्रभृति (वाजसनेय १३।११) तथा यातायातका सुन्दर मार्ग (ऋक् १।५८।१) एवं दुर्गम पार्वत्य-देशमें सुगम पथ बनाते (१।११६।२०) और विश्रामस्थानमें खाद्यद्रव्यका प्रबन्ध लगाते थे (१।१६६।९)। शकट (१।३०।१५) खदिर वा शिंशुकाष्ठसे (४।५३।१९) बनता और सारथिके बैठनेको स्थान रहता था। अश्वद्वय योजित रथ (१।९४।१०) भी तैयार होता था। त्रिवन्धयुक्त तथा त्रिकोण रथमें (१।४७।२) बैठनेको तीन स्थान और तीन चक्र रहते थे। धातुत्रय-विशिष्ट (१।१८३।१) और युद्धार्थ सुवर्णमण्डित रथ (५।६३।५) प्रभृति भी व्यवहृत होता था। युद्धकाल योद्धा सुवर्णमय कवच तथा उष्णीष (१।२५।१३, ५।५४।११), लोहवर्म (१।५६।३), तनुत्राण, वर्म, अंसत्र, द्रापि, सुवर्ण वक्षाच्छादन (४।५३।४) प्रभृति पहनते रहे। युद्ध-यात्रामें ध्वज उड़ता (१।१०३।११), दुन्दुभि बजता (१।२८।५) और सेनापति समस्त सैन्य ले आगे बढ़ता था (१।३३।३)। युद्धका सन्देशवह भी रहता था (५।८३।३)। युद्धजय होनेपर शत्रुका द्रव्य जो लुटता, वह सकल योद्धाओंको बंटते रहा।

आदि वैदिक युगमें रमणियोंको अलङ्कार पहनना बहुत अच्छा लगता था (१।८५।१)। निष्क (२।३३।१०), अञ्जि, वासी, स्रक्, रुक्म, खादि (५।५३।४), हिरण्य-कर्ण, मणि प्रभृति अलङ्कारका नाम सुनते हैं (१।१२२।१४)। मुक्तादिका व्यवहार भी चलता था (१०।६४।११)। निष्ककारी (सोनार) अलङ्कार बनाते थे (८।४७।१५)। वाण (१।८५।१०), क्षोणी (२।३४।१३) कर्करि प्रभृति वीणा-जैसे वाद्ययन्त्र थे। नर्तकी नृत्य-गीत करते रही (१।९२।४)। रङ्गमञ्चपर पुत्रिका (पुतली) का नृत्य भी होता था (४।३२।२३)। आर्य ऊर्ण, मेषलोम, चर्म और वल्कल पहनते रहे। स्त्रियां वस्त्र बुनती थीं (२।३८।४)। वयन-कार्य रात्रिको होते और ताना-बाना दो स्त्रियोंके द्वारा चलते रहा (२।३।६)।

रमणी रन्धनकार्यमें नियुक्त थीं। आर्य—दधि-मिश्रित सक्तु, भृष्टयव, पिष्टक (३।५२।६), घृत, दुग्ध, दधि, मधु, अपूप, पक्वफल, शाकादि और क्षीरपक्व अन्न खाते रहे। समय-समय मांसका भोजन भी होता था (५।२९।७, ८।७७।१०, १०।७९।६, १०।८६।१४)। अतिथियोंको सुख देनेके लिये पशुवलिको प्रथाभी रही (१।३१।१५)।

शीत-प्रधान देशमें रहनेसे कुछ लोग सुराप्रिय भी थे (१।११६।७)। सोमरस-प्रस्तुत आर्योंके धर्म-कर्ममें परिगणित है।

वाणिज्यके लिये देशभ्रमण और समुद्र गमन करते रहे (४।५५।६)। क्रयविक्रयका नियम जो ठहरता, वह टूटता न था (४।२४।९)। मुद्राका प्रचलन रहा (५।२७।२)। पणि देखो।

आजकलकी तरह उस समय भी पल्लिग्राममें कृषिकार्य होता था। कृषक खेती करते रहे (१०।११ सूक्त)। कुशूल (खत्ती) में यव रखते थे (१०।६८।३)। पशुके मध्य अश्व, बड़वा, हस्ती, उष्ट्र, मेष और वहन-कारी कुक्कुरको प्राचीन आर्य पालते रहे।

वैदिक युगके आर्योंको सूर्यकी दैनिक गति (१।१२३।४), सौर द्वादश अर (राशि), उत्तरायण तथा दक्षिणायन, प्राचीन मास और ऋतुका विषय अवगत था (१।१६४ सूक्त)। आकर्षण-शक्तिका विषय भी समझते थे (८।८५।१—१९)।

ज्योतिष शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

औषधिका गुणागुण जानते और रोगादिकी चिकित्सा चलाते रहे। आयुर्वेद देखो।

ऋक्संहितामें युगादिका नाम नहीं निकलता। यजुःसंहितामें कृत, त्रेता और द्वापर शब्द आया है। वाजसनेयसंहिता (३०।१८) में यह विषय विद्यमान है। ऋक्संहितामें नरकका नाम अविदित रहा। अथर्वसंहितामें (१२।४।३६)में 'नारक' शब्द मिलता है।

पृथिवीके सर्वप्राचीन ग्रन्थ ऋक्संहितासे हम आर्य्यों-की रीति और अवस्थाका वर्णन पहले ही लिख चुके हैं। अपर वेद और ब्राह्मणमें आर्य्योंकी रीतिनीति-पद्धतिका वृत्तान्त जो दिया,वह नीचे प्रकाशित किया है,—

ब्राह्मणोंमें प्रतिग्रहादिसे जीविका चलाना, दानादिसे धनादिको त्यागना, विद्याबलसे सर्वतत्त्व ठहराना और राज्यरक्षणार्थ युद्धके लिये राजाज्ञासे प्रसन्नतापूर्वक आगेको पैर बढ़ाना चार धर्म विशेषत: देख पड़ते थे (ऐतरेयब्रा० ७।५।३)। क्षत्रिय बलवान्, प्रतिष्ठित, आश्रित-रक्षक, सर्वोपकारी, तेजस्वी और यशस्वी रहे। वैश्य अन्यको कर देते और अन्यका धान्यादि तथा यथाकाम जेयत्व रखतेथे। शूद्रोंमें धावकत्व, कर्मकारत्व और प्रसन्नतापूर्वक शरीर प्रदत्व विद्यमान रहा। (ऐतरेयब्रा० ७।५।५-६)

ब्राह्मणोंका बलकर भक्ष्य सोम, क्षत्रियोंका न्यग्रोध, उदुम्बर, अश्वत्थ तथा प्लक्ष फल, वैश्योंका दधि और शूद्रोंका पानीय था (७।५।३-६, ७।४।१)।

ब्राह्मणोंके आयुध यज्ञ रहा। स्फ्यसे ओदन चलाते, कपालसे पुरोडाश चढ़ाते, अग्निहोत्र-हवनोसे देवताको उदक पिलाते, शूर्पसे धान्य उड़ाते, कृष्णा-जिनपर आसन जमाते, शम्यामें हवि: बनाते, उलूखलमें मुशलसे अन्न कुटाते और दृषद् एवं उपलमें उपस्कार पिसाते थे। (तैत्तिरीयसं० १।६।८।२-३) क्षत्रिय अश्व तथा रथपर चढ़ते और इषु एवं धनु:से लड़ते थे।

ब्राह्मणोंकी पंक्तिमें शूद्रोंका उपवेशन भी दोषावह रहा (ऐतरेयब्रा० २।३।१)। यज्ञकाण्ड और गो-दोहनादिमें उन्हें कोई अधिकार न था (तैत्तिरीयब्रा० १।२।३)। यज्ञदीक्षित और देवभावापन्न यजमान अयज्ञिय शूद्रोंसे बोल न सकते रहे। (शतपथब्रा० ३।१।१।१०) मूर्खोंका सामीप्य भी क्लेशकर समझा जाता था (ऐतरेयब्रा० ३।३।६)। किन्तु उनसे दुर्व्यवहार करनेवालेके लिये प्रायश्चित्त शासन विहित था (शुक्लयजु:सं० २०।१७।१)। उन्नतिके अर्थ शूद्रोंको यथायोग्य उपदेश देना पड़ता था (ऐतरेयब्रा० २६।२।१)।

चारो वर्णोंके हितप्रार्थनमें साम्य (यजु:-संहिता १८।४८।१), किन्तु आह्वानप्रयोगमें पार्थक्य रहा। ब्राह्मणको 'एहि', क्षत्रियको 'आगहि', वैश्यको 'आद्रव' और शूद्रको 'आधाव' कहकर बोलाते थे (शतपथब्रा० १।१।४।१२)।

वाग्व्यवहारपर भी बहुत उपदेश दिया गया है। वाक् सरस्वती है (ऐतरेयब्रा० ३।१।१,३।१।२, ३।३।१३)। वाक्के सत्य और अनृत दो स्तन होते हैं (४।१।१)। कौन मनुष्य पूर्ण रीतिसे सत्य कह सकता है! देव सत्य और मनुष्य अनृत बोलते हैं (१।१।६)। विद्वानोंको सत्य ही बोलना चाहिये (५।२।८) । मनुष्योंमें सत्य निहत रहता है। आंखको देखी कहना उचित है। मूर्ख बेदेखी कहते और सुनते हैं (१।१।६)। सत्य नहीं—अनृत लोगोंको मार डालता है (४।१।१)। सच बोलना उचित है (१।१।६)। इतर वाक्य असुर्य होता है (३।५।५)। मनसे वाक् निकलती और अन्यमना होनेपर असुर्य लगती है (२।१।५, ४।४)। दृप्त और उन्मत्तकी कही वाक् राक्षसी ठहरती है (२।१।७)। वाक् और मन: दोनो वर्तनी हैं। वाक् और मनसे ही यज्ञ होता है (५।५।८)। श्रद्धा पत्नी और सत्य यजमान है। श्रद्धा और सत्यका अत्युत्तम मिथुन बना है। श्रद्धा और सत्यके मिथुनसे सब लोक जीते जाते हैं (७।२।८)। झूट बोलनेवाले पापी होते हैं। सच कहनेवालोंको परमेश्वर आशीर्वाद देता है (५।१।१)।

आर्य्योंका विवाह हितके लिये होता था। विना पुत्रके संसार शून्य रहता है। पिता ही अपनी पत्नीके गर्भमें प्रवेशकर पुत्ररूपसे पुन: प्रकाशित होता है (७।३।१)। उत्पादित पुत्र वंशपरम्परासे पिताके लिये अमृतरूप उपहार है। ब्राह्मण, वैश्य या शूद्रके स्वभावका पुत्र क्षत्रिय नहीं चाहते (७।५।३)। एक वा तदधिक जायाके जीते भी जायान्तर-परिग्रहण दोषावह न रहा। किन्तु जीवत्पत्नीक पुरुषका क्रमश: युगपत् वा बहुविवाह समाजमें अमान्य होता था (३।५।३)। जीवत्पतिका पत्यन्तर-ग्रहण कर न सकती रही। मृतपतिका वा त्यक्तपतिकाका पत्यन्तर-ग्रहण

आचारविरुद्ध न था। किन्तु पुराण-इतिहासादिके आख्यानसे विदित होता, कि पत्यन्तर-ग्रहण नीच-जातिमें ही चलता था। स्वयम्बर-सभाके समागत पाणिग्रहणार्थियोंमें पणजयकारीको कन्या दी जाती रही (४।२।१)। स्त्रियां भी साधारण पण्डित होती थीं (५।५।४)।

स्नुषा (बहू) श्वशुरसे लज्जा रखती रही (३।२।११)। सोदर्य भगनी भ्रातृजायाके अनुगत थीं (३।३।१३)। सोदर्य भगिनीका अनात्मीयत्व और अन्यकुलसे लब्ध जायाका आत्मीयत्व पारम्पर्यागत है।

अपत्नीक भी अग्निहोत्र कर सकता था (७।२।८)। अग्निहोत्रका दृष्ट और अदृष्ट फल मिल जानेसे अग्निहोत्रियोंको अपने अपने गृहमें अग्निरक्षण कर्तव्य है (ऋक् १०।१११।१)। हिममें रहनेवाले प्राचीन आर्योंको हिमपातका क्लेश छोड़ानेके लिये स्व-स्व गृहमें अग्निरक्षणसे सुख मिलता था (वाजसनेय-सं० २३।१०)। अग्निमें विविध सुगन्ध्यादि द्रव्य डालनेका विधान रहा (ऐतरेयब्रा० १।५।२)। सुगन्ध्यादि द्रव्यसे गृहजात वायुदोष दब जाता है। अग्निमें आज्य, अग्निरपयः, अन्न, पुरोडास, सोमादिका आहुति छोड़नेसे तद्बाष्प-प्रसूत धारा गुणयुक्त हो जाती है। स्वर्गादि अदृष्ट श्रुति-गम्य है। इससे स्फुट प्रतीत हुआ, कि आर्योंका नित्य अग्निहोत्रानुष्ठान दृष्टादृष्ट फलको सिद्धिके लिये ही चला रहा। अग्निहोत्रानुष्ठानमें प्रातःस्नान कर्तव्य है (७।२।८)। आग्रयणसे विना यज्ञ किये नवान्नप्राशन होने, पाकपात्र टूटने, पवित्र बिगड़ने, हिरण्य खो या चोरा जाने, किसी जीते-जागते आत्मीयके मरनेका समाचार झूठ-मूठ सुनने और जाया वा स्वगोत्रके यम-सन्तान उपजने पर प्रायश्चित्त करना चाहिये। सूतक और अन्नप्राशन करनेवालोंको भी प्रायश्चित्त विहित है। होमादिरूप प्रायश्चित्तसे ही तथाविध पाप छूट जाते हैं। अग्निहोत्रादि अनुष्ठानमें प्राक्स्नान विहित होते भी किञ्चित् भोजन निषिद्ध नहीं, प्रत्युत कुछ खाकर ही कर्म करना चाहिये (४।२।१)।

मृत देह न मिलनेसे पर्णशरीरके दाहकी व्यवस्था रही। क्योंकि उसके अभावमें निन्दाभाजनत्व अवश्य-भावी था (७।२।८)। देवों, पितरों और मनुष्योंको अर्चना न करनेसे पुरुष अनड्वा वा असत्य समझा जाता रहा। अजाके गलस्तनको तरह उसका जन्म निरर्थक जाता है। इसीसे तादृश पुरुषको निन्दा होती है।

आर्यका उपास्य देव—निघण्टुमें द्युस्थानके भाजनपर षड्‌विंश पद है। प्रधानतः उनका स्थान द्युलोक है। देवराजने भाष्यमें रश्मिको देव कहा है (१।३।१।१२)। ऋक् (१।८८।२), निघण्टु (५।६।२६) और निरुक्त (१२।४।५, १३।१।११)में उक्त विषय स्पष्ट रूपसे बताया है। रश्मि जन्य-जनक भावमें पार्थिव अग्नि, विद्युत् और सूर्यसे अभिन्न है (निरुक्त १२।३।६,७ ८)। यास्काचार्य व्यक्तरूपसे कहते, कि पार्थिव अग्नि, विद्युत् और सूर्यके भक्तिसाहचर्यसे अनेक देवोंकी अर्चना करते हैं (७।२।१, ३।१०)।

पितर—निघण्टुमें अन्तरिक्ष-स्थानके भाजनपर द्वादश पद है। प्रधानतः अन्तरिक्ष लोक ही उनका स्थान है (४।३।५)। पितर तीन प्रकारके होते हैं,—अवर, परास और मध्यम। परास द्युस्थ अन्तरिक्षचारी हुये और देवयान मार्गसे स्वर्ग गये हैं (छान्दोग्य उप० ५।१।-२)। मध्यम द्यावापृथिवीके अन्तर ठहरे और पितृयान मार्गसे चन्द्रलोक पहुंचे हैं (छान्दोग्य ५।१०।३-६)। अवर भूपृष्ठस्थ अन्तरिक्षमें रहते और निरन्तर पृथिवीपर ही चला-फिरा करते हैं (५।१०।८)। त्रिविध पितरोंमें अवर अप्राप्तमार्ग हैं। असकृत् आवर्तित्वमें कहीं दीर्घकाल ठहर न सकनेसे उनका पितृलोकमें रहना असम्भव है। फिर परासोंको अवस्था भी ऐसी ही है। चन्द्रलोक वा पितृलोक जा पहुंचनेसे मध्यम ही प्रधान कहे हैं। अतएव अन्तरिक्ष स्थानमें ही पितर पद पठित है। यास्क मुनिने भी उक्त विषयको ही पुष्ट किया है (११।२।५५) यम पितरोंके राजा हैं (ऋक् १०।१४।१५)।

तत्त्वतः अन्नरसके साहाय्य स्वजनक देहपर प्रविष्ट जीव रेतःके अन्तःस्थ प्रथम गर्भमें पहुंचता और रेतःके योनिमें सिक्त होनेपर प्रथम जन्म पाता है।

फिर वही रेत: मातृयोनिमें द्वितीय गर्भाकारसे परिणत होता और गर्भके भूमिपर गिरनेसे पुरुष द्वितीय बार उपजता है। मरनेपर पित्र्यादि अन्यतम शरीर पाना ही तृतीय जन्म है (ऐतरेय-आ० २।५।१)। शतपथब्राह्मणमें भी मृतपुरुषका पित्र्यादि देह पाना कहा है (१४।७।२।१-५)। पित्र्य एवं गान्धर्व गुणकर्मादिमें परस्पर किञ्चित् भेदयुक्त अन्तरिक्षलोकग रूप है। इसीप्रकार ब्राह्म तथा प्राजापत्य द्युलोकग और दैव एवं मानुष ऐहिक रूप है।

मनुष्य—मनुष्य शब्द ऐतरेयमें निर्वचन कहा है (३।३।८)। यास्क मनुके अपत्योंको मनुष्य समझते हैं (निरुक्त ३।२।१)। शतपथब्राह्मणमें देवों, पितरों और मनुष्योंका एकत्र ही विशेष परिचय तथा उपासना-प्रकार दिया है (२।४।२।१-२-३)। ऐतरेय देवों, पितरों तथा मनुष्योंका अर्चन कर्तव्य समझता है। अग्निहोत्रादि श्रौत तथा विश्वदेवादि गृह्यसे देवों, श्रद्धा एवं अन्न-जलादि-प्रदानात्मक श्राद्धादिसे पितरों और निष्कपट भाव-प्रदर्शन, आज्ञापालन, समादर, पक्वापक्व अन्नादि आहार प्रदानसे मनुष्योंका अर्चन होता है।

अतिथिसत्कार न करनेवाला बड़ा पापी समझा जाता था (ऐतरेयब्रा० ५।५।५)। अतिथिसत्कारमें पशुघात प्रचलित रहा (१।३।४)। मांसभक्षणका विधि भी अन्यत्र निकलता है (२।१।३)। अमेध्य मांसके भक्षणमें दोष और मेध्यमांस भक्षणमें अदोष था (२।१।८)। पुरुष, किम्पुरुष, गौर, गवय, उष्ट्र तथा शरभ छः अमेध्य और अश्व, गो, मेषादि एवं पृथिवीभव पांच मेध्य हैं। पृथिवीभवसे व्रीह्यादिका ग्रहण होता है (२।१।८)। अजके मांसका प्रचलन बहुत रहा। वृथा पशुघातकी निन्दा है (७।१।१)।

अतिथि-सत्कारकी भांति अन्य-अन्य उपदेश भी मिलता है। स्थान-विशेषमें द्रव्यविशेषकी दानक्षिप्रता विहित है (६।२।५)। सर्व विचार्य कर्ममें गुर्वादि वा स्वामीकी अनुज्ञा ग्रहणीय है (२।५।६)।

ऋत्विज्यका प्राशस्त्य और अयाज्य याजनका निषेध रहा (६।४।८)। पाप पुरुषके याजनका निषेध अन्यत्र भी मिलता है (४।४।३)। जैसे पाप-पुरुषका अयाज्यत्व विहित, वैसे ही आर्त्विज्यके लिये पापपुरुषका वरण निषिद्ध है (७।५।१)। फिर आर्त्विज्यके लिये लोभादिसे आहतचित्त, तेजःशून्य, मात्सर्य-पूर्ण, तमःप्रकृति, पापानुष्ठाता और दुर्मतिको भी वरण करना न चाहिये (३।५।२)। मूर्खका आर्त्विज्य दूषण कहा है (८।२।७)। धनके लोभसे जो आर्त्विज्य करता और यजमानको चाटु कमसे रिझा आर्त्विज्य पाता उसका कृतकर्म भक्षित अर्थात् मुखमध्यमें प्रविष्ट-जैसा दूषित ठहरता है। जो समाजके आधिपत्य, ग्रामके प्रभुत्व अथवा किसी दूसरे हेतुसे यजमानको डरा आर्त्विज्य लेता, उसका कृतकर्म गीर्ण अर्थात् गलाधःकृत जैसा दूषित होता है। फिर पापकर्मा विद्वान्का कृतकर्म वान्त अर्थात् छर्दित-जैसा देवताओंके लिये घृण्य है। ऐसे त्रिविध ऋत्विग्की वरण करनेकी आशा भी यजमान न रखे। ८।२।७

राजाको पुरोहितकी आवश्यकता बहुत पड़ती थी। केवल ब्राह्मण ही पुरोहित हो सकते रहे (८।५।१)। क्षत्रिय और वैश्यको पुरोहित ही दीक्षा देता था (७।४।७)। बुद्धिमान् आर्योंमें पुरोहित रहनेका विषय कहां, पृथिव्यादि जड़ोंके भी पुरोहित थे (८।५।४)। वेदविद् ब्राह्मणोंका ही पौरोहित्य व्यवस्थापित है (८।५।३)। पुरोहित यजमानका मङ्गल मनाते थे (४।५।०७,८,९)। वाय्वादि देवोंके बृहस्पति पुरोहित-जैसे राजपुरोहित भी पुरःस्थित, प्राधान्यभाक् और उपकारी रहे। पुरोहितोंका कोपनत्व संवरण कर यजमानोंको उसके उपशमनका यत्न लगाना पड़ता था (४।५।०७, ८।५।१)। राजपुरोहित असाधारण सम्मान पाते, राजगृहमें प्रबल रहते और विशेष शक्ति रखते थे।

कर्मकारयिताओंको दक्षिणा देनेकी अतिकर्तव्यता रही (६।५।८)। किसी हेतु परित्यक्त होनेपर फिर दक्षिणा ली न जाती थी। यशोलिप्सा भी अति प्रबल रही (५।४।४)। किसी दानादि कर्ममें अपनी श्रेष्ठताका अभिमान रखनेसे पाप लगता था (१।३।२)।

हस्ती, अश्व, गवादि धनके दानकी प्रशंसा होते रही (८।४।८)। आत्रेय और अङ्गराजकी गाथामें दासी-दानकी बात भी लिखी है (८।४।८)। हरिश्चन्द्रके पुत्र रोहितने शतमुद्रात्मक धन दे शुन:शेपको मोल लिया था (७।३।३)। पुत्रोंका पितृदायभाक्त्व भी सूचित है (५।२।८)।

वाणिज्यार्थ समुद्रयानपर चढ़ महासमुद्रमें परिप्लवन भी प्रचलित था (६।४।५)। वनदस्यु उपद्रव उठाते रहे (८।२।७)। नागरिक ग्रन्थिच्छेदकोंका विषय दृष्टान्त-विधिसे कहा है (८।२।७)। चोरोंकी निन्दा होती थी (५।५।५)।

एकराट् सार्वभौम संविज्ञात रहा (८।४।१)। सार्वभौम नरपति सर्व मित्रराज्योंसे उपढौकन लेते थे (७।५।८)। महाराजकी प्रियतम भार्यासे प्रजा आवेदन करते रही (३।२।११)। राजभ्राताओंका राज-सहचरत्व व्यवहार था (१।३।२)। राजधानीके परिरक्षणकी प्राकारनिर्माणकी प्रथा रही (१।४।६)। असुरोंके उपद्रवसे यज्ञ बचानेको देवोंने अग्निप्राकार बनाया था (२।२।१)। प्रबलतर शत्रुवोंके राज्यपर आक्रमण करनेसे प्रजा परस्पर मन्त्रणा लगाती, स्वत: लड़नेको तैयार हो जाती, एकमतिसे प्रतिज्ञा करती और राजरक्षि-रक्षित गृहमें पुत्रकलत्रादि रख युद्धमें आगे बढ़ती थी (१।४।७)। प्रियवस्तुके दानादिरूप साम कौशलसे रक्तपात बचा स्वकार्यके उद्धारकी चेष्टा भी चलते रही (१।५।१)। परस्पर एकमत्य रहनेको आज्य छू लोग प्रतिज्ञा करते थे (ऐतरेयब्रा० १।४।७, शतपथब्रा० २।४।२, तैत्तिरीयसं० १।२।११, ६।२।२-६)।

सेनापतिके भागसे शत्रुकी सेनापर आक्रमण करनेका उपाय निकालते रहे (३।४।१)। युद्धकालमें राजसाहाय्यकारी प्रजा और सामन्तको प्रसादलाभ होता था (३।२।९)। युद्धमें जय होनेपर राजाको मर्यादा बढ़ते रही (३।२।१०)। पराजितका बहुमूल्य-रत्नादि धन समुद्रतीर प्रोथित होता था (५।२।६)। इससे स्फुट प्रतीत हुआ, कि वैदिक समय बहुमूल्य हीरकादिका व्यवहार रहा।

सर्व सभ्यदेशोंमें विद्यमान उपविमोक व्यवहार भी प्रचलित था (४।४।५)। दूराध्वगमनमें उपविमोककी आवश्यकता पड़ती रही (६।४।७)।

स्कन्धसे भारवहनको वीवधं (बंहगी)का व्यवहार था (८।१।१)। वीवधंका दण्ड प्राय: बांससे बनते रहा (१।२।५)। सिया हुआ सभ्यजनोचित अङ्गरक्षादिका (अंगरखा कुरता वगैरह का) व्यवहार चलता था (३।२।७)। कर्मठ, श्रमकारी तथा उद्योगीकी प्रशंसा और अलस, श्रमकातर एवं उद्योग-हीनकी निन्दा सुनते हैं (७।३।३)।

पृथिवी, द्यावापृथिवी, वृष्टि, उदकके अतिक्रासमूलिका-अभाव और द्यावापृथिवी उभयके प्रतिष्ठाके सम्बन्धमें विज्ञान था (४।४।५)। विवाह-सम्बन्ध-युक्त स्त्री-पुरुषको भांति द्यावपृथिवी उभय लोक परस्पर सम्बद्ध रहे। सूर्य हो वृष्टि और तापका हेतु समझा जाता था (४।४।५)। पृथिवीके भ्रमण, सूर्यके उदयास्त और अहोरात्रके विज्ञानकी बात भी सुन पड़ती है (३।४।६)। सूर्य पृथिवीको घूमानेवाला माने जाते रहे (२।४।१०)। सूर्यको अचल समझते थे (५।१।१।१-३)। छ:वो लोकके मध्य ईश्वरने सूर्यको ताप देनेके लिये रखा है। चन्द्र पृथिवीका उपग्रह होनेसे पृथक् माना नहीं गया। सर्व लोकोंपर रहनेसे सूर्यका उत्तरत्व विदित होता है (४।३।४)। ऋक् और यजु:में सूर्यको पृथिवीका धारण करनेवाला कहा है (ऋक् ७।९८।३, शुक्लयजु: ५।१६)। ताप देनेसे सूर्य जीवनका हेतु है (शतपथब्रा० ८।७।३।११)। चन्द्रको देवसोम कहते थे (ऐतरेयब्रा० ७।३।१०)। कारण सूर्य अपने किरणसे उसका अमृत पीता है। चन्द्रमें मर्त्यलोककी छायासे कलङ्क देख पड़ता है (४।४।५)।

वायु ही प्राण है (३।२।१)। वह सूर्यसे उत्पन्न है (१।२।१)। अग्नि देवोंका अवम है (१।१।१)। उसीको विज्ञानपर समझना चाहिये (३।१।४)। अग्निही औषधि है (१।२।१)। जलसे अभिषेक और दीक्षा दोनोंका काम चलता है (१।१।२) इस लोकमें जल ही अमृत है (८।४।६)। सोम और अग्निके भागसे जल बना है (ऋक् १।२३।२०)। अबमें

ज्योतिः प्रतिष्ठित है (तैत्तिरीय आरण्यक ८।८)। विष्णु परम होते हैं। उनका त्रिविक्रमणादिक अष्ट आम्नात है (शतपथब्रा० १।८।३।७-१२)। विष्णु सूर्यको कहते हैं (तैत्तिरीयसं० १।२।१३।२)।

आर्योंको गर्भादिका विज्ञान भी अच्छा रहा। मृत जन्तुका आतिवाहिक देहधारण और पुनर्जन्म आम्नात है (१४।७।२।४)। ब्राह्मणको भैषज्यका निषेध है (तैत्तिरीयसं० ६।४।८।२)। भेषजकरण कालमें ब्राह्मणको बैठे रहना चाहिये। (ऋक् १०।८५।४६)। ब्राह्मणेतर साधारण जातिकी स्त्रियां देवरसे कामना करती रहीं (ऋक् १०।४०।२)। उस समय बहु विवाह प्रचलित रहते (१।१०५।८) भी प्रायः पुरुष एक ही बार व्याहे जाते थे (ऋक् १।१०५।२)।

ऋग्वेदके समय आर्य राजा (१।४०।८, १।१६।१ इत्यादि), पूरपति (१।१७३।१०), ग्रामणी (१०।६२।११) भिन्न-भिन्न उच्चपदपर प्रतिष्ठित थे। राजा साधारण-पर कर लगाते (१।७०।५), शासनप्रणाली सुनियमसे चलाते (१।१७३।२) और गमन करते समय अमात्य-वेष्ठित हो गजस्कन्धपर आसन जमाते रहे (४।४।१)। सुवर्ण सज्जाविशिष्ट अश्व (४।२।८) और युद्धमें युद्धाश्व, अश्वारोही सैन्य प्रभृतिका व्यवहार भी था (४।३८।५)। प्रधान व्यक्तियोंको स्तुति सुनना अच्छा लगता रहा (१।२७।१२)। युद्धकालमें राजा एकत्र होते थे (१०।८७।६)। शान्ति रहते ऋषि संसारी, किन्तु युद्ध-काल योद्धा रहे (१।२०।१)। राजकन्यावोंसे ऋषियोंके विवाह होते थे (५।६१।८)। वीर पुरुषका आदर बहुत रहा (१।३१।६)।

आजकलकी भांति उस समय भी उत्कृष्ट, निकृष्ट और मध्यवित्त तीन श्रेणीके लोग रहे (४।२५।८)। कोई धनके गौरवमें मत्त रहता और कोई पेटके लिये अन्न मांगते फिरता था (१०।११७ सूक्त)। मध्य-वित् मनुष्य वाणिज्य-व्यवसाय द्वारा सुखसे जोविका चलाते रहे (१।७८।१)। लोग नानाप्रकार कर्म करते—कोई पुरोहित, कोई स्तोता (कवि), कोई वैद्य, कोई तक्षक (बढ़यी), कोई लोहकार, कोई नापित, कोई काष्ठिक (लकड़ो काटनेवाले), कोई रथप्रस्तुतकारी, कोई धातु वा अस्त्रादि निर्माणकारी, कोई नौकाकारी, कोई मांसिक और कोई अश्वके गात्रधौतकारी थे (१।१३५।५, ४।२।१४,—१६।२०, ५।१०२।८)।

प्राचीन ऋषियोंसे परवर्ती आर्योंके आचार, व्यवहार, और धर्मकी प्रणाली—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, वेद, उपनिषद, जाति, सभ्यता प्रभृतिमें द्रष्टव्य है।

निश्चित रूपसे कहा जा नहीं सकता, कितने दिनसे आर्य नामके बदले 'हिन्दू' शब्द इस देशमें चलता है। किन्तु त्रिसप्त नदी प्रवाहित सिन्धु-प्रदेशमें वैदिक आर्योंका रहना प्रथम ही प्रमाणित हो चुका है। वही सुप्राचीन आर्यवास रहा। आर्यावर्त देखो। पारसिकोंके 'अवस्ता' ग्रन्थमें उसीको 'हफ्त हिन्दु' लिखा है। इसलिये प्राचीन पारसिकोंके 'हिन्दु' शब्दसे वर्तमान 'हिन्दू' नाम निकला मालूम देता है। हिन्दू देखो।

(पु०) २ श्वशुर, जोड़ूका बाप। ३ स्वामी, मालिक। षष्ठ परिच्छेदमें लिखते, किसे-किसे आर्य कह सकते हैं,—

"राजन्नित्यृषिभिर्वाच्यः सोऽपत्यप्रत्ययेन च।
स्वेच्छया नामभिर्विप्रैर्विप्र आर्येति चेतरैः॥
वयस्येत्यथवा नाम्ना वाच्यो राज्ञा विदूषकः।
वाच्यौ नटीसूत्रधारावार्यानाम्ना परस्परम्॥" (साहित्यदर्पण)

ऋषि राजासे राजन् अथवा अपत्य प्रत्ययान्त दाशरथे, पौरव, पाण्डव प्रभृति-जैसे शब्द द्वारा सम्भाषण करें। विप्र विप्रसे नाम अथवा अपत्य प्रत्ययान्त कौशिक, कुशिकनन्दन सदृश पदद्वारा बोले। दूसरे लोग ब्राह्मणको आर्य कहें। राजा विदूषकको वयस्य वा विदूषक पुकारें। नट वा सूत्रधार नटोसे आर्या और नटी, नट वा सूत्रधारसे आर्य वाक्य द्वारा बताये।

कर्मधारय समासमें 'ब्राह्मण' और 'पुत्र' आगे आनेसे आर्य शब्द प्रकृतिस्वर होता है। "आर्यौ ब्राह्मण-कुमारयोः। पा ६।२।५८। "आर्यब्राह्मणः। आर्यकुमारः।" (सिद्धान्तकौ०)

आर्यक (सं० त्रि०) आर्य एव, स्वार्थे कन्। १ पूज्य, इज्जतदार। (पु०) संज्ञायां कन्। २ पितामह, जद,

दादा। ३ नागविशेष। ४ नृपति विशेष। यह गड़रियेसे राजा बन गये थे। (क्ली०) ५ पिण्ड-पात्रादि पितृकार्य। (स्त्री०) आर्यका, आर्यिका।

आर्यगृह्य (सं० वि०) आर्य-ग्रह पक्षार्थे क्यप्, ६-तत्। पदास्वैरिबाह्यापक्षेषु च। पा ३।१।११९। "पक्षे भवः पक्षाः दिगादिभ्यो यत्, आर्यगृह्य तत्पक्षाश्रित इत्यर्थः।" (सिद्धान्तकौमुदी) १ आर्यपक्षाश्रित, जिसे इज्जतदार आदमी खातिरके साथ ले। २ विनीत, खुश-असलूब, लायक।

आर्यता (सं० स्त्री०) माननीय आचरण, खुश-असलूबी, भला बरताव।

आर्यतारादेवी (सं० स्त्री०) बौद्धतन्त्रोक्त शक्तिविशेष। महायान सम्प्रदाय इन्हें सर्वप्रथम और श्रेष्ठ शक्ति बताते हैं। बुद्धगया, नासिक, अजण्टा, औरङ्गाबाद, नेपाल और कांड़ेरीमें आर्यतारादेवीकी मूर्ति प्रस्तर-मय विद्यमान है। नेपाल और कांड़ेरीके गुहामन्दिरमें यह अवलोकितेश्वरके पार्श्वपर प्रतिष्ठित हैं। दक्षिण हस्तमें पुष्प और वाम हस्तमें मुकुल है। बौद्ध इन्हें मानवकी मुक्तिविधायिनी मानते हैं।

(Vassilief Bouddhisme, p. 125)

आर्यत्व (सं० क्ली०) आर्यता देखो।

आर्यदेव (सं० पु०) नागार्जुनके एक शिष्य। ई०के १म शताब्द इन्होंने दक्षिणात्यमें किसी ब्राह्मणके घर जन्म लिया था। शतसमाधि एवं चतुःशती गाथा नामक ग्रन्थ इन्होंने बनाया। किसी तीर्थिकने पेट फाड़कर आर्यदेवको मार डाला। दूसरा नाम कानादेव था।

आर्यदेश (सं० पु०) आर्यभूमि, आर्योंके रहनेका मुल्क।

आर्यदेश्य (सं० वि०) आर्यदेश-जात, जो आर्योंके मुल्कसे निकला हो।

आर्यधर्म (सं० पु० आर्याणां धर्मः, ६-तत्। सदा-चार, दुरुस्त अतवार, अच्छा चलन। सरस्वती और दृषद्वतीनदीके बीच लोग जिस आचारपर चलते, उसे आर्यधर्म कहते हैं। (मनु २।१८)

आर्यपथ (सं० पु०) आर्याणां पन्थाः, अजन्त ६-तत्। ऋक्पूरब्धूःपथामानक्षे। पा ५।४।७४। सदाचार, अच्छा चलन। आर्यमार्गादि शब्द भी इस अर्थमें प्रयुक्त होता है।

आर्यपुत्र (सं० पु०) आर्यस्य पुत्रः, ६-तत्। १ उपा-ध्यायका पुत्र, मुर्शदका पिसर। नाट्यभाषामें स्वामीको आर्यपुत्र कहते हैं। सचराचर ज्येष्ठभ्राताके तथा अपने पुत्र और साधारणतः युवराजको इस नामसे सम्बोधन करते हैं।

आर्यभट (सं० पु०) १ प्रसिद्ध ज्योतिष-ग्रन्थ-रचयिता। इन्होंने कुसुमपुरमें अपने वासस्थानको निर्देश किया है,—

"ब्रह्मकुशशिबुधभृगुरविकुजगुरुकोणभगणान्नमस्कृत्य।
आर्यभटस्त्विह निगदति कुसुमपुरेऽभ्यर्चितं ज्ञानम्॥" (गणितपाद १)

अपने बनाये आर्यसिद्धान्त ग्रन्थमें लिखा है,—

"षष्ट्यब्दानां षष्टिर्यदा व्यतीतास्त्रयश्च युगपादाः।
त्र्यधिका विंशतिरब्दास्तदिह मम जन्मनोऽतीताः॥"

(कालक्रियापाद १०)

अर्थात् तीन युगके बाद ६०×६०=३६०० वर्ष बीतनेपर हमारे जन्मके २३ वत्सर हुये थे।

उक्त वचनानुसार (३६००-२३) कलिके ३५७७ वत्सर बीतनेपर आर्यभटका जन्म हुआ था। ऐसी अवस्थामें इनका जन्मकाल ४७५ ई० आता है।

आर्यभट इस प्रकार संख्या गणना करते थे,—

क=१, ख=२, ङ=५, ञ=१०, ट=११, न=२०, प=२१, म=२५। य=न+म। सिवा इसके अपर व्यञ्जनवर्ण प्रत्येक १० अर्थात् र कहनेसे य+१०=८० होते रहा। इसी प्रकार च=७०, ष=८०, स=९० और ह=१००के ठहरता था। प्रत्येक स्वरस्वर दशगुणके हिसाबसे बढ़ता है। जैसे—ह=१००, गि=३००, चि=६००, ङ=१००००, गु=३०००० इत्यादि। इसी प्रकार ४४ लिखनेसे घर वा प्र होता है। बीजगणितको आर्यभटने ही आवि-ष्कार किया है।

ज्योतिष-गणना ऐसी रही,—रविका ४३२००००, चन्द्रका ५७७५३३३६, पृथिवीका १५८२२३७५००, शनिका १४६५६४, गुरुका ३६४२२४ और कुजका भगण २२९६८२४ है। भृगु और बुधका भगण रविके समान लगता है।

चन्द्रोच्च ४८८२१९, भृगुका १७९३७०२० और बुधका ७०२२३८८ है। चन्द्रका पात २३२२२६ है।

२ ग्रन्थकारविशेष। यह द्वादश ई० शताब्दमें वर्तमान रहे। पूर्वोक्त आर्यभट प्रभृतिका मत पकड़ ग्रन्थ बनाये हैं। विस्तारित विवरण Journal of Royal Asiatic Society of Great Britain and Ireland, N. S. Vol. I में देखो।

आर्यभाव, आर्यधर्म देखो।

आ-र्यमहावीर—जैन-शास्त्रोक्त सिद्धपुरुष विशेष। यह शत वत्सर जिये और जैन संवत् २४८ के बाद मर गये।

आर्यमार्ग, आर्यपथ देखो।

आर्यमिश्र (सं० पु०) १ साधुजन, महानुभाव, अशराफ़, भलामानस। (त्रि०) २ प्रसिद्ध, सर-फ़राज़, मशहूर। बहुवचनमें यह शब्द साधुजन-मण्डलीका द्योतक है।

आर्ययुवन्, आर्ययुवा देखो।

आर्ययुवा (सं० पु०) आर्यकुमार, आर्य कौमका गबरू या पट्टा।

आर्यराज (सं० पु०) नृपतिविशेष।

आर्यरूप (सं० त्रि०) १ केवल आर्यका आकार रखनेवाला। २ दम्भी, कपटी, रियाकार, मक्कार।

आर्यलिङ्गिन् (सं० त्रि०) दम्भी, कपटी, दगाबाज, जो भले आदमीकी सूरत बनाये हो। (पु०) आर्य-लिङ्गी। (स्त्री०) आर्यलिङ्गिनी।

आर्यवर्मन्, आर्यवर्मा (सं० पु०) नृपतिविशेष।

आर्यवृत्त (सं० क्ली०) १ सदाचार, भला चलन। (त्रि०) २ साधुजनकी भांति व्यवहार करनेवाला, जो भलेमानसकी तरह पेश आता हो। ३ धार्मिक, नेक, पारसा।

आर्यवेश (सं० त्रि०) सुन्दर वस्त्र धारण किये हुआ, जो अच्छे कपड़े पहने हो।

आर्यव्रत (सं० क्ली०) आर्याणां व्रतम्, ६-तत्। १ साधुका कर्तव्य नियम, भले आदमीका काम। (त्रि०) आर्यस्येव व्रतमस्य। २ साधुके नियमपर चलनेवाला, जो भले आदमीकी चाल पकड़ता हो।

आर्यश्वेत (सं० पु०) आर्यं श्रेष्ठं श्वेतं चरितं यस्य। श्रेष्ठचरित, नेकचलन।

आर्यसङ्घ (सं० पु०) १ आर्योंका अखण्ड समूह, भलेमानसोंकी पूरी जमात। २ सुप्रसिद्ध दर्शनज्ञ, एक मशहूर मुहक्किक़। इन्होंने योगाकार सम्प्रदाय प्रति-ष्ठित किया था।

आर्यसत्य (सं० क्ली०) अभिजात तथ्य, इक्कीकृत-शरीफ़। ऐसे ही चार तथ्योंसे बौद्धधर्मके चार प्रधान अङ्ग बने हैं।

आर्यसमाज—सम्प्रदायविशेष। आर्य्यसमाज, जैसा कि उसके नामसे ही प्रकट है, आर्यों (वैदिकधर्मियों)का समाज है। इसे श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीने १८७५ ई०में वैदिकधर्मके प्रचारार्थ स्थापित किया था। आर्यसमाजके दश नियम इस प्रकार हैं—

१ सब सत्यविद्या और विद्यासे समझे जानेवाले पदार्थ सबका आदि मूल परमेश्वर है। २ ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्याय-कारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टि-कर्त्ता है। उसीकी उपासना करना योग्य है। ३ वेद सत्य विद्याओंका पुस्तक है, वेदका पढ़ना, पढ़ाना सुनना और सुनाना आर्योंका परम धर्म है। ४ सत्य ग्रहण करने और असत्यको छोड़नेमें सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। ५ सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्यको विचार करना चाहिये। ६ संसारका उपकार अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना इस समाजका मुख्य उद्देश्य है। ७ सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिये। ८ अविद्याका नाश और विद्याका वर्धन करना चाहिये। ९ प्रत्येकको अपनी ही उन्नतिसे सन्तुष्ट न रहना, किन्तु सबकी उन्नतिमें अपनी उन्नति समझना चाहिये। १० सब मनुष्योंको सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालनेमें परतन्त्र और प्रत्येक हितकारी नियममें स्वतन्त्र रहना चाहिये।

आर्यसमाजके संस्थापक श्रीस्वामी दयानन्द सर-स्वतीका जन्म विक्रमीय संवत् १८२४को गुजरात देशके

मोरवी राज्यके अवदीच्य ब्राह्मणकुलमें हुआ था। उनके पिता शैव थे। दयानन्द आरम्भसे ही बड़े तीव्रबुद्धि थे। बाल्यकालमें ही उन्होंने यजुर्वेदका रुद्राध्याय और अनेक अन्यभाग कण्ठस्थ कर लिया था। किसी शिवरात्रिको वह अपने पिताके साथ नगरके बाहर एक शिवालयमें शिवकी उपासना करने गये। वहां एक घटनाको देखकर उन्हें मूर्त्ति-पूजाके विषयमें शङ्का उत्पन्न और मूर्तिपूजा न करनेकी बात उनके हृदयपर अङ्कित हुयी। वे अपने चचे तथा बहनकी मृत्युसे विरक्त हो और अपनेको विवाह जालमें फंसता देखकर १८४५ ई०को योगविद्या सीखनेके अभिप्राय घरसे निकल खड़े हुये। विचरण तथा विद्याध्ययन करनेके उपरान्त १८४७ ई०को महात्मा पूर्णानन्द नामक एक संन्यासीसे संन्यास ग्रहण किया। तत्पश्चात् स्वामीजी योगियोंकी तलाशमें वर्षों पर्वतों और जङ्गलोंमें घूमते रहे। १८१७ को वे मथुरा आकर श्रीस्वामी विरजानन्दजी प्रज्ञाचक्षुके शिष्य बने और चार वर्ष तक उनसे वैदिक शिक्षा प्राप्त करते रहे। तदुपरान्त स्वामी जी अपने पूजनीय गुरुके समक्ष आर्यवर्तकी बिगड़ी दशा सुधारनेकी प्रतिज्ञा कर गुरुकुलसे विदा ले उपदेशार्थ भ्रमण करने लगे। संवत् १८२०से १८२४ तक यत्रतत्र एक ईश्वरकी उपासनाका उपदेश करते हुये हरिद्वार कुम्भके मेलेपर जा पहुंचे। वहांपर प्रबल रूपसे वैदिकधर्मका मण्डन और अवैदिक बातोंका खण्डन करते रहे। काशी आदि बड़े बड़े नगरोंमें पण्डितोंसे शास्त्रार्थ किये। वेद भाष्यादि अनेक उपयोगी ग्रन्थोंकी संस्कृत तथा आर्यभाषामें रचना की। सत्यार्थप्रकाश नामक पुस्तक बनाया, जिसमें संसार भरके मतोंका समीक्षण और वेदोक्त धर्मका प्रतिपादन बड़ी युक्ति तथा उत्तमतासे किया। स्वामी जी रजवाड़ोंमें उपदेश करते करते उदयपुर पहुंचे। वहांके राणा सज्जनसिंहजी पर स्वामीजीकी वक्तृता और विद्वत्ताका ऐसा प्रभाव पड़ा, कि वे उनके शिष्य बन गये। स्वामीजीने वेदोंके प्रचार तथा अपने ग्रन्थोंको सुरक्षित रखने और छपानेके उद्देश्यसे 'परोपकारिणी सभा' स्थापन की। उक्त महाराणा जीने सभाके प्रधान बन अपने राज्यमें सभाकी प्रथम रजिष्टरी करायी। कुछकाल पीछे जोधपुराधीश श्रीमहाराज यशवन्तसिंहके आग्रहपर, श्रीस्वामी जी जोधपुर पधारे और निर्भयतापूर्वक वैदिक धर्मका प्रचार करने लगे। स्वामीजीके सदुपदेशोंसे भयभीत होकर जोधपुर नरेशकी एक यवन वेश्याने स्वामीजीको विष दिलवा दिया। इससे वे बीमार होकर अजमेर आ गये और संवत् १८४१ की दीपावलीको ईश्वरोपासना करते करते हमसे सर्वदाको विदा हुये।

आर्यसमाज, ईश्वर, जीव और प्रकृतिको अनादि मानता है। उसके सिद्धान्तानुसार सृष्टि प्रवाहरूपसे अनादि है। अर्थात् प्रथम सृष्टिका रचा जाना, फिर प्रलय होना सदैवसे चला आता है।

आर्यसमाज एक ईश्वरका मानता, जो अनादि, अनन्त, सत्, चित् और आनन्द स्वरूप है। सदैव एक रस रहता है। उसके गुण आर्यसमाजके नियम संख्या २में वर्णित हैं। आर्यसमाज केवल इसी एक ईश्वरकी उपासना करनेका उपदेश देता और मूर्तिपूजा, श्राद्ध, मृत पितरोंके श्राद्ध, यज्ञमें पशुवोंके बलि को अवैदिक मानता है।

वेद ईश्वरीय ज्ञान होता, जिसे ईश्वर सृष्टिके आदिमें अपनी अपार दयासे मनुष्योंको प्रदान करता है। उसीके द्वारा लोग सब कुछ समझनेके लिये समर्थ होते हैं। वेद समस्त सत् विद्यावांका पुस्तक है। वेद चार हैं—ऋक्, यजुः, साम, अथर्व। स्वामी दयानन्दसे पूर्व आर्यावर्तमें वेदोंका लोप सा हो गया था। संहितायें भी कहीं कहीं मिलती थीं। उस समय यदि किसीको वेदका कुछ भाग कण्ठस्थ भी था, तो वह उसका अर्थ न जानता था। महर्षि दयानन्दका सबसे महान् कार्य वेदोंको सच्चा गौरव प्रकट कर प्रतिष्ठाके उच्च आसनपर विराजमान करा देना है। स्वामीजीके मतमें वेदोंके पढ़नेका अधिकार सबको है।

स्वामीजीने अपने वेदभाष्यकी एक अत्युत्तम भूमिका संस्कृतमें लिखी है। उसमें वेदोंका गौरव वा महत्व बड़ी उत्तमतासे दर्शाया है। ऋग्वेदका ७/८ तथा यजुर्वेदका सम्पूर्ण भाष्य रचते ही उनका देहपात हो गया। स्वामीजी केवल संहिता भागको वेद मानते और उसका स्वत: प्रमाण होना स्वीकार करते थे। वेद केवल एक निराकार, निर्विकार सर्वव्यापक, सर्वज्ञ सच्चिदानन्द स्वरूप सृष्टिकर्ता परमात्माकी उपासनाका उपदेश देते हैं। श्रीपण्डित तुलसीदाम स्वामीने सामवेदका उत्तम भाष्य श्रीस्वामीजीकी शैलीपर किया है। प्रयागनिवासी श्री० प० क्षेमकरण त्रिवेदी भी अथर्ववेदका भाष्य उसी शैलीपर करनेका प्रयत्न कर रहे हैं।

पञ्च यज्ञ अर्थात् १ सायं, प्रात: दोनोंकाल सन्ध्या, २ अग्निहोत्र, ३ जीवित माता पितादिका श्रद्धापूर्वक सत्कार, ४ अतिथि सत्कार और ५ बलिवैश्वदेव करना आर्योंका प्रधान कर्तव्य है।

गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह, वानप्रस्थ, संन्यास और अन्त्येष्टि संस्कार भी कर्तव्य है।

आर्यसमाजको दृढ़ विश्वास है, जो कर्म मन, वचन अथवा कर्मद्वारा किया जाता है, वह अपना प्रभाव पैदा किये बिना नहीं रहता। कर्ताको अवश्य फल भोगना पड़ता है। स्वर्ग और नरक कोई विशेष स्थान नहीं, किन्तु इसी संसारमें दोनो मौजूद हैं। सुखका नाम स्वर्ग और दु:खका नाम नरक है।

आर्यसमाज सृष्टिका आयु ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष मानता है। वर्तमान सृष्टिकी रचना हुये लग भग ८ अरब ९६ करोड़ वर्ष बीत चुके हैं। निवर्त अवधिके शेष समय तक वह अभी और स्थित रहे गी। चन्द्र तथा तारालोक पृथिवी की तरह गोलाकार हैं। इन लोकोंमें भी प्राणी बसते हैं।

मनुष्यजातिमें गुणकर्मानुसार संसारका कार्य विभक्त करनेके लिये आर्यसमाज वर्णोंका आवश्यक होना मानता है। जो विद्वान लोभ तथा मोहको त्यागकर परोपकारमें अपना जीवन बिताते, वे ब्राह्मण कहाते हैं। जो वीर दुष्टोंसे जातिकी रक्षा करते तथा यज्ञानुष्ठानका क्रम जारी रखते, वे क्षत्रिय हैं। जो लोग धर्मपूर्वक शिल्प वाणिज्यकी उन्नतिमें लगे रहते, वे वैश्य हैं। मस्तिष्क सम्बन्धी कार्योंमें असमर्थ हो सेवा करनेवालोंकी संज्ञा शूद्र है। वैदिक धर्मानुसार चारो वर्ण पारस्परिक सहायक हैं। आर्यसमाज यह भी मानता, कि गुण कर्मानुसार एक वर्णका मनुष्य अपनेसे ऊपरके वर्णका अधिकारी बन सकता है। शूद्र उन्नति और सद्गुण धारण करनेसे ब्राह्मण बन और निकृष्ट कर्म करनेसे ब्राह्मण पतित हो जाता है। आर्यसमाज आजकलकी जातिपांतिका, जिसका आधार केवल जन्म पर रहता, विरोधी है।

मनुष्यका कार्य-भार बांटने तथा उसके जीवनको अधिक उपयोगी एवं उत्तम बनानेके लिये वेदभगवान् चार आश्रमोंका विधान करते हैं। वेदाध्ययनकाल शरीरको पुष्ट तथा विद्याको उपलब्ध करनेके लिये न्यूनसे न्यून २५ वर्ष पर्यन्त अविवाहित रहना, 'ब्रह्मचर्य' कहाता है। तत्पश्चात् धर्मानुसार विवाह तथा सन्तान उत्पन्न करके पितृऋणसे उऋण होना 'गृहस्थाश्रम' है। पचास वर्षका आयु होनेपर ब्रह्मकी प्राप्ति तथा संसारका उपकार करनेके लिये योग्यता बढ़ानेका नाम 'वानप्रस्थ' है। फिर शेष जीवनको सर्वथा जगत्की भलाईमें लगा देना 'संन्यास' कहाता है।

आर्यसमाज विद्वान् पुरुषों, वेदों और शास्त्रोंको तीर्थ समझता है। क्योंकि 'तीर्थ'का अर्थ ही तारनेवाला है। जिसके द्वारा मनुष्य भवसागरसे तर जाता, वही तीर्थ है। नदी नाले पर्वतादिको तीर्थ मानना आर्यसमाज वैदिक नहीं समझता।

अपने इन्द्रियोंको वशमें रखते हुये अग्निहोत्रादि अनुष्ठान और विद्वानोंका सत्सङ्ग करना आदि यज्ञ कहाता है। जो लोग पशुओंके बलि-

दानका नाम यज्ञ समझे हुये हैं, वे आर्यसमाजके मतमें सरासर वेद भगवान्‌की आज्ञाका विरोध कर रहे हैं।

आर्यसमाज विद्वानोंको देवता मानता है। व्यक्ति-विशेष तथा ग्रह विशेषके सकाशसे किसी फल विशेषकी प्राप्ति तथा फलित ज्योतिषकी ख्यातिपर उसका विश्वास नहीं।

धर्म वही, जो वेद विहित है। सूक्ष्मतया आर्य-समाज धर्मके दश लक्षण मानता है। तदनुसार ही अपना जीवन बनाना मनुष्य मात्रका परम कर्तव्य है।

"धृति. क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥" (मनु ६।९२)

अर्थात् १ धृतिः—सदा धैर्य रखना, २ क्षमा—मानापमान, तथा सुखदुःखमें सहन शीलता, ३ दम—मनको धर्ममें प्रवृत्त कर अधर्मसे रोकना आदि, ४ अस्तेय—चोरीका त्याग, ५ शौच—रागद्वेष पक्षपातशून्य शारीरिक वा मानसिक पवित्रता, ६ इन्द्रियनिग्रह—इन्द्रियोंको अधर्माचरणसे रोककर धर्माचरणमें लगाना, ७ धीः—बुद्धि बढ़ाना, ८ विद्या—पृथिवीसे लेकर परमात्मा पर्यन्त को ज्ञानोपलब्धि करना, ९ सत्य—जैसे पदार्थ को वैसा ही समझना तथा कहना, १० अक्रोध—क्रोध त्यागना।

आर्यसमाजका सङ्गठन।

प्रत्येक मनुष्य वैदिक धर्मके शरण आकर आर्य-समाजके दश नियमोंको मानता हुआ समाजका सभासद बन सकता है। प्रविष्ट होनेकी तिथिसे एक वर्षतक सदाचार रखने तथा अपने आयका शतांश देनेपर वह आर्यसभासद कहानेके योग्य होता है। आर्य सभासद प्रतिवर्ष अपनेमेंसे प्रधानादि अधिकारिवर्ग तथा एक प्रबन्ध-कारिणी-समितिका निर्वाचन करते हैं। यह समिति अन्तरङ्गसभा कहाती है। एक वर्ष पर्यन्त समस्त सामाजिक कार्यों का यथोचित प्रबन्ध करना इसका कर्तव्य होता है। गत मनुष्य गणनाके अनुसार भारत भरके समस्त आर्यों को संख्या ढाई लक्षके लगभग थी। इसमेंसे संयुक्त प्रान्तीय आर्यों की संख्या एक लाख बीस सहस्रके इधर उधर है।

प्रत्येक समाज अपने साप्ताहिक अधिवेशन करता है। ये अधिकतर रविवारको होते हैं। इन अधिवेशनोंमें हवन, ईश्वर-प्रार्थना, वेदपाठ, और भजन-गानके अतिरिक्त अन्य उपयोगी पुस्तक पढ़े जाते हैं। कभी कभी धार्मिक और सामाजिक विषयोंपर व्याख्यान तथा संवाद भी चलते हैं।

एकप्रान्तके समाज मिलकर अपनी सङ्घशक्ति द्वारा 'आर्यप्रतिनिधिसभा'की स्थापना करते हैं। वह विविध समाजोंकी प्रतिनिधि-सभाओं द्वारा संगठित होती और अपने प्रान्तमें उपदेशों तथा अन्य धार्मिक कार्यों का प्रबन्ध रखती है।

उपरोक्त समस्त प्रतिनिधि-सभाओं द्वारा आर्यावर्तीय सार्वदेशिक सभाकी स्थापना हुई। इसके वर्तमान प्रधान कांगड़ी गुरुकुलके मुख्याधिष्ठाता श्रीमान् महात्मा मुन्शी रामजी तथा मन्त्री वृन्दावन गुरुकुलके मुख्याधिष्ठाता श्रीमान् मुन्शी नारायण-प्रसादजी हैं।

उपरोक्त सभा-समाजके अतिरिक्त परोपकारिणी सभा स्वामी दयानन्दने अपने ग्रन्थोंको सुरक्षित रखने, वेदोंको प्रचलित करने आदि कार्यों के विचारसे संस्थापित की थी। इस समय उसके प्रधान पदपर आर्यभूषण श्रीमहाराज जनरल सर प्रतापसिंह जी महोदय तथा मन्त्रीपद पर शाहपुराधीश राजाधिराज श्रीनाहर सिंहजी वर्मा सुशोभित हैं। परोपकारिणीसभा स्वामीजीके वैदिक प्रेसका प्रबन्ध रखती तथा उनके रचे समस्त पुस्तकोंको छपाकर प्रकाशित करती है।

अछूत भाइयोंको हिन्दुओंसे अलग रहते देखकर आर्यसमाजको दया आयी थी। उसने उनके संस्कारके लिये प्रबल प्रयत्न किया। स्यालकोट (पञ्जाब)में विशेषतः श्रीलाला गङ्गारामजीके पुरुषार्थसे लगभग २६००० अछूतोंका उद्धार हुआ है।

आर्यसमाजने गुरुकुलोंकी स्थापना द्वारा ब्रह्मचर्याश्रमका पुनरुद्धार कर वास्तवमें बड़े महत्वका

कार्य किया है। उसने लोगोंका ध्यान वीर्य रक्षाकी ओर खींच कर बतलाया, कि विवाहका अभिप्राय विषय भोग नहीं—बलिष्ठ उत्तम सन्तानकी उत्पत्ति करना है। आर्यसमाजके सिद्धान्तानुसार प्रत्येक पुरुष ऋतुगामी होते ही पुष्ट और बलिष्ठ सन्तान प्राप्त कर सकता है। बालविवाहके विरोधमें समाजने घोर आन्दोलन किया नव युवकोंमें स्वदेशी और विदेशी खेल चलाने, सदाचार बढ़ाने, सेवाभाव उपजाने और वैदिक धर्म फैलानेके लिये आर्य-कुमार सभाओंकी स्थापना हुई। वह इस सम्बन्धमें उत्तम और सराहनीय कार्य कर रही हैं।

आर्यसमाजने बतलाया, कि भारतवर्ष जैसे कृषि-प्रधान देशमें—जहांके निवासी घी दूधके सेवनसे ही स्वस्थ और बलिष्ठ हो सकते हैं, और आजकल जिसके न मिलनेसे ही उनकी शारीरिक और मानसिक दुर्दशा हो रही है—गो की रक्षा करना प्रत्येक भारतवासीका परम कर्तव्य होना चाहिये। मांसाहार न केवल वेदविरुद्ध पापमय है, प्रत्युत स्वास्थ्यके लिये अत्यन्त हानिकारक भी है। यदि मांस-भक्षण करनेवाले हिन्दू मांसाहार त्याग दें तो गो रक्षामें बहुत बड़ी सहायता दे सकते हैं। क्योंकि उनके मांसाहार छोड़ देनेपर अन्य पशुओंके न मिलनेसे गोघात करनेवाले लोग गोहत्या से रुक जायेंगे।

आर्यसमाज तो यह भी नहीं चाहता, कोई मनुष्य अपने उदर-पोषणार्थ किसी पशुका बध करे। परन्तु आशा नहीं होती, कि मांस-भक्षणको पाप न समझनेवाले अन्य मतावलम्बी उसे सर्वदा छोड़ देंगे।

अनाथोंकी रक्षाके लिये आर्यसमाजने बड़ा काम किया है। समाजसे पूर्व इस देशमें ईसाइयोंके सिवा दूसरे लोगोंके अनाथालय न थे। परन्तु आर्यसमाजने अजमेर, आगरा, फीरोजपुर, बरेली आदि बड़े बड़े नगरोंमें अपने अनाथालयोंकी स्थापना करके इस अभावकी बहुत कुछ पूर्ति कर दी है। इन आर्य अनाथालयोंमें सैकड़ों अनाथोंका पालन पोषण और शिक्षण होता है। समाजके अनाथालयोंके पश्चात् हिन्दूओंके अन्य अनाथालयोंकी स्थापना हुई। संवत् १८५६ के दुर्भिक्षमें तथा उसके पश्चात् आर्यसमाजके भूषण स्वनामधन्य लाला लाजपतिरायजीने अनाथोंकी रक्षाके लिये बड़ा उद्योग किया था।

आर्यसमाजने वैदिक विवाहकी प्रथा प्रचलित की। न्यूनसे न्यून २५ वर्षका वर तथा १६ वर्षकी वधू होना आवश्यकीय एवम् अनिवार्य है। जाति-पांतिके बखेड़ोंमें न पड़ गुणकर्मानुसार विवाह करनेका उपदेश आर्यसमाजने दिया है।

स्वर्गीय पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागरने १८५६ ई०को सरकारसे हिन्दूविधवाओंके पुनर्विवाहका कानून पास कराया था। परन्तु आर्यसमाजके प्रादुर्भावतक उसका उपयुक्त प्रचार न हुआ। आर्यसमाजने अक्षतयोनि विधवाके विवाहको वेदानुकूल मानकर प्रचार किया है।

आर्यसमाजने विधवाओंके लिये आश्रम खोले, जिनमें उपयोगी कार्योंको सीखकर वे अपने आयुको भले प्रकार बिता सकें। ये आश्रम आगरे और जालन्धरमें अच्छा कार्य कर रहे हैं।

नाचको दुष्ट और सदाचार नष्ट करनेवाली प्रथाको दूर करनेके लिये भी आर्यसमाजने बड़ा प्रयत्न लगाया है। इसमें उसे बड़ी सफलता हुई। जो जातियां इस दुर्व्यसनमें फंसीं थीं, उन्होंने सर्वथा त्याग दिया। इस कार्यमें अन्य सुधारकोंसे भी आर्यसमाजको बड़ी सहायता पहुंची है।

आर्यसमाजने बतलाया, कि जीवनको शुद्ध, उच्च और मस्तिष्कको शक्तिसम्पन्न बनानेके लिये मांस मदिरा तथा अन्य मादक द्रव्योंका सेवन सदैव वर्जित है। आर्यसमाजके उपदेशसे सहस्रों मनुष्योंने मांस भक्षण आदि दुर्व्यसनोंसे छुटकारा पाया है।

सर्वसाधारणमें शिक्षा फैलानेके महत्व पूर्ण कार्यको आर्यसमाजने अपने हाथमें लिया है। इसको ऐसी सफलतासे सम्पादित किया, कि विदेशी लोग भी मुक्त कण्ठसे सराहना करते हैं।

आर्यसमाज द्वारा आर्यभाषाका जितना अधिक

प्रचार हुआ, उतना किसी अन्य सभा वा संस्थामें नहीं। आर्यसमाजके उपनियमोंने प्रत्येक आर्यको हिन्दीभाषा सीखनेके लिये वाध्य किया। पञ्जाबमें जहां कोई उर्दूके सिवा हिन्दीभाषाका नामतक न जानता था, आर्यसमाजने आर्यभाषाका भरपूर प्रचार किया। अकेला 'दयानन्द कालेज' २५००से अधिक विद्यार्थियोंको प्रतिवर्ष हिन्दीभाषाकी शिक्षा देता है। इसके अतिरिक्त पुत्र पुत्रियोंकी अन्य स्कूल-पाठशालाओंमें हिन्दीभाषाकी शिक्षा अनिवार्य है।

आर्यसमाजके गुरुकुलोंमें हिन्दीभाषाका जो प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है, वह अन्यत्र कहीं नहीं। क्योंकि इन विद्यालयोंमें संस्कृत और अंगरेजीके साहित्यको छोड़कर शेष सब शिक्षाओंका माध्यम (medium of Instruction) हिन्दीभाषा ही है। आर्यसमाजके मुख्य गुरुकुल कांगड़ी तथा वृन्दावनमें हिन्दीभाषा द्वारा ही भूगोल, इतिहास, गणित, विज्ञान आदि विषयोंकी शिक्षा दी जाती है। आर्यसमाजने आर्यभाषाके अनेक साप्ताहिक एवं मासिक पत्र जारी किये, जिनसे वैदिक धर्म और हिन्दी भाषाका बड़ा प्रचार हुआ है।

कन्याओंके लिये आर्यसमाजने अथवा आर्य-सामाजिकोंने जालन्धर, प्रयाग, देहरादून आदि नगरोंमें बड़े बड़े विद्यालय स्थापित किये। छोटी छोटी पुत्री पाठशालायें तो प्रायः प्रत्येक नगरमें आर्य-समाजने स्थापित की हैं।

मोक्षपद प्राप्त करनेके पश्चात् स्वामी दयानन्दकी स्मृतिमें १८८६ ई०को "दयानन्द एङ्ग्लो वैदिक कालेज" लाहोरमें स्थापित किया गया। श्रीमहात्मा हंसराजजीने एतदर्थ अपना जीवन अर्पण किया, और २५ वर्ष पर्यन्त हेडमाष्टर तथा प्रिंसिपल रहकर उसकी अमूल्य सेवायें करते रहे। आप ही ने अपने प्रशंसनीय पुरुषार्थसे एक साधारण स्कूलको इतना बड़ा विद्यालय कर दिखाया। अब दयानन्द कालेजमें अनुमानसे उत्तरभारतके सब विद्यालयोंकी अपेक्षा अधिक विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं। अकेले कालेज विभागमें पढ़नेवाले विद्यार्थियोंकी संख्या ८५०से अधिक है। अन्य सामाजिक स्कूल भी बड़ा कार्य कर रहे हैं। संयुक्तप्रान्तमें भी देहरादून, अजमेर, अलीगढ़, काशी आदि स्थानोंके दयानन्द स्कूल शिक्षा प्रचारमें अच्छी सहायता देते हैं।

वैदिक शिक्षाका पुनरुद्धार तथा ब्रह्मचर्याश्रम फिर स्थापन करनेके अभिप्रायसे आर्यसमाजने ऋषि दयानन्द निर्धारित प्राचीन शिक्षापद्धतिका प्रचार आरम्भ किया है।

पञ्जाबकी आर्यप्रतिनिधि सभाने संयुक्तप्रान्तमें हरिद्वारके समीप एक गुरुकुल स्थापित किया है। वहां ३००के लगभग ब्रह्मचारी पढ़ते हैं। इसके संस्थापक और संचालक महात्मा मुन्शी रामजीने अपना जीवन अर्पण करके इसे इस अवस्थाको पहुंचा दिया है, कि स्नातक (Graduate) निकलना आरम्भ हो गये हैं।

संयुक्तप्रान्तकी आर्यप्रतिनिधिसभाने भी वृन्दावनमें एक गुरुकुल स्थापित किया है। ब्रह्मचारियोंकी संख्या १२०के लगभग है। यह 'कुल' श्रीमान् मुन्शी नारायणप्रसादजी महोदयके सुप्रबन्धमें प्रतिष्ठा प्राप्त कर रहा है।

आर्यसिंह—बौद्ध धर्माचार्य। यह सिंहलाके पुत्र और मध्यप्रदेशके अधिवासी रहे। काबुलमें बौद्धधर्म फैलाने गये थे। किन्तु अमीरने प्राणवधका आदेश दिया। (Indian Antiquary, Vol. ix, p. 316.)

आर्यसुस्थित—आर्यसुहस्तिके प्रधान शिष्य। यह व्याघ्र-पद्यगोत्रीय रहे। इन्हीं व्यक्तिसे जैनोंका कोटिकगच्छ वंश चला है। वीरनिर्वाणके ३१३ वत्सर बाद ८६ वर्षकी अवस्थामें इनकी मृत्यु हुई।

आर्यसुहस्ति—जैनोंके एक सिद्धपुरुष। यह वशिष्ठ-गोत्रीय रहे। अपने समयके राजाको इन्होंने जैन-धर्मकी दीक्षा दी थी।

आर्यहलं (सं० अव्य०) आर्य हलति विदीर्यति, अनुस्वारादि पाठादसाव्यत्वम्। बलात्कार, जबर-दस्ती, जोरसे।

आर्यहृदय (सं० त्रि०) साधु-प्रिय, जो अशराफ़को प्यारा हो।

आर्या (सं० स्त्री०) १ दुर्गा, पार्वती। २ श्वश्रू, सास। ३ श्रेष्ठस्त्री, बुजुर्ग औरत। ४ पितामही, दादी। ५ मात्रावृत्तविशेष। 'आर्यामाबवृत्तभेदयोः।' (विश्व) इसका लक्षण यों लिखा है,—

"लक्ष्मैतत् सप्तगणागोपेता भवति नेह विषमे जः।
षष्ठोजश्च न लघुर्वा प्रथमेऽर्धे नियतमार्यायाः।
षष्ठे द्वितीयलात्परकेन्ले मुखलाश्च सयति पदनियमः।
चरमेऽर्धे पञ्चमके तस्मादिह भवति षष्ठो लः।" (वृत्तरत्नाकर)

इस वृत्तमें दो पंक्ति रहती हैं। प्रत्येक पंक्तिमें साढ़े सात चरण पड़ते हैं। चरण-चरणमें चार मात्रा लगती हैं। किन्तु दूसरी पंक्तिके षष्ठ चरणमें एक ही मात्रा रहती है। इसप्रकार पहलीमें तीस और दूसरी पंक्तिमें सत्ताईस मात्रा आती हैं।

आर्या नौ प्रकार होती है,—१ पथ्या, २ विपुला, ३ चपला, ४ मुखचपला, ५ जघनचपला, ६ गीति, ७ उपगीति, ८ उद्गीति, ९ आर्यगीति।

आर्यागीति (सं० स्त्री०) आर्या गीतिरिव। वृत्तरत्नाकरोक्त मात्रावृत्तविशेष। यह वृत्त दो पंक्तिका होता है। प्रत्येक पंक्तिमें आठ समान चरण अथवा बत्तीस मात्रा एक अक्षरको लगाते हैं।

आर्याणक—देश विशेष। यह तुषार-देशके निकट अवस्थित है।

"तुषारवर्षैर्बहुले समकाण्डनिपातिभिः।
आर्याणकाभिधे देशे विपन्नं केचिदूचिरे॥" (राजतरङ्गिणी ४।१६७)

यह देश यूनानी (ग्रीक) ऐतिहासिकोंका कहा आरियाना (Ariana) मालूम होता है। उनको वर्णनाके अनुसार इसे भारतवर्षका उत्तर-पश्चिम प्रान्त, वर्तमान अफ़गानस्थानका अधिकांश और ईरानका कुछ भाग समझना चाहिये।

आर्यावर्त (सं० पु०) आर्याः श्रेष्ठा आवर्तन्ते पुण्यभूमित्वेन वसन्त्यत्र, आ-वृत आधारे घञ्। आर्यावास, भारतवर्षका एक विभाग, हिन्दुस्थानका एक हिस्सा।

ऋक्संहिताके 'अनुप्रत्नस्यौकसो हुवे' (१।३०।९) प्रमाणपर युरोपीय पुरातत्त्वविद् सारस्वत आर्योंके आदिपुरुषोंका पूर्ववास एशियाखण्डके मध्यभागस्थित बेलुताग और मुज़तागको पश्चिम पार्श्वगत अधित्यका भूमि बताते हैं। किन्तु वस्तुतः पहले आर्यावास सप्तसिन्धु प्रदेशमें रहा। फिर क्या 'अनुप्रत्नस्यौकसो हुवे' ऋक्के श्रवणमात्रसे सर्व आर्योंका आदिवास अन्यत्र क्वचित् अनुमान करना सङ्गत है!

"पुराण ओकः सख्यं शिवं वां युवोर्नरा द्रविणं जह्नाव्याम्।
पुनः कृण्वाना: सख्या शिवानि मध्वा मदेम सह नू समानाः।"

(ऋक् ३।५८।६)

उक्त मन्त्रसे शुनःशेपका पुराणओक वा पूर्ववास जह्नावीके मूल, जह्नुवोंके आधिपत्य और जह्नु मुनिके आश्रम कान्तारमें बताया है। (ऐतरेयब्रा० ७।३।६) हरिश्चन्द्रपुत्र रोहित वहींसे उन्हें खरीद सारस्वत प्रदेशको ले गये थे। जह्नुका वह आश्रमारण्य गङ्गाप्रभव हिमवत्पृष्ठमें आज भी प्रसिद्ध है। जाह्नव* प्रदेशसे प्रकाश देख पड़नेपर ही गङ्गाका अपर नाम जाह्नवी हुआ है। अथवा हिमवत्पृष्ठस्थ ओकी नाम नदीतीरको भूमि ही 'प्रत्नौकस्' है। वहां आर्योंका पहले वास रहना भी ठीक ठहरता है।

आर्यावर्तका प्रकृत अवस्थान।

मनुटीकामें कुल्लूकभट्टने लिखा है—

'आर्या अत्रावर्तन्ते पुनः पुनरुद्भवन्तीत्यार्यावर्तः।' (२।२२)

अर्थात् जिस स्थानमें आर्योंका पुनः पुनः जन्म होता, वही आर्यावर्त कहाता है। किन्तु हमारे मतमें जन्मान्तर मानते भी आर्य अर्थात् ईश्वरपुत्रव्यपदिष्ट मनुष्योंके प्रधान रूपसे रहनेका स्थान आर्यावर्त है। पहले हिमवत्पृष्ठके पश्चिम भाग सुवास्तु प्रदेशमें आर्यावर्तकी स्थिति रही।

"सुवास्त्वा अधि तुग्वनि।" (ऋक् ८।२०।३७)

यास्कने उपरोक्त ऋगंशको व्याख्या इस प्रकार की है,—

"सुवास्तुर्नदी तुग्व तीर्थं भवति तूर्णमेतदायन्ति।" (४।२।७)

---

* जह्नावी वा जाह्नवदेश—मार्कण्डेयपुराणमतसे (५७।४०) लम्पक और औरस जनपदके मध्य रहा। लम्पकका वर्तमान नाम लमघन है। टलमीने लम्बटे (Lambatai) कहकर पुकारा है। औरस टलमीका Arsa (अर्श) वा Barsa (बर्श) है। आजकल 'रस' कहते हैं। वह काश्मीरके अन्तवारमें अवस्थित है। सुतरां काश्मीरसे सुदूर उत्तर जह्नावी वा जाह्नव भूभाग पड़ता है

जिसके तीर शुद्ध आर्यको वासभूमि रहती, वह नदी सुवास्तु कहती है। सुवास्तु नदीतीरके जनपदका नाम भी सुवास्तु* ही है। 'सुवास्त्वादिभ्योऽण्' सूत्र देखनेसे समझ पड़ता, कि पाणिनिको भी उक्त प्रदेश विदित रहा। कनिङ्गहाम महोदयके मतसे आजकल सुप्रसिद्ध 'स्वात' (सुवात) नदी प्रवाहित स्वात उपत्यका ही प्राचीन सुवास्तु है।

"मावो रसानितभा कुभा क्रुमुर्मा वः सिन्धुर्निरीरमत्।
मावः परिष्ठात् सरयूः पुरीषिण्यस्मे इत् सुम्न मस्तु वः।"
(ऋक् ५।५३।९)

हे मरुद्गण! रसा, अनितभा तथा कुभा† और क्रमु‡ नदी एवं सर्वत्र गमनशील सिन्धुनद तुम्हें विलम्ब उत्पादन न करे और न जलमयी सरयू एवं पुरीषिणी (परुष्णी)** तुम्हें रोक रखे, जिससे हमें तुम्हारा दर्शनसुख मिले।

उपरोक्त ऋङ्मन्त्रसे पूर्वतन आर्यवासकी चतुःसीमा भी निकलती है। सुवास्तु नदीतीरस्थ जनपदसे बहु उत्तरस्थ अतिप्रभावा रसा नदी उत्तर, आजकल 'काबुल' कहलानेवाली हीनप्रभावा कुभा पश्चिम, भारतप्रसिद्ध सरयू पूर्व और कुभासे नीचे क्रमु-सिन्धु-सङ्गम दक्षिण सीमा है।

"युयोप नाभिरुपरस्यायोः प्र पूर्वाभिस्तिरते राष्टि शूरः।
अञ्जसी कुलिशी वीरपत्नी पयो हिन्वाना उदभिर्भरन्ते।"
(ऋक् १।१०४।४)

उपल पर्वतको जो प्रधान नगर है, उसकी रक्षा विक्रान्त मनुष्यराज करता है। अभिप्राय—वह नगर कभी-कभी प्राग्वाहिनी नदियोंमें बाढ़ आनेसे डूब जाता और राजा उसे बचाता था। सुवास्तुसे ईशान और दक्षिणाभिमुख बहनेवाली अञ्जसी, सुवास्तुसे वायव्यकी ओर दक्षिणाभिमुख बहनेवाली कुलिशी और सुवास्तुसे आग्नेयकी ओर दक्षिणाभिमुख बहनेवाली वीरपत्नी नदी है।

ऋक्संहितामें 'गौरी' शब्द दो बार आया है,—

"गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी।
अष्टापदी नवपदी बभूवुषी सहस्राक्षरा परमे व्योमन्।" (१।१६४।४१)

अर्थात् गौरी सलिलसृष्टि करती है। वह एकपदी, द्विपदी, चतुष्पदी, अष्टापदी तथा कभी नवपदी बन जाती और कभी व्योममें (आकाशमें) सहस्राक्षर परिमित शब्द निकालती हैं।

उपरोक्त मन्त्रमें सायणने 'गौरी' अर्थात् मेघगर्जन-रूप वाक् वा शब्द लिखा है। किन्तु कुछ मनोयोग-पूर्वक यह ऋक् पढ़नेपर सहज ही किसी नदीको वर्णना समझ पड़ती है। 'व्योममें सहस्राक्षर परिमित शब्द' नदीको कल-कल ध्वनिका वर्णन मात्र है। विशेषतः इसके आगे ऋक्में 'समुद्र' शब्दका प्रयोग पड़नेसे गौरीका नदी होना स्पष्ट है।

"मदच्युत् चेति सादने सिन्धोरूर्मा विपश्चित्।
सोमो गौरी अधिश्रितः॥" (ऋक् १।१२।३)

मदस्रावी सोम सिन्धुतरङ्ग स्थानमें वास करते हैं। विद्वान् सोम गौरीका आश्रय लेते हैं।

अथर्ववेदादि और महाभारतमें भी गौरी नदीकी बात लिखी है। ब्रह्माण्डपुराणमें कैलाससे उत्तर 'गौर' पर्वत बताया है और पर्वतका स्थाननिर्णय करनेसे गौरी* नदीका गौरपर्वतसे निकलना स्पष्ट ही समझ पड़ता है। गौरीसे ही पूर्व सुषस्तिन् नदी है।

---

* सुवास्तु—Suastos of Arrian तथा Suastene of Ptolemy होता और आजकल 'सुवात' कहाता है।

† कुभा—आरियन-कथित Kophes होती और आजकल काबुल-नदी कहती है।

‡ क्रमु—वर्तमान कुरम, काबुल नदीमें मिलित हुयी है।

** पुरीषिणी या परुष्णी—इरावती है। वर्तमान समय रावी कहाती है।

* गौरी—Arrian कथित Guraeus है। इस नदीके प्रवाहित भूभागका नाम मार्कण्डेयपुराणमें गौरग्रीव लिखा है। (५८।८) टलमीके ग्रन्थमें Goryaia मिला एवं आरियनने Guraoia कहा है। वर्तमान स्वात प्रदेशका उत्तराञ्चल लण्डइ नदीका तीरवर्ती स्थान है। लण्डइ नदी ऋग्वेद और महाभारतमें गौरी बतायी गयी है। ब्रह्माण्डपुराणमें कैलाश पर्वतसे उत्तर किसी गौरगिरिका उल्लेख है। अध्यापक लासेनकृत टलमीके मतानुयायी प्राचीन भारत (Das Alt Indian) नामक मानचित्रमें भी सुषस्तिन्से दक्षिण गौरीयस (Goryaia) देशका उल्लेख है।

गौरी और सुवास्तु या सुवस्तिन् दोनो मिलकर काबुल नदीमें जा गिरी है।

आर्यावास सुवास्तुसे प्राक्‌दक्षिण बहुदूरस्थ, श्रीकण्ठ-शैल-सम्भूत और जह्नुमुनिके आश्रम-तल-वाही जह्नावी नदीतक फैला था।

"पुराणमोकः सख्यं शिवं वां युवोर्नरा द्रविणं जह्नाव्यां।
पुनः कृण्वानाः सखा शिवानि मध्वा मदेम सह नू समानाः॥"
(ऋक् ३।५८।६)

हे अश्विद्वय! तुम्हारा पुरातन सख्य वाञ्छनीय और मङ्गलकर है। हे नेतृद्वय! जह्नावीमें तुम्हारा धन रहता है। भवदीय सुखकर सख्य पुनः-पुनः पाकर हम तुम्हारे समान बने हैं। हम हर्षकर सोम द्वारा तुम्हें शीघ्र और युगपत् हृष्ट करेंगे।

जह्नावी नदी भागीरथीकी शाखा ठहरती, जो आज भी उत्तराखण्डमें बहती है। इससे समझ पड़ा, कि आर्यावास सारस्वत प्रदेशमें फैला है। यहीं बहुतसे ऋक्, यजुः, सामगान और आथर्वण मन्त्र प्रकाशित हुये। यागविधि यहीं समुद्भूत एवं परिपुष्ट पड़ा और आर्य-साम्राज्य भी यहीं प्रथम विश्रुत था।

सर्ववैदिक ग्रन्थोंमें सरस्वती नामका आख्यानादि बहुतसे स्थानोंपर विद्यमान है। यागभूमि होनेसे सारस्वत प्रदेशको प्रशंसा अनेकत्र सुननेमें आती है।

"नि त्वा दधे वर आ पृथिव्या इळायास्पदे सुदिनत्वे अह्नाम्।
दृषद्वत्यां मानुष आपयायां सरस्वत्यां रेवदग्ने दिदीहि॥" (३।२३।४)

शस्यबहुल और उत्कृष्ट प्रदेशमें हे अग्नि! हम तुम्हें स्थापन करते हैं। दृषद्वती तीरसे आपया सरस्वतीतक फैले इस प्रदेशमें तुम लोगोंपर अपनी प्रभा डालो।

"सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते॥" (मनु २।१७)

सरस्वती और दृषद्वती देवनदीके अन्तर्गत देव-निर्मित देशको ब्रह्मावर्त कहते हैं।

"इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।
असिक्न्या मरुद्‌वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया।" (ऋक् १०।७५।५)

गङ्गा, यमुना, सरस्वती, शुतुद्री (शतद्रु), परुष्णी (इरावती), असिक्नी (चन्द्रभागा) एवं वितस्ता, इन्होंमें इरावती, चन्द्रभागा और वितस्ता इन तीनोंके सम्मिलनसे सम्भूत मरुद्‌वृधा, शतद्रुके पश्चिम पार्श्वसे सङ्गत प्राचीनतम आर्जीकीया (उरुञ्जिरा वा विपाट् जो इस समय विपाशा नामसे ख्यात है) और तक्षशिला नामक प्रदेशसे निम्नगामी सिन्धु-सङ्गत सुषोमा—सात नदी जिस भूभागमें बहती, उसकी संज्ञा सप्तनद वा सप्तसिन्धु है। गङ्गा-यमुनाको छोड़ जिस भूभागमें उपरोक्त पञ्च नदीका प्रवाह चलता, वही पञ्चनद वा सारस्वतप्रदेश बजता है।

वर्णित सप्तनद प्रदेश सिन्धुके पूर्वपार पड़ता है। सिन्धुके पश्चिम-पार भी अपर सप्तनद-प्रदेश विद्यमान है। आजकल वह आर्यावर्तसे अलग होते भी पहले उसके अन्तर्गत रहा।

"तृष्टामया प्रथमं यातवे सजूः सुसर्त्वा रसया श्वेत्या त्या।
त्वं सिन्धो कुभया गोमतीं क्रुमुं मेहत्न्वा सरथं याभिरीयसे।"
(१०।७५।६)

हे सिन्धु! प्रथम तुम तृष्टामा नदीसे मिलकर चले थे। पीछे सुसर्त्तु, रसा और श्वेतीसे मिले। तुम्हींने क्रमु तथा गोमतीको कुभा और मेहत्नुसे मिलाया। इन सकल नदीके साथ तुम एक रथ अर्थात् एकत्र चला करते हो।

इस मन्त्रमें तृष्टामा प्रथम, सुसर्त्तु द्वितीय, रसा* तृतीय, श्वेती चतुर्थ, कुभा पञ्चम, गोमती षष्ठ और मेहत्नुयुता क्रमु नदी सप्तम है। सातो नदी पश्चिम-हिमालयसे उत्पन्न पूर्वपश्चिमाभिमुखगामी पश्चात् दक्षिणप्रवाही समुद्रगामी सिन्धुनदके पश्चिम पूर्वदक्षिणाभिमुख बहती और अन्य नामसे पुकारी जाती हैं। आजकल चित्रलदेशसे प्राग् बहमान पञ्च-कोरप्रदेशीय तावयवा 'तृष्टामा', डेराइस्माइल खां प्रदेश-तल-वाही अर्जुनी 'सुसर्त', 'रसा*', श्वेती वा सेवेत, काबुल 'कुभा', वर्ण-प्रदेश-वाही कुरम 'क्रमु' और गोमल प्रसिद्ध नदी 'गोमती' है। तृष्टामा आदि सातो नदी साक्षात् वा परम्परासे सिन्धु-सङ्गत है।

चित्रल देशसे प्राक् और बलूचिस्थानादिसे ऊर्ध्व

* रसा—जन्द अवस्तामें रंहा नामसे वर्णित है। यह खुरासानमें बहती है।

तक पश्चिमोत्तर सुविस्तीर्ण पुरातन जो आर्यावर्तांश पड़ता, वह पश्चिम-सप्तनद प्रदेश कहा सकता है। किन्तु पूर्व-सप्तनदके अन्तर्गत पञ्चनद-प्रदेशकी तरह पश्चिम-सप्तनदमें पञ्चकोर प्रदेश (अफ़ग़ानस्थान) भी लगता है। अतः गान्धारका* आर्यावर्तान्तर्गतत्व सम्पन्न होता, जिसका प्रमाण वेद, ब्राह्मण और परवर्त्ती शास्त्रमें मिलता है,—"गन्धारीणा मिवाविका।" (ऋक् १।१२६।७) "नग्नजिते गान्धाराय" (ऐतरेयब्राह्मण ७५।८) "साल्वेयगान्धारिभ्याञ्च।" (पा ४।१।१६९)

कुरुराज धृतराष्ट्रकी पत्नी दुर्योधनादि बहुपुत्र-प्रसविनी गान्धारी भारत-प्रसिद्ध हो हैं। वर्णु प्रभृतिके आयुध-जीवित्वका वर्णन पाणिनिने लिख दिया है। पूर्व एवं पर सप्तनद प्रदेशके बीच हिमवत्-समुद्भव अधःप्रवण समुद्रान्त प्राचीन आर्यावर्तको द्विधा करनेवाला सीमादण्ड-जैसा सिन्धु नामक नद आज भी वर्तमान है। इस सिन्धुसे उत्तर दूसरी सात नदीकी विद्यमानता भी सुन पड़ती है।

"ऋजीत्यें नी रुशती महित्वा परि वयांसि भरते रजांसि।
अदब्धा सिन्धु र पसामपस्तमाश्वा न चित्रा वपुषीव दर्शता ॥ ७
स्वश्वा सिन्धुः सुरथा सुवासा हिरण्मयी सुकृता वाजिनीवती।
ऊर्णावती युवतिः सीलमावत्युताधि वस्ते सुभगा मधुवृधं ॥"
(ऋक् १०।७५।८)

इसमें कैलाश निम्नस्थ ऊर्णाप्रदेशीय ऊर्णावती और हिरण्मयी, वाजिनीवती एवं सीलमावती† उत्तरस्थ है। निम्न बलूचिस्थानमें 'एनी' नदीको कौन नहीं जानता! चित्रा वा चित्रलनदी चित्रल देशसे निकल कुभामें मिली और ऋजीती सम्भवतः उसीके समीप बही है। उक्त त्रि-सप्तनदीकी अपेक्षा सिन्धु नदका प्राधान्य वर्णित है,—
"प्र सप्त-सप्त त्रेधा हि चक्रमुः प्र सृत्वरीणा मति सिन्धुरोजसा।"(१०।७५।१)

नदी सप्त-सप्त होकर तीन श्रेणीसे आर्यावर्तमें बहती हैं। सिन्धुसे पूर्व, पश्चिम और उत्तर सात-सात नदी विद्यमान हैं। इन्हींसे नदीके बलसे अतिशयित सिन्धुनद बना, जिसे उनका पुत्र वा राजा कहा है,—

"अभि त्वा सिन्धो शिशु मिन्नमातरो वाश्रा अर्षन्ति पयसेव धेनवः।
राजेव युध्वा नयसि त्व मित् सिचौ यदासा मग्र' प्रवता मिनक्षसि।"
(१०।७५।४)

हे सिन्धो! पयःसे युक्त धेनुकी भांति यह नदी आपको शिशु समझ दुग्ध पिलाने चली आती हैं। आप इन्हें राजाकी तरह युद्धमें हांकते हैं। क्योंकि आप इन बहनेवाली नदीमें आगे बढ़ रहे हैं।

अन्यत्र भी त्रि-सप्त नदीका विषय विद्यमान है,—
"त्रि सप्त सस्रा नद्यः।" (ऋक् १०।६४।८)

वस्तुतः इन त्रि-सप्त-नदीमें परिवृत सिन्धुके मध्य ही पूर्वकालिक आर्यावर्त देश है। ऐतरेयब्राह्मणमें—

"यस्तं जो ब्रह्मवर्चस मिच्छेत्०—०प्राङ् स स्यात्, योऽन्नाद्य मिच्छेत्०—०दक्षिणा स स्यात्, स सोमपीथ मिच्छेत्०—०उदङ् स स्यात्।" (ऐतरेयक १।२।२)

प्रागादि दिक् शब्द किसी अवधिकी अपेक्षा रखता है। क्योंकि प्राक् इत्यादि आकाङ्क्षासे सर्वत्र उपजायमानत्व आता है। यहां आर्यावर्तीय सिन्धुका मध्य ही अवधि है। सिन्धुसे प्राक् इत्यादि मानते ही तेजस्त प्रभृतिकी सिद्धि निकलती है। फिर सिन्धुके प्राग् सरस्वती आदिकी तीरभूमिमें यज्ञानुष्ठानके बाहुल्यसे तेजस्त तथा ब्रह्मवर्चस्त मिलता, शतद्रु-सङ्गमके दक्षिण हिम-प्राचुर्यके अभाव तथा तापके प्राबल्यसे प्रचुर शस्य उपजता, पश्चिम अरण्यके प्राचुर्यसे पशु बहुत होता, शतद्रु-सिन्धु-सङ्गमके उत्तर अति शैत्यसे वल्लीसाम लगता और शरीर-सोम बढ़ता है। अतिप्राक्तन आर्यावर्तका यह सिन्धु-मेरुदण्ड रहा। पाश्चात्य लोग सिन्धुस्थानको 'सि' की जगह 'हि' रख हिन्दुस्थान कहते हैं। सप्तसिन्धु-प्रदेश अवस्तामें 'हफ्तहिन्द' हो गया।

रसा नदी सिन्धु-सङ्गत और अति विक्रान्त रही। द्वितीय तथा तृतीय नदी-सप्तकमें वर्णन विद्यमान है। तदानीन्तन आर्यावासकी उत्तर-सीमा वही विदित होती है।

---

* गन्धारी—Gandaraioi of Periplus, हिन्दूकुशका दक्षिण भाग वर्तमान अफ़ग़ान-स्थान है। इसी गन्धारसे अफ़ग़ानराजधानी कन्धारका नामकरण हुआ है।

† सीलमावती—ग्रीक ऐतिहासिकगणके निकट Silis नामसे कथित है। (Ukert, Geographie der Griechen und Romer, Vol. III, 2. p. 288) ऋग्वेदमें सीरा (१।१७४।९) और सीता (४।५७।७) नाम भी मिलता है।

सुवास्तु प्रदेशकी जो उत्तर-सीमा कही, वही प्रचुरोदक एवं प्रभूतवेग नदी पहले आर्य और अनार्य देशकी सीमा थी।

रसाका वर्णन भी बहुत मिलता है,—

"गिरेरिव प्ररसा अस्य पिन्विरे दत्राणि पुरुभोजस:।" (ऋक् ८।४९।२)

वह सगर्व चलती, शत सेनापति-जैसी देख पड़ती और हव्यदायीके लिये वृत्रवध करती हैं। वह बहु-लोकका पालक हैं। उनके उद्देश्यसे प्रदत्त रस पर्वतके रसकी तरह प्रीत करता है।

गिरिकी रसा नदीके न्याय पुरुभोजका धन भी वर्धित हुआ। इससे समझ पड़ता, कि रसाका समुद्भव किसी गिरिसे हुआ था। जिस प्रकार सिन्धुको पूर्व-देशीय सप्त-नदीमें गङ्गा एक रहते भी दूसरी सरितोंको गङ्गाही प्रसिद्धि है। तथा सरस्वती भी एक ही अनेक नदियोंकी वाचिका है। उसी प्रकार रसा एक होते भी अन्य निम्नगाओंकी वाचिका है। जैसे गङ्गा यमुना प्रभृति नदियोंका साधारण नाम है वैसा ही रसा भी। गङ्गाकी गमन करने, सरस्वतीकी उदक रखने और रसाकी शब्द कर्मसे कोलाहल उठाने-वाली व्युत्पन्नार्थ है। समुद्रमें मिलनेवाली रसा आजकल आर्यावर्तसे बाहर खुरासान राज्यके अन्तर्गत है। 'अवस्ता' ग्रन्थमें 'रंहा' नाम लिखा है। पहले रसा ही तदानीन्तन आर्यावासकी पश्चिम सीमा थी।

अंशुमती आदि नदीका आर्यावर्तमें रहना ८म मण्डल ९६ सूक्तके १३,१४ और १५ ऋक्में लिखा है। यह यमुना-मिली और दृषद्वती पूर्वस्थित थी। अश्मन्वतीका वर्णन १०।५३।८ ऋक्में विद्यमान है। यह घर्घरासे प्रत्यक्, शतद्रुसे बहुपूर्व, उत्तर नीचे वहती विनशनप्रदेशमें रही।

१ले, २रे और ३रे ऋक्में वर्णित शिफा नाम नदी निषद-देशीय ही विदित होती है। क्योंकि प्रथम निषद* नामका उल्लेख विद्यमान है। "यो निष्ट इन्द्र निषदे अकारि" (१।१०४।१) ६।२७के ६ठें और ७वें ऋक्की हरियूपीया और यव्यावती नदी सम्भवत: अफ़गान-स्थानमें रही। कोई-कोई हज़ारा प्रदेशकी हरिरूद या हिरातकी नदीको वैदिक हरियूपीया कहता है।

"पीवानं मेष मपचन्त वीरा न्युप्ता अक्षा अनु दीव आसन्।
द्वा धनुं बृहती मप्स्वं१न्त: पवित्रवन्ता चरत: पुनन्ता।"

(ऋक् १०।२७।१७)

इस मन्त्रमें और अन्यत्र भी जो 'अक्षा'* शब्द आता, वह अफ़ग़ानस्थानके उत्तर प्रवहमान 'अक्षस्' (Oxus) नदीको बताता है।

पहले ही श्वेती नदीका वर्तमान नाम सेवेत बता चुके हैं। श्वेतपर्वतसे निकलनेपर ही यह नाम पड़ा है। दूसरे प्रमाणोंसे भी उपरोक्त विषय प्रमाणित होता है।

"प्राच्योऽन्या नद्य: स्यन्दन्ते श्वेतेभ्य: पर्वतेभ्य: प्रतीच्योऽन्या:।"

(शतपथ १४।६।८९)

"श्वेत्या त्या।" (ऋक् १०।७५।६)

श्वेतयावरी† नदी भी श्वेतगिरिप्रभव है।

"उत स्या श्वेतयावरी।" (ऋक् ८।२६।१८)

वाजसनेयसंहिता (२३।१८)में 'काम्पिल्यवासिनी'का नाम लिखा है। पाञ्चालमें आज भी कम्पिला ही कहते हैं। बृहदारण्यकोक्त (३।३।१, ७।१।६) कपिप्रदेश भी निरुक्तोक्त (४।१४) कपिष्ठल‡ है। शर्यणावत्सर निश्चय आर्यावर्तीय था।

'शर्यणावद्ध वै नाम कुरुक्षेत्रस्य जघनार्धे सर: स्यन्दते।' (सायण)

शर्यणावत्सरके समीप ही पाणिनि-सूत्र-ग्रथित कापिशनगर** विद्यमान रहा। कपिशायन मधु और द्राक्षा प्रसिद्ध है।

* निषद—प्राचीन यौक ऐतिहासिकोंने Paropanisadai वा Paropamisus नामसे इस पार्वत्य जनपदको उल्लेख किया है। वर्तमान पाश्चात्य पण्डितगणके मतसे इसे आजकल ककेसस कहते हैं।

* अक्षा (Oxus) ऋक्संहितामें यक्षु (७।१८।१९) नाम भी लिखा एवं पुराणमें इक्षु, वंक्षु प्रभृति पाठान्तर देख पड़ा है। इस नदीको आजकल अमू-दरया कहते हैं।

† श्वेतयावरी वा श्वेती—वर्तमान सफेदकोह पर्वतनि:सृत सेवेत नदी है।

‡ कपिष्ठल—वर्तमान पञ्जाबप्रदेशके कुरुक्षेत्रका मध्यवर्ती प्रसिद्ध तीर्थ है। आजकल कैथल कहते हैं।

** कापिश—टलमीने Capissa, पाणिनिने (४।२।९९) कापिशी एवं चीनपरिव्राजक युएनचुअङ्गने कि-ए-पि-सि नाम लिखा है। यह वर्तमान कोहिस्थानका उत्तरांचल है!

"प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति प्रवातेजा इरिणे वर्वृताना:।
सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो विभीदको जागृविर्मह्यमच्छान्॥"

(ऋक् १०।३४।१)

सतत कम्पनशील फलवान् अपर वनस्पत्यादिशून्य बहुवायुयुक्त प्रदेशमें उत्पन्न होनेवाला तथा इरिण देशमें वर्तमान विभीतक वृक्ष, मूजवान् नामक पर्वत-पर उत्पन्न होनेवाली सोमलताका रस पीनेसे जैसे हर्ष बढ़ता, वैसे ही हमारे पक्षमें प्रीतिकर और उत्साह देनेवाला ठहरता है।

मूजवान्* पर्वत आज भी कैलाश गिरिसे उत्तर-पश्चिम विद्यमान है। इसीसे वैदिक युगमें इरिण वा ईरान नामक जनपदका आर्यावर्तीयत्व मानना पड़ेगा।

अथर्व-संहिता ५।१४।२२ सूक्तके ३य मन्त्रमें पक्षण† जनपद, ४र्थमें शकम्भर और महावृष, ५म एवं ७ममें मूजवान् तथा बल्हिक‡ ८में पुन: महावृष और मूजवान्, ९में फिर भी बह्लीक और अन्तको १४श मन्त्रमें अङ्ग, मगध, मूजवान् और गन्धारीका वर्णन है। किन्तु आर्यावर्तान्तर्गत रहने-पर भी उक्त स्थान में बहु अनार्य रहते थे।

"गान्धारिभ्यो मूजवद्भ्योऽङ्गेभ्यो मगधेभ्य:।
प्रैष्यं जनमिव शेवधिं तक्मानं परिदद्मसि।" (अथर्व ५।२२।१४)

अथर्वसंहितामें गन्धारी और मूजवान्के साथ जिस अङ्ग और मगधका उल्लेख मिलता, वह पूर्वभारतका प्रसिद्ध अङ्ग और मगध राज्य नहीं। वैदिक काल उक्त दोनो स्थान आर्यावर्तसे अलग रहे। मगधका वैदिक नाम कीकट है। अनार्यवसतिसे कीकटको निन्दा सुनते हैं।

"किं ते कृण्वन्ति कीकटेषु गावो नाशिरं दुह्रे न तपन्ति घर्मम्।"

(ऋक् ३।५३।१४)

'कीकटो नाम देशो अनार्यनिवास:।' (निरुक्त ६।६।४)

कीकट वर्तमान मगध देशको कहते, जिसमें अनार्य रहते थे। मगध और गया देखो।

किन्तु अथर्वसंहितामें गन्धारी और मूजवान् दोनो जब आर्यावर्तके अन्तर्गत आते, तब दोनोके पास अव-स्थित अङ्ग और मगध भी आर्यावर्तमें ही पड़ते हैं। उभय स्थान मूजवान् वा कैलास पर्वतसे उत्तर पौराणिक शाकद्वीपके दक्षिणांश और प्राचीन ग्रीक-वर्णित स्कीदिया राज्यके मध्य रहे। भविष्यपुराणमें उक्त स्थानके वासी मगब्राह्मण 'आर्यदेशसमुद्भव' कहे गये हैं। (भविष्य ब्राह्मपर्व १२६।५९) मगब्राह्मण परवर्ति-काल वर्तमान विहार प्रदेशके जिस अंशमें आकर रहा, उसी स्थानका नाम मगध हुआ। पाश्चात्य ग्रीक भौगोलिकों और ऐतिहासिकोंका विवरण पढ़नेसे समझ पड़ा, कि वर्तमान तुर्कस्थान और उसके उत्तरवर्ती तुखारस्थानसे उत्तर-पश्चिम Massa-getae नामक शाकराज्य रहा। उसमें Augasii और Sogdiana भूभाग था। कहनेसे क्या, उक्त दोनो जनपदवासी Anguttari और Magdi वा Meki नामसे प्रसिद्ध थे।* दोनो ही जनपद अथर्ववेदमें अङ्ग (उत्तर) और मगध नामसे परिचित हैं। उक्त Massagetae-वासी भविष्य, मत्स्य प्रभृति

---

* मूजवान्—पुराणमतमें कैलाश पर्वतसे भी उत्तर मूजवान् वा मुञ्जवान् पर्वत है।

"मूजवान् सुमहादिव्यो ऊर्ध्वशैलो हिमार्चित:।
तस्मिन् गिरौ निवसति गिरिशो धूम्रलोहित:॥
तस्य पादात् प्रभवति शैलोदं नाम तत् सर:।
तस्मात् प्रभवते पुण्या नदी शैलोदका शुभा।
सा वक्षु सीतयोर्मध्ये प्रविष्टा पश्चिमोदधिम्॥"

(मत्स्य १२०।१९-२०)

अर्थात् मूजवान् सुमहान्, दिव्य, ऊर्ध्वशैल और हिम-मण्डित है। उस गिरिमें धूम्रलोहित महादेव वास करते हैं। उनके पाददेशमें शैलोद नामक ह्रद है। उसी ह्रदसे शैलोदका (शैलोदा) नाम्नी एक नदी निकली है। यह नदी वक्षु (Oxus) और सीता(Jaxartes) नदीके मध्य मिलित हो पश्चिम सागरमें जा गिरी है।

उद्धृत प्रमाणसे समझ पड़ता, कि मुञ्जवान् कैलाससे उत्तर वर्तमान तुर्कस्थान वा ईरानके मध्य और बलखसे उत्तर है। महाभाष्यके प्रमाणसे कहा जाता, कि आर्यजातिके संस्कारका प्रधान चिह्न मौञ्जीद्रव्य इसी मूञ्जवान् पर्वतसे प्रथमत: उत्पन्न होता था। पतञ्जलि-महाभाष्यमें लिखा हुआ—
"मौञ्जो नाम वाहीकेषु ग्रामस्तस्मिन् भवो मौञ्जीय:।" (४।२।२)

† पक्षण—पुराणमें पक्षक कहा गया है। (ब्रह्माण्डपुराण ४९५०) चीनपरिव्राजकने पो-लु-शो-लो नाम लिखा है। इसका वर्तमान नाम पेशावर है।

‡ बल्हीक—वर्तमान नाम बलख है।

* H. H. Wilson's Ariana Antiqua.

पुराणमें शाकद्वीपीय मगग-क्षत्रिय कहाये हैं। पाश्चात्य ग्रीक ऐतिहासिकगणने उक्त स्थानको Cimbri नामक जिस जातिका उल्लेख किया, अथर्वसंहितामें (५।२२।४) वह शकम्भर नामसे महावृष, वल्हीक, मूजवत् प्रभृतिके साथ उक्त है। सुतरां पौराणिक शाकद्वीपीयगणकी उक्त अधिष्ठानभूमिके बहुपूर्वकाल आर्यदेशमें गण्य होनेका प्रमाण मिलता है।

ऋक्संहिता (१०।३४।१)में मूजवान् नाम मिलता है सही, किन्तु उसमें होनेवाले सोमका औत्कर्ष लिखा है।

"उदङ् जातो हिमवत: स प्राच्यां नीयसे जनम्।" (अथर्व ५।४।८)

उपरोक्त मन्त्रमे तत्रत्य कुष्ठका औत्कर्षमात्र विदित होता है।

"बह्लीक: प्रातिपीय: प्रयाव।" (शतपथब्राह्मण १२।९।३।१)

उक्त मन्त्रमें शतपर्वतसे प्रतीच्य और बल्हीकका जो आर्यवासत्व झलकता है, कालभेदसे उसको भी व्यवस्था ही स्वीकार्य है। अथवा उसके आर्याभिजनत्वमें कोई बाधा नहीं देख पड़ती।

तत्त्वत: हिमवत्पृष्ठके उत्तर-पश्चिमस्थ मूजवान् नामक पर्वत ही आर्यवास और अनार्यवास या आर्यावर्तकी उत्तर सीमा मानना उचित है।

"एतत् ते रुद्रावसम् तेन परो मूजवतोऽतीहि।" (वाजसनेयसं० ३।६१)

इसी यजु:का व्याख्यान अन्यत्र भी वर्णित है।

"अवसेन वा अध्वानं यन्ति तदेन भो सावस मेवान्ववार्जति यत्र यत्रास्य चरथं तदन्वव हवा अस्य पुरो मूजवतोऽतीहि।" (शतपथब्राह्मण २।६।२।७)

उपरोक्त मन्त्रमें रुद्रनाम मृत्यु देवतासे मूजवान्के* परपार अर्थात् आर्यावर्तसे दूर जानेकी प्रार्थना की गयी है। इससे विदित होता, कि अद्यतन पारसिक राज्यके पश्चिमोत्तरस्थ एशिया-मायिनरसे पूर्व, अनुगङ्ग प्रदेशसे पश्चिम, सिन्धु-सागर-सङ्गमसे उत्तर तथा मूजवान्से दक्षिण संहिताकालीन आर्यावर्त है। किन्तु आर्यसाम्राज्य और अधिक विस्तृत था।

"आवदिन्द्रं यमुना तृत्सवश्च प्रात मेदं सर्वताता मुषायत्।
अजासश्च शिग्रवो यक्षवश्च बलिं शीर्षाणि जभ्रुरश्व्यानि।" (ऋक् ७।१८।१९)

इस युद्धमें इन्द्रने भेदको मार डाला था। यमुनाने उन्हें सन्तुष्ट किया। तृत्सुगणने भी उन्हें सन्तोष दिया। अज, शिग्रु और यक्षु तीन जनपद इन्द्रको उद्देश्यसे अश्वके मस्तकने उपहार दिये थे।

जो इन्द्र सम्राट् इस राज्यमें सर्वकर्मका भेद लेते, उन्हें यामुनप्रदेशवासी सामन्त यमुन, तृत्सव, अजास, शिग्रव और यक्षव बलि देते हैं।

फिर ऐतरेयब्राह्मण-कालमें आर्यावर्तका ह्रासायतन होना भी ग्रन्थसे ही समझ पड़ता है। अभिषेक-प्रकरणमें लिखा है,—

"प्राच्यां दिशि ये के च प्राच्यानां राजान: ०—०
प्रतीच्यां दिशि ये के च नीच्यानां राजानः अपाच्यानां०—०
उदीच्यां दिशि ये के च परेण हिमवन्तं जनपदा उत्तरकुरव उत्तरमद्रा:०—०
ध्रुवायां मध्यमायां प्रतिष्ठायां दिशि ये के च कुरुपञ्चालानां राजान:
सवशोशीनराणां राज्यायैव तेऽभिषिच्यन्ते।" (ऐतरेयब्रा० ८।३।१)

उपरोक्त मन्त्रमें 'प्राच्यानां राजान:'से प्राच्यके किसी प्रबल नरपतिका नहीं, प्रत्युत क्षुद्र राजाका बोध होता है। इसीसे अन्यत्र कहा है,—

"प्राच्यो वामता बहुलाविष्टा:।" (ऐतरेयब्रा० ३।४।६)

उस समय प्राग्देशीय जनपद तथा संहिताकालीन किरातनगरादिक प्रसिद्ध रहा। वहीं सोमवल्लीका क्रय होता था,—

"प्राच्यां वै दिशि देवा: सोमं राजान मक्रीणन्।" (एतरेयब्रा० १।३।१)

पाणिनिके आगममें कान्यकुब्जाहिच्छत्रादिको विद्यमानता प्राच्यभूमिमें विदित होती है। ऐतरेयकालमें उन नगरोंके होने या न होनेमें सन्देह है।

दक्षिणमें उस समय एक सत्वत् राज्य ही बलवत्तम रहा। आजकल उसे छत्रपुर कहते हैं।

"आदत्त यज्ञं काशीनां भरत: सत्वता मिव।" (शतपथब्राह्मण १३।५।४।२१)

गाथाके वचनश्रुतिमें ऐतरेयसे भी छत्रपुर बहु प्राचीनतर भरतका अधिकृत विदित होता है। उसे दौष्मन्ति-भरतने बसाया था। उनके वंशज चिरकालसे भरत कहाते हैं।

'तस्मादाप्येतर्हि भरता: सत्वनां वित्तिं प्रयन्ति।" (ऐतरेयब्रा० २।४।१)

"तस्मादिदं भरतानां पशव: सायं गोष्ठा: सन्तो मध्यन्दिने सङ्गविनी मायन्ति।" (३।२।६)

उक्त दोनो श्रुतिवचनमें 'आयन्ति' और 'प्रयन्ति' वर्तमान कालिक प्रयोगसे विदित हुआ, कि ऐतरेयने

भरतवंशीय शासनाश्रित राज्य स्वयं देखा था। दौष्मन्त भरत नरेशको कीर्तिकथा बहुप्राचीन है,—

"हिरण्येन परीवृतान् कृष्णाञ्छुक्लदतो मृगान्।
मष्णारे भरतोऽददाच्छतं बद्धानि सप्त च।
भरतस्यैष दौष्मन्तेरग्निः साचीगुणे चितः।
यस्मिन्त्सहस्रं ब्राह्मणा बद्वशो गा विभेजिरे।
अष्टासप्ततिं भरतो दौष्मन्तिर्यमुना मनु।
गङ्गायां वृत्रघ्नेऽबध्नात् पञ्चपञ्चाशतं हयान्।
त्रयस्त्रिंशच्छतं राजाश्वान् बध्वाय मेध्यान्।
दौष्मन्तिरत्यगाद्राज्ञो मायां मायवत्तरः।
महाकर्म भरतस्य न पूर्वे नापरे जनाः।
दिवं मर्त्य इव हस्ताभ्यां नोदापुः पञ्चमानवाः।" (ऐतरेयब्रा० ८।४।९)

शतपथ-ब्राह्मणमें भी प्रायः यही लिखा है। आर्यावर्तवहिर्भूत प्रतीची दिक् कोई सुसमृद्ध राज्य न रहा। उत्तरभागके पर्वत-पादस्थ कितने ही अप्रसिद्ध नरेश रहे। दक्षिण-भागमें भी अनेक छोटे छोटे राजा थे। मध्यभागको अरण्यभूमि इन्हीं नीच्य अपाच्योंके अधिकारमें रही।

"प्रत्यञ्चि दीर्घारण्यानि भवन्ति।" (ऐतरेय ३।४।६)
"प्रतीच्योऽप्यायो बह्वाः स्यन्दन्ते।" (ऐतरेय १।२।१)

उदीचीमें हिमवत्पृष्ठ-दण्डके उत्तर-भाग आर्यावर्तसे वहिर्विद्यमान रहते भी उत्तरमद्र और उत्तरकुरुको आर्यमित्रका जनपद सुनते हैं। हिमवान्के दक्षिण-भूभाग आर्यावर्तकी तरह पहले उसका उत्तर-भूभाग भी मद्रदेश और कुरुदेशमें विभक्त था। आर्यावर्तीय मद्रदेशसे उत्तर उत्तरमद्र और आर्यावर्तीय कुरुदेशसे उत्तर उत्तरकुरु रहा। आर्यावर्तीय प्रत्यन्त देशसे आगे जो देश वा महादेश था, उसे मन्वादिने आर्य वा अनार्य नहीं कहा। फिर तद्देशवासीका आर्यत्व वा अनार्यत्व भी विचार्य नहीं। परन्तु उत्तरकुरुदेश नैसर्गिक सौन्दर्य, स्वास्थ्यकरत्व और अपने देशवासीके शान्तिप्रियत्व तथा तपःपरायणत्व आदि देव-स्वभावसे पुण्यमय एवं अजेय देवक्षेत्र समझा गया—

"देवक्षेत्रं वै तत्र नैतन्मर्त्यो जेतु मर्हति।" (ऐतरेयब्रा० ८।४।९)

लोगोंका शान्तिप्रियत्व आदि स्वभाव ही अजेयत्वमें प्रबल हेतु है,—

"तांस्तु सान्त्वेन निर्जित्य मानसं सर उत्तमम्।
ऋषिकुल्यास्तथा सर्वान् ददर्श कुरुनन्दनः॥ * *
तत एवं महावीर्यं महाकाया महाबला।
द्वारपालाः समासाद्य हृष्टावचनमब्रुवन्॥
पार्थ नेदं त्वया शक्यं पुरं जेतुं कथञ्चन।
उपावर्तस्व कल्याण पर्याप्तमिदमच्युत॥ * *
न चापि किञ्चिज्जेतव्यमर्जुनात्र प्रदृश्यते।
उत्तराः कुरवो ह्येते नात्र युद्धं प्रवर्तते॥"

(महाभारत सभापर्व २८४०)

उत्तरकुरु वा कुरुवर्ष अवश्य मेरुके समीप 'शान्त-पितृवर्ग' प्रभृति 'सुवीर्य' देशान्तमें था। आजकल वह साइबेरियाके दक्षिणांश हैं। उसके स्वर्गत्वका वर्णन अनेक ग्रन्थमें मिलता है,—

"अहो सह शरीरेण प्राप्तोऽस्मि परमां गतिम्।
उत्तरान् वा कुरून् पुण्यानथवाप्यमरावतीम्॥" (अनुशासनपर्व ५४।१६)

फिर लिखा है,—

"नैवेशिकं सर्वगुणोपपन्नं ददाति वै यस्तु नरो द्विजाय।
स्वाध्यायचारित्रगुणान्विताय तस्यापि लोकाः कुरुषूत्तरेषु॥"

(महाभारत अनुशासनपर्व ७५।२२)

प्राचीन ग्रीक भौगोलिकों और ऐतिहासिकोंने Aria वा Ariana नामक जनपदका उल्लेख किया है। इसकी पूर्वसीमा सिन्धुनद, दक्षिणसीमा भारत महासागर अर्थात् सिन्धुमुखसे पारसिक उपसागर पर्यन्त जलभाग, पश्चिमसीमा कास्पीयसागरसे कार्मेनिय अर्थात् फार भिन्न समस्त येज्द और किरमानप्रदेश, उत्तरसीमा परोपनीशस पर्वत अर्थात् भारतको उत्तर-सीमा स्थित हिमालय-संलग्न ककेसस् गिरिमाला पर्यन्त है।*

सुप्रसिद्ध फरासीपण्डित मूसों बुर्नोफके मतानुसार ग्रीक Aria वा Ariana और पारसी ईरान संस्कृत आर्य शब्दका ही रूपान्तर है। अवस्तामें ऐर्जनवैजो अर्थात् आर्यावास संस्कृत आर्यदेश नामसे परिचित है। सुतरां पाश्चात्य ग्रीक ऐतिहासिकगणका मत मानते भी कहना पड़ा, किसी समय दक्षिणमें सिन्धु-नदके पश्चिमकूलसे उत्तर कास्पीयसागर पर्यन्त आर्य

* H. H. Wilson's Ariana Antiqua, p. 120.

देश फैला था। ग्रीक-अभ्युदयकाल इसके अन्तर्गत बक्त्रियाप्रदेश प्रधान जनपद और बल्हिक वा बलख् उसकी राजधानी रहा। पतञ्जलिके महाभाष्यमें भी बल्हिकका विशेष उल्लेख मिलता है।

ईरान वा बक्त्रिया व्यतीत प्राचीन पाश्चात्य ऐतिहासिकगणने उक्त आरियाना देशके मध्य कतिपय जनपदका उल्लेख किया, वह सबका नाम और संस्कृतरूप निम्न उद्धृत है—

Paropamisadae = वैदिक निषद और पौराणिक निषध, Drangæ = धूम्रानीक, Zarangai = शारङ्ग, Comedi = कुमुद वा कुसुमोद, Metharici = मौदाकि, Angutturi = अङ्गोत्तर वा उत्तर-अङ्ग, Urui वा Urni = ऊर्णावती, Daritis = दारद, Comari = कुमार, Gedrusi = कद्रु, Arachoti = आर्चीद, Sogdiani = शाकद्वीपी।

राजतरङ्गिणीमें काश्मीरके सुदूर उत्तर शीतप्रधान आर्याणक नामक किसी जनपदका उल्लेख है। (४।३६७) पाश्चात्य पण्डित लासेन और राजतरङ्गिणीके फरासी अनुवादक ट्रयारके मतसे पाश्चात्य ग्रीक ऐतिहासिकवर्णित Ariana प्रदेश ही राजतरङ्गिणीमें आर्याणक नामसे उक्त है। राजतरङ्गिणीके अंगरेजी अनुवादक ष्टेइन साहब दूसरे स्थानपर वैसे शब्दके उल्लेखाभावसे उक्त पाश्चात्य पण्डितके मतमें आस्थावान् नहीं हैं। किन्तु हिमप्रधान आर्याणक प्रदेशका ईरान होना क्या कुछ विचित्र है! राजतरङ्गिणीमें आर्यावर्त-भिन्न आर्यदेश नामक किसी ब्राह्मण-प्रदेशका उल्लेख है। (६।८७) मिहिर-कुलके हस्त यहांके जनगणका निग्रह (१।३१२) एवं काश्मीरपति गोपादित्य कर्तृक आर्यदेशसे ब्राह्मण बुला काश्मीरमें प्रतिष्ठा करनेका प्रमाण भी मिलता है (१।३४१)। राजतरङ्गिणीमें जैसे आर्यदेशके ब्राह्मणोंकी श्रेष्ठताका आभास मिलता, हमारे भविष्यपुराणमें भी वैसे ही आर्यदेशसमुद्भव शाकद्वीपी ब्राह्मणोंकी श्रेष्ठताका वर्णन है (ब्राह्मपर्व १३९।५८)। भविष्यपुराणसे समझ पड़ा, कि उक्त आर्यदेश शाकद्वीपका ही एकांश रहा। कहनेसे क्या, पाश्चात्य ऐतिहासिकगणका आरियाना, जन्द अवस्ताका ऐर्यनवैजो और भविष्यपुराणोक्त आर्यदेश अभिन्न है।

आर्यावर्तके मध्य-भूभागमें कुरु, पाञ्चाल आदि चार प्रदेश रहे। दक्षिण वङ्ग, अङ्ग एवं प्राच्य मगधको कृष्णसार मृग न मिलने और अयज्ञियत्वसे म्लेच्छदेश कहते हैं।

पाणिनीय 'शूद्राणामनिरवसितानाम्' (२।४।१०) सूत्र—व्याख्यानपर पतञ्जलिके महाभाष्यमें लिखा है—

'अनिरवसितानामित्युच्यते। कुतोऽनिरवसितानाम्। आर्यावर्तादनिरवसितानाम्। कः पुनरार्यावर्तः। प्रागादर्शात् प्रत्यक्कालकवनाद्दक्षिणेन हिमवन्तमुत्तरेण पारिपात्रम्। यद्येवं किष्किन्धगन्धिकशकयवनं शौर्यक्रौञ्चमिति न सिध्यति। एवं तर्ह्यार्यनिवासादनिरवसितानाम्। कः पुनरार्यनिवासः। ग्रामो घोषो नगरं संवाह इति। एवमपि य एते महान्तः संस्त्यायास्तेष्वभ्यन्तराश्चण्डाला मृतपाश्च वसन्ति तत्र चण्डालमृतपा इति न सिध्यति। एवं तर्हि याज्ञात्कर्मणोऽनिरवसितानाम्। एवमपि तक्षायस्कारं रजकतन्तुवायमिति न सिध्यति। एवं तर्हि पात्रादनिरवसितानाम्। यैर्भुक्ते पात्रं संस्कारेण शुध्यति तेऽनिरवसिताः। ये भुक्ते पात्रं संस्कारेणापि न शुध्यति ते निरवसिता इति॥'

उक्त महाभाष्यकी टीकामें कैयटने कहा है,—

'निरवसिता बहिष्कृता उच्यते। * * आदर्शादयः पर्वतविशेषाः। * * एतत्पर्वतचतुष्टयमध्य आर्यावर्तो देश इत्यर्थः। यद्येवमिति एतेषामार्यावर्ताद् बाह्यत्वादिति भावः। ग्राम इति एतेष्वार्या निवसन्तीति भावः।'

महाभाष्यप्रदीपोद्योतमें नागेशभट्टजीने विवृत किया है—'शूद्रशब्दोऽत्र त्रैवर्णिकेतरः न तु शूद्रत्वजातिपरः। अनिरवसितानामिति प्रतिषेधात्।'

महाभाष्य और तत्तत् टीकाकारगणकी उक्तिसे आता, कि आदर्श पर्वतसे पूर्व, कालकवनसे पश्चिम, हिमवत्से दक्षिण और पारिपात्र पर्वतसे उत्तर, घोष, नगर तथा संवाह वा वणिक्प्रधान स्थानमें जहां आर्य अर्थात् त्रैवर्णिक और अवाह्य त्रैवर्णिकेतर शूद्रभावापन्न जनगण रहता, वहीं आर्यावर्त पड़ता है। किष्किन्ध-गन्धिक, शक, यवन, शौर्य और क्रौञ्च प्रभृति जनपद उक्त आर्यावर्तकी सीमासे बाहर है।

वराहमिहिरकी बृहत्संहितामें भारतवर्षकी उत्तर-सीमाके कैकय, आर्जुनायन प्रभृति जनपदके साथ आदर्शका* उल्लेख मिलता है। शतद्रु नदीका उत्तरतटस्थ प्रदेश केकय वा कैकय और काबुल तथा

* "कैकयवसातियामुन-भोगप्रस्थार्जुनायनाग्नीध्राः।
आदर्शान्त-दीपि-त्रिगर्त-तुरगाननाश्वमुखाः॥" (१४।२५)

पेशावरका मध्यवर्ती स्थान आर्जुनायन नामसे पूर्वकालमें प्रसिद्ध रहा। वहांके लोग नगरहार नामक पार्वत्य नगरका प्राचीन नाम 'अर्जुन' बताया करते हैं। उक्त आर्जुनायन प्रदेशके अतिरिक्त ककेसस पर्वतके निकट माकिदनवीर अलेक्सन्दरके ऐतिहासिक आरियानने 'आद्रेप्सा' (Adrepsa) नामक किसी पार्वत्य भूभागकी बात भी कही है। यह आदर्शक शब्दका विकृत पाठ समझ पड़ता है। आजकल इस स्थानको अन्दराब कहते हैं। महाभाष्योक्त कालकवन महाभारत और पुराणादिमें कालतोयक नामसे आभीर तथा अपरान्तादि देशके साथ एवं वराहमिहिरकी बृहत्संहितामें भारतवर्षके नैऋत कोणपर रैवतक, सुराष्ट्रादिके साथ कालकजनपद लिखा है। पाश्चात्य भौगोलिक टलमीने कोलक (Kolaka) एवं आरियनने क्रोकल (Krokala) नामसे भारतके दक्षिण-पश्चिम प्रान्तमें कोई जनपद बताया है। कराची उपसागरके कूलमें कालकक्ष नामक एक जिला विद्यमान है। यही स्थान प्राचीन भारतीय पुराण-वर्णित कालक वा कालतोयक एवं प्राचीन पाश्चात्य भूगोल-वर्णित कोलक या क्रोकल मालूम देता है।

पारिपात्र खृष्टीय ७म शताब्दीय चीनपरिव्राजकको पो-ली-ये-तो-लो नामसे परिचित रहा। यह शैलमाला विन्ध्यके पश्चिम और उत्तरांशमें राजपूतानाके निकट पथर नामसे आजकल पुकारी जाती है। काश्मीरसे नेपालतक हिमालयकी अंश ही स्कन्दपुराणमें हिमवत्खण्ड नामसे अभिहित है। सुतरां महाभाष्यके मतसे आर्यावर्त उत्तरमें काकेसस पर्वतसे नेपालकी पश्चिम सीमा तथा दक्षिणमें सिन्धुप्रदेशके दक्षिणांश-स्थित कराची उपकूलसे विन्ध्य पर्वतकी उत्तर-पश्चिम सीमा पर्यन्त विस्तृत रहा। ऋक्संहिताके प्रमाणसे त्रिसप्त नदी-प्रवाहित सप्त सिन्धुप्रदेश एवं सारस्वत तथा अनुगाङ्ग प्रदेशका जो परिचय उद्धृत हुआ, वह महाभाष्यके प्रमाणसे प्राचीन आर्यावर्तका वर्णन मालूम पड़ता है। इधर मनुसंहितामें आर्यावर्तकी सीमा इसप्रकार निर्धारित है,—

"आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः॥" (२।२२)

पूर्वसमुद्र पर्यन्त एवं पश्चिम भी समुद्र-पर्यन्त विस्तृत देशके अन्तराल प्रदेशमें (उत्तर-दक्षिण) गिरिके मध्यवर्ती स्थानको पण्डितोंने आर्यावर्त निर्देश किया है। मनु-भाष्यकार मेधातिथिने उक्त श्लोकके व्याख्यानमें लिखा है,—'आपूर्वसमुद्रादापश्चिमसमुद्रात्तयोऽन्तरालवर्ती देशस्तथा। तयोरेव पूर्वश्लोको ऽनदिष्टयोगिर्योः पर्वतयोर्हिमवद्विन्ध्ययोर्यदन्तरं मध्यं स आर्यावर्तो देशो बुधैः शिष्टै रुच्यते।'

मेधातिथिकी तरह अमरसिंह और कुल्लूकभट्ट दोनोंने ही हिमालय तथा विन्ध्यके मध्यवर्ती स्थानको आर्यावर्त कहा है।

"आर्यावर्तः पुण्यभूमिर्मध्यं विन्ध्यहिमालयोः।' (अमर २।१।८)
'शरावत्यास्तु योऽवधेः।
देशः प्राग्दक्षिणः प्राच्य उदीच्यः पश्चिमोत्तरः।
प्रत्यन्तो म्लेच्छदेशः स्यात् मध्यदेशस्तु मध्यमः।' (अमर २।१।६-७)

प्राग्सहित दक्षिण देशको 'प्राग्दक्षिण', पश्चिमसहित उत्तर देशको 'पश्चिमोत्तर' और अन्तके प्रतिगतको 'प्रत्यन्त' अर्थात् सीमान्तप्रदेश कहते हैं।

किन्तु पूर्वोद्धृत महाभाष्य और मूल मनुसंहिताका वचन पढ़नेसे आर्यावर्त इतना सङ्कीर्ण सीमाबद्ध मालूम नहीं पड़ता। मूल मनुसंहितामें लिखा है,

"हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विनशनादपि।
प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः॥" (२।२१)

उक्त मनुवचनके अनुसार उत्तरमें हिमालय, दक्षिणमें विन्ध्य, पूर्वमें विनशन और पश्चिममें प्रयाग चतुःसीमावच्छिन्न स्थान मध्यदेश होता है। सुतरां मेधातिथि, कुल्लूकभट्ट और अमरसिंहने हिमवत् और विन्ध्यके मध्य जिस स्थानको आर्यावर्त बताया, भगवान् मनुके मतसे वही मध्यदेश ठहरा है। मनुके मतसे ब्रह्मावर्त ब्रह्मर्षि देश और मध्यदेश आर्यावर्तके ही अन्तर्गत प्रधान स्थान है। इन कयी प्रधान भूभागोंके व्यतीत पूर्वमें समुद्र और पश्चिममें भी समुद्र पर्यन्त आर्यवास आर्यावर्तके अन्तर्गत पड़ता था। भूतत्त्वविदोंने आलोचनासे प्रमाण दिया, कि अति पूर्वकाल यूसिन युगमें सागरतरङ्ग हिमालयतट पर्यन्त पहुंचता था। वही स्वाभाविक नियमसे हिमाचल-

पृष्ठ छोड़ सिंहल द्वीपकी ओर सरक गया। उस समय प्राकृतिक नियम तथा जलप्रवाहका परिवर्तन-गतिसे पृथिवीके विभिन्न अंशमें जनपद और द्वीप फिर बने। इसीके फलसे निम्नवङ्गकी क्रमश: उत्पत्ति होती रही। भूतत्त्वविदोंने यह भी प्रमाणित किया, कि प्लिउसिन और परवर्ती युगमें राजमहलके निकट पर्यन्त समुद्रतरङ्ग आया था। महाभारतका वनपर्व पढ़नेसे समझ पड़ा, कि युधिष्ठिरके तीर्थयात्रा-काल कौशिकीतीर्थसे कुछ दूर पश्चिम नदी-युक्त गङ्गासागर-सङ्गम रहा। वर्तमान वङ्गालके हुगली जिलेमें तारकेश्वरके निकट कौशिकीका प्राचीन गर्भ देखनेमें आता है। खृष्टपूर्व तृतीय शताब्द ग्रीक-राजदूत मेगस्थेनिसने पटनेसे ३०३ मील दूर गङ्गासागर-सङ्गमकी बात कही है। उक्त प्रमाणसे समझ पड़ता, कि उत्तर-राढ़के निकट पर्यन्त किसी-किसी स्थानमें समुद्रतरङ्ग आता, तब इसमें सन्देह नहीं, कि उससे बहुत पहले वैदिक युगमें और भी सौ मील उत्तर समुद्र-तरङ्ग पहुंचता था। इसीप्रकार भूतत्त्वविदोंने यह भी प्रमाणित किया, कि भारतके पश्चिम-प्रान्त स्थित वर्तमान बलूचिस्थानसे सिन्धुप्रदेशतक कराचीका अधिकांश समुद्र-गर्भमें रहा। सुतरां मनुवर्णित आर्यावर्तकी पूर्व और पश्चिम सीमा समुद्र ही ठहरती है।

स्मृतिमें देखते हैं,—

"चातुर्वर्ण्यव्यवस्थानं यस्मिन्देशे न विद्यते।
म्लेच्छदेश स विज्ञेय: आर्यावर्तस्तत:परम्॥"

अर्थात् जिस देशमें चारो वर्णोंके वर्णगत आश्रम-धर्मकी व्यवस्था नहीं, वही स्थान म्लेच्छदेश होता है। आर्यावर्त उससे भिन्न है। मनुसंहितामें निर्दिष्ट हुआ है,—

"चरति कृष्णसारस्तु मृगो यत्र स्वभावत:।
स ज्ञेयो यज्ञियो देशो म्लेच्छदेशस्तत:परम्॥" (२।२३)

अर्थात् जिस देशमें कृष्णसार मृग स्वभावत: घूमता, वही यज्ञिय देश ठहरता; उससे भिन्न अपर स्थान म्लेच्छ देश होता है।

उद्धृत उभय वचनसे आर्यावर्त यज्ञिय देश प्रमाणित है। इसका आभास मिलता, कि शुक्लयजुर्वेदीय शतपथब्राह्मणमें वैदिक काल भारतके पूर्वापर जितने ही स्थान पर्यन्त यज्ञिय देश कहाता था। शतपथ-ब्राह्मणमें इस बातपर एक गल्प लिखा है,—'विदेघ माथवने मुखमें अग्निको रखा था। गोतम-राहूगण नामक उनके एक पुरोहित रहे। गोतमने माथवको पुकारा, किन्तु उन्होंने मुखसे अग्नि निकल पड़नेके भयसे कोई उत्तर न दिया। पुरोहितके 'वीति होत्र" (५।२६।३) इत्यादि ऋङ्मन्त्र पढ़कर प्रथम बुलानेपर माथव कुछ न बोले। उन्होंने फिर 'उदग्ने' (८।४४।१७) इत्यादि ऋङ्मन्त्रसे सम्बोधन किया, किन्तु फिर भी कोई उत्तर न मिला। अन्तको 'तं त्वा घृतस्नवीमहे' (५।२६।२) इत्यादि पढ़नेपर अग्नि 'घृत' शब्द सुनते ही मुखसे बाहर निकले और जलने लगे थे। माथव अग्निको मुखमें रोक न सके। अग्नि माथवके मुखसे निकल पृथिवीपर अवतीर्ण हुये। उस समय विदेघमाथव सरस्वतीके तीर रहते थे। फिर अग्नि दहन करते-करते पूर्वाभिमुख पृथिवीपर घूमने लगे। गोतम राहूगण और विदेघमाथव दोनोने दाहवान् अग्निका अनुगमन किया। वैश्वानरने समुदय नदी जला डाली थी। केवल उत्तर-गिरिसे विनिर्गत सदानीरा नदीका परपार बच गया। इसीसे वह ग्रीष्मान्तमें भी शीतल रहती है। पूर्वकाल ब्राह्मण उस नदीके पार उतरते न थे। अब अनेक ब्राह्मण पूर्वदिक् रहते हैं। अग्नि वैश्वानरके स्वाद न लेनेसे वह वासके अयोग्य और जल-सिक्त है। अब ब्राह्मणोंके यज्ञानुष्ठान करनेसे वास-योगय बनी है। विदेघमाथवने पूछा,—'हम कहां रहेंगे'? अग्निने कहा,—'इस नदीका पूर्व-प्रदेश तुम्हारी वासभूमि होगा।' उसी समयसे वह नदी कोशल और विदेहके मध्य अवस्थित है। वहांके लोग माथवसन्तान हैं।" (शतपथब्रा० १।४।१।१०—१७)

शतपथब्राह्मणसे अच्छी तरह समझ पड़ता, पूर्व-काल सदानीराके पश्चिम उपकूल अर्थात् कोशलराज्य पर्यन्त यज्ञीय देश लगता था। उसके बाद सदानीराका पूर्वतटस्थ प्रदेश अधिकार करनेपर आर्य-नृपति विदेघमाथवके नामानुसार यह स्थान विदेह

वा मिथिला कहाया। इसी प्रकार उनके गौतम-गोत्रीय पुरोहितसे यहां यज्ञकाण्ड चला। ब्राह्मण-युगमें मिथिला यज्ञिय देशके अन्तर्गत रहते भी मगध, अङ्ग और मिथिलासे पूर्व अवस्थित समस्त देश अयज्ञिय गिना जाता था। इसीसे ऐतरेय आरण्यकमें यह अयज्ञिय और निन्दित देश कहा गया। ब्राह्मण और आरण्यकमें मगध तथा अङ्ग पर्यन्त म्लेच्छ देश माना जाते भी उसके बहुत पीछे महाभारतके प्रचारकाल वह सकल स्थान आर्यावास एवं बहु आर्यतीर्थ-समाच्छन्न हुआ था। वनपर्व तीर्थयात्राके पर्वाध्यायसे आभास मिलता, कि उस समय उन सकल स्थानोंसे सुदूर दक्षिणमें अवस्थित वैतरणी नदीतीरस्थ कलिङ्ग (वर्तमान उड़ीसा) यज्ञिय देश कहाता था,—

"एते कलिङ्गाः कौन्तेय यत्र वैतरणी नदी।
यत्राऽयजत धर्मोऽपि देवाञ्छरणमेत्य वै॥
ऋषिभिः समुपायुक्तं यज्ञियं गिरिशोभितम्।
उत्तरं तीरमेतद्धि सततं द्विजसेवितम्॥" (महाभारत वनपर्व ११४अ:)

आजकल आर्यावर्त भूमि पश्चिम एवं उत्तरसे सिकुड़ी, दक्षिणमें प्रायः पूर्ववत् पड़ी और पूर्वपर बढ़ी है। पञ्जाबके पश्चिमप्रान्त आजकल आर्यावर्तसे बाहर गिना जाता, क्योंकि उत्कल, राढ़, गौड़, वङ्ग और प्राग्ज्योतिष (कामरूप) प्रदेश आर्यावर्तके अन्तर्गत पुण्यभूमि लगता है।

आर्यावर्तीय (सं० त्रि) आर्यावर्त-सम्बन्धीय, आर्यावर्तके मुताल्लिक्।

आर्वाक् (सं० अव्य०) पश्चात्, अनन्तर, बाद, ताक़ुबमें, पीछे।

आर्श (वै० त्रि०) कुरङ्ग-सम्बन्धीय, छल्लेदार सींग वाले आहूके मुताल्लिक्।

आर्ष (सं० त्रि०) ऋषेरिदम्, अण्। १ ऋषिसम्बन्धी, पुराना। २ ऋषिकृत, ऋषियोंका बनाया हुआ। (पु०) ३ ऋषि-सेवित वेद।

"आर्षं धर्मोपदेशञ्च वेदशास्त्राविरोधिना।
यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्मं वेद नेतरः।" (मनु १२।१०६)

संस्कारहीनत्वेऽपि ऋषिणा प्रयुक्तः। ४ व्याकरणोक्त अनुशासनको उल्लङ्घनकर ऋषियोंका कहा हुआ असाधु प्रयोग। (क्ली०) ऋषीणां समूहः प्रवरगण-भेदः। ५ प्रवर ऋषि-समूह। ६ विवाहविशेष।

"यज्ञस्थायर्त्विजे दैव आदायार्षस्तु गोद्वयम्।" (याज्ञवल्क्य)

यज्ञस्थ ऋत्विक्‌से कन्याके विवाह होनेको दैव कहते हैं। वरके पक्षसे दो गो लेकर कन्या-व्याह देना आर्ष कहाता है।

"एकं गो मिथुनं द्वे वा वरादादाय धर्मतः।
कन्याप्रदानं विधिवदार्षो धर्मः स उच्यते॥" (मनु ३।२९)

अर्थात् वरपक्षसे धर्मतः एक गाय और एक बैल अथवा गोमिथुनद्वय ले विधानक्रमसे कन्याप्रदान आर्ष कहाता, जो धर्मजनक होता है। इस स्थलपर धर्म पद रहनेसे गोद्वयका ग्रहण शुल्कके मध्य परिगणित नहीं।

"धर्मतः धर्मार्थं यागादिसिद्धये कन्यायै वा दातुं न तु शुल्कबुद्ध्या।" (कुल्लूकभट्ट)

आर्षक्रम (सं० पु०) आर्ष परिपाटी, ऋषियोंकी चाल।

आर्षधर्म (सं० पु०) कर्मधा०। १ मन्वादि-प्रोक्त धर्म, मनु आदि स्मृतिकारोंका कहा हुआ धर्म। २ आर्ष विवाह, पुरानी चालकी शादी। आर्ष देखो।

आर्षप्रयोग (सं० पु०) ऋषिसम्बन्धि सन्धि, पुराना महावरा। वाक्यमें व्याकरणके नियमसे विरुद्ध पड़नेवाला शब्द आर्षप्रयोग कहाता है। ऋषियोंने व्याकरणपर विशेष दृष्टि न रख अनेक स्थलमें उलट-पलट किया है। किन्तु उसे अशुद्ध मान नहीं सकते। छन्दमें भी व्याकरणका नियम चलना कठिन है। इसीसे जो शब्द योजना मनमानी रहती, वह आर्ष-प्रयोग बजती है। यह विषय संस्कृतसे ही सम्बन्ध रखता है।

आर्षभ (सं० त्रि०) ऋषभस्य वृषस्येदम्, अण्। १ वृषसम्बन्धी, नर-गावके मुताल्लिक्। (क्ली०) २ ऋषभ-देव-चरित।

आर्षभि (सं० पु०) ऋषभस्यापत्यम्, इञ्। १ प्रथम तीर्थङ्कर् ऋषभके पुत्र। २ भारतवर्षके प्रथम चक्रवर्ती नृपति। ऋषभ देखो।

आर्षभी (सं॰ स्त्री॰) ऋषभस्येयं प्रिया, अण्-ङीप्। १ कपिकच्छुलता, केवांचकी बेल। ऋषभस्येयम्, तुल्याकारत्वात् अण्-ङीप्। २ मध्य-पथस्थ वीथि-त्रयके मध्य वीथिविशेष, राहके बीचकी तीनमें एक गली।

आर्षभ्य (सं॰ पु॰) ऋषभस्य प्रकृतिः, ञ्य। षण्डोप-युक्त वृष, बधिया बनाने लायक बैल। 'आर्षभ्यः षण्डता-योग्यः।' (अमर)

आर्षविवाह (सं॰ पु॰) विवाह-विशेष, किसी क़िस्मकी शादी। आर्ष देखो।

आर्षिक्य (सं॰ क्ली॰) ऋषिरेव ऋषिकः, ऋषिकस्य भावः, पुरो॰ यक्। ऋषिधर्म।

आर्षिषेण (सं॰ पु॰) ऋषिषेणस्य गोत्रापत्यम्, अञ्। १ ऋषिषेण मुनिके गोत्रापत्य, देवापिका गोत्रनाम। (त्रि॰) २ ऋषिषेण मुनिसे सम्बन्ध रखनेवाला। (स्त्री॰) ङीप्। आर्षिषेणी।

आर्षेय (सं॰ क्ली॰) ऋषीणां समूहः, ढक्। १ ऋषि-गणरूप प्रवर-विशेष। २ मन्त्रदर्शी ऋषिविशेष। (स्त्री॰) ङीप्। आर्षेयी।

आर्ष्टिषेण (सं॰ पु॰) ऋष्टिषेणस्यापत्यम्, अञ्। चन्द्रवंशीय शल नृपतिके एक पुत्र। यह प्रथम राजा रहे। पर ऋषि हुआ। (हरिवंश २०१ अ॰) २ गोत्र-प्रवर विशेष।

आर्ष्टिषेणाश्रम (सं॰ क्ली॰) तीर्थ विशेष।

आर्हत (सं॰ त्रि॰) अर्हत इदम्, अण्। १ जैन-सम्बन्धी, जिन मज़हबके मुतािल्लक़। (पु॰) २ जैन, जिन मज़हबको माननेवाला शख़्स। 'स्याद्वादवाद्यर्हतः।' (हेम ३।५२५) जैन देखो। (स्त्री॰) आर्हती।

आर्हत्य (सं॰ क्ली॰) अर्हत् वा जैन साधुका साधन।

आर्हन्ती (सं॰ स्त्री॰) अर्हतो भावः, ष्यञ् नुमच, षित्वात् ङीप् यलोपः। योग्यता, क़ाबिलियत।

आर्हन्त्य (सं॰ क्ली॰) आर्हन्ती देखो।

आर्हायण (सं॰ पु॰) आर्हस्यापत्यम्, फञ्। अर्ह-नामक ऋषिके गोत्रापत्य। (स्त्री॰) ङीप्। आर्हायणी।

आर्हीय (सं॰ पु॰) अर्हमभिव्याप्य अण् आर्हम् तत्र विहितः तस्येदं वा, वृद्धाच्छ। १ पाणिनिके (५।१।१८) 'आर्हादगोपुच्छसंख्यापरिमाणाट्ठक्'से (५।१।६३) 'तदर्हति' सूत्र पर्यन्त विहित प्रत्ययविशेष। २ उपरोक्त सकल-सूत्र-विहित अर्थ। 'आर्हीयेष्वर्थे।' (सिद्धान्तकौमुदी)

आल (सं॰ क्ली॰) आलति भूषयति, आ-अल भूषादौ अच्। १ हरिताल, ज़रनाख। हरिताल जिस स्थानमें रहता, उसे भूषित करता है। इसीसे आल कहते हैं।

'पिञ्जरं पितकं तालमालञ्च हरितालकं।' (अमर २।६।१०४)

२ अण्ड, मीनाण्ड, भेकाण्ड आदि, मछली या मेंड़कका अण्डा। (त्रि॰) आ-अल पर्याप्तौ अच्। ३ अनल्प, अधिक, ज्यादा। ४ श्रेष्ठ, बड़ा।

(हिं॰ स्त्री॰) ५ अच्युत वृक्ष, एक पौधा। (Morinda citrifolia) यह भारतवर्षके नाना स्थानमें उपजता है। बुंदेलखण्ड, कोटे, बूंदी प्रभृति स्थानमें इसकी खेती होती है। माहसुरका आल सर्वोत्कृष्ट निकलता है। दूसरे-दूसरे वर्ष इस बात है। पौदा दो फ़ीट ऊंचा होता है। डण्ठलसे लाल रङ्ग बनता है। छाल और जड़को काट हौज़में सड़ानेसे कुछ दिनमें रङ्ग उतरता, जो कपड़े रंगनेके काम आता है। रङ्ग पक्का होता और शीघ्र नहीं उड़ता। आलके रङ्गसे दीमक भी दूर रहती है। ६ आलका रङ्ग। ७ माहो, सरसोंके पेड़में लगनेवाला कीड़ा। ८ पक्षा-लुका, हरित नाल। ९ लौकी, कद्दू। (पु॰) १० उप-द्रव, झगड़ा। ११ आर्द्रीभाव, सील। १२ अश्रु, आंसू। १३ प्रान्तभाग, गांवका हिस्सा। झगड़ा-बखेड़ा आल-जञ्जाल कहाता है।

(अ॰ स्त्री॰) १४ कन्याकी सन्तति, बेटीकी औलाद। बालबच्चोंको आल-औलाद कहते हैं।

आलंग (हिं॰ पु॰) आतप, कामानल, सरगर्मी, झल, चुल, मस्ती।

आलंगपर आना (हिं॰ क्रि॰) घोड़ीका सरगर्म होना या मस्त पड़ना।

आलंगपर होना, आलंगपर आना देखो।

आलक (सं॰ क्ली॰) हरिताल, पीली मट्टिया।

आलकस (हिं॰ पु॰) आलस्य, सुस्ती।

आलकसी (हिं॰ वि॰) अलस, सुस्त, काहिल।

आलक्षण्य (सं॰ क्लो॰) अलक्षण, मन्दभाग्य, पातक, ज़वाल, गुनाह।

आलक्षि (सं॰ त्रि॰) आलक्षते, आ-लक्ष-इन्। ज्ञाता, जानकार, समझदार। (स्त्री॰) ङीप्। आलक्षी।

आलक्षित (सं॰ त्रि॰) आलक्ष-क्त-इट्। सम्यक् ज्ञात, चिह्न द्वारा प्रदर्शित, अच्छीतरह समझा हुआ, जो झलक पड़ा हो।

आलक्ष्य (सं॰ त्रि॰) आलक्ष्यते, आलक्ष-यत्। १ सम्यक् ज्ञेय, लक्षण द्वारा ज्ञातव्य, ज़ाहिर, आश्कारा, झलकनेवाला। २ दुर्ज्ञेय, ब-मुश्किल नमूदार, जो ज़्यादा ज़ाहिर न हो। (अव्य॰) ल्यप्। ३ सम्यक् समझकर, देख-भालके साथ।

आलगर्द (सं॰ पु॰) अलगर्द एव, स्वार्थे अण्। जलसर्प, पानीमें रहनेवाला सांप।

आलजि (सं॰ त्रि॰) आ-लज-इन्। आभाषक, बोलनेवाला।

आलजिह्वा, अलिजिह्वा देखो।

आलथी पालथी (हिं॰ स्त्री॰) आसनभेद, एक बैठक। दाहने पैरको एंड़ी बायीं और बायें पैरकी एंड़ी दाहनी जांघपर रखनेसे यह आसन जमता है।

आलदूषक (सं॰ पु॰) प्रतुद पक्षी विशेष, ठोंग मारनेवाली एक चिड़िया।

आलन (हिं॰ पु॰) १ पलाल, नाल, भूसा, बिचाली। यह मकान् बनानेके लिये मट्टीमें मिलाया जाता है। २ व्यञ्जनमें पड़नेवाला पिष्टक, जो खमीर तरकारीमें पड़ता हो।

आलना (हिं॰ पु॰) पक्षिस्थान, आशयाना, घोंसला।

आलपाका, अलपाका देखो।

आलपीन (हिं॰ स्त्री॰) शलाका, घुण्डीदार सूयी। यह शब्द पोर्तगीज 'आलफिनेट'का अपभ्रंश है। इससे प्राय: कागज़को नत्थी करते हैं।

आलब्ध (सं॰ त्रि॰) आ-लभ-क्त। १ संसृष्ट, संयुक्त, स्पृष्ट, लगा या मिला हुआ। २ हिंसित, चोट खाये हुआ।

आलब्धि (सं॰ स्त्री॰) १ स्पर्श, छूत, लगाव। २ हिंसा, चोट, नुकसान्।

आलभन (सं॰ क्ली॰) आ-लभ-ल्युट्। १ हिंसा, नुकसान्। २ स्पर्श, पकड़।

आलभनीय (सं॰ त्रि॰) आ-लभ-अनीयर्। १ स्पृश्य, पकड़ने काबिल। २ हिंसनीय, नुकसान पहुंचाये जाने लायक।

आलभ्य (सं॰ त्रि॰) आ-लभ-यत्। पोरदुपधात्। पा ३।१।९८। १ स्पृश्य, छूवा जाने काबिल। २ हिंस्य, मारा जाने लायक। जो नुकसान् झेल सकता हो। (अव्य॰) ल्यप्। ३ स्पर्शपूर्वक, छूकर।

आलम (अ॰ पु॰) १ लोक, दुनिया। २ प्रजा, जन, खुल्क, लोग। ३ आलोक, नक़ल, तमाशा। ४ काल, वेला, ज़माना। ५ अवस्था, हालत।

आलम कवि—एक प्रसिद्ध कवि। पहले यह सनाढ्य ब्राह्मण रहे। किन्तु किसी मुसलमान-रमणीके प्रणयमें पड़नेसे इन्हें इसलामको दीक्षा दी गयी। दिल्ली-सम्राट् औरङ्गजेबके पुत्र मुअज्जिम शाहके निकट आलम काम करते थे। इनकी कविता अति उत्कृष्ट समझी जाती है।

आलमगीर (अ॰ पु॰) १ देशपति, दुनियाको जीतनेवाला शख्स। २ बादशाह औरङ्गजेब। औरङ्गजेब देखो।

आलमगीर प्रथम, औरङ्गजेब देखो।

आलमगीर द्वितीय—दिल्लीके एक सम्राट्। इनका नाम आजिज़ुद्दीन् रहा। सम्राट् जहांदार शाहके औरस और अनप बाईके गर्भसे इन्होंने १६८८ ई॰को जन्म लिया था। १७५४ ई॰को २री जूनको वज़ीर इमादुलमुल्क ग़ाज़ी-उद्दीन् खांके सहारे यह सिंहासनपर बैठे। मुहम्मद शाहके लड़के अहमद क़ैद कर लिये गये थे। इन्होंने पांच वर्षसे भी कम राज्य चलाया। १७५९ ई॰को २९वीं नवम्बरको वज़ीर इमादुलमुल्क ग़ाज़ी उद्दीन् खांने इन्हें मार डाला था। सम्राट् हुमायूंके रौज़ेके सामने आलमगीर गाड़े गये। इनके पुत्रका अलीगौहर (शाह आलम) और पौत्रका नाम मिर्ज़ा जवान्बख्त था।

आलम-गैब (अ० पु०) परलोक, देख न पड़नेवाली दुनिया।

आलमजानी (अ० पु०) इहलोक, मौजूदा दुनिया।

आलम जिन्नात (अ० पु०) पैशाच लोक, भूतोंके रहनेकी दुनिया।

आलमडांगा—बङ्गाल प्रान्तके नदिया ज़िलेका एक गांव। यह पद्मासी नदीके तीर अवस्थित है। यहां चावलका व्यवसाय अधिक होता है।

आलमनक, अलमनक देखो।

आलमनगर—१ अवध प्रान्तके सीतापुर ज़िलेका एक नगर। आजकल इसे टमसनगञ्ज भी कहते हैं। प्राय: आठ हज़ार लोगोंका वास है। २ अवध प्रान्तके शाहाबादका एक परगना। पौराणिक समय यह स्थान कान्य राजाओंके अधिकारमें रहा। कान्यकुब्जका अध:पतन होनेपर निकुम्भगणने आकर इसपर अपना अधिकार जमाया था। अकबर बादशाहके राजत्वकाल वह विद्रोही हुआ, किन्तु नवाब सदर-जहां द्वारा ताड़ित किया गया। धन-सम्पत्ति सैयदोंके हाथ लगी थी। प्रथम आलमगीर औरङ्गज़ेब बादशाहके राजत्वकाल सैयदोंने आलमनगर नाम रखा। नवाब आसफ़-उद्-दौलाके समयसे निकुम्भ फिर यहां रहने लगे थे। लोकसंख्या प्राय: अट्ठारह हज़ार है। ३ विहार प्रान्तके भागलपुर ज़िलेका एक ग्राम। यह कृष्णगञ्जसे सात मील दक्षिण-पश्चिम पड़ता है। पहले यहां चंदेल राजाओंका अधिकार रहा। स्थान-स्थानमें अट्टालिकाओंका ध्वंसावशेष देखनेसे प्राचीन समृद्धि समझ पड़ती है। आजकल राजपूत और ब्राह्मण अधिक रहते हैं।

आलमपरे—मन्द्राज प्रान्तके चेङ्गलपट् ज़िलेका एक ग्राम। यह पुंदिचेरी और चेङ्गलपट् नगरके बीचोबीच सागरकूलपर अवस्थित है। १७५० ई०को मुजफ्फरजङ्गने यह स्थान फ्रान्सीसी सेनाके नायक दुप्लेको दे दिया था। अनेक बार यहां अंगरेज़ों और फ्रान्सीसियोंमें युद्ध हुआ। १७५८ ई०को इस ग्रामके निकट भीषण जलयुद्ध चला था। १७६० ई०को सर आयार-कूटने इसे अधिकार किया। पहले यहां कस्तूरी बहुत मिलता था।

आलमपुर—१ मध्य भारतके इन्दौर राज्यका एक परगना। इसका प्रधान नगर आलमपुर ही है। प्राय: सवाह हज़ार लोग रहते हैं। २ बम्बई प्रदेशके काठियावाड़का एक ग्राम।

आलमफ़ानी (अ० पु०) नश्वर जगत्, मिट जानेवाली दुनिया।

आलमबाला (अ० पु०) वैकुण्ठ, बिहिश्त, ऊंची दुनिया।

आलममस्ती (अ० पु०) इन्द्रिय-निरति, ऐयाशी, रङ्गरस।

आलम-सिफ़ली (अ० पु०) मही, मेदिनी, ज़मीन, जहान्।

आलमारी, अलमारी देखो।

आलम्प्रा—ब्रह्मदेशके नृपति विशेष। ब्रह्मदेश और फायरे देखो।

आलम्ब (सं० त्रि०) १ नीचेकी ओर लटकनेवाला, जो नीचेको झुका हो। (पु०) २ टेक, सहारा लेनेकी चीज़। ३ आश्रय, सहारा। ४ आधार, मसकन, जगह। ५ अवष्टम्भ, थमी, खम्भेकी लकड़ी। ६ आश्रम, दारुल-अमान्। ७ निबन्धन, फरमांबरदारी। ८ लम्ब, उमूद, सीधे खड़ी लकीर।

आलम्बन (सं० क्ली०) आलम्बते, आ-लबि कर्मणि ल्युट्। १ निबन्धन, अधीनता। २ आश्रय, सहारा। ३ आधार, बुनियाद। ४ कारण, सबब। ५ अलङ्कारशास्त्रके अनुसार उपादान कारणसे मनोवृत्तिका प्रकृत तथा आवश्यक सम्बन्ध, बढ़ानेवाले सबबसे रिश्तका कुदरती और ज़रूरी ताल्लुक़। "आलम्बनं नायकादिस्तमालम्ब्य रसोद्गमात्।" (साहित्यदर्पण) रस विशेषमें आलम्बन विशेष कहा है। शृङ्गार रसमें अनुरागिणी परविवाहिता वेश्या-छोड़ अन्य नायिकाको अवलम्बन करना पड़ता है। हास्यरसमें जो विकृत आकार, वाक्य, चेष्टा प्रभृति देख लोगोंको हंसी आ सकती, वही आलम्बन है। करुणरसमें शोचनीय कार्य आलम्बन होता है। रौद्ररसमें अरि ही आलम्बन है। वीररसमें विजेतव्यादिको आलम्बन

कहते हैं। वीभत्सरसमें दुर्गन्ध, मांस, रक्त और मेद आलम्बन है। अद्भुतरसमें अलौकिक वस्तु आलम्बन होता है। शान्तरसमें अनित्यत्वादि द्वारा अशेष वस्तुका जो असारत्व रहता, वही आलम्बन बजता है। भयानक रसमें जिससे भय उपजता, वही आलम्बन आता है। ६ अनुष्ठान, अमल। निर्वाणप्राप्तिके लिये योगियोंद्वारा किये जानेवाले मानसिक साधनको आलम्बन कहते हैं। ७ स्तोत्रकी मूक आवृत्ति, दुवाका खमोश एयादा। ८ बौद्धमतानुसार—पञ्च ज्ञानेन्द्रिय सदृश द्रव्यके पांच गुण, पांचो हिसके मुताल्लिक् शेकी पांच सिफतें।

आलम्बा (सं० स्त्री०) विषाक्त पत्रयुक्त वृक्षविशेष, ज़हरीली पत्तियोंकी एक झाड़ी।

आलम्बायन (सं० पु०) आलम्ब इञस्मात् फञ्। उपदेष्टा विशेष, एक मुअल्लिम। यह आलम्बके युवापत्य रहे। (स्त्री०) ङीप्। आलम्बायनी।

आलम्बायनिपुत्र, आलम्बायन देखो।

आलम्बि (सं० पु०) आलम्बस्यापत्यम्, इञ्। वैशम्पायनके शिष्य और आलम्बके पुत्र। (स्त्री०) ङीप्। आलम्बी।

आलम्बित (सं० त्रि०) आ-लबि-क्त-इट्। १ धृत, गृहीत, पकड़ा हुआ। २ रक्षित, बचाया हुआ। ३ आश्रित, झुका या लटका हुआ।

आलम्बितविन्दु (सं० पु०) आश्रित चिह्न, सहारेका नुकता। सेतुकी दोनो ओर जिस जगह जञ्जीर स्तम्भसे लगती, वह आलम्बित-विन्दु बजती है।

आलम्बिन् (सं० त्रि०) आलम्बते, आ-लबि-णिनि। १ आश्रयी, सहारा पकड़नेवाला। २ अधीन, मातहत। ३ आश्रय देनेवाला, जो टेक लगाता हो। ४ धारण करनेवाला, जो चढ़ाता हो।

आलम्ब्य (सं० अव्य०) १ आश्रय देकर, सहारा लगाके। २ हस्त द्वारा ग्रहणकर, हाथसे पकड़के।

आलम्भ (सं० पु०) आ-लभ-घञ्-नुम्। १ संस्पर्श, आलिङ्गन, हमागोशी।

"स्त्रीणाञ्च प्रेक्षणालम्भमुपघातं परस्य च।" (मनु २।११९)

२ हिंसन, मारकाट।

"आलम्भपिञ्जविशरघातोन्मथवधा अपि।" (अमर)

आलभ्य (सं० त्रि०) आलभ्यते, आ-लभ-यत्-नुम्। आङो यि। पा ७।१।६५। हिंस्य, मारा जाने क़ाबिल।

"आलम्भ्या गौः।" (सिद्धान्तकौमुदी)

आलय (सं० पु०) आलीयतेऽस्मिन्, आ-ली आधारे अच्। १ गृह, हवेली, घर। इस अर्थमें यह शब्द प्रायः समासान्तमें आता है, जैसे—हिमालय, कार्यालय, औषधालय।

"गृहाः पुंसि च भूम्न्येव नकार्यनिलयालयाः।" (अमर)

२ आधार, टेक। भावे अच्। ३ संश्लेष, बग़लगीरी, अंकवारी। (अव्य०) मर्यादार्थे अव्ययी०। ४ लय पर्यन्त, क़यामतक। बौद्ध मतमें आत्माको आलय कहते हैं।

आलयविज्ञान (सं० क्ली०) आलयं लयपर्यन्तव्यापि-विज्ञानम्, कर्मधा०। बौद्धमत-सिद्ध अहमास्पद विज्ञान विशेष। विज्ञानसे अतिरिक्त वाह्यवस्तुको बौद्ध नहीं मानते।

आलायश (फा० स्त्री०) १ मालिन्य, मल, नजासत, आलूदगी, गन्दापन। २ पूय, दुष्य, पीप, मवाद।

आलर्क (सं० क्ली०) अलर्कस्येदम्, अण्। १ क्षिप्त कुक्कुर विष, पागल कुत्तेका ज़हर। (त्रि०) २ क्षिप्त-कुक्कुर-सम्बन्धीय, पागल कुत्तेके मुताल्लिक्।

आलवण्य (सं० क्ली०) न लवणम्, नञ्-तत्; अलवणस्य भावः, ष्यञ्। लवणरस-भिन्नत्व, बेनमकी, बेलज्ज़ती, फीकापन।

आलवाल (सं० क्ली०) अरं शीघ्रं वलते वर्धते तरुरनेन, पृषोदरादित्वात् घञ्; यद्वा आ समन्तात् लवं जललवं आलाति गृह्णाति, आलव-आ-ला-क। वृक्षमूलमें जलसेकके निमित्त खनित और मृत्तिका द्वारा निर्मित जलाधार, थाला।

"स्यादालवालमावालमावापः।" (अमर)

आलविष (सं० पु०) आलमें विष रखनेवाला जीव, ज़हरीले कांटेका जानवर। वृश्चिक, विश्वम्भर, राजीव, मत्स्य, उच्चिटिङ्ग और समुद्र-वृश्चिकके आलमें विष रहता है। (सुश्रुत)

आलविषा (सं० स्त्री०) कृच्छ्र-साध्य लूताभेद, मुश्किलसे अच्छी होनेवाली मकड़ीकी बीमारी।

आलस (सं० त्रि०) आलसति ईषद् व्याप्रियते, अच्। १ अलस, काहिल, सुस्त, जो काम करना चाहता न हो। (हिं० पु०) २ आलस्य, सुस्ती।

आलसायन (सं० पु०) आलस-युनि-फक्। आलसका युवापत्य, काहिलका नौजवान् बेटा।

आलसी (हिं० वि०) अलस, सुस्त, काहिल।

आलस्य (सं० क्लो०) न लभति, अच् नञ्-तत्; अलसः तस्य भावः, ष्यञ्। न नञ् पूर्वात्तत्पुरुषादचतुरसङ्गतलवणवटयुधकतरसलसेभ्यः। पा ५।१।१२१। १ विहित क्रिया-करणमें अनुत्साह, काहिली, सुस्ती। (त्रि०) आल-स्योऽस्त्यस्य, अर्श आदि अच्। २ आलस्ययुक्त, काहिल।

'मन्दस्तुन्दपरिमृज आलस्यः शीतकोऽलसोऽनुष्णः।' (अमर)

आला (हिं० वि०) १ आर्द्र, क्लिन्न, तर, गीला।

"आला ईंधन ऊंचा चूल्हा तवा निपुत्तो भारी रे।
मूलन भँगिया जलती नाहीं फूंकत फूंकत हारी रे॥" (ग्राम्यगीत)

२ सपूय, पूयस्रावी, जख्मी, पीप देनेवाला। (पु०) ३ विविक्त स्थान, ताक, मोखा, सूराख।

"दीवाल खोयी आलोंने।
घर खोया सालोंने॥" (लोकोक्ति)

४ आलात, कुम्हारका आंवा। ५ आल्हा देखो। (अ० वि०) ६ आली, ऊंचा, अौवल। (पु०) ७ यन्त्र, हथियार।

आलाक्त (वै० त्रि०) विषाक्त, ज़हर-बुझा। "आलाक्ता या रुरुशीर्ष्ण्यथो यस्या अयोमुखं" (ऋक् ६।७५।१५) 'आलाक्ता आसिन विषेणाक्ता।' (सायण)

आलाव्य (वै० त्रि०) समुद्रकी लहरोंमें रहनेवाला।

आलात (सं० क्लो०) अलातमेव, स्वार्थे अण्। अलात, अङ्गार, कोयला। २ पजावा, कुम्हारका आंवा।

आलातचक्र (सं० क्लो०) लुकका चक्कर। किसी जलती चीज़को घुमानेसे आगका चक्कर जो बंधता, वही आलातचक्र कहलाता है।

आलान (सं० क्लो०) आ-लीयतेऽत्र, आ-ली आधारे ल्युट्। १ गजबन्धनस्तम्भ, हाथीके बांधनेका खूंटा। करणे ल्युट्। २ बन्धनरज्जु, बांधनेका रस्सा। ३ ग्रन्थि, गांठ। ४ रज्जु, रस्सा। भावे ल्युट्। ५ बन्धन, बांध, जकड़। (पु०) ६ शिवके एक मन्त्री।

'आलानं करिणां बन्धस्तम्भे रज्जौच न स्त्रियाम्।' (मेदिनी)

आलानिक (सं० त्रि०) आलानं बन्धनं प्रयोजन-मस्तीति, ठक्। विनयादिभ्यष्ठक्। पा ५।४।३४। १ आलान-सम्बन्धीय, हाथी बांधनेके खूंटेका काम देनेवाला। (क्लो०) स्वार्थे ठक्। २ आलान, हाथीके बांधनेका खूंटा।

"सोढुं न तत् पूर्वमवर्णमीशे आलानिकं स्थाणुमिव द्विपेन्द्रः।"(रघु १४।३८)

आलाप (सं० पु०) आ-लप भावे घञ्। १ कथन, परस्परकथन, कलाम, गुफ्तार, बोली। २ अङ्कगणित वा बीजगणितके प्रश्नका निर्देश, इल्महिन्दसा य जब-रुल मुकाबिलेके सवालका तख़मीना। ३ प्रश्न, सवाल।

"आलाप इव श्रूयते।" (शकुन्तला)

४ स्वरसाधनार्थ सा-ऋ-गम इत्यादि। अनुलोम, विलोम, गमक, मूर्च्छना, तान, लय और प्रकृत स्वर आदिके संयोग रागादिको प्रकृष्ट रूपसे देखाना आलाप कहाता है। आलाप शब्दका अर्थ रागके साथ बोलना अर्थात् किसी रागका यथा-निर्दिष्ट स्वरादि द्वारा प्रतिपन्न करना है। इसमें तालके विशेष समावेशका प्रयोजन नहीं पड़ता। आलाप कण्ठ और वीणादि यन्त्र दोनोंमें देखाया जा सकता है। किन्तु वर्णसंयोगसे बनने कारण गान, कण्ठ-भिन्न यन्त्रमें नहीं उतरता।

"रागालापनमालप्तिः प्रकटीकरणं मतम्।" (सङ्गीतदर्पण)

आलापक, आलापवत् देखो।

आलापचारी (सं० पु०) स्वरसाधन, तान लड़ानेका काम।

आलापन (सं० क्लो०) आ-लप्-णिच्-ल्युट्। १ पर-स्परकथन, स्वस्तिवाचन, बातचीत, बोलचाल। (त्रि०) २ आलाप करानेवाला, जो बात कराता हो।

आलापना (हिं० क्रि०) आलाप छोड़ना, तान लड़ाना, स्वर खींचकर गाना।

आलापनीय, आलापन देखो।

आलापवत् (सं० त्रि०) परस्पर कथन करनेवाला, जो आपसमें बातचीत करता हो। (पु०) आलापवान्। (स्त्री०) आलापवती।

आलापित (सं० त्रि०) १ परस्पर कथित, आपसमें कहा हुआ। २ स्वरसाधन-पूर्वक उच्चारित, गाया हुआ।

आलापिन् (सं० त्रि०) परस्पर कथन करनेवाला, जो आपसमें बातचीत करता हो। (पु०) आलापी।

आलापिनी (सं० स्त्री०) अलाबु-निर्मित मुरली, घोषेकी वंशी, मोहर। इसे प्रायः सपेरे बजाया करते हैं। सर्प इसका शब्द सुनकर मोहित हो जाता है।

आलापुर—युक्तप्रान्तके बदावूं जिलेका एक नगर। सैयदवंशीय सुलतान् अलाउद्दीन्के अनुसार इसका नाम आलापुर पड़ा है। यह स्थान बदावूं नगरसे ११ मील दक्षिणपूर्व अवस्थित है। सारस्वत ब्राह्मणोंका वास अधिक है। उनके कथनानुसार अला-उद्दीन्ने यह स्थान उन्हें दिया था।

आलाप्य (सं० त्रि०) आ-लप्यते, आ-लप्-ण्यत्। कथनीय, कहने लायक।

आलाबाला (हिं० पु०) १ छल, कपट, टालमटोल। २ आरोप, धोका। ३ आलस्य, सुस्ती, काहिली।

"दिन खोया आलेबाले।
कातन बैठी दिया उजाले॥" (लोकोक्ति)

आलाबु (सं० स्त्री०) पूर्वपदः दीर्घः वा ऊङ्। अलाबु, कद्दू, लौकी।

आलाबू, आलाबु देखो।

आलारासी, आलारैसी देखो।

आलारैसी (हिं० स्त्री०) १ प्रमत्तता, अनवधानता, बेपरवायी। (वि०) २ प्रमत्त, अनवधान, बेपरवा।

आलावर्त (सं० क्ली०) आलं पर्याप्तं आवर्त्यते, आल-आ-वृत-णिच् कर्मणि अच्। वस्त्र-निर्मित व्यजन, कपड़ेका पङ्खा।

"आलावर्तं तु वस्त्रस्य (व्यजनम्)।" (हेम ४।४५)

आलास्य (सं० पु०) आलं पर्याप्तं आस्यं मुखं यस्य, बहुव्री०। १ कुम्भीर, घड़ियाल, निहङ्ग, मगरमच्छ।

'नक्रः कुम्भीर आलास्यः।' (हेम ४।४१५)

(क्ली०) आ सम्यक् लास्यम्, प्रादि समा०। २ सम्यक् नृत्य, अच्छा नाच।

आलि (सं० पु०) आ-अल पर्याप्तौ इन्। १ वृश्चिक, बिच्छू। २ भ्रमर, भौंरा। (स्त्री०) ३ सखी, वयस्या, सहेली। ४ आवली, कतार, सतर। ५ अल्पकाल स्थायी सेतस्थ जलका निवारक सेतु, बांध। ६ कूलक, नाला। ७ सन्तति, श्रेणी, खान्दान, जात।

'आलिः पंक्तौ च संख्यायां सेतौ च परिकीर्तिते।' (विश्व)

(त्रि०) ८ अनर्थ, बेफायदा, जो किसी मसरफका न हो। ९ शुद्धान्तःकरण, साफ-दिल, ईमान्दार, सच्चा।

आलिखत् (सं० पु०) १ उल्लेखन, विदारण, खराश, खोंच। २ राक्षसविशेष, किसी हमजादका नाम।

आलिख्य (सं० अव्य०) पाण्डुचित्र उतारते हुये, नकशा खींचकर।

आलिगी (वे० स्त्री०) सर्पविशेष, किसी नागनका नाम।

आलिगव्य (सं० त्रि०) अलिगोरपत्यम्, यञ्। गर्गादिभ्यो यञ्। पा ४।१।१०५। अलिगु मुनिसे उत्पन्न, अलिगुसे पैदा। (स्त्री०) यञन्तत्वात् ष्फः षित्वात् ङीप्। प्राचां ष्फ तद्धितः। पा ४।१।१७। आलिगव्यायनी।

आलिङ्ग (सं० पु०) १ आलिङ्गन, हमागोशी, बगल-गीरी, अंकवारी। २ दुन्दुभि-विशेष, किसी किस्मका ढोल।

आलिङ्गन (सं० क्ली०) आ-लिगि-ल्युट्। आश्लेषण, बगलगीरी, हमागोशी, अंकवारी, गल-बहियां। आलिङ्गन सात प्रकारका होता है,—१ आमोदालिङ्गन, २ मुदितालिङ्गन, ३ प्रेमालिङ्गन, ४ मदनालिङ्गन, ५ मानसालिङ्गन, ६ कृष्यालिङ्गन और ७ विनोदा-लिङ्गन।

आलिङ्गना (हिं० क्रि०) आलिङ्गन करना, बगल-गीर या हमकिनार होना, गले लगाना, गलबहियां डालना, चिमटना, लिपटना, आगोशमें लेना, कौली भरना।

आलिङ्गित (सं० त्रि०) आ-लिगि-कर्मणि क्त-इट्। १ आश्लिष्ट, बगलगीर, हमकिनार, गले लगा हुआ। (क्ली०) २ आलिङ्गन, बगलगीरी, चिमट, लपट। (पु०) ३ तन्त्रसारोक्त विंशति अवधि त्रिंशत् अक्षर पर्यन्त मन्त्र विशेष।

आलिङ्गितवत् (सं० त्रि०) आलिङ्गन करनेवाला, जो

किसीको गले लगा चुका हो। (पु०) आलिङ्गित-वान्। (स्त्री०) आलिङ्गितवती।

आलिङ्गिन् (सं० त्रि०) आलिङ्गति, आ-लिगि-णिनि। आलिङ्गनकर्ता, गले लगानेवाला। (स्त्री०) आलिङ्गिनी।

आलिङ्गी (सं० पु०) १ आलिङ्गनकर्ता, गले लगाने-वाला। २ क्षुद्र दुन्दुभि विशेष, छोटे ढोलकी एक किस्म। यह यवाकार बनाया और छातीपर रखकर बजाया जाता है।

आलिङ्ग्य (सं० त्रि०) आलिङ्ग्यते, आ-लिगि कर्मणि ण्यत्। १ आलिङ्गनीय, गले लगाने लायक। (पु०) २ वादनीय मृदङ्ग विशेष, किसी किस्मका ढोल।

'अङ्क्यालिङ्ग्यौर्ध्वकास्तय:।' (अमर)

(अव्य०) आ-लिगि-ल्यप्। ३ आलिङ्गन करके, गले लगाकर।

आलिङ्ग्यायन (सं० पु०) आलिङ्ग्यस्य मृदङ्गभेदस्यायनं यत्र, बहुव्री०। १ ग्रामविशेष, जिस गांवमें ढोल बनें। तस्यादूरभवं नगरम्, अण् वरणादित्वात् तस्य लुप्। लुपियुक्तवद्व्यक्तिवचने। पा १।२।५१। आलिङ्ग्यायन ग्रामसे अदूरभव नगर, जो शहर आलिङ्ग्यायन गांवसे नज़दीक हो।

आलिञ्जर (सं० पु०) अलिञ्जर एव, स्वार्थे अण्। मृण्मय वृहत् पात्र, पानी भरनेको मट्टीका बड़ा बरतन।

आलिन् (सं० पु०) वृश्चिक, बिच्छू।

आलिनी, आलिन् देखो।

आलिन्द (सं० पु०) अलिन्द एव, स्वार्थे अण्। बहिर्द्वारका प्रकोष्ठ, मकान्के सामनेका चबूतरा।

'प्रघाणप्रघणालिन्दावहिर्द्वारप्रकोष्ठके।' (अमर)

आलिन्दक, आलिन्द देखो।

आलिप (सं० त्रि०) आ-लिप-क। आलेपनकारी, तिला करनेवाला, जो चुपड़ता हो।

आलिप्त (सं० त्रि०) आ-लिप-क्त। कृतालेपन, लीपा-पोता।

आलिम (अ० पु०) विद्वान् पुरुष, पढ़ा-लिखा आदमी।

,, आलिम वह क्या अमल न हो जिसका किताब पर।" (लोकोक्ति)

'आलिम'का बहुवचन 'उलमा' है।

आलिम-उल्-ग़ैब (अ० वि०) सर्वज्ञ, अन्तर्यामी, ख़ुदा, छिपा हाल जान लेनेवाला।

आलिमाना (अ० वि०) ज्ञानवान्, पढ़ा-लिखा, समझदार।

आलिमाना गुफ़्तगू (अ० स्त्री०) विद्या-सम्पन्न वार्ता-लाप वा विवाद, इल्मियतकी बातचीत या बहस।

आलिम्पन (सं० क्ली०) आ-लिप्-ल्युट्, पृषोदरा-दित्वात् नुम्। उत्सवके समय लीप-पोत।

आलिम्पना (सं० स्त्री०) हमि, आसूदगी, छकाहट।

आलिवङ्गा (सं० स्त्री०) आलिम। गुजरातमें इसे आग्यालबीज कहते हैं।

आलिसपायिस (Allspice)—वृक्षविशेष, एक दरख्त। (Pimenta vulgaris) यह वृक्ष अमेरिकासे भारतवर्ष आया है। पत्र हरित और मुकुल श्वेत रहता है। मुकुल निकलते समय प्रकृतिकी शोभा फूट पड़ती है। सौरभसे चारो दिक् गन्धमय हो जाती है। प्रत्येक पत्र तथा प्रत्येक कोष परिमल प्रदान करता है। फलमें दालचीनी, जायफल और लवङ्गका गन्ध रहता है। पत्रसे सुगन्धि तैल खींचते हैं। यह तैल कभी-कभी बाज़ारमें लवङ्गतैलके नामसे भी बिक जाता है। व्यवसायी अपक्व फलको तोड़ धूपमें सुखाते और व्यवहारमें लाते हैं।

आली (सं० स्त्री०) १ सखी, सहेली। २ पंक्ति, क़तार।

(हिं० स्त्री०) ३ आर्द्र, भीगी, गीली। ४ चार बिस्वेकी नाप।

(अ० वि०) ५ वरेण्य, बुलन्द, बड़ा।

बङ्गाल और उड़ीसेमें एक मछलीको भी आली कहते हैं।

आलीक़दर (अ० स्त्री०) उच्च पद, ऊंचा दरजा।

आलीखान्दान (अ० वि०) कुलीन, जो अच्छे बड़े घरका हो।

आलीजनाब (अ० पु०) महाशय, हुजूर, सरकार।

आलीज़र्फ़ (अ० वि०) योग्य, लायक़।

आलीजाह, आलीजनाब देखो।

आलीढ़ (सं० त्रि०) आ-लिह-क्त। १ आस्वादित, चाटा या खाया हुआ। २ क्षत, चीथा हुआ। (क्ली०) ३ युद्धार्थ स्थिति विशेष, लड़ायीकी एक बैठक। दक्षिण चरण अग्रसर और वाम चरण पीछेको कुछ टेढ़ाकर बैठनेको आलीढ़ कहते हैं। यह स्थिति वाण मारने या गोली चलानेमें रहती है। ४ लेहन, चाट। ५ अशित, भोजन। (पु०) ६ पुरुषविशेष, किसी आदमीका नाम।

आलीढक (सं० क्ली०) आलीढ़ संज्ञायां कन्। वत्सका विहार, बछड़ेका खेल।

आलीदिमाग़ (अ० पु०) विशाल बुद्धि, बड़ी समझ।

आलीन (सं० त्रि०) आ-ली कर्तरि क्त ओदित्वात् तस्य न। १ आश्लिष्ट, पिगला या गला हुआ।

आलीनक (सं० क्ली०) आलीन संज्ञायां कन्। रङ्ग, रांगा। अन्य धातुके साथ संश्लिष्ट हो जानेसे रङ्ग को आलीनक कहते हैं।

आलीमर्तबा (अ० पु०) आलीक़दर देखो।

आलीशान् (अ० वि) १ उज्ज्वल, अतिशोभन, नुमायशी। २ उत्तम, प्रधान, उम्दा, बड़ा।

आलीहिम्मत (अ० वि०) आकाङ्क्षी, अभिलाषी, बलन्द-नज़र, आरज़ू या तमन्ना रखनेवाला, जो बहुत चाहता हो।

"आलीहिम्मत सदा मुफ़लिस।" (लोकोक्ति)

आलीहिम्मती (अ० स्त्री०) १ महामनस्कता, मिज़ाजदारी। २ स्पृहा, आकाङ्क्षा, गुराख़-हौसलगी।

आलु (सं० पु०) १ पेचक, घुग्घू, बूम, उल्लू, घुग्घू। २ ज़मींकन्द, सूरण। ३ कोविदार, आबनूस। (क्ली०) आ-लु-ड्। ४ भेलक, बेड़ा, चौघड़ा। ५ मूल, जड़। (स्त्री०) आ-ला-ड्। ६ गलन्तिका, मट्टीका छोटा घड़ा। इसके पेंदेमें छेद रहता, जिससे शिवलिङ्ग या तुलसी वृक्षपर जल टपकता है। 'आलुर्गलन्तिकायां स्त्री क्लीवं मूले च भेलके।' (मेदिनी) आलु देखो।

आलुक (सं० क्ली०) आलु स्वार्थे कन्। १ कन्दविशेष, काष्ठालु, शङ्खालु, हस्त्यालु, पिण्डालु, मध्वालु और रक्तालु भेदसे यह बहुत प्रकारका होता है। काष्ठालु काष्ठसदृश कठिन, शङ्खालु श्वेततायुक्त, हस्त्यालु दीर्घ तथा महाशरीर, रक्तालु रक्तवर्ण, पिण्डालु गोल और मध्वालु मधु-जैसा मिष्ट रहता है। आलुक मल-मूत्र-निःसारक, रूक्ष, दुर्जर, रक्त-पित्तघ्न, वात-कफघ्न, बल्य, वृष्य और स्तन्य-वर्धन है। (भावप्रकाश)

(पु०) २ कोविदार, आबनूस। ३ शेषनाग। ४ ज़मींकन्द।

'शेषो नागाधिपोऽनन्तो द्विसहस्राक्ष आलुकः।' (हेम)

आलुकी (सं० स्त्री०) रक्तालुभेद, घुयिया। यह बलकारी, स्निग्ध, गुरु, हृदय-कफघ्न तथा विष्टम्भी होती और तेलमें तलकर खानेसे अत्यन्त रुचिकर निकलती है। (भावप्रकाश)

आलुञ्चन (सं० क्ली०) आ-लुचि-ल्युट्। उत्पाटन, नोच-खसोट, चीर-फाड़।

आलुञ्चित (सं० त्रि०) आ-लुचि-क्त। उत्पाटित, नोचा-खसोटा, जो चीर या फाड़ डाला गया हो।

आलुण्टन (सं० क्ली०) आ-लुटि-ल्युट्। बलहेतु अपहरण, लट-पाट, छीना-छीनी।

आलुल (सं० त्रि०) आ-लल-क। १ उन्मुक्त, चञ्चलीभूत, छूटा हुआ।

आलुलायित (सं० त्रि०) आ-लल भृशादित्वात् क्यङ्-क्त। असंयत, हिलने-डुलनेवाला, जो रुका न हो।

आलू (हिं० पु०) आलु, कन्दशाकविशेष। (Solanum tuberosum) पहले भारतवर्षमें आलू न रहा, १७८२ ई०को विलायतसे आया था। महाराष्ट्र और मारवाड़ी इसे बटाटा कहते, जिसे अंगरेजी 'पोटेटो' (Potato) शब्दका अपभ्रंश समझते हैं।

वास्तवमें आलू दक्षिण-अमेरिकाका पौदा है। आज भी चिली प्रान्तमें आप ही आप उपजता है। लिमा और नव ग्रेनाडामें भी वन्य अवस्थापर मिला है। अमेरिकाके आविष्कारकाल यह चिलीसे नव ग्रेनाडातक बोया जाता था। किन्तु दक्षिण-अमेरिकाके पूर्व प्रान्त और मेक्सिकोमें इसे कोई जानते न रहा। १५३५ और १५८५ ई०के बीच युरोपीय, आलूको स्पेन ले गये थे। वहींसे इसकी खेती पोर्तुगाल, इटली, फ्रान्स, बेलजियम और जर्मनीमें फैल पड़ी। १५८६ ई०को सर वाल्टर

रालेने कारोलिनासे स्वतन्त्र भावमें आलू आयर्लेण्ड पहुंचाया था। पहले इङ्गलेण्ड, स्काटलेण्ड और फ्रान्सके लोग कुसंस्कारसे आलू बोते न रहे। इसके साथ उन्हें विषवृक्ष उत्पन्न होनेका ध्यान था। १७२८ ई०को स्काटलेण्ड-निवासी टमास् प्रेष्टिस नामक किसी व्यक्तिने पहले-पहल आलू बोया। उसके बाद क्रम-क्रम यह अफ़रीका, एशिया और अष्ट्रेलियामें चल निकला।

आजकल भारतवर्षमें सब जगह आलू बोते हैं। बङ्गालमें हुगली और वर्धमान ज़िला इसकी कृषिका प्रधान स्थान है। प्रायः जहां नदीका पानी सूखा, वहां आलू बो दिया जाता है। मट्टी रेतीली रहनेसे यह बहुत उपजता है। कंकड़दार ज़मीन् ठीक नहीं पड़ती। सींचनेकी भी अधिक आवश्यकता रहती है। बीजके लिये प्रायः छोटा-छोटा आलू चुनकर निकालते और मचानपर फैलाकर छायामें सुखाते हैं। किन्तु सफेदी आ जानेसे यह बिगड़ जाता और बीजके योग्य नहीं रहता। एक ही खेतमें प्रति वर्ष लोग आलू लगाया करते हैं। किन्तु पानीकी भड़ पड़नेसे फसल सड़ जाती है। देशीको पहले और पहाड़ीको पीछे बोते हैं। खेतको अच्छी तरह जोत जात ४० फीटके अन्तर दो बड़ी और १७ फीटके अन्तर छोटी छोटी सींचनेकी नाली रहती हैं। खलीकी खाद पड़ती है। फिर कुदालसे भूमिको गहरे खोद आलू जमाते हैं। कोपल २।३ इञ्च बढ़ आनेसे पौदेको उखाड़ कर दूसरे स्थानमें सात-सात इञ्च दूर लगा देते हैं। देशी आलूमें कोपल शीघ्र आता, किन्तु बम्बैयामें देरसे निकलता है। उगनेमें विलम्ब लगनेसे सींचना पड़ता है। पौदा छः-सात इञ्च बढ़नेपर सात या दश दिनके बाद पानी दिया जाता है। बीघे पीछे २० मन गोबर और दश मन खलीकी खाद लगती है। पौदा सूखनेसे आलू खोदते हैं। अधिक वृष्टि होनेसे सड़नेकी बीमारी दौड़ती और फ़सल मारी पड़ती है। पत्ती टेढ़ी हो जानेसे भी पौदा सूखता है। आलमें दीमक लगनेसे बड़ी हानि पहुंचती है।

आसामकी खासी पहाड़पर यह बहुत उपजता है। किन्तु कृषिकार्य सुचारुरूपसे न चलनेपर सात-आठ दिनमें आलू सड़ जाता है।

युक्तप्रान्तके नैनीताल, अलमोड़े, पावरी, लोहघाट और समतल स्थानमें यह बहुत होता है। पहाड़ी आलू आकारमें बड़ा और स्वादमें अच्छा निकलता है। १८४३ ई०को मेजर वेल्स मेन इसे युक्तप्रान्तमें लाये थे। बीजके लिये आलू समय-समयपर विलायतसे मंगाया जाता है। पौष मास फसल होती है। एक पौदेमें कोई पाव भर आलू बैठता है।

पञ्जाबमें बड़े-बड़े नगरोंके पास इसकी कृषि होती है। मध्यप्रदेशका आलू कुछ बिगड़ गया है। प्रायः अक्तोबरमें बोते और फवरी या मार्चमें खोदते हैं।

बम्बई प्रान्तमें पूना, अहमदनगर, सतारा, अह-मदाबाद और कैड़ा इसके बोनेकी खास जगह है। महाबालेश्वरका आलू सुप्रसिद्ध है। खानदेशका पाचोरा स्थान आलूकी मण्डी है।

मन्द्राज प्रान्तके नीलगिरि पर्वतपर अच्छा आलू उपजता है। किन्तु प्रतिवर्ष एक ही खेतमें कृषि होनेसे आलूमें अब रोग लग गया है।

ब्रह्मदेशमें आलू कम होता है। कितनी ही चेष्टा लगाते भी लोग इसकी कृषिसे लाभ उठा न सके।

औषधमें आलूको सुखाकर सालब मिसरीकी जगह व्यवहार करते हैं। प्रायः समग्र भारतवासी इसे खाते हैं। किन्तु लोग इसे अजीर्ण और बात बढ़ाने-वाला समझते हैं। व्रतके दिन अन्न न खानेसे प्रायः आलू व्यवहृत होता है। पहले हिन्दू इसे अशुद्ध मानते थे। किन्तु अब यह प्रथम श्रेणीके शाकमें परिगणित है।

(स्त्री०) २ क्षुद्रजलपात्र, पानी पीनेका छोटा बरतन।

आलूक (सं० क्ली०) आ लुनाति, आ-लू-क्विप् स्वार्थे कन्। १ एलवालुक, एक खुशबूदार चीज़। २ आलुक, किसी किस्मकी गठीली जड़।

आलूका सालन (हिं० पु०) आलुकयूष, आलूका झोर।

आलूचा (फा० पु०) फेनिलविशेष, किसी किस्मका

बेर। पीले रङ्गका आलूचा युरोप, सिलिसिया, और आरमेनियामें तथा काकेसस पर्वतसे उत्तर एवं हिमालयपर गढ़वालसे काश्मीरतक वन्यस्थानपर मिलता है। अलमोड़ेके समीप जो वृक्ष लगता, उसमें गहरे हरे और नारङ्गी जैसे रङ्गका फल उतरता है। समतल भूमिकी अपेक्षा पर्वत-प्रान्त हो इसकी वृद्धिके लिये उपयुक्त है। आलूचेका गोंद कुछ-कुछ अरबी-जैसा होता है। गुठलीके तेलसे रोशनी करते हैं। किन्तु वह किसी कामका नहीं होता और शीघ्र दुर्गन्ध देने लगता है।

लकड़ी कुछ-कुछ लाल तथा भूरी और दानेदार निकलती, किन्तु थोड़े होमें मुड़ और फट जाती है। काश्मीरमें इसके सन्दूक तैयार होते हैं।

फल पकनेपर बड़ा, पीला, मीठा और रसीला होता है। लोग प्रसन्नतापूर्वक खाया करते हैं। अफ़ग़ानस्थानसे सूखा फल बहुत आता और आलू-बोखारेके नामसे बाज़ारमें बिकता है। नर्म आगसे पकाकर लोग इसे बहुत खाते हैं। आलूबोखारेकी चटनी स्वादु और लाभदायक होती है। यह कुछ-कुछ खट्टा, ठण्डा और तर रहता है। खाली पेट खानेसे पाचक और रेचक निकलता है। पित्त बढ़ने और दाह उठने पर यह बहुत उपकार करता है। मूल सङ्कोचक होता है।

आलूदा (फ़ा० वि०) दूषित, गन्दा, लिथड़ा हुआ।

आलून (सं० त्रि०) आ-लू-क्त तस्य न। १ ईषत् छिन्न, कुछ कुछ कटा हुआ। २ सम्यक् छिन्न, खूब कटा हुआ।

आलू-बालू (हिं० पु०) फेनिल विशेष, किसी क़िस्मका आलूचा। आलूचा देखो।

आलूबुख़ारा (फ़ा० पु०) शुष्क फेनिल विशेष, बुखारे प्रान्तका सूखा आलूचा। आलूचा देखो।

आलूशफ़तालू (हिं० पु०) क्रीड़ा विशेष, एक खेल। तीन लड़के मिलकर यह खेल करते हैं। एक लड़का दूसरेकी पीठपर चढ़ अपने हाथसे उसकी आंखें मूंद देता और तीसरा उंगली दिखाकर घोड़े बने लड़केसे उसकी संख्या पूछता है। संख्या ठीक बता देनेसे उसका दांव उतरता और वह उंगली दिखानेवाले लड़केपर चढ़ता है।

आलेख (सं० पु०) आ-लिख-घञ्। १ सम्यक् लेखन, खासी लिखावट। आधारे घञ्। २ लेखन-पत्र, लिखनेका काग़ज़।

आलेखन (सं० क्ली०) आ-लिख भावे ल्युट्। १ सम्यक् लिखन, खासो लिखावट। (पु०) २ आचार्य, जन्मपत्रादि प्रभृति लिखनेवाला। करणे ल्युट्। ३ लिखन-साधन पत्र प्रभृति, लिखनेका काग़ज़ वग़ैरह। (त्रि०) ४ लेखनकर्ता, लिखनेवाला। आलिखन प्रयोग भी होता है।

आलेखनी (सं० स्त्री०) आघर्षणा, वर्तिका, बालोंका क़लम, कूंची या सुरमेका क़लम।

आलेख्य (सं० क्ली०) आ लिख्यते, आ-लिख कर्मणि ण्यत्। १ पटस्थ चित्र, तसवीर, नक़शा। 'चित्रमालेख्यम्।' (हेम ३।५८२) २ लेख्य देवादिका प्रतिबिम्ब। (त्रि०) ३ लेखनोय, लिखने या उतारने क़ाबिल। आधारे ण्यत्। ४ चित्रसम्बन्धीय, तसवीरके मुताल्लिक़।

आलेख्यलेखा (सं० स्त्री०) चित्रविद्या, रङ्गसाज़ी, नक़्क़ाशी।

आलेख्यशेष (सं० त्रि०) आलेख्यं चित्रमेव शेषो यस्य, बहुव्री०। मृत, मरा हुआ। प्रतिबिम्बमात्र चित्रपर शेष रहनेसे मृत व्यक्तिको आलेख्य-शेष कहते हैं।

"बाष्पायमानो बलिभन्निकेतमालेख्यशेषस्य पितुर्विवेश।"

(रघु १४।१५)

आलेप (सं० पु०) १ आ-लिप-घञ्। उपलेप, तिला, मरहम, तेल। शरीरमें उत्पन्न होनेवाले शोथव्रणपर जो यथोक्त औषध चुपड़ा जाता, वह आलेप कहाता है। २ बौद्धशास्त्रके मतानुसार—अंश, खण्ड, टुकड़ा।

आलेपन (सं० क्ली०) कर्मणि ल्युट्। आलेप देखो।

आलेय (सं० क्ली०) पद्मकाष्ठ, एक खुशबूदार लकड़ी।

आलेया (सं० स्त्री०) १ रागिणी विशेष। २ श्मशान वा पङ्कयुक्त स्थानसे उत्थित वाष्प विशेष, मरघट या दलदलकी हवा। पल्लिग्रामके लोग इसे भूत समझते हैं। यह वायुकी अपेक्षा हलकी होती है।

आलेय (सं० पु०) अश्व-मुख-रोग, घोड़ेके मुंहकी बीमारी। हनुदेश (जबड़े)के अभ्यन्तर आश्रयपर दन्त निकलनेसे अश्वको आलेय रोग होता है। यह श्लेष्म और रक्तसे उपजता है। अश्व दुर्मन तथा जर्जर पड़ जाता, धीरे-धीरे खाता-पीता, खांसते रहता और बलको गंवा देता है। (जयदत्त)

आलोक (सं० पु०) आलोक्यतेऽनेन, आ-लोक करणे घञ्। १ सूर्यादि जन्य प्रकाश, रोशनी, उजाला। नैयायिक आलोकको ही द्रव्यके चाक्षुष प्रत्यक्षका कारण बताते हैं। भावे ल्युट्। २ दर्शन, दीद, नज़ारा। ३ जयशब्द, सना, तारीफ़।

"आलोकशब्दं वयसां विरावैः।" (रघु ३।२)

'आलोको जयशब्दः स्यात्।' (विश्व)

४ उल्लास, फ़ज़्ल। ५ दीप, क़न्दील, चिराग़।

आलोकन (सं० क्ली०) आ-लोक भावे ल्युट्। १ दर्शन, नज़ारा। २ दीप, क़न्दील, चिराग़।

आलोकनीय (सं० त्रि०) आ-लोक कर्मणि अनीयर्। १ दर्शनीय, नमूदार, देखने क़ाबिल। २ ध्यान दिया जानेवाला, जो ख़याल किये जानेको हो।

आलोकनीयता (सं० स्त्री०) दर्शनीयता, नमूदारी, जिस हालतमें देख सकें।

आलोकित (सं० त्रि०) आलोक कर्मणि क्त। १ दृष्ट, नज़रमें पड़ा हुआ, जो देखा गया हो। भावे क्त। २ दर्शन, नज़ारा।

आलोकिन् (सं० त्रि०) आलोकते, आ-लोक-णिनि। द्रष्टा, देखनेवाला। (पु०) आलोकी। (स्त्री०) ङीप्। आलोकिनी।

आलोक्य (सं० त्रि०) आलोक्यते, आ-लोक कर्मणि ण्यत्। १ दर्शनीय, देखने क़ाबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ आलोकन करके, देखकर।

आलोच (हिं० पु०) शीला, काटनेसे खेतमें गिरी हुई बाल।

आलोचक (सं० त्रि०) आलोचते, आ-लोच-ण्वुल्। १ आलोचनकारी, देखनेवाला। २ विवेचक, देखानेवाला। (क्ली०) ३ दृष्टिका गुण या दृश्यका कारण, नज़रकी सिफ़त या नज़ारेका सबब। यह एक प्रकारका अग्नि होता और नेत्रमें रहता है। इसीसे रूपादिका दर्शन पाते हैं। ४ तन्मात्मक पित्त, किसी क़िस्मका जर्द-माद्द।

आलोचन (सं० क्ली०) आलोच भावे ल्युट्। १ विशेष धर्म द्वारा विवेचनाका करना, ख़यालका लड़ाना। २ दर्शन, नज़ारा। ३ अन्तःकरणकी एक वृत्ति। सांख्य मतसे यह सामान्य, विशेषशून्य, इन्द्रियजन्य और निर्विकल्प-स्थानीय है। (अव्य०) मर्यादार्थे अव्ययी०। ४ लोचनपर्यन्त, नज़रतक। (स्त्री०) णिच्-युच्-टाप्। आलोचना।

आलोचनीय, आलोच्य देखो।

आलोचित (सं० त्रि०) आ-लोच-क्त-इट्। आलोचनाके विषयीभूत, देखा या समझा हुआ।

आलोच्य (सं० त्रि०) आ-लोच-ण्यत्। १ आलोचना करने योग्य, जो देखे या समझे जाने क़ाबिल हो। (अव्य०) ल्यप्। २ आलोचना करके, देखभाल या समझ-बूझकर।

आलोड़न (सं० क्ली०) आ-लुड़ मन्थे भावे ल्युट्। १ विलोड़न, मथायी। २ मिश्रण, मिलावट।

आलोड़ना (हिं० क्रि०) मथन करना, मथना।

आलोड़ित (सं० त्रि०) आ-लुड़-क्त-इट्। १ मथित, मर्दित, मथा या मला हुआ। (क्ली०) भावे क्त। २ मन्थन, मथायी।

आलोल (सं० त्रि०) ईषत् लोलः, प्रादि-समा०। १ ईषत् चञ्चल, चुलबुला सा। २ विचलित, कम्पित, हिला या सरका हुआ।

"क्रीडालोलाः श्रवणपरुषैर्गर्जितैर्भाययन्ताः।"

(मेघदूत ६२)

३ लम्बमान, बढ़ा हुआ। (पु०) ४ चाञ्चल्य, कम्प, कंपकंपी, बेकली।

आलोलित (सं० त्रि०) आ-लुल-क्त-इट्। वा क्रिया-भावान्नेषः। पा १।२।२१। १ ईषत् चञ्चलीकृत, हिलाया या घबराया हुआ। भावे क्त। २ ईषत् चञ्चल, चुलबुलासा।

आलोष्टी (सं० अव्य०) ईषत् लोष्टमिव करोत्यनेन, आलोष्ट करोत्यर्थे णिच् बाहुलकात् ई। हिंसाके।

आलोष्टायन (सं० त्रि०) अलोष्टे भवः, फक्। अलोष्टभव, लोष्टेसे न निकलनेवाला।

आलूक (सं० क्ली०) आलूक, आलूबोखारा।

आल्हा (हिं० पु०) १ छन्दोविशेष, एक बहर। इसमें ३१ मात्रा लगती हैं। १६ मात्रापर विराम पड़ता है। जैसे—राम समुन्दरको मथि डारी चौदह रतन लीन्ह निकसाय। आल्हा पिरथिवीको मथिडारी घर घर सूर लीन्ह बंधवाय।

२ एक विख्यात वीर। पृथ्वीराजके समय यह महोबेमें विद्यमान रहे। इनकी माताका देवला, पिताका दस्सराज, भ्राताका उदयचन्द्र (ऊदल) और पुत्रका नाम इंदल रहा। सुना, कि आल्हाने देवीका अर्चन बहुत किया था। भगवतीने एक दिन प्रसन्न हो वरदान दिया,—तुम अजर-अमर रहो और कृपाण खींचते ही जगत्‌को नाश करोगे। महोबेमें यह परमाल नृपतिकी सेनाके नायक रहे। बावन युद्ध करते भी आल्हाने कभी कृपाण न खींचा। क्योंकि उससे देवीके वचनानुसार जगत् नाश होनेका डर था। लोग इन्हें बनाफर जातिके ठाकुर बताते हैं। कहते, आज भी आल्हा कजरी वनमें रहते हैं। इनकी माता देवलाके वीरत्वका वर्णन इस प्रकार सुनते हैं,—

दस्सराज किसी वनमें आखेट मारने गये थे। उन्होंने दो जङ्गली भैंसे लड़ते देखे। कितनी ही चेष्टा करते भी वह उन्हें लड़नेसे छोड़ा न सके। अन्तको एक स्त्री आ पहुंची थी। उसने हाथसे भैंसोंको पकड़ अलग-अलग कर दिया। दस्सराज स्त्रीकी सुन्दरता और वीरता देख मोह गये थे। अन्तको घर ला उससे विवाह किया। उसी स्त्रीका नाम देवला था।

आल्हा और ऊदल दोनो भाई बड़े वीर रहे। इन्होंने कयी बार पृथ्वीराजका मुंह मोड़ दिया था।

आव (हिं० पु०) आयुः, हयात, जिन्दगी।

आव-आदर (हिं० पु०) आदर-सत्कार, खातिर-तवाज़ा, मान-पान।

आवक (सं० त्रि०) अवतीति, अव रक्षणे ण्वुल्। रक्षक, मुहाफ़िज़, बचानेवाला।

आवज (हिं० पु०) प्राचीन वाद्य विशेष, एक पुराना बाजा। यह ताशे-जैसा होता और चमारोंमें खूब चलता है।

आवझ, आवज देखो।

आवटना (हिं० पु०) आवर्तन, अदल-बदल, चल-फिर, धूमधाम। (क्रि०) २ औटना, आगपर चढ़ा गाढ़ा करना।

आवट्टज (सं० पु०) १ उत्तम अश्व, बढ़िया घोड़ा। २ पारसिक अश्व, अरबी घोड़ा।

आवट्य (सं० पु०) अवटस्य ऋषिविशेषस्य गोत्रापत्यम्, गर्गादि० यञ्। अवट ऋषिका अपत्य।

आवट्या (सं० स्त्री०) आवट्य-चाप्। यावट्याच। पा ४।१।७५। आवट्यायनी स्त्री।

आवत् (वै० स्त्री०) सामीप्य, पड़ोस।

आवन (हिं० पु०) आगमन, आमद, अवायी।

आवनि (हिं० स्त्री०) आवन देखो।

आवनेय (सं० पु०) अवन्या अपत्यम्, ढक्। स्त्रीभ्यो ढक्। पा ४।१।१२०। अवनीसुत, मङ्गलग्रह। कहते, पूर्वकाल शिव दाक्षायणीके वियोगमें तपस्या करते थे। उसी समय ललाटसे एक विन्दु घर्म गिरा और उससे लोहिताङ्ग एक कुमार उत्पन्न हुआ। पृथिवीको दर्शनसे स्नेह लगा था। उसने कुमारका पालन-पोषण किया। इसीसे मङ्गल ग्रहको माहेय, आवनेय आदि नामसे पुकारते हैं।

आवन्त (सं० पु०) अवन्तेरयं राजा, अवन्ती-अण्। अवन्ती देशके अधिप चन्द्रवंशीय नृपति-विशेष। कुन्तीके किसी रण-विशारद-पुत्रका नाम धृष्ट रहा। धृष्टके आवन्त, दशार्ह और विषहर नामक तीन वीर पुत्र हुये थे। (हरिवंश ३४ अ०)

आवन्तिक (सं० त्रि०) अवन्ति देश-जात, उज्जैनके मुतालिक।

आवन्त्य (सं० त्रि०) अवन्तिषु भवः तस्या राजा वा, ञ्यङ्। १ अवन्तिदेशभव, उज्जैनका पैदा। २ अवन्ति देशका राजा, उज्जैनका मालिक। ३ व्रात्य ब्राह्मणकी सवर्ण स्त्रीसे उत्पन्न एक जाति।

"व्रात्यात् तु जायते विप्रात् पापात्मा भूर्जकण्टकः।
आवन्त्यवाटधानौ च पुष्पधः शैख एव च॥" (मनु १०।२१)

व्रात्य ब्राह्मणकी सवर्ण स्त्रीसे उत्पन्न सन्तानका नाम भूर्जकण्टक होता है। किन्तु देश विशेषमें उसीको आवन्त्य, वाटधान और पुष्पध भी कहते हैं। व्रात्य देखो।

आवपन (सं० क्लो०) आोप्यते स्थाप्यते धानाद्यत्र, आ-वप आधारे ल्युट्। १ पात्र, जर्फ़, जगह। "गोणी आवपनश्चेत्।" (सिद्धान्तकौमुदी) भावे ल्युट्। २ भूमिमें वीजादिका निधान, बोना। अन्तर्भूतण्यर्थे ल्युट्। ३ केशादि सर्वमुण्डन, बाल वग़ैरह सबका मुंडा डालना। (त्रि०) करणे ल्युट्। ४ वपनसाधन, बोनीमें लगनेवाला।

आवपनिष्किरा (सं० स्त्री०) आवपनिष्किर इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यंस० समा०। वीजवपनादि क्रिया, वीज बोने वग़ैरहका काम।

आवपनी (वै० स्त्री०) आवपन-ङीप्। पात्र, जर्फ़, जगह।

आवपन्तिक (वै० त्रि०) विकीर्ण, विक्षिप्त, फैलाया या डाला जानेवाला।

आव-भगत, भाव-आदर देखो।

आव-भाव, भाव-आदर देखो।

आवय (सं० पु०) आ-अज-अच् वीभावः। १ आगमन, आमद, अवायी। कर्तरि अच्। २ आगमनकर्ता, आनेवाला। ३ देशविशेष, एक मुल्क। ४ जल, आब, पानी। (वै० क्लो०) ५ वैयर्थ्य, शुष्कता, लाहासिली।

आवया (सं० स्त्री०) जल, आब, पानी।

आवयाज् (वै० त्रि०) अवयाज्, यज्ञानुष्ठान द्वारा प्रायश्चित्त करनेवाला।

आवरक (सं० क्लो०) आवृणाति अनेन, आ-वृ-करणे अप् ततः संज्ञायां कन्। १ आच्छादन वस्त्रादि, ढांकनेका कपड़ा वग़ैरह। (त्रि०) २ आच्छादक, ढांकनेवाला।

आवरण (सं० क्लो०) आव्रियते देहः चैतन्यं वा अनेन, आ-वृ करणे ल्युट्। १ चर्मफलक, ढाल। २ वेदान्त-मत-सिद्ध चैतन्यका आवरक अज्ञान। आवरणशक्ति देखो। ३ आच्छादन-साधनमात्र, ढांकनेकी हरेक चीज़। ४ प्राचीरादि, चहारदीवारी वग़ैरह। ५ वेष्टन, बेड़ा। भावे ल्युट्। ६ आवृति, लपेट।

आवरण-पत्र (सं० क्लो०) आच्छादनपत्र, लपेटका काग़ज़।

आवरणशक्ति (सं० स्त्री०) आवरणे शक्तिः, ७-तत्, आवृणोति, आ-वृ कर्तरि ल्युट्, आवरणं शक्तिः कर्मधा० वा०। वेदान्त-मतसिद्ध अज्ञान-शक्ति, आत्मा या चैतन्यको छिपानेवाली ताक़त। वेदान्तमतमें जैसे अल्प होते भी मेघ बहुयोजन विस्तृत सूर्यमण्डलको दर्शकोंके नयनपथसे अन्तर्भूत करता, वैसे ही तुच्छ अज्ञान अपरिमित असंसारी आत्माको बुद्धि-विपर्ययसे छिपा रखता है। इस शक्तिसे आवृत व्यक्तिको वृथा अभिमान आता और प्रमत्तादि अवस्थामें रज्जु देखनेसे सर्प समझनेकी तरह वह अपनेको कर्ता, भोक्ता, सुखी और दुःखी माना करता है।

आवरसमक (सं० क्लो०) अवरं समानम्, एकदेशी समा०, निपातनात् ह्रस्वः। ग्रीष्मावरसमात् वुञ्। पा ४।३।४९। १ अवरसम वर्षका आद्यकाल। तत्र देयं ऋणम् वुञ्। २ वर्षके आद्य समय दत्त ऋण। (त्रि०) ३ आगामी वर्ष दिया जानेवाला।

आवर्जित (सं० त्रि०) आ चुरा० वृज-णिच्-क्त। दत्त, त्यक्त, निम्नीकृत, आहृत, संयमित, दिया, छोड़ा, झुकाया या बहाया हुआ।

आवर्ज्य (सं० अव्य०) तिर्यक्, तिरछे तौरपर।

आवर्त (सं० पु०) आ-वृत भावे घञ्। १ घूर्णायमान जल, गिर्दाब, भंवर। 'स्यादावर्तोऽम्भसां भ्रमः।' (अमर) २ रोमसंस्थान विशेष, बालकी भंवरी। कितने ही मनुष्योंके बाल फेरदार होते हैं। अश्वका रोमावर्त शुभाशुभ फल-सूचक है। यह छानवे प्रकारका होता है। बीस प्रकारका शुभ और छिहत्तर प्रकारका आवर्त अशुभ है। उत्तर ओष्ठ प्रपाण पड़नेसे यह शुभावह और सृक्कण सर्वकाम-फलप्रद ठहरता है। ललाटमें दो, तीन या चार आवर्त आनेसे अश्व धन्यतम निकलता है। ललाटके ऊर्ध्व आनुपूर्वस्थित तीन आवर्तका नाम निःश्रेणी पड़ता, जिसमें स्वामीका सर्वार्थ सधता है। शिरःके केशान्तमध्य अवपर आवर्त उठनेसे अश्वके स्वामीका जय होता है। घण्टाबन्धके समीप निगालमें लगनेवाला देवमणि शुभकृत् है। कर्णमूल, बाहु, केशान्त और मस्तकका आवर्त पूजित होता है। जिस अश्वके वक्षःपर चार आवर्त पड़ता

और कण्ठमें एक देखायी देता, वह धन्य तथा सर्व-कामद रहता है। रन्ध्रका स्वामीको ईप्सित अर्थप्रद और उपरन्ध्रका आवर्त अतिपूजित है। शुभदेशका आवर्त शङ्ख, चक्र, गदा, वज्र, शुक्ति और पद्म जैसा निकलनेसे अत्यन्त शुभ कहाता है। किन्तु दूसरा आवर्त अति निन्दित, स्वामीको क्लेशावह और धन तथा प्राणका अपहारक है। नासिकापुटके मध्य प्रोथ प्रदेशपर उठनेवाला आवर्त स्वामीको नाश करता है। नासिकाके छिद्रसे ऊर्ध्वका आवर्त क्लेशकारक है। अश्वके गण्डका आवर्त दुरासद होनेसे स्वामीको मार डालता है। चक्षु:से नीचे अश्रुपातके समुद्दिष्ट प्रदेशपर पड़नेवाला आवर्त स्वामीके कुलको नाश करता है। अपाङ्गसे दो अङ्गुल शङ्खप्रदेशका आवर्त स्वामीके लिये विनाशक है। भ्रूप्रदेशसे समुद्गत आवर्त पूजित नहीं, वह सुहृत्का वियोग लाता और स्वामीके अर्थका अवसादक होता है। मन्या, ग्रीवा और शिर:का आवर्त कुत्सित है। कक्षका आवर्त भी संग्राममें स्वामीको शीघ्र मार डालता है। वाम-दक्षिण भागसे चिबुकके समीपस्थ हनु:का आवर्त दारुण है। अध-रोष्ठके नीचे चिबुकके प्रसिद्धक तथा कर्णका आवर्त स्वामीको पापका भागी बनाता है। कण्ठ और निगालके मध्य गलका आवर्त स्कन्धको सन्धिमें होनेसे पाप है। जङ्घासे नीचे कूर्च ग्रन्थिपर आनेवाला आवर्त संग्राममें स्वामीका जीवन ले लेता है। कूर्चसे अष्ट अङ्गुल ऊर्ध्व पार्श्वको कलापर आवर्त पड़नेसे स्वामीका प्राण शराघातसे जाता है। अश्वके ककुदका आवर्त स्वामीको नाश करता है। ककुद पुरोभागके समीप बांहका आवर्त स्वामीको सुत समेत मार डालता है। कीकस आवर्त दारुण और रणमें स्वामीका घातक होता है। क्रोड़, आसन, हृदय और जानुका आवर्त भी स्वामीका नाशक है। पार्श्वपर आवर्त रखनेवाला अश्व स्वामीको वैसे ही क्षय करता, जैसे रवि नीहाराम्बुको सुखा देता है। कूर्चके अध: प्रदेश कुष्ठिक जङ्घा और जानुपर पड़नेवाला आवर्त अधन्य होता है। नाभि, मुष्क, त्रिक और पुच्छमूलका आवर्त भी धन्य नहीं। कुक्षिका आवर्त व्याधि बढ़ाता है। पायु और सीवनिके मध्यका आवर्त अधन्य है। स्फिक्पिण्ड और खूरकमें वाजिके जो आवर्त आता, वह लिङ्गावर्त कहाता और स्वामीका सर्वार्थ मिटाता है। अपर आवर्तका नाम शतपदी, मुकुल, सङ्घात, पादुक, अर्धपादुक, शुक्ति और अवलीढ़ पड़ता और वाजिके देहमें आनेसे शुभाशुभ बताता है। शतपदी-जैसा शतपदी, जातीमुकुल जैसा मुकुल, भ्रमितकेश-जैसा सङ्घात, शुक्तिसंस्थानका शुक्ति, वत्सके अवलीढ़क-जैसा अवलीढ़, पादुकाकार पादुक और अर्धपादुका-जैसा अर्धपादुक कहाता है। मतिमान् भिषक्को वालके विशेष संस्थानसे विचक्षणोंके प्रोक्त शास्त्रमार्गानुसार आवर्तका निर्देश करना चाहिये। तपोधनोंने वाजि-लक्षण समझकर आवर्तको रोमज बताया है। जहां शुभ और अशुभ दो आवर्त आता, वहां एक भी फलप्रद नहीं होता। काकुदी आवर्त खराब है। श्रीवृक्ष, रोचमान, अङ्गदी, और सुपली राज्य तथा रत्नप्रद होता है। अश्वके प्रपाणमें मारुत, ललाटमें हुताशन, उर:का अश्विद्वय, मूर्धाका चन्द्रसूर्य, रन्ध्रका स्कन्दविशाख और उपरन्ध्रका आवर्त हर तथा हरिकी तरह पूजित है। किन्तु इनमें एकके भी न रहनेसे सब आवर्त अशुभ ठहरता है। (अश्ववैद्यक)

३ राजावर्त नामक मणि, लाजवर्द। ४ मेघके अधिप विशेष। 'आवर्तो मेघनायक:।' (पत्रिका) ५ माक्षिक धातु, सोनामाखी। ६ सोम। ७ आवर्त नामक मर्मस्थान विशेष, भौंहोंके ऊपरका गड्ढा। ८ वंकव्य-कार मर्मद्वय। यह दोनो भौंहोंके ऊपर रहता है। णिच् भावे अच्। ९ पुन:-पुनश्चालन, चक्कर, गर्दिश, घुमाव। १० परिघट्टन, घोंटायी। ११ धातुका द्रावण, गलायी। १२ चिन्ता, फ़िक्र। बारम्बार चित्त चलनेसे चिन्ताको आवर्त कहते हैं। आवर्त्यते समन्तात् अनेक कोटिषु, आ-वृत-णिच् कर्मणि अच्। १३ बहुविषयक संशय, बहुत सी बातोंका शक। १४ स्त्री जातिकी योनि। शङ्खकी नाभि जैसी होनेसे स्त्री-योनि आवर्त कहाती और उसके तृतीय आवर्तमें गर्भशय्या रहती है। स्त्रीदेहके मध्यस्थित आवर्तकाकार नाड़ी सन्निवेश विशेषका नाम भी आवर्त है। (सुश्रुत)

आवर्तक (सं॰ पु॰) आवर्त एव, स्वार्थे कन्। १ मेघाधिप विशेष। २ कीटविशेष, एक जहरीला कीड़ा। इसके काटनेसे वायुजन्य रोग बढ़ता है। (सुश्रुत) ३ राजावर्त मणि, लाजवर्द। आवर्त इव कायति, आवर्त-कै-क। ४ अश्वादिका रोमचिह्न विशेष, बालकी भंवरी। आवर्त देखो। ५ भ्रूद्वयोपरिके निम्नदेशका मर्मस्थान विशेष, भौंहोंके ऊपर गढ़ा। ६ घूर्णायमान जल, गिर्दाब, भंवर। ७ घूर्णन, घुमाव। ८ चिन्ता, फिक्र। (त्रि॰) आवर्तयति, आ-वृत-णिच्-ण्वुल्। ९ पुनः पुनः आघट्टक, बार-बार घोंटने, औटने या चलानेवाला। (क्लो॰) १० स्थलपद्म, गुलाब। ११ रौप्यमाक्षिक, रूपामाखी।

आवर्तकी (सं॰ स्त्री॰) आवर्तते वायुना ऊर्ध्वाधश्चलति, आ-वृत-ण्वुल्। १ भगवतवल्ली नामक लता विशेष। यह कषाय, उष्ण, सर, तिक्त, रसायन एवं वृष्य होती और वात, आमवात, रक्तशोथ तथा प्रमेहका नाश करती है। (मदनपाल) आवर्तकी कषाय, अम्ल, शीतल और पित्तघ्न है। (राजनिघण्ट) २ भद्रदन्ती, वृहद्दन्ती।

आवर्तन (सं॰ क्लो॰) आवर्तते गृहादेः पश्चिमदिगवस्थितछाया पूर्वदिशं प्रत्यावर्तते यस्मिन्, आ-वृत आधारे ल्युट्। १ गृहादिसे पश्चिमदिक् अवस्थित छायाका पूर्वदिक् गमनारम्भरूप मध्याह्नकाल, आफ्तावके मशरिककी ओर साया डालनेका वक्त, दोपहर लौटनेका समय। "आवर्तने यदा सन्धिः पर्वप्रतिपदोः भवेत्।" (गोभिल) "आवर्तनात्तु पूर्वाह्णः।" (अग्निपुराण) भावे ल्युट्। २ आलोड़न, चलाव, मथायी। ३ गुणन, जर्ब। ४ धातुका द्रावण, गलायी। कर्तरि ल्युट्। ५ विष्णु भगवान्। ६ जम्बुद्वीपका उपद्वीप विशेष। ७ वेष्टन, घेरा। ८ प्राचीरादि, चहार दीवारी। ९ अभ्यास, महारत। १० पुनः विधान, दोहराव। ११ घूर्णन, घुमाव।
(वै॰ त्रि॰) १२ घूर्णायमान, घूमनेवाला।

आवर्तनमणि, आवर्तमणि देखो।

आवर्तनी (सं॰ क्लो॰) आवर्तते अनया, आ-वृत-णिच् करणे ल्युट् गौरादित्वात् ङीष्। १ मूषी, कलछुली। आधारे ल्युट्। २ धातु गलानेका पात्र, घरिया। कर्मणि ल्युट्। ३ भूषा, साज। ४ द्रव्यविशेष, मोरफली, जोंकफल, भेंटू।

आवर्तनीय (सं॰ त्रि॰) आ-वृत-णिच् कर्मणि अनीयर्। १ द्रवणीय, गलने काबिल। २ आलोड़नीय, मथने लायक। ३ गुण्य, जर्ब दिये जाने काबिल। ४ पुनः पुनः पाठ्य, बार-बार पढ़ने लायक।

आवर्तपूलिका (सं॰ स्त्री॰) पूलिका भेद, किसी किस्मकी कचौड़ी या मठरी।

आवर्तमणि (सं॰ पु॰) आवर्ताकारो मणिः, शाक॰ तत्। राजावर्तमणि, लाजवर्द।

आवर्तमान (सं॰ त्रि॰) १ घूर्णायमान, चक्कर देनेवाला। २ अग्रगामी, जो आगे बढ़ रहा हो।

आवर्तिक (सं॰ त्रि॰) आवर्तः प्रयोजनमस्य, ठक्। आवर्ताकार धूम-साधन, चक्करदार धूवां छोड़नेवाला।

आवर्तित (सं॰ त्रि॰) आ-वृत-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। १ कृतावर्तन, औटा या मथा हुआ। २ द्रावित, गलाया हुआ। ३ गुणित, जर्ब दिया हुआ। ४ अभ्यस्त, फेरा या पढ़ा हुआ। आवर्तः सञ्जातोऽस्य, तारकादित्वात् इतच्। ५ जातावर्त, भंवर पड़ा हुआ, जो चक्कर खा गया हो।

आवर्तिन् (सं॰ त्रि॰) आ-वृत-कर्तरि णिनि। १ वर्तनशील, घूम पड़नेवाला। णिच् णिनि। २ प्रत्यावर्तन करनेवाला, जो वापस आ रहा हो।

आवर्तिनी (सं॰ स्त्री॰) आवर्तते अनया, आ-वृत-णिच् करणे ल्युट्-ङीप्। १ आवर्तमान स्त्री, वापस आनेवाली औरत। २ मुषा, कुठाली। आवर्तः मेषशृङ्गाकारफलमस्त्यस्याः, इनि-ङीप्। ३ अजशृङ्गी वृक्ष, अमलायी।

आवर्ती (सं॰ पु॰) रोमसंस्थान-विशेषयुक्त अश्व, जिस घोड़ेके भंवरी रहे।

आवर्दा (फा॰ वि॰) १ आनीत, अनुगृहीत, मकबूल, रियायती, लाया या दस्तगीरी किया हुआ। (हिं॰ स्त्री॰) २ आयुः, उम्र।

आवर्हित (सं॰ त्रि॰) आ-वृह उद्यमे णिच्-क्त, आवर्ह हिंसायां क्त वा। उत्पाटित, उन्मूलित, उखाड़ा हुआ, जो जड़से नोच कर फेंक दिया गया हो।

आवलदाभी—एक प्रसिद्ध डाकू। इसके नामानुसार मन्द्राज प्रान्तके कड़प्पा ज़िलेमें एक ग्राम स्थापित है। आवलदाभीके डाकेका हाल दक्षिणापथसे बनास नदी तीर पर्यन्त सकल स्थानमें सुन पड़ता है।

आवलि, आवली देखो।

आवलित (सं० त्रि०) आ-वल चलने क्त-इट्। १ ईषच्चलित, कुछ सरका हुआ। २ सम्यक् चलित, जो ख़ूब बढ़ा हो।

आवली (सं० स्त्री०) आ-वल-इन्, कृदिकारान्ताद्वा ङीप्। १ श्रेणी, क़तार। २ एक जातीय वस्तुद्वारा कृत पंक्ति। 'वीथ्यालियावली पंक्तिः।' (अमर) ३ परम्परा, पुरानी चाल। ४ विधि विशेष, एक क़ायदा। इससे क्षेत्रोत्पन्न शस्यका अनुमान बंधता है। एक बिस्वेमें जितने सेर माल उतरता और उसका अङ्क जो आधा आता, उतने ही मन बीघे पीछे बैठता है।

आवलोकन्द (सं० पु०) मालाकन्द।

आवल्य (सं० क्ली०) अवलस्य भावः, अवल-ष्यञ्। दुर्बलता, लाग़री, कमज़ोरी।

आवशीर (सं० पु०) जनपद विशेष। महावीर कर्णने मगध, कर्कखण्ड प्रभृति जनपद जीत इस स्थानको अधिकार किया था। (महाभारत वनप० २५२ अ०)

आवश्य (सं० क्ली०) अनन्यगतित्व, नियतत्व, आवश्यकत्व, वजूब, फ़र्ज़।

आवश्यक (सं० क्ली०) अवश्यम्भावः, मनोज्ञादित्वात् वुञ्। १ अनन्यगतित्व, वजूब, फ़र्ज़। (त्रि०) २ नियत, वाजिब, ज़रूरी।

आवश्यकता (सं० स्त्री०) अवश्यम्भाविता, ज़रूरत।

आवश्यकीय (सं० त्रि०) आवश्यक, ज़रूरी।

आवसति (सं० स्त्री०) वसत्यत्र गृहे वसतिः रात्रिः, आ सम्यक् वसतिः, प्रादि-समा०। निशीथ, अर्धरात्र, सोनेका समय, आधीरात, आरामका वक़्त।

आवसथ (सं० पु०) आ वसत्यत्र, आ-वस-अथच्। उपसर्गे वसेः। उण् ३।११४। १ गृह, हवेली। 'गृहमावसथस्तथा।' (उणादिको०) २ विश्रामस्थान, आरामगाह। ३ ग्राम, गांव। ४ व्रतविशेष। ५ आर्याछन्दोरचित कोषविशेष। ६ होमस्थान।

आवसथिक (सं० त्रि०) आवसथे गृहे वसति, ठञ्। आवसथात् ठञ्। पा ४।४।७४। १ गृहस्थ, खानानशीन्। २ गृहमें होमाग्नि रखनेवाला। (स्त्री०) आवसथिकी।

आवसथ्य (सं० पु०) आवसथस्यायम्, ञ्य। १ गृहसम्बन्धीय लौकिक अग्नि, घरमें रहनेवाली पाक आग। (क्ली०) २ विश्राम-स्थान, आरामगाह, चेलों और साधुवोंके रहनेकी जगह। ३ गृहमें होमाग्निकी प्रतिष्ठा। (त्रि०) ४ गृहस्थ, घरके मुतालिक़।

आवसान (सं० त्रि०) अवसानमभिजनोऽस्य, अण्। अभिजनश्च। पा ४।३।९०। ग्रामकी सीमापर वास करनेवाला, जो गांवकी हदपर रहता हो। (स्त्री०) ङीप्। आवसानी।

आवसानिक (सं० त्रि०) अवसाने अन्ते भवम्, ठञ्। शेषकाल भव, आख़िरी वक़्त होनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। आवसानिकी।

आवसायिन् (वै० त्रि०) १ जीविकाके पीछे दौड़नेवाला, जो रोज़गारके पीछे लगा हो। (पु०) आवसायी।

आवसित (क्ली०) आ-अव-सो-क्त, इकारोऽन्तादेशः। द्यतिस्यतिमास्थामित्तिकिति। पा ७।४।४०। १ पक्वधान्य, पक्का अनाज। २ निस्तुषीकृत धान्य, साफ़ किया हुआ अनाज। (त्रि०) ३ निर्णीत, ठहराया हुआ। ४ समाप्त, जो ख़त्म हो। ५ निष्तुषीकृत, साफ़ किया हुआ, जिसके भूसी निकाल डाली जाये। ५ पक्व, पक्का।

आवस्थिक (सं० त्रि०) अवस्थायां भवम्, ठञ्। कालकृत, अवस्था-भव, समय सम्भव, वक़्तके मुवाफ़िक़, दुरुस्त। (स्त्री०) आवस्थिकी।

आवह (सं० पु०) आवहति, आ-वह-अच्। १ सप्तस्कन्धयुक्त वायुका प्रथम स्कन्ध, भूवायु, ज़मीनकी हवा। आवह, प्रवह, विवह, परावह, संवह, उद्वह और परिवह वायुका स्कन्ध है। (हरिवंश) आवह भूर्लोक और स्वर्लोकके बीच रहता है। २ अग्निकी सातमें एक जिह्वा। (त्रि०) आवहति प्रापयति उद्देश्यस्थानम्। ३ प्रापक, ले जानेवाला। ४ उत्पादक, निकालने या पैदा करनेवाला।

आवहत् (सं० त्रि०) आनयन करनेवाला, जो लाता या पाता हो।

आवहन (सं० क्ली०) आनयन, पेशी, लवायी।

आवहमान (सं० वि०) आ-वह-शानच्। क्रमागत, धारावाही, उठा लेने या पहुंचा देनेवाला।

आवा (हिं० पु०) कुम्भकारका आपाक, कुम्हारका पजावा। "माका पेट कुम्हारका आवा कोयी काला कोयी गोरा रे।" (लोकोक्ति)

आवां (हिं० पु०) १ आवाहन, पुकार, बुलावा। अति तप्त एवं रक्तवर्ण लोहको कूटने-पीटनेके लिये अन्य कर्मकारका बोलाया जाना 'आवां' है। २ आवा।

आवागमन (सं० क्ली०) आगमन एवं गमन, आमद-रफ्त, आना-जाना। जन्ममरणको भी आवागमन कहते हैं। क्योंकि जन्म लेनेसे जीव इहलोक आता और मरण होनेसे परलोक जाता है।

आवागवन (हिं०) आवागमन देखो।

आवागौन (हिं०) आवागमन देखो।

आवाज़ (फा० स्त्री०) १ शब्द, सदा। २ आह्वान, पुकार। ३ चीत्कार, चीख। ४ स्वर, तान। ५ कोलाहल, शोर। ६ ख्याति, शोहरत।

आवाज़ कयी तरहकी होती है, इकहरी (सादी), बुलन्द (ऊंची), धीमी (नीची), बंधी (एक-जैसी), भारी (बैठी), महीन (बारीक) और मोटी (अच्छी लगनेवाली)।

आवाज़ आना (हिं० क्रि०) कर्णगोचर होना, सुन पड़ना।

आवाज़ उठाना (हिं० क्रि०) ऊंचे शब्दसे बोलना, चिल्लाना।

आवाज़ ऊंची करना, आवाज़ उठाना देखो।

आवाज़ करना (हिं० क्रि०) १ आह्वान करना, पुकारना। २ शब्द निकालना, बोल सुनाना।

आवाज़का कड़ी चीज़में चलना (हिं० पु०) घनमें शब्दका वेग, मुस्तमिद शैमें सदाकी रफ्तार।

आवाज़का घूमना (हिं० पु०) शब्दका आवर्जन, सदाकी कजी।

आवाज़का टप्पा (हिं० पु०) शब्दका गोचर, सदाकी पहुंच।

आवाज़का पतली चीज़में चलना (हिं० पु०) द्रव-वस्तुमें शब्दका वेग, रकीक़में सदाकी रफ्तार।

आवाज़का पल्ला, आवाज़का टप्पा देखो।

आवाज़का लड़ मिटना (हिं० पु०) शब्दका परस्पर सङ्घट्ट, सदाका मुक़ाबिला।

आवाज़का लौटना (हिं० पु०) प्रतिशब्द, बाज़गश्त, गूंज।

आवाज़का हवासी चीज़में चलना (हिं० पु०) वायुमें शब्दका वेग, बादमें सदाकी रफ़तार।

आवाज़की गमक (हिं० स्त्री०) शब्दकी पराकाष्ठा, सदाकी तुन्दी।

आवाज़की चाल (हिं० स्त्री०) शब्दवेग, सदाकी रफ्तार।

आवाज़दिहन्द (फा० पु०) शब्द सुनानेवाला, जो सदा लगाता हो।

आवाज़ देना (हिं० क्रि०) १ आह्वान करना, पुकारना। २ शब्द करना, सदा निकालना।

आवाज़ निकालना (हिं० क्रि०) शब्द करना, बोलना।

आवाज़पर कान लगाना, श्रवण करना, सुनना।

आवाज़पे लगना (हिं० क्रि०) आह्वानका उत्तर देना या आज्ञा मानना।

आवाज़ बैठना (हिं० क्रि०) शब्दक्षय होना, सदाका मारे पड़ना।

आवाज़ भरराना (हिं० क्रि०) शब्द कर्कश एवं रूक्ष निकलना, सदा भारी और रूखी पड़ना।

आवाज़में आवाज़ मिलाना (हिं० क्रि०) एकतालसे गान करना, मेलसे गाना।

आवाज़ लहर (हिं० स्त्री०) शब्दका तरङ्ग, सदाकी मौज।

आवाज़ा (फा० पु०) कोलाहल, शोर। सोल्लुण्ठनोक्ति (बोलीठोली) को अवाज़ा-तवाज़ा कहते हैं।

आवाज़ा कसना (हिं० क्रि०) सोल्लुण्ठनोक्ति करना, ताना मारना। इसी अर्थमें 'आवाज़ा फेंकना' और 'आवाज़ा मारना' क्रिया भी आती है।

आवाजाही (हिं०) आवागमन देखो।

आवात् (सं० त्रि०) वहन करते हुआ, जो बह रहा हो। (पु०) आवान्। (स्त्री०) आवाती, आवान्ती।

आवादानी, आबादानी देखो।

आवाधा (हिं० स्त्री०) आ सम्यक् बाधा। १ दुःख, पीड़ा, दर्द, तकलीफ। २ भूमिखण्ड, त्रिकोणके आधारका विच्छेद, मुसल्लसके कायदेका टुकड़ा।

आवाप (सं० पु०) आ-वप आधारे घञ्। १ आलवाल, थाला। 'स्यादालवालमावापः।' (अमर) २ धान्यादि रखनेका पात्र विशेष, बर्तन। भावे घञ्। ३ सकल दिक् वपन, चारो ओरको बोनी। ४ धान्यादिका स्थापन, अनाज वगैरहको रखायी। ५ शत्रुचिन्ता, दुश्मन्की फ़िक्र। ६ परराज्यचिन्ता, दूसरेकी रियासतका खयाल। ७ प्रधान होम। "प्राक्स्विष्टिकृतेरावापः।" (गोभिल) ८ आक्षेप, फेंकफांक। कर्मणि घञ्। ९ वलय, चूड़ी। १० निम्नोन्नत भूमि, नीची ऊंची ज़मीन्। ११ कल्क, दवाका मसाला। १२ मिश्रण, मिलावट। १३ पानीय द्रव्यविशेष, किसी किस्मका शर्बत। (त्रि०) १४ आवपनीय, प्रक्षेपणीय, फैलाया या चलाया जानेवाला।

आवापक (सं० पु०) आ उप्यते, आ-वप कर्मणि घञ् संज्ञायां कन्। प्रकोष्ठाभरण वलयादि, सोनेकी चूड़ी वगैरह। खल्। २ आवपनकर्ता, अच्छीतरह बोनेवाला।

आवापन (सं० क्ली०) आ-वप-णिच् करणे ल्युट्। १ सूत्रयन्त्र, तांतका चरखा। २ सूत्रसम्पुटीकरणका कोश, धागा लपेटनेका ढांचा। भावे ल्युट्। ३ केशादिका सम्यक् मुण्डन, बाल वगैरहको खासी मुंडायी।

आवापिक (सं० क्ली०) आवापाय साधुः, ठक्। अधिक, निवेशित, ज़ियादा, शामिल।

आवारगी (फ़ा० स्त्री०) १ परिभ्रमण, घूमफिर। २ स्वेच्छाचार, बदमाशी।

आवारा (फ़ा० वि०) १ परिभ्रमणशील, भटकते फिरनेवाला। २ भ्रष्टचरित, बेहया, बदमाश।

आवारा करना (हिं० क्रि०) स्वेच्छाचारी बनाना, बदमाशी सिखाना, खराबीमें डालना।

आवारागर्द, आवारा देखो।

आवारागर्दी, आवारगी देखो।

आवारा फिरना (हिं० क्रि०) परिभ्रमण करना, कूंचागर्दी करना, बेमतलब घूमना।

आवारा होना (हिं० क्रि०) परिभ्रमणशील बनना, भटकते फिरना, बेहयायी लादना।

आवारि (सं० क्ली०) आ-व्रियते आच्छाद्यते, आ-वृ बाहुलकात् इन्। १ हट्टगृह, बाज़ारू मकान्। (त्रि०) आ सम्यक् वारि यत्र, बहुव्री०। २ सम्यक् जलयुक्त, पानीसे खूब भरा हुआ।

आवाल (सं० क्ली०) आवाल्यते सञ्चार्यते जलमनेन, आ-वल-णिच् करणे अच्। १ आलवाल, पानी देनेको पेड़की चारो ओर मट्टीका घेरा। भावे घञ्। २ सञ्चार, चलाव। (अव्य०) मर्यादार्थं अव्ययी०। ३ बालक पर्यन्त, लड़केतक।

आवाल्य (सं० अव्य०) बाल्यात् आ, पर्यन्तार्थे अव्ययी०। बाल्यावस्था पर्यन्त, लड़कपनतक।

आवास (सं० पु०) आ सम्यक् वसत्यत्र, आ-वस आधारे घञ्। १ वासस्थान, गृहादि, मकान्, घर। भावे घञ्। २ सम्यक्-वास, बूदबाश, रहास।

आवासी (हिं० स्त्री०) समय-समयपर खानेके लिये तोड़ी जानेवाली कच्चे अनाजकी बाल।

आवाहन (सं० क्ली०) आ-वह-णिच्-ल्युट्। निकट आनेके लिये देवताका आह्वान, निमन्त्रण, पुकार, बुलावा।

आवाहनी (सं० स्त्री०) आवाह्यतेऽनया, आ-वह-णिच् करणे ल्युट् ङीप् वा। देवताके आह्वानार्थ मुद्रा विशेष। दोनो हाथ अञ्जलिबद्धकर दोनो अनामिकाके मूलपर्वपर दोनो अङ्गुष्ठ लगानेसे आवाहनी मुद्रा बनती है।

आवि (सं० पु०) पक्षी, चिड़िया।

आविक (सं० क्ली०) अविना तल्लोम्ना निर्मितम्, ठक्। १ कम्बल, गुदमा, लोयी। (त्रि०) २ मेषसम्बन्धी, भेड़के मुताल्लिक। ३ ऊर्णामय, पशमी, ऊनी।

आविकक्षीर (सं० क्ली०) मेषीदुग्ध, भेड़का दूध। यह स्वादु, अम्लपाक, स्निग्धोष्ण, गुरु, पित्तकफोल्बण एवं बृंहण होता और हिक्का, श्वास तथा अनिलको मारता है। (वाग्भटटीकाकार चीरपाणि) आविकक्षीर

लोमश, गुरु, कफपित्तहर, स्थौल्यघ्न, मेहनाशन, वातप्रकोपमें पथ्य और अनिलज कासमें हित है। (राजनिघण्टु)

आविकघृत (सं० क्लो०) मेषीनवनीत-जात घृत, भेड़का घी। यह लघु पाक, पित्त-कोपन और योनिदोष, कफ, वात, शोफ एवं कम्पके लिये हित होता है। (राजनिघण्टु) आविकसर्पि सर्वरोगका विष, कफवात, कृ तथा गुल्मोदर दूर करता और दीपन रहता है। (अत्रिसंहिता)

आविकदधि (अ० क्लो०) मेषी-दुग्ध-कृत दधि, भेड़का दही। यह गुरु, सुस्निग्ध, कफ-पित्तकर, रक्तवात तथा वातमें पथ्य और शोफ-व्रणघ्न है। (राजनिघण्टु) आविकदधि मुखरोगके लिये परम हित और इष्टफल होता है। इससे पित्त बढ़ता, वात घटता और कफ़ चढ़ता है। किन्तु गुल्म, अर्श, कुष्ठरोग और रक्तपित्तमें यह ठीक नहीं लगता। (अत्रिसंहिता)

आविक-नवनीत (सं० क्लो०) मेषी-दुग्ध-जात नवनीत, भेड़का मसका या नानो घो। यह पाकमें हिम, लघु तथा मारक और कफ, वात एवं अर्शःके लिये सदा हित है। किन्तु ऐड़क-नवनीत क्लिष्ट-गन्ध, शीतल, मेधाहृत्, गुरु और पुष्टि-स्थौल्य-मन्दाग्निदीपन होता है। (राजनिघण्टु)

आविकमांस (सं० क्लो०) मेषमांस, भेड़का गोश्त। यह मधुर, ईषद्गुरु तथा बलकर होता, अजामांससे विपरीतगुण पड़ता और अल्प्, स्निग्ध, गुरु, सदोष एवं अभिस्यन्दि रहता है। (वाग्भट)

आविकमूत्र (सं० क्लो०) मेषीमूत्र, भेड़का पेशाब। यह तिक्त, कटु एवं उष्ण होता और कुष्ठ, अर्शः, शूलोदर, रक्तशोफ तथा मेहका विष दूर कर देता है। (राजनिघण्टु)

आविकसौत्रिक (सं० त्रि०) सूत्रमेव, स्वार्थेऽण् सौत्रम्; आविकञ्च तत् सौत्रञ्चेति, कर्मधा०; तेन निर्मितम्, ठक्। मेषसूत्रनिर्मित, भेड़के सूतसे तैयार, जो ऊनी धागेसे बना हो।

आविकी (सं० स्त्री०) १ कम्बल, गुदमा। २ शशकी, खारपुश्त, सेह।

आविक्य (सं० क्लो०) आविकानां भावः, यक्। पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्। पा ५।१।१२८। आविकसम्बन्धित्व, भेड़का लगाव।

आविक्षित (सं० पु०) अविक्षित, मरुत्तका गोत्रनाम।

आविघ्न (सं० पु०) आ-विज कुतेरि क्त, तस्य न। करमर्द वृक्ष, करौंदेका पेड़।

आविज्ञान्य (वै० क्रि०) अविज्ञानमेव, चातुर्थ्यां स्वार्थे ष्यञ्। अपरिस्फुट, नामुमकिन-तमोज, पहचान न पड़नेवाला।

आविद् (वै० स्त्री०) १ विद्या, इल्म, समझ, जानकारी। २ आविस् और आवित्तसे आरम्भ होनेवाली वैदिक व्यवस्था।

आविदूर्य (सं० क्लो०) अवि-दूरस्य भावः, ष्यञ्। सन्निकर्ष, नैकट्य, कुर्ब, पड़ोस।

आविद्ध (सं० त्रि०) आ-व्यध-क्त। १ ताड़ित, मारा हुआ। २ विद्ध, भेदा हुआ। ३ छिद्रीकृत, छेदा हुआ। ४ क्षिप्त, फेंका हुआ। (पु०) ५ असिप्रहार विशेष, तलवारका एक हाथ। असिप्रहार बत्तीस प्रकार करते हैं। असिको घुमाकर शत्रुका आघात बचाना 'आविद्ध' कहाता है।

आविद्धकर्णी (सं० स्त्री०) अविद्धो कर्णाविव पत्रमस्याः, ङीप्। पाठा, हरज्योरी। 'पाठाऽम्बष्ठाविद्धकर्णी।' (अमर)

आविध (सं० पु०) आविध्यते काष्ठादनेन, आ-व्यध घञर्थे क। १ काष्ठादि वेधनसाधन सूच्याकाराग्र अस्त्र विशेष, साल, बरमा। २ भ्रमर, भौंरा।

आविर (सं० पु०) प्रसववेदना, हैज़का दर्द।

आविर्भाव (सं० पु०) आविस्-भू-घञ्। १ प्रकाश, ज़हूर, रोशनी। २ सांख्यमतसे—उत्पत्ति-स्थानीय अभिव्यक्ति-स्वरूप भावधर्म विशेष। जैसे—आत्मामें क्रियानिरोध बुद्धिके व्यपदेशसे क्रियाका व्यवस्थाभेद नियतभेद साधनमें शक्त नहीं पड़ता। क्योंकि एकमें उस उस विषयके प्रकाश और अनुदयसे विरोध बढ़ता है। जैसे—कूर्मशरीरमें निविशमान हस्त शुण्डादिका कभी प्रकाश और कभी लय होना आविर्भाव वा तिरोभाव नहीं कहाता। कारण, कूर्मसे वह सकल नहीं निकलता। वस्तुतः कूर्म भी उससे अभिन्न ठहरता

है। सुतरां सत् वस्तुका तिरोभाव वा आविर्भाव नहीं होता। फिर भी किसी अवस्थाभेदको ही आविर्भाव और तिरोभाव कहते हैं। २ मनुष्यादि रूप वा अवतार रूपसे देवताकी उत्पत्ति।

आविर्भूत (सं० त्रि०) आविस्-भू कर्त्तरि क्त। १ प्रकटित, ज़ाहिर। २ अभिव्यक्त, पैदा।

आविल (सं० त्रि०) आविलति दृष्टिं वारयति, आ-विल स्तृतौ क। १ कलुष, अपरिष्कृत, गन्दा, मैला।

'कलुषोऽनच्छ आविलः।' (अमर)

"दिग्वारणमदाविलः।" (कुमार २।४४)

(क्ली०) २ काबिल-देशीय फलविशेष, मेव।

आविलकन्द (सं० पु०) मालाकन्द, किसी क़िस्मकी जड़।

आविलमत्स्य (सं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह शुभ्र तथा स्थूल होता और पक्ष ताम्रवर्ण रहता है। आविलमत्स्य अतिरुच्य, मधुर, बल्य, वीर्य-पुष्टि-वर्धन और गुणाढ्य है। (राजनिघण्टु)

आविला (सं० स्त्री०) १ मत्स्य, मछली। २ चाङ्गेरी, चौपतिया, अमलोनिया।

आविवृक्ष (सं० पु०) मेषशृङ्गी, मेढ़ासींगी।

आविशत् (सं० त्रि०) उपस्थित होनेवाला, जो दाखिल हो।

आविष्करण (सं० क्ली०) आ-विस-कृ भावे ल्युट् षत्वम्। १ प्रकाश, ज़ुहूर, देखाव। "असूया गुणेषु दोषाविष्करणम्।" (सिद्धान्तकौमुदी) करणे ल्युट्। २ प्रकाशसाधन।

आविष्कर्ता, आविष्कर्तृ देखो।

आविष्कर्तृ (सं० त्रि०) आविस्-कृ-तृच्। प्रकाशक, ज़ुहूरमें लानेवाला, जो ईजाद करता हो।

आविष्कार (सं० पु०) आविर्-कृ-घञ्। आविष्करण देखो।

आविष्कारक, आविष्कर्तृ देखो।

आविष्कृत (सं० त्रि०) आविस्-कृ कर्मणि क्त। प्रकाशित, ज़ाहिर, जो ईजाद किया या ढूंढा गया हो।

आविष्क्रिया (सं० स्त्री०) आविष्करण देखो।

आविष्ट (सं० त्रि०) आ-विश-क्त। भूतादिग्रस्त, भूत-प्रेत वगैरहके फन्देमें फंसा हुआ।

आविष्ट्य (वै० त्रि०) प्रकाशित, ज़ाहिर, जिसे देख सके।

आविस् (सं० अव्य०) आ-अव-इसि। 'आङ्युलकादवतेरप्याक पूर्वादिसिः आ-अव-इसि। (उज्ज्वलदत्त) प्रकाश, प्रस्फुटत्व, खुले तौरपर आंखके सामने। कृ, भू और अस् धातुके साथ इसकी प्रतिसंज्ञा होती है।

आविस्तराम् (सं० अव्य०) आविस् तरप्-आम्। अतिशय प्रकाश, खूब खुले तौरपर।

आवी (सं० स्त्री०) अविरेव, स्वार्थे अण्-ङीप्। १ प्रसववेदना, जापेका दर्द, व्यांतकी तकलीफ़। २ रजस्वला, जो औरत कपड़ोंसे हो। ३ गर्भवती, जिस औरतके पेटमें बच्चा रहे। ४ प्रसवलिङ्गका मूत्रकफप्रसेकादि, जापेसे पेशाब वगैरहका बहाव।

आवीत (सं० त्रि०) आ-व्ये-क्त। १ सकलप्रकार ग्रथित, सब तरहसे गूंथा हुआ। २ उत्क्षेपणपूर्वक धृत, उठाकर लगाया या लटकाया हुआ। (क्ली०) ३ सम्यक् ग्रन्थन, खासी गूंथगांथ। ४ उत्क्षेपणपूर्वक धारण, लटकाव। (पु०) ५ दक्षिण स्कन्धपर धारण किया जानेवाला यज्ञोपवीत।

आवीतिन् (सं० पु०) आवीतमस्त्यस्य, इनि। अत इनि-ठनौ। पा ५।२।११५। दक्षिण स्कन्धके ऊपर यज्ञोपवीत रखनेवाला ब्राह्मण।

उद्धृते दक्षिणे पाणावुपवीत्युच्यते द्विजः।

सव्ये प्राचीन आवीती निवीती कण्ठसज्जने॥" (मनु २।६३)

आवीती, आवीतिन् देखो।

आवुक (सं० पु०) अवति रक्षति पालयति वा, अव रक्षपालनयोः उण्-कन्। जनक, पिता, बाप। 'अथावुकः जनकः।' (अमर) यह शब्द नाट्योक्तिमें चलता है।

आवृत् (वै० स्त्री०) आ-वृत सम्पदादित्वात् क्विप्। १ आवरण, लपेट। "नास्या वाश्च विमुचं नावृतम्।" (कठक ५।४६।१) 'आवृतं आवरणं धारणम्।' (सायण) २ आवर्तन, फेर। ३ पुनःपुनश्चालन, बार बारकी गर्दिश। 'सूर्यस्या-वृतमन्वावर्ते।" (शुक्लयजुर्वेद ३।१९) 'आवृतमावर्तनम्।' (महीधर) ४ वारम्वार एक जातीय क्रियाकरण, बार-बार एक ही-जैसे कामका करना। ५ परिपाटी, रिवाज। ६ अनुक्रम, चाला। ७ तूष्णीभाव, ख़मोशी। ८ जात-कर्मादि संस्कार। (त्रि०) कर्तरि अच्। ९ आवर्त-मान, घूम पड़नेवाला।

आवृत (सं॰ त्रि॰) आ-वृ-क्त। १ कृतावरण, अप्रकाशित, आच्छादित, ढंका हुआ, जो लपेट लिया गया हो। २ परिवृत, घिरा हुआ। ३ संसृष्ट, लगा हुआ। ४ विस्तृत, फैला हुआ। ५ व्याप्त, भरा हुआ। (पु॰) ब्राह्मणके औरस और उग्र जातिकी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न मनुष्य। "ब्राह्मणोदुग्रकन्यायामावृतो नाम जायते।" (मनु १०।१५)

आवृति (सं॰ स्त्री॰) आ-वृ-क्तिन्। आवरण, पर्दा, घेर।

आवृत्त (सं॰ त्रि॰) आ-वृत-क्त। १ पुनःपुनरभ्यस्त, बारबार मश्कावरा डाला हुआ। २ आवर्तमान, घूमा या वापस आया हुआ। ३ पलायित, भागा हुआ।

आवृत्ति (सं॰ स्त्री॰) आ-वृत-क्तिन्। १ प्रत्यावृत्ति, वापसी। २ वारम्बार अभ्यास, पुनःपुनः एक जातीय क्रियाकरण, फिर फिर एक ही कामका करना। ३ पुनरावृत्ति, दोहराव। ४ मार्गपरिवर्तन, मोड़। ५ वृत्तान्त, वाक़िया। ६ परिवर्तन, घुमाव। ७ सांसारिक स्थिति, पैदायशका चक्कर। ८ नियुक्ति, इस्तेमाल, लगाव।

आवृत्तिदीपक (सं॰ क्ली॰) आवृत्त्या दीपकम्, ३-तत्। १ दीपकावृत्तिरूप अर्थालङ्कारविशेष। इसमें दोहराकर किसी शब्दपर ज़ोर देते हैं। २ मस्तिष्क, दमाग़।

आवृत्य (सं॰ अव्य॰) प्रत्यावर्तनपूर्वक, घूमकर।

आवृष्टि (सं॰ स्त्री॰) आ-वृष-क्तिन्। १ सम्यक् वर्षण, खासी बारिश। "आवृष्टेः प्रावधारकैः।" (चण्डी) (अव्य॰) मर्यादार्थे अव्ययी॰। २ वृष्टिपर्यन्त, बारिशतक।

आवेग (सं॰ पु॰) आ-विज-घञ्। १ उत्कण्ठाजनक वा त्वरान्वित मानसिक वेग, इज़्तिराबी, शिताबी, हड़बड़ी। २ व्यभिचारी भावविशेष, हाल, झुकाव। यथा,—निर्वेद, आवेग, दैन्य, श्रम, मद, जड़ता, औग्र्य, मोह इत्यादि।

आवेगी (सं॰ स्त्री॰) आ-वेगोऽस्त्यस्याः अर्श आदित्वात् अच् गौरादित्वात् ङीष्। वृद्धदारकलता, बधारकी बेल। "स्याद्वृद्धगन्धा छगलान्त्र्यावेगी वृद्धदारकः।" (अमर)

आवेज़ा (फा॰ पु॰) कुण्डल, बाला, बाली, मुरकी, गोशवारा, झूमका।

आवेणिक (सं॰ त्रि॰) १ स्वाधीन, आज़ाद। २ अपर अन्य द्रव्यसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो किसी दूसरी चीज़से लगा न हो। "बुद्धधर्मा आवेणिकादयः।" (अभिधर्मकोष-व्याख्या ११२)

आवेदक (सं॰ त्रि॰) आ-विद-णिच्-ण्वुल्। १ विज्ञापक, आवेदनकारी, ज़ाहिर करनेवाला, जो हाल बता रहा हो। (पु॰) २ प्रार्थक, उम्मेदवार, मुराफ़ा करनेवाला। ३ सूचक, पिशुन, मुख़बिर।

आवेदन (सं॰ क्ली॰) आ-विद-चुरादित्वात् णिच्-ल्युट्। १ विज्ञापन, व्यवहारोत्थापन, नालिश-फर्याद। करणे ल्युट्। व्यवहारोत्थापक भाषापत्र, अर्ज़ी।

आवेदनीय (सं॰ त्रि॰) आ-विद-णिच्-अनीयर्। विज्ञापनीय, ख़बर देने या नालिश करने क़ाबिल।

आवेदित (सं॰ त्रि॰) आ-विद-णिच्-क्त-इट्, णिच लोपः। विज्ञापित, ज़ाहिर किया या ख़बर दिया हुआ।

आवेदिन् (सं॰ त्रि॰) आवेदयति, आ चुरादित्वात् विद-णिच्-णिनि। १ विज्ञापक, नालिश करनेवाला। २ आज्ञाकारी, फ़रमांबरदार। (पु॰) आवेदी। (स्त्री॰) आवेदिनी।

आवेद्य (सं॰ त्रि॰) आ-विद-णिच्-यत्। १ विज्ञाप्य, बताने क़ाबिल। (अव्य॰) ल्यप्। २ आवेदन करके, बताकर।

आवेद्यमान (सं॰ त्रि॰) प्रकाशित किया जानेवाला, जो ज़ाहिर किया जाता हो।

आवेध्य (सं॰ त्रि॰) आ-विध-ण्यत्। विद्ध किया जानेवाला, जो छेदने लायक़ हो।

आवेल तेल (हिं॰ पु॰) नारिकेल तेल, नारियलका तेल। यह ताज़ी गरीसे निकाला जाता है। सूखी गरीसे निकलनेवाला नारियलका तेल मुठेल कहाता है।

आवेश (सं॰ पु॰) आ-विश-घञ्। १ अहङ्कारविशेष, फ़ख़र, घमण्ड। २ संरम्भ, क्रोध, गुस्सा। ३ अभिनिवेश, दाख़िला, दख़ल। ४ आसङ्ग, बांध। ५ अणुप्रवेश, पहुंच। ६ ग्रहभय, भूतसञ्चार, शैतानका दौर। ७ अपस्मार रोग, मृगीका आज़ार। ८ अधिष्ठान, दौर। ९ गर्व, गुरूर। १० मनोभाव आपत्तीकरण, दिलकी हालतका जमाव। ११ आन्तरिक यत्न, भीतरी तदबीर।

आवेशन (सं० क्लो०) आ विशति यत्र, आ-विश आधारे लुग्रट्। १ शिल्पशाला, कारखाना। 'आवेशनं शिल्पशाला।' (अमर) भूतादि बाधा, शैतान्‌का साया। ३ सूर्य एवं चन्द्रका परिधि, आफताब और चांदका चक्कर। ४ क्रोधादि, गुस्सा। आधारे लुग्रट्। ५ प्रवेश सम्पादन-व्यापार, रसायी,पैठ। ६ मन्त्रसे भूतको बुला शिरःमें सन्निवेशन,शैतान्‌को सरपर चढ़ा देनेका काम।

आवेशनमन्त्र (सं० पु०) मन्त्रविशेष, एक जादू। आवेशनमन्त्र पढ़नेसे दूसरेके शरीरपर भूत चढ़ जाता है।

आवेशिक (सं० पु०) आवेशो-गृहे भवं तत्र आगतः वा, ठञ्। १ अतिथि, मेहमान्। (क्लो०) २ प्रवेश, पहुंच। ३ आतिथ्य, मेहमांदारी। (त्रि०) असाधारण, खास। ५ स्वभावज, पैदायशी।

आवेशित (सं० त्रि०) आ-विश-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। निवेशित, आवेशयुक्त, मनोयोगयुक्त, पहुंचा हुआ, जो दाखिल हो।

आवेष्ट (सं० पु०) परिवेष्टन, संवलन, घेर, अहाता।

आवेष्टक (सं० पु०) आविष्टयति, आ-विष्ट-णिच्-खुल्। आवरणकारक प्राचीरादि, वेष्टक, दीवार, खन्दक, अहाता।

आवेष्टन (सं० क्लो०) आ-वेष्ट-भावे लुग्रट्। १ आवरण, लपेट। करणे लुग्रट्। २ आवरणसाधन प्राचीरादि, चारदीवारी। ३ प्रावार, कोष, लिफाफा, बस्ता, बुकचा, बंधना।

आवेष्टित (सं० त्रि०) आवरणयुक्त, घिरा हुआ, जो लिपटा या बंधा हो।

आव्य (वै० त्रि०) अवेर्मेषस्य विकारः, अञ्। १ मेषसम्बन्धीय, भेड़के मुताल्लिक। २ और्ण, पश्मी, ऊनी।

आव्याधिन् (वै० त्रि०) आ-व्यध-णिनि। आघात वा आक्रमण करते हुये, जखम पहुंचाने या हमला मारनेवाला। (पु०) आव्याधी।

आव्याधिनी (वै० स्त्री०) आव्याधिन्-ङीप्। १ पीड़ादायक स्त्री। २ तस्करश्रेणी, रहजनोंकी जमात। "या सेना अभीत्वरीराव्याधिनीरुगणा उत।" (शुक्लयजुर्वेद ११।७७) 'आव्याधिनी या समन्ताद्विध्यन्ति ताः सर्वतोऽभ्यासाद्यन्ताः।' (महीधर)

आव्युष (वै० अव्य०) उषः पर्यन्त, सवेरेतक।

आव्रश्चन (वै० क्लो०) ईषद्व्रश्चनं छेदनम्, प्रादि-समा०। १ ईषच्छेदन, थोड़ी काट-छांट। आधारे ल्युट्। २ छेद्य वृक्षप्रदेश, दरख्तका काटा जानेवाला हिस्सा। यह यूपादि बनानेके लिये वृक्षसे काटा जाता है।

आव्रस्क (वै० पु०) आ-व्रश्च-घञ्; चस्य कत्वम्, शस्य सत्वम्। यजोः कु चिराध्याती। पा ७।३।५२। १ ईषच्छेदन, थोड़ी काटछांट। २ यूपादि बनानेके लिये काटा जानेवाला वृक्षका स्थानविशेष, दरख्तकी शाख।

आव्रीड़क (सं० पु०) आव्रीड़ानां निर्लज्जानां विषयो देशः, वुञ्। निर्लज्जदेश, बेशर्म मुल्क।

आश (सं० पु०) अश भोजने घञ्। १ भोजन, खाना। कर्मण्युपपदिति अण्, उप० समा०। २ भोजन करनेवाला, जो खाता हो। इस अर्थमें आश शब्द प्रायः समासान्तमें आता है। यथा,—हुताश, आश्रयाश, मांसाश, पलाश, हविष्याश इत्यादि।

(हिं० स्त्री०) २ आशा, उम्मेद।

आशंसन (सं० क्लो०) १ उदीक्षण, प्रतीक्षण, इन्तिज़ार, शौक्। २ वर्णन, कहावत।

आशंसा (सं० स्त्री०) आ-शनस्-अङ्-टाप्। आ संशायां भूतवच्च। पा ३।३।१३२। आशंसा वचनेलिङ्। पा ३।३।१३४। १ अप्राप्त वस्तुकी प्राप्तिके लिये इच्छा, आरज़ू, उम्मेदवारी। २ भाषा, वर्णना, बोली, कैफियत।

आशंसित (सं० त्रि०) आ-शनस्-क्त-इट्। १ कथित, इसरार किया हुआ। २ इच्छा-विषयीभूत, मुतरस्सिद, ख़ाहिश-किया हुआ। (क्लो०) भावे क्त। ३ मनोरथ, ख़्शियाक, आसरा, भरोसा।

आशंसितृ (सं० त्रि०) आशंसति, आ-शनस्-तृच्। १ आशंसायुक्त, मुन्तज़िर, उम्मेदवार, उम्मेद रखनेवाला। २ कथन करनेवाला, जो इसरार करता या कहता हो। (पु०) आशंसिता। (स्त्री०) ङीप्। आशंसित्री। 'आशंसुराशंसितरि।' (अमर)

आशंसिन् (सं० त्रि०) आ-शनस्-णिनि। आशंसाकारी, मुन्तज़िर, उम्मेद रखनेवाला। २ ज्ञापक, निवेदक; बोलने, कहने या इज़हार करनेवाला।

आशंसु (सं० त्रि०) आ-शनस्-उ। सनाशंसभिक्ष उः।

पा ३।२।१७८। इच्छाकारक, भाविशुभाकाङ्क्षी, मुन्तज़िर, ख़ाहिशमन्द, जो चाहना रखता हो।

आशक (सं० त्रि०) अश्नाति, अश-ण्वुल्। १ भक्षक, खानेवाला। २ भोगयुक्त, खानेकी चीज़से भरा हुआ। आशयति, आश-णिच्-ण्वुल्। ३ भोगसाधन, खानेके काम आनेवाला। ४ भोजनकारक, खाना बनानेवाला।

आशक्त (सं० त्रि०) आ सम्यक् शक्तम्; आ-शक्-क्त, प्रादि-समा०। सम्यक् शक्तियुक्त, ताक़तवर, शहज़ोर, ज़बरदस्त।

आशक्ति (सं० स्त्री०) सम्यक् शक्ति, ताक़त, कुव्वत, इख़्तियार, दस्तेदाद।

आशङ्कनीय (सं० त्रि०) आ-शङ्कि-अनीयर्। शङ्का-किये जाने योग्य, जो शक किये जाने क़ाबिल हो। २ ग्रहणीय, मानने क़ाबिल। ३ विचार्य, समझने लायक़।

आशङ्कमान (सं० त्रि०) शङ्कित, सभय, डरा हुआ, जिसे शक रहे।

आशङ्का (सं० स्त्री०) आ-शङ्कि-अङ्-टाप्। १ भय, त्रास, ख़ौफ़, डर। २ सन्देह, शक। ३ अविश्वास, नायेतबारी।

आशङ्कान्वित (सं० त्रि०) १ भयभीत, ख़ौफ़ज़दा, डरा हुआ। २ सन्देह रखनेवाला, जिसे शक रहे।

आशङ्कित (सं० त्रि०) आ-शङ्कि कर्तरि क्त-इट्। १ भीत, ख़ौफ़ज़दा, डरा हुआ। २ सन्देहयुक्त, जिसे शक आ चुके।

आशङ्किन् (सं० त्रि०) आशङ्कते, आ-शकि-णिनि। आशङ्कायुक्त, शक करनेवाला। (पु०) आशङ्की। (स्त्री०) ङीप्। आशङ्किनी।

आशङ्क्य (सं० त्रि०) आ शङ्क्यते, आ शकि कर्मणि ण्यत्। १ आशङ्काके योग्य, शाक किये जाने क़ाबिल, जिससे डर लगे। (अव्य०) ल्यप्। २ सन्देह करके, शक लाते हुये।

आशन (सं० पु०) अशन एव, स्वार्थे ऽण्। १ अशन वृक्ष, पीतशालका पेड़। अशन देखो। २ वज्र। ३ इन्द्र। (त्रि०) अश भोजने णिच्-ल्युट्। ४ भोजन करानेवाला, जो खिलाता हो।

आशना (फ़ा० पु-स्त्री०) १ मित्र, सुहृद्, दोस्त। २ प्रणयी, आशिक़। "रण्डीके लाखों आशना।" (लोकोक्ति) ३ वेश्या, रण्डी, रखी हुयी औरत। "जिनकी आशना उनकी बगलमें।" (लोकोक्ति) (वि०) ४ परिचित, जान-पहचानवाला। ५ आसक्त, प्यार करनेवाला। विद्यारम्भ करनेवालेको 'हर्फ़-आशना', मित्रको 'दोस्त-आशना' या 'यार-आशना' और परिचित व्यक्तिको 'सूरत-आशना' कहते हैं।

आशनायी (फ़ा० स्त्री०) १ मित्रता, दोस्ती। २ विवाह-सम्बन्ध, रिश्तेदारी। ३ अधर्म्य स्नेह, नाजायज़ प्यार।

आशनायी करना (हिं० क्रि०) १ मित्र बनाना, दोस्ती लगाना। "आशनायी करना आसान् निभाना मुश्किल।" (लोकोक्ति) २ आधर्म्य स्नेह या नाजायज़ प्यार बढ़ाना।

आशनायी जोड़ना, आशनायी करना देखो।

आशनायी लगना (हिं० क्रि०) मैत्री बढ़ना, दोस्ती होना।

आशनायी लगाना, आशनायी करना देखो।

आशनायी होना, आशनायी लगना देखो।

आशफल (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह बङ्गाल, विहार और मान्द्राज प्रान्तमें अधिक उपजता है। काष्ठ सुदृढ़ होता और सज्जाद्रव्य प्रस्तुत करनेमें लगता है।

आशय (सं० पु०) आ-शी-अच्। एरच्। पा ३।३।५६। १ अभिप्राय, मक़सद, मन्शा, ग़रज़। २ आधार, मसकन्, जगह। ३ विभव, असबाब। ४ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़। ५ वैद्यशास्त्रोक्त स्थानविशेष, जिस्मका ज़र्फ़। आशय सात होते हैं,—वाताशय, पित्ताशय, कफाशय, रक्ताशय, पक्वाशय, मूत्राशय, और आमाशय। स्त्रियोंके आठवां गर्भाशय अतिरिक्त रहता है। (सुश्रुत) उरःमें रक्ताशय, उससे नीचे श्लेष्माशय, श्लेष्माशयसे नीचे आमाशय और उससे नीचे पक्वाशय है। पक्वाशयसे ऊपर ग्रहणी नाम्नी जो कला होती, वही पाचकाशय कहाती है। नाभिसे ऊपर अग्न्याशय मध्यभागमें स्थित है। उसपर तिल पड़ता, जिससे नीचे वाताशय आता है। वाताशयसे नीचे पक्वाशयको मलाशय भी कहते हैं। मलाशयसे नीचे वस्ति वा मूत्राशय है। (भावप्रकाश)

'आशय: स्यादभिप्राये मानसाधारयोरपि।' (विश्व)

आ फलविपाकात् चित्तभूमौ शेते, कर्त्तरि अच्। ६ कर्मजन्य वासनारूप संस्कार, भलायी-बुरायी। ७ धर्माधर्मरूप अदृष्ट, मशीयत, होनी। आधारे अच्। ८ आशय-विशिष्ट चित्त, इदराक, पाददाश्त, दिल। भावे अच्। ९ शयन, नींद। १० स्थान, जगह। ११ कोष्ठागार, आरामगाह। १२ विचारकी रीति, खयालका तरीक़। १३ इच्छा, ख़ाहिश, खुशी। १४ कृपण, बख़ील। १५ बौद्धमत-सिद्ध आलय-विज्ञान-रूप विज्ञानसमूह। १६ आश्रय, टेक। १७ किंपाचन नामक पशुधारणार्थ गर्तविशेष। १८ खात विशेष, गड्डा।

आशयफल (सं० क्लो०) पनस, कटहल।

आशयाश (सं० पु०) आशयं आश्रयमश्नाति; आशय-अश-अण्, उप० समा०। १ अग्नि, आग। अपने आश्रय काष्ठादिको भक्ष्यरूपसे खानेपर अग्निको आश-याश कहते हैं। २ वायु, हवा।

आशर (सं० पु०) आशृणाति, आ-शृ-अच्। १ अग्नि, आग। २ राक्षस, आसेब, भूत।

"क्रव्यादोऽस्य आशर:।' (अमर)

आशरीक (वै० पु०) रोग विशेष, अज़ामें सख़्त और शदीद दर्द पैदा करनेवाला आज़ार।

"आशरीकं विशरीकं बलास: पृष्ट्यामयम्।" (अथर्वसंहिता)

आशल (सं० पु०) जीवकवृक्ष, एक पेड़।

आशव (सं० क्लो०) आशोर्भाव:, अञ्। पृथ्वादिभ्य इम-निज्वा। पा ५।१।१२५। शिताबी, उतावली। २ गुड़मद्य, गुड़की शराब।

आशस् (वै० त्रि०) आशंस्-क्विप्। १ भावि शुभे-च्छाकारी, आगेके लिये अच्छी उम्मेद रखनेवाला। (क्लो०) भावे क्विप्। २ भाविशुभेच्छा, भली ख़ाहिश। ३ कथन, स्तुतिसाधन, कहावत।

"पृच्छमानस्तवाशसा जातवेदो यदीदम्।" (ऋक् ४।५।१६)

'तवाशसा त्वत् स्तुत्या साधनेन।' (सायण)

आशसन (वै० क्लो०) तुषाधान, वध किये हुये यज्ञीय पशुके अङ्गका छेदन। "आशसनं विशसनमथो अधिविकर्त्तनम्।" (ऋक् १०।८५।३५) 'आशसनं तुषाधानम्।' (सायण)

आशस्त (वै० त्रि०) आ-शन्स-क्त। स्तुत, तारीफ़ किया गया।

आशा (सं० स्त्री०) आ समन्तात् अश्नुते व्याप्नोति, आ-अशू व्याप्तौ अच्। १ दिक्, फ़ासिला। २ प्रत्याशा, इश्तियाक़, उम्मेद। ३ वसुकी भार्या। ४ न्यायमतसे—संख्यापरिमित पृथक्त्व-संयोग-विभागाश्रय द्रव्य-विशेष। दैशिक परत्व और अपरत्वके असमवायि-कारणका संयोगाश्रय होनेसे ही नैयायिक इसको स्वीकार करते हैं। ५ सांख्यतत्त्व-कौमुदीके मतसे—पूर्वापरत्वके व्यवहारका उपाधि। इसी उपाधिको दिक् कहते हैं। इसके आश्रयसे अतिरिक्त दिक्-कल्पना करना ठीक नहीं पड़ता। ६ तृष्णा, लालच, न मिलनेवाली चीज़ हासिल करनेकी ख़ाहिश।

आशाक्लित (सं० त्रि०) प्रत्याशा-परिहृत, उम्मेदसे लगा हुआ।

आशागज (सं० पु०) दिक्‌हस्ती, दौरके मुक़तेका हाथी। यह पृथिवीके एक विभागको साधे है।

आशाढ़ (सं० पु०) १ आषाढ़, एक महीना। २ व्रतीका पलाशदण्ड, व्रत करनेवालेकी छड़ी।

आशाढ़ा, आशाड़ा (सं० स्त्री०) १ आषाढ़ा नक्षत्र। आशाड़ा प्रयोजनमस्य, अण्। २ ब्रह्मचारीका पलाश-दण्ड।

आशाढ़ी (सं० स्त्री०) आषाढ़ा नक्षत्रेण युक्त: काल:, अण्-ङीप्। १ चन्द्राषाढ़ पौर्णमासी।

आशादामन् (सं० क्लो०) आशा दामेव, उपमिति समा०। १ आशारूप बन्धनसाधन रज्जु, उम्मेदका जाल। (पु०) २ नृपतिविशेष, एक पुराने राजा।

आशादामा, आशादामन् देखो।

आशादित्य, आशार्क देखो।

आशाधर—एकजन प्रसिद्ध जैनग्रन्थकार। निजकृत 'धर्मामृत' ग्रन्थमें इन्होंने शाकम्भरीके निकट अपना जन्मस्थान लिखा है। वस्तुत: जयपुरके निकट किसी दुर्गमें यह उत्पन्न हुये थे। श्रीरत्नी और सरस्वती नाम्नी दो पत्नी रहीं। सरस्वतीके गर्भसे वाहल नामक पुत्र हुआ था। शहाबुद्दीनके आक्रमण मारनेपर यह मालव राज्यको भागे और पीछे धारामें विन्ध्यराज

विजयवर्माके निकट जा छिपे। उसी स्थानपर राजकवि विल्हनने इनका यथेष्ट समादर किया था। अर्जुनके मालवका राजा बननेपर यह मालकच्छमें अवस्थित और भिक्षुकके कार्यपर नियुक्त रहे। संवत् १२९६ में आशाधर वर्तमान थे। इन्होंने अनेक संस्कृत ग्रन्थ बनाये, जिनमें कुछ हाथ आये हैं,—१ रुद्रटकृत काव्यालङ्कारकी टीका, २ सटीक धर्मामृत, ३ अमरकोषकी टीका, ४ आराधनासार, ५ अष्टाङ्गहृदयटीका, ६ इष्टोपदेश, ७ जिन-यज्ञकल्प, ८ निबन्धके साथ त्रिषष्टिस्मृतिशास्त्र, ९ नित्यमहोद्योतशास्त्र, १० प्रमेयरत्नाकर, ११ भारतेश्वराभ्युदयकाव्य, १२ भूपालचतुर्विंशति, १३ सहस्रनामस्तवन और १४ मूलाराधनटीका।

आशानन्द—रामानन्दके बारहमें एक शिष्य। रामानन्दके मरनेपर यही उनकी गद्दीपर बैठे थे।

आशान्वित (सं० त्रि०) आशायुक्त, उम्मेदवार, जिसे भरोसा रहे।

आशापाल (सं० पु०) आशां दिशं पालयति; आशा-पा-णिच्-अण्, उप० समा०। पेर्ते श्रीलुग् वक्तव्यः। ७।४।१६ वार्तिक। १ पूर्वादि दिक्पाल, इन्द्रादि।

'इन्द्र।वह्निः पितृपति नैऋतो वरुणो मरुत्।
कुबेर ईशः पतयः पूर्वादीनां दिशां क्रमात्॥' (अमर)

२ वेदोक्त राजकुमार। यह अश्वमेध यज्ञके पशुकी रक्षा करते थे। (वाजसनेयसं २२।१९)

आशापिशाचिका (सं० स्त्री०) अनृताशा, भारास्त तमन्ना, झूठी उम्मेद।

आशापुर (सं० क्ली०) पुरविशेष, एक शहर। इस नगरमें उत्तम गुग्गुलु मिलता और उससे धूप बनता है।

आशापुरगुग्गुलु, आशापुरसम्भव देखो।

आशापुरसम्भव (सं० पु०) आशापुरे सम्भवति, आशा-पुर-सं-भू-अच्। गुग्गुलुविशेष, आशापुरसे निकलनेवाला गूगल।

आशाप्राप्त (सं० त्रि०) कृतकार्य, कामयाब, जिसके उम्मेद पूरे पड़े।

आशाबन्ध (सं० पु०) आशां दिशं बध्नाति, आशा-बन्ध-अच्। १ मर्कटजाल, मकड़ीका जाला। २ तृष्णाबन्ध, तमन्नाका फन्दा, उम्मेदकी जकड़। ३ दिग्बन्ध, सिम्तकी बन्दिश। ४ आश्वास, शफ़ा, बहाली।

आशाभङ्ग (सं० पु०) नैराश्य, नाउम्मेदी, भरोसेका टूट जाना।

आशार (सं० पु०) शरण, पनाह।

आशारेशिन् (वै० त्रि०) शरण ढूंढनेवाला, जो पनाहको खोजता हो।

आशार्क—कात्यायन-रचित कर्मप्रदीपके टीकाकार।

आशावत् (सं० त्रि०) विश्वासशील, उम्मेद रखनेवाला, जिसे भरोसा रहे।

आशावरी (सं० स्त्री०) सङ्गीतकी एक संपूर्ण रागिणी। इसमें निषाद, ऋषभ, गन्धार और धैवत कोमल लगता है। गानेका समय द्वितीय याम है। देशी, गान्धार और टोड़ी मिलनेसे यह बनती है। आशावरीका ध्यान इसप्रकार करते हैं,—

"श्रीखण्डशैलशिखरे शिखिपुच्छवस्त्रा मातङ्गमौक्तिकमनोहरहारवल्ली।
आकृष्य चन्दनतरोरुरगं वहन्ती आशावरी वलयमुज्ज्वलनीलकान्तिः॥"
(सङ्गीतदर्पण)

आशावह (सं० त्रि०) आशां वहति, आशा-वह-अच्, ६-तत्। १ आशाधारी, उम्मेद पैदा करनेवाला। (पु०) २ नृपविशेष। ३ आकाशपुत्र। बृहद्भानु, चक्षु, आत्मा, विभावसु, सविता, ऋचीक, अर्क, भानु, आशावह और रवि आकाशके पुत्र दश हैं। ४ वृष्णिपुत्र।

आशाविभिन्न (सं० त्रि०) हताश, नाउम्मेद, जिसे भरोसा न रहे।

आशास्य (सं० त्रि०) आ शिष्यते, आ-शास-ण्यत्। १ आशंसनीय, प्रार्थनीय, पसन्दीदा, जो चाहे जाने क़ाबिल हो। (अव्य०) २ कथन करके, कहके।

आशाहीन (सं० त्रि०) आशाशून्य, नाउम्मेद, जिसे उम्मेद न रहे।

आशि (सं० क्ली०) आ-अश-कि। १ भोजन, खाना। (स्त्री०) २ आशीर्वाद दान, दुवा-गोयी।

आशिक (अ० पु०) १ कामुक, चाहनेवाला, जो शख्स प्यार करता हो।

"आशिक़ हुआ मैंढ़ पद्मिनी मैंढ़क ताल लगावे।
चीओ पहरे गदहा नाचे ऊंट विषनपद गावे॥" (कबीर)

२ आवेदक, प्रार्थक, ख़ाहां, सायल, उम्मेदवार। ३ अनवधान साहसी पुरुष, जो मख़्सूस बेपरवा और बेफ़िक्र हो।

आशिक़-माशूक़ (अ० पु०) १ नायक-नायिका, प्यार करने और किया जानेवाला। २ भुजगमेखला, मार या सांपका पट्टा।

आशिक़मिज़ाज (अ० वि०) क्रीड़ाशील, ख़ुशदिल।

आशिक़ होना (हिं० क्रि०) कामुक बनना, चाहना, प्यार करना।

आशिक़ाना (अ० वि०) रसिक, रसीला, आशिक़ जैसा।

आशिक़ाना अशार (अ० पु०) प्रीतिकाव्य, प्यारकी कविता।

आशिक़ाना ख़त (अ० पु०) प्रीतिपत्र, प्यारकी चिट्ठी।

आशिक़ाना गीत (हिं० पु०) शृङ्गारगात, प्यारका गाना।

आशिक़ी (अ० स्त्री०) प्रीति, प्यार, चाह।

आशिचा (वै० स्त्री०) आ शिच-अङ्-लुङ्। शिक्षाभिलाष, तालीम हासिल करनेकी ख़ाहिश।

आशिञ्जित (सं० त्रि०) क्वणित; सनसनाने, ठनठनाने, झनझनाने या छनकारनेवाला।

आशित (सं० त्रि०) आ-अश-क्त। १ भुक्त, खाया हुवा। २ भोजन द्वारा तृप्तियुक्त, आसूदा, छका हुवा। (क्ली०) भावे क्त। ३ सम्यक् भोजन, खासा खाना। आशितमस्त्यस्य, अर्श आदित्वात् अच्। ४ तृप्ति, आसूदगी, छकाया। "नातिप्रगे नातिसायं न सायं प्रातराशितः।" (मनु)

आशितङ्गवीन (सं० त्रि०) आशिता अशनेन तृप्ता गावो यत्र, निपातनात् मुम्। गो द्वारा भक्षण किया हुवा, जो गायने पहले ही खाया हो।

'विष्वाशितङ्गवीनमन्तदगावो यत्राशिताः पुरा।' (अमर)

आशितम्भव (सं० त्रि०) आशितोऽशनेन तृप्तो भवत्यनेन; आशित-भू-खच्-मुम् उप० समा०। आशिते भुवः करणभावयोः। पा ३।२।४५। १ तृप्तिकारक, आसूदा करनेवाला। (क्ली०) भावे अच्। २ अन्नादि, अनाज वग़ैरह। ३ तृप्ति, आसूदगी।

आशिष्ठ (सं० त्रि०) आ-अश-तृच्-इष्ट्। अतिशय भोक्ता, इससे ज़्यादा खानेवाला। (पु०) आशिता। (स्त्री०) ङीप्। आशित्री।

आशिन् (सं० त्रि०) अश-णिनि। भोक्ता, खानेवाला। (पु०) आशी। स्त्री० ङीप्। आशिनी।

आशिन (वै० त्रि०) आशिन् स्वार्थे अण्, वेदे निपातनात् न टिलोपः। १ भक्षक, अतिशय भोक्ता, पेटू, बहुत खानेवाला। २ वृद्ध, बुड्ढा, जो बहुत वर्षका हो।

आशिमन् (सं० पु०) आशोर्भावः इमनिच् छिद्भावः। शीघ्रत्व, जल्दी।

आशियां (फ़ा० पु०) आशय, पक्षिस्थान, खोता, घोंसला।

आशियाना, आशियां देखो।

आशिर् (वै० त्रि०) आशीयते पच्यते, आ-शी-क्विप् निपातनात् साधु। १ पाकके योग्य, पकाने क़ाबिल। (स्त्री०) २ विशुद्ध करनेके लिये सोमरसमें मिला हुवा दुग्ध।

आशिर (सं० त्रि०) आशीरेव, स्वार्थेऽण्। १ पाकके योग्य, पकाने लायक़। (पु०) आ-अश व्याप्तौ भोजने वा किरच्, णित्वादुपधावृद्धिः। २ अग्नि, आग। ३ सूर्य, आफ़ताब। ४ राक्षस।

'आशिरो वह्निरक्षसोः।' (उज्ज्वलदत्त)

आशिरःपाद (सं० अव्य०) शिरःसे पाद पर्यन्त, सरसे पैर तक।

आशिर्वाद, आशीर्वाद देखो।

आशिर्विष, आशीविष देखो।

आशिष् (सं० स्त्री०) १ आशीर्वाद, दुवा। २ काव्यालङ्कार विशेष। इसमें न मिली चीज़ पानेके लिये प्रार्थना करते हैं।

आशिषाक्षेप (सं० पु०) काव्यालङ्कारविशेष। इसमें अन्यके उपकारपर ऐसा कार्य करनेका उपदेश देते, जिससे अपना क्लेश छोड़ाते हैं।

आशिषिक (सं० त्रि०) आशिषा चरति, ठक्। आशीर्वादक, दुवा देनेवाला।

आशिष्ट (सं० त्रि०) आ-शास-क्त। आशीर्वाद दिया गया, जिसके लिये दुवा मांगी जा चुकी।

आशिष्ठ (सं॰ त्रि॰) अतिशयेन आशु, इष्ठन् डिद्वद्भावः। अतिशायने तमबिष्ठनौ। पा ५।३।५५। अत्यन्त शीघ्र, निहायत जल्दबाज़।

आशिस् (सं॰ स्त्री॰) आ-शास-क्विप्, उपधाया इत्वम्। शास इदङ्हलोः। पा ६।४।३४। इष्टार्थाविष्करण, मतलबकी बातका ज़ाहर। २ प्रार्थना, दुवा। ३ आशीर्वाद, दुवागोयी। ४ सर्पका दन्त, सांपका ज़हरीला दांत। 'आशीर्दंष्ट्रे मददृशाम्। हितस्याशंसने स्त्री स्यात्।' (मेदिनी)

आशी (सं॰ स्त्री॰) आ शीर्यतेऽनया, आ-शॄ-क्विप् पृषोदरादित्वात्। १ सर्पदंष्ट्रा, सांपका ज़हरीला दांत। "आशी तालुगता दंष्ट्रा तया विद्धो न जीवति।" (विषविद्या) २ सर्पविष, सांपका ज़हर। ३ आशीर्वाद, दुवागोयी। ४ वृद्धि नामक औषध। यह जड़ी दवामें पड़ती है।

आशीत (सं॰ पु॰) पुष्पवृक्ष-विशेष, किसी क़िस्मके फूलका दरख़्त। इसे अहिम्लक कहते हैं।

आशीतक, आशीत देखो।

आशीय (सं॰ त्रि॰) अतिशयेनाशु, ईयसुन् डिद्वत्। द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ। पा ५।३।५७। अत्यन्त शीघ्र, निहायत जल्दबाज़।

आशीर्गेय (सं॰ क्ली॰) ३-तत्। नान्दीपाठ, स्तुतिवाद, दुवागोयीके साथ गाया जानेवाला गीत।

आशीर्त (वै॰ त्रि॰) आ-श्री-क्त वेदे निपातनात्। पक्व दुग्धादि, पक्का दूध वग़ैरह।

आशीर्दा (वै॰ स्त्री॰) आशिस्-दा-क-आप्। १ देवता, पूज्य व्यक्ति। २ स्तुतिवाद।

आशीर्वचन (सं॰ क्ली॰) आशीर्वाद देखो।

आशीर्वत् (वै॰ त्रि॰) दुग्धयुक्त, दुधसे मिला हुआ। (पु॰) आशीर्वान्। (स्त्री॰) आशीर्वती।

आशीर्वाद (सं॰ पु॰) आशिषो वादः, ६-तत्। इष्टार्थ आविष्करण वाक्य, दुवागोयी।

आशीविष (सं॰ पु॰) आशीः सर्पदंष्ट्रा तत्र विषमस्य, पृषोदरादित्वात् सलोपः; यद्वा आश्यां विषमस्य। १ सर्प, सांप। 'आशीविषो विषधरश्चक्री व्यालः सरीसृपः।' (अमर) २ दर्वीकर सर्प, बड़े फनका सांप।

आशु (सं॰ त्रि॰) अशू व्याप्तौ उण्, णित्वादुपधावृद्धिः। 'कृ वा पा जि मि स्वदि साध्यशूभ्य उण्।' उण् १।१। १ शीघ्र, सत्वर, तेज़, जल्दबाज़, जो फुरतीसे चलता हो। 'सत्वरं चपलं तूर्णमविलम्बितमाशु च।' (अमर) (अव्य॰) २ शीघ्रतासे, तेज़ीके साथ, फौरन्। (सं॰ क्ली॰) ३ वर्षाभव धान्य विशेष, आउस। 'आशुर्व्रीहौ च सत्वरे।' (विश्व) अन्य धान्यकी अपेक्षा शीघ्र पकनेसे आशु नाम पड़ा है। यह मधुर, पाकमें अम्ल, पित्तकर और गुरु होता है। (राजनिघण्टु)

आशुकचु—शीघ्र उत्पन्न होनेवाली घुयिया। (Colocasia Antiquorum) यह वृक्ष ब्रह्मदेश और भारतवर्षमें उत्पन्न होता है। सात मासके बाद मूलको निकाल लेते हैं। यह अरवी उत्कृष्ट और हितकर है। घुयियेका रस रक्तस्रावरोधी होता और क्षतको लाभ पहुंचाता है। पत्तीको भी अच्छी तरह उबाल कर खा सकते हैं। जड़की प्रायः तरकारी बनती है। त्रिवाङ्कोड़के लोग इसे बहुत खाते और मलयवाले स्वादको सराहते हैं। घुयिया बहुत पुष्ट होती और त्यौहारकी मिठायीमें पड़ती है।

आशुकवि (सं॰ पु॰) शीघ्र कविता बनानेवाला व्यक्ति, जो शख़्स जल्द शायरी तैयार करता हो।

आशुकारिन् (सं॰ त्रि॰) आशु शीघ्रं करोति, आशु-कृ-णिनि। शीघ्र कार्यकारी, जल्द काम करनेवाला।

आशुकारी (सं॰ पु॰) पित्तोल्वण सन्निपातज्वर। इसमें अतिसार, भ्रम, मूर्च्छा, मुखपाक तथा दाह प्रभृति होता और गात्रमें रक्तविन्दु पड़ जाता है। (भावप्रकाश)

आशुकोपित (सं॰ पु॰) मध्यदेश-जात वत्सक शालि, किसी क़िस्मका चावल।

आशुकोपिन् (सं॰ त्रि॰) चण्डस्वभाव, ज़ूदरञ्ज, तुनकमिज़ाज, जिसे जल्द ग़ुस्सा आ जाये। (पु॰) आशुकोपी। (स्त्री॰) आशुकोपिनी।

आशुक्रिया (सं॰ स्त्री॰) आशु यथा तथा क्रिया, कर्मधा॰। अविलम्बित व्यवहार, फ़ुरतीका काम।

आशुग (सं॰ पु॰) आशु शीघ्रं गच्छति, आशु-गम-ड। १ वायु, हवा। २ वाण, तीर। ३ सूर्य, आफ़ताब। 'आशुगौ सूर्ये शरे वायौ।' (हेम) भागवतके पञ्चम स्कन्धवाले २१वें अध्यायमें लिखते, कि सूर्य पन्द्रह दण्डमें २३७७५००० योजन चलते हैं। उपरोक्त अङ्कको चारसे गुण करनेपर ८५१०००० आता है।

अतएव षष्टिदण्डात्मक अहोरात्रमें ८५१००००० योजन चलनेसे सूर्यका नाम आशुग पड़ा है। किन्तु भास्कराचार्य पृथिवीको यह गति बताते हैं। पृथिवीके चलनेसे सूर्य चलते बोध होता है। ४ शाक्य मुनिके पांचमें एक भिक्षु। (त्रि०) ५ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला।

आशुगामिन् (सं० त्रि०) आशु गच्छति, आशु-गम-णिनि। १ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। (पु०) आशुगामी। २ सूर्य। ३ वायु। ४ शर। (स्त्री०) आशुगामिनी।

आशुङ्ग (वै० पु०) आशु गच्छति, आशु-गम वेदे निपातनात् खच् मुम्। १ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। (त्रि०) २ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला।

आशुतीक्ष्णक (सं० क्ली०) ताम्र, तांबा।

आशुतोष (सं० पु०) आशु शीघ्रं तोषस्तुष्टिर्यस्य, बहुव्री०। १ शिव। स्वल्पकाल अर्चना करनेसे ही तुष्ट होनेपर शिवका नाम आशुतोष पड़ा है। (त्रि०) २ शीघ्रतोषी, जल्द खुश होनेवाला।

आशुतोष मुखोपाध्याय, Sir—कलकत्ता-भवानीपुर-निवासी स्वर्गीय डाक्टर गङ्गाप्रसाद मुखोपाध्यायके पुत्र। १८६५ ई०को इनका जन्म हुवा था। १८८५ ई०को यह गणितकी एम० ए० परीक्षामें उत्तीर्ण हुये। दूसरे वर्ष रायचन्द्-प्रेमचन्द वृत्ति पायी। १८८८ ई०को हाईकोर्टमें वकालत करना आरम्भ किया। पर वत्सर कलकत्ता उनिवार्सिटीके अन्यतम सदस्य मनोनीत हुये। १८९९ और १९०१ ई०को कलकत्ता विश्वविद्यालयके प्रतिनिधि बन वङ्गीय व्यवस्थापक सभामें इन्होंने प्रवेश किया। फिर १९०३ ई०को उक्त सभाके प्रतिनिधिस्वरूपसे बड़ेलाटकी व्यवस्थापकसभामें प्रवेशका अधिकार पाया। १९८४ ई०को इन्हें डि० एल० उपाधि मिला था। १९०४ ई०को यह कलकत्ता हाईकोर्टके विचारपति पदपर अधिष्ठित हुये। आज भी उसी पदपर प्रतिष्ठाके साथ आप काम करते हैं। १९०५ ई०से १९१४ ई० आठ वर्ष तक कलकत्ता विश्वविद्यालयके वाईस चान्सलर (Vice-Chancellor) पदपर बैठ इन्होंने शिक्षा-संस्कार सम्बन्धमें अनेक कार्य किये। १९०८ ई०को यह एशियाटिक सोसायिटीके सभापति रहे। इनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी है। नवद्वीपके पण्डितोंने इन्हें 'सरस्वती' उपाधि एवं सरकारने संस्कृत-परीक्षा बोर्डके सभापतिका आसन दिया है। भारत-सम्राट्ने भी इन्हें 'सर' (Sir) उपाधि प्रदानकर सम्मानित किया है। वङ्गीय साहित्यपर इन्हें विशेष अनुराग रहता है। एक वर्षतक यह कलकत्ता साहित्य-सभाके सभापति और वङ्गीय-साहित्यपरिषत्के अन्यतम सहकारी सभापतिके पदपर अधिष्ठित थे। १९०५ ई०को यह उत्तरवङ्ग साहित्य-सम्मेलनके सभापति और १९१६ ई०को वङ्गीय साहित्य-सम्मेलनके सभापति बने। वर्तमान १९१७ ई०को सिंहलकी महास्थविरमण्डलीने इन्हें 'सम्बुद्धागमचक्रवर्ती' उपाधि प्रदान किया है।

आशुत्व (सं० क्ली०) शीघ्रता, जल्दी, फुरती, तेज़ी।

आशुप (सं० पु०) वंशविशेष, किसी क़िस्मका बांस।

आशुपत्री (सं० स्त्री०) आशु पत्रं यस्याः, बहुव्री० गौरादित्वात् ङीष्। शल्लकी लता, कुंदरूकी बेल।

आशुपत्व, आशुपत्वन् देखो।

आशुपत्वन् (वै० पु०) आशु पतति, आशु-पत्-वनिप्। शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। आशुपत्वरी।

आशुफल (सं० पु०) १ शाक प्रभृति, सब्ज़ी वग़ैरह। २ हठयोग। ३ अस्त्र विशेष, किसी क़िस्मका हथियार।

आशुमण्ड (सं० पु०) आशु-भक्तमण्ड, आवस चावलका मांड। यह ग्राही, मधुर, कफकर, तर्पण, क्षयदोषघ्न और शुक्रवर्धन होता है। (अत्रिसंहिता)

आशुमत् (वै० त्रि०) आशु शीघ्रं विद्यतेऽस्य, आशु-मतुप्। १ शीघ्रतायुक्त, जल्दबाज़। (अव्य०) २ शीघ्रतापूर्वक, जल्द। (पु०) आशुमान्।

आशुया (वै० त्रि०) १ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। (अव्य०) २ शीघ्रतापूर्वक, जल्द।

आशुरथ (वै० त्रि०) शीघ्रगामी रथ रखनेवाला, जिसके पास जल्द चलनेवाली गाड़ी रहे।

आशुव्रीहि (सं० पु०) कर्मधा०। आशुधान्य, आवुस, बरसातमें पैदा होनेवाला चावल।

आशुशुक्षणि (वै० पु०) आ-शुष-सन्-अनि। १ अग्नि। 'रोहिताश्वो वायुसखा शिखावानाशुशुक्षणिः।' (अमर) २ वायु। (त्रि०) ३ दीप्तिमान्, चमकदार।

आशुषाण (सं० त्रि०) आ-शुष बाहुलकात् कानच्। सम्यक् शुष्क होनेवाला, जो अच्छीतरह सूख जाता हो।

आशुषेण (वै० त्रि०) शीघ्रगामी बाण रखनेवाला, जिसके पास जल्द चलनेवाला तीर रहे।

आशुहेमन् (वै० पु०) शीघ्रगामी अग्नि।

आशुहेमा, आशुहेमन् देखो।

आशुहेषस् (वै० त्रि०) आशु हेषते, आशु-हेष-असुन्। सर्वधातुभ्योऽसुन्। उण् ४।१८८। १ शीघ्र शब्दायमान, जल्द आवाज़ देनेवाला। २ शब्दकारी अश्वयुक्त, जिसके हिनहिनानेवाला घोड़ा रहे।

आशू (वै० त्रि०) आशु वेदे पृषोदरादित्वात् दीर्घः। शीघ्र, जल्दबाज़, तेज़।

आशेकुटिन् (सं० पु०) आशेतेऽस्मिन्, आ-शी-विच् स इव कुटति गिनि। पर्वत, पहाड़।

आशेकुटी, आशेकुटिन् देखो।

आशोकेय (सं० त्रि०) अशोक संख्यादित्वात् ठञ्। १ अशोक वृक्षके निकटस्थ, अशोक पेड़के पास होनेवाला। अशोकाया अपत्यम्, ढक्। २ शोकरहित स्त्रीसे उत्पन्न। (स्त्री०) ङीन्। शार्ङ्गरवाद्यञो ङीन्। पा ४।१।७३। आशोकेयी।

आशोब (फ़ा० पु०) नेत्रपीड़ा, आंखका दर्द।

आशोषण (सं० क्ली०) शोषणकार्य, सूखनेका काम, सुखायी।

आशौच (सं० क्ली०) अशुचेर्भावः, अण्। नञः शुचीश्वरादि। पा ७।३।३०। अमेध्यता, कालुष्य, नापाकी, गन्दगी।

आश्चर्य (सं० क्ली०) आ-चर-यत्-सुट्। आश्चर्यमनित्ये। पा ६।१।१४७। १ अद्भुत, ताज्जुब। २ विस्मयरस, तसरुफ़, परच। ३ अद्भुत रूप, अनोखी सूरत। 'विस्मयोऽद्भुतमाश्चर्यम्।' (अमर) (त्रि०) ४ आश्चर्यान्वित, ताज्जुबअङ्गेज़, अनोखा। (अव्य०) ५ अद्भुत, अजीब तरहसे, निराले ढङ्गपर।

आश्चर्यता (सं० स्त्री०) विस्मय, ताज्जुब, अनोखापन।

आश्चर्यत्व (सं० क्ली०) आश्चर्यता देखो।

आश्चर्यभूत (सं० त्रि०) अद्भुत, अजीब, अनोखा।

आश्चर्यमय, आश्चर्यभूत देखो।

आश्चर्यित (सं० त्रि०) विस्मयाकुल, मुताज्जिब।

आश्चोतन, आश्चोतन देखो।

आश्च्योतन (सं० त्रि०) सम्यक् श्चोतति, श्च्योतति वा, आ-श्चुत श्च्युत वा ल्यु। १ सम्यक् चरणशील, ख़ूब टपकनेवाला। (क्ली०) भावे ल्युट्। २ सम्यक् चरण, खासा छींटा। ३ नेत्रसेचन, आंखको पलकपर घी वग़ैरहका लगाव। ४ चक्षुःपूरण, आंखमें दवा वग़ैरहका डालना। आश्चोतन कार्य कभी निशामें नहीं होता। नेत्रमें क्वाथ, चौद्र, आसव और स्नेहके बिन्दुका डाला जाना आश्चोतन कहाता है। लेखनमें आठ, स्नेहनमें दश और रोपणमें बारह बिन्दु मात्रा पड़ती है। (वैद्यकनिघण्टु)

आश्म (सं० पु०) अश्मनो विकारः, अण् वा टिलोपः। १ प्रस्तरविकार, पत्थरका बर्तन, खिलौना वग़ैरह। (त्रि०) २ प्रस्तरमय, सङ्गीन्, पत्थरीला।

आश्मक (सं० पु०) अश्मना कायति, अश्मन्-कै-क। साल्व देशका ग्राम विशेष।

आश्मकि (सं० त्रि०) आश्मके भवम्, इञ्। साल्वावयवप्रत्यग्रथकलकूटाश्मकादिञ्। पा ४।१।१७३। आश्मक ग्रामजात, आश्मक गांवका पैदा।

आश्मन (सं० पु०) अश्मनः सूर्यसारथेरपत्यम्, अण्। १ सूर्यसारथिके पुत्र। अश्मनो विकारः, अण् वा टिलोपाभावः। २ प्रस्तरविकार, पत्थरकी चीज़। (त्रि०) ३ प्रस्तरमय, सङ्गीन्, पथरीला।

आश्मन्य (सं० क्ली०) प्रस्तरके निकटस्थ देशादि, पहाड़ी मुल्क।

आश्मभारिक (सं० त्रि०) अश्मभारं हरति वहति आवहति वा, ठञ्। हरति वहत्यावहति भाराद्वंशादिभ्यः। पा ५।१।५०। प्रस्तरहारक, प्रस्तरवाहक, पत्थरका ढेर रखनेवाला।

आश्मरथ्य (सं० पु०) अश्मरथस्य मुनेरपत्यम्, यञ्। अश्मरथमुनिके अपत्य। (स्त्री०) ङीप्। आश्मरथी।

आश्मरिक (सं० पु०) अश्मर्य्येव, स्वार्थे बाहुलकात् ठञ्। अश्मरीरोग, सङ्गमसाना, पथरी। अश्मरी देखो।

आश्मायन (सं० पु०) अश्मनो गोत्रापत्यम्, फञ्। अश्वादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०। अश्मन् नामक ऋषिके गोत्रापत्य। (स्त्री०) ङीप्। आश्मायनी।

आश्मिक (सं० त्रि०) भारतभूतमश्मानं हरति वहति आवयति वा, ठन्। प्रस्तरका भारहारक, वाहक वा आवाहक; सङ्गीन्, पथरीला।

आश्मेय (सं० पु०) अश्मनोऽपत्यम्, ढक्। अश्मन् नामक ऋषिके अपत्य।

आश्यान (सं० त्रि०) आ-श्यै-क्त। १ घनीभूत, जो गढ़ा पड़ गया हो। २ शुष्कप्राय, जो कुछ कुछ सूखा हो।

आस्र (सं० क्ली०) अस्रमेव, स्वार्थेऽण्। चक्षुःका जल, आंसू, आंखका पानी।

आश्रपण (सं० क्ली०) आ-श्रा-णिच्-पुक् ह्रस्वे ल्युट्। पाककरण, बेपरवायीसे खाना पकानेका काम।

आश्रम (सं०-पु-क्ली०) आ सम्यक् श्रमो यत्र, आ-श्रम आधारे घञ्। १ मुनिगणका वासस्थान। २ मठ। 'आश्रमो व्रतीनां मठे। ब्रह्मचर्यादिचतुष्केऽपि।' (हेम) ३ तपोवन। ४ मुक्त व्यक्ति। परमेश्वरमें लीन होनेपर श्रम न रहनेसे मुक्त व्यक्तिको भी आश्रम कहते हैं। ५ परमेश्वर। ६ पाठशाला, मदरसा। ७ ब्रह्मचारी प्रभृतिका शास्त्रोक्त चार प्रकार धर्मविशेष।

'ब्रह्मचारी गृही वानप्रस्थो भिक्षुश्चतुष्टये। आश्रमोऽस्त्री।' (अमर)

"अनाश्रमी न तिष्ठेत्तु क्षणमात्रमपि द्विजः।
आश्रमेण विना तिष्ठन् प्रायश्चित्तीयते त्वसौ॥" (दक्ष)

'गार्हस्थो भैक्षुकश्चैव आश्रमौ द्वौ कलौ युगे।" (महानिर्वाणतन्त्र)

"चत्वार्य्यब्दसहस्राणि चत्वार्य्यब्दशतानि च।
कलेर्यदा गमिष्यन्ति तदा त्रेतापरिग्रहः।" (व्यास)

महानिर्वाणतन्त्रके कथनानुसार कलिमें गार्हस्थ्य और भिक्षु दो भिन्न अन्य आश्रम नहीं होता। व्यासके मतमें ४४०० वर्ष कलियुग बीतनेपर तीन ही आश्रम रह जायेंगे। अवशेषको लोग क्षीणबल एवं अल्पायु तथा अशेष रोगसे आक्रान्त होनेपर वानप्रस्थ किंवा सन्न्यास आश्रम रख न सकेंगे। द्विजको एकक्षण भी आश्रमहीन न रहना चाहिये। आश्रम न रखनेसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है। ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और सन्न्यास चार आश्रम होते हैं।

आश्रमगुरु (सं० पु०) आश्रमाणां ब्रह्मचर्यादीनां गुरुर्नियन्ता, ६-तत्। १ आश्रमनियन्ता, राजा। आश्रमस्य मठस्य तपोवनस्य वा गुरुः स्वामी तत्रस्थ छात्राणामुपदेष्टा वा, ६-तत्। २ तपोवनस्वामी। ३ मठस्थ किंवा तपोवनस्थ छात्रगणका उपदेष्टा।

आश्रमधर्म (सं० पु०) आश्रमविहितो धर्मः, शाक०-तत्। ब्रह्मचर्यादि विहित धर्म। धर्म छः प्रकारका होता है,—१ वर्णधर्म, २ आश्रमधर्म, २ वर्णाश्रमधर्म, ४ गुणधर्म, ५ निमित्तधर्म और ६ साधारणधर्म। ब्राह्मणका कभी मद्यपान न करना इत्यादि वर्णधर्म; यज्ञके अग्निकी रक्षा, तज्जन्य काष्ठाहरण तथा भिक्षान्न द्वारा जीवनधारण ब्रह्मचर्यादि आश्रमधर्म; ब्राह्मणी प्रभृतिका भी पलाशदण्ड ग्रहण वर्णाश्रम धर्म; विहित कार्यके अकरण एवं निषिद्ध कार्यके आचरणको प्रायश्चित्तादि निमित्त-धर्म और अहिंसादि साधारण-धर्म है।

आश्रमपद (सं० क्ली०) आश्रम एव पदं स्थानरूपम्, कर्मधा०। १ मुनिगणका आश्रमरूप स्थान।

"परिक्रम्यावलोक्य च। इदमाश्रमपदं तावत् प्रविशामि।" (शकुन्तला)

२ ब्राह्मणके धार्मिक जीवनका समयविशेष।

आश्रमपर्वन् (सं० क्ली०) महाभारतके पञ्चदशवें पर्वका प्रथमांश।

आश्रमभ्रष्ट (सं० त्रि०) आश्रमसे गिरा हुवा, जो अपने आश्रमको छोड़ बैठा हो।

आश्रममण्डल (सं० क्ली०) मुनिगणके वासस्थानका वृत्त, साधुसन्तके रहनेकी जगह।

आश्रमवास (सं० पु०) आश्रमे वासः, ७-तत्। १ मुनिका तपोवनादिमें वास। आश्रमवासमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, अण्। २ धृतराष्ट्रादिके आश्रमवास अधिकारपर व्यास-रचित भारतान्तर्गत पर्वविशेष।

आश्रमवासिक (सं० क्ली०) आश्रमवासः प्रतिपाद्यतयास्त्यस्य, ठन्। १ भारतान्तर्गत व्यासरचित धृतराष्ट्रादिके वनवासका प्रतिपादक पर्वविशेष। (त्रि०) २ मुनिगणके वासस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आश्रमवासिन्, आश्रमवासी आश्रमसद् देखो।

आश्रमसद् (सं० त्रि०) आश्रमे सीदति तद्वासित्वेन तमेवाश्रयति, आश्रम-सद्-क्विप्। आश्रमवासी, तपोवनवास-रत वानप्रस्थादि।

आश्रमस्थान (सं० क्ली०) मुनिगणका वासस्थान, साधुसन्तके रहनेकी जगह।

आश्रमालय (सं० पु०) तपोवनवासी, साधु।

आश्रमिक (सं० त्रि०) आश्रमे नियुक्तः साधुः अस्त्यस्य वा, ठन्। आश्रमयुक्त, तपोवन-सम्बन्धीय। (स्त्री०) आश्रमिकी।

आश्रमिन् (सं० त्रि०) आश्रमोऽस्य अस्ति, इनि। आश्रमयुक्त। (पु०) आश्रमी। (स्त्री०) आश्रमिणी।

आश्रमोपनिषत् (सं० स्त्री०) आथर्वणोपनिषद् विशेष।

आश्रय (सं० पु०) आश्रीयते इति, आ-श्रि कर्मणि अच्। १ आश्रयणीय द्रव्य, सहारा लेने लायक् चीज्। २ अवलम्बन, सहारा। ३ रक्षाकर्ता, हिफ़ाजत रखनेवाला। आश्रीयतेऽस्मिन्, आधारे अच्। ४ आधार, ज़र्फ़, बरतन। ५ गृह, मकान्। ६ विषय, मामला। ७ शत्रुसे पीड़ित होनेपर बलवानके आश्रयरूप छः प्रकारमें राजाका गुणविशेष। भावे अच्। ८ शरण, पनाह। ९ अधिकार, इख्तियार। १० आयत्ति, बहाना। ११ सम्पर्क, लगाव। १२ ग्रहण, लेनेका काम। १३ संयोग, मेल। १४ सम्बन्ध, ताल्लुक्। १५ उचित कार्य, मुनासिब काम। १६ व्याकरणानुसार क्रियाका कर्ता, फेलका फ़ायल। १७ मूल, जड़। १८ बौद्ध मतानुसार पञ्च ज्ञानेन्द्रिय। समासान्तमें यह शब्द आधारका बोधक है। यथा—अष्टगुणाश्रय, आठ गुणपर टिका हुवा।

आश्रयण (सं० क्ली०) आ-श्रि-ल्युट्। १ सम्यक् सेवा, खासी ख़िदमत। २ अवलम्बन, सहारा। (त्रि०) कर्तरि ल्युट्। आश्रयकर्ता, सहारा पकड़नेवाला। (स्त्री०) ङीप्। आश्रयणी।

आश्रयणीय (सं० त्रि०) आश्रीयते, आ-श्रि कर्मणि अनीयर्। आश्रय लेने योग्य, जिसके सहारे रहना मुनासिब ठहरे।

आश्रयतः (सं० अव्य०) आश्रयसे, सहारा पकड़के।

आश्रयत्व (सं० क्ली०) आश्रयता, आधारत्व, सहारा लेनेका काम।

आश्रयभुज्, आश्रयाश देखो।

आश्रयभूत (सं० त्रि०) आश्रयदाता, सहारा देनेवाला।

आश्रयलिङ्ग (सं० त्रि०) अपने सम्बन्धी शब्दसे लिङ्गमें समान रहनेवाला, जो अपने हवालेके लफ़्ज़से जिन्समें मिलता हो।

आश्रयवत् (सं० त्रि०) आश्रयोऽस्त्यस्य, मतुप् मस्य वत्वम्। आश्रययुक्त, सहारेपर टिका हुवा। (पु०) आश्रयवान्। (स्त्री०) ङीप्। आश्रयवती।

आश्रयाश (सं० पु०) आश्रयं काष्ठादिकं अश्नाति; आश्रय-अश-अण्, उप० समा०। १ अग्नि, आग, अपने आश्रय काष्ठादिको दहनरूपसे खानेपर अग्निका नाम आश्रयाश पड़ा है।

'आश्रयाशो बृहद्भानुः कृशानुः पावकोऽनलः।' (अमर)

२ चित्रकवृक्ष, चीतका पेड़। ३ कृत्तिकानक्षत्र। (त्रि०) ४ आश्रयनाशक, सहारेको तोड़नेवाला।

आश्रयासिद्ध (सं० पु०) आश्रयोऽसिद्धो यस्य। न्यायोक्त हेत्वाभास, मुग़ालता, झूठी दलील।

आश्रयासिद्धि (सं० स्त्री०) आश्रयस्यासिद्धिः, ६-तत्। न्यायोक्त हेतुका दोषविशेष, दलीलका ऐब।

आश्रयिन् (सं० त्रि०) आश्रयति, आ-श्रि-इनि। आश्रय लेनेवाला, जो सहारा पकड़ता हो। (पु०)

आश्रव (सं० त्रि०) आशृणोति वाक्यं, आ-श्रु-अच्। १ आज्ञानुवर्ती, फ़रमांबरदार, बातको माननेवाला। (क्ली०) भावे अप्। २ अङ्गीकार, इक़रार, वादा। ३ क्लेश, आफ़त, थकाहट। 'आश्रवो वचनस्थिते। प्रतिज्ञायाञ्च क्लेशे च।' (हेम) ४ नदी, धारा, दरया, बहाव। ५ दोष, क़ुसूर। ६ जैनमतसे पुण्याश्रव और पापाश्रव नामक संस्कार विशेष। इससे जीव बद्ध हो जाता है। ७ बौद्धमतानुसार कामाश्रव, भवाश्रव, दृष्टाश्रव और अविद्याश्रव नामक विषय विशेष। इसमें पड़नेसे मनुष्य मुक्ति नहीं पाता।

आश्राव (सं० पु०) आ-श्रु-णिच्-अच्। १ श्रावण, सुनानेका काम। २ अङ्गीकार, इक़रार, वादा।

आश्रावण (सं० क्लो०) आश्राव देखो।

आश्रि (सं० स्त्री०) आ-सम्यक् अश्रिः, प्रादि० समा०। १ सम्यक् कोण, खासा कोना। २ धारा, तलवारका किनारा।

आश्रित (सं० त्रि०) आश्रीयते, आ-श्रि-क्त। आश्रय-प्राप्त, टिका हुवा। २ अवलम्बित, पकड़े हुवा। ३ अनुसृत, इस्तेमाल करनेवाला। ४ शरणागत, पनाह पाये हुवा। ६ वशीभूत, अधीन, ताबेदार, मातहत।

आश्रितत्व (सं० क्लो०) वश्यता, अधीनता, मातहती।

आश्रित्य (सं० अव्य०) आ-श्रि-ल्यप्। आश्रय लेकर, सहारा पकड़के।

आश्रिन् (सं० त्रि०) अश्रं नेत्रजलमस्त्यास्य, इनि। सुखादिभ्यश्च। पा ५।२।१३१। नेत्रजलयुक्त, आंसू भरे हुवा। (स्त्री०) ङीप्। आश्रिणी।

आश्रुत् (सं० त्रि०) आश्रु भावे क्विप्। १ अङ्गीकार, इक़रार। (त्रि०) कर्तरि क्विप्। २ अङ्गीकारकर्ता, इक़रार करनेवाला।

आश्रुत (सं० त्रि०) आ-श्रु-क्त। १ अङ्गीकृत, माना हुवा। २ सम्यक् श्रुत, खूब सुना हुवा। (क्लो०) ३ सुनानेकी पुकार।

आश्रुति (वै० स्त्री०) आ-श्रु-क्तिन्। १ श्रवण, सुनायी। २ अङ्गीकार, इक़रार।

आश्रुत्कर्ण (वै० त्रि०) चारो ओर कान लगानेवाला, जो हर तर्फ़ कान देता हो।

आश्रेय (सं० त्रि०) आ-श्रि-यत्। आश्रितव्य, सहारा दिये जाने क़ाबिल।

आश्रेष (वै० पु०) आलिङ्गन करनेवाला व्यक्ति, जो शख़्स गले लगाता हो। २ प्रेत, शैतान्। ३ अश्लेषा नक्षत्र।

आश्लिष्ट (सं० त्रि०) आ-श्लिष्-क्त। १ आलिङ्गित, हमागोश, गलेसे लगा हुवा। २ सम्बद्ध, मिला हुवा। ३ आलिङ्गन करनेवाला, जो गले लगाता हो। ४ संस्कृत, फैला हुवा। ५ प्रतिपादित, साबित किया हुवा।

आश्लेष (सं० पु०) आ-श्लिष्-घञ्, आ सम्यक् श्लेषः सम्बन्धः, प्रादिसमा०। १ हार्दिक सम्बन्ध, दिली लगाव। "सामीप्याश्लेषविषयैर्व्याप्त्याधारस्तुतिविधः।" (मुग्धबोध) २ आलिङ्गन, हमागोशी, सोनेसे सोना लगाकर मिलनेकी हालत। ३ दृश्यविशेष, किसी समासेका नज़ारा। वेदमें 'आश्रेष' बोलते हैं। ४ अश्लेषा नक्षत्र।

आश्लेषण (सं० क्लो०) आश्लेषैव स्वार्थेऽण्। अश्लेषा नक्षत्र।

आश्व (सं० क्लो०) अश्वानां समूहः, अण्। १ अश्वसमूह, घोड़ोंका झुण्ड। २ अश्वत्व, घोड़ेका काम या हाल। (त्रि०) अश्वैरुह्यते शंषिकः, अण्। अश्वस्येदं वाक्यम् अञ् वा। ३ अश्वके वहनीय, जिसे घोड़ा ले जा सके। ४ अश्वसम्बन्धी, घोड़ेके मुताल्लिक़। अश्वमूत्रसे श्लेषा, कृमि और दद्रु नष्ट होता है।

आश्वतर (सं० पु०) १ बुड़िलका गोत्रनाम। २ अश्वतरका अपत्य, अश्वका लड़का।

आश्वतराश्वि (सं० पु०) अश्वतरस्यापत्यम्, इञ्। बुड़िल मुनि।

आश्वत्थ (सं० क्लो०) अश्वत्थस्य फलम्, अण्। प्रचादिभ्योऽण्। पा ४।३।१६४। १ अश्वत्थफल, पीपलका मेवा। (त्रि०) अश्वत्थस्येदम्। २ अश्वत्थ सम्बन्धी, पीपलके मुताल्लिक़।

आश्वत्थिक (सं० पु०) अश्वत्थेन युक्ता पौर्णमासी, अण् निपातनात् तस्य ठक्। १ चान्द्र आश्विनमास। (त्रि०) २ अश्वत्थसम्बन्धीय, पीपलके मुताल्लिक़।

आश्वत्थी (सं० स्त्री०) आश्वत्थ-ङीप्। १ शाखा विशेष। अश्व इव तिष्ठति, अश्व-स्था-क पृषोदरादित्वात्, अश्वत्थो अश्विनीनक्षत्रः तस्य अश्वमस्तकाकारत्वात् तेन युक्तः कालः। २ अश्विनी नक्षत्रयुक्त रात्रि।

आश्वत्थीय (सं० त्रि०) अश्व-स्था-छ। गहादिभ्यश्च। पा ४।२।१३८। अश्वत्थसम्बन्धीय, पीपलके मुताल्लिक़।

आश्वपत (सं० त्रि०) अश्वपतेरिदम्, अण्। अश्वपत्यादिभ्यश्च। पा ४।१।८४। अश्वपति-सम्बन्धीय, घोड़ेके मालिकसे ताल्लुक़ रखनेवाला।

आश्वपस् (वै० द्वि०) शीघ्र कर्मचारी, जल्द काम करनेवाला। "विभ्वना चिदाश्वपसरेभ्यः।" (ऋक् १०।७६।५)

आश्वपालिक (सं० पु०) अश्वपालस्यापत्यम्, ठक्। रेवत्यादिभ्यष्ठक्। पा ४।१।१४६। अश्वपालीका पुत्र।

आश्वपेजिन् (सं० त्रि०) अश्वपेजेन, प्रोक्तमधीते, णिनि।

शौनकादिभ्यश्छन्दसि। पा ४।३।१०६। १ अश्वपेज ऋषिप्रोक्त ग्रन्थाध्यायी, अश्वपेजकी बनायी किताब पढ़नेवाला। (पु०) २ अश्वपेज ऋषिके शिष्य।

आश्ववल (सं० त्रि०) अश्ववला द्वारा उत्पादित, जिसे अश्ववला पैदा करे। (स्त्री०) आश्ववली।

आश्ववाल (सं० त्रि०) अश्ववालाया औषधेयम्, अश्ववाला-अण्। अश्ववाल निर्मित, अश्ववाल बेंतका बना हुआ।

आश्वभारिक (सं० त्रि०) अश्ववाह्यं भारमश्वभूतं भारं वा हरति वहति आवहति वा, वंशादित्वात् ठञ्। अश्वग्राह्य वा अश्वरूप भारका हरणकर्ता।

आश्वमेधिक (सं० त्रि०) अश्वमेधाय हितम्, अश्वमेध-ठञ्। १ अश्वमेधयज्ञ-साधन, अश्वमेध यज्ञमें लगनेवाला। (क्ली०) अश्वमेधमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, ठञ्। २ शतपथब्राह्मणान्तर्गत तृतीय प्रपाठक पञ्चाध्यायिरूप ग्रन्थविशेष। इस ग्रन्थके पांच अध्यायमें अश्वमेधका उत्पत्तिफल, धर्मविषय, अध्वर्यु, उद्गाता, ब्रह्मा और यजमानको बात कही है। तीन अध्यायमें मन्त्रव्याख्याके साथ विशेष धर्म और शेष दो अध्यायमें धर्मान्तरके साथ पूर्वोक्त विषय सकल सन्निवेशित है। ३ युधिष्ठिरके अश्वमेध अधिकारपर व्यासकृत भारतान्तर्गत पर्वविशेष।

आश्वयुज् (सं० पु०) आश्वयुजी अश्विनीयुक्ता पौर्णमासी यस्मिन् अण्। १ शुक्लप्रतिपदादि अमावस्या पर्यन्त चान्द्र आश्विनमास। (त्रि०) २ अश्वयुज् नक्षत्रमें उत्पन्न।

आश्वयुज, आश्वयुज् देखो।

आश्वयुजक (सं० पु०) आश्वयुज्यामुप्ता माषः, वुञ्। आश्वयुज्या वुञ्। पा ४।३।४५। १ चान्द्र आश्विन पूर्णिमाको उप्त माष। कहा जाता, कि चान्द्र आश्विन पूर्णिमाको बोनेसे उड़द खूब जगता है। (त्रि०) २ चान्द्र आश्विन पूर्णिमाको बोया जानेवाला। (स्त्री०) आश्वयुजकी।

आश्वयुजी (सं० स्त्री०) अश्वयुजा अश्विनीनक्षत्रेण युक्ता पौर्णमासी, अण्-ङीप्। नक्षत्रेण युक्तः कालः। पा ४।२।३। आश्विनमासकी पौर्णमासी।

आश्वरथ (सं० त्रि०) अश्वेन युक्तो रथः अश्वरथस्तस्येदम्, पत्रपूर्वकत्वादञ्। अश्वके रथसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो घोड़ागाड़ीमें लगता हो।

आश्वलक्षणिक (सं० त्रि०) अश्वलक्षणं वेत्ति तज्ज्ञापकशास्त्रमधीते वा, ठक्। १० अश्वलक्षणाभिज्ञ, घोड़ेके भलेबुरे निशान् पहचाननेवाला। २ अश्वलक्षणबोधक शास्त्र अध्ययनकारी, जो घोड़ेके भलेबुरे निशान् बतानेवाली किताब पढ़ता हो। (पु०) ३ अश्वपाल, सायीस।

आश्वलायन (सं० पु०) अश्वं लाति गृह्णाति, अश्वला-क; अश्वलो मुनिभेदः तस्यापत्यम्, फक्। १ ऋग्वेदीय श्रौत और गृह्यसूत्रकारक एक ऋषि। यह शौनकके शिष्य रहे। शौनक इन्हें बहुत चाहते थे। इसीसे उन्होंने अपना बनाया सहस्रकाण्डात्मक ब्राह्मण-सन्निभ योगसूत्र आश्वलायनके नामसे हो चला दिया। उसी समयसे ग्रन्थका नाम आश्वलायन पड़ा है। (त्रि०) २ आश्वलायन सम्बन्धी। (स्त्री०) आश्वलायनी।

आश्वश्व (वै० त्रि०) आशु-अश्व। शीघ्रगामी अश्वयुक्त, जिसमें जल्द दौड़नेवाले घोड़े लगें। "य आश्वश्वा अमवद्वहन्त उते शिते।" (ऋक् ५।५४।१) 'आश्वश्वाः शीघ्रगाम्यश्वोपेताः'। (सायण)

आश्वश्व्य (वै० क्ली०) शीघ्रगामी अश्वात्मक बल, जल्द जानेवाले घोड़ोंकी ताक़त।

"उतत्यदाश्वश्व्यं यदिन्द्र।" (ऋक् ८।६।२४)

'आश्वश्व्यं शीघ्रगाम्यश्वसंघात्मकं बलम्।' (सायण)

आश्वसत् (सं० त्रि०) १ श्वास ग्रहण करनेवाला, जो सांस लेता हो। २ प्रवृद्ध, जो उठनेवाला। ३ आरोग्य पानेवाला, जो आराम हो रहा हो।

आश्वसित (सं० त्रि०) प्रोत्साहित, हौसलेमन्द, जिसे भरोसा दिया जा चुके।

आश्वायन (सं० पु०) अश्वस्य गोत्रापत्यम्, फञ्। अश्वनामक ऋषिके गोत्रापत्य। (स्त्री०) ङीप्। आश्वायनी।

आश्वावतान (सं० पु०) अश्वावताननामर्षेरपत्यम्, अञ्। अनृष्यानन्तर्यबिदादिभ्योऽञ्। पा ४।१।१०४। अश्वावतान

नामक ऋषिके पुत्र। (स्त्री०) ङीप्। आश्वलायनी।

आश्वास (सं० पु०) आ-श्वस-घञ्। १ निर्वृति और आश्रयदान, तसल्लीदिही। २ सान्त्वना, दिलासा। ३ आख्यायिका, क़िस्सा। ४ परिच्छेद, बाब। 'आश्वास: स्यात् निर्वृतौ। आख्यायिका परिच्छेदे।' (हेम)

आश्वासक (सं० त्रि०) आश्वासयति, आ-श्वस-णिच्-ण्वुल्। १ आश्वासकारक, सान्त्वनाकारी, तसल्ली देनेवाला। (पु०) २ वस्त्र, पोशाक।

आश्वासन (सं० क्ली०) आ-श्वस्-णिच्-ल्युट्। सान्त्वना, भरोसा। (त्रि०) कर्तरि ल्युट्। २ आश्वासकारक, तसल्ली देनेवाला।

आश्वासनीय (सं० त्रि०) सान्त्वना देनेयोग्य, जिसे तसल्ली दी जा सके।

आश्वासयत् (सं० त्रि०) सान्त्वनाकारक, तसल्ली देनेवाला।

आश्वासित (सं० त्रि०) सान्त्वना पाये हुवा, जिसे तसल्ली दी जा चुके।

आश्वासिन् (सं० त्रि०) आ-श्वस-णिनि। १ प्रत्याशायुक्त, तसल्ली रखनेवाला। २ प्रसन्न करनेवाला, जो खुश करता हो। (पु०) आश्वासी। (स्त्री०) आश्वासिनी।

आश्वास्य (सं० त्रि०) आ-श्वस्-णिच्-यत्। १ सान्त्वनीय, तसल्ली दिये जाने क़ाबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ सान्त्वना देकर, तसल्लीके साथ।

आश्विक (सं० त्रि०) अश्वान् भारभूतान् हरति वहति आवर्जति वा, ठञ्। १ अश्वको हरण वा वहन करनेवाला, जा घोड़ा चुराता या ले जाता हो। (पु०) अश्वनिमित्तं संयोग: उत्पातो वा, ठक्। १ अश्वलाभसूचक संयोग, घोड़ेका फ़ायदा देखानेवाला मौक़ा।

आश्विन (वै० त्रि०) आशु व्याप्तौ औणादिको क्विन्, ततो अण्। १ व्याप्त, मामूर, भरा हुवा।

"प्रत आश्विनी: पवमान।" (ऋक् ९।८६।४)

'आश्विनीर्व्याप्ता:।' (सायण)

२ अश्विदेवता-सम्बन्धीय। "अश्विनाश्विना: स्तोत:।" (वाजसनेयस० २४।१) 'आश्विना: अश्विदेवत्या:।' (महीधर)

(पु०) ३ चान्द्र आश्विनमास, क्वारका महीना। इस मासकी अमावस्याको हिन्दू पितृलोकके उद्देशसे श्राद्ध करते हैं। शुक्लपक्षमें देवीपूजा और विजयादशमी होती है, जिसकी अपेक्षा दूसरा पर्व नहीं। नृत्य, गीत और वाद्यके उद्यमसे भारत आमोदित रहता है। आबाल-वृद्ध-वनिता सबके मनमें जो आनन्द आता है, वह कहा जा नहीं सकता। पूर्णिमाको कोजागर लक्ष्मी जगाते हैं। ४ यज्ञीय कपाल, एक बरतन। ५ अश्विनीकुमार देवता-सम्बन्धीय यज्ञघृतादि द्रव्य विशेष। ६ अस्त्र, हथियार।

आश्विनी (सं० स्त्री०) अश्विनी अश्वाकारवता नक्षत्रेण युक्ता पूर्णिमा, अण्-ङीप्। १ आश्विन मासकी पूर्णिमा। २ इष्टकाविशेष। ३ चिता।

आश्विनेय (सं० पु०) अश्विन्या: घोटकाकारवत्या: संज्ञाया: अपत्यम्, ढक्। स्त्रीभ्यो ढक्। पा ४।१।१२०। १ अश्विनीकुमारद्वय। तयोरेकैकस्यापत्यम्, अण्। २ नकुल। ३ सहदेव। अश्विन्के पाण्डुराजपत्नी माद्रीसे उत्पादन करनेपर दोनो पुत्रोंका नाम आश्विनेय पड़ा है। अश्वस्यैकाऽगम: पन्था:। ४ अश्वके जाने योग्य पथ, जिस राहसे घोड़ा निकल सके।

आश्वीन (सं० पु०) अश्वस्यैकाऽगम: पन्था:, खञ्। अश्वस्यैकाऽगम:। पा ५।२।१९। अश्वके एक दिनमें जाने योग्य पथ, जिस राहसे घोड़ा एक रोज़में निकल सके।

आश्वीय (सं० क्ली०) अश्वसमूह, घोड़ोंका झुण्ड।

आश्वेय (सं० पु०) अश्वो देवता अस्य, ढक्। १ अश्वो देवता सम्बन्धीय घृतादि। २ अश्वोके अपत्य।

आषाढ़ (सं० पु०) आषाढ़ा-नक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी आषाढी सा अस्मिन् मासे, अण्। साऽस्मिन् पौर्णमासीति संज्ञायाम्। पा ४।२।२१। १ स्वनामख्यात चान्द्रमास विशेष। कृषिशास्त्रमें ठहराया जाता, कि आषाढ़ मासमें किस समय धान्य बोनेसे शस्यका शुभाशुभ चलता है। कृषि-पराशरके मतानुसार आषाढ़ मासकी पूर्णिमाको पूर्व दिक्‌से वायु चलनेपर अधिक वृष्टि होती है। किन्तु उसके अग्निकोणको सरक जानेसे शस्य मारे पड़ता है। दक्षिण दिक्‌से वायु बहनेपर वृष्टि नहीं

आती। फिर नैर्ऋत कोणमें वायु आनेसे भी धान्यादि शस्यकी हानि होती है। पश्चिम दिक्से वायुचलनेपर जल पड़ता है। वायुकोणमें वायुके आनेसे झड़ लगती है। यदि उत्तरकी ओरसे वायु चलता, तो सकल पृथिवीमें धान्यादि शस्य भर जाता है। ईशान कोणमें भी वायुके आनेसे प्रचुर शस्य उपजता है। आषाढ़ मासकी शुक्ल नवमीको वायुवर्षण (तूफान) बढ़नेसे पानी पड़ता है और वायु बन्द रहनेसे बूंद नहीं टपकता। इस नवमीको उदयाचल निर्मल रहनेसे सूर्यदेव अपना समय विधान करते हैं। ऐसे समय सूर्यका मण्डल देखते हैं। सूर्य यदि मेघसे आवृत रहता, तो तुला राशिमें अस्त होनेतक मेघ गरजता है। 'शुचिरयं आषाढ़े।' (अमर)

आषाढ़ी पूर्णिमा प्रयोजनमस्य, अण्। २ व्रतियोंके लेने योग्य पलाशदण्ड। 'पलाशो दण्ड आषाढ़ो व्रते।' (अमर) ३ मलयपर्वत। 'आषाढ़ी मलयगिरौ व्रतिदण्डे च मासि च।' (हेम)

आषाढ़क (सं० पु०) आषाढ़ एव, स्वार्थे कन्। १ आषाढ़मास। २ पलाश बीज।

आषाढ़भव (सं० पु०) आषाढ़ायां नक्षत्रे भवति, आषाढ़ा-भू-अच्। १ मङ्गलग्रह, सिरीस, अम्राट-फलक। २ आषाढ़मासजात और आषाढ़ाभू शब्द भी इसी अर्थमें आता है।

आषाढ़ा (सं० स्त्री०) १ राशिचक्रस्थित विंशतितम नक्षत्र, पूर्वाषाढ़ा। २ एकविंशतितम नक्षत्र, उत्तराषाढ़ा। उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें जन्म होनेसे मनुष्य दाता, दयावान्, सत्कर्मी और पुत्रभार्यादि सुखसम्पन्न रहता है।

आषाढ़ाभू (सं० पु०) आषाढ़ायां भवतीति, आषाढ़ा-भू-क्विप्। मङ्गलग्रह। 'मङ्गलोऽङ्गारकः कुजः। आषाढ़ाभूर्नवार्चिश्च।' (हेम) (त्रि) २ आषाढ़ानक्षत्र जात।

आषाढ़ि (सं० स्त्री०) आ-सह-क्तिन्; पृषोदरादित्वात् षत्वम्, ओकारत्वाभावश्च। १ सम्यक् सहन, खासी बरदाश्त। २ रतिदेवी।

आषाढ़िका (सं० स्त्री०) रात्रकी विशेष।

आषाढ़ी (सं० स्त्री०) आषाढ़्या नक्षत्रेण युक्ता पूर्णिमा, अण्, टिड्ढाणित्यादिना ङीप्। १ आषाढ़ मासकी पूर्णिमा। आषाढ़ीको कुछ धान्य तौलकर वायुमें स्थापन करते हैं। वायुकी आर्द्रतासे धान्यका परिमाण किञ्चित् बढ़नेपर सुवृष्टि होने और सुभिक्ष पड़नेका योग समझा जाता है। २ यज्ञीय दण्डकाविशेष।

आषाढ़ीय (सं० त्रि०) आषाढ़ायां भवं तस्येदं इत्यत्वाद्या, छ। १ आषाढ़ानक्षत्रमें उत्पन्न। २ आषाढ़-सम्बन्धीय।

आष्टम (सं० पु०) अष्टमो भागः, अ। षष्ठाष्टमाभ्यां ञ च। पा ५।३।५०। अष्टमभाग, आठवां हिस्सा।

आष्टमातुर (सं० त्रि०) अष्टानां मातृणां अपत्यम्; अष्टन् मातृ-अण्, मातृशब्दस्य उकारान्तादेशः। मातुरुत्संख्यासंभद्रपूर्वायाः। पा ४।१।११५। आठ माताका लड़का।

आष्टा (सं० स्त्री०) आ तिष्ठते: घञ्-क षत्वम्। सुषामादित्वात्। पा ८।३।९८। दिक्, जानिब, तर्फ।

आष्टि (सं० पु०) अष्टानामपत्यम्, अष्टन्-इञ्। बाह्वादिभ्यश्चेति। पा ४।१।९६। आठजनका अपत्य विशेष।

आष्टु (सं० क्ली०) अश्नुते व्याप्नोति, अशू व्याप्तौ तुन् वृद्धिश्च। अस् जि-गमि-नमि-हनिविश्यशां वृद्धिश्च। उण् ४।१५८। आकाश, आसमान्। 'आष्टुमाकाशम्।' (उज्ज्वलदत्त)

आष्ट्री (वै० स्त्री०) १ सुदीर्घवन, लम्बा जङ्गल। "इतिः पथिवी न दहात्यकादनाष्ट्राम्।" (ऋक् १०।१६५।३) 'आष्ट्रां व्याप्तायामरण्यान्याम्।' (सायण) २ भोजनगृह, बावरचीखाना।

आष्ठा (सं० स्त्री०) देश, प्रान्त, मुल्क।

आस् (सं० अव्य०) आ-अस-क्विप्, आस्-क्विप् वा। १ स्मरणसे, याद करके। २ अपेक्षापूर्वक, बनिस्बत। ३ समन्तात्, चारो ओर। ४ कोप, गुस्सेसे। 'आः समन्तात् प्रकोपयोः।' (हेम) ५ पीड़ासे गर्वके साथ मरजके, दर्दसे गुरूरके साथ जोरमें चिल्लाकर। ६ खेद, अफसोस। (वै० पु०) मुख, मुंह, चेहरा।

आस (सं० पु०) आस्-घञ्। १ आसन, बिछौना। २ स्थिति, हालत। ३ उपवेशन, बैठक। अस्यते क्षिप्यते अनेन, अस करणे घञ्। ४ धनुः, कमान्। अस क्षेपे भावे घञ्। ५ निक्षेप, फेंकफांक। ६ बैठनेका स्थान। ७ धूलि, खाक। (हिं० स्त्री०) ८ आशा, उम्मेद।

९ कामना, चाह। १० आधार, टेक। ११ दिक्, तर्फ़।

आसंसार (सं० त्रि०) १ नित्य परिवर्तनशील, बराबर बदलते रहनेवाला। (अव्य०) २ संसारके नाश-तक, जबतक दुनियां रहे।

आसकत (हिं० पु०) आलस्य, सुस्ती, ताक़तका न रहना।

आसकती (हिं० वि०) अलस, सुस्त, ताक़त न रखनेवाला।

आसक्त (सं० त्रि०) आ-सनृज-क्त। १ आसङ्गयुक्त, लगा हुवा। २ अन्य विषय परित्यागकर एक ही नियममें निविष्ट, मुश्ताक़, चाहनेवाला। (अव्य०) ३ अनवरत, लगातार, हमेशा। (क्लो०) ४ सम्यक् सम्बन्ध, खासा लगाव। 'तत्परे प्रसितासक्तौ।' (अमर)

आसक्तचित्त (सं० त्रि०) अनुरक्त, मुश्ताक़ दिलको लगाये हुवा।

आसक्तचेतस् (सं० त्रि०) किसी विषयपर हृदयको लगाये हुवा, जिसका दिल किसी बातपर अटका रहे।

आसक्तमनस्, आसक्तचेतस् देखो।

आसक्ति (सं० स्त्री०) आ-सनृज-क्तिन्। १ अन्य विषयको छोड़ एक ही विषयका अवलम्बन, लगाव। (वै० स्त्री०) २ पथस्थापन, राह डालनेका काम। (अव्य०) ३ अभिप्रायपूर्वक, मतलबसे।

आसङ्ग (सं० पु०) आ-सनृज-घञ्। १ अभिनिवेश, लगाव। २ प्राप्त वा उपस्थित विनाशि-वस्तुका रक्षाभिलाष, मिट जानेवाली मिली या हाज़िर चीज़के बचानेका इरादा। ३ भोगाभिलाष, ऐशकी ख़्वाहिश। ४ कर्तृत्वाभिमान, कारगुज़ारीका घमण्ड। ५ अन्य विषयको छोड़ एक ही विषयपर चित्तका अभिनिवेश, दूसरी बातको हटा एक ही बातपर दिलका जमाव। ६ सम्यक् सम्बन्ध, खासा ताल्लुक़। ७ लगाने योग्य सौराष्ट्रमृत्तिका। (वै० पु०) ८ पथस्थापन, राहबन्दी। (त्रि०) ९ अनवरत, मुदामी। (अव्य०) १० सदा, हमेशा, लगातार।

आसङ्गत्य (सं० क्लो०) न सङ्गतं असङ्गतम् तस्य भावः, ष्यञ् नीत्तरपदवृद्धिश्च। सङ्गताभाव, असम्बन्ध, मुफ़ारक़त, जुदाई।

आसङ्गा (सं० स्त्री०) सौराष्ट्रमृत्तिका, सौराष्ट्र देशकी मट्टी।

आसङ्गिनी (सं० स्त्री०) आसङ्गः सातत्यमस्या अस्ति, इनि-ङीप्। वात्यासमूह, चक्रवायु, गर्दबाद, बगूला, डौंडा।

आसङ्गिम (सं० पु०) आसङ्गे भवः, डिमच्। कर्णबन्धनाकृति विशेष, किसी क़िस्मकी पट्टी। कर्णबन्धनकी आकृति पन्द्रह प्रकार होती है। उसमें जिसका मध्यभाग लम्बा और एक कोणयुक्त रहता, वह आसङ्गिम बजता है। (सुश्रुत)

आसञ्जन (सं० क्लो०) आ-सनृज-ल्युट्। १ आसङ्ग, सोहबत। २ सम्यक् सम्बन्ध, खासा लगाव। ३ योजना, जोड़।

आसञ्जित (सं० त्रि०) आ-सनृज-णिच्-क्त-इट्। संयोजित, लगा हुवा।

आसड़—एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार। बालचन्द्रकृत विवेकमञ्जरीकी टीकामें लिखा है,—

आसड़ प्रसिद्ध जैनाचार्य अभयदेव सूरिके शिष्यने भिन्नमालवंशीय कटुकराजके औरस और अनलदेवीके गर्भसे जन्म लिया था। इन्हें लोग कविशोभाशृङ्गार कहते थे। इनके पृथिवीदेवी और जैतल्लदेवी दो स्त्री रहीं। इन्होंने मेघदूतकी टीका, कितने ही जिनस्तोत्र तथा स्तुति, धर्मग्रन्थ उपदेशकुण्डली और विवेकमञ्जरी बनायी है।

आसते (हिं० क्रि० वि०) १ आहिस्ता, आहिस्ता, धीरे-धीरे, ज़ोर न देकर। २ होकर।

आसत्ति (सं० स्त्री०) आ-सद्-क्तिन्। १ सङ्गम, मेल। २ लाभ, फ़ायदा। 'आसत्तिः सङ्गमें लाभे।' (हेम) ३ नैकट्य सम्बन्ध, पासका मेल। ४ न्यायमतसे प्रत्यक्षजनक सन्निकर्ष, दो लफ़्ज़ और उनके मानीके बीचका ताल्लुक़।

"वाक्यं स्याद् योग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्तः पदोच्चयः।" (साहित्यदर्पण)

योग्यता, आकाङ्क्षा और आसत्तियुक्त पदसमूहको वाक्य कहते हैं। बुद्धिका विच्छेद न पड़ना ही आसत्ति है। "आसत्तिर्बुद्ध्यविच्छेदः।" (साहित्यदर्पण)

आसत्ति, योग्यता और आकाङ्क्षासे तात्पर्य समझ

"अभि दस्युं बकुरेणा धमन्तोरु ज्योतिश्चक्रथुरार्याय।" (ऋक् १।११७।२१)

हे अश्विद्वय! वज्रसे दस्युको मार आर्यके प्रति ज्योति:प्रकाश करो।

"इन्द्रः समत्सु यजमानमार्यं।" (ऋक् १।१३०।८)

इन्द्र युद्धके समय आर्य यजमानको बचावें।

"हिरण्ययमुत भोगं ससान हत्वी दस्यून् प्रार्यं वर्णमावत्।"

(ऋक् ३।३४।९)

इन्द्रने हिरण्मय धन दिया और दस्यु मार आर्यवर्णको बचा लिया है।

"अहं भूमिमददामार्यायाहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय।" (ऋक् ४।२६।२)

मैं (इन्द्र)-ने आर्यको भूमि दी है। मैंने मर्त्य (हव्यदाता)को वृष्टि पहुंचायी है।

"यथा दासान्यार्याणि वृत्रा करो वज्रिन्त्सुतुका नाहुषाणि।"

(ऋक् ६।२२।१०)

"साह्याम दासमार्यं त्वया युजा सहस्कृतेन सहसा सहस्वता।"

(ऋक् १०।८३।१२)

"नवदशभिरस्तुवत शूद्रार्यावसृज्येताम्।" (शुक्लयजुः १४।३०)

"तयाहं सर्वं पश्यामि यश्च शूद्र उतार्यः।" (अथर्वसं० ४।२०।४)

"शूद्रार्यौ चर्मणि व्यायच्छेते।" (ताण्ड्य ब्रा० ५।५।१४)

तैत्तिरीयसंहितामें आर्य और शूद्रका चर्मनिमित्त कलह लिखा है। (७।५।९।८) ऐतरेय-ब्राह्मणमें भी आर्यशब्द आम्नात है। "अयुत मार्यस्य राष्ट्रं भवति। (८।५।२)

निरुक्तकार यास्कने जातिकथनमें एकत्र आर्य शब्द व्यवहार किया है। "विकारमस्यार्येषु।" (२।१।४)

उन्होंने अन्यत्र आर्य-शब्दके व्याख्यानमें लिखा है,—"आर्यः ईश्वरपुत्रः।" (६।५।२)

अर्थात् ईश्वरके पुत्रका नाम आर्य है।

निघण्टु (२।२२) में ईश्वरनामपर 'अर्य' शब्द परिपठित है। उसीसे अपत्यार्थ प्रत्ययमें आर्य शब्द बनता है। जैसे मुसलमानोंके धर्मप्रवर्तक मुहम्मद साक्षात् ईश्वरदूत और ईसायियोंके ईसा ईश्वरात्मज, वैसे ही पहले हमारे भी पूर्वपुरुष रूपवत्व, बलवत्व, विद्वत्व, सत्यवादिता आदि बहु सद्गुण एवं पवित्र आचारोंसे ईश्वरपुत्र माने गये हैं। इसीसे ईश्वरपुत्र इनका व्यपदेश हुआ और यही हमारे आर्य-नामका निदान है।

महामुनि पाणिनिने भी एक स्थानपर आर्यशब्दका उल्लेख किया है,—आर्यौ ब्राह्मणकुमारयोः। ६।२।५८।

आर्य जाति अति प्राचीन है। पूर्व समय यह आदर्श-विज्ञानादि ब्रह्मविज्ञानान्तवित्तम और अतिसभ्य रहे। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य भेदसे आर्य त्रिविध होते हैं। दस्यु और दास द्विविध शूद्रोंसे भिन्न ठहरनेपर इन्हें ईश्वरपुत्र कहा है। किन्तु अब कालचक्रके परिभ्रमण-नियमसे, वेदविज्ञान, ऐक्यबल और अन्तर्वाणिज्य तथा बहिर्वाणिज्य खो मुमूर्षु दशामें पड़े बारबार श्वास लेते, इसीसे जीवित समझे जाते हैं। आर्यावर्त शब्दमें प्राचीन आर्यावासका परिचय देखो।

जातिनिर्णय—जगत्के आदिग्रन्थ ऋक्संहितासे विज्ञप्ति होती—अति पूर्वकाल आर्यजाति स्वतन्त्र समझी जाती थी। उस समय वर्तमान कालकी तरह जातिभेद वा वर्णविभागकी प्रथा प्रचलित न रही। इस जातिके ऋषि, राजा और गृहस्थ साधारण आर्य नामसे ही परिचित थे। विजित अनार्य दस्युसे पृथक् रखनेके लिये 'आर्यवर्ण' शब्द द्वारा अपना परिचय देते रहे। प्राचीन ऋक्संहितामें उस समय आर्य और शूद्र केवल दो ही वर्णविभागका प्रसङ्ग पड़ता था। शूद्र कहनेसे प्रधानतः दस्यु वा दास जातिका बोध होते रहा। क्रम-क्रम आर्योंकी संख्या जितनी बढ़ी, नाना विषयमें उतनी ही उन्नति देख पड़ी। उसी समय विशेष-विशेष व्यक्तिको निर्धारित कार्यमें लगानेके लिये वर्णविभागकी आवश्यकता आयी थी। ऋक्संहितामें वर्णविभाग-सम्बन्धपर निर्दिष्ट है,—

"ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥" (ऋक् १०।९०।१२)

'इस (पुरुष)के मुखसे ब्राह्मण, बाहुसे राजन्य, ऊरुसे वैश्य और पदसे शूद्र निकला है।' सिवा इसके यजुर्वेद (वाजसनेयसं० ६८।४८, तैत्तिरीय ५।१।१०।३), अथर्ववेद (५।१७।९) और ऐतरेय-ब्राह्मण (७।१९) प्रभृति प्राचीन ग्रन्थमें भी वर्णविभागकी कथा लिखी है। वैदिकयुगके आर्योंमें ऋत्विक् वा पुरोहित, राजपुरुष और साधारण व्यवसायी वा श्रमजीवी तीन

श्रेणी भिन्न भिन्न रही। उस समय तीनो श्रेणीके मध्य आहारादि वा विवाहादि कार्य निषिद्ध न था।

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

धर्मविश्वास और उपास्य देवगण—यज्ञानुष्ठान ही वैदिक आर्योंका श्रेष्ठ धर्म परिगणित रहा। प्राचीन ऋषि समधिक प्रभाव-सम्पन्न भिन्न भिन्न प्राकृतिक पदार्थ-समुदायको पूजते थे। भगवान्‌की सत्ता समायी समझ अग्नि, वायु, ज्योतिष्क प्रभृति नैसर्गिक वस्तुके उपासक रहे। मानसिक स्फूर्तिका पूर्ण विकाश हुआ था। ऋक्संहितामें आर्याराध्य देवताओंके नाम यह लिखे हैं,—अंश, अग्नि, अदिति, अनुमति, अरण्यानी, अर्यमन्, अश्विन्, आग्नेयी, इन्द्र, इन्द्राणी, इला, उच्छिष्ट, उषस्, ऋतु, ऋभु, काम, काल, गुङ्गू, गुह, त्रित, त्रैतन, त्वष्टृ, दक्ष, दक्षिणा, दिति, द्यौस, धिषणा, नक्त, निष्टिग्री, पितृ-पुरुष, पूषा, पृश्नि, पृथिवी, प्रजापति, प्राण, ब्रह्मा, ब्रह्मचारी, ब्रह्मणस्पति, भग, भारती, मरुद्गण, मही, मित्र, राका, रुद्रगण, रोदसी, रोहित, लक्ष्मी, वनस्पति, वरुण, वरुणानी, वरुत्री, वायु, विश्वकर्मन्, बृहस्पति, श्येन, श्रद्धा, सरस्वत्, सरस्वती प्रभृति नदी, सिनिवाली, सूर्य, सूर्या, सोम, स्कम्भ, हिरण्यगर्भ, होत्रा।

पाश्चात्य पण्डितोंने शब्दशास्त्रके प्रभावसे प्राचीन पारसिकों (ईरानियों) और आर्योंका एकत्र रहना ठहराया है। सगर राजाने प्राचीन पारसिकोंको वेद और देवकी उपासनका अनधिकारी बनाया और श्मश्रु मुण्डन न करानेका आदेश सुनाया था। (विष्णुपुराण ३।४) जबतक पारसिक आर्योंसे मिलित थे, तबतक वैदिक देवताओंके उपासक भी रहे। तत्-कालीन वैदिक देवताओं और ऋषियोंके नाम अवस्ता ग्रन्थमें लिखे हैं,—

वैदिक नाम	आवस्तिक नाम
अङ्गिरा	अङ्ग
अथर्वन्	आथ्रवन्
अरमति	आर्मैयिति
अर्यमन्	अयिर्यमन्
वृत्रघ्न	वेरेथ्रघ्न
काव्य उशनस्	कव उस्
त्रित	थ्रित
त्रैतन	थ्रयेतन
नराशंस	नरियोसंह
नासत्य	नाओंहयिथ्य
मित्र	मिथ्र
यम	यिम
वरुण (असुर)	अहुर मज्द
वायु	वयु
सोम	होम

वेदसंहिताके अनेक स्थल (ऋक् ७।२३, ६।१, १३।१, १०।३, ३६।२, ६६।२, ८८।५)में देवताओंको असुर शब्दसे सम्बोधन किया है। अवस्ता-शास्त्रमें भी देवता असुर कहे गये हैं। पारसिक शब्दमें अपर विवरण देखो।

फिर पाश्चात्य पण्डितोंने ग्रीक (यूनानी) प्रभृति यूरोपीय प्राचीन सभ्य जातिको आर्य-सम्भूत माना है। उक्त मतसे प्राचीन आर्योंके साथ एकत्र बसते यूनानियोंका विश्वास और धर्म जो रहा, उसे उन्होंने पृथक् होते भी न छोड़ा। मक्षमुलर प्रभृति पाश्चात्य शाब्दिकोंको कुछ वेदोक्त देवताओंके नाम ग्रीक शास्त्रमें मिले हैं,—

वैदिक नाम	ग्रीक नाम
अश्विवान्	इक्षियोन्
अरुषा	ईरस्
अहना	डाफ्नी
गन्धर्व	केण्टौरस्
पणि	पारिस
वृत्र	अरथ्रस्
सरण्यु	एरिन्नस्
सरमा	हेलना
हरित्	खारिट्

प्राचीन आर्य तेंतीस देवताओंकी उपासना करते थे,—

"आ नासत्या त्रिभिरेकादशैरिह देवेभिर्यातं मधुपेयमश्विना।
प्रायुस्तारिष्टं नी रपांसि मृक्षतं॥" (ऋक् १।३४।११)

हे नासत्य अश्विद्वय! यहां तैंतीस देवताओंके साथ मधु पीने आवो, हमारा आयुः बढ़ावो और पाप छोड़ावो। ८।३५।४ ऋक् देखो।

ऋक्संहितामें इन तैंतीस उपास्य देवताओंके नाम नहीं दिये। अन्यत्र कहते हैं,—

"ये देवा दिव्येकादशस्थ पृथिव्यामध्येकादश
स्थाप्सु सदो महिनैकादशस्थ।" (शुक्लयजु००सं० १।७।१०)

आकाश, पृथिवी और अन्तरिक्षमें ग्यारह-ग्यारह देवता रहते हैं। याज, अनुयाज और उपयाज ग्यारह-ग्यारह रहनेसे तैंतीस देवता होते हैं। (ऐतरेयब्रा० २।१८) अष्टवसु, एकादश रुद्र और द्वादश आदित्यसे तैंतीस देवता गिने जाते हैं। (शतपथब्रा० ४।५।७।२)

उस समय आर्यऋषि अधिक देवताओंका अस्तित्व भी मानते थे,—

"त्रीणि शतात्रीसहस्राण्यग्निं त्रिंशच्च देवा नव चासपर्यन्।"

(ऋक १०।५२।६)

तीन हज़ार तीन सौ उन्तालीस (३३३९) देवताओंने अग्निकी उपासना की है। किन्तु अति प्राचीन कालसे आर्य एक ईश्वरको स्वीकार करते आये हैं,—

"अचिकित्वाञ्चिकितुषश्चिदत्र कवीन्पृच्छामि विद्मने न विद्वान्।
वियस्तस्तम्भ षडिमा रजांस्यजस्य रूपे किमपि स्विदेकं।"

(ऋक् १।१६४।६)

हम ज्ञानहीन हैं। कुछ न जानकर ज्ञानियोंसे समझनेके लिये पूछते—जो छहो लोक स्तम्भन करते, वह क्या एक अजरूपमें रहते हैं?

सिवा इसके २।१२।१, ३।५५।२१-२२, ५।८५।३-५ इत्यादि ऋक् पढ़नेसे एक ईश्वरकी बात आपही मनमें उठ आती है। निम्नलिखित मन्त्रमें इसका आभास है, कि आर्योंके हृदयमें कैसे ईश्वरवाद प्रवेश हुआ,—

"प्र सु स्तोमं भरत वाजयन्त इन्द्राय सत्यं यदि सत्यमस्ति।
नेन्द्रो अस्तीति नेम उ त्व आह क ईं ददर्श कमभि ष्टवाम॥"

(ऋक् ८।१००।३)

हे सुखाभिलाषिन्! इन्द्रका रहना यदि सत्य हो, तो तुम उनके उद्देशसे सत्य बोलो। नेम (ऋषि) कहते, इन्द्र नामके कोई नहीं। किसने उन्हें देखा है? किसकी स्तुति करेंगे?

उसी अति प्राचीनकाल यज्ञकार्य सुसम्पन्न करनेके लिये विभिन्न ऋत्विक् नियुक्त होते थे, यथा—देवगणको आह्वान करनेके लिये 'होता', हव्यदान करनेके लिये 'अध्वर्यु', अग्नि प्रज्वलित करनेके लिये 'अग्निमिन्ध', पत्थरसे सोमको कूटे रस निकालनेके लिये 'ग्रावग्राभ', नियमानुसार कर्मका अनुष्ठान करनेके लिये 'शास्ता' वा 'प्रशास्ता' और समस्त यज्ञ सम्पादन करने लिये 'मेधावी' वा 'ब्रह्मा'। (१।१६२।५)

आर्य ऋषिगणने ठहराया, कि भिन्न-भिन्न देवता परमात्माका नाम मात्र है। १०।११४।५ ऋक्, सायणकृत उसके भाष्य और ७।४ निरुक्तमें उक्त विषय वर्णित है।

आर्योंकी रीति और अवस्था—आर्य पुत्रपौत्रादिके साथ एकत्र रहते तथा खाते (ऋक् १।११४।६), और मृतकालमें सकल पुत्र पितृधनके अधिकारी होते थे (१।७३।९)। पितृगृहमें अवस्थित अविवाहित कन्या पितृकुलसे धन पाते रही (ऋक् २।१७।७)। पुत्र तथा कन्या उभयके वर्तमान रहते, पुत्र पिताकी क्रियाका अधिकार पाता और कन्याका सम्मान किया जाता था (ऋक् ३ ५१।२)। पुत्र न रहनेसे दौहित्रको अपना पुत्र बना लेते रहे (ऋक् ३।३१।१)। स्त्रियां पतिके साथ यज्ञ करती (ऋक् १।३१।३) और रथपर बैठ अपर स्थान घूमती फिरती थीं। इसी प्रकार अविवाहित अवस्थामें अधिक वयसतक रहनेसे पिता किंवा गुरुजन कोई आपत्ति उठाते न थे। विवाहके समय वर सुवर्णालङ्कारसे भूषित होते रहे (ऋक् ५।६०।४)। वधू वस्त्रावृत रहती थी (ऋक् ८।२६।१२)। यौवन आनेसे स्त्रियोंका विवाह होते रहा (ऋक् १०।८५।२२)। सुन्दरी भद्र स्त्रियोंके मनोमत पतिको वरण करती थीं (ऋक् १०।२७।१२)। विवाहके बाद स्त्रियोंको पतिगृह जाते समय उपढौकन मिलते रहा (ऋक् १०।८५।२०)। पतिके गृह पहुंच पत्नी कर्त्री बनती (ऋक् १०।८५।२७) और श्वशुरपर प्रभुत्व, श्वश्रूपर वशित्व एवं ननान्दा तथा देवरपर कर्तृत्व रखती थी।

पुर (नगरादि) और ग्राम स्वतन्त्र रहे (१।४४।२०, —४५।८,—११४।१; १०।१४६।१)। लौहमय नगर

(७।३।७, १५।१४); प्रस्तरमय शतसंख्यक पुरी (४।३०।२१) और सहस्रद्वार तथा सहस्र स्तम्भ-विशिष्ट अट्टालिका बनाते थे (१।११३।४, २।४१।५, ७।८८।५)। उत्कृष्ट गृह तथा सामान्य कुटीर (१।१०।१८) और शतद्वार-विशिष्ट यन्त्रगृह प्रभृतिका निर्माणकार्य अवगत रहा (१।५१।३)। इष्टकादि द्वारा गृह प्रभृति (वाजसनेय १३।११) तथा यातायातका सुन्दर मार्ग (ऋक् १।५८।१) एवं दुर्गम पार्वत्य-देशमें सुगम पथ बनाते (१।११६।२०) और विश्रामस्थानमें खाद्यद्रव्यका प्रबन्ध लगाते थे (१।१६६।९)। शकट (१।३०।१५) खदिर वा शिंशुकाष्ठसे (४।५३।१९) बनता और सारथिके बैठनेको स्थान रहता था। अश्वद्वय योजित रथ (१।९४।१०) भी तैयार होता था। त्रिबन्धयुक्त तथा त्रिकोण रथमें (१।४७।२) बैठनेको तीन स्थान और तीन चक्र रहते थे। धातुत्रय-विशिष्ट (१।१८३।१) और युद्धार्थ सुवर्णमण्डित रथ (५।६२ ५) प्रभृति भी व्यवहृत होता था। युद्धकाल योद्धा सुवर्णमय कवच तथा उष्णीष (१।२५।१३, ५।५४।११), लौहवर्म (१५।६।२), तनुत्राण, वर्म, अंसत्रा, द्रापि, सुवर्ण वस्त्राच्छादन (४।५३।४) प्रभृति पहनते रहे। युद्ध-यात्रामें ध्वज उड़ता (१।१०३।११), दुन्दुभि बजता (१।२८।५) और सेनापति सशस्त्र सैन्य ले आगे बढ़ता था (१।३३।३)। युद्धका सन्देशवह भी रहता था (५।८३।३)। युद्धजय होनेपर शत्रुका द्रव्य जो लुटता, वह सकल योद्धाओंको बंटते रहा।

आदि वैदिक युगमें रमणियोंको अलङ्कार पहनना बहुत अच्छा लगता था (१।८५।१)। निष्क (२।३३।१०), अञ्जि, वासी, स्रक्, रुक्म, खादि (५।५३।४), हिरण्य-कर्ण, मणि प्रभृति अलङ्कारका नाम सुनते हैं (१।१२२।१४)। मुक्तादिका व्यवहार भी चलता था (१०।६४।११)। निष्ककारी (सोनार) अलङ्कार बनाते थे (८।४७।१५)। वाण (१।८५।१०), क्षोणी (२।३४।१३) कर्करि प्रभृति वीणा-जैसे वाद्ययन्त्र थे। नर्तकी नृत्य-गीत करती रही (१।९२।४)। रङ्गमञ्चपर पुत्रिका (पुतली) का नृत्य भी होता था (४।३२।२३)।

आर्य ऊर्ण, मेषलोम, चर्म और वल्कल पहनते रहे। स्त्रियां वस्त्र बुनती थीं (२।३८।४)। वयन-कार्य रात्रिको होते और ताना-बाना दो स्त्रियोंके द्वारा चलते रहा (२।३।६)।

रमणी रन्धनकार्यमें नियुक्त थीं। आर्य—दधि-मिश्रित सक्तु, भृष्टयव, पिष्टक (३।५२।६), घृत, दुग्ध, दधि, मधु, अपूप, पक्वफल, शाकादि और क्षीरपक्व अन्न खाते रहे। समय-समय मांसका भोजन भी होता था (५।२९।७, ८।७७।१०, १०।७९।६, १०।८६।१४)। अतिथियोंको सुख देनेके लिये पशुबलिकी प्रथा भी रही (१।३१।१५)।

शीत-प्रधान देशमें रहनेसे कुछ लोग सुराप्रिय भी थे (१।११६।७)। सोमरस-प्रस्तुत आर्योंके धर्म-कर्ममें परिगणित है।

वाणिज्यके लिये देशभ्रमण और समुद्र गमन करते रहे (४।५५।६)। क्रयविक्रयका नियम जो ठहरता, वह टूटता न था (४।२४ ९)। मुद्राका प्रचलन रहा (५।२७।२)। पणि देखो।

आजकलकी तरह उस समय भी पल्लिग्राममें कृषिकार्य होता था। कृषक खेती करते रहे (१०।११ सूक्त)। कुशूल (खत्ती) में यव रखते थे (१०।६८।३)। पशुके मध्य अश्व, वड़वा, हस्ती, उष्ट्र, मेष और वहन-कारी कुक्कुरको प्राचीन आर्य पालते रहे।

वैदिक युगके आर्योंको सूर्यकी दैनिक गति (१।१२३।४), सौर द्वादश अर (राशि), उत्तरायण तथा दक्षिणायन, प्राचीन मास और ऋतुका विषय अवगत था (१।१६४ सूक्त)। आकर्षण-शक्तिका विषय भी समझते थे (८।८५।१—१९)।

ज्योतिष शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

औषधिका गुणागुण जानते और रोगादिकी चिकित्सा चलाते रहे। आयुर्वेद देखो।

ऋक्संहितामें युगादिका नाम नहीं निकलता। यजुःसंहितामें कृत, त्रेता और द्वापर शब्द आया है। वाजसनेयसंहिता (३०।१८) में यह विषय विद्य-मान है। ऋक्संहितामें नरकका नाम अविदित रहा। अथर्वसंहितामें (१२।४।३६) में 'नारक' मिलता है।

पृथिवीके सर्वप्राचीन ग्रन्थ ऋक्संहितासे हम आर्यों-की रीति और अवस्थाका वर्णन पहले ही लिख चुके हैं। अपर वेद और ब्राह्मणमें आर्योंकी रीतिनीति-पद्धतिका वृत्तान्त जो दिया,वह नीचे प्रकाशित किया है,—

ब्राह्मणोंमें प्रतिग्रहादिसे जीविका चलाना, दानादिसे धनादिको त्यागना, विद्याबलसे सर्वतत्त्व ठहराना और राज्यरक्षणार्थ युद्धके लिये राजाज्ञासे प्रसन्नतापूर्वक आगेको पैर बढ़ाना चार धर्म विशेषतः देख पड़ते थे (ऐतरेयब्रा० ७।५।३)। क्षत्रिय बलवान्, प्रतिष्ठित, आश्रित-रक्षक, सर्वोपकारी, तेजस्वी और यशस्वी रहे। वैश्य अन्यको कर देते और अन्यका धान्यादि तथा यथाकाम जेयत्व रखतेथे। शूद्रोंमें धावकत्व, कर्मकारत्व और प्रसन्नतापूर्वक शरीर प्रदत्व विद्यमान रहा। (ऐतरेयब्रा० ७।५।५-६)

ब्राह्मणोंका बलकर भक्ष्य सोम, क्षत्रियोंका न्यग्रोध, उदुम्बर, अश्वत्थ तथा प्लक्ष फल, वैश्योंका दधि और शूद्रोंका पानीय था (७।५।३-६, ७।४।१)।

ब्राह्मणोंके आयुध यज्ञ रहा। स्फ्यसे ओदन चलाते, कपालसे पुरोडाश चढ़ाते, अग्निहोत्र-हवनीसे देवताको उदक पिलाते, शूर्पसे धान्य उड़ाते, कृष्णाजिनपर आसन जमाते, शम्यामें हविः बनाते, उलूखलमें मुशलसे अन्न कुटाते और दृषद् एवं उपलमें उपस्कार पिसाते थे। (तैत्तिरीयसं० १।६।८।२-३) क्षत्रिय अश्व तथा रथपर चढ़ते और इषु एवं धनुःसे लड़ते थे।

ब्राह्मणोंकी पंक्तिमें शूद्रोंका उपवेशन भी दोषावह रहा (ऐतरेयब्रा० २।३।१)। यज्ञकाण्ड और गोदोहनादिमें उन्हें कोई अधिकार न था (तैत्तिरीयब्रा० १।२।३)। यज्ञदीक्षित और देवभावापन्न यजमान अयज्ञिय शूद्रोंसे बोल न सकते रहे। (शतपथब्रा० ३।१।१।१०) मूर्खोंका सामीप्य भी क्लेशकर समझा जाता था (ऐतरेयब्रा० ३।३।६)। किन्तु उनसे दुर्व्यवहार करनेवालेके लिये प्रायश्चित्त शासन विहित था (शुक्लयजुःसं० २०।१७।१)। उन्नतिके अर्थ शूद्रोंको यथायोग्य उपदेश देना पड़ता था (ऐतरेयब्रा० २६।२।१)।

चारो वर्णोंके हितप्रार्थनमें साम्य (यजुःसंहिता १८।४८।१), किन्तु आह्वानप्रयोगमें पार्थक्य रहा। ब्राह्मणको 'एहि', क्षत्रियको 'आगहि', वैश्यको 'आद्रव' और शूद्रको 'आधाव' कहकर बोलाते थे (शतपथब्रा० १।१।४।१२)।

वाग्व्यवहारपर भी बहुत उपदेश दिया गया है। वाक् सरस्वती है (ऐतरेयब्रा० ३।१।१,३।१।२, ३।३।१३)। वाक्के सत्य और अनृत दो स्तन होते हैं (४।१।१)। कौन मनुष्य पूर्ण रीतिसे सत्य कह सकता है! देव सत्य और मनुष्य अनृत बोलते हैं (१।१।६)। विद्वानोंको सत्य ही बोलना चाहिये (५।२।८)। मनुष्योंमें सत्य निहत रहता है। आंखको देखी कहना उचित है। मूर्ख बेदेखी कहते और सुनते हैं (१।१।६)। सत्य नहीं—अनृत लोगोंको मार डालता है (४।१।१)। सच बोलना उचित है (१।१।६)। इतर वाक्य असुर्य होता है (३।५।५)। मनसे वाक् निकलती और अन्यमना होनेपर असुर्य लगती है (२।१।५, ४।४)। दृप्त और उन्मत्तकी कही वाक् राक्षसी ठहरती है (२।१।७)। वाक् और मनः दोनो वर्तनी हैं। वाक् और मनसे ही यज्ञ होता है (५।५।८)। श्रद्धा पत्नी और सत्य यजमान है। श्रद्धा और सत्यका अत्युत्तम मिथुन बना है। श्रद्धा और सत्यके मिथुनसे सब लोक जीते जाते हैं (७।२।८)। झूट बोलनेवाले पापी होते हैं। सच कहनेवालोंको परमेश्वर आशीर्वाद देता है (५।१।१)।

आर्योंका विवाह हितके लिये होता था। बिना पुत्रके संसार शून्य रहता है। पिता ही अपनी पत्नीके गर्भमें प्रवेशकर पुत्ररूपसे पुनः प्रकाशित होता है (७।३।१)। उत्पादित पुत्र वंशपरम्परासे पिताके लिये अमृतरूप उपहार है। ब्राह्मण, वैश्य या शूद्रके स्वभावका पुत्र क्षत्रिय नहीं चाहते (७।५।३)। एक वा तदधिक जायाके जीते भी जायान्तर-परिग्रहण दोषावह न रहा। किन्तु जीवत्पत्नीक पुरुषका क्रमशः युगपत् वा बहुविवाह समाजमें अमान्य होता था (३।५।३)। जीवत्पतिका पत्यन्तर-ग्रहण कर न सकती रही। मृतपतिका वा त्यक्तपतिका पत्यन्तर-ग्रहण

आचारविरुद्ध न था। किन्तु पुराण-इतिहासादिके आख्यानसे विदित होता, कि पत्यन्तर-ग्रहण नीच-जातिमें ही चलता था। स्वयम्बर-सभाके समागत पाणिग्रहणार्थियोंमें पणजयकारीको कन्या दी जाती रही (४।२।१)। स्त्रियां भी साधारण पण्डित होती थीं (५।५।४)।

स्नुषा (बहू) श्वशुरसे लज्जा रखती रही (३।२।११)। सोदर्य भगनी भ्रातृजायाके अनुगत थीं (३।३।१३)। सोदर्य भगिनीका अनात्मीयत्व और अन्यकुलसे लब्ध जायाका आत्मीयत्व पारम्पर्यागत है।

अपत्नीक भी अग्निहोत्र कर सकता था (७।२।८)। अग्निहोत्रका दृष्ट और अदृष्ट फल मिल जानेसे अग्निहोत्रियोंको अपने अपने गृहमें अग्निरक्षण कर्तव्य है (ऋक् १०।११।१)। हिममें रहनेवाले प्राचीन आर्योंको हिमपातका क्लेश छोड़ानेके लिये स्व-स्व गृहमें अग्निरक्षणसे सुख मिलता था (वाजसनेय-सं० २३।१०)। अग्निमें विविध सुगन्धादि द्रव्य डालनेका विधान रहा (ऐतरेयब्रा० १।५।२)। सुगन्ध्यादि द्रव्यसे गृहजात वायुदोष दब जाता है। अग्निमें आज्य, अग्निपयः, अन्न, पुरोडाश, सोमादिको आहुति छोड़नेसे तद्वाष्प-प्रसूत धारा गुणयुक्त हो जाती है। स्वर्गादि अदृष्ट श्रुति-गम्य है। इससे स्फुट प्रतीत हुआ, कि आर्योंका नित्य अग्निहोत्रानुष्ठान दृष्टादृष्ट फलकी सिद्धिके लिये ही चला रहा। अग्निहोत्रानुष्ठानमें प्रातःस्नान कर्तव्य है (७।२।८)। आग्रयणसे विना यज्ञ किये नवान्नप्राशन होने, पाकपात्र टूटने, पवित्र बिगड़ने, हिरण्य खो या चोरा जाने, किसी जीते-जागते आत्मीयके मरनेका समाचार झूठ-मूठ सुनने और जाया वा स्वगोत्रके यमसन्तान उपजने पर प्रायश्चित्त करना चाहिये। सूतक और अन्नप्राशन करनेवालोंको भी प्रायश्चित्त विहित है। होमादिरूप प्रायश्चित्तसे ही तथाविध पाप छूट जाते हैं। अग्निहोत्रादि अनुष्ठानमें प्राक्स्नान विहित होते भी किञ्चित् भोजन निषिद्ध नहीं, प्रत्युत कुछ खाकर ही कर्म करना चाहिये (४।२।१)।

मृत देह न मिलनेसे पर्णशरीरके दाहकी व्यवस्था रही। क्योंकि उसके अभावमें निन्दाभाजनत्व अवश्य-म्भावी था (७।२।८)। देवों, पितरों और मनुष्योंको अर्चना न करनेसे पुरुष अनड्वा वा असत्य समझा जाता रहा। अजाके गलस्तनको तरह उसका जन्म निरर्थक जाता है। इसीसे तादृश पुरुषकी निन्दा होती है।

आर्यका उपास्य देव—निघण्टुमें द्युस्थानके भाजनपर षड्‌विंश पद है। प्रधानतः उनका स्थान द्युलोक है। देवराजने भाष्यमें रश्मिको देव कहा है (१।३।१।१२)। ऋक् (१।८८।२), निघण्टु (५ ६।२६) और निरुक्त (१२।४।५, १३।१।११)में उक्त विषय स्पष्ट रूपसे बताया है। रश्मि जन्य-जनक भावमें पार्थिव अग्नि, विद्युत् और सूर्यसे अभिन्न है (निरुक्त १२।३।६,७ ८)। यास्काचार्य व्यक्तरूपसे कहते, कि पार्थिव अग्नि, विद्युत् और सूर्यके भक्तिसाहचर्यसे अनेक देवोंकी अर्चना करते हैं (७।२।१, ३।१०)।

पितर—निघण्टुमें अन्तरिक्ष-स्थानके भाजनपर द्वादश पद है। प्रधानतः अन्तरिक्ष लोक ही उनका स्थान है (४।३।५)। पितर तीन प्रकारके होते हैं,—अवर, परास और मध्यम। परास दूरस्थ अन्तरिक्षचारी हुये और देवयान मार्गसे स्वर्ग गये हैं (छान्दोग्य उप० ५।१।-२)। मध्यम द्यावापृथिवीके अन्तर ठहरे और पितृयान मार्गसे चन्द्रलोक पहुंचे हैं (छान्दोग्य ५।१०।३-६)। अवर भूपृष्ठस्थ अन्तरिक्षमें रहते और निरन्तर पृथिवीपर ही चला-फिरा करते हैं (५।१०।८)। त्रिविध पितरोंमें अवर अप्राप्तमार्ग हैं। असकृत् आवर्तित्वमें कहीं दीर्घकाल ठहर न सकनेसे उनका पितृलोकमें रहना असम्भव है। फिर परासोंको अवस्था भी ऐसी ही है। चन्द्रलोक वा पितृलोक जा पहुंचनेसे मध्यम ही प्रधान कहे हैं। अतएव अन्तरिक्ष स्थानमें ही पितर पद पठित है। यास्क मुनिने भी उक्त विषयको ही पुष्ट किया है (११।२।५५) यम पितरोंके राजा हैं (ऋक् १०।१४।१५)।

तत्त्वतः अन्नरसके साहाय्य स्वजनक देहपर प्रविष्ट जीव रेतःके अन्तःस्थ प्रथम गर्भमें पहुंचता और रेतःके योनिमें सिक्त होनेपर प्रथम जन्म पाता है।

फिर वही रेतः मातृयोनिमें द्वितीय गर्भाकारसे परिणत होता और गर्भके भूमिपर गिरनेसे पुरुष द्वितीय बार उपजता है। मरनेपर पितृयादि अन्यतम शरीर पाना ही तृतीय जन्म है (ऐतरेय-आ० २।५।१)। शतपथब्राह्मणमें भी मृतपुरुषका पितृयादि देह पाना कहा है (१४।७।२।१-५)। पितृ एवं गान्धर्व गुणकर्मादिसे परस्पर किञ्चित् भेदयुक्त अन्तरिक्षलोकग रूप है। इसीप्रकार ब्राह्म तथा प्राजापत्य द्युलोकग और दैव एवं मानुष ऐहिक रूप है।

मनुष्य—मनुष्य शब्द ऐतरेयमें निर्वचन कहा है (३।३।८)। यास्क मनुके अपत्योंको मनुष्य समझते हैं (निरुक्त ३।२।१)। शतपथब्राह्मणमें देवों, पितरों और मनुष्योंका एकत्र ही विशेष परिचय तथा उपासना-प्रकार दिया है (२।४।२।१-२-३)। ऐतरेय देवों, पितरों तथा मनुष्योंका अर्चन कर्तव्य समझता है। अग्निहोत्रादि श्रौत तथा विश्वदेवादि गृह्यसे देवों, श्रद्धा एवं अन्न-जलादि-प्रदानात्मक श्राद्धादिसे पितरों और निष्कपट भाव-प्रदर्शन, आज्ञापालन, समादर, पक्वापक्व अन्नादि आहार प्रदानसे मनुष्योंका अर्चन होता है।

अतिथिसत्कार न करनेवाला बड़ा पापी समझा जाता था (ऐतरेयब्रा० ५।५।५)। अतिथिसत्कारमें पशुघात प्रचलित रहा (१।३।४)। मांसभक्षणका विधि भी अन्यत्र निकलता है (२।१।३)। अमेध्य मांसके भक्षणमें दोष और मेध्यमांस भक्षणमें अदोष था (२।१।८)। पुरुष, किम्पुरुष, गौर, गवय, उष्ट्र तथा शरभ छः अमेध्य और अश्व, गो, मेषादि एवं पृथिवीभव पांच मेध्य हैं। पृथिवीभवसे व्रीह्यादिका ग्रहण होता है (२।१।८)। अजके मांसका प्रचलन बहुत रहा। वृथा पशुघातकी निन्दा है (७।१।१)।

अतिथि-सत्कारकी भांति अन्य-अन्य उपदेश भी मिलता है। स्थान-विशेषमें द्रव्यविशेषकी दानक्षिप्रता विहित है (६।२।५)। सब विचार्य कर्ममें गुर्वादि वा स्वामीकी अनुज्ञा ग्रहणीय है (२।५।६)।

ऋत्विज्यका प्रामस्य और अयाज्य याजनका निषेध रहा (६।४।८)। पाप पुरुषके याजनका निषेध अन्यत्र भी मिलता है (४।४।३)। जैसे पाप-पुरुषका अयाज्यत्व विहित, वैसे ही आर्त्विज्यके लिये पापपुरुषका वरण निषिद्ध है (७।५।१)। फिर आर्त्विज्यके लिये लोभादिसे आहतचित्त, तेजःशून्य, मात्सर्य-पूर्ण, तमःप्रकृति, पापानुष्ठाता और दुर्मतिको भी वरण करना न चाहिये (३।५।२)। मूर्खका आर्त्विज्य दूषण कहा है (८।२।७)। धनके लोभसे जो आर्त्विज्य करता और यजमानको चाटु कर्मसे रिझा आर्त्विज्य पाता उसका कृतकर्म भक्षित अर्थात् मुखमध्यमें प्रविष्ट-जैसा दूषित ठहरता है। जो समाजके आधिपत्य, ग्रामके प्रभुत्व अथवा किसी दूसरे हेतुसे यजमानको डरा आर्त्विज्य लेता, उसका कृतकर्म गीर्ण अर्थात् गलाधःकृत जैसा दूषित होता है। फिर पापकर्मा विद्वान्का कृतकर्म वान्त अर्थात् छर्दित-जैसा देवताओंके लिये घृण्य है। ऐसे विविध ऋत्विग्की वरण करनेकी आशा भी यजमान न रखे। ८।२।७

राजाको पुरोहितकी आवश्यकता बहुत पड़ती थी। केवल ब्राह्मण ही पुरोहित हो सकते रहे (८।५।१)। क्षत्रिय और वैश्यको पुरोहित ही दीक्षा देता था (७।४।७)। बुद्धिमान् आर्योंमें पुरोहित रहनेका विषय कहा, पृथिव्यादि जड़ोंके भी पुरोहित थे (८।५।४)। वेदविद् ब्राह्मणोंका ही पौरोहित्य व्यवस्थापित है (८।५।३)। पुरोहित यजमानका मङ्गल मनाते थे (४।५०।७,८,९)। वाय्वादि देवोंके बृहस्पति पुरोहित-जैसे राजपुरोहित भी पुरःस्थित, प्राधान्यभाक् और उपकारी रहे। पुरोहितोंका कोपनत्व संवरण कर यजमानोंको उसके उपशमनका यत्न लगाना पड़ता था (४।५०।७, ८।५।१)। राजपुरोहित असाधारण सम्मान पाते, राजगृहमें प्रबल रहते और विशेष शक्ति रखते थे।

कर्मकारयिताओंको दक्षिणा देनेकी अतिकर्तव्यता रही (६।५।८)। किसी हेतु परित्यक्त होनेपर फिर दक्षिणा ली न जाती थी। यशोलिप्सा भी अति प्रबल रही (५।४।४)। किसी दानादि कर्ममें अपनी श्रेष्ठताका अभिमान रखनेसे पाप लगता था (१।३।२)।

हस्ती, अश्व, गवादि धनके दानकी प्रशंसा होते रही (८।४।८)। आत्रेय और अङ्गराजकी गाथामें दासीदानकी बात भी लिखी है (८।४।८)। हरिश्चन्द्रके पुत्र रोहितने शतमुद्रात्मक धन दे शुनःशेपको मोल लिया था (७।३।४)। पुत्रोंका पितृदायभाक्त्व भी सूचित है (५।२।८)।

वाणिज्यार्थ समुद्रयानपर चढ़ महासमुद्रमें परिप्लवन भी प्रचलित था (६।४।५)। वनदस्यु उपद्रव उठाते रहे (८।२।७)। नागरिक ग्रन्थिछेदकोंका विषय दृष्टान्त-विधिसे कहा है (८।२।७)। चोरोंकी निन्दा होती थी (५।५।५)।

एकराट् सार्वभौम संविज्ञात रहा (८।४।१)। सार्वभौम नरपति सर्व मित्रराज्योंसे उपढौकन लेते थे (७।५।८)। महाराजकी प्रियतम भार्यासे प्रजा आवेदन करते रही (३।२।११)। राजभ्राताओंका राज-सहचरत्व व्यवहार था (१।३।२)। राजधानीके परिरक्षणको प्राकारनिर्माणकी प्रथा रही (१।४।६)। असुरोंके उपद्रवसे यज्ञ बचानेको देवोंने अग्निप्राकार बनाया था (२।२।१)। प्रबलतर शत्रुवोंके राज्यपर आक्रमण करनेसे प्रजा परस्पर मन्त्रणा लगाती, स्वतः लड़नेको तैयार हो जाती, एकमतिसे प्रतिज्ञा करती और राजरचि-रचित गृहमें पुत्रकलत्रादि रख युद्धमें आगे बढ़ती थी (१।४।७)। प्रियवस्तुके दानादिरूप साम कौशलसे रक्तपात बचा स्वकार्यके उद्धारकी चेष्टा भी चलते रही (१।५।१)। परस्पर एकमत्य रहनेको आज्य छू लोग प्रतिज्ञा करते थे (ऐतरेयब्रा० १।४।७, शतपथब्रा० २।४।२, तैत्तिरीयसं० १।२।११, ६।२।२-६)।

सेनापतिके भागसे शत्रुकी सेनापर आक्रमण करनेका उपाय निकालते रहे (३।४।१)। युद्धकालमें राजसाहाय्यकारी प्रजा और सामन्तको प्रसादलाभ होता था (३।२।८)। युद्धमें जय होनेपर राजाकी मर्यादा बढ़ते रही (३।२।१०)। पराजितका बहुमूल्य-रत्नादि धन समुद्रतीर प्रोथित होता था (५।२।६)। इससे स्फुट प्रतीत हुआ, कि वैदिक समय बहुमूल्य हीरकादिका व्यवहार रहा।

सर्व सभ्यदेशोंमें विद्यमान उपविमोक व्यवहार भी प्रचलित था (४।४।५)। दूराध्वगमनमें उपविमोककी आवश्यकता पड़ती रही (६।४।७)।

स्कन्धसे भारवहनको वीवध (बंहगी)का व्यवहार था (८।१।१)। वीवधका दण्ड प्रायः बांससे बनते रहा (१।२।५)। सिया हुआ सभ्यजनोचित अङ्गरक्षादिका (अंगरखा कुरता वगैरह का) व्यवहार चलता था (३।२।७)। कर्मठ, श्रमकारी तथा उद्योगीकी प्रशंसा और अलस, श्रमकातर एवं उद्योग-हीनकी निन्दा सुनते हैं (७।३।३)।

पृथिवी, द्यावापृथिवी, वृष्टि, उदकके अतिक्रामक-ह्रादिका-प्रभाव और द्यावापृथिवी उभयके प्रतिष्ठाके सम्बन्धमें विज्ञान था (४।४।५)। विवाह-सम्बन्ध-युक्त स्त्री-पुरुषकी भांति द्यावापृथिवी उभय लोक परस्पर सम्बद्ध रहे। सूर्य ही वृष्टि और तापका हेतु समझा जाता था (४।४।५)। पृथिवीके भ्रमण, सूर्यके उदयास्त और अहोरात्रके विज्ञानकी बात भी सुन पड़ती है (३।४।६)। सूर्य पृथिवीको घुमानेवाला माने जाते रहे (२।४।१०)। सूर्यको अचल समझते थे (५।११।१-३)। छःवो लोकके मध्य ईश्वरने सूर्यको ताप देनेके लिये रखा है। चन्द्र पृथिवीका उपग्रह होनेसे पृथक् माना नहीं गया। सर्व लोकोंपर रहनेसे सूर्यका उत्तरत्व विदित होता है (४।३।४)। ऋक् और यजुःमें सूर्यको पृथिवीका धारण करनेवाला कहा है (ऋक् ७।८८।३, शुक्लयजुः ५।१६)। ताप देनेसे सूर्य जीवनका हेतु है (शतपथब्रा० ८।७।३।११)। चन्द्रको देवसोम कहते थे (ऐतरेयब्रा० ७।२।१०)। कारण सूर्य अपने किरणसे उसका अमृत पीता है। चन्द्रमें मर्त्यलोककी छायासे कलङ्क देख पड़ता है (४।४।५)।

वायु ही प्राण है (३।२।१)। वह सूर्यसे उत्पन्न है (१।२।१)। अग्नि देवोंका अवम है (१।१।१)। उसीको विज्ञानपर समझना चाहिये (३।१।४)। अग्निही ओषधि है (१।२।१)। जलसे अभिषेक और दीक्षा दोनोंका काम चलता है (१।१।३) इस लोकमें जल ही अमृत है (८।४।६)। सोम और अग्निके भागसे जल बना है (ऋक् १।२३।२०)। अबमें

ज्योतिः प्रतिष्ठित है (तैत्तिरीय आरण्यक ८।८)। विष्णु परम होते हैं। उनका त्रिविक्रमणादिक स्पष्ट आम्नात है (शतपथब्रा० १।८।३।७-१२)। विष्णु सूर्यको कहते हैं (तैत्तिरीयसं० १।२।१३।२)।

आर्योंको गर्भादिका विज्ञान भी अच्छा रहा। मृत जन्तुका आतिवाहिक देहधारण और पुनर्जन्म आम्नात है (१४।७।२।४)। ब्राह्मणको भैषज्यका निषेध है (तैत्तिरीयसं० ६।४।८।२)। भेषजकरण कालमें ब्राह्मणको बैठे रहना चाहिये। (ऋक् १०।८५।४६)। ब्राह्मणेतर साधारण जातिकी स्त्रियां देवरसे कामना करती रहीं (ऋक् १०।४०।२)। उस समय बहु विवाह प्रचलित रहते (१।१०५।८) भी प्रायः पुरुष एक ही बार व्याहे जाते थे (ऋक् १।१०५।२)।

ऋग्वेदके समय आर्य राजा (१।४०।८, १।१६।११ इत्यादि), पूरपति (१।१७३।१०), ग्रामणी (१०।६२।११) भिन्न-भिन्न उच्चपदपर प्रतिष्ठित थे। राजा साधारण-पर कर लगाते (१।७०।५), शासनप्रणाली सुनियमसे चलाते (१।१७३।२) और गमन करते समय अमात्य-वेष्टित हो गजस्कन्धपर आसन जमाते रहे (४।४।१)। सुवर्ण सज्जाविशिष्ट अश्व (४।२।८) और युद्धमें युद्धाश्व, अश्वारोही सैन्य प्रभृतिका व्यवहार भी था (४।३८।५)। प्रधान व्यक्तियोंको स्तुति सुनना अच्छा लगता रहा (१।२७।१२)। युद्धकालमें राजा एकत्र होते थे (१०।८७।६)। शान्ति रहते ऋषि संसारी, किन्तु युद्ध-काल योद्धा रहे (१।२०।१)। राजकन्याओंसे ऋषियोंके विवाह होते थे (५।६१।८)। वीर पुरुषका आदर बहुत रहा (१।३१।६)।

आजकलकी भांति उस समय भी उत्कृष्ट, निकृष्ट और मध्यवित्त तीन श्रेणीके लोग रहे (४।२५।८)। कोई धनके गौरवमें मत्त रहता और कोई पेटके लिये अन्न मांगते फिरता था (१०।११७ सूक्त)। मध्य-वित् मनुष्य वाणिज्य-व्यवसाय द्वारा सुखसे जीविका चलाते रहे (१।७८।१)। लोग नानाप्रकार कर्म करते—कोई पुरोहित, कोई स्तोता (कवि), कोई वैद्य, कोई तक्षक (बढ़यी), कोई लौहकार, कोई नापित, कोई काष्ठिक (लकड़ी काटनेवाले), कोई रथप्रस्तुतकारी, कोई धातु वा अस्त्रादि निर्माणकारी, कोई नौकाकारी, कोई मांसिक और कोई अश्वके गात्रधौतकारी थे (१।११२।५।५, ४।२।१४,—१६।२०, ५।१०२।८)।

प्राचीन ऋषियोंसे परवर्ती आर्योंके आचार, व्यवहार, और धर्मकी प्रणाली—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, वेद, उपनिषद, जाति, सभ्यता प्रभृतिमें द्रष्टव्य है।

निश्चित रूपसे कहा जा नहीं सकता, कितने दिनसे आर्य नामके बदले 'हिन्दू' शब्द इस देशमें चलता है। किन्तु विस्तृत नदी प्रवाहित सिन्धु-प्रदेशमें वैदिक आर्योंका रहना प्रथम ही प्रमाणित हो चुका है। वही सुप्राचीन आर्यवास रहा। आर्यावर्त देखो। पारसिकोंके 'अवस्ता' ग्रन्थमें उसीको 'हफ्त हिन्दु' लिखा है। इसलिये प्राचीन पारसिकोंके 'हिन्दु' शब्दसे वर्तमान 'हिन्दू' नाम निकला मालूम देता है। हिन्दू देखो।

(पु०) २ श्वशुर, जोड़ूका बाप। ३ स्वामी, मालिक। षष्ठ परिच्छेदमें लिखते, किसे-किसे आर्य कह सकते हैं,—

"राजन्नित्यृषिभिर्वाच्यः सोऽपत्यप्रत्ययेन च।
स्वेच्छया नामभिर्विप्रैर्विप्र आर्येति चेतरैः॥
वयस्येत्यथवा नाम्ना वाच्यो राज्ञा विदूषकः।
वाच्यौ नटीसूत्रधारावार्यानाम्ना परस्परम्॥" (साहित्यदर्पण)

ऋषि राजासे राजन् अथवा अपत्य प्रत्ययान्त दाशरथे, पौरव, पाण्डव प्रभृति-जैसे शब्द द्वारा सम्भाषण करें। विप्र विप्रसे नाम अथवा अपत्य प्रत्ययान्त कौशिक, कुशिकनन्दन सदृश पदद्वारा बोले। दूसरे लोग ब्राह्मणको आर्य कहें। राजा विदूषकको वयस्य वा विदूषक पुकारें। नट वा सूत्रधार नटीसे आर्या और नटी, नट वा सूत्रधारसे आर्य वाक्य द्वारा बताये।

कर्मधारय समासमें 'ब्राह्मण' और 'कुमार' आगे आनेसे आर्य शब्द प्रकृतिस्वर होता है। "आर्यो ब्राह्मण-कुमारयोः। पा ६।२।५८। "आर्यब्राह्मणः। आर्यकुमारः।" (सिद्धान्तकौ०)

आर्यक (सं० त्रि०) आर्य एव, स्वार्थे कन्। १ पूज्य, इज्जतदार। (पु०) संज्ञायां कन्। २ पितामह, जद,

दादा। ३ नागविशेष। ४ नृपति विशेष। यह मड़रियेसे राजा बन गये थे। (क्ली०) ५ पितृ-पात्रादि पितृकार्य। (स्त्री०) आर्यका, आर्यिका।

आर्यगृह्य (सं० त्रि०) आर्य-गृह् पक्षार्थे क्यप्, ६-तत्। पदास्वैरिबाह्यापक्षेषु च। पा ३।१।११९। "पक्षे भवः पक्ष्यः दिगादिभ्यो यत्, आर्यगृह्य तत्पक्षाश्रित इत्यर्थः।" (सिद्धान्तकौमुदी) १ आर्यपक्षाश्रित, जिसे इज्जतदार आदमी खातिरके साथ ले। २ विनीत, खुश-असलूब, लायक्।

आर्यता (सं० स्त्री०) माननीय आचरण, खुश-असलूबी, भला बरताव।

आर्यतारादेवी (सं० स्त्री०) बौद्धतन्त्रोक्त शक्तिविशेष। महायान सम्प्रदाय इन्हें सर्वप्रथम और श्रेष्ठ शक्ति बताते हैं। बुद्धगया, नासिक, अजण्टा, औरङ्गाबाद, नेपाल और कांड़ेरीमें आर्यतारादेवीकी मूर्ति प्रस्तर-मय विद्यमान है। नेपाल और कांड़ेरीके गुहामन्दिरमें यह अवलोकितेश्वरके पार्श्वपर प्रतिष्ठित हैं। दक्षिण हस्तमें पुष्प और वाम हस्तमें मुकुल है। बौद्ध इन्हें मानवकी मुक्तिविधायिनी मानते हैं।

(Vassilief Bouddhisme, p. 125)

आर्यत्व (सं० क्ली०) आर्यता देखो।

आर्यदेव (सं० पु०) नागार्जुनके एक शिष्य। ई०के १म शताब्द इन्होंने दक्षिणात्यमें किसी ब्राह्मणके घर जन्म लिया था। शतसमाधि एवं चतुःशती गाथा नामक ग्रन्थ इन्होंने बनाया। किसी तीर्थिकने पेट फाड़कर आर्यदेवको मार डाला। दूसरा नाम कानादेव था।

आर्यदेश (सं० पु०) आर्यभूमि, आर्योंके रहनेका मुल्क।

आर्यदेश्य (सं० त्रि०) आर्यदेश-जात, जो आर्योंके मुल्कसे निकला हो।

आर्यधर्म (सं० पु० आर्याणां धर्मः, ६-तत्। सदा-चार, दुरुस्त अतवार, अच्छा चलन। सरस्वती और दृशद्वतीनदीके बीच लोग जिस आचारपर चलते, उसे आर्यधर्म कहते हैं। (मनु २।१८)

आर्यपथ (सं० पु०) आर्याणां पन्थाः, अजन्त ६-तत्। ऋक्पूरब्धूःपथामानक्षे। पा ५।४।७४। सदाचार, अच्छा चलन। आर्यमार्गादि शब्द भी इस अर्थमें प्रयुक्त होता है।

आर्यपुत्र (सं० पु०) आर्यस्य पुत्रः, ६-तत्। १ उपा-ध्यायका पुत्र, मुर्शिदका पिसर। नाट्यभाषामें स्वामीको आर्यपुत्र कहते हैं। सम्मानार्थ ज्येष्ठभ्राताके तथा अपने पुत्र और साधारणतः युवराजको इस नामसे सम्बोधन करते हैं।

आर्यभट (सं० पु०) १ प्रसिद्ध ज्योतिष-ग्रन्थ-रचयिता। इन्होंने कुसुमपुरमें अपने वासस्थानको निर्देश किया है,—

"ब्रह्मकुशशिबुधभृगुरविकुजगुरुकोणभगणान्नमस्कृत्य।
आर्यभटस्त्विह निगदति कुसुमपुरेऽभ्यर्चितं ज्ञानम्॥" (गणितपाद १)

अपने बनाये आर्यसिद्धान्त ग्रन्थमें लिखा है,—

"षष्ट्यब्दानां षष्टिर्यदा व्यतीतास्त्रयश्च युगपादाः।
त्र्यधिका विंशतिरब्दास्तदिह मम जन्मनोऽतीताः॥"

(कालक्रियापाद १०)

अर्थात् तीन युगके बाद ६०×६०=३६०० वर्ष बीतनेपर हमारे जन्मके २३ वत्सर हुये थे।

उक्त वचनानुसार (३६००-२३) कलिके ३५७७ वत्सर बीतनेपर आर्यभटका जन्म हुआ था। ऐसी अवस्थामें इनका जन्मकाल ४७५ ई० आता है।

आर्यभट इस प्रकार संख्या गणना करते थे,—

क=१, ख=२, ङ=५, ञ=१०, ट=११, न=२०, प=२१, म=२५। य=न+म। सिवा इसके अपर व्यञ्जनवर्ण प्रत्येक १० अर्थात् र कहनेसे य+१०=८० होते रहा। इसी प्रकार व=७०, ष=८०, स=९० और ह=१००के ठहरता था। प्रत्येक ह्रस्वस्वर दशगुणके हिसाबसे बढ़ता है। जैसे—ह=१००, गि=३००, चि=६००, ड=१००००, गु=३०००० इत्यादि। इसी प्रकार ४४ लिखनेसे घर वा घ्र होता है। बीजगणितको आर्यभटने ही आवि-ष्कार किया है।

ज्योतिष-गणना ऐसी रही,—रविका ४३२००००, चन्द्रका ५७७५३३३६, पृथिवीका १५८२२३७५००, शनिका १४६५६४, गुरुका ३६४२२४ और कुजका भगण २२९६८२४ है। भृगु और बुधका भ्रमण रविके समान लगता है।

चन्द्रोच्च ४८८२१९, भृगुका १७९३७०२० और बुधका ७०२२३८८ है। चन्द्रका पात २३२२२६ है।

२ ग्रन्थकारविशेष। यह द्वादश ई० शताब्दमें वर्तमान रहे। पूर्वोक्त आर्यभट प्रभृतिका मत पकड़ ग्रन्थ बनाये हैं। विस्तारित विवरण Journal of Royal Asiatic Society of Great Britain and Ireland, N. S. Vol. Iमें देखो।

आर्यभाव, आर्यधर्म देखो।

आ-र्यमहावीर—जैन-शास्त्रोक्त सिद्धपुरुष विशेष। यह शत वत्सर जिये और जैन संवत् २४९ के बाद मर गये।

आर्यमार्ग, आर्यपथ देखो।

आर्यमिश्र (सं० पु०) १ साधुजन, महानुभाव, अशराफ़, भलामानस। (त्रि०) २ प्रसिद्ध, सर-फ़राज़, मशहूर। बहुवचनमें यह शब्द साधुजन-मण्डलीका द्योतक है।

आर्ययुवन्, आर्ययुवा देखो।

आर्ययुवा (सं० पु०) आर्यकुमार, आर्य कौमका गबरू या पट्ठा।

आर्यराज (सं० पु०) नृपतिविशेष।

आर्यरूप (सं० त्रि०) १ केवल आर्यका आकार रखनेवाला। २ दम्भी, कपटी, रियाकार, मक्कार।

आर्यलिङ्गिन् (सं० त्रि०) दम्भी, कपटी, दगाबाज, जो भले आदमीकी सूरत बनाये हो। (पु०) आर्य-लिङ्गी। (स्त्री०) आर्यलिङ्गिनी।

आर्यवर्मन्, आर्यवर्मा (सं० पु०) नृपतिविशेष।

आर्यवृत्त (सं० क्ली०) १ सदाचार, भला चलन। (त्रि०) २ साधुजनकी भांति व्यवहार करनेवाला, जो भलेमानसकी तरह पेश आता हो। ३ धार्मिक, नेक, पारसा।

आर्यवेश (सं० त्रि०) सुन्दर वस्त्र धारण किये हुआ, जो अच्छे कपड़े पहने हो।

आर्यव्रत (सं० क्ली०) आर्याणां व्रतम्, ६-तत्। १ साधुका कर्तव्य नियम, भले आदमीका काम। (त्रि०) आर्यस्येव व्रतमस्य। २ साधुके नियमपर चलनेवाला, जो भले आदमीकी चाल पकड़ता हो।

आर्यश्वेत (सं० पु०) आर्यं श्रेष्ठं श्वेतं चरितं यस्य। श्रेष्ठचरित, नेकचलन।

आर्यसङ्घ (सं० पु०) १ आर्योंका श्रद्धेय समूह, भलेमानसोंकी पूरी जमात। २ सुप्रसिद्ध दर्शनज्ञ, एक मशहूर मुहक्किक़। इन्होंने योगाकार सम्प्रदाय प्रति-ष्ठित किया था।

आर्यसत्य (सं० क्ली०) अभिजात तथ्य, हक़ीकृत-शरीफ़। ऐसे ही चार तथ्योंसे बौद्धधर्मके चार प्रधान अङ्ग बने हैं।

आर्यसमाज—सम्प्रदायविशेष। आर्यसमाज, जैसा कि उसके नामसे ही प्रकट है, आर्यों (वैदिकधर्मियों)का समाज है। इसे श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीने १८७५ ई०में वैदिकधर्मके प्रचारार्थ स्थापित किया था। आर्यसमाजके दश नियम इस प्रकार हैं—

१ सब सत्यविद्या और विद्यासे समझे जानेवाले पदार्थ सबका आदि मूल परमेश्वर है। २ ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्याय-कारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टि-कर्त्ता है। उसीकी उपासना करना योग्य है। ३ वेद सत्य विद्याओंका पुस्तक है, वेदका पढ़ना, पढ़ाना सुनना और सुनाना आर्योंका परम धर्म है। ४ सत्य ग्रहण करने और असत्यको छोड़नेमें सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। ५ सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्यको विचार करना चाहिये। ६ संसारका उपकार अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना इस समाजका मुख्य उद्देश्य है। ७ सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिये। ८ अविद्याका नाश और विद्याका वर्धन करना चाहिये। ९ प्रत्येकको अपनी ही उन्नतिसे सन्तुष्ट न रहना, किन्तु सबकी उन्नतिमें अपनी उन्नति समझना चाहिये। १० सब मनुष्योंको सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालनेमें परतन्त्र और प्रत्येक हितकारी नियममें स्वतन्त्र रहना चाहिये।

आर्यसमाजके संस्थापक श्रीस्वामी दयानन्द सर-स्वतीका जन्म विक्रमीय संवत् १८८४को गुजरात देशके

मोरवी राज्यके अवदीच्य ब्राह्मणकुलमें हुआ था। उनके पिता शैव थे। दयानन्द आरम्भसे ही बड़े तीव्रबुद्धि थे। बाल्यकालमें ही उन्होंने यजुर्वेदका रुद्राध्याय और अनेक अन्यभाग कण्ठस्थ कर लिया था। किसी शिवरात्रिको वह अपने पिताके साथ नगरके बाहर एक शिवालयमें शिवकी उपासना करने गये। वहां एक घटनाको देखकर उन्हें मूर्त्ति-पूजाके विषयमें शङ्का उत्पन्न और मूर्तिपूजा न करनेको बान उनके हृदयपर अङ्कित हुयी। वे अपने चचे तथा बहनकी मृत्युसे विरक्त हो और अपनेको विवाह जालमें फंसता देखकर १८४५ ई०को योगविद्या सीखनेके अभिप्राय घरसे निकल खड़े हुये। विचरण तथा विद्याध्ययन करनेके उपरान्त १८४७ ई०को महात्मा पूर्णानन्द नामक एक संन्यासीसे संन्यास ग्रहण किया। तत्पश्चात् स्वामीजी योगियोंकी तलाशमें वर्षों पर्वतों और जङ्गलोंमें घूमते रहे। १८१७ को वे मथुरा आकर श्रीस्वामी विरजानन्दजी प्रज्ञा-चक्षुके शिष्य बने और चार वर्ष तक उनसे वैदिक शिक्षा प्राप्त करते रहे। तदुपरान्त स्वामी जी अपने पूजनीय गुरुके समक्ष आर्यावर्तकी बिगड़ी दशा सुधारनेकी प्रतिज्ञा कर गुरुकुलसे विदा ले उपदेशार्थ भ्रमण करने लगे। संवत् १८२०से १८२४ तक यत्रतत्र एक ईश्वरकी उपासनाका उपदेश करते हुये हरिद्वार कुम्भके मेलेपर जा पहुंचे। वहांपर प्रबल रूपसे वैदिकधर्मका मण्डन और अवैदिक बातोंका खण्डन करते रहे। काशी आदि बड़े बड़े नगरोंमें पण्डितोंसे शास्त्रार्थ किये। वेद भाष्यादि अनेक उपयोगी ग्रन्थोंकी संस्कृत तथा आर्यभाषामें रचना की। सत्यार्थप्रकाश नामक पुस्तक बनाया, जिसमें संसार भरके मतोंका समीक्षण और वेदोक्त धर्मका प्रतिपादन बड़ी युक्ति तथा उत्तमतासे किया। स्वामी जी रजवाड़ोंमें उपदेश करते करते उदयपुर पहुंचे। वहांके राणा सज्जनसिंहजी पर स्वामीजीकी वक्तृता और विद्वत्ताका ऐसा प्रभाव पड़ा, कि वे उनके शिष्य बन गये। स्वामीजीने वेदोंके प्रचार तथा अपने ग्रन्थोंको सुरक्षित रखने और छपानेके उद्देश्यसे 'परोपकारिणी सभा' स्थापन की। उक्त महाराणा जीने सभाके प्रधान बन अपने राज्यमें सभाकी प्रथम रजिष्टरी करायी। कुछकाल पीछे जोधपुराधीश श्रीमहाराज यशवन्तसिंहके आग्रहपर, श्रीस्वामी जी जोधपुर पधारे और निर्भयतापूर्वक वैदिक धर्मका प्रचार करने लगे। स्वामीजीके सदुपदेशोंसे भयभीत होकर जोधपुर नरेशकी एक यवन वेश्याने स्वामीजीको विष दिलवा दिया। इससे वे बीमार होकर अजमेर आ गये और संवत् १८४१ की दीपावलीको ईश्वरोपासना करते करते हमसे सर्वदाको विदा हुये।

आर्यसमाज, ईश्वर, जीव और प्रकृतिको अनादि मानता है। उसके सिद्धान्तानुसार सृष्टि प्रवाहरूपसे अनादि है। अर्थात् प्रथम सृष्टिका रचा जाना, फिर प्रलय होना सदैवसे चला आता है।

आर्यसमाज एक ईश्वरका मानता, जो अनादि, अनन्त, सत्, चित् और आनन्द स्वरूप है। सदैव एक रस रहता है। उसके गुण आर्यसमाजके नियम संख्या २में वर्णित हैं। आर्यसमाज केवल इसी एक ईश्वरकी उपासना करनेका उपदेश देता और मूर्तिपूजा, श्राद्ध, मृत पितरोंके श्राद्ध, यज्ञमें पशुवोंके बलि को अवैदिक मानता है।

वेद ईश्वरीय ज्ञान होता, जिसे ईश्वर सृष्टिके आदिमें अपनी अपार दयासे मनुष्योंको प्रदान करता है। उसीके द्वारा लोग सब कुछ समझनेके लिये समर्थ होते हैं। वेद समस्त सत् विद्यावोंका पुस्तक है। वेद चार हैं—ऋक्, यजुः, साम, अथर्व। स्वामी दयानन्दसे पूर्व आर्यावर्तमें वेदोंका लोप सा हो गया था। संहितायें भी कहीं कहीं मिलती थीं। उस समय यदि किसीको वेदका कुछ भाग कण्ठस्थ भी था, तो वह उसका अर्थ न जानता था। महर्षि दयानन्दका सबसे महान् कार्य वेदोंको सच्चा गौरव प्रकट कर प्रतिष्ठाके उच्च आसनपर विराजमान करा देना है। स्वामीजीके मतमें वेदोंके पढ़नेका अधिकार सबको है।

स्वामीजीने अपने वेदभाष्यकी एक अत्युत्तम भूमिका संस्कृतमें लिखी है। उसमें वेदोंका गौरव वा महत्व बड़ी उत्तमतासे दर्शाया है। ऋग्वेदका ६/८ तथा यजुर्वेदका सम्पूर्ण भाष्य रचते ही उनका देहपात हो गया। स्वामीजी केवल संहिता भागको वेद मानते और उसका स्वतः प्रमाण होना स्वीकार करते थे। वेद केवल एक निराकार, निर्विकार सर्वव्यापक, सर्वज्ञ सच्चिदानन्द स्वरूप सृष्टिकर्ता परमात्माकी उपासनाका उपदेश देते हैं। श्रीपण्डित तुलसीराम स्वामीने सामवेदका उत्तम भाष्य श्रीस्वामीजीकी शैलीपर किया है। प्रयागनिवासी श्री० प० क्षेमकर्ण त्रिवेदी भी अथर्ववेदका भाष्य उसी शैलीपर करनेका प्रयत्न कर रहे हैं।

पञ्च यज्ञ अर्थात् १ सायं, प्रातः दोनोंकाल सन्ध्या, २ अग्निहोत्र, ३ जीवित माता पितादिका श्रद्धापूर्वक सत्कार, ४ अतिथि सत्कार और ५ बलिवैश्वदेव करना आर्योंका प्रधान कर्तव्य है।

गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह, वानप्रस्थ, संन्यास और अन्त्येष्टि संस्कार भी कर्तव्य है।

आर्यसमाजको दृढ़ विश्वास है, जो कर्म मन, वचन अथवा कर्मद्वारा किया जाता है, वह अपना प्रभाव पैदा किये बिना नहीं रहता। कर्ताको अवश्य फल भोगना पड़ता है। स्वर्ग और नरक कोई विशेष स्थान नहीं, किन्तु इसी संसारमें दोनो मौजूद हैं। सुखका नाम स्वर्ग और दुःखका नाम नरक है।

आर्यसमाज सृष्टिका आयु ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष मानता है। वर्तमान सृष्टिकी रचना हुये लग भग ८ अरब ९६ करोड़ वर्ष बीत चुके हैं। निवर्त अवधिके शेष समय तक वह अभी और स्थित रहेगी। चन्द्र तथा तारालोक पृथिवी की तरह गोलाकार हैं। इन लोकोंमें भी प्राणी बसते हैं।

मनुष्यजातिमें गुणकर्मानुसार संसारका कार्य विभक्त करनेके लिये आर्यसमाज वर्णोंका आवश्यक होना मानता है। जो विद्वान लोभ तथा मोहको त्यागकर परोपकारमें अपना जीवन बिताते, वे ब्राह्मण कहाते हैं। जो वीर दुष्टोंसे जातिकी रक्षा करते तथा यज्ञानुष्ठानका क्रम जारी रखते, वे क्षत्रिय हैं। जो लोग धर्मबल शिल्प वाणिज्यकी उन्नतिमें लगे रहते, वे वैश्य हैं। मस्तिष्क सम्बन्धी कार्योंमें असमर्थ हो सेवा करनेवालोंकी संज्ञा शूद्र है। वैदिक धर्मानुसार चारो वर्ण पारस्परिक सहायक हैं। आर्यसमाज यह भी मानता, कि गुण कर्मानुसार एक वर्णका मनुष्य अपनेसे ऊपरके वर्णका अधिकारी बन सकता है। शूद्र उन्नति और सद्गुण धारण करनेसे ब्राह्मण बन और निकृष्ट कर्म करनेसे ब्राह्मण पतित हो जाता है। आर्यसमाज आजकलकी जातिपांतिका, जिसका आधार केवल जन्म पर रहता, विरोधी है।

मनुष्यका कार्य-भार बांटने तथा उसके जीवनको अधिक उपयोगी एवं उत्तम बनानेके लिये वेद-भगवान् चार आश्रमोंका विधान करते हैं। वेदाध्ययनकाल शरीरको पुष्ट तथा विद्याको उपलब्ध करनेके लिये न्यूनसे न्यून २५ वर्ष पर्यन्त अविवाहित रहना, 'ब्रह्मचर्य' कहाता है। तत्पश्चात् धर्मानुसार विवाह तथा सन्तान उत्पन्न करके पितृऋणसे उऋण होना 'गृहस्थाश्रम' है। पचास वर्षका आयु होनेपर ब्रह्मकी प्राप्ति तथा संसारका उपकार करनेके लिये योग्यता बढ़ानेका नाम 'वानप्रस्थ' है। फिर शेष जीवनको सर्वथा जगत्की भलाईमें लगा देना 'संन्यास' कहाता है।

आर्यसमाज विद्वान् पुरुषों, वेदों और शास्त्रोंको तीर्थ समझता है। क्योंकि 'तीर्थ'का अर्थ ही तारनेवाला है। जिसके द्वारा मनुष्य भवसागरसे तर जाता, वही तीर्थ है। नदी नाले पर्वतादिको तीर्थ मानना आर्यसमाज वैदिक नहीं समझता।

अपने इन्द्रियोंको वशमें रखते हुये अग्निहोत्रादि अनुष्ठान और विद्वानोंका सत्सङ्ग करना आदि यज्ञ कहाता है। जो लोग पशुओंके बलि-

दानका नाम यज्ञ समझे हुये हैं, वे आर्यसमाजके मतमें सरासर वेद भगवान्‌की आज्ञाका विरोध कर रहे हैं।

आर्यसमाज विद्वानोंको देवता मानता है। व्यक्ति-विशेष तथा ग्रह विशेषके सकाशसे किसी फल विशेषकी प्राप्ति तथा फलित ज्योतिषकी ख्यातिपर उसको विश्वास नहीं।

धर्म वही, जो वेद विहित है। सूक्ष्मतया आर्य-समाज धर्मके दश लक्षण मानता है। तदनुसार ही अपना जीवन बनाना मनुष्य मात्रका परम कर्तव्य है।

> "धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
> धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥" (मनु ६।९२)

अर्थात् १ धृतिः—सदा धैर्य रखना, २ क्षमा—मानापमान, तथा सुखदुःखमें सहन शीलता, ३ दम—मनको धर्ममें प्रवृत्त कर अधर्मसे रोकना आदि, ४ अस्तेय—चोरीका त्याग, ५ शौच—रागद्वेष पक्षपातशून्य शारीरिक वा मानसिक पवित्रता, ६ इन्द्रियनिग्रह—इन्द्रियोंको अधर्माचरणसे रोककर धर्माचरणमें लगाना, ७ धीः—बुद्धि बढ़ाना, ८ विद्या—पृथिवीसे लेकर परमात्मा पर्यन्त की ज्ञानोपलब्धि करना, ९ सत्य—जैसे पदार्थ को तैसा ही समझना तथा कहना, १० अक्रोध—क्रोध त्यागना।

आर्यसमाजका सङ्गठन।

प्रत्येक मनुष्य वैदिक धर्मके शरण आकर आर्य-समाजके दश नियमोंको मानता हुआ समाजका सभासद बन सकता है। प्रविष्ट होनेकी तिथिसे एक वर्षतक सदाचार रखने तथा अपने आयका शतांश देनेपर वह आर्यसभासद कहानेके योग्य होता है। आर्य सभासद प्रतिवर्ष अपनेमेंसे प्रधानादि अधिकारिवर्ग तथा एक प्रबन्ध-कारिणी-समितिका निर्वाचन करते हैं। यह समिति अन्तरङ्गसभा कहाती है। एक वर्ष पर्यन्त समस्त सामाजिक कार्योंका यथोचित प्रबन्ध करना इसका कर्तव्य होता है। गत मनुष्य गणनाके अनुसार भारत भरके समस्त आर्योंकी संख्या ढाई लक्षके लगभग थी। इसमेंसे संयुक्त प्रान्तीय आर्योंकी संख्या एक लाख बीस सहस्रके इधर उधर है।

प्रत्येक समाज अपने साप्ताहिक अधिवेशन करता है। ये अधिकतर रविवारको होते हैं। इन अधिवेशनोंमें हवन, ईश्वर-प्रार्थना, वेदपाठ, और भजन-गानके अतिरिक्त अन्य उपयोगी पुस्तक पढ़े जाते हैं। कभी कभी धार्मिक और सामाजिक विषयोंपर व्याख्यान तथा संवाद भी चलते हैं।

एकप्रान्तके समाज मिलकर अपनी सङ्घशक्ति द्वारा 'आर्यप्रतिनिधिसभा'की स्थापना करते हैं। वह विविध समाजोंकी प्रतिनिधि-सभाओं द्वारा संगठित होती और अपने प्रान्तमें उपदेशों तथा अन्य धार्मिक कार्योंका प्रबन्ध रखती है।

उपरोक्त समस्त प्रतिनिधि-सभाओं द्वारा आर्यावर्तीय सार्वदेशिक सभाकी स्थापना हुई। इसके वर्तमान प्रधान कांगड़ी गुरुकुलके मुख्याधिष्ठाता श्रीमान् महात्मा मुन्शी रामजी तथा मन्त्री वृन्दावन गुरुकुलके मुख्याधिष्ठाता श्रीमान् मुन्शी नारायण-प्रसादजी हैं।

उपरोक्त सभा-समाजके अतिरिक्त परोपकारिणी सभा स्वामी दयानन्दने अपने ग्रन्थोंको सुरक्षित रखने, वेदोंको प्रचलित करने आदि कार्योंके विचारसे संस्थापित की थी। इस समय उसके प्रधान पदपर आर्यभूषण श्रीमहाराज जनरल सर प्रतापसिंह जी महोदय तथा मन्त्रीपद पर शाहपुराधीश राजाधिराज श्रीनाहर सिंहजी वर्मा सुशोभित हैं। परोपकारिणीसभा स्वामीजीके वैदिक प्रेसका प्रबन्ध रखती तथा उनके रचे समस्त पुस्तकोंको छपाकर प्रकाशित करती है।

अछूत भाइयोंको हिन्दुओंसे अलग रहते देखकर आर्यसमाजको दया आयी थी। उसने उनके संस्कारके लिये प्रबल प्रयत्न किया। स्यालकोट (पञ्जाब)में विशेषतः श्रीलाला गङ्गारामजीके पुरुषार्थसे लगभग २६००० अछूतोंका उद्धार हुआ है।

आर्यसमाजने गुरुकुलोंकी स्थापना द्वारा ब्रह्मचर्याश्रमका पुनरुद्धार कर वास्तवमें बड़े महत्वका

कार्य किया है। उसने लोगोंका ध्यान वीर्य रक्षाकी ओर खींच कर बतलाया, कि विवाहका अभिप्राय विषय भोग नहीं—बलिष्ठ उत्तम सन्तानकी उत्पत्ति करना है। आर्यसमाजके सिद्धान्तानुसार प्रत्येक पुरुष ऋतुगामी होते ही पुष्ट और बलिष्ठ सन्तान प्राप्त कर सकता है। बालविवाहके विरोधमें समाजने घोर आन्दोलन किया नव युवकोंमें स्वदेशी और विदेशी खेल चलाने, सदाचार बढ़ाने, सेवाभाव उपजाने और वैदिक धर्म फैलानेके लिये आर्य-कुमार सभाओंकी स्थापना हुई। वह इस सम्बन्धमें उत्तम और सराहनीय कार्य कर रही हैं।

आर्यसमाजने बतलाया, कि भारतवर्ष जैसे कृषि-प्रधान देशमें—जहांके निवासी घी दूधके सेवनसे ही स्वस्थ और बलिष्ठ हो सकते हैं, और आजकल जिसके न मिलनेसे ही उनकी शारीरिक और मानसिक दुर्दशा हो रही है—गो की रक्षा करना प्रत्येक भारतवासीका परम कर्तव्य होना चाहिये। मांसाहार न केवल वेदविरुद्ध पापमय है, प्रत्युत स्वास्थ्यके लिये अत्यन्त हानिकारक भी है। यदि मांस-भक्षण करनेवाले हिन्दू मांसाहार त्याग दें तो गो रक्षामें बहुत बड़ी सहायता दे सकते हैं। क्योंकि उनके मांसाहार छोड़ देनेपर अन्य पशुओंके न मिलनेसे गोघात करनेवाले लोग गोहत्या से रुक जायेंगे।

आर्यसमाज तो यह भी नहीं चाहता, कोई मनुष्य अपने उदर-पोषणार्थ किसी पशुका वध करे। परन्तु आशा नहीं होती, कि मांस-भक्षणको पाप न समझनेवाले अन्य मतावलम्बी उसे सर्वदा छोड़ देंगे।

अनाथोंकी रक्षाके लिये आर्यसमाजने बड़ा काम किया है। समाजसे पूर्व इस देशमें ईसाइयोंके सिवा दूसरे लोगोंके अनाथालय न थे। परन्तु आर्यसमाजने अजमेर, आगरा, फ़ीरोज़पुर, बरेली आदि बड़े बड़े नगरोंमें अपने अनाथालयोंकी स्थापना करके इस अभावकी बहुत कुछ पूर्ति कर दी है। इन आर्य अनाथालयोंमें सैकड़ों अनाथोंका पालन पोषण और शिक्षण होता है। समाजके अनाथालयोंके पश्चात् हिन्दुओंके अन्य अनाथालयोंकी स्थापना हुई। संवत् १८५६ के दुर्भिक्षमें तथा उसके पश्चात् आर्यसमाजके भूषण स्वनामधन्य लाला लाजपतिरायजीने अनाथोंकी रक्षाके लिये बड़ा उद्योग किया था।

आर्यसमाजने वैदिक विवाहकी प्रथा प्रचलित की। न्यूनसे न्यून २५ वर्षका वर तथा १६ वर्षकी वधू होना आवश्यकीय एवम् अनिवार्य है। जाति-पांतिके बखेड़ोंमें न पड़ गुणकर्मानुसार विवाह करनेका उपदेश आर्यसमाजने दिया है।

स्वर्गीय पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागरने १८५६ ई०को सरकारसे हिन्दूविधवाओंके पुनर्विवाहका कानून पास कराया था। परन्तु आर्यसमाजके प्रादुर्भावतक उसका उपयुक्त प्रचार न हुआ। आर्यसमाजने अक्षतयोनि विधवाके विवाहको वेदानुकूल मानकर प्रचार किया है।

आर्यसमाजने विधवाओंके लिये आश्रम खोले, जिनमें उपयोगी कार्योंको सीखकर वे अपने आयुको भले प्रकार बिता सकें। ये आश्रम आगरे और जालन्धरमें अच्छा कार्य कर रहे हैं।

नाचको दुष्ट और सदाचार नष्ट करनेवाली प्रथाको दूर करनेके लिये भी आर्यसमाजने बड़ा प्रयत्न लगाया है। इसमें उसे बड़ी सफलता हुई। जो जातियां इस दुर्व्यसनमें फसीं थीं, उन्होंने सर्वथा त्याग दिया। इस कार्यमें अन्य सुधारकोंसे भी आर्यसमाजको बड़ी सहायता पहुंची है।

आर्यसमाजने बतलाया, कि जीवनको शुद्ध, उच्च और मस्तिष्कको शक्तिसम्पन्न बनानेके लिये मांस मदिरा तथा अन्य मादक द्रव्योंका सेवन सदैव वर्जित है। आर्यसमाजके उपदेशसे सहस्रों मनुष्योंने मांस भक्षण आदि दुर्व्यसनोंसे छुटकारा पाया है।

सर्वसाधारणमें शिक्षा फैलानेके महत्व पूर्ण कार्यको आर्यसमाजने अपने हाथमें लिया है। इसको ऐसी सफलतासे सम्पादित किया, कि विदेशी लोग भी मुक्त कण्ठसे सराहना करते हैं।

आर्यसमाज द्वारा आर्यभाषाका जितना अधिक

प्रचार हुआ, उतना किसी अन्य सभा वा संस्थासे नहीं। आर्यसमाजके उपनियमोंने प्रत्येक आर्यको हिन्दीभाषा सीखनेके लिये बाध्य किया। पञ्जाबमें जहां कोई उर्दू के सिवा हिन्दीभाषाका नामतक न जानता था, आर्यसमाजने आर्यभाषाका भरपूर प्रचार किया। अकेला 'दयानन्द कालेज' २५००से अधिक विद्यार्थियोंको प्रतिवर्ष हिन्दीभाषाकी शिक्षा देता है। इसके अतिरिक्त पुत्र पुत्रियोंकी अन्य स्कूल-पाठशालाओंमें हिन्दीभाषाकी शिक्षा अनिवार्य है।

आर्यसमाजके गुरुकुलोंमें हिन्दीभाषाको जो प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है, वह अन्यत्र कहीं नहीं। क्योंकि इन विद्यालयोंमें संस्कृत और अंगरेजीके साहित्यको छोड़कर शेष सब शिक्षाओंका माध्यम (medium of Instruction) हिन्दीभाषा ही है। आर्यसमाजके मुख्य गुरुकुल कांगड़ी तथा वृन्दावनमें हिन्दीभाषा द्वारा ही भूगोल, इतिहास, गणित, विज्ञान आदि विषयोंकी शिक्षा दी जाती है। आर्यसमाजने आर्यभाषाके अनेक साप्ताहिक एवं मासिक पत्र जारी किये, जिनसे वैदिक धर्म और हिन्दी भाषाका बड़ा प्रचार हुआ है।

कन्याओंके लिये आर्यसमाजने अथवा आर्यसामाजिकोंने जालन्धर, प्रयाग, देहरादून् आदि नगरोंमें बड़ बड़े विद्यालय स्थापित किये। छोटी छोटी पुत्री पाठशालायें तो प्रायः प्रत्येक नगरमें आर्यसमाजने स्थापित की हैं।

मोक्षपद प्राप्त करनेके पश्चात् स्वामी दयानन्दकी स्मृतिमें १८८६ ई०को "दयानन्द एङ्गलो वैदिक कालेज" लाहोरमें स्थापित किया गया। श्रीमहात्मा हंसराजजीने एतदर्थ अपना जीवन अर्पण किया, और २५ वर्ष पर्यन्त हेडमाष्टर तथा प्रिंसिपल रहकर उसकी अमूल्य सेवायें करते रहे। आप ही ने अपने प्रशंसनीय पुरुषार्थसे एक साधारण स्कूलको इतना बड़ा विद्यालय कर दिखाया। अब दयानन्द कालेजमें अनुमानसे उत्तरभारतके सब विद्यालयोंकी अपेक्षा अधिक विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं। अकेले कालेज विभागमें पढ़नेवाले विद्यार्थियोंकी संख्या ८५०से अधिक है। अन्य सामाजिक स्कूल भी बड़ा कार्य कर रहे हैं। संयुक्तप्रान्तमें भी देहरादून्, अजमेर, अलीगढ़, काशी आदि स्थानोंके दयानन्द स्कूल शिक्षा प्रचारमें अच्छी सहायता देते हैं।

वैदिक शिक्षाका पुनरुद्धार तथा ब्रह्मचर्याश्रम फिर स्थापन करनेके अभिप्रायसे आर्यसमाजने ऋषि दयानन्द निर्धारित प्राचीन शिक्षापद्धतिका प्रचार आरम्भ किया है।

पञ्जाबकी आर्यप्रतिनिधि सभाने संयुक्तप्रान्तमें हरिद्वारके समीप एक गुरुकुल स्थापित किया है। वहां ३००के लगभग ब्रह्मचारी पढ़ते हैं। इसके संस्थापक और संचालक महात्मा मुन्शी रामजीने अपना जीवन अर्पण करके इसे इस अवस्थाको पहुंचा दिया है, कि स्नातक (Graduate) निकलना आरम्भ हो गये हैं।

संयुक्तप्रान्तकी आर्यप्रतिनिधिसभाने भी वृन्दावनमें एक गुरुकुल स्थापित किया है। ब्रह्मचारियोंकी संख्या १२०के लगभग है। यह 'कुल' श्रीमान् मुन्शी नारायणप्रसादजी महोदयके सुप्रबन्धमें प्रतिष्ठा प्राप्त कर रहा है।

आर्यसिंह—बौद्ध धर्माचार्य। यह सिंहलके पुत्र और मध्यप्रदेशके अधिवासी रहे। काबुलमें बौद्धधर्म फैलाने गये थे। किन्तु अमीरने प्राणवधका आदेश दिया। (Indian Antiquary, Vol. ix, p. 316.)

आर्यसुस्थित—आर्यसुहस्तिके प्रधान शिष्य। यह व्याघ्रपद्यगोत्रीय रहे। इन्हीं व्यक्तिसे जैनोंका कोटिकगच्छ वंश चला है। वीरनिर्वाणके ३१३ वत्सर बाद ८६ वर्षकी अवस्थामें इनकी मृत्यु हुई।

आर्यसुहस्ति—जैनोंके एक सिद्धपुरुष। यह वशिष्ठगोत्रीय रहे। अपने समयके राजाको इन्होंने जैनधर्मकी दीक्षा दी थी।

आर्यहलं (सं० अव्य०) आर्यं हलति विदीर्यति, अनुस्वारादि पाठादसाध्यशलम्। बलात्कार, ज़बरदस्ती, ज़ोरसे।

आर्यहृदय (सं० त्रि०) साधु-प्रिय, जो अमराफको प्यारा हो।

आर्या (सं॰ स्त्री॰) १ दुर्गा, पार्वती। २ श्वश्रू, सास। ३ श्रेष्ठस्त्री, बुजुर्ग औरत। ४ पितामही, दादी। ५ मात्रावृत्तविशेष। 'आर्यामात्रवृत्तभेदयोः।' (विश्व) इसका लक्षण यों लिखा है,—

"लक्ष्मैतत् सप्तगणागोपेता भवति नेह विषमे जः।
षष्ठोऽयं न लघुर्वा प्रथमेऽर्धे नियतमार्यायाः।
षष्ठे द्वितीयलात्परकेऽन्ले मुखलाच्च सयति पदनियमः।
चरमेऽर्धे पञ्चमके तस्मादिह भवति षष्ठो लः।" (वृत्तरत्नाकर)

इस वृत्तमें दो पंक्ति रहती हैं। प्रत्येक पंक्तिमें साढ़े सात चरण पड़ते हैं। चरण-चरणमें चार मात्रा लगती हैं। किन्तु दूसरी पंक्तिके षष्ठ चरणमें एक ही मात्रा रहती है। इसप्रकार पहलीमें तीस और दूसरी पंक्तिमें सत्ताईस मात्रा आती हैं।

आर्या नौ प्रकार होती है,—१ पथ्या, २ विपुला, ३ चपला, ४ मुखचपला, ५ जघनचपला, ६ गीति, ७ उपगीति, ८ उद्गीति, ९ आर्यागीति।

आर्यागीति (सं॰ स्त्री॰) आर्या गीतिरिव। वृत्तरत्नाकरोक्त मात्रावृत्तविशेष। यह वृत्त दो पंक्तिका होता है। प्रत्येक पंक्तिमें आठ समान चरण अथवा बत्तीस मात्रा एक अक्षरको लगाते हैं।

आर्याणक—देश विशेष। यह तुषार-देशके निकट अवस्थित है।

"तुषारवर्षैर्बहुले समकाण्डनिपातिभिः।
आर्याणकाभिधे देशे विपन्नं कैश्चिदूचिरे॥" (राजतरङ्गिणी ४।१६७)

यह देश यूनानी (ग्रीक) ऐतिहासिकोंका कहा आरियाना (Ariana) मालूम होता है। उनकी वर्णनाके अनुसार इसे भारतवर्षका उत्तर-पश्चिम प्रान्त, वर्तमान अफ़गानस्थानका अधिकांश और ईरानका कुछ भाग समझना चाहिये।

आर्यावर्त (सं॰ पु॰) आर्याः श्रेष्ठा आवर्तन्ते पुण्यभूमित्वेन वसन्त्यत्र, आ-वृत आधारे घञ्। आर्यावास, भारतवर्षका एक विभाग, हिन्दुस्थानका एक हिस्सा।

ऋक्संहिताके 'अनुप्रवस्योकसो हुवे' (१।३०।९) प्रमाणपर युरोपीय पुरातत्त्वविद् सारस्वत आर्योंके आदिपुरुषोंका पूर्ववास एशियाखण्डके मध्यभागस्थित बेलुरताग और मुशतागकी पश्चिम पार्श्वगत अधित्यका भूमि बताते हैं। किन्तु वस्तुतः पहले आर्यावास सप्तसिन्धु प्रदेशमें रहा। फिर क्यों 'अनुप्रवस्योकसो हुवे' ऋक्के श्रवणमात्रसे सर्व आर्योंका आदिवास अन्यत्र क्वचित् अनुमान करना सङ्गत है!

"पुराण ओकः सख्यं शिवं वां युवोर्नरा द्रविणं जह्नाव्याम्।
पुनः कृण्वानाः सख्या शिवानि मध्वा मदेम सह नू समानाः।"

(ऋक् ३।५८।६)

उक्त मन्त्रसे शुनःशेपका पुराणओक वा पूर्ववास जह्नावीके मूल, जह्नुवंशके आधिपत्य और जह्नु मुनिके आश्रम कान्तारमें बताया है। (ऐतरेयब्रा॰ ७।३।६) हरिश्चन्द्रपुत्र रोहित वहींसे उन्हें खरीद सारस्वत प्रदेशको ले गये थे। जह्नुका वह आश्रमारण्य गङ्गाप्रभव हिमवत्पृष्ठमें आज भी प्रसिद्ध है। जाह्नव* प्रदेशसे प्रकाश देख पड़नेपर ही गङ्गाका अपर नाम जाह्नवी हुआ है। अथवा हिमवत्पृष्ठस्थ ओको नाम नदीतीरकी भूमि ही 'प्रत्नौकस्' है। वहां आर्योंका पहले वास रहना भी ठीक ठहरता है।

आर्यावर्तका प्रकृत अवस्थान।

मनुटीकामें कुल्लूकभट्टने लिखा है—

'आर्या अत्रावर्तन्ते पुनः पुनरुद्भवन्तीत्यार्यावर्तः।' (२।२२)

अर्थात् जिस स्थानमें आर्योंका पुनः पुनः जन्म होता, वही आर्यावर्त कहाता है। किन्तु हमारे मतमें जन्मान्तर मानते भी आर्य अर्थात् ईश्वरपुत्रव्यपदिष्ट मनुष्योंके प्रधान रूपसे रहनेका स्थान आर्यावर्त है। पहले हिमवत्पृष्ठके पश्चिम भाग सुवास्तु प्रदेशमें आर्यावर्तकी स्थिति रही।

"सुवास्त्वा अधि तुग्वनि।" (ऋक् ८।२०।३७)

यास्कने उपरोक्त ऋगंशकी व्याख्या इस प्रकार की है,—

"सुवास्तुर्नदी तुग्व तीर्थं भवति तूर्णमेतदायन्ति।" (४।३।७)

---

* जह्नावी वा जाह्नवदेश—मार्कण्डेयपुराणमतसे (५७।४०) लम्पक और औरस जनपदके मध्य रहा। लम्पकका वर्तमान नाम लमघन है। टलमीने लम्बटे (Lambatai) कहकर पुकारा है। औरस टलमीका Arsa (अर्सा) वा Barsa (बर्सा) है। आजकल 'रस' कहते हैं। वह काश्मीरके चलवारमें अवस्थित है। सुतरां काश्मीरसे सुदूर उत्तर जह्नावी वा जाह्नव भूभाग पड़ता है

जिसके तीर सुष्ठु आर्यकी वासभूमि रहती, वह नदी सुवास्तु कहलाती है। सुवास्तु नदीतीरके जनपदका नाम भी सुवास्तु* ही है। 'सुवास्त्वादिभ्योऽण्' सूत्र देखनेसे समझ पड़ता, कि पाणिनिको भी उक्त प्रदेश विदित रहा। कनिङ्गहाम महोदयके मतसे आजकल सुप्रसिद्ध 'स्वात' (सुवात) नदी प्रवाहित स्वात उपत्यका ही प्राचीन सुवास्तु है।

"मावो रसानितभा कुभा क्रुमुर्मा वः सिन्धुर्निरीरमत्।
माव: परिष्ठात् सरयु: पुरीषिण्यस्मे इत् सुम्न मस्तु व: ।"

(ऋक् ५।५३।९)

हे मरुद्गण! रसा, अनितभा तथा कुभा † और क्रमु‡ नदी एवं सर्वत्र गमनशील सिन्धुनद तुम्हें विलम्ब उत्पादन न करे और न जलमयी सरयू एवं पुरीषिणी (परुष्णी)** तुम्हें रोक रखे, जिससे हमें तुम्हारा दर्शनसुख मिले।

उपरोक्त ऋङ्मन्त्रसे पूर्वतन आर्यवासकी चतु:सीमा भी निकलती है। सुवास्तु नदीतीरस्थ जनपदसे बहु उत्तरस्थ अतिप्रभावा रसा नदी उत्तर, आजकल 'काबुल' कहलानेवाली क्षीणप्रभावा कुभा पश्चिम, भारतप्रसिद्ध सरयू पूर्व और कुभासे नीचे क्रमु-सिन्धु-सङ्गम दक्षिण सीमा है।

"युयोप नाभिरुपरस्यायो: प्र पूर्वाभिस्तिरते राष्टि शूर: ।
अञ्जसी कुलिशी वीरपत्नी पयो हिन्वाना उदभिर्भरन्ते ।"

(ऋक् १।१०४।४)

उपल पर्वतको जो प्रधान नगर है, उसकी रक्षा विक्रान्त मनुष्यराज करता है। अभिप्राय—वह नगर कभी-कभी प्राग्वाहिनी नदियोंमें बाढ़ आनेसे डूब जाता और राजा उसे बचाता था। सुवास्तुसे ईशान और दक्षिणाभिमुख बहनेवाली अञ्जसी, सुवास्तुसे वायव्यकी ओर दक्षिणाभिमुख बहनेवाली कुलिशी और सुवास्तुसे आग्नेयकी ओर दक्षिणाभिमुख बहनेवाली वीरपत्नी नदी है।

ऋक्संहितामें 'गौरी' शब्द दो बार आया है,—

"गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी।
अष्टापदी नवपदी बभूवुषी सहस्राक्षरा परमे व्योमन् ।" (१।१६४।४१)

अर्थात् गौरी सलिलसृष्टि करती हैं। वह एकपदी, द्विपदी, चतुष्पदी, अष्टापदी तथा कभी नवपदी बन जाती और कभी व्योममें (आकाशमें) सहस्राक्षर परिमित शब्द निकालती हैं।

उपरोक्त मन्त्रमें सायणने 'गौरी' अर्थात् मेघगर्जनरूप वाक् वा शब्द लिखा है। किन्तु कुछ मनोयोगपूर्वक यह ऋक् पढ़नेपर सहज ही किसी नदीकी वर्णना समझ पड़ती है। 'व्योममें सहस्राक्षर परिमित शब्द' नदीकी कल-कल ध्वनिका वर्णन मात्र है। विशेषत: इसके आगे ऋक्में 'समुद्र' शब्दका प्रयोग पड़नेसे गौरीका नदी होना स्पष्ट है।

"मदच्युत् क्षेति सादने सिन्धोरूर्माविपश्चित्।
सोमो गौरी अधिश्रित: ॥" (ऋक् १।१२।३)

मदस्रावी सोम सिन्धुतरङ्ग स्थानमें वास करते हैं। विद्वान् सोम गौरीका आश्रय लेते हैं।

अथर्ववेदादि और महाभारतमें भी गौरी नदीकी बात लिखी है। ब्रह्माण्डपुराणमें कैलाससे उत्तर 'गौर' पर्वत बताया है और पर्वतका स्थाननिर्णय करनेसे गौरी* नदीका गौरपर्वतसे निकलना स्पष्ट ही समझ पड़ता है। गौरीसे ही पूर्व सुषस्तिन् नदी है।

---

* सुवास्तु—Suastos of Arrian तथा Suastene of Ptolemy होता और आजकल 'सुवात' कहाता है।

† कुभा—आरियन-कथित Kophes होती और आजकल काबुल-नदी कहलाती है।

‡ क्रमु—वर्तमान कुरम्, काबुल नदीमें मिलित हुयी है।

** पुरीषिणी वा परुष्णी—इरावती है। वर्तमान समय रावी कहाती है।

* गौरी—Arrian कथित Guraeus है। इस नदीके प्रवाहित भूभागका नाम मार्कण्डेयपुराणमें गौरग्रीव लिखा है। (५८।८) टलमीके ग्रन्थमें Goryaia मिला एवं आरियनने Guraoia कहा है। वर्तमान स्वात प्रदेशका उत्तराञ्चल लष्कर नदीका तीरवर्ती स्थान है। लष्कर नदी ऋग्वद और महाभारतमें गौरी बतायी गयी है। ब्रह्माण्डपुराणमें कैलाश पर्वतसे उत्तर किसी गौरगिरिका उल्लेख है। अध्यापक लासिनकृत टलमीके मतानुयायी प्राचीन भारत (Das Alt Indian) नामक मानचित्रमें भी सुवस्तिन्‌के दक्षिण गौरीयदय (Goryaia) इसका उल्लेख है।

गौरी और सुवास्तु या सुवस्तिन् दोनो मिलकर काबुल नदीमें जा गिरी है।

आर्यावास सुवास्तुसे प्राक्‌दक्षिण बहुदूरस्थ, श्रीकण्ठ-शैल-सम्भूत और जह्नुमुनिके आश्रम-तल-वाही जह्नावी नदीतक फैला था।

"पुराणमोकः सख्यं शिवं वां युवोर्नरा द्रविणं जह्नाव्यां।
पुनः कृण्वानाः सख्या शिवानि मध्वा मदेम सह नू समानाः॥"
(ऋक् ३।५८।६)

हे अश्विद्वय! तुम्हारा पुरातन सख्य वाञ्छनीय और मङ्गलकर है। हे नेतृद्वय! जह्नावीमें तुम्हारा धन रहता है। भवदीय सुखकर सख्य पुनः-पुनः पाकर हम तुम्हारे समान बने हैं। हम हर्षकर सोम द्वारा तुम्हें शीघ्र और युगपत् हृष्ट करेंगे।

जह्नावी नदी भागीरथीकी शाखा ठहरती, जो आज भी उत्तराखण्डमें बहती है। इससे समझ पड़ा, कि आर्यावास सारस्वत प्रदेशमें फैला है। यहीं बहुतसे ऋक्, यजुः, सामगान और आथर्वण मन्त्र प्रकाशित हुये। यागविधि यहीं समुद्भूत एवं परिपुष्ट पड़ा और आर्य-साम्राज्य भी यहीं प्रथम विस्तृत था।

सर्ववैदिक ग्रन्थोंमें सरस्वती नामका आख्यानादि बहुतसे स्थानोंपर विद्यमान है। यागभूमि होनेसे सारस्वत प्रदेशको प्रशंसा अनेकत्र सुननेमें आती है।

"नि त्वा दधे वर आ पृथिव्या इळायास्पदे सुदिनत्वे अह्नाम्।
दृषद्वत्यां मानुष आपयायां सरस्वत्या रेवदग्ने दिदीहि॥" (३।२३।४)

शस्यबहुल और उत्कृष्ट प्रदेशमें हे अग्नि! हम तुम्हें स्थापन करते हैं। दृषद्वती तीरसे आपया सरस्वतीतक फैले इस प्रदेशमें तुम लोगोंपर अपनी प्रभा डालो।

"सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते॥" (मनु २।१७)

सरस्वती और दृषद्वती देवनदीके अन्तर्गत देव-निर्मित देशको ब्रह्मावर्त कहते हैं।

"इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया।" (ऋक् १०।७५।५)

गङ्गा, यमुना, सरस्वती, शतुद्री (शतद्रु), परुष्णी (इरावती), असिक्नी (चन्द्रभागा) एवं वितस्ता, इन्होंमें इरावती, चन्द्रभागा और वितस्ता इन तीनोंके सम्मिलनसे सम्भूत मरुद्वृधा, शतद्रुके पश्चिम पार्श्वसे सङ्गत प्राचीनतम आर्जीकीया (उरुञ्जिरा वा विपाट् जो इस समय विपाशा नामसे ख्यात है) और तक्षशिला नामक प्रदेशसे निम्नगामी सिन्धु-सङ्गत सुषोमा—सात नदी जिस भूभागमें बहती, उसकी संज्ञा सप्तनद वा सप्तसिन्धु है। गङ्गा-यमुनाको छोड़ जिस भूभागमें उपरोक्त पञ्च नदीका प्रवाह चलता, वही पञ्चनद वा सारस्वतप्रदेश बजता है।

वर्णित सप्तनद प्रदेश सिन्धुके पूर्वपार पड़ता है। सिन्धुके पश्चिम-पार भी अपर सप्तनद-प्रदेश विद्यमान है। आजकल वह आर्यावर्तसे अलग होते भी पहले उसके अन्तर्गत रहा।

"तृष्टामया प्रथमं यातवे सजूः सुसर्त्वा रसया श्वेत्या त्या।
त्वं सिन्धो कुभया गोमतीं क्रुमुं मेहत्न्वा सरथं याभिरीयसे।"
(१०।७५।६)

हे सिन्धु! प्रथम तुम तृष्टामा नदीसे मिलकर चले थे। पीछे सुसर्त्तु, रसा और श्वेतीसे मिले। तुम्हींने क्रुमु तथा गोमतीको कुभा और मेहत्नुसे मिलाया। इन सकल नदीके साथ तुम एक रथ अर्थात् एकत्र चला करते हो।

इस मन्त्रमें तृष्टामा प्रथम, सुसर्त्तु द्वितीय, रसा* तृतीय, श्वेती चतुर्थ, कुभा पञ्चम, गोमती षष्ठ और मेहत्नुयुता क्रुमु नदी सप्तम है। सातो नदी पश्चिम-हिमालयसे उत्पन्न पूर्वपश्चिमाभिमुखगामी पश्चात् दक्षिणप्रवाही समुद्रगामी सिन्धुनदके पश्चिम पूर्वदक्षिणाभिमुख बहती और अन्य नामसे पुकारी जाती हैं। आजकल चित्रलदेशसे प्राग् बहमान पञ्च-कोरप्रदेशीय तरयवा 'तृष्टामा', डेराइस्माइल खां प्रदेश-तल-वाही अर्जुनी 'सुसर्त्तु', 'रसा*', श्वेती वा सेवेत, काबुल 'कुभा', वर्ण-प्रदेश-वाही कुरम 'क्रुमु' और गोमल प्रसिद्ध नदी 'गोमती' है। तृष्टामा आदि सातो नदी साक्षात् वा परम्परासे सिन्धु-सङ्गत है।

चित्रल देशसे प्राक् और वलूचिस्तानादिसे ऊर्ध्व

---

* रसा—जन्द अवस्तामें रंहा नामसे वर्णित है। यह खुरासानमें बहती है।

तक पश्चिमोत्तर सुविस्तीर्ण पुरातन जो आर्यावर्तांश पड़ता, वह पश्चिम-सप्तनद प्रदेश कहा सकता है। किन्तु पूर्व-सप्तनदके अन्तर्गत पञ्चनद-प्रदेशकी तरह पश्चिम-सप्तनदमें पञ्चकोर प्रदेश (अफग़ानस्थान) भी लगता है। अतः गान्धारका* आर्यावर्तान्तर्गतत्व सम्पन्न होता, जिसका प्रमाण वेद, ब्राह्मण और परवर्ती शास्त्रमें मिलता है,—"गन्धारीणा मिवाविका।" (ऋक् १।१२६।७) "नग्नजिते गान्धाराय" (ऐतरेयब्राह्मण ७।५।८) "साल्वेयगान्धारिभ्याञ्च।" (पा ४।१।१६९)

कुरुराज धृतराष्ट्रकी पत्नी दुर्योधनादि बहुपुत्र-प्रसविनी गान्धारी भारत-प्रसिद्ध ही हैं। वर्ण प्रभृतिके आयुध-जीवित्वका वर्णन पाणिनिने लिख दिया है। पूर्व एवं पर सप्तनद प्रदेशके बीच हिमवत्-समुद्भव अधःप्रवण समुद्रान्त प्राचीन आर्यावर्तको द्विधा करनेवाला सीमादण्ड-जैसा सिन्धु नामक नद आज भी वर्तमान है। इस सिन्धुसे उत्तर दूसरी सात नदीकी विद्यमानता भी सुन पड़ती है।

"ऋजीत्येनी रुशती महित्वा परि ज्रयांसि भरते रजांसि।
अदब्धा सिन्धुर पसामपस्तमाश्वा न चित्रा वपुषीव दर्शता॥ ७
स्वश्वा सिन्धुः सुरथा सुवासा हिरण्ययी सुकृता वाजिनीवती।
ऊर्णावती युवतिः सीलमावत्युताधि वस्ते सुभगा मधुवृधं॥"
(ऋक् १०।७५।८)

इसमें कैलाश निम्नस्थ ऊर्णाप्रदेशीय ऊर्णावती और हिरण्मयी, वाजिनीवती एवं सीलमावती† उत्तरस्थ है। निम्न बलूचिस्थानमें 'एनी' नदीको कौन नहीं जानता! चित्रा वा चित्रलनदी चित्रल देशसे निकल कुभामें मिली और ऋजीती सम्भवतः उसीके समीप बही है। उक्त त्रि-सप्तनदीकी अपेक्षा सिन्धु नदका प्राधान्य वर्णित है,—

"प्र सप्त-सप्त त्रेधा हि चक्रमुः प्र सृत्वरीणा मति सिन्धुरोजसा।"(१०।७५।१)

नदी सप्त-सप्त होकर तीन श्रेणीसे आर्यावर्तमें बहती हैं। सिन्धुसे पूर्व, पश्चिम और उत्तर सात-सात नदी विद्यमान हैं। इक्कीसो नदीके बलसे अतिशयित सिन्धुनद बना, जिसे उनका पुत्र वा राजा कहा है,—

"अभि त्वा सिन्धो शिशु मिन्नमातरो वाश्रा अर्षन्ति पयसेव धेनवः।
राजेव युध्वा नयसि त्व मित् सिची यदासा मग्रं प्रवता मिनक्षसि।"
(१०।७५।५)

हे सिन्धो! पयःसे युक्त धेनुकी भांति यह नदी आपको शिशु समझ दुग्ध पिलाने चली आती हैं। आप इन्हें राजाकी तरह युद्धमें हांकते हैं। क्योंकि आप इन बहनेवाली नदीसे आगे बढ़ रहे हैं।

अन्यत्र भी त्रि-सप्त-नदीका विषय विद्यमान है,—

"त्रि सप्त सस्रा नद्यः।" (ऋक् १०।६४।८)

वस्तुतः इन त्रि-सप्त-नदीसे परिवृत सिन्धुके मध्य ही पूर्वकालिक आर्यावर्त देश है। ऐतरेयब्राह्मणमें—

"यस्तेजो ब्रह्मवर्चस मिच्छेत्०—०प्राङ् स इयात्, योऽन्नाद्य मिच्छेत्०—०दक्षिणा स इयात्, स सोमपीथ मिच्छेत्०—०उदङ् स इयात्।" (ऐतरेयक १।२।२)

प्रागादि दिक् शब्द किसी अवधिकी अपेक्षा रखता है। क्योंकि प्राक् इत्यादि आकाङ्क्षासे सर्वत्र उपजायमानत्व आता है। यहां आर्यावर्तीय सिन्धुका मध्य ही अवधि है। सिन्धुसे प्राक् इत्यादि मानते ही तेजस् प्रभृतिकी सिद्धि निकलती है। फिर सिन्धुके प्राग् सरस्वती आदिकी तीरभूमिमें यज्ञानुष्ठानके बाहुल्यसे तेजस् तथा ब्रह्मवर्चस् मिलता, शतद्रु-सङ्गमके दक्षिण हिम-प्राचुर्यके अभाव तथा तापके प्राबल्यसे प्रचुर शस्य उपजता, पश्चिम अरण्यके प्राचुर्यसे पशु बहुत होता, शतद्रु-सिन्धु-सङ्गमके उत्तर अति शैत्यसे वल्लीसोम लगता और शारीर-सोम बढ़ता है। अतिप्राक्तन आर्यावर्तका यह सिन्धु-मेरुदण्ड रहा। पाश्चात्य लोग सिन्धुस्थानको 'सि' की जगह 'हि' रख हिन्दुस्थान कहते हैं। सप्तसिन्धु-प्रदेश अवस्तामें 'हफ्तहिन्द' हो गया।

रसा नदी सिन्धु-सङ्गत और अति विक्रान्त रही। द्वितीय तथा तृतीय नदी-सप्तकमें वर्णन विद्यमान है। तदानीन्तन आर्यावासकी उत्तर-सीमा वही विदित होती है।

---

* गन्धारी—Gandaraioi of Periplus, हिन्दूकुशका दक्षिण भाग वर्तमान अफग़ान-स्थान है। इसी गन्धारसे अफग़ानराजधानी कन्धारका नामकरण हुआ है।

† सीलमावती—ग्रीक ऐतिहासिकगणके निकट Silis नामसे कथित है। (Ukert, Geographic der Griechen und Romer, Vol. III, 2. p. 288) ऋग्वेदमें सीरा (१।१७४।९) और सीता (४।५७।७) नाम भी मिलता है।

सुवास्तु प्रदेशकी जो उत्तर-सीमा कही, वही प्रभुरोदक एवं प्रभूतवेग नदी पहले आर्य और अनार्य देशकी सीमा थी।

रसाका वर्णन भी बहुत मिलता है,—

"गिरेरिव प्ररसा अस्य पिन्विरे दत्राणि पुरुभोजसः।" (ऋक् ८।४९।२)

वह सगर्व चलती, शत सेनापति-जैसी देख पड़ती और हव्यदातीके लिये वृत्रवध करती हैं। वह बहु-लोकको पालक हैं। उनके उद्देश्यसे प्रदत्त रस पर्वतके रसकी तरह प्रीत करता है।

गिरिकी रसा नदीके न्याय पुरुभोजका धन भी वर्द्धित हुआ। इससे समझ पड़ता, कि रसाका समुद्भव किसी गिरिसे हुआ था। जिस प्रकार सिन्धुको पूर्व-देशीय सप्त-नदीमें गङ्गा एक रहते भी दूसरी सरितोंकी गङ्गाही प्रसिद्धि है। तथा सरस्वती भी एक ही अनेक नदियोंकी वाचिका है। उसी प्रकार रसा एक होते भी अन्य निम्नगाओंकी वाचिका है। जैसे गङ्गा यमुना प्रभृति नदियोंका साधारण नाम है वैसा ही रसा भी। गङ्गाकी गमन करने, सरस्वतीकी उदक रखने और रसाकी शब्द कर्मसे कोलाहल उठाने-वाली व्युत्पन्नार्थ है। समुद्रमें मिलनेवाली रसा आजकल आर्यावर्तसे बाहर खुरासान राज्यके अन्तर्गत है। 'अवस्ता' ग्रन्थमें 'रंहा' नाम लिखा है। पहले रसा ही तदानीन्तन आर्यावासकी पश्चिम सीमा थी।

अंशुमती आदि नदीका आर्यावर्तमें रहना ८म मण्डल ९६ सूक्तके १३,१४ और १५ ऋक्में लिखा है। यह यमुना-मिली और दृषद्वती पूर्वस्थित थी। अश्मन्वतीका वर्णन १०।५३।८ ऋक्में विद्यमान है। यह घर्घरासे प्रत्यक्, शतद्रुसे बहुपूर्व, उत्तर नीचे बहती विनशनप्रदेशमें रही।

१ले, २रे और ३रे ऋक्में वर्णित शिफा नाम नदी निषद-देशीय ही विदित होती है। क्योंकि प्रथम निषद* नामका उल्लेख विद्यमान है। "यो निष्ट इन्द्र निषदे अकारि" (१।१०४।१) ६।२७के ६ठें और ७वें ऋक्की हरियूपीया और यव्यावती नदी सम्भवतः अफ़ग़ान-स्थानमें रही। कोई-कोई हज़ारा प्रदेशकी हरिरुद् या हिरातकी नदीको वैदिक हरियूपीया कहता है।

"पीवानं मेष मपचन्त वीरा न्युप्ता अक्षा अनु दीव आसन्।
द्वा धनुं बृहती मप्स्व१न्तः पवित्रवन्ता चरतः पुनन्ता।"

(ऋक् १०।२७।१७)

इस मन्त्रमें और अन्यत्र भी जो 'अक्षा'* शब्द आता, वह अफ़ग़ानस्थानके उत्तर प्रवहमान 'अक्षस्' (Oxus) नदीको बताता है।

पहले ही श्वेती नदीका वर्तमान नाम सेवेत बता चुके हैं। श्वेतपर्वतसे निकलनेपर ही यह नाम पड़ा है। दूसरे प्रमाणोंसे भी उपरोक्त विषय प्रमाणित होता है।

"प्राच्योऽन्या नद्यः स्यन्दन्ते श्वेतेभ्यः पर्वतेभ्यः प्रतीच्योऽन्याः।"

(शतपथ १४।६।८।९)

"श्वेत्या त्या।" (ऋक् १०।७५।६)

श्वेतयावरी† नदी भी श्वेतगिरिप्रभव है।

"उत स्या श्वेतयावरी।" (ऋक् ८।२६।१८)

वाजसनेयसंहिता (२३।१८)में 'काम्पिल्यवासिनी'का नाम लिखा है। पाञ्चालमें आज भी कम्पिला ही कहते हैं। बृहदारण्यकोक्त (३।३।१, ७।१।६) कपिप्रदेश भी निरुक्तोक्त (४।१४) कपिष्ठल‡ है। शर्यणावत्सर निश्चय आर्यावर्तीय था।

'शर्यणावद्ध वै नाम कुरुक्षेत्रस्य जघनार्धे सरः स्यन्दते।' (सायण)

शर्यणावत्सरके समीप ही पाणिनि-सूत्र-ग्रथित कापिशनगर** विद्यमान रहा। कपिशायन मधु और द्राक्षा प्रसिद्ध है।

* निषद—प्राचीन यौक ऐतिहासिकोंने Paropanisadai वा Paropamisus नामसे इस पार्वत्य जनपदको उल्लेख किया है। वर्तमान पाश्चात्य पण्डितगणके मतसे इसे आजकल कबेसस कहते हैं।

* अक्षा (Oxus) ऋक्संहितामें यक्ष (७।८।१९) नाम भी लिखा एवं पुराणमें इक्षु, वंक्षु प्रभृति पाठान्तर देख पड़ा है। इस नदीको आजकल अमू-दरया कहते हैं।

† श्वेतयावरी वा श्वेती—वर्तमान सफेदको पर्वतनिःसृत सेवेत नदी है।

‡ कपिष्ठल—वर्तमान पञ्जाबप्रदेशके कुरुक्षेत्रका मध्यवर्ती प्रसिद्ध तीर्थ है। आजकल कैथल कहते हैं।

** कापिश—टलमीने Capissa, पाणिनिने (४।२।९९) कापिशी एवं चीनपरिव्राजक युअनचुअङ्गने कि-ए-पि-शि नाम लिखा है। यह वर्तमान कोहिस्तानका उत्तरांश है।

"प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति प्रवातेजा इरिणे वर्वृतानाः।
सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो विभीदको जागृविर्मह्यमच्छान् ॥"

(ऋक् १०।३४।१)

सतत कम्पनशील पत्रवान् अपर वनस्पत्यादिशून्य बहुवायुयुक्त प्रदेशमें उत्पन्न होनेवाला तथा इरिण देशमें वर्तमान विभीतक वृक्ष, मूजवान् नामक पर्वतपर उत्पन्न होनेवाली सोमलताका रस पीनेसे जैसे हर्ष बढ़ता, वैसे ही हमारे पक्षमें प्रीतिकर और उत्साह देनेवाला ठहरता है।

मूजवान्* पर्वत आज भी कैलाश गिरिसे उत्तर-पश्चिम विद्यमान है। इसीसे वैदिक युगमें इरिण वा ईरान नामक जनपदका आर्यावर्तीयत्व मानना पड़ेगा।

अथर्व-संहिता ५।१४।२२ सूक्तके ३य मन्त्रमें परुषण† जनपद, ४र्थमें शकम्भर और महावृष, ५म एवं ७ममें मूजवान् तथा बल्हिक‡ ८में पुनः महावृष और मूजवान्, ९में फिर भी बह्लीक और अङ्गको १४श मन्त्रमें अङ्ग, मगध, मूजवान् और गन्धारीका वर्णन है। किन्तु आर्यावर्तान्तर्गत रहनेपर भी उक्त स्थान में बहु अनार्य रहते थे।

"गान्धारिभ्यो मूजवद्भ्योऽङ्गेभ्यो मगधेभ्यः।
प्रैष्यं जनमिव शेवधिं तक्मानं परिदद्मसि।" (अथर्व ५।२२।१४)

अथर्वसंहितामें गन्धारी और मूजवान्के साथ जिस अङ्ग और मगधका उल्लेख मिलता, वह पूर्वभारतका प्रसिद्ध अङ्ग और मगध राज्य नहीं। वैदिक काल उक्त दोनो स्थान आर्यावर्तसे अलग रहे। मगधका वैदिक नाम कीकट है। अनार्यवसतिसे कीकटकी निन्दा सुनते हैं।

"किं कृण्वन्ति कीकटेषु गावो नाशिरं दुह्रे न तपन्ति घर्मम्।"

(ऋक् ३।५३।१४)

'कीकटो नाम देशो अनार्यनिवासः।' (निरुक्त ६।६।४)

कीकट वर्तमान मगध देशको कहते, जिसमें अनार्य रहते थे। मगध और गया देखो।

किन्तु अथर्वसंहितामें गन्धारी और मूजवान् दोनो जब आर्यावर्तके अन्तर्गत आते, तब दोनोके पास अवस्थित अङ्ग और मगध भी आर्यावर्तमें ही पड़ते हैं। उभय स्थान मूजवान् वा कैलास पर्वतसे उत्तर पौराणिक शाकद्वीपके दक्षिणांश और प्राचीन ग्रीक-वर्णित स्कोदिया राज्यके मध्य रहे। भविष्यपुराणमें उक्त स्थानके वासी मगब्राह्मण 'आर्यदेशसमुद्भव' कहे गये हैं। (भविष्य ब्राह्मपर्व १२६।५९) मगब्राह्मण परवर्तिकाल वर्तमान विहार प्रदेशके जिस अंशमें आकर रहा, उसी स्थानका नाम मगध हुआ। पाश्चात्य ग्रीक भौगालिकों और ऐतिहासिकोंका विवरण पढ़नेसे समझ पड़ा, कि वर्तमान तुर्कस्थान और उसके उत्तरवर्ती तुखारस्थानसे उत्तर-पश्चिम Massagetae नामक शाकराज्य रहा। उसमें Augasii और Sogdiana भूभाग था। कहनेसे क्या, उक्त दोनो जनपदवासी Anguttari और Magdi वा Meki नामसे प्रसिद्ध थे।* दोनो ही जनपद अथर्ववेदमें अङ्ग (उत्तर) और मगध नामसे परिचित हैं। उक्त Massagetae-वासी भविष्य, मत्स्य प्रभृति

---

* मूजवान्—पुराणमतमें कैलाश पर्वतसे भी उत्तर मूजवान् वा मुञ्जवान् पर्वत है।

"मुञ्जवान् सुमहादिव्यो ऊर्ध्वशैलो हिमार्चितः।
तस्मिन् गिरौ निवसति गिरिशो धूम्रलोहितः॥
तस्य पादात् प्रभवति शैलोदं नाम तत् सरः।
तस्मात् प्रभवते पुण्या नदी शैलोदका शुभा।
सा वङ्क्षुसीतयोर्मध्ये प्रविष्टा पश्चिमोदधिम्॥"

(मत्स्य १२०।१९-२०)

अर्थात् मूजवान् सुमहान्, दिव्य, ऊर्ध्वशैल और हिममण्डित है। उस गिरिमें धूम्रलोहित महादेव वास करते हैं। उनके पाददेशमें शैलोद नामक ह्रद है। उसी ह्रदसे शैलोदका (शैलोदा) नाम्नी एक नदी निकली है। यह नदी वङ्क्षु (Oxus) और सीता(Jaxartes) नदीके मध्य मिलित हो पश्चिम सागरमें आ गिरी है।

उद्धृत प्रमाणसे समझ पड़ता, कि मुञ्जवान् कैलाशसे उत्तर वर्तमान तुर्कस्थान वा ईरानके मध्य और बलखसे उत्तर है। महाभाष्यके प्रमाणसे कहा जाता, कि आर्यजातिके संस्कारका प्रधान चिह्न मौञ्जीद्रव्य इसी मुञ्जवान् पर्वतसे प्रथमतः उत्पन्न होता था। पतञ्जलि-महाभाष्यमें लिखा हुआ—"मौञ्जो नाम वाह्लीकेषु ग्रामस्तस्मिन् भवो मौञ्जीयः।" (४।२।२)

† परुष—पुराणमें परुषक कहा गया है। (ब्रह्माण्डपुराण ४२५०) चीनपरिव्राजकने पो-लु-शो-लो नाम लिखा है। इसका वर्तमान नाम पेशावर है।

‡ बल्हीक—वर्तमान नाम बलख है।

* H. H. Wilson's Ariana Antiqua.

पुराणमें शाकद्वीपीय मगग-क्षत्रिय कहाये हैं। पाश्चात्य ग्रीक ऐतिहासिकगणने उक्त स्थानको Cimbri नामक जिस जातिका उल्लेख किया, अथर्वसंहितामें (५।२२।४) वह शकम्भर नामसे महावृष, वल्हीक, मूजवत् प्रभृतिके साथ उक्त है। सुतरां पौराणिक शाकद्वीपीयगणकी उक्त अधिष्ठानभूमिके बहुपूर्वकाल आर्यदेशमें गण्य होनेका प्रमाण मिलता है।

ऋक्संहिता (१०।३४।१)में मूजवान् नाम मिलता है सही, किन्तु उसमें होनेवाले सोमका औत्कर्ष लिखा है।

"उदङ्‌ जातो हिमवतः स प्राच्यां नीयसे जनम्।" (अथर्व ५।४।८)

उपरोक्त मन्त्रमें तत्रत्य कुष्ठका औत्कर्षमात्र विदित होता है।

"बल्हीकः प्रातिपीयः प्रश्राव।" (शतपथब्राह्मण १२।९।३।१)

उक्त मन्त्रमें शतपर्वतसे प्रतीच्य और वल्हीकका जो आर्यवासत्व झलकता है, कालभेदसे उसको भी व्यवस्था ही स्वीकार्य है। अथवा उसके आर्याभिजनत्वमें कोई बाधा नहीं देख पड़ती।

तत्वतः हिमवत्पृष्ठके उत्तर-पश्चिमस्थ मूजवान् नामक पर्वत हो आर्यवास और अनार्यवास या आर्यावर्तकी उत्तर सीमा मानना उचित है।

"एतत् ते रुद्रावसम् तेन परो मूजवतोऽतीहि।" (वाजसनेयसं० ३।६१)

इसी यजुःका व्याख्यान अन्यत्र भी वर्णित है।

"अवसेन वा अध्वानं यन्ति तदेन यो सावस मेवान्ववार्जति यत्र यत्रास्य चरथं तदन्वत इवा अस्य पुरो मूजवतोऽतीहि।" (शतपथब्राह्मण २।६।२।७)

उपरोक्त मन्त्रमें रुद्रनाम मृत्यु देवतासे मूजवान्के* परपार अर्थात् आर्यावर्तसे दूर जानेकी प्रार्थना की गयी है। इससे विदित होता, कि अद्यतन पारसिक राज्यके पश्चिमोत्तरस्थ एशिया-मायिनरसे पूर्व, अनुगङ्ग प्रदेशसे पश्चिम, सिन्धु-सागर-सङ्गमसे उत्तर तथा मूजवान्से दक्षिण संहिताकालीन आर्यावर्त है। किन्तु आर्यसाम्राज्य और अधिक विस्तृत था।

"आवदिन्द्रं यमुना तृत्सवश्च प्रात्र भेदं सर्वताता मुषायत्।
अजासः शिग्रवो यक्षवश्च बलिं शीर्षाणि जभ्रुरश्व्यानि।" (ऋक् ७।१८।१९)

इस युद्धमें इन्द्रने भेदको मार डाला था। यमुनाने उन्हें सन्तुष्ट किया। तृत्सुगणने भी उन्हें सन्तोष दिया। अज, शिग्रु और यक्षु तीन जनपद इन्द्रके उद्देश्यसे अश्वके मस्तकने उपहार दिये थे।

जो इन्द्र सम्राट् इस राज्यमें सर्वकर्मका भेद लेते, उन्हें यामुनप्रदेशवासी सामन्त यमुन, तृत्सव, अजास, शिग्रव और यक्षव बलि देते हैं।

फिर ऐतरेयब्राह्मण-कालमें आर्यावर्तका दृगायतन होना भी ग्रन्थसे ही समझ पड़ता है। अभिषेक-प्रकरणमें लिखा है,—

"प्राच्यां दिशि ये के च प्राच्यानां राजानः ०—०
प्रतीच्यां दिशि ये के च नीच्यानां राजानो येऽपाच्यानां०—०
उदीच्यां दिशि ये के च परेण हिमवन्तं जनपदा उत्तरकुरु उत्तरमद्राः०—०
ध्रुवायां मध्यमायां प्रतिष्ठायां दिशि ये के च कुरुपञ्चालानां राजानः सवशोशीनराणां राज्यायैव तेऽभिषिच्यन्ते।" (ऐतरेयब्रा० ८।३।३)

उपरोक्त मन्त्रमें 'प्राच्यानां राजानः'से प्राच्यके किसी प्रबल नरपतिका नहीं, प्रत्युत क्षुद्र राजाका बोध होता है। इसीसे अन्यत्र कहा है,—

"प्राच्यो ग्रामता बहुलाविष्टाः।" (ऐतरेयब्रा० ३।४।६)

उस समय प्राग्देशीय जनपद तथा संहिताकालीन किरातनगरादिक प्रसिद्ध रहा। वहीं सोमवल्लीका क्रय होता था,—

"प्राच्यां वै दिशि देवाः सोमं राजानमक्रीणन्।" (एतरेयब्रा० १।३।१)

पाणिनिके आगममें कान्यकुब्जाहिच्छत्रादिको विद्यमानता प्राच्यभूमिमें विदित होती है। ऐतरेय-कालमें उन नगरोंके होने या न होनेमें सन्देह है।

दक्षिणमें उस समय एक सत्वत् राज्य ही बलवत्तम रहा। आजकल उसे छत्रपुर कहते हैं।

"आदत्त यज्ञं काशीनां भरतः सत्वता मिव।" (शतपथब्राह्मण १३।४।५।२१)

गाथाके वचनश्रुतिमें ऐतरेयसे भी छत्रपुर बहु प्राचीनतर भरतका अधिकृत विदित होता है। उसे दौष्मन्ति-भरतने बसाया था। उनके वंशज चिरकालसे भरत कहाते हैं।

"तस्माद्दाप्येतर्हि भरताः सत्वनां वित्तिं प्रयन्ति।" (ऐतरेयब्रा० २।४।१)

"तस्मादिदं भरतानां पशवः सायङ्गोष्ठाः सन्तो मध्यन्दिने सङ्गविनी मायन्ति।" (३।२।६)

उक्त दोनो श्रुतिवचनमें 'आयन्ति' और 'प्रयन्ति' वर्तमान कालिक प्रयोगसे विदित हुआ, कि ऐतरेयसे

भरतवंशीय शासनाश्रित राज्य स्वयं देखा था। दौष्मन्त भरत नरेशकी कीर्तिकथा बहुप्राचीन है,—

"हिरण्येन परीवृतान् कृष्णाञ्छुक्लदतो मृगान्।
मष्णारे भरतोऽददाच्छतं बद्धानि सप्त च।
भरतस्यैष दौष्मन्तेरग्निः साचीगुणे चितः।
यस्मिन्त्सहस्रं ब्राह्मणा बद्वशो गा विभेजिरे।
अष्टासप्ततिं भरतो दौष्मन्तिर्यमुनामनु।
गङ्गायां वृत्रघ्नेऽबध्नात् पञ्चपञ्चाशतं हयान्।
त्रयस्त्रिंशच्छतं राजाश्वान् बध्वाय मेध्यान्।
दौष्मन्तिरत्यगाद्राज्ञो मायां मायवत्तरः।
महाकर्म भरतस्य न पूर्वे नापरे जनाः।
दिवं मर्त्य इव हस्ताभ्यां नोदापुः पञ्चमानवाः।" (ऐतरेयब्रा० ८।४।९)

शतपथ-ब्राह्मणमें भी प्रायः यही लिखा है। आर्यावर्तवहिर्भूत प्रतीची दिक् कोई सुसमृद्ध राज्य न रहा। उत्तरभागके पर्वत-पादस्थ कितने ही अप्रसिद्ध नरेश रहे। दक्षिण-भागमें भी अनेक छोटे छोटे राजा थे। मध्यभागका अरण्यभूमि इन्हीं नीच अपाच्योंके अधिकारमें रहा।

"प्रत्यञ्चि दीर्घारण्यानि भवन्ति।" (ऐतरेय ३।४।६)
"प्रतीच्योऽप्यायो बह्वाः सन्दन्ते।" (ऐतरेय १।२।१)

उदीचीमें हिमवत्पृष्ठ-दण्डके उत्तर-भाग आर्यावर्तसे वहिर्विद्यमान रहते भी उत्तरमद्र और उत्तरकुरुको आर्यभित्तिका जनपद सुनते हैं। हिमवान्‌के दक्षिण-भूभाग आर्यावर्तकी तरह पहले उसका उत्तरभूभाग भी मद्रदेश और कुरुदेशमें विभक्त था। आर्यावर्तीय मद्रदेशसे उत्तर उत्तरमद्र और आर्यावर्तीय कुरुदेशसे उत्तर उत्तरकुरु रहा। आर्यावर्तीय प्रत्यन्त देशसे आगे जो देश वा महादेश था, उसे मन्वादिने आर्य वा अनार्य नहीं कहा। फिर तद्देशवासीका आर्यत्व वा अनार्यत्व भी विचार्य नहीं। परन्तु उत्तरकुरुदेश नैसर्गिक सौन्दर्य, स्वास्थ्यकरत्व और अपने देशवासीके शान्तिप्रियत्व तथा तपःपरायणत्व आदि देवस्वभावसे पुण्यमय एवं अजेय देवक्षेत्र समझा गया—

"देवक्षेत्रं वै तत्र नैतमर्त्यो जेतु मर्हति।" (ऐतरेयब्रा० ८।४।९)

लोगोंका शान्तिप्रियत्व आदि स्वभाव ही अजेयत्वमें प्रबल हेतु है,—

"तांस्तु सान्त्वेन निर्जित्य मानसं सर उत्तमम्।
ऋषिकुल्यास्तथा सर्वान् ददर्श कुरुनन्दनः॥ *
तत एवं महावीर्या महाकाया महाबलाः।
द्वारपालाः समासाद्य हृष्टावचनमब्रुवन्॥
पार्थ नेदं त्वया शक्यं पुरं जेतुं कथञ्चन।
उपावर्तस्व कल्याण पर्याप्तमिदमच्युत॥ *
न चापि किञ्चिज्जेतव्यमर्जुनात्र प्रदृश्यते।
उत्तराः कुरवो ह्येते नात्र युद्धं प्रवर्तते॥"

(महाभारत सभापर्व २८अ०)

उत्तरकुरु वा कुरुवर्ष अवश्य मेरुके समीप 'शान्तपिष्टवर्ग' प्रभृति 'सुवीर्य' देशान्तमें था। आजकल वह साइबेरियाके दक्षिणांश हैं। उसके स्वर्गत्वका वर्णन अनेक ग्रन्थमें मिलता है,—

"अहो सह शरीरेण प्राप्तोऽस्मि परमां गतिम्।
उत्तरान् वा कुरून् पुण्यानथवाप्यमरावतीम्॥" (अनुशासनपर्व ५४।१६)

फिर लिखा है,—

"नैवेशिकं सर्वगुणोपपन्नं ददाति वै यस्तु नरो द्विजाय।
स्वाध्यायचारित्रगुणान्विताय तस्यापि लोकाः कुरुषूत्तरेषु॥"

(महाभारत अनुशासनपर्व ७५।२२)

प्राचीन ग्रीक भौगोलिकों और ऐतिहासिकोंने Aria वा Ariana नामक जनपदका उल्लेख किया है। इसकी पूर्वसीमा सिन्धुनद, दक्षिणसीमा भारत-महासागर अर्थात् सिन्धुमुखसे पारसिक उपसागर पर्यन्त जलभाग, पश्चिमसीमा काश्यीयसागरसे कार्मेनिय अर्थात् फारभिन्न समस्त येज्द और किरमानप्रदेश, उत्तरसीमा परोपनीशस पर्वत अर्थात् भारतको उत्तर-सीमा स्थित हिमालय-संलग्न ककेसस् गिरिमाला पर्यन्त है।*

सुप्रसिद्ध फरासीपण्डित मूसों बुर्नीफके मतानुसार ग्रीक Aria वा Ariana और पारसी ईरान संस्कृत आर्य शब्दका ही रूपान्तर है। अवस्तामें ऐर्जनवैजो अर्थात् आर्यावास संस्कृत आर्यदेश नामसे परिचित है। सुतरां पाश्चात्य ग्रीक ऐतिहासिकगणका मत मानते भी कहना पड़ा, किसी समय दक्षिणमें सिन्धुनदके पश्चिमकूलसे उत्तर काश्यीयसागर पर्यन्त आर्य

* H. H. Wilson's Ariana Antiqua, p. 120.

देश फैला था। ग्रीक-अभ्युदयकाल इसके अन्तर्गत बक्त्रियाप्रदेश प्रधान जनपद और बल्हिक वा बलख् उसकी राजधानी रहा। पतञ्जलिके महाभाष्यमें भी बल्हिकका विशेष उल्लेख मिलता है।

ईरान वा बक्त्रिया व्यतीत प्राचीन पाश्चात्य ऐतिहासिकगणने उक्त आरियाना देशके मध्य कतिपय जनपदका उल्लेख किया, वह सबका नाम और संस्कृतरूप निम्न उद्धृत है—

Paropamisadae = वैदिक निषद और पौराणिक निषध, Drangæ = धूम्रानीक, Zarangai = शारङ्ग, Comedi = कुमुद वा कुसुमाद, Metharici = मौदाकि, Angutturi = अङ्गोत्तर वा उत्तर-अङ्ग, Urui वा Urni = ऊर्णावती, Daritis = दारद, Comari = कुमार, Gedrusi = कद्रु, Arachoti = आर्चीद, Sogdiani = शाकद्वीपी।

राजतरङ्गिणीमें काश्मीरके सुदूर उत्तर शीतप्रधान आर्याणक नामक किसी जनपदका उल्लेख है। (४।२६७) पाश्चात्य पण्डित लासेन और राजतरङ्गिणीके फरासी अनुवादक ट्रयारके मतसे पाश्चात्य ग्रीक ऐतिहासिक-वर्णित Ariana प्रदेश ही राजतरङ्गिणीमें आर्याणक नामसे उक्त है। राजतरङ्गिणीके अंगरेजी अनुवादक ष्टेइन साहब दूसरे स्थानपर वैसे शब्दके उल्लेखाभावसे उक्त पाश्चात्य पण्डितके मतमें आस्थावान् नहीं हैं। किन्तु हिमप्रधान आर्याणक प्रदेशका ईरान होना क्या कुछ विचित्र है! राजतरङ्गिणीमें आर्यावर्त-भिन्न आर्यदेश नामक किसी ब्राह्मण-प्रदेशका उल्लेख है। (६।८७) मिहिर-कुलके हस्त यहांके जनगणका निग्रह (१।३१२) एवं काश्मीरपति गोपादित्य कर्तृक आर्यदेशसे ब्राह्मण बुला काश्मीरमें प्रतिष्ठा करनेका प्रमाण भी मिलता है (१।३४१)। राजतरङ्गिणीमें जैसे आर्यदेशके ब्राह्मणोंकी श्रेष्ठताका आभास मिलता, हमारे भविष्यपुराणमें भी वैसे ही आर्यदेशसमुद्भव शाकद्वीपी ब्राह्मणोंकी श्रेष्ठताका वर्णन है (ब्राह्मपर्व १३६।५९)। भविष्यपुराणसे समझ पड़ा, कि उक्त आर्यदेश शाकद्वीपका ही एकांश रहा। कहनेसे क्या, पाश्चात्य ऐतिहासिकगणका आरियाना, जन्द अवस्ताका ऐर्यनवैजो और भविष्यपुराणोक्त आर्यदेश अभिन्न है।

आर्यावर्तके मध्य-भूभागमें कुरु, पाञ्चाल आदि चार प्रदेश रहे। दक्षिण वङ्ग, अङ्ग एवं प्राच्य मगधको कृष्णसार मृग न मिलने और अयज्ञियत्वसे म्लेच्छदेश कहते हैं।

पाणिनीय 'शूद्राणामनिरवसितानाम्' (२।४।१०) सूत्र—व्याख्यानपर पतञ्जलिके महाभाष्यमें लिखा है—

'अनिरवसितानामित्युच्यते। कुतोऽनिरवसितानाम्। आर्यावर्तादनिरवसितानाम्। कः पुनरार्यावर्तः। प्रागादर्शात् प्रत्यक्कालकवनाद्दक्षिणेन हिमवन्तमुत्तरेण पारिपात्रम्। यद्येवं किष्किन्धगन्धिकशकयवनं शौर्यक्रौञ्चमिति न सिध्यति। एवं तर्ह्यार्यनिवासादनिरवसितानाम्। कः पुनरार्यनिवासः। ग्रामो घोषो नगरं संवाह इति। एवमपि य एते महान्तः संस्त्यायास्तेष्वभ्यन्तराश्चण्डाला मृतपाश्च वसन्ति तत्र चण्डालमृतपा इति न सिध्यति। एवं तर्हि याज्ञात्कर्मणोऽनिरवसितानाम्। एवमपि तक्षायस्कारं रजकतन्तुवायमिति न सिध्यति। एवं तर्हि पात्रादनिरवसितानाम्। यैर्भुक्ते पात्रं संस्कारेण शुध्यति तेऽनिरवसिताः। यै र्भुक्ते पात्रं संस्कारेणापि न शुध्यति ते निरवसिता इति॥'

उक्त महाभाष्यको टीकामें कैयटने कहा है,—

'निरवसिता बहिष्कृता उच्यते। * * आदर्शादयः पर्वतविशेषाः। * * एतत्पर्वतचतुष्टयमध्य आर्यावर्तो देश इत्यर्थः। यद्येवमिति एतेषामार्यावर्ताद् बाह्यत्वादिति भावः। ग्राम इति एतेष्वार्या निवसन्तीति भावः।'

महाभाष्यप्रदीपोद्योतमें नागेशभट्टजीने विवृत किया है—'शूद्रशब्दोऽत्र त्रैवर्णिकेतरः न तु शूद्रत्वजातिपरः। अनिरवसितानामिति प्रतिषेधात्।'

महाभाष्य और तत्तत् टीकाकारगणकी उक्तिसे आता, कि आदर्श पर्वतसे पूर्व, कालकवनसे पश्चिम, हिमवत्से दक्षिण और पारिपात्र पर्वतसे उत्तर, घोष, नगर तथा संवाह वा वणिक्प्रधान स्थानमें जहां आर्य अर्थात् त्रैवर्णिक और अवाह्य त्रैवर्णिकेतर शूद्रभावापन्न जनगण रहता, वहीं आर्यावर्त पड़ता है। किष्किन्ध-गन्धिक, शक, यवन, शौर्य और क्रौञ्च प्रभृति जनपद उक्त आर्यावर्तकी सीमासे बाहर है।

वराहमिहिरकी बृहत्संहितामें भारतवर्षकी उत्तर-सीमाके कैकय, आर्जुनायन प्रभृति जनपदके साथ आदर्शका* उल्लेख मिलता है। शतद्रु नदीका उत्तरतटस्थ प्रदेश केकय वा कैकय और काबुल तथा

* "कैकयवसातियामुन-भोगप्रस्थार्जुनायनाग्नीध्राः।
आदर्शान्त-दीपि-त्रिगर्त-तुरगाननाश्वमुखाः॥" (१४।२५)

पेशावरका मध्यवर्ती स्थान आर्जुनायन नामसे पूर्व-कालमें प्रसिद्ध रहा। वहांके लोग नगरहार नामक पार्वत्य नगरका प्राचीन नाम 'अर्जुन' बताया करते हैं। उक्त आर्जुनायन प्रदेशके अतिरिक्त ककेसस पर्वतके निकट माकिदनवीर अलेक्सन्दरके ऐतिहासिक आरियानने 'आड्रेप्सा' (Adrepsa) नामक किसी पार्वत्य भूभागकी बात भी कही है। यह आदर्शक शब्दका विकृत पाठ समझ पड़ता है। आजकल इस स्थानको अन्दराब कहते हैं। महाभाष्योक्त कालकवन महाभारत और पुराणादिमें कालतोयक नामसे आभीर तथा अपरान्तादि देशके साथ एवं वराहमिहिरकी वृहत्संहितामें भारतवर्षके नैऋत कोणपर रैवतक, सुराष्ट्रादिके साथ कालकजनपद लिखा है। पाश्चात्य भौगोलिक टलमीने कोलक (Kolaka) एवं आरियनने क्रोकल (Krokala) नामसे भारतके दक्षिण-पश्चिम प्रान्तमें कोई जनपद बताया है। कराची उपसागरके कूलमें कालकच्छ नामक एक जिला विद्यमान है। यही स्थान प्राचीन भारतीय पुराण-वर्णित कालक वा कालतोयक एवं प्राचीन पाश्चात्य भूगोल-वर्णित कोलक या क्रोकल मालूम देता है।

पारिपात्र खृष्टीय ७म शताब्दीय चीनपरिव्राजकको पो-ली-ये-तो-लो नामसे परिचित रहा। यह शैलमाला विन्ध्यके पश्चिम और उत्तरांशमें राजपूतानाके निकट पथर नामसे आजकल पुकारी जाती है। काश्मीरसे नेपालतक हिमालयकी अंश ही स्कन्दपुराणमें हिमवत्खण्ड नामसे अभिहित है। सुतरां महाभाष्यके मतसे आर्यावर्त उत्तरमें काकेसस पर्वतसे नेपालकी पश्चिम सीमा तथा दक्षिणमें सिन्धुप्रदेशके दक्षिणांश-स्थित कराची उपकूलसे विन्ध्य पर्वतकी उत्तर-पश्चिम सीमा पर्यन्त विस्तृत रहा। ऋक्संहिताके प्रमाणसे त्रिसप्त नदी-प्रवाहित सप्त सिन्धुप्रदेश एवं सारस्वत तथा अनुगाङ्ग प्रदेशका जो परिचय उद्धृत हुआ, वह महाभाष्यके प्रमाणसे प्राचीन आर्यावर्तका वर्णन मालूम पड़ता है। इधर मनुसंहितामें आर्यावर्तकी सीमा इसप्रकार निर्धारित है,—

"आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः॥" (२।२२)

पूर्वसमुद्र पर्यन्त एवं पश्चिम भी समुद्र-पर्यन्त विस्तृत देशके अन्तराल प्रदेशमें (उत्तर-दक्षिण) गिरिके मध्यवर्ती स्थानको पण्डितोंने आर्यावर्त निर्देश किया है। मनु-भाष्यकार मेधातिथिने उक्त श्लोकके व्याख्यानमें लिखा है,—'आपूर्वसमुद्रादापश्चिमसमुद्राद्योऽन्तरालवर्ती देशस्तथा। तयोरेव पूर्वश्लोको ऽवदिष्टयोगिर्योः पर्वतयोर्हिमवद्विन्ध्ययोर्यदन्तरं मध्यं स आर्यावर्तो देशो बुधैः शिष्टै रुच्यते।'

मेधातिथिकी तरह अमरसिंह और कुल्लूकभट्ट दोनोंने ही हिमालय तथा विन्ध्यके मध्यवर्ती स्थानको आर्यावर्त कहा है।

"'आर्यावर्तः पुण्यभूमिर्मध्यं विन्ध्यहिमालयोः।' (अमर २।१।८)
'शरावत्यास्तु योऽवधेः।
देशः प्राग्दक्षिणः प्राच्य उदीच्यः पश्चिमोत्तरः।
प्रत्यन्तो म्लेच्छदेशः स्यात् मध्यदेशस्तु मध्यमः।' (अमर २।१।६-७)

प्राग्सहित दक्षिण देशको 'प्राग्दक्षिण', पश्चिम-सहित उत्तर देशको 'पश्चिमोत्तर' और अन्तके प्रतिगतको 'प्रत्यन्त' अर्थात् सीमान्तप्रदेश कहते हैं।

किन्तु पूर्वोद्धृत महाभाष्य और मूल मनुसंहिताका वचन पढ़नेसे आर्यावर्त इतना सङ्कीर्ण सीमाबद्ध मालूम नहीं पड़ता। मूल मनुसंहितामें लिखा है,

"हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विनशनादपि।
प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः॥" (२।२१)

उक्त मनुवचनके अनुसार उत्तरमें हिमालय, दक्षिणमें विन्ध्य, पूर्वमें विनशन और पश्चिममें प्रयाग चतुःसीमावच्छिन्न स्थान मध्यदेश होता है। सुतरां मेधातिथि, कुल्लूकभट्ट और अमरसिंहने हिमवत् और विन्ध्यके मध्य जिस स्थानको आर्यावर्त बताया, भगवान् मनुके मतसे वही मध्यदेश ठहरा है। मनुके मतसे ब्रह्मावर्त ब्रह्मर्षि देश और मध्यदेश आर्यावर्तके ही अन्तर्गत प्रधान स्थान है। इन कयी प्रधान भूभागोंके व्यतीत पूर्वमें समुद्र और पश्चिममें भी समुद्र पर्यन्त आर्यवास आर्यावर्तके अन्तर्गत पड़ता था। भूतत्त्वविदोंने आलोचनासे प्रमाण दिया, कि अति पूर्वकाल यूसिन युगमें सागरतरङ्ग हिमालयतट पर्यन्त पहुंचता था। वही स्वाभाविक नियमसे हिमाचल-

पृष्ठ छोड़ सिंहल द्वीपकी ओर सरक गया। उस समय प्राकृतिक नियम तथा जलप्रवाहका परिवर्तन-गतिसे पृथिवीके विभिन्न अंशमें जनपद और द्वीप फिर बने। इसीके फलसे निम्नवङ्गकी क्रमशः उत्पत्ति होती रही। भूतत्त्वविदोंने यह भी प्रमाणित किया, कि प्लिओसिन और परवर्ती युगमें राजमहलके निकट पर्यन्त समुद्रतरङ्ग आया था। महाभारतका वनपर्व पढ़नेसे समझ पड़ा, कि युधिष्ठिरके तीर्थयात्रा-काल कौशिकीतीर्थसे कुछ दूर पञ्चशत नदी-युक्त गङ्गासागर-सङ्गम रहा। वर्तमान बङ्गालके हुगली ज़िलेमें तार-केश्वरके निकट कौशिकीका प्राचीन गर्भ देखनेमें आता है। खृष्टपूर्व तृतीय शताब्द ग्रीक-राजदूत मेगस्थेनिस्ने पटनेसे ३०१ मील दूर गङ्गासागर-सङ्गमकी बात कही है। उक्त प्रमाणसे समझ पड़ता, कि उत्तर-राढ़के निकट पर्यन्त किसी-किसी स्थानमें समुद्रतरङ्ग आता, तब इसमें सन्देह नहीं, कि उससे बहुत पहले वैदिक युगमें और भी सौ मील उत्तर समुद्र-तरङ्ग पहुंचता था। इसीप्रकार भूतत्त्वविदोंने यह भी प्रमाणित किया, कि भारतके पश्चिम-प्रान्त स्थित वर्तमान बलूचिस्थानसे सिन्धुप्रदेशतक कराचीका अधि-कांश समुद्र-गर्भमें रहा। सुतरां मनुवर्णित आर्या-वर्तकी पूर्व और पश्चिम सीमा समुद्र ही ठहरती है।

स्मृतिमें देखते हैं,—

"चातुर्वर्ण्यव्यवस्थानं यस्मिन्देशे न विद्यते।
म्लेच्छदेश स विज्ञेयः आर्यावर्तस्ततःपरम्॥"

अर्थात् जिस देशमें चारो वर्णोंके वर्णगत आश्रम-धर्मकी व्यवस्था नहीं, वही स्थान म्लेच्छदेश होता है। आर्यावर्त उससे भिन्न है। मनुसंहितामें निर्दिष्ट हुआ है,—

"चरति कृष्णसारस्तु मृगो यत्र स्वभावतः।
स ज्ञेयो यज्ञियो देशो म्लेच्छदेशस्ततःपरम्॥" (२।२३)

अर्थात् जिस देशमें कृष्णसार मृग स्वभावतः घमता, वही यज्ञिय देश ठहरता; उससे भिन्न अपर स्थान म्लेच्छ देश होता है।

उक्त उभय वचनसे आर्यावर्त यज्ञिय देश प्रमाणित है। इसका आभास मिलता, कि शुक्लयजुर्वेदीय शतपथब्राह्मणमें वैदिक काल भारतके पूर्वापर कितने ही स्थान पर्यन्त यज्ञिय देश कहाता था। शतपथ-ब्राह्मणमें इस बातपर एक गल्प लिखा है,—'विदेघ माथवने मुखमें अग्निको रखा था। गोतम-राहूगण नामक उनके एक पुरोहित रहे। गोतमने माथवको पुकारा, किन्तु उन्होंने मुखसे अग्नि निकल पड़नेके भयसे कोई उत्तर न दिया। पुरोहितके 'वीति होत्र" (५।२६।३) इत्यादि ऋङ्मन्त्र पढ़कर प्रथम बुलानेपर माथव कुछ न बोले। उन्होंने फिर 'उदग्ने' (८।४४।१६) इत्यादि ऋङ्मन्त्रसे सम्बोधन किया, किन्तु फिर भी कोई उत्तर न मिला। अन्तको 'तं त्वा घृतस्नवीमहे' (५।२६।२) इत्यादि पढ़नेपर अग्नि 'घृत' शब्द सुनते ही मुखसे बाहर निकले और जलने लगे थे। माथव अग्निको मुखमें रोक न सके। अग्नि माथवके मुखसे निकल पृथिवीपर अवतीर्ण हुये। उस समय विदेघमाथव सरस्वतीके तीर रहते थे। फिर अग्नि दहन करते-करते पूर्वाभिमुख पृथिवीपर घूमने लगे। गोतम राहूगण और विदेघमाथव दोनोंने दाहवान् अग्निका अनुगमन किया। वैश्वानरने समु-दय नदी जला डाली थी। केवल उत्तर-गिरिसे विनिर्गत सदानीरा नदीका परपार बच गया। इसीसे वह ग्रीष्मान्तमें भी शीतल रहती है। पूर्वकाल ब्राह्मण उस नदीके पार उतरते न थे। अब अनेक ब्राह्मण पूर्वदिक् रहते हैं। अग्नि वैश्वा-नरके स्वाद न लेनेसे वह वासके अयोग्य और जल-सिक्त है। अब ब्राह्मणोंके यज्ञानुष्ठान करनेसे वास-योग्य बनी है। विदेघमाथवने पूछा,—'हम कहां रहेंगे'? अग्निने कहा,—'इस नदीका पूर्व-प्रदेश तुम्हारी वासभूमि होगा।' उसी समयसे वह नदी कोशल और विदेहके मध्य अवस्थित है। वहांके लोग माथवसन्तान हैं।" (शतपथब्रा० १।४।१।१०—१७)

शतपथब्राह्मणसे अच्छी तरह समझ पड़ता, पूर्व-काल सदानीराके पश्चिम उपकूल अर्थात् कोशलराज्य पर्यन्त यज्ञीय देश लगता था। उसके बाद सदा-नीराका पूर्वतटस्थ प्रदेश अधिकार करनेपर आर्य-नृपति विदेघमाथवके नामानुसार यह स्थान विदेह

वा मिथिला कहाया। इसी प्रकार उनके गौतम-गोत्रीय पुरोहितसे यहां यज्ञकाण्ड चला। ब्राह्मण-युगमें मिथिला यज्ञिय देशके अन्तर्गत रहते भी मगध, अङ्ग और मिथिलासे पूर्व अवस्थित समस्त देश अयज्ञिय गिना जाता था। इसीसे ऐतरेय आरण्यकमें यह अयज्ञिय और निन्दित देश कहा गया। ब्राह्मण और आरण्यकमें मगध तथा अङ्ग पर्यन्त म्लेच्छ देश माना जाते भी उसके बहुत पीछे महाभारतके प्रचारकाल वह सकल स्थान आर्यावास एवं बहु आर्यतीर्थ-समाक्रान्त हुआ था। वनपर्व तीर्थयात्राके पर्वाध्यायसे आभास मिलता, कि उस समय उन सकल स्थानोंसे सुदूर दक्षिणमें अवस्थित वैतरणी नदीतीरस्थ कलिङ्ग (वर्तमान उड़ीसा) यज्ञिय देश कहाता था,—

"एते कलिङ्गाः कौन्तेय यत्र वैतरणी नदी।
यत्राऽ यजत धर्मोऽपि देवाञ्छरणमेत्य वै॥
ऋषिभिः समुपायुक्तं यज्ञियं गिरिशोभितम्।
उत्तरं तीरमेतद्धि सततं द्विजसेवितम्॥" (महाभारत वनपर्व ११४अ:)

आजकल आर्यावर्त भूमि पश्चिम एवं उत्तरसे सिकुड़ी, दक्षिणमें प्रायः पूर्ववत् पड़ी और पूर्वपर बढ़ी है। पञ्जाबके पश्चिमप्रान्त आजकल आर्यावर्तसे बाहर गिना जाता, क्योंकि उत्कल, राढ़, गौड़, वङ्ग और प्राग्ज्योतिष (कामरूप) प्रदेश आर्यावर्तके अन्तर्गत पुण्यभूमि लगता है।

आर्यावर्तीय (सं० वि) आर्यावर्त-सम्बन्धीय, आर्यावर्तके मुताल्लिक्।

आर्वाक् (सं० अव्य०) पश्चात्, अनन्तर, बाद, ताक़ुबमें, पीछे।

आर्श (वै० त्रि०) कुरङ्ग-सम्बन्धीय, कलेदार सींग वाले आहूके मुताल्लिक।

आर्ष (सं० त्रि०) ऋषेरिदम्, अण्। १ ऋषिसम्बन्धी, पुराना। २ ऋषिकृत, ऋषियोंका बनाया हुआ। (पु०) ३ ऋषि-सेवित वेद।

"आर्षं धर्मोपदेशञ्च वेदशास्त्राविरोधिना।
यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्मं वेद नेतरः।" (मनु १२।१०६)

संस्कारहीनत्वेऽपि ऋषिणा प्रयुक्तः। ४ व्याकरणोक्त अनुशासनको उल्लङ्घनकर ऋषियोंका कहा हुआ असाधु प्रयोग। (क्ली०) ऋषीणां समूहः प्रवरगण-भेदः। ५ प्रवर ऋषि-समूह। ६ विवाहविशेष।

"यज्ञस्थायर्त्विजे दैव आदायार्षं तु गोद्वयम्।" (याज्ञवल्क्य)

यज्ञस्थ ऋत्विक्से कन्याके विवाह होनेको दैव कहते हैं। वरके पक्षसे दो गो लेकर कन्या-व्याह देना आर्ष कहाता है।

"एकं गो मिथुनं द्वे वा वरादादाय धर्मतः।
कन्याप्रदानं विधिवदार्षो धर्मः स उच्यते॥" (मनु ३।२९)

अर्थात् वरपक्षसे धर्मतः एक गाय और एक बैल अथवा गोमिथुनद्वय ले विधानक्रमसे कन्याप्रदान आर्ष कहाता, जो धर्मजनक होता है। इस स्थलपर धर्म पद रहनेसे गोद्वयका ग्रहण शुल्कके मध्य परिगणित नहीं।

"धर्मतः धर्मार्थं यागादिसिद्धये कन्यायै वा दातुं न तु शुल्कबुद्ध्या।" (कुल्लूकभट्ट)

आर्षक्रम (सं० पु०) आर्ष परिपाटी, ऋषियोंकी चाल।

आर्षधर्म (सं० पु०) कर्मधा०। १ मन्वादि-प्रोक्त धर्म, मनु आदि स्मृतिकारोंका कहा हुआ धर्म। २ आर्ष विवाह, पुरानी चालकी शादी। आर्ष देखो।

आर्षप्रयोग (सं० पु०) ऋषिसम्बन्धि सन्धि, पुराना महावरा। वाक्यमें व्याकरणके नियमसे विरुद्ध पड़नेवाला शब्द आर्षप्रयोग कहाता है। ऋषियोंने व्याकरणपर विशेष दृष्टि न रख अनेक स्थलमें उलट-पलट किया है। किन्तु उसे अशुद्ध मान नहीं सकते। छन्दमें भी व्याकरणका नियम चलना कठिन है। इसीसे जो शब्द योजना मनमानी रहती, वह आर्ष-प्रयोग बजती है। यह विषय संस्कृतसे ही सम्बन्ध रखता है।

आर्षभ (सं० त्रि०) ऋषभस्य वृषस्येदम्, अण्। १ वृषसम्बन्धी, नर-गावके मुताल्लिक। (क्ली०) २ ऋषभ-देव-चरित।

आर्षभि (सं० पु०) ऋषभस्यापत्यम्, इञ्। १ प्रथम तीर्थकृत् ऋषभके पुत्र। २ भारतवर्षके प्रथम चक्रवर्ती नृपति। ऋषभ देखो।

आर्षभी (सं० स्त्री०) ऋषभस्येयं प्रिया, अण्-ङीप्। १ कपिकच्छुलता, केवांचकी बेल। ऋषभस्येयम्, तुल्याकारत्वात् अण्-ङीप्। २ मध्य-पथस्य वीथि-त्रयके मध्य वीथिविशेष, राहके बीचकी तीनमें एक गली।

आर्षभ्य (सं० पु०) ऋषभस्य प्रकृतिः, ञ्य। षण्ढोप-युक्त वृष, बधिया बनाने लायक बैल। 'आर्षभ्यः षण्ढता-योग्यः।' (अमर)

आर्षविवाह (सं० पु०) विवाह-विशेष, किसी क़िस्मकी शादी। आर्ष देखो।

आर्षिक्य (सं० क्लो०) ऋषिरेव ऋषिकः, ऋषिकस्य भावः, पुरो० यक्। ऋषिधर्म।

आर्षिषेण (सं० पु०) ऋषिषेणस्य गोत्रापत्यम्, अञ्। १ ऋषिषेण मुनिके गोत्रापत्य, देवापिका गोत्रनाम। (त्रि०) २ ऋषिषेण मुनिसे सम्बन्ध रखनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। आर्षिषेणी।

आर्षेय (सं० क्लो०) ऋषीणां समूहः, ढक्। १ ऋषि-गणरूप प्रवर-विशेष। २ मन्त्रदर्शी ऋषिविशेष। (स्त्री०) ङीप्। आर्षेयी।

आर्ष्टिषेण (सं० पु०) ऋष्टिषेणस्यापत्यम्, अञ्। चन्द्रवंशीय शल नृपतिके एक पुत्र। यह प्रथम राजा रहे। पर ऋषि हुआ। (हरिवंश २०१ अ०) २ गोत्र-प्रवर विशेष।

आर्ष्टिषेणाश्रम (सं० क्लो०) तीर्थ विशेष।

आर्हत (सं० त्रि०) अर्हत इदम्, अण्। १ जैन-सम्बन्धी, जिन मज़हबके मुताल्लिक़। (पु०) २ जैन, जिन मज़हबको माननेवाला शख़्स। 'स्याद्वादवाद्यर्हतः।' (हेम ३।५२५) जैन देखो। (स्त्री०) आर्हती।

आर्हत्य (सं० क्लो०) अर्हत् वा जैन साधुका साधन।

आर्हन्ती (सं० स्त्री०) अर्हतो भावः, ष्यञ् नुमुच, षित्वात् ङीप् यलोपः। योग्यता, क़ाबिलियत।

आर्हन्त्य (सं० क्लो०) आर्हन्ती देखो।

आर्हायण (सं० पु०) आर्हस्यापत्यम्, फञ्। अर्ह-नामक ऋषिके गोत्रापत्य। (स्त्री०) ङीप्। आर्हायणी।

आर्हीय (सं० पु०) अर्हमभिव्याप्य अण् आर्हम् तत्र विहितः तस्येदं वा, वृद्धाच्छ। १ पाणिनिके (५।१।१८) 'आर्हादगोपुच्छसंख्यापरिमाणाट्ठक्'से (५।१।६३) 'तदर्हति' सूत्र पर्यन्त विहित प्रत्ययविशेष। २ उपरोक्त सकल-सूत्र-विहित अर्थ। 'आर्हीयेष्वर्थे।' (सिद्धान्तकौमुदी)

आल (सं० क्लो०) आलति भूषयति, आ-अल भूषादौ अच्। १ हरिताल, ज़रनीख़। हरिताल जिस स्थानमें रहता, उसे भूषित करता है। इसीसे आल कहते हैं।

'पिञ्जरं पितकं तालमालञ्च हरितालके।' (अमर २।९।१०४)

२ अण्ड, मीनाण्ड, भेकाण्ड आदि, मछली या मेंढ़कका अण्डा। (त्रि०) आ-अल पर्याप्तौ अच्। ३ अनल्प, अधिक, ज़्यादा। ४ श्रेष्ठ, बड़ा।

(हिं० स्त्री०) ५ अच्युत वृक्ष, एक पौधा। (Morinda citrifolia) यह भारतवर्षके नाना स्थानमें उपजती है। बुंदेलखण्ड, कोटे, बूंदी प्रभृति स्थानमें इसकी खेती होती है। महिसुरका आल सर्वोत्कृष्ट निकलती है। दूसरे-दूसरे वर्ष इसे बोते हैं। पौदा दो फ़ीट ऊंचा होता है। डण्ठलसे लाल रङ्ग बनता है। छाल और जड़को काट हौज़में सड़ानेसे कुछ दिनमें रङ्ग उतरता, जो कपड़े रंगनेके काम आता है। रङ्ग पक्का होता और शीघ्र नहीं उड़ता। आलके रङ्गसे दीमक भी दूर रहती है। ६ आलका रङ्ग। ७ माहो, सरसोंके पेड़में लगनेवाला कीड़ा। ८ पण्डा-लुका, हरित नाल। ९ लौकी, कद्दू। (पु०) १० उप-द्रव, झगड़ा। ११ आर्द्रभाव, सील। १२ अश्रु, आंसू। १३ प्रान्तभाग, गांवका हिस्सा। झगड़ा-बखेड़ा आल-जञ्जाल कहाता है।

(अ० स्त्री०) १४ कन्याकी सन्तति, बेटीकी औलाद। बालबच्चोंको आल-औलाद कहते हैं।

आलंग (हिं० पु०) आतप, कामानल, सरगर्मी, झल, चुल, मस्ती।

आलंगपर आना (हिं० क्रि०) घोड़ीका सरगर्म होना या मस्त पड़ना।

आलंगपर होना, आलंगपर आना देखो।

आलक (सं० क्लो०) हरिताल, पीली सखिया।

आलकस (हिं० पु०) आलस्य, सुस्ती।

आलकसी (हिं॰ वि॰) अलस, सुस्त, काहिल।

आलक्षण्य (सं॰ क्लो॰) अलक्षण, मन्दभाग्य, पातक, जवाल, गुनाह।

आलक्षि (सं॰ त्रि॰) आलक्षते, आ-लक्ष-इन्। ज्ञाता, जानकार, समझदार। (स्त्री॰) ङीप्। आलक्षी।

आलक्षित (सं॰ त्रि॰) आलक्ष-क्त-इट्। सम्यक् ज्ञात, चिह्न द्वारा प्रदर्शित, अच्छीतरह समझा हुआ, जो झलक पड़ा हो।

आलक्ष्य (सं॰ त्रि॰) आलक्ष्यते, आलक्ष-यत्। १ सम्यक् ज्ञेय, लक्षण द्वारा ज्ञातव्य, ज़ाहिर, आश-कारा, झलकनेवाला। २ दुर्ज्ञेय, ब-मुश्कल नमूदार, जो ज़्यादा ज़ाहिर न हो। (अव्य॰) ल्यप्। ३ सम्यक् समझकर, देख-भालके साथ।

आलगर्द (सं॰ पु॰) अलगर्द एव, स्वार्थे अण्। जलसर्प, पानीमें रहनेवाला सांप।

आलजि (सं॰ त्रि॰) आ-लज-इन्। आभाषक, बोलनेवाला।

आलजिह्वा, अलिजिह्वा देखो।

आलथी पालथी (हिं॰ स्त्री॰) आसनभेद, एक बैठक। दाहने पैरकी एंड़ी बायीं और बायें पैरकी एंड़ी दाहनी जांघपर रखनेसे यह आसन जमता है।

आलदूषक (सं॰ पु॰) प्रतुद पक्षी विशेष, ठोंग मारनेवाली एक चिड़िया।

आलन (हिं॰ पु॰) १ पलाल, नाल, भूषा, शिचाली। यह मकान् बनानेके लिये मट्टीमें मिलाया जाता है। २ व्यञ्जनमें पड़नेवाला पिष्टक, जो खमीर तरकारीमें पड़ता हो।

आलना (हिं॰ पु॰) पक्षिस्थान, आशयाना, घोंसला।

आलपाका, अलपाका देखो।

आलपीन (हिं॰ स्त्री॰) शलाका, घुण्डीदार सूयी। यह शब्द पोर्तगीज़ 'आलफिनेट'का अपभ्रंश है। इससे प्रायः काग़ज़का नत्थी करते हैं।

आलब्ध (सं॰ त्रि॰) आ-लभ-क्त। १ संस्पृष्ट, संयुक्त, स्पृष्ट, लगा या मिला हुआ। २ हिंसित, चोट खाये हुआ।

आलब्धि (सं॰ स्त्री॰) १ स्पर्श, छूत, लगाव। २ हिंसा, चोट, नुकसान्।

आलभन (सं॰ क्लो॰) आ-लभ-ल्युट्। १ हिंसा, नुकसान्। २ स्पर्श, पकड़।

आलभनीय (सं॰ त्रि॰) आ-लभ-अनीयर्। १ स्पृश्य, पकड़ने काबिल। २ हिंसनीय, नुकसान पहुंचाये जाने लायक।

आलभ्य (सं॰ त्रि॰) आ-लभ-यत्। पोरदुपधात्। पा ३।१।९८। १ स्पृश्य, छूवा जाने काबिल। २ हिंस्य, मारा जाने लायक। जो नुकसान् झेल सकता हो। (अव्य॰) ल्यप्। ३ स्पर्शपूर्वक, छूकर।

आलम (अ॰ पु॰) १ लोक, दुनिया। २ प्रजा, जन, खल्क, लोग। ३ आलोक, नकल, तमाशा। ४ काल, वेला, ज़माना। ५ अवस्था, हालत।

आलम कवि—एक प्रसिद्ध कवि। पहले यह सनाढ्य ब्राह्मण रहे। किन्तु किसी मुसलमान-रमणीके प्रणयमें पड़नेसे इन्हें इसलामको दीक्षा दी गयी। दिल्ली-सम्राट् औरङ्गजेबके पुत्र मुअज़्ज़िम शाहके निकट आलम काम करते थे। इनकी कविता अति उत्कृष्ट समझी जाती है।

आलमगीर (अ॰ पु॰) १ देशपति, दुनियाको जीतनेवाला शख्स। २ बादशाह औरङ्गजेब। औरङ्गजेब देखो।

आलमगीर प्रथम, औरङ्गजेब देखो।

आलमगीर द्वितीय—दिल्लीके एक सम्राट्। इनका नाम आज़िज़ुद्दीन् रहा। सम्राट् जहांदार शाहके औरस और अनप बाईके गर्भसे इन्होंने १६८८ ई॰को जन्म लिया था। १७५४ ई॰को २री जूनका वज़ीर इमा-दुलमुल्क ग़ाज़ी-उद्दीन् खांके सहारे यह सिंहासनपर बैठे। मुहम्मद शाहके लड़के अहमद क़ैद कर लिये गये थे। इन्होंने पांच वर्षसे भी कम राज्य चलाया। १७५९ ई॰को २९वीं नवम्बरको वज़ीर इमादुलमुल्क ग़ाज़ी उद्दीन् खांने इन्हें मार डाला था। सम्राट् हुमायूंके रौज़ेके सामने आलमगीर गाड़े गये। इनके पुत्रका अलीगौहर (शाह आलम) और पौत्रका नाम मिर्ज़ा जवान्‌बख्त था।

आलम-गैब (अ० पु०) परलोक, देख न पड़नेवाली दुनिया।

आलमजानी (अ० पु०) इहलोक, मौजूदा दुनिया।

आलम जिन्नात (अ० पु०) पैशाच लोक, भूतोंके रहनेकी दुनिया।

आलमडांगा—बङ्गाल प्रान्तके नदिया जिलेका एक गांव। यह पङ्गासी नदीके तीर अवस्थित है। यहां चावलका व्यवसाय अधिक होता है।

आलमनक, अलमनक देखो।

आलमनगर—१ अवध प्रान्तके सीतापुर जिलेका एक नगर। आजकल इसे टमसनगञ्ज भी कहते हैं। प्राय: आठ हज़ार लोगोंका वास है। २ अवध प्रान्तके शाहाबादका एक परगना। पौराणिक समय यह स्थान कान्य राजाओंके अधिकारमें रहा। कान्य-कुब्जका अध:पतन होनेपर निकुम्भगणने आकर इसपर अपना अधिकार जमाया था। अकबर बादशाहके राजत्वकाल वह विद्रोही हुआ, किन्तु नवाब सदर-जहां द्वारा ताड़ित किया गया। धन-सम्पत्ति सयदोंके हाथ लगी थी। प्रथम आलमगीर औरङ्गजेब बाद-शाहके राजत्वकाल सैयदोंने आलमनगर नाम रखा। नवाब आसफ़-उद्-दौलाके समयसे निकुम्भ फिर यहां रहने लगे थे। लोकसंख्या प्राय: अट्ठारह हज़ार है। ३ विहार प्रान्तके भागलपुर जिलेका एक ग्राम। यह कृष्णगञ्जसे सात मील दक्षिण-पश्चिम पड़ता है। पहले यहां चंदेल राजाओंका अधिकार रहा। स्थान-स्थानमें अट्टालिकाओंका ध्वंसावशेष देखनेसे प्राचीन समृद्धि समझ पड़ती है। आजकल राजपूत और ब्राह्मण अधिक रहते हैं।

आलमपर्रै—मन्द्राज प्रान्तके चेङ्गलपट् जिलेका एक ग्राम। यह पुंदिचेरी और चेङ्गलपट् नगरके बीचोबीच सागरकूलपर अवस्थित है। १७५० ई०को मुजफ्फरजङ्गने यह स्थान फ्रान्सीसी सेनाके नायक दुप्लेको दे दिया था। अनेक बार यहां अंगरेजों और फ्रान्सीसियोंमें युद्ध हुआ। १७५८ ई०को इस ग्रामके निकट भीषण जलयुद्ध चला था। १७६० ई०को सर आयार-कूटने इसे अधिकार किया। पहले यहां कस्तूरी बहुत मिलता था।

आलमपुर—१ मध्य भारतके इन्दोर राज्यका एक परगना। इसका प्रधान नगर आलमपुर ही है। प्राय: सत्रह हज़ार लोग रहते हैं। २ बम्बई प्रदेशके काठियावाड़का एक ग्राम।

आलमफ़ानी (अ० पु०) नश्वर जगत्, मिट जानेवाली दुनिया।

आलमबाला (अ० पु०) वैकुण्ठ, बिहिश्त, ऊंची दुनिया।

आलममस्ती (अ० पु०) इन्द्रिय-निरति, ऐयाशी, रङ्गरस।

आलम-सिफ़ली (अ० पु०) मही, मेदिनी, ज़मीन्, जहान्।

आलमारी, अलमारी देखो।

आलम्पा—ब्रह्मदेशके नृपति विशेष। ब्रह्मदेश और फायरे देखो।

आलम्ब (सं० त्रि०) १ नीचेकी ओर लटकनेवाला, जो नीचेको झुका हो। (पु०) २ टेक, सहारा लेनेकी चीज़। ३ आश्रय, सहारा। ४ आधार, मस-कन, जगह। ५ अवष्टम्भ, थूनी, अन्धेकी लकड़ी। ६ आश्रम, दारुल-अमान्। ७ निवन्धन, फरमांबर-दारी। ८ लम्ब, उमूद, सीधे खड़ी लकीर।

आलम्बन (सं० क्ली०) आलम्बते, आ-लबि कर्मणि ल्युट्। १ निवन्धन, अधीनता। २ आश्रय, सहारा। ३ आधार, बुनियाद। ४ कारण, सबब। ५ अलङ्कार-शास्त्रके अनुसार उपादान कारणसे मनोवृत्तिका प्रकृत तथा आवश्यक सम्बन्ध, बढ़ानेवाले सबबसे रिक़तका कुदरती और ज़रूरी ताल्लुक़। "आलम्बनं नायकादिस्तमालम्ब्य रसोद्गमात्।" (साहित्यदर्पण) रस विशेषमें आलम्बन विशेष कहा है। शृङ्गार रसमें अनु-रागिणी परविवाहिता वेश्या-छोड़ अन्य नायिका-को अवलम्बन करना पड़ता है। हास्यरसमें जो विकृत आकार, वाक्य, चेष्टा प्रभृति देख लोगोंको हंसी आ सकती, वही आलम्बन है। करुणरसमें शोचनीय कार्य आलम्बन होता है। रौद्ररसमें अरि ही आलम्बन है। वीररसमें विजेतव्यादिको आलम्बन

कहते हैं। वीभत्सरसमें दुर्गन्ध, मांस, रक्त और मेद आलम्बन है। अद्भुतरसमें अलौकिक वस्तु आलम्बन होता है। शान्तरसमें अनित्यत्वादि द्वारा अशेष वस्तुका जो असारत्व रहता, वही आलम्बन बजता है। भयानक रसमें जिससे भय उपजता, वही आलम्बन आता है। ६ अनुष्ठान, अमल। निर्वाणप्राप्तिके लिये योगियोंद्वारा किये जानेवाले मानसिक साधनको आलम्बन कहते हैं। ७ स्तोत्रकी मूक आवृत्ति, दुवाका खमोश एयादा। ८ बौद्धमतानुसार—पञ्च ज्ञानेन्द्रिय सदृश द्रव्यके पांच गुण, पांचो हिसके मुताल्लिक् शैको पांच सिफ़तें।

आलम्बा (सं० स्त्री०) विषाक्त पत्रयुक्त वृक्षविशेष, ज़हरीली पत्तियोंकी एक झाड़ी।

आलम्बायन (सं० पु०) आलम्ब इअस्तात् फञ्। उपदेष्टा विशेष, एक मुवल्लिम। यह आलम्बके युवापत्य रहे। (स्त्री०) ङीप्। आलम्बायनी।

आलम्बायनिपुत्र, आलम्बायन देखो।

आलम्बि (सं० पु०) आलम्बस्यापत्यम्, इञ्। वैशम्पायनके शिष्य और आलम्बके पुत्र। (स्त्री०) ङीप्। आलम्बी।

आलम्बित (सं० त्रि०) आ-लवि-क्त-इट्। १ धृत, गृहीत, पकड़ा हुआ। २ रक्षित, बचाया हुआ। ३ आश्रित, झुका या लटका हुआ।

आलम्बितविन्दु (सं० पु०) आश्रित चिह्न, सहारेका नुक़ता। सेतुकी दोनों ओर जिस जगह जञ्जीर स्तम्भसे लगती, वह आलम्बित-विन्दु बजती है।

आलम्बिन् (सं० त्रि०) आलम्बते, आ-लवि-णिनि। १ आश्रयी, सहारा पकड़नेवाला। २ अधीन, मातहत। ३ आश्रय देनेवाला, जो टेक लगाता हो। ४ धारण करनेवाला, जो चढ़ाता हो।

आलम्ब्य (सं० अव्य०) १ आश्रय देकर, सहारा लगाके। २ हस्त द्वारा ग्रहणकर, हाथसे पकड़के।

आलम्भ (सं० पु०) आ-लभ-घञ्-नुम्। १ संसर्ग, आलिङ्गन, हमागोशी।

"स्त्रीणाञ्च प्रेक्षणालम्भमुपघातं परस्य च।" (मनु २।१७९)

२ हिंसन, मारकाट।

"आलम्भपिञ्जविशरघातोन्मथवधा अपि।" (अमर)

आलम्भ्य (सं० त्रि०) आलभ्यते, आ-लभ-यत्-नुम्। भाषो यि। पा ७।१।६५। हिंस्य, मारा जाने क़ाबिल।

"आलम्भ्यो गौ।" (सिद्धान्तकौमुदी)

आलय (सं० पु०) आलीयतेऽस्मिन्, आ-ली आधारे अच्। १ गृह, हवेली, घर। इस अर्थसे यह शब्द प्रायः समासान्तमें आता है, जैसे—हिमालय, कार्यालय, औषधालय।

"गृहाः पुंसि च भूम्न्येव निकाय्यनिलयालयाः।" (अमर)

२ आधार, टेक। भावे अच्। ३ संश्लेष, बग़लगीरी, अंकवारी। (अव्य०) मर्यादार्थे अव्ययी०। ४ लय पर्यन्त, क़यामतक। बौद्ध मतमें आत्माको आलय कहते हैं।

आलयविज्ञान (सं० क्ली०) आलयं लयपर्यन्तव्यापि-विज्ञानम्, कर्मधा०। बौद्धमत-सिद्ध अहमास्पद विज्ञान विशेष। विज्ञानसे अतिरिक्त वाह्यवस्तुको बौद्ध नहीं मानते।

आलायश (फ़ा० स्त्री०) १ मालिन्य, मल, नजासत, आलूदगी, गन्दापन। २ पूय, दूष्य, पीप, मवाद।

आलर्क (सं० क्ली०) अलर्कस्येदम्, अण्। १ क्षिप्त कुक्कुर विष, पागल कुत्तेका ज़हर। (त्रि०) २ क्षिप्त-कुक्कुर-सम्बन्धीय, पागल कुत्तेके मुताल्लिक्।

आलवण्य (सं० क्ली०) न लवणम्, नञ्-तत्; अलवणस्य भावः, ष्यञ्। लवणरस-भिन्नत्व, बेनमकी, बेलज्ज़ती, फीकापन।

आलवाल (सं० क्ली०) अरं शीघ्रं वलते वर्धते तरुरनेन, पृषोदरादित्वात् घञ्; यद्वा आ समन्तात् लवं जललवं आलाति गृह्णाति, आलव-आ-ला-क। वृक्षमूलमें जलसेकके निमित्त खनित और मृत्तिका द्वारा निर्मित जलाधार, थाला।

"स्यादालवालमावालमावापः।" (अमर)

आलविष (सं० पु०) आलमें विष रखनेवाला जीव, ज़हरीले कांटेका जानवर। वृश्चिक, विश्वम्भर, राजीव, मत्स्य, उच्चिटिङ्ग और समुद्र-वृश्चिकके आलमें विष रहता है। (सुश्रुत)

आलविषा (सं० स्त्री०) कृच्छ्र-साध्य लूताभेद, मुश्किलसे अच्छी होनेवाली मकड़ीकी बीमारी।

आलस (सं० त्रि०) आलसति ईषद् व्याप्रियते; अच्। १ अलस, काहिल, सुस्त, जो काम करना चाहता न हो। (हिं० पु०) २ आलस्य, सुस्ती।

आलसायन (सं० पु०) आलस-युनि-फक्। आलसका युवापत्य, काहिलका नौजवान् बेटा।

आलसी (हिं० वि०) अलस, सुस्त, काहिल।

आलस्य (सं० क्ली०) न लसति, अच् नञ्-तत्; अलसः तस्य भावः, ष्यञ्। न नञ् पूर्वात्तत्पुरुषादचतुरसङ्गतलवणवटयुधकतरसलसेभ्यः। पा ५।१।१२१। १ विहित क्रियाकरणमें अनुत्साह, काहिली, सुस्ती। (त्रि०) आलस्योऽस्त्यस्य, अर्श आदि अच्। २ आलस्ययुक्त, काहिल।

'मन्दस्तुन्दपरिमृज आलस्यः शीतकोऽलसोऽनुष्णः।' (अमर)

आला (हिं० वि०) १ आर्द्र, क्लिन्न, तर, गीला।

"आला ईंधन ऊंचा चूल्हा तवा निपुत्ती भारी रे।
मूलन अगिया जलती नाहीं फूंकत फूंकत हारी रे॥" (ग्राम्यगीत)

२ सपूय, पूयस्रावी, जख्मी, पीप देनेवाला। (पु०) ३ विविक्त स्थान, ताक़, मोखा, सूराख़।

"हीवाल खोयी आलोंमे।
घर खोया सालोंमे॥" (लोकोक्ति)

४ आलात, कुम्हारका आंवा। ५ आल्हा देखो। (अ० वि०) ६ आली, ऊंचा, अौवल। (पु०) ७ यन्त्र, हथियार।

आलाक्ता (वै० त्रि०) विषाक्त, ज़हर-बुझा। "आलाक्ता या रुरुशीर्ष्ण्यथो यस्या अयोमुखं" (ऋक् ६।७५।१५) 'आलाक्ता आदिग्ध विषेणाक्ता।' (सायण)

आलाद्य (वै० त्रि०) समुद्रकी लहरोंमें रहनेवाला।

आलात (सं० क्ली०) अलातमेव, स्वार्थे अण्। अलात, अङ्गार, कोयला। २ पजावा, कुम्हारका आंवा।

आलातचक्र (सं० क्ली०) लुकका चक्कर। किसी जलती चीज़को घुमानेसे आगका चक्कर जो बंधता, वही आलातचक्र कहलाता है।

आलान (सं० क्ली०) आ-लीयतेऽत्र, आ-ली आधारे ल्युट्। १ गजबन्धनस्तम्भ, हाथीके बांधनेका खूंटा। करणे ल्युट्। २ बन्धनरज्जु, बांधनेका रस्सा। ३ ग्रन्थि, गांठ। ४ रज्जु, रस्सा। भावे ल्युट्। ५ बन्धन, बांध, जकड़। (पु०) ६ शिवके एक मन्त्री।

'आलानं करिणां बन्धनस्तम्भे रज्जौच न स्त्रियाम्।' (मेदिनी)

आलानिक (सं० त्रि०) आलानं बन्धनं प्रयोजनमस्तीति, ठक्। विनयादिभ्यष्ठक्। पा ५।४।३४। १ आलानसम्बन्धीय, हाथी बांधनेके खूंटेका काम देनेवाला। (क्ली०) स्वार्थे ठक्। २ आलान, हाथीके बांधनेका खूंटा।

"सोढुं न तत् पूर्वमवर्णमीशे आलानिकं स्थाणुमिव द्विपेन्द्रः।"(रघु १४।३८)

आलाप (सं० पु०) आ-लप भावे घञ्। १ कथन, परस्परकथन, कलाम, गुफ़्तार, बोली। २ अङ्कगणित वा बीजगणितके प्रश्नका निर्देश, इल्महिन्दसा य जबरूल मुकाबिलेके सवालका तखमीना। ३ प्रश्न, सवाल।

"आलाप इव श्रूयते।" (शकुन्तला)

४ स्वरसाधनार्थ सा-ऋ-गम इत्यादि। अनुलोम, विलोम, गमक, मूर्च्छना, तान, लय और प्रकृत स्वर आदिके संयोग रागादिको प्रकृष्ट रूपसे देखाना आलाप कहाता है। आलाप शब्दका अर्थ रागके साथ बोलना अर्थात् किसी रागको यथा-निर्दिष्ट स्वरादि द्वारा प्रतिपन्न करना है। इसमें तालके विशेष समावेशका प्रयोजन नहीं पड़ता। आलाप कण्ठ और वीणादि यन्त्र दोनोंमें देखाया जा सकता है। किन्तु वर्णसंयोगसे बनने कारण गान, कण्ठ-भिन्न यन्त्रमें नहीं उतरता।

"रागालापनमालप्तिः प्रकटीकरणं मतम्।" (सङ्गीतदर्पण)

आलापक, आलापवत् देखो।

आलापचारी (सं० पु०) स्वरसाधन, तान लड़ानेका काम।

आलापन (सं० क्ली०) आ-लप्-णिच्-ल्युट्। १ परस्परकथन, स्वस्तिवाचन, बातचीत, बोलचाल। (त्रि०) २ आलाप करानेवाला, जो बात कराता हो।

आलापना (हिं० क्रि०) आलाप छोड़ना, तान लड़ाना, स्वर खींचकर गाना।

आलापनीय, आलाप्य देखो।

आलापवत् (सं० त्रि०) परस्पर कथन करनेवाला, जो आपसमें बातचीत करता हो। (पु०) आलापवान्। (स्त्री०) आलापवती।

आलापित (सं॰ त्रि॰) १ परस्पर कथित, आपसमें कहा हुआ। २ स्वरसाधन-पूर्वक उच्चारित, गाया हुआ।

आलापिन् (सं॰ त्रि॰) परस्पर कथन करनेवाला, जो आपसमें बातचीत करता हो। (पु॰) आलापी।

आलापिनी (सं॰ स्त्री॰) अलाबु-निर्मित मुरली, तोंबेकी वंशी, मोहर। इसे प्रायः सपेरे बजाया करते हैं। सर्प इसका शब्द सुनकर मोहित हो जाता है।

आलापुर—युक्तप्रान्तके बदावूं जिलेका एक नगर। सैयदवंशीय सुलतान् अलाउद्दीन्के अनुसार इसका नाम आलापुर पड़ा है। यह स्थान बदावूं नगरसे ११ मील दक्षिणपूर्व अवस्थित है। सारस्वत ब्राह्मणोंका वास अधिक है। उनके कथनानुसार अला-उद्दीन्ने यह स्थान उन्हें दिया था।

आलाप्य (सं॰ त्रि॰) आ-लप्यते, आ-लप्-ण्यत्। कथनीय, कहने लायक।

आलावाला (हिं॰ पु॰) १ छल, कपट, टालमटोल। २ आरोप, धोका। ३ आलस्य, सुस्ती, काहिली।

"दिन खोया आलेबाले।
कातन बैठी दिया उजाले॥" (लोकोक्ति)

आलाबु (सं॰ स्त्री॰) पूर्वपदः दीर्घः वा अङ्। अलाबु, कद्दू, लौकी।

आलाबू, आलाबु देखो।

आलारासी, आलारेसी देखो।

आलारेसी (हिं॰ स्त्री॰) १ प्रमत्तता, अनवधानता, बेपरवायी। (वि॰) २ प्रमत्त, अनवधान, बेपरवा।

आलावर्त (सं॰ क्ली॰) आलं पर्याप्तं आवर्त्यते, आल-आ-वृत-णिच् कर्मणि अच्। वस्त्र-निर्मित व्यजन, कपड़ेका पङ्खा।

"आलावर्तं तु वस्त्रस्य (व्यजनम्)।" (हेम ४।४५)

आलास्य (सं॰ पु॰) आलं पर्याप्तं आस्यं मुखं यस्य, बहुव्री॰। १ कुम्भीर, घड़ियाल, निहङ्ग, मगरमच्छ।

'नक्रः कुम्भीर आलस्यः।' (हेम ४।४१५)

(क्ली॰) आ सम्यक् लास्यम्, प्रादि समा॰। २ सम्यक् नृत्य, खासा नाच।

आलि (सं॰ पु॰) आ-अल पर्याप्तौ इन्। १ वृश्चिक, बिच्छू। २ भ्रमर, भौंरा। (स्त्री॰) ३ सखी, वयस्या, सहेली। ४ आवली, कतार, सतर। ५ अल्पकाल स्थायी क्षेत्रस्थ जलका निवारक सेतु, बांध। ६ कूलक, नाला। ७ सन्तति, श्रेणी, खान्दान, जात।

'आलिः पंक्ती च संख्यायां सेतौ च परिकीर्तिते।' (विश्व)

(त्रि॰) ८ अनर्थ, बेफायदा, जो किसी मसरफका न हो। ९ शुद्धान्तःकरण, साफ-दिल, ईमान्दार, सच्चा।

आलिखत् (सं॰ पु॰) १ उल्लेखन, विदारण, खराश, खोंच। २ राक्षसविशेष, किसी हमजादका नाम।

आलिख्य (सं॰ अव्य॰) पाण्डुचित्र उतारते हुये, नकशा खींचकर।

आलिगी (वै॰ स्त्री॰) सर्पविशेष, किसी नागनका नाम।

आलिगव्य (सं॰ त्रि॰) अलिगोरपत्यम्, यञ्। गर्गादिभ्यो यञ्। पा ४।१।१०५। अलिगु मुनिसे उत्पन्न, अलिगुसे पैदा। (स्त्री॰) यञन्तत्वात् ष्फः षित्वात् ङीप्। प्राचांष्फ तद्धितः। पा ४।१।१७। आलिगव्यायनी।

आलिङ्ग (सं॰ पु॰) १ आलिङ्गन, हमागोशी, बगल-गीरी, अंकवारी। २ दुन्दुभि-विशेष, किसी किस्मका ढोल।

आलिङ्गन (सं॰ क्ली॰) आ-लिगि-ल्युट्। आश्लेषण, बगलगीरी, हमागोशी, अंकवारी, गल-बहियां। आलिङ्गन सात प्रकारका होता है,—१ आमोदालिङ्गन, २ मुदितालिङ्गन, ३ प्रेमालिङ्गन, ४ मदनालिङ्गन, ५ मानसालिङ्गन, ६ इच्छालिङ्गन और ७ विनोदा-लिङ्गन।

आलिङ्गना (हिं॰ क्रि॰) आलिङ्गन करना, बगल-गीर या हमकिनार होना, गले लगाना, गलबहियां डालना, चिमटना, लिपटना, आगोशमें लेना, कौली भरना।

आलिङ्गित (सं॰ त्रि॰) आ-लिगि-कर्मणि क्त-इट्। १ आश्लिष्ट, बगलगीर, हमकिनार, गले लगा हुआ। (क्ली॰) २ आलिङ्गन, बगलगीरी, चिमट, लपट। (पु॰) ३ तन्त्रसारोक्त विंशति अवधि त्रिंशत् अक्षर पर्यन्त मन्त्र विशेष।

आलिङ्गितवत् (सं॰ त्रि॰) आलिङ्गन करनेवाला, जो

किसीको गले लगा चुका हो। (पु०) आलिङ्गितवान्। (स्त्री०) आलिङ्गितवती।

आलिङ्गिन् (सं० त्रि०) आलिङ्गति, आ-लिगि-णिनि। आलिङ्गनकर्ता, गले लगानेवाला। (स्त्री०) आलिङ्गिनी।

आलिङ्गी (सं० पु०) १ आलिङ्गनकर्ता, गले लगानेवाला। २ क्षुद्र दुन्दुभि विशेष, छोटे ढोलकी एक किस्म। यह यवाकार बनाया और छातीपर रखकर बजाया जाता है।

आलिङ्ग्य (सं० त्रि०) आलिङ्ग्यते, आ-लिगि कर्मणि ण्यत्। १ आलिङ्गनीय, गले लगाने लायक। (पु०) २ वादनीय मृदङ्ग विशेष, किसी किस्मका ढोल।

'अङ्क्यालिङ्ग्योर्ध्वकाश्चयः।' (अमर)

(अव्य०) आ-लिगि-ल्यप्। ३ आलिङ्गन करके, गले लगाकर।

आलिङ्ग्यायन (सं० पु०) आलिङ्ग्यस्य मृदङ्गभेदस्यायनं यत्र, बहुव्री०। १ ग्रामविशेष, जिस गांवमें ढोल बनें। तस्यादूरभवं नगरम्, अण् वरणादित्वात् तस्य लुप्। लुपियुक्तवद्व्यक्तिवचने। पा १।२।५१। आलिङ्ग्यायन ग्रामसे अदूरभव नगर, जो शहर आलिङ्ग्यायन गांवसे नजदीक हो।

आलिञ्जर (सं० पु०) अलिञ्जर एव, स्वार्थे अण्। मृण्मय वृहत् पात्र, पानी भरनेको मट्टीका बड़ा बरतन।

आलिन् (सं० पु०) वृश्चिक, बिच्छू।

आलिनी, आलिन् देखो।

आलिन्द (सं० पु०) अलिन्द एव, स्वार्थे अण्। वहिर्द्वारका प्रकोष्ठ, मकान्के सामनेका चबूतरा।

'प्रघाणप्रघणालिन्दावहिर्द्वारप्रकोष्ठके।' (अमर)

आलिन्दक, आलिन्द देखो।

आलिप (सं० त्रि०) आ-लिप-क। आलेपनकारी, तिला करनेवाला, जो चुपड़ता हो।

आलिप्त (सं० त्रि०) आ-लिप-क्त। कृतालेपन, लीपा-पोता।

आलिम (अ० पु०) विद्वान् पुरुष, पढ़ा-लिखा आदमी।

"आलिम वह क्या अमल न हो जिसका किताब पर।" (लोकोक्ति)

'आलिम'का बहुवचन 'उलमा' है।

आलिम-उल्-गैब (अ० वि०) सर्वज्ञ, अन्तर्यामी, छमादान, छिपा हाल जान लेनेवाला।

आलिमाना (अ० वि०) ज्ञानवान्, पढ़ा-लिखा, समझदार।

आलिमाना गुफ्तगू (अ० स्त्री०) विद्या-सम्पन्न वार्तालाप वा विवाद, इलमियतकी बातचीत या बहस।

आलिम्पन (सं० क्ली०) आ-लिप्-ल्युट्, पृषोदरादित्वात् नुम्। उत्सवके समय लीप-पोत।

आलिम्पना (सं० स्त्री०) तृप्ति, आसूदगी, छकाहट।

आलिवङ्गा (सं० स्त्री०) हालिम। गुजरातमें इसे आग्रालवीज कहते हैं।

आलिसपायिस (Allspice)—वृक्षविशेष, एक दरख्त। (Pimenta vulgaris) यह वृक्ष अमेरिकासे भारतवर्ष आया है। पत्र हरित और मुकुल श्वेत रहता है। मुकुल निकलते समय प्रकृतिकी शोभा फूट पड़ती है। सौरभसे चारो दिक् गन्धमय हो जाती है। प्रत्येक पत्र तथा प्रत्येक कोष परिमल प्रदान करता है। फलमें दालचीनी, जायफल और लवङ्गका गन्ध रहता है। पत्रसे सुगन्धि तैल खींचते हैं। यह तैल कभी-कभी बाज़ारमें लवङ्गतैलके नामसे भी बिक जाता है। व्यवसायी अपक्व फलको तोड़ धूपमें सुखाते और व्यवहारमें लाते हैं।

आली (सं० स्त्री०) १ सखी, सहेली। २ पंक्ति, क़तार।

(हिं० स्त्री०) ३ आर्द्र, भीगी, गीली। ४ चार विश्वेकी नाप।

(अ० वि०) ५ वरेण्य, बुलन्द, बड़ा।

बङ्गाल और उड़ीसेमें एक मछलीको भी आली कहते हैं।

आलीक़दर (अ० स्त्री०) उच्च पद, ऊंचा दरजा।

आलीखान्दान (अ० वि०) कुलीन, जो अच्छे बड़े घरका हो।

आलीजनाब (अ० पु०) महाशय, हुजूर, सरकार।

आलीज़र्फ (अ० वि०) योग्य, लायक।

आलीजाह, आलीजनाब देखो।

आलीढ़ (सं० त्रि०) आ-लिह-क्त। १ आस्वादित, चाटा या खाया हुआ। २ क्षत, चीथा हुआ। (क्ली०) ३ युद्धार्थ स्थिति विशेष, लड़ायीकी एक बैठक। दक्षिण चरण अग्रसर और वाम चरण पीछेको कुछ टेढ़ाकर बैठनेको आलीढ़ कहते हैं। यह स्थिति वाण मारने या गोली चलानेमें रहती है। ४ लेहन, चाट। ५ अशित, भोजन। (पु०) ६ पुरुषविशेष, किसी आदमीका नाम।

आलीढक (सं० क्ली०) आलीढ़ संज्ञायां कन्। वत्सका विहार, बछड़ेका खेल।

आलीदिमाग़ (अ० पु०) विशाल बुद्धि, बड़ी समझ।

आलीन (सं० त्रि०) आ-ली कर्तरि क्त ओदित्वात् तस्य न। १ आश्लिष्ट, पिघला या गला हुआ।

आलीनक (सं० क्ली०) आलीन संज्ञायां कन्। रङ्ग, रांगा। अन्य धातुके साथ संश्लिष्ट हो जानेसे रङ्गको आलीनक कहते हैं।

आलीमर्तबा (अ० पु०) आलीक़दर देखो।

आलीशान् (अ० वि) १ उज्ज्वल, अतिशोभन, नुमायशी। २ उत्तम, प्रधान, उम्दा, बड़ा।

आलीहिम्मत (अ० वि०) आकाङ्क्षी, अभिलाषी, बलन्द-नज़र, आरज़ू या तमन्ना रखनेवाला, जो बहुत चाहता हो।

"आलीहिम्मत सदा मुफ़लिस।" (लोकोक्ति)

आलीहिम्मती (अ० स्त्री०) १ महामनस्कता, मिज़ाजदारी। २ स्पृहा, आकाङ्क्षा, ग़राज़, हौसलगी।

आलु (सं० पु०) १ पेचक, घुग्घ, बूम, उल्लू, घुग्घू। २ ज़मींकन्द, सूरण। ३ कोविदार, आबनूस। (क्ली०) आ-लु-ड्। ४ भेलक, बेड़ा, चौघड़ा। ५ मूल, जड़। (स्त्री०) आ-ला-डु। ६ गलन्तिका, मट्टीका छोटा घड़ा। इसके पेंदेमें छेद रहता, जिससे शिवलिङ्ग या तुलसी वृक्षपर जल टपकता है। 'आलुर्गलन्तिकायां स्त्री क्लीबं मूले च भेलके।' (मेदिनी) आलु देखो।

आलुक (सं० क्ली०) आलु स्वार्थे कन्। १ कन्दविशेष, काष्ठालु, शङ्खालु, हस्त्यालु, पिण्डालु, मध्वालु और रक्तालु भेदसे यह बहुत प्रकारका होता है। काष्ठालु काष्ठसदृश कठिन, शङ्खालु श्वेततायुक्त, हस्त्यालु दीर्घ तथा महाशरीर, रक्तालु रक्तवर्ण, पिण्डालु गोल और मध्वालु मधु-जैसा मिष्ट रहता है। आलुक मल-मूत्र-निःसारक, रुक्ष, दुर्जर, रक्त-पित्तघ्न, वात-कफघ्न, बल्य, वृष्य और स्तन्य-वर्धन है। (भावप्रकाश)

(पु०) २ कोविदार, आबनूस। ३ शेषनाग। ४ जमींकन्द।

'शेषो नागाधिपोऽनन्तो द्विसहस्राच आलुकः।' (हेम)

आलुकी (सं० स्त्री०) रक्तालुभेद, घुयिया। यह बलकारी, स्निग्ध, गुरु, हृदय-कफघ्न तथा विष्टम्भी होती और तैलमें तलकर खानेसे अत्यन्त रुचिकर निकलती है। (भावप्रकाश)

आलुञ्चन (सं० क्ली०) आ-लुचि-ल्युट्। उत्पाटन, नोच-खसोट, चीर-फाड़।

आलुञ्चित (सं० त्रि०) आ-लुचि-क्त। उत्पाटित, नोचा-खसोटा, जो चीर या फाड़ डाला गया हो।

आलुण्टन (सं० क्ली०) आ-लुटि-ल्युट्। बलहेतु अपहरण, लूट-पाट, छीना-छीनी।

आलुल (सं० त्रि०) आ-लल-क। १ उन्मुक्त, चञ्चली-भूत, छूटा हुआ।

आलुलायित (सं० त्रि०) आ-लुल भृशादित्वात् क्यङ्-क्त। असंयत, हिलने-डुलनेवाला, जो रुका न हो।

आलू (हिं० पु०) आलु, कन्दशाकविशेष। (Solanum tuberosum) पहले भारतवर्षमें आलू न रहा, १७८२ ई०को विलायतसे आया था। महाराष्ट्र और मारवाड़ी इसे बटाटा कहते, जिसे अंगरेजी 'पोटेटो' (Potato) शब्दका अपभ्रंश समझते हैं।

वास्तवमें आलू दक्षिण-अमेरिकाका पौदा है। आज भी चिली प्रान्तमें आप ही आप उपजता है। लिमा और नव ग्रेनाडामें भी वन्य अवस्थापर मिला है। अमेरिकाके आविष्कारकाल यह चिलीसे नव ग्रेनाडातक बोया जाता था। किन्तु दक्षिण-अमेरिकाके पूर्व प्रान्त और मेक्सिकोमें इसे कोई जानते न रहा। १५३५ और १५८५ ई०के बीच युरोपीय, आलूको स्पेन ले गये थे। वहींसे इसकी खेती पोर्तुगाल, इटली, फ्रान्स, बेलजियम और जर्मनीमें फैल पड़ी। १५८६ ई०को सर वाल्टर

राशिमें कारोलिनासे अनन्य भावमें आलू आयर्लेण्ड पहुंचाया था। पहले इङ्गलेण्ड, स्काटलेण्ड और फ्रान्सके लोग कुसंस्कारसे आलू बोते न रहे। इसके साथ उन्हें विषतुल्य उत्पन्न होनेका भ्रम था। १७२८ ई०को स्काटलेण्ड-निवासी टमास् प्रेष्टिस नामक किसी व्यक्तिने पहले-पहल आलू बोया। उसके बाद क्रम-क्रम यह अफ़रीका, एशिया और अष्ट्रेलियामें चल निकला।

आजकल भारतवर्षमें सब जगह आलू बोते हैं। बङ्गालमें हुगली और वर्धमान जिला इसकी कृषिका प्रधान स्थान है। प्रायः जहां नदीका पानी सूखा, वहां आलू बो दिया जाता है। मट्टी रेतीली रहनेसे यह बहुत उपजता है। कंकड़दार ज़मीन् ठीक नहीं पड़ती। सींचनेकी भी अधिक आवश्यकता रहती है। बीजके लिये प्रायः छोटा-छोटा आलू चुनकर निकालते और मचानपर फैलाकर छायामें सुखाते हैं। किन्तु सफेदी आ जानेसे यह बिगड़ जाता और बीजके योग्य नहीं रहता। एक ही खेतमें प्रति वर्ष लोग आलू लगाया करते हैं। किन्तु पानीकी झड़ पड़नेसे फसल सड़ जाती है। देशीको पहले और पहाड़ीको पीछे बोते हैं। खेतको अच्छी तरह जोत जात ४० फीटके अन्तर दो बड़ी और १७ फीटके अन्तर छोटी छोटी सींचनेकी नाली रहती हैं। खलीकी खाद पड़ती है। फिर कुदालसे भूमिको गहरे खोद आलू जमाते हैं। कोपल २।३ इञ्च बढ़ आनेसे पौदेको उखाड़ कर दूसरे स्थानमें सात-सात इञ्च दूर लगा देते हैं। देशी आलूमें कोपल शीघ्र आता, किन्तु बम्बैयामें देरसे निकलता है। उगनेमें विलम्ब लगनेसे सींचना पड़ता है। पौदा छः-सात इञ्च बढ़नेपर सात या दश दिनके बाद पानी दिया जाता है। बीघे पीछे २० मन गोबर और दश मन खलीकी खाद लगती है। पौदा सूखनेसे आलू खोदते हैं। अधिक वृष्टि होनेसे सड़नेकी बीमारी दौड़ती और फ़सल मारी पड़ती है। पत्ती टेढ़ी हो आनेसे भी पौदा सूखता है। आलूमें दीमक लगनेसे बड़ी हानि पहुंचती है।

आसामकी खासी पहाड़पर यह बहुत उपजता है। किन्तु कृषिकार्य सुचारुरूपसे न चलनेपर सात-आठ दिनमें आलू सड़ जाता है।

युक्तप्रान्तके नैनीताल, अलमोड़े, पावरी, लोहघाट और समतल स्थानमें यह बहुत होता है। पहाड़ी आलू आकारमें बड़ा और स्वादमें अच्छा निकलता है। १८४३ ई०को मेजर वेल्स मैन इसे युक्तप्रान्तमें लाये थे। बीजके लिये आलू समय-समयपर विलायतसे मंगाया जाता है। पौष मास फसल होती है। एक पौदेमें कोई पाव भर आलू बैठता है।

पञ्जाबमें बड़े-बड़े नगरोंके पास इसकी कृषि होती है। मध्यप्रदेशका आलू कुछ बिगड़ गया है। प्रायः अक्तोबरमें बोते और फवरी या मार्चमें खोदते हैं।

बम्बई प्रान्तमें पूना, अहमदनगर, सतारा, अह-मदाबाद और कैड़ा इसके बोनेकी खास जगह है। महाबालेश्वरका आलू सुप्रसिद्ध है। खानदेशका पाचोरा स्थान आलूकी मण्डी है।

मन्द्राज प्रान्तके नीलगिरि पर्वतपर अच्छा आलू उपजता है। किन्तु प्रतिवर्ष एक ही खेतमें कृषि होनेसे आलूमें अब रोग लग गया है।

ब्रह्मदेशमें आलू कम होता है। कितनी ही चेष्टा लगाते भी लोग इसकी कृषिसे लाभ उठा न सके।

औषधमें आलूको सुखाकर सालब मिसरीकी जगह व्यवहार करते हैं। प्रायः समग्र भारतवासी इसे खाते हैं। किन्तु लोग इसे अजीर्ण और वात बढ़ाने-वाला समझते हैं। व्रतके दिन अन्न न खानेसे प्रायः आलू व्यवहृत होता है। पहले हिन्दू इसे अशुद्ध मानते थे। किन्तु अब यह प्रथम श्रेणीके शाकमें परिगणित है।

(स्त्री०) २ क्षुद्रजलपात्र, पानी पीनेको छोटा बरतन।

आलूक (सं० क्ली०) आ लूनाति, आ-लू-क्विप् स्वार्थे कन्। १ एलबालुक, एक खुशबूदार चीज़। २ आलुक, किसी क़िस्मकी गठीली जड़।

आलूका सालन (हिं० पु०) आलुकयूष, आलूका झोर।

आलूचा (फ़ा० पु०) फलविशेष, किसी क़िस्मका

बेर। पीले रङ्गका आलूचा युरोप, सिलिसिया, और आरमेनियामें तथा काकेसस पर्वतसे उत्तर एवं हिमालयपर गढ़वालसे काश्मीरतक वन्यस्थानपर मिलता है। अलमोड़ेके समीप जो वृक्ष लगता, उसमें गहरे हरे और नारङ्गी जैसे रङ्गका फल उतरता है। समतल भूमिकी अपेक्षा पर्वत-प्रान्त ही इसकी वृद्धिके लिये उपयुक्त है। आलूचेका गोंद कुछ-कुछ अरबी-जैसा होता है। गुठलीके तेलसे रोशनी करते हैं। किन्तु वह किसी कामका नहीं होता और शीघ्र दुर्गन्ध देने लगता है।

लकड़ी कुछ-कुछ लाल तथा भूरी और दानेदार निकलती, किन्तु थोड़े हीमें मुड़ और फट जाती है। काश्मीरमें इसके सन्दूक तैयार होते हैं।

फल पकनेपर बड़ा, पीला, मीठा और रसीला होता है। लोग प्रसन्नतापूर्वक खाया करते हैं। अफ़ग़ानस्थानसे सूखा फल बहुत आता और आलू-बोखारेके नामसे बाज़ारमें बिकता है। नर्म आगसे पकाकर लोग इसे बहुत खाते हैं। आलूबोखारेकी चटनी स्वादु और लाभदायक होती है। यह कुछ-कुछ खट्टा, ठण्डा और तर रहता है। खाली पेट खानेसे पाचक और रेचक निकलता है। पित्त बढ़ने और दाह उठने पर यह बहुत उपकार करता है। मूल सङ्कोचक होता है।

आलूदा (फ़ा० वि०) दूषित, गन्दा, लिथड़ा हुआ।

आलून (सं० त्रि०) आ-लू-क्त तस्य न। १ ईषत् छिन्न, कुछ कुछ कटा हुआ। २ सम्यक् छिन्न, खूब कटा हुआ।

आलू-बालू (हिं० पु०) फेनिल विशेष, किसी क़िस्मका आलूचा। आलूचा देखो।

आलूबुख़ारा (फ़ा० पु०) शुष्क फेनिल विशेष, बुखारे प्रान्तका सूखा आलूचा। आलूचा देखो।

आलूशफताल् (हिं० पु०) क्रीड़ा विशेष, एक खेल। तीन लड़के मिलकर यह खेल करते हैं। एक लड़का दूसरेकी पीठपर चढ़ अपने हाथसे उसकी आंखें मूंद देता और तीसरा उंगली देखाकर घोड़े बने लड़केसे उनकी संख्या पूछता है। संख्या ठीक बता देनेसे उसका दांव उतरता और वह उंगली देखानेवाले लड़केपर चढ़ता है।

आलेख (सं० पु०) आ-लिख-घञ्। १ सम्यक् लेखन, खासी लिखावट। आधारे घञ्। २ लेखन-पत्र, लिखनेका काग़ज़।

आलेखन (सं० क्ली०) आ-लिख भावे ल्युट्। १ सम्यक् लिखन, खासी लिखावट। (पु०) २ आचार्य, जन्मपत्रादि प्रभृति लिखनेवाला। करणे ल्युट्। ३ लिखन-साधन पत्र प्रभृति, लिखनेका काग़ज़ वग़ैरह। (त्रि०) ४ लेखनकर्ता, लिखनेवाला। आलिखन प्रयोग भी होता है।

आलेखनी (सं० स्त्री०) आवर्षणा, वर्तिका, बालोंका कलम, सीसे या सुरमेका कलम।

आलेख्य (सं० क्ली०) आ लिख्यते, आ-लिख कर्मणि ण्यत्। १ पटस्थ चित्र, तसवीर, नक़शा। 'चित्रमालेख्यम्।' (हेम ३।५८३) २ लेख्य देवादिका प्रतिविम्ब। (त्रि०) ३ लेखनीय, लिखने या उतारने क़ाबिल। आधारे ण्यत्। ४ चित्रसम्बन्धीय, तसवीरके मुताल्लिक़।

आलेख्यलेखा (सं० स्त्री०) चित्रविद्या, रङ्गसाज़ी, नक्क़ाशी।

आलेख्यशेष (सं० त्रि०) आलेख्यं चित्रमेव शेषो यस्य, बहुव्री०। मृत, मरा हुआ। प्रतिविम्बमात्र चित्रपर शेष रहनेसे मृत व्यक्तिको आलख्य-शेष कहते हैं।

"आप्यायमानो वलिभिश्चिरेतमालेख्यशेषस्य पितुर्विवेश।"

(रघु १४।१५)

आलेप (सं० पु०) १ आ-लिप-घञ्। उपलेप, तिला, मरहम, तेल। शरीरमें उत्पन्न होनेवाले शोथव्रणपर जो यथोक्त औषध चुपड़ा जाता, वह आलेप कहाता है। २ बौद्धशास्त्रके मतानुसार—अंश, खण्ड, टुकड़ा।

आलेपन (सं० क्ली०) कर्मणि ल्युट्। आलेप देखो।

आलेय (सं० क्ली०) पद्मकाष्ठ, एक खुशबूदार लकड़ी।

आलेया (सं० स्त्री०) १ रागिणी विशेष। २ श्मशान वा पङ्कयुक्त स्थानसे उत्थित वाष्प विशेष, मरघट या दलदलकी हवा। पल्लिग्रामके लोग इसे भूत समझते हैं। यह वायुकी अपेक्षा हलकी होती है।

आलेश (सं० पु०) अश्व-मुख-रोग, घोड़ेके मुंहकी बीमारी। हनुदेश (जबड़े)के अभ्यन्तर आश्रयपर दन्त निकलनेसे अश्वको आलेश रोग होता है। यह श्लेष्म और रक्तसे उपजता है। अश्व दुर्मन तथा जर्जर पड़ जाता, धीरे-धीरे खाता-पीता, खांसते रहता और बलको गंवा देता है। (जयदत्त)

आलोक (सं० पु०) आलोकतेऽनेन, आ-लोक करणे घञ्। १ सूर्यादि जन्य प्रकाश, रोशनी, उजाला। नैयायिक आलोकको ही द्रव्यके चाक्षुष प्रत्यक्षका कारण बताते हैं। भावे ल्युट्। २ दर्शन, दीद, नज़ारा। ३ जयशब्द, सना, तारीफ़।

"आलोकशब्दं वयसां विराद्वैः।" (रघु ४।८)

'आलोको जयशब्दः स्यात्।' (विश्व)

४ उल्लास, फ़ख़। ५ दीप, क़न्दील, चिराग़।

आलोकन (सं० क्ली०) आ-लोक भावे ल्युट्। १ दर्शन, नज़ारा। २ दीप, क़न्दील, चिराग़।

आलोकनीय (सं० त्रि०) आ-लोक कर्मणि अनीयर्। १ दर्शनीय, नमूदार, देखने क़ाबिल। २ ध्यान दिया जानेवाला, जो ख़्याल किये जानेको हो।

आलोकनीयता (सं० स्त्री०) दर्शनीयता, नमूदारी, जिस हालतमें देख सकें।

आलोकित (सं० त्रि०) आलोक कर्मणि क्त। १ दृष्ट, नज़रमें पड़ा हुआ, जो देखा गया हो। भावे क्त। २ दर्शन, नज़ारा।

आलोकिन् (सं० त्रि०) आलोकते, आ-लोक-णिनि। द्रष्टा, देखनेवाला। (पु०) आलोकी। (स्त्री०) ङीप्। आलोकिनी।

आलोक्य (सं० त्रि०) आलोक्यते, आ-लोक कर्मणि ण्यत्। १ दर्शनीय, देखने क़ाबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ आलोकन करके, देखकर।

आलोच (हिं० पु०) शीला, काटनेसे खेतमें गिरी हुई बाल।

आलोचक (सं० त्रि०) आलोचते, आ-लोच-ण्वुल्। १ आलोचनकारी, देखनेवाला। २ विवेचक, देखाने-वाला। (क्ली०) ३ दृष्टिका गुण वा दृश्यका कारण, नज़रकी सिफ़त या नज़ारेका सबब। यह एक प्रकारका अग्नि होता और नेत्रमें रहता है। इसीसे रूपादिका दर्शन पाते हैं। ४ तत्त्वात्मक पित्त, किसी क़िस्मका जर्द-आब।

आलोचन (सं० क्ली०) आलोच भावे ल्युट्। १ विशेष धर्मद्वारा विवेचनाका करना, ख़्यालका लड़ाना। २ दर्शन, नज़ारा। ३ अन्तःकरणकी एक वृत्ति। सांख्य मतसे यह सामान्य, विशेषशून्य, इन्द्रियजन्य और निर्विकल्प-स्थानीय है। (अव्य०) मर्यादार्थं अव्ययी०। ४ लोचनपर्यन्त, नज़रतक। (स्त्री०) णिच्-युच्-टाप्। आलोचना।

आलोचनीय, आलोच्य देखो।

आलोचित (सं० त्रि०) आ-लोच-क्त-इट्। आलो-चनाके विषयीभूत, देखा या समझा हुआ।

आलोच्य (सं० त्रि०) आ-लोच-ण्यत्। १ आलोचना करने योग्य, जो देखे या समझे जाने क़ाबिल हो। (अव्य०) ल्यप्। २ आलोचना करके, देखभाल या समझ-बूझकर।

आलोड़न (सं० क्ली०) आ-लुड़ मन्थे भावे ल्युट्। १ विलोड़न, मथायी। २ मिश्रण, मिलावट।

आलोड़ना (हिं० क्रि०) मथन करना, मथना।

आलोड़ित (सं० त्रि०) आ-लुड़-क्त-इट्। १ मथित, मर्दित, मथा या मला हुआ। (क्ली०) भावे क्त। २ मन्थन, मथायी।

आलोल (सं० त्रि०) ईषत् लोलः, प्रादि-समा०। १ ईषत् चञ्चल, चुलबुला सा। २ विचलित, कम्पित, हिला या सरका हुआ।

"क्रीडालोलाः श्रवणपरुषैर्गर्जितैर्भाययन्ताः।"

(मेघदूत ६२)

३ लम्बमान, बढ़ा हुआ। (पु०) ४ चाञ्चल्य, कम्प, कंपकंपी, बेकली।

आलोलित (सं० त्रि०) आ-लुल-क्त-इट्। वा क्रिया-भावाद्णिच्। पा १।२।२१। १ ईषत् चञ्चलीकृत, हिलाया या घबराया हुआ। भावे क्त। २ ईषत् चञ्चल, चुलबुलासा।

आलोष्टी (सं० अव्य०) ईषत् लोष्टमिव करोत्यनेन, आलोष्ट करोत्यर्थे णिच् बाहुलकात् ई। हिंसाके।

आलोहायन (सं० त्रि०) अलोहे भवः, फक्। अलोहभव, लोहेसे न निकलनेवाला।

आलूक (सं० क्ली०) आलुक, आलूबोखारा।

आल्हा (हिं० पु०) १ छन्दोविशेष, एक बहर। इसमें ३१ मात्रा लगती हैं। १६ मात्रापर विराम पड़ता है। जैसे—राम समुन्दरको मथि डारो चौदह रतन लीन्ह निकलाय। आल्हा पिरथिवीको मथिडारी घर घर युद्ध लीन्ह बंधवाय।

२ एक विख्यात वीर। पृथ्वीराजके समय यह महोबेमें विद्यमान रहे। इनकी माताका देवला, पिताका दस्सराज, भ्राताका उदयचन्द्र (ऊदल) और पुत्रका नाम ईंदल रहा। सुना, कि आल्हाने देवीका अर्चन बहुत किया था। भगवतीने एक दिन प्रसन्न हो वरदान दिया,—तुम अजर-अमर रहो और कृपाण खींचते ही जगत्‌को नाश करोगे। महोबेमें यह परमाल नृपतिकी सेनाके नायक रहे। बावन युद्ध करते भी आल्हाने कभी कृपाण न खींचा। क्योंकि उससे देवीके वचनानुसार जगत् नाश होनेका डर था। लोग इन्हें बनाफर जातिके ठाकुर बताते हैं। कहते, आज भी आल्हा कजरी वनमें रहते हैं। इनकी माता देवलाके वीरत्वका वर्णन इस प्रकार सुनते हैं,—

दस्सराज किसी वनमें आखेट मारने गये थे। उन्होंने दो जङ्गली भैंसे लड़ते देखे। कितनी ही चेष्टा करते भी वह उन्हें लड़नेसे छोड़ा न सके। अन्तको एक स्त्री आ पहुंची थी। उसने हाथसे भैंसोंको पकड़ अलग-अलग कर दिया। दस्सराज स्त्रीकी सुन्दरता और वीरता देख मोह गये थे। अन्तको घर ला उससे विवाह किया। उसी स्त्रीका नाम देवला था।

आल्हा और ऊदल दोनो भाई बड़े वीर रहे। इन्होंने कयी बार पृथ्वीराजका मुंह मोड़ दिया था।

आव (हिं० पु०) आयुः, हयात, जिन्दगी।

आव-आदर (हिं० पु०) आदर-सत्कार, खातिर-तवाजा, मान-पान।

आवक (सं० त्रि०) अवतीति, अव रक्षणे ण्वुल्। रक्षक, मुहाफिज, बचानेवाला।

आवज (हिं० पु०) प्राचीन वाद्य विशेष, एक पुराना बाजा। यह ताशे-जैसा होता और चमारोंमें बहुत चलता है।

आवझ, आवज देखो।

आवटना (हिं० पु०) आवर्तन, अदल-बदल, उलट-फिर, धूमधाम। (क्रि०) २ औटना, आगपर चढ़ा गाढ़ा करना।

आवहज (सं० पु०) १ उत्तम अश्व, बढ़िया घोड़ा। २ पारसिक अश्व, अरबी घोड़ा।

आवट्य (सं० पु०) अवटस्य ऋषिविशेषस्य गोत्रापत्यम्, गर्गादि० यञ्। अवट ऋषिका अपत्य।

आवट्या (सं० स्त्री०) आवट्य-चाप्। आवट्याच। पा ४।१।७५। आवट्यकी स्त्री।

आवत् (वै० स्त्री०) सामीप्य, पड़ोस।

आवन (हिं० पु०) आगमन, आमद, अवायी।

आवनि (हिं० स्त्री०) आवन देखो।

आवनेय (सं० पु०) अवन्या अपत्यम्, ढक्। स्त्रीभ्यो ढक्। पा ४।१।१२०। अवनीसुत, मङ्गलग्रह। कहते, पूर्वकाल शिव दाक्षायणीके वियोगमें तपस्या करते थे। उसी समय ललाटसे एक विन्दु घर्म गिरा और उससे लोहिताङ्ग एक कुमार उत्पन्न हुआ। पृथिवीको दर्शनसे स्नेह लगा था। उसने कुमारका पालन-पोषण किया। इसीसे मङ्गल ग्रहको माहेय, आवनेय आदि नामसे पुकारते हैं।

आवन्त (सं० पु०) अवन्तेरयं राजा, अवन्ती-अण्। अवन्ती देशके अधिप चन्द्रवंशीय नृपति-विशेष। कुन्तीके किसी रण-विशारद-पुत्रका नाम धृष्ट रहा। धृष्टके आवन्त, दशार्ह और विषहर नामक तीन वीर पुत्र हुये थे। (हरिवंश ३६ अ०)

आवन्तिक (सं० त्रि०) अवन्ति देश-जात, उज्जैनके मुताल्लिक।

आवन्त्य (सं० त्रि०) अवन्तिषु भवः तस्या राजा वा, अण्। १ अवन्तिदेशभव, उज्जैनका पैदा। २ अवन्ति देशका राजा, उज्जैनका मालिक। ३ व्रात्य ब्राह्मणकी सवर्ण स्त्रीसे उत्पन्न एक जाति।

"व्रात्यात् तु जायते विप्रात् पापात्मा भूर्जकण्टकः।
आवन्त्यवाटधानी च पुष्पधः शैख एव च॥" (मनु १०।२१)

व्रात्य ब्राह्मणको सवर्ण स्त्रीसे उत्पन्न सन्तानका नाम भूर्जकण्टक होता है। किन्तु देश विशेषमें उसीको आवन्त्य, वाटधान और पुष्पध भी कहते हैं। व्रात्य देखो।

आवपन (सं० क्लौ०) ओप्यते स्थाप्यते धानायत्र, आ-वप आधारे ल्युट्। १ पात्र, ज़र्फ़, जगह। "गोणी आवपनम्बे त्।" (सिद्धान्तकौमुदी) भावे लुट्। २ भूमिमें वीजादिका निधान, बोना। अन्तर्भूतणर्थे लुट्। ३ केशादि सर्वमुण्डन, बाल वग़ैरह सबका मुंडा डालना। (त्रि०) करणे ल्युट्। ४ वपनसाधन, बोनेमें लगनेवाला।

आवपनिष्किरा (सं० स्त्री०) आवपनिष्किर इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यंस० समा०। बीजवपनादि क्रिया, बीज बोने वग़ैरहका काम।

आवपनी (वै० स्त्री०) आवपन-ङीप्। पात्र, ज़र्फ़,जगह।

आवपन्तिक (वै० त्रि०) विकीर्ण, विक्षिप्त, फैलाया या डाला जानेवाला।

आव-भगत, आव-आदर देखो।

आव-भाव, आव-आदर देखो।

आवय (सं० पु०) आ-अज-अच् वीभावः। १ आगमन, आमद, अवाई। कर्तरि अच्। २ आगमनकर्ता, आनेवाला। ३ देशविशेष, एक मुल्क। ४ जल, आब, पानी। (वै० क्लौ०) ५ वैयर्थ्य, शुष्कता, लाहासिली।

आवया (सं० स्त्री०) जल, आब, पानी।

आवयाज् (वै० त्रि०) अवयाज्, यज्ञानुष्ठान द्वारा प्रायश्चित्त करनेवाला।

आवरक (सं० क्लौ०) आवृणाति अनेन, आ-वृ-करणे अप् ततः संज्ञायां कन्। १ आच्छादन वस्त्रादि,ढांकनेका कपड़ा वग़ैरह। (त्रि०) २ आच्छादक, ढांकनेवाला।

आवरण (सं० क्लौ०) आव्रियते देहः चैतन्यं वा अनेन, आ-वृ करणे ल्युट्। १ चर्मफलक, ढाल। २ वेदान्त-मत-सिद्ध चैतन्यका आवरक अज्ञान। आवरणशक्ति देखो। ३ आच्छादन-साधनमात्र, ढांकनेकी हरेक चीज़। ४ प्राचीरादि, चहारदीवारी वग़ैरह। ५ वेष्टन, बेड़ा। भावे लुट्। ६ आवृति, लपेट।

आवरण-पत्र (सं० क्लौ०) आच्छादनपत्र, लपेटका काग़ज़।

आवरणशक्ति (सं० स्त्री०) आवरणे शक्तिः, ७-तत्, आवृणोति, आ-वृ कर्तरि लुट्,आवरणं शक्तिः कर्मधा० वा०। वेदान्त-मतसिद्ध अज्ञान-शक्ति, आत्मा या चैतन्यको छिपानेवाली ताक़त। वेदान्तमतमें जैसे अल्प होते भी मेघ बहुयोजन विस्तृत सूर्यमण्डलको दर्शकोंके नयनपथसे अन्तर्भूत करता, वैसे ही तुच्छ अज्ञान अपरिमित असंसारी आत्माको बुद्धि-विपर्ययसे छिपा रखता है। इस शक्तिसे आवृत व्यक्तिको वृथा अभिमान आता और प्रमत्तादि अवस्थामें रज्जु देखनेसे सर्प समझनेकी तरह वह अपनेको कर्ता, भोक्ता, सुखी और दुःखी माना करता है।

आवरसमक (सं० क्लौ०) अवरं समानम्, एकदेशी समा०, निपातनात् ह्रस्वः। ग्रीष्मावरसमात् वुञ्। पा ४।३।४९ १ अवरसम वर्षका आद्यकाल। तत्र देयं ऋणम् वुञ्। २ वर्षके आद्य समय दत्त ऋण। (त्रि०) ३ आगामी वर्ष दिया जानेवाला।

आवर्जित (सं० त्रि०) आ चुरा० वृज-णिच्-क्त। दत्त, त्यक्त, निम्नीकृत, आहृत, संयमित, दिया, छोड़ा, झुकाया या बहाया हुआ।

आवर्ज्यं (सं० अव्य०) तिर्यक्, तिरछे तौरपर।

आवर्त (सं० पु०) आ-वृत भावे घञ्। १ घूर्णायमान जल, गिर्दाब, भंवर। 'स्यादावर्तोऽम्भसां भ्रमः।' (अमर) २ रोमसंस्थान विशेष, बालकी भंवरी। कितने ही मनुष्योंके बाल फेरदार होते हैं। अश्वका रोमावर्त शुभाशुभ फल-सूचक है। यह छानवे प्रकारका होता है। बीस प्रकारका शुभ और छिहत्तर प्रकारका आवर्त अशुभ है। उत्तर ओष्ठ प्रपाण पड़नेसे यह शुभावह और लक्षण सर्वकाम-फलप्रद ठहरता है। ललाटमें दो, तीन या चार आवर्त आनेसे अश्व धन्यतम निकलता है। ललाटके ऊर्ध्व आनुपूर्वस्थित तीन आवर्तका नाम निःश्रेणी पड़ता, जिससे स्वामीका सर्वार्थ सधता है। शिरःके केशान्तमध्य अवपर आवर्त उठनेसे अश्वके स्वामीका जय होता है। घण्टाबन्धके समीप निगालमें लगनेवाला देवमणि शुभकृत् है। कर्णमूल, बाहु, केशान्त और मस्तकका आवर्त पूजित होता है। जिस अश्वके वक्षःपर चार आवर्त पड़ता

और कण्ठमें एक देखायी देता, वह धन्य तथा सर्व-कामद रहता है। रन्ध्रका स्वामीको ईप्सित अर्थप्रद और उपरन्ध्रका आवर्त अतिपूजित है। शुभदेशका आवर्त शङ्ख, चक्र, गदा, वज्र, शुक्ति और पद्म जैसा निकलनेसे अत्यन्त शुभ कहाता है। किन्तु दूसरा आवर्त अति निन्दित, स्वामीको क्लेशावह और धन तथा प्राणका अपहारक है। नासिकापुटके मध्य प्रोथ प्रदेशपर उठनेवाला आवर्त स्वामीको नाश करता है। नासिकाके छिद्रसे ऊर्ध्वका आवर्त क्लेशकारक है। अश्वके गण्डका आवर्त दुरासद होनेसे स्वामीको मार डालता है। चक्षुःसे नीचे अश्रुपातके समुद्दिष्ट प्रदेशपर पड़नेवाला आवर्त स्वामीके कुलको नाश करता है। अपाङ्गसे दो अङ्गुल शङ्खप्रदेशका आवर्त स्वामीके लिये विनाशक है। भ्रूप्रदेशसे समुद्भूत आवर्त पूजित नहीं, वह सुहृत्का वियोग लाता और स्वामीके अर्थका अवसादक होता है। मन्या, ग्रीवा और शिरःका आवर्त कुत्सित है। कक्षका आवर्त भी संग्राममें स्वामीको शीघ्र मार डालता है। वाम-दक्षिण भागसे चिवुकके समीपस्थ हनुःका आवर्त दारुण है। अधरोष्ठके नीचे चिवुकके प्रसिद्धक तथा कर्णका आवर्त स्वामीको पापका भागी बनाता है। कण्ठ और निगालके मध्य गलका आवर्त स्कन्धकी सन्धिमें होनेसे पाप है। जङ्घासे नीचे कूर्च ग्रन्थिपर आनेवाला आवर्त संग्राममें स्वामीका जीवन ले लेता है। कूचसे अष्ट अङ्गुल ऊर्ध्व पार्श्वकी कलापर आवर्त पड़नेसे स्वामीका प्राण शराघातसे जाता है। अश्वके ककुदका आवर्त स्वामीको नाश करता है। ककुद पुरोभागके समीप बांहका आवर्त स्वामीको सुत समेत मार डालता है। कौकस आवर्त दारुण और रणमें स्वामीका घातक होता है। क्रोड़, आसन, हृदय और जानुका आवर्त भी स्वामीका नाशक है। पार्श्वपर आवर्त रखनेवाला अश्व स्वामीको वैसे ही क्षय करता, जैसे रवि नीहाराम्बुको सुखा देता है। कूर्चके अधःप्रदेश कुष्ठिक जङ्घा और जानुपर पड़नेवाला आवर्त अधन्य होता है। नाभि, मुष्क, त्रिक और पुच्छमूलका आवर्त भी धन्य नहीं। कुक्षिका आवर्त व्याधि बढ़ाता है। पायु और सीवनिके मध्यका आवर्त अधन्य है। स्फिक्पिण्ड और खूरकमें वाजिके जो आवर्त आता, वह लिङ्गावर्त कहाता और स्वामीका सर्वार्थ मिटाता है। अपर आवर्तका नाम शतपदी, मुकुल, सङ्घात, पादुक, अर्धपादुक, शुक्ति और अवलीढ़ पड़ता और वाकिके देहमें आनेसे शुभाशुभ बताता है। शतपदी-जैसा शतपदी, जातीमुकुल जैसा मुकुल, भ्रमितकेश-जैसा सङ्घात, शुक्तिसंस्थानका शुक्ति, वत्सके अवलीढ़क-जैसा अवलीढ़, पादुकाकार पादुक और अर्धपादुका-जैसा अर्धपादुक कहाता है। मतिमान् भिषक्को बालके विशेष संस्थानसे विचक्षणोंके प्रोक्त शास्त्रमार्गानुसार आवर्तका निर्देश करना चाहिये। तपोधनोंने वाजि-लक्षण समझकर आवर्तको रोमज बताया है। जहां शुभ और अशुभ दो आवर्त आता, वहां एक भी फलप्रद नहीं होता। काकुदो आवर्त खराब है। श्रीवृक्ष, रोचमान, अङ्गदी, और सुषली राज्य तथा रत्नप्रद होता है। अश्वके प्रपाणमें मारुत, ललाटमें हुताशन, उरःका अश्विद्वय, मूर्धाका चन्द्रसूर्य, रन्ध्रका स्कन्दविशाख और उपरन्ध्रका आवर्त हर तथा हरिकी तरह पूजित है। किन्तु इनमें एकके भी न रहनेसे सब आवर्त अशुभ ठहरता है। (अश्ववैद्यक)

२ राजावर्त नामक मणि, लाजवर्द। ४ मेघके अधिप विशेष। 'आवर्तो मेघनायकः।' (पत्रिका) ५ माक्षिक धातु, सोनामाखी। ६ सोम। ७ आवर्त नामक मर्मस्थान विशेष, भौंहोंके ऊपरका गड्ढा। ८ वैकल्य-कार मर्मद्वय। यह दोनो भौंहोंके ऊपर रहता है। णिच् भावे अच्। ९ पुनः-पुनश्चालन, चक्कर, गर्दिश, घुमाव। १० परिवर्तन, घोंटायी। ११ धातुका द्रावण, गलायी। १२ चिन्ता, फिक्र। बारम्बार चित्त चलनेसे चिन्ताको आवर्त कहते हैं। आवर्त्यते समन्तात् अनेक कोटिषु, आ-वृत-णिच् कर्मणि अच्। १३ बहुविषयक संशय, बहुत सी बातोंका शक। १४ स्त्री जातिकी योनि। शङ्खकी नाभि जैसी होनेसे स्त्री-योनि आवर्त कहाती और उसके तृतीय आवर्तमें गर्भशय्या रहती है। स्त्रीदेहके मध्यस्थित आवर्तकाकार नाड़ी सन्निवेश विशेषका नाम भी आवर्त है। (सुश्रुत)

आवर्तक (सं० पु०) आवर्त एव, स्वार्थे कन्। १ मेघाधिप विशेष। २ कीटविशेष, एक ज़हरीला कीड़ा। इसके काटनेसे वायुजन्य रोग बढ़ता है। (सुश्रुत) ३ राजावर्त मणि, लाजवर्द। आवर्त इव कायति, आवर्त-कै-क। ४ अश्वादिका रोमचिह्न विशेष, बालकी भंवरी। आवर्त देखो। ५ भ्रूद्वयोपरिके निम्नदेशका मर्मस्थान विशेष, भौंहोंके ऊपर गढा। ६ घूर्णायमान जल, गिर्दाब, भंवर। ७ घूर्णन, घुमाव। ८ चिन्ता, फिक्र। (त्रि०) आवर्तयति, आ-वृत-णिच्-ण्वुल्। ९ पुनः पुनः आघट्टक, बार-बार घोंटने, औटने या चलानेवाला। (क्लो०) १० स्थलपद्म, गुलाब। ११ रौप्यमाक्षिक, रूपामाखी।

आवर्तकी (सं० स्त्री०) आवर्तते वायुना ऊर्ध्वाधश्चलति, आ-वृत-ण्वुल्। १ भगवतवल्ली नामक लता विशेष। यह कषाय, उष्ण, सर, तिक्त, रसायन एवं वृष्य होती और वात, आमवात, रक्तशोथ तथा प्रमेहका नाश करती है। (मदनपाल) आवर्तकी कषाय, अम्ल, शीतल और पित्तघ्न है। (राजनिघण्टु) २ भद्रदन्ती, वृहद्दन्ती।

आवर्तन (सं० क्लो०) आवर्तते गृहादेः पश्चिमदिगवस्थितछाया पूर्वदिशं प्रत्यावर्तते यस्मिन्, आ-वृत आधारे ल्युट्। १ गृहादिसे पश्चिमदिक् अवस्थित छायाका पूर्वदिक् गमनारम्भरूप मध्याह्नकाल, आफ़ताबके मशरिककी ओर साया डालनेका वक्त, दोपहर लौटनेका समय। "आवर्तने यदा सन्धिः पर्वप्रतिपदोः भवेत्।" (गोभिल) "आवर्तनात् पूर्वाह्नः।" (अग्निपुराण) भावे ल्युट्। २ आलोड़न, चलाव, मथायी। ३ गुणन, ज़र्ब। ४ धातुका द्रावण, गलायी। कर्तरि ल्युट्। ५ विष्णु भगवान्। ६ जम्बुद्वीपका उपद्वीप विशेष। ७ वेष्टन, घेरा। ८ प्राचीरादि, चहार दीवारी। ९ अभ्यास, महारत। १० पुनः विधान, दोहराव। ११ घूर्णन, घुमाव। (वै० त्रि०) १२ घूर्णायमान, घूमनेवाला।

आवर्तनमणि, आवर्तमणि देखो।

आवर्तनी (सं० क्लो०) आवर्तते अनया, आ-वृत-णिच् करणे ल्युट् गौरादित्वात् ङीष्। १ मूषी, कलछुली। आधारे ल्युट्। २ धातु गलानेका पात्र, घरिया। कर्मणि ल्युट्। ३ भूषा, साज़। ४ द्रव्यविशेष, मोरफली, जोंकफल, भेंटू।

आवर्तनीय (सं० त्रि०) आ-वृत-णिच् कर्मणि अनीयर्। १ द्रवणीय, गलने क़ाबिल। २ आलोड़नीय, मथने लायक़। ३ गुण्य, ज़र्ब दिये जाने क़ाबिल। ४ पुनः पुनः पाठ्य, बार-बार पढ़ने लायक़।

आवर्तपूलिका (सं० स्त्री०) पूलिका भेद, किसी क़िस्मकी कचौड़ी या मठरी।

आवर्तमणि (सं० पु०) आवर्ताकारो मणिः, शाक० तत्। राजावर्तमणि, लाजवर्द।

आवर्तमान (सं० त्रि०) १ घूर्णायमान, चक्कर देनेवाला। २ अग्रगामी, जो आगे बढ़ रहा हो।

आवर्तिक (सं० त्रि०) आवर्तः प्रयोजनमस्य, ठक्। आवर्ताकार धूम-साधन, चक्करदार धूवां छोड़नेवाला।

आवर्तित (सं० त्रि०) आ-वृत-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। १ कृतावर्तन, औटा या मथा हुआ। २ द्रावित, गलाया हुआ। ३ गुणित, ज़र्ब दिया हुआ। ४ अभ्यस्त, फेरा या पढ़ा हुआ। आवर्तः सञ्जातोऽस्य, तारकादित्वात् इतच्। ५ जातावर्त, भंवर पड़ा हुआ, जो चक्कर खा गया हो।

आवर्तिन् (सं० त्रि०) आ-वृत-कर्तरि णिनि। १ वर्तनशील, घूम पड़नेवाला। णिच्-णिनि। २ प्रत्यावर्तन करनेवाला, जो वापस आ रहा हो।

आवर्तिनी (सं० स्त्री०) आवर्तते अनया, आ-वृत-णिच् करणे ल्युट्-ङीप्। १ आवर्तमान स्त्री, वापस आनेवाली औरत। २ मुषा, कुठाली। आवर्तः मेषशृङ्गाकारफलमस्त्यस्याः, इनि-ङीप्। ३ अजशृङ्गी वृक्ष, अमलायी।

आवर्ती (सं० पु०) रोमसंस्थान-विशेषयुक्त अश्व, जिस घोड़ेके भंवरी रहे।

आवर्दा (फा० वि०) १ आनीत, अनुगृहीत, मक़बूल, रियायती, लाया या दस्तगीरी किया हुआ। (हिं० स्त्री०) २ आयुः, उम्र।

आवर्हित (सं० त्रि०) आ-वृह उद्यमे णिच्-क्त, आवर्ह हिंसायां क्त वा। उत्पाटित, उन्मूलित, उखाड़ा हुआ, जो जड़से नोच कर फेंक दिया गया हो।

आवलदाभी—एक प्रसिद्ध डाकू। इसके नामानुसार मन्द्राज प्रान्तके कड़प्पा जिलेमें एक ग्राम स्थापित है। आवलदाभीके डाकेका हाल दक्षिणापथसे बनास नदी तीर पर्यन्त सकल स्थानमें सुन पड़ता है।

आवलि, आवली देखो।

आवलित (सं० त्रि०) आ-वल चलने क्त-इट्। १ ईषच्चलित, कुछ सरका हुआ। २ सम्यक् चलित, जो खूब बढ़ा हो।

आवली (सं० स्त्री०) आ-वल-इन्, कृदिकारान्ताद्वा ङीप्। १ श्रेणी, कतार। २ एक जातीय वस्तुद्वारा कृत पंक्ति। 'वीथ्यालियावली पंक्तिः।' (अमर) ३ परम्परा, पुरानी चाल। ४ विधि विशेष, एक कायदा। इससे खेतोत्पन्न शस्यका अनुमान बंधता है। एक बिस्वेमें जितने सेर माल उतरता और उसका अङ्क जो आधा जाता, उतने ही मन बीघे पीछे बैठता है।

आवलोकन्द (सं० पु०) मालाकन्द।

आवल्य (सं० क्ली०) अवलस्य भावः, अवल-ष्यञ्। दुर्बलता, लागरी, कमजोरी।

आवशीर (सं० पु०) जनपद विशेष। महावीर कर्णने मगध, कर्कखण्ड प्रभृति जनपद जीत इस स्थानको अधिकार किया था। (महाभारत वनप० २५२ अ०)

आवश्य (सं० क्ली०) अनन्यगतित्व, नियतत्व, आवश्यकत्व, वजूब, फ़र्ज़।

आवश्यक (सं० क्ली०) अवश्यम्भावः, मनोज्ञादित्वात् वुञ्। १ अनन्यगतित्व, वजूब, फ़र्ज़। (त्रि०) २ नियत, वाजिब, ज़रूरी।

आवश्यकता (सं० स्त्री०) अवश्यम्भाविता, ज़रूरत।

आवश्यकीय (सं० त्रि०) आवश्यक, ज़रूरी।

आवसति (सं० स्त्री०) वसत्यत्र गृहे वसतिः रात्रिः, आ सम्यक् वसतिः, प्रादि-समा०। निशीथ, अर्धरात्र, सोनेका समय, आधीरात, आरामका वक्त।

आवसथ (सं० पु०) आ वसत्यत्र, आ-वस-अथच्। उपसर्गे वसेः। उण् ३।११४। १ गृह, हवेली। 'गृहमावसथसभा।' (उणादिको०) २ विश्रामस्थान, आरामगाह। ३ ग्राम, गांव। ४ व्रतविशेष। ५ आर्याछन्दोरचित कोषविशेष। ६ होमस्थान।

आवसथिक (सं० त्रि०) आवसथे गृहे वसति, ठण्। आवसथात् ठण्। पा ४।४।७४। १ गृहस्थ, स्नानशीन्। २ गृहमें होमाग्नि रखनेवाला। (स्त्री०) आवसथिकी।

आवसथ्य (सं० पु०) आवसथस्यायम्, ञ्य। १ गृहसम्बन्धीय लौकिक अग्नि, घरमें रहनेवाली पाक आग। (क्ली०) २ विश्राम-स्थान, आरामगाह, चेलों और साधुवोंके रहनेकी जगह। ३ गृहमें होमाग्निकी प्रतिष्ठा। (त्रि०) ४ गृहस्थ, घरके मुताल्लिक़।

आवसान (सं० त्रि०) अवसानमभिजनोऽस्य, अण्। अभिजनश्च। पा ४।३।९०। ग्रामकी सीमापर वास करनेवाला, जो गांवकी हदपर रहता हो। (स्त्री०) ङीप्। आवसानी।

आवसानिक (सं० त्रि०) अवसाने अन्ते भवम्, ठञ्। शेषकाल भव, आखिरी वक्त होनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। आवसानिकी।

आवसायिन् (सं० त्रि०) १ जीविकाके पीछे दौड़नेवाला, जो रोजगारके पीछे लगा हो। (पु०) आवसायी।

आवसित (क्ली०) आ-अव-सो-क्त, इकारोऽन्तादेशः। द्यतिस्यतिमास्थामितिकिति। पा ७।४।४०। १ पक्वधान्य, पक्का अनाज। २ निर्तुषीकृत धान्य, साफ़ किया हुआ अनाज। (त्रि०) ३ निर्णीत, ठहराया हुआ। ४ समाप्त, जो खतम हो। ५ निष्तुषीकृत, साफ़ किया हुआ, जिसके भूसी निकाल डाली जाये। ५ पक्व, पक्का।

आवस्थिक (सं० त्रि०) अवस्थायां भवम्, ठञ्। कालकृत, अवस्था-भव, समय सम्भव, वक्तके मुवाफ़िक, दुरुस्त। (स्त्री०) आवस्थिकी।

आवह (सं० पु०) आवहति, आ-वह-अच्। १ सप्तस्कन्धयुक्त वायुका प्रथम स्कन्ध, भूवायु, ज़मीनकी हवा। आवह, प्रवह, विवह, परावह, संवह, उद्वह और परिवह वायुका स्कन्ध है। (हरिवंश) आवह भूर्लोक और स्वर्लोकके बीच रहता है। २ अग्निकी सातमें एक जिह्वा। (त्रि०) आवहति प्रापयति उद्देश्यस्थानम्। ३ प्रापक, ले जानेवाला। ४ उत्पादक, निकालने या पैदा करनेवाला।

आवहत् (सं० त्रि०) आनयन करनेवाला, जो लाता या पाता हो।

आवहन (सं० क्ली०) आनयन, पेशी, लवायी।

आवहमान (सं० त्रि०) आ-वह-शानच्। क्रमागत, धारावाही, उठा लेने या पहुंचा देनेवाला।

आवा (हिं० पु०) कुम्भकारका आपाक, कुम्हारका पजावा। "माका पेट कुम्हारका आवा कोयी काला कोयी गोरा रे।" (लोकोक्ति)

आवां (हिं० पु०) १ आवाहन, पुकार, बुलावा। अति तप्त एवं रक्तवर्ण लोहको कूटने-पीटनेके लिये अन्य कर्मकारका बोलाया जाना 'आवां' है। २ आवा।

आवागमन (सं० क्ली०) आगमन एवं गमन, आमद-रफ़्त, आना-जाना। जन्ममरणको भी आवागमन कहते हैं। क्योंकि जन्म लेनेसे जीव इहलोक आता और मरण होनेसे परलोक जाता है।

आवागवन (हिं०) आवागमन देखो।

आवागौन (हिं०) आवागमन देखो।

आवाज़ (फा० स्त्री०) १ शब्द, सदा। २ आह्वान, पुकार। ३ चीत्कार, चीख़। ४ स्वर, तान। ५ कोलाहल, शोर। ६ ख्याति, शोहरत।

आवाज़ कयी तरहकी होती है, इकहरी (सादी), बुलन्द (ऊंची), धीमी (नीची), बंधी (एक-जैसी), भारी (बैठी), महीन (बारीक) और मीठी (अच्छी लगनेवाली)।

आवाज़ आना (हिं० क्रि०) कर्णगोचर होना, सुन पड़ना।

आवाज़ उठाना (हिं० क्रि०) ऊंचे शब्दसे बोलना, चिल्लाना।

आवाज़ ऊंची करना, आवाज़ उठाना देखो।

आवाज़ करना (हिं० क्रि०) १ आह्वान करना, पुकारना। २ शब्द निकालना, बोल सुनाना।

आवाज़का कड़ी चीज़में चलना (हिं० पु०) घनमें शब्दका वेग, मुस्तहकम शैमें सदाकी रफ़्तार।

आवाज़का घूमना (हिं० पु०) शब्दका आवर्जन, सदाकी कजी।

आवाज़का टप्पा (हिं० पु०) शब्दका गोचर, सदाकी पहुंच।

आवाज़का पतली चीज़में चलना (हिं० पु०) द्रव-वस्तुमें शब्दका वेग, रकीक़में सदाकी रफ़्तार।

आवाज़का पल्ला, आवाज़का टप्पा देखो।

आवाज़का लड़ मिटना (हिं० पु०) शब्दका परस्पर सङ्घट्ट, सदाका मुक़ाबिला।

आवाज़का लौटना (हिं० पु०) प्रतिशब्द, बाज़गश्त, गूंज।

आवाज़का हवासी चीज़में चलना (हिं० पु०) वायुमें शब्दका वेग, बादमें सदाकी रफ़्तार।

आवाज़की गमक (हिं० स्त्री०) शब्दकी पराकाष्ठा, सदाकी तुन्दी।

आवाज़की चाल (हिं० स्त्री०) शब्दवेग, सदाकी रफ़्तार।

आवाज़दिहन्द (फ़ा० पु०) शब्द सुनानेवाला, जो सदा लगाता हो।

आवाज़ देना (हिं० क्रि०) १ आह्वान करना, पुकारना। २ शब्द करना, सदा निकालना।

आवाज़ निकालना (हिं० क्रि०) शब्द करना, बोलना। आवाज़पर कान लगाना, श्रवण करना, सुनना।

आवाज़पे लगना (हिं० क्रि०) आह्वानका उत्तर देना या आज्ञा मानना।

आवाज़ बैठना (हिं० क्रि०) शब्दक्षय होना, सदाका मारे पड़ना।

आवाज़ भरराना (हिं० क्रि०) शब्द कर्कश एवं रूक्ष निकलना, सदा भारी और रूखी पड़ना।

आवाज़में आवाज़ मिलाना (हिं० क्रि०) एकतालसे गान करना, मेलसे गाना।

आवाज़ लहर (हिं० स्त्री०) शब्दका तरङ्ग, सदाकी मौज।

आवाज़ा (फ़ा० पु०) कोलाहल, शोर। सोल्लु-ण्ठनोक्ति (बोलीठोली) को अवाज़ा-तवाज़ा कहते हैं।

आवाज़ा कसना (हिं० क्रि०) सोल्लुण्ठनोक्ति करना, ताना मारना। इसी अर्थमें 'आवाज़ा फेंकना' और 'आवाज़ा मारना' क्रिया भी आती है।

आवाजाही (हिं०) आवागमन देखो।

आवात् (सं० त्रि०) वहन करते हुआ, जो बह रहा हो। (पु०) आवान्। (स्त्री०) आवाती, आवान्ती।

आवादानी, आबादानी देखो।

आवाधा (हिं०.स्त्री०) आ सम्यक् बाधा। १ दुःख, पीड़ा, दर्द, तकलीफ। २ भूमिखण्ड, त्रिकोणके आधारका विच्छेद, मुसल्लसके क़ायदेका टुकड़ा।

आवाप (सं० पु०) आ-वप आधारे घञ्। १ आल-वाल, थाला। 'स्यादालवालमावापः।' (अमर) २ धान्यादि रखनेका पात्र विशेष, बर्तन। भावे घञ्। ३ सकल दिक् वपन, चारो ओरकी बोनी। ४ धान्यादिका स्थापन, अनाज वगैरहकी रखायी। ५ शत्रुचिन्ता, दुश्मनकी फ़िक्र। ६ परराज्यचिन्ता,दूसरेकी रियासतका ख़याल। ७ प्रधान होम। "प्राक्स्विष्टिकृतेरावापः।" (गोभिल) ८ आक्षेप, फेंकफांक। कर्मणि घञ्। ९ वलय, चूड़ी। १० निम्नोन्नत भूमि, नीची ऊंची ज़मीन्। ११ कल्क, दवाका मसाला। १२ मिश्रण, मिलावट। १३ पानीय द्रव्यविशेष, किसी क़िस्मका शर्बत। (त्रि०) १४ आवप-नीय, प्रक्षेपणीय, फेलाया या चलाया जानेवाला।

आवापक (सं० पु०) आ उप्यते, आ-वप कर्मणि घञ् संज्ञायां कन्। प्रकोष्ठाभरण वलयादि, सोनेकी चूड़ी वगैरह। ण्वुल्। २ आवपनकर्ता, अच्छीतरह बोनेवाला।

आवापन (सं० क्ली०) आ-वप-णिच् करणे ल्युट्। १ सूत्रयन्त्र, तांतका चरखा। २ सूत्रसम्पुटीकरणका कोश, धागा लपेटनेका ढांचा। भावे ल्युट्। ३ केशा-दिका सम्यक् मुण्डन, बाल वगैरहकी खासी मुंडायी।

आवापिक (सं० क्ली०) आवापाय साधुः, ठक्। अधिक, निवेशित, ज़ियादा, शामिल।

आवारगी (फ़ा० स्त्री०) १ परिभ्रमण, घूमफिर। २ स्वेच्छाचार, बदमाशी।

आवारा (फ़ा० वि०) १ परिभ्रमणशील, भटकते फिरनेवाला। २ भ्रष्टचरित, बेहया, बदमाश।

आवारा करना (हिं० क्रि०) स्वेच्छाचारी बनाना, बदमाशी सिखाना, खराबीमें डालना।

आवारागर्द, आवारा देखो।

आवारागर्दी, आवारगी देखो।

आवारा फिरना (हिं० क्रि०) परिभ्रमण करना, कूंचागर्दी करना, बेमतलब घूमना।

आवारा होना (हिं० क्रि०) परिभ्रमणशील बनना, भटकते फिरना, बेहयायी लादना।

आवारि (सं० क्ली०) आ-व्रियते आच्छाद्यते, आ-वृ बाहुलकात् इन्। १ हट्टगृह, बाज़ारू मकान्। (त्रि०) आ सम्यक् वारि यत्र, बहुव्री०। २ सम्यक् जलयुक्त, पानीसे ख़ूब भरा हुआ।

आवाल (सं० क्ली०) आवाल्यते सञ्चार्यते जलमनेन, आ-वल-णिच् करणे अच्। १ आलवाल, पानी देनेकी पादकी चारो ओर मट्टीका घेरा। भावे घञ्। २ सञ्चार, चलाव। (अव्य०) मर्यादार्थे अव्ययी०। ३ बालक पर्यन्त, लड़केतक।

आबाल्य (सं० अव्य०) बाल्यात् आ, पर्यन्तार्थे अव्ययी०। बाल्यावस्था पर्यन्त, लड़कपनतक।

आवास (सं० पु०) आ सम्यक् वसत्यत्र, आ-वस आधारे घञ्। १ वासस्थान, गृहादि, मकान्, घर। भावे घञ्। २ सम्यक्-वास, बूदबाश, रहास।

आवासी (हिं० स्त्री०) समय-समयपर खानेके लिये तोड़ी जानेवाली कच्चे अनाजकी बाल।

आवाहन (सं० क्ली०) आ-वह-णिच्-ल्युट्। निकट आनेके लिये देवताका आह्वान, निमन्त्रण, पुकार, बुलावा।

आवाहनी (सं० स्त्री०) आवाह्यतेऽनया, आ-वह-णिच् करणे ल्युट् ङीप् वा। देवताके आह्वानार्थ मुद्रा विशेष। दोनो हाथ अञ्जलिबद्धकर दोनो अनामिकाके मूलपर्वपर दोनो अङ्गुष्ठ लगानेसे आवाहनी मुद्रा बनती है।

आवि (सं० पु०) पक्षी, चिड़िया।

आविक (सं० क्ली०) अविना तल्लोम्ना निर्मितम्, ठक्। १ कम्बल, गुदमा, लोयी। (त्रि०) २ मेषसम्बन्धी, भेड़के मुताल्लिक़। ३ ऊर्णामय, पशमी, ऊनी।

आविकक्षीर (सं० क्ली०) मेषीदुग्ध, भेड़का दूध। यह स्वादु, अम्लपाक, स्निग्धोष्ण, गुरु, पित्तकफोत्पत्ति एवं बृंहण होता और हिक्का, श्वास तथा अनिलको मारता है। (वाग्भटटीकाकार चोरपाणि) आविकक्षीर

लोमश, गुरु, कफपित्तहर, स्थौल्यघ्न, मेहनाशन, वात-प्रकोपमें पथ्य और अनिलज कासमें हित है (राजनिघण्टु)

आविकघृत (सं॰ क्ली॰) मेषीनवनीत-जात घृत, भेड़का घी। यह लघु पाक, पित्त-कोपन और योनि-दोष, कफ, वात, शोफ एवं कम्पके लिये हित होता है। (राजनिघण्टु) आविकसर्पि सर्वरोगका विष, कफवात, कु तथा गुल्मोदर दूर करता और दीपन रहता है। (अत्रिसंहिता)

आविकदधि (अ॰ क्ली॰) मेषी-दुग्ध-जात दधि, भेड़का दही। यह गुरु, सुस्निग्ध, कफ-पित्तकर, रक्तवात तथा वातमें पथ्य और शोफ-व्रणघ्न है। (राजनिघण्टु) आविकदधि मुखरोगके लिये परम हित और दृष्टफल होता है। इससे पित्त बढ़ता, वात घटता और कफ़ चढ़ता है। किन्तु गुल्म, अर्श, कुष्ठरोग और रक्तपित्तमें यह ठीक नहीं लगता। (अत्रिसंहिता)

आविक-नवनीत (सं॰ क्ली॰) मेषी-दुग्ध-जात नवनीत, भेड़का मसका या नोनी घी। यह पाकमें हिम, लघु तथा सारक और कफ, वात एवं अर्शःके लिये सदा हित है। किन्तु ऐड़क-नवनीत क्लिष्ट-गन्ध, शीतल, मेधाहृत्, गुरु और पुष्टि-स्थौल्य-मन्दाग्निदीपन होता है। (राजनिघण्टु)

आविकमांस (सं॰ क्ली॰) मेषमांस, भेड़का गोश्त। यह मधुर, ईषद्गुरु तथा बलकर होता, अजामांससे विपरीतगुण पड़ता और अत्युष्ण, स्निग्ध, गुरु, सदोष एवं अभिस्यन्दि रहता है। (वाग्भट)

आविकमूत्र (सं॰ क्ली॰) मेषीमूत्र, भेड़का पेशाब। यह तिक्त, कटु एवं उष्ण होता और कुष्ठ, अर्शः, शूलोदर, रक्तशोफ तथा मेहका विष दूर कर देता है। (राजनिघण्टु)

आविकसौत्रिक (सं॰ त्रि॰) सूत्रमेव, स्वार्थेऽण् सौत्रम्; आविकस्य तत् सौत्रञ्चेति, कर्मधा॰; तेन निर्मितम्, ठक्। मेषसूत्रनिर्मित, भेड़के सूतसे तैयार, जो ऊनी धागेसे बना हो।

आविकी (सं॰ स्त्री॰) १ कम्बल, गुदमा। २ मेषकी, खारपुश्त, सेह।

आविक्य (सं॰ क्ली॰) आविकानां भावः, यक्। पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्। पा ५।१।१२८। आविकसम्बन्धित्व, भेड़का समाज।

आविक्षित (सं॰ पु॰) अविक्षित, मरुत्तका गोत्र-नाम।

आविग्न (सं॰ पु॰) आ-विज कर्तरि क्त, तस्य न। करमर्द वृक्ष, करौंदेका पेड़।

आविज्ञान्य (वै॰ त्रि॰) अविज्ञानमेव, चातुर्वर्ण्यं स्वार्थे ष्यञ्। अपरिस्फुट, नामुमकिन-तमीज़, पहचान न पड़नेवाला।

आविद् (वै॰ स्त्री॰) १ विद्या, इल्म, समझ, जान-कारी। २ आविन्न और आवित्तसे आरम्भ होनेवाली वैदिक व्यवस्था।

आविदूर्य (सं॰ क्ली॰) अवि-दूरस्य भावः, ष्यञ्। सन्निकर्ष, नैकट्य, कुर्ब, पड़ोस।

आविद्ध (सं॰ त्रि॰) आ-व्यध-क्त। १ ताड़ित, मारा हुआ। २ विद्ध, भेदा हुआ। ३ छिद्रीकृत, छेदा हुआ। ४ क्षिप्त, फेंका हुआ। (पु॰) ५ असिप्रहार विशेष, तलवारका एक हाथ। असिप्रहार बत्तीस प्रकार करते हैं। असिको घुमाकर शत्रुका आघात बचाना 'आविद्ध' कहाता है।

आविद्धकर्णी (सं॰ स्त्री॰) आविद्धौ कर्णाविव पत्रमस्याः, ङीप्। पाठा, हरज्योरी। 'पाठाऽम्बष्ठाविद्धकर्णी।' (अमर)

आविध (सं॰ पु॰) आविध्यते काष्ठादनेन, आ-व्यध घञर्थे क। १ काष्ठादि वेधनसाधन सूच्याकाराग्र अस्त्र विशेष, साल, बरमा। २ भ्रमर, भौंरा।

आविर (सं॰ पु॰) प्रसववेदना, ज़ेहका दर्द।

आविर्भाव (सं॰ पु॰) आविस्-भू-घञ्। १ प्रकाश, ज़हूर, रौशनी। २ सांख्यमतसे—उत्पत्ति-स्थानीय अभिव्यक्ति-स्वरूप भावधर्म विशेष। जैसे—आत्मामें क्रियानिरोध बुद्धिके व्यपदेशसे क्रियाका व्यवस्थाभेद नियतभेद साधनमें शक्त नहीं पड़ता। क्योंकि एकमें उस उस विषयके प्रकाश और अनुदयसे विरोध बढ़ता है। जैसे—कूर्मशरीरमें निविशमान हस्त शुण्डादिका कभी प्रकाश और कभी लय होना आविर्भाव या तिरो-भाव नहीं कहाता। कारण, कूर्मसे वह सकल नहीं निकलता। वस्तुतः कूर्म भी उससे अभिन्न ठहरता

है। सुतरां सत् वस्तुका तिरोभाव वा आविर्भाव नहीं होता। फिर भी किसी अवस्थाभेदको ही आविर्भाव और तिरोभाव कहते हैं। ३ मनुष्यादि रूप बना अवतार रूपसे देवताकी उत्पत्ति।

आविर्भूत (सं० त्रि०) आविस्-भू कर्तरि क्त। १ प्रकटित, ज़ाहर। २ अभिव्यक्त, पैदा।

आविल (सं० त्रि०) आविलति दृष्टिं वारयति, आ-विल स्तृतौ क। १ कलुष, अपरिष्कृत, गन्दा, मैला।

'कलुषोऽनच्छ आविलः।' (अमर)

"दिग्वारणमदाविलः।" (कुमार २।४४)

(क्ली०) २ काबिल-देशीय फलविशेष, सेव।

आविलकन्द (सं० पु०) मालाकन्द, किसी किस्मकी जड़।

आविलमत्स्य (सं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह शुभ्र तथा स्थूल होता और पक्ष ताम्रवर्ण रहता है। आविलमत्स्य अतिरुच्य, मधुर, बल्य, वीर्य-पुष्टि-वर्धन और गुणाढ्य है। (राजनिघण्ट)

आविला (सं० स्त्री०) १ मत्स्य, मछली। २ चाङ्गेरी, चौपतिया, अमलोनिया।

आविवृक्ष (सं० पु०) मेषशृङ्गी, मेढ़ासींगी।

आविशत् (सं० त्रि०) उपस्थित होनेवाला, जो दाखिल हो।

आविष्करण (सं० क्ली०) आ-विस-कृ भावे ल्युट् षत्वम्। १ प्रकाश, ज़ुहूर, दिखाव। "अमूया गुणेषु दोषाविष्करणम्।" (सिद्धान्तकौमुदी) करणे ल्युट्। २ प्रकाशसाधन।

आविष्कर्ता, आविष्कर्तृ देखो।

आविष्कर्तृ (सं० त्रि०) आविस्-कृ-तृच्। प्रकाशक, ज़ुहूरमें लानेवाला, जो ईजाद करता हो।

आविष्कार (सं० पु०) आविस्-कृ-घञ्। आविष्करण देखो।

आविष्कारक, आविष्कर्तृ देखो।

आविष्कृत (सं० त्रि०) आविस्-कृ कर्मणि क्त। प्रकाशित, ज़ाहिर, जो ईजाद किया या ढूंढा गया हो।

आविष्क्रिया (सं० स्त्री०) आविष्करण देखो।

आविष्ट (सं० त्रि०) आ-विष-क्त। भूतादिग्रस्त, शैतान् वगैरहके फन्देमें फंसा हुआ।

आविष्ट्य (वै० त्रि०) प्रकाशित, ज़ाहिर, जिसे देख सके।

आविस् (सं० अव्य०) आ-अव-इसि। 'आङ्गलकादयतेरव्याङ् पूर्वादिसिः आ-अव-इसि। (उज्ज्वलदत्त) प्रकाश्य, प्रस्फुटत्व, खुले तौरपर आंखके सामने। कृ, भू और अस् धातुके साथ इसकी प्रतिसंज्ञा होती है।

आविस्तराम् (सं० अव्य०) आविस् तरप्-आम्। अतिशय प्रकाश, खूब खुले तौरपर।

आवी (सं० स्त्री०) अविरेव, स्वार्थे अण्-ङीप्। १ प्रसववेदना, जापेका दर्द, व्यांतकी तकलीफ़। २ रजस्वला, जो औरत कपड़ोंसे हो। ३ गर्भवती, जिस औरतके पेटमें बच्चा रहे। ४ प्रसवलिङ्गका मूत्रकफप्रसेकादि, जापेसे पेशाब वगैरहका बहाव।

आवीत (सं० त्रि०) आ-व्ये-क्त। १ सकलप्रकार ग्रथित, सब तरहसे गूंथा हुआ। २ उत्क्षेपणपूर्वक धृत, उठाकर लगाया या लटकाया हुआ। (क्ली०) ३ सम्यक् ग्रन्थन, खासी गूंथगांथ। ४ उत्क्षेपणपूर्वक धारण, लटकाव। (पु०) ५ दक्षिण स्कन्धपर धारण किया जानेवाला यज्ञोपवीत।

आवीतिन् (सं० पु०) आवीतमस्यास्य, इनि। अत इनि-ठनौ। पा ५।२।११५' दक्षिण स्कन्धके ऊपर यज्ञोपवीत रखनेवाला ब्राह्मण।

"उद्धृते दक्षिणे पाणावुपवीत्युच्यते द्विजः।
सव्ये प्राचीन आवीती निवीती कण्ठसज्जने॥" (मनु २।६७)

आवीती, आवीतिन् देखो।

आवुक (सं० पु०) अवति रक्षति पालयति वा, अव रक्षणपालनयोः उण्-कन्। जनक, पिता, बाप। 'अथावुकः जनकः।' (अमर) यह शब्द नाट्योक्तिमें चलता है।

आवृत् (वै० स्त्री०) आ-वृत सम्पदादित्वात् क्विप्। १ आवरण, लपेट। "नास्या वाश्म विमुञ्च नावृतम्।" (ऋक् ५।४६।१) 'आवृतं आवरणं धारणम्।' (सायण) २ आवर्तन, फेर। ३ पुनःपुनश्चालन, बार बारकी गर्दिश। 'सूर्यस्या-वृतमन्वावर्ते।" (शुक्लयजुर्वेद २।२६) 'आवृतमावर्तनम्।' (महीधर) ४ बारम्बार एक जातीय क्रियाकरण, बार-बार एक ही-जैसे कामका करना। ५ परिपाटी, रिवाज। ६ अनुक्रम, चाला। ७ तूष्णीभाव, खमोशी। ८ जात-कर्मादि संस्कार। (त्रि०) कर्तरि अच्। ८ आवर्त-मान, घूम पड़नेवाला।

आवृत (सं० त्रि०) आ-वृ-क्त। १ कृतावरण, अप्रकाशित, आच्छादित, ढंका हुआ, जो लपेट लिया गया हो। २ परिवृत, घिरा हुआ। ३ संसृष्ट, लगा हुआ। ४ विस्तृत, फैला हुआ। ५ व्याप्त, भरा हुआ। (पु०) ब्राह्मणके औरस और उग्र जातिकी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न मनुष्य। "ब्राह्मणोदुग्रकन्यायामावृतो नाम जायते।" (मनु १०।१५)

आवृति (सं० स्त्री०) आ-वृ-क्तिन्। आवरण, पर्दा, घेर।

आवृत्त (सं० त्रि०) आ-वृत-क्त। १ पुनःपुनरभ्यस्त, बारबार महावरा डाला हुआ। २ आवर्तमान, घूमा या वापस आया हुआ। ३ पलायित, भागा हुआ।

आवृत्ति (सं० स्त्री०) आ-वृत-क्तिन्। १ प्रत्यावृत्ति, वापसी। २ बारम्बार अभ्यास, पुनःपुनः एक जातीय क्रियाकरण, फिर फिर एक ही कामका करना। ३ पुनरावृत्ति, दोहराव। ४ मार्गपरिवर्तन, मोड़। ५ वृत्तान्त, वाक़िया। ६ परिवर्तन, घुमाव। ७ सांसारिक स्थिति, पैदायशका चक्कर। ८ नियुक्ति, इस्तैमाल, लगाव।

आवृत्तिदीपक (सं० क्लो०) आवृत्त्या दीपकम्, ३-तत्। १ दीपकावृत्तिरूप अर्थालङ्कारविशेष। इसमें दोहराकर किसी शब्दपर ज़ोर देते हैं। २ मस्तिष्क, दमाग़।

आवृत्य (सं० अव्य०) प्रत्यावर्तनपूर्वक, घूमकर।

आवृष्टि (सं० स्त्री०) आ-वृष-क्तिन्। १ सम्यक् वर्षण, खासी बारिश। "आवृष्टेः प्राणधारके:।" (चण्डी) (अव्य०) मर्यादार्थे अव्ययी०। २ वृष्टिपर्यन्त, बारिशतक।

आवेग (सं० पु०) आ-विज-घञ्। १ उत्कण्ठाजनक वा त्वरान्वित मानसिक वेग, इज़्तिराबी, शिताबी, हड़बड़ी। २ व्यभिचारी भावविशेष, हाल, जुलाव। यथा,—निर्वेद, आवेग, दैन्य, श्रम, मद, जड़ता, औग्र्य, मोह इत्यादि।

आवेगी (सं० स्त्री०) आ-वेगोऽस्त्यस्याः अर्श आदित्वात् अच् गौरादित्वात् ङीष्। वृद्धदारकलता, बधारकी बेल। "स्याहृषगन्धा छगलान्त्र्यावेगी वृद्धदारकः।" (अमर)

आवेज़ा (फा० पु०) कुण्डल, बाला, बाली, मुरकी, गोखरू, झूमका।

आवेणिक (सं० त्रि०) १ स्वाधीन, आज़ाद। २ अपर अन्य द्रव्यसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो किसी दूसरी चीज़से लगा न हो। "बुद्धधर्मा आवेणिकादयः।" (अभिधर्मकोषव्याख्या ११२)

आवेदक (सं० त्रि०) आ-विद-णिच्-ण्वुल्। १ विज्ञापक, आवेदनकारी, ज़ाहिर करनेवाला, जो हाल बता रहा हो। (पु०) २ प्रार्थक, उम्मेदवार, मुराफ़ा करनेवाला। ३ सूचक, पिशुन, मुख़बिर।

आवेदन (सं० क्लो०) आ-विद-चुरादित्वात् णिच्-ल्युट्। १ विज्ञापन, व्यवहारोत्थापन, नालिश-फर्याद। करणे ल्युट्। व्यवहारोत्थापक भाषापत्र, अर्ज़ी।

आवेदनीय (सं० त्रि०) आ-विद-णिच्-अनीयर्। विज्ञापनीय, ख़बर देने या नालिश करने क़ाबिल।

आवेदित (सं० त्रि०) आ-विद-णिच्-क्त-इट्, णिच लोपः। विज्ञापित, ज़ाहिर किया या ख़बर दिया हुआ।

आवेदिन् (सं० त्रि०) आवेदयति, आ चुरादित्वात् विद-णिच्-णिनि। १ विज्ञापक, नालिश करनेवाला। २ आज्ञाकारी, फ़रमांबरदार। (पु०) आवेदी। (स्त्री०) आवेदिनी।

आवेद्य (सं० त्रि०) आ-विद-णिच्-यत्। १ विज्ञाप्य, बताने क़ाबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ आवेदन करके, बताकर।

आवेद्यमान (सं० त्रि०) प्रकाशित किया जानेवाला, जो ज़ाहिर किया जाता हो।

आवेध्य (सं० त्रि०) आ-विध-ण्यत्। विद्ध किया जानेवाला, जो छेदने लायक़ हो।

आवेल तेल (हिं० पु०) नारिकेल तेल, नारियलका तेल। यह ताज़ी गरीसे निकाला जाता है। सूखी गरीसे निकलनेवाला नारियलका तेल मुठेल कहाता है।

आवेश (सं० पु०) आ-विश-घञ्। १ अहङ्कारविशेष, फ़ख़्र, घमण्ड। २ संरम्भ, क्रोध, गुस्सा। ३ अभिनिवेश, दाख़िला, दख़ल। ४ आसङ्ग, बांध। ५ अणुप्रवेश, पहुंच। ६ ग्रहभय, भूतसञ्चार, शैतान्का दौर। ७ अपस्मार रोग, मृगीका आज़ार। ८ अधिष्ठान, दौर। ९ गर्व, गुरूर। १० मनोभाव आपत्तीकरण, दिलकी हालतका जमाव। ११ आन्तरिक यत्न, भीतरी तदबीर।

आवेशन (सं॰ क्लो॰) आ विशति यत्र, आ-विश आधारे ल्युट्। १ शिल्पशाला, कारखाना। 'आवेशनं शिल्पशाला।' (अमर) भूतादि बाधा, शैतानका साया। ३ सूर्य एवं चन्द्रका परिधि, आफताब और चांदका चक्कर। ४ क्रोधादि, गुस्सा। आधारे ल्युट्। ५ प्रवेश सम्पादन-व्यापार, रसायी,पैठ। ६ मन्त्रसे भूतको बुला शिरःमें सन्निवेशन,शैतानको सरपर चढ़ा देनेका काम।

आवेशनमन्त्र (सं॰ पु॰) मन्त्रविशेष, एक जादू। आवेशनमन्त्र पढ़नेसे दूसरेके शरीरपर भूत चढ़ जाता है।

आवेशिक (सं॰ पु॰) आवेशो-गृहे भवं तत आगतः वा, ठञ्। १ अतिथि, मेहमान्। (क्लो॰) २ प्रवेश, पहुंच। ३ आतिथ्य, मेहमांदारी। (त्रि॰) असाधारण, खास। ५ स्वभावज, पैदायशी।

आवेशित (सं॰ त्रि॰) आ-विश-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। निवेशित, आवेशयुक्त, मनोयोगयुक्त, पहुंचा हुआ, जो दाखिल हो।

आवेष्ट (सं॰ पु॰) परिवेष्टन, संवलन, घेर, अहाता।

आवेष्टक (सं॰ पु॰) आविष्टयति, आ-विष्ट-णिच्-ण्वुल्। आवरणकारक प्राचीरादि, वेष्टक, दीवार, खन्दक, अहाता।

आवेष्टन (सं॰ क्लो॰) आ-वेष्ट-भावे ल्युट्। १ आवरण, लपेट। करणे ल्युट्। २ आवरणसाधन प्राचीरादि, चारदीवारी। ३ प्रावार, कोष, लिफाफा, बस्ता, बुकचा, बंधना।

आवेष्टित (सं॰ त्रि॰) आवरणयुक्त, घिरा हुआ, जो लिपटा या बंधा हो।

आव्य (वै॰ त्रि॰) अवेर्मेषस्य विकारः, यञ्। १ मेषसम्बन्धीय, भेड़के मुताल्लिक। २ और्ण, पश्मी, ऊनी।

आव्याधिन् (वै॰ त्रि॰) आ-व्यध-णिनि। आघात वा आक्रमण करते हुये, जख्म पहुंचाने या हमला मारनेवाला। (पु॰) आव्याधी।

आव्याधिनी (वै॰ स्त्री॰) आव्याधिन्-ङीप्। १ पीड़ादायक स्त्री। २ तस्करश्रेणी, रहजनोंकी जमात।
"या सेना अभीत्वरीरा व्याधिनीरुगणा उत।" (शुक्लयजुर्वेद ११।७७)
'आव्याधिनी आ समन्ताद्विध्यन्ति ताः सर्वतोऽभिताडयन्त्यः।' (महीधर)

आव्युष (वै॰ अव्य॰) उषः पर्यन्त, सवेरेतक।

आव्रश्चन (वै॰ क्लो॰) ईषद्व्रश्चनं छेदनम्, प्रादि समा॰। १ ईषच्छेदन, थोड़ी काट-छांट। आधारे ल्युट्। २ छेद्य वृक्षप्रदेश, दरख्तका काटा जानेवाला हिस्सा। यह यूपादि बनानेके लिये वृक्षसे काटा जाता है।

आव्रस्क (वै॰ पु॰) आ-व्रश्च-घञ्; चस्य कत्वम्, शस्य सत्वम्। यजोः कु घिरयतौ। पा ७।३।५२। १ ईषच्छेदन, थोड़ी काटछांट। २ यूपादि बनानेके लिये काटा जानेवाला वृक्षका स्थानविशेष, दरख्तकी शाख।

आव्रीडक (सं॰ पु॰) आव्रीडानां निर्लज्जानां विषयो देशः, वुञ्। निर्लज्जदेश, बेशर्म मुल्क।

आश (सं॰ पु॰) अश भोजने घञ्। १ भोजन, खाना। कर्मण्युपपदेऽति अण्, उप॰ समा॰। २ भोजन करनेवाला, जो खाता हो। इस अर्थमें आश शब्द प्रायः समासान्तमें आता है। यथा,—हुताश, आश्रपाश, मांसाश, पलाश, हविष्याश इत्यादि।

(हिं॰ स्त्री॰) २ आशा, उम्मेद।

आशंसन (सं॰ क्लो॰) १ उदीक्षण, प्रतीक्षण, इन्तिज़ार, शौक़। २ वर्णन, कहावत।

आशंसा (सं॰ स्त्री॰) आ-शन्स्-अङ्-टाप्। आ संशायां भूतवच्च। पा ३।३।१३२। आशंसा वचनेलिङ्। पा ३।३।१३४। १ अप्राप्त वस्तुकी प्राप्तिके लिये इच्छा, आरज़ू, उम्मेदवारी। २ भाषा, वर्णना, बोली, कैफियत।

आशंसित (सं॰ त्रि॰) आ-शन्स्-क्त-इट्। १ कथित, इसरार किया हुआ। २ इच्छा-विषयीभूत, मुतरश्शिद, ख्वाहिश-किया हुआ। (क्लो॰) भावे क्त। ३ मनोरथ, इश्तियाक़, आसरा, भरोसा।

आशंसितृ (सं॰ त्रि॰) आशंसति, आ-शन्स्-तृच्। १ आशंसायुक्त, मुन्तज़िर, उम्मेदवार, उम्मेद रखनेवाला। २ कथन करनेवाला, जो इसरार करता या कहता हो। (पु॰) आशंसिता। (स्त्री॰) ङीप्। आशंसित्री। 'आशंसुराशंसितरि।' (अमर)

आशंसिन् (सं॰ त्रि॰) आ-शन्स्-णिनि। आशंसाकारी, मुन्तज़िर, उम्मेद रखनेवाला। २ ज्ञापक, निवेदक; बोलने, कहने या इज़हार करनेवाला।

आशंसु (सं॰ त्रि॰) आ-शन्स्-उ। सन्नाशंसभिक्ष उः।

पा ३।२।१७८। इच्छाकारक, भाविशुभाकाङ्क्षी, मुश्तजिर, खाहिशमन्द, जो चाहना रखता हो।

आशक (सं० त्रि०) अश्नाति, अश-ण्वुल्। १ भक्षक, खानेवाला। २ भोगयुक्त, खानेकी चीज़से भरा हुआ। आशयति, आश-णिच्-ण्वुल्। ३ भोगसाधन, खानेके काम आनेवाला। ४ भोजनकारक, खाना बनानेवाला।

आशक्त (सं० त्रि०) आ सम्यक् शक्तम्; आ-शक्-क्त, प्रादि-समा०। सम्यक् शक्तियुक्त, ताक़तवर, शहज़ोर, जबरदस्त।

आशक्ति (सं० स्त्री०) सम्यक् शक्ति, ताक़त, कुव्वत, इख़्तियार, इस्तेदाद।

आशङ्कनीय (सं० त्रि०) आ-शङ्कि-अनीयर्। शङ्का-किये जाने योग्य, जो शक किये जाने क़ाबिल हो। २ ग्रहणीय, मानने क़ाबिल। ३ विचार्य, समझने लायक़।

आशङ्कमान (सं० त्रि०) शङ्कित, सभय, डरा हुआ, जिसे शक रहे।

आशङ्का (सं० स्त्री०) आ-शङ्कि-अङ्-टाप्। १ भय, त्रास, ख़ौफ़, डर। २ सन्देह, शक। ३ अविश्वास, नायेतबारी।

आशङ्कान्वित (सं० त्रि०) १ भयभीत, ख़ौफ़ज़दा, डरा हुआ। २ सन्देह रखनेवाला, जिसे शक रहे।

आशङ्कित (सं० त्रि०) आ-शङ्कि कर्तरि क्त-इट्। १ भीत, ख़ौफ़ज़दा, डरा हुआ। २ सन्देहयुक्त, जिसे शक आ चुके।

आशङ्किन् (सं० त्रि०) आशङ्कते, आ-शङ्कि-णिनि। आशङ्कायुक्त, शक करनेवाला। (पु०) आशङ्की। (स्त्री०) ङीप्। आशङ्किनी।

आशङ्क्य (सं० त्रि०) आ शङ्क्यते, आ शङ्कि कर्मणि यत्। १ आशङ्काके योग्य, शाक किये जाने क़ाबिल, जिससे डर लगे। (अव्य०) ल्यप्। २ सन्देह करके, शक लाते हुये।

आशन (सं० पु०) अशन एव, स्वार्थे अण्। १ अशन वृक्ष, पीतशालका पेड़। अशन देखो। २ वज्र। ३ इन्द्र। (त्रि०) अश भोजने णिच्-ल्यु। ४ भोजन करानेवाला, जो खिलाता हो।

आशना (फ़ा० पु-स्त्री०) १ मित्र, सुहृद्, दोस्त। २ प्रणयि, आशिक़। "रण्डीके लाखों आशना।" (लोकोक्ति) ३ वेश्या, रण्डी, रखी हुयी औरत। "जिनकी आशना उनकी बगलमें। (लोकोक्ति) (त्रि०) ४ परिचित, जान-पहचानवाला। ५ आसक्त, प्यार करनेवाला। विद्यारम्भ करनेवालेको 'हर्फ़-आशना', मित्रको 'दोस्त-आशना' या 'यार-आशना' और परिचित व्यक्तिको 'सूरत-आशना' कहते हैं।

आशनायी (फ़ा० स्त्री०) १ मित्रता, दोस्ती। २ विवाह-सम्बन्ध, रिश्तेदारी। ३ अधर्म्य स्नेह, नाजायज़ प्यार।

आशनायी करना (हिं० क्रि०) १ मित्र बनाना, दोस्ती लगाना। "आशनायी करना आसान् निभाना मुश्किल।" (लोकोक्ति) २ आधर्म्य स्नेह या नाजायज़ प्यार बढ़ाना।

आशनायी जोड़ना, आशनायी करना देखो।

आशनायी लगना (हिं० क्रि०) मैत्री बढ़ना, दोस्ती होना।

आशनायी लगाना, आशनायी करना देखो।

आशनायी होना, आशनायी लगना देखो।

आशफल (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह बङ्गाल, विहार और मान्द्राज प्रान्तमें अधिक उपजता है। काष्ठ सुदृढ़ होता और सज्जाद्रव्य प्रस्तुत करनेमें लगता है।

आशय (सं० पु०) आ-शी-अच्। एरच्। पा ३।३।५६। १ अभिप्राय, मक़सद, मन्शा, ग़रज़। २ आधार, मसकन्, जगह। ३ विभव, असबाब। ४ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़। ५ वैद्यशास्त्रोक्त स्थानविशेष, जिस्मका ज़र्फ़। आशय सात होते हैं,—वाताशय, पित्ताशय, कफाशय, रक्ताशय, पक्वाशय, मूत्राशय, और आमाशय। स्त्रियोंके आठवां गर्भाशय अतिरिक्त रहता है। (सुश्रुत) उरःमें रक्ताशय, उससे नीचे श्लेष्माशय, श्लेष्माशयसे नीचे आमाशय और उससे नीचे पक्वाशय है। पक्वाशयसे ऊपर ग्रहणी नाम्नी जो कला होती, वही पाचकाशय कहाती है। नाभिसे ऊपर अग्न्याशय मध्यभागमें स्थित है। उसपर तिल पड़ता, जिससे नीचे वाताशय आता है। वाताशयसे नीचे पक्वाशयको मलाशय भी कहते हैं। मलाशयसे नीचे वस्ति वा मूत्राशय है। (भावप्रकाश)

'आशयः आहमिप्राये मानसाधारयोरपि।' (विश्व)

आ फलविपाकात् चित्तभूमौ शेते, कर्तरि अच्। ६ कर्मजन्य वासनारूप संस्कार, भलायी-बुरायी। ७ धर्माधर्मरूप अदृष्ट, मशीयत, होनी। आधारे अच्। ८ आशय-विशिष्ट चित्त, इदराक, पाददाश्त, दिल। भावे अच्। ९ शयन, नींद। १० स्थान, जगह। ११ कोष्ठागार, आरामगाह। १२ विचारकी रीति, ख़्यालका तरीक़। १३ इच्छा, ख़ाहिश, ख़ुशी। १४ क्षपक, वकील। १५ बौद्धमत सिद्ध आलय-विज्ञान-रूप विज्ञानसमूह। १६ आश्रय, टेक। १७ किंपाचन नामक पशुधारणार्थ मर्तविशेष। १८ खात विशेष, गड्ढा।

आशयफल (सं० क्ली०) पनस, कटहल।

आशयाश (सं० पु०) आशयं आश्रयमश्नाति; आशय-अश-अण्, उप० समा०। १ अग्नि, आग। अपने आश्रय काष्ठादिको भक्ष्यरूपसे खानेपर अग्निको आश-याश कहते हैं। २ वायु, हवा।

आशर (सं० पु०) आशृणाति, आ-शॄ-अच्। १ अग्नि, आग। २ राक्षस, आसेब, भूत।

"क्रव्यादोऽस्त्र आशरः।" (अमर)

आशरीक (वै० पु०) रोग विशेष, अज़ामें सख़्त और शदीद दर्द पैदा करनेवाला आज़ार।

"आशरीकं विशरीकं बलासः पृष्ठ्यामयम्।" (अथर्वसंहिता)

आशल (सं० पु०) जीवकवृक्ष, एक पेड़।

आशव (सं० क्ली०) आशोर्भावः, अञ्। पृथ्वादिभ्य इम-निज्वा। पा ५।१।१२२। शिताबी, उतावली। २ गुड़मद्य, गुड़की शराब।

आशस् (वै० त्रि०) आशन्स्-क्विप्। १ भावि शुभे-च्छाकारी, आगेके लिये अच्छी उम्मेद रखनेवाला। (क्ली०) भावे क्विप्। २ भाविशुभेच्छा, भली ख़ाहिश। ३ कथन, स्तुतिसाधन, कहावत।

"पृच्छमानस्त्वाशसा जातवेदो यदीदम्।" (ऋक् ४।५।१६)

'नवाशसा त्वत् स्तुत्या साधनेन।' (सायण)

आशसन (वै० क्ली०) तुषाधान, वध किये हुये यज्ञीय पशुके अङ्गका छेदन। "आशसनं विशसनमथो अधिविकर्तनम्।" (ऋक् १०।८५।३५) 'आशसनं तुषाधानम्।' (सायण)

आशस्त (वै० त्रि०) आ-शन्स्-क्त। स्तुत, तारीफ़ किया गया।

आशा (सं० स्त्री०) आ समन्तात् अश्नुते व्याप्नोति, आ-अशू व्याप्तौ अच्। १ दिक्, फ़ासिला। २ प्रत्याशा, इश्तियाक़, उम्मेद। ३ वसुकी भार्या। ४ न्यायमतसे—संख्यापरिमित पृथक्त्व-संयोग-विभागाश्रय द्रव्य-विशेष। दैशिक परत्व और अपरत्वके असमवायि-कारणका संयोगाश्रय होनेसे ही नैयायिक इसको स्वीकार करते हैं। ५ सांख्यतत्त्व-कौमुदीके मतसे—पूर्वापरत्वके व्यवहारका उपाधि। इसी उपाधिको दिक् कहते हैं। इसके आश्रयसे अतिरिक्त दिक्-कल्पना करना ठीक नहीं पड़ता। ६ तृष्णा, लालच, न मिलनेवाली चीज़ हासिल करनेकी ख़ाहिश।

आशाक्षित (सं० त्रि०) प्रत्याशा-परिहत, उम्मेदसे लगा हुआ।

आशागज (सं० पु०) दिक्हस्ती, दौरके मुक़तेका हाथी। यह पृथिवीके एक विभागको साधे है।

आशाढ़ (सं० पु०) १ आषाढ़, एक महीना। २ व्रतीका पलाशदण्ड, व्रत करनेवालेकी छड़ी।

आशाढ़ा, आशाड़ा (सं० स्त्री०) १ आषाढ़ा नक्षत्र। आशाड़ा प्रयोजनमस्य, अण्। २ ब्रह्मचारीका पलाश-दण्ड।

आशाढ़ी (सं० स्त्री०) आषाढ़ा नक्षत्रेण युक्तः कालः, अण्-ङीप्। १ चन्द्राषाढ़ पौर्णमासी।

आशादामन् (सं० क्ली०) आशा दामेव, उपमिति समा०। १ आशारूप बन्धनसाधन रज्जु, उम्मेदका जाल। (पु०) २ नृपतिविशेष, एक पुराने राजा।

आशादामा, आशादामन् देखो।

आशादित्य, आशार्क देखो।

आशाधर—एकजन प्रसिद्ध जैनग्रन्थकार। निजकृत 'धर्मामृत' ग्रन्थमें इन्होंने शाकम्भरीके निकट अपना जन्मस्थान लिखा है। वस्तुतः जयपुरके निकट किसी दुर्गमें यह उत्पन्न हुये थे। श्रीरत्नी और सरस्वती नाम्नी दो पत्नी रहीं। सरस्वतीके गर्भसे वाहल नामक पुत्र हुआ था। शहाबुद्दीनके आक्रमण मारनेपर यह मालव राज्यको भागे और पीछे धारामें विन्ध्यराज

विजयवर्माके निकट जा छिपे। उसी स्थानपर राजकवि विल्हनने इनका यथेष्ट समादर किया था। अर्जुनके मालवका राजा बननेपर यह मालकच्छमें अवस्थित और भिक्षुकके कार्यपर नियुक्त रहे। संवत् १२९६ में आशाधर वर्तमान थे। इन्होंने अनेक संस्कृत ग्रन्थ बनाये, जिनमें कुछ हाथ आये हैं,—१ रुद्रटकृत काव्यालङ्कारकी टीका, २ सटीक धर्मामृत, ३ अमरकोषकी टीका, ४ आराधनासार, ५ अष्टाङ्गहृदयटीका, ६ इष्टोपदेश, ७ जिन-यज्ञकल्प, ८ निबन्धके साथ त्रिषष्टिस्मृतिशास्त्र, ९ नित्यमहोद्योतशास्त्र, १० प्रमेयरत्नाकर, ११ भारतेश्वराभ्युदयकाव्य, १२ भूपालचतुर्विंशति, १३ सहस्रनामस्तवन और १४ मूलाराधनटीका।

आशानन्द—रामानन्दके बारहमें एक शिष्य। रामानन्दके मरनेपर यही उनकी गद्दीपर बैठे थे।

आशान्वित (सं० त्रि०) आशायुक्त, उम्मेदवार, जिसे भरोसा रहे।

आशापाल (सं० पु०) आशां दिशं पालयति; आशा-पा-णिच्-अण्, उप० समा०। पेते पौलुग् वक्तव्यः। ३।३।६ वार्तिक। १ पूर्वादि दिक्पाल, इन्द्रादि।

'इन्द्रो वह्निः पितृपति र्नैऋतो वरुणो मरुत्।
कुवेर ईशः पतयः पूर्वादीनां दिशां क्रमात्॥' (अमर)

२ वेदोक्त राजकुमार। यह अश्वमेध यज्ञके पशुकी रक्षा करते थे। (वाजसनेयसं० २२।१९)

आशापिशाचिका (सं० स्त्री०) अमृताशा, नारास्त तमन्ना, झूठी उम्मेद।

आशापुर (सं० क्ली०) पुरविशेष, एक शहर। इस नगरमें उत्तम गुग्गुलु मिलता और उससे धूप बनता है।

आशापुरगुग्गुलु, आशापुरसम्भव देखो।

आशापुरसम्भव (सं० पु०) आशापुरे सम्भवति, आशापुर-सं-भू-अच्। गुग्गुलुविशेष, आशापुरसे निकलनेवाला गूगल।

आशाप्राप्त (सं० त्रि०) कृतकार्य, कामयाब, जिसके उम्मेद पूरे पड़ें।

आशाबन्ध (सं० पु०) आशां दिशं बध्नाति, आशा-बन्ध-अच्। १ मर्कटजाल, मकड़ीका जाला। २ तृष्णाबन्ध, तमन्नाका फन्दा, उम्मेदकी जकड़। ३ दिग्बन्ध, सिम्तकी बन्दिश। ४ आश्वास, शफा, बहाली।

आशाभङ्ग (सं० पु०) नैराश्य, नाउम्मेदी, भरोसेका टूट जाना।

आशार (सं० पु०) शरण, पनाह।

आशारेशिन् (वै० त्रि०) शरण ढूंढनेवाला, जो पनाहको खोजता हो।

आशार्क—कात्यायन-रचित कर्मप्रदीपके टीकाकार।

आशावत् (सं० त्रि०) विश्वासशील, उम्मेद रखनेवाला, जिसे भरोसा रहे।

आशावरी (सं० स्त्री०) सङ्गीतकी एक संपूर्ण रागिणी। इसमें निषाद, ऋषभ, गन्धार और धैवत कोमल लगता है। गानेका समय द्वितीय याम है। देशी, गान्धार और टोड़ी मिलनेसे यह बनती है। आशावरीका ध्यान इसप्रकार करते हैं,—

"श्रीखण्डशैलशिखरे शिखिपुच्छवस्त्रा मातङ्गमौक्तिकमनोहरहारवल्ली।
आकृष्य चन्दनतरोरुरगं वहन्ती आशावरी वलयमुज्ज्वलनीलकान्तिः॥"
(सङ्गीतदर्पण)

आशावह (सं० त्रि०) आशां वहति, आशा-वह-अच्, ६-तत्। १ आशाधारी, उम्मेद पैदा करनेवाला। (पु०) २ नृपविशेष। ३ आकाशपुत्र। दृढ़ह्लादु, चक्षु, आत्मा, विभावसु, सविता, ऋचीक, अर्क, भानु, आशावह और रवि आकाशके पुत्र दश हैं। ४ वृष्णिपुत्र।

आशाविभिन्न (सं० त्रि०) हताश, नाउम्मेद, जिसे भरोसा न रहे।

आशास्य (सं० त्रि०) आ शिष्यते, आ-शास-ण्यत्। १ आशंसनीय, प्रार्थनीय, पसन्दीदा, जो चाहे जाने क़ाबिल हो। (अव्य०) २ कथन करके, कहके।

आशाहीन (सं० त्रि०) आशाशून्य, नाउम्मेद, जिसे उम्मेद न रहे।

आशि (सं० क्ली०) आ-अश-कि। १ भोजन, खाना। (स्त्री०) २ आशीर्वाद-दान, दुवा-गायो।

आशिक (अ० पु०) १ कामुक, चाहनेवाला, जो ख़ूब प्यार करता हो।

"आशिक् बूढ़ा मैंस पद्मिनी मेंढ़क ताल लगावै।
चौकी पहरै गदहा नाचै ऊंट विष्णपद गावै॥" (कबीर)

२ आवेदक, प्रार्थक, ख्वाहाँ, सायल, उम्मेदवार। ३ अनवधान साहसी पुरुष, जो मखूस बेपरवा और बेफ़िक्र हो।

आशिक्-माशूक् (अ० पु०) १ नायक-नायिका, प्यार करने और किया जानेवाला। २ भुजगमेखला, मार या सांपका पट्टा।

आशिक्मिज़ाज (अ० वि०) क्रीड़ाशील, खुशदिल।

आशिक् होना (हिं० क्रि०) कामुक बनना, चाहना, प्यार करना।

आशिक़ाना (अ० वि०) रसिक, रसीला, आशिक् जैसा।

आशिक़ाना अशार (अ० पु०) प्रीतिकाव्य, प्यारकी कविता।

आशिक़ाना खत (अ० पु०) प्रीतिपत्र, प्यारकी चिट्ठी।

आशिक़ाना गीत (हिं० पु०) शृङ्गारगीत, प्यारका गाना।

आशिक़ी (अ० स्त्री०) प्रीति, प्यार, चाह।

आशिक्षा (वै० स्त्री०) आ शिक्ष-अङ्-लुराट्। शिक्षाभिलाष, तालीम हासिल करनेकी ख्वाहिश।

आशिञ्जित (सं० त्रि०) क्वणित; सनसनाने, ठनठनाने, झनझनाने या छनकारनेवाला।

आशित (सं० त्रि०) आ-अश-क्त। १ भुक्त, खाया हुवा। २ भोजन द्वारा तृप्तियुक्त, आसूदा, छका हुवा। (क्लो०) भावे क्त। ३ सम्यक् भोजन, खासा खाना। आशितमस्यस्य, अर्श आदित्वात् अच्। ४ तृप्ति, आसूदगी, छकाया। "नातिप्रगे नातिसायं न सायं प्रातराशितः।" (मनु)

आशितङ्गवीन (सं० त्रि०) आशिता अशनेन तृप्ता गावो यत्र, निपातनात् मुम्। गो द्वारा भक्षण किया हुवा, जो गायने पहले ही खाया हो।

'विष्वाशितङ्गवीनन्तदगावो यत्राशिताः पुरा।' (अमर)

आशितम्भव (सं० त्रि०) आशितोऽशनेन तृप्तो भवत्यनेन; आशित-भू-खच्-मुम् उप० समा०। आशिते भुवः करणाभावयोः। पा ३।२।४५। १ तृप्तिकारक, आसूदा करनेवाला। (क्लो०) भावे अच्। २ अन्नादि, अनाज वगैरह। ३ तृप्ति, आसूदगी।

आशितृ (सं० त्रि०) आ-अश-तृच्-इट्। अतिशय भोक्ता, हदसे ज्यादा खानेवाला। (पु०) आशिता। (स्त्री०) ङीप्। आशित्री।

आशिन् (सं० त्रि०) अश-णिनि। भोक्ता, खानेवाला। (पु०) आशी। स्त्री० ङीप्। आशिनी।

आशिन (वै० त्रि०) आशिन् स्वार्थे अण्, वेदे निपातनात् न टिलोपः। १ भक्षक, अतिशय भोक्ता, पेटू, बहुत खानेवाला। २ वृद्ध, बुड्ढा, जो बहुत वर्षका हो।

आशिमन् (सं० पु०) आशोर्भावः इमनिच् डिद्भावः। शीघ्रत्व, जल्दी।

आशियां (फ़ा० पु०) आशय, पक्षिस्थान, खोता, घोंसला।

आशियाना, आशियां देखो।

आशिर् (वै० त्रि०) आशीयते पच्यते, आ-शी-क्विप् निपातनात् साधु। १ पाकके योग्य, पकाने क़ाबिल। (स्त्री०) २ विशुद्ध करनेके लिये सोमरसमें मिला हुवा दुग्ध।

आशिर (सं० त्रि०) आशीरेव, स्वार्थेऽण्। १ पाकके योग्य, पकाने लायक्। (पु०) आ-अश व्याप्तौ भोजने वा किरच्, णित्वादुपधावृद्धिः। २ अग्नि, आग। ३ सूर्य, आफ़ताब। ४ राक्षस।

'आशिरो वह्निरक्षसोः।' (उज्ज्वलदत्त)

आशिरःपाद (सं० अव्य०) शिरःसे पाद पर्यन्त, सरसे पैर तक।

आशिर्वाद, आशीर्वाद देखो।

आशिर्विष, आशीविष देखो।

आशिष् (सं० स्त्री०) १ आशीर्वाद, दुवा। २ काव्यालङ्कार विशेष। इसमें न मिली चोज़ पानेके लिये प्रार्थना करते हैं।

आशिषाक्षेप (सं० पु०) काव्यालङ्कारविशेष। इसमें अन्यके उपकारपर ऐसा कार्य करनेका उपदेश देते, जिससे अपना क्लेश छोड़ाते हैं।

आशिषिक (सं० त्रि०) आशिषा चरति, ठक्। आशीर्वादक, दुवा देनेवाला।

आशिष्ट (सं० त्रि०) आ-शास-क्त। आशीर्वाद दिया गया, जिसके लिये दुवा मांगी जा चुकी।

आशिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन आशु, इष्ठन् डिद्भावः। अतिशायने तमविष्ठनौ। पा ५।३।५५। अत्यन्त शीघ्र, निहायत जल्दबाज़।

आशिस् (सं० स्त्री०) आ-शास-क्विप्, उपधाया इत्वम्। शास इदङ्हलोः। पा ६।४।३४। इष्टार्थाविष्करण, मतलबकी बातका ज़िक्र। २ प्रार्थना, दुआ। ३ आशीर्वाद, दुवागोयी। ४ सर्पका दन्त, सांपका ज़हरीला दांत। 'आशीर्दन्ते भरदनाम्। हितसाशंसने स्त्री स्यात्।' (मेदिनी)

आशी (सं० स्त्री०) आ शीर्यतेऽनया, आ-शृ-क्विप् पृषोदरादित्वात्। १ सर्पदंष्ट्रा, सांपका ज़हरीला दांत। "आशी तालुगता दंष्ट्रा तया विद्धो न जीवति।" (विषविद्या) २ सर्पविष, सांपका ज़हर। ३ आशीर्वाद, दुवागोयी। ४ वृद्धि नामक औषध। यह जड़ी दवामें पड़ती है।

आशीत (सं० पु०) पुष्पवृक्ष-विशेष, किसी क़िस्मके फूलका दरख़्त। इसे अश्विन्नक कहते हैं।

आशीतक, आशीत देखो।

आशीय (सं० त्रि०) अतिशयेनाशु, ईयसुन् डिद्वत्। द्विवचनविभज्योपपदेतरबीयसुनौ। पा ५।३।५७। अत्यन्त शीघ्र, निहायत जल्दबाज़।

आशीर्गेय (सं० क्ली०) ३-तत्। नान्दीपाठ, स्तुतिवाद, दुवागोयीके साथ गाया जानेवाला गीत।

आशीर्त (वै० त्रि०) आ-श्री-क्त वेदे निपातनात्। पक्व दुग्धादि, पका दूध वगैरह।

आशीर्दा (वै० स्त्री०) आशिस्-दा-क-टाप्। १ देवता, पूज्य व्यक्ति। २ स्तुतिवाद।

आशीर्वचन (सं० क्ली०) आशीर्वाद देखो।

आशीर्वत् (वै० त्रि०) दुग्धयुक्त, दुधसे मिला हुआ। (पु०) आशीर्वान्। (स्त्री०) आशीर्वती।

आशीर्वाद (सं० पु०) आशिषो वादः, ६-तत्। इष्टार्थ आविष्करण वाक्य, दुवागोयी।

आशीविष (सं० पु०) आशीः सर्पदंष्ट्रा तत्र विषमस्य, पृषोदरादित्वात् सलोपः; यद्वा आश्यां विषमस्य। १ सर्प, सांप। 'आशीविषो विषधरश्चक्री व्यालः सरीसृपः।' (अमर) २ दर्वीकर सर्प, बड़े फनका सांप।

आशु (सं० त्रि०) अशू व्याप्तौ उण्, णित्वादुपधावृद्धिः। 'कृ वा पा जि मि स्वदि साध्यशूभ्य उण्।' उण् १।१। १ शीघ्र, सत्वर, तेज़, जल्दबाज़, जो फुरतीसे चलता हो। 'सत्वरं चपलं तूर्णमविलम्बितमाशु च।' (अमर) (अव्य०) २ शीघ्रतासे, तेज़ीके साथ, फौरन्। (सं० क्ली०) ३ वर्षाभव धान्य विशेष, आउस। 'आशुर्व्रीहौ च सत्वरे।' (विश्व) अन्य धान्यकी अपेक्षा शीघ्र पकनेसे आशु नाम पड़ा है। यह मधुर, पाकमें अम्ल, पित्तकर और गुरु होता है। (राजनिघण्टु)

आशुकचु—शीघ्र उत्पन्न होनेवाली घुयिया। (Colocasia Antiquorum) यह वृक्ष ब्रह्मदेश और भारतवर्षमें उत्पन्न होता है। सात मासके बाद मूलको निकाल लेते हैं। यह अरवी उत्कृष्ट और हितकर है। घुयियेका रस रक्तस्रावरोधी होता और वातको लाभ पहुंचाता है। पत्तीको भी अच्छी तरह उबाल कर खा सकते हैं। जड़की प्रायः तरकारी बनती है। त्रिवाङ्कोड़के लोग इसे बहुत खाते और मलयवाले स्वादको सराहते हैं। घुयिया बहुत पुष्ट होती और त्योहारकी मिठाईयोंमें पड़ती है।

आशुकवि (सं० पु०) शीघ्र कविता बनानेवाला व्यक्ति, जो शख़्स जल्द शायरी तैयार करता हो।

आशुकारिन् (सं० त्रि०) आशु शीघ्रं करोति, आशु-कृ-णिनि। शीघ्र कार्यकारी, जल्द काम करनेवाला।

आशुकारी (सं० पु०) पित्तोल्वण सन्निपातज्वर। इसमें अतिसार, भ्रम, मूर्च्छा, मुखपाक तथा दाह प्रभृति होता और गात्रमें रक्तविन्दु पड़ जाता है। (भावप्रकाश)

आशुकोपित (सं० पु०) मध्यदेश-जात बक्षक शालि, किसी क़िस्मका चावल।

आशुकोपिन् (सं० त्रि०) चण्डस्वभाव, ज़ूदरञ्ज, तुनकमिज़ाज, जिसे जल्द गुस्सा आ जाये। (पु०) आशुकोपी। (स्त्री०) आशुकोपिनी।

आशुक्रिया (सं० स्त्री०) आशु यथा तथा क्रिया, कर्मधा०। अविलम्बित व्यवहार, फुरतीका काम।

आशुग (सं० पु०) आशु शीघ्रं गच्छति, आशु-गम-ड। १ वायु, हवा। २ वाण, तीर। ३ सूर्य, आफ़ताब। 'आशुगौर्के शरे वायौ।' (हेम) भागवतके पञ्चम स्कन्धवाले २१वें अध्यायमें लिखते, कि सूर्य पञ्चदश दण्डमें २३७७५००० योजन चलते हैं। उपरोक्त अङ्कको चारसे गुण करनेपर ९५१०००० आता है।

अतएव षष्टिदण्डात्मक अहोरात्रमें ८५१०००० योजन चलनेसे सूर्यका नाम आशुग पड़ा है। किन्तु भास्कराचार्य पृथिवीकी यह गति बताते हैं। पृथिवीके चलनेसे सूर्य चलते बोध होता है। ४ शाक्य मुनिके पांचमें एक शिष्य। (त्रि०) ५ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला।

आशुगामिन् (सं० त्रि०) आशु गच्छति, आशु-गम-णिनि। १ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। (पु०) आशुगामी। २ सूर्य। ३ वायु। ४ शर। (स्त्री०) आशुगामिनी।

आशुङ्ग (वै० पु०) आशु गच्छति, आशु-गम वेदे निपातनात् खन् मुम्। १ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। (त्रि०) २ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला।

आशुगोत्थक (सं० क्ली०) ताम्र, तांबा।

आशुतोष (सं० पु०) आशु शीघ्रं तोषस्तुष्टिर्यस्य, बहुव्री०। १ शिव। स्वल्पकाल अर्चना करनेसे ही तुष्ट होनेपर शिवका नाम आशुतोष पड़ा है। (त्रि०) २ शीघ्रतोषी, जल्द खुश होनेवाला।

आशुतोष मुखोपाध्याय, Sir—कलकत्ता-भवानीपुर-निवासी स्वर्गीय डाक्टर गङ्गाप्रसाद मुखोपाध्यायके पुत्र। १८६५ ई०को इनका जन्म हुवा था। १८८५ ई०को यह गणितकी एम० ए० परीक्षामें उत्तीर्ण हुये। दूसरे वर्ष रायचन्द-प्रेमचन्द वृत्ति पायी। १८८८ ई०को हाईकोर्टमें वकालत करना आरम्भ किया। पर वत्सर कलकत्ता जनिवार्सिटीके अन्यतम सदस्य मनोनीत हुये। १८९९ और १९०१ ई०को कलकत्ता विश्वविद्यालयके प्रतिनिधि बन बङ्गीय व्यवस्थापक सभामें इन्होंने प्रवेश किया। फिर १९०३ ई०को उक्त सभाके प्रतिनिधिस्वरूप से बड़ेलाटकी व्यवस्थापकसभामें प्रवेशका अधिकार पाया। १८९४ ई०को इन्हें डि० एल० उपाधि मिला था। १९०४ ई०को यह कलकत्ता हाईकोर्टके विचारपति पदपर अधिष्ठित हुये। आज भी उसी पदपर प्रतिष्ठाके साथ आप काम करते हैं। १९०५ ई०से १९१४ ई० आठ वर्ष तक कलकत्ता विश्वविद्यालयके वाईस चान्सलर (Vice-Chancellor) पदपर बैठ इन्होंने शिक्षा-संस्कार सम्बन्धमें अनेक कार्य किये। १९०८ ई०को यह एशियाटिक सोसायिटीके सभापति रहे। इनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी है। नवद्वीपके पण्डितोंने इन्हें 'सरस्वती' उपाधि एवं सरकारने संस्कृत-परीक्षा बोर्डके सभापतिका आसन दिया है। भारत-सम्राट्ने भी इन्हें 'सर' (Sir) उपाधि प्रदानकर सम्मानित किया है। बङ्गीय साहित्यपर इन्हें विशेष अनुराग रहता है। एक वर्षतक यह कलकत्ता साहित्य-सभाके सभापति और बङ्गीय-साहित्यपरिषत्के अन्यतम सहकारी सभापतिके पदपर अधिष्ठित थे। १९०५ ई०को यह उत्तरबङ्ग साहित्य-सम्मेलनके सभापति और १९१६ ई०को बङ्गीय साहित्य-सम्मेलनके सभापति बने। वर्तमान १९१७ ई०को सिंहलको महास्थविरमण्डलीने इन्हें 'सम्बुद्धागमचक्रवर्ती' उपाधि प्रदान किया है।

आशुत्व (सं० क्ली०) शीघ्रता, जल्दी, फुरती, तेज़ी।

आशुप (सं० पु०) वंशविशेष, किसी किस्मका बांस।

आशुपत्री (सं० स्त्री०) आशु पत्रं यस्याः, बहुव्री० गौरादित्वात् ङीष्। शणकी लता, कुंदरूकी बेल।

आशुपत्व, आशुपत्वन् देखो।

आशुपत्वन् (वै० पु०) आशु पतति, आशु-पत्-वनिप्। शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। आशुपत्वरी।

आशुफल (सं० पु०) १ शाक प्रभृति, सब्ज़ी वग़ैरह। २ हठयोग। ३ अस्त्र विशेष, किसी किस्मका हथियार।

आशुमण्ड (सं० पु०) आशु-भक्तमण्ड, आउस चावलका मांड। यह ग्राही, मधुर, कफकर, तर्पण, क्षयदोषघ्न और शुक्रवर्धन होता है। (अत्रिसंहिता)

आशुमत् (वै० त्रि०) आशु शीघ्रं विद्यतेऽस्य, आशु-मतुप्। १ शीघ्रतायुक्त, जल्दबाज़। (अव्य०) २ शीघ्रतापूर्वक, जल्द। (पु०) आशुमान्।

आशुया (वै० त्रि०) १ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। (अव्य०) २ शीघ्रतापूर्वक, जल्द।

आशुरथ (वै० त्रि०) शीघ्रगामी रथ रखनेवाला, जिसके पास जल्द चलनेवाली गाड़ी रहे।

आशुव्रीहि (सं० पु०) कर्मधा०। आशुधान्य, आउस, बरसातमें पैदा होनेवाला चावल।

आशुशुक्षणि (वै० पु०) आ-शुष-सन्-अनि। १ अग्नि। 'रोहिताश्वो वायुसखा शिखावानाशुशुक्षणिः।' (अमर) २ वायु। (त्रि०) ३ दीप्तिमान्, चमकदार।

आशुषाण (सं० त्रि०) आ-शुष बाहुलकात् कानच्। सम्यक् शुष्क होनेवाला, जो अच्छीतरह सूख जाता हो।

आशुषेण (वै० त्रि०) शीघ्रगामी वाण रखनेवाला, जिसके पास जल्द चलनेवाला तीर रहे।

आशुहेमन् (वै० पु०) शीघ्रगामी अग्नि।

आशुहेमा, आशुहेमन् देखो।

आशुहेषस् (वै० त्रि०) आशु हेषते, आशु-हेष-असुन्। सर्वधातुभ्योऽसुन्। उण् ४।१८८। १ शीघ्र शब्दायमान, जल्द आवाज़ देनेवाला। २ शब्दकारी अश्वयुक्त, जिसके हिनहिनानेवाला घोड़ा रहे।

आशू (वै० त्रि०) आशु वेदे पृषोदरादित्वात् दीर्घः। शीघ्र, जल्दबाज़, तेज़।

आशेकुटिन् (सं० पु०) आशेतेऽस्मिन्, आ-शी-विच् स इव कुटति णिनि। पर्वत, पहाड़।

आशेकुटी, आशेकुटिन् देखो।

आशोकेय (सं० त्रि०) अशोक संख्यादित्वात् ढञ्। १ अशोक वृक्षके निकटस्थ, अशोक पेड़के पास होनेवाला। अशोकाया अपत्यम्, ढक्। २ शोकरहित स्त्रीसे उत्पन्न। (स्त्री०) ङीन्। शार्ङ्गरवाद्यञो ङीन्। पा ४।१।७३। आशोकेयी।

आशोब (फ़ा० पु०) नेत्रपीड़ा, आंखका दर्द।

आशोषण (सं० क्ली०) शोषणकार्य, सूखनेका काम, सुखायी।

आशौच (सं० क्ली०) अशुचेर्भावः, अण्। नञः शुचीश्वरादि। पा ७।३।३०। अमेध्यता, कालुष्य, नापाकी, गन्दगी।

आश्चर्य (सं० क्ली०) आ-चर-यत्-सुट्। आश्चर्यमनित्ये। पा ६।१।१४७। १ अद्भुत, ताज्जुब। २ विस्मयरस, तस-रुफ़, परच। ३ अद्भुत रूप, अनोखी सूरत। 'विस्मयोऽद्भुत माश्चर्यम्।' (अमर) (त्रि०) ४ आश्चर्यान्वित, ताज्जुब-अङ्गेज़, अनोखा। (अव्य०) ५ अद्भुत, अजीब तरहसे, निराले ढङ्गपर।

आश्चर्यता (सं० स्त्री०) विस्मय, ताज्जुब, अनोखापन।

आश्चर्यत्व (सं० क्ली०) आश्चर्यता देखो।

आश्चर्यभूत (सं० त्रि०) अद्भुत, अजीब, अनोखा।

आश्चर्यमय, आश्चर्यभूत देखो।

आश्चर्यित (सं० त्रि०) विस्मयाकुल, मुताज्जिब।

आश्चोतन, आश्च्योतन देखो।

आश्च्योतन (सं० त्रि०) सम्यक् श्चोतति, श्च्योतति वा, आ-श्चुत श्च्युत वा ल्यु। १ सम्यक् क्षरणशील, खूब टपकनेवाला। (क्ली०) भावे ल्युट्। २ सम्यक् क्षरण, खासा छींटा। ३ नेत्रसेचन, आंखको पलकपर घी वग़ैरहका लगाव। ४ चक्षुःपूरण, आंखमें दवा वग़ैरहका डालना। आश्च्योतन कार्य कभी निशामें नहीं होता। नेत्रमें क्वाथ, चौद्र, आसव और स्नेहके बिन्दुका डाला जाना आश्च्योतन कहाता है। लेखनमें आठ, स्नेहनमें दश और रोपणमें बारह बिन्दु मात्रा पड़ती है। (वैद्यकनिघण्टु)

आश्म (सं० पु०) अश्मनो विकारः, अण् वा टिलोपः। १ प्रस्तरविकार, पत्थरका बर्तन, खिलौना वग़ैरह। (त्रि०) २ प्रस्तरमय, सङ्गीन्, पत्थरीला।

आश्मक (सं० पु०) अश्मना कायति, अश्मन्-कै-क। साल्व देशका ग्राम विशेष।

आश्मकि (सं० त्रि०) आश्मके भवम्, इञ्। साल्वावयव-प्रत्यग्रथकलकूटाश्मकादिञ्। पा ४।१।१७३। आश्मक ग्रामजात, आश्मक गांवका पैदा।

आश्मन (सं० पु०) अश्मनः सूर्यसारथेरपत्यम्, अण्। १ सूर्यसारथिके पुत्र। अश्मनो विकारः, अण् वा टिलोपाभावः। २ प्रस्तरविकार, पत्थरकी चीज़। (त्रि०) ३ प्रस्तरमय, सङ्गीन्, पथरीला।

आश्मन्य (सं० क्ली०) प्रस्तरके निकटस्थ देशादि, पहाड़ी मुल्क।

आश्मभारिक (सं० त्रि०) अश्मभारं हरति वहति आवहति वा, ठञ्। तद्धरति वहत्यावहति भाराद्वंशादिभ्यः। पा ५।१।५०। प्रस्तरहारक, प्रस्तरवाहक, पत्थरका ढेर रखनेवाला।

आश्मरथ्य (सं० पु०) अश्मरथस्य मुनेरपत्यम्, यञ्। अश्मरथमुनिके अपत्य। (स्त्री०) ङीप्। आश्मरथी।

आश्मरिक (सं० पु०) अश्मर्येव, स्वार्थे बाहुलकात् ठञ्। अश्मरीरोग, सङ्गमसाना, पथरी। अश्मरी देखो।

आश्मायन (सं० पु०) अश्मनो गोत्रापत्यम्, फञ्। अश्वादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०। अश्मन् नामक ऋषिके गोत्रापत्य। (स्त्री०) ङीप्। आश्मायनी।

आश्मिक (सं० त्रि०) भारतभूतमश्मानं हरति वहति आवयति वा, ठन्। प्रस्तरका भारहारक, वाहक वा आवाहक; सङ्गीन्, पथरीला।

आश्मेय (सं० पु०) अश्मनोऽपत्यम्, ढक्। अश्मन् नामक ऋषिके अपत्य।

आश्यान (सं० त्रि०) आ-श्यै-क्त। १ घनीभूत, जो गढ़ा पड़ गया हो। २ शुष्कप्राय, जो कुछ कुछ सूखा हो।

आस्र (सं० क्ली०) अश्रमेव, स्वार्थेऽण्। चक्षुःका जल, आंसू, आंखका पानी।

आश्रपण (सं० क्ली०) आ-श्रा-णिच्-पुक् करणे ल्युट्। पाककरण, वैपरवायीसे खाना पकानेका काम।

आश्रम (सं०-पु-क्ली०) आ सम्यक् श्रमो यत्र, आ-श्रम आधारे घञ्। १ मुनिगणका वासस्थान। २ मठ। 'आश्रमो व्रतीनां मठे। ब्रह्मचर्यादिचतुष्केऽपि।' (हेम) ३ तपोवन। ४ मुक्त व्यक्ति। परमेश्वरमें लीन होनेपर श्रम न रहनेसे मुक्त व्यक्तिको भी आश्रम कहते हैं। ५ परमेश्वर। ६ पाठशाला, मदरसा। ७ ब्रह्मचारी प्रभृतिका शास्त्रोक्त चार प्रकार धर्मविशेष।

'ब्रह्मचारी गृही वानप्रस्थो भिक्षुश्चतुष्टये। आश्रमोऽस्त्री।' (अमर)
"अनाश्रमी न तिष्ठेत् क्षणमात्रमपि द्विजः।
आश्रमेण विना तिष्ठन् प्रायश्चित्तीयते खलु॥" (दक्ष)
'गार्हस्थो भैक्षुकश्चैव आश्रमौ द्वौ कलौ युगे।" (महानिर्वाणतन्त्र)
"चत्वार्यब्दसहस्राणि चत्वार्यब्दशतानि च।
कलेर्यदा गमिष्यन्ति तदा त्रेतापरिग्रहः।" (व्यास)

महानिर्वाणतन्त्रके कथनानुसार कलिमें गार्हस्थ्य और भिक्षु दो भिन्न अन्य आश्रम नहीं होता। व्यासके मतमें ४४०० वर्ष कलियुग बीतनेपर तीन ही आश्रम रह जायेंगे। अवशेषको लोग क्षीणबल एवं अल्पायु तथा अशेष रोगसे आक्रान्त होनेपर वानप्रस्थ किंवा सन्न्यास आश्रम रख न सकेंगे। द्विजको एकक्षण भी आश्रमहीन न रहना चाहिये। आश्रम न रखनेसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है। ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और सन्न्यास चार आश्रम होते हैं।

आश्रमगुरु (सं० पु०) आश्रमाणां ब्रह्मचर्यादीनां गुरुर्नियन्ता, ६-तत्। १ आश्रमनियन्ता, राजा। आश्रमस्य मठस्य तपोवनस्य वा गुरुः स्वामी तत्रस्थ छात्राणामुपदेष्टा वा, ६-तत्। २ तपोवनस्वामी। ३ मठस्थ किंवा तपोवनस्थ छात्रगणका उपदेष्टा।

आश्रमधर्म (सं० पु०) आश्रमविहितो धर्मः, शाक०-तत्। ब्रह्मचर्यादि विहित धर्म। धर्म छः प्रकारका होता है,—१ वर्णधर्म, २ आश्रमधर्म, ३ वर्णाश्रमधर्म, ४ गुणधर्म, ५ निमित्तधर्म और ६ साधारणधर्म। ब्राह्मणका कभी मद्यपान न करना इत्यादि वर्णधर्म; यज्ञके अग्निकी रक्षा, तज्जन्य काष्ठाहरण तथा भिक्षान्न द्वारा जीवनधारण ब्रह्मचर्यादि आश्रमधर्म; ब्राह्मणो प्रभृतिका भी पलाशदण्ड ग्रहण वर्णाश्रम धर्म; विहित कार्यके अकरण एवं निषिद्ध कार्यके आचरणको प्रायश्चित्तादि निमित्त-धर्म और अहिंसादि साधारण-धर्म है।

आश्रमपद (सं० क्ली०) आश्रम एव पदं स्थानरूपम्, कर्मधा०। १ मुनिगणका आश्रमरूप स्थान।

"परिक्रम्यावलोक्य च। इदमाश्रमपदं तावत् प्रविशामि।" (शकुन्तला)

२ ब्राह्मणके धार्मिक जीवनका समयविशेष।

आश्रमपर्वन् (सं० क्ली०) महाभारतके पन्द्रहवें पर्वका प्रथमांश।

आश्रमभ्रष्ट (सं० त्रि०) आश्रमसे गिरा हुवा, जो अपने आश्रमको छोड़ बैठा हो।

आश्रममण्डल (सं० क्ली०) मुनिगणके वासस्थानका वृत्त, साधुसन्तके रहनेकी जगह।

आश्रमवास (सं० पु०) आश्रमे वासः, ७-तत्। १ मुनिका तपोवनादिमें वास। आश्रमवासमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, अण्। २ धृतराष्ट्रादिके आश्रमवास अधिकारपर व्यास-रचित भारतान्तर्गत पर्वविशेष।

आश्रमवासिक (सं० क्ली०) आश्रमवासः प्रतिपाद्यतयास्त्यस्य, ठन्। १ भारतान्तर्गत व्यासरचित धृतराष्ट्रादिके वनवासका प्रतिपादक पर्वविशेष। (त्रि०) २ मुनिगणके वासस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आश्रमवासिन्, आश्रमवासी आश्रमसद देखो।

आश्रमसद् (सं० त्रि०) आश्रमे सीदति तद्वासित्वेन तमेवाश्रयति, आश्रम-सद-क्विप्। आश्रमवासी, तपोवनवास-रत वानप्रस्थादि।

आश्रमस्थान (सं० क्लो०) मुनिगणका वासस्थान, साधुसन्तके रहनेकी जगह।

आश्रमालय (सं० पु०) तपोवनवासी, साधु।

आश्रमिक (सं० त्रि०) आश्रमे नियुक्तः साधुः अस्त्यस्य वा, ठन्। आश्रमयुक्त, तपोवन-सम्बन्धीय। (स्त्री०) आश्रमिकी।

आश्रमिन् (सं० त्रि०) आश्रमोऽस्य अस्ति, इनि। आश्रमयुक्त। (पु०) आश्रमी। (स्त्री०) आश्रमिणी।

आश्रमोपनिषत् (सं० स्त्री०) आथर्वणोपनिषद् विशेष।

आश्रय (सं० पु०) आश्रीयते इति, आ-श्रि कर्मणि अच्। १ आश्रयणीय द्रव्य, सहारा लेने लायक चीज। २ अवलम्बन, सहारा। ३ रक्षाकर्ता, हिफ़ाजत रखनेवाला। आश्रीयतेऽस्मिन्, आधारे अच्। ४ आधार, ज़र्फ़, बरतन। ५ गृह, मकान्। ६ विषय, मामला। ७ शत्रु से पीड़ित होनेपर बलवानके आश्रयरूप छः प्रकारमें राजाका गुणविशेष। भावे अच्। ८ शरण, पनाह। ९ अधिकार, इख़्तियार। १० आयत्ति, बहाना। ११ सम्पर्क, लगाव। १२ ग्रहण, लेनेका काम। १३ संयोग, मेल। १४ सम्बन्ध, ताल्लुक़। १५ उचित कार्य, मुनासिब काम। १६ व्याकरणानुसार क्रियाका कर्ता, फ़ेलका फ़ायल। १७ मूल, जड़। १८ बौद्ध मतानुसार पञ्च ज्ञानेन्द्रिय। समासान्तमें यह शब्द आधारका बोधक है। यथा—अष्टगुणाश्रय, आठ गुणपर टिका हुवा।

आश्रयण (सं० क्लो०) आ-श्रि-ल्युट्। १ सम्यक् सेवा, खासी खिदमत। २ अवलम्बन, सहारा। (त्रि०) कर्तरि ल्युट्। आश्रयकर्ता, सहारा पकड़नेवाला। (स्त्री०) ङीप्। आश्रयणी।

आश्रयणीय (सं० त्रि०) आश्रीयते, आ-श्रि कर्मणि अनीयर्। आश्रय लेने योग्य, जिसके सहारे रहना मुनासिब ठहरे।

आश्रयतः (सं० अव्य०) आश्रयसे, सहारा पकड़के।

आश्रयत्व (सं० क्लो०) आश्रयता, आधारत्व, सहारा लेनेका काम।

आश्रयभुज्, आश्रयाश देखो।

आश्रयभूत (सं० त्रि०) आश्रयदाता, सहारा देनेवाला।

आश्रयलिङ्ग (सं० त्रि०) अपने सम्बन्धी शब्दसे लिङ्गमें समान रहनेवाला, जो अपने हवालेके लफ़्ज़से जिन्समें मिलता हो।

आश्रयवत् (सं० त्रि०) आश्रयोऽस्त्यस्य, मतुप् मस्य वत्वम्। आश्रययुक्त, सहारेपर टिका हुवा। (पु०) आश्रयवान्। (स्त्री०) ङीप्। आश्रयवती।

आश्रयाश (सं० पु०) आश्रयं काष्ठादिकं अश्नाति; आश्रय-अश-अण्, उप० समा०। १ अग्नि, आग, अपने आश्रय काष्ठादिको दहनरूपसे खानेपर अग्निका नाम आश्रयाश पड़ा है।

'आश्रयाशो बृहद्भानुः कृशानुः पावकोऽनलः।' (अमर)

२ चित्रकवृक्ष, चीतका पेड़। ३ कृत्तिकानक्षत्र। (त्रि०) ४ आश्रयनाशक, सहारेको तोड़नेवाला।

आश्रयासिद्ध (सं० पु०) आश्रयोऽसिद्धो यस्य। न्यायोक्त हेत्वाभास, मुग़ालता, झूठी दलील।

आश्रयासिद्धि (सं० स्त्री०) आश्रयस्यासिद्धिः, ६-तत्। न्यायोक्त हेतुका दोषविशेष, दलीलका ऐब।

आश्रयिन् (सं० त्रि०) आश्रयति, आ-श्रि-इनि। आश्रय लेनेवाला, जो सहारा पकड़ता हो। (पु०)

आश्रव (सं० त्रि०) आशृणोति वाक्यं, आ-श्रु-अच्। १ आज्ञानुवर्ती, फ़रमांबरदार, बातको माननेवाला। (क्लो०) भावे अप्। २ अङ्गीकार, इक़रार, वादा। ३ क्लेश, आफ़त, थकावट। 'आश्रवो वचनस्थिते। प्रतिज्ञायाञ्च क्लेशे च।' (हेम) ४ नदी, धारा, दरया, बहाव। ५ दोष, क़ुसूर। ६ जैनमतसे पुण्याश्रव और पापाश्रव नामक संस्कार विशेष। इससे जीव बद्ध हो जाता है। ७ बौद्धमतानुसार कायाश्रव, भवाश्रव, दृष्टाश्रव और अविद्याश्रव नामक विषय विशेष। इसमें पड़नेसे मनुष्य मुक्ति नहीं पाता।

आश्राव (सं० पु०) आ-श्रु-णिच्-अच्। १ श्रावण, सुनानेका काम। २ अङ्गीकार, इक़रार, वादा।

आश्रावण (सं० क्लो०) आश्राव देखो।

आश्रि (सं० स्त्री०) आ-सम्यक् अश्रिः, प्रादि० समा०। १ सम्यक् कोण, खासा कोना। २ धारा, तलवारका किनारा।

आश्रित (सं० त्रि०) आश्रीयते, आ-श्रि-क्त। आश्रयप्राप्त, टिका हुवा। २ अवलम्बित, पकड़े हुवा। ३ अनुसृत, इस्तेमाल करनेवाला। ४ शरणागत, पनाह पाये हुवा। ५ वशीभूत, अधीन, ताबेदार, मातहत।

आश्रितत्व (सं० क्लो०) वश्यता, अधीनता, मातहती।

आश्रित्य (सं० अव्य०) आ-श्रि-ल्यप्। आश्रय लेकर, सहारा पकड़के।

आश्रिन् (सं० त्रि०) अश्रं नेत्रजलमस्त्यस्य, इनि। सुखादिभ्यश्च। पा ५।२।१३१। नेत्रजलयुक्त, आंसू भरे हुवा। (स्त्री०) ङीप्। आश्रिणी।

आश्रुत् (सं० त्रि०) आश्रु भावे क्विप्। १ अङ्गीकार, इक़रार। (त्रि०) कर्तरि क्विप्। २ अङ्गीकारकर्ता, इक़रार करनेवाला।

आश्रुत (सं० त्रि०) आ-श्रु-क्त। १ अङ्गीकृत, माना हुवा। २ सम्यक् श्रुत, खूब सुना हुवा। (क्लो०) ३ सुनानेकी पुकार।

आश्रुति (वै० स्त्री०) आ-श्रु-क्तिन्। १ श्रवण, सुनायी। २ अङ्गीकार, इक़रार।

आश्रुत्कर्ण (वै० त्रि०) चारो ओर कान लगानेवाला, जो हर तर्फ़ कान देता हो।

आश्रेय (सं० त्रि०) आ-श्रि-यत्। आश्रितव्य, सहारा दिये जाने क़ाबिल।

आश्रेष (वै० पु०) आलिङ्गन करनेवाला व्यक्ति, जो शख़्स गले लगाता हो। २ प्रेत, शैतान्। ३ अश्लेषा नक्षत्र।

आश्लिष्ट (सं० त्रि०) आ-श्लिष्-क्त। १ आलिङ्गित, हमागोश, गलेसे लगा हुवा। २ सम्बद्ध, मिला हुवा। ३ आलिङ्गन करनेवाला, जो गले लगाता हो। ४ संस्कृत, फैला हुवा। ५ प्रतिपादित, साबित किया हुवा।

आश्लेष (सं० पु०) आ-श्लिष्-घञ्, आ सम्यक् श्लेषः सम्बन्धः, प्रादिसमा०। १ हार्दिक सम्बन्ध, दिली लगाव। "सामीप्याश्लेषविषयैर्व्याप्त्याधारश्चतुर्विधः।" (मुग्धबोध) २ आलिङ्गन, हमागोशी, सीनेसे सीना लगाकर मिलनेकी हालत। ३ हस्तविशेष, किसी समासेका नज़ारा। वेदमें 'आश्रेष' बोलते हैं। ४ अश्लेषा नक्षत्र।

आश्लेषण (सं० क्लो०) आश्लेषैव स्वार्थेऽण्। अश्लेषा नक्षत्र।

आश्व (सं० क्लो०) अश्वानां समूहः, अण्। १ अश्वसमूह, घोड़ोंका झुण्ड। २ अश्वत्व, घोड़ेका काम या हाल। (त्रि०) अश्वेनोह्यते शैषिकः, अण्। अश्वस्येदं वाह्यम् अञ् वा। ३ अश्वके वहनीय, जिसे घोड़ा ले जा सके। ४ अश्वसम्बन्धी, घोड़ेके मुताल्लिक़। अश्वमूत्रसे श्लेष्मा, कृमि और दद्रु नष्ट होता है।

आश्वतर (सं० पु०) १ बुड़िलका गोत्रनाम। २ अश्वतरका अपत्य, अश्वका लड़का।

आश्वतराश्वि (सं० पु०) अश्वतरस्यापत्यम्, इञ्। बुड़िल मुनि।

आश्वत्थ (सं० क्लो०) अश्वत्थस्य फलम्, अण्। प्लक्षादिभ्योऽण्। पा ४।३।१६४। १ अश्वत्थफल, पीपलका मेवा। (त्रि०) अश्वत्थस्येदम्। २ अश्वत्थ सम्बन्धी, पीपलके मुताल्लिक़।

आश्वत्थिक (सं० पु०) अश्वत्थेन युक्ता पौर्णमासी, अण् निपातनात् तस्य ठक्। १ चान्द्र आश्विनमास। (त्रि०) २ अश्वत्थसम्बन्धीय, पीपलके मुताल्लिक़।

आश्वत्थी (सं० स्त्री०) आश्वत्थ-ङीप्। १ शाखा विशेष। अश्व इव तिष्ठति, अश्व-स्था-क पृषोदरादित्वात्, अश्वत्थी अश्विनीनक्षत्रः तस्य अश्वमस्तकाकारत्वात् तेन युक्तः कालः। २ अश्विनी नक्षत्रयुक्त रात्रि।

आश्वत्थीय (सं० त्रि०) अश्व-स्था-छ। गहादिभ्यश्च। पा ४।२।१४१। अश्वत्थसम्बन्धीय, पीपलके मुताल्लिक़।

आश्वपत (सं० त्रि०) अश्वपतेरिदम्, अण्। अश्वपत्यादिभ्यश्च। पा ४।१।८४। अश्वपति-सम्बन्धीय, घोड़ेके मालिकसे ताल्लुक़ रखनेवाला।

आश्वपस् (वै० त्रि०) शीघ्र कर्मचारी, जल्द काम करनेवाला। "विभ्वना चिदाश्वपस्तरेभ्यः।" (ऋक् १०।७६।५)

आश्वपालिक (सं० पु०) अश्वपालस्यापत्यम्, ठक्। रेवत्यादिभ्यष्ठक्। पा ४।१।१४६। अश्वपालीका पुत्र।

आश्वपेजिन् (सं० त्रि०) अश्वपेजेन, प्रोक्तमधीते, णिनि।

शौनकादिभ्यश्छन्दसि। पा ४।३।१०६। १ अश्वपेज ऋषिप्रोक्त ग्रन्थाध्यायी, अश्वपेजकी बनायी किताब पढ़नेवाला। (पु०) २ अश्वपेज ऋषिके शिष्य।

आश्वबल (सं० त्रि०) अश्वबला द्वारा उत्पादित, जिसे अश्वबला पैदा करे। (स्त्री०) आश्वबली।

आश्वबाल (सं० त्रि०) अश्वबालाया श्चैषधेयम्, अश्वबाला-अण्। अश्वबाल निर्मित, अश्वबाल बेंतका बना हुवा।

आश्वभारिक (सं० त्रि०) अश्ववाह्यं भारमश्वभूतं भारं वा हरति वहति आवहति वा, वंशादित्वात् ठञ्। अश्ववाह्य वा अश्वरूप भारका हरणकर्ता।

आश्वमेधिक (सं० त्रि०) अश्वमेधाय हितम्, अश्वमेध-ठञ्। १ अश्वमेधयज्ञ-साधन, अश्वमेध यज्ञमें लगनेवाला। (क्ली०) अश्वमेधमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, ठञ्। २ शतपथब्राह्मणान्तर्गत तृतीय प्रपाठक पञ्चाध्यायिरूप ग्रन्थविशेष। इस ग्रन्थके पांच अध्यायमें अश्वमेधका उत्पत्तिफल, धर्मविषय, अध्वर्यु, उद्गाता, ब्रह्मा और यजमानकी बात कही है। तीन अध्यायमें मन्त्रव्याख्याके साथ विशेष धर्म और शेष दो अध्यायमें धर्मान्तरके साथ पूर्वोक्त विषय सकल सन्निवेशित है। ३ युधिष्ठिरके अश्वमेध अधिकारपर व्यासकृत भारतान्तर्गत पर्वविशेष।

आश्वयुज् (सं० पु०) आश्वयुजी अश्विनीयुक्ता पौर्णमासी यस्मिन् अण्। १ शुक्लप्रतिपदादि अमावस्या पर्यन्त चान्द्र आश्विनमास। (त्रि०) २ अश्वयुज् नक्षत्रमें उत्पन्न।

आश्वयुज, आश्वयुज् देखो।

आश्वयुजक (सं० पु०) आश्वयुज्यामुप्ता माषः, वुञ्। आश्वयुज्या वुञ्। पा ४।३।४५। १ चान्द्र आश्विन पूर्णिमाको उप्त माष। कहा जाता, कि चान्द्र आश्विन पूर्णिमाको बोनेसे उड़द खूब जगता है। (त्रि०) २ चान्द्र आश्विन पूर्णिमाको बोया जानेवाला। (स्त्री०) आश्वयुजकी।

आश्वयुजी (सं० स्त्री०) अश्वयुजा अश्विनीनक्षत्रेण युक्ता पौर्णमासी, अण्-ङीप्। नक्षत्रेण युक्तः कालः। पा ४।२।३। आश्विनमासकी पौर्णमासी।

आश्वरथ (सं० त्रि०) अश्वेन युक्तो रथः अश्वरथस्तस्येदम्, पत्रपूर्वकत्वादञ्। अश्वके रथसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो घोड़ागाड़ीमें लगता हो।

आश्वलक्षणिक (सं० त्रि०) अश्वलक्षणं वेत्ति तज्ज्ञापकशास्त्रमधीते वा, ठक्। १ अश्वलक्षणाभिज्ञ, घोड़ेके भलेबुरे निशान् पहचाननेवाला। २ अश्वलक्षणबोधक शास्त्र अध्ययनकारी, जो घोड़ेके भलेबुरे निशान् बतानेवाली किताब पढ़ता हो। (पु०) ३ अश्वपाल, सायीस।

आश्वलायन (सं० पु०) अश्वं लाति गृह्णाति, अश्वला-क; अश्वलो मुनिभेदः तस्यापत्यम्, फक्। १ ऋग्वेदीय श्रौत और गृह्यसूत्रकारक एक ऋषि। यह शौनकके शिष्य रहे। शौनक इन्हें बहुत चाहते थे। इसीसे उन्होंने अपना बनाया सहस्रकाण्डात्मक ब्राह्मण-सन्निभ योगसूत्र आश्वलायनके नामसे ही चला दिया। उसी समयसे ग्रन्थका नाम आश्वलायन पड़ा है। (त्रि०) २ आश्वलायन सम्बन्धी। (स्त्री०) आश्वलायनी।

आश्वश्व (वै० त्रि०) आशु-अश्व। शीघ्रगामी अश्वयुक्त, जिसमें जल्द दौड़नेवाले घोड़े लगें। "य आश्वश्वा अमवद्वहन्त उते शिते।" (ऋक् ५।५४।१) 'आश्वश्वाः शीघ्रगाम्यश्वोपेताः'। (सायण)

आश्वश्व्य (वै० क्ली०) शीघ्रगामी अश्वात्मक बल, जल्द जानेवाले घोड़ोंकी ताक़त।

"उतत्यदाश्वश्व्यं यदिन्द्र।" (ऋक् ८।६।२४)

'आश्वश्व्यं शीघ्रगाम्यश्वसंघात्मकं बलम्।' (सायण)

आश्वसत् (सं० त्रि०) १ श्वास ग्रहण करनेवाला, जो सांस लेता हो। २ प्रबुद्ध, जो उठनेवाला। ३ आरोग्य पानेवाला, जो आराम हो रहा हो।

आश्वसित (सं० त्रि०) प्रोत्साहित, हौसलेमन्द, जिसे भरोसा दिया जा चुके।

आश्वायन (सं० पु०) अश्वस्य गोत्रापत्यम्, फञ्। अश्वनामक ऋषिके गोत्रापत्य। (स्त्री०) ङीप्। आश्वायनी।

आश्वावतान (सं० पु०) अश्वावताननामर्षेरपत्यम्, अञ्। अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ्। पा ४।१।१०४। अश्वावतान

नामक ऋषिके पुत्र। (स्त्री०) ङीप्। आश्वावतानी।

आश्वास (सं० पु०) आ-श्वस-घञ्। १ निर्वृति और आश्रयदान, तसल्लीदिही। २ सान्त्वना, दिलासा। ३ आख्यायिका, किस्सा। ४ परिच्छेद, बाब। 'आश्वासः स्यात् निर्वृतौ। आख्यायिका परिच्छेदे।' (हेम)

आश्वासक (सं० त्रि०) आश्वासयति, आ-श्वस-णिच्-ण्वुल्। १ आश्वासकारक, सान्त्वनाकारी, तसल्ली देनेवाला। (पु०) २ वस्त्र, पोशाक।

आश्वासन (सं० क्ली०) आ-श्वस्-णिच्-ल्युट्। सान्त्वना, भरोसा। (त्रि०) कर्तरि ल्युट्। २ आश्वासकारक, तसल्ली देनेवाला।

आश्वासनीय (सं० त्रि०) सान्त्वना देनेयोग्य, जिसे तसल्ली दी जा सके।

आश्वासयत् (सं० त्रि०) सान्त्वनाकारक, तसल्ली देनेवाला।

आश्वासित (सं० त्रि०) सान्त्वना पाये हुवा, जिसे तसल्ली दी जा चुके।

आश्वासिन् (सं० त्रि०) आ-श्वस-णिनि। १ प्रत्याशायुक्त, तसल्ली रखनेवाला। २ प्रसन्न करनेवाला, जो खुश करता हो। (पु०) आश्वासी। (स्त्री०) आश्वासिनी।

आश्वास्य (सं० त्रि०) आ-श्वस्-णिच्-यत्। १ सान्त्वनीय, तसल्ली दिये जाने क़ाबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ सान्त्वना देकर, तसल्लीके साथ।

आश्विक (सं० त्रि०) अश्वान् भारभूतान् हरति वहति आवहति वा, ठञ्। १ अश्वको हरण वा वहन करनेवाला, जो घोड़ा चुराता या ले जाता हो। (पु०) अश्वनिमित्तं संयोगः उत्पातो वा, ठक्। १ अश्वलाभसूचक संयोग, घोड़ेका फ़ायदा देखानेवाला मौक़ा।

आश्विन (वै० त्रि०) आशु व्याप्नो औणादिको विनि, ततो अण्। १ व्याप्त, मामूर, भरा हुवा।

"प्रत आश्विनीः पवमान।" (ऋक् ९।८६।४)

'आश्विनीर्व्याप्ताः।' (सायण)

२ अश्विदेवता-सम्बन्धीय। "मधिवालस्य आश्विनाः श्वेतः।" (वाजसनेयसं० २४।१) 'आश्विना: अश्विदेवत्याः।' (महीधर)

(पु०) ३ चान्द्र आश्विनमास, क्वारका महीना। इस मासकी अमावस्याको हिन्दू पितृलोकके उद्देशसे श्राद्ध करते हैं। शुक्लपक्षमें देवीपूजा और विजयादशमी होती है, जिसकी अपेक्षा दूसरा पर्व नहीं। नृत्य, गीत और वाद्यके उद्यमसे भारत आमोदित रहता है। आबाल-वृद्ध-वनिता सकलके मनमें जो आनन्द आता है, वह कहा जा नहीं सकता। पूर्णिमाको कोजागर लक्ष्मी जगाते हैं। ४ यज्ञीय कपाल, एक बरतन। ५ अश्विनीकुमार देवता-सम्बन्धीय यज्ञघृतादि द्रव्य विशेष। ६ अस्त्र, हथियार।

आश्विनी (सं० स्त्री०) अश्विनी अश्वाकारवता नक्षत्रेण युक्ता पूर्णिमा, अण्-ङीप्। १ आश्विन मासकी पूर्णिमा। २ इष्टकाविशेष। ३ चिता।

आश्विनेय (सं० पु०) अश्विन्याः घोटकाकारवत्याः संज्ञायाः अपत्यम्, ढक्। स्त्रीभ्योढक्। पा ४।१।१२०। १ अश्विनीकुमारद्वय। तयोरेकैकस्यापत्यम्, अण्। २ नकुल। ३ सहदेव। अश्विनके पाण्डुराजपत्नी माद्रीसे उत्पादन करनेपर दोनो पुत्रोंका नाम आश्विनेय पड़ा है। अश्वस्यैकाऽगमः पन्थाः। ४ अश्वके जाने योग्य पथ, जिस राहसे घोड़ा निकल सके।

आश्वीन (सं० पु०) अश्वस्यैकाऽगमः पन्थाः, खञ्। अश्वस्यैकाहगमः। पा ५।२।१९। अश्वके एक दिनमें जाने योग्य पथ, जिस राहसे घोड़ा एक रोज़में निकल सके।

आश्वीय (सं० क्ली०) अश्वसमूह, घोड़ोंका झुण्ड।

आश्वेय (सं० पु०) अश्वो देवता अस्य, ढक्। १ अश्वो देवता सम्बन्धीय घृतादि। २ अश्वोके अपत्य।

आषाढ़ (सं० पु०) आषाढ़ा-नक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी आषाढी सा अस्मिन् मासे, अण्। साऽस्मिन् पौर्णमासीति संज्ञायाम्। पा ४।२।२१। १ स्वनामख्यात चान्द्रमास विशेष। कृषिशास्त्रमें ठहराया जाता, कि आषाढ़ मासमें किस समय धान्य बोनेसे शस्यका शुभाशुभ आता है। कृषिपराशरके मतानुसार आषाढ़ मासकी पूर्णिमाको पूर्व दिक्से वायु चलनेपर अधिक वृष्टि होती है। किन्तु उसके अग्निकोणको सरक जानेसे शस्य मारे पड़ता है। दक्षिण दिक्से वायु बहनेपर वृष्टि नहीं

आती। फिर नैर्ऋत कोणमें वायु जानेसे भी धान्यादि शस्यकी हानि होती है। पश्चिम दिक्से वायुचलनेपर जल पड़ता है। वायुकोणमें वायुके आनेसे झड़ लगती है। यदि उत्तरकी ओरसे वायु चलता, तो सकल पृथिवीमें धान्यादि शस्य भर जाता है। ईशान कोणमें भी वायुके आनेसे प्रचुर शस्य उपजता है। आषाढ़ मासकी शुक्ल नवमीको वायुवर्षण (तूफान) बढ़नेसे पानी पड़ता है और वायु बन्द रहनेसे बूंद नहीं टपकता। इस नवमीको उदयाचल निर्मल रहनेसे सूर्यदेव अपना समय विधान करते हैं। ऐसे समय सूर्यका मण्डल देखते हैं। सूर्य यदि मेघसे आवृत रहता, तो तुला राशिमें अस्त होनेतक मेघ गरजता है। 'शुचिरयं आषाढ़े।' (अमर)

आषाढ़ी पूर्णिमा प्रयोजनमस्य, अण्। २ व्रतियोंके लेने योग्य पलाशदण्ड। 'पलाशो दण्ड आषाढ़ो व्रते।' (अमर) ३ मलयपर्वत। 'आषाढ़ो मलयगिरौ व्रतिदण्डे च मासि च।' (हेम)

आषाढ़क (सं० पु०) आषाढ़ एव, स्वार्थे कन्। १ आषाढ़मास। २ पलाश बीज।

आषाढ़भव (सं० पु०) आषाढ़ायां नक्षत्रे भवति, आषाढ़ा-भू-अच्। १ मङ्गलग्रह, मिरीख, जम्माद-फलक। २ आषाढ़मासजात और आषाढ़ाभू शब्द भी इसी अर्थमें आता है।

आषाढ़ा (सं० स्त्री०) १ राशिचक्रस्थित विंशतितम नक्षत्र, पूर्वाषाढ़ा। २ एकविंशतितम नक्षत्र, उत्तराषाढ़ा। उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें जन्म होनेसे मनुष्य दाता, दयावान्, सत्कर्मी और पुत्रभार्यादि सुखसम्पन्न रहता है।

आषाढ़ाभू (सं० पु०) आषाढ़ायां भवतीति, आषाढ़ा-भू-क्विप्। मङ्गलग्रह। 'मङ्गलोऽङ्गारकः कुजः। आषाढ़ाभूर्नवार्चिष।' (हेम) (त्रि) २ आषाढ़ानक्षत्र जात।

आषाढ़ि (सं० स्त्री०) आ-सह-क्तिन्; पृषोदरादित्वात् षत्वम्, ओकारत्वाभावश्च। १ सम्यक् सहन, खासी बरदाश्त। २ रतिदेवी।

आषाढ़िका (सं० स्त्री०) राक्षसी विशेष।

आषाढ़ी (सं० स्त्री०) आषाढ़या नक्षत्रेण युक्ता पूर्णिमा, अण् टिड्ढाणित्यादिना ङीप्। १ आषाढ़ मासकी पूर्णिमा। आषाढ़ीको कुछ धान्य तौलकर वायुमें स्थापन करते हैं। वायुकी आर्द्रतासे धान्यका परिमाण किञ्चित् बढ़नेपर सुवृष्टि होने और सुभिक्ष पड़नेका योग समझा जाता है।' २ यज्ञीय इष्टका-विशेष।

आषाढ़ीय (सं० त्रि०) आषाढ़ायां भवं तस्येदं इत्यत्वाद्वा, छ। १ आषाढ़ानक्षत्रमें उत्पन्न। २ आषाढ़-सम्बन्धीय।

आष्टम (सं० पु०) अष्टमो भागः, ञ। षष्ठाष्टमाभ्यां ञ च। पा ५।३।५०। अष्टमभाग, आठवां हिस्सा।

आष्टमातुर (सं० त्रि०) अष्टानां मातृणां अपत्यम्; अष्टन् मातृ-अण्, मातृशब्दस्य उकारान्तादेशः। मातु-रुत्संख्यासंभद्रपूर्वायाः। पा ४।१।११५। आठ माताका लड़का।

आष्टा (सं० स्त्री०) आ तिष्ठतेः घञ्-क षत्वम्। सुषामादित्वात्। पा ८।३।९८। दिक्, जानिब, तर्फ।

आष्टि (सं० पु०) अष्टानामपत्यम्, अष्टन्-इञ्। बाह्वादिभ्यश्चेति। पा ४।१।९५। आठजनका अपत्य विशेष।

आष्ट्र (सं० क्ली०) अश्नुते व्याप्नोति, अशू व्याप्तौ ष्ट्रन् वृद्धिश्च। असि-जि-गमि-नमि-हनिविश्यशां वृद्धिश्च। उण् ४।१५९। आकाश, आसमान्। 'आष्ट्रमाकाशम्।' (उज्ज्वलदत्त)

आष्ट्री (वै० स्त्री०) १ सुदीर्घवन, लम्बा जङ्गल। "हेतिः पक्षिणी न दधात्यस्मादष्ट्राम्।" (ऋक् १०।१६५।३) 'आष्ट्रां व्याप्तायामरण्यान्याम्।' (सायण) २ भोजनगृह, बावरचीखाना।

आष्ठा (सं० स्त्री०) देश, प्रान्त, मुल्क।

आस् (सं० अव्य०) आ-अस-क्विप्, आस्-क्विप् वा। १ स्मरणसे, याद करके। २ आपेक्षापूर्वक, बनिस्बत। ३ समन्तात्, चारो ओर। ४ कोप, गुस्सेसे। 'आः समन्तात् प्रकोपयोः।' (हेम) ५ पीड़ासे गर्वके साथ गरजके, दर्दसे गुरूरके साथ जोरमें चिल्लाकर। ६ खेद, अफ़सोस। (वै० पु०) मुख, मुंह, चेहरा।

आस (सं० पु०) आस्-घञ्। १ आसन, बिछौना। २ स्थिति, हालत। ३ उपवेशन, बैठक। अस्यते क्षिप्यते अनेन, अस करणे घञ्। ४ धनुः, कमान्। अस क्षेपे भावे घञ्। ५ निक्षेप, फेंकफांक। ६ बैठनेका स्थान। ७ धूलि, खाक। (हिं० स्त्री०) ८ आशा, उम्मेद।

८ कामना, चाह। १० आधार, टेक। ११ दिक्, तर्फ़।

आसंसार (सं० वि०) १ नित्य परिवर्तनशील, बराबर बदलते रहनेवाला। (अव्य०) २ संसारके नाश-तक, जबतक दुनिया रहे।

आसकत (हिं० पु०) आलस्य, सुस्ती, ताक़तका न रहना।

आसकती (हिं० वि०) अलस, सुस्त, ताक़त न रखनेवाला।

आसक्त (सं० त्रि०) आ-सन्ज-क्त। १ आसक्तियुक्त, लगा हुवा। २ अन्य विषय परित्यागकर एक ही नियममें निविष्ट, मुश्ताक़, चाहनेवाला। (अव्य०) ३ अनवरत, लगातार, हमेशा। (क्ली०) ४ सम्यक् सम्बन्ध, खासा लगाव। 'तत्परे प्रसितासक्तौ।' (अमर)

आसक्तचित्त (सं० त्रि०) अनुरक्त, मुश्ताक़, दिलको लगाये हुवा।

आसक्तचेतस् (सं० त्रि०) किसी विषयपर हृदयको लगाये हुवा, जिसका दिल किसी बातपर अटका रहे।

आसक्तमनस्, आसक्तचेतस् देखो।

आसक्ति (सं० स्त्री०) आ-सन्ज-क्तिन्। १ अन्य विषयको छोड़ एक ही विषयका अवलम्बन, लगाव। (वै० स्त्री०) २ पथस्थापन, राह डालनेका काम। (अव्य०) ३ अभिप्रायपूर्वक, मतलबसे।

आसङ्ग (सं० पु०) आ-सन्ज-घञ्। १ अभिनिवेश, लगाव। २ प्राप्त वा उपस्थित विनाशि-वस्तुका रक्षाभिलाष, मिट जानेवाली मिली या हाज़िर चीज़के बचानेका इरादा। ३ भोगाभिलाष, ऐशकी ख़ाहिश। ४ कर्तृत्वाभिमान, कारगुज़ारीका घमण्ड। ५ अन्य विषयको छोड़ एक ही विषयपर चित्तका अभिनिवेश, दूसरी बातको हटा एक ही बातपर दिलका जमाव। ६ सम्यक् सम्बन्ध, खासा ताल्लुक़। ७ लगाने योग्य सौराष्ट्रमृत्तिका। (वै० पु०) ८ पथस्थापन, राहबन्दी। (त्रि०) ९ अनवरत, मुदामी। (अव्य०) १० सदा, हमेशा, लगातार।

आसङ्गत्व (सं० क्ली०) न सङ्गतं असङ्गतम् तस्य भावः, त्व् नोत्तरपदद्वयं। सङ्गताभाव, असम्बन्ध, अपार्थकत, जुदायी।

आसङ्गा (सं० स्त्री०) सौराष्ट्रमृत्तिका, सौराष्ट्र देशकी मट्टी।

आसङ्गिनी (सं० स्त्री०) आसङ्गः सातत्यमस्या अस्ति, इनि-ङीप्। वात्यासमूह, चक्रवायु, गर्दबाद, बगूला, झोंका।

आसङ्गिम (सं० पु०) आसङ्गे भवः, डिमच्। कर्णबन्धनाकृति विशेष, किसी क़िस्मकी पट्टी। कर्णबन्धनकी आकृति पन्द्रह प्रकार होती है। उसमें जिसका मध्यभाग लम्बा और एक कोणयुक्त रहता, वह आसङ्गिम बजता है। (सुश्रुत)

आसञ्जन (सं० क्ली०) आ-सन्ज-ल्युट्। १ आसङ्ग, सोहबत। २ सम्यक् सम्बन्ध, खासा लगाव। ३ योजना, जोड़।

आसञ्जित (सं० त्रि०) आ-सन्ज-णिच्-क्त-इट्। संयोजित, लगा हुवा।

आसड़—एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार। बालचन्द्रकृत विवेकमञ्जरीकी टीकामें लिखा है,—

आसड़ प्रसिद्ध जैनाचार्य अभयदेव सूरिके शिष्यने भिल्लमालवंशीय कटुकराजके औरस और अनलदेवीके गर्भसे जन्म लिया था। इन्हें लोग कविशोभाशृङ्गार कहते थे। इनके पृथिवीदेवी और जैतल्लदेवी दो स्त्री रहीं। इन्होंने मेघदूतकी टीका, कितने ही जिनस्तोत्र तथा स्तुति, धर्मग्रन्थ उपदेशकुण्डली और विवेकमञ्जरी बनायी है।

आसते (हिं० क्रि० वि०) १ आहिस्ता, आहिस्ता, धीरे-धीरे, ज़ोर न देकर। २ होकर।

आसत्ति (सं० स्त्री०) आ-सद्-क्तिन्। १ सङ्गम, मेल। २ लाभ, फ़ायदा। 'आसत्तिः सङ्गमे लाभे।' (हेम) ३ नैकट्य सम्बन्ध, पासका मेल। ४ न्यायमतसे प्रत्यक्षजनक सन्निकर्ष, दो लफ़्ज़ और उनके मानेके बीचका ताल्लुक़।

"वाक्यं स्याद् योग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्तः पदोच्चयः।" (साहित्यदर्पण)

योग्यता, आकाङ्क्षा और आसत्तियुक्त पदसमूहको वाक्य कहते हैं। बुद्धिका विच्छेद न पड़ना ही आसत्ति है। "आसत्तिर्बुद्ध्यविच्छेदः।" (साहित्यदर्पण)

आसत्ति, योग्यता और आकाङ्क्षासे तात्पर्य समझ

पड़ता है। सन्निधान कारणको पदकी आसत्ति कहते हैं। "आसत्तिर्योग्यताकाङ्क्षा तात्पर्यंज्ञानमिष्यते।
कारणं सन्निधानन्तु पदस्यासत्ति रुच्यते॥" (भाषापरिच्छेद)

जिस पदार्थके साथ जिस पदार्थका अन्वय आवश्यक आता, उन्हीं दोनोके अव्यधानकी उपस्थिति का नाम कारण पड़ता है। इसीसे 'देवदत्तने आगवाले पर्वतो खाया' इत्यादि स्थानमें शब्दबोध नहीं होता। क्योंकि पर्वत, आगवाले और खाया शब्दके साथ 'देवदत्तने' पदके अव्यवधानसे अन्वय कैसे लगेगा। जिस पदार्थके साथ जिस पदार्थका अन्वय लगता, उसी पदार्थका अव्यवधानकी उपस्थितिका बोध होना आसत्ति कहाता है।

आसथा (हिं०) आस्था देखो।

आसथान, आस्थान देखो।

आसदन (सं० क्लो०) आ-सद-ल्युट्। १ प्राप्ति, याफ्त। २ नैकट्य सम्बन्ध, पासका तालुक़। ३ स्थान, बैठक। ४ उपवेशनकार्य, बैठ जानेकी बात।

आसन (सं० क्लो०) आस भावे ल्युट्। १ स्थिति, बैठक। २ स्वस्थानमें स्थितिरूप राजाके छः प्रकार गुणके अन्तर्गत गुण-विशेष, ठहराव। उभय पक्षके सैन्यका सामर्थ्य घटनेपर आसन (अपने-अपने शिविरमें विश्रामके निमित्त स्थिति) आवश्यक आता है। ३ जयेच्छु राजाका यात्रानिवर्तक व्यापार विशेष, दुश्मन्से किसी जगहका बचाव। मन्त्रीको परपक्ष और स्वस्वामीके सैन्यकी शक्ति तथा संख्या समान देख अपने राजासे आसन (एकत्रावस्थान) लेनेको बोलना चाहिये। क्योंकि पीछे सैन्यसंख्या बढ़ा सकनेसे ही जयकी सम्भावना होती है। आस्यते उपविश्यतेऽत्र, आस आधारे ल्युट्। ४ उपवेशनका आधार कम्बलादि, बठनेकी चीज़, कुरसी, मोढ़ा, कम्बल वगैरह। "सहासनं गोत्रभिदाध्यवात्सीत्।" (भट्टि) ५ देवपूजाका उपचार विशेष। "आसनं स्वागतं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम्।" (तन्त्र) ६ जीवकद्रुम। ७ गजस्कन्ध, हाथीका कन्धा। ८ योगाङ्ग विशेष।

घेरण्डसंहिताके मतसे जीवजन्तुकी संख्या जितनी होती, आसनकी गणना भी उतनी ही निकलती है। पहले शिवने ८४ लक्ष आसन कहे थे। उनमें ८४ प्रकारके आसन प्रधान हैं। किन्तु मर्त्यलोकके लिये बत्तीस ही आसन शुभप्रद होते हैं।

"सिद्धं पद्मं तथा भद्रं मुक्तं वज्रञ्च स्वस्तिकम्।
सिंहञ्च गोमुखं वीरं धनुरासनमेव च॥
मृतं गुप्तं तथा मात्स्यं मत्स्येन्द्रासनमेव च।
गोरक्षं पश्चिमोत्तानमुत्कटं सङ्कटं तथा॥
मयूरं कुक्कुटं कूर्मं तथा चोत्तानकूर्मकम्।
उत्तानमण्डूकं वृक्षं मण्डूकं गरुड़ं वृषम्॥
शलभं मकरञ्चोष्ट्रं भुजङ्गञ्च योगासनम्।
द्वात्रिंशदासनानि * * मर्त्यलोके च सिद्धिदम्॥"

१ सिद्ध, २ पद्म, ३ भद्र, ४ मुक्त, ५ वज्र, ६ स्वस्तिक, ७ सिंह, ८ गोमुख, ९ वीर, १० धनु, ११ मृत, १२ गुप्त, १३ मत्स्य, १४ मत्स्येन्द्र, १५ गोरक्ष, १६ पश्चिमोत्तान, १७ उत्कट, १८ सङ्कट, १९ मयूर, २० कुक्कुट, २१ कूर्म, २२ उत्तानकूर्म, २३ उत्तानमण्डूक, २४ वृक्ष, २५ मण्डूक, २६ गरुड़, २७ वृष, २८ शलभ, २९ मकर, ३० उष्ट्र, ३१ भुजङ्ग और ३२ योग आसन होता है।

शिवसंहिताके मतमें ८४ प्रकार आसन हैं। उनमें १ सिद्ध, २ पद्म, ३ उग्र और ४ स्वस्तिक ही प्रधान पड़ता है। घेरण्डसंहितामें बत्तीसो आसन लगानेका विधि लिखा है,—

१ सिद्धासन।

स्थिरमति योगिगणके एक गुल्फ द्वारा योनिस्थानको दबाने, दूसरेको लिङ्गपर जमाने, छातीमें चिबुक अड़ाने और भ्रूके मध्यस्थानपर स्थिरदृष्टि लड़ानेसे सिद्धासन बनता है। इस आसनसे स्थिरमति योगिगण मोक्ष पाता है। शिवसंहिताके मतानुसार एक पैरकी एड़ी लिङ्गपर लगाने, उसीपर दूसरे पैरकी भी एड़ी जमाने और निश्चल, सरल एवं निरुद्विग्न बन ऊर्ध्व दृष्टि उभय भ्रूके मध्यपर लड़ानेसे सिद्धासन सधता है। इस आसनको लगानेसे योगीको अभीष्टलाभ होता है। अन्य सकल आसनको अपेक्षा सिद्धासन ही श्रेष्ठ है।

२ पद्मासन।

वाम उरूपर दक्षिण तथा दक्षिण उरूपर वाम

चरण रख पीठकी ओर घुमाकर दक्षिण हाथसे दक्षिण एवं वाम हाथसे वाम पैरका वृद्धाङ्गुल (अंगूठा) जोरसे पकड़ छातीपर ठुड्डी अड़ाने और नाककी नोकपर दृष्टि लगानेसे पद्मासन गंठता है। इससे समस्त रोग मिटता और पेटका अग्नि बढ़ता है। यह आसन बद्ध और मुक्त भेदसे दो प्रकारका होता है। जो ऊपर कहा, वह बद्ध है। केवल वाम ऊरुपर दक्षिण और दक्षिण ऊरुपर वाम चरण रख दोनो चरण पर दोनो हाथका तालु लगानेसे मुक्त पद्मासन पड़ता है। शिवसंहिताके मतानुसार दोनो पैर चितकर दोनो ऊरुपर लगाने, दोनो हाथ चितकर दक्षिण ऊरुपर वाम तथा वाम ऊरुपर दक्षिण हाथ बैठाने, नाककी नोकपर दृष्टि जमाने, दन्तमूलपर जिह्वा अड़ाने, चिवुक तथा वक्षः उठा क्रमशः साध्यमत नाकसे वायु खींच पेटमें ठहराने और पीछे धीरे-धीरे वायुको नाकसे ही निकालनेपर पद्मासन सजता है। इससे रोग छूट जाता है। फिर दोनो ऊरुपर लिङ्गके नीचेसे दोना पादतल मिलानेपर भी पद्मासन लगता है। पद्मासनसे योगीका समस्त कार्य सिद्ध होता और बन्धन छुटता है।

३ भद्रासन।

अण्डकोषके नीचे दोनो पैरकी एड़ी उलटी लगाने, दोनो पैरके अंगूठे पीछेसे पकड़ जालन्धर बांधने और नाककी नोकपर दृष्टि जमानेसे भद्रासन बैठता है। इससे भी सकल रोग नष्ट होता है।

४ मुक्तासन।

मलद्वारपर वामपदकी एड़ी रख उसपर दक्षिण पदकी एड़ी जमाने और मत्था तथा धड़ बिलकुल सीधा लगानेसे मुक्तासन बनता है। इससे कार्यसिद्धि होती है।

५ वज्रासन।

दोनो जङ्घा वज्र-जैसी बनाने और दोनो पैर मलद्वारकी दोनो ओर लगानेसे वज्रासन होता है। यह योगियोंको सिद्धि देता है।

६ स्वस्तिकासन।

उभय जानु तथा ऊरुके मध्य उभयपदका तल रख त्रिकोणाकार आसन बांधने और सीधे तौरपर स्वच्छन्द बैठनेसे स्वस्तिक सजता है। शिवसंहिताके मतानुसार जानु तथा ऊरुके मध्य दोनो पदतल भली भांति रख समान भावमें सुखसे बैठनेपर भी यह आसन लग जाता है। स्वस्तिकासनसे योगीका प्राणायामादि सकल कार्य सिद्ध होता है।

७ सिंहासन।

पैरकी दोनो एड़ी अण्डकोषके नीचे परस्पर विपरीत भावमें पिछली ओर ऊर्ध्वमुख निकालने, दोनो घुटने मट्टीपर रख उनपर व्यक्त भावसे मुख उठाने और जालन्धरबन्ध बना नाककी नोकपर दृष्टि जमानेसे सिंहासन लगता है। यह आसन रोगनाशन है।

८ गोमुखासन।

दोनो पैर मट्टीपर रख पीठकी दोनो ओर मिलाने और शरीर सीधा जमा गोमुख जैसा ऊपरको मुख उठानेसे गोमुखासन गंठता है।

९ वीरासन।

एक पैरको ऊरुपर और दूसरे पैरको पीछेकी ओर रखनेके वीरासन बनता है।

१० धनु आसन।

दोनो पैर लट जैसे सीधे फैलाने और दोनो हाथसे पीठकी ओर दोनो पैर पकड़ समस्त शरीर धनुःकी तरह टेढ़ा बनानेसे धनु आसन होता है।

११ शवासन।

मुर्देकी तरह चित हो मट्टीपर लोटनेसे ही शवासन बन जाता है। इससे श्रम मिटता और मन शान्त होता है। अन्य नाम मृतासन है।

१२ गुप्तासन।

दोनो घुटनोंके मध्य दोनो पैर खूब छिपा दोनो पैर ऊपर रखनेसे गुप्तासन गंठता है।

१३ मत्स्यासन।

मुक्त पद्मासन लगा दोनो कुहनीसे मत्था दबाने और चित हो पड़ जानेपर मत्स्यासन लगता है।

१४ पश्चिमोत्तानासन।

मट्टीपर दण्डाकार सीधे फैला दोनो पैर दोनो हाथसे पकड़ने और दोनो पैरपर घुटनेके नीचे

भाग मध्य मत्था रखनेसे पश्चिमोत्तानासन पड़ता है। दोनो पैर परस्पर असंलग्न रूपसे फैला और हस्तद्वय द्वारा अच्छीतरह पकड़ दोनो घुटनोंपर मत्था रखनेसे भी यह आसन जम जाता है। अपर नाम उग्रासन है।

१५ गोरक्षासन।

उभय जानु और ऊरुके मध्य दोनो पैर चित कर अप्रकाशित रूपसे जमाने, दोनो हाथ चितकर दोनो गुल्फ छिपाने और कण्ठकी सिकोड़ नाककी नोकपर दृष्टि लड़ानेसे गोरक्षासन बनता है। इससे समस्त कार्य सिद्ध होता है।

१६ मत्स्येन्द्रासन।

उदरकी पीठकी तरह सीधा कर वाम पद झुका दाहने घुटनेपर जमाने, उसपर दाहनी कुहनी लगाने और दाहने हाथपर मुख रख दोनो भ्रूके मध्यभाग पर दृष्टि बैठानेसे मत्स्येन्द्रासन ठहरता है।

१७ उत्कटासन।

दोनो पादकी वृद्धाङ्गुली द्वारा मृत्तिका पकड़ते हुये दोनो गुल्फ शून्यमें ठहराने और दोनो गुल्फपर गुह्यदेश जमानेसे उत्कटासन लगता है।

१८ सङ्कटासन।

वाम पद तथा वाम घुटना मट्टीपर रख और वाम पदका दक्षिण पदसे लपेट दोनो घुटनोपर हाथ बैठानेसे यह आसन जमता है।

१९ मयूरासन।

दोनो हाथके तालुसे भूमिको पकड़, दोनो कुहनी पर नाभिका पार्श्व लगा और मुक्तपद्मासनके न्याय पादद्वय पीछेकी ओर उठा शून्यमें दण्डाकार सम-भावसे खड़े होनेपर मयूरासन बंधता है।

२० कुक्कुटासन।

किसी मञ्चपर मुक्तपद्मासन लगा दोनो घुटने और ऊरुके मध्य दोनो हाथ रख दोनो कुहनोपर टिकनेसे यह आसन सिद्ध होता है।

२१ कूर्मासन।

अण्डकोषके नीचे दोनो गुल्फ परस्पर विपरीत भावमें रख गर्दन, मत्था और देह सीधाकर बैठनेसे कूर्मासन कहाता है।

२२ उत्तानकूर्मासन।

कुक्कुटासन लगा और दोनो हाथसे गर्दनको पिछाड़ी पकड़ कच्छपकी तरह चित हो जानेपर यह आसन जमता है।

२३ मण्डूकासन।

पदतलद्वयसे पीठके पर दोनो पदकी वृद्धअङ्गुलि परस्पर मिलाने और दोनो घुटने सम्मुख जमानेपर मण्डूकासन लगता है।

२४ उत्तानमण्डूकासन।

मण्डूकासन लगा और दोनो कुहनोसे मत्था पकड़ मेंढककी तरह चित हो पड़नेपर यह आसन निकलता है।

२५ वृक्षासन।

वाम ऊरुपर दक्षिण पद रख पेड़की तरह भूमि-पर सीधे तौरसे खड़े होनेपर वृक्षासन बंधता है।

२६ गरुड़ासन।

उभय जङ्घा तथा ऊरुद्वारा भूमि स्पर्शपूर्वक सुस्थिर हो दोनो घुटनोंपर दोनों हाथ रखनेसे गरुड़ासन गंठता है।

२७ वृषासन।

दक्षिण गुल्फपर गुह्यदेश लगा और उसकी वाम ओर वामपद उलटे तौरपर रख भूमि छूनेसे वृषासन बैठता है।

२८ शलभासन।

अधोमुख लेट तथा हस्तद्वय छातीपर रख उभय हस्तके तालु द्वारा भूमि छूने और दोनो पद शून्यमें आध हात ऊपर उठानेसे शलभासन सजता है।

२९ मकरासन।

अधोमुख लेट मट्टीपर छाती रख और पदद्वय फैला दोनो हाथसे मत्था पकड़नेपर मकरासन पड़ता है। इससे अग्नि वृद्धि होती है।

३० उष्ट्रासन।

अधोमुख लेट दोनो पैर पीठपर ले जाने तथा दोनो हाथसे पकड़ने और उदर एवं मुख गाढ़ रूपसे आकुञ्चित करनेपर उष्ट्रासन जमता है।

३१ भुजङ्गासन।

पैरके अंगूठेसे नाभि पर्यन्त भूमिपर रख दोनो

हाथके तालु द्वारा भूमि स्पर्शपूर्वक सर्पके न्याय ऊपर की ओर मस्था उठानेसे भुजङ्गासन लगता है। इससे भूख बढ़ती और बीमारी घटती है। कुण्डलिनी शक्ति भी भुजङ्गासन मारनेसे प्रसन्न होती है।

१२ योगासन।

दोनो पैर चितकर घुटने तथा दोनो हाथ चितकर इस आसन पर रखने और पूरक द्वारा वायु खेंच कुम्भक करते हुये नाककी नोक देखनेसे योगासन बनता है। इससे अच्छीतरह योगसाधन होता है।

शास्त्रोक्त आसन दान करनेके मन्त्र यह हैं,—

"पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति। (श्रुति) (पहले हाथमें पानी ले) "आसनमन्त्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः सुतलं छन्दः कूर्मो देवता आसनपरिग्रहे विनियोगः।"

(पात्रमें हाथका पानी डाल और कृताञ्जलि हो)

"पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्वञ्च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम॥" (तन्त्र)
"हेममयं महादिव्यं फणामणिसहस्रकम्।
कोटिसूर्यप्रतीकाशं गृहाणासनमीश्वर॥" (पुराण)

आसनपर्णी (सं० स्त्री०) अपराजिता, किसी क़िस्मकी जड़ी।

आसनसोल—बङ्गाल प्रान्तके वर्धमान ज़िलेका ग्राम। यह अक्षा० २३° ४२′ उ० और द्राघि० ८७° १′ पू० पर अवस्थित है। यहां ईष्ट-इण्डियन-रेलवेका बड़ा ष्टेशन बना है। आसनसोलसे कितना ही कोयला रानीगञ्ज जाता है।

आसना (सं० स्त्री०) आस-युच् अण्-टाप्। ण्यासश्रन्थो युच्। पा ३।३।१०७। १ स्थिति, उपवेशन, क़याम, रहास, बैठक। (हिं० क्रि०) २ उपस्थित रहना, होना। (पु०) ३ जीवकद्रुम, दोपहरियाका पेड़।

आसनादि (सं० पु०) आसनमादिर्यस्य, बहुव्रो०। तन्त्रोक्त पूजाङ्ग उपचार। यथा,—१ आसन, २ स्वागत, ३ पाद्य, ४ अर्घ्य ५ आचमनीय, ६ मधुपर्क ७ आचमन, ८ स्नान, ९ वचन, १० आभरण, ११ गन्ध, १२ पुष्प, १३ धूप, १४ दीप, १५ नैवेद्य और १६ वन्दन।

आसनी (सं० स्त्री०) आस आधारे ल्युट्-ङीप्। १ विपणि, दुकान्। २ स्थिति, क़याम, रहास। 'आसनी विपणौ स्थित्याम्।' (मेदिनी) ३ छोटा आसन, दुलीची, तिपायी वग़ैरह।

आसन्द (सं० पु०) आसीदत्यस्मिन्, आ-सद आधारे घञ्। १ वासुदेव, परब्रह्म। २ खट्टाभेद, किसी क़िस्मका पलंग। 'आसन्दो वासुदेवे स्यात् खट्टाभेदे च योषिति।' (मेदिनी)

आसन्दिका (सं० स्त्री०) क्षुद्र खट्टा, पलंगड़ी।

आसन्दी (सं० स्त्री०) आसद्यतेऽस्याम्, आ-सद निपातनात् गौरादित्वात् ङीष्। १ लघुखट्टिका, छोटा पलंग। २ कुरसी, आराम कुर्सी।

आसन्दीवत् (सं० त्रि०) आसन्दी अस्त्यर्थे मतुप्, मस्य वत्वम्। १ आसन्दीयुक्त, जिसके पलंग रहे। (पु०) आसन्दीमान्। ग्रामविशेष। (स्त्री०) ङीप्। आसन्दीवती।

आसन्न (सं० त्रि०) आ-सद-क्त। १ निकटस्थ, नज़दीक, लगा हुवा। 'समीपे निकटासन्नसन्निकृष्टसनीडवत्।' (अमर) (पु०) २ अस्तगत सूर्य, ग़ुरूब होनेवाला आफ़ताब।

आसन्नकाल (सं० पु०) आ सम्यक् सीदति यत्र; आ-सद-क्त, प्रादिसमा०। १ मृत्युकाल, मौतका वक़्त। (त्रि०) २ प्राप्त-समय, जिसके आख़िरी वक़्त आये।

आसन्नतरता (सं० स्त्री०) अधिकतर नैकट्य, ज्यादा नज़दीकी।

आसन्नता (सं० स्त्री०) सामीप्य, नज़दीकी।

आसन्नप्रसवा (सं० स्त्री०) प्राप्त-प्रसव-वेदना, बच्चा देने या जननेवाली औरत।

आसन्नभूत (सं० पु०) वर्तमान भूतकाल, माज़ी-क़रीब, हालका गुज़रा हुवा ज़माना। जैसे,—मैंने कविता बनायी है, आपने लेखनी उठायी है, उसने बात चलायी है। सामान्य भूतकी क्रियाके आगे हूं, हो, है वा हैं लगानेसे आसन्नभूत बनता है।

आसन्य (सं० त्रि०) आस्ये भवः यत्। मुखभव, मुंहमें रहनेवाला।

आसन्वत् (दे० त्रि०) उपस्थित, मौजूद, हाज़िर। (पु०) आसन्वान्। (स्त्री०) आसन्वती।

आसपास (हिं० क्रि० वि०) १ समीप नज़दीक, इधर-उधर। "धूपनकी बास आसपास बगरे रहैं।" (श्रीपति)

(वि०) २ निकटस्थ, करीब, लगा हुवा। (पु०) ३ प्रतिवेश हमसाया, पड़ोसी। "आप गये और आसपास।" (लोकोक्ति)

आसफ् उद्-दौला—१ अवध-नवाब शुजा-उद्-दौलाके ज्येष्ठ पुत्र। १७७५ ई०के जनवरी मास इन्होंने अपने पिताका उत्तराधिकार पाया और फैज़ाबादके बदले लखनऊको अपने राज्यकी राजधानी बनाया। १७८८ ई०की सन्धिके अनुसार यह पांच लाख रुपये ईष्ट-इण्डिया कम्पनीको प्रतिवत्सर देनेपर राजी हुये थे। उपरोक्त प्रबन्धके बाद अयोध्या प्रदेश शान्त पड़ा और राज्य दिन-दिन बढ़ने लगा। कुछ समयके उपरान्त सर जोन शोर गवरनर हुये थे। उन्होंने छल-बलमें नवाबसे अधिक धन पानेकी चेष्टा की। सहज रीतिसे कुछ मिलते न देख सर् जोन शोर साहबने नवाबकी विना अनुमति मन्त्री महाराज झाबूलालको पकड़ लिया। झाबूलाल ही अर्थलाभके पथमें कण्टक समझे गये थे। आसफुद्दौला रङ्ग-बिरङ्ग देख साढ़े पांच लाख रुपये नकद अधिक प्रति वर्ष देनेपर राज़ी हुये। कुछ दिन बाद किसी कारण वश यह विशेष रूपसे आहत किये गये थे। १७९७ ई०को २१वीं सितम्बरको आसफुद्दौला मरे और अपने बनाये लखनऊके इमाम-बाड़ेमें गड़े। इन्होंने उर्दू और फारसी भाषामें एक दीवान् बनाया है। आसफुद्दौला बड़े दानी रहे। अभीतक लोग कहा करते हैं,—"जिसे न दे मौला, उसे दे आसफुद्दौला।" (लोकोक्ति)

२ नवाब असद खान्। सिवा आसफुद्दौलाके इनका दूसरा उपाधि जुमुलतुलमुल्क रहा। तुर्कोंमें इनका वंश प्रसिद्ध है। असद खान्के पिता ईरान-सम्राट् शाह अब्बासके अत्याचारसे भारत भाग आये थे। जहांगीर बादशाहने उन्हें ऊंचे पदपर बैठाया, ज़ुल-फ़िक़ार खान्का उपाधि प्रदान किया और अपनी बेगम नूरजहान्के सम्बन्धीकी किसी लड़कीसे व्याह दिया। असद खान्को पहले इब्राहीम कहते थे। शाहजहांने शीघ्र ही ध्यान दे अपने वज़ीर आसफ़ खान्की लड़कीसे इनका विवाह करा दिया। १६७१ ई० अर्थात् आलमगीरके १५ वें वर्षतक यह बख़्शीके पदपर प्रतिष्ठित रहे। फिर इनका अधिक सम्मान बढ़ा था। पहले ४००० और पीछे ७००० सवार असद खानकी खिदमतमें रहने लगे। मन्त्री तथा ऊंचे दरजेके अमीरका पद भी मिल गया था। बहादुर शाहके समय यह वकील-मुतलक, और इनके लड़के इस्माईल अमीर-उल्-उमरा ज़ुलफ़िक़ार उपाधिके साथ मीर बख़्शी बने। किन्तु फर्रुखसियारके सिंहासनारूढ़ होनेपर असदखान् अपमानित हुये थे। इनकी जायदाद जब्त कर ली गयी। इस्माईल-का वध हुवा था। उस समयसे असदखान् नज़रबन्दकी तरह थोड़े अरसेपर अपना जीवन बिताने लगे। १७१५ ई०को इनकी मृत्यु हो गयी।

आसफ् खान्—१ अकबरके समयवाले एक सम्भ्रान्त व्यक्ति। इनका उपाधि अबदुल मजीद रहा। १५६५ ई०को इन्होंने बुंदेलखण्डके प्रान्तभागमें नर्मदा-तीर गढकोटपर आक्रमण मारा था। उस समय रानी दुर्गावती गढ़कोटकी अधीश्वरी रहीं। उन्होंने ससैन्य आसफ़ख़ान्के विरुद्ध अस्त्र उठाया। किन्तु इनकी गूढ़ नीतिसे वह हार गयीं थीं। आसफ़ख़ान्ने उन्हें पकड़नेकी चेष्टा चलायी। दुर्गावतीने सम्मान बना रखनेको खड्गाघातसे अपना शिर काट डाला था। इन्हें दुर्गावतीकी अतुल सम्पत्ति मिल गयी। सम्पत्तिके अधिकांशको आत्मसात् करनेके लिये चेष्टा चली। किन्तु गुप्तकाण्ड पकड़ जानेसे यह विद्रोही बन गये थे। फिर भी चित्तोर जीतनेपर वहां इन्हें जागीर मिली।

२ मिर्ज़ा बदी उज्ज़मान्के पुत्र। लोग इन्हें मिर्ज़ा जाफ़र बेग कहा करते थे। काज़वीन् नामक स्थानमें इन्होंने जन्म लिया। १५७७ ई०को आसफ़ख़ान् भारत आये थे। इनके मामा अकबर बादशाहके अमात्य रहे। उन्हींके अनुरोधसे यह बख़्शीगीरीके कार्यमें नियुक्त हुये थे। इनके मामाका उपाधि भी आसफ़ख़ान् रहा। उनके मरनेपर इन्हें वही उपाधि मिल गया। पहले इन्हें अलिफ़ख़ान् कहते थे। यह कवि और सुपण्डित रहे। मुल्ला अहमदके मरनेपर इन्होंने अकबरके आदेशसे 'तारीख़-अलफ़ी' नामक ऐतिहासिक ग्रन्थ लिखा। १५९८ ई०को अकबरने इन्हें प्रधान मन्त्री

बनाया था। जहांगीर बादशाहके राजत्वकाल आसफ़ख़ान्को महासम्मान मिला। इनका बनाया 'शीरीन् या खुसरो' नामक एक उत्कृष्ट काव्य विद्यमान है। १६१२ ई०को आसफ़ख़ान् मर गये।

३ नूरजहान् बेगमके भाई और सुप्रसिद्ध मन्त्री एतमाद्-उद्-दौलाके बेटे। नाम अबदुल हसन रहा। सिवा आसफ़ख़ान्के एतक़ाद ख़ान्, एमीनुद्दौला प्रभृति इन्हें कई उपाधि मिले थे। १६२१ ई०को एतमाद-उद्दौलाके मरनेपर बादशाह जहांगीरने इन्हें मन्त्री बनाया। इनकी कन्या अर्जुमन्द बानो बेगम या मुमताज महल शाहजहांको व्याही थीं। सिवा मुमताज महलके शायस्ता ख़ान्, मिर्ज़ा मसीह, मिर्ज़ा हुसेन और शाहनवाज़ख़ान् चार लड़के रहे। १६४१ ई०को १०वीं नवम्बरको आसफ़ख़ान् मरे और लाहोर नगरके सम्मुख रावी किनारे गड़े।

४ आसफ़ख़ान् जाफ़र बेगके चचे और आक़ा मुल्लांदके बेटे। अकबर बादशाहके समय यह बख़्शी रहे। १५७३ ई०को गुजरातसे जीतकर आनेपर आसफ़ने अब्बास ख़ान् उपाधि पाया था। १५८१ ई०को गुजरातमें इन्होंने शरीर छोड़ा।

आसबन्द (हिं० पु०) सूत्रविशेष, एक धागा। पटवे टूनूंमें बांध इसके सहारे आभूषण गूंथते हैं।

आसमान् (फ़ा० पु०) १ आकाश, फ़लक। २ वैकुण्ठ, बिहिश्त। "लंगड़ी कहे आसमान् पे घोंसला।" (लोकोक्ति)

आसमान्के तारे तोड़ना, आसमान्में थेगली लगाना देखो।

आसमान्-खोंचा (हिं० पु०) उत्थुच्च पदार्थविशेष, कोयी बहुत ऊंची चीज़। लम्बे लग्गे या धरहरे, ऊंचे आदमी और बहुत बड़ी नैवाले हुक्केको आसमान्-खोंचा कहते हैं।

आसमान् ताकना (हिं० क्रि०) आकाशको ओर देखना, फ़लकपर निगाह लड़ाना।

आसमान् पर चढ़ाना (हिं० क्रि०) १ उत्कर्ष देना, बढ़ाना। २ व्याजस्तुति करना, चापलूसी देखाना, फुसलाना।

आसमानपर थूकना (हिं० क्रि०) अनुचित कार्य करना, बेजा काम चलाना।

"आसमान्का थूका मुंहपर आवे।" (लोकोक्ति)

आसमान् पे क़दम रखना (हिं० क्रि०) अभिमान देखाना, अपनी बड़ायीका डङ्का बजाना।

आसमान् पे खंचना, आसमान् पे क़दम रखना देखो।

आसमान् पे दिमाग़ होना (हिं० क्रि०) अभिमानमें चूर रखना, मनमानी करना।

"नये नवाब आसमान् पे दिमाग़।" (लोकोक्ति)

आसमान्में छेद होना (हिं० क्रि०) अतिवृष्टि पड़ना, शदीद बारिश आना, ख़ूब ज़ोरसे बरसना।

आसमान्में थेगली लगाना (हिं० क्रि०) अपने कार्यको अति निपुणतासे करना, बादल फाड़ना।

आसमान्से गिरना (हिं० क्रि०) १ आकाशसे आना, फ़लकसे टूट पड़ना। २ विना श्रम प्राप्त होना, अचानक पा जाना। २ तुच्छ समझना, क़द्र न करना।

आसमान्से टक्कर खाना (हिं० क्रि०) अत्यन्त विशाल होना, बुलन्दीमें सबक़त ले जाना, आकाशको चूमना।

आसमान्से बातें करना, आसमान्से टक्कर खाना देखो।

आसमानी (फ़ा० वि०) १ आकाशीय, फ़लकी। २ आकाशवर्ण, नीलगूं, आबी। ३ आकस्मिक, नागहां, अचानक। (स्त्री०) ४ छनी हुयी भांग या ताड़ी। ५ कार्पासभेद, मिश्रकी एक कपास।

आसमानी ग़ज़ब (फ़ा० पु०) दैवी अनर्थ, फ़लकसे टूटी हुयी बला।

आसमानी गोला, आसमानी ग़ज़ब देखो।

आसमानी तीर (फ़ा० पु०) १ व्यर्थ कार्य, बेफ़ायदा काम। २ आपद्, नागहां ग़ज़ब।

आसमानी थपेड़ा, आसमानी ग़ज़ब देखो।

आसमानी पिलाना (हिं० क्रि०) ताड़ी या छनी भांग पिलाकर मत्त बनाना, सब्ज़ीके नशेसे चूर कर देना।

आसमानी फ़रमानी (फ़ा० स्त्री०) १ अतिवृष्टि अथवा अनावृष्टिके कारण आयी हुयी आपद्, जो मुसीबत ज़्यादा बारिश होने या पानी न बरसनेसे पड़ी हो। २ लेखप्रमाण और पट्टका एक पद, दस्तावेज़ और पट्टेमें लिखा जानेवाला एक लफ़्ज़। पहले मौसम बिगड़ने और सरकारके नाजायज़ तौरपर मालगुज़ारी

वसूल करनेसे जमीन्दारोंको जो नुकसान् उठाना पड़ता, उसे काश्तकारोंसे वसूल करनेके लिये यह लफ़ज दस्तावेजों और पट्टोंमें लिखा जाता था। ३ भूमि करके अंश-जैसा निरूपित अर्थदण्ड तथा अपहार, तखमीना किया हुवा जु.र्माना और ज़ब्ती। यह गढ़वालमें चलती है।

आसमुद्र, आसमुद्रात् देखो।

आसमुद्रात् (सं० अव्य०) समुद्र पर्यन्त, बहरके फैलाव तक।

आसम्बाध (सं० त्रि०) आ समन्तात् सम्बाधा यत्र। निरुद्ध, घिरा हुवा।

आसय (हिं०) आशय देखो।

आसया (दे० अव्य०) सङ्गतिमें, निकट, उपस्थित होकर, साथ-साथ, मिल-जुलके।

आसर (हिं० पु०) १ आशर, राक्षस, आदमखोर। २ दशमुद्रा, अशर, दश रुपये। उक्त अर्थमें प्रायः कसाई इस शब्दको व्यवहार करते हैं।

आसरना (हिं० क्रि०) आश्रय ग्रहण करना, सहारा पकड़ना।

आसरा (हिं० क्रि०) १ विश्वास, एतबार, भरोसा। २ आशा, उम्मेद। "अपने पास पैसा तो पराया आसरा कैसा।" (लोकोक्ति) ३ रक्षा, हिफ़ाज़त। ४ शरण, पनाह। ५ आश्रयदाता, सहारा देनेवाला। ६ साहाय्य, मदद। ७ काष्ठका हरित् तथा मृदुस्तर, होर। यह संस्कृतके आश्रय शब्दका अपभ्रंश है।

आसरा तकना (हिं० क्रि०) प्रतीक्षा करना, राह देखना। "सेज फूलोंकी मैं बिछा रक्खूं।
जौर पड़ी उसका आसरा तक्कूं॥" (विरह)

आसव (सं० पु०) आसूयते, आ-सू कर्मणि अप्। १ अभिषव, अर्क कशो, चुवाव। 'आसवोऽभिषवः।' (हेम) २ अभिषवणीय मद्य, चीनी या गुड़की ताज़ी शराब।

'मैरेयमासवः सीधुर्मैदको जगलः समौ।' (अमर)
"यक्षरक्षःपिशाचान्नं मद्यं मांसं सुरासवम्।
तद्ब्राह्मणेन नात्तव्यं देवानामश्नता हविः॥" (मनु ११।९६)

३ अरिष्ट, जोशांदा, औंटी। अरिष्ट देखो। (वै०) ४ उत्तेजन, जोश।

आसवद्रु (सं० पु०) १ असनवृक्ष, असनेका पेड़। २ तालवृक्ष।

आसवद्रुम, आसवद्रु देखो।

आसवी (सं० त्रि०) आसवपान करनेवाला, शराबखोर।

आसा (सं० स्त्री०) आ-सो-अङ्। १ अन्तिका, निकट, कु.र्ब, नज़दीकी। (हिं०) २ आशा, उम्मेद। ३ असा, सोंटा, डण्डा।

आसा अहीर—दाक्षिणात्यके एक ग्वाला-सरदार। सन् ई०के १४वें शताब्द इन्होंने दाक्षिणात्यमें असीरगढ नामक एक दुर्ग बनाया था। प्रायः दो सहस्र अनुचर आसाके साथ रहे। असीरगढ़ भारतीयोंके हाथका बना सबसे अच्छा और मजबूत किला है। पशुरक्षाके लिये पर्वत सुदृढ भित्तिसे वेष्टित है। खान्देशके मुसलमान-सरदार मालिक नसीरने इन्हें धोकेसे मार असीरगढ़को अधिकार किया और क़िलेका बाकी काम तमाम बनाया। दो शताब्द बाद अकबरने असीरगढ़ और कुल नोमारको जीत लिया था। १८१७ ई०को यह स्थान अंगरेजोंके हाथ लगा।

आसाढ़ (हिं०) आषाढ़ देखो।

आसात् (सं० अव्य०) निकट, समीप, नज़दीक, पास।

आसाद (वै० पु०) पीठोपधान, मसनद, गद्दी।

आसादन (सं० क्ली०) आ-सद्-णिच्-ल्युट्। १ सन्निधापन, स्थापन, रखायी। २ आसन्नता-सम्पादन, मेलमिलाप। ३ मर्दन, हमला। ४ प्राप्ति, हासिल। ५ पूरणकरण, कमालियत।

आसादयितव्य (सं० त्रि०) १ आक्रमण किये जाने योग्य, जिसपे हमला पड़े।

आसादित (सं० त्रि०) आ-सद्-णिच्-क्त-इट्। १ निकटीकृत, नज़दीक लाया हुवा। २ प्राप्त, हासिल किया हुवा। ३ आयोजित, लगाया हुवा। ४ सन्निधापित, रखा हुवा। ५ सम्पादित, पूरे तौरपर किया हुवा। ६ कामकेलि आसक्त, जो ऐशो-इशरतमें डूबा हो।

'लब्धं प्राप्तं विन्नं भावितमासादितञ्च भूतञ्च।' (अमर)

आसाद्य (सं० त्रि०) आ-सद्-णिच्-यत्। १ प्राप्य,

हासिल होने क़ाबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ प्राप्त करके, पाकर। "समुद्रमासाद्य भवत्यपेया।" (रघु)

आसाधन (सं० क्लो०) प्राप्ति, पूर्णता, हासिल, कमाल।

आसान (फ़ा० वि०) १ सरल, सीधा। "नियत साबित मञ्जिल आसान।" (लोकोक्ति) २ अबाधित, अप्रतिबद्ध, बेमुवाख़ज़ा, बेमुतालबा, जो रोका न गया हो।

आसान करना (हिं० क्रि०) १ सरल बनाना, चिकनाना, पुल बांध देना। २ स्वतन्त्रता देना, आज़ादी बख़्शना। ३ छोड़ाना, बोझ उतारना।

आसान होना (हिं० क्रि०) सरल लगना, मुश्किल न देख पड़ना। २ बहना, धारके साथ तैरना।

आसानी (फ़ा० स्त्री०) १ सरलता, मुश्किल न पड़नेकी हालत, बच्चोंका खेल। २ साध्यता, उपपाद्यता, उंकूपिज़ीरी, इमकान्। ३ स्वतन्त्रता, आज़ादी, चिकनापन। ४ सुख, आराम, चैन।

आसापाला (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक दरख़्त।

आसाम—भारतवर्षका एक सीमान्त प्रदेश। यह बङ्गालसे उत्तर-पूर्व, अक्षा० २४° ०´ एवं २७° १७´ उ० और द्राधि० ८९° ४५´ तथा ९७° ५´ पू०के बीच अवस्थित है। क्षेत्रफल कोई ४६३४१ वर्गमील लगता है। खासी पहाड़के शिलांग नगरमें चीफ़-कमिश्नर रहते हैं। यहांके अधिवासी आहोम कहाते हैं। उन्हींके नामसे इस प्रान्तका नाम आसाम पड़ा है।

आसामसे उत्तर हिमालय, उत्तरपूर्व मिशमी पहाड़, पूर्व ब्रह्मदेशका पर्वत, दक्षिण लुशाई पहाड़ तथा बङ्गालका टिपरा ज़िला और पश्चिम मैमनसिंह, रङ्गपुर, कोचविहारराज्य और जलपाईगुड़ी ज़िला है।

मुख्य आसाम अथवा ब्रह्मपुत्रकी अधित्यका ४५० मील लम्बी और ५० मील चौड़ी समतलभूमि है। सिवा पश्चिमके बाक़ी तीनो ओर ऊंचे-ऊंचे पहाड़ खड़े हैं। ब्रह्मपुत्रनद पूर्वसे पश्चिमको बहता है। जापसो पर्वतकी शिखा १२००० फ़ीट ऊंची है।

आसामके पर्वतोंमें कोयला, लोहा और चूनेका कङ्कड़ ख़ूब होता है। पहले पहल १८८४ ई०को रेल चली थी। माकूममें मट्टीका तेल भी निकलता है। कितनी ही पहाड़ी नदियोंमें सोना पाया जाता है।

वन्य पशुवोंमें हाथी, गैंडा, चीता, बघेरा, भालू, हरिण, भैंसा और गो प्रधान है। आसामकी भैंस बहुत अच्छी होती है। हाथी पकड़नेका ठेका सरकार उठाती है।

आसाममें आहोम, चूटिया, नागा, खासी, गारो, मिकिर, कछाड़ी, लालुङ्ग, राभा, हाजोङ्ग, खामती, मीरी, डफला, अबर, मणिपुरी, मदही और कुकी लोग रहते हैं। तत्तत् शब्दमें विवरण देखो। वर्तमान आसाम भाषा मैथिल और बंगलासे बनी है। पहाड़ियोंमें रहनेवाली जातियां अपनी ही बोली बोलती और चाल चलती हैं। विभिन्न जातियोंके साथ विवाह-प्रथा प्रचलित है।

सबसे पहले ब्रह्मपुत्र अधित्यकापर ब्राह्मणों, क्षत्रियों तथा कायस्थोंका वास हुवा। ई०के १३ वें और १४वें शताब्द कमतापुरके राजावोंने गौड़से ब्राह्मणों और कायस्थोंके ले जाकर कामरूपमें बसाया था। कमतापुर तथा कोचविहार देखो। १६वें शताब्दके प्रारम्भकाल कोच-नृपति विश्वसिंह और तत्पुत्र नरनारायण द्वारा प्रतिष्ठित ब्राह्मण कामरूपी कहाते हैं। ऊपरी आसामके ब्राह्मणादि उच्चजाति विष्णुपूजक और महापुरुष शङ्करदेव, दामोदरदेव तथा हरिदेव प्रवर्तित सम्प्रदायभुक्त हैं। शङ्करदेव और दामोदरदेव देखो।

१७वें शताब्द आहोम भी गोविन्द ठाकुरको पूजते थे। निम्नप्रान्तमें शिवपूजक तान्त्रिक रहते, जो अपनेको नदीयेके ब्राह्मणोंका वंशज कहते हैं। १७वें शताब्दके समय आहोम-नृपति रुद्रसिंहने उन्हें लाकर बसाया था। सुरमा अधित्यका और सिलहटमें मुसलमान बहुत हैं।

आसाम-प्रान्त कृषिप्रधान स्थान है, वाणिज्यव्यवसायका अधिक प्रसार नहीं। मारवाड़ी यहांका माल बाहर भेजते और बाहरका माल यहां मंगाते हैं।

आसाममें चावल और सरिसों अधिक उपजता है। सिलहट तथा ग्वालपाड़ेमें सन और पहाड़ी प्रान्तमें रूयीकी खेती होती है। खासी एवं जयन्तिया पहाड़ीके नीचे आलू, नारङ्गी और तेजपात लगाते हैं। युरोपीय चायका काम करते हैं। १८२३ ई०को मिष्टर

राबर्ट ब्रूसने-ऊपरी आसामके वनमें चायके पेड़ पाये थे। अन्तको लाट अकलेण्डने चीनसे जापकादि बोला चायको खेती कराना आरम्भ किया। १८३८ ई०को पहले पहल लखीमपुरमें चायका बाग़ लगा था। चाय देखो।

गौहाटीसे शिलंग और ब्रह्मपुत्रके दक्षिण किनारे किनारे पक्की सड़क गयी है। १८७२ ई०को शिलंगसे चेरापूंजीको नयी सड़क निकली। १८८३ ई०को जोरहाट और कोकिलामुखके बीच ट्रामवे चली थी। १८८४ ई०को डिब्रूगढ़ और दमदमेके बीच रेलवे निकली। इसको शाखा माकुमको गयी थी। किन्तु आसामका प्रधान मार्ग ब्रह्मपुत्रनद ही है। प्रति सप्ताह कलकत्तेसे डिब्रूगढ़ जहाज़ जाता-आता है।

आसामका जलवायु आर्द्र है। आधे मयी माससे अक्तोबर तक वृष्टि होती है। जाड़ेमें दिसम्बर और जनवरी मास सवेरे कुहरा बहुत पड़ता है। वायु प्रायः उत्तर-पूर्वसे चलता है। भूकम्प अधिक आता है। चेरापूंजीमें जितनी वृष्टि होती, उतनी पृथिवी-पर दूसरे स्थान नहीं पड़ती। स्वास्थ्यकी दशा असन्तोषजनक है। ब्रह्मपुत्र अधित्यकामें मलेरियेका प्रकोप रहता है।

१८७४ ई०को आसाम बङ्गालसे निकाल चीफ़ कमिश्नरके अधीन नया प्रान्त बनाया गया था। ब्रह्मपुत्र एवं सूरमा अधित्यका और मध्यस्थ पार्वत्य प्रान्त तीन प्रधान विभाग हैं। बीचमें पूर्ववङ्ग और आसाम बङ्गालसे पृथक् और एक छोटे लाटके अधीन हो गया था। किन्तु दो वर्ष बाद फिर पूर्ववङ्ग पहलेकी तरह बङ्गालमें मिला और सिलहट शहरके साथ आसाम चीफ़ कमिश्नरके अधीन पड़ा। प्राचीन काल कामरूपमें भगदत्तवंश, बाणवंश तथा अपरापर हिन्दुवोंका राज्य रहा। प्राग्ज्योतिषपुर वा गौहाटी राजधानी थी। योगिनीतन्त्रमें इसका विशेष विवरण लिखा है। कोचविहार, कामरूप तथा प्राग्ज्योतिष शब्दमें विस्तृत विवरण द्रष्टव्य है। गौहाटीसे तेजपुरतक प्रासादों और मन्दिरोंका जो ध्वंसावशेष देखनेमें आता, वही प्राचीन हिन्दू राज्यकी विशालताका सुदृढ़ प्रमाण है। ई०के १२वें शताब्द तक भगदत्तवंशीय वर्म्मराजका प्रताप अक्षुण्ण था। ई०के १५वें शताब्दमें मेचवंशका अभ्युदय हुवा। कोचविहार तथा बिजनी और सिदलीके राजा मेचवंशज मालूम पड़ते हैं। कोचविहार शब्दमें इतिहास देखो।

पीछे पूर्वसे आहोम और पश्चिमसे मुसलमान कामरूपपर झपटे थे। आहोम सम्पूर्ण अधित्यकाके बाहर भीतर अपना राज्य प्रतिष्ठित करनेमें सफल हुये। सम्भवतः वह ब्रह्मदेशके मोमियट स्थानसे ई०के ७म शतकमें आये थे। ई०के १३वें शताब्द पहले पहल आहोम अधित्यकामें अधिकार जमाया। यह बड़े वीर रहे। १२२८ ई०को उन्होंने आसाम आक्रमण किया। १४९७ ई०को चुनहुमफा नृपतिने सिंहासन पर बैठ हिन्दूधर्मकी दीक्षा ली। उनके बाद चुचेङ्गफाने १६११से-१६४९ ई०तक राज्य किया। उन्होंने शिवसागरमें शिवमन्दिर बनवा हिन्दुधर्मको अपने राज्यमें फैला दिया था। १६५० ई०को राजा चुतुमलेके सिंहासनारूढ़ होनेपर औरङ्गजेबके चतुर सेनापति मीर-जुमलेने आसामको आक्रमण किया। किन्तु आहोम मुसलमानोंको मारते-मारते ग्वालपाड़े तक खदेर लाये थे। आहोम राजावोंमें सबसे बड़े रुद्रसिंह रहे, जो १६९५ ई०को गद्दीपर बैठे। दरङ्गके मेच-नृपतियों और मोवामारियोंने जब गौरीनाथ सिंहको गद्दीसे उतारा, तब १७९२ ई०को कुछ सिपाहियोंके साथ कप्तान वेल्शका यहां आगमन हुवा। तब ब्रह्मदेशवासी कठोर शासन करते थे। अन्तको १७९४ ई०के समय अंगरेजों तथा ब्रह्मदेशवासियोंके बीच युद्ध चला और १८२६ ई०को २४वीं फरवरीको यन्दबूकी सन्धिके अनुसार आसाम अंगरेजोंके हाथ पड़ा। निम्न विभागमें अंगरेजी प्रबन्ध किया, किन्तु अधित्यकाका ऊपरी अंश १८३२ ई०में पुरन्दर सिंहको सौंपा गया था। आहोम शब्दमें आहोमराजवंशका परिचय द्रष्टव्य है। पुरन्दर सिंहके राज्यका प्रबन्ध ठीक तौरसे कर न सकनेपर १८३८ ई०को वह अंश भी अंगरेजोंने अपने राज्यमें मिला लिया। १८६५ ई०को ही ईष्ट इण्डिया कम्पनीने बङ्गालके साथ सिलहट और ग्वालपाड़ा

दीवानी बख्शिशके मुताबिक पाया था। १८३० ई०-को राजा गोविन्दचन्द्रके मरने और काई उत्तराधिकारी न रहनेसे कछाड़का समतल भाग भी अंगरेजोंके हाथ लगा। १८५४ ई०को तुलाराम सेनापतिके देश-पर अंगरेजी अधिकार जमा। १८६६ ई०को समागुटिङ्ग नागा पर्वतका हेड क्वार्टर बनाया गया था। १८७९-८० ई०को सामरिक अभियान भेजने और क्वादिमा अधिकार करनेपर अङ्गामी प्रान्तके मध्य हेड क्वार्टर प्रतिष्ठित किया और उत्तर कछाड़ तथा नवगाम्पर दुर्दान्त लोगोंका आक्रमण करना रोका गया। १८८२ ई०को सीमा निर्द्धारित कर अंगरेजोंने सदाके लिये नागा पर्वत अपने राज्यमें मिलाया।

आसामी (हिं० वि०) १ आसामदेशसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो आसामसे ताल्लुक रखता हो। (पु०) २ आसामका अधिवासी, आसाममें रहनेवाला शख्स। (स्त्री०) ३ आसाम प्रान्तकी भाषा, आसामकी बोली। आसाम तथा असामी देखो।

आसायश (फ़ा० स्त्री०) सुख, आराम, सुबीता।

आसार (सं० पु०) आ-सृ-घञ्। १ धारासम्पात, गहरी बारिश। 'धारासम्पात आसारः।' (अमर) २ प्रसरण, दौड़। ३ सैन्यकी सकल दिक् व्याप्ति, फौजका चारो ओर जमाव। आस्रियतेऽनेन, करणे घञ्। ४ सुहृद्-बल, दोस्तकी फौज। ५ द्वादश राजमण्डलके मध्यस्थ राजविशेष। 'आसारो वेगवद्वर्षे सुहृद्बलप्रसार्योः।' (हेम) द्वादशमण्डलमें युद्धके समय आत्ममण्डल, रिपुमण्डल, सुहृद्मण्डल, शत्रुमित्रमण्डल, मित्रमित्रमण्डल तथा मित्ररिपुमण्डल आगे और पार्ष्णिग्राह, आक्रन्द, आसार, आक्रन्दासार, निग्रहशक्तमध्यस्थ, अनुग्रहशक्त-मध्यस्थ एवं निग्रहानुग्रहशक्त उदासीन पीछे रहता है। ६ षड्‌विंशति रगण द्वारा रचित दण्डक छन्दो-विशेष। भारा देखो। ७ भोजन, खाना, रसद। (अ० पु०) ८ चिह्न, निशान्। ९ आयाम, चौड़ायी।

आसारण (सं० पु०) वृक्षभेद, एक दरख्त।

आसारित (सं० क्ली०) वैदिक गान विशेष।

आसाव (वै० पु०) स्तोता, तारीफ़ करनेवाला शख्स। (सायण)

आसावरी (हिं० स्त्री०) १ कपोत विशेष, किसी किस्मकी कबूतरी। २ रागिणी विशेष। आशावरी देखो। ३ वस्त्रविशेष, किसी किस्मका रेशमी कपड़ा। इसपर चांदीके तारका काम रहता है।

आसाव्य (वै० त्रि०) अभिषवणीय, दबाने काबिल।

आसिक (सं० पु०) असिः प्रहरणमस्य, ठक्। १ खड्ग द्वारा युद्धकारक, बरकन्दाज, तलवरया। (हिं० पु०) २ आशिक, चाहनेवाला।

आसिका (सं० स्त्री०) पर्यायेण आसनम्, आस पर्याये शवुच्-टाप्। पर्यायार्हर्णोत्पत्तिषु ण्वुच्। पा ३।३।१११। १ पर्याय-क्रमका उपवेशन, बैठनेकी बारी। २ उपवेशन, बैठक।

आसिक्त (सं० त्रि०) ईषत् सम्यग्वा सिक्तम्, आ-सिच्-क्त। १ ईषद्सिक्त, कुछ-कुछ सींचा हुवा। २ सम्यक् सिक्त, अच्छीतरह सींचा हुवा।

आसिख (हिं०) आशिस् देखो।

आसिच् (वै० स्त्री०) १ आहुति, होम। २ पात्र, बरतन। ३ स्नानविशेष।

आसित (सं० क्ली०) आस् भावे क्त। क्तोऽधिकरणे च ध्रौव्यगतिप्रत्यवसानार्थेभ्यः। पा ३।४।७६। १ उपवेशन, बैठक। आधारे क्त। २ उपवेशनका आधार, बैठनेकी जगह। (पु० स्त्री०) असितस्य मुनेरपत्यम्, शिवादिगणस्या-कृतिगणत्वात् अण्। ३ असित मुनिका पुत्र वा कन्या-रूप अपत्य। असित मुनिके अपत्य शाण्डिल्यगोत्रका प्रवर रखते हैं।

आसिद्ध (सं० त्रि) आ-सिध-क्त। राजाज्ञासे वादी द्वारा बद्ध किया हुवा, जिसे सरकारी हुक्मसे मुद्दयी क़ैद कराये। २ सम्पन्न, पूरा किया हुवा।

आसिधार (सं० क्ली०) असिधारा इवास्त्यत्र, अण्। कामुक भाव परित्याग-पूर्वक आचरण, जो बरताव इश्क़ मजाजीसे अलग हो। यदि युवा कामुकभाव छोड़ युवतीके साथ सुन्दर भर्त्ताकी तरह व्यवहार करता, तो वह आचरण आसिधारव्रत कहाता है।

आसिन (हिं० पु०) आश्विनमास, क्वारका महीना।

आसिनासि (सं० पु०) असिः खड्गः स इव तीक्ष्णाग्रा नासा यस्य सोऽसि नासः मुनिभेदस्तस्यापत्यम्, इञ्।

असिनास मुनिके अपत्य। असिनास मुनिके पौत्रको आसिनासायन कहते हैं।

आसीन (सं० त्रि०) आस-शानच् ईत्वम्। ईदासः। पा ७।२।८३। शानच्। उपविष्ट, बैठा हुवा।

आसीन-प्रचलायित (सं० क्ली०) आसीनेन उपविष्टेनैव प्रचलवत् आचरितम्, आसीन-प्रचल-क्यच् भावे क्त। निद्राके आवेशसे उपवेशनकर दोलन, नींदमें बैठ झोका लेनेका काम।

आसीस (हिं० पु०) १ मसनद, तकिया, उसीसे रखनेकी चीज़। २ आशीर्वाद।

आसु (हिं० सर्व०) १ इसका, इससे सम्बन्ध रखनेवाला। (क्रि० वि०) २ शीघ्र, जल्द।

आसुग (हिं०) आशुग देखो।

आसुत् (सं० त्रि०) आ-सु-क्विप्-तुक्। कृताभिषव, कृतस्नान, नहाया-धोया।

आसुत (सं० क्ली०) चिरकालस्थित तथा कन्दादियुक्त अम्ल, बहुत दिनकी रखी और जड़ी वगैरहसे मिली हुयी खटायी।

आसुति (वै० स्त्री०) आ-सु-क्तिन्। १ सोमलतादि निष्पीड़न। २ अभिषव, मद्यनिष्पादन, भभकेसे शराबका चुवाना। "इयमासुतिश्चारुमादाय।" (ऋक् ८।१।२६) ३ क्षीरादि पेय। "यो नाविन्द्रचुप्यन्नो वय आसुतिं दाः।" (ऋक् १।१०४।१) 'आसुतिं पयं चीरादिकम्।' (सायण) आ-सु प्रसवे क्विप्। ४ प्रसव, बच्चेका पैदा करना।

आसुतिमत् (सं० त्रि०) आसुतेः सन्निकृष्टदेशादिः, चतुरर्थ्यां मतुप्। मध्वादिभ्यश्च। पा ४।२।८६। १ आसुतिके निकटस्थ। २ आसुतिविशिष्ट।

आसुतीय (सं० त्रि०) आसुत् तस्येदम्, छ। गहादिभ्यश्च। पा ४।२।१३८। स्नानकारी वा मद्यकारी सम्बन्धीय, नहाने या शराब बनानेवालेके मुताल्लिक।

आसुतीवल (सं० पु०) आसुतिरस्यास्य, वलच् दीर्घः। रजः कृष्यासुतिपरिषदो वलच्। पा ५।२।११२। १ शौण्डिक, कलवार, शराब बनानेवाला शख्स। २ सोमलताका रस निकाल सकनेवाला याज्ञिक।

आसुतोख (हिं०) आशुतोष देखो।

आसुर (सं० त्रि०) असुरस्येदम्, अण्। १ असुर-सम्बन्धी, शैतान्के मुताल्लिक।

"कुलालचक्रनिष्पन्नमासुरं मृण्मयं स्मृतम्।
तदेव हस्तघटितं स्थाल्यादि दैविकं भवेत्।" (कात्यायन)

(पु०) २ असुरके न्याय आचारयुक्त व्यक्ति, जो शख्स शैतानकी चाल पकड़े हो। आसुर शौच, आचार तथा सत्यको प्रतिपालन नहीं करता और कामचारी, दाम्भिक एवं मदयुक्त होता है। यह ईश्वरको नहीं मानता। मनमें सोचा करता है,—मैं ही ईश्वर, यागी, सिद्ध, सुखी, बलवान्, धनाढ्य और अभिजनशाली हूं; मेरे बराबर अन्य नहीं। ३ असुरके न्याय कर्तव्य विवाह विशेष।

"ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः॥" (मनु ३।२१)

मनुने आठ प्रकारका विवाह वर्णन किया है। कन्या और उसके पितादिको यथाशक्ति शुल्क देनेसे वरकी इच्छानुसार होनेवाला विवाह आसुर कहाता है। ४ कर्मविघ्नकारी असुरहन्ता। (सायण) स्वार्थे अण्। ५ असुर। (क्ली०) ६ विड्लवण। ७ समुद्रलवण।

आसुरस्व (सं० क्ली०) नञ्-६-तत्। यजनहीन व्यक्तिका धन, शैतान्की दौलत। "अयज्वनान्तु यद्द्रव्यमासुरस्वं तदुच्यते।" (मनु)

आसुरायण (सं० पु०) आसुरेऽपत्यं युवा, फक्। गोत्रादयून्यस्त्रियाम्। पा ४।१।९४। असुरका युवा गोत्रापत्य। (स्त्री०) ङीप्। आसुरायणी।

आसुरि (सं० पु०) अस्यति क्षिपति पापानि तत्त्वज्ञानेन, असु क्षेपणे उरण्; असुरः कपिलस्तस्य छात्रः, इञ् न लुक्। असेरुरण्। उण् १।४१। कपिल मुनिके छात्र, सांख्यमतप्रवर्त्तक जनैक मुनि।

आसुरिक (सं० त्रि०) असुर-ठञ्। असुर-सम्बन्धीय, शैतान्के मुताल्लिक।

आसुरिवासिन् (सं० पु०) आसुरौ आसुर मुनिसमीपे वसति णिनि। आसुरि मुनिके समीप रहनेवाले शिष्य प्रश्नोपुत्र। आसुरिवासी यजुर्वेदी एक ऋषि रहे।

आसुरी (सं० स्त्री०) आसुर-ङीप्। १ राजसर्षप, सफेद सरसों। 'खरः क्षुधाभिजननो राजिका क्षविकासुरी।' (अमर)

२ आयामकाञ्जिक, किसी क़िस्मकी कांजी। ३ रक्त-सर्षप, राई। ४ छेदभेदात्मक चिकित्साविशेष, चीर-फाड़। चिकित्सा आसुरी, मानुषी और दैवी त्रिविध होती है।

आसुरीय (सं० पु०) असुरेण प्रोक्तम्, असुर-छ। १ असुर-कथित कल्पशास्त्र। (त्रि०) २ आसुरिसम्बन्धीय।

आसूत्रित (सं० त्रि०) प्रतिबद्ध, बंधा हुवा, जो हार डाले हो।

आसूदगी (फ़ा० स्त्री०) १ शान्ति, अमन, खमोशी। २ सुख, चैन, खुशी। ३ तृप्ति, छकाहट।

आसूदा (फ़ा० वि०) १ सुखी, स्वतन्त्र, खुश। २ तृप्त, छका हुवा। (क्रि० वि०) ३ सुखपूर्वक, आरामसे, छककर।

आसेक (सं० पु०) आ-सिच-घञ्। १ जलादि द्वारा वृक्षादिका अल्प सेचन, हलकी सिंचायी। २ सम्यक् सचेन, खासी सींच।

आसेक्य (सं० पु०) आसेकमर्हति, आ-सेक-यत्, आ-सिच्-ण्यत् वा। नपुंसक विशेष, किसी क़िस्मका नामर्द। पिताके स्वल्प वीर्यसे पुरुष आसेक्य होता, किन्तु शुक्र पीनेसे असंशय ध्वजोन्नति पाता है। (सुश्रुत)

आसेचन (सं० त्रि०) न सिच्यते तृप्यति मनोऽस्मात्, अपादाने ल्युट् स्वार्थे अण्। १ प्रिय, दिलफ़रेब, प्यारा। (क्ली०) २ सम्यक् सेचन, खासी सींच। (वै०) ३ सेचनसाधन पात्र, सींचनेका बरतन।

आसेचनक, आसेचन देखो।

आसेचनवत् (सं० त्रि०) उदराकार, उत्तान, मुजव्वफ़, खोकला, गहरा। (पु०) आसेचनवान्। (स्त्री०) आसेचनवती।

आसेदिवस् (सं० त्रि०) आ-सद्-क्वसु। १ निकटागत, नज़दीक आया हुवा। २ प्राप्त, मिला हुवा।

आसेदुषी (सं० स्त्री०) आ-सद-क्वसु ङीप् वस्योत्वं इटो निवृत्तिश्च। १ आगता, आयी हुयी औरत। २ उपस्थिता, जो औरत हाज़िर हो।

आसेद्धृ (सं० पु०) आ-सिध-तृच्। विवाद विषयमें राजाज्ञासे प्रतिवादीकी गति प्रवृत्तिका रोधकर्ता वादी, क़ैद करानेवाला शख्स।

आसेध (सं० पु०) आ-सिध भावे घञ्। विवाद विषयमें राजाज्ञासे वादिकर्तृक प्रतिवादीका स्थानान्तरको गमन निवारण, हिरासत, हवालात, नज़रबन्दी, क़ैद। आसेध चार प्रकारका होता है,—कालासेध, स्थाना-सेध, प्रवेशासेध और कर्मासेध। समयकी मर्यादाके निरूपणको कालासेध, किसी स्थानके प्रति निरोधको स्थानासेध, अपसरणके प्रतिकूल निषेधको प्रवेशासेध और कार्योद्योगके निबन्धको कर्मासेध कहते हैं।

आसेधक (सं० त्रि०) नियन्ता, निग्रहीता, क़ैद करने या हिरासतमें रखनेवाला।

आसेधनीय (सं० त्रि०) निग्रहके योग्य, जो हिरा-सतमें रखे जाने क़ाबिल हो।

आसेध्य, आसेधनीय देखो।

आसेब (फ़ा० पु०) १ प्रेतबाधा, दोष, फ़ितना, बिगाड़। २ नुक़सान्, हानि। ३ भय, खौफ़, डर।

आसेब उतारना (हिं० क्रि०) १ प्रेतबाधा छुड़ाना, शैतान्के साया पड़नेसे पैदा हुयी बीमारीको दूर करना। २ भूतापसरण करना, शैतान्को निकाल देना।

आसेब दूर करना, आसेब उतारना देखो।

आसेब पहुंचना (हिं० क्रि०) आघात आना, चोट लगना।

आसेब पहुंचाना (हिं० क्रि०) आघात देना, चोट मारना।

आसेर (हिं० पु०) आश्रय, पनाह, क़िला।

आसेवन (सं० क्ली०) सम्यक् सेवनम्, प्रादिसमा०। नित्यसपतावमासेवने। पा ८।१।१०२। कार्यविशेषका प्रसक्त अभ्यास, किसी कामका मेहनती महावरा। २ पौनः-पुन्य, बार-बारका करना।

'आसेवनं पौनःपुन्यम्।' (सिद्धान्तकौमुदी)

आसेवा (सं० स्त्री०) आ-सेव-अङ्-टाप्। १ सम्यक् सेवा, खासी खिदमत। २ राक्षसी।

आसेवित (सं० त्रि०) आ-सेव-क्त-इट्। १ सम्यक् सेवित, अच्छीतरह खिदमत किया गया। २ पुनः पुनः सेवित, बार-बार खिदमत किया गया। (क्ली०) भावे क्त। ३ सम्यक् सेवा, खासी खिदमत।

आसेविन्, आसेवितिन् देखो।

आसेवितिन् (सं० त्रि०) आसेवित-इनि। सुन्दर सेवाकारी, खासी खिदमत करनेवाला। (पु०) आसेविती। (स्त्री०) ङीप्। आसेवितिनी।

आसोज (हिं० पु०=संस्कृत आश्वयुज् शब्दका अपभ्रंश) आश्विनमास, क्वार।

आसौं (हिं० क्रि० वि०) इस वत्सर, इमसाल।

आस्कन्द (सं० पु०) आ-स्कन्द-घञ्। १ उत्प्लवन, उछाल, चढ़ायी। २ आक्रमण, हमला। ३ तिरस्कार, झिड़की। ४ अश्व प्रभृतिकी आस्कन्दित नामक गति-विशेष, घोड़ेका उड़ान। ५ आक्रामक, हमला मारनेवाला शख्स।

आस्कन्दन (सं० क्लो०) आस्कन्द्यतेऽत्र, आ-स्कन्द आधारे ल्युट्। १ युद्ध, जङ्ग, लड़ायी। भावे ल्युट्। २ तिरस्कार, बेइज्जती। ३ आक्रमण, हमला, धावा। ४ उत्प्लवन, उछाल। ५ अश्वकी गति विशेष, घोड़ेका उड़ान। ६ संशोषण, खासी सुखायी। ७ विनाश, बरबादी।

आस्कन्दित (सं० क्लो०) आ-स्कन्द-णिच्-क्त-इट्। १ अश्वकी गतिविशेष, घोड़ेकी कुदौटी। 'आस्कन्दितं धौरितकं रेचितं वल्गितं प्लुतम्।' (अमर) आस्कन्दित अश्वकी गतिका पञ्चम भेद है। हेमचन्द्रने तिर्यक् काण्डमें लिखा है,—अश्वकी गति धौरित, वल्गित, प्लुत, उत्तेजित और उत्तेरित पांच प्रकार होती है। गाड़ीमें जोतनेसे घोड़ा जो चाल चलता, उसका नाम धौरितक, धौर्य, धोरण वा धौरित पड़ता है। लगाम खींचनेपर क्रोड़को ओर धीरे-धीरे आगेके पैर उठाने, अग्निशिखा अथवा कङ्कपक्षीके न्याय शिखाधारी हो अर्थात् चोटीका अग्रभाग ऊपरको निकाल उल्लाससे गला चढ़ाने और मुंहको नीचेकी तर्फ सिकोड़नेसे वल्गित बनता है। पक्षी वा मृगकी गतिके न्याय उछल-उछल कुछ स्थान लांघते-लांघते जानेको प्लुति अथवा प्लुत कहते हैं। वेगसे दौड़ना ही उत्तेजित वा रेचित है। कभी-कभी कोपसे चारो पैर उठा ऊपर-एकायेक उछलने और उसीतरह आगे बढ़नेसे उत्तेरित, उपकण्ठ, आस्कन्दित अथवा आस्कन्दितक आता है।

आस्कन्दितक, आस्कन्दित देखो।

आस्कन्दिन् (सं० त्रि०) आस्कन्दति छिनत्ति, आ-स्कन्द-इन्। १ हिंसक, हमलावर, झपट पड़नेवाला। २ बहानेवाला। ३ दाता, बख्शनेवाला। (पु०) आस्कन्दी। (स्त्री०) आस्कन्दिनी।

आस्क्र (वै० त्रि०) आ-क्रम-ड वेदे पृषोदरादित्वात् सुट्। १ आक्रामक, हमलावर। भावे ड। २ आक्रमण, हमला।

आस्त (सं० पु०) आ-अस विक्षेपे क्त। १ सम्यक् क्षिप्त, अच्छीतरह फेंका हुवा।

"अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।" (मनु ३।७६)

आस्तर (सं० पु०) आ-स्तृ-अप्। १ हस्तीके पृष्ठका कम्बल, झूल। २ बिछौना, चटाई। भावे अप्। ३ सुविस्तार, खासा फैलाव। ४ अस्त्रविशेष, एक हथियार। वैशम्पायनोक्त धनुर्वेदमें लिखा है,—आस्तर नामक अस्त्रका पाददेश ग्रन्थियुक्त, मस्तक दीर्घ, हाथ बड़ा, उदर तथा मत्या टेढ़ा और वर्ण काला होता है। परिमाण दो हाथ रहता है। इसके द्वारा घुमायी, सिंचायी और कटायी कयी क्रियायें सम्पन्न की जाती हैं। युद्धकालमें आस्तर शत्रुवोंको मार डालता है। अश्वारोही और पदाति इसे धारण करते हैं। ५ कुर्ते वगैरहके भीतरका कापड़ा।

आस्तरण (सं० क्लो०) आस्तीर्यते यत्, कर्मणि ल्युट्। १ आस्तीर्यमान कटादि, फैलाकर बिछाया जानेवाला क़ालीन वगैरह। भावे ल्युट्। २ विस्तार, फैलाव। ३ पलंग, बिछौना। ४ यज्ञमें कुशका फलक। ५ हस्ति-पृष्ठस्थ-विचित्र कम्बल, हाथीकी पीठपर पड़नेवाली झूल।

आस्तरणवत् (सं० त्रि०) वस्त्रसे आच्छादित, क़ालीन या कपड़ेसे ढका हुवा। (पु०) आस्तरणवान्। (स्त्री०) आस्तरणवती।

आस्तरणिक (सं० त्रि०) आस्तरणं प्रयोजनमस्य, आस्तरण-ठक्। १ कटादिपर विश्राम लेनेवाला, जो क़ालीन वग़ैरहपर आराम करता हो। २ आस्तरण-साधन, बिछौनेके काम आनेवाला।

आस्तरणी (सं० स्त्री०) आस्तरण-ङीप्। आस्तरणपट, क़ालीन वग़ैरह।

आस्तरणीय (सं॰ त्रि॰) आस्तरणस्येदम्, वृद्धत्वात् छ। आस्तरण-सम्बन्धी, बिछौनेके मुताल्लिक।

आस्तायन (सं॰ त्रि॰) अस्ति इति अव्ययम् अस्ति विद्यमानस्य सन्निकृष्टदेशादि; पक्षादित्वात् फक्, अव्ययस्य टिलोपः। वर्तमान निकटवर्ती देशादि।

आस्तार (सं॰ पु॰) आ-स्तृ-घञ्। विस्तार, फैलाव।

आस्तारपंक्ति (सं॰ स्त्री॰) आस्तारो नाम पंक्तिः, शाक॰ तत्। वैदिक छन्दोविशेष। इसमें दो पंक्ति होती हैं। पहली पंक्तिके दोनो पादमें आठ-आठ और दूसरीके दोनो पादमें बारह-बारह वर्ण रहते है।

आस्ताव (वै॰ पु॰) आ-स्तुवन्त्यत्र, आ-स्तु आधारे घञ्। १ यज्ञमें स्तोतृगणके स्तव करनेका स्थान। भावे घञ्। २ सम्यक् स्तव, खासी तारीफ़।

आस्तिक (सं॰ त्रि॰) अस्ति परलोक इति मतिर्यस्य, ठक्। अस्तिनास्तिदिष्टं मतिः। पा ४।४।६०। १ ईश्वर और परलोकका अस्तित्ववादी, क़यामतको माननेवाला। २ पुराणादि पर विश्वास रखनेवाला। ३ धार्मिक, पारसा। (पु॰) ४ जरत्कारु मुनिके पुत्र निरुक्त। परलोक होनेकी बात प्रथम कहनेसे उक्त मुनिका नाम आस्तिक पड़ा है। आस्तीक देखो।

आस्तिकजननी (सं॰ स्त्री॰) आस्तिकस्य जननी ६-तत्। वासुकिकी भगिनी और जरत्कारुकी पत्नी मनसा।

आस्तिकता (सं॰ स्त्री॰) ईश्वरमें विश्वास।

आस्तिकत्व (सं॰ क्ली॰) आस्तिकता देखो।

आस्तिकपन (हिं॰ पु॰) आस्तिकता देखो।

आस्तिकमति (सं॰ पु॰) उत्तमवैद्य, बढ़िया तबीब।

आस्तिकार्थद (सं॰ पु॰) आस्तिकाय अर्थं ददाति, आस्तिक-अर्थ-दा-क। जनमेजय। इन्होंने आस्तिक मुनिके कहनेसे तक्षककी विनाशसे बचाया था।

आस्तिक्य (सं॰ क्ली॰) आस्तिकस्य भावः, यक्। पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्। पा ५।१।१२८। आस्तिकता, परलोक स्वीकार, उबूदियत, पारसायी।

आस्तीक (सं॰ पु॰) वासुकिकी भगिनी मनसाके गर्भसे उत्पन्न जरत्कारु मुनिके पुत्र। वासुकिका ज्ञातिवर्ग मातृशापसे अभिभूत हुवा था। उन्होंने उक्त शाप छोड़नेके लिये महातपा जरत्कारुको अपनी भगिनी प्रदान की। सम्प्रदानसे पूर्व ही जरत्कारु मुनिने कहा था,—दे दीजिये, किन्तु उनके भरण-पोषणका भार हम उठा नहीं सकते; फिर तुम्हारी भगिनी यदि हमारे असत कार्य करेगी, तो उसी समय छोड़ दी जायेगी। वासुकिने सब बात मानकर भगिनीको मुनिके साथ व्याह दिया। अनन्तर मुनिके सहवाससे उनके गर्भ रह गया। एकदा महर्षि निद्रित थे। नागभगिनीने देखा, कि सूर्य अस्त होता और स्वामीको सायं क्रियाका समय बीता जाता था। ऋषि भयानक रागी रहे। जगानेसे कहीं छोड़ कर चले जानेका डर था। किन्तु उन्होंने धर्मलोपकी अपेक्षा अन्य दुःखको तुच्छ समझ जरत्कारुको जगा दिया। ऋषिने उठकर कहा था,—भद्रे! तुमने अप्रिय कार्य किया है, सुतरां यहां मेरा रहना अब किसी प्रकार हो नहीं सकता; तुम्हें और तुम्हारे भाईको मेरे जानेसे दुःखित न होना चाहिये। जरत्कारु मुनि यह कहकर चलते बने। वासुकिकी भगिनीने जाते समय पूछा था—आप तो चल दिये, वासुकिने जिसके लिये मुझे आपको सौंपा था, उसका क्या हुवा। मुनिने उत्तर दिया,—अस्ति अर्थात् हमारे औरससे तुमने गर्भधारण किया है। कुछ दिनके बाद उनके पुत्र उत्पन्न हुवा। यह पुत्र सर्पभवनमें सर्पकर्तृक प्रतिपालित किया और अपने बुद्धि बलसे भृगुपुत्र च्यवनके निकट समस्त शास्त्र पढ़ गया। गर्भमें रहते ही पिताके 'अस्ति' कहकर चले जानेसे आस्तीक नाम पड़ा है। इन्होंने जनमेजयके सर्पध्वंसयज्ञसे सर्पगणको बचा लिया था। आस्तीकमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, अण्। २ आस्तीक मुनिके जीवनचरित पर महाभारतान्तर्गत पर्व विशेष।

आस्तीक्य, आस्तिक्य देखो।

आस्तीन् (फा॰ स्त्री॰) परिच्छदका पिप्पल, पोशाकका खरीता, बांह।

आस्तीन्का सांप (हिं॰ पु॰) गृहशत्रु, भीतरी दुश्मन्।

आस्तीन् चढ़ाना (हिं॰ क्रि॰) १ भय देखाना, धमकाना। २ उपस्थित होना, तैयारी करना।

आस्तीर्ण (सं० त्रि०) आ-स्तृ-क्त। विस्तीर्ण, विस्तारित, फैला हुवा।

आस्तृत, आस्तीर्ण देखो।

आस्तेय (सं० त्रि०) अस्तीत्यव्ययं तत्र विद्यमानं भवम्, ठञ्। इतिकुत्विकलशिवसात्स्वाइहैर्ठञ्। पा ४।३।५६। १ विद्यमान पदार्थजात, मौजूदा चीज़से पैदा। (क्ली०) अस्तेय मस्तेयं तस्य भावः, अण्। २ अचौर्य, साहूकारी, चोरी न करनेकी बात।

आस्त्र (सं० त्रि०) अस्त्रस्येदम्, अण्। अस्त्रसम्बन्धी, हथियारके मुताल्लिक।

आस्त्राबुध्न (वै० पु०) अस्त्रबुध्नके पुत्र।

"त्वं नामिन्द्रमर्त्यमास्त्रबुध्नाय।" (ऋक् १०।१७१।३)

आस्था (सं० स्त्री०) आ-स्था-अङ्-टाप्। १ आलम्बन, सहारा। २ अपेक्षा, निस्बत। ३ श्रद्धा, एतक़ाद। ४ स्थिति, हालत। ५ यत्न, तदबीर। ६ आदर, इज्ज़त। आस्थीयतेऽत्र, आधारे अङ्-टाप्। ७ सभा, मजलिस। 'आस्था यत्नालम्बनयोरास्थानापेक्षयोरपि।' (हेम)

आस्थागम (सं० पु०) जल, पानी।

आस्थातृ (वै० त्रि०) स्थितिकारी, खड़ा रहने या चढ़ जानेवाला। "आस्थाता ते जयतु जैत्राणि।" (ऋक् ६।४७।२६) 'आस्थाता अवस्थितो रथी।' (सायण)

आस्थान (सं० क्ली०) आस्थीयतेऽत्र, आ-स्था आधारे ल्युट्। १ सभा, मजलिस। २ विश्रामस्थान, आरामगाह, बैठनेकी जगह। भावे ल्युट्। ३ आस्था, एतक़ाद। ४ श्रद्धा, इश्तियाक़।

आस्थानगृह (सं० क्ली०) सभाभवन, मजलिसका मकान।

आस्थानसिंह—कन्नौजस्थ सुप्रसिद्ध नरेश जयचन्द्र वंशज शिवाजीके पुत्र। यह अपने भाई सोनिङ्गजी और अजयदेवजीके साथ अन्हलवाड़े पाटनकी ओर कुछ राज्य पानेके लिये कन्नौजसे निकल पड़े थे। पालीमें जाकर पल्लीवाल ब्राह्मणोंका राज्य देखा। किन्तु अरवल्ली पर्वतके भील उन्हें बहुत सताया करते थे। लोगोंके प्रार्थना करनेपर इन्होंने रक्षा करनेका वचन दिया। आस्थानसिंहने भीलोंके राजा कान्हाको मार चल देनेका विचार किया था। किन्तु लोगोंने कहा, आप यहीं रहें, आपके चले जानेसे भील हमें फिर सतायेंगे। इन्हें दुर्ग बनानेको बहुत भूमि मिली थी। पल्लीवालोंको निर्बल देख आस्थानसिंहने राज्य अपने हाथ लेना चाहा। एक दिन होलीको कितने ही पल्लीवाल वधकर इन्होंने राज्यपर अपना आधिपत्य जमाया था। फिर थोड़े दिन बाद आस्थानसिंहजी खेड़े विवाह करने गये। वहां गोहिल वंशज विचित्रसेन नृपति और डाबी जातिके भगवन्तराय नामक राजपूत मन्त्री रहे। मन्त्रीने राज्य अधिकार करनेके लिये आस्थानसिंहजीसे साहाय्य मांगा और आधा भाग देनेको वादा किया। आस्थानसिंहका विवाह होते समय गोहिलों और डाबियों दोनोंको राठोरोंने अधिक मदिरा पिलायी थी। जब लोग अचेतन हुये, तब सबके मस्तक काटे गये। खेड़का राज्य पाने पीछे इन्होंने कोडणेराज्यके भी १४० ग्राम छीन लिये थे। अन्तको इनकी मृत्यु हो गयी।

आस्थानी (सं० स्त्री०) आ-स्था-ल्युट्, आस्थान-ङीप्। सभा, मजलिस। 'आस्थानी क्लीवमास्थानम्।' (अमर)

आस्थापन (सं० क्ली०) आ-स्था-णिच्-पुक्-ल्युट्। १ सम्यक् स्थापन, खासी रखायी। करणे ल्युट्। २ सुश्रुतोक्त व्रणोपक्रमणीय निरूहवस्ति, घी तेल वगैरहकी पिचकारी। निरूह देखो।

आस्थापनोपवर्ग (सं० पु०) आस्थापनयोग्य पञ्चविंश महाकषायका वर्ग, पिचकारी देने लायक़ पचीस कसैली चीजोंका जखीरा। त्रिवृत्, बिल्व, पिप्पली, कुष्ठ, सर्षप, वचा, इन्द्रयव, शतपुष्पा, यष्टिमधु और मदनफल आस्थापनोपवर्गमें गिना जाता है। (चरक)

आस्थापित (सं० त्रि०) आ-स्था-णिच्-युक्-क्त-इट्। सम्यक् स्थापित, अच्छीतरह रखा हुवा।

आस्थाय (सं० अव्य०) १ आश्रयपूर्वक, सहारेसे। २ आरोहण करके, चढ़कर। ३ खड़े होते।

आस्थायिका (सं० स्त्री०) आ-स्था धात्वर्थनिर्देशे ण्वुल्, स्त्रीत्वात् टाप् अत: इत्वम्। आस्थान, सभा, मजलिस।

आस्थायी—सङ्गीतमें किसी रागालाप किंवा गीतका प्रथम चरण वा मुखबन्ध, मुखड़ा, टेक। आस्थायी,

अन्तरा, सञ्चारी और आभोग चार चरण रहनेसे आलाप वा गीत सम्पूर्ण समझा जाता है।

आस्थित (सं० त्रि०) आ-स्था-क्त, इकारोऽन्तादेशः। द्यतिस्यतिमास्थामि ति किति। पा ७।४।४०। १ अवस्थित, ठहरा हुवा। २ प्राप्त, हासिल किया हुवा। ३ आरूढ़, चढ़ा हुवा। ४ आश्रित, चिपटा या लिपटा हुवा। ५ विस्तृत, फैला हुवा। ६ अभ्यास डालनेवाला, जो महारत बढा रहा हो।

आस्थिति (सं० स्त्री०) आ-स्था-क्तिन्। १ सम्यक् स्थिति, खासा ठहराव। २ निवास, रहास।

आस्थेय (सं० त्रि०) आ-स्था-कर्मणि यत्। आश्रयणीय, सहारा लिये जाने क़ाबिल, जो काम दे सकता हो।

आस्नात (वै० त्रि०) आ-स्ना-क्त। कृतस्नान, ग़ुसल किये हुवा, जो नहा चुका हो।

आस्नान (सं० क्ली०) आ-स्ना-ल्युट्। १ प्रक्षालन द्वारा शुद्धि,धोनेसे होनेवाली सफ़ायी। २ सम्यक् स्नान, खासा ग़ुसल। ३ स्नानगृह, हम्माम, नहानेका घर।

आस्पद (सं० क्ली०) आ-पद-अच्-सुट्। आस्पदप्रतिष्ठायाम्। पा ६।१।१४६। १ प्रतिष्ठा, इज़्ज़त। २ पद, दरजा। ३ स्थान, जगह। ४ कृत्य, काम। ५ प्रभुत्व, मलकयी। ६ अवलम्बन, सहारा। ७ विषय, बात। ८ अवस्थान, ठहराव। ९ लग्नसे दशम स्थान। यह शब्द प्रायः समासान्तमें आता है, जैसे—अहङ्कारास्पद। 'आस्पदन्तु पदे कृत्ये।' (विश्व)

आस्पन्दन (सं० क्ली०) आ-स्पन्द-ल्युट्। १ ईषत्-कम्पन, थोड़ी कंपकंपी। २ अतिकम्प,गहरी कंपकंपी।

आस्पर्धा (सं० स्त्री०) अहमहमिका, विजिगीषा, हिर्स, हौंस।

आस्पर्धिन् (सं० त्रि०) विजिगीषु, प्रतिस्पर्धी, हमसरी-जो, होड़ लगानेवाला।

आस्पर्श (सं० पु०) सम्पर्क, संयोग, लम्स, लगाव।

आस्पर्शत: (सं० अव्य०) सम्पर्क द्वारा, संयोग वश, लगावसे।

आस्पात्र (वै० क्ली०) आस्यरूपं पात्रम्। मुखरूप पात्र, मुंह-जैसा बरतन।

आस्फाल (सं० पु०) आ, स्फल चाले णिच्-अच्, स्फुल-घञ् स्फालादेशो वा। १ आघात, प्रहार, फटकार, रगड़। २ उत्क्षेपण, फड़फड़ाहट। ३ करिकर्णास्फालन, हाथीके कानकी फड़फड़ाहट।

आस्फालन (सं० क्ली०) आ-स्फल चाले णिच्-ल्युट्। १ ताड़न, मार, फटकार। २ चालन, फड़फड़ाहट। ३ आटोप, सूजन। ४ दम्भ, गुस्ताख़ी, घमण्ड।

आस्फालित (सं० त्रि०) आ-स्फल-णिच्-क्त। १ चालित, फड़फड़ाया हुवा। २ आघट्टित, रगड़ा हुवा। ३ ताड़ित, झाड़ा या फटकारा हुवा।

आस्फुजित् (सं० पु०) आस्फुलति, आ-स्फुल-ड: तं जयति, जि-क्विप्-तुक्। शुक्राचार्य, ज़ोहरा, नाहीद, लोलो-फलक।

आस्फोट (सं० पु०) आ-स्फुट-णिच् कर्तरि अच्। १ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़। २ गिरिज पीलु, किसी क़िस्मका अख़रोट। ३ मल्लका बाहुशब्द, पहलवानोंके ताल ठोंकनेकी आवाज़। ४ संघर्षजात शब्द सकल, रगड़की आवाज़।

आस्फोटक (सं० क्ली०) आ-स्फुट-णिच्-ण्वुल्। १ पर्वतका पीलु विशेष, जङ्गली अख़रोट। (त्रि०) २ बाहु शब्दकारी, ताल ठोंकनेवाला।

आस्फोटन (सं० क्ली०) आ-स्फुट-णिच् भावे ल्युट्। १ प्रकाश, शिगुफ़्तगी, फैलाव। २ बाहुशब्द, ताल ठोंकनेकी आवाज़। ३ शूर्पादि द्वारा धान्यादिका वितुषीकरण, फटकार, झाड़। ४ चालन, फड़फड़ाहट। ५ कम्पन, कंपकंपी। ६ नियमकरण, मोहरबन्दी।

आस्फोटनी (सं० स्त्री०) आस्फोट्यते छिद्रीक्रियते अनया, करणे ल्युट्-ङीप्। वेधनिका, मसक़ब, बरमी।

आस्फोटा (सं० स्त्री०) नवमल्लिका, नेवारका फूल।

आस्फोटित (सं० त्रि०) आ-स्फुट-णिच् कर्मणि क्त। १ विदलित, रगड़ा हुवा। भावे क्त। २ बाहु प्रभृतिके ताल ठोंकनेका शब्द प्रकाश,जो आवाज़ ताल बजानेसे आती हो।

आस्फोत (सं० पु०) आ-स्फुट-अच्, पृषोदरादित्वात् टस्य तत्वम्। १ रक्तार्कवृक्ष, लाल मदारका पेड़। २ कोविदार वृक्ष, कचनारका दरख़्त। ३ भूपलाश वृक्ष, टेसूका पेड़।

आस्फोतक, आस्फोत देखो।

आस्फोतका, आस्फोता देखो।

आस्फोता (सं॰ स्त्री॰) आ-स्फुट्-अच्, पृषोदरादित्वात् टाप्। १ अपराजिता कालीजीर। 'आस्फोता गिरिकर्णी विष्णुक्रान्ताऽपराजिता।' (भावप्रकाश) २ लताविशेष, हापरमाली बेल। ३ शारिवा, अनन्तमूल। ४ काष्ठमल्लिका, जङ्गली चमेली। ५ श्वेत शारिवा, सफेद अनन्तमूल। ६ नवमल्लिका, नेवार।

आस्माक (सं॰ त्रि॰) अस्माकमिदम्; अस्मद्-अण् अस्मकादेशः, णित्वादाद्यचो वृद्धिः। तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ। पा ४।३।२। अस्मत् सम्बन्धी, हमारा।

आस्माकीन (सं॰ त्रि॰) अस्माकमिदम्, खञ्; अस्माकादेशः जित्वादाद्यचो वृद्धिः। युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्। पा ४।३।१। अस्मत् सम्बन्धी, हमारा।

आस्य (सं॰ क्ली॰) अस्यते चिप्यते भक्ष्यं यत्र अनेन वा, अस आधारे वा करणे ण्यत्। १ मुख, मुंह। 'वक्त्रास्ये वदनं तुण्डमाननं लपनं मुखम्।' (अमर) २ आकृति, चेहरा। ३ मुखांशविशेष, मुंहका एक हिस्सा। इससे अक्षरोच्चारण होता है। ४ छिद्र, दराज। (त्रि॰) आस्ये भवम्। ५ मुखसम्बन्धी, मुंहके मुतालिक।

आस्यदेश (सं॰ पु॰) मुखमध्य, मुंहका बिचड़।

आस्यन्दन (सं॰ क्ली॰) आ-स्यन्द भावे ल्युट्। १ ईषत् क्षरण, थोड़ा बहाव। २ अल्प गलन, हलकी गलायी।

आस्यन्दनवत् (सं॰ त्रि॰) वह चलनेवाला, जो गलते जा रहा हो। (पु॰) आस्यन्दनवान्। (स्त्री॰) आस्यन्दनवती।

आस्यन्धय (सं॰ त्रि॰) मुखामृतास्वादक, मुखचुम्बक, चुम्बनकारी, बोसा मिट्ठी या बच्ची लेनेवाला, जो किसीका मुंह चूमता हो।

आस्यपत्र (सं॰ क्ली॰) आस्येनेवोपमितं पत्रमस्य, बहुव्री॰। पद्म, मुंह-जैसे पत्ते रखनेवाला कमल।

आस्यपुष्प (सं॰ पु॰) श्वेतकिणिही वृक्ष, सफेद झटजीरा।

आस्यफल (सं॰ पु॰) श्वेतधुस्तूरवृक्ष, सफेद धतूरा।

आस्यलाङ्गल (सं॰ पु॰) आस्यं मुखं लाङ्गलमिव भूविदारकं यस्य, बहुव्री॰। १ शूकर, सूवर। २ वन्य शूकर, जङ्गली सूवर।

आस्यलोम, आस्यलोमन् देखो।

आस्यलोमन् (सं॰ क्ली॰) आस्यभवं लोम, शाक॰ तत्। श्मश्रु, दाढ़ी-मूंछ।

आस्यवैरस्य (सं॰ क्ली॰) मुखविस्वाद, मुंहका फीकापन।

आस्यशाखोट (सं॰ पु॰) गुल्मविशेष, किसी किस्मका झाड़। यह वातको बढ़ाता और पित्त, कफ, क्रमि, पाण्डुता, ज्वर तथा कामलको घटाता है। (चरकसंहिता)

आस्या (सं॰ स्त्री॰) आस भावे क्यप्-टाप्। १ स्थिति, गतिराहित्य, मुकूनत, रहास। २ विलम्बण, हालत-अवतर। ३ उपवेशन, बैठक। ४ निरुद्योगोपवेशन, बेकाम-बैठनेकी हालत।

आस्यासव (सं॰ पु॰) आस्यासव इव। लाला, लुवाब-दहन, तुफ, राल, थूक।

आस्र (सं॰ क्ली॰) अस्रमेव, स्वार्थे अण्। रुधिर, रक्त, खून, लहू।

आस्रप (सं॰ पु॰) आस्रं रुधिरं पिबति, उपसमा॰। १ राक्षस, खून पीनेवाला शख्स। मूलानक्षत्रका देवता भी राक्षस होता है। २ जोंक।

आस्रव (सं॰ पु॰) आस्रवति मनोऽनेन, करणे अप्। १ क्लेश, आफत, तकलीफ। २ प्रस्राव, बहाव। ३ पचत् तण्डुलका फेन, गर्म चावलका उबाल। ४ जैन मतसिद्ध पदार्थ विशेष। इससे जीव मुक्तिलाभ करता है। इन्द्रियको संयमसे रखना और सत्कर्ममें लगाना शुभास्रव कहाता है। आश्रव देखो।

आस्रस्त (सं॰ त्रि॰) पतित, गिरा-पड़ा, जो छूट गया हो।

आस्राय् (सं॰ त्रि॰) आस्रं वेदयति, आस्र-क्यङ्-क्विप्। सुखादिभ्यः कर्तृवेदनायाम्। पा ३।१।१८। आस्रज्ञापक, खून् बहनेका हाल बता देनेवाला।

आस्रायण (सं॰ पु॰) आस्राय-फक्। आस्रज्ञापकका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य।

आस्राव (सं॰ पु॰) आ-स्रवति रुधिरमस्मात्, आ-स्रु अपादाने घञ्। १ क्षत, जख्म। भावे घञ्। २ सम्यक् क्षरण, खासा बहाव। ३ मुखलाला, लुवाब

दहन, राल, थूक। ४ क्लेश, तकलीफ़। (त्रि०) आस्रावोऽस्त्यस्य, अर्श आदित्वात् अच्। ५ सम्यक् क्षरणयुक्त, खूब बहनेवाला।

आस्राविन् (सं० त्रि०) आस्रवति, आ-स्रु-णिनि। १ मदादि क्षरणशील, जिससे शराब वगैरह टपके। आस्रावोऽस्यास्तीति, अस्त्यर्थे इनि। २ क्षरणयुक्त, बहनेवाला। (स्त्री०) आस्राविनी।

आस्रावी (सं० पु०) १ अश्वके पादरोगका भेद, घोड़ेके पैरकी एक बीमारी। क्लेदस्रवतल अर्थात् पैरके तलवेमें ज़ख़्म रखनेवाले अश्वको आस्रावी समझना चाहिये। (जयदत्त) २ हस्ती, मस्त हाथी।

आस्वनित (सं० त्रि०) आ-स्वन-क्त इट्। धृषमनस-संघुषास्वनाम्। पा ७।२।२८। शब्दित, पुरशोर, आवाज़ देनेवाला।

आस्वाद (सं० पु०) आ-स्वद कर्मणि घञ्। १ मधुरादि रस, मीठा वगैरह ज़ायक़ा। २ शृङ्गारादि रस, इश्क़ वगैरहका मज़ा। भावे घञ्। ३ रसका अनुभव, ज़ायक़ेका लेना। शृङ्गारादिसे मनमें आनन्द वा दुःख उपजनेको आस्वाद कहते हैं। (त्रि०) ४ रस लेनेवाला, जिसे ज़ायक़ा आये।

आस्वादक (सं० त्रि०) आ-स्वद-ण्वुल्। आस्वादनकर्ता, ज़ायक़ा लेनेवाला। (स्त्री०) आस्वादिका।

आस्वादन (सं० क्ली०) आ-स्वद भावे ल्युट्। आस्वाद, ज़ायक़ेका लेना।

आस्वादनीय (सं० त्रि०) आस्वाद्य, चखने क़ाबिल।

आस्वादवत् (सं० त्रि०) आस्वाद चातुरर्थिको मतुप्। आस्वादयुक्त, रसीला, ज़ायक़ेदार।

आस्वादित (सं० त्रि०) आ-स्वद-णिच्-क्त-इट्। गृहीतआस्वादन, ज़ायक़ा लिया गया। २ भुक्त, खाया गया।

आस्वाद्य (सं० त्रि०) आ-स्वद-णिच्-यत्। १ आस्वादयोग्य, चख जाने लायक़। (अव्य०) ल्यप्। २ आस्वादन करके, ज़ायक़ा लेकर।

आस्वान्त (सं० त्रि०) आ-स्वन-क्त दीर्घश्च। शब्दित, पुरशोर, जिससे आवाज़ निकले।

आह (सं० अव्य०) आ-हन-ड। १ क्षेपपूर्वक, फेंककर। २ नियोग द्वारा, लगावसे। ३ दृढ़ सम्भावनामें, पक्की उम्मीदपर। ४ विषादपर, रञ्जके साथ।

'आह क्षेपे नियोगे च दृढ़सम्भावनेऽव्ययम्।' (शब्दाब्धि)

(हिं० अव्य०) ५ हाय, अफ़सोस। (स्त्री०) ६ दीर्घश्वास, ठण्ढी सांस।

"तुलसी आह ग़रीबकी हरिसों नहीं सहाय।
मुयी खालकी फूंक सो सार भसम हो जाय।" (तुलसी)

७ साहस, हिम्मत।

आहक (सं० पु०) आहन्ति; आ-हन-ड, ततः संज्ञायां कन्। नासाज्वर, नाक सूजनेसे आनेवाला बुखार।

आह करना (हिं० क्रि०) दीर्घश्वास लेना, उसास छोड़ना, ग़मगीन होना।

आह खेंचना, आह करना देखो।

आहङ्कार्य, अहङ्कार देखो।

आहट (हिं० स्त्री०) पादन्यासका शब्द, पैरकी खटक।

आहट लेना (हिं० क्रि०) सचेत रहना, खबरगीरा रखना।

आहत (सं० त्रि०) आ-हन-क्त। १ ताड़ित, मार खाये हुवा। २ हत, ज़ख़्मी, जो मार डाला गया हो। ३ गुणित, ज़रब दिया हुवा। ४ ज्ञात, जाना हुवा। ५ मृषार्थक, झूठ कहा हुवा। (पु०) ६ ढक्का, ढोल। (क्ली०) ७ वस्त्रविशेष, नया कपड़ा। वशिष्ठके मतसे अल्प प्रक्षालित, नूतन और न पहने हुये वस्त्रको आहत कहते हैं। यह वस्त्र सकल कार्यमें लग सकता है। ८ पुरातन वस्त्र, पुराना कपड़ा। बारम्बार रजकका आघात प्राप्त होनेसे पुरातन वस्त्रका नाम आहत पड़ा है।

'आहत' गुणिते चापि ताड़िते च मृषार्थके।
स्यात् पुरातनवस्त्रेऽपि नववस्त्रे च नाऽहते॥" (मेदिनी)

आहतलक्षण (सं० त्रि०) आहतमभ्यस्तं लक्षणं यस्य, बहुव्री०। शौर्यादि गुण द्वारा प्रसिद्ध, अच्छी सिफ़तके लिये मशहूर।

आहति (सं० स्त्री०) आ-हन-क्तिन्। १ प्रहरहेतु

आघात, चोट। २ ताड़न, मारपीट। ३ आगमन, आमद। ४ गुणन, ज़रब। ५ मर्दन, मालिश, मसाजी।

आहन (फा० पु०) १ आयस, लोहा। (हिं० पु०) २ भित्तिनिर्माणार्थ मृत्तिका तथा तृणका सम्मिलित द्रव्य, दीवार उठानेको पैरा और मट्टी मिलाकर बनायी हुयी चीज़।

आहनन (सं० क्ली०) आ-हन्यतेऽनेन, आ-हन करणे ल्युट्। १ ताड़न, मारपीट। २ पशुवध, जानवरका क़त्ल। ३ ताड़न-साधन दण्डादि, मारने-पीटनेको डण्डा वग़ैरह।

आहननवत् (वै० त्रि०) आहनन-मतुप्। वञ्चनवत्, मक्कार, दग़ाबाज़।

आहनन्य (वै० त्रि०) ढक्का बजाकर अपनी ख्याति करनेवाला,जो अपनी तारीफ़ ढोल बजाकर सुनाता हो।

आहनस् (वै० त्रि०) आहन्यते, आ-हन-असुन्। १ आहननीय, मारा जाने क़ाबिल। २ निष्पीड्य, निचोड़ा जाने लायक़। ३ स्फीत, आध्मात, सूजा या फूला हुवा।

आहनस्य (वै० क्ली०) आहनसे साधुः, यत्। १ हनन साधन द्रव्यादि, मारकाटमें काम देनेवाली चीज़। २ स्फीतता, सूजन, मोटायी।

आहनस्यवादिन् (वै० त्रि०) कामुक शब्द निकालनेवाला, जो मस्ताना बात करता हो।

आह निकालना, आह करना देखो।

आहनी (फा० वि०) अयोमय, लोहेसे बना हुवा।

आह पड़ना (हिं० क्रि०) १ अन्यके दीर्घश्वास निकालनेसे मारे जाना, दूसरेके अफ़सोस करनेसे तकलीफ़में आना। २ साहस होना, हिम्मत बढ़ना।

आह भरना, आह करना देखो।

आह मारना, आह करना देखो।

आहर (सं० पु०) आ-हृ-अच्। १ उच्छ्वास, आहसर्द, ठण्डी सांस। २ अन्तर्मुखनिश्वास, मुंहके भीतर भीतर चलनेवाली सांस। (त्रि०) ३ सञ्चयकारक, इकट्ठा करनेवाला, जो जोड़ता हो। ४ निकृष्ट जाति विशेष। इस जातिके लोग सम्भल, रामपुर, अहमदपुर, उभाली, महेश्वाम तथा रामगङ्गाके तीर रहते और रुहेलखण्डके भी किसी-किसी स्थानमें देख पड़ते हैं। यह अपनेको यदुवंशीय और कृष्णसे उत्पन्न बताते हैं। किन्तु आहीर अपनेको ही कृष्णवंशीय कहते और इनको उत्पत्ति गोपसे मानते हैं। आहर मत्स्य, गोमांस प्रभृति खाते हैं। युक्तप्रदेशमें नगावत, भट्टि, नौगरी, रुकर, वासोपरा, बकियायिन, भूसायिन, दिशवार प्रभृति कयी श्रेणीके आहर रहते हैं। (हिं० पु०) ५ समय, वक़्त। ६ युद्ध, जङ्ग। ७ जलस्थान, हौज़। यह तालावसे छोटा और मादसे बड़ा पड़ता है।

आहरकरटा (सं० स्त्री०) आहरकरट इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं०। करटको आहरण करनेका उपदेश देनेकी बात, कौवेसे उठा ले जानेको सिखानेकी बोली।

आहरचेटा (सं० स्त्री०) आहर चेट इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं०। चेटके प्रति आहरणार्थ निदेशक्रिया, नौकरसे उठा ले जानेको हुक्म देनेकी बात।

आहरण (सं० क्ली०) आ-हृ भावे ल्युट्। १ आनयन, लवायी। २ आयोजन, जुगाड़। कर्मणि ल्युट्। ३ आह्रियमाण द्रव्य, इकट्ठा की या लायी हुयी चीज़। ४ विवाहादिका उपढौकन द्रव्य, शादीमें दिया जानेवाला सामान। ५ ग्रहण, लेवायी। ५ अपहरण, छीन-छान।

आहरणीय (सं० त्रि०) आ-हृ-अनीयर्। १ आयोजनीय, आनयनके योग्य, इकट्ठा करने क़ाबिल, जो लाने लायक़ हो। २ उपढौकनके योग्य, दिये जाने क़ाबिल। ३ अपहरणयोग्य, छीन लिये जाने क़ाबिल।

आहरन (हिं० स्त्री०) ख़ूबी, निहायी।

आहरनिवपा (सं० स्त्री०) आहरनिवप इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं०। 'आहरण करो और बोवो' कहनेको आदेश क्रिया, जिस हुक्मसे काममें ले आने और बीज डालनेको बात सुनें।

आहरनिष्किरा (सं० स्त्री०) आहरनिष्किर इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं०। 'आहरणकर छाओ' कहनेको आदेश क्रिया, 'लाकर छोड़ दो' हुक्म देनेकी बात। इसी प्रकार आहरविताना, आहरवसना और

आहरसेना शब्दसे भी तत्तद्वस्तुके आहरणार्थं आदेश आता है।

आहरी (हिं० स्त्री०) १ लघु तड़ाग, छोटा तालाव। २ आलबाल, थाला। ३ कूपके समीपका जलाशय, कुयेंके पासका हौज़। इसमें पशु पानी पीते हैं।

आहर्तृ (सं० त्रि०) आ-हृ-तृच्। १ उपार्जक, पैदा करनेवाला। २ आयोजक, इकट्ठा करनेवाला। ३ आनयनकर्ता, लानेवाला। ४ अनुष्ठानकर्ता, काम शुरू करनेवाला। ५ हरण करनेवाला, जो छीन लेता हो। (पु०) आहर्ता। (स्त्री०) आहर्त्री।

आहलक् (वै० अव्य०) आस्फोटन शब्दके साथ, फटकारकर।

आहला (हिं० पु०) जलप्लावन, सैलाब, पानीकी बाढ़।

आहलीव (सं० क्ली०) द्रव्यविशेष, एक चीज़। गुजरातमें इसे आसालवीज कहते हैं। आहलीव उष्ण एवं तिक्त होता और त्वग्दोष, वात तथा गुल्मको नाश करता है। (वैद्यक निघण्टु)

आहव (सं० पु०) आह्वयन्ते परस्परं युद्धार्थमस्मिन्, आ-ह्वे आधारे अप् सम्प्रसारणं गुणश्च। आङि युद्धे। पा ३।३।७३। १ युद्ध, लड़ाई। २ समराह्वान, ललकार। आह्वयन्ते यज्ञद्रव्याण्यत्र, आ-हु आधारे अप्। २ यज्ञ, नियाज़। 'आहवः समरे यज्ञे।' (हेम)

आहवन (सं० क्ली०) आहूयते हवनीय घृताद्यत्र, आ-हु आधारे ल्युट्। १ यज्ञ, कुरबानी। भावे ल्युट्। २ सम्यक् होम, अच्छीतरह नयाज़ देनेका काम।

आहवनीय (सं० पु०) आहूयते प्रक्षिप्यते हविरत्र, आ-हु आधारे अनीयर्; आहवन-मर्हति छ वा। १ यज्ञका अग्निविशेष, नयाज़की आग। यह गार्हपत्य अग्निसे लिया और होमादिके निमित्त प्रस्तुत किया जाता है। २ यज्ञमें जलनेवालोंसे पूर्वीय अग्नि। 'दक्षिणाग्निर्गार्हपत्याहवनीयौ त्रयोऽग्नयः।' (अमर) (त्रि०) कर्मणि अनीयर्। ३ होतव्य, नयाज़में लगने लायक़।

आहवनीयक, आहवनीय देखो।

आहसर्द (फ़ा० स्त्री०) ठण्ढी सांस, अफ़सोसके साथ सांसका लेना।

आहा (सं० स्त्री०) वणिक् द्रव्यभेद, एक चीज़। (हिं०-अव्य०) २ आश्चर्य, ताज्जुब, अरे। ३ हर्ष, क्या खूब!

आहार (सं० पु०) आ-हृ-घञ्। १ आहरण, लेवायी। २ नियुक्ति, लगायी। ३ द्रव्यगलाधःकरण, खवायी। "आहारनिद्रा भयमैथुनञ्च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।" (हितोपदेश) ४ भोजनद्रव्य, खानेकी चीज़। भोजनद्रव्य द्रव और अद्रवभेदसे द्विविध होता है। फिर इसमें भी प्रत्येक स्वभावगुरु,मात्रागुरु और संस्कारगुरु भेदसे त्रिविध है। प्राणियोंका मूल आहार ही ठहरता है। क्योंकि इससे बल, वर्ण और ओजःकी वृद्धि होती है। आहार षट् रसमें आयत्त रहता है। स्थिति, उत्पत्ति और विनाशसे ब्रह्मादि भी आहार करते हैं। इससे ही अतिवृद्धि, बल, आरोग्य, वर्ण और इन्द्रिय-प्रसादादि मिलता है। फिर आहारके वैषम्यसे अस्वास्थ्य आता है। (सुश्रुत) आहार बलकृत्, सद्यः प्रीतिप्रद तथा देहधारक होता और ओजः, तेजः, स्वरोत्साह, धृति, स्मृति एवं मतिको बढ़ाता है। (मदनपाल) प्राणानिलसे ईरित हो आहार पहले आमाशयमें पहुंचता और माधुर्य, फेनभार तथा षट् रसको प्राप्त करता है। पाचक पित्तसे विदग्ध होनेपर यह अम्ल पड़ जाता और पीछे समान मरुत् द्वारा ग्रहणीमें पहुंचता है। ग्रहणीमें आहार पकता और कोष्ठवह्निसे कटु पड़ता है। सम्यक्क रहनेसे रस और अपक्व रहनेसे यह आम बनता है। फिर वह्निबलसे आहारमें माधुर्य और स्निग्धतादि गुण आता है। सम्यक् पक्व होनेसे आहार अखिल धातुको परिष्कार करता और अमृतोपम ठहरता है। किन्तु रस मन्द-वह्निसे विदग्ध, कटु तथा अम्ल होनेसे विषभावको पहुंचता और रोगसङ्कर उपजाता है। (शार्ङ्गधर) ५ अन्न, अनाज। ६ अर्धाहार, आधा खाना। ७ शब्दादि विषयक ज्ञान, आवाज़ वगैरहका इल्म। ८ आहरणकारी, उठा ले जानेवाला। ९ राजपूतानेका एक प्राचीन नगर। पहले आहार नगरमें बड़ी समृद्धि रही। किन्तु अब उसका ध्वंसावशेष मात्र अवशिष्ट है। जैनोंके अति प्राचीन मन्दिर आज भी पड़े हैं। ९ युक्तप्रान्तके बुलन्दशहर जिलेकी एक पुरानी बस्ती।

यहां अनेक देवालय विद्यमान हैं। पास ही गङ्गानदी बहती है। कितने ही लोग स्नान करने आते हैं। औरङ्गजेबके समय आहारके नागर-ब्राह्मणोंने बाध्य हो इसलाम धर्मको ग्रहण किया था।

आहारक (सं० त्रि०) आहरणकारी, लानेवाला।

आहारपाक (सं० पु०) आहारस्य भुक्तद्रव्यस्य पाकः रसादिभावेन परिणामः। वैद्यशास्त्रोक्त भुक्त अन्नादिका रसादिके रूपमें परिणामसे पाकविशेष, खानेका हाज़िमा। आहार देखो।

आहारविरह (सं० पु०) भोजनकी न्यूनता, खानेकी तकलीफ़, रोटीका लाला।

आहार-विहार (सं० पु०) भोजन-भाव, खाना-खेलना। आहार-विहार बिगड़नेसे कोष्ठाग्नि बुझ जाता और ज्वर उत्पन्न होता है।

आहारशुद्धि (सं० स्त्री०) आहारस्य भक्ष्यान्नादेःशुद्धिः, ६-तत्। १ भक्ष्य अन्नादिका सूत्युक्त शोधन, खानेकी सफ़ायी। २ दुष्ट-आहार-जन्य दोषनिवारणार्थ शुद्धि-रूप प्रायश्चित्त, बुरे खानेसे पैदा हुये ऐबको मिटानेके लिये किया जानेवाला प्रायश्चित्त।

आहारशोषण (सं० पु०) कृष्णजीरक, काला जीरा।

आहारसम्भव (सं० पु०) आहारात् भुक्तान्नादेः सम्भवति, आहार-सं-भू-अच्। आहार-पाकज रस-धातु, खानेके हाज़मेसे बना हुवा जिस्मका कैलूस।

आहारस्थान (सं० क्ली०) निर्जनादि देश, सन्नाटेकी जगह। भले आदमीको आहार, निर्हार और विहार-योग विजनमें करना चाहिये। (भावप्रकाश)

आहारार्थिन् (सं० त्रि०) आहारार्थ भिक्षाटन वा अन्वेषण करनेवाला, जो खानेकी ग़र्ज़ या तलाशमें हो। (पु०) आहारार्थी। (स्त्री०) आहारार्थिनी।

आहारिक—जैनमतानुसार जीवके पांचमें एक शरीर। इसका रूप अति सूक्ष्म है। आहारिक समाधिस्थ साधुके शिरःसे निकलता, त्रिकालज्ञ सिद्धसे व्यवस्था लेने जाता और अभीष्ट समाचार पा लौट पड़ता है।

आहारिन् (सं० त्रि०) आहार करनेवाला, जो खाता पीता हो। (पु०) आहारी। (स्त्री०) आहारिणी।

आहार्य (सं० त्रि०) आ-हृ-ण्यत्। १ आहरणीय, लेने या छीनने लायक़। २ व्याप्य, हस्तिफ़ाकी। ३ कृत्रिम, मसनूयी। ४ भक्ष्य, खाया जानेवाला। ५ आनयनयोग्य, लाने क़ाबिल। ६ ज्ञेय, समझा जाने लायक़। (पु०) ७ बन्धनभेद, किसी क़िस्मकी पट्टी। ८ लौकिकाग्नि, दुनियावी आग। ९ औपासनिक अग्नि, घरमें पूजी जानेवाली आग। (क्ली०) १० निष्कर्षण द्वारा चिकित्सा किया जानेवाला रोग, जो बीमारी निकाससे अच्छी हो। ११ निष्कर्षण, निकास। १२ पात्र, बरतन। १३ नाटकका सुन्दर अभिनय, तमाशेका बढ़िया हिस्सा।

आहार्यशोभा (सं० स्त्री०) कृत्रिम कान्ति, मसनूयी ख़ूबसूरती।

आहार्याभिनय (सं० पु०) अभिनय विशेष, किसी क़िस्मका खेल। इसमें पात्र न कुछ कहता-सुनता और न अङ्गचालन ही करता है। एकमात्र वेशभूषासे ही उसका काम निकल जाता है।

आहाव (सं० पु०) आ-ह्वे-घञ्, सम्प्रसारणं वृद्धिश्च। निपानमाहावः। पा ३।३।७४। १ निपानजलाशय, हौज़। कूप निकट गो प्रभृतिके जल पीनेको प्रस्तरादि द्वारा निर्मित क्षुद्र जलाशय आहाव कहाता है। 'आहावस्तु निपानं स्यादुपकूपजलाशये।' (अमर) २ पात्र, बरतन। आहू-यन्ते परस्परं युद्धार्थमरयो यत्र, आधारे घञ् पृषो-दरादित्वात् साधुः। ३ युद्ध, जङ्ग। भावे घञ्। ४ आह्वान, ललकार। आ-हु आधारे घञ्। ५ अग्नि, आग। आ-ह्वे भावे आधारे वा घञ्। ६ मन्त्रविशेष द्वारा आह्वान, आह्वान-साधन मन्त्रविशेष।

आहि (हिं० क्रि०) है। यह आसना क्रियाका वर्तमानकाल और अन्य पुरुषका एकवचन है।

आहिंसि (सं० पु०-स्त्री०) अहिंसस्यापत्यम्, इञ्। अहिंसका अपत्य, हिंसारहित व्यक्तिका पुत्र वा कन्या-रूप अपत्य। अहिंसके गोत्रापत्यको आहिंसायन कहते हैं।

आहिक (सं० पु०) अहिरिव, इवार्थे कन् ततः स्वार्थे अण्। १ केतुग्रह, नुक़ता रास-उल्ज़ब। 'आहिकः अश्लेषाभूः शिखी केतुः।' (हेम) सर्प-जैसा होनेसे केतुग्रहका नाम आहिक पड़ा है। २ पाणिनि मुनि।

आहिच्छत्र (सं० त्रि०) अहिच्छत्रदेशे भवम्, अण्। अहिच्छत्रदेशभव, अहिच्छत्र मुल्कका पैदा।

आहिण्डिक (सं० पु०) निषादके औरस और वैदेहीके गर्भसे उत्पन्न अन्त्यज सङ्कर जाति।

"आहिण्डिको निषादेन वैदेह्यामेव जायते।" (मनु १०।३७)

पहले आहिण्डिक कारावाससे बाहर चौकीदारी करते थे।

आहित (सं० त्रि०) आ-धा-क्त ह्यादेशः। १ न्यस्त, क्षिप्त, रखा हुवा, डाला गया। २ स्थापित, रक्षित, बैठाया या महफूज किया हुवा। ३ अर्पित, नजर किया हुवा। ४ कृत, किया हुवा। ५ आधान-संस्कार-कृत। ६ जनित, पैदा किया हुवा। अपने स्वामीसे एक साथ अधिक धन लेकर कार्य सम्पादन करनेवाला भृत्य आहित कहाता है।

आहितक्लम (सं० त्रि०) श्रान्त, थका-मांदा।

आहितलक्षण (सं० त्रि०) आहितं लक्षणं यस्य। १ गुणादि द्वारा विख्यात, अच्छे औसाफके लिये मशहूर। २ न्यस्तचिह्न, दागदार, निशान् रखनेवाला।

आहितव्यथ (सं० त्रि०) दुःखित, तकलीफज़दा, दर्दके आसार रखनेवाला।

आहितस्वन (सं० त्रि०) कोलाहलकारी, पुरशोर, गुल मचानेवाला।

आहिताग्नि (सं० पु०) आहितः आधानीकृतोऽग्नि-र्येन, बहुव्री०। १ साग्निक, वेदमन्त्रादि द्वारा कृत संस्काराग्नियुक्त। जन्मसे मरण पर्यन्त उत्पन्न होनेवाले गृहमें अग्निको बनाये रखनेवाला ब्राह्मण आहि-ताग्नि कहाता है। आज भी काशी प्रभृति तीर्थमें साग्निक ब्राह्मण मिलते हैं। २ याज्ञिक, वेदीपर यज्ञका अग्नि रखनेवाला पुरुष।

आहिताग्निगण—पाणिन्युक्त परनिपातार्थ शब्दसमूह। यथा,—आहिताग्नि, जातपुत्र, जातदन्त, जातश्मश्रु, तैलपीत, घृतपीत, मद्यपीत, ऊढ़भार्य, गतार्थ।

"आकृतिगणः तेनान्येपि।" (सिद्धान्तकौमुदी)

आहिताङ्क (सं० त्रि०) चिह्नित, दागदार, धब्बे रखनेवाला।

आहिति (सं० स्त्री०) आ-धा-क्तिन्, ह्यादेशः। १ स्थापन, रखायी। २ आधान, संस्कारपूर्वक प्रतिष्ठा। ३ मन्त्रद्वारा अग्न्यादिकी संस्काररूप आहुति।

आहितुण्डिक (सं० पु०) अहितुण्डेन दीव्यति, ठक्। तेन दीव्यति खनति जयति जितम्। पा ४।४।२। व्यालग्राही, सपेरा, सांपको पकड़नेवाला।

आहिमत (सं० त्रि०) अहिमतो दूरभवम्, अण्। सर्पविशिष्ट देशके निकट उत्पन्न, जो सांपोंसे भरे मुल्कमें पैदा हो।

आहिस्तगी (फ़ा० स्त्री०) १ मन्दता, दीर्घसूत्रता, धीमापन।

आहिस्ता (फ़ा० वि०) १ मन्द, धीमा। २ अलस, काहिल, सुस्त। ३ मृदु, नर्म। (क्रि० वि०) ४ अशीघ्र, धीरे-धीरे। ५ शनैः शनैः, बारी-बारी, थोड़ा-थोड़ा। ६ सुखपूर्वक, आरामसे, फुरसतमें।

आहीर—गोपजाति विशेष, अहीर। महाभारतादि प्राचीन ग्रन्थमें आभीर नाम लिखा है। मनुके मतमें ब्राह्मणके औरस और अम्बष्ठ स्त्रीके गर्भसे अहीरका जन्म हुवा है। किन्तु ब्रह्मपुराण क्षत्रियके औरस और वैश्य स्त्रीके गर्भसे इसकी उत्पत्ति बताता है। अहीर अपनेको यदुवंशीय कहते हैं। पूर्वकाल यह जाति भारतवर्षके पश्चिम रहती थी। उस समय अहीरोंके रहनेका स्थान भी आभीर ही कहाया। पाश्चात्य ऐतिहासिक टलेमिने आबिरिया (Abiria) नाम दिया है। ई०के प्रथम शताब्द आहीरोंको नेपालका आधिपत्य मिल गया था। नेपालके 'पार्व-तीय वंशावली' नामक ग्रन्थमें इस जातिके तीन राजा-ओंका नाम विद्यमान है। ई०के अष्टम शताब्द गुजरात पहुंचनेपर काठी लोगोंने अधिकांश अहीरोंका राज्य देखा था। आजकल युक्तप्रदेश और मध्यप्रदेशके नानास्थानमें यह जाति बसती है। प्रधानतः नन्द-वंश, यदुवंश और गोपालवंश (ग्वाला) तीन भागमें अहीर विभक्त हैं। गङ्गाकी अन्तर्वेदीसे उत्तर नन्द-वंश, अन्तर्वेदीके मध्य यदुवंश और काशी, बिहार प्रभृति स्थानमें गोपालवंश रहता है।

आहीरणी (सं० पु०) दो शिरःका सर्प, दुमुंहा सांप।

आहुक (सं० पु०) यदुवंशीय क्षत्रियविशेष, वसु-

देव। महाभारतीय सभापर्वके २२ और हरिवंशके ३८वें अध्यायमें वसुदेवको आहुक कहा है।

आहुकी (सं० स्त्री०) आहुककी भगिनी।

आहुड़ (हिं० पु०) आहव, जङ्ग, लड़ाई।

आहुत (सं० क्ली०) उद्देश्यस्याभिमुख्येन साक्षादेव हुतं दत्तम्, आ-हु-क्त। १ गृहस्थद्वारा कर्तव्य पञ्च महायज्ञके अन्तर्गत मनुष्ययज्ञ। २ आतिथ्य, मेहमांदारी। ३ सम्मुख हुत देवादि। ४ सम्यक् यज्ञ।

आहुति (सं० स्त्री०) आ-हु-क्तिन्। १ मन्त्रद्वारा देवोद्देशसे अग्निमें घृतादिका निक्षेप, देवताके लिये आगमें घी वग़ैरहका डालना।

"अग्नौ प्रास्ताहुति: सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।" (मनु ३।७६)

आहुयते, कर्मणि क्त। २ अग्नि, आग। ३ होमका द्रव्य घृतादि।

आहुती (हिं०) आहुति देखो।

आहुली (सं० स्त्री०) आहुल्य देखो।

आहुल्य (सं० क्ली०) आह्वल वाहुलकात् क्यप् सम्प्रसारणञ्च। कश्मीरादि देशमें उत्पन्न होनेवाला तरवट नामक काञ्चनवर्ण पुष्पविशेष, किसी झाड़का पीला फूल। यह तिक्त, शीत तथा चक्षुष्य होता और पित्तदाह, मुखरोग, कुष्ठ, कण्डु एवं शूलव्रणको दूर करता है। (राजनिघण्टु)

आहुव (वै० त्रि०) आ-ह्वे घञर्थे कर्मणि क सम्प्रसारणं उवङ्। आह्वानके योग्य, बोलाये जाने लायक़।

आहू (सं० त्रि०) आह्वयाति, आ-ह्वे-क्विप् सम्प्रसारणम्। १ आह्वयक, बोलानेवाला। २ आह्वयमान, जो बोलाया गया हो। (फ़ा० पु०) ३ हरिण, मृग, हिरना।

आहूत (सं० त्रि०) आ-ह्वे-क्त। १ बोलाया या पुकारा हुवा। (अव्य०) २ आभूत, प्रलय पर्यन्त, क़यामत तक।

आहूतप्रपलायिन् (सं० त्रि०) आहूत: विवादनिर्णयाय राज्ञा कृताह्वानोऽपि प्रपलायते, प्र-परा-अय-णिनि, रस्य लत्वम्। व्यवहारमें हीनवादी विशेष, बोलाये जाते भी भाग खड़ा होनेवाला मुद्दयी या गवाह। हीनवादी पांच प्रकारका होता है—कुछका कुछ उत्तर देने, प्रतिवादीके साक्षी प्रभृतिसे द्वेष रखने, विचारके समय न पहुंचने, पूछनेपर चुप रह जाने और बोलानेसे भी भाग खड़ा होनेवाला।

आहूतसंप्लव (सं० पु०) आहूतस्य संप्लव:, ६-तत् पृषोदरादित्वात् तस्य ह्र:। १ पृथिवी पर्यन्तका जलमें डूब जाना। आहूतस्य तत्तन्नाम्ना कृतसङ्केतस्य विश्वस्य संप्लवो यत्र, बहुव्री०। २ प्रलयकाल, क़यामत। प्रलयके समय तत्तन्नामसे कृतसङ्केत विश्वका आह्वानरूप व्यवहार नहीं चलता।

आहूति (सं० स्त्री) आ-ह्वे-क्तिन्। आह्वानकार्य, पुकार, बुलाहट। घृत, समिध, तिल प्रभृति द्वारा जो होम होता, वह आहूति कहाता है। आहूति पानेसे देवता उपस्थित हो जाते हैं। सुतरां इसे भी पुकार कहना पड़ता है।

आहूय (सं० अव्य०) आ-ह्वे-ल्यप्। आह्वान करके, बुलाकर, पुकारनेपर।

"आहूय दानं कन्याया ब्राह्मो धर्म: प्रकीर्तित:।" (मनु ३।२७)

आहूरफेन (सं० क्ली०) अहिफेन, अफीम।

आहूर्य (वै० त्रि०) १ नीचे झुकाया या नज़दीक लाया जानेवाला। २ अनुकूल बनाया जानेवाला, जिससे झुकना पड़े। ३ पुकारा जानेवाला, जिसे बुलाना पड़े।

आहृत (सं० त्रि०) आ-हृ-क्त। आनीत, आहरण किया हुवा, जो लाया गया हो।

आहृतयज्ञक्रतु (वै० त्रि०) निष्पन्न यज्ञ करनेका अभिलाषी।

आहृति (सं० स्त्री०) आ-हृ-क्तिन्। आहरण, आनयन, लवायी।

आहृत्य (सं० अव्य०) आ-हृ-ल्यप् तुगागम:। आहरण करके, लाकर।

आहेय (सं० त्रि०) अहेरिदम्, ढक्। १ सर्पसम्बन्धी, सांपसे तालुक़ रखनेवाला। (क्ली०) २ विष, सांपका ज़हर।

आहै (हिं० क्रि०) आहि, है। यह 'आछना' क्रियाका वर्तमान काल है।

आहो (सं० अव्य०) नु, उत, आहोस्वित्, अथवा,

अथवा, नोचेत्, वरना, ख़ाह, या, ना, कि, नहीं तो। इस शब्दसे प्रश्न, विकल्प और विचार प्रकट होता है।

'आहो उताहो हाथैतो परि प्रश्नविचारयोः।' (विश्व)

आहोपुरुषिका (सं॰ स्त्री॰) अहो अहमेव पुरुषः पुरुषपदवाच्यः शूर इत्यर्थः, मयूरव्यं॰; निपातनात् अहो पुरुषः तस्य भावः, वुञ् स्त्रीत्वात् टाप्। १ आत्मश्लाघा, ख़ुदसिताई, अपनी बड़ाईकी बात। २ अपने बलका गर्व, अपनी ताकतकी शेखी।

'आहोपुरुषिका दर्पाद्या स्यात् सम्भावनात्मनि।' (अमर)

आहोम—आसामका एक प्राचीन राजवंश। ई॰के १३वें शताब्द ब्रह्मपुत्र उपत्यकाकी पूर्वसीमापर आहोम वंशके पूर्वज इधर-उधर घूमते फिरते थे। यह ताई अथवा शान जातिके लोग रहे। आहोम अपनेको ईश्वरसे उत्पन्न बताते हैं। ५६४ ई॰को खुनलङ्ग और खुनलाई सुवर्णशृङ्खलाके सहारे वैकुण्ठसे मुङ्गरी-मुङ्गराम देशपर आ उतरे थे। वहांके ताई या शान राष्ट्रविहीन रहे। इनके साथी लङ्गो भूलसे छूटे हुये शकुनसूचक कुक्कुट और दूसरे सुसिद्ध द्रव्य लानेको वैकुण्ठ वापस पहुंचे। इसके उपहारमें चीन तथा हेङ्गडानका राज्य उन्हें मिला था। खुनलङ्ग और खुन्लाईने मुङ्गरी-मुङ्गराममें एक नगर बनाया। खुनलाईने अपने बड़े भाई खुनलङ्गको इतना दबाया, कि उन्होंने 'सोमदेव'का उठा मङ्गखु-मुङ्गजाउमें अपना राज्य प्रतिष्ठित किया था। खुनलङ्गके सात पुत्र रहे। कनिष्ठ पुत्र खुच्छूको सिंहासन प्राप्त हुवा था। दूसरे भाई अन्य राज्योंके करद नृपति बने। मुङ्गकङ्ग-नरेश ज्येष्ठ पुत्रके पास 'सोमदेव' रहे। खुनलाईने सत्तर और उनके पुत्र त्याउआई-जेपत्याफाने चालीस वर्ष मुङ्गरीमुङ्गराममें राजत्व किया। उन्होंने नारावों और ब्रह्मदेशवासियोंमें आज भी चलनेवाला एजेयी संवत् निकाला था। खुनलाईके कोयी उत्तराधिकारी न रहनेसे खुनलुङ्ग और खुच्छू वंशके त्याउखुञ्जनने अपने एक पुत्रको सिंहासनपर बैठाया, जिन्होंने पचीस वर्षतक राज्य किया। उनके मरनेपर पुत्रोंने राज्यको बांट अलग अलग मुङ्गरीमुङ्गराम और मौलङ्गपर अधिकार जमाया था। मुङ्गरीमुङ्गरामका राजवंश ३३ वर्ष राज्य चला नष्ट हुवा और खुच्छूका एक वंशज राजा बना। उन्हींके एक पौत्रका नाम सुकाफा रहा, जिन्होंने आसाममें आहोम राज्य प्रतिष्ठित किया।

किन्तु योगिनीतन्त्रके प्रमाणमें आहोम वंशका परिचय अन्य प्रकार देते हैं। उसके लेखानुसार सौमारपीठसे पूर्व किसी पहाड़ीपर वशिष्ठ मुनिका आश्रम रहा। एक दिन मुनिने अपने उद्यानमें सचीके साथ इन्द्रको क्रीड़ा करते देखा था। उन्होंने क्रोधमें आकर शाप दिया,—इन्द्र! तुम्हें किसी नीच जातिकी स्त्रीके प्रेममें फंसना पड़ेगा। मुनिका वाक्य सच्चा निकला। विद्याधरीने किसी नीचके घर अवतार लिया था। इन्द्रसे उनका प्रेम बढ़ा और एक पुत्र उत्पन्न हुवा। इन्द्र उस लड़केको बहुत प्यार करते थे। उसके कितने ही पुत्र हुये, जिनमें खुनलुङ्ग एवं खुनलाई बड़े और मुङ्गरीमुङ्गरामके राजा थे।

आहोम बुरांजि देखने और दूसरे प्रमाण पानेसे सुकाफा ही आसाममें आहोम राज्यके प्रतिष्ठाता मालूम पड़ते हैं। वह शानके मौलङ्ग राज्यसे आसाम आये थे। सम्भवतः आहोमोंका आदिवास पोङ्गमें रहा। आहोम आकार-प्रकार और भाषाभावमें प्रकृत शान हैं। शानोंके बौद्धधर्म ग्रहण करनेसे पहले ही आहोम आसाम आ गये थे।

लोगोंके कथनानुसार १२१५ ई॰को आठ सभ्यों और ८०० मनुष्यों, स्त्रियों और बच्चोंके साथ सुकाफाने मौलङ्ग छोड़ा। सवारीके लिये दो हाथी और ३०० घोड़े भी रहे। तेरह वर्ष तक वह पाटकाईके पार्वत्य प्रदेशपर घूमते घूमते और नागा ग्रामपर आक्रमण मारते मारते १२२८ ई॰को खाम-जाङ्ग पहुंचे। नाङ्गन्याङ्ग ह्रदपर आनेसे पहले सकाफाने बरंगोंके सहारे खामनामजाङ्ग नदी पार की थी। नागावोंको मारकाट और अपने एक सभ्यको राजा बना वह डङ्गकाओरङ्ग, खामपाङ्गपुङ्ग और नामरूपकी ओर रवाना हुये। सुकाफा सेसा नदीपर पुल बांध डिहिङ्गपर चढ़े, किन्तु उस स्थानको उपयुक्त न देख टिपाम लौट पड़े। १२३६ ई॰को मुङ्गकाङ्ग चेखरू (अभयपुर)में जा वह कयी वर्ष रहे थे। १२४०

ई०को जलप्लावन होनेसे सुकाफा हाबुङ्ग आये और दो वर्षतक वहां ठहरे। १२४४ ई०को हाबुङ्गमें भो जलप्लावन पड़नेसे उन्हें दोखूके मुंहानेपर जाकर ठहरना पड़ा। वहांसे सुकाफा लिगिरीगांव गये थे। १२४६ ई०को वह सिमलुगुड़ी पहुंचे। १२५३ ई०को सुकाफाने सिमलुगुड़ी छोड़ चराईदेवमें आकर एक नगर बनाया था। उपरोक्त उत्सवके उपलक्षमें भगवान्के प्रीत्यर्थ दो अश्वका वलि दिया और ब्रह्म-दारुके नीचे देवाधाईका शान्तिपाठ किया गया।

प्रकृत प्रस्तावसे सुकाफा ही आसाममें इन्द्र वा आहोम-राजवंशके प्रतिष्ठाता रहे। आहोम वंशके जिन-जिन राजावोंने आसाममें शासन किया, उनका नाम नीचे दिया है,—

१। सुकाफा	१२२८ ई०से	१२६८ ई०तक
२। सुतेउफा (१लेका बेटा)	१२६८	१२८१
३। सुबिन्फा (२रे ,,)	१२८१	१२९३
४। सुखांफा (३रे ,,)	१२९३	१३३२
५। सुखरांफा	१३३२	१३६४
६। सुतुफा	१३६४	१३७६
(राजहीन—बड़गोंहाई और बूढ़ागोंहाईका शासन ४ वर्ष)		
७। त्याओखाम्ति (सुखांफाका ३रा बेटा)	१३८०	१३८९
(राजहीन—८ वर्ष)		
८। सुदांफा वा ब्रह्मराज (७मका बेटा)	१३९७	१४०७
९। सुजांफा	१४०७	१४२२
१०। सुफाक्फा	१४२२	१४३९
११। सुसेन्फा	१४३९	१४८८
१२। सुहेन्फा	१४८८	१४९३
१३। सुपिम्फा	१४९३	१४९७
१४। सुहुंमुं वा स्वर्गनारायण	१४९७	१५३९
१५। सुक्लेन्मुं वा गढ़गांवा राजा	१५३९	१५५२
१६। सुकाम्फा वा खोड़ा राजा	१५५२	१६०३
१७। सुसेंफा वा बुड्ढे राजा प्रतापसिंह	१६०३	१६४१
१८। सुराम्फा वा भगा राजा	१६४१	१६४४
१९। सुत्यिन्फा वा नरिया राजा	१६४४	१६४८
२०। सुताम्ला वा जयध्वजसिंह	१६४८	१६६३
२१। सुपुंमुं वा चक्रध्वज सिंह	१६६३	१६७०
२२। सुन्यात्फा वा उदयादित्य सिंह	१६७०	१६७३
२३। सुक्लाम्फा वा रामध्वज सिंह	१६७३	१६७५
२४। सुहुं	१६७५	
२५। गोबर	१६७५	
२६। सुजिन्फा	१६७५	१६७७
२७। सुदेफा	१६७७	१६७९
२८। सुलिक्फा वा लड़ा राजा	१६७९	१६८१
२९। सुपात्फा वा गदाधरसिंह	१६८१	१६९६
३०। सुकरुंफा वा रुद्रसिंह	१६९६	१७१४
३१। सुतान्फा वा शिवसिंह	१७१४	१७४४
३२। सुनेन्फा वा प्रमत्तसिंह	१७४४	१७५१
३३। सुरामफा वा राजेश्वरसिंह	१७५१	१७६९
३४। सुन्योफा वा लक्ष्मीसिंह	१७६९ ई०से	१७८०
३५। सुहित्पांफा वा गौरीनाथसिंह	१७८०	१७९५
३६। सुक्लिंफा वा कमलेश्वरसिंह	१७९५	१८१०
३७। सुदिन्फा वा चन्द्रकान्त सिंह	१८१०	१८१८
३८। पुरन्दर सिंह	१८१८	१८१९
३९। योगेश्वर सिंह	१८१९	
(ब्रह्मदेशीयका शासन	१८१९	१८२४)
(वृटीश-अधिकार	१८२४)	
पुरन्दर सिंह (उपर आसाममें)	१८३२	१८३८

उपरोक्त राजावोंमें जिनके समय विशेष-विशेष घटना हुयी, अति संक्षेपसे उनकी बात लिखी है—४थे नृपति सुखांफा आसपासके राजावोंको हरा समय ब्रह्मपुत्र उपत्यकाके अधीश्वर बने। कामताके राजाने युद्ध की भीषणतासे घबरा अपनी कन्या रजनी आहोमराजको व्याह दी थी। ५म राजा त्याओ-खामतिको अमात्योंने मारवा डाला था। खाम्तिकी छोटी रानी हाबुङ्ग पलायनके एक पुत्र हुवा, जिसका नाम सुदांफा पड़ा। बूढ़ा गोंहाईने यह समाचार पा सुदांफा बालकको बोलाया और १३९८ ई०को सिंहासनपर बैठाया। ब्राह्मणके घर लालन-पालन होनेसे लोग प्रायः उन्हें 'ब्रह्मराज' कहते थे। उन्होंने धोलामें एक नगर बनाया। किन्तु पीछे अपनी राजधानी दिहिङ्ग नदीके समीप चारगुयाको ले गये थे। उन्होंके समय सबसे पहले आहोमोंमें ब्राह्मणोंका प्रभाव फैला। राजाने अपने पालनेवाले ब्राह्मण और उसके पुत्रादिको साथ ला अच्छे-अच्छे पदोंपर प्रतिष्ठित किया था। १४०७ ई०को राजा सुहुंमुं चारगुयामें बड़ी धूमधामसे गद्दीपर बैठे। ब्राह्मणोंने राजाका नाम 'स्वर्गनारायण' रख दिया था। दिहिङ्गमें अपनी राजधानी बकटा बनाने और कितने ही आहोम बसानेसे अधिकतर लोग उन्हें 'दिहिङ्गिया' कहते रहे। अतःपर आहोमराज स्वर्गदेव नामसे भी ख्यात हुवे। १५२७ ई०को मुसलमान् भी आसामपर चढ़े थे। किन्तु आहोमोंने उन्हें हराया और ४० घोड़ों तथा २०से ४० तक तोपोंको छीना। १५२१ ई०को तेमाईमें मुसलमानोंसे पुनः युद्ध हुवा। मुसलमान-सेनापति अपने जहाज़ छोड़ भाग गये थे। १५३२ ई०को मुसलमानोंने फिर बड़े समारोहसे आक्रमण किया। कितने ही दिन समर होने बाद

१५३२ ई०को जो जलयुद्ध हुवा, उसमें आहोमोंने धूम-धामसे विजय पाया था। इस विजयके उपलक्ष्यमें उक्त नदीपर आहोम-सेनापतिने एक मन्दिर और तड़ाग बनवाया। १५३८ को सुकलेन्मुंने अपने पिता आहोमराज सुहुंमुंको मरवा डाला था। उक्त नृपतिके समय आहोमोंने 'ताओसिङ्ग' वा षष्टि संवत्सरके बदले हिन्दुवोंका शक चलाया और शङ्करदेवके सहारे वैष्णवमार्गका प्रभाव बढ़ाया। अपने पिताको मार सुकलेन्मुं राजा बने थे। उन्होंने अपनी राजधानी गढ़गांवमें प्रतिष्ठित की। १५६३ ई०को ढकेरीराजने भी चढ़ायी की थी। मुराभगाके युद्धमें आहोमोंने उन्हें भगाया और हाथियों तथा हथियारोंको लूट लिया। सन् १६१५ ई०का मुसलमानोंने कोचनरेश बलितनारायणको परास्त किया और उन्होंने आकर आहोमनृपति प्रतापसिंहके निकट आश्रय लिया। इसपर मुसलमानोंने आहोम राज्यपर आक्रमण मारा था। भरलीमें जो युद्ध हुवा, उसमें पहले तो मुसलमानोंने विजय पाया; किन्तु पीछे पराजय हाथ लगा। १६१७ ई०को प्रतापसिंह हाजोकी ओर आगे बढ़े थे। उन्होंने मुसलमानोंपर आक्रमणकर पाण्डु जीता। किन्तु हाजोका आक्रमण सफल न हुवा, और आहोमोंको पीछे हटना पड़ा था। १६१८ ई०को मुसलमानोंने धर्मनारायणको ब्रह्मपुत्रके दक्षिण किनारे घेर लिया। आहोमोंने वहां पहुंच मुसलमानोंको हराया था। १६१५ ई०को भरली नदीकी लड़ायीमें भी आहोम जीते। १६३८ ई०को अन्ततः मुसलमानके साथ सन्धि हुयी और ब्रह्मपुत्रके उत्तर किनारे बड़-नदी और दक्षिण किनारे असुरारअली मुसलमानों और आहोमोंके राज्यकी सीमा ठहरी। १६५८ ई०को आहोमोंने कोचोंको भी दो बार सङ्कोश-नदीके पास खदेर मारा था। कहते, कि उस समय आहोमोंने ढाके तक लूट-मार मचायी। १६६२ ई०को मीर-जुमला आहोम राज्यपर चढ़े थे। आहोम जोगीगोफाका किला छोड़ श्रीघाट और पाण्डुको भाग गये। ४थी फरवरीको मुसलमानोंने गौहाटी नगर छीना था। अन्तको शिमलागढ़का किला भी आहोमोंने छोड़ दिया। कोलियाबरके युद्धमें आहोमोंके तीन सौ जहाज मुसलमानोंके हाथ लगे थे। १६६३ ई०को सन्धि हुयी और मीर-जुमलाकी फौज बङ्गाल वापस गयी। अपर विस्तृत घटनावली आसाम, कोच-विहार, स्वर्गदेव, रुद्रसिंह, नागा, कुटिया, कछाड़ी प्रभृति शब्दमें द्रष्टव्य है।

आहोस्वित् (सं० अव्य०) आहोच स्विच, द्वन्द्वम्। १ विकल्प! शक! २ प्रश्न! सवाल! क्या!

आह्न (सं० क्ली०) अह्नां समूहः, अच्। १ दिन-समूह, नहारका ज़खीरा। (त्रि०) २ दिनमें कर्तव्य, नहारमें होनेवाला।

आह्निक (सं० त्रि०) अह्निभवं अह्ना निर्वृत्तं साध्यं वा ठञ्। १ दिनमें उत्पन्न, नहारका पैदा। २ दिन-साध्य, नहारमें हो जानेवाला, रोज़ाना। ३ सात्त्विक हिन्दुवोंका दिनकर्तव्य कार्य सकल। स्मृतिमें इस तरह लिखा है,—ब्राह्ममुहूर्तमें जाग ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं नवग्रहके स्मरणपूर्वक गुरुको प्रणाम करे। फिर आत्माको ब्रह्मरूप भावना कर दिनके कर्तव्य धर्मकर्म और अर्थोपार्जनकी चिन्ता लगाना चाहिये। उसके अनन्तर सज्जासे उठ रात्रिवास छोड़ पृथिवीको नमस्कार कर और दक्षिण चरण भूमिपर रख कर्कोटकनाग, दमयन्ती, नल, ऋतुपर्ण तथा कार्तवीर्यार्जुन राजाका स्मरण कर चक्षुः एवं मुख धो दो बार आचमन लेना उचित है। फिर नैऋत कोण वा दक्षिण दिक् मलमूत्र छोड़ और जलमृत्तिकासे शौच एवं दो बार आचमन कर हरिस्मरणपूर्वक दिनको सूर्य तथा रात्रिको चन्द्र-तारा देखे। सूर्य और चन्द्रताराके अभावमें अग्निका दर्शन विहित है। पीछे दन्तधावन करे। दन्तकाष्ठ न मिलने वा निषिद्ध दिन पड़नेसे द्वादश गण्डूष जल वा पत्र द्वारा मुख शोध दो बार आचमन करना चाहिये। उसके बाद प्रातःस्नान, तिलक, सन्ध्या, तर्पण कर सूर्योदय पर्यन्त गायत्री जपे। स्नान करनेमें असमर्थ होनेसे आर्द्र वस्त्र द्वारा गात्र मार्जन-कर मन्त्रस्नानपूर्वक सन्ध्योपासनादि करे। द्वितीय यामार्धमें वेदविद्यादिका अभ्यास और समिध् तथा पुष्पादिका आहरण होता है। तृतीय यामार्धमें

गुरु, देवता, धार्मिक, और कुटुम्ब भरणार्थ ईश्वर-की उपासना करते हैं। चतुर्थ यामार्धमें मध्याह्न-स्नान किया जाता है। उसके बाद स्नानके वस्त्र और हस्त भिन्न दूसरी चीज़से गात्र पोंछ तिलक और तर्पण करना उचित है। फिर अष्टम मुहूर्तमें मध्याह्न-सन्ध्या समापन, ब्रह्मयज्ञ और देवपूजाकर यथा-काल पादोदक तथा नैवेद्य ले। पञ्चम यामार्धमें वलि, वैश्वदेव, काम्यवलिकर्म और वामदेवगान करना चाहिये। गानेमें असमर्थ होनेसे तीन बार वामदेवका मन्त्र पढ़ते हैं। पार्वण श्राद्धादिके दिन पार्वण श्राद्धके बाद वलिवैश्वदेव करना उचित है। वलिकर्मके बाद अतिथि लाभार्थ भोजन न कर राह देखना चाहिये। अतिथिभोजन करा न सकनेसे भिक्षा देना योग्य है। अतिथि न मिलनेसे ब्राह्मणको दान देते हैं। ब्राह्मण-को कुछ दे न सकनेपर अग्नि वा जलमें किञ्चित् अन्न छोड़े। उसके बाद नित्य श्राद्ध करे। नित्य श्राद्ध करनेमें असमर्थ होनेसे वलि और तर्पणानुष्ठान द्वारा ही पितृयज्ञ बन जाता है। उसके बाद गोग्रास दान और गोप्रणाम करे। फिर यथाविध भोजन करते हैं। पीछे स्थानान्तर न जा मृत्तिकाघर्षण द्वारा मुख एवं हस्त परिष्कार कर तृणादिसे दन्तलग्न रसद्रव्य निकाल जलगण्डूषसे मुखका मध्यभाग प्रक्षालनपूर्वक हाथपैर धोते हैं। फिर आसनपर बैठ भूमिपर पद-द्वय रख दो बार आचमन ले तुलसीपत्रसे मुखशोधन कर मन्त्रपाठपूर्वक दक्षिण हस्तसे जल देना चाहिये। अन्नकी जीर्णताके निमित्त मन्त्रपाठपूर्वक वामहस्त उदरपर फेर शतपद चलकर वामपार्श्व किञ्चित्काल विश्राम करे। षष्ठ और सप्तम यामार्धका कृत्य इतिहास-पुराणादि श्रवण है। अष्टम यामार्धमें लौकिकचिन्ता, सायंसन्ध्योपासना और इष्टदेवताका स्मरण आदि होता है। रात्रिको सन्ध्याके अनन्तर इष्टदेवताका स्मरण, मन्त्रजप, त्रिकालपाठ्यस्तव और नारायणका स्मरण करना चाहिये। फिर भुक्त द्रव्यादि पचनेपर पूर्ववत् वलिवैश्वदेव कर्मकर अतिथिको अन्नादि दे अवश्य भरणीयोंके साथ सार्धप्रहर रात्रिके मध्य अनतिदृप्त भावसे भोजन करे। अन्न भोजन न करते भी ताम्बूलादि खा लेना चाहिये। प्रथम प्रहरके मध्य विद्याभ्यास करते हैं। उसके बाद सोना चाहिये। परिष्कृत स्थानमें खट्टापर सज्जा लगा मस्तकको ओर एक जलपूर्ण कुम्भ रख रात्रिवास पहन हाथ-पैर धो दो बार आचमन ले पूर्व वा दक्षिण शिरा हो पद्मनाभका स्मरण कर द्विप्रहरके मध्य शयन करते हैं। फिर दारोपगमन होता है। दारोपगमनके अनन्तर एक सज्जापर दम्पती नहीं सोते। सहवास देखो।

तन्त्रमें प्रतिदिनका कर्तव्य कर्म इस प्रकार लिखा है,—ब्राह्ममुहूर्तमें उठ भूतशुद्धि तथा इष्टदेवताका ध्यानादि कर गुरुका स्मरण रखते हुये पञ्चभूतात्मक पञ्चोपचार द्वारा गुरुकी मानस पूजा करना चाहिये। उसके अनन्तर सद्गुरुका ध्यान लगा कुलवृक्षको प्रणाम करे। फिर पादुका और सम्प्रदायक्रमसे गुरुका मन्त्र अष्टोत्तर शत वा अष्टोत्तर सहस्र जप, गुरुस्तोत्र-कवच पढ़ते हुये गुरुप्रणाम, सद्गुरु-नमस्कार और ब्राह्मणादि प्रणाम करना चाहिये। पीछे श्रीगुरुध्यान, पूजा, स्तव, कवच और गीतापाठ करे। उसके बाद कुण्डलिनी ध्यान धर, कुण्डलिनी स्तोत्रकवच पढ़ गौरगणेश मन्त्र जप और अजपा मन्त्र समर्पण एवं अपजा जप कर हंस स्मरण और 'त्रैलोक्य चैतन्यमयाधिदेव' इत्यादि प्रार्थना करना चाहिये। पीछे उठ भूमिको प्रणामकर वामपद पुरःसर गृहसे निकल मूत्रपुरीषोत्सर्ग एवं दन्त-धावनकर मुख, नासा तथा नासारन्ध्रद्वय धो डाले। फिर स्मृत्युक्त विधानसे शौचादि और देहशुद्धिकर रात्रिवास उतार अन्य वस्त्र पहन मन्त्रस्नान कर देव-गृहमें पहुंच सम्मार्जनीय लेपनादि लगा देवतानिर्माल्य निकाल पूर्वदिनावशिष्ट पत्रादिसे अभ्यर्चनाकर क्षम-स्तोत्र पढ़े। उसके बाद यथोक्त विधानसे नद्य तर्पण करना उचित है। फिर वस्त्र बदल यज्ञोपवीत धो तिलक त्रिपुण्ड्रादि लगाये। पीछे वेदोक्त सन्ध्याकर तान्त्रिको सन्ध्या करना चाहिये। फिर यथोक्तकालमें अन्नादि शोध इष्टदेवताको निवेदनकर खाते हैं। शाक्तानन्दतरङ्गिणीमें सविस्तर विवरण द्रष्टव्य है। स्मार्त रघुनन्दनकृत

आह्निकतत्त्व एवं आह्निककृत्यप्रदीपमें स्मार्त और तन्त्रसारमें तान्त्रिक दिनकृत्य विस्तृतरूपसे वर्णित है। दिनकृत्य देखो। (क्लो०) ३ धार्मिक संस्कार विशेष। यह प्रतिदिन नियत समय पर किया जाता है। ४ एक दिनका कार्य, रोज़ाना काम। ५ सूत्रात्मक शास्त्रभाष्यके पदांशकी व्याख्या। यह एक दिनमें होती है। ६ एक दिनमें अध्यापकके निकट अध्ययन किया हुवा पाठ, रोज़ाना सबक़। ७ एक दिन वेतनसे क्रीत दासादि, एक रोज़की मज़दूरीसे ख़रीदा हुवा नौकर वगैरह। ८ स्व-सत्तासे एक दिन व्याप्त ज्वर प्रभृति, एकांतरा, रोज़-रोज़ आनेवाला बुख़ार। ९ एक दिनका भोजन, रोज़ाना ख़ुराक।

आह्निकाचार (सं० पु०) दैनिक व्यवहार, रोज़ाना दस्तूर। दिनकृत्य देखो।

आह्नेय (सं० पु०) सौचकके गोत्रापत्य।

आह्रुत (सं० त्रि०) आहत, ज़ख़मी, चोट खाये हुवा।

आह्रुतभेषज (वै० त्रि०) आहतको अच्छा करनेवाला पदार्थ, जो चीज़ ज़ख़मीको आराम कर देती हो।

आह्लाद (सं० पु०) आ-ह्लाद-घञ्। आनन्द, शादी, ख़ुशी।

आह्लादक, आह्लाददुघ देखो।

आह्लाददुघ (सं० त्रि०) आनन्दप्रद, ख़ुशी बख़्शनेवाला।

आह्लादन (सं० क्लो०) आ-ह्लाद-ल्युट्। १ आनन्द-सम्पादन, ख़ुशीकी बख़्शिश। (त्रि०) कर्तरि ल्युट्। २ आनन्द-सम्पादक, ख़ुशी बख़्शनेवाला। करणे ल्युट्। ३ आनन्दसाधन, जिससे मज़ा मिले।

आह्लादि (सं० पु०) बभ्रुके एक पुत्र।

आह्लादित (सं० त्रि०) आ-ह्लाद-णिच्-इट्, णिच् लोपः। आनन्दयुक्त, मसरूर, ख़ुश होनेवाला।

आह्लादिन् (सं० त्रि०) आ-ह्लाद-णिनि। १ आनन्द-युक्त, मसरूर, ख़ुश। २ आनन्दकारी, ख़ुश करनेवाला।

आह्व (सं० त्रि०) आह्वयति, आ-ह्वे-ड। आह्वान-कारी, पुकारने या बोलानेवाला।

आह्वय (सं० त्रि०) आह्वयते स्वसमीपमानयनाय-मुच्चैः रुआय्यतेऽनेन, बाहुलकात् करणे अः। १ नाम, इस्म। पुकारनेमें काम आनेसे नामको आह्वय कहते हैं। २ मेषादि प्राणी द्वारा पणपूर्वक क्रीड़ा विशेष, मनुने इसे अष्टादश विवादके मध्य गिना है।

आह्वयत् (सं० त्रि०) आह्वानकारी, पुकारनेवाला, जो ललकार रहा हो।

आह्वयन (सं० क्लो०) आह्वयं करोत्यनेन, आ-ह्वय-णिच् करणे ल्युट्। नामादेश-साधन शब्दविशेष।

आह्वयितव्य (सं० त्रि०) आह्वयं करोति, आह्वय-णिच् कर्मणि तव्य। आह्वयनीय, पुकारा या बुलाया जानेवाला।

आह्वर (सं० त्रि०) आह्वरति, आ-ह्वृ-अच्। १ कुटिल, टेढ़ा। २ उशीनरदेशोत्पन्न। (पु०) ३ उशीनरका दुर्ग।

आह्वरक (सं० त्रि०) आह्वर स्वार्थे कन्। १ निन्दनीय, हिकारत किये जाने क़ाबिल। (पु०) २ पितरोंको पिण्डदान दे स्वयं उसे खा जानेवाला नीच व्यक्ति।

आह्वा (सं० स्त्री०) आ-ह्वे-अङ्-टाप्। १ आह्वान, पुकार। करणे अङ्। २ संज्ञा, इस्म, नाम।

आह्वान (सं० क्लो०) आ-ह्वे-ल्युट्। १ निमन्त्रण, तलबी, पुकार, बुलावा। आह्वयते येन, करणे ल्युट्। २ संज्ञा, इस्म, नाम। ३ आज्ञासाधन राजकीय पत्र, तलबनामा, समन, वारण्ट। भावे ल्युट्। ४ विचारमें विवाद-निर्णयके निमित्त राजाकर्तृक बुलावा। ५ देवताका निमन्त्रण। ६ अभिग्रह, ललकार।

आह्वाय (सं० पु०) संज्ञा, नाम, तलबनामा, पुकार।

आह्वायक (सं० त्रि०) आ-ह्वे-ण्वुल्-युक्। आह्वान-कारक, बोलानेवाला। (पु०) २ दूत, हरकारा।

आह्वारक (सं० त्रि०) आ-ह्वृ-ण्वुल्। १ कुटिल, टेढ़ा। (पु० बहुव०) २ कृष्णयजुर्वेदका एक संस्करण।

आह्वृति (सं० स्त्री०) आ-ह्वृ-क्तिन्। १ कौटिल्य। (पु०) २ जारुथी नगरके अधिपति। (महाभारत वन० १२६।२०)

द्वितीय भाग सम्पूर्ण।

लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, पुस्तकालय
Lal Bahadur Shastri National Academy of Administration, Library

मसूरी
MUSSOORIE.

यह पुस्तक निम्नांकित तारीख तक वापिस करनी है ।
This book is to be returned on the date last stamped.

दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.	दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.

R
039.914
Enc

प्रवाप्ति संख्या 118238
Acc No. 15

वर्ग संख्या
Class No. _______

पुस्तक संख्या
Book No. _______

लेखक
Author _______

शीर्षक
Title _______

R
039.914
Enc
V.2

15

LIBRARY
LAL BAHADUR SHASTRI
National Academy of Administration
MUSSOORIE

Accession No. 118238

1. Books are issued for 15 days only but may have to be recalled earlier if urgently required.
2. An over-due charge of 25 Paise per day per volume will be charged.
3. Books may be renewed on request, at the discretion of the Librarian.
4. Periodicals, Rare and Reference books may not be issued and may be consulted only in the Library.
5. Books lost, defaced or injured in any way shall have to be replaced or its double price shall be paid by the borrower.

Help to keep this book fresh, clean & moving